पं. श्रीराम शर्मा आचार्य वाङ्मय

सावित्री, कुण्डलिनी एवं तंत्र

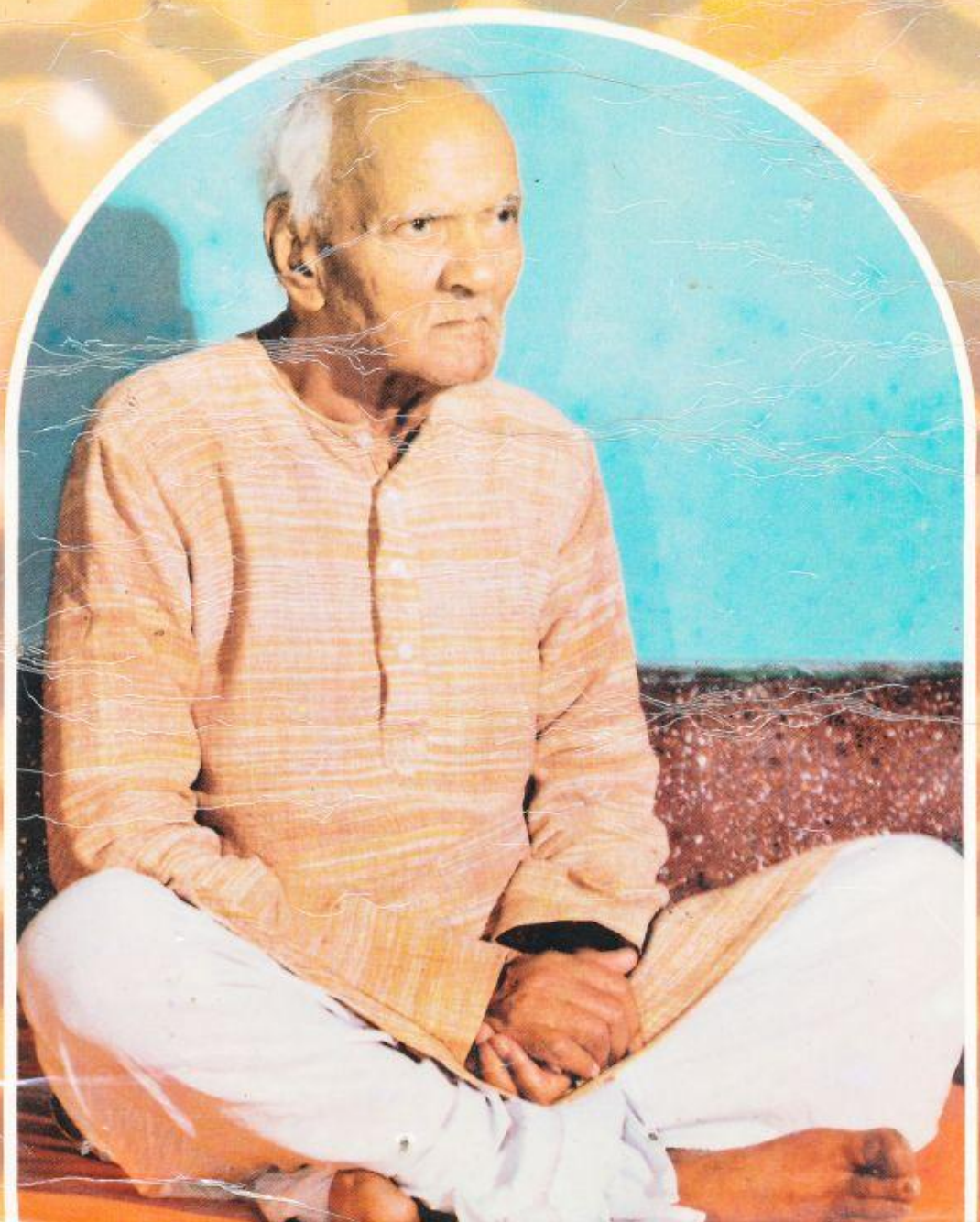

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सावित्री-कुंडलिनी एवं तंत्र

सम्पादक
ब्रह्मवर्चस

प्रकाशक
अखण्ड ज्योति संस्थान, मथुरा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रकाशक
अखण्ड ज्योति संस्थान
मथुरा - २८१००३

© सर्वाधिकार सुरक्षित

द्वितीय संस्करण १९९८

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

मूल्य १२५)

मुद्रक
जनजागरण प्रेस, मथुरा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समर्पणम्

ॐ मातरं भगवतीं देवीं श्रीरामञ्च जगद्गुरुम् ।
पादपद्मे तयोः श्रित्वा प्रणमामि मुहुर्मुहुः ॥

मातृवत् लालयित्री च पितृवत् मार्गदर्शिका ।
नमोऽस्तु गुरुसत्तायै श्रद्धा-प्रज्ञा युता च या ॥

भगवत्याः जगन्मातुः, श्रीरामस्य जगद्गुरोः ।
पादुकायुगले वन्दे, श्रद्धाप्रज्ञास्वरूपयोः ॥

नमोऽस्तु गुरवे तस्मै गायत्रीरूपिणे सदा ।
यस्य वागमृतं हन्ति विषं संसारसंज्ञकम् ॥

www.vicharkrantibooks.org

असम्भवं सम्भवकर्तुमुद्यतं प्रचण्डझञ्झावृतिरोधसक्षमम् ।
युगस्य निर्माणकृते समुद्यतं परं महाकालममुं नमाम्यहम् ॥

त्वदीयं वस्तु गोविन्द ! तुभ्यमेव समर्पये ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भूमिका

परमपूज्य गुरुदेव ने गायत्री साधना के साथ-साथ सावित्री साधना-सूर्य देवता की विशिष्ट उच्चस्तरीय साधना को स्वयं अपने जीवन में विशेष उद्देश्यों के निमित्त सम्पन्न किया था । उनकी साधनावधि के एक बहुत बड़े भाग को गुह्य माना जा सकता है । चौबीस-चौबीस लक्ष के चौबीस अनुष्ठानों के साथ-साथ भी उनकी सौर शक्ति के संदोहन वाली विशिष्ट सावित्री साधना चलती रही । १९५८ का सहस्रकुण्डी यज्ञ इसी दिशा में एक विशेष प्रयोग था जो सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ । परमपूज्य गुरुदेव ने प्राणाग्नि, कुण्डलिनी, अन्दर प्रसुप्त पड़ी सर्पिणी पर यों तो पहले भी समय-समय पर लिखा पर विस्तार से इसकी जानकारी सुधी पाठकों को अपने १९६०-६१ के हिमालय प्रवास से लौट कर ही देना आरम्भ की, वह भी क्रमशः छोटे-छोटे सूत्रों के रूप में ।

सावित्री साधना एवं कुण्डलिनी महाशक्ति का जागरण एवं उसकी संसिद्धि एक विशिष्ट स्तर का पुरुषार्थ है जिसे पूज्यवर जीवन भर औरों को लाभ पहुँचाने के लिए करते रहे किन्तु सूक्ष्मीकरण के माध्यम से यह प्रयोग और सघनतम एवं विराटतम रूप में १९८४-८५ में सम्पन्न किया गया । वाङ्मय में प्रस्तुत खण्ड में इसी साधना के स्वरूप सत्परिणामों की परिजनों को जानकारी करायी गयी है । कुण्डलिनी महाशक्ति के विषय में संव्याप्त भ्रान्तियों का निवारण कर इस ज्ञान के महासागर पर छाए कुहासे को मिटाकर पूज्यवर ने साधना का वह द्वार खोल दिया जो विशिष्ट उद्देश्यों के लिए आत्मबल सम्पन्न साधकों द्वारा ही प्रयुक्त होना चाहिए ।

कुण्डलिनी जागरण का अर्थ है अपने अन्दर छिपे पड़े प्राणशक्ति के भाण्डागार का गायत्री महामंत्र की साधना के माध्यम से स्फोट प्रक्रिया द्वारा रहस्योदघाटन आत्मकल्याण एवं लोक कल्याण के निमित्त । इसके लिए उस द्वार तक पहुँचने के अनेकानेक मार्ग हैं जहाँ वह चाबी लगायी जाती है जो प्राणाग्नि को उच्चस्तरीय ऊर्जा में बदलकर साधक का ब्रह्मवर्चस् बढ़ा देती है, किन्तु कोई भी मार्ग बिना मार्गदर्शक के पार नहीं किया जा सकता । हमारी सुषुम्ना नाड़ी जो मूलाधार से सहस्रार तक नीचे से ऊपर सर्पिणी की तरह साढ़े तीन फेरे लगाकर पहुँच कर क्षीरसागर में बैठे सहस्रफणि सर्प में बदल जाती है, हमारी जीवन ऊर्जा का मूलाधार है । इड़ा पिंगला नाड़ी इस प्राण शक्ति की ऊर्ध्वगमन प्रक्रिया, साधक की इच्छानुसार नियन्त्रण में सहायता करती है । नीचे से ऊपर तक ऐसे अनेकानेक द्वार हैं, जिनका क्रमशः भेदन कर साधक अपने सहस्रारचक्र को आनन्दमय कोष को जगा सकता है व आत्मबोध के चरम लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है । मूलाधार रूपी नीचे वाले द्वार के पास रुद्रग्रंथि है तो सूर्यचक्र के पास शरीर मध्य में विष्णु ग्रंथि एवं मस्तिष्क मध्य में ब्रह्मग्रंथि । इसी प्रकार सूक्ष्म व कारण शरीर को लपेटे पाँच कोष हैं जिनसे यह हमारा समग्र ढाँचा विनिर्मित है । षट्चक्र, तीन ग्रंथियाँ, पंचकोष मिलकर समुद्र मन्थन के चौदह रत्नों के समान भूमिका निभाते हैं । यह चौदह रत्न यदि मनुष्य हस्तगत करले तो वह देवोपम स्थिति में बन्धनमुक्ति एवं आत्मसाक्षात्कार की स्थिति में पहुँच जाता है ।

कुण्डलिनी विज्ञान का अनुसंधान वस्तुतः प्रसुप्त की जागृति का विज्ञान ही है । यदि यह योग सध सके तो शारीरिक बलिष्ठता मानसिक प्रतिभा एवं आत्मिक वर्चस् को असाधारण रूप से बढ़ाया जा सकना सम्भव है । कुण्डलिनी शक्ति की तुलना विद्युत ऊर्जा या आभा से की गयी है । **''तडिल्लता समरुचिर्विद्युल्लेखेव भास्वरा''** सूत्र में उसे बिजली की लता रेखा जैसा ज्योतिर्मय बताया गया है । इसी प्रकार एक अन्य स्थान पर उसे प्रचण्ड अग्निरेखा एवं दिव्य वैश्वानर अग्नि की उपमा दी गयी है । कुण्डलिनी वस्तुतः प्राणाग्नि के रूप में जीवनशक्ति प्राणशक्ति के रूप में ब्रह्माण्डीय चेतना की आत्म-सत्ता में प्रतिष्ठापित प्रतिमूर्त्ति है जिसका संचालन वह पराप्रकृति ही करती रहती है । यह मानवी विद्युत शरीर के इर्द-गिर्द फैले तेजोबलय के रूप में शरीर-मस्तिष्क के चारों ओर देखी जा सकती है । यह एक प्रकार का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

''आध्यात्मिक डायनामाइट'' है जिसकी ऊर्जा यों तो मनुष्य के कण-कण में विद्यमान है किन्तु मस्तिष्क हृदय और जननेन्द्रिय मूल में उसकी विशिष्ट मात्रा पायी जाती है ।

प्राणाग्नि कुण्डलिनी ही जीवट, प्रतिकूलताओं से लड़ने वाली जीवनी शक्ति व जिजीविषा-हिम्मत के रूप में मनुष्य में कूट-कूट कर भरी है । मनुष्य के सूक्ष्म शरीर में यह प्रसुप्त ऊर्जा छह तालों की तिजोरी के रूप में बन्द है जो षटचक्र के रूप में भँवर नाड़ी गुच्छक अथवा विद्युत्प्रवाह के रूप में सुषुम्ना व उसके चारों ओर स्थित है । इसी मार्ग से मनुष्य ऊर्ध्वगमन कर ब्रह्मलोक पहुँचता है जिसे सहस्रार कहा गया है । आद्यशंकराचार्य ने सौंदर्य लहरी में जो इसका वर्णन किया है, उसकी बहुत ही सुन्दर व्याख्या परमपूज्य गुरुदेव ने इस खण्ड में प्रस्तुत की है । वैज्ञानिक आधार बताते हुए वे रेटीकुलर एक्टीवेटिंग सिस्टम का जागरण मस्तिष्क के सभी केन्द्रों का जागरण ही सहस्रार का जागरण व तद् जन्म आनन्द की अनुभूति रसस्राव से हुई बताते हैं जो कि स्वयं में एक अनूठी प्रमाण सम्मत तथ्य सम्मत प्रतिपादन भी है ।

इस वाङ्मय के अंतिम तीसरे भाग में तंत्र मार्ग की व्याख्या है । तांत्रिक साधनाएँ अतिक्लिष्ट व उपयुक्त मार्गदर्शक के अभाव में किये जाने पर हानिकारक सिद्ध होती हैं, इसके प्रमाण देते हुए पूज्यवर ने गायत्री का गोपनीय वाममार्ग बताया है । सामान्यतया लोग तंत्र साधना भौतिक एषणाओं की तुर्तफुर्त प्राप्ति अथवा किसी पर अभिचार मारण आदि प्रयोग के लिए करते हैं । बहुत कम जानते हैं कि तंत्र एक उत्तेजनात्मक उग्र प्रणाली है जो उलटकर वापस तांत्रिक पर ही वार करती है, यदि सुरक्षा का प्रबंध नहीं किया गया है । तंत्र साधना से मानवी काया व मन के बाह्य व आंतरिक वातावरण में एक प्रकार से सूक्ष्म झँझावात व आँधियाँ चलने लगती हैं । यदि साधक निर्भय बना रहे तो इस स्थिति से गुजर कर बहुमूल्य ऋद्धि-सिद्धियों को प्राप्त कर अनेकानेक व्यक्तियों का कल्याण कर सकता है । तंत्र में सफल हुआ व्यक्ति कोई गड़बड़ी न पैदा करे, ईश्वरीय विधि-विधान को असंतुलित न करे, इसीलिए हर किसी को इस साधना का अधिकार नहीं है । गायत्री योग जहाँ दक्षिण मार्ग है, वहाँ गायत्री तंत्र वाम मार्ग है ।

चमत्कार प्रदर्शन के लिए, घात या कृत्या के रूप में मारण प्रयोगों के रूप में यदि तंत्र का प्रयोग करता है तो वह नैतिक दृष्टि से अनुचित है, इसीलिए इस शास्त्र को कई तालों में बन्द कर तिजोरी में सम्भाल कर रखा गया है । शाप-वरदान, मारण, मोहन, उच्चाटन, आदि अभिचार प्रयोगों पर ऋषियों ने अंकुश लगाकर उसे मात्र सुपात्रों के लिए सुरक्षित व गोपनीय बनाकर रखा है । शारदा तिलक का हवाला देते हुए पूज्यवर गायत्री की वाममार्गी साधना का स्वरूप भी स्पष्ट करते हैं व सावधानियाँ भी समझाते चले जाते हैं सावित्री, कुण्डलिनी व तंत्र तीनों ही गुह्यविज्ञान के ऐसे पक्ष है, जिनके सम्बन्ध में बहुत कुछ अविज्ञात रहा है । इसी को परमपूज्य गुरुदेव ने बड़े स्पष्ट शब्दों में लिखकर जन-जन का सही मार्गदर्शन किया है । निश्चित ही वाङ्मय का यह खण्ड अनेकानेक अर्थों में भ्रांति निवारक व लोकोपयोगी है ।

—ब्रह्मवर्चस

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

विराट गायत्री परिवार एवं उसके संस्थापक-संरक्षक एक संक्षिप्त परिचय

इतिहास में कभी-कभी ऐसा होता है कि अवतारी सत्ता एक साथ बहुआयामी रूपों में प्रकट होती है एवं करोड़ों ही नहीं, पूरी वसुधा के उद्धार-चेतनात्मक धरातल पर सबके मनों का नये सिरे से निर्माण करने आती है । परमपूज्य गुरुदेव पं. श्रीराम शर्मा आचार्य को एक ऐसी ही सत्ता के रूप में देखा जा सकता है जो युगों-युगों में गुरु एवं अवतारी सत्ता दोनों ही रूपों में हम सबके बीच प्रकट हुई, अस्सी वर्ष का जीवन जीकर एक विराट् ज्योति प्रज्ज्वलित कर उस सूक्ष्म ऋषि चेतना के साथ एकाकार हो गयी जो आज युग परिवर्तन को सन्निकट लाने को प्रतिबद्ध है । परमवंदनीया माताजी शक्ति का रूप थीं जो कभी महाकाली, कभी माँ जानकी, कभी मां शारदा एवं कभी माँ भगवती के रूप में शिव की कल्याणकारी सत्ता का साथ देने आती रही है । उनने भी सूक्ष्म में विलीन हो स्वयं को अपने आराध्य के साथ एकाकार कर ज्योतिपुरुष का एक अंग स्वयं को बना लिया । आज दोनों सशरीर हमारे बीच नहीं है किन्तु, नूतन सृष्टि कैसे ढाली गयी, कैसे मानव गढ़ने का साँचा बनाया गया, इसे शान्तिकुंज, ब्रह्मवर्चस, गायत्री तपोभूमि, अखण्ड ज्योति संस्थान एवं युगतीर्थ आँवलखेड़ा जैसी स्थापनाओं तथा संकल्पित सृजन सेनानी गणों के, वीरभद्रों की करोड़ों से अधिक की संख्या के रूप में देखा जा सकता है ।

परमपूज्य गुरुदेव का वास्तविक मूल्यांकन तो कुछ वर्षों बाद इतिहासविद, मिथक लिखने वाले करेंगे किन्तु, यदि उनको आज भी साक्षात कोई देखना या उनसे साक्षात्कार करना चाहता हो तो उन्हें उनके द्वारा अपने हाथ से लिखे गये उस विराट परिमाण में साहित्य के रूप में युग संजीवनी के रूप में देख सकता है जो वे अपने वजन से अधिक भार के बराबर लिख गये । इस साहित्य में संवेदना का स्पर्श इस बारीकी से हुआ है कि लगता है लेखनी को उसी की स्याही में डुबा कर लिखा गया हो । हर शब्द ऐसा जो हृदय को छूता मन को, विचारों को बदलता चला जाता है । लाखों करोड़ों के मनों के अंत:स्थल को छू कर उसने उनका कायाकल्प कर दिया । रूसो के प्रजातंत्र की, कार्ल मार्क्स के साम्यवाद की क्रांति भी इसके समक्ष बौनी पड़ जाती है । उनके मात्र इस युग वाले स्वरूप को लिखने तक में लगता है कि एक विश्वकोश तैयार हो सकता है, फिर उस बहुआयामी रूप को जिसमें वे संगठनकर्ता, साधक, करोड़ों के अभिभावक, गायत्री महाविद्या के उद्धारक, संस्कार परम्परा का पुनर्जीवन करने वाले, ममत्व लुटाने वाले एक पिता, नारी जाति के प्रति अनन्य करुणा बिखेरकर उनके ही उद्धार के लिए धरातल पर चलने वाला नारी जागरण अभियान चलाते देखे जाते हैं, अपनी वाणी के उद्‌बोधन से एक विराट गायत्री परिवार एकाकी अपने बलबूते खड़े रहते दिखाई देते हैं तो समझ में नहीं आता, क्या-क्या लिखा जाय, कैसे छन्दबद्ध, लिपिबद्ध किया जाय, उस महापुरुष के जीवनचरित को ।

आश्विन कृष्ण त्रयोदशी विक्रमी संवत् १९६७ (२० सितम्बर १९११) को स्थूल शरीर से आँवलखेड़ा ग्राम जनपद आगरा जो जलेसर मार्ग पर आगरा से पंद्रह मील की दूरी पर स्थित है, में जन्मे श्रीराम शर्मा जी का बाल्यकाल-कैशोर्य काल ग्रामीण परिसर में ही बीता । वे जन्मे तो थे एक जमींदार घराने में, जहाँ उनके पिता-श्री पं. रूपकिशोर जी शर्मा आसपास के दूर-दराज के राजघरानों के राजपुरोहित, उद्‌भट विद्वान, भागवत कथाकार थे किन्तु, उनका अंत:करण मानव मात्र की पीड़ा से सतत विचलित रहता था । साधना के प्रति उनका झुकाव बचपन में ही दिखाई देने लगा । जब वे अपने सहपाठियों को, छोटे बच्चों को अमराइयों में बिठाकर स्कूली शिक्षा के साथ-साथ सुसंस्कारिता अपनाने वाली आत्मविद्या का शिक्षण दिया करते थे । छटपटाहट के कारण हिमालय की ओर भाग निकलने व पकड़े जाने पर उनने संबंधियों को बताया कि हिमालय ही उनका घर है एवं वहीं वे जा रहे थे । किसे मालूम था कि हिमालय की ऋषि चेतनाओं का समुच्चय बनकर आयी यह सत्ता वस्तुत: अगले दिनों अपना घर वहीं बनाएगी । जाति-पाँति का कोई भेद नहीं । जातिगत मूढ़ता भरी मान्यता से ग्रसित तत्कालीन भारत के ग्रामीण परिसर में एक अछूत वृद्ध महिला की जिसे कुष्ठ रोग हो गया था, उसी के टोले में जाकर सेवाकर उनने घरवालों का विरोध तो मोल ले लिया पर अपना व्रत नहीं छोड़ा ।

उस महिला ने स्वस्थ होने पर उन्हें ढेरों आशीर्वाद दिये। एक अछूत कहलाने वाली जाति का व्यक्ति जो उनके आलीशान घर में घोड़ों की मालिश करने आता था, एक बार कह उठा कि मेरे घर कथा कौन कराने आएगा, मेरा ऐसा सौभाग्य कहाँ। नवनीत जैसे हृदय वाले पूज्यवर उसके घर जा पहुँचे एवं कथा पूरे विधान से कर पूजा की, उसको स्वच्छता का पाठ सिखाया, जबकि सारा गाँव उनके विरोध में बोल रहा था।

किशोरावस्था में ही समाज सुधार की रचनात्मक प्रवृत्तियाँ उनने चलाना आरम्भ कर दी थीं। औपचारिक शिक्षा स्वल्प ही पायी थी किन्तु, उन्हें इसके बाद आवश्यकता भी नहीं थी क्योंकि जो जन्मजात प्रतिभा सम्पन्न हो वह औपचारिक पाठ्यक्रम तक सीमित कैसे रह सकता है। हाट-बाजारों में जाकर स्वास्थ्य-शिक्षा प्रधान परिपत्र बाँटना, पशुधन को कैसे सुरक्षित रखें तथा स्वावलम्बी कैसे बनें, इसके छोटे-छोटे पैम्फलेट्स लिखने, हाथ की प्रेस से छपवाने के लिए उन्हें किसी शिक्षा की आवश्यकता नहीं थी। वे चाहते थे, जनमानस आत्मावलम्बी बने, राष्ट्र के प्रति स्वाभिमान उसका जागे, इसलिए गाँव में जन्मे इस लाल ने नारी शक्ति व बेरोजगार युवाओं के लिए गाँव में ही एक बुनताघर स्थापित किया व उसके द्वारा हाथ से कैसे कपड़ा बुना जाय, अपने पैरों पर कैसे खड़ा हुआ जाय, यह सिखाया।

पंद्रह वर्ष की आयु में वसंत पंचमी की वेला में सन् १९२६ में उनके घर की पूजा स्थली में, जो उनकी नियमित उपासना का तब से आगार थी, जबसे महामना पं० मदन मोहन मालवीय जी ने उन्हें काशी में गायत्री मंत्र की दीक्षा दी थी, उनकी गुरुसत्ता का आगमन हुआ अदृश्य छायाधारी सूक्ष्म रूप में। उनने प्रज्ज्वलित दीपक की लौ में से स्वयं को प्रकट कर उन्हें उनके द्वारा विगत कई जन्मों में संपन्न क्रिया कलापों का दिग्दर्शन कराया तथा उन्हें बताया कि वे दुर्गम हिमालय से आये हैं एवं उनसे अनेकानेक ऐसे क्रियाकलाप कराना चाहते हैं, जो अवतारी स्तर की ऋषि सत्ताएँ उनसे अपेक्षा रखती हैं। चार बार कुछ दिन से लेकर एक साल तक की अवधि तक हिमालय आकर रहने, कठोर तप करने का भी उनने संदेश दिया एवं उन्हें तीन संदेश दिए- १. गायत्री महाशक्ति के चौबीस-चौबीस लक्ष के चौबीस महा- पुरश्चरण जिन्हें आहार के कठोर तप के साथ पूरा करना था। २. अखण्ड घृतदीप की स्थापना एवं जन-जन तक इसके प्रकाश को फैलाने के लिए समय आने पर ज्ञानयज्ञ अभियान चलाना, जो बाद में अखण्ड ज्योति पत्रिका के १९३८ में प्रथम प्रकाशन से लेकर विचार-क्रांति अभियान के विश्वव्यापी होने के रूप में प्रकटा तथा ३. चौबीस महापुरश्चरणों के दौरान युगधर्म का निर्वाह करते हुए राष्ट्र के निमित्त भी स्वयं को खपाना, हिमालय यात्रा भी करना तथा उनके संपर्क से आगे का मार्गदर्शन लेना।

यह कहा जा सकता है कि युग निर्माण मिशन, गायत्री परिवार, प्रज्ञा अभियान, पूज्य गुरुदेव जो सभी एक दूसरे के पर्याय हैं, की जीवन यात्रा का यह एक महत्वपूर्ण मोड़ था, जिसने भावी रीति-नीति का निर्धारण कर दिया। पूज्य गुरुदेव अपनी पुस्तक 'हमारी वसीयत और विरासत' में लिखते हैं कि "प्रथम मिलन के दिन समर्पण सम्पन्न हुआ। दो बातें गुरु सत्ता द्वारा विशेष रूप से कही गई, संसारी लोग क्या करते हैं और क्या कहते हैं, उसकी ओर से मुँह मोड़कर निर्धारित लक्ष्य की ओर एकाकी साहस के बलबूते चलते रहना एवं दूसरा यह कि अपने को अधिक पवित्र और प्रखर बनाने की तपश्चर्या में जुट जाना- जौ की रोटी व छाछ पर निर्वाह कर आत्मानुशासन सीखना। इसी से वह सामर्थ्य विकसित होगी जो विशुद्धतः परमार्थ प्रयोजनों में नियोजित होगी। वसंत पर्व का यह दिन गुरु अनुशासन का अवधारण ही हमारे लिए नया जन्म बन गया। सद्गुरु की प्राप्ति हमारे जीवन का अनन्य एवं परम सौभाग्य रहा।"

राष्ट्र के परावलम्बी होने की पीड़ा भी उन्हें उतनी ही सताती थी जितनी कि गुरुसत्ता के आदेशानुसार तपकर सिद्धियों के उपार्जन की ललक उनके मन में थी। उनके इस असमंजस को गुरुसत्ता ने तोड़कर परावाणी से उनका मार्गदर्शन किया कि युगधर्म की महत्ता व समय की पुकार देख सुन कर तुम्हें अन्य आवश्यक कार्यों को छोड़कर अग्निकाण्ड में पानी लेकर दौड़ पड़ने की तरह आवश्यक कार्य भी करने पड़ सकते हैं। इसमें स्वतंत्रता संग्राम सेनानी के नाते संघर्ष करने का भी संकेत था। १९२७ से १९३३ तक का समय उनका एक सक्रिय स्वयं सेवक-स्वतंत्रता सेनानी के रूप में बीता, जिसमें घरवालों के विरोध के बावजूद पैदल लम्बा रास्ता पारकर वे आगरा के उस शिविर में पहुँचे, जहाँ शिक्षण दिया जा रहा था, अनेकानेक मित्रों-सखाओं-मार्गदर्शकों के साथ भूमिगत हो कार्य करते रहे तथा समय आने पर जेल

भी गये । छह-छह माह की उन्हें कई बार जेल हुई । जेल में भी वे जेल के निरक्षर साथियों को शिक्षण देकर व स्वयं अंग्रेजी सीखकर लौटे । आसन- सोल जेल में वे श्री जवाहर लाल नेहरू की माता श्रीमती स्वरूपरानी नेहरू, श्री रफी अहमद किदवई, महामना मालवीय जी, देवदास गाँधी जैसी हस्तियों के साथ रहे व वहाँ से एक मूलमंत्र सीखा जो मालवीय जी ने दिया था कि जन-जन की साझेदारी बढ़ाने के लिए हर व्यक्ति के अंशदान से-मुट्ठी फण्ड से रचनात्मक प्रवृत्तियाँ चलाना । यही मंत्र आगे चलकर एक घण्टा समयदान बीस पैसा नित्य या एक दिन की आय एक माह में तथा एक मुट्ठी अन्न रोज डालने के माध्यम से धर्मघट की स्थापना का स्वरूप लेकर लाखों-करोड़ों की भागीदारी वाला गायत्री परिवार बनाता चला गया, जिसका आधार था प्रत्येक व्यक्ति की यज्ञीय भावना का उसमें समावेश ।

स्वतंत्रता की लड़ाई के दौरान कुछ उग्र दौर भी आये, जिनमें शहीद भगतसिंह को फाँसी दिये जाने पर फैले जन आक्रोश के समय श्री अरविन्द के किशोर काल की क्रांतिकारी स्थिति की तरह उनने भी वे कार्य किये, जिनसे आक्रान्ता शासकों के प्रति असहयोग जाहिर होता था । नमक आन्दोलन के दौरान वे आततायी शासकों के समक्ष झुके नहीं, वे मारते रहे परन्तु, समाधि स्थिति को प्राप्त राष्ट्र देवता के पुजारी को बेहोश होना स्वीकृत था पर आन्दोलन से पीठ दिखाकर भागना नहीं । बाद में फिरंगी सिपाहियों के जाने पर लोग उठाकर घर लेकर आये । जरारा आन्दोलन के दौरान उनने झण्डा छोड़ा नहीं जबकि, फिरंगी उन्हें पीटते रहे, झण्डा छीनने का प्रयास करते रहे। उनने मुँह से झण्डा पकड़ लिया, गिर पड़े, बेहोश हो गये पर झण्डे का टुकड़ा चिकित्सकों द्वारा दाँतों में भींचे गये टुकड़े के रूप में जब निकाला गया तब सब उनकी सहनशक्ति देखकर आश्चर्य चकित रह गये । उन्हें तब से ही आजादी के मतवाले उन्मत्त श्रीराम मत्त नाम मिला। अभी भी आगरा में उनके साथ रहे या उनसे कुछ सीख लिए अगणित व्यक्ति उन्हें मत्त जी नाम से ही जानते हैं। लगानबन्दी के आँकड़े एकत्र करने के लिए उनने पूरे आगरा जिले का दौरा किया व उनके द्वारा प्रस्तुत वे आँकड़े तत्कालीन संयुक्त प्रान्त के मुख्य मंत्री श्री गोविन्द वल्लभ पंत द्वारा गाँधी जी के समक्ष पेश किये गये । बापू ने अपनी प्रशस्ति के साथ वे प्रामाणिक आँकड़े ब्रिटिश पार्लियामेण्ट भेजे, इसी आधार पर पूरे संयुक्त प्रान्त के लगान माफी के आदेश प्रसारित हुए । कभी जिनने अपनी इस लड़ाई के बदले कुछ न चाहा उन्हें सरकार ने अपना प्रतिनिधि भेजकर पचास वर्ष बाद ताम्रपत्र देकर शांतिकुज में सम्मानित किया । उसी सम्मान व स्वाभिमान के साथ सारी सुविधाएँ व पेंशन उनने प्रधान मंत्री राहत फण्ड, हरिजन फण्ड के नाम समर्पित कर दीं । वैरागी जीवन का, सच्चे राष्ट्र संत होने का इससे बड़ा प्रमाण क्या हो सकता है ?

१९३५ के बाद उनके जीवन का नया दौर शुरु हुआ, जब गुरुसत्ता की प्रेरणा से वे श्री अरविन्द से मिलने पाण्डिचेरी, गुरुदेव ऋषिवर रवीन्द्रनाथ टैगोर से मिलने शांति निकेतन तथा बापू से मिलने साबरमती आश्रम, अहमदाबाद गये । सांस्कृतिक आध्यात्मिक मोर्चे पर राष्ट्र को कैसे परतंत्रता की बेड़ियों से मुक्त किया जाय, यह निर्देश लेकर अपना अनुष्ठान यथावत् चलाते हुए उनने पत्रकारिता के क्षेत्र में प्रवेश किया जब आगरा में 'सैनिक' समाचार पत्र के कार्यवाहक संपादक के रूप में श्री कृष्णदत्त पालीवाल जी ने उन्हें अपना सहायक बनाया। बाबू गुलाब राय व पालीवाल जी से सीख लेते हुए सतत स्वाध्यायरत रह कर उनने अखण्ड ज्योति नामक पत्रिका का पहला अंक १९३८ की वसंत पंचमी पर प्रकाशित किया । प्रयास पहला था, जानकारियाँ कम थीं अत: पुन: सारी तैयारी के साथ विधिवत् १९४० की जनवरी से उनने परिजनों के नाम पाती के साथ अपने हाथ से बने कागज पर पैर से चलने वाली मशीन से छापकर 'अखण्ड ज्योति' पत्रिका का शुभारंभ किया जो पहले तो दो सौ पचास पत्रिका के रूप में निकली, किन्तु क्रमश: उनके अध्यवसाय घर-घर पहुँचाने, मित्रों तक पहुँचाने वाले उनके हृदय स्पर्शी पत्रों द्वारा बढ़ती-बढ़ती नवयुग के मत्स्यावतार की तरह आज दस लाख से भी अधिक संख्या में विभिन्न भाषाओं में छपती व एक करोड़ से अधिक व्यक्तियों द्वारा पढ़ी जाती है ।

पत्रिका के साथ-साथ 'मैं क्या हूँ' जैसी पुस्तकों का लेखन आरम्भ हुआ, स्थान बदला, आगरा से मथुरा आ गये, दो-तीन घर बदलकर घीयामण्डी में जहाँ आज अखण्ड ज्योति संस्थान है, आ बसे । पुस्तकों का प्रकाशन व कठोर तपश्चर्या, ममत्व विस्तार तथा पत्रों द्वारा जन-जन के अंत: स्थल को छूने की प्रक्रिया चालू रही । साथ देने आ गयीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

परमवंदनीया माताजी भगवती देवी शर्मा, जिन्हें भविष्य में अत्यधिक महत्वपूर्ण भूमिका अपने आराध्य इष्ट गुरु के लिए निभानी थी। उनके मर्मस्पर्शी पत्रों ने, भाव भरे आतिथ्य, हर किसी को जो दुखी था-पीड़ित था, दिये गये ममत्व भरे परामर्श ने गायत्री परिवार का आधार खड़ा किया, इसमें कोई सन्देह नहीं। यदि विचारक्रांति में साहित्य ने मनोभूमि बनायी तो भावात्मक क्रांति में ऋषियुगल के असीम स्नेह ने ब्राह्मणत्व भरे जीवन ने शेष बची भूमिका निभायी।

'अखण्ड ज्योति' पत्रिका लोगों के मनों को प्रभावित करती रही, इसमें प्रकाशित 'गायत्री चर्चा' स्तम्भ से लोगों को गायत्री व यज्ञमय जीवन जीने का संदेश मिलता रहा, साथ ही एक आना से लेकर छह आना सीरज की अनेकानेक लोकोपयोगी पुस्तकें छपती चली गयीं। इस बीच हिमालय के बुलावे भी आये, अनुष्ठान भी चलता रहा जो पूरे विधि विधान के साथ १९५३ में गायत्री तपोभूमि की स्थापना, १०८ कुण्डी यज्ञ व उनके द्वारा दी गयी प्रथम दीक्षा के साथ समाप्त हुआ। गायत्री तपोभूमि की स्थापना के निमित्त धन की आवश्यकता पड़ी तो परम वंदनीया माताजी ने जिनने हर कदम पर अपने आराध्य का साथ निभाया, अपने सारे जेवर बेच दिये, पूज्यवर ने जमींदारी के बाण्ड बेच दिये एवं जमीन लेकर अस्थायी स्थापना कर दी गयी। धीरे-धीरे उदारचेताओं के माध्यम से गायत्री तपोभूमि एक साधना पीठ बन गयी। २४०० तीर्थों के जल व रज की स्थापना वहाँ की गयी, २४०० करोड़ गायत्री मंत्र लेखन वहाँ स्थापित हुआ, अखण्ड अग्नि हिमालय के एक अति पवित्र स्थान से लाकर स्थापित की गयी जो अभी तक वहाँ यज्ञशाला में जल रही है। १९४१ से १९७१ तक का समय परमपूज्य गुरुदेव का गायत्री तपोभूमि, अखण्ड ज्योति संस्थान में सक्रिय रहने का समय है। १९५६ में नरमेध यज्ञ, १९५८ में सहस्रकुण्डी यज्ञ करके लाखों गायत्री साधकों को एकत्र कर उनने गायत्री परिवार का बीजारोपण कर दिया। कार्त्तिक पूर्णिमा १९५८ में आयोजित इस कार्यक्रम में दस लाख व्यक्तियों ने भाग लिया, इन्हीं के माध्यम से देश भर में प्रगतिशील गायत्री परिवार की दस हजार से अधिक शाखाएँ स्थापित हो गयीं। संगठन का अधिकाधिक कार्यभार पूज्यवर परमवंदनीया माताजी पर सौंपते चले गये एवम् १९५९ में पत्रिका का संपादन उन्हें देकर पौने दो वर्ष के लिए हिमालय चले गये, जहाँ उन्हें गुरुसत्ता से मार्गदर्शन लेना था, तपोवन नंदनवन में ऋषियों से साक्षात्कार करना था तथा गंगोत्री में रहकर आर्ष ग्रन्थों का भाष्य करना था। तब तक वे गायत्री महाविद्या पर विश्वकोश स्तर की अपनी रचना गायत्री महाविज्ञान के तीन खण्ड लिख चुके थे, जिसके अब तक प्रायः पैंतीस संस्करण छप चुके हैं। हिमालय से लौटते ही उनमें महत्वपूर्ण निधि के रूप में वेद, उपनिषद्, स्मृति, आरण्यक, ब्राह्मण, योगवाशिष्ठ, मंत्र महाविज्ञान, तंत्र महाविज्ञान जैसे ग्रन्थों को प्रकाशित कर देव संस्कृति की मूल थाती को पुनर्जीवन दिया। परमवंदनीया माताजी ने उन्हीं वेदों को पूज्यवर की इच्छानुसार १९९१-९२ में विज्ञान सम्मत आधार देकर पुनर्मुद्रित कराया एवं वे आज घर-घर में स्थापित हैं।

युग निर्माण योजना व 'युग निर्माण सत्संकल्प' के रूप में मिशन का घोषणा पत्र १९६३ में प्रकाशित हुआ। तपोभूमि एक विश्वविद्यालय का रूप लेती चली गयी तथा अखण्ड ज्योति संस्थान एक तपःपूत की निवास स्थली बन गया, जहाँ रहकर उनने अपनी शेष तप साधना पूरी की थी, जहाँ से गायत्री परिवार का बीज डाला गया था। तपोभूमि में विभिन्न शिविरों का आयोजन किया जाता रहा, पूज्यवर स्वयं छोटे-बड़े जन सम्मेलनों, यज्ञायोजनों के द्वारा विचार क्रांति की पृष्ठभूमि बनाते रहे, पूरे देश में १९७०-७१ में पाँच १००८ कुण्डी यज्ञ आयोजित हुए। स्थायी रूप से विदाई लेते हुए एक विराट सम्मेलन (जून १९७१) में परिजनों में विशेष कार्य भार सौंप, परम वंदनीया माताजी को शांतिकुंज, हरिद्वार में अखण्ड दीप के समक्ष तप हेतु छोड़ कर स्वयं हिमालय चले गये। एक वर्ष बाद वे गुरुसत्ता का संदेश लेकर लौटे एवं अपनी आगामी बीस वर्ष की क्रिया पद्धति बतायी। ऋषि परम्परा का बीजारोपण, प्राण प्रत्यावर्त्तन संजीवनी व कल्प साधना सत्रों का मार्गदर्शन जैसे कार्य उनने शांतिकुंज में सम्पन्न किये।

सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थापना अपनी हिमालय की इस यात्रा से लौटने के बाद ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान की थी, जहाँ विज्ञान और अध्यात्म के समन्वयात्मक प्रतिपादनों पर शोध कर एक नये धर्म वैज्ञानिक धर्म के मूलभूत आधार रखे जाने थे। इस सम्बन्ध में पूज्यवर ने विराट् परिमाण में साहित्य लिखा, अदृश्य जगत के अनुसंधान से लेकर मानव की प्रसुप्त क्षमता के जागरण तक साधना से सिद्धि एवं दर्शन-विज्ञान के तर्क, तथ्य प्रमाण के आधार पर प्रस्तुतीकरण तक। इसके

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

लिए एक विराट ग्रन्थागार बना व एक सुसज्जित प्रयोगशाला। वनौषधि उद्यान भी लगाया गया तथा जड़ी बूटी, यज्ञविज्ञान तथा मंत्र शक्ति पर प्रयोग हेतु साधकों पर परीक्षण प्रचुर परिमाण में किये गये। निष्कर्षों ने प्रमाणित किया कि ध्यान साधना मंत्र चिकित्सा व यज्ञोपैथी एक विज्ञान सम्मत विधा है। गायत्री नगर क्रमशः एक तीर्थ, संजीवनी विद्या के प्रशिक्षण का एकेडमी का रूप लेता चला गया एवं जहाँ ९-९ दिन के साधना प्रधान, एक-एक माह के कार्यकर्त्ता निर्माण हेतु युग शिल्पी सत्र सम्पन्न होने लगे।

कार्यक्षेत्र में विस्तार हुआ। स्थान-स्थान पर शक्तिपीठें विनिर्मित हुईं, जिनके निर्धारित क्रियाकलाप थे- सुसंस्कारिता, आस्तिकता संवर्धन एवं जन जागृति के केन्द्र बनना। ऐसे केन्द्र जो १९८० में बनना आरंभ हुए थे, प्रज्ञा संस्थान - शक्तिपीठ-प्रज्ञामण्डल-स्वाध्याय मंडल के रूप में पूरे देश व विश्व में फैलते चले गये। ७६ देशों में गायत्री परिवार की शाखाएँ फैल गयीं, ४६०० से अधिक भारत में निज के भवन वाले संस्थान विनिर्मित हो गये, वातावरण गायत्रीमय होता चला गया।

परमपूज्य गुरुदेव ने सूक्ष्मीकरण में प्रवेश कर १९८५ में ही पाँच वर्ष के अंदर अपने सारे क्रिया कलापों को समेटने की घोषणा कर दी। इस बीच कठोर तप साधना कर मिलना-जुलना कम कर दिया तथा क्रमशः क्रिया कलाप परमवंदनीया माताजी को सौंप दिये। राष्ट्रीय एकता सम्मेलनों, विराट दीप यज्ञों के रूप में नूतन विधा को जन-जन को सौंप कर राष्ट्र देवता की कुण्डलिनी जगाने हेतु उनने अपने स्थूल शरीर छोड़ने व सूक्ष्म में समाने की, विराट से विराटतम होने की घोषणा कर गायत्री जयन्ती २ जून १९९० को महाप्रयाण किया। सारी शक्ति वे परमवंदनीया माताजी को दे गये व अपने व माताजी के बाद संघशक्ति की प्रतीक लाल मशाल को ही इष्ट आराध्य मानने का आदेश देकर ब्रह्मबीज से विकसित ब्रह्मकमल की सुवास को देव संस्कृति दिग्विजय अभियान के रूप में आरंभ करने का माताजी को निर्देश दे गये।

एक विराट श्रद्धांजलि समारोह व शपथ समारोह जो हरिद्वार में सम्पन्न हुए, में लाखों व्यक्तियों ने अपना समय समाज के नव निर्माण, मनुष्य में देवत्व के उदय व धरती पर स्वर्ग लाने का गुरु सत्ता का नारा साकार करने के निमित्त देने की घोषणा की। परमवंदनीया माताजी द्वारा भारतीय-संस्कृति को विश्वव्यापी बनाने, गायत्री रूपी संजीवनी घर-घर पहुँचाने के लिए पूज्यवर द्वारा आरम्भ किये गये युगसंधि महापुरश्चरण की प्रथम व द्वितीय पूर्णाहुति तक विराट अश्वमेघ महायज्ञों की घोषणा की गयी। वातावरण के परिशोधन, सूक्ष्मजगत के नव निर्माण एवं सांस्कृतिक व वैचारिक क्रांति के निमित्त सौर ऊर्जा के दोहन द्वारा विशिष्ट प्रयोगों के माध्यम से विशिष्ट मंत्राहुतियों द्वारा सम्पन्न किये गये इन अश्वमेधों ने सारी विश्ववसुधा को गायत्री व यज्ञमय, वासंती उल्लास से भर दिया। स्वयं परमवंदनीया माताजी ने अपनी पूर्व घोषणानुसार चार वर्ष तक परिजनों का मार्गदर्शन कर सोलह यज्ञों का संचालन स्थूल शरीर से किया व फिर भाद्रपद पूर्णिमा १९ सितम्बर १९९४ महालय श्राद्धारंभ वाली पुण्य वेला में अपने आराध्य के साथ एकाकार हो गयीं। उनके महाप्रयाण के बाद दोनों ही सत्ताओं के सूक्ष्म में एकाकार होने के बाद मिशन की गतिविधियाँ कई गुना बढ़ती चली गयीं एवं जयपुर के प्रथम अश्वमेध यज्ञ (नवम्बर ९२) से छब्बीसवें अश्वमेध यज्ञ शिकागो (यू. एस. ए. जुलाई ९५) तक प्रज्ञावतार का प्रत्यक्ष रूप सबको दीखने लगा है।

गुरुसत्ता के आदेशानुसार सतयुग के आगमन तक १०८ महायज्ञ देवसंस्कृति को विश्वव्यापी बनाने हेतु संपन्न होने हैं। युग संधि महापुरश्चरण की अंतिम पूर्णाहुति उसी के बाद होगी। प्रथम पूर्णाहुति नवम्बर १९९५ में कार्त्तिक पूर्णिमा के अवसर पर युगपुरुष पूज्यवर की जन्मभूमि आँवलखेड़ा में मनायी जा रही है। उनके द्वारा लिखे गये समग्र साहित्य के वाङ्मय का जो सत्तर खण्डों में फैला है, विमोचन भी यहीं सम्पन्न हो रहा है। विनम्रता एवं ब्राह्मणत्व की कसौटी पर खरे उतरने वाले वरिष्ठ प्रज्ञापुत्र ही उनके उत्तराधिकारी कहे जायेंगे, यह गुरुसत्ता का उद्घोष था एवं इस क्षेत्र में बढ़ चढ़कर आदर्शवादी प्रतिस्पर्धा करने वाले अनेकानेक परिजन अब उनके स्वप्नों को साकार करने आगे आ रहे हैं। 'हम बदलेंगे-युग बदलेंगे' का उद्घोष दिग-दिगन्त तक फैल रहा है एवं इक्कीसवीं सदी-उज्ज्वल भविष्य, सतयुग की वापसी का स्वप्न साकार होता चला जा रहा है, यह स्पष्ट दिखाई दे रहा है।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विषय-सूची

अध्याय-१

गायत्री और सावित्री-एक ही महाशक्ति के दो रूप १.१
गायत्री और सावित्री की एकता और पृथकूता १.४
गायत्री गंगा की अनेकानेक धाराएँ १.६
शिव और शक्ति की एकरूपता १.११
महाकाल की महाकाली-सावित्री १.१४
सावित्री - रहस्य १.१७
सावित्री साधना और कुण्डलिनी जागरण १.१६
गायत्री, सावित्री और कुण्डलिनी महाशक्ति १.२३
कुण्डलिनी जागरण-गायत्री की उच्चस्तरीय तप साधना १.२६
स्थूल और सूक्ष्म शक्तियों का उद्गम-गायत्री महामंत्र १.३३
पिण्ड में अन्तर्हित शक्ति-कोष १.३४
अन्तर्जगत की दस महा विद्याएँ १.३५
स्थूल जगत की भौतिक शक्तियाँ १.३६
योग साधना का राज-मार्ग १.३७

अध्याय-२

सावित्री का शक्तिस्रोत-सविता देवता २.१
सावित्री और सविता का सम्बन्ध २.१
गायत्री-सावित्री महाशक्ति का महाप्राण सविता २.४
सावित्री का शक्ति स्रोत सविता देवता २.१०
सावित्री-सविता की ऊर्जा एवं आत्मा २.१४
सूर्य की सविता शक्ति का विवेचन २.१८
समस्त शक्तियों का उद्गम स्रोत सविता २.२४
सूर्य की क्षमता और आराधना २.३१
सूर्योपासना की बहुआयामी उपलब्धियाँ २.३६
सूर्य उपासना से आत्मिक ही नहीं, भौतिक शक्ति भी २.३८
सविता देवता से उद्भासित ज्ञान और शक्ति २.४०
चेतना और ऊर्जा का भाण्डागार-सविता देवता २.४३
सूर्य की साधना से मिलती है-सद्बुद्धि ! २.४६
सविता-आत्मा हमारी बुद्धि धारण करे २.४८
सविता बनो; सूर्य का अनुकरण करो २.५२
जीवन सत्ता का सूर्य से सम्बन्ध २.५५
सम्पूर्ण दृश्य प्रकृति सूर्य-प्रकाश की अनुकृति २.६०

अध्याय-३

सूर्योपासना का ज्ञान-विज्ञान ३.१
वैदिक वाङ्मय में सूर्यदेव की अभ्यर्थना ३.१
सूक्ष्मातिसूक्ष्म देवशक्तियों का विधानः सूर्य विज्ञान ३.६
मधु विद्या को जानें सविता का अमृत पियें ३.६
सूर्योपासना की सार्वभौमिकता ३.१२
प्राणः प्रजानां उदयत्येष सूर्यः ३.१४
विराट प्राण पुरुष : सविता देवता ३.१७
सविता का अनुदान प्राण शक्ति के रूप में ३.२०
सविता की उपासना हर दृष्टि से विज्ञान सम्मत ३.२६
सावित्री उपासना से प्राण शक्ति का अभिवर्धन ३.२६
सूर्योपासना कब और कैसे ? ३.३३
नवयुग का उपास्य-सविता देवता ३.३५
सविता के रूप में इष्ट का निर्धारण ३.३७
सूर्य शक्ति वनाम् सूर्य पूजा ३.३८
समूचा ब्रह्माण्ड-एक चैतन्य शरीर ३.४१
सूर्यग्रहणः किंवदन्तियाँ एवं साधनात्मक मर्म ३.४४
सूर्य-चन्द्र ग्रहण और उनमें सन्निहित तथ्य ३.४७
पृथ्वी और सूर्य, आत्मा और परमात्मा आदर्श पति-पत्नी ३.४६
दिव्यलोकों से बरसने वाला शक्ति-प्रवाह ३.५३
समष्टि से प्रभावित व्यष्टि के क्रिया-कलाप ३.५६
सौर ज्वालाओं से प्रभावित बृह्मांडीय चेतना ३.५६
सौर स्फोट और उनका धरती पर प्रभाव ३.६६
भूगोल बदल रहा है तो इतिहास भी बदलेगा ३.७२
सविता देवता की समर्थ साधना ३.७५
गायत्री मंत्र जप द्वारा सूर्य शक्ति संदोहन ३.८२
गायत्री उपासना के साथ सविता की आराधना ३.८६

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सविता उपासना–प्रकाश की साधना ३.९१
प्रकाश रश्मियों की विज्ञान सम्मत
ध्यान प्रक्रिया ३.९६
सविता के ध्यान द्वारा शक्तियों
का विकास ३.९९
सविता साधना से अन्तःशक्ति का
अभिवर्धन ३.१०२
ध्यान साधना से शक्तियों का विकास ३.१०४
सविता पर एक वैज्ञानिक दृष्टि ३.१०७
स्वर्णिम सविता की ध्यान–धारणा ३.१०९
ज्योति अवतरण की साधना ३.११३
सविता और संसारव्यापी परिवर्तन प्रक्रिया ३.११५
अगली शताब्दी का अधिष्ठाता–सूर्य ३.१२०
सावित्री साधना का स्वरूप एवं
उससे जुड़ी मर्यादाऐं ३.१२३
सावित्री साधना और पंचकोश ३.१२६

अध्याय–४

आध्यात्मिक काम विज्ञान ४.१
सृष्टि में संचरण और उल्लास की प्रवृत्ति ४.६
काम क्रीड़ा की उपयोगिता ही नहीं
विभीषिका का भी ध्यान रहे ४.१०
प्रकृति की प्रेरणा–सदाचार भरी आत्मीयता ४.१४
संयम और सुखी परिवार ४.१४
वासना के दुष्परिणाम ४.१८
नर-नारी का मिलन एक असामान्य प्रक्रिया ४.२२
काम को मरण मात्र नहीं अमृत बनायें ४.२६
काम प्रवृत्तियों का नियंत्रण परिष्कृत
अन्तःचेतना से ४.३०
काम बीज का परिष्कार ४.३३
सृजन शक्ति का प्रेरणा स्रोत – काम ४.३५
फ्रायड का काम–स्वेच्छाचार एक
अनैतिक प्रतिपादन ४.४१
काम विज्ञान का आध्यात्मिक स्वरूप ४.४८
कामोल्लास की सृजनात्मक शक्ति ४.५२
हेय और ग्राह्य काम ४.५४
काम–वासना का दुरुपयोग और सदुपयोग ४.५६
काम तत्व की विकृति एवं परिष्कृति ४.५९
कामुकता का भ्रम जंजाल ४.६३
कामुकता का आवेश, उन्माद ४.६६
वासना के ताप में विगलित व्यक्तित्व ४.६७
कामक्षरण को रोकें, उसे सही दिशा दें ४.७०
मनोनिग्रह और कामुकता का निराकरण ४.७३
अखण्ड आनंद की प्राप्ति ४.७५
उत्तेजित कामक्रीड़ा से प्राणशक्ति का क्षरण ४.७९
ब्रह्मचर्य पालें–ओजस्, मनस् और
तेजस् बढ़ायें ४.८१
ब्रह्मचर्य की सही परिभाषा ४.८३
ब्रह्मचर्य द्वारा आत्म–बल का संचय ४.८५
ब्रह्मचर्य एक तप है ४.८८
सुख चाहें तो ब्रह्मचर्य व्रत धारण करें ४.८९
काम–वासना का रूपान्तर ४.९०

अध्याय ५

कुण्डलिनी महाशक्ति और उसकी संसिद्धि ५.१
आत्म विज्ञान की साधना का गुह्य तत्त्व ज्ञान ५.१
मानवी काया एक सशक्त सौर मण्डल ५.४
कायकलेवर में विद्यमान–ऋषि–तपस्वी,
देवता और तीर्थ ५.१५
कुण्डलिनी के पाँच मुख–पाँच शक्ति प्रवाह ५.२४
कुण्डलिनी के वशीभूत–ब्राह्मी चेतना के
क्रिया कलाप ५.२९
कुण्डलिनी महाशक्ति का स्वरूप और आधार ५.३३
श्री आद्य शंकराचार्य के कुण्डलिनी अनुभव ५.४३
चेतना की प्रचण्ड ज्योति ज्वाला–कुण्डलिनी ५.५९
कुंडलिनी महाशक्ति की पौराणिक व्याख्या ५.६८
महासर्पिणी कुण्डलिनी और उसका महासर्प ५.७६
सुप्त सर्पिणी और उसका जागरण ५.८०
शरीरगत प्रचण्ड शक्ति स्रोत– कुण्डलिनी ५.८४
दिव्य शक्ति का निर्झर कुण्डलिनी का
चक्र परिवार ५.८७
कुण्डलिनी महाशक्ति और प्राण प्रवाह ५.८९
कुल कुण्डलिनी देवि, कन्दमूल निवासिनी ५.९६
कुण्डलिनी–एक प्रचण्ड प्राण ऊर्जा ५.१००

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुण्डलिनी का निवास स्वरूप और प्रतिफल ५.११३
कुण्डलिनी महाशक्ति का साक्षात्कार ५.११८

अध्याय ६

षट्चक्रों का स्वरूप और रहस्य ६.१
शक्ति केन्द्रों का जागरण, ऊर्जा का ऊर्ध्वगमन ६.१
षट्चक्र प्रचण्ड प्रवाहों के उद्गम ६.६
षट्चक्रों की पिटारी में कैद चेतना का महासागर ६.१२
चक्र संस्थान और उसकी सिद्धि–सामर्थ्य ६.१५
षट्चक्र ब्रह्माण्डव्यापी शक्तियों के रेडियो केन्द्र ६.२२
कुण्डलिनी के षट्चक्र और उनका वेधन ६.२४
शरीर सात लोकों की शोभानगरी ६.३१
ध्रुव–प्रभा द्वारा देवयान मार्ग और स्वार्गारोहण की पुष्टि ६.३५
देवयान मार्ग–सुषुम्ना की महिमा महत्ता ६.३८
मानवी सत्ता के दो ध्रुव प्रदेश–मूलाधार सहस्रार ६.४२
प्रचण्ड ऊर्जा के दो प्रवाह कुण्डलिनी में ६.५१
दिव्य शक्तियों का केन्द्र सहस्रार एवं ब्रह्मरंध्र ६.५३
मानवी सत्ता का दक्षिणी ध्रुव मूलाधार ६.६४
काम की उत्पत्ति–उद्भव ६.६६
दिव्य शक्तियों की गंगोत्री – नाभि चक्र ६.७६
रहस्यमयी उपत्यिकाओं का पर्यवेक्षण ६.८२

अध्याय ७

कुण्डलिनी जागरण की ध्यान साधनायें ७.१
कुण्डलिनी साधना, स्वरूप और उद्देश्य ७.१
कुण्डलिनी साधना की पृष्ठभूमि ७.७
कुण्डलिनी जागरण की पूर्व तैयारी ७.९
दिव्य अग्नि का अभिवर्धन, उन्नयन ७.११
नाड़ी संस्थान का शोधन और उसकी सामर्थ्य ७.१५
कुण्डलिनी का प्राणयोग–सूर्यवेधन प्राणायाम ७.१९
ऊर्ध्वगमन का अभ्यास शक्ति–चालनी मुद्रा द्वारा ७.३१
कुण्डलिनी जागरण एवं नाद साधना ७.३४
गायत्री द्वारा कुण्डलिनी जागरण ७.३७
षट्चक्रों का वेधन ७.४०
कुण्डलिनी जागरण की ध्यान धारणा ७.४५
१.ध्यान भूमिका में प्रवेश ७.४६
२. (क) कुण्डलिनी के पाँच नाम पाँच स्तर ७.५०
२. (ख) कुण्डलिनी ध्यान धारणा के पाँच चरण ७.५४
२. (ग) जागृत जीवन–ज्योति का ऊर्ध्वगमन ७.५५
२. (घ) चक्र शृंखला का वेधन–जागरण ७.५७
२. (ई,ङ) आत्मीयता का विस्तार आत्मिक प्रगति का आधार ७.६०
२. (च) अन्तिम चरण–परिवर्तन ७.६१
३. (क,ख) समापन शान्ति–पाठ ७.६३
कुण्डलिनी जागरण से आत्मिक और भौतिक सिद्धियाँ ७.६४
कुण्डलिनी जागरण से व्यक्तित्व में क्रान्ति ७.६८
कुण्डलिनी साधना क्यों, किस प्रयोजन के लिए ? ७.७२
नव सृजन के निमित्त साधना पराक्रम ७.७५
राष्ट्र कुण्डलिनी की परिवर्तन प्रक्रिया ७.७८
कुण्डलिनी साधना का मर्म एवं आवश्यक मार्गदर्शन ७.८२

अध्याय–८

सावित्री विज्ञान और तंत्र साधना ८.१
सावित्री द्वारा वाममार्गी तांत्रिक साधनायें ८.१
तांत्रिक साधनाएँ गोपनीय हैं ८.४
दक्षिणमार्गी साधना ही श्रेयस्कर ८.८
तंत्र विद्या की उपयोगिता ८.१३
तंत्र शास्त्र उपयोगी भी, विज्ञान सम्मत भी ८.१५
तंत्र अध्यात्म क्षेत्र का भौतिक विज्ञान ८.१८
तंत्र विज्ञान अलौकिक क्षमताओं से भरी पूरी विधा ८.२१
योग विज्ञान एवं तंत्र शास्त्र एक ही वृक्ष की दो शाखाएँ ८.२३

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

योग और तंत्र की पृष्ठभूमि ८.२४
कुण्डलिनी योग का स्वरूप और प्रयोग ८.२६
योग का वामाचारी प्रयोग रोका जाय ८.३३
वाममार्गी साधनाओं में पंचमकार-रहस्य ८.३५
तंत्र-शास्त्र में मुद्राओं का महत्त्व ८.४७
यंत्रों का रहस्यमय विज्ञान ८.४८
तंत्र द्वारा शक्तियों का आदान-प्रदान ८.५१

✸✸✸

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गायत्री और सावित्री – एक ही महाशक्ति के दो रूप

आद्य शक्ति के दो पक्ष हैं । एक ज्ञान, दूसरा विज्ञान । ज्ञान में चेतना, विचारणा, भावना, मान्यता एवं आकांक्षा सन्निहित है । इसका निवास मनुष्य के अन्तराल में है । विज्ञान प्रकृति सम्पदा के विस्तार और इसके इच्छानुसार कार्यान्वित करने की विद्या को कहते हैं । ज्ञान मनुष्य की अन्तःचेतना में समाहित है और विज्ञान इस क्रिया–कौशल के रूप में समझा जाता है जिससे पदार्थों को अपनी आवश्यकता के अनुरूप ढाला जा सके । यह समूचा विश्व ब्रह्माण्ड और शरीर पदार्थ है । इसको आवश्यकतानुरूप ढालने के कौशल का विकास विज्ञान के रूप में हुआ है । सृष्टा का ज्ञान और प्रकृति का वैभव दोनों मिल–जुलकर इस विश्व की व्यवस्था को बनाते और उसे गतिशील रखते हैं ।

पौराणिक गाथा में यह प्रसंग इस प्रकार आता है कि सृष्टि सृजेता ब्रह्मा की दो पत्नियाँ थीं । एक गायत्री दूसरी सावित्री । गायत्री ज्ञान की देवी और सावित्री विज्ञान की अधिष्ठात्री । मनुष्य का काय कलेवर पदार्थ है इसलिए उसकी सत्ता को सावित्री के अन्तर्गत लिया जाता है ।

ज्ञान मार्ग पर बढ़ने से मनुष्य संयम और सम्वर्धन का मार्ग प्राप्त करता है । प्रसन्न रहने और प्रेरणा देने की राह प्राप्त करता है । आत्मा और परमात्मा का साक्षात्कार करता है । जीवन लक्ष्य की पूर्णता तक पहुँचता है । महामानव, ऋषि, देवात्मा, अवतार की श्रेणी में जा पहुँचता है । प्रत्यक्ष क्षेत्र में आगे बढ़ता है और परोक्ष में ऊँचा उठता है । ज्ञान की गायत्री की गरिमा ऐसी ही है ।

विज्ञान द्वारा शारीरिक क्षमता का सही सदुपयोग किया जाता है । काय संरचना में छिपे रहस्यमय केन्द्रों को प्रसुप्त स्थिति से उबारकर जागृत स्थिति में लाकर उन्हें असाधारण रूप से सशक्त बनाया जाता है । लोक व्यवहार में काम आने वाले अनेक कौशलों में विज्ञान ही प्रवीण बनाता है । यही है सावित्री का स्वरूप और कार्यान्वयन ।

गायत्री साधना में आत्मशोधन प्रधान है । आत्म–सत्ता पर चढ़े जन्म–जन्मान्तरों के कुसंस्कारों का जन–सम्पर्क से मिलने वाले दोष दुर्गुणों का निराकरण किया जाता है । मानवी गरिमा के अनुरूप जिस समझदारी, ईमानदारी, जिम्मेदारी और बहादुरी की आवश्यकता पड़ती है उन्हें अर्जित किया जाता है । बुद्धि में दूरदर्शी विवेकशीलता–महाप्रज्ञा का–समावेश होता है । इन सब विशेषताओं के कारण मनुष्य इसी जीवन में देवोपम स्थिति को प्राप्त करता है । अपनी रीति–नीति और दिशाधारा ऐसी बनती हैं जिसमें इसी जीवन में देवता जैसी गरिमा उपलब्ध हो सके, स्वयं तरे और दूसरों को अपने कन्धे पर बिठाकर पार करा सके ।

सावित्री साधना से शरीरगत अलौकिक शक्तियों को प्रसुप्ति से ऊँचा उठाकर जागृति में लाया जाता है और यह जागरण इतना महत्त्वपूर्ण सिद्ध होता है कि उसके सहारे दृश्य जगत को अनुकूल बनाया जा सके । इन उपलब्धियों को सिद्धियां कहते हैं । सौर मण्डल की समस्त क्षमताएँ सूक्ष्म रूप से परमाणु में विद्यमान हैं । परमाणु की गतिविधियाँ और क्षमताएँ संक्षिप्त रूप में वही होती हैं, जो परमाणु में पाई जाती हैं । ब्रह्माण्ड का समस्त समीकरण पिण्ड में विद्यमान है । किन्तु साधारणतया मनुष्य को इतनी ही स्वाभाविक क्षमता प्राप्त होती है कि अपनी जीवनचर्या की गाड़ी किसी प्रकार घसीट सके ।इसके अतिरिक्त विश्व परिस्थितियों को मोड़ने मरोड़ने की आवश्यकता समझी जाती है तो उसे उस विज्ञान का आश्रय लेना पड़ता है, जिसे सावित्री कहते हैं ।

विज्ञान के अनेक प्रयोजनों के लिए अनेकानेक यन्त्र उपकरण बनाये और आविष्कार किये हैं । उन सभी की मूल सत्ता काया में सन्निहित अनेकों सूक्ष्म केन्द्रों में समाहित होती है । वह चाहे तो प्रयत्नपूर्वक उन्हें सक्रिय सक्षम कर सकता है और काया को ऐसी प्रयोगशाला में परिणित कर सकता है जिसमें वैज्ञानिकों द्वारा विनिर्मित सभी यन्त्र उपकरणों की सत्ता उभर सके और वे ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

कार्य कर सके जो विज्ञान क्षेत्र के मूर्धन्य अपने शोध प्रयासों से सम्पन्न करते हैं ।

आद्यशक्ति की दो प्रकार की प्रतिमाएँ पाई जाती हैं । इनमें एक मुख, दो भुजा, हाथ में कमण्डलु , माला, वाहन हंस–यह ब्राह्मी शक्ति है । इसे गायत्री कहते हैं । एक दूसरे प्रकार की छवि पंचमुखी प्रतिमा या चित्र रूप में मिलती है, इसे सावित्री कहते हैं ।

गायत्री का वाहन हंस है । हंस अर्थात्–राज हंस, परमहंस, नीर–क्षीर विवेक कर सकने वाला, मोती चुगने, कीड़े आदि न खाने वाला व्रतशील । माला से उपासना और पुस्तक से स्वाध्याय का–सत्संग का–मनन चिन्तन का भाव है । मातृ शक्ति की यही प्रतिभा है । मानवी गरिमा की वह अधिष्ठात्री है, इसीलिए उसकी एक दिशा धारा, एक प्रतिपादन के रूप में एकमुख है ।

सावित्री का वाहन कमल है । कमल अर्थात् प्रसन्नता । सुख साधनों की बहुलता । उसके पाँच मुख हैं । शरीर पाँच तत्वों का बना है और उसका मानस चेतन पाँच प्राणों के समन्वय से बना है । सावित्री की दस भुजाएँ अर्थात् काया में सन्निहित दसों इन्द्रियाँ । इन्द्रिय शक्ति से ही काया अपने विभिन्न कार्य सम्पन्न करती है । आयुधों में भी ऐसे यन्त्र उपकरणों का चित्रण है जो लौकिक प्रगति एवं संघर्षशीलता के लिए काम आते हैं ।

गायत्री प्रधान है क्योंकि सद्ज्ञान हस्तगत होने से मनुष्य ऐसा व्यक्तित्व उपलब्ध करता है जो यदि सम्पदा क्षेत्र की ओर ध्यान दे तो अपने या दूसरों के लिए विपुल वैभव उपलब्ध कर सकता है । किन्तु सावित्री का क्षेत्र विज्ञान की सीमा सांसारिक उपलब्धियों तक सीमित है । आवश्यक नहीं कि वैभव सम्पन्न व्यक्ति सद्ज्ञान का भी धनी हो । इसलिए उसे गौण माना गया है । व्यक्तित्व में आत्मा प्रमुख है और शरीर गौण । इसी प्रकार आध्यात्मिक दृष्टिकोण से गायत्री को प्रमुख और सावित्री को गौण माना जाता रहा है । फिर भी उपास्य दोनों हैं । दोनों ही की अपने–अपने स्थान पर आवश्यकता रहती है । इसलिए समन्वयवादी साधक दोनों का ही प्रयोग करते और यथासमय उनकी क्षमताओं को कार्यान्वित करते हैं ।

वाल्मीकि रामायण में प्रसंग आता है कि विश्वामित्र राम लक्ष्मण को यज्ञ रक्षा के बहाने अपने आश्रम में ले गये थे । वहाँ उन्हें बला, और अतिबला विद्याएँ सिखाईं । यह दोनों सावित्री और गायत्री के ही दूसरे नाम हैं । एक के माध्यम से उन्होंने लंका में दुर्धर्ष असुरों को परास्त किया । दूसरी की शक्ति से उन्होंने सतयुग को त्रेता में वापस बुलाया । रामराज्य–धर्मराज्य की सतयुगी स्थापना की । इस प्रकार दोनों ही विद्याएँ दो भिन्न प्रकार के प्रयोजनों में काम आईं और असाधारण प्रयोजनों की पूर्ति में सफल रहीं ।

उपर्युक्त पंक्तियों में कहा जा चुका है कि ब्रह्माजी के दो पत्नियाँ थीं । प्रथम गायत्री दूसरी सावित्री । इसे अलंकारिक प्रतिवादन में ज्ञान चेतना और पदार्थ सम्पदा कहा जा सकता है । इनमें एक परा प्रकृति है, दूसरी अपरा । परा प्रकृति के अन्तर्गत मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार –अहंकार चतुष्टय, ऋतम्भरा प्रज्ञा आदि का ज्ञान क्षेत्र आता है । दूसरी पत्नी सावित्री, इसे अपरा प्रकृति, पदार्थ चेतना, जड़ प्रकृति कहा जाता है । पदार्थों की समस्त हलचलें–गतिविधियाँ–उसी पर निर्भर हैं । परमाणुओं की भ्रमण–शीलता, रसायनों की प्रभावशीलता, विद्युत, ताप, प्रकाश, चुम्बकत्व, ईथर आदि उसी के भाग हैं । पदार्थ विज्ञान इन्हीं साधनों को काम में लाकर अगणित आविष्कार करने और सुविधा साधन उत्पन्न करने में लगा हुआ है । इसी अपरा प्रकृति को सावित्री कहते हैं । कुण्डलिनी इसी दूसरी शक्ति का नाम है ।

चेतना की शक्तियों का बारापार नहीं । विद्वान, विज्ञानी, आत्म–वेत्ता, महामानव, ऋषि, मनीषी इसी शक्ति का अपने–अपने ढंग से अपने–अपने क्षेत्र में उपयोग करके अपने क्षेत्र में प्रगति करते हैं । मस्तिष्कीय विकास के लिए स्कूली प्रशिक्षण से लेकर स्वाध्याय सत्संग, चिन्तन, मनन और साधना समाधि तक के अगणित प्रगति प्रयास इसी आधार पर होते हैं । व्यक्तित्व और वर्चस्व की–प्रखरता की समस्त सम्भावनाएँ इसी क्षेत्र के साथ जुड़ी हुई हैं । परा प्रकृति की साधना एवं गायत्री उपासना के सहारे ही अन्तःचेतना का विकास होता है ।

दूसरी शक्ति सावित्री–पदार्थ शक्ति, क्रियाशीलता इस अपरा प्रकृति से ही प्राणियों का शरीर संचालन होता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है और संसार का प्रगति चक्र चलता है । शरीर में श्वास–प्रश्वास, रक्त–संचार, निद्रा–जागृति, पाचन–विसर्जन, ऊष्मा–ऊर्जा, विद्युत प्रवाह आदि अगणित क्रिया–कलाप काया के क्षेत्र में चलते हैं । संसार का हर पदार्थ क्रियाशील है । उत्पादन, अभिवर्धन और परिवर्तन का गतिचक्र इस सृष्टि में अनवरत गति से चलता है । प्राणी और पदार्थ सभी अपने–अपने ढंग से प्रगति पथ पर द्रुतगति से दौड़ रहे हैं । विकास की दिशा में कण–कण को धकेला जा रहा है । निष्क्रियता को सक्रियता के रूप में बदलने का प्रेरणा केन्द्र जिस महत्तत्व में सन्निहित है, उसे अपरा प्रकृति कहते हैं । सत, रज, तम–पंचतत्व तन्मात्राएँ आदि का सूत्र संचालन यही शक्ति करती है । सिद्धियाँ और वरदान इसी के अनुग्रह से मिलते हैं । ब्रह्मा जी की द्वितीय पत्नी सावित्री इसी को कहते हैं । मनुष्य शरीर में आरोग्य, दीर्घजीवन, बलिष्ठता, स्फूर्ति, साहसिकता, सौन्दर्य आदि अगणित विशेषताएँ इसी पर निर्भर हैं । यों इसका विस्तार तो सर्वत्र है, पर पृथ्वी में ध्रुव केन्द्र में और शरीर के मूलाधार चक्र में इसका विशेष केन्द्र है । साधना प्रयोजन में इसी को 'कुण्डलिनी शक्ति' कहते हैं ।

गायत्री और सावित्री दोनों परस्पर पूरक हैं । इनके मध्य कोई प्रतिद्वन्दिता नहीं । गंगा–यमुना की तरह ब्रह्म हिमालय की इन्हें दो निर्झरिणी कह सकते हैं । सच तो यह है कि दोनों अविच्छिन्न रूप से एक–दूसरे के साथ गुँथी हुई हैं । इन्हें एक प्राण दो शरीर कहना चाहिए । ब्रह्म ज्ञानी को भी रक्त–मांस का शरीर और उसके निर्वाह का साधन चाहिए । पदार्थों का सूत्र संचालन चेतना के बिना सम्भव नहीं । इस प्रकार यह सृष्टि–क्रम दोनों के संयुक्त प्रयास से चल रहा है । जड़–चेतन का संयोग बिखर जाय तो फिर दोनों में से एक का भी अस्तित्व शेष न रहेगा । दोनों अपने मूल कारण में विलीन हो जायेंगे । इसे सृष्टि के प्रगति रथ के दो पहिये कहना चाहिए । एक के बिना दूसरा निरर्थक है । अपंग तत्वज्ञानी और मूढ़ मति नर–पशु दोनों ही अधूरे हैं । शरीर में दो भुजाएँ, दो पैर, दो आँखें, दो फेंफड़े, दो गुर्दे आदि हैं । ब्रह्म शरीर भी अपनी दो शक्ति धाराओं के सहारे यह सृष्टि प्रपंच संजोये हुए है, इन्हें उसकी दो पत्नियाँ, दो धाराएँ आदि किसी भी शब्द प्रयोग के सहारे ठीक तरह वस्तु स्थिति को समझने का प्रयोजन पूरा किया जा सकता है । पत्नी शब्द अलंकार मात्र है । चेतन सत्ता का कुटुम्ब परिवार मनुष्यों जैसा कहाँ है ? अग्नि तत्व की दो विशेषताएँ हैं–गर्मी और रोशनी । कोई चाहे तो इन्हें अग्नि की दो पत्नियाँ कह सकते हैं । यह शब्द अरुचिकर लगे तो पुत्रियाँ कह सकते हैं । सरस्वती को कहीं ब्रह्मा की पत्नी कहीं पुत्रियाँ कहा गया है । इसे स्थूल मनुष्य व्यवहार जैसा नहीं समझना चाहिए । यह अलंकारिक वर्णन मात्र उपमा भर के लिए है । आत्म–शक्ति को गायत्री और वस्तु–शक्ति को सावित्री कहते हैं । सावित्री साधना को कुण्डलिनी जागरण कहते हैं । उसमें शरीरगत प्राण ऊर्जा की प्रसुप्ति, विकृति के निवारण का प्रयास होता है । बिजली की ऋण और धन दो धाराएँ होती हैं । दोनों के मिलने पर ही शक्ति प्रवाह बहता है । गायत्री और सावित्री के समन्वय से साधना की समग्र आवश्यकता पूरी होती है । गायत्री साधना का सन्तुलित लाभ उठाने के लिए सावित्री शक्ति को भी साथ लेकर चलना पड़ता है ।

अध्यात्म क्षेत्र में ज्ञान भाग को 'दक्षिण मार्ग' कहते हैं । उसे 'निगम'–'राजयोग', 'वेद मार्ग' आदि भी कहा गया है । दूसरे क्रिया भाग को 'वाम मार्ग', 'आगम', 'तन्त्र', 'हठयोग' आदि के रूप में प्रस्तुत किया गया है । दोनों पृथकता, प्रतिकूलता हानिकारक हैं । इससे कलह और विनाश उत्पन्न होता है । देवासुर संग्राम के उपाख्यानों को पढ़ कर किसी को प्रसन्नता नहीं होती । उस वर्णन को पढ़ कर खिन्नता ही उभरती है । दोनों जब मिलकर साथ चले, समुद्र मंथन में सहयोग किया तो उस क्षेत्र में दबी हुई प्रचुर सम्पदा उपलब्ध हुई । समुद्र मंथन के फलस्वरूप बहुमूल्य चौदह रत्न निकलने की कथा सर्व विदित है । लक्ष्मी, अमृत–कलश, कामधेनु, कल्प–वृक्ष आदि उसी सम्मिलित प्रयास के फलस्वरूप उपलब्ध हुए थे । जब तक देव और दानव पृथक्–पृथक् रहे, लड़ते–झगड़ते रहे, कष्ट और विनाश के अतिरिक्त और कुछ प्राप्त न कर सके, पर जैसे ही सहयोग बना वैसे ही समुद्र–मंथन और उसकी उपलब्धि का आधार बन गया । गायत्री और सावित्री के समन्वय को ठीक इसी प्रकार के देवासुर सहयोग स्तर का कहा जा सकता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

शिव और पार्वती के विवाह से दोनों का एकाकीपन दूर हुआ था । दोनों के संयोग से दो पुत्र हुए एक सिद्धिदायक गणेश । दूसरे असुर निकंदन कार्तिकेय । एक से धर्म की स्थापना होती है, दूसरे से अधर्म के विनाश की । गणेश का वरदान 'प्रज्ञा' और कार्तिकेय का अनुदान 'शक्ति' है । कार्तिकेय के छह मुख हैं, इन्हें हठयोग के षट्चक्र कहते हैं ।

गायत्री की सर्वोपयोगी सर्व-सुलभ साधना नित्य-कर्म में सम्मिलित की गई है । संध्या वन्दन अध्यात्म साधना का अनिवार्य अंग है । 'संध्या' का कृत्य गायत्री उपासना के बिना नहीं हो सकता । इसके उपरान्त आगे की विशेष साधनाएँ अपनाई जाती हैं । एक अनुष्ठान दूसरा पुरश्चरण ।

गायत्री साधना को चेतना पर चढ़े, कषाय-कल्मषों के निवारण की पुण्य प्रक्रिया कह सकते हैं । इससे आत्मसत्ता के दिव्य स्वरूप का निखार होता है । भौतिक क्षेत्र में आत्म-चेतना का प्रभाव उत्पन्न करने के लिए सावित्री साधना का उपयोग करना पड़ता है । आत्मा को संसारी वर्चस्व बनाने के लिए शरीर धारण करना पड़ता है । गायत्री रूपी आत्मा को संसारी कर्त्तव्यों की पूर्ति के लिए जिस सामर्थ्य की आवश्यकता पड़ती है, उसे सावित्री साधना से सम्पन्न किया जाता है । पंचकोशी साधना एवं कुण्डलिनी जागरण इसी को कहते हैं । शास्त्रों में ऐसा उल्लेख भी मिलता है कि सावित्री के द्वारा प्रकृति की संरचना हुई और गायत्री के द्वारा चेतना के पाँच स्तरों का आविर्भाव हुआ । इन्हें ही मनुष्य के पाँच आवरण, पंचकोश या पाँच लोक भी कहते हैं । ऋद्धि-सिद्धियों के भाण्डागार भी यही हैं ।

गायत्री महाशक्ति की उपासना मनुष्य की भावनाओं, आकांक्षाओं, उमंगों, प्रतिभा तथा प्रज्ञा को उभारती है और सावित्री आयु, प्रजा, कीर्ति, धन आदि लौकिक सम्पदाओं को प्रदान करती है, क्योंकि वे सम्पदायें पदार्थ जगत से सम्बन्धित हैं । गायत्री को एकमुखी और सावित्री को पंचमुखी कहा गया हैं । सावित्री भौतिकी है और गायत्री आत्मिकी । दोनों का अपना-अपना महत्व है । मनुष्य अपने पुरुषार्थ से सम्पदाएँ अर्जित कर लेता है । दैत्य प्रकृति के व्यक्ति भी अपने पौरुष और चातुर्य के बल बूते रावण की तरह प्रचुर वैभव कमा सके हैं, पर आत्मिक विभूतियों के जागरण में तो मात्र दैवी अनुकंपा ही अपेक्षित रहती है । मनुष्य ज्ञान चेतना के अभाव में सर्व-सुविधाओं के रहते हुए भी दुर्बुद्धिवश दुष्प्रवृत्ति अपनाता और विकट परिस्थितियों में पड़ता है । समस्याओं-उलझनों में उलझता है । इसलिए सर्वसाधारण के लिए जन-जन के लिए संध्या वंदन के रूप में नित्य गायत्री उपासना का विधान है । त्रिकाल संध्या न बन पड़े तो उसे एक बार प्रातःकाल तो किसी न किसी रूप में अनिवार्य रूप से करना ही चाहिए ।

सावित्री उपासना कठिन है । उसमें प्राण विद्युत को उस स्तर तक उभारना पड़ता है कि आकाश में कड़कती बिजली की तरह वह इन्द्र वज्र की भूमिका निभा सके । आत्मिकी के क्षेत्र में सावित्री महाशक्ति का आह्वान सूर्य शक्ति के रूप में करना पड़ता है और इस योग्य बनाना पड़ता है कि अन्तराल में छिपी हुई ऋद्धि-सिद्धियाँ इसी काया में प्रकट-हो सकें और साधक को ऋषिकल्प, ओजस्वी, तेजस्वी, मनस्वी और तपस्वी स्तर का बना सकें ।

गायत्री और सावित्री की एकता और पृथकता

पुराणों में सृष्टि के आरम्भ का वर्णन करते हुए लिखा गया है कि विष्णु की नाभि से कमल उत्पन्न हुआ । कमल पुष्प पर ब्रह्मा विराजे । विधाता ने आकाशवाणी के माध्यम से ब्रह्मा से कहा-आपको सृष्टि संरचना के लिए उत्पन्न किया गया है । उसकी क्षमता उत्पन्न करने के लिए तप कीजिए । तप से शक्ति उपलब्ध होती है और उसी विशिष्टता के आधार पर महत्वपूर्ण कार्य बन पड़ते हैं । ब्रह्माजी ने तप का आधार व स्वरूप पूछा तो आकाशवाणी ने कहा-"गायत्री मन्त्र की सम्यक् उपासना ही तप है । पीछे उन्हें गायत्री मन्त्र बताया गया, जिसकी वे उपासना करने लगे । इस आधार पर उनकी चेतना जगी और सृष्टि निर्माण का ताना-बाना बुन लिया गया । उसकी सुव्यवस्थित योजना बना ली गयी ।

किन्तु उस समय महाप्रलय का जल ही जल सर्वत्र भरा पड़ा था । कोई पदार्थ नहीं था । अब सृष्टि बने तो किस आधार पर बने ? इसके लिए पदार्थ की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आवश्यकता पड़ी । उसे जुटाने के लिए उन्हें दुबारा तप करना पड़ा । इस बार उन्हें सावित्री का आश्रय लेना पड़ा । सावित्री प्रकट हुई और उसका उन्होंने उपयोग करके सृष्टि की संरचना कर डाली ।

इस कथानक के अनुसार गायत्री और सावित्री दो का सहयोग ब्रह्माजी को लेना पड़ा । इसलिए यह दोनों ही उनकी सहायिकाएँ, सहभागिनी, पत्नियाँ कहलाईं गायत्री अर्थात् आत्मिकी । सावित्री अर्थात् भौतिकी । भौतिकी का मूल भूत आधार पंच तत्व हैं । तत्व जड़ हैं । इसलिए प्रकृति को जड़ कहा जाता है । जड़ प्रकृति से समस्त ब्रह्माण्ड भरा पड़ा है । उसमें अनेकों ग्रह, पिण्ड और छुटूटल पदार्थ प्रचुर मात्रा में विद्यमान हैं, पर उनमें चेतना न होने से मात्र क्रिया भर होती है । उनके परमाणु और पिण्ड अपनी धुरी एवं कक्षा में भ्रमण करते हैं । कणों के साथ-साथ पिण्ड की मूलभूत संरचना में प्रतिकण भी विद्यमान हैं । छाया की तरह प्रतिच्छाया जुड़ी होने की तरह यह क्रिया व्यापार सब ओर चल रहा है । यह प्रक्रिया भी किन्हीं नियमों के अन्तर्गत व्यवस्थित रूप से इकालॉजी विज्ञान के अनुशासनों के अन्तर्गत चलती है । पृथ्वी पर बिखरा हुआ पदार्थ भी इसका अपवाद नहीं है, पर जड़ सृष्टि अपर्याप्त है । उसका न कोई उद्देश्य है, न प्रयास, न प्रतिफल, न आनन्द । इसका समावेश हुए बिना जड़ पदार्थ दृश्यमान, गतिशील होते हुए भी निरर्थक ही बना रहा । इस अभाव की पूर्ति के लिए ब्रह्माजी को आत्मिकी का-चेतना का-गायत्री का उपयोग करना पड़ा । इसी आधार पर प्राणी बने । इस प्रसंग का माहात्म्य शास्त्रों में बड़े विशद रूप में प्रकट हुआ है ।

परब्रह्मस्वरूपा च निर्वाण पद दायिनी ।
ब्रह्मतेजोमयी शक्तिस्तदधिष्ठातृ देवता ॥

-देवी भागवत स्कन्द ६ अ० १।४२

गायत्री मोक्ष देने वाली परमात्मास्वरूप और ब्रह्मतेज से युक्त शक्ति है और मन्त्रों की अधिष्ठात्री है ।

गायत्री इदं सर्वम् ।

-नृसिंहपूर्वतापनीयोप० ४।२

यह समस्त जो कुछ है गायत्री स्वरूप है ।

गायत्री परमात्मा ।

-गायत्री तत्वे०

गायत्री ही परमात्मा है ।

ब्रह्म गायत्रीति-ब्रह्म वै गायत्री ।

-शतपथ ब्राह्मण ८।५।३।७।-ऐतरेय ब्रा० अ० २७ खं० ५

ब्रह्म गायत्री है, गायत्री ही ब्रह्म है ।

परमात्मनस्तु या लोके ब्रह्म शक्तिर्विराजते ।
सूक्ष्मा च सात्विकी चैव गायत्रीत्यभिधीयते ॥९

संसार में परमात्मा की जो सूक्ष्म और सात्विक ब्रह्म-शक्ति विद्यमान है, वह ही गायत्री कही जाती है ।

प्रभावादेव गायत्र्या भूतानामभिजायते ।
अन्तःकरणेषु दैवानां तत्वानां हि समुद्भवः ॥१०

प्राणियों के अन्तःकरण में दैवी तत्वों का प्रादुर्भाव गायत्री के प्रभाव से ही होता है ।

प्राणियों के, सभी जीवधारियों के शरीर तो पदार्थ विनिर्मित थे । पर इसके अन्तर्गत चेतना का समावेश एक विलक्षणता थी । चेतना न होने पर प्राणी अपने शरीरों का उपयोग किस प्रकार, किस निमित्त कर पाते । संसार में बिखरे हुए साधनों का किस प्रकार उपयोग कर पाते ? इस उपयोग के बिना उन्हें सन्तोष, उत्कर्ष और आनन्द की प्राप्ति कैसे होती ? यह काम चेतना का है । प्राणियों के शरीर पंच तत्वों से बने हैं और उनके भीतर काम करने वाली चेतना गायत्री है । इस चेतना को प्राण कहा गया है । प्राण रहने तक ही प्राणी जीवित रहते हैं । इनके निकल जाने पर शरीर मृतक बन जाता है । अपनी सत्ता नष्ट करने के लिए अपने भीतर से ही सड़न के कृमि-कीटक उत्पन्न हो जाते हैं और वे उसका सफाया करके स्वयं भी समाप्त हो जाते हैं । अन्यथा चील, कौए, सियार, कुत्ते आदि उसे खाकर समाप्त कर देते हैं । जल में डाल देने पर मछलियाँ, कछुए आदि उसे खा जाते हैं । इस प्रकार चेतना के बिना शरीर का स्वस्थ सक्रिय रहना तो दूर, वह अपनी सत्ता को बनाये रहने में भी समर्थ नहीं होता । इसलिए सावित्री से गायत्री का महत्त्व अधिक माना जा सकता है । किन्तु यह मान्यता भी अपूर्ण है । क्योंकि चेतना की चिन्तनात्मक क्षमता आधार हीन होने पर अपने पराक्रम का, अस्तित्व का परिचय नहीं दे सकती । इस तर्क के अनुसार सावित्री की भी समान महत्ता स्वीकार करनी पड़ती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जहाँ तक चेतन जगत का सम्बन्ध है, वहाँ आत्मिकी और भौतिकी की सम्मिश्रित प्रक्रिया ही काम करती दीखती है और दोनों एक-दूसरे पर निर्भर प्रतीत होती हैं । दो पत्नियाँ होने पर वे मिलजुल कर सृष्टि की समग्र गृह व्यवस्था चलाती हैं । इसी प्रकार चेतन जगत का समस्त क्रिया-कलाप सावित्री और गायत्री के, भौतिकी और आत्मिकी के, संयुक्त प्रयास से ही चलना प्रत्यक्ष है ।

गायत्री पंच प्राणों से विनिर्मित है । प्राणों की गणना पाँच में होती है । उप प्राण भी पाँच ही हैं । इसलिए उसे प्राण विद्या कहा गया है । शास्त्रकारों ने गायत्री का स्वरूप निर्धारित करते समय उसे प्राण चेतना या प्राण् विद्या कहा है । इस सम्बन्ध में शास्त्र मतों को देखा जा सकता है ।

पाँच कोशों की स्थिति पर प्रकाश डालते हुए "*सर्व-सारोपनिषद*" में कहा गया है-

अन्नकार्याणां कोशानां समूहऽन्नमयकोश इत्युच्यते प्राणादि चतुर्दश वयुभेदा अन्नमय कोशे यदा वर्तन्ते तदा प्राणमय-कोश इत्युच्यते । एतत्कोश द्वय संसंक्तं मन आदि चतुर्दशकरणरात्मा शब्दादि विषय संकल्पादिर्मानु यदा करोति तदा मनोमय कोश इत्युच्यते । एतत्कोशत्रयसंसक्त तद्गत विशेषज्ञो यदा भासते तदा विज्ञानमय कोश इत्युच्यते । एतत्कोश चतुष्टय संसक्त स्वाकारणा-ज्ञाने वटकनिकायामिव वृक्षो यदा वर्तते तदा आनन्दमय कोश इत्युच्यते ।

अर्थात-अन्न से अन्न के स्वरूप एवं शक्ति सत्ता से, प्रत्यक्षतः विनिर्मित कोशों को अन्नमय कोश कहते हैं । इन अन्नमय कोश में संचरित प्राण, अपान, उदान, व्यान, समान इन पंच प्राणों, पंच उपप्राणों आदि प्राणवायु के सभी शरीरस्थ रूपों का समुच्चय प्राणमय कोश है । मन समेत समस्त इन्द्रियों द्वारा किए जाने और किए जा सकने वाले सूक्ष्म कार्य-क्षेत्र का नाम मनोमय कोश है । इन तीनों कोशों के संयुक्त स्वरूप से आत्मा बुद्धि द्वारा जो कुछ ज्ञानात्मक क्रिया-व्यापार करती है, उसे विज्ञान-मय कोश कहते हैं । इन चारों कोशों से संसक्त आत्मा जब अपने कारण रूप के प्रति अनभिज्ञ रहती है और स्वतः में ही रमती रहती है, जैसे बटबीज में वृक्ष रहता है, तब उसे आनन्दमय कोश कहते हैं ।

पाँच प्राणों को ही पाँच देव बताया गया है ।

पंचदेव मयं जीव, पंच प्राणमयं शिव ।
कुण्डली शक्ति संयुक्त, शुभ्र विद्युल्लतोपमम ॥

-तंत्रार्णव

यह जीव पाँच देव सहित है । प्राणवान होने पर शिव है । यह परिकर कुण्डलिनी शक्ति युक्त है । इनका आकार चमकती बिजली के समान है ।

सावित्री विद्या समर्थित पंच कोशों के जागरण से उत्पन्न ब्राह्मी शक्ति की पराशक्ति के रूप में अभ्यर्थना की गई है । देवी भागवत में कहा गया है-

पंचप्राणाधिदेवी या पंचप्राणस्वरूपिणी ।
प्राणाधिकप्रियतमा सर्वाभ्यः सुन्दरी परा । ३६

-देवी भागवत

पाँच प्राण उसी पंचकोश सम्पदा के पाँच स्वरूप हैं । प्राणों की अधिष्ठात्री देवी वे ही हैं । सर्वाङ्ग सुन्दरी है । पराशक्ति है । भगवान को प्राणों से प्यारी है । वस्तुतः गायत्री प्राणि सत्ता में समाई हुई है इसलिए उसे वह अपने सदृश ही मानता है । मनुष्य की उपासना में वह मानुषी है और उसकी आकृति वैसी ही है । दो हाथ, दो पैर ज्ञानेन्द्रियाँ, कर्मेन्द्रियाँ भी उतनी हैं । किसी और प्राणी को यदि मनुष्य जैसी बुद्धिमत्ता होती तो वह अपनी जैसी आकृति जैसा चेतना के स्वरूप को समझ पाता । बैल का भगवान बैल जैसा और पक्षी का भगवान पक्षी जैसा होता ।

चर्चा प्रतीक के प्रसंग में चल रही है । गायत्री महाविज्ञान का ऊहापोह करते समय उपासना विज्ञान के क्षेत्र में प्रवेश करने के लिए ध्यान की अनिवार्य आवश्यकता प्रतीत होती है । एकाग्रता और श्रद्धा के आधार पर ही ध्यान बन पड़ता है । इसलिए उस हेतु कोई न कोई नाम रूप वाली प्रतिमा बुद्धि कल्पित करती है । कल्पना बेपर की उड़ान भर ही हो तो बात दूसरी है अन्यथा वह ध्यान के अनुरूप ही साधक की आकृति बना लेती है । यदि ध्यान, श्रद्धा एवं विश्वास के संयोग से ठीक उसी प्रकार फलित होने लगता है, जैसी कि उस पर आस्था जमाई गई थी । इसी दृष्टि से गायत्री की प्रतिमा ठीक मानुषी जैसी गढ़ी गई है । उसके साथ दो उपकरण जोड़े गये हैं । एक जल भरा कमण्डलु, दूसरे हाथ में पुस्तक । पुस्तक विवेक का प्रतिनिधित्व करती है और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जल भावना का । विवेक और भावना का समन्वय ही मानवी गरिमा के अनुरूप आस्था एवं आकांक्षा उत्पन्न करता है ।

गायत्री का वाहन हंस है । यह हंस भी साधक की अन्तःचेतना के स्तर की ओर ही इंगित करता है । गायत्री का वाहन राजहंस है । सामान्य जलाशयों में रहने वाला हंस नामक पक्षी नहीं । हंस और राजहंस में मौलिक अन्तर है । राजहंस नीर-क्षीर-विवेक से सम्पन्न है । दूध और पानी मिला होने पर उसमें से दूध पीता है और पानी को छाँट देता है । इसी प्रकार वह मोती चुगता है । न मिलने पर प्राण त्याग देता है । यह विशेषताएँ साधारण हंसों में नहीं होती । वे जलाशयों में पाये जाने वाले कीड़े-मकोड़े खाते हैं । दूध उन बेचारों को कहाँ मिलता है ? इसी प्रकार वे मोती पाने की स्थिति में भी नहीं होते । मोती बहुत गहरे पानी में मिलते हैं । उतनी डुबकी साधारण हंस नहीं लगा सकते । राजहंस नाम का कोई पक्षी भी नहीं होता । यह एक अलंकारिक कल्पना है जिसका तात्पर्य आदर्शवादिता से है । जो आत्मिकी का-चेतना का-असाधारण अनुदान प्राप्त करना चाहते हैं, उन्हें अपना जीवन सर्वथा श्वेत, उज्जवल रखना चाहिए । कषायों की, विकारों की कलौंच तनिक भी नहीं रहने देनी चाहिए । किन्तु साधारण हंसों में तो चोंच के इर्द-गिर्द तथा पंखों के नीचे कालापन भी होता है । इसलिए यह अलंकारिक निरूपण ही समझा जा सकता है ।

सावित्री की, भौतिकी की सूक्ष्म विशिष्टता अपने शरीर में जिन्हें जागृत करनी होती है, उन्हें अध्यात्म की भाषा में उसी के साथ तद्रूप होना पड़ता है । ध्यान की तन्मयता स्तर तक विकसित करनी होती है । इसके लिए भी अलंकारिक चित्रण किया गया है । सावित्री पंचमुखी है । उसकी दश भुजाएँ हैं । कमलासन पर विराजमान है । आयुधों और आभूषणों से सुसज्जित है ।

पंचमुख अर्थात् प्रकृति के पाँच तत्व और चेतना के पाँच प्राण । दश भुजाएँ अर्थात् पाँच ज्ञानेन्द्रियों का समुच्चय । आभूषण, आयुध का अर्थ सुविधा सम्पन्न करने वाले साधन और कठिनाइयों को निरस्त करने वाले उपकरण । भौतिकी के क्षेत्र में प्रगति करने वालों के लिए यह सारा सरंजाम जुटाना आवश्यक है ।

सावित्री का वाहन-आसन कमल पुष्प है । इसके कई तात्पर्य हैं । हृदय को कमल कहा गया है । हृदय सम्वेदना, सहानुभूति, सहयोग जैसी प्रवृतियों का उद्गम माना गया है । उसे मात्र रक्त समेटने-फेंकने की थैली तो शरीर शास्त्री ही मानते हैं । आत्मिकी के तत्ववेत्ताओं ने शरीर अवयवों के साथ प्रवृत्तियों को भी जोड़ा है । मस्तिष्क के मध्य में रहने वाला सहस्रार कमल भी कमल पुष्प की उपमा में प्रयुक्त होता है । इसका तात्पर्य यह हुआ कि मस्तिष्क की बुद्धि तीक्ष्ण और हृदय का, स्वभाव सम्वेदना सहकारिता का, सन्तुलन का, माध्यम होना चाहिए । इस प्रकार गायत्री और सावित्री की प्रतिमाओं का पृथक्करण होता है । इस सन्दर्भ में शास्त्रकारों का अभिमत स्पष्ट है ।

सविता सर्व भूतानां सर्व भापाश्च सूयत ।
सर्वनात्प्रेरणाच्चैव सविता तेन चोत्यते ॥

अर्थात्-समस्त तत्वों, सभी प्राणियों और समस्त भावनाओं की प्रेरणा देने के कारण ही उस शक्ति को सविता कहा गया है । प्रतीक रूप में सविता देवता की उपासना की जाने का विधान है । (गायत्री तंत्र)

इसी प्रकार कहा गया है ।

गायत्री को सद्भावनाओं का और सावित्री को सत्प्रवृत्तियों का माध्यम मानना चाहिए । सद्भावनाओं के सहारे मनुष्य आत्मिक क्षेत्र में ऊँचा उठता है । महामानव, ऋषि, देवता बनता है । उसकी प्रज्ञा, श्रद्धा, निष्ठा बलवती होती है । दूरदर्शी विवेकशीलता अपनाता है और पवित्र जीवन वाला बनता है । निजी कठिनाइयों से जूझता और उन्हें परास्त करता है । ऐसी सूझ-बूझ दिशाधारा और रीति-नीति अपनाता है जिससे आत्मिक कल्याण हो सके और दूसरों को भी उपयुक्त प्रकाश मिल सके ।

सावित्री भौतिक क्षेत्र में प्रगति और समृद्धि को कहते हैं । इस प्रकार की सफलताओं को अध्यात्म की भाषा में सिद्धियाँ कहा गया है । गायत्री द्वारा उपलब्ध उत्कृष्टताओं को ऋद्धियाँ कहते हैं ।

भौतिक क्षेत्र में भी वैसी ही दो आवश्यकतायें पड़ती हैं जैसी आत्मिकी के क्षेत्र में । कठिनाई से जूझना और गुत्थियों को सुलझाना अपने-अपने ढंग से दोनों ही क्षेत्रों में अभीष्ट हैं । साधनों को जुटाना और उपयोगी सहयोग

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

अर्जित करना दोनों ही क्षेत्रों में समान रूप से आवश्यक हैं । स्वरूप और तरीके दोनों क्षेत्रों के अलग-अलग अवश्य हैं ।

संघर्ष के बिना कोई गति नहीं । आत्मिक क्षेत्र में कुसंस्कारों, दुर्गुणों, पाप-कर्मों के अधोगामी प्रवाह को रोकना पड़ता है । संयमशील और तपस्वी बनकर आत्मशोधन करना होता है । इतना ही नहीं ऋद्धियों, विभूतियों को उपलब्ध करने के लिए व्यक्तित्व को अधिक पवित्र और प्रखर बनाना पड़ता है । इससे कम में कोई इन्हें पाने का अधिकारी बन नहीं सकता ।

यही बात भौतिक क्षेत्र के सम्बन्ध में भी है । स्वभाव गत आलस्य प्रमाद को परास्त करके अपने को नियमित व्यवस्थित, सक्रिय बनाना होता है और साथ ही बहिरंग क्षेत्र के ईर्षालुओं, प्रतिद्वन्दियों, दुष्टों, आक्रामक-आततायियों से अपनी आत्मरक्षा के लिए इतनी साहसिकता और सहकारिता अर्जित करनी पड़ती है कि उसे देखते हुए आक्रामक दुष्प्रवृत्तियों का साहस ही शिथिल हो जाय और यदि वे दुस्साहस करें भी तो उन्हें नीचा देखना पड़े । इस प्रकार की तैयारी रखने वाले ही भौतिक प्रगति के क्षेत्र में सफल होते हैं ।

जिस प्रकार शरीर और प्राण-पुरुषार्थ और स्वस्थ चित्त के समन्वय से ही कोई व्यक्ति आत्मिक विभूतियों का धनी बन सकता है, ठीक उसी प्रकार आन्तरिक साहस और बाह्य पुरुषार्थ के बलबूते भौतिक क्षेत्र की समृद्धि, सम्पत्ति, प्रतिभा, विजय जैसी सिद्धियाँ हस्तगत होती हैं । दोनों क्षेत्रों में दोनों ही प्रकार की विशेषताओं की आवश्यकताएँ पड़ती हैं । इसलिए दोनों को सर्वथा परस्पर सम्बद्ध माना जाता है । एक क्षेत्र की तैयारियाँ समग्र एवं स्थिर प्रगति का आधार नहीं बन सकतीं । सुपात्र साधक जब साधना की परिपक्वता पा लेते हैं तो उनमें दैवी चेतन शक्ति का प्रादुर्भाव होता है । श्रुति कहती है-

प्रादुर्यवन्ति वे सूक्ष्माश्चतुर्विंशति शक्तयः ।
अक्षरेभ्यस्तु गायत्र्या मानवानां ह मानसे ॥

-गायत्री संहिता

"मनुष्य के अन्तःकरण में गायत्री के चौबीस अक्षरों से चौबीस सूक्ष्म शक्तियाँ प्रकट होती हैं ।"

जागृता ग्रन्थयस्त्वेताः सूक्ष्माः साधच मानसे ।
दिव्यशक्तिसमुद्भूति क्षिप्रं कुर्वन्त्यसंशयम् ॥

जागृत हुई ये सूक्ष्म यौगिक ग्रन्थियाँ साधक के मन में निःसन्देह शीघ्र ही दिव्य शक्तियों को पैदा कर देती हैं ।

जनयन्ति कृते पुंसामेता वै दिव्यशक्तयः ।
विविधान् वै परिणामान् भव्यान् मङ्गलपूरितान् ॥

ये दिव्य शक्तियाँ मनुष्यों के लिए नाना प्रकार के मंगलमय परिणामों को उत्पन्न करती हैं । ये हैं- १-प्रज्ञा २-वैभव ३-सहयोग ४-तिभा ५-ओजस् ६-तेजस् ७-वर्चस् ८-न्ति ९-साहसिकता १०-दिव्यदृष्टि ११-पूर्वाभास १२-विचार संचार १३-वरदान १४-शाप १५-शान्ति १६-प्राण प्रयोग १७-देहान्तर सम्पर्क १८-प्राणाकर्षण १९-ऐश्वर्य २०-दूर-श्रवण २१-दूर-दर्शन २२-लोकान्तर सम्पर्क २३-देव सम्पर्क २४-कीर्ति । इन्हीं को गायत्री की २४ सिद्धियाँ कहा जाता है ।

गायत्री व सावित्री साधना के समन्वय के विषय में शास्त्रकारों का मत स्पष्ट है-

पृष्ठतोऽस्याः साधनाया राजतेऽतितरां सदा ।
मनस्विसाधकानां हि बहूनां साधनाबलम् ॥

इन साधनाओं के पीछे आदि काल से लेकर अब तक असंख्य मनस्वी साधकों का साधन बल शोभित है ।

इस समन्वय के पीछे भी दोनों का अपना महत्त्व है । अपना-अपना स्वरूप भी । इसीलिए शास्त्रकारों ने जान-बूझकर या अनजाने दोनों का ही बहुत जगहों पर एक ही स्तर पर वर्णन किया है और एक ही नाम से पुकारा है । एक ही प्रकार का प्रतिफल बताया है जब कि दोनों की दिशा धाराएँ पृथक-पृथक हैं । त्रिवेणी में गंगा यमुना का संगम होने से उनका एकीकरण हो जाने की बात भी सही है । पर यह भी गलत नहीं कि दोनों का उद्गम और प्रवाह क्षेत्र अलग-अलग है । इनका समन्वय एकीकरण तो बहुत आगे चलकर होता है ।

एकता के बीच भिन्नता का निरूपण करने के लिए गायत्री और सावित्री के दो रूप विनिर्मित किये गये हैं । गायत्री एकमुखी एवं द्विभुजी । सावित्री पंचमुखी

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एवं दस भुजी । दोनों के वाहन और अस्त्र आयुध भी भिन्न-भिन्न हैं । हमें दोनों की एकता भी समझनी चाहिए और भिन्नता भी । आत्मिक प्रगति के लिए गायत्री का आश्रय लिया जाता है और भौतिक समस्याओं के लिए सावित्री का अवलम्बन ग्रहण करना होता है । इसी को कहते हैं द्वैत में अद्वैत की दृष्टि और अद्वैत में द्वैत का पर्ववेक्षण ।

गायत्री गंगा की अनेकानेक धाराएँ

गायत्री यों चारों वेदों में पाया जाने वाला एक महा मंत्र है, जिसमें शिक्षात्मक प्रेरणा इतनी ही है कि बुद्धि को शुद्ध रखा जाय । यही वह केन्द्र है जहाँ उत्थान-पतन के अंकुर उगते हैं । यदि बुद्धि भ्रमित हो जाय, निकृष्टता की दिशा में चल पड़े तो फिर समझना चाहिए कि आधि-व्याधियों का घटाटोप सिर पर घुमड़ने ही वाला है । इसलिए समस्त शास्त्रों और धर्म दर्शनों का सार तत्त्व गायत्री मंत्र में सन्निहित समझा जा सकता है । मान्यता, भावना, विचारणा, आकांक्षा, कल्पना और क्रिया तत्परता की पृष्ठभूमि बुद्धि के आधार पर ही बनती और विकसित होती है । उसी आधार पर मनुष्य उत्कृष्टता, निकृष्टता अपनाता और ऊँचा उठता, नीचे गिरता है । अस्तु मानवी सम्पदाओं में बल, वैभव, पद, अधिकार, शिक्षा, कौशल आदि सभी की तुलना में सद्बुद्धि को सर्वोपरि माना गया है और कहा गया है कि अपनी ही नहीं अपने समाज संसार की विचारणा को उच्चस्तरीय बनाने में प्रयत्नरत रहना चाहिए ।

यह गायत्री का ज्ञान पक्ष है । दूसरा है-विज्ञान पक्ष । जिसके अनुसार गायत्री सविता देवता की प्राण चेतना, जड़ चेतना, सृष्टि की नियंत्रण कर्त्री आद्यशक्ति है । यह उत्पादन कर्म में ब्राह्मी, अभिवर्धन में वैष्णवी और परिवर्त्तन-क्रम में शाम्भवी मानी जाती है । उसे वेदमाता, देवमाता और विश्वमाता भी कहा गया है । महाप्रज्ञा के रूप में वेदमाता है । उपासक के चरित्र में दिव्यता भर देने के कारण देवमाता है । जिसका कार्य क्षेत्र, प्रभाव क्षेत्र समूचा संसार है । इसलिए उसे विश्वमाता कहा गया है । गायत्री की योग धारा भी है और तंत्र धारा भी । योगधारा के अवगाहन से सप्त ऋषियों का परिकर विभूतिवान बना था और रावण, कालनेमि जैसों ने उसे अघोर-क्रम से अपनाकर दैत्य स्तर की सशक्तता प्राप्त की थी । विश्वामित्र ने इन दोनों धाराओं को गायत्री, सावित्री नाम से असुर दमन और सद्भाव संवर्धन के निमित्त भगवान राम को प्रशिक्षित किया था ।

सामान्य-जन उसकी उपासना मनोकामना पूर्ति और बाधाओं की निवृत्ति के लिए करते हैं । यह सर्वविदित परिचय है । गायत्री का सूक्ष्म परिचय प्राप्त करने के लिए अधिक गहराई में उतरने की आवश्यकता है । जिस प्रकार शुक्राणु में, एक व्यक्ति का स्वस्थ बुद्धिकौशल प्रतिभा आदि सभी कुछ सन्निहित रहता है । बीज में वृक्ष का कलेवर, पुष्पों की बनावट, फलों का स्वाद एवं आयु विस्तार आदि की सारी विशेषताएँ सूक्ष्म रूप से विद्यमान रहती हैं, उसी प्रकार गायत्री महामंत्र के २४ अक्षरों में से विभिन्न स्तर की विभूतियाँ, विशिष्टताएँ, ऋद्धियाँ-सिद्धियाँ समाविष्ट हैं । उन सब के समन्वय से ही एक पूरा गायत्री मंत्र बनता है ।

दत्तात्रेय की गुरु खोज जब पूरी नहीं हुई तो वे प्रजापति के पास गये और प्रामाणिक गुरु उपलब्ध करने के लिए उनसे निर्देश चाहा । उन्होंने उन्हें २४ गुरु के लिए कहा । अलंकारिक रूप से उन्हें चित्र-विचित्र जीव-जन्तु भी कहा गया है, पर वस्तुतः वे गायत्री के २४ अक्षर ही हैं, जिनका अवगाहन करके वे महर्षि से अवतार स्तर तक पहुँचने में समर्थ हुए ।

गायत्री में २४ अक्षर हैं । इनमें से प्रत्येक अक्षर एक-एक देवता, एक-एक देवी, एक-एक अवतार, एक-एक ऋषि अपने कलेवर के साथ जोड़े हुए हैं । इन सबके समुच्चय को ही समग्र गायत्री मंत्र माना जाना चाहिए । यों देवताओं, देवियों, अवतारों, ऋषियों की संख्या गिनते हुए मत विशेष से वे न्यूनाधिक भी हो जाते हैं । किन्तु मनीषियों के तथा शास्त्रकारों के बहुमत को लिया जाय तो वह संख्या चौबीस ही होती है । इस प्रकार अध्यात्म जगत में जो कुछ सारतत्त्व है, उसे इन माध्यमों से गायत्री में केन्द्रीभूत समझा जा सकता है ।

मनुष्य के काय कलेवर में २४ विशेष केन्द्र हैं । षट्चक्र यंत्र कोष का विस्तार उन्हीं २४ केन्द्रों के अन्तर्गत आ जाता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

१.१० सावित्री कुण्डलिनी एवं तंत्र

स्थूल शरीर में ही सूक्ष्म शरीर भी गुँथा हुआ है । जिस प्रकार प्रत्यक्ष शरीर में प्रत्यक्ष अंग–अवयव होते हैं, उसी प्रकार सूक्ष्म शरीर में भी विशिष्ट शक्ति केन्द्र होते हैं । नदी में भँवर एवं तेज गरम हवा में चक्रवात बनते देखे जाते हैं । उसी प्रकार सूक्ष्म शरीर में भी ऐसे भ्रमर पड़ते हैं, जिन्हें शक्ति केन्द्र की उपमा दी जा सकती है । इन्हें निर्झर भी कहा गया है । झरनों से जिस प्रकार धाराएँ स्रवित होती हैं, उसी प्रकार मनुष्य की प्रतिभा में योगदान देने वाली इन निर्झरणियों को उपत्यिकाएँ कहा जाता है । इन्हें गजमणि, सर्पमणि के समतुल्य मनुष्य में ओजस्, तेजस् एवं वर्चस् भरने वाली अग्नि जिह्वाएँ भी कहा गया है ।

हारमोन ग्रन्थियों के सम्बन्ध में शरीर शास्त्री गहराई तक खोज करने में संलग्न हैं । अभी तक उन्हें जो विदित हुआ है उसके अनुसार जीवन में अनेक प्रकार की विलक्षणताओं को चलाने, बढ़ाने, घटाने में इन अन्तः स्रावी ग्रन्थियों की महती भूमिकाएँ होती हैं । आकार सौन्दर्य, जीवट, कामोत्तेजन, पराक्रम, आवेश आदि उतार–चढ़ाव हारमोनों की न्यूनाधिकता एवं व्यवस्था व्यतिरेकता के ऊपर निर्भर हैं । इनकी संख्या अभी प्रायः एक दर्जन खोजी गई है, लेकिन सम्भावनाएँ बताती हैं कि वे २४ से कम नहीं हो सकतीं । कारण कि शरीर और मस्तिष्क में ऐसी विलक्षणताएँ पाई गई हैं जो विज्ञात हारमोनों की परिधि में नहीं आती । दूसरी और शरीर में ऐसी ग्रन्थियाँ भी देखी गई हैं, जिनके उद्देश्य और कार्य ठीक तरह समझे नहीं जा सके । इसी प्रकार यह भी अचम्भे का ही विषय है कि कतिपय प्रकार की विलक्षणताओं के सम्बन्ध में यह विदित नहीं हो सका है कि उनका उद्गम कहाँ है ? जब इन रहस्यों का पता चलेगा तब जाना जायेगा कि अविज्ञात और ज्ञात हारमोनों की संख्या मिलकर २४ हो जाती है । यह मान्यता सुनिश्चित है कि हाड़–मांस के शरीर में अनेक प्रतिभाओं और विशेषताओं के साथ इन हारमोन ग्रन्थियों का गहरा सम्बन्ध है ।

अध्यात्म भाषा में उपत्यिकाएँ उन्हीं को कहते हैं, जिनसे रिसने वाले स्राव रक्त में मिलते हैं और विभिन्न शक्ति संस्थानों को सींच कर उन्हें पल्लवित, पुष्पित एवं फलित करते हैं ।

इन शक्ति बीजों को प्रत्यक्ष नहीं देखा जा सकता । हारमोनों की बनावट तथा उनके स्राव ही देखे समझे गये हैं । पर उनकी क्रिया–पद्धति के रहस्यों का विवेचन विश्लेषण नहीं हो सका है, किन्तु अध्यात्म क्षेत्र में इनको बहुत पहले से ही जान लिया गया है । उन्हें बीज की संज्ञा दी गई है और आकृति को कोणात्मक यंत्र बताया गया है ।

तंत्र विज्ञान में अभीष्ट सिद्धियाँ उपार्जित करने के लिए बीज मंत्रों और कोण यंत्रों की रहस्यमयी सामर्थ्य समझी गई है । साथ ही उन्हें जागृत एवं प्रयुक्त करने का विधान भी बताया गया है । बीज और यंत्र उपत्यिकाओं का ही सूक्ष्म रूप है । उपत्यिकाओं का स्थान एवं अता–पता शरीर विच्छेद से एक सीमा तक जाना जा सकता है किन्तु उनके बीज एवं यंत्र दृश्य नहीं हैं, उन्हें दिव्य नेत्रों एवं सूक्ष्म विज्ञान के आधार पर ही जाना जा सकता है ।

मंत्र विज्ञान, तंत्र विज्ञान एवं यंत्र विज्ञान को साधना जगत की त्रिविध विशिष्टताएँ समझा जा सकता है । मंत्र विज्ञान में शब्द शक्ति का प्रयोग है । मंत्र के अक्षरों का अनवरत जप करते रहने से उनका एक चक्र बन जाता है और उनकी सुदर्शन चक्र जैसी गति विद्युतीय चमत्कारों में परिणत होती है । मंत्र शब्द बेधी बाण की तरह काम करते हैं । अभीष्ट लक्ष्य को बेधते हैं ।

तंत्र प्रकारान्तर से कुण्डलिनी विज्ञान है । उसमें प्राण ऊर्जा को प्रचण्ड किया जाता है और किन्हीं व्यवधानों की तोड़ मरोड़ में उनका प्रयोग किया जाता है । मारण, मोहन, उच्चाटन, बेधन, वशीकरण आदि में उनके प्रयोगों को कार्यान्वित किया जाता है । सम्मोहन और विनष्टीकरण तंत्र के यही दो मूल प्रयोजन हैं ।

तांत्रिक अघोर साधना करके अपने मन, शरीर के विद्युतीय क्षेत्र को इस स्तर का बना लेते हैं कि चाहें तो किसी का प्राण हरण भी कर सकें । असुर समुदाय में तंत्र विधि को ही अपनाया जाता रहा है । दैत्यों के क्रिया–कलाप प्रायः आक्रामक रहे हैं । इसके लिए वे अपने साधारण शरीरों में वेधक और मारक क्षमता का उत्पादन तंत्र साधना से ही करते रहे हैं । उन्हें कुण्डलिनी शक्तिभण्डार से अभीष्ट प्रयोजनों के लिए उतना आधार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मिलता है, जितना कि समय-समय पर प्रयोजन विशेष के लिए आवश्यकता पड़ती रहती है ।

तंत्र में आसन, बंध, मुद्राएँ अभ्यास में उतारनी पड़ती हैं । इन तीनों की ही संख्याएँ अनेक और अगणित हैं किन्तु गायत्री का तंत्र-पक्ष सावित्री यदि सिद्ध करना हो तो २४ आसन, २४ बंध और २४ मुद्राएँ प्रयोग में लानी पड़ती हैं । २४ मुद्राएँ प्रसिद्ध हैं । बंधों की मोटी जानकारी तीन तक सीमित है । किन्तु विशेषज्ञों को विदित है कि उनके भी भेद उपभेद २४ की संख्या तक पहुँचते हैं ।हटयोग में आसन तो ८४ तक पहुँचते हैं, पर तंत्र प्रयोजन में उनमें से २४ की एक अतिरिक्त शृंखला है तांत्रिकों का काम २४ से ही चल जाता है ।

गायत्री के २४ अक्षरों तंत्र प्रयोग में २४ बीज, २४ मंत्र, २४ आसन, २४ बंध, २४ मुद्राओं के रूप में जाने जाते हैं इन्हें करने से पूर्व नेति, धौति, वस्ति, वज्रोली, कपाल, भीति आदि षट् कर्मों के द्वारा नाड़ी शोधन की आवश्यकता पड़ती है ।

योग मार्ग में प्राणायाम और ध्यान दो की प्रमुखता है । मंत्र योग स्वतंत्र है । उसे वाक् विद्या के नाम से जाना जाता है । मंत्र की शक्ति सहस्र चक्र ब्रह्मरंध्र विचारों आदि के सम्मिश्रण से उद्भूत होती है । किन्तु योग साधना के लिए प्राणायाम और ध्यान का आश्रय लेना पड़ता है । प्राणायामों का अपना संसार और अपना विस्तार है । पर उनमें से गायत्री मार्ग अपनाने वाले के लिए २४ ही छाँटे हुए अलग हैं । महामंत्र के २४ अक्षर भी हैं । इसी अनुपात से २४ प्राणायामों का भी निर्धारण हुआ है ।

ध्यान के राजमार्ग के साथ अनेक पगडण्डियाँ जुड़ती हैं । नादयोग भी प्रकारान्तर से ध्यान ही है । सोहम् साधना की श्वास-प्रश्वास क्रिया तो होती है, पर ध्यान सोहम् की सूक्ष्म ध्वनि पर ही केन्द्रित रहता है । भक्तियोग में इष्टदेव दर्शन का पूरा प्रकरण ध्यान पर ही आश्रित है । ध्यान की परिपक्वता ही जब समग्र हो जाती है तो निर्धारित इष्टदेव के प्रत्यक्षवत् दर्शन होने लगते हैं । हृदय गुफा में अंगुष्ठ मात्र ज्योति का आभास भी इस प्रकार दीखने लगता है मानो उसका साक्षात्कार ही हो रहा हो । इष्ट देव भी अपनी धारणा या भावना के अनुरूप आकार प्रकार धारण करके प्रकट होते हैं । यह ध्यान की समग्रता का ही चमत्कार है ।

ध्यान में एकाग्रता की प्रमुख भूमिका रहती है । त्राटक आदि के सहारे दिव्य नेत्र खोले जाते हैं और उससे अपनी ही सत्ता अनेक गुनी हो जाती है । छाया पुरुष साधना में आत्मसत्ता को द्विगुणित हुई देखा जाता है । पंच मुखी गायत्री की पंचकोशीय साधना में अपने में ही पाँच-पाँच स्वतंत्र इकाइयाँ विकसित हो जाती हैं । यह उच्चस्तरीय गायत्री साधना की चमत्कारी परिणतियाँ हैं । ये पाँचों एक ही समय में अपनी-अपनी क्षमता के अनुरूप काम करती देखी जा सकती हैं ।

ध्यान में सर्वप्रथम छवि मात्र का आभास होता है । किन्तु मनोयोग की गहनता में उनमें प्राण प्रतिष्ठा भी हो जाती है और वह छवि एक सजीव देव-दानव की तरह निर्देश का पालन करने लगती है । यह योगमार्ग है । योग आद्यशक्ति गायत्री का प्रथम पक्ष है एवं तंत्र सावित्री शक्ति का द्वितीय पक्ष । उच्चस्तरीय साधना अनुष्ठानों में सावित्री-गायत्री महाशक्ति के इस विवेचन को ध्यान में रखकर ही साधना करनी चाहिए ।

शिव और शक्ति की एक रूपता

श्रीनगर (जम्मू-कश्मीर) से ८७ मील दूर अमरनाथ की यात्रा और हिम शिवलिंग के दर्शन करने केवल भारतवर्ष अपितु संसार के अन्य प्रदेशों से भी प्रतिवर्ष हजारों लोग आते हैं । हिन्दू जन अपनी श्रद्धा के सुमन भगवान् आशुतोष के चरणों में समर्पित करने के लिये और दूसरे विदेशी लोग प्रकृति का यह चमत्कार देखने के लिये जिसका कोई वैज्ञानिक विश्लेषण आज तक नहीं किया जा सका ।

चन्द्रमा पृथ्वी की एक ऐसी दिशा में अवस्थित है कि वह पृथ्वी वासियों को ३० दिन में-एक पक्ष में क्रमशः बढ़ता हुआ पूर्णमासी के दिन पूर्ण दर्शन देने की स्थिति में आ जाता है तो दूसरी बार क्रमशः घटता हुआ अमावस्या के दिन बिल्कुल छुप जाता है । यहाँ विज्ञान का कार्य-कारण सिद्धांत समझ में आता है । कोई क्रिया विशेष कारणों की उपस्थिति में ही सम्भव है पर जब कोई कार्य कारण बिना सम्भव हो तब ? विज्ञान के पास उसका कोई

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

जवाब नहीं । वह ऐसी क्रियायें नहीं मानता पर सृष्टि में यह भी होता है तब मानना पड़ता है कि सृष्टि में सब कुछ स्थूल पदार्थों का ही अस्तित्व नहीं स्थूलोत्तर चेतन अस्तित्व भी है और स्थूल से कहीं अधिक सशक्त है ।

अमरनाथ इस बात का प्रत्यक्ष उदाहरण है । अमावस्या के दिन उस बिन्दु पर कुछ भी नहीं होता जहाँ उसके दूसरे ही दिन से चन्द्रकला की दशा के ही अनुसार एक हिम शिवलिंग का विकास प्रारम्भ हो जाता है और बढ़ते–बढ़ते यही पूर्णमासी के दिन पूर्ण शिवलिंग का रूप ले लेता है । अमरनाथ अत्यधिक शीत प्रदेश है । वहाँ साल भर बर्फ जमी रहती है । श्रावण के महीने में वहाँ की बर्फ कम होती है, मौसम भी कुछ अनुकूल हो जाता है तब हजारों दर्शनार्थी वहाँ जाकर इस अद्भुत शिवलिंग के दर्शन करते हैं । शिवलिंग के पास ही और भी मूर्तियाँ जमती हैं उनको पार्वती जी, गणेश जी और कार्तिकेय जी मानकर पूजन किया जाता है । अमरनाथ के इस विचित्र रहस्य के कारण की खोज आज तक कोई भी नहीं कर सका । जो भी उसे देखता है ईश्वर की महिमा कहकर सिर झुका लेता है ।

यदि यह सब प्रकृति का ही खेल है तो भी हमारा ध्यान ऋग्वेद की ओर जाता है जिसमें कहा गया है–

गयः केशिनः ऋतुथा विचक्षते संवत्सरे–वपत एकएषाम ।
विश्वेमेको अभिचष्टे शचीभिर्याजिरेकस्य–ददृशे न रूपम ॥

ऋग्वेद १/१६४/४४

अर्थात्– जगत् के कारण स्वरूप ब्रह्म, जीव और प्रकृति तीनों पदार्थ अनादि हैं । परमात्मा जीव को कर्मफल प्रदान करने के लिये अध्यक्षता करता है पर व्यवस्थापिका प्रकृति ही है जो परमात्मा के आदेशों के अनुसार जीव को फल प्रदान करती है । इन तीनों में जीव और परमात्मा चेतन होने के कारण उनके प्रकाशमय स्वरूप की तो निश्चितता हो जाती है पर प्रकृति भी सत्व गुण वाली होने के कारण प्रकाशमय अर्थात् चेतन ही है "परमात्मा की अनुवर्ती होने पर भी वह स्वतन्त्र अस्तित्व है इसलिये अपने उपासक को वह परमात्मा की तरह ही फल देती है । कई बार जिस प्रकार नाराज पिता को भी माता अपने सौन्दर्य और काम गुण द्वारा प्रभावित करके पुत्र के अपराध क्षमा करा लेती है, प्रकृति भी जीव के लिये कर्माध्यक्ष परमात्मा से क्षमा प्राप्त कराकर उसके लिये सुख–समृद्धि का द्वार खोल देती है ।"

सावित्री उपासना को प्रकृति की उपासना कहकर कुछ लोग उसे जड़ उपासना का दोष लगाते हैं । यहाँ उसके भाव पक्ष को ही स्पष्ट किया जा रहा है कि प्रकृति का सत्व–गुण उतना ही चेतन और सर्वशक्तिमान है जितना ब्रह्म । इसलिए ब्रह्म की उपासना से जो लाभ मिल सकते हैं वह सब प्रकृति की भावनात्मक उपासना से भी मिल सकते हैं । विभिन्न यांत्रिक और तांत्रिक साधनों द्वारा ही उसे वश करने की कष्ट साध्य प्रक्रिया आवश्यक नहीं । प्रकृति की कृपा पाने के लिये उसका पति (परमेश्वर में स्थित होना) ही आवश्यक नहीं, पुत्र होकर भी उसका स्नेह और प्यार प्राप्त किया जा सकता है । गायत्री को माँ मानने और नारी रूप में उपासना का यही दर्शन है । प्रस्तुत प्रमाण उसकी चेतनता सिद्ध करने को ही लिखे जा रहे हैं ।

अमरीका के केण्टकी राज्य में मैमथ नामक प्राकृतिक गुफा है । इसे मनुष्यों ने नहीं बनाया प्रकृति ने अपने आप बनाया है । उसकी कारीगरी देखते ही बनती है । डिजाइनदार खम्बे और कमरे कोई २०० मील लम्बे क्षेत्र में फैले हुये हैं । इसी में कई तालाब और नाले भी हैं । जिनमें जल–बिहार भी किया जा सकता है । घनघोर अन्धकार वाली इस गुफा की आश्चर्य उसकी दीवारें हैं अनुमानतः कई दीवारें तो इसमें पाँच मंजिल की इमारत जितनी ऊँची हैं । जो कार्य किसी इंजीनियर से हो सकता है वह प्रकृति ने अन्तःप्रेरणा से करके यह दिखा दिया है कि उसमें किसी भी योग्यतम इंजीनियर से बढ़कर ही बुद्धि और शक्ति है ।

काँगड़ा जिले के डाडा सीखा गाँव में एक खड्ड को खोदने पर एक पत्थर मिला । पत्थर किसी इमारत या पुरातत्व विभाग का दबा हुआ टुकड़ा न होकर विशुद्ध खनिज था, पर जब उसे बाहर निकाला गया तो लोग आश्चर्यचकित रह गये कि उस पत्थर में एक चिड़िया का हूबहू चित्राँकित है । चोंच, पूँछ, पंजे सारे अवयव ठीक किसी चित्रकार जैसे ही हैं, उसे देखने के लिये हजारों की भीड़ जमा रहती है । लोग समझ नहीं पा रहे हैं जहाँ हवा पहुँचती नहीं, जहाँ खाने–पीने के नाम पर मिट्टी ही मिट्टी है उस अन्तराल में दबी यह प्रकृति

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आखिर किस तरह चित्र बनाती रही । कारण कुछ भी हो प्रकृति ने इस उदाहरण से सिद्ध कर दिया कि वह इंजीनियर ही नहीं कुशल चित्रकार भी है ।

अमरीका के पश्चिमी भाग में स्थित "येलोस्टोन नेशनल पार्क" जाने का अवसर मिले तो वहाँ का "ओल्ड फेथफुल" गीजर अवश्य देखना चाहिये । पृथ्वी के भीतर से प्राकृतिक तौर पर निकलने वाले फौवारों को "गीजर" कहते हैं । भूगर्भ शास्त्रियों का कथन है कि पृथ्वी के गर्भ में जल राशि की छिपी तहें हैं । जो तहें ज्वालामुखी पहाड़ों के पास हैं वह कभी–कभी ज्वालामुखी अग्नितप के सम्पर्क में आ जाती हैं । यह तापमान उस पानी को उबालने लगता है । भाप मिश्रित होने के कारण वह धरती को फोड़कर निकल पड़ता है और पृथ्वी से बाहर गर्म फौवारे के रूप में फूट पड़ता है ।

ज्वालामुखी की आग हो अथवा धरती के भीतर का पानी सब प्रकृति के ही विभाग हैं इसलिये इस कारण दृश्य को भी प्रकृति का ही खेल कहा जा सकता है पर जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है यह गीजर अपने आपमें विचित्रता लिये हुये है । वह यह है कि यह लगभग एक घण्टे के अन्तर से बराबर छूटता रहता है और इस तरह वह सिद्ध करता है कि प्रकृति को समय और नियमितता का भी ज्ञान है ।

इच्छा तो भगवान् की ही समझ में नहीं आती फिर प्रकृति की इच्छा को समझना तो और भी कठिन है पर उसकी चेतनता में कोई अन्तर नहीं है ।

अनन्यां तस्य तां विद्धि स्पन्दशक्तिं मनोमयीम् ।

योगवसिष्ठ ६/२/८४/२

"चिन्मात्रं स्पदशक्तिश्च यथैवैकात्य सर्वदा ।

योगवसिष्ठ ६/२/८४/३

अर्थात्–चिति और स्पन्दशक्ति एक ही है उसमें भी वैसा ही मन है । जिस प्रकार ब्रह्म मनोमय है । विभिन्न प्राकृतिक पदार्थों में मन को प्रभावित करने की सामर्थ्य भी होती है, वह केवल खाने से ही नहीं स्पर्श और दर्शन से भी होती है । प्राचीनकाल में अधिकांश लोग जंगलों में प्रकृति के संसर्ग में रहा करते थे क्योंकि उससे उन्हें मानसिक शान्ति मिलती थी । धातुओं के प्रयोग में हमारे यहाँ जो सावधानी बरती गई है वह एक वैज्ञानिक तथ्य है कि विभिन्न धातुयें विभिन्न प्रकार से मस्तिष्क को प्रभावित करती हैं । इस संन्दर्भ में आयरलैण्ड के कार्कनगर में पाये जाने वाले ब्लार्नी पत्थर के चमत्कारिक गुण की चर्चा करना अनुपयुक्त न होगा । "ब्लार्नी" शब्द का अर्थ है वाकपटुता और जैसा कि नाम से स्पष्ट है इस पत्थर के बारे में कहा जाता है कि इसे जो भी चूम लेता है उसमें बोलने की सामर्थ्य का चमत्कारिक विकास होता है । यह पत्थर बैनकबर्न की लड़ाई के अवसर पर, जब कि जनरल मैकार्थी ने राबर्ट ब्रूम की सहायतार्थ ५ हजार सैनिक दिये थे, राबर्ट ब्रूम ने उपहार स्वरूप मैकार्थी को दिया था । मैकार्थी ने उसे अपने किले की बुर्ज पर जड़वा दिया था । आज भी हजारों पर्यटक प्रतिवर्ष कोर्क शहर केवल इस पत्थर को चूमने और प्रकृति के अद्भुत प्रभाव से लाभान्वित होने के लिये जाते हैं । अमरीका इस पत्थर को लेने के लिये करोड़ों डालर देने को तैयार है पर आयरलैण्ड ने उसे कभी बेचने की इच्छा भी नहीं की । भारतीय पर्यटक श्री सरोस कावस जी ने खुद जाकर इस पत्थर को चूमा और ४ अगस्त १९६३ के धर्मयुग अंक में उसका विवरण देकर स्वीकार किया है कि इस पत्थर ने उन्हें भी प्रभावित अवश्य किया है ।

शास्त्रीय मान्यतायें प्रमाण की ही कसौटी पर खरी नहीं उतरतीं अब विज्ञान भी इस बात को मानने लगा है । जर्मन जीव शास्त्री हैकेल का कथन है कि प्रकृति में जो कुछ भी आक्सीजन, पानी, रोशनी, पेड़–पौधे, कीटाणु, पशु–पक्षी और मनुष्य हैं वे सब तरंग मात्र हैं । इस विज्ञान का नाम "इकालाजी" दिया गया है और उसका सिद्धांत है कि सृष्टि की हर वस्तु एक दूसरे पर अवलम्बित तरंग या चेतना रूप ही है । इस तरह विराट् प्रकृति की विराट् ब्रह्म के समान ही चेतनता सिद्ध होती है । उस चेतना में आत्म चेतना को घुलाकर जीव न केवल प्रकृति के सूक्ष्म रहस्यों का अवगाहन कर सकता है वरन् उसकी महान् कृपा का अधिकारी पात्र भी बन सकता है जैसा कि गायत्री उपासना से लाभ मिलने की बात कही जाती है । स्थूल की उपासना द्वारा सूक्ष्म का अवगाहन और प्राप्ति जैसी विद्या और कोई नहीं है इसलिये इस उपासना को सर्वोपरि मानते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

महाकाल की महाकाली–सावित्री

गायत्री महाशक्ति का उपयोग दक्षिणमार्गी भी है और वाममार्गी भी । दक्षिण मार्ग, अर्थात् सीधा रास्ता शुभ लक्ष्य तक ले जाने वाला रास्ता । वाम मार्ग माने कठिन रास्ता–भयानक लक्ष्य तक ले पहुँचने वाला रास्ता ।

चाकू के दोनों ही प्रयोग हो सकते हैं–कागज काटने, पेन्सिल बनाने, फल काटने आदि के उपयोगी कार्यों के लिए भी और किसी को चोट पहुँचाने, अंग–भंग करने, प्राण लेने के लिए भी । यह प्रयोक्ता की समझ और चेष्टा के ऊपर निर्भर है कि वह उसका किस प्रकार उपयोग करे ।

गायत्री का दक्षिण मार्गी प्रयोग हमने सीखा और सिखाया है । वह व्यक्तित्वों का परिष्कार करती है । जन–स्तर को ऊँचा उठाना एक बहुत बड़ा काम है । वह सदा सर्वदा प्रयोग करने योग्य है । उसमें लाभ–ही –लाभ है । भले ही वह समग्र विधान के अभाव में सीमित प्रतिफल प्रस्तुत करे, पर उसमें किसी प्रकार की हानि की, प्रतिकूल परिणति की आशंका नहीं है । माचिस का प्रयोग भी चाकू जैसा ही है । उससे आग जलाकर शीत से बचने, भोजन पकाने, शतपुटी आयुर्वेदीय रसायनें–रस भस्में बनाने जैसे उपयोगी कार्य भी हो सकते हैं और ऐसा भी हो सकता है कि उसी माचिस से घर में आग लगाकर समूचे गाँव को भस्म कर दिया जाय । आग लगा कर आत्महत्या भी की जा सकती है और किसी दूसरे का प्राण हरण भी हो सकता है ।

गायत्री के तान्त्रिक प्रयोग भी हैं । देवी भागवत में गायत्री तन्त्र का एक स्वतन्त्र प्रकरण भी है । विश्वामित्र कल्प में उसके विशेष विधानों का वर्णन है । लंकेश तन्त्र में भी उसकी विधियाँ हैं, पर हैं वे सभी संकेत मात्र । तान्त्रिक प्रयोगों को गोपनीय इस लिए रखा जाता है कि उसे कुपात्र की जानकारी में पहुँचा देने से भस्मासुर जैसे संकट बताने सिखाने वाले के लिए भी खड़े किये जा सकते हैं । द्रोणाचार्य ने जिन शिष्यों को बाण विद्या सिखाई थी, उन्होंने उसी शिक्षा के सहारे शिक्षक का ही कचूमर निकाल दिया । इसलिए उसके प्रयोगों को, विधानों को गुरु परम्परा में ही आगे बढ़ाया जाता है, ताकि पात्रता की परख करने के उपरान्त ही शिक्षण का प्रयोग आगे बढ़े ।

रावण वेदों का विद्वान था । उसने चारों वेदों के भाष्य भी किये थे, जिनमें से कोई–कोई भाग अभी भी मिलते हैं, पर उसने वेदमाता गायत्री का वाम मार्ग अपना कर उसे अनर्थकारी प्रयोजनों में ही लगाया, स्वार्थ ही साधे, सोने की लंका बनाई, पारिवारियों को अपने जैसा ही दुष्ट बनाया, देवताओं को सताया, मारीच को वेश बदलने की विद्या सिखाकर सीताहरण का षड्यन्त्र बनाया । इन तात्कालिक सफलताओं का लाभ लेते हुए भी अन्ततः अपना सर्वनाश किया और अनेकों ऋषि–मुनियों को त्रास देने में कोई कमी न रखी । यही है तन्त्र मार्ग–वाममार्ग । यह मनुष्य की अपनी इच्छा है कि शक्तियों को सत्प्रयोजनों में लगाये या अनर्थ के लिए प्रयुक्त करे ।

तन्त्र मार्ग एक प्रकार की भौतिकी है । उसकी परिधि भी सीमित है और प्रयोग भी कुछ दुर्बल स्तर के लोगों पर ही हो सकता है । बहेलिये लोमड़ी, खरगोश, कबूतर जैसे प्राणियों पर ही घात लगाते हैं । उनकी हिम्मत शेर, बाघ, चीते, घड़ियाल जैसे जानवर पकड़ने की नहीं होती । उनकी खाल की कीमत भी बहुत मिल सकती है, पर साथ में जान जोखिम का खतरा भी है । इसलिए प्रहार दुर्बलों पर ही होते हैं । जाल में वे ही फँसते हैं ।

तान्त्रिक प्रयोग भी मनस्वी लोगों पर नहीं चलते । उनकी तेजस्विता से टकराकर वापस लौट आते हैं । ऐसा न होता तो हिटलर, मुसोलिनी जैसे खलनायकों को तो किसी तान्त्रिक ने ही मार दिया होता । पुरातन काल में तन्त्र प्रचलित था । पर वह वृत्रासुर, महिषासुर, हिरण्यकश्यपु जैसों पर नहीं चला । हीन मनोभूमि के लोग उसे गुलेल की तरह दुर्बल प्राणियों को आहत करने में ही प्रयुक्त करते हैं । हिप्नोटिज्म में भी दुर्बल मन वाले लोग ही प्रभावित होते हैं ।

तन्त्र के अनेक माध्यम हैं । उन्हीं में एक गायत्री तन्त्र भी है । उसकी साधना किसी व्यक्ति विशेष को ही हानि पहुँचा सकती है । व्यापक क्षेत्र में उसका प्रयोग नहीं हो सकता । मारण, मोहन, उच्चाटन, वशीकरण,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्तम्भन आदि प्रयोगों के तन्त्र विधान हैं । इनमें किसी व्यक्ति विशेष को कठिनाइयों में फँसाया जा सकता है, प्रतिशोध लिया जा सकता है, पर ऐसा कुछ नहीं है जिसमें किसी को ऊँचा उठाने, आगे बढ़ाने या संकट से उबारने का उच्चस्तरीय प्रयोजन पूरा हो सके ।

गायत्री त्रिपदा है । दक्षिण मार्ग में उसका यही स्वरूप प्रयुक्त होता है । ब्राह्मी, वैष्णवी, शाम्भवी के रूप में, वेदमाता, देवमाता, विश्वमाता के रूप में उसका तत्वज्ञान हृदयंगम किया जाता है और विधान अपनाया जाता है । किन्तु जब उसका तान्त्रिक प्रयोग करना होता है तो वह नाम रूप नहीं रहता । तब उसे त्रिपुरा या 'त्रिपुर भैरवी' कहते हैं । यह शिव के भूत-पिशाचों में सम्मिलित है । इसे 'रौद्री' या 'चण्डी' कहते हैं । यह तमोगुणी शक्तियाँ हैं और अनर्थ करने में ही समर्थ हैं । रक्तपात में ही उन्हें मजा आता है, किन्तु साथ ही यह जोखिम भी है कि वह तनिक-सी भूल हो जाने पर अपना क्रोध उलटकर प्रयोक्ता पर ही निकाल दे और उसे उन्मादी, उद्धत, अपराधी स्तर का बना दें । दूसरे को हानि पहुँचाने वाले, प्रयोग उलटा पड़ने पर स्वयं भी कम जोखिम नहीं उठाते हैं । व्यभिचारी जूतों से पिटते, हत्यारे फाँसी पर चढ़ते और उद्दण्ड घूँसे का जवाब लाठी से प्राप्त करते देखे गये हैं । इसलिए तन्त्र साधना को प्रोत्साहन नहीं दिया गया, उसे गोपनीय रखा गया है ।

बन्दूक की गोली आगे को चलती है, पर चलते समय पीछे को धक्का भी मारती है । यदि चलाने वाला अनाड़ी हुआ तो अपनी हँसली की हड्डी तोड़ लेता है । ऐसे लोग निन्दा के पात्र तो बनते ही हैं, उनका कोई सच्चा मित्र नहीं बनता, क्योंकि डर लगा रहता है कि अनैतिक व्यक्ति तनिक से कारण पर मित्र से शत्रु बन सकता है, आज सहयोगी है, कल अनर्थ करने पर उतारू हो सकता है । इसलिए गायत्री उपासकों से दक्षिण मार्गी साधना करने और माता जैसा स्नेह-दुलार का रिश्ता बनाने के लिए कहा गया है ।

गायत्री के तान्त्रिक प्रयोगों में ब्रह्मदण्ड, ब्रह्मास्त्र और ब्रह्मशीर्ष के प्रयोग का वर्णन आता है । दण्ड कहते हैं लाठी को या प्रताड़ना को । ब्रह्मदण्ड का प्रयोक्ता किसी को आर्थिक, पारिवारिक, शारीरिक, मानसिक क्षति पहुँचा सकता है । डन्डे से पीटने की तरह या न्यायाधीश द्वारा दिये गये जेल जुर्माने की सजा की तरह । ब्रह्मास्त्र इससे बड़ा हथियार है । वह व्यर्थ नहीं जाता । उसमें सिंह से लड़ने जैसा पराक्रम और जोखिम उठाना पड़ता है । मेघनाद ने लक्ष्मण जी पर ब्रह्मास्त्र का ही प्रहार किया था । कोई दूसरा होता तो निश्चय ही जान से हाथ धो बैठता । स्वयं शेष जी के अवतार होने तथा सुखेन वैद्य और हनुमान जी द्वारा संजीवनी बूटी की व्यवस्था करने पर ही उनके प्राण बच सके ।

ब्रह्मशीर्ष दुर्बुद्धि उत्पन्न करने के काम आता है । जिस पर यह प्रयोग होता है वह सन्मार्ग छोड़कर कुमार्ग अपनाता है, दुर्बुद्धि का आश्रय लेता है । हर आक्रमणकारी आरम्भ में सामने वाले के असावधान होने के कारण लाभ उठा लेता है पर जब लोकमत और शासन उसके विरुद्ध पड़ता है तो सांसारिक क्षति भी कम नहीं उठानी पड़ती । इसके अतिरिक्त ईश्वरीय कर्मफल व्यवस्था का अपना विधान है, उससे किसी का बच निकलना नितान्त असम्भव है । देर भले ही लगे पर अनाचारी अपने कुकृत्य का फल अवश्य पाते हैं । देर हो सकती है, पर इस विश्व व्यवस्था में अन्धेर नहीं है । इसलिए तन्त्र विज्ञान को गोपनीय ही रखा गया है और चाहे जिसके हाथ में थमा देने का निषेध किया गया है । रिवाल्वर को खिलौने की तरह खेलने के लिए नहीं दिया जा सकता ।

विज्ञान का प्रत्येक पक्ष हर किसी के लिए खुला नहीं होता । अणु बम बनाने वाले देश उसके रहस्यों को दूसरे देशों को बताने के लिए तैयार नहीं होते । उसे नितान्त गोपनीय रखते हैं । अमेरिका स्टार वार की तैयारी वाले अस्त्र बना रहा है, पर उनकी प्रक्रिया इतनी गोपनीय रखी जा रही है कि रूस को या अन्य किसी देश को उसकी जानकारी न मिल जाय । इसलिए काम करने वाले वैज्ञानिकों की भी इतनी चौकीदारी रखी जाती है कि उनका कोई देश अपहरण न कर ले अथवा किसी रीति से उनके निर्माण की विधि जानकर उसकी वरिष्ठता छीनकर समानता की प्रतिद्वन्द्विता न करने लगे ।

तन्त्र ऐसा ही गोपनीय है । उसमें विपक्ष के बलिष्ठ हो जाने और अपने पक्ष की वरिष्ठता छिन जाने का खतरा तो है । एक और भी बड़ी बात है, दुरुपयोग

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

करके अपना या पराया अनर्थ न होने लगे । बारूद के गोदाम में किसी प्रकार एक चिनगारी जा पहुँचे तो विरोधी का नहीं, निर्माता एवं संग्राहक का ही अनर्थ होगा ।

बच्चे अपने ही होते हैं । पर उनसे पैसा–आभूषण आदि छुपाते हैं । भेद पूछकर कोई चोर–उचक्का उन्हें लूट सकता है । वे बच्चों के हाथ पड़े तो भी उनसे छिन जाने का या जान जाने का खतरा है । वे लोभ में तो कोई ऐसी चीज भी खरीद सकते हैं, जिनसे उनको या परिवार को भारी हानि सहन करनी पड़े । पैसा चुराकर शराब खरीदी जावे और उसे पी मरें, तो पैसा भी गया, बालक भी गया और सावधानी न बरतने के कारण अपनी भर्त्सना भी हुई ।

वरदान देने की शक्ति दक्षिण मार्गी साधनाओं से होती है और शाप देने की तान्त्रिक विधानों से । दुर्वासा के बारे में प्रसिद्ध है कि वे जरा–जरा–सी बात से तुनक कर चाहे जिसको शाप दे डालते थे और पीछे पछताते थे । अम्बरीष को, शकुन्तला को शाप देकर उन निर्दोषों को कष्ट में डाला और स्वयं बदनाम हुए । तान्त्रिक साधना का विधान ही ऐसा है, जिसमें साधक नीति–अनीति का बोध खो बैठता है और अपना दर्प दिखाने के लिए जिस–तिस को छोटे कारणों से आक्रोश में भर शाप देने लगता है ।

जिस प्रकार दक्षिण मार्गी साधनाओं में गायत्री महाशक्ति को धारण करके पात्रता विकसित करने के लिए अधिक–से–अधिक पवित्र और सात्विक बनना पड़ता है । उसी प्रकार तान्त्रिकों को क्रूर कर्म करने के लिए स्वयं भी क्रूर–अनाचारी बनना पड़ता है, ताकि उस प्रयोग को करते समय मन में आत्मग्लानि न उठे । आत्मा को दबाने, दबोचने और अपवित्रता, दुस्साहसिकता से भरे–पूरे ही तन्त्र साधना के प्रयोग पहले साधक को अपने ऊपर करने पड़ते हैं ।

हत्यारे अक्सर उस क्रूर कर्म को करने से पूर्व डटकर मद्यपान कर लेते हैं, ताकि उस कृत्य को करते हुए आत्मा में करुणा न उपजे और हाथ न रुकें । तान्त्रिकी साधना अक्सर श्मशानों में होती है । मुर्दों की चिताओं पर भोजन पकाते–खाते हैं । कापालिक मनुष्य के कपालों में भोजन करते, पानी पीते और मुण्ड–मालाएँ गले में लटकाये रहते हैं । अघोरी मल–मूत्र तक खा जाते हैं, ताकि अनौचित्य के प्रति घृणा भाव समाप्त हो जाय ।

वाम मार्ग में साधाक को पंच मकारों का अभ्यास करना पड़ता है–(१) मद्यं (२) मासं च (३) मीनं च (४) मुद्रा (५) मैथुन एव च । यह पाँचों मकार हेय कर्म हैं । शराब, गाँजा, भाँग आदि तीव्र नशों का सेवन । माँस भक्षण और इस प्रयोजन के लिए देवता के नाम पर पशु–पक्षियों का ही नहीं, मनुष्यों तक का वध करना । मछली, मेढक जैसे आसानी से मिल सकने वाले प्राणियों की आये दिन हत्या करना और उन्हें भूनते–तलते रहना । मुद्रा का एक अर्थ भयंकर आकृति बना कर त्रिशूल जैसे शस्त्र लेकर नग्न नृत्य करना भी है और अनीति युक्त धन संग्रह करना भी, ताकि उसके सहारे व्यभिचार–बलात्कार आदि कुकृत्य किये जा सकें । बुद्ध काल में ऐसे वाममार्गी अनाचार शास्त्रों और देवताओं के नाम पर चल रहे थे । भगवान बुद्ध ने इस अनाचार के विरुद्ध क्रान्ति की और जिन शास्त्रों में ऐसा उल्लेख और जो देवता ऐसे क्रूर कर्म में सहायता करते हैं, उन्हें मान्यता देने से इन्कार कर दिया ।

उस अनाचार को घटाने और मिटाने के लिए अहिंसा धर्म का प्रचार करने के लिये उन्हें संगठित संघर्ष करना पड़ा । यहाँ तक कि देववाद ही नहीं, ईश्वरवाद तक का खण्डन करने, अपने को शून्यवादी तक घोषित करना पड़ा । हमने भी तन्त्रवाद से सर्वथा असहयोग रखा है । न सीखा है, न किसी को सिखाया है ।

प्रकारान्तर से यह तान्त्रिक मनोवृत्ति अनायास ही लोगों के स्वभाव में बरसात के उद्भिजों की भाँति ही पनप रही है । ऐसी दशा में कहीं तान्त्रिक विधान का आश्रय भी मिल जाय, तो स्थिति दुर्गति की चरम सीमा तक जा पहुँचेगी ।

यहाँ स्थिति का स्पटीकरण इसलिए करना पड़ा कि सावित्री की सविता की प्रचण्डता देखते हुए कोई उसकी संगति तान्त्रिक विधान या विज्ञान के साथ न जोड़ने लगे । सविता परब्रह्म का स्वरूप है और सावित्री उसकी ब्राह्मी शक्ति । वह आदि से अन्त तक सात्विकता से सराबोर है । किन्तु सार्वजनिक और विशाल–प्रचण्ड कार्यों के लिए उसका प्रयोग आवश्यक हो जाता है । इसलिए उस विज्ञान पर प्रकाश डालना पड़ा, उसे पुनर्जीवन देना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पड़ा और स्वयं भी उसकी साधना में संलग्न होना पड़ा । इसके बिना हम या हमारे अनुयायी निजी व्यक्तित्व की दृष्टि से कितने ही परिष्कृत क्यों न हों निजी व्यक्तित्व में भले ही स्वर्ग मुक्ति या दूसरों की सीमित भलाई कर सकने वाली शक्ति क्यों न प्राप्त कर लें, विश्व कल्याण एवं युग परिवर्तन के लिए उससे बड़ी शक्ति चाहिए । वही है सविता महाकाल की महाकाली सावित्री ।

सावित्री – रहस्य

आत्म कल्याण के लिए गायत्री, पार्वती की दिव्यता का आश्रय लेना पड़ता है । गायत्री की तीन विभूतियाँ हैं–प्रज्ञा, श्रद्धा और निष्ठा । पार्वती के दो पुत्र हैं – बुद्धि के देवता गणेश और षट्चक्रों के अधिष्ठाता षडानन कार्तिकेय । तीसरा नन्दी है, जो वृषभ होते हुए भी इस परिवार का अंग बन गया है । शिव का प्रख्यात पुरुषार्थ गंगावतरण है । उन्होंने भागीरथ को आगे करके स्वर्ग लोक से गंगा का अवतरण पृथ्वी पर सम्भव कराया था । यदि शिव का सहयोग न होता तो गंगा सम्भवतः पाताल को चली जातीं है । उन्हें स्थिर रखने का श्रेय शिव को ही है ।

गायत्री और पार्वती की शास्त्रकारों ने अनेक स्थानों पर समता की है । दोनों सौम्य हैं । दोनों की तप और योग की प्रवृत्ति है । एक का वाहन हंस है तो दूसरे का नन्दी । दोनों की उच्च और आदर्श प्रकृति है । जो इनकी शरण में जाता है, वह मनुष्य कलेवर में ही देवोपम होता है । उसकी विवेकशीलता गंगा के समान पवित्र और तरण–तारिणी होती है ।

अधिक जानने योग्य ब्रह्मा और शिव का वाम पक्ष है । ब्रह्मा की पंचमुखी सावित्री और शिव की चण्डी कुण्डलिनी । सावित्री से पाँच कोश जाग्रत होते हैं । हर कोश में एक से एक बढ़कर विभूतियाँ हैं । प्रज्ञा, सम्पदा, प्रतिभा, प्रवीणता के अतिरिक्त पाँचवीं शक्ति का नाम है–रणनीति, शस्त्र संसाधन । उसके आधार पर ऐसे दिव्य अस्त्र विनिर्मित हो सकते हैं, जैसे रामायण और महाभारत काल में प्रयुक्त हुए थे । आग्नेयास्त्र, वरुणास्त्र, कृत्या, गतिचक्र जैसे दिव्य बाण उन दिनों प्रयुक्त हुए थे । भरत ने अपने बाण पर बिठाकर हनुमान को लंका भेजा था ताकि वे लक्ष्मण के जीवित रहते संजीवनी वहाँ तक पहुँचा सकें । अर्जुन ने पाताल फोड़कर जल –धारा भीष्म की प्यास बुझाने के लिए निकाली थी । राम ने गोलाई में उगे सात ताड़ वृक्षों को एक ही बाण से बेधा था । एकलव्य ने कुत्ते के होंठ बाण प्रहार से सिये थी । राम का बाण जयन्त का पीछा करने निकल पड़ा था और अम्बरीष को सताने पर विष्णु का चक्र दुर्वासा के पीछे लग लिया था । भस्मासुर, मारीचि, कुम्भकरण, रावण, मेघनाद आदि ने जो वरदान पाये थे, वे दिये तो शिव ने थे, पर उनमें विज्ञान सावित्री का था । विश्वामित्र ने यही पक्ष राम लक्ष्मण को उस समय सिखाया था जब उन्हें शिव धनुष तोड़ना था और रावण के महामायावी असुरों के साथ लोहा लेना था । उन दिनों सुरसा, ताड़का, सूर्पणखा, त्रिजटा तक इन प्रसंगों में प्रवीण पारंगत थीं । खरदूषण आदि दैत्यों के आतंक का तो ठिकाना ही क्या था । इस स्तर के प्रपंचियों के साथ लोहा लेना सरल नहीं था । वह दुष्कर कार्य दिव्य शक्ति के सहारे ही सम्भव हो सका ।

विश्वामित्र गायत्री के द्रष्टा और सावित्री के प्रयोक्ता थे । वे गायत्री का आश्रय लेकर राजर्षि से ब्रह्मऋषि बने थे और सावित्री के सहारे नई सृष्टि रचने के लिए ब्रह्माजी से प्रतिद्वन्द्विता करने लगे थे । उनके शिष्य हरिश्चन्द्र की तरह विश्वविख्यात हुए और परशुराम की तरह सहस्रबाहु के भुजाओं को छेदने में समर्थ हुए । रघुवंशियों के गुरु तो वशिष्ठ थे, पर अनेक आड़े अवसरों में विश्वामित्र ही काम आते रहे । शकुन्तला विश्वामित्र की ही पुत्री थी, जिसने चक्रवर्ती भरत को गोदी में खिलाया और इस आर्यावर्त का सुविस्तृत सीमाओं वाला विशाल भारत बनाया । विश्वामित्र का ऋषित्व गायत्री का अनुदान था और उनका प्रचंड पुरुषार्थ सावित्री का वरदान । इसी बल पर उनने राजा हरिश्चन्द्र को परीक्षा लेकर उस परिवार को फिर सजीव बनाकर यथास्थान बिठा दिया था ।

सावित्री के अपने रहस्य हैं । उनका उल्लेख 'विश्वामित्र कल्प' ग्रन्थ में संकेत शैली में किया गया है । देखने में लगता है कि भौतिक सिद्धियों का समग्र क्षेत्र सावित्री विज्ञान के ही इर्द–गिर्द घूमता है । जिन दिनों अध्यात्म विज्ञान के क्षेत्र में सावित्री विद्या के जानकार थे, उन दिनों यहाँ शृंगी ऋषी स्तर के प्रयोक्ता भी थे, जिनके अनुग्रह से राजा दशरथ चार भगवानों के जन्मदाता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

बने और शाप देकर मरे तक्षक को जीवित बनाये रखा और नियत अवधि के भीतर परीक्षित का प्राण हरण कराया । यह सावित्री का विलोम है ? अनुलोम से वरदान और प्रतिलोम से शाप की वर्षा की जा सकती है । समुद्र पर पुल बना देने और स्वर्ण खचित लंका को घास की तरह जला देना किन्हीं भी शरीरों द्वारा सम्भव हुआ हो ? पर था वह सावित्री शक्ति का चमत्कार, जिसे प्रयोक्ताओं ने सही प्रयोजन के लिए, सही अवसर पर क्रियान्वित किया ।

सतयुग में सावित्री विद्या को ही अनिष्टों से निपटने के लिए काम में लाया जाता था । चण्डी का उपयोग और उद्भव उससे पीछे का है । उसे तब उत्पन्न किया गया, जब चण्ड, मुण्ड, रक्तबीज, शुंभ-निशुंभ, मधुकैटभ, महिषासुर जैसे दैत्य अपनी क्षमता और उद्दंडता को चरम सीमा तक ले पहुँचे थे । वे महाशक्ति को अपनी पत्नी बना लेने तक की धृष्टता करने लगे थे । देवता हतप्रभ हो चुके थे । उन महादैत्यों से निपटना देवताओं की शक्ति के लिए सम्भव नहीं रह गया था, कारण कि वे युद्ध में भी निर्धारित नीति का पालन करते थे और असुर सभी मर्यादाओं को छोड़कर जो कुछ सम्भव था, बुरे से बुरा कृत्य कर गुजरने पर कटिबद्ध रहते थे । ऐसे से कौन निपटे ? कैसे निपटे ? सोचा गया कि दुष्टता से निपटने के लिए सज्जनता काम नहीं आती, उससे बढ़ी-चढ़ी दुष्टता अपनानी पड़ती है । हाथी को छकाने में घोड़ा काम नहीं देता, उस पर तो आक्रमण सिंह ही करता है । उस युग के महादैत्यों से निपटने के लिए चण्डी का प्रकटीकरण हुआ और वह जन्मते ही विकट संग्राम में जुट गई । असुरों के साथ नीति क्या बरतना ? दो भुजा वालों से दो भुजाओं से लड़ना क्या ? चण्डी ने दस भुजाएँ प्रकट कीं, दसों में शस्त्र संभाले । असुर बिना वाहन के थे पर चण्डी ने सिंह को अपना सहयोगी बनाया । वह कहने भर का वाहन था । वस्तुतः असुरों की सेना को विदीर्ण करने में लगा हुआ था । असुरों की क्षमता और कुटिलता को देखते हुए देवी आवेश में उन्मत्त होकर लड़ने लगीं । रक्तपान करने के लिए उसके खप्पर भरने लगे और जिह्वा हाथों की सीमा छोड़कर इस प्रकार लहराने लगी मानों असुरता का समग्र रूप ध्वंस करके रहेगी ।

यह दुर्गा चरित्र है जो मारकण्डेय पुराण और देवी भागवत में विस्तारपूर्वक लिखा गया है । इसे ऐतिहासिक घटना नहीं मान लेनी चाहिए अन्यथा वह इतिहास मात्र बनकर रह जायगा । ऐसा होना अर्थ का अनर्थ समझा जायगा ।

चण्डी अध्यात्म विज्ञान का एक भौतिक पक्ष है, जो सामान्य विधि से न सुलझ पाने वाली समस्या के समाधान हेतु प्रयुक्त की जाती है । सामान्य विग्रहों का उपयोग सामान्य साधनों से किया जाना चाहिए । लात का जवाब घूँसे से देना पर्याप्त है । आये दिन के विग्रहों में प्रतिरोध की हिंसात्मक और अहिंसात्मक कई क्रिया-प्रक्रिया काम में लाई जाती रहती हैं ।

आत्म शक्ति के रचनात्मक प्रयोग ही अधिक हैं । उन्हीं की आवश्यकता, उपयोगिता एवं प्रशंसा भी है, किन्तु जब कठिनाई अत्यधिक बड़ी हो और चट्टान की तरह अड़ जाय तो उसे कच्चे घड़े की तरह जमीन पर चटकाने और चूर-चूर कर देने के अतिरिक्त और कोई मार्ग भी नहीं रह जाता । चण्डी शक्ति का उपयोग व्यापक और वीभत्स समस्याओं के समाधान के लिए करने योग्य माना गया है । उसका आह्वान, उत्थान, प्रचंडीकरण कैसे किया जाय ? किस प्रकार अभीष्ट प्रयोजन को पूरा करने वाली परिस्थितियाँ बनें ? यह एक रहस्य है, जिसे विवेकवान प्रयोक्ता ही समय और आवश्यकता के अनुरूप निर्धारित करते हैं ।

ओछे और घटिया तांत्रिक लोभ वश किसी पर अहसान दिखाकर उससे अनुचित प्रकार के लाभ उठाने के लिए प्रयोग करते हैं । व्यक्तिगत रागद्वेष में जिस प्रकार आवेश ग्रस्त कोई प्रहार करते हैं, उसी प्रकार अघोरी प्रकृति के लोग रागद्वेष के कुचक्र में पड़कर किसी के विरुद्ध मारण, अपंगीकरण, उच्चाटन के त्रासदायक और मोहन, वशीकरण के द्वारा स्वेच्छा सहयोग के कारण बनाते हैं । ऐसे कार्यों में कृत्या स्तर के वाममार्गी प्रयोगों का उपयोग किया जाता है । उनमें डाकिनी, शाकिनी स्तर की निकृष्ट, पिशाच बेतालों जैसी शक्तियों का उपयोग होता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है। करते समय तो आरम्भिक आक्रमण की तरह उसका लाभ तत्काल दीखता है, किन्तु नैतिक नियमों की प्रतिक्रिया अपना काम करती है और देर सबेर में अनुचित आक्रमण करने वाले अथवा अनैतिक लाभ लेने या दिलाने वाले उस अनर्थ का दैवी दण्ड प्राप्त करते हैं।

सावित्री विद्या के अन्तर्गत भी प्रहार वैसे ही हो सकते हैं। पर वे व्यक्तिगत प्रयोजनों के लिए नहीं किये जाते। उसका शर संधान तभी होता है जब किसी बड़े अनर्थ के बड़े प्रतिकार की आवश्यकता हो।

सावित्री को सरस्वती भी कहा गया है। उसे ज्ञान-विज्ञान की अभिवृद्धि के लिए, उचित अभ्युदय के लिए, नीति और न्याय की रक्षा के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है। महाभारत वन पर्व में देवी सरस्वती और जिज्ञासु तार्क्ष्य सम्वाद है। उसमें अपना परिचय एवं वरदान देने का आधार बताती हुई वे कहती हैं-"मैं सन्देहों को दूर करती हूँ, अग्निहोत्र से उत्पन्न होती हूँ, ऋत्विज यज्ञ विधान द्वारा मेरा अनुग्रह प्राप्त करते हैं, किन्तु यह सब उन्हीं से बन पड़ता है, जो संयमशील, सदाचारी और देव प्रयोजनों में निष्ठावान रहते हैं। ब्रह्म विद्या के अध्ययन सहित जो सात वर्ष तक नियमित रूप से यज्ञ द्वारा मेरा आराधन करते हैं, वे मुझे पात हैं। कालिदास, वरदराज आदि ऐसे ही प्रयोगों द्वारा विद्यावान बने थे। यहाँ सरस्वती का, सावित्री का सृजन पक्ष ही समझना चाहिए। उसी से सर्वतोमुखी कल्याण भी है। सावित्री का वाम पक्ष वह है जो प्रहार के लिए काम में आता है, पर वह प्रहार न्याय रक्षा के निमित्त ही सीमित मर्यादा में किया गया होना चाहिए। राजदण्ड भी अपराध के अनुरूप न्यूनाधिक मात्रा में ही मिलते हैं।

चण्डी तत्व आवश्यक है, पर उसमें औचित्य की सीमा का उल्लंघन भी होता है। वनों में लगने वाली दावानल तथा समुद्रों में उभरने वाली बडवानल जब प्रचण्ड होती है, तो निर्दोष वनजीवों, जलजीवों का भी प्राण हरती है, इसलिए इस प्रकार की अग्नि प्रज्ज्वलित करने से पूर्व आवेशग्रस्त नहीं, विवेकयुक्त मनोभूमि होनी चाहिए। फिर भी अतिवाद में दूसरों की तरह अपने लिए भी अहित खड़ा होने की गुंजाइश रहती है। युद्धाग्नि प्रचण्ड होने पर उसमें सभी अपराधी ही नहीं मरते, निर्दोष भी चपेट में आते हैं। चण्डी अभियान ऐसा ही है। उसे आत्मविद्या के ज्ञाता सोच-समझ कर ही सीमित मात्रा में प्रयुक्त करते हैं।

सावित्री साधना और कुण्डलिनी जागरण

पिछले पृष्ठों में बताया गया है कि ब्रह्माजी के दो पत्नियाँ थीं। प्रथम गायत्री दूसरी सावित्री। इसे अलंकारिक प्रतिपादन में ज्ञान चेतना और पदार्थ सम्पदा कहा जा सकता है। इनमें एक परा प्रकृति है, दूसरी अपरा। परा प्रकृति के अन्तर्गत मन, बुद्धि, चित्त, अंहकार-अंहकार चतुष्टय, ऋतम्भरा प्रज्ञा आदि का ज्ञान क्षेत्र आता है। दूसरी पत्नी सावित्री। इसे अपरा प्रकृति, पदार्थ चेतना, जड़ प्रकृति कहा जाता है। पदार्थों की समस्त हलचलें-गतिविधियाँ उसी पर निर्भर हैं। परमाणुओं की भ्रमणशीलता, रसायनों की प्रभावशीलता, विद्युत ताप, प्रकाश, चुम्बकत्व, ईथर आदि उसी के भाग हैं। पदार्थ विज्ञान इन्हीं साधनों को काम में लाकर अगणित आविष्कार करने और सुविधा साधन उत्पन्न करने में लगा हुआ है। इसी अपरा प्रकृति को सावित्री कहते हैं। कुण्डलिनी इसी दूसरी शक्ति का नाम है।

दूसरी शक्ति सावित्री-पदार्थ शक्ति, क्रियाशीलता इस अपरा प्रकृति से ही प्राणियों का शरीर संचालन होता है और संसार का प्रगति चक्र चलता है। शरीर में श्वास-प्रश्वास, रक्त-संचार, निद्रा-जागृति, पाचन-विसर्जन, उष्मा-ऊर्जा, विद्युत प्रवाह अगणित क्रियाकलाप काया के क्षेत्र में चलते हैं। संसार का हर आदि पदार्थ क्रियाशील है। उत्पादन, अभिवर्धन और परिवर्तन का गतिचक्र इस सृष्टि में अनवरत गति से चलता है। प्राणी और पदार्थ सभी अपने-अपने ढंग से प्रगति पथ पर द्रुतगति से दौड़ रहे हैं। विकास की दिशा में कण-कण को धकेला जा रहा है। निष्क्रियता को सक्रियता के रूप में बदलने का प्रेरणा केन्द्र जिस महत्तत्व में सन्निहित है, उसे अपरा प्रकृति कहते हैं। सत, रज, तम-पंचतत्व तन्मात्राएँ आदि का सूत्र संचालन यही शक्ति करती है। सिद्धियाँ और वरदान इसी के अनुग्रह से मिलते हैं। ब्रह्माजी की द्वितीय पत्नी सावित्री इसी को कहते हैं। मनुष्य शरीर में आरोग्य, दीर्घजीवन, बलिष्ठता, स्फूर्ति, साहसिकता, सौन्दर्य आदि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अगणित विशेषताएँ इसी पर निर्भर हैं। यों इसका विस्तार तो सर्वत्र है, पर पृथ्वी में ध्रुव केन्द्र में और शरीर के मूलाधार चक्र में इसका विशेष केन्द्र है साधना प्रयोजन में इसी को कुण्डलिनी शक्ति कहते हैं।

गायत्री और सावित्री दोनों परस्पर पूरक हैं। इनके मध्य कोई प्रतिद्वन्दिता नहीं है। गंगा-जमुना की तरह ब्रह्म हिमालय की इन्हें दो निर्झरिणी कह सकते हैं। सच तो यह है कि दोनों अविच्छिन्न रूप से एक-दूसरे के साथ गुँथी हुई हैं। इन्हें एक प्राण दो शरीर कहना चाहिए। ब्रह्मज्ञानी को भी रक्त-मांस का शरीर और उसके निर्वाह का साधन चाहिए। पदार्थों का सूत्र संचालन चेतना के बिना सम्भव नहीं। इस प्रकार यह सृष्टिक्रम दोनों के संयुक्त प्रयास से चल रहा है। जड़-चेतन का संयोग बिखर जाय, तो फिर दोनों में से एक का भी अस्तित्व शेष न रहेगा। दोनों अपने मूल कारण में विलीन हो जायेंगे। इसे सृष्टि के, प्रगति रथ के, दो पहिये कहना चाहिए। एक के बिना दूसरा निरर्थक है। अपंग तत्वज्ञानी और मूढ़ मति, नर-पशु दोनों ही अधूरे हैं। शरीर में दो भुजाएँ, दो पैर, दो आँखें, दो फेंफड़े, दो गुर्दे आदि हैं। ब्रह्म शरीर भी अपनी दो शक्ति धाराओं के सहारे यह सृष्टि प्रपंच सँजोये हुए है, इन्हें उसकी दो पत्नियाँ, दो धाराएँ आदि किसी भी शब्द प्रयोग के सहारे ठीक तरह वस्तुस्थिति को समझने का प्रयोजन पूरा किया जा सकता है। पत्नी शब्द अलंकार मात्र है। चेतन सत्ता का कुटुम्ब परिवार मनुष्यों जैसा कहाँ है ? अग्नि तत्व की दो विशेषताएँ हैं -गर्मी और रोशनी। कोई चाहे तो इन्हें अग्नि की दो पत्नियाँ कह सकते हैं। यह शब्द अरुचिकर लगे तो पुत्रियाँ कह सकते हैं। सरस्वती को कहीं ब्रह्मा की पत्नी, कहीं पुत्री कहा गया है। इसे स्थूल मनुष्य व्यवहार जैसा नहीं समझना चाहिए। यह अलंकारिक वर्णन मात्र उपमा भर के लिए है। आत्म-शक्ति को गायत्री और वस्तु-शक्ति को सावित्री कहते हैं। सावित्री साधना को कुण्डलिनी जागरण कहते हैं। उसमें शरीरगत प्राण ऊर्जा की प्रसुप्ति, विकृति के निवारण का प्रयास होता है। बिजली की ऋण और धन दो धाराएँ होती हैं। गायत्री व सावित्री के समन्वय से साधना की समग्र आवश्यकता पूरी होती है।

नित्यकर्म में, संध्यावन्दन में की जाने वाली गायत्री उपासना सामान्य है। कुण्डलिनी जागरण के लिए गायत्री की उच्चस्तरीय उपासना का क्रम अपनाना पड़ता है। इसे जड़ और चेतन को परस्पर बाँधे रहने वाली सूत्र शृंखला कह सकते हैं। प्रकारान्तर से यह प्राण प्रवाह है जो व्यष्टि और समष्टि की समस्त हलचलों का संचालन करता है। नर और नारी अपनी जगह पर अपनी स्थिति में समर्थ होते हुए भी अपूर्ण हैं। इन दोनों को समीप लाने और घनिष्ठ बनाने में एक अविज्ञात चुम्बकीय शक्ति काम करती रहती है। इसी के दबाव से युग्मों का बनना और प्रजनन क्रम चलना सम्भव होता है। उदाहरण के लिये इन नर और नारी के बीच घनिष्ठता उत्पन्न करने वाले चुम्बकीय धारा प्रवाह को कुण्डलिनी की एक चिनगारी कह सकते हैं। प्रकृति और पुरुष को घनिष्ठ बनाकर उनसे सृष्टि सञ्चारी की विभिन्न हलचलों का सरंजाम खड़ा करा लेना इसी ब्रह्माण्ड व्यापी कुण्डलिनी का काम है। व्यक्ति सत्ता में भी काया और चेतना की घनिष्ठता बनाये रहना और शरीर में लिप्सा, मन में ललक और अन्तःकरण में निष्ठा उभारना इसी कुण्डलिनी महाशक्ति का काम है। जीव की समस्त हलचलें, आकांक्षा, विचारणा और सक्रियता के रूप में सामने आती हैं। इनका सृजन उत्पादन कुण्डलिनी ही करती है। अन्यथा जड़ पंच तत्वों में पुलकन कहाँ, निर्लिप्त आत्मा में उद्विग्न आतुरता कैसी ? दृष्टि जगत की समस्त हलचलों के बीच जो बाजीगरी काम कर रही है, उसे अध्यात्म की भाषा में 'माया' कहा गया है। साधना क्षेत्र में इसी को कुण्डलिनी कहते हैं। इसे विश्व हलचलों का, मानवी गतिविधियों का, उद्गम मर्मस्थल कह सकते हैं। यह प्रमुख कुञ्जी मास्टर के हाथ आ जाने पर प्रगति का द्वार बन्द किये रहने वाले सभी ताले खुलते चले जाते हैं।

गायत्री की उच्चस्तरीय साधना में ऋतम्भरा प्रज्ञा उभारने के लिए, प्रत्यक्ष सत्ता को प्रखर बनाने के लिए कुण्डलिनी साधना की कार्य-पद्धति काम में लाई जाती है। गायत्री साधना का उद्देश्य मानसिक चेतनाओं का जागरण और कुण्डलिनी साधना का प्रयोजन पदार्थ गत सक्रियताओं का अभिवर्द्धन है।

मस्तिष्क मार्ग से प्रकट होने वाली चेतनात्मक शक्तियों की सिद्धियों का वारापार नहीं। योगी, तत्वज्ञानी, पारदर्शी, मनीषी, विज्ञानी, कलाकार, आत्मवेत्ता, महामानव इसी शक्ति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का उपयोग करके अपने वर्चस्व को प्रखर बनाते हैं । ज्ञान शक्ति के चमत्कारों से कौन अपरिचित है ? मस्तिष्क का महत्त्व किसे मालूम नहीं ? उसके विकास के लिये स्कूली प्रशिक्षण से लेकर स्वाध्याय, सत्संग, चिन्तन, मनन और साधना समाधि तक के अगणित प्रयोग किये जाते रहते हैं । इस व्यावहारिक क्षेत्र को गायत्री उपासना – परा प्रकृति की साधना ही कहना चाहिए ।

दूसरी क्षमता है, क्रिया शक्ति । अपरा प्रकृति । शरीरगत अवयवों का सारा क्रिया–कलाप इसी से चलता है । श्वास–प्रश्वास, रक्त–संचार, निद्रा, जागृति, मलों का विसर्जन, ऊष्मा, ज्ञान, तत्व, विद्युत प्रवाह आदि अगणित प्रकार के क्रिया–कलाप शरीर में चलते रहते हैं । उन्हें अपरा प्रकृति का कर्तृत्व कहना चाहिए, इसे जड़ पदार्थों को गतिशील रखने वाली 'क्रिया–शक्ति' कहना चाहिए । व्यक्तिगत जीवन में इसका महत्व भी कम नहीं । आरोग्य, दीर्घजीवन, बलिष्ठता, स्फूर्ति, साहसिकता, सौन्दर्य आदि कितनी ही शरीरगत विशेषताएँ इसी पर निर्भर हैं । इसे व्यावहारिक रूप से कुण्डलिनी शक्ति कहना चाहिए । आहार, व्यायाम, विश्राम आदि द्वारा साधारणतया इसी शक्ति की साधना, उपासना की जाती है ।

यों प्रधान तो मस्तिष्क स्थित दिव्य–चेतना ही है । वह बिखर जाय तो तत्काल मृत्यु आ खड़ी होगी । पर कम उपयोगिता शरीरगत पदार्थ चेतना की भी नहीं है । उसकी कमी होने से मनुष्य दुर्बल, रुग्ण, अकर्मण्य, निस्तेज, कुरूप और कायर बनकर रह जायेगा । निरर्थक, निरुपयोगी, भार भूत जिन्दगी की लाश ही ढोता रहेगा ।

गायत्री का केन्द्र सहस्रार–मस्तिष्क का मस्तिष्क, ब्रह्मरन्ध्र है । कुण्डलिनी का केन्द्र काम बीज–मूलाधार चक्र । गायत्री ब्रह्म चेतना की और सावित्री ब्रह्म तेज की प्रतीक हैं । दोनों में परस्पर सघन एकता और अविच्छिन्न घनिष्ठता है । गायत्री से दिव्य आध्यात्मिक विभूतियाँ उपलब्ध होती हैं और सावित्री से भौतिक ऋद्धि–सिद्धियाँ । गायत्री उपासना की उच्चस्तरीय साधना पंचकोशों की, पंचयोगों की साधना बन जाती है । सावित्री कुण्डलिनी है और उसे पाँच तप साधनों द्वारा जगाया जाता है । योग और तप के समन्वय से ही सम्पूर्ण आत्म–साधना का स्वरूप बनता और समग्र प्रतिफल मिलता है । इसलिये पंचकोशों की गायत्री और कुण्डलिनी जागरण की सावित्री विद्या का समन्वित अवलम्बन अपनाना ही हितकर है । बिजली की दो धाराएँ मिलने पर ही शक्तिप्रवाह में परिणत होती हैं । आत्मिक प्रगति का रथ भी इन्हीं दो पहियों के सहारे महान् लक्ष्य की दिशा में गतिशील होता है । गायत्री साधना का सन्तुलित लाभ उठाने के लिए सावित्री शक्ति को भी साथ लेकर चलना पड़ता है ।

समन्वयात्मक साधना का जितना महत्व है उतना एकांगी का, असंबद्ध का नहीं । प्रायः साधना क्षेत्र में इन दिनों यही भूल होती रही है । ज्ञान मार्गी, राजयोगी–भक्तिपरक साधना तक सीमित रह जाते हैं और हठयोगी, कर्मकांडी, तप साधनाओं में निमग्न रहते हैं । उपयोगिता दोनों की है । महत्ता किसी की भी कम नहीं, (पर उनका एकांगीपन उचित नहीं) दोनों को जोड़ा और मिलाया जाना चाहिए । यह शिव–पार्वती विवाह ही गणेश जैसा भावनात्मक वरदान और कार्तिकेय जैसे पदार्थात्मक अनुदानों की भूमिका प्रस्तुत कर सकता है ।

हम समन्वयात्मक साधना की उपयोगिता मानते रहे हैं और उसी का मार्ग–दर्शन करते रहते हैं । वैदिक योग साधना के साथ–साथ तान्त्रिक प्रयोगों को भी महत्व दिया है । गायत्री साधना को प्रमुखता देते हुए भी कुण्डलिनी जागरण की उपयोगिता को माना है । यही कारण है कि प्रथम पाठ पढ़ाने के बाद दूसरे पाठ की भी पृष्ठभूमि तैयार की गयी है । इसे प्रकारांतर न समझा जाय इसमें विरोधाभास न ढूँढा जाय । यह इकलौती सन्तान के बड़े होने पर उसका जोड़ा मिलाने, विवाह करने का प्रयत्न मात्र है । यों गायत्री के देवता सविता को विष्णु या शिव मानते हैं और उनकी पत्नी अग्नि, लक्ष्मी, काली को कुण्डलिनी का प्रतीक माना गया है । इस प्रकार सुगम युग्म–एक प्रकार से नर नारी का, शिव–पार्वती का विवाह ही हुआ धनुष तोड़ने की प्रक्रिया पूरी करके इसे सिया स्वयंवर राम जानकी का विवाह सम्पन्न करना कहा जा सकता है । पर यदि कोई कुण्डलिनी और गायत्री में भाषा की दृष्टि से एक ही लिंग देखता हो तो भी उसे कुछ अचम्भा नहीं करना चाहिए । जीव और ब्रह्म दो पुल्लिग होते हुए भी परस्पर विवाह करते हैं । साक्षी दृष्टा ब्रह्म निष्क्रिय है उसकी परा–अपरा प्रकृतियां दोनों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परस्पर मिल जुलकर ही अपने संयोग–संभोग से इस समस्त सृष्टि का सृजन कर संचालन कर रही है । यह कथन अलंकार भर हैं । वस्तुतः नर–नारी जैसा लिंग भेद सूक्ष्म जगत में कहीं है ही नहीं । गायत्री या कुण्डलिनी को स्त्री और ब्रह्म शिव को पुरुष मानना अपनी बात को चेतना का उदाहरण देकर समझाना भर है । तत्वतः इस उच्च शक्ति क्षेत्र में नर नारी जैसा कोई भेद है ही नहीं । इस जगत में भी जिन ब्रह्म वादियों को तत्वज्ञान हो जाता है वे नर–नारी के शरीर भेदों के अन्तर को भी सर्वथा भुला ही देते हैं । उन्हें सभी में एक लिंग एक तत्व दिखाई पड़ता है । उनकी दृष्टि में न कोई नर है न नारी । अद्वैत ज्ञान में भेद बुद्धि समाप्त होते ही नर–नारी की भिन्नता भी समाप्त हो जाती है । कुण्डलिनी और गायत्री विद्याओं के सम्बन्ध में यदि विवाह संयोग, समन्वय जैसी चर्चा अंलकारिक रूप से आ पड़े तो उसमें कुछ विस्मय न किया जाय इसीलिये यह पंक्तियाँ लिखी गई हैं ।

तत्व–दर्शियों ने गायत्री और कुण्डलिनी को परस्पर पूरक माना है और एकात्म भाव में देखा है । इसके कुछ प्रकरण आगे देखिये

कुण्डलिनी साधना के अन्तर्गत षट्चक्र वेधन प्रक्रिया मुख्य है । यही इस साधना का प्रधान आधार है । गायत्री शक्ति भी वही प्रयोजन पूरा करती है । इस प्रकार मूलतः वे दोनों एक ही छड़ के दो सिरों की तरह अभिन्न ही हैं । षट्चक्र जागरण में कुण्डलिनी शक्ति को गायत्री का सहकार प्राप्त हो जाता है ।

'गायत्री–मन्त्र' का 'भू कार' भू–तत्व या पृथ्वी–तत्व है । साधना के मार्ग में वह मूलाधार चक्र है । फिर जगन्माता के निम्नस्तर ब्राह्मी या इच्छाशक्ति–महायोनि–पीठ में सृष्टि–तत्व है ।'भुवः' भुवर्लोक या अन्तरिक्ष तत्व । साधना की दृष्टि से यह विशुद्ध–चक्र है और महाशक्ति के मध्यस्तर में पीनोन्नत पयोधर में, वैष्णवी या क्रिया–शक्ति पालन व सृष्टि तत्व है । 'स्वःकार' सुरलोक या स्वर्ग–तत्व । साधना के पथ में सहस्रार निर्दिष्ट चक्र एवं आद्याशक्ति के ऊर्ध्व या उच्चस्तर में गौरी या ज्ञान–शक्ति, संहार या लय तत्व है । यही वेदमाता गायत्री का स्वरूप तथा स्थान रहस्य है ।

यों ज्ञान चेतना समस्त शरीर में संव्याप्त है पर उसका केन्द्र मस्तिष्क माना गया है । यों क्रिया–शक्ति संपूर्ण शरीर में फैली पड़ी है पर उसका केन्द्र–स्थल जननेन्द्रिय है । नपुंसक व्यक्ति प्रायः सभी उच्चगुणों के अभिवर्धन और साहस भरे पुरुषार्थी के सम्पादन में असमर्थ रहते हैं । किसी को नपुंसक क्लीव कहना उसकी अन्तः क्षमता को अपमानित करने वाला है । शरीर के अन्य अंग दुर्बल हों तो उसके बिना प्रगति रुकेगी नहीं पर नपुंसक से कुछ महत्वपूर्ण कार्य बन पड़ना कठिन है । सरकारी नौकरियों में भर्ती करते समय डाक्टरी जांच में यह भी परीक्षा की जाती है कि वह व्यक्ति नपुंसक तो नहीं है । शारीरिक विशेषताओं का केन्द्र इसीलिए जननेन्द्रिय गह्वर के मर्म स्थल योनि केन्द्र को माना गया है ।

साधना के यही दो मर्म स्थल हैं । उन्हें ही कायपिण्ड के दो ध्रुव कहते हैं । यों विद्युत–शक्ति एक ही है पर उसे दो भागों में विभाजित किया गया है एक धन (पोजेटिव) दूसरी ऋण (निगेटिव) मानवीय समान चेतना की धन विद्युत इस ज्ञान केन्द्र मस्तिष्क केन्द्र में केन्द्रित है इस स्थल को अध्यात्म की भाषा में 'सहस्रार' कहते हैं । दूसरी ऋण विद्युत काय केन्द्र जननेन्द्रिय मूल में है जिस 'मूलाधार' कहते हैं । इन दो केन्द्रों में से ज्ञान केन्द्र को – गायत्री का और काम केन्द्र को – कुण्डलिनी का उद्गम केन्द्र कहा गया है । भौतिक क्षमताएँ–समृद्धियाँ, सिद्धियाँ कुण्डलिनी में प्रादुर्भूत होती हैं और आध्यात्मिक दिव्यविभूतियाँ, ऋद्धियाँ गायत्री के द्वारा विकसित होती हैं । दोनों का सम्मिश्रण साधक को समृद्धियों और विभूतियों से ऋद्धियों और सिद्धियों से ज्ञान और क्रिया से सुसम्पन्न बनाता है । इसलिए दोनों की सम्मिश्रित साधना का अवलम्बन करना ही समन्वयात्मक प्रवृत्ति के साधकों के लिए उपयुक्त है ।

सहस्रार कमल को ब्रह्म केन्द्र के रूप में– गायत्री गह्वर के रूप में विष्णु के क्षीर सागर या शिव के कैलाश के रूप में चित्रित किया गया है । इसके प्रमाण इस प्रकार मिलते हैं ।

ब्रह्मरन्ध्र सरसीरुहो दर नित्यलग्नमवदातमतभुम् कुण्डली विवरकांड मंडितं द्वादशार्ण सरसीरुहं भजे ।

–पादुका पेचक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मस्तक के मध्य अधोमुख सहस्त्र दल कमल है। उसके उदर में अद्भुत पथ गामिनी नाड़ी। उसे कुण्डलिनी कहते हैं।

इदं स्थानं ज्ञात्वा नियतनिजचित्तो नरवरो,
न भूयात् संसारे पुनरपि न बद्धस्त्रिभुवने।
समग्रा शक्तिः स्यान्नियतमनसस्तस्य कृतिनः,
सदा कर्तुं हर्तुं खगतिरपि वाणी सुविमला॥

–षट्चक्र निरुपणम्

इस सहस्रार कमल की साधना से योगी चित्त को स्थिर कर आत्मभाव में लीन हो जाता है। भवबन्धन से छूट जाता है। समग्र शक्तियों से सम्पन्न होता है। स्वच्छन्द विचरता है और उसकी वाणी विमल हो जाती है।

शिरःकपालविवरे ध्यायेद्दुग्धमहोदधिम्।
तत्र स्थित्वा सहस्रारे पद्मे चन्द्रं विचिन्तयेत्॥७६॥

–शिव संहिता ५।७६

कमल की गुफा में क्षीर सागर समुद्र का तथा सहस्त्र दल कमल में चन्द्रमा जैसे प्रकाश का ध्यान करे।

सहस्रार चन्द्र की कैलाश पर्वत से तुलना करते हुए वहाँ की दिव्य परिस्थितियों का मत्स्य पुराण में वर्णन किया गया है। यह वर्णन तिब्बत स्थित कैलाश पहाड़ का नहीं वरन् विशुद्ध रूप से ब्रह्मरन्ध्र में अवस्थित सहस्रार ज्ञान केन्द्र का ही है। संवर्तक बड़वानल विद्युत का वहीं निवास है। महासर्पों का सरोवर उसी केन्द्र में है। साधना की सिद्धि इसी केन्द्र में तीव्रगति से होती है। यह तथ्य कैलाश पहाड़ पर लागू नहीं हो सकते।

परस्परेण द्विगुणा धर्म्मतः कामतोऽर्थतः।
हेमकूटस्य पृष्ठं तु सर्पाणां तत्सरः स्मृतम्॥
सरस्वती प्रभवति तस्माज् ज्योतिष्ठती तु या।
इत्येते पर्वताविष्टाश्चत्वारो लवणोदधिम्।
छिद्रममानेषु पक्षेषु पुरा इन्द्रस्य वै भयात्॥

–मत्स्य पुराण

कैलाश पर्वत पर की हुई साधना से दूनी सिद्धि होती है। धर्म, अर्थ, काम तीनों ही प्राप्त होते हैं। वह हेम कूट पर्वत का सरोवर सर्पों का बनाया हुआ है। ज्योतिर्मान, प्रज्ञा वहीं उत्पन्न होती है।

वहाँ संवर्तक नामक महा भयानक अग्नि जलता रहता है। वह उस सरोवर के जल को पी जाता है। यह अग्नि समुद्र को भी सुखा देने वाला वड़वा मुख है।

मूलाधार को शक्ति का केन्द्र माना गया है। इसे अग्नि कुण्ड–शक्ति उद्गम–काली पीठ तथा क्रिया–शक्ति की अधिष्ठात्री कुण्डलिनी के रूप में चित्रित किया गया है। इसका संकेत अध्यात्म शास्त्र में विस्तृत रूप से मिलता है।

इन सब तथ्यों पर दृष्टिपात करते हुए इसी निष्कर्ष पर पहुँचना पड़ता है कि गायत्री की ज्ञान शक्ति का और कुण्डलिनी की क्रिया शक्ति का परस्पर अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है। दोनों के मिलने से ही परिपूर्ण एवं समग्र उत्कर्ष की सम्भावना मूर्तिमान होती है। इन दोनों साधनाओं में विरोधाभास नहीं माना जाना चाहिये और न प्रकारान्तर। वरन् यही समझना चाहिए कि साधना–क्रम में दोनों का समन्वय होने से भौतिक और आत्मिक दोनों ही सफलताओं का पथ प्रशस्त होता है। यह समन्वयात्मक साधना भुक्ति और मुक्ति दोनों प्रयोजनों को पूरा करती है। इसीलिए साधना विज्ञान के तत्ववेत्ता एकाँगी साधना की अपूर्णता को ध्यान में रखते हुए उभय प्रयोजन पूरे करने वाली समग्र साधना का पथ प्रदर्शन करते रहे हैं। वही यहाँ भी किया जा रहा है।

या देवता भोगकरी सा मोक्षाय न कल्पते।
मोक्षदा नहि भोगाय त्रिपुरा तु द्वय प्रदा॥

–त्रिपुरा तन्त्र

जो देवता भोग देते हैं वे मोक्ष नहीं देते, जो मोक्ष देते हैं, वे भोग नहीं देते। पर कुण्डलिनी दोनों प्रदान करती हैं–

गायत्री, सावित्री और कुण्डलिनी

महाशक्ति

कुण्डलिनी की मीमांसा गायत्री महाप्रज्ञा के तत्वदर्शन की चर्चा से आरंभ होती है। गायत्री उपासना मूलतः धर्मधारणा और भाव–संवेदना का प्रयोग है। इसमें आत्मशोधन को प्रधानता दी गई है एवं ध्यान–धारणा द्वारा भक्ति संचार करते हुए ब्राह्मी चेतना को निकटवर्ती बुलाया जाता है या उसके साथ गुंथा जाता है। लकड़ी के ढेर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

पर आग उगल देना या जलती आग में ईंधन डालते जाना समानान्तर कृत्य है। अन्तर इतना ही है कि आत्म–समर्पण की, अद्वैत की स्थिति ले आने से चमत्कारी परिणति अविलम्ब बन पड़ती है। समर्पण भाव न होकर अपने लिये कुछ चाहने का सकाम प्रयोजन भी हो, गाड़ी धीमी चाल से चलती हो तो भी उस में अपना हित साधन तो हो ही जाता है। पर सामर्थ्य इतनी हस्तगत नहीं होती कि दूसरों का भी भला कर सके। तैराक स्वयं तो तैर सकता है, पर नाविक की तरह दूसरों को पार लगाते रहने का व्यवसाय नहीं कर सकता। गायत्री की निष्काम और सकाम उपासना में यही अन्तर है। अपने–अपने स्तर की सफलता दोनों ही प्रयत्नों से साधकों को मिलती है।

यों हम गायत्री के तत्वदर्शन की गहराई में जाएँ तो पाते हैं कि मस्तिष्क के 'ज्ञान बीज' से ही हमारी समस्त चेतना प्रभावित होती है। शरीर निर्वाह तथा लोक–व्यवहार में उसी की भूमिका प्रधान है। उच्चस्तरीय भूमिका में यही केन्द्र अतीन्द्रिय क्षमताओं का उद्गम स्रोत सिद्ध होता है और अन्ततः ब्रह्म और जीव को मिलाने वाली, जीवन लक्ष्य को पूर्ण करने वाली, परमानन्द प्रक्रिया भी यहीं सम्पन्न होती है। ब्रह्मरंध्र अर्थात् ब्रह्म संस्थान ब्रह्मलोक को गायत्री की ब्राह्मी शक्ति कहा गया है, उसका प्रभाव क्षेत्र ज्ञान चेतना है। गायत्री को ब्रह्माणी, ब्रह्म–पत्नी अलंकारिक दृष्टिकोण से कहा गया है। उसकी सामर्थ्य को भौतिक जगत में दुःख–दारिद्रय का विनाश करने वाले एवं दुष्ट–दुष्कृतों को परास्त करने वाले ब्रह्म दण्ड के रूप में देखा जाता है। अध्यात्म क्षेत्र में उसका स्वरूप ब्रह्मवर्चस के रूप में देखा जाता है।

गायत्री के उपरान्त सावित्री साधना का प्रसंग चलता है। सावित्री उपासना गायत्री का ही भौतिक पक्ष है। भौतिक प्रयोजनों के लिए शक्ति चाहिए। शक्ति ऊर्जा के सहारे विकसित होती है। काय–कलेवर में अवस्थित पंचतत्व, पंचप्राण ईंधन का काम दे जाते हैं और उनके सहारे भीतरी अग्नि जगाई जा सकती है। यह अग्नि प्रज्वलन ही सावित्री साधना है। सावित्री व कुण्डलिनी साधना में अंतर होते हुए भी उन्हें एक–दूसरे के समतुल्य समझा जा सकता है।

पृथ्वी के उत्तरी दक्षिणी ध्रुवों की तरह मानवी काया के भी दो आधार हैं, जिन्हें धुरी के दो छोर कह सकते हैं। इनमें से एक है ब्रह्मरंध्र स्थित सहस्रार कमल, दूसरा है मल–मूत्र छिद्रों के मध्य मूलाधार चक्र। सहस्रार चक्र को उत्तरीध्रुव और मूलाधार को दक्षिणी ध्रुव समझा जाना चाहिए। ब्रह्मरंध्र में ज्ञान बीज और जननेन्द्रिय मूल में काम बीज माना गया है। स्थूल रूप से तो शरीर के सभी अंगों में रक्त–मांस आदि भरे हैं, पर सूक्ष्म रूप से अवयवों के मध्य जो चेतना संस्थान है उसे शक्ति चक्र कहा जाता है। चक्र शृंखला में आदि और अन्त के यही दो प्रमुख हैं। शेष तो इन्हीं के मध्यान्तर में बने हुए हैं।

मस्तिष्क के 'ज्ञान बीज' से हमारी समस्त चेतना प्रभावित होती है। शरीर निर्वाह तथा लोक–व्यवहार में उसी की भूमिका प्रधान है। उच्चस्तरीय भूमिका में यही केन्द्र अतीन्द्रिय क्षमताओं का उद्गम स्रोत सिद्ध होता है और अन्ततः ब्रह्म और जीव को मिलाने वाली जीवन लक्ष्य को पूर्ण करने वाली, परमानन्द प्रक्रिया भी यहीं सम्पन्न होती है। ब्रह्मरंध्र अर्थात् ब्रह्म संस्थान, ब्रह्मलोक गायत्री की ब्राह्मी शक्ति कहा गया है। उसका प्रभाव क्षेत्र ज्ञान चेतना है। गायत्री को ब्रह्माणी – ब्रह्म–पत्नी कहा गया है। उसकी सामर्थ्य व भौतिक जगत में दुःख–दारिद्र का विनाश करने वाले 'ब्रह्मरंध्र' के रूप में दुष्ट–दुष्कलों को परास्त करने वाले ब्रह्म दण्ड के रूप में देखा जाता है। अध्यात्म क्षेत्र में उसका स्वरूप ब्रह्म वर्चस् के रूप में देखा जाता है। गीता में कही गई ब्राह्मी स्थिति और उपनिषद् में वर्णित ब्रह्म चेतना का उद्भव उन्नयन इसी महा शक्ति के माध्यम से होता है।

ब्रह्माण्डव्यापी एक चेतना शक्ति भी है, जिसे परब्रह्म कहते हैं। चिन्तन और निर्धारण उसी का है। वही योजनाएँ बनाता और व्यवस्थाएँ करता है। मनुष्य का मानस उसी की छत्रछाया में विकसित होता है। लोकाचार क्षेत्र को मन की उथली परत संभालती है, किन्तु अन्तः करण की अन्तरात्मा की, सुपरचेतना की गहन परतें इस दिव्य ब्रह्मचेतना की परिधि में ही आती हैं और वहीं से उसका सूत्र–संचालन होता रहता है। मस्तिष्क के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मध्य भाग में अवस्थित सहस्रार कमल–ब्रह्मरंध्र, इसी चेतना के मनुष्य में अवतरित होने का केन्द्र बिन्दु है। ब्रह्मा, विष्णु इसी अमृत कलश में विराजते हैं और उन देवताओं के दर्शन–सम्पर्क इसी क्षेत्र में होते हैं, जिनकी उपस्थिति स्वर्गलोक में या उससे भी ऊँचे ब्रह्म लोक आदि में मानी गई है। ब्राह्मीशक्ति चिनगारी के रूप में हमारे मस्तिष्क के मध्य में विद्यमान है। वहीं सूक्ष्म और कारण शरीरों के दो पात्र प्रतिष्ठित हैं। ब्राह्मी का मधेनु दुहने वाले की इच्छानुसार इन पात्रों में से एक को या दोनों को भरती रहती है। उसी अनुग्रह से जीव उच्चस्तरीय सशक्त भूमिकाएँ निभा सकने में समर्थ होता है। ईश्वर और जीव की मध्यवर्ती एकता, घनिष्ठता इसी चेतना गह्वर में होती है। विश्व–ब्रह्माण्ड के लोक–लोकान्तरों तक अथवा अदृश्य देवशक्तियों के साथ सम्पर्क साधने, उन्हें अनुकूल बनाने में इसी क्षेत्र को विकसित, परिष्कृत, एवं प्रशिक्षित करना पड़ता है। इस समूची विद्या को एक शब्द में "आत्मिकी" कह सकते हैं। देवताओं के क्रीड़ा–कल्लोल का यही क्षेत्र है। विष्णु उसी क्षीर सागर में शयन करते हैं। शिव की समाधि वाला कैलाश यही है। जीवात्मा का उत्थान–पतन इसी क्षेत्र में निर्धारित होता रहता है।

व्यक्ति सत्ता दो भागों में विभाजित है– एक स्थूल दूसरी सूक्ष्म। स्थूल दृश्यमान काया को कहते हैं और सूक्ष्म अदृश्य प्राण सम्पदा को। शरीर रसायनों का बना है। उसकी संरचना में विशुद्ध रूप से भौतिक घटकों का समावेश हुआ है। उसमें काम करने वाली क्रिया शक्ति को प्रकारान्तर से जैव ऊर्जा कहते हैं। उसे ओजस्–तेजस्–वर्चस् के रूप में आँका और नापा भी जा सकता है। शरीर के इर्द–गिर्द कुहरे जैसा छाया रहने वाला तेजोवलय इसी का प्रतिबिम्ब है।

जिस प्रकार ब्रह्मी चेतना, अमृत कुण्ड, ब्रह्मरंध्र मस्तिष्क मध्य में है, उसी प्रकार प्रकृतिगत क्रियाशक्ति प्राण ऊर्जा का भाण्डागार मूलाधार चक्र में है। मूलाधार चक्र जननेन्द्रिय मूल में कुछ ऊपर उठकर नाभिचक्र के पीछे भीतरी मध्य भाग में है। समझा जा सकता है कि मेरुदण्ड का अन्त जहाँ हुआ है, वह विचित्र गुच्छक मूलाधार चक्र है। शक्ति का निवास इसी उद्गम में है। वह समस्त शरीर फैलती है, विभिन्न अवयवों का सूत्रसंचालन करती है। मनःक्षेत्र में उल्लास और साहस उसी की देन है। इस प्रकार वह न्यूनाधिक मात्रा में छायी तो समस्त शरीर पर रहती है और शरीर सम्बन्धी विभिन्न क्रियाकलापों को भी संभालती है। उसका अति प्रत्यक्ष कार्य यौनाचार है। इसी क्षेत्र में कामोत्तेजना उत्पन्न होती है। मस्तिष्क उसकी तृप्ति के साधन ढूँढ़ता है। उपलब्ध न होने तक बेचैन रहता और स्खलन के उपरान्त कुछ काल के लिए शान्त हो जाता है, किन्तु बाद में फिर उत्तेजना उभर आती है और कामुक कल्पनाओं में भटकने लगती है। शांति के लिए बार–बार पुनरावृत्ति करनी पड़ती है। वंशवृद्धि इसी प्रकार होती है। नर–नारी प्रकृति के इसी प्रयोजन की पूर्ति में मरते–खपते रहते हैं। हँसने और रोने का जैसा मिश्रित संयोग इस प्रजनन कृत्य के साथ जुड़ा है। उसे देखते हुए विधाता की उलटबाँसी पर हँसे बिना नहीं रहा जाता।

प्रजनन प्रकरण को छोड़ कर इस प्राण ऊर्जा के उच्चस्तरीय प्रयोजनों की चर्चा यहाँ की जा रही है, यदि वह न्यूनमात्रा में हो, तो मनुष्य डरपोक, आलसी, उदास और नपुंसक प्रकृति का होने लगता है, युवावस्था में भी उसे आन्तरिक बुढ़ापा घेर लेता है; किन्तु यदि उसका अनुपात सामान्य हो, तो उसे एक समर्थ व्यक्ति की भूमिका निभाते हुए देखा जा सकता है।

मूलाधार स्थित प्राण ऊर्जा का मिलन–सम्पर्क मस्तिष्कीय ऊर्जा के साथ होता रहता है। इसके आवागमन का मार्ग मेरुदंड है। मेरुदंड को मस्तिष्क का पुच्छ भाग ही कहना चाहिए। शरीर में फैले ज्ञानतंतु इसी के माध्यम से निस्सृत होते हैं। उन्हें संदेश और संकेत तो मनः क्षेत्र से मिलते हैं, किन्तु कार्य कर सकने की क्षमता कुण्डलिनी के विद्युत भंडार से उपलब्ध होती है। उसकी भूमिका जेनरेटर या बैटरी स्टोर डायनमों जैसी होती है। कभी–कभी वहाँ से चुम्बकीय क्रियाकलाप भी होते हैं। ए. सी. और डी. सी. करेण्टों की तरह खींचने और फेंकने की क्रियाएँ भी आवश्यकतानुसार उत्पन्न होती हैं। यह ज्वार भाटे शरीर और मनःक्षेत्र में आगे बढ़ने और पीछे हटने के संकेत देते हैं। मैत्री और विग्रह, प्रेम और घृणा, सहयोग और आक्रमण इसी क्षेत्र के उतार–चढ़ावों के खेल हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

काय–कलेवर के इस लम्बे और भारी ढकोसले में संचालक सूत्र दो ही हैं । मस्तिष्क का अमृत कुण्ड जो भावना, कामना, आस्था, प्रज्ञा, श्रद्धा, निष्ठा आदि का उद्गम है । इस प्राण ऊर्जा का संवाहक कुण्डलिनी चक्र, जो मूलाधार में अवस्थित रहकर मौलिक स्तर की ऊर्जा काया में तथा उसके सम्पर्क क्षेत्र में बखेरता रहता है ।

आत्म विज्ञान में उपरोक्त दोनों ही विशिष्ट केन्द्रों के बारे में बहुत कुछ कहा और समझाया गया है, किन्तु पुरातन कथन शैली ऐसी है, जिसमें अलंकारिक कवित्व का अत्यधिक समावेश हुआ है । संभव है सोचने वालों ने सोचा हो कि आत्म विज्ञान के ज्ञाताओं को रहस्यवाद के आधार पर तथ्यों तक पहुँचने की मानसिक विशेषता भी होनी चाहिए । इसे कला–कौतूहल का सम्मिश्रण भी कह सकते हैं । जब शास्त्र और दर्शन जैसे विचार विज्ञान से सम्बन्धित विषयों को छन्दबद्ध अलंकारिक रूप से लिखा गया है; तो आत्म विज्ञान को उस कला–सौन्दर्य से वंचित क्यों रखा जाता । देव कुण्ड–अमृत सरोवर, मस्तिष्क और शक्ति कुण्ड–प्राणऊर्जा भण्डार कुण्डलिनी क्षेत्र की विवेचना में उसी क्रम का समावेश क्यों न किया जाता ? किया भी गया है । हुआ भी है ।

विज्ञान नर की अभिरुचि का विषय है और कला नारी का । चूँकि आत्म विज्ञानियों में से अधिकांश नर रहे हैं, जिससे उनके लिए आप्त पुरुषों ने यही उचित समझा कि उस कथन को नारी अलंकार के साथ जोड़कर अधिक आकर्षक बनाया जाय । शक्ति शब्द ऐसे भी स्त्रीलिंग हैं । इसलिए उसकी विवेचना में अलंकार और लिंग नारी वर्ग के किये गये हैं, तो उसमें कुछ विसंगति नहीं समझी जानी चाहिए ।

जहाँ नारी वर्ग की साधना का विषय है, वहाँ पुरुष वाचक प्रतिष्ठापना भी हुई है । पर उनका अनुपात अपेक्षाकृत कम ही है । नारियाँ अपने सामान्य जीवन क्रम में उस मार्ग पर अधिक दूर तक चल भी नहीं पातीं, गृह–व्यवस्था का संचालन ही उनके लिए एक पूरा तपोवन बन जाता है । फिर भी उनके लिए निषेध या प्रतिबंध नहीं है । अरुन्धती, अनुसुइया, सुकन्या, घोषा, अपाला, इला आदि की तरह उनके लिए भी ब्रह्मवादिनी स्तर का पुरुषार्थ करने की छूट है । मैडम क्यूरी की तरह नारी आत्म विज्ञान में भी अपने चरण बढ़ा सकती है ।

प्रसंग यहाँ बहुलता वाले नरपक्ष का चल रहा है । उसके लिए उपरोक्त दोनों शक्तियों के साथ सम्बन्ध स्थापित करने के लिए शक्तियों के नारी रूपों की प्रतिष्ठापना की गई है ।

मस्तिष्क क्षेत्र के देवता माने गये हैं–ब्रह्मा। ब्रह्मा की पौराणिक मतानुसार दो पत्नियाँ हैं । एक गायत्री, दूसरी सावित्री । गायत्री को ब्राह्मी, सरस्वती एवं प्रज्ञा भी कहते हैं । सात्विक प्रयोजनों के लिए आत्मोत्कर्ष, ऊर्ध्वगमन एवं मोक्ष, आत्म साक्षात्कार ब्रह्मनिर्वाण आदि के लिए गायत्री की उपासना की जाती है । सावित्री पाँच मुखी है । पाँच तत्व, पाँच प्राण का प्रतीक मानकर उसे सावित्री कहा गया है । वह पंचमुखी दशभुजी है । दशभुजी का अर्थ है दश इन्द्रियों की बलिष्ठता का केन्द्रीकरण । पाँच मुखों का तात्पर्य है–अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय और आनन्दमय कोश । कोश कहते हैं खजाने को । बहुमूल्य मणिमुक्तकों का, ऋद्धि–सिद्धियों का खजाना । इनके सहारे शाप, वरदान देने की क्षमता प्राप्त होती है । यह दोनों ही भौतिक प्रयोजन हैं । इसलिए गायत्री को आत्मिकी और सावित्री को भौतिकी कहा गया है ।

ऊर्जा पक्ष के अधिष्ठाता शिव माने गये हैं। उनका त्रिशूल ताप, शब्द और प्रकाश तरंगों के लहलहाते ऊर्जा भण्डार का प्रतीक है । शिव की दो पत्नियाँ हैं एक पार्वती दूसरी महाकाली । महाकाली को दुर्गा, चण्डी, भवानी, रौद्री आदि नामों से भी पुकारते हैं । यही कुण्डलिनी भी है ।

शिव और पार्वती के विवाह से दोनों का एकाकीपन दूर हुआ था । दोनों के संयोग से दो पुत्र हुए एक सिद्धिदायक गणेश । दूसरे असुर निकंदन कार्तिकेय । एक से धर्म की स्थापना होती है दूसरे से अधर्म के विनाश की । गणेश का वरदान 'प्रज्ञा' और कार्तिकेय का अनुदान 'शक्ति' है । कार्तिकेय के छै मुख हैं । इन्हीं

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को षट्चक्र कहते हैं। इस स्कन्द अवतरण को कुण्डलिनी महाशक्ति से सम्बन्धित षट्चक्र समूह और उसके प्रभाव का वर्णन ही समझना चाहिए।

जननेन्द्रिय मूल में अवस्थित आधार अग्नि का नाम ही कुण्डलिनी है, शिव रूप सहस्रार के जाग्रत, प्रफुल्लित होने पर उसका जो पराग मकरन्द निर्झरित हुआ उसे शिव 'रेतस्' कहना चाहिए। कुण्डलिनी आधार अग्नि ने उसे ग्रहण किया। छै कृत्तिकाओं ने उसे परिपक्व किया। यह छै कृत्तिकाएँ छै चक्र ही हैं। छै कृत्तिकाओं द्वारा परिपोषित छै मुख वाले कार्तिकेय को अलंकार के रूप में षट्चक्रों का प्रभाव परिणाम ही माना जाना चाहिए।

पार्वती सौम्य हैं। स्वयं कठोर तप करके उन्होंने शिव को वरण किया था। किन्तु चण्डी ऐसे ही शिव के गले बँध गई। उसे प्रजापति ने देवताओं की शक्ति एकत्रित करके सृजा था और दैत्यों का दलन संभव कराया था। इसके उपरान्त जब वे अपनी दसों दिशाओं में ज्वाला बनकर विचरण करने लगी तो नियमन के लिए उन्हें शिव के गले बाँध दिया गया। वहाँ भी वे पार्वती की भाँति शिव के चरणों में नहीं गई। नन्दी पर नहीं बैठीं। उनने अपना वाहन सिंह रखा और शिव को नीचे पटक कर उनकी छाती पर चढ़कर कल्लोल करने लगी है। यही है महाकाली–महाचण्डी कुण्डलिनी, जिसका कार्य दमन है। वाममार्ग में इसी का प्रयोग होता है।

कुण्डलिनी की शक्ति और महिमा पर प्रकाश डालने वाले अनेकों शास्त्र वचन उपलब्ध होते हैं। यथा

या देवता भोग करीसा मोक्षायन कल्पते।
मोक्षदा नहि भोगाय त्रिपुरा तु द्वय प्रदा॥

–त्रिपुरा तन्त्र

जो देवता भोग देते हैं, वे मोक्ष नहीं देते। जो मोक्ष देते हैं वे भोग नहीं देते। पर कुण्डलिनी दोनों प्रदान करती है।

'कारण शरीर' का देवता ब्रह्मा 'सूक्ष्म शरीर' का अधिपति विष्णु और 'स्थूल शरीर' का अधिष्ठाता शिव है। यह अधिष्ठाता देव सामान्य व्यक्तियों के जीवन में गाँठ की तरह बँधे हुए एक कोने में पड़े रहते हैं। पर जब कुण्डलिनी जागरण की तीन अग्नियाँ प्रज्वलित होती हैं तो उनका प्रभाव तीनों शरीरों पर पहुँचता है और उनके प्रसुप्त तीनों देवता सजग सक्षम सक्रिय होकर अपना प्रकाश एवं प्रभाव प्रदर्शित करने लगते हैं। जिन तीन शरीरों का साधारणतया आभास अनुभव नहीं होता वे अपने अधिष्ठाता देवताओं के जागृत होने पर स्थूल शरीर से भी अधिक प्रत्यक्ष एवं समर्थ दिखाई देने लगते हैं। ब्रह्म ग्रन्थि, विष्णु ग्रन्थि और रुद्र ग्रन्थि के खुल जाने से समस्त अभावों और शोक सन्तापों के भव बन्धनों से भी छुटकारा मिल जाता है और साधक की प्रतिभा में देवत्व का प्रकाश स्पष्ट परिलक्षित होता है।

गायत्री–सावित्री के तीन चरण इन तीन ग्रन्थियों–तीन शरीरों की और इंगित करते हैं। गायत्री ओर सावित्री की समन्वित साधना चेतना पर चढ़े कषाय कल्मषों का निवारण करती है, परिणाम स्वरूप उससे आत्मसत्ता के दिव्य स्वरूप में और निखार आता है। भौतिक क्षेत्र में आत्म चेतना का प्रभाव उत्पन्न करने के लिए सावित्री साधना का उपयोग करना पड़ता है। आत्मा को संसारी वर्चस्व बनाने के लिए शरीर धारण करना पड़ता है। गायत्री रूपी आत्मा को संसारी कर्तव्यों की पूर्ति के लिए जिस सामर्थ्य की आवश्यकता पड़ती है उसे सावित्री साधना से उत्पन्न किया जाता है।

उपर्युक्त पंक्तियों में सावित्री साधना द्वारा कुण्डलिनी जागरण की चर्चा की गयी है जो मूलतः उनके लिए है, जो भौतिकी के माध्यम से आत्मिकी से साध्य प्रयोजन उच्चस्तरीय उपलब्धियों हेतु पूरा करना चाहते हैं, जो शक्ति के पुजारी हैं एवं सोचते हैं कि शक्ति की महत्ता अधिक है। देवासुर संग्राम में असुरों ने शक्ति जो उपार्जित की थी, उसे निकृष्ट प्रयोजनों में गंवाया एवं फिर विष्णु भगवान की या उच्चस्तरीय आत्मशक्ति का प्रयोग कर उनका दमन किया जाता रहा। देवत्व के साथ जब शक्ति साधना जुड़ती है तभी फलीभूत होती है। ऐसी उपलब्धि शाश्वत होती है एवं दूरगामी दृष्टि से सदैव जन साधारण के लिए हितकारी भी। दैत्यों की सफलता जो प्रारम्भ में दिखाई देती है हथेली पर सरसों जमा देने की बाजीगरी की तरह ही मायावी सिद्ध होती है। शुक्राचार्य कुण्डलिनी विद्या के निष्णात् रहे हैं, उन्हीं ने अपने शिष्यों, असुरों को इसका मार्गदर्शन एवं प्रशिक्षण दिया था। बृहस्पति देव गुरु रहे हैं। उन्होंने योगी, तपस्वी और ब्रह्मवेत्ता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

श्रेयार्थियों को गायत्री मंत्र से प्रारम्भिक सोपान पर चलाकर सुपात्र बनाया, देवोपम बनाया । उन्होंने भी कुण्डलिनी साधना के प्रयोगों का शिक्षण दिया पर उसका नियोजन सदैव श्रेष्ठता के संवर्धन हेतु परहितार्थाय ही होता रहा । जिन आत्मवेत्ताओं के सामने भौतिक समस्याएँ थीं, उन्हें प्रारंभिक शिक्षण के उपरान्त सावित्री साधना का अवलम्बन लेने के लिए कहा गया । दधीचि, भागीरथ, लोमश, शृंगी, विश्वामित्र आदि ने सावित्री साधना से ही भौतिक पुरुषार्थ सम्पन्न किए थे । वे किए गए परमार्थ प्रयोजनों के लिए ही थे, पर साधना का मार्ग–उपक्रम–विधि–विधान तद्नुसार बदला गया । अर्जुन, हनुमान जैसों को भी सांसारिक विग्रह का शमन करना पड़ा । उन्हें भी अध्यात्म विज्ञान के अन्तर्गत भौतिकी शाखा सावित्री–कुण्डलिनी साधना का पथ अपनाना पड़ा । हमारी अपनी साधना भी इन्हीं उद्देश्यों हेतु नियोजित हुई एवं सही मार्ग अपनाने पर प्रतिफल भी वैसे मिले ।

जब सावित्री साधना व कुण्डलिनी जागरण का सम्मिलित प्रयोग होता है तो चमत्कारी परिणाम मिलते हैं । बिजली कुछ ही सेकण्डों में अपना काम कर दिखाती है । विद्युत शवदाह गृहों में यह कृत्य सरलतापूर्वक सम्पन्न हो जाता है, जब कि अग्नि पर दाल–चावल पकाने तक में देर लगती है । आध्यात्मिक दिव्यता को क्षति भी न पहुँचे एवं सुपात्र साधक अपने गन्तव्य को भी शीघ्र पा ले, उसके लिए यही विधि श्रेयस्कर है । विशुद्ध कुण्डलिनी साधना तंत्र–मार्ग–वाममार्ग के अन्तर्गत आती है । जब सावित्री, गायत्री व कुण्डलिनी का समन्वय हो जाता है तो योगमार्ग–दक्षिण मार्ग का प्राधान्य हो जाता है ।

भगवान को बहुधा विकट प्रसंगों में वाराह, नृसिंह, परशुराम आदि का रूप धारण करना पड़ा है । शिवजी को भोलेबाबा, औघड़दानी कहा जाता है पर उन्होंने भी दक्ष प्रजापति पर क्रुद्ध होकर वीरभद्र को उत्पन्न किया व दक्ष के अहंकार को मटियामेट किया था । ये आपत्तिकालीन प्रसंग हैं, जिनमें आवश्यकता को देखते हुए शमन–मर्दन के प्रयोग किए जाते हैं ।

अवतार शक्तियाँ एवं उच्चस्तरीय आत्माएँ परिस्थितियाँ देखते हुए यह कार्य दूसरों से कराती हैं, ताकि अपनी शक्ति क्षीण न हो । विश्वामित्र अपने यज्ञ की रक्षा स्वयं कर सकते थे पर क्रोध के आवेश में वर्चस्–शक्ति नष्ट न कर उन्होंने ताड़का, सुबाहु, मारीचि से निपटने के लिए राम–लक्ष्मण जैसे क्षत्रिय बालकों को ही अग्रिम पंक्ति में रखा, बला–अतिबला विद्या सिखाकर उनसे रक्षा का कार्य कराया । समर्थ रामदास ने छत्रपति शिवाजी से और चाणक्य ने चन्द्रगुप्त से वे कार्य कराये थे,जो यदि वे चाहते तो स्वयं भी कर सकते थे । यहाँ प्रश्न यही आता है कि ब्रह्मतेज अधिक मूल्यवान है । उस उपार्जित विभूति को उच्च प्रयोजनों के लिए सुरक्षित रखा जाय, विग्रह हेतु अपव्यय न किया जाय । इस प्रकार सावित्री व कुण्डलिनी की समन्वित साधना से अपने और पराये सामान्य स्तर के संकट निपटाये जा सकते हैं और औचित्य की सीमा के अन्तर्गत वैभव सामर्थ्य को भी बढ़ाया जा सकता है ।

एक व्यक्ति की साधना उपार्जित सामर्थ्य से अन्य अनेक एवं यहाँ तक कि वातावरण को भी बदला, सारे परिकर में मंथन कर आमूलचूल परिवर्तन किया जा सकता है । यह सत्य है । अन्य दानों की तरह शक्ति दान भी होता है । आत्मशक्ति वाले किसी समर्थ से अपने लिए शक्ति का अनुदान माँगकर उसे उचित कार्यों में खर्च कर सकते हैं, इसका सृष्टि के नियमों में वैसा ही प्रावधान है जैसा कि बैंकों से ब्याज लिया जाता है । जिस प्रकार धनी व्यक्ति अपनी धन सम्पदा का एक अंश दान करते रहते हैं । उसी प्रकार, योगी समष्टिगत कठिनाई आने पर सारी वसुधा के हित हेतु अपना उपार्जन दूसरे सत्पात्रों को भी दान करते रहते हैं । कुटुम्ब में कमाने वाला एक होता है । सभी अपने–अपने हिस्से के छोटे बड़े काम स्थिति के अनुरूप करते रहते हैं, पर यह आवश्यक नहीं कि उन्हें अपने लिए अलग–अलग कमाना पड़े, अपनी आवश्यकता का सरंजाम जुटाना पड़े ।

कुण्डलिनी जागरण अति कठिन विधा है । इसे बिजली के साथ खेलना कह सकते हैं । बिजली के साथ जान जाने का जोखिम भी बना रहता है । कुण्डलिनी जागरण प्रयोगों में मार्गदर्शन के, पात्रता के अभाव में कई व्यक्ति पागल होते देखे गए हैं । कईयों को पक्षाघात हुआ व कई जान से हाथ धो बैठे हैं । मोटर ड्राइविंग की किताब पढ़कर कोई गाड़ी चलाने चल पड़े तो इसका परिणाम अनर्थ में भी हो सकता है । कुशल, सीखा हुआ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चालक गाड़ी भी संभालता है और बैठे यात्रियों को अभीष्ट स्थान पर पहुँचा देता है। कुण्डलिनी जागरण का माहात्म्य, ऋद्धि-सिद्धियों के घटना प्रसंग, प्रतिफल आदि जान लेने, सुन-समझ लेने के उपरान्त ऐसी उतावली नहीं करनी चाहिए कि इस कार्य को अति सरल समझ लिया जाय और बिना किसी मार्गदर्शक की सहायता के अपने आप ही कुछ उलटा-सीधा करने लग जायें। ऐसे प्रसंगों में फुदक कर अगली पंक्ति में जा खड़े होने में रोमांच तो है, साहस का काम भी है, पर उसमें खतरा भी कम नहीं है।

गायत्री, सावित्री व कुण्डलिनी के समन्वित प्रसंगों की चर्चा साधना प्रयोजनों हेतु इतनी सावधानी से की जानी इसीलिए आवश्यक है कि उस दिशा में लोगों का आकर्षण कम नहीं है। गुह्य विज्ञान होने के नाते एक आवरण उस पर पड़ा है। कुण्डलिनी विज्ञान का सिद्धान्त, स्वरूप व व्यवहार समझने की बात उचित भी है, आवश्यक भी। क्योंकि जब ऐसी विधाओं का लोप होने लगता है तो सूत्र संकेतों की कड़ी मिल जाने पर बुद्धिमान व्यक्ति तो शृंखला को अपनी सूझ-बूझ के आधार पर सुलझा लेते हैं। यदि कुछ भी अता-पता न हो तो नये सिरे से अन्वेषण, आविष्कार निश्चित ही कष्टसाध्य समयसाध्य है। अस्तु विज्ञान की महत्वपूर्ण धाराओं की जानकारी होने में हर्ज नहीं। हर्ज मात्र प्रयोग करने में है। शब्दबेधी बाण यदि उलट पड़े और अपनी ही आवाज को लक्ष्य मान ले तो वह प्रहार आत्मघाती ही होगा।

कुण्डलिनी विधा को साधारण पूजा पत्री स्तर की खिलवाड़ न मानकर यही मान्यता बनानी चाहिए कि इसके लिए पात्रता अनिवार्य है, प्रारम्भिक साधना की पृष्ठभूमि भी होना अभीष्ट है एवं जहाँ तक प्रयोग का सम्बन्ध है, वह निष्णातों के हाथ में ही रहे।

कुण्डलिनी जागरण-गायत्री की उच्चस्तरीय तप साधना

कुण्डलिनी साधना गायत्री उपासना का उच्चस्तरीय विधान है। पंचकोषों का अनावरण, गायत्री की पंचमुखी साधना के अन्तर्गत आता है। उसकी चरम परिणिति कुण्डलिनी साधना में है। इसे गायत्री और सावित्री का मिलन कह सकते हैं। मूलाधार की भौतिक ऊर्जा जब सहस्रार की दिव्य जागृति के साथ मिलती है तो उसका समन्वय संगम ऐसी आत्म-शक्ति उत्पन्न करती है, जिसे योगाभ्यास की पूर्णता कहा जा सकता है। गायत्री ब्रह्म विद्या और सावित्री शक्ति चण्डी। दोनों के मिलने की विद्या कुण्डलिनी जागरण कहलाती है। इसी विधान को ब्रह्मवर्चस् भी कहा गया है। ब्रह्मवर्चस साधना में कुण्डलिनी जागरण की प्रक्रिया भी सम्मिलित है।

साधना विज्ञान के अन्तर्गत कुण्डलिनी की चर्चा प्रधान होती रहती है और उसे अद्भुत एवं प्रचण्ड दिव्य शक्ति के रूप में प्रतिपादित किया जाता रहा है। कुण्डलिनी के स्वरूप विज्ञान एवं साधना विज्ञान को समझने से पूर्व यह जान लेना आवश्यक है कि यह शक्ति है क्या ? उसका उद्गम स्रोत क्या है ? उसकी साधना का क्या प्रयोजन है और उस प्रयास से किस प्रकार क्या लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

कुण्डलिनी कहते हैं गोलाई की आकृति को। गोलाई की आकृति इस समूचे ब्रह्माण्ड की है। छोटे से छोटा परमाणु भी गोल है। कोई चाहे तो ब्रह्माण्ड सत्ता अथवा जीव सत्ता को कुण्डलिनी कह सकता है। ग्रह नक्षत्र गोल है। पदार्थों के परमाणु और प्राणियों के जीवाणु भी गोल हैं। इस गोलाई को कुण्डलिनी समझा जा सकता है। यह मोटी व्याख्या हुई अब इससे अधिक आगे चलना होगा। ग्रह नक्षत्र गतिशील हैं वे एक नियत कक्षा में परिभ्रमण करते हैं। आगे बढ़ते और गोल गति से घूमते हुए बार-बार अपनी कक्षा में परिभ्रमण करते रहते हैं। यह परिभ्रमण गोलाकार होने से कुण्डलिनी है। जीव जन्मता, बढ़ता, मरता और फिर उसी क्रम की पुनरावृति करता है, यह कुण्डलिनी चक्र ही हुआ।

कुण्डली मारकर सर्प बैठता है। इसीलिए उसी की उपमा प्रायः काम में लाई जाती है। पृथ्वी शेषनाग के फन पर रखी हुई है। आकाश तत्व का देवता अनन्त महा सर्प है। इस पौराणिक मान्यता में विश्व ब्रह्माण्ड की तथा पृथ्वी की स्थिति का निरूपण है। पाताल को शेषलोक कहते हैं। ऊपर के ब्रह्म लोक पर भी शेष सर्प का ही आधिपत्य है। विष्णु भगवान सर्प पर सोये हुए हैं। शिव लोक में भी सर्प साम्राज्य है। वे भगवान शंकर के अंग-अंग में लिपटे हुए हैं। इस प्रकार अधः लोक और ऊर्ध्व लोक में पृथ्वी के ऊपर और नीचे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

सर्प सत्ता का ही अधिपत्य है। इस विवेचन से कुण्डलिनी शक्ति के स्वरूप की आरम्भिक जानकारी मिलती है।

जो ब्रह्माण्ड में है वही पिण्ड शरीर में है। मस्तिष्क ब्रह्मलोक है और मूलाधार भू-लोक। दोनों पर सर्प-शक्ति का आधिपत्य है। मस्तिष्क में सहस्रार चक्र-सहस्रफन वाला-विष्णु शैया के लिए प्रयुक्त होने वाला महा सर्प है। सर्पिणी कुण्डलिनी जननेन्द्रिय मूल में है। प्राणी के शरीर की उत्पत्ति यहीं से होती है। नारी जननेन्द्रिय की आकृति कुण्डाकार होती है। नर और नारी दोनों के ही जननेन्द्रिय में एक सूक्ष्म गट्ठर है। उसका कन्द या कुण्ड नाम से अध्यात्म शास्त्रों में विस्तृत वर्णन किया गया है। इसी में कुण्डलिनी शक्ति का निवास माना गया है। उसे सुप्त सर्पिणी की उपमा दी गई है। वस्तुतः यह विद्युत धारा है, जो सामान्यतया प्रजनन प्रयोजन पूरा करने का सरंजाम जुटाती है। साथ ही प्राणी के शरीर की स्थिरता एवं प्रगति के लिए जो कुछ आवश्यक है उसे शक्ति रूप में उत्पन्न करती है। शक्ति का ही विकसित रूप पदार्थ है। शरीर के अवयवयों रासायनिक पदार्थों से बने हैं, पर मूलतः वे शक्ति रूप हैं। शक्ति ही सघन होकर रासायनिक तथा दूसरे पदार्थों का रूप धारण करती है और उन्हीं के संयोग से शरीर बन जाती है। संक्षेप में शरीर रचना का मूल तत्व, मूल आधार एक विद्युत शक्ति के रूप में ही उद्भूत होता है। रति क्रिया के घर्षण से यही विद्युत उत्पन्न होती है, उसी से शुक्राणु एवं डिम्ब कीट मिलकर गर्भ धारण का सुयोग बनाते हैं। शरीर गत सभी हलचलों, क्षमताओं और विशेषताओं का श्रेय जिन गुण सूत्रों को दिया जाता है, उनमें जिस वंशानुक्रम सम्पदा को खोजा जाता है वह वस्तुतः एक सचेतन विद्युत की ही प्रतिक्रियायें हैं। यह प्राण विद्युत किसी शरीर का उत्पादन करने से लेकर उसका आजीवन बना रहने वाला ढाँचा खड़ा करती है। इस ढाँचे में शरीर और मन की ही संरचना सम्मिलित है। संक्षेप में प्राण धारियों की काय कलेवर का अस्तित्व, स्वरूप एवं भविष्य निर्धारण करने वाली प्राण विद्युत का नाम कुण्डलिनी है। यों तो यह समस्त शरीर में संव्याप्त है किन्तु उसका केन्द्र ढूँढ़ना हो तो वह जननेन्द्रिय मूल में अवस्थित एक सूक्ष्म संस्थान मूलाधार चक्र से उत्पन्न होती पाई जायेगी।

कुण्डलिनी का दूसरा सिरा मस्तिष्क मध्य ब्रह्म रंध्र में है, यह चेतना मूलक है। चेतना यों समस्त शरीर में संव्याप्त है पर उसका संचार केन्द्र मस्तिष्क ही है। प्राण विद्युत का ज्ञान परक सिरा मस्तिष्क में और शक्ति परक सिरा मूलाधार में है। दोनों प्रायः प्रथक ही रहते हैं। दोनों सिरे अपने-अपने सीमित प्रयोजनों को ही पूरा कर पाते हैं। प्रथक-प्रथक उनकी शक्ति इतनी ही है कि अपने स्थानीय उत्तरदायित्व को वहन कर सकें। इससे सामान्य जीवन धारण भर किये रहना और दैनिक क्रिया-कलापों का चलते रहना भर सम्भव हो पाता है। बिजली के दो तार अलग-अलग रहें तो उनसे कोई विशेष प्रयोजन पूरा नहीं होता, पर जब वे मिल जाते हैं तो उस संयोग से प्रचण्ड प्रवाह उत्पन्न होता है। कुण्डलिनी जागरण की साधना में प्राण विद्युत के दोनों सिरों को आपस में मिला देना है। इस मिलन का चमत्कार वैसा ही होता है- जिस प्रकार नर-नारी के मिलन से एक नये परिवार का आरम्भ होता है। कुण्डलिनी जागरण में मूर्छना की समाप्ति और चेतना की अभिवृद्धि ही नहीं दो शक्ति ध्रुवों की मिलन प्रक्रिया भी सम्मिलित है।

पृथ्वी की धुरी उत्तरी ध्रुव में है। वहाँ से वह अन्तःग्रही शक्तियों के विशाल भण्डार में से अपने लिए उपयोगी और आवश्यक वस्तुयें खींचती खरीदती रहती है। उपयोग करने के उपरान्त जो कचरा-छिलका-बच जाता है, उसे दक्षिण ध्रुव में होकर फेंक देती है। सामान्यतया खींचने का केन्द्र महत्वपूर्ण लगता है और फेंकने का घटिया। पर बात वैसी है नहीं। फेंकने की व्यवस्था न रहने पर संचय की उपयोगिता ही न रहेगी। गाय घास खाती तो रहे पर दूध दुहा न जाय तो फिर थनों को ही नहीं उसके सारे शरीर को हानि पहुँचेगी। मल विसर्जन की शक्ति न रहने पर भी वैसा ही संकट उत्पन्न होगा जैसा कि भूख न लगने पर। अन्तरिक्षीय राकेट फेंकने में जो शक्ति खर्च होती है वह सर्व विदित है। पृथ्वी की आकर्षण शक्ति को चीरकर राकेट का बाहर निकलना एक बड़ा काम है। उसे शक्तिशाली प्रेषण केन्द्र पर प्रचुर ऊर्जा संचय करके ही पूरा किया जाता हैं। इसलिए महत्व इसका है कि गेंद को दूर तक फेंकने में कितनी शक्ति लगानी पड़ती

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । खींचने की शक्ति का महत्व तो सर्व विदित है ही । कुँए से पानी निकालने में – जमीन की गहरी परतों से तेल–कोयला आदि खनिज निकालने में, कितनी सामर्थ्य का उपयोग करना पड़ता है, उसे सभी जानते हैं । इस विवेचन से उत्तरी ध्रुव और दक्षिणी ध्रुव की प्रक्रिया का महत्व और उन केन्द्रों में प्रयुक्त होने वाली प्रचण्ड सामर्थ्य का स्वरूप सहज ही समझ में आ जाता है ।

पृथ्वी की तुलना मानवी काया से की गई है । अध्यात्म विवेचना में उसे भू–लोक भी कहा जाता है । ब्रह्माण्ड विशाल विश्व को कहते हैं और पिण्ड पृथ्वी को । इसी प्रकार ब्रह्म और जीव को समझा जाना चाहिए । सौर मण्डल और परमाणु घटक की स्थिति एक जैसी है । दोनों के भीतर समान सिद्धांत कार्यान्वित होते और समान स्तर के क्रिया–कलाप चलते हैं । इसी प्रकार विराट् ब्रह्म और मानव अण्ड की स्थिति समझी जानी चाहिए । पृथ्वी विराट् है और मानवी काया उसकी प्रतिकृति है । जीव ब्रह्म का अंश है और काया अपनी इसी पृथ्वी की रीति–नीति अपनाये हुए है ।

कहा जा चुका है कि उत्तरी ध्रुव की तुलना मानवी मस्तिष्क मध्य से की गई है और दक्षिणी ध्रुव की जननेन्द्रिय मूल से । मस्तिष्क मध्य को ब्रह्म रंध्र का सहस्रार कहते हैं । जननेन्द्रिय मूल को मूलाधार । कुण्डलिनी वह शक्ति है, जिसका मूलाधार और सहस्रार के बीच अधिक शक्तिशाली प्रवाह चल पड़े तो जीव और ब्रह्म के बीच एकता से जो महान सम्भावनायें बन सकती हैं, वे दीखने लगें । किन्तु सामान्यतया यह प्रवाह बहुत ही न्यून रहता है । दोनों सिरे अपने–अपने सीमित स्थानीय कार्यों में ही लगे रहते हैं । उनके बीच आदान–प्रदान की प्रक्रिया प्रायः नहीं जितनी ही चल पड़ती है ।

मूलाधार की क्षमता प्रजनन के लिए उत्साह एवं सामर्थ्य जुटाने में लगी रहती है और उसी प्रवाह में पूर्ति कर पाती है । सहस्रार की सामर्थ्य भी उपार्जन, उपभोग एवं व्यवहार व्यवस्था में भी अपनी शक्ति को समाप्त कर लेती है । बहुत बार तो दोनों ही केन्द्र अपने जिम्मे आये हुए काम को ही निपटाने में थकान अनुभव करने लगते हैं । सामान्य स्थिति यही है । इस स्थिति को बदलकर इन केन्द्रों में प्रचुर मात्रा में स्तरीय सामर्थ्य उत्पन्न करने के लिए जो विशेष प्रयत्न करने पड़ते हैं, उन्हें कुण्डलिनी जागरण कहते हैं । मिट्टी के ढेले को तो हाथ से हटाया या पैर से तोड़ा जा सकता है, पर यदि उसी ढेले के भीतर रहने वाले परमाणुओं में से एक का विखण्डन करके अजस्र सामर्थ्य उत्पन्न करनी हो तो उसके लिए विशिष्ट साधन जुटाने होंगे । जननेन्द्रिय और मस्तिष्क के शारीरिक केन्द्र अपना–अपना क्रम सामान्य रूप से निपटाते रहते हैं । उनसे कोई मोटी गड़बड़ी पड़ती है तो उसे दवादारू से निपटा दिया जाता है । यदि इन केन्द्रों में छिपी बीज शक्ति को उभारना और उच्चस्तरीय बनाना हो तो फिर सामान्य से आगे बढ़कर असामान्य उपाय उपचार अपनाने होंगे । इसी असामान्य उपाय उपचार को कुण्डलिनी जागरण की साधना कहते हैं ।

कुण्डलिनी का निवास मूलाधार चक्र में माना जाता है । उसे प्राण ऊर्जा–जीवनी शक्ति–सृजन प्रेरणा, जिजीविषा–उमंग आदि के रूप में समझा जा सकता है । उसका अनवरत प्रयास काया के समस्त भौतिक प्रयोजनों में आवश्यक समर्थता एवं प्रेरणा उत्पन्न करने में लगा रहता है । उन्हीं में से एक उत्साह, काम, क्रीड़ा, विनोद एवं खिलाड़ी जैसे आनन्द की अनुभूति है । इस प्रयोजन में प्रायः काम कौतुक की हलचल को प्रधानता मिल जाती है । प्रकृति ने प्राणियों की वंश रक्षा को ध्यान में रखते हुए इस प्रकार के उत्साह की मात्रा शरीरों में अनायास ही कुछ अधिक रख दी है । इसलिए रति प्रयोजनों के अर्थ में ही इन दिनों काम शब्द का उपयोग होने लगा है । मूल अर्थ इससे कहीं अधिक व्यापक है । उसमें कर्मठता और प्रगतिशीलता का उमंग भरा सम्मेलन कह सकते हैं । यदि ऐसा न हो तो जीवन के चार पुण्य फलों में–धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, में काम शब्द का उपयोग न होता । भला योगी, तपस्वी, ब्रह्मज्ञानी, तत्वज्ञानी, क्यों काम जैसी अश्लील और शक्ति क्षरण करने वाली प्रक्रिया को जीवन फलों में सम्मिलित करते ।

कुण्डलिनी शक्ति अतीव व्यापक है । उसकी बिजली कभी–कभी आकाश में चमकती है तो चकाचौंध उत्पन्न कर देती है । काम कौतुक मनुष्य को बेचैन और विक्षिप्त बना देते हैं । इस महाशक्ति का उत्पादन बढ़ाया जा सके तो और जीवन क्षेत्र के महत्वपूर्ण प्रयोजनों में उसे लगाया जा सके तो उसका परिणाम ऐसा ही होगा, जैसा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कि किसी छोटे जनरेटर की तनिक सी क्षमता को विकसित करके विशाल क्षेत्र में बिजली दे सकने योग्य बना देना । जीवनी शक्ति का एक भोग का उपयोग प्रजनन कार्य है । उससे असंख्य गुने आनन्ददायक और महत्वपूर्ण कार्य जीवन क्षेत्र में और भी करने के लिए पड़े होते हैं । उन्हें पूरा करने के लिए अभीष्ट मात्रा में शक्ति का उत्पादन कुण्डलिनी जागरण से सम्भव हो सकता है ।

यह काया के दक्षिण ध्रुव की बात हुई । कुण्डलिनी का दूसरा सिरा मस्तिष्क मध्य सहस्रार में है । यह उत्तर ध्रुव है । यह जीव चेतना का, ज्ञान धारणा का केन्द्र है । इसे शिक्षण और अनुभव के सहारे आमतौर से विकसित कराया जाता है और वह जितना विकसित हो जाता है उतनी ही समझदारी बढ़ती है । उसी अनुपात से मनुष्य अधिक आजीविका एवं प्रतिष्ठा प्राप्त कर पाता है । इस केन्द्र की रहस्यमयी परतें कुण्डलिनी जागरण के अभ्यास से उभारी और सशक्त बनाई जा सकती हैं । इस उपार्जन को दिव्य ज्ञान या दिव्य दृष्टि कहते हैं । अतीन्द्रिय ज्ञान के कौतूहल पूर्ण चमत्कारों की चर्चा प्रायः होती रहती है । विशिष्ट बुद्धिमानों की अद्भुत मस्तिष्कीय प्रतिभा के आश्चर्य चकित करने वाले विवरण भी सुनने को मिलते रहते हैं । यह स्कूली शिक्षा या अनुभव अभ्यास का प्रतिफल नहीं है । इसके पीछे किसी रहस्यमय चेतना परत का प्रस्फुरण ही काम करता है । दूरदर्शिता, सूझ-बूझ के सहारे लोग ऐसी योजनायें बनाते हैं, जिनके सफल होने में कदाचित् ही व्यवधान पड़ते हैं, अन्यथा सोचे और निर्धारित किये गये कार्य पूरे होकर ही रहते हैं । इसे भी मानसिक विशिष्टता ही कह सकते हैं, जो सर्व साधारण में नहीं होती । ऐसी उपलब्धियों में भी उन्हीं गहरी परतों का उभार काम करता है जिन्हें सामान्य प्रयत्नों से नहीं वरन् कुण्डलिनी जागरण जैसे आध्यात्मिक प्रयासों से ही प्राप्त किया जाता है । जिन्हें अनायास ही ऐसा कुछ मानसिक अतिरिक्त मिला हो तो समझना चाहिए कि यह उनकी पूर्व संचित कमाई का प्रतिफल है ।

चेतनात्मक उत्कर्ष की उच्चस्तरीय सफलता आत्म-ज्ञान, ब्रह्म ज्ञान, तत्व ज्ञान और सद्ज्ञान के चार रूपों में देखी जाती है । इनमें से किसी का भी जिसे कोई अंश प्राप्त होता है तो उसकी ज्ञान प्रतिभा असाधारण उठने लगती है । तत्वदर्शी-महा मनीषी-ब्रह्मज्ञानी आत्मायें अपनी दिव्य क्षमताओं का उच्च स्तरीय प्रयोजनों में उपयोग करना जानती हैं । फलतः वे महात्मा, देवात्मा, ब्रह्मात्मा जैसी भूमिकायें सामान्य शरीर धारण किये रहने पर भी निवाहते रहते हैं । उन्हें जड़ जगत की आन्तरिक परस्थितियों की जानकारी रहती है । उसमें हेर-फेर करने की क्षमता भी उनमें पाई जाती है । इसलिए उन्हें सिद्ध पुरुष भी कहा जाता है ।

कुण्डलिनी महाशक्ति का प्रचुर भण्डार परमात्मा ने अपने राजकुमार-मनुष्य को जन्मजात रूप से प्रदान किया है । वह उसी की काया तिजोरी में बन्द है । कपाट को खोलना और मूर्छा को जागृति में बदलना यही है कुण्डलिनी जागरण के अभ्यास का मूल प्रयोजन ।

आद्य शक्ति गायत्री साधना के दो मार्ग हैं एक दक्षिण दूसरा वाम । दक्षिण मार्ग में पंचकोशों का अनावरण करना होता है और वाम मार्ग में षटचक्रों का जागरण । षटचक्र वेधन में प्रयुक्त होने वाली प्राण प्रक्रिया को कुण्डलिनी जागरण कहते हैं । इस शक्ति का उन्नयन सरल भी है और कठिन भी । सरल उनके लिए जो उस मार्ग पर चलने का साहस जुटाते हैं । कठिन उनके लिए जो कौतूहल भर से रस लेते हैं । साधना की कठिन प्रक्रिया अपनाने का सुदृढ़ निश्चय और अविचल संकल्प नहीं करते ।

दोनों ही मार्ग अपने-अपने स्थान पर महत्वपूर्ण हैं । इनमें न कोई छोटा है न बड़ा । प्रत्यक्ष जीवन में कुण्डलिनी और परोक्ष जगत में समाधि प्रक्रिया को आधार बनाना पड़ता है । दोनों का समन्वित प्रतिफल ही समग्र विकास की आवश्यकता पूर्ण करता है ।

कुण्डलिनी की तांत्रिक और समाधि योग की वैदिक प्रक्रिया का समन्वय ही श्रेयस्कर है । दूरदर्शी ऋषि परम्परा में दोनों को साथ लेकर चलने का परामर्श दिया गया है । ब्रह्मवर्चस् इसी समन्वय का परिणाम है ।

जिस व्यक्ति की कुण्डलिनी जाग जाती है, वह जागृत अवस्था की तरह गम्भीर निद्रावस्था में भी उतना ही सचेतन रहता है । उसकी स्वप्न और जागृति में कोई अन्तर नहीं आता । जिस तरह जागृत अवस्था में वह किसी से बातचीत करता, सुनता, सोचता, विचारता, प्रेरणा देता,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सहायता, सहयोग देता रहता है, उसी प्रकार स्वप्नावस्था में भी उसकी गतिविधियाँ चला करती हैं । उस अवस्था में वह किसी का भला भी कर सकता है और नई-नई जानकारियों के लिये अन्य ब्रह्माण्डों में सैर के लिये भी जा सकता है । अन्य ब्रह्माण्डों का अर्थ विशुद्ध रूप से सूर्य, चन्द्र, बृहस्पति, शुक्र हर्शल, प्लूटो आदि से है । यह आश्चर्य लगने वाली बात उसके लिये बिलकुल साधारण और सामान्य होती है । साधकों को जागते अथवा सोते हुए कई बार ऐसी अनुभूतियाँ होती हैं, जिन्हें भविष्य की घटनाओं का पूर्वाभास कहा जा सकता है या उन्हें किसी गोपनीय रहस्य का पता चल जाता है । वह कुण्डलिनी की ही शक्ति है ।

कुण्डलिनी के दो उत्पत्ति स्थान माने गये हैं । एक सूर्य केन्द्र में निवास करने वाली पुरुषरूपी और दूसरी स्त्री रूप पृथ्वी केन्द्र में । पृथ्वी केन्द्र में कुण्डलिनी को प्राणधारियों की जीवन सत्ता का केन्द्र कह सकते हैं । यह दर-असल सूर्य कुण्डलिनी का ही बीज है । कहा जाता है कि संसार जो कुछ भी है वह सब बीज रूप से देह में विद्यमान है । सूर्य भी कुण्डलिनी के रूप में शरीर में बैठा हुआ है । शारीरिक मूलाधार में ग्रन्थि का जब विकास होता है तब उसमें सूर्य का प्राण प्रतिष्ठित होता है उसकी जागृत अवस्था सूर्य जैसी होती है । अर्थात् उसमें मनुष्य की शक्ति सूर्य की जितनी शक्ति वाली सर्वव्यापी, सर्वसमर्थ हो जाती है फिर उस शक्ति का नियन्त्रण करना कठिन हो जाता है । कमजोर मन और शरीर वाले उस शक्ति को धारण नहीं कर सकते ।

गायत्री का देवता "सविता" है और कुण्डलिनी की प्रतिनिधि शक्ति भी सूर्य ही है । इसलिए गायत्री उपासना का सीधा प्रभाव मेरुदण्ड से होकर इस गुदा क्षेत्र में ही होता है । ऊपर से उतरने वाला प्राण प्रवाह पहले यहीं पहुँचता है और फिर गुच्छकों के द्वारा सारे शरीर में सञ्चित होता रहता है । जितना अधिक साधन का विकास होता है उतना ही प्राणशक्ति का अभिवर्द्धन और उसी अनुपात से कुण्डलिनी जागृत होती चलती है । यह प्रकाश धीरे-धीरे नेत्र, वाणी, मुख और ललाट आदि सम्पूर्ण शरीर में चमकने लगता है । त्वचा में यही कोमलता और बुद्धि में सात्विकता एवं पवित्रता की अभिवृद्धि करता है । यह क्रिया धीरे-धीरे होती है । इसलिये हानि की भी संभावना नहीं रहती, उपासक अपने आत्म-कल्याण भर के संकेत प्राप्त करता हुआ जो वास्तविक लक्ष्य है वह जीवन-मुक्ति भी प्राप्त कर लेता है ।

जागृत हो जाने पर यह कुण्डलिनी मनुष्य के आंतरिक कलेवर और वाह्य स्वरूप में आमूल-चूल परिवर्तन कर देती है । एक प्रकार से शरीर और आन्त्र क्षेत्र में इस के परिणाम स्वरूप एक प्रकार से क्रांति ही उत्पन्न हो जाती है । लेकिन यह क्रांति शरीरस्थ कुण्डलिनी को सूर्य कुण्डलिनी से जोड़ देने पर ही सम्भव है । यह क्रिया वैसी ही है जैसे किसी बड़े तालाब से छोटी सी नाली लगाकर खेतों तक पानी पहुँचा दिया जाता है । शरीरस्थ कुण्डलिनी को सूर्य कुण्डलिनी से जोड़ने में गायत्री साधना अद्‌भुत सहायक सिद्ध होती है । कुण्डलिनी जागरण की यह साधना समय साध्य तो है पर उसमें अन्यान्य साधनाओं के समान जोखिम जरा भी नहीं है । दूसरी साधनायें भले ही इस प्रकार की लगती रहें कि उनसे कुण्डलिनी जागरण का लक्ष्य प्राप्त हो जायेगा पर उन साधनाओं में जो कठिनाइयां आती हैं, जो खतरे रहते हैं उनका निराकरण करने और उनसे बचते बचाते रहने में ही इतना समय और श्रम लग जाता है कि दिखाई पड़ने वाली शीघ्र प्राप्ति और भी विलंबित हो जाती है । अस्तु विचारशील मनीषियों ने गायत्री साधना को कुण्डलिनी जागरण का सबसे सुगम पूर्ण निरापद और अवश्य फलदायी बताया है ।

स्थूल और सूक्ष्म शक्तियों का उद्‌गम-गायत्री महामंत्र

गायत्री महाशक्ति अपने ब्रह्म उद्‌गम हिमालय से निकल कर दो भागों में विभक्त होती है । इनमें से एक ज्ञान धारा है, दूसरी शक्ति धारा है । ज्ञान धारा को गंगा और शक्ति धारा को यमुना भी कहते हैं । इन्हीं दोनों को इड़ा, पिंगला भी कहा गया है ।

ज्ञान के उपरान्त शक्ति के उपयोग का क्रम चलता है । मोटर चलानी हो तो पहले उसे चालक की विधि सीखनी पड़ती है इसके उपरान्त ही उसे चलाने की बात बनती है । आरम्भ में ही चलाने लग जायें और पीछे उसकी मशीन के बारे में समझा जाय तो दुर्घटना होने का भय रहेगा ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

आरम्भिक साधना में गायत्री का उपासना पक्ष सिखाया जाता है। जप, अनुष्ठानों का विधान इसी प्रयोजन के लिए है। यह ज्ञान पक्ष है। इसे भूमि शोधन कहा जा सकता है। बीज बोने का अवसर तब आता है जब उसके उपयुक्त भूमि तैयार कर ली जाती है। घर में बिजली का फिटिंग ठीक हो जाने पर उस विभाग के अफसर उसकी जाँच-पड़ताल करते हैं और सही होने पर कनेक्शन जोड़ते हैं। गलत फिटिंग पर यदि बिजली की धारा जोड़ दी जाय तो उससे भयंकर हानि होने का डर रहेगा। ज्ञान उपासना सरल है इसलिए आरम्भिक शिक्षा उसी की दी जाती है। इंजीनियरिंग कालेज, मेडीकल कालेज आदि शिक्षा संस्थानों में प्रारम्भिक शिक्षण सिद्धान्तों का होता है। तदुपरान्त यन्त्रों पर काम करने का अवसर दिया जाता है। बिना शरीर विज्ञान सीखे कोई छात्र आरम्भ में ही आप्रेशन का चाकू उठा ले तो वह उस कार्य में अपयश ही अर्जित करेगा। आत्म विज्ञान में ज्ञान बीज का विकास 'उपासना' द्वारा और शक्ति बीज का 'साधना' द्वारा सम्भव होता है। जप, ध्यान, पूजा, उपचार के आधार पर भूमि-शोधन का कार्य सम्पन्न होता है। साधना योगाभ्यास और तपश्चर्या के सहारे विकसित होती है।

गायत्री विज्ञान का उच्चस्तरीय पक्ष कुण्डलिनी जागरण कहा गया है। इसमें योगाभ्यास प्रधान है। योग में एक ज्ञान पक्ष है। दूसरा विज्ञान पक्ष। ज्ञान पक्ष का केन्द्र ब्रह्म रन्ध्र है और शक्ति पक्ष का मूलाधार। साधारणतया दोनों स्थान की दृष्टि से ही नहीं स्थिति की दृष्टि से भी दूर है। क्रिया और ज्ञान का समन्वय प्रायः हो नहीं पाता। इसलिए प्रयत्नों में प्रखरता उत्पन्न न होने से सफलता भी स्वल्प मात्रा में मिलती है। दोनों का सुयोग होने से प्रचंड शक्ति धारा का प्रवाह उत्पन्न होता है और सफलता का पथ-प्रशस्त होता है।

गायत्री महाशक्ति का प्राण पक्ष 'शक्ति पक्ष' कुण्डलिनी है। दोनों मूलतः एक ही हैं। विद्युत तत्व एक है। ऋण और धन उसके दो विभाग मात्र हैं। जीव सत्ता एक है शरीर और प्राण उसके दो घटक भर हैं। गायत्री और कुण्डलिनी को पृथक नहीं वरन् दो धाराओं का परस्पर पूरक स्वरूप समझा जाना चाहिए।

अध्यात्मिक और भौतिक दोनों ही प्रकार की सूक्ष्म शक्तियों से गायत्री माता ओत-प्रोत है। अध्यात्मिक क्षेत्र में वह प्रधानतः ब्रह्म तेज के रूप में परिलक्षित होती है। वह परमब्रह्म परमात्मा का ही प्रकट स्वरूप है। वह साधक को ब्रह्म निर्वाण पद तक सुविधा पूर्वक पहुँचा देती है। देवी भागवत पुराण में इस बात को स्पष्ट कर दिया गया है।

परब्रह्म स्वरूपा च निर्वाण पद दायिनी।
ब्रह्म तेजोमयी शक्ति स्तथिष्ठातृ देवता॥

अर्थात् गायत्री परब्रह्म स्वरूप तथा निर्वाण पद देने वाली है। वह ब्रह्म तेज शक्ति की अधिष्ठातृ देवी है।

यह महाशक्ति सतृ, रज, तम इन तीनों गुणों से प्रभावित होकर मनुष्य जीवन में ज्ञान क्रिया और धन के रूप में प्रकट होती है। उपासक को ज्ञानवान, क्रियावान तथा धनवान बना देती है।

सात्त्विकस्य ज्ञान-शक्ति राजसय क्रियात्मिका।
द्रव्य शक्तिस्तामसस्य तिस्त्रश्चकथितासव॥

-दे० भा० ३।७।२६

सात्त्विक की ज्ञान-शक्ति, राजस्व की क्रिया शक्ति, तामस की द्रव्य शक्ति ये तीन प्रकार की शक्ति कही गई हैं।

पिण्ड में अन्तर्हित शक्ति कोष

इन तीन शक्तियों का कोष जिन चक्रों में भरा हुआ है, गायत्री के द्वारा वे सूक्ष्म चक्र भी जागृत होते हैं :-

इच्छा शक्तिश्च भूः कारः क्रिया शक्तिर्भुवस्तथा।
स्वः कारः ज्ञान शक्तिश्च, भूर्भुवः त्वः स्वरूपकं॥
मूल पद्मश्च भूर्लो को विशुद्धश्च भुवस्तथा।
सुर लोकः सहस्रा गायत्री स्थान निर्णयः॥

भूः -इच्छा शक्ति। भुवः-क्रिया शक्ति। स्वः- ज्ञान शक्ति। यह भूर्भुवःस्व का रूप है। भूः-मूलाधार चन्द्र, भूलोक। भुवः-विशुद्धाव चन्द्र, भुवः लोक। स्वः- सहस्रार चन्द्र, सुरलोक यह गायत्री का स्थान है।

मनुष्य के मेरु दण्ड में छः प्रधान चक्र हैं, इन

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चक्रों में जो शक्तियाँ और सिद्धियाँ भरी हुई हैं, उन्हें प्राप्त करने के लिए गायत्री उपासना द्वारा ही इन षट्चक्रों का जागरण किया जाता है । मूलाधार चक्र में निवास करने वाली कुण्डलिनी महा शक्ति का इन छहों चक्रों पर अधिकार है । इस कुण्डलिनी को गायत्री का ही स्वरूप माना गया है । मनुष्य के अन्तर्जगत को प्रकाशवान बनाने वाले जो दश प्राण अवस्थित हैं तथा उनके कारण जिन सूक्ष्म दश महा विद्याओं का ज्ञान होता है वह सभी विज्ञान भी गायत्री पर ही निर्भर हैं ।

कुण्डलिन्या समुद्भूता गायत्री प्राण धारिणी ।
प्राण विद्या महाविद्या यस्यां वेत्ति स वेद वित् ॥

–योग चूड़ामणि

अर्थात् कुण्डलिनी रूप में प्रकट होने वाली, चैतन्य प्राण को धारण करने वाली, चैतन्य शक्ति गायत्री है । यह गायत्री ही प्राण विद्या है, यही महा विद्या है, जो इस रहस्य को जानता है' वही तत्वदर्शी है ।

मूलादि ब्रह्मरंध्रान्ता गीयते मननाद्यतः ।
मनतात् त्राति षट्चक्रं गायत्री तेन कथ्यते ॥

मूलाधार चक्र से लेकर ब्रह्म रंध्र पर्यन्त षट्चक्र जिसकी उपासना से खुल जाते हैं, उसे गायत्री कहते हैं ।

मानव शरीर अनन्त स्थूल और शक्तियों का भण्डार है पर उनका बाह्य जगत के व्यर्थ विचारों और कार्यों में अपव्यय होता रहता है । इस अपव्यय को रोक कर यदि उनकी वृत्तियाँ अन्तर्मुखी बनाली जायें और अन्तर्जगत में ही काम करने लगें तो निश्चय ही प्रचण्ड अन्तर्बल प्राप्त कर सकता है । देखिए:–

वहिर्मुखस्य मंत्रस्य वृत्तयो या प्रकीर्तिताः ।
ता एवान्तर्मुखस्थास्य शक्तियः परिकीर्तिताः ॥

मन्त्र अर्थात् चित्त के बहिर्मुख होने पर जो वृत्तियाँ कही जाती हैं वे ही उसके अन्तर्मुख होने पर 'शक्तियाँ' कहलाती हैं ।

अन्तर्जगत की दश महा विद्याएँ

अन्तर्जगत का अत्यन्त विस्तृत विज्ञान है यह दश विद्याओं के रूप में दश भागों बँटा हुआ है । वैदिक वाङ्मय में इन विद्याओं का विस्तार पूर्वक वर्णन है ।

१– उद्गीथ विद्या २– संवर्ण विद्या ३– मधु विद्या ४– पंचाग्नि विद्या ५– उपकोशल विद्या ६– शांडिल्य विद्या ७– दहर विद्या ८– भूमा विद्या ९– मन्थ विद्या १०– दीर्घायुष्य विद्या–ये दश विद्या ऋषियों की सम्पत्ति थीं । इन सम्पत्तियों के द्वारा ही वे अपरिग्रही एवं निर्धन रहते हुये इस भूलोक में कुबेर भण्डारी बने हुये थे । जो कुछ देवताओं के पास है उसे वे इसी मानव शरीर में इसी लोक में करतल गत कर लेते थे ।

तंत्र मार्ग में भी यही दश विद्याएँ अन्य नामों से उपलब्ध हैं । यद्यपि आसुरी वाममार्गी तंत्रोक्त विधान देव सम्प्रदाय के दक्षिणमार्गी वैदिक विधान से भिन्न है फिर भी उनके द्वारा भी उन्हीं सिद्धियों को प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाता है । तंत्र मार्ग में १– इन्द्राणी २– वैष्णवी ३– ब्रह्माणी ४– कौमारी ५– नारसिंही ६– वाराही ७– माहेश्वरी ८– भैरवी ९– चण्डी १०– आग्नेयी इन दश नामों से दश महाविद्याओं की साधना की जाती है ।

इन महाविद्याओं का विस्तृत वर्णन इन पंक्तियों में सम्भव नहीं । सुविधानुसार अखण्ड–ज्योति के पृष्ठों में कुछ समय उपरान्त करेंगे, अभी तो इतना ही जानना पर्याप्त होगा कि गायत्री के तीनों अक्षर एक प्रकार से आध्यात्मिक त्रिवेणी के समान हैं । जिस प्रकार गंगा, यमुना और सरस्वती के मिलन से तीर्थराज प्रयाग की भौतिक त्रिवेणी बनी है, उसी प्रकार गायत्री के तीन अक्षरों से सन्निहित इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना की तीन महाधाराओं के मिलन से आध्यात्मिक त्रिवेणी बनती है । प्रयाग की त्रिवेणी में स्नान करने का पुण्य फल होता है पर इस योग त्रिवेणी में स्नान का जो महाफल है उसका तो वर्णन ही हो सकना कठिन है । लिखा है कि–

इड़ा भोगवती गंगा पिङ्गला यमुना नदी ।
इड़ा पिंङ्गल योर्मऽध्ये सुषुम्ना च सरस्वती ॥

इड़ा नाड़ी गंगा है, पिंगला यमुना है । इन दोनों के बीच में जो सुषुम्ना है, वही सरस्वती है ।

त्रिवेणी योगः सा प्रोक्त तत्र स्नानं महाफलम् ।

यह योग की त्रिवेणी है । इसमें स्नान करने का महा फल होता है ।

जो कुछ इस विशाल ब्रह्माण्ड में हैं वह सब इस शरीर रूपी पिण्ड में भी सूक्ष्म रूप से मौजूद है । जो वस्तु हमें बाहर से उपलब्ध होती हैं उन सब को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साधना द्वारा अन्तर्जगत से भी प्राप्त किया जा सकता है। बाहर कोई वस्तु ऐसी नहीं जो भीतर न हो।

आध्यात्मिक साधनाओं द्वारा जो इन अन्तरंग शक्तियों पर अधिकार कर लेता है, उसके लिए वे वैसी ही उपयोगी हो जाती हैं जैसी बिजली एटम से भाप आदि की शक्तियों पर अधिकार प्राप्त करके आज के वैज्ञानिकों ने उन्हें मनुष्य की सेवा में प्रयुक्त कर दिया है। भौतिक जाति में जो शक्ति भौतिक क्षमता सम्पन्न दिखाई पड़ती है, वही अन्तर्जगत में आध्यात्मिक क्षमता के रूप में प्रकट होती है। गायत्री की आध्यात्मिक शक्ति साधक के सम्मुख सिद्धियों के रूप में सामने आती है, उसे लगता है कि अदृश्य लोक के कोई देव दानव उसकी सेवा में उपस्थित हो गये हैं और उसकी आज्ञा का पालन करने के लिए हर क्षण तत्पर रहते हैं।

यक्ष राक्षस गन्धर्वा अप्सरोगण किन्नराः।
सेवन्ते चरणं तस्य सर्वेतस्य वंशानुगाः॥

यक्ष, राक्षस, गन्धर्व, अप्सरा, किन्नर आदि उसके वश में हो जाते हैं और उसके चरणों की सेवा करते हैं।

स्थूल जगत की भौतिक शक्तियाँ

यही मातृ तत्व संसार में परमाणु शक्ति स्थूल, सूक्ष्म, प्राण, भाव आदि रूपों में काम कर रहा है। उसे अभिवादन करते हुए इस प्रकार वर्णन किया है:-

परमाणु स्वरूपे च द्वयणुकादि स्वरूपिणि।
स्थूलातिस्थूल रूपेण जगद्धात्रि नमोऽस्तुते॥
सूक्ष्मातिसूक्ष्म रूपे च प्राणापानादि रूपिणि।
भावाभाव स्वरूपे च जगद्धात्रि नमोऽस्तुते॥

-जगद्धात्री स्तोत्र

परमाणु स्वरूप, द्वि अणु रूपिणी, स्थूलातिस्थूल, सूक्ष्मातिसूक्ष्म, प्राण अपान व्यान आदि रूपिणी, भावाभाव स्वरूपा, जगद्धातृ आपको नमस्कार है।

यह भौतिक शक्ति गायत्री के २४ अक्षरों के अनुसार २४ प्रकार की है। हमारे प्राचीन वैज्ञानिकों ऋषियों की भाषा से इन्हें २४ मातृका कहा गया है। इनके नाम इस प्रकार हैं- १- चन्द्रमेश्वरी २- अजितबला ३- दुरितारि ४- कालिका ५- महाकाली ६- श्यामा ७- शान्ता ८- ज्वाला ९- तारिका १०- अशोका ११-श्रीवत्सा १२- चण्डी १३- विजया १४- अंकुशा १५- पन्नगा १६- निर्वाणी १७- बला १८- धारिणी १९- धरणप्रिया २०- नरदत्ता २१-गान्धारी २२-अम्बिका २३-पद्मावती २४- सिद्धायिका।

भौतिक विज्ञान के वर्तमान वैज्ञानिकों ने इनकी शोध अपने ढंग से की है। वे इस शक्ति को "एनर्जी आव फोर्स" के नाम से पुकारते हैं। हीट पावर (ताप), इलेक्ट्रिकल एनर्जी (ताकत), एनर्जी ऑफ एलैस्टिसिटी (स्थिति), एनर्जी ऑफ ग्रेवीटेशन (मध्याकर्षण), एनर्जी ऑफ मोशन (गति), क्लेटिक एनर्जी (क्रिया), कॉस्मिक इलैक्ट्रिक सिटी (विश्व विद्युत), इन्टैलिजेन्स (ज्ञान), सुपर फोर्स (उच्च शक्ति) आदि अनेकों भेदों में इस शक्ति को विभक्त किया गया है और उसके गुण कर्मों को जानकर आविष्कारों का तारतम्य मिलाया है।

शरीर में काम करने वाली विद्युत शक्तियों का भी आधुनिक वैज्ञानिकों ने पता लगाया है। (ओजस) औडीलिक फोर्स उंगलियों तथा नेत्रों का तेज, पर्सनल मेगनिट शारीरिक चुम्बकतत्व आदि नामों से इसके भेदों का पता लगाया है। डाक्टर किलनर ने 'ओरोस्पेक' नामक एक ऐसे यन्त्र का आविष्कार किया है जिसके द्वारा मानव शरीर के अन्तर्गत विभिन्न व्यक्तियों के शरीर में काम करने वाली विभिन्न प्रकार की विद्युत शक्तियों की संख्या तथा मात्रा का पता लगाया जा सकता है। यह शरीर विद्युत योग साधनों से उत्पन्न सूक्ष्म दृष्टि के द्वारा भी स्पष्टतः देखी जा सकती है। तत्व दर्शियों ने इसके स्वरूप का वर्णन इस प्रकार किया है:-

तडिल्लेखा तन्वी तपन शशिं वैश्वानरमयो।
तडिल्लता समरुचिर्विद्युल्लेखेव भास्वती॥

बिजली की बेल के समान, तपते हुए चन्द्रमा के समान, अग्निमयी वह शक्ति दृष्टिगोचर होती है।

योग शास्त्रों में शरीर के अन्तः प्रदेश में काम करने वाले सहस्रों तत्वों का पता लाखों वर्ष पूर्व लगा लिया था। आधुनिक विज्ञान ने भी इस मार्ग पर कदम उठाने शुरू किए हैं और पिछले दिनों तक शोधें हुई हैं। उनके अनुसार एथेरिक बाडी (प्राणभण्डार), माइस्टिक रोज (हृत पद्म), सोलर प्लेफिसस (सौर जगत), कार्डिअक प्लेसिस (अनाहित चक्र), थाइराइड ग्लाण्ड (कंठ ग्रंथि), पाइनियल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बऑण्ड(आत्राचक्र), पाइट्यूटरी बाडी (शक्ति ग्रन्थि) आदि का पता चलाया है और यह माना है कि इन विलक्षण संस्थानों द्वारा मनुष्य की प्रसुप्त प्रतिभाओं और विशेषताओं के भाव अभाव से, मन्दता और तीव्रता से भारी सम्बन्ध है। फिर भी वे यह नहीं जान सके कि औषधि, सर्जरी आदि सीमा से बाहर के इन सूक्ष्म संस्थानों का विकास किस प्रकार संभव है। इसका उत्तर एवं मार्ग-दर्शन तो योग शास्त्र ही कर सकता है और करता रहा है।

योग साधना का राज मार्ग

इन सूक्ष्म शक्ति संस्थानों के जागरण के लिए साधना विज्ञान के अनुसार बन्ध और मुद्राओं का विधान शास्त्रों में मौजूद है। गायत्री के २४ अक्षरों से सम्बन्धित इस प्रकार की २४ साधनाएँ प्रसिद्ध हैं। १- महामुद्रा २- नभोमुद्रा ३- उड्डीयान ४- जालन्धर बंध ५- मूलबंध ६-महाबंध ७- खेचरी ८-विपरीत करणी ९- योनि मुद्रा १०- बज्रौली ११- शक्ति चालनी १२- तडागी १३- माण्डवी १४- शांभवी १५- अश्विनी १६- पाशिनी १७- काक्री १८- मातंगी १९- भुजंगिनी २०- पार्थिवी २१- आपम्भरी २२- वैश्वानरी २३- कयवी २४- आकाशी।

आठ प्राणायाम १- सूर्यभेदन २- उज्जायी ३- सीत्कारी ४- शीतली ५- भस्त्रिका ६- भ्रामरी ७- मूर्छा ८- प्लाविनी। यह भी इन्हीं सूक्ष्म संस्थानों के जागरण के लिए है। ८४ प्रकार के योग आसनों से भी यह उद्देश्य पूरा होता है पर यह सब समझने में नए विज्ञान को कुछ देर लगेगी। फिर भी यह आशा की जा सकती है कि आधुनिक वैज्ञानिक अपनी खोजों को जारी रखते हुए एक दिन वहीं पहुंचेंगे जहाँ बहुत समय पूर्व हमारे ऋषि पहुंच गए थे।

योग दर्शन के द्वितीय अध्याय में अष्टांग योग साधना की सिढ़ियों का वर्णन है। अहिंसा की साधना करने वाले से हिंसक जीव भी बैर त्याग देते हैं। सत्य की आराधना करने वाले के मुख से निकले हुए शाप वरदान सफल होते हैं। अस्तेय वृत्ति धारण करने से बहुमूल्य रत्नों के समान वस्तुएँ उपलब्ध होती हैं। ब्रह्मचर्य का पालन करने से तेजस्विता मिलती है। अपरिग्रह सध जाने पर जन्मजन्मान्तरों का तथा भूत-भविष्य-वर्तमान का ज्ञान हो जाता है। पवित्रता की साधना हो जाने पर घृणा तथ परसंसर्ग से छुटकारा मिलता है। अन्तःकरण की पवित्रता से मन की प्रसन्नता, एकाग्रता, इन्द्रियों पर विजय और आत्म साक्षात्कार करने की क्षमता प्राप्त होती है। सन्तोष धारण करने से सर्वोत्तम सुख मिलता है। तप साधना से मल दोष दूर हो जाने पर अणिमा, लघिमा, महिमा आदि आठ शारीरिक सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। स्वाध्याय से इष्टदेव का साक्षात्कार होता है। ईश्वर प्रणिधान से समाधि लग जाती है। आसन सध जाने से सर्दी गर्मी आदि के द्वन्द्व दुख नहीं पहुंचते। प्राणायाम से पाप और अज्ञान का आवरण मिटता है। प्रत्याहार से इन्द्रियाँ वश में हो जाती हैं।

अन्य साधनाओं से अन्य प्रकार की भी अनेक सिद्धियाँ मिलती है अणिमा, महिमा, लघिमा, गरिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशित्व, वशित्व, दूरदर्शन, दूर श्रवण परचित्र विज्ञान, परकाय प्रवेश, आकाशारोहण, मारण, मोहन, उच्चाटन, वशीकरण आदि का वर्णन योग ग्रन्थों में मौजूद हैं। वे सभी गायत्री उपासना से संभव हैं। कहा गया है कि-

गायत्री द्वारा योग साधना के पिपीलिका मार्ग, दादर मार्ग, बिहंगम मार्ग यह तीन मार्ग हैं। इन पर चलने से परा, पश्यन्ती, मध्यमा और बैखरी चारों वाणियाँ प्रस्फुटित होती हैं। अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष, आय निवेश यह पाँचों क्लेश दूर होते हैं। जागृत, स्वप्न, सुसुप्ति, तुरीया यह चारों अवस्थाएँ परिमार्जित होती हैं। मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत, विशुद्धास्थ, आज्ञचक्र यह छहों चक्र जागृत होते हैं एवं मस्तिष्क के मध्यभाग में व्यवस्थित सहस्रार कमल में ब्रह्म तेज विकसित होने लगता है। आकाश, महाकाश, पराकाश, तत्वाकाश, सूर्याकाश, इन पाँचों आकाशों में उसकी गति विधि विस्तृत होने लगती है। सातों भूमिका में शुभेच्छा, विचारणा तनुमानसा, सत्वापत्ति, असंसक्ति, पदार्थ, भाविनी, तुर्यगा अपनी नियमित गति विधि से विकसित होती जाती हैं। गायत्री के माध्यम से योग साधना करने वाला साधक योग मार्ग के नौ विघ्नों-व्याधि, स्त्यान, संशय,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रमाद, आलस्य, अविरति, भ्रान्ति, अलब्ध भूमिका, अनवस्थिति पर विजय प्राप्त कर लेता है ।

गायत्री ही वह महाशक्ति है जो सारे विश्व का नियन्त्रण करती है । उसकी सत्ता से संसार की प्रत्येक क्रिया नियमित रूप से होती रहती है । कठोपनिषद में इसका वर्णन यों आया है–

भयादस्याग्निस्तपति भयात्तपसि सूर्यः ।
भयादिन्द्रश्च वायुश्च मृत्युर्धावति पंचमः ॥

जिसके भय से अग्नि तपती है, जिसके भय से सूर्य जलता है, जिसके भय से इन्द्र, वायु और यम दौड़ते रहते हैं ।

ऐसी परम महिमामयी माता का श्रद्धा पूर्वक अंचल पकड़ने वाला साधक क्या नहीं प्राप्त कर सकता है ? उसे श्रुति सम्मति मार्ग से उपलब्ध हो सकने वाला प्रत्येक पदार्थ मिल सकता है ।

गायत्रया सर्व संसिद्धि र्द्विजानां श्रुति संमजा ।

अर्थात् वेद सम्मत सारी सिद्धियां गायत्री उपासना से मिल सकती हैं ।

अध्यात्मशास्त्रों में उपासनाओं की सार्थकता के लिए उर्वर मनोभूमि बनाने में गायत्री उपासना की असाधारण उपयोगिता बताई गयी है ।

सा गायत्री समिद्धाऽन्यानि छन्दांसि समिन्धे ।

–शपथ १/३/४/६

गायत्री के जागृत होने पर अन्य मन्त्र जागृत होते हैं ।

प्रारम्भ में हलके काम दिये जाते हैं और समर्थता बढ़ने पर बड़े एवं भारी काम सौंपे जाने लगते हैं । गायत्री की सरल जप प्रक्रिया–उपासनात्मक विधि–विधान के साथ जब ठीक प्रकार बन पड़ती है तो साधक को योगाभ्यास सहित उसे करने के लिए कहा जाता है । योग और तप का समन्वय हो जाने से गायत्री कुण्डलिनी बन जाती है। योग साधना सहित की गयी गायत्री उपासना का विशेष महत्त्व है ।

गायत्री संस्मरेद्योगात् स याति ब्रह्मणः परम् ।
गायत्री जप निरतो मोक्षोपायञ्च विन्दति ॥

वृद्ध पारासर ५/७८

योगाभ्यास सहित जो गायत्री उपासना करता है वह ब्रह्म पद को प्राप्त कर लेता है ।

योग और तप के समन्वय से की गयी गायत्री साधना का, कुण्डलिनी साधना का, महत्व बताते हुए कहा गया है कि–

गायत्र्येव तपो योगः साधनं ध्यान मुच्यते ।
सिद्धीनां सामना माता नात् किंचिद् ब्रह्मत्तरम् ।
गायत्री साधना लोक न कस्यापि कदापि हि ।
याति निष्फलता मेतन् ध्रुवं सत्यं भूतले ।
योगिकानां समस्तानां साधनानां तु वरानने ।

–गायत्री मंजरी

शिवजी कहते हैं– हे पार्वती, गायत्री ही तप है, योग है, साधन है, ध्यान है । वही सिद्धियों की माता मानी गई है । इससे बढ़ कर श्रेष्ठ तत्व इस संसार में और कोई नहीं है । कभी किसी की गायत्री साधना निष्फल नहीं जाती । समस्त योग साधनाओं का आधार गायत्री ही है ।

गायत्री की प्रखरता प्राण–शक्ति के समन्वय से प्रकट होती है । वस्तुतः गायत्री को प्राण–विद्या ही कहना चाहिए । प्रश्नोपनिषद् के यम–नचिकेता संवाद में जिस पंचाग्नि प्राण–विद्या का उल्लेख किया गया है वह गायत्री महा शक्ति में सन्निहित पंच प्राणों के प्रखर बनाने का ही विज्ञान है । यही पंचमुख अथवा सूक्ष्म शरीर के पंच कोश हैं । गायत्री की प्राण–शक्ति को उभारने के लिए ही सावित्री की, कुण्डलिनी की उच्चस्तरीय साधनाएँ की जाती हैं ।

पंचदेव मयं जीव, पंच प्राणमयं शिवं ।
कुण्डली शक्ति संयुक्त, शुभ्र विद्युल्लपोपमम् ॥

–तंत्रार्णव

यह जीव पाँच देव सहित है । प्राणवान होने पर शिव है । यह परिकर कुण्डलिनी शक्ति युक्त है । इनका आकार चमकती बिजली के समान है ।

कुण्डलिनी जागरण का परिचय पंच कोशों की जागृति के रूप में मिलता है ।

कुण्डलिनी शक्तिराविर्भवति साधके ।
तदा स पंच कोशे मत्तेजोऽनुभवति ध्रुवम् ॥

–महायोग विज्ञान

जब कुण्डलिनी जागृत होती है तो साधक के पांचों कोश ज्योतिर्मय हो उठते हैं । यही वह शक्ति केन्द्र हैं जिन्हें सूक्ष्म शक्तियों का भाण्डागार कहा जाता है और जिन्हें उच्चस्तरीय गायत्री–सावित्री साधना द्वारा जागृत किया जाता है ।

* * *

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सावित्री का शक्ति स्रोत- सविता देवता

सावित्री और सविता का सम्बन्ध

गायत्री वेद-जननी चारों वेदों की माता होते हुए एक वेद-मन्त्र भी है। वेद के हर मन्त्र का एक छन्द, एक ऋषि और एक देवता होता है। उनका स्मरण उच्चारण करते हुए विनियोग किया जाता है। गायत्री महामन्त्र का गायत्री छन्द-विश्वामित्र ऋषि और सविता देवता है। सविता बोल-चाल की भाषा में सूर्य को कहते हैं। सविता की अधिष्ठात्री देवी होने के कारण गायत्री का दूसरा नाम सावित्री भी है। सविता और सावित्री का युग्म प्रख्यात है। कहते हैं सावित्री में जो शक्ति है वह सविता की है। यों सविता, परमब्रह्म परमात्मा को भी कहते हैं और उसकी प्रेरक विधेयक, निर्मात्री, संचारिणी, ह्लादिनी, चेतना शक्ति को-गायत्री को-सावित्री कहा जा सकता है। यह ज्ञान-दृष्टि हुई। विज्ञान-दृष्टि में सविता को परमात्मा का तेजपुंञ्ज ब्रह्म बताते हैं, जिसके प्रभाव और प्रकाश में यह सारा दृश्य जगता, सक्रिय रहता है। उस सविता की समग्र क्षमता एवम् स्थिति की प्राण-प्रकिया को सावित्री माना गया है।

शरीर और प्राण में जो सम्बन्ध है वही सविता और सावित्री में है। प्राणी के अस्तित्व को प्रकाश एवं अनुभव में लाने के लिए शरीर चाहिए और शरीर सजीव बना रहे उसके लिये प्राण की स्थिति आवश्यक है। दोनों का "अन्योन्याश्रय" सम्बन्ध है। एक के बिना दूसरे की गति नही, स्थिति नहीं, उपयोगिता नहीं, शोभा नहीं। इसी प्रकार सविता और सावित्री एक दूसरे के लिए जुड़े हुए है। दोनों का एक मिश्रित युग्म है। अंलकार रूप से सावित्री को, सविता की पत्नी भी कहते हैं।

मोटे अर्थ में यह प्रातः उदय होने वाला, सायंकाल अस्त होने वाला, प्रकाश और गर्मी देने वाला अग्नि पिण्ड भी सूर्य है-सविता है। उसकी भी अपनी शक्ति एवं क्षमता है इस संसार का सारा क्रिया-कलाप उसी के प्रभाव से हो रहा है इसलिए उसकी स्थूल जगत में विभिन्न प्रकार की हलचलें उत्पन्न करने वाली क्षमता को लौकिक सावित्री कहा जा सकता है। वैज्ञानिक इसी अदृश्य और अविज्ञात महाशक्ति सावित्री के विभिन्न पक्षों का अनुसंधान आविष्कार करने में सृष्टि के आदि से लेकर अथावधि पर्यन्त प्रयत्नशील है। उन्होंने बहुत कुछ पाया भी है।

अग्नि तत्व का पता लगाकर मनुष्य ने जिस दिन उसका उपयोग जाना, उस दिन उसने ऐसा अनुभव किया मानों उसने किसी महान शक्तिशाली देवता को अपने घर आंगन में प्रतिष्ठित रहने के लिये मना लिया हो। अग्नि के आविष्कार ने बन्दरों की तरह अस्त-व्यस्त जीवन व्यतीत करने वाले मानव प्राणी को व्यवस्थित बनाने में महान योगदान दिया। इसके उपरान्त वर्तुलाकार लुढ़कने से उत्पन्न होने वाली गतिशीलता का पता लगाकर उसने पहिये का निर्माण किया और विभिन्न प्रकार के वाहन और यन्त्र बनाना सम्भव हो सका।

आज तो बिजली, भाप, ईथर, अणु आदि क्षेत्रों में काम करने वाली सहस्त्रों शक्तियों को जान लिया गया है और उनके आधार पर विज्ञान के चरण द्रुत गति से अग्रसर हो रहे है। अन्याय ग्रह, नक्षत्रों पर चढ़ाई करने की योजनाऐं बन रही है, इस धरती पर एक-से-एक अद्भुत आविष्कारों की तैयारी है, मनुष्य शरीर का कायाकल्प करके उसे चिरस्थाई बनाने की योजना है। यह सावित्री शक्ति के कतिपय पक्षों की जानकारी का परिणाम है। सावित्री-प्रकृति चेतना के बारे में जितना अब तक जाना जा सका है उससे अभी असंख्य गुना जानना शेष है। सीमित बुद्धि वाला मानव प्राणी अनन्तकाल तक नई-नई उपलब्धियां प्राप्त करता रहे, तो भी प्रकृति की असीम शक्तियों की पूरी तरह जानकारी प्राप्त कर सकना सम्भव न हो सकेगा। सावित्री का भाण्डागार अपरिमित है। इतना अपरिमित जिसकी कल्पना भी हम पूरी तरह नही कर सकते।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

सावित्री–सविता की शक्ति है । यह अग्नि–पिंड सूर्य इस पृथ्वी पर जिस प्रकार की शक्तियों का वितरण–विकरण करता है, उसी की खोज–बीन में हम लगे हैं । पर यही सूर्य अन्य अनेक ग्रह, नक्षत्रों पर वहीं की स्थिति के अनुरूप अन्यान्य प्रकार की विचित्र और विलक्षण प्रकार की शक्तियों का सृजन करता है । यदि इन सब सूर्य के प्रभाव से प्रभावित ग्रह–नक्षत्रों तक पहुंच सकना हमारे लिए सम्भव हो सके तो पता चले कि हमारी इस छोटी–सी पृथ्वी पर जो विज्ञान अब तक प्रकाश में आया है उससे सर्वथा भिन्न प्रकार का वैज्ञानिक–वातावरण उन ग्रह–पिण्डों पर फैला पड़ा है ।

हम लोग पृथ्वी के आकर्षण में जितना भार अनुभव करते हैं, आकर्षण रहित ग्रहों में उतना बिल्कुल भी न होगा । पक्षियों की तरह हर कोई वहां आकाश में सुगमता पूर्वक उड़–उछल सकता होगा । तब वहां इस सम्बन्ध में जो वैज्ञानिक नियम कार्य में आ रहे होंगे, वे हमारी पृथ्वी पर प्रचलित नियमों से सर्वथा भिन्न होंगे । यह एक उदाहरण मात्र है । सृष्टि में फैली पड़ी असीमित शक्तियां पृथ्वी पर ही इतनी व्यापक हैं कि उसकी सम्पूर्ण खोज मनुष्य के वर्तमान साधनों द्वारा सम्भव नहीं, फिर सविता के विस्तृत प्रभाव–क्षेत्र–ग्रह–नक्षत्रों में बिखरी पड़ी विचित्र स्तर की शक्तियों की जानकारी एवं उससे लाभान्वित होने की सुविधा तो मिल ही कैसे सकेगी ? कहने का तात्पर्य इतना भर है कि चमकने वाले उदीयमान अग्नि–पिंड–सूर्य की (सविता की) क्षमता, (सावित्री) जब इतनी विस्तृत है तो असली सविता, परब्रह्म परमात्मा की पंच–तत्वों से अत्यन्त ऊंचे स्तर की चेतना के–सावित्री के बारे में तो कहा ही कैसे जाय ?

वैज्ञानिक अपनी प्रयोगशालाओं के माध्यम से प्रकृति की विलक्षणताओं का–सावित्री की गरिमा में यत्किंचित ज्ञान एवं उपयोग जानने का प्रयोग करते और जो उपलब्धियां प्राप्त हो जाती हैं, उनसे सांसारिक सुविधाये बढ़ाने का प्रयत्न करते हैं । इसी स्तर कार्य एक वैज्ञानिक प्रयोग आत्म–विद्या विशारद योगीजन भी करते हैं । वे अपने शरीर एवं मन की प्रयोगशाला में प्रस्तुत अद्भुत अविज्ञात शक्तिसंस्थानों की सहायता से प्रकृति की सूक्ष्मता के साथ अपना सम्बन्ध जोड़ते है और वहा से वैसी ही विलक्षण उपलब्धियां प्राप्त कर लेते हैं, जैसे गोताखोर समुद्र में डुबकी लगाकर वहां छिपी पड़ी रत्न–राशि को बटोरते रहते हैं । तथाकथित ऋषि–मुनियों का आधार यही है ।

जो कार्य किन्हीं शक्तिशाली यन्त्रों के द्वारा हो सकता है वही कार्य शरीर संस्थान के वैज्ञानिक प्रयोग द्वारा भी हो सकता है । इसी प्रणाली का नाम 'तन्त्र' है । जिस प्रकार बन्दूक चला कर किसी का प्राण हरण किया जा सकता है, वैसे ही तन्त्रोक्त 'कृत्या' से भी अनिष्ट उत्पन्न हो सकता है । जिस प्रकार विद्युत् सम्बन्धों से धातुओं के स्वरूप को बदला जा सकता है,उसी प्रकार तांबे को सोने में परिणत करने में सफलता प्राप्त की जा सकती है । कितने ही सिद्ध पुरुष ऐसा करते भी रहें हैं । नागार्जुन, रावण आदि ऐसे ही असुर सम्प्रदाय के तान्त्रिक वैज्ञानिक थे जिन्होंने निर्धारित तपश्चर्याएं करके शरीरों से इतनी अणु–शक्ति संचालित कर ली थी कि वे अपने मनोबल के द्वारा अभीष्ट वस्तुऐं तथा परिस्थितियां उत्पन्न कर लेते थे ।

दक्षिणमार्गी ऋषि–मुनी इसी प्रयोजन को अपने ढंग की सात्विक योग साधनाओं से सम्पन्न करते थे । इसलिए उनकी पद्धति मन्त्र–योग कहलाती थी । दक्षिण और वाममार्ग में सात्विक और तामस का अन्तर रहने के कारण उन्हें तन्त्र–विद्या और मन्त्र–विद्या का अलग–अलग नाम दिया है । जहां तक परिणामों का सम्बन्ध है, दोनों के प्रतिफल लगभग समान हैं । जो भौतिक लाभ मन्त्र–योगी उठा सकता है, वही चमत्कार उत्पन्न कर सकना तन्त्र योगी के लिये भी सम्भव है । सविता की महाशक्ति सावित्री एक ही है, उससे सम्पर्क बनाने के अनेक तरीके हो सकते हैं, इसमें से एक तरीका शरीर यन्त्र को माध्यम बनाकर साधना विधान के प्रयोग का है, दूसरा वैज्ञानिक–प्रयोगशालाओं के माध्यम से उपकरणों एवं यन्त्रों के माध्यम से लाभान्वित होने का है ।

आज यह यन्त्र–विज्ञान उस क्षेत्र में काम करने वाले निष्ठावान कार्यकर्त्ताओं के कारण सफलता पूर्वक काम कर रहा है । तन्त्र और मन्त्र क्षेत्रों के वैज्ञानिकों ने तपश्चर्या की कठोरता से डर कर मुंह मोड़ लिया, फलस्वरूप वहां सुनसान ही दृष्टिगोचर हो रहा है । आवश्यकता इस बात की है कि वैज्ञानिक तसपरता के साथ इस क्षेत्र में भी काम किया जाता रहे और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऋषि–मुनियों की बातें कल्पना समझी जाने का अवसर न आने देकर उस विज्ञान को मानव जाति के कल्याण में प्रस्तुत किया जाय ।

यहां प्रसंग सविता और सावित्री का चल रहा है । पंच–भौतिक जगत में यह उदीयमान सूर्य ही सविता है और उसके प्रभाव में उत्पन्न होने वाली अगणित शक्तियों का पुंज ही सावित्री है । इस युग्म से हमें बड़ा लाभ होता है । उसी के प्रभाव से हम जीवित हैं और अभीष्ट साधन सामिग्री उपलब्ध कर रहे हैं । श्रुतियों में सूर्य को "जगत की आत्मा" बताया गया है । उसी से वह प्राण प्रादुर्भूत होता है जिसके कारण प्राणियों के लिये शरीर धारण किए रह सकना, वनस्पतियों का उगना, पंच–तत्वों का सक्रिय रह सकना सम्भव है । यदि सूर्य ठण्डा हो जाय तो देखते–देखते यह धरती हिम–पिण्ड की तरह ठण्डी हो जाय और यहां सब कुछ निर्जीव हो जाय, जीवन का किंचित लक्षण भी दिखाई न पड़े । इसलिए इस अग्नि–पिण्ड सविता का भी हमारे भौतिक जीवन में असाधारण महत्त्व है ।

सविता की असाधारण रहस्यमयी शक्तियों का–सावित्री का उपयोग हम यन्त्रों के माध्यम से तो कर ही रहे हैं । चाहें तो तन्त्र और मन्त्र योगों द्वारा भी वैसे ही लाभ उठा सकते हैं । जैसे कि भौतिक–विज्ञान वाले उठा रहे हैं या उठाने की बात सोच सकते हैं । यह सूर्य–योग चाहें किसी भी विधि से किया जाय, भौतिक जीवन में सुविधाऐं बढ़ाने के लिए बड़ा उपयोगी सिद्व होता रहा है, आगे यह उपयोगिता और भी बढ़ने की सम्भावना है ।

असली सविता जो गायत्री मन्त्र का देवता है–इस उदीयमान सूर्य से भी ऊंचा है । उसे असंख्य सूर्यों का सूर्य–परम शक्ति–स्रोत, इस सृष्टि का नियामक और परिपुष्ट कर्ता, विधाता, प्रजापति कहा जाता है । उसके साथ सम्बन्ध, सम्पर्क बनाकर यदि सानिध्यलाभ किया जा सके तो दृश्य सूर्य की अपेक्षा वह आध्यात्मिक सविता हमारे लिए असंख्य गुने सुख–साधन प्रस्तुत कर सकता है । परमात्मा की परम शक्ति गायत्री की–सविता अविच्छिन्न क्षमता सावित्री की–उपासना करके हम वह लाभ ले सकते हैं जिसके लिए यह मानव शरीर उपलब्ध हुआ है । वस्तुतः गायत्री उपासना–सावित्राए साधना ही हमारा जीवन लक्ष्य हो सकता है, होना चाहिए ।

ऐसा भ्रम किसी को नहीं करना चाहिए कि गायत्री से सावित्री भिन्न हो सकती है । एक ही शक्ति के दो नाम हैं । जब वह शक्ति भौतिक प्रयोजनों की पूर्ति के लिए प्रयुक्त की जाती है तब उसे सावित्री कहते हैं और जब वह आध्यात्मिक प्रयोजनों के लिए काम आती हैं, तब उसी को गायत्री कहने लगते हैं । मृत शरीर को जलाते समय जो अग्नि जलती है वह 'लोहिता' और भोजन बनाने की भट्ठी में जलने वाली को 'रोहिता' कहते हैं । लोहिता और रोहिता यह दो नाम प्रयोग में आने वाले विभाजन के अनुरूप हैं । वस्तुतः अग्नि एक ही है । इसी प्रकार उस महाशक्ति को परा, अपरा, सावित्री और गायत्री के नाम से पहचाना जाता हैं । सविता–तत्व के साथ सम्बद्ध होने के कारण उसे सावित्री कहा गया है । सावित्री का देवता होने के कारण परम–तत्व को सविता कहते हैं । यह गायत्री का ही स्वरूप है ।

गायत्री में जिस वरेण्य, भर्ग, देव, सविता का स्मरण, चिन्तन किया जाता है, वह परम तेजस्वी सर्व शक्तिमान् सर्वेश्वर सविता, प्रसविता परमात्मा ही है और उस परमात्मा की सर्वेतोमुखी, सर्वोपरि शक्ति को चाहे गायत्री कहें अथवा सावित्री, वस्तुतः एक ही महत्व से उसका प्रयोग है । सावित्री और गायत्री की एकता के कुछ प्रमाण देखिए 'यश्चैवं विद्वानेव वेदानामातो सावित्री संपदमुपनिषद् मुपास्ते इति ।'

–(गोपथ ब्राह्मण)

'इस प्रकार विद्वान् वेद माता को सावित्री के नाम पर कहते हैं ।'

ओंकार पूर्विकास्तिस्रो महाव्याहृतयोऽव्यय ।
त्रिपदा चैव सावित्री विज्ञेयं ब्रह्मणो मुखम् ॥

ओंकारपूर्वक तीनों महाव्याहृतियों तथा सावित्री मन्त्र वेद का मुख कहा जाता है ।"

एकाक्षरं परब्रह्म प्राणयामः परं तपः ।
सावित्रयास्तु परं नास्ति मौनात्सत्यं विशियते ॥

–(मनु. २१८३)

"एक ओंकार ही परब्रह्म है प्राणायाम मुख्य तप है, सावित्री से बढ़ कर कोई शक्ति नहीं है और मौन की अपेक्षा सत्य–भाषण की महिमा विशेष है । "

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

नमो नमस्ते गायत्रि सावित्रि त्वां नमाम्यहम् ।
सरस्वति नमस्तुभ्यं तुरीये ब्रह्मरूपिणी ॥

हे गायत्री ! हे सावित्री ! मैं आपको प्रणाम करता हूं और मेरा आपके चरणों में बार-बार अभिवादन समर्पित है । हे सरस्वती ! आपके लिए मेरा नमस्कार अर्पित है । हे तुरीये ! आप ब्रह्म के स्वरूप वाली हैं ।"

नमस्ते देवि गायत्री सावित्री त्रिपदेश्वरे ।
अजरे अमरे मातस् त्राहि मां भवसागरात् ॥

(वशिष्ठ संहितायं वांत्रिक स्तोत्र)

"हे तीन पदों वाली गायत्री, सावित्री देवी ! हम तुझे नमस्कार करते हैं । हे अजर-अमर माता ! मेरी भवसागर से रक्षा करो ।"

सच्चिन्मपि परे देवि गायत्रि ब्रह्मरूपिणि ।
आज्ञामय त्वं सावित्रि परिवारार्चनाय मे ॥

"हे सच्चित्मयि ! हे परे ! देवि ! हे ब्रह्म के स्वरूप वाली गायत्री देवि ! हे सावित्रि ! अब आप मुझ सेवक को परिवारार्चन करने के लिए आज्ञा प्रदान करें ।

समस्त देवता चक्र मुनि पितृ गणावृते ।
आरात्रिकं गृहाणेद सावित्रि मम सिद्धये ॥

"हे समस्त देवों के समूह-मुनिगण और पितृगण आवृते ! हे सावित्री ! अब मेरी सिद्धि के लिये इस आरात्रिक (आरती) को ग्रहण कीजिये"

नमस्ते सूर्य संकाशे सूर्यसावित्रिकेऽमले ।
ब्रह्मविद्ये महाविद्ये वेदमातानमोऽस्तुते ॥

"हे सूर्य के समान रूप वाली ! हे सूर्य सावित्री ! हे अमले ! आप ब्रह्म विद्या हैं, आप महाविद्या हैं तथा वेदों की माता हैं । आपके लिये मेरा प्रणाम समर्पित किया जाता है ।"

उपर्युक्त प्रमाणों में गायत्री-सावित्री को एक ही माना गया है । यदि इनमें थोड़ा अन्तर किया भी जाय तो वह इतना ही हो सकता है कि भौतिक प्रयोजनों में प्रयुक्त इस ब्रह्म शक्ति को सावित्री, और अध्यात्म प्रयोजन में होने पर उसे गायत्री कहा जाय । सावित्री जप का लाभ 'स्वर्ग' अर्थात् सुख-सुविधाओं का अभिवर्धन बताया गया है और गायत्री उपासना से मोक्ष लाभ अर्थात् वासना एवं तृष्णा के बन्धनों से छुटकारा मिलना प्रसिद्ध है ।

कहा गया है कि

सावित्री जप्यनिरतः स्वर्गमाप्नोति मानवः ।
गायत्री जप्यानिरतो मोक्षोपायं च विदन्ति ॥

"सवित्री के जप करने वाले को और गायत्री के जप करने वाले को मोक्ष की प्राप्ति होती है ।"

सावित्री का स्वरूप वर्णन करते हुए बताया गया है-

सावित्री त्रिपदा ज्ञेया षटकुक्षिः पञ्जशीर्षका ।
अग्निवर्णमुखा शुक्ला पुण्डरीकदलेक्षणा ॥

(सूत संहिता-गायत्री विवरण)

"सावित्री तीन पाद, षटकुक्षिः और पांच मस्तक वाली है । वह अग्निवर्ण की मुख वाली, शुभ्र और कमल नेत्रों वाली है ।"

दैविक, दैहिक और भौतिक इन तीनों क्षेत्रों में सावित्री का अधिपत्य होने के कारण उसे तीन पाद वाली कहा गया है । कहते हैं कि वामन भगवान् ने तीन चरणों में राजा बलि के तीनों लोक वाले राज्य को नाप लिया था । सावित्री के तीन पाद भी तीनों लोकों तक लम्बे हैं । अर्थात् उनके प्रभाव से तीनों लोकों में अपनी स्थिति सुख-शान्तिमय बनती है । तीन लोक में आकाश, पाताल और पृथ्वी को भी कहते हैं । पर यहां दैविक, दैहिक, भौतिक अर्थात् आध्यात्मिक, शारीरिक और सम्पत्ति-परक तीनों ही क्षेत्रों में सावित्री का प्रकाश पहुंचता है और उस महाशक्ति की उपासना से इन सभी क्षेत्रों में आनंद उल्लास की परिस्थितियां उत्पन्न होती हैं ।

गायत्री-सावित्री महाशक्ति का महाप्राण सविता

साकार उपासना में गायत्री माता का ध्यान सदा सूर्य मण्डल के मध्य में विराजमान महाशक्ति के रूप में किया जाता है । "सूर्य-मण्डल के मध्यस्था" विशेषण के साथ ही उसे समझा और समझाया जाता है । साकार उपासना करने वाले-पुस्तक, पुष्प, कमण्डल धारण किए मातृ-शक्ति का सूर्य-मण्डल के मध्य में विराजमान ध्यान करते हैं । निराकार उपासना करने वाले चिदाकाश एवं महदाकाश में प्रतिष्ठित तेज मण्डल के रूप में उसका ध्यान करते हैं । उपासना का क्रम निराकार हो अथवा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साकार दोनों ही स्थितियों में सूर्य–मण्डल की स्थापना अनिवार्य रूप से रहेगी। प्रकाश के तेजोबल को समन्वित किए बिना गायत्री महाशक्ति का ध्यान हो ही नहीं सकता।

गायत्री भावयेद्देवी सूर्यासारकृताश्रयाम् ।
प्रातमध्याह्नसन्ध्यायां ध्यानं कृत्वा जपेत्सुधीः ॥

(शाक्तानन्दतरंगिणी ३।४।१)

"बुद्धिमान मनुष्य को सूर्य के रूप में स्थित गायत्री देवी का प्रातः मध्याह्न और सायं त्रिकाल ध्यान करके जप करना चाहिए।"

निराकार उपासक तो जप के साथ सूर्य मण्डल की आभा को गायत्री के प्रतीक के रूप में ध्यान करते हैं। साकार उपासाना में भी गायत्री माता के नारी स्वरूप को सूर्य–मण्डल के बीच प्रतिष्ठापित चित्रित किया जाता है। उसके मुख मण्डल पर तेजोवलय के रूप में सूर्य मण्डल का संयुक्त किया जाना तो अनिवार्य रूप से आवश्यक ही माना जाता है। गायत्री माता का ऐसा चित्र किसी ने कदाचित ही बनाने की भूल की होगी जिसमें सूर्य के तेजोमंडल का समावेश न किया गया हो। गायत्री उपासना के अन्त में सूर्यार्घ्यदान के रूप में जप की पूर्णाहुति की जाती है। उपासना के समय में दीपक की, अगरबत्ती की, अग्नि स्थापना की आवश्यकता भी सूर्य शक्ति का प्रतिनिधित्व रखने के रूप में ही की जाती है। यज्ञाग्नि में आहुति देने का विधान भी पुरश्चरणों का अंग है। इसमें भी दूरस्थ सूर्य की निकटस्थ प्रतिनिधि अग्नि की प्रतिष्ठा करने की भावना है।

सूर्य 'सविता' को कहते हैं। सविता की महिमा महत्ता का गान करते हुए शास्त्रकार कहते हैं

सविता सर्वभूतानां सर्वभावश्च सूयते ।
सवनात्प्रेरणाच्चैव सविता तेन चोच्यते ॥

"सब प्राणियों में सब प्रकार के भावों को सविता ही उत्पन्न करता है। उत्पन्न और प्रेरणा करने से ही यह सविता कहा जाता है।"

वरेण्यं वरणीयञ्च संसार भय भीरुभिः ।
आदित्यान्तर्गत यच्च भर्गाख्यं वा मुमुक्षुभि ॥

"संसार के भय से भीत और मोक्ष की कामना वालों के लिए सूर्यमण्डल के अन्तर्गत जो श्रेष्ठ तेज है वह वन्दनीय है।"

देवस्य सवितुर्यच्च भर्गमन्तर्गत विभुम् ।
ब्रह्मवादिन एवाहुर्वरिण्यम् तच्च धीमहि ॥

"सविता देव के अन्तर्गत तेज को ब्रह्मज्ञानी वरेण्य अर्थात् श्रेष्ठ कहते हैं, उसी का हम ध्यान करते हैं।

सन्ध्यायोग में इसका और भी अधिक स्पष्टीकरण किया गया है और बताया गया है कि जिस भावना का हम ध्यान करते हैं वह मन को एकाग्र करने के लिये कोई प्रकाश गोलक मात्र नहीं वरन् वह परम तेजस्वी परमात्मा है जो हमारी बुद्धि, अन्तःचेतना, भावना एवं आस्था को सन्मार्ग की ओर प्रेरित करता है।

चिन्तायामो वयं भर्गो धियो योनः प्रचोदयात् ।
धर्मार्थ काम मोक्षेषु बुद्धि वृती पुनः पुनः ॥

"हम उस तेज का ध्यान करते हैं जो हमारी बुद्धि में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की बार–बार प्रेरणा करता है।"

बुद्धे र्बोधयिता यस्तु चिदात्मा पुरुषो विराट् ।
सवितुस्तद्वरेण्यन्तु सत्यधर्माणमीश्वरम् ॥

"बुद्धि को सन्मार्ग पर लगाने वाला जो विराट् चिदात्मा पुरूष है, वही सत्य धर्म वाला ईश्वर रूप वन्दनीय सविता है।"

अगस्त्य और पाराशर ऋषियों ने भी इसी तथ्य की पुष्टि की है। गायत्री महामन्त्र का ध्यान करते समय जिस सविता को धारण करने की प्रेरणा है वह रोशनी एवं गर्मी ही नहीं देता वरन् हमारी अन्तः चेतना को उत्कृष्टता की दिशा में वह प्रेरणा भी देता है जिससे जीवनोद्देश्य को प्राप्त कर सकना सम्भव हो सके।

यो देवः सविताऽस्माकंधियो धर्मादिगोचराः ।
प्रेरयेत्तस्य यद्भर्गस्त वरेण्यमुपास्म हे ॥

–अगस्त्य

"सविता नामक जो देवता हमारी बुद्धि को धर्मादि में लगाते हैं उनके वन्दनीय तेज की हम उपासना करते हैं।

देवस्ये सवितुर्भर्गो वरणीयञ्च धीमहि ।
तद्स्माकं धियो यस्तु ब्रह्मत्वेव प्रचोदयात् ॥

–पाराशर

"सविता देवता के प्रशंसनीय तेज का हम ध्यान करते हैं जो हमारी बुद्धि को ब्रह्मत्व में प्रेरित करे।"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

प्रत्येक वेद मन्त्र का एक देवता है जिसकी शक्ति से ही यह मन्त्र सिद्व एव फलित होता है। गायत्री महामन्त्र का देवता 'सविता' है। 'तत् सवितुः इस आरम्भिक पद में उस सविता का उल्लेख करते हुए आगे उसी का ध्यान और धारणा करने का निर्देश दिया गया है। गायत्री की शक्ति इस सविता देवता पर ही अवलम्बित है।

सविता कहते हैं "सूर्य" को। गायत्री को एक प्रकार से सूर्य का मन्त्र भी कहा जाता है। 'पुनातु मां तत् सवितुर्वरेण्यम्' इस अन्तिम पद वाले स्तोत्र में सूर्य देवता का ही स्तवन किया गया है। इसलिए कितने ही उपासक सूर्य की आराधना के लिए गायत्री का उपयोग करते हैं। गायत्री को माता के रूप में मानने वाले साधक भी उसका रूप "सूर्य मण्डल मध्यस्था" सूर्य मंण्डल के बीच में अवस्थित स्वरूप का, मातृदेणी के रूप में ही ध्यान करते हैं। किसी भी रूप में गायत्री मन्त्र की उपासना की जाय 'सूर्य का उससे अविच्छिन्न सम्बन्ध अनिवार्य रूप से रखना होगा। गायत्री का देवता ही सूर्य है तो उसका स्वरूप भी साथ में होना स्वाभाविक है।

स्थूल विज्ञान की दृष्टि से सूर्य एक अग्निपिण्ड है, जो आकाश में अवस्थित अनन्त आकाश गंगाओं में से 'स्पाइरल' नामक एक आकाश गंगा के परिवार के लगभग डेढ़ खरब तारों में से एक छोटा-सा तारा मात्र है। इसका व्यास करीब ९ लाख मील अर्थात् पृथ्वी की अपेक्षा ११० गुना बड़ा है। उसके परिवार में ९ ग्रह है तथा प्रत्येक ग्रह के अनेक उपग्रह है। बुध, शुक्र और पृथ्वी का एक-एक चन्द्रमा है। मंगल के दो, वृहस्पति के बारह, शनि के नौ, वरुण के पांच, हरिग्रह के दो और पीतग्रह के चार। इनके अतिरिक्त हजारों छोटे ग्रह तथा ग्रहिकाऐं एवं अगणित धूमकेतु, पुच्छल तारे इस सौर परिवार में सम्मिलित हैं। यह सब सूर्य की प्रवल आकर्षण शक्ति में जकड़े हुए उसकी परिक्रमा करते रहते हैं। अपने इस सारे परिवार को लेकर सूर्य 'स्पाइरल' आकाश गंगा की परिक्रमा करता है। इस एक परिक्रमा में उसे पच्चीस करोड़ वर्ष लगते हैं। ज्योतिषियों का अनुमान है कि जब से सूर्य पैदा हुआ है तब से अब तक वह सोलह ऐसी परिक्रमाऐं कर चुका है।

स्थूल पदार्थ विज्ञान अभी तक सूर्य के सम्बन्ध में ऐसी ही जानकारियां एकत्रित कर सका है। तथा उसकी किरणों से सप्त रंग, विद्युत् प्रवाह एवं आणविक विकरण का कुछ हद का पता लगा सका है। इस दिशा में और भी जानकारी एकत्रित की जा रही है पर यह सब सूर्य के स्थूल रूप का ही परिचय है। जैसे मनुष्य की सत्ता का विश्लेषण करने के लिए उसके शरीर सम्बन्धी जानकारी प्राप्त कर लेना पर्याप्त नहीं माना जा सकता, उसकी विद्या, बुद्धि, गुण, कर्म स्वभाव प्रवृत्ति भावना, चेतना एवं आत्मा का पता लगाना भी आवश्यक होता है। इसके बिना केवल शरीर विश्लेषण के आधार पर जो परिचय प्राप्त किया जायेगा वह अधूरा ही रहेगा। इसी प्रकार सूर्य की आत्मा का भी जानना आवश्यक है। इसके बिना गायत्री मन्त्र का साधक इस अग्नि पिण्ड सूर्य के जान लेने मात्र से अपना प्रयोजन पूर्ण नहीं कर सकता।

एक अनन्त चैतन्य, जीवन एवं शक्ति का समुद्र इस विश्व में लहरा रहा है। जड़ प्रकृति का परमाणु सकुल, उस चेतन सत्ता की तरंग से ही तरंगित होकर गतिवान हो रहा है। जड़ पदार्थों में अपनी निज की कोई शक्ति या चेतना नहीं है। जब प्रलय होती है तो वह सब राख के ढेर के समान निष्प्राण, गतिहीन हो जाता है। संसार में जो कुछ हलचल हो रही दीखती है उसके मूल में वह चेतना का महाभंडागार ही काम कर रहा है। जैसे देह के निर्जीव कलेवर में आत्मा का ही संसार गतिशील रहता है, वैसे ही जड़ प्रकृति में जो चेतना होती दिखाई पड़ती हैं उसका कारण वह चेतना सागर ही हैं जिसके लिए गायत्री मन्त्र में 'सविता' शब्द का प्रयोग हुआ है। यह प्रकाश पिण्ड सूर्य उस सविता का एक बाह्य-शरीर-स्थूल कलेवर मात्र है।

सूर्य की गर्मी और रोशनी हर किसी को दीखती है, यह उसकी स्थूल शक्ति है। इसके भीतर एक और भी सूक्ष्म सत्ता उसके अन्तर में मौजूद है वह है जीवन-शक्ति। प्राणियों को उत्पन्न करने, पोषण और अभिवर्धन करने का विश्वव्यापी कार्यक्रम उस सूर्य की आत्मा पर ही आधारित है। रोशनी और गर्मी मशीनों से भी पैदा की जा सकती हैं, पर उनसे जीवन नहीं मिल सकता। वैज्ञानिक जानते हैं कि यदि सूर्य न होगा तो पृथ्वी पर जीवन का भी कोई चिह्न शेष न रहेगा।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

श्रुति में सूर्य को "संसार की आत्मा" बताया गया है। आकाश में दौड़ने वाले सूर्य बाह्य कलेवर को गर्मी और रोशनी का पिण्ड कह सकते हैं, पर उसकी आत्मा जगत का जीवन है। इस जीवन शक्ति का दूसरा नाम प्राण-शक्ति भी है। सूर्य की आत्मा को ही महाप्राण कहा गया है। उस महा प्राण की बूंदें विभिन्न प्राणियों में अल्प प्राण के रूप में दृष्टगोचर होती हैं।

गय कहते हैं प्राण को। स्त्री कहते हैं त्रास, उद्धार, उत्थान करने वाली को। प्राणशक्ति का उत्थान करने वाली विद्या को गायत्री कहा जाता है। अपने देवता सविता से गायत्री महामन्त्र में प्राण-शक्ति अभिप्रेत होती है और उसी का एक अंश अपने में धारण करके गायत्री उपासक अपने आपको धन्य बनाता है।

सूर्य के माध्यम से प्रस्फुटित होने वाला महाप्राण परब्रह्म परमात्मा का वह अंश है जिससे इस विश्व-ब्रह्माण्ड का संचालन होता है। एक से अनेक बनने का ब्रह्म संकल्प ही महाप्राण वन कर फूट पड़ा है। यह निर्झर जिस दिन तक झर रहा है उसी दिन तक सृष्टि है। जिस दिन परम प्रभु उस संकल्प को समेट लेंगे उसी दिन महाप्राण शान्त हो जायगा और फिर महा शून्य के अतिरिक्त और कुछ भी शेष न रहेगा। यह ब्रह्मसंकल्प महाप्राण परब्रह्म की सत्ता से भिन्न कोई बाहरी पदार्थ नहीं वरन् उसी का एक अविच्छिन्न अंग है। परमात्मा अनन्त है उसकी सत्ता असीम है। उस अनन्त, असीम, अचिन्त्य का एक भाग जो सृष्टि के संचालन में, उसकी समस्त प्रक्रियाओं को सुव्यवस्थित रखने में लगा हुआ हैं, उस महाप्राण को ही सूर्य की आत्मा-सविता देवता समझना चाहिए। प्राणी का, जीवधारी का सीधा सम्बन्ध इसी से हैं।

जीवन की बाह्य और आन्तरिक सुव्यवस्था के लिए प्रगति और शान्ति के लिए परब्रह्म की महाप्राण सत्ता को अधिकाधिक मात्रा में उपलब्ध करना प्राणी के लिए अभीष्ट होता है। इसी प्रयोजन की पूर्ति के लिए गायत्री महामन्त्र द्वारा सविता देवता की उपासना की जाती है।

यह भ्रम नहीं रहना चाहिए कि गायत्री महामन्त्र की शक्ति इस अग्नि पिण्ड सूर्य पर अवलम्बित है। यह तो रोशनी और गर्मी मात्र देता है। यह सब तो बिजली की मशीनों से भी प्राप्त किया जा सकता है। इतने मात्र के लिए किसी उपासना की क्या आवश्यकता थी? गायत्री सूर्य की आत्मा सविता शक्ति के साथ उपासक को सम्बन्धित करती है जिसके द्वारा वह परब्रह्म महाप्राण को अपने शरीर और अन्तः करण में आवश्यक मात्रा में धारण करके लौकिक सुख एवं आत्मिक शान्ति को अनुभव करता हुआ जीवन के परम लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है।

यह महाप्राण जब शरीर क्षेत्र में अवतीर्ण होता है तो आरोग्य आयुष्य, तेज, ओज, बल, उत्साह, स्फूर्ति, पुरुषार्थ, इन्द्रिय शक्ति के रूप में दृष्टिगोचर होता है जब वह मनःक्षेत्र में अवतीर्ण होता है तो उत्साह, स्फूर्ति प्रफुल्लता, साहस, एकाग्रता, स्थिरता, धैर्य, संयम आदि सद्गुणों के रूप में देखा जा सकता है। जब उसका अवतरण आध्यात्मिक क्षेत्र में होता है तो त्याग, तप, श्रद्धा, विश्वास, दया, उपकार, प्रेम, विवेक आदि के रूप में दिखाई देता है। तीनों ही क्षेत्र उस महाप्राण से जैसे-जैसे भरते जाते हैं वैसे ही मनुष्य अपूर्णता से पूर्णता की ओर, लघुता से विभुता की ओर, तुच्छता से महानता की ओर बढ़ने लगता है। आत्म कल्याण का, लक्ष्य प्राप्ति का यही मार्ग हैं। गायत्री के द्वारा सविता देवता को महाप्राण को उपलब्ध करने का प्रयोजन ही यही हैं।

सविता देवता यद्यपि सूर्य का ही दूसरा नाम है। पर यह भली प्रकार समझ लेना चाहिए कि जो अन्तर शरीर और आत्मा का है वही सूर्य और सविता का है। गायत्री महामन्त्र का देवता सूर्य वही महाप्राण है। उसका स्पष्टीकरण शास्त्रों में स्थान-स्थान पर विस्तारपूर्वक किया गया है।

योऽसावादित्ये पुरुषः सोऽहम्।

मैत्रेयी उपनिषद ६/३५

"जो सूर्य है सो मैं हूं।"

प्राणो वै अर्क।

शतपथ १०/४/७/२३

"प्राण ही सूर्य है।"

सएष वैश्वानरो विश्व रूपः प्राणे ऽग्निरुदयते।

प्रश्नोपनिषद १/७

"सूर्य के उदय होनें पर सारे विश्व में प्राणाग्नि का संचार होने लगता है।"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सहस्ररश्मि शतधा वर्तमानः ।
प्राणः प्रजानामुदंयत्येष सूर्यः ॥

प्राण ही सहस्त्र रश्मियों वाला, सैकड़ों प्रकार से वर्तमान प्रजा को उत्पन्न करने वाला सूर्य है ।

भोऽसो तपन्नुदेति ससर्वेषां। भूतानां प्राणाना दायो देति।

–श्रुति

"इस सूर्य से ही सब प्राणियों को प्राण प्राप्त होता है ।"

आदित्यो वै बाह्यप्राण उदयत्येषत्येनं चाक्षुषं प्राणामनुग्रह्णीते।

प्रश्नोपनिषद१/७

"बाह्य जगत में यह प्राण आदित्य रूप होकर दशों दिशाओं मे विद्यमान है ।"

विश्व रूपं हरिणं जात वेदसं
परायणं ज्योतिरेकं तपन्तम् ।
सहस्र रश्मिः शतधा वर्तमानः
प्राणःप्रजानामुदयत्येष सूर्यः ॥

प्रश्नोपनिषद१/८

"विश्वरूप, व्यापक, सर्वाधार, प्रकाशवान्, तप्त किरणों वाला यह सूर्य समस्त जीवों का प्राण होकर उदय होता है ।"

सूर्याद् भवन्ति भूतानि सूर्येण पालितानि तु ।
सूर्य लयं प्राप्नुवन्तियः सूर्यः सोऽहमेव च ॥

–सूर्योपनिषद

"सूर्य ही से सब प्राणी उत्पन्न होते हैं , उसी से उनका पालन होता है, उसी में वे लय हो जाते हैं, जो सूर्य है सो ही मैं हूं ।"

गायत्री का देवता सविता–सूर्य विश्व के जीवन का, ज्ञान और विज्ञान का केन्द्र हैं । अन्य समस्त देव शक्तिओं का केन्द्र भी वही है । चारो वेदों में जो कुछ है, वह सब भी इस सविता शक्ति का विवेचन मात्र है । तप, श्रद्वा और साधना के द्वारा योगीजन इसे ही प्राप्त करने में संलग्न रहते हैं । नाम रूप सुविधानुसार कोई भी माना जाय पर वस्तुतः यह सविता देवता ही सबका उपास्य है । उसी को प्राप्त करने के लिए प्रत्येक को प्रयत्नशील होना पड़ता है देखिए

उद्यन्तं वादित्यं मग्निरनु समारोहति ।
सुषुम्नः सूर्यरश्मिः चन्द्रमा गन्धर्वः ॥

"इस सूर्य के अन्तर्गत ही अग्नि, सुषम्न,चन्द्र, गन्धर्व आदि हैं ।"

ऋग्भिः पूर्वान्हेदिवि देव ईयते,
यजुर्वेदेतिष्ठति मध्यअहः ।
सामवेदेनास्तमये महीयते,
वेदेरसून्यस्त्रिभिरेति सूर्यः ॥

"यह सूर्य प्रातः ऋक् से, मध्याह्न को यजु से और सायंकाल साम से युक्त होता हैं ।"

ऋचोऽस्य मण्डलं सामान्यस्य मुर्तिर्यजूंषिच ।
त्रयीमयोऽय भगवान् कालात्म कलकृद्विभः ॥

–सूर सिद्वान्त

"ऋक् सूर्य का मण्डल और यजुः तथा साम उसकी मूर्ति है । वही काल रूप भगवान है ।"

नत्वा सूर्य परंधाम ऋग् यजुः साम रूपिणम् ।

–सूर्य पुराण

"ऋक् यजु साम रूपी परंधाम सूर्य को नमस्कार है ।"

अथोत्तरेण तपसा ब्रह्मचर्येण श्रद्वया विद्ययात्मा नमन्विष्यादित्यभिः जयन्ते एकद्वै प्राणानामायतनमेत्तदमृतम मयमेतत्परायण मेतस्यान्न पुनरावर्तन्त इत्येषनिरोधः ।

"तप, ब्रह्मचर्य श्रद्वा तथा विद्या द्वारा जो आत्मा की खोज कर उस आदित्य को प्राप्त करते हैं वे पुनःजन्म नहीं लेते यह आदित्य ही प्राणों का आशय हैं । वही मोक्ष है, वही पद है, जीव को उसी से परम आश्रय मिलता है ।"

भवद्भूतं भविष्यं च जंगमंस्थवरं च चयत् ।
अस्यैकं सूर्यमैवैक प्रभवं प्रलयंविदुः ।
असतश्च सतश्चैव योनिरेषा प्रजापतिः ।
तदक्षरं चाव्ययंच यच्चैतद ब्रह्मशाश्वतम् ।
कृत्वैवहि त्रिधात्माननेषु लोकेषुतिष्ठति ।
वेदान् यथायथं सर्वान् निवेश स्वेषु रश्मिषु ।

–सूर्योपनिषद

"जो जड़–चेतन पदार्थ इस संसार में अब मौजूद हैं, भूतकाल में थे या भविष्य में होंगे वे सभी सूर्य से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उत्पन्न हुए और उसी में लीन होते हैं । यह सूर्य ही प्रजापति है । यह सत्–असत् की योनि है । अक्षर, अव्यय, शाश्वत, ब्रह्म यही है । यह तीनों लोकों में व्यात है समस्त देवता इसी की किरणें हैं ।"

आदित्योह्यादि धूतत्वात् प्रसूत्या सूर्य उच्यते ।
परंज्योतिः तमः पारे सूर्येऽयं सवितेति च ॥

–सूर्य सिद्धान्त

"वह समस्त जगत् का आदि कारण है । इसलिए उसे आदित्य कहते हैं । सबको उत्पन्न करता है इसलिए सविता कहते हैं । अन्धकार को दूर करता है इससे उसे सूर्य कहा जाता है ।

अथादित्य उसेयन्यत्प्राचीदिशं प्रविशति तेन प्राच्यान् प्राणन रश्मिष संनिधत्ते। यद्दक्षिणां यत् प्रतीची यदुदीची यदधो यद्दूर्ध्व यदन्तरा दिशो यत्सर्वप्रकाशयति तेन सर्वान् रश्मिषुसंनिधत्ते ।

–प्रश्नोपनिषद१/६

"पूर्व में उदय होता हुआ सूर्य अपनी किरणों से पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, नीचे, ऊपर तथा उनके कोणों का सभी दिशाओं को प्रकाशित करता है । उसकी किरणों में समस्त जगत् का प्राण धारण किया जाता है ।"

अपश्यं मोपायमनिपद्यमान माच पराच पथिभिश्चरन्तम् ।
स सध्रीचीः स विषूचीर्वसानआनरीवति भुवनेष्वन्तः ॥

–ऐतरेय

"मैंने प्राण को देखा है । साक्षात्कार किया है । यह प्राण सब इद्रिन्यों का रक्षक है । यह कभी नष्ट नहीं होता है । यह नाड़ियों द्वारा शरीर में दौड़ता रहता है । मुख और नासिका द्वारा यह आता और जाता है । यह शरीर में वायु रूप है पर ब्रह्माण्ड में सूर्य रूप है ।"

इस सविता की उपासना में संलग्न ऋषि, मुनि योग के द्वारा अपनी आत्मा को तेज पुंज महाप्राण पर ब्रह्म में प्रविष्ट करते हैं । शुकदेव जी अपनी साधना को पूर्ण करते हुए जिस स्थिति में प्रविष्ट हुए उसका उल्लेख महाभारत में इस प्रकार मिलता है-

तस्माद् योग समास्थायत्यनत्वागृहकलेवरम् ।
वायुभूतः प्रवेक्ष्यामि तेछोराशि दिवाकरम् ॥

–महाभारत

शुकदेवजी ने कहा "मैं योग में स्थित होकरइस देह को त्याग कर तेजो–राशि सूर्य वायुभूत होकर प्रवेश करता हूं ।

उपनिषदकारों ने इस महा उपास्य सविता की उपासना का निर्देश करते हुए उसकी महान् महत्ता पर भी प्रकाश डाला है और उसे आत्मिक मलीनताओं का वितरण कर्त्ता माना है ।"

सूर्यश्व मा मन्युश्च कन्युपतयश्व मन्युकृतेभ्यः पापेभ्यो रक्षन्ताम् । यद्रात्रया पापमकार्षम् । मनसावाचा हस्ताभ्याम्। पद्भ्बामुदरेश शिश्न । रात्रिम्तवलुम्पतु यत् किच जुरितं मयि
इदमह माममृतयोनौ सूर्ये ज्योतिषी जुहोमि स्वाहा ।

–(तै० अ० प्र० १० अ० ३२)

"जगत् का प्रेरक सूर्य उन पापों से मेरी रक्षा करे जो क्रोधादि वृत्तियों द्वारा उत्पन्न हुए हैं । जो रात्रि में मैंने पाप किया है, मन, वाणी और हाथों द्वारा पैर, उदर और उपस्थेन्द्रिय द्वारा (किया है) रात्रि में वह लुप्त हो जाय यह मैं अपने आपको अमृत की योनि में जो कि सूर्य ज्योति रूप परमात्मा है उसमें आहुति रूप देता हूं–स्वाहा बोल कर देता हूं ।"

य इह वा व स्थिरचर निकराणां निजनिकेनिानां मनइन्द्रयासुर–गपाननात्मनः स्वयमात्माऽन्तर्यामी प्रचोदयात्॥

–ब्रह्मोपनिषद

"आप सबके आत्मा हो और अतर्न्यामी हो ।जगत् में जितने चराचर प्राणी हैं वे सब आपके ही आधार पर रहते हैं और उनके अचेतन जैसे मन, इन्द्रिय और प्राणों के आप ही प्रेरक हो ।"

त्रिकाल संध्या में प्रातः मध्याह्न, सायंकाल के लिए तीन प्रतीकों का उल्लेख है । प्रातः ब्राह्मी, मध्यान्ह वैष्णवी और सायं शाम्भवी गायत्री के हंसारूढ़, गरुणारूढ़, वृषभारूढ़, स्वरूपों का वर्णन है ! वस्तुत यह तीन वेदों का ही त्रिविध स्वरूप है । सविता देवता प्रातः ऋग्वेद, मध्याह्न यजुर्वेद और सायंकाल सामदेव स्वरूप होता है । वेदों में जिन तीन विज्ञान का भण्डार है उसे साधक के अन्तःकरण में अभिप्रेत करता है । ऋग से ज्ञान योग, यजु से कर्मयोग साम से भक्तियोग का सम्बन्ध है । सविता देवता का ध्यान हमारी मनोभूमि को इन तीनों योगों की साधना के उपयुक्त बनाता है । इन्हीं तीनों तथ्यों का ब्रह्मा, विष्णु, महेश के रूप में उल्लेख हैं । ऋग्–ब्रह्म, यजु–विष्णु, और साम–शिव है । इन तीनों के द्वारा त्रिकाल सन्ध्या द्वारा गायत्री उपासना करने वाले को ज्ञान, वैभव एवं सद्गुणों की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

उपलब्ध होती है। इसी आधार, एक ही परब्रह्म–महतत्व सविता को तीन प्रकार तीन चित्रों में चित्रित किया गया है।

महर्षि याज्ञवल्क्य ने इसी सविता की उपासना का विधान वर्णन करते हुए उसकी महत्ता, विशेषता एवं उपलब्धियों को संक्षिप्त किन्तु सारगर्भित शब्दों में इस प्रकार वर्णन किया है

ॐ नमो भगवते आदित्याखिल जगतात्मस्वरूपेण कालस्वरूपेण चतुर्थिथि भूतनिकायानां ब्रह्मादिस्तम्ब पर्यन्तानामन्तर्हृदयेषु बहिरपि चाकाश दवोपाधि नाऽव्ययधीयमानो भवानेक एवं क्षणलवनिमेषा – वयवोपचितसंवत्सरगणे नामामादान विसर्गाभ्यामिमां लोकयात्राम–भुवाते। याज्ञवल्क्य

"मैं ॐकार स्वरूप भगवान को नमस्कार करता हूं। हे भगवन् ! आप समस्त जगत् के आत्मा और काल स्वरूप हो। ब्रह्मा से लेकर तृणपर्यन्त जितने प्राणी हैं उन सबके हृदय में और बाहर भी आकाश के समान व्याप्त रह कर, फिर भी सब उपाधियों से पृथक् होकर आप एक अद्वितीय ईश्वर हैं। आप ही क्षण, लव, निमेष इत्यादि अवयव वाले संवत्सरों द्वारा तथा जल के खींचने तथा प्रदान के द्वारा समस्त जगत का जीवनचालन करते हो।

प्रत्येक गायत्री उपासक को जप के साथ ध्यान भी करना चाहिए यह ध्यान चाहे माता के रूप में साकार हो अथवा प्रकाश पुंज के रूप में निराकार। दोनों ही स्थितियों में 'सूर्य मण्डल मध्यस्था' की भावना के साथ परम तेजस्वी' सद्बुद्धि प्रेरक, सविता देवता की ध्यान–धारणा अवश्य करनी चाहिए। सावित्री और सविता का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है। दोनों का अविच्छिन्न युग्म है। इसलिए गायत्री तप के साथ–साथ सविता की ध्यान–धारणा को अनिवार्य घोषित किया गया है।

सावित्री का शक्तिस्रोत सविता देवता

सविता और सावित्री की युग्म भावना एक कल्पना पर नहीं तथ्यों पर आधारित है। अग्नि तत्व से बना दृश्यमान सूर्य तो चेतन सविता देव का स्थूल प्रतीक भर है। प्रतीक पूजा का स्वरूप ही यह है कि जड़ पदार्थों के माध्यम से चेतनात्मक प्रशिक्षण की आवश्यकता पूरी कराई जाय। सविता–चेतना ब्रह्मतेज को कहते हैं। वह अदृश्य है। ब्रह्मडीय चेतना के रूप में, दिव्य प्रखरता के रूप में सर्वत्र व्यापक और विद्यमान है। उसी के साथ आत्म चेतना की घनिष्ठता बढ़ाने के लिए प्रतीक रूप से सूर्य अग्नि पिण्ड ध्यान साधना में प्रयुक्त किया जाता है। प्रकारान्तर से सूर्य उपासना का तात्पर्य ब्रह्म तेज अवतरण आत्म चेतना की पृष्ठ भूमि पर सम्पन्न कराना है। आत्मा को पृथ्वी और ब्रह्म तेज को सूर्य की उपमा दी जा सकती है। पृथ्वी पर जो जीवन दृष्टिगोचर होता है वह सूर्य का ही अनुदान है। 'सूर्य आत्मा जगतस्थुश्च' सूर्य को जगत् की आत्मा बताया गया है। पृथ्वी पर जिस तरह सूर्य–केन्द्र से जीवन बरसता है उसी प्रकार आत्मा रूपी पृथ्वी पर ब्रह्मसत्ता के प्राण तेज की वर्षा होती है। इसी से अन्तः भूमि पर विभूतियों की हरितमा उगती और फूलती–फलती हैं। गायत्री के साथ उनके देवता सविता का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध इसी आधार पर जुड़ा हुआ है। गायत्री का दूसरा नाम सावित्री सविता की शक्ति–ब्रह्मशक्ति होने के कारण ही रखा गया है।

इस प्रकार उपचार में उपासनात्मक कलेवर की प्रतीक पूजा नारी रूप में करने के साथ ही उच्च स्तरीय ध्यान में स्थापना भी प्राण की करनी पड़ेगी। गायत्री का प्राण सविता है। शरीर को देख लेने के बाद किसी की वस्तु स्थिति उसके आन्तरिक स्तर को समझने में ही विदित होती है। सविता सम्पर्क के लिए अग्रिम कदम बढ़ाने के पीछे भी यही कारण है। इसमें विरोध विग्रह एवं सामंजस्य जैसी कोई बात नहीं है। इसे क्रमिक प्रगति के अतिरिक्त और कुछ नहीं समझा जाना चाहिए।

गायत्री को प्राण प्राण को सविता कहा गया है। इस त्रिकोण विवेचन से गायत्री के सवितामय होने का ही निष्कर्ष निकलता है। गायत्री सद्बुद्धि की ऋतुम्भरा प्रज्ञा की देवी है। प्राण और सविता को भी इन्ही प्रयोजनों की पूर्ति करने वाला बताया गया है। शास्त्र वचनों में इस त्रिकोण को रेखा गणित के त्रिभुज की तरह एक दूसरे के साथ हुआ समझा जा सकता है। गायत्री का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देवता सविता होने के सन्दर्भ में कुछ उक्तियां इस प्रकार हैं ।–

दैवतं सविताप्यस्यां गायत्रं छन्द एव च ।
विश्वामित्र ऋषिश्चैव प्रोच्यते ऋषिसत्तम ॥

हे ऋषि श्रेष्ठ! इसका देवता सविता है–गायत्रीछन्द है और विश्वामित्र इसका ऋषि कहा जाता है ।

सवितुश्चाधिदेवो या मन्त्राधिष्ठातृदेवता ।
सावित्री ह्यपि वेदाना सावित्री तेन कीर्तिता ॥

–देवी भगवत

इस सावित्री मन्त्र का देवता सविता (सूर्य) है । वेद मन्त्रों की अधिष्ठात्री देवी वही है । इसी से उसे सावित्री कहते हैं ।

यो देवः सवितास्माकं धियो धर्मादिगोचरः ।
प्रेरयेत् तस्य यद् भर्गः तं वरेण्यमुषास्महे ॥

"जो सविता देव हमारी बुद्वि को धर्म में प्रेरित करता है उसके श्रेष्ठ भर्ग (तिज) की हम उपासना करते हैं ।

सर्व लोकप्रसवनात् सविता स तु कीत्यते ।
यतस्तद् देवता देवी सावित्रीत्युच्यते ततः ॥

–अमरकोश

"वे सूर्य भगवान समस्त जगत को जन्म देते हैं इसलिए 'सविता' कहे जाते हैं । गायत्री मन्त्र के देवता 'सविता' हैं इसलिए उसकी दैवी, शक्ति को 'सावित्री' कहते हैं ।"

मनोवै सविता प्राणधियः ।

–शतपथ ३/६/१

प्राण एव सविता,विद्युतरेव सविता ।

–शतपथ ७/७/६

यो देवः सविताऽस्माकं धियो धर्मादिगोचरः ।
प्रेरयत्तास्य तदृभर्गस्तध्वरेण्यमुपास्महे ॥

"जो देव सविता सूर्य मण्डण के रूप है प्रत्यक्ष होकर धर्माधर्म संस्कारों को देखता हुआ हमारी बुद्वि को प्रेरणा देता है, उसका प्रसिद्व भर्ग (स्वप्रकाश चेतना रूप तेज) स्पृह्य करने योग्य है, उसी की हम उपासना, ध्यान करते हैं ।"

यो वै स प्राण एषा सा गायत्री ।

–शत०१/३/५/१५

जो प्राण है उसे ही निश्चित रूप से गायत्री जानना । गायत्री को प्राण कहा गया है और प्राण ही सूर्य है । श्रुति कहती है 'प्राण प्रजानां उदयत्येष सूर्यः" अर्थात् यह उदीयमान सूर्य ही जीवधारियों में प्राण शक्ति के रूप में प्रकट होता है ।

यह सूर्य ही तेज कहा जाता है । ब्रह्म तेज और सविता एक ही है । गायत्री को तेजस्विनी कहा गया है । सविता तेज का प्रतीक है । अस्तु सविता का तेज और गायत्री के भर्ग को एक ही समझा जाना चाहिए । कहा गया है

तेजसा वं गायत्री प्रथम त्रिरात्र दाधार
पदैर्द्वितीयमक्षरैस्तृीयम् । ता. १०/५/३
तेजो वै गायत्री । गो.उ. ५/३
ज्योतिर्वै गायत्री छन्दसाम् ता १३/६/२
ज्योतिर्वै गयात्री । को० १७/६
दविद्यु ततो वै गायत्री ता. १२/१/२
गायत्र्येव भर्गः। गो.पू ५/१५
गायत्री वै रथन्तस्य योनिः ता.ब्रा.१५/१०/५
तेजो वै गायत्री ।

–कपि.सं.३०/२

सविता तेज के सम्बन्ध में किसी प्रकार भ्रम न रह जाय, उसे भौतिक अग्नि प्रकाश्न मान लिया जाय इसलिए यह स्पष्टीकरण आवश्यक समझा गया कि यह 'तेजस्' विशुद्व रूप से ब्रह्म तत्त्व का है । सविता तेज के ब्रह्म तेज के अतिरिक्त और कुछ समझ बैठने की भूल किसी अध्यात्म विद्या के छात्र को नहीं ही करनी चाहिए । कहा है

सविता सर्वभूतानां सर्वभावान् प्रसूयते ।
सवनात् पावनाच्चैव सवितानेन चोच्यते ॥

सकल भूतों के उत्पादक तथा पावन कर्ता होने से परमात्मा सविता कहलाते हैं ।

आदित्यो ब्रह्मेत्यादेस्तस्योपव्याख्यानम् ।

–छान्दोग्योपनिषद्–३प्र°१६/१

सूर्य ही ब्रह्म है, वहे महर्षियों का आदेश है, सूर्य में परमेश्वर की सत्ता को समझने का उपदेश है ।

यद्वै तद् ब्रह्मेतीदं वावतद्योऽयं बि हर्था पुरूषादाकाशो यो वैस बहिर्धा पुरूषादाकाशः ॥७॥

–छान्दोग्योपनिषद्–हि३प्र°१२/७

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

जो ही वह ब्रह्म है । यह ही वह गायत्री वर्णित सविता है जो वह पुरुष से बाहर 'आकाश' प्रकाशमान है ।

यो असौ आदित्य पुरुषः सो असौ अहम्।

–यजु°४०/१७

सूर्यमण्डल में जो पुरूष है, वही मैं हू

ब्रह्म सूर्य समं ज्योतिः ।

यजु°२३/४८

ब्रह्मसूर्य ज्योति के समतुल्य है ।

युञ्जते मन उत युञ्जते धियो ।
विप्रा विप्रस्य बृहतो विपश्चितः ।
वि होत्रा देधे वयुनाविदेक
इन्महीं देवस्य सवितु परिष्टुतिः ॥

श्वेताश्वतर२/४

जिस सविता देवता में विद्वान अपने मन को, बुद्धि को लगाते हैं और यज्ञादि शुभ कर्म करते हैं, वह सर्व ज्ञाता एक है । उस सर्व व्यपक, सर्व देव की हम स्तुति करते हैं ।

तदित्यवाड मनोगम्यं ध्येयं यत्सूर्य मंडले ।

उस परब्रह्म का ध्यान सूर्य मण्डल में वाक् और मन द्वारा किया जाता है । गायत्री उपनिषद् से अनेकों उदाहरण देकर यह समझाने का प्रयत्न किया गया है कि वे दोनों परस्पर काया और प्राण की तरह एक दूसरे के साथ सुसम्बद्ध हैं दोनों को दो योनि एक मिथुन की संज्ञा दी गई है ।

गायत्री के भर्ग तेज की उपासना करने से साधक तेजस्वी बनता है । जो तेजवान है वस्तुतः वही बलवान है । मोटी काया बना लेने भर से कोई तेज रहित दुर्बल मनः स्थिति का व्यक्ति बलवान नहीं कहलाता ।

तेजोयस्य विराजते स बलवान्
स्थूलेषु कः प्रत्ययः ।

–नीति

जिसमें तेज है वही बलवान है स्थूल काया के पुष्ट होने से क्या प्रयोजन सधता है ।

गायत्री साधना वस्तुतः तेजस्विता की, प्राण शक्ति की, ब्रह्मबल की उपासना है । इसी से उसकी उच्च स्तरीय साधना प्रक्रिया को 'ब्रह्मवर्चस' विद्या कहा जाता है । इस उपार्जन में संलग्न व्यक्ति को सर्वतोमुखी प्रगती के पथ पर अग्रसर होने का अवसर मिलता है । श्रुति कहती है

यो हवा एववित् ब्रह्मवित् पुण्यं च कीर्ति लभते । सुरभीञ्च गन्धान् । सोऽपहृतपाप्मा अनन्ताश्रिय न श्रुत। यह एवं वेद यश्चवै विद्वान एवमेतां वेदानां मातरम्। सावित्री सपदमुपनिषद् मुपास्ते ।

शैपथ ब्राह्मण

जो गायत्री के गहन तत्व को जानता है,वह पुण्य, कीर्ति लक्ष्मी आदि को प्राप्त करता हूआ परम श्रेय को प्राप्त करता है ।–

शास्त्रों में यह भी कहा गया है कि गायत्री का देवता सविता–सूर्य विश्व के जीवन का ज्ञान और विज्ञान का केन्द्र भी वही है । चारों वेदों में जो कुछ है, वह सब भी इस सविता शक्ति का विवेचन मात्र है । तप श्रद्धा और साधना के द्वारा योगीजन इसे ही प्राप्त करने में संलग्न रहते हैं । नाम रूप सुविधानुसार कोई भी माना जाय पर वस्तुतः वह सविता देवता ही सबका उपास्य है । उसी को प्राप्त करने के लिए प्रत्येक साधक को प्रयत्नशील होना पड़ता है । देखिए

उद्यन्तं वादित्य मग्निरनु समारोहति ।
सुषुम्नः सूर्यरश्मिः चन्द्रमा गन्धर्वः ॥

–श्रुति

"इस सूर्य के अन्तर्गत हीअग्नि, सुषुम्न, चन्द्र, गन्धर्व आदि हैं ।"

ऋग्भिः पूर्वादिवि देवि ईयते,
यजुर्वेदेतिष्ठति मध्यअहः।
सामवेदेनास्तमये महीयते,
वेदेरसून्यस्त्रिभिरेति सूर्यः

"यह सूर्य प्रातः ऋक् से, मध्याह्नको यजु से और सायंकाल साम से युक्त होता है ।"

ऋचोऽस्य मण्डलं सामान्यस्य मूर्तिर्यजूंषिच ।
त्रयीमयोऽय भगवान् कालात्म कलकृद्विभुः ॥

सूर्य सिद्धान्त

"ऋक् सूर्य का मण्डल और यजु तथा साम उसकी मूर्ति है । वही काल रूप भगवान् है ।"

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नत्वा सूर्य परंधाम ऋगु् यजुः सान रूपिणम् ।

सूर्य पुराण

ऋक् यजु साम रूपी परंधाम सूर्य को नमस्कार है ।"

अथोत्तरेण तपसा ब्रह्मचर्येण श्रद्वया विद्ययात्मा नमन्विष्यादित्यमभिजयन्ते एकद्वै प्राणानामायतनमेतदतृ–मयमेतत्परायण मेतस्यान्न पुनरावर्तन्त इत्यनिरोधः ।

"तप, ब्रह्मचर्य, श्रद्वा तथा विद्या द्वारा जो आत्मा की खोज कर उस आदित्य को प्राप्त करते हैं वे पुनः जन्म नहीं लेते, यह आदित्य ही प्राणों का आश्रय है । वही मोक्ष है, वही पद है, जीव को उसी से परम आश्रय मिलता है ।"

भवद्भूतं भविष्यं जंगमंस्थवरं च चयत् ।
अस्यैकं सूर्यमेवैकं प्रभवं प्रलयं विदुः ।
असतश्च अतश्चैव योनिरेषा प्रजापतिः ।
तदक्षरं चाव्ययंच यच्चैतद् ब्रह्मशाश्वतम् ।
कृत्वैवहि त्रियात्मानमेषु लोकेषुतिष्ठति ।
वेदान् यथायथं सर्वान् निवेश्य स्वेषु रश्मिषु ।

–सूर्योपनिषद्

"जो जड़–चेतन पदार्थ इस संसार में अब मौजूद हैं भूतकाल में थे या भविष्य में होंगे वे सभी सूर्य से उत्पन्न हुए और उसी में लीन होते हैं । यह सूर्य ही प्रजापति है । यह सत्, असत् की योनि है । अक्षर, अव्यय शाश्वत ब्रह्म यही है । यह तीनों लोकों में व्याप्त है समस्त देवता इसी की किरणें हैं ।"

आदित्योत्यादि धूतत्वात् प्रसूत्या सूर्य इच्यते ।
परंज्योतिः तमः पारे सूर्येऽयं सवितेति च ॥

–सूर्य सिद्वान्त

"वह समस्त जगत का आदि कारण है इसलिए उसे आदित्य कहते है । सबको उत्पन्न करता है इसलिए सविता कहते हैं । अंन्धकार को दूर करता है इससे उसे सूर्य कहा जाता है ।"

अथादित्य उसेयन्यत्प्राचीदिशं प्रविशति तेन प्राच्यान् प्राणान् रश्मिषु संनिधत्ते। यद्दक्षिणां यत् प्रतीची यदुदीची यदधो यद्दूर्ध्व यदन्तरा दिशो यत्सर्वप्रकाशयति तेन सर्वान् प्राणान् रश्मिषुसंनिधते।

प्रश्नोपनिषद १/६

"पूर्व में उदय होता हुआ सूर्य अपनी किरणों से पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, नीचे, ऊपर तथा उनके कोणों, की सभी दिशाओं को प्रकाशित करता है उसकी किरणों में समस्त जगत का प्राण धारण किया जाता है ।"

अपश्यं मोपायमनिपद्यमान माच पराच पथिभिश्चरन्तम् ।
स सध्रीचीः स विषूचीर्वसान आनरीवति भुवनेष्वन्तः ॥

–ऐतरेय

"मैंने प्राण को देखा है । साक्षात्कार किया है । यह प्राण सब इन्द्रियों का रक्षक है । इसे कभी नष्ट नहीं होता । यह नाड़ियों द्वारा शरीर में दौड़ता रहता है । मुख और नासिका द्वारा यह आता और जाता है । यह शरीर में वायु रूप है, पर ब्रह्माण्ड में सूर्य रूप है ।"

इस सविता की उपासना में संलग्न ऋषि, मुनि योग के द्वारा अपनी आत्मा को तेजपुंज महाप्राण परब्रह्म में प्रविष्ट करते हैं, शुकदेव जी अपनी साधना को पूर्ण करते हुए जिस स्थिति में प्रविष्ट हुए उसका उल्लेख महा–भारत में इस प्रकार मिलता है

तस्माद् योग समास्थायत्यक्त्वागृह्कलेवरम् ।
वायुभूतः प्रवेक्ष्यामि तेजोराशि दिवाकरम् ॥

–महाभारत

शुकदेव जी ने कहा "मैं योग में स्थिति होकर इस देह को त्यागकर तेजो–राशि सूर्य में होकर प्रवेश करता हूं ।"

उपनिषद्कारों ने इस महाउपास्य सविता देवता की उपासना का निर्देश करते हुए उसकी महान् महत्ता पर भी प्रकाश डाला है । और उसे आत्मिक मलीनताओं का वितरण कर्त्ता माना है ।

सूर्यश्च मा मन्युश्च कन्युपतयश्च मन्युकृतेभ्यः
पापेभ्यो रक्षन्ताम् । यद्राज्या पापमकार्षम् ।
मनसावाचां हस्ताभ्याम्। पद्भ्यामुदरेश शिश्न ।
रात्रिस्तवलुम्पतु यद् किंच जुरितं मयि
इदमह माममृतयोनौ सूर्ये ज्योतिषी जुहोमि स्वाहा।

–(तै० अ० प्र० १० अ० ३२)

'जगत् का प्रेरक सूर्य उन पापों से मेरी रक्षा करे जो क्रोधादि वृत्तियों द्वारा उत्पन्न हुए हैं । जो रात्रि में मैंने पाप किया है, मन, वाणी और हाथों द्वारा, पैरों,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

उदर और उपस्थितेन्द्रिय द्वारा (किया है) रात्रि में वह लुप्त हो जाय । यह मैं अपने आपको अमृत की योनि में जो कि सूर्य ज्योति रूप परमात्मा है उसमें आहुति रूप देता हूं स्वाहा बोल कर देता हूं ।"

य इह वा व स्थिरचरनिकाराणां निजनिकेनानां मनइन्द्रियासुरगणाननात्मनः स्वयमात्माऽन्तर्यामी प्रचोदयात्

–ब्रह्मोपनिषद

"आप सबके आत्मा हो और अन्तर्यामी हो । जगत् में कितने चराचर प्राणी हैं वे सब आपके ही आधार पर रहते हैं और उनके अचेतन जैसे मन, इन्द्रिय और प्राणों के आप ही प्रेरक हो ।"

त्रिकाल संध्या में प्रातः, मध्याह्न, सायंकाल के लिए तीन प्रतीकों का उल्लेख है । प्रातः, ब्राह्मी, मध्याह्न, वैष्णवी और सायं शाम्भवी गायत्री के हंसारूढ़, गरुणारूढ़, वृषभारूढ़, स्वरूपों का वर्णन है । वस्तुतः यह तीन वेदों का ही त्रिविधि स्वरूप है । सविता देवता प्रातः ऋग्वेद, मध्याह्न यजुर्वेद और सायंकाल सामवेद स्वरूप होता है । वेदों में जिन तीन विज्ञान का भण्डार है उसे साधक के अन्तःकरण में अभिप्रेत करता है । ऋक् से ज्ञान योग, यजु से कर्मयोग, साम से भक्तियोग का सम्बन्ध है । सविता का ध्यान हमारी मनोभूमि को इन तीनों योग की साधना के उपयुक्त बनाता है । इन तीनों तथ्यों का ब्रह्मा, विष्णु, महेश के रूप में उल्लेख है । ऋक् ब्रह्मा, यजु विष्णु, और साम शिव है । इन तीनों के द्वारा त्रिकाल सन्ध्या द्वारा गायत्री उपासना करने वाले को ज्ञान, वैभव एवं सद्गुणों की उपलब्धि होती है । इसी आधार पर एक ही परब्रह्म–महत्त्व सविता को तीन प्रकार से तीन चित्रों में चित्रित किया गया है

महर्षि याज्ञवल्क्य ने इसी सविता की उपासना का विधान वर्णन करते हुए उसकी महत्ता, विशेषता एवं उपलब्धियों को संक्षिप्त किन्तु सारगर्भित शब्दों में इस प्रकार वर्णन किया है––

ॐ नमो भगवते आदित्याखिल जगतात्मस्वरूपेण कालस्वरूपेण चतुर्विधि भूतनिकायानां ब्रह्मादिस्तम्ब पर्यन्तानामन्तर्हृदयेषु बोहिपि चाकाश दवोपाधि नाऽव्ययधीयमानो भवानेक एवं क्षणलवनिमेषा–वयवोपचितसंवत्सरगणे नामामादान विसर्गाभ्यामियां लोकयात्रामनुवाते।

–याज्ञल्क्य

मैं ॐकार स्वरूप भगवान् को नमस्कार करता हूं । हे भगवन् ! आप समस्त जगत् के आत्मा और काल स्वरूप हैं । ब्रह्मा से लेकर तृणपर्यन्त जितने प्राणी हैं उन सबके हृदय में ओर बाहर भी आकाश के समान व्याप्त रहकर, फिर भी सब उपाधियों से पृथक् होकर आप एक अद्वितीय ईश्वर हैं । आप ही क्षण 'लव, निमेष इत्यादि अवयव वाले संवत्सरों द्वारा तथा जल के खींचने तथा प्रदान के द्वारा समस्त जगत् का जीवन पालन करते हैं ।

सावित्री–गायत्री उपासना में साधक चाहे साकार ध्यान करता हो अथवा निराकार उसे सविता देवता के प्रकाश का ध्यान अनिवार्य रूप से करना पड़ता है । निराकार प्रकाश और गायत्री–सावित्री की छवि का ध्यान दोनों में सविता देवता के वरेण्य तेजस् का ध्यान किया जाता है । इस प्रकार सावित्री और सविता का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है, दोनों का अविच्छन्न युग्म, इस तथ्य को भुलाया न जाना चाहिए ।

सावित्री–सविता की ऊर्जा एवं आत्मा

गायत्री का युग्म है यज्ञ और सावित्री का–सविता । गायत्री जप अनुष्ठान की पूर्ति पर यज्ञ की व्यवस्था करना आवश्यक माना गया है । सामान्य जप में भी यदि सम्भव हो तो तिल, घी, शक्कर और जौ सुगन्धित पौष्टिक बनस्पतियां सम्भव हों उन्हें मिलाकर २४ आहुतियां तांबें के या मिट्टी के बने कुण्ड में दी जा सकती हैं । नित्य न बन पड़े तो महीने में एक दिन संक्राति के दिन अथवा पूर्णिमा को हवन कर लेना चाहिए ।

अनुष्ठानों के अन्त में दोनों प्रकार के विधान हैं । एक प्रतिदिन का, दूसरा अन्तिम दिन पूर्णाहुति का । दोनों में से जिसमें सुविधा हो उस उपचार को अपना लेना चाहिए ।

गायत्री व्यक्तिगत साधना है । उसमें "नः" शब्द बहुबचन परक आता तो है । तो भी यह "नः" (याने हम सब) शब्द निजी परिवार या निजी सम्पर्क क्षेत्र तक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सीमित है। उस व्यक्तिगत साधना को एकान्त में, किसी शुद्ध वातावरण वाले स्थान में बैठकर करने का विधान है। निजी अनुष्ठान में सार्वजनिक सहयोग का निषेध है। इसे तो अपनी सामर्थ्य भर स्वयं ही करना चाहिए। हवन प्राचीन काल में जप का दशांश होता था। अब मंहगाई की परिस्थितियों को देखते हुए शतांश की संगति बिठा दी गई है। शुद्ध गौ घृत मिलना कठिन हो गया है। इसलिए जड़ी-बूटी पंचांग के अलावा तिल, गुड़ और थोड़ा-सा गौ दुग्ध किसी प्रकार मिल सके तो उतने से ही काम चला लेना चाहिए। चर्बी मिले वेजीटेबिल की अपेक्षा तो मात्र तिल का हवन कर लेना भी अच्छा है। चन्दन चूरा, देवदारू चूरा आदि मिल सके तो अभाव में उससे भी परम्परा की पूर्ति हो सकती है।

सावित्री का सविता सूर्य है। उसके लिए सूर्योपस्थान आवश्यक है। सूर्य के दर्शन तो प्रातःकाल स्वर्णिम आभा रहने तक ही हो सकते हैं। पीछे तेज धूप हो जाने पर दर्शन करने से आंखें खराब होती हैं। तब जल में सूर्य की परछाईं देखकर उसके ध्यान में सविता के इष्ट की उपस्थिति मानी जा सकती है।

सावित्री सामूहिक है। जब अनेक व्यक्तियों को जप अनुष्ठान यज्ञ में सम्मिलित करके वह संकल्प पूरा किया जाता है। तब वह सावित्री बन जाती है। सूर्य को 'सप्त ऋषि' अर्थात् सात रंग की किरणों वाला और 'सहस्रांशु' सहस्र किरणों वाला कहा गया है। नवग्रहों का अधिपति होने से उसे नवधिपति भी कहते हैं। इस आधार पर कुण्डों की संख्या निर्धारित कर सामूहिक यज्ञ किया जा सकता है। सामूहिक अर्थात् सार्वजनिक, जिसमें अनेकों लोग सम्मिलित हों। अनेकों कुण्ड हों। अनेकों व्यक्ति सम्मिलित हों। जहां सार्वजनिक धन का उपयोग किया जाय, वह सविता यज्ञ है।

व्यक्तिगत जीवन के दोष-दुर्गुणों, संचित कुसंस्कारों का निवारण करने के लिए, व्यक्तिगत मेधा, प्रज्ञा प्रतिभा, श्रद्धा बढ़ाने के लिए वेदमाता गायत्री की उपासना की जाती है। इससे मनुष्य का चिन्तन, चरित्र और व्यवहार परिष्कृत होता है। इसलिए उसे देव माता भी कहा गया है। सावित्री विश्वमाता है उसका प्रभाव व्यक्ति विशेष तक सीमित न रहकर विश्वव्यापी पड़ता है। जनमानस का परिष्कार, लोककल्याण, वायुमंडल की शुद्धि, वातावरण की परिष्कृति यह सब सावित्री शक्ति के प्रतिफल हैं। उसमें "वसुधैव कुटुम्बकम्" की भावना सन्निहित है।

इन दिनों मनुष्य व्यक्तिगत कठिनाइयों से ही संत्रस्त है। व्यक्तिगत भ्रष्टता ही बढ़ी हुई है। व्यक्तिगत आकांक्षाओं की ही प्रबलता है। इसलिए उस स्तर के लोगों को गायत्री उपासना करनी होती है। जिन साधकों को स्वर्ग, मुक्ति, सिद्धि, शान्ति आदि निजी आकांक्षा हैं उन्हें गायत्री साधना का अवलम्बन लेना ही उचित है।

जिनकी अहन्ता मिट गई, जो निस्पृह हो गये, जिनने भव-बंधन तोड़ डाले, उन जीवनमुक्तों का स्वार्थ विकसित होकर परामार्थ बन जाता है। उन्हें उसी की चिन्ता रहती है। वह ऋषि की वाणी बोलता है-"न मुझे राज्य चाहिए, न स्वर्ग, न मुक्ति। दुःखिजनों के दुःखों को दूर करने की ही एक मात्र कामना है। भगवान बुद्ध ने भी मरते समय यही कहा था कि "जब तक संसार का एक भी प्राणी बन्धन में बंधा है तब तक न मुझे स्वर्ग में जाना है न मुक्ति पानी है। मैं इन दुखियारों का दुःख दूर करने के लिए बार-बार जन्मता और मरता रहूंगा।" यही है सावित्री का तत्वज्ञान।

गायत्री और सावित्री का अन्तर समझने के लिए दीपक और सूर्य का उदाहरण ठीक पड़ता है। दीपक अपने घर में प्रकाश भर देता है। निजी काम-काज के लिए वह पर्याप्त भी हैं। उसे जलाना सुगम है। कोई बड़ा जोखिम भी नहीं है। तनिक-सी सावधानी से उसका उपयोग सदा सर्वदा होता रहता है। उसके प्रयोग की परम्परा पीढ़ियों से चली आ रही है। उसे आंख खोल कर देखा भी जा सकता है। त्राटक साधना में उस पर दृष्टि भी जमाई जाती है, पर इससे आंखों को कोई हानि नहीं होती।

सूर्य की बात बड़ी है। उसका प्रकाश सर्वत्र फैलता है। सौर-मण्डल के सभी ग्रह-उपग्रह उससे प्रकाशवान होते हैं। हमारे निकटवर्ती चन्द्रमा में अपना कोई प्रकाश नहीं, वह मिट्टी का ढेला मात्र है, पर सूर्य का प्रकाश पड़ने से वह ऐसा चमकता है कि रात्रि की उसकी चान्दनी ही दिन जैसा काम कर देती है। अन्य ग्रह-उपग्रहों के सम्बन्ध में भी यही बात है। सौर-मण्डल का कोई पिण्ड अपने प्रकाश से नहीं चमकता, उन सभी को सूर्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की आभा ही प्रकाशित करती है। अपनी पृथ्वी भी अन्य ग्रहों से देखने पर ऐसी ही चमकदार दीखती होगी। सम्भव है वह ब्रह्माण्ड के अन्य नक्षत्रों पर खड़े होकर देखने पर एक प्रकाशवान तारे जैसी दीखती हो।

यहां यह ध्यान रखने योग्य तथ्य है कि सूर्य ताप का मात्र २२० करोड़वां भाग पृथ्वी पर जीवधरियों के लिए जीने योग्य समुचित परिस्थितियां बनाये रखने हेतु सक्षम हैं। इतना ही मिलने की सृष्टा ने व्यवस्था भी बनाई है। दस करोड़ मील दूर अवस्थित सूर्य से प्रकाश ऊर्जा पृथ्वी पर सतत् आती व जीवों को प्राण चेतना से अनुप्राणित करती रहती है। इसमें न्यूनाधिक भी कमी आ जाये तो पृथ्वी पर प्रतिकूल परिस्थितियां उठ खड़ी होती हैं। सविता देवता की पृथ्वी पर जीवन योग्य वातावरण बनाये रखने के लिए कितनी आवश्यकता है, इसे वैज्ञानिक उदाहरणों से आसानी से समझा जा सकता है और फिर यह सूर्य तो मात्र हमारी पृथ्वी जिस सौर मण्डल की सदस्य है, उसका अधिपति है। ऐसे अगणित अरबों सूर्य परब्रह्म की इस विश्व व्यवस्था में सतत् ज्वलन्त बने रहकर ऊर्जा वितरण करते हैं। सविता से अर्थ परब्रह्म की इस समष्टिगत व्यवस्था के परिप्रेक्ष्य में समझा जाना चाहिए। इसे हमारे सौर–मण्डल तक ही सीमित नहीं मानना चाहिए।

सूर्य की ऊर्जा जब गर्मी के दिनों में अधिक प्रखर एवं निकटवर्ती होती है तो उसकी तीव्र धूप में देर तक खड़ा होना मुश्किल हो जाता है। घासपात सूख जाते हैं। रेतीली धरती तवे जैसी जलने लगती हैं। पसीना छूटता है और बार–बार प्यास लगती है। बचने के लिए भागकर छाया का, पंखे का, कूलर का, आश्रय लेना पड़ता है। लू लगने, फुंसियां उठने जैसी व्यथाऐं उठ खड़ी होती हैं। यह उसके तेजस्वी प्रताप का प्रतिफल है।

दूसरी ओर अनेकानेक लाभ भी हैं। प्राणियों में सक्रियता आती है। पौधे विकसित होते हैं। फलों का बाहुल्य होता है। उसी से बादल बनते और बरसते हैं। समुद्र के खारे जल को मेघ बनाकर मीठे जल में परिवर्तित करता है। ऐसे ही अनेक कारणों को देखते हुए उसे "जगत की आत्मा" कहा गया है। यदि उसका सन्तुलित प्रकाश पृथ्वी पर न आए तो फिर यह भी या तो बुध की तरह अग्नि पिण्ड बन जाय। या फिर प्लेटो, नेप्च्यून की तरह सदा बर्फ से ढंकी रहे और उनमें जीवन के विकास की कोई सम्भावना न रहे। पृथ्वी की अन्य ग्रह गोलकों की तुलना में जो सुन्दरता एवं सर्वांगीणता है वह सूर्य की सन्तुलित ऊर्जा के कारण ही बन पड़ी है।

दीपक सीमित है और सूर्य असीम। इस तथ्य को समझने के साथ ही यह भी समझा जा सकता है कि व्यक्ति एवं परिवार के लिए रात्रि के अन्धकारजन्य कठिनाईयों से निपटने के लिए दीपक ही जीवन प्राण है। उसी का उपयोग शक्य है। सूर्य को चाहे जब, चाहे जहां न्यौत बुलाना सम्भव नहीं। वह अपने क्रम और नियम से ही आता चला जाता है, पर दीपक अपने हाथ की बात है। भले ही वह थोड़ा प्रकाश करे पर अपने प्रयास के अन्तर्गत है गायत्री को सर्वसुलभ, सर्वोपयोगी इसीलिए माना गया है कि उसका प्रयोग कोई भी कभी भी कर सकता है और उसकी व्यवस्था करने में भी ऐसा कुछ नहीं करना पड़ता जो अपनी सामर्थ्य से बाहर हो। पर सूर्य के उपयोग के सम्बन्ध में ऐसी बात नहीं है। सूर्य चूल्हे बनाये गये हैं। पर वे भी रात्रि के समय और घने बादल कुहरे आदि की विपन्नता में काम नहीं करते। जबकि साधारण चूल्हे में आग एक माचिस भर के सहारे जलाई जा सकती है।

वस्तुतः सावित्री, सविता की ऊर्जा एवं आत्मा है। उसके प्रयोग से व्यापक क्षेत्र में विशाल और व्यापक कार्य सम्पन्न किये जा सकते हैं। किन्तु उसका उपयोग सरल नहीं है। वह अत्यन्त कठिन भी है और जोखिम भरा भी। छोटे से आतिशी शीशे पर सूर्य किरणें एकत्रित करने भर से आग जल उठती हैं और उससे भयंकर अग्निकाण्ड हो सकता है। बिखरी हुई किरणें भी यदि एकत्रित की जा सकें तो उससे पृथ्वी की सारी सम्पदा कुछ ही क्षणों में जल भुन कर नष्ट हो सकती है। उसकी निकटता और दूरी दोनों ही एक से एक बढ़कर जोखिम भरी हैं। पर जो साहसी उसका विवेकपूर्ण प्रयोग कर पाते हैं, वे उससे लाभ भी कम नहीं उठाते है।

सूर्य की सप्तधा किरणों से संसार के सभी रोग दूर हो सकते हैं। सूर्य चिकित्सा विज्ञान का अभी आरम्भिक प्रयोग ही चल रहा है। रंगीन कांचों के सहारे उस रंग

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की किरणें शरीर के किसी रुग्ण अवयव पर विधानपूर्वक डाली जायें तो उसका आश्चर्यजनक प्रभाव होता है। रंगीन बोतलों में पानी भरके धूप में रखने के उपरान्त वह पानी ही औषधि बन जाता है और बाजारू औषधियों की तुलना में कहीं अधिक काम करता है। क्रोमोपैथी के ऐसे वैज्ञानिक प्रयोग चल भी रहे हैं कि मात्र सूर्य किरणों से सभी रोगों की चिकित्सा की जाय। वह सरल भी रहेगी और सस्ती भी। आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि वर्तमान प्रचलित चिकित्सा प्रणलियों में से सभी को पीछे धकेल कर अगले दिनों सूर्य शक्ति के उपयोग से मनुष्य के शारीरिक ही नहीं मानसिक रोगों को दूर करने की सर्वांगपूर्ण चिकित्सा पद्धति काम में आने लगे। यह एक बड़ी समस्या है। रोग निवारण और आरोग्य सम्वर्धन का कोई सर्वसुलभ माध्यम अगले प्रयोग परीक्षाणों द्वारा निकलता है तो इसे एक बहुत बड़ी उपलब्धि ही माना जायेगा।

दूसरा एक और प्रयोग भौतिक जगत में यह भी सोचा जा रहा है कि पेयजल की जो भारी कमी पड़ने जा रही है। उसका समाधान कैसे हो ? बढ़ती हुई आबादी और बढ़ती हुई सभ्यता मनुष्य के दैनिक जीवन में अधिक पेयजल की मांग करती है। कारखानों में भी उसके बिना काम नहीं चलता। खाद्य उत्पादन के प्रयासों में सिंचाई की सबसे बड़ी आवश्यकता है। उसमें भी मीठा पानी चाहिए।

समुद्रों में यद्यपि भारी मात्रा में जल विद्यमान है, पर वह खारी होने के कारण न पीने के काम आ सकता है और न सिंचाई के, न दैनिक जीवन में पीने, सफाई आदि के कामों में उसका उपयोग हो सकता है। ऐसी दशा में खारी पानी को मीठा बनाने का उपाय ढूंढ़े बिना गुजारा नहीं। यदि इस संकट का निराकरण सम्भव न हुआ तो पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, मनुष्य, उत्पादन उद्योग सभी का सर्वनाश होगा और धरती पर निवास करने वाले प्राणियों और पदार्थों के लिए सर्वनाश का संकट आ उपस्थित होगा।

इसका समाधान पानी को उबालकर भाप बनाना ही हो सकता है। यह बिजली से बनाने में तो बहुत मंहगा पड़ता है। फिर आवश्यकता के अनुरूप पानी की विशाल मात्रा तैयार करने में तो संसार भर में प्रयुक्त होने वाली बिजली ही खप जावेगी। तब अन्य कार्य कैसे चलेंगे। सूर्य में ऊर्जा का विशाल भण्डार है। वह बिखरा पड़ा होने के कारण हजारवां भाग ही धूप के रूप में काम आता है। इस ऊर्जा को एकत्रित कर लेने पर समुद्र के पानी को भाप बना कर जहां उसका उपयोग है वहां ले जाया जा सकता है। अभी तो बादल, समुद्रों, पर्वतों और दलदलों में भी बरसते हैं जहां उनका कोई उपयोग नहीं। सूर्य शक्ति का एकत्रीकरण और उसका अभीष्ट उपयोग कुछ असम्भव नहीं हैं। जिस वैज्ञानिक अनुसन्धानों ने अणुशक्ति, हाइड्रोजन शक्ति, लेसर शक्ति, इन्फ्रारेड, अल्ट्रावायलेट रेज, माइक्रोवेव्ज जैसी अनेकों शक्तियों को ढूंढ़ निकाला है उनके लिए अगले दिनों यह प्रयास भी सम्भव होगा कि बढ़ती हुई जल समस्या का समाधान समुद्रों को भाप बनाकर उड़ाने और एक बड़े संकट का समाधान करने में समर्थ हो सकें। अरब देशों में ऐसे प्रयोग हो भी रहे हैं। यह एक मोटा प्रत्यक्ष विवेचन हुआ।

कहा जा चुका हैं कि गायत्री आत्मिकी और सावित्री भौतिकी है। उसके सहारे ही ब्रह्मा जी ने प्रत्यक्ष सृष्टि का सृजन किया है। उसमें वह सामर्थ्य भी मौजूद है कि समय-समय पर उपस्थित होने वाली चित्र-विचित्र समस्याओं का भी समाधान कर सके।

इन दिनों व्यक्ति का अध्यात्मिक जीवन ही नहीं, भौतिक परिस्थितियां भी प्रतिकूल चल रही है। अभावों, विपत्तियों और उलझनों का सामना करना पड़ रहा है। उपायों सीमित प्रयासों से वह इनका हल निकालने की चेष्टा भी करता है, पर उसमें सफल नहीं हो पाता। बुद्धि तथा साधनों के होते हुए भी हर घड़ी खिन्न, विपन्न और तनावग्रस्त दीख पड़ता है। इसका समाधान सावित्री विद्या के सहारे ही सम्भव हो सकता है। इसका प्रयोग पूर्वकाल में विदित था, पर अब तो वह एक प्रकार से लुप्त ही हो गया। आवश्यकता अब इस बात की है कि उसको फिर से खोज निकाला जाय। उसे पुनर्जीवन दिया जाय।

इन दिनों सामूहिक समस्याओं का तो कहना ही क्या ? अकेला अणु युद्ध भी निकट से निकटतम आता चला जा रहा है। वरन् उसके अतिरिक्त भी पर्यावरण प्रदूषण, जनसंख्या विस्फोट, विकिरण, विषाक्तता की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अभिवृद्धि नित नये–नये रोगों की उत्पत्ति जैसे अनेकानेक कारण हैं जो मनुष्य को उसकी निवास स्थली पृथ्वी को महाविनाश की चुनौतियां दे रहे हैं । इनका सामना करने के लिए सविता शक्ति का प्रयोग असाधारण रूप से कारगर हो सकता है । सर्वत्र जल की कमी पड़ने से भागीरथ ने तप करके गंगा को पृथ्वी पर लाने और उस समस्या को हल करने में सफलता पाई थी । दैत्यों से पराजित होने पर देवताओं को आत्मरक्षा के लिए किसी अचूक अस्त्र की आवश्यकता पड़ी तब दधीचि की अस्थियों से इन्द्र वज्र बना और संकट दूर हुआ । आज भी सविता शक्ति के अनुसन्धान, एवं प्रयोगों की वैसी ही आवश्यकता हैं । समाधान का यह दैवी अस्त्र ब्रह्मास्त्र कारगर होकर रहेगा, ऐसा एहज विश्वास किया जा सकता है ।

सूर्य की सविता शक्ति का विवेचन

दृश्यमान सूर्य को सविता कहते हैं और उसकी शक्ति को सावित्री । सविता और सावित्री का युग्म है । रथ के दो पहियों की तरह दोनों एक दूसरे के पूरक हैं । सावित्री को गायत्री भी कहते हैं सविता को आदित्य या भर्ग भी । दोनों की संयुक्त शक्ति का आविर्भाव जब होता है तो उस समन्वय को उपलब्ध करके साधक धन्य बन जाता है । सविता को सर्वोपरि यहां तक कि ब्रह्म कहा गया है ।

आदित्या–ज्योतिर्जायते । आदित्याद्देवा जायन्ते ।
आदित्या द्वेदा जायन्ते । असवा दित्यो ब्रह्म ।

–सूर्योपनिषद

अर्थात्–"आदित्य से प्रकाश उत्पन्न होता है । आदित्य से देवता उत्पन्न हुए हैं। आदित्य से वेद उत्पन्न हुए, यह सूर्य ही प्रत्यक्ष ब्रह्म है ।"

आगे शास्त्र इसी कथन की पुष्टि करते हैं।

एष ब्रह्मा च विष्णुश्च शिवःस्कंद प्रजापतिः।
महेन्द्रो धनदः काले यमः सोमो ह्यषां पतिः

–बालमीकि० रामा०

अर्थात्–"यह सूर्य ही ब्रह्मा है । विष्णु है । शिव है । स्कन्द है । प्रजापति है । इन्द्र है । कुबेर है । काल है । यम है । सोम है और इन सब का स्वामी भी है ।

संधानो देवः सविता साविशद् अमृतानि

–अथर्ववेद

अर्थात्–"वह सविता देव अमृत तत्वों से भरा–पूरा है ।"

तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषा ।

अर्थात्–"यह परम पुरुष सविता तेज का भण्डार है और अमृतमय है ।"

वस्तुतः अमृत घट के रूप में सविता का ही अलंकारिक वर्णन शास्त्रों में निरूपित किया गया है ।

मुण्डकोपनिषद में कहा गया है–

आदित्या–ज्योति जायते ।

अर्थात्–"आदित्य से ही ज्योति उत्पन्न होती है । संसार में जिस किसी रूप में प्रकाश दृष्टिगोचर होता है, वह सूर्य का ही अनुदान है ।"

प्रातः काल का सूर्य सुनहरी आभा वाला होता है, इसलिए उसे स्वर्णिम, स्वर्णाभ आदि नामों से जाना जाता है । उषा काल पूर्वदिशा में सुनहरी रंग के साथ उदय होता है । इसे ब्रह्म मुहुर्त भी कहते हैं । इस समय को सूर्य उपासना के लिए अधिक उपयुक्त माना गया है । इसी समय सविता देव की प्रेरणा का प्रत्यक्ष दर्शन होता है । तालाबों में कमल खिलते हैं । उद्यान में पुष्पों की खिलखिली दृष्टिगोचर होती है । चिड़ियां घोंसलों से निकल कर चहचहाती, कुदकती, फुदकती दृष्टिगोचर होती हैं । वन्य पशु आहार की तलाश में एक दिशा से दूसरी में चलते–भागते दीख पड़ते हैं । रात्रि की स्तब्धता के उपरान्त सवेरे का पवन शीतल, मन्द, सुगन्ध से भरा–पूरा होता है । उसमें प्राण–तत्व अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में पाया जाता है । यह सूर्य का प्रत्यक्ष अनुदान है । सविता को प्राण या प्राण प्रदाता भी कहा जाता है । उस समय का खुले क्षेत्र में विचरण करते हुए जो लोग उपयोग करते हैं, उनके उस समय किए हुए सभी काम अधिक अच्छी तरह सम्पन्न होते हैं । इस समय का टहलना सामान्य व्यायामों की तुलना में कहीं अधिक शक्ति वर्धक पाया गया है । व्यायामशालाओं में स्वास्थ्य सम्भालने वाले पहलवानी के शौकीन इसी समय जा पहुंचे हैं । विद्यार्थी इस समय जितनी अच्छी तरह अपना पाठ याद कर लेते हैं, वैसा सुयोग उन्हें दिन के किसी अन्य समय में नहीं मिलता । लेखनी की साधना का भी यही सर्वोत्तम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समय है। उपासना साधना के लिए तो यह समय सर्वोपरि है। कारण कि वातावरण में नवोदित सूर्य द्वारा प्रेरित प्राण तत्व की मात्रा का परिमाण अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में उपलब्ध होता है।

सूर्य के सप्त अश्व वस्तुतः सात प्रकार की सात रंगों वाली किरणों के समुच्चय का प्रतीक है। सात द्वीप, सात सागर, सात पर्वत, सात सरिता, इसके धरातल पर होने का उल्लेख है, यह भूगोल पुरातन काल का है। कालान्तर में वे प्रकृतिगत दबावों के कारण घटते-बढ़ते रहे हैं। फिर भी उन्हें सप्तधा ही कहा गया है। सौर मण्डल में सात ग्रह ही प्रधान हैं। उन्हीं के आधार पर सप्ताह के सात दिनों का नामकरण किया गया हैं। सप्त ऋषि प्रख्यात हैं। यों ऋषि मुनियों की संख्या समयानुसार घटती-बढ़ती रहती है। पर जिन्हें ऋषि तत्व का प्रतिनिधित्व करने वाला माना गया है, उनकी संख्या सात ही है। वे आकाश में अवस्थित हैं। रात्रि को तारागणों के मध्य चमकते हैं। लोक सात हैं। इन्हें आध्यात्मिक आयाम भी कह सकते हैं और ब्रह्माण्ड का सप्तधा वर्गीकरण भी। इन्हें सात लोकों के नाम से निरूपित किया गया है- १-भूः, २-भुवः, ३-स्वः, ४-महः, ५-जनः, ६-तपः, ७-सत्यम्। इन्हें एक से एक ऊंची मनः स्थिति एवं परिस्थिति समझना चाहिए।

सूर्य को महाकाल भी कहा गया है। काल गणना उसी के आधार पर होती है। दिनमान प्रथम इकाई है। सात दिनों का सप्ताह होता है। इसके उपरान्त पक्ष, मास, ऋतु, वर्ष, युग, कल्प आदि का सिलसिला चलता है। ज्योतिषशास्त्र का आविर्भाव इसी आधार पर हुआ है। सूर्य को प्रधानता देते हुए उसके परिवार के अन्यान्य ग्रह उपग्रहों की भी गति गणना की गई है। साथ ही यह भी देखा गया है कि आकाशस्थ किस राशि पर किस ग्रह की क्या स्थिति होने पर प्राणियों, पदार्थों पर उस स्थिति का क्या प्रभाव पड़ता है ? वातावरण में क्या हेरफेर हो रहा है।

आदिम काल से लेकर आधुनिक वैज्ञानिक प्रगति काल तक मनुष्य समय-समय पर अपने-अपने ढंग से सूर्य का आश्रय लेता रहा है और वह शृंखला अभी भी अपने क्रम में चल ही रही है। आरम्भिक काल में उसे देवता माना गया था। प्रातःकाल और सायंकाल के उदय-अस्त काल में उसकी अभ्यर्थना होती थी। पूजा सामग्री का चयन न होने के कारण जल को ही उपचार माध्यम निर्धारित किया गया था। नाम, जप, रूप-ध्यान के अतिरिक्त श्रद्धाभिव्यक्ति के लिए सूर्य को ही जलांजलि दी जाती थी।

पीछे प्रतीक प्रतिमाओं का निर्माण आरम्भ हुआ। सभ्यता के उदय काल से लेकर उसके विकास काल तक सूर्य की प्रतिमाऐं विनिर्मित होती रहीं। पुरातत्व खोजियों ने संसार के उन सभी क्षेत्रों का बारीकी से पर्यवेक्षण किया है, जहां वन्य सभ्यता से आगे बढ़कर, शहरीकरण शुरू हो गया था और जहां प्रतिमाऐं बनने लगी थीं। अति प्राचीन काल की समझी जाने वाली प्रतिमाओं में से अधिकांश सुर्याकृति की ही हैं। मिट्टी की बनी प्रतिमाओं और गुफाओं के भित्ति चित्रों में सूर्य आकृति का ही प्रधानतया चित्रण हैं। इसके बाद पाषाण प्रतिमाओं और धातु प्रतिमाओं का समय आया। उन दिनों की स्थिति के अनुसार निर्माण पदार्थों में तो अन्तर होता गया, पर प्रतिमाऐं सूर्य की ही रहीं। अतिपुरातन काल में प्रत्यक्ष गोलक की तरह प्रतिमाऐं भी गोलाकार ही बनती थीं। उसे मुख माना जाता था और उस पर मुख, नेत्र, नाक, कान, आदि का अंकन किया जाता था। चारों ओर किरणें बिखेरने का भी उपक्रम किया जाता था। इसके बाद जब देवता मनुष्याकृति में बनने लगे, उनके साथ वाहन, आयुध जुड़ने लगे तब मनुष्याकृति में देवता बने। वाहन रूप में सप्त अश्व निरूपित किए गये। किन्हीं-किन्हीं प्रतिमाओं में अरुण सारथी भी बिठाया गया है। उस काल में देवताओं की अधिक भुजाऐं, अधिक शक्तियों के प्रतीक रूप में मानी जाती थीं। दो भुजा वाली मूर्तियां कम ही मिली हैं। अधिकांश में चार भुजाऐं हैं। आयुधों में अन्तर है। लगता हैं, जिस क्षेत्र में जिन आयुधों की वरिष्ठता और बहुलता थी, वहां उन्हीं वाहनों का अंकन किया जाता रहा है।

सूर्य को ज्योतिर्लिंग कहा गया है। ज्योतिर्लिंगों के नाम पर अनेक तीर्थ और देवालय रहे हैं। इन दिनों उन सभी में शिवलिंग स्थापित हैं। धार्मिक भावना के उदय काल मे शिव और सूर्य को एक ही माना जाता था। शिव को इतिहासकार अनार्य देवता मानते हैं उनकी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

वेषभूषा, परिधान, आच्छादन, वाहन, आयुध सभी आदि वासियों जैसे हैं। प्रतिमा निर्माण की कला उस वर्ग के अभ्यास में नहीं आई थी। इसलिए नदियों में बहने वाले गोल पत्थर ही शिव के प्रतीक माने गये। अविकसित लोगों ने इस परम्परा को आत्मसात कर लिया और शिवलिंग को सूर्य गोलक की कल्पना दे दी। समन्वय की आवश्यकता समझी गई और शिव सूर्य के बीच का जो अन्तर था, वह हट गया।

मिस्र की विशाल काय सूर्य प्रतिमा सबसे पुरातन है। फराऊ बादशाह रैसेमस द्वितीय ने इस पहाड़ी को कटवाकर उसे सूर्य रूप दिया था। यह प्रतिमा २२५ फुट ऊंची है। इसे ईस्वी सन् से ४ हजार वर्ष पूर्व की माना जाता है। इसी प्रकार उन दिनों की विकसित सभ्यताओं के चिह्न जहां भी मिले हैं, वहां सूर्य के प्रतीक अनिवार्य रूप से उपलब्ध हुए हैं। यों धीरे-धीरे अन्य देवी देवताओं का भी प्रचलन विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न रूपों में होने लगा था। किन्तु सूर्य का स्तर और सम्मान गिरा नहीं। उनके प्रतिक हर जगह विद्यमान मिले।

विश्व के पुरातत्व विज्ञानी अपने-अपने क्षेत्रों की खोजों के निकले निष्कर्षों के आधार पर इस परिणाम पर पहुंचे है कि प्रतिमाओं की स्थापना और पूजा का प्रचलन जब से आरम्भ हुआ, तब उसमें प्राथमिकता सूर्य प्रतीकों की ही रही। कहीं उन्हें स्मारक रूप में सम्मान दिया गया, कहीं उन्हें देवालयों के रूप में विनिर्मित करके पूजा अर्चा का सिसिला चलाया गया। जिन गुफाओं में मनुष्य परिवारों के निवास करने का पता चला है। सूर्य, चित्र एवं विविध-विविध प्रतीकों का स्थापन चित्रण या उत्खनन के रूप में होता रहा है।

अग्रगामिता ने देवताओं में बहुलता का समावेश किया और उनके सम्प्रदाय भी चल पड़े। पौराणिक काल से कुछ पहले शिव, दुर्गा, गणेश, विष्णु के भी सम्प्रदाय बनने लगे थे, पर पांचवे सूर्य की इनमें प्राथामिकता रही। देव सम्प्रदायों और उनके भक्तों की संख्या और विभिन्नता तो बढ़ती रही, पर सूर्य की प्रमुखता पर कहीं से भी उंगली नहीं उठी। वरन् कहा तो यह भी जाता रहा कि सूर्य की प्रथम पूजा किए बिना अन्य सब देवताओं की अर्चना अधूरी ही रहती है। सूर्य का दृश्यमान होना और मात्र जलांजलि से उनकी अभ्यर्थना बन पड़ना इस वरिष्ठता का प्रधान कारण रहा।

विभिन्न समयों पर विदेशी यात्री भारत की समृद्धि आध्यात्मिक प्रगति और विचित्रता का पता लगाने आते रहे हैं। इनमें इब्नबतूता और ह्वेनसांग का नाम विशेष उल्लेखनीय है। उनने अपनी यात्रा विवरणों में भारत में विद्यमान, अनेक विशालकाय सूर्य मन्दिरों का उल्लेख किया है। मध्यम श्रेणी के देवालय तो असंख्यों थे। मुलतान के मन्दिर के बारे में लिखा गया है कि उसकी प्रतिमा २०० मन सोने की ढली थी। मोंढ़ेरा मन्दिर का भी आश्चर्यजनक विस्तार लिखा गया है। उत्तर भारत की तरह दक्षिण भारत में भी उसका बाहुल्य था।

समय की लम्बी अवधि बीत जाने पर उन विशालकाय देवालयों के तो अब ध्वंसावशेष ही शेष रह गये हैं। मध्य कालीन मन्दिर आकार में छोटे थे और उनका निर्माण भी उतनी मजबूत सामग्री तथा कुशलता के साथ नहीं हुआ था तो भी उनके ऐसे ध्वंसावशेष जहां-तहां विद्यमान है। जिनमें सूर्य की प्रतिमा और उनके वाहन अश्वों का सजीव परिचय मिलता है। विद्यमान मन्दिरों में कोणार्क (उड़ीसा) का सूर्य मन्दिर अब भी अपेक्षाकृत अच्छी हालत में है। उसकी ऊंचाई २२५ फुट है। सूर्यग्रहण के समय इस स्थान से उस स्थिति को अधिक अच्छी तरह जानने के लिए देश विदेशों के अनेक वैज्ञानिक अपने बहुमूल्य यन्त्रों समेत वहां एकत्रित होते हैं।

सम्पूर्ण भारत में ऐसे ध्वंसावशेषों की ४००० से ऊपर संख्या है, जिनमें सूर्य के निमित उन्हें बनाए जाने का पता लगता है। पर यह सभी टूटी-फूटी स्थिति में हैं। इससे पता चलता है कि चिरपुरातन काल के उपरान्त ऐसा मध्यकाल भी आया हैं जिसमें अन्य देवताओं की मान्यता बढ़ गई और सूर्य की उपेक्षा होने लगी। साथ ही आक्रमणकारियों का भी वर्चस्व रहा, जो मूर्तिपूजा के विरोधी थे। इस स्थिति में बने सूर्य मन्दिरों का निर्माण एक प्रकार से रुक ही गया। लोग ज्योतिर्लिंगों के रूप में शिवलिंग को ही मान्यता देने लगे।

जिनकी अच्छी स्थिति है, जो नये बने हैं जिनकी आयु पांच छः सौ वर्ष से अधिक की नहीं है, ऐसे सूर्य मन्दिर भारतवर्ष में एक हजार के लगभग आंके गये हैं। विदेशों में जो ध्वंसावशेष मिले हैं, उनकी संख्या भी हजारों में है। इन सब प्रमाणों द्वारा ऐतिहासिक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दृष्टि से भी नहीं विदित होता है कि भारतीय संस्कृति में सूर्य की मान्यता को अतीव ऊंचा स्थान चिरपुरातन काल से दिया जाता है ।

प्राचीन धर्म ग्रन्थों में से एक भी ऐसा नहीं है, जिसमें सूर्य का विवेचन, महात्म्य एवं पूजा विधान का वर्णन न हो । पुराणों और उप पुराणों में से सभी में किसी न किसी रूप में सूर्य सम्बन्ध उपाख्यान विद्यमान हैं ।मन्त्र विज्ञान और तन्त्र विधान के दोनों पक्षों में ही अपने–अपने ढंग से सूर्य की अभ्यर्थना का विवरण है । प्रतीत होता है कि चिर काल तक योग, तप, अनुष्ठान, के रूप में विविध प्रकार की सिद्धियों के लिए सूर्य तप किए जाते रहे हैं ।

कुन्ती ने सूर्य की आराधना करके उन्हीं के समान तेजस्वी पुत्र कर्ण प्राप्त किया था । सूर्य उपासना से ही द्रौपदी को ऐसा अक्षय पात्र मिला था जिसकी भोजन सामग्री कभी समाप्त ही नहीं होती थीं । हनुमान को सूर्य का तेजांश प्राप्त हुआ था और उन्हीं की कृपा से वे अनेक विभूतियों के अधिनायक बने थे । सीता ने बाल्मीकि के आश्रम में सूर्य साधना करके ही लव–कुश को जन्म दिया था। राजा इक्ष्वाकु ने सूर्य साधना की थी । वहीं से उनके वंशधर सूर्यवंशी कहलाते चले गये । शकुन्तला ने अपनी परित्यक्त स्थिति में सूर्य साधना करके ही चक्रवर्ती भरत को जन्म दिया था । ऐसे अनेक कथानक हैं, जिनमें सूर्योपासना से तेजस्वी सन्तानों का वरदान मिलने का उल्लेख है । यही नहीं सूर्योपासना से अभीष्ट मनोरथों के पूरा होने का उल्लेख शास्त्रों में विस्तार से आता है ।

स्कन्द पुराण में कहा गया है–

किं किं न सविता दयात् सम्यगुपासितः ।
आयुरारोग्यमैश्वर्य स्वर्ग चाप वर्गकम् ॥

अर्थात–"भली प्रकार उपासना करने पर सूर्य क्या–क्या प्रदान नहीं करते । आयु, आरोग्य, ऐश्वर्य, स्वर्ग, अपवर्ग सभी कुछ उनसे मिलते हैं ।"

"शरीरारोग्य कृच्चैव धन वृद्धि यश स्करः
जायते नात्र संदेहो यस्य तुष्ये दिवाकर"

–पद्म पुराण

अर्थात्–"शरीर के आरोग्य, धन वृद्धि, यश यह सब उसे प्राप्त होते हैं जिस पर सूर्य प्रसन्न हैं ।"

महाभारत में वर्णन आता है कि जब बनवास काल में पाण्डव बुरी तरह परिस्थितियों में घिर गये, तब उन्होंने महर्षि धौम्य से पूछा कि इस विपत्ति से कैसे निकलें ? तब उत्तर में धौम्य ने कहा–तुम लोग सूर्य की उपासना करो । उन्हीं की कृपा से कष्टों का निवारण और संयोग का आगमन हो सकता है ।

गायत्री महामन्त्र वस्तुतः सविता देव का शक्ति स्रोत है । भौतिक प्रयोजनों में जब गायत्री का उपयोग होता है तो उसे सावित्री कहते हैं । अध्यात्म प्रयोजनों में वह दिव्य रूप धारा गायत्री ही रहती है । स्वर्ग, मुक्ति, सिद्धि प्रदान करती है । किन्तु सावित्री रूप में वह महारानी, महाचण्डी, महाकुण्डलिनी का रूप धारण करती है । शक्ति सम्प्रदाय सावित्री उपासकों का है । वैष्णव, सम्प्रदाय गायत्री उपासकों का । फिर भी यह कोई विभाजन रेखा नहीं है । आवश्यकतानुसार कोई भी साधक इनमें से किसी का भी आश्रय ले सकता है ।

गायत्री को सूर्य मण्डल मध्यस्थ कहा गया हैं वह सूर्य मण्डल के बीच में अवस्थित है । गायत्री ध्यान में सविता देव का ही ध्यान किया जाता है । सविता स्वर्णिम आभा वाले हैं। प्रातः और सायं दोनों समय उनका वही रूप रहता हैं । दिन और रात्रि के मिलन काल यह दोनों ही हैं । इसलिए इन बेलाओं को सन्ध्या काल कहा जाता है । यों कहीं–कहीं मध्याह्न समेत त्रिकाल सन्ध्याओं का वर्णन है । पर मुख्य सन्ध्याऐं प्रातः सायं की दो ही हैं । इन समयों पर किसी न किसी रूप में सन्ध्या वंदन करना आवश्यक माना गया है । भले ही वह स्वल्प काल का ही क्यों न हो ?

सविता की निष्काम उपासना से अन्तराल में सान्निहित दिव्य विशेषताओं का, विभूतियों का अभिवर्धन होता है । सकाम उपासना से प्रतिकूलताऐं टलती हैं और अनुकूलताऐं बढ़ती हैं । शारीरिक रोग, मानसिक उद्वेग, शत्रुता का आक्रमण, दुर्बुद्धिजन्य अनाचरण, व्यसन, प्रायः प्रतिकूल परिस्थितियों के रूप में सामने आते रहते हैं । इनसे किसी प्रकार पीछा छुड़ाया जाय, इसकी अन्तःप्रेरणा सूर्योपासना से जन्म लेती है उपाय सूझ पड़ते हैं और उन्हें कार्यान्वित करने के लिए जिस विवेक और साहस की आवश्यकता पड़ती है उनका उद्भव भी अन्तःक्षेत्र में से अनायास ही उदय होने लगता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

स्वाध्याय, सत्संग, चिन्तन, मनन, के उपायों को अन्तःचेतना के अभिवर्धन में सहायक माना गया है। पर बाह्य प्रयोग ही पर्याप्त नहीं है। उज्जवल भविष्य का निर्माण करने वाले जिस आन्तरिक उल्लास की आवश्यकता है। उसमें सूर्याराधना विशेष रूप से सहायक होती है।

सावित्री साधना में सविता की ध्यान धारणा अनिवार्य मानी गयी है। सूक्ष्म शरीर का परिशोधन एवं शक्तिवर्धन स्वर्णिम सूर्य–सविता का ध्यान करने से पूरा होता है। प्रभात काल सूर्याभिमुख होकर, नेत्र बन्द रखते हुए भ्रूमध्य, हृदय स्थान एवं नाभि चक्र में प्रकाश पुंज का ध्यान किया जाता है। मस्तिष्क में बुद्धि चेतना का निवास है। हृदय में भाव सम्वेदना और नाभि में सर्वतोमुखी बलिष्ठता का इन स्थानों में किया गया ध्यान अपने–अपने केन्द्रों को अधिक समर्थ बनाता है। उनकी चेतना को अधिक विकसित करता है। इस प्रकार स्थूल, सूक्ष्म और कारण तीनों ही शरीर अपने–अपने क्षेत्र में बीज रूप से विद्यमान क्षमताओं के जागरण में, उत्कर्ष में विशेष रूप से सहायक सिद्ध होते हैं।

हठयोग में कुण्डलिनी जागरण के प्रयोग को अधिक महत्त्वपूर्ण माना गया है। मेरुदण्ड में षट्चक्र है। जननेन्द्रिय मूल में प्रसुप्त सर्पिणी जैसी कुण्डलिनी का मूल आधार है। इसका अन्तिम सिरा मस्तिष्क मध्य वाले ब्रह्म–रन्ध्र में सहस्रार कमल है। इन तीनों पक्षों को मिला कर कुण्डलिनी का पूरा कलेवर बनता है। जागरण के लिए जहां अन्यान्य क्रिया–कृत्यों का समावेश करना पड़ता है वहां सूर्य का ध्यान भी अनिवार्य है। जिस–जिस केन्द्र में सूर्य का ध्यान किया जाता है वह जागृत, सक्रिय और गतिवान होने लगता है। इस साधना का यह सरलतम मार्ग है कि सहस्रार से लेकर मेरुदण्ड अवस्थित छहों चक्रों में होते हुए जननेन्द्रिय मूल तक के समूचे क्षेत्र में सूर्य प्रकाश के प्रवेश करने, ऊर्जा भरने का ध्यान किया जाय।

सोहम् साधन द्वारा प्राण आकर्षित किया जाता है। सांस लेते समय 'सो' और निकालते समय 'हम्' की ध्वनि का ध्यान किया जाता है। पर इसके साथ ही श्वास–प्रश्वास की सूर्य शक्ति से ओत–प्रोत होने की भावना भी की जाती है। नाद–योग में नाद श्रवण के साथ यह मान्यता भी परिपक्व की जाती है कि वे दिव्य शब्द सूर्य लोक से उतर कर साधक तक आ रहे हैं।

सम्भवतः इसी कारण सूर्य के कुछ उपासना पर्व भी निर्धारित हैं। रविवार को सूर्य का दिन माना जाता है। उस दिन उपवास रखकर सूर्य को प्रसन्न करने की प्रथा है। वट सावित्री का सम्बन्ध सावित्री सत्यवान की कथा से जोड़ा जाता है। सावित्री ने सूर्योपासना, करके अपने पति सत्यवान को यमराज के हाथ से पुनः वापस लौटाया था। सौभाग्य रक्षा के लिए अन्य स्त्रियां भी इस व्रत को करती हैं। मध्य प्रदेश और बिहार में कार्तिक शुक्ल ६ को सूर्य षष्टी कहा जाता है। उस दिन उसे पूरे क्षेत्र में अत्यन्त समारोह पूर्वक इस व्रत उत्सव को मनाया जाता है।

गायत्री सावित्री का ध्यान चित्रण एवं प्रतिमा निर्माण तो सूर्य मण्डल के मध्य में करना आवश्यक ही है। अन्य देवताओं को भी सूर्य आभा के अन्तर्गत ही किया गया है। सभी के चेहरों पर तेजोवलय का समावेश आवश्यक माना गया है। जितने भी देवता हैं उनकी प्रतिमाऐं बनाते समय उनके चेहरे के इर्द–गिर्द तेज मण्डल का अंकन या चित्रण अनिवार्यतः रहेगा यह सूर्य की ही आभा है। इससे स्पष्ट है कि कोई भी नर देवता या नारी देवता जो शक्ति प्राप्त करते हैं, वह सूर्य द्वारा अधिग्रहीत की गई ही होती हैं। सर्वविदित है कि चन्द्रमा पृथ्वी की तरह ही साधारण मिट्टी का बना हुआ है। पर सूर्य का प्रकाश उसके जितने भाग पर पड़ता है, उतना ही वह रात्रि के समय चमकता है। सौर मण्डल के अन्य ग्रहों और उपग्रहों के सम्बन्ध में यही बात है, उनमें अपना निज का कोई प्रकाश नहीं है। सूर्य की किरणों का प्रकाश पड़ने से ही वे उदय होते रहते हैं।

ब्रह्माण्ड में सूर्य सहोदरों की बहुत बड़ी संख्या है। अपने सूर्य को आदित्य कहते हैं। ठीक इसी प्रकार के सूर्य वे तारक भी हैं, जो रात्रि के समय आकाश में चमकते हैं। चमकते ही नहीं, वे अपनी–अपनी विभिन्नताओं और विचित्रताओं से भरी पूरी विशिष्ट किरणें भी निःसृत करते हैं। पृथ्वी पर उन समस्त सूर्यों का प्रकाश आता है, पर वह अपने आदित्य की छलनी में छनकर ही धरती पर आता है। तारकों की सीधी किरणें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यदि पृथ्वी पर आने लगें तो समूचा वातावरण ही गड़बड़ा जाय ।

सूर्य और पृथ्वी की दूरी का इतना सन्तुलित क्रम है जिसे सहज एवं सुयोग सम्मत कह सकते हैं । यदि किरणें अपेक्षाकृत निकट या तीव्र होतीं तो पृथ्वी की स्थिति भी बुध के समान लाल अंगारे जैसी होती । यदि दूरी अधिक होती तो प्लूटो आदि के समान ही यहां असहनीय शीत होता और किन्हीं प्राणियों या वनस्पतियों का, जलाशयों का कोई चिह्न कहीं दृष्टिगोचर न होता । यह सूर्य का अनुग्रह ही है कि पृथ्वी उससे संतुलित दूरी पर है । फलतः यहां विविध प्रकार के प्राणी, वनस्पति, पदार्थ उत्पन्न होते हैं । जल बरसता है और वायु चलती हैं । वायु में जीवन तत्व 'प्राण' ऑक्सीजन घुला रहता है । यदि उसका अनुपात नहीं रहा होता तो वायु के रहते हुए भी उसमें प्राण प्रदायनी शक्ति का अभाव रहता और कोई जीव जन्तु उत्पन्न न होता । इसीलिए सूर्य को जगत की आत्मा कहा गया है–सूर्य आत्मा जगतुस्थश्च– अर्थात्–इस जगत की आत्मा सूर्य ही है । समस्त जीवधारियों का उत्पादन, अभिवर्धन और परिवर्तन सूर्य के कारण ही सम्भव होता है ।

ऋषिगणों के अनुसार–

सूर्योज्योतिज्ज्योतिः सूर्यो वर्चा ज्योतिर्वचः ।

–श्रुति

सूर्य ही ज्योति है । सूर्य ही वर्चस् है ।

सूर्य प्रकाश रूप है । पर यह प्रकाश इतने तक ही सीमित नहीं है कि अन्धकार को दूर करे । जो वस्तु जैसी है उसे उसी रूप में दिखाये । यह अन्तः प्रकाश भी है, जिस ब्रह्म तेज या वर्चस कहते हैं । इससे अपनी तथा विश्व की महिमामयी विभूतियों के दर्शन भी होते हैं ।

सवित्रयास्तु परं नास्ति ।

अग्नि पुराण

सवित्रयास्तु परं नास्ति ।

मनुस्मृति

सवित्रयास्तु परं नास्ति ।

याज्ञवल्क्य

सावित्री से ऊंचा और कोई नहीं है ।

शास्त्रकारों के अनुसार सूर्य उपासना का एक मात्र मन्त्र सावित्री है । सप्त व्याहृतियां लगने पर वह सावित्री कहलाती है और तीन व्याहृतियां रहने पर उसे गायत्री कहते हैं । सावित्री का प्रयोग भौतिक प्रयोजनों के लिए होता है । तथा गायत्री को अध्यात्म तत्व–ज्ञान के लिए प्रयुक्त किया जाता है ।

यों देखा जाय तो पृथ्वी का सुसंचालन सूर्य की सुसन्तुलित स्थिति के कारण ही हो रहा है प्राणियों के लिए जिन पदार्थों की आवश्यकता है वह सब भी प्रकारान्तर से आदित्य अनुग्रह ही प्रदान करता है । जीवन धारण के लिए ऊर्जा नितान्त आवश्यक हैं । प्रत्येक प्राणी के शरीर में ऊर्जा काम करती है । खाद्य पदार्थों में भी कैलोरी के रूप में ऊर्जा तत्त्व ही काम करता है । शीत से बचने एवं गति देने के लिए बिजली, तेल, कोयला, ईंधन आदि के रूप में ऊर्जा ही काम आती है ।

पृथ्वी का आकार चपटापन लिए हुए हैं साथ ही उसकी भ्रमण कक्षा भी अण्डाकार हैं । इसी कारण शीत और ग्रीष्म ऋतुऐं आती हैं । साथ ही कुछ क्षेत्र सदा शीतल और सदा उष्ण बने रहते हैं । उत्तरी और दक्षिणी ध्रुवों में शीतलता अधिक रहती है । उनमें भरी बर्फ जमी रहती है । यदि सूर्य ताप में घट–बढ़ रहने लगे तो उससे समुद्र में भरी जल राशि पर भारी प्रभाव पड़ सकता है । सूखे क्षेत्र पानी में डूब सकते हैं और जल घट जाने से कितने ही द्वीप उभर सकते हैं इसलिए सर्व साधारण को विज्ञजन सदा सचेत करते रहते हैं कि ऊर्जा का उपयोग अनुचित मात्रा में न किया जाय । कल, कारखाने, मोटर, वायुयान जैसे वाहनों की भरमार न की जाय । पृथ्वी की उर्वरा शक्ति बनाये रखने के लिए उस पर वृक्ष, वनस्पतियों की बहुलता घटने न दी जाय । पेड़–पौधे सूर्य का प्रकाश सोखते हैं । उसकी प्रतिक्रिया प्राणवायु युक्त वायु निःसृत करने के रूप में होती है । प्राणियों के लिए यही जीवन तत्त्व है । इसीलिए धरती पर वन सम्पदा को अक्षुण्ण बनाये रहना भी प्रकारान्तर से सूर्य उपासना का ही एक पक्ष है । जहां वनस्पति से धरती ढंकी नहीं होती उसे शास्त्रों में निर्वसना कहा गया है । अनुपयोगी रहने की ओर संकेत किया गया है । रेगिस्तान इसी कारण बढ़ते हैं । बंजर ऊसर भी इस कारण पनपते हैं । सूर्य उपासना का सर्व साधरण द्वारा की जाने वाली प्रक्रिया का यह महत्त्वपूर्ण अंश है

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

कि धरती को हरीतिमा से ढंक रखा जाय, उस पर मनुष्यों तथा पशु पक्षियों के लिए उपयुक्त आहार उगाया जाय। वृक्ष वनस्पतियों से प्रत्येक भूभाग को भरा-पूरा रखा जाय। आदित्य पुराण में वृक्षों को सूर्य के केश और वनस्पतियों को रोम बताया गया है, पृथ्वी को आदित्य भगवान का दिया हुआ यह सीधा अनुदान है ।

सूर्य पृथ्वी से बहुत ऊपर है । उसका आकार भी प्रायः पृथ्वी से ११० गुना बड़ा है । फिर भी उसकी ऊर्जा को हम कहीं भी अग्नि रूप में प्रज्वलित कर सकते हैं । अग्नि भी सूर्यांश ही है । इसलिए उसकी ज्योतिर्मय प्रतिमा अग्नि रूप से ही प्रज्ज्वलित की जाती है । उपासना प्रयोजनों में अगरबत्ती धूप-दीप का विधान इसीलिए है कि देव प्रयोजनों में सूर्यांश को साक्षी रखे रहा जाय ।

अग्निहोत्र सूर्य आराधना का सर्वोत्तम प्रयोग है । सामान्य कार्यों में प्रयुक्त होने वाली अग्नि तो ईंधन के सहारे जल जाती है । पर यज्ञाग्नि को प्रज्ज्वलित करने के लिए विशेष वृक्षों की ही समिधाऐं काम में आती हैं । समिधा के लिए जिन वृक्षों का काष्ठ प्रयुक्त होता हैं, उनमें सूर्य तत्त्व की बहुलता पाई गई हैं । फिर इसके अतिरिक्त शक्तिशाली शब्द शक्ति का मन्त्र रूप में भी समावेश किया जाता है । यज्ञाग्नि सूर्य का भूतलीय प्रतिनिधित्व करती है, इसके लिए उसके माध्यम से भी वे लाभ उठाए जा सकते हैं जो सूर्य किरणों के द्वारा उपलब्ध होते हैं । शारीरिक रोगों का निवारण, मानसिक चेतना का अभिवर्धन, व्यक्तित्व में ओजस्, तेजस्, वर्चस्, का समावेश, प्रतिभा का सम्वर्धन सद्गुणों का विकास, सत्प्रवृत्तियों का सम्वर्धन अग्नि होत्र के प्रधान लाभ हैं । इसके अतिरिक्त यह ऊर्जा आत्मा को परमात्मा से मिलने का दोनों के बीच तादात्म्य उत्पन्न करने का प्रयोजन भी पूरा करती है। इसलिए चेतना में ब्रह्मत्व की-ब्रह्मभाव की अभिवृद्धि के लिए यज्ञाग्नि का सानिध्य आवश्यक माना गया है । कहा गया है कि यज्ञाग्नि के सानिध्य से मनुष्य शरीरधारी ब्राह्मणत्व की उच्च भूमिका तक पहुंचते हैं ।

सीलन, सड़न, कृमि, कीटक, दुर्गन्ध आदि के निवारण में जितने भी प्रयोग उपचार प्रयुक्त होते हैं, उन सबकी तुलना में अकेले सूर्य ऊर्जा कहीं अधिक बढ़कर प्रयोजन पूरा करती है । गन्दगी का अनुपात जब बढ़ता है तब ग्रीष्म ऋतु में तूफान, अन्धड़, चक्रवात् उठते हैं । उनका उद्देश्य वातावरण की-वायु मण्डल की सुविस्तृत सफाई करना ही है । समुद्र स्थिर रहता है पर उसे भी ज्वार-भाटों के माध्यम से ऊंची लहरें एवं तूफान के माध्यम से गतिशील बनाए रहती हैं । चल नदियों का पानी स्वच्छ रहता है । स्थिर जोहड़ों का पानी सड़ने लगता है । उसी प्रकार समुद्र का जल तभी तक शुद्ध रहता है जब तक उसमें हलचल उठती रहती है । यह कार्य सूर्य और चन्द्रमा की आकर्षण शक्ति ही सम्पन्न करती है । सूर्य किरणें ही समुद्र जल को भाप बनाती हैं । बादल बनाकर उन्हें जहां-तहां बरसाती हैं । इसीलिए सविता को अग्नि का ही नहीं जल का देवता भी माना गया है । धूप, दीप, जैसे अग्नि प्रतीकों के साथ-साथ देव पूजा में जल कलश का भी प्रयोग होता है । जिस प्रकार यज्ञाग्नि में अनेकानेक देवताओं का आह्वान किया जाता है । उसी प्रकार पूजा वेदी पर स्थापित किये जाने वाले जल कलश में विभिन्न प्रकृति के विभिन्न प्रयोजनों वाले देवताओं को भी आमन्त्रित किया जाता है। सूर्य को इन्द्र और वरुण दोनों की संज्ञा दी गई है । इन्द्र अग्नि है और वरुण जल । दोनों के समन्वय से यह पृथ्वी अपनी विभिन्न क्रिया-प्रक्रियाओं का सूत्र संचालन करती रहती है । मनुष्य शरीर भी एक प्रकार का भूमण्डल, सौर मण्डल अथवा ब्रह्माण्ड ही है । इसके प्रकट और अप्रकट क्रिया-कलापों में सूर्य का असाधारण एवं अद्भुत योगदान रहता है । इसीलिए सूर्योपासना का इतना अधिक माहात्म्य बताया गया है ।

समस्त शक्तियों का उद्गम स्रोत सविता

समस्त देव शक्तियों का उद्गम स्रोत सविता है । शतपथ ब्राह्मण में कहा है-"सविता वा देवानां प्रसविता ।" अर्थात् सविता ही देवों का प्रसविता है । प्रसविता का अर्थ प्रसव कारक यानी उत्पत्ति कारक अथवा उत्पादन कारण है । ब्रह्माण्ड व्यापी ब्रह्मतेज युक्त चेतना का ही नाम सविता है । उसके चिन्मय प्रकाश स्वरूप का स्थूल प्रतीक सूर्य है । सविता से देव उत्पन्न होते हैं । वे मानों उस चेतना सूर्य की रश्मियां हैं-"एते वै विश्वे देवा रश्मयः (शतपथ ब्रा० २।३।१।६) ऐसा श्रुति वाक्य है। देव का अर्थ द्योतन शील या दीप्ति युक्त होता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । इसीलिए उन्हें चेतना रश्मियां ही समझना चाहिए । ये चेतना–रश्मियां स्वाभाविक ही विपुल शक्ति पुन्ज हैं ।

प्राण से प्राणित अग्नि ही आदित्य है यानी व्यापक प्राण ऊर्जा से ऊर्जस्वित तरंग समूह ही आदित्य है । यह चेतन–ज्योति तरंग कणों का ऊर्जस्वी विस्तार है । इसे ही सविता कहते हैं । वह सर्वव्यापी ऊर्जस्वी चेतना ज्योति है । उस सत्ता का आधि-भौतिक स्वरूप सूर्य हैं, आधि-वैदिक स्वरूप आदित्य है और आध्यात्मिक स्वरूप सविता है । इसलिए आध्यात्मिक अर्थ में सविता ब्रह्माण्ड व्यापी चेतन ऊर्जा को कहते हैं । उसी से विभिन्न देव–शक्तियां विकिरण ऊर्जाओं के रूप में निःसृत प्रसारित होती रहती हैं । द्योतनशील यानी प्रकाशनशील बोध प्रद होने के कारण इन चित् शक्तियों को देव कहते हैं । सविता ही इन सब देवशक्तियों का केन्द्र व आधार है ।

सविता के आधिभौतिक पक्ष की आधारभूत स्थूल इकाई परमाणु है । परमाणु नाभिक केन्द्रीय ध्रुव है । उसमें पारमाणविक इलेक्ट्रॉनों के विभिन्न स्तर या कक्षाऐं होती हैं । इसी प्रकार भूलोक से लेकर स्वर्गलोक तक सात मण्डल हैं जिनके नाम क्रमशः प्रवह, आवह, उद्वह, संवह, विवह, परिवह और परावहं कहे गये हैं । ये मण्डल वस्तुतः जैविक विद्युत् प्रवाह के सात स्तर हैं । इन्हें ही सात देवलोक कहा गया है ।

सात प्रकार की प्रधान विकिरण–ऊर्जाऐं ब्रह्माण्ड में सक्रिय हैं ।

१–कॉस्मिक विकिरण ऊर्जा
२–पराकासनी विकिरण ऊर्जा
३–दृश्य–प्रकाश विकिरण ऊर्जा
४–अवरक्त– विकिरण ऊर्जा
५–रेडियो-विकिरण ऊर्जा
६–एक्स–विकिरण ऊर्जा
७–गामा–विकिरण ऊर्जा

इन विकिरण ऊर्जाओं का समष्टि में संचालन–नियमन करने वाली चेतना शक्तियों को ही देव कहते हैं । अध्यात्म–शास्त्र में चेतन की बलिष्ठता को ही प्राण कहते हैं । श्रुति में देवों को प्राण स्वरूप कहा गया है । उन्हें ज्योति स्वरूप भी कहा गया है । इससे स्पष्ट है कि ज्योति के रूप में सक्रिय चेतन प्राण ऊर्जा ही देव हैं।

शक्ति और स्वभाव के अनुसार इन चेतन प्राण ऊर्जाओं की अनेक श्रेणियां हैं । इसलिये देवों की भी अनेक श्रेणियां एवं समूह गिनाये गये हैं । सभी विकिरण ऊर्जाओं का मूल उद्गम सूर्य है । सभी देव–सत्ताओं का प्रसविता चेतना–सूर्य सविता है । उपरोक्त सात विकिरण ऊर्जाओं के ही समकक्ष सात प्रधान देवगण या गण देव हैं जो ये हैं (१) विश्वेदेव प्रथम गण (२) विश्वे देवा द्वितीय गण (३) आदित्य गण (४) रुद्रगण (५) वसु गण (६)मरुद्गण और (७) साध्य देवगण ।

कॉस्मिक विकिरण ऊर्जाऐं जिस चेतना शक्ति से संचालित रहती हैं उसका शास्त्रीय नाम विश्वेदेव है । आकाश के अज्ञात प्रदेश से आने वाली अति सूक्ष्म ब्रह्माकुण्डीय किरणें जिस चेतना शक्ति द्वारा संचालित रहती है, नियन्त्रित रहती हैं । वही विश्व देवा हैं । पराकासनी विकिरण–ऊर्जा विश्व देवा के दूसरे वर्ग से संचालित प्राण प्रवाह है । वेदों में विश्वेदेवों के दो वर्ग गिनाए गए हैं । एक वर्ग में तेरह विश्वे देव हैं । दूसरे में इक्कीस ।

दृश्य विकिरण–ऊर्जा वैदिक आदित्य देवताओं की चेतन शक्ति से संचालित प्रवाह है । यह आदित्य देव बारह हैं । अवरक्त, विकिरण ऊर्जा के स्तर पर सक्रिय चेतना–शक्ति रूप हैं और रेडियो विकिरण–ऊर्जा की नियामक समष्टि व्यापी चेतना शक्ति ही वसुगण हैं । तीक्ष्ण एवं वेधक एक्स किरणों के संचालक मरुद्गण हैं ओर उनसे भी अधिक सूक्ष्म गामा किरणों के मूल में जो ब्रह्माण्डीय चेतना है वह साध्य नामक सर्वोच्च देवगणों द्वारा नियन्त्रित संचालित होती है ।

सविता ही इन सभी देव सत्ताओं का मूल है । इन प्रधान देवगणों के अतिरिक्त अन्य देव शक्तियां भी सविता से ही प्रवाहित होती हैं । ज्योतिः स्वरूप, प्रकाश के वेग से फोटॉन–कण की तरह निरन्तर गतिशील होने के कारण देवता कालजयी हैं एवं काल सखा हैं । वे काल चक्र के साथ–साथ चलते हैं ।

यस्मादर्वाक्सं वत्सरोऽहोभिः परिवर्तते।
तद्देव ज्योष्यां ज्योतिरायुर्हो पासतेऽमृतम्॥

– बृ० उ० ४।४।१६

अर्थात् काल–चक्र के आवर्तन से जो संवत्सर–क्रम दिन रात चलता रहता है उसका ज्योतिः स्वरूप देव यथावत्

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अनुवर्तन करते हैं । प्रकाश के वेग के साथ ही काल चलता है । इसलिए इन देवताओं की आयु स्थिर रहती है । वे कालात्य प्राणामृत को पीते रहते हैं ।

वस्तुतः जैसे सभी वस्तुएं दिक् या 'स्पेस' में अवस्थित होती हैं । उसी प्रकार प्राण–ऊर्जा काल में सम्पृक्त है । इसीलिए उसे कालात्म कहा है । इस काल की गति प्रकाश गति के स्तर पर स्थिर होती है । प्रकाश की गति को दिव्य गति भी कहा जाता है । देवताओं की गति, दिव्य गति है इसलिए वे काल के साथ–साथ चलते हैं और अजर–अमर हैं । चेतना ऊर्जा अविनाशी है, अक्षय है ।

देव शब्द का अर्थ ही दीप्तिमान होता है । दीप्तिमान चेतन–ऊर्जा ही देवसत्ता कही जाती है । वह चेतन–ऊर्जा विपुल शक्ति की पुंज होती है । प्रारम्भ में जिन सात प्रधान देवगणों का वर्णन हो चुका है, उनके साथ ही अन्य मुख्य देव चार और हैं इन्द्र, अश्विनकुमार, मित्र और वरुण । कुल ग्यारह प्रमुख देव हुए।

इन्द्र को देवों में ज्येष्ठ और सर्वाधिक बलवान कहा गया है ।

इन्द्र एवं ज्येष्ठो.....अतिष्ठो वा इन्दुः ।

–(शतपथ ब्रा० ५।२।७।६)

शतपथ ब्राह्मण में ही यह भी कहा है कि इन्द्र ने वृत्र का वध किया ।

वृत्रो हवा–––––तमिन्द्रो जघान।

(शत० १।१।३।४।व ५)

वृत्र असुर था यानी वह ऋणात्मक ऊर्जा–प्रवाह का प्रतीक है । यह भी कहा गया है कि वह द्यौ एवं पृथ्वी के बीच सब कुछ को आवृत किये सो रहा था, इसी से वृत्र कहलाया । इससे पता चलता है कि परमाणु नाभिक एवं उसके बाह्य–स्तर के बीच जो ऊर्जा–स्तर हैं, उनमें की ऋणात्मक ऊर्जा ही वृत्र–शक्ति की लघु प्रतीक है. या फिर स्थायी नाभिकों में जो आवेशरहित न्यूट्रॉन कण होते हैं । उनकी ऊर्जा वृत्र की प्रतीक है । आयनोस्फियर में विद्यमान कणों में जो ऋणात्मक –ऊर्जा होती है, वह भी वृत्रासुर का ही पर्याप्त है । अतः मेघों का निर्माण करने वाले जो विद्युतआवेशी कण या आयन हैं । वे इन्द्र की शक्ति से ही संचालित हैं । इन्द्र वृहदारण्यक उपनिषद् में पक्षीरूप भी बताया गया है । अतः उसे तरंग ऊर्जा के स्तर पर सक्रिय चेतना–शक्ति होना चाहिए । वृत्र को जब इन्द्र पराभूत करता है । तब मरुत् उसके चारों तरफ खेलते हैं ऐसा शतपथ ब्राह्मण (२।५।३।२०) में कथन है–

"मरुतो ह वै क्रीडिनो वृत्रं हनिष्यन्तमिन्द्रमा गतः ।"

इन सब तुलनाओं से स्पष्ट होता है कि मरुत् है बीटा–किरणों की चेतना ऊर्जा और इन्द्र है एल्फा-किरण के स्तर पर सक्रिय चेतना ऊर्जा । रेडियम यूरेनियम जैसे किन्ही भी तत्वों के कृत्रिम विघटन या विखण्डन से एल्फा कण ही तरंग रूप में परमाणु–के ऊर्जास्तरों को वेधता निकलता है । बीटा किरणें भी एल्फा किरणों के साथ ही उसी समय निकलती हैं । एल्फा कणों के प्रहार से स्थायी नाभिक भी विघटित हो जाते हैं, जो वृत्र–हनन की प्रक्रिया का प्रतीक है । एल्फा–कण मूल कणों में सबसे बड़े और ऊर्जास्वी होते हैं । मूल कारणों की प्राण–ऊर्जा को देव समुदाय कहें तो एल्फा कण देवराज इन्द्र हैं । यह सदैव स्मरण रख जाना चाहिए कि देवगण स्वयं मूल कण नहीं हैं । मूल कण तो देव–वाहन हैं । उनकी जो संचालक समष्टिगत चेतना ऊर्जा है वही देव है । इस प्रकार एल्फा–कणों की समष्टि चेतना–ऊर्जा देवराज इन्द्र है । देवों का कोई निश्चित पार्थिव रूप नहीं होता, क्योंकि वे स्वयं रूपों के निर्धारक हैं । देव मात्र प्राण–रूप या चेतना रूप हैं । एल्फा-कण हीलियम नामक तत्व के आयनित रूप हैं । शेष सभी तत्व हीलियम–नाभिक के ही विभिन्न संयोजनों से विनिर्मित होते हैं–यही एक तत्व का बहुरूपी करण या माया है । बृहदारण्यक उपनिषद् में कहा है ।

"इन्द्रो मायाभिः पुरुरूपं ईयते"

(वृहदा० उप० २।५।१९)

अर्थात् इन्द्र माया से पुरुरूप यानी विविध रूपों वाला होता है । यह सृष्टि के सबसे बड़े मूल कण के संयोजन से विविधि तत्वों के निर्माण की प्रक्रिया के अनुरूप ही वर्णन है । एल्फा कण जो हीलियम नाभिक में होता है । वही विभिन्न रासायनिक तत्वों के रूप में अभिव्यक्त होता है । यह आधुनिक वैज्ञानिकों की भी मान्यता है ।

इन्द्र की दो वीर्यवान भुजाऐं ही मित्र देव एवं वरुण देव हैं–

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इन्द्रस्य वाः वीर्यकृतो बाहुः।
मित्रा वरुणाउहि बाहु॥
–(ऋ० ५।३।५।२७)

एल्फा कण स्वयं मूल कण है । अतः वह एक इकाई है । एल्फा-कणों की नियामक समष्टि न्यूट्रॉनों के योग से बना होता है । प्रोटॉन आवेश युक्त-कण होता है, उसमें जो वैद्युत आवेश का बन्धन कारक आकर्षण होता है । वही विश्वव्यापी वरुण की पाशशक्ति का भौतिक स्वरूप है । क्योंकि इन्द्र की बाहु स्वरूप वरुण की पाशशक्ति प्रसिद्ध है । न्यूट्रॉन कण अनाविष्ट होते हैं उन्हें कोई भी वस्तु प्रतिकर्षित नहीं कर सकती। यही अनाविष्ट शक्ति मित्र की भौतिक अभिव्यक्ति है । मित्र देव सबके मित्र है । किसी के भी शत्रु नहीं। वे किसी की हिंसा नहीं करते। किन्तु देवों ने वाध्य किया तब मित्र ने भी वृत्र को मारा–इन्द्र की प्रहारक भुजा बना । प्रहारक न्यूट्रॉन परमाणु नाभिक को अस्थिर बना देता है । तब नाभिक विखण्डित हो जाता है और दो छोटे नाभिक बन जाते हैं । तब पाशमुक्त प्रोटॉन आकर्षण मुक्त न्यूट्रॉन बाहर रह जाते हैं । इस प्रकार इन दोनों लघु नाभिकों में प्रारम्भिक नाभिक की तुलना में कम न्यूट्रॉन होते हैं । यह मित्र ही पशुओं से वंचित हो जाने की स्थिति के रूप में शतपथ ब्राह्मण में वर्णित प्रक्रिया के अनुरूप हैं । तब देवों ने सोम में दूध मिलाकर मित्र को पुनः पशुओं से युक्त किया न्यूट्रॉन प्रोटॉन के साथ ही परमाणुओं में विद्यमान रहता हैं । अर्थात् मित्र वरुण के बिना पशुवान नहीं हो सकता। सोम वरुण का आहार है, और दूध मित्र का ।

वरुण–शक्ति का आधि भौतिक रूप प्रोटॉन हाइड्रोजन या उद्जन का नाभिक है । उद्जन जल का मुख्य तत्व है । वरुण जल का देवता कहा गया है । मनुष्यों सहित सभी जन्तुओं के शरीरों की संरचना में वरुण–पाश या वैद्युत आवेश की प्रधान भूमिका होती है । जैविक दृष्टि से वरुण देव–शक्ति अत्यावश्यक है । किन्तु योग–साधना के उच्चतर अभ्यास में यथा सुषुम्ना में प्राण के ऊर्ध्वमुखी प्रवाह में शरीर का यही वैद्युत–आवेश बाधक बनता है । इसीलिए वैदिक ऋषि वरुण से प्रार्थना करते हैं कि हमें पाश–मुक्त रखो ।

देव अश्विन कुमार दो भाई हैं । वे अश्वयन या प्रसार–गुण से विभूषित हैं । वे दोनों देव विश्वेदेवों के दूत और अमृत के रक्षक हैं ।

यौ देवानां भिफजौ हव्यवाहौ।
विश्वस्य दूतावमृतस्य गौपौ॥
(तैत्तिरीय ब्रह्मण ३।१।१।११)

अर्थात् वे दोनों देवों की वैद्य हवियों को हवन करने वाले विश्वेदेवा–दूत तथा अमृत–रक्षक हैं ।

तैत्तिरीय ब्राह्मण में यह भी कहा है कि वे दोनों विकीर्ण रश्मियों की शरीर रक्षा करते हैं, ऊर्जा का वहन करते हैं और सभी गण देवों का उन्हीं के माध्यम से आवाहन किया जाता है । इससे यह स्पष्ट होता है कि विद्युत् चुम्बकीय ऊर्जा स्तर सक्रिय चेतना ही अश्विन है । विद्युत् चुम्बकीय ऊर्जा तरंग के दोनों घटक ही कुमारद्वय हैं, जिनमें विद्युत् ऊर्जा एवं चुम्बकीय ऊर्जा की समयुग्मिता प्रक्रिया समाविष्ट रहती है । सभी रश्मियों का सार है उनके दो विद्युच्चुम्बकीय घटक । इसीलिए सभी देवों का अन्तर्भव दोनों अश्विनों में हो जाता है । ये देव–सत्ताऐं एकादश हैं, प्रारम्भ में वर्णित सात देवगण तथा वाद में वर्णित चार देव जिनमें स्वयं अश्विन भी सम्मिलित हैं । जैसा कि बार–बार स्पष्ट किया जा चुका है ये देवसत्ताऐं चेतना–ऊर्जाऐं हैं । भौतिक कणिकाऐं एवं तरंगें इनके वाहन मात्र हैं । इसी से उन्हें देववाहन कहा जाता है ।

ये सभी चेतना ऊर्जाऐं प्रजापति की श्रति सृष्टि हैं । इनकी भी सम्पूर्ण गतिशीलता त्रिविध या त्रिगुणात्मिका होती है । प्रकाश क्रिया एवं स्थिति । ये तीन ही समस्त देवसत्ताओं के मूल गुण हैं । अतः मूल शक्तियां तीन ही हुईं, इन्हें ही त्रिदेव–ब्रह्मा, विष्णु महेश मन्ना गया है । इन्ही शक्तियों की ऋग्वेद में "त्रय एकादशासः देवाः" कहा गया है । यही मूल त्रिदेव एवं ग्यारह विश्वेदेव हैं । अन्ततः भूमा प्राण–सविता से ही ये सभी देवशक्तियां उत्सर्जित होती हैं । इसीलिए सविता ही परम आराध्य, उपास्य देव है । वही महाप्राण ब्रह्मतेज सर्वत्र अपनी रश्मियां बिखेर कर प्राण का संचार करता है । दिव्य प्रखरता के रूप में सर्वत्र व्यापक एवं विद्यमान वही चेतना सविता देव गायत्री–साधकों के इष्ट हैं । जीवन का उद्गम वही है ।

यों तो प्रत्यक्ष सूर्य ही देवता है । वह आंखों से उदीयमान देखा भी जाता है । उसकी ज्योति एवं ऊष्मा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

का लाभ निरन्तर सभी उठाते हैं । रात्रि के समय चन्द्र बनकर सूर्य ही अपनी परवर्त्तित आभा का परिचय देता है । सूर्य प्राणियों की वनस्पतियों की आत्मा है । उसी के कारण जल, थल और नभ की ऐसी स्थिति बनी हुई है, जिसमें जीवन विकसित हो सके । सूर्य ही समुद्र का जल भाप बनाकर मेघ वर्षा का प्रबन्ध करता है । जल के आधार पर ही जीवधारी ओर पदार्थ विनिर्मित, विकसित और विघटित होते रहते हैं । इसलिए उसे प्रत्यक्ष चेतना पिण्ड कहा गया है । दृश्यमान परब्रह्म नाम से भी उसकी मनीषियों ने अभ्यर्थना की है ।

उपासना सन्दर्भ में सूर्य को सविता कहा गया है और सविता की शक्ति को सावित्री नाम दिया गया है ।· सावित्री अर्थात् गायत्री । आद्यशक्ति–महाप्रज्ञा। शक्ति शक्तिवाकूदेवी–मन्त्र विद्या की अधिष्ठात्री, मन्त्र विचार है, विवेक प्रेषक । ओजस् तेजस् वर्चस् का प्रतीक प्रतिनिधि । शब्द ही ज्ञान है । लेखनी और वाणी के द्वारा उसी का आराधन अध्यवसाय किया जाता है । शब्द के आधार पर ही मनुष्य ज्ञानवान बनता है । अन्यथा उसके नर बानर बने रहने में कोई सन्देह नहीं । सविता को प्रकाश विवेक कहा जाता है । उसकी दिव्य शक्ति को वाणी कहते हैं । सामान्य प्रयोग में वह वार्तालाप के रूप में प्रयुक्त होती है किन्तु उच्च भूमिका में वह मन्त्र शक्ति बन जाती है । मन्त्र विद्या का प्राण गायत्री महा मन्त्र में सन्निहित है । सावित्री में आत्मिकी और भौतिकी का उभयपक्षीय समावेश है । इसीलिए उन्हें बला और अतिबला नाम दिया गया है । पौराणिक कथानकों में उस एक ही शक्ति को द्विधा कहा गया है । परब्रह्म की परा और अपरा शक्तियां पत्नियां वे ही हैं । भारतीय अध्यात्म में ज्ञान तथा विज्ञान का जो पुट है उसे सृष्टि सत्ता में विकसित किया गया है । सत्ता क्षेत्र में उसे सर्वोपरि माना गया है । वही महादेव है ।

देव मान्यता के आरम्भ काल में सर्वप्रथम प्रतिष्ठापना सूर्य की ही हुई । वह प्रत्यक्ष एवं दृश्यमान भी है । जल का अर्घ्य चढ़ाकर उसकी सर्व सुलभ पूजा अर्चा भी बन पड़ती है । उसके उदय, अस्त का काल संध्या कहा गया है और उस अवसर पर बन्दन–नमन का प्रावधान रखा गया है । यही है सनातन वैदिक सम्पदा। भारतीय तत्व दर्शन सविता की ही अभ्यर्थना करता है । अन्यान्य देवताओं के मुख मण्डल पर जो तेजोवलय है वह प्रकट करता है कि देवताओं का देवत्व सविता की छत्रछाया में ही विकसित हुआ है ।

जिन दिनों आत्मिकी की आराधना का उदय हुआ उस समय प्राथमिकता सूर्य की ही थी । जिन क्षेत्रों में सभ्यता का विकास हुआ वहां पूजा प्रयोग में सविता को ही अपनाया गया । पुरातत्व विज्ञान ने धरातल से जो आदि सभ्यता के चिह्न ढूंढ़े हैं, उनसे सूर्य प्रतिमाऐं प्रमुख हैं । वे तेजस् युक्त गोलाकर हैं । पीछे उनमें मनुष्य के चेहरे का भी आरोपण हुआ ।

सम्प्रदायों का विभेद जब तक नहीं हुआ था तब तक शाश्वत् सनातन धर्म को ही मानवी मान्यता ने अंगीकार किया था और सूर्य ही समूची मानव जाति का आराध्य था। उसकी गति, आभा एवं ऊर्जा की त्रिविधि क्षमताओं को लेकर त्रिवेदी की कल्पना जगी । तीन देवियां यही हैं । त्रिवेणी–त्रिपदा के रूप में इन्हीं का तीर्थ संगम है ।

पुरातत्व के देवालय पक्ष में सूर्य प्रतीकों की ही स्थापना वाले प्रमाण उपलब्ध हुए हैं। पुरातन सभ्यताओं के प्रतीकों में सूर्य का अविछिन्न समावेश है । देवालयों में सूर्य प्रतीक ही अतिशय पुरातन है । विकासमान सभ्यताओं के साथ वह उच्चस्तरीय सम्मान का अधिष्ठाता रहा । भारत में कोणार्क जैसे कतिपय मंदिर उन दिनों बने थे, जिन दिनों भारत का वर्चस्व समस्त भूमण्डल पर छाया हुआ था ।

गायत्री महामन्त्र में भारतीय बाङ्मय का क्रमिक विकास हुआ है । गायत्री का केन्द्र बिन्दु सविता ही है। मन्त्र शक्ति का अवतरण उसी से होता है। सूर्योपस्थान वस्तुतः सविता के तेजस् का स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीरों में अवतरण की अवधारण की प्रक्रिया है ।

भौतिक विज्ञान ने प्रकृति के अंचल में समाहित अनेकानेक रहस्यमयी शक्तियों की खोज की है । वे कहां से आईं ? इसका पता लगाने पर पाया गया है कि यह सूर्य का ही अनुदान है । रेडियो तरंगे, लैसर किरणें, ब्रह्माण्डीय किरणें, पराबैंगनी किरणें आदि का क्रमिक रहस्योद्घाटन होता चला जा रहा है । साथ ही यह भी स्पष्ट होता जाता है कि इन सबका एक ही उद्गम केन्द्र है सूर्य ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सूर्य–मण्डल से उद्भासित इस शक्ति को ही जड़–चेतन का आधार माना गया है ।

सविता सर्व भूताना सर्व भावाश्च सूयते।

सर्वनात्प्रेरणाच्चैव सविता तेन चोच्यते॥

समस्त तत्वों, सभी प्राणियों और समस्त भावनाओं को प्रेरणा देने के कारण ही उसे सविता कहते हैं ।

उपर्युक्त वाक्यों में भारतीय तत्व दर्शियों ने सृष्टि विज्ञान की भौतिक और आध्यात्मिक प्रक्रिया का स्पष्ट ज्ञान कर दिया है । वह तत्व रूप होने से तत्वों या भौतिक पदार्थों की गति और सक्रियता का कारण है तथा भावना रूप, प्राण रूप होने से वही सम्पूर्ण प्राणियों एवं मनुष्य को शक्ति प्राण और प्रकाश देकर भावनात्मक विकास में सहायक होती है ।

सूर्य को सृष्टि का प्राण कहा गया है । सूर्य के कारण ही धरित्री पर जीवन है । सूर्य नारायण यदि एक दिन न निकलें तो धरती पर त्राहि–त्राहि मच जाये । सूर्य का प्रकाश समस्त जीवधारियों में उल्लास एवं प्राण का संचार करता है, इसीलिए सूर्य की इतनी महत्ता है । किन्तु सूर्य मात्र जलता आग का गोला भर नहीं है, जिसमें हाइड्रोजन–हीलियम की पारस्परिक प्रतिक्रिया से आग के शोले तथ ऊर्जा भंवर उठते रहते हैं । यह तो सूर्य का दृश्य आधिभौतिक रूप है । आधिदैविक रूप में वह विचारों का नियन्त्रक, ग्रहों का अधिपति तथा भावों को सुन्दर प्रेरणा देने वाला है तथा जातक की आत्मा के रूप में विद्यमान है । इससे भी गहरे चलते हैं तो आध्यात्मिक रूप में वह विराट पुरुष की ज्योति है, अतिमानसिक ज्योति है । सु+इर–इस अर्थ से, सुन्दर प्रेरणाऐं जो दे, वह सूर्य है ।

विचारणाओं को उठाया नहीं गया, सोचने का लोगों ने प्रयत्न नहीं किया अन्यथा पता चलता कि ऋषियों, तत्वदर्शियों की उपर्युक्त गवेषणाऐं पूर्ण वैज्ञानिक सत्य हैं । जो बातें आज से लाखों वर्ष पूर्व ऋषियों ने लिख दी थीं आज का विज्ञान ही उनकी सत्यता की साक्षी देने लगा है ।

यद्यपि वैज्ञानिक अभी बहुत थोड़ा और स्थूल भाग ही जान पाये हैं । पर जो कुछ जाना जा सका है वह भी भारतीय मान्यताओं के प्रतिपादन की दृष्टि से कम नहीं ।

यों तो आकाश में असंख्य तारे हैं और वे सभी अपनी नाभिकीय शक्ति (न्यूक्लियर एनर्जी) का सृजन अपने आप करते हैं पर मूल रूप से वे सब सूर्य की ऊर्जा पर आधारित और जीवित हैं । सूर्य प्रति सेकण्ड ४.१०२३ किलोवाट (चार सौ सैक्टीलियन) ऊर्जा (गर्मी, प्रकाश और विद्युत् के सम्मिश्रित स्वरूप का नाम ऊर्जा या एनर्जी) फेंकता रहता है । उसके भीतरी भाग का ताप दो करोड़ डिग्री सेण्टीग्रेड से भी अधिक है वहां इतनी तीव्र हलचल उठ रही है जैसे कि किसी नहर से एक नाली द्वारा जब पानी किसी दूसरी छोटी नहर में निकलते हैं तो उसके पृष्ठ और पीठ दोनों स्थानों में जल बड़ी तीव्र हलचल उत्पन्न करता है । अनुमान है कि सूर्य के मध्य भाग में इस हलचल का कारण "स्पाइरल" नामक आकाश गंगा से आकर गिरता हुआ प्राण हो जो कि ब्रह्माण्ड की किसी अज्ञात मशीन या किसी विराट् तारे से आता है । "सत् सवितुः" पद भी यही संकेत करता है । कि वह सूर्य जो इस सविता लोक को प्रकाशित करता है" सूर्य के इस भाग में केवल नाभिक कण ही होते हैं । इन पर किसी प्रकार का आवरण नहीं होता । न्यूट्रॉन इलेक्ट्रॉनों को भगाते रहते हैं और स्वयं प्रोटॉनों अथवा धन विद्युत् आवेश में बदलते रहते हैं । इसी से द्रव्य का रूपान्तर होता है अर्थात् हाइड्रोजन हीलिमय में बदलता रहता है उससे उत्पन्न ऊर्जा ही सृष्टि का संचालन करती है । इस शक्ति का हजारवां भाग तो मनुष्य के उपयोग में आता है शेष ९९९ भाग से सविता देवता पृथ्वी की गतिविधियों मौसम नदियों, पहाड़ों, समुद्र और वर्षा आदि की गतिविधियों का नियन्त्रण करते रहते हैं ।

पृथ्वी में भी जो धूप, पत्थर का कोयला, लकड़ी का ईंधन, पानी, वायु; बिजली आदि हैं वह सब इसी ऊर्जा के रूपान्तर हैं जबकि पृथ्वी को सूर्य से कुल २०० ट्रिलियन किलोवाट ही ही शक्ति प्राप्त होती है । "नीपर" का पानी का बिजली घर ही संसार का सबसे अधिक विद्युत् उत्पादक माना जाता है । वह यदि दिन रात काम करे तो भी इतनी अधिक शक्ति नहीं दे सकता । यह सब देखकर मानना ही पड़ता है "सविता वे प्रसवानामीशे"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

(यजुर्वेद) सबको उत्पन्न करने वाला परमेश्वर सविता ही है ।

यह शक्ति सूर्य लोक में जितनी प्रचंड है पदार्थों में भी वही प्रभाव लेकर समासीन हो गई । मन में भी वही शक्ति होने के कारण मनुष्य प्रत्येक पदार्थ के अन्तरंग से सम्पर्क स्थापित कर सकने और सूक्ष्म रूप से किसी भी पदार्थ की शक्ति को प्रवाहित कर लेने में समर्थ है । पर यह विज्ञान थोड़े से योगी जानते हैं । इसीलिए उनके कितने ही क्रियाकलाप चमत्कार जैसे लगते हैं । अब जबकि पदार्थ में शक्ति की प्रचंडता और अस्तित्व की विज्ञान ने भी स्वीकार कर लिया है यह सिद्धियां यान्त्रिक रूप से ग्रहण की जा सकती हैं पर उनके मनोगत चमत्कार तो योग और उपासना पद्धति से ही प्राप्त हो सकते हैं ।

आइन्स्टीन ने पहली बार परमाणु के भीतर बन्द ऊर्जा (शक्ति) की माप के लिए एक समीकरण (इक्वेशन) निकाला ई-एम सी स्क्वायर ई कहते हैं इनर्जी अर्थात् शक्ति और "एम" कहते हैं "मास" अर्थात् पदार्थ में द्रव्य की मात्रा को और सी एक स्थिर अंक है जो प्रकाश की गति अर्थात् १८६००० मील प्रति सेकण्ड की गति का बोध कराता है । यह शक्ति फुट पौण्डों में नापी जाती है । २० फुट पौण्ड शक्ति का अर्थ हुआ २ पौंड भार को १० फुट ऊंचे उठाने के लिए जितनी शक्ति खर्च हो या १० पौंड भार को २ फुट तक उठाने में। मनुष्य जाति नियमित रूप से काम करते हुए कुछ शक्ति निकालती रहती है वैज्ञानिकों के अनुमान से संसार के सब लोग १ वर्ष में ९०००००००००००००००००००(नौ के आगे १९ शून्य) फुट पौंड ऊर्जा आकाश में फेंकते रहते हैं जबकि पदार्थ में यह शक्ति थोड़ी सी ही मात्रा में प्राप्त हो जाती है। उदाहरण के लिए हीलियम सबसे हलकी गैस है इसके नाभिक (न्यूक्लियस) में केवल दो प्रोट्रॉन और दो ही न्यूट्रॉन (इनमें ही अणु भार निहित होता है) होते हैं । वैज्ञानिकों ने इन्हें मापने के लिए जो मात्रक बनाया उसके अनुसार प्रोट्रॉन का भार १००७५८ और न्यूट्रानें का भार कुल १००८९४ द्रव्यमान मात्रक होता है ।२—२ प्रोट्रॉन और न्यूट्रॉनों का भार २०१५१६+२०१७८८=४०३३०४ द्रव्यमान मात्रक होना चाहिए था पर हीलियम के नाभिक का भार कुल ४००२७९ द्रव्यमान मात्रक ही होता है अर्थात् कुल संभाव्य मात्रक का ३/१०० वां अंश पता नहीं कहां गायब है । पीछे उसे शक्ति के रूप में जाना गया ।

वैज्ञानिकों ने पता लगाया कि गणना में फुट पौंड का केवल एक अंश जितना सूक्ष्म होने पर भी यही शक्ति है जो संसार को स्थिर किये हुए है यदि यह शक्ति कहीं भड़क उठे तो जितनी ऊर्जा संसार के मनुष्य मिलकर भी पैदा नहीं कर पाते उतनी ऊर्जा भड़क उठे और संसार के सभी पदार्थों को नष्ट करके हाइड्रोजन में बदल डाले ।

आइन्स्टीन ने इसी शक्ति की माप ई=एम सी स्क्वायर समीकरण के द्वारा की । ऊपर हीलियम का जो द्रव्यमान मात्रक है । केवल वही यदि शक्ति में बदला जाये तो उतने से ही जो ऊर्जा पैदा होगी वह २८० लाख इलेक्ट्रॉन वोल्ट के बराबर होगी । द्रव्य में हमेशा एक परमाणु से अधिक परमाणु होंगे अर्थात् यदि किसी द्रव्य की ऊर्जा का विखण्डन किया जायेगा तो एक न्यूट्रॉन से २ और २ से ४,४ से ८, ८ से १६ और १६ से ३२ की संख्या में वे बढ़ते जायेंगे और उसी अनुपात से ऊर्जा की मात्रा भी बढ़ती जायेगी । विखण्डन की बीसवीं पीढ़ी में न्यूट्रॉनों की संख्या ५२४२८८ अस्सीवीं पीढ़ी में १२०८९०००००००००००००००००० से भी अधिक होगी उस समय की शक्ति का अनुमान करना भी कठिन होगा जबकि यह शक्ति का उफान एक नैनो सेकण्ड अर्थात् सेकण्ड के अरबवें समय से भी कम कल्पनातीत समय में दृष्टिगोचर हो जाता है ।

भारतीय तत्वदर्शियों ने आइन्स्टीन की इस बात को बहुत पहले ही जान लिया था ।

तेजोयस्य विराजते स बलवान्—स्थूलेषु कः प्रत्ययः।

—देवी भागवत

शक्ति व तेजरूप से प्रत्येक स्थूल पदार्थ में विद्यमान तुम अकूत बलवाली परमेश्वरी हमारी रक्षा और विकास करो ।

वास्तव में इसी शक्ति से मानसिक सम्बन्ध स्थापित करके वह ऋद्धि सिद्धियां अर्जित की गई जो लोगों को चमत्कार जैसी लगती हैं पर वे विज्ञान के सिद्धान्तों पर ही पूर्णतया आधारित होती हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

फ्रांस वैज्ञानिक यूशो ने इस प्राकृतिक शक्ति (सूर्य–ऊर्जा) को यान्त्रिक ऊर्जा में परिवर्तित करने का प्रयत्न किया। रूस में भी यन्त्र बनाऐ गये और ब्रयान्स्क, तिबलिस और ताशकन्द के पास भी ऐसे यन्त्र लगे हैं जो सूर्य से आने और पदार्थों में व्याप्त होकर क्रियाशील होने वाली शक्ति को बीच में ही रोक लेते हैं और उसे यान्त्रिक शक्ति में बदल कर उससे खेतों की सिंचाई, रसोई, स्नानागार, लाण्ड्री, जल शोधक आदि के काम करते हैं इस शक्ति से औद्योगिक क्षेत्रों में ईंधन आपूर्ति की एक बड़ी भारी समस्या हल होने की सम्भावना की जा रही है। गायत्री उपासना और तन्त्र विधि से साधना करके कुण्डलिनी शक्ति का जागरण भी सूर्य की इस अदृश्य शक्ति का ही शरीर में अवगाहन धारणा और विकास करना होता है उससे स्वास्थ्य, आरोग्य, तेज, बल, बुद्धि का तो विकास होता ही है उन अतीन्द्रिय क्षमताओं का विकास भी होता है जिन्हें लोग आश्चर्य अथवा ईश्वरीय अनुकम्पा ही मानते हैं।

गायत्री मन्त्र के जाप के साथ मन को सूर्यलोक से जोड़ने का विधान बताया गया है। "आदित्य मण्डले व्यास त्परय मात्मानम् अयम्" अर्थात् सूर्य मण्डल में अविनाशी परमात्मा का ध्यान करे। ध्यान से सूर्य के प्राण या शक्ति का आगमन होता है।

याभिरादित्य स्तपति रश्मि–
भिस्ताभिः पर्जन्योभवति ।

अर्थात् सूर्यदेव जिन किरणों से तपते हैं उन्हीं किरणों की वृष्टि करते हैं।

सूर्य और मन एक तत्व होने से इस ध्यान के फलस्वरूप मन में सूर्य को तेजस्विता का विकास होता है।

मनौ वै सविता । प्राण धियः

–शतपथ ३।६।१।१३

मन ही सविता है, प्राण ही धी है। इन्द्रियों की स्थूल व पराशक्ति का विकास भी इसी शक्ति से होता है क्योंकि वे भी इसी से सम्बद्ध हैं।

एतस्माज्जायते प्राणो मनः सर्वेन्द्रियाणि च ।

–मुण्डक २।१।३

मन और समस्त इन्द्रियां प्राण की ही उपज हैं।

गोपथ ब्राह्मण पूर्व भाग में प्राण और विद्युत् को सूर्य की ही देन कहा है।

प्राण एवं सविता, विद्युदेव सविता।

–७/७/६

यह प्राण और विद्युत सूर्य के दिये हुए हैं। इस प्रकार सूर्य ही समस्त शक्तियों का स्रोत है और सूर्यलोक से प्रस्फुटित यह चैतन्य तत्व गायत्री सावित्री ही मनुष्य के विकास में समर्थ है यदि हम उसे भली प्रकार समझ कर धारण कर सकें तो यह शक्ति स्वरूपा गायत्री हमारे मन, बुद्धि, चित्त को शुद्ध और निर्मल बनाकर हमारी क्षमताओं का विस्तार सैकड़ों गुना कर सकती है और उसी से हम लोक–परलोक की सुख–शान्ति के अधिकारी हो सकते हैं।

सूर्य की क्षमता और आराधना

सूर्य देखने में सुदूर आकाश में अवस्थित एक ऐसा ग्रह पिण्ड दिखाई पड़ता है जिससे दिन के समय गर्मी और रोशनी प्राप्त होती है। थोड़ा और बारीकी में उतरने से प्रतीत होता है कि धरती का सारा वैभव ही सूर्य का अनुदान है और उसी की अनुकम्पा से वनस्पतियों तथा प्राणियों का जीवन क्रम चल रहा है।

देखने में थाली के बराबर आकार का यह अपना सूर्य विशाल और इतनी अनन्त शक्ति का भाण्डागार हो सकता है, इस पर सहसा विश्वास नहीं होता। फिर भी वास्तविकता तो अपने स्थान पर रहेगी ही। जिस सूर्य के सहारे हमारी धरती का सारा जीवन क्रम चल रहा है उसका स्वरूप समझते, समझाते मस्तिष्क चकराने लगता है।

आकाश के विभिन्न पिण्डों में सूर्य का अपना अलग ही अस्तित्व है। चन्द्रमा तारे यदि मिट भी जायें तो हमारे लिए कोई विशेष खतरे की बात नहीं है। पर सूर्य का एक घण्टे के लिए भी अलग रहना प्राण संकट उत्पन्न कर सकता है। सूर्य हमारे लिए कितना उपयोगी है इसका हम अनुमान इस आधार पर लगा सकते हैं। वैज्ञानिकों का मत है कि यदि आज सूर्य मिट जाय तो तीन दिन के भीतर ही पृथ्वी के चर–अचर सभी जीवों का अस्तित्व समाप्त हो जायेगा तथा सूर्य के समाप्त

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

होने के दो दिन के भीतर ही वायुमण्डल की कुल जल वाष्प ठण्डी होकर पानी या बर्फ के रूप में गिर पड़ेगी । उस बर्फ की भीषण सर्दी से कोई प्राणी बच न सकेगा ।

सूर्य की प्रचण्ड शक्ति को प्राचीन काल में दैवी शक्ति मानकर अपनी उपासना का एक महत्त्वपूर्ण अंग समझा जाता था । सूर्य की हर गतिविधियों को एक दैवी व्यवस्था के रूप में ही प्रतिपादित किया गया । उसका नियत समय के नियत दिशा में ही उदय होना तथा अस्त होना, ऋतु परिवर्तन की निर्धारित प्रक्रिया आदि का रहस्य हजारों वर्षों तक लोगों के दिमाग में ठीक–ठीक नहीं बैठ पाया था । हमारे पूर्वज इन सारी प्रक्रियाओं को एक दैवी अनुग्रह मानते थे और यह प्रतिपादन देते थे कि नित्य एक नया सूर्य उदय होता है तथा सायं को वह समुद्र में समा जाता है । कालान्तर में ज्यों–ज्यों आदमी का बुद्धि विकास हुआ त्यों–त्यों यह तथ्य सामने आया कि सूर्य एक ग्रह है और उसकी क्षमता अन्य सभी ग्रहों से सर्वोपरि है । अब आधुनिक विज्ञान ने तो सूर्य के विषय में ढेरों जानकारियां हासिल कर ली हैं ।

वैज्ञानिकों ने पता लगाया है कि पृथ्वी से सूर्य की दूरी सवा नौ करोड़ मील है । इस दूरी का अनुमान हम इस आधार पर लगा सकते हैं कि यदि एक आदमी बैठकर २०० अंक तक प्रति मिनट की रफ्तार से गिनती गिने तो सवा नौ करोड़ गिनने में उसे ग्यारह महीने लगेंगे । शर्त यह है कि वह अन्य कोई काम न करे, न सोये, न खाये, न पिये, दिन रात गिनता ही रहे ।

एक अन्य वैज्ञानिक ने इस दूरी की कल्पना इस प्रकार की है कि यदि हमारे हाथ इतने लम्बे हो जायें कि हम सूर्य को छू सकें और सूर्य की गर्मी हमारी अंगुलियों पर लगते ही अपने स्नायु तन्तुओं को उसकी सूचना मस्तिष्क तक उसी रफ्तार से पहुंचानी पड़े जिस रफ्तार से वे पहुंचाते हैं तो इस कार्य में कुल १६० वर्ष का समय लगेगा अर्थात् १६० वर्ष बाद अंगुली जलने की सूचना मस्तिष्क को मिल सकेगी । इसी प्रकार वैज्ञानिकों का कहना है कि यदि सूर्य पर कोई घोर शब्द हो और वह ध्वनि उसी वेग से चले जिस वेग से धरती पर चलती है तो उसे पृथ्वी तक आने में १४ वर्ष लगेंगे ।

सूर्य का डील डौल भी कुछ कम आश्चर्यजनक नहीं है । इस सम्बन्ध में वैज्ञानिकों ने कुछ महत्त्वपूर्ण आंकड़े इकट्ठे किए हैं । वैज्ञानिकों का कहना है कि सूर्य का व्यास पृथ्वी के व्यास का १०९ गुना है और इसलिए उसका घनफल पृथ्वी की अपेक्षा १०९.१०९.१०९ गुना है । तेरह लाख पृथ्वियों को एक में मिला दिया जाय तब कहीं सूर्य के बराबर गोला बन सकेगा । पर सूर्य की घनता पृथ्वी से बहुत कम है । यदि पृथ्वी का नाम का पानी का गोला लें तो पृथ्वी उससे साढ़े पांच गुना भारी होगा जबकि सूर्य अपनी घनता के बराबर पानी के गोले से मात्र सवा गुना भरी है ।

सूर्य कितना गर्म है यह अनुमान लगाना कल्पना से परे हैं । फिर भी वैज्ञानिकों ने जो जानकारियां हासिल की हैं उस आधार पर हम यह अनुमान लगा सकते हैं कि पृथ्वी के दो वर्गगज जमीन पर सूर्य की जितनी ऊर्जा आती है । उसकी शक्ति एक 'अश्व शक्ति' के बराबर होती है । इस ऊर्जा को यदि उपयोग में लाने का कोई सुगम तरीका हाथ लग सके तो सभी इंजन केवल सौर ऊर्जा से ही चलाए जा सकते हैं ।

इन्हीं बातों के आधार पर वैज्ञानिकों ने बताया है कि सूर्य का ताप ६०००० से० ग्रे० होगी । १०० से० ग्रे० पर पानी खोलने लगता है । ३००० से०ग्रे० तक ताप मानव निर्मित विद्युत् मशीनें पैदा कर सकती हैं ।

गणना से पता चलता है कि सूर्य की सतह के प्रत्येक वर्ग इन्च से ५४ अश्व बल की शक्ति निकलती हैं । अंगूठी के नग के बराबर सूर्य की सतह से लगभग ३ अरब बल की शक्ति राति दिन बराबर निकला करती हैं । वैज्ञानिकों का अनुमान है कि लगभग ३००००० मोमबत्ती की रोशनी सूर्य के प्रत्येक वर्ग इन्च से बराबर निकलती रहती हैं । पर हम सूर्य की आकर्षण शक्ति का अनुमान लगा सकते हैं ।

माउण्ट विल्सन वेधशाला के शोध कर्त्ताओं ने कहा कि सूर्य के पृष्ठ भाग पर उसकी आकर्षण शक्ति पृथ्वी के पृष्ठ भाग की वर्तमान आकर्षण शक्ति की अपेक्षा २८ गुनी अधिक है । इस प्रकार जो पत्थर पृथ्वी पर १ सेर का जान पड़ता है वह सूर्य पर २८ सेर का होगा । ३२ उपग्रहों को लेकर आकाश में स्थित मन्दाकिनी निहारिका में निरन्तर गतिशील है । सूर्य मन्दाकिनी विश्व

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के केन्द्र से ३० हजार प्रकाश वर्ष दूर है । १०८००० कि०मी० प्रति घण्टा वेग से सूर्य अपने सौर मण्डल को लेकर मन्दाकिनी विश्व का परिभ्रमण करता है । इसका एक चक्कर काटने में सूर्य को २२ करोड़ वर्ष लग जाते हैं । सूर्य की आयु यदि ७ अरब वर्ष मानी जाये तो अपने जन्म के बाद सूर्य ने मन्दाकिनी विश्व के ३० चक्कर काटे माने जायेंगे । मन्दाकिनी विश्व का व्यास १ लाख प्रकाश वर्ष है । इसका मध्य भाग मोटाई लिए हुए है । इसके मध्य भाग की मोटाई १५ हजार प्रकाश वर्ष है। सूर्य जैसे १०० अरब तारे मन्दाकिनी विश्व में विद्यमान हैं । इसके अतिरिक्त इतने ही तारे बन सके इतने 'तारा बादल' (रन्टेलर मास) हैं ।

बुध सूर्य से सबसे नजदीक का ग्रह है । सूर्य से इसकी दूरी ५ करोड़ ७६ लाख कि०मी० है । सूर्य की परिक्रमा ८८ दिन में करता है । इसके बाद शुक्र जो १० करोड़ ८२ लाख कि० मी० सूर्य से दूर है । जिसे सूर्य परिक्रमा में २२५ दिन लगते है ।पृथ्वी की दूरी १४ करोड़ ६६ लाख कि०मी० है । एक परिक्रमा ३६५ दिन में होती है । पृथ्वी के बाद मंगल है जिसकी दूरी २२ करोड़ ७६ लाख कि०मी० है परिभ्रमण में ६८७ दिन लगते हैं । इसके बाद गुरु है जो ७७ करोड़ ८३ लाख कि०मी० दूर है जिसका एक वर्ष ४ हजार ३३३ दिन का है । शनि की दूरी १४२ करोड़ ७० लाख कि० मी० है परिभ्रमण १० हजार ७५६ दिन में करता है । शनी के बाद यूरेनस (यम) है जिसकी दूरी २८६ करोड़ ६६ लाख कि० मी० है परिभ्रमण ३० हजार ६८५ दिन में होता है । नेप्च्यून (वरुण) की दूरी ४४६ करोड़ ६६ लाख कि० मी० है। ६० हजार १६० दिन में एक परिभ्रमण करता है । सबसे दूर प्लेटो है इसकी दूरी ५६० करोड़ २ लाख कि० मी० है । परिभ्रमण वर्ष ६०४७० दिन का है ।

बुध और शुक्र के उपग्रह नहीं हैं । जैसे चन्द्र में कलाएं होती हैं वैसे बुध और शुक्र में भी कलाऐं हैं । इनके वर्ष और दिन एक बराबर होते हैं क्योंकि ये दोनों अपनी धुरी पर नहीं घूमते । पृथ्वी का एक उपग्रह है जिसे चन्द्र कहते हैं । मंगल के दो । गुरु के १४ , शनी के ६, यूरेनस के ४, २ उपग्रह हैं । इसके अतिरिक्त २०० से अधिक छोटे उपग्रह पाये गये हैं । जिनका व्यास १ से लेकर हजार कि० मी० तक है ।

सूर्य पृथ्वी से ३,३०,००० गुना बड़ा है । सूर्य का सबसे निकटवर्ती और छोटा ग्रह बुध है । उसका व्यास मात्र ३०१० मील है मंगल कुछ बड़ा है अर्थात् ४२०० मील । इनकी तुलना में पृथ्वी बड़ी है । उसका व्याव ७६१३ मील है । इसे शुक्र के समतुल्य कहा जा सकता है । प्राप्त जानकारी के अनुसार सौर मण्डल के सदस्यों में सबसे बड़ा वृहस्पति है उसका व्यास ८६,८०० मील है अर्थात् पृथ्वी से ११ गुना बड़ा । इसके बाद शनि का नम्बर आता है वह ७१५००० मील व्यास का है । शनिश्चर के दस गुना अधिक चन्द्रमा है । इनमें से टाइटन पृथ्वी के चन्द्रमा से भी बड़ा है ।

नये खोजे गये तीन ग्रह यूरेनस, नेप्च्यून और प्लूटो हैं । प्लूटो सूर्य से सर्वाधिक दूरी पर है । वह अपनी धुरी पर तो छः दिन में ही घूम जाता है पर सूर्य की एक परिक्रमा करने में २४८ वर्ष लगते हैं ।

अपना सूर्य जिस मन्दाकिनी के गर्भ में है उसमें रहते हुए भी प्रति सेकण्ड २०० किलोमीटर गति से अपनी निर्धारित कक्षा में भी भ्रमण करता रहता है ।

ब्रिटेन के बरमिंघम विश्व विद्यालय के भौतिकीविद डा० एच० बी० वानउर री के अनुसार सूर्य दिन में नौ बार कांपता है । यह कंपकंपी एक बार में १६० मिनट तक कभी-कभी चलती है । ऐसा माना जाता है कि सूर्य में हाइड्रोजन ईंधन की भट्ठी धधक रही है । सूर्य इतना विशाल है कि इसमें १० लाख अरब टन हाइड्रोजन ईंधन एक सेकिण्ड मात्र में फुंक जाता है । यह खुराक खाकर भी उसका पेट नहीं भरता । कहा जाता है कि इतने पर भी कम आहार के कारण वह ठण्डा होता चला जा रहा है ।

सूर्य का भौतिक दृष्टि से ही नहीं, आधात्मिक दृष्टि से महत्व अपनी जगह अलग ही है । उसे सविता देवता प्राण ऊर्जा का महत् स्रोत कहा गया है । इन दिनों ब्रह्मा विष्णु, शिव, राम, कृष्ण, दुर्गा, गणेश, हनुमान आदि देवताओं का बाहुल्य है । सूर्य मन्दिरों की संख्या इनकी तुलना में कम है तो भी पुरातन काल के देवालयों पर दृष्टिपात करने से प्रतीत होता है कि किसी समय सूर्य ही प्रमुख देवता था और उसी की उपासना को प्रमुखता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

प्राप्त थी । मन्दिर भी उन्हीं के बनते थे । पांच सौ से पुराने मन्दिरों में उन्हीं की बहुलता है ।

गोपाडि (ग्वालियर) क्षेत्र में एक पुरातन सूर्य मन्दिर था जिसके अब खण्डहर ही शेष हैं । शाकल (स्याल कोट) के सूर्य मन्दिर का उल्लेख ह्वेन सांग ने किया है । मोडेरा (गुजरात), कोणार्क (उड़ीसा), खजुराहो, तिरुपति बालाजी (दक्षिण), मडखेरा (उ० प्र०) के पुरातन सूर्य मन्दिर यद्यपि जराजीर्ण स्थिति में जा पहुंचे हैं तो भी यह साक्षी प्रस्तुत करते हैं कि कभी भारत में सूर्योपासना की प्रधानता रही है ।

वृत्ताकार सूर्य को बालाजी कहते हैं । बालाजी के नाम से मध्यकाल में सूर्य की उपासना होती रही है । अब कोई-कोई इस शब्द का अर्थ हनुमानजी से भी लगाते हैं ।

कुषाण काल में सूर्योपासना एशिया के अधिकांश भाग में प्रचलित थी । मिश्र और ईरान में इस्लाम के आगमन से पूर्व सूर्य सम्प्रदाय का अधिपत्य था । उस समय की प्रतिमाओं और शिलालेखों से प्रकट है कि इन क्षेत्रों में उपासना के लिए सूर्य को ही प्रमुख आधार माना जाता रहा है ।

ऋग्वेद १।१२५।१ में सूर्य को जगत की आत्मा बताया गया है इसका अर्थ हुआ इस पृथ्वी पर जो चेतना एवं हल-चल है उसका उद्गम स्रोत सूर्य है । उससे हमें गर्मी और रोशनी ही नहीं मिलती इसके अतिरिक्त वह भी मिलता है जो चेतना से सम्बन्धित है ।

प्रख्यात गायत्री मन्त्र सूर्य उपासना का मन्त्र है । उसका देवता सविता है । सविता के भर्ग की याचना की गई है । उस भर्ग को प्रगतिशील प्रेरणा में नियोजित करने का अनुरोध आग्रह है ।

बारह महीनों के कारण सूर्य को द्वादश आदित्य भी कहा जाता है । षट ऋतुऐं उसकी पत्नियों मानी गई हैं । ऊषा को उसकी प्रेमिका और संज्ञा या सन्ध्या को पटरानी के रूप में निरूपित किया गया है । यह कथा प्रतिपादन सूर्य की मूलभूत क्षमता के अनेकानेक प्रयोजनों में प्रयुक्त होने की विधा पर प्रकाश डालते हैं ।

भगवान राम को सूर्यवंशी माना जाता हैं । कुन्ती ने पाण्डवों को सूर्योपासना के आधार पर उत्पन्न किया था इसलिए वे भी एकरान्तर से सूर्यवंशी हुए । चन्द्रमा भी सूर्य से ही प्रकाश ग्रहण करता है इसलिए चन्द्रवंशी भी सूर्योपासना में वैसी ही अनुरक्ति प्रकट करते हैं ।

हिन्दू देवताओं का संख्या विस्तार जितनी तेजी से हुआ है उसे देखते हुए आश्चर्य होता है । सभ्यता के आरम्भ में सूर्य ही एकमात्र उपास्य थे । प्रत्यक्ष देवता के सम्मुख वही सर्वसाधारण के सामने रहता है । उसके कारण मिलने वाली गर्मी रोशनी से न केवल देखने की सुविधा होती है वरन् जीवनचर्या के साथ जुड़े हुए अनेकानेक प्रयोजन भी पूरे होते हैं, इस तथ्य को जैसे-जैसे अधिक अच्छी तरह समझा गया वैसे-वैसे सूर्य का महत्त्व भी अधिक अच्छी तरह समझा गया । रात्रि के अन्धकार में होने वाली असुविधा ने इस तथ्य पर तुलनात्मक अध्ययन का अवसर प्रदान किया ओर लोग सूर्य की गरिमा के प्रति अधिकाधिक श्रद्धावान होते चले गये । अरुणोदय तथ अस्तकाल में उनकी पहुंचाई एवं विदाई के लिए सन्ध्या वन्दन का नियम बना । इसके लिए सूर्योपस्थान का सरल किन्तु भावभरा विधान अपनाया गया । अभ्यर्थना-उपचार में सूर्यार्घ दान के रूप में जल चढ़ाने की परम्परा चली । सर्वसाधारण के लिए वह सर्वसुलभ जो थी ।

अन्य देवताओं का उद्भव सम्भवतः सूर्य परिवार के रूप में ही हुआ है । सप्त वर्ण सप्त अश्व को जब सूर्य का अविच्छिन्न अंग माना गया तो फिर उनकी पृथक्-पृथक् स्थापना और अभ्यर्थना की उमंग उठी और व्यवस्था बनी होगी । वैदिक देवताओं में सात प्रमुख हैं । ऋषियों में भी मूर्धन्य सात ही थे । सात लोक सात महाद्वीप की मान्यता भी सूर्य विज्ञान के भेद-प्रभेदों पर प्रकाश डालने के रूप में आविर्भूत हुई । सुविदित है कि शरीर में रस, रक्त, मांस, मेवा आदि सात धातुऐं हैं । सूक्ष्म शरीर में षटचक्रों और उनके अधिपति सहस्रार को मिलाकर सप्त धाराऐं बनती हैं । रत्नों में साथ ही प्रमुख हैं । स्वर सप्तक की तरह इन सभी की संगति सूर्य के सप्त अश्वों के साथ बैठती हैं । अध्यात्म और विज्ञान की दोनों ही धाराऐं यह बताती हैं कि चेतना और प्रकृति के दोनों ही क्षेत्रों मे जिन सप्त धाराओं के प्रवाहित होने की परिकल्पनाऐं की गई हैं । वे सूर्य से सम्बन्धित हैं । पुराणों में इन्हें भगवान मन्दिर के सप्त सभासद भी बताया गया है । कहीं-कहीं पत्नियां भी कहा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गया है । योग विज्ञान में जिस प्रमुख सप्त नाड़ियों का वर्णन है वे रक्तवाहिनी धमनियां नहीं वरन् लोक–लोकान्तरों से आकर मानवी काया को गतिशील एवं समुन्नत बनाने वाली विभूतियां ही हैं । ऋद्धि–सिद्धियों का स्रोत इन्हीं को माना और स्थिरता तथा प्रगति के लिए इनके सहारे मिलने वाले अनुदानों को दैवी अनुग्रह के रूप में गिना गया है । काल गणना में सप्ताह का सर्वाधिक महत्त्व है । ज्योतिर्विज्ञान का गतिचक्र इन्हीं के आधार पर आगे बढ़ता है ।

ऋग्वेद के १।१६४।८ में कहा गया है । 'धरती आकाश्स्थ सूर्य की पत्नी है । वह उसके प्रति समर्पित है । बादलों के माध्यम से वह गर्भ धारण करती है उस विवेचन के फलस्वरूप प्राणि वर्ग का प्रजनन करती है ।

मन्दिर निर्माण के इतिहास में वाराह पुराण (१७७+५६–७२) के अनुसार राजा शाम्ब ने तीन सूर्य मन्दिरों की स्थापना उदयगिरी एवं शाम्बपुर क्षेत्रों में कराई । इनमें क्रमशः प्रातः, मध्याह्न और अस्त कालक सूर्यों की प्रतिमाऐं हैं ।

चीनी तीर्थयात्री 'ह्वेन सांग' ने अपने यात्रा वर्णन में शाम्बपुर के सूर्य मन्दिर में अवस्थित स्वर्ण प्रतिमा का वर्णन किया है डानसन ने अपनी पुस्तक 'हिस्ट्री ऑफ इण्डिया' में इसी प्रतिमा को २३० मन सोने से बनी बताया है । और सन् ७१२ के मुस्लिम आक्रमण से उसके नष्ट होने का उल्लेख किया है ।

वैदिक देवताओं में इन्द्र, अर्वमा, पूष, मित्र, वरुण, विष्णु, त्वष्ट आदि नामों का वर्णन है । वे प्रकारान्तर से सूर्य के ही अर्थ बोधक नाम हैं । इस प्रकार वेदों में पाया जाने वाला बहुदेववाद भी अन्ततः एक ही ब्रह्म को सद्विदों द्वारा 'बहुधा वदन्ति' की मान्यता में समेट लेते हैं ।

सविता की उपासना में सूर्योपस्थान और सूर्यार्घ्य दान की विशेष महत्ता है । हाथ ऊंचे करके सूर्योपस्थान में भी गायत्री जाप किया जाता है । और सूर्यार्घ के रूप में भी गायत्री मन्त्र का ही प्रयोग होता है । स्कन्द पुराण ४।६।४६ में कहा गया है 'गायत्री मन्त्र द्वारा अभिमन्त्रित जल को जिसने तीर बार सूर्य के समक्ष अर्घ प्रदान किया उसने तीनों लोकों की भलाई के लिए बहुत कुछ किया । तीन अंजलियों का अर्घ दान तीन लोकों के कल्याण के लिए है । ऐसा अर्घदान गायत्री युक्त होना चाहिए ।' यथा–

गायत्रीमन्त्रतोयाढ्य दत्तं येनाञ्जलित्रयम् ।
काले सवित्रे किं न स्यात्तेन दत्तं जगत्त्रयम् ॥

स्कन्द पुराण काशी खण्ड पूर्वार्ध ६।५४ में सूर्य और गायत्री को वाच्य वाचक की कत्थक और कथन की उपमा दी गई है । दोनों की एकात्मता सिद्ध की गई है । यथा–

वाच्यवाचकम्सबन्धो गायत्रयाः सवितुर्द्वयोः ।
वाच्योऽसौसविता साक्षाद् गायत्री वाचिका परा ॥

गायत्री उपासक की परम गति सूर्य लोक में पहुंचने के रूप में मानी गई है । पद्म पुराण में कहा गया है जो जितेन्द्रिय ब्रह्म परायण गायत्री की उपासना करता है वह जीवन मुक्त होकर सूर्य लोक से परम पद प्राप्त करता है । यथा–

तां दैवीमुपतिष्ठन्ते ब्राह्मणा ये जितेन्द्रियाः ।
सूर्यलोकं ते प्रयान्ति क्रमान्मुक्ति च पार्थिव ॥

श्रुति वचन है –

"यः सन्ध्यामुपासते ब्रह्मैव तदुपासते "

अर्थात् – जो सन्ध्योपासना करता है वह ब्रह्म की ही उपासना है ।

यह परब्रह्म क्या है ? इसका उत्तर देते हुए छांदोग्य में कहा है "आदित्यो ब्रह्म" अर्थात् उस ब्रह्म का प्रतीक आदित्य है । तैत्तिरीय आरण्यक में भी इस मत की पुष्टि की है । उसके २/२ में उल्लेख है "असावदित्यो ब्रह्म ।" अर्थात् यह आदित्य ब्रह्म ही है ।

गायत्री विनियोग में उसका देवता उद्गम स्रोत सविता माना गया है । यह सविता और आदित्य एक ही है । शतपथ ब्राह्मण ६।३।१।२० का कथन है–असौ वा आदित्यो देवः सविता ।' अर्थात् यह आदित्य सूर्य ही सविता है । इस मत की पुष्टि दैवत काण्ड ४।३१ में भी मिलती है । कहा गया है "आदित्योऽपि सवितैवोच्यते" अर्थात् आदित्य को ही सविता कहते हैं ।

सारे वैज्ञानिक प्रमाण एवं आप्त वचन सविता की महत्ता का ही प्रतिपादन करते हैं । महाप्रज्ञा गायत्री की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

उपासना में सविता की ही प्रकारान्तर से आराधना की जाती है एवं उस दिव्य प्रकाश से स्वयं को ही नहीं–सृष्टि के हर प्राणधरी को जीवन चेतना, सत्प्रेरणा प्रदान किए जाने की प्रार्थना की जाती है । चिन्तन को बहिरंग से मोड़कर अन्तर्मुखी बनाकर हर कोई सूर्य की दिव्य सामर्थ्य का लाभ उठाता रह सकता है ।

सूर्योपासना की बहुआयामी उपलब्धियां

सौर–मण्डल के ऊर्जा प्रवाहों से यों तो जीवन की लगभग सभी गतिविधियां प्रभावित परिवर्तित होती हैं । लेकिन इसकी सबसे गहरी सघनता मानवीय स्वास्थ्य के साथ जुड़ी हुई है । इस रहस्य को जानने के कारण ही आयुर्वेद चिकित्सा प्रणाली किसी समय में हर तरह की बीमारियों के उपचार में सक्षम थी । आज जैसे असाध्य नाम के कोई रोग न थे । न केवल रोग निवारण और स्वास्थ्य संवर्धन वरन् वृद्धावस्था में भी यौवन प्राप्त करने के कायाकल्प जैसे उपचारों का उल्लेख आयुर्वेद में मिलता है ।

आयुर्वेद की चिकित्सा प्रणाली, निदान, उपचार, की विधियां आज भी प्रचलित हैं । सम्बन्धित महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ भी उपलब्ध हैं । रोगोपचार की वनस्पतियां भी अविज्ञात नहीं हैं । फिर क्या कारण है कि कायाकल्प और असाध्य रोगों का उपचार तो दूर रहा सामान्य रोगों के उपचार में भी सफलता नहीं मिल पाती । गहराई से चिन्तन करने पर एक ही तथ्य उभर कर सामने आता है कि प्राचीन आयुर्वेद के साथ सौर परिवार के ऊर्जा प्रवाहों का रहस्यात्मक ज्ञान घुला मिला था । आयुर्वेद की सफलता का श्रेय भी कभी इसी विद्या को था ।

आयुर्वेद के भूर्धन्य विद्वानों में चरक सुश्रुत, वाणभट्ट का नाम आता है । ये सभी न केवल चिकित्साशास्त्र के वरन् ज्यार्तिविज्ञान के भी मर्मज्ञ थे । किंवदंती है कि 'चरक' वनस्पतियों के संग्रह के लिए वनों एवं पहाड़ों पर जाते थे तो जड़ी–बूटियां स्वतः अपनी विशेषताओं और गुणों को बता देती थीं । साथ ही उन्हें किस वातावरण में और कब लगाने से क्या विशेषताएं पैदा होती हैं । और किस तरह की मनोभूमि एवं रोग वाले व्यक्ति को लाभ पहुंचाती हैं, की जानकारी भी दे देती थीं । कथानक की सत्यता और असत्यता पर ध्यान न देकर सन्निहित तथ्यों पर ध्यान दें तो पता चलता है रोग निवारण में मात्र ओषधि का ही योगदान नहीं होता । उसे किस वातावरण में कब और किन ग्रह नक्षत्रों की योगस्थिति में उगाए जाने से क्या प्रभाव पड़ता है यह जानना भी आवश्यक है ।

मानवी स्वास्थ्य अन्तर्ग्रही गतिविधियों एवं परिवर्तनों से असाधारण रूप से प्रभावित होता है । इस तथ्य पर प्रकाश डालने वाले कितने ही सूत्रों का उल्लेख आयुर्वेद शास्त्र में मिलता है । ज्योतिष सूत्र के अनुसार "अष्टमी व्याधिनाशिनी" अर्थात् अष्टमी, जो चन्द्रमा का आठवां दिन होता है सम्पूर्ण व्याधियों का अन्त करने वाला दिन है अर्थात् इस दिन जो भी ओषधि ली जायेगी लाभकारी होगी । अष्टमी को सूर्य और चन्द्रमा एक–दूसरे से ९० अंश पर स्थित होते हैं । इसलिए दोनों ही पृथ्वी के सभी द्रवों के प्रति अपना आकर्षण कम कर देते हैं । मानव शरीर में विद्यमान रक्त और जल में भी सूर्य और चन्द्र का अतिरिक्त आकर्षण कम हो जाने से इस अवधि में दी गई दवाएं अधिक प्रभावकारी सिद्ध होती हैं ।

"भैषजिक ज्योतिष" के अनुसार अनेकों बीमारियां विशेषतः चर्मरोग, पागलपन, मिरगी, मानसिक विक्षिप्ता शुक्लपक्ष में उग्र होती हैं । आधुनिक चिकित्साशास्त्र को इसकी कोई जानकारी नहीं है कि ऐसा क्यों होता है । ज्योतिष विज्ञान के अनुसार शुक्ल पक्ष में सूर्य और चन्द्रमा आकाश में एक दूसरे के अधिक निकट होते हैं । ये दोनों ही पृथ्वी के वायुमण्डल में संव्याप्त गैस कणों को अधिक आकर्षित करते हैं जिसका प्रभाव मनुष्य और पशुओं के स्वास्थ्य पर पड़ता है । प्रायः ऐसा देखा गया है कि चतुर्दशी को जब सूर्य और चन्द्रमा एक दूसरे से १६० अंश का कोण बनाते हैं–बीमारियों की उग्रती एवं भवनात्मक उद्वेग इन्हीं दिनों चरम बिन्दु पर होता है ।

आयुर्वेद के प्रसिद्ध त्रिदोष सिद्धान्त भी अपने सौर–मण्डल के ऊर्जा प्रवाहों के कितने ही सूक्ष्म रहस्यों को समाहित किए हुए हैं, जिन्हें समझा जा सके तो अनेक रोगों के उपचार में सहयोग मिल सकता है । 'वात' शब्द की उत्पति 'वा' धातु से हुई है । पित्त शब्द का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उद्गम 'तप' से हुआ है । 'तप' अर्थात् तापसं तामे पित्तम अर्थात् उत्क्रान्तता, उत्तेजना और शक्तिका परिचायक । कफ श्लेषमा से अभिप्राय है मिलना आकर्षण करना । श्लिष आलिंगने । टीकाकार चक्र पाणि ने इन तीनों की व्याख्या सारगर्भित रूप में की है । उनके अनुसार वात गति का पित्त शक्ति का और कफ आकर्षण का प्रतीक है । लेकिन इतना ही जानना काफी नहीं है कि ये तीनों शरीर की मूल तीन रासायनिक प्रकृतियां मात्र हैं, वरन् इनकी सूक्ष्म विशेषताओं को जानना भी आवश्यक है।

आयुर्वेदाचार्य सुश्रुत का मत है कि जिस प्रकार सूर्य चन्द्रमा और वायु की शक्तियां संसार को गतिशील करने के लिए आवश्यक हैं । उसी तरह वात, पित्त और कफ का सन्तुलन शारीरिक एवं मानसिक आरोग्य के लिए भी अनिवार्य है । इन तीनों प्रकृतियों पर सौरमण्डल के ग्रहों की गति, स्थिति, परिवर्तनों का समय-समय पर क्या प्रभाव पड़ता है यह जानना भी महत्त्वपूर्ण है । रोग का निदान और उपचार भलीभांति तभी सम्भव है ।

ज्योतिर्विज्ञान के अनुसार तारा पुंजों के तीन समुदाय हैं । जिनका सम्बन्ध आयुर्वेद के त्रिदोष सिद्धान्त से है। वे तीनों वात पित्त, कफ की स्थिति को भी समय-समय पर प्रभावित करते हैं । इसी तरह ग्रहों का प्रभाव भी तीनों ही धातुओं पर पड़ता है । उदाहरणार्थ सूर्य अधिकांशतः पित्त पर, चन्द्रमा बात पर असर करता है। चन्द्रकला की स्थिति और सूर्य की गतिविधि के कारण दोनों ही तत्वों में उतार चढ़ाव आते हैं । ज्योतिष शास्त्र का मत है कि चन्द्रमा मन को, सूर्य आत्मा को बुध चेतन तुन्तओं को अपनी स्थिति से प्रभावित करते है । जिन जातकों में सूर्य और चन्द्रमा आग्नेय राशियों के नक्षत्र में होते हैं । ऐसी स्थिति में शुष्क, गर्म धूप वाली जलवायु में रहने वाले व्यक्तियों के चेतना तन्तुओं में विशिष्ट प्रकार की विकृतियां आ जाती हैं जिनके कारणों से आज चिकित्सा शास्त्री अपरिचित होते हैं । फलस्वरूप उनको निदान और उपचार में सफलता नहीं मिल पाती ।

शरीर विज्ञान और चिकित्साशास्त्र के जिन गूढ़ रहस्यों पर सौरमण्डल के ऊर्जा प्रवाह असर डालते हैं । उसके विषय में विश्व में ढूंढ खोज आरम्भ हो गई है । रोगी की उत्पति और उपचार में शारीरिक और मानसिक स्थिति में अन्तर्ग्रही परिस्थितियों का भी योगदान होता है । अब यह विश्व के ख्यातिनामा चिकित्सा शास्त्री अनुभव करने लगे हैं । डा० एडसन ने अपने अनेकों प्रयोगों के उपरान्त यह निष्कर्ष निकाला है कि रक्त स्राव की ब्यासी प्रतिशत घटनाएं चांद के प्रथम और तीसरे सप्ताहों में घटित होती हैं । प्रो० रिविस्ज का मत है कि मानव शरीर मे वैद्युतीय शक्ति की अधिकता पूर्णमासी की रात को होती है ।परिवर्तन मनुष्य की मनःस्थिति और स्वभाव को विक्षुब्ध करते हैं । डा० बेकर के अनुसार मानसिक विक्षिप्तता के कारण इन्हीं दिनों अपराध की घटनाओं में भी वृद्धि होती हैं । प्रसिद्ध रूसी वैज्ञानिक निकोल ससिउज का मत है कि सूर्य कलंकों में वृद्धि होने से मानव रक्त में पाए जाने वाले रक्षात्मक श्वेतकणों में कमी आ जाती है । फलतः रुग्ण होने की सम्भावना बढ़ जाती है ।

प्राचीन ज्योतिर्विद्या में न केवल रोगों की उत्पत्ति के कारणों का वर्णन है वरन् निदान और उपचार पर भी प्रकाश डाला गया है । भैषजीय ज्यातिर्विज्ञान में रोग निदान का विस्तृत उल्लेख किया है । उसमें मात्र औषधि उपचार का ही नहीं अन्तर्ग्रही परिवर्तनों के साथ खान-पान में किस तरह हेर-फेर करना तथा उपवास एवं मन्त्र चिकित्सा का प्रयोग अपनाना चाहिए का भी छुट-पुट वर्णन मिलता है । 'अरिष्ट योग' में बताया गया है कि रोगी की क्षय हुई शक्ति को और नष्ट हो गई कोशिकाओं को मन्त्र चिकित्सा द्वारा पुनः प्राप्त किया जा सकता है ।

सौरमण्डल के विविध ऊर्जा प्रवाहों का मूल स्रोत सूर्य स्वयं है । अन्य सब इसी की शक्ति से अनुप्राणित संचालित हैं । इसी वजह से इसे ग्रहों का अधिपति भी माना गया है । सूर्य की उपासना मनुष्य में इन सभी अन्तरिक्षीय प्रवाहों को सन्तुलित करती और ग्रहों के दुष्प्रभावों को समाप्त करती हैं । अथर्व वेद में कहा गया है-

अपचितः प्र पतत सुपर्णो वसतेरिव ।
सूर्यः कृणोतु भेषजं चन्द्रमा वोऽपोच्छतु ॥

-अथर्व ६-८३-१

जिस प्रकार गरुण वसति से दौड़ जाता है- उसी प्रकार अपचनादि व्याधियां दूर चली जाएंगी । इसके लिए

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

सूर्य औषधि बनायें और चन्द्रमा अपने प्रकाश से उन व्याधियों का नाश करे ।

इस मन्त्र में स्पष्ट है कि सूर्य औषधि बनाते हैं । विश्व में प्राण रूप हैं तथा वे अपनी रश्मियों से स्वास्थ्य ठीक करते है । पद्यपुराण में भी कहा है

–अस्योपासनमात्रेण सर्वरोगाप्रमुच्यते (सृष्टि ख० ७६/१७) भगवान सूर्य की उपासना मात्र से सभी रोगों से मुक्ति मिल जाती है । इतना ही नहीं भारतीय मनीषियों ने आत्मा की तुलना सूर्य से की है और जीवात्मा का स्वरूप प्रकाश बिन्दु के रूप में वर्णित किया है । निराकार साधना में आज्ञाचक्र के स्थान पर, भृकुटि मध्य केन्द्र में सूर्य सदृश तेजस्वी प्रकाश का ध्यान किया जाता है । उच्चस्तरीय अध्यात्म साधनाओं में, ज्योति अवतरण में प्राणावर्षण प्राणायाम में सूर्य के समान तेजस्वी प्रकाश का ध्यान किया जाता है । सूर्य हमारे जीव जगत का केन्द्र है । सौर परिवार अपने इसी अभिभावक के इर्द–गिर्द परिक्रमा करते हैं । अणु की संरचना भी इसी प्रकार की है कि उसकी तुलना सौर परिवार से की जा सकती है अणु का नाभिक एक छोटा सूर्य है । दोनों की रीति–नीति एवं क्रिया–पद्धत्ति एक समान है । जीव और ब्रह्म की सत्ता भी इसी प्रकार समझी जा सकी है ।

सूर्योपासना द्वारा न केवल स्वास्थ्य सम्वर्धन की उपलब्धि होती हैं, वरन् सविता आराधना द्वारा आत्मा जब अपने में अवस्थित होकर शक्ति किरणें बिखेरता है और बड़े कदम उठाता है तो उसका स्वरूप देखते ही बनता है । महामानव, ऋषि, देवदूत और अवतारी आत्माएं इसी स्थिति की होती हैं । उनकी क्षमता और सामर्थ्य लगती तो अवश्य विचित्र है, पर वह मूलतः हर मनुष्य में समान रूप से होती है । प्रयत्नपूर्वक उसे जो भी चाहे, जितनी भी मात्रा में विकसित कर सकता है ।

सूर्य उपासना से आत्मिक ही नहीं, भौतिक शक्ति भी

शक्ति को हम तलाश करते फिरते हैं और शक्ति हमें ढूंढती फिरती है । दोनों को ही यह शिकायत है कि हम अभावग्रस्त अनुपयोगी बने पड़े हैं । मनुष्य मंहगी, झंझट भरी और जटिल संरचना की मशीनें बनाकर शक्ति प्राप्त करने में संलग्न हैं । उसे प्राप्त करने में जितना भार पड़ता है उसे देखते हुए प्राप्त हुई उपलब्धियां कुछ अधिक उत्साह वर्धक नहीं हैं । शक्ति उपार्जन का सबसे बड़ा स्रोत सूर्य हमारे सामने प्रस्तुत है और हमारी बाल–क्रीड़ाओं का उपहास करते हुए यह कह रहा है–बच्चो संसार में जो कुछ भी शक्ति भण्डार भरा पड़ा है वह मेरा ही अनुदान है । तुम यहां–वहां भटकने की अपेक्षा जितनी शक्ति चाहिए, मुझी से सीधी क्यों प्राप्त नहीं कर लेते ।

सूर्य से पृथ्वी को प्रति घण्टे ५०,००,००,००,००, ००,००,००० किलो–वाट ऊर्जा प्राप्त होती है, संसार में काम में लाई जाने वाली ऊर्जा से यह कोई २०,००० गुनी अधिक है, विज्ञान क्षेत्र में सोचा यह जा रहा है कि निकट भविष्य में जबकि कोयला और तेल चुक जायेगा तब ईंधन की कमी पड़ेगी । जलाऊ लकड़ी की तो अभी भी कमी पड़ रही है । गोबर जलाना रोकने की बात जिस तरह लोगों के गले उतारी गई है, उसी तरह अगले दिनों यह भी समझाया जायेगा कि वे इमारती लकड़ी के बाद जो लकड़ी बेकार समझी जाती है उसे भी जलाना बन्द करें । उस बेकार लकड़ी को गला पिघलाकर हार्डबोर्ड, प्लाइवुड, कार्डबोर्ड, कागज आदि के रूप में परिणत होने वाले कच्चे माल के रूप में प्रयुक्त किया जाता है ।

जलाऊ लकड़ी की बात तो इस प्रकार समाप्त हुई । कोयला और तेल का दुर्भिक्ष अगले पच्चीस वर्षों की तरह उभर कर आ जायेगा एक शताब्दी के अन्दर–क्या २१०० तक तो तेल और कोयला कहीं दीख भी नहीं पड़ेंगे । उन्हें पूरी तरह धरती में से निकाल कर खत्म कर लिया जायेगा । बिजली का उत्पादन उन्हीं प्राकृतिक ईंधनों द्वारा चलने वाले यन्त्रों से होता है । जल प्रपातों से उस उत्पादन में मदद तो मिलती है फिर भी जरूरत तो प्राकृतिक ईंधन की बनी ही रहेगी । बिजली का उत्पादन सर्वथा स्वावलम्बी नहीं हो सकता । उसे तेल, कोयला, आदि की पराधीनता से सर्वथा मुक्त किया जाना बड़े पैमाने पर कठिन है । छुट–पुट बैटरियां बन जांय तो बात दूसरी है ।

परमाणु ऊर्जा की समस्या सांप, छंछूदर जैसी है; न खाते बनती है न उगलते । इतने बड़े शक्ति स्रोत

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की उपेक्षा कैसे की जाय ? एक ओर यह लालच खाय जाता है । और दूसरी ओर उसकी विषाक्त राख जो बचेगी उसे जल, थल, नभ में कही भी छोड़ने से खैर नहीं; यह विभीषिका मुंह बाये खड़ी है । इसलिए उसे पचाते भी नहीं बनता । यों अणु भट्टियां बनाने और चलाने के दुस्साहसी कदम उठ चुके हैं, पर उत्साह से भी अधिक असमंजस छाया हुआ है । इसलिए परमाणु ऊर्जा अभी त्रिशुंक की तरह अधर में लटकी हुई है । उसके प्रयुक्त होने पर वहिष्कृत होने की सम्भावनाएं पचास-पचास फीसदी हैं । समय ही बताएगा कि उसे पचाया गया या उगला गया । अभी तो उसे गले में अटकी हड्डी की तरह ही कह सकते हैं; उसे किधर जाना है यह स्पष्ट नहीं हो सका ।

विज्ञान का ध्यान अब इस ओर मुड़ा है कि जब विश्व-व्यापी शक्ति का उद्गम स्रोत सूर्य है तो फिर सौर ऊर्जा का सहारा लेकर ही शक्ति की समस्त आवश्यताएं क्यों न पूर्ण की जांय ? अन्य स्रोतों की अपेक्षा वह अधिक निर्दोष और अधिक सुलभ है । लेसर किरणों में शक्ति तो अत्यधिक है पर उसका प्रयोग कर सकना केवल मूर्धन्य वैज्ञानिकों और अत्यन्त बहुमूल्य यन्त्रों द्वारा अत्यन्त सावधानी के साथ ही किया जाना सम्भव है । कहीं कोई राई रत्ती गड़बड़ी हो जाय तो समझना चाहिए कि उतने मात्र से ही सर्वनाश हो जायेगा ।

सौर ऊर्जा में इस प्रकार जोखिम कम से कम हैं । उसका भण्डार कभी चुकने वाला भी नहीं है । रात्रि में सूर्य नहीं चमकता इससे कुछ हर्ज नहीं-दिन में उपार्जन किया जाय और रात्रि में वे उत्पादन कारखाने बन्द रहें गर्मी में अधिक काम हो, सर्दी में शिथिलता आ जाय तो भी हर्ज नहीं । गन्ना पेलने और चीनी बनाने के कारखाने भी तो छः महीने चलते और छः महीने बन्द रहते हैं । फैक्टरियां भी दिन में काम करती और रात में बन्द रहती है । सूर्य ताप पृथ्वी पर जिस क्रम से न्यूनाधिक मात्रा में उतरेगा उसी अनुपात से उत्पादन की व्यवस्था जुटाई जायेगी अधिक उत्पादन को संग्रहीत करके रखा जायेगा । और पीछे उसका आवश्यकतानुसार उपयोग किया जायेगा ।

सूर्य की किरणों से एक वर्ग गज की धूप वाले स्थान में तीन हॉर्स पावर शक्ति उत्पन्न होती है । सूर्य जब चन्द्रमा के सिर पर होता है तो २४०.८ फारेन हाइट यानी पानी खौला देने वाला ताप उत्पन्न करता है । किन्तु जब वहां रात हो जाती है तो शून्य तापमान से भी अधिक नीची, बर्फ जमने जैसी ठण्ड पड़ने लगती है ।

अमारकी वैज्ञानिकों ने 'सिलिकॉन' धातु से 'सोलर सेल' का निर्माण किया है । उन्हें ट्रांजिस्टरों, विद्युत घड़ियों एवं बैटरियों में प्रयुक्त किया जा रहा है । अन्तरिक्षयानों में विद्युत् उत्पादन का स्वल्प भारावाही तरीका इन सोलर सेलों की सहायता से ही विनिर्मित किया गया है । निकट भविष्य में उनसे बड़े और महत्त्वपूर्ण प्रयोजनों की पूर्ति हो सकने की सम्भावना, आशा और उत्साह भरे दृष्टिकोण के साथ देखी गई है ।

समुद्र के खारी पानी को मीठा करने के लिए ऐसे विशालकाय पारदर्शी संयन्त्र बनाये जा रहे हैं । जो सूर्य किरणों को जिस स्थान पर केन्द्रित करेंगे वहां बादल उठने वाली गर्मी समुद्र तल पर पड़ने लगेगी फिर उन बादलों को कैद करके पानी के रूप में परिणत किया जा सकेगा और जहां चाहें वहां उसे ले जाया जा सकेगा । इस विधि का नाम 'इलेक्ट्रो डियालिसिस' रखा गया है । इस प्रयोग में एक हजार गैलन शुद्ध पानी तैयार करने में एक रुपया पैंतीस पैसा लागत आती है । प्रशान्त, अटलान्टिक ओर गल्फकोस्ट समुद्रों में ऐसी मशीनें लगाई गई हैं जो उर्युक्त प्रयोग को और भी अधिक स्पष्ट करने में निरत हैं । यदि यह प्रयोग सफल हुए तो भविष्य में मीठे पानी की समस्या का समाधान करके मनुष्य जाति अपनी एक बहुत बड़ी आवश्यकता को पूरा कर सकेगी ।

सौर ऊर्जा से संचालित होने वाली बैटरियां बन चुकी हैं । सिद्धान्तः वे सफल हैं । हां सार्वजनिक उपयोग के लिए सुविधाजनक एवं सस्ती स्थिति में जनता को मिल सकें ऐसा प्रबन्ध नहीं हो सकता है । अगले दिनों वह सुविधा भी हो जायेगी; ऐसी आशा की जाती है । रूस, इंग्लैण्ड, अल्जीरिया, लेबनान, अमेरिका, जापान, इटली, फ्रांस आदि देशों ने छोटे पैमाने पर सौर ऊर्जा उत्पन्न करने और उसका उपयोग ताप एवं विद्युत् के रूप में करने के कारखाने बनाए हैं । इन प्रयोगों के परिणाम का अध्ययन दिलचस्पी और बारीकी के साथ किया जा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

रहा है और पता लगाया जा रहा है कि सौर ऊर्जा को बड़े पैमाने पर सार्वजनिक उपयोग के लिए किस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है ।

ईंधन के लिए हमें अन्ततः सविता देवता की आराधना करनी पड़ेगी । जीवन उसी से मिला है । धरती की समस्त जड़-चेतन, हलचलें उसी की कृपा से चल रही हैं । भविष्य की ईंधन समस्या सहित अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए हमें उन्हीं की शरण लेनी पड़ेगी ।

पृथ्वी पर जितनी सूर्य शक्ति अवतरित होती है, उसका ९९ प्रतिशत बेकार चला जाता है । केवल १ प्रतिशत का ही कुछ उपयोग हो पाता है । सारी पृथ्वी पर जितनी शक्ति का व्यय होता है । उससे २० हजार गुनी शक्ति निरन्तर पृथ्वी पर भेजता रहता है ।

सूर्य ऊर्जा अतुलनीय है । किसी राजस्थानी रेगिस्तान के सौ वर्ग मील टुकड़े की सूर्य शक्ति यदि वशवर्ती की जा सके तो उससे पूरे भारत की शक्ति की आवश्यकता मजे में पूरी हो सकती है । दर्पणों के प्रतिबिम्ब द्वारा सूर्य शक्ति का उपयोग करने की बात सोची गई थी, पर उसमें जितना सरंजाम इकट्ठा करना पड़ता है उसकी तुलना में उपलब्धि कम होती है । 'सिलिकॉन' के पतले परतों द्वारा सूर्य ऊर्जा से बैटरियां बनाई गई थीं छोटे प्रयोजनों के लिए वह सफल तो थीं, पर प्रारम्भिक स्थिति में उसमें भी लागत अधिक आई । सूर्य शक्ति और अणु ऊर्जा का स्तर एक ही है पर सूर्य किरणें आठ मिनट की यात्रा करके जब धरती पर पहुंचती है । तो वे इतनी हलकी हो जाती हैं । कि प्राणी और वनस्पति उनका सुकोमल स्पर्श सुखपूर्वक कर सकते हैं और लाभ उठा सकते हैं । इसके विपरीत धरती पर उत्पन्न की गई अणु ऊर्जा किसी बलिष्ट दैत्य के समान है उसका उपयोग केवल ऐसे ही कामों में हो सकता है जो गर्मी का तीव्र दबा सहन कर सकें ।

अध्यात्म उपासनाओं में सूर्योपासना सर्वोपरि है । गायत्री महामन्त्र का अधिष्ठाता सूर्य देवता है । ब्रह्मरन्ध्र में अवस्थित सहस्रार सूर्य चक्र ही अन्यान्य षटचक्रों को प्रभावित करता है । आकाशस्थ सूर्य नवग्रहों और उपग्रहों को अनेकानेक स्तर की शक्तियां प्रदान करके उन्हें अपने कर्म चक्र पर चलते रहने का साधन प्रदान करता है । हमारी पृथ्वी पर जो जीवन उपलब्ध है वह मात्र सूर्य देवता का ही अनुदान है ।

तत्वदर्शी महामनीषियों ने शरीर को सूर्य सम्पर्क में रखकर जीवनी शक्ति प्राप्त करने और मनोभूमि सविता देवता की आराधना करके ओजस्वी, तेजस्वी एवं ब्रह्मवर्चस् सम्पन्न बनाने का साधना विज्ञान विनिर्मित किया था । अब भौतिक विज्ञानी भी हर दिशा से निराश होकर सूर्य देवता की शरण में जाने की तैयारी कर रहे हैं । विश्व की ऊर्जा समस्या का कोई अन्य समाधान आधार नहीं ।

सविता देवता से उद्भासित ज्ञान और शक्ति

यह भारतीय तत्व दर्शन की ही विशेषता है कि उसमें सृष्टि विज्ञान की भौतिक और आध्यात्मिक दोनों ही प्रक्रियाओं का स्पष्ट ज्ञान करा दिया गया है । शास्त्रों में उल्लेख आता है कि एक बार देवताओं ने प्रजापति के पास जाकर प्रश्न किया कि पितामह आप कहते हैं कि गायत्री उपासना करने वालों के सब सांसारिक कष्ट दूर हो जाते हैं तथा उसे लोक परलोक में सुख शान्ति तथा सद्गति प्राप्त होती है पर आपने यह नहीं बताया कि इस प्रकार की महान सामर्थ्य वाली सत्ता कौन है ?

इसके उत्तर में प्रजापति कहते हैं हे देवताओ ! यह जो अनेक प्रकार के वरदान देने वाली गायत्री है उसे तुम सावित्री अर्थात्-सविता देवता से उद्भासित होने वाला ज्ञान जानो । और भी कई स्थानों पर ऐसा उल्लेख आता है कि गायत्री प्रकाश तेज, अग्नि और शक्ति रूप है । तीनों काल उसी की शक्ति से गतिशील हैं । इस शक्ति के सम्बन्ध में कहा गया है । कि समस्त तत्वों, सभी प्राणियों और समस्त भावनाओं की प्रेरणा देने के कारण ही उस शक्ति को सविता कहा गया है । प्रतीक रूप में सविता देवता की प्रतिमा सूर्य को माना गया है । यह सविता का स्थूल प्रतीक हैं । सविता उससे भी सूक्ष्म है । उसकी शक्ति सामर्थ्य और विशेषताओं को समझने के लिए सूर्य के सम्बन्ध में जान-समझ लेना आवश्यक होगा । सर्वविदित है कि सूर्य ही तत्व रूप

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से सम्पूर्ण भौतिक और जागतिक पदार्थों की गति तथा सक्रियता का कारण है । उस प्रतीक में सविता देवता के भावना रूप और प्राणरूप होने की मान्यता भी स्थापित की गई है और बताया गया है वही सम्पूर्ण प्राणियों एवं मनुष्य को शक्ति प्राण और प्रकाश देकर भवनात्मक विकास में सहायक होती है । इस सम्बन्ध में कुछ अधिक जानने विश्लेषण करने का प्रयत्न नहीं किया गया अन्यथा प्रतीत होता कि ऋषियों और तत्वदर्शियों की यह गवेषणाएं पूर्ण वैज्ञानिक एवं सत्य हैं । जो बातें उनने लाखों वर्ष पूर्व लिख दी थीं विज्ञान आज भी उनकी सत्यता की साक्षी देने लगा है ।

सविता देवता के स्थूल भाग का बहुत थोड़ा भाग ही वैज्ञानिक अभी जान पाए हैं पर जो कुछ जाना जा सका है वह भी भारतीय मान्यताओं के प्रतिपादन की दृष्टि से कम नहीं हैं स्थूल दृष्टि से सूर्य आग का एक विराट तप्त गोला दिखाई देता है । वैज्ञानिकों के अनुसार नदी के तेज प्रवाह में जिस प्रकार भंवर पड़ते हैं उसी प्रकार सूर्य के गरम द्रव्य में भी तेज भंवर पड़ते हैं और उससे हजारों मील लम्बी आग की लपटें उठती हैं । सूर्य के उसी प्रकाश से पृथ्वी में जीवों को जीवित रहने के लिए आवश्यक ऊर्जा प्राप्त होती है तथा पृथ्वी के अतिरिक्त दूसरे अन्य ग्रहों का वातावरण व परिस्थितियां विनिर्मित होती हैं ।

पृथ्वी ही नहीं पूरे सौर मण्डल में जिस किसी भी ग्रह नक्षत्र पर जीवन है सूर्य उसका आधार है । सभी प्राणी सूर्य से ही शक्ति ग्रहण करते हैं और उससे प्राप्त उस ऊष्मा के बल पर ही जीवन जीते हैं । जिस तापक्रम पर मनुष्य तथा अन्य जीव जन्तु रहते हैं । वह सूर्य के कारण ही स्थिर और सन्तुलित रहता है । भारतीय ऋषियों ने इसीलिए सूर्य को जीवन दाता और सृष्टि का प्राण कहा है । जीवन दाता और सृष्टि का प्राण सूर्य वैज्ञानिकों के अनुसार आकाश में दिखाई देने वाले असंख्य तारों में से एक है ऋषि ने ठीक ही गया है ।

सविता वै प्रसवानामीशे ।

सबको उत्पन्न करने वाला परमेश्वर सविता देवता सूर्य ही है । सूर्य से उत्सर्जित होने वाली प्रचण्ड शक्ति अपने प्रभाव समेत पदार्थों में भी समासीन हो जाती है । यही कारण है कि स्वास्थ्य संरक्षण के लिए सूर्य प्रकाश के सान्निध्य में अधिकाधिक रहना आवश्यक माना गया है ।

एक अर्थ में सूर्य का प्रकाश भोजन और जल से भी अधिक आवश्यक है । शरीर को पर्याप्त धूप मिलने से रक्त में लाल कणों की मात्रा आवश्यक रूप से संरक्षित रहने लगती है । यदि ऐसा न हो-सूर्य का प्रकाश न मिले तो यह मात्रा घटने लगती है और उनमें जल तत्व बढ़ने लगता है । फलतः रक्तल्पता तथा रक्त सम्बन्धी अन्यान्य विकार पैदा होने लगते हैं ।

जीवधारियों का जीवन सूर्य प्रकाश से कितना घनिष्ठ रूप में सम्बन्ध रहता है । इसका एक उदाहरण पेड़-पौधे भी हो सकते हैं । अगर किसी पौधे को सूर्य के प्रकाश से वंचित कर दिया जाय तो जल्दी ही उसमें क्लोरोफिल बनाने की प्रक्रिया बन्द हो जाती है । तथा वह क्षीण और म्लान होने लगता है । इस सम्बन्ध में किए गये एक सर्वेक्षण के अनुसार शहर की गलियों और संकरे स्थानों में खुले स्थानों की अपेक्षा अधिक लोग बीमार पड़ते है । तथा अल्पायु को प्राप्त होते हैं ।

सूर्य के प्रकाश से मनुष्य शरीर का विद्युतीकरण होता रहता है । अमेरिका के एक वैज्ञानिक डा० नील बर्नहाट ने वर्षों की शोध के बाद यह प्रतिपादित किया-कि सूर्य की शक्ति वर्थक किरणों के सम्पर्क में आकर मनुष्य के शरीर से एक विद्युन्मय चुम्बकीय प्रवाह बहने लगता है । पृथ्वी तो स्वयं एक महा चुम्बक है ही ।

शरीर स्वास्थ्य पर पड़ने वाले सूर्य शक्ति प्रभाव के अलावा मनुष्य के व्यक्तित्व पर भी उसका असाधारण प्रभाव पड़ता है । कहा जा चुका है कि सूर्य लोक से जो शक्ति अपनी जिस प्रचण्डता के साथ पृथ्वी पर आती हैं, उसी प्रचण्ड प्रभाव के साथ प्राणियों में समाहित हो जाती है । मन में भी वही शक्ति होने के कारण मनुष्य प्रत्येक पदार्थ के अन्तरंग से सम्पर्क स्थापित कर सकने और सूक्ष्म रूप में किसी भी पदार्थ की शक्ति को प्रवाहित कर लेने में सक्षम, हैं, इस विज्ञान को पहुंचे हुए योगी जानते और उसका उपयोग करते हैं । इसी कारण उनके कितने ही क्रिया कलाप चमत्कार जैसे लगते हैं । अब जब कि पदार्थ में शक्ति की प्रचण्डता और अस्तित्व को विज्ञान ने भी स्वीकार कर लिया है तो यह सिद्धियां यांत्रिक रूप से भी ग्रहण की जा सकती हैं पर उनके मनोगत चमत्कार तो योग और उपासना पद्धति से ही प्राप्त हो सकते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

योगीजन साधना उपासना द्वारा सविता देवता से–सूर्य की सूक्ष्म शक्ति से मानसिक सम्बन्ध स्थापित करते हैं और वे ऋद्धि सिद्धियां प्राप्त करते हैं जो लोगों को चमत्कार जैसी प्रतीत होती हैं । लेकिन उनका आधार वैज्ञानिक ही होता है । फ्रांस के वैज्ञानिक यूशों ने इस दिशा में कुछ प्रयोग सूर्य की सविता शक्ति को यान्त्रिक ऊर्जा में परिवर्तित करने के किए हैं । रूस में भी इस तरह के यन्त्र बनाये गये हैं, जो सूर्य से आने और पदार्थों में व्याप्त होकर क्रियाशील होने वाली शक्ति को बीच में ही रोक लेते हैं । फिर इस शक्ति को यान्त्रिक शक्ति में बदल कर उससे खेतों में सिंचाई, रसोई, स्नानागार, लाड्री जल शोधक आदि के प्रयोजन पूरे किया जाते है । इस शक्ति से औद्योगिक क्षेत्र में ईंधन आपूर्ति की एक बड़ी भारी समस्या हल होने की आशा की जा रही है ।

लेकिन योगी जन सविता देवता की जिस शक्ति का अवशोषण और उपयोग करते हैं । यह इससे भिन्न है । उसे कुण्डलिनी जागरण कहा जाता है । गायत्री उपासना द्वारा सविता शक्ति का शरीर में अवगाहन धारण और, विकास कर यह प्रयोजन पूरा किया जाता है । इससे स्वास्थ्य आरोग्य तेज और बुद्धि का विकास तो होता ही है, उन अतीन्द्रिय क्षमताओं का विकास भी होता है जिन्हें लोग आश्चर्य अथवा ईश्वरीय अनुकम्पा मानते हैं ।

गायत्री उपासना में, गायत्री मन्त्र के जप द्वारा मन का सम्बन्ध सविता लोक से स्थापित किया जाता है तथा उसकी चमत्कारी क्षमताओं का लाभ उठाया जाता हैं । यदि इस तथ्य को भली भांति समझा और अपनाया जा सके तो मन, बुद्धि, चित्त और अन्तःकरण शुद्ध तथा निर्मल होकर उनकी क्षमताओं का विस्तार सैकड़ों गुना हो सकता है । इससे न केवल स्वयं का कल्याण साधित हो सकता है । वरन् समूचे मानव जाति का, प्राणि जगत का कल्याण साधित हो सकता है

अध्यात्मवेत्ता जानते है कि जब–जब असुरता के विरोध में व्यूह रचना हुई है, सूर्य शक्ति के अवतरण को व्यापक बनाना पड़ा है । बाल्मीकीय रामायण में युद्ध के समय महर्षि अगस्त्य द्वारा भगवान राम को सूर्य उपासना बताए जाने का वर्णन है । आदित्य हृदय का रहस्य जानकर ही रावण बध सम्भव हो सका । महाभारत में महर्षि धैम्य ने युधिष्ठिर सहित अन्य भाइयों को सूर्य उपासना में दीक्षित किया था । ध्यान रखने की बात यह है कि इसके प्रतिफल व्यक्तिगत स्वार्थो के लिए न थे ।

वैज्ञानिकों की दृष्टि में सूर्य लोक में प्राण का संचारक हीलियम हाइड्रोजन की अन्तर्क्रियाओं का समुच्चय भर है । यह उसका आधि–भौतिक रूप है । जो अपने में समर्थ और सृष्टि का केन्द्र बिन्दु है इस सामर्थ्य से शत–सहस्र गुना बढ़कर उसके अधिदैवत और आध्यात्मिक रूप हैं । ज्योतिषशास्त्र में इसके अधिदैवत रूप की चर्चा है । इस रूप में यह विचारों का नियन्त्रक, भावों का प्रेरक और ग्रहों का अधिपति है । वराहमिहिर ने इसे जातक की आत्मा माना है । वेद भी "सूर्य आत्मा जगतस्थुषश्च" अर्थात् सूर्य को जगत की आत्मा स्वीकार करते हैं । व्यक्ति में इसकी शक्तियों का अभाव काम विकार, मनोरोगों को जन्म देने वाला सिद्ध होता है । जिसका सूर्य नीचे का है उसे सारी सफलता के बावजूद दुर्विचारों, कुकर्मो से घिरे रहना पड़ेगा । आत्मिक उत्थान इसकी ऊर्जा के बिना सम्भव नहीं । इस उर्जस्विता को प्राप्त करने के लिए ज्योतिष शास्त्र ने एकमत से महाधिपति की उपासना के विधान सुझाए हैं । इनका परिपालन जहां उपासक को सभी ग्रहों को कष्ट से मुक्त करता है वहीं पवित्रता प्रखरता उपलब्धि के रूप में मिलती है ।

अपने तीसरे रूप में सूर्य विराट पुरुष की ज्योति है ।श्री अरविन्द ने इसे "अतिमानस की ज्योति" कहा है । विराट पुरुष के रूप में इसकी उपासना अपनिषदों में ब्रह्म विद्या दहरविद्या (छा० उ०), मधु विद्या, उपकोशल विद्या, मन्थ विद्याएं, पचांग्नि विद्या के रूप में मिलती है । वेदों में ब्रह्म सूर्य सर्म ज्योतिः (यजु २३/४०) भवानो अर्वाड स्वर्णः ज्योतिः (ऋक् ४/१०/३) कहकर इसे विराट पुरुष के रूप में अनुभव किया गया है । ऋग्वेद में सूर्य की इस महिमा को सूचित करने वाले चौदह सूक्त हैं ।

सूर्य की उपासना के तत्वों को यदि विश्व के विभिन्न भू भागों में ढूंढे तो विस्मय जनक हर्ष होता है कि समूचा विश्व, सूर्य उपासना के रूप में कभी एकजुट था । इसे देव संस्कृति के प्रति एक निष्ठा ही कहेंगे । आकाश

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के देवता 'एना' और पृथ्वी के देवता 'इया' में निष्ठा रखने वाले बेबीलोनियां निवासियों ने दिन का आरम्भ सूर्योदय से माना। मिश्र की नीलघाटी सभ्यता में सूर्य पूजा मुख्य थीं। फैल्डियन लोगों की श्रद्धा भी सूर्य पर टिकी थी। सूमेरियन सभ्यता के दो देवता थे। सूर्य चन्द्रमा। फिनीशियन भी यह सूर्य चन्द्र के उपासक थे। पर वैदिक वाङ्मय में सूर्य तत्व की जो गहन शोध है वह विरल है। वेदों ने सूर्य को सु+इर सुन्दर प्रेरणा देने वाला माना है।

वस्तुतः सूर्य उपासना को सर्व प्रचलित करने में लोक जीवन के भाव और विचारों के परिष्कार का रहस्य छुपा है। यों सूर्य उपासना के अन्य अनेक मन्त्र हैं तरह-तरह की उपासना पद्धतियां हैं पर उनकी सीमा अधिदैवत तक सीमित है। व्यक्तिगत स्तर पर भले उनसे लाभान्वित हुआ जा सके। सामूहिक मन में हो रहे प्रदूषण का निवारण सम्भव नहीं है। यह सम्भावना सिर्फ गायत्री मन्त्र के माध्यम से साकर हो सकती है। सूर्य रहस्य का प्रकटीकरण सिर्फ इसी समर्थ विधि से सम्भव है।

गायत्री आदि मन्त्र है इसी के रहस्य की व्याख्या चारों वेद हैं। चारों वेदों में इसकी उपस्थिति इसके वैशिष्ट्य और महत्त्व के दर्शनि के लिए पर्याप्त है। ऋग्वेद, शाकल संहिता ३/६२/१०, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिनीय संहिता ३/३५, २२/६, ३०/२, ३६/३, कृष्ण यजुर्वेद, तैत्तरीय संहिता १/५/६/१२, १/५/८/१०, ४/१/११/६७ तथा कृष्ण मैत्रायणी संहिता ४/१०/७७, सामवेद कौथुम संहिता उत्तरार्चिक १३/३/३ तथा १३/४/३/१ अथर्ववेद शौनक संहिता १६/७१/१ में गायत्री के गान की गूंज है।

जहां इस मन्त्र में, मन्त्र शक्ति की अलौकिक सामर्थ्य-सूर्य रहस्य का ज्ञान, विराट पुरुष से एकत्व की गुह्यता छुपी है। वही इसमें महान संस्कृति के उदय-विस्तार का तत्व भी संजोया है। इसका प्राकट्य जिस महान उद्देश्य से हुआ उसे बताने वाली एक कथा संकेत ऋग्वेद में मिलती है। ऋक्काल में भारत में आर्य और दस्यु दो जातियां थीं। सुसंस्कृत आर्यो के नेता अगस्त्य थे, दस्युओं का नेतृत्व शम्बर के हाथ में था। अगस्त्य वरुण के उपासक थे। दस्यु अपनी दुष्वृत्तियों के कारण आर्यो के शत्रु थे। अगस्त्य के शिष्य विश्वरथ के मन में विचार आया क्या इन दस्युओं को आर्य बनाना, सुसंस्कृत कर सकना सम्भव है ? यदि हाँ तो कैसे ? इस प्रश्न के समाधान के लिए उन्होंने घोर तप किया। परिणाम में जो विद्या मिली वह गायत्री थी जिसकी शक्ति से उन्होंने दस्युओं को सामूहिक रूप से आर्य बना डाला। उनके इस महान प्रयास पर ऋषियों ने चकित होकर उन्हें विश्व का मित्र-विश्वामित्र कहा।

उदय काल से सूर्य उपासना की यह महान विद्या सामूहिक हितों, सामूहिक मन को सुसंस्कृत बनाने के लिए प्रयोग की जाती रही है। महर्षि दयानन्द ने आधुनिक समय में व्रात्य हो चुके समाज को आर्य बनाने के लिए इसका प्रयोग किया उनके प्रयास की परिधि भले छोटी रही हो पर उद्देश्य गगनचुम्बी था। कहने सुनने के लिए गायत्री की साधना बहुतों ने की होगी। पर इसके २४ अक्षरों में एक अक्षर नः का सत्यज्ञान कितनों ने समझा-यह विचारणीय तथ्य है। सद्बुद्धि के अर्जन और उपार्जन की यह प्रक्रिया 'मम्' अर्थात् मेरे लिए न होकर नः अर्थात हमारे (हम सब) के लिए है।

चेतना और ऊर्जा का भाण्डागार-सविता देवता

पारस मणि की कल्पना अति पुरातन है। मान्यता के अनुसार उस पाषाण खण्ड को छूने से लोहा सोना बन जाता है। ऐसा कोई पदार्थ अभी तक दृष्टिगोचर नहीं होता। यदि ऐसा कुछ कहीं रहा होता तो उसके स्पर्श का क्रम चल पड़ता और प्रकारान्तर से संसार भर का लोहा सोना बन गया होता। तब सोने से अधिक उपयोगी धातु लोहे का मूल्य उतना हो गया होता जितना कि अब सोने का है और लोहा उस भाव बिकता, जितना कि इन दिनों सोना।

यह अंलकार मात्र है। कल्पना तब उठी होगी जब रात्रि का काला अन्धकार लोहे जैसा समझा गया होगा और प्रातःकाल का उदीयमान सूर्य अपनी प्रथम आभा स्वर्ण के रूप में बिखेर रहा होगा। काले अन्धकार और सुनहरे प्रभात का पारस्परिक मिलन पारस की उपमा सार्थक कर रहा होगा। सम्भवतः ऊषाकाल के इस स्वर्णिम सूर्य की अलंकारिक विवेचना कर ऋषिगणों ने पारस के वर्णन द्वारा उसके महात्म्य को प्रतिपादित किया होगा।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह मात्र दृश्य प्रयोजन ही नहीं, वरन अवसर भी वैसा ही मूल्यवान, महत्त्वपूर्ण है । दिन रात मिलाकर चौबीस घण्टे होते हैं, पर उसमें इतना प्रभावोत्पादक समय और कोई नहीं होता, जितना प्रभात काल का । उसमें कुछ ही घण्टे का समय होता हैं, सायंकाल सन्ध्या समय का । रात्रि बढ़ती आती है और अस्त होता सूर्य श्वेत से स्वर्णिम बनता जाता है । इस असाधारण परिवर्तन काल का समूची प्रकृति पर प्रभाव पड़ता है । भौतिक दृष्टि से भी और आत्मिक दृष्टि से भी ।

इस संकेत काल का उद्‌बोधन स्पन्दन सभी पदार्थ और प्राणी अनुभव करते हैं । पदार्थों के तापमान और गुण. धर्म में अन्तर पड़ता है । चेतना में उल्लास और अवसाद बढ़ता है । प्रातःकाल सभी प्रफुल्लित, पुलकित दीखते हैं और सायं काल को रात्रि के आगमन के साथ ही निन्द्रा का दबाव बढ़ने लगता है । अपराधों की, अपराधियों की संख्या बढ़ जाती है । किन्तु प्रभातकाल हर किसी को सात्विकता सक्रियता अपनाने के लिए प्रोत्साहित करता है । यह सूर्य का अनुदान है । ब्रह्म मुहूर्त में साधना करने का निर्देश ऋषि–गणों ने इस अनुदान का भरपूर सदुपयोग करने हेतु ही किया है । सविता देवता के महात्म्य पर आर्षग्रन्थों में प्रचुर संख्या में उद्धरण मिलते हैं ।

'य एषोऽन्तरादित्ये हिरण्मयः पुरुषों दृश्यते'

महर्षि व्यास

अर्थात–"इस स्वर्णिम सूर्य के अन्तराल में परम पुरुष के दर्शन होते हैं ।"

'य एषोन्तश दित्ये
हिरण्मयः–हिरण्यश्म––––हिरण्यकेशः ।

(छान्दोग्य)

अर्थात्–"यह आदित्य सुवर्णमय है। सुनहरे ही उसके रोम और केश हैं ।

स्वर्णिम होने के साथ–साथ सूर्य निरन्तर गतिशील भी है । उसे किसी के आश्रय की, सहयोग की आवश्यकता नहीं । इसलिए उसका रथ एक चक्र वाला माना गया है । उसे सुदर्शन चक्र अथवा कालचक्र भी कह सकते हैं ।

इस रथ में सात घोड़े जुते हुए हैं और सप्तक स्वर विज्ञान से लेकर काल गणना की आधारभूत इकाई सप्ताह वारों के रूप में निर्धारित हुआ है । पुष्टि आप्तवचनों से होती है–

"सप्ताश्व रथिनं हिरण्य वर्ण ।"

–सूर्योपनिषद्

"जिसके रथ में सात घोड़े जुते हैं, जो सुवर्ण वर्ण है, यही सूर्य का ध्यान करने योग्य सामान्य स्वरूप है ।"

"सप्ताश्वं चैव चक्रं"

–सूर्य पुराण

"सूर्य के रथ में एक पहिया है । सात घोड़े जुते हुए हैं ।" सप्त द्वीप, सप्त सागर, सप्त वर्ण, सप्त पर्वत, सप्त सरिता, सप्त धातु, सप्त लोक, सप्त चक्र, सप्त अग्नि,सप्त ऋषि, सप्त दिवस, सप्त स्वर, आदि अनेक प्रकार से उपमा देते हैं । सूर्य के सप्त अश्वों की अलंकारिक विवेचना की गई हैं ।

विज्ञान क्षेत्र में सात प्रकार की प्रधान विकिरण–ऊर्जाएं ब्रह्माण्ड में सक्रिय हैं १–कास्मिक ऊर्जा २–पराबैगनी विकिरण ऊर्जा, ३–दृश्य–प्रकाश विकिरण–ऊर्जा ४–अवरक्त विकिरण–ऊर्जा, ५–रेडियो–विकिरण–ऊर्जा ६–एक्स विकिरण ऊर्जा और, ७–गामा–विकिरण ऊर्जा ।

सूर्य के सप्त अश्वों से प्रार्थना करते हुए साधक आत्म विजय एवं ऊर्जासुनियोजन की अपेक्षा रखता हैं ।

जयोजयश्च विजितो जयः प्राणोजित श्रमः ।
मनोजवोजित क्रोधो वाजिनः सप्त कीर्तताः ।

–आदित्य हृदय

"जहां जय की आवश्यकता है । जय मिलती है । विजेता को भी जीता जा सकता है । प्राण, थकान, मन और क्रोध को जीता जा सकता है । आपके सप्त अश्व क्या नहीं कर सकते ?

मनीषी कहते हैं कि सूर्य की सात रंग की सात किरणें जब मनुष्य के व्यक्तित्व में समाहित होती हैं वे कुछ विभूति विशिष्टताओं के रूप में परिलक्षित होती हैं । ये हैं, १–साहस, २–पराक्रम, ३–संयम, ४–सन्तुलन ५–एकाग्रता, ६–प्रफुल्लता एवं, ७–उत्साह । यही हैं वे विशेषताएं जिनके आधर पर साधारण सामान्य स्तर का मनुष्य भी प्रतिभावान एवं सफल सम्पन्न बनता है । इन गुणों का अभाव या न्यूनता ही मनुष्यों को पिछड़ेपन से ग्रस्त रखती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विभिन्न प्रयोजनों के लिए सूर्य शक्ति के अनेकानेक उपयोग हैं । कुण्डलिनी जागरण में प्रधान भूमिका सूर्य शक्ति की ही है । उसी के आधार पर षट्चक्र,पंचकोश, मूलाधार गह्वर, सहस्रार कमल, इड़ा–पिंगला–सुषुम्ना का त्रिवर्ग ही प्रसुप्त स्थिति छोड़ कर उत्तेजित होता है और साधक को प्रचण्ड दिव्य क्षमता से सम्पन्न करता है ।

इन सात चक्रों को सप्त प्राण केन्द्र कहा गया है । इन्हीं को सात ऋषि, सात यज्ञ, सात समिधा, सात लोक, आदि कहा गया है । ये सभी सात–सात अन्तर्गुहा में निहित हैं । इस रहस्य को मुण्डकोपनिषद् में इस प्रकार प्रकट किया गया है–

सप्त प्राणः प्रभवन्ति तस्मात्,
सप्तार्चिषः समिधः सप्त होमाः ।
सप्त इमे लोका येषु चरन्ति प्राणा,
गुहाशया निहिताः सप्त सप्त ॥८॥

मुण्डक २/१/८

अर्थात्– सात चक्रों में समस्त तीर्थ प्रतिनिधि रूप में विद्यमान हैं । इनका अवगाहन करने से समस्त तीर्थों का पुण्यफल साधक को प्राप्त होता है ।

विज्ञान के विद्यार्थी प्रकृति शक्ति की सात धाराओं से परिचित हैं । उन्हें १–गति, २–ध्वनि, ३–ऊष्मा, ४–प्रकाश, ५–कोहेजन, ६–विद्युत्, ७–चुम्बक कहते हैं । इन सातों का प्रतिनिधित्व मानवी काया में अवस्थित सात चक्र करते हैं ।

चेतना शक्ति के भी सात विभाग हैं १–पराशक्ति, २–ज्ञान शक्ति ३–इच्छा, शक्ति ४–क्रिया शक्ति, ५–कुण्डलिनी शक्ति, ६–मातृका शक्ति, ७–गुप्त शक्ति, । इन सबके संयुक्त स्वरूप को "लाइट आफ लोगोस" कहते हैं । इसी को लेटेन्ट लाइट–एस्ट्रल लाइट आदि नामों से पुकारते हैं । यही ब्राह्मी चेतना का दिव्य प्रकाश है, जो सविता की किरणों के रूप में दृष्टिगोचर होत है ।

सविता एवं कुण्डलिनी का परस्पर सघन सम्बन्ध है ।

यदा कुण्डलिनी शक्तिर्विर्विमति साधके ।
तदास पंचकोशे मत्तेजेनुभवति ध्रुवम्

–सूर्य गीता

जब कुण्डलिनी शक्ति जागृत होती है तो साधक को पांचों कोशों में प्रकाश भरा गया अनुभव होता है । पांचों कोश, छहों चक्र, तीन ग्रथियां, चौबीस उपत्यिकाएं साधक को प्रकाशवान हुए परिलक्षित होने लगते हैं ।

–भुवन ज्ञानं सूर्य सयमात्

–योग दर्शन

अर्थात्–"सूर्य की ध्यान साधना करने से विश्व ब्रह्माण्ड का रहस्यमय ज्ञान प्राप्त होता है ।" यही कुण्डलिनी सिद्धि है ।

सूर्य ग्रहण के समय उस मण्डल की विचित्र स्थिति होती है । दिन में रात्रि का बोध होता है । इसका प्रभाव तो भौतिक जगत पर भी पड़ता है । पर आध्यात्मिक साधनाओं पर उसका चमत्कारी प्रतिफल दृष्टिगोचर होता है । इसलिए आगम और निगम दोनों ही सम्प्रदायों के लोग सूर्य ग्रहण के अवसर पर बिना कुछ विशेष साधना किए चूकते नहीं ।

सूर्य ग्रहण कालेन समोन्योनासि कश्चना
तत्र यत् तत् कृतं सर्व मनन्तफलं भवेत्।

–आगस्त्य संहिता

सूर्य ग्रहण काल अन्य सामान्य समयों की भांति नहीं है । उस समय जो कुछ भी किया जाय उसका अनन्तगुना फल होता है ।

अग्नि होत्र भी प्रकारान्तर से सूर्य आराधना ही है । दिव्य अग्नि का सूर्य के साथ महत्त्वपूर्ण आदान–प्रदान सम्भव होता है । याज्ञिक उस दिव्य विधा द्वारा सूर्य शक्ति का आवश्यक भाग अपनी ओर आकर्षित करते हैं । साथ ही सूर्य अनुदानों में उन तत्वों की अभिवृद्धि करते हैं, जो प्राणियों, वनस्पतियों एवं ऋतु चक्र वातावरण को अनुकूल बनाने के लिए आवश्यक है ।

एतस्मिन् मण्डले सोऽग्नि ।

"जो इस सूर्य मण्डल में है वही त्तत्व यज्ञाग्नि, रूप में प्रकट होता है ।"

यच्चाग्नौं तत्तेजो विद्धि मामकम्

–गीता

"जो यज्ञाग्नि की ज्वलशीलता है वह भी मेरी ही है ।"

यत्र–यत्र च संकीर्णमात्मनं मन्यते सुधीः
तत्र–तत्र तिलै होमो गायत्र्या अग्निहोत्र वै ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"जहां साधक को अनुष्ठान का निश्चित विधि–विधान विदित न हो, वहां तिल का गायत्री मन्त्र से हवन करके काम चलाना चाहिए ।"

अग्निहोत्र में विभिन्न जड़ी–बूटियों और शाकल्यों का उपयोग किया जाता है । पर यदि वे उपलब्ध न हों तो सविता या सावित्री का यजन मात्र तिलों से भी हो सकता है ।

सूर्य भौतिक ऊर्जा का अक्षय भण्डार है । पृथ्वी की आवश्यकताओं से कहीं अधिक क्षमता उसके आकार विस्तार में विद्यमान है । अब तक अभावों की आवश्यकता खनिजों से, विभिन्न प्रकार के ईंधनों से पूरी की जाती रही है, पर अब जब कि वे स्रोत सूखते जा रहे हैं, सूर्य से ही उन आवश्यकताओं की पूर्ति करनी पड़ेगी ।

अमेरिका की 'टाइम' पत्रिका के अनुसार इन दिनों अमेरिका में ४० लाख घरों में सूर्य शक्ति के प्रकाश लेने, मकान गर्म रखने, भोजन पकाने जैसे कार्य किए जा रहे हैं । इस्राइल में उसकी आबादी का पंचमांश अर्थात् २,२०,००० व्यक्ति सूर्य से विभिन्न कार्यों के लिए ऊर्जा और प्रकाश प्राप्त करते हैं । जापान के २० लाख घरों में यह सुविधा उपलब्ध है । फ्रांस, जर्मनी आदि अनेक देश इस दिशा में आगे बढ़ रहे हैं । ३ मई १९७८ मे विश्व भर में सूर्य दिवस मनाया गया था और उपाय सोचा गया था कि सूर्य ऊर्जा का अधिक प्रयोग किस प्रकार किया जाना सम्भव हो सकता है ? यह सौर ऊर्जा का दृश्यमान प्रत्यक्ष उपभोग है ।

पुरातन सूर्योपासना के स्थान पर अर्वाचीन काल में शिव प्रतीक को अपना लिया गया था । ज्योतिर्लिंग का पुरातन स्वरूप सूर्य मन्डल था । अब उसी आकृति को शिव लिंग के रूप में प्रयुक्त किया जाने लगा है । इस प्रकार परिवर्तित रूप में सूर्योपासना अभी प्राचीन काल की तरह ही प्रचलित है ।

इसकी साक्षी आर्षग्रन्थ देते हैं–

आदित्यं च शिवं विद्यात् शिव आदित्य रूपिणम् ।
उभयोरंतरंनास्ति आदित्यस्य च शिवस्य च ।

–शिव पुराण

"शिव और आदित्य को एक ही समझना चाहिए । इन दोनों के बीच कोई अन्तर नहीं है ।"

शिव के साथ अनेक कथानक जुड़ गये हैं । उनमें कुछ बुद्धि संगति भी हैं और कुछ नहीं भी । किन्तु सूर्य के सम्बन्ध में ऐसी कथा गाथाएं नहीं जुड़ी हैं, जिससे उनके शिवत्व पर किसी प्रकार की उंगली उठती हो।

भौतिक दृश्यमान सूर्य को सविता देव का, शिव सत्ता का कलेवर माना गया है । वस्तुतः उस कलेवर के अन्तर्गत विद्यमान चेतना भण्डार को ही उपास्य माना गया है । जीवन उसी से हर किसी को उपलब्ध होता है । जीवन में उत्कृष्ट वरिष्ठता भर देने का कार्य भी उसी की उपासना द्वारा सम्पन्न होता है ।

सूर्य की साधना से मिलती है सद्बुद्धि !

जिस प्रकार दीपक को ज्ञान का, राष्ट्रीय ध्वज को देश भक्ति का, प्रतिमा को देवता का प्रतीक माना जाता है, उसी प्रकार आकाश को निरन्तर ज्योतिर्मय बनाये रहने वाले सूर्य को तेजस्वी परब्रह्म का प्रतीक माना और सविता कहा गया है । गायत्री का जप करते समय इस सविता का ही ध्यान किया जाता है । सावित्री का तो यह सविता युग्म ही है, गायत्री–सावित्री उपासना के माध्यम से इसी सविता शक्ति का अवतरण होता है । शाकानन्द तरंगिणी ३/४/१ में कहा भी है

"गायत्री भावयेद्देवी सूर्यसारकृताश्रयाम् ।
प्रातर्मध्यान्ह सन्ध्यायं ध्यानं कृत्वां जपेत्सुधीः ।"

अर्थात् बुद्धिमान मनुष्य को सूर्य के रूप में स्थित गायत्री महाशक्ति का प्रातः मध्याह्न और सायं त्रिकाल ध्यान करके जप करना चाहिए ।

अन्यत्र भी उल्लेख है

देवस्य सवितुर्यच्च भर्गमन्तर्गतविभुम ।
ब्रह्मावदिन स्वाहुर्वरिण्यम् तच्च धीमहि ॥"

अर्थात् सविता देव के अन्तर्गत तेज को ब्रह्मज्ञानी वरेण्य–श्रेष्ठ कहते हैं, उसी का हम ध्यान करते हैं ।

सविता की भौतिक और आत्मिक क्षेत्र में महती भूमिका का शास्त्रकारों ने उल्लेख किया है और ब्रह्मतेजस् प्राप्त करने के लिए सविता के साथ संबद्ध होने का निर्देश दिया है । महामनीषी महीधर का कहना है कि सविता मण्डल में ब्रह्म स्वरूप पुरुष विद्यमान हैं । वह प्रकाशमान

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

'ज्योतिपुंज, प्रेरक तथा प्राणियों की अन्तःस्थिति को जानता है । समस्त विज्ञान से विभूषित वह आनन्द स्वरूप है । वेदान्त में उन्हीं का प्रतिपादन हुआ है । वह समस्त सृष्टि का संहार करने में समर्थ है । वही वरण करने तथा प्रार्थना करने योग्य सत्य स्वरूप है । उनका ध्यान करने से हमारी अन्तरात्मा में ज्ञान–विवेक और आनन्द प्रदान करने वाला दिव्य तेज बढ़ता हुआ चला जाता है । शास्त्रकार कहते हैं

'बुद्धे बोधयिता यस्तु चिदात्मा पुरुषो विराट् ।
सवितुस्तद्वरेण्यन्तु सत्यधर्माणभीश्वरम् ॥'

अर्थात् बुद्धि को सन्मार्ग पर लगाने वाला जो विराट् चिदात्मा पुरुष है, वही सत्य, धर्म, ब्रह्म–रूप, वन्दनीय, सविता है । महर्षि अगस्त्य भी इस तथ्य की पुष्टि करते हुए कहते हैं

'यो देवः सविताऽस्मांक धियो धर्मादि गोचराः ।
प्रेरयेत्तस्य यद्भर्गस्तं वरेण्यमुपास्महे ॥'

अर्थात् सविता नामक जो देवता हमारी बुद्धि को धर्मादि में लगाते हैं, उनके बन्दनीय तेज की हम उपासना करते हैं ।

महातपस्वी पाराशर मुनि का कथन है–

'देवस्ये सवितुर्भर्गो वरणीयं च धीमही ।
तदस्मांक धियो यस्तु ब्रह्मत्वेव प्रचोदयात् ॥"

अर्थात् सविता देवता के प्रशंसनीय तेज का हम ध्यान करते हैं जो हमारी बुद्धि को ब्रह्मत्व में प्रेरित करें ।

आत्मोत्कर्ष की दिशा में आगे बढ़ने के लिए सविता देवता की आराधना या ध्यान–धारणा महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, मोक्षपद के अभिलाषियों ब्रह्मपरायण साधकों के लिए उपनिषदों में माया के बन्धनों से, कुसंस्कारों कषाय–कल्मषों से छुटकारा पाने के लिए प्राणविद्या, पंचाग्नि विद्या, मधु विद्या, पुरुष विद्या, षाडिविद्या, शाण्डिल्य विद्या, आदि ३२ प्रकार की विद्याओं–उपासनाओं का सविस्तृत उल्लेख किया गया है । उनमें उद्गीथ विद्या के अन्तर्गत अन्तरादित्य विद्या का वर्णन है जिसमें सूर्य मण्डल में ध्यान करने का विधान है । सूर्य मण्डल मध्यस्थ महाप्रज्ञा गायत्री की आराधना साधक को परम पवित्र बनाती और मनोरथों को पूर्ण करती है । महाभारत–वनपर्व में स्पष्ट उल्लेख है कि सूर्य से ही समस्त जगत प्रकाश पाता है । वही जीवों की उत्पति के कारण भी हैं । मुक्तिदाता भी वही हैं । उनकी उपासना कभी निष्फल नहीं जाती । जो व्यक्ति कोई मनको संयमित एवं चित्त को एकाग्र कर सूर्य की उपासना आराधना करेगा, उसकी इच्छा पूर्ति होगी, इसमें कोई संशय नहीं ।

गायत्री का देवता सविता विश्व के जीवन का, ज्ञान और विज्ञान का केन्द्र है । अन्य समस्त देव शक्तियों का केन्द्र भी वही है । चारों वेदों में जो कुछ है वह सब भी इस सविता शक्ति का विवेचन मात्र है । तप, श्रद्धा और साधना के द्वारा योगीजन इसे ही प्राप्त करने में संलग्न रहते हैं । नाम रूप सुविधानुसार कोई भी माना जाय पर वस्तुतः यह सविता देवता ही सबका उपास्य है । उसी को प्राप्त करने के लिए प्रत्येक साधक को प्रयत्नशील होना पड़ता है ।

इस सविता की उपासना में संलग्न ऋषि मुनि योग के द्वारा अपनी आत्मा को उस तेजपुंज महाप्राण परब्रह्म में प्रविष्ट करते है । शुकदेव जी अपनी साधना को पूर्ण करते हुए जिस स्थिति में प्रविष्ट हुए उसका उल्लेख महाभारत में इस प्रकार मिलता है

तत्माद् योग समास्थायत्यनत्वा वृह कलेवरम् ।
वायुभूतः प्रवेश्यामि तेजो राशि दिवाकरम् ॥

शुकदेव जी ने कहा "मैं योग में स्थित होकर इस देह का स्थान त्याग कर 'तेजो' राशि सूर्य में वायुभूत होकर प्रवेश करता हूं ।"

उपनिषदकारों ने इस महा उपास्य सविता देवता की उपासना का निर्देश करते हुए उसकी महान महत्ता पर भी प्रकाश डाला है और उसे आत्मिक मलीनताओं का वितरण कर्त्ता माना है ।

सूर्यश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युकृतेभ्यः
पापेभ्यो रक्षत्ताम । यद्राभ्या पापमकार्षम् ।
मनसावाचा हस्ताभ्याम् । पदभ्यामुदग्सा शिश्न ।
रात्रिस्तवलुम्पतु । यत् किंच दुरितं मयि ।
इदमह माममृतयोनौ सूर्ये ज्योतिषी जुहोमि स्वाहा ।

–(तै० आ० प्र० १० अ ३२)

"जगत का प्रेरक सूर्य उन पापों से मेरी रक्षा करे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जो क्रोधादि वृत्तियों द्वारा उत्पन्न हुए हैं । जो रात्रि में मैंने पाप किया है, मन, वाणी और हाथों द्वारा, पैर, उदर और उपस्थेन्द्रिय द्वारा (किया है) रात्रि में वह लुप्त हो जाय । यह मैं अपने आपको अमृत की योनि में जो कि सूर्य ज्योति रूप परमात्मा है । उसमें आहुति रूप देता हूं स्वाहा बोल कर देता हूं।"

य इह वा व स्थिरचरनिकराणां निजनिकेतानां
मनइन्द्रियासुरगणाननात्मनः स्वयमात्माऽन्तर्यामी
प्रचोदयात् ॥

–(ब्रह्मोपनिषद)

"आप सबके आत्मा हो और अन्तर्यामी हो । जगत में जितने चराचर प्राणी है । वे सब आपके ही आधार पर रहते हैं । और उनके अचेतन जैसे मन, इन्द्रिय और प्राणी के आप ही प्रेरक हो ।"

त्रिकाल सध्या में प्रातः मध्याह्न, सायंकाल के लिए तीन प्रतीकों का उल्लेख है । प्रातः ब्राह्मी, मध्याह्न वैष्णवी और सायं शाभवी गायत्री के हंसारूढ़, गरुणारूढ़, वृषभारूढ़, स्वरूपों का वर्णन है । वस्तुतः यह तीन वेदों का ही त्रिविध स्वरूप है । सविता देवता प्रातः ऋग्वेद, मध्याह्न यजुर्वेद और सांयकाल सामवेद स्वरूप होता है । वेदों में जिन तीन विज्ञान का भण्डार है उसे साधक के अन्तःकरण में अभिप्रेत करता है । ऋग से ज्ञान–योग, यजु से कर्मयोग, साम से भक्ति योग का सम्बन्ध है । सविता देवता का ध्यान हमारी मनोभूमि को इन तीनों योगों की साधना के उपयुक्त बनाता है । इन्हीं तीनों तथ्यों का ब्रह्मा, विष्णु, महेश के रूप में उल्लेख है । ऋग्–ब्रह्मा, यजु–विष्णु और साम–शिव है । इन तीनों के द्वारा त्रिकाल सन्ध्या द्वारा गायत्री उपासना करने वाले को ज्ञान, वैभव एवं सद्गुणों की उपलब्धि होती है । इसी आधार पर एक ही परब्रह्ममहत्तत्व सविता को तीन प्रकार से तीन चित्रों में चित्रित किया गया है–

ऋग्भि पूर्वान्हे दिवि देव ईयते,
यजुर्वेदे तिष्ठति मध्य अन्हः ।
सामवेदेनास्तमेय महीयते,
वेदैरसून्यस्त्रिभिरेति सूर्यः ॥

(श्रुति)

"पूर्वाह्न (प्रातःकाल) में सूर्य ऋक् द्वारा मध्याह्न में यजुः द्वारा, अस्तकाल में सोम द्वारा युक्त होते है ।"

महर्षि याज्ञवल्क्य ने इसी सविता की उपासना का विधान वर्णन करते हुए उसकी महत्ता, विशेषता एवं उपलब्धियों को संक्षिप्त किन्तु सारगर्भित शब्दों में इस प्रकार वर्णन किया है

ॐ नमो भगवते आदित्याखिल जगतात्मस्वरूपेण कालस्वरूपेण चतुर्विधि भूतनिकायानां ब्रह्मादिस्तम्ब पर्यन्तानामन्तर्हृदयेषु बहिरपि चाकाश देवोपाधि नाऽव्ययधीयमानोभवानैक एवं क्षणलवनिमेषावयवोपचित संवत्सर गणे नामामादानविसर्गाभ्यामियां लोकयासाममुबहाते।

(याज्ञवल्क्य)

"मैं ॐकार स्वरूप सूर्य भगवान को नमस्कार करता हूं । हे भगवन् ! आप समस्त जगत के आत्मा और काल स्वरूप हो । ब्रह्मा से लेकर तृणपर्यन्त जितने प्राणी हैं उन सबके हृदय में और बाहर भी आकाश के समान व्याप्त रह कर, फिर भी सब उपाधियों से पृथक् होकर आप एक अद्वितीय ईश्वर है । आप ही क्षण, लब, निमेष इत्यादि अवयव वाले संवत्सरों द्वारा तथा जल के खींचने तथा प्रदान के द्वारा समस्त जगत का जीवन चालन करते हो ! "

इन भावनाओं के साथ प्रत्येक गायत्री उपासक को जप के साथ ध्यान भी करना चाहिए । वह ध्यान फिर चाहे माता के रूप में साकार हो, अथवा प्रकाश पुंज के रूप में निराकार। दोनों ही स्थितियों में 'सूर्य मद्वता संध्यस्था' की भावना के साथ–परम तेजस्वी, सद्बुद्धि प्रेरक सविता देवता की ध्यान धारणा, अवश्य करनी चाहिए । गायत्री सावित्री का शक्ति स्रोत, सविता देवता है । मन्त्र और देवता का अविच्छिन्न सम्बन्ध है इसलिए सावित्री तप के साथ–साथ सविता को ध्यान धारणा को भूलाया न जाना चाहिए ।

सविता–आत्मा हमारी बुद्धि धारण करे

साधना से उदात्त जीवन की जो प्रेरणा और प्रखरता अंन्तःकरण में आनी चाहिए वह नहीं आती तो परमात्मा का उपासक निराश होता है और साधना की व्यर्थता अनुभव करने लगता है । इस सीढ़ी पर पांव रख कर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आत्म–कल्याण के इच्छुकों को जानना चाहिए देव शक्तियों और परमात्मा के जो सनातन नियम है। उनकी अवहेलना करने की शक्ति उनमें भी नहीं है ।

क्रमिक विकास ही वह नियम है जिससे हम संसार के कर्मफल में बंधे हुए हैं । एक माह तक कार्यालय में काम करने के बाद वेतन मिलता है । निश्चित मात्रा तक वाष्प और उष्णता ग्रहण करने के बाद ही इंजन चलता है । गर्मियों में सूर्य जब अपनी प्रचण्ड ताप शक्ति से तप लेता है तब कहीं बरसात आती है । मनुष्य का जन्म भी क्रमिक विकास के इस सिद्धान्त से परे नहीं जा सकता । नौ माह दस दिन तक मां के गर्भ में पकने के बाद ही धरती में आने का सौभाग्य उसे मिल पाता है ।

बीच के समय प्रयत्न और आवश्यक तैयारी के होते हैं । जो लोग इस तैयारी में जितनी अधिक बुद्धि खर्च करते हैं, लगन और तत्परता व्यक्त करते हैं । फल भी उन्हें वैसा ही स्वस्थ और परिपुष्ट मिलता है । अधीर, उद्विग्न, समय से पूर्व फल चाहने वालों को फल की प्राप्ति दूर, कई बार जोखिम में भी पड़ते देखा गया है ।

शास्त्रकार ने अपनी इसी बात को एक किसान का उदाहरण देते हुए कहा

क्षेत्रे बिना प्रयत्नेन वन्यतृण समुद्भवः ॥
भूयो भूयोः कृषे पक्षे महानर्थाय जायते ॥

"किसान खेत में बीज बोता है । पौधे उगते हैं । बीच में जंगली घास–पात बिना प्रयत्न के ही उग आती है । वह कृषि को हानि पहुंचाती है ।"

आत्म–विकास की उपासना भी ऐसी ही है । मनोभूमि पर पड़े हुए पूर्व जन्मों को दुर्गुणों कुविचारों के बीज बिना प्रयत्न अपने आप उगा करते हैं । कई बार तो मन की स्थिति ऐसी असमंजस पूर्ण बन जाती है कि पता भी नहीं चलता कि जिस कुविचार की कल्पना एकाएक सूझ पड़ी वह तो कभी मेरे द्वारा हो नहीं सकती थी। किन्तु वह किसी अज्ञात जन्म, पूर्व योनि की क्रियाओं का संस्कार होती है जिसे हम प्रत्यक्ष नहीं जानते पर वह हमें विचलित करती है । ऐसे समय मनुष्य क्या करे सूक्ष्मदर्शी शास्त्रकार ने उसका उपाय भी बताया है

कृषकस्य प्रयत्नेन सावधानस्य नित्याशः ।
वारणं क्रियते तेषां कृषे रक्षा च जायते ॥

"चतुर किसान जानते हैं कि यह बिना प्रयत्न उगा हुआ खर–पतवार कृषि के लिये हानिकारक है अवएव वह नित्य नियमपूर्वक उनकी निराई करता रहता है ।"

एवं चित्ते स्वभावेन नाना दुर्वासनोदयः ।
जायमानों मनुषस्य क्लेश सन्ततिकारणम् ॥
केवलं तत्र यत्नेन भूयोभूयः कृतैन वै ।
निरोधः शक्यते कर्तुं तासामुन्मूलनं तथा ॥

मनुष्य के चित्त में भी उसी प्रकार दुर्वासनाओं के अनेक खर–पतवार उगते रहते हैं जिनके कारण दुःख और क्लेश अनुभव होता है । इस स्थिति का विरोध किसी की तरह केवल बार–बार किए गये प्रयत्नों से ही सम्भव है । इनका उन्मूलन तो सावधानी से प्रयत्नपूर्वक ही किया जा सकता है ।

प्रयत्नों को शास्त्रकारों ने चतुरता की संज्ञा दी है । उन्होंने केवल यही नहीं कहा कि जो लोग में पैदा हुई दुर्वासनाओं को प्रयत्नपूर्वक हटाते रहते हैं वही लक्ष्य तक पहुंच सकते हैं । वरन् उसका संबल भी बताया है–

धीरैरुत्साहसम्पन्नैः श्रद्धाविश्वास धारिभिः
कर्तुं तत्पार्यते नैव राशयाविष्ट मानसैः।

"श्रद्धा और विश्वास को धारण करने वाले उत्साही धीर वीरों द्वारा ही दुर्वासनाओं और अमंगल विचारों का विरोध और उन्मूलन किया जा सकता है जिसके मन में संशय है, फल के प्रति आशंका रहती है वे इस कार्य में पछड़ जाते हैं बीच में ही प्रयत्न छोड़ देते हैं ।

श्रद्धा और विश्वास की शिक्षा किसान से पाई जा सकती है । किसान जानता है कि फल डालने के बाद फसल उगना अवश्यम्भावी है । फल की इसी सुनिश्चितता का नाम है । विश्वास और उस विश्वास के प्रति आशा उत्साह आदि का नाम श्रद्धा है । केवल विश्वास ही पर्याप्त नहीं श्रद्धा भी होनी चाहिए। आशा और उत्साह बना रहता है तो फल की परिपक्वता, विश्वास की पुष्टि तक का समय सरल और सुरुचि पूर्ण बन जाता है । प्रयत्नों में मन लगा रहता है । कदाचित आधी फसल उग आने पर किसान कहे मालूम नहीं फसल आयेगी भी या नहीं और इस संशय के साथ ही वह अपना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

प्रयत्न परित्याग दे तो फल की आशा नष्ट होगी ही अब तक का प्रयत्न भी निरर्थक चला जायेगा। दुबारा सफलता के लिए फिर एक नये सिरे से श्री गणेश करना पड़ेगा।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि वासनायें और कुविचार क्षणिक होते हैं। देर तक चित्त में बने रहने वाले, सुख और आह्लाद देने वाले शुभ संकल्प और स्वस्थ विचार ही होते हैं। इसलिए आद्यावधि उठने वाली दुर्वासनाओं को सफलता का संकेत मानकर सन्तोष तो करना चाहिए किन्तु उनके उन्मूलन में चतुर किसान की तरह सजग और जागरूक रहने वाले जीवन–साधक अन्त में सफलता का सुख पाते हैं।

तस्य देवस्य सवितःप्रसवानां य ईशिता।
प्रकाश प्रेरणां लब्ध्वा वस्तुतो जीवन प्रदाम्॥
नष्टा ये दुष्ट संस्कारास्तेषां खाद्येन नित्यशः।
सद्विचाराः प्ररोहन्ति शुभ संकल्प वारिणा॥

अन्त में शास्त्रकार ने कहा सविता स्वरूप तेजस्वी परमपिता परमात्मा उन्हें अपना प्रेरणापुंज प्रतिदान कर सुखी बनाता है जो उसकी उपासना करते हैं पर उसके लिए प्रयत्न की आवश्यकता है। इसी का नाम साधना है अर्थात् जो लोग अपने शुभ संकल्पों को बढ़ात है और दुर्वासनाओं को उनकी खाद बनाकर डालते जाते हैं अन्त में उनके प्रयत्नों की कृषि सफल होती है और सविता–आत्मा उनकी बुद्धि को धारण करते हैं। अर्थात् उनको अपने ही समान प्रखरता और तेजस्विता से भर देते हैं।

अपने चारों ओर जो विस्तृत विश्व हमको दृष्टिगोचर हो रहा है उसका मुख्य आधार सूर्य भगवान ही हैं। इस जीवन–प्रदायक सूर्य की उपासना हम गायत्री–मन्त्र द्वारा करते हैं और ध्यान भी कर सकते हैं। आत्मा ही सूर्य है, ऐसी भावना रखते हुए गायत्री का जप करने से ज्ञान प्राप्त होता है। इस मन्त्र के अन्तिम भाग में साधक भगवान से 'धि" अर्थात् बुद्धि (ज्ञान) मांगता है। गायत्री की उपासना विश्व के इस सर्व प्रथम प्रकाश की ही प्रार्थना है। रेडियो में कुछ सुनने की इच्छा होने से सबसे पहले उसमें "लाइट" की जाती है, जिससे वह उचित प्रमाण में गरम हो जाता है, फिर उसी तेज में से जो कुछ सुनना हो वही सुना जा सकता है। उसी प्रकार चित्त की अथवा मन की एकाग्रता हृदय की तरफ ठीक–ठीक ढंग से करने पर एक प्रकार से आत्मिक प्रकाश का अनुभव होने लगता है। उस प्रकाश की सहायता से जो कुछ प्राप्त करना हो वही मिल सकता है।

इस अन्धकारमय प्रकृति तत्व में परमात्मा की प्रकाशमय सत्ता का प्रवेश होते ही, उसका अत्यन्त सूक्ष्म और शुद्ध भाग, स्थूल और अशुद्ध भाग से पृथक् हो जाता है। अशुद्ध और स्थूल भाग में से नीचे प्रदेश रचे गये हैं और शुद्ध तथा सूक्ष्म भाग द्वारा ऊपर के प्रदेशों में रचना होती हैं अशुद्ध तथा स्थूल भाग में उसकी अशुद्धि तथा स्थूलता के कारण प्रकाश का प्रवेश उचित रीति से नहीं हो पाता, पर दूसरे शुद्ध तथा सूक्ष्म भाग में प्रकाश भली प्रकार प्रवेश कर सकता है। प्रकाश और अग्नि जिस गुण की सहायता से भिन्न–भिन्न कार्य करते हैं, यह गुण उष्णता ही है। गायत्री को शास्त्रों में 'अग्निमुखी' कहा गया है। उष्णता दो प्रकार के परस्पर विरोधी गुण उत्पन्न करती है। एक तो वह सूक्ष्म जलमय द्रव्य को स्थूल पार्थिव द्रव्य से पृथक् करके और भी अधिक सूक्ष्म बनाती हैं, और पार्थिव द्रव्य को वह और अधिक ठोस बनाती है। उस प्रकार उष्णता विजातीय द्रव्यों पर पृथक्करण करके सजातीय का संयोग करती है।

इस प्रकार प्रकाश की न्यूनाधिकता के आधार पर उच्च प्रदेश, मध्य प्रदेश और निम्न प्रदेश इस प्रकार तीन विभाग किये जा सकते हैं। उच्च प्रदेश को केवल विद्यात्मक प्रदेश कहा जाता है। वह चैतन्यमय अजरामर और अविनाशी है और विश्व में यही सबसे शुद्ध प्रदेश है।

मध्य प्रदेश को हम स्वर्गीय प्रदेश का नाम दे सकते हैं। इसका विषय बड़ा गूढ़ और गुप्त है। यह सत्य है कि प्रकृति के नियम बहुत सीधे सादे और सरल होते हैं और इसलिए उनको समझने में किसी को कठिनाई नहीं होनी चाहिए। पर इस मार्ग से कदाचित् ही कोई प्रयास करता है और जो थोड़े से भाग्यशाली व्यक्ति इस रास्ते पर होकर जाते हैं, वे इस उद्देश्य से कि कोई अनधिकारी प्रकृति के गुप्त रहस्यों को जान न सके, अपने पग–चिह्नों को कंटि और झांखड़ डालकर बड़ी सावधानी से ढक देते हैं। इसी कारण बिना मार्ग दर्शक गुरू की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सहायता के स्वयमेव इस मार्ग पर प्रयास करने वाले सैकड़ों बार रास्ते से भटक जाते हैं। यह मध्य प्रदेश 'विद्यात्मक' भाग से नीचे होता है और जब कि विद्यात्मक प्रदेश में केवल प्रकाश ही होता है, इस मध्य प्रदेश में पार्थिव भाग का भी कुछ अंश रहता है।

सृष्टि के आरम्भ में दो मूल तत्व होते हैं, एक अत्यन्त सूक्ष्म प्रकाशमय तत्व और दूसरा स्थूल अन्धकारमय तत्व, प्रकाश, उष्णता और गति प्रथम तत्व के गुण हैं। प्रथम तत्व प्रकाशक, प्रेरक और अपनी क्रिया करने में असमर्थ है स्त्री रूप या प्रकृति रूप है। हमारी भौतिक सृष्टि में उत्पति का कार्य प्रथम तत्व द्वारा ही सम्पन्न होता है।

उष्णता द्वारा ही पदार्थ सूक्ष्म रूप में परिणित हो सकते हैं। सब तरह की उत्पत्ति, वृद्धि और संयोग इन दोनों तत्वों द्वारा ही होते हैं। सूक्ष्मता होने से उसमें प्रकाश का प्रवेश विशेष रूप से होता है और स्थूलता होने से प्रकाश में कमी आ जाती है। उदाहरण के लिए घी जब स्थूल या जमे हुए रूप में रहता है तो उसमें प्रकाश का प्रवेश नहीं हो सकता है और अगर कोई अन्य पदार्थ उसमें पड़ गया हो तो उसका भी पता नहीं चलता। पर जब हम उसे उष्णता द्वारा गरम करके पतला कर देते हैं तो उसकी तली में पड़े तिनके तक को भी देख सकते हैं।

उष्णता और शीतलता के प्रभाव से ही सब प्रकार के पदार्थ तरह-तरह के रूप धारण करते हैं। द्रव्य की अत्यन्त सूक्ष्मता वायु रूप होती है, उससे कम सूक्ष्मता जल रूप होती है और स्थूलता पृथ्वी रूप होती है। इस विवेचन से समझा जा सकता है कि योगी जन अणिमा, लघिमा, महिमा आदि क्रियाओं द्वारा स्थूल और सूक्ष्म रूप में रूपान्तर कर लेते हैं। पर जब तक साधक सूक्ष्म तत्त्वों को ग्रहण करने की भूमिका तैयार नहीं कर लेता तब तक उस को समझाना या अनुभव कराना सम्भव नहीं होता।

समस्त विश्व चैतन्यमय बन जाय इसके लिए प्रकाश उसके बाहरी और भीतरी भाग में प्रविष्ट होता है। विश्व में हम जो कुछ भी उत्पन्न होता देखते हैं उसका कारण प्रकाश ही है। सूर्य को इस प्रकाश प्रभाव स्थान रूप में परमेश्वर ने निश्चित किया है, पर ऐसा होते हुए भी हम यह नहीं कह सकते कि सूर्य के अतिरिक्त अन्यत्र कहीं भी प्रकाश नहीं है।

"सूर्य आत्मा जगतस्त=स्थुपश्च" अर्थात् "भगवान सूर्य स्थावर जंगम विश्व का आत्मा उदित हुआ है"- यह उपासना का मन्त्र सन्ध्या समय हम बोलते हैं। सूर्य ही हमारे जगत का आत्मा है। पुरुष बिना स्त्री जिस प्रकार निष्फल रहती है, उसी प्रकार सूर्य बिना पृथ्वी भी बन्ध्या के समान है। सूर्य की सत्ता से पृथ्वी पर वनस्पतियां ही उत्पन्न नहीं होती, वरन् समस्त सचेतन प्राणी उसी के द्वारा उत्पन्न और वृद्धि को प्राप्त होते हैं।

प्रत्येक मनुष्य एक ब्रह्माण्ड है। उसकी आत्मा सूर्य के समान है, जिसके इर्द-गिर्द ग्रह-परमाणु-भ्रमण करते रहते हैं। मानवी काया में भ्रमण करने वाले-अणु-जीवाणु एक विशेष प्रकार की विद्युत् उत्पन्न करते हैं। उसी विद्युत् से प्रभावित होकर मस्तिष्क से लेकर इन्द्रियां तथा अन्य अवयव अपना काम करते हैं। जड़ में चेतना उत्पन्न होने का माध्यम यही है। साधारणतया अणुओं में हलचल भर रहती है। चिन्तन तथा अनुभूति उनमें नहीं है। पर मानवी विद्युत् जिसे 'प्राण' कहा जाता है, जड़ अणुओं के समूह में चेतना, विचारणा और अनुभूति उत्पन्न कर देती है और सजीव जीवन आरम्भ कर देती है। निर्जीव अनुभूति रहित जीवन तो पत्थर-चट्टानों में भी रहता है।

पृथ्वी के ध्रुवों के आस-पास चुम्बकीय आँधियां चलती रहती हैं। अस्थिर रंग विरंगा प्रकाश "आरोरा बोरिएलिस" के रूप में छाया रहता है। यही ध्रुव स्थान अन्य ग्रहों के विकिरण, प्रकाश एवं प्रभाव को पृथ्वी पर लता है और यहां की विशेषताओं को अन्य लोकों तक ले जाता है। इस ध्रुवीय क्षेत्र को ब्रह्माण्ड का सम्पर्क सूत्र कह सकते हैं। इन ध्रुव केन्द्रों के माध्यम से चलने वाले अनतर्ग्रहीय प्रत्यावर्तन के बलबूते ही धरती अपनी वर्तमान परिस्थितियों में बनी हुई है। इतना ही नहीं अन्य ग्रहों की वर्तमान परिस्थितियों में भी इन भू-ध्रुवों में चलने वाले अनवरत प्रत्यावर्तन का महान योगदान है। यदि किसी कारण यह महान-आदान प्रदान बन्द हो जाये तो पृथ्वी की स्थिति में इतना विषम परिवर्तन होगा कि तब यहां जीवन का अस्तित्व भी सन्दिग्ध हो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

जायेगा । साथ ही ग्रहों की कक्षाओं और स्थितियों में परिवर्तन होने से सौर–मण्डल की प्रस्तुत गतिविधियों में भारी उलट–पुलट हो जायेगी । भू–ध्रुवों के माध्यम से होने वाला प्रत्यावर्तन ही अपने सौर–मण्डल की वर्तमान परिस्थिति बनाये हुए है । तनिक से क्षेत्र में होने वाला तनिक सा क्रियाकलाप–पृथ्वी सौर–मण्डल और उस सौर–मण्डल के महासूर्य के प्रदक्षिणा क्रम में कितना भारी योगदान कर रहा है । इस तथ्य पर जितनी गहराई से विचार किया जाय–उतना अधिक मार्मिक रहस्योद्घाटन होता चला जाता है ।

मनुष्य का अन्तःकरण भी ऐसा ही चेतना ध्रुव संस्थान है । उसके भीतर इच्छा शक्ति, भावना शक्ति, संकल्प शक्ति, आकर्षण शक्ति, विकर्षण शक्ति जैसी अगणित ज्ञात और अविज्ञान क्षमताऐं भरी पड़ी हैं । यदि उन्हें जाग्रत किया जा सके, उनका उपयोग करना सीखा जा सके तो इस विश्व ब्रह्माण्ड में समस्त शक्तियों का प्रवाह मानवी सत्ता के भीतर उमड़ता–प्रकट होता अनुभव किया जा सकता है । मानवीय अन्तःकरण सौर–मण्डल के कार्य करने का पथ प्रशस्त करते रहने वाले आकाश की तरह ही असीम है और उसमें जो कुछ भरा पड़ा है उसे अन्तरिक्ष आकाश से कहीं अधिक शक्तिशाली समझा जाना चाहिए । इतना सब होते हुए भी पता नहीं किस कारण हम अपनी करतलगत सम्पदा से अपरिचित बने हुए हैं । यदि किसी प्रकार अपने मूल ऊर्जा स्रोत से सम्पर्क स्थापित किया जा सके तो नाभिकीय महासागर की तरह चैतन्य ऊर्जा से जुड़कर व्यष्टि सत्ता से असम्भव से असम्भव भी सम्पन्न कर दिखाया जा सकता है । सूर्य–सविता मानव का उपास्य व इष्ट है । उपास्य से एकाकार होना ही जीवात्मा का लक्ष्य है ।

सविता बनो; सूर्य का अनुकरण करो ।

सवितास्तु पद वितनोतिध्रुवं,
मनुज्ञोवलवान् सवितेतिभवेत् ।
विषया अनुभूतिपरिस्थितय,
श्च सदात्मन एवगणेदति सः ॥

अर्थ गायत्री का 'सविता' पद यह बतलाता है कि मनुष्य को सूर्य के समान बलवान होना चाहिए और सभी विषयों की अनुभूतियां तथा परिस्थितियां अपने अन्दर हैं ऐसा मानना चाहिए ।

परिस्थितियों का जन्मदाता मनुष्य स्वयं है । हर मनुष्य अपने भाग्य का निर्माण स्वयं करता है । कमरेखा, भाग्य, तकदीर, ईश्वर की इच्छा, ग्रहदशा, दैवी आपत्ति, आकस्मिक लाभ आदि की विलक्षणता देखकर कई आदमी भ्रमित हो जाते हैं । वे सोचते हैं कि ईश्वर की जो मर्जी होगी, कर्म में जो लिखा होगा वह होगा, हमारे प्रयत्न या पुरुषार्थ से प्रारब्ध को बदला नहीं जा सकता, इसलिए कर्तव्य पालन का श्रम करने की अपेक्षा चुप बैठे रहना या देवी देवताओं की मनौती मनाना ठीक है । ऐसे आदमी यह भूल जाते हैं । कि भाग्य, प्रारम्भ ईश्वरेच्छा आदि की अदृश्य शक्तियां खुशामद या पक्षपात पर आधारित नहीं हैं कि जिस प्रकार प्रसन्न हो जाए उसे चाहे जो दे दें और जिस पर नाराज हो जाए उससे बदला लेने के लिए उस पर आपत्तियों का पहाड़ पटक दें ।

हर व्यक्ति अपने गज से दूसरों को नापता है । हम स्वयं पक्षपाती, खुशामद पसन्द, रिश्वती, पूजाकांक्षी, बदले की भावना से भरे हुए होते हैं, इसलिए सोचते हैं कि अदृश्य शक्तियों को भी ऐसा ही होना चाहिए पर यह अनुमान सत्य नहीं है । सत्य यह है कि ईश्वर पूर्णतया निष्पक्ष है, वह हर प्राणी को समान दृष्टि से देखता है जिसका जैसा प्रयत्न और पुरुषार्थ है, पाप पुण्य है, उसी के अनुसार उसे सुख दुख देने की न्यायमूर्ति न्यायाधीश की भांति व्यवस्था कर देता है । प्रारब्ध की कोई स्वतन्त्र सत्ता नहीं है हमारा कल का पुरुषार्थ आज प्रारब्ध बन जाता है रात को जमाया हुआ दूध सवेरे दही बन जाता है । दूध और दही के नाम रूप में फर्क है यद्यपि दोनों ही वस्तुऐं वस्तुतः एक हैं पुरुषार्थ और प्रारब्ध यद्यपि दो अलग–अलग वस्तुएं प्रतीत होती है । पर वस्तुतः वे एक हैं । हरा कच्चा खट्टा आम जब पाल में लगा दिया जाता हैं । तो कुछ दिन बाद वह पीला, पका, मीठा आम बन जाता है । समय के परिपाक से यह परिवर्तन हो गया फिर भी वह आम एक ही है । पुरुषार्थ और प्रयत्न का भेद भी ऐसा ही अवास्तविक है । इसी जन्म के, पिछले जन्म के कुछ कर्म अपने परिपाक का समय लेकर जब अनायास प्रकट होते हैं तब उन्हें प्रारब्ध कर दिया जाता है । यह प्रारब्ध किसी दूसरे की कृपा का रोष का परिणाम नहीं, अपितु निश्चित रूप से हमारे

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपने भूतकाल के कर्मों का फल है । इस प्रकार हम स्वयं ही अपने भाग्य के निर्माता ठहरते हैं । भले ही यह निर्माण हमने निकट भूतकाल में किया हो या सुदूर भूतकाल में ।

संसार दर्पण के समान है । जैसे कुछ हम स्वयं है वैसे ही हमारा संसार है । कहते हैं कि हर आदमी की दुनिया अलग है, ठीक भी है जैसा वह स्वयं है वैसी ही उसकी दुनिया होगी । को मनुष्य क्रोधी है उसका सबसे झगड़ा होगा फलस्वरूप उसे सारी दुनिया झगड़ालू मालूम पड़ेगी । बेईमान, चोर, ठग और दुष्ट प्रवृत्ति के मनुष्य दूसरों का अपने ही जैसा समझते हैं । और दूसरों पर तरह–तरह के आक्षेप लगाया करते हैं । आलसी, दरिद्री, ओछे, मूर्ख प्रकृति के लोग अपने आस–पास के लोगों पर तरह–तरह के दोषारोपण करते रहते हैं । वे उन्हें उठने नहीं देते, बढ़ने नहीं देते, रोकते हैं, सताते हैं । सब बात यह है कि संसार का व्यवहार कुए की आवाज की तरह हैं । पक्के कुए में मुंह करके जैसी आवाज हम करते हैं ठीक वैसे ही शब्दों की प्रतिध्वनि वापिस लौट आती है । जो प्रशंसा के योग्य है उसे प्रशंसा प्राप्त होती है, जो सहायता का अधिकारी है उसे सहायता मिलती है, जो आदर का पात्र है उसे आदर मिलता है और जो निन्दा, घृणा, तिरष्कार, अपमान और दण्ड का पात्र है उसे यह वस्तुऐं जहां भी जायेगा वहीं पहले से ही तैयार रखी हुई मिलेंगी ।

संसार में बुरे तत्व बहुत हैं पर अच्छे तत्व उनसे भी अधिक हैं । यदि ऐसा न होता तो कोई आत्मा यहां रहने को तैयार न होती । जो गुणवान है, शक्तिवान है, विचारवान है, सहृदय और उदार हैं उन्हें निश्चित रूप से अपना भाग्य उत्तम मिलेगा । मनस्वी इमरसन कहा करते थे कि मुझे नरक में रखा जाय तो मैं वहां भी अपने सद्गुणों के कारण स्वर्ग बना लूंगा । जो बुरे आदमी हैं वे स्वर्ग में रहकर भी नरक की यातना भोगेंगे। कितने ही अमीर चिन्ताओं की ज्वालाओं में जलते रहते हैं और कितने ही गरीब स्वर्गीय सुख में दिन काटते हैं । अमेरिका का धनकुवेर हेनरी फोर्ट, धन की लिप्सा में अपनी पाचन शक्ति गंवा बैठा था । वह जब अपने सुविस्तृत कारखानों के मजदूरों को मोटी रोटी खाते देखता था तो वह कहता था कि 'इन मजदूरों के भाग्य पर मुझे ईर्ष्या होती है । वह हाथ मलता था कि हे ईश्वर ! काश मैं हैनरी न होकर बलवान पाचन शक्तिवाला मजदूर होता तो कितना सुखी होता।

फोर्ट के उदाहरण से यह भली प्रकार समझ में आ जाता है कि अमीरी ही मनुष्य को सुखी नहीं बना सकती । सुखी बनाने की क्षमता 'शक्ति' में है । शक्ति ही वास्तविक सम्पत्ति है । इस सम्पत्ति के बदले में हम जो भी वस्तु चाहें प्राप्त कर सकते हैं जिसकी पाचन शक्ति ठीक है । उसे नमक रोटी में कचौड़ी का आनन्द आवेगा । जिसका पेट दुर्बल है उसे बहुमूल्य स्वादिष्ट पदार्थ भी कडु लगेंगे और हानिकारक सिद्ध होंगे । पुंसत्व शिथिल हो जाने पर इन्द्र की अप्सरा भी कुरुप लगती है और बलवीर्य से परिपुष्ट होने पर कुरूप दम्पत्ति भी सरस जीवन का आस्वादन करते है । सौन्दर्य को देख कर वही आनन्द अनुभव कर सकता है जिसके नेत्र सक्षम हैं, मधुर ध्वनियां वही सुन सकेगा जिसके कान सक्रिय हैं । आंख और कान की शक्ति नष्ट हो जाय तो समझिये कि सारा संसार अन्धकार और स्तव्यता मय ही हो गय।

१–शरीर बल, २–बुद्धिबल, ३–विद्याबल, ४–धनबल, ५–संगठन बल, ६–चरित्र बल, ७–आत्मबल, यह सात बल जीवन को प्रकाशित, प्रतिष्ठित, सम्पन्न और सुस्थिर बनाने के लिए आवश्यक हैं । सविता–सूर्य के रथ में सप्त आश्व जुते हुए हैं ।सविता की सात रंगों की किरणें होती हैं जो इन्द्र धनुष में तथा विल्लौरी कांच में देखी जा सकती है । गायत्री का सविता पद हमें आदेश करना है कि हम भी सूर्य के समान तेजस्वी बनें और अपने जीवन रथ को चलाने के लिए उपर्युक्त सातों बलों को घोड़ों के समान जुता हुआ रखें । जीवन रथ इतना भारी है कि एक दो घोड़ों से ही उसे नहीं चलाया जा सकता यदि जीवन की गतिविधि ठीक रखनी है तो उसे खींचने के लिए सात अश्व, सात बल जोतने पड़ेगें ।

१–स्वस्थ शरीर, २–अनुभव, विवेक दूर, दर्शिता पूर्ण व्यवहार बुद्धि, ३–विशाल अध्ययन,श्रवण, मनन और सत्संग द्वारा सविकसित किया हुआ मस्तिष्क, ४–जीवनोपयोगी साधन सामिग्रियों का समुचित मात्रा में संचय, ५–सच्चे मित्रों, वान्धवों एवं सहयोगियों की अधिकता ,६– ईमानदारी, मधुरता, परिश्रम शीलता, आत्म सम्मान की रक्षा, सद्व्यवहार, उदारता जैसे गुणों से परिपूर्ण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उत्तम चरित्र, ७–ईश्वर और धर्म में सुदृढ़ आस्था, आत्म ज्ञान, कर्मयोगी दृष्टि कोण, निर्मल मनोभूति, सतोगुणी विचार व्यवहार, परमार्थ परायणता, यह सात प्रकार के बल प्रत्येक मनुष्य के लिए अतीव आवश्यक हैं । इन सबका साथ–साथ सन्तुलित विकास होना चाहिए । स्वादिष्ट भोजन वह है जिसमें नमक, मसाला, घी, मीठा, आटा, वेसन, मैदा आदि सन्तुलित मात्रा में हों यदि इनमें से कोई वस्तु आवश्यकता से बहुत ज्यादा और कोई बहुत कम होगी तो भोजन चाहें कितने ही श्रम से क्यों न बनाया गया हो वह असन्तुलित होने के कारण अखाद्य बन जायेगा । शरीर का कोई अंग बहुत मोटा और कोई बहुत पतला रह जाय तो ऐसा असंतुलित शरीर रोगी ही समझा जायेगा । इसी प्रकार यह सातों बल उचित मात्रा में संचय करने चाहिए ।

जो धनी तो बहुत है पर दुर्बल हो रहा है । जो स्वस्थ तो काफी है पर मूर्ख है, जो विद्वान तो बहुत बड़ा है पर चरित्र भ्रष्ट है, जो चतुर तो बहुत है पर नास्तिक, दुष्ट और अधर्मी है, जो उच्च पद पर तो हैं पर कोई सच्चा मित्र नहीं, ऐसे लोग अधूरे हैं । एकांगी उन्नतिं चाहे वह कितनी ही बड़ी क्यों न हो किसी को सच्चे अर्थो में सुखी नहीं बना सकती । जो लोग केवल धन कमाने के पीछे पड़े है और शरीर, विद्या, मैत्री, चरित्र आदि बलों की उन्नति नहीं कर रहे हैं वे यह भूल जाते हैं कि केवल एक धन का ही स्रोत ऐसा है जैसे दसों इन्द्रियों में केवल एक इन्द्री का सजीव तथा अन्य सबका निर्जीव होना । सप्ताह में एक दिन बढ़िया भोजन मिल और छः दिन भूखा रहना पड़े तो वह कोई आनन्द की बात न होगी, चाहे रूखा सूखा भोजन मिले पर सातों दिन मिले तभी काम चल सकता है इसी प्रकार सातों बलों का संन्तुलित विकास होना ही जीवन को सुख शान्ति मय बना सकता है ।

गायत्री का "सवितुः" पद में उपदेश करता है कि सूर्य के समान तेजस्वी बनो, सप्त अश्वों को, सप्त बलों को अपने जीवन रथ में जुता रखो । सूर्य केन्द्र है और अन्य समस्त ग्रह उसकी परिक्रमा करते हैं वैसे ही तुम भी अपने को कर्त्ता केन्द्र और निर्माता मानो । परिस्थितियां, वस्तुऐं, घटनाऐं तो हमारी परिक्रमा मात्र करती है । जैसे परिक्रमा करने वाले ग्रह सूर्य को प्रभावित नहीं करते वैसे ही कोई परिस्थिति हमें प्रभवित नहीं करती । अपने भाग्य के, अपनी परिस्थितियों के निर्माता हम स्वयं हैं, अपनी क्षमता के आधार पर अपनी हर एक इच्छा और आवश्यकता को पूरा करने में हम पूर्ण समर्थ हैं । गायत्री माता हम बालकों को गोदी में लेकर उंगली के संकेत से सविता को दिखाती है, और समझाती है मेरे बालको, सविता बनो, सविता का अनुकरण करो ।

वेद उपनिषद्, और गीता प्रभृति सभी मुहुर्मुहुः यही सन्देश देते हैं कि प्रकृति की जड़ता से परे परम चेतना सत्य को प्राप्त करो ।

"उद्वयं तमरास्परिस्वः पश्यन्त उत्तरं,
देवं देवन्ना सूर्य भगन्य ज्योतिरुत्तमम्"

"तमस् की सीमा से परे आनन्दमय सविता की मंगल ज्योति का साक्षात् करो"

"असतो मा सत गमय तमसो मा ज्यातिर्गमय मृत्योर्मा अमृंत गमय ।"

असत् से परे सत् की ओर चलो, अज्ञानान्धकार से परे ज्ञान मय निर्मल ज्योति की ओर चलो, जीवन मरण की आवागमनमयी चक्री से निकल कर अमरता की ओर चलो । परमानन्द को प्राप्त करो ।

वेदमाता गायत्री का भी यही संदेश है कि वही सच्चिदानन्द (भूभुर्वः स्वः) सर्व प्रेरक (सविता) वरण करने योग्य है उपास्य है उसी के लिए आत्म समर्पण कर दो ।"

वैदिक साहित्य में तमस, अन्धकार, अज्ञान, अविद्या माया, विमर्श, प्रकृति प्रधान, अज्यक्त, विकुण्ठा शक्ति त्रिपुरसुन्दरी वाक् आदि प्रकृति के ही वाचक पर्याय शब्द हैं । इधर सत्य, नारायण, सविता, पुरुष, परम–पुरुष, परमात्मा, सत्, ज्ञान, सचिदानन्द, ज्योति प्रकाश, ब्रह्म, सूर्य आदि नारायण के सामानार्थी हैं । जो प्रकृति से परे परम सूक्ष्मतत्व के वाचक हैं

वृहदारण्यक उपनिषद् में 'सत्य' शब्द की व्युत्पत्ति इस प्रकार भी बताई गई है स–जीव, ति–प्रकृति, यम्–शासक नियामक अर्थात् जो सत्ता जीव और प्रकृति दो पर शासन करती हैं दोनों का नियमन करती है वही 'सत्य' है ।

'नारायण' शब्द भी जीव और प्रकृति में व्यापक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सर्व नियन्ता का ही बोध कराता है ।

"आपो नारा इति प्रोक्ता, आपो नर सूनवः"

आपः सर्वत्र विस्तृत प्रकृति है, इस प्रकृति में तथा जीव में निवास करने वाला नारायण है ।

सत्यनारायण और सविता तत्वतः एक ही हैं । सविता उस उत्पादिका सत्ता का नाम है जो सर्वव्यापक होकर सब में 'प्रेरणा' करती है जो जड़ान्धकार से परे निर्मल ज्योति स्वरूप हैं । प्रसविता होने से सारी सृष्टि उन्ही के ज्ञान का परिणाम है ।

प्राचीन वेदमन्त्र भाष्यकारों ने भूभुर्वः स्वः तीनों महाव्याहृतियों का अर्थ क्रमशः सत्–चित्–आनन्द किया है ।भू का अर्थ सत् है, सत्य । भुवः चित् एवे स्वः आनन्द से चिदानन्द भाव निकलता है जो नारायण का वाचक है इस प्रकार भूर्भुवः स्वः सच्चिदानन्द सत्यनारायण के वाचक शब्द हैं ।

भू का सत्ताव्यक अर्थ सर्वमान्य हैं । उसी की सत्ता से अखिल ब्रह्माण्ड ठहरा हुआ है जिस प्रकार भूमि उत्पादिका है उसी प्रकार वह शक्ति भी उत्पादिका है प्रसवित्री है जननी है ।

सन्ध्या के मन्त्रों में 'भू' का सम्बन्ध मस्तिष्क से स्थापित किया है "भू पुनातु शिरसि" वह ईश्वर सविता अपनी सर्वश्रेष्ठ भू विभूति से मेरे शिर को पवित्र करे । पुनः इसी प्रकार में कहा "सत्यं पुनातु पुनः शिरसि"पुनः सत्यं विभूति से मेरे शिर को पवित्र करे । इससे स्पष्ट है कि भू और सत्यं का भाव एक ही है । गायत्री मन्त्र में सात में से तीन ही व्याहृतियों का प्रयोग किया जाता है शेष चार को इन तीन में ही अन्तर्निहित मान लिया है'सत्य' भू व्याहृति में निहित है जैसा उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है ।

गायत्री मन्त्र का देवता 'सविता' है इसका भावार्थ ऊपर दिया जा चुका है । सारी ही व्याहृतियां सविता की आतरूपा हैं । ॐ भू शीर्षस्थानीय व्याहृति से इसका सर्वाधिक सम्बन्ध प्रतीत होता है । शीर्षस्थानीय होने से भू प्रेरणाशक्ति भी है जो सवितृ का अर्थ है । अतः भू सत्य और सविता एक ही अर्थबोधक हैं ।

'तत्सवितुर्वरिण्यं' पद में सविता का दर्शक तत् शब्द आया है जो उसकी सूक्ष्मता, अभौतिकता, सर्वव्यापकता और अगोचरता का प्रतीत है । वह जो वाङ् मनसातीत सविता शक्ति है उसके लिए उपनिषदों ने अन्यत्र कहा है "तत्सत्ये प्रतिष्ठतं" वह सत्य में प्रतिष्ठित है । इसीलिए महात्मा गांधी सत्य को परमेश्वर का श्रेष्ठ नाम मानते थे ।

'भर्गो देवस्य धीमहि' उस ज्योतिर्मय पापनाशक सविंता के दिव्य तेज को ही धारण करें क्योंकि "सत्यं वै धर्मः" वह सत्य ही धर्म है धारणीय तत्व है 'असतो मसत गमय' उसी की ओर चलना है । 'सत्यमेव जयते' उसी की विजय होती है ।

वह सविता या सत्यनारायण ही वरेण्यं है वरण करने योग्य है । व्रत लेना और वरण करना एक ही चीज है । पत्नी पति को वरण करने से ही पवित्रता कहलाती है ।

जीवन सत्ता का सूर्य से सम्बन्ध

गायत्री महामन्त्र सूर्य–सविता का मन्त्र है प्राचीन काल से ही गायत्री उपासना प्रत्येक भारतीय के लिए अनिवार्य धर्म कर्त्तव्य माना गया है । इस उपासना से अर्जित प्राण की मात्रा और उसके व्यवहारिक जीवन के उपयोग के आधार पर ही जाति व्यवस्था तक का निर्धारण करने की परम्परा रही है । ब्रह्मी चेतना की समीपता, धारणा, विकास और ब्रह्मचर्य के विस्तारण के कारण एक वर्ग को ब्राह्मण कहा गया है । ब्राह्मण का तात्विक अर्थ किसी ब्राह्मण माता–पिता से पैदा हुआ नहीं अपितु ब्राह्मी शक्ति सम्पन्न व्यक्तित्व माना गया है । कल्पना की गई है कि ऐसे व्यक्तियों में ब्रह्मतेज की बहुलता होती है । यह ब्रह्मतेज और कुछ नहीं गायत्री उपासना से अर्जित सविता देवता से आकर्षित प्रचुर परिमाण में प्राण और उसके फलस्वरूप विकसित हुई मेधा एवं ऋतम्भरा प्रज्ञा ही है । यह सुनिश्चित है कि ऐसे व्यक्ति की भावनाए अत्यधिक आस्तिक, आस्थावादी, विशाल, उदार और परमार्थ परायण होंगी । वह निरन्तर धर्म कृत्यों द्वारा मनुष्य जाति को उर्ध्वगामी चिन्तन और आदर्श नेतृत्व की ओर मोड़े रहता है इसलिए वह समाज का शिरोमणि, श्रदास्पद और सम्मानास्पद ठहराया गया । अगली श्रेणियां क्रमशः इस तत्व की कमी और पार्थिव जीवन के प्रति क्रमशः अधिक आसीक्त के अनुसार निर्धारित हुई हैं, पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

तीनों वर्णों के लिए गायत्री उपासना को अनिवार्य माना गया । जो सामाजिक कर्त्तव्यों का उपेक्षक और घोर सांसारिक हुआ उसे अन्त्यज कहा गया । यह विशुद्ध वैज्ञानिक समाज व्यवस्था थी । आज भले ही उसका स्वरूप विकृत क्यों न हो गया हो ।

सामान्यतः यह एकाएक समझ में आने वाली बात नहीं है कि भला मनुष्य की तरह विचारशील चेतन सत्ता बनाने वाली प्राण सत्ता इतनी व्यापक कैसे हो सकती है कि वह वायुमण्डल में घुला हुआ हो । किन्तु विज्ञान ने इस धारणा को पूरी तरह बुद्धि संगत ठहरा दिया है ।

विद्युत् वैज्ञानिकों की दृष्टि में पृथ्वी एक चुम्बकीय शक्ति से भरा-पूरा गोला है । रासायनिक पदार्थों का अस्तित्व अवश्य है पर उनकी क्षमता, कार्य प्रणाली परिवर्तन पद्धति, सम्मिश्रण से रूपान्तरण की प्रक्रिया जैसी हलचलों के पीछे वह विद्युत् शक्ति ही काम करती है जिसे प्रत्येक पदार्थ का प्राण कहना चाहिए । यदि इसका अपहरण कर लिया जाय तो वस्तु अपनी मौलिक विशेषताऐं खो बैठेगी और मृत तुल्य बन जाएगी ।

यह तथ्य न केवल वस्तुओं के सम्बन्ध में है । अपितु जीवित प्राणियों के सम्बन्ध में भी है । जीवन और मृत्यु के बीच अन्तर करने वाले तत्व को अध्यात्म की भाषा में 'प्राण' कहा जाता है । भौतिक विज्ञानी उसे बिजली की ही एक किस्म मानते हैं ।

चुम्बक और विद्युत् यों प्रत्यक्षतः दो पृथक्-पृथक् सत्ताऐं हैं पर वे परस्पर अविछिन्न रूप से सम्बद्ध हैं और समयानुसार एक धारा का दूसरी में परिवर्तन होता रहता है । यदि किस 'सरकिट' का चुम्बकीय क्षेत्र लगातार बदलते रहा जाय तो बिजली पैदा हो जायेगी इसी प्रकार लोहे के टुकड़े पर लपेटे हुए तार में से विद्युत्धारा प्रवाहित की जाय तो वह चुम्बकीय शक्ति सम्पन्न बन जायेगी ।

पृथ्वी के इर्द-गिर्द एक चुम्बकीय वातावरण फैला हुआ है । अकेला गुरुत्वाकर्षण कार्य ही नहीं उससे और भी कितने प्रयोजन पूरे होते हैं । यह चुम्बकत्व आखिर आता कहां से है ? उसका उद्भव स्रोत कहां है ? यह पता लगाने वाले इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि यह कोई बाहरी अनुदान नहीं वरन् पृथ्वी के गहन अन्तराल से निकलने वाला शक्ति प्रवाह है ।

हिन्दू शास्त्रों में, हिन्दू धर्म-ग्रन्थों में, जापानी परम्पराओं में इस बात का प्रतिपादन है कि सिर उत्तर की ओर और पैर दक्षिण की ओर करके सोना चाहिए । इसके औचित्य की रीचेन वैक, डूरविले, क्लोरिक, अब्रावस, रेगनाल्ट लिंप्रिस, मुलर प्रभृति अनेक मनः शास्त्रियों ने लम्बी खोज की और उसे सही बताया । उन्होंने यही निष्कर्ष निकाला है कि सही और गहरी नींद के लिए उत्तर की ओर उत्तरी ध्रुव की ओर; मस्तिकीय चुम्बक का रुख रहना चाहिए। उत्तर को सिर करके सोना ही ठीक है ।

डा० मौरिनेस्को ने अपने प्रयोगों में चुम्बकीय उपकरण द्वारा तीसरी बेंट्रिकिल को धन ध्रुवीय करके कृत्रिम निद्रा उत्पन्न करने में सफलता प्राप्त की है । मस्तिष्क को अचेतन करने वाले, इंजेक्शनों की तरह ही इस प्रयोग का प्रभाव सम्भव पाया गया । लोहे के पलंगों की अपेक्षा लकड़ी की चारपाई की, लोहे की छड़ी या टीन की चार से बने मकानों की अपेक्षा लकड़ी मिट्टी या फूंस के पटाव की अधिक उपयोगिता पाई गई। स्वास्थ्य की दृष्टि से उन्हें अधिक उपयुक्त इसलिए पाया गया कि ध्रुवीय विद्युत संचार का, आकाशीय विद्युत, फेराडेन्डेज का, अनावश्यक संग्रह शरीर में न होने पावे। अनावश्यक संग्रह हर चीज का अहितकर होता है । चुम्बकत्व की अनावश्यक मात्रा शरीर और मस्तिष्क में ठूंसने वाले लौह उपकरण इस दृष्टि से यदि अनुपयुक्त माने गये हैं तो वह तर्क संगत ही हैं ।

पृथ्वी दृश्य रूप से मिट्टी, पानी, खनिज, वनस्पति आदि का समन्वय दीखती है । या सूक्ष्म दृष्टि से देखने पर वह एक विशाल चुम्बक ही प्रतीत होती है । मानव शरीर भी यों रक्त, मांस, अस्थि, त्वचा आदि का समूह दीखता है पर तात्विक दृष्टि से उसे भी एक चलता फिरता सजीव चुम्बक ही कहना चाहिए ।

शरीर का प्रत्येक कोषाणु एक विद्युत् इकाई है । जिस तरह पौधे अपने पत्तों द्वारा आकाश से सांस वायु ग्रहण करते हैं उसी प्रकार यह कोषाणु आकाशीय वायु मण्डल से 'फ्रीक्वेन्सी आवृत्ति' खींचते हैं । उन्हीं के आधार पर वे अपना वाइब्रेट (कम्पन) एवं आसीलेट (दोलन) क्रम चलाते हैं ।

स्विटजरलैण्ड के डाक्टर फिलिप्स आरोलस पेरा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सेलसन्स ने कितनी ही बीमारियों का कारण शरीरगत चुम्बकत्व की विकृति एवं विश्रंखलता को सिद्ध किया है । ऐसे रोग जिनका कारण ठीक से समझ नहीं पा रहे थे और चिकित्सा के अनेक प्रयोगों में असफल रहे थे। डा० फिलिप्स ने रुग्ण के मूलों में चुम्बक की आवश्यक मात्रा पहुंचा कर उन रोगों से मुक्ति दिलाई।

चुम्बकत्व का उत्तरी ध्रुव जीवाणु क्रिया को नियन्त्रित करता है और दक्षिणी ध्रुव शक्ति पोषण की आवश्यकता पूरी करता है । अस्वस्थता को इन दो वर्णों में वर्गीकृत करके यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि चुम्बक की दोनों धाराओं में से किसका, कहां और कितना उपयोग किया जाय ?

इस सन्दर्भ में वैज्ञानिकों ने गम्भीरता पूर्वक अनुसन्धान किया है । इसी तरह का एक प्रयोग मूर्धन्य विज्ञानवेत्ता डा० रेगनाल्ड ने किया है–एक बार वे जब एक रोगी की परिचर्या कर रहे थे, मानसिक तनाव के उस बीमार को वे जब–जब पूर्व पश्चिम दिशा की ओर सुलाते 'औसिलोमीटर' की सहायता से पता चलता कि कष्ट बढ़ गया है जबकि चारपाई की दिशा उत्तर–दक्षिण करते तत्काल लाभ मिलता । उन्होंने बताया यह घटना इस बात का प्रमाण है कि मनुष्य का पृथ्वी की चुम्बकीय धाराओं से सम्बन्ध है । डा० रेगनाल्ट की यह खोज एक दिन विकासवाद और मनुष्य के अमीबा जैसे एक कोशीय जीव से उत्पत्ति की बात को खण्डित कर दे तो कुछ आश्चर्य नहीं । प्राण या जीवन शक्ति एक सनातन तत्व है जो विस्फोट के कारण ब्रह्माण्ड के किसी केन्द्र पिण्ड से बहता हुआ सारे विश्व में नाना प्रकार की रचनाओं के रूप में व्यक्त हो रहा है ।

कुत्ते, बिल्लियां, बैल एक बार जिस रास्ते को देख लेते हैं दुबारा उधर कभी जाना हो तो वे उधर से आसानी से लौट आते हैं । इनके सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि वे प्राकृतिक चिह्नों की मदद से यात्राऐं कर लेते होंगे पर कुछ पक्षी, मछलियां हजारों मील लम्बी यात्राऐं करती हैं, रात में करती हैं, विभिन्न ऋतुओं में करती हैं तो भी नियत स्थानों में ही पहुंचती हैं । यह एक आश्चर्य है कि वे बिना किसी दिशा निर्देश के अन्तर्वृत्ति द्वारा किस प्रकार इतनी लम्बी यात्राऐं समाप्त कर लेते हैं ।

योरोपीय सारस ठण्डक के दिनों में योरोप से उड़ते हैं और अफ्रीका जा पहुंचते हैं । काले सिर वाले कौए (हूडेड क्रो), अबाबीलें ६००० मील यात्राऐं करके एक स्थान से दूसरे स्थनों तक पहुंच जाते हैं । उन्हें कोई दिशा ज्ञान न होने पर भी वे नियत स्थानों में कैसे पहुंच जाते हैं यह आश्चर्य का विषय था । यात्राऐं अधिकांश रात में होती हैं । तारों का कोई ज्ञान हो, पक्षियों के बारे में ऐसे भी कोई तथ्य प्रकट नहीं अतएव आश्चर्य होना स्वाभाविक ही है । जीवशास्त्रियों ने खोज की और पाया कि रहस्य कुछ भी हो पर एक बात निश्चित रूप से साफ हो जाती है वह यह कि सभी पक्षी पृथ्वी की चुम्बकीय रेखाओं के समान्तर प्रवास करते हैं प्रयोगों से यह बात और भी स्पष्ट हो जाती है ।

एक बार कुछ कौओं को पकड़कर उनके शरीर में कुछ चिह्न बांध दिये गये । यह कौए उत्तर पूर्व दिशा में प्रवास के आदी थे । इस बार उन्हें प्रशा (जर्मनी) में पकड़ा गया और वहां से ५०० मील पश्चिम ले जाकर कील नहर के किनारे छोड़ा गया । इस बार उन्होंने उड़ान भरी और स्कैंडेनेविया में जाकर उतरे । पहली उड़ान वाले मार्ग से इस मार्ग की तुलना की गई तो स्पष्ट ज्ञात हो गया कि यह यात्रा के पथ पहले प्रवाह पथ से ठीक समान्तर और पृथ्वी की चुम्बकीय रेखा के भी ठीक समान्तर था । ह्वेल और सालोमन मछलियों के प्रयोग से भी यही बात सामने आई और उससे एक बात पूर्ण स्पष्ट हो गई कि जीव–जन्तुओं का जीवन चुम्बक–शक्ति से प्रभावित और प्रेरित होता है । इन प्रयोगों में शियर–वाटर (जल में तैरने वाले पक्षी) का उदाहरण सर्वाधिक आश्चर्य जनक था । इसे अटलाण्टिक महासागर के एक किनारे पर छोड़ा गया, वहां से वे ३०५० मील लम्बी यात्रा सम्पन्न कर स्कोरवोम द्वीप के अपने निवास स्थल पर जा पहुंचे ।

जीव–जगत चुम्बकीय शक्ति से बहुत अधिक प्रभावित पाया जाता है । टरमाइट कीड़ा अपना घर ठीक पृथ्वी चुम्बकीय रेखाओं के समान्तर बनाता है । पृथ्वी पर कभी चुम्बकीय आन्धियां आती हैं तो दीमक, चींटियां तक विक्षुब्ध हो उठती हैं । यहां तक कि जीव कोशों (लाइफ सेल्स) का सूत्र विभाजन भी अपनी प्रारम्भिक और मध्य अवस्था में चुम्बकीय शक्ति से प्रभावित होता है । क्रोमोसोम हमेशा सेलों के ध्रुवों की ओर ही चलते हैं । यह इस बात का प्रमाण है कि जीवन–शक्ति विद्युत्

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

चुम्बकीय क्षमता से ओत–प्रोत अथवा वैसी ही कोई शक्ति है ।

जीव–जन्तु ही नहीं मनुष्यों के जीवन भी चुम्बकीय शक्ति से प्रभावित होते हैं । १८४५ में डा० रीचेनबैक ने अनेक लोगों पर उनके स्वप्नों का अध्ययन कर बताया कि पूर्व की ओर सिर और पश्चिम की ओर पैर करके सोने से बड़ी बैचेनी होती है जबकि उत्तर–दक्षिण सोने में सुखद अनुभूतियां होती हैं । डा० क्लैरिक तथा डुरविले के प्रयोग भी इसी तथ्य की पुष्टि करते हैं और बताते हैं कि स्वप्नों में दिखाई देने वाले दृश्यों का सम्बन्ध कैसे भी हो चुम्बकीय शक्ति से ही है । डा० रेगनाल्ट, अम्ब्रास मुलर, लैप्रिस आदि ने भी उक्त मान्यताओं की पुष्टि की है ।

पृथ्वी की चुम्बक शक्ति के बारे में यद्यपि वैज्ञानिक अभी कल्पनाऐं ही करते हैं और अनुमान लगाते हैं कि पृथ्वी के गर्भ में मैगनेटाइट या फेरस ऑक्साइड की विशाल राशि संग्रहीत है उसी के फलस्वरूप पृथ्वी एक विशाल चुम्बक की तरह काम करती है । मानवीय जीवन या जीव जन्तुओं का चुम्बकीय धाराओं से प्रभावित होने का कारण उनके शरीर में लौह युक्त हीमोग्लोबिन का होना बताते हैं पर वस्तुतः यह दोनों ही कारण सूर्य के प्रकाश कणों की विद्युत् चुम्बकमयता के कारण हैं । पृथ्वी का चुम्बक बनाने का काम सूर्य करता है । पिछले पृष्ठों में ध्रुव प्रभा के निर्माण की व्याख्या करते समय यह बात प्रकट हुई है । सूर्य के प्रकाश कण (फोटोन्स) ही जीवन का आधार भूत तथ्य हैं । पुरुष के शरीर में पाया जाने वाला "हीमोग्लोबिन" यह प्राण ही है जो सूर्य से निःसृत होता है और वायु द्वारा इच्छा शक्ति द्वारा तथा अन्न द्वारा हमारे शरीरों में पहुंचता रहता है । स्त्री के शरीर में इसे ही "रयि" कहते हैं । विपरीत ध्रुव संचय होने के कारण ही स्त्री–पुरुषों में परस्पर आकर्षण का स्वभाव पाया जाता है ।

डा० मैरिनेस्को ने तो कई प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध कर दिया कि चुम्बकत्व हमारे मानसिक संस्थान को भी प्रभावित करते हैं । वे मस्तिष्क की तीसरी वेन्ट्रिकल में धन विद्युत प्रविष्ट कर निद्रा ला देते थे । विद्युत् और चुम्बक लगभग एक जैसी ही शक्तियां और परस्पर परिवर्तनीय हैं । उन्होंने यह भी दिखाया कि स्वप्न की अनुभूतियां भी चुम्बकीय क्षेत्र से प्रभावित होती हैं । हम ऐसे सैकड़ों उदाहरण दे चुके हैं कि कई बार मनुष्य के स्वप्न नितान्त सत्य पाये जाते हैं इससे प्रतीत होता है कि मानवीय चुम्बक शक्ति में ही विचार, सर्वज्ञता, सर्व व्यापकता के सारे लक्षण विद्यमान हैं । यदि ऐसा ही है तो ध्रुव प्रभावों (अरोरल लाइट) द्वारा जीवात्मा के ऊर्ध्व या अधोगामी लोकों में प्रस्थान की भारतीय मान्यताऐं भी गलत नहीं होनी चाहिए । पुराणों में वर्णन आता है–

नागवीथ्युत्तरं यच्च सप्तर्षिभ्यश्च दक्षिणम् ।
उत्तरं सवितुः पन्था देवयान इति स्मृतः ॥
उत्तरं यदगसतस्य अजवीथ्याश्च दक्षिणम् ।
पितृयानः स वै पन्था वैश्वानर पथाद् बहिः॥

अर्थात्–नाग वीथी से उत्तर और सप्तर्षि से दक्षिण पूर्य का जो उत्तर की तरफ का मार्ग है उसे देवयान कहते हैं । अगस्त के तारे से जो उत्तर और अजवीथी से दक्षिण है उस वैश्वानर मार्ग से बाहर पितृयान का मार्ग है ।

यह मार्ग पृथ्वी की चुम्बकीय शक्ति और सूर्य के प्रकाश कणों के सम्मिलित रूप से बनते हैं । उनका स्वरूप विद्युत् चुम्बकीय ही होता है जैसा कि पिछले ध्रुव प्रभा वाले लेख में दिया है । धन और ऋण विद्युत् कणों का एक दूसरी ओर आना–जाना ही विद्युत् या चुम्बक शक्ति का क्रम है । वैदिक भाषा में इसे ही "एति च प्रेति च" कहा है । इसे ऋग्वेद में–

अन्तश्चरति रोचनास्य प्राणद पानती,
व्यख्यनमहिषो दिवम् (ऋग्वेद १०/१८६/२)

अर्थात्–प्राण अपान रूप में स्पन्दित यह शक्ति ही जीवन का आधार है ।

आकृष्णेन रजसा वर्त्तमानों निवेशयन्नमृतं मर्त्य च।
हिरण्य येन सविता रथेन देवे याति भुवनानि पश्यन॥

अर्थात्–काले वर्ण के लोकों से विरचरता हुआ मृत्यु और अमृत अर्थात् प्रकृति और प्राण (धन और ऋण यां उत्तरी ध्रुव चुम्बकत्व व दक्षिणी ध्रुव चुम्बकत्व) दोनों सुव्यवस्थित करता हुआ सुवर्णमय रथ से सविता (आदित्य प्राण) समस्त लोकों को देखता हुआ, दर्शन देता हुआ आ रहा है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जहां अब यह सिद्ध होता जा रहा है कि जीवनी शक्ति विद्युत् चुम्बकीय तत्व है वहां उसके सूर्य लोक से निःसृत होने के प्रमाण भी वैज्ञानिकों को मिल रहे हैं। सूर्य में काले धब्बों का वैज्ञानिकों द्वारा अंकन इस बात की पुष्टि करता है कि सूर्य लोक का सम्बन्ध किसी और भी सुविशाल बीज ग्रह से अथवा ब्रह्माण्ड से है। इस सम्बन्ध में आगे की खोजें स्वर्ग मुक्ति और एक विश्व-व्यापी सत्ता के अस्तित्व और उसकी प्राप्ति की आवश्यकता का ही बोध करायेंगी।

इससे यह भी सुनिश्चित है कि गायत्री उपासना के समय सविता के ध्यान से हमारे मस्तिष्क का चुम्बकत्व सूर्य के प्रकाश कणों के चुम्बकत्व को आकर्षित करता और ग्रहण करता हुआ हमारी जीवनी शक्ति-प्राण को बढ़ाता रहता है।

मनुष्य एक प्रकार का अण्डा है जिसके भीतरी केन्द्र में जर्दी रहती है और चारों ओर सफेद मांसल पदार्थ। मनुष्य के शरीर को जर्दी कह सकते हैं और उसके चारों ओर फैले हुए तेजोवलय को सफेदी कह सकते हैं। इस दृश्य और अदृश्य दोनों को मिलाकर एक पूर्ण व्यक्तित्व बनता है। असल में यह व्याख्या भी त्रुटि पूर्ण है। मनुष्य जितने क्षेत्र में अपना प्रभाव फेंक सकता है और जितने क्षेत्र से प्रभाव ग्रहण कर सकता है उतने को मनुष्य का सम्बन्ध क्षेत्र भी कहा जायगा। यह परिधि असीम है इसलिए मनुष्य को भी असीम या अनन्त ही माना गया है।

पृथ्वी का दृश्य पिण्ड छोटा है पर उसका वायुमण्डल चुम्बकत्व रेडियो क्षेत्र, अन्तर्ग्रही आदान-प्रदान की परिधि को मिलाकर देखा जाय तो लगेगा कि ब्रह्माण्ड परिवार की विशालकाय मशीन का वह एक सुसम्बद्ध पुर्जा मात्र है। विश्व परिवार के पृथक् होकर पृथ्वी का कोई अस्तित्व ही नहीं रह जाता। ठीक इसी प्रकार मनुष्य भी विश्व चेतना की शृंखला की एक कड़ी मात्र ही है। घड़ी का छोटा पुर्जा तभी तक उपयोगी है जब तक वह घड़ी के साथ जुड़ा है, अलग रह कर वह कूड़ा कचरा मात्र है। मनुष्य अपने को एकाकी मानता भले ही रहे पर तथ्य यह है कि उसका वैभव, सुख एवं प्रगति प्रयास विश्व चेतना पर ही पूर्णतया निर्भर हैं। आत्मा-उसका कलेवर शरीर-शरीर के इर्द-गिर्द छाया हुआ तेजोवलय, तेजोवलय में सन्निहित सूक्ष्म शक्तियों की हलचलों की अकल्पनीय परिधि-यह सब मिल कर ही मनष्य की विशालता समझी जानी चाहिए। काय-कलेवर की ससीमता और विश्व ब्रह्माण्ड की असीमता के बीच की कड़ी यह तेजोवलय ही है जो मनुष्य के चारों ओर छाया रहता है। आंखों से दीखते हुए भी उसकी भूमिका इतनी आश्चर्यजनक है कि उसे दृश्य काया से भी अधिक महत्त्वपूर्ण माना जाना चाहिए। शरीर मर जाता है पर यह तेजोवलय फिर भी विद्यमान रहता है। भूत-प्रेतों के रूप में उसी की हलचलें देखी जाती हैं। हो सकता है कोई व्यक्ति कहीं जन्म ले चुका हो और उसका तेजोवलय स्वतन्त्र रूप से काम कर रहा हो-प्रेतात्मा की भूमिका निवाह रहा हो।

धरती और आकाश में काम करने वाली दृश्य एवं अदृश्य शक्तियां अपने आप में एकाकी अथवा पूर्ण नहीं हैं। वे दूसरों के अनुदान, संयोग, समन्वय से बनी हैं। अणु की सत्ता जिस रूप में सामने आती है वह उसकी अपनी एकाकी कमाई नहीं है, उसमें भूतल ही नहीं अन्य-अन्य लोकों का भी अद्भुत अनुदान जुड़ा होता है अन्यथा आणविक गतिविधियां मात्र हलचल बनकर रह जायें, उनके द्वारा कोई उत्साह वर्धक प्रयोजन पूरा न हो सके।

यही बात मानवी व्यक्तित्व के बारे में भी है। जीव कोषों से विनिर्मित यह घटक यदि अनेकों दूरवर्ती सत्ताओं का कृपा पात्र न हो तो सम्भवतः वह क्षुद्र जीवधारी से अधिक कुछ भी न बन पाता।

जड़ अणुओं की गति एक प्रकार की विद्युत् उत्पन्न करती है, उसमें जब चेतन सत्ता का समावेश होता है तो जीवन का-जीवधरियों का आविर्भाव होता है। ध्रुवों के क्षेत्र में चुम्बकीय तूफान उठते रहते हैं, जिनका प्रकाश 'अरोरा बोरीलिस' तेजोवलय के रूप में छाया रहता है। इसे पृथ्वी के साथ अन्य ग्रहों की सूक्ष्म हलचलों का मिलन स्पन्दन कह सकते हैं। यही है वह पृथ्वी का ग्रहों के साथ प्रणय-परिणय जिसके फलस्वरूप कुन्ती के पांच पुत्रों की तरह पांच की विविध विविध हलचलें जन्म लेती हैं और उनके क्रिया कलाप एक से एक बढ़कर अद्भुत और शक्तिशाली बने हुए सामने आते रहते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समुद्र का खारा जल जब धातु विनिर्मित नौकाओं तथा जल-यानों से टकराता है तो उससे विद्युत् तरंगें उत्पन्न होती हैं। नौका विज्ञानी इस अनायास होते रहने वाले विद्युत् उत्पादन से परिचित रहते हैं और उसकी हानिकारक-लाभदायक प्रतिक्रिया से सतर्क रहते हैं।

ठीक इसी प्रकार शरीरगत जीवाणु भी ईथर एवं वायुमण्डल में भरे विद्युत प्रवाह से टकराते हैं और विद्युत् ऊर्जा उत्पन्न करते हैं। जीव कोषों में उन धातुओं तथा रसायनों की समुचित मात्रा रहती है जो आघातों से उत्तेजित होकर विद्युत् प्रवाह उत्पन्न कर सके। यही कारण है कि हर मनुष्य में गर्मी ही नहीं रहती वरन् विद्युत् प्रवाह के अनेक स्तरों की धाराऐं भी बहती रहती हैं। इन्हें यन्त्रों द्वारा भली प्रकार परखा-जाना जा सकता है।

मानवी चुम्बकत्व विश्वव्यापी ब्रह्मसत्ता के साथ सविता के साथ एक तन्तुनाल द्वारा जुड़ा रहता है। विष्णु की नाभि में से कमल का उत्पन्न होना और उसके पुष्प पर ब्रह्मा जी का अवतरण परमात्मा और आत्मा के बीच में सम्बन्ध सूत्र की इसी शृंखला का अलंकारिक चित्रण है। गर्भस्थ बालक माता के साथ इसी नालतन्तु द्वारा जुड़ा रहता है। नाभि को मध्य केन्द्र माना गया है। नवजात शिशु का नाभि नाल प्रसव के उपरान्त ही बाहर आता है और उसे काट कर दोनों को पृथक् करना पड़ता है।

मनुष्य के कान सीमित स्तर के ध्वनि प्रवाह को ही सुनते हैं किन्तु पशुओं में ऐसी चेतना पाई जाती है जिसके आधार पर वे उन ध्वनियों को भी सुन सकें जिन्हें सुनने में मनुष्य असमर्थ रहता है। यन्त्रों द्वारा ऐसी सीटी बजाई जा सकती है जिसे मनुष्य तो अनुभव न करें पर कुत्ता आसानी से सुन सके और उसकी बुलाहट पर दौड़ा आवे। मालिक की आवाज को वह इतनी दूर से सुन सकता है जितना कि सामान्य मनुष्यों के लिए सुनना सर्वथा असम्भव है।

मेज पर एक कोरा कागज बिछाइए। उसके ऊपर एक चुम्बक रखिए। एक फुट ऊंचाई से लोहे का बुरादा धीरे-धीरे बरसाइये। देखा जायेगा कि लोहकण एक विशिष्ट क्रम के अनुसार गिर रहे हैं। यह क्रम चुम्बक की बल रेखाओं के अनुरूप होगा। कागज पर चुम्बक की अन्तःस्थिति कागज पर गिरे लोहे के बुरादे से भली प्रकार स्पष्ट हो रही होगी।

मनुष्य भी एक प्रकार का चुम्बक है। वह सौरमण्डल से बरसने वाले अनेक अनुदानों को अपनी आन्तरिक स्थिति के अनुरूप स्वीकार अस्वीकार करता है। वह जैसा कुछ स्वयं है उसी का चुम्बकत्व उसे इस विश्व ब्रह्माण्ड में अपनी जैसी सूक्ष्म धारा प्रवाह से अनायास ही सम्पन्न सज्जित करता रहता है।

सम्पूर्ण दृश्य प्रकृति सूर्य-प्रकाश की अनुकृति

भारतीय तत्व-दर्शन में सूर्य को सर्वाधिक महत्त्व दिया गया है। सृष्टि के आदि में सबसे पहले सूर्य ही उत्पन्न हुआ इसीलिऐ उन्हें 'आदित्य' भी कहते हैं। उनसे ही सर्वप्रथम 'मनु' अर्थात् मानवीय चेतना की उत्पत्ति हुई और दृश्य-प्रकृति भी। संसार में आत्मा रूप से जो कुछ भी विद्यमान है, उसमें सूर्य का ही प्राण और प्रकाश काम करता है। मन, प्राण और वाक् नाम से विख्यात वेदों की 'त्रयी-विद्या' और कुछ नहीं-सूर्य-शक्ति का ही सूक्ष्म और स्थूल विवेचन है-

सर्वकारण भूताय निष्ठायैज्ञानचेतसाम्।
नमा सूर्यस्वरूपाय प्रकाशात्मस्वरूपिणौ।
भास्करायनमस्तुभ्यं तथा दिनकृतेनमः॥

-मारकण्डेय पुराण ७०/५-६

अर्थात् हे सूर्य भगवान! आप ही ज्ञान चित्त वाले पुरुषों के लिये निष्ठास्वरूप तथा सर्वभूतों के कारण स्वरूप हैं। आप ही सूर्यरूपी प्रकाश और आत्मरूपी भास्कर हैं। आप दिनकर को नमस्कार है।

इन पंक्तियों में सूर्य का जो वर्णन किया है, उससे दो बातें ज्ञात होती हैं- १-सृष्टि में जो चेतना है, वह सूर्य का ही प्राण और प्रकाश है तथा २-सम्पूर्ण दृश्य प्रकृति अर्थात् वृक्ष, वनस्पति, समुद्र, नदियों और सौर-मण्डल के दूसरे ग्रह-नक्षत्र वह सब सूर्य के द्वारा ही उपजे और गतिमान हैं। सूर्य ही सम्पूर्ण दृश्य प्रकृति की आत्मा है।

गायत्री महाविज्ञान वस्तुतः सूर्य का ही विवेचन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । उससे आधिदैहिक, आदिभौतिक और आध्यात्मिक लाभ प्राप्त होने की जो बातें कही गई हैं, वह वस्तुतः सूर्य की दृश्य–अदृश्य शक्तियों की वैज्ञानिक शोध ही है । प्रयोगों का तरीका भिन्न है । मानसिक–ध्यान का है, पर उसकी वैज्ञानिकता में बिल्कुल सन्देह नहीं है । आज के वैज्ञानिकों ने जो खोजें की हैं वह इन बातों को अक्षरशः पुष्ट करती हैं ।

वनस्पति शास्त्र (बॉटनी) और कृषि शास्त्र (एग्रीकल्चर) के जानने वाले लोगों को मालूम है कि पृथ्वी पर जितने भी पेड़–पौधे दिखाई दे रहे हैं, वह सब सूर्य के अस्तित्व में होने के कारण ही हैं । सूर्य न होता, तो वृक्ष–वनस्पति का नाम भी न होता और शायद जीवन नाम की कोई वस्तु भी न होती । जिस प्रकार मकड़ी अपने पेट से धागे निकालती और अपना जाल बुनती रहती है, उसी प्रकार सूर्य–गर्भ से निकला हुआ प्रकाश ही सृष्टि का ताना–बाना बुनता रहता है । जब तक सूर्य है तब तक सृष्टि है । जिस दिन उन्होंने अपनी माया समेटी, उसी दिन सृष्टि का अन्त हुआ ।

वनस्पति का ९५ प्रतिशत भाग सूर्य से विकसित होता है । प्रकाश शक्ति का जिस क्रिया से रासायनिक शक्ति (केमिकल एनर्जी) में रूपान्तर होता है, उसे विज्ञान में बड़ा महत्त्व दिया गया है । इस क्रिया को प्रकाश–संश्लेषण (फ्रेटोसिन्थेसिस) कहते हैं । ऐसा जान पड़ता है कि वृक्ष–वनस्पतियां पृथ्वी से पोषण और जीवन तत्व प्राप्त करती हैं, पर यथार्थ यह नहीं । पृथ्वी से तो कुल ५ प्रतिशत विकास सामग्री ही उन्हें प्राप्त होती है ।

हाड्रिला प्लाण्ट परीक्षण से यह बात पूरी तौर पर सिद्ध हो गई है । हाड्रिला पानी में पाई जाने वाली एक प्रकार की घास–सेवार–को कहते हैं । उसे एक प्रकार के बर्तन में रखते हैं । ऊपर से जल से भरी हुई परीक्षण–नली (टेस्टट्यूब) लगाकर रखते हैं, इस यन्त्र को यदि विद्युत् के प्रकाश में रखें, तो कोई रासायनिक क्रिया नहीं होती । किन्तु जैसे ही उसे सूर्य के प्रकाश में लाते हैं, प्रतिक्रिया आरम्भ हो जाती है । सेवार जल ग्रहण करने लगता है और परीक्षण नली के ऊपरी सिरे पर बुलबुले उठने लगते है । इससे सिद्ध होता है कि प्रकाश न हो तो, वृक्ष–वनस्पति का थोड़ा भी विकास नहीं हो सकता । किसी पौधे को डिब्बे में बन्द करके इस तरह रख दिया जाये कि उसमें सूर्य के प्रकाश की किरणें बिल्कुल न पड़ें तो वह पौधा बढ़ेगा नहीं, पीला पड़ कर मुरझा जायेगा । पर यदि उसे फिर धूप में ले आयें, तो उसमें फिर से हरियाली आ जायेगी ।

प्रकाश–संश्लेषण की यह क्रिया न केवल पौधों के विकास में सहायक होती है वरन् उससे सृष्टि में एक ऐसी प्रक्रिया का निर्माण हो रहा है, जिससे मनुष्य और दूसरे जीवधारी भी प्राण धारण किऐ रहने में समर्थ हैं । यदि प्रकाश–संश्लेषण न हो रहा होता, तो मनुष्य का जीवित बना रहना सम्भव न होता । सूर्य से वृक्ष–वनस्पतियों और वनस्पतियों से मनुष्य जाति के सहयोग की यह पद्धति सचमुच बड़ी महत्त्वपूर्ण है । यदि उसे विराट् रूप से देखें या अनुभव करें तो पता चलता है कि सम्पूर्ण सृष्टि में जीवन के अनेक रूप होते हुए भी एक ही–प्रकाश की–यह प्रक्रिया काम कर रही है । यदि वह ठप्प पड़ जाये, तो सम्पूर्ण जीवन–प्रवाह रुक जाये।

पेड़ों की पत्तियों के निचले खुरदरे भाग में अति सूक्ष्म छिद्र जिन्हें 'रन्ध्र छिद्र' (स्टोमेटा) कहते हैं, एक प्रकार से श्वांस नलिका या रसोई घर का काम करते हैं । यह रन्ध्र छिद्र सूर्य–प्रकाश में हवा, कार्बन डाइऑक्साइड (यह एक प्रकार की दूषित गैस है, जो मनुष्य की सांस, मल–मूत्र और थूआं आदि से निकलती रहती हैं) खींचते हैं । जड़ें पानी लेकर पत्तियों में पहुंचाती हैं । सूर्य–प्रकाश कणों की उपस्थिति क्लोरोफिल (यह पेड़–पौधों का हरा वाला भाग है) के साथ पानी और कार्बन डाइऑक्साइड, कार्बोहाइड्रेट बनाते हैं । यह प्रक्रिया पत्तियों के 'मिजोफील' नामक स्थान में होती है । कुछ अंश पानी का बच जाता है, वह इस पकाये हुए भोजन को सारे शरीर में पहुंचाता है । इस तरह इस पके हुए अन्न में मिले सूर्य द्वारा प्रकीर्ण (रेडिएन्ट) प्रकाश के कण ही पौधे में जीवन, गति और विकास की प्रक्रिया को चलाते रहते हैं । इस रासायनिक क्रिया में ऑक्सीजन (यह गैस मनुष्य को जिन्दा रहने के लिए आवश्यक है) गैस बची रहती है । पत्तियां उसे उसी तरह निकाल देती हैं, जिस तरह हम गन्दी सांस निकालते हैं । इस तरह प्रकाश के द्वारा ही हमारी गन्दी सांस पौधे खाते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

हैं और हमारे लिये शुद्ध वायु तैयार करते रहते हैं । परस्पर सहयोग का, त्याग और सेवा का इससे अच्छा दूसरा उदाहरण संसार में न मिलेगा ।

हम अनुभव नहीं करते अन्यथा हमारे शरीर में जो प्राण और चेतना विकसित होती है वह सूर्य की इस अदृश्य प्रकाश शक्ति का ही प्रतिफल है । यह प्रकाश–कण चाहे सीधे मिलते हों अथवा अन्न के द्वारा, बात एक ही है । अन्न, फल, फूल, पत्ते जो कुछ भी खाते हैं उनमें यह प्रकाश–कण ही सोखे हुए रहते हैं । वैज्ञानिकों का तो यहां तक कहना है कि कोयला आग पकड़ते ही धधकने लगता है – इसका कारण भी कोयले में सूर्य–प्रकाश कणों की उपस्थिति होती है । सूर्य द्वारा प्रकीर्ण प्रकाश प्राण विद्युत् में किस प्रकार परिवर्तित होकर मनुष्य शरीर में पहुंचता है । इसका विस्तृत विवेचन वायु तत्व की व्याख्या में करेंगे ।

वैज्ञानिक सूर्य प्रकाश की स्थूल गति–विधि को ही अब तक जान सके हैं । हमारा मानसिक सम्बन्ध भी सूर्य से है और उसे शब्दों (मन्त्र) के द्वारा अनुभव किया जा सकता है । अभी इस बात को वैज्ञानिक नहीं जान पाऐ, पर भारतीय योग द्वारा मिलने वाले अनेक चमत्कारिक लाभों का रहस्य ही है कि हम अपनी आत्मा अर्थात् सूर्य की अक्षय शक्ति से सम्बन्ध स्थापित कर लेते हैं और उस शक्ति का मनमाना उपयोग कर सकने की स्थिति में हो जाते हैं । गायत्री सिद्धि इसी रहस्य का उद्घाटन और प्राप्ति है । प्राणी शब्द 'प्राण' से बना है । जिसमें प्राण है वही प्राणी है चाहे वह मनुष्य हो, पशु या पक्षी हो । प्राण इस प्रकार से एक स्वतन्त्र सत्ता है जो इन्द्रिय आदि शारीरिक अवयवों से भिन्न होती है । सृष्टि में जो कुछ भी दिखाई देता है वह प्राण की उत्पत्ति है । इसीलिऐ प्रश्नोपनिषद् में कहा है–

स प्राणमसृजत प्राणच्छ्रद्धां खं वायु ज्योतिरूपः पृथिविन्द्रियः मनोऽन्नम् ।

–प्रश्नोपनिषद् ६/४

अर्थात् परमात्मा ने प्राण उत्पन्न किया । प्राण से श्रद्धा, बुद्धि, आकाश, वायु, तेज, जल, पृथ्वी, इन्द्रियां, मन और अन्न सब बने ।

शास्त्रकार की इन बातों को समझने और अवगाहन करने के लिए यद्यपि यौगिक साधना पद्धतियां विकसित हुई हैं । प्राण की अनुभूति के लिए ही अनेक प्रकार के योगों का आविर्भाव हुआ । प्राचीन काल में इस देश के निवासियों ने प्राण तत्व पर एक प्रकार से अधिकार ही कर लिया था । इसीलिए हम भारतीय विश्व की सर्व समर्थ जाति बन सके थे । ज्ञान–विज्ञान हमारी मुट्ठी में था–वह इस शक्ति का ही चमत्कार था ।

प्राण को ही विवेकानन्द ने 'लेटेन्ट हीट' या 'साइकिफोर्स' कहा है । अर्थात् चेतना को धारणा करने वाली शक्ति ही प्राण है । प्राण शब्द की युत्पत्ति 'प्र' उपर्ग पूर्वक 'अन्' धातु जीवन शक्ति एवं चेतना वाचक है। इसीलिए प्राण शब्द का अर्थ चेतन शक्ति के लिए किया गया है ।

यह प्राण सूर्य की ही देन है अर्थात् विश्व में जितने भी प्राणी हैं, वह सूर्य का ही तेज धारण किए हुए हैं–समस्त चेतना सूर्य की ही है, क्योंकि यह प्राण सूर्य से ही आता है ।

उपनिषद् कहती है–

यथाग्नेः क्षद्रास्फुल्लिंगा व्युच्चरन्त्येव मेवास्पादात्मनः सर्व प्राणाः ।

–वृहदारण्यक २/१,२,२०

अर्थात् जैसे अग्नि से छोटी–छोटी चिनगारियां निकलती हैं, वैसे ही इस आत्मा से समस्त प्राण निकलते हैं ।

आत्मा की व्याख्या में शास्त्रकार ने बताया–

यौ असौ आदित्य पुरुषः सो असौअहम् ।

–यजुर्वेद ४०/१७

अर्थात् उस सूर्य मण्डल में जो पुरुष है, वही मैं हूं ।

सूर्य आत्मा जगतः तस्थुष च ।

–ऋग्वेद १/१२५/१

इस समस्त विश्व की आत्मा सूर्य हैं । इस सब का तात्पर्य यह हुआ कि अग्नि की चिनगारी के समान प्राण सूर्यलोक से स्फुरित होता है और वही वृक्ष, वनस्पति, नदी, नद और वायुमण्डल के माध्यम से गमन करता हुआ सृष्टि के अनेकों जीवों के रूप में दिखाई पड़ने लगता है । इसी से कहते हैं–यह जो कुछ चेतना है

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वह सब एक ही आत्मा–सूर्य या सविता है । प्रकाश के रूप में आने वाली उसी की प्राणशक्ति (सूर्य के प्रकाश में विद्युत्, ऊष्मा और गति तीनों ही होते हैं यही प्राण के भी गुण हैं इसलिए प्राण और सूर्य के प्रकाश में कोई अन्तर नहीं है) से पृथ्वी पर जीवन का आविर्भाव हुआ । हम स्थूल क्रियाओं, इन्द्रिय भोगों और पदार्थों तक ही सीमित न रहकर इस प्राण स्फुलिंग की शोध करते, तो निश्चय ही सूर्य की विराट् आत्मा की वैसे ही प्राप्ति और अनुभूति करते जैसे हमारे यहां योगी–यती और भक्तगण गायत्री आदि उपासनाओं से प्राप्त करते रहे हैं ।

***

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सूर्योपासना का ज्ञान-विज्ञान

वैदिक वाङ्मय में सूर्यदेव की अभ्यर्थना

वैदिक वाङ्मय सूर्य देवता के माहात्म्य उनकी विश्व संचालन में चेतात्मक भूमिका तथा सूर्योपासना के लाभों के विवरणों से भरा पड़ा है । वेद सूर्य को विश्व में जीवन और गति के महान प्रेरक के रूप में, अपनी पृथ्वी को अपने गर्भ से उत्पन्न करने वाले सृजेता के रूप में तथा समग्र संसार की चलायमान चैतन्य वस्तुओं में प्रमुख ग्रहाधिपति उन्हें मानता है । न केवल सूर्य वैदिक ऋषि की दृष्टि में चराचर विश्व का संचालक है, वह घड़ी, पल, अहोरात्र, मास व ऋतु आदि समय का प्रवर्त्तक भी है । ऋग्वेद में सूर्य की व्याख्या इस प्रकार है –

"सरति गच्छति वा सुरयति प्रेरयति वा तत्तद् व्यापारेषु कृत्स्नं जगदिति सूर्यः । यद्वा सुष्ठ ईर्यते प्रकाशपवर्षणादि व्यापारेषु प्रेर्यते इति सूर्यः ।" (६/११४/३ ऋग्वेद सायण भाष्य) यह नाम की व्युपत्ति का द्योतक भी व प्रवृत्तियों का परिचयात्मक वर्णन है ।

सूर्य को समर्पित चौदह सूक्तों में ऋग्वेद के ऋषि हमें बताते हैं –

"अग्नेरनीकं बृहतः संपर्य दिवि शुकं यजतं सूर्यस्य" १०/७/३ अर्थात् "आकाश में सूर्य का ज्वलन्त प्रकाश मानों अमूर्त्त अग्नि देव का मुख है ।" तथा **"शं नः सूर्य उरुचक्षा उदेतु"** (७/३५/८) अर्थात् वे दूर द्रष्टा है । "विश्वस्य जगतो वहन्ति" कहकर विद्वान ऋषि उन्हें इस जगती का पालक सर्वेक्षक बताते हैं ।

सूर्य को आदिकाल से ही चर और अचर विश्व सभी की आत्मा तथा उनका रक्षक माना गया है –**"सूर्य आत्मा जगस्तस्थुश्चच"** (ऋ १-११५-१ यथा यजु. ७-४२) इसी बात को दूसरे शब्दों में अन्य स्थान पर विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च गोपाः' (ऋग्वेद ७-६०-२) में भी प्रतिपादित किया गया है । ऋग्वेद के पाँचवें मण्डल के सूक्त ८१ की प्रारंभिक पाँच ऋचाओं की व्याख्या करते हुए श्री अरविंद अपनी ऐतिहासिक कृति "वेद रहस्य' में लिखते हैं कि वैदिक ऋषियों का सूर्य सत्य का अधिपति है, आलोक प्रदाता है, रचयिता है–"सविता' के रूप में तथा "पूषा' के रूप में पुष्टि प्रदाता है । उसकी किरणें अतः प्रेरणा व अंतर्ज्ञान की तथा प्रकाशपूर्ण विवेक की अति मानसिक क्रियाओं की द्योतक हैं । बड़ी ही सुन्दर व्याख्या सविता देवता की शक्ति-प्रक्रिया की तथा सूर्योपासना से सम्भावित उपलब्धि ऋग्वेद की इस ऋचा में है–

उतेशिषे प्रसवस्य त्वमेक इदुत पूषा भवसि देव यामभिः ।
उतेदं विश्वं भुवनं वि राजसि श्यावाश्वते सवितः
–स्तोममानशे॥

ऋग्वेद मंत्र ५– सूक्त ८१/मण्डल ५ इसका भावार्थ इस प्रकार होता है –"देवाधिपति सूर्य रचयिता, पोषक सविता है, समस्त लोकों को यह आलोकित करता है । इस प्रकार अत्रिकुल का श्यावश्व सविता को आत्मसत्ता के अंदर एक ऐसे आलोक प्रदाता सत्य के रूप में प्रतिष्ठत करने में सफल हो चुका है , जो रचयिता है, प्रगतिशील है, मानव मात्र का पोषक है – मनुष्य को अहंभाव की सीमा से निकाल कर विश्वव्यापी बना देता है, ससीम से असीम कर देता है ।"

–वेद रहस्य प्रथम भाग–पृ. ३७६

वैदिक ऋषियों के विचार में सत्य और प्रकाश पर्यायवाची शब्द हैं जैसे कि उनके विलोम अज्ञान व अंधकार भी पर्यायवाची हैं । यह सत्य है सूर्य की ज्योति, उसका शरीर यह सूर्य वह है जो सत्य के रूप में अंधकार में–अवचेतन की गुप्त गुफा में अवस्थित है किन्तु प्रयासपूर्वक उसका साक्षात्कार किया जा सकता है । वस्तुतः वेदों का अलंकारिक वर्णन उन्हें उन पवित्र धार्मिक ग्रन्थों के रूप में प्रकट करता है , जिनमें सूर्य की पूजा अथवा (सत्यम् सूर्यम्) सत्य के सूर्य को जो अज्ञानरूपी अंधकार से ढँका है, प्रकाशित करने की प्रक्रिया समझायी गयी है । **"सत्यं तदिन्द्रो दशभिर्दशग्वैः सूर्य विवेद तमसि क्षियन्तम् ।"**

–ऋ ३.३९.५ का उत्तरार्ध

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वेदों में स्थान-स्थान पर सूर्य के माहात्म्य के भिन्न-भिन्न उद्धरण मिलते हैं। ऋषि लिखते हैं-"पश्येम् नु सूर्यमुच्चरन्तम (ऋ ६-५२-५) अर्थात् जीवन का अर्थ ही सूर्योदय का वर्णन करना है। इस प्रकार सूर्य धरती पर जीवन के प्रकटीकरण के प्रतीक है। वे यह भी कहते हैं अभी प्राणी उन पर अबलम्बित है। "सूर्यस्य चक्षू रज सैत्यावृत्तं तस्मिन्नार्पिता भुवनानि विश्वा" ऋ. १-१६४-१४। यही नहीं वैदिक मनीषी के अनुसार सूर्य विश्वकर्मा हैं-सृष्टि रचयिता है "येनेमा विश्वा भुवनान्याभृता विश्वकर्मणा विश्वदेव्यावता ऋ. १०-१७०४ यही नहीं, वे उन सहस्र युग का आदि और अन्त है, जो ब्रह्मा का दिन कहलाता है-

यदहो ब्रह्मणः प्रोक्तं सहस्रयुग सम्मितम्।
तस्य त्वमादिरन्तश्च कालज्ञैः सम्प्रकीर्त्तितः॥

(-५/१७० महाभारत)

सूर्य व सविता की भ्रान्ति को वेद स्पष्ट करता है। सविता अर्थात् सम्पूर्ण ब्रह्माण्डों के सूर्यों में समान विराजमान,प्रेरक, दिव्यशक्ति रूप परब्रह्म परमात्मा। ऋषि के अनुसार प्रत्येक सूर्य सविता है।

सविता सर्वस्य प्रसविता (निरुक्त १०-३१)। सविता अर्थात् सबकाय प्रेरक। शतपथ के अनुसार सविता देवानां प्रसविता सविता देवों का भी पालन करने वाले प्रेरक हैं।

ऋग्वेद के चौथे मण्डल के चौदहवें सूक्त के दूसरे श्लोक में वर्णन आया है-

उर्ध्वं केतुं सविता देवो अश्रेज्योतिर्विश्वस्मै भुवनाय कृण्वन्।
आप्राद्यावापृथिवी अन्तरिक्ष वि सूर्यो रश्मि भश्चेकितनाः

अर्थात् "सविता देव ने अपनी ज्योति को ऊँचा उभारा है और इस प्रकार उसने समस्त लोकों को प्रकाशित किया है। सूर्य प्रखरता के साथ चमकते हुए भूलोक, पृथ्वी और अन्तरिक्ष को अपनी किरणों से आपूरित कर रहे हैं।" इसका अर्थ यह है कि "सूर्य भौतिक सौर-मण्डल के अधिपति हैं। जबकि सविता उनमे अन्तर्निहित दिव्य शक्ति का ध्यानावस्थित महर्षियों के अन्तः किरण में प्रादुभूत आध्यात्मिक प्रेरणा के अनुसार वर्णित रूप है। "यह सूर्य के आधिभौतिक के पश्चात् आधिदैविक व आध्यात्मिक रूप का वर्णन ही सविता देवता के रूप में है, कोई अलग रूप में नहीं।

वेद कहता है-"संपूर्ण विश्व का प्रसव करने वाले सर्वप्रेरक,सविता देवता ही अपने नियमन साधनों से वृष्टि प्रदानादि उपायों से पृथ्वी को सुखमय बनाकर रखते हैं तथा वे ही आलम्बन रहित प्रदेश में द्युलोक को दृढ़ रखते हैं, जिससे नीचे न गिरे। वे ही अन्तरिक्षगत होकर वायवीय पार्शो से बँधे हुए मेघमय समुद्र को दुहते हैं।

सविता मन्त्रै पृथिवीय रम्णा
दस्कम्भने सविता द्यामहंडत्।
अश्वमिवा धुक्षद्ध नियन्तरिक्ष
मतूर्त्ते बद्धं सविता समुद्रम्॥

-(ऋ. १०-१४६-१)

इस सूक्त में सूर्य के विराट स्तर पर क्रियाकलापों की एक झलक है।

सूर्य को पापनाशक माना गया है। उनका भर्ग ब्रह्मतेजस् पापनाशिनी शक्ति वाला है। यह स्तुति बड़े ही सुन्दर ढंग से ऋग्वेद के चौथे मण्डल के ५४-वें सूक्त (तीसरे श्लोक) में अभिव्यक्त हुई है-"हे सविता देव। आपका जीवन दिव्य गुणों से भरा हुआ है। हम अज्ञानवश आपके प्रति अपराध एवं श्रद्धा निष्ठा में प्रमाद कर देते है, हम अपनी चतुराई, ऐश्वर्य या पौरुष के मद से अन्य देवों या मनुष्यों के प्रति अपराध कर देते हैं आप उन सब अपराधों को क्षमा कर हमें सम्पूर्ण पापों से मुक्त कर दीजिए। हमारी यही अभ्यर्थना है।" इसी बात को १-११५-१ में-"हे प्रकाशमान सूर्य रश्मियो! सूर्योदय के समय प्रगट हो तुम हमें पापों से निकाल कर बचालों, जो निन्दित है, उससे हमारी रक्षा करो।"(अद्या देवा उदिता सूर्यस्य निरहंसः पिपृता निरवद्यात्)

इसीलिये पापों से मुक्ति व सद्बुद्धि की याचना वाला गायत्री मन्त्र सविता के ध्यान के साथ जपा जाता है तथा उद्यते नमः, उदायते नमः, उदिताय नमः (अथर्व १७-१-२२) एवं अस्तं यते नमोऽस्तमेष्ते नमोऽस्तमिताय नमः "सूक्तों में सूर्य उदय-प्रकट व अस्त तीनों दशाओं में नमन के साथ प्रार्थना, वेदों का ऋषि करता है।

सूर्य देव मानसिक शान्ति प्रदान करके सब प्रकार के सुख प्राप्त कराते हैं। जो मानव को अभीष्ट हैं। और व्रतों को पूर्ण करने की सामर्थ्य देते हैं-

"व्रतानि देवः सविता भिरक्षते"

(ऋ. ४-५३-४)

यजुर्वेद कहता है कि सूर्य स्वयम्भू है, इस सौर जगत में श्रेष्ट है, सारे जगत को प्रकाशित कर रहे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

हैं । सबको वर्चस् और ज्योति देते हैं । जो भी सूर्य के नियमों का अनुसरण करेगा, वह उनके ही समान वर्चस्वी बनेगा ।

स्वयंभूरसि श्रेष्ठो रश्मिर्वचोदा असि वर्चो मे देहि।
–सूर्यस्यावृतमन्ववर्त्ते (यजु.२–२६)

सूर्य देव कर्मयोगी को ही वांछित अनुदान देते हैं "सूर्य की प्रेरणा लेकर मनुष्य जिस मात्रा मे कर्म करता है, उसी मात्रा में पदार्थ अथवा अर्थ लाभ लेता है,"–यह भाव ऋग्वेद की इस उक्ति में आया हैं–

नूनं जनाः सूर्येण प्रसूता अयन्नर्थानि कृणवन्नपांसि ।
(७–६३–४)

वेदों के उपरोक्त उद्धरण एक ही तथ्य का उद्घाटन करते हैं कि मानव का आदर्श–लक्ष्य सूर्य सविता हो तो वह ब्रह्म का दर्शन ही नहीं उन्हें प्राप्त भी कर सकता है ।

श्रुति का अधिकारपूर्वक कथन है कि इस संसार जिसमें हम सब रहते हैं, की उत्पत्ति के पूर्व सर्वत्र अंधकार ही अंधकार संव्याप्त था ।"तमः आसीत्" इस वाक्य में भाव यही है सम्पूर्ण दिशाएँ अवर्णात्मक तम से व्याप्त थीं । किन्तु पूर्व में उदित होकर अनन्त आकाश में अपनी सम्पूर्ण आभा के साथ विचरण करने वाले परम तेजस्वी स्तुत्य भगवान सूर्य इस धरती व सृष्टि में जीवन प्रकाश एवं प्राण के कारण बने । छान्दोग्योपनिषद् में ऋषि कहता है–

"य एषोऽन्तरादित्ये हिरण्मयः पुरुषो दृश्यते
हिरण्यश्म, श्रर्हिरण्यकेश आप्रणरश्वात्सर्व एव सुवर्णः"
–(१–६–६)

इस प्रकार इसी सर्वशक्तिमान परमात्मा हिरण्यगर्भ के परम उत्कर्ष के रूप में उसके दिव्य तेज के दिग् दिगन्त-व्यापी–अंधकारमयी निशा में आत्म प्रकाश के रूप में उदित हो की बात कही गयी है । तात्पर्य यह कि इस दिव्य अध्यात्म प्रकाश के आविर्भाव के साथ ही सम्पूर्ण दिशाओं का अंधकार समाप्त हो गया व सारा संसार प्रकाशित आलोकित हो उठा ।

भारतीय संस्कृति आदि संस्कृति है–सबसे पुरातन सुंस्कृति है । अति प्राचीनकाल से लेकर अब तक किसी ने भी मानव जीवन के समस्त आयामों को इतना आकृष्ट–प्रभावित, चमत्कृत नहीं किया है जितना कि भगवान भुवन भास्कर ने । इसी कारण "आदि देव नमस्तुभ्यं " कहकर सृष्टि के प्रारम्भ में मानव के विकास का कारण सबने हमारे पूर्वज ऋषिगण इसी आदित्य की–सूर्य के तेज की अभ्यर्थना–अभिवंदना करते दिखायी देते हैं । सूर्य वस्तुतःसंस्कृति के विकास में एक महती भूमिका निभाते देखे जाते हैं ।"समय की कल्पना, दिन और रात का आना–जाना, मासों व ऋतुओं का क्रमिक विभाजन तथा चन्द्रमां जो सूर्य का ही एक भाग है के क्षय व वृद्धि द्वारा कृष्ण व शुक्ल पक्षों में बँटी मास व्यवस्था जैसे व्यावहारिक पक्ष जो मानव जीवन को आदिकाल से निरन्तर प्राभावित करते आये हैं, सूर्य की उपस्थिति के कारण ही सम्भव हो पाये हैं । मनुष्य की दैनन्दिन द्रिनचर्या का निमित्त कारण ही आदिकाल से सूर्य बना । जिस जलते आग के गोले के पिण्ड के रूप में सर्वप्रथम मानव ने सूर्य भगवान को देखा उन्हें प्राण का, शक्ति का, पुंज व भगवत्सता का स्वरूप माना । उनके उदित व अस्त होने के साथ ही उसकी सुव्यवस्थित जीवनचर्या बनी । इस प्रकार मानवी सभ्यता व संस्कृति के विकासक्रम में सूर्य भगवान को एक अति–महत्वपूर्ण भूमिका निभाते देखा जा सकता है ।

हमारे ऋषि वैदिककाल के आरम्भ से ही "भूमा वै सुखम् ।"(छान्दोग्य ,०–७–२३–१.७/२४/१) भूमा तद अमृतम् "की दृष्टि वाले रहे हैं । आर्ष ऋषियों की यह "भूमा' वाली दृष्टि उन्हें ससीम से असीम की ओर बढ़ने तथा उससे तादात्मय स्थापित करने की प्रेरणा देती रही है । इसी क्रम में एक तरफ जहाँ सृष्टि के नियामक रूप में उन्हें अनेक देवी-देवताओं के दर्शन होते हैं, वहीं तीनों लोकों में अपने को समाहित करने व त्रैलोक्य के नियन्ता के साथ तादात्म्य स्थापित करने की उत्कट अभिलाषा भी उनमें जाग्रत हुई । ऋषियों के इस दृष्टि से किये गये प्रयास ही हमारी उपासना पद्धति के मूल आधार बने । इस उपासना क्रम में सूर्योपासना का देवसंस्कृति में एक विशिष्ट व अति महत्वपूर्ण स्थान है । इसका एक प्रमुख कारण यह है कि सौर–मण्डल में सूर्य–चन्द्रादि नवग्रह, मरूत्गण सप्तर्षि व तैंतीस कोटि देवताओं का निवास बताया गया है । इन सब देवशक्तियों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का प्रतिनिधित्व हमारे ऋषि मनीषियों के अनुसार भुक्त भास्कर सूर्यनारायण ही आदिकाल से करते आये हैं। इसलिए " सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च" कहकर ऋग्वेद का ऋषि शाकल संहिता १-११५-१ में यह कहता है कि "जगम तथा स्थावर सभी प्राणियों की आत्मा भगवान सूर्य ही है।"

गीता में जहाँ भगवान कृष्ण विभूति वर्णन के प्रसंग में "ज्योतिषां रविरंशुमान्"(१०-२१) कह कर सूर्य देव की महत्ता प्रतिपादित करते हैं, वहाँ सुप्रसिद्ध गायत्री मन्त्र सूर्य की तेजःशक्ति की उपासना से मानव मात्र के सन्मार्ग पर चलने की बात कहता है तथा इसे ब्रह्मविद्या बताता है। (शुक्लयजु.३-३५-२२-६ एवं ऋग्वेद संहिता ३-६२-१०)। "आकृष्णेन रजसा" के माध्यम से ऋग्वेद शाकल संहिता १-३५-२ में वेदों में सूर्योपासना का प्रथम संकेत मिलता है। कृष्ण यजुर्वेद में तद्भास्कराय विद्महे प्रभाकराय धीमहि। तन्नोः भानु प्रचोदयात् (२-६-६) में सूर्योपासना की महत्ता बतायी गयी है। सूर्य की हमारी संस्कृति में कितनी ऊँची स्थापना की गयी है, यह आदित्यो ब्रह्म (छान्दोग्योप. ३-१६-१) "ब्रह्म ही प्रतीक रूप में आदित्य हैं" तथा असौ यः स आदित्यः (शत. ब्राह्मण ५०-५-१-४)। इन उद्धरणों का अवलोकन करने पर ज्ञात होता है।

ऋग्वेद के एक मंत्र में ऋषि स्तुति करते हैं कि "हे सूर्यदेव हम सभी उसी प्रकार परस्पर मिलते रहें व कल्याण पथ अनुसरण करते रहें जैसे आप एवं चन्द्रदेव हमें दिग्दर्शित करते हैं।" (स्वस्ति पन्थामनु चरेम् सूर्याचन्द्रमसासिवव-ऋ. ५-५१-१५) अर्थात् जैसे सूर्य व चन्द्रमा लाखों वर्षों से नियमित रूप से बिना किसी आलस्य प्रमाद के काम करते आए हैं, हम भी अपने विलास की भावना (चन्द्रमा प्रतीक रूप में) को विवेक भाव (सूर्य प्रतीक रूप में) के अधीन मर्यादित रखें। जब आवश्यकता पड़े तो अनीति से लड़ने हेतु सूर्य जैसे उग्र-प्रखर भी बनें तथा उत्तेजना की स्थिति में चंद्र जैसे शान्त भी बनें। यही नहीं "हे सवितादेव ! आप सब प्रकार के कष्टों पापों को दूर करें और जो कल्याण कारक हो, वही हमारे लिये करें उत्पन्न करें व हमें दें-"ॐ विश्वानि देव सवितर्दुरितानिपरासुव। यद् भद्रं तन्न आसुव ऋग.(५-८२-५) इस मंत्र में श्रेष्ठ विचारों को सब ओर से सूर्य के माध्यम से आमंत्रित किया गया है ताकि मानव चिन्तन सदैव सही विवेक युक्त बना रहे। उपरोक्त सभी उद्धरण यह बताते हैं कि सविता देवता की स्तुति को ऋषियों ने क्यों इतना महत्वपूर्ण माना तथा दैनन्दिन जीवन में श्रेष्ठतम स्थान दिया। "सविता सर्वस्य प्रसविता" सविता सबके उत्पादक जन्मदाता हैं, कहकर यह प्रतिपादित किया है सूर्य देवता ही समस्त प्राणी जगत को जीवन व प्राण देने वाले हैं।

देव संस्कृति के प्रणेता महामानवों ने अपनी दिव्य दृष्टि से अंतः स्फुरणाओं के रूप में जो भी कथन कहे वे श्रुति बन गये तथा जो भी प्रतिपादन अन्तर्जगत में स्वानुभूत प्रयोग सम्पन्न करके किए वे जीवन व्यावहार के सूत्र बन गए। अग्नि प्रज्वलन, जो मानव जाति का प्रथम अनुसन्धान था, का प्रेरणा स्रोत भी सूर्य ही है। वहाँ से लेकर सूर्य रश्मियों से चलने वाले रथों के अनुसन्धान तथा सूर्य द्वारा आरोग्य प्राप्ति के प्रयोगों से लेकर सूर्य किरणों सम वेग से चलने वाले कणों की खोज तक तथा मूल बलों के एकीकरण के प्रयोगों तक सभी में सूर्य की प्रधानतम भूमिका रही है। ऋषियों ने ही सर्वप्रथम जाना तथा कहा कि सूर्य से ही सांसारिक सृष्टि चक्र प्रवर्त्तित व संचालित है। सूर्य से ही प्राणी मात्र की उत्पत्ति होती है। सूर्य के कारण ही कृषि कार्य सम्पन्न हो पाता है। सूर्य से ही वृष, फूल, फल वनस्पति ओषधि और अन्न की उत्पत्ति सम्भव हो पाती है। सूर्य न हों तो सांसारिक सृष्टिचक्र चल ही नहीं सकता, इस प्रकार इस संसार चक्र के मूल में सूर्य ही है, यह हमें ऋषियों ने बताया व इसी कारण हम सूर्य देव को आदि देव मानकर अपना सांस्कृतिक विकास उसी क्रम से करते आये हैं।

पृथ्वी के व्यास से लगभग १०८ गुना बड़े, प्रायः आठ लाख चौंसठ हजार मील के व्यास वाले प्रकाश मण्डल की आभा लिये सूर्य को स्वयं सम्भवतः यह अनुमान न होगा कि ऊष्मा के पुंज उस दिनमान ने चौदह करोड़ से भी अधिक किलो-मीटर दूरी पर स्थिति पृथ्वी पर सभ्यता के विकास की प्रक्रिया में कितनी महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। ऋतु विभाजन व दिन-रात की सीमा निर्माण से लेकर वर्षा, सूखा यहाँ तक कि जीवन के सभी उपक्रमों में सूर्य की ही प्रमुख भूमिका है। पृथ्वी पर जल भी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सूर्य की ऊष्मा के ही कारण है तथा वृष्टि का जल भी सूर्य के ही कारण है। सूर्य की ऊष्मा ही पृथ्वी पर प्राप्त अग्नि तथा विद्युत का मूल कारण है, इस प्रकार सूर्य मानव के उद्भव से लेकर प्राणी मात्र के अस्तित्व का मूल कारण है, यह तथ्य सुनिश्चित है। इसी कारण सूर्योपासना अनादिकाल से न केवल भारत वर्ष में, जहाँ वैदिक संस्कृति का विकास सर्वप्रथम हुआ, बल्कि समस्त विश्व के विभिन्न भागों में भक्ति व श्रद्धापूर्वक की जाती रही है। विश्व संस्कृति कभी भारतीय संस्कृति ही थी, यह तथ्य सूर्य मन्दिर विश्व भर में स्थान-स्थान पर पाये जाने पर सुनिश्चित लगने लगता है। अमेरिका के रैड इण्डियनों द्वारा आबाद क्षेत्रों में सूर्य मन्दिर प्रचुर संख्या में पाये गये हैं। कालक्रम से ऋषि चेतना से संपर्क टूट जाने पर सभ्यता के विकास क्रम में वे संभवतः आगे बढ़ नहीं पाये किन्तु उपासना उनका दैनन्दिन जीवन का अंग बन गयी। कई प्रकार की सूर्य गाथायें हवाई द्वीप, जापान, अमेरिका तथा कैरिबियन द्वीपों में प्रचलित है जो बताती है कि सूर्य सब का उपास्य रहा है। चीन के विद्वानों ने तो सूर्य को आधार मानकर अपना समग्र खगोल शास्त्र तथा ज्योतिष-विज्ञान स्थापित किया है। वहाँ सूर्य को "यांग" तथा चन्द्रमा को "पिन" मानते हैं। तथा इनकी प्रतिनिधि धाराएँ इड़ा-पिंगला के रूप में शरीर में संव्याप्त मानते हैं। जापान सूर्य पूजक राष्ट्र है तथा दिनमान का आगमन सर्व-प्रथम उसी देश से हुआ माना जाता है। बौद्ध जातकों में सूर्य का प्रसंग वाहन के रूप में स्थान-स्थान पर आया है तथा अजवीथि, नागवीथि और गोवीथि नाम के मार्गों के आधार पर तीन गतियाँ उसकी मानी गयी हैं।

फारसी, अरबी में सूर्य को आफताब कहा गया है। इस्लाम में सूर्य को "इल्म अहकाम अननजूम" का केन्द्र माना गया है अर्थात् सूर्य इच्छाशक्ति को बढ़ाने वाली चैतन्य सत्ता के प्रतीक हैं। ईसाई धर्म में न्यूटेस्टामेण्ट' में सूर्य के धार्मिक महत्व का विशद् वर्णन है। सेण्ट पाल ने इसीलिये रविवार का दिन पवित्र घोषित कर इस दिन प्रभु की आराधना, दान दिये जाने आदि को अत्यन्त फलदायी पुण्य माना है। इसी कारण सारे विश्व के ईसाई रविवार को नियमित रूप से पूजाघरों में जाकर समूहिक प्रार्थना करते हैं। ग्रीक और रोमन विद्वानों ने भी इसी दिन को पूजा का दिन स्वीकार किया।

उपरोक्त सन्दर्भ तो विश्वभर के धर्म-मत-सम्प्रदायों व अन्यान्य सभ्यताओं के सूर्य सम्बन्ध में दिये गये हैं किन्तु भारतीय संस्कृति तो विशुद्धतः वैदिक संस्कृति को सूर्य संस्कृति के रूप में मानती व अपना आदि देव सूर्य देव को बताती चली आयी है। हमारी संस्कृति के अनुसार सूर्य ही ब्रह्मा है (उत्पत्तिकर्ता), सूर्य ही विष्णु है (पालनकर्त्ता) तथा सूर्य ही महाकाल है अर्थात् काल के समय का निर्धारणकर्त्ता। महाकाल को मृत्यु का देवता माना जाता है। सूर्य की ऊर्जा अर्थात् प्राणाग्नि जब तक शरीर में रहती है, तब तक प्राणी जीवित है। इसके निकल जाने पर वह नष्ट हो जाता है। यही नहीं सूर्य को गणपति भी कहा गया है। ग्रहों में सबसे प्रमुख होने के कारण सूर्य गणपति है तथा सभी ग्रह इसकी परिक्रमा प्रमुख होने के कारण ही करते हैं। सूर्य को इन्द्र अर्थात् देवताओं का राजा भी कहा गया हैं। हमारे कण्ठ से निकलने वाला स्वर भी सूर्य की ही देन है। "रव" अर्थात् स्वर इसमें "इ' प्रत्यय लगाकर रवि-स्वर उत्पन्न करने वाला या देने वाला-यह सूर्य का नाम बनता है। उच्चारण प्रदाता होने के कारण सूर्य को उद्गीथ" भी कहते हैं। महाभारतकार ने पाण्डव श्रेष्ठ युधिष्ठिर के मुख से सूर्य की स्तुति इस प्रकार करवायी है-

"त्वामिन्द्रमाहुस्त्वं रूद्रस्त्वं विष्णुस्त्वं प्रजापतिः।
त्वमग्निस्त्वं मनः सूक्ष्मं प्रभुस्त्वं ब्रह्म शाश्वतम्॥

"हे सूर्य! आप इन्द्र, रुद्र, विष्णु, प्रजापति, अग्नि, मन प्रभु और ब्रह्म हैं।"

वस्तुतः देव संस्कृति सूर्योपासना के माध्यम से माहात्म्य के प्रसंगों के माध्यम से भारतीय आध्यात्मिक जीवन का उच्चतम आदर्श प्रस्तुत करती है। "सत्यं तातान् सूर्यः (ऋग्वेद १-१०५-१२) आध्यात्मिक जीवन शैली का प्रतीक वाक्य है। वैदिककाल से ही सूर्य को आचार्य रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त है वैदिक युग से ही उपनयन में अपनी और विद्यार्थी की अंजलि जल से भरकर आचार्य के मन्त्र पढ़ने की विधि रही है (श्रेष्ठ सर्वधातमं तुरं भगस्य धीमहि-(ऋग्वेद ५-८२-१) एवं आचार्य शिष्य को आश्वासन देते रहे हैं कि जिस प्रकार सूर्य प्रकाश

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देकर जगत् का अन्धकार निरन्तर दूर करते हैं, वैसे ही आचार्य शिष्य का अज्ञानान्धकार दूर करते रहेंगे ।

मानव व सूर्य के आदिकाल से अब तक गहन भावनात्मक सम्बन्ध रहे हैं । वह मात्र जलता आग का गोला नहीं है अपितु मानव मात्र के लिए प्राणदाता–जीवन संरक्षक व उसके सांस्कृतिक विकास का परिचायक भी है । सूर्य का प्रत्येक गुण मानव के क्रमिक, आध्यात्मिक उत्थान का द्योतक है । यहाँ तक कि हमारी चिरपुरातन देव संस्कृति के जो भी महत्वपूर्ण प्रतिष्ठत तत्व हैं, उन सबके मूल में सूर्य देवता की ही प्रधान भूमिका मानी जाय तो कई अत्युक्ति नहीं होगी । संभवतः यही कारण रहा है कि यजुर्वेद में "सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा" (३–६) से लेकर प्रश्नोपनिषद् (१-८)"प्राणः प्रजानामुत्दयत्येष सूर्यः" के माध्यम से सूर्य की महिमा व स्तुति का गायन हुआ है । सूर्य मार्तण्ड भी कहलाते हैं, क्योंकि ये मृत अण्ड (ब्रह्माण्ड) में से होकर सारे जगत् को अपनी ऊष्मा तथा प्रकाश से जीवन दान देते हैं । ऐसे आदि देव की महिमा का गान करते हुए शास्त्र कहते हैं-

देवः किं बान्धवः स्यात्प्रियसुहृदथवाऽऽचार्य आहोस्विदर्यो ।
रक्षाचक्षुर्न दीपो गुरुरूत जनको जीवितं बीजमोक्षः ॥
एवं निर्णीयते यः क इव न जगतां सर्वथा सर्वदाऽसौ ।
सर्वाकारोपकारी दिशतु दशशतामीषुरभ्यर्थितं नः ॥

जिन भगवान सूर्यनारायण के विषय में यह निर्णय हो नहीं पाता कि वे वास्तव में देवता हैं या बान्धव, प्रिय मित्र हैं, आचार्य हैं, अथवा अर्च्य स्वामी । वे क्या हैं, रक्षा नेत्र हैं ? अथवा विश्व प्रकाशक दीपक । वे धर्माचार्य गुरु हैं अथवा पालनकर्ता पिता । प्राण हैं या जगत के प्रमुख आदि कारण बल हैं अथवा और कुछ ! किन्तु इतना निश्चय है कि सभी कालों, सभी देशों और दिशाओं में वे कल्याण करने वाले हैं । वे सहस्ररश्मि (भगवान सूर्य) हम सबका मंगल मनोरथ पूर्ण करें ।

सूक्ष्मातिसूक्ष्म देवशक्तियों का विधानः सूर्य विज्ञान

सूर्य हाइड्रोजन–हीलियम का चमकता गोला भर है, अथवा देवता, जिसकी उपासना वैदिक ऋषियों ने की । जो आज भी गुह्य विद्या के मर्मज्ञों का उपास्य है अथवा यह स्वयं सर्वव्यापी परमात्मा है । गायत्री महाविद्या के साधक जिससे एकत्व की अनुभूति करते हैं । पहेली विचित्र है । जो एक है वह तीन कैसे हो सकता है ? तीनों एक में किस तरह समाहित हो सकते हैं ? सवाल जितना उलझा हुआ है, जवाब उतना ही सरल है ।

संसार के हर तत्व की तरह सूर्य तत्व भी त्रिस्तरीय त्रिआयामी है । ये तीन आयाम हैं आधिभौतिक, आधिदैविक एवं आध्यात्मिक । देवसत्ता आधिदैवत् रहस्य है । मूल कणिकाएँ और भौतिक ऊर्जा-विकिरण उसके भौतिक पक्ष हैं । चेतनात्मक व्यापकता इसकी आध्यात्मिक अभिव्यक्ति है । सूर्य की तरह अग्नि वरुण आदि के सम्बन्ध में भी यही बात है । भारतीय मनीषियों ने इसको समझते हुए तीनों ही स्तरों पर उनका विवेचन, विश्लेषण किया है ।

इन तीनों रूपों को समझने के साधन–उपकरण माध्यम और विधियाँ अलग–अलग होती हैं । सिर्फ भौतिक विज्ञान द्वारा तीनों स्तरों का ज्ञान सम्भव नहीं होगा । आज–कल का विज्ञान आधिभौतिक स्वरूप की ही खोज–बीन में जुटा हुआ है । आधिदैविक रहस्य को समझने के लिए उपकरण भी आधिदैविक ही चाहिए । भौतिक पदार्थों से बने उपकरण चाहे कितने सूक्ष्म हों वे पदार्थ के रहस्य की ही खोज कर पायेंगे । भारतीय तत्वदर्शन में वर्णित देवोपासना को विज्ञान इन्हीं आधिदैवत, रहस्यों को खोजने की विद्या है, जिसके द्वारा–वरुण, अग्नि, इन्द्र सूर्य, गणेश, सरस्वती, सोम, उषा, सूर्य, धन्वतन्तरि, बृहस्पति आदि देव शक्तियों से संपर्क किया जा सकता है । यही नहीं उनकी विशिष्ट शक्ति–सामर्थ्य से स्वयं को समर्थ और बलवान बनाया जा सकता हैं । काल के प्रवाह में यह रहस्यमयी विद्या गुप्त भले हो गई हो पर लुप्त नहीं हुई है । सभी देवता परमात्मा की विभिन्न अलौकिक शक्तियाँ हैं । किसी के भी आश्रय से उस परम प्रभु को प्राप्त करने का विज्ञान था, उसे अब केवल कल्पना ही समझा जाता है ।

कणोंपनिषद में नचिकेता यम से प्रश्न करता है–
स त्वमग्नि स्वर्ग्यमध्येषि मृत्यो प्रब्रूहिं तं श्रद्धानायमह्यम् ।
स्वर्गलोका अमृतत्वं भजतं एतद् द्वितीयेन वृणे वरेण ।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"हे यमराज ! आप स्वर्ग की साधनभूत अग्नि को जानते हैं ।

मैं श्रद्धाप्लावित होकर आप से पूछता हूँ कि जिनके द्वारा स्वर्गीय पुरुष अमृतत्व प्राप्त करते हैं, उस अग्नि का वर्णन कीजिए ।" यह सवाल सुनकर आचार्य यम कहते हैं–

प्रते ब्रवीमि तुर्मे निबोध सस्वर्ग्यमग्निं नचिकेतःप्रजानन्।
अनंत लोकाप्तिमथो प्रतिष्ठों, विद्वि त्वमेतं निहितं गुहायाम् ॥

–कठ १–१–१४

"हे नचिकेता ! मैं तुझे अच्छी प्रकार अग्नि का उपदेश करता हूँ वह अग्नि स्वर्ग को प्रदान करने वाली है । अनन्त लोक की प्राप्ति कराने वाली है । उसका आधार बुद्धि रूपी गुहा में निहित है । तू उसे अच्छी प्रकार समझ ले ।"

इस मन्त्र में निश्चित रूप से अग्नि के परमाणविक स्वरूप को स्थिर करने का प्रयास किया गया है । मैत्रायणी उपनिषद् में उसे और अच्छी प्रकार स्पष्ट करते हुए शास्त्रकार ने बताया कि अग्नि हृदय कमल में स्थित है, वह जो अन्न खाता है वह जो मोक्षधाम द्यौ में स्थित कालाग्नि नामक परमेश्वर रूप अग्नि है, जो प्रलयकाल में समस्त भूतों को खा जाती है, अपने आप में लीन कर लेती है ।

उपरोक्त कथन में अग्नि का तात्विक विश्लेषण है । एक भौतिक आग है जो पदार्थों को जलाती है । लपट और गर्मी के रूप में जिसका अहसास होता है । दैविक रूप में यह अग्नि देव है, जिसकी सूक्ष्म शक्ति सर्वव्याप्त है अर्थात् अग्नि एक व्यापक तत्व है, जो दृश्य भी है, अदृश्य भी । अदृश्य अवस्था वाली अग्नि की व्यापकता ही दैवी सत्ता का बोध कराती है । शरीर, मन और वाणी की तेजस्विता इन्हीं की कृपा से विकसित होती है । कालाग्नि के रूप में यही परमेश्वर है ।

ऋग्वेद के ७–८७–२ मन्त्र वरुण देवता की स्तुति करते हुए मन्त्र द्रष्टा कहते हैं– "समस्त नदियाँ वरुण के आदेश से ही बहती हैं । यह आकाश देव हैं, अन्य देव इनके अनुयायी हैं । इनका आदेश सर्वोपरि है । यह देव जिस व्यवस्था का संरक्षक है, उसे ऋत कहते हैं, विश्व सृजन के पूर्व भी "ऋत" था । इसके रहस्य को जानने वाला ऋताचारी होता है । "

वरुण "वर' धातु से बना है, जिसका सअर्थ आच्छादन करना होता है । एक तत्व जो समस्त लोकों में अवस्थानुसार परिवर्त्तित होकर ऋतु नियमन करता है । यदि ऋतुएँ न हों तो संसार शून्य हो जाये । यह बात प्लेटो के यूनिवर्सल सिद्धान्त से बहुत मिलती जुलती है । वैज्ञानिक आज विस्तृत रूप से ऋतु–विज्ञान की खोज कर रहे हैं । इस खोजबीन में वैज्ञानिकों को कहीं भी वर्षा करा लेने का सिद्धान्त ढूँढ़ निकालने में सफलता मिल गई है । यह वरुण विज्ञान की छोटी सी स्फलिंग मात्र हैं । यदि यह मालूम हो सके कि ऋतु का नियमन करने वाली ऐसी कोई अदृश्य सत्ता है, जिससे ऋषियों ने वरुण देवता कहा है, तो उससे सम्पर्क स्थापित कर कोई व्यक्ति ऋताचारी या मौसम विज्ञान का निष्णात् और नियत्रंक हो सकता है ।

सोम, ऊषा, अदिति के बारे में भी विस्तृत विवेचन शास्त्रों मिलते हैं । किन्तु खेद है कि आज के पढ़े–लिखे लोग देवताओं की इन शक्तियों और स्वरूपों को बाल कल्पना मानकर उपेक्षित कर देते हैं । फ्लीटरट और ब्लूम फील्ड जैसे पश्चिमी चिन्तकों ने देवताओं के सम्बन्ध में भारतीय तत्व विज्ञान का जो मजाक बनाया था पाश्चात्य से प्रभावित व्यक्ति उसी को ठीक मानते चले आ रहे हैं । प्रसन्नता की बात है कि आज का विज्ञान इस देवशक्तियों के भौतिक स्वरूप को समझकर भ्रान्त धारणाओं को खण्डित कर रहा है ।

देवता किसी की प्रति–कृति नहीं वरन् विशिष्ट गुण या शक्तियाँ सूक्ष्म जगत में सचमुच क्रियाशील हैं । विज्ञान इनके दैविक रहस्य भले न पा सका हो, पर उसने इनके भौतिक स्वरूप से यान्त्रिक सम्पर्क पाने में जरूर सफलता पायी है । उदाहरण के लिए गणेश को असाधारण स्मृति और लेखन वाला देवता मानते हैं । पौराणिक कथा है कि व्यास जी द्वारा बोले गए १८ पुराणों को सुनकर उन्हें शब्द बद्ध कर सकने का गुरुतर कार्य गणेश जी ही सम्पन्न कर सके थे, इस असाधारण मानवीय स्मृति पर अर्धदग्ध मनुष्य शंका और सन्देह कर सकते हैं, वैज्ञानिक नहीं । आज के कम्प्यूटर युग में ऐसे–ऐसे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कम्प्यूटरों का निर्माण हुआ जिसे दफ्तरों, बैंकों आदि के काम में दस हजार गुना तेजी आयी है । सोलह सौ फाइलें रखने में कई अलमारियाँ लग सकती हैं । पर इसमें कुल तीन घन फीट में इतनी फाइलों की जानकारी को सँजोया जा सकता है । जब भी चाहें किसी पन्ने को खोलकर सारा ब्यौरा प्राप्त कर सकते हैं ।

मनुष्य हाथ से जब तक एक अंक लिखता है । तब तक कम्प्यूटर से १६ बड़े-बड़े अंकों के गुणन लघुत्तम समापवर्तक निकाले जा सकते हैं इंसान ज्यादा से ज्यादा ५.००० शब्द याद रख सकता है पर उसकी स्मरण क्षमता क्षमता ६०.००० शब्दों से भी अधिक हैं । मनुष्य कठिनाई से चार छः भाषाएँ सीख कर एक बार में याद रख सकता है । कम्प्यूटर के लिए १५-१५ भाषाओं का ज्ञान रखना आसान बात है । यही नहीं इससे एक भाषण एक ही समय में १५ भाषाओं में अनुवाद भी किए जा सकते हैं ।

यह स्मरण शक्ति का छोटा सा चमत्कार है । जो गणेश सत्ता के भौतिक अणु-परमाणुओं से यान्त्रिक सम्पर्क साधकर वैज्ञानिकों ने सम्पन्न किया है । भौतिक रूप से परे गणेश सत्ता की दैवी शक्ति अनन्त गुना शक्तिशाली है । इसकी विधि उपासना किसी भी व्यक्ति की बौद्धिक क्षमताओं में चमत्कारी परिवर्तन ला सकती है ।

सूर्य की शक्तियाँ इन सभी देव शक्तियों में भी कहीं अधिक बढ़ी-चढ़ी हैं । इसे समूचे काल चक्र का नियन्ता माना गया है ।

सप्त युञ्जन्ति रथमेक चक्र
मेको अश्वो वहति सप्तनाम।
त्रिनाभि चक्र यजर भनर्व
यत्रेमासविश्वा भुवामाधि तस्थु ।

(ऋग. १-१६४-२)

सूर्य के एक पहिए के रथ में सात घोड़े जुड़े हुए हैं । वस्तुतः (घोड़े सात नहीं) एक ही सात नाम का या सात जगह नमन करने वाला घोड़ा इस रथ को चलाता है । इस रथ चक्र की तीन नाभियाँ हैं । यह चक्र शिथिल नहीं, अत्यन्त दृढ़ है और कभी जीर्ण नहीं होता । इसी के आधार पर सारे लोक स्थिर हैं । यह हुआ सीधा शब्दार्थ ।

इसके विज्ञान पर विचार करें तो सौर जग-मण्डल सूर्य किरण क्रान्त ब्रह्माण्ड ही सूर्य का रथ है । संवत्सर इस रथ का चक्र माना गया है । वस्तुतः संवत्सर रूपी काल ही इस अखिल जगत को फिरा रहा है । काल के कारण ही जगत घूम रहा है । इस संवत्सर रूप चक्र की तीन नाभियाँ है । अर्थात् एक साल में तीन बार जगत की स्थिति बिल्कुल पलट जाती है । वे ही तीन ऋतुएँ (शीत, ऊष्ण, वर्षा) चक्र की नाभियाँ हैं ।

सूर्य मण्डल किसी के आधार पर नहीं है इसलिए अनर्वम् है । यह अजर है अर्थात् जीर्ण नहीं होता और इसी के आधार पर सम्पूर्ण लोक स्थिति हैं । इस व्याख्या के अनुसार सूर्य मण्डल के आकार्षण से सब लोग बँधे हुए हैं एवं सूर्य अपने ही आधार पर है । वह किसी दूसरे के आकर्षण से बँधे नहीं हैं । निःसंदेह काल के ही आधार पर सब हैं । काल किसी के आधार पर नहीं हैं । फिर काल कभी बूढ़ा भी नहीं होता ।

वैज्ञानिकों ने सूर्य देव के भैतिक रूप से सम्पर्क कर प्रकाश, ऊर्जा और यत्किचित काल ज्ञान प्राप्त किया है । इसका दैविक पक्ष कहीं अधिक सशक्त और रहस्यमय है । इसकी उपासना से पवित्रता, प्रखरता, वर्चस् तेजस्, जैसी सिद्धियाँ पायी जा सकती हैं । ब्रह्माण्ड के रहस्य जाने जा सकते हैं । लोक-लोकान्तर के रहस्यों को प्रत्यक्ष किया जा सकता है ।

इस सृष्टि में सूक्ष्म देव शक्तियाँ अनगिनत रूपों में संव्याप्त हैं वैज्ञानिकों ने इनके भौतिक रूप को साधकर अनेकानेक करतब प्रस्तुत किये हैं । दरअसल इनकी दैवी क्षमताएँ, भौतिक क्षमताओं से लाख गुना चमत्कारी हैं । देव शक्तियों का यह विधान अपने आप में वैज्ञानिक सिद्धान्तों से अलग नहीं है । इस विज्ञान को विकसित किया जा सके तो मनुष्य की शक्ति-सामर्थ्य में अनन्त गुनी वृद्धि की जा सकती है ।

यह देव शक्तियाँ अन्तरिक्ष में अनन्तकाल से विद्यमान हैं और उनका सूक्ष्म प्रतिनिधित्व मानव शरीर में भी भरा है । भारतीय तत्वतेत्ता इन शक्तियों के साथ सम्पर्क करने का आध्यात्मिक स्तर पर प्रयत्न करते रहे हैं । उपासना एवं तपश्चर्या वस्तुतः एक ऐसे उच्चस्तरीय विज्ञान का ही प्रतिपादन करती है । जिसके लिए मशीनों की नहीं वरन् पवित्रता और सात्विकता से निमित्त बने व्यक्तित्वों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की आवश्यकता होती है । सूर्य देवाधि देव हैं । उनसे उपासनात्मक सम्पर्क मानवी व्यक्तित्व को अनन्त अलौकिक शक्तियों का अधिपति बनाता हैं ।

मधु विद्या को जाने सविता का अमृत पियें

सविता अमृत तत्व का स्रोत है । इसकी उपासना साधक के जीवन में प्राण भरती, मन में उल्लास तरंगित करती और आत्मा को उसके अमृत स्वरूप का बोध करा देती है । इसकी ओर से साधक का ध्यान हट न जाए ऐसी सर्तकता रखते हुए अध्यात्म विद्या के अन्वेषक मनीषियों ने जगह–जगह पर उसके अर्थ, गुण, कर्म एवं स्वरूप को प्रतिपादित किया है ।

छान्दोग्य–उपनिषद् में वर्णित मधुविद्या इस रहस्यमय तत्व का सर्वांगीण विवेचन हैं । स्थान–स्थान पर बिखरी उपासना की रहस्य रश्मियाँ–एकत्रित होकर यहाँ प्रकाशित हैं । इस उपनिषद् के प्रथम खण्ड के प्रथम बारह श्लोकों में मधुविद्या एवं सविचा साधना को मनोरम ढंग से समझाया गया है । इसके अनुसार आदित्व देवताओं का मधु है–

ॐ असौ वा आदित्सयो देव मधु तस्यद्यौरेब ।
तिरश्चीनवँ शोऽन्तरिक्षमपूपो मरीचयः पुत्राः ।
(छा.उ. ३–१–१)

अर्थात् "ॐ यह आदित्य निश्चय ही देवताओं का मधु है । द्युलोक ही वह तिरछा बांस है, जिस पर यह मधु लटका है । अन्तरिक्ष छत्ता है और किरणें मधुमक्खियों के बच्चे के समान हैं ।"

इस मन्त्र में जहाँ तत्वदर्शी ऋषियों द्वारा साक्षात्कृत परम तत्व की अनूठी अभिव्यन्जना की गई है वहीं उनकी वैज्ञानिक जानकारी का भी परिचय मिलता है । आदित्य का आधिभौतिक रूप परमाणु है । आधुनिक विज्ञान पदार्थ विद्या मात्र होने के कारण मात्र पदार्थ तत्वों का विश्लेषण करता है । इसलिए उसकी पदावली मात्र भौतिक द्रव्य के लिए निर्दिष्ट होती है । आमतौर पर आधुनिक परिवेश में पले और पढ़े लोग इसे ही एक मात्र सही वैज्ञानिक विधि मान बैठते हैं । क्योंकि वे मस्तिष्कीय क्षमतायें जो कि चिन्तन प्रणालियों का निर्धारण करती हैं, वे अभ्यस्त क्रम का ही विचार करने में सुविधा का अनुभव करती हैं । यही कारण है कि मनुष्य अपने प्रिय एवं परिचित विषय को ही बार–बार सुनना, देखना एवं अनुभव करना पसन्द करता है और थोड़े हेर–फेर से उसी अनुभव को दुहराने को वह नयापन–नवीनता आदि कहता समझाता रहता है । उस प्रचलित ढर्रे से भिन्न सोचने, करने वाले को सामान्य मनुष्य न समझ पाते और न सहपाते हैं । वे उसे अप्रामाणिक, अशास्वीय,अवैज्ञानिक आदि कहने लगते हैं । बाद में काल क्रम से जब वह नया प्रतिपादन उनके लिए जाना–पहचाना हो जाता है तब वे उसे तो स्वीकार कर लेते हैं, किन्तु अगले नये प्रतिपादन, नये अन्वेषण के प्रति पुनः वैसी ही प्रतिक्रिया करते हैं ।

यह सब यहाँ इसलिए स्मरण करना आवश्यक लगा क्योंकि इन दिनों जो वैज्ञानिक पदावली चली है उसमें सिर्फ पदार्थ तत्व का निर्देशन रहने से लोग उसे ही एक मात्र वैज्ञानिक अभिव्यक्ति मानने लगे हैं । किन्तु प्राचीन भारतीय चिन्तक वैज्ञानिकों की अभिव्यक्ति-प्राणाली भिन्न थी । वे मात्र पदार्थ विद्या के जानकार नहीं होते थे अपितु देवतत्व तथा आत्म तत्व के भी मर्मज्ञ होते थे । अपनी इस समग्रता के कारण उन्होंने अभिव्यक्ति की एक ऐसी प्रणाली का आविष्कार किया था जिसमें एक सही पदावली एक साथ आधिभौतिक, आधिदैविक एवं आध्यात्मिक तीनों ही अभिप्रायों, अर्थों को अभिव्यक्त करती थी । ऐसा करना जहाँ आज की अभिव्यक्ति शैली से बहुत अधिक जटिल–कठिन कार्य था, वही जनसामान्य के लिए वह आधुनिक शैली की तुलना मे अधिक उपयोगी एवं लाभकारी था । उनका एक साथ ही तीनों स्तरों पर प्रशिक्षण होता चलता था, स्पष्टतया इस अभिव्यक्ति प्राणाली के लिए अनुपम मेधा की आवश्यकता है, जो ऋतम्भरा प्रज्ञायुक्त ऋषियों में ही सम्भव हैं ।

उपरोक्त मन्त्र भी उसी महान भारतीय शास्त्रीय शैली में सविता तत्व का विवेचन है । आदित्य का आधिभौतिक रूप है परमाणु, आधिदैविक रूप है, ग्यारह प्रमुख देवगणों में से एक आदित्य देव तथा आध्यात्मिक रूप है चेतना–आदित्य, सर्वव्यापी सविता ब्रह्म । यत्पिण्डे–तत ब्रह्माण्डे की अद्भुत शैली में ही सृष्टि सरंचना होने के कारण ही ऐसा प्रतिपादन संभव हो सका है क्योंकि जो अणु में है वही विराट रूप में, विभू में है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यहाँ इस मन्त्र में आदित्य का जो वर्णन है, वह परमाणु पर भी लागू होता है। तिरछे बाँस की तरह का द्युलोक परमाणु में इलेक्ट्रन की भ्रण कक्षा वाला बाह्य स्तर हैं। आर्बिटल्स से युक्त परमाणु-कलेवर ही मधु का छत्ता है। परमाणु के इन अन्तस्थ कोष्ठकों में जो फोटॉन कण होते हैं वे ही मधुमक्खियों के बच्चे रूपी मरीचि हैं। भौतिक सूर्य पर भी यही विवरण लागू होता हैं, क्योंकि वह ऐसे ही परमाणुओं की एक विशाल, विराट "मास" ही तो है। फोटोनों में विद्युत चुम्बकीय ऊर्जा भरी रहती है और वे सूर्य किरणों की तरंगों में समाहित रहते हैं।

फोटॉन प्रकाश कण हैं, यह अब सर्व विदित है। मरीचि सूर्य की रश्मियों के ही नाम है। सूर्य का भी एक नाम मरीचि था, मरीचि है। यहाँ अभिव्यन्जित आदित्य का आधिदैविक अर्थ आदित्य देवगण हैं। जो दृश्य यानि प्रकाश विकिरण ऊर्जाओं के स्तर पर सक्रिय चेतन शक्तियाँ हैं। आध्यात्मिक दृष्टि से यह आदित्य सर्वव्यापी सविता ब्रह्म है। वह देवताओं का मधु है। चेतन देव सत्ताओं की अमरता और मधुमयता का उद्गम स्रोत सविता ही है। "सविता वा देवानहं प्रसतिवा" शास्त्रीय कथन है। सविता ही देवों का सप्रसविता है। उसी से मधु रस ग्रहण कर देव सत्ताएँ बलवान बनती हैं। यह मधु सम्पूर्ण अन्तरिक्ष में संव्याप्त है। अन्तरिक्ष या आकाश तत्व ब्रह्माण्ड व्यापी अमूर्त मौलिक तत्व है। उसमें जो चेतना का मधु भरा है, वही आदित्य या सविता है। देव-ऊर्जायें उसी से शक्ति या प्राण-रस, मधु-रस ग्रहण करती हैं।

उपनिषत्कार में इससे आगे सूर्य से चारों ओर विकीर्ण होने वाली रश्मियों को मधु नाड़ियाँ कहा है। इन मधु नाड़ियों से भिन्न-भिन्न दिशाओं में प्रवाहित मधु की चर्चा की गई हैं। इस सम्बन्ध में जहाँ तक आधुनिक भौतिकी का प्रश्न है, वह सृष्टि के मूल कणों की खोज के क्रम में इस तथ्य तक तो पहुँच चुकी है कि परमाणु नाभिक के परितः ऊर्जा स्तरों में इलेक्ट्रॅन कण परिभ्रमण करते रहते हैं। यह परिभ्रमण गति आवर्तक होता है। किन्तु इस गति को दिशा और उसके सापेक्ष वेग का निर्धारण आधुनिक भौतिकी के द्वारा अभी सम्भव नहीं हो सका हैं। कारण यह है कि इलेक्ट्रॉन की ठीक-ठीक स्थिति एवं उसके वेग का वैज्ञानिक अध्ययन प्रयोगशाला में प्रकाश रश्मि के ही उपयोग से किया जाता है और स्वयं प्रकाश रश्मि में फोटन कण होते हैं जो सृष्टि के मूल कणों में से एक हैं तथा अजर अमर हैं।

प्रकाश वेग से चलने वाले ये कण इलेक्ट्रॉन से टकराकर उसके संवेग और उसकी स्थिति एवं दिशा में अन्तर उत्पन्न कर देते हैं। इस प्रकार जिस वैज्ञानिक उपकरण के माध्यम से वैज्ञानिक इलेक्ट्रॉन की गति एवं स्थिति की जानकारी पाना चाहते हैं। वह खुद भी अपनी सूक्ष्मता एवं प्रखरता के कारण इस सूक्ष्म इलेक्ट्रॉन कणों को प्रभावित कर देता है और सही-सही अध्ययन, परीक्षण-निरीक्षण, विश्लेशण-असम्भव हो जाता है। जबकि मधु विद्या के ज्ञाता एवं विवेचक आचार्यों ने चैतन्य विकरण ऊर्जाओं की गति एवं दिशा का भी विवेचन किया है। जिससे उनकी वैज्ञानिक क्षमता के भी अति विकसित होने का पता चलता है।

आदित्य से निकलने वाली विकिरण ऊर्जाओं का यह विश्लेषण इस प्रकार किया गया है।

"तस्य ये बाञ्चो रश्मयस्ता एवास्य प्राच्योमधुनाऽयः। ऋच एव मधु क्रत, ऋग्वेद एवं पुष्पं ता अमृता आपसता वा एवा ऋचः।

एवम् ऋग्वेदमभ्वस्तयां स्तस्याभितप्तस्य यशस्तेज इन्द्रियं वीर्य भन्नथ्व रसोऽयाजत।

तद्वयक्षरतदादित्यमभितोऽश्रयत्तद्वाएतद्यदेतदादित्सयस्य रोहितं रूपम्।"

(छा. उ. ३-१-५.३१४)

अर्थात् उस आदित्य की पूर्ववर्ती दिशा की किरणें ही इस अन्तरिक्ष रूपी छत्तें के पूर्व दिशावर्ती छिद्र हैं, ऋचाएँ ही मधुकर हैं। ऋग्वेद ही पुष्प हैं, सोम आदि अमृत जल हैं। उन ऋक् रूप मधुकरों ने ऋग्वेद को अभितृप्त किया। अभितृप्त ऋग्वेद से यश, तेज, इन्द्रिय, वीर्य, एवं अन्न का आद्य रूप "रस' उत्पन्न हुआ। वे सब जाकर आदित्य के पूर्व भाग में आश्रय पाकर वहीं उस आदित्य के लाल रूप में प्रतिष्ठित हैं।

इसी तरह इसी अध्याय के दूसरे खण्ड में कहा गया हैं "अथ येऽस्य दक्षिण रश्मयस्ता एवास्य दक्षिणा मधुनाड्यो जयूँ प्येव मधु कृतों यजुर्वेद एवं पुष्पं ता अमृता आपः।" (छा. ३-२-१)

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अर्थात् इस आदित्य की दक्षिण दिशा की किरणें ही इसकी दक्षिणा दिशावर्ती समधु नाड़ियाँ हैं। यजु श्रुतियाँ ही इसकी मधुकर हैं। यजुर्वेद ही पुष्प हैं, सोमादि जल है, आदि।

आगे तीसरे खण्ड में "अथयेऽस्य प्रत्यञ्चो रश्यमयस्ता एवाच्य प्रतीच्यो मधुनाड्यः" आदि कहकर पश्चिमी छिद्र से प्रस्तुत पश्चिम दिशावर्ती किरणें ही पश्चिमी मधुनाड़ियाँ कहीं कई हैं। साम श्रुतियाँ उनके मधुकर एवं सामवेद पुष्प बताये गये हैं।

(छा.-३-३-१)

चौथे खण्ड में उत्तर दिशा की ओर प्रवाहित किरणें उत्तरी मधुनाड़ियाँ बताई गई हैं। अथर्वागिरस उनके मधुकर और इतिहास पुराण ही पुष्प हैं।

(छा.३-४-१)

पाँचवे खण्ड में ऊर्ध्व रिश्मयों का वर्णन है। "अथ येऽस्योध्वी रश्मयस्ता एवास्योध्वी मधुनाडयों गुह्य एवादेशाप मधुकृतो ब्रह्म वै पुष्पं" इन ऊर्ध्व नाड़ियों के मधुकर गुह्य आदेश ही हैं और ब्रह्म ही इनका पुष्प है" आदि।

(-छा.३-५-१)

इन प्रतिपादनों के सूक्ष्म आधिभौतिक स्वरूप की पुष्टि तो आधुनिक भौतिकी के भावी शोध-निष्कर्षों पर निर्भर है। यों स्थूल भौतिक स्वरूप तो स्पष्ट ही है। सूर्य चारों ओर किरणें फेंकता है। ऊध्वर्गारोही किरणों का रहस्य अभी भौतिकी की नजर से ओझल है। पहले खण्ड में आदित्य के रक्त वर्ण का संकेत है, दूसरे खण्ड में शुक्ल वर्ण का, तीसरे में कृष्णा और चौथे में आतिकृष्ण का।

सूर्य उगते समय रक्त वर्ण का रहता है। थोड़ी देर बाद शुक्लोज्ज्वल हो जाता है। पीछे जहाँ छाया रहती है अर्थात् पृथ्वी के जिस हिस्से में सूर्य प्रकाश नहीं पहुँच रहा होता है, वहाँ की दृष्टि से उसका तेज कृष्ण यानि कि सायंकाल के उपरान्त की आभा वाला तथा और गहरी रात्रि में व्यतीत होने वाली गहरी कालिमा, अधिक काली आभा वाला कहा गया है। आधिदैविक स्वरूप इन पाँच विकरण ऊर्जाओं की चेतना के मूल में सक्रिय पाँच देवगण हैं। वसुगण, रुद्रगण, आदित्यगण, मरुद्गण, एवं साध्यगण। इनकी पर्याप्त भौतिक ऊर्जायें क्रमशः रेडियो विकिरण ऊर्जा, अवरक्त विकिरण ऊर्जा, दृश्य विकिरण ऊर्जा एक्स विकिरण ऊर्जा हैं। ये पाँच विकिरण ऊर्जायें इन पाँच देवगणों की वाहन हैं। इनके मूल में सक्रिय चेतना प्रवाह ही देवगण हैं।

उपनिषद् में विवेचित मधु विद्या का सर्वाधिक महत्वपूर्ण पक्ष इसका आध्यात्मिक अर्थ है। इसमें सविता के प्रवाह के माध्यम पाँच अन्तरिक्षीय छिद्रों को बताया गया है। इसी छान्दोग्य उपनिषद के तीसरे अध्याय में आगे तेरहवें खण्ड में उनका विवेचन हैं। उन्हें पाँच देव ऋषि कहा गया है और उनसे प्रवाहित पाँच प्राण प्रवाहों प्राण, अपान, व्यान समान एवं उदान का उल्लेख स्पष्टतः किया गया है। प्रगट है कि सर्वव्यापी चेतना सूर्य सविता जो समष्टि प्राण हैं, उससे प्रवाहित पाँच प्राण धारायें ही अन्तरिक्षीय छिद्रों से बहने वाली पाँच प्रकार की किरणें हैं। इनमें से चार प्राण प्रवाहों से क्रमशः ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद एवं अथर्ववेद पुष्पित बतलाये गये हैं। यहाँ वेद से तात्पर्य ग्रन्थ रूप में उपलब्ध वैदिक संहिता से नहीं है। अपितु चेतना में परा एवं पश्यंती वाक् के रूप में स्फुरित ज्ञान प्रेरणाओं से है, क्योंकि इन्हीं पुष्पों से मधुकर रस ग्रहण करते हैं। ऋचाएँ यजुः श्रुतियाँ साम श्रुतियाँ एवं अथर्वाङ्गरस श्रुतियाँ मधुकर कहीं गई हैं। अर्थात् वे श्रुतियाँ मूल ज्ञान चेतना की वाहक हैं। उनमें वही ज्ञान चेतना प्रकाशित है। मधुकरों का सत्व पुष्प रस है। श्रुतियों का सत्त्व वहीं परावाक् तथा पश्यंती वाक् है, जो समस्त ज्ञान-विज्ञान का आधार है। इस प्रकार मूल ब्राह्मी चेतना ज्ञान-विज्ञान इतिहास पुराण आदि विविध ज्ञान रूपों में अभिव्यक्त होती रहती है। ये सभी ज्ञान रूप सविता की ही किरणें हैं। ऐसा यहाँ स्पष्ट विवेचित है।

ऊर्ध्व दिशा में प्रवाहित होने वाली किरणों में ऊर्ध्वमुखी प्राण प्रवाह का वर्णन है। ऊर्ध्वगामी चेतना के लिए चारों वेदों का सारभूत बोध ही महत्वपूर्ण होता है। क्योंकि वह आप्त काम स्थिति है। गीता कहती है।

भावानर्थ उदपाने सर्वतः संप्लुतोदके।
तादान, सर्वेषु वेदेषु ब्राह्मणस्य विजानतः॥

(गीता २-४३)

अर्थात्-"सब ओर से परिपूर्ण श्रेष्ठ जलाशय को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

छोटे–छोटे कुओं–ताल तलैयों आदि से जितना लेना–देना होता है (यानि कि कोई विशेष प्रयोजन नहीं होता) उतना ही लेना–देना परम तत्त्ववित् ब्रह्मवेत्ता को समस्त वेदों से होता है ।"

सविता साधना के क्रम में विभिन्न दार्शनिक मतों का गम्भीर अनुशीलन, वेदों का अध्ययन, स्वाध्याय आवश्यक होता है । साधना की उच्चतम स्थिति में समाधि की अवस्था में जहाँ परम तत्व से एकात्म होता है ,उस समय इन ग्रन्थों से प्रत्यक्ष प्रयोजन नहीं रहता । यद्यपि चेतना के उत्कर्ष का आधार उनके स्वाध्याय से ही विनिर्मित होता है । साधना की प्रक्रिया के निर्देशक ग्रन्थों का एवं मार्ग दर्शक सदगुरु की आवश्यकता तो पग–पग पर पड़ती है । किन्तु सविता सम्पर्क की प्रत्यानुभूति के क्षणों में आत्म सत्ता ही वेद और गुरु बन जाते हैं ।

कुण्डलिनी साधना के समय सुषुम्ना प्रवाह में जब प्राण ऊर्जा प्रविष्ट होकर ऊर्ध्वारोहण करती है, तब अति चेतन में जो प्रकाश संव्याप्त हो जाता है । सूक्ष्मदर्शियों ने उसका ध्वनिमय प्रतीक ॐ को ही बत लाया है । उन्हें गुह्य आदेश कहा गया है । ये आदेश प्रणव रूपी पुष्प से ही प्राप्त होते हैं । आनन्द और उल्लास से भरी जो प्रखर सक्रियता उस समय उत्पन्न होती है । वही केन्द्रवर्ती मधु है । पूर्ववर्ती चार मधु नाड़ियों से प्रवाहित जो मधुरस साधक को प्राप्त होता है–उससे अन्न आदि रस यानि पौष्टिकता, इन्द्रियों की स्वस्थ सक्रियता, तेजस्विता, वीर्य एवं यश प्राप्त होता है, ये ही चार प्रकार के मधु रस हैं । किन्तु जो पाँचवाँ मध्यवर्ती मधु है, वह रसों का भी रस हैं ।

ते वा एते रसानां रसा, वेदा हि
रसास्तेषामेते रसास्तानि वा ।
एतान्यमृतानाममृतानि, वेदाह्यमृतास्तेषा मेतान्यंसृतानि॥
(छा. उ. ३–५–४)

अर्थात् वही रसों के रस हैं । (वि दिव्य अनुभूतियाँ ही सर्वोत्तम मधु हैं) वेद ही रस हैं, ये (दिव्य अनुभूतियाँ) उनका भी रस हैं वेद ही अमृत हैं और ये उनका भी अमृत हैं ।

पंचकोशी साधना की दृष्टि से इस तत्व को यों समझना होगा कि आन्नादिरस कीउत्पत्ति का मतलब है अन्नमय कोश की पुष्टि । जिससे प्रखरता उत्पन्न होती है । प्राण शक्ति बढ़ती है तथा प्राणमय कोश की इस प्रकार हुई सक्रियता से यश वृद्धि होती है । इन्द्रियों का अधिपति मन है ।अतः उनकी उत्पत्ति का अर्थ है मनोमयकोश की सिद्धि । वीर्य की पुष्टि विज्ञानमय कोश की सिद्धि का आधार है । तेज की उत्पत्ति से अक्षय आनन्द उल्लास की उपलब्धि होती है । यही आनन्दमय कोश की सिद्धि हैं । ये सिद्धियाँ सविता की चतुर्मुखी, चतुवर्गी किरणों से सम्पर्क का परिणाम होती है । सविता की ऊर्वगामी किरणें उस अनुभूति का बोध कराती हैं, जो अमृतों का भी अमृत है । जिसे योग की भाषा में निर्बीज समाधि, धर्ममेघ समाधि, स्वरूप प्रतिष्ठा, जीवन्मुक्ति आदि के रूप में कहा गया है । सविता के मध्यवर्ती मधु का पान इसी स्थिति में होता है । सविता साधना की सर्वोच्च उपलब्धि चरम परिणमित यही है । वशिष्ठ पद पाने पर यह सम्भव होता है ।

सविता के उस अमृत का साक्षात्कार करना ही उसका पान है । यही समष्टि प्राण है, प्राणों का आधार है जीवनों का जीवन है । अपने अमृत रस से परम तृप्ति देने वाले यही सविता देवता समष्टि चेतना, परमब्रह्म, गायत्री साधकों के उपास्य व इष्ट है ।

सूर्योपासना की सार्वभौमिकता

आरोग्य सम्वर्द्धन, बलवर्द्धन, आयु, प्राण एवं आत्मोन्नति के विविध विधि उपचारों के लिए सूर्य–सान्निध्य का प्रचलन मानव जन्म की भाँति ही अति प्राचीन हैं विश्व के प्रायः सभी धर्मो में सूर्यापासना का कभी व्यापक रूप से प्रचलन था । इसका प्रमुख कारण सूर्य का जीवन से घनिष्ठ रूप से जुड़ा होना हैं । शास्त्र वचनों के अनुसार पृथ्वी पर जीवन निर्माण से लेकर विकास एवं मरणोत्तर तक की सारी प्रक्रियाओं–गतिविधियों का संचालन, नियमन प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से सूर्य द्वारा ही होता है । काया के निर्माण में भाग लेने वाले पंच तत्वों का उद्गम स्रोत भी उसे ही माना गया है । पंच भौतिक तत्वों में सर्वाधिक प्रबल वायु होता है जिसकी विकृति ही रूग्णता–अशक्तता का कारण बनती है । यादि इसे नियंत्रित रखा एवं प्रचण्ड बनाया जा सके तो न केवल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

दीर्घजीवी बना जा सकता है, वरन् ऋद्धि-सिद्धियों से लेकर स्वर्ग-मुक्ति तक का द्वार खुल सकता है ।

वेदों में ओजस, तेजस् एवं ब्रह्मवर्चस् की प्राप्ति के लिए सूर्य की उपासना करने का विधान है । यजुर्वेद अध्याय १३, मन्त्र ४३ में कहा गया है कि सूर्य की, सविता की आराधना इसलिए भी की जानी चाहिए कि वह मानव मात्र के समस्त शुभ और अशुभ कर्मो के साक्षी हैं । उनसे हमारा कोई भी कार्य या व्यवहार छिपा नहीं रह सकता है । सूर्य की दृश्य व अदृश्य किरणें समस्त वाधाओं-दीवारों को बींधती हुई सृष्टि के कण-कण की सूचनायें एकत्रित करती रहती हैं । यह एक वैज्ञानिक तथ्य भी है । फिर मनुष्य तो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रकाश रश्मियों के सम्पर्क में रहता ही है । क्योंकि सूर्य विश्व चक्षु जो ठहरा ।

भौतिक एवं आध्यात्मिक क्षैत्र मे सूर्योपासना की सार्वभौमिकता एवं उस से मिलने वाले लाभों से समूचा आर्ष्वाङ्मय भरा पड़ा है । स्कन्द पुराण-काशी खण्ड ६/४५-४८ में सविता-सूर्य-आराधना द्वारा धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष अर्थात् चतुवर्ग की फल प्राप्ति का वर्णन है । धन, धान्य, आयु, आरोग्य, पुत्र, पशुधन, विविध भोग, स्वर्ग अपवर्ग आदि सभी सूर्य की उपासना करने से प्राप्त होते हैं । ऋग्वेद मे सूर्योपासना के अनेकों प्रसंग हैं जिनमे सूर्य से पाप, मुक्ति, रोगनाश, दीर्घायुष्य, सुख प्राप्ति, शत्रुनाश, दरिद्रता निवारण आदि के लिए प्रार्थना की गयी है । ऋग्वेद के ही ६/६६५/६ एवं ६०/३७/४ तथा यजुर्वेद २०/३० आदि मन्त्रों मे सूर्य को आधि-व्याधि निवारण एवं पाप कर्मो, आसत्र सकटों, अपकीर्ति से बचाने वाला तथा प्रगति एवं अभिवृद्धि प्रदान करने वाला बताया गया है । यजुर्वेद के ही ५/३३ एवं ८/४० मन्त्रों में सविता को देवयान मार्ग पर ले जाने वाला तथा आराधक को सर्वश्रेष्ठ तेजस्वी बनाने वाला कहा गया हैं ।

ब्रह्म पुराण के अध्याय २६-३० में सूर्य को सर्व-श्रेष्ठ देवता मानते हुए सभी देवों को इन्हीं का प्रकाश स्वरूप बताया गया है और कहा गया है कि सूर्य की उपासना या आराधना करने वाले मनुष्य जो कुछ सामग्री सूर्य के लिए अर्पित करते हैं, भगवान भास्कर उन्हें लाख गुना करके वापस लौटा देते हैं । सौर सम्प्रदाय के अनुयायी एवं गायत्री महाशक्ति के उपासक अभी भी सूर्य की आराधना उसके तीन रूपों में करते हैं । सूर्योदय के समय ब्रह्म और उसकी शक्ति के रूप में, मध्यान्ह में महेश्वर रूप में एवं सूर्यास्त के समय विष्णु रूप में उपासना करते हैं । सूर्य अनुपम कल्पना शक्ति वाले, सिद्धि के प्रेरक, सबको कर्म की प्रेरणा देने वाले एवं बुद्धि प्रदाता हैं । उनके इस स्वरूप का वर्णन यजुर्वेद मे बहुत ही सुन्दर ढंग से किया गया है । ऋषियों ने इसे अनुभूति के स्तर तक उतारा और उनसे मिलने वाले लाभों का वर्णन किया है । पातंजलि योग दर्शन में उल्लेख है कि सूर्य पर संयम करने से विश्व-ब्रह्माण्ड का ज्ञान होता है । सामान्य साधना क्रम में भी सूर्य पर त्राटक करने या स्वर्णिम सविता का ध्यान करने से साधक को दिव्य दृष्टि प्राप्त होती है, जिसके द्वारा वह किसी को भी देख कर उसका प्राकृत स्वरूप और समस्त घटनाओं को जान लेता है । दूरस्थ वस्तुओं, घटनाक्रमों एवं प्रकृति के गर्भ में चल रही सूक्ष्म हलचलों की जानकारी वह प्राप्त कर सकता है ।

सविता देवता की उपासना से अभीष्ट की पूर्ति होती है । शास्त्रों में इसके अनेकों प्रमाण मिलते हैं । भगवान राम द्वारा रावण पर विजय एवं साम्ब का कुष्ठ रोग से मुक्त होना सूर्योपासना की इतिहास प्रसिद्ध घटनायें हैं । सूर्य आराधना से पुत्र प्राप्ति का उल्लेख करते हूए महाभारत में कहा गया है कि महारथी कर्ण का कवच कुण्डल सहित जन्म, माता कुन्ती के गर्भ से उनके द्वारा की गयी सूर्य आराधना का ही प्रतिफल था । महाराजा अश्वपति ने सूर्य की उपासना करके सती सवित्री को अपनी कन्या के रूप में पाया था । यही कन्या सत्यवान को ब्याही गयी थी जिसने अपने तपोबल से उसकी मृत्यु हो जाने पर भी यमराज से उसे वापस ले लिया था । महाकवि कालिदास ने अपनी अनुपम कृति "रघुवंश" में बनवास काल के समय सीता द्वारा सूर्य पर त्राटक करने का उल्लेख किया है । उसमें कहा गया है कि सीता ने राम को सन्देश भेजा था कि वह गर्भस्थ शिशुओं को जन्म देने के पश्चात् सूर्य पर दृष्टि निबद्ध कर अनन्य भाव से तपस्या करेंगी जिससे अगले जन्म में भी वह राम को पति रूप में प्राप्त कर सकें ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हिन्दू धर्म की भाँति ही जैन एवं बौद्ध धर्मो में भी सूर्योपासना का प्रचलन उनके उद्गम काल से ही प्रचलित है। बोध, गया तथा भाजा की गुफा एवं उड़ीसा प्रान्त की अनन्त गुफा में सूर्य की प्रतिमा इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। जैन आगमों, विशेषकर "सूर्य प्रज्ञप्ति" में सूर्य सम्बन्धी विविध ज्ञान सम्पदा का प्रतिपादन किया गया है। इसी तरह आगम शास्त्र "भगवती" में ऐसे अनेकों प्रसंगों का वर्णन है जिससे स्पष्ट होता है कि जैन मुनियों की जीवन साधना के अनेक प्रयोग सूर्य से सम्बन्धित हैं। उनकी मान्यता है कि सूर्य सान्निध्य से उसकी आतापना लेने से शरीर में बल और कान्ति की, ओजस् और तेजस् की अभिवृद्धि होती है। प्राण–प्रखरता बढ़ती है। "तेजस् लब्धि" के लिए जैन शास्त्रों में ६ महीने तक सूर्य की ओर मुख करके तप करने, आतप लेने का विधान है। कर्मक्षय एवं आभामण्डल के विकास के लिए भी सूर्य मण्डल या उसकी प्रकाश रश्मियों का ध्यान किया जाता है ।

प्रख्यात मनीषी ए.बी.कीथ के अनुसार ग्रीक दर्शन में सूर्योपासना को अत्यन्त प्राचीन माना गया है। प्रसिद्ध दार्शनिक गेलिस ने भी उपरोक्त तथ्य की पुष्टि की है। ग्रीक दार्शनिक एम्पेडीलस का कथन है कि सूर्य ही इस संसार का स्रष्टा है। उन्होंने सूर्य को अग्नि के मूल स्रोत के रूप में वर्णन किया है। ग्रीस में आज भी विवाह–शादियों में सूर्य मंत्र पढ़ा जाता है। रोमन में रविवार को पवित्र दिन माना और उस दिन की गयी पूजा, उपासना को अधिक फलदायी माना जाता है। महान दार्शनिक थियोडोसियन ने तो रविवार के दिन नृत्य, वाद्य, संगीत, थियेटर, सर्कस आदि सभी मनोरंजन के कार्यो एवं द्यूतकर्म, मुकदमेबाजी आदि सभी का निषेध किया है।

चीन के सुविख्यात दार्शनिक लीकी ने अपने ग्रंथ–"कि आओ तेह सेंग" में कहा है कि ज्योतिर्विद्या एवं खगोलशास्त्र का मूलाधार सूर्य ही है। उन्होंने सूर्य को "स्वर्ग पुत्र" नाम से सम्बोधित किया है और दिन का प्रदाता, ज्ञान–विज्ञान का स्रोत कहकर उसकी अभ्यर्थना की है। इसी तरह इस्लाम में सूर्य को–"इल्म अहकाम अन नजूम" का केन्द्र मानकर उसकी उपासना की गयी है। इतिहास वेत्ताओं के अनुसार अकबर स्वयं सूर्य उपासक था। वह नित्य सूर्याभिमुख होकर सूर्य सहस्त्रनाम का पाठ करता और पूजन करता था। उसने एक आदेश निकाला था कि उसके राज्य में प्रातः, मध्यान्ह, सांय एवं अर्धरात्रि को अर्थात् चार बार सूर्य की पूजा–आराधना होनी चाहिए। यूनान का सम्राट सिकन्दर भी सूर्य का उपासक था।

ईसाई धर्म में सूर्य–आराधना का महत्वपूर्ण स्थान हैं। इस सन्दर्भ में ईसाई 'धर्म ग्रन्थ' "न्यू टेस्टामेण्ट" में सुविस्तृत वर्णन मिलता है। रविवार सूर्य का दिन होने से पूजा–उपासना के लिए इस धर्म के अनुयायियों के लिए विशेष महत्व रखता है। सेण्टपाल का कथन है कि सूर्य के द्वारा पवित्र किया गया यह दिन दान की अपेक्षा रखता है। ईसाई लोग इस दिन को ईसा का पवित्र दिन भी मानते हैं।

आद्य शंकराचार्य ने संध्याभाष्य में सूर्य माहात्म्य का वर्णन करते हुए कहा है कि चराचर जगत के उत्पादक सूर्य की आराधना पापों का नाश करती है। वे हमारी बुद्धि को सन्मार्ग की ओर प्रेरित करते हैं। स्फूर्ति प्रदान करने,विश्व में गति का संचार करने, सद्विवेक जगाने एवं प्रेरणा देने के कारण ही सूर्य को "सविता" कहा जाता है। गायत्री महामन्त्र में इसी अदृश्य तात्विक शक्ति की ओर संकेत हुए, उसकी नित्य आराधना करने को कहा गया है। स्वामी रामतीर्थ सूर्य को सबसे बड़ा सन्यासी कहते थे। उनके अनुसार वही सबके प्रकाशक, प्रेरक और जीवनदाता हैं। ज्ञानरूपी प्रकाश प्रदान करने का कार्य भी वही करते हैं, अतः वह प्रकाश सृष्टि के सबसे बड़े आचार्य हैं। उनका आश्रय लेकर ही मनुष्य अज्ञानान्धकार एवं त्रितापों, से त्राण पा सकता है। ज्ञान का सद्विवेक का आश्रय लेकर ही मनुष्य श्रेय–पथ की ओर अग्रसर होता और भौतिक ऋद्धियों एवं आत्मिक विभूतियों का स्वामी बनता है। ज्ञान–विज्ञान एवं प्राण चेतना के भाण्डागार सविता देवता सूर्य की ध्यान-धारणा, पूजा, उपासना इसमें बहुत सहायक होती है।

प्राणः प्रजानां उदयत्येष सूर्यः

काया की छाया, स्थूल का सूक्ष्म, व्यक्त का अव्यक्त, दृश्य का अदृश्य, प्रत्यक्ष का परोक्ष पक्ष सर्वविदित है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

ऐसे ही यह गोचर संसार यदि लौकिक है, तो इसकी एक अलौकिक सत्ता भी होनी चाहिए । विज्ञान भले ही अभी ऐसे ग्यारह लोकों की कल्पना भर कर सका है, पर आध्यात्म विज्ञान में तो १४ लोकों की सुनिश्चित मान्यता है । इनमें से सात पृथ्वी के नीचे और छः ऊपर, सातवाँ पृथ्वी । इस प्रकार कुल चौदह लोक हुए । यहाँ तात्पर्य मात्र इतना भर बताना है कि हर पदार्थ की कम-से-कम एक सूक्ष्म सत्ता अवश्य होती है । इस जगत को आभा और ऊर्जा से अनुप्राणित करने वाला यह प्रकाशवान सूर्य भी ऐसा ही एक ग्रह है । योगी जन इसके सूक्ष्म अस्तित्व से सर्वथा इन्कार नहीं करते ।

यहाँ यह प्रश्न उठ सकता है कि क्या दृश्य के साथ अदृश्य की उपस्थिति सम्भव है ? स्थूल सूर्य का कोई ऐसा कलेवर भी हो सकता है, जो अगोचर स्तर का व्यापक, विस्तृत एवं अधिक सामर्थ्यवान हो ? उत्तर "हाँ " में दिया जा सकता है । शरीर की एक समरूप छाया होती है, इसे कदाचित् ही कोई स्वीकार करे । इन्कार करने वाले प्रकाश की उपस्थिति में इसका स्पष्ट आभास प्राप्त कर सकते हैं, फिर भी यह सत्य है कि अँधेरे में इसका आपा अनुपस्थिति जैसा बना रहता है । इतने पर भी यह नहीं कहा जा सकता कि वह मौजूद नहीं है । विद्यमान तो वह तब भी होती है । अन्तर मात्र इतना होता है कि अन्धकार के कारण दिखायी नहीं पड़ती । गहन तमिस्रा में तो अपने ही शरीर के कई अंग-अवयव दृश्यमान नहीं होते, तो फिर सूक्ष्म स्तर की छाया समान कैसे हो ? फिर भी जो इसका प्रमाण चाहते हों, वे छाया-पुरुष के साधकों का उदाहरण ले सकते हैं और यह देख सकते हैं कि किस प्रकार आवाहन मात्र से उनकी ही अनुकृति आज्ञानवर्ती सेवक की तरह उनके इर्द-गिर्द डोलने लगती और आदेश मिलते ही क्षणमात्र में वह कार्य कर गुजरती है, जो शरीरधारी कर्ता के लिए शायद ही शक्य हो । ये ही चमत्कार सिद्ध सन्त अपने सूक्ष्म शरीरों से करते दृष्टिगोचर होते हैं । स्थूल सत्ता एक स्थान पर असमर्थ जैसी स्थिति में पड़ी रह कर जहाँ दीन-ही साबित होती है, वहीं सशक्त सूक्ष्म शरीर अनेक स्थानों पर एक ही समय में ऐसे कौशल कर दिखातें हैं, जिन्हें अचम्भा कहा जा सके । इससे दो बातें सिद्ध होती हैं । प्रथम तो पुरुष की एक छाया-पुरुष जैसी हूबहू अपने ही जैसी, सूक्ष्म प्रतिकृति होती है और दूसरी, वह अपनी अभिव्यक्त सत्ता से अधिक समर्थ होती है । विज्ञान भी अब न्यूनाधिक इसे स्वीकारने लगा है कि हर पदार्थ का अपना एक अव्यक्त अस्तित्व होता है ।

प्रसिद्ध विज्ञानवेत्ता एवं प्रख्यात लेखक लायल वाटसन ने अपनी कृति "सुपरनेचर " में लिखा है कि जब किर्लियन ने अपने अद्भुत कैमरे का आविष्कार किया, तो पहली बार पदार्थ-विज्ञान के स्थूल से सूक्ष्म में प्रवेश कर उसकी सुनिश्चित पुष्टि की । मात्र पदार्थपरक अस्तित्व पर ही विश्वास करने वाले विज्ञानियों को हैरानी तब हुई, जब उससे उसने वृक्ष-वनस्पतियों, मनुष्यों एवं मानवेतर प्राणियों के चित्र उतारने शुरू किये । हर तस्वीर के चारों ओर उन्हें एक विस्तृत नीली आभा दिखायी पड़ी, जो बिल्कुल मूल वस्तु का ही आकर लिए रहती । बाद में उसे आभामण्डल, ऑरा आदि मूल वस्तु के अव्यक्त अस्तित्व जैसे सम्बोधनों से सम्बोधित किया गया । अध्येताओं को आश्चर्य तब हुआ, जब उन्हें कटी पत्तियों में भी सम्पूर्ण पत्ते के चित्र प्राप्त हुए । उनका अनुमान था कि आधे पत्तों के अपूर्ण प्रभामण्डल ही प्राप्त होंगे, पर तथ्य उलटा ही हस्तगत हुआ । ऐसे ही एक अन्य अवसर पर एक कटी टाँग वाले व्यक्ति का किर्लियन फोटो लिया गया, तो उसमें टाँग का वह भाग भी वहाँ स्फुट मौजूद देखा गया, जिसे कभी प्रथक कर दिया गया था । इससे उनकी यह भ्रान्ति मिट गई कि स्थूल अवयव के विनष्ट होने के साथ-साथ उसका सूक्ष्म वजूद भी समाप्त हो जाता है ।

इसी मत का समर्थन करते हुए डॉ. गोपीनाथ कविराज अपने "सूर्य विज्ञान रहस्य" में लिखते हैं कि पदार्थ का प्रवाह सदा भविष्य से वर्तमान, वर्तमान, से भूत के क्रम में चलता है ।जो वस्तु भी नहीं है, जो कल्पना, जो घटना अभी अघटित है, वह अनागत के गर्भ में पल-पक रही है, फिर वह वर्तमान बनती है, तत्पश्चात् अतीत के, विस्मृति के क्रोड में समा जाती है, किन्तु फिर भी उनका अस्तित्व एकदम समाप्त नहीं हो जाता । जो होता है, वह मात्र इतना है कि वह तिरोहित स्तर का बन जाता है, परन्तु रहता अवश्य है । दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि अनादिकाल से अब तक जो-जो

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वस्तुएँ वजूद में आयी हैं, अथवा आने वाली हैं, प्रकृति में चिरकाल से अपना आपा सदा बनाये हुए हैं। विज्ञान अपने शोध–अनुसंधान के दौरान इन्हीं का अन्वेषण करता और सूक्ष्म से सूक्ष्मतर की ओर निरन्तर बढ़ता चलता है।

आकाश में चमकने वाल अपना सूर्य भी पदार्थपरक एक पिण्ड है। यो प्रत्यक्ष में तो वह प्रकाश और ऊष्मा बिखरने वाला अग्नि का गोला भर प्रतीत होता है, पर वैज्ञानिक बताते हैं कि यदि यह जलता गोला किसी कारण नहीं होता, तो आज यह पृथ्वी आबाद नहीं होती। अतिशय ठण्डा के कारण यहाँ बर्फ जमी रहती और रौशनी के अभाव मे अमा–निशा की–सी स्थिति होती। इस दृष्टि से यह दिनमान महत्वपूर्ण तो हैं, किन्तु इससे भी अधिक महत्वपूर्ण वह अंशुमाली हैं, जो इन चर्मचक्षुओं को दिखायी नहीं पड़ता और हृदयाकाश में सहस्त्रों रविओं से भी अधिक देदीप्यमान बनकर चमकता रहता है। योगी–यती इसी की झलक–झाँकी पाने के लिए योगरत रहते हैं। और जन्म बिता देते हैं। यह वही सूक्ष्म सत्ता हैं, जिसकी स्थूल अभिव्यक्ति हम दृश्य जगत के अन्तरिक्ष में उदीयमान देखते हैं एवं जिसके बारे में श्रुति का उद्घोष है।–" सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुशस्च" अर्थात् यह सूर्य जगत की आत्मा है। यहाँ "सूर्य शब्द से विश्व को प्रकाशित करने व आकाश में उगने वाले सूरज से किसी को अर्थ नहीं लगाना चाहिए और न यह भ्रम पालना चाहिए कि यही विश्वात्मा है। भला एक जगह अचल रहने वाला सर्वथा जड़ पदार्थ संसार की आत्मा कैसे हो सकता है ? आत्मा तो सर्वव्यापी परमात्मा की अंशधर है। उसे तो वही गुण अपने में सँजोये रहना चाहिए, जो ईश्वर में हैं, पर वह तो चेतन भी नही, फिर जगत की आत्मा किस भाँति हो सकता है ? दूसरी दृष्टि से विचार करें, तो आत्म सत्ता को शरीर सत्ता के साथ अविच्छिन्न रूप से जुड़ा रहना चाहिए–ऐसा प्रतीत होता और प्रत्यक्ष दिखायी पड़ता है। देखा गया है कि आत्मा के पृथक होते ही प्राणियों का प्राणान्त हो जाता व शरीर सड़ने–गलने लगता है। यदि इस दृश्य में सूर्य को जगत की आत्मा मान लिया जाय, तो स्कैण्डिनेवियाई देशों मे से नार्वे स्वीडन आदि राष्ट्रों में कई ऐसे स्थान हैं, जहाँ तीन–तीन महीनों तक सूर्य के दर्शन नहीं होते। फिर भी वहाँ जनजीवन सामान्य बना रहता है। उक्त अवधारणा की ओर यदि श्रुति का आशय रहा होता, तो फिर वहाँ मरण का नग्न नृत्य ही दिखायी पड़ना चाहिए, किन्तु ऐसा दीखता कहाँ है ? इससे स्पष्ट है कि आप्तजनों का आशय दृश्यमान दिवाकर से नहीं, वरन् उस चेतन सत्ता से हैं, जिसे "सविता" कहा गया है। यह बात आगे के सूत्र से और भी साफ हो जाती है "प्राणः प्रजानां उदयत्येष सूर्यः" अर्थात् यह उदीयमान सूर्य ही जीवधारियों में प्राण शक्ति के रूप में प्रगट होता है। यदि यहाँ तात्पर्य जड़ जगत के सूर्य के आधिभौतिक रूप से लगाया गया, तो अनेक बिसंगतियाँ उठ खड़ीं होंगीं, यथा गर्मी और रौशनी बिकीर्ण करने वाला स्थावर पिण्ड प्राण के रूप में प्राणियों में किस प्रकार प्रस्फुटित हो सकता है ? वह चेतनामय प्राण धार कैसे बन सकता है ? अतः यह मान कर चलना ही बुद्धिमानी होगी कि जो स्वयं चेतन है, वही प्राण–चेतना के रूप मे अन्यत्र प्रगट हो सकता है। सविता में ही यह गुण है। इस प्रकार यहाँ भी संकेत उसी सूर्य से हैं, जो हर एक के अन्तराकाश में उदीयमान है। श्रुति में इसी का समर्थन दूसरे प्रकार से यह कह कर किया गया है–

सहस्ररश्मि शतधा वर्तमानः।
प्राणः प्रजानामुदयंत्येष सूर्यः॥

अर्थात् प्राण ही सहस्र रश्मियों वाला सैंकड़ों प्रकार से वर्तमान प्रजा को उत्पन्न करने वाला सूर्य है। इसी की ओर उँगुली निर्देश करते हुए गीता में भगवान कहते हैं–"ज्योतिषां रविरंशुमान (१०/२१)"। ज्योतियों मे मैं सूर्य हूँ। इसे ही यजुर्वेद में यों कहा गया है–"ब्रह्म सूर्य समं ज्योतिः (२३/४८)" अर्थात् ब्रह्म, सूर्य–ज्योति के समतुल्य है। जिस तरह भौतिक दिनमान सम्पूर्ण संसार को प्रकाशित करता रहता है, उसी प्रकार चैतन्य सूर्य, जिसको प्रायः "सविता" के नाम से पुकारा गया हैं, उसकी ज्योति से जगत का समस्त जड़ चेतन, कण–कण, अणु–अणु समान रूप से प्रकाशित हो रहा है। यह सविता–प्रकाश ही ब्रह्म है। यही छान्दोग्य उपनिषद् का निर्देश है–

आदित्यो ब्रह्मोत्यादेशस्तस्यो पष्याख्यानम्" (३/११/१)

अर्थात् आदित्य ही ब्रह्म है। यह महर्षियों का आदेश है। इसमें परमेश्वर की सत्ता को समझने का उपदेश है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सूर्य ब्रह्म कहलाने का अधिकारी तभी हो सकता है, जब उसकी सत्ता हर स्थिति और हर अवस्था में हर क्षण समूची दुनियाँ को अपनी आभा प्रदान कर रही हो, पर प्रत्यक्ष में ऐसा होता कहाँ दीखता है ? आकाश में उगने वाला गोला तो रात्रि के पहर पूरी धरित्री को गहन तम में धकेल देता है । उस वक्त उसकी किरणों से वसुंधरा वंचित होती है, फिर उसे ब्रह्म कैसे कहा जाय ? और जहाँ ब्रह्म का प्रकाश न हो, वहाँ यह सृष्टि और उसकी नियम–व्यवस्था बनती व चलती कैसे रह सकती है ? क्योंकि जगती का निमित्त कारण तो वही है । फिर भी हम देखते हैं कि यहाँ सब कुछ नियमानुसार हो रहा है । इससे स्पष्ट है कि अध्यात्म क्षेत्र के आचार्यों का तात्पर्य उस महासूर्य से है, जिसके बाह्य दृष्टि से न दीखने वाले अनन्त गुना आलोक से यह ब्रह्माण्ड आलोकित है । गीता में इसी को और सरल शब्दों में निम्न प्रकार से निरूपित किया गया है–

दिवि सूर्यसहस्रस्य भवेद्युगपदुत्थिता
यदि भाः सदृशी सा स्याद्यासस्तस्य महात्मनः
(११/१२)

अर्थात् अन्तरिक्ष में हजार सूर्यों के एक साथ उदित होने से जो तेज पैदा होता है, वह भी उस ब्रह्म तेज के समान कदाचित् ही होता है ।

इस प्रकार यह प्रमाणित हो गया कि दृश्य सूर्य एवं आर्ष बाड्मय में वर्णित सूर्य में जमीन–आसमान जितना अन्तर है । वस्तुतः यह लाल अग्नि पिण्ड ब्राह्मी–चेतना–सविता की ही स्थूल अभिव्यंजना है, इसमें दो मत नहीं । यहाँ शंकालु हृदय को यह सन्देह हो सकता है कि जब जड़–चेतन रवि दो पृथक अस्तित्व हैं, तो फिर साधना–विधानों में जड़ दिस्मान के आश्रय का क्या तुक है ? ऐसे लोगों के समाधान के लिए इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि मानवी मन इतना चलायमान है कि उसे स्थिर व एकाग्र करने के लिए दृश्य माध्यमों का सहारा लेना पड़ता है । जिसने निराकार ईश्वर को देखा नहीं, उसे साकार साधनों से काम चलाना पड़ता है, उन्हें ब्रह्म का मूर्तिमान प्रकाश मान कर चलना पड़ता है । इतने पर भी अन्तिम लक्ष्य वह सर्वव्यापी तेजोमय ब्रह्म की उपलब्धि ही होता है बालक जब छोटा होता है, तो उसे लकड़ी की तिपहिये की गाड़ी से चलना सिखाया जाता है । बाद में जब उसके पैर लड़खड़ाने बन्द हो जाते और जमीन में स्थिर होकर टिकने लगते हैं, तो फिर उसकी आवश्यकता नहीं रह जाती । वह अपनी टाँगों से ही बिना किसी सहायता के न सिर्फ चलने लगता है, अपितु दौड़ने–भागने में भी समर्थ हो जाता है ।

विराट प्राण पुरुष : सविता देवता

विश्व रचना के दो प्रधान तत्व है पहला प्राण दूसरा भूत । इन दोनों तत्वों का जहाँ भी मिलन हो जाता है, वहीं गतिमान या क्रियाशील जीवन के दर्शन होने लगते हैं । केवल भूत पदार्थ प्राण के बिना स्पन्दित नहीं हो सकता । इसलिए भौतिक जगत में जहाँ भी जीवन तत्व हैं, वह प्राण ही है, इसे ही गायत्री कहते हैं ऐसी ऋषियों की मान्यता है ।

मनुष्य में भूत व प्राण दोनों ही शक्तियाँ स्पष्ट रूप से प्रकट होती हैं । बचपन में छोटा सा पंच भौतिक पदार्थों का पिण्ड छोटा सा प्राण धारण किए हुए होता है । तब उसकी शक्ति और तेजस्विता कम थी पर जैसे–जैसे शरीर का विकास होता है, प्राण की मात्रा बढ़ने के साथ शक्ति और क्रियाशीलता भी बढ़ती है । अवस्था के क्रम में बाल्यावस्था, यौवन और वृद्धावस्था को गायत्री की समिधा कहा गया है, क्योंकि प्राण तत्व इन्हीं में जलता है ।

उसके बाद दोनों तत्व फिर अलग–अलग हो जाते हैं । प्राण निकल जाता है और पंच भूतों से बना नितान्त प्राकृत शरीर पड़ा रह जाता है । इस छूटे हुए शरीर को ऋग्वेद में –

यद् गायत्रे अधि गायत्र माहितम् ।(१–१६४–२३)

अर्थात् "पंचभूतों से बना शरीर मर्त्य गायत्री है । इसमें सोचने, समझने, सुख–दुख अनुभव करने, क्षोभ और विकलता व्यक्त करने वाली शक्ति प्राण थी । शरीर निस्पन्द और अनुभवहीन होता है । इसलिए सुख–दुख ही नहीं मनुष्य जीवन की सारी हलचल,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परिवर्तन, गति उन्नति, अवनति का कारण भी प्राण ही है ।

अधिक सूक्ष्मता से विचार करने पर स्पष्ट होता है कि जो प्राण शरीर के विभिन्न क्षेत्रों मे क्रियाशील रहता है, वह भी भौतिक है । किरणें, ज्योति या अग्नि जैसा कोई स्थूल तत्व कह सकते हैं । उसे नियन्त्रित और प्रेरित करने वाली एक तीसरी मनोमय शक्ति है ।इसी को इच्छा और संकल्प शक्ति से शरीरगत व्यापार चलते हैं । इसलिए गायत्री इस एक शब्द में ही पांच भौतिक प्राण और मन–त्रिक शक्ति हैं । इसी की इच्छा और संकल्प शक्ति का समग्र रूप आ जाता है । शास्त्रों में इसे भौतिक क्लेश और प्रपंच से मुक्ति दिलाने वाली विद्या कहा गया है ।

गायत्री का आविर्भाव कहाँ से होता है ? यह सवाल उठता है तो उपनिषद्कार कहते हैं–

"देवात्म शक्तिं स्वगुणे निगुढः"

देव माया या इन्द्र शक्ति ही सत्ता है, जो विश्व गायत्री अर्थात् अनेक रूपों में विकसित होती है । यह देव शक्ति या इन्द्र कौन है–

"तस्य दृश्यः शतादशः"

सूर्य ही वह इन्द्र है जिसकी हजारों किरणें हैं । एक–एक किरण एक–एक रूप है । इन किरणों में प्राण शक्ति भरी होती है । सूर्य को त्रयी विद्या भी कहा गया है, अर्थात् सूर्य स्वयं भी एक वैसी ही गायत्री शरीर प्राण ओर मनोमय रूप में धरती में विद्यमान रहती है । इस तरह यदि सूर्य को एक विराट पुरुष की संज्ञा प्रदान करें जो एक व्यापक क्षेत्र में बिलकुल मनुष्य की तरह क्रियाशील रहता है । सोचविचार भी कर सकता है, विकल और क्षुब्ध हो सकता है । दंड और पुरस्कार दे सकता है । हर्ष और शोक, संतोष और असंतोष व्यक्त कर सकता है तो उसमें कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए ।

अब तक यह विषय हमारी श्रद्धा का रहा है । अर्थात् जिसके हृदय में वैराग्य और श्रद्धा उत्पन्न होती थी, वह यह मान लेता था कि "निखिल आकाश या किसी लोक में गायत्री नाम की कोई देवी बैठी होगी, जो हमारे आन्तरिक भावों को सुन और समझकर अपने वरदान दे सकती होगी ।" पर अब उनके विराट पुरुष को विज्ञान ने इस तरह सिद्ध कर दिया है कि जिनके हृदय में उस रूप में भाव विह्वलता न हो तो वे भी इस प्राण पुरुष से अपना संपर्क स्थापित कर उसी प्रकार लाभान्वित हो सकते हैं जिस तरह बड़े बिजलीघर से सम्पर्क स्थापित करके छोटा बिजली घर भी प्रकाशमान हो उठता है ।

मनुष्य एक छोटी गायत्री है, सूर्य एक विराट गायत्री छोटी गायत्री को जब विराट गायत्री के साथ जोड़ देते हैं तो वह भी वैसी ही शक्ति और संपन्नता अनुभव करने लगती है, जैसे धनवान पिता का पुत्र पास में कुछ न होने पर भी अपने पिता की तरह ही धन का अभिमान और कुछ भी क्रय कर सकने का विश्वास कर सकता है, अर्थात् गायत्री के विराट स्वरूप को पा जाने पर मनुष्य भी उतनी ही क्षमता वाला हो सकता है, जितनी सूर्य भगवान की क्षमता है । इसे ही सिद्धि कहते हैं ।

यह जानना जरूरी है कि क्या सचमुच सूर्य मनुष्य की तरह त्रिक शक्ति वाला विराट पुरुष है, जिसमें मनुष्य की तरह संवेदनशीलता हो सकती है । सूर्य रश्मियों के वर्णन में वैज्ञानिक यह कहते हैं कि यह तीन रंगों का (सात रंग इन रंगों के मिश्रण से बनते हैं मूल रंग तीन ही हैं) सम्मिश्रण है । स्पेक्ट्रोमीटर के द्वारा इन रंगों को अलग–अलग भी करके दिखाया जा सकता है । यदि मनुष्य और सूर्य में ऐसा कुछ साम्य है तो मनुष्य शरीर में भी इन रंगों को परिलक्षित होना चाहिए । यहाँ तो रक्त का रंग भी लाल है । फिर साम्य कहाँ हुआ ?

लेकिन विज्ञान के विद्यार्थियों को पता होगा कि रक्त का रंग लाल नहीं है । कई तत्वों के सम्मिश्रण से वह लाल दिखाई देता है । अन्यथा रक्त के कोषाणु विशुद्ध पीले रंग के होते हैं । आजकल पूर्ण मृत्यु का पता लगाने के लिए त्वचा में "यूरेनाइन" नाम का इन्जेक्शन दिया जाता है । यदि मनुष्य की मृत्यु नहीं हुई और रक्त संचार हो रहा होता है तो त्वचा का रंग पीला और हरा हो जाता है । नीला रंग लाल रंग की गहराई के कारण दृश्य नहीं हो पाता । अन्यथा इस विधि से शरीर की इस त्रिक शक्ति का स्पष्ट विश्लेषण हो जाता है । मृत देह में इन्जेक्शन का कोई असर नहीं होता ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रत्यक्ष में निर्विकार दिखाई देने वाले सूर्य के संबन्ध में सर्वप्रथम इनगोल स्टाड के पादरी क्रिस्टाफ शाइनर ने एक संदेश अपने अध्यक्ष पादरी को दिया था कि उसमें काले-काले धब्बे विद्यमान हैं । लेकिन अरस्तू के ग्रथ में ऐसा कुछ न था । इसलिए बेचारे शाइनर को कड़ी डाँट-फटकार सुननी पड़ी । किन्तु सौभाग्य से उन्हीं दिनों गैलीलियो ने दूरदर्शक यन्त्र की सहायता से इस बात की पुष्टि कर दी कि सूर्य में सचमुच विभिन्न वर्णों के धब्बे दिखाई देते हैं और यह धब्बे हलचल करते हैं । कभी फूट कर फैल जाते हैं कभी एक धब्बा लुप्त हो जाता है, उसके पास का धब्बा कौंधने लगता है । कई बार वे कई भागों बँट जाते हैं । पहले ही इन हलचलों का कारण वैज्ञानिक नहीं जान सके थे । पर धीरे-धीरे पता चला कि यह सब तपी हुई गैसों के बृहत बवण्डर हैं और वे बिल्कुल मनुष्य की सी इच्छा शक्ति से मेल खाते हैं ।

सूर्य की इस दमक के साथ जो प्रकाश फूटता है उसे फ्लेयर कहा जाता है, और उस समय जो प्रकाश सर्पिलाकार लहरों में दौड़ता है-वह फिलामेण्ट कहलाता है । अब इनके संबध में कई आश्चर्यजनक तथ्य सामने आने से वैज्ञानिक यह मानने को सहमत हो रहे हैं कि सूर्य के अंदर संवेदना व्याप्त है । अर्थात् यह हलचल विकलता, क्षोभ, प्रसन्नता और क्रोध जैसी भावनाओं के स्थूल स्पन्दन हैं और जिस तरह विचारों का प्रभाव मनुष्य के शरीर पर पड़ता है । उसी प्रकार यह विकलताएँ भी प्रकृति में भारी हलचलें उत्पन्न करती रहती हैं । विकलता की स्थिति में सूर्य विशेष प्रकार के सूक्ष्मकण और किरणों के अंबार छोड़ता है जो बड़े वेग से चलकर करोड़ों मील तक अपना प्रभाव डालते हैं । यहाँ तक कि चुम्बकीय क्षेत्र को भी मथ डालते हैं । ऐसे समय कुतुबनुमा की सुई तक काँपने लगती है ।

इनका प्रभाव पृथ्वी पर पड़ता है तो उससे हिमपात ओले, अनावृष्टि, वृक्षों की वृद्धि, बाढ़, वर्षा, झंझावात ताप और शीत की मात्रा में तीव्रता से परिवर्तन आदि दृश्य उपस्थित होते हैं । इतना ही नहीं विगत दिनों इनके प्रभाव राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक एवं भावानात्मक क्षेत्र मे भी देखे गए हैं । कुछ महीने पूर्व "सांइटिफिक अमेरिकन" पत्रिका में प्रकाशित विज्ञानवेत्ता एम. ममफोर्ट के शोध पत्र "सनस्पाट एक्सिखनेस एण्ड इफेक्ट्स" के अनुसार सूर्य से एक प्रकार की आँधी चल पड़ी है और वहाँ इस समय तेजी से विकलताएँ परिलक्षित हो रही हैं । उनका पृथ्वी पर तेज प्रभाव होगा । प्राकृतिक हलचलें तीव्र होंगी । वायु दुर्घटनाओं की संख्या बढ़ेगी मानवीय संकट बढ़ेंगे ।

यह आपदाएँ ६-७ वर्षों तक बनी रह सकती हैं । सूक्ष्मदर्शियों के अनुसार ये हलचलें सूर्य की मनोमय क्रांति हैं और उनका यह विश्वास है कि इससे विश्व के भूगोल में कितने ही बड़े और भयंकर परिवर्तन क्यों न हों पर भारतीय संस्कृति को उससे संरक्षण ही मिलेगा । उसके अभ्युत्थान के मूल में उस विराट पुरुष की ही इच्छा काम कर रही है । चाहे इसे कोई वैज्ञानिक दृष्टि से मान ले अथवा श्रद्धापूर्वक स्वीकार कर ले । सूर्य देव की इस मनोमय प्रकृति के अलावा उनकी प्राण शक्ति और पंच भौतिक प्रकृति भी है ।

शरीर में जितनी धातुएँ, रासायनिक तत्व आदि हैं, वह सब सूर्य में भी हैं । मनुष्य का शरीर सूर्य और पृथ्वी के तत्वों के सम्मिश्रण से बना है । इसलिए शारीरिक और मानसिक दृष्टि से शरीर पृथ्वी से ही प्रभावित नहीं होते वरन् उन पर सूर्य का भी प्रचण्ड हस्तक्षेप रहता हैं । हम यदि शरीर पर विचार करें तो प्रतीत होगा कि अन्न, जल आदि पृथ्वी का रस सेवन करने से हमारे शरीर में आक्सीजन, नाइट्रोन, कार्बन, लोहा गंधक, सोडियम, कैलसियम आदि विभिन्न तत्व उत्पन्न होते हैं । वहाँ उसमे इन तत्वों से भी सूक्ष्म प्राण शक्तियाँ भी क्रियाशील हैं । प्राण के द्वारा ही हमारे शरीर मे स्पन्दन है । छींकना, जम्हाई लेना, अपान वायु का विसर्जन, निद्रा, पलक झपकाना आदि क्रियाएँ प्राण के द्वारा ही संभव हैं । इस प्राण और पंच भौतिक प्रकृति को सूर्य विज्ञान के द्वारा आसानी से समझा जा सकता है । मनुष्य की तरह प्राण पंच भौतिक प्राकृति और मनोमय क्रियाशील तीनों ही अंग सूर्य देव मे विद्यमान हैं ।

हम उनको आत्मा के रूप मे "गायत्री" के रूप में ध्यान और धारण करते हैं, चाहें तो उनकी कल्पना एक विराट पुरुष के रूप में भी कर सकते हैं । यह निश्चित है कि जिस तरह मनुष्य का एक छोटा सा अहं भाव है, सूर्य का भी वैसी अहं भाव संभव है और जिस

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तरह हम किसी तेजस्वी महात्मा के वरदान को प्राप्त कर आरोग्य लाभ, पुत्र लाभ, धन लाभ, बुद्धि लाभ आदि प्राप्त कर सकते हैं । इन प्राण पुरुष गायत्री के तत्व देवता–सविता से और भी अधिक विश्वासपूर्वक ऐसे आशीर्वाद और स्नेह प्राप्त कर सकते हैं । शर्त इतनी भर है कि यदि हम उनको अपनी श्रद्धा और निष्ठा से उसी तरह प्रभावित कर सकें, जिस तरह पुत्र अपने पिता को प्रसन्न करके स्नेह के साथ उनकी अन्य भौतिक वस्तुओं का भी अधिकार पा लेता है ।

अभी यह रहस्य और विस्तृत होने वाले हैं । अभी वैज्ञानिकों को ध्यान की प्रणाली का पूरा–पूरा ज्ञान नहीं है । जिस दिन इस विद्या की वैज्ञानिक जानकारी देनी संभव हो जाएगी उस दिन उपासना, श्रद्धा और भक्ति आदि का रहस्य भी प्रकट हो जायेगा और सिद्धियों सामार्थ्यों की बात भी सत्य साबित हो जायगी ।

सूर्य भगवान का दृश्य और अदृश्य क्रिया क्षेत्र पृथ्वी ही नहीं अनेक ग्रह नक्षत्रों में व्याप्त है । मनुष्य की दृश्य शक्ति उसकी आँखें ऐसी नहीं हैं कि वह उतने व्यापक क्षेत्र को देख सके । किन्तु जब वह अपना सम्बन्ध सूर्य देव के साथ जोड़ लेता है, तो वह भी उसी तरह न केवल पृथ्वी की हलचलों और परिवर्तनों का जानकार हो जाता है, वरन् उसे ब्रह्माण्डों के भी रहस्य ज्ञात होने लगते हैं । यही नहीं वह एक अंश तक उन परिवर्तनों के साथ अपनी सम्पति जोड़कर उन्हें कुछ कम या ज्यादा कर सकता है ।

हजारों वर्ष पूर्व प्राण विद्या के आचार्यो ने कहा था तेजसा वै गायत्री प्रथमं त्रिरात्रं दाधार पदैद्वितीयमक्षरै स्तृतीयम् । ता.१०–५३

तेजो वै गायत्री –गो. उ. ५–३

ज्योतिर्वै गायत्री छन्दसाम् –ता. १६–२

अर्थात् गायत्री एक प्रकार का तेज है जो प्रकाश और ऊष्मा के रूप में विश्व का मूल है । सूर्य गायत्री तेज का सबसे बड़ा भण्डार है और विश्व के निर्माण में सबसे बड़ा कारण भी ।

इसी प्रकार गायत्री के मनुष्य जीवन में प्रादुर्भाव के स्वरूप को व्यक्त करते हुए शास्त्रकार ने बताया कि "मन एवं सविता " अर्थात् मन ही सविता है । तात्पर्य यह कि जब मन और सूर्य देव का तादात्म्य करते हैं । तो सूर्य देव की भर्ग शक्ति मनुष्य के अन्तःकरण में प्रवेश करती है और प्रकृति से सामंजस्य स्थापित करती है । अर्थात् यदि प्रकृति कहीं दूषित हो रही है तो उसे ठीक करती है । इसी का नाम असत संस्कारों का निष्कासन और सत्संस्कारों का विकास है । जब तादात्म्य की स्थिति ऐसी हो जाए कि सूर्य का ध्यान करते हुए मन की अग्नि और सूर्य का रूप दोनों एक हो जायें । कोई और कल्पना हो ही नहीं, तो उसे गायत्री की सिद्धि कहेंगे । तब गायत्री की सम्पूर्ण अनुभूति और शक्ति का स्वामी वह मनुष्य होगा और उन क्षमताओं से प्रकृति में परितवर्तन की शक्ति से विभूषित होगा, जिनकी ऊपर व्याख्या की गई है ।

सविता का अनुदान प्राणशक्ति के रूप में

सामान्य प्राणी अपने जीवनक्रम को शारीरगत ऊर्जा और प्रकृति प्रदत्त तापमान से सामान्यतया चला लेते हैं । उन्हें अतिरिक्त ऊर्जा की आवश्यकता नहीं पड़ती । परन्तु विकसित मनुष्य पर यह बात लागू नहीं होती । स्तर बढ़ने के साथ–साथ साधनों की आवश्यकता बढ़ती हैं । सर्व विदित है कि असामान्य उत्पादन के लिए असामान्य ऊर्जा की आवश्यकता होती है । ऊर्जा ही शक्ति है । शक्ति से ही पराक्रम सम्भव होता है । शरीर हो अथवा उपकरण, उसकी गतिशीलता शक्ति पर ही निर्भर है । यह शक्ति प्रकारान्तर से ऊर्जा ही विविधि रूपों में परिलिक्षित होने वाली परिणति भर होती है, जिसका उद्गम स्थल सूर्य है ।

दिव्यदर्शी मनीषियों ने भूतकाल से ही सूर्य शक्ति का उपयोग मनुष्य की सर्वतोमुखी प्रगति के लिए कई उपाय–उपचारों के सहारे किया है । सूर्य चिकित्सा अपने आप में एक विज्ञान है । शरीर को रूग्ण करने वाले विषाणुओं का नाश नित्य प्रति के व्यवहार में तो धूप सेकने के सहारे होता ही है । विशेष रोगों की चिकित्सा भी रवि रश्मियों की ऊर्जा को विशिष्ट क्रम से ग्रहण करने से सहज सम्भव हो सकती है । सूर्योपस्थान, सूर्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

नमस्कार, सूर्य साधना जैसे अनेकों आध्यात्म उपचार ऐसे हैं जो मानवी चेतना की विभिन्न आयामों को पूरा कर सकते हैं ।

गायत्री महामन्त्र की गरिमा सर्व विदित है । उसके चमत्कारी लाभों से सभी परिचित हैं । उसके अक्षरों का अर्थ तो ऋतम्भरा सप्रज्ञा का सद्भावना एवं सद् विचारणा से सम्बन्धित है पर उसकी साधना से जिस चमत्कारी शक्ति सम्पदा की उपलब्धि होती है, उसका उद्गम केन्द्र–"सविता' देवता है । गायत्री का अधिपति –"सविता' है । उसी के विशिष्ट साधना-विधानों की सहायता से दिव्य शक्तियों को आकर्षित किया जाता है और साधक को सर्वसमर्थ बनने का अवसर मिलता है ।

धरातल की प्राकृतिक हलचलें अधिकतर सूर्य के अनुदान पर ही अवलम्बित हैं । पृथ्वी की अपनी विशिष्टताएँ एवं सम्पदायें परोक्ष रूप से सूर्य की ही देने हैं । अन्तरक्षीय अनुदानों के रूप में उसे जो कुछ प्राप्त होता है उसमें सूर्य का भाग ही प्रमुख होता है । ऐसी दशा में वह मानवी आवश्यकताओं की बढ़ोत्तरी का समाधान कर सकने में भी समर्थ हो सकता है, यह बात सहज ही समझ में आने योग्य भी है ।

उदाहरण के लिए सविता की स्वर्णिमा आभा नित्य प्रति जो हम तक पहुँचती उसमें असंख्यों जीवनदायी दुर्लभ तत्व घुले होते हैं । मिस्र के काहिरा यूनिवर्सिटी के सुप्रसिद्ध भौतिकविद् नाफीद यूसुफ ने गहन अनुसंधान के पश्चात् निष्कर्ष निकाला है कि अरुणोदय काल में सुदूर क्षितिज से आती सूर्य किरणों में एक लाख खरब टन सोना बिखरा विद्यमान होता है । इतनी भारी मात्रा से लदी हुई इन रश्मियों को हम अपने शरीर पर प्रतिदिन झेलते रहते हैं । सूर्योदय के समय खुले बदन पर यदि कुछ समय के लिए प्रतिदिन इन्हें पड़ने दिया जाय तो स्वास्थ्य सम्वर्धन में यह अभूतपूर्व सत्परिणाम प्रस्तुत करती हैं ।

इतना ही नहीं सूर्य जीवन शक्ति, प्राण का केन्द्र है । अध्यात्मवेत्ता ऋषि–मुनीषियों ने सविता को प्राणपन्य और बुद्धि चेतना को प्रेरणा दे सकने योग्य बताया है और "प्राणः प्रजानां उदयति एव सूर्यः" कह कर प्रार्थना की है । उनके अनुसार इसके बिना पृथ्वी पर जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती । उससे निःसृत प्रकाश ताप और प्राण-ऊर्जा जीवन निर्वाह और सृष्टि व्यवस्था दोनों के लिए आवश्यक हैं । वैज्ञानिकों का भी कहना है कि सूर्य की सत्ता ही जीवन सम्पदा का रूप धरती है । रोग निवारण एवं स्वास्थ्य सम्वर्धन में निरंतर काम आने वाली 'जीवनी शक्ति' शरीर का अपना उपार्जन नहीं वरन् सूर्य का दिया हुआ अनुदान ही है । यही वनस्पतियों का प्राण एवं प्राणियों की जीवनी शक्ति का केन्द्र है । सूर्य प्रकाश के अभाव में चारों ओर जीवन प्रवाह मन्द हो जाता है । इसी कारण गर्मी व सर्दी में जन्मने वाले तथा ऊष्मा एवं शीत प्रधान देशों में रहने वाले व्यक्तियों की प्रकृति, रूचि और मान्यताओं में अन्तर देखा जाता है । वातावरण की भिन्नता के पीछे पृथ्वी के विभिन्न स्थानों के साथ होने वाल सूर्य संयोग ही मुख्य हैं ।

अग्नि का अस्तित्व तो पहले भी था, पर मनुष्य ने उसे काफी समय बाद पहचाना । कालान्तर में विकसित होती विधियों से विशिष्ट प्रक्रिया द्वारा इस शक्ति से लाभ उठाना सम्भव होता गया । सूर्य की गर्मी अपनी प्राकृतिक सम्पदा तो सबको समान रूप से बाँटती रहती है, पर उसका सर्वाधिक लाभ जानकार लोग ही उठा पाते हैं । उसमें सन्निहित प्राण शक्ति को अध्यात्मवेत्ता ही जानते हैं और उसके सम्पर्क सान्निध्य, अभीष्ट लक्ष्य को प्राप्त करते हैं ।

जिस तरह भौतिक जगत में आज के वैज्ञानिक विभिन्न कार्यों के सम्पादन के लिए ऊर्जा का एक मात्र सशक्त एवं स्थायी विकल्प सूर्य ऊर्जा को ही मान रहे हैं और उसके दोहन के लिए विविध विधि सरंजाम खड़े कर रहे हैं । ठीक उसी तरह शारीरिक, मानसिक रोगों के निवारण और स्वस्थ दीर्घायुष्य जीवन से लेकर अध्यात्मोपचार तक की प्रक्रिया में सविता की प्राण शक्ति का तारतम्य बिठाया जा सकता है । इसके लिए किसी वैज्ञानिक उपकरण की आवश्यकता नहीं पड़ती । अपना मन और अन्तःकरण ही इसके लिए फोटोवोल्टिक बैटरी और स्टोरहाउस का काम करते हैं । ध्यान–धारणा के सहारे आदित्य मण्डल के प्राण भण्डार को आकर्षित किया और अपने को उससे परिपूरित किया जाता है । वैदिक ऋचाएँ इसी तथ्य का प्रतिपादन करती हैं कि सूर्य शक्ति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को महत्व भौतिक और आध्यात्मिक दोनों ही दृष्टि से दिया जाना चाहिए ।

पाश्चात्य जगत के ख्याति लब्ध खगोलज्ञ सर जॉन हर्शेल की भी मान्यता है कि सविता के 'एब्सेकंडिटो' नामक क्षेत्र में प्राण शक्ति का विशाल स्रोत भरा पड़ा है । विश्व ब्रह्माण्ड की आपूर्ति इसी से होती है । उनके अनुसार शरीर में जिस तरह हृदय कार्यरत रहता है, लगभग वैसा ही काम सूर्य का है । इसकी लय भी उसी तरह गतिशील रहती हैं । 'वाइटल फ्लूइड' अर्थात् जीवनतत्व का संचरण उसी से होता है । यौगिक अभ्यासों –साधना उपचारों के माध्यम से साधक उसी प्राण शक्ति को आकर्षित करके अपने को शारीरिक, मानसिक और आत्मिक दृष्टि से सशक्त एवं प्रखर बनाते हैं ।

भौतिक जगत पर सौर ऊर्जा का अजस्र अनुदान बरसता है और आत्मिक क्षेत्र पर उसका अभिवर्षण प्राण के रूप में होता है । प्राण को सविता का अनुदान माना गया है । प्राण प्रधान होने से ही जीवधारियों को प्राणी कहा गया है । जो जितना प्राणवान है उतना ही समर्थ, विकसित एवं समुन्नत है । मनुष्य को दूरदर्शिता, साहसिकता, श्रमशीलता एवं सद्भावना के रूप में जो विशिष्टताएँ उपलब्ध हुई हैं वे प्रकारान्तर से प्राण शक्ति के अनुदान हैं ।

अनुसंधानकर्ता विज्ञान वेत्ताओं ने इस संसार में ऐसी शक्ति का अस्तित्व पाया है, जो पदार्थों को हलचल करने के लिए और प्राणियों को सोचने के लिए विवश करती है । यही वह मूल प्रेरक शक्ति है, जिससे निश्चेष्ट को सचेष्ट और निस्तब्ध को सक्रिय होने की सामर्थ्य मिलती है, वस्तुओं और प्रणियों की तरह–तरह की हलचलें इसी के प्रभाव से असंभव हो रही है । समस्त अज्ञात और विज्ञात क्षेत्र के मूल में यही तत्व गतिशील है और अपनी गति से सबको अग्रगामी बनाता है । वैज्ञानिकों की दृष्टि में इसी जड़-चेतना स्तरों की समन्वित क्षमता का नाम प्राण है । पदार्थ को ही सब कुछ मानने वाले ग्रैविटी, ईथर, मैगनेट के रूप में उसकी व्याख्या करते हैं अथवा इन्हीं की उच्चस्तरीय स्थिति बताते हैं । चेतना का स्वतन्त्र अस्तित्व मानने वाले विज्ञानी उसे "साइकिक फोर्स" या "लेटेन्ट हीट" कहते हैं ।

ऋषियों ने इस तत्व की गहराइयों का अन्वेषण करके इसे चेतन की जीवन-शक्ति के रूप में अनुभव किया है । उनके अनुभव के अनुसार जीवन का सार तत्व प्राणं है । यही प्रगति का आधार है । समृद्धि उसी के मूल्य पर खरीदी जाती है । सिद्धियों और विभूतियों का उद्गम स्रोत वही है । यह प्राण तत्व अपने भीतर प्रचुर परिमाण में भरा पड़ा है । उसका चुम्बकत्व बढ़ा देने पर विश्व प्राण से भी उसे अभीष्ट मात्रा में उपलब्ध और धारण किया जा सकता है । मानवीय सत्ता में सन्निहित यह प्राण भंडार सामान्यतया प्रसुप्त स्थिति में पड़ा रहता हैं, और उससे शरीर निर्वाह भर के काम हो पाते हैं । उसे साधना विज्ञान के आधार पर जाग्रत किया जा सके तो सामान्य में से असामान्य का प्रगटीकारण हो सकता हैं ।

ऋषियों और वैज्ञानिकों के शोध प्रयासों की व्यापकता और गहराई में अन्तर भले हो पर दोनों ने निर्विवाद रूप से विश्व में जीवन चेतना के स्पन्दन फैलाने वाले प्राण तत्व का उद्गम स्रोत सूर्य को माना है । १९७३ ई. के अगस्त में विख्यात अमेरिकन पत्रिका "न्यू सायन्टिस्ट" में आण्विक जीव विज्ञानी डा. फ्रांसिस, डा. फ्रिक और डा. लेसली ने अपने शोध निष्कर्ष प्रस्तुत करते हुए कहा है विश्व में जीवन और प्राण के स्पन्दन सूर्य से ही प्रकट हुए हैं । अपनी इस स्वीकारोक्ति के बावजूद वैज्ञानिक इस तत्व की गहनता में प्रवेश नहीं कर पाते । जबकि भारतभूमि के पुरातन वैज्ञानिक तत्वदर्शी ऋषियों ने यह रहस्यमयी प्राण विद्या आविष्कृत की । जिसके आधार पर की गई सूर्य–साधना व्यक्तित्व में अलौकिक क्षमताओं –सामर्थ्यों को विकसित करने वाली होती है ।

इस सन्दर्भ में उपनिषदों के एक विवरण के अनुसार प्राण तत्व की शोध में संलग्न सुकेशा, सत्यकाम, गार्ग्य, कौसल्य, वैदर्भी तथा कबन्धी यर्थाथ समाधान पाने के लिए महर्षि पिप्पलाद के पास गये । जिज्ञासा एक ही थी कि प्राण का उद्गम स्रोत क्या है? जिज्ञासा का समाधान करते हुए पिप्पलाद ने गम्भीर स्वर में कहा–

"आदित्योह वै प्राणों रयिरेव चन्द्रमा रयिर्वा एतत्सर्वं यन्मूर्त वामूर्त चतस्मान्मूर्तिरेव रयि ॥

अथादित्य उदयन्यत्प्राचीं दिशं प्रविशति तेन प्राच्यान्

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्राणान् रश्मिषु संनिधत्ते ॥
यदृक्षिणाम्.....सहस्ररश्मि शतधा वर्तमान प्राणः प्रजानां मुदत्येष सूर्यः ॥

प्रश्नो. १-५-८ ॥

"निश्चय ही आदित्य ही प्राण और चन्द्रमा ही रयि है । सभी स्थूल और सूक्ष्म, मूर्त और समूर्त रयि ही है अतः मूर्ति ही रयि है । जिस समय उदय होकर सूर्य पूर्व दिशा में प्रवेश करते हैं, उससे पूर्व दिशा के प्राणों को सर्वत्र व्याप्त होने के कारण अपनी किरणों में उन्हें प्रविष्ट कर लेते हैं । इसी प्रकार सभी दिशाओं को वे आत्मभूत कर लेते हैं । वे भोक्ता होने के कारण वैश्वानर, विश्वरूप प्राण और अग्नि रूप हो प्रगट होते हैं । ये सर्वरूप ज्ञान संपन्न, समस्त प्राणों के आश्रयदाता सूर्य ही सम्पूर्ण प्रजा के जनक हैं ।"

सूर्य के माध्यम से प्रस्फुटित होने वाला महाप्राण परब्रह्म, परमात्मा का वह अंश है जिससे इस विश्व ब्रह्माण्ड का संचालन होता है । एक से अनेक बनने का ब्रह्म संकल्प ही महाप्राण बन कर फूट पड़ा है । यह निर्झर जिस दिन तक झर रहा है उसी दिन तक सृष्टि है । जिस दिन परम प्रभु उस संकल्प को समेट लेंगे उसी दिन महाप्राण शान्त हो जाएगा और फिर महाशून्य के अतिरिक्त और कुछ भी शेष न रहेगा । यह ब्रह्म संकल्प-महाप्राण-परब्रह्म की सत्ता से भिन्न कोई बाहरी पदार्थ नहीं वरन् उसी का एक अविच्छिन्न अंग है । परमात्मा अनन्त है उसकी सत्ता असीम है उस अनन्त, असीम, अचिन्त्य का भाग जो सृष्टि के संचालन में उसकी समस्त प्रक्रियाओं को सुव्यवस्थित रखने में लगा हुआ है । उस महाप्राण को ही सूर्य की आत्मा सविता देवता समझना चाहिये । प्राणी का जीवनधारी का सीधा सम्बन्ध उसी से है ।

जीवन की बाह्य और आन्तरिक सुव्यवस्था के लिए प्रगति और शान्ति के लिए परब्रह्म की महाप्राण सत्ता को अधिकाधिक मात्रा में उपलब्ध करना प्राणी को अभीष्ट होता है । इसी प्रयोजना की पूर्ति प्राण-विद्या के माध्यम से सविता देवता की उपासना से की जाती है । यह प्रक्रिया सूर्य की आत्मा सविता शक्ति के साथ उपासक को सम्बन्धित करती है । जिसके द्वारा वह परब्रह्म महाप्राण को अपने शरीर और अन्तःकरण में आवश्यक मात्रा में धारण करके लौकिक सुख एवं आत्मिक शान्ति को अनुभव करता हुआ जीवन के परम लक्ष्य को प्राप्त करता है ।

यह महाप्राण जब शरीर क्षेत्र में अवतीर्ण होता है तो आरोग्य आयुष्य, तेज. ओज, बल, उत्साह, स्फूर्ति, पुरुषार्थ इन्द्रिय-शक्ति के रूप में दृष्टि-गोचर होता है । जब वह मनः क्षेत्र में अवतीर्ण होता है तो उत्साह, स्फर्ति, प्रफुल्लता, साहस, एकाग्रता, स्थिरता, धैर्य, संयम आदि सद्गुणों के रूप में देखा जा सकता है । जब उसका अवतरण आध्यात्मिक क्षेत्र में होता है तो त्याग, तप, श्रद्धा, विश्वास, दया, उपकार, प्रेम, विवेक आदि के रूप में दिखायी देता है । तीनों ही क्षेत्र उस महाप्राण से जैसे-जैसे भरते जाते हैं, वैसे ही मनुष्य अपूर्णता से पूर्णता की ओर, लघुता से विभुता की ओर, तुच्छता से महानता की ओर बढ़ने लगता है ।

श्रुति में प्राण को प्रत्यक्ष ब्रह्म मानकर उसका अभिनन्दन किया गया है ।

"वायोत्वं प्रत्यक्ष ब्रह्मासि ।" ऋग्वेद
"हे प्राणवायु आप प्रत्यक्ष ब्रह्म हैं ।"
प्राणायनमो यस्य सर्व मिदं वशे यो भूतः सर्वस्येश्वरो यस्मिन्त्सर्व प्रतिष्ठतम् । अथर्व

"उस प्राण को नमस्कार है जिसके वश में सब कुछ है जो सबका स्वामी है, जिसमें सब समाये हुए हैं उपनिषदों में भी ऐसे वर्णन मिलते हैं,

प्राणो भवेत् परब्रह्म जगत्कारणमव्ययम् प्राणों भवेत् तथा मंत्र ज्ञान कोश गतोऽपिवा ॥

-ब्रह्मोपनिषद्

"प्राण ही जगत का कारण परब्रह्म है । मन्त्र ज्ञान तथा पंचकोश प्राण पर आधारित हैं ।"

प्राणाग्नय एवास्मिन् ब्रह्म पुरे जाग्रति ।

-प्रश्नोपनिषद्

"इस ब्रह्मपुरी में प्राण की अग्नियाँ ही सदा जलती रहती हैं ।"

आरण्यक और ब्राह्मण ग्रन्थों में प्राण को प्रज्ञा आयु

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और अमृत कहा गया है

प्राणोऽस्मि प्रज्ञात्मा । तं मामायुरमृत मित्युपास्स्वाऽऽयुः प्राणः प्राणो वा आयुः । यावद्स्मिञ्छरीरे प्राणो वसति तावदायुः । प्राणेन हि एवास्मिन् लोकेऽमृत्वमाप्नोति ।

शंखायन आरण्यक ५–२

"मैं ही प्राण रूप प्रज्ञा हूँ । मुझे ही आयु और अमृत जानकर उपासना करो । जब तक प्राण है, तभी तक जीवन है । इस लोक में अमृतत्व प्राप्ति का आधार प्राण ही हैं ।"

अमृतमु वै प्राणः–शतपथ ६–१–२–३२

प्राण ही निश्चित रूप से अमृत है ।

सात प्राण ही सात ऋषि हैं । सप्त ऋषियों को ज्ञान, तप, और आध्यात्म बल का प्रतीक माना जाता है । यह ऋषि सप्त प्राणों के रूप में हमारे अन्दर मौजूद हैं । प्राण विद्या के द्वारा इन्हें अपने अंतस् में जाग्रत करके साधक ऋषि तत्व की धारणा का अधिकारी बनाता हैं ।

ऐतरेय ब्राह्मण में आता है कि हिरण्यदन नामक ऋषि ने प्राण के स्वरूप को जाना और उपासना की । फलस्वरूप उन्हें विपुल सत्परिणाम प्राप्त हुए । प्राण स्वयमेव ऋषि है । मन्त्र द्रष्टा ऋषियों का ऋषित्व उनके शरीर पर नहीं वरन् प्राण पर अवलम्बित है । इसलिए विभिन्न ऋषियों के नाम से उसका ही उल्लेख हुआ है । इन्द्रियों के नियन्त्रण को कहते हैं गृत्स । कामदेव को कहते हैं "मद" । यह दोनों ही कार्य प्राण शक्ति के द्वारा सम्पन्न होते हैं, इसलिए उसे "गृत्समद" कहते हैं । विश्वं मित्र यस्य असौ विश्वामित्रः । प्राण का यह समस्त विश्व अवलम्बन होने से भिन्न है, इसलिए उसे विश्वामित्र कहा गया है । वन्दनीय, सेवनीय, भजनीय और श्रेष्ठ होने के कारण उसे बामदेव कहा गया है । सर्व पाप्यनोऽत्रायत इति अत्रिः ।सबको पाप से बचाता है इसलिए वही अत्रि है । इस वाज रूप शरीर का भरण करने से भरद्वाज भी वही है । विश्व में सबसे श्रेष्ठ विशिष्ठ होने से वशिष्ठ भी वही हुआ । इसी प्रकार प्राण के अनेक नाम ऋषि बोधक हैं ।

प्राण वा ऋषयः । इमौ एव गौतम भरद्वाजौ । अयमेव गौतमः अयं भरद्वाजः । इमौ एव विश्वामित्र जमदग्नी । अयमेव विश्वामित्रः अयं जमदग्निः इमौ एवं वशिष्ठ कश्यपौ । अयमेव वशिष्ठः अयं कश्यपः । वागे वात्रिः ।

सात प्राण ही सात ऋषि हैं । दो कान गौतम और भरद्वाज हैं । दो आखें विश्वामित्र और जमदग्नि हैं । दो नासिका छिद्र वशिष्ठ और कश्यप हैं । वाक् अत्रि है ।

इन सातों प्राणों का स्रोत महाप्राण सविता देवता स्वयं है । इसकी आराधना से ऋषित्व उपलब्ध होता, विभूतियाँ व्यक्तित्व को सौन्दर्य मण्डित करती हैं । इसी तत्व का स्पष्टीकरण शास्त्रों में स्थान–स्थान पर विस्तारपूर्वक किया गया है ।

प्राणो वै अर्कः ।

–शतपथ १०–४–७–२३

प्राण सूर्य है ।

स एष वैश्वानरो विश्व रूपः प्राणेऽग्नि रुद्यते

प्रश्नोपनिषद् १–७

"सूर्य के उदय होने पर सारे विश्व में प्राणाग्नि का संचार होने लगता है ।"

"योऽसौ तपःन्नुदेति स सर्वेषां भूतानां प्राणानां दायोदेति"

इस सूर्य से ही सब प्राणियों को प्राण प्राप्त होता है ।

स एष वैश्वानरो विश्व रूपः प्राणाग्नि रुदयते ।

"यह प्राण ही सर्वव्यापी अग्नि के रूप में प्रकट होता है ।"

आदित्यो वै बाह्यप्राण उदयत्येषत्येनं चाक्षुष प्राणामनुग्रहणीते ।

–प्रश्नोपनिषद् १–७

"बाह्य जगत में यह प्राण आदित्य रूप होकर दसों दिशाओं में विद्यमान है ।"

विश्व रूपं हरिणं जातवेद सं
परायणं ज्योतिरेक तपन्तम् ।
सहस्र रश्मिः शतधा वर्तमानः
प्राणः प्रजानामदयत्येष सूर्यः ॥

(शतपथ)

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विश्व रूप, व्यापक, सर्वाधर, प्रकाशवान, तप्त किरणों वाला सहस्र रश्मियों वाला यह सूर्य समस्त जीवों का प्राण होकर उदय होता है ।

सूर्याद भवन्ति भूतानि सूर्येण पालितानि तु
सूर्ये लयं प्रापुवन्तियः सूर्यः सोऽहमेव च ॥

"सूर्य से ही सब प्राणी उत्पन्न होते हैं, उसी से उनका पालन होता है, उसी में वे लय हो जाते हैं, जो सूर्य है, वही मैं हूँ ।"

गायत्री का देवता–सविता सूर्य विश्व के जीवन का ज्ञान और विज्ञान का केन्द्र है । अन्य समस्त देव शक्तियों का केन्द्र भी है । चारों वेदों में जो कुछ है वह सब भी इस सविता शक्ति का विवेचन मात्र है । तप, श्रद्धा और साधना के द्वारा योगीजन इसे ही प्राप्त करने में संलग्न रहते हैं । नाम–रूप सुविधानुसार कोई माना जाय, वस्तुतः यह सविता देवता ही सबका उपास्य है । उसी को प्राप्त करने के लिए प्रत्येक साधक को प्रयत्नशील होना पड़ता है ।

उद्यन्तं वादित्यामग्निसु समारोहति ।
सुषुम्नः सूर्यरश्मिः चन्द्रमा गन्धर्वः ॥

"इस सूर्य के अन्तर्गत ही अग्नि, सुषुम्न, चन्द्र, गंधर्व आदि हैं ।"

अथोत्तसरेण तपसा ब्रह्मचर्येण श्रद्धया विद्ययात्मा नमन्विष्यादित्यमभिः जयन्ते एतद्वै प्राणानामाय तनमेतदमृतममतमे तत्परायण मेतस्यात्र पुनरावर्तन्त इत्येष निरोधः ।

"तपः ब्रह्मचर्य, श्रद्धा, तथा विद्या द्वारा जो आत्मा की खोज कर उस आदित्य को प्राप्त करते हैं, वे पुनः जन्म नही लेते यह आदित्य ही प्राणों का आश्रय है । वही मोक्ष है, वही पद है, जीव को उसी से परम आश्रय मिलता है ।"

भद्भूतं भविष्यं च जंगमंस्थावरं चयत् ।
अस्यैकं सूर्यमेवैकं प्रभवं प्रलयं विदुः ॥
असतश्व सतश्चैव योनिरेषा प्रजापतिः ।
तदक्षरं चाव्ययं च यच्चैतद ब्रह्मशाश्वतम् ॥
कृत्वैवहि मिथात्मान्नेषु लोकेषुतिष्ठति ।
वेदान् यथायथं सवनि् निवेश्य स्वेषु रश्मिषु ॥

–सूर्योपनिषद्

जो जड़ चेतन पदार्थ इस संसार में अब मौजूद हैं, भूतकाल में थे या भविष्य में होंगे, वे सभी सूर्य से उत्पन्न हुए और उसी में लीन होते हैं । यह सूर्य ही प्रजापति है । यह सत् और असत् की योनि है । अक्षर, अव्यय, शाश्वत ब्रह्म यही है । यह तीनों लोकों में व्याप्त है । समस्त देवता इसी की किरणें हैं ।

आदित्योद्यादि धूतत्वात प्रसूत्या सूर्य उच्यते ।
परं ज्योतिः तमः पारे सूर्योऽयं सवितेति च ॥

–सूर्य सिद्धान्त

"वह समस्त जगत का आदि कारण है, इसलिए उसे आदित्य कहते हैं । सबको उत्पन्न करता है इसलिए सविता कहते हैं । अंधकार को दूर करता है, इससे उसे सूर्य कहा जाता है ।"

अथादित्य उदयन्य प्राचीं दिशं प्रविशति तेन प्रच्यान् प्राणान् रश्मिषु संनिधत्ते । यद्दक्षिणां यत् प्रतीची यदुदीची यदधो यद्हर्थ यदन्तरा दिशो यत्सर्व प्रकाश यति तेन सर्वान् प्राणान रश्मिषु संनिधत्ते ।

–प्रश्नोपनिषद

"पूर्व में उदय होता हुआ सूर्य अपनी किरणों से पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, नीचे ऊपर तथा उनके कोणों की सभी दिशाओं को प्रकाशित करता है । उसकी किरणों में समस्त जगत का प्राण धारण किया जाता है ।"

अपश्यं, गोपायमनि पद्यमान्
माच पराच पथिभिश्चरन्तम्
स सध्रीचीः स विषूचीर्वसान
आनरीवर्ति भुवनेष्वन्तः

–ऐतरेय

"मैंने प्राण को देखा है । साक्षत्कार किया है यह प्राणसब इन्द्रियों का रक्षक है । यह कभी नष्ट नहीं होता । यह नाड़ियों द्वारा शरीर में दौंड़ता रहता है । मुख और नासिका द्वारा यह आता और जाता है । यह शरीर में वायु रूप है, पर ब्रह्माण्ड में सूर्य रूप है ।"

तेन संसार चक्रेऽस्मिन् भ्रमतीत्वेव सर्वदा ।
तदर्थ ये प्रवर्तन्ते योगिनः प्राण धारणे ॥
तत एवाखिला नाड़ी निरुद्धाचाष्ट वेष्टनम् ।
इयं कुण्डलिनी शक्ति रंधंत्यजति नान्यथा ॥

–गोरक्ष

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसी की ही शक्ति से जीवधारी इस संसार में गतिमान रहते हैं। इसी से ही योगी लोग दीर्घ जीवन प्राप्त करते हैं। इसी प्राण के कारण ही इन्द्रियाँ सशक्त और निरोग रहती हैं। प्राण के अभ्यास से ही नाड़ियाँ शुद्ध होती हैं और तभी कुण्डलिनी शक्ति जाग्रत होती है।

इसका एक अत्यन्त महत्वपूर्ण विज्ञान है। सूर्य साधना से इस विज्ञान को प्रत्यक्ष किया जाता है। गायत्री महामंत्र सूर्य की रहस्यमयी प्राण विद्या ही है। जिसके द्वारा सप्राण को जगाया और उसके रहस्यों को अनुभव किया जाता है। जिसने अपने प्राण को जगा लिया उसके लिए चारों ओर जाग्रति ही जाग्रति है, सब दिशाओं में प्रकाश ही प्रकाश है। सोता वही है जिसका प्राण सोता है। जिसकी प्राणशक्ति जग गई, इस संसार में वही जाग्रत माना जाता है। उसी के सामने इस विश्व का वह रहस्य प्रकट होता है जो सर्वसाधारण के लिए छिपा हुआ है।

तदाहुः कोऽस्वप्नुमर्हति यद्वाव।
प्राणो जागार तदेव जागरितम् इति॥

–ताण्ड्य. १०–४–४

कौन सोता है? कौन जागता है? जिसका प्राण जागता है, वस्तुतः वही जागता है।

य एवं विद्वान्प्राणं वेद रहस्य प्रजा
हीयतेऽमृतो भवति तयेव श्लोकः

–प्रश्नोपनिषद् ३–११

जो विद्वान सविता की प्राण–विद्या के रहस्य को जानता है उसकी परम्परा कभी नष्ट नहीं होती। वह अमर हो जाता है।

निश्चित ही सविता आराधना द्वारा प्राण का ज्ञान एवं जागरण ही अमृतत्व एवं मोक्ष प्राप्त करने का मार्ग है। उसी से यह लोक और परलोक सुधरता है। इसी से भौतिक और आध्यात्मिक विभूतियाँ प्राप्त होती हैं।

सविता की उपासना हर दृष्टि से विज्ञान सम्मत

निरुक्त (२/२/८) में आदित्य का एक नाम "भारत' बताया गया है। इस प्रकार भारत का अर्थ हुआ आदित्य की ज्योति एवं उसकी उपासना करने वाला। इसका दूसरा अर्थ हुआ वह देश जहाँ सविता की उपासना होती हो। इस प्रकार अपने देश का नाम भारत पड़ने का एक यह भी हेतु हो सकता है।

किन्तु यहाँ प्रतिपाद्य विषय न तो नामकरण संबन्धी विवाद है और न इससे जुड़ा कोई अन्य प्रश्न वरन् मूल सवाल यह है कि आरंभ में जब अपना देश अध्यात्म सम्पन्न था और सम्पूर्ण विश्व को तत्संबन्धी मार्ग दर्शन करने का महत्वपूर्ण बीड़ा उठाया और उसे सफलतापूर्वक सम्पन्न कर दिखाया था, तो आज उसकी यह दुर्गीते क्यों व कैसे हुई ? वर्तमान में इसकी दुरावस्था के कारण इसकी संज्ञा चाहे कुछ भी दी जाय, किन्तु भूतकाल की इसकी आध्यात्मिक सम्पन्नता को देखते हुए इसे विश्व–शिरोमणि की उपमा दे देना कोई अत्युक्ति जैसी बात न होगी। इस संदर्भ में "भारत–भारती" खण्ड–काव्य में विश्व को इसके अजस्र अनुदान की एक बानगी द्रष्टव्य है। मैथिलीशरण गुप्त लिखते हैं–"भारत–गगन में उस समय फिर एक वह झंडा उड़ा, जिसके तले आनन्द से आधा जगत आकर जुड़ा।" यह क्रम आगे भी जारी रहा और एक ऐसा समय आया, जब भारत का अध्यात्म यहाँ के क्रान्ति–दूतों द्वारा विश्व के कोने कोने में फैला दिया गया। इसे भारतीय अध्यात्म जगत का मध्ययुगीन स्वर्णकाल कहा जा सकता हैं। फिर पश्चिमी देशों से पतन की शुरूआत हुई एवं श्रृखंला की कड़ी की तरह टूटती, बिखरती गौरव–गरिमा भारत भूमि तक आ पहुँची एवं तमिस्रा अमा–निशा की तरह यहाँ भी गहराने लगी। आज उसी का परिणाम हम विभिन्न रूपों में भुगत रहे हैं किन्तु इतना सबके बावजूद भी यह नहीं कहा जा सकता कि अध्यात्म अपने देश में सर्वथा मर गया। हाँ, इतना अवश्य है कि उसमें समय के साथ–साथ संशोधन न होने के कारण विभिन्न प्रकार की कुरीतियों, गूढ़–मान्यताओं और अन्ध परम्पराओं के घुस पड़ने से उसकी छवि धूमिल और स्वरूप विकृत हुआ है, पर यह कहना एकदम सयीचीन न होगा कि अपने यहाँ से अध्यात्म बिल्कुल उठ गया। यहाँ अभी भी प्रज्ञा, निष्ठा और आस्था की त्रिवेणी अक्षुण्ण बनी हुई है, जिसे अध्यात्म का हृदय–स्थल माना जाता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यहाँ यह प्रश्न उठ सकता है कि आखिर वे कारण क्या हैं, जिससे आध्यात्मिकता हर काल में इस भूमि में न्यूनाधिक बनी रहती है ? गहन अध्ययन-अन्वेषण के उपरान्त जिस एक निष्कर्ष पर पहुँचा गया, वह है सविता-देव की कृपा दृष्टि और भारत-भूमि की विशिष्ट भौगोलिक स्थिति । इन्हीं दो कारणों से यह भूखण्ड सदा-सर्वदा देव-तत्वों से परिपूरित रहता है । कभी भी सर्वथा इनसे छूँछ नहीं होता । मूर्धन्य मनीषी आचार्य चतुरसेन शास्त्री अपने संस्मरणात्मक ग्रन्थ "यादें" के शोधपूर्ण निबन्ध "ब्राडकास्ट" में लिखते हैं कि भारत के पास से होकर गुजरने वाली विशिष्ट भूचुम्बकीय रेखाएँ इसके कुरूक्षेत्र स्थान को बिल्कुल स्पर्श करती हुई गुजरती है जिससे प्राचीनकाल में दिनमान एवं सूर्योदय-सूर्यास्त की सही घटक गणना कुरूक्षेत्र के ही मध्यबिन्दु से होती थी तथा यही उन दिनों समस्त एशिया एवं विश्व का "ग्रीनविच" था ।

आर्ष वाङ्मय में इस बात का स्पष्ट उल्लेख है कि जिस सूर्य को आकाश में हम जलते हुए गोले व स्थूल पिण्ड के रूप में देखते हैं, वह तत्वतः वैसा है नहीं । वह चेतना और प्राण का केन्द्र है और समस्त संसार की जड़-चेतन वस्तुओं की उसे आत्मा कहा गया है । वैदिक ऋषि का स्पष्ट उद्घोष है- "सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुश्च" (ऋतक १/११५/१, यचु ७/४२) । यदि सूर्य का अस्तित्व न रहे, तो सारी दुनिया नष्ट हो जाय । आप्तवचन इस बात के भी प्रमाण हैं कि सूर्य में हजारों प्रकार की रश्मियाँ हैं । इस संदर्भ में उपनिषद् की ऋचा कहती हैं- "सहस्ररश्मिः शतधा वर्त्तमानः प्राणः प्रजानामुदयत्वेश सूर्यः (प्रश्नोप-१/८) । सूर्य गायत्री भी इसी की पुष्टि यह कहते. हुए करती है-"आदित्याय विद्महे सहस्रकिरणाय धीमहि तन्नो सूर्यः प्रचोदयात् ।" यह बात और कि पदार्थ विज्ञान ने अब तक सूर्य के स्थूल सूक्ष्म सिर्फ़ नव किरणों का ही पता लगा पाया हैं "बैनी आहपीनाला" के रूप में सात स्थूल किरणें एवं अल्ट्रा वायलेट (जिसे वेदों में "एवश' अथवा "नीलग्रीव' दो सूक्ष्म स्तर की किरणें । यही कुल नव किरणें हैं, जिन्हें हम आज जानते-मानते हैं, किन्तु हमारे प्राचीन विकसित विज्ञान ने सूर्य की सहस्रों सूक्ष्म रश्मियों को ढूँढ़ निकाला था एवं पृथ्वी के पृथक्-पृथक् भूखण्डों पर पड़ने वाले इनके प्रभावों का पदार्थ एवं प्राणियों पर अध्ययन किया था । उसके अनुसार इन सौर शक्ति-किरणों के बाद में दो प्रवाह बन जाते हैं-दिति और अदिति । इनके साथ इनकी नायक शक्तियाँ भी विद्यमान होती हैं (यजु. अ. २५ म.२३ ॥) अदिति प्रवाह पर मित्र और दिति पर वरुण का साम्राज्य होता है । मित्र प्राणदायु का पोषक और सात्विकता लिए होता है,जबकि वरुण प्रणवायु को नष्ट करने वाला और तामसिकता को धारण किये होता है । इसी कारण से वरुण को मय अथवा विष-प्राण की संज्ञा की गई है ।

उक्त दो प्रवाहों के दो सर्वथा विपरीत गुणों के कारण ही दिति-अदिति प्रवाहों को क्रमशः असुर व देव प्रवाह से अभिहृत किया गया है (यजु. अ. ८ मं. ६१ ॥) इस संदर्भ में श्रुति (यजु. अ. १७ म. ४०, यजुः अ. ८ मं. ३७) कहती है कि देव प्रवाह से देव-सेना की देवे-शक्तियाँ प्रगट होती हैं एवं असुर प्रवाह से तामसिक वृत्ति वाली असुर शक्तियाँ । यह दोनों शक्तियाँ अंतरिक्ष एवं पृथ्वी पर सदा प्रवाहमान होती हैं । आप्त ग्रन्थों के अनुसार दिति अर्थात् असुर प्रवाह आकाश में पूर्व से पश्चिम की ओर बहता है और पश्चिम से पृथ्वी पर आता है । इसी कारण से पश्चिमी देशों में तामसिक वृत्ति की अधिकता पायी जाती है, जबकि देव शक्तिश्रे का अधिष्ठाता अदिति प्रवाह पश्चिम से पूर्व की ओर बहता है एवं पूर्व से पृथ्वी पर अबतरित होता तथा भूमंडल पर प्राची से प्रतिची की ओर प्रवाहित होता रहता है । पृथ्वी पर जहाँ यह दोनों शक्तियाँ परस्पर मिलती हैं, वहीं से ऊपर की ओर उठ कर अपने-अपने आकाशस्थ प्रवाह में समाहित हो जाती हैं । पूर्वी देशों मे इन देवा शक्तियों के निरन्तर प्रवाह के कारण ही इनमें सात्विकता और आध्यात्मिकता पश्चिमी देशों की तुलना में अधिक और हल काल में न्यूनाधिक बनी रहती हैं ।

आधुनिक अनुसंधान भी इस बात का प्रमाण प्रस्तुत करता है कि सौर मंडल से एक सूक्ष्म प्रवाह अनवरत भारत में कुरुक्षेत्र वाली भूमि के आस-पास से उतरता है और वहाँ से पूरे देश एवं अड़ोस-पड़ोस में फैल जाता है । संभवतः अधुनातन अन्वेषण का यह प्रवाह वही अदिति शक्ति हो, जिसे आर्षग्रन्थों में देव-प्रवाह के नाम से पुकारा गया है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अब यहाँ एक प्रमुख प्रश्न यह उठ खड़ा होता है कि यह उपरोक्त बातों में तनिक भी सच्चाई है और देव–शक्ति गुण–धर्म वाला कोई प्रवाह भारत–भूमि पर सूर्य किरणों के साथ उतरता है, तो फिर आज यहाँ के लोगों के चिन्तन, चरित्र व व्यवहार में वह सात्विकता क्यों नहीं दिखाई पड़ती जो पूर्वकाल में यहाँ की प्रधान विशिष्टता रही थी ? आधुनिक शोधकर्मी इसके दो प्रधान कारण बताते हैं–प्रथम तो यह कि अब वायुमंडल इतना प्रदूषित हो चुका है कि उस सूक्ष्म देव–प्रवाह के आवागमन में व्यतिरेक उत्पन्न होता है और अब वह उस परिमाण में नहीं आ पाता, जितना प्राचीन समय में इनकी अनुपस्थिति और वायुमंडल की शुद्धता की स्थिति में आता था । द्वितीय, जो इस देव–प्रवाह का उद्‌गम स्रोत है, उसे हम जलता हुआ अग्नि पिण्ड मात्र मान कर उसकी अवमानना एवं उपेक्षा कर रहे हैं, जबकि वास्तविकता इससे सर्वथा विपरीत है, वह चेतना का पिण्ड है और समस्त संसार को जाग्रत–जीवन्त बनाये रखता है । इस संबन्ध में छान्दोग्य उपनिषद (३/१९/३) का कथन है–"आदित्यो ब्रह्मेत्यादेशस्तस्योप व्याख्यानम् सदेवेदमग्र आसीत्" अर्थात् भूः से द्यु तीनों लोकों को अपनी रश्मियों से जीवन देने वाले सूर्य ही सबकी आत्मा हैं ।

पूर्ववर्ती युगों में वर्तमान विपत्ति के उपरोक्त दोनों ही कारण अनुपस्थित थें, अस्तु आध्यात्मिकता समस्त भूखण्ड पर विद्यमान थी । भारत में तो फिर भी सूर्य सद्यः देवता के रूप में पूजित है । अतएव वायुमंडलीय प्रदूषण के बावजूद भी सविता देवता की कुछ देव–किरणें आ जाती हैं एवं कुछ हद तक सात्विकता को अब भी अक्षुण्ण बनाये हुई हैं, किन्तु पश्चिमी देशों मे जहाँ दिनमान को मात्र आभा और ऊर्जा प्रदान करने वाला स्थूल पिण्ड भर माना जाता है, दिति (असुर) शक्ति–प्रवाह की घनघोर वर्षा से पैशचिकता में ही अभिवृद्धि हो रही है । सूर्य विज्ञान रहस्य के मर्मज्ञ स्वामी विशुद्धानन्द का भी यही मत है कि यदि किसी क्षेत्र में पापाचार, व्यभिचार, अनाचार जैसे अनैतिक कृत्य पनपते–उभरते हैं, तो इसमें भी सूक्ष्म सूर्य किरणों का हाथ है और यदि किसी भूखण्ड विशेष में दया, ममता, करुणा, उदारता जैसी, सात्विक वृत्तियाँ दिखाई पड़ती हैं, तो इसके लिए भी स्तर की सूर्य रश्मियाँ ही जिम्मेदार हैं ।

सूर्य वास्तव में देवता है क्या जिसमें प्रसन्नता अप्रसन्नता के भाव विद्यमान हों ? हिन्दुओं के इस मत की विश्वसनीयता जानने के लिए सन् १९८० में कैलिफोर्निया यूनिवर्सिटी के विज्ञान के एक प्रोफेसर सर ए. के. जार्ज ने एक प्रयोग किया । वे जून की एक दुपहरी में नंगे शरीर पाँच मिनट तक चिलचिलाती धूप में बैठे रहे । इसके पश्चात् पुनः कमरे में जाकर शरीर का तापमान नापा तो वह तीन डिग्री ज्वर बता रहा था । दूसरे दिन पूरी श्रद्धा–भावना के साथ सूर्य की पूजा की, धूप–दीप दिखाया, फल–फूल–नैवेद्य चढ़ाऐ, तदुपरान्त मध्याह्न के समय नंगें बदन ग्यारह मिनट तक सूर्य के समक्ष बैठे रहे । इसके पश्चात् पुनः कमरे मे जाकर शरीर का तापमान नापा उन्हें यह देख कर भारी अचम्भा हुआ कि इस बार सूर्य के सम्मुख अधिक देर तक बने रहने पर भी शरीर का तापक्रम सामान्य था । इससे उनकी यह भ्रान्ति समाप्त हो गई कि हिन्दू संस्कृति में यदि सूर्य को देवता माना गया है, तो इसमें कोई आश्चर्य जैसी बात है, यह सारा विवरण उनने तथ्यों और वैज्ञानिक प्रमाणों पर आधारित अपनी पुस्तक "सन दि हिन्दूज डियटी" में प्रकाशित किया हैं । इस प्रकार अब धीरे–धीरे पश्चिमी लोग भी इस बात को स्वीकारने लगे हैं कि हिन्दू संस्कृति के सूर्य, चन्द्र स्थूल पिंड मात्र नहीं वरन् चैतन्य देव–शक्तियाँ हैं, और उनमे कुपित होने और खुश होने के भाव विद्यमान हैं । इन्हीं वैज्ञानिक कारणों से प्राचीन समय में सर्वत्र विश्व में सूर्योपासना होती थी, जिसके प्रमाण आज के पुरातत्ववेत्ता उत्खनन के दौरान उपलब्ध सूर्य–मन्दिरों और मूर्तियों द्वारा प्रस्तुत कर रहे हैं ।

पिछले दिनों कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी, लंदन में सूर्य पर एक व्याख्यान आयोजित किया गया था, जिसमें समस्त विश्व के वैज्ञानिक एवं पुरातत्ववेत्ता आमंत्रित थे । इस व्याख्यान में इस बात की पुष्टि हो गई कि पुराने समय में पूरी दुनियाँ में सूर्य की उपासना होती थी । पुरातत्ववेत्ताओं ने अनेक ऐसे साक्ष्य प्रस्तुत किये, जिसने उक्त कथन पर सच्चाई की मुहर लगा दी । इन्हीं में से एक अमेरिका के ग्रीनलैण्ड स्थिति वह प्रदेश है, जहाँ कुछ वर्ष पूर्व खुदाई के दौरान सूर्य–प्रतिमा के समक्ष, उसकी फूल–फलों व सुगंधित द्रव्यों से उपासना करते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हुए एक उपासक बैठा मिला था । यह सब पत्थरों पर खुदा हुआ था । इसके अतिरिक्त संगोष्ठी में कितनी ही ऐसी साक्षियाँ सामने रखी गयीं, जो यह सिद्ध करती थीं कि ईसवी संवत् से छः हजार वर्ष पूर्व से १४० ईसवी तक समस्त संसार मे सूर्योपासना होती थी । पर्सियनि चर्चो के "मित्रा" ग्रीको के "हेलियस," रेड इंडियनों के "एतना" प्राचीन जापानियों के "इज्ना–गी" मिहिश्रयों के "रा" तातारियों के "फ्लोरस" पेरू के "फुलेस" चीनियों के "उ.ची." अफ्रीकियों के "विले" नव सेण्टो ईज्म के "एमिनो""मिनाक " "नाची" आदि देवता प्रकारान्तर से सूर्य के रूप में ही पूजित–उपासित थे । भारत में मथुरा, मुल्तान, कश्मीर, कोणार्क, उज्जयिनी, गया, आदि स्थान सूर्यापासना के मुख्य केन्द्र थे, जिनमें से कुछ जगहों पर अब भी इनके भग्न पूजागृह विद्यमान देखे जा सकते हैं ।

एक बार फिर से उस लुप्त परम्परा का पुनरुद्धार भारत से गायत्री और यज्ञ के द्विधा प्रचलन के शुभारंभ के रूप में किया जा रहा है । दोनों के माध्यम से उसी सविता देवता की उपासना द्वारा उसके उन्हीं सूक्ष्म किरणों को आकर्षित–अवशोषित करने का प्रयास किया जा रहा है जिसने हमें कभी धन धान्यों से परिपूर्ण और नैतिकता के उच्च मानदण्डों से ओत–प्रोत बनाया था, जिसके कारण यह कभी विश्व का आध्यात्मिक मार्ग दर्शन करने मे सक्षम हुए थे । गायत्री प्रत्यक्षतः सूर्य की उपासना तो है ही, इसके युग्म यज्ञ द्वारा उसी क्रिया को परोक्ष रूप से सम्पन्न कर, हम सविता देव की कृपा दृष्टि के भाजन बनते हैं ।

सावित्री उपासना से प्राण शक्ति का अभिवर्धन

गायत्री महामंत्र सूर्य का मंत्र है । "गय" का अर्थ संस्कृति में प्राण और "त्री" का अर्थ त्राण । "गायते प्राणः इति गायत्री" अर्थात् जो प्राणों का त्राण करती है उसे गायत्री कहते हैं । त्राण का अर्थ छुटकारा दिलाना, मुक्त करना होता हैं । प्राण हमारे शरीर इन्द्रियों और उनकी विषय वासनाओं में पाशबद्ध "ब्रह्मी" अथवा चेतना तत्व है उसे उस बन्धन से मुक्ति दिलाकर चेतन सत्ता का बोध करना, यही प्राणों का परिणाम हुआ । इस अर्थ में प्राणों का सारा विज्ञान गायत्री में आता है ।

प्राण शब्द की व्युत्पत्ति "प्र" उपसर्ग पूर्वक "अन्" धातु से है । "अन्–"धातु जीवन शक्ति एवं चेतना वाचक है इसलिए प्राण शब्द का अर्थ चेतन शक्ति से किया जाता है । "लेटेन्ट हीट" या "साइकिक–फोर्स" इसे ही कहते हैं । ताण्ड्य जैमिनी तथा शतपथ ब्राह्मण ग्रन्थों ने प्राण को "गायत्री प्राणौ वै गायत्री' कहा है । ताण्ड्य १२/१/२ में उसे ही "दवियनुतती गायत्री" अर्थात् यह विद्युत ही गायत्री है । इस प्रकार हम देखते हैं–गायत्री, प्राण-विद्युत सब एक ही तत्व हैं उसी से जीवन के समस्त व्यापार चलते हैं । वशिष्ठ ने वायु में हुई प्राण–विद्युत की गहन शोध करके ही प्राणायम के उन विधानों को खोजा था जो न केवल मानवीय क्षमतायें बढ़ाते हैं वरन् मनुष्य का सम्बन्ध अन्य लोकों की सूक्ष्म शक्तियों से भी जोड़ते हैं । प्राण विद्या प्रकारण ६वें अध्याय में २४ वें सूक्त के २० से ३१ तक के मन्त्रों में उसकी विशद् विवेचना हुई है और यह बताया है कि जिस प्रकार कोई यान्त्रिक (इन्जीनियर) यन्त्र चलाता है उसी प्रकार जीवन की समस्त गतिविधियों का व्यापार इस शक्ति से ही होता है ।

गायत्री–सावित्री उपासना के समय सूर्य से किस तरह विशाल परिमाण में प्राण ऊर्जा आकर्षित, धारण और विकसित की जा सकती है, इस पर भारतीय मनीषियों ने व्यापक खोज की थी । प्राण को तत्वदर्शियों ने दो भागों मे विभक्त किया है– (१) अणु (२) विभु । अणु वह जो पदार्थ जगत में सक्रिय बनकर परिलक्षित होता है । विभु वह जो चेतना जगत में जीवन बनकर लहलहा रहा है । इन दो विभागों को आधिदैविक, कास्मिक और आध्यात्मिक, माइक्रोकास्मिक अथवा हिरण्यगर्भ कहा जाता है ।

आधिदैविकेन समष्टिव्यष्टिरूपेण हैरण्यगर्भेण
प्राणात्मनैवतद् विभुत्वमाम्नायतेनाध्यात्मिकेन ।

–ब्रह्मसूत्र शंकर भाष्य

समष्टि रूप हिरण्यगर्भ विभु है । व्यष्टि रूप आधिदैविक अणु । इस अणु शक्ति को लेकर ही पदार्थ विज्ञान का सारा ढाँचा खड़ा किया गया है । विद्युत,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ताप, प्रकाश, विकिरण आदि की अनेकानेक शक्तियाँ उसी स्रोत में गतिशील रहती हैं। अणु के भीतर जो सक्रियता है वह सूर्य की है। यदि सूर्य का प्रकाश पृथ्वी तक न पहुँचे तो यहाँ सर्वथा नीरव स्तब्धता परिलक्षित होगी। कहीं कुछ भी हलचल दिखाई न पड़ेगी। अणुओं की जो सक्रियता पदार्थों का आविर्भाव, अभिवर्धन एवं परिवर्तन करती है, उसका कोई अस्तित्व दिखाई न पड़ेगा, भौतिक विज्ञान ने इस सूर्य द्वारा पृथ्वी को प्रदत्त अणुशक्ति के रूप में पहचाना है और उससे विभिन्न प्रकार के आविष्कार करके सुख साधनों का आविर्भाव किया है। शक्ति के कितने ही प्रचंड स्रोत कर तल गत किये हैं, पर यह नहीं मान बैठना चाहिए कि विश्व–व्यापी शक्ति भण्डार मात्र अणु शक्ति की भौतिक सामर्थ्य तक ही सीमाबद्ध है।

जड़ जगत में शक्ति तरंगों के रूप में संव्याप्त सक्रियता के रूप में प्राण का परिचय दिया जा सकता है और चेतन जगत में सम्वेदना उसे कहा जा सकता है। इच्छा, ज्ञान और क्रिया इसी सम्वेदना के तीन रूप हैं। जीवन्त प्राणी इसी के आधार पर जीवित रहते हैं। उसी के सहारे चाहते, सोचते और प्रयत्नशील होते हैं। इस जीवनी शक्ति की जितनी मात्रा जिसे मिल जाती है, वह उतना ही अधिक प्राणवान कहा जाता है। आत्मा को महात्मा, देवात्मा और परमात्मा बनने का अवसर इस प्राण शक्ति की अधिक मात्र उपलब्ध करने पर ही सम्भव होता है। चेतना की विभु सत्ता जो समस्त विश्व ब्रह्माण्ड में संव्याप्त है, चेतन प्राण कहलाती है। उसी का अमुक अंश प्रयत्नपूर्वक अपने में धारण करने वाला प्राणी, प्राणवान एवं महाप्राण बनता है।

प्रश्नोपनिषद् में प्राण का उद्गम केन्द्र सूर्य को माना गया हैं–

स एष वैश्वानरो विश्व रूपः प्राणोऽग्निरुदयते।

–प्रश्न० १–७

यह भौतिक व्याख्या है सभी जानते हैं कि पृथ्वी पर जीवन की उत्पत्ति का श्रेय सूर्य किरणों को है।

स्थूल जगत की जीवनी शक्ति का केन्द्र सूर्य है। उसके पाँच प्राण तत्व हैं।

आदित्यो ह वै वाह्यः प्राण उदयत्येष त्येनं चाक्षुषं प्राण। मनु गृहणानू पृथिव्यां या देवता सैषा पुरुषस्यापानः। मवष्टभ्यान्तरा यदाकाशः स समानो वायु ष्वनिः तेजो ह वै उदानः।

–प्रश्नोपनिषद्

यह सूर्य ही बाह्य प्राण है। उदय होकर दृश्य जगत की हलचलों को क्रियाशील करता है। "इस विश्व रूपी शरीर को यह सूर्य का महाप्राण ही जीवन्त रखता है। पाँच तत्वों में वह पाँच प्राण बनकर संव्याप्त है।

सोवियत रूस के वैज्ञानिक डा. जी. ए. उशाकोव ने अपने ध्रुव शोध के विवरणों में एक और नया तथ्य प्रतिपादित किया है। वे कहते हैं कि जीवन का आधार मानी जाने वाली आक्सीजन, वायु पृथ्वी की अपनी उपज अथवा सम्पत्ति नहीं है। वह सूर्य से प्राण रूप में प्रवाहित होती हुई चली आती है और धरती के वातावरण में यहाँ की तात्विक प्रक्रिया के साथ संमिश्रित होकर प्रस्तुत 'आक्सीजन' बन जाती है। यदि सूर्य अपने उस प्राण प्रवाह में कटौती करदे अथवा पृथ्वी ही किसी कारण उसे ठीक तरह ग्रहण न कर सके तो आक्सीजन की न्यूनता के कारण धरती का जीवन संकट में पड़ जाएगा। पृथ्वी से ६२ मील ऊँचाई पर प्राण का आक्सीजन रूप में परिवतन आरम्भ होता है। यह आक्सीजन बादलों की तरह चाहें जहाँ नहीं बरसता रहता वरन् वह भी सुधा उत्तरी ध्रुव पर आता है और फिर दक्षिण ध्रुव के माध्यम से समस्त विश्व में वितरित होता है। ध्रुव प्रभा में रंग-बिरंगी झिलमिल का दीखना विद्युत मण्डल के साथ आक्सीजन की उपस्थिति का प्रमाण है।

प्राणायाम का–प्राण विद्या का उद्देश्य उसी सूर्य प्राण को अभीष्ट परिमाण में ग्रहण करके शरीर में धारण करना है। चुम्बकीय विद्युत प्रवाह को दीप्तिमान करने के लिए जिस प्राण अभिवर्धन की आवश्यकता होती है, उसे प्राण साधना क्रम से विशेष प्राणायामों द्वारा उपलब्ध किया जाता है। स्वरयोग एवं प्राणविद्या की निर्धारित साधना पद्धति द्वारा कुण्डलिनी अग्नि को ठीक उसी प्रकार प्रदीप्त करते हैं, जैसे लुहार अपनी आग की भट्टी को धोंकनी की हवा से तेज करता है। नासिक छिद्रों से प्राण तत्व को अनन्त आकाश से आकर्षित करके सूर्य तत्व द्वारा प्रेरित चुम्बकीय प्रवाह को तीव्र बनाया जाता हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

इस प्रकार उत्पन्न हुए प्रकाश के कारण सारा सोया हुआ प्राण जीवित हो उठता है । सूर्य के निकलते ही पशु, पक्षी, कीट, पतंग सभी निद्रा त्याग कर अपने कार्य में उत्साहपूर्वक लगते दिखाई देते हैं । कलियाँ खिलने लगती हैं और वायु का प्रवाह तीव्र हो जाता है । ठीक इसी प्रकार प्राण साधना से जब हमारे दोनों ध्रुव शक्ति प्रवाह से भरने लगते हैं तो सूर्योदय जैसी हलचल उत्पन्न होती है और न केवल स्थूल शरीर के वरन् सूक्ष्म शरीर और कारण शरीर के भी दृश्य और अदृश्य अंग, अवयव अपनी सक्रियता प्रदर्शित करने लगते हैं । साधक को अनुभव होता है मानो वह केंचुली छोड़कर स्फूर्ति या सर्प की तरह नव चेतना का अपने में अनुभव कर रहा है ।

कभी–कभी सूर्य मण्डल में विशेष उत्क्रान्ति उत्पन्न होने से उस प्रवाह की एक लहर पृथ्वी पर भी चली जाती है और ध्रुव प्रदेश में चुम्बकीय आँधी तूफानों का सिलसिला चल पड़ता है । इनकी प्रतिक्रिया उसे ध्रुव क्षेत्रों तक ही सीमित नहीं रखती वरन् समस्त विश्व को प्रभावित करती है । कई बार यह चुम्बकीय तूफान बड़े उपयोगी और सुखद परिणाम उत्पन्न करते हैं और कई बार इनमें कुछ ऐसे तत्व घुले हुए चले आते हैं, जिनका प्रभाव समस्त विश्व को कई प्रकार के संकटों में धकेल दे । एक बार सन् १९३८ में एक चुम्बकीय तूफान ध्रुव प्रदेश पर आया था, उसकी भयानक चमक अफ्रीका तथा क्रीमिया तक देखी गई । उसका प्रभाव न केवल वस्तुओं पर पड़ा वरन् जीवधारी भी बुरी तरह प्रभावित हुए । ऐसी ही विद्युत आँधियों ने धरती पर "हिम युग' उपस्थित कर दिया, मुद्दतों तक बहुत बड़े भूभाग को बर्फ ने ढके रखा । समुद्र में बाढ़ आई, जमीन समुद्र में और समुद्र मरुस्थल में बदल गया । कहते हैं कहीं ऐसे ही वायु प्रलय, जल प्रलय, अग्नि प्रलय भी उपस्थित हो सकती है और यह चुम्बकीय आँधियाँ धरती के वर्तमान स्वरूप को कुछ से कुछ करके रख सकती हैं ।

प्रकृति गत चुम्बकीय आँधियाँ पंचतत्वों के हेर–फेर अथवा नियति के विधान से आती हैं । योग साधना से ऐसी चुम्बकीय आँधियाँ सूक्ष्म जगत में उठाई जा सकती हैं और आकाशस्थ ग्रह नक्षत्रों को ही नहीं, दिव्य सत्ता केन्द्रों, देवताओं को उससे प्रभावित किया जा सकता है । इस जगत को प्रभावित करने वाले चेतना केन्द्र सविता को तपस्वी लोग हिला–डुला सकते हैं । ध्रुव प्रकाश में प्रखर तीव्रता मार्च और सितम्बर में (चैत्र और आश्विन की नवरात्रि के दिनों में) अत्यधिक होती है । इसका कारण पृथ्वी का अक्ष सूर्य के साथ उचित कोण पर होता है । बीज बोने का वही समय अधिक प्रभावी होता है । गर्भ स्थापनायें भी उन्हीं दिनों अधिक होती हैं । फूल खिलने का समय यही है । साधक लोग साधनाओं में अधिक सफलता भी इन्हीं दिनों पाते हैं । हम अपनी पृथ्वी कामकला को सूर्य तेज कला के साथ जब भी जोड़–तोड़ सकें तभी यह प्रकाश प्रवाह में तीव्रता आने वाली स्थिति पैदा हो सकती है और उसकी प्रतिक्रिया व्यक्तिगत जीवन में आश्चर्यजनक परिणाम लेकर प्रस्तुत हो सकती है । इतना ही नहीं व्यापक वातावरण को भी उससे प्रभावित किया जा सकता है ।

अलेक्जेण्डर मार्शेक ने सघन अन्तरिक्ष में प्रकाश के रूप में भी, शब्दों के रूप में भी सौरमण्डल तथा मन्दाकिनी आकाशगंगा से आने वाले शक्ति प्रवाहों को सुना है । उसका यन्त्र अंकन किया है । यह आवाज क्रमबद्ध संगीत एवं स्वर लहरियों की तरह है । यों कान से वे ध्वनि मात्र सुनाई पड़ती हैं, उनका कोई विशेष महत्व समझ में नहीं आता पर खगोल विद्या की नवीनतम शोधों से यह स्पष्ट करती चली जा रही हैं कि यह शब्द प्रवाह भी सूर्य से ध्रुव प्रदेशों पर बरसने वाले गति प्रवाहों की तरह ही अतीव सामर्थ्यवान है और उनके द्वारा प्राणियों के शरीर तथा मन पर ऐसा प्रबल प्रभाव पड़ता है जैसा व्यक्तिगत प्रयत्नों से बहुत परिश्रम करने पर भी सम्भव नहीं । यह प्रभाव भले और बुरे दोनों ही स्तर का होता हैं ।

योग साधना में शब्द साधना का विशेष स्थान है । कुण्डलिनी साधना में नाद, बिन्दु, कला की साधनायें इन अविज्ञात शक्ति प्रवाहों को समझना और उनके साथ अपना सम्बन्ध स्थापित करना ही है । शंख, घण्टा, सीटी, नफीरी, झींगुर, निर्झर, मेघ गर्जन आदि के शब्द नाद साधना में सुने जाते हैं । यह मात्र चित्तवृत्तियों को एकाग्र करने के लिए ही नहीं, वरन् इसलिए भी हैं कि लोक लोकान्तरों में ग्रह नक्षत्रों, आकाशगंगाओं एवं देव संस्थानों में जो अनुदान सूर्य की भाँति ही बरसाये जाते रहते हैं, उन्हें ग्रहण कर सकना और उनका लाभान्वित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हो सकना सम्भव हो सके । कुण्डलिनी साधक को यह प्रक्रियायें अपनानी पड़ती हैं । फलतः वह दैवी वरदानों की तरह अपने में बहुत कुछ अनुपम और उद्‌भुत तत्व समाविष्ट हुआ अनुभव करता है ।

ध्रुव प्रभा का स्वरूप सर्चलाइट की तरह होता है । वह उत्तर की अपेक्षा दक्षिण की ओर काफी तीव्र होता है । इससे प्रगट होता है कि वह प्रवाह एक स्थान पर दक्षिणी ध्रुव की ओर तीव्र गति से दौड़ रहा है । हमारे मस्तिष्क में अवतरित होने वाला दिव्य तेज भी योनि गह्वर की और कुण्डलिनी केन्द्र की ओर दौड़ता है । दाक्षिणी ध्रुव में 'पेनगंइन' नामक पक्षी पाया जाता है, यह अति मृदुल स्वभाव का होता है और आगन्तुकों से अत्यन्त मधुर प्रेम भरा व्यवहार करता है । वस्तुतः दक्षिणी ध्रुव कला केन्द्र ही है । वहाँ प्रेम की कोमलता, मधुरता और सरलता की अजस्र धारा बहती है । पेनगुइन पक्षी की तरह ही–योनि गह्वर में सरसता और रसिकता का आनंद और उल्लास का मिठास भरा पड़ा है । इसे जागृत किया जा सके तो जीवन में कलात्मक सरसता का उल्लास निर्झरिणी की तरह फूटकर प्रवाहित हो सकता है । दक्षिणी ध्रुव समुद्रतल से १६००० फुट उभरा हुआ है । इसे विश्व शरीर की जननेन्द्रिय का उभार कह सकते हैं । पुराणों में इसे शिवलिंग कहा गया है । नारी की जननेन्द्रिय में भी यह उभार छोटे रूप में पाया जाता है ।

ध्रुवों पर सूर्य की किरणों की विचित्रता के फल–स्वरूप वहाँ सब कुछ जादूनगरी जैसा दीखता है । वहाँ पर अक्सर अपनी छाया दुहरी दिखाई पड़ती ।आत्मेवेत्ता भी अपने साथ परा और अपरा प्रकृति की दो सहेलियों को साथ फिरते देखता है और अपने को इन छायाओं से स्थूल और सूक्ष्म शरीरों से भिन्न अविनाशी आत्मा ही मानता है ।

भारतीय प्राण–विद्या का प्रयोजन यह है कि दोनों ध्रुवों पर बरसने वाली सूर्य शक्ति सन्निहित प्राण धारा को अभीष्ट मात्रा में आकर्षित करके उनके द्वारा स्थूल और सूक्ष्म चेतना को समग्र दृष्टि से पुष्ट किया जाय ।

मस्तिष्क द्वारा भी किन्हीं अनजाने प्रकाश–स्रोतों के प्रकाश कण आकर्षित कर प्रकाश शरीर वाले सूक्ष्म शरीर को विकसित किया जा सकता है, यह थोड़ी कठिन उपपत्ति (सोलूशन) है तथापि विज्ञान अब उसे भी प्रमाणित करने लगा है । इस प्रमाण के लिए बेचारे रूसी खगोलशास्त्री श्री चिजोव्स्की को भारी तप करना पड़ा ।

पहले तो वह घण्टों कभी सूर्य की तेज धूप में तो कभी चन्द्रमा के शीतल प्रकाश में बैठे रहते और होने वाले अपने मानसिक परिवर्तनों को लिखते रहते । फिर उन्होंने पिछले ४०० वर्षों के इतिहास में मानवी स्वभाव के उतार–चढ़ाव तथा अनेक प्रकार की बीमारियों के वार्षिक आँकड़े एकत्रित करके देखा कि सूर्य आदि की चमक और उसके ११ वर्षीय कलंकों (सन–स्पाट्स) का मनुष्य की मनोदशा से गहरा सम्बन्ध है । इस सम्बन्ध में विस्तृत चर्चा तो कभी बाद में करेंगे, पर यहाँ यह समझ लेना नितान्त आवश्यक है कि विचार प्रणाली का सम्बन्ध मस्तिष्क की जिन थायोराइड, एड्रीनल और पिच्यूटरी आदि ग्रन्थियों से है, वे सब नलिका विहीन (डक्टलेस) होती हैं, अर्थात् उनमें किसी प्रकार का रासायनिक प्रभाव नहीं होता । प्रकाश या प्राण के सूक्ष्म कण भी उसी तरह प्रवाहित होते हैं, जिस प्रकार तार में विद्युत कण । जैसे–जैसे यह प्रकाश–कण होते हैं, वैसे–वैसे भव उठते हैं । सूर्य की तेज धूप में क्लान्ति क्रोध, वीरता जैसे भाव आते हैं तो चन्द्रमा के प्रकाश में आह्लाद और कामुकता के । अब यदि कोई व्यक्ति अपना ध्यान किसी प्रकाश–स्रोत पर लगाता है तो इसका अर्थ यह हुआ कि हमारी नलिका विहीन ग्रन्थियाँ उस स्रोत विशेष से विद्युत चुम्बकीय सम्बन्ध स्थापित कर लेती हैं और वह कण तेजी से हमारे अन्दर भरने लगते हैं । ध्यान जितना एकाग्र और गहन होता है, इस आकर्षण की ओर सूक्ष्म शरीर के विकास की गति को हम उतना ही स्पष्ट अनुभव करते–करते एक दिन उस स्रोत से तादात्म्य कर सिद्धि प्राप्त कर लेते हैं ।

सावित्री या गायत्री उपासना के साथ सूर्य का ध्यान करना पड़ता है । ध्यान की अवस्था में सूर्य के विद्युत––चुम्बकीय प्रवाह से अपने मस्तिष्क की चोटी वाले स्थान से नलिका विहीन ग्रन्थियों का सम्बन्ध जुड़ जाता है और सूर्य तेज के कण हमारे शरीर में प्रवेश करते हुए चले जाते हैं, इस तरह अपना प्राण शरीर विकसित होता हुआ सूर्य प्रकाश के समान हल्का दिव्य तेजस्वी होता चला जाता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सूर्योपासना कब और कैसे ?

आस्तिकजनों की प्राचीनतम उपासना का पर्यवेक्षण करने पर प्रतीत होता है कि भगवान के दृश्य प्रतीकों में सर्वप्रथम मान्यता "सूर्य' को प्राप्त हुई । वह प्रत्यक्ष एवं दृश्यमान भी है । अन्यान्य देवताओं के नाम रूप कल्पित हैं । जिस आकार–प्रकार में उनका वर्णन हुआ हैं, वैसा कहीं प्रत्यक्ष दृश्यमान नहीं होता । प्रतिमाएँ उनकी विशेषताओं को ध्यान में रख कर कल्पित एवं विनिर्मित की गई हैं । यही कारण है कि अन्यायन्य देवताओं के मुख मण्डल, वाहन, आयुध, परिधान, आच्छादन आदि में अन्तर मिलता है, किन्तु सूर्य के प्रत्यक्ष उदीयमान रहने के कारण उसका आकार सुस्थिर रखा गया है । पुरातन काल से लेकर अद्यावधि सूर्य प्रतीको में कोई अन्तर नहीं पड़ा है ।

सूर्य को चतुर्भुजी माना गया है । यह धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, का प्रतीक है । चार वर्ण और चार आश्रम भी इन्हें कहा जा सकता है । ब्रह्मा, विष्णु, महेश, और गणेश, यह चार देव भी सूर्य की चार भुजाओं में समाहित हैं ।

एक चक्र का रथ प्रकारान्तर से सुदर्शन चक्र है । इसे विश्वव्यापी गतिशीलता कह सकते हैं । ऊर्जा का शक्ति स्रोत भी यही है । भगवान का प्रधान आयुध सुदर्शन चक्र है । विश्व ब्रह्मांड, सौर मण्डल, परमाणु परिभ्रमण का चक्र इसी आधार पर गतिशील है । भ्रमण से शक्ति उत्पन्न होने का सिद्धान्त पदार्थ विज्ञानियों को भी मान्य है । उत्पादन अभिवर्धन, परिवर्तन का एक सुनियोजित चक्र है, जिसके अनुसार प्राणियों, वनस्पतियों एव पदार्थों का उत्पादन विसर्जन होता रहता है । अस्त्रों में वे ही अधिक शक्तिशाली होते हैं, जिनके पीछे भ्रमण गति काम करती है । जिन दिनों रण क्षेत्र पर हाथियों का प्रभुत्व था, उन दिनों उसकी सूड़ से लोहे की जंजीर बाँध दी जाती थी । वह उसे घुमाता था और सामने उपस्थित शत्रु समुदाय को तितर–बितर कर देता था । सौर मण्डल एवं अन्यान्य ग्रह नक्षत्रों में यह गतिशीलता ही गुरुत्वाकर्षण से लेकर अनेकानेक प्रकार की क्षमताएँ उत्पन्न करती है । फलतः प्रकृति अनेकानेक प्रगट अप्रगट क्रियाकलाप गतिशील रहते हैं । भ्रमणशीलता के अद्भूत प्रवाह में यह ब्रह्माण्ड सतत् नियम निर्धारित गति से चल रहा है और अधर लटका हुआ है ।

सूर्य को सचेतन माना गया है–"सविता' । उसका रथ कलेवर ही वह है जो अन्यान्य ग्रहों की भाँति गतिशील रहता है, चमकता है, उदय–अस्त होता है, जिसे अग्निपिण्ड भी कहते हैं । यह कलेश्वर ही अरुण है, जो ऊषाकाल के उपरान्त सर्णिम आभा के साथ उदय होता है ।

सूर्य रथ में सात अश्व जुते हुए हैं । यह दिव्य अश्व है । इन्हें सप्त वर्ण भी कह सकते हैं । जिन्हें इन्द्र धनुष दिखाई पड़ने पर प्रत्यक्ष भी देखा जा सकता है । अनादिकाल में जब आदिम मनुष्य को दिन भर समूचे आकाश में एक सूर्य ही प्रकाशवान दीखा तो उसे विदित हुआ कि रात्रि के सघन अन्धकार को यही भगाता है । दीख पड़ने वाली वस्तुओं को यह रूप देता है, शीत को भगाता है, वर्षा लाता है । उसकी गर्मी से अण्डों से लेकर फल तक पकते हैं । उसकी अनुकूलता से ही बसन्त आता है और धरती पर हरीतिमा छाती है । जिस समय चारों ओर अन्धकार और शीत का साम्राज्य होता है, उन दिनों विकास ही हर दिशा अवरूद्ध हो जाती है । इस प्रकार के अनेकानेक गुण तो प्रत्यक्ष ही हैं । जीवितों की भाँति वह चलता भी है । प्रातः उगना और रात्रि को अस्त होना मनुष्यों की तरह जब आदिम काल के मनुष्य को दीख पड़ा, इसलिए उसे प्रत्यक्ष देव माना गया । प्रकृति की चित्र–विचित्र घटनाएँ जब सामान्य बुद्धि से न समझी जा सकीं तो उन्हें देवकृत ही माना जाने लगा और यहाँ तक समझा जाने लगा कि मनुष्य जीवन में जो शुभ–अशुभ घटित होता है, उसके पीछे दैवी अनुग्रह या आक्रोश ही निमित्त कारण है । बहुदैववाद की कल्पना पीछे जगी । विभिन्न प्रयोजनों के साथ विभिन्न देवताओं का संम्बन्ध पीछे जुड़ा, पर पहले एक से ही काम चलता रहा । सूर्य को ही एक मात्र सर्वशक्तिमान प्रत्यक्ष देव माना गया । जब बहुदेव मान्यता भी विकसित हुई तो भी सूर्य को देवाधिदेव सब प्राणियों और देवताओं की आत्मा उसे माना गया ।

ऋग्वेद संसार में सबसे प्राचीन ग्रन्थ हैं उसमे आठ सूक्त केवल सूर्य की प्रार्थना और विवेचना के सम्बन्ध

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में ही हैं । देव मान्यताओं के साथ यह तथ्य भी जुड़ा कि उनकी पूजा प्रार्थना से अपने अन्दर दैवीगुण को समाविष्ट कर उन्हें अपने अनुकूल बनाया जा सकता है और अभीष्ट वरदान पाया जा सकता है । प्रत्यक्ष जीवन में उस की अनेकानेक उपलब्धियों के साथ जब यह विश्वास बढ़ा कि उसकी पूजा से मनोकामनाएँ पूरी होती हैं कठिनाइयाँ, विपत्तियाँ दूर होती हैं, तो उसके साथ भक्ति भावना का सम्बन्ध और भी सघन हो गया ।

संसार में सूर्योपासना का प्रचलन सर्वोपरि है । सर्वप्रथम और सर्वप्रमुख भी । जब वाणी द्वारा प्रार्थना, अभ्यर्थना करके ही उपासना का क्रम चलाया जाता था, तब गायत्री महामंत्र के शब्द समुच्चय को सूर्योपासना का प्रधान मंत्र माना गया । प्रातः कालीन उदीयमान सूर्य स्वर्णिम होता है । जिस प्रकार नवागुन्तक के आगमन के समय ही स्वागत सत्कार की परम्परा है, उसी प्रयोग को सूर्योपासना के लिए भी प्रयुक्त किया गया । सूर्योदय काल को पवित्र समय मानकर उपसना हेतु निर्धारित किया गया ।

जब तक वाणी का विकास परिष्कार नहीं हुआ था, तब तक संकेतों द्वारा अपनी उपासना का अभिप्रायः व्यक्त किया जाता था । यथा सूर्यार्घदान, सूर्योपस्थान, सूर्यनमस्कार, सूर्यस्नान, सूर्यसान्निध्य, सूर्यसेवन, सूर्यदर्शन, सूर्यपरिक्रमा आदि–आदि । यह सभी क्रियाकृत्य ऐसे थे जो जलाशय की समीपता में आसानी से हो सकते हैं । यहाँ तक कि सूर्य प्रभावित जल को सौम या अमृत की संज्ञा दी जाने लगी । उसका पान करने पर रोग निवारण या दीर्घायुष्य की कामना की जाने लगी ।

भूत, प्रेत, राक्षस, यक्ष आदि का भय आरम्भिक युग में ही चल पड़ा था । समझा जाता था कि यह दुष्ट आत्माएँ रोग, भय, मनोविकार आदि के रूप में मानव मात्र को संत्रस्त करती हैं । उनका दौर सूर्य की अनुपस्थिति में ही चलता हैं ।अस्तु उन्हें निशाचर वर्ग में गिना गया । मनुष्यों में भी जो अपराधी, आतातायी थें, उनके बारे में भी यही मान्यता रही कि इनकी घात अँधर में ही लगती है । इसलिए रात्रि में भी अन्धकार दूर करने के लिए दीपक या अग्नि प्रज्ज्वल का प्रचलन चला । पूजा उपचारों में भी इन प्रकाश प्रतीकों का प्रयोग होने लगा ।

अखण्ड अग्नि ज्योति की स्थापना अखण्ड दीपकों का प्रज्वलन, होम, यज्ञ, अग्निहोत्र की विधा सूर्य पूजा के रूप में अपनाई गई । इन्हें अभिमंत्रित करने के लिए सावित्री मंत्र को परम शक्तिशाली माना गया । जब भाषा का प्रांजल विकास हो चला तो गायत्री मंत्र का प्रयोग सूर्य उपासना के रूप मे होने लगा । इससे पूर्व "ॐ शं सूर्यायनमः इतना कह कर ही काम चलाया जाता था । शं सूर्य का बीज मंत्र हैं । इसे पूर्व गायत्री का छोटा रुप माना गया है । एक और भी दुसरा लघुरुप गायत्री का है – "हरि ॐ तत् सत्' । एक तीसरा प्रयोग है मात्र तीन व्याहृतियों का उच्चारण "ॐ भूर्भुतः स्वः "इन लघु स्वरूपों का आश्रय इसलिए लेना पड़ा कि २४ अक्षर और तीन पदों वाली गायत्री का उच्चारण करने के लिए भाषा सम्बन्धी जानकारी आवश्यक थी । साथ में व्याकरण के पद प्रत्ययों की भी । इतना जान पाना और स्मरण रखना उन दिनों सर्व साधारण के लिए सम्भव न था । इसलिए विद्वान लोग ही गायत्री मंत्र का उच्चारण अवगाहन कर पाते थे । अशिक्षितों को संक्षिप्त शब्दावली से ही काम चलाना पड़ता है ।

सूर्य साधना के सम्बन्ध में शास्त्रकार लिखते हैं–

स्मरतां संध्ययोनृणं हरन्तं हो दिने दिने ।

–भागवत्

अर्थात् दोनों संध्याओं के समय सूर्य का ध्यान करने से मनुष्य दिन–दिन पवित्र बनता जाता है ।

संध्ययो अर्चयेत् सूर्य ।.

–सूर्यपुराण

दोनों उदय–अस्त की संध्याओं में सूर्य की उपासना करें । अन्य प्रकार की उपासनाएँ न बन पड़ें तो कम से कम इतना तो प्रत्येक साधक को करना ही चाहिए ।

प्रातर्भजामि सविता रमनन्त शक्तिं
पापैश्च शत्रु भय रोग हरे परं च ।

अर्थात् अनन्त शक्ति वाले सविता का प्रातः काल स्मरण करना चाहिए । जो शत्रु भय तथा रोगों को हरने वाला परमतत्व है ।

सूर्य सम्पूजयेनित्यं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सावित्रीं च जपेत् तथा ।
सर्याघ्यं संधयोर्दद्यान्नम स्कुर्याच्च भास्करम् ।

अर्थात्– सूर्य की नित्य पूजा करें, तथा गायत्री का जप करें । दोनों संध्याओं में अर्घ्य दें । भास्कर को नमस्कार करें ।

संध्यावंदन के अनेक विधि विधान हैं । वे कितने ही क्रिया–कृत्यों के साथ जुड़े हुए हैं, पर उन सब में संक्षिप्त और सरल यह है कि प्रातः सायं सूर्योपासना की जाय ।

सूयोदये यः सुसंमहितः भास्करः
धृति प्रज्ञां च मेघां च स्पविन्दयते समहित

–महाभारत

अर्थात् सूर्योदय के समय जो भगवान भास्कर की भली प्रकार उपासना करता है । वह धृति, मेधा और प्रज्ञा को प्रचुर परिमाण में प्राप्त करता है ।

उद्यते नमः उदीयते नमः उदीयते नमः उदिताय नमः अस्तंयेते नमो स्तमे प्यते–

अर्थात्–उदय होने वाले को नमस्कार । उदय करने वाले को नमस्कार । उदीयमान को नमस्कार । अस्त होने वाले को नमस्कार । अस्त करने वाले को नमस्कार ।

अन्धकार हरने वाले को नमस्कार ।

अद्यादेवा उदिता सूर्यस्य निरंहस

–ऋग्वेद

हे उदीयमान सूर्य आप हमें पाप कर्मों से उबारें । सूर्य उपासना से मनःक्षेत्र में ऐसा परिवर्तन होता है कि पाप कर्मों से अनायास ही घृणा होने लगती है ।

उद्यन्तमस्तं यन्तमादित्य मभिध्यायन
कुर्वन सकलं भद्रयश्नुते

–तैत्तरीय

उदय होते हुए, अस्त होते हुए सूर्य का ध्यान करें । इससे सब प्रकार के कल्याण होते हैं ।

अधिक लोग, एक ही समय, एक नियत निर्धारित साधना करें, तो उसका अधिक प्रतिफल उपलब्ध होता हैं । इस्लाम धर्म में अजान देने, नमाज पढ़ने के नियत समय होते हैं । ईसाई धर्म में भी नियत समय पर ही प्रार्थनाएँ होती हैं । भारतीय धर्म संस्कृति में प्रातःकाल सूर्योदय के समय और सायंकाल सूर्य अस्त होने के समय गायत्री मंत्र के माध्यम से जप ध्यान करने पर बहुत जोर दिया गया है । नियत समय का अनुशासन पालने से उसका अधिक महत्व एवं सत्परिणाम माना गया है ।

नवयुग का उपास्य–सविता देवता

सूर्य को प्रकाश और तेज का प्रतीक माना गया है, लेटेन्ट लाइट, डिवाइन लाइट, ब्रह्मज्योति आदि शब्दों में, मानवी सत्ता में दैवी अवतरण के प्रकाश के उदय की संज्ञा दी गई है । प्रातः कालीन स्वर्णिम सूर्य को सविता कहा गया है और उसे ज्ञान स्वरूप परमात्मा का प्रतीक मानकर उपासना आराधना करने का निर्देश आर्ष ग्रथों में दिया गया है । महाभारत में कहा गया है "सूर्योदय के समय जो सविता देवता की भली प्रकार उपासना करता है वह धृति, मेधा, और प्रज्ञा को प्रचुर परिमाण में प्राप्त करता है । इसी तरह सूर्य पुराण, तैत्तरीय आरण्यक, एवं श्रीमद्भागवत् में भी उदय होते हुए, अस्त होते हुए सूर्य का ध्यान करने और सब प्रकार से कल्याण का भागी बनने, पवित्र बनने की बात कही गई है ।

शास्त्रकारों का कथन है कि संध्या–वंदन के अनेक विधि–विधान हैं । वे कितने ही क्रिया–कृत्यों के साथ जुड़े हुए हैं । पर उन सब में संक्षिप्त और सरल यह है कि प्रतः सायं सूर्योपासना की जाय । क्योंकि सूर्य ही प्रत्यक्ष एवं परम ज्योतिर्मय, सर्व प्रकाशक, सब के उत्पादक देवता हैं । प्रजा के लिए प्राण बन कर वही उदित होते हैं । ऋग्वेद एवं प्रश्नोपनिषद् में प्रातःकाल के उदीयमान सूर्य की किरणों को प्राण बन कर वही उदित होते हैं । ऋग्वेद एवं प्रश्नोपनिषद में प्रातःकाल के उदीयमान सूर्य की किरणों को प्राण वर्षा करने वाली कहा गया है । इसी कारण आत्म सत्ता में प्राण्तत्व का आकर्षण अभिवर्धन करने के लिए प्रातः कालीन उदीयमान सूर्य को ध्यान प्रक्रिया में विशेष महत्व है ।

ईश्वर के सम्बन्ध में, सर्वाधिक चर्चा "प्रकाश की ही होती है । कोई उसे हृदय में कोई मस्तिष्क में तो कोई आकाश में मानते हैं । प्रकाश का प्रतीक सूर्य को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

माना जाता है जो साकार भी है और निराकार भी । उसका चिन्तन करते ही गति और ऊर्जा का तारतम्य उसके साथ जुड़ा हुआ स्पष्ट होता है । इन्हीं की हमें प्रधानतया समर्थ जीवन के लिए आवश्यकता भी है । बुद्धिमत्ता को भी ज्ञान रूपी प्रकाश में गिना जाता है । यह सारी विशेषताएँ सूर्य में सन्निहित मानी जाती हैं ।

प्रकाश को निराकार प्रकाश दर्शन की ध्यान–धारणा में ईश्वर को निराकार प्रकाश पुंज के रूप में, स्वर्णिम सविता के रूप में मानकर उसके तमोनाशक–पापनाशक आनन्दकारक सदगुणों को जीवन में उतारने का प्रयास किया जाता है । प्रकाश ध्यान का आरंभ सूर्य को पूर्व दिशा में उदय होते हुए परिकल्पित करने की भावना से होता है । जिसमें साधक की भावना रहती है कि सविता देव से निस्सृत दिव्य किरणें अपने कायकलेवर में प्रवेश करती हैं और तीनों शरीरों को असाधारण रूप से सशक्त बनाती हैं । स्थूल शरीर को अग्निपुंज, अग्निपिण्ड, सूक्ष्म–शरीर को प्रकाशमय, ज्योतिर्मय तथा कारण शरीर को दीप्तिमय, कान्तिमय, आभामय बनाती हैं । समूची जीवन सत्ता जयोतिर्मय हो उठती है । इस स्थिति में स्थूल शरीर को ओजस् सूक्ष्म को तेजस् और कारण शरीर को वर्चस् के अनुदान उपलब्ध होते हैं । इस ध्यान धारण का चमत्कारी प्रतिफल साधक को शीघ्र ही दृष्टिगोचर होने लगता है । स्थूल शरीर में बल, उत्साह एवं स्फूर्ति सूक्ष्म–शरीर में संतुलन, ज्ञान–विवेक, और कारण शरीर में श्रद्धा एवं भक्ति का दिव्य संचार इस प्रकाश ध्यान के सहारे उठता, उभरता दीखता है । तीनों शरीर इन अनुदानों सहित अवतरित होने वाले प्रकाश से परिपूर्ण होते चले जाते हैं । यह संकल्प जितना गहरा होता है, उसी अनुपात में चेतना में उपरोक्त विविध विशेषताएँ विभूतियाँ उभरती चली जाती हैं । इस प्रकार यह ध्यान साधना, आत्म–सत्ता के बहरंग एवं अन्तरंग पक्ष को विकसित करने में असाधारण रूप से सहायक सिद्ध होती है । सामान्य सी लगने वाली यह साधना असामान्य प्रभाव परिणाम उपलब्ध कराती है ।

सविता के प्रकाश ध्यान का प्रथम चरण उसकी दिव्य किरणों का प्रवेश आत्म सत्ता में कराने का है । दूसरा चरण अन्तः सूर्य की मान्यता परिपुष्ट करके उसका प्रकाश वाहय जगत में फैलाने का है । इसे अपने अनुदान विश्व मानव के लिए प्रेरित करने की प्रक्रिया कह सकते हैं । प्रथम चरण को संग्रह और दूसरे को विसर्जन कह सकते हैं । ध्यान करते समय अन्तः क्षेत्र में सूर्यादय होने की मान्यता की जाती है । स्थूल शरी का मध्या केन्द्र नाभि चक्र है, जिसे विज्ञान की भाषा में सोलर प्लेक्सस या एबडामिनल ब्रेन भी कहते हैं । सूक्ष्म शरीर का केन्द्र आज्ञा चक्र–थर्ड आई, और कारण शरीर का हृदय–चक्र कार्डियक–प्लेक्सस है । इनमें से किस साध ाक को किस केन्द्र पर ब्रहम चेतना के प्रतीक सविता देव के उदय की भावना करनी चाहिए । इसका निर्धारण अपनी व्यक्तिगत स्थिति का सूक्ष्म पर्यवेक्षण करते हुए करना होता है ।

अन्तः सूर्य की धारा परिपक्व होने पर उसका प्रकाश निकटवर्ती क्षेत्र को प्रकाशित करता ही है, साथ ही उसका प्रभाव बाहय जगत में भी फैलता है । इससे वातावरण में किन्हीं सामयिक सत्प्रेरणाओं को सुविस्तृत किया जा सकता है । मनुष्य के किसी वर्ग विशेष को उपयोगी प्रेरणाओं से प्रभावित किया जा सकता है । व्यक्ति विशेष या समष्टि की आध्यात्मिक सेवा भी इस आधार पर की जा सकती है । मानवेत्तर प्राणियों पर भी इसका प्रभाव पड़ सकता है । इसी प्रकार वनस्पति, जगत् पदार्थ सम्पदा की स्थिति में सुधार करने के लिए भी अन्तः सूर्य की क्षमता का परिपोषण होना संभव है । यह कितना प्रभाव उत्पन्न कर सकेगा, यह इस पर निर्भर है कि साधक की संयम तपश्चर्या मनोबल और श्रद्धा किस स्तर के है । यह समर्थता साधना की प्रखरता और व्यक्तित्व की उत्कृष्टता पर निर्भर रहती है ।

वेद, उपनिषद्, दर्शन, मनुस्मृति, पुराण तथा तन्त्रशास्त्रों में सूर्योपासना का विस्तृत वर्णन किया गया है । मनु स्मृति में बताया गया है कि सूर्य से वर्षा, वर्षा से अन्न और अन्न से प्राणियों का अस्तित्व है । सूर्य प्रकाश के अभाव में जीवन के अस्तित्व की कल्पना भी नहीं की जा सकती । महाभारत बन पर्व ३/३६ में सूर्य को विश्व का नेत्र तथा समस्त प्राणियों की आत्मा बताया गया है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सविता देवता की उपासना से जहाँ भौतिक और आध्यात्मिक उन्नति का मार्ग प्रशस्त होता है । ज्ञान और भक्ति की शिक्षा मिलती है, वहीं उनसे सतत् सत्कर्म करते रहने की भी प्रेरणा मिलती है, वह कर्मठता क्रियाशीलता एवं प्रखरता के प्रत्यक्ष उदाहरण हैं । उस तथ्य को उदघाटित करते हुए ऐतरेये ब्राह्मण ३३/३/५ में देवराज इन्द्र ने रोहित को कर्म–कौशल का उपदेश देते हुए कहा है कि "सूर्य की श्रेष्ठता इसलिए है कि वे लोकमंगल के लिए सतत् गतिशील रहते हुए तनिक भी आलस्य नहीं करते हैं । अतः सूर्योपासक को भी चाहिए कि वह अपने इष्ट की भाँति कर्त्तव्य पथ पर निरन्तर चलता ही रहे ।

वस्तुतः सूर्य साधना सार्वभौम साधना है । सर्व सुगम एवं सब धर्मों के लिए प्रयुक्त की जा सकने वाले इस आध्यात्म उपचार को महाकाल की साधना हेतु प्रयुक्त किया जा सकता है एवं प्राप्त प्रेरणाओं को जीवन में उतारकर निज का कायाकल्प किया जा सकता है । नवयुग की अगवानी के लिए सविता देवता की उपसाना तो और भी आवश्यक है । इसे सब का इष्ट–उपास्य कहा जाय तो कोई अत्युक्ति न होगी ।

सविता के रूप में इष्ट का निर्धारण

उपासना मनुष्य जीवन की एक मनोवैज्ञानिक आवश्यकता है । संसार की विषमताओं और जीवन की विपन्नताओं के बीच वह अपने आपको असहाय अनुभव करता है । प्रतिकूलताओं से अपने बलबूते निपट न पाने पर उसे किसी ऐसे समर्थ साथी की आवश्यकता होती है जो उसका साथ दे सके, हाथ बटा सके । भले ही दूरवर्ती या अदृश्य ही क्यों न हों ?

असफलताएँ और प्रतिकूलताएँ मनुष्य को तोड़ देती है, इस स्थिति से उबरने के लिए कोई आशा की किरण चाहिए जो खोये हुए को पुनः वापस दिलाने का आश्वासन दे सके । इसी प्रकार आतंक और आक्रमण से तिलमिला जाने पर ऐसे न्यायनिष्ठ की खोज की जाती है, जो आहत के बदले प्रतिशोध ले सके ।

सृष्टि संरचना और गतिविधियों में भी ऐसी विषमताएँ पाई जाती है जो तुफान,भूकम्प, बाढ़ जैसी अप्रत्याशित घटनाओं के घटित होने पर कोई स्पष्ट कारण नहीं बतातीं । मनुष्य हतप्रभ हो जाता है । तब भी अनसुलझी गुत्थियों के पीछे ईश्वर की मर्जी खोजनी पड़ती है और वैसा कुछ दिन अपने ऊपर न आ पड़े, इसलिए भी ईश्वर की शरण लेनी पड़ती है । मरने के बाद परलोक के संबन्ध में मनुष्य अपने को सर्वथा असमर्थ अनुभव करता है । सोचता है कि वहाँ की परिस्थितियाँ ईश्वर की इच्छा से ही प्राप्त हो सकती हैं । वर्तमान जीवन में भी कठिनाइयों के समाधान और सुविधाओं के सम्वर्द्धन में ईश्वर की अप्रत्याशित सहायता मिल जाने की अपेक्षा रहती है ।

कितने ही भावुक जन किसी सर्व समर्थ की मैत्री एवं अनुकृपा चाहते हैं, इसलिए भी उन्हें उपासना का आश्रय लेना होता है । विचारवान अपने चारों ओर घिरे हुए वातावरण का कोई कर्ता ढूँढ़ते हैं और वह ईश्वर ही दृष्टिगोचर होता है ।

कइयों को इस चमत्कारी सृष्टि रचना का निमित्त कारण ईश्वर ही दीखता है और उसकी मनुहार करने भेट पूजा का आश्रय लेने–में, ही अपनी भलाई दीखती है । शास्त्रकारों और आप्तजनों ने सृष्ट की प्रशंसा में–उसकी सत्ता प्रतिपादन में बहुत कुछ कहा है । इसके अतिरिक्त भजनानन्दियों का भी एक बड़ा समुदाय हैं, जिनकी गतिविधियों से सामान्य जन प्रभावित होने और अनुकरण में बुद्धिमत्ता सोचते हैं । ऐसे ही अनेक कारण हैं जो आस्तिक होने की प्रामाणिकता प्रकट करने के लिए ईश्वर विश्वास करते और उसका अवलम्बन लेते हैं । संसार में अधिकांश जनों की मनः स्थिति ऐसी ही है । डावांडोंल चित्त वाले और भजन न करने वाले भी प्रत्यक्षतः अपने को नास्तिक नहीं कहते हैं । दोष लगाना हो तो पुजारियों पर लगाते हैं । दोषारोपण ईश्वर पर नहीं करते ।

इतने पर भी एक बड़ी कठिनाई यह है कि आस्तिक वर्ग के लोग ईश्वर को एक मानते हुए भी उसके अनेक रूप गढ़ लेते हैं और अपनी–अपनी मान्यता पर इतना अधिक बल देते हैं कि दूसरों के निर्धारण को झूठा कहना पड़े । सम्प्रदायों के बीच आये दिन मचे रहने वाले कलह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का एक बड़ा कारण यह भी है कि वे ईश्वर की आकृति और प्रकृति के संबन्ध में अत्याधिक भिन्नता मानते हैं ।

अच्छा होता कि ईश्वरवादी और अनीश्वरवादी दो ही पक्ष रहते । कम से कम आस्तिकों को तो ईश्वर के स्वरूप एवं मन्तव्य के संबन्ध में एक मत होना चाहिए था । उतना भी न बन पड़ने से अनीश्वरवादियों के तर्क ही भारी पड़ते हैं और बहुमत में होते हुए भी आस्तिक अपने मतभेदों और विग्रहों के कारण हल्के पड़ते हैं । अच्छा हो समय रहते यह भूल सुधार ली जाय जैसे कि उसे एक माना जाता है, वैसे ही उसका ऐसा स्वरूप भी निर्धारित कर लिया जाय जिससे एकता की दिशा में आस्तिक समुदाय का बढ़ चलना संभव हो सके ।

विचारने पर ऐसा स्वरूप "सूर्य " के रूप में निर्धारित करना अधिक युक्ति संगत प्रतीत होता है, क्योंकि जीवन उसी से आता है और हम सब उसी के आश्रय में अपनी अधिकांश आवश्कताएँ पूरी करते हैं । अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "दी रिडल आफ दी यूनिवर्स" में प्रख्यात विद्वान अर्नस्ट हैकल ने लिखा है कि आज से हजारों वर्ष पूर्व सूर्योपासना का क्रम प्राकृतिक देव शक्ति के रूप में ही चलता था । आधुनिक खगोल भौतिकी की मान्यताओं के अनुसार भी हमारी पृथ्वी सूर्य से निकला हुआ एक टुकड़ा है, जो कुछ हजार वर्षों बाद उसी की गोद में चली जायगी । शरीर विज्ञानियों का कहना है कि पृथ्वी पर जीवन की जो संभावनाएँ दृष्टिगोचर हो रही हैं, सूर्य के ही फलस्वरूप हैं । इसीलिए इसे इस सृष्टि का जीवनदाता कहा गया है । धरती पर जीवन का मूल स्रोत "प्रोटोप्लाज्म' को माना जाता है । यहाँ तक कि अजैवकीय पदार्थ, पानी, कार्बनिक एसिड तथा अमोनिया जैसे सम्मिश्रण भी सूर्य से प्रभावित होते हैं । इसी कारण सूर्य की पूजा उपासना करने का विधान आदि काल से चला आ रहा है । सूर्य की पूजा करने वालों को लोग उत्कृष्ट श्रेणी का समझते थे । प्रकाशमान स्वर्णिम सूर्य की उपासना अभी भी विश्व के अनेक भागों में की जाती है ।

ईश्वर के संबन्ध में सर्वाधिक प्रयोग प्रकाश का होता है । कोई उसे हृदय में, कोई मस्तिष्क में तो कोई आकाश में मानते हैं । प्रकाश का प्रतीक सूर्य को माना जाना अधिक तर्कसंगत है । वह साकार भी है और निराकार भी.। दिन में साकार हो जाता है और रात को निराकार । फिर दिन में भी उसका प्रत्यक्ष स्वरूप ही दृष्टिगोचर होता है । उसके अगणित प्रभाव बुद्धि से या उपकरणों से ही जाने जा सकते हैं । प्रकाश का चिन्तन करते ही ऊर्जा और गति का तारतम्य उसके साथ जुड़ा हुआ स्पष्ट होता है । इन्हीं की हमें प्रधानतया समर्थ जीवन के लिए आवश्यकता भी है । बुद्धिमत्ता को भी ज्ञान रूपी प्रकाश में गिना जाता है । यह सारी विशेषताएँ सूर्य में सन्निहित मानी जाती हैं ।

इष्ट का निर्धारण या ध्यान करने से मनुष्य उसी ढाँचे में ढलता है । यही उपासना का दर्शन है । ईश्वर को हम साकार न मानते हों तो निराकार प्रकाश पुंज के रूप में सविता के रूप में मानें, उसके तमोनाशक–पापनाशक आनन्दकारक सद्गुणों को जीवन में उतारने का प्रयास करें तो ईश उपासना निश्चित ही फलीभूत होती है ।

सूर्य शक्ति वनाम सूर्य पूजा

प्रकृति की अनेक शक्तियाँ हमें प्रभावित करती हैं । कई बार तो उनका उपयोगी–अनुपयोगी प्रभाव–दबाव अत्यधिक होता है, तो भी मानवी चेतना की विशेषता यह है कि वह अनुपयोगी प्रभाव से अपने को बचाने में कोई न कोई मार्ग ढूँढ़ निकालती है । उपयोगी प्रभावों से अधिक लाभान्वित होने का उपाय भी उसे मिल ही जाता है ।

सर्दी–गर्मी, आँधी–तूफान, अतिवृष्टि–अनावृष्टि आदि के उल्टे–सीधे झंझावात अपने ढंग से चलते रहते हैं । दूसरे प्राणी अपनी शारीरिक विशेषताओं के कारण तथा अत्यधिक प्रजनन शक्ति के कारण अपना अस्तित्व बचाये रहते हैं । मनुष्य इन दोनों ही दृष्टियों से पीछे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है, फिर भी प्रकृति के आघात सह सकने की व्यवस्था बना लेता है, यह उसका बुद्धि वैभव ही है ।

सूर्य को ही लें, उसका अनुदान पृथ्वी पर–प्राणियों पर अनवरत रूप से बरसता है, पर यदाकदा उसकी ऐसी स्थिति भी होती है जो पृथ्वी पर अपना अनुपयोगी प्रभाव डाले । उन दबावों को रोक न सकने पर भी पूर्व जानकारी के आधार पर बचाव के उपाय ढूँढ़ लिये जाते हैं । सतर्कता बरतना अपने आप में एक बड़ा उपाय है, जिससे अनायास ही बहुत कुछ बचाव हो जाता है । इसी प्रकार उसके उपयोगी सम्पर्क को बढ़ाकर वे लाभ पाये जा सकते हैं जो अन्जान स्थिति में पड़े रहने पर मिल सकने सम्भव नहीं हैं ।

साधारणतया सूर्य आग का एक ऐसा गोला है जिसके किसी प्रभाव को रोकना अपने लिए कठिन ही हो सकता है, फिर भी सूर्योपासना के कितने ही भौतिक और आध्यात्मिक उपाय ढूँढ़ कर उसकी उपयोगी शक्तियो से अधिक लाभान्वित बन सकता सम्भव हो जाता है । अनावश्यक ताप से बचने के लिए छाया के कितने ही उपाय किये जाते हैं । सूर्य की अपनी महत्ता है और अपनी उपयोगिता । पर उससे भी अधिक प्रशंसा मानवी बुद्धि की है जो इतने समर्थ शक्ति पुंज से उपयोगी प्रभाव ग्रहण करने और अनुपयोागी से बच निकलने का रास्ता खोज लेती है ।

सूर्य को उदय होते देखकर ऋषि गाता है–"प्राणः प्रजानां उदयति एष सूर्यः" । यह प्रजाजनों का प्राण–सूर्य उदय हो रहा है । सन्ध्या वन्दन की सूर्योपस्थान क्रिया को करते हुए गायत्री मन्त्र बोला जाता है और उसके माध्यम से माँग जाता है कि सविता देव हमारी विवेक बुद्धि को सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा प्रदान करें ।

यह अध्यात्म मान्यता है जिसके अनुसार सूर्य को प्राण पुंज और बुद्धि चेतना को प्रेरणा दे सकने योग्य माना गया है ।

भौतिक विज्ञान प्रत्यक्षवाद पर निर्भर रहा है । "प्रत्यक्ष की उसकी परिभाषा पिछले दिनों बहुत उथली और भोंथरी थी । अब धीरे–धीरे वह पैनी और गहरी होती जा रही है । पिछले दिनों भौतिक विज्ञानियों की दृष्टि से सूर्य की इतनी ही व्याख्या पर्याप्त प्रतीत हुई थी, पर अब बात आगे बढ़ गई है और विचार अधिक गहराई तक होने लगा है ।पिछले दिनों विज्ञान के लिए 'पदार्थ' ही सब कुछ था । भावना और अध्यात्म के सम्बन्ध में उपेक्षा और उदासीनता थी । अधिक से अधिक शरीर के एक अवयव मस्तिष्क की हरकतों को मनःशास्त्र के नाम से एक विशेष स्थान दिया जा सका था । श्वास–प्रवाह, रक्त संचार, स्नायु संचालन की तरह ही मस्तिष्क को भी सोचने वाला यन्त्र मान लिया गया था और उसकी हलचलों को मन, बुद्धि, चित्त आदि की संज्ञा दे दी गई थी । इतना "पदार्थ' क्षेत्र में आता है इसलिए उतना ही "पर्याप्त माना गया । चेतना की गहराई को देखने, समझने की दिशा में बहुत समय तक कोई कहने लायक दिलचस्पी नहीं ली गई । तद्नुसार सूर्य को भी चेतना से कुछ सम्बन्ध ही हो सकता है, इस पर विचार नहीं किया गया । पर अब उस सन्दर्भ में गहराई तक जाने और गम्भीर विचार करने की आवश्यकता अनुभव की जा रही है ।

सूर्य को अब जीवन का केन्द्र माना जा रहा है । वनस्पतियाँ उसी से जीवन ग्रहण करती हैं और प्राणियों को भी अपनी प्राण शक्ति के लिए बहुत कुछ सूर्य पर ही निर्भर रहना पड़ता है । विज्ञान स्वीकार करता है कि सूर्य और पृथ्वी के बीच जो दूरी है वह जीवन की उत्पत्ति एवं स्थिरता के लिए आदर्श है । यदि यह दूरी कुछ घट जाय या बढ़ जाय तो फिर या तो अपना भूलोक आग्नेय हो उठेगा या हिमाच्छादित बन जायगा, तब प्राणियों या वनस्पतियों की उपस्थिति यहाँ सम्भव न हो सकगी ।

सूर्य में जो काले धब्बे हैं, वे उसमें समय–समय पर पड़ते रहने वाले खड्ड हैं । ये कभी गहरे हो जाते हैं, कभी उथले बन जाते हैं, तब वे कम या अधिक दिखाई पड़ते हैं । पहले उन धब्बों से अपना कुछ बनता–बिगड़ता नहीं यह माना जाता था, पर अब ऐसा नहीं समझा जाता है । वैज्ञानिक उन्हें बहुत बारीकी से देखते हैं और इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि इनका क्या प्रभाव–परिणाम अपनी पृथ्वी पर पड़ेगा ?

जब काले धब्बे बढ़ते हैं तो सूर्य से प्रकाश एवं गर्मी की ही नहीं दूसरे उन उपयोगी तत्वों की भी कमी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पड़ जाती है, जो प्राणियों के लिए विचित्र प्रकार से स्वास्थ्य संरक्षक होते हैं । जिस साल सूर्य के धब्बे बढ़ते हैं उस साल अनाज, फलों की पैदावार कम होती है । पौधे अभीष्ट गति से नहीं पनपते । दाने पतले होते हैं और उनमें पोषक तत्व अपेक्षाकृत कम पाये जाते हैं । खाद और पानी का समुचित प्रबन्ध रहने पर भी इस कमी का कारण जब सूर्य के धब्बों में खोजा जाता है तो यह निष्कर्ष भी निकलता है कि उसमें "जीवनी शक्ति' भी भरी पड़ी है जो पृथ्वी को उस पर रहने वाले प्राणधारियों को मिलती है । इस प्रकार सूर्य मात्र गर्मी देने वाली अँगीठी ओर रोशनी देने वाली लेम्प के स्तर का न रहकर प्राणवान्–प्राणदाता भी बन जाता है और वैदिक ऋषि की वह आस्था सही मालूम पड़ती है, जिसमे उसने उदीयमान सूर्य का अभिबन्दन करते हुए उसे प्राण का उद्गम कहा था ।

बात बहुत आगे बढ़ गई है । सूर्य की स्थिति का प्राणियों के शरीर और मन संस्थानों पर क्या प्रभाव पड़ता है? यह एक अति महत्वपूर्ण शोध विषय बन गया है । जन्मकाल को ही लें । रात्रि और दिन में जन्म लेने वालों गर्मियों और सर्दियों में जन्म लेने वालों की प्रकृति में अन्तर पाया जाता है । जहाँ सूर्य की किरणें तिरछी पड़ती हैं, उन शीत प्रधान और जहाँ सीधी पड़ती हैं, उन उष्णता प्रधान क्षेत्रों के लोगें की जीवन शक्ति एवं प्रकृति में अन्तर पाया जाता है । अपने ही देश के बंगाली, पंजाबी, मद्रासी, गुजराती यों सभी भाई–भाई हैं, पर उनकी शारीरिक, मानसिक स्थिति में कितनी ही सूक्ष्म विशेषताएँ पाई जाती हैं । इसका कारण उन क्षेत्रों के वातावरण को समझा जा सकता है और वातावरण की भिन्नता में पृथ्वी विभिन्न स्थानों के साथ होने वाला सूर्य संयोग ही मुख्य आधार है । अफ्रीका के नीग्रो, इंगलैंड के गोरे, उत्तरी ध्रुव के एक्सिमो, चीन के मंगोलियन अपनी–अपनी आकृति–प्रकृति की भिन्नताएँ रखते हैं, यों सभी एक मानव परिवार के सदस्य हैं । यह क्षेत्रीय विशेषताएँ या भिन्नताएँ जिस आधार पर उत्पन्न होती हैं, उनमें सूर्य सम्पर्क को प्रमुखता देनी पड़ेगी ।

सूर्योपासना की वैज्ञानिक विधियों का सहारा लेकर मन और शरीर पर पड़ने वाले सूर्य के प्रभाव को न्यूनाधिक किया जाता है । सूर्य चिकित्सा के अनेक विधि विधान शारीरिक रोगों के निवारण करने में अत्यधिक सहायक सिद्ध होते हैं, जबकि ऐसे ही खुली सर्दी–गर्मी से रोगग्रस्त हो जाना सम्भव है । इसी प्रकार सूर्य के मन पर पड़ने वाले प्राकृतिक प्रभाव का विश्लेषण करके ध्यान आदि द्वारा उपयोगों को बढ़ाने और अनुपयोगी को हटाने का क्रम बन सकता है । सविता देवता के प्रभावों को उपासना रूपी छलनी में छानकर ग्रहण करने में पानी को छानकर पीने पर उसमें घुली अस्वच्छता से बचने जैसा लाभ मिलता है । सूर्योपासना मानवी विवेक की एक अति उपयोगी उपलब्धि थी, जिसे हम क्रमशः भूलते ही चले जा रहे हैं ।

सूर्य द्वारा प्राप्त होने वाली जीवनी शक्ति का, प्राण शक्ति का, प्रकृतिक प्रभाव धरती पर, उसकी प्रकृति सम्पदा और प्राणि परिवार पर पड़ता है । यह तथ्य स्पष्ट हो जाने के उपरान्त यह विचारणीय विषय हो जाता है कि क्या हम उस शक्ति को अभीष्ट मात्रा में ग्रहण करके लाभान्वित हो सकते हैं । सर्दी की ऋतु का शरीर पोषण के लिए उपयोग हो सकता है । अधिकतर स्वास्थ्य संवर्द्धन के प्रयोग उन्हीं दिनों होते हैं । इसके विपरीत सर्दी के सम्पर्क में आकर निमोनिया, जुकाम जैसे रोगों को भी गले बाँधा जा सकता है । सूर्य की गर्मी, रोशनी बरसती तो एक जैसी हैं, पर हम उसमें से आवश्यक मात्र ही लेते हैं, शेष से बचने का प्रबन्ध कर लेते हैं । इसी प्रकार प्राणशक्ति की सन्तुलित मात्रा ही ग्रहण करें यह भी हो सकता है । सामान्य वितरण की अपेक्षा कुछ विशेष पाया, समेटा जा सकता है अथवा आवश्यक एवं अवांछनीय को हटाया–घटाया जा सकता है । यदि ऐसी सन्तुलित विधि हाथ लग सके तो उसे सूर्य–योग कहा जायगा ।

अग्नि का अस्तित्व अनादिकाल से संसार में मौजूद था, पर उसे मनुष्य ने पाया–पहचाना बहुत समय बाद पाने के बाद उसके उपयोग के अनेकों नियम–विधानों की प्रक्रिया क्रमशः विकसित होती गई और उससे उसी क्रम से अधिकाधिक लाभ उठा सकना सम्भव होता गया । बिजली आदि शक्तियों के बारे में भी यही बात है । सूर्य ताप का प्राकृतिक लाभ तो सहज ही मिलता रहता है, आवश्यकता इस बात की है कि उसकी प्राण शक्ति को पहचाना जाय और सर्वतोमुखी प्रगति के लिए

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

उसका उपयोग किया जाय, यों सूर्य से जो रोशनी और गर्मी मिलती है उसके भी सदुपयोग की बहुत बड़ी सम्भावना मौजूद है ।

गुण, दोषों की विवेचना कर सकने वाली मानवी क्षमता सूर्य जैसी शक्तिशाली सत्ता से अपने लिए उपयोगी प्रभाव ग्रहण करने और अनुपयोगी दबाव निरस्त करने का रास्ता निकाल लेती है । वही विवेक शक्ति यदि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में काम करती रहे तो संसार में निरन्तर चलती रहने वाली सशक्त; प्रतिकूलताओं से भी लोहा ले सकती है और अवांछनीय परिस्थितियों में भी अपनी सुरक्षा को अक्षुण बनाये रह सकती है । प्रकृति की शक्तियाँ बड़ी हैं, पर मनुष्य की उपलब्ध विवेक शक्ति का भी कम महत्व नहीं है; जो उसका ठीक उपयोग कर सके, उनके लिए बड़े संकट भी उसी तरह टल जाते है, जिस प्रकार सूर्य की प्रतिकूल स्थिति के कारण उत्पन्न होने वाले दुष्परिणामों से निपटने का कोई रास्ता निकाल लिया जाता हैं ।

समूचा ब्रह्माण्ड एक चैतन्य शरीर

शरीर के किसी भाग पर आघात पहुँचता है तो उसकी प्रतिक्रिया से शरीर का रोम-रोम काँप उठता है । मन मस्तिष्क भी उद्विग्न और बेचैन हो उठते हैं । मन-संस्थान असन्तुलित हो तो शरीर भी स्वस्थ एवं निरोग नहीं रह पाता । शरीर के प्रत्येक अवयव मन-संस्थान एक दूसरे की स्थिति से प्रभावित होते है । यह शरीर की चैतन्यता एवं एकता का प्रमाण है । दृश्य और अदृश्य प्रकृति, समूचा सौर-मण्डल भी इस तरह एक दूसरे से गहरे भावनात्मक आकर्षण से जुड़ा हुआ है । इसके एक सिरे पर जो कुछ भी घटित होता है तो अन्यान्य स्थानों पर उसकी प्रतिक्रिया परिलक्षित हुए बिना नहीं रहती ।

इस तथ्य को प्रतिपादित करने एंव रहस्योद्घाटन करने का जो विज्ञान भारत में प्राचीनकाल से प्रचलित था उसे ज्योतिष विज्ञान के नाम से जाना जाता है । इसका लक्ष्य था सौर-मण्डल के सदस्यों के पारस्परिक संबन्धों की वैज्ञानिक विवेचना करना तथा एक-दूसरे पर पड़ने वाले प्रभावों से अवगत कराना । फलतः इस विद्या के सहारे पृथ्वी से इतर ग्रह-नक्षत्रों के अनुदानों से लाभ उठा सकना एवं दुष्प्रभावों से बचाव कर पाना सुलभ था, जो आज के विकसित विज्ञान द्वारा भी संभव नहीं है । कालान्तर में यह विज्ञान विलुप्त होता गया और उसका स्थान मूढ़मान्यताओं एवं भ्रान्तियों ने ले लिया, जिसे देखकर विज्ञजनों द्वारा इस विद्या की उपेक्षा हुई ।

इसके बावजूद भी विज्ञान ने जब से प्रौढ़ता की ओर कदम रखा है उसका ध्यान अन्तरिक्ष की खोजबीन की ओर आकर्षित हुआ है । साथ ही ग्रह-नक्षत्रों, सौर-मण्डल की गतिविधियों, आपसी संबन्धों एवं परस्पर एक दूसरे पर पड़ने वाले प्रभावों को जानने के लिए छुटपुट प्रयास भी चल रहे हैं । प्रकारान्तर से भौतिक विज्ञान अब उन्हीं निष्कर्षों पर पहुँच रहा है, जिस पर सदियों पूर्व तत्ववेत्ता ऋषि जो ज्योतिर्विज्ञान के मर्मज्ञ भी थे, पहुँच चुके थे ।

ज्योतिष-विज्ञान के आचार्यो ने सौर-मंडल के सदस्यों को देव शक्तियों के रूप में प्रतिष्ठापित किया था । नौ ग्रहों की नौ देव शक्तियों के रूप में प्रतिष्ठापना की गई हैं । ज्योतिर्विज्ञान की यह मान्यता सदियों से चली आ रही है कि सौर-मण्डल का अधिपति सूर्य मात्र अग्नि का धधकता पिण्ड नहीं है, अपितु जीवन प्राण और सक्रिय अग्नि का पुंज है, जो पल-प्रतिपल अपने सौर-मण्डल के सदस्यों को अपनी गतिविधियों से प्रभावित किया करता है । सूर्य के साथ ही मंगल, बृहस्पति, बुध आदि गृह भी पृथ्वी के वातावरण को प्रभावित करते हैं ।

इस तथ्य को विश्व के प्रसिद्ध भौतिकविद् भी स्वीकार करने लगे हैं कि सौर-मण्डल की गतिविधयाँ पृथ्वी के वातावरण एवं जैविक परिस्थितियों पर प्रभाव डालती हैं । यूगोस्लाविया के नाभिकीय भौतिकविद् प्रो. स्टीनवेन डेडीजर जैसे विद्वानों का कहना है कि विज्ञान को अपनी अन्तरिक्षीय खोज की सफलता के लिए प्राचीन ज्योतिर्विज्ञान का अवलंबन लेना होगा । प्राकृतिक घटनाओं की अभी कितनी ही गुत्थियाँ ऐसी हैं, जिसको सुलझा पाने में आज का विकसित विज्ञान भी असमर्थ है । आधुनिक विज्ञान अन्तरिक्ष एवं सब-न्यूक्लियर क्षेत्र में अपनी शानदार सफलता के बावजूद भी ब्रह्माण्ड संबन्धी घटनाओं की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

व्याख्या कर पाने में अपनी अक्षमता व्यक्त कर रहा है, क्योंकि इसका क्षेत्र सीमित है । इसके विपरीत ज्योतिष विज्ञान का सूर्य संबन्धी ज्ञान–ब्रह्माण्ड की सूक्ष्म गतिविधियाँ और सूर्य के प्रभावों की जानकारी अन्तरिक्षीय रहस्यों का उद्‌घाटन करने में पूर्णतया सक्षम है ।

भौतक विज्ञन के सिद्धान्तानुसार हर पदार्थ का कण इस ब्रह्माण्ड में एक–दूसरे के सापेक्ष गतिशील है । वे अपना स्थान भी परिवर्तित करते रहते हैं । फलतःजिस पर्यावरण में वे गतिशील रहते हैं, वह बदलता रहता है और एक अविच्छिन्न ब्रह्माण्डीय श्रखंला में बँधे होने के कारण कणों का संदोह विशेष प्रभाव उत्पन्न करता है । जो अन्यान्य ग्रहों तथा पृथ्वी, चर, अचर पदार्थों एवं खगोलीय पिण्डों को प्रभावित करता है । इस तथ्य से परिचित होते हुए भी विज्ञान ग्रह–नक्षत्रों की गति स्थिति और प्रभावों की स्पष्ट जानकारी देने मे असमर्थ है । उपरोक्त टिप्पणी देते हुए भौतिक विज्ञानी स्टीवेन डेडीजर का कहना है कि समग्र जानकारियों के लिए ज्योतिर्विज्ञान के विलुप्त ज्ञान को पुनर्जीवित करने की आवश्यकता है ।

प्रख्यात आस्ट्रियाई वैज्ञानिकि "एरनेस्ट मैंक' का मत है कि ब्रह्माण्ड के अनन्तकण एक दूसरे से जुड़े हुए हैं तथा उनमें परस्पर बड़ा घना संबन्ध है । सौर लपटें जो कि ग्रहों की निकिटता एवं चन्द्रमा की गति से किसी न किसी प्रकार सम्बन्धित हैं, पृथ्वी पर विभिना प्रकार के व्यतिरेक उत्पन्न करती हैं । ग्रही योग पृथ्वी एवं जैविकीय चुम्बकत्व पर अपना प्रभाव डालते हैं । ग्रहों के असंतुलन से उत्पन्न होने वाली चुम्बकीय आँधी प्रकृति प्रकोपों एवं पृथ्वी के जीवधारियों मे अनेकों प्रकार के मानसिक एवं नर्वससिस्टम के रोग उत्पन्न करती है । भू चुम्बकत्व में होने वाले हेर–फेर से मानवीय आचरण एवं स्वभाव भी अछूता नहीं रहता है ।

रूस के विज्ञानवेत्ता चीनेवस्की ने इस क्षेत्र में लम्बे समय तक खोजबीन करने के उपरान्त महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकाले हैं । उनका कहना है सौर–मण्डल की हलचलों से पृथ्वी के वातावरण एवं घटनाक्रमों का घना संबन्ध है । हर ग्यारहवें वर्ष सूर्य में आण्विक विस्फोट होता है । इन वर्षों में पृथ्वी पर युद्ध और क्रान्तियाँ जन्म लेती हैं । प्रकृति–प्रकोप एवं महामारियाँ बढ़ती हैं ।

जियोजार जी गिआरडी नामक वैज्ञानिक ने ज्योतिर्विज्ञान से प्रेरणा लेकर विज्ञान की नवीन शाखा को जन्म दिया–ब्रह्माण्ड रसायन शास्त्र (कास्मो बॉयोलाजी); गिआरडी का कहना है कि समूचा ब्रह्माण्ड एक शरीर है, इसका कोई भी घटक अलग नहीं वरन् संयुक्त रूप से एकात्म का है । इसलिए कोई भी ग्रह कितना भी दूर क्यों न हो, पृथ्वी के जीवन को प्रभावित करता अवश्य हैं ।

प्रो. ब्राउन का मत है कि पृथ्वी सौर–मण्डल का ही एक सदस्य है और चन्द्रमा उसका ही एक उपग्रह । वैज्ञानिक दृष्टि से पृथ्वी और चन्द्र की उत्पत्ति सूर्य से हुई है । न केवल चन्द्र और सूर्य वरन् मंगल, बृहस्पति, शुक्र और शनि की गतियाँ भी पृथ्वी को प्रभावित करती हैं । उन्होंने अन्तर्ग्रही प्रभावों को समानुभूति नाम दिया है ।

तीसरी अन्तर्राष्ट्रीय विषुवतीय वायु गोष्ठी विज्ञान गोष्ठी के उद्‌घाटन के अवसर पर अहमदाबाद भौतिक अनुसंधानशाला के दो वैज्ञानिकों प्रो. के. आर. रामनाथन एवं डा. एस अनन्त कृष्णन ने यह घोषणा की है कि पृथ्वी सौर–मंडल की अभिन्न घटक है । आकाशीय पिण्डों के स्पन्दन धरती को व्यापक रूप से प्रभावित करते हैं । अपनी एक खोज में इन वैज्ञानिकों ने पाया कि वायु मण्डल के "डी' क्षेत्र में शक्तिशाली एक्स–किरणों के स्रोत स्कोपिओं ११ के गुजरने से वनस्पति एवं जीवजगत की हलचलें बढ़ जाती हैं तथा उनका हानिकारक प्रभाव पड़ता है ।

परमाणु ऊर्जा आयोग के भूतपूर्व अध्यक्ष एवं विश्व के जाने–माने भौतिक विज्ञानी डा. साराभाई विभिन्न देशों के वैज्ञानिकों की एक गोष्ठी को सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि सूर्य के अतिरिक्त भी अन्य आकाशीय पिण्डों का प्रेक्षीय प्रभाव धरती पर आता है, यदि ज्योतिर्विज्ञान के सूत्रों को ढूँढ़ा जा सके और अन्तरिक्षीय ज्ञान में प्रयुक्त किया जा सके तो अनेकों महत्वपूर्ण जानकारियाँ हाथ लग सकती हैं ।

रूसी वैज्ञानिक ब्लादीमोर देस्यातोय ने इस संबन्ध में व्यापक शोध कार्य किया है, उनका कहना है कि पृथ्वी पर समय–समय पर आने वाले चुम्बकीय तूफानों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से धरती के निवासियों में स्नायविक एवं मनोरोगों की बहुलता देखी जाती है । धरती पर चुम्बकीय क्षेत्र की तीव्रता या फ्रीक्वेन्सी का बदलना आकाशीय पिण्डों के ऊर्जा प्रवाह के परिणाम हैं । अपनी आरंभिक खोजों में ब्लादीमोर ने यह पाया कि जब सूर्य पर एक विशेष प्रकार के ज्वाला प्रकोप (फ्लेयर) फूटते हैं तो धरती से प्रचण्ड चुम्बकीय तूफान आते हैं । जिनसे प्रभावित तो सभी होते हैं पर कमजोर मनः स्थिति वाले व्यक्तियों पर उनकी प्रतिक्रिया अत्यधिक दिखाई पड़ती हैं । आत्महत्याएँ, हत्याएँ एवं असंतुलन के फलस्वरूप सड़क दुर्घटनाएँ अधिक होती है ।

इसी आधार पर वैज्ञानिकों का कहना है कि मस्तिष्कीय क्रिया–क्षमता का मूलभूत स्रोत अल्फा इलर्जी धरती के चुम्बकीय क्षेत्र से जुड़ा हुआ है और भू–चुम्बकत्व का सीधा संबन्ध आकाशीय पिण्डों से है । इसलिए मानवी जीवन अन्तरिक्षीय घटनाक्रमों एवं शक्तियों से विलक्षण रूप से संबंधित है । अतएव अन्तरिक्ष में पैदा होने वाली हर हलचल पृथ्वी मानवीय प्रकृति मन, बुद्धि चेतना को प्रभावित करती है ।

खगोलशास्त्री पास्कल के शोध निष्कर्षों के अनुसार सूर्य और चन्द्रमा के द्वारा होने वाले सशक्त खिंचाव न केवल समुद्रों–सागरों में ज्वार–भाटे उत्पन्न करते हैं बल्कि जीवधारियों पर भी अपना प्रभाव छोडते हैं । पास्कल के अनुसार समस्त जीवधारी कम्पायमान समष्टिगत ऊर्जा के एक विशाल समुद्र में निवास करते हैं, फिर विभिन्न ग्रहों से उत्सर्जित होने वाली ऊर्जा तरगों से अप्रभावित कैसे रह सकते हैं ? भौतिक विज्ञान के क्षेत्र में यह तथ्य अगले दिनों प्रमाण पुष्ट होगा कि पृथ्वी पर विद्यमान जीवन का अन्तरिक्ष के ग्रह–नक्षत्रों से घना संबन्ध है और अविज्ञात होते हुए भी सूक्ष्म आदान–प्रदान का क्रम चलता रहता है ।

प्रौढ़ता की ओर बढ़ रहे आधुनिक विज्ञान के कदम शनैः–शनैः उन्हीं निष्कर्षो की ओर गतिशील हैं, जिन्हें सहस्राब्दियों पूर्व भारतीय तत्ववेत्ता ज्योतिर्विदों ने पाया था, समूचा ब्रह्माण्ड एक चैतन्य शरीर है । सूर्य इसकी आत्मा है । जिसका प्रत्येक स्पन्दन हर घटक को प्रभावित करता है, जिसमें पृथ्वी और संबंधित वातावरण वनस्पति एवं जीवधारी भी सम्मिलित हैं । प्राचीकाल में ज्योतिर्विज्ञान इसी दिशा में अनुसंधान करने प्रमाण जुटाने और अन्तर्गही तथ्यों की खोजबीन करने में सचेष्ट था, जिसकी अनेकानेक उपलब्धियों से समय–समय पर मानवजाति लाभान्वित होती रहती थी ।

विज्ञान का ध्यान भी इस ओर आकृष्ट हुआ है और अन्तर्ग्रही टोह लेने का सिलसिला शुरू हुआ है । यह शुभ लक्षण है । फिर भी ज्योतिर्विज्ञान के बिना अन्तरिक्षीय खोज–बीन करने में विज्ञान उतना सक्षम नहीं है । इस दिशा में प्राचीन भारतीय ज्ञान मार्गदर्शक की भूमिका निभा सकता है । आर्य भट्ट का ज्योतिष सिद्धान्त का‌लक्रियापाद, गोलपाद सूर्य सिद्धान्त, और उस पर नारदेव ब्रह्मगुप्त के संशोधन, परिवर्द्धन, भास्कर स्वामी का महाभास्करीय आदि दुर्लभ और अमूल्य ग्रन्थ अनेकानेक रहस्यों एवं निष्कर्षो से भरे पड़े हैं । अपने पंच सिद्धान्तिक में वाराह मिहिर ने पॉलिश, रोमक, वाशिष्ठ सौर और पितामह नाम पाँच ज्योतिर्सिद्धान्तों का वर्णन किया है जो ज्योतिर्विज्ञान पर विस्तुत प्रकाश डालते हैं ।

तत्ववेत्ता महर्षियों द्वारा अन्वेषित यह विद्या सिर्फ सूर्य एवं ब्रह्माण्ड की भौतिक गतिविधियों की जानकारी देकर मौन नहीं साध लेती । इसका भौतिक पक्ष कितना ही व्यापक, सूक्ष्म एवं आकर्षक क्यों न हो, ज्योतिषविद्या का कलेवर भर है । इस कलेवर में समाहित वास्तविक तत्व ऊर्जा प्रवाहों का दैवीय विज्ञान है । जिसे समझकर न सिर्फ इनसे स्वयं को ऊर्जस्वी बनाया जा सकता है बल्कि वर्तमान और भविष्य को अपेक्षित दिशा में गढ़ा और ढाला जा सकता है ।

ज्योतिर्विज्ञान का भौतिक पक्ष हो अथवा दैवीय विज्ञान इसके रहस्य सूर्य–साधना में समाए हैं । इसकी विशिष्ट साधनाओं से उन्मीलित दृष्टि ही इनका रहस्योद्‌घाटन करने में सक्षम और समर्थ हैं इन साधनाओं की गम्भीरता में उतर कर ब्रह्माण्ड की रहस्यमयी सूक्ष्मताओं को जाना व सौर मण्डल के ऊर्जा प्रवाहों से लाभान्वित हो पाना संभव है ।

सूर्यग्रहणः किंवदन्तियाँ एवं साधनात्मक मर्म

सूर्य और चन्द्र पर लगने वाले ग्रहण क्या हैं ? इसके जवाब में इतना तो प्राथमिक शाला के विद्यार्थी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भी बता सकते हैं कि चन्द्रमा पर पृथ्वी की छाया पड़ने का दृश्य चन्द्र ग्रहण है । इसी प्रकार सूर्य प्रकाश को पृथ्वी तक आने देने में जब चन्द्रमा व्यवधान उत्पन्न करता है तो उसे सूर्य ग्रहण कहते हैं । पर बात उतने तक सीमित नहीं है । ग्रहण की प्रक्रिया अपने में खगोल विज्ञान एवं ब्रह्माण्डीय हलचलों के चेतना जगत पर पड़ने वाले अनेकों रहस्य समेटे-सँजोये हैं ।

खगोल विज्ञानियों के अनुसार पृथ्वी अपनी धुरी पर २४ घण्टो में एक पूरा चक्कर लगाती है । भिन्न-भिन्न अक्षांशों पर उसकी गति भिन्न-भिन्न रहती है । विष्वत् रेखा पर यह गति १०४० मील प्रति घण्टा ३०° अक्षांश पर यह गत्ति ६०० मील, ४५° अक्षांश पर ७३ मील और ६०° अक्षांश पर ५२० मील प्रति घण्टा रहती है । पृथ्वी की दूसरी गति सूर्य की परिक्रमा है । जिसमें १८.५ मील प्रति सेकण्ड की गति उसे ३६५ दिन लगते हैं । वस्तुतः इस अवधि की ठीक गणना की जाय तो वह ३६५ दिन ५ घण्टा ४८ मिनट और ४६ सेकण्ड से कुछ कम होती है । पृथ्वी की धुरी जिसके चारों ओर वह प्रतिदिन घूमती है, अपने परिक्रमा पथ के समकोण नहीं है वरन् ६२०५ झुकी हुई है ।

आकाश में सूर्य मार्ग १६° चौड़ा है, जिसमें सूर्य चन्द्र तथा अन्य ग्रह चलते दिखाई देते हैं । आकाश के इस मार्ग को-जोडिएक कहा जाता है । इसे पहचानने के लिए उसे १२ भागों में विभाजित किया गया है, जिन्हें राशियाँ कहते हैं । प्रत्येक राशि ३०° की होती है । सूर्य को एक राशि से दूसरी में प्रवेश करने में दो घण्टे लग जाते हैं । इन राशियों को मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, बृश्चिक धनु, मकर, कुम्भ मीन नाम दिए गए हैं ।

घूमता हुआ लट्टू जब गिरने को होता है तो अपनी कीली पर घूमता हुआ लड़खड़ाने लगता है । उसकी कीली भी घूमने लगती है । पृथ्वी की कीली भी अपनी कटि पर इसी प्रकार घूमती रहती है । यदि इसकी कीली को आकाश में बहुत ऊँचाई तक बढ़ाया जाय तो वह वहाँ पर एक अलग गोल चक्कर बना देगी । यह पृथ्वी की एक विशेष गति है, जिसका ज्ञान सामान्य विद्यार्थियों को नहीं होता । इस पूरे चक्कर के पूरा होने में २६०० वर्ष लगते हैं । पृथ्वी की इस गति का ग्रहणों के क्रम पर भी प्रभाव पड़ता है ।

चन्द्रमा २७ दिन ७ घण्टे ४३ मिनट ११.५ सेकण्ट में पृथ्वी की एक परिक्रमा पूरी करता है । इसे नक्षत्र मास कहते हैं । इस अवधि में चन्द्रमा अपनी एक परिक्रमा पूरी करके यथास्थान आ जाता है । किन्तु इस बीच पृथ्वी अपनी वार्षिक परिक्रमा में काफी आगे बढ़ जाती है । पृथ्वी के मान से चन्द्रमा को एक परिक्रमा पूरी करने के लिए और आगे बढ़ना पड़ता है । इस तरह उसे कुल २९ दिन १२ घण्टे ४४ मिनट २.८ सेकण्ड लग जाते हैं । इस अवधि को संयुति मास कहते हैं ।

यदि पृथ्वी और चन्द्रमा के वृत्त एक ही तल पर होते तो प्रत्येक पूर्णिमा को चन्द्र ग्रहण और प्रत्येक अमावस्या को सूर्य ग्रहण दिखाई देता । जब चन्द्रमा पृथ्वी की परिक्रमा करता होता है तो उसका वृत्त अन्तरिक्ष में उसके समानान्तर रहता है । उन वृत्तों को काटने वाली रेखा वर्ष में कम से कम दो बार सूर्य के केन्द्र की दिशा की ओर इंगित करती है और तब सूर्य चन्द्रमा और पृथ्वी एक सीधी रेखा में हो जाते हैं, यही ग्रहण का अवसर होता है । इससे यह भी स्पष्ट है वर्ष में कम से कम दो ग्रहण जो दोनों सूर्य के भी हो सकते हैं, अवश्य ही पृथ्वी के किसी न किसी भाग में दिखाई देंगे । वर्ष में ग्रहणों की अधिकतम संख्या ७ है, जिनमें ४-५ सूर्य के शेष चन्द्रमा के होते हैं । प्रत्येक ग्रहण १८ वर्ष ११ दिन बीत जाने पर पुनः होता है । किन्तु वह अपने पहले के स्थान में ही हो यह निश्चित नहीं है, क्योंकि संपात बिन्दु चलायमान होता है ।

साधारणतया सूर्य ग्रहण की अपेक्षा चन्द्र ग्रहण अधिक देखे जाते हैं । पर सच तो यही है कि चन्द ग्रहण से कहीं अधिक सूर्य ग्रहण होते हैं । चन्द्र ग्रहणों के अधिक देखे जाने का कारण यह होता है कि वे पृथ्वी के आधे से अधिक भाग में दिखाई पड़ते हैं, जबकि सूर्य ग्रहण पृथ्वी के बहुत थोड़े भाग में-प्रायः सौ मील से कम चौड़े और दो हजार से तीन हजार मील लम्बे भू-भाग में दिखलाई पड़ते हैं । बम्बई में खग्रास सूर्य ग्रहण हो तो सूरत में खण्ड सूर्य ग्रहण दिखाई देगा और अहमदाबाद में दिखाई ही नहीं देगा ।

चन्द्रमा पृथ्वी से अधिकतम २२,५३,००० और न्यूनतम २,२१,६०० मील दूर रहता हैं । जब वह पृथ्वी के निकट होता है तो चाल बढ़ जाती है, दूर होता है

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तो घट जाती है । पृथ्वी और चन्द्रमा में अपना कोई प्रकाश नहीं हैं । सूर्य द्वारा पाये प्रकाश से ही वे चमकते हैं । पृथ्वी, चन्द्र और सूर्य की अपनी–अपनी अनोखी चालें हैं । इस चलाचली में वे जब एक ही, एक समतल पर सीधी रेखा में आ जाते हैं तब ग्रहण पड़ता है । जब बीच में चन्द्रमा हो तो पथ्वी पर से पूरे सूर्य को नहीं देखा जा सकता है । सूर्य का जितना हिस्सा चन्द्रमा के बीच में आने से पृथ्वी पर से नहीं दीखता, वह सूर्य ग्रहण होता है । सूर्य ग्रहण मुख्यतः तीन तरह के होते हैं– (१) सर्वग्राम या खग्रास–जो संपूर्ण सूर्य बिम्ब को ढकने वाला होता है । (२) कंकणाकार या वलयाकार–जो सूर्यबिम्ब के बीच का भाग ढकता है । (३) खण्ड ग्रहण जो सूर्य बिम्ब के अंश को ही ढकता है । इसी तरह जब पृथ्वी सूर्य और चन्द्रमा के बीच आ जाती है और चन्द्रमा पृथ्वी की छाया में होकर गुजरते हैं तब चन्द्र ग्रहण होता है । चन्द्रग्रहण के समय यदि कोई व्यक्ति–चन्द्रमा पर ही हो तो उसे उस समय सूर्य ग्रहण दिखाई देगा ।

ये खगोल शास्त्रीय गणनाएँ पश्चिमी जगत में भले सौ–दो सौ वर्षों से प्रचलित हुंई हों, पर भारतीय तत्त्ववेत्ता इन रहस्यों से हजारों साल पूर्व परिचित थे । महर्षि अत्रि मुनि ग्रहण–ज्ञान के प्रथम ज्ञाता आचार्य थे । ऋग्वेदीय प्रकाश काल से ग्रहण के ऊपर अध्ययन अन्वेषण होते चले आए हैं । ऋग्वेद के एक मंत्र में यह चमत्कारिक वर्णन मिलता है कि "हे सूर्य ! असुर राहु, ने आप पर आक्रमण कर अंधकार से जो आपको विद्ध कर दिया, ढक दिया, उससे मनुष्य आपके रूप को समग्रता से देख नहीं पाए और अपने–अपने कार्यद्योत्रों में हतप्रभ से हो गए । तब महर्षि अत्रि ने तुरीय यंत्र से छाया का अपनोदन कर सूर्य का समुद्धार किया ।"

यत त्वा सूर्य स्वर्भानुस्तमसा विध्यदासुरः ।
अक्षेत्र विद्यथा मुग्धो भुवनान्यवीधयुः ॥
स्वर्भानोरध यदिन्द्र माया
अवो दिवो वर्तमाना अवाहन् ।
गुलं सूर्य तमसाप व्रतेन
तुरीयेण–ब्रह्मणाऽविन्ददत्रि ।

–ऋग्वेद ५–४०–५

'सिद्धान्त शिरोमणि' के पर्व सम्भवाधिकार में श्रीभास्कराचार्य की प्रक्रिया को स्पष्ट करते हुए कहते हैं "भूमा विधुं विधुरिनं ग्रहणे पिधन्ते' । यही बात "सूर्य सिद्धान्त' के चन्द्र ग्रहणधिकार प्रकरण में कही गई है–

छादको भास्करस्येन्दुरधस्थो घनपद् भवेत् ।
भू छायां प्रांङ्मुखश्चन्द्रो विशत्यस्य भवेद सा।।

अर्थात् नीचे होने वाला चन्द्रमा बादल की भाँति सूर्य को ढक लेता है । पूर्व की ओर चलता हुआ चन्द्रमा पृथ्वी की छाया में प्रविष्ट हो जाता है । इसलिए पृथ्वी की छाया चन्द्रमा को ढकने वाली है । सूर्य सिद्धान्तकार ने पृथ्वी की छाया को, राहु और चन्द्रमा की छाया को केतु कहा है । यह छाया भी अपने ग्रहों के अनुसार सही गति से नियमबद्ध रूप से भ्रमण करती है, इसलिए नव ग्रहों में उन्हें भी सम्मिलित कर लिया गया है ।

भारतीय तत्वेत्ताओं ने ग्रहण के ब्रह्माण्डीय रहस्य को पिण्ड में, स्वयं के शरीर में भी साक्षात्कार किया है जाबालोपनिषद् के चतुर्थ खण्ड में योगी के लिए शरीरस्थ चन्द्र ग्रहण का स्वरूप बताते हुए उसका साधनात्मक मर्म बताया गया है ।

महायोगी दत्तात्रेय जी अपने शिष्य सांडति को अष्टांगयोग का उपदेश करते हैं । उसी योगोपदेश के प्रसंग में इड़ा, कुण्डली, पिंगला इन नाड़ियों का वर्णन है । कन्द के मध्य में सुषुम्ना जिसके चारों ओर बहत्तर हजार नाड़ियां हैं, सुषुम्ना के बायें भाग में इड़ा नाड़ी है और दाक्षिण में पिङ्गला नाड़ी है । नाभिकन्द से दो अंगुल नीचे कुण्डली नाड़ी है । इड़ा नाड़ी से जब प्राण कुण्डली के स्थान मे पहुँचते तब चन्द्र ग्रहण होता है । जब पिङ्गला से कुण्डली के स्थान में प्राण जाता है तब सूर्य ग्रहण होता है । ग्रहण संबन्धी यह पिण्ड परक प्रतिवादन स्वयं में अनूठा है ।

किन्तु जिन देशों की मानवीय सभ्यताएँ पिण्ड और ब्रह्माण्ड के इस रहस्य से अपरिचित थीं, उनमें ग्रहण को लेकर तरह–तरह की किंवदंतियाँ फैली थीं । चीन देश में मानयता थी कि आकाश के दोनों सिरों पर ड्रैगन दैत्य परिवार समेत बसते हैं । जब परिभ्रमण करते हुए चन्द्र–सूर्य उनके समीप से गुजरते हैं, तब वे दैत्य उन पर टूट पड़ते हैं । मनुष्य लोक का शोर सुनकर ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वे डर कर भागते और इन देवताओं को मुख से उगलते हैं । यूनान में भी ग्रहण को दैत्यों का आक्रमण माना जाता रहा है । अमेरिकी रेड इण्डियन, अफ्रीकी हब्शी उस समय सूर्य चन्द्र के बीमार पड़ने की किंवदंती पर विश्वास करते हैं । अन्यान्य देशों में उन पर भेड़ियों, कुत्तों, बाघों, साँपों, का आक्रमणा होने की मान्यता है । प्रशान्त के तराहती द्वीपवासियों की कल्पना इन सबसे अनोखी है । वे सूर्य को प्रेमी और चन्द्र को प्रेमिका मानते हैं और कभी संयोग मिलने पर उनके मधुर मिलन की बेला को ग्रहण मानते हैं । उस दृश्य को देखने में वे लज्जा अनुभव करते हैं और मुँह छिपाते फिरते हैं ।

किंवदंतियों एवं भ्रामक मान्यताओं का लाभ उठाकर कुछ बुद्धिवादी लोग ग्रहण का चतुरतापूर्वक उपयोग करने में भी सफल रहे हैं । अमेरिका के आदिवासियों का विद्रोह शान्त करने के लिए कोलंबस ने ऐसी ही चतुरता से काम लिया । उसने वागियों के नेताओं को बुलाकर कहा तुम्हारे कृत्यों से देवता बहुत नाराज हैं । वे पूर्व सूचना के रूप में अमुक दिन चन्द्रमा को अपनी झोली में डालकर ले चलेंगे और तुम्हारे ऊपर विपत्ति बरसने का शाप देंगे । नियत समय पर आदिवासी एकत्रित हुए और इनके उस पूर्व कथन को सर्वथा सच पाया । फलतः वे बुरी तरह डर गए और कोलंबस का साथ देने लगे ।

अपने में अनेकों किंवदंतियों, रहस्यों को समेटे ग्रहण की प्रक्रिया जितनी महत्वपूर्ण है, ग्रहण की बेला उससे कहीं अधिक कीमती है । वैज्ञानिकों ने सूर्य ग्रहण को शोधों के निमित्त बड़ा अनुकूल माना है खग्रास अथवा अधिक ढके सूर्य ग्रहण के समय प्रकृति विलक्षणताओं को अपेक्षाकृत आसानी से खोजा जा सकता है । भूतकाल में कितने ही महत्वपूर्ण अनुसंधान सूर्य ग्रहण की अवधि में संभव हुए हैं ।

ग्रहण बेला में न केवल प्रकाश ही घटता है वरन् वातावरण में और भी बहुत कुछ परिवर्तन हो जाता है । इसकी जानकारी पक्षियों को विशेष रूप से मिलती है । फलतः वे डरकर अपने घोसलों में जा छिपते हैं । जबकि उससे भी अंधेरा करने वाली बदली आसमान पर छा जाने के समय उनकी सामान्य-गतिविधियों में कोई अंतर नहीं पड़ता । वातावरण का यह विचित्र परिवर्तन सामान्य जीवन तथा पदार्थों पर भी विशेष रूप से पड़ता है । फलतः उसकी स्थिति में सावधानी रखने तथा सुरक्षा बरतने की आवश्यकता होती है । वातावरण में ग्रहण काल में होने वाले इस परिवर्तन का साधनात्मक दृष्टि से भी गंभीर महत्व है । अगस्त्य संहिता में कहा है-

सूर्य ग्रहण कालेन समोऽन्यो नास्ति कश्चन ।
तत्र यद् यत्कृर्त सर्वमनन्त फलदं भवेत् ।
सिद्धिर्भवति मंत्रस्य विनाऽयासेन वेगतः ।
कर्तव्यं सर्वयत्नेन् मंत्रसिद्धिरभीप्सुभिः ॥
सूर्याद् भवन्ति भूतानि सूर्येण पालितानि तु ।
सूर्य लंय प्राप्नुवन्तिः य सूर्यः सोऽहमेव च ॥

सूर्य से ही समस्त प्राणियों की उत्पत्ति होती है । सूर्य से ही पालन होता है और सूर्य में ही लय होता है और जो सूर्य है, वही मैं हूँ ।

अर्थात्-तीर्थों और सूर्य ग्रहण तथा चन्द्र ग्रहण में मंत्र दीक्षा लेने के लिए कोई विचार न करे । सूर्य ग्रहण के समान और कोई समय नहीं है । सूर्य ग्रहण में अनायास ही मंत्रसिद्धि हो जाती है ।

गणपत्युपनिषद् के अनुसार-

सूर्यग्रहणे महानद्यां प्रतिमा संनिर्धो वा जपत्वा सिद्ध मन्त्रो भवति

-(गणपत्युपनिषद् मंत्र ८)

अर्थात् सूर्य ग्रहण में महानदियों या किसी प्रतिमा के पास मंत्र अपने से वह तुरन्त सिद्ध हो जाता है ।

प्रायः हर वर्ष सूर्य ग्रहण व चन्द्र ग्रहण की एक श्रखंला बनी ही रहती है । उनके साथ होने वाले वातावरण के परिवर्तन हमारे व्यक्तित्व में सार्थक पविर्तन कर सकें, इसके लिए हमें अपने उपासनात्मक आधार को बढ़ाना और मजबूत करना चाहिए । अगले दिनों सौर ग्रहणों की संख्या में बढोत्तरी होने जा रही है, चूँकि यह संधिकाल है । इस अवधि मे की गयी साधना निश्चित रूप से भगवान भुवन-भास्कर की अनुकम्पाओं का निमित्त कारण बनेगी, इसमें कोई संदेह नहीं है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सूर्य-चन्द्र ग्रहण और उनमें सन्निहित तथ्य

गणित शास्त्र के कुछ अजूबे हैं, जिनके कारण कई पद्धतियाँ अपनाकर भी एक ही निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है । एक स्थान तक पहुँचने के कई रास्ते हो सकते हैं और उनके बीच में पड़ने वाले स्थानों के नाम, रूप स्वभावतः भिन्न होंगे फिर भी निर्धारित लक्ष्य तक पहुँचना उनमें से किसी भी मार्ग से हो सकता है । यही बात धर्मो के सम्बन्ध में भी है, वे रास्तों की तरह हैं जो भिन्न होते हुए भी हमें संयम और उदारता के कदम बढ़ाते हुए पूर्णता के लक्ष्य तक पहुँचने में सहायता करते हैं । आवश्यक नहीं कि इन धर्म मान्यताओं के ढाँचे में एक रूपता हो, प्रतिपादनों की भिन्नता होते हुए भी एक ही निष्कर्ष पर पहुँच सकना पूर्णतया संभव है ।

उदाहरहण के लिए ग्रह–नक्षत्रों की स्थिति के सम्बन्ध में भूतकालीन और अर्वाचीन मान्यताओं को लिया जा सकता है, उनमें भारी अन्तर है तो भी निष्कर्ष निकालने का जहाँ तक सम्बन्ध है, उसमें कोई अन्तर नहीं आता । सूर्य ग्रहण और चन्द्र ग्रहण की भविष्यवाणी आज की तरह भूतकाल में भी की जाती थी और वह अब की तरह तब भी पूर्णतया सही होती थी । ज्योतिष सम्बन्धी प्राचीन मान्यताएँ अब झुठला दी गई हैं और यह प्रमाणित कर दिया गया है कि भूतकालीन ज्योतिषियों की मान्यताएँ अब की अपेक्षा भिन्न प्रकार की थीं । इतने पर भी उस खन्डन से कोई अन्तर नहीं पड़ा । प्राचीन ज्योतिष के आधार पर भी ग्रहण समय सम्बन्धी निष्कर्ष अभी भी जहाँ के तहाँ हैं । और वे तब की तरह अब भी सही हैं ।

भारतीय ज्योतिष आज के खगोल विज्ञान के साथ तालमेल नहीं खाती । फिर भी ग्रहण सम्बन्धी उसकी परिणिति सही निकल आती है ।

भातीय ज्योतिष के अनुसार सूर्य ही पृथ्वी के चारों ओर चक्कर लगाता है । जैसा कि चन्द्रमा लगाता है । पृथ्वी के चारों ओर चक्कर लगाने वाले नौ ग्रहों में से सूर्य भी एक है ।

यह मान्यता वर्तमान खगोल विज्ञान से भिन्न है फिर भी उसका निष्कर्ष ग्रहण के सन्दर्भ में ठीक बैठ जाता है । इसका कारण यह है कि सूर्य को स्थिर और पृथ्वी को चल अथवा पृथ्वी को स्थिर और सूर्य को चल मानकर चलने में परिणामतः कोई अन्तर नहीं आता । चलती रेल में बैठकर देखने से पेड़ पीछे को भागते प्रतीत होते हैं । यह पेड़ों के पीछे भागने की गति वही होती है जो रेलगाड़ी के आगे दौड़ने की । चूँकि पृथ्वी २४ घण्टे में ३६०° चलती है, यदि इसी बात को सूर्य का २४ घण्टे में ३६०° चलना कहा जाय तो भी परिणाम वही रहेगा ।

पृथ्वी अपनी धुरी पर २४ घण्टे में एक पूरा चक्कर लगाती है । भिन्न–भिन्न अक्षांशों पर उसकी गति भिन्न रहती है । विषुवत् रेखा पर यह गति १०४० मील प्रति घण्टा ३०° अक्षांश पर यह गति ९०० मील ४५° अक्षांश पर ७३५ मील और ६०° अक्षांश पर ५२० मील प्रति घण्टा रहती है । पृथ्वी की दूसरी गति सूर्य की परिक्रमा है । जिसमें १८.५ मील प्रति सैकिण्ड की गति से उसे ३६५ दिन लगते हैं । वस्तुतः इस अवधि की ठीक गणना की जाय तो वह ३६५ दिन ५ घण्टा ४८ मिनट और ४६ सैकिण्ड से कुछ कम होती है । पृथ्वी की धुरी जिसके चारों ओर वह प्रतिदिन घूमती है अपने परिक्रमा पथ के समकोण नहीं है वरन् ६२.५° झुकी हुई ।

आकाश में सूर्य का मार्ग १६ चौड़ा है जिसमें सूर्य चन्द्र तथा अन्य ग्रह चलते दिखाई देते हैं । इसे पहचानने के लिए उसे १२ भागों मे विभाजित किया गया है, जिन्हें राशियाँ कहते हैं । प्रत्येक राशि ३०° की होती है । सूर्य को एक राशि से दूसरी में प्रवेश करने मे दो घण्टे लग जाते हैं । इन राशियों को मेष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धन, मकर, कुम्भ, मीन नाम दिये गये हैं, यह सर्वविदित है ।

घूमता हुआ लटटू जब गिरने को होता है तो अपनी कीली पर घूमता हुआ लड़खड़ाने लगता है, उसकी कीली भी घूमने लगती है, पृथ्वी की कीली भी अपनी कटि पर इसी प्रकार घूमती रहती है । यदि इसकी कीली को आकाश में बहुत ऊँचे तक बढ़ाया जाय तो वह वहाँ पर एक अलग गोल चक्कर के पूरा होने में २६०००

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वर्ष लगते हैं । पृथ्वी की इस गति का ग्रहणों के क्रम पर भी प्रभाव पड़ता है ।

चन्द्रमा २७ दिन ७ घण्टे ४३ मिनट ११.५ सैकण्ड में पृथ्वी की एक परिक्रमा पूरी करता है, इसे नाक्षत्र मास कहते हैं । इस अवधि में चन्द्रमा अपनी एक परिक्रमा पूरी करके यथास्थान आ जाता है । किन्तु इस बीच पृथ्वी अपनी वार्षिक परिक्रमा में काफी आगे बढ़ जाती है । पृथ्वी के मान से चन्द्र को एक परिक्रमा पूरी करने के लिए और आगे बढ़ना पड़ता है । इस तरह इसे कुल २९ दिन १२ घण्टे ४४ मिनट २.८ सैकण्ड लग जाते हैं । इस अविधि को संयुति मास कहते हैं ।

यदि पृथ्वी और चन्द्रमा के वृत्त एक ही तल पर होते तो प्रत्येक पूर्णिमा को चन्द्र ग्रहण और प्रत्येक अमावस्या को सूर्य ग्रहण दिखाई देता । जब चन्द्रमा पृथ्वी की परिक्रमा करता होता है तो उसका वृत्त अन्तरीक्ष में उसके समान्तर रहता है तो उन वृत्तों को काटने वाली रेखा वर्ष में कम से कम दो बार सूर्य के केन्द्र की दिशा की और इंगित करती है और तब सूर्य, चन्द्रमा और पृथ्वी एक सीधी रेखा में हो जाते हैं, यही ग्रहण का अवसर होता है । इससे यह भी स्पष्ट है कि वर्ष में कम से कम दो ग्रहण जो दोनों सूर्य के भी हो सकते हैं, अवश्य ही पृथ्वी के किसी न किसी भाग में दिखाई देंगे । वर्ष में ग्रहणों की अधिकतम संख्या ७ है, जिनमें ४–५ सूर्य के और शेष चन्द्रमा के होते हैं ।

चन्द्रमा पृथ्वी से अधिकतम २,५३,००० और न्यूनतम २,२१,६०० मील दूर रहता है । जब वह पृथ्वी के निकट आता है तो चाल बढ़ जाती है, दूर होता है तो घट जाती है ।

पृथ्वी और चन्द्रमा में अपना कोई प्रकाश नहीं है । सूर्य द्वारा पाये प्रकाश से ही वे चमकते हैं । पृथ्वी, चन्द्र और सूर्य की अपनी–अपनी अनौखी चालें हैं । इस चलाचली में वे जब एक ही, एक समतल पर सीधी रेखा में आ जाते हैं तब ग्रहण पड़ता है । जब बीच में चन्द्रमा हो तो पृथ्वी पर से पूरे सूर्य को नहीं देखा जा सकता । सूर्य का जितना हिस्सा चन्द्रमा के बीच में आने से पृथ्वी पर से नहीं दीखता वह सूर्य ग्रहण होता है । इसी तरह जब पृथ्वी बीच में हो तो सूर्य का प्रकाश चन्द्रमा के उतने क्षेत्र में पड़ने से रोक देती है, यही चन्द्र ग्रहण है । चन्द्र ग्रहण के समय यदि कोई व्यक्ति चन्द्रमा पर हो तो उसे उस समय सूर्य ग्रहण दिखाई देगा ।

भारतीय ज्योतिष में चन्द्रमा की छाया को केतु और पृथ्वी की छाया को राहु कहा गया है । यह छाया भी अपने ग्रहों के अनुसार सही गति से नियमबद्ध रूप से भ्रमण करती है, इसलिए नव ग्रहों में उन्हें भी सम्मिलित कर लिया गया है ।

चूँकि चन्द्रमा की गति प्रति घण्टा उसके व्यास के बराबर २१०० मील है । अतः खग्रास अधिक से अधिक दो घण्टे का हो सकता है । इसके अतिरिक्त स्पर्श से लेकर मोक्ष तक में एक घण्टा और भी लग सकता है ।

ग्रहण सम्बन्धी अब के प्रतिपादन ऊपर दिये गये हैं । प्राचीनकाल में राहु और केतु के आक्रमण को चन्द्र ग्रहण और सूर्य ग्रहण का कारण माना गया था । पृथ्वी और सूर्य में से कौन स्थिर और कौन चल है । इस विषय पर भी मान्यताएँ बदलती रही हैं । धर्म और दर्शन भी इसी प्रकार अपने कई रूप बदलता रहा है, पर इससे उस लक्ष्य में कोई अन्तर नहीं आता जो जीवन की पूर्णता का केन्द्र बिन्दु है ।

ज्ञान, कर्म और भक्ति की त्रिवेणी की तरह सूर्य, चन्द्र और पृथ्वी की भी स्थिति है । उनकी गतिशीलता स्वतन्त्र रीति से चलती है । जब कभी व्यतिक्रम होता है, तो ग्रहण पड़ता है । भावना, विचारणा और क्रिया का व्यक्तिक्रमण भी मनुष्य जीवन पर ग्रहण जैसा कलंक लगा देता है ।

औसतन प्रत्येक शताब्दी में प्रायः १५४ चन्द्र ग्रहण और २३७ सूर्य ग्रहण होते हैं । पर इनका कोई सुनिश्चित क्रम नहीं रहता । इस अनिश्चितता के कारण ही उनके सम्बन्ध में तरह–तरह के अनुमान लगाये जाते थे ।

ईसा से हजारों वर्ष पूर्व भारतीय ज्योतिषियों ने ग्रहणों की प्रत्यावर्तन अवधि जान ली थी । इसे चन्द्र चक्र कहा जाता था । इस चक्र का एक घेरा ६५८१ १/३ दिन निश्चित किया गया था । इसका अर्थ यह था कि यदि आज कोई ग्रहण हुआ हो तो ठीक ६५८५ दिन बाद वही ग्रहण होगा । चूँकि पृथ्वी चन्द्र और सूर्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की गतियाँ भिन्न है उनमें सदा कुछ न कुछ अन्तर पड़ता ही रहता है इसलिए ग्रहण का भी ६५८५वे दिन ठीक उसी स्थान पर उतना ही होना तो सम्भव नहीं पर बहुत कुछ तालमेल खा जाता है और इतने दिन बाद ग्रहणों की पुनरावृत्ति वाली बात बन जाती है ।

प्रकृति चक्र अपनी धुरी पर घुमता है । दिन के बाद रात, रात के बाद दिन । जन्म के बाद मरण–मरण के बाद जन्म । ये परिवर्तन का एक सुनिश्चित क्रम है । सुख और दुख भी इसी प्रकार आते जाते रहते है । परिवर्तन प्रक्रिया के गोलाकार चक्र का संकेत ग्रहण क्रम से भी मिलता है । इतनी अवधि पूरी करके ग्रहणों का चक्र फिर पूर्ववत् चल पड़ता है । जब श्रेष्ठ परिस्थिति चली गई और उनके स्थान पर निकृष्टता की निशा आसीन हो गई, तो कोई कारण नहीं कि फिर उत्कर्ष की अरुणिमा ऊषा का उदय न हो । हमारा भविष्य उज्ज्वल बनाने में कालचक्र अपनी भूमिका सम्पादित कर ही रहा है ।

पृथ्वी और सूर्य, आत्मा और परमात्मा आदर्श पति–पत्नी

पृथ्वी और सूर्य को आदर्श पति–पत्नी कहा जा सकता है । पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करती है, उससे प्रकाश ग्रहण करती है और जीवित रहती है । आदर्श पत्नी को पति के इर्द–गिर्द घूमना चाहिए, उसकी सत्ता के साथ अपनी सत्ता जुड़ी रखनी चाहिए । उससे प्रकाश ग्रहण करना चाहिए, योग्यता से लाभान्वित होना चाहिए और यदि वह सूर्य जैसा प्रकाशवान है, तो उसके जीवन से अपने जीवन को आलोकित भी करना चाहिए । सूर्य भी अपने उत्तरदायित्वों की उपेक्षा नहीं करता । अपनी समग्र सम्पदा का अजस्र अनुदान उसे मुक्त हस्त से प्रदान करता है और उसके रोम–रोम में जीवन संचार करने में अपने साथ ग्रन्थि बन्दन को, पाणिग्रहण को सार्थक बनाता है ।

कभी सूर्य और पृथ्वी एक ही गोलक में संयुक्त थे जैसे सृष्टि के आरंभ में नर और नारी एक थे । पीछे परिस्थितियों ने दोनों को अलग कर दिया, फिर भी उनकी महानता में कोई अन्तर नहीं आया । परमात्मा का एक अंश ही जीव है । कभी दोनों एक थे, अब वे अलग हो गये फिर भी मूल सत्ता की विशेषता दोनों पक्षों में यथावत् विद्यमान है । पृथ्वी सूर्य से अलग है तो भी अपने मूल केन्द्र के विशेष वैभव की उत्तराधिकारिणी बनी हुई हैं परमात्मा का समस्त वैभव बीज रूप से आत्मा में मौजूद हैं । पृथ्वी का ठोस पिण्ड थोड़ी सी परिधि में सीमित है, पर उसका शक्ति–क्षेत्र, वायु मंडल बहुत बडे क्षेत्र में संव्याप्त है ।

पृथ्वी कितनी बड़ी है इसका उत्तर छोटी कक्षा के विद्यार्थी तुरन्त ८००० मील व्यास बता कर दे सकते हैं । पर चूँकी वायु मण्डल भी पृथ्वी का ही अंग है । धरती की वायु भूत सम्पदा जिस क्षेत्र में उड़ती फिरती है, उसे भी उसका एक अंग क्यों न माना जाय । इस प्रश्न के अनुसार पृथ्वी का विस्तार और अधिक बढ़ जाता है । अब से ५० वर्ष पूर्व यह वायु मंडल ७–८ मील माना जाता था । पीछे पाया गया कि वह १००–१५० मील तक फैला हुआ है । रेडियो संचार की खोज ने उसे २५०–३०० मील तक पहुँचा दिया । पर अन्त यहाँ भी नहीं होता । प्रकृति की दिव्य रंग–बिरंगी, झूमती, लहराती उरु ज्योतियाँ, आऊरोरल लाइट्स दिखाई पड़ती रहती हैं, वे भी बिना वायुमंडल के कैसे चमकती होंगी यह सोचकर अब वायु मंडल का विस्तार ७०० मील ऊँचाई तक मानना पड़ा ।

रूसी और अमेरिकी उपग्रहों ने नये समाचार यह लाकर दिये कि वायुमंडल बहुत आगे तक फैला हुआ है । पृथ्वी की भूमध्य रेखा के चारों ओर दो मोटे–मोटे कवच हैं । मानो पृथ्वी कमर में मजबूत मेखलाऐं पहन रखी हों । पृथ्वी तल से उनकी दूरी क्रमशः २ हजार और बीस हजार मील है । यह मेखलाएँ किस चीज की बनी हैं, इसके उत्तर में उस स्थिति को "प्लाज्मा' कहा गया है । पिछले दिनों पदार्थो के तीन स्वरूप बताये जाते रहे हैं (१) ठोस (२) तरल (३) वायव्य । अब एक चौथा तथ्य और सामने आया है प्लाज्मा । यह गैसीय स्थिति से भी विरल स्थिति है, इतनी विरल कि उसमें परमाणुओं का विघटन हो जाता है । असल में ठोस पृथ्वी का वायव्य विस्तार इतने बड़े क्षेत्र को घेरे हुए है, यही मानकर चलना चाहिए । पृथ्वी का वास्तविक कलेवर इतना ही सुविस्तृत है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पिछले दिनों यह माना जाता रहा है कि ग्रह नक्षत्रों के बीच अन्तरिक्ष क्षेत्र नितान्त शून्य है। अब यह माना गया है कि शून्य नाम की कोई चीज नहीं है। सर्वत्र किसी न किसी रूप में पदार्थ की सत्ता मौजूद है। अन्तरिक्ष भी विद्युन्मय चैतन्य से भरा है, उसमें भी स्पन्दन मौजूद है और प्लाज्मा अथवा अन्य रूपों में पदार्थ की सत्ता विद्यमान है। पृथ्वी की ठोस परिधि समाप्त होते ही वायुमंडल की पर्त आरंभ होती है और वायु मंडल के समाप्त होते ही प्लाज्मा की पर्त आरंभ हो जाती है तो फिर प्लाज्मा को भी पृथ्वी की ही परिधि में क्यों न गिन लिया जाय ? पृथ्वी का यह चुम्बकीय क्षेत्र है। प्लाज्मा की हलचलों को सूर्य से गति मिलती है, अस्तु सूर्य और पृथ्वी के बीच का सारा क्षेत्र चुम्बक मण्डल बन जाता है। उसी से सूर्य और पृथ्वी के बीच अति महत्वपूर्ण आदान-प्रदान चलते रहते है।

पति पत्नी का स्थूल कार्य क्षेत्र में घर परिवार की छोटी सीमा में सीमाबद्ध प्रतीत होता है, पर वस्तुतः उसका कर्तव्य और उत्तरदायित्व, समाज, राष्ट्र और विश्व की सुविस्तृत सीमाओं का स्पर्श करता है। सूर्य पृथ्वी का पोषण करता है पर उतने तक सीमित नहीं है, वह अन्य ग्रह उपग्रहों को भी अपने अनुदान देता है और अनन्त आकाश को अपनी सामर्थ्य से प्रभावित, प्रकाशित करता है। यही बात पृथ्वी की भी है वह सूर्य की अनुचरी तो है। पर अपने शिशु चन्द्रमा सहित सुविस्तृत प्रभाव क्षेत्र अपने अनुदान बिखेर कर ब्रह्माण्डव्यापी आदान-प्रदान प्रक्रिया के निर्वाह का पूरी तरह ध्यान रखती है। न सूर्य न पृथ्वी कोई किसी के लिए सीमित नहीं होते। यद्यपि कर्तव्यपालन में कोई त्रुटि भी नहीं रहने देते।

जिस तरह पृथ्वी का वायुमण्डल सैकड़ों मील तक फैला हुआ है। उसी तरह सूर्य का वायव्य कवच लाखों मील तक फैला हुआ है। सूर्य का पीलापन लिए जो प्रभामंडल दुर्बीनों से दीख पड़ता है वह उसके इर्द-गिर्द का ६००० मील का आवरण वर्ण मंडल है। इसके बाद एक और क्षीण आलोक है। यह एक लाख मील विस्तार का है। इसे सूर्य किरीट कहते हैं। इस किरीट आवरण की हलचलें और आगे बढ़कर लाखों मील तक देखी गई हैं।

सूर्य के वर्ण मण्डल में कई बार आग की अत्यन्त विशालकाया लपटें सूर्य से अलग स्वतंत्र रूप से उड़ती और शून्य में विलीन होती देखी जाती हैं। वे जिधर भी जाती होंगी उधर अन्य ग्रहों से संबंधित प्लाज्मा को प्रभावित करती होंगी।

विकरण मेखलाओं का क्षेत्र इतना विशाल है कि उसकी व्याख्या मीलों तक नहीं की जा सकती और न उन्हें किसी ग्रह विशेष की सम्पदा माना जा सकता है यह समस्त विश्व का एक संयुक्त वैभव है, जिसमें सभी ग्रह उपग्रह सम्मिलित हैं। सूर्य मण्डल का कामनवैल्थ तो निश्चित रूप से इस श्रृंखला में मजबूती के साथ बँधा हुआ है ही।

सूर्य को प्रसन्नता होती होगी कि उसकी परिपोषित पत्नी निखल ब्रह्माण्ड को अपनी सत्ता से प्रभावित करती है और स्वतंत्र स्वावलम्बी बनकर अपने प्रखर एवं परिपक्व अस्तित्व का परिचय देती है। पति को इतना ही उदार होना चाहिए। अपनी पोषित को अपने उपभोग के लिए ही सीमाबद्ध नहीं करना चाहिए। क्षेत्र की व्यापकता होने से भी उनके परस्पर प्रेम और आकर्षण में किसी प्रकार की कमी नहीं आती।

पति अपना सारा उपार्जन अनुदांन पत्नी को ही दे दे और अन्यान्य कर्त्तव्यों का पालन करने के लिए कुछ भी शेष न रखे, यह आवश्यक नहीं। आवश्यकता के अनुरूप आदान-प्रदान ही उचित है। समूचा आधिपत्य-अधिकार तो सकीर्ण होना और संकीर्ण बनाना ही कहा जायगा। पृथ्वी और सूर्य में से कोई भी ऐसा अनुदार नहीं है।

सूर्य की गर्मी और रोशनी जो ब्रह्माण्ड में चारों ओर बिखरती रहती है उसका दो करोड़ वाँ भाग ही पृथ्वी को मिलता है। यह थोड़ी-सी सम्पदा ही पृथ्वी को जीवन प्रदान करती है। यदि इसकी थोड़ी-सी सम्पदा में थोड़ी-सी भी कमी वेशी पड़ जाय तो लेने के देने पड़ जायें। गर्मी बढ़ते ही धरती की पर्त झुलस जाय और थोड़ी कमी पड जाय तो सब कुछ शीत से अकड़ कर ठंडा हो जाय। ग्रहण और प्रदान में औचित्य का ध्यान रखा ही जाता है।

पृथ्वी के पास एक से एक बढ़ी-चढ़ी शक्तियाँ हैं उनमें एक अति महत्वपूर्ण है गुरुत्वाकर्षण। इसी के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आधार पर वह सौर परिवार के साथ अपना संबन्ध संतुलन बनाये हुए है। इसी के कारण उस पर रखे पदार्थ और प्राणी उछल कर अनंत आकाश में उड़ जाने से बचे रह सकते हैं। यह गुरुत्वाकर्षण पृथ्वी को सूर्य से मिला स्नेह, सौजन्य, सद्भाव ही कहा जायगा। परमात्मा से आत्मा को भी ऐसी ही सम्पत्ति मिली है, यदि वह उसका सही उपयोग कर सके तो पृथ्वी के समान ही अपने सुविस्तृत सम्पर्क क्षेत्र को सुसंतुलित बनाये रह सकता है।

न्यूटन द्वारा प्रतिपादित "आकर्षण नियम' की अभी भी पूरी तरह व्याख्या नहीं हुई है। उसका एक अंश ही जाना जा सका है।गुरुत्वाकर्षण क्यों है ? क्या है ? किस तरह है ? जैसे प्रश्नों का उत्तर देने में न्यूटन ने अपनी अनभिज्ञता प्रकट की थी और अभी वे प्रश्न जहाँ के तहाँ हैं। इस बीच कुछ नई खोजें जमा हुई हैं। समान आवेश वाले कणों का परस्पर धकेला जाना और विपरीत आवेश वालों का आपस में खिंचना–यह विद्युत चुम्बकीय बल हैं। आइन्टीन ने इस बल को फोटोन नामक अणु अंश द्वारा निःसृत सिद्ध किया है। जर्मन खगोल वेत्ता मिलिगेट और अंग्रेज विज्ञानी पोल डिराक ने यह संभावना व्यक्त की कि हो न हो गुरुत्वाकर्षण इसी विद्युत चुम्बकीय बल का स्थूल रूप है। इन्हीं ४० वर्षों में परमाणु के भीतर एक सौ से भी अधिक सूक्ष्म कण खोजे जा चुके हैं। उन्हें परस्पर बाँधें रखने की क्षमता सम्पन्न एक नया नाभिकीय बल खोजा गया है। अनुमान यह लगाया गया है कि विद्युत चुम्बकीय बल का केन्द्र यह नाभिकी सत्ता है जो विकसित एवं विस्तृत होकर गुरुत्वाकर्षण का रूप धारण करती है।

अनेक शोध निष्कर्षों का निर्णय यह है कि गुस्त्वाकर्षण पृथ्वी का अपना उपार्जना नहीं है वह सूर्य का ही अजस्र अनुदान है जो पृथ्वी ने अपने भीतर मजबूती के साथ गहराई तक जकड़–पकड़ लिया है।

ऐसी और भी अनेक शक्तियाँ हैं, धरती पर बिखरा पड़ा जीवन भी सूर्य का ही अनुदान है। अदृश्य आकाश में वायु, विद्युत, रेडियो विकरण आदि न जाने क्या क्या भरा पड़ा है। चुम्बकत्व और प्रकाश को भी इसी प्रकार के सूर्य द्वारा पृथ्वी को दिये गये उपहार कहा जा सकता है।

इस संसार में तीन प्रकार की चुम्बकीय शक्तियाँ काम कर रही हैं (१) प्राणि चुम्बक (२) धातु चुम्बक (३) पृथ्वी चुम्बक। इन तीनों की त्रिविध शक्तियाँ इस संसार में विभिन्न प्रकार की हलचलों को जन्म देती और उनमें रूपान्तरण प्रस्तुत करती हैं।

प्राणि चुम्बक वह है जिसके आधार पर एक प्राणी अपनी भौतिक एवं आत्मिक विशेषताओं का एक दूसरे के साथ आदान प्रदान करता है। संगति प्रभाव से लेकर प्रजनन प्रक्रिया तक में इस का चमत्कार देखा जा सकता। इसके अन्तर्गत् मनोबल, साहस, शौर्य, पराक्रम, तेजस्विता, ओजस्, आत्मबल जैसी विशेषताएँ आती हैं, रूप सौन्दर्य के आकर्षण भी इसी से जुड़े हुए हैं। एक–दूसरे के निकट आने और दूर हटने की अविज्ञात हलचलें भी इसी आधार पर होती रहती हैं। शाप, वरदान, सिद्धि चमत्कार और अतीन्द्रिय चेतना को भी इसी परिधि मे लिया जा सकता है।

प्राणि विद्युत पर पिछली शताब्दी में गहरी खोजें हुई हैं। थियो फास्टस्पैरा सेल्सस, वान हेलमान्ट, स्काचमेन मैक्स वेल, मैस्मर, सैटामेली, कान्स्टैट पुसिगर, ला फान्टेन्ट आदि विद्वानों ने इस संदर्भ में गहरे अन्वेषण किये हैं और सिद्ध किया है कि मनुष्य की शरीरगत और मनोगत विद्युत शक्ति न केवल व्यक्तित्व को उठाने गिराने में वरन् दूसरो को सहायता देने में भी बहुत बड़ी भूमिका प्रस्तुत कर सकती है। इस विज्ञान का इलेक्ट्रो वायोलाजिकल्स् के रूप में मान्यता मिली और उस पर गहरे अनुसंधान हुए। डा० डुरान्ड डे ग्रास और डा० लीवाल्ट ने इस शक्ति का चिकित्सा शास्त्र में सफल प्रयोग किया, स्टैटिक इलेक्ट्रिसिटी का वैसा ही प्रयोग जीवित प्राणियों की शारीरिक और मानसिक क्षमता सुव्यवस्थित करने के लिए किया गया जैसा कि वस्तुओं के हेर–फेर में सामान्य बिजली का प्रयोग किया जाता है।

उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव धातु चुम्बक के केन्द्र माने जाते हैं। वहाँ से निसृत होने वाली विद्युत धाराएँ धातुओं को प्रभावित करती हैं। उस प्रभाव का शक्ति रूप में प्रयोग होता है। यह शक्ति रासायनिक पदार्थो के रूप परस्पर संमिश्रण के द्वारा नवचीन योगिकों का सृजन करती है। अणुओं को उनके अव्यवों के साथ सटाये रहती है। बिजली की उत्पत्ति का केन्द्र यही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । खदानें इसी आधार पर जमा होती हैं, और भी बहुत कुछ इसके द्वारा होता है । कम्पास की सुई का सिरा सदा उत्तर की ओर रखने में यही धातु-चुम्बक ही काम करता है ।

धरती को सूर्य से मिला एक उपहार है, प्रकाश । इसकी अनेकों धाराएँ हैं । इन धाराओं में एक का नाम है "लैसर' । इसकी खोज कुछ ही समय पूर्व हुई है । वैज्ञानिक इसके आधार पर बड़ी-बड़ी आशाएँ लगा रहे हैं, और उस अणु शक्ति को हाइड्रोजन शक्ति से भी बड़ी मानकर करतल गत करने का प्रयत्न कर रहे हैं ।

आमतौर से प्रकाश रश्मियाँ जैसे-जैसे आगे बढ़ती हैं, फैलती चली जाती हैं । अस्तु दिन-रात जाने से कुछ दूर जाकर उनका अस्तित्व ही समाप्त हो जाता है । साधारण प्रकाश यदि चन्द्रमा की दूरी ढाई-लाख मील तक फेंका जाय तो वहाँ तक पहुँचते-पहुँचते वह पच्चीस हजार मील चौड़ा हो जायगा ।

लैसर किरणों की विशेषता उनके सीधे चलने में है । वे अपनी निर्धारित दिशा में ही बढ़ती हैं और इधर-उधर नहीं छितरातीं । इसी विशेषता के कारण उनके कम्पन ज्यों के त्यों बने रहते हैं । अन्य प्रकाश दूरी के अनुपात से अपने रंग बदलते रहते हैं, पर लैसर किरणें अपना मूल रंग ज्यों का त्यों बनाये रहती हैं ।

आमतौर से प्रकाश तरंगे अलग-अलग लम्बाई की होती हैं, उनसे मिलकर दृश्यमान प्रकाश बनता है । सबसे बड़ी-तरंगों को लाल और सबसे छोटी को बेंजनी रंग की माना जाता है । बल्व हो या मोमबत्ती सभी प्रकाश इन्हीं बड़ी छोटी तरंगों से मिलकर बने होते हैं । प्रत्येक तरंग की एक आवृति होती है । इन आवृत्ति पुंजों का संयुक्त स्वरूप प्रकाश के रूप में दृष्टिगोचर होता है ।

"लैसर' अपने ढंग का अनौखा प्रकाश है । उसकी सभी तरंगें एक ही आवृत्ति की होती हैं । प्रत्येक तरंग एक-दूसरे के समानान्तर चलती है । उनमें तनिक भी कालान्तर नहीं रहता । साधारण प्रकाश चारों ओर फैलता है । किन्तु लैसर एक दिशा में चलता है यही वह विशेषता हैं । जिनके कारण वह अन्य प्रकाशों की तुलना में अत्यधिक शक्तिशाली सिद्ध हो सका ।

लैसर की सभी किरणें एक दूसरे का साथ देती हैं । फलस्वरूप उनकी शक्ति भी उसी अनुपात से बढ़ती जाती है । एक सेन्टीमीटर के दस हजारवें भाग जितनी छोटी जगह पर लैसर किरणें एकत्रित की गई तो उनकी गर्मी एवं चमक सूर्य को भी मात देने वाली बन गई । कुछ वर्ष पूर्व पृथ्वी से ढाई लाख मील दूरी पर घूमने वाले चन्द्रमा पर लैसर प्रकाश की टार्च फेंकी गई थी । उसने एक सैकण्ड में इतनी लम्बी यात्रा पूरी करली और दो मील क्षेत्र को प्रकाश से भर दिया । लैसर की सहायता से घने अन्धकार में आवश्यक चित्र लिये जा सकते हैं और अधिक से अधिक एवं छोटी से छोटी दूरी तक उसे भेजा जा सकता है । देखते-देखते एक फुट मोटी लोहे की चद्दर में छेद किया जा सकता है ।

लैसर सुविधाओं से युक्त छड़ी अब बनने जा रही है जो अंधों के लिए आँखों का काम देगी । उसे हाथ में लेकर वे चलेंगे और जानते रहेंगे कि उनके मार्ग में कितनी दूरी पर क्या बाधा है ।

विभिन्न प्रयोजनों के लिए पृथ्वी से अन्तरिक्ष में कितने ही उपग्रह भेज जाते रहते हैं । उनकी कक्षा तथा चाल सुधारने के लिए इन किरणों का प्रयोग होने लगा है । आकाश में उड़ने वाले किसी भी शत्रु पक्ष के विमान अथवा उपग्रह को जलाकर भस्म कर देना इन किरणों की सहायता से अब बहुत ही सरल हो गया है । छोटे से छोटे काम यहाँ तक कि सिगरेट जलाने की जेबी माचिस वक्स तक इन्हीं किरणों से बनने लगे हैं ।

पृथ्वी का लाड़ला पुत्र मनुष्य अपने पुरुषार्थ से उपार्जित ऊर्जा को आवश्यकता से कम अनुभव कर रहा है । उसे नये शक्ति स्रोतों की आवश्यकता पड़ रही है । इसके लिए उसे पिता सूर्य के आगे ही हाथ पसारना पड़ेगा । वह अपनी पत्नी पृथ्वी का और उसकी संतान का पालन करने में कभी भी कंजूसी बरतने वाला नहीं है ।

संयुक्तराष्ट्र संघ की संगृहीत सूचनाओं के अनुसार संसार में ऊर्जा का उपयोग अत्याधिक तेजी से बढ़ रहा है । इसकी पूर्ति पैट्रोल गैस, कोयले एवं बिजली से न हो सकेगी । अणु ऊर्जा की बात भी बन नहीं पड़ रही क्योंकि उससे उत्पन्न विकरण को नियंत्रित करने का कोई निश्चित मार्ग निकल नहीं पाया है । ऐसी दशा में सूर्य ऊर्जा ही निरापद प्रतीत होती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ब्रिटेन के नोबुल पुरुस्कार विजेता वैज्ञानिक सर जार्ज पार्टर ने कहा है, कि विश्व में ऊर्जा आवश्यकता जिस तेजी से बढ़ रही है उसकी पूर्ति सूर्य किरणों के अतिरिक्त और किसी प्रकार से नहीं हो सकती ।

परमात्मा शक्ति का पुंज है वह अपनी पत्नी आत्मा की, उसके परिवार की सभी आवश्यकताएँ पूरी कर सकता है । जैसा कि सूर्य पृथ्वी की, उसकी संतान की आवश्यकताएँ पूरी करने के लिए बचनबद्ध है । पर इसके लिए वैसे ही घनिष्ठ सम्पर्क की आवश्यकता है जैसा कि पृथ्वी ने सूर्य के साथ बनाया हुआ है । सूर्य सान्निध्य द्वारा विराट ब्रह्म से हम सरलतापूर्वक अपना तादात्म्य स्थापित कर करते हैं ।

दिव्यलोकों से बरसने वाला शक्ति–प्रवाह

उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव पृथ्वी के उभय पक्षीय संतुलन केन्द्र बिन्दु हैं । अन्तरिक्ष का असीम विकरण पृथ्वी के इर्द–गिर्द मण्डराता रहा है । उसका एक सीमित अंश ही भूतल को स्पर्श कर पाता है । धरती के बहुत ऊपर एक जटिल आवरण कवच चढ़ा हुआ है । प्राचीन काल में योद्धा लोग जिस तरह वख्तर पहन कर युद्ध में लड़ने जाते थे और शत्रु के प्रहारों से आत्मरक्षा करते थें । उसी प्रकार का कवच सुदूर अन्तरिक्ष में पृथ्वी ने भी धारण कर रखा है । अन्तर्ग्रहीय विकरण उसी से टकरा कर इधर उधर छितरा जाते हैं, यदि यह आवरण न होता तो अन्तरिक्ष से बरसते रहने वाले अनियन्त्रित शक्ति प्रवाह उसे कब का नष्ट भ्रष्ट कर देते ।

सौर मण्डल के अन्य ग्रह उपग्रहों में यही एक विशेष कमी–कमजोरी है कि उनके ऊपर पृथ्वी जैसा आवरण कवच नहीं हैं अतएव उल्काऐं उनसे टकराती रहती हैं । विकरण उन्हें प्रभावित करते रहते हैं । इन्हीं आक्रमणों ने उन्हें निष्प्राण बना रखा है, यदि उन्हें भी धरती जैसा कवच मिला होता तो वे भी अपनी पृथ्वी की तरह ही सुन्दर, सुरभित और सजीव बने हुए होते ।

अन्तर्ग्रहीय ऊर्जाऐं पृथ्वी पर उत्तरी ध्रुव क्षेत्र में होकर छनी हुई उपयुक्त एवं आवश्यक मात्रा में ही प्रवेश करती हैं । तदुपरान्त पृथ्वी को अभीष्ट परिपोषण देने के उपरान्त दक्षिणी ध्रुव में होती हुई बहिर्गमन हो जाती हैं । एक सिरे से प्रवेश करके चूहा जिस प्रकार बिल के दूसरे सिरे से निकल भागता है, उसी प्रकार अन्तर्ग्रहीय विकिरण धरती के एक सिरे से प्रवेश करता और दूसरे से बाहर निकलता रहता है । उत्तरी ध्रुव क्षेत्र में एक ऐसी चुम्बकीय छलनी है, जो केवल उसी प्रवाह को भीतर प्रवेश करने देती है जो उपयोगी है । छलनी में बारीक आटा ही छनता है और भूसी ऊपर रह जाती है । ठीक इसी प्रकार ध्रुवीय छलनी में भी पृथ्वी के लिए उपयोगी विकिरण अन्दर आते हैं और शेष को पीछे धकेल दिया जाता है ।

उत्तरी ध्रुव पर यह छनने की क्रिया टकराव के रूप में देखी जा सकती है । इस टकराव से एक विलक्षण प्रकार के ऊर्जा कम्पन उत्पन्न होते हैं, जिनकी प्रत्यक्ष चमक उस क्षेत्र में प्रायः देखने को मिलती रहती है उसे ध्रुवप्रभा या मेरुप्रकाश कहते हैं । इसका दृश्यमान प्रत्यक्ष रूप में जितना अद्भुत है उससे अधिक रहस्यमय उसका अदृश्य रूप है । इस मेरुप्रभा का प्रभाव स्थानीय ही नहीं होता वरन् समस्त भूतल को वह प्रभावित करता है । भू गर्भ में समुद्र तल में वायु–मण्डल में ईश्वर के महासागर में जो विभिन्न प्रकार की हलचलें होती रहती हैं– चढ़ाव उतार आते हैं उनका बहुत कुछ सम्बन्ध इस ध्रुवप्रभा एवं मेरुप्रकाश से होता है । इतना ही नहीं उसकी हल चलें प्राणधारियों की शारीरिक एवं मानसिक स्थिति को भी प्रभावित करती हैं । मनुष्यों पर तो उसका प्रभाव विशेष रूप से होता है । सुविज्ञ लोग उस प्रभाव प्रवाह में से अपने लिए उपयोगी तत्व खींच लेने धारण कर लेने में भी सफल होते हैं और उससे असाधारण लाभ प्राप्त करते हैं ।

ध्रुवप्रकाश सर्चलाइट के समान होता है । यह उत्तर की अपेक्षा दक्षिण में ज्यादा तेज होता है । उत्तरी ध्रुव पर कभी–कभी गर्मी भी हो जाती है, दक्षिणी ध्रुव पर नहीं । उत्तरी ध्रुव पर एस्किमो रहते हैं, दक्षिणी ध्रुव पेंगुइन पक्षी के अतिरिक्त कुछ नहीं मिलता, यह पक्षी आगन्तुकों से बहुत प्रेममय व्यवहार करते हैं । उत्तरी ध्रुव पर धरती भीतर को धँसी है १४,००० फुट गहरा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समुद्र बन गया है, जबकि दक्षिणी ध्रुव १६,००० फीट उभरा हुआ है। उत्तर में बर्फ बहती है दक्षिण में स्थिर रहती है दक्षिण ध्रुव में रात धीरे-धीरे आती है सूर्य दक्षिणी क्षितिज के लिए बहुत थोड़ी देर के लिए जाता है। सूर्यास्त का दृश्य घण्टों रहता है, अस्त हो जाने पर महीनों अन्धकार छाया रहता है, केवल मात्र उत्तर की ओर कुछ प्रकाश दिखाई देता है। एक बार ध्रुव यात्री बायर्ड ने यहाँ सूर्य को बिल्कुल हरे रंग का देखा। ऐसा दृश्य इससे पहले किसी ने नहीं देखा था। किरणों की वक्रता के कारण ऐसे बिलक्षण दृश्य वहाँ प्रायः देखने को मिलते रहते हैं।

ध्रुवों पर सूर्य की किरणों विचित्रता के फलस्वरूप अनेक विचित्रताऐं दृष्टिगोचर होती हैं। दूर की वस्तुयें हवा में लटकती हुई जान पड़ती हैं। टीले जितने होते हैं उससे कई गुना बड़े लगते हैं। कई बार सूर्य एक के स्थान पर कई-कई दिखाई देते हैं और इसी प्रकार चन्द्रमा भी बर्फ में, हवा में भी कई बार सूर्य दिखाई दे जाते हैं। यह सभी कृत्रिम सूर्य वास्तविक जैसे ही लगते हैं।

पृथ्वी का चुम्बकत्व जो कि पृथ्वी के कण-कण को, पृथ्वी में पाये जाने वाले जीवन तत्व को प्रभावित करता है। वस्तुतः ब्रह्माण्ड से आने वाले एक प्रकार के शक्ति या तत्व प्रवाह के कारण है। यह प्रवाह उत्तर की ओर से आता है, इसलिए उत्तरी ध्रुव क्षेत्र और दक्षिणी ध्रुव क्षेत्र दोनों दो ध्रुव होने पर भी गुण-धर्म से अलग-अलग है। सामान्यतः दोनों चुम्बकीय ध्रुवों की विशेषताएँ एक समान किन्तु एक दूसरे से भिन्न दिशा में होनी चाहिए किन्तु कई बातों में समानता होने पर भी दोनों की विशेषताओं में बड़ा अन्तर है।

उत्तरी ध्रुव एक गढ़ा है दक्षिणी ध्रुव गुमड़ा। उत्तरी ध्रुव की बर्फ दक्षिणी ध्रुव से अधिक गर्म होती है। जल्दी गलने और जल्दी ही जमने वाली भी होती है। दक्षिणी ध्रुव उजाड़ क्षेत्र है। यहाँ कुछ पक्षी जलचरों के अतिरिक्त एक पंखहीन मच्छर भी पाया जाता है, वह क्या खाकर जीता है और कैसे इतनी भयंकर शीत में जीवन धारण किये रहता है, वैज्ञानिक इस प्रश्न का आज तक समाधन नहीं कर सके।

उत्तरी ध्रुव में जीवन का बाहुल्य है पौधों तथा जन्तुओं की संख्या करोड़ों तक पहुँचती है। यहाँ दिन और रात समान नहीं होते ६-६ माह के ही नहीं होते-कई बार रात ८० दिन के बराबर होती है। यह सबसे लम्बी रात होती है। क्षितिज के बीच सूर्य वर्ष में १६ दिन रहते है। यहाँ चन्द्रमा इतनी तेजी से चमकता है कि उसके प्रकाश में दिन में सूर्य की रोशनी के समान ही काम किया जा सकता है।

कुछ मेरुप्रकाश विस्तृत और आकृतिहीन होते हैं कुछ सजीव और हलचल करते हुए। कभी वे किरणों की लम्बाई के रूप मे जान पड़ते हैं, कभी प्रभा और ज्वाला के रूप में, कभी वह दृश्य बदलता हुआ कभी चाप, पड़ी और कोरोना के रूप में होता है, तो कभी प्रकाश गुच्छे सर्चलाइट के समान। यह रात भर तरह-तरह के दृश्य बदलते हैं। हर दृश्य और परिवर्तन सूर्य की अपनी आन्तरिक हलचल का प्रतीक होता है। इसका सबसे बड़ा प्रमाण अन्तर्राष्ट्रीय भू-भौतिक वर्ष अनुसन्धान के दौरान आया। उस समय यह प्रकाश सर्वाधिक अस्तित्व में आया और उसके विलक्षण आकार प्रकार देखने में आये। स्मरण रहे भू-भौतिक वर्ष सूर्य के ११ वर्षीय चक्र के दौरान मनाया गया। इस अवधि मे सूर्य की आन्तरिक हलचल बहुत बढ़ जाती है। यह प्रकाश मुख्यतः चुम्बकीय तूफान होता है, जो पृथ्वी की सारी यान्त्रिक क्रिया में क्रान्ति उत्पन्न करके रख देता है।

अनुसन्धान के दौरान यह पाया गया है कि सूर्य में जब तेज दमक दिखती है, उसके एक दो दिन बाद ही मेरू प्रकाश भी तीव्र हो उठता है। यह बढ़ी हुई सक्रियता सूर्य-विकिरण तथा कणों की बौछार का ही प्रतीक होती है। शान्त अवस्था में भी यह सम्बन्ध बना रहता है, पर प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर नहीं होता। यह कण अति सूक्ष्म इलेक्ट्रान (ऋण आवेश कण) प्रोट्रान (धन आवेश कण) होते हैं जो २०० से लेकर १००० मील तक प्रति घण्टे की गति से दौड़ते हुए पृथ्वी तक आते हैं, जबकि प्रकाश पृथ्वी तक पहुँचने में कुल ८ ही मिनट लेता है प्रकाश की गति १८००००० मील प्रति सेकण्ड है, इसका अर्थ यह हुआ कि पृथ्वी सूर्य की विद्युतीय शक्ति से सम्बद्ध है पृथ्वी स्वयं-एक चुम्बक की तरह है। चुम्बकत्व पार्थिव कणों में विद्युत प्रवाह के कारण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

पैदा होता है । इससे स्पष्ट है कि पृथ्वी की चुम्बकीय क्षमता सूर्य के ही कारण है । यह कण पृथ्वी से हजारों मील ऊपर ही पृथ्वी के क्षेत्र द्वारा पृथ्वी के उत्तरी तथा दक्षिणी ध्रुवों की ओर मोड़ और प्रवाहित कर दिये जाते हैं ।

मार्च तथा सितम्बर में (चैत्र तथा क्वार) में जबकि पृथ्वी का अक्ष सूर्य के साथ उचित कोंण पर होता हैं, मेरुप्रकाश अधिक मात्रा में पृथ्वी पर पड़ता है, जबकि अन्य समय गलत दिशा के कारण प्रकाश लौटकर ब्रह्माण्ड में चला जाता है यही वह अबधि होती है जब पृथ्वी में फूल फलों की वृद्धि और ऋतु परिवर्तन होता है । नबरात्रियों का सम्बन्ध इसी से हो सकता है । उस समय सूर्य की यह विद्युत धाराऐं स्पष्ट और अधिक मात्रा में पृथ्वी पर पड़ती हैं । प्रयोगों से यह भी सिद्ध हो चुका है कि उत्तरी दक्षिणी ध्रुवों में विद्युत धारा की चादरें जैसी ढकी रहती हैं ।

एक ओर आश्चर्यजनक घटना वायुमण्डल की है वह सीटी जैसी ध्वनियों की । अनुमान किया जा रहा है कि यह आकाश में तड़ित विद्युत के कारण विद्युत चुम्बकीय तरंगों के कारण होता है । इससे वायुमण्डल में ७००० मील की ऊँचाई पर भी एक विद्युन्मय गैस की उपस्थिति की सम्भावना व्यक्त की जा रही है । ज्ञात नहीं यह सूर्य की शक्ति है या पृथ्वी की ।

ध्रुवप्रभा एवं मेरुप्रकाश का धरती पर होने वाली विभिन्न हलचालों एव परिवर्तनों से क्या सम्बन्ध है । उसका अन्वेषण करने में विज्ञान वेत्ता संलग्न है । वे क्रमशः इस निष्कर्ष पर पहुँचे जा रहे हैं कि मनुष्य के निजी पुरुषार्थ का महत्व एक बहुत छोटी सीमा तक ही सीमित है । बहुत करके तो अन्तरिक्ष और भूलोक के बीच चल रहे आदान–प्रदान पर ही निर्भर रहता है । धातुऐं – वनस्पतियाँ, ऋतु परिवर्तन, जलवायु जैसे महत्वपूर्ण तत्वों पर इन्हीं अदृश्य अभिकर्षणों का प्रभाव रहता है । इतना ही नहीं वे प्राणियों की–शारीरिक एवं मानसिक स्थिति को भी प्रभावित करती हैं । उस दृष्टि से स्वतन्त्र समझा जाने वाला प्राणि जगत् प्रकृति की सूक्ष्म हलचलों की कठपुतली मात्र बनकर एक प्रकार से निर्यात नियन्त्रित ही बन जाता है ।

एक वारगी यह स्थिति बड़ी दयनीय प्रतीत होती है कि प्राणियों को नियति की कठपुतली मात्र बनकर रहना पड़े । अन्तर्ग्रहीय प्रवाह उसके सामने जो भी परिस्थितियाँ उत्पन्न करे उसके सामने नतमस्तक होना पड़े ।

पर नृतत्व विज्ञान पर अधिक गहराई से विचार करने पर स्पष्ट होता है कि ध्रुवीय छलनी की तरह ही मानवी चेतना में भी एक अद्भूत विशेषता यह है कि वह प्रकृतिगत प्रवाहों में से जिसे चाहे स्वीकार एवं ग्रहण करे और जिसे चाहे अपने मनोबल की टक्कर मारकर इधर–उधर छितरादें । ऋतु प्रभाव, क्षुधा पिपासा एवं रोग–शोक के चढ़ाव उतारों तक से वह अपने संकल्प बल से अभीष्ट परिवर्तन कर सकता है । ऐसी दशा मे वह नियति की कठपुलती न रहकर स्वतन्त्र चेतना और स्वभाग्य निर्माता का अपना गौरव अक्षुण्य बनाये रख सकता है ।

अध्यात्म दर्शन एवं साधना विज्ञान का प्रयोजन यही है कि मनुष्य की उस विशेषता को बलिष्ट बनाया जाय जो प्रकृतिगत प्रतिकूलताओं में उपयोगी एवं अनुकूल तत्वों को खींचकर अपनी आन्तरिक क्षमता बढ़ा सके और उसके आधार पर जीवन के हर क्षेत्र में सुसम्पन्न रह सके ।

मनुष्य आपने आप में एक ब्रह्माण्ड है । मस्तिष्क के मध्य ब्रह्मरंध्र के अवस्थित सहस्रार चक्र को सर्प माना गया है । मन संस्थान और कायकलेवर धरती है । मस्तिष्क को उत्तरी ध्रुव और मूलाधार स्थित कुण्डलिनी गह्वर को दक्षिणी ध्रुव माना जाता है । इन दोनों के बीच होते रहेने वाले दिब्य आदान–प्रदान का माध्यम मेरुदण्ड है । इसमें चलने वाले इड़ा पिंगला और सुषुम्ना प्रवाह दूसरे शब्दों में पिंडगत ध्रुवा प्रभा एवं मेरुप्रकाश का प्रतिनिधित्व करते हैं ।

बिन्दु योग की प्रकाश साधना का उद्देश्य आत्म क्षेत्र में अदृश्य लोकों से अवतरित होते रहने वाले शक्तिप्रवाह की अभीष्ट मात्रा को आकर्षित एवं धारण करना है । यह दिव्य अवतरण ऊर्जा को ध्यानयोाग द्वारा और ध्वनि को नादयोग द्वारा आकर्षित, नियन्त्रित किया जाता है । ध्रुवीय मेरुप्रभा का भौतिक विज्ञानों ने केवल स्वरूप और प्रभाव ही जाना है, वे अभी इस निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सके कि उन प्रचण्ड शक्ति धाराओं के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रवाह भी आवश्यक हेर फेर कैसे किया जा सकता है ? पर योग विज्ञानी जानते हैं कि मानवी काया की धरती पर दिव्य लोकों से, दिव्य शक्तियों से जो प्राप्त हो सकता है और उस साधना उपचार के द्वारा किस प्रकार उपलब्ध किया जाय और उससे किस प्रकार देवोपम विभूतियों से लाभान्तिव हुआ जाय ।

समष्टि से प्रभावित व्यष्टि के क्रिया कलाप

मानव स्वास्थ्य पर दूरवर्ती अन्यान्य ग्रह–नक्षत्रों से आने वाली अदृश्य बौछारों का भी प्रभाव पड़ता है । इस संदर्भ में चलते रहे–विभिन्न वैज्ञानिक अनुसंधानों ने इस तथ्य को सत्य प्रमाणित किया है कि पूर्णिमा के चाँद का मनुष्य पर न केवल जैबिक असर पड़ता है अपितु भावनात्मक प्रभाव भी पड़े बिना नहीं रहता । इस संबन्ध में किये गये अध्ययनों से जो निष्कर्ष सामने आये हैं उनके अनुसार पूर्णिमा काल में जो कार्यकीय परिवर्तन है उनमें रक्तचाप, हृदय धड़कन, उपापचय प्रक्रिया में भी इस समय तीव्रता अनुभव की गई है ।

शिकागों के इलिवान्स यूनिवर्सिटी के फार्मोकॉलोजी विभाग के प्रो० डॉ० राल्फ डब्लू मोरिस ने अध्ययनों परांत पाया कि रक्त–स्राव अन्य अवसरों की तुलना मे इस दिन अधिक क्रियाशील रहता है । पूर्ण चन्द्रमा से निकलने वाली विशिष्ट ऊर्जा तंरगें रक्त बहाव को रोकने वाले ब्लैड प्लेटमेट्स के निर्माण में बाधा उत्पन्न करती हैं । फलस्वरूप अधिक मात्रा में रक्त स्रावित हो जाता है । पाया गया है कि मधुमेह के रोगियों में इन्हीं दिनों ब्लड शुगर चरम स्थिति में पहुँच जाती है ।

अनुसंधानकर्ता चिकित्सा विज्ञानियों का कहना है कि चन्द्रमा की कलाओं का महिलाओं के मासिक चक्र पर विशेष प्रभाव पड़ता है । पूर्णिमा अवधि में उनमें अवसाद् और तनाव जैसे मनोविकारों की बहुलता देखी गई है । कुछ महिलाएँ रक्त स्राव और हारमोनों के घट–बढ़ के कारण क्रमशः स्थायी रूप से मानसिक अवसाद का शिकार बनती चली जाती है । उनके द्वारा की जाने वाली हत्याओं व आत्म–हत्याओं की घटनाएँ प्रायः इसी अवधि में देखी गई हैं । वस्तुतः इस प्रकार के कृत्यों के पीछे मानसिक दुर्बलता ही प्रमुख कारण होती है । सबल मनःस्थिति वाले व्यक्तियों पर इन परिवर्तनों का कोई विशेष प्रभाव परिलक्षित नहीं होता ।

मनः चिकित्सकों तथा पुलिस विभाग के अध्ययनकर्ता विशेषज्ञों का कहना है कि पूर्णिमा का चन्द्रमा आवेश–उत्तेजना, तनाव, चिन्ता आदि मनोविकारों में बढ़ोत्तरी करता है । मनःशास्त्रियों के अनुसार इस दिन व्यक्ति की हठधर्मिता व आक्रमकता अन्य दिनों की अपेक्षा बढ़ जाती है । आपराधिक घटनाओं में आश्चर्यजनक अभिवृद्धि इसी अवधि में पायी गई है । उस दिन सामान्यजनों के व्यवहार में परिवर्तन भी होते देखा गया है । न्यूयार्क के वैज्ञानिको नें अपने खोजपूर्ण अध्ययन में बताया है कि इस काल में आगजनी एवं हिंसा की घटनाएँ अधिक होती हैं । साथ ही देशव्यापी हत्याओं में ५० प्रतिशत की अभिवृद्धि देखी गई है । डॉ० मौरिस ने अपने तथ्यों के समर्थन में एक रोचक उदाहरण प्रस्तुत करते हुए कहा है कि डेविड बरकोलिए नामक डाक तार विभाग के कर्मचारी ने "सेन आफ सैन" नामक कुख्यात हत्याकाड आठ रातों मे सम्पन्न किया, इन आठ में से पाँच रातें पूर्णिमा की थीं ।

डॉ० मौरिस के अनुसार मनुष्य के व्यवहार चिन्तन में उन्माद लाने वाले चन्द्र प्रभावों की व्याख्या करना अत्यन्त जटिल है क्योंकि पूर्णिमा काल में पृथ्वी सूर्य और चन्द्रमा तीनों ही एक सीधी रेखा में आ जाते हैं । उस वक्त उनके सम्मिलित विद्युत चुम्बकीय प्रभाव एवं गुरुत्वाकर्षण में जो परिवर्तन होता है वह काया के सूक्ष्म विद्युतीय प्रवाहों पर सीधा प्रभाव डालता है और उसमे परिवर्तन लाकर स्वास्थ्य को सीधे प्रभावित करता है ।

३ फरवरी १९६९ को अहमदाबाद में तीसरी अन्तर्राष्ट्रीय विषुतवीय वायु विज्ञान गोष्ठी का उद्घाटन हुआ, उस समय अहमदाबाद भौतिक अनुसंधानशाला के दो वैज्ञानिकों, प्रो० के० आर० रामनाथन और डा० एस० अनन्त कृष्णान की एक महत्वपूर्ण खोज की घोषणा की गई । घोषणा यह थी कि धरती पर आकाशीय पिण्डों का व्यापक प्रभाव पड़ता है । इन वैज्ञानिकों ने कुछ सप्ताह पूर्व वायु–मण्डल के डी क्षेत्र में विस्तृत अयनकरण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(अयनोस्फियर) की खोज की थी और यह पाया था कि शक्तिशाली एक्स किरणों के स्रोत स्कोपिओं–११ के गुजरने से वनस्पति और जीवन–जगत् में व्यापक हलचल उत्पन्न होती है ।

परमाणु शक्ति आयोग के अध्यक्ष डा० साराभाई ने, विभिन्न देशों से आये ८५ वैज्ञानिकों, जिनमें ३५ भारतीय भी थें, सम्बोधित करते हुये बताया कि सूर्य के अतिरिक्त अन्य किसी आकाशीय पिण्ड से भी प्रेक्षीय प्रभाव धरती पर आता है और यदि उसकी विस्तृत खोजें की गईं तो धरती में जीवन और जीवन में आकाशीय पिण्डों के प्रभाव की अनेक महत्त्वपूर्ण जानकारियाँ मिल सकेंगी ।

इस सम्बन्ध में पाश्चात्य वैज्ञानिक काफी अर्से से जागरुक हैं । चन्द्रमा की यात्रा का नियंत्रण करने वाले रूसी वैज्ञानिकों ने पाया कि जिस प्रकार का चुम्बकीय क्षेत्र (मैगनेटिक फील्ड) धरती पर है, उस तरह का चन्द्रमा और दूसरे ग्रहों पर नहीं है । धरती के समस्त जीवित पदार्थ चूँकि इस चुम्बकीय क्षेत्र में विकसित हुये हैं, इसलिये यह प्रश्न उठा कि अन्य नक्षत्रों में चुम्बकीय क्षेत्र का अभाव यात्रियों में मस्तिष्क में प्रभाव डालेगा और इसी बात को लेकर एक नये विज्ञान चुम्बकीय जीव–शास्त्र (मैगनेटिक एनाटामी) का जन्म हुआ ।

सन् १९५४ से लेकर ६४ तक रूसी वैज्ञानिक ब्लादीमीर देस्यातोव ने इस सम्बन्ध में व्यापक शोधकार्य किया और आँकड़े एकत्रित कर यह बताया कि जब चुम्बकीय तूफान (मैगनेटिकस्टार्म्स) आते हैं तो धरती के निवासियों में स्नायविक बेचैनी (नर्वसनेस) और मनोरोगों की संख्या बढ़ जाती है । इस तरह के रोगियों की मृत्यु दर भी बढ़ती पाई गई । उल्लेखनीय है कि धरती के चुम्बकीय क्षेत्र की तीव्रता या उसको फ्रीक्वेन्सी बदलना आकाशीय पिण्डों की किसी ऊर्जा–प्रवाह का परिणाम होते हैं । इस सम्बन्ध में यदि खोजों का सिलसिला जारी रखा गया तो भारतीय तत्व विज्ञान के उसी सिद्धान्त की पुष्टि होगी, जिसमें यह बताया गया है कि मनुष्य आकाश की अदृश्य शक्तियों से प्रभावित है, यही नहीं वह मन की चुम्बकीय शक्ति के द्वारा अज्ञात नक्षत्रों से वह शक्ति–प्रवाह भी अपने अन्दर आकर्षित और धारण कर सकता है जिसके अभाव में शारीरिक शक्तियाँ अविकसित पड़ी रहती हैं । आशा है आगे की यह उपलब्धियाँ भारतीय तत्व–ज्ञान और उपासना क्षेत्र को क्रांतिकारी ढंग से प्रभावित करेंगी ।

प्रारम्भिक शोधों में श्री ब्लादीमीर ने यह पाया कि जब सूर्य में एक विशेष प्रकार के ज्वाला प्रकोप (फ्लेयर) फूटते हैं तो धरती पर प्रचण्ड चुम्बकीय तूफान आते हैं और उससे मानसिक दृष्टि से दुर्बल व्यक्तियों के जीवन अस्त व्यस्त हो जाते हैं, आत्म–हत्यायें और सड़क दुर्घटनायें भी उसी के फलस्वरूप बढ़ती हैं । शराबी, क्रोधी, चिड़चिड़े, कामुक, अनैतिक और दुर्बल स्नायु संस्थान वाले व्यक्ति इन फ्लेयर्स के बाद बहुत ही कमजोर और परेशान हो जाते हैं, इसी कारण उक्त घटनाओं में चार–पाँच गुनी तक वृद्धि हो जाती है । इसी के आधार पर वैज्ञानिकों ने यह कहा है कि मस्तिष्क की क्रिया क्षमता का बुनियादी ताप (अल्फरा एनर्जी) धरती के चुम्बकीय क्षेत्र से जुड़ा है, और धरती का चुम्बकीय क्षेत्र चूँकि आकाशीय पिण्डों से जुड़ा है, इसलिये हमारा जीवन आकाशीय पिण्डों की शक्तियों से विलक्षण रूप से जुड़ा हुआ है ।

इस जानकारी के आधार पर ही भारतीय शास्त्रकारों ने मनुष्य जीवन को स्थूल और सूक्ष्म शक्ति परम्पराओं के साथ जोड़ा था, जिससे यहाँ लोगों का भौतिक जीवन भी सामर्थ्यवान् हुआ करता था और योग पद्धति से वे अपना लघु क्षमता का इतना विकास कर लेते थे कि पिण्ड में हो, ब्रह्माण्ड का दर्शन और आनन्द लिया करते थे । इसी विशालता को वेद में यों कहा है–

सूर्या मे चक्षुर्वातः प्रारणोऽन्तरिक्षमात्मा–पृथ्वी शरीरम् ।
अस्तृतो नामाहमयमस्मि म आत्मानं निदधे
द्यावापृथ्विां गोपीथाय ॥

–अथर्व ५/८/७,

अर्थात् सूर्य मेरा नेत्र है, वायु मेरा प्राण है, अन्तरिक्ष मेरी आत्मा (हृदय) और धरती मेरा शरीर है । मैं अपने आपको अपराजित समझकर द्यावा और धरती के मध्य सुरक्षित रखता हूँ ।

इसी प्रकार यजुर्वेद में कहा है–

"शीर्ष्णो द्यौः समवर्ततः यस्य वातः प्राणाप्राणौ;

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नाभ्याऽसीदन्तरिक्षँ दिशः श्रोत्रं पद्भ्यां भूमिः ।

अर्थात्–द्यौ मेरा सिर, वायु, प्राण, अन्तरिक्ष नाभि, दिशा कान और भूमि मेरे पैर हैं ।

इन ऋचाओं में जहाँ पिण्ड की विशाल ब्रह्माण्डीय शक्ति का परिचय मिलता है, वहाँ उनमें एक महत्त्वपूर्ण विज्ञान का भी पता चलता है । वह यह कि आकाश में सूक्ष्म और ग्रह–नक्षत्रों की ऊर्जा, अयन, विकिरण आदि सब बीज रूप में शरीर में विद्यमान् हैं, उन्होंने यह भी पता लगाया कि यह शरीरस्थ सूक्ष्म संस्थान परस्पर नाड़ियों द्वारा सम्बन्धित हैं और जब अन्तरिक्ष में कोई हलचल पैदा होती है तो उस हलचल के फलस्वरूप मानवीय प्रकृति भी हलचल करती है और मन, बुद्धि, एवं चंतना को प्रभावित करती है । विस्तृत 'विज्ञान ध्यान बिन्दु उपनिषद' में इस प्रकार मिलता है–

प्रधानाप्राण वाहिन्यो भूपस्तमदश स्मृताः । इड़ा च पिंगला चैव सुषुम्ना च तृतीयका गान्धारी हस्तिजिह्वा च पूषा चैव यशस्विनी अलम्बुसा कुहुरत्र शंखिनी दशमी स्मृता एवं नाड़ीय चक्रं विज्ञेयं योगिनां सदा सततं प्राण वाहिन्यः सोमसूर्याग्नि देवता ।

–५२/५३/५२,

अर्थात्–बहत्तर हजार नाड़ियाँ में से दस प्रधान नाड़ियाँ प्राण को चलाती हैं, उनके नाम इड़ा, पिंगला, सुषुम्नां. गान्धारी हस्तिजिह्वा, पूषा, यशस्विनी, अलम्बुसा, कुहू और शंखिनी हैं । योगियों को (आत्म–चेतना को विश्व–चेतना में परिणत करने की इच्छा रखने वाले) इस नाड़ी चक्र का ज्ञान होना आवश्यक है । इनमें से इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना इन तीन नाड़ियों में सूर्य, चन्द्र और अग्नि देवता प्रतिष्ठित हैं, प्राण सदैव इन्हीं में चला करता है ।

इनमें से भी सुषुम्ना विश्व व्यापी प्राण से सम्बन्ध स्थापित करने वाली मुख्य नाड़ी है, जो मस्तिष्क में ब्रह्मरन्ध्र से निकलकर गुदा के पास तक रीढ़ की हड्डी के भीतर गई है । यह नाड़ी स्थूल आँखों से नहीं देखी जा सकती, जिस तरह छत के अत्यन्त बारीक छिद्र से प्रकाश की एक किरण प्रवाहित होती दिखाई देती है, उसी तरह का एक शक्ति–प्रवाह ही सुषुम्ना कहलाता है, इड़ा और पिंगला (धन और ऋण विद्युत) उसी की दो धारायें हैं । सुषुम्ना का प्रवाह जिन ६ चक्रों को पार करता हुआ बढ़ता है, योगियों ने देखा कि उनमें से एक में आकाश में महत्त्वपूर्ण लोक अपने बीज रूप में विद्यमान् हैं– (१) मूलधार चक्र गुदा से दो अंगुल ऊपर है । यह भूलोक का प्रतिनिधि है, धरती पर होने वाली कोई भी हलचल मूलाधार को प्रभावित करती है और उससे हमारा हृदय और मन प्रभावित होता है । (२) स्वाधिष्ठान चक्र पेडू के पास है । वह भुवःलोक का बीज है । (३) मरिणपूरक नाभि में लोक "स्वः' । (४) अनाहत चक्र, हृदय के पास महःलोक । (५) विशुद्ध चक्र कण्ठ प्रदेश में जनःलोक । (६) आज्ञा चक्र दोनों भौहों के बीच तपःलोक । एक सातवाँ चक्र–सहस्रार भी है, जो मस्तिष्क में है और जो ब्रह्मलोक का प्रतिनिधित्व करता है, इन सबसे सर्वोपरि है । वह इन सब पर नियंत्रण की शक्ति रखता है, इसलिये इन शक्तियों को प्राप्त कर लेने वाले के सम्बन्ध में कहा जाता है कि वह अपने इन सूक्ष्म शक्ति संस्थानों के माध्यम से सूर्य, चन्द्रमा, अग्नि, वायु, वर्षा आदि पर भी नियन्त्रण कर सकता है, उस शक्ति का क्या पाराबार हो सकता है ?

उस शक्ति का थोड़ा–सा परिचय और विश्व व्यापी नक्षत्र शक्तियों से क्या सम्बन्ध और सामंजस्य हो सकता है ? उसकी एक क्षीण कल्पना १८९९ में प्रसिद्ध वैज्ञानिक जोसेफ जेन को हुई थी । उन्होंने बताया कि एटम में इलेक्ट्रान्स होते हैं, उतने ही प्रोटान्स भी होते हैं, जो एक दूसरे को आपसी आकर्षण द्वारा बँधे हुये हैं और न्यूक्लियस से सौर–मण्डल के क्रम के समान बँधे हुये हैं । एटम ऊर्जा के समान है और समस्त शक्तियाँ जैसे विद्युत, गर्मी, ध्वनि, प्रकाश और चुम्बकत्व आदि एक दूसरे में परिवर्तित होते हैं । पदार्थ में ऊर्जा कम्पन के रूप में होती है । कम्पन जब तीव्र होता है, तब वह वस्तु ऊर्जा हो जाती है, मध्यम अवस्था में उसे पदार्थ कहते हैं । इससे साबित होता है कि जड़ पदार्थों को सक्रिया रखने की क्रिया इलेक्ट्रानिक शक्तियाँ, जिन्हें सौर–मण्डल की शक्तियाँ कह सकते हैं, ही करती है । शक्ति (एनर्जी) सम्बन्धी वर्तमान परिभाषायें भी इसी बात को पुष्ट करती हैं और यह बताती है कि मनुष्य–जीवन अज्ञात नक्षत्रीय शक्तियों से निरन्तर प्रभावित होता रहता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ज्योतिष विद्या का प्रादुर्भाव भी इसी सिद्धान्त पर हुआ है । मिश्र के लोगों ने देखा कि जब कुछ तारे प्रगट होते है, तभी नील नदी में बाढ़ आती है, इसलिये उन्होंने अनुभव किया कि अन्तरिक्ष के पिण्ड हमारे जीवन को निश्चित विधान के अनुसार प्रभावित करते रहते हैं । यदि प्रकृति प्रभावित होती है तो मनुष्य का शरीर और मन भी उससे प्रभावित हुये बिना नहीं रह सकता । इस जानकारी से एक लाभ तो अन्तरिक्षीय ज्ञान के विकास के रूप में मिला और दूसरा मनुष्य शरीर को प्राकृति सामंजस्य में रखकर उससे विश्व व्यापी शक्तियों की अनुभूति और प्राप्ति का लाभ मिला ।

पिछले दिनों सूर्य के अध्ययन से भी उपरोक्त सिद्धान्त प्रामाणित हुये हैं । सूर्य में अधिकतम सक्रियता सन् १९२८, १९३६, १९४७ और १९५९ में दिखाई दी थी, इन वर्षो में धरती में उल्लेखनीय हलचलें हुई । भारतवर्ष की स्वतन्त्रता भी इसी में सम्मिलित है । सूर्य की सक्रियता उसके धब्बों से फूटती दिखाई देती है । उनके बारे में तो कोई निश्चित जानकारी अभी वैज्ञानिक नहीं पा सके पर यह पता लगाया गया है कि इन धब्बों से ही अति बेंगनी किरणों की शक्तिशाली धारा और सौर कणों की विपुल संख्या का उद्‌गम होता है । दृश्य प्रकाश की बेंगनी किरणें १८,६००० मील प्रति सैकिण्ड की रफ्तार से चलती है, पर सौर-कण धीमी रफ्तार से चलते हैं । उनकी गति (वेलासिटी) अलग-अलग होती है, इसलिये प्रकाश को जहाँ पहुँचने में आठ मिनट लगते हैं, यह कण-२० से ६० घण्टे तक का समय ले लेते हैं, जब ये किरणें और कण धरातल में पहुँचते हैं तो वायु-मण्डल के विद्युत-जलवायु में परिवर्तन हो जाता है । ऐसे स्वाभाविक परिवर्तनों में सन् १९७२ तक तीव्रता आयी और उससे विश्व व्यापी परिवर्तन भी हुये । पर यह सब किसका खेल है, यह वह नहीं समझ पा रहे हैं ।

२२ फरवरी १९५६ की रात को सूर्य में अत्यन्त शक्तिशाली विस्फोट हुआ था । विश्व की अनेक वैज्ञानिक प्रयोगशालाओं ने उस घटना को अंकित किया था । विस्फोट की तेजी के अनुरूप सौर-कण धरती की और दौड़ पड़े थे और उसके कारण एशियाई देशों और आस्ट्रेलिया में भयंकर तूफान और आँधी आई जिससे रेडियो संचार तक गड़बड़ में पड़ गया ।

यह विस्फोट जहाँ भावी परिवर्तनों के संकेत हैं, वहाँ यह भी है कि मुनष्य अपने शरीर में स्थित उन बीज शक्तियों को, जो नाड़ी जाल में संसार के ग्रह-नक्षत्रों की शक्तियों को बाँधे हुये हैं, जागृत कर इन परिवर्तनों में साझेदार हो सकता है, अर्थात् वह उन्हें रोकने की सामर्थ्य भी रखता है और विस्फोट की भी ।

प्राचीनकाल के ऋषि माने जाने वाले शोधकर्ताओं ने विभिन्न ग्रह उपग्रहों के इन अदृश्य प्रवाहों, इनके परिणामों की संभावनाओं को देखते हुए तदनुरूप विभिन्न व्रत-उपवासों आध्यात्मिक साधनाओं की पद्धति को प्रचलित किया था । जिसका अवलम्बन व्यक्ति को सदैव ही निषेधात्मक परिणामों से बचाने बाला सिद्ध होता है । आज भी इनकी वैज्ञानिकता यथावत् है ।

सौर ज्वालाओं से प्रभावित बृह्मांडीय चेतना

पृथ्वी की परिस्थतियों, वातावरण, मौसम, वृक्ष-वनस्पतियों और प्राणी-समुदाय की शारीरिक-मानसिक स्थिति पर सूर्य की गति और उसमें समय-समय पर होते रहने वाले परिवर्तनों का असाधारण प्रभाव पड़ता है । वैज्ञानिकों एवं खगोल विंदों की नवीनतम् खोजों से यह तथ्य अधिक स्पष्ट रूप से उभर कर सामने आया है कि सौर धब्बों, सौर ज्वालाओं का सीधा प्रभाव अन्तर्ग्रही संतुलन एवं मानवी काया और मन, मस्तिष्क पर पड़ता है । जब भी इस तरह के परिवर्तनों में अभिवृद्धि होती है प्रकृति में असंतुलन बढ़ जाता है, जिसकी परिणति प्रकृति विक्षोभों और विस्फोटक घटनाक्रमों के रूप में होती है ।

सौर धब्बों के उभरने और उनके द्वारा पृथ्वी पर परिवर्तनों की शृंखला का सुविस्तृत वर्णन सर्वप्रथम वाराहमिहिर ने बृहत्संहिता में किया, जो आज पाश्चात्य वैज्ञानिकों के लिए अनुसंधान का प्रमुख-विषय बना हुआ है । खगोलवेत्ताओं का मत है कि हर ग्यारहवें साल सूर्य की सक्रियता बढ़ जाने से आण्विक विस्फोट होता है जिसके कारण सूर्य से रेडियो विकिरण अधिक होता है । सामान्यतः मौसम परिवर्तन प्रकृति का नियम है,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जो विश्व के विभिन्न भागों में भिन्न-भिन्न पाया जाता है । प्रकृति चक्र के अनुरूप यह बदलता भी रहता है, पर जिन दिनों सूर्य धब्बों की संख्या बढ़ जाती है, उन दिनों पृथ्वी पर एक विशिष्ट प्रकार की जैव चुम्बकीय लहर चलती है । मौसम भी विशेष प्रकार का चलता है, जिन्हें हम पकड़ नहीं पाते, पर पेड़-पौधे उन्हें पकड़ लेते हैं । उन अदृश्य सूक्ष्म तरंगों का प्रभाव मानवी मन-मस्तिष्क को मथ कर रख देता है और वह विवश हो कुछ से कुछ सोचने और कुछ से कुछ करने लग जाता है । सूर्य के इस प्रचण्ड तूफानी चुम्बकीय प्रवाह के माध्यम से विश्व ब्रह्मांड में गलाई और ढलाई की, ध्वंश और सृजन की दोनों ही प्रक्रियायें साथ-साथ संपन्न होती हैं, पर उसका सर्वाधिक प्रभाव अवांछनीयताओं के विस्मार होने के रूप में ही सामने आता है, यद्यपि गेहूँ के साथ घुन के पिस जाने की कहावत भी चरितार्थ हुए बिना नहीं रहती ।

अनुसंधानकर्ता सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक जॉन का कहना है कि इस शताब्दी में सूर्य धब्बों की सबसे ज्यादा अभिवृद्धि सन् १९६८ से आरंभ हुई है और सन् २००० तक उत्तरोत्तर बढ़ती ही जायेगी । सौर सक्रियता का सामान्य चक्र ग्यारह वर्षीय होता है, किन्तु ग्रहणकाल में यह सक्रियता कई गुना अधिक बढ़ जाती है । खग्रास सूर्य ग्रहण की अपेक्षा पूर्ण ग्रहणकाल में सौर धब्बों की संख्या भी सर्वाधिक बढ़ी-चढ़ी होती है । छोटे सूर्य ग्रहणों की शृंखला लम्बी है । कई बार तो एक ही वर्ष में पाँच से भी अधिक सूर्य ग्रहण होते देखे गये हैं, पर पूर्ण सूर्य ग्रहण कई वर्षों बाद ही आता है । इस सदी में बड़े खग्रास सूर्य ग्रहण २१ अगस्त १९१४ एवं २९ मई १९३८ को हुए थे । ये दोनों ही क्रमशः प्रथम व द्वितीय विश्व युद्ध से पूर्व घटित हुए थे । १६ फरवरी १९८० का सूर्य ग्रहण उक्त दोनों से भी बड़ा था । अगले पूर्ण सूर्य ग्रहण क्रमशः २४ अक्टूबर सन् १९९५ एवं ११ अगस्त १९९९ में पड़ेंगे । पिछला पूर्ण सूर्य ग्रहण जो स्पष्ट देखा गया था वह २२ जनवरी १८९८ को हुआ था । खगोलवेत्ताओं एवं भौतिक विज्ञानियों का कहना है कि सौर सक्रियता में निरन्तर हो रही अभिवृद्धि घटनाओं एवं विभीषिकाओं की दृष्टि से असामान्य स्तर की होंगी । अगले दिनों सूर्य धब्बों की संख्या और भी अधिक बढ़ जायेगी, परिणाम स्वरूप पृथ्वी पर जबर्दस्त चुम्बकीय तूफान उठेंगे और साथ ही सौर ज्वालायें एवं हवायें और भी घातक हो उठेंगी । उस समय न केवल वातावरण एवं मौसम में भारी परिवर्तन होंगे, वरन् मनुष्य को भी शारीरिक, मानसिक तथा भावनात्मक रूप से उथल-पुथल का सामना करना पड़ेगा ।

वस्तुतः अपनी पृथ्वी सौर मण्डल का एक हिस्सा है । सूर्य पृथ्वी पर न केवल जीवन चक्र चलाने के लिए जिम्मेदार है, वरन् समूचे धरातल की भौतिक संरचना में अपनी शक्तियों से दीर्घकालीन परिवर्तन लाने के लिए भी उत्तरदायी है । करोड़ों किलोमीटर की दूरी के बावजूद भी सूर्य और पृथ्वी का संबन्ध अन्यान्य ग्रह-गोलकों की अपेक्षा अत्यधिक घनिष्ठ है यही कारण है कि सूर्य मंडल की गतिविधियों में होने वाले परिवर्तनों का सीधा प्रभाव पृथ्वी पर पड़ता है और उसमें भू भौतिकीय परिवर्तन आते हैं । सौर सक्रियता के कारण भू भौतिकीय परिवर्तन और प्राणियों की जैव रासायनिक संरचना तथा व्यवहार में आने वाले उतार-चढ़ावों का आपस में भी गहरा सम्बंध है । इसी तरह सौर गतिविधियों और भूकंप का भी आपसी रिश्ता है ।

इस संदर्भ में कैलीफोर्निया-अमेरिका की सुविख्यात महिला जीवविज्ञानी मार्शा ऐडम्स ने गहन अनुसंधान किया है । उनका कहना है कि लगभग सभी जैविकीय एवं भौतिक परिवर्तन सौर गतिविधियों में उतार-चढ़ाव के कारण ही होते हैं । भूकंप एवं ज्वालामुखी विस्फोट से लेकर मौसम में विशेष परिवर्तन तक की भू-भौतिकीय प्रक्रियाएँ एवं हिंसात्माक गतिविधियों युद्धों, महामारियों से लेकर महाक्रान्तियाँ तक की घटनायें किसी न किसी तरीके से सौर हलचलों से जुड़ी हुई हैं । विभिन्न अस्पतालों में ११ हजार-रोगियों का गंभीरतापूर्वक निरीक्षण-परीक्षण करने के पश्चात् उसने निष्कर्ष निकाला है कि सौर धब्बों की अभिवृद्धि के दिनों में मनुष्य में कुछ विशेष शारीरिक, मानसिक एवं भावनात्मक लक्षण उभरते हैं । प्रायः सभी जैविक क्रियायें सौर हलचलों मे उत्पन्न तीव्रता के कारण अव्यवस्थित व अनियमित हो उठती हैं । यह भी पाया गया है कि उन्हीं दिनों भूंकप भी आते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उनका मत है कि जो सामर्थ्य या प्रेरक बल मनुष्यों में दैहिक या मानसिक भावनात्मक लक्षण या परिवर्तन उत्पन्न करते हैं, वही बल भूकंप उत्पन्न करने वाले कारकों को प्रेरित करते हैं और उन्हीं के कारण मानवेत्तर प्राणियों–पशु पक्षियों के व्यवहार में भी विलक्षणता उत्पन्न होती है। जो भूंकप आने के ठीक पहले या कुछ देर बाद उत्पन्न होती है।

जीवविज्ञानी मार्शा ऐडम्स के अनुसार यह सभी प्रेरक–बल सौर सक्रियता में तीव्रता उत्पन्न होने के कारण उल्लेखनीय रूप से प्रभावित होते हैं। सौर हलचलों की, जिसमें सनं स्पाट्स एवं सौर ज्वालायें भी सम्मिलित हैं। की तीव्रता न केवल भूंकप जैसी प्राकृतिक आपदाओं के लिए वरन् विलक्षण मौसम स्थिति, नियतकालिक बीमारियों, आगजनी, दंगे, राजनीतिक अस्थिरता, अपराधिक लहर आदि के लिए भी उत्तरदायी हैं। इस संबन्ध में उदाहरण प्रस्तुत करते हुए उसने कहा है कि अर्जेन्टीना व ब्रिटेन के मध्य फ़ाकलैण्ड द्वीप का विवाद सौर गतिविधियों में वृद्धि के बाद ही उभरा था। इसके अतिरिक्त रेल दुर्घटनायें, वायुयानों की दुर्घटनायें–परिवहन तथा समुद्रीयानों के एक्सीडेन्ट आदि के लिए भी सौर सक्रियता में अभिवृद्धि ही मुख्य कारण होते है। इसकी प्रभाव–प्रतिक्रिया मनुष्यों में कुछ दिनों बाद वयक्त होती है, जब कि भूकंप लगभग चार दिन बाद आते हैं। देखा गया है कि शल्यक्रिया के पश्चात् स्वास्थ्य लाभ कर रहे व्यक्तियों के कच्चे घावों से सौर हलचलों की तीव्रता के दिनों अनियमित रूप से रक्त स्राव होने लगता है। रक्त स्राव की यह अनियमितता सौर गतिविधि बढ़ने के कुछ देर बाद और भूकंप आने से कुछ पहले देखी गयी है। इतना ही नहीं कुछ रोगियों में भावनात्मक असंतुलन देखा गया तो कुछ को उलटी करते और रोग–निवारक औषधियों के प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए पाया गया है।

वैज्ञानिकों का कहना है कि सौर गतिविधियों में सबसे ज्यादा खतरनाक एवं शक्तिशाली 'सोलर फ्लेअर' अर्थात् सौर ज्वालायें होती हैं। जिह्वा के आकार के लपलपाते हुए यह विशालकाय उभार अपने भीतर दो करोड़ डिग्री कैल्विन से भी ज्यादा तापमान समेटे हुए होते हैं और १० से १०० अरब मेगाटन हाइड्रोजन बमों के बराबर ऊर्जा मुक्त करते हैं, जिससे किसी भी राष्ट्र को हजारों वर्ष तक बिजली आपूर्ति की जा सकती है। सूर्य धब्बों के चक्र, जसमें धब्बों की संख्या प्रत्येक ११ वें वर्ष में अधिकतम होती है, के साथ–साथ सौर ज्वालाओं में भी अभिवृद्धि होती जाती है। जिन दिनों सूर्य धब्बों की संख्या अधिकतम होती है, उन दिनों २–३ छोटी–छोटी सौर ज्वालायें या प्रदीप्ति प्रत्येक घंटे दीखती हैं, जब कि एक विशालकाय सौर ज्वाला प्रत्येक महीने दिखती है। लेकिन "सोलर मिनिमम"– अर्थात् कम से कम सूय धब्बों की स्थिति में कई सप्ताहों तक सौर प्रदीप्ति दिखायी नहीं पड़ते।

अनुसंधानकर्ताओं का कहना है कि जिस तरह पृथ्वी की सतह पर तेज हवायें चलती रहती हैं, उसी तरह से सूर्य की सतह पर भी सोलर विन्ड (सौर आँधी) चलती है, अन्तर केवल इतना ही होता है कि यह आँधी मात्र एक ही दिशा मे चलती हैं। सूर्य–धब्बों की तीव्रता के दिनों यह तूफ़ान सौर–मण्डल से पृथ्वी पर आ जाता है और पृथ्वी की चुम्बकीय स्थिति में भारी बदलाव लाता है। १५ लाख किलोमीटर प्रति घण्टे की रफ्तार से चलने वाले सूर्य कणों से युक्त इस तूफ़ान से पृथ्वी की भूचुम्बकीय स्थिति में जो परिवर्तन होता है, उसका प्रभाव प्राणि जगत एवं वनस्पति जगत पर तो पड़ता ही है, साथ ही उसका अत्यन्त हानिकारक प्रभाव इलेक्ट्रानिक मशीनरी, संचार माध्यमों, विद्युत–आपूर्ति करने वाले संयत्रों कृत्रित उपग्रहों. नाभिकीय संयत्रों आदि पर पड़ता है। इस संबन्ध मे टेनेसी स्थिति ओकेरिज नेशनल लेबोरेटरी के विशेषज्ञ द्वय पाडॅल बर्नेस तथा जेम्स वॉ डाइके ने पिछले दिनों १३ मार्च १९८९ को घटित घटनाओं का हवाला देते हुए कहा है कि है कि उस दिन सौर ज्वालायें विश्व इतिहास में अपने अब तक के प्रचंडतम् रूप में थीं। लाखों कि. मी. लम्बी इन ज्वालायें के कारण उत्पन्न सूर्य कणोंयुक्त तूफ़ानी हवाओं से फ़्लोरिडा के पास हाइड्रो क्यूबेक पावर–सिस्टम पूरी तरह फेल हो गया था। इन्हीं सूर्य–हवाओं के कारण न्यू–जर्सी स्थित एक नाभिकीय संयत्र के सारे ट्रांसफार्मर जल कर राख हो गये थें।

डेनमार्क के वैज्ञानिकों ने भी सूर्य के धब्बों की क्रियाशीलता और विश्वव्यापी तापमान में गहरा संबन्ध खोज निकाला है। उनका कहना है कि पृथ्वी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के इन दिनों अधिक गरम होने का कारण सूर्य–हलचलों की तीव्रता में आया उतार–चढ़ाव है । अगले दिनों सौर–गतिविधियाँ अधिक प्रचंड होंगी, जिससे न केवल भू–भौतिकीय परिवर्तन होंगे वरन मानवी चेतना भी प्रभावित होगी ।

अनुसंधानकर्ता वैज्ञानिक बताते हैं कि सूर्य वर्त्तमान में अपने अनुदान की तुलना में अभिशाप–वर्षी, अधिक कर रहा है । उनके अनुसार सौर–कलंकों की संख्या और प्रचण्डता आजकल जितनी उग्र व अधिक हुई है, उतनी पहले कदाचित् ही कभी रही हो । विशेषज्ञों के अध्ययनों से पता चला है कि सूर्य–धब्बों का अपना एक ग्यारह वर्षीय चक्र है । इसमें वे नियमित रूप से उगते और डूबते रहते हैं । इन धब्बों का धरती के पदार्थ और प्राणियों का सुनिश्चित प्रभाव पड़ता है । इस बात का उल्लेख वराहमिहिर ने अपनी पुस्तक "बृहत्संहिता " में विस्तारपूर्वक किया है । इसे आज के विज्ञान विशारद भी स्वीकार करते हैं । वे यह मानते हैं कि इन दिनों यहाँ के मौसम और पर्यावरण में जो आश्चर्यजनक परिवर्तन आया है, उसमें इस सौर–कलंकों का महत्वपूर्ण हाथ है । डॉ. ए. जी. पीयर्स ने अपनी पुस्तक "ए टैक्स्ट बुक ऑफ एस्ट्रोलॉजी" में लिखा है कि अनेक वर्षों के अध्ययन से यह ज्ञात हुआ है कि सौर–धब्बों की संख्या और गतिविधियाँ बढ़–घटने से वर्षा प्रभावित होती है । उनके अनुसार जब ये बढ़ते हैं तो अनावृष्टि की स्थिति पैदा होते देखी गई है और घटने पर अतिवृष्टि । पीयर्स के तथ्यान्वेषण का समर्थन इन दिनों की परिस्थितियाँ भी कर रही हैं । आजकल सूखे के कारण भुखमरी की जो विकट स्थिति विश्व के कुछ हिस्सों में पैदा हुई है, वह सर्वविदित है । विशेषकर सूडान एवं अन्य अफ्रीकी देशों में दशा अत्यन्त दयनीय है । लोग भूख के कारण या तो दम तोड़ रहे हैं अथवा अस्थिपिंजर बन कर जीवन की अंतिम साँसें गिनने पर विवश हैं । एरिजोना यूनिवर्सिटी के डगलस राइस ने इसी बात को वृक्ष–वलयों पर अध्ययन कर सिद्ध करने का प्रयास किया है । वे कहते हैं कि जिस भाग में वृक्ष–वलयो के बीच की दूरी कम हो, वह यह दर्शाता है कि उन दिनों पेड़ को सूखे का सामना करना पड़ा, जबकि परस्पर की दूरी अधिक होने पर इस बात की सुनिश्चितता होती है कि उस दौरान वनस्पतियों को पर्याप्त वर्षा–जल प्राप्त हुआ । उनके अनुसार वनस्पति वाक्यों का सीधा संबन्ध अनावृष्टि और अतिवृष्टि से है और बरसात (सूर्य का वरुण से गहन संबन्ध होने के कारण) सौर–कलंको से गहन तादात्म्य रखती है, अतएव रिंगों की पड़ताल के आधार पर सौर–गतिविधियों की जानकारी प्राप्त की जा सकती है और लगभग विगत तीन हजार वर्षों का मौसम संबन्धी अनुमान लगाया जा सकता है ।

पिछले दिनों तक सूर्य एवं दूसरे खगोलीय पिण्डों का प्राणी एवं वनस्पतियों पर प्रभाव ज्योतिषशास्त्र तक सीमित था तथा उसी का विषय माना जाता था, पर अब उस पर विज्ञान ने भी अपनी मुहर लगा दी है और यह स्वीकार कर लिया है कि उनका सुनिश्चित असर पदार्थ और प्राणियों पर पड़ता है । इसी आशय का मंतव्य प्रकट करते हुए मूर्धन्य वैज्ञानिक एवं "ब्रिटिश एसोसिएशन फार दि एडवान्समेण्ट ऑफ साइन्स" के सदस्य अरनाल्ड डब्ल्यू. मेयर अपनी कृति "एस्ट्रोलाजिज प्लेस इन दि वर्ल्ड ऑफ साइन्स" में लिखते हैं कि हमारे शरीर में जो अन्तःस्रावी ग्रन्थियाँ हैं, वह पर्यावरण में होने वाले रासायनिक परिवर्तनों के आधार पर स्वयं को समायोजित करती रहती हैं और छोटे–मोटे बदलावों से प्रायः अप्रभावित बनी रहती है, किन्तु जब कोई बड़ा परिवर्तन पर्यावरण में घटित होता है, तो वे प्रभावित हुए बिना नहीं रहती हैं । इनके प्रभावित होते ही व्यक्ति की इच्छा, आकांक्षा, भावना, संवेदना में भारी हेर–फेर दिखाई पड़ने लगता है । सौर–सक्रियता के दौरान चूँकि शरीर–विद्युत और पृथ्वी की चुम्बकीयता में बड़ी उथल–पुथल होने लगती है, अतःशरीर–ग्रन्थियों पर उसका निश्चित असर पड़ता है और व्यक्ति का व्यवहार असामान्य हो जाता है । विश्व के प्रख्यात भूगोलवेत्ता एवं येल यूनिवर्सिटी के प्रो. हण्टिंगटन भी दीर्घकाल के अपने अध्ययन के उपरान्त इसी निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि सौर धब्बों की अवधि में मानवी व्यवहार असामान्य हो जाता है ।

प्रख्यात भारतीय ज्योतिर्विद बी.वी रमण ने अपने ग्रन्थ "प्लैनेटरी इन्फ्लुएन्सेज ऑन ह्यमन अफेयर्स " में कुछ इसी प्रकार के विचार प्रकट किये हैं, वे उक्त पुस्तक के "प्लैनेट्स एण्ड मैन" नामक अध्याय में लिखते हैं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

कि सन् १७८६, १८३०, १८४८, १८७० की फ्रांसीसी क्रांति–१६०६ एवं १६१७ की रूसी क्रांति तथा १६३७ की स्पेन क्रांति तथा १६५६ में हंगरी को देशव्यापी उथल–पुथल को सौर–सक्रियता से जोड़ कर आधुनिक वैज्ञानिकों ने वस्तुतः कोई नया अन्वेषण नहीं किया, वरन् वर्षों पूर्व वराहमिहिर द्वारा स्थापित तथ्य की ही पुनरुक्ति की है । आज की परिस्थितियाँ भी वराहमिहिर के अनुसंधान की पुष्टि करती हैं ।वर्तमान में विश्वभर में जो भीषण मार–काट, उथल–पुथल और अराजकता मची है, उसे असाधारण और अभूतपूर्व ही कहा जा सकता है । ऐसी भंयकर स्थिति संपूर्ण धरा में पहले कभी रही हो, इसका कोई उदाहारण और प्रमाण इतिहास में नहीं मिलता ।

विज्ञानवेत्ताओं का यह भी कथन है कि इन दिनों सौर थब्बों की जो प्रचण्डता है, वैसी उग्रता पिछले समय में कभी रही हो, इसके भी साक्ष्य उपलब्ध रिकार्डो से प्राप्त नहीं होते । ऐसी स्थिति में यह सुनिश्चित जान पड़ता है कि बढ़ी–चढ़ी सौर–लपटों का पृथ्वी के जन–जीवन को अस्तव्यस्त और क्षतिग्रस्त करने में सीधा हाथ है ।

यह सूर्य का एक पहलू हुआ । इसके इस विनाशकारी पक्ष के कारण ही इसका नाम "मार्तण्ड" पड़ा । महर्षि गोबिल ने इसका अर्थ करते हुए कहा है कि मार्तण्ड वह है, जो ध्वंस से संलग्न हो । इस दृष्टि से सूर्य का उक्त नाम साथ है, किन्तु जो जगत की आत्मा हो, वह ऐसी विनाशलीलाएँ करे, यह बात गले नहीं उतरती और यदि यह सत्य है, तो इसके पीछे का तथ्य क्या हो सकता है? उत्तर विज्ञान का क्रिया–प्रतिक्रिया वाला सिद्वान्त देता है । उल्लेखनीय है कि पिछले दिनों तक और कुछ हद तक आज भी विज्ञान का बुद्धिवाद समस्त संसार को जड़ मानता रहा और किसी नियामक सत्ता एवं उसकी प्रतिक्रिया अथवा व्यवस्था से सर्वथा इनकार करता रहा है । एकेश्वरवादियों की तो यह दृढ़ मान्यता है कि इस प्रकृति को मनुष्यों के भोग–विलास के लिए ही भगवान ने विनिर्मित किया है बस फिर क्या था, "ऋणं कृत्वा घृतं पीवेत्" का लोकायत दर्शन चल पड़ा और जनमानस पर वह इस कदर छाया कि प्रकृति और संसाधनों का बेतरह दोहन आरंभ हो गया । क्रिया जब एक सीमा को पार कर गई, तो निसर्ग ने प्रतिक्रिया दिखानी आरंभ की । सूर्य समेत सभी ग्रह–नक्षत्र छेड़े गये भुजंग की तरह हुंकारने और फुसकारने लगे । दिनमान चूँकि सौरमंडल का सबसे समर्थ और धरती के समीप का तारा है, अतः अन्यों की तुलना में उसकी प्रतिक्रया भी अधिक दुर्द्धर्ष दिखाई पड़ी । प्रसिद्ध खगोलशास्त्री स्टीटसन के अनुसार आजकल सूर्य से पराबैंगनी किरणें पहले की तुलना में ३० प्रतिशत अधिक निःसृत हो रही हैं । वे कहते हैं कि इसका यह असाधारण परिमाण ही प्रस्तुत समय और समाज में व्यतिक्रम के लिए जिम्मेदार है । उनका कथन है कि यदि उक्त मात्रा में ५ प्रतिशत की भी कमी हो जाय, तो मनुष्य मौसम के व्यवहार में सुधार की काफी संभावना हो सकती है ।

यह तो वैज्ञानिकों का अनुमान है । अध्यात्मवादियों की दृष्टि में यह अनुमान मूर्तिमान तब तक नहीं हो सकता, जब तक चिन्तन और कर्तृत्व में बदलाव नहीं आ जाय । उनके अनुसार मनुष्य जब तक बुद्धिवाद और जड़वाद का पल्ला पकड़े रहेगा, तब तक उसे ऐसी ही विसंगतियों व विपदाओं का सामना करना पड़ेगा । उबार तो इनमें अध्यात्मवादी दृष्टिकोण ही सकता है । ज्ञातव्य है कि भारतीय संस्कृति में जड़ में भी चेतन की उपस्थित की अवधारण है । इस आधार पर प्राचीन समय में समस्त ग्रह–पिण्डों को देवता माना और पूजा जाता था । कालक्रम में विज्ञान का जैसे–जैसे विकास हुआ, उसने जनमानस की इस श्रद्धा को अंधभक्ति कहकर तोड़ दिया । चन्द्रमा, मंगल, बुध व बृहस्पति पर उसने अपने यान एवं उपग्रह भेजे और प्रकारान्तर से यही सिद्ध किया कि वे कोई देवता नहीं, वरन् वीरान और बंजर भूखण्ड मात्र हैं । आस्था टूटी, तो उन्हें उपास्य मानने की परम्परा भी धीरे–धीरे समाप्त होती हुई लुप्त हो गई । फलतः प्रतिदिन जो अर्घ्य और यजन की आहुतियाँ श्रद्धासिक्त हृदय से वे पाते थे, वह मिलने बन्द हो गये । परिणाम हमारे सामने है । जिन उपक्रमों से वातावरण पुष्ट और देवता तुष्ट होते थे, जब वे ही विहित माने जाने लगे, देवों से अनुदान की आशा कैसे की जाय ? स्थिति यहीं तक सीमित होती तो किसी कदर संतोष किया जा सकता था, किन्तु जड़वाद ने जनमानस की निष्ठा को इस हद तक नष्ट–भ्रष्ट किया कि प्रणेताओं और अनुयायियों की

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्वयं की बुद्धि भी जड़ हो गई । वे यह भूल गये कि तथाकथित जड़ भी एक सीमा तक ही छेड़छाड़ बरदाश्त करते हैं । इसके उपरान्त अपनी प्रतिक्रिया दिखाना प्रारंभ कर देते हैं । बस, इसी त्रुटि ने उन्हें प्रकृति से छेड़खानी के लिए प्रोत्साहित किया और आज वह चरमोत्कर्ष पर है । इसकी दुःखद परिणति भी निसर्ग के–खगोलीय पिण्डों के कोप के रूप में हमारे सम्मुख है । वे अब अनुदान की जगह अभिशाप बरसाते अधिक देखे जा रहे हैं । विशेषकर सूर्य के संबन्ध में विशेषज्ञों की यह मान्यता दृढ़ हुई है कि इन दिनों वह ज्यादा कुपित हो गया है ।

इन दिनों सूर्य में कुछ ऐसी प्रक्रियायें उभर रही हैं, जो घटना की दृष्टि से दूरवर्ती होने के कारण सामान्य कही जा सकती हैं, किन्तु उनकी परोक्ष प्रतिक्रिया ऐसी है जिससे जन–जीवन आसाधारण रूप से प्रभावित होता है । अनुसंधानकर्ता वैज्ञानिकों के अनुसार जब भी सूर्य पर इस तरह "सन स्पॉट्स' या कलंक–धब्बे उभरते हैं तो उसकी स्थिति असामान्य हो जाती है । उसके अन्तराल में भयंकर आँधी–तूफान उठते हैं और लाखों मील के दायरे में अग्नि ज्वालायें लपलपाती हैं तथा वैद्युतीय–चुम्बकीय तंरगों का निर्माण इतनी तीव्रता के साथ होता है कि उससे सारा सौर–मंडल प्रभावित हो उठता है । पृथ्वी और सूर्य के बीच आदान–प्रदान का विशिष्ट सूत्र संबन्ध जुड़ा हुआ है, इसलिए उस पर इस विषमता का प्रभाव भी अधिक पड़ता है । सामान्य स्थिति बदल जाती है और उत्पन्न विपन्नता ऐसे दृश्य और अदृश्य प्रभाव उत्पन्न करती हैं जिनसे हित कम और अहित अधिक होता है । ऋतुयें ठण्डी पड़ जाती हैं, भारी हिमपात होते हैं, आँधी, तूफान और चक्रवात आते हैं तथा वायुभार ऊचाँ हो जाता है । ओजोन पर्त में आक्सीजन के स्तर में कमी आ जाती है । सूर्य–कलंकों का उभरना भारतीय ज्योतिष शास्त्र में भी परिवर्तन का परिचायक माना गया है जो शुभ–अशुभ कुछ भी हो सकता है । इस संदर्भ में विज्ञान भी पूर्णता सहमत है ।

सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक अलेक्जेंडर मारशेक ने अपनी कृति "अर्थ एण्ड होराइजन" में लिखा है कि भले ही पृथ्वी पर घटने वाली घटनाओं का सूर्य के अन्तर्विग्रह से प्रत्यक्ष संबन्ध न जोड़ा जा सके, किन्तु सांख्यिकीय दृष्टि से उनका पृथ्वी से संबन्ध निर्विवाद सिद्ध हो गया है । पाया गया है कि जब–जब यह सौर सक्रियता बढ़ती है, वर्षा तथा तूफानों की बाढ़ आती है, वनस्पति में वृद्धि, ग्रीष्म की अभिवृद्धि के साथ–साथ कहीं–कहीं अकाल, सड़क दुर्घटनायें, वायुयान दुर्घटनायें, युद्ध तथा रक्तपात बढ़ता है । इस अवधि में न केवल भीषण भू–चुम्बकीय उत्पात अर्थात् भूकम्प, ज्वालामुखी विस्फोट होते हैं, वरन् मेरु प्रकाश की असामान्य दिव्य चमक भी देखने में आयी है । इसका भी हमारे जीवन पर प्रभाव पड़ता है । अमेरिका के मौसम विज्ञानी डॉ. वेक्सलर ने तो इन्हें मनुष्य के अन्तरंग जीवन में बड़े गहरे एवं विलक्षण स्तर के हस्तक्षेप की संज्ञा दी है ।

सूर्य में होने वाले परिवर्तनों का पृथ्वीवासियों पर क्या प्रभाव पड़ता है ? यह जानने के लिए रूस के मूर्धन्य वैज्ञानिक चिजोब्स्की ने विगत ४०० वर्षों के इतिहास और सूर्य की पिछली गतिविधियों का गहन अध्ययन किया है । उन्होंने निष्कर्ष निकाला है कि विविध प्रकार की महामारियों एवं क्रांतिकारी परिवर्तनों का सौर कलंकों–(सन स्पॉट्स) से गहरा संबन्ध है । यह एक वैज्ञानिक तथ्य है कि प्रत्येक ग्यारह वर्ष पश्चात इन ६ ाब्बों की संख्या बढ़ जाती है । जितनी अवधि तक यह धब्बे गहरे या उथले रहते है, उतनी अवधि तक उसी अनुपात से पृथ्वी पर हलके भारी परिवर्तन या उत्पात होते है । इसके अतिरिक्त सूर्य–कलंकों के कारण पृथ्वी का चुम्बकीय क्षेत्र भी लड़खड़ाने लगता है, रेडियों संचार में बाधा आती है तथा मौसम प्रभावित होता है । ख्याति प्राप्त वैज्ञानिक माइकेल्सन का तो यहाँ तक कहना है कि इन परिवर्तनों से पृथ्वी विशेष अवसरों पर फूलती और पिचकती भी है जिनसे भूकंप जैसे प्राकृति उपद्रव उठ खड़े होते है । प्रसिद्ध अमेरिकी वैज्ञानिक डॉ. एण्ड्रू. ई. डगलस के अनुसार इन सौर–कलंकों का प्रभाव न केवल मनुष्य एवं जीव–जन्तुओं पर पड़ता है, वरन् वृक्ष, वनस्पति भी इनसे प्रीभावित होते हैं, प्रति ग्यारह वर्ष पश्चात् वृक्षों में बनने वाली वार्षिक वलय (एन्युअलरिंग) कुछ मोटी हो जाती है । संभवतः ऐसा इसलिए होता है कि उन दिनों सूर्य धब्बों से उत्पन्न सूक्ष्म विकिरण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

से बचने के लिए प्रकृति उस वर्ष वृक्षों की खाल मोटी कर देती है ।

अमेरिकी परमाणु ऊर्जा आयोग की अलवुकर्क स्थित सांडिया लैबोरेटरी के वज्ञानिकों ने सौर प्रभावों पर गहन अनुसंधान किया है । उन्होंने अपराधों एवं दुर्घटनाओं से संबन्धित बीस वर्षों के आंकड़े एकत्रित किये और उनका अध्ययन किया, तदुपरान्त वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे है कि सौर–कलंक जब अपनी चरम स्थिति में होती हैं तो दुर्घटनायें एवं अपराध प्रायः छः गुना अधिक बढ़ जाते हैं । न्यूयार्क के डॉ. बेकर ने भी पाया है कि तीव्र सौर सक्रियता के दिनों में मानसिक रोगियों की संख्या में असाधारण रूप से वृद्धि होती है । इस संदर्भ में प्राचीन भारतीय ज्योतिर्विदों ने बहुत पहले ही यह खोज कर ली थी कि सूर्य–मंडल में होने वाले विस्फोटों का क्या स्वरूप है ? उनके क्या कारण हैं तथा पृथ्वी के चराचर पर उससे क्या प्रभाव पड़ता है । महर्षि गर्ग, पराशर, कश्यप, देवल, नारद तथा वशिष्ठ आदि ने इन विस्फोटों के बारे में चेतना के स्तर पर पर्याप्त अनुसंधान किया था ।

अन्तरिक्ष विज्ञानी इन दिनों सौर मंडल तथा उससे ऊपर की ब्रह्माडीय क्षेत्र का पर्यवेक्षण करने में निरत्त है । उनका कहना है कि वर्तमान सौर सक्रियता पृथ्वी के लिए संकटापन्न परिस्थितियाँ उत्पन्न करने वाली है । सभी जानते हैं कि पृथ्वी की अपनी स्वमं की जितनी शक्ति और संपदा है, उसे उससे कहीं अधिक अनुदान लेकर अपना गुजारा करना पड़ता है । सौर ऊर्जा उसका प्राण है और इसी से आबद्ध है धरती का जीवन, इस तथ्य को अति प्राचीनकाल से ही स्वीकार गया है । मिस्र में सिंचाई के समय एक त्यौहार प्राचीनकाल से मनाया जाता है । यह उस दिन मनाया जाता है जिस दिन जुलाई माह में नील नदी मे एकाएक बाढ़ ठीक उसी दिन आती है । जिस दिन सूर्योदय के ठीक समय लुब्धक नामक तार दिखाई देता है । इसका अर्थ हुआ कि नील नदी का परिवर्तन किसी न किसी तरह सौर प्रक्रिया से जुड़ा हुआ है ।

विज्ञानवेत्ताओं के अनुसर सूर्य स्फोटों का गतिचक्र प्रायः ११ वर्ष एक महीने एवं २२ वर्ष दो महीने में लौट–लौट कर वापस आता रहता है । फलस्वरूप उसी क्रम से कितनी ही उलट–फुलट धरती के वातावरण में भी होती रहती है । सौर कलंकों के समय सूर्य की चमक अचानक बहुत बढ़ जाती है जिसे सौर ज्वाला (सोलर फ्लेयर) कहते हैं, इसमे से कई प्रकार के कण धीमे एवं तेजगति से निकलते हैं । इन में से तीव्रगामी गणों की शक्ति अपरिमित होती है । ये कण ओजोन मंडल को पारकर पृथ्वी की सतह तक पहुँच जाते हैं और प्राणियों के तथा मानवी मस्तिष्क को प्रभावित करते हैं । देखा गया है कि जब सूर्य कलंक बढ़ते हैं और उनके कारण सौर ज्वालाओं से प्रक्षेपित होकर ऊर्जा कारण पृथ्वी पर जीवधारियों तक पहुँते हैं तो उनके मानस पटल पर असाधारण प्रभाव डालते हैं । इनके प्रभाव के कारण बड़े–बड़े व्यक्तियों तक की विचारधारायें प्रभावित होती और संसार में विभिन्न समस्यायें उभरती देखी गयी हैं ।

सूर्य कलंको की संख्या में जब भी अभिवृद्धि होती है तब न केवल व्यक्तिगत वरन् समष्टिगत मानव समाज की प्रवृतियों पर भी इन सौर परिवर्तनों का प्रभाव पड़ता है । अठरहवीं शताब्दी से अब तक के विश्व इतिहास की गवेषणाओं से यह तथ्य स्पष्ट होता है । कि महत्वपूर्ण ऐतिहासिक क्रांन्तियाँ, रक्तपात, हिंसक उपद्रव आदि घटनायें इन्हीं सौर कंलक के वर्षों में हुई हैं । अनुसंधानकर्ता वैज्ञानिकों ने यह विस्मयजनक तथ्य भी उजागर किया है कि इन सूर्य कलंक वर्षों का मानवजाति के विश्व इतिहस की घटनाओं से बहुत गहरा संबन्ध है । जिस वर्ष कलांकों–या–धब्बों की संख्या बढ़ जाती है उस वर्ष पृथ्वी पर जीवन असाधारण रूप से असामान्य हो उठता है । जब–जब ऐसा दौर आया है तब–तब संसार में बड़े–बड़े युद्ध, विश्वयुद्ध, और महान क्रांतियाँ हुई । सन् १७८९ में फ्रांस की प्रसिद्ध राज्य क्रांति, १८५७ में भारत का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम, १९०४–५ में रूस और जापान की लड़ाई, १९१४–१८ प्रथम विश्वयुद्ध, १९३९–४२ द्वितीय विश्व युद्ध, १९४७ भारती की स्वतंत्रता आदि इन्हीं सूर्य कलंकों के परम वर्षों में संपन्न हुई । इसके बाद सूर्य कलंक के तीन परम वर्ष क्रमशः १९५८. १९६९. और १९८०–८१ गुजर चुके हैं । इसी श्रृखंला का अब यह नया दौर ९२–९३ से आरंभ हुआ है और अगले दिनों जब कि सन् १९९५ और सन् १९९९में पूर्णसूर्य

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ग्रहण होने वाले हैं तब तक सौर धब्बों की यह सक्रियता निरंतर बनी रहने वाली है । यह प्रकोप अब तक के सभी स्फोटों से अधिक भंयकर होने का गणित लगाया गया है और कहा गया है कि बीसवीं सदी के अंतिम सात–आठ वर्ष मानव जाति के लिए अतीव कष्टकारक एवं परिवर्तनकारी हैं ।

अध्यात्मवेत्ता दिव्यदर्शियों का कहना है कि कालचक्र के अनुसार अगले दिनों बहुत अधिक तीव्र और शीघ्रातिशीघ्र परिवर्तन होंगे । किन्हीं अज्ञात कारणों से अगले दिनों नियमों को तोड़कर सूर्य पृथ्वी में परिवर्तन लायेगा । इसमें वृष्टि, अनावृष्टि, सूखा, अकाल, विश्व युद्ध, महामारियों के प्रकोप ही नहीं होंगे, वरन् महाक्रांतियों का नया दौर भी शुरू होगा और मानवी दुर्बुद्धि पर अंकुश लगेगा । सूर्य केवल भौतिक जगत का ही प्राण नहीं वरन् प्राणियों की प्राण चेतना का भी स्वामी है । ऋषियों ने उसे त्रयीविद्या कहा है अर्थात् उसमें स्थूल तत्व जिनसे शरीर बनते हैं, प्राण–जिनसे चेतना आती है, और मन जो चेष्टायें प्रदान करता है–तीनों तत्व विद्यमान हैं । गायत्री महामंत्र द्वारा उसी की शक्ति का संदोहन मानवी चेतनात्मक उत्कर्ष तथा समष्टिगत परिवर्तन के लिये पिछले कई वर्षों से किया जाता रहा है । इस प्रयोग को अगले दिनों और गतिशील किया जाना है ।

सौर स्फोट और उनका धरती पर प्रभाव

पृथ्वी और सूर्य की मध्यवर्ती आधार शृंखला का सभी को ज्ञान है । सूर्य के उदय होते ही प्राणियों की हलचलें आरम्भ होती हैं और उसके अस्त होते ही अन्धकार बढ़ने और आलस्य छाने लगता है । पशु–पक्षियों से लेकर मनुष्य तक सभी निद्रा के अंचल में पड़े हुए अर्धमृतक जैसी स्थिति में पड़े दृष्टिगोचर होते हैं । पेड़–पौधे स्तब्ध हो जाते हैं । फूल तब खिलते हैं जब दिन निकलता है । सूर्यमुखी का तो नाम ही इस आधार पर हुआ है कि उस का फूल सूर्य की ओर ही मुँह किए अपना रूख बदलता रहता है ।

सूर्य का प्रकाश पुरुषार्थ का बोधक है । रात्रि में तो निशाचर ही अपने दाव–धात लगाते रहते हैं । उत्पादन निर्माण से लेकर अन्यान्य सभी महत्वपूर्ण कार्यों का समय दिन ही है । सूर्य की उपस्थिति में ही प्राणियों द्वारा अपने पुरुषार्थ का प्रमाण प्रस्तुत किया जाता है । जब सूर्य पृथ्वी से दूर निकल जाता है, तो सर्दी बढ़ती है और लोग सिमटे ठिठुरे बैठे रहते हैं । गर्मी ही ऊर्जा है । ऊर्जा के बिना कोई यन्त्र या शरीर चल नहीं पाता । धरती पर जितनी कुछ ऊर्जा है उसे प्रकारान्तर से सूर्य का अनुग्रह अनुदान ही कहा जा सकता है । श्रुति में सूर्य को ही इस जगत की आत्मा कहा है ।

यह सामान्य जानकारी हुई । विशेष ज्ञातव्य यह हैं कि पृथ्वी के वातावरण पर सूर्य की स्थिति का भारी प्रभाव पड़ता है । जब सूर्य की स्थिति में थोड़ा भी अन्तर आता है तो उसका प्रभाव पृथ्वी के वातावरण पर पड़ता है और उन परिवर्तन से प्राणियों की, पदार्थों की स्थिति बुरी तरह प्रभावित होती है । इतना ही नहीं जीवधारियों की मनः स्थिति में भी भारी अन्तर उपस्थित होता है और वे कुछ के कुछ सोचने और कुछ से कुछ करने लगते हैं ।

इससे भी बड़ी बात यह है कि मनुष्यों के स्वाभाव ओर क्रिया–कलाप में कुछ ऐसे अन्तर आते हैं जिससे सामान्य लोक जीवन लड़खड़ाने लगता है और ऐसे विग्रह उपद्रव उठ खड़े होते हैं, जिनकी सामान्यतः कोई आवश्यकता नहीं थीं ।

प्रकृति प्रकोप के रूप में भी ऐसी अप्रत्याशित घटनाएँ घटित होती हैं, जिनसे मनुष्यों तथा इतर प्राणियों को बिना किसी अपराध के विपत्ति में फँसना पड़ता है । सूर्य की सामान्य स्थिति जहाँ संसार के लिए सुखद परिस्थितियों का निर्माण करती रहती है, वहाँ यह विचित्रता भी देखी गई है कि जब वह किसी कारणवश असामान्य स्थिति में–विपत्ति में होता है तो स्वयं ही बिक्षुब्ध नहीं होता वरन् अपने संकट मं अपने सम्पर्क क्षेत्र को धरातल के प्राणियों और पदार्थों को भी लपेट लेता है ।

विपत्ति सब पर आती है । सूर्य पर भी । आवश्यक नहीं कि संकटों का कारण जान बूझ कर किये गये कर्म ही हों । प्रारब्ध से लेकर दैवी प्रकोप भी इस सन्दर्भ में अपना काम करते हैं और आगत संकट को दैवी दुर्बिपाक मान कर ही सहन करना पड़ता है ।

सूर्य पर आने वाले संकटों से धर्म भीरु लोग ग्रहणों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

की गणना करते हैं, पर विज्ञानी उस पर उभरने वाले धब्बों को जिन्हें सामान्यतः स्पाट या कलंक कहा जाता है को एक विशिष्ट विक्षोभ मानते हैं और कहते हैं कि उस स्थिति में सूर्य की स्थिति अपने कलेवर के भीतर असाधारण हो जाती है और उसकी विद्रूपता डराबनी प्रतीत होती है। उसका भंयकर प्रभाव दूर-दूर तक सौर मण्डल के साथ जुड़े हुए समस्त ग्रह-उपग्रहों पर पड़ता है। पृथ्वी सूर्य पर सर्वाधिक निर्भर है। इस संकट में भी उसी को साझीदार भी होना पड़ता है। साझेदारी का सिद्धान्त ही यह है कि उसमें दुःख सुख में, हानि लाभ दोनों में ही समान रूप से भागीदार रहना पड़ता है। सूर्य की विपन्नता, पृथ्वी को कष्ट न दे, यह कैसे हो सकता है ?

सूर्य में धब्बे क्यों आते हैं ? उनमें उतार चढ़ाव क्यों आता है ? नियम अवधि के उपरान्त ही लौट-लौट कर वह कुचक्र नियमित रूप से क्यों आता है ? इन प्रश्नों का उत्तर खोजने में विज्ञान संलग्न है। अभी उसे उत्साहवर्धक सफलता नहीं मिली है अभी कल्पनाओं, परिकल्पनाओं का ऊहापोह ही चल रहा है। खण्डन प्रतिपादन की उलट-पुलट का क्रम अभी समाप्त होता नहीं दीखता। किसी सुनिश्चित तथ्य, निष्कर्ष तक पहुँचने का समय कभी आवेगा तो सही, पर अभी उसमें कुछ देर लगती प्रतीत होती है।

अब तक जो निश्चित रूप से जाना जा सका है, वह इतना ही है कि जब सूर्य पर धब्बे उभरते हैं तो उसकी स्थिति असाम्य हो जाती है। उसके अन्तराल में भयंकर आँधी तूफान उठते हैं और लाखों मील के दायरे में अग्नि ज्वालाएँ लपलपाती हैं। इसे बिस्फोट तो नहीं विक्षोभ कहने में कोई अत्युक्ति नहीं है। उस विषम स्थिति से सारा सौर मण्डल प्रभावित होता है। पृथ्वी के बीच आदान-प्रदान का विशिष्ट सूत्र सम्बन्ध जुड़ा हुआ है, इसलिए उस पर इस विषमता का प्रभाव भी अधिक पड़ता है। सामान्य स्थिति बदल जाती है और उत्पन्न विपन्नता ऐसे दृश्य और अदृश्य प्रभाव उत्पन्न करती है, जिनसे हित कम और अहित अधिक होता है। सूर्य कलंकों का उभरना भारतीय ज्योतिष शास्त्र में अशुभ माना गया है। इस सन्दर्भ में विज्ञान भी पूर्णतया सहमत है। अस्तु जब भी ऐसी स्थिति आती है तो सूक्ष्मदर्शी चिन्तित होते हैं और अपनी-अपनी बुद्धि के अनुसार आगत विपत्ति से बचने का उपाय भी करते हैं।

अलेक्जेंडर मारशेक ने अपनी पुस्तक, "अर्थ एण्ड होराइजन" के पृष्ठ १८५ में लिखा है कि भले ही पृथ्वी में घटने वाली घटनाओं का सूर्य के अन्तर्विग्रह से प्रत्यक्ष सम्बन्ध न जोड़ा जा सके किंतु साँख्यिकी दृष्टि से उनका पृथ्वी से सम्बन्ध निर्विवाद सिद्ध हो गया है। जब-जब यह सौर सक्रियता बढ़ती है वर्षा तथा तूफानों की बाढ़ आती है, वनस्पति में वृद्धि, ग्रीष्म की वृद्धि के साथ कहीं-कहीं अकाल, सड़क दुर्घटनायें, वायुयान दुर्घटनाएँ युद्ध तथा रक्तपात बढ़ता है। अमरीका के सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक एण्डू० ई० डगलस ने इनका सम्बन्ध पौधों की वृद्धि से भी बताया और सेक्वेइया नामक वृक्ष के वलय से गैलीलियों के समय के सूर्य कलंक का भी अध्ययन किया था और लिखा था कि सूर्य हमारी प्रकृति में इतना व्याप्त हो चुका है कि प्रत्येक कण से लाखों वर्ष पूर्व के इतिहस का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।

इस अवधि में न केवल भीषण भू चुम्बकीय उत्पात अर्थात् भूकम्प, ज्वालामुखी विस्फोट होते हैं अपितु मेरु प्रकाश की असामान्य दिव्य चमक भी देखने में आई है उसका भी कुछ प्रभाव मानव जीवन पर पड़ता है क्या ? वैज्ञानिक उसकी तत्परता-पूर्वक खोज करने में लगे हैं।

सोवियत सघं की जल-मौसम वैज्ञानिक संस्था ने दावा कि है कि सूर्य सक्रियता का उत्तरी व दक्षिणी दोनों ध्रुवों के जलवायु परिवर्तन तथा बर्फ की मात्रा से स्पष्ट सम्बन्ध है।

१९५२ की २४ फरवीर को सूर्य की सतह पर एक सामान्य विस्फोट देखा गया। पराबैंगनी किरणों की विराट् सेना पृथ्वी की ओर चल पड़ी। उसके पीछे कुछ ऐसे तत्व थे, जिनका अभी तक वैज्ञानिक विश्लेषण नहीं कर सके। अगले वर्षों में भू भौतिक-शास्त्री विशेष कर पूर्ण सूर्य ग्रहण के अवसरों पर विशेष अध्ययन की तैयारी कर रहे हैं। तब शायद वे कुछ अधिक ज्ञात कर सके। इसमें छोटे से विस्फोट के कारण ही ग्रीनलैंड, कनाडा, आलास्का, अटलाँटिक तथा बर्लिन में दो सप्ताह तक तूफानों का गतिचक्र तेजी से घूमता रहा। ऐसा

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ही १९५५ में हुए एक विस्फोट का अध्ययन अमेरिकी वैज्ञानिक डा० वाल्टर तथा राबर्ट्स ने किया और लिखा कि स्फोट से १३–वे दिन ऋतु परिवर्तन का क्रम सामान्य से असामान्य हो गया । रेडियों प्रसारण बन्द हो गये । तेज वर्षा, वायु उत्पति और बिजली कड़कने की आवाजें कई दिनों तक गूँजती और छोटी प्रलय के से दृश्य उपस्थित करती रहीं । तब से निरन्तर यह अध्ययन किया जा रहा है कि सूर्य के इन स्फोटजन्य प्रवाहों का पृथ्वी के प्राणियों के जीवन से क्या सम्बन्ध है ? प्रसिद्ध अमेरिकन मौसम वैज्ञानिक डा० वेक्सलर ने तो इन्हें मनुष्य के अंतरंग जीवन में अचानक और विलक्षण हस्तक्षेप की संज्ञा दी है और नियर्मित उत्सर्जित ऊर्जा के साथ इस असामान्य क्रिया के तुलनात्मक अध्ययन की आवश्यकता प्रतिपादित की है । हवा उन अदृश्य कणों का अवशोषण किस प्रकार करती और किस तरह असामान्य आचरण करने को विवश होती है, इस पर गम्भीर खोजें चल रही है ।

जब सौर कलंक उत्पन्न होते हैं तब पृथ्वी पर रेडियों व्यवहार में रुकावट पैदा होती है । इसका कारण सौर–कलंक के समय अग्निमशालों में से निकलने वाली प्रबल किरणें हैं । पृथ्वी से छूटने वाली रेड़ियों तरंगें अयन मण्डल से टकरा कर पृथ्वी की ओर लौट आती है । जिस दिन सूर्य पर बड़ा कलंक उभरता है उस समय सूर्य की अग्निमशालों से छटने वाला रेडियों विकिरण अयनमंडल को छिन्न–भिन्न कर देता है । मिनटों के भीतर ही यह आवरण छिन्न–भिन्न हो जाता है । और कभी–कभी लम्बे समय तक यह विलुप्त ही रहता है । सूर्य के धरातल पर सौर कलंक उत्पन्न होते ही वहाँ से रेडियों तरंगें छूटना आरम्भ हो जाती हैं और बाद में लम्बी तरंगें भी छूटने लगती हैं । सूर्य के कैरोना को वेध कर वह १६०० किलो–मीटर के वेग से दौड़ती है और २४ से २६ घण्टे के समय में पृथ्वी तक पहुँच जाती हैं । उसके पृथ्वी तक पहुँचते ही वहाँ की रेडियों तरंगें भिन्न–भिन्न लम्बाई की रहती हैं । कैरोना का जो स्तर सूर्य से अधिक दूर है उसमें उत्पन्न होने वाली रेडियों, तरंगों की लम्बाई भी ज्यादा रहती है ।

२३ फरवरी, १९५६ को रूस और अमेरिका की कुछ अन्तरिक्ष प्रयोगशलाओं में कास्मिक रेडियों बिकिरण में अचानक वृद्धि देखी गई । आयोनाउण्ड कैमरों तथा कणों की गणना करने वाले यन्त्रों से लैस दूरीबीनों की सहायता से कास्मिक किरणों में असाधारण वृद्धि देखी गई । फ्रीबर्ग तथा स्वीजलैंड के पर्वतीय स्टेशन में यह वृद्धि अचानक छह गुना हो गई और ४ घण्टे से भी अधिक समय तक बनी रही । इसक बाद धीरे–धीरे विकिरण घटने लगा । इसी प्रकार रोम में यह विकिरण तीन गुना बढ़ा । आस्ट्रिया में तो विकिरण इतना बढ़ा कि उसे मापने में कोई यन्त्र ही समर्थ नहीं हुआ । यह विकिरण सूर्य में उत्पन्न होने वाले धब्बों के कारण पृथ्वी के अयन मण्डल को बेध कर धरती तक आ पहुँचा था ।

सूर्य कलंकों के आस–पास वाले क्षेत्र में कलंक के दिनों सूर्य की चमक अचानक बहुत बढ़ जाती है । यह चमक सूर्य के अन्य स्थानों पर होने वाली चमक से अधिक होती है । यह चमक कुछ मिनटों से लेकर कई घण्टों तक की होती है । इस चमक को सौर ज्वाला कहते हैं, इसमें से कई प्रकार के कण धीमे एवं तेजगति से निकलते हैं ।

अब तक इनके वैज्ञानिक अध्ययन से पता चला है कि ये ज्वालाएँ चुम्बकीय क्षेत्र में गड़बड़ के कारण उत्पन्न होती हैं । इनके कारण रेडियों एवं टेलीविजन प्रसारणों में भी बाधा पड़ती है । इन ज्वालाओं से बड़ी तेज गति से निकलते हैं, उनकी शक्ति भी अपरिमित होती है और ये कण ओजोन मंडल को पार कर पृथ्वी की सतह तक पहुँच जाते हैं और उनके मस्तिष्क को प्रभावित करते हैं । यही कारण है कि देखा गया है कि जब सूर्य कलंक बढ़ते हैं और उनके कारण सौर ज्वालाओं से प्रक्षेपित होकर ऊर्जा कण पृथ्वी पर जीव–धारियों तक पहुँचते हैं, तो उन के मानस पटल पर असाधारण प्रभाव डालते हैं और इस कारण बड़े–बड़े व्यक्तियों तक की विचार धाराएँ प्रभावित होती हैं । इन कारणों से संसार में विभिन्न समस्याएँ पैदा होती हैं ।

ब्रिटिश खगोलज्ञ और सुप्रसिद्ध दूरबीन विशेषज्ञ सर बिलियम हर्शेल ने सूर्य की स्थिति का धरती पर पड़ने वाले प्रभावों का गहरा अध्ययन किया है और निष्कर्ष निकाला है कि वनस्पतियों के विकसित और फलित होने से लेकर प्राणियों के शरीर और मनुष्यों के मनःस्तर पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

सूर्य परिवर्तन का असाधरण प्रभाव पड़ता है । उसे देखते हुए यह प्रतीत होता है कि सूर्य से पृथ्वी के न केवल ऋतु परिवर्तन चक्र प्रभावित होते हैं, वरन् प्राणियों का शारीरिक और मानसिक स्तर भी उठता-गिरता है । उजवेकिस्तान (सोवियत रूस) के विज्ञानी-एन केनोसरिन ने सूर्य के धब्बों के साथ पृथ्वी पर दल-दल बढ़ने घटने की संगति बिठाई है । मास्कों के प्रो० शिझेब्की ने पता लगाया है कि धरती के इतिहास में जब जब सूर्य में तीव्र प्रति क्रियाएँ हुई हैं, तब तब हैजा, प्लेग, टाइफाइड, आदि बीमारियों का संसार में भारी प्रकोप हुआ है, उनके अनुसार सूर्य में होने वाले परिवर्तनो के कारण मनुष्य के स्वभाव में हेर-फेर होता रहता है ।

यह एक तथ्य है कि पृथ्वी पर उसके निवासी मनुष्यों, प्राणियाँ तथा वृक्ष-वनस्पतियों पर सौर मण्डल की उथल-पुथल का विशेष प्रभाव पड़ता है । उनमें से कुछ सामयिक होतो हैं तो कुछ का प्रभाव स्थायी रूप से लम्बे समय तक बना रहता है । उदाहरण के लिए समुद्र में उठने वाले ज्वार-भाटों का चन्द्रमा की घट-बढ़ के साथ तारतम्य बैठता है । इन्हीं दिनों लोगों की मानसिकता एवं स्वास्थ्य में विशेष परिवर्तन आँके जाते हैं । सूर्य मण्डल की हलचलों का प्रभाव सीमित न होकर व्यापक क्षेत्र को अपनी चपेट में लेता है । ज्योतिषियों के इस कथन में कोई दम नहीं कि जन्म-काल के समय की स्थिति के आधार पर मनुष्य का भाग्य और भविष्य बनता है, परन्तु यह सत्य है कि सौर प्रवाहों, अन्तर्ग्रही प्रभावों एवं ब्रह्माण्डीय बौछारों का वातावरण सहित समूचे मानव समुदाय पर प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता । यह सुखद एवं दुखद दोनों प्रकार का हो सकता है ।

बृहत संहिता में उल्लेख है कि सूर्य में होने वाले परिवर्तनों एवं अन्य ग्रहों के प्रभाव से मनुष्य का स्वास्थ्य एवं व्यवहार प्रभावित होता है । शास्त्रों में ग्रहण काल में कुछ खाने-पीने की मनाही इसीलिए की गई है कि उस अवधि में निस्सृत अवांछनीय ब्रह्माण्डीय किरणों से खाद्य पदार्थ दूषित हो उठते हैं और रोगोत्पति का निमित्त कारण बन सकते हैं । इन्फ्लुएंजा, प्लेग, कॉलरा जैसी महामारियों को उस अवधि में अधिक उग्र रूप धारण करते हुए देखा गया है ।

इस संदर्भ में येल यूनिवर्सिटी (अमेरिका) के सुविख्यात वैज्ञानिक प्रोफेसर हेटिंग्टन ने गंभीर खोजें की हैं और पाया है कि सौर मंडल में उत्पन्न हलचलों एवं बढ़ते सूर्य कलंकों से हमारी धरती सबसे अधिक प्रभावित होती है । उससे निस्सृत हानिकर किरणें पर्यावरण का संतुलन बिगाड़ती और प्राकृति सुरक्षा कवच तक को तोड़कर रख देती हैं । इनके कारण जीव-जन्तु एवं पेड़-पौधे तो प्रभावित होते ही हैं, बुद्धिमान समझे जाने वाले मानव समुदाय भी अवांछित प्रवाहों में बहते और आपदाग्रस्त होते हैं ।

खगोलशस्त्रियों एवं ज्यातिर्विज्ञानियों ने इसी शोधश्रृंखला में अपने अध्ययन निष्कर्षों, की अगली कड़ी और जोड़ते हुए कहा है कि सूर्य कलकों का सर्वाधिक सक्रियकाल में कभी-कभी मानवी मस्तिष्क युद्धोन्मादग्रस्त तक हो उठता है । लड़ाइयाँ छिड़ जाती हैं, गृह युद्ध भड़क उठते हैं । असाधारण राजनीतिक उथल-पुथल होते और महाक्रान्तियाँ फूट पड़ती हैं । कार्ल सांगा एवं जॉन नेल्सन जैसे प्रख्यात ज्योतिर्विदों का कहना है कि इतिहास प्रसिद्ध घटनाएँ प्रायः इन्हीं अवसरों पर घटित हुई हैं । उनके अनुसार सूर्य से निकलने वाला प्रचण्ड प्राण प्रवाह उसमें उठने वाले तूफानी प्रवाहों तथा बनने वाले धब्बों, सौर-कलंकों की बढ़ोत्तरी के साथ ही बढ़ जाता है ।

अमेरिका के "ट्री रिसर्च सेन्टर' के निर्देशक प्रो० डगलस ने लम्बे समय तक वृक्ष के तनों पर पड़ने वाले प्रतिवर्ष बतुंलों का अध्ययन किया । उनका कहना है कि "वृक्ष के बतुंलों में भूतकाल की घटनाओं का इतिहास अंकित है । टेप रिकार्डर की भांति वृक्ष सौर मण्डल के परिवर्तनों एवं अन्तर्ग्रही प्रभावों को ग्रहण करते हैं । "डगलस के अनुसार एक निश्चित अवधि के बाद घटनाओं की पुनरावृत्ति होती है । हर ग्यारहवें वर्ष वृक्षों में पड़ने वाले रिंग अन्य वर्षों की तुलना में बड़े होते हैं । इन वर्षों में सूर्य के ये धब्बे सर्वाधिक देखे जाते हैं । सूर्य पर आण्विक गतिविधियाँ सबसे अधिक होती हैं । खगोलवेत्ताओं का मत है कि हर ग्याहरवें वर्ष सूर्य में सक्रियता बढ़ जाने से आण्विक विस्फोट होता है जिसके कारण सूर्य से रेडियों विकिरण अधिक होता है । प्रो० डगलस का कहना है कि इन वर्षों में रेडियों विकिरण से अपनी सुरक्षा के लिए वृक्ष अपने तनों में मोटा रिंग बनाते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मौसम एक समय में विश्व के विभिन्न स्थानों पर भिन्न-भिन पाया जाता है । एक स्थान पर ठंड है तो उसी समय दूसरे स्थान पर गर्मी । प्रो० डगलस ने इस मान्यता के विपरीत एक नये तथ्य का रहस्योद्घाटन किया है । सम्पूर्ण पृथ्वी पर सूर्य के कारण भी एक विशिष्ट प्रकार का मौसम चलाता है जिसे हम नही पकड़ पाते किन्तु वृक्ष पकड़ लेते हैं । प्रति ग्यारहवें वर्ष सूर्य ध ाब्बों की बृद्धि से होने वाले परिवर्तनों को वृक्षों के सम्वेदनशील तन्तु पकड़ने में सक्षम होते हैं । ग्याहर वर्षीय चक्रों की भांति ही धब्बे के वर्षीय चक्र का भी पता लगा है । "इजिष्ट' के "तस्मान' नामक एक विद्वान ने नील नदी का चार हजार वर्ष का इतिहास लिखा है । चार हजार वर्ष पूर्व वहाँ के लोगों में यह विश्वास प्रचलित था कि नील नदी के पानी के साथ सूर्य की गतिविधियों का घना सम्बन्ध है । चार हजार वर्ष पूर्व वहाँ के सम्राट ने अपने देश के विद्वानों को आदेश दे रखा था कि नील नदी में घटने-बढ़ने वाले जल स्तर का पूरा-पूरा विवरण रिकार्ड करें । तब से लेकर अब तक नील नदी के पानी का रिकार्ड निरन्तर अंकित किया जाता रहा । इसका पूरा विवरण मिस्र के राष्ट्रीय रिकार्ड में क्रमबद्ध रूप से रखा गया है । उस इतिहास के अध ययन से पता चलता है कि प्रत्येक ६० वर्षों बाद सूर्य कलंकों में असामान्य रूप से वृद्धि होने से सूर्य में भयंकर विस्फोट होता है । विद्युत चुम्बकीय तूफान चलते हैं । रेडियों विकिरण बढ़ जाता है । पृथ्वी पर भंयकर भूचाल आते हैं । इन वर्षो में नील-नदी का जल स्तर या तो असाधारण रूप से बढ़ जाता है अथवा घट जाता है । इस घटना की पुनरावृत्ति हर ६० वर्षों के बाद होती है ।

माउण्ट विल्सन वेधशाला द्वारा पिछली शताब्दी में जो सूर्य कंलकों के चित्र लिये गये उससे एक नई जानकारी मिली कि कई सूर्य कलंक पृथ्वी के आकार से २० या २५ गुना तक बड़े थे । ये पूर्व से पश्चिम दिशा की ओर गति करते पाये गये । जब-जब इनकी संख्या में वृद्धि हुई है, तूफान और भू चुम्बकीय आँधियाँ अधिक आती हैं । वैज्ञानिक "जाफन एडी' का कथन है कि सूर्य कलंकों में क्रमिक परिवर्तन धरती के मौसम परिवर्तन का कारण बनते हैं । ग्लेशियर्स का बनना, पहाड़ों पर अधिक बर्फ का जमना आदि घटनाएँ सौर कलंकों से जुड़ी हुई हैं । डा० एडी के अनुसार गत ५० वर्षो में न केवल सूर्य धब्बों में वृद्धि हुई है वरन् हर ग्यारह वर्ष पर उभरने वोले इन धब्बों की संख्या और आकार में (एक हजार से लेकर इस हजार किलोमीटर लम्बी) भी बृद्धि हुई है । इस अभिवृद्धि से प्रकृति प्रकोपों में भी उत्तरोत्तर बढ़ोत्तरी हुई है ।

वैज्ञानिकों के अनुसार सूर्य कलंक के ११ वर्षीय और ६० वर्षीय चक्र के साथ महत्वपूर्ण घटनाएँ घटित होती हैं । पिछले एक दशक से तो सूर्य धब्बों की संख्या में निरन्तर अभिवृद्धि होती चली जा रही है, साथ ही युद्धों, प्रकृति विक्षोभों और विभीषिकाओं की संख्या भी बढती जा रही है । पिछले दशक के जिन वर्षों में सूर्य धब्बे अधिक देखें गये, उन वर्षों में भयंकर हिंसात्मक घटनाएँ युद्ध, बाढ़, सूखा, विश्व के मूर्धन्य महापुरुषों की दुःखद परिस्थितियों में मृत्यु आदि की घटनाएँ अधिक हुई । जिस वर्षों में सूर्य धब्बे सबसे कम देखे गये उन में विश्व शन्ति एवं स्थिरता बनी रही । पिछले दशक का अध्ययन इसी तथ्य पर प्रकाश डालता है ।

सन् १९६८ में सूर्य धब्बों की सक्रियता बढ़ने लगी । उसी वर्ष भारत-पाक युद्ध आरम्भ हो गया । विश्व शान्ति प्रयासों के प्रबल समर्थक "मार्टिन' लूथर किंग की हत्या रंगभेद के कारण कर दी गई । सोवियत रूस ने चेकोस्लाविया के बड़े भाग पर आधिपत्य कर लिया ।

१९६९ में भी सूर्य धब्बे अधिक देखें गये । उस वर्ष फ्रान्स के सिक्के फैंक का अबमूल्यन १२ प्रतिशत से भी अधिक हो गया । फ्रान्स के प्रमुख चार्ल्स डीगल की मृत्यु हो गई । मिस्र के गमाल अब्दुल नासर की मृत्यु से देश पर वज्रपात हो गया । पूर्वी पाकिस्तान (आज बंगला देश) में भयंकर चक्रवात आये जिसमें दस लाख से भी अधिक व्यक्ति अकाल मृत्यु के गर्भ में समा गये ।

सन् १९७१ में सूर्य धब्बे कम देखे गये । इस वर्ष नये बंगला देश का उदय हुआ । सन् १९७२ में भी सौर कलंकों में कमी रही । फलतः विश्व शान्ति के लिए अनेकों प्रकार के प्रयास किए गये । अमेरिकी राष्ट्रपति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

ने मैक्सिको की यात्रा इसी प्रयोजन के लिए की । पाकिस्तानी तानाशाह भुट्टो ने बंगला देश के राजनेता मुजीबुर्रहमान को लम्बी कैद के बाद बिना किसी शर्त के उन्हें मुक्त कर दिया । वर्ष १९७३, १९७४ और १९७५ में भी सूर्य धब्बे कम दिखाई पड़े । फलतः विश्व की स्थिति उतनी तनावपूर्ण न रही । सन् १९७५ में भारत और पाकिस्तान के बीच व्यापार समझौता हुआ । ईराक और ईरान ने सीमान्त प्रदेशों के झगड़ों को सुलझाने के लिए समझौते पर हस्ताक्षर किए । मोजम्बिक देश पुर्तगालियों की ५०० वर्ष की दासता से मुक्त हुआ । अमेरिका और रूस के अन्तरिक्ष यात्रियों ने अन्तरिक्ष में परस्पर यान परिवर्तन करके आपसी सौहार्द्र का परिचय दिया । इजरायल ने मिस्र से समझौता करके माउण्ट सिनाई से अपनी सेना वापस बुला ली । यह शान्तियुक्त परिस्थितियाँ १९७७ तक बनी रहीं ।

सन् १९७७ के बाद पुनः तीव्रगति से सूर्य धब्बों में वृद्धि होने लगी । इसी वर्ष ईरान में भयंकर भूकम्प आया । हजारो व्यक्ति उसकी चपेट में आकर मारे गये । पाकिस्तान में गृह युद्ध छिड़ने से भयंकर रक्तपात हुआ । सत्ता की बागडोर जनरल जिया ने सम्भाली, भुट्टों की गिरफ्तारी हुई । देशद्रोह के अभियोग में उन्हें मृत्यु की सजा दी गई । बंगला देश के एक विद्रोह में मुजीबुर्रहमान की परिवार सहित हत्या कर दी गई । अन्य पाँच सौ व्यक्ति भी मारे ही गये ।

सन् १९७८ की घटनाएँ और भी अधिक तबाही उत्पन्न करने वाली हुई । भयंकर बाढ़ से यमुना का पानी अब तक के सभी रिकार्डों को तोड़कर दिल्ली को तबाह कर गया । जनशक्ति और धन शक्ति की भारी क्षति हुई । पश्चिम बंगाल में भी भयंकर बाढ़ आई । भारत में यह वर्ष भारी राजनैतिक उथल-पुथल का रहा । अफगानिस्तान वोलीविया, मौरीटेनिया, कांमोरोद्वीप समूह, दक्षिणी यमन आदि देशों में युद्ध छिड़े । पोपपाल-६ की मृत्यु हो गयी । उनके स्थान पर नियुक्त दूसरे पोष की भी मृत्यु मात्र २० दिनों बाद ही हो गई । ग्बाना द्वीप समूह में धार्मिक अन्ध विश्वास के कारण ९०० से भी अधिक व्यक्तियों ने सामूहिक आत्म-हत्या करके ली । इजराइल की प्रथम महिला प्रधानमंत्री गोल्डामेयर की मृत्यु हो जाने से इजराइल और मिस्र के बीच समझौता न हो सका । सन् १९७९ में सूर्य धब्बे और अधिक संख्या में देखे गये । ईरान में स्थित अमेरिकी दूतावास पर संकट छा गया । ईरानियों ने अमेरिकियों को बन्धक बना लिया । फलतः दोनों देशों के बीच तनाव बढ़ाता ही गया । अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों पर भी इस घटना का गहरा प्रभाव पड़ा । रूस ने अफगानिस्तान में अपना सैनिक अड्डा जमा लिया । ईरान और इराक के बीच समझौता टूट गया और सीमान्त झगड़े प्रारम्भ हो गये । ईरान के शाह को राजगद्दी से हटा दिया गया । देश में क्रान्ति हुई जिसमें असंख्यों व्यक्ति मारे गये । भारत में नेय रोग "ब्रेन फीबर' (मस्तिष्कीय ज्वर) से हजारों व्यक्तियों की मृत्यु हुई । विभिन्न वस्तुओं के भावों में तीव्र वृद्धि हुई ।

वैज्ञानिकों का कहना है कि सूर्य कलांकों में हर वर्ष निरन्तर वृद्धि हो रही है । फलतः प्रकृति विक्षोभ और आपसी तनाव बढ़ते जा रहे हैं । सूर्य का सीधा सम्बन्ध जीवन से है । पृथ्वी पर प्राणियों की जीवन ऊर्जा का स्रोत है वह वैज्ञानिकों के अध्ययन निष्कर्षो के दौरान यह विस्मयजनक तथ्य सामने आया है कि इन सूर्य कलं वर्षों का मानव जाति के विश्व इतिहास की घटनाओं से बहुत गहरा सम्बन्ध है । जिस वर्ष कलंकों की संख्या बढ़ जाती है उस वर्ष पृथ्वी पर जीवन असाधारण रूप से असामान हो उठता है । विश्व इतिहास की महत्वपूर्ण घटनाएँ इन्हीं कलंक वर्षों में घटित होती रही हैं । जब-जब सूर्य पर कलंकों की संख्या बहुत ज्यादा बढ़ कई तब-तब संसार में बड़े-बड़े युद्ध, विश्व युद्ध और महान क्रांतियाँ हुई ।

सन् १९८९ में फ्रांस की प्रसिद्ध राज्य क्रान्ति हुई जिसने विश्व इतिहास को नया मोड़ दिया । इस समय सूर्य कलंक अपने चरम वर्ष में थे । सन् १८१५ में ट्रैफलगर और सन् १८१५ में वाटरलू की लड़ाइयों हुई । इतिहास के जानकार जानते हैं कि इन लड़ाइयों ने यूरोपीय इतिहास को एक नया मोड़ दिया ।

सन् १८५७ में भारतीय स्वाधीनता संग्राम लड़ा गया उस वर्ष भी सूर्य पर कलंकें की संख्या बहुत बड़ गई थी । यह कोई आवश्यक नहीं कलंक वर्ष बाद ही उत्पन्न होते हों और बीच में नहीं, ११ वर्ष बाद तो इन कलंकों की संख्या बढ़ती ही है बीच की अवधि में कभी भी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यें बढ़ और रुक सकते हैं । १८६१ से १८६५ तक अमेरिका में चला युद्ध इन्हीं कलंकों की वृद्धि के वर्षों में चला । सन् १८७० में फ्रांस और जर्मनी के बीच हुआ भयंकर युद्ध और उन्हीं दिनों फ्रांस के नेपोलियन तृतीय की हुई गिरफ्तारी, १६०४–५ में रूस और जापान के बीच हुआ युद्ध आदि लड़ाईयाँ जिन दिनों लड़ी गयी, उन दिनों सूर्य कलंक अपनी चरम स्थिति में थे ।

सन् १६१४ से १८ तक हुए प्रथम विश्व युद्ध के दिनों में सूर्य के कलंक अपनी चरम संख्या थे । स्मरणीय है, कि इन्ही दिनों प्रथम युद्ध के साथ–साथ रूस में भी लेनिन के नेतृत्व में साम्यवादी क्रांति हुई । सन् १६३६ से ४५ तक का समय विश्व इतिहास में फिर उथल–पुथल मचाने वाला बना । दूसरा विश्व युद्ध इन्हीं दिनों आरम्भ हुआ और सूर्य कलंकों का चक्र दिनोंदिन तीव्र होता जा रहा था ।

सन् १६४७ में सूर्य कलंकों की संख्या करीब १६० थी । उस वर्ष भारत को स्वतन्त्रता मिली, चीन में भी इन्हीं दिनों जन क्रांति हुई । सूर्य कलंकों की यह संख्या सन् १७५० से तब तक हुई कलंकों की संख्या में सबसे ज्यादा थी ।

आज से ३७० वर्ष पूर्व अन्तरिक्ष विज्ञानी गैलीलियों ने इस सौर सक्रियता का प्रत्यक्ष दर्शन और प्रतिपादन सन् १६१०–११ में किया था । इसके बाद यह प्रचण्डता १६४७ में आरम्भ हुई और उसने अन्तरिक्ष के ६,३००००००० वर्ग मील अर्थात् पृथ्वी के आकार से लगभग १०० गुने क्षेत्र को प्रभावित किया । इस मध्य सौर ज्वालाएँ ढाई लाख मील ऊँची उठती और उतनी ऊँचाई तक मात्र ३० मिनट में पहुँचती देखी गई । इसका प्रभाव तब से लेकर अब तक धीरे–धीरे ही कम होता आया है, कुछ तो अभी भी बना हुआ है ।

हार्वर्ड विश्वविद्याल (अमेरिका) के सुप्रसिद्ध खगोल विज्ञानी डा. राबर्ट नोयस ने अपने अनुसंधान निष्कर्ष में बताया है कि सूर्य के केन्द्र से असंख्य शक्तियों की धाराएँ सतत् प्रवाहित होती रहती है । जब कभी उनकी बहुलता हो जाती है, तो उस वक्त पृथ्वी पर अनेकानेक परिवर्तन परिलक्षित होते हैं । इन परिवर्तनों में ध्वंस और सृजन दोनों ही सम्मिलित होते हैं । उनके अनुसार सौर मंडल में होने वाले परिवर्तनों से धरती के आयन मण्डल का सीधा सम्बन्ध होने के कारण उसमें भी भारी उथल–पुथल होने लगती है । फलतः मानवी मस्तिष्क भी असाधारण सीमा तक प्रभावित होते हैं । अपने वर्षों के अनुसंधान अध्ययन के आधार पर उसने बताया है कि सन् १६६० के जून माह से लेकर सन् २००० तक सौर सक्रियता अपनी चरम सीमा पर होगी । इस मध्य पृथ्वी पर वातावरण एवं मौसम सम्बन्धी अनेकों परिवर्तन तो होगें ही, आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक महाक्रान्तियों जैसे ऐतिहासिक महापरितर्वन भी होगे । सूर्य की प्रचण्ड शक्ति अपने प्रबल प्रवाह से सब कुछ उलट पुलट कर रख देगी ।

सविता देवता की भारतीय आध्यात्म में बड़ी महत्ता बतायी गयी है । गायत्री मंत्र सविता की उपासना का ब्रह्मतेजस् के अभिवर्धन का, सौर ऊर्जा के आध्यात्मिक अंश को ग्रहण करने की प्रेरणा देन वाला मंत्र है । अगले दिनों सूर्य मण्डल में भारी उथल पुथल की संभवना है, ऐसे में सविता साधना का आश्रय लेना चाहिए ।

भूगोल बदल रहा है तो इतिहास भी बदलेगा

सिडनी विश्व विद्यालय के प्रोफेसर श्री एस० टी० बटलर ने जुलाई ६७ में घोषणा की थी कि इकारस नाम का क्षुद्र ग्रह पृथ्वी की ओर बढ़ रहा है । जून १६६८ में उसके पृथ्वी के टकरा जाने की सम्भावना थी । अनुमान था कि यदि इकारस किसी ध्रुव प्रदेश से टकरा गया तो सारी पृथ्वी में बर्फीले तूफान आ जायेंगे । समुद्र उफन उठेगा । विनाश लीला खड़ी हो जायेगी । लाखों लोग अकाल मृत्यु के गाल में चले जावेंगे ।

समुद्र–तल से टकराने में जल प्रलय और किसी विषुवत रेखीय प्रान्त से टकराने पर पृथ्वी फट तक सकती थी । सौभाग्य से इकारस पृथ्वी के समीप होकर गुजर गया । पृथ्वी वासी एक भयंकर प्रलय से बच गये । इसे परमात्मा का अनुग्रह ही समझना चाहिये ।

इस घटना के तुरन्त बाद ही घोषणा की गई कि इकारस पृथ्वी के समीप से गुजर गया है, अभी उसका

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अंत नहीं हो गया । अभी सौर मंडल में ऐसे कई क्षुद्र ग्रह चक्कर काट रहे हैं, इनमें से कोई भी ग्रह किसी भी समय धरती से टकरा कर, यहाँ विचित्र हलचल उत्पन्न कर सकता है ।

ऐसे प्राकृतिक परितर्वन सृष्टि के आरम्भ काल से होते आये हैं । जब–जब ऐसे विस्फोट हुये हैं और पृथ्वी के धरातल में हलचल हुई है, तब–तब मानव–जाति का इतिहास करवट बदलता रहा है । जब तक प्राकृतिक प्रकोपों से लोग बचते रहते हैं, तब तक लौकिक बुद्धि, स्वार्थ, अहंकार, तृष्णा, वासना की वद्धि होती रहती है पर जब प्रकृति के झटके लगते हैं, मनुष्य को शारीरिक, मानसिक, दैविक दण्ड भुगतना पड़ता है, तब–तब उसकी बुद्धि सही दिशा में न्याय, ईमानदारी, नैतिकता से काम करने को विवश होती रही है । अब जब मनुष्य की स्वेच्छाचारिता, अनैतिकता, अपराध वृत्ति, पाप आदि बहुत आधिक बढ़ गये हैं तो कोई आश्चर्य नहीं, यदि प्रकृति उसे अपनी मार–काट, प्रलय–तूफान द्वारा मनुष्य को पीट–पीटकर ठीक करें । यदि मनुष्य पहले ही अपनी गतिविधियाँ दुरुस्त कर ले तो संभव है प्रकृति अपना कोप कुछ कम कर दे और हल्के झटके से छुटकारा मिल जाये ।

धरती का भाग्य उत्तर लोक और ग्रहों से कितना सम्बद्ध है, इस सम्बन्ध में अब पाश्चात्य वैज्ञानिक भी भारतीय दावों की पुष्टि करने लगे हैं । आस्ट्रिया के वैज्ञानिक ने डा० हैरल्ड श्वाइत्जर के नेतृत्व में यह पता लगाया है कि सूर्य–ग्रहण का मनुष्य मस्तिष्क पर बड़ा प्रभाव पड़ता है, उनका कहना है कि पूर्ण सूर्य–ग्रहण के अवसर पर कीट पतंगे तक अपना विवके खो बैठते हैं और वैसा ही आचरण करने लगते हैं, जैसे आदिम जाति के अन्ध–विश्वासी लोग । सूर्य–ग्रहण के समय देखा गया कि चींटियों ने आधा घण्टे पहले ही भोजन की तलाश बन्द कर दी और इधर–उधर निरुदेश्य घुमती रहीं ।

दिन में बाहर न निकलने वाले सैकड़ों वुड लाइस, मिली पीडस और बीटल्स नामक कीट–पतंगे बाहर निकल आये। चिड़ियों को दिशा ज्ञान नहीं रहा । गौरैया, नीलकण्ठ और ऐसी ही कुछ चिड़ियाओं को छोड़कर शेष ने चहकना भी बन्द कर दिया । इससे साबित होता है कि प्रकृति के हर परिवर्तन की धरती निवासी प्राणधारियों पर प्रतिक्रिया होती है और उस प्रभाव से मनुष्य भी बच नहीं सकता ।

ग्रह स्थिति को उपासना और सात्विक जीवन–क्रम अपनाकर अनुकूल और लाभदायक भी बनाया जा सकता है, इसका प्रमाण अमेरिकी वैज्ञानिक दे रहे हैं । सूर्य–मंडल में हो रहे परिवर्तनों की वहाँ तेजी से जाँच हो रही है, देखा गया है कि सूर्य में कुछ किरणें बिखण्डित हो रही है, वह तेज चमक उठती है । उसका प्रभाव अगले वर्षो में पृथ्वी पर उड़ने वाले जहाजों पर पड़ेगा । आश्चर्यजनक खोज यह है कि सूर्य से एक प्रकार की प्रकाश पूर्ण आँधी पृथ्वी की ओर वेग से चल पड़ी है । अमरीकी वैज्ञानिकों का कहना है कि इस आँधी की दिशा एशिया के किसी देश–सम्भवतः ठीक भारतवर्ष की ओर चल रही है । जब वह पूरी तरह भारतवर्ष से सम्बन्ध स्थापित कर लेगी तो यहाँ तीव्र परिवर्तन होंगे ।

इस समाचार पर भारतीय भूगोल विज्ञान वेत्ताओं की टिप्पणी सुनने और समझने योग्य है । उनका विश्वास है कि "भारतवर्ष में गायत्री उपासना की वृद्धि हो रही है । गायत्री मन्त्र और उपासना का सीधा सम्बन्ध सूर्य से है । सविता को गायत्री का देवता (फल देने वाला) कहा गया है । आगे लाखों, करोड़ों की संख्या में उपासक बढेंगे तब सूर्य–मंडल का और भी तीव्र मंथन होगा और उसकी भारतवर्ष में तीव्र प्रतिक्रिया परिलक्षित होगी । आसुरी स्वभाव वालों के लिये यह प्रतिक्रिया प्रतिकूल बैठेगी, अर्थात् उन्हें रोग–शोक, सामाजिक अपमान और राजदण्ड का भागी बनना पड़ेगा पर शुद्ध और पवित्र आचरण वाले व्यक्ति उससे लाभान्वित होंगे । उन्हें सुख–सम्पत्ति धनधान्य की कोई कमी नहीं रहेगी । जलवायु, समुद्र, आकाश पृथ्वी सब यहाँ के लिए शुभ, लाभदायक होंगे ।"

हमारी मान्यतायें इससे भी अधिक हैं, अर्थात् तब यहाँ अनेक तेजस्वी आत्मायें जन्म लेंगी, वह कृषि–विज्ञान, साइन्स, राजनीति, अर्थनीति, वाणिज्य, कला–संस्कृति के क्षेत्र में सम्पूर्ण विश्व का मार्ग–दर्शन और नेतृत्व करेंगी ।

यह परिवर्तन अपने अनादि क्रम में चल रहे हैं अर्थात् यदि कोई इन परिवर्तनों को स्वीकार करने की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इच्छा न भी करे तो भी यह परिवर्तन बलात् होंगे, क्योंकि वह किसी आद्य शक्ति के सनातन नियम हैं । फिर अतीतकाल में आज की अपेक्षा पृथ्वी कहीं अधिक वेग से घूमती थी । अनुमान है कि तब दिन और रात का चक्र १० घंटे में ही पूरा हो जाता । पृथ्वी की आयु लगभग ४ अरब वर्ष हो चुकी हैं, इतनी अवधि में १४ घन्टे का अन्तर पड़ गया हैं । इसका कारण सूर्य और चन्द्रमा के आकर्षण के कारण समुद्र-तल में उठने वाला ज्वार-भाटा है । जब यह समुद्रीय ज्वार-भाटे महाद्वीपों के तट से टकराते हैं, तब घर्षण, अवरोध उत्पन्न होता है । इस घर्षण से पृथ्वी के घूमने से उत्पन्न हो रही शक्ति का कुछ अंश गर्मी में बदल जाता है । गर्मी कम होती है तो हर वस्तु में आलस्य और शिथिलता आती है । पृथ्वी के वेग में इसी कारण निरंतर ह्रास होता चला रहा है ।

अब इस परिवर्तन का आसुरी और शुद्ध आचरण वाले व्यक्तियों पर क्या मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ेगा, यह भी समझा जा सकता है । पृथ्वी के इस आलस्य का प्रभाव उन पर पड़ेगा, जो उसकी "तन्मात्रा' के समीप अर्थात् पार्थिव सुखों का अधिक ध्यान करने वाले होंगे । जिन्हें केवल अपने सुख, स्वाद, इन्द्रिय-लिप्सा का ही ध्यान रहता है, वह इस कोटि में आते हैं पर जिन पर आकाश तत्व अर्थात् सबके कल्याण में चिन्तन का भाव, त्याग और उदारता, संयम और आस्तिकता का भाव होगा, वह ऊर्ध्व लोकों की हलचलों से प्रकाश और गर्मी पाते रहेंगे, इसलिये उनकी उन्नति सम्भव होगी और पहली प्रकार के व्यक्तियों की अवनति । इस सिद्धान्त के अन्वेषक श्री ई० आर० आर० होल्मवर्ग का भी ऐसा विश्वास है कि भविष्य में दिन-रात के घन्टों की संख्या २४ से बढ़ जायेगी । हमारी घड़ियों का ज्ञान छोटा हो जायेगा, जब मनुष्य समाज पर कई तरह के परिवर्तन परिलक्षित होंगे ।

यह परिवर्तन ऐसे हैं जिनका सम्बन्ध पृथ्वी और सौर मंडल के अन्य शक्तिशाली ग्रहों के परिवर्तनों से है । हमारी धरती में ही अनेक तीव्र परिवर्तन हो रहे हैं । इन भौगोलिक परिवर्तनों का मानवीय सभ्यता के इतिहास में जबर्दस्त परिवर्तन होने वाला है, उसका अनुमान हम लोग नहीं लगा पा रहे हैं ।

सन् १९६६ में मास्को में द्वितीय अन्तर्राष्ट्रीय सागर वैज्ञानिकों का सम्मेलन बुलाया गया उसमें प्रायः सभी देशों के वैज्ञानिकों ने समुद्र से सम्बन्ध रखने वाली भविष्यवाणियाँ और अनुसन्धान प्रस्तुत किये । इसी सम्मेलन में लेमंट भूगर्भ अनुसन्धान शाला के प्रोफेसर डा० ब्रूस सी० हीजेन व डा० नील उपडाइक ने एक रोमांचकारी घोषणा प्रसारित की । उन्होंने कहा आज से लगभग २०३२ वर्ष बाद पृथ्वी के चुम्बकीय बलक्षेत्र अपना स्थान बदल देंगे । इस अवधि मे उसकी चुम्बकीय शक्ति नष्ट हो जायेगी और तब मनुष्य की आकृति अब के मनुष्यों की आकृति से बिल कुल भिन्न हो जायेगी । लोगों की लम्बाई अब की अपेक्षा डयोढ़ी कम या ज्यादा भी हो सकती है । आज से ४००० वर्ष पूर्व मनुष्य की स्थिति के बारे में उन्होंने भारतीय मान्यताओं की पुष्टि की और बताया कि उस समय पृथ्वी में रहने वाला मनुष्य आज के मानव से बिल्कुल भिन्न रहा होगा ।

डा० हीजेन और डा० नील उपडाइक ने यह भी बताया कि पृथ्वी की चुम्बकीय शक्ति के ह्रास का मुनष्य ही नहीं वृक्ष-वनस्पति, कीट-पतंगों पर भी प्रभाव पड़ेगा । इनमें भी असाधारण परिवर्तन होंगे । कई जीव-जन्तु मनुष्य की भाषा बोल सकेंगे । कुछ वृक्षों की ऊँचाई अब की अपेक्षा बहुत बढ़ जायेगी, कुछ वृक्षों का चौड़ाव बढ़ जायेगा और किन्हीं-किन्ही में कई-कई महीनों तक न चुकने वाली फलों की खाद्य-सामग्री मिला करेगी । अपने प्रमाण की पुष्टि में उन्होंने प्रशांत महासागर की तलहटी छेदकर निकाली मिट्टी के कई प्रयोग और रेडियो लारिमा नामक एक कोश वाले जन्तु पर हो रहे परिवर्तन दिखाये ।

वैज्ञानिकों ने यह भी बताया कि सन् ४००० तक चुम्बकीय क्षेत्र में परितर्वन के कारण पृथ्वी के ध्रुव अपना स्थान बदल देंगे । लगभग २०० वर्ष का समय ऐसा आयेगा जब पृथ्वी का कोई चुम्बकीय क्षेत्र न रह जायेगा । यह काल खण्ड प्रलय जैसा ही होगा । अर्थात् उस समय बहुत गर्म स्थान बिलकुल ठन्डे पड़ जायेंगे । ठन्डे स्थानों में बर्फीले तूफान आयेंगे, वहाँ की बर्फ गलकर समाप्त हो जायेगी और वे स्थान बिलकुल खुश्क पड़ जायेंगे । इस अवधि में सौर ग्रहों से पृथ्वी पर होने वाला विकिरण बहुत अधिक ऊर्जावान् (गर्मी लिये

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हुये) होगा। जिससे सारी धरती में विनाश के दृश्य उपस्थित होंगे। कहीं-कहीं तो अङ्गारों की वृष्टि जैसे दृश्य उपस्थित होंगे ।

इन परिवर्तनों से बचने के लिये वैज्ञानिकों ने अपनी-अपनी तरह के सुझाव दिये हैं। कुछ ने तो यहाँ तक कहा कि आगे लोगों को गुफायें खोदकर उनके अन्दर रहना प्रारम्भ कर देना चाहिये। अध्यात्मवेत्ताओं का कहना है कि चूँकि इस सृष्टि का प्राणदाता सूर्य है, अतः हमें उसी की शरण में जाना चाहिए और उसकी अभ्यर्थना करनी चाहिए ।

सविता देवता की समर्थ साधना

गायत्री महामंत्र की गरिमा सर्वविदित है। उसकी साधना से जिस चमत्कारी शक्ति-सम्पदा की उपलब्धि होती है, उसका उद्गम केन्द्र "सविता' है। गायत्री का अधिपति सविता देवता है। विशिष्ट साधना विधानों की सहायता से उसी की दिव्य शक्तियों को आकर्षित किया जाता है और साधक को भौतिक तथा अध्यात्मिक दृष्टि से सर्वसमर्थ बनने का अवसर मिलता है। प्राचीन काल के दिव्यदर्शी ऋषि-मनीषी इस तथ्य से भली भाँति परिचित थे। उनने भूतकाल से ही सूर्य का उपयोग सविता-साधना के रूप में मनुष्य की सर्वतोमुखी प्रगति के लिए, उत्कर्ष के लिए किया है। युगान्तरकारी महापरिवर्तन की प्रस्तुत संधिवेला में भी उसी की दिव्य शक्तियों का आह्वान किया गया है ।

अगले ही दिनों सूर्य की प्रबल प्रेरक शक्तियाँ अपने प्रचण्ड प्रवाह से मानवी मस्तिष्कों की अवांछनीय दिशा धारा को, ध्वंसात्मक प्रवृत्तियों को मोड़कर-मोड़कर सृजनात्मकता की ओर उन्मुख कर दें और धरित्री पर सर्वत्र स्वर्गोपम परिस्थियाँ तथा मानव में देवत्व के दर्शन होने लगें, तो इसमें किसी को कोई आश्चर्य नहीं मानना चाहिए ।

सूर्य विज्ञान और सविता साधना एक ही तथ्य के स्थूल और सूक्ष्म रूप हैं। सूर्य विज्ञान से भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति का सुयोग मिलता है, तो सविता साधना से आध्यात्मिक उपलब्धियाँ हस्तगत होती हैं। वैदिक युग में सूर्योपासना सर्वोपरि थी। वेद एवं उपनिषदों में सूर्य को जगत की आत्मा के रूप में उल्लेख किया गया है, और कहा गया है कि सारा जगत उसी से प्रकाशित होता और प्राणवान बनता है। वह जीवनी शक्ति और चेतना शक्ति का घनीभूत रूप है। सबको वर्चस् और ज्योति उसी से मिलती है। प्राणियों की उत्पत्ति, पोषण आदि का तथा संसार की सृष्टि, स्थिति और संहार का निमित्त कारण भी सूर्य है। सूर्य न केवल प्रकाशक, प्रवर्तक एवं प्रेरक है, वरन् वह आरोग्यकारक, अरिष्ट निवारक एवं पीड़ा पतन का, बिगाड़ का परिहार करने वाला भी है। समस्त आशंकाओं, अनिष्टों, अनाचारों का निवारक भी वह है। प्राकृति नियमों, मानवी मर्यादाओं का उल्लघंन करने वाले दुरात्माओं का संहारक-विघातक भी उसे कहा गया है। "ज्योतिषा' रविरंशुमान' कहकर गीताकार ने उसे अपनी विभूति के रूप में निरूपित किया है। सूर्य के सविता देवता की प्रचण्डता, समर्थता एवं श्रेष्टता के प्रतिपादनों से वैदिक साहित्य भरा पड़ा है। सूर्योपस्थान् सूर्य आराधना, सूर्य नमस्कार, सविता साधना जैसे आध्यात्मिक उपाय-उपचार मानवी चेतना की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए ही निर्मित किये गये हैं ।

पाश्चात्य मनीषी भी सूर्य को सम्पूर्ण सृष्टि का कारण मानते है। प्रख्यात दार्शनिक प्लेटो के अनुसार सूर्य मात्र प्रकाश या ताप का पुंज नहीं, वरन् जीवन ज्योतियों का रश्मि समूह है जो सौर मंडल में एकत्र होतीं और नाना विधि शक्ति उत्पन्न करती है। इसे उन्होंने से फिर "डिवाइनइन्टैलिजैन्ट' के नाम से सम्बोधित किया है। स्कॉट ने अपनी कृति "द साइकिल्स आफ हेवन" में इसे ही "ब्रह्माण्डीय प्रभाव' कहा है। उनके अनुसार सूर्य मंडल की शक्तियाँ न केवल भौतिक परिवर्तन प्रस्तुत करती हैं, वरन् हमारे मस्तिष्क एवं व्यवहार को भी प्रभावित, परिवर्तित करती रहती हैं। इनके बिना तो पृथ्वी पर जीवन की कल्पना तक नहीं की जा सकती। सूर्य की किरणें यदि धरती तक न पहुँचें तो यहाँ जीवन एवं हरीतिमा नाम की कोई वस्तु दृष्टिगोचर न होगी ।

वस्तुतः सौर मंडल के समस्त ग्रह-गोलकों सहित अपने धरातल की सारी हलचलें सूर्य के अनुदान पर ही अवलम्बित हैं। पृथ्वी की अपनी विशिष्टताएँ एवं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

क्षमताएँ परोक्ष रूप से सूर्य की ही देन हैं । ब्रह्माण्डीय अनुदानों के रूप में उसे जो कुछ प्राप्त होता हैं, उसमें सूर्य का भाग ही प्रमुख होता है । भैतिक जगत पर सविता का अजस्र अनुदान ऊर्जा, ताप और प्रकाश के रूप में बरसता है, तो आत्मिक क्षेत्र पर उसका अभिवर्षण प्राण के रूप में, सत्प्रेरणाओं–सद्भावनाओं के रूप में होता है । साम्ब–उपनिषद् में उल्लेख है कि सूर्य का समग्र तेजों मंडल दो शक्ति धाराओं मे विभक्त है जिन्हें "संज्ञा' एवं छाया के नाम से जाना जाता है । इनका कार्य समस्त लोकों में निवास करने वाले प्राणियों के भीतर ज्ञान एवं क्रिया का उद्दीपन करना है । पुराणों में इन्हें ही सूर्य की दो पत्नियों के रूप में वर्णन किया गया है और कहा गया है कि "संज्ञा' ज्ञान चेतना के रूप मे "छाया' कर्म एवं क्रियाशीलता के रूप में प्राणि चेतना में कार्यरत रहती है । सविता साधना में इन्हीं शक्तियों का अवगाहन अवधारा किया और ओजस्, तेजस् एवं वर्चस् की बहुमूल्य विभूतियों–सम्पदाओं से लाभान्वित हुआ जाता है ।

जरथस्त्र ने सूर्य को विराट चेतना का प्रतीक माना और जीवन को उसका उद्भूत अविनाशी अंश बताया है । उनके अनुसार धरती पर पाये जाने वाले या निवास करने वाले जड़–चेतन सभी का उत्पादनकर्ता सूर्य है । उसी की रश्मियों से उन्हें गति और शक्ति मिलती है । भौतक प्रकाश के अतिरिक्त आभ्यांतरिक प्रकाश भी हमें उसी से मिलता है । सविता की प्रकाश रश्मियाँ ब्रहमाण्डीय चेतना के रूप में मानवी अन्तराल में प्रविष्ट होकर उसे आत्मोत्कर्ष की दिशा में आगे बढ़ने, ऊँचा उठने के लिऐ प्रेरित करती हैं । सूर्य के प्रकाश में सप्तवर्णी रश्मियों के अतिरिक्त अल्ट्रावायलेट इन्फ्रारेड, कॉस्मिक आदि शक्तिशाली अदृश्य किरणें भी सम्मिलित रहतीं और धरातल तक पहुँच कर अपने–अपने गुणों एवं विशिष्टताओं के आधार पर वनस्पति जगत एवं प्राणि जगत को प्रभावित करती हैं । ठीक इसी तरह उससे भी अधिक शक्तिशाली सूक्ष्म ऊर्जा तंरगें सूर्य से निस्सृत होकर अपनी कृपा की वर्षा मानव समुदाय पर करती रहती हैं । जरथुस्त्र ने इन्हें "दिव्य आध्यात्मिक किरणों के नाम से सम्बोधित करते हुए कहा है कि अभ्युदय की अभीप्सा रखने वालों के अतंःकरण में यह सीधे प्रवेश करतीं और प्राण चेतना में उच्चस्तरीय उभार उत्पन्न करती हैं । उनके अनुसार विशेष परिवर्तनों के समय जब कभी "दिव्य आध्यात्मिक रवि रश्मियाँ' अपनी समग्रता के साथ पृथ्वी पर उतर आती हैं तो सर्वत्र उथल–पुथल मच जाती है । आन्दोलनों, परिवर्तनों एवं महाक्रान्तियों के अम्बार लग जाते हैं । विश्व में हुई विभिन्न महाक्रान्तियाँ इसकी साक्षी हैं । प्रस्तुत समय इसी तरह की सौर सक्रियता से भरापूरा है । अब विज्ञानवेत्ताओं ने भी इसकी पुष्टि कर दी है ।

ग्रीक अध्यात्मवेत्ता जूलियन ने सूर्य सम्बन्धी अपनी व्याख्या–विवेचना में उक्त तथ्य की पुष्टि करते हुए सूर्य के तीन रूपों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है । प्रथम पार्थिव ईथर के रूप में, दूसरा–लाइट आफ हेवन के रूप में तथा तीसरा विशुद्ध आध्यात्मिक माना है । उनका मत है कि जब कभी धरती पर विध्वंसकारी प्रवृत्तियों का बाहुल्य हो जाता है, सर्वत्र विक्षोभकारी परिस्थितियाँ ही विस्तार ले लेती हैं, तब सूर्य अपने तीसरे रूप में प्रगट होता है और अपने प्रचण्ड शक्ति प्रवाह से ध्वंस को सृजन में बदल देता है । इसकी पुष्टि पाइथागोरस एवं एनाक्सागोरस की रचनाओं में भी की गयी है ।

वस्तुतः मनुष्य की आध्यातमिक उन्नति सविता देवता की महत्वपूर्ण भूमिका होती है । उनके अनुसार मनुष्य जितना अधिक पार्थिव शक्तियों से प्रभावित होता है, उससे भी कई अनेक गुना अधिक उसे सौर शक्तियाँ उत्तेजित, आन्दोलित करती हैं । पार्थिव शक्तियाँ गुरुत्वाकर्षण के नियमानुसार नीचे की ओर खींचने का प्रयास करती दीखती हैं, जबकि सूर्य की शक्तियाँ ऊर्ध्वगामिता की ओर ले जाती हैं । सूर्य ही है जो समस्त ग्रह पिण्डों को अपनी आकर्षण शक्ति से बाँधे हुए है और उन्हें अपनी–अपनी कक्षा में परिभ्रमण के लिए बाधित किये हुए हैं । उस की शक्तियाँ ही पृथ्वी पर उतरती और मनुष्य समेत समस्त प्राणियों एवं वनस्पतियों में प्राण भरती हैं । संसार में जितने भी महापुरुष हुए हैं, जिसने भी क्रान्तियों का संचालन किया है, मनीषियों ने उन्हें सविता–शक्ति से संचालित बताया है । प्राचीनकाल के ऋषि–मनीषियों के आराध्य देवता सूर्य ही थे । वैदिक ऋचाएँ सूर्य मंत्रों से भरी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

पड़ी हैं। इस रहस्य को यदि समझा जा सके तो ब्रहमाण्डीय शक्तियों को आकर्षित करने और महानता की ओर अग्रसर होने का अवसर हर किसी के समक्ष प्रस्तुत है ।

सौर मण्डल से सम्बन्धित आज कल विज्ञान की जो खोजें की जा रही हैं वह वास्तव में आश्चर्यजनक हैं, पर इसमें भी सन्देह नहीं कि प्राचीन भारतीय वैज्ञानिक भी इनसे कहीं बढ़ी-चढ़ी खोजें कर चुके थे । इन दिनों रूस, अमेरिका ने जो उपग्रह आकाश में चलाये हैं और चन्द्रलोक तक धमकने में सफल रहे हैं, उससे भी बढ़कर आश्चर्यजनक अनेक खोजें भारत के प्राचीन ऋषि मुनि कर गये हैं, जिनका हल समय-समय पर प्राचीन ग्रन्थों से मालूम होता रहता है । इन ग्रन्थों में पूरे नगर के बराबर वायुयान बनाकर आकाश में ही निवास करने का वर्णन पाया जाता है । हाल में महर्षि भारद्वाज का "यन्त्र सरस्वम्' नामक ग्रन्थ मिला है जो मैसूर की "अन्तर्देशीय संस्कृत संशोधन संस्था' के पास है, इसके ४०वें प्रकरण में वैज्ञानिक आविष्कारों का अति आश्चर्यकारक वर्णन मिलता है । इसमें भूः, भुवः स्वः महः आदि दूर वर्ती लोकों तक की यात्रा करने की विधि दी गई हैं, भिन्न-भिन्न ग्रहों में जाने के लिये अलग-अलग तरह के अद्‌भुत विमानों के निर्माण का विवरण दिया गया है । ऐसे भी यन्त्र बनाना बताया गया है, जिससे एक ही मनुष्य पक्षी की तरह आकाश में उड़ सके ।

पूर्व और पश्चिम के विद्वानों में जो मुख्य और विलक्षण भेद है वह यही है कि पश्चिम वाले बाहरी जगत में से अपनी कामनाओं की पूर्ति करने का प्रयत्न करते हैं, और पूर्व वाले अपनी आत्मा की असीम शक्ति पर आधार रखते हैं । पश्चिम निवासी इन्द्रियजनित सुखों को प्राप्त करने के लिये परिश्रम करते हैं, जब कि पूर्व के निवासी पंचेन्द्रिय पर संयम रख कर आत्म चिन्तन द्वारा अपूर्व आनन्द प्राप्त करते हैं । पश्चिम के विद्वान वैज्ञानिक प्रकृति के गुण, धर्म को जानकर पदार्थों में रहने वाली गुप्त शक्तियों से कार्य लेते हैं जब कि पूर्व के तपस्वी, अपनी ही आत्मा में जो अमोघ और अपरिमित अन्तर शक्ति पायी जाती है, अधिकांश उसी शक्ति के द्वारा अपने सब कामों को सिद्ध करते हैं ।

महर्षि भारद्वाज रचित "अंशु बोधिनी" ग्रन्थ में सूर्य और नक्षत्रों की, किरणों की शक्ति पर विचार किया गया है । इस ग्रन्थ में ६४ अधिकरण हैं जिनको छः भागों में विभाजित किया गया है । इनमें से ५४ वाँ अधिकरण "विमानाधिकरण" नाम का है । इसके सिवा इन्हीं ऋषि का एक ग्रन्थ "अक्ष-तन्त्र" नाम का हैं जिसमें आकाश की परिधि और उसके विभागों का वर्णन किया गया है और बताया है कि मनुष्य आकाश में कहाँ तक जा सकता है और उसके बाहर जाने से किस प्रकार वह नष्ट हो सकता है उसमें विमानों के सम्बन्ध में अनेक ऐसी बातें दी गई है जिनको पढ़ कर आजकल के मनुष्य आश्चर्य में पड़ जाते हैं । "विमानधिकरण" में यह सूत्र दिया गया है--

"शक्त्युद्‌गमोदयष्टौ"

इस सूत्र पर बौधायन ऋषि ने निम्नलिखित व्याख्या की है--

शक्त्युद्‌गमो भूतवाहो धूमयानश्शिखोद्‌गमः ।
अंशुवाहस्तार मुखोमणि वाहो मरुत्सखः ॥
इत्यष्टदाधिकरणें वर्गाणयुक्तानि शास्त्रातः ।

अर्थात् विमान-रचना और उनके आकाश के चलनें की गति के आठ भेद है-

(१) शक्त्युद्‌म वर्गम-विद्युत शक्ति से चलने वाले विमान ।

(२) भूतवाहपंच महाभूत की शक्ति से एकत्रित करके चलने वाले विमान ।

(३) धूमयान भाप अथवा धुँये से चलने वाले विमान ।

(४) शिखोद्‌गम पंचशिखी, शिखरीनी, शिखा-वति, कुदंशिखी आदि वनस्पतियों के तेल की मोमबत्ती बनाकर उनसे चलने वाले विमान ।

(५) अशुवाह सूर्य की किरणों की शक्ति से चलने वाले विमान ।

(६) तारामुख नक्षत्र शास्त्र के अनुसार नक्षत्रों में रस बनकर जो पदार्थ भूमि पर आता है उसके प्रयोग से चलने वाले विमान ।

(७) मणि वहा हवा मे जो उष्णता और बिजली है उसको कुछ यंत्रों द्वारा पृथक करके उसकी शक्ति से चलने वाले विमान ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(८) मरुत्सखा हवा में शीत और उष्णा विभाग हैं उनका आवृत्तिकरण करने से जा शक्तिप्राप्त होती है, उससे चलने वाले विमानों को "मरुत्सखा' कहा जाता था ।

सूर्य-किरणों के मुख्य बारह विभाग होते हैं । उनके द्वारा ऋषियों ने जो आश्चर्यजनक कार्य किये थे, उनका विचार कर सकना भी हमारे लिये असम्भव है । सूर्य किरणों की बारह शक्तियों के नाम ये हैं--(१) प्रकाश, (२) उष्णता, (३) अनिल, (४) जल, (५) वर्ण, (६) चालन, (७) मुग्ध, (८) विद्युत, (९) वेग, (१०) जृम्भण, (११) नलिका, (१२) वारूणि ।

सूर्य को इन बारह शक्तियों को पृथक करके १२ मणि तैयार करके और उनके दर्पण बनाकर उनकी शक्ति द्वारा जो विमान चलाया जाता है, उसे मणिवाह-विमान कहते हैं । इन बारह मणियों को तैयार करने में जो द्रव्य काम में लाये जाते हैं, उनका पूरा वर्णन इस ग्रन्थ में है ।

"अंशुबोधिनी" के चौथे भाग में कूट-केन्द्र का वर्णन किया गया है, जिसका आशय यह है कि अनेक शक्तियों को एक केन्द्र पर एकत्रित करके उनका प्रयोग करना । सूर्य-राशियों में हमेशा होने वाले परिवर्तन, उनसे बनने वाले "कूट' और उनके परिणामों का वर्णन है । ये "कूट' अमुक "गोल' के किस-किसी भाग को स्पर्श करते हैं और उनसे तरह-तरह की गति किसी प्रकार उत्पन्न होकर कार्य करती हैं, इसका वर्णन भी आश्चर्यजनक है। इस कूट-विद्या को स्पष्ट करने के लिये दण्ड, त्रिकोण, जया, वाण, पाँजरा, वहा, वर्तुल, ज्वलन, सन्त, घोर, मुग्ध, प्रकाश, ईषत् स्फुरण, उद्धर्गुण, अधोमुख, तिर्यग मुख, विविध-वर्तुल, चित्र आन्दोलन आदि उनके प्रकार की सूर्य-किरणों के परिवर्तनों का जो वर्णन किया गया है वह भी बड़े महत्व का है ।

सूर्य और सूर्य रश्मियों का ज्ञान मनुष्यों के लिये वास्तव में अति उपयोगी है और उसके लिये भारद्वाज ऋषि का यह ग्रन्थ आलौकिक है । पर इस ग्रन्थ के रहस्य को समझने के लिये ब्रह्मचर्य और वेदाध्यन द्वारा शुद्ध बुद्धि की आवश्यकता है । इन ऋषि महाराज ने इन्द्र सत्ता (वीर्य बल) प्राप्त करने के लिये तप किया था, अर्थात् मानसिक उपांशु जप करके अजपा गायत्री सिद्ध की थी । तब परब्रह्म की कृपा से दीर्घायु प्राप्त करके वेद का तथ्य जानने के लिये अन्तर्मुख होकर घोर तप किया था । इससे वेद का गुह्य तत्व उन पर प्रकट हो गया और योग शक्ति द्वारा वे सूर्य के समान ही तेजस्वी हो गये । उनको वेदों के ज्ञान के पर्वत पर पर्वत दिख लाई पड़ने लगे । उनकी विशालता से चकित होकर ऋषि परमात्मा की प्रार्थना करने लगे कि इस अपार वेद-ज्ञान के एक अंश को देख सकने की भी शक्ति मुझ में नहीं है, तो फिर महान् पर्वतों के तुल्य ज्ञान को मैं कैसे जान सकता हूँ ? परब्रह्म ने सन्तुष्ट होकर अनन्त वेद में से तीन अक्षर (ओ३म्) उनको दिख लाये और बताया कि उनमें सब प्रकार की विद्याओं को प्रकाशित करने की सामर्थ है । इन प्रणव-शक्ति की सहायता से भारद्वाज ऋषि ने परमात्मा के वेद-स्वरूप अनन्त ज्ञान को समझा और उसमें से मनुष्यों के उपकारार्थ इस सौर-विद्या के महान ग्रन्थ की रचना की ।

स्वामी विशुद्धानंद सविता देवता के प्रख्यात उपसक और सूर्य विज्ञान के महान ज्ञाता रहे हैं । वे प्रायः कहा करते थे कि- "सृष्टि में जो भी जीवन चेतना दिखाई देती है, "जो भी स्पन्दन और क्रियाशीलता दृष्टि गोचर होती है, उसके मूल में सविता देवता की शक्ति ही काम करती है । सूर्य-सविता देवता का स्थूल प्रतीक है और उससे निःसृतः होती रहने वाली किरणों का उपयोग यदि आध्यात्मिक प्रयोजनों के लिए किया जा सके तो व्यक्ति ईश्वर के समान हो सकता है, नर से नारायण बन सकता है ।"

"सृष्टि प्रक्रिया में सविता देवता की क्या भूमिका होती है ?-स्वामी विशुद्धानंद के एक प्रमुख शिष्य ने उनसे पूछा तो उन्होंने कहा-"सृष्टि की सभी वस्तुओं में सब तत्व विद्यमान हैं किन्तु जिस वस्तु में जिस तत्व की अधिकता होती है उसका नामकरण उसी आधार पर होता है और वह वस्तु उसी आधार पर अस्तित्व में आती है । यही नहीं उस वस्तु के गुण और उसकी विशेषतायें भी उसी प्राधान्य के आधार पर होती हैं ।"

प्रत्यक्ष अनुभव के सम्बन्ध में पूछा जाने पर स्वामी विशुद्धानंद ने पास में रखी हुई माला में से एक फूल निकाला । माला गंधफूल की थी और उसमें से गंधफूल ही निकाला गया । स्वामी जी ने कहा- "इसमें सब प्रकार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के फूल ही नहीं और भी वस्तुए विद्यमान है प्रमाण है कि यह फूल अभी गुलाब में परिणत किया जा सकता है ।"

इतना कहकर स्वामी विशुद्धानंद उस फूल को हाथ में लेकर धीरे–धीरे हिलाने लगे । साथ ही वे यह भी कहते जा रहे थे कि देखो इसमें गुलाब के परमाणु आते जा रहे हैं ।" थोड़ी देर बाद ही वह गंधफूल गुलाब के फूल में परिणित हो गया । स्वामी विशुद्धानंद ने इस घटना की विवेचना करते हुए कहा इस प्रकार सब वस्तुओं में सबकी सत्ता है, परन्तु जिस वस्तु का अंश जिसमें अधिक रहता है, उसी की गुण क्रिया उस वस्तु में व्यक्त होती है, और उसी रूप में उसका प्रकाश होता है ।' यह पूछे जाने पर कि यह परिवर्तन क्या योग क्रिया से हुआ है तो स्वामी विशुद्धानंद ने कहा–"नहीं यह सूर्य विज्ञान है और सविता देवता की क्रिया पद्धति को भली भांति समझ लेने के बाद इस तरह का परिवर्तन कोई भी कर सकता है ।"

गायत्री के उपासक भली–भाँति जानते हैं कि इनका उपास्य सविता देवता है । सूर्य सविता देवता का स्थूल प्रतीक है और सृष्टि के जीवन का अस्तिव, चेतना की क्रीड़ा सूर्य की उपास्थिति से ही होती है । कहा जा सकता है कि सृष्टि के कण–कण में जीवन चेतना का जो स्फुरण अनुभव किया जाता है, उसका जो अस्तित्व अनुभव किया जाता है, उसका मूल आधार सूर्य–सविता देवता की सत्ता ही है ।

सूर्य की उपस्थिति मात्र से किसी वस्तु की सत्ता के मूल स्वरूप में किस प्रकार विभेद दिखाई देता है उसका एक छोटा सा उदाहरण है । विभिन्न पेड़–पौधों के फूल विभिन्न रंगों में विभिन्न आकार प्रकार के दिखाई देते हैं लेकिन वस्तुतः उनमें एक ही तत्व विद्यमान रहते हैं । किसी विशेष तत्व की न्यूनाधिकता के कारण उनके अलग–अलग रंग आकार प्रकार दिखाई देते हैं मनुष्य का शरीर जिन तत्वों से मिलकर बना हैं, वे भी सभी मनुष्यों में समान होते है । परन्तु इसके बाबजूद भी किन्हीं दो मनुष्यों की आकृति–प्रकृति एक समान नहीं होती । इसका कारण मात्र "हारमोन' का अन्तर ही है । "हारमोन' सभी मनुष्यों में रहते हैं, लेकिन उनकी संरचना में नाम मात्र का विभेद रहता है । स्वामी विशुद्धानंद ने इस तथ्य को इन शब्दों में प्रतिपादित किया हैं–। "सविता देवता की शक्ति का तत्व समझ लेने पर किसी भी वस्तु को अन्य किसी दूसरे रूप में परिवर्तित किया जा सकता है । लेकिन कठिनाई उसे तत्वतः जानने में ही है, क्योंकि सविता शक्ति के विभिन्न प्रभाव बहुत सूक्ष्म होते हैं वस्तु को दूसरी वस्तु में रूपान्तरित करने के लिऐ सर्वप्रथम विशुद्ध तत्व को पहचानना और समाविष्ट करना पड़ता है । इस शुभसत्ता को अभीष्ट प्रयोजन के लिए संयोजित किया जाता है, जिससे उस वस्तु का अविर्भाव होता है ।

"यद्यपि किसी भी वस्तु में दूसरी अन्य वस्तु का अर्न्तभाव होता है । परन्तु गुण भाव प्रधान रहने से वस्तु का स्वरूप अलग होता है । जैसे कील, चिमटा, कढ़ाई और बड़ी–बड़ी मशीनों में एक ही तत्व रहता है 'लोहा' लेकिन विभिन्न प्रकार से उनका निमार्ण करने के कारण स्वरूपतः भेद दिखाई देता है । तत्वतः तो वे सभी एक ही हैं उसी प्रकार "सूर्य शक्ति" के कारण जीवन चेतना का एक ही तत्व विभिन्न रूप और विभिन्न प्रकारों में दिखाई देता है । यह आवश्यक भी है, क्योंकि तत्व दृष्टि से सभी वस्तुएँ एकरूप में आये, उनमें गुण भेद न रहे तो वस्तु का लय ही हो जायगा ।"

"सूर्य इस सृष्टि का मूल आधार है । उस स्थिति को कल्पना नहीं की जा सकती, जब सूर्य नही रहेगा । वैज्ञानिक स्पष्ट घोषणा करते हैं कि सूर्य के बुझ जाने पर यह सृष्टि और सारा सौर मण्डल भी निर्जीव हो जायगा, सूर्य जिस शक्ति से सारी सृष्टि को जीवन चेतना प्रदान करता है, उस शक्ति का नाम है सविता और उस शक्ति के कारण ही सूर्य को सविता कहा जाता है । क्योंकि सविता देवता का और कोई स्थूल प्रतीक तो देखने में नहीं आता ।"

भारतीय धर्म और आध्यात्म का सारा महत्व विज्ञान की आधारशिला पर खड़ा है । जिन घटनाओं को हमारे यहां अलंकारिक ढंग से व्यक्त किया गया है, ये भी मात्र कल्पना पर आधारित नहीं हैं, वे भी विज्ञान सिद्ध अनुभव की जाने लगी हैं ।

उदाहरण के लिए गर्भ के बाहर भ्रूण का निर्माण और उसका विकास अभी तक कल्पना की उड़ान भर समझा जाता था । ऋग्वेद के सप्तम् मण्डल के ३३वे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सूक्त के तेरहवें सूक्त में अगस्त ऋषि का जन्म कुम्भ में होने, सगर राजा के साठ हजार बेटे आदान पात्रों में जन्म लेने (अथर्व २९/१२७/१) की कथाओं को कल्पना की उड़ान भर समझा जाता था पर आज जब चिकित्सा विज्ञानियों ने परखनली में शुक्राणु तथा डिम्ब का संसेचन कर परखनली शिशुओं को पैदा कर दिखाया तो यह विश्वास किया जाने लगा कि गर्भ के बाहर भी अयोनिग सन्तान जन्म ले सकती हैं ।

स्वामी विशुद्धानंद से एक बार किसी ने चर्चा प्रसंग में कहा वेदशास्त्रों में बहुत सी बातें अलौकिक तथा अविश्वसनीय भरी पड़ी हैं जिनका कोई आधार ही नही हैं ।

स्वामी जी ने पूछा–"जैसे ? तो बताया गया जैसे विष्णु के नाभि कमल से ब्रह्मा की उत्पति । स्वामीजी ने कहा यह घटना रूपक भी हो सकती है और वास्तविक भी । रूपक से आशय है शास्त्रकार ने कोई तथ्य समझाने के लिए यह दृष्टान्त दिया हो जैसे मनुष्य संकल्प शक्ति के बल पर स्वयं भी सृष्टि का सृजन कर सकता है लेकिन दृष्टान्त वस्तुतः घटना हो, यह भी अस्वाभाविक नहीं है । परन्तु मनुष्य का स्वभाव पूर्वाग्रह पर अड़े रहना है । जो वस्तु या घटना हमारी समझ में आती उसे हम तुरन्त गलत होने का फतवा दे डालते हैं, लेकिन सच्चाई–सच्चाई ही रहती है । इस दुनिया में कोई भी वस्तु या घटना असम्भव अथवा असहज नहीं है ।"

"परन्तु ऐसा कैसे हो सकता है । इस बात को कोई विज्ञान विद् भी नहीं मानेगा' उक्त व्यक्ति ने कहा तो स्वामी जी बोले सविता विज्ञान के सामने तो आज का विज्ञान बच्चा है बेटे ! तुम्हारे वैज्ञानिक कितना जानते हैं देह तत्व अत्यन्त गम्भीर है और सविता उससे भी अधिक गहन ! नाभि में से कमल–क्या प्रत्यक्ष देखना चाहते हो ?'

यह कह कर स्वामी विशुद्धानंद जिस पलंग पर बैठे थे उस पर तकिया लगा कर लेट गये । उन्होंने पेट पर पहना हुआ वस्त्र हटाया तथा नाभि प्रदेश को खोल दिया उस स्थान को वे हाथ से हिलाने लगे । पहले उस स्थान पर एक गहरा और खोखला सा गड्डा हो गया । फिर उस गड्ढे का रंग रक्तिम लाल हो गया । तदनंतर धीरे–धीरे उस स्थान से एक डेढ़ फुट लम्बा कमल नाल निकला जिसके ऊपर अत्यन्त सुन्दर कमल पुष्प था । उसकी गन्ध से पूरा कमरा सुवासित हो गया । बाबा बोले, अभी सूर्य का तेज कम है अन्यथा यह कमल छत तक भी पहुँच सकता था । थोड़ी देर बाद वह कमल नाल सहित नाभि में प्रवेश कर गया ।

इस घटना की विवेचना करते हुए स्वामी जी ने कहा–विज्ञान जिन भी तथ्यों को आज देख परख रहा है योग उसे बहुत पहले ही अनुभव कर चुका है । आप्तवाक्य है कि–ब्रहम के संकल्प मात्र से यह कौतुक मय संसार उत्पन्न हो गया । योगी अपनी साधना के बल पर उस ब्रहम से तादात्म्य प्राप्त करलेता है फिर उसकी सत्ता भी ब्रहम के समाने शक्तिशाली और सर्वव्यापी हो जाती है । वह संकल्प मात्र से कुछ भी प्राप्त कर सकता है । कुछ भी बना बिगाड़ सकता है ।

सौर विज्ञान या सावित्री विद्या वैदिक साधना पद्धति का आधार स्तम्भ मानी जाती रही है । श्री अरविन्द ने कहा है कि आर्यों का इष्ट एक ही रहा है–स्वयं प्रकाशित एकमेव (तद् एकं, तत् सत्यं)– सूर्य । सविता, सृजेता, सृष्टा सूर्य ही सत्या अधिपति, आलोक प्रदाता एवं रचयिता है, पुष्टिदायक पूषा है जो उसका ध्यान करने वाले साधक में केवलेशन (स्वतः प्रकाशित ज्ञान) इंस्पीरेशन (अंतः प्रेरणा) इन्ट्यूशन (अंतर्ज्ञान) तथा ल्युमीनस डिसर्नमेण्ट द्वारा विवेक दृष्टि प्रदान करता है, मन की त्रिविध लोकों वाली सृष्टि को प्रकाश प्रेरणा से अनुप्राणित कर देता है । भौतिक चेतना वाला "भूलोक" क्रियाशील–प्राणमय चेतना वाला "भुवः लोक" तथा प्रकाशमान मन (विशुद्ध मानसिक चेतना वाला) लिए "स्वः लोक" उसी सविता से प्रेरित है, जिसकी रश्मियों ने इस सृष्टि का सृजन किया है इनके माध्यम से सृष्टि के किसी भी जड़ चेतन घटक की संरचना में परिवर्तन संश्लेषण–विश्लेषण सभी कुछ कर पाना योगी के लिए संभव है ।

सुप्रसिद्ध इण्डॉलॉजिस्ट व अपने समय का एक अनोखा ही प्राच्यविद् पाल ब्रण्टन अपनी भारतव्यापी शोध के दौरान तिब्बत, मिस्र, भारत के गुह्यज्ञान के विस्तार को जानने के निमित्त वाराणसी आया । उस दौर का विवरण उसने "ए सर्च इन सीक्रेट इण्डिया" पुस्तक में विस्तार से दिया है । उसमें सूर्य विज्ञान को समर्पित एक निबन्ध में उसे विशुद्धानन्द कानन आश्रम मलदहिया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

बनारस में श्री गोपीनाथ कविराज के माध्यम से परमहंस विशुद्धानन्द जी से हुई चर्चा का वर्णन लिखा है। चूँकि ब्रण्टनल की दृष्टि कौतुक की थी, परमहंस ने उसे पहले स्फटिक के माध्यम से एक रूमाल में भाँति-भाँति की सगुंध संगृहीत करके दीं। यही नहीं उसने यह भी देखा कि शून्य से ताजा अंगूर, हवा से मिठाइयाँ कैसे पैदा की जा सकती हैं, मुरझाये फूल को फिर से ताजा हरा-भरा कैसे बनाया जा सकता है? इन सबका विज्ञान सम्मत आधार समझाते हुए उसने कहा कि सूर्य रश्मियाँ प्राण शक्ति का अजस्र स्रोत हैं। इनके मर्म को जानकर उनका संघटन या विघटन करना ही सूर्य विज्ञान कहलाता है। इस गुह्यविज्ञान से दुर्लभतम् सिद्धि सृष्टि संरचना की शक्ति हस्तगत की जा सकती है। संभवतः विश्वामित्र द्वारा नूतन सृष्टि की उत्पत्ति इसी विधा के आधार पर हुई हो, क्योंकि गायत्री मंत्र सविता देवता की अभ्यर्थना की ही प्रार्थना रूप में है तथा गायत्री का ऋषि उन्हें ही माना जाता है।

परमहंस विशुद्धानन्दजी मात्र सुपात्र, पवित्र अंतः करण वाले व्यक्तियों के समक्ष ही सूर्य विज्ञान की इन सिद्धियों का प्रदर्शन कर, उन्हें सविता देवता की साधना की-गायत्री अनुष्ठरान व योग साधना के क्षेत्र में गहरे प्रवृत्त होने की प्रेरणा देते थे। कभी भी उनका प्रदर्शन ख्याति के निमित्त अथवा सिद्ध चमत्कार दिखाने के लिए नहीं रहा। यही कारण था कि वह एकाकी गहन शोध कर सूर्य विज्ञान विद्या को तिब्बत की दुर्गम गुफाओं से लाकर पवित्र नगरी वाराणसी में प्रतिष्ठत कर सके। हीरा, सोना, मूँगा आदि सूर्य किरणों से विनिर्मित कर वापस उसे ब्रह्माण्ड में लौटा देने की क्रिया अनेकों व्यक्तियों ने अपनी आँखों से देखी है। यही नहीं सभी की नाभि में कमल होता हैं, यह उन्होने अपनी नाभि से नाल सहित कमल उत्पन्न कर अपने शिष्यों को दिखाया था। वे निज की काया में प्रयोगशाला के परीक्षण की तरह भाँति-भाँति के प्रयोग कर उनकी व्याख्या करते थे वे जिज्ञासु साधकों को सावित्री विद्या में प्रवृत्त करते थे। एक दिन उन्होने एक सुपात्र शिष्य जोगश वसु को व्याधिग्रस्त पाकर दो बेला के फूलों को सूर्य की किरणों द्वारा स्फटिक में बदल दिया तथा एक को उनके तथा दूसरे को गुरुभाई केदार भौमिक के शरीर में योगबल से प्रविष्ट करा दिया तथा कहा कि इससे तुम्हारे शरीर निरोग रहेंगे तथा परमाणु उत्तम बनेंगे। गोलाकार स्फटिक शरीर में प्रवेश भी कर गए और शरीर से रक्त की एक बूँद भी न निकली।

पंडित गोपीनाथ कविराज सूर्य विज्ञान के ऊपर पड़े रहस्य के पर्दो को अनावृत्त करते हुए लिखते हैं कि "यह विद्या विशुद्धतः सूर्य रश्मियों के ज्ञान पर निर्भर है। इनके विभिन्न प्रकार से संयोग व वियोग होने पर विभिन्न प्रकार के पदार्थों की अभिव्यक्त होती है। विभिन्न रश्मियों का परस्पर सुनियोजित संगठन ही सूर्य विज्ञान का रहस्य है। इनसे सृष्टि भी की जा सकती है व संहार भी। इसीलिए सही विद्या को जानना बहुत जरुरी है।" वे लिखते हैं कि विज्ञान की सृष्टि व योग बल से की गयी सृष्टि में अन्तर स्पष्ट समझ लिया जाना चाहिए। उनके अनुसार योग सृष्टि इच्छा शक्ति से होती है। स्रष्टा की आत्मा व उसका आत्म बल ही इसमें मुख्य उपादान हैं। अपनी प्रबल इच्छा द्वारा आत्मा के अंदर स्थित स्वरूप को बाहर प्रकाशित करना ही योग सृष्टि है। सावित्री विद्या के अंतर्गत यही तांत्रिक परिभाषा के अनुसार विन्दु की विसर्गलीला है।"

आद्य श्रीशंकर कहते हैं। "समग्र विश्व का लीला व्यापार आत्मा के निज स्वरूप के अंतर्गत चल रहा है। दर्पण में प्रतिबिम्ब रूप में दिखाई दे रही नगरी जैसे दर्पण के ही अन्तर्गत है, पृथक नहीं, वैसे ही प्रकाशमान आत्मा में प्रतिभासित दृश्य आत्मा के ही अंतर्गत हैं, उससे पृथक नहीं। ज्ञानी इसी रूप से विश्व को देखा करते हैं, क्योंकि उनकी दृष्टि में आत्मा से पृथक् कोई वस्तु नहीं है। ज्ञानी माया शक्ति का आश्रय लेकर ही आत्मा की शक्ति का बाहर प्रकाशन करते हैं।"

योगी की विज्ञान की सृष्टि वह है जिसमें स्फटिकादि माध्यमों द्वारा सूर्य रश्मियों के संघठन या विघटन द्वारा प्रकृतिगत पदार्थ के मूलभूत द्रव्यों को बनाया या बिखराया जा सकता है। प्रयोजन के अनुसार प्रकृतिगत संरचना में उस गुण को उभारा जा सकता है, जो प्रयोगकर्त्ता चाहता है। जिसे हम गुलाब कहते हैं, वह बाह्य रूप में तो गुलाब है, किन्तु उसमें विश्व सृष्टि के मूलभूत सभी द्रव्य विद्यमान हैं। इसलिए आवश्यकता पड़ने पर कमल के उपादान-द्रव्यगुणों का आकर्षण कर गुलाब में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से ही कमल पुष्प का निर्माण किया जा सकता है । केवल पुष्प ही नहीं, जो भी वस्तु चाहें उसमें उस गुलाब के रूप को बदला जा सकता है । रूप बदलने पर भी गुलाब का वह फूल शून्य नहीं होता, अव्यक्त अवश्य हो जाता है । गुलाब सूक्ष्म रूप में रह गया एवं कमल स्थूल रूप में फूट उठा । सूर्य विज्ञान यह मानता है कि विज्ञान की सृष्टि का यह सिद्धान्त संसार में पाये जाने वाले हर पदार्थ व चेतना घटकों पर लागू होता है । प्रत्येक वस्तु की पृष्ठभूमि के अव्यक्त और स्थूल दोनों रूप में मूल प्रकृति रहती है । प्रकृति में परिवर्तन योगी ही कर पाता है ।

सूर्य विज्ञान का प्रस्तुत प्रसंग अलौकिक भी है तथा अनेकानेक अद्‌भुतताओं के साथ संभावनाओं से भरा हुआ भी । यह बताता है कि सूर्य का सूक्ष्म व कारण रूप रचयिता व पोषणदाता वालास्वरूप है तथा सूर्य रश्मियों के स्पेक्ट्रम के संकुचित ज्ञान द्वारा स्थूल रूप से स्फटिक-लेन्स आदि से अथवा योगबल से उनकी क्रम व्यवस्था में न्यूनाधिक परिवर्तन कर सृष्टि के घटकों के रूपों को बदला जा सकता है । यह विद्या असीम संभावनाओं से भरी पड़ी है । सविता शक्ति का ज्ञान प्राप्त कर, उसकी सिद्धि अर्जित कर कोई भी व्यक्ति ब्रह्म के समान शक्तिशाली सिद्ध और सर्वसमर्थ बन सकता है ।

गायत्री मंत्र जप द्वारा सूर्य शक्ति संदोहन

गायत्री उपासना जब भी की जाये सूर्य भगवान का ध्यान करते हुए की जाये । सविता गायत्री महामन्त्र का देवता कहा गया है । सामान्य बोलचाल में सूर्य और सविता एक ही कहे जाते हैं, किन्तु व्युत्पत्ति की दृष्टि से दोनों में जमीन आसमान का अन्तर है । किसी को नाम लेकर पुकारा जाता तो वह मुँह से बोलता है और उसके शरीर नामधारी होने का बोध होता है, किन्तु मृत्यु हो जाने पर उस शरीर नामधारी को चाहे कितना बुलाया जाये वह बोलाता नहीं, इसका अर्थ यह हुआ कि नाम शरीर का ही नहीं प्राण-संज्ञक चेतना का भी हुआ । सूर्य और सविता में यही अन्तर है । सूर्य भौतिक है तो सविता उसका अन्तःकरण-प्राण ।

गायत्री मंत्र जप द्वारा सूर्य का अभ्यान्तर प्रभावित होता है और प्राण शक्ति का विनिमय संभव होता है यह विलक्षण बात लगती है; पर सचमुच देखा जाये तो यह श्रद्धा अवैज्ञानिक नहीं, उसे समझने के लिए (१) जिह्वा (२) हृदय अर्थात् भाव संवेदना (३) शब्द विज्ञान (४) ज्योर्तिविज्ञान (५) परमाणु विज्ञान की जानकारी और इन पांचों के संगतिकरण की जानकारी आवश्यक हो जाती है ।

शारीरिक विज्ञान जिह्वा की मोटी जानकारी देकर और मोटी मांसल परिभाषा प्रस्तुत करके चुप ही हो जाता है । उसकी थोड़ी सी जानकारी यह है कि जीभ स्वादेन्द्रिय और वाणी दोनों का काम करती है । पर वह एकाकी नहीं है, अनेक घटकों का समूह है । जीभ एक परिवार है जिसके अनेक विभाग हैं और वे सब परस्पर मिल जुलकर काम करते हैं, तभी जिह्वा अपना प्रयोजन पूरा कर पाती है ।

जीभ की नोंक पर कोई चीज रख दी जाय तो वह उसका स्वाद का पता न लगा सकेगी । इस जांच-पड़ताल में उसे अपने अन्य सहायकों का सहयोग लेना पड़ता है । पदार्थ के साथ मुँह की लार का सम्मिश्रण होता है, वह गीला पदार्थ स्वाद नलिकाओं को स्पर्श करता है वे अपनी प्रतिक्रिया मस्तिष्क तक पहुचाती हैं । इतना हो चुकने के बाद ही यह पता चलता है कि जो पदार्थ मुँह में है वह किस स्वाद का है । यदि लार का मिश्रण न हो और सूखी वस्तु जीभ पर रखी रहे तो, उसके स्वाद का कुछ भी पता न चल सकेगा ।

स्वाद अनेक होते हुए भी वैज्ञानिक वर्गीकरण के अनुसार वे केवल चार हैं (१) मीठा (२) खट्टा (३) कडुआ (४) खारा । इन्हें परखने के स्थान भी मुँह में अलग स्थानों पर हैं । जीभ के अग्र भाग में मीठा, पिछले भाग में कडुआ, दोनों पार्श्वों में खट्टा और खारा परखने के सम्वेदक तन्तु हैं ।

नासिका और जिह्वा के संवेदक तन्तुओं में परस्पर घना सम्बन्ध है । जुकाम हो जाने पर मुँह का जायका बिगड़ जाता है और वस्तुओं का स्वाद ठीक से पहचानने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में नहीं आता, स्वादिष्ट व्यंजनों की गन्ध जीभ को प्रभावित करती है मुँह में पानी भर आता है और पता चलता है कि किस स्वाद के व्यंजन कितनी दूरी पर बन रहे हैं। मिर्च मसालों के छौंक वघार नासिका की गन्ध शक्ति द्वारा मुँह को उनके स्वाद का परिचय कराते हैं। खरबूजा, आम आदि फलों को सूँघकर उनके खट्टे-मीठे होने का निर्णय किया जा सकता है। यह नासिका और जिह्वा के सम्वेदकों में परस्पर घनिष्ठता होने का ही प्रमाण है।

जीभ की संरचना का यदि वर्गीकरण किया जाय तो उसे लम्ब पेशियां, जीनियों ग्लोसस पेशियां, जिह्वा ग्रन्थि, जिह्वावरण, लेपेक्स, तन्त्रिकाएँ, स्वाद नलिकाएँ, स्वाद कोशिकाएँ, स्पिडल कोशिकाओं के विभागों में विभक्त किया जा सकता है। इन सबका सहयोग ही जीभ को अपना काम ठीक तरह करते रह सकने के योग्य बनाता है।

जीभ का यह भौतिक परिचय हुआ। उसका आत्मिक परिचय भगवती सरस्वती के प्रतीक रूप में है। जिह्वा शब्दोच्चारण करती है और उस उच्चारण के पीछे मनुष्य के मस्तिष्क और अन्तःकरण को ही नहीं शरीर को भी प्रभावित करने की शक्ति रहती है। इससे भी आगे बढ़ कर वह शक्ति वस्तुओं को भी प्रभावित करती है। इसी रहस्यमय शक्ति को चमत्कारी ढंग से प्रयुक्त करने के विधान का नाम मन्त्र शास्त्र है। सामान्य जानकारी का आदान-प्रदान तो वाणी से होता ही रहता है, पर जब वह एकाग्र-समग्र और शब्द शास्त्र के अनुसार कुछ विशेष शब्दों का स्वर साधना के साथ उच्चारण करती है तो उस शब्द समूह को "मन्त्र' कहते हैं। मन्त्रों की चमत्कारी शक्ति से आध्यात्म विज्ञान का पन्ना-पन्ना भरा पड़ा है। जप के बिना, किसी धर्म, सम्प्रदाय की कोई साधना नहीं हो सकती, इसे आत्म-शक्ति सम्बर्द्धन का आधारभूत स्रोत माना गया है।

जहाँ तक मन्त्रोच्चारण का सम्बन्ध है यह कह सकते हैं कि जिह्वा तन्तुओं का सम्बन्ध जिन चक्रों, उपत्यिकाओं मातृकाओं से है। वे इस उच्चारण के साथ वैसे ही प्रभावित होती हैं जैसे टाइप राइटर की कुंजियाँ दबाने पर उस से सम्बन्धित तीलियाँ उछलती हैं और कागज पर अक्षर छप जाता है। शरीर के विभिन्न स्थानों पर विभिन्न सूक्ष्म, शक्तियों के भण्डार दबे पड़े हैं, वाणी का प्रभाव बाहर ही नहीं निकलता भीतर भी चलता है। शब्दोच्चारण के साथ-साथ जिह्वा की नस, नाड़ियाँ और ध्वनि लहरियाँ उन प्रसुप्त संस्थानों को जगाती हैं। क्रम विशेष से सितार के तारों को बजाने से उसमें से विभिन्न स्वर लहरियाँ निकलती हैं, इसी प्रकार शब्दों का उच्चारण तथा स्वर क्रम मिलकर एक ऐसी गूँज उत्पन्न करते हैं, जिससे शरीरगत सूक्ष्म संस्थान में हलचल मच जाती है और जो मन्त्र जिस प्रयोजन के लिए निर्धारित है, उसके अनुकूल ध्वनि कम्पनों का, ऊर्जा तरंगो का निर्माण होता है।

इस प्रकार मन्त्र शक्ति अपना काम करती है। मंत्रोच्चारण के अवसर पर सारा स्वर संस्थान एक शक्ति श्रोत के रूप में परणित हो जाता है और अपने भीतर लक्ष्य किये हुए मनुष्य या देवता के ऊपर अथवा अनन्त आकाश में एक प्रभाव उत्पन्न करता है, जिससे शास्त्रोक्त अभीष्ट परिणाम उत्पन्न होने की सम्भावना बन जाय।

पर इतना ही पर्याप्त नहीं माना जाता। इस मन्त्रोच्चार की शब्द शृंखला के पीछे हृदयगत ऊर्जा की प्रचंड शक्ति धाररओं का सम्मिश्रण भी होना चाहिए। हृदय का अर्थ दो प्रकार का होता है, जिह्वा की तरह वह भी दो प्रयोजन पूरे करता है। एक तो रक्ताभिप्रण का केन्द्र बिन्दु होने से वहाँ उत्पन्न होने वाली प्रचण्ड ऊर्जा का वह भण्डार बना होता है दूसरे उसे भाव संस्थान का केन्द्र बिन्दु भी माना गया है। धड़कन से उत्पन्न ऊर्जा और श्रद्धा, निष्ठा, भक्ति, एवं विश्वास की समन्वयात्मक भाव गरिमा इन दोनों का समन्वय ही मन्त्र का प्राण है। उच्चारण को मन्त्र का कलेवर और भावनाओं को उनका प्राण कहा गया है। इस प्रकार जहाँ तक आत्म साधना के विज्ञान का सम्बन्ध है, जिह्वा और हृदय दोनों को एक ही रथ के दो पहिये माना गया है। मंत्र साधना में दोनों का सहयोगात्मक समन्वय समान रूप से रहने पर ही अभीष्ट प्रयोजन सिद्ध होता है।

हृदय क्या है ? साढ़े तीन इंच चौड़ी-पाँच इंच लम्बी पान के पत्ते जैसे आकार की १२.५ औंस भारी छाती की बायी ओर पाँचवीं और छठवीं पसली के बीच की एक मॉसल थैली जो सदा धड़कती रहती है। यह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चार कोष्ठों में विभाजित है। दो ऊपर वाले भाग आरीकिल (अलिंद) कहलाते हैं नीचे के दो भाग वेन्ट्रीकिल (निलयं) कहे जाते हैं। शरीर में रक्त का संचार और नियंत्रण उनका काम है।

बन्द मुट्ठी जैसी आकृति के इस नरम और मुलायम हृदय की धड़कन हर मिनट में ७०–७५ बार होती हैं। हर सेकण्ड में प्रायः ८ बार धड़कन होती है। इस प्रकार वह एक साल में प्रायः तीन करोड़ सत्तर लाख बार धड़क लेता है। नव जात शिशु के हृदय की धड़कन प्रति मिनट १२० से १४० बार तक होती है, पर जैसे–जैसे आयु बढ़ती है यह धड़कन घटती जाती है और अन्त में प्रायः ६०–७० तक रह जाती है। इसका कारण आयु वृद्धि के साथ–साथ आक्सीजन युक्त नीले खून वाली शिराओं की लचक घटते जाना है। उनकी दीवारें मोटी होती जाती हैं। जिससे धमनियों के फैलने सिकुड़ने की क्षमता घटती जाती है। तदनुसार धड़कन का क्रम भी कम होता चला जाता है।

अपने आकार और वजन को देखते हुए शरीर के अन्य अवयवों की तुलना में हृदय को कहीं अधिक काम करना पड़ता है। वह एक मिनट में ७२ बार धड़कता है। वर्ष में ३ करोड़ ७० लाख बार। यदि कोई व्यक्ति ६० वर्ष जीवित रहे तो उसका हृदय २२० करोड़ बार धड़क चुका होगा। १८००० टन रक्त बहा चुका होगा, ६२००० मील रक्त नलिकाओं की सड़क पगडण्डियों पर चल चुका होगा। यह लम्बाई समस्त पृथ्वी की परिक्रमा से ढाई गुनी अधिक है। इस कार्य में उसे इतनी शक्ति खर्च करनी पड़ती है, जितने में कि संसार का सबसे भारी युद्ध पोत धरती से पाँच गज ऊँचा उठाकर अधर टाँगा जा सकता है। मनुष्य की बनाई अब तक की कोई मशीन इतने लम्बे समय तक–बिना टूट–फूट, बिना विश्राम लिए चल सके, ऐसी नहीं बनी है।

यों वह कर्तृत्व भी इस छोटी सी माँस थैली का आश्चर्यजनक है। पर बात इतनी सी ही नहीं है। अपने आकार को देखते हुए हृदय जितना काम करता है, उसके अनुपात को देखते हुए उसकी कार्य क्षमता की तुलना में संसार का कोई यन्त्र नहीं बैठता। आकार और साधन स्वल्प होते हुए वह जितना बड़ा उत्तरदायित्व सँभालता है निस्सदेह उसी अनुपात का मनुष्य–कृत यन्त्र बन सकना अभी तक सम्भव नहीं हुआ। इतनी प्रचण्ड ऊर्जा का योगदान मन्त्र शक्ति से मिल जाता है तो उसकी शक्ति को करोड़ों गुना अधिक बढ़ना ही चाहिए।

आकाश–वाणी से उच्चारण किये हुए शब्द इसलिए प्रखर हो उठते हैं कि उनमें विद्युत शक्ति का सम्मिश्रण किया जाता है। उसी के अभाव में हमारी आवाज हजार गज पर भी नहीं सुनी जाती, जबकि रेडियों की आवाज सारा संसार सुनता है। ठीक मन्त्रोच्चारण को प्रचंड और व्यापक बनाने के लिए हृदय की विद्युतंधारा का उपयोग करना पड़ता है। साथ ही श्रद्धा, विश्वास और भक्ति का समन्वय करने उसकी, जप शब्दावली को इतना प्रखर बनाना पड़ता है कि वह साधारण उच्चारण न रहकर एक शक्ति प्रवाह के रूप में प्रादुर्भूत होकर अपना अभीष्ट प्रयोजन पूरा कर सके।

हृदय को शिव और जिह्वा को शक्ति कहते हैं। हृदय प्राण और जिह्वा रयि है। हृदय को अग्नि, जिह्वा को सोम कहते हैं। दोनों का समन्वय धन और ऋण विद्युत धाराओं के मिलने से शक्ति प्रवाह उत्पन्न करता है, वही मन्त्र के चमत्कार रूप में देखा जा सकता है।

मन्त्र की एक प्रकट ध्वनि होती है, एक अप्रकट। शब्दोच्चार के साथ–साथ एक प्रतिध्वनि और उत्पन्न होती है जो प्रत्यक्ष उच्चारण से अधिक सूक्ष्म होने के कारण और भी अधिक बलवती होती है। कान की पकड़ में न आने वाली ध्वनियों को आजकल वैज्ञानिक उपकरणों द्वारा पकड़ और प्रयुक्त किया जा रहा हैं। उनकी अद्भूत सामर्थ्य ने विज्ञान जगत को आश्चर्यान्वित कर दिया है।

आवाज उतनी ही नहीं है जितनी कानों से सुनी जाती है। कानों की एक सीमित मर्यादा है। वे अपनी पकड़ में आने वाली आवाजों को ही सुन पाते हैं। पर ऐसा नहीं समझना चाहिए कि जो हम सुन सके उतनी ही ध्वनि होती है। शब्द तरंगों का बहुत बड़ा भाग वह है जो कानों की पकड़ में नहीं आता पर वह इस आकाश में चलती निरन्तर रहती हैं। रेडियों तरंगों के साथ मिली हुई आवाजें आकाश में हर घड़ी गुँजती रहती हैं पर हम उन्हें सुन तभी पाते हैं, जब रेडियो यन्त्र पास में हो और उस कानों की पकड़ से बाहर की आवाज

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

को बिजली के सहारे तीव्र करें । शब्द तरंगों की अपनी स्वतन्त्र सत्ता है । वे इस संसार में चल रही अनेक हलचलों के कारण जो ध्वनियाँ होती है, उन्हें इधर से उधर लाती ले जाती रहती है । योगाभ्यास में "नादानुसन्धान' की पद्धति से इन्हीं ध्वनियों को सुना, अपनाया जाता है ।

ध्वनि तरंगे केवल आवाज को कान तक पहुँचा कर उसके द्वारा जानकारी बढ़ाने का ही काम नहीं करतीं, उनमें एक प्रचण्ड बिजली भी भरी रहती है और वह इतनी सामर्थ्यवान होती है, कि डाइनामाइट जैसी पुल और किले उड़ा देने वाली बारुद को पीछे छोड़ दे । अब इन ध्वनि तरंगों का वह प्रवाह भी वैज्ञानिकों की पकड़ में आ गया है, तो कानों द्वारा सुने जानें की मर्यादा से ही अधिक सूक्ष्म है । उनका उपयोग सुनने के लिए नहीं वरन् उन कार्यों के लिए सफलता-पूर्वक किया जा रहा है, जो बिजली की सामर्थ्य से भी कहीं अधिक गहरी शक्ति की अपेक्षा करते हैं । अभी इनके प्रयोग का प्रथम चरण है । आगे चलकर सोचा यह जा रहा है कि इन तरंगों द्वारा संसार की शक्ति आवश्यकता, सस्तेपन और सरलता के साथ सम्पन्न की जाय ।

जिन कर्ण कुहरों से आगे की ध्वनि तरंगों की यहाँ चर्चा हो रही है, उन्हें विज्ञान की भाषा में "अस्विन' कहा जाता है । इन्हें छुट-पुट अनेक उद्योगों में प्रयुक्त किया जा रहा है । कपड़ों को धोना, सुखाना, सफाई, तेल निकालना, कागज बनाना जैसे छोटे-मोटे उद्योगों में इनका सफल प्रयोग किया गया है । जर्मनी में उन्हें धातुओं की ढलाई के काम में लाया जा रहा है । ब्रिटिश वैज्ञानिकों ने धागे के सम्बन्ध में उनका प्रयोग किया है । बी. एफ. गुडरिच कम्पनी का अनुसन्धान विभाग इस अन्वेषण में लगा हुआ है कि इन ध्वनि तरंगों को किस उद्योग में किस प्रकार काम में लगाया जा सकता है । रेथ्यान कम्पनी का बना होमोजिना इजिंग यन्त्र दुग्ध साधनों के लिए इसी आधार पर बना है और हजारों की संख्या में बिक रहा है ।

शब्द विज्ञान, मंत्र शक्ति बनकर किस प्रकार सूर्य को प्रभावित करता है । इसके लिये ज्योतिर्विज्ञान के प्रयोगों की ओर ध्यान देना होगा । ३ फरवरी १९६९ को अहमदाबाद में सम्पन्न तृतीय अन्तर्राष्ट्रीय विषुवतीय वायु विज्ञान गोष्ठी में, जिसके अध्यक्ष डा० विक्रम साराभाई थे तथा विभिन्न देशों के १२० वैज्ञानिकों ने भाग लिया था । ग्रह नक्षत्रों द्वारा मानवीय जीवन के प्रभावित होने की विशद् चर्चा हुई । सोवियत वैज्ञानिक ब्लादीमीर का यह शोध कि सूर्य मनुष्य के न केवल शरीर अपितु मन और भावनाओं को भी प्रभावित करता है, काफी चर्चित हुई ।

सन् १९२४ से लेकर ६४ तक रूसी वैज्ञानिक ब्लादीमीर देस्यातोव ने इस सम्बन्ध में व्यापक शोध कार्य किया और आँकड़े एकत्रित कर यह बताया कि जब सूर्य में चुम्बकीय तूफान (मैगनेटिकस्टॉर्म्स) आते हैं तो धरती के निवासियों में स्नायविक बेचैनी (नर्वसनेस) और मनोरोगों की संख्या बढ़ जाती है । इस तरह के रोगियों की मृत्यु दर भी बढ़ती पाई गई । उल्लेखनीय है कि धरती के चुम्बकीय क्षेत्र की तीव्रता या उसकी फ्रीक्वेन्सी बदलना आकाशीय पिण्डों की किसी ऊर्जा-प्रवाह का परिणाम होते हैं । इस सम्बन्ध में यदि खोजों का सिंलसिला जारी रखा गया तो भारतीय तत्व विज्ञान के उसी सिद्धान्त की पुष्टि होगी, जिसमें यह बताया गया है कि मनुष्य आकाश की अदृश्य शक्तियों से प्रभावित है, यही नहीं वह मन की चुम्बकीय शक्ति के द्वारा अज्ञात नक्षत्रों से वह शक्ति-प्रवाह भी अपने अन्दर आकर्षित और धारण कर सकता है, जिसके अभाव में शारीरिक शक्तियाँ अविकसित पडी रहती हैं । आशा है आगे की यह उपलब्धियाँ भारतीय तत्व-ज्ञान और उपासना क्षेत्र को क्रांतिकारी ढंग से प्रभावित करेंगी ।

प्रारम्भिक शोधों में श्री ब्लादीमीर ने यह पाया कि जब सूर्य में एंक विशेष प्रकार के ज्वाला प्रकोप (फ्लेमर) फूटते हैं तो धरती पर प्रचण्ड चुम्बकीय तूफान आते हैं और उससे मानसिक दृष्टि से दुर्बल व्यक्तियों के जीवन अस्त व्यस्त हो जाते हैं, आत्म-हत्यायें और सड़क दुर्घटनायें भी उसी के फलस्वरूप बढ़ती हैं । शराबी, क्रोधी, चिड़चड़े कामुक, अनैतिक और दुर्बल स्नायु संस्थान वाले व्यक्ति इन फ्लेयर्स के बाद बहुत ही कमजोर और परेशान हो जाते हैं, इसी कारण उक्त घटनाओं में चार-पाँच गुनी तक वृद्धि हो जाती है, इसी के आधार पर वैज्ञानिकों ने यह कहा है कि मस्तिष्क की

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

क्रिया क्षमता की बुनियादी ताप (अल्फा एनर्जी) धरती के चुम्बकीय क्षेत्र से जुड़ा है और धरती का चुम्बकीय क्षेत्र चूँकि आकाशीय पिण्डों से जुड़ा है, इसलिये हमारा जीवन आकाशीय पिण्डों की शक्तियों से विलक्षण रूप से जुड़ हुआ है ।

ज्योतिष विद्या का प्रादुर्भाव भी इस सिद्धान्त पर हुआ है । मिस्र के लोगों ने देखा कि जब कुछ तारे प्रकट होते हैं, तभी नील नदी में बाढ़ आती है, इसलिए उन्होंने अनुभव किया कि अन्तरिक्ष के पिण्ड हमारे जीवन को निश्चित विधान के अनुसार प्रभावित करते रहते हैं । यदि प्रकृति प्रभावित होती है । तो मनुष्य का शरीर और मन भी उससे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता इस जानकारी से एक लाभ तो अन्तरिक्षीय ज्ञान के विकास के रूप में मिला और दूसरा मनुष्य शरीर को प्रकृति सामंजस्य में रखकर उससे विश्वव्यापी शक्तियों की अनुभूति और प्राप्ति का लाभ मिला ।

पिछले दिनों सूर्य के अध्ययन से भी उपरोक्त सिद्धान्त प्रमाणित हुए हैं । सूर्य में अधिकतम सक्रियता सन् १९२८, १९३७, १९४७, और १९५९ में दिखायी दी थी, इन वर्षों में धरती में उल्लेखनीय हलचलें हुई । भारतवर्ष की स्वतन्त्रता भी इसी में सम्मिलित है । सूर्य की सक्रियता उसके धब्बों से फूटती दिखायी देती है । उनके बारे में तो कोई निश्चित जानकारी अभी वैज्ञानिक नहीं पा सके पर यह पता लगाया गया है कि इन धब्बों से ही अति वैगनी किरणों की शक्तिशाली ध ारा और सौर कणों की विपुल संख्या का उद्‌गम होता है दृश्य प्रकाश की बैंगनी किरणें १८६००० मील प्रति सेकिण्ड की रफ्तार से चलती हैं पर सौर–कण धीमी रफ्तार से चलते हैं । उनकी गति (वेलासिटी) अलग–अलग होती है, इसलिये प्रकाश को जहाँ पहुँचने में आठ मिनट लगते हैं, यह कण २० से ६० घण्टे तक का समय ले लेते हैं जब ये किरणें और कण धरातल पर पहुँचते हैं तो वायुमण्डल में विद्युत–जलवायु में परिवर्तन हो जाता है ।

२२ फरवरी १९५६ की रात को सूर्य में अत्यन्त शक्तिशाली विस्फोट हुआ था । विश्व की अनेक वैज्ञानिक प्रयोगशालाओं ने उस घटना को अंकित किया था । विस्फोट की तेजी के अनुरूप सौर–कण धरती की ओर दौड़ पड़े थे और उसके कारण एशियाई देशों और आस्ट्रेलिया में भयंकर तूफान और आँधी आयी जिससे रेडियो संचार तक गड़बड़ में पड़ गया ।

शरीर विज्ञानवेत्ता यह जानते हैं कि शरीर में सन्देश वाहक तन्तु दो प्रकार के होते हैं एक वह जो मस्तिष्क से सन्देश ले जाते हैं एक वह जो मस्तिष्क को सन्देश पहुँचाते हैं । इन्हें एफरेण्ट व इफरेण्ट नवर्स कहते हैं । किसी स्थान की किसी भी तरह यह नस कट जाए तो उस अवयव विशेष से सम्बन्ध विच्छेद हो जाता है तब या तो वहाँ तक सन्देश जाएगा ही नहीं या आयेगा ही नहीं । सविता शक्ति से गायत्री उपासना द्वारा सम्बन्ध विच्छेद हो जाने के दुष्परिणाम आज भौतिक जगत में स्पष्ट अशान्ति और अव्यवस्था के रूप में दृष्टि गोचर हो रहे हैं । उपरोक्त नाड़ियाँ केवल सूर्य से प्रभावित ही नहीं होतीं शब्द शक्ति के पूर्व वर्णित सिद्धान्त के आधार पर आकाश में भरे परमाणुओं को माध्यम बनाकर एक विशेष ताप गति से सूर्य तक पहुँचाती और न केवल उन महाप्राण को अपनी अन्तः पुकार पहुँचाती हैं अपितु वहाँ से उनका आशीर्वाद उनकी प्राण ऊर्जा भी लेकर आती है । गायत्री उपासना से मिलने वाला आरोग्य चैतन्यता स्फूर्ति बल स्निग्धता प्राण शक्ति के भौतिक लाभ होते हैं तो अदृश्य सहायताये-आत्मिक शान्ति और प्रगति उनका दैवी अनुग्रह । इसी को गायत्री माँ की कृपा कहा जाता है । यह कृपा कितनी विराट-विशाल हो सकती है, इसे कोई उपरोक्त विज्ञान से स्पष्ट अनुभव कर सकता है । उसका प्रत्यक्ष लाभ तो श्रद्धा–भक्ति पूर्वक की गई उपासना से ही मिलता है ।

गायत्री उपासना के साथ सविता की आराधना

सावित्री–गायत्री का अधिष्ठाता देवता सूर्य है । आध्यात्म की भाषा में इसे सविता कहते हैं । सूर्य में आभा चमक, रोशनी और ऊर्जा गर्मी और शक्ति, यह दोनों ही तत्व विद्यमान हैं । प्रकाश पुंज होने के कारण अपनी किरणों से जहाँ वह जगत के अन्धकार को दूर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

करता है, वहीं चेतना पुंज सविता रूप में उपासक के अज्ञानान्धकार को छिन्न-भिन्न करके अन्तःकरण को ज्ञान से प्रकाशित करता है । प्रसुप्त अंतः शक्तियों, दिव्य क्षमताओं को उभार कर उसे महामानव, देव मानव एवं अवतार स्तर तक पहुँचा देता है । आर्ष ग्रन्थों में सूर्य स्नान, सूर्य उपस्थान, सूर्य नमस्कार, सूर्यध्यान, सूर्याग्निहो, सूर्य उपवास, सूर्यजप, सविता आराधना आदि उपचार सूर्योपासना के कहे गये हैं ।

सविता द्वारा ज्ञान प्रदान करने तथा जड़ता को चैतन्यता में बदल देने की घटनाओं, कथानकों से वेदों की ऋचायें भरी पड़ी हैं । मनु, याज्ञवल्क्य, व्यास, शाम्ब, भारद्वाज, पराशर, गौतम, वशिष्ठ, विश्वामित्र, मार्कण्डेय आदि महर्षियों ने इसी का आश्रय लिया और आत्मोन्नति के चरम उत्कर्ष पर पहुँच कर त्रैलोक्य विख्यात हुए । वाल्मीकि रामायण ७/३६/१३-१४ में स्पष्ट उललेख है कि हनुमान को सूर्योपासना से ही ज्ञान-विज्ञान की समस्त विभूतियाँ, परा-अपरा विद्यायें उपलब्ध हुई थीं । महाराजा पृथु ने सूर्य से अमोघ रश्मिवाण प्राप्त किया था । कौषीतकि ऋषि ने सविता आराधना से पुत्र कामना की तथा अपनी अभिलाषा को पूर्ण किया था । भगवान राम स्वयं सूर्य उपासक थे । वाल्मीकि रामायण के ही लंका काण्ड में कथा आती है कि परिस्थितियों की विषमता देख कर जब राम चिन्तित बैठे थे तो अगस्त्य मुनि आ पहुँचे और उन्होने कहा-आप सूर्य की उपासना करें । उनकी शक्ति उपलब्ध करने पर आप महाबली असुर समुदाय पर भी विजय प्राप्त कर सकेंगे । वैसा ही उन्होने किया भी और शत्रुओं को सहज ही परास्त किया ।

सविता देवता अनन्त ज्ञान एवं शक्ति के भण्डागार हैं । वैदिक ज्ञान-परम्परा मनुष्य समुदाय को उन्हीं के द्वारा प्राप्त हुई है । इस तथ्य का रहस्योद्घाटन करते हुए गीता के चौथे अध्याय के प्रथम श्लोक में कृष्ण भगवान ने कहा है कि, सूर्य ज्ञान के भण्डार हैं । उनके द्वारा यह ज्ञान वैवश्वत मनु को ओर मनु के द्वारा राजा इक्ष्वाकु को मिला । महर्षि याज्ञवल्क्य इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं कि सविता देवता अनन्त ज्ञान के समुच्चय हैं । शुक्ल यजुर्वेदीय माध्यन्दिनी संहिता उन्हें सूर्य से ही मिली थी । "आदित्य हृदय" के अनुसार श्री कृष्ण ने अर्जुन को सूर्योपासना की अनूठी विधा प्रदान की थी । शास्त्रों में अनेकों प्रमाण उपलब्ध हैं, जिन में कहा गया है कि ऋषि-मनीषी ही नहीं, देवता भी अनादि-काल से सविता की आराधना करते आये हैं । यजुर्वेदीय सूत संहिता में इस तथ्य का उद्घाटन करते हुए भगवान शंकर कहते हैं कि "मैं स्वयं श्रद्धापूर्वक सविता की, सावित्री मंत्र द्वारा, जिसे गायत्री कहते हैं, उपासना करता हूँ ।"

योगाभ्यास-परक उच्चस्तरीय साधना एवं तपश्चर्याओं में सविता शक्ति का ही आश्रय लिया जाता है । कुण्डलिनी जागरण में सविता शक्ति का ही अवगाहन-अवधारण किया जाता है । दिव्य दृष्टि प्रदान करने एवं दिव्य क्षमताओं के उन्नयन में रवि-रश्मियों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है । पराशर कल्प सूत्र में इस संदर्भ में विस्तारपूर्वक वर्णन करते हुए कहा गया है कि मूलाधार में सविता देवता का ध्यान करने पर दिव्य दृष्टि की प्राप्ति होती है । इसी तरह अक्ष्युपनिषद् एवं कृष्णयजुर्वेदीय उपनिषद् में चाक्षुषी विद्या का वर्णन करते हुए कहा गया है कि इसी विद्या का आश्रय लेकर मनुष्य न केवल सभी प्रकार के नेत्र रोगों से मुक्ति पा सकता है, वरन् दिव्य दृष्टि भी जागृत कर सकता है । इस विद्या के ऋषि अहिबुध्न्य हैं, छन्द गायत्री एवं देवता सविता हैं । छान्दोग्य एवं बृहदारण्यक उपनिषदों में भी इसी प्रकार का उल्लेख है जिसके अनुसार समस्त प्राणियों की दृष्टि शक्ति के अधिष्ठाता सूर्य हैं । उनकी आराधना से दिव्य दृष्टि की उपलब्धि होती है ।

पुरातन-काल के ऋषियों से लेकर अर्वाचीन योगी, तपस्वियों की साधना-उपासना में सविता की प्रमुखता रही है । उससे प्राप्त ज्ञान के आधार पर उन्होने अनेकानेक भौतिक एवं आध्यात्मिक अनुसंधान किये । प्रकृति पर विजय पाई । एडिंगटन, जीन्स फाउलर, एडवर्ड आर्थर, मिलेन, रसेल आदि प्रख्यात वैज्ञानिक मनीषियों ने सूर्य-शक्ति के सम्बन्ध में गहन खोजें की हैं और वैदिक ऋषियों द्वारा प्रतिपादित सविता की सत्ता, महत्ता, गति आदि के सिद्धान्तों की पुष्टि की है ।

मार्कण्डेय पुराण में सूर्य को ब्रह्म का मूर्त रूप बताते हुए कहा गया है कि "ॐ' अर्थात् प्रणव सूर्य का सूक्ष्म रूप है । उसी से भूः भुवः स्वः नामक तीन व्याहृतियाँ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उद्भूत हुई हैं । तत्पश्चात् महः जनः तपः सत्यम् आदि सप्तलोकों का आविर्भाव हुआ । गायत्री महामंत्र इसी का विस्तृत रूप है, जिसमें ज्ञान विज्ञान की समस्त शक्तियाँ सन्निहित हैं ।

यही कारण है कि प्रचलित विविध उपासना पद्धतियों में सूर्य मंडल में ईश्वर की, इष्ट की भावना करना सबसे महत्वपूर्ण एवं सर्वाधिक फलदायी बतायी गई है । आत्म ज्योति को प्रखर-प्रचण्ड बनाने एवं ओजस्वी-तेजस्वी बनाने के लिए सविता की ध्यान साधना को अध्यात्मवेत्ताओं ने शीघ्र परिणाम प्रस्तुत करने वाला पाया है । बृहद्योगि याज्ञवल्क्य में सविता की ज्योति साधना को सर्वश्रेष्ठ माना है और कहा है कि गायत्री मंत्र का जप करते हूए सूर्य के दिव्य तेज को अपने में धारण करना चाहिए । "तत्सवितुर्वरेण्यं' में वस्तुतः सविता ही ध्येय है । सूर्योपनिषद् चाक्षुषोपनिषद् अक्ष्युपनिषद् आदि आर्ष-ग्रन्थों में इसी तेज पुंज की उपासना करने को कहा गया है । बृहत्पराशर स्मृति में सूर्य मंडल में स्थित भगवान विष्णु का ध्यान करने का विधान है । यथा-"ध्येयः सदा सवितृमण्डल मध्यवर्ती नारायण ।" युजुर्वेद वा. सं. ४०/१७ का मंत्र भी आदित्य मण्डल मध्यस्थ परमात्मा की ध्यान-धारणा करने की ओर संकेत करता है । शिव उपासक इन्हें ही ज्योतिर्लिंग के रूप में ध्यान करते हैं । गायत्री एवं सावित्री उपासक तीनों कालों में दिव्य तेजोमय सूर्य की उपासना करते हैं और सद्बुद्धि प्राप्ति के लिए अभ्यर्थना करते हैं । महाभारत वन पर्व ३/३६-३८ में इसकी महिमा महत्ता का वर्णन करते हुए ऋषि ने उन्हें ही सांख्य योगियों के प्राप्तव्य स्थल, कर्मयोगियों के आश्रयदाता एवं मुमुक्षुओं के मुक्ति प्रदाता बताया है । समस्त प्राणियों के उत्पादक, पालक, पोषणकर्ता वही हैं । सकाम या निष्काम भाव से साकार या निराकार प्रकाश पुंज के रूप में जो इन्हें जैसा मानते और उपासना करते हैं, तदनुरूप उसकी पूर्ति सविता देवता अवश्य करते हैं । श्रद्धा-विश्वास की प्रगाढ़ता ही इस फलितार्थ में महत्वपूर्ण भूमिका सम्पन्न करती है ।

भोजन पकाने में जिस प्रकार अग्नि अनिवार्य है, उसी प्रकार आत्मा को देवात्मा के रूप में विकसित करने के लिए दिव्य ऊर्जा की आवश्यकता है । देव शक्ति कोई भी क्यों न हो, किसी भी नाम, रूप या गुण, महत्व वाले देवता की आराधना भले ही की जाय, पर उसके साथ सूर्य तत्व का समावेश आवश्यक है । वेदों में देव शक्तियों का निरूपण सूर्य रश्मियों के रूप में किया गया है । अतः जिस प्रकार बिना अग्नि के भोजन नहीं पक सकता, ठीक इसी प्रकार बिना सूर्य समन्वय के किसी भी स्तर का देवाराधन सम्पन्न नहीं हो सकता ।

गायत्री मंत्र अन्य वेद मंत्रों की भाँति एक शब्द समुच्चय ही है, पर उसमें जो महती शक्ति संवेदना का बाहुल्य पाया जाता है, वह सविता शक्ति के समन्वय से ही होता है । गायत्री महामंत्र का जप और प्रातः का समन्वय होने पर ही उन लाभों का अवतरण होता है जिसका वर्णन इस महामंत्र के माहात्म्य में किया गया है । गायत्री की समग्रता तभी आती है, जब उसे सूर्य मण्डल मध्यस्था की स्थिति में अपनाया जाय । केवल मंत्र जाप भी अधूरा है और केवल ध्यान से भी अभीष्ट की पूर्ति नहीं होती । अग्नि के प्रज्ज्वलन के लिए सूखे ईंधन की भी आवश्यकता पड़ती है, अन्यथा एकाकी रहने पर वे दोनों ही निरर्थक हो जाते हैं । ईंधन न हो या गीला हो तो अग्नि के प्रज्ज्वलित कैसे हो ? अग्नि की चिनगारी तो हो, पर ईंधन न हो तो भी उद्देश्य की पूर्ति नहीं होती । मंत्र जप और सविता के प्रकाश पुंज का भाव प्रवण ध्यान मिल कर ही गायत्री माहात्म्य को समग्र बनाते और साधक को निहाल करते हैं ।

शास्त्रों मे कहा गया है कि उपासना का क्रम निराकार हो अथवा साकार दोनों ही स्थितियों में सूर्य-मण्डल की स्थापना अनिवार्य रूप से रहेगी । प्रकाश के तेजोवल को समन्वित किये बिना गायत्री महाशक्ति का ध्यान हो ही नहीं सकता ।

गायत्री भावयेद्देवी सूर्यासारकृताश्रयाम ।
प्रातमध्यह्ने ध्यान कृत्वा जपेत्सुधीः ॥

"बुद्धिमान मनुष्य को सूर्य के रूप में स्थित गायत्री देवी का प्रातः मध्याह्न और सायं त्रिकाल ध्यान करके जप करना चाहिए ।"

साकार उपासना करने वाला गायत्री माता को सूर्य-मण्डल के मध्य में अवस्थित मानकर अथवा उनके मुखारबिन्द के चारों ओर तेज-मण्डल की भावना करके ध्यान का उद्देश्य पूरा करते हैं । निराकार उपासना करने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वाले प्रकाश बिन्दु तथा उदीयमान सूर्य जैसे विशाल तेज मण्डल का ध्यान करते हुए जप के द्वारा उपासना क्रम चलाते हैं । गायत्री महामन्त्र की उपासना विधि यही है

सविता सर्वभूतानां सर्वभावश्च सूयते ।
सवनात्प्रेरणाच्चैव सविता तेन चोच्यते ।

सब प्राणियों में सब प्रकार के भावों को सविता उत्पन्न करता है । उत्पन्न और प्रेरणा करने से ही सविता कहा जाता है ।

बुद्ध बोधयिता यस्तु चिदात्मा पुरुषो विराट् ।
सवितुस्तद्वरेण्यन्तु सत्यधर्माणमीश्वरम् ॥

"बुद्धि को सन्मार्ग पर लगाने वाला जो बिराट् चिदात्मा पुरुष है, वही सत्य धर्म वाला ईश्वर रूप वन्दनीय सविता है ।" अगस्त्य ने भी इसी तथ्य की पुष्टि की है । गायत्री महामन्त्र का ध्यान करते समय जिस सविता को धारण करने की प्रेरणा है, वह रोशनी एवं गर्मी ही नहीं देता वरन् हमारी अन्तः चेतना को उत्कृष्टता की दिशा में वह प्रेरणा भी देता है, जिससे जीवनोद्देश्य को प्राप्त कर सकना सम्भव हो सके ।

यो देवः सविताऽस्माकं धियो धर्मादिगोचरा ।
प्ररयेत्तस्य सद्भर्गस्त वरोण्यमुपास्महे–अगस्त्य ॥

"सविता नामक जो देवता हमारी बुद्धि को धर्मादि में लगाते हैं, उनके वन्दनीय तेज की हम उपासना करते हैं" सविता कहते हैं । प्रातःकालीन स्वर्णिम सूर्य को वस्तुतः यह ज्ञान स्वरूप परमात्मा का नाम है । अग्निपिण्ड सूर्य तो उसकी स्थूल प्रतिमा भर है । ईश्वर की स्वयंभू प्रतिमा सूर्य को कहा गया है, ॐ उसका स्वोच्चारित नाम है ।

सूर्य को प्रकाश और तेज का प्रतीक माना गया है । चेतना क्षेत्र में इस ज्ञान को प्रकाश कहा गया है । लेटेन्ट लाइट, डिवाइन लाइट, ब्रह्मज्योति आदि शब्दों में मानवी सत्ता में दैवी अवतरण के प्रकाश के उदय की संज्ञा दी गई है । सूर्य का ध्यान करते समय साधक की भावना रहती है कि सविता देवता से निस्सृत दिव्य किरणें मेरे काय–कलेवर में प्रवेश करती हैं । फलस्वरूप स्थूल शरीर में बल, सूक्ष्म शरीर में ज्ञान और कारण शरीर में श्रद्धा का संचार करती हैं । तीनों शरीर इन अनुदानों सहित अवतरित होने वाले प्रकाश से परिपूर्ण होते चले जाते हैं । यह संकल्प जितना गहरा होता है, उसी अनुपात से चेतना में उपरोक्त विविध विशेषताएँ उभरती चली जाती हैं । इस प्रकार यह ध्यान आत्म–सत्ता के बहिरंग एवं अन्तरंग पक्ष को विकसित करने में असाधारण रूप से सहायक सिद्ध होता है ।

प्रकाश ध्यान का आरम्भ सूर्य को पूर्व दिशा में उदय होते हुए परिकल्पित करने की भावना से होता है । उसकी किरणें अपने काय–कलेवर में प्रवेश करती हैं और तीनों शरीरों को असाधारण रूप से सशक्त बनाती हैं । स्थूल शरीर को अग्निपुञ्ज, अग्निपिण्ड, सूक्ष्म शरीर को प्रकाशमय, ज्योतिर्मय, कारण शरीर को दीप्तिमय, कान्तिमय, आभामय बनाती हैं । समूची जीवन सत्ता ज्योतिर्मय हो उठती है । इस स्थिति में स्थूल शरीर को ओजस्, सूक्ष्म को तेजस् और कारण शरीर को वर्चस् अनुदान उपलब्ध होते हैं । इस ध्यान धारणा का चमत्कारी प्रतिफल साधक को शीघ्र ही दृष्टिगोचर होने लगता है । स्थूल शरीर में उत्साह एवं स्फूर्ति, सूक्ष्म शरीर में संतुलन एवं विवेक, कारण शरीर में श्रद्धा एवं भक्ति का दिव्य संचार इस प्रकाश ध्यान के सहारे उठता, उभरता दीखता है । मोटी दृष्टि से लाभ सामान्य प्रतीत हो सकते हैं । किन्तु जब इस अन्त विकास की प्रतिक्रिया सामने प्रस्तुत होगी तो प्रतीत होगा कि यह सामान्य साधना कितना असामान्य प्रभाव परिणाम उपलब्ध कराती है ।

सूर्य के प्रकाश ध्यान का प्रथम चरण बाहर के सूर्य की दिव्य किरणों का प्रवेश आत्मसत्ता में कराने का है । दूसरा चरण अन्तः सूर्य की मान्यता परिपुष्ट करके उसका प्रकाश बाह्य जगत में फैलाने का है । इस अपने अनुदान विश्व मानव के लिए प्रेरित करने की प्रक्रिया कह सकते हैं । प्रथम चरण को संग्रह और दूसरे को विसर्जन कह सकते हैं । द्वितीय चरण में अंतःक्षेत्र में सूर्योदय होने की मान्यता है । स्थूल शरीर का मध्य केन्द्र नाभि चक्र, सूक्ष्म शरीर का आभा चक्र, और कारण शरीर का हृदय चक्र है । इनमें से किस साधक को किस केन्द्र पर ब्रह्म चेतना के प्रतीक सविता देव के उदय की भावना करनी चाहिए । इसका निर्धारण अपनी व्यक्तिगत स्थिति का सूक्ष्म पर्यवेक्षण करते हुए करना होता है ।

अन्तः सूर्य की धारणा परिपक्व होने पर उसका प्रकाश निकटवर्ती क्षेत्र को प्रकाशित करता ही है, साथ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ही उसका प्रभाव बाह्य गत में भी फैलता है, उससे वातावरण में किन्हीं सामाजिक सत्प्रेरणाओं को सुविस्तृत किया जा सकता है। मनुष्य के किसी वर्ग विशेष को उपयोगी प्रेरणाओं से प्रभावित किया जा सकता है। किसी व्यक्ति विशेष के अभावों की पूर्ति भी इस आधार पर की जा सकती है। मनुष्येतर प्राणियों पर भी इसका प्रभाव पड़ सकता है इसी प्रकार वनस्पति जगत–पदार्थ सम्पदा की स्थिति में सुधार करने के लिए भी अन्तःसूर्य की क्षमता का परिपोषण होना सम्भव है। यह कितना प्रभाव उत्पन्न कर सकेगा, यह इस पर निर्भर है कि साधक का संयम बल, मनोबल और श्रद्धा बल किस स्तर का है। यह समर्थता साधना की प्रखरता और व्यक्तित्व की उत्कृष्टता पर निर्भर रहती है।

ध्यानयोग में ज्योति दर्शन की श्रेष्ठता का प्रतिपादन करते हुए शास्त्रकार कहते हैं:–

तत्तजो दृश्यते येन क्षणमात्रं निराकुलम्।
सर्वपाप विनिर्मुक्तः स याति परमां गतिम्॥

–शिव संहिता

भावार्थः–आत्मा का यह परमतेज जो पुरुष चिर स्थित होकर क्षण मात्र भी देखता है, वह सब पाप से मुक्त होकर परमगति को प्राप्त होता है।

ज्योतिः पश्यति योगीन्द्रः शुद्धं शुद्धा चलोपमम्।
तत्राभ्यास बलेनैव स्वयं तद्रूपको भवेत्॥

–शिव संहिता

ज्योति का ध्यान करने वाले साधक की ज्योति जब अचल हो जाती है, तब वह साधना ही अपने बल से साधक की रक्षा करती है।

ध्यानयोग में ज्योति दर्शन के भेद उपभेद समझाते हुए शास्त्रकार कहते हैं:–

स्थूलं ज्योतिस्तथासूक्ष्मं ध्यानस्यत्रिविधिं बिंदु।
स्थूलं मूर्तिमयं प्रोक्तं ज्योतिस्तेजो मयं तथा।
सूक्ष्म बिन्दुमयं बृह्म कुण्डलनी पर देवता॥

घेरण्ड संहिता ६/१

ध्यान तीन प्रकार का होता है स्थूलध्यान, ज्योतिर्ध्यान एवं सूक्ष्मध्यान जिसमें मूर्ति, इष्ट देवता अथवा गुरु का चिन्तन हो, उसे स्थूल, और जिसमें तेजोमय ब्रह्मय या शक्ति की भावना हो उसे ज्योतिर्ध्यान कहते हैं। जिस ध्यान के द्वारा बिन्दुमय ब्रह्म कुण्डलिनी शक्ति का ध्यान हो उसे सूक्ष्म ध्यान कहते हैं।

गायत्री महाशक्ति की आरम्भिक साधना में माता के रूप में साकार उपासना की आवश्यकता पड़ती है, किन्तु उच्चस्तरीय साधना के लिए प्रकाश ध्यान को ही अपनाना पड़ता है। गायत्री की उच्च भूमिका सवितामय बन जाती है। गायत्री का प्राण प्रकाश पुञ्ज सविता देवता ही है। अस्तु समुन्नत भूमिका के साधक प्रकाश के ध्यान का ही अवलम्बन करते हैं। विभिन्न प्रसंगों में श्रुति यही कहती आयी है। ताण्डयोपनिषद (१०/५/३) कहता है–"तेजसा वे गायत्री एवं ज्योतिर्वे गायत्री छन्दसाम्" (१३/७/२) यजुर्वेद कहता है–"सविता वे प्रसवानामीशे अर्थात् सबको उत्पन्न करने वाला परमेश्वर सविता है।" छान्दोग्य उषनिषद में ऋषि कहते हैं– य एष आदित्ये पुरुषोदृश्यते सोहमस्मि स एवाहम स्मीति॥

अर्थात् "आदित्य–मण्डल में जो पुरुष देखा जाता है वह मैं हूँ। उसे अपना ही स्वरूप समझना चाहिए।" शास्त्रकार आगे कहते हैं–

आदित्य मण्डल ध्याये त्परमात्मा नमव्ययम्

–शौनक स्मृति

आदित्य मण्डल में अव्यय परमात्मा का ध्यान करना चाहिए।

सविता सूर्व भूतानां सर्वभावाश्च सूयते।
सर्वनात्प्रेरणाच्चैव सविता तेन चोच्यते॥

अर्थात् "समस्त तत्वों सभी, प्राणियों और समस्त भावनाओं को प्रेरणा देने के कारण ही उसे सविता कहते हैं"।

यो देवः सवितास्नाकंधियो धर्मादि कर्माणि।
प्ररेयेत्तस्य तत् स्तिद्वरेण्यमुपस्यहे॥

अर्थात् जो सविता देवता हमें धर्म एवं कर्त्तव्य की प्रेरणा करता है। उसके वरेण्य भर्ग की हम उपासना करें।

देवस्य सवितुर्यच्च भर्गमन्तर्गत विभुम।
ब्रह्मवादिन एवाहुर्वरेण्यम् तच्च धीमहि॥

"सविता देव के अन्तर्गत तेज को ब्रह्मज्ञानी वरेण्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

अर्थात् श्रेष्ठ कहते हैं, उसी का हम ध्यान करते हैं । सन्ध्या योग में इसका और भी अधिक स्पष्टीकरण किया गया है और बताया गया है, कि जिस भावना का हम ध्यान करते हैं, वह मन को एकाग्र करने के लिए कोई प्रकाश गोलक मात्र नहीं वरन् वह परम तेजस्वी परमात्मा है जो हमारी बुद्धि, अन्तः चेतना, भावना एवं आस्था को सन्मार्ग की ओर प्रेरित करता है ।

प्रत्यक्ष अग्नि सूर्य भी प्राण–चेतना का प्रतीक है । अस्तु उसका सम्पर्क सान्निध्य भी साधक में प्राण संचार करता है ।यह प्राण प्रतिभा भी आत्मिक प्रगति के लिए कम महत्वपूर्ण नहीं है । प्राणाग्नि उपलब्ध करने के लिए भी सूर्योपासना की उपयोगिता है । इस तथ्य का प्रतिपादन इस प्रकार शास्त्रों में उपलब्ध होता है ।

प्राणः प्रजानामुदयत्येष सूर्यः

–प्रश्नोपनिषद

प्रजा के लिए प्राण बनकर सूर्य उदय होता है ।

समृता को परब्रह्म का प्रतीक माना गया है । शत पथ ब्राह्मण की श्रुति है–

आदित्ये ब्रह्म इति आर्दशः

आदित्य ब्रह्म ही है । वह परम्परागत तथ्य है । सूर्य को आत्मा और परमात्मा का सम्मिश्रण भी कहा गया है–

यो असौ आदित्य पुरुषः सो असौ अहम् ।

–यजु

इस सूर्य मण्डल में जो पुरुष है वह मेरी ही आत्मा है ।

इसी कारण ऋग्वेद में ध्यान के लिए प्रातःकाल के उदीयमान सूर्य को सर्वोत्तम माध्यम माना गया है ।"अथ आदित्य उदयन प्राची दिशां सर्वान् प्राणान् रश्मिसु सन्निधत्ते" मन्त्र में प्रातःकाल के उदीयमान सूर्य की किरणों को प्राण वर्षा करने वाली कहा गया है । आत्म सत्ता में प्राण तत्व का आकर्षण अभिवर्द्धन करने के लिए इस ध्यान प्रक्रिया का विशेष महत्व है ।

उपासना में मध्यकालीन प्रौढ़ सूर्य को नहीं, प्रभात कालीन स्वर्णिम सूर्य को ही उपयुक्त माना गया है । भावना संज्ञा उसी की है । ध्यान में स्वर्ण कान्ति वाले नवोदित सविता का ध्यान करने का ही निर्देश है । इसकी फलश्रुतियों का साधक को शीघ्र ही अनुभव होने लगता है ।

प्रकाश ज्योति की साधना करने वाले साधक को कई प्रकार की, कई आकृतियों की कई रंगों की ज्योतियों के दर्शन होते हैं । यह भ्रान्तियाँ नहीं हैं वरन् सूक्ष्म लोक की विशेष धाराएँ हैं, जिस प्रकार नादयोग में कई प्रकार की ध्वनियाँ सुनाई पड़ती हैं और उनके पीछे कुछ दिव्य संकेत संदेश होते हैं । इसी प्रकार बिन्दुयोग साधना के अन्तर्गत किये जाने वाली सविता देव की प्रकाश ज्योति की ध्यान–धारणा में ही कई रंगों के प्रकाशों का दर्शन होना भी दिव्य अनुभूतियों की श्रेणी में ही गिना जायगा ।

ध्यानयोग के लिए आश्रय किसी भी प्रतीक के अथवा परमात्मा के दिव्य विराट रूप के, चिन्तन रूप में लिया जा सकता है । महत्वपूर्ण बात यह है कि जिन गुणों का ध्यान किया जा रहा है वे साधक को कितना अनुप्राणित कर पाए उसके जीवन में किस सीमा तक उतरे ? ध्यान से सिद्धि बाद की बात है, पहले सविता के ध्यान द्वारा प्राण शक्ति के अपने अन्दर होने की धारणा की जाय वही उत्तम है ।

सविता उपासना–प्रकाश की साधना

आध्यात्म विज्ञान में स्थान–स्थान पर प्रकाश की साधना और प्रकाश की याचना की चर्चा मिलती है । यह प्रकाश बल्ब, बत्ती अथवा सूर्य, चन्द्र आदि से निकलने वाला उजाला नहीं वरन् वह परम ज्योति है जो इस विश्व में चेतना का आलोक बनकर जगमगा रही है । गायत्री का उपास्य सविता देवता इसी परम ज्योति को कहते हैं । इसका अस्तित्व ऋतम्भरा प्रज्ञा के रूप में प्रत्यक्ष और कण–कण में संव्याप्त जीवन ज्योति के रूप में प्रत्येक व्यक्ति अपने भीतर देख सकता है । इसकी जितनी मात्रा जिसके भीतर विद्यमान हो समझना चाहिए, कि उसमें उतना ही अधिक ईश्वरीय अंश आलोकित हो रहा है ।

मस्तिष्क के मध्य भाग से प्रकाश कणों का एक फुव्वारा सा फूटता रहता है । उसकी उछलती हुई तरंगें एक वृत्त बनाती हैं और फिर अपने मूल उद्गम में लौट

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जाती हैं । यह रेडियो प्रसारण और संग्रहण जैसी प्रक्रिया है, ब्रह्मरन्ध्र से छूटने वाली ऊर्जा अपने भीतर छिपी हुई भाव स्थिति को विश्व–ब्रह्माण्ड में ईथर कम्पनों द्वारा प्रवाहित करती रहती है, इस प्रकार मनुष्य अपनी चेतना का परिचय और प्रभाव समस्त संसार में फेंकता रहता है । फुहारे की लौटती हुई धाराएँ अपने साथ विश्व व्यापी असीम ज्ञान की नवीनतम घटनात्मक तथा भावनात्मक जानकारियाँ लेकर लौटती हैं, यदि उन्हें ठीक तरह समझा जा सके, ग्रहण किया जा सके, तो कोई भी व्यक्ति भूतकालीन और वर्तमान–काल की अत्यन्त सुविस्तृत और महत्वपूर्ण जानकारियाँ प्राप्त कर सकता है । व्यक्ति में प्रवाह ग्रहण करने की और प्रसारित करने की जो क्षमता है उसका माध्यम यह ब्रह्मरन्ध्र अवस्थित ध्रुव संस्थान ही है । पृथ्वी पर अन्य ग्रहों का प्रचुर अनुदान आता है तथा उसकी विशेषताएँ अन्यत्र चली जाती हैं । यह आदान–प्रदान का कार्य ध्रुव केन्द्रों द्वारा सम्पन्न होता है शरीर के भी दो ध्रुव हैं –एक मस्तिष्क, दूसरा जनन गह्वर । चेतनात्मक विकिरण मस्तिष्क से और शक्ति परक ऊर्जा प्रवाह जनन गह्वर से सम्बन्धित है । सूक्ष्म आदान–प्रदान की अति महत्वपूर्ण प्रक्रिया इन्हीं केन्द्रों के माध्यम से संचालित होती है ।

शारीरिक और मानसिक स्थिति के अनुरूप तेजोवलय की स्थिरता बनती है । यदि स्थिति बदलने लगे तो प्रकाश पुंज की स्थिति भी बदल जायगी । इतना ही नहीं समय–समय पर मनुष्य के बदलते हुए स्वभाव तथा चिन्तन स्तर के अनुरूप उसमें सामयिक परिवर्तन होते रहते हैं । सूक्ष्मदर्शी उसकी भिन्नताओं को रंग बदलते हुए परिवर्तनों के रूप में देख सकते हैं । शान्ति और सज्जनता की मनःस्थिति हल्के नीले रंग में देखी जायेगी । विनोदी, कामुक, सत्तावान, वैभवशाली, विशुद्ध व्यवहार कुशल स्तर की मनोभूमि पीले रंग की होती है । क्रोधी, अहंकारी, क्रूर, निष्ठुर, स्वार्थी, हठी और मूर्ख मनुष्य लाल वर्ण के तेजोवलय से घिरे रहते हैं । हरा रंग सृजनात्मक एवं कलात्मक प्रकृति का द्योतक है । गहरा बैंगनी चंचलता और अस्थिर मति का प्रतीक है । धार्मिक, ईश्वर भक्त और सदाचारी व्यक्तियों की आभा केशरिया रंग की होती है । इसी प्रकार विभिन्न रंगों का मिश्रण मनुष्य के गुण, कर्म, स्वभाव के परिवर्तनों के अनुसार बदलता रहता है । यह तेजोवल सदा स्थिर नहीं रहता । बदलती हुई मनोवृत्ति प्रकाश पुंज के रंगों में परिवर्तन कर देती है । यह रंग स्वतन्त्र रूप से कुछ नहीं । मनोभूमि में होने वाले परिवर्तन, शरीर से निःसृत होते रहने वाले ऊर्जा कम्पनों की घटती–बढ़ती संख्या के आधार पर आँखों को अनुभव होते हैं । वैज्ञानिक इन्हें "फ्रीक्वेन्सी आफ दी वेव्स' कहते हैं ।

दिव्य दर्शन (क्लेयर बाइन्स), दिव्य अनुभव (साइक्रो मैट्री), प्रभाव प्रेषण (टेलीपैथी), संकल्प प्रयोग (सजेशन) जैसे प्रयोग थोड़ी आत्म–शक्ति विकसित होते ही आसानी से किये जा सकते हैं । इन विद्याओं पर पिछले दिनों से काफी शोध कार्य होता चला आ रहा है और उन प्रयासों के फलस्वरूप उपयोगी निष्कर्ष सामने आये हैं । पर मनोविज्ञान, अतीन्द्रिय विज्ञान, मैटाफिजिक्स जैसी चेतनात्मक विद्यायें भी अब रेडियो विज्ञान तथा इलेक्ट्रोनिक्स की ही तरह विकसित हो रही हैं । अचेतन मन की सामर्थ्य के सम्बन्ध में जैसे–जैसे रहस्यमय जानकारियों के पर्त खुलते हैं, वैसे–वैसे स्पष्ट होता जाता है कि नर पशु लगने वाला मनुष्य वस्तुतः असीम और अनन्त क्षमताओं का भण्डार है, कठिनाई इतनी भर है कि उसकी अधिकांश विकृतियाँ प्रसुप्त अविज्ञात–स्थिति में पड़ी हैं ।

प्रकाश रश्मियों की लम्बाई एक इंच के सोलह सौ तीस लाखवें हिस्से के बाराबर होती है । रेडियो पर सुनी जाने वाली ध्वनि तरंगों की गति एक सैकण्ड में एक लाख, छियासी हजार मील की होती है, वे एक सैकण्ड में सारी धरती की सात परिक्रमा कर लेती हैं । शब्द और प्रकाश की तरंगों का आकार एवं प्रवाह इतना सूक्ष्म एवं गतिशील है कि उन्हें बिना सूक्ष्म यन्त्रों की सहायता के हमारी इन्द्रियाँ अनुभव नहीं कर सकती हैं ।

डा० जे० सी० ट्रस्ट ने "अणु और आत्मा" ग्रन्थ में स्वीकार किया है कि मानव अणुओं की प्रकाश वाष्प न केवल मनुष्यों में वरन् अन्य जीवधारियों, वृक्ष, वनस्पति, औषधि आदि में भी होती है, यह प्रकाश अणु ही जीवधारी के यथार्थ शरीरों का निर्माण करते हैं । खनिज पदार्थों से बना मनुष्य या जीवों का शरीर तो तभी तक स्थिर रहता है, जब तक यह प्रकाश अणु शरीर में रहते हैं । इन प्रकाश अणुओं के हटते ही स्थूल शरीर बेकार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हो जाता है, फिर उसे जलाते या गाड़ते ही बनाता है । खुला छोड़ देने पर तो उसकी सड़ाँद से उसके पास एक क्षण भी ठहरना कठिन हो जाता है ।

स्वभाव, संस्कार, इच्छायें, क्रिया–शक्ति यह सब इन प्रकाश अणुओं का ही खेल है । हम सब जानते हैं कि प्रकाश का एक अणु (फ्रेटोन) भी कई रंगों के अणुओं से मिलकर बना होता है । मनुष्य शरीर की प्रकाश आभा भी कई रंगों से बनी होती है । डा० जे० सी० ट्रस्ट ने अनेक रोगियों, अपराधियों तथा सामान्य व श्रेष्ठ व्यक्तियों का सूक्ष्म निरीक्षण करके बताया है कि जो मनुष्य जितना श्रेष्ठ और अच्छे गुणों वाला होता है, उसके मानव अणु, दिव्य तेज और आभा वाले होते हैं, जबकि अपराधी और रोगी व्यक्तियों के प्रकाश अणु क्षीण और अन्धकारपूर्ण होते हैं । उन्होंने बहुत से मनुष्यों के काले धब्बों को अपनी दिव्य दृष्टि से देखकर उनके रोगी या अपराधी होने की बात को बताकर लोगों को स्वीकार करा दिया था कि सचमुच रोगी और अपराधी वृत्तियाँ काले रंग के अणुओं की उपस्थिति का प्रतिफल होते हैं, मनुष्य अपने स्वभाव में चाहते हुए भी तब तक परिवर्तन नहीं कर सकता, जब तक यह दूषित प्रकाश अणु अपने अन्दर विद्यमान बने रहते हैं ।

यही नहीं जन्म–जन्मान्तरों तक खराब प्रकाश अणुओं की यह उपस्थिति मनुष्य से बलात्, दुष्कर्म कराती रहती है, इस तरह मनुष्य पतन के खड्डे में बार–बार गिरता और अपनी आत्मा को दुखी बनाता रहता है । जब तक यह अणु नहीं बदलते, न निष्क्रिय होते, तब तक मनुष्य किसी भी परस्थिति में अपनी दशा नहीं सुधार पाता ।

यह तो है कि अपने प्रकाश अणुओं में यदि तीव्रता है तो उस से दूसरों को आकस्मिक सहायता दी जा सकती है । रोग दूर किये जा सकते हैं । खराब विचार वालों को कुछ देर के लिए अच्छे सन्त–स्वभाव में बदला जा सकता है । महर्षि नारद के सम्पर्क में आते ही डाकू वाल्मीकि के प्रकाश अणुओं में तीव्र झटका लगा और वह अपने आपको परिवर्तित कर डालने को विवश हुआ । भगवान बुद्ध के इन प्रकश–अणुओं से निकलने वाली विद्युत विस्तार सीमा में आते ही डाकू अंगुलिमाल की विचारधारायें पलट गई थीं । ऋषियों के आश्रमों में गाय और शेर एक घाट पानी पी आते थे, वह इन प्रकाश–अणुओं की ही तीव्रता के कारण होता था । उस वातावरण से निकलते ही व्यक्तित्वगत प्रकाश अणु फिर बलवान हो उठने से लोग पुनः दुष्कर्म करने लगते हैं, इसलिए किसी को आत्म–शक्ति या अपना प्राण देने की अपेक्षा भारतीय आचार्यों ने एक पद्धति का प्रसार किया था, जिनमें इन प्रकाश–अणुओं का विकास कोई भी व्यक्ति इच्छानुसार कर सकता था । देव उपासना उसी का नाम है ।

उपासना एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है, जिसमें हम अपने भीतर के काले, मटमैले और पापाचरण को प्रोत्साहन देने वाले प्रकाश अणुओं को दिव्य तेजस्वी, सदाचरण और शान्ति एवं प्रसन्नता की बृद्धि करने वाले मानव–अणुओं में परिवर्तित करते हैं । विकास की इस प्रक्रिया में किसी नैसर्गिक तत्व, पिण्ड या ग्रह–नक्षत्र की साझेदारी होती है । उदाहरण के लिए जब हम गायत्री की उपासना करते हैं तो हमारे भीतर के दूषित प्रकाश अणुओं को हटाने और उसके स्थान पर दिव्य प्रकाश अणु भर देने का माध्यम 'गायत्री' का देवता सविता अर्थात् सूर्य होता है ।

वर्ण रचना और प्रकाश की दृष्टि से यह मानव–अणु भिन्न–भिन्न स्वभाव के होते हैं । मनुष्य का जो कुछ भी स्वभाव आज दिखाई देता है, वह इन्हीं अणुओं की उपस्थिति के कारण होता है । यदि इस विज्ञान को समझा जा सके तो न केवल अपना जीवन शुद्ध, सात्विक, सफल, रोग मुक्त बनाया जा सकता है, वरन् औरों को भी प्रभावित और इन लाभों से लाभान्वित किया जा सकता है । परलोक और सद्गति के आधार भी यह प्रकाश–अणु या मानव–अणु ही हैं ।

वस्तुयें हम प्रकाश की सहायता से देख सकते हैं । किन्तु साधारण प्रकाश कणों की सहायता से हम शरीर के कोश (सैल) को देखना चाहें तो वह इतने सूक्ष्म हैं कि इन्हें देख नहीं सकते । इलेक्ट्रोनों को जब ५०००० बोल्ट आवेश पर सूक्ष्मदर्शी (माइक्रोस्कोप) में भेजा जाता है तो उनकी तरंग–दैर्ध्य श्वेत प्रकाश कणों की तुलना में १/१०००० भाग सूक्ष्म होती हैं, तब वह हाइड्रोजन के परमाणु का जितना व्यास होता है, उससे भी ४२.४ वें हिस्से छोटे परमाणु में भी प्रवेश करके वहाँ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की गतिविधियाँ दिखा सकती हैं । उदाहरण के लिए यदि मनुष्य की आँख एक इन्च घेरे को देख सकती है, तो उससे भी ५०० अंश कम को प्रकाश सूक्ष्मदर्शी और १०००० अंश छोटे भाग को इलेक्ट्रोन सूक्ष्मदर्शी । इसी से अनुमान लगा सकते हैं कि मनुष्य शरीर के कोश (सेल्स) का चेतन भाग कितना सूक्ष्म होना चाहिए । इस तरह के सूक्ष्मदर्शी से जब कोश का निरीक्षण किया गया तो उसमें भी एक टिमटिमाता हुआ प्रकाश दिखाई दिया । चेतना या महत्तत्व इस प्रकार प्रकाश की ही अति सूक्ष्म स्फुरणा है, यह विज्ञान भी मानता है ।

भारतीय योगियों ने ब्रह्मरन्ध्र स्थित जिन षट्चक्रों की खोज की है, सहस्रार कमल उनसे बिल्कुल अलग सर्वप्रभुता सम्पन्न है । यह स्थान कनपटियों से दो-दो इन्च अन्दर भ्रुकुटि से लगभग ढाई या तीन इंच अन्दर छोटे से पोले में प्रकश पुंज के रूप में है । तत्वदर्शियों के अनुसार यह स्थान उल्टे छाते या कटोरे के समान १७ प्रधान प्रकाश तत्वों से बना होता है, देखने में मरकरी लाइट के समान दिखाई देता है । छान्दोग्य उपनिषद् में सहस्रार दर्शन की सिद्धि पाँच अक्षरों में इस तरह प्रतिपादित की *'तस्य सर्वेषु कामचारी भवति'* अर्थात् सहस्रार प्राप्त कर लेने वाला योगी सम्पूर्ण भौतिक विज्ञान प्राप्त करने में समर्थ हो जाता है । यही वह शक्ति केन्द्र है जहाँ से मस्तिष्क शरीर का नियन्त्रण करता है और विश्व में जो कुछ भी मानवकृत विलक्षण विज्ञान दिखाई देता है, उनका सम्पादन करता है ।

आत्मा या चेतना जिन अणुओं से अपने को अभिव्यक्ति करती है, वह यह प्रकाश अणु ही है, जबकि आत्मा स्वयं उससे भिन्न है । प्रकाश-अणुओं को प्राण, विधायक शक्ति, अग्नि, तेजस कहना चाहिए, वह जितने शुद्ध दिव्य तेजस्वी होंगे, व्यक्ति उतना ही महान् तेजस्वी, यशस्वी, वीर, साहसी और कलाकार होगा । महापुरुषों के तेजोबल उसी बात के प्रतीक हैं जबकि निकृष्ट कोटि के व्यक्तियों में यह अणु अत्यन्त शिथिल मन्द और काले होते हैं । हमें चाहिए कि हम इन दूषित प्रकाश अणुओं को दिव्य अणुओं में बदलें और अपने को भी महापुरुषों की श्रेणी में ले जाने का यत्न करें ।

इस संदर्भ में अनेकानेक उपयोग भौतिक विज्ञानियों ने भी किये हैं और सफल रहे हैं । श्रीमती जे० सी० ट्रस्ट ने अपने प्रयोग में एक ऐसे व्यक्ति को चुना जो छोटी-छोटी बातों में उत्तेजित हो जाता था । वह दिन में कई-कई बार क्रुद्ध हो जाने के कारण बहुत दुबला पड़ चुका था, सर्दी-गर्मी के हल्के परिवर्तन भी उसको कष्टदायक प्रतीत होते, उसे कोई न कोई बीमारी प्रायः बनी रहती थी ।

एक बार जब वह भरे गुस्से में था, तब श्रीमती ट्रस्ट ने उसे लिटा दिया और उसके नंगे शरीर पर बालू की हलकी पर्त बिछा दी । उनके शिष्य, अनुयायी और कई वैज्ञानिक भी उपस्थिति थे । उन सब ने बड़े कौतूहल के साथ देखा कि जिस प्रकार पानी से भरी काँसे की थाली को बजाने से पानी की थरथरी, काँसे के अणुओं में उत्तेजन और स्पन्दन का अभास कराती है, उसी प्रकार मनुष्य के शरीर से भी प्रकाश-अणु निरन्तर निःसृत होते और थरथरी पैदा करते रहते हैं ।

क्रोध जैसे उत्तेजनशील आवेश के समय यह प्रकाश-अणु बड़ी तेजी से थरथराते हुए निकलते हैं, इसलिए उस समय तो स्पष्ट आभास हो जाता है पर सामान्य स्थिति में प्रकाश कणों की थरथराहट धीमी होती है । जो व्यक्ति जितना अधिक शान्त, कोमल-चित्त, मधुर स्वभाव, मित भाषी, स्थिर बुद्धि का होता है, उसके सूक्ष्म शरीर के प्रकाश-अणु बहुत धीरे-धीरे निकलते हैं और बहुत समय तक शरीर में शक्ति, उष्णता और सहनशीलता बनाये रखते हैं । ऋतुओं के आकस्मिक परिवर्तन भी शरीर पर दबाव नहीं डाल पाते ।

रासायनिज्ञ रोमेल ने भी इस तथ्य को एक प्रयोग द्वारा सिद्ध करके दिखा दिया कि शरीर में निरन्तर विद्युत चुम्बकीय उर्मियाँ (कम्पन) निकलते और मानव अणुओं को बाहर निकालते रहते हैं । उन्होंने रेडियो-फास्फोरस, रेडियो-आयोडीन आदि रेडियो धर्मी औषधियाँ खाईं तो चमक के साथ प्रकाश किरणें सी शरीर से स्पष्ट लपकती जान पड़ीं । दरअसल अणुओं की इस आभा का छिटकना जीवन के लिए बड़ा महत्त्वपूर्ण है, यदि यह क्रिया शरीर में न चल रही होती तो न तो शरीर की गन्दगी बाहर निकलती और न ही पुराने कोश (सेल्स) नये कोशों में बदल कर शरीर को स्वस्थ रखते । देखने में आया है कि इन अणुओं के निकलते ही शरीर के कोश बदलने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की अपेक्षा सड़ने लगते हैं और कुछ ही देर में शरीर से बदबू आने लगती है ।

शरीर से जीवन अणुओं का निकलना एक वैज्ञानिक सिद्धान्त है, उसकी अपेक्षा महत्त्वपूर्ण जानकारी है, शरीर में पहले से व्याप्त इन प्रकाश–अणुओं में से घूमिल, मटमैले, गन्दे संस्कारों वाले प्रकाश अणुओं के स्थान पर दिव्य अणुओं का विकास । यदि इस विकास के विज्ञान को कोई जान ले तो उसके लिये सृष्टि की नैसर्गिक शक्तियों के दिव्य प्रकाश कणों को आकर्षित करना ही सुगम न हो जाये वरन् वह व्यक्ति बड़ी आसानी से किसी के द्वारा प्रेक्षित सन्देश और शक्ति–संचार को भी बड़ी तेजी से अपने अन्दर भरता हुआ, उसी प्रकार उन शक्तियों से ओत–प्रोत हो सकता है, जिस प्रकार बड़े तालाब से नाली निकालकर किसी भी छोटे गड्ढे को अपनी पात्रता भर लेते हैं । किसी के कष्ट निवारण, छाया शरीर का नियन्त्रण, प्रकाश प्रवेश और समाधि–अवस्था में सुदूर प्रान्तरों एवं ग्रह–नक्षत्रों में विचरण सब इसी विद्या की शाखायें हैं ।

प्रकाश–अणुओं के आकर्षण की एक क्रिया तो अपने आप शरीर के द्वारा चलती रहती है, यों हमारा सीधा सम्पर्क सूर्य की गर्मी या प्रकाश–अणुओं से है, तथापि हम जहाँ भी हैं, वहाँ इस ब्रह्मांड के लाखों–करोड़ों ग्रह–नक्षत्रों के प्रकाश–कण विद्यमान होकर एक विलक्षण शक्ति के रूप में वायु में घुले हमारी साँस और त्वचा के द्वारा भीतर जाते हैं । वैज्ञानिक इसे ही 'वाइटल फोर्स' और भारतीय तत्त्व–वेत्ता उसे ही 'प्राण' कहते हैं ।

पराकासनी (इन्फ्रारेन) विकिरण तो शरीर में पर्याप्त भीतर तक घुस जाता है और उसके अणु या ऊष्मा भीतर ही भीतर बिखर जाती है । मनुष्य की त्वचा एक मिलीमीटर गहराई तक इन किरणों को संप्रेषित करती रहती हैं । काली चमड़ी वालों में यह प्रकाश–कण सोखने (टु आब्जार्व) की क्रिया धीमी होती है, फिर यही विद्युत–चुम्बकीय तरंगें स्नायु सूत्रों तथा विद्युत चालकों, प्रोटानों के माध्यम से शरीर के सभी कोनों में फैल जाती हैं ।

शरीर के दूसरे अवयव जैसे कोशिकाओं, रक्त, माँस, मज्जा, कारटेक्स (मस्तिष्क के आन्तरिक भाग को कारटेक्स कहते हैं) तथा स्नायु सूत्रों में भी प्रकृति की अन्य वस्तुओं की भाँति ही कई प्रकार के विकिरणों (प्रकाश के छिटके हुये अणु प्रवाह) को ग्रहण करने, परिवर्तन, शोषण, सम्प्रेषण तथा पुनः विकिरण करने की भी क्षमता होती है । इस क्रिया पर ही स्वस्थ, दुर्बल, युवा अथवा वृद्ध होना निर्भर है । प्राणायाम द्वारा प्राणों का नियन्त्रण और योगाभ्यास द्वारा उन शरीर–संस्थानों को जागृत करना जो प्राण–शक्ति को आकाश में से बहुतायत से खींच सकते हैं, वृद्ध होने पर भी अपने शरीर को बलवान् और तेजस्वी बनाये रखते हैं ।

मस्तिष्क द्वारा भी किन्हीं अनजाने प्रकाश–स्रोतों के प्रकाश–कण आकर्षित कर प्रकाश शरीर वाले सूक्ष्म शरीर को विकसित किया जा सकता है, यह थोड़ी कठिन उपपत्ति (सोलूशन) है, तथापि विज्ञान अब उसे भी प्रमाणित करने लगा है । इस प्रमाण के लिये बेचारे रूसी खगोल शास्त्री श्री चिजोव्स्की को भारी तप करना पड़ा ।

पहले तो वह घण्टों कभी सूर्य की तेज धूप में तो कभी चन्द्रमा के शीतल प्रकाश में बैठे रहते और होने वाले अपने मानसिक परिवर्तनों को लिखते रहते । फिर उन्होंने पिछले ४०० वर्षों के इतिहास में मानवीय स्वभाव के उतार–चढ़ाव तथा अनेक प्रकार की बीमारियों के वार्षिक आँकड़े एकत्रित कर देखा कि सूर्य आदि की चमक और उसके ११ वर्षीय कलंकों (सन–स्पाट्स) का मनुष्य की मनोदशा से गहरा सम्बन्ध है । इस सम्बन्ध में विस्तृत चर्चा तो कभी बाद में करेंगे पर यहाँ यह समझ लेना नितान्त आवश्यक है कि विचार प्रणाली का सम्बन्ध मस्तिष्क की जिन थायोराइड, एड्रीनल और पिचुट्री आदि ग्रन्थियों से हैं, वे सब नालिका विहीन (डक्टलेस) होती हैं, अर्थात् किसी प्रकार का रासायनिक प्रवाह न होना, प्रकाश या प्राण के इस कारण ही उसी तरह प्रवाहित होते हैं, जिस प्रकार तार में विद्युत–कण । जैसे–जैसे यह प्रकाश–कण होते हैं, वैसे–वैसे भाव उठते हैं । सूर्य की तेज धूप में क्लान्ति, क्रोध, बीरता जैसे भाव आते हैं, तो चन्द्रमा के प्रकाश में आल्हाद और कामुकता के । अब यदि कोई व्यक्ति अपना ध्यान किसी प्रकाश–स्रोत पर लगाता है तो इसका अर्थ यह हुआ कि हमारी नलिका विहीन ग्रन्थियाँ उस स्रोत विशेष से विद्युत चुम्बकीय सम्बन्ध स्थापित कर लेती हैं और वह कण तेजी से हमारे अन्दर भरने लगते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं। ध्यान जितना एकाग्र और गहन होता है, इस आकर्षण की और सूक्ष्म शरीर के विकास की गति को हम उतना ही स्पष्ट अनुभव करते–करते एक दिन उस स्रोत से तादात्म्य कर सिद्धि प्राप्त कर लेते हैं।

गायत्री उपासना के साथ सूर्य का ध्यान भी करना पड़ता है। ध्यान की अवस्था में सूर्य के विद्युत–चुम्बकीय प्रवाह से अपने मस्तिष्क की चोटी वाले स्थान से नालिका विहीन ग्रन्थियों का सम्बन्ध जुड़ जाता है और सूर्य तेज के कण हमारे शरीर में प्रवेश करते हुये चले जाते हैं, इस तरह अपना प्राण शरीर विकसित होता हुआ सूर्य प्रकाश के समान हल्का दिव्य तेजस्वी होता चला जाता है। जिस दिन शरीर के सभी प्रकाश अणु बदल जाते हैं, उसी दिन साधक गायत्री सिद्ध या सूर्य की सी गति वाला हो जाता है। जब तक शरीर में एक भी विजातीय अणु रहेगा, तब तक साधक के चित्त में कोई न कोई अस्थिरता बनी रहेगी, पर सिद्धि के बाद सभी आशंकायें और अस्थिरतायें मिट जाती हैं।

ब्रह्मविद्या का उद्गाता "तमसो मा ज्योतिर्गमय' की प्रार्थना में इस दिव्य प्रकाश की याचना करता है। इसी की प्रत्येक जागृत आत्मा को आवश्यकता अनुभव होती है। अस्तु गायत्री उपासक अपने जप प्रयोजन में इसी ज्योति को अन्तः भूमिका में अवतरण करने के लिए सविता देवता का ध्यान करता है।

प्रकाश रश्मियों की विज्ञान सम्मत ध्यान प्रक्रिया

मनुष्य को शारीरिक, मानसिक एवं आत्मिक दृष्टि से सुविकसित–समुन्नत बनाने में, दीर्घायुष्य प्रदान करने में प्रकाश की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। विज्ञान जगत में उपचार की इस विधि व्यवस्था को फोटो क्रोमोथैरेपी, कलर ब्रीदिंग, कलर मेडिटेशन आदि नामों से जाना जाता है। वर्णों के आधार पर चिकित्सा की यह पद्धति भारत में प्राचीन–काल से ही प्रचलित रही है। योग–साधनाओं में तो सूर्योपासना एवं रंगोपचार की अनेक विधाओं का उपयोग साधक की मनःस्थिति को दृष्टिगत रख समर्थ मार्ग दर्शकों द्वारा किया जाता रहा है। भारतीय दर्शन के प्रवक्ताओं द्वारा ध्यान साधना में भिन्न–भिन्न रंग संवेदनाओं का प्रयोग प्रमुख विधा के रूप में किया जाता रहा है। यह प्रभाव उथली संवेदनात्मक प्रतिक्रिया तक सीमित न रहकर आध्यात्मिक विकास में अतीन्द्रिय क्षमताओं के उन्नयन में उत्प्रेरक की भूमिका निभाने लगता है। उचित वर्ण का चुनाव कर उनसे लाभ उठा सकना हर किसी के लिए संभव है।

विभिन्न रंगों की सहज उपलब्धता प्रातःकालीन स्वर्णिम आभा लिए उदय होते सूर्य से होती है। आध्यात्म साधनाओं में सविता देवता की भौतिक उपासना सूर्य सेवन और आध्यात्मिक उपासना तेजस् का ध्यान करते हुए की जाती है। भारतीय तत्वदर्शियों ने सविता को सहस्र किरणों वाला माना है और उनकी प्रधान एवं सुपरिचित किरणों को 'सात रश्मि' कहा है। वायु पुराण में उल्लेख है कि सूर्य की सहस्र रश्मियाँ हैं, उनमें से सात प्रधान हैं। ऋग्वेद १०/१३६/१ में, कौशीतकी ब्राह्मण, शतपथ– ब्राह्मण आदि ग्रन्थों में भी सात रंग की रश्मियों का वर्णन हैं। उनके नाम– (१) सुषुम्णाः (२) हरिकेशः (३) विश्वकर्मा (४) संपहंसु (५) अर्वावसु (६) विश्वश्रवः और (७) स्वराट् गिनाये गये हैं। उन नामों में उन विशेषाओं का एवं शक्तियों का संकेत है जो भौतिक जगत में प्रगति का और आत्मिक जगत में बृह्मतेज का पथ प्रशस्त करती हैं। सात रंगों के रूप में हम उनका प्रत्यक्ष परिचय चर्म चक्षुओं से भी प्राप्त करते हैं। त्रिपार्श्व (प्रिज्म) से गुजारने पर इन्हें क्रमशः विबजोर अर्थात् बैंगनी, नीला, आसमानी, हरा, पीला, नारंगी और लाल रूप में देखा जाता है। आध्यात्मिक क्षेत्र में यही सप्त रश्मियाँ सप्तज्ञान भूमिकाओं– शुभेच्छा, विचारणा, तनुमानसा, सत्वापत्ति, असंशक्ति, पदार्था–भावनी और तुर्यगा की घोतक मानी जाती हैं। इन्हें सप्त साधना के रूप में अर्थात् शोधन, दृढ़ता, स्थैर्य, लाघव, प्रत्यक्ष एवं निर्लिप्ता के अर्थ के भी साथ प्रयुक्त किया जाता है।

सूर्य की सात रंग की किरणें जब मनुष्य के व्यक्तित्व में समाहित होती हैं, तो वे कुछ विभूतियों, विशिष्टताओं के रूप में परिलक्षित होती हैं। ये हैं– साहस, पराक्रम, संयम, संतुलन, एकाग्रता, प्रफुल्लता एवं उत्साह। यही हैं वे विशेषताएँ जिनके आधार पर साधारण सामान्य स्तर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का मनुष्य भी प्रतिभावान एवं सफल सम्पन्न बनता है। इन गुणों की न्यूनता ही मानव को पिछड़ेपन से ग्रस्त रखती है। प्रकाश रंगों का भावप्रवण ध्यान न केवल उन कमियों को दूर करता है, वरन् साधक को सद्गुण सम्पन्न बनाता है और अतीन्द्रिय शक्तियों को उभारता है। चेतना के उच्च आयामों की ओर आरोहण करने में इससे काफी सहायता मिलती है।

भाव संवेदनाओं को उभारने में इनसे महत्वपूर्ण सफलता मिलती है। मानसिक विकास एवं मन के स्थिरीकरण में रंगों की ध्यान-धारणा का प्रयोग प्राचीनकाल से ही चला आ रहा है। योगाभ्यास की षट्चक्र बेधन प्रक्रिया में विभन्न रंगों का ही ध्यान किया जाता है। आधुनिक काल के पाश्चात्य मनोचिकित्सों-विशेषज्ञों ने भी मनोरोगों के निवारण में रंगों के ध्यान से आशातीत सफलता पाई है। व्यक्तित्व विकास में मानसिक एकाग्रता आवश्यक है। इसके लिए उन्होंने प्रकृति के अनुरूप रंगों के ध्यान को उपयुक्त माना है।

प्रख्यात रंग चिकित्सा विज्ञानी एस० जी० जे० ओसिली ने अपनी पुस्तक-"कलर मेडिटेशन" में बताया है कि ध्यान के साथ रंगों का घनिष्ठ सम्बन्ध है। मन भावना और रंग परस्पर गुँथे हुए हैं। उन्होंने प्रकाश के सात रंगों को सूक्ष्म शरीर स्थित सात चक्रों, एवं स्थूल शरीर की अंतःस्रावी गंथियों के साथ संबंधित बताया है। श्वेत रंग को उन्होंने दिव्य प्रकाश का स्वरूप माना है, जिसका केन्द्र सहस्रार चक्र और उससे जुड़ी पीनियल ग्रन्थि है। श्वेत प्रकाश का ध्यान करने से ज्ञान केन्द्रों का अनावरण होता है। आज्ञाचक्र एवं उससे संबन्धित पिट्यूटरी ग्रंन्थि पीले रंग का ध्यान करने से प्रभावित उत्तेजित होती है। विशुद्धि चक्र एवं थायरायड ग्लैण्ड नीले रंग से, अनाहत चक्र तथा उससे जुड़ी अंतःस्रावी ग्रन्थि थायमस हरे रंग की प्रकाश रश्मियों से सक्रिय बनती एवं जाग्रत होती है। मणिपुर चक्र का सम्बन्ध एड्रीनल ग्रन्थियों से होता हे। यही वह केन्द्र है जो सूर्य की विविध प्रकाश ऊर्जा तरंगों का अवशोषण करता और समस्त शरीर को वितरित करता है। अन्यान्य चक्रों को उनके अनुरूप रंग प्रकम्पनों की पूर्ति यहीं से होती है। इससे जहाँ शरीर को जीवन शक्ति मिलती है वहीं चक्रों-कमलों से सम्बधिन्त एवं नियंत्रित अंगों में रंगों का सही अनुपात बना रहता है। इस चक्र को प्रभावित करने, सक्रिय बनाने के लिए नारंगी रंग का ध्यान किया जा सकता है।

मनीषीगणों के अनुसार षट्चक्र प्राण ऊर्जा के केन्द्र माने गये हैं। उनसे प्रस्फटित होने वाली ऊर्जा तरंगों से ही जीवन की समस्त गतिविधियाँ संचालित नियंत्रित एवं अभिप्रेरित होती हैं। तमसाछन्न होने के कारण इन शक्तियों का ज्ञान एवं सदुपयोग मनुष्य नहीं कर पाता और दीन-हीन स्थिति में पड़ा, जीवन ऊर्जा का अपव्यय करता रहता है। इन शक्ति केन्द्रों के अपने विशिष्ट रंग, प्रभाव और सामर्थ्य होते हैं जिन्हें रंग विशेष के ध्यान द्वारा जाग्रत किया और उभारा जा सकता है। विशिष्ट रंग प्रकम्पन्नों को आकर्षित कर अपने आभा मण्डल को, प्राण ऊर्जा को सशक्त, आकर्षक एवं सुखदायी बना सकना सभी के लिए सहज संभव है।

योग साधनाओं, उपासनात्मक-क्रिया-कृत्यों-कर्मकाण्ड के विविध विधि-विधानों में भिन्न-भिन्न रंगों का निर्धारण है। तंत्र साधना में प्रायः लाल वर्ण को इसलिए महत्वपूर्ण माना गया है, क्योंकि उसमें इष्टदेव को बल और आक्रोशपूर्वक वशवर्ती करना होता है। यह विचार यदि ठण्डे पड़ जाये और साधक को बीच में ही साधना छोड़नी पड़े, तो न सिर्फ उसके अब तक के समय-श्रम बर्बाद होंगे, वरन् प्राण-संकट भी उठ खड़े होंगे। इसीलिए ऐसी साधनाओं में लाल रंग के प्रयोग से निकलने बाली लाल प्रकाश तरंगें साधक की भावनाओं को वैसी ही उग्र बनाये रखने में मदद करती हैं, ताकि साधना निरुत्साह के कारण न टूटे। इसी प्रकार पूजा उपासना और सात्विक साधनाओं में प्रायः पीले अथवा श्वेत रंग का प्रयोग किया जाता है, जो साधक की सात्विक विचारधारा को उस काल में उद्दीप्त करते रहता है।

थियोसोफिकल सोसाइटी की संस्थापिका मैडम एच० पी० ब्लैवेट्स्की ने अपनी कृति "प्रैक्टिकल आकल्ट्िज्म" में बताया है कि रंगों का मानव जीवन से घनिष्ठ संबन्ध है। रंग विशेष के वातावरण में ध्यान करने पर मन की एकाग्रता सधती और ध्यान-जनित आनन्ददायी अनुभूतियों का लाभ भी साधक को मिलता है। आधुनिक रंग चिकित्सा विशेषज्ञों ने इस संदर्भ में गहन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अध्ययन एवं अनुसंधान किये हैं और पाया है कि मानवी चेतना रंगों से बहुत अधिक प्रभावित होती है । उनके अनुसार नारंगी रंग का ध्यान करने अथवा उस वातावरण में रहने से मानसिक क्षमता बढ़ती है । इच्छा शक्ति–संकल्पबल को सुदृढ़ बनाने में इस रंग की महती भूमिका होती है । बौद्धिक एवं भावनात्मक विकास के लिए इसे उपयुक्त पाया गया है । हरे रंग का ध्यान भी मानसिक प्रफुल्लता तथा शान्ति प्रदान करता है । स्वार्थ, ईर्ष्या, द्वेष आदि भावनाओं को कम करने, उनका परिमार्जन परिष्कार करके परमार्थ की पवित्र कर्मो के सम्पादन की, मैत्री की भावना उत्पन्न करने में हरा रंग बहुत सहायक होता है । सूक्ष्म शरीर के विकास में प्रधान भूमिका इसी की होती है । नीला रंग शीतल, सुखद माना गया है । मानसिक उत्तेजनाओं को समाप्त कर शान्ति प्रदान करने में इससे महत्वपूर्ण सहायता मिलती है । आत्मिक विकास के लिए प्रयुक्त होने वाली ध्यान साधना में इसी रंग को प्रमुखता दी जाती है । इसे श्रद्धा, भक्ति एवं सत्याचरण की भावना को प्रेरित–उद्वेलित करने वाला माना गया है ।

मूर्धन्य रंग चिकित्सा विज्ञानी मेरी एण्डर्सन के अनुसार लाल रंग अग्नि तत्व का द्योतक है । इसकी गणना रक्त एवं स्नायुओं को उत्तेजना प्रदान करने वाले तत्वों में की जाती है । इसकी अधिकता–भौतिक शरीर के लिए अस्वास्थ्यकर होती है । अनेक भावनात्मक असंतुलनों को लाल रंग के अनुपात में संतुलन बिठाकर अथवा इसका ध्यान कर संतुलित किया जाता है । पीला रंग ज्ञान का, प्रतिभा का, तर्क बुद्धि का प्रतीक माना जाता है । शरीर में इसका सही अनुपात व्यक्तित्व विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है । इस रंग का सेवन करने या ध्यान करने से निराशा, अवसाद, उदासी, चिन्ता, विषाद, आदि मानसिक विकार दूर होते हैं । आसमानी, गहरा नीला एवं बेंगनी रंग ठंडे प्रकृति के होने के कारण मानसिक प्रसन्नता प्रदान करते हैं । इनमें आसमानी रंग का ध्यान अन्तर्ज्ञान का, अंतःप्रज्ञा का बोध कराता है । उच्चस्तरीय अतीन्द्रिय सामर्थ्य एवं मानसिक क्षमताओं को जाग्रत करने में इस रंग से काफी सहायता मिलती है ।

बैंगनी रंग सबसे अच्छा एवं शान्तिदायक रंग माना गया है । इसके प्रकम्पन मानसिक रूप से विक्षिप्त उन्मादी व्यक्ति को भी स्वस्थ बना देते हैं । मानसिक परिष्कार एवं आत्मोन्नति में सहायक होने के कारण इसे आध्यात्मिक रंग के नाम से सम्बोधित किया जाता है । रंग चिकित्सा विशेषज्ञों का कहना है कि बेंगनी रंग के प्रकाश में ध्यान करने से मन की एकाग्रता सधती है साथ ही साधक ध्यान की गहराइयों में पहुँच जाता है । प्रसुप्त अतःशक्तियों को जागृत करने तथा अन्तरात्मा तक पहुँचने में इस रंग के ध्यान से बहुत सहायता मिलती है । मैजेन्टा कलर भावनात्मक स्थिरता प्रदान करता है । लाला और बैंगनी रंगों के सम्मिश्रण से मैजेन्टा रंग बनता है । टरक्वाइज अर्थात् फीरोजी रंग का निर्माण पीले और हरे रंग के सम्मिश्रण से होता है । इस रंग का ध्यान मानसिक चंचलता–उग्रता को दूर करता है । मन की एकाग्रता एवं भावना की प्रगाढ़ता जितनी अधिक होगी, प्रतिफल भी उसी अनुपात में सामने आयेगा ।

प्रकाश, ताप, विद्युत और चुम्बकीय शक्ति का आधार एवं केन्द्र विभिन्न रंगों वाली सूर्य प्रभा ही है । वेदों–उपनिषदों में इसे जीवनी शक्ति "प्राण' के नाम से सम्बोधित किया गया है, जिसकी पुष्टि अब विज्ञानवेत्ता भी करने लगे हैं । ख्यातिलब्ध वैज्ञानिक मनीषी सर ओलिवर लाज ने अपनी कृति–"लाइफ एण्ड मैटर" में कहा है सूर्य की रंगीन किरणों में प्राण तत्व के सम्वर्द्धन की अद्‌भुत क्षमता है । इनका अवशोषण अवधारण मनुष्य की शारीरिक मानसिक चेतना के विकास में सहायक सिद्ध होता है ।

रंगों का मूल स्रोत सूर्य प्रभा है । शास्त्रकारों ने इसे ही "रश्मीनां प्राणानां रसानां चे स्वीकरणात् सूर्यः" कहा है अर्थात् प्रकाश रश्मियाँ ही समस्त प्राणियों की प्राण शक्ति–जीवनी शक्ति है । यही रश्मियाँ अपने अमृत रस से मनुष्य सहित सभी जीवधारियों को जीवन प्रदान करती हैं । सप्तव्याहृतियाँ अर्थात् गायत्री, त्रिष्टुप, जगती, अनुष्टुप, बृहती, पंक्ति और उष्णिक यह सभी सविता देवता की सात रंगों वाली किरणों से उत्पन्न हुई हैं । चेतना के सात आयामों, ज्ञान–विज्ञान की सात भूमिकाओं की अधिष्ठाता सप्तव्याहृतियाँ इन्हीं रंग रश्मियों के अवयव हैं । प्राचीन ऋषि मुनि इन्हीं का पान करके व्याहृतियों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तथा वेदमंत्रों का साक्षात्कार करते थे। याज्ञवल्क्य सहित सप्तऋषियों एवं समस्त मनीषियों ने इन्हीं का अमृत पान कर ज्ञान-विज्ञान के उच्चतर सोपानों पर आरोहण किया था। आज भी वह उपचार पद्धति सबके लिए खुली पड़ी है। अपनी मनः स्थिति, प्रकृति और सामर्थ्य के अनुरूप वर्णों का रंग-रश्मियों का चुनाव कर उनके प्रकम्पनों से लाभान्वित हो सकना सबके लिए सहज-सुलभ है। रंग ध्यान की प्रक्रिया निरापद भी है।

सविता के ध्यान द्वारा शक्तियों का विकास

दृश्य प्रकृति का सृजेता सूर्य माना गया है। उसी प्रकार शरीर रूपी जगत का सृजेता भी सूर्य है जो नाभि में बैठा हुआ है। डाक्टरों और वैज्ञानिकों द्वारा लगभग महत्वहीन नाभि को भारतीय योग शास्त्र में भारी महत्त्व दिया गया है। बच्चा गर्भावस्था में नाभि के द्वारा ही माँ के शरीर से जुड़ा हुआ होता है और उसके शरीर विकास के लिए उस नाभि द्वारा ही सारी वस्तुयें प्राप्त होती हैं। नाभी का विस्तार सारे शरीर में है। अन्तर्दृष्टि जागृत करने वाली प्रत्येक साधना का प्रारम्भ इसी को जागृत करने से होता है। कुण्डलिनी के साधक को भी प्राणायाम की यथेष्ट मात्रा एकत्र कर लेने के बाद सर्व प्रथम "लोम-विलोम सूर्य भेदन प्राणायाम" का ही अभ्यास करना पड़ता है। पातञ्जलि कृत योगदर्शन में बताया है कि नाभिचक्रे कायव्यूह ज्ञानम् नाभि चक्र में चित्त वृत्तियों को स्थिर करने से नाड़ी आदि शरीरस्थ स्थूल पदार्थों का ज्ञान होता है। पाश्चात्य देशों में अब लोग इसे सोलर फ्लैक्सस के नाम से जानने भी लगे हैं किन्तु उसका ज्ञान अभी नहीं के बराबर है।

छान्दोग्योपनिषद् में कहा है-

सय एवमेतं द्रथरन्तरमग्नो प्रोते वेद वृह्म
वर्चस्यन्नादो भवति, सर्वमायुरेति ज्योग्जीवति
महान्प्रजया पशुभिर्भवति महान्कीर्त्या न प्रत्ड्ँाःडग्नि
माचामेन्न निश्ठी वेत्तद व्रतम् ॥

जो इस रथन्तर (नाभि स्थित) साम की अग्नि में उपासना करता है वह तेजस्वी, प्रदीप्त जठराग्नि वाला होता है, पूर्ण आयु पाता है। प्रजा और पशु से सम्पन्न प्रतिष्ठा वाला होता है। वह कीर्ति से भी महान होता है- अग्नि की ओर मुख करके न कुछ खाये और न थूके यह व्रत है।

योगवशिष्ठ ने तो इसी अग्नि को, सूर्य को, जो नाभि में स्थित है, कुण्डलिनी शक्ति का द्वार माना है और लिखा है-

मांसं कुयंत्र जठरे स्थिते श्लिष्टमुखं मिथः।
ऊर्ध्वाधिः संमिलत्प्लूतह्रयम्भः स्थैरिय वैतसम् ॥
तस्य कुण्डलिनी लक्ष्मीर्निलीनान्त निजास्पदे।
पद्यराग समुद्रस्य कोशे मुक्तावली यथा ॥

-६/१/८१/६३-६४

हे राम-देहरूपी यन्त्र के उदर भाग में नाभि के पास परस्पर मिले हुए मुख वाली धौंकनियों के समान माँस का पिंण्ड इस तरह थरथराता हुआ (सूर्य भी कम्पनशील प्लाज्मा या अग्नि ही है) स्थित है, जैसे ऊपर और नीचे बहने वाले दो जलों के बीच में सदा स्थिर रहने वाला वेत कुञ्ज उसके भीतर कुण्डलिनी शक्ति इसी प्रकार स्थित है, जैसे मूँग की पिटारी में मोतियों की माला।

योग-विद्या के यह कथ्य जितने तथ्यपूर्ण हैं उतने ही आश्चर्यजनक। पदार्थ को शक्ति में बदलने वाले इस शक्ति केन्द्र की भारतीय योगियों ने तब शोध की थी, जब पश्चिम शक्ति की परिभाषा करना भी नहीं जानता था। यों यह शक्ति सामान्य अवस्था में शिथिल और उपेक्षित पड़ी रहती है अमर्या दित आहार-विहार के कारण उसका क्षय भी होता रहता है, तथापि उस क्षय को रोक कर आश्यर्चजनक काम किये जा सकते हैं। किन्हीं व्यक्तियों में यह प्रमाण स्वयं व्यक्त होता है।

साधारण तौर पर मनुष्य का पेट फल, फूल, अन्न और रस पचाने की जितनी अग्निवाला माना जाता है, यदि लोहा शीशा पचाने की बात आये तो भारी शक्ति वाली अणु भट्टी की आवश्यकता होगी। कोई व्यक्ति बिना किसी बाह्य रसायन अथवा यन्त्र की मदद से यदि इस्पात और पत्थर जैसी कठोर तथा सायनायड जैसी मारक विष खाकर पचा जाये तो यही प्रमाणित होगा कि उसके पेट में वस्तुतः कोई अग्नि कुण्ड होगा। पिछले दिनों ऐसे कई व्यक्तियों के उदाहरण सामने आये हैं जो आश्चर्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ही कहे जा सकते हैं । उनका विवरण–विस्तार से देने की यहाँ न तो गुंजायश है और न आवश्यकता ।

कहा इतना भर जा रहा है कि मनुष्य की भीतर ऐसी सम्भावनायें विद्यमान हैं जो उसे आश्चर्य जनक क्षमताओं और शक्तियों का स्वामी बना सकती हैं । इन शक्तियों को विकसित करने में सूर्य साधना महत्त्वपूर्ण रूप से सहायक सिद्ध होती है । गायत्री साधना से दृश्य जगत के सूर्य का सम्बन्ध शरीर जगत के सूर्य से स्थापित कर उन सभी सम्भावनाओं को साकार किया जा सकता है ।

गायत्री को पंचमुखी भी कहा जाता है । जैसे कि अन्यत्र बताया जा चुका है सभी प्रतीकों को अलंकारिक रूप से चित्रित किया गया है और उनके पीछे विशिष्ट प्रेरणायें विद्यमान रहती हैं । पंचमुखी गायत्री के पाँच मुख, पाँच मस्तक मानवी सत्ता के कलेवर में विद्यमान पाँच कोष हैं । इन पाँचों कोषों में से प्रत्येक को एक रत्न भांडागार कहना चाहिए जिनकी शक्ति क्रमशः बढ़ती जाती है । अधिकांश व्यक्ति प्रथम स्तर तक, अन्नमय कोष की, स्थूल शरीर की क्षमता का ही थोड़ा सा सहारा लेकर भौतिक सुख साधन जुटाते रहते हैं । बहुलजनों की मति इतनी ही होती है, पर जो प्रबुद्ध व्यक्ति शेष चार कोषों को भी सक्रिय, समर्थ और सुविकसित बना लेते हैं उनकी सामर्थ्य क्षमता देवोपम होती चली जाती है । इन कोषों का परिष्कार सावित्री साधना से ही संभव होता है ।मानवी सत्ता इतनी रहस्मय है कि उसके तीन शरीरों, पंचकोशों, षट्चक्रों आदि सूक्ष्मपर्तों में सन्निहित एक से बढ़कर एक उच्चस्तरीय चेतनात्मक शक्ति रहस्यों को अनावरण सविता देवता से प्राप्त शक्ति के आधार पर ही होता है । उस शक्ति–स्रोत उसे प्रत्यक्ष सम्पर्क जोड़ने की साधना सर्वोत्तम एवं सर्वाधिक सहज कुण्डलिनी–साधना विधान है ।

मूलाधार में यह कुण्डलिनी शक्ति प्रसुप्त अवस्था में पड़ी रहती है । सविता की शक्ति से जब यह जाग्रत होकर सहस्रार स्थिति परम शिव से जा मिलती है तो साधक स्वयं उस महाज्योति के साथ तदूप हो जाता है । शक्ति जागरण की यह प्रक्रिया क्रमशः जिन चेतना–स्तरों को पार करती जाती है, उन्हीं को साधना विज्ञान में 'चक्र' या 'लेक्सस' कहा जाता है । मूलाधार तथा सहस्रार के बीच मेरुदण्ड में ऐसे पाँच प्रमुख चक्रसंस्थित हैं । ये हैं स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्धि और आज्ञाचक्र । मूलाधार और सहस्रार को मिलाकर ये सप्त चक्र हो जाते हैं । इन्हें ही सप्तलोक, सप्तऋषी, सप्तद्वीप, सप्तसागर आदि कहा जाता है । बीच में स्थित पांच चक्र पंचतत्व प्राण के प्रतीक हैं । इनकी उपासना ही वास्तविक पंचोपचार है । कठोपनिषद् के यम नचिकेता सम्वाद में इसे ही पंचाग्नि विधा कहा गया है ।

वस्तुतः यह सातों चक्र सूक्ष्म आध्यात्मिक केन्द्र हैं । ब्रह्माण्ड में जो चेतन–शक्ति की धारायें अविराम दुत गति से दौड़ रही हैं, उनके कुछ निश्चित आवर्त केन्द्र हैं । जो ब्रह्माण्ड स्थित चेतना संस्थानों के प्रतिनिधि हैं । ये चक्र भिन्न–भिन्न प्रकार के शक्ति–प्रवाहों के उदगम केन्द्र माने जा सकते हैं । यद्यपि इन सभी का मूल उद्गम् केन्द्र तो सविता देवता ही है । जो चक्र–संस्थान अविज्ञात चेतना प्रवाह के जिस केन्द्र से विशेष रूप से जुड़ा रहता है, उसका जागरण उसी प्रकार की अनुभूतियों और विभूतियों को जन्म देता है ।

प्रत्येक चक्र का अपना तत्व–बीज, अपना वाहन, अपना आदि देवता, अयनदल, यन्त्र, शब्द एवं रंग होता है । इन्हीं विशेषताओं की भिन्नता से उनके भेद किये गये हैं । जिस प्रकार ज्वालामुखी के छिद्र आग, धुआँ तथा दूसरी वस्तुये उगलते रहते हैं, उसी प्रकार ये चक्र संस्थान जागृत होने पर भिन्न–भिन्न प्रकार की शक्तियाँ विभूतियाँ उगलते हैं ।

इन षट्चक्रों में आज्ञाचक्र को 'गुरुचक्र' कहा जाता है, क्योंकि वही मार्गदर्शक है, शक्ति प्रवाह का ज्योति का उद्गम स्थल है । इस आज्ञाचक्र को ही तीसरा नेत्र–'थर्ड आई' अथवा दिव्य दृष्टि भी कहते हैं । सन्तुलन, अन्तर्दृष्टि, दिव्यदर्शन की क्षमता इसी चक्र संस्थान में सन्निहित है । चक्रवेधन एवं कुण्डलिनी जागरण की प्रक्रिया स्वरूप, निहितार्थ तथा उपयोग की विधि को जानने समझने की शक्ति इस चक्र के जागृत होने पर ही प्राप्त होती है । जिसका 'आज्ञा चक्र' जग गया, जिसे दिव्य दृष्टि मिल गयी, उसका साधन पथ आलोकित हो जाता है और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लक्ष्य स्पष्ट हो जाता है । उस साधना-पथ पर चलते हुए साधक सुगमता से लक्ष्य को पा लेता है । इस आज्ञाचक्र को जागृत करने के लिए सविता के ज्योति पुंज के अवतरण की साधना करनी होती है ।

आज्ञाचक्र मनुष्य के मस्तिष्क की दोनों भवों के मध्य में अवस्थित होता है । भृकुटी के नीचे अस्थियों का जो आवरण है उसके भीतर एक बेर की गुठली जैसी ग्रन्थि होती हैं, वही आज्ञाचक्र संस्थान है । इसके जागरण के लिए साधक कुशासन अथवा कम्बल बिछा कर मेरुदण्ड को सीधा रखते हुए पद्मासन या सुखासन में पालथी मारकर ध्यान मुद्रा में बैठता है । शरीर पर न्यूनतम वस्त्र ही रख जाते हैं ।

प्रारम्भिक अभ्यास के लिए सूर्य पर त्राटक आवश्यक हो जाता है । अतः अरुणोदय के समय कोई ऐसा स्थान निश्चित करना पड़ता है जहाँ मकानों, पेड़ों आदि की आड़ न हो और ऊपर उभरता बाल-सूर्य स्पष्ट दिखायी दे सके । इस प्रकार स्थान चयन के बाद साधक ध्यनावस्था में सुदूर अन्तरिक्ष में उदित प्रभाकालीन स्वर्णिम बाल-सूर्य को देखता है ।

खुली आँखों से सर्वप्रथम एक या दो सेकण्ड बाल सूर्य को देख कर आँखें बन्द करली जाती हैं । तीस सेकण्ड तक बन्द आँखों से उसी प्रकार सूर्य को देखने की भावना-कल्पना की जाती है । यह क्रम तभी तक चलता है जब तक सूर्य की स्वर्णिम आभा समाप्त न हो जाय । दस-पन्द्रह मिनट के भीतर ही सूर्य श्वेत वर्ण होने लगता है । तब यह त्राटक सर्वथा निषिद्ध है । यहाँ यह ध्यान रखने योग्य है कि सूर्य का स्वर्णिम प्रकाश भी तीन सेकण्ड से अधिक देर तक देखने से आँखों को हानि पहुँचती है । अति उत्साह में आकर सूर्य को देर तक देखने की भूल किसी को भी नहीं करनी चाहिए ।

प्रारम्भिक बीस दिन तक इस प्रातः कालीन सूर्य-त्राटक का नियमित रूप से अभ्यास करने से वह कल्पना में-भावना में गहराई तक बैठ जाता है । इसके बाद इस प्रारंभिक अभ्यास की आवश्यकता नहीं रह जाती । इसके उपरान्त अभ्यास सिद्धि कल्पना और आस्था पुष्ट भावना के सम्मिश्रण से सविता के ज्योति बिन्दु का ध्यान आगे बढ़ाया जाय ।

उपासना अवधि में साधक गायत्री महामन्त्र के जप के साथ ही अपने 'आज्ञाचक्र' संस्थान में वैसे ही स्वर्णिम सविता का ध्यान करता है । अगले चरण के इस ध्यान में यह प्रगाढ़ भावना करनी पड़ती है कि ईश्वरीय दिव्य प्रकाश की प्रेरणापूर्ण किरणें जो अपने ऊपर बरस रही हैं, उनसे सम्पूर्ण स्थूल, सूक्ष्म एवं कारण शरीर जगमग हो गया है । आज्ञाचक्र स्थित आत्म-ज्योति जागृत हो गयी है । वहाँ एक्स-रेज जैसी प्रचण्ड किरणें निकल रही हैं जो वस्तुओं, व्यक्तियों को ही नहीं, विचारों, भावनाओं, शास्त्रों और सैद्धान्तिक प्रतिपादनों तक के मर्म-वेधन में समर्थ हैं । जो अन्तर्निहित दिव्य दृष्टि को प्रखर बना रही हैं । अपने भीतर के कषाय-कल्मष, दोष दुर्गण भी स्पष्ट दीख रहे हैं और उन्हें दूर करने-फेंक देने, समाप्त कर देने की प्रक्रिया भी सामने स्पष्ट है । साथ ही अपनी अन्तरिक उत्कृष्टताओं, प्रसुप्त क्षमताओं को उभारने का मार्ग भी पूर्णतः प्रकाशित हो उठा है ।

जितनी गहरी श्रद्धा भावना के साथ अन्तः क्षेत्र को दिव्य बनाने वाली यह सविता-साधना की जायेगी, आज्ञाचक्र के जागरण का उद्देश्य उतनी ही मात्रा में पूरा होता जायगा ।

आज्ञाचक्र के जागरण की यह सविता-साधना नियमित रूप से लम्बे समय तक करने पर साधक के भीतर की उत्कृष्टतायें उभरती चली जाती हैं और वह गीतोक्त संजय की तरह दिव्य दर्शन की शक्ति-दिव्य दृष्टि भी प्राप्त कर लेता है । भूगर्भ में या सृष्टि के अन्तराल में छिपी दूरवर्ती वस्तुओं का ज्ञान आज्ञाचक्र से निकलने वाली अद्भुत सूक्ष्म किरणों द्वारा सहज ही हो जाता है । अविज्ञात के गर्भ में पक रही सम्भावनायें, भविष्य में घटित होने वाली घटनायें भी उसे दीख जाती हैं । आज्ञाचक्र के जागरण से ही साधक आत्म-ज्योति के अनावरण में सफल होता और आप्तकाम बनता है । शक्ति जागरण की यह सविता साधना सरल भी है और बिना जोखिम की सर्वोपयोगी भी । इसे हर कोई सरलतापूर्वक सम्पन्न कर सकता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सविता साधना से अन्तःशक्ति का अभिवर्धन

सूर्य उभयपक्षी शक्ति धाराओं का उद्गम हैं। उसमें जीवनी शक्ति का अजस्र भण्डार है। जीवित प्राणियों, अन्न फलों को जहाँ किरणें स्पर्श करती हैं, वहाँ जीवनदायक विशिष्ट तत्वों का अवतरण हुआ देखा जाता है। इसी प्रकार उसमें दूसरी विनाशक शक्ति भी है। विषाक्तता संलग्न, मलीनता को यही किरणें रौंद डालती हैं। साधारण विज्ञान के विद्यार्थी इस बात को जानते हैं, और अन्न वस्त्र, पुस्तक आदि को धूप लगाते रहने की आवश्यकता बताते है, अन्यथा जीवाणु उसके अस्तित्व को खतरे में डाल दें। सूर्य किरण चिकित्सा के आधार पर अनेक रोगों का निवारण उसी प्रकार सम्भव होने लगा है, जिस प्रकार कि एलोपैथी, होम्योपैथी, आयुर्वेद प्राकृतिक चिकित्सा आदि द्वारा सम्भव होता है। भौतिक जगत में जो कुछ प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष वैभव दृष्टिगोचर होता हैं, उसे सूर्य का अनुदान ही समझा जाना चाहिए। भविष्य की महती आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए भी अन्य आधारों से निराश होकर सूर्य का आश्रय लेने की बात ही सोची जा रही है। ईधन जितना उपलब्ध हो सकता है वह एक शताब्दी में ही समाप्त हो जायगा। फिर उसकी आवश्यकता सूर्य के महान ऊर्जा भण्डार से ही पूरी कर सकना सम्भव होगा। पानी की बढ़ती समस्या बादलों से पूरी होती दीखती नहीं। बर्फ का पिघलना भी नदियों के माध्यम से क्षेत्रीय आवश्यकता ही पूरी करता है। भूगर्भ का जल नीचे खिसकता जाता है। उसके स्रोत सूखते जा रहे हैं। ऐसी दशा में निरन्तर बढ़ती हुई जल की आवश्यकता सूर्य किरणों द्वारा समुद्र के खारीपन को दूर करके, कृत्रिम बादल बना कर ही पूरी की जा सकेगी। अब तक के प्रगति इतिहास में भी सूर्य की ही प्रमुख भूमिका रही है। भविष्य में भी सम्भावनाओं का केन्द्र वही रह सकेगा। यदि उसकी अमृत-वर्षा का लाभ उपलब्ध नहीं हुआ तो दिन-दिन चुकते जाने वाला पदार्थ भण्डार और जीवन धारा चूक जाने में बहुत देरी नहीं समझी जानी चाहिए। सृष्टि का उद्भव उसी से होने की बात विज्ञानवेत्ता खुले रूप में स्वीकारते हैं, साथ ही यह भी कहते हैं, बढ़ती जनसंख्या के साथ बढ़ती आश्यकताओं की पूर्ति के लिए इस अजस्र भाण्डागार से सन्तुलन बिठा पाना सम्भव हो सकेगा। इस अनुदान में कमी पड़ी तो जल हीन मछलियों की तरह अपनी दुर्दशा ही होकर रहेगी। जहाँ चाह तहाँ राह के अनुसार अगले दिनों यह प्रयत्न सफल होकर रहेंगे कि दृश्यमान सूर्य का धरती निवासियों को अपेक्षाकृत अधिक लाभ मिल सकना कैसे सम्भव हो ?

प्रसंग आत्मोत्कर्ष का चल रहा है। वैभव का अभिवर्धन भी पर्याप्त नहीं है। आवश्यकता उस आत्म-बल बढ़ाने की भी है जिसे श्रद्धा, प्रज्ञा, निष्ठा, जैसी विभूतियों का आधार माना जाता है। अतीन्द्रिय क्षमताओं का विकास इसी पर निर्भर है। ऋद्धि-सिद्धियाँ इसी क्षेत्र से उभरती हैं। प्रतिभा कुशलता, विशिष्टता वरिष्ठता बाहर से नहीं उतरती, भीतर से ही उभरती हैं। अन्तरंग ही आत्मा का क्षेत्र हैं। इसे दिव्यलोक भी कहा जाता है। प्रसुप्त रूप से उन समस्त सम्भावनाओं के बीज इसी क्षेत्र में प्रसुप्त स्तर पर पड़े हुए हैं कि उन्हें जो जितनी मात्रा में जगा लेते हैं वे उसी अनुपात से देवात्मा होने का गौरव प्राप्त करते हैं।

आत्मोत्कर्ष के क्षेत्र में अभ्युदय के, परिशोधन के अनेक उपाय, उपचार हैं। उपासना, साधना की सम्प्रदाय भेद से अनेकों विधि परम्परायें प्रचलित हैं। इनमें ध्यान-धारणा को सार्वभौम एवं सर्वानुमोदित स्थान मिला हुआ है। इस आत्मवादी विशेष आकांक्षा संजोकर श्रद्धा विश्वास के साथ अपनाते और उसका भावना के अनुरूप प्रतिफल भी प्राप्त करते हैं। इतना ही नहीं अनीश्वरवादी भी मानसिक सन्तुलन बिठाने और एकाग्रताजन्य विशिष्टता प्राप्त करने के लिए ध्यान उपचार को प्रयोग में लाते हैं।

ध्यान के अनेक माध्यम हैं। लक्ष्य एवं इष्ट को निर्धारण करते हुए उसे ध्यान का केन्द्र बिन्दु बनाया जाता है। फिर भी इन स्थापनाओं में मतभेद तो बनते ही रहते हैं। इस विखराव को दूर करने में सूर्योपासना अधिक कारगर सिद्ध हो सकती है। प्रकाश की चमक में आकर्षण भी होता है। पंतगे दीपक की ओर अनायवास ही लपकते देखे जाते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गायत्री महामन्त्र का देवता सविता उगते हुए स्वर्णिम सूर्य को कहते हैं । ध्यान प्रयोजन के लिए सूर्योपासक इसी का प्रयोग करते हैं । सूर्योपस्थान, सूर्य नमस्कार, सूर्यार्घ, सूर्य सेवन, आदि के अनेकों उपक्रम साधना क्षेत्र में अपनाये जाते हैं । अग्निहोत्र में भी सूर्य शक्ति की प्रमुखता है । इसके अतिरिक्त ध्यान–धारणा को तो उस आधारभूत अवलम्बन के रूप में अपनाया ही जाता है ।

ध्यान–धारणा में सविता उपासना का सामान्य क्रम यह है कि प्रातः कालीन उगते सूर्य को अर्द्ध खुली आँखों से देखकर पलक बंद कर लिया जाय । भावना की जाय कि वह दिव्य सत्ता अपने किरण जाल समेत सम्पूर्ण शरीर में संव्याप्त हो गई । इस शुभारम्भ में जलाशय की समीपता शक्ति आकर्षण की दृष्टि से अधिक फलप्रद होती है । कई व्यक्ति जलाशय में खड़े होकर सूर्याभिमुख स्थिति में जप तथा ध्यान करते हैं । कई उतने समय तक गीले वस्त्र धारण किये रहते हैं । कुछ सूर्य को अर्घ्यदान करते हुए मानसिक जप के साथ अपनी संरक्षित आराधना पूरी कर लेते हैं । यदि बृहत्म मुहूर्त में यह आराधना करना हो, तथा बादल छाये रहने पर प्रत्यक्ष दर्शन न हो रहा हो तो जिस दिशा में उस समय सूर्य की उपस्थिति सम्भव लगती हो, उस ओर मुख करके भी ध्यान किया जा सकता है यह अनेकानेक प्रचलनों में से कुछ एक की चर्चा हैं ।

सार्वभौम, सर्वजनीन और सर्व सुलभ ध्यान का उपाय यह है कि खुले स्थान में बैठा जाय । प्रातः काल का समय हो जल पात्र दाई ओर रखा हो । प्रतीक स्थापना के रूप में अगरबत्ती या दीपक जला लिया जाय । स्वच्छ स्थान में स्वच्छ शरीर, वस्त्र से पालथी मार कर बैठा जाय । मेरुदण्ड सीधा रहे । नेत्र बन्द । हाथ गोदी में एक के ऊपर एक स्थिर शरीर, शान्त चित । यह है ध्यान मुद्रा, जिसे प्रत्येक प्रकार के ध्यान में आवश्यक एवं उपयोगी माना गया है ।

इस स्थिति को बनाने में आरम्भ मे पाँच मिनट लगा सकते हैं । इसके बाद स्वर्णिम सूर्य का ध्यान मस्तिष्क मध्य ब्रह्मरन्ध्र से आरम्भ किया जाय । ध्यान ठीक प्रकार बन पड़ने में कुछ दिन लगते हैं । अभ्यास से ही साधना परिपक्व होती है । इसका चिन्ह यह है कि बिना आँख खोले ही दृष्टि देव के भाव दर्शन होने लगें । प्रतीति हो चले कि अन्तःक्षेत्र में ध्येय का दिव्य अवतरण आरम्भ हो गया । मस्तिष्क के मध्य में एक हल्का छोटा सौम्य सूर्य उदय हुआ । उसकी किरणें नीचे की दिशा में समस्त कायकलेवर में फैलीं और ऊपर के आकाश क्षेत्र में उसने उभर कर गगन मण्डल के साथ सम्पर्क जोड़ा । ब्रह्मरन्ध्र को मध्य बिन्दु माना जाय । अधोभाग में शरीर के समस्त अवयव और ऊर्ध्व भाग में अन्तरिक्ष का वह भाग जो ध्यान के कायकलेवर से उतना ही ऊँचा है, जितना नीचे का अधोभाग ।

मस्तिष्क मध्य में मनुष्य की दिव्य शक्तियों का अदृश्य भाण्डागार है । उसी को जागृत करने की प्रथम चेष्टा होनी चाहिए । ब्रह्मरन्ध्र खिले कमल की तरह दृष्टिगोचर होने लगता है । पुष्प प्रजाति में कमल का सूर्य के साथ रहस्य भरा सम्बन्ध है । प्रभात कालीन किरण पड़ते ही वह खिलना आरम्भ करता है और अस्त होने पर वह भी सिकुड़ जाता है । मस्तिष्क मध्य में सूर्य का ध्यान इस प्रकार किया जाय, मानो वह पर्वत श्रृंखला के हिमाच्छादित शिखर से उदय हो रहा है और उसमें यथावत् प्रतिबिम्ब मस्तिष्क मध्य में उसी तरह प्रतिबिम्बित होता है, जैसे दर्पण में सामने वाला दृश्य यथावत् परिलक्षित होता है ।

हिमालय के उदयाचल क्षेत्र में मान सरोवर अवस्थित है, मस्तिष्कीय स्निग्ध पदार्थ को मान सरोवर या क्षीर सागर की उपमा दी जाती रही है । शतदल कमल यही है । बृह्मा, विष्णु, महेश की–दिव्य गुरु सत्ता की–भावना कमलासन पर अवस्थित होने के रूप में देखी जाती है इस स्थिति का भाव क्षेत्र, मानस लोक में उभरते ही उसकी किरणें समूचे क्षेत्र में बिखरतीं हुई अनुभव की जानी चाहिए । साथ ही उसकी सौम्य ऊर्जा का विस्तार भी । सूर्य प्रायः उष्ण होता है । पर उसके प्रतिबिम्ब यदि शीतल झील पर पड़े तो उसका प्रभाव एवं प्रकाश भी शीतल रहेगा । मस्तिष्क मध्य का सूर्य भी सदा शीतल ही रहता है, ताकि उसकी आभा समूचे सम्पर्क क्षेत्र को शान्ति प्रदान करती रहे । इस प्रकाश से मनःक्षेत्र के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वे सभी पक्ष अभिनव चेतना प्राप्त करते हैं और सभी ज्ञात, अविज्ञात, प्रसुप्त–जागृत क्षेत्र नये सिरे से उभरना, शक्ति सम्पन्न बनना, आरम्भ कर देते हैं । यह दृश्य ध्याता को इस रूप में दृष्टिगोचर होता है, मानो उद्यान के पुष्प पल्लवों पर लगी कलियाँ खिलने और सुगन्ध बखेरने लगीं । दस दृश्य को अतीन्द्रिय दिव्य क्षमताओं का प्रकट–प्रखर बनना, विकसित होना समझा जा सकता है । वैसा वस्तुतः होता भी है । साधक अनुभव करता है कि उसका मस्तिष्क क्षेत्र देवलोक की तरह सत्प्रवृत्तियों का, देव शक्तियों का केन्द्र बन कर सुदूर क्षेत्र तक अपने आलोक का विस्तार वितरण कर रहा है ।

प्रत्यक्षतः काय कलेवर में यों सोने जगने की, पेट प्रजनन की सामान्य जीवों जैसे क्रियाएँ ही बन पड़ती हैं । पर यदि उसके अन्तरंग क्षेत्र में अवस्थित विभिन्न घटकों को टार्च जैसा प्रकाश उगते हुए दीख जाय तो दिव्य चेतना के आलोक में ऐसा बहुत कुछ विद्यमान अनुभव होता है, जो असाधारण है । दिव्य क्षमताओं से भरपूर है । अभिनव आलोक मिलने पर उस सब का अभ्युदय उत्कर्ष निश्चित है ।

स्थूल शरीर में अनेक गुच्छक अन्तर्ग्रन्थि स्राव, ग्रन्थि समुदाय शरीर विज्ञानी देखते हैं । सूक्ष्म शरीर को निरखने की जिसमें क्षमता है वे षटचक्र, पंचकोष, नाड़ी प्रवाह उपत्तिकाएँ स्तर के सूक्ष्म अवयवों की उपस्थिति भी देखते हैं । मस्तिष्क चलन के अतिरिक्त सूक्ष्म शरीर में अति महत्वपूर्ण केन्द्र और भी हैं । इन्हें हृदय चक्र और नाभि चक्र भी कहते हैं । नाभि चक्र स्थूल शरीर का अधिष्ठाता है । इस परिधि को मूलोक कहते हैं । हृदय चक्र सूक्ष्म शरीर, मानस लोक को स्वर्ग लोक का प्रतीक माना गया हैं । मस्तिष्क का बृत्मचक्र स्वर्ग लोक है । उसे कारण शरीर का अधिष्ठाता कहा जा सकता है ।

सामान्य स्थिति में यह तीन चक्र उपेक्षित, अविज्ञात अविकसित स्थिति में पड़े रहते हैं । पर जब उनमें सविता के दिव्य आलोक का संचार होता है तो क्रमशः विकसित होते चले जाते हैं । इस विकास की प्रमाणभूत अनुभूति साधक को स्वयं होन लगती हैं । उसे प्रतीत होता है कि सविता का अन्तः क्षेत्र में अवतरण अपना प्रभाव, चमत्कार दिखा रहा है । तीनों शरीरों में और उनमें सन्निहित अनेकानेक घटकों में अभिनव शक्ति संचार कर रहा है सर्वतोमुखी अभ्युदय का इस आधार पर पथ प्रशस्त भी हो रहा है ।

ध्यान साधना से शक्तियों का विकास

सवित्री को "षटकुक्षि" कहा गया है । षट्कुक्षि का तात्पर्य षट्चक्र जागरण से ही है । शरीर में छिपे हुए छहों शक्ति संस्थान सावित्री उपासना से जागृत हो जाते हैं । किसी मिल में छः इन्जन हों और वे ठण्डे पड़े रहें तब तो सारी मिल बन्द पड़ी रहेगी, पर यदि वे एक–एक करके सभी चालू हो जाँय तो मिल अपनी पूरी चाल से चलने लगेगी और उत्पादन का ढेर जमा हो जायगा । षट्चक्र मानव शक्ति में छिपे हुए अत्यन्त शक्तिशाली बायलर इन्जन, जनरेटर हैं । उनके सक्रिय होने पर मनुष्य साधारण जीव नहीं रह जाता वरन् उसकी गणना सिद्ध पुरुषों में होने लगती है । इस षट्चक्र जागरण के विधि–विधान में सावित्री सान्निध्य को ही प्रधान आधार माना गया है, इसलिये छः कुक्षि वाली छः साधनाओं वाली बताया गया है ।

पाँच मस्तक, पाँच कोषों के नाम से प्रख्यात हैं । अन्नमय कोष, मनोमय कोष, प्राणमय कोष, विज्ञानमय कोष, आनन्दमय कोष यह पाँच आवरण जीव के ऊपर हैं । इनमें से प्रत्येक को एक रत्न भाण्डागार कहना चाहिए । प्रत्येक की शक्ति क्रमशः एक–से–एक की अधिक है । हम में से अधिकांश व्यक्ति अन्नमय कोष, स्थूल शरीर की क्षमता की ही थोड़ा–सा सहारा लेकर भौतिक सुख–साधन जुटाते रहते हैं ।

सामान्य मनुष्यों की गति इतनी ही है । पर जो प्रबद्ध व्यक्ति शेष चार कोषों को भी समर्थ, सक्रिय, सुविकसित बना लेते हैं उनकी क्षमता देवोपम होती चली जाती हैं । यन्त्र–कोषों का परिष्कार सावित्री की साधना से ही सम्भव होता है । उसे पंच–मुखी भी कहते हैं । चित्रों में सावित्री के पाँच मुख भी चित्रित किये

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जाते हैं । इस बहुमुखी अलंकार का तात्पर्य सावित्री की शक्ति से पाँच कोषों के जागरण की सम्भावना यक्त करना ही है ।

उसे श्वेत अग्नि की आभा वाली कहा गया है । अर्थात् शुभ्र प्रकाश उसका स्वरूप है । इसी आधार पर उसका ध्यान किया जाता है, सावित्री शक्ति सूर्य जैसे प्रकाश एवं ताप से परिपूर्ण है उसका ध्यान करने में प्रकाश के मध्य में उपस्थित आकृति की ही भावना करनी पड़ती है । सविता की अधिष्ठात्री होने के कारण वह स्वयं भी प्रकाश पुञ्ज है । प्रकाश-युक्त ही उसका ध्यान करना पड़ता है । साधक को वह अन्धकार से प्रकाश की ओर ले जाती और उसे विशिष्ट ब्रह्मवर्चस, प्रचण्ड ओज एवं प्रखर तेजस्विता प्रदान करती है । इसीलिये उसे शुभ्र अग्नि-वर्ण वाली कहा गया है ।

कमल नेत्र का तात्पर्य है बड़ी आँखें । कमल सब पुष्पों में बड़ा एवं सबसे शोभायमान माना गया है । नेत्र देखने का काम करते हैं, कमल नेत्र का अलंकार दूर दृष्टि एवं दिव्य-दृष्टि का संकेत करता है । सावित्री की उपासना साधक को यही विशेषताऐं प्रदान करती है । वह इसी सम्भावना को देखता है, दूर की बात सोचता है सुदूर भविष्य का निर्माण करता है । जो बातें छोटे आँख वालों को, ओछे लोगों को सूझ नहीं पड़ती वह उस कमल नेत्र वाली सावित्री के भक्तों को सूझती हैं और वे उपलब्ध दिव्य-दृष्टि के माध्यम से अपना ही नहीं अन्य असंख्यों का भी कल्याण करते हैं ।

सावित्री की महिमा वर्णन करते हुए शास्त्रकार ने उसे तीन पाद वाली, छःकुक्षि वाली, पाँच मस्तक, शुभ्र अग्नि वर्ण एवं कमल नेत्र वाली बताया है । वस्तुतः यह सभी विशेषण उस महाशक्ति में विद्यमान हैं । जो ठीक तरह अविच्छिन्न श्रद्धा और निर्धारित विधि-विधान के साथ उसकी उपासना में संलग्न होता है, उसे किसी भी दिशा में-किसी भी क्षेत्र में असफल एवं अभाव ग्रस्त नहीं रहना पड़ता ।

कहा जा चुका है कि सावित्री का देवता सविता है । इसलिये उसे अधिष्ठान देवता के साथ अविच्छिन्न रूप से सुसम्बद्ध माना गया है । सावित्री उपासना में सविता का आधार लेना ही पड़ता है । सूर्य जैसे प्रकाश के साथ सम्बद्ध करके ही गायत्री का ध्यान किया जा सकता है । गायत्री का चित्र अथवा विग्रह जहाँ कहीं भी होगा वहाँ प्रकाश मण्डल अवश्य चित्रित किया जायगा । अन्य देवताओं का चित्रण प्रकाश-वलय से रहित भी हो सकता है, पर गायत्री का नहीं । क्योंकि वह सविता की शक्ति है । शक्ति और शक्तिवान का समन्वय तो होना चाहिये । इसीलिये गायत्री को-सावित्री को-सूर्य प्रकाश के साथ सदा ही सम्मिलित किया जाता है ।

गायत्रीं स्मरेद्धीमान् हृदि वा सूर्यमंडले ।
कल्पोक्त लक्षणेनैव ध्यात्वाऽभ्यर्च ततो जयेत् ॥

"बुद्धिमान पुरुष को हृदय में और सूर्यमण्डल में गायत्री का स्मरण करना चाहिये और कल्पोक्त लक्षण से ही ध्यान तथा अभ्यर्चन करके उसके पश्चात जप करना चाहिए ।"

आत्मा में अनन्य दिव्य तेज भरा पड़ा है वह गायत्री का ही भर्ग है । यह तेजस्विता से ही जठराग्नि बन कर शरीर का भोजन पचाती उष्णता प्रदान करती और गतिशील सक्रियता प्रदान करती है । वही मस्तिष्क में बुद्धि, हृदय में भावना, व्यक्तित्व में प्रतिभा और जीवन में महानता बन कर विद्यमान रहती है । इसी प्रकाश से आत्म-साक्षात्कार, ईश्वर दर्शन का लाभ होता है । आँखों की पुतलियों में जिस प्रकार छोटा-सा प्रकाश बिन्दु हमें संसार का सुन्दर दृश्य देख सकने का अवसर देता है वैसे ही आत्मा में स्थित वह परम तेज हमें तत्वदर्शी बनाता है, अज्ञान से छुड़ा कर प्रकाश की ओर ले जाता है ।

आत्मा का स्वरूप प्रकाशयुक्त माना गया है । ध्यान प्रयोजन में आत्मा को सदा ज्योति मानकर चला जाता है । आत्म-साक्षात्कार ज्योति-पुञ्ज के रूप में ही होता है । आकृतियों वाले इष्टदेव तो हमारे कल्पना चित्र मात्र हैं, जो ध्यान धारणा में परिपक्वता लाने तक ही काम आते हैं । उससे ऊँची स्थिति में तो बृह्म-ज्योति ही एक मात्र अवलम्बन रह जाती है । यही आध्यात्मिक यज्ञाग्नि है । इसी को आदित्य दिव्य-आभा-अखण्ड-ज्योति कहते हैं । यह आभा जिसे जितनी मात्रा में मिलती जाती है, वह परबृह्म परमात्मा के साथ, सविता देवता के साथ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एकाकार होता चला जाता है । संसार के समस्त जड़–चेतना में यही ज्योति प्रकाशमान है । इसी से देव शक्तियाँ और पंच–तत्व अपना कार्य कर सकने में समर्थ होता है । ग्रह–नक्षत्रों में यह प्रकाश जगमगा रहा है । हमारा कल्याण इस प्रकाश में ओत–प्रोत होने से ही होता है ।

कहा भी है–

आदित्यान्तर्गतं यच्च ज्योतिषां ज्योतिरुत्तमम् ।
हृदये सर्वभूतानां जीवभते स तिष्ठति ।
हृद्व्योम्नि तपति ह्येष बाह्य सूर्यस्य चान्तरे ।
अग्नौ वा धूमकेतौ च ज्योतिषश्चित्रकरञ्च यत् ।
प्राणिनां हृदये जीव रूप तया य एवभर्गस्तिष्ठति सा।
एव आकाशे आदित्यमध्ये पुरुषरूपया विद्यते ॥

"जिस ज्योति की प्रभा से सारे तामसिक भाव दूर हो जाते हैं, वह ज्योति ही श्रेष्ठ वस्तु है, उसे आदित्य के अन्तर्गत समझना होगा, वही समस्त जीव–जगत के हृदय में चेतयिता (चेतन) बनकर निवास करती हैं । बाह्य सूर्य के भीतर जो ज्योति आकाश में प्रकाश पाती है, वही ज्योति जीवन के हृदयाकाश में भी प्रकाश पाती है । वह ज्योति, अग्नि, धूमकेतु नक्षत्र आदि से भी अधिक उज्ज्वल है । वही भर्ग–देवता प्राणियों के हृदय में जीव–रूप में अर्थात् चेतन रूप में विराजमान है । वही बाह्य जगत् के अन्तकरण में विराट् पुरुष के रूप में विराजमान होकर जगत् को चेतन करता है ।"

अग्निश्च या मन्युश्यच मन्युयतपश्चमन्युकृतेभ्यः ।
पापेभ्योरक्षन्ताम् यदहना पापमूकार्षम् शिश्ना ॥
मनसा वाचा हस्ताभ्याम् ।
पदभ्यामुदरेणा शिश्ना ।
अहस्तदललुम्पतु । यत्किंच दुरितं मयि ।
इदमहं माममृतयोनौ सत्ये ज्योतिषि जुहोमि स्वाहा॥
–(तै० आ० १०–३२)

"अग्नि अर्थात् प्रकाशमय और तप अर्थात् ज्ञानमय परमात्मा और उनकी शक्तियाँ उन पापों से मेरी रक्षा करें जो कि क्रोधादि वृत्तियों के कारण उत्पन्न हुए हैं । जो पाप मैंने दिन में किया है, मन वाणी या हाथों द्वारा किया हैं, पैरों, उदर और उपस्थेन्द्रिय द्वारा किया है, वह लुप्त हो गया । जो कुछ पाप मुझ में हैं, वह लुप्त हो जायें । यह मैं अपने आपको अमृत की योनि में–जो कि सत्य–ज्योति रूप परमात्मा है उसमें आहुति रूप देता हूँ– स्वाहा बोल कर देता हूँ ।"

वेदों में जिस अग्नि का सहस्रों मन्त्रों में वर्णन एवं स्तवन किया गया है । वह चूल्हे में जलने वाली अग्नि नहीं वरन् व्यष्टि और समिष्टि को हर दिशा में प्रकाशित, प्रभावित करने वाली दिव्य तेजस्विनी दिव्य–ज्योति हैं । यही यज्ञाग्नि है इसी का वैश्वनर रूप में आदित्य और सविता रूप में पूजन अर्चन किया जाता है । अग्नि और सूर्य में भी वही दिव्य तेजस्विता विद्यमान है । इसलिये उसे उनमें उपस्थित होते हुए भी भिन्न माना गया है । श्रुति कहती है–

योऽग्नौ तिष्ठन्नग्नेरग्तरो यमग्निर्न वेद यस्याग्नि ।
शरीरं योऽग्निमन्तरां यमयत्येष त
आत्मान्तर्याभ्यमृतः ॥

"जो अग्नि में रह कर अग्नि से भिन्न हैं, जिसको नहीं जानते, अग्नि जिसका शरीर है, जो अग्नि के भीतर रह कर अग्नि को नियन्त्रित करता है, वही तुम्हारा अन्तर्यामी है ।"

सावित्री का देवता सविता वह नहीं जो सबेरे उगता और सायं को अस्त होता है । यह उसकी एक प्रतिमा मात्र है । सूर्य आवरण है और सविता उसकी आत्मा है । जो सर्वत्र प्रकाश, जीव, जागृति, चेतना उत्पन्न करता है, वह सविता है । यों दृश्य सूर्य में भी यह गुण हैं पर आत्मा में इन विशेषताओं का प्रेरक एवं संस्थापक सविता परबृह्म परमात्मा ही है । सावित्री उसी की अविच्छिन्न शक्ति है । इन दोनों का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है । एक का कार्य दूसरे पर पूर्णतया निर्भर है । एक देवता है दूसरा देवी । एक प्राण दो शरीर की तरह दोनों को अविभाज्य ही समझना चाहिये ।

सावित्री–गायत्री के माध्यम से ही सविता परबृह्म तक हमारी पहुँच हो सकती है । माता के द्वारा ही पिता से सम्बन्ध और परिचय होता है । माता का माध्यम न हो तो पिता का परिचय, सम्बन्ध एवं अनुग्रह प्राप्त हो सकना किसी भी प्रकार सम्भव नहीं हो सकता ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ठीक इसी प्रकार गायत्री महाशक्ति का सहारा लिये बिना परब्रह्म के सृष्टि साम्राज्य में आत्मा को खुल खेलने, युवराज बनने और अनन्त ऐश्वर्य पर अधिकार करने का भी सौभाग्य नहीं मिल सकता ।

उपनिषद् में इस तथ्य को और भी विस्तारपूर्वक विवेचना एवं उदाहरणों के साथ प्रस्तुत किया गया है उल्लेख इस प्रकार मिलता है–

कस्सविता का सावित्री ?
अग्निरेव सविता पृथिवी सावित्री ।
कस्सविता का सावित्री ?
वरूण एवं सविताऽऽपस्सावित्री ॥
कस्सविता का सावित्री ?
वायुरेव सविताऽऽकाशस्सावित्री ।
कस्सविता का सावित्री ?
यज्ञ एव सविता छन्दांसि सावित्री ।
कस्सविता का सावित्री ?
स्तनयित्नुरेव सविता विद्युत्सावित्री ॥
कस्सविता का सावित्री ?
आदित्य एव सविता द्यौस्सावित्री ।
कस्सविता का सावित्री ?
चन्द्र एव सविता नक्षत्राणि सावित्री ।
कस्सविता का सावित्री ?
पुरुष एव सविता स्त्री सावित्री ।
एवं ज्ञात्वा विद्वान् कृतकृत्यो भवति, सावित्री एवं सलोकतां जुषतीत्युपनिषद् ।

सविता और सावित्री कौन है? इस प्रश्न के उत्तर में कहा गया है कि अग्नि सविता है, पृथ्वी सावित्री है, वरुण सविता है और जल सावित्री है । वायु सविता है और आकाश सावित्री है । यज्ञ सविता है और ऋचा सावित्री है । मेघ सविता है और विद्युत सावित्री हैं । सूर्य सविता और आकाश सावित्री है । चन्द्र सविता और नक्षत्र सावित्री है । मन सविता और वाणी सावित्री है । पुरुष सविता और स्त्री सावित्री है, इस सर्वव्यापक तेजोमय सावित्री को जो विद्वान् जानते हैं । वे कृतकृत्य हो जाते हैं । सावित्री से ही सालोक्य मोक्ष प्राप्त होता है ।"

प्रश्नोत्तर के रूप में सविता सावित्री का रूप उपरोक्त मन्त्र से पूछा है और उसी में उदाहरण समेत समाधान भी किया गया । सविता और सविता के जोड़े को उदाहरण समेत अन्य युग्मों के सदृश बताकर जिज्ञासु की शंका का समाधान किया गया है ।

जल दृश्य पदार्थ है, वरुण उसकी अधिष्ठात्री शक्ति–आत्मा है । वायु का निवास आकाश में है । आकाश न हो तो वायु कहाँ रह सकेगी ? वायु न हो तो आकाश का उपयोग क्या रहेगा ? इसी प्रकार आदित्य की निर्भरता द्युलोक पर है ।

मन्त्र बड़ा है, उसमें कितने ही युग्मों का उदाहरण देकर जिज्ञासु को यही तथ्य हृदयंगम कराने का प्रयत्न किया गया है कि जीवन का साध्य लक्ष्य बृह्म है और उसका साधन गायत्री । यदि किसी को बृह्म को वस्तुतः प्राप्त करना हो । बृाह्मी स्थिति, बृह्म परायणता– बृह्म निर्वाण एवं, बृाह्मणत्य उपलब्ध करने की आकांक्षा करता हो तो उसे बृह्म–तेज की, बृह्म वर्चस्व की–आधिष्ठातृ देवी–सावित्री गायत्री का अवलम्बन ग्रहण करना चाहिए ।

सविता पर एक वैज्ञानिक दृष्टि

विश्व रचना के दो प्रधान तत्व हैं–एक प्राण (इसे आध्यात्मिक भाषा में "दैव' भी कहते हैं) दूसरा 'भूत' । इन दोनों तत्वों का जहाँ भी मिलन हो जाता है, वही दृश्य प्रकृति, गतिमान या क्रियाशील जीवन के दर्शन होने लगते हैं । केवल "भूत' पदार्थ प्राण के बिना स्पन्दन नहीं कर सकता । इसलिये भौतिक जगत में जहाँ भी जीवन–तत्व है, वह प्राण ही है, इसे ही "गायत्री कहते हैं ।

मनुष्य शरीर में यह दोनों शक्तियाँ स्पष्ट रूप से प्रगट होती हैं । बाल्यावस्था में छोटा–सा पंच भौतिक पदार्थों का पिण्ड छोटा–सा प्राण धारण किये हुए था, तब उसकी शक्ति और तेजस्विता कम थी, पर जैसे–जैसे शरीर का विकास होता है और शरीर में प्राण की मात्रा बढ़ती है, शक्ति और क्रियाशीलता भी बढ़ती है, अवस्था के इस क्रम से बाल्यावस्था, यौवनावस्था और वृद्धावस्था को "गायत्री की समिधा" कहा गया है, क्योंकि प्राण तत्व इन्हीं में जलता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उसके बाद दोनों तत्व फिर अलग–अलग हो जाते है, प्राण निकल जाता है और पञ्चभूतों से बना हुआ नितान्त प्राकृत शरीर पड़ा रह जाता है। इस छूटे हुए शरीर को ऋग्वेद में–

यद गायत्रे अधि गायत्र माहितम् ।

१/१६४/२३

अर्थात् पंचभूतों से बना शरीर मर्त्यगायत्री है। इसमें सोचने, समझने, सुख दुःख अनुभव करने, क्षोभ और विकलता व्यक्त करने वाली शक्ति प्राण थी। शरीर निस्पन्द और अनुभव–हीन होता है। इसलिये सुख–दुःख ही नहीं मनुष्य जीवन की सारी हलचलें, परिवर्तन गति उन्नति अवनति कारण भी प्राण ही है।

यदि सूक्ष्म रूप से विचार करें तो ऐसा मालूम पड़ेगा कि जो प्राण शरीर के विभिन्न क्षेत्रों में क्रियाशील रहता है, वह भी भौतिक है। किरणा ज्योति या अग्नि जैसा कोई स्थूल तत्व कह सकते हैं, उसे नियन्त्रित और प्रेरित करने वाली एक तीसरी मनोमय शक्ति है। इसी की इच्छा और संकल्प शक्ति से शरीरगत व्यापार चलते हैं। इसलिये गायत्री–इस एक शब्द में ही पञ्चभौतिक, प्राण और मन–त्रिक शक्ति समग्ररूप आ जाता है। शास्त्रों में इसे भौतिक क्लेश और प्रपंच से मुक्ति दिलाने वाली विद्या कहा गया है। अर्थात् जो विचार–पूर्वक इन तीनों शक्तियों का अलग–अलग अनुभव करते हैं, फिर उनकी अधोगति नहीं होती। "तुमहिं जानि कछु रहे न शेषा, तुमहि पाय कछु रहे न क्लेशा।" इसी गायत्री की स्तुति है, जो अब विज्ञान समस्त भी है।

गायत्री का आविर्भाव कहाँ से होता है। यह प्रश्न उठता है तो उपनिषद्कार कहते हैं–

"देवात्म शक्तिम् स्वगुणे निर्गूढ़"

देव माया या इन्द्र शक्ति ही वह सत्ता है, जो विश्वगायत्री अर्थात् अनेक रूपों में विकसित होता है। यह देव–शक्ति या इन्द्र कौन हैं––

"तस्य दृश्यः शतादश"

सूर्य ही वह इन्द्र है, जिसकी हजारों किरणें हैं। एक–एक किरण, एक–एक रूप है। इन किरणों में प्राण–शक्ति भरी होती है। सूर्य को त्रयी विद्या भी कहा गया है अर्थात् सूर्य स्वयं भी एक वैसी ही गायत्री है, जिस तरह की एक गायत्री शरीर प्राण और मनोमय रूप में, धरती में विद्यमान् रहती है। इस तरह यदि सूर्य को एक विराट् पुरुष की संज्ञा प्रदान करें–जो एक व्यापक क्षेत्र में बिल्कुल मनुष्य की तरह क्रियाशील रहता है। सोच–विचार भी कर सकता है, विकल और क्षुब्ध हो सकता है। दण्ड और पुरस्कार दे सकता है। हर्ष और शोक, सन्तोष और असन्तोष व्यक्त कर सकता है, तो उसमें कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए।

मनुष्य एक छोटी गायत्री है, सूर्य एक विराट् गायत्री। छोटी गायत्री को जब विराट् गायत्री के साथ जोड़ देते है तो वह भी वैसी ही शक्ति और सम्पन्नता अनुभव करने लगती है, जैसे धनवान् पिता का पुत्र पास में कुछ न होने पर भी अपने पिता की तरह ही धन का अभिमान और कुछ भी क्रय कर सकने का विश्वास कर सकता है। अर्थात् गायत्री के विराट् स्वरूप को पा जाने पर मनुष्य भी उतनी ही क्षमता वाला हो सकता है, जितनी सूर्य भगवान की, इसे ही शक्ति अथवा सिद्धि कहते हैं।

यह जानना आवश्यक है कि क्या सचमुच सूर्य मनुष्य की तरह त्रिक शक्ति वाला विराट् पुरुष है जिसमें मनुष्य की तरह सम्वेदनशीलता हो, हो सकता है ?

सूर्य रश्मियों के वर्णन में वैज्ञानिक कहते हैं कि यह तीन रंगों का (सात रंग इन तीन रगों के मिश्रण से बनते हैं, मूल रंग तीन ही हैं) सम्मिश्रण है। स्पेक्ट्रोमीटर के द्वारा इन रंगों को–अलग–अलग भी कर दिखाया जा सकता है। यदि मनुष्य और सूर्य में ऐसा कुछ साम्य है तो मनुष्य शरीर में भी इन रंगों को परिलक्षित होना चाहिए पर यहाँ तो रक्त का रंग भी लाल है फिर साम्य कहाँ हुआ ?

विज्ञान के विद्यार्थी जानते होंगे कि रक्त का रंग लाल नहीं हैं, कई तत्वों के सम्मिश्रण से वह लाल दिखाई देता है, अन्यथा रक्त के जीवाणु विशुद्ध पीले रंग के होते हैं। आजकल पूर्ण मृत्यु का पता लगाने के लिये त्वचा में 'यूरेनाइन' नाम का इन्जेक्शन दिया जाता है। यदि मनुष्य की मृत्यु नहीं हुई और रक्त संचार हो रहा है तो त्वचा का रंग पीला और हरा हो जाता है, नीला रंग, लाल रंग की गहराई के कारण दृश्य नहीं हो पाता अन्यथा ऐसी विधि से शरीर की इस त्रिक शक्ति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का स्पष्ट विश्लेषण हो जाता है। मृत देह में इनजेक्शन का कोई प्रभाव नहीं होता।

प्रत्यक्ष निर्विकार दिखाई देने वाले सूर्य के सम्बन्ध में सर्वप्रथम इन्गोलस्टाड के पादीर क्रिस्टांफ शाइनर ने एक सन्देश अपने अध्यक्ष पादरी को दिया था कि उसमें काले-काले धब्बे विद्यमान हैं। लेकिन अरस्तु के ग्रन्थ में ऐसा कुछ नहीं था, इसलिये बेचारे शाइनर को कड़ी डाँट-फटकार सुननी पड़ी किन्तु सौभाग्य से उन्हीं दिनों गैलीलियों ने दूरदर्शन यन्त्र की सहायता से इस बात की पुष्टि कर दी कि सूर्य में सचमुच धब्बे हैं और यह धब्बे हलचल करते रहते हैं। कभी फूटकर फैल जाते हैं, कभी एक धब्बा लुप्त हो जाता है और उसके पास का धब्बा कौंधने लगता है। कई बार वे कई भागों में बँट जाते हैं और फिर कई-कई मिलकर एक हो जाते हैं। पहले इन हलचलों का कारण वैज्ञानिक नहीं जान सके थे, पर धीरे-धीरे पता चला कि यह सब तपी गैसों के बृहत् बवण्डर है और वे बिल्कुल मनुष्य की सी इच्छा शक्ति से मेल खाते हैं।

सूर्य भगवान् का दृश्य और क्रिया क्षेत्र बहुत व्यापक पृथ्वी ही नहीं अनेक ग्रह-नक्षत्रों तक व्याप्त है। मनुष्य की शक्ति उसकी आँखें ऐसी नहीं हैं कि वह उतने व्यापक क्षेत्र को देख सके, किन्तु जब वह अपना सम्बन्ध सूर्यदेव के साथ जोड़ लेता है। (ध्यान-विज्ञान के द्वारा यह स्थिति काफी दिन में आ पाती है) तो वह भी उसी तरह न केवल पृथ्वी की हलचलों और परिवर्तनों का जानकार हो जाता है वरन् उसे ब्राह्माण्डों के भी रहस्य ज्ञात होने लगते हैं, यही नहीं वह एक अंश तक उन परिवर्तनों के साथ अपनी सम्मति भी जोड़कर उन्हें कुछ कम या ज्यादा कर सकता है। अर्थात् इस तरह के कोई आध्यात्मिक पुरुष बड़ी-बड़ी दैवी हलचलों का ज्ञान ही नहीं प्राप्त करते, उन्हें कम या बिल्कुल ही समाप्त कर सकते हैं।

किसी प्रकार गायत्री का मनुष्य जीवन में प्रादुर्भाव के स्वरूप को व्यक्त करते हुए शास्त्रकार ने बताया कि "मनः एव सविता" अर्थात् मन ही सविता है। तात्पर्य यह है कि जब मन और "सूर्यदेव" का तादात्म करते हैं (जप और सूर्य तेजमध्यस्था गायत्री का ध्यान करते हैं) तो प्राणायतन होता है अर्थात् सूर्यदेव की भर्गशक्ति मनुष्य के अन्तःकरण में प्रवेश करती हैं और प्रकृति से सामंजस्य स्थापित करती है, अर्थात् यदि प्रकृति कहीं दूषित हो रही है (कोई रोग के रूप में) तो उसे ठीक करती है। इसी का नाम असत् संस्कारों का निष्कासन और सत्संस्कारों का विकास होता है। जब तादाम्य की स्थिति ऐसी हो जाये कि मन का ध्यान करते हुए मन की अग्नि और सूर्य रूप दोनों एक हो जायें, तो और विलम की कल्पना हो ही नहीं, तो उसे 'गायत्री सिद्धि' कहेंगे। तब गायत्री की सम्पूर्ण अनुभूति और शक्ति का स्वामी वह मनुष्य होगा और उन क्षमताओं से प्रकृति में परितर्वनों की शक्ति से विभूषित होगा, जिनकी ऊपर व्याख्या की गई है।

शास्त्रकार ने जो कहा था कि एक गायत्री मनुष्य है और दूसरी विद्या शक्ति सूर्य। दोनों में विलक्षण साम्य है। यह विषय अब विज्ञान भी सिद्ध करने लगा है, इसका थोड़ा-सा अनुमान इस पंक्तियों में होगा। विस्तृत ज्ञान तो तब हो, जब सावित्री तत्व का भी विस्तृत साधन और अवगाहन करें। यह विद्या है, जो शरीर बुद्धि और अन्तःकरण तीनों में हस्तक्षेप रखने के कारण शरीर-बल, सांसारिक-बल और आत्म-बल देकर अपने उपासक का भारी हित सम्पादित कर सकती है, करती भी है।

स्वर्णिम सविता की ध्यान-धारणा

मन की शक्ति अपार है। व्यावहारिक जीवन में प्रायः उसका ७ प्रतिशत ही काम में आता है। शेष ९३ प्रतिशत प्रसुप्त स्थिति में ही पड़ा रहता है। जो अवयव काम में नहीं आते वे निष्क्रय रहने पर जंग खाये चाकू की तरह, पक्षाघात पीड़ित की तरह निरर्थक हो जाते हैं। अपंग जैसी स्थिति में रहने लगते हैं। मस्तिष्क के सम्बन्ध में भी यही बात है। दैनिक क्रिया-कलाप में जिन घटकों से काम लिया जाता है, उन्हीं में जागृति एवं सक्रियता बनी रहती है। काम न मिलने पर हिम प्रदेश के भालुओं और सर्पों की तरह वे निद्राग्रस्त हो जाते हैं। मनःक्षेत्र के अनेकानेक घटकों के सम्बन्ध में भी यही बात लागू होती है। यदि अपेक्षाकृत अधिक क्षेत्रों को क्रियाशील रखा जा सका होता तो मनुष्य बौद्धिक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दृष्टि से असामान्य स्थिति तक पहुँचा होता । उस विकास का प्रभाव समूचे जीवन पर पड़ता । प्रगति हर प्रयोजन में परिलक्षित होती । विशेषतया मनः संस्थान तो उतना समुन्नत होता कि वह अतीन्द्रियातीत क्षमताओं से सुसम्पन्न होता और दिव्य ज्ञान के आधार पर इतना कुछ कर सकता, जितना सौ बुद्धिमान मिल कर भी नहीं कर सकते ।

शरीर और मस्तिष्क अनेकानेक अदृश्य घटकों से मिलकर बने हैं । उनके समूह समुच्चय अपना-अपना क्षेत्र सँभालते हैं और प्रत्यक्ष अंग-अवयवों के रूप में काम करते हैं । यों कहने को तो समस्त घटकों का परिपोषण संचालन कर सकने की क्षमता रक्त द्वारा सम्पन्न होती समझी जाती है, पर वस्तुतः उनकी हलचलें उन ज्ञान तन्तुओं द्वारा होती हैं जो मस्तिष्क के साथ जुड़े हुए हैं । मस्तिष्क के सक्रिय केन्द्र इन ज्ञान तंतुओं के माध्यम से समस्त शरीर के साथ सम्बन्ध जोड़े रहते हैं और जानकारियों का आदान-प्रदान करते रहते हैं । रक्त की न्यूनता एवं अशक्तता होने पर अवयव कुपोषण के शिकार होते हैं और रुग्णता तथा अकाल मृत्यु की दिशा में चलने लगते हैं, किन्तु जैव ऊर्जा का प्रभाव इससे भी अधिक है । जीवनी शक्ति रक्त में पाई तो जाती हैं, पर उस पर निर्भर नहीं है । वह स्वतंत्र है तथा काय-कलेवर से नहीं चेतना से उद्भूत होती है । चेतना से मनःसंस्थान का जितना क्षेत्र ज्वलन्त होता है उसी अनुपात से शरीर में जीवन शक्ति, कोमलता, सुन्दरता बनी रहती है । निरोधक शक्ति की बहुलता होने पर रोगों का आक्रमण भी सफल नहीं होता । जीवट वाले व्यक्ति महामारियों में भी निरन्तर सेवा कार्य करते रहते हैं, किन्तु स्वयं उससे प्रभावित नहीं होते । यह मनोबल की प्रखरता है, जो अंग अवयवों को सुरक्षित रखे रहती है । बहुमुखी सफलताएँ इसी पर निर्भर रहती हैं ।

कायिक घटकों को रक्त का पोषण ही नहीं मनोबल की वह विशिष्टता भी चाहिए, जिसे जीवन शक्ति कहते हैं । जिस प्रकार पोषण रक्त पर आश्रित है, उसी प्रकार प्रतिभा समेत जीवट के अनेक पक्ष मनःसंस्थान से उभरते तथा गतिशील होते हैं । प्रश्न यह है कि प्रचुर परिमाण में जैव ऊर्जा की समुचित मात्रा में उपलब्धि कैसे हो ? प्रसुप्त निष्क्रिय कोष्ठकों को जागृत कैसे किया जाय ? रहस्य भरी अदृश्य शक्तियों की चमत्कारी विशेषताओं से लाभान्वित कैसे हुआ जाय ? उन्हें प्रखर प्रचण्ड कैसे बनाया जाय ?

सोये व्यक्ति को झकझोर कर जगाया जाता है । निस्तब्ध पड़े घड़ियाल को घंटा मारकर झनझनाया जाता है । दबा खजाना खोदने के लिए कुदाल चलाया जाता है । विकृत-विक्षिप्त मस्तिष्क को बिजली का झटका दिया जाता है । इसी प्रकार शरीर के किसी अंग अवयव को विशेष रूप से सक्रिय समर्थ बनाना है, तो उसे किसी समर्थ उपकरण के सहारे हिलाया डुलाया, उटका, पटका जाता है । ऐसे उपकरण की भूमिका कौन निभाये ? कैसे निभे ? इसका सुनिश्चित उत्तर एक ही है कि मानसिक ऊर्जा का एक सघन समुच्चय एकत्रित किया जाय और इस योग्य बनाया जाय कि वह तिलमिलाने वाला प्रहार कर सके । इस उपलब्धि को हस्तगत करने का एक ही उपाय है । एकाग्रता और भावनिष्ठा सम्पन्न ध्यान ।

आतिशी शीशे पर सूर्य किरणें एकत्रित की जायें तो उसका केन्द्र बिन्दु देखते-देखते अग्नि उगलने लगता है । बन्दूक दागने पर कारतूस की गोली कितनी तीव्र गति से उड़ती और कठोर लक्ष्य को बेधती है । यह सर्वविदित है ।

सूर्य की किरणों की भाँति मानसिक शक्तियाँ भी बिखरी रहने के कारण अपना प्रभाव अतिस्वल्प मात्रा में ही पृथ्वी पर बिखेर पाती हैं । यही बात विचार शक्ति के बारे में भी है, वह अनेक क्षेत्रों की, अनेक आवश्यकताओं की पूर्ति में नियोजित रहती है । इसे एकत्रित कर लिया जाय तो उसकी मूल शक्ति असाधारण रूप से शक्तिशाली हो जाती है । भाप के सम्बन्ध में भी यही बात है । सामान्यता पानी गर्म होकर हवा में उड़ता रहता है और उसका किसी को भी पता नहीं चलता, किन्तु जब उसे रेल इंजन के पिस्टन के साथ जोड़ दिया जाता है, तो बड़ी तादाद के माल के डिब्बों को घसीटती हुई वही भाप कहाँ से कहाँ पहुँचती है ? प्रेशर कुकर इसी भाप के दबाव से घंटों में बनने वाला भोजन मिनटों में पका देती है । कल्पना शक्ति की क्षमता के सम्बन्ध में भी यही समझा जाना चाहिए । उसे बिखेरते रहने वाले लोग अति बुद्धिमान होते हुए भी अस्त-व्यस्त

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

रहते हैं और जीवन भर में कोई महत्वपूर्ण कार्य कर नहीं पाते । किन्तु जो एकाग्रता साधने में समर्थ होते हैं, वे वैज्ञानिक, विद्वान, कलाकार, दार्शनिक कुशल शिल्पी बनकर दिखा देते हैं । हमें एकाग्रता की महत्ता समझनी चाहिए और कछुए खरगोश की दौड़ वाली कहानी याद रखनी चाहिए, जिसमें मंद गति वाला कछुआ नियत लक्ष्य तक पहुँच कर बाजी जीत गया था, जबकि द्रुतगामी खरगोश अपने मन को जहाँ–तहाँ उलझाये रखने के कारण पिछड़ गया था । प्रत्यक्ष जीवन की सफलता का यही आधार है और यही आत्मिक उत्कर्ष का भी ।

विचारों की एकाग्रता साधने का सरल और प्रभावी उपाय ध्यान है । ध्यान में केन्द्रीकरण के लिए कोई छवि निर्धारित करनी पड़ती है । ऐसी वस्तु जो आकर्षक भी हो और गुणवत्ता से भरपूर भी । सुन्दरी युवतियों की ओर अनायास ही ध्यान खिंच जाता है और उनकी छवि तथा भंगिमा के इर्द–गिर्द चक्कर लगाने लगता है । यही बात ध्यान इष्ट के सम्बन्ध में है । उस निर्धारण से पूर्ण लक्ष्य पर गरिमा, महत्ता एव चयन का आरोपण करना पड़ता है । यही सिद्धान्त सभी देवी–देवताओं के सम्बन्ध में लागू होता है ।

सार्वभौम ध्यान के लिए प्रकाश पुंज प्रभात–कालीन स्वर्णिम सूर्य सविता का चयन करना अति उत्तम एवं निर्विवाद है । जिन देवताओं की कथा गाथा होती है, उसके इतिहास में कितने ही उत्साहवर्धक तथ्य रहते हैं, तो कई खोट भरे भी । ध्यान के कारण वह सभी भलाइयाँ बुराइयाँ साधना पर सवार होती हैं । इसलिए अन्य देवता संदेहास्पद भी हों, तीखी समालोचना से उनके चरित्र एवं स्वभाव में ऐसी आवांछनीयता भी सन्निहित रहती है जो साधक पर भी श्रेश्ठताओं के साथ–साथ हावी होती चली जाती है । इस दृष्टि से सूर्य सर्वथा दोष रहित है । उसमें गुण ही गुण हैं । साथ ही शक्ति का भण्डार एवं आकर्षक सुन्दरता से भरा–पूरा भी, उसे समझा जा सकता है ।

सविता गायत्री का अधिष्ठाता है । उसके द्वारा प्राण शक्ति का उद्भव और वितरण होता है । इसी कारण वह प्राणियों का, वनस्पतियों का, जन्मदाता माना जाता है । प्रकाश वितरण करने चर्मक्षुओं को दृश्य देखने और चक्षुओं को दिव्य दृष्टि से भरने का अनुदान प्रदान करता है । उसे निरन्तर निस्वार्थ विश्व में निरत देखा जाता है । अनुशासन का धनी है । समय साधना की दृष्टि से उसे आदर्श एवं अनुकरणीय माना जा सकता है । तेजस्विता उसकी विशिष्टता है । इन्हीं सब विभूतियों को ध्यान धारणा द्वारा आकर्षित और अन्तराल में प्रतिष्ठित किया जा सके तो समझना चाहिए कि साधक की सर्वतोमुखी प्रगति का द्वार खुल गया । जिस उद्देश्य के लिए ध्यान किया जाता है, उस गन्तव्य तक पहुँचने का राजमार्ग मिल गया ।

प्रभात काल के उदीयमान सूर्य में कुछ समय तक स्वर्णिम आभा रहती है । वही नेत्रों के लिए सह्य भी है । आरम्भ में तनिक देर आँखें खोलकर उसे देखना और फिर तुरन्त ही पलक बन्द कर लेना चाहिए । सूर्य के अभाव में दीपक की लौ को देखने से भी काम चल सकता है । दोनों ही त्राटक साधना के अन्तर्गत आते हैं । खुले नेत्रों से प्रकाश को देखने की अवधि न्यूनतम होनी चाहिए । एक पल झाँकी भर । इसके उपरान्त पलक बंद कर लेने चाहिए और उस प्रकाश पुन्ज की मानसिक अवधारणा करनी चाहिए । कुछ दिन के अभ्यास से सूर्य को या दीपक को खुले नेत्रों से देखने की आवश्यकता नहीं पड़ती, यह ध्यान स्वाभाविक हो जाता है और आनायास ही होता रहता है । उस समय सविता मंत्र का भी स्वचालित जप होता रहता है । प्राणयोग की 'सोहम' साधना में श्वास–प्रश्वास के साथ निरन्तर चलते रहने की आदत स्वभाव का अंग बन जाती है ।

प्रकाश पर संयम किया गया विचारों का एकत्रीकरण दोनों उपचारों के कारण एक विशेष शक्ति से सुसम्पन्न हो जाता है, उससे अन्तः क्षेत्र की दिव्य शक्ति का आविर्भाव होता है । इसका मनःक्षेत्र के किसी भी शक्ति केन्द्र पर आरोपण किया जाय तो वह प्रसुप्त अवस्था में न रह कर, जागृत होने लगता है । इस जागृति का तात्पर्य है एक अतिरिक्त शक्ति की उपलब्धि हस्तगत होना । इस प्रयोग को शरीर के किसी अवयव पर या शक्ति केन्द्र चक्र, गुच्छक पर, उपत्यिका परिकर पर केंन्द्रित किया जा सकता है । टार्च की रोशनी जिस स्थान पर पड़ती

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है वह परिधि चमकने लगती है। ठीक इसी प्रकार प्रकाश युक्त ध्यान को जिस भी स्थान के लिए जोड़ा जाता है वहाँ अभिनव हलचल चल पड़ती है। कील ठोकने पर जिस पर छेद होता है उसकी नीचे की पर्तों में दबा हुआ पदार्थ ऊपर उछल कर आ जाता है, उसी प्रकार यह ध्यान धारणा भी फलित होती है। आपरेशन करने पर मवाद बाहर निकल पड़ता है। मधुमक्खी के छत्ते में नली डालने पर शहद टपकने लगता है। उसी प्रकार प्रकाश से समहित एकाग्रता को किसी क्षेत्र पर आरोपण करने से कील ठोकने जैसी प्रतिक्रिया होती है। उससे भरी हुई अवांछनीयताओं का आपरेशन की तरह निष्कासन होता है। साथ ही वहाँ जो कुछ श्रेष्ठ प्रसुप्त स्थिति में पड़ा है, वह जागृत होकर अप्रत्यक्ष से प्रत्यक्ष स्तर पर आ जाता है। आगे का प्रश्न यह है कि ध्यान द्वारा उपलब्ध की गई बेधक दिव्य दृष्टि को किस स्थान पर किस प्रयोजन के लिए कितनी मात्रा में नियोजित किया जाय। यह निर्णय करने से पूर्व यह जानना होता है कि स्थूल शरीर और सूक्ष्म शरीर में किसी दिव्य शक्ति का केन्द्र कहाँ है और उसके साथ सम्बन्ध जोड़ने के लिए बेधक दृष्टि की किस मार्ग से कितने मोड़ मरोड़ों में होकर गुजरते हुए पहुँचा जा सकता है ?

इतनी बारीकी में जा सकने की यदि सिद्धहस्त सर्जन जैसी योग्यता किसी अनुभवी का सान्निध्य प्राप्त करके जान सकना सम्भव नहीं तो फिर सीधा मार्ग है। स्थूल शरीर की दिव्य क्षमताओं को जागृत कराने के लिए नाभिचक्र के दिव्य कमल को ऊर्जा प्रदान करते हुए प्रस्फुरण सूक्ष्म शरीर का केन्द्र हृदय चक्र है और धारण शरीर की भाव संवेदनाओं का उद्गम मस्तिष्क मध्य में अवस्थित सहस्र दल कमल बृत्मचक्र। इनको झकझोरने से भी भौंरे की तरह दिव्य रस एवं दिव्य गंध जैसा अलौकिक आनन्द प्राप्त किया जा सकता है।

ध्यान-धारणा में सविता उपासना का सामान्य क्रम यह है कि ऊषा बेला में उगते सूर्य को अधखुली आँखों से देखकर पलक बन्द कर लिया जाय। भावना यही प्रगाढ़ रहे कि वह दिव्य सत्ता अपने किरण जाल समेत संपूर्ण शरीर में संव्याप्त हो गई। इस शुरूआत में जलाशय का निकट होना शक्ति आकर्षण की दृष्टि से अधिक लाभदायक है। इसी कारण बहुतेरे जलाशय में खड़े होकर सूर्याभिमुख स्थिति में जप तथा ध्यान करते हैं। कई उतने समय तक गीले कपड़े पहने रहते हैं। कुछ सूर्य को अर्ध्यदान करते हुए मानसिक जप के साथ अपनी संक्षिप्त साधना पूरी कर लेते हैं। यदि बृह्मवेला में यह आराधना करनी हो तथा बादल छाए रहने पर प्रत्यक्ष दर्शन न हो पा रहा हो तो जिस दिशा में सूर्य की उपस्थिति संभव लगती हो उस ओर मुख कर के भी ध्यान किया जा सकता है। यह अनेकानेक प्रचलनों में कुछ एक की चर्चा हैं।

सर्वसुलभ ध्यान का उपाय यह है कि खुले स्थान पर बैठा जाय। सुबह का समय हो, जलपात्र दायीं ओर रखा रहे। प्रतीक उपासना के रूप में अगरबत्ती जलाई जा सकती है। स्वच्छ स्थान में स्वस्थ शरीर, वस्त्र से ध्यान मुद्रा में बैठे। ध्यान मुद्रा की पंच सूत्री विधि है (१) शान्त चित्त (२) स्थिर शरीर (३) कमर सीधी (४) हाथ गोद में (५) आँखें बन्द। यह है ध्यान मुद्रा, जिसे प्रत्येक प्रकार के ध्यान में आवश्यक एवं उपयोगी माना गया है।

इस स्थिति को बनाने में शुरुआत के पाँच मिनट लग सकते हैं। इसके बाद ध्यान की तन्मयता इन निर्देशों के साथ प्रगाढ़ करने चले जायें।

-प्रातःकाल-पूर्व दिशा-अरुणिम आकाश-
-स्वर्णिम सूर्योदय
-स्वर्णिम सूर्य सविता। सविता-तेजस्वी परबृह्म
-सविता बृह्म। प्रकाश ज्ञान-प्रज्ञा संविता वर्चस्। अग्नि ऊर्जा-प्रखरता।
-सविता-बृह्मवर्चस्। उपास्य आराध्य। इष्ट। लक्ष्य
-साधक पर सविता शक्ति की अनन्त अन्तरिक्ष से शक्ति वर्षा अमृत वर्षा।
-अमृत वर्षा से आत्म-सत्ता विकसित, पुलकित, उल्लसित,
-संव्याप्त आत्मा-सत्ता में समर्थता-सजगता-सरसता।
-साधक का सविता में समर्पण, विसर्जन-विलय, समन्वय, समापन, शरणागति।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

–सविता शक्ति का आत्मा सत्ता में प्रवेश । भाव चेतना में प्रखरता की अनुभूति ।
–स्थूल शरीर में ओजस्, सूक्ष्म शरीर में तेजस् । कारण शरीर में वर्चस् ।
–निष्ठा, प्रज्ञा और श्रद्धा का प्रचंड उद्भव । पवित्रता–प्रसन्नता विशिष्टता की दिव्य अनुभूति । प्रकाश पुंज की ओर अनवरत अनुगमन, अदम्य–उल्लास का अनुभव ।

संकल्पपूर्वक अभ्यास करते रहने पर यह कल्पना चित्र सूक्ष्म नेत्रों से क्रमशः अधिक स्पष्ट होते चले जाते हैं । इस स्पष्टता से उत्साह बढ़ता है । फिर भी जानने योग्य बात है कि कल्पना चित्र की स्पष्टता होना न होना मस्तिष्कीय संरचना पर निर्भर है । बहुतों को सोने–जागने में कल्पना चित्र सहज ही दीखने लगते हैं । बहुतों के मस्तिष्क में इस तरह के दृश्य देख सकने की तनिक भी गुंजाइश नहीं होती । अतएव दीखने न दीखने के आधार पर ध्यान की सफलता–असफलता का अनुमान नहीं लगाया जा सकता । मूल तत्व है भावानुभूति । यदि सविता देव के साथ सघन आत्मीयता बढ़ रही हो, श्रद्धा परिपक्व हो रही हो तो समझना चाहिए ध्यान–धारणा में अभीष्ट प्रगति हो रही है ।

इस प्रगति का परिणाम सविता देव की अनुकम्पा के रूप में साधक के स्थूल सूक्ष्म–कारण शरीर में निहित ढेर की ढेर विभूतियों को जगाने वाला सिद्ध होता है । स्थूल शरीर में अनेक गुच्छक ग्रन्थि समुदाय को शरीर विज्ञानी देखते हैं । सूक्ष्म शरीर को निरखने की जिनमें क्षमता है, वे षट्चक्र, पंचकोष, नाड़ी प्रवाह, उपत्यिकाएँ स्तर के सूक्ष्म अवयवों की उपस्थिति भी देखते हैं । मानसिक गतिविधियों के अलावा सूक्ष्म–शरीर में अति महत्वपूर्ण केन्द्र और भी हैं । इन्हें हृदय–चक्र और नाभि चक्र भी कहतें हैं । नाभी चक्र स्थूल शरीर की हलचलों का अधिष्ठाता है । हृदय चक्र को सूक्ष्म शरीर स्वर्गलोक का केन्द्र माना गया है । मस्तिष्क मध्य में सहस्रार बृह्मलोक–कारण शरीर का अधिष्ठान है ।

सामान्य स्थिति में यह तीनों चक्र उपेक्षित, अविज्ञात और अविकसित दशा में ही पड़े रहते हैं । पर जब इनमें ध्यान की प्रक्रिया से सविता के दिव्य आलोक का संचार होता है तो धीरे–धीरे ये तीनों विकसित होते जाते हैं । इनके विकास का अनुभव साधक को अपनी साधना की प्रगाढ़ता में स्वयं होने लगता है । उसे अनुभव होने लगता हे कि सविता का अन्तः क्षेत्र में अवतरण अपना प्रभाव चमत्कार दिखा रहा है । तीनों शरीरों और उनमें सन्निहित अनेक घटकों में सूर्य शक्ति का अभिनव संचार हो रहा है । सौर चेतना साधक के सर्वतोमुखी अभ्युदय का मार्ग प्रशस्त कर रही है ।

ज्योति अवतरण की साधना

बृह्मवर्चस् को, बृह्म तेज को प्राप्त करने के लिए उच्चस्तरीय अनेकों साधनायें हैं । उनके विधि–विधान और महत्म्य अलग हैं, इस छोटी सी पुस्तक में उन सबका उल्लेख किया भी नहीं जा सकता, पर सविता की, सावित्री की, गायत्री की, प्राण शक्ति का कर्षण करने और अपने में उसका विकास करने के लिए ज्योति अवतरण की तेज पुंज साधना भी उच्चस्तरीय और ध्यान–धारणाओं में से एक है । एक प्रकार से यह अपने आप में पूर्ण भी है और गायत्री साधना की सिद्धि के लिए इसका अवलंबन लिया जा सकता है ।

प्रारम्भिक स्तर की साधना वह कहलाती है, जिसमें माँ की छवि के साथ–साथ पूजा–उपकरणों की आवश्यकता होती है । भावनाओं के विकास और अपनी श्रद्धा–निष्ठा को प्रगाढ़ बनाने की दृष्टि से उसका अपना विशिष्ट महत्त्व है । किन्तु साधना की सिद्धि के लिए उच्चस्तरीय ध्यान–धारणा ही काम में आती है । इष्ट के चित्र और प्रतिमा के साथ की गई उपासना से पूर्वाभास, सुखद स्वप्नों में भविष्य ज्ञान, माता के दर्शन, अन्तःकरण से दिव्य भावनाओं की स्फुरणा इस साधना की सफलता के संकेत होते हैं, किन्तु आत्मा साक्षात्कार की भूमिका वह होती है, जिसमें सालोक्य, सारूप्य तथा सायुज्य की अनुभूति होती है । यह स्थिति सविता की शक्ति गायत्री–सावित्री के तेज पुञ्ज

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में अपने आपको घुलाने, मेल-मिलाप कराने के अभ्यास से प्रारम्भ होती है और उस तेज पुंज में समाधिस्थ हो जाने की प्रगाढ़ अवस्था में उसकी परिणति । उस स्तर का साधक अपने आपको सविता के तेज पुंज की स्थिति में अनुभव करता और विराट आत्मा की अनुभूति करता है । इस दृष्टि से तेज पुंज ज्योति अवतरण की साधना का अभ्यास आवश्यक हो जाता है ।

इसके लिए चित्र आदि की आवश्यकता नहीं । रात्रि को यदि कभी आँख खुल जाय तो बिस्तर पर पड़े-पड़े भी किया जा सकता है । बैठकर करनी हो तो दीवार, मसन्द का सहारा लिया जा सकता है । आराम कुर्सी भी काम में लाई जा सकती है । शरीर को शिथिल, मन को एकाग्र करके सुविधा के समय इस साधना को करना चाहिए । समय कितना लगाना है, यह अपनी सुविधा एवं परिस्थिति पर निर्भर है । पर जितना भी समय लगाना हो उसे तीन भागों में विभक्त कर लेना चाहिए । एक तिहाई में स्थूल शरीर, एक तिहाई में सूक्ष्म शरीर और एक तिहाई में कारण शरीर में ज्योति का अवतरण करना चाहिए । अनुमान से या घड़ी की सहायता से यह समय निर्धारित करना चाहिए ।

सूक्ष्म जगत में ईश्वरीय दिव्य प्रकाश की प्रेरणापूर्ण किरणें निरन्तर बहती रहती हैं । उन्हें श्रृद्धा, एकाग्रता और भावनापूर्वक ध्यान करके इस लेख में वर्णित विधि से कोई भी साधक ग्रहण कर सकता है । पर अपने परिवार के लिए, इस साधना में संलग्न साधकों के लिए दो-दो घण्टे के दो ऐसे समय भी नियुक्त हैं जिनमे किन्हीं महान दिव्य शक्तियों द्वारा अपना शक्ति प्रवाह भी जोड़ दिया जाता है और उस समय ध्यान करने में विशेष आनन्द आता है और विशेष प्रभाव पड़ता है । यह समय रात्रि को ८ बजे और प्रातः ३ से ५ बजे का है । इन दोनों अवसरों में से जब जिसे सुविधा हो तब वह अपनी सुसविधा के अनुरूप समय निर्धारित कर सकते हैं ।

आरम्भ में यह समय एक बार में आधा घण्टे से अधिक का नहीं होना चाहिए । धीरे-धीरे समय बढ़ाकर एक घण्टे तक का किया जा सकता है । रात्रि के पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध में दोनों बार भी यह साधना की जा सकती है । तब दो बार में कुल मिलाकर एक घण्टे से लेकर दो घण्टे तक का यह समय हो सकता है । २४ घण्टे में २ घण्टे इसके लिए अधिकतम समय हो सकता है । अधिक तेज के ग्रहण करने में कठिनाई पड़ती है, इसलिए ग्रहण उतना ही करना चाहिए जितना पचाया जा सके । कौन किस समय इस साधना को करे, कितनी देर, किस प्रकार बैठकर करे यह निर्धारण करना साधक का काम है । अपनी परिस्थतियों के अनुसार उसे अपने व्यवस्था स्वयं ही करनी चाहिए । पर जो क्रम या समय निर्धारित किया जाये, उसे उसी क्रम से चलाना चाहिए । समय और स्थिति का एक ही क्रम चलाना किसी भी साधना की सफलता के लिए उचित एवं आवश्यक है ।

ज्योति अवतरण साधना इस प्रकार करनी चाहिए-

(१) शरीर को बिल्कुल शिथिल कर देना चाहिए, भावना करनी चाहिए कि अपना मन, शरीर और आत्मा पूर्ण शान्त, निश्चिन्त एवं प्रसन्न स्थिति में अवस्थित है । यह भावना पाँच मिनट करने से चित्त में ध्यान के उपयुक्त शान्ति उत्पन्न होने लगती है ।

(२) ध्यान कीजिए चारों ओर प्रकाश-पुञ्ज फैला हुआ है । आगे-पीछे, ऊपर-नीचे सर्वत्र प्रकाश फैल रहा है । भगवती आदिशक्ति की आभा सूर्य मण्डल से निकलकर सीधी आप तक चली आ रही है और आप उस प्रकाश के घेरे में चारों ओर घिरे हुए हैं ।

(३) यह प्रकाश किरणें धीरे-धीरे आपके शरीर में, त्वचा छिन्द्रों में प्रवेश करती हुई प्रत्येक अवयव में घुस रही हैं । हृदय, फेंफड़े, आमाशय, ऑत, मस्तिष्क, हाथ, पैर और अंग उस प्रकाश-पुञ्ज को अपने भीतर धारण करके परिपुष्ट हो रहे हैं । जिस्वा, गुह्येन्द्रिय, नेत्र, कान, नाम आदि इन्द्रिय इस प्रकार से आलोकित होकर पवित्र बन रही हैं । उनकी असंयम वृत्ति जल रही है । पवित्रता की यह ज्योति शरीर के कण-कण को पवित्र बनाने में संलग्न हैं ।

स्थूल शरीर में रक्त-माँस अस्थि आदि के बने हुए अवयवों के प्रकाश पुञ्ज बनने और उनके परिपुष्ट, पवित्र, स्फूर्तिवान् एवं ज्योतिर्मय स्वरूप का ध्यान करने के उपरान्त सूक्ष्म शरीर पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए । सूक्ष्म शरीर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

का स्थान मस्तिष्क है ।

(४) ध्यान करना चाहिए कि मस्तिष्क के भीतर मक्खन जैसे बिखरे हुए कणों में अगणित प्रकार की मानसिक शक्तियों एव विचारणाओं के केन्द्र छिपे हुए हैं, उन तक आदिशक्ति माता के प्रकाश की धाराएँ बह रही हैं और वे सभी कण उसके द्वारा रत्नकणों की तरह ज्योतिर्मय होकर जगमगाने लगे हैं ।

(५) मन में छिपे हुए अज्ञानान्धकार का असंमय, स्वार्थ, मोह, भय और भ्रम जंजाल का इस प्रकाश के प्रवेश होने से विनाश हो चला और मानसिक संस्थान का कण-कण विवेक, उच्च विचार, सन्तुलन एवं सुरुचि जैसी विभूतियों से जगमगाने लगा । गायत्री माता की इस ज्योति द्वारा अपनी मनोभूमि को महापुरुषों जैसे स्तर की बनाया जा रहा है और हम उस प्रकाश को बड़ी श्रद्धापूर्वक अधिकाधिक मात्रा में मस्तिष्कीय कणों में ग्रहण एवं धारण करते चले जा रहे हैं ।

(६) ध्यान करना चाहिए कि आकाश मे अनन्त प्रकाश की आभा अवतरित होकर अपने हृदय स्थान में अवस्थित आत्मा के अंगुष्ठ मात्र प्रकाश पुञ्ज में प्रवेश कर रही है । उसकी सोमबद्धता, संकीर्णता और तुच्छता दूर कर अपने सदृश बना रहीं है । लघु और महान का यह मिलन-अणु ज्योति का यह आलिंगन परस्पर महान् आदान-प्रदान के रूप में परिणत हो रहा है ।

(७) जीवात्मा का लघु प्रकाश परमात्मा के परम प्रकाश से लिपट रहा है और दीपक पर जलने वाले पतिंगे की तरह, यज्ञकुण्ड में पड़ने वाली आहुति की तरह अपने अस्तित्व को होम रहा है । चकोर की तरह उस प्रकाश पुंज को चन्द्रमा मानकर आल्हादित हो रहा है और अनन्त आनन्द का अनुभव कर रहा है ।

(८) इस मिलन के फलस्वरूप अन्तःकरण में सद्भावनाओं की हिलोरे उठ रही हैं, आकाँक्षाएँ, आदर्श एवं उत्कृष्टता परिपूर्ण हो चली हैं । ईश्वरीय सन्देशों और आदेशों पर चलने की निष्ठा परिपक्व हो रही है । विश्व के कण-कण में परमब्रह्म को ओत-प्रोत देखकर "वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना प्रबल हो रही है और सेवा-धर्म अपनाकर ईश्वर-भक्ति के मधुर रसास्वादन की उमंग उठ रही है । आत्मा की महिमा के अनुरूप अपनी विचारणा और कार्य पद्धति रखने का निश्चय प्रबल हो रहा है ।

(९) अनन्त प्रकाश के आनन्दय समुद्र में स्नान करते हुए आत्मा अध्यात्म अपने आपको धन्य एवं कृत्य-कृत्य हुआ अनुभव कर रहा है ।

इस संसार में जीवन को सफल बनाने की सबसे बड़ी शक्ति आध्यात्म ही है । उसी के द्वारा मनुष्य अपने को पहचान सकता है और समस्त प्राणियों को एक ही महाशक्ति का अंश समझकर उसके साथ अपनत्व का अनुभव कर सकता है । इस तरह की भावना हमारी शक्ति को अनेक गुना बढ़ा सकती है । 'ज्योति-अवतरण' की साधना से मनुष्य इस सर्वव्यापी आत्मतत्त्व की वास्तविकता को बहुत कुछ अनुभव कर सकता है । यह अनुभूति कितनी प्रगाढ़ होगी आत्मानुभूति, आत्म साक्षात्कार और अपनी आत्मामय होने की भावना उतनी ही सघन होती चली जायेगी ।

सविता और संसारव्यापी परिवर्तन प्रक्रिया

इटली के महान् खगोल वैज्ञानिक गैलीलियो ने एक बार यह घोषणा की कि सूर्य सम्पूर्ण है ही नहीं । इस पर सारे संसार में एक बार तहलका मच गया । लोगों में खलबली मच गई कि सूर्य इतना साफ दिखाई देता है फिर उसका सम्पूर्ण न होना कैसे हो सकता है ? गैलीलियों ने एक बार यह समझाने की चेष्टा भी की कि वह तो एक प्रकार का आवेश अथवा चेतना है, जो सौर-मण्डल के प्रत्येक परमाणु में प्रतिभासित है । यही नही परमाणुओं में पाये जाने वाले सौर-बीज उतने ही शक्तिशाली और समर्थ हैं, जितना स्वयं सूर्य । इस बात को तब तो किसी ने नहीं समझा, पर खगोल विद्या का अध्ययन तेजी से अवश्य प्रारम्भ किया गया । तब से अब तक सूर्य का जितना अध्ययन किया जा चुका है, उससे गैलीलियों सिद्धान्त तो परिपुष्ट हुए ही हैं, अनेक ऐसे रहस्य भी ज्ञात हुए हैं, जिससे भारतवर्ष में प्रचलित गायत्री महाविद्या के सिद्धान्तों की भी पुष्टि होने लगी । स्मरण रहे गायत्री का देवता एवं शक्ति स्रोत 'सविता'-अर्थात् सूर्य ही है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अगर हम यह जानना चाहें कि सूर्य का मानव-जीवन से क्या सम्बन्ध है ? तो विज्ञान की भौतिक उपलब्धियों को ही देखकर सन्तुष्ट नहीं रह जाना होगा वरन् उनके आधार पर भारतीय आध्यात्म की संगति पर भी विचार करना आवश्यक होगा । पाश्चात्य देशों में उसे जलवायु, वनस्पति और दृश्य जगत् में परिवर्तनों के लिये प्रमुख उत्तरदायी माना जाता है, किन्तु भारतीय आचार्यों का मत है कि मनुष्य की भावनाओं का भी सूर्य से घनिष्ठतम सम्बन्ध है, इस तादात्म्य की उपेक्षा करके मनुष्य सुखी नहीं रह सकता । गैलीलियो ने इसी सूक्ष्म विज्ञान पर प्रकाश डालने का प्रयत्न किया था । तब उसकी बातों की उपेक्षा की गई पर बाद में वैज्ञानिकों ने विस्तृत अध्ययन किया और अब तक जो कुछ खोजें हुई, उनसे यह बात निश्चित रूप से सिद्ध हो चुकी है कि मनुष्य पूर्णत या सूर्य का ही आश्रित है । उससे मानसिक सम्बन्ध स्थापित करके अनेक प्राकृतिक रहस्य और शक्तियाँ प्राप्त करने एवं आत्म विकास में प्रकाश पाने की विस्तृत खोज इस देश में गायत्री विद्या के नाम से हुई ।

पृथ्वी और सूर्य समान तत्वों से बने हैं, अन्तर केवल ठोस और गैसीय अवस्था का है । पृथ्वी में आक्सीजन, नाइट्रोजन, लोहा, गन्धक, कार्बन, सोडियम आदि अनेक तत्व पाये जाते हैं, इन्हें ठोस से तरल एवं गैसीय स्थिति में भी बदला जा सकता है, वह सब तापमान का खेल है । यह सब तत्व सूर्य में भी पाये जाते हैं, किन्तु उच्च ताप के कारण वहाँ स्थूल कुछ भी नहीं है । गैस स्थिति में यह तत्व सूर्य में विद्यमान् है । इसलिये मनुष्य प्रकृति में जो गुण सम्भव है, वह सूर्य में भी हैं और उन कणों को आकर्षित कर मनुष्य बिना किसी औषधि या खाद्य के अपना स्वास्थ्य और आरोग्य स्थिर रख सकता है ।

मनुष्य का शरीर सूर्य और पृथ्वी के तत्वों के सम्मिश्रण से बना है, इसलिये शारीरिक और मानसिक दृष्टि से शरीर पृथ्वी से ही प्रभावित नहीं होते वरन् उन पर सूर्य का भी प्रचण्ड हस्तक्षेप रहता है । हम यदि शरीर पर विचार करें तो प्रतीत होगा कि अन्न-जल आदि पृथ्वी का रस सेवन करने से हमारे शरीर में आक्सीजन, नाइट्रोजन, कार्बन, लोहा, गन्धक, सोडियम, कैल्शियम आदि विभिन्न तत्व उत्पन्न होते हैं, वहाँ उसमें इन तत्वों से भी सूक्ष्म प्राण शक्तियाँ भी क्रियाशील है । प्राण के द्वारा ही हमारे शरीर में स्पन्दन है । छींकना, जम्हाई लेना, अपान वायु का विर्सजन, निद्रा, पलक झपकना आदि क्रियायें प्राण के द्वारा ही सम्भव हैं । यह क्रियायें जड़-तत्व मात्र नहीं कर सकतीं । प्राण इन सब तत्वों से अधिक सूक्ष्म है, इसलिये वह पहचान में नहीं आता पर सूर्य विज्ञान के द्वारा उसे आसानी से समझा जा सकता है ।

खगोल-शास्त्रियों का कहना है कि सूर्य में उपरोक्त रासायनिक तत्वों की गन्ध मात्र है, मूलतः सूर्य में दो ही तत्व पाये जाते हैं, एक हाइड्रोजन, दूसरा हीलियम । सूर्य हाइड्रोजन का आहार करता है और उसके चार परमाणुओं को हीलियम के एक परमाणु में बदल देता है । इसी से उसमें शक्ति आती है, ताप और प्रकाश उत्पन्न होता है, यदि यह क्रिया न होती तो सूर्य दिखाई भी नहीं देता, क्योंकि वह सौर-मण्डल के समग्र भाग में चेतना रूप में छाया हुआ है । दिखाई केवल उतना हिस्सा देता है जहाँ यह क्रिया होती है, अन्यथा सूर्य सर्वव्यापी और सर्वान्तर्यामी तत्व है, अब चाहे उसे आत्मा कहें, प्राण पुञ्ज कहें या हाइड्रोजन का जलता हुआ गोला कहें । यदि किसी को यह भ्रांति हो कि सूर्य आग का जलता हुआ गोला है तो उसे दूरदर्शी (टेलेस्कोप) से सूर्य का अध्ययन करना चाहिये । उससे पता चलेगा कि सूर्य में यज्ञ कुण्ड के समान लपटें ही नहीं फूटतीं वरन् उसमें से 'ऊर्जा भँवर' जो कि प्रकाश, गर्मी और विद्युत का सम्मिश्रण होता है, फूटता रहता है, इसी तरह की क्रिया हमारे शरीरों में होती है । विचारों के रूप में इसी तरह की ऊर्जा हमारे शरीरों में भी विद्यमान् है । यह केवल स्पन्दन जैसी क्रिया है, इसलिये दिखाई नहीं देती पर हमारे शरीर की अधिकांश शक्ति इसी तरह अभिव्यक्त होती है । यदि मनुष्य को विभिन्न स्थूल तत्वों का प्राणी कहें और स्वल्प क्षमता वाला मानें तो सूर्य को भी उन्हीं शक्तियों का सूक्ष्म गैसीय स्थिति का विचारशील प्राणी मानना पड़ेगा । उसकी शक्ति चूँकि अनन्त और विशाल है । वह निरन्तर देता रहता है, इसलिये उन्हें 'देवता' नामक आदर सूचक शब्द से सम्बोधन करने की परम्परा रही है । सूर्य को यदि इस अर्थ में भावनाओं और विचारों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की केन्द्रीयभूत शक्ति मानें और यह कल्पना करें कि मनुष्य उनसे शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, औद्योगिक और बौद्धिक वरदान प्राप्त कर सकता है, तो किसी को आश्चर्य नहीं होना चाहिये । गायत्री मन्त्र द्वारा उसी विद्या का उद्घाटन पृथ्वी पर किया गया है ।

ध्वनि से सम्बन्धित एक सर्वज्ञात तथ्य है कि समान कम्पन गति वाले एक अंग्रेजी के वाई के आकार के उपकरण (ट्यूनिंग फार्क) तथा एक तार को लें । तार पर एक छोटा-सा कागज का टुकड़ा मोड़ कर रख दें । अब ट्यूनिंग फार्क को किसी ठोस से टकराकर कम्पन उत्पन्न करें और तार के समीप लायें । स्पष्ट दिखाई देता है कि कागज का वह छोटा-सा टुकड़ा तार पर नाचने लगा । जबकि तार और ट्यूनिंग फार्क के मध्य सम्पर्क का माध्यम केवल आकाश था । ट्यूनिंग फर्क के कम्पन समान अवस्था वाले तार में भी कम्पन्न उत्पन्न कर देते हैं । तार के इन वास्तविक कम्पनों के कारण ही कागज का टुकड़ा नाचने लगता है ।

एक और प्रयोग है । पंचम स्वर पर चढ़े हुए तबले को कस कर रख दें । बरसात के दिनों में यदि बादल पंचम स्वर में गरज उठें तो उसकी गड़गड़ाहट का पृथ्वी में रखे हुए तबले पर क्या प्रभाव पड़ेगा ? यह देखें तबले का चमड़ा अपने आप फट जायेगा । यह शब्द की शक्तिशाली तरंगों के द्वारा होता है ।

इन दो प्रयोगों के समान ही समान तत्वों वाले मनुष्य और सूर्य में मानसिक सम्बन्ध स्थापित कराने का काम वह २४ अक्षरों के कम्पन करते हैं, जिन्हें गायत्री मंत्र कहा जाता है । ठीक उसी प्रकार सूर्य और मनुष्य में तात्विक एकता है । शास्त्रकार का कथन है-"सूर्यात्मा जगतस्थ-स्युशश्च सूर्य जगत् की आत्मा है । जबकि हमारी चेतना हमारे शरीर जगत् की आत्मा है । इन दो चेतनाओं को समान गति से कम्पित और सम्बन्ध स्थापित कर सकने की सामर्थ्य गति उन २४ अक्षरों में है, जिन्हें गायत्री मन्त्र कहते हैं ।

विज्ञान का यह नियम है कि उच्चस्तर या अधिक शक्ति का प्रवाह निम्न स्तर अथवा कम शक्ति वाले केन्द्र की ओर तब तक बहता है, जब तक कि दोनों समान न हो जायें । गायत्री से प्राप्त सिद्धियाँ इसी तादात्म्य की परिपक्व अवस्था ही है, जब मनुष्य भौतिक शरीर में ही सूर्य की चेतना के समान सर्वव्यापी, सर्वदर्शी और सर्वसमर्थ हो जाता है । वह न केवल जलवायु, लोगों के स्वास्थ्य, मन की बातें जान लेने की सामर्थ्य पा लेता है, वरन् इनसे भी सूक्ष्म से सूक्ष्म गतिविधियों और शक्तियों का स्वामी हो जाता है । उनका विस्तृत विवरण किया ही नहीं जा सकता । वह सारे संसार को भी नष्ट कर सकता है, किन्तु सूर्य देवता से सम्पर्क स्थापित होने के बाद गायत्री उपासक में उन्हीं की सी करुणा सद्बुद्धि और परार्थ उत्सर्ग की भावना विकसित होने लगती है । दूसरे शब्दों में यदि गायत्री उपासना के उपासक के साथ-साथ अपने सद्गुण सद्विचारों को अधिक से अधिक सत्कर्मों में लगाने लगता है तो उसकी साधना की सफलता और भी सत्वर हो उठती है ।

कोई मनुष्य शांत और प्रसन्न मुद्रा में बैठा हो, उस समय अन्य कोई उसके पास जाकर भावनापूर्वक कुछ निवेदन करे तो उससे आशातीत समर्थन प्राप्त किया जा सकता है । बजाय तब जबकि वह अस्त-व्यस्त और अशांत स्थिति में हो । कोई तालाब स्वच्छ और शांत हो तो उस पर एक छोटा-सा कंकड़ फेंककर ही तरंगों का उत्पादन किया जा सकता है । यह भाव और विज्ञान दोनों का मिला-जुला स्वरूप है । भारतीय आचार्यों ने जो आचार संहितायें और वैज्ञानिक प्रयोग किये हैं, वह उक्त सिद्धान्त को दृष्टि में रख कर ही किये । पिछले दिनों हमने भी उसी सूक्ष्म दर्शन का आश्रय एक प्रयोग किया था । वह सहस्र कुण्डी गायत्री महायज्ञ के रूप में था । हमने पढ़ा था कि कुछ विशिष्ट अवसरों पर विशिष्ट रीति से गायत्री उपासनायें एवं यज्ञादि प्रक्रियायें सम्पन्न की जायें तो उनसे सूर्य देव की आध्यात्मिक शक्तियों को विशेष रूप से प्रभावित एवं आकर्षित किया जा सकता है । उनसे न केवल अपने लिये वरन् सम्पूर्ण समाज, राष्ट्र और विश्व के लिये सुख-समृद्धि और शांति का अनुदान उपलब्ध किया जा सकता है ।

अक्टूबर १९५८ का सहस्र कुण्डी यज्ञ एक ऐसा ही प्रयोग था । पीछे मौसम वैज्ञानिकों ने भी हमारी मान्यता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के एक भाग की पुष्टि कर दी । १ जुलाई १९५७ से ३१ दिसम्बर १९५८ तक खगोल शास्त्रियों से अन्तर्राष्ट्रीय शांत सूर्य वर्ष (इन्टरनेशनल इयर ऑफ दि क्वायेट सन्) संक्षेप में 'इक्विसी' मनाया । यह नाम इसलिये रखा गया कि इन दो वर्षों में सूर्य बिल्कुल शांत रहा और वैज्ञानिकों को उस पर अनेक प्रयोग और अध्ययन करने का अवसर मिला । लगभग इसी अवधि से हमारे उस यज्ञ की तैयारी हुई थी । साधकों ने एक वर्ष पूर्व में ही गायत्री के विशेष पुरश्चरण प्रारम्भ किये थे और अक्टूबर १९५८ में ४ दिन तक यज्ञ का शरदपूर्णिमा के दिन पूर्णाहूति दी थी । गायत्री का देवता सविता है, इसलिए इस गायत्री अभियान का भी उद्देश्य उसका अध्ययन और प्रयोग भी था और उन उपलब्धियों से सारे विश्व समाज को लाभान्वित कराना भी, जो ऐसे अवसरों पर देव शक्तियों से सुविधापूर्वक अर्जित की जा सकती हैं ।

उस यज्ञ के बाद से विश्व की गतिविधियों का हम बराबर अध्ययन कर रहे हैं और यह देखकर आश्चर्यचकित हैं कि न केवल प्रकृति अपने विधान बदल रही है वरन् लोगों की भावनायें और विचार भी तेजी से बदल रहे हैं, योरोप की विलासिताप्रिय और भौतिकवादी प्रजा भी अध्यात्म का आश्रय पाने के लिए भागी चली आ रही है । भारतवर्ष को तो उसका सुनिश्चित लाभ मिलने वाला है, भले ही उसका प्रत्यक्ष दर्शन सन् १९९९ के बाद दिखाई दे । अपने दैनिक जीवन मे सूर्य की शांत स्थिति प्रातः और सन्ध्या के समय होती है, भारतीय आचार्यों ने यह दोनों ही समय जप के लिये उपयुक्त बताये हैं, इसी प्रकार नवरात्रि पर विशेष साधनायें करने का जो विधान है, वह सूर्य की इस भौतिक प्रकृति की खोज का ही फल है, वह पूर्णतया विज्ञान सम्मत ही है ।

दीर्घकालीन कालचक्र के अनुसार इस बीच दो महाक्रांतियाँ होने को हैं । अन्तर्राष्ट्रीय शांत सूर्य वर्ष समिति ने १ जनवरी १९६४ से ३१ दिसम्बर १९६५ तक, दूसरा शांत सूर्य वर्ष मनाया और यह बताया कि सूर्य में कुछ विचित्र प्रकार के स्पन्दन (फैक्यूले) उत्पन्न हो रहे हैं, उनके बाद ही विशेष प्रकार के काले धब्बे (सूर्य कलंक) दिखाई देते हैं और उसके कारण पृथ्वी को जलवायु में विशेष प्रकार की हलचल उत्पन्न होती है । अगले कुछ दिन बहुत अधिक तीव्र और शीघ्रातिशीघ्र परिवर्तन होंगे । यों सूर्य कलकों (सन स्पाट्स) के कारण पृथ्वी में प्राकृतिक परितर्वनों को क्रम ११ वर्ष बाद आता है पर किन्हीं अज्ञात कारणों से अगले दिनों इस नियमों को तोड़कर सूर्य पृथ्वी में परिवर्तन लायेगा । इसमें वृष्टि, अनावृष्टि, सूखा, अकाल, ओलावृष्टि आदि ही नहीं युद्ध और महामारियों के प्रकोप भी होंगे । उन प्रकोपों में उन्हीं की रक्षा होगी, जो सूर्य से अपना सम्बन्ध जोड़े रहेंगे ।

इस तरह की घोषणायें हम काफी समय पहले से ही कर रहे हैं, वह गणित-ज्योतिष और सूर्य विद्या के आधार पर ही करते रहे हैं । वैज्ञानिक निष्कर्ष उसकी पुष्टि ही करते हैं । भारतवर्ष को मुसलिम और अँग्रेजी सभ्यता के बन्धन में रहते हुए कोई १५०० वर्ष बीत गये हैं, सूर्य विद्या के आधार पर इन १५०० वर्षों का अन्त इसी शताब्दी में हो जायेगा । ग्रह गणित के अनुसार पृथ्वी को सूर्य की परिक्रमा करने में नौ करोड़ तीस लाख मील की यात्रा करनी पड़ती है, इस यात्रा को पृथ्वी लगभग ६७ हजार मील प्रति घन्टा की गति से चलकर ३६५.२५ दिनों में पूरा करती है । प्रत्येक चक्कर में १/४ दिन बढ़ जाता है । ४ वर्ष में वह एक दिन के बराबर होता है, अँग्रेजी हिसाब में प्रत्येक चौथे वर्ष फरवरी २९ दिन की और वर्ष ३६६ दिन का होता है । एक नया पूरा वर्ष होकर पृथ्वी को पुनः उसी कक्षा में आने के लिए ३६५.२५ x ४=१४६१ वर्ष लग जाते हैं ।

इस तरह १४६१ वर्षों का एक क्रम इस शताब्दी के अन्त में पूरा हो जायेगा । इस बीच सूर्य की प्रचण्ड शक्तियों का पृथ्वी पर आर्विभाव होगा और उससे वह तमाम शक्तियाँ नष्ट-भ्रष्ट हो जायेंगी, जो मानसिक दृष्टि से आध्यात्मबादी न होंगी । जो लोग सूर्य शक्तियों से सम्बन्ध बनायें रखेंगे, उसकी रक्षा और समुन्नति उसी प्रकार होगी, जिस तरह भयंकर ज्वार-भाटा आने पर भी समुद्र में पड़े फूलों का अनिष्ट नहीं होता, जबकि बड़े-बड़े जहाज यदि साधे न जायें तो उस अनन्त जल-राशि में डूबकर नष्ट हो जाते हैं । गायत्री उपासक इन परिवर्तनों को कौतूहलपूर्वक देखेंगे और उन कठिनाइयों में भी स्थिर बुद्धि बने रहने का साहस उसी प्रकार प्राप्त करेंगे, जिस प्रकार माँ का प्यारा बच्चा माता के क्रुद्ध होने पर भी उनसे भयभीत नहीं होता वरन् अपनी प्रार्थना से उन्हें शांत कर लेता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह नहीं समझना चाहिये कि इन परिवर्तनों में विश्व संस्कृति का अन्त हो जायगा । जब तक सूर्य है, तब तक सृष्टि बनी रहेगी, चेतना स्वरूप में प्राणि जगत् सूर्य या सूर्य का ही अंश है और सूर्य कम से कम एक अरब वर्ष इसी तरह प्रकाश और प्राण देता रहेगा, जब तक सूर्य है, जब तक सूर्य के पास हाइड्रोजन है, तब सृष्टि बनी रहेगी पर अब वह एक बार स्नान करके अपनी सम्पूर्ण गन्दगी साफ कर देने का इच्छुक है, वर्तमान प्रकृति हलचलें युग परिवर्तन की सम्भावनायें उसी का प्रमाण हैं ।

अन्तरिक्ष किरणों, उत्तरी ज्योति, पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र (मैगेटिक फील्ड) पृथ्वी के ऊपरी वायु-मण्डल और अयन मण्डल (आयनोस्फियर) पर सूर्य के प्रभाव का अध्ययन करने के बाद वैज्ञानिकों ने यह बताया कि सूर्य अपने आप उत्तेजित होता रहता है, उसका रहस्य क्या है ? इसका उत्तर तो वे नहीं दे पाये, पर उनका विश्वास है कि ११ वर्षों में एक वर्ष ऐसा आता है, जबकि उसकी उत्तेजना बढ़ जाती है । उत्तेजित सूर्य अपने सम्पूर्ण सौर-मण्डल का जिसमें पृथ्वी भी सम्मिलित है, मन्थन करता है । उस समय उससे ज्वालायें फूटती हैं और सूक्ष्म कणों की वर्षा होती है । यह कण बाद में कहाँ विलीन हो जाते हैं, उसका पता वैज्ञानिक लगाने में असमर्थ रहे, पर आत्म-विद्या के आचार्य यह जानते हैं कि सृष्टि प्रत्येक के अणु-अणु में "अतिरिक्त शक्ति' के रूप में यह उत्तेजित कण ही हलचल पैदा करते हैं, उससे स्थूल प्रकृति ही प्रभावित नहीं होती वरन् मनुष्य की सूक्ष्म प्रकृति अर्थात् विचार, भावनायें, संकल्प और विश्वास भी परिवर्तित होते हैं, इस परिवर्तन को आँका जाना यद्यपि सम्भव नहीं होता पर सामूहिक रूप से विश्व की राजनीति, उद्योग, व्यापार, श्रम, रोजगार, युद्ध एव सामाजिक गतिविधियों पर उसके प्रभाव को देखकर वस्तुस्थिति को समझा अवश्य जा सकता है । उसकी से इस विश्वास की पुष्टि होती है कि सूर्य जड़ पदार्थों का पुञ्ज ही नहीं प्राण और मनोमय जगत् का स्वामी है ।

जो लोग इन बातों की अनुभूति करेंगे, वह तेजी से गायत्री विद्या के अन्तराल में प्रवेश होंगे । साधना ज्ञानार्जन और संयम में उनकी वृत्ति बढ़ेगी, ऐसे लोग ही आगे चलकर विश्व का मार्ग-दर्शन करेंगे ।

सूर्य द्वारा ही स्थूल प्रभाव को तो वैज्ञानिकों ने अच्छी तरह अनुभव कर लिया है । प्रकाश सूर्य से ही मिलता है, गर्मी सूर्य से ही मिलती, वर्षा सूर्य कराता है । भूमि और पानी को अलग-अलग तरह की गर्मी प्रदान करके हवायें भी उसी के चलाये चलती हैं, पौधों को भोजन भी वही देता है । फलों में, वनस्पतियों में, खनिज सूर्य से ही आते हैं, वही बाद में मनुष्य पाता है । लकड़ी, पत्थर का कोयला, जल-प्रपात और पेट्रोल आदि सभी तत्व सूर्य ही देता । यह सब वह अपनी बाहरी क्रियाशक्ति और गर्मी से करता है । उसके तल का तापमान ११००० फारनेहाइट है । पृथ्वी की किसी वस्तु को इतनी गर्मी में कुछ सैकिंड तक ही रखा जा सकता है । सूर्य के यह प्रभाव तो दृश्य है और इतने सामान्य हो गये हैं कि लोग इसके महत्व को भी नहीं समझते । सूर्य अपने भीतर एक और विलक्षण २६०००००० अश फारेनहाइट की गर्मी रखता है, पृथ्वी की गर्मी तो उसके आगे बर्फ की तरह ठण्डी है, उस शक्ति से ही सूर्य बिम्ब पर सटी हुई कणिकाओं (ग्रेनल्स) में हलचल करता है । यह ग्रेनल्स ६०० से १४०० किलोमीटर र्सक के गोले और समकोण आकार के होते हैं, इन ग्रेनल्स को वह बारी-बारी से चमकाता, बुझाता रहता है, उसी से उसके बिम्ब में झिलमिलाहट जैसी होती है, देखने में वह तरंगे आकाश में ही शांत हो जाती है, ऐसा जान पड़ता है, किन्तु उनसे पृथ्वी में विचित्र प्रकार की हलचलें होती हैं, यह लहर तन्तुक (फिलामेंट) साँप की तरह लहराते हुए चलते हैं और गगन मण्डल में विचित्र परिवर्तन करते हैं, उसके फलस्वरूप पृथ्वी पर प्राकृतिक हलचलें पैंदा हो जाती हैं । इन हलचलों में यद्यपि कोई निश्चित समय क्रम नहीं है, पर अधिकांश ११ वर्षो के एक बार तीव्र हलचल होती है । ऐसे समय साधनाओं की सिद्धि के लिए बड़े उपयोगी होते हैं, मानसिक जप से उन शक्ति-कणों और स्पन्दनों को अपने भीतर स्थिर कर अनेक शारीरिक, मानसिक और आत्मिक लाभ तीव्रता से प्राप्त किये जाते हैं, इसलिये इन दिनों गायत्री उपासना के प्रसार का एक व्यापक अभियान चलाकर उससे आधिदैविक लाभ प्राप्त करने का अवसर सारे देश को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देना आवश्यक है, इस पुण्य में सभी गायत्री उपासकों को भाग लेना चाहिये ।

सन् १९६६ में सूर्य के ग्यारह वर्षीय पट परिवर्तन का १९ बाँ चक्र था । उस वर्ष मई और जून के महीनों में रूस, चेकोस्लोवाकिया, बुलगेरिया, भारत, इटली अमेरिका, अफगानिस्तान आदि में भीषण बाढ़ आई, बुलगेरिया में १६ जून को ऐतिहासिक स्मरण वाले ओले गिरे । कूबान में १८ मई को भयंकर तूफान आया, जिसमें लाखों पेड़ उखड़ गये, फसलें बरबाद हुई और मकानों की छतें तक उड़ गई । इसी अवधि में भारतवर्ष में भीषण बाढ़ आई और हजारों लोग बेघर-बार हो गये ।

दिव्य द्रष्टी मनीषियों का कहना है कि इन दिनों अपने सौर मंडल मे कुछ ऐसा ही घटित हो रहा है । एक ओर जहाँ किन्ही अज्ञात कारणों से सूर्य की गर्मी में वृद्धि के साथ सौर-कलंकों-सूर्य धब्बों की बाढ़ सी आई हुई है और विनाशकारी विभीषिकाओं को आमंत्रित करती दीख रही हैं, वही दूसरी ओर अभिनव सृजन शक्ति से परिपूर्ण उज्ज्वल भविष्य का सरंजाम जुटाये सूर्य की आध्यात्मिक शक्तियाँ भी प्रचण्ड प्रवाह के रूप में धरती पर घटाटोप बनकर बरस रही हैं आवश्यकता मात्र उनकी ओर अभिमुख होने और आत्मसात करने की है । सविता साधना के स्वयं के उत्कर्ष के साथ समूचें संसार का कल्याण सम्मिहित है ।

हम ऊपर बता चुके हैं, अगले २० वर्ष व्यापक हलचलों के हैं पर उनमें से सन् १९९८-१९९९ यह दो वर्ष भारी प्राकृति उथल-पुथल के होंगे इन वर्षो में पृथ्वी की भौगोलिक स्थिति बदल जाये तो कुछ आश्चर्य नहीं । यह दृश्य परिवर्तन सूर्य के द्वारा होता है, पर क्यों ? वैज्ञानिकों के पास इसका कोई उत्तर नहीं है ।

गायत्री महाविद्या के अनुसार विश्व-रचना के दो ही तत्व प्रधान है, एक देव या प्राण, दूसरा भूत या पदार्थ । भूत प्राण के बिना गतिशील नहीं होता । इसलिये प्रत्येक भौतिक गायत्री का जीवन तत्व उसका प्राण है । पंचभूतों से बना मनुष्य शरीर नितान्त प्राकृत है । यह गायत्री का शब्द भाग है और जिस तरह से उच्चारण करने के बाद गायत्री के अक्षर वायु में विलीन हो जाते हैं, उसी प्रकार मनुष्य शरीर भी उत्पन्न होकर विलीन होते रहते हैं । उसका दूसरा चरण प्राण है, यह प्राण सविता का ही अधिष्ठान है, उसका दृश्य भाग तो भौतिक है, पर अदृश्य भाग मनोमय है अर्थात् उसमें चेष्टायें हैं, अपने इसी रूप में सूर्य सर्वाधिक शक्तिशाली है, उसी बात को श्रुतियों कहती है-"प्राणः प्रजानां उदयत्येष सूर्यः" यह सूर्य ही अपने प्राणों को संयोग से प्राज्ञा की उत्पत्ति करता है । ब्रह्म सूर्य सम ज्योतिः (यजुर्वेद २३/४८) सूर्य का भौतिक प्रतीक स्थूल है पर उसमें चेतना ब्रह्म शक्ति भरी हुई है ।

सूर्य को ऋषियों ने त्रयीविद्या कहा है, अर्थात् उसमें स्थूल तत्व (जिनसे शरीर बनते हैं) प्राण (जिनसे चेतना आती है) और मन (जो चेष्टायें प्रदान करता है ।) तीनों तत्व विद्यमान् हैं । हम दृश्य रूप से सूर्य के परिवर्तनों से प्रभावित होकर दुःखी होते हैं, किन्तु गायत्री मंत्र के माध्यम से जब सूर्य के साथ हम अपने मनोमय जगत् को जोड़ते हैं, तादात्म्य करते हैं तो हमें उसके आध्यात्मिक लाभ तीनों-स्वास्थ्य, तेजस्विता और मनस्विता के रूप में मिलता है । जिस दिन पृथ्वी के लोग इस विद्या को ठीक-ठीक जान लेंगे उस दिन सुख-शांति और समृद्धि का कोई अभाव नहीं रहेगा पर युग परिवर्तन की इस संधि और संक्रान्ति अवस्था में उन लोगों को अधिक श्रेय, सम्मान मिलेगा, जो इस तत्वज्ञान के अवगाहन और सारे विश्व में फैलाने का प्रयत्न करेंगे ।

अगली शताब्दी का अधिष्ठाता-सूर्य

इस ब्रह्माण्ड में इस स्तर का और कोई ग्रह नहीं खोजा जा सका, जैसा कि सुन्दर-सुव्यवस्थित, सुनियोजित और अगणित विशेषता सम्पन्न है यह भू-मण्डल । स्वर्ग लोक की कल्पना तो की जाती है, पर उसमें इतनी विशेषतायें और विचित्रतायें आरोपित नहीं की जा सकी जितनी कि अपने भूलोक में विद्यमान हैं । इसीलिये उसे "स्वर्गादपि गरीयसी' नाम दिया गया है । अपने सौर मण्डल में जितने भी ग्रह-उपग्रह खोजे गये हैं, उनमें आकार की दृष्टि से कई पृथ्वी से कई गुने बड़े हैं, पर प्रकृति शोभा, प्राणि, समुदाय, वृक्ष, वनस्पति आदि की समता और कहीं नहीं । ऋतुओं का ऐसा परिवर्तन अन्यत्र कहीं भी सम्भव नहीं । फिर मनुष्य जैसा प्राणी मिल सकना तो सर्वथा दुर्लभ ही है, जिसे अगणित क्षमताओं विशेषताओं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

और विभूतियों का भण्डार माना जाता है, भले ही उनमें से कितनी ही प्रसुप्त स्थिति में ही क्यों न बनी रहती हों ?

अन्य ग्रहों की तुलना में बहुत छोटे आकार की इस पृथ्वी में इतना सौन्दर्य और इतना सौष्ठव किस प्रकार सम्भव हुआ, इसके भौतिक कारणों को देखते हुए मात्र एक ही प्रमुख तथ्य सामने आता है कि सूर्य से पृथ्वी की दूरी इतनी सही सार्थक है कि उस संतुलन के कारण ही यह सब सम्भव हुआ । यदि दूरी कम रही होती, तो वह अग्नि पिण्ड जैसी बन जाती । अधिक दूर होती, तो शीत की अधिकता से यहाँ किसी प्रकार की हलचलें दृष्टिगोचर न होतीं । सुनिश्चित दूरी का यह सुयोग ही धरती में ऐसी विशेषतायें संभव कर सका है, जैसे कि ब्रह्माण्ड भर में अन्यत्र कहीं भी खोजी-जानी नहीं जा सकीं ।

तत्वदर्शियों से लेकर विज्ञानवेत्ताओं तक सब एक स्वर से यह स्वीकार करते हैं कि "सूर्य आत्मा जगथश्य" अर्थात् "सूर्य ही जगत की आत्मा है ।" पृथ्वी का अधिपति सूर्य ही बताया गया है और उस तथ्य को पति-पत्नी, प्रेमी-प्रेमिका जैसे अनेक अलंकारों से अभिव्यक्त किया गया है ।

सूर्य की किरणें जब धरती पर बरसती हैं, तो उस क्षेत्र. में उत्साह और पराक्रम दौड़ जाता है । वनस्पतियों, प्राणियों और पदार्थों में हलचलों का दौर चल पड़ता है । दिवाकर के अस्त होते ही सुस्ती थकान, नींद, अकर्मण्यता आ घेरती है और हलचलों में अधिकांशतः विराम लग जाता है । जहाँ किरणें नहीं पहुँचती, वहाँ सीलन-सड़न, नीरसता और निस्तब्धता ही अपना डेरा डालने लगती है । ऐसे स्थानों पर पहुँचने के लिए विषाणु घात लगाने लगते हैं, जहाँ सौर ऊर्जा की जितनी पहुँच है वहाँ उतनी ही बलिष्ठा, सुदृढ़ता का माहौल दृष्टिगोचर होता है ।

इस संसार के प्रमुख तत्व शब्द, प्रकाश और ताप माने जाते हैं । इन्हीं की तरंगें अणु-परमाणु और उनके घटक अपने-अपने परिकर के साथ परिभ्रमण में निरत रहकर विभिन्न पदार्थों के स्वरूप गढ़ती हैं । वस्तुयें अनेक रंग की दिखाई पड़ती हैं । यह रंग कहाँ से आता है ? उत्तर स्पष्ट है जो वस्तु या पौधा अपने अनुरूप, किरणों में विद्यमान जिन रंगों को अवशोषित कर लेता है, वह उसी रंग का बन जाता है । रंगकर्मी अकेला सूर्य है । उसी ने इस वसुधा के विभिन्न घटकों को अपनी योजना के अनुसार चित्रशाला की तरह रंग भरकर अद्भुत कलाकारिता का परिचय दिया है ।

धरती पर अनेक रसायन उपलब्ध होते हैं । उन्हीं के आधार पर वनस्पतियों और प्राणियों की काया का निर्माण होता है । यह रसायन सूर्य और पृथ्वी संयोग से ही विनिर्मित होते हैं । उन्हीं को खाद्य पदार्थों से लेकर पदार्थ जगत के अन्य अनेक क्षेत्रों में उपजते, बढ़ते और अपने ढंग से काम करते देखा जाता है । वैज्ञानिकों का कहना है कि धरती पर जितना कुछ जीवन तत्व विद्यमान है, जितनी भी हलचलें हैं, उसका उद्गम केन्द्र सूर्य सत्ता में सन्निहित है । एंगस्ट्राम एवं ह्यूगनिन्स जैसे वैज्ञानिकों का निष्कर्ष है कि सूर्य प्रभा में सोडियम कैल्सियम, बेरियम, जिंक, कॉपर, आयरन, मैंगनीज, कोबाल्ट, कैडमियन जैसी धातुओं के निर्माण की क्षमता है । मानवी जीवनी शक्ति सूर्य से ही प्राप्त अनुदान है । इसके अभाव में ही आदमी रोगी होता है ।

मनुष्य शरीर में अनेकानेक प्रवृत्ति के जीव कोश, ऊतक, क्षार, प्रोटीन, स्राव, हारमोन विटामिन्स आदि पाये जाते हैं । मोटे तौर से इन्हें प्रकृति की देन मान लिया जाता है, पर सूक्ष्म सर्वेक्षण से प्रतीत होता है कि यह भिन्नतायें मात्र इस कारण विनिर्मित होती हैं कि अमुक स्थानों तक सूर्य का प्रभाव किस स्तर का, किस मात्रा में, किस गति से पहुँचता है ? वहाँ किन घटकों के साथ किस प्रभाव का मिश्रण होकर क्या प्रतिक्रिया उत्पन्न करता है ? रसायनों से पदार्थों का निर्माण होते देखा जाता है, पर वस्तुतः रसायन भी सूर्य किरणों का ही उत्पादन है ।

सृष्टि के आदि से लेकर अब तक धरती के वातावरण में प्राणियों, पदार्थों, मौसमों में जो चित्र-विचित्र परिवर्तन होते रहते हैं । उनके मूल में पृथ्वी और सूर्य के बीच चलने वाले आदान-प्रदान और उसके कारण उत्पन्न होने वाली प्रतिक्रियाओं में अन्तर आते रहना ही प्रमुख कारण रहा है । प्रकृति का प्राकृतिक इतिहास जिस प्रकार बदलता रहता है, उसके कारण तलाश करने पर यही निष्कर्ष सामने आता है कि दोनों ग्रहों के बीच जो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अन्तर पड़ता रहा है, वही इन उथल–पुथलों का निमित्त कारण रहा है ।

भविष्य के सम्बन्ध में विचार करने पर भी दृष्टि इसी केन्द्र पर जमती है कि सूर्य शक्ति का अगले दिनों कितना और किस प्रकार उपयोग कर सकना संभव होगा ? मनुष्य की सबसे बड़ी आवश्यकता "ऊर्जा' पर अवलम्बित है। भोजन बनाने, ईट, सीमेन्ट, पकाने, रसायनें विनिर्मित करने, धातुयें पकाने, जलयान, थलयान, वायुयान चलाने, कारखानों को गतिशील रखने, जमीन से पानी निकालने आदि के लिए ईथन कहाँ से आये, इसके उत्तर में वैकल्पिक ऊर्जा का एक मात्र आधार सूर्य ही रह जाता है ।

सूर्य का एक रूप वह है जो अपनी चमक और गर्मी के रूप में हर किसी को प्रत्यक्ष परिचय देता है। दूसरा उसका आध्यात्मिक स्वरूप है, जो अन्तःकरण में प्रेरणा, प्रकाश, साहस, उत्साह, पराक्रम, आदि दे सकने में समक्ष है । उसे आध्यात्म भाषा में "सविता" कहते हैं। यह जड़ अग्नि पिण्ड नहीं, वरन् सचेतन प्राण शक्ति है । आवाहन आकर्षण किये जाने पर वह साधक में ओजस्, तेजस्, वर्चस् प्रदान करने में समर्थ है । कुन्ती ने इसी शक्ति का आवाहन करके सूर्य पुत्र कर्ण को जन्म दिया था । कर्ण के शरीर और मन में यही शक्ति कवच–कुण्डल बनकर परिलक्षित हुई थी । अन्य अनेक प्रसंगों में सूर्य के माध्यम से चमत्कारी क्षमतायें प्राप्त किये जाने के उल्लेख हैं । रघुवंशियों का उपास्य सूर्य ही था ।

नवयुग में जन मानस को परिष्कृत करने के लिए प्रखर प्रतिभा संवर्धन की आवश्यकता पड़ेगी। महामानवों के उत्पादन अभिवर्धन में सविता की चेतना शक्ति का प्रयोग अभीष्ट होगा। इसके लिए इन दिनों भी उच्चस्तरीय आत्मायें अपने सूक्ष्म शरीर से विशेष प्रयोग–प्रयत्न कर रही हैं ।

सार्वजनिक प्रयोग के रूप मे शान्ति कुञ्ज में युग संधि बेला में ऐसा ही एक महापुरश्चरण चल रहा है । यह शारदेय नवरात्रि १९८८ से आरम्भ हुआ है और दिसम्बर २००० तक चलेगा । इसकी पूर्णाहुति भी अपने ढंग की अनौखी और विशालकाय होने की संभावना है । साधना विज्ञान में श्रद्धा रखने वाले शांति कुञ्ज के एक महीने एवं नौ दिन वाले सत्रों में सम्मिलित होने आते हैं और साथ ही इस युग सन्धि पुरश्चरण में भी भाग लेते रहते हैं ।

इन दिनों अणु आयुधों से उद्भूत रेडियोधर्मिता से कैसे जूझा जाय, इस संबन्ध में प्रसिद्ध दार्शनिक आर्थर कोस्लर ने भी आध्यात्मिक उपचारों का आश्रय लेने की बात कही है । अपना अभिमत ब्लिट्रज के सम्पादक श्री करंजिया से हुई चर्चा में जो प्रसिद्ध पत्रिका नवनीत (मार्च १९८३) में प्रकाशित हुआ था । व्यक्त करते हुए उनने कहा था कि अणु–आयुधों से भी बढ़कर सामर्थ्य गायत्री मंत्र में है जो सावित्री–सविता का मन्त्र है । वे कहते हैं कि जब विश्व के करोड़ों भारतीय, गायत्री मंत्र का समवेत उच्चारण पुरश्चरण के रूप में करेंगे, तो इस अनुष्ठान से उत्पन्न ऊर्जा ब्रह्माण्ड में सूर्य को भेदने वाली मिसाइल का काम करेगी तथा "भर्ग" से मिलकर आण्विक शक्ति को नष्ट कर देगी ।

प्राचीनकाल के ऋषियों की तरह अगले दिनों अपने समय के तत्वज्ञानी भी यह अनुभव करेगें कि मानव प्रकृति में भी इस महत् शक्ति के आधार पर आवश्यक परिष्कार, परिमार्जन एवं परिवर्तन संभव किये जा सकेंगे । सूर्य पुराण, अक्षुण्योपनिषद् आदित्य हृदय आदि में सूर्य की विशिष्ट क्षमताओं का उल्लेख और उसके ऐसे उपचारों का संकेत है, जिनमें शरीर मन एवं भाव संवेदनाओं को इस शक्ति से उच्चस्तरीय लाभ प्रदत्त किया जा सके । इन प्रतिपादनों के सम्बन्ध में अब ऐसी शोधें होंगी, जिन्हें झुठलाया न जा सके, परीक्षण की कसौटियों पर जिन्हें सही सिद्ध किया जा सके । अगले दिनों सूर्य विज्ञान को प्रमुखता प्राप्त होगी और उसका न केवल पदार्थ शक्ति के रूप में प्रयोग होगा, वरन् मानसोपचार के रूप में भी काम में भी लाया जा सकेगा। सूर्य नमस्कार, सूर्यवेदन प्राणायाम, सूर्योपस्थान आदि विधि उपचारों के असंदिग्ध परिणाम सभी के समक्ष हैं । इससे सूर्य की शक्ति पर विश्वास जमता है ।

जिन्हें इन प्रतिपदानों पर दृढ़ विश्वास हो उनके लिए एक सार्वजनिक उपासना, प्रावधान बनाया गया है । वह इस प्रकार है–ब्रह्म मुहूर्त में यथासंभव शरीर और मन में शुद्ध होकर नेत्र बंद करके प्रातः कालीन उदीयमान स्वर्णिम सविता का ध्यान करें । भावना करें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कि स्वर्णिम सूर्य किरणें अपने शरीर में प्रवेश कर रही हैं और उसकी स्थिति चन्द्रमा जैसी बन रही है । सूर्य से प्रकाश ग्रहण करके चन्द्रमा चमकता है और अपने शीतल प्रकाश से रात्रि में प्रकाश उत्पन्न करने वाला अमृत बरसाता है । समझना चाहिए कि ध्यान स्थिति में सूर्य किरणों का प्रवेश साधक के शरीर में हुआ और वह चन्द्रमा की तरह अमृत ज्योति से भर गया । यह ज्योति संसार में बिखर कर अमृत ज्योति से भरा-पूरा वातावरण बना रही है । उससे पदार्थ और प्राणी अनुप्राणित हो रहे हैं । उपयोगी वातावरण बन रहा है और अवांछनीयतायें विदा हो रही हैं ।

गायत्री मंत्र सूर्य का मंत्र है । जिन्हें गायत्री मंत्र पर श्रद्ध हो वे उपरोक्त ध्यान के साथ गायत्री मंत्र मानसिक रूप से जपते रह सकते हैं । जिन्हें उसकी उपयोगिता गले न उतरती हो वे मात्र सूर्य की काया में आवाहन और उसके कारण बनते चन्द्रोपम शरीर से अमृत ज्योति वितरण का ध्यान मात्र करते रह सकते हैं ।

इसके लिए समय पन्द्रह मिनट रखा गया है, ताकि वह नियम सभी से सध सके । एक ही भावना एक ही समय यदि लाखों करोड़ों लोग मिल-जुलकर करें तो उस संयुक्त शक्ति के उद्भव से सूर्य का चेतना पक्ष, मनुष्य समाज पर अधिक अनुग्रह बरसायेगा, ऐसी आशा की जा सकती है ।

सावित्री साधना का स्वरूप एवं उससे जुड़ी मर्यादाऐं

शब्दार्थों की दृष्टि से गायत्री और सावित्री पर्यायवाचक माने जाते हैं पर जब साहित्यिक शब्दार्थ से आगे बढ़कर आध्यात्मिक क्षेत्र में प्रवेश करते हैं तो दोनों की प्रकृति में भिन्नता आ जाती है । गायत्री का तप करके ब्रह्माजी ने उच्चस्तरीय ज्ञान प्राप्त किया था । पर जब सृष्टि संरचना की आवश्यकता पड़ी तो पदार्थ सम्पदा सावित्री का आश्रय लेना पड़ा । वह सामग्री भी साधारण नहीं असाधारण थी जिससे ब्रह्माण्ड का विस्तार और परमाणु का अन्तराल इतना सशक्त बन सका कि उसकी समग्र कल्पना कर सकना भी मानवी बुद्धि से बाहर की बात है ।

गायत्री सावित्री इन दो शब्दों का प्रयोग इस प्रकार मिले-जुले रूप में होता रहता है, जिससे वे दोनों एक ही प्रतीत होते हैं । पर वस्तुतः दोनों के बीच जो अन्तर है, उसे उस कथा के आधार पर समझा जा सकता है । जिसमें ब्रह्मा जी की दो पत्नियाँ बताई गई हैं जिनमें से एक थी सद्ज्ञान की अधिष्ठात्री गायत्री और दूसरी पदार्थ प्रकृति के अनुदानों से भरी-पूरी सावित्री । दोनों के सम्बन्ध बताते हुए शास्त्र कहता है-

सावित्री जप्यनिरतः स्वर्गमाप्नोति मानवः ।
गायत्री जप्यानिरतौ मोक्षोपायं च विन्दति ॥"

"सावित्री के जप करने वाले को स्वर्ग और गायत्री के जप करने वाले को मोक्ष की प्राप्ति होती है ।"

यों दोनों ही एक तथ्य के साथ जुड़ी हुई हैं । फिर भी उनके बीच दुविधा अवश्य है । गायत्री उपासना व्यक्तित्व को परिष्कृत करते हुए महानता की ओर अग्रसर करने के निमित्त की जाती है और सावित्री की साधना बल, पराक्रम, वैभव प्राप्त करके सशक्त बनने के लिए । सावित्री को दूसरे शब्दों में जीवनी शक्ति कह सकते हैं । गायत्री को आत्म चेतना के परिष्कार और आत्मोत्कर्ष की दृष्टि से अनिवार्य माना ही गया है । शास्त्रकार कहते हैं-

ओंकारद् व्याहृतिर्भवति, व्याहृतितो गायत्री भवति, गायत्र्याः सावित्री भवति, सावित्रियाः सरस्वती भवति, सरस्वत्या वेदा भवन्ति, वेदेभ्यो लोकाः ।

ॐकार से व्याहृतियाँ हुईं व्याहृतियों से गायत्री, गायत्री से सावित्री, सावित्री से सरस्वती, सरस्वती से वेद और वेद से लोक उत्पन्न हुए ।

उपरोक्त शास्त्र विवेचन में गायत्री और सावित्री के प्रत्यक्ष स्वरूप में क्या अन्तर है, यह स्पष्ट किया गया है । चौबीस अक्षरों के साथ तीन व्याहृतियाँ (भूर्भुवः) लगाने में वह गायत्री मन्त्र रहता है और उनके साथ सप्त महा व्याहृतियाँ लग जाने पर उसकी संज्ञा सावित्री हो जाती है गायत्री से भागीरथ द्वारा गंगावतरण की तरह अन्तरात्मा में ब्राह्मी चेतना की ज्ञान गंगा का अवतरण होता है और सावित्री द्वारा वह प्रयोजन पूरा होता है

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जो दधीचि ने अपनी अस्थियों का वज्र बनाकर देवताओं को संकट से उबारा था ।

शक्ति का प्रतिनिधित्व करने के कारण उसके साथ अनेक प्रकार की, अनेकों स्तर की, शक्ति धाराओं का समावेश होता है । व्यक्तिगत जीवन में वही कुण्डलिनी भी बन जाती है। अपनी या दूसरों की भौतिक परिस्थितियों में हेर-फेर करने की दृष्टि से ही सावित्री का आश्रय लिया जाता है ।

जिस प्रकार गायत्री का युग्म यज्ञ है, उसी प्रकार सावित्री का देवता सविता है । सविता मोटे शब्दों में प्रातःकाल के उदीयमान स्वर्णिम सूर्य को कहते हैं । पर अध्यात्म क्षेत्र में उसे ब्रह्मतेजस् के रूप में जाना जाता है । अग्नि पिण्ड सूर्य जड़ है । परन्तु सविता विश्वात्मा के रूप में चेतना तेजस्विता से भरा पूरा है । दूसरे शब्दों में उसी को व्यक्तिगत प्रयोजनों में प्राण और सार्वभौम क्षेत्र में महाप्राण कहते हैं । सावित्री का युग्म-शक्ति स्रोत सविता है । जिस प्रकार बिखरी हुई धूप को छोटे से आतिशी काँच द्वारा एकत्रित करके अग्नि प्रकट की जा सकती है, उसी प्रकार सावित्री का उपासक सविता का ब्रह्मतेजस् उपलब्ध करता है । ब्रह्मतेजस् का ही दूसरा नाम ब्रह्मवर्चस् है ।

सूर्य अनन्त शक्तियों का स्रोत है । भौतिक विज्ञानी जानते हैं कि जीवों का विकास जल से नहीं, सूर्य ऊर्जा से ही सम्भव हुआ है । जल भी उसी के कारण बना। उसी से समुद्र बने। जलचर बने और विकासवादियों के अनुसार उन्हीं से प्राणी विकसित होते हुए मनुष्य स्तर तक आ पहुँचे । इसलिए वे भी अध्यात्मवादियों के स्वर में स्वर मिलाकर "सूर्य आत्मा जगत स्थुश्च" स्वीकार करते हैं ।

सावित्री का अधिष्ठाता सूर्य है । यह सूर्य जो दिन में चमकता है, साधारण नहीं है । पृथ्वी को जीवन उसी से मिला है । सौर मण्डल के ग्रह उपग्रहों को गुरुत्वाकर्षण, चुम्बकत्व, ताप, प्रकाश और ध्वनि की तरंगें उसी महा भण्डार से उपलब्ध होती हैं । साथ ही वह इन सब बाल-बच्चों को साथ लेकर महा सूर्य की परिक्रमा के लिए भी द्रुतगति से दौड़ रहा है । उसकी सामान्य गतिविधियों में तनिक भी असामान्यता आते ही पृथ्वी पर हाहाकार मच जाता है ।

यह सूर्य की बात हुई । यह प्रत्यक्ष एवं दृश्यमान है । इसकी एक अदृश्य आत्मा है, जिसे सविता कहते हैं । उस सविता को परब्रह्म कहा गया है और चेतना जगत पर अजस्र अनुदान बरसाने वाला भी । उस परम शक्तिमान की प्रार्थना करते हुए शास्त्र कहता है-

एष लोकानुलोकश्च सप्तदीपश्चसागरोः एष पाताल सप्तस्पो दैत्य दानव राक्षसाः । एष भूतात्मको देवः सूक्ष्मो व्यक्तः सनातनः ईश्वरः सर्वभूतानां परमेष्टि प्रजापतिः ।

-आदित्य हृदय

समस्त लोक-लोकान्तरों, सप्त द्वीपों, सप्त समुद्रों, सप्त पातालों, दैत्य दानव, राक्षसो आदि को आप सन्तुलित रखते हैं । प्राणियों की दृश्य स्थिति आप में ही समाहित है । आप ही जीवधारियों के प्राण हैं । आप ही परमेष्टि प्रजापति हैं ।

अन्य शास्त्रों में भी यह उल्लेख आता है-

प्राणो वै अर्क ।

-शतपथ १०/४/७/२३

-"प्राण ही सूर्य हैं ।"

सएष वैश्वानरो विश्व रूपः प्राणेऽग्निरुदयते ।

-प्रश्नोपनिषद् १/७

"सूर्य के उदय होने पर सारे विश्व में प्राणग्नि का सञ्चार होने लगता है ।"

सहस्ररश्मि शतधा वर्तमानः ।
प्राणः प्रजानामुदंयत्येष सूर्यः ॥

-प्राण ही सहस्र रश्मियों वाला, सैकड़ों प्रकार से वर्तमान प्रजा को उत्पन्न करने वाला सूर्य है ।

भोऽसो तपन्नुदेति ससर्वेषां भूतानां प्राणना दायो देति ।

-प्रश्नोपनिषद् १/७

"ब्राह्म जगत् में यह प्राण आदित्य रूप होकर दशों दिशाओं में विद्यमान हैं ।"

आग से लेकर बिजली तक, अणु शक्ति से लेकर लेकर किरणों तक का अपार शक्ति भण्डार पृथ्वी तक सूर्य के स्रोत से ही आता है । अब भी उसी के कारण अन्न, जल और वायु की जीवन सम्पदा उसी के द्वारा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

प्राप्त होती है और भविष्य में भी महती समस्याओं के समाधान के लिए उसी की ओर निहारा जा रहा है। पेय और सिंचाई के जल की दिन-दिन कमी पड़ती जाती है। इसके लिए सूर्य शक्ति का केन्द्रीकरण कर समुद्र जल को भाप बनाने का एकमात्र विकल्प है। ऊर्जा के स्रोत समाप्त होते जा रहे हैं। भविष्य में यह आवश्यकता भी सूर्य का आश्रय लेने से ही हल होगी। अभी इस ओर ध्यान गया नहीं है कि यह दोनों अत्यन्त कठिन कार्य कैसे सिद्ध किये जा सकते हैं ? पर वह दिन दूर नहीं जब सविता का अनुग्रह उपलब्ध कर लिया जायेगा। तब वे आधार भी हस्तगत हो जायेंगे जिनके कारण पृथ्वी निवासियों की जल तथा ऊर्जा की समस्याओं का समाधान हो सकेगा। रोग चिकित्सा में भी अगले दिनों सूर्य किरणों को ही महत्व मिलने वाला है।

आत्मिक चेतना और सविता चेतना का तारतम्य बनाने वाला अध्यात्मिक आधार सावित्री साधना है। सूर्य हमसे बहुत दूर है। लगभग दस करोड़ मील दूर। उसका प्रभाव पृथ्वी तक उसकी किरणों द्वारा ही आता है। माध्यम वे ही हैं। सूर्य की किरणों में सात रंग हैं। इन्हीं को पौराणिक भाषा में सूर्यरथ के सात घोड़े कहा गया है और उसी को तत्वज्ञानी सावित्री के साथ जुड़ी हुई सप्त व्याहृतियाँ (भूः भुवः स्वः महः जनः तपः सत्यम्) मानते हैं। संक्षेप में सावित्री साधना सूर्य साधना है। उसका माध्यम सावित्री मंत्र है।उसके माहात्म्य में शक्ति की प्रचण्ड धाराएँ उपलब्ध होने की बात कही गई हैं। भौतिक दृष्टि से सूर्य शक्ति १/२२० करोड़ वें भाग मात्र से जीव सत्ता का पोषण होने की बात कही जाती है।

गायत्री के चौबीस अक्षरों में भगवान से सद्बुद्धि की प्रेरणा का अनुरोध किया गया है, वह कम आवश्यक नहीं है। प्राथमिकता उसी की है। उसके बिना शक्ति का दुरुपयोग होने लगता है और विनाश का वातावरण बनता है। किन्तु सद्बुद्धि के रहते उस सामर्थ्य का सदुपयोग बन पड़ना ही निश्चित है।

व्यक्ति का आत्मज्ञानी होना पर्याप्त लगे तो सावित्री साधना की आवश्यकता नहीं है। पर जब मानवी पुरुषार्थ से काबू में न आने वाले संकट सामने हों, बड़े विनाश से टक्कर लेनी हो और सृजन के बड़े साधनों एवं अधिक व्यक्तियों की आवश्यकता हो तो सावित्री की साधना अपनाना ही आत्म विज्ञान की दृष्टि से एकमात्र आधार है।

सप्त वचन भी इसकी साक्षी देते हैं-

सामर्थ्य प्राप्यचात्युच्चैरन्यद भुवन सर्जन किंकिं दयाद् सावित्री सम्यगेव मुपासिता।

अर्थात् विश्वामित्र ने एक नई सृष्टि स्व जलने की सामर्थ्य सावित्री के अनुग्रह से ही प्राप्त की थी। इस संसार में और क्या-क्या ऐसा है जो सावित्री द्वारा उपलब्ध हो सके।

इन दिनों संसार की स्थिति हर क्षेत्र में जितनी विषम है उतनी धरती के जन्मकाल से लेकर इतनी विषम कभी नहीं हुई। इसे व्यवस्थित बनाने के लिए शक्तिशाली उपकरण चाहिए। वही है सविता युक्त सावित्री जिसके तेजस् को यदि व्यवस्था के सन्तुलन में लगाया जा सके तो सर्वनाश का मुँह पीछे की ओर मोड़ने के लिए विवश किया जा सकता है। इस सम्भावना को चरितार्थ करने का ठीक यही समय है।

जैसा कि बताया जा चुका है, सावित्री उपासना पंचकोशों के जागरण विधान पर निर्भर है। इसका आरम्भिक परिचय हम पंचमुखी गायत्री के रूप में समय-समय पर देते रहे हैं। सर्वसाधारण से जितना बन पड़े, जितना बेजोखिम का हो, उस मर्यादा को ध्यान में रखते हुए ही यह विवरण छपता रहा है, ताकि किसी अनजान द्वारा उत्साह से भरकर किसी परमाणु विस्फोट जैसे भयंकर कृत्य कर बैठने की आशंका न हो। (१) अन्नमय कोश के लिए आहार-विहार की पवित्रता (२) प्राणमय कोश के लिए छोटे-छोटे व्रत लेकर साहसिकता बढ़ाने का प्रयास (३) मनोमय कोश के लिए एकाग्रता और सन्तुलन (४) विज्ञानमय कोश के लिए सहृदयता विवेकशीलता (५) आनन्दमय कोश के सर्वत्र बिखरे हुए सौन्दर्य को दृष्टिगत रखते हुए प्रफुल्लित, पुलकित रहने का सरल तत्वज्ञान और विधान बताया जाता रहा है और आगे भी बताया जाता रहेगा, पर वह होगा उतना ही, जितना भार सहन करने वालों की क्षमता होगी। जिनका स्तर ऊँचा उठ सका है, उनके लिए मार्गदर्शन की कमी न अखरेगी। न हमें अखरी और न किसी सत्पात्र को अखरेगी।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सामान्य व्याख्या में सावित्री साधन को कुण्डलिनी का उच्चस्तरीय जागरण भी कहते हैं । जननेन्द्रिय मूल में शक्ति का और मस्तिष्क के मध्य सरसार ब्रह्मरन्ध्र का निवास माना गया है । यों एक सीमा तक इन दोनों का मिलन, संयोग मेरुदण्ड मार्ग से चलता रहता है और उसी के आधार पर शरीर एवं मन की रहस्यमयी क्रियाएँ चलती रहती हैं । पर इसको यदि ऊँचे स्तर पर जागृत किया जा सके तो प्रसुप्त शक्ति भण्डार उभरने और ऐसे क्रिया-कलाप करने लगते हैं, जिन्हें देवोपम या दैत्योपम कहा जा सके ।

कुण्डलिनी जागरण वस्तुतः एक प्रकार का समुद्र मन्थन है । समुद्र में नीचे कूर्म भगवान बैठे हैं । ऊपर मदराचल पर्वत रखा गया है । यह जननेन्द्रिय और उसके ऊपर मेरुदण्ड के बीच में सपुम्ना चलती है जो इड़ा पिंगला से मिलकर बनी है । इसे शेषनाग की राई बनायें जाने के रूप में समझा जा सकता है । इस तत्वज्ञान के देव एवं साधनात्मक पराक्रम के दैत्य मिलकर मथते हैं, जिससे समुद्र मंथन से निकले बहुमूल्य रत्नों की तरह अनेकों विभूतियाँ साधक को उपलब्ध होती हैं ।

कुण्डलिनी विवरण की एक उपमा और भी है । मस्तिष्क को उत्तर ध्रुव माना गया है और मूलाधार को दक्षिणी ध्रुव । पृथ्वी सूर्य की तथा अन्यान्य ग्रह नक्षत्रों की दिव्य सम्पदा, अन्तर्ग्रही शक्ति वर्षा के रूप में ग्रहण करती है । उसमें से उपयोगी अंश अपने लिए रखकर दक्षिण ध्रुव मूलाधार से होकर बाहर फेंक देती है । मनुष्य मस्तिष्क से ग्रहण करता है और जननेन्द्रिय से क्षरण कर देता है । जो बचत अंश हाथ में रह जाता है, उसी से साधक में ओजस्, तेजस् और मनस् दृष्टिगोचर होता है ।

कुडण्लिनी जागरण हठयोग की एक प्रक्रिया है, जिसमें षटचक्रों का बेधन करना होता है । तब वह सर्प की तरह फुसकारती हुई अपनी क्षमता का परिचय देती हैं शिव और पार्वती के गले में सर्प लिपटे होने की छवियाँ इसी कारण विनिर्मित होती हैं ।

कुण्डलिनी जागरप का प्रभाव भी व्यक्तिगत तेजस्विता के रूप में ही दृष्टिगोचर होता है, क्योंकि वह जननेन्द्रिय मूल, मेरुदण्ड और ब्रह्मरन्ध्र के माध्यम से शरीर में ही उत्पन्न होती है और वहाँ तक प्रभाव दिखाती है, जहाँ तक कि शरीर सम्पर्क का कार्यक्षेत्र है ।

सावित्री साधना और कुण्डलिनी जागरण की थोड़ी-सी संगति तो बैठती है । उसमें षटचक्रों का बेधन करना पड़ता है । उसमें पंचकोशों का जागरण होता है । यह सभी शक्ति भण्डार हैं, पर इनमें भरी हुई सम्पदा भिन्न-भिन्न प्रकार की है । जागृत कुण्डलिनी उतने ही क्षेत्र में अपना प्रभाव दिखाती है, जितने में कि साधक का निकटवर्ती सम्पर्क क्षेत्र होता है, किन्तु सावित्री विश्वव्यापी है । उसके प्रभाव से भूमण्डल का सम्पूर्ण क्षेत्र एवं प्राणि समुदाय का समूचा वर्ग प्रभावित हो उठता है । वह जन-जन के मन-मन में प्रेरित प्रेरणा की तरंगें उत्पन्न कर सकती है । वह अनर्थ सजोने वाले को टक्कर मारकर नीचे गिरा सकता है और साथ ही दिशा भूले लोगों को सही रास्ते पर उसी प्रकार चला सकता है जिस प्रकार झुण्ड से बहार जिधर-तिधर भागने वाली भेडों को ग्वाला डण्डा दिखाकर सीधे रास्ते पर ले आता है । आज की परिस्थितियों में असन्तुलन को सन्तुलन में बदलने के लिए ऐसी ही समर्थता अवतरित करने की आवश्यकता है । सावित्री साधना में, सूर्य उपासना में, समय के अनुरूप तेजस् धरती पर खींच बुलाने के लिए यह प्रयत्न ऐसा ही है जैसे कि भागीरथ ने गंगा को स्वर्ग से जमीन पर खींच बुलाने के लिए बाधित किया था ।

सावित्री साधना और पंचकोश

सावित्री उपासना के दो स्तर हैं । एक सर्व साधारण के लिए सर्वोपयोगी, सुगम और सरल जिसे सामान्य स्थिति का भावनाशील व्यक्ति भी भली प्रकार करता रह सकता है । दूसरा स्तर वह है जो विशिष्ट व्यक्तियों के लिए, परिशोधित और परिष्कृत लोगों के लिए ही सम्भव है । इसमें इतने कठोर प्रतिबन्ध, विधान और अनुशासन हैं कि उनका निर्वाह कर सकना हर किसी के लिए सम्भव नहीं है । इसलिए वह प्रयोजन अभी अपने तक ही सुरक्षित रखा है । जो सर्वसाधरणों के लिए विशेषयता प्रज्ञा परिजनों के लिए सम्भव है, उसी का उल्लेख यहाँ कर रहे हैं ।

व्यक्तिगत भौतिक या आध्यात्मिक प्रयोजनों के लिए जो एकाकी साधना की जाती है, उसे गायत्री उपासना समझा जाय । आध्यात्मिक प्रयोजनों में स्वर्ग, मुक्ति, सिद्धि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आदि की गणना होती है और भौतिक प्रयोजनों में रोग, शोक, उद्वेग, दरिद्र, शत्रुता, आक्रमण, अभाव जैसे कारणों की गणना होती है । इन वस्तुओं के लिए दयालु माता से प्रार्थना की जा सकती कि वे अपनी और दूसरे सम्बन्धित लोगों की बुद्धि में सुधार करके उपस्थित संकटों का निराकरण करें ।

सविता व्यापक है । उसकी शक्ति सवित्री भी उसी स्तर की है । सूर्य समूचे सौर मण्डल को ऊर्जा, प्रकाश एवं गति देता है । सवित्री का उपयोग भी सामूहिक और व्यापक समस्याओं के लिए ही किया जा सकता है । वस्तुतः समूचा मानव समाज एक दूसरे से प्रभावित होता और प्रत्यक्ष या परोक्ष सहयोग का आदान-प्रदान करता है । मनुष्य सामाजिक प्राणी होने के कारण एक ऐसी विशाल नाव पर बैठा है, जिसमें डूबना और पार होना साथ-साथ ही हो सकता है । जिनकी दृष्टि इतनी विशाल है कि स्वार्थ और परमार्थ को एक दूसरे का अविच्छिन्न अंग मान सकें, उन्हीं के लिए सावित्री उपासना का अवलम्बन लेना चाहिए । उसका प्रभाव सार्वभौम है और उपयोग सार्वजनीन समस्याओं का समाधान है । इस सर्व के अन्तर्गत ही अपना "स्व" भी आता है ।

सार्वजनिक आयोजनों को सावित्री साधना कह सकते हैं । इसी प्रयोजन के लिए सूर्योदय के समय एक माला गायत्री जप विधिपूर्वक या मानसिक रूप से करने के लिए कहा गया है । २४ लाख साधक इसे कर रहे हैं, और भी आगे बढ़ाने का प्रयत्न किया जाय तो यह संख्या और भी बढ़ सकती है और उससे अदृश्य वातावरण के परिशोधन में भारी सहायता मिल सकती है ।

यज्ञ यों तो वैयक्तिक भी होते हैं । अमुक प्रयोजनों के लिए लोग निजी खर्च से होताओं को पारिश्रमिक देकर निज के निमत्त ग्रह शान्ति आदि के यज्ञ करते हैं । यह व्यक्तिगत बात हुई । पर यदि सामूहिक गायत्री यज्ञ किया जाय उसमें सभी उपयुक्त व्यक्ति भाग लें और खर्च की मिल-जुलकर व्यवस्था करें तो वह प्रयोग भी सावित्री के अन्तर्गत ही आता है और उसका लाभ व्यक्ति विशेष को तो उसके श्रम सहयोग के अनुरूप ही स्वल्प मात्रा में मिलता है पर उसका वास्तविक सम्बन्ध लोक कल्याण के साथ जुड़ा होने के कारण इस प्रकार के आयोजनों को विश्व शान्ति यज्ञ कहते हैं । यह छोटे या बड़े रूप में जितने अधिक किये जा सकें, उसे सावित्री को प्रखर बनाने के लिए किया गया प्रयास ही माना जायगा ।

नवरात्रि आयोजन को सामूहिक रूप में मनाने की आवश्यकता इसीलिए माहात्म्य समझाते हुए बताई जाती है । यों लोग अपने घर में भी एकाकी अनुष्ठान करते रहते हैं और उसका हवन भी स्वयं या परिवार समेत कर लेते हैं । पर इसी को यदि सार्वजनिक आयोजन की तरह सम्पन्न किया जाय । सभी साधक एक जगह मिल बैठकर जप करें । एक साथ स्वस्ति वाचन-पूजा-अर्चना करें । पूर्णाहुति भी एक साथ हो और अन्तिम दिन अमृताशन (खिचड़ी आदि) उबले अन्न का सहभोज करें तो उसे भी सविता साधना में ही गिना जायगा ।

अधिक लोगों की अधिक संयुक्त प्राण शक्ति मिलने से अधिक सार्वजनकि हित होता है । इसलिए अनुष्ठानों का एक छोटा प्रयोग १०८ माला का भी आरम्भ किया गया है । अब तक २४ हजार, सवा लक्ष और चौबीस लक्ष के तीन ही अनुष्ठानों के प्रकार थे । अब चौथा प्रकार १०८ माला का इसलिए निर्धारित किया गया है कि जो लोग बहुत व्यस्त हैं, वे भी प्रतिदिन एक घण्टे का समय निकालकर इन अनुष्ठानों में सम्मिलित होने का श्रेय प्राप्त करें ।

सावित्री साधना वस्तुतः पंचकोशों की साधना है । उसे बड़े स्तर पर किया जाता है । यह कठिन कार्य है । अपनी एक सत्ता को पाँच भागों में विभक्त करके पाँच पाण्डवों जैसा एक यूनिट खड़ा करने जैसा । इसके लिए कुन्ती जैसी लगन, श्रद्धा, हिम्मत और कष्ट सहिष्णुता चाहिए । वह उच्चस्तरीय कार्य हमने अपनें जिम्मे लिया है । उसमें कष्टसाध्य शरीर और मन को निचोड़कर इत्र निकालने जैसा कठोर कार्य भी पूर्व संस्कारित और परिष्कृत अभ्यास से ही सफल हो सकता है । सामान्य परिजनों को उस कठोरता को उत्साह में अपनाने और कुछ ही दिनों में, किसी बहाने छोड़ बैठने के लिए आमन्त्रित नहीं किया गया है ।

फिर भी जिन्हें हमारा हाथ बँटाना है । इस उच्चतम स्तर की साधना में वे भागीदार होना चाहते हों तो उनके लिए एक सरल तरीका ढूढँ निकाला गया है । वह यह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कि वे पाँच कोशों की साधना को अपने व्यावहारिक जीवन में–गुण, कर्म, स्वभाव की तरह सम्मिलित करने का प्रयत्न करें ।

अन्नमय कोश की साधना के लिए आहार को अधिकाधिक सात्विक और सीमित बनाया जाय ताकि अन्न के अनुरूप मन में भी सात्विकता जागे ।

प्राणमय कोश के जागरण के लिए आन्तरिक साहस और पराक्रम को प्रखर करना पड़ता है । इसके लिए छोटे–छोटे, थोड़े–थोड़े दिनों संकल्प करके उनकी पूर्ति हर हालत में करनी चाहिए । पूरा करने पर मनोबल बढ़ता और मनस्विता में निखार आता है । रामायण का गीता का नवाहन पारायण सहज ही हो सकता है । इसी प्रकार गायत्री अनुष्ठान भी । चल पुस्तकालय, झोला पुस्तकालय जैसे उच्चस्तरीय परमार्थों को इतने दिन तक इतने समय तक चलाते रहने का व्रत लिया जा सकता है । इसी प्रकार श्रम दान, साधन दान देकर सत्प्रवृत्तियों को समाज में अग्रसर करने में योगदान दिया जा सकता है । अपने बच्चे के विद्यारम्भ से लेकर उपनयन, विवाह तक की प्रतिज्ञा शान्ति–कुंज में कराने का संकल्प लेना भी ऐसी ही व्रतशीलता के अंग हैं, जिनसे मनुष्य में दूसरों की तुलना में अधिक प्राण, अधिक साहस होने का परिचय मिलता है ।

मनोमय कोश की साधना में अन्तर्द्वन्द्व को आमन्त्रित करना होता है । अपने गुण कर्म, स्वभाव, रीति–नीति एवं आदतों को कड़ी दृष्टि से नित्य निरीक्षण करना और जो अनुपयुक्तता भीतर घुसी हुई हो उसके विरुद्ध विद्रोह खड़ा करके कूड़े करकट की तरह बहार फेंकना, उसके स्थान पर सत्प्रवृत्तियों की हठपूर्वक स्थापना करना । कुकल्पनाओं के उठते ही उनके विरुद्ध उच्च विचारों को भिड़ा देने में विलम्ब न करना, यही मनोमय कोश की साधना है ।

मनोबल बढ़ाने के लिए सप्ताह में एक दिन कुछ व्रतों का भी पालन करना चहिए । इन्हें एक प्रकार से अणु व्रत कहा जा सकता है । यथा (१) एक समय बिना नमक–शक्कर का भोजन और एक समय रस, दूध, छाछ आदि प्रवाही पदार्थों पर गुजारा करना । (२) उस दिन शारीरिक और मानसिक दोनों ही दृष्टियों से ब्रह्मचर्य का पालन करना । (३) किसी सुविधा के समय पर दो घण्टे का मौन रखना । उस समय में एकान्त में रहना । लिखकर या इशारों से भी बात न करना । इन दो घण्टों में आत्म–निरीक्षण,आत्म–सुधार, आत्म–निर्माण और आत्म विकास के सम्बन्ध की परिधि में ही विचार करते रहना । अब या पिछले दिनों की तुलना में अगले दिनों अपने को अधिक पवित्र और प्रखर बनाने की योजना बनाना और उसे कार्यान्वित करने के तौर–तरीके निर्धारित करना । मनोमय कोश इतनी साधना भर से क्रमशः अधिक तेजस्वी हो सकता है ।

विज्ञानमय कोश से मोटा आशय प्रायः दूरदर्शी विवेकशीलता को इतना तेजस्वी बनाने से है कि अपने को अकेले भी किसी मार्ग पर चलना पड़े, कोई कार्यक्रम अपनाना पड़े तो उसमें कोई झिझक संकोच आड़े न आने पाये । अपने व्यक्तिगत जीवन में कितनी ही अवांछनीयताएँ घुसी बैठी होती हैं और आदत का रूप धारण कर लेने पर उन्हें छोड़ना तो दूर उलटे अपनाये रहने का दुराग्रह जड़ जमाकर बैठा होता है । इसी प्रकार समाज में अनेकों कुरीतियाँ, गूढ़ मान्यताएँ अनीतियाँ, दुष्प्रवृत्तियाँ जड़ जमाये बैठी होती हैं । पर उन्हें देखते, सहते रहने पर वे भी अखरती नहीं और एक परम्परा के रूप में अचेतन मन उन्हें स्वीकार कर लेता है ।

आनन्दमय कोश के जागरण की प्रक्रिया यह है कि हलकी–फुलकी, हँसती–हँसाती जिन्दगी को जिया जाय । अनुकूलता–प्रतिकूलता के सन्दर्भ में आवश्यक उपाय तो किये जायँ पर मनः स्थिति खिलाड़ी जैसी रखी जाय जो आये दिन हारते–जीतते रहने पर भी अपने को खिन्न उद्विग्न नहीं होने देते ।

बड़ों का कहना है कि अच्छी से अच्छी आशाएँ रखो और बुरी से बुरी सम्भावनाओं के लिए तैयार रहो । परिस्थितियाँ सदा अनुकूल ही बनी रहें, कभी प्रतिकूलताओं का सामना न करना पड़े यह सम्भव नहीं । दिन और रात की तरह हार–जीत का भी जोड़ा है । जो दोनों ही स्थिति में अपने को सन्तुलित रखे रहता है, उपार्जन के लिए प्रयत्नशील एवं उपलब्धियों के सदुपयोग के लिए सदा दूरदर्शिता भरे कदम उठाता है, उसे दोनों ही प्रकार की परिस्थितियाँ बड़े उपयोगी पाठ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

पढ़ा जाती हैं। दोनों का ही मनुष्य जीवन में अपना–अपना उपयोग है। यह मान्यता जो स्थिर सुनिश्चित कर लेते हैं, उनका आनन्द किसी के छीने छिनता नहीं।

आनन्दित रहना ही सौन्दर्य की उपासना है। हँसते–मुस्कराते रहने की आदत ऐसी है जो अपनी अन्तरंग और बहिरंग क्षमताओं को उल्लसित करती है और अनायास ही अनेकों को मित्र, सहयोगी एवं प्रशंसक बना देती है।

जीवनचर्या में इतना भर करते रहा जाय तो समझना चाहिए कि गहरे स्तर का न सही, सामान्य जीवन को अधिक सुविकसित करने का वरदान उपलब्ध कराने वाला पंचकोशी साधना का सूत्र हाथ लग गया और प्रगति पथ पर चलने, लक्ष्य तक पहुँचने का शुभारम्भ हो गया।

सावित्री साधना से "तप". का अविच्छिन्न सम्बन्ध है। तपस्वी ही उस दिव्यता को उपार्जित एवं धारण कर सकते हैं। शरीर, मन और प्राणों को तपाकर पानी को भाप, पारे को मकरध्वज बनाने वाली प्रक्रिया कठिन है। उसकी ओर अनधिकारी चल पड़े तो अच्छे–खासे स्वास्थ्य को भी बिगाड़ बैठते हैं। वह काया–कल्प जैसी अद्भुत और अनुभवी लोगों के संरक्षण के सफल हो सकने वाली प्रक्रिया है। सर्वसाधारण को "संयम' ही तप का पर्याय वाची मानकर चलना पर्याप्त है।

अब एक ही प्रश्न शेष रहता है कि गायत्री और सावित्री के अन्तर को समझा जाय। दोनों में ही २४ अक्षर हैं। दोनों में ही २४ अवतार, २४ देवता, चौबीस ऋषि और चौबीस अक्षरों में २४ शक्ति स्रोत समाहित हैं।

अन्तर इतना ही है कि गायत्री त्रिपदा होने के कारण उसमें "भूर्भुवः स्वः" की तीन व्याहृतियाँ आरम्भ में लगाई जाती हैं और सावित्री में सप्त व्याहृतियाँ हैं। यही सूर्य के सात अश्व हैं। किरणों के सात रंग हैं। इनमें भूर्भुवः स्वः के उपरान्त जप जनः, तपः, महः, सत्यम लगाया जाता है। इसलिए वह सावित्री हो जाती है। प्राणायाम मन्त्र में तो उनका समावेश होता ही है। सावित्री उपासना करने वाले साधारण जप में भूर्भुवः स्वः जनः, तपः, महः, सत्यम् का भी प्रयोग करते हैं। ध्यान माता की अपेक्षा पिता का, सविता का–प्रातःकालीन स्वर्णिम सूर्य का किया जाता है। विष्णु स्मृति में कहा गया है–

"तदित्य चोस्या सवित्री परमेषि प्रजापति सन्ध्ययोर्वेद
विदुषी सप्त व्याहृति पूर्वकम् ॥

–विष्णु स्मृति

अर्थात् आदित्य की महाशक्ति सावित्री प्रजापति द्वारा उपासित है। उसे सन्ध्याकालों में सप्त व्याहृतियों समेत अपनाना चाहिए।

इन पंक्तियों में प्रधानतया सावित्री विज्ञान की चर्चा की जा रही है और बताया जा रहा है कि उसके पाँच मुख, शरीर रचना में ब्रह्माण्ड के सृजन में प्रयुक्त हुए पाँच तत्व ये हैं–(१) पृथ्वी (२) जल (३) अग्नि (४) वायु (५) आकाश। इसी प्रकार मनःसंस्थान का सूत्र संचालन करने वाले पाँच भाग हैं–(१) प्राण (२) अपान (३) ध्यान (४) उदान (५) समान। इन्हीं सबके समन्वय से मनुष्य जीवन की गाड़ी चलती है। इनमें सन्निहित रहस्यों को जाना और क्षमताओं को काम में लाया जा सके तो मनुष्य ऋद्धि–सिद्धियों का धनी हो सकता है।

पाँच की गणना में कई पक्ष आते हैं। पाँच देवता–(१) सूर्य (२) गणेश (३) ब्राह्म (४) विष्णु (५) महेश। पंचरत्न प्रसिद्ध हैं देवार्चन में पंचामृत का प्रयोग होता है। ज्योतिष का आधार पंचाग है। जड़ी–बूटियों में से अधिकांश के पाँचों अंग मूल, त्वक, पत्र, पुष्प, फल ही काम में आते हैं। पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ, पाँच विभूतियाँ, पाँच सम्पदाएँ प्रख्यात हैं। सावित्री साधना में पंचकोशों के अनावरण का विधान है। कुण्डलिनी जागरण में षट चक्रों का वेधन करना होता है एवं कोश साधना में पाँच कोशों का। चक्रों और कोशों में राई रत्ती भर का अन्तर है। कुण्डलिनी जागरण, प्रचण्ड ज्वलमाल का प्रज्जवलन है और पंचकोशी साधना में आवरणों को हटाते हुए शक्ति स्रोत तक पहुँचने का विधि–विधान। आज्ञाचक्र के सम्बन्ध में छै और पाँच का मतभेद इसी प्रकरण से होता है। कुण्डलिनी का उद्भव मूलाधार से होता है। वह इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना मार्ग से होती हुई, सहस्रार मस्तिष्क मध्य तक समाप्त हो जाती हैं। इस मेरुदण्ड मार्ग में

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पाँच चक्र पड़ते हैं । आज्ञाचक्र भ्रूमध्य भाग में है । वहाँ मेरुदण्ड का अधिकार क्षेत्र नहीं है । इस विवाद में ही षटचक्र और पाँच कोश की विसंगति हो गई है । दूसरे कुण्डलिनी हठयोग है, वह बिजली का खेल है । उसमें चूक पड़ने पर जोखिम उठानी पड़ सकती है, पर पंचकोश अनावरण सौम्य है । वह छिलके व कपड़े उतारने की तरह है । एक-एक करके कोट, जाकेट, कुर्ता स्वेटर, बनियान उतरते चले जाएँ तो इसमें समय भर लगेगा । किसी प्रकार के अनिष्ट की आशंका नहीं है । कुण्डलिनी आग, बारूद, बिजली, चुम्बक, रेडियम जैसे पदार्थों का कार्यान्वयन है । उसमें अधिक सतर्कता, तत्परता एवं अनुशासन की जरूरत है । जबकि केले के तने के पर्त उतरते जाने में, प्याज के छिलके हटाते जाने में किसी बड़ी प्रवीणता की आवश्यकता नहीं है ।

आत्म-ज्योति के ऊपर पाँच आवरण दोष-दुर्गुणों के, कषाय-कल्मषों के, कुसंस्कारों के चढ़े हुए हैं । उन्हें हटाते रहा जाय तो जो प्रकाश पहले धुँधला प्रतीत होता था, वही अब स्पष्ट दृष्टिगोचर होने लगता है । यही आत्मदर्शन या ब्रह्म साक्षात्कार है । इस स्थिति तक पहुँचने के उपरान्त और कुछ करना शेष नहीं रह जाता ।

पंचकोशों में (१) अन्नमय (२) प्राणमय (३) मनोमय (४) विज्ञानमय (५) आनन्दमय कोष की गणना होती है । इनके जागरण के लिए पाँच प्रकार की प्रत्यक्ष और परोक्ष साधनाएँ करनी पड़ती हैं ।

अन्नमय कोश में आहार शुद्धि पर पूरा ध्यान दिया गया है, ताकि उससे बनने वाला शरीर पवित्र और प्रखर बनता जाय । इसके लिए व्रत, उपवासों का आश्रय लेना पड़ता है । सीमित और सात्विक आहार पर रहना पड़ता है । आसन-स्तर की व तीर्थयात्रा जैसी शरीर से सम्बन्धित साधना करनी पड़ती है । आसनों में इस प्रयोजन के लिए शवासन या शिथिलीकरण मुद्रा का अधिक महत्व है ।

प्राणमय कोश में प्राणों का निग्रह नियन्त्रण मुख्य है । शारीरिक विद्युत को प्राण कहते हैं । इसके लिए संयम, साधना करनी पड़ती है । इन्द्रिय निग्रह की कड़ाई करनी पड़ती है । शारीरिक और मानसिक ब्रह्मचर्य पालन करना पड़ता है । बहिर्मुखी प्रवृत्तियों को अन्तर्मुखी करना पड़ता है । प्राणायामों में से अपनी स्थिति के अनुरूप किसी प्राणायाम को चुनना होता है । इसके लिए प्राणाकर्षण प्राणायाम अधिक सरल और सुविधाजनक पड़ता है ।

मनोमय कोश के अनावरण करने के लिए मन की एकाग्रता से सम्बन्धित साधनाओं की आवश्यकता पड़ती है । एकाग्रता साधने के लिए त्राटक साधना का विशेष महत्व है । उसमें मन की भाग-दौड़ को किसी एक केन्द्र पर केन्द्रित करना पड़ता है । चिन्तन की भगदड़ को पकड़कर एक खूँटे से बाँधना पड़ता है । स्वाध्याय, सत्संग, चिन्तन, मनन के अभ्यासों में भी मन रुकता है । और एकाग्रता की स्थिति बढ़ती जाती है ।

विज्ञानमय कोश के अन्तर्गत विशेष ज्ञान, तत्व ज्ञान, आत्मबोध की स्थिति अन्तःकरण में पैदा करनी पड़ती है । लोग अपने को शरीर मात्र समझते हैं और आजीवन उसी के लिए मरते खपते रहते हैं । इस दलदल में से निकलकर अपने शुद्ध स्वरूप का, जीवन सम्पदा के स्वरूप एवं सदुपयोग पर ध्यान केन्द्रित करना पड़ता है । इसके लिए प्रातः उठते ही नया जीवन और सोते समय उसके अन्त का अभ्यास सर्वसुलभ है ।

सोहम् साधना में आत्म-बोध का पुट है । नादयोग से ईश्वर की वाणी, पुकार, निर्देशन को सुनने का अवसर मिलता है । शरीर और आत्मा की विभिन्नता अनुभव करते हुए आत्मा के लिए क्या किया जाना चाहिए, इस पर ध्यानस्थ होकर विचार करना होता है । तब संसार के पीछे दौड़ने की आवश्यकता नहीं रह जाती, वरन् अपने को जागरुक प्रहरी मानकर दूसरों की सुरक्षा के लिए सतर्क करने वाला मार्गदर्शन करना पड़ता है ।

आनन्दमय कोश में इस समस्त संसार को भगवान का विराट् स्वरूप मानते हुए, उसे सुविकसित बनाने के लिए प्रयत्न करना पड़ता है । परब्रह्म की सत्ता को अपने ब्रह्मरन्ध्र सहस्रार में प्रकाश ज्योति की तरह अनुभव करना पड़ता है । इस प्रयोजन के लिए खेचरी मुद्रा भी दिव्य रसास्वादन का अवसर प्रदान करती है । योग निद्रा अथवा समाधि अवस्था में भी अद्वैत भाव स्थापित करना पड़ता है । दिव्य चेतना के प्रति समर्पित होना पड़ता है । अपनी महत्वाकांक्षाओं को छोड़कर दिव्य चेतना के निर्देशन एवं अनुशासन का पालन करने के लिए तत्पर होना पड़ता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

ये साधनाएँ यहाँ तो अपने सर्वसुलभ रूप में दी गयी हैं एवं सभी सुविधानुसार नियमित समय निकालकर करनी होती हैं । फिर भी यह सन्देहास्पद रह जाता है कि कौन व्यक्ति किस स्तर की, कितनी देर किस क्रम से साधना करें ? इससे ऊँचे स्तर की साधना के सोपान तो अत्यन्त रहस्यमय हैं । उनके लिए साधक की मनःस्थिति और परिस्थिति की जाँच पड़ताल करने की आवश्यकता होती है । यह कार्य कोई अनुभवी एवं इस क्षेत्र का प्रवीण पारंगत व्यक्ति कर सकता है । इसलिए अन्य साधनाओं की भाँति पंचकोशी गायत्री साधना के लिए सावित्री विज्ञान का अध्यवसाय आरम्भ करने के लिए कुशल मार्गदर्शक की आवश्यकता होती है । रोगी की स्थिति देखकर जिस प्रकार चिकित्सक को उपचार का निर्धारण और परिवर्त्तन करना पड़ता है, उसी प्रकार अध्यात्म क्षेत्र में परिशोधन और उत्कर्ष का प्रयोजन सिद्ध करने में उपयुक्त स्तर के मार्गदर्शक की आवश्यकता पड़ती है ।

* * *

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आध्यात्मिक काम विज्ञान

गायत्री–सावित्री की उच्चस्तरीय साधना कुण्डलिनी जागरण एवं पंचकोष अनावरण के रूप में सम्पन्न की जाती है। कुण्डलिनी महाशक्ति क्या है ? उसका जागरण कैसे संभव हो सकता है ? आदि प्रक्रियाएँ जानने से पूर्व यह जानना आवश्यक है कि कुण्डलिनी का आधार क्या है ? 'काम' ही वह आधारभूत ऊर्जा है जिस पर सृजन और उद्भव, उल्लास और आह्लाद की नींव टिकी है। ऊर्ध्वरता महामानव इसकी महत्ता को भली-भांति जानते और रचनात्मक कार्यों में उसका सुनियोजन करते हैं। हमें भी आध्यात्मिक काम विज्ञान की महत्ता को भली-भांति जानना समझना होगा और तदनुरूप साधना पथ पर कदम बढ़ाना होगा।

सृष्टि का संचरण किस क्रिया से होता है, इस सम्बंध में पदार्थ विज्ञान अणु को प्रथम इकाई मानता है। उसका कहना है कि अणु के अन्तर्गत नाभिक तथा दूसरे उप अणु अपना क्रिया-कलाप जिस निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार संचरित करते हैं, उसी में विविध हलचलें उत्पन्न होती हैं और वस्तुओं के उद्भव से लेकर शक्ति उपशक्तियों की विद्या विभिन्न क्रम विक्रमों के आधार पर चल पड़ती है। यह तीस वर्ष पुरानी मान्यता है। अब विज्ञान की आधुनिकतम शोधों ने बताया है कि अणु आरम्भ नहीं परिणति है। सृष्टि का मूल एक चेतना है, जिसे पदार्थ और विचार की द्विधा से सुसम्पन्न कहा जा सकता है। इस चेतना को प्रकृति कहते हैं। प्रकृति के स्फुल्लिंग ही परमाणु माने जाते हैं और कहा जाता है कि उन्हीं की गतिविधियों पर सृष्टि का उद्भव, विकास और विनाश अवलम्बित है।

अध्यात्म विज्ञान इसकी बहुत अधिक गहराई तक जाता है और वह सृष्टि का आरम्भ प्रकृति और पुरुष के सम्मिश्रण से मानता है। वैज्ञानिक शब्दों में प्रकृति को रयि और पुरुष को प्राण भी कहा जाता है। इसी को शक्ति और शिव कहते हैं। वेदों में इसे सोम और अग्नि कहा गया है और भी अधिक स्पष्ट समझना हो तो ऋण (निगेटिव) और धन (पॉजिटिव) विद्युत् धारायें कह सकते हैं। विद्युत् विज्ञान के ज्ञाता जानते हैं कि प्रवाह (करेन्ट) के अन्तराल में उपर्युक्त दोनों धाराओं का मिलन बिछुड़ना होता रहता है। यह मिलन बिछुड़न की क्रिया न हो तो बिजली का उद्भव ही सम्भव न हो सकेगा।

प्रकृति और पुरुष के बारे में सांख्यकार की उक्ति है कि वह निरंतर मिलन बिछुड़न के संघर्ष अपकर्ष की प्रक्रिया संचरित करते हैं। फलस्वरूप परा और अपरा प्रकृति के नाम से पुकारा जाने वाला वह सृष्टि वैभव आरम्भ हो जाता है, जिसका प्रथम परिचय हम अणु प्रक्रिया द्वारा प्राप्त करते हैं। क्लॉक घड़ियों में पेण्डुलम लगा रहता है और गतिचक्र के नियमानुसार एक बार हिला देने पर वह स्वयंमेंव हिलते रहने की क्रिया करने लगता है और घड़ी की मशीन चलने लगती है। प्रकृति और पुरुष निरन्तर उसी प्रकार मिलन बिछुड़न क्रम संचरित करते हैं और सृष्टि का क्रिया-कलाप दीवार घड़ी की पेण्डुलम प्रक्रिया की तरह चल पड़ता है।

इस सूक्ष्म तत्व ज्ञान–एक अन्तर विज्ञान को और भी अधिक स्पष्ट समझना हो तो उसे नर-नारी का रूपक दिया जा सकता है। ब्रह्म को नर और प्रकृति को नारी का प्रतीक प्रतिनिधि माना जा सकता है। सृष्टि का उद्भव विकास और विघठन करने वाली शक्ति त्रिवेणी को ब्रह्मा, विष्णु, महेश के नाम से पुकारते हैं। यों तत्व एक ही है, पर उसके क्रिया-कलाप की भिन्नता को अधिक स्पष्टता के साथ समझने-समझाने के लिए तीन देवताओं का नाम दिया गया है। वे तीनों ही सपत्नीक हैं। ब्रह्म की पत्नी का नाम सावित्री, विष्णु की लक्ष्मी और शिव की उमा प्रख्यात हैं। इस अलंकार के पीछे इसी तथ्य का प्रतिपादन है कि सृष्टि का उद्भव अकेले ब्रह्म से नहीं वरन् प्रकृति के संयोग से होता है। नर और नारी दोनों मिलकर ही एक व्यवस्थित शक्ति का रूप धारण करते हैं, जब तक यह मिलन न हो तो गति एवं चेतना उत्पन्न ही न होगी और सब कुछ शून्य की तरह पड़ा रहेगा। नृतत्व विज्ञान की दृष्टि से पति-पत्नी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

का मिलना सृष्टि का स्थूल कारण है । संयोग या संभोग से प्रजा उत्पन्न होती है । प्रजनन प्रक्रिया में मिलन बिछुड़न क्रम की एक रगड़ संघर्ष जैसी हलचल चलती है । इससे सृष्टि के अति सूक्ष्म क्रिया-कलाप का अनुमान लगाया जा सकता है । शरीर का जीवन इसी क्रिया-कलाप पर जीवित है । माँस-पेशियाँ सिकुड़ती फैलती हैं, और जीवन शुरू हो जाता है । साँस का संचरण, दिल की धड़कन, नाड़ियों का रक्त संचार, कोशिकाओं का क्रिया-कलाप इस मिलन बिछुड़न की-आकुंचन प्रकुंचन की क्रिया पर ही निर्भर है । जिस क्षण यह क्रम टूटा उसी क्षण मृत्यु की विभीषिका सामने आ खड़ी होती है । यह तथ्य मात्र देह के जीवन का नहीं-सम्पूर्ण सृष्टि का है । समुद्र में उठने वाले ज्वार-भाटे की तरह यहाँ सब कुछ उस संयोग-वियोग पर हो रहा है, जिसे अध्यात्म की भाषा में प्रकृति और पुरुष अथवा रयि और प्राण कहते हैं ।

मानव जीवन इसी सर्वव्यापी क्रिया-कलाप पर निर्भर है । नर और नारी मिलकर स्थूल जीवन को पुरुष और प्रकृति के संयोग से चलने वाले सूक्ष्म जीवन क्रम की तरह विनिर्मित करते हैं । इसलिये सामाजिक जीवन में नर और नारी का मिलन एक अनिवार्य आवश्यकता बन गया है । अपवाद ही बात अलग है । विवशता और अति उच्चस्तरीय आदर्शवादिता नर-नारी के मिलन को वर्जित भी रख सकती है, पर वह मात्र अपवाद है । उनमें स्वाभाविक नहीं और न सरल विकास क्रम की क्रम-व्यवस्था का ही समावेश है । स्वाभाविक जीवन नर-नारी के सुयोग संयोग से विकसित होता है, इस तथ्य को स्वीकार करने में किसी को कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए ।

यह संयोग मात्र प्रजनन के लिए नहीं है और न इन्द्रिय तृप्ति के लिये । वंश वृद्धि और आह्लाद की आवश्यकता इन क्रियाओं को अपनाने के लिए भी प्रेरणा कर सकती है, पर नर-नारी के मिलन के आधार पर बनने वाला संयोग मूलतः दोनों की प्रसुप्त चेतनाओं को जगाने के लिए, जन्म से मरण पर्यन्त यह आवश्यकता समान रूप से बनी रहती है । बचपन में माता का स्तन पीना, गोदी में खेलना, लाड़-दुलार एक आवश्यकता है । मातृ विहीन लड़के और पितृ विहीन लड़कियाँ मनोवैज्ञानिक दृष्टि से बहुत हद तक अविकसित रह जाते हैं । बहिन-भाइयों का साथ खेलना परिवार की शोभा है । जिन घरों में केवल लड़के ही लड़के हैं या लड़कियाँ ही लड़कियाँ हैं, उनमें सर्वतोमुखी प्रतिभा का विकास बहुत कुछ रुका रहता है और मानसिक अपूर्णता को वहाँ सहज ही देखा जा सकता है । यौवन के आँगन में प्रवेश करते ही दाम्पत्य-जीवन की व्यवस्था जुटानी पड़ती है । ढलती आयु में यह जरूरत पुत्र और पुत्रियों को गोदी में खिलाते हुये पूरी होती है । इस प्रकार प्रकारान्तर से नर-नारी आपस में प्रायः गुथे ही रहते हैं और अपनी-अपनी विशेषताओं के कारण एक-दूसरे की प्रतिभा की प्रसुप्त शक्तियों को जगाने की महत्वपूर्ण भूमिका स्थापित करते रहते हैं ।

मनोविज्ञान शास्त्री डा. फ्रायड ने मानव जीवन के विकास की सबसे महती आवश्यकता "काम" मानी है, जिसे वह नर और नारी के मिलन से विकसित होने वाली मानता है । चूँकि अपने देश में "काम" शब्द प्रजनन क्रिया एवं संभोग के अर्थ में प्रयुक्त होने लगा है, इसलिए वह अश्लील जैसा बन गया है और उसे हेय दृष्टि से देखा जाता है । इसलिये फ्रायड की उपर्युक्त मान्यता अपने गले नहीं उतरती और न रुचती है । पर यदि उसे वैज्ञानिक परिभाषा के आधार पर सोचें और शब्दों के प्रचलित अर्थों को कुछ समय के लिये उठाकर एक ओर रख दें तो इस निष्कर्ष पर पहुँचना पड़ेगा कि सृष्टि के मूल कारण प्रकृति पुरुष के मिलन से लेकर दाम्पत्य जीवन बसाने तक चली आ रही काम प्रक्रिया विश्व की एक ऐसी आवश्यकता है जिसे अस्वीकार करने में केवल आत्म-वंचना ही हो सकती है ।

दुरुपयोग हर वस्तु का निषेध है । अति को सर्वत्र वर्जित किया गया है । अविवेकी मनुष्य ने हर इन्द्रिय का दुरुपयोग करने में कोई कसर नहीं रखी है । जिह्वा को ही लें तो कटु और असत्य भाषण से लेकर अभक्ष भोजन तक की दुष्प्रवृत्ति अपनाकर अपना शारीरिक मानसिक, नैतिक, आर्थिक सब प्रकार अहित ही किया गया है । यह दोष जिह्वा की स्वाद एवं संभाषण क्षमता का नहीं । इनका सदुपयोग किया जाय तो जिह्वा हमारे जीवन में विकास क्रम की महती भूमिका सम्पादित कर सकती है । इसी प्रकार जननेन्द्रिय को सीमित और सोद्देश्य

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रयोग के लिए प्रतिबन्धित कर दिया जाय, संयम और ब्रह्मचर्य के महत्व को समझते हुए, मर्यादाओं के अन्तर्गत रहते हुए तत्सम्बन्धित कामोल्लास का लाभ लिया जाय तो उससे हानि नहीं, लाभ ही होगा। हानि तो दुरुपयोग से है। सो दुरुपयोग अमृत का करके भी हानि उठाई जा सकती है और सदुपयोग विष का भी किया जाय तो उससे भी आश्चर्य-जनक लाभ उठाया जा सकता है। हेय काम प्रवृत्ति नहीं-भर्त्सना उसके दुरुपयोग की, की जानी चाहिए।

नर-नारी का मिलना जितना ही प्रतिबन्धित किया जायगा उतनी ही विकृतियाँ उत्पन्न होंगी। सच तो यह है कि अनावश्यक प्रतिबन्धों ने ही हेय काम प्रवृत्ति को भड़काया है। बच्चा माँ का दूध पीता है, उसके स्तन स्पर्श से कुछ भी अश्लीलता प्रतीत नहीं होती है और न लज्जा जैसी कोई बुराई दीखती है। आदिवासी क्षेत्रों में, पिछड़े कबीलों में, स्त्रियाँ प्रायः छाती नहीं ढकतीं। वहाँ किसी को इसमें अश्लीलता और काम विकार भड़काने वाली कोई बात ही प्रतीत नहीं होती। यह मानसिक कुत्सायें और मूढ़ मान्यतायें ही हैं, जिन्होंने नारी के स्तन जैसे परम पवित्र और अभिवन्दनयी अंग को विकारों का प्रतीक बनाकर रख दिया। यह विचार विकृति का दोष ही है कि अति स्वाभाविक और अति सामान्य नारी के-एक कुत्सा गढ़ कर खड़ी कर दी है। काम का विकृत स्वरूप जिसने मनुष्य की एक प्रकृति प्रदत्त दिव्य सामर्थ्य को कुत्सित बनाकर रख दिया वस्तुतः हमारी बौद्धिक भ्रष्टता ही है। पशु-पक्षी नग्न रहते हैं। उनकी जननेन्द्रिय बिना ढकी रहती हैं। सभी साथ-साथ खाते, सोते हैं, पर बिना अवसर की माँग हुये दोनों पक्षों में से कोई किसी की ओर ध्यान तक नहीं देता, आकर्षित होना तो दूर। मनुष्य कृत गर्हित कामशास्त्र को यदि जला दिया जाय और प्रकृति की स्वाभाविक प्रेरणा और जीवन विकास के पुण्य प्रयोजन के लिए उस संजीवनी शक्ति का सदुपयोग किया जाय तो काम क्रीड़ा गर्हित न रह कर जीवनोत्कर्ष की एक महती आवश्यकता पूर्ण कर सकने में समर्थ बनाई जा सकती है।

बेटी, भगिनी और माता का पिता, भाई और पुत्र के साथ विनोद और उल्लास भरा सम्पर्क अहितकर नहीं, हितकारक ही हो सकता है, उसी प्रकार नर-नारी के बीच खड़ी कर दी गई एक अवांछनीय विभेद की दीवार यदि गिरा दी जाय तो इससे अहित क्यों होगा ? दाम्पत्य-जीवन की बात ही लें, उसमें से कुत्सायें हटा दी जायें और परस्पर सहयोग एवं उल्लास अभिवर्धन वाले अंश को प्रखर बना दिया जाये तो विवाह उभय पक्ष की अपूर्णता दूर करके एक अभिनव पूर्णता का ही सृजन करेगा। इस दिशा में भगवान कृष्ण ने एक क्रान्तिकारी शुभारम्भ किया था। उन दिनों अबोध बालकों और बालिकाओं का सहचरत्व भी प्रतिबन्धित था। लोगों ने एक काल्पनिक विभीषिका गढ़कर खड़ी कर ली थी कि नर-नारी चाहे वे किसी भी आयु के, किसी भी मनः स्थिति के क्यों न हों, मिलेंगे तो केवल अनर्थ ही होगा। इस मान्यता ने जन साधारण की मनोभूमि तमसाछिन्न कर रखी थी और छोटे बच्चे भी परस्पर इसलिए हँस-बोल नहीं सकते थे, खेल कूद नहीं सकते थे क्योंकि वे लड़के और लड़की के भेद से प्रतिबन्धित थे। कृष्ण भगवान ने इस कुण्ठा को अवांछनीय बनाया और उन्होंने लड़के लड़कियों को साथ हँसने, खेलने के लिये आमन्त्रित करते हुए रासलीला जैसे विनोद आयोजन खड़े कर दिये। उन्हें अवांछनीय लगा कि मनुष्य-मनुष्य के बीच इसलिए दीवार खड़ी कर दी जाये कि एक वर्ग को नारी कहा जाता है और उसके मूँछें नहीं आती। दूसरे वर्ग को इसलिए अस्पर्श्य घोषित किया जाय कि वह पुरुष है और उसकी मूँछें आती हैं। प्रजनन अवयवों की बनावट में प्रकृति प्रदत्त अन्तर सृष्टि की शोभा विशेषता है इतने नन्हें से कारण को लेकर मनुष्य जाति के दो परस्पर पूरक पक्षों को यह मान कर अलग कर दिया जाय कि वे जब मिलेंगे तब केवल अनर्थ ही सोचेंगे, अनर्थ ही करेंगे, यह मनुष्य की मनुष्य के प्रति अविश्वसनीयता की अति है। प्रतिबन्धित करके किसी को भी सदाचरण के लिए विवश नहीं किया जा सकता। जेल में कैदी हथकड़ी, बेड़ी पहने हुए भी बड़े-बड़े अनर्थ करते हैं। घूँघट और पर्दे के कठोर प्रतिबन्ध रहते हुए भी दुनिया में न जाने क्या-क्या हो रहा हैं, सगे भाई-बहिन, पिता, पुत्र जैसा बाह्याचार के भीतर ही भीतर न जाने क्या-क्या बनता बिगड़ता है, उन कुत्सित कथा-गाथाओं को कहने-सुनने में कुछ लाभ नहीं। बात सोचने की यह है कि यदि मनुष्य की सज्जनता-ईमानदारी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

और प्रामाणिकता को विकसित न किया गया हो तो कड़े से कड़े प्रतिबन्ध आदमी की बुद्धि चातुरी को चुनौती नहीं दे सकते । वह हर कानून और हर प्रतिबन्ध के रहते हुए भी चाहे जो कर गुजर सकता है । मानवीय चरित्र निष्ठा उनकी श्रद्धा, विवेकशीलता और दूरदर्शिता तथा आदर्शवादिता को विकसित करके ही परिपक्व करनी होगी । अन्यथा प्रतिबन्ध कड़े करते जाने में परस्पर सहयोग से उपलब्ध हो सकने वाले अगणित भौतिक लाभों और असीम आत्मिक उत्कर्षों से वंचित रह कर अपार हानि का ही सामना करना पड़ेगा और हम निरन्तर पिछड़ते ही चले जायेंगे । भगवान कृष्ण के हास परिहास आन्दोलन के पीछे यही क्रान्तिकारी भावना काम कर रही थी ।

आध्यात्मिक काम शास्त्र की जानकारी हमें सर्वसाधारण तक पहुँचानी ही चाहिए । भले ही उस प्रशिक्षण को अवांछनीय या अश्लील कहा जाय । सृष्टि के इतने महत्वपूर्ण विषय को जिसकी जानकारी प्रकृति जीव जन्तुओं तक को करा देती है उसे गोपनीय नहीं रखा जाना चाहिए । खासतौर से तब जबकि इस महत्वपूर्ण विज्ञान का स्वरूप लगभग पूरी तरह से विकृत और उलटा हो गया हो । जो मान्यतायें चल रही हैं, वे ही चलने दी जायें । सुलझे हुए समाधान और सुरुचिपूर्ण प्रावधान यदि प्रस्तुत न किये गये तो विकृतियाँ ही बढ़ती, पनपती चली जायेंगी और उससे मानव जाति एक महती शक्ति का दुरुपयोग करके अपना सर्वनाश ही करती रहेगी ।

आध्यात्मिक काम विज्ञान नर-नारी के निर्मल सामीप्य का समर्थन करता है । दाम्पत्य जीवन में उसे इन्द्रिय तृप्ति और काम-क्रीड़ा द्वारा उत्पन्न होने वाले हर्षोल्लास की परिधि तक बढ़ाया जा सकता है । इसके अतिरिक्त वह सौम्य सामीप्य अप्रतिबन्धित रहना चाहिए । जिस प्रकार दो नर या दो नारी चाहे वे किसी वय के हों निर्बाध रूप से हँस-बोल सकते हैं और स्नेह सामीप्य बढ़ा सकते हैं, और उससे कुछ भी अनुचित आशंका नहीं की जाती, इसी प्रकार नर-नारी का परस्पर व्यवहार भी निर्मल और निष्कलंक रखा जा सकना अति सरल है । इस सौम्य सरलता को प्रतिबन्धित नहीं किया जाना चाहिए । प्रतिबन्ध परक प्रयोग पिछले बहुत दिनों से चले आ रहे हैं और उनके निष्कर्षों ने उस मान्यता की निरर्थकता ही सिद्ध की है । पर्दे की प्रथा चलाकर हमने क्या पाया ? केवल इतना भर हुआ कि नवागन्तुक वधुयें अपनी ससुराल का जो अविछिन्न स्नेह पा सकती थीं, अनुभवी गुरुजनों का परामर्श प्राप्त कर सकती थीं, उससे वंचित रह गईं । उन्हें ससुराल का वातावरण पितृ ग्रह से उतना भिन्न और विपरीत लगा जितना स्वच्छन्द विचरण करने वाले पक्षी की आँखें बन्द करके चारों ओर से पर्दा लगाकर रखे गये पिंजड़े में बन्द किये जाने की स्थिति में हो सकता है । कई भावुक लड़कियाँ तो इस जमीन-आसमान जैसे परिवर्तन से बुरी तरह घबरा जाती हैं और उन्हें हिस्टीरिया सरीखे-भय, भूत-प्रेत, घबराहट जैसी अनेकों मानसिक बीमारियाँ उठ खड़ी होती हैं । ऐसी स्थिति में हीनता की भावना बढ़ना नितान्त स्वाभाविक है । सब लोग हँसी-खुशी से घर-बाहर घूमें और हँसे-बोलें पर उस वयस्क नारी की, जिसकी भावुकता नये वातावरण में बहुत ही उभरती है और नई परिस्थितियों में ढलने, बदलने के लिए उस परिवार के भारी मानसिक सहयोग की आवश्यकता पड़ती है-यदि मुँह ढककर एक कोने में बैठे हुए प्रतिबन्धित कैदी की स्थिति में पटक दिया जाये तो निस्सन्देह उसका मानसिक प्रभाव घुटन, कुण्ठा, अरुचि, विवशता, ज्यादती के रूप में ही होगा । या तो विद्रोह भड़केगा या अन्तःकरण अपना अहं खोकर सर्वथा दीन-हीन, पराधीन हो जायेगा । दोनों ही मनःस्थितियाँ अवांछनीय हैं । इससे नारी की भाव सम्पदाओं का-सृजनात्मक विभूतियों का नाश हो सकता है । हुआ भी है । पर्दा प्रथा ने नव वधुओं के साथ सचमुच बहुत अनीति बरती और ज्यादती की है और उसका परिणाम समस्त समाज को भोगना पड़ा है ।

यह अस्वाभाविक प्रक्रिया एक कदम भी जीवित न रह सकी । पर्दे का उद्देश्य रत्तीभर भी सफल न हुआ । उसका उद्देश्य नर और नारी के बीच पारस्परिक आकर्षण को रोकना था । वह कहाँ पूरा हुआ । नव वधू केवल ससुराल में सास-ससुर, जेठ आदि गुरुजनों से पर्दा करती है । जो वस्तुतः उसे बेटी जैसी ही समझ सकते हैं । जिनसे खतरा है, उनके लिए तो पर्दा फिर भी खुला रह सकता है । यदि व्यभिचार की रोक थाम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की समस्या है तो उसकी सबसे अधिक गुञ्जायश पितृगृह के स्वच्छन्द वातावरण में रहती है । ससुराल में भी बाहर के लोगों से हाट बाजार में–मेंले ठेले में किसी से भी मुँह खोलकर बातें की जा सकती हैं । सुसराल में भी यदि उस आकर्षण की गुञ्जायश है तो देवर से है, जो पति की अपेक्षा अधिक मृदुल लग सकता है । उससे पर्दा नहीं, बुजुर्गों से पर्दा–इस मूर्खता को किसी भी तथ्य के आधार पर समर्थित नहीं किया जा सकता, जो आज कल चल रही है ।

पर्दे की प्रथा उन विदेशी शासकों की देन है जो दूसरों की बहिन–बेटियों को केवल पाप अनाचार की दृष्टि से ही देखते और उनका अपहरण करने में नहीं चूकते थे । उन दिनों पर्दे का कुछ सामयिक उपयोग हो भी सकता था । अरब के रेगिस्तानों में जहाँ रेतीली आँधियाँ चलती रहती थीं आँख, नाक, कान, मुँह आदि को कूड़े–कचरे से बचाने के लिए पर्दे का प्रचलन कुछ समझ में भी आता है, पर भारत की वर्तमान परिस्थिति में कहीं घूँघट, पर्दे की गुञ्जायश है, इसका कोई कारण समझ में नहीं आता । यौवन कोई अभिशाप नहीं–नारी का शरीर मिलना कोई पाप नहीं है । इस ईश्वरीय अनुदान को निष्ठुरता–पूर्वक प्रतिबन्धित किया जायगा तो उसकी प्रतिक्रिया अवांछनीय और अनुपयुक्त ही होगी । पर्दे ने नारी का मनोबल गिराया और उसकी अगणित क्षमताओं को कुचल कर फेंक दिया । उससे इसकी उपयोगिता में कमी आई और स्थिति यहाँ तक जा पहुँची कि लड़कियों का विवाह करना हो तो लड़के वाले रिश्वत के रूप में दहेज, नकदी, जेवर, और गुलामी जैसी दीनता माँगते हैं । यह स्थिति तभी बनी जब नारी का मूल्य बेहिसाब गिर गया । यदि उसका उचित मूल्य स्थिर रखा गया होता तो बिना कीमत अपना शरीर मन और सहयोग देने के लिये महान आत्मिक अनुदान देने वाली वधू के ससुराल वाले उसके चरण धो–धो कर पीते । पशु भी कीमत देकर खरीदा जाता है । अनेक गुणों से विभूषित वधू घर में आवे तो उसे लेने के लिये उपेक्षा दिखाई जाय और रिश्वत माँगी जाय इस दयनीय स्थिति के पीछे नारी का वह अवमूल्यन झाँक रहा है, जो पर्दे जैसे प्रतिबन्धों ने अवांछनीय और अनुचित रूप से प्रस्तुत कर दिया ।

अध्यात्म तत्व ज्ञान की मान्यतायें नर–नारी के बीच की उन अवांछनीय दीवारों को तोड़ना चाहती हैं जो मनुष्य को मनुष्य से पृथक करती है और एक–दूसरे का सहयोग करने में अस्वाभाविक, अप्राकृतिक प्रतिबन्ध उत्पन्न करती है । यौन विकृतियों और व्यभिचार के खतरों को रोकने के दूसरे तरीके हैं । एक–दूसरे से सर्वथा प्रथक रखने वाली प्रक्रिया इस प्रयोजन को पूरा नहीं करती । आधी जनसंख्या को इन प्रतिबन्धों के नाम पर अपंग बनाकर हम अपने ही पैरों में कुल्हाड़ी मार रहे हैं । सारी समस्या का एक मात्र कारण वह बौद्धिक भ्रष्टाचार है, जिसने नारी को कामिनी और रमणी का अतिरंजित चित्रण करके उसे एक भयावह चुड़ैल के रूप में प्रस्तुत कर दिया । तथाकथित कलाकारों, चित्रकारों, मूर्तिकारों, कवियों, गायकों, साहित्यकारों, अभिनेताओं ने नारी का कुत्सित अंश ही उभारा–उसे यौन आकर्षण का प्रतीक मात्र बनाया और उस भ्रान्ति को अधिकाधिक सघन करने में अपनी सारी कलाकारिता का अन्त कर दिया ।

नर और नारी के बीच पाये जाने वाले प्राण और रयि, अग्नि और सोम, स्वाहा और स्वधा तत्वों का महत्व सामान्य नहीं, असामान्य है । सृजन और उद्भव की–उत्कर्ष और आह्लाद की असीम सम्भावनायें उसमें भरी पड़ी हैं, प्रजा उत्पादन तो उस मिलन का बहुत ही सूक्ष्म सा स्थूल और अति तुच्छ परिणाम है । इस सृष्टि के मूल कारण और चेतना के आदि स्रोत इन द्विधा संस्करण और संचरण का ठीक तरह मूल्याकंन किया जाना चाहिए और इस तथ्य पर ध्यान दिया जाना चाहिए कि इनका सदुपयोग किस प्रकार विश्व कल्याण की सर्वतोमुखी प्रगति में सहायक हो सकता है और उनका दुरुपयोग मानव जाति के शारीरिक, मानसिक स्वास्थ्य को किस प्रकार क्षीण विकृत करके विनाश के गर्त में धकेलने के लिए दुर्दान्त दैत्य की तरह सर्वग्रासी संकट उत्पन्न कर सकता है ।

अश्लील अवांछनीय और गोपनीय संयोग कर्म हो सकता है । विकारोत्तेजक शैली में उसका वर्णन अहितकर हो सकता है । पर सृष्टि संस्करण के आदि उद्गम प्रकृति पुरुष के संयोग से यह द्विधा किस प्रकार काम कर रही है, यह जानना न तो अनुचित है और न

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अनावश्यक । सच तो यह है कि इस पंचाग्नि विद्या की अवहेलना अवमानना से हमने अपना ही अहित किया है । नर–नारी के बीच प्रकृति प्रदत्त विद्युत्धारा से किस सीमा तक, किस दिशा में कितनी और कैसे श्रेयस्कर प्रतिक्रिया उत्पन्न करती है और उनकी विकृति विनाश का निमित्त कैसे बनती है, इस जानकारी को आध्यात्मिक काम विज्ञान कह सकते हैं । इसे मात्र शारीरिक सुख को अधिकाधिक बनाने का प्रयोजन नहीं कहना चाहिए ।

सृष्टि में संचरण और उल्लास की प्रवृत्ति

ब्रह्मा की दो पत्नियाँ होने की चर्चा पुराणों में आती है । एक का नाम सावित्री दूसरी का गायित्री है । एक को परा प्रकृति दूसरी को अपरा प्रकृति कहते हैं । दूसरे शब्दों में इन्हें जड़ और चेतन सृष्टि कह सकते हैं । जड़–शक्ति वह है जो अणु शक्ति के पीछे काम करने वाली प्रेरक सत्ता से आरम्भ होती है । नाभिक न्यूक्लियस के अन्तराल में भरी हुई अगणित और अद्भुत् गति विधियों और दिशा विदिशाओं के रूप में जिसका परिचय प्राप्त किया जाता है । भौतिक जगत् इसी का पसारा है । इन्द्रियों से जिनका स्वरूप देखा समझा जाता है, एवं इन्द्रियातीत वे शक्तियाँ जिनको उपकरणों से पकड़ा जा सकता है वे सभी दृश्य–अदृश्य शक्तियाँ यों हलचल से शून्य नहीं हैं लेकिन उनमें चिन्तन क्षमता न होने से जड़ कहते हैं । जड़ प्रकृति का अर्थ गतिहीन नहीं । शक्ति में गति न हो तो फिर वह शक्ति कैसी । बोलचाल की भाषा में उसे जड़–दार्शनिक चर्चा में उसे परा, पौराणिक अलंकारों में उसे सावित्री कहते हैं । जितना कुछ यह जगत् देखा समझा जा सकता है । उसे सावित्री कहना चाहिए । जो कुछ विचार की, भावना की, उत्साह की शक्ति है उसे गायत्री कहते हैं । पुराणों का उपर्युक्त अलंकारिक उपाख्यान–यही प्रतिपादित करता है कि ब्रह्म–परमेश्वर अपनी परा और अपरा प्रकृति के, जड़ और चेतन विभूतियों के माध्यम से समस्त सृष्टि का उद्भव, पोषण और प्रत्यावर्तन करता है ।

मनुष्य इन परा और अपरा प्रकृतियों का सजीव सम्मिश्रण है । शरीर पंच तत्वों का बना होने से जड़ है । आत्मा विचारशील और भाव सम्पन्न होने से चेतन है । जड़ और चेतन का यह संयोग ही मनुष्य की अद्भुत प्रतिभा का स्रोत है, जिन निम्न वर्ग वाले जीव–जन्तुओं का चेतन जितना निर्बल है वे उतने ही पिछड़े हुए हैं । हम इसीलिए अगणित सम्पदाओं और विभूतियों के अधिपति बन सके कि इस काया में उत्कृष्ट स्तर की परा और अपरा प्रकृति को कर्ता ने भली प्रकार नियोजित कर दिया है ।

काया में दो केन्द्र इन शक्तियों के हैं । सावित्री–जड़ परा प्रकृति का केन्द्र है । मूलाधार चक्र यहाँ कुण्डलिनी महाशक्ति अत्यन्त प्रचण्ड स्तर की क्षमतायें दबाये बैठी है । पुराणों में इसे महाकाली के नाम से पुकारा गया है । मोटे शब्दों में इसे 'काम–शक्ति' या 'काम कला' कह सकते हैं । काम शक्ति का अनुपयोग, सदुपयोग, दुरुपयोग किस प्रकार मनुष्य के व्यक्तित्व को प्रभावित करता है उसे आध्यात्मिक कामविज्ञान कहना चाहिए । इस शक्ति का बहुत सूझ–बूझ के साथ प्रयोग किया जाना चाहिए, यही ब्रह्मचर्य का तत्व–ज्ञान है । बिजली की शक्ति से अगणित प्रयोजन पूरे किये जाते हैं और लाभ उठाये जाते हैं लेकिन यह होता तभी है जब उसका ठीक तरह प्रयोग करना आये, अन्यथा चूक करने वाले के लिये तो वही बिजली प्राणघातक सिद्ध होती है ।

काम–शक्ति को गोपनीय तो माना गया है, जिस प्रकार धन कितना है, कहाँ है, आदि बातों को आमतौर से लोग गोपनीय रखते हैं, उसकी अनावश्यक चर्चा करने से अहित होने की आशंका रहती है, इसी प्रकार काम–तत्व को गोपनीय ही रखा गया है । लेकिन इसकी महत्ता, सत्ता और पवित्रता से कभी किसी ने इनकार नहीं किया । यह घृणित नहीं, पवित्रतम है । यह हेय नहीं, अभिवंदनीय है । भारतीय अध्यात्म शास्त्र के अन्तर्गत शिव और शक्ति का प्रत्यक्ष समन्वय जिस पूजा प्रतीक में प्रस्तुत किया गया है उसमें इस रहस्य का सहज ही उद्घाटन हो जाता है । शिव को पुरुष की जननेन्द्रिय और पार्वती को नारी की जननेन्द्रिय का स्वरूप दिया गया है । उनका सम्मिलित विग्रह ही अपने देव मन्दिरों में स्थापित है । यह अश्लील नहीं है । तत्वतः यह सृष्टि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

में संचरण और उल्लास उत्पन्न करने वाले प्राण और रयि, अग्नि और सोम के संयोग से उत्पन्न होने वाले महानतम शक्ति प्रवाह की ओर संकेत है। इस तत्व-ज्ञान को समझना न तो अश्लील है और न घृणित वरन् शक्ति के उद्भव, विकास एवं विनियोग का उच्चस्तरीय वैज्ञानिक तथ्यों पर आधार-भूत एक दिव्य संकेत है। यदि ऐसा न होता तो अपने त्रिकालदर्शी और ईश्वर समकक्ष स्तर पर पहुँचे हुए तपः पूत ग्रन्थि भगवान् शिव और उनकी स्फुरण शक्ति का समन्वय मन्दिरों में स्थापित न करते। हेय तो हर वस्तु का दुरुपयोग ही होता है। अमृत भी दुरुपयोग से विष बन सकता है। काम-शक्ति स्वयं घृणित नहीं। घृणित तो वह विडम्बना है जिसके द्वारा इतनी बहुमूल्य ज्योति धारा को शरीर को जर्जर और मन को अधः पतित करने के लिए अविवेक-पूर्वक प्रयुक्त किया जाता है। सावित्री का, कुण्डलिनी का प्राण-काम पतित कैसे हो सकता है। वह तो देवता की पंक्ति में अति सम्मान-पूर्वक विराजमान होता रहा है। जो जितना उत्कृष्ट है विकृत होने पर वह उतना ही निकृष्ट बन जाता है। यह एक तथ्य है। काम-तत्व के बारे में भी यही सिद्धान्त लागू होता है। जब वह विद्रोही और उच्छृंखल हो उठा और अवांछनीय चेष्टायें करने लगा तभी उसके शमन का प्रयोग करना पड़ा। भगवान् शिव ने तीसरा नेत्र खोल कर उसकी कुचेष्टाओं को जलाया था। उसके अस्तित्व को छेड़ा नहीं वरन् उसे वरदान देकर अजर-अमर बना दिया। यदि वह वस्तुतः अनुपयुक्त होता तो शिवजी त्रिपुर असुर की तरह उसे भी समूल नष्ट कर सकते थे। पर ऐसा किया नहीं गया। ऐसा हो गया होता तो यह संसार की महानतम दुर्घटना होती। फिर प्राणी अशक्त और अवसर ग्रस्त नीरस, निराश और निरीह जीवन जीकर किसी प्रकार मौत के दिन पूरे करते भर दिखाई देते। यहाँ आनन्द और उल्लास जैसी, उमंग और उल्लास जैसी शक्ति प्रगति भी समृद्धि उत्पन्न करने वाली कोई परिस्थिति देखने को न मिलती।

ब्रह्मा की दूसरी पत्नी शक्ति-गायत्री जिसे विचारणा एवं भावना कहते हैं, अपने स्थान पर अति महत्वपूर्ण है। मानवीय चिन्तन का उचित निर्देशन उसी के द्वारा होता है। ऋतम्भरा प्रज्ञा ही नर-पशु को नर-नारायण बनाती है। समस्त धर्म-शास्त्र, तत्व-ज्ञान स्वाध्याय, सत्संग, मनन चिन्तन, उसी की क्षेत्र परिधि में आता है। उसके प्रकाश विस्तार पर कोई प्रतिबन्ध न होने से अतीत से लेकर अद्यावधि पर्यन्त बहुत कुछ कहा सुना जाता रहा है, उसी की चर्चा की जाती रही है। सावित्री की चर्चा अधिक हो न सकी। कुण्डलिनी शक्ति की गोपनीयता का उद्घाटन करने से कतराने की ही परम्परा चली आई है। गोपनीयता की मर्यादा जहाँ तक रही वहाँ तक उसे तन्त्र विद्या के माध्यम से किसी न किसी रूप में कहा, बताया जाता रहा। लेकिन जब दुरुपयोग का विग्रह-उग्र से उग्रतर होने लगा और बात अश्लीलता तक पहुँच गई, उसके प्रयोक्ता असुर दुष्टता को अपनाने लगे तो उसकी चर्चा और भी अधिक अस्पर्श हो गई। तन्त्र काल जब तक रहा तब तक स्नायु मण्डल में थिरकती हुई इस महाकाली की विवेचना और साधना सम्मानित बनी रही। दश महाविद्यायें जिनकी साधना से भौतिक जीवन में ऋद्धि-सिद्धियों का अद्भुत संचरण होता है तन्त्र-विज्ञान की आधार स्तम्भ है। इन दश देवियों की पूजा प्रकरण हमने अपने तन्त्र-विज्ञान ग्रन्थ में लिखा भी है, पर गहन क्षेत्र में प्रवेश करने पर स्पष्ट हो जाता है कि वस्तु-स्थिति पूजा उपासना तक सीमित नहीं। उन्हें जीवन की ज्योतिर्मयी शक्ति पीठ ही कहना चाहिए। दस विद्यायें मात्र पूजा साधना में प्रयुक्त होने वाली देवियाँ नहीं हैं वरन् मानवीय चेतना की समस्त क्रिया प्रक्रियाओं में व्याप्त शक्ति निर्झरणी है जिनमें स्नान अवगाहन करने पर मनुष्य सामान्य न रह कर असामान्य बनता है और तुच्छता का कलेवर उतार कर महानता की भूमिका में प्रवेश करता है।

समय आ गया कि काम-विद्या के तत्व-ज्ञान का संयत और विज्ञान सम्मत प्रतिपादन करने का साहस किया जाय और संकोच का यह पर्दा उठा दिया जाय कि इस महान् विद्या की विवेचना हर स्तर पर अश्लील ही मानी जायगी, उसे हर स्थिति में गोपनीय ही रखा जाना चाहिए। यह संकोच मानव-जाति को एक महान् लाभ से वंचित ही रखे रहेगा। चर्चा करने वाले को लोग हल्के स्तर का समझेंगे, उसकी गरिमा घटेगी यह अपराध ही है। शरीर शक्ति का शिक्षण करने वाले उपाध्याय जननेन्द्रियों का स्वरूप समझाने में झिझक कर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपने छात्रों को उस महत्वपूर्ण ज्ञान से वंचित नहीं करते । यदि यह संकोचशीलता न तोड़ी जाती तो यौन रोगों के चिकित्सक कहाँ से आते ? प्रसव सहायता और गर्भाशयों की शल्य-क्रिया कैसे सम्भव होती ? संकोच वहाँ उचित है जहाँ कुत्साएँ भड़कने की आशंका हो । प्रतिबन्ध पशुता भड़काने वाले अश्लीलता कामुकता, वासना की आत्मघाती प्रवृत्ति के प्रसारण पर होना चाहिए । सृष्टि की संचरण प्रक्रिया और मानव जीवन की अतिशय महत्वपूर्ण एवं प्रेरक प्रवृत्ति की दिशा-विदिशा जानने से वंचित रहना, वस्तुतः अपने ही पैरों कुल्हाड़ी मारना है । उचित ज्ञान के अभाव में ही प्रक्षिप्त ज्ञान को विस्तार मिलता है । काम-वासना मनुष्य जीवन की एक अति प्रबल प्रवृत्ति है । उसकी हलचल मस्तिष्क को उद्वेलित करती ही रहती है । फलतः व्यक्ति उस सम्बन्ध में कुछ न कुछ कहने-सुनने के, पूछने-बताने के, पढ़ने-जानने के लिये भी खोजबीन करता रहता है । उच्चस्तरीय जानकारी न होने से उसे घटिया, विकृत और अवांछनीय सामग्री हाथ लगती है जिससे आत्मघात करने का ही पथ प्रशस्त होता है । इस स्थिति से बचने की दृष्टि से भी यह आवश्यक है । काम प्रवृत्ति की तथ्यपूर्ण जानकारी सर्वसाधारण को उपलब्ध रहे और उसके आधार पर उसे अपने व्यक्ति-विकास एवं शक्ति-संतुलन में सहायता मिलती रह सके ।

आध्यात्मिक काम-विज्ञान का प्रथम पाठ आज की स्थिति में भारतीयों को यह पढ़ाना चाहिए कि वे प्रकृति और पुरुष की समीपता एवं एकता को तात्विक दृष्टि से देखें और उनका समन्वय वैसे ही करें जैसे कि एक ही शरीर में रहने वाले इन दो तत्वों का सहजभाव से बना चला आता है । मस्तिष्क प्राण का, अग्नि का, ब्रह्म का प्रतीक है । मूलाधार काम संस्थान-रयि का, सोम का, प्रकृति का, प्रतीक है । दोनों एक ही शरीर में घुले-मिले पास-पास रहते हैं । दोनों की सह स्थिति कोई उपद्रव उत्पन्न नहीं करती वरन् एक अपूर्णता को पूर्णता में विकसित करती है । दो पृथक अंगों की सीमा में विकसित होकर यही प्रक्रिया में एक से दो में और दो से बहुत में विकसित होती है । नर और नारियाँ दोनों ही मनुष्य हैं और दोनों के अस्तित्व में प्रत्यक्षतः कोई बड़ा अन्तर नहीं है । दोनों की योग्यता, मर्यादा और क्षमता लगभग एक ही माननी चाहिए । लेकिन यदि सूक्ष्मता की गहराई में जाया जाय तो उनकी मूल प्रकृति में पाया जायेगा-नर जहाँ प्राण का, पौरुष का, अग्नि का बाहुल्य रख रहा होगा वहाँ नारी सोम की, सौजन्य की, भावना का प्रतिनिधित्व कर रही होगी । दोनों की अपनी-अपनी विशेषताएँ हैं और उनका महत्व समान रूप से मूल्यवान है । दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं । समीपता से दोनों एक-दूसरे को बहुत कुछ देते हैं और दे सकते हैं । एक-दूसरे के विरोधी नहीं पूरक हैं ।

नारी के प्रति हमारा चिन्तन सखा, सहचर और मित्र जैसा सरल स्वाभाविक होना चाहिए । उसे सामान्य मनुष्य से न अधिक माना जाय न कम । पुरुष और पुरुष तथा स्त्रियाँ और स्त्रियाँ जब मिलते हैं तो उनके असंख्य प्रयोजन होते हैं, काम सेवन जैसी बात वे सोचते भी नहीं । ऐसे ही नर-नारी का मिलन भी स्वाभाविक सरल और सौम्य बनाया जाना चाहिए । यह स्थिति निश्चित रूप से आ सकती है क्योंकि वही प्राकृतिक है । इसी प्रकार रूढ़ि-वादियों से कहा जाना चाहिए कि प्रतिबन्धों से व्यभिचार रुकेगा नहीं-बढ़ेगा । जिस स्त्री का मुँह ढका होता है उसे देखने को मन चलेगा पर मुँह खोले सड़क पर हजारों लाखों स्त्रियों में से किसी की ओर नजर गढ़ाने की इच्छा नहीं होती चाहे वे रूपवान हों या कुरूप । पर्दा यह मान्यता मजबूत करता है कि नारी-नर का सम्पर्क वासना के अतिरिक्त और किसी प्रयोजन के लिए हो ही नहीं सकता । यह विचारणा बहुत ही कलुषित, हेय और निकृष्ट स्तर की है । हमें अपनी बहिन, बेटी, माता और पत्नी पर इतना विश्वास करना ही चाहिए कि वे बिना किसी प्रतिबन्ध के स्वेच्छा पूर्वक अपनी शालीनता अक्षुण्ण रख सकने में समर्थ हैं । जब शासक, सामान्य निरीह प्रजा की बहिन बेटियों की इज्जत लूटने के लिए भेड़ियों की तरह गली गूचों में फिरते रहते थे वह जमाना बहुत पीछे रह गया । अब हम आत्म रक्षा के लिए उपयुक्त परिस्थितियों के बीच जी रहे हैं । इसलिए आक्रांता और आततायियों के डर से नारी को प्रतिबन्धित करने की भी कोई आवश्यकता नहीं रही । फिर क्यों हम घूँघट, पर्दा, प्रतिबन्ध के बन्धनों में उसे जकड़ें और क्यों उसके स्वाभाविक जीवन का ईश्वर प्रदत्त सुविधा को छीनने का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पाप कमायें ? इसी प्रकार अध्यात्मवाद के नाम पर नारी तिरस्कार और बहिष्कार की बेवक्त शहनाई बन्द कर देनी चाहिए । जिन भगवान की हम उपासना करते हैं और जिनसे स्वर्ग मुक्ति सिद्धि माँगते हैं वे स्वयं सपत्नीक हैं । एकाकी भगवान एक भी नहीं । राम, कृष्ण, शिव, विष्णु आदि किसी भी देवता को लें सभी विवाहित हैं । सरस्वती, लक्ष्मी, काली जैसी देवियों तक को दाम्पत्य जीवन स्वीकार रहा है । हर भगवान और हर देवता के साथ उनकी पत्नियाँ विराजमान हैं फिर उनके मनों को अपने इष्ट देवों से भी आगे निकल जाने की बात क्यों सोचनी चाहिए ?

सप्त ऋषियों में सातों के सातों विवाहित थे और उनके साधना काल की तपश्चर्या अवधि में भी पत्नियाँ उनके साथ रहीं । इससे उनके कार्य में बाधा रत्ती भर नहीं पहुँची वरन् सहायता ही मिली । प्राचीन काल में जब विवेकपूर्ण अध्यात्म जीवित था तब कोई सोच भी नहीं सकता था कि आत्मिक प्रगति में नारी के कारण कोई बाधा उत्पन्न होगी ।

राम कृष्ण परमहंस को विवाह की आवश्यकता अनुभव हुई और उन्होंने उस व्यवस्था को तब जुटाया, जब वे आत्मिक प्रगति के ऊँचे स्तर पर पहुँच चुके थे । काम–सेवन और नारी सान्निध्य एक बात नहीं है । इसके अन्तर को भली–भाँति समझा जाना चाहिए । योगी अरविन्द घोष की साधना का स्तर कितना ऊँचा था उनमें सन्देह करने की कोई गुन्जायश नहीं है । उनके एकाकी जीवन की पूरी-पूरी साज-संभाल "माताजी" करती रहीं । इस सम्पर्क से दोनों की आत्मिक महत्ता बढ़ी ही, घटी नहीं । प्रातस्मरणीय माताजी ने अरविन्द के सम्पर्क से भारी प्रकाश पाया और योगिराज को यह सान्निध्य गंगा के समान पुण्य फलदायक सिद्ध हुआ । प्राचीन काल का ऋषि इतिहास तो आदि से अन्त तक इस सरल स्वाभाविकता की सिद्धि करता चला आया है । तपस्वी ऋषि सपत्नीक स्थिति में रहते थे । जब जरूरत पड़ती प्रजनन की व्यवस्था बनाते अन्यथा आजीवन ब्रह्मचारी रहकर भी नारी सान्निध्य की व्यवस्था बनाये रखते । यह उनके विवेक पर निर्भर रहता था । प्रतिबन्ध ऐसा कुछ नहीं था । यह स्थिति आज भी उपयोगी रह सकती है । सन्त लोग अपना व्यक्तिगत जीवन विवाहित या अविवाहित जैसा भी चाहें बितायें, पर कम से कम उन्हें इस अतिवाद का ढिंढोरा पीटना तो बन्द ही कर देना चाहिए जिसके अनुसार नारी को नरक की खान कहा जाता है । यदि ऐसा वस्तुतः होता तो गाँधी जी जैसे संत नारी त्याग की बात सोचते । कोई अधिक सेवा सुविधा की दृष्टि से या उत्तरदायित्व हल्के रखने की दृष्टि से अविवाहित रहे तो यह उसका व्यक्तिगत निर्णय है । इससे यह सिद्ध नहीं होता कि ये भी कोई प्रतिबन्ध हो सकता है या होना चाहिए । सच तो यह है कि सन्त लोग यदि सपत्नीक सेवा कार्य में जुटें तो वे अपना आदर्श लोगों के सामने प्रस्तुत करके उच्चस्तरीय ग्रहस्थ जीवन की सम्भावना प्रत्यक्ष प्रमाण की तरह प्रस्तुत कर सकते हैं ।

काम अर्थ विनोद, उल्लास और आनन्द है । मैथुन को ही काम नहीं कहते । काम क्षेत्र की परिधि में वह भी एक बहुत ही छोटा और नगण्य या माध्यम हो सकता है पर वह कोई निरन्तर की वस्तु तो है नहीं । यदाकदा ही उसकी उपयोगिता होती है । इसलिए मैथुन को एक कोने में रखकर–उपेक्षणीय मानकर भी काम लाभ किया जाता है । स्नेह, सद्भाव, विनोद, उल्लास की उच्चस्तरीय अभिव्यक्तियाँ जिस परिधि में आती हैं उसे 'आध्यात्मिक काम' कह सकते हैं । यह छोटे बालकों से लेकर वृद्धों तक एक-समान प्रयुक्त हो सकता है । नारी और नर को भी इस भाव प्रवाह से वंचित नहीं किया जाना चाहिए । घर में बहिन, बेटी, माता, भावज, चाची, दादी, बुआ, भतीजी आदि के साथ रहकर उनके साथ प्यार दुलार के पवित्र सम्बन्धों सहित आनन्दित जीवन जिया जा सकता है तो घर से बाहर की परिधि में ऐसा क्यों नहीं हो सकता ? हम पड़ौसी के परिवार में भी अपने ही घर परिवार की तरह बिना नर-नारी का भेदभाव किये प्यार दुलार क्यों नहीं बिखेर सकते ?

नर-नारी के बीच व्यापक सद्भाव–सहयोग की–सम्पर्क की स्थिति में व्यक्ति और समाज का विकास ही सम्भव है । उससे हानि रत्ती भर भी नहीं । स्मरण रखा जाय पाप या व्यभिचार का सृजन सम्पर्क से नहीं दुर्बुद्धि से होता है । पुरुष डाक्टर नारी के प्रजनन अवयवों तक का आवश्यकतानुसार ऑपरेशन करते हैं । उसमें न पाप है, न अश्लील, न अनर्थ । रेलगाड़ी की भीड़

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में नर–नारियों के शरीर पिचे रहते हैं । जहाँ पाप वृत्ति न हो वहाँ शरीर का स्पर्श दूषित कैसे होगा ? हम अपनी युवा पुत्री के सिर और पीठ पर स्नेह का हाथ फिराते हैं तो पाप कहाँ लगता है । सान्निध्य पाप नहीं है । पाप तो एक अलग ही छूत की बीमारी है जो तस्वीरें देखकर भी चित्त को उद्विग्न कर सकने में समर्थ है । इलाज इस बीमारी का किया जाना चाहिए । हमारी कुत्सा का दण्ड बेचारी नारी को भुगतना पड़े यह सरासर अन्याय है । इस अनीति को जब तक बरता जाता रहेगा, नारी की स्थिति दयनीय ही बनी रहेगी और इस पाप का फल व्यक्ति और समाज को असंख्य अभिशापों के रूप में बराबर भुगतना पड़ेगा ।

भगवान वह शुभ दिन जल्दी ही लाये जब नर–नारी स्नेही सहयोगी की तरह, मित्र और सखा की तरह, एक-दूसरे के पूरक बनकर सरल स्वाभाविक नागरिकता का आनन्द लेते हुए जीवनयापन कर सकने की मनःस्थिति प्राप्त कर लें । हम विकारों को रोकें, सान्निध्य को नहीं । सान्निध्य रोककर विकारों पर नियन्त्रण पा सकना सम्भव नहीं है । इसलिए हमें उन स्रोतों को बन्द करना पड़ेगा जो विकार और व्यभिचार भड़काने में उत्तरदायी हैं । अग्नि और सोम, प्राण और रयि, ऋण और धन विद्युत् प्रवाहों का समन्वय इस सृष्टि के संचरण और उल्लास को अग्रगामी बनाता चला आ रहा है । नर–नारी का सौम्य सम्पर्क बढ़ा कर हमें खोना कुछ नहीं–पाना अपार है ।

काम क्रीड़ा की उपयोगिता ही नहीं विभीषिका का भी ध्यान रहे

पिछले दिनों अग्नि तत्व को बहुत महत्व मिला और सोम एक कोने में उपेक्षित पड़ा रहा । फलतः सृष्टि का, समाज का, सारा सन्तुलन गड़बड़ा गया । हवन कुण्ड के चारों ओर एक पानी की नाली भरी रखी जाती है । कर्मकाण्ड के ज्ञाता जानते हैं कि यज्ञ कुण्ड में अग्नि कितनी ही प्रदीप्त क्यों न रहे उसके चारों ओर घेरा सोम का जल का ही रहना चाहिए । अग्नि को उतने समारोह-पूर्वक यज्ञ आयोजनों में स्थापित नहीं किया जाता जितनी धूमधाम के साथ कि जल यात्रा की जाती है और जल देवता को स्थापित किया जाता है । अग्नि का, ग्रीष्म ऋतु का उत्ताप तीव्र होते ही वर्षा ऋतु दौड़ आती है और उस तपन का समाधान प्रस्तुत करती है ।

नर की अग्नि ऊष्मा और नारी की सोम, जल कहा गया है । नर की प्राण शक्ति पुरुषार्थ क्षमता और कठोरता की बौद्धिक प्रखरता का अपना स्थान है और उसका उपयोग किया जाना चाहिए लेकिन यदि उसे उच्छृंखल छोड़ दिया गया, नारी का नियंत्रण उस पर न हुआ तो सृष्टि में क्रूरता और दृष्टता का उत्ताप ही बढ़ता चला जायगा । परम्परा यह रही है कि नर के श्रम साहस का उपयोग क्रम चलता रहा है, परनारी ने अपनी मृदुल भावनाओं से उसे मर्यादाओं में रहने के लिए नियन्त्रित और बाध्य किया है । उसकी मृदुल और स्नेह सिक्त भावनाओं ने क्रूरता को कोमलता में बदलने की अद्भुत सफलता पाई है । यह क्रम ठीक तरह चलता रहता पुरुष का शौर्य, ओजस् अपनी प्रखरता से सम्पदायें उपार्जित करता और नारी अपनी मृदुलता से उसे सौम्य सहृदय बनाती रहती तो दोनों सही पहियों की गाड़ी से प्रगति की दिशा में सृष्टि व्यवस्था की यात्रा ठीक प्रकार सम्पन्न होती रहती । चिरकाल तक वही क्रम चला । उपार्जन नर ने किया और उसका उपयोग नारी ने । अब वह क्रम नहीं रहा । अब उच्छृंखल नर हर क्षेत्र में सर्वसत्ता सम्पन्न हुआ दैत्य, दानव की तरह निरंकुश सत्ता का उद्धत उपयोग कर रहा है । नारी तो मात्र भोग्या, रमणी, कामिनी बनकर विषय विकारों की तृप्ति के लिए साधन सामग्री मात्र रह गई है । उसके हाथ से वे सब अधिकार छीन लिये गये जो अनादिकाल से उसे सृष्टिकर्ता ने सौंपे थे ।

वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक हर क्षेत्र में दिशा निर्धारण के सूत्र नारी के हाथ में रहने चाहिए । तभी उपलब्ध सम्पदाओं का सौम्य सदुपयोग सम्भव हो सकेगा । आज हर क्षेत्र में विकृतियों की विभीषिकाएँ नग्न नृत्य कर रही हैं । इसके स्थूल कारण कुछ भी हों सूक्ष्म कारण यह है कि नारी का वर्चस्व नेतृत्व कहीं भी नहीं रहा, सर्वत्र नर की ही मनमानी, घरजानी चल रही है । उसकी प्रकृति में जो कठोरता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का भला या बुरा तत्व अधिक है उसी के द्वारा सब कुछ संचालित हो रहा है। फलस्वरूप हर क्षेत्र में उद्धतता का बोलबाला दीख पड़ता है। जल के अभाव में अग्नि सर्वनाशी दावानल विकराल का रूप धारण कर लेती है। इन दिनों नारी को उपेक्षित, तिरस्कृत करने के उपरान्त जो विद्रूप अपनाया है उसका परिणाम व्यापक हाहाकार के रूप में सामने प्रस्तुत है।

स्थिति को बदलने और सुधारने के लिए भूल को फिर सुधारना होगा और वस्तुस्थिति उपलब्ध करने के लिये पीछे लौटना होगा। नारी का वर्चस्व पुनः स्थापित किया जाय और उसके हाथ में नेतृत्व सौंपा जाय, यह समय की पुकार और परिस्थितियों की माँग है उसे पूरा करना ही होगा। नवयुग–निर्माण के लिए जन मानस में जिन कोमल भावनाओं का परिष्कार किया जाना है वह नारी सूत्रों से ही उद्भूत होगा। युद्ध, संघर्ष, कठोरता, चातुर्य, बुद्धि, कौशल के चमत्कार देख लिये गये। उन्होंने सम्पदाएँ तो कमाईं लेकिन उसकी एकांकी उद्धत प्रकृति उसका सदुपयोग न कर सकी। स्नेह, सौजन्य, सद्भाव सफलता की प्रतीक तो नारी है। उसी का वर्चस्व मृदुलता का संचार कर सकने में समर्थ है। उसे उपेक्षित पड़ा रहने दिया जाय तो उपार्जन कितना भी, किसी देश में क्यों न होता रहे, सदुपयोग के अभाव में वह विश्वघातक ही सिद्ध होता रहेगा। सन्तुलन तभी रहेगा जब नारी को पुनः उसके पद पर प्रतिष्ठापित किया जाय और शक्ति के उन्मत्त हाथी पर स्नेह का अंकुश नियोजित किया जाय। भावनात्मक नवनिर्माण का यह अति महत्वपूर्ण सूत्र है। नारी का पिछड़ापन दूर किये बिना, उसे आगे लाये बिना, कोई गति नहीं। इस कदम को उठाये बिना हमारी धरती पर स्वर्ग अवतरण करने और मनुष्य में देवत्व का उद्भव करने के हमारे स्वप्न साकार न हो सकेंगे।

प्रतिबन्धित नारी को स्वतन्त्रता के स्वाभाविक वातावरण में साँस ले सकने की स्थिति तक ले चलने में प्रधान बाधा उस रूढ़िवादी मान्यता की है जिसके अनुसार उसे या तो अछूत, बन्दी, अविश्वस्त घोषित कर दिया गया है या फिर उसे कामिनी की लांछना से कलङ्कित कर दिया है। इन मूढ़ मान्यताओं पर प्रहार किये बिना, उनका उन्मूलन किये बिना यह सम्भव न हो सकेगा कि अन्ध परम्परा के खूनी शिकंजे ढीले किये जा सकें और नारी को कुछ कर सकने के लिए अपनी क्षमता का उपयोग कर सकना सम्भव हो सके। यह लेख माला इसी प्रयोजन के लिए लिखी जा रही है और यह प्रतिपादित किया जा रहा है कि नारी न तो कामिनी है, न अविश्वस्त, न नरक में धकेलने वाली, न बन्दी बना कर रखी जाने योग्य, भूखी अथवा दासी। वह मनुष्य जाती की आधी इकाई है और उसका व्यक्तित्व वर्चस्व नर के समान ही नहीं वरन् अधिक उपयोगी भी है। उसे सरल स्वाभाविक स्थिति में जीवन-यापन करने की छूट दी जा सके तो विश्व की वर्तमान विषम परिस्थितियों में आश्चर्यजनक मोड़ लाया जा सकता है और अन्धकार से घिरा दीखने वाला मानव जाति का भविष्य आशा के आलोक से प्रकाशवान होता हुआ दृष्टिगोचर हो सकता है।

सर्व साधारण को यह समझाया जाना चाहिए कि जिस प्रकार पुरुष–पुरुष मिलकर कुछ काम करें या स्त्रियाँ–स्त्रियाँ मिलकर सहयोग सान्निध्य जगावें तो व्यभिचार अनाचार की आशंका नहीं की जा सकती। उसी प्रकार नर और नारी मिलजुल कर रहें तो उसमें प्रकृतितः कोई जोखिम या कुकल्पना की ऐसी आशंका नहीं है जिससे भयभीत होकर आधे मनुष्य समाज पर–नारी पर अवांछनीय प्रतिबंध आरोपित किये जायें। नर-नारी का प्राकृतिक मिलना कितना उपयोगी, आवश्यक एवं उल्लासपूर्ण है इसका परिचय हम भरे–पूरे परिवार में, जिसमें सभी वर्ग के नर–नारी अति पवित्रता के साथ रहते हैं, आसानी से प्राप्त कर सकते हैं। घर परिवार में पति–पत्नी के जोड़ों के अतिरिक्त कौन किसे कुदृष्टि से देखता है या कुचेष्टा करता है। यह स्थिति विश्व परिवार में भी लाई जा सकती है और सर्वत्र नर–नारी समान रूप से अपने कर्तव्यों का पालन करते हुए स्नेह सद्भाव का संवर्धन करते हुए आत्मिक और भौतिक विकास में परस्पर अति महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं। यह स्थिति लाई ही जानी चाहिए, बुलाई ही जानी चाहिए।

अवरोध केवल गर्हित दृष्टिकोण ने प्रस्तुत किया है। इसके लिए अधिक दोषी कलाकार वर्ग है जिसने समाज के सोचने की दिशा ही अति भ्रमित करके रख दी, नारी को रमणी, कामिनी और वेश्या के रूप में प्रस्तुत

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

करने की कुचेष्टा में जब कला के सारे साधन झोंक दिये गये तो जन मानस विकृत क्यों न होता ? चित्रकार जब उसके मर्म-स्थलों को निर्लज्ज निर्वसना बनाने के लिए दुशासन की तरह अड़े बैठे हैं, कवि जब वासना भड़काने वाले ही छन्द लिखें, गायक जब नख-शिख का उत्तेजक उभार और लम्पटता के हाव-भावों भरे क्रिया कलापों को अलापें, साहित्यकार कुत्सा ही कत्सा सृजन करते चले जायें और प्रेस तथा फिल्म जैसे वैज्ञानिक माध्यमों से उन दुष्प्रवृत्तियों को उभारने में पूरा-पूरा योगदान मिले तो जनमानस को विकृत और भ्रमित कर देना क्या कुछ कठिन हो सकता है ? हमें इस विकृति के मूल स्रोत कला के अनाचार को रोकना बदलना होगा । स्नेह और सद्भाव की देवी सरस्वती के साथ किया जाने वाला यह बर्बर व्यवहार यदि उल्टा जा सकता हो तो लोक मानस में नारी के प्रति स्वाभाविक सौजन्य फिर पुनः जीवित किया जा सकता है ।

रूढ़िवादियों से कहा जाय कि वे दिन में आँखें मलकर न बैठे रहें । विवेक का युग उभरता चला आ रहा है । औचित्य की प्रतिष्ठा करने के लिए बुद्धिवाद की प्रखरता प्रातःकालीन ऊषा की तरह उदय होती चली आ रही है । उसे रोका न जा सकेगा । कथा पुराणों की दुहाई देकर, प्रथा परम्परा का पल्ला पकड़कर, अब देर तक वे प्रतिबन्ध जीवित न रखे जा सकेंगे जो नारी को व्यभिचारिणी और अविश्वस्त समझ कर उसे अगणित बन्धनों में जकड़े हुए हैं । विवेक और न्याय की आत्मा तड़प रही है, वह इस बात के लिये मचल पड़ी है कि नारी के साथ बरती जाने वाली बर्बरता का अन्त किया जाय । सो वह सब होकर रहेगा । उसे कोई भी अवरोध देर तक रोक न सकेगा । अगले दिनों निश्चित रूप से नर और नारी परस्पर सहयोगी बनकर स्नेह सद्भाव के साथ स्वाभाविक जीवन जियेंगे और एक-दूसरे को आशंका या यौन आकर्षण की दृष्टि से न देखकर पुण्य सौजन्य के आधार पर निर्माण और निर्वाह के क्षेत्रों में प्रगतिशील कदम बढ़ाते चलेंगे । रूढ़िवाद के लिये उचित यही है कि समय रहते बदलें अन्यथा समय उनकी अवज्ञा ही नहीं दुर्गति भी करेगा । उदीयमान सूर्य रुकेगा नहीं, उल्लू, चमगादड़ और वनविलाव ही चाहे तो मुँह छिपाकर किसी कोने में विश्राम लेने के लिए अवकाश प्राप्त कर सकते हैं ।

इसी प्रकार तथाकथित सन्त महात्माओं को कहा जाना चाहिये कि वे अपने मन की संकीर्णता, क्षुद्रता, और कलुषिता से डरें, उसे ही भवबन्धन मानें । नरक की खान वही है । नारी को उस लांछन से लांछित कर उस मानव जाति की भर्त्सना न करें जिसके पेट से वे स्वयं पैदा हुए हैं और जिसका दूध पीकर इतने बड़े हुए हैं । अच्छा हो हमारी जीभ पुत्री को न कोसे, भगिनी को लांछित न करे, नारी नरक की खान हो सकती है यह कुकल्पना अध्यात्म के किसी आदर्श या सिद्धान्त से तालमेंल नहीं खाती । यदि बात वैसी ही होती तो अपने इष्टदेव राम, कृष्ण, शिव आदि नारी को पास न आने देते । ऋषि आश्रमों में ऋषिकाएँ न रहतीं । सरस्वती, लक्ष्मी, काली आदि देवियों का मुख देखने से पाप लग गया होता । निरर्थक की ड़ींगें न हाँकें तो ही अच्छा है । अन्तरात्मा प्रज्ञा, भक्ति, साधना, मुक्ति, सिद्धि यह सभी स्त्रीलिंग हैं । यदि नारी नरक की खान है और स्त्रीलिंग, इस शब्दों के साथ जुड़ी हुई विभूतियों को भी बहिष्कृत किया जाना चाहिए । अच्छा है अध्यात्मवाद के नाम पर भौंडा भ्रम जंजाल अपने और दूसरों को दिग्भ्रान्त करने की अपेक्षा उसे समेंट कर अजायबघर की कोठरी में बन्द कर दिया जाय ।

सर्वसाधारण को इस तथ्य से परिचित कराया जाना ही चाहिए कि नर-नारी को सघन सहयोग यदि पवित्र पृष्ठभूमि पर विकसित किया जाय तो उससे किसी को कुछ भी हानि पहुँचने वाली नहीं है वरन् सबका सब प्रकार से लाभ ही होगा । नारी कोई बिजली या आग नहीं हैं । जिसे छूते ही या देखते ही कोई अनर्थ हो जाय । उसे अलग-अलग रखने की कुछ भी आवश्यकता नहीं हैं । मनुष्य को मनुष्य के अधिकार मिलने ही चाहिए । विश्व में राजनैतिक स्वतन्त्रता की माँग पिछले दिनों बहुत प्रबल होती चली आई है और उसने परम्परागत ताज, तख्तों को जड़ मूल से उखाड़कर फेंक दिया । यह प्रवाह परिवर्तन राजनीति तक ही सीमित न रहेगा । मनुष्य के समान स्वाधीनता दिला कर ही वह गति रुकेगी । गुलाम प्रथा का अन्त हो गया अब दास-दासी खरीदे व बेचे नहीं जाते । वर्ग भेद और रङ्गभेद के नाम पर बरती जाने वाली असमानता के विरुद्ध आरम्भ हुआ विद्रोह प्रबल से प्रबलतर होता चला जा रहा है और

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दिन दूर नहीं जबकि मानवीय सम्मान और अधिकार से वंचित कोई व्यक्ति कहीं न रहेगा । जन्म, जाति, वंश, वर्ण, रङ्ग आदि के नाम पर बरती जाने वाली असमानता अब देर तक जिन्दा रहने वाली नहीं है । वह अपनी मौत के दिन गिन रही है । इसी संदर्भ में यह भी गिरह बाँध लेनी चाहिए कि नर और नारी के बीच बरता जाने वाला भेदभाव भी उसी अन्याय की परिधि में आता है । नारी की पराधीनता मनुष्य के आधे भाग की, आधी जनसंख्या की पराधीनता है । यह कैसे सम्भव है, वह आगे भी आज की ही तरह बनी रहे । स्वतन्त्रता का प्रवाह नारी को भी इन अनीति-मूलक बन्धनों से मुक्ति दिलाकर रहेगा । दिन दूर नहीं कि गाड़ी के दो पहियों की तरह, शरीर की दो भुजाओं की तरह नर–नारी सौम्य सहयोग करते दिखाई पड़ेंगे । समय का प्रवाह आज नहीं तो कल इस स्थिति को उत्पन्न करके रहेगा । अच्छा हो वक्त रहते हम बदल जायें तो अमिट भावनाओं से लड़ मरने की अपेक्षा उसके लिये रास्ता खुला छोड़ दें–अच्छा तो यह है कि न्याय और विवेक की दिव्य किरणों के साथ उदय होने वाली इस ऊषा की अभ्यर्थना, करके अपनी सद्भाव सम्पन्नता का परिचय देने के लिए आगे बढ़ चलें ।

नव निर्माण की प्रक्रिया इस दिशा में अधिक उत्सुक इसलिए है कि भावी विश्व का समग्र नेतृत्व नारी को ही सौंपा जाने वाला है । राज सत्ता का उपयोग पिछले दिनों आक्रमण, आतंक, शोषण और युद्ध लिप्सा के लिए होता रहा है, पुरुष के नेतृत्व का दुष्परिणाम इतिहास का पन्ना–पन्ना बता रहा है । अब राज सत्ता नारी के हाथ सौंपी जायगी ताकि वह अपनी करुणा और मृदुलता के अनुरूप राज सत्ता के अंचल में कराहती हुई मानवता के आँसू पोंछ सके । शिक्षा से लेकर न्याय तक, वाणिज्य से लेकर धर्म धारणा तक हर क्षेत्र का नेतृत्व जब नारी करेगी तब सचमुच दुनिया तेजी से बदलती चली जायेगी । कला के सारे सूत्र जब नारी के हाथ सौंप दिये जायेंगे तब उस देव मंच से केवल शालीनता की दिव्य धाराएँ ही प्रवाहित होंगी और उस पुण्य जाह्नवी में स्नान करके जन मानस अपने समस्त कषाय कल्मष धोकर निर्मल निष्पाप होता दिखाई देगा ।

नर का नेतृत्व मुद्दतों से चला आ रहा है । उसकी करतूत करामात भली प्रकार देखी परखी जा चुकी है । अच्छा है वह ससम्मान पीछे हट जाय और पेन्शन लेकर कम से कम नेतृत्व की लालसा से विदा हो ही जाय । करने के लिये बहुत काम पड़े हैं । पुरुष को उनसे रोकता कौन है ? बात केवल नेतृत्व की है । बदलाव का तकाजा है कि ग्रीष्म का आतप बहुत दिन तप लिया अब वर्षा की शांति और शीतलता की फुहारें झरनी चाहिए । सर्वनाश की जिस विषम विभीषिका में मनुष्य जाति फँसी पड़ी है उससे परित्राण नेतृत्व बदले बिना सम्भव नहीं । नारी की करुणा से ही नर की निरन्तर क्रूरता का परिमार्जन हो सकेगा । उसे सशक्त और समर्थ बनाने के लिए वह सब बौद्धिक प्रक्रिया सजीव करनी पड़ेगी जो इस लेख माला के अन्तर्गत प्रस्तुत की जा रही है ।

नर–नारी के सम्मिलन से खतरा केवल एक ही है कि यह वर्तमान विकृत वासना का ताण्डव रोका नहीं गया तो पाश्चात्य देशों की तरह स्वच्छन्द के वातावरण में बढ़ चला यौन अनाचार बिखर पड़ेगा और वह भी कम विघातक न होगा । इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए जहाँ नारी स्वातन्त्रय के लिए हमें प्रयत्न करना है वहाँ यह चेष्टा भी करनी है कि कामुकता की ओर बहती हुई मनोवृत्तियों को परिष्कृत करने में कुछ उठा न रखा जाय । नारी का सौम्य और स्वाभाविक चित्रण इस सन्दर्भ में अति महान है । कला के विद्रूप को कोसने से कर्म न चलेगा, उसे गन्दे हाथों से छीन लेना शासन सत्ता के लिए तो सम्भव है पर हम लोग जन स्तर पर इस प्रजातन्त्र पद्धति के रहते कुछ बहुत बड़ा प्रतिरोध नहीं कर सकते । हम यही कर सकते हैं कि दूसरा कला मंच खड़ा करें और उसके माध्यम से नारी की पवित्रता प्रतिपादित करते हुए लोक मानस की यह मान्यता बनायें कि नारी वासना के लिए नहीं, पवित्रता का पुण्य स्फुरण करने के लिए है । कला मंच यह सब आसानी से कर सकता है । साहित्य का सृजन इसी दिशा में हो, कविताएँ ऐसी ही लिखी जायें, चित्र इसी प्रयोजन के लिए बनें, गायक यही गायें, प्रेस यही छापें, फिल्म यही बनायें तो कोई कारण नहीं कि नारी का स्वाभाविक एवं सरल सौम्य स्वरूप पुनः जन मानस में प्रतिष्ठापित न किया जा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सके । ऐसी दशा में वह जोखिम न रहेगा जिसे पाश्चात्य लोग भुगत रहे हैं । उन्होंने नारी स्वतन्त्रता तो प्रस्तुत की पर विकारोन्मूलन के लिए कुछ करना तो दूर उल्टे उसे भड़काने में लग गये और दुष्परिणाम भुगत रहे हैं । हमें यह भूल नहीं करनी चाहिए । हम दृष्टिकोण के परिष्कार के प्रयत्नों को भी नारी स्वातन्य आंदोलन के साथ मोड़कर रखें तो निश्चय ही वैसी आशंका न रहेगी जिससे विकृतियों के भड़क पड़ने का विद्रूप उठकर खड़ा हो जाय ।

साथ ही हमें आध्यात्मिक काम विज्ञान के उन तथ्यों को सामने लाना होगा जिनके आधार पर यौन सम्बन्ध की, काम क्रीड़ा की उपयोगिता और विभीषिका को समझा जा सके और उसके दुरुपयोग के खतरे से बचने एवं सदुपयोग से लाभान्वित होने के बारे में समुचित ज्ञान सर्वसाधारण को मिल सके ।

प्रकृति की प्रेरणा सदाचार भरी आत्मीयता

आजकल पाश्चात्य शिक्षा और सभ्यता से प्रभावित लोग यौन सदाचार का पालन करते हिचकिचाते हैं और तर्क प्रस्तुत करते हैं कि मनुष्य ने प्रकृति से प्रेरणायें ली हैं । प्रकृति में, पशुओं में, कामाचार की कोई मर्यादायें नहीं रहती अतएव मनुष्य भी यदि उनका पालन नहीं करे तो कुछ हर्ज नहीं । वस्तुतः ऐसा कहने वालों ने प्रकृति का गहराई तक अध्ययन नहीं किया । थोड़े से तुच्छ और नगण्य किस्म की मक्खियों, मच्छरों, कुत्तों, बिल्लियों की बात अलग है अन्यथा सृष्टि में जितने भी शक्तिशाली और प्रसन्नता प्रिय जीव हैं उन सबके दाम्पत्य जीवन बहुत ही आत्मीयता, घनिष्टता और सदाचार पूर्ण होते हैं ।

मनुष्य को छोड़कर अन्य प्राणियों में उतनी काम कला नहीं होती । वे काम वासना का उपयोग मात्र वंश वृद्धि के लिए ही करते हैं । उतना ही नहीं वे वंशवृद्धि के बाद के अपने उत्तरदायित्वों को भी समझते हैं और उसके बाद उन्हें निभाने के लिए पहले से ही व्यवस्था करने लगते हैं ।

संयम और सुखी परिवार

'स्टिकल-बैक' नाम की एक मछली होती है, जो समुद्र में ही पाई जाती है । ड़ा लार्ड ने इस मछली की विभिन्न आदतों और क्रियाओं का बहुत सूक्ष्मता से अध्ययन किया । बैकोवर आइरलैण्ड़ में महीनों रह-रहकर आपने इस मछली की जीवन पद्धति का अध्ययन किया और बताया कि मनुष्य चाहे तो इससे अपने पारिवारिक जीवन को सुखी और सुदृढ़ बनाने की महत्त्वपूर्ण शिक्षायें ले सकता है ।

नर स्टिकल बैक अपना घर बसाने के लिये बहुत पहले से तैयारी प्रारम्भ कर देता है । सबसे पहले सारे समुद्र में घूम-घूमकर वह कोई ऐसा स्थान ढूँढ़ निकालता है, जहाँ पर पानी न बहुत तेजी से बह रहा हो न बहुत धीरे । जगह शांत एकान्त हो और वहाँ हर किसी का पहुँचना भी सम्भव न हो ।

प्राचीनकाल की जीवन-प्रणाली और शिक्षा पद्धति पर दृष्टि दौड़ाकर देखते हैं तो पता चलता है कि तत्कालीन ऋषियों-मुनियों एवं सामाजिक मार्ग-दर्शक आचार्यों ने भी यह भली-भाँति अनुभव किया था कि दाम्पत्य और गृहस्थ-जीवन एक महत्वपूर्ण योग साधना है, उसके लिये आवश्यक तैयारियाँ न की जायें तो लोगों के वैयक्तिक जीवन ही नहीं, पारिवारिक और सामाजिक व्यवस्थायें भी लड़खड़ा सकती हैं । जीवन के प्रथम २५ वर्ष ब्रह्मचर्यपूर्वक रहकर विद्याध्ययन करने और पाठ्यक्रम में धार्मिक, आध्यात्मिक, नैतिक, सांस्कृतिक विषयों के समावेश के पीछे एक मात्र उद्देश्य और रहस्य यही था कि आने वाले जीवन और जिम्मेंदारियों को वहन करने के लिये शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, चारित्रिक त्रुटि न रह जाये । पूर्ण तैयारी कर लेने के फलस्वरूप ही उन दिनों के दाम्पत्य जीवन, पारिवारिक और सामाजिक संगठन, प्रेम-मैत्री करुणा, दया, क्षमा, उदारता आदि सुख-सन्तोष और स्वर्गीय परिस्थितियों से भरे-पूरे रहते थे । आनंद छलकता था उन दिनों, पर आज जब कि शिक्षा के ढंग-ढाँचे में, हमारी रीति-नीति और जीवन पद्धति में उस तैयारी के लिये कोई स्थान नहीं रहा, तब हमारे पारिवारिक जीवन में कोई उल्लास नहीं रह गया । दाम्पत्य जीवन असन्तोष और अस्तव्यस्तता के पर्याय बन गये हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मनुष्य भूल कर सकता है पर सृष्टि के सैकड़ों जीव-जन्तुओं की तरह स्टिकल बैक मछली यह भूल कभी नहीं करती । जैसे उसे प्रकृति से यह प्रेरणा मिली हो कि वह अपनी जीवन पद्धति द्वारा मनुष्य को सिखाये और समझाये कि जो आनन्द पहले से तैयारी किये हुए दाम्पत्य जीवन में है, वह चाहे जैसे गृहस्थ बसा लेने में नहीं है । यह सारा उत्तरदायित्व पति का है कि वह समुचित व्यवस्थायें स्वयं जुटाये । अपनी तैयारी में कोई त्रुटि न हो तो पत्नियों की ओर से पूर्ण सहयोग और समर्थन न मिले ऐसा कभी हो ही नहीं सकता । इस मछली की तरह तैयारी किये हुये नर दाम्पत्य जीवन का ऐसा आनन्द पाते हैं कि उन्हें न तो स्वर्ग की कल्पना होती है और न मुक्ति की ही । वे इसी जीवन में स्वर्ग-भोग का सौभाग्य प्राप्त करते हैं ।

तत्परतापूर्वक ढूँढ़-खोज के बाद जब उपयुक्त स्थान मिल जाता है, तब स्टिकल बैक पत्नी के लिये सुन्दर घर बनाने की तैयारी करता है । इसके लिए उस बेचारे को कितना परिश्रम करना पड़ता है, यह बात अपने माता-पिता की पीठ पर चढ़े, विवाह की कामना करने वाले युवक भला क्या समझेंगे ? स्टिकल बैक पानी में तैरती हुई छोटे-छोटे पौधों की नरम-नरम लकड़ियाँ, तैरते हुये पौधों की जड़ें इकट्ठी करता है और उन्हें चुने हुये स्थान पर ले जाता है । विवाह के शौकीन स्टिकल को पहले खूब परिश्रम और मजदूरी करनी पड़ती है । अपने शरीर से वह एक प्रकार का लसलसा पदार्थ निकालता है और एकत्रित सारी वस्तुओं को उसी में चिपका लेता है ताकि उसका इतना परिश्रम व्यर्थ न चला जाये । उसने जो लकड़ियाँ एकत्रित की हैं, वह अपने स्थान तक पहुँच जायें ।

स्टिकल बैक पूरे आत्म-विश्वास के साथ काम करता है । सारा एकत्रित सामान मजबूती से चिपक गया है, इसका विश्वास करने के लिये वह अपने शरीर को फड़फड़ाता हुआ नाचता है, जैसे उसे परिश्रम में आनन्द लेने की आदत हो । जब एक बार विश्वास हो गया कि सामान गिरेगा नहीं, तब आगे बढ़ता है और पूर्व निर्धारित स्थान पर इस सामान से मकान बनाता है । शरीर का लसलसा पदार्थ यहाँ सीमेंन्ट का काम करता है और लाई हुई लकड़ियाँ ईंट-पत्थरों का । आगन्तुक वधू के लिये महल बनाकर एक बार वह उसे घूम-घूमकर देखता है । लगता है अभी वैभव में कुछ कमी रह गई । फिर वह रेत के बारीक टुकड़े मुख में भर कर लाता है और मकान के फर्श पर बिछाता है । कोठरी में कहीं टूट-फूट की गुञ्जाइश हो तो उसे ठीक करता है । सारा मकान वार्निस किया हुआ-सा हो जाने के बाद ही उसे सन्तोष होता है । जब यह तैयारियाँ पूर्ण हुईं; तब वह स्वयं मादा की खोज में निकलता है । उसे दहेज और लेन-देन की आवश्यकता नहीं, क्योंकि वह जानता है, नारी-नर की अपनी आवश्यकता भी है, इसलिये प्रिय वस्तु को भरपूर स्वागत और सम्मान अपनी ओर से ही क्यों न दिया जाये । वह मनुष्यों की तरह का दम्भ और पाखण्ड प्रदर्शित नहीं करता ।

उपयुक्त पत्नी मिल जाने पर वह उसे घर लाता है । पत्नी कुछ दिन में गर्भावस्था में आती है, तब यह उसे घूमने को भेजता रहता है, घर और अण्डों की देखभाल तब वह स्वयं ही करता है । यह उनके भोजन आदि का ही प्रबन्ध नहीं करता वरन् सुरक्षा के लिये दरवाजे पर कड़ा पहरा भी रखता है । मि. फ्रैंक बकलैण्ड ने इसकी कर्मठता का वर्णन करते हुये लिखा है कि मकान में थोड़ी-सी भी गड़बड़ी हो तो यह उसे तुरन्त ठीक करता है ।

स्टिकल बैक अपने बच्चों और पत्नी के पालन का उत्तरदायित्व पूरी सूझ समझ के साथ निभाता है । वह उन्हें पर्दे में नहीं रखता । पर्याप्त ऑक्सीजन मिलती रहे, इसके लिये वह अपने मकान में दो दरवाजे रखता है । इससे वहाँ के पानी में बहाव बना रहता है और ताजी आक्सीजन मिलती रहती है, यदि बहाव रुक जाये तो वह तुरन्त शरीर फड़फड़ाकर बहाव पैदा कर देता है, जिससे रुके हुये पानी की गन्दगी प्रभावित न कर पाये ।

स्टिकल बैक का जीवन कितना कलात्मक और सुरुचिपूर्ण है । इधर बच्चे निकलने लगे, उधर उसने मकान के ऊपरी भाग छत को अलग करके एक बढ़िया झूला तैयार किया । मनुष्यों की तरह गुम-सुम का जीवन उसे पसन्द नहीं । झूला बनाकर उसमें बच्चों को भी झुलाता है और पत्नी को भी । स्वयं उस क्षेत्र में परेड करता रहता है, जिससे उसके आनन्द और खुशहाली

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की अभिव्यक्ति होती है । लेकिन दूसरे दुश्मन और बुरे तत्व डरकर भाग जाते हैं, जैसे कलाप्रिय और सुरुचिपूर्ण सद्गृहस्थ से अवगुण दूर रहने से अशांति पास नहीं आती । बच्चे झूला छोड़कर इधर-उधर भागते हैं तो यह उन्हें झूले में बार-बार डाल देता है, जब तक बच्चे स्वम समर्थ न हो जाऐं, यह उन्हें आवारागर्दी और कुसंगति में नहीं बैठने देता । अपनी रक्षा करने में जब वे समर्थ हो जाते हैं, तभी उन्हें जाने और नया संसार बनाने की अनुमति देता है ।

स्टिकल बैक की तरह मनुष्य का पारिवारिक जीवन भी तैयारी उद्देश्य और सुरुचिपूर्ण होता, पतिव्रत हो नहीं पत्नीव्रत का भी ध्यान रखा गया होता तो सामाजिक जीवन हँसता खिलखिलाता हुआ होता ।

शेरनी १०८ दिन में प्रसव करती है । इसके बाद वह प्रायः २ वर्ष तक, जब तक कि बच्चे बड़े न हो जायें और समर्थ न बन जायें उन्हीं के पोषण व प्रशिक्षण में व्यस्त रहती है । सहवास की इच्छा होने पर भी वह उसे टालती रहती है और बच्चों के बड़े हो जाने पर ही पुनः गर्भ धारण करती है । इस तरह के उदाहरण से भावनाओं की गम्भीरता का पता चलता है । इसके विपरीत आचरण स्वभाव का हल्कापन है, भावनाओं का अर्थ केवल मात्र झुकना नहीं अपितु अपनी समीक्षा बुद्धि को जाग्रत रखते हुए, जो पवित्र रसमय और मर्यादा जन्य है उसे पूरा करने में अपनी संपूर्ण निष्ठा का परिचय देना है ।

कीवी, कैसोवरी, रही, मौआ, एमू, शुतुर्मुर्ग और पेन्गुइन आदि पक्षियों के जीवन का विस्तृत अध्ययन करने के बाद चार्ल्स डारर्विन ने लिखा है- इन पक्षियों का गृहस्थ और पारिवारिक जीवन बड़ा सन्तुलित; समर्पित और चुस्त होता है । नर-मादा आपस में ही नहीं बच्चों के लालन-पालन में भी बड़ी सतर्कता, स्नेह और बुद्धि-कौशल से काम लेते हैं । मनुष्य-जाति की तरह इनमें भी परिवार के पालन-पोषण का अधिकांश उत्तरदायित्व नर पर रहता है । मादा के शरीर में छोटा होने पर भी वह घोंसला बनाना, अण्डे सेहना और जिन दिनों मादा अण्ड़े से रही हो उन दिनों उसके आहार की व्यवस्था करना, सद्यः प्रसूत बच्चों को संभालने से लेकर उन्हें उड़ना सिखा कर एक स्वतन्त्र कुटुम्ब बसा करके रहने की प्रेरणा देने तक का अधिकांश कार्य नर ही करता है । वह उनकी दुश्मनों से रक्षा भी करता है ।

गृहस्थी बसाने में सम्भवतः मनुष्य को इतनी आपा-थापी नहीं करनी पड़ती होगी जितनी बेचारे पेन्गुइन पक्षी को । उसके लिये पेन्गुइन दो महीने सितम्बर और फरवरी में दक्षिणी ध्रुव की यात्रा करता है । पेन्गुइन जानते हैं अपने अभिभावक अपने मार्गदर्शक के अनुशासन में रहना कितना लाभदायक होता है । उसके अनुभवों का पूरा-पूरा लाभ उठाने के लिये पेन्गुइन अपने मुखिया के चरण-चिह्नों पर ही चलता है ।

ध्रुवों पर पहुँचने के बाद पुराने पेन्गुइन तो अपने पहले वर्षों के छोड़े हुए घरों में आकर रहने लगते हैं किन्तु नवयुवक पेन्गुइन अपने माता-पिता की आज्ञा लेकर नया परिवार बसाने के लिये बल देता है । उसकी सबसे पहली आवश्यकता एक योग्य पत्नी की होती है । वह ऐसी किसी मादा को ढूँढता है जिसका विवाह न हुआ हो । अपनी विचित्र भाव-भंगिमा और भाषा में वह मादा से सम्बन्ध माँगता है । मनुष्य ही है जो जीवन साथी का चुनाव करते समय गुणों का ध्यान न देकर केवल धन और रूप-लावण्य को अधिक महत्व देता है । लेकिन पेन्गुइन यह देखता है कि उसका जीवन साथी क्या उसे सुदृढ़ साहचर्य प्रदान कर सकता है ।

सम्बन्ध की याचना वह स्वयं करता हे । ऐसे नहीं, उसे मालूम है जीवन में धर्मपत्नी का क्या महत्व है, इसलिये पत्नी को खुश करके । पत्नी की प्रसन्नता भी सुन्दर चिकने पत्थर होते हैं । नर चोंच में दवा कर एक सुन्दर-सा कंकड़ लेकर मादा के पास जाता है । मादा कंकड़ देखकर उसके गुणी, पुरुषार्थी एवं श्रमजीवी होने का पता लगाती है । यदि उसे नर पसन्द आ गया तो वह अपनी स्वीकृति दे देगी अन्यथा चोंच मारकर उसे भगा देगी । चोट खाया हुआ नर एक बार पुनः प्रयत्न करता है । थोड़ी दूर पर उदास सा बैठकर इस बात की प्रतीक्षा करता है कि मादा सम्भव है तरस खाये और स्वीकृति दे दे । यदि मादा ने ठीक न समझा तो नर बेचारा कहीं और जाकर सम्बन्ध ढूँढने लगता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मादा की स्वीकृति मिल जाये तो पेन्गुइन की प्रसन्नता देखते ही बनती है। नाच-नाच कर आसमान सिर पर उठा लेता है। लेकिन मादा को पता होता है। गृहस्थ परिश्रम से चलते हैं इसलिये वह नर को संकेत देकर घर बनाने में जुट जाती है। नर तब दूर-दूर तक जाकर कंकड़ ढूँढकर लाता है। मादा महल बनाती है। इस समय बेचारा नर डाँट-फटकार भी पाता है लेकिन उसे यह पता है कि पत्नी के स्नेह और सद्भाव के सुख के आगे मीठी फटकार का कोई मूल्य नहीं। दोनों मकान बना लेते हैं तब फिर स्नान के लिये निकलते हैं और जल की निर्मल लहरों में देर तक स्नान करते हैं। स्नान करके लौटने पर कई बार उनके बने-बनाये मकान पर कोई अन्य पेन्गुइन अधिकार जमा लेता है। दोनों पक्षों में युद्ध होता है जो विजयी होता है वही उस मकान में रहता है। लेकिन युद्ध के बाद स्नान करने जाना आवश्यक है। इस बार वे पहले जैसी भूल नहीं करते। बारी-बारी से स्नान करने जाते हैं और लौट कर फिर गृहस्थ कार्य में संलग्न होते है मादा अण्डे देती है लेकिन बच्चों की पालन प्रक्रिया नर ही पूर्ण करते हैं। पेन्गुइन की इस तरह की घटनायें देख-कर मनुष्य की उससे तुलना करने को जी करता है। मनुष्य भी उनकी तरह लूट-पाट और स्वार्थपूर्ण प्रवंचना में कितना अशान्त और संघर्षरत रहता है। लेकिन वह सुखी गृहस्थ के सब लक्षण भी इन पक्षियों से नहीं सीख सकता और परस्पर घर में ही लड़ता-झगड़ता रहता है। पेन्गुइनसी सहिष्णुता भी उसमें नहीं है।

कछुये को नृत्य करते देखने की बात तो दूर की है, किसी ने उसे तेज चाल से चलते हुये भी नहीं देखा होगा लेकिन दाम्पत्य जीवन में आबद्ध होते समय उसकी प्रसन्नता और थिरकन देखते ही बनती है। कछुआ जल में तेजी से नृत्य भी करता है और तरह-तरह के ऐसे हाव-भाव भी जिन्हें देखकर मादा भी भावविभोर हो उठती है। यही स्थिति है मगरमच्छ की। मगर भी प्रणय वेला में विलक्षण नृत्य करता है।

मछलियों में सील मछली की दुनिया और भी विचित्र है। नर अच्छा महल बनाकर रहता है और उसमें कई-कई मादायें रखता है। नर अन्य नरों की मादाओं को हड़पने का भी प्रयत्न करते रहते हैं और इसी कारण उन्हें कई बार तेज संघर्ष भी करना पड़ता है। कामुकता और बहु-विवाह की यह दुष्प्रवृत्ति मछलियों में ही नहीं शुतुर्मुर्ग और रही नामक पक्षियों में भी होती है। यह ७-८ मादायें तक रखते हैं फिर भी नर इतना धैर्यवान् और परिश्रमी होता है कि एक-एक मादा आठ-आठ, दस-दस अण्डे देती है और नर उन सबको भली प्रकार सँभाल लेता है। लगता है इनकी दुनियाँ ही पत्नी जुटाने और बच्चे पैदा करने के लिये होती है। इस दृष्टि से मनुष्य की कामुकता और दोषदृष्टि को तोला जा सकता है। यदि मनुष्य भी इन दो प्रवृत्तियों तक ही अपने जीवन क्रम को सीमित रखता है तो इसका यह अर्थ हुआ कि वह रही और सील मछलियों की ही जाति का कोई जीव है।

कई बार तो अश्लीलता में मनुष्य सामाजिक मर्यादाओं का भी उल्लंघन कर जाता है किन्तु इन पक्षियों और प्राणियों ने अपने लिये जो विधान बना लिया होता है उससे जरा भी विचलित नहीं होते। चींटी राजवंशी जन्तु है। उसमें रानी सर्व प्रभुता सम्पन्न होती है। वही अण्डे देती है और बच्चे पैदा करती है। अपने लिये मधुमक्खी की तरह वह एक ही नर का चुनाव करती है शेष चींटियाँ मजदूरी, चौकीदारी और मेंहतर आदि का काम करती हैं। अपनी जिम्मेंदारी प्रत्येक चींटी इस ईमानदारी से पूरी करती है कि किसी दूसरी को रत्ती भर भी शिकायत करने का अवसर न मिले जब कि उन बेचारियों को अपने हिस्से से एक कण भी अधिक नहीं मिलता। लगता है सामाजिक व्यवस्था में ईमानदारी को भी श्रम और निष्ठा यह आदर्श मनुष्य ने चींटी से सीख लिया होता तो वह आज की अपेक्षा कहीं अधिक सुखी और सन्तुष्ट रहा होता, पर यहाँ तो अपने स्वार्थ, अपनी गरज के लिये मनुष्य अपने भाई-भतीजों को भी नहीं छोड़ता। कम तौलकर, मिलावट करने, कम परिश्रम में अधिक सुख की इच्छा करने वाला मनुष्य इन चींटियों से भी गया गुजरा लगता है।

एक बार अफ्रीका में वन्य पशु खोजियों का एक दल हाथियों की सामाजिकता का अध्ययन करने आया। संयोग से उन्हें एक ऐसा सुरक्षित स्थान मिल गया जहाँ से वे बड़ी आसानी से हाथियों के करतब देख

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सकते थे । एक दिन उन्होंने देखा हाथियों का एक झुण्ड सबेरे से ही विलक्षण व्यूह रचना कर रहा है । कई मस्त हाथियों ने घेरा डाल रखा है । झुण्ड में जो सबसे मोटा और बलवान् हाथी था वही चारों तरफ आ जा सकता था शेष सब अपने-अपने पहरे पर तैनात थे । लगता था वह बड़ा हाथी उन सबका पितामह था या मुखिया था । उसी के इशारे पर सब व्यवस्था चल रही थी और एक मनुष्य है जो थोड़ा ज्ञान पा जाने या प्रभुता सम्पन्न हो जाने पर भाई-भतीजों की कौन कहे परिवार के अत्यन्त संवेदनशील और उपयोगी अङ्ग· बाबा, माता-पिता को भी अकेला या दीन-हीन स्थिति में छोड़कर चल देता है ।

मुखिया के आदेश से ५-६ हथिनियाँ उस घेरे में दाखिल हुईं । बीच में गर्भवती हथिनी लेटी थी । सम्भवतः उसकी प्रसव पीड़ा देखकर ही हमलावरों से रक्षा के लिये हाथियों ने यह व्यूह रचना की थी । परस्पर प्रेम, आत्मीयता और निष्ठा का यह दृश्य सचमुच मनुष्य को लाभदायक प्रेरणायें दे सकता है यदि मनुष्य स्वयं भी उनका परिपालन कर सकता होता ।

बच्चा हुआ, कुछ हथिनियों ने जच्चा को सँभाला कुछ ने बच्चे को । ढाई-तीन घण्टे तक जब प्रसव होने के बाद से बच्चा धीरे-धीरे चलने न लगा हाथी उसी सुरक्षा स्थिति में खड़े रहे । हथिनियाँ दाई का काम करती रहीं । बच्चे और मादा के शरीर की सफाई से लेकर उन्हें खाना खिलाने तक का सारा काम कितने सहयोग और संकुचित ढंग से हाथी करते हैं यह मनुष्य को देखने, सोचने, समझने और अपने जीवन में भी धारण करने के लिये अनुकरणीय है ।

पेन्गुइन पक्षी बच्चों पर कठोर नियंत्रण रखते हैं । बड़े-बूढ़ों के नियन्त्रण के कारण बच्चे थोड़ा भी इधर-उधर नहीं जा सकते । जब शरीर और दुनियादारी में वे चुस्त और योग्य हो जाते हैं तो फिर स्वच्छन्द विचरण की आज्ञा भी मिल जाती है जब कि मनुष्य ने बच्चे पैदा करना तो सीखा पर उनमें से आधे भी ऐसे नहीं होते जो सन्तान के प्रति अपने उत्तरदायित्वों का निर्वाह इतनी कड़ाई से करते हों । अधिकांश तो यह समझना भी नहीं चाहते कि बच्चों को किस तरह योग्य नागरिक बनाया जाता है ।

थोड़ी भी परेशानी आये तो मनुष्य अपने उत्तरदायित्वों से कतराने लगता है किन्तु अन्य जीव अपने गृहस्थ कर्त्तव्यों का पालन कितनी निष्ठा के साथ करते हैं यह देखना हो तो अफ्रीका चलना चाहिये । यहाँ कीवी नाम का एक पक्षी पाया जाता है । कामाचार को वह अत्यन्त सावधानी से बरतता है ताकि उसे कोई देख न ले । काम सम्बन्धी मर्यादाओं को ढीला छोड़ने का ही प्रतिफल है कि आज सामाजिक जीवन में अश्लीलता और फूहड़पन का सर्वत्र जोर है । कीवी को यह बात ज्ञात है और वह अपने वंश को सदैव सदाचारी देखना चाहता है इसीलिये सहवास भी वह बिल्कुल एकान्त में और उस विश्वास के साथ करता है कि वहाँ उसे कोई देखेगा नहीं । मादा जब अण्डे देने लगती है तो नर उनकी रक्षा करता है और सेहता भी है । उसे लगातार ८० दिन तक अण्डे की देखभाल करनी होती है । बच्चा पैदा होने के साथ वह जहाँ पुत्रवान् होने पर गर्व अनुभव करता है वहाँ यह प्रसन्नता भी कि अब उसे विश्राम मिलेगा पर होता यह है कि इसी बीच मादा ने दूसरा अण्डा रख दिया होता है । बेचारे नर को फिर ८० दिन का अनुष्ठान करना पड़ जाता है । इस तरह वह कई-कई पुरश्चरण एक ही क्रम में पूरे करके अपनी निष्ठा का परिचय देता है । मनुष्य क्या उतना नैतिक हो सकता है ? इस पर विचार करें तो उत्तर निराशाजनक ही होगा ।

वासना के दुष्परिणाम

प्राणि जगत् में जहाँ एक ओर यौन सदाचार अधिकाधिक ब्रह्मचर्य और पारिवारिक जीवन में स्नेह भरी घनिष्ठता के दर्शन होते हैं वहीं काम का वह विद्रूप भी स्पष्ट दिखाई दे जाता है जो नारी को कामिनी और रमणी रूप में देखने के कारण मनुष्य जाति को भुगतना पड़ता है । संयम और दाम्पत्य जीवन की मर्यादाओं का उल्लंघन करने वाले जीवों का जीवनकाल इतना त्रास-दायक पाया गया है कि उसे देखकर रोगटें खड़े हो जाते हैं । कम से कम मनुष्य जैसे विचारशील प्राणी को तो वैसी स्थिति नहीं आने देनी चाहिये ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रजनन-ऋतु आने पर नर-सील मादाओं के लिए लड़ने लगते हैं । एक सशक्त नर-सील ४०-५० तक मादाओं का मालिक होता है लेकिन उसकी विक्षुब्ध वासना अपरिमित होती है । नई मादाएँ देखकर वह मचल उठता है तथा पड़ौसी सील-समूह पर आक्रमण कर बैठता है । उस समूह के नर से उसे प्रचण्ड संघर्ष करना पड़ता है । मान लें कि वह इस संघर्ष में विजयी ही हो जाता है और अपनी पसन्द की मादा को लेकर थका, आहत, गर्वोद्धत अपने समूह में लौटता है, तो उसे प्रायः यही दृश्य दीखेगा कि उसके समूह की एक याकि दो-चार मादाएँ कोई दूसरा नर-सील खींचे लिऐ जा रहा है । अब या तो मन मारकर, अपहरण का यह आघात झेलें अथवा उसी थकी मांदी दशा में द्वंद युद्ध के लिए ललकारे और तब परिणाम पता नहीं क्या हो ?

इस प्रवृत्ति के परिणामस्वरूप अधिकांश नर-सील तीन माह की यह प्रजनन ऋतु बीतने तक श्लथ, क्षतविक्षत हो चुकते हैं और आहार जुटा पाने योग्य शक्ति भी उनमें शेष नहीं रहती । इसका कारण मादा के प्रति नर-पशु की निरन्तर यौन-जागरूकता की प्रवृत्ति है । इससे विपरीत सामूहिक सह-जीवन की प्रवृत्ति वाले पशुओं में तो मादा के प्रति कोई अनावश्यक आकर्षण नर रखते ही नहीं । मात्र प्रजनन ऋतु में ही मादा विशेष के प्रति आकर्षित होते हैं । शेष समय ये मानों लिंगातीत साहचर्य की स्थिति में रहते हैं ।

हाथी की शक्ति एवं बुद्धिमता सुविदित है किन्तु इस विषमतावादी प्रवृत्ति से हाथियों के मुखिया को भी अपनी शक्ति व समय का अधिकांश भाग अनावश्यक संघर्षों में खर्च करना होता है ।

हाथी समूह में रहते हैं । समूह-नायक ही अपने समूह की सभी हथिनियों का स्वामी होता है । समूह के अन्य किसी सदस्य द्वारा किसी भी हथिनी से तनिक सी भी कामचेष्टा या प्रेम-प्रदर्शन करने पर मुखिया यह देखते ही उस पर आक्रमण कर या तो भगा देता है या परास्त कर प्रताड़ित, अपमानित करता है ।

कोई युवा, शक्तिशाली हाथी कभी भी ऐसी उद्धत चेष्टा कर मुखिया को उत्तेजित कर देता है और युद्ध में उसे यदि परास्त कर देता है तो फिर वही टोली की सभी हथिनियों का स्वामी तथा टोली नायक बन जाता है । पराजित नायक बधुदा विक्षिप्त हो जाता है और खतरनाक भी हो उठता है ।

"मरण विन्दुपातेन जीवनं बिन्दु धारणम्" सूत्र में कामुकता के अमर्यादित चरणों को मरण का प्रतीक माना गया है । उसमें सर्वनाश ही सन्निहित है । यह विचार सर्वथा असत्य है कि अति कामुकता बरतने वालों से उनकी सहधर्मिणी प्रभावित होती है, वरन् सच तो यह है कि वह उल्टी घृणा करने लगती है । ऐसी घृणा जहाँ पनपेगी वहाँ सद्भाव कहाँ रहेगा ? जब मादा देखती है कि नर अपनी तृप्ति के लिए उसके शरीर का अनावश्यक दुरुपयोग किये जा रहा है तो वह पति-भक्ति अपनाने के स्थान पर उल्टे आक्रमण कर बैठती है । ऐसे आक्रमणों से नर की दुर्गति ही होती है और 'मरण बिन्दु पातेन सूत्र के अनुसार उद्धत कामविकार मृत्यु का दूत बनकर सामने आ खड़ा होता है ।

नर बिच्छू अपनी प्रेयसी के साथ-साथ घण्टों नृत्य करता है । कभी तेजी से दोनों आगे बढ़ते हैं और कभी पीछे हटते हैं, थककर शिथिल होने पर दोनों साथ-साथ ही विश्राम करते हैं लेकिन मादा बिच्छू, कई बार उत्तेजना में नर को खा भी जाती है ।

'फ्राग-फिश' का यौनाचरण भी ऐसा ही प्राणान्तक है मादा फ्राग-फिश घूमती रहती है श्रीमान नर अधिकांश पुरुषों की ही तरह लंपट और अधीर होते हैं । मादा के पास पहुँचते ही वे उत्तेजित हो उठते हैं, जब कि मादा को ऐसा कुछ भी नहीं होता । उत्तेजित नर मादा के मादक दिख रहे शरीर मांस में तेजी से दाँत गढ़ाता है, बस फिर वह दाँत गढ़ा ही रह जाता है । क्योंकि उस माँस से यह दाँत कभी निकल नहीं पाता किसी तरह केलि करते हैं । नशा उतर जाने के बाद दाँत छुड़ाने की पूरी कोशिश करते हैं-बार-बार । लेकिन विफल मनोरथ ही रहते हैं । खाना-पीना बन्द कितने दिन जीयेंगें ? अन्तः में दम टूट जाता है ।

बिल्लियों का गम्भीर रुदन उनकी शारीरिक पीड़ा का नहीं वरन् उत्तेजित मनोव्यथा का परिचायक होता है । बन्दरों की कर्ण कटु किलकारियों में भी यह आभास होता है कि उनके भीतर कुछ असाधारण हलचल हो रही है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

साही का प्रणयकाल उसके उछलने कूदने की व्यस्तता से जाना जा सकता है । उन दिनों वह खाना, पीना, सोना, तक भूल जाती है और बावली सी होकर लकड़ी के टुकड़ों को मुँह में देकर उन्हें उछालती हुई ऐसी दौड़ती है मानो उसे फुटबाल मैच में व्यस्त रहना पड़ रहा हो ।

सर्प आलिंगन बद्धता के क्षणों में अत्यंत भावुक और आवेशग्रस्त होता है । सर्प नहीं चाहता कि इस एकान्त सेवन में कोई भागीदार हस्तक्षेप करे । यदि उसे पता चल जाये कि कोई लुक-छिप कर उसे देख रहा है तो सर्प क्रोधोन्मत्त होकर प्राणघातक आक्रमण कर बैठता है ।

हिरनों में ऋतुकाल स्वयंवर के लिए मल्लयुद्ध का रूप धारण करता है । इससे उनके सींग टूटते हैं, घाव लगते हैं, और कई बार तो वे प्राण तक गँवाते हैं । हिरनियाँ इस मल्ल युद्ध को निरपेक्ष भाव से देखती रहती हैं और पराजित से सम्बन्ध तोड़ने और विजयी की अनुचरी बनने के लिए बिना किसी खेद के सहज स्वभाव प्रस्तुत रहती हैं । यही दुर्गति अगणित पशुओं की होती है । उनमें से आधे तो प्रायः इसी कुचक्र में क्षत-विक्षत होकर मरते हैं ।

केवल नर ही इस स्वयंवर युद्ध में लड़-मरकर कष्ट उठाते हों सो बात नहीं । कई बार तो मादाएँ भी नरों की अविवेकशीलता के लिए उन्हें भरपूर दण्ड देती और नाच नचाती हैं ।

नर गरुड़ को प्रणयकेलि की तभी स्वीकृति मिलती है जब वह मल्लयुद्ध में अपनी प्रेयसी को परास्त करने में समर्थ हो जाता है । ऋतुमती गरुड़ मादा नर को आमंत्रण तो देती है लेकिन साथ ही यह चुनौती भी प्रस्तुत करती है कि यदि वह पिता बनने योग्य है तो ही उस पद की लालसा करे । समर्थता को परखने के लिए मादा मल्लयुद्ध करती है और इस भयानक संघर्ष में नर के पंख नुच जाते हैं । घायल होने पर खून से लथपथ हो जाता है । इतने पर भी यदि वह मैदान छोड़कर भाग खड़ा न हो तो ही उसके गले में स्वयंवर की माला पहनाई जाती है । तब न केवल विवाह होता है वरन् नर को घर परिवार के साथ जुड़े हुए उत्तरदायित्वों को सँभालने में मादा की भरपूर मदद करने के लिए भी तत्पर होना पड़ता है ।

सन् १९५० आज से ४५ वर्ष पूर्व की बात है, कुछ वैज्ञानिकों ने ऐन्जिलर मछली के बारे में विस्तृत खोज प्रारम्भ की । मध्य सागर में रहने वाली इस ऐन्जिलर के बारे में अब तक लोगों को वैसे ही स्वल्प-सी जानकारी थी जैसे शरीरस्थ अनेक चक्रों ,ग्रन्थियों, गुच्छाओं एवम् उपत्यिकाओं के सम्बन्ध में वैज्ञानिकों को थोड़ी-सी जानकारी प्राप्त है ।

अध्ययन के लिये जितनी भी ऐन्जिलरी पकड़ी गईं नर उनमें से एक भी न निकला । एक दिन एक मछली विशेषज्ञ ने निश्चय किया कि इस मछली के अंग-प्रत्यंगों की जानकारी प्राप्त करनी चाहिए । विशेष और महत्वपूर्ण जानकारी तब मिली जब इन विशेषज्ञ महोदय न देखा कि एन्जिलर मादा के सिर के ऊपर सीधी आँख पर एक बहुत ही छोटा सा मछली जैसा जीव चिपका हुआ है । इस जैव का अध्ययन करने से पता चला कि यही वह सज्जन है जिसकी वैज्ञानिकों को तलाश थी । नर ऐन्जिलर, यही था बेचारी मादा के सिर पर चिपका उसी के रक्त को चूसने वाला ।

मादा का आकार ४० इन्च ,भगवान ने अच्छा किया कि पति देव को कुल चार इन्च का बनाकर यह दिखाया कि नारी को मात्र प्रजनन और शोषण की सामग्री बनाने वालों का बौना होना ही ठीक है । मनुष्य के इतिहास में भी यही पाया जाता है । संसार के जो भी देश आज प्रगति के शिखर पर पहुँचे हैं, उन सब में नारी के उत्थान के लिये बड़े कदम उठाये गये हैं । हम भारतवासी हैं, जिन्होंने नारी को दासी, पर्दे में रहने वाली, शिक्षा-शून्य बनाया । उसका रमणी के रूप में उपभोग किया । तभी तो प्रगति में एन्जिलर नर की तरह बौने के बौने रह गये ।

हम में यह दोष कहाँ से आया, इसका उत्तर भी एन्जिलर मछली के अध्ययन करने वाले वैज्ञानिकों ने दिया । उन्होंने नर के स्वभाव का अध्ययन करके बताया कि उसकी यह शोषण प्रियता उसकी आलसी और वासनापूर्ण प्रकृति के कारण है । जीवन में मधुरता के लिये कोई स्थान न होने के कारण वह अपनी ही पत्नी का खून पिया करता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देखने में एन्जिलर नर पापी और अपराधी कहा जा सकता है लेकिन जिन लोगों ने नारी का मूल्यांकन वासना के रूप में दासी और सम्पत्ति के रूप में किया, उन्हें क्या माना और क्या कहा जाय इसका निर्णय तो हमें अपने भीतर मुख डालकर करना पड़ेगा ?

कामुकता का वाह्य स्वरूप कितना ही आकर्षक क्यों न हो उसके कलेवर में विष और विनाश के अतिरिक्त कुछ नहीं। अफ्रीका में एक बहुत सुन्दर फूल पाया जाता है। पक्षी इन फूलों पर आसक्त होकर उन पर जा बैठते हैं। बैठते ही फूल धीरे-धीरे सिकुड़ना प्रारम्भ कर देता हैं और फिर उसे इस तरह जकड़ कर उसे अपने पैने काँटे चुभो देता है कि लगातार प्रयत्न करने पर भी वह निकल नहीं पाता। खून पूरी तरह चूस लेने के बाद ही पौधा उसे छोड़ता है। कामुक उच्छृंखल ऐसी ही विनाशकारी प्रवृत्ति है। प्रकृति में पग-पग पर उसके दर्शन होते हैं ?

चीन में पैराडाइज नाम की एक ऐसी मछली पाई जाती है जो अपने मुँह से एक विशेष प्रकार के लसलसे रसायन के बुलबुले छोड़ती है। थोड़ी देर में बड़ी संख्या में एकत्र हुए इन बबूलों में एक सिरे से छेद कर वह भीतर-भीतर ऐसी सुन्दर छटाई करती है जिससे बबूलों का समुदाय अनेक मकानों वाला नगर दिखाई देने लगता है। अब मादा अण्डे देने प्रारम्भ करती है और उन्हें इसी बबूल-नगर में पहुँचाती जाती है। स्वयं उस नगर की पहरेदारी करती रहती है। दुर्ग के किसी भी द्वार से बच्चे निकल न भागने पावें वह इसकी बराबर देख-रेख रखती है। इसी तरह उसकी वंशवृद्धि होती रहती है।

माया ने उसी तरह अपना विस्तार अनेक शरीर बनाकर किया। ऐसे शरीर जहाँ जीव के अस्तित्व को किसी प्रकार संकट न पावे। पीछे वह ऐसी व्यवस्था और उपक्रम जुटाती रहती है जिससे जीव उसी मायावी नगर में फँसा रहे उससे बाहर न निकलने पावे। माया के इस घर को विरले ही तोड़ पाये हैं।

अमेंरिका के दक्षिणी भागों में पानी में पाया जाने वाला कछुये की सी शक्ल का ऐलीगेटर स्नैपर बड़ा चतुर जीव है। वह अपनी जीभ को बाहर निकाल कर इस तरह दायें-बायें, आगे-पीछे लपलपाता है कि देखने वाले को यह जीभ किसी स्वतंत्र जीभसी लगती है। उसे देख कर कई मछलियाँ उसे खाने के लिए दौड़ पड़ती हैं। जैसे ही वह उसके पास पहुँचती हैं एलीगेटर स्नैपर उन्हें दबोच कर खा जाता है।

यही स्थिति शरीर में इन्द्रियों में बसे विषयों की लपलपाहट से भ्रमित जीभ उनकी तृप्ति के लिए भाग-भाग कर आता है और बार-बार काल के द्वारा दबोच लिया जाता है। थोड़े से बुद्धिमान भी होते हैं जो इन्द्रियों की इस आसक्ति को आत्मा का नहीं शरीर का विषय मानते हैं और उनसे दूर रह कर ही अपनी रक्षा कर पाते हैं।

नदियों में पाया जाने वाला घड़ियाल जितना क्रूर होता है उतना ही चतुर भी। शिकार के लिए वह नदियों के किनारे आकर इस तरह निश्चेष्ट पड़ा रहता है मानो वह कोई चट्टान या निष्प्राण वस्तु हो। जैसे ही कोई मूर्ख मछली पास पहुँची कि उसने पकड़ा और उदरस्थ किया।

मनुष्य की इन्द्रियाँ भी उतनी धूर्त और चालाक होती हैं सामान्यतः वे निर्जीव दिखाई देती हैं। इसलिए मनुष्य आहार-विहार और परिस्थितियों की सतर्कता नहीं रख पाता। जैसे ही खान-पान और मर्यादाजन्य भूलें हुईं कि इन्हीं निष्प्राण लगने वाली इन्द्रियों की उत्तेजना ने थर पकड़ा। फिर तो उनके चंगुल से निकल पाना कठिन ही होता है। ज्ञानी और विचारशील लोग पहले से ही सतर्क रहते हैं और संयमित और मर्यादित जीवन जीते हैं। तभी उनसे बचते और अपनी शक्ति, शान्ति और सम्मान सुरक्षित रख पाते हैं।

योरोप में एक चिड़िया पाई जाती है 'स्पैरो'। उसका मूल आहार है टिड्डे, लेकिन वह मिले कैसे ? स्पैरो एक कौने में दुबक कर बैठती है और ठीक टिड्डे की आवाज में बोलना शुरू करती है टिड्डे यह आवाज सुनकर उसके पास आ जाते हैं और स्पैरो पक्षी का आहार बन कर मौत के मुँह में चले जाते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इन्द्रियजन्य सुखों की स्थिति भी ऐसी ही है, जब वे कुलबुलाते हैं तो मनुष्य यह नहीं समझ पाता कि उनका शरीर से सम्बन्ध है, आत्मा से नहीं। वह उन्हें अपना ही स्वजन सहायक समझकर उनकी तृष्णा बुझाने में लगा रहता है, और इस तरह आत्मा को अवनति के गर्त में धकेलता रहता है।

माया के इन खेलों को समझने वाला और उनसे दूर रहने वाला व्यक्ति ही बुद्धिमान, विचारशील और आत्मनिष्ठ होता है। उसी का जीवन सफल और सार्थक कहलाता है।

नर-नारी का मिलन एक असामान्य प्रक्रिया

नर-नारी को सामान्य सामाजिक स्तर पर अलग रहने की जरूरत नहीं है। जरूरत यौन सम्पर्क के सम्बन्ध में अति सतर्कता बरतने की है। मस्तिष्क के बाद जननेन्द्रियों का दूसरा स्थान है। इन दोनों केन्द्रों को शक्ति संस्थान कहना चाहिये। पृथ्वी के दो सिरे दो ध्रुव कहलाते हैं। इन ध्रुवों में अति रहस्यमय प्रकृति की शक्ति धाराओं के स्रोत बीज दबे पड़े हैं। इन्हीं के कारण यह धरती अपनी धुरी पर घूमने, सूर्य की परिक्रमा करने, लहराती चाल से चलने, महासूर्य को अपने सौर मण्डल के साथ भ्रमण कराने में समर्थ है। ऋतु परिवर्तन से लेकर वनस्पति उत्पादन और खनिज द्रव्यों के निर्माण तथा सारी प्रक्रियाएँ इन्हीं उभय ध्रुवों में सन्निहित शक्ति बीजों के कारण सम्भव होती है। मनुष्य पिण्ड में भी पृथ्वी की ही तरह मस्तिष्क उत्तरी ध्रुव और मूलाधार दक्षिणी ध्रुव है। जीवन की चेतनात्मक, बौद्धिक एवं भावनात्मक हलचलों का केन्द्र मस्तिष्क है और शरीर में जो कुछ उत्तम, आकर्षक दीखता है उसका केन्द्र जननेन्द्रिय के अन्तराल में दबा पड़ा है। यदि मष्तिस्क में विकृति आ जाय तो बुद्धिहीन व्यक्ति पागल की तरह अपने और दूसरे के लिए निरर्थक हो जायेगा। इसी प्रकार यदि मूलाधार के कामबीज विकृत हो जायें तो स्नायु मंडल से लेकर पाचन तन्त्र तक सारा कार्यकलाप लड़खड़ा जायेगा। इसलिए इन दोनों शक्ति-सस्थानों का बहुत ही समझबूझ कर अति दूरदर्शिता पूर्वक उपयोग किया जाता है इस उपयोग में बरती गई भूलें बहुत ही विघातक सिद्ध होती हैं।

प्रकृति ने मस्तिष्क का वाह्य कलेवर हड्डियों के मजबूत किले के भीतर सुरक्षित रखा है ताकि बाहरी कोई विघातक तत्व-शीत, ग्रीष्म का प्रभाव उसे प्रभावित न कर सके, भीतरी प्रभावों को ग्रहण करने और छोड़ने की गुन्जाइश ही रखी गई। मनुष्य अपने चिन्तन मनन, स्वाध्याय सत्संग से उसे प्रभावित कर सकता है और दिशा दे सकता है मस्तिष्क की दिशा जिधर चल पड़ती है जीवन का स्वरूप वैसा ही बन जाता है और उसी आधार पर मनुष्य उन्नति-अवनति, सुख-दुःख के परिणाम उपलब्ध करता है। मस्तिष्क मर्मस्थल कहा गया है-उसके ब्रह्मरन्ध्र में क्षीर सागर निवासी विष्णु भगवान् विराजमान हैं इस पौराणिक अलंकार में यही रहस्य छिपा पड़ा है कि समस्त दिव्य शक्तियों, सिद्धियों और विभूतियों का केन्द्र इस मस्तिष्क को ही कहा जाता है। इसे स्वस्थ एवं समुन्नत रखने के लिए विद्याध्ययन से लेकर विचार विनिमय तक हमें बहुत कुछ करना होता है। तभी इस मस्तिष्क से समुचित लाभ मिल पाता है। यदि उसे कुसंग दुर्बुद्धि, अशुभ-चिंतन आदि से विकृत कर लिया जाय तो समझना चाहिये कि उत्कर्ष की संभावनाएँ समाप्त हो गई और भविष्य को अन्धकारमय बना लिया गया।

ठीक इसी प्रकार जननेन्द्रिय का महत्व है। उसे मात्र मूत्र त्याग अथवा घिनौने मनोरंजन के लिए नहीं बनाया गया उसमें स्वास्थ्य संरक्षण से लेकर दीर्घ जीवन तक के सारे सूत्र बीज रूप में विद्यमान हैं। इसलिए इसे भी ऐसी जंघाओं की मांसल किन्तु अति कोमल परिधि के दायरे में प्रकृति ने प्रतिष्ठापित किया है। इस सुरक्षात्मक व्यवस्था के पीछे प्रकृति का यही निर्देश सन्निहित है कि इस मर्मस्थल का उपयोग अति सतर्कता और दूरदर्शिता के साथ ही किया जाना चाहिये। उसे निम्न स्तर के क्रीड़ा-कलाप का खिलौना बनाकर अपनी शारीरिक क्षमताओं पर कुठाराघात नहीं किया जाना चाहिये।

नर-नारी का सामान्य मिलन जितना उपयोगी है उतना ही वासनात्मक सम्पर्क से खतरा भी है। दोनों का स्वरूप और महत्व अलग-अलग है। प्रतिबंधित, व्यक्ति, सान्निध्य नहीं यौन मिलन किया जाना चाहिए।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह ध्यान रखा जाय कि वासनाओं का उभार एक अलग चीज है जिसका सामाजिक नर–नारी सम्पर्क से कोई विशेष संबंध नहीं । पुरुष दुकानदारों के यहाँ सामान खरीदने दिन भर औरतें जाती और बात करती हैं । कोई विकार उत्पन्न नहीं होता, न कोई किसी की ओर आकर्षित होता है । आकर्षण उस विशेष मनःस्थिति में उत्पन्न होता है जिसमें यौन–सम्पर्क की अभिलाषा भी रहती है । यदि इस भावस्थल को पहले से ही निर्मल बना लिया जाय तो भले ही बात नवयौवन की हो, सामने वाले रूपवान पक्ष के लिए भी आकर्षण पैदा न होगा ।

यह बचाव इसलिए आवश्यक है कि यौन संस्थानों में अद्‌भुत विद्युत् धाराएँ प्रवाहित करने वाला शक्ति केन्द्र विराजमान है जिसे मूलाधार चक्र कहते हैं । वस्तुतः यह नामकरण बहुत ही समझ बूझकर किया गया है । यही शरीर के अन्तर्गत काम करने वाले सारे क्रिया–कलाप, उत्साह, स्फूर्ति कोमलता, आकर्षण आरोग्य, दीर्घ जीवन आदि का मूलभूत आधार है । इसकी अवांछनीय छेड़खानी करने से हम काम क्षमता को एक प्रकार से नष्ट–भ्रष्ट भी कर डालते हैं ।

नर में प्राण और नारी में रयि शक्ति की प्रधानता है उन्हें आध्यात्मिक भाषा में अग्नि और सोम कहते हैं । विज्ञान के शब्दों में इन्हें धन और ऋण विद्युत्–धारा पुकारते हैं, इनमें स्वभावतःआकर्षण है एक-दूसरे के समीप आकर अपनी अपूर्णता पूर्ण करना चाहते हैं । जहाँ तक सामान्य सम्पर्क का संबंध है वहाँ तक यह विनिमिय उपयोगी है । सभी जानते हैं कि बिना बाप या भाई की लड़की और बिना माँ या बहिन का लड़का मानसिक दृष्टि से अपूर्ण, अविकसित पाया जाता है । पतिपक्षी वर्ग का सम्पर्क व्यक्तित्व के विकास के अनेक द्वार खोलता है । एकांकी अलग-थलग पड़ा जीवन–क्रम कुंठित और मूर्छित होता चला जाता है । विधवा और विधुरों की मृत्यु संख्या, रोग ग्रस्तता एवं शारीरिक दुर्बलता–विवाहितों की अपेक्षा कहीं अधिक पायी जाती है । पर्दे में रहने वाली महिलायें हर दृष्टि से पिछड़ती चली जाती हैं । यह सामान्य प्रतिपक्षी सम्पर्क से वंचित होने का ही दुष्परिणाम है । यदि जनसंस्पर्श में नर–नारी जैसी बाधा उपस्थित न की जाय तो इससे व्यक्तित्वों के विकास में बाधा उत्पन्न नहीं होगी वरन् सहायता ही मिलेगी ।

यदि मन में काम विकार जाग पड़े तो प्रतिपक्षी वर्ग के साथ सामान्य सम्पर्क की मर्यादा तोड़कर यौन सम्बन्ध स्थापित करने की अभिलाषा होती है । दोनों विद्युत्–धारायें समीप आने के लिए मचल उठती हैं और उससे सामाजिक काम–विकृति प्रत्यक्ष ही फैलती है, शारीरिक मानसिक गड़बड़ी भी कम नहीं उभरती । व्यभिचार के पीछे एक तथ्य तो स्पष्ट है कि सामान्य स्तर के व्यक्ति अपने दाम्पत्य जीवन तथा परिवार के प्रति निष्ठावान नहीं रहते । दूसरी जगह आकर्षण चला जाने से अपना परिवार उस स्नेह सौजन्य के लाभ से वंचित होने लगता है जो सामान्यतया किसी सद्‌गृहस्थ के लिए आवश्यक है । परिवार व्यवस्थाएँ गड़बड़ाने न लगें, गृहस्थ अपनी–अपनी धुरी पर टिके रहें इस दृष्टि से व्यभिचार को हेय माना गया लेकिन यह कोई अविच्छिन्न मर्यादा नहीं है । आवश्यकतानुसार इसमें हेर–फेर भी होते रहते हैं । जर्मनी में जब पिछले महायुद्ध के समय पुरुष बहुत मारे गये और नारियों की संख्या अधिक रह गई तो तत्कालीन स्थिति को देखते हुए एक पुरुष कई पत्नियाँ रख सके, कानून में ऐसे सुधार किये गये । सामान्यतया ईसाई देशों में एक पत्नी एक पति का ही कानून रहता है । इसी प्रकार देहरादून जिले के जौनसार बावर क्षेत्र के पहाड़ी इलाकों में यह आम रिवाज है कि भाइयों में से एक बड़े भाई का विवाह होता है, जो पत्नी आती है वह सब छोटे भाइयों की भी उपपत्नी होती है । बच्चे उन जन्म दाताओं को बड़े पिताजी, मँझले पिताजी, छोटे पिताजी आदि कह कर संबोधित करते हैं । वहाँ इस विवाह पद्धति को कोई न व्यभिचार कहता हैन बुरा मानता है । उनका कहना है कि हम उन पाण्डवों की सन्तान हैं जिन्होंने एक द्रौपदी से ही पाँचों ने अपना दाम्पत्य जीवन निभा लिया था । जहाँ तक उथले स्तर पर बहुपतियों, बहुपत्नियों का संबंध है वहाँ तक उसे सामाजिक स्तर का परिवार जीवन में विकृती उत्पन्न करने वाला पाप ही कहा जा सकता है । यदि कहीं ऐसी गड़बड़ न होती हो और गृहस्थ सद्‌भावतः यथावत् बना रहता हो तो उस दोष का परिमार्जन हो जाता है जिसके कारण एक से अनेक का दाम्पत्य जीवन गर्हित या वर्जित घोषित किया गया है । कृष्ण ने बहुपत्नी और द्रोपदी ने बहुपति का सफल प्रयोग करके यह सिद्ध

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

किया था कि पारिवारिक जीवन में विकृति उत्पन्न किये बिना यौन–सम्पर्क को विस्तृत किया जा सकता है लेकिन यह हर किसी के बस की बात नहीं । इस प्रयोग में बहुत ऊँचे या बहुत नीचे व्यक्ति ही सफल हो सकते हैं । अस्तु सामान्य समाज व्यवस्था में एक पत्नी या एक पति प्रथा का ही प्रचलन है जो उचित भी है और आवश्यक भी ।

प्राचीन काल में नियोग प्रथा प्रचलित थी । सुयोग्य संतान उत्पन्न कर सकने की क्षमता से सम्पन्न न होने पर पति अपनी पत्नी के लिए अन्य उपयुक्त व्यक्ति से यौन–सम्पर्क करने की आज्ञा देते थे और उस आधार पर जो बच्चे होते थे उन्हें सम्मानित नागरिक ही माना जाता था । विचित्र वीर्य ने अपनी पत्नियों की व्यास जी द्वारा ऐसे ही नियोग की व्यवस्था की थी और उत्पन्न हुए तीनों बालक पाण्डु, धृतराष्ट्र, तथा विदुर वैध सन्तान के सम्मान से वंचित नहीं हुए थे । आज के लोगों की मनःस्थिति दूसरी है इसीलिए प्रतिबन्ध लगाने की जरूरत पड़ी । उन दिनों व्यक्ति अधिक उदार और उत्तरदायी होते थे, नियोग की प्रथा रहने पर भी कोई अपने पारिवारिक उत्तरदायित्वों में गड़बड़ाता न था, उन दिनों की बात दूसरी थी पर अब जब कि छोटी तवियत के लोग तनिक से आकर्षण में अपने घर बिगाड़ने लगे तो एक पत्नी एक पति की मर्यादा ही उचित है ।

नर–नारी सम्पर्क की अभिवृद्धि में जो खतरा है उसे समझने के लिए हमें अधिक गहराई तक विचार करना होगा । सामाजिक मान के रूप में जहाँ तक परिवार विग्रह के कारण उत्पन्न अव्यवस्था का सवाल है वहाँ यदि उच्चस्तरीय सम्पर्क हो तो उस संबन्ध में थोड़ी उपेक्षा भी की जा सकती है, लेकिन इस संदर्भ में अधिक कड़ाई बरतने का अधिक महत्वपूर्ण कारण यह है कि यौन सम्पर्क नर–नारी की अति महत्वपूर्ण विद्युत–शक्ति एक-दूसरे में अति तीव्रतापूर्वक प्रवाहित होती है । यदि वह प्रवाह उपयुक्त न हुआ तो आन्तरिक क्षमता का भयानक ह्रास और विद्रूप प्रस्तुत होता है । शक्ति का नियम यह है कि अधिक स्ववल्प समर्थता की ओर भागती है । दो तालाबों को यदि एक नाली खोद कर परस्पर मिला दिया जाय तो ऊँचे लेविल का पानी नीचे लेविल के तालाब की ओर बहना आरम्भ कर देगा और वह प्रवाह तब तक चलता रहेगा जब तक कि दोनों का पानी एक लेविल पर नहीं आ जाता । एक रोगी और दूसरा निरोग व्यक्ति यदि यौन–सम्पर्क करेंगे तो प्रत्यक्षतः रोगी को लाभ और निरोग को हानि होगी । एक की सामर्थ्य दूसरे में प्रवाहित होगी और नर या नारी जो भी दुर्बल होगा लाभ में रहेगा और सबल को घाटा उठाना पड़ेगा । यह बात शरीर सम्बन्धी स्थिति पर जितनी लागू होती है उससे हजार गुनी अधिक मनःस्थिति पर लागू होती है । ओछे स्तर के दुष्ट, दुराचारी, व्यसनी और अनाचारी व्यक्तियों से यौन सम्पर्क बनाने वाला दूसरा पक्ष अपनी आत्मिक विशेषताओं को खोता चला जायगा । इसी प्रकार मंद बुद्धि और प्रतिभा सम्पन्नों के बीच इस प्रकार का प्रत्यावर्तन निश्चित रूप से समर्थ पक्ष के लिए हानिकारक सिद्ध होगा ।

उच्चस्तरीय प्रतिभाओं से सम्पन्न व्यक्तियों में स्वभावतः कितने ही महत्वपूर्ण चेतन तत्व भरे पड़े होते हैं । उन्ही के आधार पर उन्हें आश्चर्यजनक सफलतायें मिलती हैं । यदि उस शक्ति स्रोत को वे काम–क्रीड़ा में खर्च करने लगें तो धीरे–धीरे अपना कोष समाप्त करते चले जायेंगे । इसलिए प्रतिभा सम्पन्न व्यक्तियों को उच्चस्तरीय बौद्धिक अथवा आत्मिक गुण सम्पन्नों को ऐसे विनियोग करने से रोका गया । ब्रह्मचर्य ऐसे लोगों के लिए अधिक आवश्यक है । घटिया शरीर स्थिति और मनःस्थिति का व्यभिचार करे तो उसे उतना घाटा नहीं है जितना मनोबल और आत्मबल सम्पन्न लोगों को । इस शरीर बल की तुलना में मनोबल का मूल्य अत्यधिक है । पुष्ट शरीर और दुर्बल शरीर का यौन सम्पर्क स्वस्थ पक्ष को थोड़ी सी ही शारीरिक क्षति पहुँचाता है । लेकिन मनोबल और बुद्धिबल तो प्रत्यक्ष प्राण है, वह तनिक अवसर पाते ही प्रचण्ड प्रवाह की तरह विद्युत् गति से दौड़ पड़ता है और निम्न स्तर के पक्ष में स्थिर कर अपनी भारी हानि कर लेता है । दुर्बल मनोबल वाला पक्ष थोड़ा लाभ उठा ले यह ठीक है लेकिन उससे प्राण शक्ति सम्पन्न पक्ष अपनी प्रतिभा खोकर उस प्रयोजन को पूरा कर सकने में असमर्थ हो जाता है जो अनेक दृष्टियों से अति महत्वपूर्ण होते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विवाह वस्तुतः व्यक्ति विनियोग की दृष्टि से अतीव सतर्कता के साथ ही किये जाने चाहिये । जोड़ा ठीक हो तो ही उसकी सार्थकता है अन्यथा उससे लाभ से भी अधिक हानि की सम्भावना रहती है । भोजन पका देने या बच्चे पैदा करने का लाभ उतना महत्व का नहीं जितना कि प्राणों के प्रत्यावर्तन का । जिसका व्यक्तित्व जितना घटिया होगा गुण कर्म स्वभाव की दृष्टि से जिसका स्तर जितना नीचा है उसमें आन्तरिक क्षमता उतनी ही स्वल्प होगी । कई व्यक्ति शरीर से सुन्दर और पुष्ट दीखते हुए भी आन्तरिक दुर्बलताओं के कारण बहुत ही दीन-हीन होते हैं । इसके विपरीत शरीर से क्षीण दीखने वालों का प्राण बल भी आन्तरिक उत्कृष्टता के कारण बहुत प्रबल रहता है । यौन सम्पर्क से प्रत्यावर्तन शरीरों का नहीं प्राणों का होता है । शक्ति का सूक्ष्म स्वरूप प्राण है, शरीर या कलेवर नहीं । प्राण की पुष्टि परिपक्वता केवल उत्कृष्ट व्यक्तियों और श्रेष्ठ प्रतिभा सम्पन्नों में ही सम्भव है । ऐसे व्यक्ति अपनी उस विभूति को क्रीड़ा-कल्लोल में खर्च करके छूँछ न बन जायें और विश्व की महती सेवा कर सकने के पुण्य से वंचित न हो जायें इसलिए उन्हें अधिक सतर्कता और कठोरता के साथ ब्रह्मचर्य पालन करने के लिए प्रतिबन्धित किया गया है ।

काम-विकार आँधी ,तूफान की तरह आते हैं और बिना पात्र कुपात्र का भेद किये बादलों की तरह चाहे जहाँ बरस पड़ते हैं । यदि यह सम्पर्क वैध अथवा उपयुक्त नहीं है तो इससे बहुत प्रकार की विकृतियाँ उत्पन्न होंगी । विवाह हो या व्यभिचार प्राण शक्ति का विनियोग समान रूप से अपना वैज्ञानिक प्रभाव उत्पन्न करेगा । घटिया स्तरहीन प्राण और ओछे व्यक्तियों के साथ सम्पर्क बनाकर न पत्नी को लाभ मिलेगा और न प्रेयसी को । न पति का कल्याण है न प्रेमी का । यौन सम्पर्क एक प्रकार से अपनी शारीरिक, मानसिक और आत्मिक पूँजी का आत्म-समर्पण है । अविवेक पूर्वक चाहे जहाँ, चाहे जिसके साथ बिना उसकी आन्तरिक स्थिति को परखे, यदि शरीर आकर्षण अथवा इन्द्रिय प्रेरणा से प्रेरित होकर ये किये जायेंगे तो उसमें सबल पक्ष को बहुत तरह की बहुत गहरी क्षति उठानी पड़ेगी । तनिक भी क्रीड़ा उसे बहुत महँगी पड़ेगी ।

नर-नारी का समाज सम्पर्क यदि व्यभिचार तक बढ़ चले तो निसंदेह वह बहुत हानिकारक है, इससे मनोबल उन्नत न होगा । वह घाटे में रहेंगे प्रतिभाएँ कुंठित होती चली जायेंगी और उच्च व्यक्तित्वों के दुर्बल होने से समाज की भारी क्षति होगी । यों शरीर सम्पर्क की मर्यादा का व्यक्ति-क्रम भी कम हानिकारक नहीं है । सामान्य व्यक्तियों को भी बहुत दिन बाद यदा-कदा ही काम-सेवन की बात सोचने चाहिये, यदि वे आये दिन इसी मखौल में उलझे रहे और अपने ओजस को नदी-नालियों में बहाते रहे तो उन्हें शारीरिक रुग्णता और दुर्बलता का शिकार ही नहीं बनना पड़ेगा बल्कि मनोबल, आत्मबल, और प्राण शक्ति की पूँजी से भी हाथ धोना पड़ेगा । काम-सेवन में जिनकी अति प्रवृत्ति है वे अपनी ही पूँजी नहीं चुकाते वरन् साथी का भी सर्वनाश करते हैं । अपने समाज में नारी की शारीरिक और मानसिक दुर्गति का एक बहुत बड़ा कारण उनके पतियों द्वारा बरती जा रही अत्याचारी रीति-नीति है जिसके कारण उन्हें विवश होकर अपने अच्छे खासे स्वास्थ्य की बर्बादी सहन करनी पड़ती है । यदि संयम से गृहस्थ-जीवन चलाया गया होता तो न कोई नारी वन्ध्या होती, न किसी को प्रदर जैसे रोगों का शिकार बनना पड़ता । जितनी संतान भली प्रकार पालित नहीं की जा सकती उतनी पैदा करके गृहस्थ जीवन का उद्देश्य और आनन्द नष्ट कर लेना भी यौन-सम्पर्क की मर्यादाओं का अतिक्रमण ही है । ऐसे अविवेकी साथी को पाकर किस गृहस्थ को विवाह का आनन्द मिलेगा । यौन-सम्पर्क की जिसमें खुली छूट है उस विवाह के करने से पूर्व ही हजार बार सोचना चाहिए कि साथी का प्राण तत्व किस स्तर का है, उसकी विचारण भावना, गुण, कर्म, स्वभाव, चरित्र, मनोबल, आत्मबल जैसे उच्च तत्वों की स्थिति क्या है । यदि ऐसा नहीं ढूँढा गया और यों ही किसी नर तनुधारी से विवाह कर लिया गया तो उससे शरीर को क्षीण करने के अतिरिक्त और कुछ प्रयोजन सिद्ध न होगा ।

जननेन्द्रियों का सम्पर्क ही काम उल्लास नहीं वरन् उच्च भावना सम्पन्न व्यक्तित्वों का परस्पर आन्तरिक आदान-प्रदान ही वह आनन्द प्रदान कर सकता है जिसे भौतिक जगत् का सर्वोपरि सुख माना गया है और जिसकी तुलना ब्रह्मानन्द से की गयी है । प्रकृति और पुरुष का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

संयोग ही इस सृष्टि में आनन्द और उल्लास की तरंगें प्रवाहित कर रहा है । केवल उच्चस्तरीय भावनाओं से सम्पन्न नर–नारी ही एकान्त–मिलन का वह आनन्द ले सकते हैं जो शक्ति को किसी तरह नष्ट नहीं करता वरन् असंख्य गुनी बढ़ा देता है । काम–सेवन आमतौर से हानिकारक ही माना गया है लेकिन उन अपवादों को छोड़कर लाभदायक शक्ति संवर्धन और उत्कर्ष में सहायक भी सिद्ध हो सकता है । नहीं तो उन आत्माओं का शरीरिक ही नहीं आत्मिक मिलन भी संभव होता है । लेकिन ऐसा होता कहाँ है ? ऐसे जोड़े मिलते कहाँ हैं ? जब तब वैसी स्थिति प्राप्त न हो तब केवल इन्द्रिय सुख के लिये काम–सेवन एक क्षणिक आवेश और हानिकारक कार्य ही सिद्ध होता है । इसलिये यौन–सम्पर्क में बहुत ही सावधानी बरतने और जहाँ तक सम्भव हो ब्रह्मचर्य पालन करने की मर्यादा नियन्त्रित की गयी है । वही सर्वोपयोगी भी है ।

काम को मरण मात्र नहीं अमृत बनायें

शरीर शास्त्री और मनोविज्ञान वेत्ता यह बताते हैं कि नर–नर का सानिध्य, नारी–नारी का सान्निध्य मानवीय प्रसुप्त शक्तियों के विकास की दृष्टि से इतना उपयोगी नहीं जितना भिन्न वर्ग का सान्निध्य । विवाहों के पीछे सहचरत्व की भावना ही प्रधान रूप से उपयोगी है, सच्चे सखा सहचर की दृष्टि से परस्पर हंसते, खेलते जीवन बिताने वाले पति–पत्नी यदि आजीवन काम सेवन न करें तो भी एक-दूसरे की मानसिक एवं आत्मिक अपूर्णता को बहुत हद तक पूरा कर सकते हैं । मनुष्य में न जाने क्या ऐसी रहस्यमय अपूर्णता है कि वह भिन्न वर्ग के सहचरण में अकारण ही बड़ी तृप्ति और शान्ति अनुभव करता है । अविवाहित जीवन में सब प्रकार की सुविधाएँ होते हुए भी उद्विग्नता, अतृप्ति और अशांति बनी रहती है । विवाह के बाद एक निश्चिन्तता सी अनुभव होती है । साथी की प्रगाढ़ मैत्री का विश्वास करके व्यक्ति अपनी समर्थता दूनी ही नहीं, दस गुनी अनुभव करता है । एकाकी जीवन में शून्यता थी उसकी पूर्ति तब होती है जब यह विश्वास बन जाता है कि हम अकेले नहीं दूसरे साथी को लेकर चल रहे हैं, जो हर मुसीबत में सहायता करेगा और प्रगति के हर स्वप्न में रंग भरेगा । यह विश्वास मन में उतरते ही मनोबल चौगुना बढ़ जाता है और उत्साह भरी कर्मठता और आशा भरी चमक से जीवन–क्रम में एक अभिनव उल्लास दृष्टिगोचर होता है । विवाह का मूल लाभ भिन्न वर्ग के सान्निध्य से होने वाले उभयपक्षी सूक्ष्म शक्ति प्रक्रिया का अति महत्वपूर्ण प्रत्यावर्तन तो है ही, एक मनोवैज्ञानिक लाभ अन्तरंग का एकाकीपन दूर करना और समर्थता को द्विगुणित हुई अनुभव करना भी उज्ज्वल भविष्य की सम्भावना का आशापूर्ण भविष्य की दृष्टि से बहुत उपयोगी है ।

काम–सेवन विवाहित जीवन में आवश्यकतानुसार मर्यादाओं के अन्तर्गत उपयुक्त होता रहे तो उसमें कोई बड़ा अनर्थ नहीं है । लेकिन उसे आवश्यक या अनिवार्य न माना जाय । मोटे तौर से पति–पत्नी की परस्पर मनःस्थिति वैसी ही होनी चाहिए जैसे दो पुरुष या दो नारियों की सघन मित्रता होने पर होती है । सखा, साथी, मित्र, स्नेही का रिश्ता पर्याप्त है, कामुक और कामिनी को दृष्टि में रखकर किये गये विवाह घृणित हैं । रूप, रंग, शोभा, सौन्दर्य के आधार पर उत्पन्न हुआ आकर्षण एक आवेश मात्र है । उस आधार पर जो जोड़े बनेंगे वे सफल न हो सकेंगे । रूप, यौवन की सारी चमक एक छोटा सा रोग बात की बात में नष्ट करके रख सकता है । फिर कोई दूसरा अधिक सुन्दर आकर्षण सामने आ जाय तो मन उधर ढुलक सकता है । रूपवान में दोष, दुर्गुण भरे पड़े हों तो भी निर्वाह देर तक नहीं हो सकेगा । शारीरिक आकर्षण की खोज आज की विवाह सफलता का अंग बनती जा रही है । रूपवान लड़के लड़कियों की ही माँग है । कुरूपों की बाजार दर दिन–दिन गिरती जाती है । यह प्रवृत्ति बहुत ही विघातक है । चमड़ी की चमक ही यदि अच्छे साथी की कसौटी बन जायेगी तो फिर आन्तरिक स्तर की उत्कृष्टता का क्या मूल्य रह जायेगा ? फिर भावनाओं की, सद्गुणों की, स्नेह सौजन्य की कीमत कौन आँकेगा ?

चमड़ी का रंग या नखशिख की बनावट को शोभा, सौन्दर्य की दृष्टि से सराहा जा सकता है । नृत्य अभिनय में उसको प्रमुखता मिल सकती है । नयनाभिराम मनमोहक आकर्षण भी उसमें देखा जा सकता है । ईश्वर की कृति की इस विभूति से प्रसन्न हुआ जा सकता है । दाम्पत्य–जीवन में उसकी कोई बहुत उपयोगिता नहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है। मिलन चमड़ी का –आँख, नाक का नहीं वरन् अन्तरंग का होता है और उसकी उत्कृष्टता,निकृष्टता चेहरे या अवयवों की बनावट से तनिक भी सम्बन्ध नहीं रखती । हो सकता है कोई काला कुरूप व्यक्ति योगी अष्टावक्र नीतिज्ञ चाणक्य अथवा पांचाली द्रौपदी की तरह उच्च मनःस्थिति धारण किये हो । रूपवती नर्तकियाँ अभिनेत्रियाँ नट–नायक कोई उच्च भावनाशील ही थोड़े होते हैं । बन्दीगृह में क्रूर कर्म करने के दण्ड में अगणित नर–नारी आते रहते हैं, उनके कुकर्मों का विवरण सुनकर रोमांच खड़े हो जाते हैं । रूप रंग के आवरण में उनके भीतर प्रेत पिशाच का वीभत्स नृत्य देखकर दिल दहल जाता है । विवाह का वास्तविक आनन्द और लाभ जिन्हें लेना हो उन्हें साथी का चुनाव करने में रंग रूप की बात उठाकर ताक में रख देनी चाहिये । केवल सद्भावना निष्ठा सौजन्य, व्यवस्था उदारता, दूरदर्शिता, उत्साही और हँसमुख प्रकृति जैसे सद्गुणों पर ही ध्यान देना चाहिये । सज्जनों के बीच ही चिर–स्थायी मैत्री का निर्वाह होता है । दुर्जन तो क्षण भर में मित्र बनते हैं और पल भर में शत्रु बनते देर नहीं लगती । अभी बहकावे की मीठी–मीठी बात कर रहे थे और चापलूसी की अति कर रहे थे, अभी तनिक सी बात पर खून के प्यासे बन सकते हैं । प्रेम के जाल में ऐसे ही लोग दूसरों को फँसाते फिरते बहुत देखे जाते हैं । इसलिये विवाह की सोचने से पहले साथी के चुनाव की कसौटी निश्चित करनी चाहिए और वह यह होनी चाहिए कि रंग रूप कैसा ही क्यों न हो, साथी की आन्तरिक स्थिति में स्नेह सौजन्य का समुचित पुट होना चाहिए । जिन्हें ऐसा साथी मिल जाय समझना चाहिए कि उनका विवाह करना सार्थक हो गया ।

काम–सेवन के सम्बन्ध में उपेक्षा वृत्ति बरती जानी चाहिए । इस प्रयोग का स्वास्थ्य पर असर पड़ता है। कम ही लोग ऐसे होते हैं जिनके पास अपनी शारीरिक, मानसिक आवश्यकता की पूर्ति के अतिरिक्त इतना ओजस् संचित रहे जिसे क्रीड़ा कल्लोल में व्यय कर सके। आमतौर से वर्तमान परिस्थितियों में लोग इतनी ही शक्ति उपार्जित कर पाते हैं जिसके आधार पर किसी प्रकार काम चलता रहे और गाड़ी लुढ़कती रहे । इस स्वल्प उत्पादन में से यौन सम्पर्क में अपव्यय किया जायेगा तो उसका सीधा प्रभाव समग्र स्वास्थ्य और जीवन यात्रा पर पड़ेगा। विषयी मनुष्य अपनी श्रमशीलता, तेजस्विता, स्फूर्ति निरोगता, प्रतिभा, स्मरणशक्ति, साहसिकता, स्थिरता, सन्तुलन आदि सभी शारीरिक मानसिक विशेषतायें खोते चले जाते हैं । यह अपव्यय जितना बढता है उतना ही खोखलापन बढ़ता चला जाता है। आसक्ति का शिकंजा अपने गले में कसा जाना हर कामुक व्यक्ति निरन्तर अनुभव करता रहा है । यह एक प्रकार से स्वेच्छापूर्वक हँसते–खेलने की जाने वाली मन्दगति से की जाने वाली आत्महत्या ही है ।

प्रजनन जब उचित और आवश्यक हो तो उचित मर्यादाओं के अन्तर्गत काम–सेवन में ढील छोड़ी जा सकती है । यदि अपनी या साथी की तन्दुरुस्ती या मनःस्थिति ठीक न हो तो इस प्रकार के छेड़छाड़ की कोई तुक नहीं रह जाती । पति–पत्नी के बीच इस प्रकार का धैर्य, संतुलन रहना ही चाहिये कि जब तक अति आवश्यक न हो, दोनों की पूर्ण सहमति न हो तब तक इस प्रसंग को उपेक्षित ही किया जाय । साथी की अनिच्छा, रहने पर उसे विवश करना एक प्रकार से बलात्कार जैसा अपराध ही है भले ही वह विवाहित साथी के साथ किया गया हो । कानून उसे भले ही दण्डनीय न माने पर नैतिक दृष्टि से उसे निर्लज्ज बलात्कार ही कहा जायेगा । ऐसा प्रसंग जिससे साथी का मन रोष या क्षोभ से भर जाय निश्चित रूप से कामुक पक्ष के लिए हर दृष्टि से हानिकारक सिद्ध होगा । क्षणिक उद्वेग शान्त करके जितनी प्रसन्नता पाई गई थी, कालान्तर में उसकी प्रतिक्रिया अनेक गुनी अप्रसन्नता की परिस्थिति लेकर सामने आवेगी । अस्तु, हर समझदार पति–पत्नी को आदि से अन्त तक ऐसी मनःस्थिति विनिर्मित करनी चाहिए कि कोई किसी को कठिनाई, क्षति या असमंजस में न डाले । दाम्पत्य जीवन के बीच ब्रह्मचर्य की निष्ठा का जितना प्रभाव होगा उतना ही पारस्परिक सद्भाव प्रगाढ़ होता जायेगा और वह लाभ मिलेगा जिसे प्राप्त करना विवाह का मूल प्रयोजन है ।

जननेन्द्रिय का अमर्यादित उपयोग यौनरोग उत्पन्न करता है । विशेषतया नारी को तो इससे अत्यधिक हानि उठानी पड़ती है । औसत नारी महीने में एकाध बार से अधिक काम–क्रीड़ा का दबाव सहन नहीं सकती,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रजनन की दृष्टि से हर बच्चे के बीच कम से कम पाँच वर्ष का अन्तर होना चाहिए। जल्दी-जल्दी बच्चे उत्पन्न करने और काम-क्रीड़ा का अधिक दबाव पड़ने पर नारी अपना शारीरिक ही नहीं मानसिक स्वास्थ्य भी खो बैठती है। दैनिक काम-क्रीड़ा का स्वरूप हँसी, विनोद, मनोरंजन, चुहल, छेड़-छाड़ तक सीमित रहे तभी ठीक है। हर्षोल्लास बढ़ाने वाले छुटपुट क्रिया-कलाप चलते रहें तो चित्त प्रसन्न रहता है। परस्पर घनिष्ठता बढ़ती है और सान्निध्य का मनोवैज्ञानिक ही नहीं काम प्रयोजन भी पूरा हो जाता है। यौन-सम्पर्क को यदा कदा के लिए ही सीमित रखना चाहिए। आये दिन की इस विडम्बना में फँस कर मनुष्य अपना स्वास्थ्य ही नष्ट नहीं करता, प्रतिक्रिया के आनन्द से भी वंचित हो जाता है। कामुक व्यक्ति बहुत घटिया और उथला आनन्द ले पाते हैं। उसमें जो ऊँचे स्तर का उल्लास है उसे प्राप्त करने के लिए देर तक की संग्रहीत शक्ति होनी चाहिए। जिन्हें यौन रोगों से बचना हो उन्हें इस प्रकार की सतर्कता रखनी ही चाहिए।

इस संदर्भ में यह समझ ही लिया जाय कि जननेन्द्रिय का सीधा संबंध मस्तिष्क से है। वहाँ जो कुछ गड़बड़ होगी उसका सीधा प्रभाव मस्तिष्क पर पड़ेगा। मनोविज्ञान वेत्ताओं के अनुसार उचित समय पर उचित काम-सेवन को अवसर न मिलने से जहाँ अपस्मार, मूर्छा, हिस्टीरिया, अनिन्द्रा चिड़चिड़ापन, स्मरण शक्ति की कमी, सिर दर्द, हृदय रोग, नाड़ी विकृति आदि रोग उत्पन्न होते हैं वहाँ अति काम-सेवन भी ऐसे ही उद्वेग उत्पन्न करता है। लम्पटों का शरीर जितना क्षीण होता है मन उससे भी अधिक विक्षिप्त, असंतुलित रहने लगता है। अनेकों मानसिक रोगों से त्रस्त उन्हें पाया जायेगा जिन्होंने काम-सेवन की दिशा में अति बरती। इस प्रकार का दुरुपयोग यों दोनों के लिए ही हानिकारक है लेकिन नारी को तो उसकी क्षति असाधारण रूप से उठानी पड़ती है। अतएव विवाहित जीवन को काम-क्रीड़ा के उच्छृंखल उपयोग की खुली छूट नहीं मान लेनी चाहिए और उस संदर्भ में लगभग वैसी ही सतर्कता उपेक्षा बरतनी चाहिए जैसी कि अविवाहित जीवन में बरती जाती है। इस शक्ति संग्रह का सर्वतोमुखी प्रतिभा और व्यक्तित्व के विकास पर सीधा असर पड़ता है। सुहागिनी की अपेक्षा विधवायें अथवा कुमारियाँ अधिक तेज तर्रार और स्फूर्तिवान पाई जाती हैं। इसका कारण उनकी अन्तःशक्ति का अनावश्यक क्षरण न होना ही प्रधान कारण है। इस लाभ से विवाहितों को भी वंचित नहीं होना चाहिए।

काम-सेवन का वैज्ञानिक स्वरूप यह है कि शरीरों की विद्युत्-शक्ति का इस प्रयोग द्वारा अति द्रुति गति से प्रत्यावर्तन होता है। मानवीय विद्युत् की शक्ति शरीर में भी पाई जाती है लेकिन उसका भण्डार-चेतन संस्थान में ही देखा पाया जाता है। यौन संस्थान की नींव में यह बिजली अकूत मात्रा में भरी पड़ी है। जैसे ही जननेन्द्रिय निकट आती है वैसे ही वह प्रसुप्त शक्ति सजग और प्रबल हो उठती है और तत्काल दोनों पक्ष अपनी विद्युत्-शक्ति को विनिमय करने लग जाते हैं। ऋण विद्युत् धारा धन की ओर और धन धारा ऋण की ओर दोड़ने लग जाती है। नर-नारी को और नारी-नर को अपना शक्ति प्रवाह प्रस्तुत करते हैं। इस सम्मिलन एवं प्रत्यावर्तन का ही वह परिणाम है जो काम-सेवन के आनन्द के रूप में उस क्षण अनुभव किया जाता है। यह विशुद्ध रूप से प्राण और रयि शक्ति के-अग्नि और सोम के परस्पर प्रत्यावर्तन की अनुभूति है। यह प्रयोग अति महत्वपूर्ण है। उससे जहाँ व्यक्तित्वों का विकास हो सकता है वहाँ विनाश भी संभव है। प्रबल विद्युत् धारा वाला पक्ष निबल पक्ष को अपना अनुदान देकर उसे ऊँचा उठाने और परिपुष्ट बनाने में सहायता कर सकता है लेकिन जिसके शरीर में क्षीण प्राण हैं वह साथी को क्षति ही पहुँचा सकता है। इसका परिणाम यह भी हो सकता है कि दोनों शारीरिक दृष्टि से न सही प्राण-शक्ति की दृष्टि से समान स्तर पर आ जावें।

वेश्या शरीर का क्षरण करते रहने पर भी अपना रूप सौन्दर्य बनाये रखती हैं। इसके कारण शरीर शास्त्री नहीं बता सकते। इसका उत्तर प्राण विद्या के ज्ञाताओं के पास है। वे मनस्वी कामुकों की शक्ति चूसती रहती है और जिस स्थिति में सामान्य गृहस्थ नारी मृत्यु के मुख में जा सकती थी उस स्थिति में भी अपने चेहरे पर चमक और शरीर में स्फूर्ति बनाये रहती हैं। यदि उनके प्रेमी घटिया स्तर के रोगी या मूर्ख स्तर के हों तो फिर उनका स्वास्थ्य और तेज कभी भी स्थिर नहीं रहेगा। यों शरीर की दृष्टि से युवाकाल में नर-नारियों में विजली अधिक रहती है। इसी से उनका आकर्षण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

युवा वर्ग के साथ काम–सेवन की लालसा संजोये रहता है। शरीर में विद्युत्–शक्ति है तो पर थोड़ी और घटिया स्तर की ही पाई जाती है। असली शक्ति भण्डार मस्तिष्क और हृदय में भरा रहता है। स्वस्थ और सुन्दर व्यक्ति भी यदि मनोबल की दृष्टि से घटिया है तो उसे इस सन्दर्भ में अशक्त ही माना जायेगा। कुरूप और ढलती आयु का व्यक्ति भी उसके आन्तरिक स्तर के अनुरूप प्रबल प्राण रह सकता है। असलियत यह है कि शरीर की स्थिति से प्राण क्षमता का संबंध बहुत ही कम है किसी भी आयु में मनःस्थिति के अनुरूप प्राण की प्रबलता या न्यूनता हो सकती है और उसकी लाभ–हानि साथी को भोगना पड़ सकती है।

यो ब्रह्मचर्य सभी के लिए उचित है लेकिन उन प्राण सम्पन्न उच्च व्यक्तित्वों के लिए तो बहुत ही आवश्यक है। वे इस प्रकार का व्यतिक्रम करके अपनी प्रगति को ही रोक देंगे। साथी को उतना लाभ न मिलेगा जितनी स्वयं क्षति उठा लेंगे। इसलिये ब्रह्मचर्य की महत्ता असंदिग्ध है। प्राण को संचित करते रहा जाय और यदा–कदा उसका उपयोग काम–क्रीड़ा में कर लिया जाय तो साथी की सहायता की दृष्टि से भी समर्थ पक्ष की यही बुद्धिमत्ता होगी। कामुक व्यक्ति बाहर से ही चमक–दमक के भले दीखें भीतर से खोखले होते हैं और वे जिससे भी सम्पर्क बनाते हैं उसी की शक्ति चूसने लगते हैं। लम्पट व्यक्ति के साथ दाम्पत्य जीवन बना कर उसका साथी शारीरिक और मानसिक क्षति ही उठा सकता है। क्षीण प्राण वाला व्यक्ति समर्थ पक्ष की कुछ सहायता नहीं कर सकता है। ब्रह्मचारी और ब्रह्मचारिणी ही अपनी विशेष विद्युत् धाराओं से एक-दूसरे को लाभान्वित कर सकते हैं। प्रशंसनीय केवल इसी स्तर का काम–सेवन कहा जा सकता है जिससे प्रबल शक्ति प्रवाह का लाभ दोनों पक्ष अपनी–अपनी आवश्यकता की पूर्ति और अतृप्ति निवारण के लिए कर सकें।

संतान उत्पादन के सत्परिणाम संयम शीलता पर निर्भर हैं। कामुकता की दशा में अति करने वाले दम्पत्ति कुछ ही दिनो में अपनी जननेन्द्रियों की मूल सत्ता खो बैठते हैं। ऐसे पुरुष को नपुंसक और नारी का बंध्या होते देखा जाता है। गर्भ रहे भी तो गर्भपात होने, दुर्बल या मृत सन्तान होने का खतरा बना रहता है। ऐसे माता-पिता मूर्ख, दुर्गुणी, रोगी, अविकसित सन्तान ही उत्पन्न कर सकते हैं। समर्थ सन्तान के लिए जिसे परिपक्व एवं शुक्र की आवश्यकता है उसका निर्माण ब्रह्मचारी जीवन से ही संभव है, पुष्ट शरीर वाले युवक-युवती मिलकर पुष्ट शरीर वाले बालक को तो जन्म दे सकते हैं लेकिन उसकी मनःशक्ति, बुद्धिमत्ता, एवं तेजस्विता अपूर्ण ही रह जायेगी। आन्तरिक समस्त विशेषतायें और विभूतियाँ प्राण–शक्ति से सम्बन्धित हैं। प्राण का परिपाक ब्रह्मचर्य ही कर सकता है। इसलिए जिन्हें आन्तरिक दृष्टि से मेंधावी, प्रतिभावान और दूरदर्शी सन्तान अपेक्षित हो उन्हें अपनी अन्तःक्षमता की सुरक्षा एव परिपुष्टि का ध्यान रखना चाहिये। यह उपलब्धि अधिक संयम से ही प्राप्त कर सकना सम्भव है। इसलिए गृहस्थ रहते हुए भी ब्रह्मचारी की स्थिति बनाये रहकर अपना–अपने साथी का और भावी सन्तान का भविष्य उज्जवल बनाने की बात सोचनी चाहिये। काम–सेवन क्षुद्र मनोरंजन के लिए इन्द्रिय तृप्ति के लिए, नहीं किया जाना चाहिए उसका सदुपयोग तो प्राण प्रत्यातर्वन द्वारा एक-दूसरे के अभावों को पूर्ण करने में ही किया जाना चाहिये। यह प्रयोजन केवल प्राणवान और प्रबुद्ध पति–पत्नी मिलकर ही कर सकते हैं। अपने देश और समाज और वंश का मुख उज्जवल कर सकने वाली सन्तान उत्पन्न करना हर किसी के वश की बात नहीं है। इसके लिए इन्द्रिय संयम की साधना करनी पड़ती है और प्राण को परिपुष्ट करने वाली सत्प्रवृत्तियों से भरा पूरा व्यक्तित्व बनाना पड़ता है। वस्तुतः सुयोग्य सन्तानोत्पादन भी एक साधना है जिसके लिए संयमी ही नहीं मनस्वी भी बनना पड़ता है।

दो वस्तुयें मिलने से तीसरी बनने की प्रक्रिया 'रसायन' कहलाती है। केमिस्ट्री इस विज्ञान का नाम है। रज और वीर्य मिलने से भ्रूण की उत्पत्ति होती है और नौ महीने की अवधि पूरी करके भ्रूण बालक के रूप में प्रसव होता है। यह स्थूल गर्भ धारण या प्रजनन हुआ। इसके अतिरिक्त भी एक प्राण प्रत्यावर्तन होता है जिसे अनेक अवसरों पर, अनेक रूपों में देखा जा सकता है। शिष्य के प्राण में गुरु अपना प्राण प्रतिष्ठापित करके उसकी प्रतिभा, मेंधा और विद्या को प्रखर बनाता है। यह कार्य स्कूली मास्टर नहीं कर सकते, वे तो बेचारे शिष्य को मात्र जानकारी दे सकने वाले

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पाठ भर पढ़ा सकते हैं । वह विद्या जो गुरु के समान ही प्रखर बना दे केवल तपस्वी गुरूओं द्वारा ही उपलब्ध हो सकती है । योगी अपने साधकों को शक्तिपात करते हैं, वे अपनी तपः शक्ति शिष्य को देकर बात की बात में उच्च भूमिका तक पहुँचा देते हैं । मरणासन्न रोगी को रक्तदान देकर पुनर्जीवन प्रदान किया जा सकता है, इसी प्रकार दुर्बल प्राण को सबल प्राण बनाने का कार्य शक्ति प्रत्यावर्तन जैसी प्रक्रिया से सम्पन्न करती है । काम-सेवन का ऊँचा स्तर यही है । वह बच्चे पैदा करने के लिए नहीं दो, प्राणों के समन्वय से एक नवीन प्रतिभा विकसित करने के लिए किया जा सकता है । सतोगुणी और सौम्य दम्पत्ति एक प्राण साधना के रूप में यदि काम-सेवन करते भी हैं, तो इसका प्रयोजन एक अद्‌भुत प्रतिभा को जन्म देना होता है जो आवश्यकतानुसार एक या दो शरीरों से पैदा की जा सकती है । यह उच्चस्तरीय शिशु जन्म है । ऐसा काम-सेवन अभिशाप न होकर वरदान भी हो सकता है । विष को भी यदि संशोधन करके भेषज बना लिया जाय तो वह विघातक न रहकर संजीवन मूरि बन सकता है । काम-प्रक्रिया को विष बनाकर अपने मरण का साज न संजोयें बल्कि उसे अमृत बनाकर दो व्यक्तियों के असाधारण उत्कर्ष एवं विश्व-कल्याण के कर सकने में समर्थ एवं प्राण प्रयोजन सिद्ध करे यह पूर्णतया अपने बस की बात है और अपनी बुद्धिमत्ता, दूरदर्शिता पर निर्भर है ।

काम प्रवृत्तियों का नियंत्रण परिष्कृत अन्तःचेतना से

भारतीय तत्व वेत्ताओं ने कामोत्तेजना को मनोज-मनसिज आदि नाम देकर बहुत पहले ही यह स्वीकार कर लिया था कि यह उद्वेग शारीरिक हलचल नहीं, मानसिक उभार है । यदि मन पर नियन्त्रण किया जा सके, उसे ईश्वर भक्ति, कला, साधना एवं आदर्श, निष्ठा में नियोजित किया जा सके तो युवावस्था में भी शरीर और मन से ब्रह्मचारी रहा जा सकता है । इसके विपरीत यदि शारीरिक नियन्त्रण तो निभाया जाय पर मानसिक उत्तेजना उभरती रहे तो ब्रह्मचर्य का वह लाभ न मिल सकेगा जैसा कि साधना ग्रन्थों में उसका माहात्म्य बताया गया है । दृष्टिकोण में परिवर्तन ही इन्द्रिय निग्रह का प्रधान आधार है । आहार-विहार के संयम से तो उसमें थोड़ी सी सहायता भर मिलती है ।

आमतौर से यह समझा जाता है कि सुन्दरता या परिपुष्ट स्थिति के नर-नारी अधिक काम तृप्ति करते होंगे एवं अच्छा प्रजनन करने में सफल रहते होंगे लेकिन यह बात वैज्ञानिक तथ्यों के विपरीत है । मनुष्य की चेतनात्मक विद्युत् शक्ति ही कामोत्तेजना उत्पन्न करती है और उसी की प्रबलता से यौन-तृप्ति एवं उत्कृष्ट प्रजनन का सम्बन्ध रहता है । यह भ्रम अब दूर होता चला जा रहा है कि शरीर गठन का कामोल्लास से सीधा सम्बन्ध है । वस्तुतः कामोत्तेजना विशुद्ध मानसिक प्रक्रिया है । वह जिस आयु में भी, जिस मात्रा में उल्लसित रहेगी उसी स्थिति में कामोद्वेग उठते रहेंगे और तृप्ति तथा प्रजनन की सफलता भी उसी अनुपात से सामने आती रहेगी ।

भ्रूभध्य भाग में अवस्थित पिट्यूटरी ग्रन्थि एक विशेष प्रकार के हॉर्मोन उत्पन्न करती है, जो कामोत्तेजना की वृद्धि तथा यौन अवयवों को परिपुष्ट करते हैं । विशेषज्ञ हर्मन्शन का कथन है-"कामुकता को भावुकता का ऐसा आवेश कह सकते हैं जिसे प्रजनन हॉर्मोनों की प्रबलता उत्पन्न करती है ।" उसी आधार पर लोगों में न्यूनाधिक कामोत्तेजना पाई जाती है । हो सकता है कि कोई पूर्ण स्वस्थ पूर्ण नपुंसक भी हो, इसके विपरीत दुर्बल शरीर में वही आवेश अनियन्त्रित स्थिति में उभर रहा हो ।

शिकागो मनोविश्लेषण संस्थान के डा. थेरेसी वेनेडेव तथा जीवरसायन शास्त्री डा. रूवेन स्टीन ने मासिक धर्म का जल्दी तथा देरी से, न्यूनता तथा अधिकता से होना हॉर्मोन स्रावों के साथ अति घनिष्ठता के साथ जुड़ा हुआ बताया है । रजोदर्शन के कुछ पहले से लेकर कुछ दिन पश्चात तक नारी प्रवृत्ति में आमतौर से भावुकता और उत्तेजना बढ़ जाती है । इन दिनों वे अधिक चंचल होती हैं । या तो यौन उत्तेजना की बात सोचती हैं या फिर खीज, झुंझलाहट अथवा आक्रोश प्रकट करती हैं । गृह कलह प्रायः इन्हीं दिनों अधिक होता है । महिलाओं द्वारा किये जाने वाले अपराधों में तीन-चौथाई इन्हीं दिनों होते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मेंडिकल न्यूज ट्रिब्यून नामक लन्दन से प्रकाशित होने वाले साप्ताहि पत्र में डा० एन० एन० ज्यॉफरी का एक अन्वेषण लेख छपा है जिसमें उन्होंने प्रकाश और उष्णता के प्रभाव से जल्दी यौवन उभर आने का उल्लेख किया है। कई जीवों को गरम और प्रकाश के वातावरण में रखने पर उनमें युवावस्था जल्दी उभरी।

ब्रिटेन के एक-दूसरे साप्ताहिक पत्र 'लान्सेट' में यह विवरण प्रकाशित हुआ है कि इङ्गलैण्ड का तापमान क्रमशः बढ़ रहा है। जब वहाँ पहले जितनी ठण्ड नहीं पड़ती। फलस्वरूप लड़कियाँ जल्दी रजस्वला होने लगी हैं। औसत लड़की हर १० वर्ष में चार मास पहले रजस्वला होने लगी हैं। इसी प्रकार सन्तानोत्पादन समर्थता भी पहले की अपेक्षा अब कम आयु में परिपुष्ट होने लगी है।

आहार-विहार और वातारवण की गर्मी बढ़ जाने से नर-नारियों में काम प्रवृत्ति तीव्र होने की मान्यता पुरानी हो गई। अब शरीर शास्त्री इस नये निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि उत्तेजानात्मक चिंतन से जो मस्तिष्कीय विद्युत् प्रवाह उमड़ते हैं वे ही यौन लिप्सा में मनुष्य को बलात् प्रवृत्त करते हैं। यह विद्युत् धारा घटाई भी जा सकती है और बढ़ाई भी। तदनुसार संयम के लिए पृष्ठभूमि अपने ही प्रयास से बन सकती है। इनके लिए सोचने का तरीका बदलने भर से काम नहीं चलता वरन् हॉर्मोन प्रवाह की रोकथाम कर सकने वाली अन्तःचेतना का बलिष्ठ होना भी आवश्यक है जो योगाभ्यास जैसे उपायों से ही सम्भव है।

मनोवज्ञिान क्रुकशैंक का कथन है-काम तृप्ति में इन्द्रिय समाधान ही नहीं आवेश की तृप्ति भी आवश्यक होती है और वह चेतना में भावुकता भरी उमगें उठने से ही सम्भव है। यह उमगें शृंगार रस का वातावरण बनाने से भी उठती हैं किन्तु मुख्यतया वे उस अन्तः चेतना पर निर्भर हैं, जिन्हें हॉर्मोन स्रावों का जन्मदाता कहा जा सकता है।

पुत्र या पुत्री के उत्पन्न होने में भी उस आवेश विद्युत् का ही प्रधान हाथ रहता है। सामान्यता शुक्र कीटाणुओं और रज अण्ड की स्थिति को गर्भधारण के लिए उत्तरदायी माना जाता है और यह कहा जाता है कि पुत्र जन्म के लिए और कन्या जन्म के लिए अलग-अलग शुक्राणुओं का हाथ रहता है।

शरीर शास्त्र के विद्यार्थी जानते हैं कि नर के शुक्राणुओं में मादा और नर जाति के जीवाणु पाये जाते हैं जबकि नारी रज में केवल एक ही प्रकार के-नारी जाति के जीवाणु रहते हैं। इन दोनों के मिलने से गर्भ की स्थापना होती है। इस मिलन में यदि नर शुक्राणु का नारी बीज सफल हुआ तो लड़की की और यदि उसका नर बीज सफल हुआ तो लड़के की उत्पत्ति होती है। मोटा सिद्धान्त सभी प्राणियों में यही लागू होता हैं। इसलिये कन्या या पुत्र की उत्पत्ति के लिए नर शरीर को ही उत्तरदायी माना जाता है। इन संदर्भ में नारी सर्वथा निष्पक्ष निर्दोष है।

शुक्र में उभयपक्षी जीवाणुओं में से एक वर्ग को यदि निष्क्रिय बनाया जा सके तो संतान अभीष्ट लिंग की उत्पन्न हो सकती है। इस सिद्धान्त को ध्यान में रखकर ऐसी औषधियों की खोज बहुत दिन तक चली जिनके आधार पर एक पक्ष के जीवाणु मूर्छित बनाये जा सकें। इन प्रयोगों में सफलता न मिलने से उन्हें बन्द कर दिया गया। जर्मन वैज्ञानिकों ने रतिक्रिया के समय प्रयुक्त हो सकने वाले ऐसे रसायन तैयार किये जो एक वर्ग के जीवाणुओं को मूर्छित कर सकें, लेकिन यह प्रयोग भी असफल रहा।

रूसी महिला वैज्ञानिक बी० एन० श्रीडर ने अपने साथी के कोलस्तोव की सहायता से यह अन्वेषण किया कि वीर्य बीज बिजली की ऋण और धन धाराओं से प्रभावित होते हैं। शरीर में यदि एक वर्ग को ही बिजली कहें तो एक वर्ग के शुक्रबीज विशेष रूप से उत्तेजित होंगे और दूसरे वर्ग के मन्द स्थिति में पड़े रहेंगे। धन विद्युत् नर बीजों को और ऋण धारा नारी बीजों को उत्तेजित करती है। उन्होंने 'एलेक्ट्रोफोरेसिस' की सहायता से बीजाणुओं का पृथक्करण करके खरगोशों से सन्तानोत्पादन कराया, परिणाम आशाजनक रहा।

इंग्लैण्ड के शैरीलेवीन और अमेंरिका के मेंनुयल गेडिन ने भी इस दिशा में प्रयोग किये। वे पूर्ण सफलता तक तो नहीं पहुँचे लेकिन यह प्रतिपादन पूर्ण विश्वास के साथ व्यक्त कर सके कि निकट भविष्य में अभीष्ट लिंग की सन्तान उत्पन्न कर सकना सम्भव हो जाय, ऐसे आधार हाथ लग गये हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

उपर्युक्त प्रतिपादन यह सिद्ध करते हैं कि शुक्राणुओं में से किस वर्ग के कीटक प्रबल होंगे और किस लिंग का बालक जन्म देंगें इसकी बागडोर उन कीटाणुओं की संरचना में रहने वाली रासायनिक विशेषता पर निर्भर नहीं है वरन् उस विद्युत् प्रवाह पर निर्भर है जो अमुक वर्ग के कीटाणुओं को उत्तेजित करती है । अब औषधि सेवन करा के नंपुसकों को पौरुषवान बनाने की बात व्यर्थ मानी जाती है, इसी प्रकार उन औषधियों को झुठला दिया गया है जो पुत्र या कन्या उत्पन्न कराने का दावा करती हैं । आधुनिकतम मान्यता यह है कि मानव शरीर के अन्तःक्षेत्र में प्रवाहित रहने वाली विद्युत् शक्ति का स्तर ही नर के शुक्र एवं नारी के रज को न केवल गर्भाधान की स्थिति में लाता है वरन् उसी पर पुत्र या कन्या का जन्म भी निर्भर है ।

कोलम्बिया विश्वविद्यालय के प्रसूति शास्त्र के अध्यापक डा. लेड्रम शेटल्स ने एक हजार मनुष्यों के शुक्राणु संग्रह करके उन पर विभिन्न प्रकार के परीक्षण किये । वे भी इसी निष्कर्ष पर पहुँचे कि क्रोमोसोम कणों को विद्युत् धारा द्वारा इस स्तर तक प्रभावित किया जा सकता है कि उनसे इच्छित लिंग की सन्तान पैदा कराई जा सके ।

फिलाडेल्फिया मेंडीकल सेन्टर ने यह निष्कर्ष निकाला है कि अधिक मात्रा में और अधिक समर्थ जीवाणुओं की उत्पत्ति कामोत्तेजना की मन्द अथवा तीव्र स्थिति पर निर्भर है । अन्यमनस्क मनःस्थिति में हुए संयोग से उत्पादित जीवाणु भी निष्क्रिय और निस्तेज ही पाये गये हैं । ऐसे निस्तेज निराश गर्भाधान से मनस्वी और प्रतिभाशाली बालक उत्पन्न नहीं हो सकते ।

अधिक संख्या में सन्तानोत्पादन शरीर की रासायनिक स्थिति पर निर्भर नहीं है वरन् हॉर्मोन उत्तेजना से संबंधित है । रासायनिक दृष्टि से जिस स्थिति का एक शरीर बन्ध्यत्व ग्रस्त होगा उसी स्थिति का दूसरा शरीर बहु प्रजनन की अति भी कर सकता है । ऐसे शरीरों का विश्लेषण करने पर उनके आन्तरिक विद्युत् प्रवाह को ही उस भिन्नता के लिए उत्तरदायी ठहराया जा सकता है ।

रूस की एक महिला ने २७ बार गर्भवती होकर २३ शिशुओं को जन्म दिया । यह महिला अपने समय में बहुत प्रख्यात हुई थी और सम्राट जार द्वितीय ने उसे सम्मानित किया था ।

फ्रांस की एक ग्रामीण नारी ने २१ सन्तानों की माँ बनकर इस समय में सर्वोग्रणी जननी का पद प्राप्त किया है । इण्डोनेशिया की एक महिला गत २८ वर्षों से हर साल एक सन्तान को अनवरत रूप से जन्म देती चली आ रही है । मांटीमिलेटो (इटली) की एक महिला श्रीमती रोसा अब तक २६ बच्चों को जन्म दे चुकी हैं ।

केवल कन्याओं को जन्म देने वाली महिलाओं में प्रथम हैं इण्डियाना पोलिश की श्रीमती सिसिल जिन्होंने लगातार १४ कन्याओं को जन्म दिया है । इसके बाद दूसरे नम्बर पर आती हैं श्रीमती लाइड ब्रुक्स उनके १३ कन्याएँ ही हैं । इन दोनों महिलाओं ने कभी भी पुत्र प्रसव नहीं किया ।

आयु के न्यून या अधिक होने पर भी प्रजनन अवयव इस स्थिति में हो सकते हैं कि वे सन्तानोत्पादन कर सकें ।

गुआर्राटगुएट (ब्राजील) में २३ बच्चों के पिता जोसे पारफरियो डी. एराओ ने १०६ वर्ष की आयु में ४८ वर्षीय महिला के साथ चौथा विवाह किया है । पूछने वालों को उसने बताया कि यदि मेंरे सन्तान होती है तो उसे पूर्णतया स्वाभाविक समझूँगा ।

नव–वधू का यह प्रथम विवाह है । वह बहुत समय से उसकी प्रेयसी रही है । लोगों ने इस वृद्ध विवाह का मखौल उड़ाया तो वधू ने इससे असहमति प्रकट की और उसने कहा–मेंरा पति शारीरिक दृष्टि से पूर्ण समर्थ है और मैं उससे सन्तुष्ट हूँ ।

दक्षिण पेरू के आरिक्विया अस्पताल में एक ११ वर्षीय बालिका ने १.८ किलोग्राम वजन के बच्चे को जन्म दिया । जच्चा और बच्चा दोनों ही स्वस्थ रहे ।

इससे पूर्व कम उम्र की लड़की द्वारा प्रजनन का पहला रिकार्ड यह है कि १६३८ में एक सात वर्षीय बालिका लिण्डा मैडिना ने कैस्ट्रोविरीना के अस्पताल में पुत्र को जन्म दिया था ।

यह प्रमाण बताते हैं कि शरीर की स्थिति पर प्रजनन निर्भर नहीं वरन् उसका सीधा सम्बन्ध ऐसी चेतना से है जो कायगत रासायनिक पदार्थों से कही ऊँचा है ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इन तथ्यों पर विचार करने से काम प्रवृत्ति को नियंत्रित, परिष्कृत, परिपुष्ट, प्रबल और शिथिल बनाने को ही नहीं अभीष्ट सन्तानोत्पादन के लिए उसे विशिष्ट चेतना के साथ सम्पर्क बनाना पड़ेगा जो अस्थि मांस से नहीं वरन् अन्तःचेतना से सम्बन्धित है। चेतना का यह स्तर योगाभ्यास की कुण्डलिनी उत्थान जैसी साधना पद्धतियों से सम्बन्धित है। ब्रह्मचर्य का परिपूर्ण पालन और उस ओजस् शक्ति का प्रखर व्यक्तित्व के रूप में परिवर्तन भी इसी स्तर की साधनाओं द्वारा सम्भव हो सकता है।

काम बीज का परिष्कार

शरीर की उत्पत्ति काम बीज से है। फ्रायड के अनुसार वह बालकपन में दुग्ध पान से लेकर साथियों की छेड़छाड़ के अनेक रूप विकसित होता है किशोरावस्था में वह जोश बनकर उभरता है। होश को पीछे छोड़कर जोश की जो तूफानी लहरें उठती हैं उनमें मनोविज्ञानी काम तत्व की प्रबलता देखते हैं। लड़कों में नये स्थानों पर नये केश उत्पन्न होने– जननेन्द्रियों में प्रौढ़ता बढ़ने के रूप में उसकी अभिवृद्धि प्रकट होती है। लड़कियों में रजो–दर्शन तथा वक्षस्थल का उभार इसी का प्रमाण है। कल्पना क्षेत्र में विपरीत लिंग के प्रति आकर्षक कल्पनाओं के आँधी–तूफान उठने लगते हैं। आगे चलकर इसकी परिणति प्रणय में होती है। दाम्पत्य सूत्र जुड़ते हैं, आदान–प्रदान के भावभरे रसास्वादन मिलते हैं और सन्तानोत्पत्ति का क्रम चल पड़ता है। एक नये गृहस्थ का, नये परिवार का श्रीगणेश होता है और पति–पत्नी को उसी की विविध व्यवस्थाएँ जुटाने में अपनी लगभग पूरी शक्ति झोंकनी पड़ती है। यह 'काम बीज'से उत्पन्न वट वृक्ष है जिसका विस्तार भली या बुरी व्यस्त क्रिया-प्रतिक्रियाओं में होता है। जीवन सम्पदा का उत्सर्ग इसी वेदी पर होता देखा गया है। बीच–बीच में उच्छृंखल यौनाचार की कल्पनायें अथवा क्रियाएँ अपने अलग ही कुहराम मचाती रहती हैं। उन पर सामाजिक नियन्त्रण न हो तो उस स्वेच्छाचार की प्रतिक्रिया से सामाजिकता का पारिवारिकता का, सभ्यता का, मानवी प्रगति का अन्त हुआ ही समझना चाहिए। अपराधों के घटनाक्रम में काम–विग्रह का, उसकी विकृति प्रतिक्रिया का जितना हाथ रहता है उतना सब अनाचारों से मिलकर भी नहीं होता है। नीति मर्यादाओं का उल्लंघन इसी प्रबल प्रेरणा से आये दिन होता रहता है।

इतने प्रेरक तत्व को तुच्छ मानकर नहीं चलना चाहिए। उसकी सामर्थ्य असीम है एक शरीर से दूसरे का उत्पन्न होना इस सृष्टि का अभ्यस्त किन्तु अद्भुत आश्चर्य है। मानव तत्व की भावना, विचारण एवं क्रिया को अपने जाल-जंजाल में समेटकर बैठ जाना इसी आकर्षण का काम है। भव बन्धनों की चर्चा जब तब होती रहती है। प्रकारान्तर से वह संकेत काम-विग्रह के लिए ही किया गया होता है। गीता के कर्मयोग में 'निष्काम' होने पर जोर दिया गया है। यों तो उसका मोटा अर्थ कामनाओं से पीछा छुड़ाकर कर्त्तव्यपरायण होना है, लेकिन गहराई में उतरने पर उसमें काम रहित होने पर उच्चस्तरीय आत्मिक प्रगति होने– आत्म-कल्याण एवं ईश्वर दर्शन का लाभ मिलने का तथ्य सामने आ खड़ा होता है।

ब्रह्मचर्य का महत्व सनातन धर्म के रूप में सभी सम्प्रदायों ने समान रूप से बताया है। उसके कई प्रकार के लाभ सत्परिणाम बताये हैं। ब्रह्मचर्य का मोटा अर्थ संभोग से बचना बताया गया है। यह शारीरिक मर्यादा है लेकिन इसका लाभ भी तभी होता है जब उसे मानसिक रूप से भी निभाया जाये। सच तो यह है कि यह प्रसंग शारीरिक कम और मानसिक अधिक है। मन पर कामुकता छाई रहे तो शरीर संयम निरर्थक ही नहीं कई बार तो हानिकारक भी होता है शरीर शास्त्री काम निरोध को हानिकारक भी बताते हैं यह बात उस स्थिति में सही भी है जब मानसिक असंयम तो बनाये रहा जाय किन्तु शरीर को हठपूर्वक नियन्त्रित किया जाय। ऐसी दशा में स्वप्न दोष होने लगेंगे अथवा गुप्त कुकृत्यों का सिलसिला चल पड़ेगा। इसमें प्रत्यक्ष मैथुन से कम नहीं अधिक ही हानि है। इसके विपरीत यदि धर्म पत्नी के साथ, मित्र, सहचर, सहोदर के भाव से रहा जाय और आवश्यकतानुसार मर्यादित कामसेवन क्रम भी चलता रहे तो उसकी कोई बुरी प्रतिक्रिया न होगी। सच तो यह है कि उससे कुकल्पनाओं और कुचेष्टाओं को निरस्त करने में सहायता मिलेगी। देवताओं, ऋषियों और महामानवों को भी जब विवाहित जीवन–क्रम अपनाते देखते हैं तो लगता है यह कोई गर्हित कृत्य नहीं है। यदि ऐसा होता तो वे इस मार्ग पर क्यों चलते ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

यहाँ विवाहित रहने या अविवाहित रहने की उपयोगिता के पक्ष-विपक्ष में कुछ नहीं कहा जा रहा है । व्यक्ति विशेष की मनःस्थिति, परिस्थिति एवं कार्य-पद्धति को देखते हुए दोनों ही मार्ग उपयोगी हैं जिन्हें उच्च आदर्शों में निरत रहना है उन्हें अपनी शक्तियाँ बचाकर लक्ष्य के लिए अधिक कुछ कर सकना तभी हो सकता है जब गृहस्थ का भार ढोने से अवकाश मिले, प्राचीन काल से साधु परम्परा यह रास्ता अपनाती रही है । परिव्राजक कार्य-पद्धति में, न्यूनतम निर्वाह में चिन्ता मुक्त रहने में उन्हें सुविधाएँ अविवाहित रहकर ही मिलती थीं । इसके विपरीत जिन्हें आश्रम चलाने पड़ते थे । वे ब्राह्मण गृह-व्यवस्था के लिए पत्नी के सहयोग की सुविधा देखते थे । जो हो यह प्रसंग यहाँ नहीं उठना है । चर्चा काम प्रक्रिया की हो रही थी । वह शरीर क्षेत्र से कम और मनःक्षेत्र से अधिक सम्बन्धित है । शरीर से ब्रह्मचारी और मन से व्यभिचारी रहे तो उसे इस प्रतिबन्धन की विडम्बना का कोई लाभ न मिल सकेगा । इसके विपरीत यदि मन पवित्र रहे तो गृहस्थ भी एक योगी बन सकता है । तब घर में तपोवन का वातावरण बना देना कुछ कठिन न होगा । वासना और विलासिता का स्थान यदि स्वच्छ सहकार और बालपोषण हास्य विनोद ग्रहण कर ले तो उसे बंधित ब्रह्मचर्य से कम नहीं अधिक लाभदायक ही कहा जायेगा ।

समस्या यहाँ आकर अटक जाती है कि यदि काम बीज जीव चेतना की इतनी गहराई में घुसा बैठा है, उसकी शक्ति इतनी प्रबल और जड़ इतनी गहरी है तो फिर उससे बच सकना कैसे हो सकता है ? तब ब्रह्मचर्य के लाभों से लाभान्वित कैसे हुआ जा सकता है ? यदि संयम न बरता जाय तो ओजस् की क्षति होती है । यदि बरता जाय तो दमित मानस विकृत ग्रन्थियों का हानिकारक संग्रह करता है । इधर खाई उधर कुआँ । आखिर किया जाय तो क्या किया जाय ?

मनीषियों ने इसका उत्तर कुण्डलिनी जागरण की साधना के रूप में दिया है । इसका कर्मकाण्ड और विधि-विधान जितना चमत्कारी है उससे अधिक महत्वपूर्ण है उसका तत्व दर्शन । कुण्डलिनी विधान जानने से पहले उसका दर्शन जानना आवश्यक है । प्रतिपादन यह है कि काम कला को ब्रह्म विद्या के रूप में परिवर्तित किया जाय । इसे विज्ञान की भाषा में -ट्रांसफार्मेशन रूपान्तरण कहते हैं । काम को कला में परिणत, परिष्कृत किया जा सकता है । भक्ति भावना उसी प्रयास का उत्कृष्ट रूप है । ललित कलाओं में, उद्देश्यपूर्ण शौर्य, साहस में, पारमार्थिक सेवा साधना में जो उच्चस्तरीय उल्लास उपलब्ध होता है उसे काम तत्व की परिष्कृत भाव भूमिका कह सकते हैं । चिन्तन की दिशा धारा मोड़ देने से यह परिवर्तन समभव हो सकता है । वर्षा का जल यदि अनियन्त्रित फैले तो खेतों, घरों को डुबाकर हानि करेगा । लेकिन यदि नदी/नाले के माध्यम से बाँध बनाकर संग्रह किया जाय तो नहरों के माध्यम से सिंचाई के लिए खेतों तक पहुँचाया जाय तो इससे हर प्रकार लाभ ही लाभ है । अनियन्त्रित काम-प्रवृत्ति का निरोध इसी प्रकार उचित है । उसे हठपूर्वक नष्ट कर देने की बात सोची जाय, वरन् ऐसे प्रयोजन में लगा दिया जाय जिसमें उच्चस्तरीय उद्देश्यों की पूर्ति हो ।

पौरोणिक कथाओं में कामदेव भगवान शंकर पर प्रकोप करता है, उन्हें अपनी उँगली के इशारे पर नचाना चाहता है । शिवजी अपने दूरदर्शी विवेक से, तृतीय नेत्र से इसके दुष्परिणामों को समझने का प्रयत्न करते है । वस्तुस्थिति समझ में आते ही, तृतीय नेत्र खुलते ही सम्भावना समाप्त हो जाती है । कामदेव जलकर भस्म हो जाता है । वह विवेकशीलता की पशु प्रवृत्ति पर प्रत्यक्ष विजय है । कुविचारों को सद्विचारों से ही निरस्त किया जाता है । लोहे से लोहा कटता है । कामुकता के दुष्परिणामों और संयम के सत्परिणामों पर विस्तारपूर्वक विचार किया जाय तो विवेक का निर्णय औचित्य के पक्ष में होगा । चोर की घात तो तब लगती है जब घर मालिक सोये हुए हों, यदि उनमें से कोई बच्चा होने लगे, बुढ्ढा खाँसने लगे, तो बलिष्ट चोर की भी हिम्मत टूट जायेगी और उसे उलटे पैरों भागना ही पड़ेगा । कामुकता सम्मत कुविचारों के सम्बन्ध में यही बात लागू होती है । यदि आदर्शवाद के समर्थक तर्कों, तथ्यों, प्रमाण और उदाहरणों की सेना सजा ली जाय और जब भी शत्रु सिर उठाये तभी वह सेना लड़ा दी जाय तो समझना चाहिए कि औचित्य ही जीतेगा । कल्मषों के उन्मूलन का यही एकमात्र मार्ग है । महाभारत युद्ध की घटना को लेकर जीव रूपी अर्जुन को दुरित दुर्जनों को परास्त करने के लिए जिस सैन्य सज्जा के लिए कहा गया है उसे अन्तःसथर्म ही समझना चाहिए । शिवजी का काम दहन भी इसी तथ्य के समर्थन में एक प्रेरणाप्रद प्रसंग है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पीछे काम पत्नी–रतिः सरसता विलाप करती है । विधवा के दुःख को भगवान आशुतोष सहन नहीं कर पाते, वे द्रवित होते हैं और वरदान देते हैं कि भस्मसात कामदेव शरीर समेंत तो जीवित नहीं हो सकते, पर वे सूक्ष्म रूप में फिर सजीव हो जायेंगे और उच्च आत्माओं पर भी अपना अस्त्र छोड़ने की अपनी कामना पूरी करेंगे ।

इस वरदान का अभिप्राय यही है कि पशु–प्रवृत्तियों को भड़काने वाली और जीवन सम्पदा को कुमार्गगामी बनाने वाली कामुकता को परिष्कृत किया जा सकता है । उसे भावनात्मक श्रेष्ठ सम्वेदनाओं से लगाकर स्थूल यौनाचार के आकर्षण से विरत किया जा सकता है ।

कुण्डलिनी के स्वरूप निर्धारण में यह तथ्य और भी स्पष्ट है । काम केन्द्र मूलाधार चक्र को बताया गया है । यह जननेन्द्रिय के मूल में है । इसे अग्नि कुण्ड, अग्नि समुद्र, शक्ति समुद्र भी कहा गया है । उमंगें और उत्साह भरने की क्षमता वहाँ केन्द्रित है । इस स्थिति में उसकी संज्ञा सर्पिणी की है । सर्प दंश और सर्प विष की भयानकता सर्वविदित है । सामान्य स्थिति में अधोगामी और बहिर्मुखी रहती है । उसके क्षरण–स्राव-जननेन्द्रियों मार्ग से नीचे की ओर टपकते हैं । उसका प्रत्यक्ष रूप त्वचा तल से ऊपर उभरा होता है । नर और नारी की जननेन्द्रियों की स्थिति इस दृष्टि से लगभग एक जैसी ही है । इसे कुण्डलिनी की गर्हित, मूर्च्छित अधःपतित स्थिति समझा जाना चाहिए ।

कुण्डलिनी जागरण साधना में समुद्र मंथन जैसे प्रयत्न करने पड़ते हैं । फलतः प्रसुप्ति जागृति में बदलती है । तप की उष्णता पाकर अन्तःऊर्जा उभरती है और ऊपर की ओर चलने का प्रयत्न करती है । गर्मी से वायु, जल आदि सभी का विस्तार होता है । वे ऊपर की ओर उठते हैं । ग्रीष्म में चक्रवात गरम हवा के द्वारा ही उठते हैं । पानी से भाप गर्मी ही ऊपर की ओर उठाती है । मूलाधार से जगी हुई व्यक्ति ऊर्जा, प्राण–शक्ति कुण्डलिनी ऊपर को उठती है । मेंरुदण्ड मार्ग से सर्पिणी की तरह लहराती हुई ब्रह्मरंध्र की ओर चलती है, बिजली की यही चाल है । यह ऊर्जा मस्तिष्क में पहुँचती है । सहस्रार कमल से सम्बन्ध बनाती है । और उसी में लय हो जाती है । कमल सात्विकता का, कला का, दिव्य सौन्दर्य का केन्द्र माना गया है । भगवान के अंगों का, अवयवों का, वर्णन कमल उपमा के साथ किया जाता रहा है । लक्ष्मी कमलासन पर विराजमान हैं । गजेन्द्र ने ग्राह से मुक्ति पाने के लिए कमल पुष्प सूड़ में लेकर भगवान की अभ्यर्थना की थी । कमला लक्ष्मी का दूसरा नाम है । विष्णु के चार हाथों में चार उपकरण है । शंख चक्र, गदा के उपरान्त चौथा पद्म ही आता है । इस प्रकार पौराणिक संगतियों में कमल को दिव्यता का प्रतीक माना गया है । मस्तिष्क के मध्य क्षेत्र में, ब्रह्मरंध्र में, सहस्रार कमल अवस्थित हैं । उस पर कहीं विष्णु की कहीं, शिव की, कहीं सदगुरु की, स्थापना और ध्यान का उल्लेख है । यह प्रतिपादन यही इंगित करता है कि कामुकता में संलग्न अन्तःऊर्जा को उस पतन के गर्त से निकाल कर ब्रह्मचेतना में उत्कृष्ट उल्लास प्रधान करने वाली ब्रह्म विद्या में नियोजित किया जाना चाहिए ।

इसी परिवर्तन परिष्कार को–उत्कर्ष उन्नयन की कुण्डलिनी जागरण कहा गया है । ब्रह्मचर्य की तात्विक साधना यही है । इसी में अध्यात्म तत्वज्ञान के समस्त सूत्र सँजोए हुए हैं । इस ट्रांसफार्मेशन का, रूपान्तर का सत्परिणाम, महान् जागरण, महान् परिवर्तन दिव्य जीवन के पक्ष में सामने आता है । काम बीज का यह ब्रह्म समर्पण कितना श्रेयस्कर होता है इसे कुण्डलिनी महाविज्ञान की जागरण साधना एवं तत्व भावना को अपनाकर ही जाना जा सकता है ।

सृजन शक्ति का प्रेरणा स्रोत –काम

सामान्य व्यक्तियों की दृष्टि में काम–प्रजनन अथवा वासना तृप्ति का साधन है । अधिकांश उस शक्ति का उपयोग भी उन सीमित कार्यों के लिए ही करते देखे जाते हैं लेकिन तत्वदर्शियों का मत है कि काम जीवन की समस्त हलचलों का आधार है । अभिनव सृजन की प्रेरक शक्ति है । प्रकृति में सौन्दर्य की जो सर्वोत्तम अभिव्यक्ति है, वह काम का ही रूप है । विपुला, शस्य श्यामला प्रकृति काम के गर्भ से ही उत्पन्न होती तथा अगणित जीवन्त सुन्दर घटकों के रूप में विकसित होती है । पुष्प के सौन्दर्य में काम का ही उभार है । प्राणियों की जीवन, शौर्य, पराक्रम उत्साह एवं उमंग में काम की अभिप्रेरणा ही कार्यरत होती है । प्रकृति की समस्त गतियों में काम की ही स्फुरणा है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गीता में अपनी दैवी विभूतियों का उल्लेख करते हुए भगवान कृष्ण कहते हैं–प्रजनश्चास्मि कन्दर्प.....। अर्थात् 'सन्तान की उत्पत्ति का हेतु मैं कामदेव हूँ ।' वस्तुतः जीवन की समस्त उत्पत्ति काम से है । संसार की सृष्टि में भी काम की प्रेरणा ही काम कर रही है । कामना से अभिप्रेरित होकर ही ब्रह्म ने सृष्टि की रचना की । सृष्टि के मूल में काम का प्रवाह है । काम शक्ति का एक रूप प्रजनन के रूप में सामने आता है तो दूसरा ज्ञान के रूप में अभिनव कल्पनाओं एवं सृजनात्मक विचारों के रूप में कोई भी सृजन काम के बिना नहीं हो सकता ।

संसार भर में मात्र एक हिन्दू धर्म ही ऐसा है जिसने काम को भी 'देव' के रूप में प्रतिष्ठापित करके अभ्यर्थना की है । यह प्राचीन ऋषियों-मनीषियों की सूक्ष्म तथा उस विधेय दृष्टि का बोध कराती है जो तत्व-दृष्टि स्तर तक विकसित हो चली थी । उन्हें यह ज्ञात था कि काम ऊर्जा ऊर्ध्वगमन से व्यक्तित्व के असीम विकास की सम्भावना बन सकती है ।

मानवी व्यक्तित्व की तीन कोटियाँ हैं । नर–पशु हैं जिनकी काम वासना सतत् नीचे की ओर बहती हैं देव–मानव वे हैं जिनकी काम–शक्ति ऊर्ध्वमुखी अथवा अन्तर्मुखी है । नर–नारायण वे हैं जिनकी काम शक्ति स्थिर है, बहती ही नहीं । भगवान कृष्ण कहते हैं कि यदि तुम देवताओं में खोजना चाहो तो काम में खोजना । क्योंकि काम ही सृजन का आधार है । जगत् में जो भी घटित होता है–शुभ, सत्य अथवा सुन्दर के रूप में, यह काम ऊर्जा की परिणति है । खजुराहो, कोणार्क, के मन्दिरों की दीवारों पर अनूठे भित्ति चित्र खुदे हुए हैं । पर्यटक काम की विधेयात्मक अभिव्यक्ति के दर्शन के लिए ही वहाँ आते हैं । चित्रकला एवं मूर्तिकला के माध्यम से वस्तुतः उनमें कामदेव की प्रतिष्ठापना का आध्यात्मिक भाव सन्निहित है ।

मनुष्य के भीतर एक ही जीवन्त ऊर्जा सतत् क्रियाशील है । जब वह नीचे की ओर बहती है तो काम वासना बन जाती है और जब ऊपर की ओर प्रवाहित होने लगती है तो कुण्डलिनी महाशक्ति बन जाती है । काम ऊर्जा दो स्थानों पर विलीन होती है–जननेन्द्रिय, मूलाधार अथवा मूर्धा– सहस्रार । ये दो चक्र व्यक्तित्व के दो छोर हैं । काम केन्द्र से मनुष्य प्रकृति से जुड़ा है । लेकिन सहस्रार के माध्यम से परब्रह्म से सम्बद्ध हैं पर यह सबसे बड़ी विडम्बना है कि अधिकांश व्यक्ति काम ऊर्जा का सामान्य –नगण्य सा उपयोग ही कर पाते हैं । जिस व्यक्ति को आग का मात्र इतना ही परिचय है कि वह किसी वस्तु को जला सकती है –दावानल खड़ा कर सकती है, उसे दुर्भाग्यशाली समझा जायेगा और तरस खाया जायेगा । क्योंकि रोटी पकाने, पानी गरम करने, प्रकाश देने, गर्मी प्रदान करने जैसे वह अगणित काम भी तो करती है । जीवनी शक्ति के क्षय के रूप में काम वासना के रूप में जो काम शक्ति का एकांगी परिचय जानते हैं सचमुच ही वे अविवेकी हैं । कई दशकों तक परमाणु शक्ति का उपयोग परमाणु बमों के निर्माण जैसे ध्वंसक प्रयोजनों तक सीमित रह गया था । महाविनाश के रूप में पिछले महायुद्ध में उस प्रचण्ड शक्ति का परिचय भी मिला । लेकिन वैज्ञानिकों के समझ में वर्षों बाद वह समझ में आया कि परमाणु शक्ति का उपयोग रचनात्मक कार्यों में भी हो सकता है । फलस्वरूप अब परमाणु शक्ति से संचालित थर्मल पावरों से ऊर्जा उत्पादन जैसे कितने ही काम लिये जा रहे है । काम ऊर्जा भी उस परमाणु ऊर्जा की तरह है जिसका महत्व अभी ठीक तरह समझा नहीं जा सका है, न ही वह शक्ति अगणित सृजन कार्यों में प्रयुक्त हो सकी है ।

फ्रायड और उनके समकक्ष अगणित मनोवैज्ञानिक कहते हैं कि मनुष्य की सारी उद्विग्नता समस्त विक्षिप्तता का निन्यानवे प्रतिशत कारण काम वासना है । उनका निदान सही हो सकता है लेकिन जो उपचार वे बताते हैं वह भ्रामक हैं– पूर्णतः गलत हैं । वे कहते हैं कि समस्याओं की जड़ काम वासना है । उसकी परितृप्ति का ठीक उपाय न हो तो आदमी विक्षिप्त होता चला जायेगा । लेकिन उनका प्रतिपादन इसलिए गलत है कि काम वासना की तृप्ति कभी भी सम्भव नहीं है काम वासना को रूपान्तरित किये बिना तृप्ति-सन्तुष्टि एवं शान्ति की उपलब्धि हो नहीं सकती । प्रमाण एवं उदाहरण भी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सामने है । फ्रायड के विचारों तथा काम्यू के दर्शन से पनपे स्वच्छन्दवाद ने यौनाचार की खुली छूट पश्चिमी जगत् को दे दी ।लेकिन काम तृप्ति न हो सकी । सभी तरह के बन्धनों–सामाजिक मर्यादाओं से मुक्त रहने वाली 'परमिसिव सोसाइटी' का जन्म हुआ । स्वछन्दता के प्रयोग तो चले पर असफलता ही हाथ लगी । काम वासना की अतृप्ति घटी नहीं, बढ़ती ही चली गयी, अग्नि में घृत डालने की तरह वह भभकती गयी ।

फ्रायड का गन्तव्य वस्तुतः अधूरा–एकांगी था । उस आधार पर किये गये प्रयोगों ने यूरोपीय समुदाय की समस्याएँ अधिक बढ़ा दी हैं । फ्रायड के निदान के साथ योग का उपचार जुड़ा होता तो पाश्चात्य जगत् की आज की स्थिति कुछ और ही होती । काम को रूपान्तरित होने का अवसर मिल गया होता । शास्त्रों में जिसे एक महाशक्ति मानकर अभ्यर्थना की गयी है, उसका हेय रूप देखने को नहीं मिलता । यौनाचार का निकृष्ट स्वरूप सामने नहीं आता । स्वतन्त्रता स्वच्छन्दता के स्तर तक पहुँचकर निर्लज्ज अट्टहास नहीं करती । मर्यादाओं–शालीनताओं के बन्धन इस तरह नहीं टूटते । हिप्पियों का समुदाय न पनपता ।

काम का निम्नगामी प्रवाह मनुष्य को खोखला बना देता है । जवानी में बुढ़ापा इस खोखलेपन का ही नाम है । बूढ़ा आदमी भीतर से खालीपन अनुभव करता है । यह स्थिति प्रकृति की दी हुई, आसमान से टपकी हुई नहीं, वस्तुतः स्वयं की आमन्त्रित हैं । कामवासना ने समस्त शक्तियों को अवशोषित करके अशक्तता का अभिशाप लाद दिया । युवा व्यक्ति भीतर से भरा-पूरा अनुभव करता है । यौवन शरीर से छलकता उभरता है यह वस्तुतः कामशक्ति का ही उभार है । वृद्ध की रिक्तता का काम ऊर्जा की समाप्ति का ही परिचायक है । जो युवावस्था में भी ऐसी रिक्तता का, जीवट का, उत्साह एवं उमंग का अभाव अनुभव करते हैं वे भी वृद्ध तुल्य ही हैं । जिन्होंने असमय ही बहुमूल्य जीवन सम्पदा को कौड़ी के मोल गँवा दिया हैं जबकि जो वृद्धावस्था में भी जीवट सम्पन्न है, उत्साह उमंग से भरे हैं, वे युवा कहे जाने योग्य हैं ।

काम ऊर्जा का प्रवाह बाहर होने के स्थान पर जब अन्दर की ओर होने लगता है तो उसके वास्तविक स्वरूप एवं प्रयोजन का परिचय मिलता है । तब यह बोध होता है कि आत्म-विकास में जिस काम को हेय समझा अथवा अवरोध माना गया था, वह मात्र एक भ्रान्ति थी । जिसे जहर समझा गया था वह अमृत था । जिसे नरक का द्वार माना गया था वह मुक्ति का–मोक्ष का साधन भी है । यह समझ आने पर वास्तविक प्रगति का द्वार खुल जाता है ।

आध्यात्म शास्त्रों में जीवनक्रम के सफलता के चार आधार महत्वपूर्ण माने गये हैं धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष । इनमें से काम शब्द का अर्थ ठीक प्रकार से न समझ सकने के कारण असमंजस उत्पन्न होता है । योगी, तपस्वी, संयमी और ब्रह्मचारी लोग सोचते हैं कि कहीं वे कामवासना की उपेक्षा करके भूल तो नहीं कर रहे हैं । भौतिकवादी प्रतिपादनों में तो कामवासना को मानवी चेतना की मूल प्रवृत्ति ही ठहरा दिया है कितने ही पाश्चात्य मनोविज्ञानियों ने उसे प्रकृति प्रेरणा ठहराते हुए कामुकता की पूर्ति पर बहुत जोर दिया है । भ्रान्तियों का मूल कारण काम का अर्थ यौनलिप्सा के निम्न स्तर पर करने लगाना है ।

कामशक्ति का भ्रान्तिपूर्ण प्रतिपादन करने में फ्रायड नामक मनोवैज्ञानिक को अग्रणी माना जाता है। कामवासना को उन्होंने मनुष्य की मूल प्रवृत्ति माना और उसे 'लिबिडो' नाम से सम्बोधित किया है । उनके अनुसार जीवन की समस्त क्रियाओं की संचालिका शक्ति यही है । सम्पूर्ण व्यक्तित्व को प्रभावित करने की क्षमता इसमें है । जब उसका असाधारण रूप से दमन किया जाता है तो अनेक प्रकार की शारीरिक, मानसिक, बीमारियाँ पैदा हो जाती हैं किन्तु उसका उदात्तीकरण कला, धर्म, परोपकार भक्ति आदि की भावनाएँ जाग्रत करता है । इस तथ्य की ओर उनका ध्यान ही नहीं गया, ऐसा अध्यात्मपरक मनोविज्ञान के समर्थकों का मत है ।

मूर्धन्य मनोवैज्ञानिक अल्फ्रेड एडलर ने उक्त प्रतिपादन को फ्रायड की एक बड़ी भूल बताते हुए कहा है कि काम प्रवृत्ति सामान्य जीवन का एक अंग मात्र है, जिसकी प्रतिष्ठा वंशवृद्धि में सन्निहित है । इस

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आधार पर की कई एकांगी विवेचना मनुष्य जीवन के समग्र व्यक्तित्व को प्रकाशित नहीं कर सकती । उनका कहना है कि मनुष्य के सामान्य व्यवहार का स्रोत सामाजिक प्रतिष्ठा की प्रबल इच्छा है, न कि कामुकता की इच्छा । सामाजिक प्राणी होने के कारण प्रत्येक मनुष्य अपने साथियों में, समाज में एक विशिष्ट स्थान बनाना चाहता है जिसे प्रतिष्ठा की कामना कह सकते हैं । यही मनुष्य की प्रेरणात्मक शक्ति है जिसे उल्लास उमंग भी कह सकते हैं । काम प्रवृत्ति के स्थान पर उसके परिष्कृत रूप "आत्म- स्थापन" को उन्होंने मानव जीवन में प्रमुख स्थान दिया है । काम शक्ति का यही उच्चस्तरीय परिवर्तित रूप भी है ।

प्रख्यात मनोवेत्ता कार्ल गुस्तेव जुंग के अनुसार कामशक्ति को यौन उत्तेजनाओं के सीमित दायरे में केन्द्रित नहीं किया जा सकता । यह एक सशक्त साइकिक एनर्जी–मानसिक ऊर्जा है, जिसके द्वारा मानव मन के प्रत्येक क्रियाकलाप संचालित होते हैं । लिबिडों का अर्थ है इच्छा शक्ति–संयमशक्ति । इसी के आधार पर मनुष्य जीवन की दिशाधारा निर्धारित होती है । इस शक्ति का प्रवाह कई दिशाओं में हो सकता है । मनुष्य में अनेक प्रवृत्तियाँ हो सकती हैं । जिसमें जिस प्रवृत्ति की प्रधानता होती है, उसकी मानसिक शक्ति का प्रवाह भी उसी दिशा विशेष में होने लगता है । इस प्रवाह की दिशाधारा ही मानव के चरित्र एवं व्यक्तित्व का निर्धारण करती है । दमन की अपेक्षा आकांक्षा एवं अभिरुचि का उत्साह का प्रवाह मोड़ने में विशेष कठिनाई उत्पन्न नहीं होती । अतः कामशक्ति का सृजनात्मक प्रयोजनो में नियोजन भी कठिन नहीं होना चाहिए ।

"द साइकोलॉजी आफ दि अनकांशस" नामक अपनी कृति में जुंग कहते हैं कि काम प्रवृत्ति वस्तुतः एक अभेद्य जीवनीशक्ति है । इस जीवन ऊर्जा की अभिव्यक्ति उत्कर्ष की खोज में, कलात्मक सर्जन तथा अन्यान्य सृजनात्मक क्रियाओं में होती है । यौन सुख तो उसका एक क्षणिक एवं आंशिक भाग है जिसका प्रयोग मात्र जाति संरक्षण के लिए किया जाता है । इस तथ्य को जानने वाले कामुकता के भ्रमजंजाल से बचते और कामबीज का उन्नयन एवं नियोजन सांस्कृतिक सामाजिक उत्कर्ष या आत्मोत्थान के लक्ष्यों को प्राप्त करने में करते है । उनके अनुसार मानसिक ऊर्जा का उपयोग जब सही दिशा में निर्धारित लक्ष्य की पूर्ति में किया जाता है तो मन संतुलित अवस्था में बना रहता है और उसकी परिणति मानसिक उल्लास–उमंग के रूप में साहस एवं प्रतिभा के रूप में सामने आती है ।

मनोविज्ञानी जुंग का उक्त प्रतिपादन प्रकारान्तर से भारतीय ऋषियों की उस मान्यता का समर्थन करता है जिसमें कामबीज को परम प्रयोजनों में, ज्ञानबीज में परिवर्तित एवं नियोजित करने की बात कही गई है । अथर्व वेद में कामशक्ति के अवतरण की प्रार्थना करते हुए ऋषि कहते हैं "हे परमेश्वर ! तेरा काम रूप भी श्रेष्ठ और कल्याणकारक है । उसका चयन असत्य नहीं है । आप कामरूप से हमारे भीतर प्रवेश करें और पाप बुद्धि से छुड़ाकर हमें निष्पाप उल्लास की ओर ले चलें ।"

काम वस्तुतः प्रत्येक प्राणी के अन्तराल में समाहित एक उल्लास है छिपी प्रेरणा है जो आगे बढ़ने, ऊँचे उठने विनोद का रस लेने एवं साहसिक प्रयास करने के लिए निरन्तर उभरती रहती है । उसी को आकर्षण शक्ति कहते हैं । जड़ पदार्थो में यह ऋण और धन विद्युत् के रूप में काम करती है । परम्परा उन्हें जोड़ती खदेड़ती रहती है । भौतिकी के अनुसार सृष्टि की गतिविधियों का उद्गम यही है । परमाणु का नाभिक अपने भीतर इसी क्षमता का निर्झर दबाये बैठा है और समयानुसार उसे उभार कर विकिरण उत्पन्न करता है । शक्ति तरंगें उसी से उद्भुत होती और संसार की अनेकानेक हलचलों का सृजन करती हैं ।

प्राणियों में उसका उभार, उत्साह उल्लास एवं उमंगों के रूप में होता है । पारस्परिक प्रेम सहयोग से उत्पन्न उपलब्धियों से परिचित होने के कारण आत्मा उस स्तर के प्रयासों में रस लेती है और सहज विनोद के लिए उन प्रयासों में प्रवृत्त होती है । इसी को शास्त्रकारों ने 'काम' कहा है और उसकी उपयोगिता का समर्थन किया है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसी प्रवृत्ति का एक छोटा रूप "यौनाचार" है जिसे फ्रायड जैसे पाश्चात्य मनोविज्ञानियों ने पूर्ण प्रवृत्ति का नाम दे डाला और मनुष्य को उसका गुलाम बनने को प्रोत्साहित किया है। परिणाम की दृष्टि से यह नर और नारी के लिए बोझिल ही नहीं, कष्टकारक भी है। भारतीय मनीषियों ने काम तत्व की व्यापकता को समझते हुए ही संतानोत्पादन को इसका एक अति सामान्य प्रकृति प्रयोजन भर माना है जिससे वंश प्रवाह को सुस्थिर रखा जा सके किन्तु मनुष्य ने इस संदर्भ मर्यादा का उल्लंघन एवं स्वेच्छाचार का दुस्साहस किया है।

वनस्पति जगत् में पुष्पों का सौन्दर्य और सौरभ उनके अन्तराल में उभरे हुए कामोल्लास का परिचय देते हैं। भ्रमर के गुंजन, मयूर के नृत्य, पक्षियों के क्रीड़ा कल्लोल में उनके उभरते हुए अन्तः उल्लास का परिचय मिलता है। मनुष्यों में यही विनोद, उल्लास अनेक अवसरों पर अनेक प्रकार से उभरता है। बच्चे अकारण उछलते मचलते रहते हैं किशोरों को क्रीड़ांकन में तथा युवतियों को नृत्य गायन में अपनी स्फूर्ति, अंतः उल्लास की शक्ति का परिचय देते देखा जाता है। प्रौढ़ों को दूरदर्शी योजनाएँ कार्यान्वित करते एवं गुत्थियों को सुलझाने में भावविभोर देखा जाता है। कवि, कलाकार आदि को अपनी ही तरह के सरसता के निर्झर में आनन्द लेते और दर्शकों को उल्लसित करते देखा जाता है। शास्त्रकार के शब्दों में यही उच्चस्तरीय कामोल्लास है जो अगणित उमंगों के रूप में प्रकट होता है और विनोद भरे क्रिया-कृत्य करने की प्रेरणा देता है। प्राणियों की प्रगति और पदार्थों की हलचल उसी उभार पर निर्भर है। संसार में जितने भी महत्वपूर्ण काम हुए हैं, जितने भी व्यक्तित्व उभरे हैं उन सबके मूल में अदम्य अभिलाषा और भाव भरा उल्लास ही काम करता रहा है।

'काम' को हेय तब से समझा जाने लगा, जब से उसे यौनाचार के रूप में प्रतिपादित किया जाने लगा। यों अश्लील चिन्तन और उस प्रयोजन के लिए होने वाले अन्य कृत्य भी कामुकता की व्याख्या परिधि में आते हैं, किन्तु वास्तविकता यह है कि यह समस्त परिकर सुविस्तृत कामशक्ति का बहुत ही छोटा और हेय स्वरूप है। वस्तुतः 'काम' शब्द की परिभाषा क्रीड़ा उल्लास ही हो सकती है, जिसका उभार या उमंग सृजनात्मक प्रयोजनों में निरत होने पर सामान्य से मानव को महामानव स्तर का बना देता है। इस शक्ति का उन्नयन आत्मोत्कर्ष के लक्ष्य को प्राप्त करने का प्रमुख आधार खड़ा करता है। धर्म और मोक्ष जैसे आत्मिक एवं अर्थ और काम जैसे भौतिक प्रगति की चर्तुविधि महान उपलब्धियों में उसकी गरिमा के अनुरूप ही 'काम' को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। हमें कामशक्ति के इसी उत्कृष्टता सम्पन्न स्वरूप को समझना और इससे जुड़ती रहने वाली भ्रान्तियों से बचना चाहिए।

वस्तुतः काम-चेतना की प्रगति एवं जड़ प्रकृति के सौन्दर्य का मूल आधार है। प्राणियों की प्रगति और पदार्थों की हलचल इसी काम प्रेरणा पर अवलम्बित है। बच्चों की फुदकन, किशोरों की स्फूर्ति एवं प्रौढ़ों की महत्वाकांक्षाओं में यह शक्ति ही प्रेरित करती है। जिस अन्तः शक्ति से संसार में रस लेने, तथा प्रगति के क्रम में आगे बढ़ चलने की उमंग प्राप्त होती है उसे ही शास्त्रों में 'काम' कहा गया है। संसार में जितने भी महत्वपूर्ण कार्य हुए है उनमें वे अन्तःउमंग से प्रेरित उदम्य अभिलाषा एवं उसकी पूर्ति के लिए साहसिक पुरुषार्थ ही प्रधान कारण रहा है।

भाव सम्वेदनाओं का उत्कृष्ट स्वरूप प्रेम है। उसे ईश्वर के साथ जोड़ देने पर 'भक्ति' बन जाता है। स्नेह, सहयोग, करुणा, सेवा, सहृदयता इसकी ही उच्चस्तरीय उपलब्धियाँ हैं। श्रेष्ठ उद्देश्यों के लिए किए जाने वाले त्याग, बलिदान में कार्य कर रही भाव सम्वेदनाएँ काम की ही परिणति हैं। काम की महत्ता एवं प्रगति के लिए इसकी उपयोगिता का प्रतिपादन शास्त्रों में इसी कारण किया गया है।

काम में अद्भुत सृजन शक्ति छिपी पड़ी है। यह विषय सुख की लालसा नहीं, मौलिक सृजन का आधार है। विभिन्न रूपों में प्रकट होने वाली शक्ति भिन्न दिखायी पड़ते हुए भी एक ही है। कलाकार की सुन्दर अभिव्यक्ति कवि की काव्यान्जनां, साहित्यकार की कल्पना में इसी उमंग का योगदान रहता है।

साधना में भाव सम्वेदना के रूप में प्रकट होकर साधक साध्य के मध्य दिव्य आदान-प्रदान करने में काम की प्रमुख भूमिका होती है। गंगा हिमालय से चलती है। उसका प्रचण्ड वेग विविध नदी नहरों से होकर अपने पावन जल से जीव-जन्तु एवं वनस्पतियों को तृप्त करता विशाल समुद्र में मिल जाता है। इस प्रकार की उमंगों को प्रकृतिगत काम-क्रीड़ा कहा जा सकता है। सृजनात्मक दिशा में मोड़ने एवं श्रेष्ठ उद्देश्यों में नियोजित करने से वह उदात्त बनती और अन्ततः समष्टिगत प्राण शक्ति से मिलकर एकाकार हो जाती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

निकृष्टतम अभिव्यक्ति संसति एवं उच्चतम सृजेता के रूप में होती है । मीरा के भावभरे गीतों, तुलसी के भावनापूर्ण मानस के प्रसंगों, कालिदास के शाकुन्तलम, सूर के गीतों को पढ़ने पर पाठक एक अनिवर्चनीय आनन्द के रस में डूब जाता है पाश्चात्य कवियों में 'डुयौडे' की 'आइकिजनिया', शैली की एपिप्सिकडियन रचनाएँ शाश्वत सौन्दर्य की अदृश्य कृतियाँ हैं जो मनुष्य को अदृश्य सत्ता के दिव्य स्वरूप का परोक्ष दर्शन कराती है ।

सामान्यतः इस महाशक्ति का दुरुपयोग मनुष्य विषय भोगों की लिप्सा में करता है । फलस्वरूप इसके दिव्य अनुदानों का लाभ जो श्रेष्ठ विचारों, उदात्त भाव सम्वेदनाओं के रूप में मिलता है, उसे नहीं उठा पाता । सृजनात्मक यह आधार क्षणिक इन्द्रिय सुखों के आवेश में नष्ट होकर मनुष्य की प्रगति को रोक देता है । यही कारण है कि शास्त्रों में ब्रह्मचर्य पर अधिक जोर दिया गया तथा समस्त सफलताओं का मूल आधार माना गया है । इसका आरम्भ तो इन्द्रिय संयम से ही होता है किन्तु अन्त ब्रह्म में एकाकार होकर होता है । इस दृष्टि से इन्द्रिय के स्थूल संयम का भी कम महत्व नहीं है । यह दमन का नहीं परिष्कार एवं उर्ध्वीकरण का मार्ग है । ब्रह्मचर्य का सुन्दरतम स्वरूप आदर्शों एवं सिद्धान्तों के प्रति प्रगाढ़ निष्ठा के रूप में दिखाई पड़ता है । इस तथ्य से अवगत हो जाने पर यौन आकर्षणों से विरक्ति हो जाती है ।

ब्रह्मचर्य का बल कुछ क्षणों के लिए प्रकृति के नियमों में भी हेर-फेर कर सकने में समर्थ होता है । सीता और सावित्री भारतीय नारियों के आदर्श हैं । उनकी उनके नाम लेने मात्र से मन में पवित्र भावों का संचार होने लगता है ।

ब्रह्मचर्य द्वारा मृत्यु पर भी विजय प्राप्त की जा सकती है । इस प्रतिपादन में तथ्य यह है कि उसे बहुत समय के लिए टाला जा सकता है । निस्सन्देह ब्रह्मचर्य सृजन शक्ति का उत्पादक है । यह प्रवाह का अवरोध नहीं वरन् उमंगों का उन्नयन है । जर्मन के महाकवि 'नवातिस' को अपनी प्रेमिका सोफी से असीम प्रेम था । वह पन्द्रह वर्ष की आयु में दिवंगत हो गई 'नवातिस' ने अपने हृदय में आदर्शों की प्रतिमूर्ति एक ऐसी आध्यात्मिक चैतन्य प्रियतमा की स्थापना की जिसने उसके जीवन की दिशा धारा ही मोड़ दी । आदर्शों की प्रतिमूर्ति यह प्रियतमा उसे आजीवन प्रेरणा देती रही । हृदय में आदर्शों के रूप में विद्यमान सोफी ने कवि को आत्मपरायण बनाकर ईश्वर के निकट पहुँचा दिया । काम के उन्नयन का यह उदाहरण उल्लेखनीय है । अपने विषय में वह लिखता है "एक बार में अपनी प्रेमिका के शोक में आँसू बहा रहा था । उसकी कब्र पर खड़ा असीम वेदना की अनुभूति कर रहा था । अपने को निर्बल और असहाय अनुभव कर रहा था । अचानक दूर क्षितिज से दिव्य प्रेरणाओं के रूप में एक ज्योति हमारे अन्तःकरण में प्रविष्ट हुई । अन्धकार की तमिस्रा दूर हुई । जन्म का बन्धन, स्थूल आकर्षण टूटकर बिखर गया । निराशा दिव्य प्रेरणा के रूप में अवतरित हुई । मेंरी प्रियतमा ईश्वरीय स्फुरणा के रूप में अवतरित हुई । उसके नेत्रों में अनन्तता के भाव थे । वह अनन्तता मेंरी अन्तरात्मा में स्थापित हो गई । आदर्शों के रूप में विद्यमान मेंरी आध्यात्मिक प्रियतमा मेंरे प्रेरणा की केन्द्र बिन्दु है ।"

काम के स्थूल आकर्षण का आध्यात्मिक प्रेम में परिवर्तित होना ही ऊर्ध्वगमन है । ब्रह्मचर्य का पालन विशेष प्रतिभा, चिन्तन में प्रखरता, वाणी की ओजस्विता, हृदय की विशालता के रूप में दृष्टिगोचर होता है । काम की सुन्दरतम् अभिव्यक्ति यही है । उसकी चरम परिणति ईश्वरीय प्रेम के रूप में होती है । ईश्वरीय सान्निध्य के दिव्य रसास्वादन का यही आधार बनता है ।

काम के इस वन्दनीय स्वरूप से काम तत्व की महत्ता एवं समर्थता से प्राचीन ऋषि-मनीषी भली-भाँति परिचित थे । यही कारण था कि उन्होंने उसके दमन की नहीं अपितु सृजनात्मक कार्यों में लगाने की विचारधारा को जन्म दिया था, और कामना की संज्ञा देकर उसे व्यापक अर्थ प्रदान किया था । अथर्ववेद ९/२/१९ में इस संबंध में कहा गया है- "कामों जज्ञे प्रथमम्..... विश्वहा महान्" अर्थात् इस सृष्टि में काम शक्ति सबसे महान है । वह सृजन भी कर सकती है और दुरुपयोग होने पर ध्वंस भी खड़ा कर सकती है । यही वह शक्ति है, जो प्रत्येक प्राणी के अन्तराल में समाहित उल्लास के रूप में उमँगती, आगे बढ़ने, ऊँचा उठने, विनोद का रस लेने एवं साहसिक प्रयास करने के रूप में निरन्तर प्रस्फुटित होती रहती है । इसी को आकर्षण शक्ति कहते हैं । जड़ पदार्थों में ऋण और धन विद्युत् के रूप में इसे ही कार्यरत देखा जाता है । भौतिकी के अनुसार भी सृष्टि की गतिविधियों का उद्गम यही है । शक्ति तरंग उसी से उद्भूत होती और संसार की अनेकानेक हलचलों का सृजन करती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अध्यात्मवेत्ताओं एवं कार्ल गुस्ताव जुंग जैसे विख्यात मनोविज्ञानियों ने काम प्रवृत्ति का साइकिक एनर्जी–मानसिक ऊर्जा के रूप में वर्णन किया है और कहा है कि उसका परिष्कृत रूप ही शारीरिक बलिष्ठता, मानसिक दक्षता एवं आत्मिक प्रखरता के रूप में दृष्टिगोचर होता है । प्राणियों में उसका उभार उत्साह, उल्लास एवं उमंगों के रूप में होता है । पारस्परिक प्रेम, सहयोग से उत्पन्न उपलब्धियों से परिचित होने के कारण आत्मा इस स्तर के प्रयासों में और सहज विनोद के लिए उन प्रयासों में प्रवृत्त होती है । शास्त्रकारों ने भी इसी को काम कहा है और उसकी उपयोगिता का समर्थन किया है । मनोवेत्ताओं द्वारा प्रतिपादित मानसिक ऊर्जा ही शास्त्रकारों के शब्दों में वह जीवन तत्व है, जिसे उत्तेजनाओं, वासनाओं को भड़काने से रोक कर मस्तिष्क की ओर प्रवाहित कर देने पर मनुष्य को ऊर्ध्वरता बनने का सौभाग्य प्राप्त होता है । रेतस्–जीवन ऊर्जा का ऊपर ही ऊपर मस्तिष्क की तरफ प्रवाहित होना ही ब्रह्मचर्य है । यही ऊर्जा जब आध्यात्मिकता की ओर मुड़ जाती है, तो आत्मा–परमात्मा में विचरण करने लगती है । ब्रह्मवर्चस् परायण जीवन इसी का नाम है । वेदों, उपनिषदों, एवं महापुरुषों का यही आदर्श एवं आदेश भी है ।

फ्रायड एवं एडलर जैसे पाश्चात्य मनोविज्ञानियों ने काम प्रवृत्ति को अर्जेज, इड, लिबिडो, विल आदि नाम देकर जिस संकुचित रूप में उसकी व्याख्या–विवेचना की है शास्त्रकार के शब्दों में वह ऐषणाओं का एक छोटा रूप है । ऐषणा का अर्थ है–मनुष्य को प्रेरणा देने वाली शक्ति । इसका उदात्तीकरण ही सदुपयोग का सही मार्ग है । यह मात्र कामोल्लास तक सीमित नहीं है । बृहदारण्यक उपनिषद् के सूत्र १/४ के अनुसार 'काम'–कामना रूप में व्यापक अर्थों वाला शब्द है । इसके उभार पर प्राणियों की प्रगति और पदार्थों की हलचलें निर्भर हैं । यही शक्ति अगणित उमंगों के रूप में प्रकट होती और विनोद भरे क्रियाकृत्य करने की प्रेरणा देती है । जीवन में सामान्य क्रिया–कलापों में मन लगाने और आनन्द मनाने का अवसर जिस अन्तःस्फूर्ति के आधार पर मिलता है मनीषियों ने उसे 'काम' कहा है । सद्कामना की पूर्ति में उत्साह और उमंग के साथ संलग्न होने वाली प्रवृत्ति ही 'काम' है । 'काम' के इस उच्चस्तरीय ऊर्जा का रसास्वादन जो न कर सका वह अर्धमृतकवत् जीवित रहेगा, उसे महत्वपूर्ण सफलताओं के दर्शन जीवन में कभी भी न हो सकेंगे ।

फ्रायड का काम स्वेच्छाचार एक अनैतिक प्रतिपादन

मनोविज्ञानशास्त्री फ्रायड का यह बहुचर्चित प्रतिपादन सर्वविदित है कि काम-वासना की अतृप्त इच्छायें से ही मनोविकारों को उत्पन्न करती हैं और उस अवरोध से प्रतिभा कुण्ठित होती है । मानसिक ही नहीं शारीरिक स्वास्थ्य पर भी बुरा असर पड़ता है और व्यक्तित्व दब जाता है । वे कहते रहे हैं कि मनुष्य इंजन है और काम–वासना उसमें बनती–बढ़ती भाप । यदि इस भाप को निकलने का अवसर न मिले तो विस्फोट होगा और व्यक्तित्व बिखर जायेगा । उन्होंने उन्मुक्त काम सेवन की वकालत की और उस पर लगे प्रतिबन्धों को हानिकारक बताया है ।

उस प्रतिपादन ने यौन सदाचार पर बुरा प्रभाव डाला है और लोगों का जितना विश्वास फ्रायड के प्रतिपादन पर जमा है उतना ही असंयम और व्यभिचार को प्रोत्साहन मिला है । सुशिक्षित वर्ग में इस तथाकथित मनोविज्ञान के आधार पर यह मान्यता जड़ जमाती जा रही है कि कामेच्छा की पूर्ति आवश्यक है । उसे स्वच्छन्द उपभोग का अवसर मिलना चाहिए । संयम से शारीरिक और मानसिक हानि होती है । इस प्रतिपादन का कुप्रभाव नर–नारी के बीच पावन सम्बन्धों की समाज व्यवस्था परक सुव्यवस्था एवं पवित्रता पर पड़ रहा है । दाम्पत्य जीवन में यदि कुछ अतृप्ति रह जाती है, तो उसे बाहर पूरा करने में भय, लज्जा, संकोच अनुभव नहीं करता वरन् उस उद्धत आचरण को शारीरिक मानसिक स्वास्थ्य की दृष्टि से आवश्यक मानता है । यह व्यभिचार का खुला समर्थन है । दाम्पत्य मर्यादाओं को फिर कैसे स्थिर रखा जा सकेगा । अविवाहित या विधुर यदि व्यभिचार पथ पर प्रवृत्त होते हैं तो उन्हें किस तर्क से समझाया जा सकेगा । फिर जो छेड़छाड़ और गुण्डागर्दी की अश्लील शर्मनाक घटनाएँ आये दिन होती रहती हैं उन्हें अवांछनीय या अनावश्यक कैसे ठहराया जा सकेगा । फ्रायड का शास्त्र दूसरे शब्दों में व्यभिचार शास्त्र ही है जिसे मनोविज्ञान में दार्शनिक मान्यता देकर समाज व्यवस्था पर कुठाराघात ही किया जा रहा है । एक तो वैसे ही पशु

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रवृत्तियाँ यौन उच्छृंखलता की ओर प्रोत्साहित करती थी, सामाजिक परिस्थितियाँ भी उसी ओर आकर्षण बढ़ाती थीं, इस पर उस प्रवृत्ति को वैज्ञानिक समर्थन मिलने लगे और संयम को हानिकारक बताया जाने लगे तब तो ब्रह्मचर्य और दाम्पत्य जीवन की पवित्रता का ईश्वर ही रक्षक है ।

फ्रायड कहते हैं–"मनुष्य बचपन से ही 'ईडिफुस कम्प्लेक्स' में यौन आकांक्षा अथवा यौन ईर्ष्या से ग्रसित रहता है । लड़का माँ के प्रति यौनाकांक्षा से प्रेरित होता है और लड़की बाप के प्रति आकर्षित होती है । तीन वर्ष की आयु से ही बच्चा अपनी माँ के साथ यौन सम्बन्ध स्थापित करने के लिए व्याकुल रहता है । एकाध साल बाद जब उसे पता चलता है कि उसकी माँ के साथ तो बाप का वैसा सम्बन्ध पहले से ही है तो उसके मन में बाप के प्रति ईर्ष्या और घृणा जग पड़ती है । यह विद्वेष उसकी अवचेतना में आजीवन बना रहता है । इसी प्रकार लड़की अपने बाप के प्रति सोचती है और माँ से ईर्ष्या करती है । इस मानसिक अवरोध के कारण मनुष्य की मानसिक प्रगति रूक जाती है और 'ईडिफस कम्प्लेक्स' उसके सामने तरह-तरह के अवरोध खड़े करता है । यह स्थिति अपवाद नहीं वरन् साधारणतया प्रायः यही होता है ।"

यह कितना घृणित और हास्यास्पद प्रतिपादन है । छोटा बच्चा यौन आकांक्षाओं से पीड़ित होगा सो भी अपनी माँ के साथ, यह बात समझ में नहीं आती । पशु–पक्षियों के शरीर में भी वासना तब उठती है जब उनके शरीर प्रजनन के योग्य सुदृढ़ हो जाते हैं । लेकिन मनुष्य बालक को वह वृत्ति इतनी छोटी आयु में ही कैसे पैदा हो जाती है और फिर माँ के साथ वैसी तृप्ति करने की उसकी शारीरिक मानसिक स्थिति भी तो नहीं होती । फिर तीन वर्ष के बालक को काम प्रयोग और उनमें माँ बाप के संलग्न होने की जानकारी कहाँ से हो जाती है । फिर वह यह कैसे समझ लेता है कि उसे बाप से ईर्ष्या करनी चाहिए । यह ऐसे बेतुके प्रतिपादन हैं जिसके लिए भर्त्सना ही की जानी चाहिए । लेकिन दुर्भाग्य यह है कि उन्हीं विचारों को मनोविज्ञान शास्त्र का आधार मान लिया गया है और उन्हें ही पढ़ने पढ़ाने की बात शिक्षा के क्षेत्र में बिना किसी ननुनच के स्वीकार कर ली गई है ।

फ्रायड ने अपनी तराजू पर सारी दुनिया को तालने की गलती की है । उनका निज का जीवनक्रम अवश्य कुछ ऐसे ही बेतुके क्रम से विकसित हुआ । फ्रायड की माता अमेंलिया असाधारण सुन्दरी थी । उसने योकोव के साथ अपना दूसरा विवाह किया था । जब फ्रायड जन्मा तब वह इक्कीस वर्ष की थी । बच्चे को बह बहुत प्यार करती थी । सम्भव है कुछ समझ आने पर फ्रायड की उसके रूप में यौनाकांक्षा भड़की हो और उसने माँ के प्यार को 'प्रणय' माना हो । वह जन्म से ही उद्दण्ड और ईर्ष्यालु था । एक दिन वह माता–पिता के सोने के कमरे में घुस गया और उन दोनों को विचित्र परिस्थिति में डालकर हड़बड़ा दिया । हो सकता है उसे इस स्थिति में ईर्ष्या उत्पन्न हुई हो । सात साल का था तो एक दिन बाप की ओर मुँह बनाकर चिढ़ाने लगा । बाप ने उसे डांटा और कहा यह छोकरा जिद्दी और निकम्मा बनता जाता है ।

यह घटनाएँ फ्रायड ने स्वयं लिखी हैं । उस पर सम्भव है अपने माँ बाप के सम्बन्ध में वैसी ही छाप पड़ी हो, जैसी कि उसने प्रतिपादित की है लेकिन यह एक विशेष मनःस्थिति के विशेष लड़के की ही बात कही जा सकती है । इसे सर्वसाधारण पर घटित नहीं किया जा सकता । सधारणतया बालक अपने माता–पिता के प्रति भाव भरे रहते हैं । उनके प्रति श्रद्धा, ममता और आदर का भाव रखते हैं । उनके साथ रहने के लिए प्रसन्नता अनुभव करते हैं । बाप को देखकर ईर्ष्या की आग में जल मरने वाले और माता से यौन सम्बन्ध स्थापित करने के इच्छुक तो कोई विरले ही होते होंगे । यदि सभी ऐसे होते तो लड़कियाँ अपनी माँ को और लड़के बाप को मार डालने का प्रयत्न करते और बड़े होने पर वह अचेतन वृत्ति बाप बेटी और माँ बेटे से ही शादी करा देती । तब विवाह सम्बन्ध ढूँढ़ने का झंझट ही दूर हो जाता ।

इस प्रकार के प्रतिपादन का उत्साह सम्भवतः फ्रायड को पाश्चात्य धर्म मान्यताओं से भी मिला होगा । क्योंकि उनका तत्वदर्शन कुछ ऐसा ही अटपटा है ।

यहूदी और ईसाई धर्म मान्यताओं के अनुसार मनुष्य जन्मजात पापी है । वह पाप वृत्तियों लेकर अवतरित हुआ है । उसकी प्रकृति पाप मूलक है । इस 'ओरीजिनल सिन' को ही सम्भवतः फ्रायड ने मनुष्य की मूलभूत प्रवृत्ति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

माना है । जो कुछ वह सोचता है, करता है, उसमें पाप ही प्रधान होना चाहिए । पापों में से प्रधानता किसे दी जाये । फ्रायड को इसके लिए सबसे सरल और आकर्षक 'सेक्स' ही जँचा और उसने यह मान्यता गढ़ डाली कि मनुष्य की स्थिरता एवं प्रगति सेक्स पर अवलम्बित है । उसकी निरन्तर इच्छानुरूप–स्वच्छन्द पूर्ति न हो सकेगी तो मन में कम्प्लैक्स ग्रन्थियाँ बनेंगी । मनोविकार उत्पन्न करेंगी, बीमारी लायेंगी और न जाने क्या–क्या करेंगी । इसलिए उन समस्त उपद्रवों और हानियों से बचने का एक ही आकर्षक तरीका है कि स्वच्छन्द काम सेवन की सुविधा प्राप्त की जाय । इस दिशा में लगे हुए प्रतिबन्धों और मर्यादाओं को अमान्य किया जाय । स्वेच्छाचार और स्वच्छन्दतावाद सम्भवतः इसलिए उन्हें उचित प्रतीत हुआ क्यों कि वह उस दर्शन में– जिसमें फ्रायड पले, यह माना जाता रहा है कि मनुष्य जन्मजात पापी है । पाप उसकी प्रकृति है । जब ऐसा ही है तो उस मूल प्रवृत्ति को क्यों रोका जाय ? उसे तृप्त ही क्यों न होते रहने दिया जाय ? यही है फ्रायड का अधूरा और बेतुका चिन्तन जिसे न जाने क्यों विचारशील लोगों ने आँखें बन्द करके स्वीकार कर लिया है ।

मनुष्य की प्रकृति में कामुकता का भी एक स्थान है लेकिन वह है सीमित । उसे मान्यता मिली है, उसे हर्षोल्लास के विकास की दृष्टि से प्रयुक्त भी होने दिया जाता है, लेकिन उसकी दिशा ऊँची रखी जाती है और यह प्रयत्न किया जाता है कि वह ऊर्ध्वगामी होकर विकसित हो । विवाह के समय पत्नी प्रियतमा व प्रेयसी होती है, रस रंग में सहायक होती है, लेकिन उसकी इस स्थिति की अवधि बहुत स्वल्प है । जल्दी ही वह माँ बन जाती है और फिर पति भी, पत्नी भी अपने उत्तरदायित्वों और गृहस्थ के कर्त्तव्यों को देखते हुए बालकों पर पड़ने वाले प्रभाव का ध्यान रखते हुए उस प्रणय प्रवृत्ति को जल्दी ही शालीनता में परिणत करने लगते हैं । आरम्भिक दिनों में चन्द्र वंदनी मृगनयनी आदि कहा जाता था पर थोड़े दिनों ही बाद वह मुन्नी की मम्मी, श्याम की माँ कहकर पुकारी जाती है । फिर परस्पर सम्बोधन बच्चों के नाम पर उनकी माताजी या उनके पिताजी कहकर किये जाते हैं । वासनात्मक दृष्टिकोण बदलकर अभिभावकों का, बुजुर्गों का बन जाता है । यही स्वस्थ दृष्टिकोण है । धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, की चार उपलब्धियों में एक गणना काम की भी है, परन्तु उसकी प्रधानता नहीं तीसरा नम्बर है । पहले धर्म कर्त्तव्य –इसके बाद अर्थ पुरुषार्थ –तब कहीं काम– सो भी तुरन्त छुटकारे से मोक्ष से– तनिक ही पूर्व । सूर्य चन्द्र पर ग्रहण लगता तो है परन्तु उसका मोक्ष काल भी जल्दी ही आ जाता है । यही है तथ्यपूर्ण काम मर्यादा ।

माना कि पशु प्रवृत्तियाँ भी मनुष्य के भीतर हैं लेकिन इसका अर्थ यह तो नहीं है कि उन्हें खुलकर खेलने के लिए छुट्टल कर दिया जाय । उनका उदात्तीकरण ही तो 'संस्कृति' है बालों को काट–छांट कर साज–सँभाल कर ही तो उन्हें सुन्दर बनाया जाता है । यदि उन्हें मूल रूप में ही बढ़ने दिया जाय तो फिर मनुष्य की शक्ल आदम मानव जैसी कुरूप बन जायगी । बगीचे की कटाई, छटाई खुदाई निराई न की जाय तो वह झाड़-झंखाड़ के रूप में कुरूप बना खड़ा होगा । पशु प्रवृत्तियों का उदात्तीकरण ही तो 'कला' है । कला रहित को सींग, पूँछ रहित पशु कहा गया है । 'काम' को भारतीय दर्शन में भी उसके मूल स्वरूप में स्वीकार किया गया है और उसका सम्मान भी किया गया है । उसे 'पाप' नहीं माना गया वरन् हर्षोल्लास, विनोद, कौतुक के भावान्दोलन का लाभ लेकर उसे श्रद्धा सिक्त अध्यात्म की दिशा में उन्मुख कर दिया गया है । शिव लिंग की प्रतिमाएँ देव मन्दिरों में पूजी जाती हैं यह नर-नारी की जननेन्द्रियाँ ही हैं । उन्हें सृष्टि बीज–चेतना केन्द्र के रूप में श्रद्धासिक्त दृष्टि से देखा जाता है और अर्चना अभ्यर्थना के उच्च स्तर पर उन्हें बिठाकर वन्दन अभिनन्दन किया जाता है । उच्छृंखल उन्माद के लिए कोमल भावनाओं के रूप में उन्हें मृदुल रस धारा बनाकर जीवन मरुभूमि में प्रवाहित करना ही ललित कलाओं का उद्देश्य है शिव द्वारा काम दहन के पौराणिक कथानक ने स्थूल काम सेवन को विक्षोभकारी, असन्तुलन उत्पादन का अपराधी ठहरा कर विवेक के तृतीय नेत्र से उसे भस्म कराया है । साथ ही उसे अशरीरी बनकर अजर-अमर रहने का वरदान भी मिला है और उसे देवताओं की पंक्ति में बिठाया गया है । यही है काम सम्बन्धी परिष्कृत दृष्टिकोण ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

परन्तु सन्तोष इस बात का है कि आरम्भ में फ्रायड को जैसा समर्थन मिला था और नवीन सभ्यताभिमानियों ने हर स्तर पर जिस उत्साह से उसकी हाँ में हाँ मिलाई थी, अब वैसी बात नहीं रही । वह जोश ठण्डा पड़ता जा रहा है और संयम सदाचार को वैसा ही उपयोगी माना जाने लगा है जैसा कि प्राचीन काल से माना जाता आ रहा है । विज्ञानवेत्ताओं की नवीनतम शोधें फ्रायड का समर्थन नहीं करतीं वरन् उसे झुठलाती हैं ।

लीसेस्टर विश्वविद्यालय के मनोविज्ञान प्राध्यापक डा. डेविड राइट ने अपने शोध पर्यवेक्षण से यह निष्कर्ष निकाला है कि काम वासना मनुष्य की स्वाभाविक एवं जन्मजात प्रवृत्ति नहीं है वरन् वह सामाजिक जीवन के प्रचलन द्वारा आरोपित है । उन्होंने पशुओं पर किये गये अपने परीक्षणों से सिद्ध किया है कि काम सेवन के अभाव में कोई जन्तु हिंसक या समाज विरोधी नहीं बनता वरन् वह अपेक्षाकृत अधिक सौम्य हो जाता है । वंध्य बनाये गये बैल, भैंस, घोड़े, बकरे, गधे आदि उन्मुक्त काम सेवन करने वाले अपने सजातियों की तुलना में अधिक शान्त प्रकृति के होते हैं जबकि फ्रायड का कहना है कि यदि मनुष्य को काम सेवन की छूट न मिले तो वह समाज विरोधी बन जायेगा । यह बात उन्हीं लोगों के लिए सही हो सकती है जो उच्छृंखल वातावरण में रह रहे हैं । साधु प्रकृति के संयमी, सदाचारी और ब्रह्मचारी काम सेवन का अवसर न रहने पर भी न तो हिंस्र बनते हैं और न समाज विरोधी ।

श्री राइट ने अनेकों उदाहरणों से अपनी कृति 'इण्टरकोर्स इज नॉट ऐन एण्टरटेनमेण्ट' में यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया है कि यदि कामुकतापूर्ण वातावरण एवं चिन्तन से दूर रहा जाय तो वह प्रवृत्ति स्वयमेव शिथिल या समाप्त हो जाती है । द्वितीय महायुद्ध में पकड़े गये बन्दी सैनिकों तथा साइबेरिया के श्रम शिविरों में बन्द लोगों का पर्यवेक्षण करने पर निष्कर्ष निकला है कि उनकी न केवल रति क्षमता वरन् वह इच्छा भी घट गई अथवा समाप्त हो गई । इसी प्रकार उन्होंने किन्हीं महत्वपूर्ण कार्यों में मनोयोग पूर्वक लगे हुए व्यक्तियों के उदाहरण देते हुए बताया है कि उन्हें अपने चिन्तन की व्यस्तता में काम सेवन की न तो इच्छा होती है और न आवश्यकता प्रतीत होती है । सेनानायक, नाविक, पर्वतारोही, वैज्ञानिक, शोधकर्त्ता अध्ययन परायण व्यक्तियों की कामेच्छा बहुत स्वल्प होती है और वह भी तब तक जाग्रत नहीं होती जब कि वातावरण, संवाद अथवा स्वचिन्तन से ही उस तरह की अतिरिक्त उत्तेजना न मिले ।

भारत के नैतिक एवं सामाजिक स्वास्थ्य संगठन दिल्ली के एक शोध अध्ययन से पता चलता हैं कि काम सेवन की न्यूनता से नहीं वरन् उसकी अति से पारिवारिक कलह उत्पन्न होते हैं । इस दिशा में अधिक आतुर, उत्सुक रहने वाले न केवल शारीरिक दुर्बलताग्रस्त होते हैं वरन् मानसिक सन्तुलन खोकर चिड़चिड़े भी हो जाते हैं और उस अति को अपने ऊपर अत्याचार मानकर विरोध विद्रोह भी करते हैं । पारिवारिक कलह एवं मनोमालिन्य की घटनाओं में इस विग्रह का बहुत बड़ा हाथ पाया गया है । जो लोग मर्यादाओं में रहते हैं उन्हें एक-दूसरे से शिकायत होना तो दूर उलटे विश्वास, सम्मान, सन्तोष, और सहयोग की मात्रा बढ़ी-चढ़ी रहती है ।

श्री डेविड राइट के उक्त कथन की और भी पुष्टि वैज्ञानिक अनुसन्धान द्वारा मिल जाती है और इस तरह फ्रायड के सिद्धान्त का लगभग अन्त ही हो जाता है । आने वाले समय में लोग फ्रायड के सिद्धान्त को तूल देकर अपना न तो मस्तिष्क खराब करेंगे और न शरीर की शक्तियाँ बरबाद करेंगे वरन् शक्तियों के संचय से जीवन की अनेक ऐसी धाराओं का विकास करने में समर्थ होंगे, जिनका सम्बन्ध आध्यात्मिक तत्वों से है और जो यथार्थ में मनुष्य के लक्ष्य हैं । ईश्वर, आत्मा, परलोक, पुनर्जन्म जैसे आध्यात्मिक सत्यों की शोध में ब्रह्मचर्य सबसे अधिक सहायक है । आगे की पीढ़ी का ध्यान ब्रह्मचर्य द्वारा शक्ति संयम और उससे जीवन की प्रसन्नता के लिए नई-नई विधाओं की खोज की ओर कहीं अधिक होगा ।

मेंरीलैण्ड (अमरीका) के नेशनल इन्स्टीट्यूट आफ चाइल्ड हेल्थ एण्ड डेवलपमेंन्ट (अमरीका की एक राष्ट्रीय संस्था जो बच्चों के स्वास्थ्य और मानव विकास की आवश्यकताओं की शोध और शिक्षण करती है) ने एक खोज में बताया कि मनुष्य शरीर की कोशिकाओं में गुणसूत्रों (क्रोमोसोम्स- अर्थात व्यक्ति के शरीर स्वभाव आदि का निर्धारण करने वाले तत्व) के तेईस जोड़े रहते हैं । प्रत्येक जोड़े में एक गुणसूत्र पिता का तथा एक माता का होता है । २२ जोड़े ऐसे होते हैं जिनका काम-वासना सम्बन्धी गुणों व विकास से कोई सम्बन्ध नहीं होता ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अधिकतम एक ही जोड़ा काम–वासना का रहता है इसी से काम वासना की प्रवृत्ति का व्यक्ति में निर्धारण होता है किन्तु कुछ मामलों में यह भी देखा गया है कि उस एक जोड़े में भी एक गुणसूत्र या तो माता की ओर का या पिता की ओर का था ही नहीं, सारे २३ समूहों में केवल एक ही गुणसूत्र था । ऐसे व्यक्तियों में सेक्स अंगों का विकास तो असामान्य होता है किन्तु उनके स्वभाव में काम–वासना सम्बन्धी कोई विशेष रुचि नही होती वरन् कई बातों में वे असाधारण प्रतिभा वाले सिद्ध हुये । बेशक ! कुछ ऐसे भी उदाहरण आये जबकि बाईस जोड़े अलिंगी गुणसूत्रों (आटोसपल क्रोमोसोम्स) की जगह २१ जोड़े ही रह गये शेष दो में से एक तो पूरा ही जोड़ा काम–सम्बन्धी गुणसूत्र का था जबकि दूसरे में भी एक गुणसूत्र काम–वासना वाला था । वैज्ञानिकों ने पाया कि इस अतिरिक्त काम–वासना के गुणसूत्र वाले सभी व्यक्ति लम्पट, क्रोधी, असामाजिक और खूँखार थे । तात्पर्य यह कि काम–वासना पर नियंत्रण न होना व्यक्ति के लिये सुविधा का नहीं पतन का ही कारण हो सकता है ।

मनोविज्ञान फ्रायड की ही बपौती नहीं है इस पर अन्यान्य शोध कर्त्ताओं ने भी भारी परिश्रम किया है और महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकाला है । मानवी मूल प्रवृत्तियों की चर्चा करते हुए अन्यान्य मनः शास्त्रियों ने कितनी ही प्रवृत्तियों को प्रमुख बताया है और उनमें एक नगण्य सी प्रवृत्ति के रूप में ही कामुकता को स्थान दिया है । वे कहते हैं कि इस प्रवृत्ति को वैसी प्रधानता किसी भी प्रकार नहीं दी जानी चाहिए जैसी कि फ्रायड प्रभृति ने दी है ।

मनोविज्ञानवेत्ता जुंग ने डा. सिगमंड फ्रायड के इस प्रतिपादन पर करारा व्यंग किया है कि "मनुष्य की इच्छाएँ तथा चेष्टाएँ प्रधानतया काम वासना से प्रेरित हैं ।" उन्होंने कहा है ऐसा सोचना अन्तःकरण और व्यवहार के बीच की एक धुँधली सी परत की चर्चा भर है । यह मन की वास्तविक स्थिति नहीं वरन् उसकी काली कुरूप छाया भर है । क्रिया प्रतिक्रिया को उस उथल-पुथल में कई मीठी कड़वी लहरें मन में उठती रहती हैं । उनमें से एक लहर काम वासना भी है । उसे इतना ही महत्व मिलना चाहिए । वह अकिंचन सी विकृति ही चेतना की मूल प्रेरणा नहीं है ।

यदि वह मनुष्य की अपरिहार्य प्रवृत्ति है तो उससे छुटकारा पाने का कोई क्यों प्रयत्न करेगा और क्योंकर उससे छूट पायेगा । प्रतिबंधों और मर्यादाओं से रहित काम तृप्ति की स्वच्छंदता यदि तथाकथित मनोविज्ञान के आधार पर माँगी और दी जायेगी तो फिर इस संदर्भ में पूरी तरह पशु प्रवृत्ति का साम्राज्य छा जायेगा । बहिन, बेटी, माता का रिश्ता पशुओं में नहीं होता । वे इस सम्बन्ध में पूरी स्वच्छंदता बरतते हैं फिर यही आधार प्रकृति की प्रेरणा के नाम पर मनुष्यों को भी अपनाना होगा तब बात इसी सीमा तक न रुकेगी वरन् प्रचलित परिवार व्यवस्था को भी प्रतिगामी ठहराना पड़ेगा । पशु समाज में दाम्पत्य जीवन प्रायः काम सेवन के थोड़े समय तक ही सघन रहता है । उसके उपरान्त तत्क्षण उसका अन्त हो जाता है । गर्भवती के प्रति नर का न कोई कर्त्तव्य होता है और न उत्तरदायित्व । बच्चों के पालन पोषण में भी वह क्वचित ही सहायता करता है । मादा को भी दाम्पत्य सुख के लिए कुछ क्षण तक साथ रहे क्षणस्थायी पति की न तो याद रहती है और न उसके साथ कोई सहानुभूति दीखती है । बच्चे तभी तक माँ का सहारा तकते हैं जब तक वे अपने पैरों पर खड़े नहीं हो जाते । समर्थ होते ही माता और बालकों के संबन्ध का अन्त हो जाता है । मनुष्य को भी इसी स्थान तक यह मनोविज्ञानी प्रतिपादन पहुँचा कर रहेंगे । इतने सामाजिक, नैतिक, भावनात्मक बन्धनों में जकड़ कर मनुष्य को दाम्पत्य जीवन के प्रति एक सीमा तक निष्ठावान बनाया गया है । इसमें भी आये दिन लुक छिपकर व्यतिरेक होते रहते हैं और व्यभिचार, बलात्कार, गर्भपात, अपहरण हत्या, आत्महत्या, जैसे क्रूर कर्म सामने आते रहते हैं । समाजशास्त्री यही सोचते रहते हैं कि यदि यह प्रतिबन्ध ढीले होते चले गये और मर्यादाएँ शिथिल पड़ीं तो मनुष्य पशुता तक ही नीचे न उतरेगा वरन् पिशाच होकर रहेगा । धर्म के प्रति अनास्था और यौन उच्छृंखलता वर्तमान वातावरण में अपने आप ही बढ़ती चली जा रही है । यदि इसे मनोविज्ञान के नाम पर आवश्यक और उचित भी ठहराया जाने लगेगा तब फिर इस संदर्भ में बरते वाले जाने नीति नियमों की कोई आवश्यकता ही न समझी जायेगी । इन्हें तोड़ना प्रतिगामिता मानी जायेगी । ऐसी दशा में नर-नारी के बीच सभ्यता की,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शील सदाचार की, मर्यादा और उत्तरदायित्व की जो झीनी दीवार खड़ी है उसका भी पूरी तरह अन्त हो जायेगा। धर्म और संयम का परित्याग कर देने पर मनुष्य समाज का अन्ततः क्या बनेगा, इसका स्वरूप सोचने भर से जी काँपने लगता है। विज्ञान या मनोविज्ञान यदि इसी स्तर पर मनुष्य को पहुँचाने के लिए प्रयत्नशील हैं तो फिर वह दुखद दुर्भाग्य एवं अभिशाप ही सिद्ध होगा।

मनोविज्ञानी फ्रायड के विश्लेषण पर इन दिनों बहुत चर्चा है। वे मूल प्रवृत्तियों में सर्वप्रधान काम प्रवृत्ति को मानते हैं। चर्चा तो अन्य कई प्रवृत्तियों के अस्तित्व की भी करते हैं परन्तु सबसे प्रबल काम प्रवृत्ति को ही मानते हैं और कहते हैं उसकी तृप्ति के लिए समुचित अवसर मनुष्य के जीवनक्रम में रहना चाहिए।

इस प्रतिपादन ने कामुकता के नियंत्रण को भूत कालीन मान्यता पर आघात किया है और यह इस प्रकार सोचा जाने लगा है कि काम-क्रीड़ा एवं यौन तृप्ति के लिए स्वच्छंदता को मान्यता मिलनी चाहिए और इस सन्दर्भ में लगे हुए वर्तमान प्रतिबन्ध समाप्त अथवा शिथिल किये जाने चाहिए। नर-नारी के बीच सामान्य वार्ता व्यवहार की तरह कामुक आमोद-प्रमोद को भी स्वाभाविक एवं निर्दोष समझा जाना चाहिए। फ्रायड का प्रतिपादन क्रमशः इसी प्रकार की मान्यताओं का समर्थन करता है। फलतः कामुक स्वेच्छाचार को उचित एवं आवश्यक समझ लिया जाता है। ऐसी दशा में दाम्पत्य जीवन की पवित्रता की जडें ही हिल जाती हैं।

किन्तु ऐसा नहीं समझा जाना चाहिए कि मनोविज्ञान के कर्त्ता-धर्त्ता केवल फ्रायड ही हैं। उन्ही की तरह दूसरे अन्वेषक भी हुए हैं और वे भी शोध कार्य में इस क्षेत्र के अग्रणी समझे जाते हैं, उन्होंने मूल प्रवृत्तियों की व्याख्या की है। उसमें कामुकता को नहीं अन्य प्रवृत्तियों को प्रमुख माना है। उनकी खोज में कामुकता एक प्रवृत्ति तो है लेकिन उसका स्थान बहुत ही हल्का एवं गौण है। इसे बदलने, सुधारने में उनके कथनानुसार कोई बड़ी कठिनाई नहीं होनी चाहिए। सामाजिक एवं नैतिक आवश्यकता के अनुरूप यदि उस पर एक सीमा तक प्रतिबन्ध लगाया जाय तो उससे किसी बड़ी हानि की आशंका नहीं है।

मनोविज्ञानियों के विश्लेषणों में प्रधान मूल प्रवृत्तियों के सम्बन्ध में भारी मतभेद हैं। उदाहरणार्थ हाब्स ने मूल प्रवृत्तियों के अनुसार मनुष्य को निर्दयी तथा स्वार्थी माना है। एडम स्मिथ ने अपने ग्रन्थ, "सिम्पथेटिक बेसिस आफ ह्यूमन एक्टिविटीज" में सहानुभूति को मूल प्रवृत्ति एवं मनुष्यों का पारस्परिक व्यवहार का प्रधान आधार माना है। ट्रोटर ने अपने ग्रन्थ- "इन्स्टिक्ट्स आफ दि हर्ड इन पीस एण्ड वार" में मनुष्य को सामाजिकता एवं सामूहिकता की प्रवृत्तियों से ओत-प्रोत सिद्ध किया है।

डा. पेमाख मूल प्रवृत्तियों को स्वीकार करते हैं, परन्तु वे कहते हैं कि उत्तेजना मिलने पर ही वे जाग्रत होती हैं यदि उन्हें छेड़ा न जाय तो उनका क्वचित प्रभाव ही दृष्टिगोचर होगा। वह भी इतना हल्का होगा कि उसे थोड़े प्रयत्न से मोड़ा मरोड़ा जा सके।

"जिंसबर्ग" यह मानते हैं कि मूल प्रवृत्तियाँ मनुष्य की अभिरुचि को अपनी दिशा में आकर्षित तो करती हैं लेकिन वे इतनी प्रबल नहीं होती कि रोकने मोड़ने पर कोई विग्रह खड़ा कर दें।

मैग्डूगल ने अपने ग्रन्थ "आउटलाइन आफ साइकोलौजी" में इस तथ्य को और भी अधिक स्पष्ट किया है कि मूल प्रवृत्तियों में ज्ञानात्मक, क्रियात्मक और रागात्मक तीनों प्रकार की मानसिक क्रियाएँ जुड़ी हुई हैं फिर भी वे शरीर मस्तिष्क को चलाने वाली स्वसंचालित सहज क्रियाओं जैसी नहीं। रक्ताभिषरण, श्वास-प्रश्वास, आकुंचन, प्रकुंचन जैसा अपरिहार्य उनका वेग नहीं है। वे परिवर्तनशील हैं और सुधारी जा सकती हैं। शहद की मक्खी में छत्ता बनाने की जो प्रवृत्ति है वह सहज क्रिया है। लेकिन कुत्ते की मूल प्रवृत्ति जहाँ भी आहार मिले वहाँ से झपट लेने की आदत बदली जा सकती है और रोटी पाने के लिए उपयुक्त अवसर की प्रतीक्षा करने के लिए अभ्यस्त किया जा सकता है।

मनोविज्ञानी जेम्स के अनुसार छः प्रकार की मूल प्रवृत्तियाँ मनुष्यों में पाई जाती हैं परन्तु यह आवश्यक नहीं कि हर किसी में वे समान रूप से उभरी हुई हैं किसी में इनमें से किसी का संवेग तीव्र हो सकता है और किसी में उसका स्तर उतना क्षीण हो सकता है कि उनके अस्तित्व की संभावना ही संदिग्ध प्रतीत होने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लगे । जेम्स इन्हें छः की संख्या में गिनते हैं । (१) सार्वभौमिकता–यूनिवर्सिलिटी (२) जन्मजात–इन्नेट (३) संशोधन क्षमता–एडाप्टेबिलिटी (४) प्रयोजन–परपज (५) प्राथमिक पूर्णता–परफेक्शन फर्स्ट पर्फोरमेंन्स (६) सम्पूर्ण मानसिक क्रिया–कम्पलीट मेंन्टल एक्शन ।

थॉर्नडाइक का कथन है कि मनुष्य की मूल प्रवृत्तियाँ एक सौ तक गिनी जा सकती हैं जिनमें से चालीस तो ऐसी हैं जिनका अस्तित्व न्यूनाधिक मात्रा में प्रायः हर किसी में देखा जा सकता है । डा० बर्नार्ड ने अपने "ए स्टडी आब सोशल साइकोलॉजी" ग्रन्थ में लगभग उतनी ही संख्या में मूल प्रवृत्तियों की गणना की है जितनी के थॉर्नडाइक बताते है ।

'ड्रेवर' ने अपने ग्रन्थ 'इन्स्टिक्ट इन मैन' में वासनात्मक और प्रतिक्रियात्मक दो वर्गों में मूल प्रवृत्तियों का विभक्तिकरण किया है । किल पेट्रिक ने (१) आत्म-रक्षा की प्रवृत्ति–सेल्फ प्रिजर्वेटिव इंस्टिक्ट (२) सन्तानोत्पत्ति की प्रवृत्ति–रिप्रोडक्टिव इंस्टिक्ट (३) सामूहिक जीवन की प्रवृत्ति–ग्रेगेरियस इंस्टिक्ट (४) परिस्थितियों के अनुकूल जीवन चलाने की प्रवृत्ति–एडॉप्टिव इंस्टिक्ट (५) आदर्श पालन की प्रवृत्ति–रेगुलेटिव इंस्टिक्ट को ही प्रधान माना है । शेष को या तो प्रधान प्रवृत्तियों में गिनते ही नहीं, या फिर उन्हें वे तुच्छ उपेक्षणीय कहते हैं ।

वुडवर्थ ने उनका विभाजन नौ श्रेणियों में किया है (१) आंगिक आवश्यकता (२) काम प्रेरणा (३) पलायन प्रेरणा (४) लड़ना (५) अनुसंधान (६) विनोद (७) सामाजिक चेतना (८) संस्थापक (९) विनीतता ।

मैग्डूगल के ग्रन्थ 'सोशल साइकोलॉजी एण्ड आउट-लाइन आफ साइकोलॉजी' में मूल प्रवृत्तियों की संख्या चौदह बताई गई है । (१) पलायन–एस्केप (२) युयुत्सा–कम्बैट या पुगनैसिटी (३) निवृत्ति–रिपल्सन (४) संवेदना–अपील (५) भोग–मैटिंग आरसेक्स (६) जिज्ञासा–क्यूरियोसिटी (७) दैन्य–सबमिशन (८) आत्म गौरव–सेल्फ एसोर्शन (९) सह जीवन–ग्रेगेरियासनेस(१०) आहारान्वेषण–फडसीकिंग (११) संचय–एक्विजिसन (१२) विधायकता–कान्स्ट्रक्टिवनेस (१३) हास–लाफ्टर ।

मनः शास्त्री बेब्लोनस्की का कथन है कि मनुष्य की मूल प्रवृत्तियाँ इतनी अधिक हैं जितना अनन्त आकाश । उन्हें गणना की सीमा से परे सार्वभौम कहना चाहिए । सार्वभौमिकता भूख, प्यास, निन्द्रा जैसी उन प्रवृत्तियों को कहते हैं जो समस्त विश्व के मनुष्यों में एकसमान पाई जाती हैं । 'जन्मजात'– वे हैं जो बच्चों में जन्मते ही साथ आती हैं– दूध चूसना, अंग संचालन आदि । समयोजन की क्षमता का तात्पर्य है– परिस्थितियों के अनुरूप उपाय खोजना और अपने को ढालना, प्रयोजन किसी सामयिक आवश्यकता की पूर्ति के लिए सहज बुद्धि से तत्पर हो जाना । सम्पूर्ण मानसिक क्रिया का स्वरूप है विपत्ति सामने आते ही उसका सामना करने के लिए हर अंग का क्रियाशील हो जाना । शेर सामने आते ही मुँह चिल्लाने, हाथों से पत्थर उठाने, पैरों से भागने जैसे बहुमुखी क्रियाकलाप का एक साथ–तत्काल आरम्भ हो जाना । जिज्ञासा, संग्रहशीलता, अहमन्यता का प्रदर्शन दूसरों की तुलना में श्रेष्ठ सिद्ध होने की इच्छा जैसी अनेकों अन्य प्रवृत्तियाँ भी ऐसी हैं जो न्यूनाधिक मात्रा में हर मनुष्य के अन्दर विद्यमान रहती हैं ।

मनः शास्त्रियों के अन्यान्य प्रतिपादनों को देखते हुए फ्रायड के काम स्वेच्छाचार का प्रतिपादन बहुत ही बचकाना और एकांगी प्रतीत होता है । खेद इसी बात का है कि ऐसे अधूरे और अवांछनीय निष्कर्षों को अग्रिम पंक्ति में बिठाने की ऐसी भूल की जा रही है जिसका परिणाम मानव समाज का भविष्य अन्धकारमय ही बना सकता है ।

यह फ्रायड जैसे कामुकता समर्थक दार्शनिकों की ही देन है जिसने पाश्चात्य देशों को मनोविज्ञान के नाम पर बहुत प्रभावित किया है और वहीं से वह आँधी अब इस देश में भी बढ़ती आ रही है । मार्क्स ने आर्थिक आवश्यकताओं को प्रधानता दी, जिससे लोगों के जीवन का एक लक्ष्य हो गया–पैसा । फ्रायड ने 'काम सुख ही इष्ट' का सिद्धान्त देकर लोगों को वासना का अपराधी बना दिया । यदि आज के मनुष्य का मानसिक विश्लेषण किया जाय तो मिलेगा कि ईश्वर, आत्मा; ज्ञान, शिक्षा, प्रेम, व्यवहार, आदरसत्कार, सामंजस्य, सहयोग, लोक–सुधार और पारलौकिक सद्गति आदि की कल्पना उन्हें छू भी नहीं गई–(१) पैसा और (२) काम–सुख यही दो लक्ष्य अब शेष रह गये हैं ।

अपने जीवन की इसी संस्कार जन्य कमजोरी के कारण लगता है कि फ्रायड ने 'काम–सुख' को ही एक सर्वसाधारण सिद्धान्त मान लिया और उसे ही सत्य सिद्ध करने में जीवन भर लगा रहा । मनुष्य जीवन की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साधारण गति अधोमुखी होती ही है सो उसे समर्थक भी मिलते गये और देखते–देखते 'फ्रायड के सेक्स' ने सारे पाश्चात्य समाज को अपनी कुण्डली में बाँध लिया ।

नैपोलियन २५ वर्ष की आयु तक काम–सुख तो क्या नारी के प्रति भी आकृष्ट नहीं हुआ था । न्यूटन के मस्तिष्क में यौनाकर्षण उठा होता तो उसने अपना बुद्धि कौशल सृष्टि के रहस्य जानने की अपेक्षा अपरिमित काम–सुख प्राप्त करने में झोंक दिया होता । भीष्म और हनुमान प्रतिज्ञाबद्ध हो सकते हैं, लेकिन न्यूटन के सामने तो वैसी कठिनाई थी ही नहीं । जन्मजात प्रतिभायें अधोमुखी ही नहीं, ऊर्ध्वमुखी भी होती रही हैं और उनसे काम–सुख की अपेक्षा अधिक सुख लोगों को मिलता रहा है । हमारे देश में तो सच्चे और शाश्वत सुख की प्राप्ति में काम–वासना को प्रधान बाधा माना गया है । रामकृष्ण परमहंस विवाहित होकर भी योगियों की तरह रहे, वे सदैव आनन्द विह्वल रहते थे । स्वामी रामतीर्थ और भगवान् बुद्ध ने तो ऊर्ध्वसुख के लिये तरुणी पत्नियों का परित्याग कर दिया था । महर्षि दयानन्द ब्रह्मचारी होकर जिये । महात्मा गाँधी ने ३६ वर्ष की अवस्था के बाद काम–वासना को बिल्कुल नियंत्रित कर दिया था तो भी उनके जीवन से प्रसन्नता का फौबारा छूटता रहता था, तब फिर क्या 'काम–सुख को प्रधान जीवन सुख और लक्ष्य' की मान्यता दी जा सकती है ?

'रेतस' को ऊर्ध्वगामी बनाकर जो उल्लास शक्ति, प्रसन्नता, प्रमोद और आनन्द मिलता है योग–शास्त्रों में उसकी बड़ी प्रशंसा की गई है और उसे अनवरत काम सुख से भी बढ़कर बताया गया है । यौनाकर्षण तो क्षणिक सुख की प्रेरणा देता है, इस प्रकार की तृप्ति से आंशिक सुख भले ही मिल जाता हो लेकिन बाद में शरीर और आत्मा की दुर्गति ही होती है । मनुष्य के विचार और क्रियाकलाप सब निम्नगामी होते चले जाते हैं, व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में विद्रूपता और उपद्रव उठ खड़े हो जाते हैं । आंकड़े बताते हैं कि आज पाश्चात्य देशों में यौन–सदाचार की कितनी दुर्गति हुई है । इस दुर्गति के परिणामस्वरूप वहाँ के वैयक्तिक जीवन में रोग–शोक, चिन्ता, दुर्वासनायें, पारिवारिक जीवन में क्रोध, कलह, असंतोष और संताप एवं सामाजिक जीवन में अशांति, उच्छृंखलता, उद्दंडता और शत्रुता का कितना भयानक वातावरण छा गया है ।

अब यह प्रवाह धीरे–धीरे इस देश को भी छूने लगा है । बालकों के चरित्र और सहवास की मर्यादायें ढीली होने से स्वास्थ्य पर तो बुरा असर पड़ा ही है, सामाजिक जीवन में उच्छृंखल मनोवृत्ति का तेजी से विकास होता जा रहा है । वंशानुसंक्रमण की सारी तेजस्विता और स्वाभिमान नष्ट होता जा रहा है । बच्चे छोटी अवस्था से ही आत्म–हीनता (इनफीरियरिटी काम्प्लेक्स) से ग्रसित होते जा रहे हैं । आज का नवयुवक अपने भीतर इतनी आत्म–हीनता भरे हुऐ रहता है कि वह अपने आपको अच्छी तरह व्यक्त भी नहीं कर सकता ।

काम विज्ञान का आध्यात्मिक स्वरूप

उल्लास और उत्साह मनःक्षेत्र की अति शक्तिशाली क्षमतायें हैं । उन्हें मृत संजीवनी सुधा कह सकते हैं । सूखे, मुरझाए,टूटे, हारे, निराश व्यक्ति में नवजीवन का संचार करने की इनमें क्षमता है । इसलिए जीवन की जिन चार महती आवश्यकताओं की गणना की जाती है, उनमें इसी को प्राथमिकता दी गई है । जीवन के परम लाभ चार हैं– धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष । इनमें काम प्रथम है काम का सीधा सादासा अर्थ है–प्रसन्नता, प्रफुल्लता, उमंग और आशा की झलक–छलक । यह जिन माध्यमों से सम्भव हो सके उन्हें काम कहा जा सकता है । काम अर्थात् क्रीड़ा–विनोद । कला की समूची व्याख्या इतने में ही सीमित की जा सकती है ।

कई बार दो परस्पर विरोधी तथ्य भी एक जैसे दीख पड़ते हैं । कई बार असली का भ्रम नकली उत्पन्न कर देता है । कई बार छद्म पाखण्ड धर्म जैसा प्रतीत होता है । ऐसा ही एक दुर्देव काम के साथ भी जुड़ गया है । काम वासना–कामुकता, वासना, अश्लीलता, यौनाचार जैसे प्रसंग जब "काम" शब्द के साथ जुड़ते हैं तो अर्थ का अनर्थ उत्पन्न करते हैं ।

कामाचार विशुद्ध रूप से एक प्रजा उत्पादन प्रक्रिया है उसकी ओर मन ले जाने वाले विचारशील को हजारों बातें सामने रखनी होती हैं । क्या नर–मादा दोनों की शारीरिक,मानसिक स्थिति ऐसी है जिसके संयोजन से ऐसे नये प्राणी की उत्पत्ति हो सके जो अपने लिए ही नहीं–

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समूचे समाज के लिए वरदान बन सके । जिनके शरीर दुर्बल रूग्ण हैं, जो मन से खिन्न-विपन्न रहते हैं, उनके वे दोष निश्चित रूप से सामने आयेंगे । फिर यह भी देखना है कि जिस वातावरण में उसका भरण-पोषण होगा उसमें स्नेह, सहयोग, दुलार, एवं सुसंस्कार भरे हैं या नहीं । नवजात शिशु को खेलने-कूदने के लिए जगह है या नहीं । कहीं सारे दिन एकाकी उदास तो नहीं बैठा रहेगा । उसे घृणा, तिरस्कार, अवज्ञा, उपेक्षा का मानसिक त्रास तो नहीं सहना पड़ेगा । बच्चे को सही पोषण बड़े आदमी से सस्ता नहीं महँगा ही पड़ता है । फिर उसे विनोद खेलकूद भी चाहिए । साथी भी, खिलौने भी जो उसके खाली समय में साथ रह सकें । इसके अतिरिक्त आजकल उपयुक्त शिक्षा के लिए स्थान तलाश करना और उसका खर्च वहन करना भी एक आवश्यकता है । जो इतना प्रबन्ध कर सकें, वे ही सन्तानोत्पाद की बात सोचें अन्यथा पिता, माता, परिवार और समूचे समाज को उस मूर्खता का अभिशाप जैसा दण्ड भुगतना पड़ेगा । अनगढ़ सन्तान को जन्म देना प्रत्यक्ष पाप है जिसका दण्ड हाथों हाथ उस प्रसंग से सम्बन्धित हर व्यक्ति को सहन करना पड़ता है ।

जननी का शारीरिक और मानसिक विकास उचित आयु तक पहुँच चुका होना चाहिए । इसके लिए न्यूनतम आयु बीस वर्ष मानी गई है । फिर हर सन्तान के बीच अन्तर न्यूनतम पाँच वर्ष का होना चाहिए ताकि पहले बच्चे की माता पर से निर्भरता छूट जाय और वह ठीक तरह दूसरे पर ध्यान दे सके । इससे कम समय में उस क्षति की पूर्ति भी नहीं होती । जो प्रथम शिशु का शरीर बनाने, प्रसव पीड़ा सहने, दूध पिलाने, पूरी नींद न ले पाने, आदि के कारण जननी को सहन करना पडता है ।

फिर आजकल देश की बढ़ती हुई जनसंख्या एक विकट समस्या बनती जा रही है । जिस अनुपात से बच्चे जन्मते हैं उतनी निर्वाह सामग्री पैदा नहीं होती । फलतः भुखमरी, तंगी, गरीबी, अशिक्षा, दुर्बलता आदि का भार हर नये पुराने नागरिक पर बढ़ता है । इस अनर्थ के भागी वे बनते हैं जो बिना सोचे विचारे सन्तान उत्पन्न करने में लगे रहते हैं । काम कौतुक का स्वाद राई भर और उसका दण्ड दुष्परिणाम पहाड़ भर, जो इसका विचार नहीं कर सकते उन्हें नर पामर ही कहना चाहिए ।

सृष्टि में कुछ ऐसे प्राणी भी हैं जो घासपात की तरह दूसरों की भूख बुझाने के लिए उत्पन्न होते हैं । कीड़े-मकोड़े इसी श्रेणी में आते हैं । उनके ढेरों अण्डे, बच्चे होते हैं उनमें से अधिकांश प्रकृति के प्रकोप के शिकार हो जाते हैं । कुछ ही उनसे बचे प्राणी खा पीकर निपटा देते हैं । इस पर भी जो बचे रहते हैं उनके लिए प्रकृति ठिकाना लगाने वाले बहाने ढूँढ निकालती है । कुछ भूखे मर जाते हैं कुछ पैरों तले कुचल जाते हैं । कुछ को बीमारियाँ खा जाती हैं, कुछ आवेशग्रस्त होकर आत्महत्या के लिए दौड़ पड़ते हैं । इन उद्भिजों और कीटपतंगों में अपनी गणना करानी हो और उत्पादन को ऐसी ही दयनीय दुर्दशा में धकेलना हो तो फिर यौनाचार की छूट है । कोई कुछ भी कर सकता है और अपने कृत्यों का फल भुगतता रह सकता है किन्तु जिन तक मानवोचित कर्त्तव्य उत्तरदायित्वों की कोई किरण पहुँची हो, उन्हें इस गम्भीर कार्य में हाथ डालने से पूर्व हजार बार सोचना चाहिए । कृत्य के उपरान्त उत्पन्न होने वाली समस्याओं पर विचार करना चाहिए और विवेक स्वीकृति प्रदान करे तो ही कदम बढ़ाना चाहिए ।

जिन पशु पक्षियों की समझदार प्राणियों में गणना होती है, उनकी मादाएँ अपनी प्रजनन क्षमता के अनुरूप उत्तेजना प्रकट करती हैं । इसी आधार पर नर उनसे संभोग साधते हैं । इसके बिना कोई मादा से छेड़खानी नहीं करता । गाय, भैंस, भेड़, बकरी, घोड़ी, गधी और सभी पशु न मादाओं के रूप में रहते और चरते हैं । नर कभी किसी मादा को अपनी ओर से नहीं छेड़ता । मादा की प्रजनन क्षमता जब उभरती है तो उसी संकेत पर यौनाचार बनता है । मनुष्य को इतना विवेक तो होना ही चाहिए कि इस सम्बन्ध में विशुद्ध रूप से नारी की स्थिति को समझे । अपनी ओर से कोई प्रलोभन या दबाव न डाले । इस आधार पर पाँच या कम से कम तीन वर्ष बाद ही इस ओर ध्यान देने की आवश्यकता पड़ेगी । विवाह का अर्थ यौनाचार की उच्छृंखल छूट मिलना नहीं है वरन् एक परिवार को मिल-जुलकर समुन्नत बनाना, दो जीवनों को पारस्परिक सहयोग हर्षोल्लास से भर देना है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जो इस विवेक प्रेरणा की अवज्ञा करते हैं और अमर्यादित काम सेवन करते हैं, उन पुरुषों को एक प्रकार से नर भक्षी ही कहा जा सकता है । इससे साथी को धीमी आत्महत्या करने के लिए विवश किया जाता है । नारी जननेन्द्रियों की संरचना इतनी कोमल है कि वे प्रजनन कृत्य आवश्यक हो जाने पर एक दो बार का नर सम्पर्क सहन कर सके । अमर्यादा बरतने पर वे कोमल अंग कई तरह के रोगों के शिकार हो जाते हैं । उनसे पीछा छुड़ाना कठिन होता है । प्रजनन अपने आप में एक बहुत बड़ा ऑपरेशन है । उसमें ढेरों रक्त जाता है । बच्चे के शरीर जितना मांस जननी की देह में से ही भरता है । इसके बाद भी दूध पिलाने के रूप में उस क्षति का सिलसिला चलता ही रहता है । हजार प्रसवों पीछे १३ प्रसूताओं की जान तो बच्चा जनते समय ही चली जाती है । सब मिलाकर अन्त तक अनेकों दबाव जननी को सहने पड़ते हैं । इसके लिए बाधित करना किसी भी प्रकार मित्र धर्म नहीं है । नर भक्षी भेड़िये मनुष्यों या दूसरे जानवरों को खाते हैं । अपनी मण्डली के सदस्यों की चमड़ी नहीं उधेड़ते । लेकिन एक मनुष्य है जो पत्नी पर प्रेम प्रकट करते हुए वस्तुतः उसका जीवन रस ही चूस लेता है । उसे रुग्णता, दुर्बलता का त्रास सहते हुए समय से बहुत पहले मर जाने के लिए बाधित करता है । अपनी स्वार्थ सिद्धि भी इतनी कि क्षण भर की लोलुप उत्तेजना का समाधान हो ।

जिस वर्ग के नरों में कामुक लोलुपता की मात्रा अधिक पाई जाती है वे साथी का अनर्थ करते हुए अपने लिए भी कम संकट खड़ा नहीं करते । शास्त्रकार ने ठीक ही कहा है–"मरणं विन्दुपातेन, जीवनं विन्दु धारणात्" अर्थात् वीर्यनाश से मरण और उसके संरक्षण में जीवन है । इसके उदाहरण में हनुमान, भीष्म, शंकराचार्य, दयानन्द आदि अनेकों के नाम गिनाये जा सकते हैं जो शारीरिक और आत्मिक दृष्टि से अपनी बलिष्ठता सिद्ध कर सके । असुरों के उदाहरण इस सम्बन्ध में स्मरण किये जा सकत हैं जिन्होंने कई–कई विवाह किये व बुरी मृत्यु को प्राप्त हुए ।

कई थलचरों और जलचरों की बढ़ी हुई कामुकता किस प्रकार उनके लिए प्राणघातक बनती है । उसके उदाहरण प्रत्यक्ष हैं । आश्विन के महीने में कुत्ते आपस में किस प्रकार लड़ते–भिड़ते, घायल होते और सड़ते हैं यह कौतुक हर साल देखा जा सकता है । हिरनों की भी यही दुर्गति होती है । उनके ऋतुकाल में यही मल्लयुद्ध ठनते हैं । परस्पर सीगों से घायल होकर कितने ही भारी कष्ट सहते हैं । मकड़ी तो खुद ही अपने नर को हाथोंहाथ मजा चखा देती है । मकड़े को प्रसंग के उपरान्त थका हुआ पाती है तो स्वयं ही उसको कतर ब्यौंत कर डालती है बिच्छू को भी काम प्रसंग के उपरान्त ऐसा ही त्रास सहना पड़ता है । कोई–कोई ही उस संकट से अपनी जान बचा पाता है ।

मछलियों में अधिकांश नर सज्जन प्रकृति के होते हैं । मादा की पूरी–पूरी सहायता करते हैं और प्रजनन काल में उन्हें अधिक से अधिक सुविधा पहुँचाने का प्रयत्न करते हैं लेकिन कुछ ऐसे दुष्ट भी होते हैं जिन्हे हरम इकट्ठा किये बिना चैन नहीं । फ्राग फिश अपने घेरे में प्राय एक दर्जन युवा मछलियाँ समेटे रहता है और उनके साथ क्रीड़ा कल्लोल का मजा लूटता है । साथ ही यह भी होता रहता है कि उसके प्रतिद्वन्द्वी उसके हरम पर धावा बोलकर कुछ को झपट ले जाँय । दूसरी ओर उस मण्डलाधीश को भी चैन नहीं । वह जितनी हैं उनसे सन्तुष्ट न रहकर नई नवेलियाँ तलाश करता है और किसी दूसरे के हरम पर छापा मारता है । इस कारण उनमें मल्लयुद्ध ठन जाता है । हर साल उनमें से इसी महाभारत में खेत आते हैं । मछलियाँ भी नरों से शिक्षा प्राप्त करती हैं और किसी एक के चंगुल में बहुत दिन रहकर जल्दी-जल्दी ससुराल बदलती और पुनर्विवाह रचती रहती हैं । इस कारण असन्तुष्ट मछलियाँ भी आपस में लड़ बैठती हैं । इस वर्ग के नर मादा चैन से नहीं बैठते । विशेषतया ऋतुकाल में तो उनमें खून-खच्चर मचता ही रहता है । जबकि दूसरी सन्तोषी प्रकृति के जल जीव लम्बे समय तक पतिव्रत निभाते हैं और सहयोग और आनन्द भरा जीवन जीते हैं ।

गरुड़ मादा यह खोजती रहती है कि उससे बलिष्ठ साथी है या नहीं । इस प्रयोजन के लिए ताक-झाँक करने वाले से सर्वप्रथम वह मल्लयुद्ध की चुनौती देती है । युद्ध में दोनों पक्ष लहू–लुहान हो जाते हैं । नर यदि भाग खड़ा हुआ तो उसे क्षमा कर दिया जाता है । अन्त तक डटा रहा तो अपने पौरुष के आधार पर स्वयंवर का लाभ उठाता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अध्यात्म विज्ञान के तन्त्र पक्ष में कुण्डलिनी योग की साधना का सुविस्तृत प्रकरण है । उसमें मूलाधार चक्र और सहस्रार चक्र को शक्ति केन्द्र माना गया है और दोनों को प्रखर प्रचण्ड बनाकर परस्पर सहयोग की स्थिति तक पहुँचा देना परम सिद्धि का आधार माना गया है । मूलाधार चक्र जननेन्द्रिय मूल में है और सहस्रार मस्तिष्क मध्य ब्रह्मरन्ध्र में । यही दोनों केन्द्र उत्तर ध्रुव और दक्षिण ध्रुव हैं । वे हेय प्रयोजन में अपनी शक्ति गँवाते रहते हैं । इसलिए अपनी ऊर्जा एक-दूसरे तक नहीं पहुँचा पाते । बिजली के दोनों तारों में शक्ति हो और मिले तो महाकाली जैसा प्रचण्ड प्रवाह उत्पन्न होता है । इसी आधार पर कुण्डलिनी जाग्रत होकर अनेकानेक चमत्कारी सिद्धियों का परिचय देती है । सहस्रार चक्र को ध्यान योग और मूलाधार चक्र को ब्रह्मचर्य द्वारा जाग्रत एवं प्रखर बनाया जाता है । यह साधना क्रम सुविस्तृत है, परन्तु उसका सार संक्षेप इतने में ही समझना चाहिए कि आध्यात्मिक काम विज्ञान के सिद्धान्तों का समग्र परिपालन किया जाय । नर-नारी साथ-साथ तो रहें, स्नेह और सहयोग भी करें लेकिन उसमें कामुकता के विष का प्रवेश न होने दें । बाँध में नदी का पानी रोक देने पर पानी का इतना एकत्रीकरण हो जाता है कि उसमें अनेकों नहर निकल सकें और सुविस्तृत भूमि खण्डों को हरा-भरा, फूला-फला बनाया जा सके । पानी न रोका जाय तो वह बहता और घटता रहेगा और अन्त में गहरे समुद्र में गिरकर ऐसा खारा पानी बन जायेगा जो पीने के भी काम न आ सके ।

नर और मादा का साथ-साथ समीप रहना, प्रकृतिगत स्वाभाविक स्थिति बनाये रहता है । यदि दोनो एक-दूसरे से बचें, भागें, डरें अथवा आक्रामक नीति अपनायें तो उसमें सृष्टा की उस कलाकारिता का अपमान है जो गंगा, यमुना की तरह मिलकर नई सरस्वती उत्पन्न करती हैं और सबके लिए सब प्रकार श्रेयस्कर परिणाम ही उत्पन्न करती हैं । खतरा तो रस में विष मिला देने से उत्पन्न होता है ।

आज 'सेक्स' शब्द जिन अर्थों में प्रयुक्त होता है वह काम का वस्तुतः स्थूल धरातल है । काम की परिष्कृत धारा प्रेम है । शौर्य, साहस, पराक्रम, जीवट, उत्साह और उमंग उसकी ही विभिन्न भौतिक विशेषताएँ हैं । उत्कृष्ट विचारणाएँ उदात्त भाव सम्वेदनाएँ काम की आध्यात्मिक विशेषताएँ हैं । सेक्स के इन्द्रिय धरातल से उठकर प्रेम और भाव सम्वेदनाओं के विस्तृत क्षेत्र में पहुँचना ही काम का परम लक्ष्य है । इन्द्रिय सीमा में लिप्त काम अतृप्ति और अशान्ति को ही जन्म देता है । पवित्र प्रेम में परिवर्तित होकर सन्तोष और दिव्य आनन्द का कारण बनता है ।

शरीर, मन और बुद्धि तीनों में ही काम शक्ति क्रियाशील है संयम और ऊर्ध्वगमन की साधना द्वारा 'काम' का रूपान्तरण होता है । रूपान्तरण का अर्थ है सम्पूर्ण व्यक्तित्व में उल्लास का समावेश हो जाना ।

प्रायः समझा यह जाता है कि दाम्पत्य जीवन में काम सेवन अनिवार्य है और इसके बिना पति-पत्नी के बीच प्रेम और घनिष्ठता स्थापित नहीं हो सकती । यह मान्यता निराधार है कितने ही महापुरुष ऐसे हुए हैं जो आजीवन ब्रह्मचारी रहे और उनका दाम्पत्य जीवन अन्य व्यक्तियों की तुलना में कहीं अधिक सुखी, सन्तुष्ट, सरस और आनन्ददायक बना रहा । महात्मा गाँधी ने ३२ वर्ष की आयु में ब्रह्मचर्य का संकल्प लिया और आजीवन उस व्रत का पालन किया । इससे कस्तूरबा और उनके बीच घनिष्ठता घटी नहीं बल्कि उत्तरोत्तर बढ़ती ही गई । शारदामणि के साथ जीवन पर्यन्त साथ रहते हुए भी रामकृष्ण परमहंस आजीवन ब्रह्मचारी रहे । उन दोनों के बीच जो माधुर्य प्रेम और आत्मीयता थी वह देखते बनती थी ।

काम के संयम का अर्थ है- उसे रचनात्मक दिशा देना । दमन से तो विकृति उत्पन्न होती है और अनेकानेक मनोरोगों को जन्म देती है । नदियों की प्रचण्ड धारा को मोड़कर बाँध बनाया, विद्युत् को उत्पन्न किया जाता है । छोटी-बड़ी नहरों में छोड़कर खेतों को सींचने का काम लिया जाता है । उस धारा को रोक दिया जाय और दिशा न दी जाय तो पानी फूट-फूट कर बह निकलेगा और समीपवर्ती क्षेत्र को आप्लावित कर देगा । 'काम' के साथ भी यही बात लागू होती है ।

वैचारिक और भावनात्मक क्षेत्र में काम शक्ति का नियोजन कर क्षणिक इन्द्रिय तुष्टि की तुलना में कहीं उच्चस्तरीय और स्थायी आनन्द की अनुभूति की जा सकती है । कवि, कलाकार, साहित्यकार, संगीतज्ञ, प्रायः अपनी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ही धुन और मस्ती में खोये रहते हैं । इन्द्रिय के स्थूल धरातल से वे ऊपर उठे होते हैं । कला, साहित्य, संगीत, कविता, जब साधना का अंग बन जाती है तो उसमें होने वाली रसानुभूति की तुलना में काम सेवन तुच्छ और हेय जान पड़ता है ।

ललित कलाओं में गायन विद्या सर्वश्रेष्ठ है । इसमें भावों के प्रचलित होने के लिए ऊँचे और सरस क्षेत्र मिल जाने से काम का स्थूल आवेश समाप्त हो जाता है । बुद्धि क्षेत्र में उच्चस्तरीय दार्शनिक विचारों का चिन्तन-मनन काम परिष्कार का सशक्त माध्यम है । बुद्धि और भाव के क्षेत्र में काम की शक्तिधारा परिष्कृत और परिशोधित होकर प्रवाहित होने पर उनमें उत्कृष्ट विचारों और उदात्त भावों से भर देती है । शरीर के स्थूल केन्द्रों की ओर उसका प्रवाह अपने आप कम होता जाता है । फलतः कामोद्वेग नहीं रहता ।

काम की चरम परिणति ईश्वर प्रेम के रूप में होती है । भक्त भगवान के बीच भाव तादात्म्य घनिष्ठता आत्मीयता सरसता की एकरूपता स्थापित हो जाने से दिव्य आनन्द की निर्झरिणी प्रवाहित होने लगती है जिसके समक्ष सभी सांसारिक सुख निस्सार जान पड़ते हैं । इसे ही काम बीज का ज्ञान बीज में उत्कर्ष कहते हैं । यही है काम का परम लक्ष्य ।

कामोल्लास की सृजनात्मक शक्ति

कामबीज से ही शरीर की उत्पत्ति हुई है । जन्म लेने के बाद उसका बहिरंग रूप दुग्धपान से लेकर किशोरावस्था के जोश, शरीरगत परिवर्तनों एवं नूतन उमंगों के रूप में प्रकट होता है किशोर मन की कल्पनाएँ विपरीत लिंग के प्रति आकर्षण से युक्त होती हैं जिनकी परिणति आगे चलकर प्रणय में होती है । दाम्पत्य बन्धन से बँधा यह युवक आदान–प्रदान का क्रम आरम्भ करता है एवं संतानोत्पत्ति की ओर अग्रसर होता है । नया परिवार बनता है, बढ़ता है । नई व्यवस्थाएँ जुटाने एवं बच्चे के लालन पालन में ही पति–पत्नी की अधिकांश क्षमताएँ लग जाती हैं । यह विशाल वट वृक्ष उसी काम बीज का है जिसका विस्तरण विभिन्न रूप में होता देखा जाता है । इसका परिष्कार संवर्धन कर व्यक्ति महामानव बनते चले जाते हैं तो इसका एक अन्य पक्ष है स्वच्छन्द यौनाचार द्वारा व्यक्ति का अधोगामी प्रवृत्तियों में लिप्त हो जाना ।

आर्षकालीन महामानवों के अनुसार जीवन क्रम की सफलता के चार महत्वपूर्ण आधार माने गये हैं धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष । काम शब्द का सही अर्थ न समझने एवं उसका जीवन में सही उपयोग करने की विधा का ज्ञान न होने से ही असमंजस उत्पन्न होता है । 'काम' वस्तुतः प्रत्येक प्राणी के अन्तराल में समाहित एक दिव्य उल्लास है, जो आगे बढ़ने, ऊँचा उठने एवं साहसिक प्रयत्न करने के लिए निरन्तर उभरता रहता है ।

जड़ पदार्थों में यही ऋण और धन विद्युत् के रूप में कार्य करता है । सृष्टि की गतिविधियों का उद्गम यही है । प्राणियों में इसका उभार उत्साह, उल्लास एवं उमंगों के रूप में होता है । आत्मा इस स्तर के प्रयत्नों में स्वाभाविकतः रस लेती है और सहज विनोद के लिए इन्हीं प्रयत्नों में प्रवृत्त भी होती है । यही है काम की व्याख्या जिसकी उपयोगिता का समर्थन शास्त्रकार चिरकाल से करते आये हैं ।

'यौनाचार' इस प्रवृत्ति का एक छोटा सा अंग मात्र है । काम तत्व का यह अति सामान्य प्रकृति प्रयोजन यदा-कदा ही क्रियान्वित हो सकता है । मनुष्य ने इस उपलब्धि का सही उपयोग न कर मर्यादा उल्लंघन एवं स्वेच्छाचार का दुस्साहस किया है जो आधुनिक युग में व्याप्त नैतिक एवं सामाजिक समस्याओं के रूप में परिलक्षित होता है ।

मनुष्य जीवन का अर्थ केवल मात्र शरीर और श्वांस का समागम नहीं है । यदि जीवन का अर्थ मात्र यही होता तो बिना हाथ, सिर, पैर के जमीन पर रेंगने वाले कीड़ों-मकोड़ों और मनुष्य में कोई अन्तर नहीं रहता । मनुष्य सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी है । उसे शक्ति, विवेक और सदाचार का अधिकार मिला है । कीटोपम जीवन मनुष्य के लिये न तो योग्य है और न श्रेयस्कर । नीति मर्यादाओं का पालन समाज की सुव्यवस्था हेतु किस तरह जरूरी है इसका महत्व समझना हो तो यूरोप के कुछ देशों के उदाहरण हमें देखना चाहिए । डेनमार्क, स्वीडन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जैसे राष्ट्रों में स्वच्छन्द यौनाचार पर कोई बन्धन नहीं है । फ्रायडवादी विचारणा वाले समाज शास्त्रियों ने मनोग्रन्थियों के निवारण के लिए यही उपयुक्त उपाय पाया है । वहाँ प्रति वर्ष नग्न मेंले आयोजित किये जाते हैं । परिणामतः वहाँ यौन रोगों की बाढ़ आ गई है। साथ ही विपरीत लिंग के प्रति आकर्षण की सहजता समाप्त होते ही इसका विकृत स्वरूप सामने आया है । सामाजिक नीति मर्यादाओं के पालन की बात तो दूर ही है ।

इस प्रेरक तत्व को इतना तुच्छ नहीं माना जाना चाहिए । इसकी सामर्थ्य असीम है । इसका एक प्रत्यक्ष उदाहरण ही एक शरीर से दूसरे शरीर की उत्पत्ति है जो सृष्टि के अद्भुत आश्चर्यों का परिचायक है । सृष्टा की घोषणा 'एकोऽहं बहुस्यामि' मनुष्य की इसी सामर्थ्य में प्रतिभासित होती है । परन्तु यदि मनुष्य अपना सारा जीवन कृमि कीटकों की तरह सन्तानोत्पादन में ही बिता दे तो यह सामर्थ्य का दुरुपयोग ही हुआ ।

काम को हेय तब से समझा जाने लगा जब से उसे यौनाचार के रूप में प्रतिपादित किया जाने लगा । वस्तुतः काम शब्द की परिभाषा क्रीड़ा उल्लास ही हो सकती है । उसे उभार या उमंग ही कहा जा सकता है । यह प्रयोजन जिन भी उपाय उपचारों से सम्भव होता है उन्हें काम की परिधि में सम्मिलित किया जा सकता है । धर्म एवं मोक्ष आत्मिक प्रगति के तथा अर्थ एवं काम भौतिक प्रगति के माध्यम माने गये है । मनुष्य जीवन की चतुर्दिक उपलब्धियों में गरिमानुकूल ही 'काम' को इतना महत्वपूर्ण स्थान मिला है ।

प्रजनन प्रक्रिया पशुपक्षियों कृमि कीटकों के जीवन की एक अनिवार्य स्थिति है । इस समुदाय में कई ऐसे उदाहरण देखने को मिलते हैं जो संयम न बरतने के दुष्परिणामों एवं स्वच्छन्द यौनाचार से सम्भावित हानियों पर प्रकाश डालते हैं । सील नामक स्तनपोषी प्राणी उत्तरी ध्रुव के बर्फीले इलाके में रहता है । मादा सील के कारण पशुओं में जो लड़ाइयाँ होती हैं उनका सबसे भयावह स्वरूप इस प्राणी में दृष्टिगोचर होता है । प्रजनन ऋतु आरम्भ होते ही इनमें पारस्परिक संघर्ष आरम्भ हो जाता है । चालीस पचास मादा सीलों का मालिक नयी मादा लाने के लिए पड़ोसी सील पर हमला करता है । जब तक वह इस संघर्ष में विजय पाता है, वह देखता है कि उसकी स्वयं की मादाओं में से कुछ को कोई और नर अपने साथ ले जा रहा है । नर सील की अधिकांश शक्ति इसी तरह के काम युद्ध में नष्ट हो जाती है । चींटी, दीमक, मकोड़ों आदि में नर केवल एक बार सहवास कर पाता है क्योंकि तुरन्त पश्चात उसकी मृत्यु हो जाती है । बिच्छू और मकड़ी में यह हिंसात्मक प्रेम बड़ा विचित्र स्वरूप ले लेता है । मादा मिलन के बाद अपना सन्तुलन खो देती है एवं नर को ही मार कर खा जाती है ।

यही स्थिति ईल मछली एवं रेशम के कीड़ों की है । रेशम के कीड़े का 'कोये' से निकलने के बाद एक ही लक्ष्य होता है मादा से मिलन । इसके तुरन्त बाद नर अपने प्राण छोड़ देता है । ईल मछली केवल नर से सहवास हेतु समुद्र के मध्य जाती है उसके बाद दोनों मृत्यु की गोद में चले जाते हैं । दोनों के अण्डे इसके बाद प्रकृति द्वारा सेए जाते हैं । फीजी द्वीप में समुद्र के किनारे पलोलो नामक एक कीड़ा पाया जाता है । प्रजनन ऋतु आते ही बड़ी संख्या में ये समुद्र की सतह पर तैरने लगते हैं । सहवास में सफल तो एक ही हो पाता है । शेष का पिछला हिस्सा इस प्रयत्न में फट जाता है और इनका जीवन समाप्त हो जाता है ।

जीव जगत् के इन्हीं प्राणियों जैसा जीवन जीने वालों को नर पशु कहा जाता है । अधोगामी प्रवृत्तियों में ही जिसका सारा जीवन नियोजित हो उससे सामान्य मानवी कर्त्तव्य, मानवोचित गुण, सदाचार आदि के पालन की अपेक्षा क्या रखी जाय ? ऐसे मनुष्य असंयम के दुष्परिणाम स्वयं तो भोगते ही हैं इसका परोक्ष प्रभाव सारे समाज पर भी पड़ता है । समाज का सारा सन्तुलन ही इस मानवी व्यवस्था पर टिका है जिसमें एक-दूसरे के सम्मान की रक्षा की जाती है एवं कुकर्मों में निरत व्यक्ति को प्रताड़ित किया जाता है । यदि ऐसा नहीं हुआ तो व्यक्ति एवं समाज का वही भविष्य होगा जैसा आज पाश्चात्य देशों में हमें दृष्टिगोचर हो रहा है प्राणि जगत् में जिसके उदाहरण निरन्तर हमें सीख देते रहते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वस्तुतः यह तथ्य समझने योग्य है कि पशु प्रवृत्तियों को भड़काने वाली और जीवन रूपी सम्पदा को सुमार्गगामी बनाने वाली कामुकता को परिष्कृत किया जा सकता है । स्थूल यौनाचार के आकर्षण से उसे विरत किया जाना सम्भव है । यह तभी हो सकता है जब भावनात्मक श्रेष्ठ संवेदनाओं के साथ उसे जोड़ दिया जाय । यह परिष्कृत स्वरूप ही प्रसुप्ति का जागरण है । 'काम' के साथ जुड़ी उमंग और उत्साह जब विधेयात्मक स्वरूप ले लेते हैं तो फिर ऊर्ध्वगमन ही एकमेंव मार्ग शेष रह जाता है ।

प्राचीन काल में योगियों ने अपनी सूक्ष्म दृष्टि से इस तथ्य को अच्छी तरह जाना था और प्रतिपादित किया था कि वह प्राणशक्ति जो काम सेवन में क्षरित होती है, मानव जीवन का मूलाधार है । इसीलिए उन्होंने कामशक्ति के परिष्कार हेतु योगसाधना के विभिन्न उच्चस्तरीय पक्ष सामने रखे । संवेदन क्षमता को ऊर्ध्वमुखी बनाना ही इसका उद्देश्य था । अभी तक संयम का जो स्वरूप माना जाता रहा है, वह एकांगी है । अर्थात् शक्तियों के प्रवाह को रोकना । नदियों का पानी बाँध बनाकर रोक तो लिया जाता है लेकिन सिंचाई एवं विद्युत् उत्पादन का काम लिया न जाय तो उसकी परिणति विनाश में ही होगी ।

संयम का अर्थ है शक्ति प्रवाह को निरर्थक हानिकारक दिशा से रोक कर सार्थक कल्याणकारी दिशा में लगाना । ऐसे प्रयास व्यक्तित्व को प्रखर एवं जीवन को समृद्ध बनाते चलते हैं । इसके अभाव में उत्कृष्ट जीवन अकल्पनीय है । काम एक शक्ति है । हम चाहें तो उसे ऊर्ध्वगामी बनाकर जीवन को उल्लास से भर सकते हैं ।

काम का विधेयात्मक परिष्कृत रूप अनेक स्तर के व्यक्तियों में अनेक प्रकार से उभरता है । यही कामोल्लास है । बच्चों का अकारण उछलना-मचलना, किशोरों का क्रीड़ा के क्षेत्र में अपनी स्फूर्ति का परिचय देना एवं कलाकार का भावविभोर हो थिरकते हुए नृत्य करना, अन्तरंग के उल्लास का वाह्य स्वरूप है । इसी अन्तः स्फूर्ति को, जिसके आधार पर जीवन के सामान्य क्रियाकलापों में मन लगने एवं आनन्द प्राप्ति का अवसर मिलता है, परिष्कृत काम कहते हैं संसार में जितने भी महामानव हुए हैं, जितने भी व्यक्तित्व उभरे हैं, उन सबके मूल में अदम्य अभिलाषा एवं साहसिक पुरुषार्थ की ही प्रधान भूमिका रही है । उमंग भरी साहसिकता एक उच्चस्तरीय गुण है जो जीवन साधना से, काम के परिष्कार से जीवन में समाविष्ट होती है । काम की ही परिणति महात्वाकांक्षाओं के रूप में होती है । जब मनुष्य उस दिशा में प्रयास करता है तो वही पुरुषार्थ एवं साहसिकता के रूप में देखा जाता है । काम जयी ऋषि तपस्वियों की भाँति जार्ज बर्नाड शा भी अन्दर से बाहर तक उल्लास एवं पुरुषार्थ के सजीव रूप थे उन्हें विवाह के लिए कभी अवकाश नहीं मिला । उसी 'काम' शक्ति को जब ऐसे महामानवों ने विधेयात्मक दिशा में लगा दिया तो अन्तरंग की प्रसन्नता का लाभ इन्हें तो मिला ही, समाज को उनकी प्रतिभा के भरपूर योगदान मिले ।

यदि परिष्कृत संयमित जीवन के सिद्धान्तों के पालन से संभावित लाभों पर ध्यान दिया जाय तो हर व्यक्ति अपने जीवनोद्देश्य की प्राप्ति में सफल हो सकता है । काम बीज से फलित वृक्ष का ऊर्ध्वगामी दिशाओं में विस्तार कर संयम की मर्यादाओं का पालन कर हर व्यक्ति स्वयं तो शारीरिक, मानसिक एवं आत्मिक विकास कर ही सकता है, समाज के सर्वांगीण विकास में भी योगदान दे सकता है । इन मानवोचित गुणों का पालन जीवन में कर हर व्यक्ति कृमि कीटक के स्तर से ऊँचा उठकर मानव एवं महामानव बन सकता है ।

हेय और ग्राह्य 'काम'

धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष को चतुर्विधि आवश्यकताएँ कहा गया है और उनके लिए प्रयत्नरत रहने का आप्त-जनों द्वारा परामर्श दिया गया है ।

इनमें से धर्म और मोक्ष की बात आत्मिक जीवन को समुन्नत बनाने और पारलौकिक लाभ लेने के लिए आवश्यक समझा गया है । अर्थ की आवश्यकता इसलिए है कि उसके बिना शरीर यात्रा के आवश्यक सुविधा साधन उपलब्ध नहीं होते । असमंजस 'काम' के सम्बन्ध हैं । 'काम' शब्द सामान्यतया हेय कृत्य के रूप में प्रयुक्त होता है । काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर ये रिपु कहे जाते हैं । इनमें काम प्रमुख है । यह सभी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

निन्दनीय और त्याज्य ठहराये गये हैं फिर काम को चतुर्विधि पुरुषार्थ में कैसे सम्मिलित किया गया है उसके लिए प्रयत्नशील रहने का निर्देश कैसे दिया गया है यह विचारणीय है ।

यहाँ 'काम' का अर्थ क्रीड़ा है । क्रीड़ा अर्थात् विनोद । विनोद भी मानसिक आहार है । इसलिए तैरने, खेलने, गाने जैसे कितने ही विनोद कौशलों को क्रीड़ा कहा जाता है । प्रायः समस्त कलाएँ उसी परिकर में आती है । भक्तजनों का गायन, वादन, नृत्य, कीर्तन इसी श्रेणी में आता है । प्रसन्नता की अभिव्यक्ति का नाम काम है । इसका तात्पर्य हुआ– ऐसे प्रयत्न करना जिससे मन हलका–फुलका रहे, प्रसन्नता प्रफुल्लता का अनुभव करे, हँसती–हँसाती जिन्दगी जिये, सन्तुष्ट और उल्लसित मनोभूमि बनाये । निराशा, विक्षोभ, उद्वेग, चिन्ता, भय, ईर्षा, द्वेष, आक्रोश, दर्प आदि उन मनोविकारों से बचा रहे जो मन पर अनावश्यक दबाव डालते हैं और भार बनकर लदे रहते हैं ।

काम का दार्शनिक अर्थ क्रीड़ा, विनोद प्रसन्नता की मनःस्थिति बनाये रहना वैसी गतिविधियों आदतों को बढ़ावा देना है किन्तु इसका एक दूसरा शब्दार्थ भी है जो लिपि और उच्चारण की दृष्टि से समान दीखते हुए भी तात्पर्य की दृष्टि से सर्वथा प्रतिकूल है । वह अर्थ है– कामुकता । कामुकता का अर्थ है–अश्लील चिन्तन विषयासक्ति । निन्दा इसी की की गई है और इसी को शत्रु मानने, बचने का परामर्श दिया गया है ।

कामुकता एक प्रकार का मनोविकार या मनोरोग है । इसमें अकारण अनावश्यक अश्लील चिन्तन मस्तिष्क पर नशे की तरह छाया रहता है और उसके सन्तुलन पर बुरी तरह आघात करता है । यह प्रवृत्ति क्रोध, आवेश, उन्माद जैसी अवांछनीय है । उसका आकर्षक प्रवाह चिन्तन तन्त्र को इस प्रकार जकड़ लेता है कि हर घड़ी वैसी ही कल्पनाएँ उठती, इच्छाएँ उभरती और योजनाएँ बनती रहती हैं । यह समूचा चिन्तन न केवल उत्तेजक वरन् निरर्थक भी होता है । कामुकता मर्यादा रहित है, वह किसी के भी सम्बन्ध में काम सेवन का ताना–बाना सकती है जब कि प्रस्तुत समाज व्यवस्था के अन्तर्गत वह किसी भी प्रकार सम्भव नहीं । अपनी ओर से जिस रूप सौन्दर्य पर आसक्ति उभारी जा रही है आवश्यक नहीं कि दूसरा पक्ष भी उसके लिए सहमत हो । ऐसी दशा में निराशा के अतिरिक्त और क्या हाथ लगने वाला है कामुक चिन्तन प्रकारान्तर से एक प्रकार का उन्माद है जिसमें व्यावहारिकता अव्यावहारिकता का कोई भान नहीं रहता । नीति–अनीति भी विस्मरण हो जाती है ।

इस आधार पर उत्तेजित अस्त–व्यस्त रहने वाली मनःस्थिति में कोई गम्भीर या महत्वपूर्ण चिन्तन सम्भव नहीं । दार्शनिक, वैज्ञानिक, साहित्यकार, सृजेता स्तर के लोगों को जिस स्तर की एकाग्रता आवश्यक है वैसी बन पड़ना कामुक उत्तेजना के रहते सम्भव नहीं । इसी प्रकार हेय उपयोग की अनियंन्त्रित आकांक्षा मनुष्य को अपराधी प्रवृत्तियाँ अपनाने के लिए घसीट ले चलती हैं । जब किसी के भी साथ काम सेवन की योजना बन सकती है तो उसका धन, अधिकार आदि के अपहरण में भी क्यों संकोच होगा ? यह पाप पतन का प्रवाह है जो काल्पनिक, असम्भावित होते हुए भी मनुष्य को अनैतिक बनाने की भूमिका बनाता रहता है । अन्ततः यह प्रवाह चारित्रिक पतन के गर्त में ही गिराकर छोड़ता है । चिन्तन ही परिपक्व होकर कर्म बनता है । कामुक कल्पनाएँ या तो व्यभिचार बलात्कार के रूप में प्रकट होती हैं या फिर अपने लिए कोई और रास्ता ढूँढ कर मर्यादा उल्लंघन के अनाचारी कृत्य कराने लगती हैं ।

शारीरिक बलिष्ठता की दृष्टि से ब्रह्मचर्य की महिमा सर्वविदित है । ब्रह्मचारी सदाचारी सदा शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य की दृष्टि से बलिष्ठ रहे हैं । हनुमान, भीष्म, शंकराचार्य आदि के उदाहरण इसकी पुष्टि में दिये जाते रहते हैं और कामुक लोगों को क्षय जैसे रोगों से ग्रसित होकर बेमौत मरने वालों के उदाहरण भी कम नहीं हैं । शारीरिक काम सेवन से धातु क्षय की हानि होती है, जिसे किसी प्रकार सहन भी किया जा सकता है किन्तु मानसिक व्यभिचार से तो और भी बड़ी हानि होती है । उसमें ओजस् ही नहीं मनस् भी क्षीण होता है और मनुष्य संकल्प, सहारा एवं मनोबल ही गवाँ बैठता है । ऐसे व्यक्ति हर दृष्टि से खोखले सिद्ध होते हैं ।

अश्लील काम क्रीड़ा का तो दाम्पत्य जीवन तक में निषेध है । भावना विज्ञान के मूर्धन्यों ने अपनी स्त्री तक की सहधर्मिणी, सहचरी, धर्मपत्नी आदि के रूप में मान्यता दी है । रमणी और कामिनी रूप में उस तक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

की भर्त्सना है । प्रजनन कृत्य को भी भारतीय धर्म में गर्भाधान संस्कार का रूप दिया है और उसे मात्र समाज सेवा का एक रूप मानते हुए ही अपनाने की छूट दी है । विनोद के लिए कामुकता का उपयोग बुरे किस्म का फूहड़पन है । इसके स्थान पर सात्विक हास परिहास किसी से भी किया जा सकता है । इसके लिए पत्नी, बच्चे, मित्र, साथी, छोटे बड़े सभी को माध्यम बनाया जा सकता है । परन्तु वह सब होना चाहिए सात्विक, सौम्य, शालीन । इसी में काम शब्द की सार्थकता है ।

आज कामुकता की बाढ़ जैसी आई हुई है । पाश्चात्य देशों में उसका खुला प्रचलन बढ़ता जाता है और उसे सामान्य जीवन व्यवहार के रूप में मान्यता मिलती जा रही है । अन्य सभ्यताभिमानी देशों में वह सब पर्दे के पीछे होता है । विकृतियाँ वहाँ भी कम मात्रा में नहीं पनप रही हैं । यही है हेय प्रचलन जिसकी 'काम' विकार के रूप में निन्दा की गई है । उसे दुर्भाग्य ही कहना चाहिए कि सौम्य काम विनोद के स्थान पर अश्लील काम विकार जन समाज पर नशीले उन्माद की तरह सवार होता चला जाता है । सामने प्रस्तुत प्रमाण इस विभीषिका को उजागर करते हैं और कहते हैं कि समय रहते इसकी रोकथाम होनी चाहिए ।

खिलवाड़ के लिए बहूमूल्य वस्तुओं को भी हेय उपहासास्पद एवं हानिकारक प्रयोजनों के लिए खर्च किया जा सकता है । गन्ने की उपयोगिता आहार में है । लेकिन उन्हें शराब बनाकर भी पिया जाता है । इसमें हर दृष्टि से हानि ही हानि है । बारूद की खिलवाड़ में ढेरों समय, श्रम और साधन खराब होते है । बदले में दुर्घटना होने और वायु में विषाक्तता बढ़ने जैसी हानियाँ प्रत्यक्ष सामने आती हैं । इसी प्रकार शरीर को जिस बहुमूल्य शक्ति 'ओजस्' के रूप में प्रयत्न करके मनुष्य हर दृष्टि से समर्थ बन सकता है उसे गन्दी नाली में बहा देने में न जाने क्यों बुद्धिमता समझी और आतुरता बरती जाती है[1]। मस्तिष्क तक पहुँचकर जो शुक्र मनुष्य को अधिकाधिक मेधावी, प्रज्ञावान बना सकता है उस तुच्छ से मनोरंजन के लिए बर्बाद करते रहने में समझदारी कहाँ है ?

दाद खुजाते समय चमड़ी छील लेने और घाव होने से कष्ट बढ़ने का ध्यान नहीं रहता । सूखी हड्डी चबाकर कुत्ता अपने ही जबड़े में घाव कर लेता है और उसमें बहने वाले रक्त को चाटकर हड्डी से स्वाद मिलने की बात सोचता है । कामुकता में जो क्षणिक उत्तेजना मिलती है उसे इसी स्तर का समझा जा सकता है । उसमें विनोद कम और विनाश अधिक है ।

'काम' का उपयोगी स्वरूप विनोद है । विनोदों में कामुकता ओछे दर्जे की है । दाम्पत्य जीवन में भी उसका न्यूनतम एवं सौम्य उपयोग होना चाहिए । इससे बाहर के क्षेत्र में उसका चिन्तन और प्रयोग अहितकर ही समझा जा सकता है । शास्त्रकारों ने मात्र सात्विक 'काम' का ही समर्थन किया है ।

काम-वासना का दुरुपयोग और सदुपयोग

कुछ भौतिकवादी मानसिक उपचारकों का विचार है कि काम-प्रवृत्ति मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्ति होने से उसके प्रकाशन और तृप्ति की प्रक्रिया में तब तक रोक नहीं लगाई जानी चाहिए जब तक कि उससे समाज के किसी अन्य घटक को कोई क्षति या पीड़ा न पहुँच रही हो । उनकी मान्यता है कि कामोत्तेजना का दमन स्नायविक तनाव का कारण बनता है और इससे विभिन्न शारीरिक-मानसिक रोगों की उत्पत्ति होती है ।

इस सन्दर्भ में अनेक ऐसे लोगों का परीक्षण किया गया जो कि बुद्धि और हृदय से काम-सम्बन्धी उपर्युक्त मत को ही सत्य मानते थे और स्वयं डाक्टर थे तथा शरीर की भली-भाँति जानकारी रखते थे । पाया यह गया कि उच्छृंखल काम-सेवन या कि 'काम-चिन्तन' से इन लोगों को भी शारीरिक थकावट, निराशा, चिन्ता वृद्धि शंकालुता के कारण उदय आदि से ग्रस्त-त्रस्त होना पड़ा । अधिक समय तक इसी में लगे रहने वाले ऐसे डाक्टरों को भी औरों की तरह 'न्यूरेस्थेनिया' का रोग हो गया । "साइकोलॉजी एन्ड मॉरल्स" नामक पुस्तक में मनोविज्ञानवेत्ता प्रोफेसर हेडफील्ड ने लिखा है कि स्वच्छन्द यौनाचरण का परामर्श देना, व्यक्ति को विनाश के मार्ग में ले जाने की विधि है ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तब क्या यह सही नहीं है कि काम–वासना का दमन रोगों को जन्म देता है ? वस्तुतः सही यह है कि जब किसी तरह के भय के कारण काम वासना दमित की जाती है, तो वह मात्र चेतन मन में दमित होती है । अचेतन मन में उसकी आग धधकती ही रहती है और वह कामकुटेवों तथा शारीरिक–मानसिक विकृतियों के रूप में फूटती है ।

एक ओर, काम–क्रीड़ा के प्रति जब व्यक्ति–मन में प्रबल पाप–भावना घर कर लेती है और दूसरी ओर अचेतन मन के प्रशिक्षण की विधियाँ जाने बिना मन की स्वाभाविक कामोत्तेजनाएँ बार–बार उभरकर उद्विग्न–उद्वेलित करती रहती हैं तो एक प्रचण्ड संघर्ष का जन्म स्वाभाविक है । इस संघर्ष के बावजूद अनियन्त्रित–अप्रशिक्षित मन में कामोद्वेग तो उठेगा ही, इससे आत्मग्लानि की भावना उत्पन्न होने लगती है । साथ ही दमन की अस्वाभाविक आकांक्षा दुराग्रही और हठी बनती जाती है । यह अपने को ही अपना शत्रु मान बैठने की स्थिति होती है । परिणाम स्पष्ट है–क्षति स्वयं की ही होती है । दमित भावना अचेतन मन में चली जाती है और असामान्य क्रम में होने वाले स्वप्न–दोषों से लेकर विभिन्न यौन–रोगों तथा शारीरिक मानसिक विकृतियों का कारण बनती है ।

किशोरावस्था में ऐसा हो जाता है कि अपने किसी तरुण विरुद्धलिंगी सम्बन्धी के प्रति आकर्षण में काम वासना का समावेश हो जाये । मन की नैतिक मान्यताएँ जब इस हेतु स्वयं को धिक्कारती हैं, तब व्यक्ति इन भावनाओं का दमन करने लगता है । इससे सर्वप्रथम स्वप्नदोष आदि के रूप में ये दमित भावनाएँ फूटती हैं । फिर स्वप्न दोष के प्रति भी यदि अस्वाभाविक भय ग्रन्थियाँ मन में घर कर गई हों, तो हीन भावना की वृद्धि होती जाती है, चित्त की एकाग्रता नष्ट हो जाती है और शक्तियों का बिखराव दिनानुदिन असफलता का बोध कराता है । मन में हताशा, कुंठा और पराजय की वृत्तियाँ घनीभूत एवं प्रचंड होती जाती हैं ।

काम-कुटेवों का भी यही परिणाम होता है । काम–कुटेव का अर्थ है–सामान्य विधि एवं पात्र को छोड़कर, किसी अस्वाभाविक विधि तथा अनुपयुक्त पात्र द्वारा योनेच्छा की सन्तुष्टि । परपीड़क कामक्रीड़ाएँ, काममूलक आत्मप्रपीड़न प्रदर्शन–स्पर्श–विचित्र वेष धारणा या विवस्त्र प्रियता, इतरेतर वस्त्र प्रियता, सयौनवृत्ति से लेकर अत्यन्त घृणित तथा वीभत्स रूपों में विचित्र कामचेष्टाएँ करना, यौन–सन्तुष्टि की भ्रान्ति से प्रेरित हो अकरणीय कर्म और अचिन्त्य चिन्तन तक काम–कुटेवों के विचित्र विकृत रूपों की पराकाष्ठा शवयौनवृत्ति, कामैषणा–हत्याएँ (लस्ट मर्डर) तथा पशुयौनवृत्ति आदि रूपों में देखी जाती है ।

मात्र भर्त्सना से काम–कुटेवों से मुक्ति असम्भव है । यह भर्त्सना गुरुजनों, प्रियजनों, परिजनों या समाज द्वारा की जाये अथवा स्वयं अपने ही द्वारा । अपराध के बोध से भर्त्सना का भाव जगे, तो प्रायश्चित स्वरूप अपराधी वृत्ति से मुक्ति का संकल्प ही प्रबल हो उठे तथा इस संकल्प को क्रियान्वित करने की अपनी शक्ति पर आस्था हो, यही श्रेयस्कर और सही मार्ग है । यही आत्मसम्मान भी है । आत्मसम्मान से ही संयम की शक्ति आती है । संयम द्वारा प्रतिगामी बन रही मनः शक्तियों को पुरोगामी, प्रगतिशील बनाया जाता है । यदि आत्मनिन्दा और आत्मा धिक्कार की ही भावना घर करती जाए तो इच्छाशक्ति क्षीण होती जाती है । इच्छाशक्ति की दुर्बलता मनुष्य में विभिन्न रोगों के उद्भव और विकास का कारण तथा आधार बन जाती है । मात्र चेतन मन के स्तर पर उपचार के प्रयास से रोग दूर नहीं हो पाते । चेतन मन में उभरी वृत्तियाँ तो हमारे संस्कारों के दर्पण में उभरे प्रतिबिम्ब मात्र हैं । परिष्कार का क्षेत्र तो वह संस्कार जगत् ही है ।

यह सही है कि कामवासना के दमन से विकृतियाँ ही पनपती बढ़ती हैं । लेकिन यह 'काम' की प्रचण्डता का नहीं, 'मन' की ही प्रचण्डता का परिणाम है ।

हमारी स्वसंचालित गतिविधियों का सूत्र संचालन अचेतन मस्तिष्क से ही होता है । आकांक्षाओं के वेग को हठात् रोकने अथवा प्रतिकूल परिस्थितियों के भावात्मक आघातों या अपमान के अनुभवों से अचेतन मन में कई तरह के अवरोध-विकार उत्पन्न होते रहते हैं । "काम" सम्बन्धी आकांक्षा से उत्पन्न विकृतियाँ भी इसी का एक अंग हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

काम को मनुष्य की मूल प्रवृत्तियों में से एक मान लेना एक हास्यास्पद भ्रान्ति ही है । युंग ने फ्रायड की इस स्थापना पर कि "मानवीय इच्छाएँ–चेष्टाएँ प्रधानतया काम–वासना से प्रेरित निर्देशित हैं," अपनी टिप्पणी यह की थी कि "फ्रायड का यह कथन, अन्तःकरण और व्यवहार के बीच की एक धुँधली सी परत की चर्चा भर है । यह मन की वास्तविक स्थिति नहीं, उसकी काली कुरूप छाया मात्र है । मन में अनेक लहरें उठती रहती हैं। क्रिया–प्रतिक्रिया की इन्हीं तरंगों में से एक कामवासना की तरंग भी है । उसे चेतना की मूल प्रेरणा मानना भ्रान्ति ही है ।"

मनोविज्ञान में किसी व्यक्ति की ही स्थापना को प्रमुखता देने वाले व्यक्तियों के भी मन का विश्लेषण अनिवार्य है । आज मनोविज्ञान बहुत आगे बढ़ चुका है, फिर भी अपनी आन्तरिक कुरूपता-दुर्बलता को गरिमा मंडित करने की निर्लज्ज चेष्टा में निरत लोग फ्रायड की उक्त स्थापना की ही दुहाई दिए चले जाते हैं, जबकि स्वयं फ्रायड ने जीवन के अन्तिम दिनों में अपनी कई मान्यताओं का परिशोधन परिमार्जन किया था । हॉब्स, एडम स्मिथ, मैक्डूगल, जेम्स, किल पेट्रिक, ड्रेवर, थार्नडाइक, वुडवर्थ आदि ने मूल प्रवृत्तियों का भिन्न–भिन्न रीति से विभाजन किया है । बेब्लोनस्की का कथन है कि "मनुष्य की मूल प्रवृत्तियाँ अनन्त आकाश के समान गणनातीत हैं ।"

'जीन्सबर्ग' ने कहा है कि– "मूल प्रवृत्तियाँ मनुष्य को अपनी ओर आकर्षित तो करती हैं, किन्तु वे ऐसी प्रचण्ड कदापि नहीं होती कि रोकने-मोड़ने पर कोई अनर्थमूलक विग्रह खड़ा कर दें ।"

अपनी पुस्तक "साइकोलॉजी एण्ड साइकोथेरेपी" में डा. विलियम ब्राउन ने कहा है–रियलिटी समय से परे है । वह समय से बाहर नहीं, समयातीत है । 'रियलिटी' की यह कालातीत होने की विशेषता ही हमें वह 'स्वतंत्रता' देती है, जिसके कारण हम अपनी मूल प्रवृत्तियों को नियंत्रित कर सकते हैं । भौतिक विज्ञान की शब्दावली से मूल प्रवृत्तियों के नियंत्रण की बात समझ में ही नहीं आ सकती । जहाँ तक भौतिक विज्ञान की वर्तमान पहुँच हैं, वहाँ तक 'डिटर्मिनिज्म' बिल्कुल सही है, उसके अनुसार मूल प्रवृत्ति का प्रकाशन अनिवार्य है । इसमें अन्यथा हम कुछ नहीं कर सकते। लेकिन 'रियलिटी' दिक्कालातीत है और स्वरूपतः आध्यात्मिक (या चेतनात्मक स्पिरिचुअल) है । हम इसी ब्रह्माण्ड व्यापी चेतना के अंश हैं और इसी रूप में हम स्वतंत्र हैं । मनुष्य की इच्छाशक्ति स्वतंत्र है, लेकिन कैसे स्वतंत्र है, यह निरी भौतिक–विज्ञानी विधियों तथा शब्दावलियों द्वारा हम न समझ सके हैं, न कभी समझ सकेंगे ।"

काम–कुटेवों समेंत समस्त स्वेच्छाचारिता की प्रेरणा अचेतन मन से होती है । अचेतन मन पर अधिकार पाने के लिए इच्छा शक्ति की महत्ता तथा स्वरूप को समझना आवश्यक होता है । हमारी सचेत इच्छा शक्ति हमारे चेतन–मन की ही उत्पत्ति है । अचेतन मन का विस्तार इससे बहुत अधिक है ।

स्नेह–प्रेम के अभाव तथा जीवन में विफलता के गहरे बोध से व्यक्ति की जीवनी शक्ति का प्रवाह सहज नहीं रह जाता और वह विकृति रूपों में व्यक्त होता है । यह विकृत चेतन मन के समक्ष जब पहली बार आती है तो व्यक्ति की नैतिक मान्यता उसे सहन नहीं कर पाती और उसे ग्लानि होती है । यह ग्लानि संकल्प से जुड़ने पर सृजनात्मक हो सकती है । दिशा–निर्देश के अभाव में यह आत्मविश्वास हीनता को जन्म देती और इच्छाशक्ति को क्षीण करती है । क्षीण इच्छाशक्ति से विकृतियाँ रुकती नहीं, बढ़ती ही जाती हैं ।

कामावेग जन्य विकृतियों से बचने के लिए एक उपाय यह भी सुझाया जाता है कि नैतिक मान्यताएँ ही इसके स्वच्छन्द प्रकाशन को अनुचित ठहराती तथा ग्लानि उत्पन्न करती हैं, अतः उन्हें ही ध्वस्त कर दिया जाये । किन्तु नैतिक मान्यताएँ इतनी मामूली वस्तु नहीं । वे हमारी प्रगतिशीलता का आधार हैं । वे विवेकपूर्ण हों, तभी नैतिक मानी जायेंगी और विवेक से उत्पन्न नैतिक मान्यताओं की अस्वीकृति का अर्थ है विवेक की अस्वीकृति । विवेक के बिना व्यक्ति विचित्र गतिविधियों का पिटारा मात्र बन कर रह जाएगा । उसे किसी भी कार्य में न तो बौद्धिक आस्वाद प्राप्त होगा, न ही हार्दिक उल्लास । तब जीवन में आनन्द की भी स्पष्ट अनुभूति न हो सकेगी ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नैतिक मान्यताओं का क्षेत्र आध्यात्म का क्षेत्र है । वे मात्र नियंत्रक नहीं, प्रेरक निर्देशक भी हैं । उनके बिना जीवन के किसी भी क्षेत्र में सार्थक क्रियाशीलता ही सम्भव न हो सकेगी । यह बात भारतीय विचारकों ऋषियों को अनादिकाल से स्पष्टतः ज्ञात है । मनु ने कहा है–

"ध्यानिकं सर्वमेंव एतद् यद् एतद्–अभिशब्दितम् ।
न हि अनध्यात्मवित्कश्चित् क्रियाफलं उपाश्नुते ॥"

अर्थात्– 'यह सम्पूर्ण 'दृश्य–जगत्' आत्मा के ध्यान से ही प्रयोज्य है । इसलिए जो अध्यात्म को नहीं जानता, वह किसी भी क्रिया का सत्परिणाम नहीं प्राप्त कर सकेगा ।'

अतः आवश्यकता काम–वासना के दमन की नहीं, शमन की है । शमित काम–शक्ति को पुण्य–प्रयोजनों में नियोजित करने पर ही प्रचण्ड पुरुषार्थ सम्भव हो पाता है । मनुष्य की विभिन्न मनःशक्तियों का उत्कर्ष काम–शक्ति के नियंत्रण तथा संचय से ही हो पाता है । काम का अर्थ है विनोद, उल्लास, आनन्द । मैथुन उसका एक अत्यल्प, नगण्य–सा अंग या माध्यम हो सकता है, अनिवार्य नहीं । मनु ने इसे ही स्पष्ट किया है–

"अकामस्य क्रिया काचित्, दृश्यते नेह कर्हिचित् ।
काम्यो हि वेदाधिगमः, कर्मयोगश्च वैदिकः ॥"

अर्थात्– काम रहित जीव की कोई क्रिया कदाचित कहीं देखने में नहीं आती । वेदाध्ययनादि सभी कुछ काम्य या इच्छा–प्रेरित ही हैं ।

अग्नि और सोम का, प्राण तथा रयि का ऋणात्मक तथा घनात्मक विद्युत् प्रवाह समन्वित होकर सृष्टि–संचरण को अग्रगामी बनाता तथा उल्लास का निरन्तर विस्तार करता है । यह आनन्दोल्लास काम के शमित, शान्त–सौम्य स्वरूप और शक्ति के सदुपयोग द्वारा ही उपलब्ध होता है । आवश्यकता 'काम' के अस्वाभाविक हठात् दमन की नहीं विकार और व्यभिचार के स्रोतों को बन्द करने की है । ताकि उस महाशक्ति का संगीत साहित्य, कला, के रूप में भाव–भरे स्नेह–सौहार्द तथा भक्ति भावना के रूप में विकसित किया जा सके । धर्म से अविरुद्ध काम को गीता में भगवान ने अपना स्वरूप बताया है । धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इन चार फलों में एक काम भी है । अस्तु उसे घृणित नहीं कहा जा सकता । इस बात की भी आवश्यकता नहीं कि उसे निरन्तर धिक्कारने और दबाने में ही लगा रहा जाय । विवेक का नियंत्रण भर रखने से कामचलाऊ हल निकल आता है और उच्छृंखलता की सीमा तक बढ़ने की आवश्यकता नहीं पड़ती । किन्तु इस महाशक्ति को निरर्थक भी क्यों जाने दिया जाय ? उसे परिष्कृत किया जाना चाहिए । उल्लास के रूप में परिणत करने के कितने ही सौम्य प्रयोजन हैं, जो हमें हास–विलास, विनोद, क्रीड़ा कौतुक के रूप में न केवल आनन्द देते हैं वरन् उत्साह, साहस और कौशल की वृद्धि भी करते हैं । काम भावना को इसी दिशा में परिष्कृत किया जा सके तो वह न तो विनाशकारी बनेगी और न अनैतिक रहेगी । उसे जीवन को उत्कृष्ट और आनन्दित बनाने के लिए बुद्धिमतापूर्ण रीति से मोड़ा जाय तो वह हर दृष्टि से लाभदायक सिद्ध होगा ।

काम तत्व की विकृति एवं परिष्कृति

सृष्टा एक कुशल कलाकार और असाधारण शिल्पी है । उसने अपनी कलाकृतियों में युग्म पद्धति का बड़ा ही सुन्दर समन्वय किया है । शरीर संरचना में दो हाथ, दो पैर, दो आँख, दो कान, दो नितम्ब आदि अवयवों को सुन्दरता और पूरक बनाने की दृष्टि से सृजा है । यों काम तो एक से भी चल जाता लेकिन काया इतनी सर्वांग सुन्दर न बन पाती । इसी दृष्टि से नर और नारी को सृजा गया है । वे अपनी–अपनी विशेषताओं से भरे–पूरे हैं । इतना ही नहीं, वे परस्पर एक-दूसरे के लिए अनेक दृष्टियों से पूरक हैं । इसमें एक तो सर्व-विदित प्रजनन परम्परा और वंशवृद्धि की नैसर्गिक आवश्यकता है ही, परन्तु बात उतने से ही समाप्त नहीं होती । आध्यात्मिक, मानसिक, सामाजिक, पारिवारिक, आर्थिक, शारीरिक क्षेत्रों की अनेकानेक ज्ञात और अविज्ञात आवश्यकताएँ ऐसी हैं, जिन्हें मिलजुलकर वे पूरा करते हैं । न केवल एक-दूसरे को समग्र बनाते हैं वरन् सृष्टि क्रम के सुसंचालन और सौन्दर्य परिकर में भी महत्वपूर्ण योगदान देते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अकेला नर अपूर्ण है । अकेली नारी भी । फूल-पत्तियों का युग्म फबता है । नर और नारी का समुदाय भी मिलजुलकर समग्रता उत्पन्न करता है । यही कारण है कि प्रायः सभी देवता और सभी ऋषि युग्म बनकर रहे हैं । आवश्यक नहीं कि इसके साथ वासना जुड़ी ही रहे और सन्तानोत्पादन अनिवार्य रूप से चले । एक-दूसरे को जो भावनात्मक उल्लास एवं उत्साह प्रदान करते हैं, वे अपने आप में इतने समग्र हैं कि सृष्टा की इच्छा और मनुष्य की आवश्यकता दोनों की ही पूर्ति हो जाती है ।

परिवार को धरती का स्वर्ग कहा जाता रहा है । दैवी पुष्पोद्यान । उसमें पूर्णता लड़की और लड़के दोनों ही मिलकर उत्पन्न करते हैं । व्यवस्था और बहुलता के साथ-साथ भावना क्षेत्र की उत्कृष्टता इस समन्वय से ही उत्पन्न होती है ।

अनगढ़ मनुष्य एक भौंड़ा पशु है । वह लिंग प्रतिपक्ष को पत्नी के रूप में देखता है और जब अवसर मिलता है, बिना किसी मान मर्यादा का विचार किये यौनाचार के लिए सचेष्ट होता है । इसमें उसे भय, लज्जा, अनौचित्य जैसा कोई अन्तर प्रतीत नहीं होता । माता, भगिनी, पुत्री के साथ पत्नीवत् व्यवहार करने में उसे किसी नीति या मर्यादा का व्यतिरेक हुआ प्रतीत नहीं होता किन्तु मनुष्य की मर्यादा इससे सर्वथा भिन्न है । उसके साथ धर्म, कर्त्तव्य, आदर्श के जो अनेकों अनुबन्ध लगे हुए हैं, वे नर और नारी के बीच उत्कृष्टता के अनेकानेक अनुबन्ध स्थापित करते हैं और उन स्थापनाओं का निर्वाह तथा परिपोषण ऐसे परिवार के बीच रहकर ही सम्भव होता है जिसमें नर और नारी मिलजुलकर रहते हैं । घर में जितने सदस्य रहते हैं, उनमें ने नर वर्ग को बाबा, ताऊ, चाचा, भाई, भतीजा आदि के शिष्टाचारों से व्यवहृत किया जाता है । इसी प्रकार महिलाएँ दादी, ताई, चाची, बुआ, बहिन, भाभी, भतीजी, बेटी आदि के रिश्तों में सँजोयी जाती हैं । हर रिश्ते की अपनी सुषमा, शोभा, भाव सम्वेदना मिठास अलग-अलग ही है । सब मिलकर एक गुलदस्ता बनता है । भोजन में अनेक प्रकार के व्यंजन जिस प्रकार बनते हैं उसी प्रकार परिवार में नर-नारी सदस्यों के माध्यम से आध्यात्मिकता, आदर्शवादिता और मर्यादा के अनेकों महत्वपूर्ण क्षेत्र विकसित होते हैं । इसलिए गृहस्थ बनाकर रहने की परम्परा है जिसका सामान्य जन ही नहीं उच्चस्तरीय विभूतियाँ भी निर्वाह करती हैं ।

आत्म मार्ग के पथिकों के लिए तो विवाह करने पर एक प्रकार के तप का अवसर अनायास ही मिलता है । युवावस्था में प्रकृति यौनाचार की उत्तेजना देती है । इसे हठपूर्वक रोकने से हठयोग सधता है और दोनों परिवार देव बुद्धि विकसित करके श्रद्धा सम्वर्धन के निमित्त उसे मोड़ दें तो भावयोग की साधना ठीक वैसी ही सध जाती है जैसी कि प्रतिमा पूजन के माध्यम से देवाराधना की योग की अनेकानेक शाखा प्रशाखाओं में एक अति महत्वपूर्ण गृहस्थ योग भी है । परिवार तो समूह साधना-सृष्टि में सुसंस्कारी श्रेष्ठतम नागरिकों के निर्माण का कारखाना-विद्यालय जैसा चलाना है ही । इसके अतिरिक्त दाम्पत्ति जीवन में प्रणय परिचर्या को श्रद्धा, भक्ति, आत्मीयता, समर्पण, स्नेह जैसे उत्कृष्ट आधारों की ओर मोड़ देना, एक ऐसा प्रयास है जिसमें ईश्वर भक्ति की प्रक्रिया की पूर्ति होती हैं । पत्नी के लिए पति को परमेश्वर माना गया है और पति के लिए पत्नी को जगदम्बा सदृश मानने के लिए शास्त्र वचन है । नारी तत्व को 'नमस्तस्यै-नमस्तस्यै-नमस्तस्यै-नमो नमः ॥' की मान्यता दी गई है । सीता, पार्वती, सरस्वती, लक्ष्मी, दुर्गा, आदि के रूप, सौन्दर्य आदि को देवी चित्रों में देखकर श्रद्धा सम्वेदना ही बढ़ाई जाती है किसी कुटिल कलुषता को मन में नहीं आने दिया जाता । ठीक उसी प्रकार अपनी धर्मपत्नी के रूप में भी उसी तत्व की अभ्यर्थना की जानी चाहिए । यही बात पत्नी के सम्बन्ध में पति के निमित्त भी है । वे उनमें राम, कृष्ण, शिव, गणेश आदि की झलक झाँकी करती हुई प्रभुभूत होती रह सकती है । भावनाओं का परिष्कार ही अध्यात्म है । अध्यात्म साधना के अनेकानेक उपाय उपचार हैं । उनमें एक धर्म पत्नी को मान्यता है । धर्म शब्द इसीलिए जोड़ा गया है कि यदि वह मात्र पत्नी होती तो नर मादा के मध्यवर्ती चलने वाले लोकाचार में कोई सोचने विचारने की आवश्यकता न पड़ती ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विवाहित जीवन में लोकाचार की दृष्टि से काम-कौतुक का कोई प्रतिबन्ध नहीं है परन्तु अध्यात्म जीवन में तो श्रद्धा का परिष्कार ही करना है। गोबर को गणेश बनाना है। खम्भे में से नृसिंह प्रकट करना है। पत्थर को मीरा की तरह गिरधर गोपाल स्तर तक ले जाना है और राम कृष्ण परमहंस की तरह दक्षिणेश्वर प्रतिमा में से साक्षात काली का रूप प्रकट करना है। दोनों पक्षों को ही एकलव्य द्रोणाचार्य की कथा को चरितार्थ कर दिखाना है। तुलसी का पौधा और शालिग्राम का पत्थर जब भगवान बन सकते हैं तो कोई कारण नहीं कि पति-पत्नी एक-दूसरे को जीवन्त देवसत्ता मानकर उसके सहारे प्राकृतिक कुत्साओं का संशोधन न कर सकें। आयुर्वेद में विषों का शोधन, जारण, मारण करके अमृत बनाया जाता है तो बदले में सेवा, सद्भावना, स्नेह, सौजन्य का परिचय देने वाले साथी में दिव्यता का आरोपण करते हुए अपना आत्मिक स्तर जमीन से आसमान तक ऊँचा उठाना पति व पत्नी दोनों का कर्त्तव्य है। इसमें दृष्टिकोण को परिवर्तन करने का आत्म शोधन, तप, दोनों को करना पड़ता है।

सभी देवताओं के विवाह हुए हैं परन्तु सन्तान किसी को भी नहीं हुई। अपवाद मात्र शिव का है जिन्होंने देवताओं की विपत्ति निवारण करने के लिए दो पुत्र पैदा किये और जिनका भरण-पोषण कृतिकाओं ने किया। ऋषियों में भी ऐसे अपवाद हो सकते हैं परन्तु वे आपत्तिकालीन आवश्यकता की पूर्ति के लिए देव प्रयोजनों के लिए ही हुए होंगे। अन्यथा गृहस्थ होते हुए भी उन्होंने निजी सन्तानोत्पादन का झंझट नहीं उठाया। याज्ञवल्क्य की दो पत्नियाँ थीं। परन्तु सन्तान एक को भी नहीं। इसी प्रकार अरुन्धती, अनुसूया आदि ऋषिकाओं के इतिहास हैं। जब सारा संसार, सारा गुरुकुल ही अपनी सन्तान है तो निजी प्रजनन का झंझट उठाकर निर्धारित सेवा कार्य में विघ्न विक्षेप क्यों उत्पन्न किया जाय।

बिना पत्नी का,बिना परिवार का ब्रह्मचर्य सरल है क्योंकि उसमें अभावजन्य विवशता है। परन्तु जहाँ प्रतिबन्ध न होते हुए स्वेच्छा प्रतिबन्ध लगता है वहाँ वह प्रक्रिया तप बन जाती है। घर में भोजन न हो और भूखा रहना पड़े तो वह विवशता का उपवास है, परन्तु जहाँ घर में व्यंजनों की कमी न होते हुए भी आहार का परित्याग किया जाता है, उपवास उसी को माना जायगा।

कुण्डलिनी योग साधना को आध्यात्मिक काय विज्ञान कहा गया है। उसमें नर के लिए नारी और नारी के लिए नर शक्ति केन्द्र एवं शक्ति स्रोत बनते हैं। पत्नी भाव का मातृभाव में बदलते ही यौनाचार अवयव प्राण संचार उद्गम बन जाते हैं। माता की जननेन्द्रियों से अपनी काया उपजती है और धरती के समान पवित्र है। स्तन दूध पिलाते हैं। वे कामधेनुवत् हैं। माता का चुम्बन आलिंगन कितना पुनीत, कितना उल्लास भरा होता है। उसमें अश्लीलता जैसी अनुभूति कहीं कोई नहीं होती। देवियों के चित्रों प्रतिमाओं में भी सभी नारी अंग होते हैं, परन्तु कोई उपासक उन्हें देखकर अश्लील कल्पना नहीं करता। यही बात नारी आराधिका के सम्बन्ध में नर आकृति के इष्टदेव के सम्बन्ध में है। वास्तविक ब्रह्मचर्य यही है। अविवाहित तो रहा जाय पर कुकल्पनाएँ मस्तिष्क पर छाई रहें तो वह प्रकारान्तर से व्यभिचार ही हुआ और पत्नी साथ रखकर राम सीता की तरह-वनवास बिताया जाय तो उसमें प्रणय चर्या की गंध भी नहीं सूँघी जाती।

कुण्डलिनी साधना का प्रथम चरण यही है। उसमें दृष्टिकोण को ब्रह्मचारी समान बनाना पड़ता है। रामकृष्ण परमहंस जब आध्यात्मिक साधना की परिपक्वावस्था में थे, तब उन्होंने माता शारदामणि से विवाह किया है। पण्डिचेरी के अरविन्द घोष जब मौन एकान्त साधना में संलग्न हुए तब उन्हें अकेली माताजी को उनकी आध्यात्मिक सहचर को उनसे भेंट करते रहने की सहमति मिली। गाँधी जी ने ३२ वर्ष की आयु में कस्तूरबा को माँ कहना आरम्भ किया और आजीवन दोनों के बीच वही माँ-पुत्र का रिश्ता स्थित रहा।

कुण्डलिनी साधक विवाहित है या अविवाहित इसकी झंझट नहीं। अनुबन्ध इस बात का है कि समीपवर्ती अथवा स्मृति में आने वाले प्रतिपक्ष के प्रति देव भाव उत्पन्न हुआ या नहीं। दोनों के सम्बन्ध में वासना का विष घुल रहा है या नहीं। यह विष सामान्य गृहस्थों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

के जीवन में भी जितना अधिक होगा उनका लौकिक जीवन भी उसी अनुपात से विषाक्त होता चला जायेगा। विवाह का तात्पर्य यौनाचार की अमर्यादा नहीं। इस खाई खड्ड में धँस पड़ने पर दोनों पक्ष अपना शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य गँवा बैठते हैं। पारिवारिक झंझटों से इतना अधिक लद जाते हैं कि उस बोझ को उठाते–उठाते कमर टूटती है।

तथाकथित समय और सम्पन्न देशों में इन दिनों विलासिता का उन्माद भूत पिशाच की तरह चढ़ा है। विलासिता में सजधज के समान ही यौनाचार की दुष्प्रवृत्ति बढ़ी है। इसका विषाक्त प्रतिफल सर्वप्रथम नारी को और उससे कुछ ही कम नर को भुगतना पड़ रहा है। नर अपनी जीवनी शक्ति का भण्डार चुकाता जा रहा है। बौद्धिक कुशाग्रता बेतरह घट रही है। उठती आयु में उत्तेजक आहार के कारण शरीर का ढकोसला तो बिगड़ने नहीं पाता। परन्तु भीतर ही भीतर स्थिति घुने हुए गेहूँ जैसी हो जाती है।

मनुष्य की औसत आयु विगत पचास वर्षों में बढ़ी है परन्तु बुढ़ापा दस वर्ष पहले आने लगा है। क्रिया शक्ति बेतरह क्षीण हो रही है। मांस के चलते–फिरते लोथड़े की तरह जीना पड़ रहा है। मस्तिष्कीय क्षमता में बेतरह गिरावट आई है। फलस्वरूप सनकी और अर्ध विक्षिप्त की तरह इस स्थिति में रहना पड़ता है जिसमें न किसी के साथ रहा जा सके न कोई अपने साथ रह सके। सनकों की दुनियाँ में तैरने वाला आदमी हमेंशा असन्तुष्ट और चिन्तित रहता है। भयभीत या उत्तेजित भी। स्त्रियों की स्थिति और भी अधिक दयनीय है। कामुक पुरुष समुदाय उन्हें छात्रावस्था में से ही निचोड़ना शुरू करता है। इसके लिए प्रलोभनों की हाट लगी रहती है। कुशिक्षण के लिए अश्लील साहित्य, ब्लू फिल्में, तथा इसी प्रशिक्षण में पारंगत बनाने वाले जाल गली मुहल्लों में खुले रहते हैं। भेड़ियों की कहीं कमी नहीं। अन्तर सभ्यों और असभ्यों का है, कही रुलाकर,कहीं हँसाकर तरीके अपने–अपने हैं, लेकिन नारी आखिर नारी है। वह वासना का कामधेनु नहीं है कि वह निरन्तर दुहते रहने पर भी अक्षय बनी रहे। परिणाम सामने है तथा कथित सभ्य देशों की नारियों में अस्सी प्रतिशत यौन रोगों से ग्रसित पाई गई हैं। वासना की पूर्ति और जन्म निरोध की दुहरी मार उन्हीं पर पड़ती है। फलतः वे रंग बिरंगी गुड़िया दीखने के अतिरिक्त और कुछ रह नहीं जातीं। इस खोखली स्थिति को वे किस प्रकार टॉनिकों, नशों और नींद की गोलियों के सहारे घसीटती हैं। आयु बढ़ने के साथ वे हर दृष्टि से खोखली होती जाती हैं। मर्दों से भी अधिक दयनीय स्थिति उनकी होती हैं।

यह सभ्य और सम्पन्न देशों के नर-नारियों की दुर्दशा है जिससे पीड़ित होकर वे भीतर रोते और बाहर हँसते रहते हैं। भारत जैसे पिछड़े और अशिक्षित देशों की स्थिति और भी गई बीती है। बूढ़े अन्येपन, खाँसी विक्षिप्त अशक्त स्थिति में दिन काटते हैं। बाल विवाह की लानत लड़कियों को सीधे बुढ़ापे में धकेल देती है। उन्हें पता भी नहीं चलता कि यौवन कब आया और कब चला गया। जो दिन इसके होते हैं उनमें से प्रजनन के भार से इस बुरी तरह लदी रहती हैं कि चैन की साँस लेने के दिन ही खाली नहीं मिलते। पच्चीस की आयु होते–होते चार पाँच बच्चों की माँ बन जाती हैं। मातृत्व पारिवारिक श्रम, आये दिन के अपमान, बन्दी जीवन साथ में कुछ न कुछ रोग भी समेंट लाता है। श्वेत प्रदर, कमर का दर्द, सिर का दर्द, पैरो की फड़कन, अपच, अनिन्द्रा, थकान आदि अनेकों जंजाल शिर पर लादे हुए वे जिन्दगी की लाश ढोती रहती हैं। वे अपने लिए, परिवार के लिए बच्चों के लिए, पति के लिए भार बनकर ही जीती हैं। इसका कारण एक ही है वासना का अत्यधिक और अनगढ़ दबाव।

इसका प्रमाण प्रत्यक्ष खोजा जा सकता है। विधवाएँ परित्यक्ताएँ, कुमारियाँ जिनकी गोदी में बच्चे नहीं हैं, अपेक्षाकृत अधिक स्वस्थ और सुखी रहती हैं। यों ऐसे जीवन में उन्हें अनिश्चित और अर्थाभाव की स्थिति में रहना पड़ता है। तो भी वे सुहागिनों की तुलना में शारीरिक और मानसिक दृष्टि से कहीं अधिक निश्चिन्त और सन्तुष्ट रहती हैं। जिन तक इन दुर्व्यसनों की हवा जितनी कम पहुँची है वे नर-नारी उतने ही अधिक सुखी हैं। आदिवासी, वनवासी, किसान, श्रमजीवी जिनके मस्तिष्क पर निर्वाह की समस्याओं का सुलझाना भर रहता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

है, जिन पर वासना का प्रकोप जितना कम हुआ है, वे निर्धन और अशिक्षित होते हुए भी कम से कम स्वास्थ्य को गँवा बैठने के अभिशाप से तो बचे ही रहते हैं ।

इन पंक्तियों में से एक झाँकी उस स्थिति की कराई गई है जो आज की उद्धत पीढ़ी को वासना विलासिता की बलि वेदी पर चढ़कर सहन करनी पड़ती है । उनके लिए आध्यात्मिक प्रगति का, समाज सेवा का, उत्कृष्ट चिन्तन का, व्यक्तित्व के परिष्कार का तो सुयोग मिलता ही कहाँ है ?

आध्यात्मिक काम विज्ञान की दिशाधारा और विलासी कुकर्मियों की कुचेष्टा में जहाँ जमीन आसमान जैसा अन्तर है वहाँ उसका कर्मफल भी निश्चित है । ब्रह्मचर्य को तप और योगाभ्यास कहा गया है । इसका कारण प्रत्यक्ष है । उसे अपनाने पर नर और नारी के बीच जो सहज उमंग होती है और निकट आने पर उल्लास का निर्झर बनकर फूटती है, उसे कभी भी, कहीं भी, कोई भी प्रत्यक्ष देख सकता है ।

नारी शक्ति है । नर तेजस् । दोनों एक-दूसरे को उत्साह और बल प्रदान करते हैं परन्तु यह होता तभी है जब दोनों के बीच, कुत्सा का प्रवेश न होने पावे । काम का अर्थ क्रीड़ा है क्रीड़ा अर्थात् विनोद, हास्य, पर वह होना चाहिए सात्विक । बालकों जैसा निश्छल । ऐसी मनःस्थिति बनाये रहकर, छोटी, बड़ी, समान आयु के नर-नारी निकटता रखें । आत्मीयता भरें, सान्निध्य को बनायें, बढायें तो उससे सांसारिक और आध्यात्मिक दोनो ही दृष्टियों से दोनों ही पक्षों का लाभ होता है ।

वे गलती पर हैं जो नर-नारी की समीपता में पाप दृष्टि का ही अनुमान लगाते हैं और एक दूसरों को सर्वथा दूर रखने की बात सोचते हैं । पर्दे का प्रतिबन्ध लगाते हैं और जब भी किसी प्रकार के वार्तालाप या सहयोग का अवसर हो तभी जासूसी चौकीदारी करने के लिए मध्यवर्ती की नियुक्ति पुलिस मैन की तरह करना आवश्यक समझते हैं । ऐसे लोगों का मन ही कलुषित समझना चाहिए । जो मनुष्य–मनुष्य के बीच रहने वाली श्रद्धा सद्भावना पर विश्वास नहीं करते । सर्वत्र पाप ही पाप खोजते हैं । नर और नारी भी तो दो मनुष्य ही हैं । उनकी बारूद माचिस जैसी बनावट नहीं है जो निकट आते ही विस्फोट या अनर्थ उपस्थित करे ।

कामुकता का भ्रम जंजाल

पाश्चात्य मनोविज्ञान ने यह प्रतिपादित किया है कि मनोविकारों का दमन न किया जाय अन्यथा वे दमित होकर कई प्रकार की कुंठाएँ उत्पन्न करते हैं । मानसिक संतुलन को गड़बड़ा देते हैं और शारीरिक रोगों का सृजन करते हैं । उद्विग्न मन वाला मानसिक और शारीरिक दोनों ही प्रकार के स्वास्थ्य गँवा बैठता है ।

स्वाभाविक इच्छाओं में वे कामुकता को प्रधानता देते हैं । उसे जन्मजात और सदा रहने वाली भी मानते हैं । उसके समाधान का उपाय काम सेवन की तृप्ति बताते हैं । आनाकानी करने पर कई प्रकार के शारीरिक मानसिक रोग होने का भय दिखाते हैं । अजीब हैं यह मनोविज्ञान और अजीब है उनके शोध निष्कर्ष । इन्हें सही मानकर चला जाय तो मनुष्य जाति को ऐसे दलदल में फँसना पड़ेगा कि उसमें से निकल सकना ही संभव न रहे ।

बच्चे द्वारा माँ का दूध पीने को इन मनोविज्ञानियों ने रति आनंद के समकक्ष बताया है । यदि इस स्तन पान को रति सुख गिना जाय तो आयु बढ़ने के साथ–साथ वह उत्कंठा भी प्रबल होती जानी चाहिए और वयस्क होने तक बालक को माता का दूध ही पीते रहना चाहिए । यह किस प्रकार संभव है ?

कामुकता अन्यान्य जीव जन्तुओं में शारीरिक उमंग के रूप में उठती है और गर्भाधान का प्रयोजन पूरा करके कुछ ही समय में शान्त समाप्त हो जाती है । यह प्रस्ताव आमतौर से मादा ही करती है क्योंकि गर्भधारण उसी को करना पड़ता है । इस संदर्भ में काम आने वाले भीतरी प्रजनन अंग जब अपने लिए काम माँगते हैं तो मादा का मन यौनाचार के लिए उत्साह प्रकट करता है । नर उसकी स्थिति को पहचानने के उपरान्त समाधान का सहयोग कर देता है । पशु पक्षियों में कीट पतंगों में यही प्रथा चलती है । परन्तु उसमें इच्छा की प्रधानता मादा ही करती है । बिना उसका प्रस्ताव आगे आये नर झुण्ड में साथ–साथ रहते हुए भी मादा से किसी प्रकार छेड़खानी नहीं करता ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सार्वभौम मनोविज्ञान यही है। कामुकता और उसकी तृप्ति का अनुबंध भी यही है। मनुष्य भी प्रकृति परिवार का एक सामान्य प्राणी है। उसके ऊपर भी वही नियम अनुबंध लागू होते हैं जो अन्य प्राणियों पर। फिर मनोवैज्ञानिकों का यह प्रतिपादन किस प्रकार व्यवहृत हो सकता है कि मनुष्य की इच्छाएँ कामुकता प्रधान हैं। उनका दमन नहीं किया जाना चाहिए। तृप्ति से ही चैन पड़ता है अन्यथा स्वास्थ्य बिगड़ जाता है।

यह प्रस्ताव ऐसा है जिसे मनुष्य के सभ्यताभिमानी ढाँचे के अन्तर्गत किसी प्रकार पूरा नहीं किया जा सकता। समाज में विवाह एक अनिवार्य बंधन है। उसके कानूनों में ढील या कड़ाई हो सकती है परन्तु विवाह तो विवाह ही है। वह आदिम लोगों में भी होता है, यहाँ तक कि कई पशु-पक्षी तक जोड़ा बनाकर रहते हैं, एक-दूसरे पर अपने अधिकार की स्वेच्छा स्वीकृति देते हैं। मनुष्यों में तो यह प्रचलन सभ्यता का प्रमुख आधार समझकर उसे माना अपनाया जाता है। नारी की वासना गर्भ धारण करते ही शान्त हो जाती है परन्तु मनुष्य के संबंध में ऐसी बात नहीं है। उसने काम को एक कौतुक विनोद और रसास्वादन जैसा मान लिया है। हर घड़ी नवीनता खोजता है। इस प्रकार उसकी शारीरिक तृप्ति एक ही से भले हो जाय, पर मानसिक तृप्ति के लिए तो अलिफ लैला जैसी नित नई श्रंखला चाहिए। इतने पर भी मन की कल्पनाओं का क्या ठिकाना। उनका परी लोक तो हर घड़ी नया बन सकता है और फिल्म की लड़ी में उसे बदला जा सकता है इतना उपभोग किस प्रकार संभव हो सके और फिर अभीष्ट तृप्ति किस प्रकार मिल सके। यदि इसी तृप्ति पर शारीरिक स्वास्थ्य और मानसिक संतुलन टिका है तो उस बालू की भीत का गिरना निश्चित है। वह देर तक अपने पाँवों पर खड़ी नहीं रह सकती। उसका प्रस्तावित उपचार वर्तमान मनुष्य की सामाजिक-पारिवारिक व्यवस्था रहते तो बन नहीं सकता। नये सिरे से नया स्वेच्छाचारी समाज गढ़ा जाये तो बात दूसरी है, उसमें भी बालकों, वृद्धों नपुंसकों की इच्छा फिर भी अतृप्त ही बनी रहेगी और स्वास्थ्य संकट खड़ा ही रहेगा।

मान्यताएँ सर्वथा अधूरी और बेतुकी हैं। मन की मूलभूत संरचना को देखने से प्रतीत होता है कि जिस बात को जितने अधिक रसास्वादन का समावेश करते हुए स्मरण किया जाय वह मनःलोक पर उतनी ही गहराई तक छाती चली जायेगी। जिसे स्मरण ही न किया जाय, जिसका महत्व ही अविदित अथवा स्वल्प हो, उसकी न तो ललक उठेगी और न कामना ही जगेगी। जिन घोड़ों बैलों, या बकरों को नपुंसक बना दिया जाता है वे अपनी बिरादरी की मादाओं के साथ रहते हुए भी छेड़खानी नहीं करते, एक जाति के जीव ही यदि एक साथ रहें तो भी उनके मन में कोई विकार उत्पन्न नहीं होता। साध्वी बाल विधवाएँ आरंभ से ही परपुरुष गमन की कल्पना तक में पाप मानती हैं। फलतः उन्हें वैसा सोचते नहीं बनता। यदि कोई छेड़ भी दे तो वे सर्पिणी की तरह फुफकार उठती हैं। यह शारीरिक या मानसिक बनावट की भिन्नता नहीं, वरन् संकल्प शक्ति की प्रमुखता है कितने ही बाल ब्रह्मचारी संत महात्मा अपने व्रत के सच्चे भी होते हैं। उन्हें न तो वासना सताती है न दमन करने की आवश्यकता पड़ती है और न इस कारण उन्हें कोई रोग सताते हैं।

सच्चाई तो मनोवैज्ञानिक प्रतिपादन के सर्वथा विपरीत है। पाश्चात्य देशों में जहाँ यौन सदाचार का अब कोई महत्व नहीं रह गया है वहाँ भी लाखों की संख्या में अविवाहित रहने वाले पादरी और महिलाएँ पाई जाती हैं। जैन साधु और साध्वी भी ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते हैं। यह सभी आमतौर से अपना व्रत निभा लेते हैं। अपवाद व्यतिक्रम तो यदा-कदा ही देखने सुनने को मिलते हैं। पाया गया है कि इन ब्रह्मचारियों के स्वास्थ्य भी अपेक्षाकृत अच्छे रहते हैं और वे दीर्घजीवी भी होते हैं। वैज्ञानिकों, साहित्यकारों, कलाकारों में से कितनों ने ही जानबूझकर विवाह नहीं किया। प्रसंग आने पर भी वे सदा यही कहते रहे कि इस झंझट में पड़ने से उनकी तन्मयता एवं एकाग्रता में बाधा पड़ेगी। काम हर्ज होगा और वे अपने विषय में जितनी अधिक प्रगति कर सकते हैं न कर सकेंगे। उनका कथन बहुत हद तक सही था। जिनके पीछे घर-गृहस्थी का परिवार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

व्यवसाय का जितना बड़ा जाल-जंजाल बँधा रहता है उनकी क्षमता छुटपुट प्रसंगों और चित्र-विचित्र समस्याओं में ही उलझी रहती हैं । वे एकनिष्ठ होकर किसी प्रयोजन में तन्मय नहीं हो पाते । फलतः उनकी विशेषतया आध्यात्मिक प्रगति आधी अधूरी ही रहती है ।

कितने ही ऐसे उदाहरण भी देखे गये हैं कि पति-पत्नी उद्देश्य विशेष में एक-दूसरे के सहायक रहने की दृष्टि से ही परस्पर बँधे रहे । उन्होंने काम कौतुक में कोई रस नहीं लिया । रामकृष्ण परमहंस, जापान के गान्धी कागावा आदि के ऐसे ही उदाहरण हैं । जिन्होंने अपने मन को ही साथी मान लिया उनमें जार्ज बर्नार्ड शा, राम मनोहर लोहिया जैसे कितने ही व्यक्ति हुए हैं जिन्होंने अपनी जिन्दगी हँसी-खुशी से काटी और उन्हें किसी प्रकार का अभाव नहीं खटका ।

विचारों को उत्तेजित करना और फिर उनको रोकने का प्रयत्न करना यह रीति ऐसी हो सकती है जिसमें झंझट खड़ा हो । अतः उत्तेजक अश्लील वातावरण से दूर रहा जाय । वासना की अतिवादी तुष्टि के भयानक दुष्परिणामों का अनुमान लगा सकें तो प्रतीत होगा कि रसास्वादन राई रत्ती जितना था लेकिन उसका दुष्परिणाम इतना सामने आया जिसे प्रतिभा का सर्वनाश ही कहा जा सकता है । यौनाचार से तो शरीर का स्वत्व नष्ट होता ही है साथ ही व्यक्तित्व के गहन अन्तराल को हर दृष्टि से समर्थ बनाने वाले ओजस्, तेजस्, और वर्चस् की भी भयंकर कमी पड़ती है जिनके कारण मनुष्य को खोखला बन कर रहना पड़ता है। उसकी वह विशिष्टता नष्ट हो जाती है जो ब्रह्मचर्य पालन करने के उपरान्त काय कलेवर ओर जीवन ऊर्जा के रूप में बलिष्ठता और वरिष्ठता बढ़ाती रहती है ।

नारी को रमणी, कामिनी, रूपसी, वेश्या की दृष्टि से देखने, उसकी कल्पना करने से ही चिन्तन चंचल होता है और अश्लीलता का खुमार चढ़ता है । उनके अश्लील अवयवों की छवि मानस पटल पर जमाने और उनके साथ खिलवाड़ करने की कल्पना ही उत्तेजना उत्पन्न करती है । यह स्वनिर्मित उन्माद है जिससे मद्यपान की तरह बचा भी जा सकता है ।

नारी को माता, भगिनी, पुत्री की दृष्टि से देखने पर कुविचार मन में नहीं उठते । धर्मपत्नी के संबंध में भी साथी, सहचर, मित्र, भाई जैसी मान्यताएँ रखी जा सकती हैं । पुरुष पुरुष के बीच और नारी-नारी के बीच अश्लील विचार नहीं उठते हैं, वरन् उनकी मित्रता घनिष्ठता आत्मीय स्तर की हो जाती है । मनुष्य जाति के दो वर्ग हैं नर और नारी । पर उन दोनों के बीच ऐसी कोई विशेषता नहीं है जो अश्लील स्तर की उत्तेजना उत्पन्न करे । रेलगाड़ी, मुसाफिरखाने, मेले ठेले, पर्व स्नान आदि के अवसर पर असंख्यों नर-नारियों आते जाते, मिलते-बिछुड़ते रहते हैं किन्तु उस माहौल में किसी के मन में अश्लील विचार नहीं आते । इसी दृष्टि से संसार को देखा जाय और इसमें नर-नारी वर्ग के दोनों प्राणियों की भीड़ भरी हुई देखी जाय तो किसी विशेष आकृति के सौन्दर्य पर मन लुभाने जैसी कोई विचारणा उठेगी ही नहीं ।

मानव शरीर की नर-नारी दो आकृतियाँ हैं । दोनों में पूर्णतया समानता है । अन्तर इतना ही है कि प्रकृति की विनोद, क्रीड़ा, वंश परम्परा चलाने के लिए एक पक्ष को कुछ अधिक दायित्व भार उठाना पड़ता है जबकि दूसरे को प्रजनन के उपरान्त बालक की दीर्घकालीन सुव्यवस्था बनाने के लिए अन्यान्य भारी भरकम दायित्व उठाने पड़ते हैं । उसमें प्रकृति का वंशवृद्धि प्रयोजन तो पूरा होता है लेकिन नर और नारी उस प्रयोजन की पूर्ति के लिए यौनाचार अपनाते और उसकी परिणति को कोल्हू के बैल की तरह वहन करते हैं । यौनाचार का रत्ती भर कौतुक दोनों ही पक्षों को ऐसे निविड़ जंजाल में फँसाता है कि सारा जीवन उसी जंजाल की उलझन सुलझाने में व्यतीत हो जाता है ।

कामुकता के आरंभ, मध्य और अंत की बदलती हुई परिस्थितियों को देखा जाय तो प्रतीत होगा कि यह किसी माया नगरी में बुना गया जाल जंजाल मात्र है । पत्नी की सहायता से जीवनक्रम में सुविधा होने की बात भी रंगीली कल्पना मात्र है । वास्तविकता यह है कि दोनों पक्षों को एक-दूसरे के लिए इतना करना खपना पड़ता है जिसकी तुलना में एक की निर्वाह कहीं अधिक सरल और सस्ता पड़ता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कामुकता एक मद्यपान जैसी खुमारी है जिसमें कल्पित मजेदारी दीख पड़ती है । इसी को पाश्चात्य वैज्ञानिक आवश्यक बताते हैं और उस रसास्वादन की महिमा बखानते हुए कहते हैं कि इससे बचा गया, इसे रोका गया तो स्वास्थ्य बिगड़ेगा और मानसिक उद्वेग उठेंगे । धन्य हैं प्रतिपादनकर्त्ता और धन्य है उनकी उलटा सोचने की दृष्टि । जो उनकी बातों पर भरोसा करते और समर्थन का सिर हिलाते हैं उन्हें भी किसी सनक लोक के वासी ही कहा जा सकता है ।

कामुकता का आवेश उन्माद

उन्माद का सहोदर है–आवेश । मस्तिष्क की स्थानीय गड़बड़ी से पागलपन उभरता है । अनिद्रा के लगातार रहने, कोई मानसिक आघात लगने, ज्वर के मस्तिष्कीय क्षेत्र में प्रवेश कर जाने आदि कारणों से लोग पगला जाते हैं । वे अपनी जिम्मेदारी को भूल जाते हैं और बदनामी, आर्थिक हानि आदि क्षतियों का अनुमान नहीं लगा पाते । आपे में नहीं रहते और चाहे जो करने लगते हैं । यह पागलपन के लक्षण हैं ।

आवेश में थोड़ा अन्तर है । इससे ग्रसित व्यक्ति होश में तो रहता है और अपने स्वरूप को भी याद रखे रहता है किन्तु जब तैश आता है तो यह ज्ञान नहीं रहता कि इस स्थिति में जो कहा या किया जा रहा है उसका परिणाम क्या होगा ? असंतुलित स्थिति में कुछ भी ओंधा-सीधा सोचा जा सकता है । तिल का ताड़ और राई का पर्वत बनाया जा सकता है । यह असंतुलन कातरता निराशा में भी परिणत हो सकता है और आक्रामक दिशा अपना लेने पर किसी से भयंकर रूप से टकरा जाने से लेकर हत्या या आत्महत्या तक कर बैठने पर उतारू हो सकता है ।

मस्तिष्क की अजीब दशा हो जाती है । जो विचार उबल पड़ता है वह ठंडा ही नहीं होता । नींद उड़ जाती है । जागृति या उनींदा अवस्था में वही विचार हावी रहता है । उतारे से उतरता नहीं । हटाने से हटता नहीं । बिना ब्रेक की गाड़ी की तरह मनमानी दिशा में दौड़ता रहता है । स्थिति बहुत देर में मुश्किल से ही काबू में आती है । जो चिन्तन चल रहा है उसके विपरीत भी कोई तर्क या तथ्य हो सकता है । यह सूझता नहीं । विकल्प ढूँढने और नई राह खोजने की भी गुंजाइश नहीं रहती । ऐसी दशा में बेलगाम घोड़े की तरह विपत्ति में जा फँसने की दिशा में भी सरपट दौड़ा जा सकता है किसी भी खाई खड्ड में गिरा जा सकता है ।

आवेशों में एक अजीब किस्म की सनक है–कामुकता । प्रकृति प्रवाह के जीवन में इसका स्थान अत्यन्त स्वल्प है । नर–मादा जब पूर्ण परिपक्व स्थिति में होते हैं तो फल के मध्य से पकने वाले नये बीज की तरह अगली पीढ़ी के सृजन की तैयारी करते हैं । उसी उत्साह की परिपक्वता, प्रौढ़ता का नाम है कामुकता । जो यौनाचार के लिए आतुरता प्रकट करती है और साथी सहयोगी तलाश करती है ।

इस उत्तेजना में एक जैव चुम्बकत्व लहराता है जिसका आरम्भ मादा की ओर से होता है । वह परिपक्व स्थिति के नर को उत्तेजित आमंत्रित करता है । फलतः यौनाचार का संयोग बन जाता है और गर्भाधान से नई पीढ़ी का निर्माण का श्री गणेश होता है । अपरिपक्वावस्था में अल्प वयस्कता में यह उभार नहीं उठता और वृद्धता आने पर शिथिलता की स्थिति में सही प्रजनन बहुधा सम्भव नहीं होता, इसलिए कि कामोन्माद की प्रवृत्ति समाप्त प्रायः सी हो जाती है । अन्य प्राणियों की तरह यही प्रकृति नियम मनुष्य पर भी लागू होता है । उनकी कामुकता नारी की चरम विकसित जननोल्लास पर निर्भर रहनी चाहिए । नर बिना आमंत्रण के मादा को नहीं छेड़ता । इन नियमों का मनुष्य भी पालन करे, यह प्रकृति प्रेरणा है । मर्यादा में रहकर ही शान्ति और व्यवस्थापूर्वक जिया जा सकता है ।

प्रकृति का अनुशासन जिन्होंने अंगीकार किया है उन वनवासी कबीलों अथवा सभ्य समुदायों में विभिन्न आयु के नर–नारी साथ–साथ रहते हैं । वे सभी अपने निर्धारित क्रियाकलापों में लगे रहते हैं । कामुक चिन्तन की चपेट में वही मुड़ते हैं जिनकी स्थिति गर्भाधान के उपयुक्त हो गई है । इसके बिना स्वाभाविक रूप से कामुक आवेश उत्पन्न ही नहीं होता और न यौनाचार का अवसर खोजा जाता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मनुष्य में जो अनेक दुष्प्रवृत्तियाँ स्वभाव में शामिल कर ली हैं उनमें प्रमुख एक है– कामुकता । इसमें एक प्रतिशत यथार्थता और ९९ प्रतिशत काल्पनिक उच्छृंखलता का समावेश रहता है ।

विपरीत लिंग के सजातीय की मांसलता तथा उत्कंठा के काल्पनिक चित्र गढ़े होते हैं और मिलन संयोग का सपना संजोया जाता है । बस इतने भर से स्नायविक उत्तेजना आरम्भ हो जाती है और ऐसा उपाय सोचने से मानसिकता दौड़ने लगती है जिससे कल्पना को चरितार्थ करने का अवसर मिले ।

सामाजिक मर्यादाओं में पाशविक स्वेच्छाचार की छूट नहीं है । मनुष्य को सामाजिकता के नैतिकता के,बंधनों से जकड़ा गया है और आचार संहिता अपना कर चलने के लिए मर्यादाओं का अनुबंध सृजा गया है । लेकिन जब मानसिकता आवेशग्रस्त होती है, तो वह वर्जनाओं को तोड़ डालने तक के लिए कटिबद्ध होती है । इससे दाम्पत्य दायित्वों की लक्ष्मण रेखा टूटती है और पहले मानसिक फिर शारीरिक व्यभिचार का सिलसिला चल पड़ता है ।

इन दिनों यह अनर्थकारी दुष्प्रवृत्ति आँधी तूफान की तरह बढ़ चली है । गोपनीय विषय होते हुए भी सार्वजनिक रूप से झरोखों से जो उजागर होता है, उसे देखते हुए लगता है कि नर–नारी के बीच जो शालीनता का अन्तर पड़ा हुआ था, उसे बेतरह झकझोरा और तोड़ा मरोड़ा जा रहा है । बहिन, भाई, पिता, पुत्री के रिश्ते समाप्त प्रायः होते जा रहे हैं । शिकार और शिकारी की दृष्टि उभर रही है । विपरीत लिंग के प्रति अश्लील चिन्तन आम बात होती जा रही है । इसके प्रतिफल व्यभिचार, बलात्कार इत्यादि के रूप में इस कदर सुनने देखने में आ रहे हैं कि उनके भयावह परिणामों की सम्भावना से परिवार संस्था की पवित्रता का समापन होता दीख पड़ता है । इसका प्रतिफल वासनात्मक अतिवाद के कारण शरीरों के निःस्वत्व होते देखा जा सकता है, और पाया जा सकता है कि अभिभावकों और वंशजों के बीच दुःखदायी उपेक्षा पल रही है । यौन रोग पनप रहे हैं और उसके साथ ही बौद्धिक एवं नैतिक स्तर बेतरह गिर रहे हैं ।

कामुकता का आवेश उत्पन्न करने में अश्लीलता की पक्षधर साज-सज्जा विशेष रूप से जिम्मेदार है । इस प्रकार की उत्तेजना देने वाली पुस्तकें, तस्वीरें, फिल्में, भावुक और कोमल मस्तिष्कों पर गहरी छाप छोड़ती हैं और किशोरों–किशोरियों से लेकर तरुण और प्रौढ़ों का ध्यान अन्य उपयोगी प्रसंगों से खींचकर अपने साथ जोड़ती हैं । फलतः दिवास्वप्नों में भूत-पिशाच की तरह यौनाचार ही मनों पर छाया रहता है । इसे आवेश ही कह सकते हैं, एक प्रकार का उन्माद भी । उन्मादी अपना व्यक्तित्व और भविष्य गँवा बैठता है । आतुर भी इसी प्रकार क्षतिग्रस्त होते हैं । अश्लील चिन्तन स्वच्छंद यौनाचार के दुष्परिणाम अभी भी बुरी तरह मनुष्य को तोड़ निचोड़ रहे हैं और भी अधिक बढ़ोत्तरी होने पर जो बीतने वाला है उसकी चिन्ता मात्र से सीना दहलता है ।

वासना के ताप में विगलित व्यक्तित्व

कामुक और लम्पट व्यक्ति अपने व्यक्तित्व की मूल भित्ति को ढहाते–जीवनी शक्ति का क्षरण तो करते ही हैं, समाज में भी उन्हें सम्मान और प्रतिष्ठा की दृष्टि से नहीं देखा जाता । बहुत सम्मानित और प्रतिष्ठित व्यक्तियों के चरित्र पर भी जब वासना का, लम्पटता का धुआँ उड़ता है तो वर्षों की मेंहनत से अर्जित प्रतिष्ठा एक क्षण में गिर जाती है । अपने समाज की आज भी यह स्थिति है कि कामुकता और यौन उच्छृंखलता को आधुनिकता का अंग मानकर उसे मौखिक स्वीकृति भले ही दी जाती हो, लेकिन इसकी वकालत करने वाले स्वयं अपनी माता, पत्नी, बहिन और पुत्री के सम्बन्ध में इस प्रकार के आक्षेप सहन नहीं करते । यौन–संयम या ब्रह्मचर्य जीवन के भव्य भवन की आधारशिला है तो यौन–शुचिता उस आधार भित्ति में लगा ईंट का एक पत्थर । पश्चिमी देशों में मुक्त यौनाचार को भले ही इतना अधिक हेय और निन्दनीय न माना जाता हो, मगर परिवार के अस्तित्व का एक आधार अब भी इसे समझा जाता है । इस आधार के टूटने पर कितने ही दम्पत्तियों को तनाव, मन–मुटाव, कलह से लेकर विग्रह तक के दुष्परिणाम भोगने पड़ रहे हैं । अब वहाँ भी तीव्रता से यौन–संयम के साथ यौन–शुचिता की आवश्यकता अनुभव की जा रही है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पीढ़ियों के अन्तर और सभ्यता के विकास के साथ इस प्रकार की विकृतियाँ भले ही फैली हों, पर किसी समय में यौन सम्बन्धों की पवित्रता और संयम को सारी पृथ्वी पर परिवार की, दाम्पत्य सम्बन्धों की और स्वस्थ सन्तति की सम्भावना की रीढ़ इसे समझा जाता था। पूरी पृथ्वी पर इन मर्यादाओं का ध्यान रखा जाता था तथा इनके उल्लंघन पर किसी को नहीं बख्शा जाता थ। मिस्र की क्लियोपेट्रा की कहानी सर्वविदित है जिसने अपने भाई को उन्मुक्त जीवन में बाधा मानकर मौत के घाट उतार दिया। भाई की हत्या करने से उसके सामने राज्य का दूसरा कोई प्रतिद्वन्द्वी उत्तराधिकारी तो नहीं बना, पर मिस्र के दरबारी सामन्त और सरदारों ने एक स्त्री को शासन की बागडोर सौंपने का विरोध किया। उस समय क्लियोपेट्रा का कोई बस न चला और उसे सीरिया जाना पड़ा। वहाँ उसने अपनी सुन्दरता के बल पर कितने ही प्रतिष्ठित व्यक्तियों को अपना समर्थक बनाया तथा उनके मातहतों की एक सेना बनाकर सिंहासन की लड़ाई लड़ी और बिना खून खराबे के ही मिस्र की सत्ता हथिया ली। यहाँ तक कि दिग्विजयी रोमन सम्राट जूलियस सीजर को भी अपने रूप का दास बना लिया। पचास साल के वृद्ध सीजर और बीस वर्षीया क्लियोपेट्रा– दोनों की जोड़ी कहीं भी संगत नहीं थी। लेकिन वासना और महत्वाकांक्षा की अन्धी दौड़– सीजर को भी लोकनिन्दा और जनरोष का शिकार होना पड़ा तथा क्लियोपेट्रा को तो सर्पदंश से अपनी आत्महत्या करनी पड़ी।

वर्षों तक क्लियोपेट्रा ने भले ही शासन किया हो मगर अन्त में मिस्र के सरदारों तथा वहाँ की जनता ने उसकी व्यभिचारी आदतों से रुष्ट होकर बगावत कर दी। साथ ही रोम का तत्कालीन सम्राट आक्टेवियस भी सेना लेकर चढ़ आया और क्लियोपेट्रा को बन्दी बनाकर अपने साथ ले गया। वहाँ बड़ी बुरी दशा में उसे आत्मघात करना पड़ा। अपने जीवन का दुखान्त समापन करने के बाद भी क्लियोपेट्रा को आज तक घृणा और निन्दा की दृष्टि से देखा जाता है।

फिलिस्तीन में अतिथि बनकर आयी इथोपिया की महारानी शीबा की कामवासना भड़काकर वहाँ के सम्राट सोलोमन ने क्षण भर की सन्तुष्टि भले ही प्राप्त कर ली हो, मगर इसके लिए जीवन भर अपने सहयोगियों का रोष और विरोध सहना पड़ा। निस्सन्तान सोलोमन चाहता था कि शीबा के गर्भ से उत्पन्न हुआ पुत्र उसका उत्तराधिकारी बने, लेकिन जब उसने उत्तराधिकारी की घोषणा की तो अपने ही सामन्तों और सरदारों से जो वक्त आने पर सम्राट् के लिए जान तक लड़ाने को तैयार थे– बगावत करने की धमकी सुननी पड़ी। सोलोमन का अन्त उस भूल या उन्माद के कारण बड़ी ही दुःखद परिस्थितियों में हुआ।

यौन–शुचिता के सम्बन्ध में लोक मर्यादाएँ और आवश्यक नियमों का परिपालन न केवल प्रतिष्ठा बनाये रखने की दृष्टि से आवश्यक है वरन् व्यक्तित्व को समर्थ और विकसित बनाने के लिए भी आवश्यक है। आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी कहा जा सकता है। इस मामले में ढीले और कमजोर व्यक्तियों को हर कहीं अप्रामाणिक और अविश्वसनीय माना जाता था। उन्हें कोई गम्भीर दायित्व नहीं सौंपे जाते, क्योंकि अस्थिरता उनके भाव का एक अंग बन जाती है। स्त्री हो या पुरुष अनियंत्रित यौन भावना जिनमें भी होगी वे अस्थिर स्वभाव के होंगे ही। जहाँ उन्हें आकर्षक और मोहक व्यक्तित्व दिखाई दिया, सौंपे गये कार्यों का दायित्व अनुभव करने के स्थान पर उनके चित्त में प्रतिपक्षी को प्राप्त करने और भोगने की इच्छा उठने लगेगी। उसी के सम्बन्ध में उठी कल्पनाओं की लहरों में वे बहने लगेंगे। पश्चिमी देशों में इस ओर मुख्य रूप से ध्यान दिया जाता है। कर्त्तव्य निष्ठा और दायित्व भावना की परिपक्वता को सर्वप्रथम इसी कसौटी पर कसा जाने लगा है कि व्यक्ति मादक वातावरण और कामोद्दीपक बातों में कहीं उत्तेजित या अस्थिर तो नहीं हो जाता है। साथ ही औरों की इस कमजोरी से लाभ उठाने की प्रवृत्ति बढ़ रही है। हाल ही का समाचार है किसी कम्पनी ने अपने उत्पादन की खपत के लिए सुन्दर प्रचारिकाओं को रखना आरम्भ किया और उसे इसमें सफलता भी मिली।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उच्छृंखलयौन भावना का अर्थ इतना भर ही नहीं है कि ऐसे वातावरण में रहकर या स्त्री-पुरुषों के सम्पर्क में आते ही व्यक्ति अपनी वासना को पूरा कर ले । सुन्दर युवतियों के चित्र देखने से लेकर राह चलती लड़कियों या स्त्रियों को विशेष रूप से देखने के पीछे भी यही भाव रहता है । सिनेमा से लेकर नायिका प्रधान उपन्यास, रोमान्टिक कथा-कल्पनियाँ या युवतियों के चित्रों के साथ प्रचारित विज्ञापनों पर नजरें गढ़ाने का लगाव व्यक्ति की अनियन्त्रित वासना का परिचय देता है । मानस-शास्त्री इन कृत्यों को भी मैथुन मानते हैं । हमारे देश में तो आठ प्रकार के मैथुनों में से सात इसी प्रकार के माने गये हैं ।

कामोद्दीपक आचरणों या बातों में किसी भी प्रकार का रुझान या रुचि रखना यही सिद्ध करता है कि इसके चित्त में अस्थिरता है और जरा भी इस प्रकार का वातावरण मिलने पर व्यक्ति के विचलित होने, गिर जाने की सम्भावना है । अवसर की दुर्लभता से व्यक्ति का चरित्रवान बने रहना कोई बड़ी बात नहीं है । अन्यथा आन्तरिक दृष्टि से तो वह मानसिक व्यभिचार की ओर प्रवृत्त रहता है । मनोविज्ञान के साधारण जानकार भी इस बात को अच्छी तरह जानते हैं कि व्यक्ति की भावनाएँ उसके शरीर, स्वास्थ्य और क्रियाशक्ति को कितना प्रभावित करते हैं । जब मनोभूमि ही दूषित होगी तो कार्य और प्रवृत्तियाँ स्वस्थ कहाँ रह पाती हैं ? इन विकृतियों का यत्किंचित समाज व्यवस्था और व्यवसाय तन्त्र भी जिम्मेदार है, मगर एक प्रकार से व्यावसायिक प्रतिष्ठान भी मनुष्य की इस कमजोरी का लाभ उठाते हैं । विज्ञापनों में मॉडलिंग का व्यवसाय-इसी कमजोरी से लाभ उठाने का एक अंग है । सुन्दर लड़कियों और सजीले नवयुवकों के आकर्षक चित्रों के साथ साबुन, तेल से लेकर दवाओं तक के विज्ञापनों का यही उद्देश्य है । व्यक्ति का कामुक चित्त उन वस्तुओं की ओर नहीं उनके साथ छपे बनाये चित्रों की ओर ही आकृष्ट होता है और उस आकर्षण के साथ विज्ञापित वस्तुओं का परिचय प्राप्त करता है ।

जो भी हो व्यक्ति स्वयं उत्तरदायी है उस सीमा तक जहाँ तक कि वह अपनी वासना-यौन भावना को अनियंत्रित विस्तार देता है । आजकल तो इस विचारधारा का प्रचार कतिपय बुद्धिजीवियों द्वारा भी किया जाने लगा है कि मनुष्य को उन्मुक्त यौन जीवन की छूट मिलनी चाहिये । कहा जाता है कि इस प्रकार उसकी यौन कुण्ठाएँ विसर्जित होंगी और वह अपना स्वस्थ विकास करने में समर्थ हो सकेगा । इस छूट के लिए न तो हमारे संस्कार अनुमति देते हैं और न ही नैतिकता । रतिक्रीड़ा को गोपनीय विषय माना जाता है साथ ही सामाजिक उत्तरदायित्व को पूरा करने के लिए उसकी आवश्यक सीमित छूट दाम्पत्य जीवन में भी दी गयी है । यौन-शुचिता के आधार पर ही पति-पत्नी का प्रेम और विश्वास प्रगाढ़ बनता है । छुपकर किये जाने वाले अवांछनीय कुकर्म उस आधार को ही तोड़ देते हैं तथा परिवार को एक सुदृढ़ संस्था न रहने देकर स्वार्थी सौदा बना देते हैं । कहना नहीं होगा इसका प्रभाव भावी सन्तानों पर भी पड़ता है । पश्चिम में बढ़ती अपराध प्रवृत्ति का मुख्य कारण औद्योगीकरण या व्यस्त तीव्र जीवन उतना नहीं है, जितना कि वहाँ के परिवारों की जर्जरावस्था । व्यावसायिक सन्धियों की भांति स्थापित किये गये दाम्पत्य सम्बन्ध और उनमें जन्मी संतान अपने माता-पिता का प्रेम पाने के लिए बुरी तरह तरसती है और उसी प्रेम के अभाव में जन्म लेती है उनमें अपराध प्रवृत्ति । जो पति-पत्नी आपस में ही स्वस्थ प्रेम भावना का विकास नहीं कर सके, जिनकी स्वयं की ही प्रेम पिपासा अतृप्त रही, वे अपनी सन्तानों को क्या प्रेम दे सकेंगे । प्रेम की भूख और स्नेह की आकांक्षा अधूरी और अतृप्त लिये घूमते बच्चे भावी जीवन में कुण्ठित और विद्रोही नहीं बनेंगे तो क्या बनेंगे ।

अपने देश में संस्कार और नैतिकता के स्थापित मूल्य प्रत्येक व्यक्ति के अन्तरंग में उच्छृंखल वासना को अवांछनीय अनुभव कराते हैं । चोरी छिपे यदि अनुचित संबंध बना भी लिए जॉय अथवा व्यक्ति मानसिक व्यभिचार में लिप्त रहे तो संस्कारगत जीवन मूल्यों को तोड़ने की एक अपराध भावना उनमें जन्म लेती है, जो उन्हें कभी भी स्थिर चित्त और एकाग्र नहीं होने देती । फलस्वरूप वे अपना कोई भी कार्य मनोयोगपूर्वक नहीं कर पाते । मनोयोग और एकाग्रता के अभाव में किये गये किसी भी कार्य की सफलता असंदिग्ध रहती है, मिलती भी है तो आधी-अधूरी ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इन सबका परिणाम खंडित व्यक्तित्व के रूप में, निराश और हताश व्यक्ति के रूप में, चित्त की अस्थिरता और चंचलता के रूप में मिलता है । व्यक्तिगत दृष्टि से खंडित व्यक्तित्व और सामाजिक दृष्टि से अविश्वसनीयता तथा अप्रामाणिकता–यही तो मिलता है उद्वेलित-वासना की उपलब्धि के तौर पर । अतः आवश्यक है कि जीवन में सफलता और समाज में प्रतिष्ठा प्राप्त करने के लिए अपनी यौन भावना को नियंत्रित किया जाय । यौन–शक्ति का श्रेष्ठतम उपयोग तो उसे सृजनात्मक दिशा देना ही है । दीपक का तेल बाती से होता हुआ सिरे पर पहुँच कर प्रकाश उत्पन्न करता है । यदि दीपक की पेंदी में छेद हो, तेल की दिशा अधोमुखी हो तो न दिया जलेगा और न तेल बचेगा । यौन–शक्ति को ऊर्ध्वगामी बनाना प्रयत्न और अभ्यास साध्य है । कालिदास ने प्रयत्न और अभ्यास से इसे सिद्ध कर जड़ बुद्धि से महाकवि बनने में सफलता प्राप्त की । पत्नी को एक क्षण के लिए छोड़ने को तैयार नहीं– तुलसी ने जब यह दिशा पकड़ी तो वे कामुक और लम्पट पुरुष से रामचरित मानस जैसे ग्रन्थ के प्रणेता और सन्त महापुरुष बन गये । गृहस्थ होते हुए भी यौन भावना को परिमार्जित और सृजनात्मक दिशा दे कर बोलते समय काँपने वाले मोहनदास अपनी आवाज से करोड़ों लोगों में प्राण फूँकने वाले महात्मा गाँधी हो गये । यौन भावना को ऊर्ध्वमुखी बनाकर संसार में आश्चर्यजनक सफलता प्राप्त करने वाली ज्ञात–अज्ञात विभूतियों का विवरण इकट्ठा किया जाय तो उनकी संख्या हजारों में नहीं लाखों में हो सकती है । यदि इतना एकदम सम्भव न हो सके तो कम से कम उसे नियंत्रित तो किया ही जा सकता है । सफलता का मतलब यश, कीर्ति ही नहीं है , उच्च गुणों से सुसज्जित आत्मबल, सम्पन्न, सुखी और सन्तुष्ट जीवन जिया जाय यही व्यक्तित्व की सफलता का राज है । अपनी शक्तियों को अनेक छिद्रों से न बहाकर उन्हें एकाग्र कर, शक्ति संचय कर जिस कार्य में भी जुटा जाय सफलता का राजमुकुट उसी क्षेत्र में प्रतीक्षा करते हुए मिलेगा । अन्यथा उद्धत कामुकता, लम्पटता और वासना की उष्णता समूचे व्यक्तित्व को ही गलाकर रख देती है, यह तो शत–प्रतिशत निश्चित दुष्परिणाम है ।

कामक्षरण को रोकें, उसे सही दिशा दें

पृथ्वी के दो ध्रुव हैं–एक उत्तरी, दूसरा दक्षिणी । शरीर के भी दो महान शक्ति केन्द्र हैं एक मस्तिष्क में अवस्थित सहस्रार चक्र –ब्रह्मरंन्ध्र, जिसमें मन–बुद्धि–चित्त स्वबोध का अन्तःकरण चतुष्टय निवास करता है । दक्षिणी ध्रुव जिसे मूलाधार चक्र कहते हैं । जननेन्द्रिय में मूल है । इन दोनों की समर्थताओं के बलबूते ही मनुष्य समुन्नत स्तर का बनता है । ब्रह्मरन्ध्र में बुद्धिमत्ता से लेकर ब्रह्म चेतना भरी पड़ी है । इसी को कैलाश, मानसरोवर कहते है । यही क्षीरसागर में शेषशायी विष्णु का निवास है । जननेन्द्रिय मूल गह्वर में महाकाली कुण्डलिनी शक्ति का निवास है इसे साहस का केन्द्र कहते हैं और वंशवृद्धि के तत्व भी इसी क्षेत्र में सन्निहित हैं । मस्तिष्कीय प्रसन्नता का अपना आनन्द है और काम चेतना का अपना उत्साह ।

इन दोनों शक्ति भण्डारों को भगवान ने इसलिए प्रदान किया है कि उनके माध्यम से जीवन को सफल बनाने वाले एक से एक बढ़े चढ़े कार्य सम्पन्न किये जा सकें । मस्तिष्कीय ब्रह्मरन्ध्र मनुष्य को विद्वान, बुद्धिमान, प्रज्ञावान, दूरदर्शी, दिव्यदर्शी आदि बनाता है । परमात्मा से साक्षात्कार करने से लेकर स्वर्ग मुक्ति, ऋद्धि–सिद्धि आदि का यह उद्गम केन्द्र है । सांसारिक सूझ-बूझों एवं योजनायें भी इसी केन्द्र में उद्भूत होती हैं । मूलाधार चक्र में उत्साह और साहस के भण्डार भरे पड़े हैं । उनके सहारे कठिन दीखने वाले पराक्रम और पुरुषार्थ उपलब्ध होते हैं और साधारण दीखने वाला व्यक्ति भी असाधारण सफलता उपलब्ध करता है । इन्हें सुरक्षित रखा जाय, इस दृष्टि से भगवान ने इन्हें गोपनीय तिजोरियों में बन्द करके रखा है । मस्तिष्क खोपड़ी के सुदृढ़ कवच के भीतर अवस्थित है । जननेन्द्रिय क्षेत्र भी बालों से, वस्त्रों से इस प्रकार ढका रहता है कि साधारणतया किसी की दृष्टि उस पर न पड़े । यह सुरक्षा प्रबन्ध इसलिए है कि किसी प्रकार इनको अनावश्यक क्षति न पहुँचे ।

किन्तु मनुष्य की बुद्धिमत्ता को परखने की दृष्टि से सृष्टा ने इन दोनों केन्द्रों में ऐसी कुलबुलाहट उत्पन्न

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की है कि वे वयस्क होते ही उत्तेजित हो उठते हैं और उस दिव्य सामर्थ्य का अपव्यय काम-क्रीड़ा में करने लगते हैं। इसका परिणाम व्यक्तित्व को प्रतिभावान बनाने वाली प्राण चेतना के अनावश्यक क्षरण रूप में ही दृष्टिगोचर होता है और जो विवेकपूर्वक इन्द्रियनिग्रह का संयम बरतने नहीं पाते वे थोड़े ही दिनों में खोखले हो जाते हैं। ऐसी दशा में वे ज्यों-त्यों जीवन की गाड़ी खींचते रहते हैं। कोई महत्वपूर्ण सफलता हस्तगत नहीं कर पाते। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए ही शास्त्रकारों ने ब्रह्मचर्य को सिद्धिदाता तप कहा है और यथासम्भव काम-क्रीड़ा से बचने का परामर्श दिया है।

विवाह का तात्पर्य दाम्पत्य जीवन की सार्वजनिक घोषणा और एक-दूसरे के चरित्र की रक्षा- विशेषताओं का मिलजुलकर रचनात्मक दिशा में सदुपयोग करना है। जो लोग इस प्रकार का जीवन बिता पाते हैं, वे परस्पर एक-दूसरे का हृदय जीतते, गहरा स्नेह सद्भाव अर्जित करते हैं। काम वासना की पूर्ति भी दाम्पत्य जीवन में होती रहती है, मगर उसमें दूरदर्शी विवेकशीलता अपनाने की महती आवश्यकता रहती है। इस सन्दर्भ में हम दूसरे प्राणियों को मिलने वाली प्रकृति प्रेरणा से बहुत कुछ शिक्षण ग्रहण कर सकते हैं। मादा जब गर्भ धारण की स्थिति में होती है, वैसी आवश्यकता अनुभव करती है तो नर को उत्तेजना प्रदान करती है। गर्भधारण होते ही दोनों पक्ष उस ओर से अपना मन सिकोड़ लेते हैं। पक्षी आमतौर से जोड़ा बनाकर रहते हैं, मगर उनमें से कोई भी कुसमय की छेड़छाड़ नहीं करता। गाय, भैंस, भेड़, बकरी झुण्ड में चरती हैं। उनमें सभी मादाएँ नहीं होती कुछ नर भी होते हैं, मगर गर्भधारण की प्राकृतिक उत्तेजना के बिना कोई किसी को हैरान नहीं करते। इसी में मर्यादा पालन भी है और शारीरिक मानसिक सुरक्षा भी।

आज के प्रचलनों में यह सबसे बड़ा दुर्भाग्य है कि नारी को वयस्क होते ही उसे नर द्वारा कुदृष्टि से देखने का सिलसिला चल पड़ता है और उसकी परिणति बहुत बार काम सेवन के रूप में भी होती है। यहाँ तक कि उस प्रसंग में सभी नीति-नियमों का उल्लंघन अतिक्रमण आरम्भ हो जाता है। फलतः कुछ ही दिनों में दोनो पक्षों की जननेन्द्रियाँ रोगग्रस्त हो जाती हैं। पुरुषों को प्रमेह, स्वप्नदोष शीघ्रपतन नपुंसकता आदि रोग घेर लेते हैं और स्त्रियों को श्वेत प्रदर, रक्त प्रदर, जलन, खुजली, फुन्सी जैसे रोग घेरने लगते हैं। बहुमूत्र की व्यथा लग जाती है। ऐसे-ऐसे अनेकों रोग अमर्यादित मैथुन का दुष्परिणाम हैं।

प्रकृति ने नर-नारी दोनों की विशेषतया नारी की जननेन्द्रिय को इस प्रकार सृजा है कि जब प्रजनन की उत्कृष्ट अभिलाषा हो तभी उस अवयव पर दबाव पड़े अन्यथा अनावश्यक घर्षण और क्षरण शरीर की बहुमूल्य धातुओं की बर्बादी आरम्भ कर देता है।

कुण्डलिनी गह्वर -जननेन्द्रिय मूल में समाहित शक्ति भण्डार को ऊर्ध्वरेता होना चाहिए, ताकि उस स्नेह के पोषण से बुद्धिमत्ता का दीपक प्रदीप्त रह सके। जो इस तथ्य की उपेक्षा करते व काम-सेवन में अतिवाद बरतते हैं, वे अपनी मेंधा, समर्थता और स्वास्थ्य सन्तुलन को बेहिसाब गँवाते हैं। यह सौदा बहुत महँगा पड़ता है। कहते हैं कि कुत्ता सूखी हड्डी चबाने लगता है, तो उसके जबड़े छिल जाते हैं और खून निकलने लगता है। उसका स्वाद उसे ऐसा प्रतीत होता है, मानो यह रक्त सूखी हूई हड्डी का स्वयं हो वस्तुतः होता यह है कि काम सेवन में अपनी समर्थता को बारूद की तरह जलाया जाता है और उस फुलझड़ी से छूटती चिनगारियों को देखकर मोद मनाया जाता है।

काम सेवन की तरह काम चिन्तन भी कम भयानक नहीं है। मस्तिष्क में जिस स्तर के विचार आते हैं उसी स्तर की क्रिया के निमित्त मन मचलने लगता है और इस आतुरता की पूर्ति के लिए सही गलत अनेक उपाय सूझते हैं। कई बार तो उसके लिए कोई न कोई तरकीब भी ढूँढ निकाली जाती है। इसीलिए भारतीय मनोविज्ञान वेत्ताओं ने परामर्श दिया है कि काम चिन्तन पर नियंत्रण किया जा सके, तो काम सेवन की प्रक्रिया फिर कुछ भी कठिन न रह जायेगी।

यह स्मरण रखने योग्य है कि दाम्पत्य जीवन का उद्देश्य घर परिवार की व्यवस्था बनाने से लेकर परस्पर एक-दूसरे की प्रगति में सहायता करना है। जिसकी योग्यता बढ़ी-चढी है, वही अपने साथी की सहायता भी अधिक कर सकता है। फिर मित्रता के साथ वह परम पवित्र कर्त्तव्य भी जुड़ा हुआ है कि एक-दूसरे की सुविधाओं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की देखभाल ही न करें, वरन् योग्यता भी बढावें। इसके लिए स्वयं भी प्रयत्न परामर्श करना पड़ता है। एकान्त का बचा हुआ समय समुन्नत जीवन की रूपरेखा बनाने की अपेक्षा यदि काम-कौतुक में ही वह समय खर्च करते रहा जाय, तो दो कार्य एक साथ कैसे बन पड़ेंगे।

सृष्टि के सभी प्राणी नया गर्भ धारण तब करते हैं जब पिछला बच्चा बहुत हद तक स्वावलम्बी हो जाय। मनुष्य ही है जो इस मर्यादा का अतिक्रमण करता है और पिछला बच्चा समर्थ होने से पूर्व ही नयी जिम्मेंदारी उठाने के लिए आतुर होने लगता है। बहुप्रजनन हर दृष्टि से अनर्थकारी है। इससे जननी का स्वास्थ्य बर्बाद होता है। पिता पर आर्थिक भार बढ़ता है बच्चों का लालन-पालन सही रीति से नहीं हो पाता और समाज की प्रगति योजनाओं का सर्वनाश होता है। इतना उत्पादन नहीं बढ़ रहा है जितनी तेजी से बच्चे पैदा हो रहे हैं काम-सेवन में मर्यादा न रखने के फलस्वरूप अधिक बच्चे पैदा होते है और उन सभी को न माता-पिता का उचित स्नेह संरक्षण मिल पाता है और न उनकी प्रगति के लिए आवश्यक साधन जुटाना बन पड़ता है।

धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के चतुर्वर्ग में जहाँ 'काम' शब्द का उपयोग हुआ है, वहाँ उसका अर्थ हास- परिहास, क्रीड़ा विनोद मात्र है। यौनाचार की खुली छूट नहीं। इस सन्दर्भ में जितना संयम बरता जा सके, उतना ही उत्तम है। इसमें अपना ही नहीं साथी का भी शारीरिक, मानसिक स्वास्थ्य सही रहता है। जो इसका ध्यान रखते हैं, उन्हें सच्चा मित्र भी कह सकते हैं और साथ ही हितचिन्तक भी।

नारी को कामिनी, रमणी, वेश्या के रूप में चित्रित करने में ओछे साहित्यकारों, कवियों, गायकों, चित्रकारों की पूरी भूमिका रहती है। रीतिकाल के कवियों ने नारी के कामोत्तेजक पक्ष को ही उभारा है। नृत्य अभिनय आदि भी इसी कुत्सा तक केन्द्रित हो गये हैं। इसका परिणाम यह हुआ है कि भावनात्मक शालीनता हम बुरी तरह गँवा बैठे और मानवी उत्कृष्टता का परित्याग कर उन पशुओं की बिरादरी में सम्मिलित हो गये, जिनमें काम-सेवन के लिए बहिन, पुत्री, माँ, आदि के लिए भी कोई प्रतिबन्ध नहीं है। जिस उच्छृंखलता के साथ यह दुष्प्रवृत्तियाँ बढ़ रही हैं उसे देखते हुए यही कहा जा सकता है कि हम शील का परित्याग करके नरपशु बनते जा रहे हैं।

नीति और औचित्य का भावना स्तर यह बताता है कि नर-नारी के बीच भाई-भाई जैसा बहिन-बहिन जैसा व्यवहार होना चाहिए। शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य की माँग है कि अश्लीलता को उत्तेजित करना एक दण्डनीय अपराध माना जाये। अश्लीलता का दृष्टिकोण समाज क्षेत्र में प्रगति का सबसे बड़ा व्यवधान है क्योंकि वह नारी की योग्यता एवं क्षमता को प्रतिबन्धित रखता है। नर और नारी सर्वथा अलग रहें, तो फिर बात वहाँ से शुरू करनी चाहिए कि लड़के माता का दूध न पियें। बहिन-भाई एक घर में न रहें। इतने पतित समाज में पूरी अराजकता फैलेगी और सर्वनाश होगा। यह उसी की शुरूआत है कि नारी की दृष्टि से नर को और नर की दृष्टि से नारी को सर्वथा पृथक रखने और मिल जुल कर काम करने को अविश्वास की दृष्टि से देखा जाय। ऐसी व्यवस्था बनाने में तो हजार प्रकार की हानियाँ हैं। उचित इतना ही है कि दृष्टिकोण में परिवर्तन किया जाय। नारी को माता का, बहिन का, पुत्री का सम्मान दिया जाय और पत्नी को भी धर्मपत्नी, गृहलक्ष्मी दृष्टि से देखते हुए समान सम्मान, समान सहयोग एवं समान अधिकार देने का मानवोचित दृष्टिकोण अपनाया जाय। स्मरण रहे, वर्तमान प्रचलन जिसमें नारी मात्र के प्रति अश्लील कामुकता की दृष्टि से देखा जाता है, अत्यन्त हेय है। भगवान शंकर ने ऐसे ही उद्दण्ड कामदेव का नाश तीसरा नेत्र खोलकर किया था। हमें शिव-पार्वती, विष्णु-लक्ष्मी, राम-सीता के उच्च आदर्शों को समझने और अपनाने का प्रयत्न करना चाहिए। इसी में कल्याण है।

शास्त्रकार का यह कथन शत-प्रतिशत सही है कि "मरणं बिन्दु पातेन जीवनं बिन्दु धारणात्" मर्यादा भंग के कारण बढ़ते हुए व्यभिचार ने ऐसे अनेकों रोगों को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इन्हीं दिनों जन्म दिया है , जिनके कारण मनुष्य को आज नारकीय सड़न में सड़ते हुए मरना पड़ रहा है। अच्छा हो मनुष्य काम सेवन की मर्यादा समझें एवं ऊर्ध्वरिता बनकर अपनी शक्ति उच्चस्तरीय प्रयोजनों में लगायें।

मनोनिग्रह और कामुकता का निराकरण

अपना चेहरा अपनी आँखों से देख सकना सम्भव नहीं, मगर वह दर्पण में प्रतिबिम्ब रूप से सहज ही देखा जा सकता है। मन सूक्ष्म है। उसकी स्थिति और प्रकृति की जाँच-पड़ताल करने के लिए वासना, तृष्णा और अहंता के स्तर को परखते हुए यह जाना जा सकता है कि व्यक्ति का मानसिक स्तर क्या है ?

आत्मा का शासन क्षेत्र मन है। आत्मा की पवित्रता और प्रखरता किस स्तर तक ऊँची उठ सकी, इस प्रगति का लेखा-जोखा इस आधार पर मिलता है कि मन को निग्रहीत और सुनियोजित करने में कितनी सफलता प्राप्त हुई। मन का स्तर किस हद तक परिमार्जित हुआ इसे जाँचने के लिए तृष्णा और अहंता के सूक्ष्म क्षेत्र पर कसौटी लगाने से पहले वासना की प्रत्यक्षता की स्थिति समझना सरल है।

शरीर पर मन का आधिपत्य है और आत्मा का मन पर। मन कहाँ, क्या, कौतुक रच रहा है इसके लिए इन्द्रियाँ ही परीक्षा क्षेत्र हैं। इन्हें नियंत्रित करना ही मोटे तौर से मनोनिग्रह की सच्ची कसौटी है। इन्द्रियों के साथ लौकिक मन गुँथा हुआ है। व्यक्तिगत चरित्र और चिन्तन का स्वरूप समझने के लिए यह देखना होता है कि इन्द्रियों को वासना वृत्ति की उच्छृंखलता बरतने की छूट तो नहीं मिल गई है। इन्द्रियों का गणना क्रम स्वादेन्द्रिय से होता है, इसके बाद ही कामेंन्द्रियाँ आती हैं। पाण्डवों में थे तो पाँच, मगर पराक्रम की दृष्टि से अर्जुन और भीम मूर्धन्य माने गए हैं। इसी प्रकार मनोनिग्रह के प्रसंग में इन्द्रिय दमन की साधना करने वालों को दो मोर्चे फतह करने की प्रमुखता देनी होती है। जीभ का चटोरापन काबू में आ गया तो समझना चाहिए कि प्रथम चरण सही रूप से उठ गया। इसके साथ ही संयम युग्म में दूसरा चरण कामेंन्द्रिय पर अनुशासन स्थापित करने का है। दोनों ने यदि शालीनता अपना ली हो तो समझना चाहिए कि मनोनिग्रह का प्रत्यक्ष आरम्भिक और कठिन भाग पूरा हो गया। अब तृष्णा और अहन्ता पर अंकुश लगाना भी कठिन न रहेगा।

रसना का नियंत्रण स्वाद जीतने से होता है। खाद्य पदार्थों में शकर, नमक, मसाले और चिकनाई मिलाने से आहार के अनेकों ललचाने वाले आकार-प्रकार बनते हैं मिष्ठान पकवान और चाट-नमकीन जैसा आकर्षण उपर्युक्त मिश्रणों में ही होता है, जो स्वास्थ्य की दृष्टि से उपयोगी होना तो दूर नितान्त हानिकर ही है। इनकी आदत नशेबाजी जैसी पीछे पड़ जाती है और फिर छुड़ाये नहीं छूटती। इनके साथ कड़ाई बरतनी पड़ती है। संकल्प की कड़ाई। जैसे व्रत उपवासों के दिनों बरतनी पड़ती है कि नियम भंग करने से पाप पड़ेगा। बदनामी होगी। व्रत टूटेगा। देवता अप्रसन्न होंगे। पुण्यफल से वंचित रहना पड़ेगा आदि-आदि। अस्वाद व्रत का पालन लम्बे समय तक किया जाय तो फिर वह भी अभ्यास में आ जाता है। सादी रोटी चबा-चबाकर खाई जाय तो वह बिना दाल शाक के भी बड़ी स्वादिष्ट लगने लगती है। इसी प्रकार शाक-दाल आदि के सम्बन्ध में भी है, वे भी कुछ दिन के अभ्यास से अपने स्वाद विशेष से मनभावन लगने लगते हैं। जब अफीम तम्बाकू शराब जैसे कड़ुवे पदार्थ कुछ दिन की आदत से स्वभाव के अंग बन जाते हैं और उनके बिना काम नहीं चलता तो कोई कारण नहीं कि अभ्यास से अस्वाद आहार प्रिय न लगने लगे। स्वभाव का अंग न बन जाय। यह मात्र निग्रहीत मन के अभ्यास पर निर्भर है।

दूसरा प्रसंग कामेंन्द्रिय का है उसमें स्त्री की छवि में उत्तेजक आकर्षण देखने और रतिक्रिया की स्मृति को मस्तिष्क में घुमाने से उच्छृंखलता उत्पन्न होती है और वैसा अवसर बार-बार प्राप्त करने के लिए मन करता है। रति कर्म का योग तो जब-तब ही बैठता है। अनेक उत्तेजक मुद्राएँ जो मस्तिष्क में घूमती हैं, उनकी निकटता तक सम्भव नहीं हो पाती। शरीर स्पर्श तक कठिन है। वे छवियाँ और उनके साथ अठखेलियाँ मात्र कल्पना चित्रों के रूप में ही मनःक्षेत्र में निरन्तर छाई रहती हैं। यह मानसिक व्यभिचार ही मस्तिष्क को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

अधिक उद्वेलित करता है किसी उपयोगी काम में चिन्तन को केन्द्रीभूत नहीं करने देता । इसलिए कहा गया है कि यौनाचार का प्रत्यक्ष व्यवहार तो कुछ मिनटों में ही समाप्त हो जाता है मगर श्रृंगारिक अश्लील चिन्तन ढेरों समय उन्माद की तरह छाया रहता है । ऐसी स्थिति में वह मनोविकार बन जाता है और उससे शरीर की अपेक्षा मन को अधिक क्षति पहुँचती है ।

कई अविवाहित, विधुर अथवा तथाकथित ब्रह्मचारी प्रत्यक्ष काम सेवन से बचे रहने पर भी ब्रह्मचर्य के लाभ से कोसों दूर रहते हैं । उनकी आकृति, प्रकृति, मनोदशा और तन्दुरूस्ती गये बीते स्तर की देखी जाती है । इसका कारण एक ही है मन पर उन्माद की तरह कामुकता का बुखार चढ़ा रहना और चिन्ता, क्रोध भय आदि मनोविकारों की तरह शारीरिक और मानसिक ढाँचे को लड़खड़ा देना । इसीलिए अविवाहितों की शारीरिक एवं मानसिक तन्दुरूस्ती विवाहितों की तुलना में और भी अधिक गई बीती देखी जाती है । इसका कारण कामुक चिन्तन का उन्माद मनोभूमि पर छाया रहता है ।

इस प्रेत पिशाच से कैसे पीछा छूटे ? उसका उत्तर भी मन को समझाने में सहमत करने पर निर्भर है । युवा शरीरों की श्रृंगारिक सज्जा, देखने या स्मरण करने में उद्वेग उत्पन्न होता है मगर इस समुदाय को संसार में–आँखों से सर्वथा पृथक नहीं किया जा सकता । जहाँ तक हो सके ऐसी छवियों की निकटता के अवसर चुकाने चाहिए । घरों में ऐसे चित्र नहीं टाँगने चाहिए । इन दिनों ऐसे कैलेण्डर खूब छपते हैं और मनचले लोग घरों में उत्साहपूर्वक उन्हें टाँगते हैं । अश्लील चित्रों और कामुक विवरणों वाला साहित्य भी खूब बिकता है जो कमजोर मनोभूमि पर बड़ा घातक प्रभाव डालता है । सिनेमाओं में ऐसे कृत्य गायनों, हाव–भावों की भरमार रहती है । इसके अतिरिक्त यौनाचार के चित्र एवं ब्लू फिल्मों के रूप में जहर गैर कानूनी होते हुए भी लुक–छिपकर खूब बिकता है । ऐसे उपकरणों की विषाक्त परिणति को समझते हुए साँप–बिच्छू की तरह दूर रहने का भरसक प्रयत्न करना चाहिए परन्तु यह सामाजिक एवं अधूरे प्रयत्न मात्र हैं ।

होना यह चाहिए कि अपने परिवार की माता, बहिन या पुत्री की स्वस्थ और वयस्क छवियाँ मस्तिष्क में बिठानी चाहिए । यदि अन्य किसी महिला का कल्पना चित्र मस्तिष्क में आये तो उन्हीं पारिवारिक सम्बन्धों वाली महिलाओं का चित्र उस अन्य कल्पना चित्र के स्थान पर अड़ा देना चाहिए । हममें से प्रत्येक का निजी एवं सगे सम्बन्धी का परिवार होता है । उनमें बहिनों और पुत्रियाँ कुछ न कुछ ऐसी होती हैं जिनकी छवि उत्तेजक हो । इतने पर भी अपने मन में उनके प्रति कोई अश्लील विचार नहीं उठते । बहिनें राखी बाँधती हैं, उनमें से प्रायः युवा ही होती हैं । बेटियों का कन्यादान देते उन्हें पढ़ाते-लिखाते एवं बुलाते-चलाते हैं । इस सम्पर्क में कोई गर्हित विचार पास भी नहीं फटकने पाता । यहाँ तक कि इन सगी बहिन-बेटियों की ओर कोई पास–पड़ौसी वाला लड़का कुदृष्टि से देखता है तो उसका सिर तोड़ने के लिए प्रतिशोध से भभक उठते हैं । ठीक ऐसी ही कल्पना हमें उन सभी छवियों के साथ जोड़नी चाहिए जो अश्लील वेष–भूषा या भाव-भंगिमा के साथ हमारे मनःक्षेत्र में प्रवेश करती हैं ।

यों आवश्यक तो यह भी है कि युवा लड़कियों को उत्तेजक वेष–भूषा बनाने से रोका जाय । उन्हें सादा जीवन उच्च विचार की महत्ता बताई जाय । प्राचीन-काल के उन प्रचलनों का स्मरण दिलाया जाय जिनमें युवतियाँ लज्जा को अपनी कुलीन ता का चिह्न मानती थीं । नीची आँखें करके चलती थीं और सीना, पेट, पैर आदि को इस प्रकार कपड़ों से ढककर रखती थीं, जिससे किसी की कुदृष्टि न पड़े । इस सम्बन्ध में उच्छृंखल प्रचलन जैसे–जैसे हुआ है वैसे–वैसे बलात्कार, अपहरण, छेड़छाड़ व्यभिचार की घटनाएँ अनेक गुनी बढ़ गई हैं । अच्छा तो हम अपनी बहिन-बेटियों को और प्रभाव क्षेत्र की लड़कियों को इस कुप्रचलन को अपनाने से बचायें जो प्रकारान्तर से रास्ता चलने वालों की आँखों में अकारण ही विषाक्तता उभारता और अनुचित आक्रमक कदम उठाने के लिए आमंत्रित करता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

मुख्य बात असत्य नियंत्रण की है । हर युवती को वेश्या समझने और उसके साथ अश्लील सम्बन्ध बनाने की कल्पना करना भी जननेन्द्रियों का दुराचार है । हमें इस कल्पना से मन को बचाना चाहिए । साथ ही यौनाचार के घृणित पक्ष को मन से सदा बाहर करते रहना चाहिए । मल, मूत्र के अतिरिक्त अन्य छिद्रों से कफ भी निकलता है । आँख से कीचड़, नाक और गले से कफ भी कई बार बाहर आता है । यह देखने में कितना घृणित और चित्त को खराब करने वाला होता है । मल मूत्र के स्थान शरीर भर में सब में कुरूप होते हैं । उन्हें दृष्टि से ओझल रखने के लिए प्रकृति ने घने बालों से ढक रखा है । यह संरचना सोद्देश्य है । मूत्र प्रवाहित करते रहने के कारण वे दुर्गन्धित भी होते हैं । इसके अतिरिक्त मासिक धर्म में कई–कई दिन तक रक्त प्रवाहित होता है । आजकल कामोचार की मर्यादा भंग करने या दूसरे मानसिक कारणों से अधिकांश युवतियों को श्वेत प्रदर की शिकायत भी रहती है और वह प्रवाह तीसों दिन चलता ही रहता है । इन घिनौने स्रावों की, प्रकृति द्वारा बनाई भोंडी बनावट की यदि घृणा उत्पादक दृष्टि से यथार्थवादी कल्पना की जाय तो सहज ही उस ओर आकर्षण उत्पन्न होने के स्थान पर विरक्ति होती है और मन अकारण उन प्रसंगों की ओर दौड़ लगाना बन्द कर देता है ।

ब्रह्मचर्य की महत्ता समझने के लिए हनुमान, भीष्म पितामह, शंकराचार्य, दयानन्द, विवेकानन्द आदि की छवियाँ मस्तिष्क में घुमानी चाहिए । व्यभिचारी किस प्रकार हर दृष्टि से खोखले हो जाते हैं । इसकी भी कल्पना करनी चाहिए । साथ ही दोनों के मध्य बनने वाली आकाश–पाताल जैसी खाई को अपनी मान्यता में स्थान देना चाहिए । पत्नी को सगा भाई मानकर उसकी उपयोगिता एक-दूसरे को अधिक समुन्नत, सुसंस्कारी, संयमी शालीन बनाने की दृष्टि से समझना चाहिए । धर्मपत्नी को भी रमणी, कामिनी की दृष्टि से देखा जाता रहेगा तो वह भी नागिन, बाघिन की तरह तप तेज को नष्ट करेगी । फिर बाहर की अन्यान्य महिलाओं के बारे में कुकल्पना करने के दुष्परिणामों का तो कहना ही क्या ? यहाँ जो बात पुरुषों को नारी के सम्बन्ध में कही गई है ठीक वही नारी को नर के सम्बन्ध में समझनी चाहिए ।

अखण्ड आनंद की प्राप्ति

सांसारिक भोगों में एक विचित्र आकर्षण होता हैं । यही कारण है वे मनुष्य को सहज ही अपनी ओर खींच लेते है किन्तु इससे भी अद्‌भुत बात यह है कि यह जितनी ही अधिक मात्रा में प्राप्त होते जाते हैं, मनुष्य का आकर्षण उतना ही उनकी ओर बढ़ता जाता है और शीघ्र ही वह दिन आ जाता है जब मनुष्य इनमें आकण्ठ डूबकर नष्ट हो जाता है । सांसारिक भोगों की ओर अशक्त की भाँति विवश होकर खिंचते रहना ठीक नहीं । मनुष्य को अपना स्वामी होना चाहिए, इस प्रकार यन्त्रवत प्रवृत्तियों के संकेत पर परिचालित होते रहना चाहिये । संयम मनुष्य की शोभा ही नहीं शक्ति भी है । अपनी इस शक्ति को काम में लाकर, विनाशकारी भोगों के चंगुल से उसे अपनी रक्षा करनी ही चाहिए । मनुष्य जीवन अनुपम उपलब्धि है । इस प्रकार सस्ते रूप में उसका ह्रास कर डालना न उचित है और न कल्याणकारी ।

यह निर्विवाद सत्य है कि भोगों की अधिकता मनुष्य की शारीरिक, मानसिक और आत्मिक तीनों प्रकार की शक्तियों का ह्रास कर देती है । भोग जिनमें भ्रमवश मनुष्य आनन्द की कल्पना करता है, वास्तव में विष रूपी ही होते हैं । यह रोग युवावस्था में ही अधिक लगता है । यद्यपि उठती आयु में शारीरिक शक्तियों का बाहुल्य होता है, साथ ही कुछ न कुछ जीवन–तत्व का नव निर्माण होता रहता है । इसलिए उस समय उसका कुप्रभाव शीघ्र दृष्टिगोचर नहीं होता किन्तु अवस्था का उत्थान रुकते ही इसके कुपरिणाम सामने आने लगते हैं । लोग अकाल में वृद्ध हो जाते हैं । नाना प्रकार की कमजोरियों और व्याधियों के शिकार बन जाते हैं । चालीस तक पहुँचते–पहुँचते सहारा खोजने लगते हैं । इन्द्रियाँ शिथिल हो जाती हैं और जीवन एक भार बन जाता है । शरीर का तत्व वीर्य जो कि मनुष्य की शक्ति और वास्तविक जीवन कहा गया है अपव्यय हो जाता है जिससे सारा शरीर एकदम खोखला हो जाता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ईसा मसीह जीवन भर ब्रह्मचारी रहे । साथ ही वहाँ भी अच्छे–अच्छे तथा बुद्धिजीवी लोग अधिकतर संयमी जीवन ही बिताने की चेष्टा किया करते हैं । वैज्ञानिक, दार्शनिक, विचारक, सुधारक तथा ऐसी ही उच्च चेतना वाले लोग संयम का ही जीवन जीते दृष्टिगोचर होते हैं ।

गृहस्थ आश्रम में सन्तानोत्पादन का बहाना लेकर भोगपूर्ण जीवन बिताने वाले गृहस्थाश्रम का सही मन्तव्य नहीं समझते । सृष्टि क्रम को स्थिर रखने के लिए दाम्पत्य जीवन की अनिवार्यता स्वीकार अवश्य की गई है तथापि उसमें भी संयम का महत्व कम नहीं किया गया है । धर्म कर्त्तव्य के रूप में सन्तान सृजन और बात है और कामुकता के वशीभूत होकर दाम्पत्य जीवन को भोग का माध्यम बना डालना भिन्न बात है । उस प्रकार के आचरण को संसार के सभी विद्वान तथा विवेकशील व्यक्तियों ने अनुचित तथा मानव–जीवन को नष्ट करने वाला बतलाया है । वेद भगवान् ने तो यहाँ तक कहा है कि 'ब्रह्मचर्येण तपसा देवा म मुमुपाघ्नत-ब्रह्मचर्य के प्रभाव से मनुष्य बलवान तथा शक्तिवान ही नहीं बनता वरन् मृत्यु तक को जीत सकता है ।

ब्रह्मचर्य की महिमा बतलाते हुए छान्दोग्योपनिषद में यहाँ तक कहा गया है–"एक तरफ चारों वेदों का उपदेश और दूसरी तरफ ब्रह्मचर्य– यदि दोनों को तोला जाय तो ब्रह्मचर्य का पलड़ा वेदों के उपदेश के पलड़े के बराबर रहता है ।"

विषयों का निषेध करते हुये भगवान ने गीता में स्पष्ट कहा है–

" ये हि सं स्पर्शजा भोगा दुःखयोनय,एव ते ।
आद्यन्तवन्तः कौन्तेय नं तेषु रमते बुधः ॥"

जो इन्द्रिय तथा विषयों के संयोग से उत्पन्न होने वाले सर्व सुख हैं, यद्यपि वे विषयी पुरुष को सुख रूप प्रतीत होते हैं, किन्तु वास्तव में होते वे दुःख के ही हेतु हैं और नाशवान भी । इसलिये हे कुन्ती पुत्र अर्जुन बुद्धिमान व्यक्ति उनमें आसक्त और लिप्त नहीं होते ।

न केवल धर्म–शास्त्रों में ही, अपितु लौकिक शास्त्रों में भी ब्रह्मचर्य की महिमा का बखान किया गया है । आयुर्वेद सम्बन्धी ग्रन्थ चरक संहिता में कहा गया है–

"सतामुपासनं सम्यगसतां परिवर्जनम ।
ब्रह्मचर्योपयाशस्य नियमाश्च पृथग्विधा ॥

सज्जनों की सेवा, दुर्जनों का त्याग, ब्रह्मचर्य उपवास धर्म शास्त्र के नियमों का ज्ञान और अभ्यास आत्म–कल्याण का मार्ग है । यही नहीं की भारतीय मनीषियों ने ही जीवन में ब्रह्मचर्य संयम का गुण गाया हो, विदेशी विचारकों ने भी इसकी कम प्रशंसा नहीं की है प्रसिद्ध जीवशास्त्री डा. क्राउन एम. डी. ने लिखा है–

"ब्रह्मचारी यह नहीं जानता कि व्याधि ग्रस्त दिन कैसा होता है । उसकी पाचक शक्ति सदा नियंत्रित रहती है और उसको वृद्धावस्था में भी बाल्यावस्था जैसा आनंद आता है ।"

अमेरिका के प्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक डा. बेनीडिक्ट लुस्टा का कथन है "कि जितने अंशों तक जो मनुष्य ब्रह्मचर्य की विशेष रूप से रक्षा करता है, उतने ही अंशों तक वह विशेष महत्व का कार्य कर सकता है ।"

"सिद्ध सन्त स्वामी रामतीर्थ और योगी अरविन्द ने वीर्य का वैज्ञानिक महत्व प्रकट करते हुये, अपने अनुभव इस प्रकार व्यक्त किये हैं– "जैसे दीपक का तेल बत्ती के द्वारा ऊपर चढ़कर प्रकाश के रूप में परिणत होता है वैसे ही ब्रह्मचारी के अन्दर का वीर्य सुषुम्ना नाड़ी द्वारा प्राण बनकर ऊपर चढ़ता हुआ ज्ञान दीप्ति में परिणत हो जाता है । रेनस (वीर्य) का जो तत्व रति करने के समय काम में लगता है, जितेन्द्रिय होने से वह तत्व, प्राण, मन और शरीर की शक्तियों का पोषण देने वाले एक महत्व के दूसरे तत्व में बदल जाता है । इस तरह आर्यों का आदर्श रेतस का ओजस में रूपान्तर होने के फलस्वरूप उसकी ऊर्ध्वगति करने का आदर्श सर्वोच्च है ।"

अपने पिता आशुतोष शिवजी को प्रसन्नचित जानकर कुमारसम्भव ने उनके पास जाकर पूछा– तात आपने जिस प्रकार दुर्लभ साधनायें की वैसा साहस किसी में न हो और वह सिद्धियों का स्वामित्व तथा ब्रह्म को प्राप्त करना चाहता हो तो उसे क्या करना चाहिए । यह सरल उपाय आप हमें बताने की कृपा करें । लोक कल्याण की इच्छा रखने वाले भगवान शंकर ने बताया–

सिद्धे विन्दु महायत्ने किं न सिद्धयति भूतले ।
यस्य प्रसादान्महिमा, ममाप्येतादृशो भवेतं ॥

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वत्स! उसका एक उपाय है अखण्ड ब्रह्मचर्य अर्थात् "जिसने यत्नपूर्वक अपने वीर्य को सिद्ध कर लिया है उसके लिये इस पृथ्वी पर कुछ भी दुर्लभ नहीं रह जाता सिद्ध वी. पुरुष तो मेरे समान समर्थ हो सकता है ।

वीर्य तत्व के बारे में इन पंक्तियों में जो कुछ कहा गया है उसकी यथार्थता का अनुमान तो ब्रह्मचर्य–व्रती जीवन बिताकर ही किया जा सकता है मगर अब उसकी यथार्थता वैज्ञानिक भी मानने लगे हैं और कहते हैं कि वीर्य-कीट जिस सुरक्षित घोल में रखे जाते हैं उसी से अनुमान किया जा सकता है कि सृष्टि का कितना महत्वपूर्ण तत्व है । वीर्य एक प्रकार का रसायन है । वीर्य कीट उसमें रहने वाले जीवाणु होते हैं । तरल पदार्थ ७५ प्रतिशत जल, ५ प्रतिशत फास्फेट आफ लाइम, ४ प्रतिशत चिनाई, ३ प्रतिशत प्रोटीन ऑक्साइड, शेष भाग फॉस्फेट, फॉस्फोरस, सोडियम क्लोराइड आदि पदार्थ होते हैं पुरुष के शुक्र कीट (स्पर्म) तथा स्त्री का डिम्ब (ओवम) का उत्पादन पुरुष के अण्ड तथा स्त्री के अण्डाशय में होता है । यहाँ से एक प्रकार का रस जो वीर्य रसायन का एक प्रकार का प्लाज्मा होता है जो सारे शरीर में ओज और तेजस की भाँति छाया रहता है । यह तेजस ही परस्पर आकर्षण का कारण होता है । जिस शरीर में वीर्य की प्रचुर मात्रा होती है वह काले कुवड़े होने पर भी आकर्षण लगते हैं । कहते हैं अष्टावक्र जो शरीर में आठ स्थानों से टेढ़ा था ने अपनी संयम शक्ति द्वारा मुख मण्डल पर यह तेजस्विता अर्जित कर ली थी कि महाराज जनक भी उसकी ओर देखकर हतप्रभ हो उठते थे ।

पुरुषों के शरीर में पौरूष और स्त्रियों के शरीर में स्त्रीत्व लक्षणों का कारण यह वीर्य ही होता है जिसे आयुर्वेद की भाषा में अन्तवीर्य की संज्ञा दी गई है ।

आधुनिक विज्ञान इतना विकसित हो जाने पर भी वीर्य की उत्पत्ति का कोई सिद्धान्त निश्चित नहीं कर पाया । सामान्य रासायनिक रचना के अतिरिक्त उन्हें इतना ही पता है कि वीर्य का एक कोश (स्पर्म) स्त्री के डिम्ब (ओवम) से मिल जाता है । यही वीर्य कोश पुनःउत्पादन प्रारम्भ कर देता है और अपनी तरह के तमाम कोश माँ के आहार से प्राप्त आहार द्वारा कोश विभाजन प्रक्रिया (एक से दो, दो से चार, चार से आठ) के अनुसार विभक्त होता चला जाता है । कहना न होगा कि विन्द (वीर्य का परमाणु) चेतना का सर्वाधिक सूक्ष्म अंश है । इनकी लम्बाई १/१६०० से १/१७०० इंच तक होती है जिसमें न केवल मनुष्य शरीर वरन् विराट् विश्व के शक्ति बीज छिपे होते हैं । सृष्टि की परम्परा की क्षमता भी इन्हीं बीजो में होती है । उसकी शक्ति का अनुमान किया जाना कठिन है ।

प्राचीन काल के योगियों ने अपनी सूक्ष्म दृष्टि से बिना किसी वैज्ञानिक यन्त्र के महत्वपूर्ण जानकारियाँ प्राप्त की थीं । आज वह विज्ञान द्वारा सही सिद्ध होती है । उदाहरण के लिए वही वीर्य–कोश जो स्त्री के अण्ड में पहुंचा था गर्भ धारण के बाद जब विकसित होना प्रारम्भ करता है तब वह बीज कोश मस्तिष्क में ही संचय होते हैं क्योंकि गर्भ में सन्तान का सिर नीचे की ओर होता है । जन्म के समय १० रत्ती वीर्य बालक के ललाट में होता है ऐसा भारतीय तत्व दर्शियों का मत है । यही कारण है कि बच्चा विशुद्ध परमहंस जैसी प्रकृति का विशुद्ध आनन्दवादी निश्चिन्त और केवलोऽहं होता है । यह वीर्य शक्ति और दृढ़ता प्राप्त करे इसके लिए बालक को नितान्त शुद्ध, सात्विक और भाव भरे आहार की आवश्यकता होती है । ऐसा दूध माता के दूध के अतिरिक्त दूसरा नहीं होता मगर कदाचित आयु बढ़ने के साथ माँ उतना दूध न पिला सके तो दूध की आवश्यकता गौदुग्ध बकरी अथवा भैंस के दूध को हलका करके पूरा करना चाहिये । इसके बाद जैसे-जैसे शरीर में शक्ति का संचार होता है क्रमशः आहार पद्धति में सावधानी बरतने की आवश्यकता भी बढ़ती जाती है । १० वर्ष की आयु तक वीर्य दोनों भौंहों के बीच वाले स्थान में आ जाता है । इस समय बच्चे को अधिकांश अलोना आहार फल, फूल, दूध आदि ही देना चाहिये । गुरुकुल में ५ वर्ष की आयु में ही बालक पहुँचा देने का प्राचीन उद्देश्य बच्चे को गृहस्थों के अनुचित आहार से बचाये रखना होता था । इस आयु में बच्चे में अनुकरण की प्रवृत्ति रहती है । तीखा, कड़ुवा भोजन वह यह समझते हुए भी इसलिए करने का इच्छुक रहने लगता है क्योंकि घर के सदस्य उसका उपभोग करते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

६ से १२ वर्ष तक वीर्य शक्ति भौंहों से उतर कर कण्ठ में आ जाती है। प्रायः इसी समय बच्चे के स्वर में भारापन और कन्याओं के स्वर में सुरीलापन आता है। अभी तक लगभग दोनों की ही ध्वनि एक जैसी होती थी। अब बच्चे के स्वर में पुरुषोचित लक्षण झलकने लगते हैं। इस आयु में वीर्य में विपरीत लिंग का आकर्षण पैदा होने लगता है, अतएव बालक-बालिकाओं का सम्पर्क अलग-अलग कर दिया जाना चाहिये। आज की सहशिक्षा तो इस दृष्टि से बच्चों से जीवन में कुठाराघात जैसा है। परस्पर समीपता के कच्चा वीर्य मंथन प्रारम्भ कर सकता है जिसके कारण युवकों को जीवन भर स्वप्न दोष, वीर्यपात और शीघ्र-स्खलन की बीमारियाँ लग जाती हैं जो न केवल उसे स्वास्थ्य की दृष्टि से वरन् मानसिक दृष्टि से भी हीन बना देती हैं। ऐसे बच्चे बौद्धिक दृष्टि से बिलकुल कमजोर होते हैं। नास्तिकता कोई सिद्धान्त नहीं, एक प्रकार का रोग है जो मानसिक कमजोरी के कारण होता है। प्राचीन काल में बालक की वीर्य रक्षा पर ध्यान रखा जाता था, इससे उसकी विचार क्षमता ऊर्ध्वमुखी बनी रहती थी। ऊर्ध्वरेता चिन्तन ही जीवन के यथार्थ लक्ष्य और ब्रह्म की विराटता की अनुभूति कर सकता है।

११ से १६ वर्ष तक की आयु में वीर्य मेंरुदण्ड से होता हुआ उपस्थ की ओर बढ़ता है और धीरे-धीरे मूलाधार चक्र में अपना स्थान बना लेता है। काम विकार पहले मन में आता है उसके बाद तुरन्त ही मूलाधार चक्र उत्तेजित हो उठता है। उसके उत्तेजित हाने से वह सारा ही क्षेत्र जिसमें कि कामेंन्द्रिय भी सम्मिलित होती है उत्तेजित हो उठता है। उसके उत्तेजित होने से वह सारा ही क्षेत्र जिसमें कि कामेंन्द्रिय भी सम्मिलित होती है उत्तेजित हो उठती है। ऐसी स्थिति में ब्रह्मचर्य को सँभालना कठिन हो जाता है। २४ वर्ष तक की आयु में यह वीर्य मूलाधार चक्र में से सारे शरीर में इस प्रकार व्याप्त हो जाता है जैसे-

यथा पयसि सर्पिस्तु, गूढश्चेक्षौ रसो यथा।
एवं हि सकले काले शुक्र तिष्ठति देहिनाम॥

अर्थात् जिस प्रकार दुग्ध में घी, तिल में तेल, ईख में मीठापन तथा काष्ठ में अग्नि तत्व सर्वत्र विद्यमान रहता है उसी प्रकार वीर्य सारे शरीर में व्याप्त हो जाता है।

यदि २५ वर्ष की आयु तक आहार-विहार को दूषित नहीं होने दिया गया और ब्रह्मचर्य खंडित न हुआ तो इस आयु में शक्ति की मस्ती और विचारों की प्रफुल्लता देखते ही बनती है। ऐसे बच्चे प्रायः जीवन भर स्वस्थ रहते हैं। काम-विकार से घिरे बच्चों को दमित वासना का संकट हो सकता है। जिस बालक के मस्तिष्क में मातृभाव रहा, काम-वासना प्रदीप्त नहीं होने पाई, उसे दमित वासना की तो कल्पना भी नहीं आयेगी वरन् ऐसा सोचने वाले उसके सम्मुख कीट-तत्व जैसे हीन बुद्धि लगेंगे। प्रफुल्लता, मानसिक उन्मुक्तता, साहस, निर्भयता, वाक् विनोद अपने आप में उतना आनन्द है जितना संभोग में। सम्भोग का आनन्द तो थोड़ी देर का है परन्तु यदि वीर्य अच्छी तरह शरीर में पच गया है तो वह आनन्द जीवन के हर क्षेत्र में उत्साह और सफलता के रूप में सर्वत्र लिया जा सकता है।

उपस्थ में आये स्थूल वीर्य को ऊर्ध्वरेता बनाकर पुनः उसी ललाट में लाना जहाँ से वह मूलाधार तक आया था ले जाना योग विद्या का काम है। कुण्डलिनी साधना में विभिन्न प्राणायाम साधनाओं द्वारा सूर्य चक्र की ऊष्मा को प्रज्वलित कर (ईंधन बनाकर) इस वीर्य को पकाया जाता और उसे सूक्ष्म शक्ति का रूप दिया जाता है तब यह फिर उसकी प्रवृत्ति ऊर्ध्वगामी होकर मेंरुदण्ड से ऊपर चढ़ने लगती है। साधक उसे क्रमशः अन्य चक्रों में ले जाता हुआ फिर से ललाट में पहुँचाता है। शक्ति-बीज का मस्तिष्क में पहुँच जाना और सहस्रार चक्र की अनुभूति कर लेना ही ब्रह्म निर्वाण है। ऐसे व्यक्ति के लिये ही भगवान् शिव ने अपने समान सिद्ध और पूर्ण योगी बताया है।

कठिन योग साधनायें न करने पर भी जो लोग वीर्य को अखंड रख लेते हैं वे अपने अन्दर शक्ति का अक्षय भंडार अनुभव करते हैं और कुछ भी कर सकने की क्षमता रखते हैं। प्रज्ञावान् आत्मायें उसके लिए गर्भ धारण के समय से ही सचेष्ट रहती हैं और वीर्य को अधोमुखी नहीं होने देकर उसे ऊर्ध्वगामी बनाने का प्रयत्न करती रहती हैं। सामाजिक कर्त्तव्यों के पालन द्वारा भी ऐसा सम्भव है परन्तु उसके लिए आज की पारिवारिक परिस्थितियों से लेकर शिक्षा पद्धति तक में परिवर्तन करना पड़ेगा। वीर्य सृष्टि का मूल उपादान है। उसकी सामर्थ्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जो समझा जाना चाहिए, उसकी रक्षा की जानी चाहिये तथा ऊर्ध्वरेता के लाभों से लाभान्वित होकर मनुष्य जीवन की यथार्थता को समझना और पाना चाहिये। जो अपने वीर्य की रक्षा कर लेते हैं, एक बूँद बरबाद नहीं होने देते वे कोई भी इच्छा करें, कभी अधूरी नहीं रह सकती भले ही उसे लोग योग सिद्धि समझें लेकिन है यह सब सिद्ध-बिन्दु का ही चमत्कार। यह शक्ति और सिद्धि ही हमें समर्थ और अपराजेय बना सकती है और कोई दूसरी शक्ति नहीं। अखंड आनन्द की प्राप्ति इसी से सम्भव है।

उत्तेजित कामक्रीड़ा से प्राणशक्ति का क्षरण

साधना में ब्रह्मचर्य का विशेष महत्व बताया गया है और उसकी आवश्यकता का स्थान-स्थान पर प्रतिपादन किया गया है। उसका कारण, मात्र शरीर की एक धातु के क्षरण से होने वाली नगण्य सी क्षति को बढ़ा-चढ़ाकर तूल देना नहीं वरन् यह समझाना है कि शरीर में एक ही धातु ऐसी है जिसमें मात्र शारीरिक तत्व-वसा, जल, जीवाणु, खनिज आदि ही नहीं वरन् प्राण तत्व भी एक बड़ी मात्रा में सन्निहित रहता है। मुख्य हानि इसी के क्षरण की है।

शरीर शास्त्रियों ने स्वाभाविक और सामान्य काम सेवन में कोई हानि नहीं देखी है वरन् उसे लाभदायक भी बताया है। आँकड़े प्रस्तुत करके यह बताया जाता है कि विवाहितों की अपेक्षा अविवाहित अधिक बीमार पड़ते और अधिक मरते हैं। मानसिक रोगी भी अविवाहित ही ज्यादा होते हैं। फ्रायड आदि मनोविज्ञान वेत्ताओं ने तो कामवासना को जीवन की एक आवश्यक और उपयोगी प्रवृत्ति बताया है और चेतावनी दी है उस पर अनावश्यक रोक बाँध करने से शरीर और मन दोनों को अनेक रोगों के शिकार एवं क्षतिग्रस्त होना पड़ सकता है।

भारतीय योगियों ने भी वीर्यपात में जो शारीरिक तत्व चले जाते हैं उनकी बहुत परवाह नहीं की है क्योंकि रक्त निकल जाने पर प्रकृति द्वारा नये रक्त के रूप में जिस तरह जल्दी ही उसकी पूर्ति कर दी जाती है उसी प्रकार वीर्य की क्षति भी पूरी होती रह सकती है। इसीलिये अपने यहाँ स्वप्नदोष में होने वाली हानि को आध्यात्मिक दृष्टि से कोई बहुत बड़ी चिन्ता की बात नहीं बताया गया है। उसे शारीरिक विकार मात्र कहकर चिकित्सा कराने भर का निर्देश देकर बात समाप्त कर दी है।

प्राण वीर्य के साथ घुलने से पूर्व ही ऊर्ध्वगामी होकर मस्तिष्क में चला जाय और वहाँ ओजस् विद्युत् के रूप में परिणत होकर स्थूल शरीर के समस्त प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष अवयवों को परिपुष्ट करे इसके लिये वज्रोली क्रिया, वज्रोली मुद्रा आदि की साधना बताई गई है। वीर्य से खींचा गया यह स्वत्व या तत्व जिसे ओजस् कहते हैं न केवल स्थूल शरीर को प्रभावित करता है वरन् 'सूक्ष्म शरीर' और "कारण शरीर" को भी प्रभावित एवं परिपुष्ट करता है। कामोत्तेजना से रक्त का मंथन होकर रेतस् ग्रन्थियों द्वारा वीर्य का निर्माण, उसका एक नियत थैली में संचय और स्खलन के साथ उसका मूत्रेन्द्रिय द्वारा निकल जाना, इस मोटी बात को शरीर शास्त्र का सामान्य विद्यार्थी भी जानता है। परन्तु यह जानकारी किसी-किसी को ही है कि कामवासना के विचार समस्त शरीर में फैले हुए प्राण तत्व का मंथन करते हैं और सम्भोग के समय वीर्यपात के साथ-साथ ही प्राण प्रवाह का एक अंश भी बाहर चला जाता है। फलतः इससे व्यक्ति क्रमशः दुर्बल होता जाता है। शारीरिक दृष्टि से उतना नहीं जितना कि मानसिक दृष्टि से।

इसलिये ब्रह्मचर्य का जहाँ भी आध्यात्मिक चर्चा के संदर्भ में जिक्र आये वहाँ प्राण के प्रवाह को नष्ट न होने देने की चिन्ता को ही प्रधान कारण माना जाना चाहिये। मन से कामवासना के विचार एवं उत्तेजना को हटाकर उस कृत्य को विशुद्ध धर्म भावना से करने के लिये अपने यहाँ गर्भाधान को एक दिव्य संस्कार मात्र माना गया है। इस मनोदशा में विकारी हलचलें मन में न रहने से वह प्रयोजन प्राण को नष्ट नहीं करता वरन् मात्र संतानोत्पादन अथवा शारीरिक प्रयोजन पूरे करता है। मनोविकारों से रहित कामसेवन से ब्रह्मचर्य की मूल आवश्यकता को विशेष क्षति नहीं पहुँचती। इसके विपरीत यदि शारीरिक ब्रह्मचर्य तो निभाया जाय मगर मानसिक अभिलाषा और आकांक्षा उद्दीप्त रहे तो उससे लगभग कामसेवन जितनी ही क्षति पहुँचती रहेगी।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्राण तत्व की उत्तेजना कामवासना से जुड़ी हुई है। वासना प्रदीप्त हुई कि प्राण भड़के और उफना हुआ दूध जिस प्रकार कड़ाही से निकल कर इधर-उधर बिखर जाता है उसी प्रकार वासना की उद्दीप्तता प्राण का हरण और क्षरण निरन्तर करती रहती है। ऐसे अविवाहित जिनके मस्तिष्क निरंतर विकार ग्रस्त रहते हैं यदि शरीर शास्त्रियों के अनुसार विवाहितों की अपेक्षा अधिक मरते और अधिक अस्वस्थ्य रहते हों तो आश्चर्य की बात नहीं। इसी स्तर के लोगों को यदि फ्रायड आदि मनोवैज्ञानिकों ने काम प्रवृत्ति की उद्दीप्तता का रोकने के खतरे बताये हों तो उसे भी अनुचित नहीं कहा जा सकता। इसका अर्थ यह न समझा जाय कि विकारों को भड़कने देने से पूर्व रोकने को किसी ने मना किया है।

साधु जीवन और सौम्य सरल मनोवृत्ति की भला कौन निन्दा करेगा ? पवित्र दृष्टि रखने की महत्ता से कौन इन्कार करेगा ? नारी के प्रति पवित्र और श्रद्धा भरी-माता भगिनी और पुत्री की- भावनाएँ रखकर उनके बारे में उक्त भावना रखकर विचार करने की विधि मालूम होने से नारियों के सम्पर्क में रहने से भी कुछ बिगड़ता नहीं, इसके विपरीत वन जंगलों में एकाकी रहने और एकान्त सेवन करने पर भी यदि मन में वासनात्मक विचारों की प्रचण्डता रहती हो तो कहा जाना चाहिए कि वहाँ भी व्यभिचार ही चल रहा है।

नारी स्वयं बुरी नहीं है। उसका वासनात्मक पक्ष ही बुरा है। जब कामिनी, रमणी और रूपसी के रूप में दुर्बुद्धि पूर्वक उसे देखा जाता है तभी सर्पिणी, डाकिनी बनती है अन्यथा वह पवित्रता और शक्ति की प्रत्यक्ष देवी है। उसका सान्निध्य एवं चिन्तन उत्कर्ष का ही कारण बनता है। भारतीय धर्म में देवियों की प्रतिमाएँ युवा और अति सुन्दर नारियों के रूप में ही बनाई गई हैं। लक्ष्मी, दुर्गा, सरस्वती, गायत्री, सावित्री, आदि की मूर्तियाँ, तस्वीरें जहाँ-कहीं भी मिलेंगी अति सुन्दर और सुसज्जित युवती के कलेवर में ही विनिर्मित हुई होंगी। उनके अंगों में उभार ही रखे गये हैं इसलिये कि साधक नारी के इस स्तर के रूप में भी श्रद्धा और पवित्रता का समुचित समावेश कर सके।

प्राचीन काल के लगभग सभी ऋषि अपने वन्य आश्रमों में पत्नियों समेत रहते थे। उनमें से प्रायः सभी की संतानें थीं। फिर भी उनका ब्रह्मचर्य दो कारणों से अक्षुण्य था। एक यह कि उन्होंने कामुकता के लिए मनः क्षेत्र में स्थान नहीं दिया। दूसरे जब समागम की आवश्यकता अनुभव हुई तब उस क्षरण को केवल शरीरगत धातुओं की क्षति तक ही सीमित रखा और प्राण को उसमें से विलग करके रोक लिया। यह वज्रोली मुद्रा द्वारा सम्भव है।

दूध में से मक्खन निकालकर- बिना क्रीम के दूध में कुछ अधिक शक्ति नहीं रह जाती। इसी प्रकार प्राण को विलग करके रोक लेने के बाद समागम, मात्र एक इन्द्रिय विनोद अथवा सन्तानोत्पादन प्रयोजन मात्र की भौतिक आवश्यकता पूर्ण करने मात्र की एक सामान्य वस्तु रह जाती है। इस प्रकार गृहस्थ योगी के लिये भी तात्विक ब्रह्मचर्य का पालन कर सकना सम्भव हो सकता है। इसके विपरीत जिसे वह प्राण पृथक्करण की विद्या नहीं आती और मन में कामुकता की कल्पनाएँ भरे रहता है उस विरक्त को भी सामान्य लम्पट गृहस्थों जैसी ही क्षति उठानी पड़ती रहती है।

प्राण का सम्बन्ध भावनात्मक उफान से है। मैथुन के समय यदि उस प्रक्रिया में अति रस लिया जाय-रसिकता का उत्तेजक वातावरण बनाया जाय तो उससे प्राण उत्तेजित होगा और प्राण प्रत्यावर्तन भी। सुयोग्य संतानोत्पादन के अतिरिक्त अथवा साथी के साथ प्राण शक्ति का समन्वय संतुलन करने के लिये ही किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त यदि क्रीड़ा कौतुक में रुचि ही हो तो उसे अन्यमनस्क होकर- उपेक्षापूर्वक शरीर क्रिया तक ही सीमित रखना चाहिये। तन्मयता का उसमें समावेश न किया जाय। वेश्याएँ इसी उपेक्षा वृत्ति को अपनाये रहकर अपने स्वास्थ्य की रक्षा कर पाती हैं।

काम-क्रीड़ा का संस्कार मन पर न पड़े तभी यह सम्भव है कि उस ओर बार-बार अभिरुचि का आकर्षण प्रोत्साहन रुक सके। गृहस्थों को ब्रह्मचर्य की रक्षा की दृष्टि से- प्राण शक्ति की सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए जब संयोग आवश्यक प्रतीत हो तो उसे उदासीन अन्यमनस्क वृत्ति से शरीर क्रिया तक ही सीमित कर लेना चाहिए। मन पर उसका गहरा प्रभाव नहीं पड़ने देना चाहिए। इस प्रकार आंशिक ब्रह्मचर्य गृहस्थ में भी रखा जा सकता है और महत्वपूर्ण प्राण शक्ति के अनावश्यक क्षरण से बचा जा सकता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ब्रह्मचर्य पालें–ओजस्, मनस् और तेजस् बढ़ायें

मनुष्य में एक विलक्षण विद्युत् शक्ति है जिसे ओजस कहते हैं । इसी को प्राण भी कहते हैं । उसका ध्रुव स्थान कुण्डलिनी केन्द्र में है, जिसे मूलाधार भी कहते हैं । इसकी स्थिति तो सुषुम्ना क्षेत्र के अन्तरंग गह्वर में है, मगर उसका दृश्य प्रतीक जननेन्द्रिय के रूप में दृष्टिगोचर होता है । इस क्षेत्र में जब उत्तेजना उत्पन्न होती है तो सारा मनः संस्थान उन्माद जैसी स्थिति में जा पहुँचता है । कामोन्माद की चर्चा तक उत्तेजक होती है और ऐसा आवेश उत्पन्न करती है जिसमें प्राणी विवेक से विमुख होकर कृत्य-अकृत्य कुछ भी करने पर उतारू हो जाता है । इस आवेश का समाधान ढूँढने के लिए ही प्रायः विवाह किया जाता है ।यद्यपि सभी जानते हैं कि इस बंधन में बंधने के उपरान्त इतने उत्तरदायित्व सिर पर लदते हैं जिनको ढोते–ढोते समूची जिन्दगी खप चले ।

प्राण विद्युत् यों समूचे शरीर में संव्याप्त है और उसके सूत्र संचालन का कार्य मनःसंस्थान द्वारा होता है तो भी उसका उद्गम जननेन्द्रिय क्षेत्र को ही माना गया है । अध्यात्म भाषा से उसे सुषुम्ना मूल, कुण्डलिनी केन्द्र, मूलाधारचक्र आदि नामों से जाना जाता है । शरीर शास्त्र के अनुसार यह प्रजनन और रति कर्म का स्थान है । मनोविज्ञानी यहाँ की उत्तेजना को कला, विनोद, उल्लास, हर्ष साहस का उद्गम मानते हैं । नपुंसक को न सेना में भर्ती किया जाता है और न ही उसका पौरोहित्य के लिए वरण किया जाता है । सामान्य जीवन में भी वह अपंग, लुंज–पुंज होकर रहता है और कोई बड़ा पुरुषार्थ कर सकने में समर्थ नहीं होता ।

ब्रह्मचर्य के साथ शारीरिक बलिष्ठता और मानसिक प्रखरता भी जुड़ी हुई है । उसे अपनाने वाले ओजस्वी, मनस्वी और तेजस्वी बनते हैं । यह तथ्य है कि ऋषियों और मनीषियों में से अधिकांश ब्रह्मचारी रहे हैं । जिन्हें अपनी बलिष्ठता और प्रखरता को कौड़ी मोल न बहना हो, उन सम्पदाओं को किन्हीं उच्चस्तरीय प्रयोजनों में लगाना हो, उनके लिये यही उचित है कि ब्रह्मचर्य का अधिकाधिक पालन करें, साथ ही अन्य इन्द्रियों को भी वश में रखने का प्रयत्न करें । शास्त्रकारों ने इस तथ्य के समर्थन में बहुत कुछ कहा है । यथा–

आयुस्तेजोबल वीर्यं प्रज्ञाश्रीश्च महद्यशः ।
पुण्यं च प्रीतिमत्वं च हन्यतेऽब्रह्मचर्या ॥

अर्थात्– आयु, तेज, बल, वीर्य, बुद्धि, लक्ष्मी, कीर्ति, पुण्य, प्रीति आदि सभी विभूतियाँ ब्रह्मचर्य न पालने पर पलायन कर जाती हैं ।

अथर्व वेद ११।५।१९ की ऋचा है–

ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्यु मुपाघ्नतः ।
इन्द्रो ब्रह्मचर्येण देवेभ्यः स्वरा भरत ॥

अर्थात्– ब्रह्मचर्य रुपी तप का आश्रय लेकर देवताओं ने मृत्यु को जीता । इन्द्र को उच्च पदासीन होने का श्रेय सौभाग्य ब्रह्मचर्य पालन के कारण ही मिला था ।

शिव वचन है–

न तपस्तप इत्याहुर्ब्रह्मचर्य तपोत्तमम ।
ऊर्ध्वरिता भवेद् यस्तु स देवो न तु मानुषः ॥

अर्थात्– शरीर कष्ट की तितीक्षा ही तप नहीं है । उत्कृष्ट तप तो ब्रह्मचर्य है । "ऊर्ध्वरिता" ब्रह्मचारी को मनुष्य नहीं देवता ही कहना चाहिए ।

अथर्ववेद की एक अन्य ऋचा है–

रुजन् परिरुजन मृणन् परिमृणन् ।
म्रोक्री मनीहा खनो निर्दाह आत्मदषिस्तनूद् षिः ॥

अर्थात्– यह काम विकार मनुष्य को रोगी बनाने वाला है । बुरे–बुरे रोगों में फँसाता है । यह मारने वाला वधिक है । बहुत बुरी प्रकृति का बधिक है । यह अपने शिकार को उलटा घसीटता है और बुद्धि का अपहरण कर लेता है । शरीर में से आरोग्य और बल की जड़ें खोदकर फेंक देता है । धातुओं को जलाता है । आत्मा को मलीन करता है और तेजस् को चुरा लेता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ब्राह्मण ग्रन्थों में इस संयम मर्यादा की चर्चा करते हुए कहा गया है–

'व्रतेषु वै ब्रह्मचर्यम् ।'

अर्थात्– व्रतों में सर्वश्रेष्ठ ब्रह्मचर्य है ।

'ब्रह्मचर्य परं बलम्' ।

अर्थात्– ब्रह्मचर्य उत्कृष्ट स्तर का बल है' ।

योग दर्शन साधन पद १८ का वचन है–

'ब्रह्मचर्य प्रतिष्ठायां वीर्य लाभः । '

अर्थात् –ब्रह्मचर्य पालने से बलिष्ठता का लाभ मिलता है ।

वीर्यं वै भर्गः ।

–शतपथ

अर्थात्– वीर्य निश्चय ही ब्रह्म तेज है ।

सूत्र कृतांक ६।२३ का वचन है–

तवेसु वा उत्तमं बंभचेरे ।

अर्थात् तपों में उत्तम तप ब्रह्मचर्य है ।

वैकालिक सूत्र ६।१७ का वचन है–

अबंभ चरियं घोरं पमायं दुरहिट्ठियं ।

अर्थात् ब्रह्मचर्य का व्यतिरेक प्रमाद भी है और पाप भी ।

याज्ञवल्क्य संहिता में उल्लेख है–

कर्मणा मनसा वाचा सर्वावस्थेसु सर्वथा ।
सर्वत्र मैथुन त्यागा ब्रह्मचर्य प्रचक्षते ॥

अर्थात्– ब्रह्मचर्य वह है जिसमें क्रिया से ही नहीं, चिन्तन और कथन–श्रवण से भी कामुक प्रसंगों का परित्याग किया जाता है ।

घेरंड संहिता के अनुसार शिव का वचन है–

सिद्धे बिन्दौ महादेवि, किं न सिद्धयति भूतले ।

अर्थात्– हे पार्वती, बिन्दु को सिद्ध कर लेने– ब्रह्मचर्य पालने पर इस धरती की कोई सिद्धि ऐसी नहीं जो प्राप्त न हो सके ।

महाभारत के मोक्ष धर्म प्रकरण में शुकदेव जनक को प्रबोधन करते हुए कहते हैं–

'तपसा गुरुवृत्या च ब्रह्मचर्येण वा विभो ।'

"उस विद्यार्थी का अध्ययन सार्थक होता है जो ब्रह्मचर्यपूर्वक, तपस्वियों जैसा जीवन जीता है और गुरु अनुशासन को पालता है" ।

कामुकताजन्य शारीरिक उत्तेजना आवश्यकता नहीं वह विशुद्ध रूप से संकल्पजन्य है । अश्लील चिन्तन से ही कामोत्तेजना उत्पन्न होती है और मन को उस प्रसंग से विरत कर लेने पर उसका समाधान भी सरलतापूर्वक हो जाता है । महाभारत आपद्धर्म प्रसंग में उल्लेख है–

संकल्पाज्जायते कामः सेव मानो विवर्धते ।
यदा प्राप्तोविरमते तथा सद्यः प्रणश्यति ॥

अर्थात्– "चिन्तन से कामोत्तेजना उत्पन्न होती है । सेवन करने पर वह और अधिक प्रचण्ड हो उठती है किन्तु जब विज्ञजन उस ओर से मन हटा लेते हैं तो उसके समाप्त होने में भी देर नहीं लगती । "

महाभारत आदि पर्व में एक कथा है– पांचाल जाते समय मार्ग में मिले सोमापयाण नगर के समीप महाप्रतापी गन्धर्वराज अंगार पर्ण के साथ भयंकर युद्ध होने का वर्णन है, जिसमें अन्ततः गन्धर्व राजा हारे और अर्जुन जीते ।

विजय के उपरान्त अर्जुन ने पराजित गन्धर्व से पूछा "कहाँ हम साधारण मनुष्य और कहाँ आप दैव शक्तियों से सम्पन्न महाबली । फिर आप हारे कैसे, कृपया इसका रहस्य समझाइए । "

उस गन्धर्व ने कहा–

ब्रह्मचर्य परो धर्मः स चापि नियतस्त्वपि ।
यस्मात् तस्मादहं पार्थ रणेऽरि मविजित स्त्वया ॥

हे पार्थ ! ब्रह्मचर्य परमधर्म है । वह तुम में विद्यमान है । मैं उससे रहित होने के कारण हारा और तुम जीत गये ।

वयोवृद्ध ययाति ने अपने पुत्र पूरु से यौवन माँगकर अपनी वासनात्मक तृप्ति का प्रयत्न किया । फिर भी उनकी वासना शान्त नहीं हुई । कामना तृप्ति की कोई सम्भावना नहीं दीखी । तब उन्होंने पुत्र को उसका यौवन वापस लौटा दिया और पश्चाताप करते हुए जो विचार व्यक्त किये उसका उल्लेख महाभारत आदिपर्व में इस प्रकार है–

न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति ।
हविषा कृष्ण वर्त्मेवभूय एषाविवर्तते ॥

अर्थात– " हे पुत्र इतना उपभोग कर लेने पर भी मेरी कामुकता शान्त नहीं हुई । कामना पूरी होने की अपेक्षा वह और भी अधिक अतृप्त रहने लगी । आग में घी डालने की तरह वह बढ़ती ही है ।"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उर्वशी के प्रणय प्रस्ताव को अस्वीकृत करते हुए अर्जुन कहते हैं–

गच्छ मूर्ध्ना प्रष्पन्नोस्मि पादौ ते वर वर्णिनि ।
त्वंहि में मातृवत् पूज्या रक्षोऽहं पुत्रवत् त्वया ॥

अर्थात्– "आपके चरणों में मस्तक रखकर मैं आपकी वन्दना करता हूँ । आप मुझे माता के समान पूज्य हैं । मुझे पुत्र मानकर वात्सल्य प्रदान करें और वापस लौट जाएँ ।"

चिकित्साचार्य सुश्रुत के अनुसार आहार से रस, रस से रक्त, रक्त से मांस, मांस से मेंद, मेंद से अस्थि, अस्थि से मज्जा और मज्जा से वीर्य बनता है । इसमें से प्रत्येक प्रक्रिया पाँच–पाँच दिन में सम्पन्न होती है । इस प्रकार आहार चालीस दिन में वीर्य की स्थिति तक पहुँचता है ।

कहा गया है कि ४० सेर भोजन का एक सेर रक्त और एक सेर रक्त का २३.३२८ ग्राम वीर्य बनता है । एक बार के मैथुन में १७.४६६ ग्राम वीर्यपात का औसत माना जाता है । इस प्रकार मैथुन प्रक्रिया इतनी महँगी पड़ती है जिसमें आहार की लागत और शरीर के अनेकानेक अवयवों की इतने समय की मेंहनत एक प्रकार से निरर्थक ही चली जाती है । अमृतोपम घृत को गन्दी नाली में बहाते रहना और अपने स्वास्थ्य मनोबल को खोखला करते रहना किसी भी प्रकार बुद्धिमानी नहीं है ।

शिव वचन हैं–

यस्य प्रसादान महिमा ममाप्येता दशो भवेत् ।

अर्थ–" मेंरी इतनी महिमा ब्रह्मचर्य पालन के कारण ही हुई है ।"

और भी–

मरणं विन्दु पातेन जीवनं बिन्दु धारणात् ।

अर्थात्– " ब्रह्मचर्य जीवन है और उसका उल्लंघन मरण ।"

ब्रह्मचर्य की शास्त्र प्रतिपादित महिमा को कोई भी नर–नारी अनुभव द्वारा प्रत्यक्ष देख सकता है । अविवाहित लड़की-लड़के अपना स्वास्थ्य सौन्दर्य लम्बे समय तक यथावत् बनाये रखते हैं परन्तु अतिक्रमण करने वालों को जवानी में ही वृद्धावस्था घेर लेती है । अतः ब्रह्मचर्य की मर्यादा का पालन व्यक्तित्व सम्पदा के अर्जन हेतु करना ही चाहिए ।

ब्रह्मचर्य की सही परिभाषा

काम शक्ति का परिष्कार एवं ऊर्ध्वारोहण न केवल शारीरिक बलिष्ठता की दृष्टि से जरूरी है वरन् मानसिक प्रखरता के लिए भी अनिवार्य है । सृजनात्मक एवं समस्त सफलताओं का मूलाधार भी यही है । इसका आरंभ इन्द्रिय संयम से होता है किन्तु समापन ब्रह्म में एकाकार होकर होने के रूप में होता है । ब्रह्मचर्य की संयम-साधना दमन का नहीं, परिष्कार एवं ऊर्ध्वीकरण का मार्ग है । इसका सुन्दरतम् स्वरूप आदर्शों एवं सिद्धान्तों के प्रति प्रगाढ़ निष्ठा के रूप में दिखाई पड़ता है । इस तथ्य से अवगत होने पर जीवनी शक्ति का क्षरण रुकता है ।

ब्रह्मचर्य का महत्व न समझने वाले व्यक्ति काम शक्ति का दुरुपयोग भोग लिप्सा, यौन लिप्सा में करते हैं । फलतः इसके दिव्य अनुदानों का लाभ, जो श्रेष्ठ विचारों–उदात्तभाव– संवेदनाओं के रूप में मिलता है, उसे नहीं उठा पाते । अद्भुत सृजनशक्ति का आधार क्षणिक इन्द्रिय सुखों के आवेश में नष्ट होकर मनुष्य की प्रगति को रोक देता है । इससे वह अपने पूर्व संचित तथा अब की उपार्जित क्षमताओं को भी गँवा बैठता है । साथ ही दुरुपयोग का दुष्परिणाम भी भुगतता है । कामुक लोगों–यौन स्वेच्छाचारियों को एड्स, क्षय जैसी प्राणघातक बीमारियों से ग्रसित होकर बेमौत मरते देखा जाता है । शारीरिक काम सेवन से धातु क्षय की हानि तो होती है उससे भी बड़ी हानि मानसिक व्यभिचार से होती है । उसमें ओजस् ही नहीं, मनस् भी क्षीण होता है और व्यक्ति संकल्प, साहस और मनोबल भी गँवा बैठता है । ऐसे व्यक्ति हर दृष्टि से खोखले हो जाते हैं ।

अध्यात्मवेत्ता ऋषि–मनीषियों का युगों–युगों से यह शिक्षण रहा है कि मनुष्य यदि इस अदूरदर्शी क्षरण को रोक सके तो उस बचत से इतना बड़ा भंडार जमा हो सकता है जिसके बलबूते विपुल विभूतियों का अधिपति बन सके । अथर्ववेद की ऋचा १/५/१९ में कहा है कि ब्रह्मचर्य द्वारा मृत्यु पर भी विजय प्राप्त की जा सकती है । इस प्रतिपादन में तथ्य यह है कि उसे बहुत समय के लिए टाला जा सकता है । हनुमान, भीष्म, शंकराचार्य स्वामी दयानंद, विवेकानन्द आदि इसी के उदाहरण हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

यह एक तथ्य है कि ऋषियों और मनीषियों में से अधिकांश संयमी-ब्रह्मचारी रहे हैं, परिणामस्वरूप उनकी क्षमता प्रतिभा, प्रखरता एवं भाव संवेदनाएँ भी बढ़ी-चढ़ी रही हैं । रामकृष्ण परमहंस एवं जापान के गांधी का गोवा के ऐसे उदाहरण हैं । दो साँड़ों के टकराव को रोकने के लिए दयानन्द सरस्वती ने उन दोनों के सींग पकड़कर मरोड़ और धकेल कर दूर पटक दिये थे । अपनी संयम शक्ति के बल पर ही उन्होंने एक राजा की बग्घी रोक कर दिखाई थी । शिवाजी को उनकी संयम साधना एवं पात्रता के आधार पर ही भवानी तलवार हस्तगत हुई थी । आद्य शंकराचार्य विवेकानन्द, समर्थ गुरु रामदास, विनोबा आदि महापुरुषों की प्रतिभाओं का मूल स्रोत उनकी संयम शक्ति थी । निश्चय ही ब्रह्मचर्य की शक्ति महान है । घेरण्ड संहिता में शिव का वचन है– " बिन्दु को सिद्ध कर लेने पर इस धरती की कोई सिद्धि ऐसी नहीं जो प्राप्त न हो सके । "

ब्रह्मचर्य का पूर्ण परिपालन कैसे निभे ? क्या अविवाहित रहना ही ब्रह्मचर्य है ? आदि प्रश्नों की गहराई में उतरने पर स्पष्ट होता है कि इसकी प्रधान भूमिका मानसिक है । अन्यथा कितने ही विवाहित लोग पूर्ण संयमी रहते और दीर्घ जीवन का आनन्द उठाते हैं । इसके विपरीत तथाकथित अविवाहित ब्रह्मचारी, साधु–संन्यासी खोखले, निस्तेज दीखते और नाना प्रकार की आधि–व्याधियों से घिरे असमय दम तोड़ते देख जाते हैं । वस्तुतः वीर्य रक्षा का लाभ उन्हें ही मिल पाता है जो अश्लील चिन्तन, कामुक आचरण से अपने ऋचा मन मस्तिष्क को बचाये रखते हैं । मन, वचन, कर्म से इन्द्रिय निग्रह ही "ब्रह्मचर्य" हैं ।

महात्मा गाँधी का कहना है कि हम लोगों ने ब्रह्मचर्य की व्याख्या को केवल स्थूल रूप दे दिया और जो लोग प्रति क्षण क्रोध करते रहते हैं, उन्हें दोषी मानना छोड़ दिया है । जिस प्रकार स्थूल ब्रह्मचर्य का पालन शरीर सुख के लिये आवश्यक है, उसी प्रकार आध्यात्मिक ब्रह्मचर्य की भी आवश्यकता है ।

ब्रह्मचर्य का अर्थ है मन, वचन और काया से समस्त इन्द्रियों का संयम । ... जब तक अपने विचारों पर इतना कब्जा न हो जाय कि अपनी इच्छा के बिना एक भी विचार न आने पावे, तब तक वह सम्पूर्ण ब्रह्मचर्य नहीं । जितने भी विचार हैं वे सब एक तरह के विकार हैं । उनको वश में करने के मानी हैं मन को वश में करना और मन को वश में करना वायु को वश में करने से भी कठिन है । इतना होते हुए भी यदि आत्मा कोई चीज है तो फिर यह भी साध्य होकर रहेगा ।

ब्रह्मचर्यहीन जीवन मुझे शुष्क और पशुवत मालूम होता है । पशु स्वभावतः निरंकुश है, परन्तु मनुष्यत्व इसी बात में है कि मनुष्य स्वेच्छा से अपने को अंकुश में रखे । ब्रह्मचर्य की जो स्तुति धर्मग्रन्थों में की गई है उसमें पहले मुझे अत्युक्ति मालूम होती थी परन्तु अब दिन-दिन यह अधिकाधिक स्पष्ट होता जाता है कि वह बहुत ही उचित और अनुभव सिद्ध है ।

'विषय मात्र का निरोध ही ब्रह्मचर्य है ।'

.....सत्याग्रह –सेनापति के शब्द में ताकत होनी चाहिये– वह ताकत नहीं जो असीमित अस्त्र-शस्त्रों से प्राप्त होती है, बल्कि वह जो जीवन की शुद्धता, दृढ़ जागरूकता और सतत आचरण से प्राप्त होती है । यह ब्रह्मचर्य का पालन किये वगैर असम्भव है । ब्रह्मचर्य का अर्थ यहाँ खाली दैहिक आत्म संयम या निग्रह ही नहीं है, इसका तो इससे कहीं अधिक अर्थ है । इसका मतलब है सभी इन्द्रियों पर पूर्ण नियमन । इस प्रकार अशुद्ध विचार भी ब्रह्मचर्य का भंग है और यही हाल क्रोध का है । सारी शक्ति उस वीर्य शक्ति की रक्षा और ऊर्ध्वगति से प्राप्त होती है, जिससे कि जीवन का निर्माण होता है । अगर इस कार्य–शक्ति को नष्ट होने देने के बजाय, संचय किया जाय तो यह सर्वोत्तम सृजन शक्ति के रूप में परिणत हो जाती है । बुरे या अस्त–व्यस्त, अव्यवस्थित ,अवांछनीय विचारों से भी इस शक्ति का बराबर और अज्ञात रूप से क्षय होता रहता है और चूँकि विचार ही सारी वाणी और क्रियाओं का मूल है इसलिये वे सभी इसी का अनुकरण करती हैं । इसीलिये पूर्णतः नियंत्रित विचार खुद ही सर्वोच्च प्रकार की शक्ति है और स्वतः क्रियाशील बन सकता है । मूक रूप में की जाने वाली हार्दिक प्रार्थना का मुझे तो यही अर्थ मालूम पड़ता है । अगर मनुष्य ईश्वर की मूर्ति का उपासक है तो उसे अपने मर्यादित क्षेत्र के अन्दर किसी बात की इच्छा

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भर करने की देर है, जैसा वह चाहता है वैसा ही बन जाता है । जिस तरह चूने वाले नल में भाफ रखने से कोई शक्ति पैदा नहीं होती, उसी प्रकार जो अपनी शक्ति का किसी भी रूप में क्षय होने देता है उसमें इस शक्ति का होना असम्भव है ।

"ब्रह्मचारी रहने का यह अर्थ नहीं कि मैं किसी स्त्री को स्पर्श न करूँ, अपनी बहिन का स्पर्श न करूँ । ब्रह्मचारी होने का अर्थ यह है कि स्त्री का स्पर्श करने से किसी प्रकार का विकार न उत्पन्न हो जिस तरह कि कागज को स्पर्श करने से नहीं होता । मेरी बहिन बीमार हो और उसकी सेवा करते हुए, उसका स्पर्श करते हुए ब्रह्मचर्य के कारण मुझे हिचकना पड़े तो वह ब्रह्मचर्य तीन कौड़ी का है । जिस निर्विकार दशा का अनुभव हम मृत शरीर को स्पर्श करके कर सकते हैं उसी का अनुभव जब हम किसी सुन्दरी युवती का स्पर्श करके कर सकें तभी हम ब्रह्मचारी हैं ।

मुझे यह बात कहनी ही होगी कि ब्रह्मचर्य व्रत का तब तक पालन नहीं हो सकता जब तक कि ईश्वर में जो कि जीता जागता सत्य है अटूट विश्वास न हो ।

"जो ब्रह्मचारी बनने की कोशिश कर रहा है उसके लिये अनेक बन्धनों (नियमों) की जरूरत है । आम के छोटे पेड़ को सुरक्षित रखने के लिये उसके चारों तरफ बाड़ लगानी पड़ती है । छोटा बच्चा पहले माँ की गोद में सोता है, फिर पालने में और फिर चालन-गाड़ी में लेकर चलता है, जब बड़ा होकर खुद चलने लगता है तब सब सहारा छोड़ देता है । ब्रह्मचर्य पर भी यही चीज लागू होती है । ब्रह्मचर्य एकादश व्रतों में से एक व्रत बतलाया गया है । इस पर से यह कहा जा सकता है कि ब्रह्मचर्य की मर्यादा या रक्षा करने वाली बाड़ एकादश व्रतों का पालन है । वास्तव में ब्रह्मचर्य मन की स्थिरता है । बाहरी आचार या व्यवहार उसकी निशानी है । जिस पुरुष के मन में जरा भी विषय-वासना नहीं रही है, वह कभी विकार के वश में नहीं होगा । वह किसी स्त्री को चाहे जिस हालत में देखे, चाहे जिस रूप रंग में देखे, तो भी उसके मन में विकार उत्पन्न नहीं होगा । इसलिए ब्रह्मचारी को अपनी मर्यादा स्वयं ही बना लेनी चाहिए । उद्देश्य यही है कि हम सच्चे ब्रह्मचर्य को पहचानें, उसकी कीमत जान लें और ऐसे कीमती ब्रह्मचर्य का पालन करें ।"

ब्रह्मचर्य द्वारा आत्म-बल का संचय

सुख और श्रेय मानव जीवन की दो महान उपलब्धियाँ मानी गई हैं । इनको पा लेना ही जीवन की सफलता है ।

सुख की परिधि का परिसार संसार तक हैं अर्थात् हम संसार के व्यवहार क्षेत्र में जो जीवन जीते हैं, उसका निर्विघ्न, स्निग्ध और सरलतापूर्वक चलते रहना ही सांसारिक सुख है । श्रेय आध्यात्मिक क्षेत्र की उपलब्धि है । ईश्वरीय बोध, आत्मा का ज्ञान और भव बन्धन से मुक्ति श्रेय कहा गया है ।

पार्थिव अथवा अपार्थिव किसी भी पुरुषार्थ के लिए शक्ति की अनिवार्य आवश्यकता है । शक्तिहीनता क्या साधारण और क्या असाधारण दोनों प्रकार की प्रगतियों के लिये बाधा रूप है । शरीर अशक्त हो, मन निराश और कुण्ठित हो, बुद्धि की निर्णायक क्षमता शिथिल हो तो मनुष्य इच्छा रहते हुए भी किसी प्रकार का पुरुषार्थ नहीं कर सकता ।

संसार के सारे सुखों का मूलाधार साधनों को माना गया है । साधन यों ही अकस्मात् प्राप्त नहीं हो जाते । उनके लिये उपाय तथा परिश्रम करना होता है । रोटी, कपड़ा और आवास के साथ और भी अनेक प्रकार के साधन जीवन को सरलतापूर्वक चलाने के लिये आवश्यक होते हैं । इनके लिये कार-रोजगार, मेंहनत-मजदूरी, नौकरी-चाकरी कुछ न कुछ काम करना होता है । यह सब काम करने के लिये शक्ति की आवश्यकता है । अशक्तता की दशा में कोई काम नहीं किया जा सकता ।

केवल शक्ति ही नहीं आरोग्य तथा स्वास्थ्य भी सुख, शांतिमय जीवन-यापन की एक विशेष शर्त है । साधन हो, कार-रोजगार हो, धन तथा आय की भी कमी न हो, तब भी जब तक तन-मन स्वस्थ और निरोग नहीं है, जीवन सुख और सरलतापूर्वक नहीं चलाया जा सकता है । इस प्रकार शक्ति और स्वास्थ्य जीवन के सुख के आवश्यक हेतु हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शक्ति जन्मजात प्राप्त होने वाली कोई वस्तु नहीं है जिस प्रकार धन, सम्पत्ति, जमीन–जायदाद उत्तराधिकार में मिल जाते हैं उस प्रकार शक्ति के विषय में कोई भी उत्तराधिकार नहीं है। यह मनुष्यों की अपनी व्यक्तिगत वस्तु है, जिसे पाया नहीं, उपजाया जाता है। सांसारिक सुख और पारलौकिक श्रेय के लिये मनुष्य को शक्ति का उपार्जन कर लेना आवश्यक है।

लौकिक विद्वानों से लेकर सिद्ध महात्माओं और मनीषियों–सब ने एक स्वर से संयम को शक्ति का स्रोत बतलाया है। बहुत लोगों का विचार रहता है कि अधिक खाने–पीने से शक्ति प्राप्त होती है। परन्तु उनका यह विचार समीचीन नहीं। अधिक अथवा बहुत बार खाने से शरीर को अनावश्यक श्रम करना पड़ता है, जिससे शक्ति बढ़ने के बजाय क्षीण होती है। स्वास्थ्य बिगड़ता है और आरोग्य नष्ट होता है। भोजन में निश्चय ही शक्ति के तत्व रहते हैं किन्तु वे प्राप्त तभी होते हैं, जब भोजन का उपभोग संयमपूर्वक किया जाये। समय पर, नियंत्रित मात्रा में उपयुक्त भोजन ही सुविधापूर्वक पचता और शक्तिदायक रसों को देता है।

शक्ति संचय के लिए समय पर, सीमित और उपयुक्त भोजन किया जाये, स्वास्थ्य और आरोग्य के विषय में सावधान रहा जाय, परन्तु ब्रह्मचर्य का पालन न किया जाये, तब भी सारे प्रयत्न बेकार चले जायेंगे और शक्ति के नाम पर शून्य ही हाथ में रहेगा। भोजन के तत्व वीर्य बनकर ही शरीर में संचय होते हैं और उस संचित और परिपक्व वीर्य का ही स्फुरण शक्ति की अनुभूति है। वीर्यवान शरीरों में न तो अशक्तता आती है और न उसका आरोग्य ही जाता है। इसीलिए वीर्य को शरीर की शक्ति ही नहीं प्राण भी कहा गया है।

इसी महत्व के कारण भारतीय मनीषियों और आचार्यों ने वीर्य रक्षा अर्थात् ब्रह्मचर्य संयम को सबसे बड़ा माना है और निर्देश किया है कि लौकिक जीवन के सुख और पारलौकिक श्रेय के लिये मनुष्य को अधिकाधिक ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए।

परशुराम, हनुमान और भीष्म जैसे महान पुरुषों ने आजीवन ब्रह्मचारी रह कर ब्रह्मचर्य व्रत की महत्ता प्रमाणित की है। इसी व्रत के बल पर वे न केवल अतुलित बलधाम बने बल्कि जरा और मृत्यु तक को जीत लिया। परशुराम और हनुमान के पास तो मृत्यु आई ही नहीं– और भीष्म ने तो उसे आने पर डाँट कर ही भगा दिया और रोम–रोम में बिंधे शरों की शेज पर तब तक सुखपूर्वक लेटे रहे, जब तक कि सूर्यनारायण उत्तरायण नहीं हो गये। सूर्य के उत्तरायण हो जाने पर ही उन्होंने इच्छामृत्यु का वरण स्वयं किया। शर–शैया पर लेटे हुए वे केवल जीवित ही नहीं बने रहे अपितु पूर्ण स्वस्थ और चैतन्य भी बने रहे। महाभारत युद्ध के पश्चात उन्होंने पाण्डवों को धर्म तथा ज्ञान का आदर्श उपदेश भी दिया। यह सारा चमत्कार उस ब्रह्मचर्य व्रत का ही था, जिसका कि उन्होंने आजीवन पालन किया था। हनुमान ने उसके बल पर समुद्र पार कर दिखाया और एक अकेले परशुराम ने इक्कीस बार पृथ्वी से आततायी और अनाचारी राजाओं को नष्ट कर डाला था। ब्रह्मचर्य की महिमा अपार है।

कहा जा सकता है कि यह सब लोग मानवों की महान् कोटि के व्यक्ति थे और आजीवन ब्रह्मचर्य का व्रत लेकर अविवाहित रहे थे। आजीवन ब्रह्मचर्य वीर्य संयम से सरल है। अविवाहित अथवा अनानुभवी व्यक्ति को काम–ज्वर पीड़ित नहीं कर पाता, किन्तु जन सामान्य के लिये उसका संयम कठिन होता है। विवाहित व्यक्तियों का उद्दीप्त कामदेव उन्हें विवश कर अपने वश में कर ही लेता है।

इस शंका के समाधान में इस प्रकार विचार किया जा सकता है। भीष्म, भार्गव अथवा हनुमान को उच्च कोटि का महापुरुष माने जाने का कारण उनकी स्थिति नहीं है बल्कि उनके वे कार्य हैं जो उन्होंने अपने जीवन में कर दिखाये और वे उन शक्ति सम्भव कार्यों को कर ही आत्म संयम के बल पा सके। कोई भी व्यक्ति सामान्य अथवा असामान्य उन जैसा संयमपूर्ण जीवन जिये, उन जैसे आचार–विचार रखे और उन जैसी सदाशयता से अलंकृत कार्यविधि अपनाये तो निश्चय ही उच्च श्रेणी में पहुँच सकता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ब्रह्मचर्य पालन के विषय में आजीवन अविवाहित और अनानुभवी व्यक्तियों को छोड़ भी दीजिये तो भी भारतीय इतिहास में ऐसे दृढ़ व्रती और संयमशील व्यक्तियों के उदाहरणों की कमी नहीं है जिन्होंने विवाहित और अनुभव प्राप्त होने पर भी अनुकरणीय काम संयम करके दिखला दिये ।

दूर जाने की आवश्यकता नहीं– रामायण के प्रमुख पात्र राम, लक्ष्मण, भरत, सीता, उर्मिला और मांडवी को ही ले लीजिये । सभी विवाहित तथा सद्गृहस्थ थे । जिस समय राम के वनगमन की घटना घटी उस समय इन सबके विवाह हुए ज्यादा दिन न हुए थे । सभी यौवन की उत्थान तथा उद्दाम आयु में थे । हास–विलास तथा सुख सौष्ठ्यपूर्ण जीवन बीत रहा था । तभी एक साथ चौदह वर्ष के लिये राम वनवास की बात हो गई ।

राम बनवास के लिये चले तो बहुत कुछ समझाने और निषेध करने पर भी सीता तथा लक्ष्मण उनके साथ प्रेमवश हो ही लिये । चलते समय लक्ष्मण ने अपनी नवागता पत्नी उर्मिला से विदा ले लेना आवश्यक समझा । वे गये और अपना विचार प्रकट किया । उर्मिला के हृदय पर तो बार एक आघात हुआ, उसकी आँखें भर आईं किन्तु तत्क्षण ही उसने अपने आपको संयम कर कहा– "आप प्रभु के साथ वनवास जा रहे हैं । तो उन्हीं की तरह मुझे भी अपने साथ क्यों न लेते चलें किन्तु लक्ष्मण ने अपने कर्त्तव्य की महत्ता और उसके संग रहने से होने वाली उचित असुविधाओं को बतलाकर समाधान कर दिया । उर्मिला घर रह गई और लक्ष्मण चौदह वर्ष के लिए राम के साथ वन चले गये ।

वन में जाकर कुमार लक्ष्मण ने विवाहित तथा सानुभवी होने पर भी चौदह वर्ष तक ब्रह्मचर्य का अखण्ड पालन किया । इस व्रत पालन में न तो उन्हें कोई असुविधा हुई और न कोई कठिनाई । वे सरलतापूर्वक यतियों का जीवन व्यतीत करते रहे । इधर वधू उर्मिला ने भी पति वियोग के अतिरिक्त किसी प्रकार का विकार अथवा काम पीड़ा का अनुभव नहीं किया । वह निर्भयतापूर्वक अपना व्रत पालन करती रहीं । विवाहित तथा अनुभव प्राप्त व्यक्ति के लिये चौदह वर्ष का ब्रह्मचर्य कोई अर्थ रखता है किन्तु उन्होंने उसका पालन कर यह सिद्ध कर दिया कि यदि मनुष्य में दृढ़ता है । अपने व्रत के प्रति आस्था है और संयम के प्रति आदर है तो वह विवाहित, गृहस्थ, अनुभवी और तरुण होने पर भी ब्रह्मचर्य का पालन सुविधापूर्वक कर सकता है ।

यहाँ पर फिर कहा जा सकता है कि लक्ष्मण पत्नी से दूर थे । उनका काम रक्षित रह सकना सम्भव था । कभी-कभी वैवश्य भी संयम का पालन करा देता है । इसके लिये कहा जा सकता है कि लक्ष्मण तो अपत्नीक थे, किन्तु राम तो नहीं थे । उनके साथ तो उनकी पत्नी सीताजी थीं किन्तु राम ने भी पूर्ण काम–संयम का प्रमाण दिया और ब्रह्मचर्य व्रत का अखण्ड रूप से पालन किया । फिर कहा जा सकता है कि सीता से आगे चलकर उनका विछोह हो गया था । ठीक है–परन्तु भरत के साथ तो ऐसी कोई बात नहीं थी । वे न तो वनवास में ही गये और न पत्नी से दूर ही रहे । वे अयोध्या में ही रहे और मांडवी उनकी सेवा में हर समय उपस्थित रहती थी । तथापि भरत ने स्वयं भी पत्नी सहित चौहद वर्ष तक ब्रह्मचर्य का पालन किया और कभी किसी विकार की दुर्बलता नहीं आने दी ।

यह सब तथ्य इस बात के ज्वलन्त उदाहरण हैं कि आजीवन अविवाहित के लिये अथवा अनानुभवी व्यक्तियों के लिये ही नहीं ब्रह्मचर्य का संयम गृहस्थ और भुक्त–भोगियों के लिये भी सर्वथा सम्भव है । जो व्यक्ति इस विषय में विवशता अथवा निर्बलता प्रकट करते हैं, वे वास्तव में निर्बल व्यक्ति ही होते हैं और ब्रह्मचर्य के महत्व में सच्ची आस्था नहीं रखते । अपनी वासनाओं के प्रश्रय के लिये बहाने दिया करते हैं ।

काम–संयम सर्वथा सम्भव है और सबको करना ही चाहिए । इससे शारीरिक, मानसिक तथा बौद्धिक ही नहीं आत्मिक शक्ति भी बढ़ती है । मनुष्य में तेज तथा प्रभाव का प्रादुर्भाव होता है, वाणी में तेज तथा नेत्रों में ज्योति आती है । यह सारे गुण और सारी विशेषतायें प्रेम तथा श्रेय दोनों की उपलब्धि में सहायक होते हैं । इन सहायकों के अभाव में आध्यात्मिक उन्नति तो दूर, सामान्य सांसारिक जीवन भी सुख और सरलतापूर्वक नहीं जिया जा सकता ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जो व्यक्ति संसार के महान व्यक्तित्व हुए हैं, जिन्होंने धर्म, समाज तथा देश के लिये उल्लेखनीय कार्य कर प्रेम प्राप्त किया है और जिन्होंने तप, साधना तथा चिन्तन मनन कर श्रेय पाया है, निर्विवाद रूप से उन्होंने ब्रह्मचर्य व्रत द्वारा सबसे पहले शक्ति की ही साधना की है। वासना को जीत और इन्द्रियों पर अधिकार कर सकने पर ही वे जीवन में श्रेयस्कर कार्य कर सकने में सफल हो सके हैं।

वीर्य रक्षा से शरीर स्वस्थ तथा स्फूर्तिवान बना रहता है। रोगों का आक्रमण नहीं होने पाता। मन तथा बुद्धि इतने पुष्ट एवं परिपक्व हो जाते हैं कि बड़ी से बड़ी विपत्ति में भी विचलित नहीं होते। प्रमाद, आलस्य अथवा अवज्ञा का भाव नहीं आने पाता। परिश्रम तथा उपार्जन की स्फूर्ति बनी रहती है, जिससे उसके क्षरण दिन–दिन उन्नति के सोपानों पर ही चलते जाते हैं।

हम सब ने जिस मनुष्य जीवन को पाया है, वह यों ही कष्ट-क्लेशों, अभावों तथा आवश्यकताओं में नष्ट कर देने योग्य नहीं है और न इसी योग्य है कि उसे कामनाओं, वासनाओं और संसार की अन्य विभीषिकाओं में गँवा दिया जाये। वह है संसार में सद्कर्मों द्वारा पुण्य तथा परमार्थ उपार्जित कर अध्यात्म मार्ग से पारलौकिक श्रेय प्राप्त करने के लिये और यह उपलब्धि शारीरिक, मानसिक तथा आत्मिक शक्ति द्वारा ही सम्भव है, जिसका उपार्जन इन्द्रिय निग्रह द्वारा, ब्रह्मचर्य व्रत द्वारा सहज ही में किया जा सकता है।

ब्रह्मचर्य एक तप है

महर्षि अरविन्द के अनुसार– अपने अन्दर की शक्ति को बढ़ाना तथा उसे ऐसे कामों में लगाना जिनमें व्यक्ति को या मनुष्य जाति को लाभ पहुँचे– इसके लिए सबसे पहली और सबसे आवश्यक शर्त है ब्रह्मचर्य पालन। समस्त मानवीय शक्ति का एक स्थूल आधार है। यूरोपीय जड़वाद में दोष यह है कि वह आधार को ही सब कुछ मानता है और इसे ही उद्गम समझने की भूल करता है। जीवन और शक्ति का उद्गम प्राकृतिक नहीं आध्यात्मिक है, किन्तु जिस आधार या नींव पर स्थित होकर जीवन और शक्ति कर्म करती है वह भौतिक है हिन्दुओं ने उद्गम और आधार के कारण और प्रतिष्ठा के, सत्ता के उत्तरी ध्रुव और दक्षिणी ध्रुव के इस भेद को स्पष्ट रूप में अनुभव किया था। पृथ्वी या स्थूल जड़ तत्व है प्रतिष्ठा, ब्रह्म या आत्मा है। कारण, भौतिक को आध्यात्मिक तक ऊँचा ले जाना ही ब्रह्मचर्य है, कारण, जो शक्ति एक से प्रारंभ करके दूसरे को पैदा करती है वह इन दोनों के मिलन से ही बढ़ती और परिपूर्ण बनती है।

यह दार्शनिक सिद्धान्त है। इसे कार्यान्वित करने के लिये शक्ति के मानवीय आधार की शारीरिक तथा मानसिक गठन का ठीक-ठीक ज्ञान होना आवश्यक है। मूल भौतिक इकाई है रेतस, जिसमें तेज अर्थात् मनुष्य का भीतरी ताप, प्रकाश, विद्युत् अंतर्लीन और गुप्त है। समस्त शक्ति रेतस में अन्तर्निहित है। इस शक्ति को हम चाहें तो स्थूल रूप में व्यय कर सकते हैं या हम इसे सुरक्षित रख सकते हैं। समस्त विषय विकार, वासना, कामना शक्ति को स्थूल रूप में या उदात्तीकृत सूक्ष्मतर रूप में शरीर से बाहर उँडेलकर नष्ट कर देती है। दुराचार इसे स्थूल रूप में बाहर फेंकता है, दुर्विचार सूक्ष्म रूप में दोनों ही अवस्थाओं में अपव्यय होता है और मन–वाणी तथा शरीर सभी अपवित्र होते हैं। दूसरी ओर, सब प्रकार का आत्मसंयम रेतस् की शक्ति को सुरक्षित रखता है और संरक्षण से सदा ही शक्ति की वृद्धि होती है। परन्तु स्थूल शरीर की आवश्यकताएँ परिमित हैं, अतएव इस प्रचुर शक्ति में से कुछ फालतू बच रहती हैं जिसे स्थूल से भिन्न किसी और काम में लगाना आवश्यक है। प्राचीन सिद्धांत के अनुसार रेतस् है जल जो प्रकाश, ताप और विद्युत् से, एक शब्द में, तेज से पूर्ण है रेतस् की अतिरिक्त मात्रा पहले ताप या तपस् में बदलती है जो संपूर्ण देह में शक्ति संचारित करता है, और इसी कारण आत्मसंयम और कठोर जीवन चर्या के सभी रूपों को तप या तपस्या कहा जाता है। क्योंकि उनसे ताप या उत्तेजना पैदा होती है जो प्रबल कर्मण्यता और सफलता का मूल स्रोत है, दूसरे, यह परिणत होती है वास्तविक तेज में, प्रकाश और बल में, जो ज्ञानमात्र उद्गम हैं, तीसरे, यह विद्युत् के रूप में परिवर्तित होती है जो बौद्धिक या शारीरिक सभी शक्तिशाली कर्मों के मूल में विद्यमान हैं और फिर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विद्युत् में निलीन है ओज या प्राणशक्ति अर्थात् आकाश से उद्भूत होने वाली आद्या शक्ति । रेतस् तेज और विद्युत् में तथा विद्युत् से ओज के रूप में परिष्कृत होता हुआ शरीर को भौतिक शक्ति, स्फूर्ति और बुद्धि से भर देता है और अपने ओज-आत्मक अन्तिम रूप में मस्तिष्क में आरोहण कर उसे आद्या शक्ति से अनुप्राणित करता है । यह आद्या शक्ति जड़तत्व का अत्यन्त परिशुद्ध रूप है और आत्मा के निकटतम है । यह ओज है, यह आध्यात्मिक शक्ति या वीर्य उत्पन्न करता है । इसी से मनुष्य आध्यात्मिक ज्ञान, आध्यात्मिक प्रेम एवं श्रद्धा और आध्यात्मिक बल प्राप्त करता है इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि जितना ही हम ब्रह्मचर्य से तप, तेज, विद्युत् और ओज का भण्डार बढ़ा सकेंगे उतना ही हम अपने को, देह, अन्तःकरण, मन और आत्मा के कर्मों के लिए, पूर्ण सामर्थ्य से परिप्लुत कर सकेंगे ।

सुख चाहें तो ब्रह्मचर्य व्रत धारण करें

चैतन्य प्राणियों की उत्पत्ति पर प्रकाश डालते हुए प्रश्नोपनिषद् में बताया गया है कि सर्वप्रथम दो शक्तियों का आविर्भाव हुआ– एक रयि दूसरा प्राण । कात्यायन कबन्धी के प्रश्न का उत्तर देते हुए महर्षि पिप्पलाद ने बताया है कि इन्हीं दो शक्तियों के सम्मिश्रण से चैतन्य जीवन विभिन्न आकार प्रकार में निर्मित हुए । विद्युत् विज्ञानवादी रयि और प्राण शक्ति को 'नेगेटिव' और 'पॉजिटिव' कहते हैं । समाजशास्त्री इन्हें नर शक्ति एवं नारी शक्ति बताते हैं, अध्यात्मवादी प्रकृति पुरुष नाम देते हैं, मनोविज्ञान के अनुसार यह इच्छा और क्रिया कहे जाते हैं योग शास्त्र में इन्हीं को ज्ञान भक्ति कहकर पुकारा गया है, सारे जगत् में सूर्य और चन्द्रमा इनकी प्रतिमूर्तियाँ हैं ।

क्रम यह है कि रयि द्वारा प्राण का आकर्षण होना चाहिए । जिस क्रम से रयि शक्ति विकसित होती है उसी क्रम से प्राण की धारणा होती है । घड़े में जितना स्थान हो उतना ही पानी भरना चाहिए, यदि घड़े के स्थान की परवाह न करके अन्धाधुन्ध पानी भरा जायेगा तो उससे विकृति उत्पन्न होगी और परिणाम हानिकर होगा । भक्ति की अपेक्षा ज्ञान अधिक होगा तो नास्तिकता बढ़ेगी, जितनी इच्छा है उससे अधिक क्रिया करनी पड़ेगी, तो करने वाला थक जायेगा और कष्ट अनुभव करेगा । सृष्टि के सभी जीव इस नियम से परिचित हैं और उसका यथाविधि पालन करते हैं । रति संयोग के सम्बंध में समस्त पशु-पक्षी मादा की इच्छा का पालन करते हैं । सृष्टि का कोई प्राणी मादा की सम्भोग इच्छा के अतिरिक्त उस पर किसी प्रकार का दबाव नहीं डालता ।

मादा की सम्भोगेच्छा बहुत ही स्वल्प और एक विशेष आवश्यकता होने पर प्रकट होती है । संकोच और विकास (Contraction & Expansion) के नियमों से मादा बँधी हुई है । फूलों की कलियाँ बन्द रहती हैं अपनी सामर्थ्य बढ़ाने तक चुप रहती हैं, जब उनके भीतर संकोच की मर्यादा पूरी हो जाती है और रयि का पर्याप्त संचय हो जाता है तो वे अपनी रूप शक्ति का विकास करने के निमित्त खुलती हैं और प्राण रूप क्रिया शक्ति का संयोग होने पर फल पैदा करने के लिए फिर संकोच कर लेती हैं । रयि का उत्तेजन प्रकृत स्वभाव से उचित अवसर पर होता है और प्राण प्राप्त होते ही तुरन्त शान्त हो जाता है और अपना उद्देश्य पूरा करके पुनः शक्ति संचय करके वैसा ही अवसर आये बिना फिर जाग्रत नहीं होता । स्त्री की सम्भोगेच्छा स्वाभाविक रूप से ऋतु काल में होती है, सो भी हर ऋतु में नहीं, यदि कोई शारीरिक या मानसिक कष्ट हो तो ऋतु होने पर भी रयि का उत्तेजन नहीं होता ।

मैथुन केवल स्त्री की रयि उत्तेजन की आवश्यकता की पूर्ति के लिए होना चाहिए । चटोरी लालसा द्वारा जैसे भूख न रहने पर भी सुस्वादु भोजनों के लिए मन चलता है, वैसे ही स्त्रियों को चटोरी काम वासना भी हो सकती है । इसकी सूक्ष्म दृष्टि से विवेचना करनी चाहिए और मानसिक विकार का विरोध करते हुए केवल स्वाभाविक आवश्यकता का ही आदर करना चाहिए । चटोरी भूख को पूरा करते रहने से शरीर रोगों का घर बन जाता है, वैसे ही जीवन की मूलभूत चेतना रयि का दुरुपयोग होने से स्त्रियों का जीवन तत्व नष्ट होता है और मानव शरीर की अनेकानेक महत्ताओं से उन्हें सर्वथा वंचित रहना पड़ता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पुरुषों का अपना दृष्टिकोण पूर्ण ब्रह्मचारी रहने का होना चाहिए। उन्हें स्वेच्छा से वीर्य नष्ट करने का कोई अधिकार नहीं है। रयि की तृप्ति के लिए प्राण प्रदान करने की उन्हें अनुमति मिली हुई है, इसका उपयोग दूसरे पक्ष की आवश्यकता पर निर्भर है। पुरुष का अपना निजी विचार हर समय कठोर ब्रह्मचर्य के लिए रहना चाहिए क्योंकि उसका यही कर्तव्य है।

यह समझना बड़ी भारी भूल है कि वीर्य शरीर का एक मल है और उसे निकालना ही चाहिए। यदि ऐसी बात होती तो मलमूत्र की तरह वीर्य के लिए भी कोई विशेष प्रक्रिया होती, किन्तु देखा जाता है कि शरीर में भी वीर्य के भण्डार नहीं भरे हैं। यह अमूल्य पदार्थ रक्त में अदृश्य रूप से इस प्रकार छिपा हुआ है कि बिना अत्यन्त आवश्यकता के इसका उपयोग न हो सके। उपनिषदों में रेतस् शब्द 'तेज' के अर्थ में उपयोग किया गया है। वीर्य एक चिकनी लसदार वस्तु नहीं है, वरन् जीवन का प्रत्यक्ष तेज है। आत्मा, आत्मा से उत्पन्न होता है, न कि शरीरस्थ मल मूत्रों से। रक्त, माँस, हड्डी आदि धातुओं से यदि आप सन्तान उत्पन्न करना चाहें तो कभी नहीं हो सकता, क्योंकि उनमें चैतन्य तत्व नहीं है। वीर्य में आत्मा का तेजस् है, प्राण है, चैतन्य है, इसीलिए तो वह सन्तान उत्पन्न कर सकता है। विचार तत्व को प्रकट करने के लिए मस्तिष्क एक साधन है। इस प्रकार आत्मा के चैतन्य तत्व का प्रत्यक्ष दर्शन वीर्य रूप में होता है।

वीर्य शरीर का एक भाग है, इसका खण्डन उन उदाहरणों से हो जाता है, जिनमें कि अन्धे पिता के नेत्रों वाली और अंग-भंग पिताओं के पूर्ण अंगों वाली सन्तान उत्पन्न होती है। यदि वीर्य शरीर का एक ही भाग होता तो जो अंग पिता के शरीर में नहीं हैं वह बालक में भी न होने चाहिए थे। अंगों के नष्ट होने से आत्मा में से वे भाग चले नहीं जाते, इसलिये वीर्य का तेज, पूर्ण अंग वाली सन्तान उत्पन्न करने में समर्थ रहता है। मरे हुए व्यक्ति का वीर्य क्या किसी को गर्भ धारण करा सकता है ? लसदार पदार्थ लकड़ी के समान है। आत्म तेज की अग्नि जब उसमें सम्मिलित रहती है तब उसमें प्रज्ज्वलित होने से क्रियाशीलता आती है।

आत्म तेज एक प्रेरक शक्ति है, वह मानव जीवन को विकसित करने के लिए उत्तेजना देती हैं हमें अनेक दिशाओं में प्रगति करनी होती है और उस सबके लिये शक्ति का प्रवाह वीर्य द्वारा प्राप्त होता है। नगर भर में बिजली द्वारा असंख्य स्थानों पर असंख्य कार्य होते रहते हैं, परन्तु उद्गम केन्द्र "बिजलीघर" में ही है। मनुष्य के सामने एक बड़ी यात्रा पड़ी हुई है, उसे ठीक तरह पूरी करने के लिये शरीर की मोटर में पेट्रोल भरा गया है किन्तु हाय ! कितने दुःख की बात है, कि हम लोग ऐसे बहुमूल्य पदार्थ को क्षण भर के तुच्छ स्पर्श सुख के लिए बर्बाद कर रहे हैं। मोटर के पेट्रोल को आतिशबाजी का तमाशा करने में फूँक रहे हैं जो शक्ति हमें सर्वथा सुरक्षित रखनी चाहिए और स्वेच्छा से जिसका एक बूँद भी स्पर्श सुख के लिये खर्च नहीं करना चाहिए, उस बहूमूल्य पदार्थ को मानसिक विकारों की दियासलाई से जलाकर नष्ट कर रहे हैं। हाय ! हम अपने पाँव में अपने आप कुल्हाड़ी मारने का यह भयानक खेल क्यों खेल रहे हैं ? अपनी चिता के लिये अपने आप लकड़ियाँ क्यों इकट्ठी कर रहे हैं ?

कामवासना का रूपान्तर

इस तत्व का भली-भाँति स्मरण रखिए कि जब तक काम वासना पर विजय प्राप्त नहीं की जाती तब तक कोई भी महान् कार्य सम्पादन नहीं किया जा सकता, सांसारिक, धार्मिक, या दैविक कोई भी क्यों न हो। अर्जुन भगवान् कृष्ण से प्रश्न करते हैं कि महाराज पाप करने में अनेक घोर कष्ट हैं– यह जानकर भी मनुष्य किस प्रेरणा से पाप कर्म में प्रवृत्त होता है। उन्होंने उत्तर दिया–

काम एष क्रोध एष रजोगुणसमुद्भवः।
महाशनो महापाप्मा विद्धयेनमिह वैरिणम्॥

अर्थात् हे अर्जुन ! काम क्रोध जो कि रजोगुण से उत्पन्न हुए हैं, भय देने वाले हैं और इन्हीं से प्रत्येक पाप में प्रवृत्ति होती है। ये ही सब से बड़े शत्रु हैं। जहाँ तक हो सके इनके विनाश का उपाय करो।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जिस प्रकार अग्नि धुएँ से दर्पण मलीन हो जाता है और गर्भ के गन्दे पदार्थों से नवजात शिशु ढका हुआ होता है, इसी प्रकार काम की कालिमा से यथार्थ आत्मज्ञान ढका हुआ रहता है ।

इस शत्रु को विजय करने के अनेक उपाय बताये जाते हैं किन्तु लोग यह भूल जाते हैं कि इस प्रवृत्ति को जड़मूल से उखाड़ डालना संभव नहीं । अनेक महात्माओं ने प्रयत्न किये और वे असफल रहे । यह वासना नष्ट तो नहीं की जा सकती । हाँ, इससे छुटकारा पाने का एक और उपाय है । वह है इस का रूपान्तर (Transmutation) कर देना । काम वासना का रूपान्तर का अर्थ स्पष्ट ही है । इसका अभिप्राय यह है कि काम की शक्ति का प्रवाह शारीरिक सम्पर्क के निंद्य मार्ग से रोककर उसे निकलने का कोई अन्य मार्ग प्रदान कर देना । नदियों, झरनों, नालों के पानी का मार्ग अवरुद्ध कर लिया जाता है, फिर उसे किसी नवीन क्षेत्र में प्रवाहित करके आश्चर्यजनक विद्युत की उत्पत्ति की जाती है । इसी प्रकार काम वासना के तीव्र प्रवाह को क्षुद्र सांसारिक भोग विलास के संकीर्ण मार्ग से हटाकर एक ऐसे क्षेत्र में खोल देते हैं जिससे उसकी आश्चर्यजनक शक्ति से अनेक दुष्कर कार्य सम्पन्न हो सकते हैं ।

कामशमन के उपायों में उसे एक नवीन उत्पादन क्षेत्र प्रदान कर देना सर्वोत्कृष्ट है । सांसारिक इच्छा पूर्ति के मार्ग को अवरुद्ध कर उसे किसी अन्य मार्ग से प्रकट होने का अवसर दीजिए । नवीन क्षेत्र पाने से इस वासना का कूड़ा-करकट साफ हो जाता है और इसका परिष्कृत रूप अनेक आश्चर्यचकित करने वाले महान् कार्य कर दिखाता है । यह सामान्य व्यक्ति को अद्भुत प्रतिमा-सम्पन्न व्यक्ति में परिणत कर देता है ।

वह व्यक्ति धन्य है जिसने अपनी काम वासना (Sexenergy) को निकलने के लिए एक नवीन उत्पादक मार्ग प्रदान कर दिया है । इस शक्ति के प्रवाह को जिस क्षेत्र में लगायेगा उसी में चमत्कार उत्पन्न कर देगा । सेक्स शक्ति के रूपान्तर का अर्थ ही है कि ऐसा व्यक्ति एक ऐसी दशा की ओर उन्मुख होने लगा है जिस ओर उसका विशेष रुझान है और जिसमें वह अपनी अद्भुत शक्तियों का परिचय भली-भाँति दे सकता है । मनोवैज्ञानिक खोज के उपरान्त हम इस निर्णय पर पहुँचते हैं कि–

संसार को हिला डालने वाले व्यक्तियों में काम प्रवृत्ति विशेष रूप से उग्र (Developed) थी किन्तु उन्होंने इस प्रचंड शक्ति के प्रवाह को शारीरिक सम्पर्क के नाशक क्षेत्र से हटाकर एक नवीन क्षेत्र में उसका प्रवाह खोल दिया था । शक्ति के इस सागर ने उनकी आत्मा को नव शक्ति, नव धैर्य प्रदान किया था ।

साहित्य, कला, वाणिज्य, शिल्पकारी, प्रसिद्धि के प्रायः प्रत्येक क्षेत्र में उन्हीं व्यक्तियों को प्रतिभा, समृद्धि या प्रसिद्धि (Recognition) प्राप्त हुई जिनकी शक्ति का उद्गम स्थान कोई स्त्री थी । उन्हें उस स्त्री ने विशेष उत्तेजना, उत्साह, साहस प्रदान किया । तदुपरान्त उस प्रचंड शक्ति का प्रवाह शारीरिक सम्पर्क की संकीर्णता से हट कर एक कल्याणकारी क्षेत्र में प्रवाहित हो गया । इस शक्ति के रूपान्तर द्वारा ही वे बहुत ऊँचे चढ़ गये ।

कवि शिरोमणि सूरदास को किसी सुन्दरी ने उत्तेजना (Stimulesa) प्रदान की, शक्ति के महासागर में प्रचंड तूफान उठा, उन्होंने अपनी आंखें निकाल डालीं और शक्ति को कृष्ण प्रेम के कल्याणकारी मार्ग में प्रवाहित कर दिया । इसी प्रकार कविश्रेष्ठ तुलसीदास जी अपनी प्रियतमा पर अत्यन्त अनुरक्त रहे, फिर एक दिन उन्हें "काम वासना का रूपान्तर" की शिक्षा प्राप्त हुई और वे महानता को प्राप्त हुए । महात्मा बुद्ध का प्रारम्भिक जीवन श्रंगारिक था । अनेक महर्षियों तत्ववेत्ताओं, साहित्य के देवताओं को स्त्रियों ने महानता के लिए उत्तेजना प्रदान की है ।

संसार का इतिहास उठा देखिए । बड़े नायकों, बड़े राजनैतिकों, बड़े राजाओं, सभी की काम वासना उद्दीप्त हुई और फिर उसका क्षेत्र परिवर्तित हो गया । जॉर्ज वाशिंगटन, शेक्सपीयर, अब्राहम लिंकन, इमरसन, राबर्टबर्न्स, टामस जैफरसन, औस्कर वाइल्ड, रोजेटी, एन्ड्रूजैकसन इन सभी की जीवनियों में यही सत्य उपलब्ध होता है । नैपालियन ने जब जौसेफाइन (Josephine) से विवाह किया था तो वह अजेय बन गया था । उसी की उत्तेजना से वह एक के बाद अनेक विजय प्राप्त करता चला गया । जब उसकी शक्ति का वह उद्गम स्थान बन्द हुआ तो पतन भी प्रारम्भ हुआ और सैन्टहेलना में बड़ी पराजय हुई ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

४.९२ सावित्री कुण्डलिनी एवं तंत्र

काम की शक्ति इतनी प्रबल है कि इसके आवेश में मनुष्य में अद्‌भुत परिवर्तन हो जाता है मनुष्य की कल्पना तीव्र हो उठती है उत्साह और आशा का संचार हो जाता है । संकल्प शक्ति में बल आता है, आत्म-निर्भरता की अभिवृद्धि हो उठती है । ऐसी शक्तियों का केन्द्र खुल जाता है जिनका मनुष्य को भान तक नहीं होता । सेक्स द्वारा उद्‌दीप्त कल्पना, आशा, आत्मनिर्भरता, संकल्प की सामूहिक शक्तियों का रूपान्तर किसी भी दिशा में आश्चर्यजनक कार्य कर सकता है । इसके प्रवाह के बिल्कुल अवरुद्ध होने से मनुष्य कई मानसिक रोगों का शिकार बनता है और इस प्रवाह को उत्तम मार्ग प्रदान करने से संसार में साहित्य, कला, विज्ञान और समाज का निर्माण और उन्नति होती है । इस शक्ति के प्रवाह को, बिना किसी और मार्ग से निकाल, रोक देने में उतना ही भय है जितना कि वेग से बहते हुए पर्वतीय सोते को बाँध देने में । यदि उसके निमित्त कोई नवीन मार्ग न निकाला जाय तो वह सारे बाँध को तोड़-फोड़ सकता है ।

***

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुण्डलिनी महाशक्ति और उसकी संसिद्धि

आत्म विज्ञान की साधना का गुह्य तत्त्व ज्ञान

प्याज के छिलके के भीतर दूसरा छिलका निकलता है । दूसरे के भीतर तीसरा । इसी प्रकार केले के तने को चीरा जाय तो उसमें एक के भीतर दूसरी परत निकलती जाती है । पदार्थ की सबसे छोटी इकाई परमाणु है, पर वह अकेला दीखते हुए भी अकेला नहीं है । उसके भीतर मध्यवर्ती नाभिक होता है और उसके इर्द-गिर्द इलेक्ट्रॉन, प्रोट्रॉन, न्यूट्रॉन आदि छोटी इकाइयाँ परिभ्रमण करती रहती हैं ।

सौर मण्डल एक घेरा है। पर उनकी परिधि के अन्तर्गत नवग्रह और ४३ उपग्रह अपनी-अपनी धुरी एवं कक्षा में परिभ्रमण करते हैं । परमाणु भी एक सौर मण्डल है । उसके भीतर भी सौर मण्डल की प्रक्रिया काम करती है । मिट्टी का एक ढेला तोड़ा जाय तो उसमें से थोड़ा-सा रेत बिखर जाये पर यदि परमाणु के मध्यवर्ती नाभिक को तोड़ा जाये तो उसमें से एक बड़े पर्वत को गला देने वाली ऊर्जा निकलती है।

स्पष्ट है कि स्थूल को जितना सूक्ष्म किया जाता है उतना ही वह अधिक शक्तिशाली होता है । शरीर में अरबों-खरबों जीव कोशिकाएँ हैं, पर उनके अन्तराल में जो जीन्स छिपे रहते हैं, उनमें से प्रत्येक में एक प्राणी की प्रोटोटाइप निहित रहती है । इस प्रकार हर मनुष्य की काया में समष्टिगत ब्रह्मांण्ड की तरह अरबों-खरबों प्राणी निवास करते हैं । इनमें से एक को संभोग क्रिया के अवसर पर नारी डिम्ब में प्रवेश करने का अवसर मिल जाता है । बस इतने भर से एक भ्रूण बनता है और उसकी पृथक सत्ता, पृथक काया बननी आरम्भ हो जाती है । नौ महीने में वह भ्रूण परिपक्व हो जाता है और माता के योनिमार्ग से बाहर निकल कर संसार में विचरण करना आरम्भ कर देता है ।

इस नवजात शिशु में अपने माता-पिता, नाना-नानी, दादा-दादी आदि कितनी ही पीढ़ियों की शारीरिक एवं मानसिक विशेषताओं का समावेश होता है । यह विशेषताएँ विभूतियों के रूप में इतनी सूक्ष्म होती हैं कि जीवन-प्राण 'जीन्स' का सूक्ष्मातिसूक्ष्म विलेक्षण करने पर भी वस्तुस्थिति का पता नहीं चलता । उनकी स्थिति तब प्रकट होती है, जब शिशु विकसित होते-होते प्रौढ़ बन जाता है और अपनी विशेषताओं का स्पष्ट परिचय देना आरम्भ कर देता है । इसका तात्पर्य यह हुआ कि कच्ची स्थिति में उन विशेषताओं का भी पता नहीं चलता जो प्रौढ़ होने पर प्रकट होती हैं । शिशु का विश्लेषण करने पर उस परम्परागत प्रकृति पर, त्वचा पर अभिभावकों का कुछ असर दृष्टिगोचर होता है । सूक्ष्मता चिरकाल तक अपरिपक्व स्थिति में ही बनी रहती है और समयानुसार परिपक्व होने पर अपनी स्थिति एवं सत्ता का परिचय देती है ।

सूक्ष्म के भीतर सूक्ष्म का इतना बड़ा उपक्रम है कि प्याज के छिलके और केले के तने की उपमा उसके आगे वस्तुतः उपहासास्पद-सी ही प्रतीत होती है ।

बीजों के ढेर को इकट्ठा कर लिया जाये तो उनके रंग, रूप, वजन आदि में थोड़ा बहुत ही अन्तर दिखाई पड़ता है । पर जब उन्हें बोया जाता है तो अन्दर अंकुरों की आकृति से आरम्भ होकर पत्तों में, पत्ते के बाद तनों में, तनों के बाद टहनी, में इसके उपरान्त फूल, फल की आकृति में प्रत्यक्ष होता चला जाता है । बड़े पेड़ों का अन्तर स्पष्ट दीखने लगता है । उनके फूलों की आकृति सुगंध तथा फलों के स्वाद गुण में इतना अधिक अन्तर हो जाता है कि उनका वर्गीकरण सहज ही पृथक-पृथक किया जा सकता है । यह अन्तर असाधारण होता है । उनकी पृथकता बीज के अनतराल में छिपी होती है, जिसे आरम्भिक स्थिति में देखा समझा नहीं जा सकता ।

मानव शरीर की कोशाओं की सामान्य आकृति एक जैसी होती है किन्तु उनके भीतर इतने रहस्य भरे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होते हैं जिनकी थोड़ी सी जानकारी भर मिलने पर आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है । भौतिक विज्ञानी, इस पर्यवेक्षण का स्थूल भाग ही खोजने में लगे हैं । शरीर में कोशाएँ कितनी भिन्न-भिन्न गतिविधियाँ अपनाती हैं और अपने-अपने पृथक-पृथक कार्य करने में किस प्रकार संलग्न रहती हैं, इसका कुछ भाग शरीर शास्त्रीविज्ञानी वंशानुक्रम जान पाये हैं । उसी आधार पर वे चिकित्सा एवं शल्यक्रिया करते हैं, मनुष्य की जीवनी शक्ति की क्षमता तथा सम्भावनाओं का मूल्यांकन करते हैं ।

किन्तु विशेष ध्यान देने योग्य बात है कि जीव घटक मात्र पदार्थ से ही नहीं बने होते । उनमें रसायनों भर का सम्मिश्रण नहीं है । उनमें एक महत्त्वपूर्ण पक्ष चेतना का भी है, जिसे जैव-विद्युत कहते हैं । अध्यात्म की भाषा में उसे प्राण कहा जाता है । यह प्राण यों है तो एक, पर विभिन्न अवयवों में पहुँचकर वह स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप ढल जाता है । मस्तिष्क, क्षेत्र में वह आस्था, आकांक्षा, आदत, विचारणा आदि के रूप में काम करता हे । मन, बुद्धि, चित्त आदि के रूप में उसकी व्यवस्था, विवेचना की जाती है । यही तत्त्व ज्ञानेन्द्रियों में अपना प्रभाव रूप, रस, गंध, स्पर्श, शब्द के रूप ग्रहण करता है । शरीर के अन्य अंगों में वह पाचन, विसर्जन, बल पराक्रम आदि के रूप में काम करता है । जननेन्द्रिय के माध्यम से वह कामुकता का रसास्वादन करता है और प्रजनन का ढाँचा खड़ा करता है । हर माँसपेशी का-स्नायु तन्तु का-अपने-अपने ढंग का क्रिया-कलाप और स्वभाव है शक्ति और ज्ञान दोनों ही इसमें गुंथे हुए हैं ।

काया के जड़ व चेतन रूप को जानने, समझने के बाद निष्कर्ष यही निकलता है कि समूचे वृक्ष की सत्ता जिस प्रकार बीज में समायी रहती है, उसी प्रकार सम्पूर्ण ब्रह्माण्डतत्त्वरूप में पिण्ड काया के अन्तर्गत विद्यमान है । ब्रह्माण्ड की-कायापिण्ड की हम वर्त्तमान कालीन स्थिति ही देख पाते हैं पर वस्तुतः उसके साथ भूत और भविष्य भी जुड़ा होता है । काया एक दर्पण है, यदि उसकी गहन सूक्ष्मता तक उतरा जा सके तो यह जानकर व देखकर आश्चर्य हो सकता है कि यह विश्व व्यापी पदार्थ सत्ता और चेतन सत्ता के साथ हमारा काय पिण्ड कहाँ और किस रूप में किस सीमा तक जुड़ा हुआ है ?

वस्तुतः मनुष्य के छोटे शरीर में इतना कुछ भरा पड़ा है जिसके सम्बन्ध में इतना ही कहा जा सकता है कि वह शक्तियों के संयुक्त परिकर की तुलना में अकेला ही अधिक शक्तिशाली है । किन्तु कठिनाई एक ही है कि यह शक्तिभण्डार प्रसुप्त स्थिति में है । इन्हें जानने के लिए तप साधना स्तर के प्रयत्न करने पड़ते हैं, यदि उन्हें न किया जाये तो वे सदा सर्वदा सुप्त ही पड़े रहते हैं और नर पशु से अधिक बड़े स्तर का और कुछ कर सकना उसके लिए सम्भव नहीं होता । इसीलिए अध्यात्म क्षेत्र में प्रवीण पारंगत बनने के लिए हर किसी को साधनारत होने की आवश्यकता पड़ती है ।

काय विज्ञान का सूक्ष्म पर्यवेक्षण करने पर पाते हैं कि यह सभी विभूतियाँ मनुष्य के भीतर ही हैं । उनकी दिव्य क्षमताओं को कार्यान्वित कर सिद्धियों को हस्तगत भी किया जा सकता है । सूक्ष्मकाया में अवस्थित षटचक्र प्रसद्धि हैं ।

(१) मूलाधार (२) स्वाधिष्ठान (३) मणिवूर (४) अनाहत (५) विशुद्धि (६) आज्ञाचक्र । यह काय कलेवर के अन्तर्गत ही हैं । इस गणना में मस्तिष्क को छोड़ दिया गया है । उसके मध्य में सहस्रार कमल है । इसे भी जोड़ देने से सात चक्र हो जाते हैं और सप्त लोकों में जो वैभव हैं, सप्त तीर्थों में जो विभूतिवान् पुण्य प्रयोजन हैं उन सबका परिचय मिलने लगता है । आवश्यकता केवल विकास जागरण की है । शुक्रणु का नारी गर्भ में जब पोषण होता है, तब उसका शिशु रूप में विकास और जन्म होता है । बीज कोठे में बंद पड़ा रहने पर विकसित नहीं होता, उसे खाद पानी की समुचित सुविधा उपलब्ध कराने पर ही यह सम्भव होता है कि पौधा पेड़ बने और फूल-फलों से लदा हुआ विशालकाय शोभायमान दृष्टिगोचर हो ।

मेरुदण्ड को राजमार्ग महामार्ग कहते हैं । इसे धरती से स्वर्ग पहुँचने का देवयान मार्ग कहा गया है । इस यात्रा के मध्य में सात लोक हैं । आत्मा और परमात्मा के मध्य सप्तलोकों को विराम स्थल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

माना गया है । लम्बी मंजिलें पूरा करने के लिए लगातार ही नहीं चला जाता । बीच-बीच में विराम भी लेने होते हैं । रेलगाड़ी गन्तव्य स्थान तक बीच के स्टेशनों पर रुकती-कोयला, पानी लेती चलती है । काय विद्युत के इन विराम स्थलों को ही चक्र कहा गया है । चक्रों की व्याख्या दो रूपों में होती है, एक अवरोध के रूप में दूसरे अनुदान के रूप में । महाभारत में चक्रव्यूह की कथा है । अभिमन्यु उसमें फँस गया था । वेधन कला की समुचित जानकारी न होने से वह मारा गया था । चक्रव्यूह में सात परकोटे होते हैं । इस अलंकारिक प्रसंग को आत्मा का सात चक्रों में फँसा होना कह सकते हैं । भौतिक आकर्षणों की, भ्रान्तियों की, विकृतियों की चहारदीवारी के रूप में भी चक्रों की गणना होती है । इसलिए उसके वेधन का विधान बताया गया है । भागवत् माहात्म्य में धुन्धकारी प्रेत का बाँस की सात गाँठें फोड़ते हुए सातवें दिन कथा प्रभाव से देव देहधारी होने की कथा है । इसे चक्रवेधन का संकेत समझा जा सकता है!

साधना में अपनी निज की कोई विशेष शक्ति नहीं है । उसकी प्रमुखता एक ही है कि वह सोई हुई शक्ति को जगाती है । जिसमें निज की क्षमता नहीं है या न्यून है, उसके लिए साधारण साधना कुछ विशेष कारगर नहीं होती । सरकस के पशु शिक्षक उन्हीं को भरती करते हैं जिनमें निजी चतुरता या सूझबूझ होती है । साधनाएँ सभी कलात्मक हैं । वे भावना की पृष्ठभूमि पर उगती और फलती-फूलती हैं । इसलिए अध्यात्म मार्ग में प्रवेश करने वाले को पहले अपने दृष्टिकोण का-भाव संस्थान का-संयम परिष्कार करना होता है । साथ ही चिन्तन और चरित्र को भी परिमार्जित करना होता है । यह प्रारम्भिक शर्त है, जिसे पूरा किया ही जाना चाहिए ।

किस साधना को कितने समय करना चाहिए ? इसका सब के लिए एक जैसा निर्धारण नहीं हो सकता । यह मनोभूमि के ऊपर निर्भर है । जिसके व्यक्तित्त्व में आत्मवादी गुणों का पहले से ही समावेश हो चुका है वह थोड़े ही समय में, थोड़े ही श्रम से उत्साहवर्धक लाभ प्राप्त कर सकता है । किन्तु जिन सत्प्रवृत्तियों के आधार पर यह उपार्जन किया जाता है उन्हीं में वह खर्च भी होता रहता है । गिरों को उठाने में, दुखों को घटाने में, डूबतों को उबारने में, चढ़ते को चढ़ाने में, इस शक्ति का समापन होता रहता है । तप के बदले पुण्य बढ़ता रहता है । इस प्रकार संतुलन बना रहता है और योगी-यती सौम्य सात्त्विक देवोपम जीवन जीते रहते हैं । उनका दृष्टिकोण स्वर्गोपम और आचरण जीवन मुक्त जैसा रहता है । आत्म गौरव के रूप में आत्मसाक्षात्कार होता है और विश्व वसुधा के कण-कण में समाये हुए परमेश्वर का दर्शन विवेक चक्षुओं से निरन्तर होता रहता है । वही वह स्थिति है जिसमें पुरुष, पुरुषोत्तम नर नारायण कहलाता है ।

किन्तु यदि चिन्तन और चरित्र पर आश्रित व्यक्तित्त्व उज्जवल न हो, उसमें वीभत्स स्तर की निकृष्टता भरी हो तो रहस्यमयी शक्तियों के उपार्जन कर लेने पर मनुष्य मदोन्मत्त हो जाता है और ऐसे कुकृत्य करने लगता है, जिससे उसकी गणना राक्षस, असुर, दैत्य वर्ग में होती है । धन, बल, वैभव, पराक्रम आदि शक्तियों का यदि सदुपयोग न हो तो वे संचित नहीं रह सकतीं, कुमार्ग में चल पड़ती हैं । अंगूर सड़ने पर मदिरा बन सकता है । इसी प्रकार रहस्यमयी आन्तरिक शक्तियों का विकास तो हो किन्तु सत्प्रयोजनों में न लग सके तो फिर दूसरा विकल्प दुरुपयोग ही रह जाता है । अध्यात्म का योगपरक दक्षिणमार्गी उपयोग न होगा तो फिर वह दुष्टता पर उतारू होगा । कुकर्मी तांत्रिक अघोरी, कापालिक भी असुरता पर उतर आते हैं और मारण, मोहन वशीकरण, उच्चाटन जैसे घोर कर्म करते हैं । असुरों को प्रायः आक्रमण, अपहरण करते और आतंक मचाते ही देखा जाता है । वृत्रासुर, हिरण्यकश्यपु महिषासुर, कंस, रावण आदि यही करते रहे । उनके परिवार के खरदूषण, कुम्भकरण, मेघनाद, हिरण्याक्ष, कंस, जरासंध, रक्तबीज आदि ने यही किया । असुरों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ने देवताओं को सताया । उनका वैभव लूटा, और ऋषि रक्त को निचोड़ा था । वे प्रजा को मात्र त्रास ही देते रहते थे और तनिक से स्वार्थ के लिए बड़े से बड़ा अनर्थ कर गुजरते थे ।

असुरों के दो वर्ग होते हैं, एक उद्धत आक्रमी आंतकवादी । दूसरे मायावी, छली, प्रपंच रचने वाले और षडयंत्र गढ़ने वाले । आक्रमणकारी अपने पराक्रम की डींग हाँकते हैं और मायावी अपने छल कौशल को मायाचार को बढ़ चढ़कर बखानते हैं । आक्रमणकारी बदनाम हो जाते हैं । किन्तु मायावी पर्द के पीछे बैठकर अपनी घात चलाते हैं । कई बार तो वे बाहर से सन्त और हितैषी जैसा आवरण ओढ़ते हैं । उदाहरण के लिए कालनेमि इसी मायावी वर्ग का था । रावण का कुटुम्बी असुर होते हुए भी वह आक्रमण नहीं करता था, पर दूसरों की बुद्धि पर सवार होकर उन्हें ऐसे कुमार्ग पर घसीट ले जाता था जहाँ से वे उभर तो सकते नहीं थे, दलदल में फँसकर रोते–कलपते प्राण त्यागते थे ।

अध्यात्म शक्तियों का उपार्जन तो किया जाय, पर उसको सत्प्रयोजन में न लगाकर विलास, वैभव, चातुर्य, छल, पाखण्ड में लगाया जाय तो स्थिति कालनेमि जैसी बन जाती है । उसमें आक्रमण के साथ जुड़ा हुआ प्रत्युत्तर का भय भी नहीं रहता और छद्म की आड़ ले लेने पर प्रत्यक्ष बदनामी से भी कुछ समय तक बचाव हो जाता है । इसलिए आधुनिक असुरता कुण्डलिनी क्षेत्र में भी कालनेमि मार्का लगाकर बाजार में सस्ते भावों मिलती और टोकरे भर–भर कर मिनटों में बिकती है ।

असली आत्मशक्ति सम्पादन तो श्रेय मार्ग अपनाने पर ही बन पड़ता है । उसी में अपना तथा अन्य सबका भला भी है । आत्म विज्ञान का मूलभूत दर्शन यही है कि साधना का अवलम्बन लिया जाय, पर प्राप्त सिद्धियों–विभूतियों को परहित हेतु ही नियोजित किया जाय ।

मोटेतौर पर समझा यह जाता है कि परिस्थितियाँ भावना स्थिति को प्रभावित करती हैं । संसार में जो घटित हो रहा है, उसी से हम प्रभावित होते हैं । पर आत्म–विज्ञान की मान्यता इससे बहुत गहराई तक चली गई है और यहाँ तक पहुँची है कि वैयक्तिक चेतना के तन्तु समीपवर्ती और दूरवर्ती परिस्थितियों को प्रभावित करते हैं । मनुष्य को अपना भाग्य विधाता कहा जाता है, पर तथ्य यह है कि वह विकसित स्थिति में ब्रह्माण्ड का सूत्र संचालक भी है । इतना तो इस संदर्भ में निश्चित रूप से समझा जा सकता है कि अपने भीतरी और बाहरी क्षेत्र में सम्बन्ध रखने वाले परिकर को मनःस्थिति के अनुरूप निश्चित रूप में ढाल सकते हैं विकसित स्थिति में वह विश्व व्यापी गतिविधियों को भी मोड़–मरोड़ सकता है । इसी को अतीन्द्रिय क्षमता कहा गया है । यही अतिमानव या अति मानस की स्थिति है, जो कि साधारणतया अविज्ञात एवं प्रसुप्त स्थिति में ही बने रहती है । इसे जाग्रत कैसे किया जाय? बलिष्ठ कैसे बनाया जाय? और विभिन्न प्रयोजनों के लिए उसे काम में कैसे लाया जाय ? इसी का नाम आत्मविज्ञान है । इसी को ब्रह्म विद्या कहते हैं । कुण्डलिनी साधना इसी को जीवन्त जाग्रत स्तर तक पहुँचाने के लिए की जाती है ।

मानवी काया एक सशक्त सौर मण्डल

मानवी शरीर यों हाड़–मांस का पुतला भर प्रतीत होता है, पर उसका विश्लेषण जितनी गहराई से किया जाय उतनी एक के बाद दूसरी परत अद्भुत दिखाई देती चली जाती है । प्रभु के हाथ की इस अनुपम कलाकृति में एक से बढ़कर एक रहस्य प्रकट होते चलते हैं ।

काया के भीतर रहने वाले मन की शक्ति और सम्भावना का तो कहना ही क्या शरीर की संरचना भी ऐसी ही है जिसकी बारीकियाँ अपने गर्भ में न जाने कितनी विशेषताएँ धारण किये प्रतीत होती हैं । शरीर शास्त्र के आधार पर देखें तो प्रतीत होता है । कि उनमें सात स्वतन्त्र तन्त्र काम कर रहे हैं । उनमें परस्पर सहयोग तो है पर साथ ही उनका क्रिया–कलाप अपने आप में समग्र एवं सर्वाङ्गपूर्ण भी है । जिस प्रकार शासन तन्त्र में गृह विभाग, अर्थ विभाग, निर्माण विभाग, संचार विभाग, विदेश विभाग, उद्योग विभाग,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शिक्षा विभाग आदि अनेक उप–तन्त्र होते हैं उसी प्रकार शरीर बाहर से एक दीखते हुए भी उसके भीतर सन्तरे के भीतर पाये जाने वाले स्वतंत्र घटकों की तरह सात शरीर पाये जाते हैं, उनकी विचित्रता इतनी भर है कि अपनी सीमित गतिविधियों में संलग्न रहते हुए भी परस्पर एक–दूसरे के सहयोगी एवं पूरक बने रहते हैं ।

इन सात शरीरों से काया के क्रिया–कलापों का संचालन होता है सो तो है ही, साथ ही उनमें ऐसे शक्ति स्रोत भी सन्निहित हैं जिनके आधार पर मानवी व्यक्तित्त्व के विकास की अगणित सम्भावनायें मूर्तिमान होती रहती हैं । जिस प्रकार जड़ पदार्थों में भी एक आत्मा का अस्तित्त्व अध्यात्म दर्शन ने माना है उसी प्रकार इन सात शरीरों के भी सूक्ष्म शक्ति केन्द्र हैं । इन्हें षट्चक्र और सातवाँ सहस्र दल कमल–ब्रह्मरंध्र–कहते हैं । शरीर विज्ञानी जिस प्रकार प्रत्यक्ष सात कायकलेवरों का विस्तार पूर्वक वर्णन करते हैं उसी प्रकार अध्यात्म विज्ञान में सूक्ष्म शरीर के साथ सघन घनिष्टता के साथ जुड़े हुए सप्त शक्ति चक्रों का निरूपण किया है और उन्हें सप्तदीप, सप्तसागर, सप्तनाद, सप्तपर्वत, सप्तऋषि, सप्तलोक, सप्तव्याहृति, सप्तसत्ता, सप्तसाधना के रूप में विवेचना करते हुए समग्र आत्म विद्या का कलेवर खड़ा किया है ।

ब्रह्मशरीर के अन्तर्हित व्यापक क्षेत्र में फैले हुए पदार्थतत्त्व के सात भाग हैं । उन्हें ब्रह्माण्डव्यापी प्रकृति के सात शारीर भी कह सकते हैं (१) दैवीय–डिवायन (२) सृष्टि के प्रथम जीव से संबद्ध–मोनडिक (३) परमाणु–एटम (४) आत्मिक–स्प्रिचुअल (५) मानसिक–मेन्टल (६) सूक्ष्म–वास्ट्रिल (७) भौतिक –फिजीकल । इन सातों के भीतर ही वे अगणित सिद्धियाँ समृद्धियाँ समाविष्ट हैं– जिनके लिए हम निरन्तर लालायित रहते हैं । ब्रह्माण्ड शरीर की भाँति ही मनुष्य शरीर के भीतर भी सात परतें हैं चाहें तो इन्हें सात शरीर भी कह सकते हैं । ब्रह्म शरीर के सात आवरणों की भाँति ही मनुष्य शरीर के सात विभेद भी परस्पर घनिष्टता पूर्वक संबद्ध हैं ।

मनुष्य शरीर यों एक मालूम पड़ता है पर उसका विश्लेषण किया जाये तो प्रतीत होगा कि उसमें ऐसी सात पृथक संरचनायें काम करती हैं, जिनकी अपने–अपने ढंग की कार्य पद्धति है । इसे यों भी कहा जा सकता है कि सात पृथक् रीति–नीति अपनाकर काम करने वाले शरीरों से मिलकर एक पूर्ण शरीर बना है । इनकी कार्य पद्धतियाँ पृथक् हैं तो भी वे परस्पर एक दूसरे के पूरक और सहयोगी बनकर रहते हैं ।

यह सातों शरीर इस प्रकार हैं–(१) अस्थि शरीर–वोनवॉडी (२) माँस शरीर–मसल्स वॉडी (३) नाड़ी शरीर–नर्व वॉडी (४) संचरण शरीर–सर्कुलेटरी वॉडी (५) लसीका शरीर–लिम्फेटिक वॉडी(६) नलिकाकार शरीर–ट्यूबूलर वॉडी (७) चर्म शरीर–स्किन वॉडी । इनमें से प्रत्येक शरीर समग्र शरीर रचना में अपना अनोखा योगदान देता है ।

शरीर यों एक ही–एक समान ही सदा दीखता है पर वस्तुतः इसमें द्रुतगति से परिवर्तन होता रहता है । यद्यपि बाहरी पहचान नहीं बदलती तो भी भीतर ही भीतर सब कुछ आँधी–तूफान की तरह चलता बदलता रहता है । दार्शनिक हक्सले ने मानव शरीर की उछलते हुए फव्वारे से तुलना की है । चलता हुआ फव्वारा यद्यपि एक स्थिति में दीखता रहता है । पर उसका पानी हर घड़ी निरन्तर चलता रहता है और एक क्षण पहले जो बूँद जहाँ थी वहाँ से बहुत दूर चली जाती है । कायगत कोश भी इसी तरह मरते जनमते और चलते बदलते रहते हैं पर बाहर से यही प्रतीत होता रहता है कि शरीर ज्यों का त्यों स्थिर है ।

षट्चक्र एक प्रकार से छै बिजली घर हैं जिनके केन्द्रों से विभिन्न स्तरों के आकर्षण और विकर्षण शक्ति सम्पन्न कम्पन निसृत होते हैं । विश्वव्यापी शक्तियों को खींचकर अपने में धारण करने और अपनी विशेषताओं को संसार में प्रसारित करने की क्षमता इनमें भरी रहती है मस्तिष्क भी एक सातवाँ चक्र है, जिसका केन्द्र बिन्दु सहस्रदल कमल कहलाता है । उसकी विशेषता विचारों के आदान–प्रदान की है । अन्तरिक्ष में भरे ज्ञान सागर में से अपने उपयोग के मोती ढूँढ़ निकालना मस्तिष्क का काम है साथ ही वह यह भी करता है कि अपनी विचारणा चेतना को एक छोटी नदी के समान उस अनन्त ज्ञान सागर में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समर्पित करता रहे । शेष चक्रों में इन अन्य सभी शक्तियों के प्रतिनिधि केन्द्र हैं जो इस विश्व के संचालन में विभिन्न प्रकार की भूमिकायें सम्पादित करती रहती हैं । आँखों से देखने से संसार के पदार्थ जड़ एवं स्थिर दिखाई पड़ते हैं, पर वैज्ञानिक तथ्य यह है कि स्थिरता नाम की कोई चीज कहीं नहीं है । हर वस्तु के भीतर प्रचण्ड आणविक हलचलें हो रही हैं और उन्हीं के आधार पर वस्तुयें, वनस्पतियाँ जन्मती, बढ़ती, सन्तानोत्पादन करतीं जीर्ण होती और मरती रहती हैं । इन गति विधियों के पीछे परमाणुओं की निर्धारित हलचलों से लेकर अन्य अनेक ऐसी शक्तियाँ काम करती रहती हैं, जिनका उद्गम अन्तर्ग्रहीय केन्द्र से रहता है । यह सब मिलकर ही संसार के विभिन्न पदार्थ अपना कार्य कर रहे हैं । इन सबके पीछे जो क्रिया-कलाप चल रहा है वही मनुष्य के भीतर भी है । पर उसमें विशेषता यह है कि चल रहे प्रवाह में से इच्छानुसार अपने लिए अतिरिक्त रूप से ग्रहण कर सकता है और चाहे तो बहुत कुछ दे भी सकता है । यह पूर्णतया ऐच्छिक है । यदि किसी व्यक्ति में यह आकर्षण विकर्षण की अतिरिक्त क्षमता विकसित न हो सके तो फिर अन्य पदार्थों या प्राणियों की तरह वह केवल नियति के प्रवाह से प्रभावित मात्र होता रहेगा । प्रकृति का क्रम वहाँ जहाँ भी धकेलेगा उधर ही बहता चलता रहेगा ।

षट्चक्र साधना से मनुष्य की आन्तरिक क्षमता बढ़ा सकती है और वह अपने को एक ऐसी प्रचण्ड इकाई के रूप में विकसित कर सकता है जो संसार के अजस्र वैभव में से इच्छानुसार बहुत कुछ अधिग्रहण कर सके । यह क्षमता कई बार प्रकृति प्रदत्त भी होती है और कई बार जन्म-जन्मान्तरों के संग्रहीत संस्कारों के कारण अनायास ही विकसित हो पड़ती है पर इतना द्वार हर किसी के लिए खुला हुआ है कि वह चाहे तो अपनी मानव सत्ता के साथ जुड़ी हुई चमत्कारी विशेषताओं को चाहे जितनी ऊँचाई तक विकसित कर सकता है । यहाँ तक कि सर्व शक्तिमान परमेश्वर के समतुल्य भी बन सकता है ।

सौरमण्डल में नौ ग्रह हैं । इनमें एक केन्द्रीय सूर्य और एक हमारी पृथ्वी भी सम्मिलित है । इन दो को छोड़ दें तो फिर अन्य ग्रह सात ही रह जाते हैं । अन्तरंग में अवस्थित ईश्वरीय सत्ता और जीव चेतना को सूर्य और पृथ्वी की संज्ञा दी जाय तो फिर काय कलेवर की सात आवरणों वाले-सात ग्रहों वाले-सौर मण्डल से तुलना की जा सकती है । यदि कायिक सौर मण्डल को नव ग्रह जैसा मानने का आग्रह हो तो आत्मा और परमात्मा की दो प्रतिमाओं को भी देह मन्दिर में स्थापित मानकर वह संख्या पूरी नौ भी हो सकती है । यह सप्तधा अथवा नवधा आत्म सत्ता सूक्ष्मतः चक्र संस्थान के रूप में अनुभव की जाती है और शरीर के सप्त तन्त्रों में विभक्त प्रत्यक्ष रूप से देखी जाती है ।

पृथ्वी पर छै कवच चढ़े हुए हैं । इन्हीं के कारण वह उल्कापातों, धूमकेतुओं और तड़ित वर्षाओं से आत्मरक्षा कर पाती और निरन्तर विकसित होती है । यह कवच हैं (१) आयनोस्फीयर (२) स्ट्रेटोस्फीयर (३) ट्रोपोस्फीयर (४) मीजोस्फीयर (५) थर्मोस्फीयर और (६) एक्जोस्फीयर । यह सैकड़ों मील ऊपर तक के घेर को सँभाले रहते हैं । इसी प्रकार छै चक्रों का शक्तिशाली आवरण आत्मा के ऊपर सुदृढ़ आच्छादन की तरह फैला हुआ है और उसकी दैत्य-दुर्गमों से रक्षा करता है । इतना ही नहीं यह चक्र विद्युत उत्पादक पावर स्टेशन की तरह चैतन्य ऊर्जा उत्पन्न करते हैं, जिनके सहारे मनुष्य महत्त्वपूर्ण काम कर सकने में समर्थ होता है ।

आत्मसूर्य के सप्त अश्व प्रमुख चेतना केन्द्रों के रूप में माने गये हैं-प्राण, चक्षु, जिह्वा, त्वचा, श्रवण, मन और बुद्धि-इन सातों को अश्व की संज्ञा दी गई है । दिव्य जीवन सत्ता में इन्हीं सातों का वर्णन इस प्रकार मिलता है-देव, ऋषि, गंधर्व, पन्नग, अप्सरा, यक्ष और राक्षस । वैदिक देवताओं में इन्हीं का दूसरे रूप में वर्णन है प्रजापति, अर्यमा पूषा, त्वष्टा, वरुण, इन्द्र और मरुत । छन्दशास्त्र की दृष्टि से इनका उल्लेख जिन सात छन्दों में किया किया गया है । वे हैं-गायत्री, उष्णिक, अनुदुष्प, बृहती, पंक्ति त्रिष्टुप एवं जगती ।

स्वर मंजूष में सप्त चक्रों को सप्त स्वरों की संज्ञा दी है और कहा है कि इस सितार की कोई

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साधना ठीक प्रकार कर सके तो उससे जैसी भी, जिस प्रकार की भी राग–रागिनी को बनाने, सुनने–सुनाने की आवश्यकता हो उसकी पूर्त्ति इसी माध्यम से पूरी की जा सकती है ।

वस्तुतः षट्चक्र नाम ही भ्रामक है । एक तरह से उन्हें सप्त चक्र ही कहना चाहिए । सहस्रार को इस चक्र श्रृंखला से अलग नहीं किया जा सकता । प्रत्येक चक्र भी सात आधारों से बना होता है । उनके स्वरूप निर्धारण की जो व्याख्या विवेचना योगशास्त्रों साधना शास्त्रों में की गई है उसमें प्रत्येक के सात–सात विवरण दिये गये हैं – (१) तत्त्व बीज (२) वाहन (३) अधिदेवता (४) दल (५) यन्त्र (६) शब्द (७) रंग । इन्हीं विशेषताओं की भिन्नता से उनके अलग विभेद किये गये हैं अन्यथा बाहर से तो उनकी आकृति एक जैसी ही है उनकी क्षमताओं, विशेषताओं प्रतिक्रियाओं का विवरण इन्हीं सात संकेतों के रूप में समझा जा सकता है ।

महर्षि अरविन्द ने सहस्रार सहित षट्चक्रों को अतिमानसिक चेतना की सात परतों अतिमानस के सात सूर्यों के रूप में वर्णन किया है । उनके अनुसार सहस्र दल ज्ञानशक्ति का–सत्य का केन्द्र है, जो विकसित होने पर अतिमानसिक सृष्टि को जन्म देता है । आज्ञाचक्र अतिमानसिक ज्योति–संकल्प शक्ति का केन्द्र है जो अपने भीतर से ज्ञानशक्ति को विकीर्ण करता है । विशुद्ध चक्र–शब्द ब्रह्म का एवं अनाहत चक्र–प्रेम, सौंदर्य और आनन्द का केन्द्र है । नाभिचक्र अतिमानसिक जीवनी शक्ति का स्रोत है । स्वाधिष्ठान –शक्ति किरणों का सूर्य है जो क्रिया शक्ति को वितरित करता और उसे ठोस आकारों में ढाल देता है । मूलाधार चक्र पदार्थ शक्ति और आकार शक्ति का सूर्य है जो अतिमानसिक जीवन को साकार रूप तथा सृष्टि को स्थायित्त्व प्रदान करने की शक्ति से युक्त है । सप्त चक्रों का जागरण मनुष्य को अतिमानव देवमानव तक ऊँचा उठा देता है ।

सप्त आयामीय चेतन सत्ता

शास्त्रों में सप्त लोक, सप्त ऋषि, सप्त देवियाँ, सप्त नगरी, सप्तरंग, सूर्य की सप्त किरणें, सप्त घोड़ों का वर्णन विस्तार पूर्वक किया गया है । उपरोक्त सात समूह वस्तुतः चेतना की सात परतें सात आयाम हैं जिनका अलंकारिक वर्णन इन रूपों में किया गया है । उनकी चमत्कारी सामर्थ्य की गाथाओं से सारा पुराण इतिहास भरा पड़ा है । जो जितनी परतों को जान लेता, उन पर अधिकार कर लेता है, वह उसी अनुपात में शक्ति सम्पन्न बन जाता है । समस्त जड़–चेतन इन्हीं सात आयामों के भीतर गतिशील हैं दृश्य–अदृश्य समस्त सत्ताओं का अस्तित्त्व इन सात आयामों के भीतर है । पदार्थ एवं चेतना का दृश्य एवं अदृश्य स्वरूप इन आयामों के ऊपर निर्भर रहता है ।

ब्रह्म विद्या में सात आयामों की चर्चा अक्सर की जाती है । यही सात लोक गायत्री मन्त्र के साथ प्राणायाम करते समय सात व्याहृतियों का उच्चारण किया जाता है । भूः, भुवः, स्वः, तपः, जनः, महः, सत्यम् । ये सप्त व्याहृतियाँ सात लोकों की परिचायक हैं । इनकी चर्चा इस सन्दर्भ में होती है कि प्रगति पथ पर अग्रसर होते हुए ही हमें अगले आयामों में पदार्पण करना चाहिए । तीन लोक भौतिक हैं–भूः, भुवः एवं स्वः । इन्हें धरती, पाताल और आकाश भी कहते हैं । भौतिकी इसी सीमा में अपनी हलचलें जारी रखती है । अगले चार लोक सूक्ष्म हैं । चौथा भौतिकी और आत्मिक का मध्यवर्ती क्षेत्र है । पांचवा, छठा, सातवाँ लोक विशुद्ध चेतनात्मक है । इन्हें पदार्थ सत्ता से ऊपर माना गया है । इसे और भी अच्छी प्रकार समझना हो तो भूः,भुवः,स्वः, को सामान्य जगत, तपः को चमत्कारिक सूक्ष्म जगत एवं जनः, महः, सत्यम् को देवलोक कह सकते हैं । मनुष्य सामान्य जगत में रहते हैं, सिद्ध पुरुषों का कार्यक्षेत्र सूक्ष्म जगत है देवता उस देवलोक में रहते हैं जिनकी संरचना जनः महः सत्यम् तत्त्वों के आधार पर हुई है ।

प्रायः समझा जाता है कि सातों लोक ग्रह नक्षत्रों की तरह वस्तु विशेष हैं और उनका स्थान कहीं सुनिश्चित है । वस्तुतः ऐसा है नहीं । ये लोक अपने ही जगत की गहरी परतें हैं । उनमें क्रमशः प्रवेश करते चलने पर चक्रव्यूह को वेधन करते हुए परम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

लक्ष्य तक पहुँचना सम्भव हो सकता है । इस प्रगति क्रम में सशक्तता बढ़ती चलती है और अन्तिम चरण पर पहुँचा हुआ मनुष्य सर्व समर्थ बन जाता है । इसी को आत्मा की परमात्मा में परिणिति कह सकते हैं । यह सात लोक ही सात ऋषि हैं । इन्हीं में पहुँचे हुए देवात्मा एक से एक बढ़-बढ़कर उच्चस्तरीय सिद्धियाँ प्राप्त करते हैं ।

सामान्यतया तीन आयाम तक ही हमारा बोध क्षेत्र है । लम्बाई, चौड़ाई, ऊँचाई अथवा गहराई के अन्तर्गत समस्त पदार्थ सत्ता का अस्तित्त्व है । इन्द्रियों की बनावट भी कुछ ऐसी है कि वह मात्र तीन आयामों का अनुभव कर पाती है लम्बाई, चौड़ाई, ऊँचाई (या गहराई) । जो भी पदार्थ स्थूल नेत्रों को दृष्टिगोचर होते हैं, उनके यही तीन परिमाण हैं । चतुर्थ आयाम की ऊहापोह वैज्ञानिक क्षेत्रों में चल रही है, काल, दिक् के रूप में पाश्चात्य दार्शनिकों एवं पूर्वात्त दर्शन के मनीषियों द्वारा वर्णित यह आयाम अनेक रहस्य अपने अन्दर छिपाये आइन्स्टीन से लेकर नार्लीकट वह अब्दुस्सलाम तक कई वैज्ञानिकों को शोध हेतु आकर्षित करता रहा है । दार्शनिक मान्यताओं के अनुसार चतुर्थ आयाम में पहुँचने पर हमारी पूर्व स्थापित धारणाओं एवं जानकारियों में आमूल-चूल परिवर्तन होने की पूरी-पूरी सम्भावना है । सम्भव है कि जो दूरी हमें दो-चार हजार मील की मालूम पड़ती है चतुर्दिक जगत में पहुँचने पर कुछ गज रह जाये । चौथे आयाम में पहुँचकर प्राणी के कुछ पल में अमेरिका व ब्रिटेन पहुँच-कर भारत वापस लौट आने की पूरी-पूरी सम्भावना है भारतीय ऋषियों, योगियों के विषय में ऐसे अनेकों प्रामाणिक प्रसंग समय-समय पर सामने आते रहे हैं । उनका अदृश्य हो जाना, कुछ पलों में एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँच जाना सम्भवतः चतुर्थ आयाम में पहुँचकर ही सम्भव हो सका होगा । जिस चतुर्थ आयाम की बात अभी कल्पना वैज्ञानिक जगत में की जा रही है । उसकी जानकारी हमारे ऋषियों को पूर्वकाल से है ।

चतुर्थ आयाम का बोध होते ही हमारे सामने ज्ञान का एक अनन्त क्षेत्र खुल सकता है । तब यह संसार भिन्न रूप में दिखायी पड़ने लगता है । उन मान्यताओं को जिन्हें हम सत्य यथार्थ मानते हैं सम्भव है भ्रान्ति मात्र लगने लगें । आइन्स्टीन की कल्पना के अनुसार काल को भूत, वर्तमान, भविष्य की सीमाओं से नहीं बाँधा जा सकता । 'हाइजन वर्ग' जैसे वैज्ञानिक ने सिद्ध किया कि 'काल' भूत से वर्त्तमान एवं भविष्य की ओर ही नहीं, भविष्य से भूतकाल की ओर भी चलता है ।

जब अतीत की ओर लौटना सम्भव हो जायेगा तो हमारी मान्यताएँ अस्त-व्यस्त हो जायेंगी । तब रामकृष्ण, बुद्ध, विवेकानन्द, गान्धी को उसी प्रकार देखा जा सकेगा जैसे सामने जीवित खड़े हों । जीवन मरण की मान्यताएँ तब उलट जायेंगी । पांचवाँ, छठा एवं सातवाँ आयाम् पदार्थ सत्ता से परे है । ये आयाम विशुद्धतः चेतना से सम्बन्धित है । भौतिकी की पकड़ यहाँ तक नहीं है । भौतिक यन्त्रों एवं इन्द्रियों की सीमा से बाहर है ।

पांचवाँ आयाम विचार जगत् से सम्बन्धित है । विचारों की महत्ता एवं उनकी चमत्कारी शक्ति से हर कोई परिचित है । मनुष्य जैसा भी है विचारों की प्रतिक्रिया मात्र है । शारीरिक हलचलें उनकी प्रेरणा से ही होती हैं । विचारों के माध्यम से वस्तुओं के स्वरूप की कल्पना की जाती है । विचार जगत में उठने वाली तरंगें वातावरण एवं मनुष्यों को प्रभावित करती हैं तथा अपने अनुरूप लोगों को चलने के लिए बाध्य करती हैं । महामानव ऋषि, महर्षि अवतार अपने सशक्त विचारों का सम्प्रेषण, सूक्ष्म अन्तरिक्ष में करते रहते हैं । इस आधार पर वे असंख्य मनुष्यों की मनःस्थिति एवं परिस्थितियों को प्रभावित करते हैं । जन-प्रवाह उन विचारों के अनुकूल चलने के लिए विवश होता है । पंचम आयाम की रहस्यमय शक्ति को जानने एवं उसको करतलगत कर सुदपयोग करने से ही बड़ी-बड़ी आध्यात्मिक क्रान्तियाँ सम्भव हो सकी हैं । कन्दरा में बैठे ऋषि एक स्थान पर बैठकर अपने विचारों को पंचम आयाम में प्रस्फुटित करते रहते हैं तथा अभीष्ट परिवर्तन कर सकने में समर्थ होते हैं ।

छठा आयाम भावना जगत है । कहते हैं कि इस लोक में मात्र देवता निवास करते हैं । इस अलंकारिक वर्णन में एक तथ्य छिपा है कि भावों में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ही देवता निवास करते हैं अर्थात् भाव सम्पन्न व्यक्ति देव तुल्य हैं । भावना की शक्ति असीम है । इसके आधार पर पत्थर में भगवान् पैदा हो जाते हैं । व्यक्तित्व का समूचा कलेवर अन्तरंग की आस्था से ही विनिर्मित होता है । विचारणा तथा क्रियाकलाप तो आन्तरिक मान्यताओं से ही अभिप्रेरित होते हैं । इसे ब्रह्माण्डीय चेतना के साथ जीव चेतना को जोड़ने और उससे लाभ उठाने का सशक्त माध्यम कहा जा सकता है । आत्मा का परमात्मा से मिलन कितना आनन्ददायक होता है–इसका अनुमान भौतिक मनःस्थिति द्वारा लगा सकना सम्भव नहीं है । तत्त्वज्ञान उसी आनन्द की मस्ती में डूबे रहते हैं तथा जन–मानस को उसे प्राप्त करने की प्रेरणा देते रहते हैं ।

तुलसीदास जड़–चेतन सबमें परमात्मा सत्ता का अनुभव करते हुए लिखते हैं 'सियाराम मय सब जग जानी' "ईशावास्य मिदं सर्वं यित्किंचिंत जगत्याम जगत्" । इशावाश्योपनिषद तथा रामायण के इस उद्धकरण में अद्वैत स्थिति का वर्णन किया गया है । सप्तम् आयाम की यही स्थिति इसमें पहुँचने पर जड़–चेतन में विभेद नहीं दीखता । सर्वत्र एक ही सत्ता दृष्टिगोचर होती है । शिव शक्ति, ब्रह्म–प्रकृति का, जड़ चेतन का, जीव–ब्रह्म की एकरूपता सातवें आयाम में दिखायी पड़ने लगती है । इसी को ब्राह्मी स्थिति कहते हैं । इसे प्राप्त करने के बाद कुछ भी प्राप्त करना शेष नहीं रहता । सातवें आयाम का ही वर्णन सप्तम लोक के रूप में किया गया है ।

सप्त लोक, सप्त आयाम, चेतना की सात परतें एक के भीतर एक छिपी हुई हैं । इनमें विभेद स्वरूप मात्र है । जिस प्रकार पोले स्थान में हवा भरी रहती है । हवा में आक्सीजन तथ आक्सीजन में प्राण–सभी एक के भीतर एक परतें हैं, उसी प्रकार चेतना की सात परतें एक के भीतर एक विद्यमान हैं । प्याज के भीतर रस तथा रस के भीतर गन्ध एवं स्वाद होता है । स्थूल प्याज की अपेक्षा सूक्ष्म रस में प्याज की सारी विशेषता छिपी रहती है । एक वस्तु के भीतर कई परतें भरी रहती हैं । मनुष्य के भीतर हृदय है । हृदय में नसें तथा नसों में रक्त का प्रवाह चलता रहता है । रक्त, रक्तकणों से मिलकर बना है, रक्त के रक्तकण अनेकानेक कोषिकाओं तक पहुँचकर उन्हें ओषजन के रूप में प्राण देते हैं । कोषिकायें अरबों की संख्या में हैं, जिनमें स्वयं के अपने–अपने नाभिक हैं । इसमें डी. एन. ए. रहता है जो जीवन का मूल आधार है ।

इसी प्रकार एक लोक के भीतर सात लोक, सात आयाम विद्यमान हैं । तीन आयामों से युक्त पदार्थ जगत् की विशेषताओं से सभी परिचित हैं । स्थूल की अपेक्षा सूक्ष्म पदार्थ में चेतना की शक्ति अनेक गुना अधिक है । आइन्स्टीन के चतुर्थ आयाम की कल्पना मात्र से वैज्ञानिकों के हाथ में एक बहुत बड़ी शक्ति मिलने की आशा बन चली है । लेजर किरणों से 'होलीग्राफी' के आधार पर त्रिमितीय सिनेमाओं का निर्माण कई देशों में हो चुका है । जहाँ पर्दे पर मनुष्य, मोटर, गाड़ी, शेर, हाथी, यथार्थवत् चलते दिखायी देते हैं । अनभ्यस्त व्यक्तियों को प्रायः यथार्थ होने का भ्रम हो जाता है । त्रिआयामीक चित्रों की यह विशेषता है । इसके पश्चात् चतुर्थ, पंचम्, षष्टम, सप्तम आयाम कितना विलक्षण एवं शक्ति सम्पन्न हो सकता है इसकी आज तो कल्पना भी नहीं की जा सकती है ।

भौतिकी की पहुँच जहाँ तक है, वहीं तक की उपलब्धियाँ आदमी को चमत्कृत कर देती हैं । मानवी बुद्धि की विलक्षणता और उसकी अन्वेषण क्षमता को इसका श्रेय दिया जाता है । परन्तु वास्तविकता यहीं तक सीमित नहीं है । जब योग साधना रूपी अध्यात्म उपचारों का आश्रय लिया जाता है, शास्त्रों में वर्णित वैज्ञानिक पद्धति से अपने जीवन को परिष्कृत समुन्नत बनाकर प्रतीति या प्रपंच जगत् से ऊपर पहुँचने की स्थिति बनायी जाती है । तो जिस लीला जगत् का दर्शन होता है, उसकी शब्दों में अभिव्यक्ति सम्भव नहीं । यह सब अपने ही अन्दर है, इस वास्तविकता को भूलकर व्यक्ति सामान्यतया अपने को त्रिआयामीय जगत् एवं इन्द्रिय सम्वेदनों तक ही स्वयं को सीमित कर लेता है । वस्तुस्थिति तक पहुँचे बिना ही सन्तुष्टि सामान्य जीवन कलप वालों के लिए है । देवपुरुष महामानव इससे ऊँचा उठते हैं व स्वयं तो धन्य बनते ही हैं, दूसरों को भी कृतकृत्य करते हैं ।

सात लोकों का अस्तित्त्व अपने इर्द–गिर्द एवं भीतर बाहर भरा पड़ा है । उसमें से इन्द्रियों एवं यन्त्र

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उपकरणों से तो मात्र तीन को ही अनुभव किया जा सकता है । चौथे लोक में यदि प्रवेश सम्भव हो सके तो इन्हीं इन्द्रियों और इन्हीं यन्त्र उपकरणों से ऐसा कुछ देखा समझा जा सकेगा जिसे आज की तुलना में अकल्पनीय और अप्रत्याशित एवं अद्‌भुत ही कहा जायेगा । तब गीता के अनुसार "आश्चर्यवत् पश्यति कश्चिदेन्----" की स्थिति सामने होगी । यह चौथा आयाम चेतना, जगत् और भौतिक जगत् का घुला-मिला स्वरूप है । इसे 'तप' लोक कहा गया है । तपस्वी इसमें अभी भी प्रवेश पाते और अतीन्द्रिय क्षमताओं से सम्पन्न सिद्ध पुरुष कहलाते हैं ।

इसके ऊपर के जनः महः और सत्य लोक विशुद्ध चेतनात्मक है । उनमें प्रवेश पाने वाला देवलोक में विचरण करता है, दैवी शक्तियों से सम्पन्न होता है और उस तरह की मनःस्थिति एवं परिस्थिति में होता है । जिसे पूर्ण पुरुष जीवन मुक्त, परमहंस एवं देवात्मा जैसे शब्दों में सामान्य जनों द्वारा तो कहा सुना ही जा सकता है ।

सात लोगों के स्थान का पता लगाने के लिए ऊपर नीचे झाँकने की आवश्यकता नहीं । वे एक के भीतर एक पिरोये, समाये हुए हैं । शरीर एक-एक शरीर के भीतर अवयव-अवयवों के भीतर माँस पेशियाँ-माँस पेशियों के भीतर ज्ञान तन्तु-ज्ञान तन्तुओं के भीतर मस्तिष्कीय विद्युत-यह कई परतें तो हैं, पर इनके लिए अलग-अलग स्थान निर्धारित करने की आवश्यकता नहीं है । वे एक के भीतर एक के क्रम से क्रमशः भीतर के भीतर-समाये, सजाये अनुभव किये जा सकते हैं । सात लोकों के सम्बन्ध में भी यही समझा जाना चाहिए कि अपने स्थूल लोक के भीतर ही उनकी सत्ता सूक्ष्म से सूक्ष्मत्तर-सूक्ष्मतम और अति सूक्ष्म होती चली गई है । स्थान उन सबका वही है जिसमें कि हम निवास करते हैं । ब्रह्माण्ड के भीतर ब्रह्माण्ड की सत्ता उसी प्रकार समझी जा सकती है । जिस प्रकार परमाणु की मध्यवर्ती नाभिक के अन्तर्गत को खोलने पर उसके भीतर भी एक अति सूक्ष्म किन्तु अपने इस विशाल ब्रह्माण्ड का प्रतिनिधित्त्व करने वाला ब्रह्म बीज विद्यमान मिलता है ।

जीव शरीर भी ब्रह्म शरीर का प्रतीक प्रतिनिधि है । उसके भीतर भी सात लोक हैं । इन्हें सात शरीर कहते हैं । मोटेतौर से इन्हें सप्त धातुएँ कहा जाता हैं । रस, रक्त, माँस, अस्थि, मज्जा, शुक्र धातुएँ शरीर में देखी जाती हैं । इनके स्थान अलग-अलग कोठों में नियत नहीं हैं, वरन् एक के भीतर एक समाये हुए हैं । चेतना शरीर भी इसी प्रकार से सात शरीरों से मिलकर बना है । वे भी एक के भीतर एक के क्रम से अपना अस्तित्त्व बनाये हुए हैं ।

योग शास्त्र में इन्हें चक्रों का नाम दिया गया है । छै चक्र और सातवाँ सहस्रार कमल । छै चक्रों के नाम प्रसिद्ध हैं-(१) मूलाधार चक्र (२) स्वाधिष्ठान चक्र (३) मणिपूर चक्र (४) अनाहत चक्र (५) विशुद्ध चक्र (६) आज्ञाचक्र । इनके उपरान्त सातवाँ सहस्रार चक्र । कहीं छै कहीं सात की गणना से किसी भ्रम में पड़ने की आवश्यकता नहीं है । सातवाँ लोक सत्यलोक है । सत्य अर्थात् पूर्ण परमात्मा । इससे नीचे के लोक भी छै ही रह जाते हैं । शरीर में छै धातुएँ प्रसिद्ध हैं सातवीं ओजस् तो आत्मा की ऊर्जा मात्र है । इसी प्रकार साधना में प्रयुक्त होने वाले चक्र तो छै ही हैं सातवाँ सहस्रार कमल तो ब्रह्मलोक है उसमें तो लय होने की ही बात है । सात या छै के भेद-भाव को इस तरह समझा जा सकता है कि अपने स्थान से अमुक देवालय सात मील है । बीच में छै मील के पत्थर और सातवाँ मील पत्थर-प्रत्यक्ष देवालय । गणना के हिसाब से छै गिने जाँय या सात इससे वस्तुस्थिति में कोई अन्तर नहीं पड़ता ।

ब्रह्माण्ड सत्ता में विद्यमान सुविस्तृत सात लोकों की चर्चा पीछे कभी करेंगे । यहाँ हमें मनुष्य सत्ता के भीतर विद्यमान सात लोकों की-सात शरीरों की चर्चा करना ही अभीष्ट है ।

मनुष्य के सात शरीरों का वर्णन तत्त्ववेत्ताओं ने किया हैं वे इस प्रकार हैं-

(१) स्थूल शरीर-फिजिकल बॉडी (२) सूक्ष्म शरीर-इथरिक बॉडी (३) कारण शरीर-एस्ट्रल बॉडी (४) मानस् शरीर-मेन्टल बॉडी (५) आत्मिक शरीर-स्प्रिचुअल बॉडी (६) देव शरीर-कॉस्मिक बॉडी (७) ब्रह्म शरीर-बॉडीलेस बॉडी या डिवाइन बॉडी ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सप्त धातुओं का बना भौतिक शरीर प्रत्यक्ष है । इसे देखा, छुआ और इन्द्रिय सहित अनुभव किया जा सकता है । जन्मतः प्राणी इसी कलेवर को धारण किए होता है । उसमें प्रायः इन्द्रित चेतना ही जाग्रत होती है । भूख, सर्दी–गर्मी जैसी शरीरगत अनुभूतियाँ ही सक्षम रहती हैं । पशु शरीर आजीवन इसी स्थिति में बने रहते हैं, पर मनुष्य के सातों शरीर क्रमशः विकसित होते चलते हैं । दो वर्ष का होते हुए उसका सूक्ष्म शरीर जाग्रत होने लगता है इसे भाव शरीर कहते हैं । इच्छाओं और संवेदनाओं के रूप में इसके विकास का परिचय मिलता है । मानापमान–अपना–पराया, राग–द्वेष, सन्तोष–असन्तोष, मिलन–वियोग जैसे अनुभव भाव शरीर को होते हैं । यही सूक्ष्म शरीर है । बीज में से सर्व प्रथम अंकुर निकलता है पीछे उसका विकास दो–तीन पत्तों के रूप में होता है । स्थूल शरीर को अंकुर कहा जाये तो सूक्ष्म शरीर को उसका पत्तों के रूप में विकसित होना माना जा सकता है । फिजिकल बॉडी तो यथास्थान बनी रहती है, पर उसमें नई शाखा भाव शरीर के एस्ट्रल वाडी के रूप में विकसित होने लगती है । यों सातों शरीरों का अस्तित्त्व आत्मा के साथ–साथ ही रहता है, पर उनका विकास आयु और परिस्थितियों के आधार पर धीमे अथवा तीव्र गति से–स्वल्प, अधिक मात्रा में होता चलता है ।

तीसरा कारण शरीर विचार, तर्क, बुद्धि से सम्बन्धित है । इसका विकास, व्यावहारिक, सभ्यता और मान्यता परक संस्कृति के आधार पर होता है । यह किशोरावस्था में प्रवेश करते–करते आरम्भ होता है और वयस्क स्थिति तक पहुँचते–पहुँचते अपने अस्तित्त्व का ठीक तरह परिचय देने लगता है । बालक–मताधिकार 18 वर्ष की आयु में मिलता है । अल्प वयस्कता इसी अवधि में पहुँचने पर पूरी होती है । बारह से लेकर अठारह वर्ष की आयु में कारण शरीर का कामचलाऊ विकास हो जाता है । यौन संवेदनाएँ भी इसी अवधि में जाग्रत होती हैं । सामान्य मनुष्य इतनी ही ऊँचाई तक बढ़ पाते हैं, फिजिकल–इथरिक और एस्ट्रल वॉडी के तीन वस्त्र पहनकर ही दरिद्र लोग दिन गुजार लेते हैं । धोती, कुर्त्ता और जूता इतने से ही गरीबों को काम चलाना पड़ता है । अधिकांश लोगों की जिन्दगी इसी सीमा में रहकर समाप्त हो जाती है । इसलिए मोटेतौर से तीन शरीरों की व्याख्या करके बात पूरी कर ली जाती है । प्रथम शरीर में शरीरगत अनुभूतियों का सुख–दुखः दूसरे में भाव संवेदनाएँ और तीसरे में लोकाचार एवं यौनाचार की प्रौढ़ता विकसित होती है और एक कामचलाऊ मनुष्य स्तर का ढाँचा बनकर खड़ा हो जाता है ।

तीन शरीरों के बाद मनुष्य की विशिष्ठताएँ आरम्भ होती हैं । मनस् शरीर में कलात्मक रसानुभूति होती है । कवित्त्व जगता है । कोमल संवेदनाएँ उभरती हैं । कलाकार, कवि, संवेदनाओं के भाव लोक में विचरण करने वाले भक्त–जन, दार्शनिक, करुणार्द्र, उदार, देश–भक्त इसी स्तर के विकसित होने पर बना जा सकता है । यह स्तर उभरे तो, पर विकृत बन चले तो व्यसन और व्यभिचार जन्य क्रीड़ा कौतुकों में रस लेने लगता है । इसी स्तर के लोग कामुक एवं रसिक पाये जाते हैं । मनस् क्षेत्र के विकसित व्यक्ति असामान्य होते हैं । उनकी पहचान रसिकता की मनःस्थिति से होती है । सूरदास, तुलसीदास जैसे सन्त अपने आरम्भिक दिनों में कामुक थे । वही पैट्रोल अब दूसरी दिशा में गाड़ी दौड़ाने लगा तो संवेदनाएँ कुछ से कुछ करके दिखाने लगीं । महत्त्वाकांक्षाएँ इसी क्षेत्र में जाग्रत होती हैं । दूसरे शब्दों में उसे अहंकार भी कहा जा सकता है । महत्त्वाकांक्षी व्यक्ति ही भौतिक जीवन में तरह–तरह के महत्त्वपूर्ण प्रयास करते हैं और असाधारण लोगों में अपनी गणना कराते हैं । इसे प्रतिभा भी कह सकते हैं । प्रतिभाशाली लोगों का मनस् तत्त्व प्रबल होता है । उन्हें मनस्वी भी कहा जा सकता है । बाल्मीक, अँगुलिमाल, अशोक जैसे महत्त्वाकांक्षी विकृत मनःस्थिति में घोर आतंकवादी रहे थे, पर जब मुड़ गये तो श्रेष्ठ मार्ग में भी उन्हें चोटी की सफलता प्राप्त करने में देर नहीं लगी । इसे मेन्टल बॉडी की प्रखरता एवं चमत्कारिता कहा जा सकता है ।

पाँचवाँ शरीर–आत्मिक शरीर स्प्रिचुअल बॉडी–में अतीन्द्रिय शक्तियों का निवास होता है । अचेतन मन की गहरी परतें जिनमें दिव्य अनुभूतियाँ होती हैं । इसी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पाँचवें शरीर से सम्बन्धित हैं । मैस्मरेजन, हिप्नोटिज्म, टेलीपैथी, क्लैरेड्डाइंस जैसे प्रयोग इसी स्तर के विकसित होने पर होते हैं । कठोर तन्त्र साधनाएँ एवम् उग्र तपश्चर्याएँ इसी शरीर को परिपुष्ट बनाने के लिए की जाती हैं । संक्षेप में इसे 'दैत्य' सत्ता कहा जा सकता है । सिद्धि और चमत्कारों की घटनानाएँ–संकल्प शक्ति के बढ़े–चढ़े प्रयोग इसी स्तर के समर्थ होने पर सम्भव होते हैं । सामान्य सपने तो सभी देखते हैं, पर जब चेतना इस पाँचवें शरीर में जमी होती है तो किसी घटना का सन्देश देने वाले सपने भी दीख सकते हैं उनमें भूत, भविष्य की जानकारियों तथा किन्हीं रहस्यमय तथ्यों का उद्घाटन भी होता है । भविष्यवक्ताओं, तांन्त्रिकों एवं चमत्कारी सिद्ध पुरुषों की गणना पाँचवें शरीर की जाग्रति से ही सम्भव होती है । ऊँची मीनार पर बैठा हुआ मनुष्य जमीन पर खड़े मनुष्य की तुलना में अधिक दूर की स्थिति देख सकता है । जमीन पर खड़ा आदमी आँधी का अनुभव तब करेगा जब वह बिलकुल सामने आ जायेगी । पर मीनार पर बैठा हुआ मनुष्य कई मील दूर जब आँधी होगी तभी उसकी भविष्यवाणी कर सकता है । इतने मील दूर वर्षा हो रही है अथवा अमुक स्थान पर इतने लोग इकट्ठे हैं इसका वर्णन वह कर सकता जो ऊँचे पर खड़ा है और आँखों पर दुर्वीन चढ़ाये है, नीचे खड़े व्यक्ति के लिए यह सिद्धि चमत्कार है, पर मीनार पर बैठे व्यक्ति के लिए यह दूरदर्शन नितान्त सरल और स्वाभाविक है ।

छठे शरीर को देव शरीर कहते हैं–यही कास्मिक बॉडी है । ऋषि, तपस्वी, योगी इसी स्तर पर पहुँचने पर बना जा सकता है । ब्राह्मणों और सन्तों को भू–देव–भू–सुर कहते हैं । यह नामकरण उनकी देव अन्तः स्थिति के आधार पर किया गया है । स्वर्ग और मुक्ति इसी स्थिति पर पहुँचने पर मिलने वाला मधुर फल है । सामान्य मनुष्य चर्मचक्षुओं से देखता है, पर देव शरीर में दिव्य चक्षु खुलते हैं और "सियाराम मय जब जग जानी" की–विराट् ब्रह्म दर्शन की मनःस्थिति बन जाती है । कण–कण में ईश्वरीय सत्ता के दर्शन होते हैं और इस दिव्य उद्यान में सर्वत्र सुगन्ध ही मँहकती दिखाई पड़ती है । परिष्कृत दृष्टिकोण ही स्वर्ग है । स्वर्ग में देवता रहते हैं । देव शरीर में जाग्रत मनुष्यों के अन्दर उत्कृष्ट चिन्तन और बाहर आदर्श कर्तृत्त्व सक्रिय रहता है । तदनुसार भीतर शान्ति की मनःस्थिति और बाहर सुख भरी परिस्थिति भरी–पूरी दृष्टिगोचर होती है । स्वर्ग इसी स्थिति का नाम है । जो ऐसी भूमिका में निर्वाह करते हैं उन्हें देवता कहने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए । असुर, मनुष्य और देव यह आकृति से तो एक जैसे ही होते हैं । अन्तर उनकी प्रकृति मात्र में होता है ।

भौतिकवादी लोक मान्यताओं का ऐसे देव मानवों पर रत्ती भर भी प्रभाव नहीं पड़ता । वे निन्दा स्तुति की, संयोग–वियोग की, हानि–लाभ की, मानापमान की लौकिक संवेदनाओं से बहुत ऊँचे उठ जाते हैं । लोक मान्यताओं को वे बाल–बुद्धि की दृष्टि से देखते हैं । लोभ और मोह के–वासना और तृष्णा के भव–बन्धन ही सामान्य मनुष्यों को बेतरह जकड़े रहते हैं और इन्हीं धागों में बँधकर उन्हें कठपुतली जैसे भोंड़े नाच नाचने पड़ते हैं । छटवीं देव भूमिका में पहुँची हुई देव आत्माएँ मात्र आदर्श और कर्त्तव्य भर को पर्याप्त मानती हैं । आत्मा और परमात्मा को सन्तोष देना ही उन्हें पर्याप्त लगता है । वे अपनी गतिविधियाँ निर्धारित करते समय लोक मान्यताओं पर तनिक भी ध्यान नहीं देते वरन् उच्चस्तरीय चेतना से प्रकाश ग्रहण करते हैं । इन्हें भव–बन्धनों से मुक्त–जीवन मुक्त कहा जाता है । मुक्ति या मोक्ष प्राप्त कर लेना इसी स्थिति का नाम है । यह छटे शरीर में–देव स्थिति में कॉस्मिक बॉडी में विकसित आत्माओं को उपलब्ध होता है ।

सातवाँ ब्रह्म शरीर है । इसमें आत्मा अपने शुद्ध स्वरूप में अवस्थित होती हैं सभी वे शरीर झड़ जाते हैं जो किसी न किसी प्रकार भौतिक जगत् से सम्बधित थे । उनका आदान–प्रदान प्रत्यक्ष संसार से चलता है वे उससे प्रभावित होते और प्रभावित करते हैं । ब्रह्म शरीर का सीधा सम्बन्ध परमात्मा से होता है । अस्तु उसकी स्थिति लगभग ब्रह्म स्तर की हो जाती है । अवतार इसी स्तर पहुँची हुई आत्माएँ बनती हैं । लीला अवतरण में उनकी अपनी कोई

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इच्छा आकांक्षा नहीं होती, वे ब्रह्मलोक में निवास करते हैं और जब ब्राह्मी चेतना किसी सृष्टि सन्तुलन के लिए भेजती है तो उस प्रयोजन को पूरा करके पुनः अपने लोक को वापस लौट जाते हैं । ऐसे अवतार समय –समय पर होते हैं । भारत में पिछले दिनों उनकी संख्या १० या २४ गिनी जाती है, पर वस्तुतः उनकी गणना करना कठिन है । संसार के विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न प्रयोजनों के लिए वे समय–समय पर विलक्षण व्यक्तित्व सहित उतरते हैं और अपना कार्य पूरा करके वापिस चले जाते हैं ।

ऐसे ही स्तर पर पहुँचने की स्थिति 'अहम् ब्रह्मोसि' सच्चिदानन्दो हम्, शिवोहम्, सोहम्, कहने की होती है । उस चरम लक्ष्य स्थल पर पहुँचने की स्थिति को चेतना क्षेत्र में बिजली की तरह कौंधाने के लिए इन वेदान्त मन्त्रों का जप, उच्चारण एवं चिन्तन, मनन किया जाता है ।

पाँचवे शरीर तक स्त्री–पुरुष की मान्यताएँ रहती हैं और उन्हीं मान्यताओं के कारण विपरीत लिंग के प्रति आकर्षण तथा अगले जन्म में उसी लिंग का शरीर बनने की प्रक्रिया चलती रहती है । उससे आगे के छटे और सातवें शरीर में विकसित होने पर यह भेदभाव चला जाता है । तब मात्र एक आत्मा की अनुभूति होती है । स्त्री और पुरुष का आकर्षण विकर्षण समाप्त हो जाता है । सर्वत्र एक ही आत्मा की अनुभूति होती हैं । अपने आपकी अन्तःस्थिति लिंग भेद से ऊपर उठी होती है यद्यपि जननेन्द्रिय के चिन्ह शरीर में अपने स्थान पर यथावत् बने रहते है । यही बात सांसारिक स्थिति बदलने के कारण मन पर पड़ने वाली भली–बुरी प्रतिक्रिया के सम्बन्ध में भी होती है । समुद्र में लहरें उठती, गिरती रहती है । नाविक उनके लिए हर्ष, शोक नहीं करता–मात्र समुद्री हलचलों का आनन्द लेता है । छटे शरीर में विकसित देवात्माएँ इस स्थिति से ऊपर उठ जाती है उनका चेतना स्तर गीता में कहे गये स्थिति प्रज्ञ की ज्ञानी की और उपनिषदों में वर्णित तत्त्वदर्शी की बन जाती है । उसके आत्म सुख से संसार के किसी परिवर्तन में विक्षेप नहीं पड़ता । लोकाचार के लिए उपयुक्त लीला प्रदर्शन भर के लिए उसका व्यवहार चलता रहता है । यह भी छटे शरीर तक की ही बात है । सातवें शरीर वाले भगवान संज्ञा से विभूषित होते है । उन्हें अवतारी भी कह सकते हैं । इन्हीं के लिए ब्रह्मात्मा, ब्रह्म पुरुष–शब्द प्रयुक्त होते हैं । उन्हें ब्रह्म साक्षात्कार–ब्रह्म निर्वाण प्राप्त भी कहा जा सकता है ।

छटे शरीर में स्थित देव मानव स्थितिवश शाप और वरदान देते हैं, पर सातवें शरीर वाले के पास शुभेच्छा के अतिरिक्त और कुछ बचता ही नहीं । उनके लिए पराया एवं बैरी कोई रहता ही नहीं । दोष, अपराधों को वे बाल–बुद्धि मानते हैं और द्वेष दण्ड के स्थान पर करुणा और सुधार की बात भर सोचते हैं ।

अध्यात्मशास्त्रों में वर्णित सात लोकों, सप्त ऋषियों, सप्त प्राणों की व्याख्या–विवेचना पाश्चात्य अध्यात्मवेत्ताओं ने अपने ढंग से की है । उनकी स्थापना में ब्रह्माण्ड और पिण्ड को तत्सम माना गया है । और चेतना के आयामों को सात लोकों की संज्ञा दी गई है प्रथम भौतिक शरीर को वे 'फिजिकल बॉडी' कहते है जो पंच भौतिक तत्त्वों से बना है । इसे इन्द्रियगम्य भी कहते हैं जिसमें मात्र शरीरगत अनुभूतियाँ ही विकसित हो पाती हैं दूसरा शरीर वह हैं, जिसमें विचारणाएँ जन्म लेती हैं । राग–द्वेष, मानापमान, अपना–पराया, संतोष–असंतोष, मिलन–विछोह की कड़वी–मीठी अनुभूतियाँ होती हैं । यह ईथरीक बॉडी है, जिस थियॉसाफीस्ट इथरीक डबल कहते हैं, व प्राणमय कोश के समतुल्य मानते हैं, जबकि वह इससे भी विस्तृत परिधि वाला क्षेत्र है । इसे ही "बायोफ्लक्स" के रूप में देखा व मापा जाता है । "मैन विजीबुल –इनविजीबुल" के माध्यम से इसी की चर्चा लेडबीटर ने की है । इसे "आयडीयो स्फीयर" भी कह सकते हैं ।

तीसरी शरीर विचार तर्क बुद्धि प्रज्ञा से संबंधित है । इसका विकास व्यवहार सभ्यता मान्यता अभिरुचि, संस्कृति आदि से संबंधित है । मनस् शरीर में कलात्मक रसानुभूतियाँ होती हैं, कोमल भाव संवेदनाएँ जागती हैं । यह भाव लोक है । करुणा, दया, उदारता, आदर्शवादिता इसी शरीर में निवास करती हैं । चौथा शरीर मनस् शरीर है, जिसमें महात्त्वाकांक्षाएँ उभरती हैं और साहस–पराक्रम परिपक्व

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होता है इसी आधार पर व्यक्ति अपने भविष्य का निर्माण करता है । इसके सुनियोजन से व्यक्ति महानता को एवं विकृत हो जाने से पतन को प्राप्त होता है ।

पाँचवा शरीर–आत्मिक शरीर है जो अतीन्द्रिय क्षमताओं का भाण्डागार है । अचेतन मन भी इसी सीमा में अपने पैर जमाये हुए है । छठे देव शरीर में ऋषि, तपस्वी योगी, संयमी, बन जाता है । भूसुर के नाम से जानने वाले महामानवों का यही कार्यक्षेत्र है । सातवें शरीर में स्व पर भेद मिट जाता है । आत्मवृत–सर्वभुतेषु और वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना जाग्रत होती है । आत्म स्वरूप और ब्रह्म शरीर की अनुभूति होती है । स्वर्ग और मुक्ति का क्षेत्र भी यही है ।

शिवपुराण में महापराक्रमी शिव पुत्र स्कन्द या कार्त्तिकेय जन्म की विचित्र कथा आती है । असुरता के दमन व देव सत्ता की स्थिरता हेतु शिवजी को पुत्र जन्म की आवश्यकता अनुभव हुई । देवताओं की प्रार्थना को स्वीकार कर लिया गया । शिवजी का रेतस् अग्नि रूप में बाहर आया । पार्वती जी उसे धारण करने में असमर्थ थीं तो वैश्वानर ने नारी रूप धारण किया और अपने गर्भ में उस अग्नि रूप रेतस् को स्थान दिया । स्कन्द जन्मे तो जन्मते ही उनका प्रचण्ड तेजस् देखकर असमंजस हुआ कि पोषण कौन करे ? पार्वतीजी का अनुभव नहीं था । तब इस कार्य को छै कृतिकाओं ने सम्भाला । उन्होंने ही पालपोस कर इस पुत्र को बड़ा किया । छह कृतिकाओं का दूध पीने के लिए उनके छह मुँह उत्पन्न हो गये । इसलिए कार्त्तिकेय को बड़ा भी कहते हैं । समर्थ होने ही दुर्दान्त दैत्यों से उनने युद्ध किया व उन्हें परास्त कर देव शासन की स्थापना की ।

इस स्कन्द अवतरण को कुण्डलिनी महाशक्ति से संबंधित षट्चक्र समूह व उसके प्रभाव का वर्णन ही समझना चाहिए । रेतस् शिवकी कुण्डलिनी है और उसे धारण करने के लिए अन्तराल की वैश्वानर सत्ता का आस्वान करता है । षट्चक्र छः कृतिकाओं के रूप में दूध, पिलाने और प्रचण्ड आत्मिक क्षेत्र का महापराक्रमी बनकर जाग्रत कुण्डलिनी वाला सिद्ध साधक देव प्रयोनजों की पूर्ति करता है ।

मेरुदण्ड के सूक्ष्म भाग में अवस्थित इन चक्रों को बिजली के धारक और वितरक ट्रांसफार्मर्स की उपमा दी जा सकती है, जिनका काम रहस्यमय ऊर्जा को सूक्ष्म जगत से आकर्षित करके स्थूल, सूक्ष्म व कारण शरीरों की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति करते रहना है । इन दिव्य शक्तियों की समन्वय पुंज "लोगस" नाम से अंग्रेजी में जाना जाता है ।

तंत्र विधान के अनुसार विश्व की प्रमुख शक्तियों को सात भागों में विभाजित किया गया है–पराशक्ति, ज्ञानशक्ति, इच्छाशक्ति, क्रियाशक्ति, कुण्डलिनी शक्ति, मातृका शक्ति एवं गुह्य शक्ति । इन सबका एकीकरण ही "ग्राण्ड यूनीफिकैशन ऑफ फार्सस" नाम से जाना जाता है जिस पर भौतिकी का अनुसंधान चल रहा है ।

अध्यात्म शास्त्र में वर्णित सात लोक–समुद्र दीप पर्वत आदि का वर्णन है । भूगोल से इनकी संगति नहीं बैठती । वस्तुतः यह अध्यात्म क्षेत्र की संरचना और क्षमता स्रोतों का उल्लेख है । यह सात रत्न भण्डारों की तिजोरी है जिसमें वह सब कुछ भरा हुआ है । जिनकी प्रत्यक्ष और परोक्ष में मनुष्य को आवश्यकता अनुभव होती है ।

आयुर्वेद के हिसाब से शरीर में सात धातुएँ हैं । रस, रक्त, त्वचा, मांस अस्थि, मेद, शुक्र । यह सब अलग–अलग दीखते हुए भी परस्पर सघनतापूर्वक गुँथी हुई हैं । इन सातों से मिलकर ही समग्र शरीर बनता है । जब व्यष्टि सत्ता के सन्दर्भ में सात आयामों की चर्चा होती है, तो लम्बाई, चौड़ाई, ऊँचाई, से जुड़े होलोग्राफी के त्रिआयामीय प्रसंग के अलावा चौथा टाइम–स्पेस का (स्पेशिअल ओरिएन्टेशन) एवं पाँचवा–एण्टीमैटर–प्रति पदार्थ–परोक्ष जगत का माना जा सकता है । इसी पाँचवे आयाम का व्यष्टिगत रूप छाया शरीर–अतीन्द्रिय सामर्थ्य इत्यादि के रूप में विद्यमान होता है । छठा आयाम विचारणा एवं सातवाँ भाव–संवेदना, "रसो वे सः एवं बंधन्मुक्ति का माना गया है । जहाँ प्रथम चार जड़ सत्ता से संबंधित हैं, वहाँ अंतिम तीन विशुद्धतः चेतना परक आयाम हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भगवान राम ने बाली को मारने से पूर्व एक बाण से सात ताड़ वृक्षों को बेधकर सुग्रीव को अपने पराक्रम का प्रमाण दिया था । यह सात ताड़ वृक्ष वस्तुतः सूक्ष्म शरीर के सात चक्र ही हैं । इनका वेधन ठीक तरह से न हो पाने के कारण ही अभिमन्यु गर्भकाल से प्राप्त अपूर्ण ज्ञान के फल स्वरूप कौरवों द्वारा रचित चक्रव्यूह में फँस गया और बाहर न निकल सका । कुण्डलिनी इतनी बहुमूल्य सम्पदा है कि उसे चक्र रूपी तालों वाली तिजोरी में बन्द करके रखा गया है ।

अनुसंधानकर्त्ता परामनोवेत्ताओं एवं गुह्य विज्ञानियों का कहना है कि चेतना के विभिन्न आयाम वस्तुतः अपनी ही आत्म सत्ता के सूक्ष्म केन्द्रों में सन्निहित हैं । उनके अनुसार निम्न स्तरीय कायिक चेतना का सम्बन्ध मूलाधार एवं स्वाधिष्ठान चक्र से है, तो मणिपूरक का अतीन्द्रिय चेतना से । अनाहत चक्र को साइकोकाइनेसिस का केन्द्र माना जाता है । विशुद्ध एवं आज्ञा चक्र दिक्काल से परे वैश्वचेतना से संयुक्त अति समर्थ परते हैं तथा सहस्रार सुपर चेतना का आधार है ।

अमेरिकी मनोवैज्ञानिक डॉ॰ हरबर्ट के अनुसार उक्त तथ्य रहस्य उद्घाटित करते हैं कि चेतना कितने ही धरातल अथवा रहस्यमय अनुभूतियों के आयाम हैं । वर्तमान भौतिक जीवन से परे भी जीवन सातत्य विद्यमान है जो उच्च आयामों को अपने अंदर समाविष्ट रखता है । जैसे-जैसे चेतना का विस्तार एवं परिष्कार होता जाता है, वह ऊर्ध्वारोहण करती जाती है और दिव्य क्षमताओं के द्वार खुलते जाते हैं । उनके अनुसार सत्कर्मों के आधार पर ही अनुभूतियों का एवं भविष्य का निर्धारण होता है ।

वस्तुतः अभी हम जिन अनुभवों के चेतना-के धरातल पर निवास कर रहे हैं, वह द्विआयामीय या त्रिआयामीय है । सत्य का अनुभव भी हम इन्हीं आधारों पर करते हैं । गुह्यविज्ञानी एडगर केसी का कहना है कि जब हम तीसरे आयाम को ही भलीभाँति नहीं जानते जिसमें हम सभी निवास कर रहे हैं, तो फिर उच्च आयामों को कैसे जान सकते हैं ? उनके अनुसार चौथा आयाम सद्भावना का सद्विचारणा का है परन्तु यह कहाँ से आरंभ होता, कहाँ पर समाप्त होता और किधर प्रक्षेपित या प्रयुक्त होता है कहा नहीं जा सकता । यह अन्तहीन है । चारदशक पूर्व मनीषी प्रवर आइन्स्टीन ने विश्व-ब्रह्माण्ड में संव्याप्त अनेक आयामों की संभावना व्यक्त की थी और कहा था कि जब मनुष्य चतुर्थ आयाम के तथ्यों को कार्य रूप में परिणत करने लगेगा तब उसका ज्ञानबोध अब की तुलना से अनेक गुना अधिक बढ़ जायेगा । साथ ही ऐसी शक्ति हस्तगत होगी जिसे चमत्कारिक कहा जा सके ।

उच्चस्तरीय आयामों में पाँचवां, छठा एवं सातवाँ आयाम पदार्थ सत्ता से परे है । ये विशुद्ध रूप से चेतना से सम्बन्धित हैं, किन्तु यदि चतुर्थ आयाम की जानकारी एवं प्रभाव-परिणाम से ही हम अवगत हो सकें तो हमारे सम्पूर्ण बोध क्षेत्र में उथल-पुथल मच जायेगी । जिन व्यक्तियों को अभी हम अपना मान बैठे हैं, वे भी पराये दीखने लगें । अथवा पराये भी अपने हो जायेंगे । व्यक्ति एवं वस्तु के प्रति वर्तमान मोह का दुराग्रह टूट जाने और पदार्थ एवं जीव का वास्तविक स्वरूप विदित होने पर उस भ्रम जंजाल से छुटकारा मिल सकेगा जिसमें सामान्यतया हम सभी आबद्ध रहते हैं । चेतना का उच्चस्तरीय विकास कर लेने पर हमें उस तत्त्वदर्शन की सत्यता का भी बोध होगा जिसमें ऋषियों ने आत्मवत् 'सर्वभुतेषु' की -'सर्वाखिल्विदं ब्रह्म की कल्पना की है ।

कायकलेवर में विद्यमान-ऋषि-तपस्वी, देवता और तीर्थ

मोटे तौर पर मनुष्य शरीर पंच तत्त्वों का-सप्त धातुओं का बना परिलक्षित होता है । अन्न जल पर उसका निर्वाह चलता प्रतीत होता है पर यदि तात्त्विक सूक्ष्म दृष्टि से देखा जाये तो उसमें विश्व ब्रह्माण्ड में संव्याप्त समस्त जड़ चेतन शक्तियों के बीज विद्यमान दिखाई देंगे । जो कुछ इस विराट् विश्व में है उसका छोटा रूप अपने भीतर बहुत ही सुव्यवस्थित रीति से सँजोया हुआ है । यदि उन बीजों का ठीक तरह सिंचन पोषण किया जा सके तो उसका विस्तार इतने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बड़े विशाल वृक्ष के रूप में हो सकता है कि आश्चर्य चकित रह जाना पड़े ।

अपने भीतर सभी देवता, सभी दिव्य लोक, सभी सिद्ध पुरुष, सभी ऋषि, सभी तीर्थ, सभी सिद्धियाँ तथा जो कुछ श्रेष्ठ उत्कृष्ट है उसके अंकुर यथा स्थान बोये, उगाये हुए मौजूद हैं । आवश्यक केवल उनमें खाद पानी देने की अनुकूलता प्रस्तुत करने की है । देखते-देखते वे विकसित, पल्लवित और फल-फूलों से सुसज्जित हो सकते हैं ।

साधना का प्रयोजन अपने भीतर की महानता को विकसित करना ही है । बाहर व्यापक क्षेत्र में भी देव शक्तियाँ विद्यमान हैं । पर उनके लिए समष्टि विश्व की देखभाल का विस्तृत कार्य क्षेत्र नियत रहता है । व्यक्ति की भूमिका के अनुरूप प्रतिक्रिया उत्पन्न करने-सफलता और वरदान देने का कार्य उनके वे अंश ही पूरा करते हैं जो बीज रूप में हर व्यक्ति के भीतर विद्यमान हैं । सूर्य का अंश आँख में मौजूद है । यदि आँखें सही हो तो ही विराट् सूर्य के प्रकाश से लाभ उठाया जा सकता है । अपने कान ठीक हों तो ही बहार के ध्वनि प्रवाह की कुछ उपयोगिता है इसी प्रकार अपने भीतर के देय बीज यदि विकसित परिष्कृत हों तो उनके माध्यम से विश्वव्यापी देवतत्त्वों के साथ सम्बन्ध जोड़ना आकर्षित करना और उनका सहयोग अनुग्रह प्राप्त कर सकना सम्भव हो सकता है ।

कुण्डलिनी जागरण की साधना पद्धति का प्रयोजन अपने भीतर के देव अंशों को विकसित और परिपुष्टि बनाना है । कैलाश पर्वत पर सर्पों का यज्ञोपवीत धारण करके विराजमान शिव और क्षीर सागर में शेष नाग पर सोये हुए विष्णु का बीजांश हमारे मस्तिष्क मध्य केन्द्र-ब्रह्मरंध्र में यथावत् विद्यमान है । इस स्थान को 'सहस्रार' कहते हैं । मूलाधार-अग्नि जिह्वा चामुण्डा का बीजांश जननेन्द्रिय गह्वर-'मूलाधार' -में विद्यमान है । इन दो शक्तियों के असम्बन्ध बने रहने पर केवल उनकी उपस्थिति का आभास मात्र ही होता है पर जब उन दोनों का संगम समागम हो जाता है तो अजस्र शक्ति की एक ऐसी धारा प्रवाहित हो उठती है जिसे अनुपम या अद्भुत ही कहा जा सकता है ।

जब वर्षा ऋतु आती है तो सूखे वीहड़ भी हरियाली से भर जाते हैं । ग्रीष्म ऋतु में जिनका कोई अस्तित्त्व दृष्टि-गोचर नहीं होता था, ऐसे दबे हुए बीज भी उपज पड़ते हैं और ऐसा लगता है कि मानों किसी चतुर माली ने विभिन्न प्रकार की वनस्पतियाँ, पुष्प-गुल्म, लता बल्लरियाँ विधिवत् आरोपित की हैं । कुण्डलिनी साधना की सफलता को पावस का आगमन कह सकते हैं । मनुष्य शरीर एक विशाल उर्वर भूखण्ड कहा जा सकता है । इसमें एक से एक बहुमूल्य बीज दबे पड़े हैं । वर्षा न होने तक उनका अस्तित्त्व छिपा पड़ा था पर जैसे ही पानी बरसा कि वे सभी प्रकट होकर अपनी शोभा सुषमा दिखाने लगते हैं । साधारणतया जिन विशेषताओं और विभूतियों का किसी को भान भी नहीं होता वे इस पावस में अनायास ही अंकुरित और पल्लवित होने लगते हैं ।

आत्म वेत्ताओं ने मानव काया के तीन परतों में-स्थूल सूक्ष्म और कारण शरीरों में एक से एक अद्भुत देवांश खोजा है । शक्ति बीजों की प्रचुर मात्रा उन्हें दृष्टि-गोचर हुई है । विराट् में सन्निहित सब कुछ उन्होंने इसी छोटे से कलेवर में सारभूत विद्यमान पाया है । इसलिए उन्होंने अपने अन्तरंग में ही देव साधना का विधान अधिक महत्त्वपूर्ण माना है । यों देव मन्दिरों में तथा लोक-लोकान्तरों में भी देव शक्तियाँ संव्याप्त हैं, पर जितनी समीप और जितनी सजीव अपने अन्तरंग में हैं-उतनी अन्यत्र नहीं । जितनी सुविधा पूर्वक उन्हें अपने भीतर पाया जा सकता है-उतनी सरलता और सफलता अन्यत्र नहीं मिल सकती । कुण्डलिनी विद्या की साधना अन्तरंग क्षेत्र में ही करनी पड़ती है और उसकी सफलता जब मेघ मालाओं की तरह बरसती है तो अगणित दिव्य विभूतियाँ स्वयमेव प्रस्फुटित और पल्लवित होती हैं । अन्तरंग में कहाँ क्या है इसका वर्णन देखिए-

देहेऽस्मिन् वर्तते मेरुः सप्तद्वीपसमन्वितः ।
सरितः सागराः शैला क्षेत्राणि क्षेत्रपालकाः ॥
ऋषयो मुनयः सर्वे नक्षत्राणि ग्रहास्तथा ।
पुण्यतीर्थानि पीठानि वर्तन्ते पीठदेवता ॥

-शिव संहिता २।१।२

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसी शरीर में सुमेरु, सप्तद्वीप, तथा समस्त सरिताऐं, सागर, पर्वत, क्षेत्र, क्षेत्रपाल, ऋषि, मुनि, नक्षत्र, ग्रह, तीर्थ, पीठ, देवता, निवास करते हैं ।

अस्थिस्थाने महेशानि जम्बुद्वीपो व्यवस्थितः ।
मांसेषु च कुशद्वीपः क्रौञ्चद्वीपः शिरासु च ॥
शाकद्वीपः स्मृतो रक्ते प्राणिनां सर्वसन्धिषु ।
तदूर्ध्वं शाल्मलीद्वीपः प्लक्षश्च लोमसञ्चये ॥
नाभौ च पुष्करद्वीपः सागरस्तदनन्तरम् ।
लवणोदस्तथा मूत्रे शुक्रे क्षीरोदसागरः ॥
मज्जा दधिसमुद्रश्च तदूर्ध्वं घृतसागरः ।
वसापः सागरः प्रोक्त इक्षु स्यात्कटिशोणितम् ॥
शोणिते च सुरासिन्धुः कथिताः सप्तसागराः ।

–महायोग विज्ञान

अस्थि स्थान में जम्बूद्वीप, माँस में कुश द्वीप, शिराओं में क्रौञ्च द्वीप, रक्त में शाक द्वीप, त्वचा में शाल्मिली द्वीप, लोम समूह में प्लक्ष द्वीप, नाभि में पुष्कर यह सातों द्वीप इस शरीर में ही विद्यमान हैं ।

इसी प्रकार इस काया में सात समुद्र भी हैं । मूत्र में लवण सागर, शुक्र में क्षीर सागर, मज्जा में दधि सागर, मेद में घृत सागर, नाभि में इक्षु सागर, रक्त में सुरा सागर अवस्थित हैं ।

श्रीपर्वतं शिरःस्थाने केदारं तु ललाटके ।
वाराणसी महाप्राज्ञ भ्रु वोर्घ्राणस्य मध्यमे ॥
कुरुक्षेत्रं कुचस्थाने प्रयागं हृत्सरोरुहे ।
चिदम्बरं तु हृन्मध्ये आधारे कमलालयम् ॥
आत्मतीर्थं समुत्सृज्य बहिस्तीर्थानि यो व्रजेत् ।
करस्थं स महारत्नं त्वक्त्वा काचं विमार्गति ॥
भावतीर्थं परं तीर्थं प्रमाणं सर्वकर्मसु ।

–जाबाल दर्श. ४।४८

इसी मनुष्य देह में सात तीर्थ हैं मस्तक में श्री शैल, ललाट में केदार, नासिका और भौहों के बीच काशी, स्तनों में कुरुक्षेत्र, हृदय में प्रयाग, मूलाधार में कमलालय, तीर्थ विद्यमान हैं । जो इन आत्म तीर्थों को छोड़कर वाह्य तीर्थों में भटकता है । वह रत्न छोड़कर काँच ढूँढ़ते फिरने वालों की तरह है ।

गंगा सरस्वती गोदा नर्मदा यमुना तथा ।
कावेरी चन्द्र भागा च वितस्ता च इरावती ॥
द्विसप्तति सहस्रेषु नदी नद परिस्रवाः ।
इतस्ततो देह मध्ये ऋक्षाश्च पंच विंशतिः ॥
योगाश्च राशयश्चैव ग्रहाश्च तिथयस्तथा ।
करणानि च वाराश्च सर्वेषां स्थापनं तथा ॥
सर्वाङ्गेषु च देवेशि समग्रमृक्षमण्डलम् ।
त्रयास्त्रिंशत्कोटयस्तु निवसन्ति च देवताः ॥

– महायोग विज्ञान

इसी शरीर में समस्त तीर्थ और देवताओं का निवास है । गंगा, यमुना, सरस्वती, गोदावरी, नर्मदा, सिन्धु, कावेरी, चन्द्रभागा, वितस्ता, इरावती, यह प्रमुख नदियाँ तथा बहत्तर हजार छोटी नदियाँ यह बड़ी और छोटी नदियों के रूप में प्रवाहित हो रही हैं ।

ऐसे ही इस शरीर में पन्द्रह तिथियाँ, सात वार, सत्ताइस नक्षत्र बारह राशि, अट्ठाईस योग, सात करण, नवग्रह उनके उपग्रह, नक्षत्र मंडल तथा तेतीस कोटि देवता इसी शरीर में विराजमान हैं ।

चक्रमध्ये स्थिता देवाः कम्पन्ति वायुताडनात् ।
कुण्डल्यपि महामाया कैलासे सा विलीयते ॥

–शिव संहिता ४।४६

प्राण वायु की ताड़ना से चक्रों के मध्य में अवस्थित देवता जाग्रत होते हैं और माया कुण्डलिनी कैलाश मस्तक में जो पहुँचती है ।

ब्रह्मणो हृदयस्थानं कण्ठे विष्णुः समाश्रितः ।
तालुमध्ये स्थितो रुद्रो ललाटस्थो महेश्वरः ॥

–ब्रह्मविद्योपनिषद४१

ब्रह्मा का स्थान हृदय, विष्णु का कण्ठ और रुद्र का तालु में और ललाट में सर्वेश्वर का स्थान है ।

मनुष्य के भीतर ही समस्त तीर्थ विद्यमान हैं । यदि कुण्डलिनी विद्या द्वारा आत्मा साधना करली जाय तो यह काया ही समस्त तीर्थों का संगम बन सकती है और तीर्थयात्रा का जो महात्म्य बताया है वह अनायास ही मिल सकता है । इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना की तीर्थराज प्रयाग में गङ्गा यमुना सरस्वती के संगम की उपमा दी है और पुण्य फल अनन्त बताया है ।

इड़ायां यमुना देवी पिंगलायां सरस्वती ।
सुषुम्णायां वसद् गंगा तास्तं योगस्त्रिधा भवेत् ॥
संगता ध्वज मूले च विमुक्त भ्रू वियोगतः ।
त्रिवेणी योगः संप्रोक्त तत्र स्नानं महाफलम् ॥

–षटचक्र निरूपणम्

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इड़ा नाड़ी यमुना, पिंगला सरस्वती और सुषुम्ना गंगा है । यही योग त्रिवेणी है । उनका मूलाधार से और वियोजन मध्य में होता है । इस योग त्रिवेणी के संगम का महा–फल है ।

इड़ा भागीरथी गङ्गा पिंगला यमुना नदी ।
इड़ापिंगलयोर्मध्ये सुषुम्ना च सरस्वती॥
त्रिवेणी सङ्गमो यत्र तीर्थराजः स उच्यते ।
तासां तु सङ्गमो स्नात्त्वा धन्यो याति परां गतिम्॥
इडासुषुम्णे शुभतीर्थकेऽस्मिन्,
ज्ञानाम्बुपूर्णा बहतः शरीरे ।
ब्रह्माम्बुभिः स्नातितयोः सदा,
याः किन्तस्य गाङ्गैरपि पुष्करैर्वा॥

–महायोग विज्ञान

इड़ा गङ्गा और पिंगला यमुना के बीच सरस्वती रूपी जो सुषुम्ना बहती है, उनके संगम में स्नान करने वाला धन्य हो जाता है और परमगति पाता है ।

इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना इनका संगम शिव तीर्थ है । इनके ज्ञान रूपी ब्रह्म जल में जो स्नान करते हैं । उनके लिए बाह्य नदी सरोवरों तथा तीर्थों क्या प्रयोजन ?

इड़ा हि पिङ्गला ख्याता वरणासीति होच्यते ।
वाराणसी तयोर्मध्ये विश्वनाथोऽत्र भाषितः॥
एतत् क्षेत्रस्य माहाम्यमृषिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ।
शास्त्रेषु बहुधा प्रोक्तं परं तत्त्वं सुभाषितम्॥

–शिव संहिता ५।१२६।–१२७

इड़ा नाड़ी को वरणा और पिंगला को असी कहते हैं । इन दोनों के बीच स्वयं विश्वनाथ विराजमान हैं । यही वाराणसी है ।

इसी वाराणसी का महात्म्य तत्त्वदर्शी ऋषियों तथा शास्त्रों ने गाया है और उसे ही परम तत्त्व कहा है ।

आज्ञापङ्कजदक्षांसाद्वामनासापुटं गता ।
उदग्वहेति तत्रेड़ा गङ्गेति समुदाहृता ॥

–शिव संहिता ५।१३२

आज्ञा चक्र के दाहिने भाग में बाईं ओर को जाने वाली इड़ा नाड़ी को ही गङ्गा कहते हैं ।

'कारण शरीर' का देवता ब्रह्मा–'सूक्ष्म शरीर' का अधिपति विष्णु और 'स्थूल शरीर' का अधिष्ठता शिव है । यह अधिष्ठता देव सामान्य व्यक्तियों के जीवन में गाँठ की तरह बँधे हुए एक कोने में पड़े रहते हैं । पर जब कुण्डलिनी जागरण की तीन अग्नियाँ प्रज्वलित होती हैं तो उनका प्रभाव तीनों शरीरों पर पहुँचता है और उनके प्रसुप्त तीनों देवता सजग सक्षम सक्रिय होकर अपना प्रकाश एवं प्रभाव प्रदर्शित करने लगते हैं । जिन तीन शरीरों का साधारणतया आभास अनुभव भी नहीं होता वे अपने अधिष्ठाता देवताओं के जाग्रत होने पर स्थूल शरीर से भी अधिक प्रत्यक्ष एवं समर्थ दिखाई देने लगते हैं । ब्रह्म ग्रन्थि–विष्णु ग्रन्थि और रुद्र ग्रन्थि के खुल जाने से समस्त अभावों और शोक सन्तापों के भव–बन्धनों से भी छुटकारा मिल जाता है और साधक की प्रतिभा में देवत्त्व का प्रकाश स्पष्ट परिलक्षित होता है ।

महर्षि व्यास ने महाभारत लिखते–लिखते एक अत्यन्त गुह्य रहस्य को प्रकट कर दिया है वे लिखते हैं–

'गुह्यं' ब्रह्म तदिदं ब्रवीमि ।
नहि मनुष्यात् श्रेष्ठ तरं हि किंचित् ।'

एक गुप्त रहस्य बताता हूँ । मनुष्य से बढ़ कर इस संसार में और कुछ नहीं है ।

जिन देवताओं से वह तरह–तरह के वरदान पाने की मनुहार करता है वे वस्तुतः उसी की श्रद्धा एवं विश्वास के छैनी–हथौड़े से गढ़े हुए मानस पुत्र हैं । 'भावोहि विद्यत् देव' की उक्ति से यह स्पष्ट कर दिया गया है कि पत्थर के टुकड़े को देवता के समतुल्य समर्थ बना देने वाला चमत्कार भावना के आरोपण से ही सम्भव होता है । उसे उठा लिया जाये तो देव प्रतिमा में पत्थर के अथवा धातु खण्ड के अतिरिक्त और कुछ नहीं है । मनुष्य देवताओं को गढ़ता है और स्वयं भी देवता बनता है–

भजन्ते विश्वे देवत्त्वं नामऋत सपन्तो अमृत मेवैः ।

–ऋग्वेद

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ईश्वर का अविनाशी अंश होने के कारण आत्मा के देव मन्दिर इसी शरीर में समस्त देवताओं की बीज सत्ताएँ विद्यमान है । अङ्ग-प्रत्यङ्गों में उच्चस्तरीय श्रेष्ठता विद्यमान है । उपेक्षा एवं अवज्ञा के कारण वे मूर्छित स्थिति में मृतक तुल्य पड़े हैं । उन्हें जगाने का प्रयास योग और तप द्वारा किया जाता है । अपने भीतर देव सत्ता के विद्यमान होने का प्रसंग इस प्रकार आया है-

ता एता देवताः सृष्टा अस्मिन् महत्यर्णवे प्रापतंस्तमशनायापिपासाभ्वामन्ववार्जत् ता एनमब्रुवन्नायतनै नः प्रजानीहि यस्मिन् प्रतिष्ठता अन्नमदामेति ॥१॥

ताभ्यो गामानयता अब्रुवन्न वै नोऽयमलमिति ताभ्योऽश्वमानयत्ता अब्रुवन्ना वै नोऽयमलमिति ॥२॥ ताभ्यः पुरुषमानयत्ता अब्रुवन् सुकृतं वतेति । सुरुषोबावसकृतम् । ता अब्रवीद्यथायतनं प्रविशतेति ॥३॥ अग्निर्वा भूत्वा मुखां आविशद्वायुः प्राणो भूत्वा नासिके प्राविशदादित्यश्चक्षुर्भूत्वाक्षिणी प्राविशद्दिशः श्रोत्रं भूत्वा कर्णौ प्राविशन्नोषधिवनस्पतयो लोमानि भूत्वाां त्वचं प्राविशंश्चंद्रमा मनो भूत्वा हृदयं प्राविशन्मश्त्युरपाना भूत्वा नाभि प्राविशदापो रेतो भूत्वा शिननं प्राविशन् ॥४॥

-एतरेय २/१से४

परमात्मा ने देवताओं को इस संसार में भेजा । उनमें भूख, प्यास और अनुभूति उत्पन्न की । देवताओं ने परमात्मा से कहा-हमारे लिए शरीर-निर्माण करो । जिसमें रहकर हम अपनी आवश्यकताएँ पूर्ण करें । परमात्मा ने उन्हें गौ, अश्व आदि के शरीर दिखाये, जिसे उन्होंने अनुपयुक्त बताया । तब परमात्मा ने उन्हें मनुष्य-देह दिखायी । देवताओं ने कहा-हाँ, यही बहुत ठीक और सुन्दर है । तब परमात्मा ने कहा-अपने-अपने उपयुक्त स्थानों में घुस जाओ । तब अग्नि वाणी बनकर मुख में, वायु प्राण बनकर नासिका में, सूर्य नेत्रों में, दिशाएँ कानों में, औषधि त्वचा में, चन्द्रमा मन बनकर हृदय में, यम अपान बनकर नाभि में और वरुण रेतस, बनकर जननेन्द्रिय में प्रविष्ट हुआ ।

पुरुषो वाव गौतमाग्निस्तस्य वागेव समित्प्राणो धूमो जिह्वार्चिश्चक्षुरङ्गाराः श्रोत्रं विस्फुलिंगा ॥१॥ तस्मिन्नेतस्मिन्नग्नौ देवा अन्नं जुह्वति तस्या आहुते रेतः सम्भवति ॥२॥

-छान्दोग्य ५ /७ /१२

यह पुरुष ही अग्नि है । वाणी समिधा है । प्राण धुआँ है । जिह्वा ज्वाला है । नेत्र अंगार हैं । कान चिनगारियाँ । इस अग्नि में देवगण हवन करते हैं और उससे पराक्रम उत्पन्न होता है ।

मानवी संकल्प शक्ति की क्षमता असीम है । उसको जाग्रत करना और सदुद्देश्य के लिए प्रयुक्त कर सकना सम्भव हो सके तो कुछ भी बन सकना और कुछ भी कर सकना सम्भव हो सकता है-

फलं ददाति कालेन तस्य तस्य तथा तथा ।
तपोवा देवता वापि भूत्वा स्वैव चिदन्यथा ।
फलं ददात्यथ स्वैरं नभः फल निपातवत् ।

-योगवाशिष्ठ

जीव अपनी इच्छा से ही देवता, तपस्वी बनता रहता है । प्रगति और अवनति का आधार मनुष्य का अपना कर्त्तव्य ही है ।

यह विधि की विडम्बना ही है कि आँख आदि इन्द्रियों के छिद्र बाहर की ओर बनाये । वे बाहर का तो बहुत कुछ देखती हैं, पर आन्तरिक सम्पदा को समझने उसका सदुपयोग करने से वंचित ही रह जाती हैं । हमारी बुद्धि बाहरी समस्याओं को सुलझाने में तो लगी रहती है किन्तु जीवन के स्वरूप, लक्ष्य एवं उपयोग को जानने में असमर्थ रहती है ।

पराञ्चि खानि व्यतृणत् स्वयम्भूस्तस्माद्
पराङ् पश्यति नान्तरात्मन् ।
कश्चिद्धीरः
प्रत्यगात्मानमैक्षदावृत्तचक्षुरमृतत्त्वमिच्छन्॥

(कठोपनिषद २ /४ /१)

विधाता ने छेदों को बाहर की ओर छेदा (अर्थात् इन्द्रियों को बहिर्मुखी बनाया) अतएव मनुष्य बाहर ही देखता है । अन्तर को नहीं देखता । अमृत की आकांक्षा करने वाला दूरदर्शी विरला मनुष्य ही अन्दर की ओर देखता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गायत्री की उच्चस्तरीय साधना में सप्त चक्रों का जागरण प्रमुख है । यह सप्त चक्र और पंचकोश परस्पर सम्बद्ध है । दोनों की साधना एक साथ ही सम्पन्न होती है । इसी में देव साधना, ऋषि उपासना, समग्र उत्कर्ष, जीवन-लक्ष्य, सर्वतोमुखी विकास उल्लास के समस्त तत्त्वों का समावेश है । कहा गया है-

मूलादि ब्रह्म रंध्रान्ता गीयते मननात् यतः ।
मननात् त्राति षट्चक्रं गायत्री तेन कथ्यते॥

-तन्त्र कौमुदी

मूलाधार से लेकर ब्रह्मरन्ध्र तक विस्तृत षट्चक्र का जिसके अवगाहन से जागरण होता है उसे गायत्री कहते हैं ।

आत्मसत्ता में सन्निहित विश्व की समस्त विभूतियों को यदि खोजा और जगाया जा सके तो जीवात्मा को देवात्मा एवम् परमात्मा बनने का अवसर मिल सकता है । इस अन्वेषण प्रयास को ब्रह्म विद्या और जागरण प्रक्रिया को ब्रह्म तेज सम्पादन कहते हैं । इस सन्दर्भ में सप्तऋषियों को जीवन्त करने और उनके ब्रह्म-बल से उच्चकोटि का लाभ उठाने की प्रक्रिया 'चक्र वेधन' के रूप में समझी जा सकती है । पाश्चात्य अध्यात्मवेत्ता चेतना के सात शरीर मानते हैं । एक प्रत्यक्ष है अप्रत्यक्ष । (१) भौतिक शरीर को वे (फिजीकल बॉडी) कहते हैं । इससे आगे के क्रमशः (२) आकाश शरीर-(इथरिक बॉडी) (३) सूक्ष्म शरीर (एस्ट्रल बॉडी) (४) मनस् शरीर-(मेन्ट बॉडी) (५) आत्म शरीर (स्प्रिचुअल बॉडी) (६) ब्रह्म शरीर-(कॉस्मिक बॉडी) (७) निर्वाण शरीर-इसे वे शरीर कहते हुए भी आत्मसत्ता कहते हैं और शरीर न कहकर "बीइंग एण्ड नोनबीइंग" की संज्ञा देते हैं । यह 'अनिर्वचनीय' जैसा शब्द है ।

(१) मूलाधार (२) स्वाधिष्ठान (३) मणिपूर (४) अनाहत (५) विशुद्ध (६) आज्ञाचक्र यह षट्चक्र वर्ग में आते हैं । सातवाँ सहस्रार इनका अधिपति का सूत्र संचालक है । मानवीकाया में अवस्थित यही परम तेजस्वी सप्त ऋषि हैं । जिनकी पीठ पर-जिनके समर्थन में-सात ऋषि होंगे उन्हें किसी प्रकार का अनुभव न होगा । निद्रित स्थिति में तो मनुष्य भी मृत तुल्य पड़ा रहता है । ऋषियों का अस्तित्त्व आत्मसत्ता के अन्तर्गत होते हुए भी यदि वे प्रसुप्त स्थिति में पड़े हैं तो उनका समुचित लाभ मिल सकना सम्भव न होगा ।

आत्म सूर्य के सप्त अश्व प्रमुख चेतना केन्द्रों के रूप में वर्णन किये गये हैं-(१) प्राण (२) चक्षु (३) जिह्वा (४) त्वचा (५) कान (६) मन (७) बुद्धि इन सातों को अश्व संज्ञा दी गई है ।

दिव्य जीव सत्ता में इन सातों का वर्णन इस प्रकार मिलता है- (१) देव (२) ऋषि (३) गन्धर्व (४) पन्नग (५) अप्सरा (६) यज्ञ (७) राक्षस । वैदिक देवताओं में इन्हीं का दूसरे रूप में वर्णन है- (१) प्रजापति (२) अर्यमा (३) पूषा (४) त्वष्टा (५) वरुण (६) इन्द्र (७) मित्र । छन्द शास्त्र की दृष्टि से इनका उल्लेख जिन सात छन्दों में किया गया है वे-(१) गायत्री (२) उष्णिक् (३) अनुष्टा (४) वृहती (५) पंक्ति (६) त्रिष्टुप और (७) जगती है ।

गान विद्या के सप्त स्वर प्रसिद्ध हैं- स, रे, ग, म, प, ध, नि के नाम से इन्हें संगीत शास्त्र के आरम्भिक छात्र भी जानते हैं । सूर्य की सात किरणें- (१) बैंगनी (२) जामुनी (३) नीले (४) हरे (५) पीले (६) नारंगी (७) लाल रंग की हैं । इन्हीं रंगों के प्रभाव से पदार्थों और प्राणियों में तरह-तरह के उभार एवं उतार चढ़ाव आते रहते हैं ।

आयुर्वेद के अनुसार अपने प्रत्यक्ष शरीर में सप्त धातुएँ हैं-(१) रस (२) रक्त (३) माँस (४) मज्जा (५) अस्थि (६) मेरु (७) शुक्र । इन्हीं के सहारे काया का क्रिया-कलाप चलता है । सूक्ष्म शरीर का ढाँचा भी सात आधारों पर ही खड़ा है । (१) पाँच तत्त्व (२) पाँच प्राण (३) पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ (४) पाँच कर्मेन्द्रियाँ (५) पाँच तन्मात्राएँ (६) अन्तःकरण चतुष्टय (७) आकांक्षा संस्कार ।

स्थूल शरीर के आधारों को प्रत्यक्ष आँखों से देखा जा सकता है सूक्ष्म शरीर के आधार भी सूक्ष्म होते हैं, अस्तु वे दृष्टिगोचर तो नहीं होते पर अस्तित्त्व उन सबका बना रहता है । भाप बनकर आकाश में उड़ जाने पर भी पदार्थ बना तो रहता है पर उसका अस्तित्त्व दृष्टिगोचर नहीं होता सूक्ष्म शरीर की सत्ता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भूत-प्रेतों के रूप में, स्वप्न में, छाया पुरुष में, स्वर्ग-नरक भोगने में स्थूल शरीरधरियों की तरह ही काम करती है, पर उसका अस्तित्त्व स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर नहीं होता । दिव्यात्माएँ भी ऐसा ही सूक्ष्म कलेवर धारण करके इतना काम करती हैं जो स्थूल शरीर की तुलना में अत्यधिक होता है ।

षट्चक्रों का नाम श्यामक है । वस्तुतः उन्हें सप्तचक्र ही कहना चाहिए । सहस्रार को इस चक्र शृंखला से अलग नहीं किया जा सकता । प्रत्येक चक्र भी सात आधारों से बना है । उनके स्वरूप निर्धारण की जो व्याख्या विवेचना है उसमें प्रत्येक के सात-सात विवरण दिये गये हैं- (१) तत्त्व बीज (२) वाहन (३) अधिदेवता (४) दल (५) यन्त्र (६) शब्द (७) रंग । इन्हीं विशेषताओं की भिन्नता से उनके अलगअलग विभेद किये गये हैं । अन्यथा बाहर से तो उनकी आकृति एक जैसी ही है । उनकी क्षमताओं, विशेषताओं और प्रतिक्रियाओं का विवरण इन्हीं सात संकेतों के रूप में समझा जा सकता है ।

शरीर एक समूचा ब्रह्माण्ड है । जो कुछ इस विस्तृत ब्रह्माण्ड में है उसे बीज रूप से मानवी पिण्ड में संजो दिया गया है । साधना द्वारा इन बीजों को अंकुरित और पल्लवित किया जाता है । ब्रह्माण्ड और पिण्ड की सत्ता एक जैसी बताते हुए कहा है-

ब्रह्माण्ड संज्ञके देहे यथा देशं व्यवस्थितः ।

-शिव संहिता

यह शरीर ब्रह्माण्ड संज्ञक है । जो ब्रह्माण्ड में है वही इस शरीर में भी मौजूद हैं ।

नदी, पर्वत, समुद्र, द्वीप आदि भी सात-सात ही गिनाये गये हैं । भूगोल के हिसाब से इनकी संगति नहीं बैठती । संसार में हजारों नदियाँ हैं । इसी प्रकार पर्वत भी सैकड़ों हैं । पृथ्वी पर महाद्वीप पाँच हैं । छोटे द्वीपों की संख्या तो लाखों तक पहुँचेगी । समुद्र भी सात कहाँ हैं । इस प्रकार भौगोलिक गणना के आधार पर यह ब्रह्माण्ड विवरण सही नहीं बैठता । किन्तु पिण्ड ब्रह्माण्ड की प्रमुख शक्तियों को इन रूपकों के माध्यम से समझाने वाले अलङ्कारिक संकेत का रहस्य समझा जा सके तो यह सभी सप्तक सही बैठते हैं ।

सात पर्वत यह हैं- (१) विद्युत (२) हिमिशैल (३) द्युतिमान (४) पुष्पवान (५) कुशेशय (६) हरिशैल (७) मन्दराचल ।

सात नदियों के नाम हैं- (१) जलधर (२) दैवत (३) श्यामक (४) उद्रक (५) अम्बिकेय (६) रम्य (७) केशरी ।

सात चक्रों की सप्त अग्नियाँ तथा सात सोम संस्थाओं के रूप में भी वर्णन हुआ है । सोम संस्थाओं के नाम ब्राह्मण ग्रन्थों में इस प्रकार गिनाये गये हैं- (१) आत्माग्नि स्टोम (२) उष्टवक्य (३) थोडसी (४) वाजपेयक (५) अति रात्र (६) आप्त (७) याम ।

अग्नि पुराण में सात चरु यज्ञ एवं सात हवि यज्ञों का वर्णन है । चरु यज्ञ हैं- (१) पुरोष्टक (२) पार्वण (३) श्रावणी (४) अग्रहायणी (५) चैत्र (६) अश्व (७) युजी ।

हवि यज्ञ भी सात हैं-(१) अग्न्याधेय (२) अग्निहोत्र (३) दर्श (४) पौर्णमास (५) चातुर्मास्य (६) आग्रहायण (७) निरुढ़ ।

सात अग्नियाँ हैं- (१) ब्रह्माग्नि (२)आत्माग्नि (३) योगाग्नि (४) कालाग्नि (५) सूर्याग्नि (६) वैश्वानर (७) आतप ।

मुन्डक उपनिषद के अनुसार अग्नि देव की सात जिह्वायें हैं-(१) काली (२) कराली (३) मनोजवा (४) लोहिता (५) धूम्रवर्णा (६) स्फुल्लिंगिनी (७) विश्वरुचि ।

सात समुद्रों और सात द्वीपों के नाम मार्कण्डेय पुराण में इस प्रकार गिनाये गये हैं ।

समुद्र-(१) लवण सागर (२) इक्षुसागर (३) सुरासागर (४) दुग्धसागर (५) दधि सागर (६) घृत सागर (७) जल सागर

द्वीप-(१) जम्बू द्वीप (२) प्लक्ष द्वीप (३) शाल्मलि द्वीप (४) कुश द्वीप (५) क्रौच द्वीप (६) शाक द्वीप (७) पुष्कर द्वीप ।

इन सभी प्रतिपादनों में यह संकेत है कि हर स्तर की क्षमता बीज रूप से अपने भीतर विद्यमान है यदि उन्हें जाग्रत करने का प्रयत्न किया जाय तो व्यक्ति उच्चस्तरीय स्थिति तक निरन्तर बढ़ता चल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सकता है और प्रगति के उच्चस्तर तक पहुँच सकता है । बीज का अस्तित्त्व और फल का परिणाम सुनिश्चित है । आवश्यकता उस कृषि कर्म की–बागवानी की रीति-नीति जानने-अपनाने की है जिसे आध्यात्म की भाषा में साधना कहते हैं ।

प्राणायाम मन्त्र में गायत्री के साथ सात व्याहृतियों का प्रयोग होता है । भूः भुवः स्वः महः जनः तपः सत्यम् । यह सात व्याहृतियाँ हैं । इन्हें सात ऋषि एवं सात लोक भी कहा गया है ।

अग्नि पुराण में सात ऋषियों के नाम इस प्रकार गिनाये गये हैं–

वशिष्ठः काश्पोऽतथात्रिर्जमदग्निः स गोतमः
विश्वामित्र भरद्वाजो मुनयः सप्त साम्प्रतम् ।

(१) वशिष्ठ (२) काश्यप (३) अत्रि (४) जमदग्नि (५) गौतम (६) विश्वामित्र (७) भारद्वाज ।

इन सातों की सत्ता सप्त चक्रों में विद्यमान है । इन सातों की शक्ति इन्द्रियों के रूप में भी दृष्टि गोचर होती है ।

प्राणाः वा ऋषय । इमौ एव गौतम भरद्वाजौ । अयमेव गौतमः अयं भरद्वाजः । इमौ एव विश्वामित्र जमदग्नि । अयमेव विश्वामित्रः अयं जमदग्निः । इमौ एव वशिष्ठ कश्यपौ अयमेव वशिष्ठः अयं कश्यपः वागेवात्रिः श्रुति।

सात प्राण ही सात ऋषि हैं । दो कान गौतम और भारद्वाज हैं । दो आँखें विश्वामित्र और जमदग्नि हैं । दो नसिका छिद्र वशिष्ठ ओर काश्यप है । वाक् अत्रि हैं । वस्तुतः अपना काय कलेवर ही सूक्ष्म तपोवन है । उसमें निवास करने वाले चेतना केन्द्र यदि परिष्कृत हो जाते हैं तो वे ऋषि बन जाते हैं । ऐसे चेतना केन्द्र सात हैं । इसलिए उन्हें सप्त ऋषि भी कहते हैं । अपने काय कलेवर के तपोवन में अवस्थित सात ऋषियों का वर्णन, विवरण इस प्रकार है ।

सप्तऋषयः प्रतिहिता, शरीरे सप्त
रक्षन्ति सर्गम् अप्रमादम् ।

–यजु ३४।५५

सप्त इन्द्रियाँ सप्त ऋषि हैं । यही इस कलेवर की रक्षा करती हैं ।

कः सप्त स्तानि वितदर्द शीर्षाणि ।
कर्णा विमौ नासिके चक्षिणी पुरवम् ।

–अथर्व १०।२।६

सप्त ऋषि यह हैं–दो कान, दो नासिका छिद्र, दो नेत्र, एक मुख, इस प्रकार सात हुए ।

चक्षुर्वे जमदाग्नि ऋषिर्यद्व नेन जगत्पश्यति

–शत पथ ८।१।२।३

जब यह नेत्र समस्त विश्व को देखते हैं तब वे जमदाग्नि कहलाते हैं ।

श्रोत्रं वै विश्वामित्र ऋषिर्यदेनन सर्वतः श्रुणोत्यथो यदस्यै सर्वतो मित्रं भवति सस्माच्छोत्रं विश्वामित्र ऋषिः ।

–श. प. ८।१।२।६

कान जब दशों दिशाओं के दूर व्यापी शब्दों को सुनते हैं सब ओर से सद्वचनों को ही ग्रहण करते हैं । तब वह विश्वामित्र कहलते हैं ।

वाक वै विश्व कर्मार्षि वर्चाहीदं सर्व कृतम् ।

–शत पथ ८।१।२।६

वाणी जब उच्चारण मात्र से ही सब कुछ उत्पन्न और सम्पन्न करती है तब वह विश्व कर्मा ऋषि बन जाती है ।

शत पथ ब्राह्मण १४।५।२ में इन्द्रियों का ऋषि परक नाम करण इस प्रकार हुआ है–

"दो कान गौतम और भारद्वाज दो नासिका छिद्र विशिह आदि काश्यप है । दो आँखे विश्वामित्र और जमदाग्नि हैं । मुख अत्रि है ।"

विश्वामित्रः सर्व मित्रः । निरुक्त २।७।२४

विश्वामित्र वह जो सब का मित्र हो ।

विश्वस्य ह मित्रं विश्वामित्र आस । विश्वं हास्मै मित्रं भवति य एवं वेद ।

ऐ. ब्रा. ६।२०

समस्त विश्व का मित्र विश्वामित्र । उसके सभी मित्र होते हैं ।

तयोरादौ सरस्वत्याश्चालनं कथयामि ते ।
अरुन्धत्यैव कथिता पुराविद्भि सरस्वती ॥

योगकुण्डल्यूपनिषत् १।६

सुषुम्नानाड़ी को अरुन्धती अथवा सरस्वती कहते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शरीर की स्थूल इन्द्रियों में नहीं वरन् इन इन्द्रियों के संचालक सूक्ष्म केन्द्र जो मानसिक क्षेत्र में विद्यमान है । उन्हें ही ऋषि स्थापना का उद्गम मानना चाहिए, इन्द्रियों का मांसल भाग तो मात्र क्रिया-कलाप सम्पन्न करता है । अनुभूतियाँ तो मस्तिष्क में ही होती हैं । इन्द्रियाँ उपभेजा के पीछे दृष्टि कौण का निर्धारण और उनके संचालन का निर्देश तो मानसिक आस्था पर ही निर्भर रहता है । अस्तु उन्हीं मस्तिष्क में अवस्थित चेतना केन्द्र को ऋषि मानना चाहिए ।

सप्त ऋषियों मस्तिष्क में निवास करने वाले सात प्रमुख चेतना केन्द्र हैं–

(१) आज्ञा केन्द्र–'मोटर एरिया'
(२) प्रज्ञा केन्द्र–'सेन्सरी एरिया'
(३) श्रवण केन्द्र–'हियरिंग'
(४) वाणी केन्द्र–'स्पीच'
(५) दृष्टि केन्द्र–'विजन'
(६) घ्राण केन्द्र–'स्मेल'
(७) स्वाद केन्द्र–'टेस्ट'

इन्हें ही सप्त ऋषि आश्रम कहना चाहिए । काय तपोवन में हमारा मस्तिष्क–मानसिक स्तर ही सप्त ऋषि आश्रम है । इन्द्रियाँ तो अपना आहार पदार्थों के रूप में माँगती हैं पर यह ऋषि तो तप और ब्रह्म–परायणता के आधार पर ही पोषण प्राप्त करते हैं–जीवित रहते हैं ।

तद्ब्रह्म च तपश्च सप्तऋषय उपजीवन्ति
ब्रह्मवर्चस्युप्रजीवनीयो भवति एवं वेद ।

अथर्व ८/१३/१६/१०/४

सप्त ऋषि तप और बल के आधार पर जीवित रहते हैं । तो इस रहस्य को जानता है वह ब्रह्मवर्चस और जीवन प्राप्त करता है ।

महायोग विज्ञान में कहा गया है कि सात लोक आकाश में ढूँढ़ना व्यर्थ है । वे किसी ग्रह नक्षत्र के रूप में नहीं हैं, वरन् आत्म सत्ता में सप्त चक्रों के रूप में ही उनका अस्तित्त्व है । वे इस प्रकार हैं– (१) भू–लोक मूलाधार में (२) भुवः लोक स्वाधिष्ठान में (३) स्वः लोक नाभि स्थान में (४) मह लोक हृदय में (५) जन लोक कण्ठ में (६) तप लोक ललाट में (७) सत्य लोक ब्रह्मरंध्र में विद्यमान है । जहाँ स्थान मात्र गिना दिये गये हैं । वहाँ उन स्थानों में अवस्थित चक्रों का ही संकेत समझा जाना चाहिये ।

उपनिषदकार ने मानवी काया को 'छै अरे' एवं 'सात–चक्र' लगा हुआ विलक्षण रथ कहा है– यह षट्चक्रों का सप्त चक्रों का ही संकेत है–

"ऊर्ध्वमेनं अन्य उपरे विलक्षण सपत
चक्रे शब्दर आहुरर्पितम् ।"

अन्य लोक उस विलक्षण को सात चक्र और छै अरों वाला कहते हैं ।

पद्म पुराण में भागवत् माहात्म्य वर्णन सन्दर्भ में धुन्धुकारी प्रेत की मोक्ष उस कथा श्रवण के फलस्वरूप होने का उल्लेख है । यह प्रेत बाँस की गांठों को फोड़ता हुआ नीचे से ऊपर चला था और गाँठें तोड़कर प्रेत योनि से छूटा तथा परम पद का अधिकारी बना था । अध्याय ५ श्लोक ६४ में यह बाँसों की गाँठ वेधे जाने का रहस्योद्घाटन करते हुए इसे योगिक ग्रन्थि भेद बताया है । कहा गया है –

जडस्य शुष्कं वंशस्यं यत्र ग्रन्थि विभेदनम् ।
चित्रं किमु तदा चित्त ग्रन्थिभेदः कथा श्रवात् ॥

इसमें सूखे और जड़ बाँस की गाँठें फटने का तात्पर्य चित्त की ग्रन्थियाँ खुलना बताया गया है ।

भागवत पुराण के स्कन्ध २, अध्याय २ के १६, २०, २१ श्लोकों में महर्षि शुकाचार्य ने विहंगम मार्ग से ब्रह्म निष्ठ योगियों के प्राण त्याग का विधान बताया है । इसमें षट्चक्र वेधन विधान की ही प्रक्रिया है । छहों चक्रों का वेधन करते हुए अन्त में सहस्रार चक्र में प्राण को लय करते हुये प्राण त्याग करने की विधि समझाई गई है ।

यह सप्त ऋषि जिस पर अनुग्रह करते हैं उन्हें सद्गुणों की सात विभूतियाँ प्रदान करते हैं । स्पष्ट है कि सद्गुण ही वे देव अनुग्रह हैं जिनके मूल्य पर भौतिक और आत्मिक, सम्पदाएँ, सफलताएँ खरीदी जाती हैं । यह भ्रान्तियाँ निरस्त की जानी चाहिए कि उपासना के फलस्वरूप सीधी सम्पदाएँ मिलती हैं । सच्ची साधना के फलस्वरूप अन्तरंग में उत्कृष्टता उभरती है और सज्जनोचित सद्भावों का विस्तार होता है । बहिरंग में सत्प्रवृत्तियाँ सक्रिय होती हैं और क्रिया–कलापों में महामानवों जैसी प्रतिभा व्यवस्था एवं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शालीनता की मात्रा बढ़ती है । जहाँ आत्म विकास का यह स्वरूप दृष्टिगोचर हो समझना चाहिए कि यहाँ सच्ची साधना की गई और उसके फलस्वरूप व्यक्तित्त्व में परिष्कार बन कर देव अनुग्रह अवतरित हुआ । व्यक्तित्त्व निखरने के फलस्वरूप ही भौतिक और आत्मिक सफलताओं के–ऋद्धि–सिद्धि के रूप में वे प्रतिफल प्राप्त होते हैं जिनका माहात्म्य साधनाओं की सफलता के रूप में वर्णन किया गया है ।

न देवा दण्डमादाय रक्षन्ति पशुपालवत् ।
यस्तु रक्षितुमिच्छन्ति बुद्ध्या संयोजयन्तितम् ॥

–महाभारत

ग्वाला जिस प्रकार लाठी लेकर पशुओं की रक्षा करते हैं उस तरह देवता किसी की रक्षा नहीं करते । वे जिसकी रक्षा करना चाहते हैं, उसकी बुद्धि को सन्मार्ग पर नियोजित कर देते हैं ।

सप्त ऋषियों का अनुग्रह सात लोकों, सात द्वीपों, सात समुद्रों, सात पर्वतों, सात नदियों, का स्वामित्त्व उपलब्ध होने के रूप में मिलता है । तात्पर्य यह हुआ कि ब्रह्माण्ड सत्ता की प्रतीक आत्म सत्ता पर अपना अधिकार अधिपत्य मिलता है । अपनी क्षमताओं को समझने, उन्हें उभारने और उपयोग करने का कौशल प्राप्त होता है । जिसे यह सफलता मिल सकी समझना चाहिए उसे ब्रह्माण्ड का अधिपत्य मिल गया ।

सात यज्ञ, सात अग्नि, सात सोम आदि की उपासना से जो प्रतिफल मिलते बताये गये हैं उन्हें भी उन्हीं सात ऋषियों के वरदान समझना चाहिए जो अपने आत्म सत्ता के हिमालय में निरन्तर निवास और तप करते हैं । इन्हीं शक्ति धाराओं को साधना विज्ञान में सात चक्र कहा गया है । प्रत्येक चक्र प्रत्येक ऋषि के एक-एक वरदान एक-एक सद्गुण के रूप में प्राप्त होता है । वे ही ऋद्धि–सिद्धियों के साथ में जीवन को देवोमय बनाते हैं और स्वर्गीय उपलब्धियों से सुसम्पन्न करते हैं ।

'यों पौराणिक गाथाओं में ऋषि, व्यक्ति–विशेष थे । महामानवों के रूप में योग और तप में निरत–स्व पर कल्याण में संलग्न जीवनयापन करते हुए उनका वर्णन किया गया है । पर आत्म विज्ञान में ऋषि तत्त्व जाग्रत एवं प्रखर प्राण सत्ता को कहा गया है वे सूर्य के समान एक कहे जा सकते हैं । अथवा सप्त किरणों के रूप में उनके सात नाम दिये जा सकते हैं और सुविधा के लिए सात वर्गों में विभाजित करके सात व्याख्याएँ की जा सकती हैं । सृष्टि के आदि में जब जीव सत्ता प्रकट हुई तो उसका स्वरूप 'ऋषि प्राण'के रूप में था । यह जीवात्मा का शुद्ध स्वरूप है । उसी स्थिति में पहुँचने पर आत्मा को देवात्मा एवं परमात्मा के रूप में परिष्कृत बनने का अवसर मिलता है । शतपथ में इस रहस्य का इस प्रकार उल्लेख हुआ है–

असद्वा इदमग्न आसीत् तदाहुः कि तदसदासी दित्यृष्यो वा व तेऽमेऽ सदासीत तदाहुः के ते ऋषय इति, प्राणा वा ऋषय ।

–शतपथ ६।१।१।१

पहले सृष्टि से पूर्व में यह असत् था । तब कहा–वह असत् क्या था ? उत्तर–वे ऋषि ही थे । वे सृष्टि से पूर्व असत थे । तब कहा–वे ऋषि क्या थे ? प्राण ही ऋषि थे ।

सप्त ऋषि मरते नहीं, वे आकाश में सात तारागणों की श्रृंखला के रूप में भी चमकते हैं और हमारी जीवन सत्ता में भी सप्त चक्र बन कर विद्यमान हैं । जो इन ऋषियों के सान्निध्य में रहने की–उनका अनुग्रह प्राप्त करने की साधना करता है वह उन ऋषियों की तरह ही ब्रह्म वर्चस् सम्पन्न बन जाता है । अथर्व वेद इस तथ्य की साक्षी इस प्रकार देता है–

तद्ब्रह्म च तपश्च सप्तऋषय उपजीवन्ति
ब्रह्मवर्चस्युपजीवनीयो भवति य एवं वे ।

–अथर्व ८।१३,१६।१०।४

सप्त ऋषि तप और बल ब्रह्म के आधार पर जीवित रहते हैं । जो इस रहस्य को जानता है वह ब्रह्मवर्चस् और जीवन प्राप्त करता है ।

सात चक्रों को सप्त प्राण केन्द्र कहा गया है । इन्हीं को, सात यज्ञ, सात समिधा, सात लोक आदि कहा गया है । ये सभी सात सात अन्तर्गुहा में निहित हैं । इस रहस्य को मुण्डकोपनिषद् २।१।८ में प्रकट किया गया है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सप्त प्राणाः प्रभवन्ति तस्मात्,
सप्तार्चिषः समधिः सप्त होमाः ।
सप्त इमे लोका येष चतन्ति प्राणाः,
गुहाशया निहिताः सप्त सप्त ॥८॥

सात चक्रों में समस्त तीर्थ प्रतिनिधि रूप में विद्यमान हैं । इनका अवगाहन करने से समस्त तीर्थों का पुण्य फल साधक को प्राप्त होता है ।

ऐसे अनेक तथ्यों पर विचार करके तत्त्वज्ञों ने यह निष्कर्ष निकाला है कि कुण्डलिनी के चक्र एक प्रकार की फीक्वेंसियाँ हैं जो ब्रह्माण्ड व्यापी विशिष्ट शक्तियों से चेतना का सम्बन्ध जोड़ती हैं । इस संयोग का नाम ही सिद्धि है । वह शक्तियाँ ही देवता, ऋषि और लोक कहलाती हैं । उनकी उपलब्धि जंग लगे लौह जीवन को भी खरा कुंदन, सामान्य मनुष्य को सम्राटों जैसा ऐश्वर्यवान बना देती हैं । सृष्टि में ऐसा कुछ भी नहीं शेष रहता जो इन चक्रों को जाग्रत कर लेने के बाद मिल न सकता हो ।

इन चक्रों के जागरण के लिये नियमित जप के अतिरिक्त पंचकोशों की अनावरण साधना का उच्चस्तरीय अभ्यास भी करना पड़ता है । यों सामान्य जप उपासना से भी उनका विकास होता है । और शनैः-शनै इन चक्रों में सन्निहित शक्तियों का लाभ मिलता है । पर यदि उस शक्ति की अधिक मात्रा अभीष्ट हो तो उच्चस्तरीय साधना का अभ्यास करना पड़ता है । वह अभ्यास कठिन तो है पर उनसे साधक को वह शक्तियाँ मिलती हैं जिन्हें पाकर पर इन्द्र जैसी सामर्थ्य, कुबेर जैसी सम्पन्नता और ऋषियों जैसी त्रिकाल दर्शी सिद्धि का आनन्द लाभ प्राप्त करता है ।

कुण्डलिनी के पाँच मुख–पाँच शक्ति प्रवाह

बोलचाल की भाषा में सभी जीवित प्राणियों को जीवधारी कहते हैं । वे प्राणवान हैं, इसलिए प्राणी भी कहते हैं । पर बात इतनी साधारण नहीं है । पदार्थ विज्ञानी तो जीव की कोई सत्ता ही नहीं मानते । पंचतत्त्वों एवं रासायनिक द्रव्यों का मिलन मात्र ही जीवन है, ऐसा उनका मत है । वे कहते हैं कि इस संयोग का वियोग हो जाना जीव की सत्ता का आत्यंतिक समापन है । उनकी दृष्टि में आत्मा नाम की कोई चीज नहीं । मनुष्य एक चलता, फिरता, बोलता पौधा भर है ।

ये परिभाषाएँ तत्त्वज्ञान की कसौटी पर खरी नहीं उतरतीं । वे आत्मा का अस्तित्त्व परमात्मा के छोटे घटक रूप में मानते हैं । प्राण इससे भिन्न है । प्राण जीवट को कहा गया है । जिसमें आन्तरिक साहस और बहिरंग पराक्रम है वही प्राणवान है । प्राणवान होने में ही जीवधारी का गौरव और जीवन का महत्त्व है । यहाँ चर्चा जिस प्राण की की गई हैं, उसे सामान्य भाषा में जीवट कहते हैं । जीवट से तात्पर्य है "प्रतिभा" । प्रतिभा कहते हैं–समझदारी, ईमानदारी, जिम्मेदारी और बहादुरी के समन्वय को । अध्यात्म की भाषा में इसी विभूतिमयी विशेषण को प्राणाग्नि कहा गया है । हिम्मत वाले ओर बलवान तो दुष्ट, डाकू और कुचक्री भी होते हैं । पर उन्हें शौर्यवान पुरुषार्थी कहलाने का श्रेय नहीं मिलता । अधिक से अधिक उन्हें दैत्य, दुष्ट कहा जा सकता है

प्राणवान होना मनुष्य जीवन की महानतम उपलब्धि है । जिनके पास यह वर्चस्व होता है, वे ही अनुकरणीय अभिनन्दनीय कार्य कर पाते हैं । महापुरुष कहलाते हैं और अपने सुसंस्कृत व्यक्तित्त्व के कारण स्वयं उठते और दूसरों को उठाते हैं । स्वयं पार होते और असंख्यों को अपनी नाव पर बिठाकर पार उतारते हैं ।

प्राण एक चेतना शक्ति है । जिसे जीवन्त विद्युत कहा जा सकता है । बिजली की शक्ति से बड़े–बड़े कल कारखाने चलते हैं । नगर रोशनी से जगमगाते हैं और उस ऊर्जा के सहारे अनेकों सुख–साधन जुटाते हैं । प्राण विद्युत भी साधारण से शरीरों के सहारे ऐसे असम्भव जैसे कार्य सम्पन्न कर दिखाती है, जिनका स्वरूप देखते हुए आश्चर्य चकित रह जाना पड़े ।

संसार में जीवित प्राणियों की संख्या गिन पाना कठिन है । जल, थल में रहने वाले और आकाश में परिभ्रमण करते रहने वाले जन्तुओं की कोई गणना नहीं कर सकता । उपजाऊ भूमि में सूक्ष्म जीवी होते हैं । पानी की एक बूँद में सहस्रों अदृश्य जन्तु देखे जा सकते हैं । इनकी गणना कौन करे ? उनकी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संख्या कल्पनातीत है । यों कहने को तो इन सभी को प्राणी कहा जा सकता है । पर इन पंक्तियों में जिस प्राण की चर्चा की जा रही है उसका तात्पर्य ऐसी प्रतिभा एवं क्षमता से है जो साधारण मनुष्यों में नहीं पाई जाती । ऊँची छलांग लगाने की हिम्मत उन्हीं में होती है । जिनकी नाड़ियों में, मांस पेशियों में कल्पना और विचारणा में उच्चस्तरीय विद्युत–शक्ति पाई जाती है । जो असाधारण सोचते और अपने एकाकी पराक्रम के बलबूते अनौखी योजना बनाते और असाधारण सफलता पाते हैं । ऐसे लोग ही अपने को कृतकृत्य हुआ मानते हैं । देखने और सुनने वाले उन्हें धन्य कहते है ।

जीव धारियों के समुदाय में प्राणवानों की ही विशिष्टता और वरिष्ठता है । वे जहाँ–तहाँ कदाचित कभी–कभी ही दीख पड़ते हैं, पर जो होते हैं वे ज्योतिवान होकर असंख्यों की आँखों में चकाचौंध उत्पन्न करते हैं । अनेकों को श्रद्धालु एवं अनुयायी बनाते हैं । जिस राह पर वे चलते हैं उस पर पीछे चलने वालों की कमी नहीं रहती । सड़क न सही, वे एक अच्छी खासी पगदंडी तो बनाकर छोड़ ही जाते हैं जिस पर चलकर भूल भटके भी गन्तव्य लक्ष्य तक पहुँच सकें । ऐसे लोग आत्म–गौरव अनुभव करते हैं और दूसरों की दृष्टि में दिव्य विभूतियों से भरे पूरे माने जाते हैं । इतिहास में ऐसे ही जीवट सम्पन्नों द्वारा किये गये महान कार्यों का उल्लेख है । उन्हीं को महामानव के नाम से मूर्धन्यों की गणना में गिना गया है ।

जीवन के साथ जुड़े हुए–शरीर मस्तिष्क परिवार–वैभव को एक तराजू पर रखा जाय और प्राण प्रतिभा को दूसरे पलड़े पर तो भारी भरेकम प्रतिभा ही बैठेगी । उन्हें ही नररत्न कहते हैं । आदर्शों का अवलम्बन लेने और उसके लिए बढ़–चढ़कर त्याग बलिदान कर गुजरने पर तो उन्हें नर नारायण कहा जाता है । उनकी कृतियाँ अनेकों का मार्ग दर्शन करती है । राजा हरिश्चन्द्र का नाटक देखने पर बालक गाँधी ने निश्चत किया है कि वे भी हरिश्चन्द्र जैसे महान बनकर रहेंगे । वह संकल्प अन्ततः पूरा ही हुआ । सत्य अहिंसा की अवधारणा करने वाले गान्धी सचमुच ही दूसरे हरिश्चन्द्र बन गये ।

ऐसी जीवट प्राप्त करने के लिए स्वाध्याय, सत्संग, मनन, चिन्तन के आत्म निर्माण करने वाले तरीके भी हो सकते हैं, मनःस्थिति भी परिस्थिति बनाती है । पर आध्यात्मिक उपचारों में ऐसी प्रतिभा प्राप्त करने के लिए प्राणायाम–प्रणाकर्षण जैसे उपचार भी हैं । उन उपचारों में सबसे ऊँची प्रक्रिया कुण्डलिनी जागरण की है । इसे सूर्योपसाना के माध्यम से भी सम्पन्न किया जा सकता है । सूर्य को भौतिक ऊर्जा का स्रोत मानना अपर्याप्त होगा ।

आत्मिकी के सिद्धान्त उसे परब्रह्म का दृश्यमान स्वरूप भी मानते हैं । और उसे गर्मी रोशनी का ग्रह गोलक भर न मानकर अन्तरात्मा में–अन्तःकरण में–और उसके प्रत्येक स्फुल्लिंग में जीवट का अभिनव संचारकर्ता भी मानते हैं । वस्तुतः वह है भी ऐसा ही । सविता को तेजस्विता यदि साधना, तपश्चर्या, सघन श्रद्धा एवं प्रबल इच्छा शक्ति के सहारे धारण की जाय तो साधक को निराश न होना पड़ेगा ।

प्राण की चैतन्य विद्युत इस निखिल ब्रह्माण्ड में सर्वत्र भरी पड़ी है । उसमें से मनुष्य अपने संकल्प बल पर चाहे जितनी मात्रा में उसे ग्रहण कर सकता है । पर उसको धारण करना उतना ही सम्भव है जितनी अपनी पात्रता हो । जलाशय में अथाह पानी भरा रहता है । उसमें से कितना ही लेने पर कोई रोक टोक भी नहीं है पर लिया उतना ही जा सकता है जितना बड़ा कि अपने पास पात्र हो । इसके अभाव में अधिक ले चलने की आकांक्षा अधूरी ही रह जाती है ।

सूर्य, ग्रह नक्षत्रों के बीच सबसे अधिक प्रकाशवान है । यह प्रकाश रोशनी के बल्ब जैसा नहीं है । वरन् अपनी ऊर्जा आभा से अनेकों को ज्योतिर्मय बनाता है । चन्द्रमा उसी के प्रकाश से इतना चमकता है । सौर मण्डल के अन्य सदस्य भी उसी के प्रकाश से प्रकाशवान होकर दृष्टिगोचर होते हैं । वृक्षों, वनस्पतियों में जीवन वही बाँटता है । उसी के कारण कलियाँ फूल बनकर विकसित होती हैं । प्रश्नोपनिषद् में–नचिकेता को विस्तार से इसी प्राण की महिमा बताई और उससे संबंधित पाँच प्रकार की प्रणाग्नि विद्या सिखाई है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसी प्रकार गायत्री महा–शक्ति का प्राण पक्ष–शक्ति पक्ष–कुण्डलिनी है । दोनों–मूलतः एक ही हैं । विद्युत तत्त्व एक है । ऋण और धन उसके दो विभाग मात्र हैं । जीव सत्ता एक है, शरीर और प्राण उसके दो घटक भर हैं । गायत्री और कुण्डलिनी को पृथक नहीं वरन् दो धाराओं का परस्पर पूरक स्वरूप समझा जाना चाहिए । कहा भी है–

कुण्डलिन्यां समुद्भूता गायत्री प्राणधारिणी ।
प्राणविद्या महाविद्या यस्तां वेत्ति स वेदकवत् ॥

–योगचूड़ामणि उपनिषद्

कुण्डलिनी ही प्राण शक्तमयी गायत्री का उत्पति स्थान हैं । यह गायत्री ही प्राणविद्या रूपा महाविद्या है । जो व्यक्ति इस विद्या को जानते हैं, वे ही वेदवित् हैं ।

जीव सत्ता के साथ पाँच सशक्त देवता, उसके लक्ष्य प्रयोजनों को पूर्ण करने के लिए मिले हुए हैं । वे निद्राग्रस्त हो जाने के कारण मृततुल्य पड़े रहते हैं और किसी काम नहीं आते । फलतः जीव दीन दुर्बल बना रहता है । यदि इन सशक्त सहायकों को जगाया जा सकें, उसकी सामर्थ्य का उपयोग किया जा सके तो मनुष्य सामान्य न रह कर असामान्य बनेगा । दुर्दशाग्रस्त स्थिति से उबरने और अपने महान गौर व के अनुरूप जीवन–यापन का अवसर मिलेगा । शरीरगत पाँच तत्त्वों का उल्लेख कपिलतंत्र में पाँच देवताओं के रूप में इस प्रकार किया गया है–

"आकाशस्याधियो विष्णुरग्नेश्चैव महेश्वरी ।
वायोः सूर्यः क्षितेरीशो जीवनस्य गणाधिपः ॥"

अर्थात्– आकाश के अधिपति हैं विष्णु । अग्नि की अधिपति महेश्वरी शक्ति हैं । वायु–अधिपति सूर्य हैं । पृथ्वी के स्वामी शिव हैं । और जल के अधिपति गणपति गणेश जी हैं । इस प्रकार पंच देव शरीर के पंचतत्त्वों की ही अधिपति–सत्ताएँ हैं ।

पाँच प्राणों को भी पाँच देव बताया गया है । तंत्रार्णव में कहा गया है–

पंच देवमयं जीव, पंच प्राणमयं शिव ।
कुण्डली शक्ति संयुक्तं, शुभ्र विद्युल्लतोपमम् ॥

अर्थात्– यह जीव पाँच देव सहित है । प्राणवान होने पर यह शिव है । यह परिकर कुण्डलिनी शक्तियुक्त है । इनका आकार चमकती हुई बिजली के समान हैं ।

मनुष्य के सूक्ष्म शरीर में यह पाँच प्राण– (१) प्राण (२) उदान (३) अपान (४) व्यान (५) समान के रूप में विकसित हुए हैं । इनके पाँच सहायक भी हैं ।जिन्हें (१) देवदत्त (२) वृकल (३) कूर्म (४) नाग (५) धनजय के नाम से वर्णित किया गया है । यह चेतना की पाँच परतें हैं । इनके सम्मिश्रण से व्यक्तित्त्व बनता है । उनका स्तर एवं अनुपात जितना ऊँचा नीचा होता है, उसी आधार पर व्यक्ति की वरिष्ठता एवं विशिष्टता प्रदीप्त होती है ।

आधुनिकतम गेस्टाल्ट साइकॉलाजी के अनुसार भी व्यक्तित्त्व को पाँच भागों में विभाजित किया गया है । मनः चिकित्सक डा.फ्रेडरिक. ए. पर्ल्स ने यह प्रतिपादन व्यक्त करते हुए बताया कि पाँच परतें जो व्यक्तित्त्व का निर्माण करती हैं, यदि सही विश्लेषण विधि द्वारा खोली टटोली जा सकें तो स्वभावकी अनगढ़ता को मिटाकर व्यक्तित्त्व को परिष्कृत कर सकना सम्भव है । ये पाँच परते इस प्रकार हैं– (१) क्लीश लेयर (२) सिंथेटिक लेयर (३) इम्पल्स लेयर (४) इम्पलोसिव अथवा डेथ लेयर एवं (५) एक्सप्लोजिव अथवा लाइफलेयर निरर्थक अनगढ़ जीवन से आरंभ होने वाली क्लीशलेयर अपने विकास की चरमावस्था में एक विस्फोटित ऊर्जा का रूप ले लेती है । जिसमें व्यक्ति स्वतंत्र, विश्वसनीय सक्रिय और यथार्थ जीवन जीने लगता है । गेस्टॉल्ट ने ऊपर जिन ऊर्जा परतों की ओर संकेत किया है, वे व्यक्ति के सूक्ष्म शरीर में अवस्थित पंचकोश ही है ।

जिस प्रकार ब्रह्माण्ड का दृश्यमान पदार्थ पञ्चतत्त्वों से बना है । उसी प्रकार संव्याप्त चेतना प्राण रूप में भरी पड़ी है । यह ब्रह्माण्ड पंच वेतन सत्ताओं से भरा पड़ा है । मानवी पिण्ड भी उसी का छोटा संस्करण है । जो ब्रह्माण्ड में है । वही पिण्ड में है । ब्रह्माण्डव्यापी पंच प्राणों का समावेश इस काया में भी है । वह सुषुप्त एवं बीज रूप में विद्यमान है । बीज में समूचा वृक्ष विद्यमान रहता है । पर उसकी स्थिति को स्पष्ट देख सकना संभव नहीं । पुरुष और स्त्रियों के शुक्राणु डिम्बाणु मिल कर बालक की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संरचना करते हैं, किन्तु उन कणों को उलट पुलट कर सूक्ष्मदर्शी यंत्रों से भी देखा जाय तो भी उनमें शिशु शरीर का कोई ढांचा दृष्टिगोचर नहीं होगा । ठीक इसी प्रकार सावित्री शक्ति की पंचधा प्रवृत्तियों के संबंध में यह नहीं कहा जा सकता कि प्रत्यक्षतः उनका स्वरूप और परिणाम क्या है ? तो भी इस दिव्य शक्ति के शरीर मे अवतरित होने पर जो परिणाम सामने आते है । उनके आधार पर उनकी शक्ति और सत्ता को समझा जा सकता है ।

पाँच वैभवों की गणना होती है । (१) बल (२) धन (३) ज्ञान (४) विज्ञान (५) कौशल । इस प्रकार अन्यान्य भी कई प्रकार के पंच प्रकरण हैं । महाभारत के प्रमुख योद्धा पाँच पाण्डव थे । राम दल में भी हनुमान, अंगद, नल, नील, जामवन्त यह पाँच ही प्रमुख सेनापति थे । पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं । पाँच ही कर्मेन्द्रियाँ, पंचरत्न, पंचामृत, पंचगव्य, पञ्चांग जैसे कितने ही पंचक गिनाये जा सकते हैं । वेदान्त की पंचीकरण साधना प्रसद्धि है ।

कुण्डलिनी जागरण की साधना में प्रयुक्त पँचकोशों में अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय, एवं आनन्दमय कोषों की गणना की जाती है ।

महायोग विज्ञान में कुण्डलिनी जागरण का परिचय पंच कोषों की जाग्रति के रूप में मिलता है ।

कुण्डलिनी शक्तिसविर्भति साधके ।
तदा सपंच कोशे मतजोऽनुभर्वात ध्रुवम ॥

अर्थात्- जब कुण्डलिनी जाग्रत होती है तो साधक के पाँचों कोश ज्योतिर्मय हो उठते हैं ।

पाँच तत्त्वों से शरीर बना है । उसके सत्त्व गुण चेतना के पाँच उभरों के रूप में दृष्टिगोचर होते हैं । (१) मन माइण्ड (२) बुद्धि-इन्टलैक्ट (३) इच्छा-विल (४) चित्त-माइन्ड स्टफ (५) अहंकार-ईगो ।

पाँच तत्त्वों के राजस तत्त्व से पाँच प्राण उत्पन्न होते हैं इन्हें वायटल फोर्स भी कहा जा सकता है । पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ उन्हीं के आधार पर अपने विषयों का उत्तरदायित्त्व निबाहती हैं । तत्त्वों के तमस भाग से काय कलेवर का निर्माण हुआ है । (१) रस (२) रक्त (३) मांस (४) अस्थि (५) मज्जा के रूप में उन्हें क्रिया निरत काया में देखा जा सकता है । मस्तिष्क, हृदय, आमाशय, फुफ्फुस और गुर्दे यह पाँचों विशिष्ट अवयव तथा पाँच कर्मेन्द्रियों को उसी क्षेत्र का उत्पादन कह सकते हैं ।

जब हम विज्ञान की परिभाषा में इन पंचप्राणों, पंचकोषों की विवेचना करते हैं । तो पाते है कि इनके प्रतिनिधिकरण व्यष्टि एवं समष्टि सभी में संव्याप्त हैं ।

भौतिक विज्ञान भी पाँच शक्तियों को प्रमुख मानता है । (१) महासत्त्व (२) अल्पसत्त्व (३) गुरुत्वाकर्षण (४) विद्युतचुम्बकीय बल (५) एण्टीमैटर । ब्रह्माण्डीय कण भी पाँच ही प्रख्यात हैं-न्यूट्रीनों, क्वार्कस, पल्साज, फोटॉन्स, एवं लेप्टान्स । क्वान्टम वेव थ्योरी के अनुसार सारी शक्ति का कार्य व्यापार तरंगों से ही चल रहा है । ब्रह्माण्डीय किरणें पाँच ही हैं-अल्ट्रावायोलेट, इन्फ्रारेड, कॉस्मिक, रेडियो, वेव्स या माइक्रोवेव्स इन्टरस्टेलर वेव्स । ध्वनि तरंगें भी पाँच हैं-सोनिक, अल्ट्रासोनिक, इन्फ्रासोनिक, हाइपरसोनिक, सुपरसोनिक । पृथ्वी पर चढ़े पाँच ही कवच भी हैं-लीथोस्फीयर, हाइट्रोफीयर, बायोस्फीयर, पीडोस्फीयर एवं एटमास्फीयर इनके ऊपर आयनोस्फियर है जो १६०० किलोमीटर ऊँचाई तक चला गया है । इसकी भी पाँच परतें हैं-एण्डोस्फीयर, ट्रोपोस्फीयर, स्ट्रटोस्फीयर, आज्ञानोस्फीयर एवं एक्जोस्फीयर ।

पाँच शक्तियाँ ऐसी है । जो जैव भौतिकी के क्षेत्र में क्रियाशील हैं ये हैं- बायोइलेक्ट्रीसीटी-जैवविद्युत बायोमेग्नेटिस्म- जैवचुम्बकत्त्व, रेडिएशन-विकिरण, क्रिएशन-रिप्रोडक्शन (प्रजनन) इम्युनीटी-प्रतिरोधी सामर्थ्य । जैवविद्युत के भी वैज्ञानिक दृष्टि से पाँच भेद हैं- प्लेक्सस इलेक्ट्रीसीटी, न्यूरोनल इलेक्ट्रसीटी, सेल्युलर इलेक्ट्रीसीटी, कन्डक्शन इलेक्ट्रीसीटी एवं फेशियोऑक्युलर इलेक्ट्रीसीटी । प्रकारान्तर से इन्हीं को अध्यात्म भाषा में वर्चस्, ओजस, तेजस्, ब्रह्मचर्य वचर्स् एवं मनस के अन्तर्गत समेट लिया गया है ।

मस्तिष्क स्नायु संस्थान का संचालन करने वाले पाँच प्रमुख घटक हैं- कार्टिकल न्युकलाई, थेलेमस, हाइपोथेलेमस, मेडयुला एवं स्पाइनल कार्ड । मस्तिष्क को सक्रिय रखने वाले रसस्राव भी प्रमुखतः पाँच ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । जिन्हें न्यूरोट्यूमरल सिक्रीशन कहते हैं– डोपासिन, एण्डाफिन, सिरोटोनिन, एन्केफेलीन एवं गाबा । इनमें न्यूनाधिक अस्तव्यस्तता से मानसिक क्रियाकलाप गड़बड़ा जाते है । पाँच हारमोन ग्रन्थियाँ जिनकी संगति बहुधा पैंचकोशों से बिठाई जाती है । इस प्रकार है–पीनियल, पीटुटरी, थाइराइड, एड्रीनल एवं गोनेडस । षट्चक्रों की चर्चा आने पर छठी थाइमस ग्रंथि का प्रसंग और जोड़ दिया जाता है ।

इस प्रकार ब्रह्माण्डव्यापी और शरीरगत कई विभाजन है जिनका योगदान सूक्ष्म क्रियाकलापों में होता है । इन सभी पाँच प्रमुख शक्ति समूहों को सावित्री के पाँच मुखों का–कुण्डलिनी शक्ति के पंचकोशों का ही अंग प्रत्यंग माना जा सकता है । इनमें से कुछ को भी नियंत्रित कर सुनियोजित किया जा सके तो उसकी उपलब्धियाँ ऐसी हो सकती हैं मानो पाँचलोकों से पाँच देवताओं द्वारा साधक पर दिव्यशक्ति भर पुण्यों की वर्षा की जा रही हो । कुण्डलिनी जागरण की फल–पत्तियाँ ऐसी ही विशिष्टताओं से भरी पूरी हैं ।

कुण्डलिनी के वशीभूत–ब्राह्मी चेतना के क्रिया कलाप

मानवी काया में दिव्य सचेतन बिजली के भण्डार भरे पड़े हैं । इनमें से जीवन–यापन विधा में थोड़ा ही प्रयुक्त होता है । खाने–कमाने, सोने, नित्यकर्म, विनोद आदि में इसका थोड़ा सा ही अंश काम में आता है । अभ्यास के अनुरूप उतना ही भाग काम में लाने का अनुभव होता है । शेष सामर्थ्य है तो सही पर प्रसुप्त स्थिति में । यदि उसे जाग्रत करके सक्रिय सुनियोजित किया जा सके तो उससे इतने अधिक ओर इतनी विविधता भरे महान कार्य सम्पन्न होते रह सकते हैं कि उन्हें आश्चर्यजनक स्तर तक विकसित हुआ देखा जा सकता है । ऐसे व्यक्तियों की गतिविधियाँ और विभूतियाँ इतनी विलक्षण होती हैं, जिन्हें देखकर आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है । साधारणतया समग्र शरीर और मस्तिष्क में संव्याप्त विद्युत शक्ति का मात्र सात प्रतिशत भाग ही व्यस्त लोगों के दैनन्दिन जीवन में प्रयुक्त होता है । इसके अतिरिक्त जो भाग शेष रह जाता है, उस अविज्ञात को कुण्डलिनी जागरण प्रक्रिया के माध्यम से सक्षम बनाया जाता है । इस भण्डार में से जो जितना कुरेद लेता है, बटोर लेता है, वह उतना ही सुसम्पन्न बन जाता है ।

वैज्ञानिकों का निष्कर्ष है कि मानवी मस्तिष्क की संरचना अत्यन्त जटिल है । उसमें प्रत्येक न्यूरान करीब ६०,००० सिनेप्सों से जुड़ा रहता है । एक न्यूरान से दूसरे न्यूरान को सब संकेत ३६० मील प्रति घंटा की गति से मिलते हैं । फिर वे अपने स्थान पर आ जाते हैं । ये संकेत मस्तिष्कीय विद्युत शक्ति से मिलते हैं । स्वीडन के जीवन विज्ञानी होल्डर हाइडेन के अनुसार इस विद्युत से ही चिन्तन कोशिकाएँ ज्ञान तन्तुओं के लिए संवेदनशील बनती है । प्रतिभा, पराक्रम एवं विवेक का जागरण इन्हीं कोशिकाओं की स्फुरणा का परिणाम है ।

सुविख्यात मनीषी–वैज्ञानिक आइन्स्टीन के अनुसार मानव स्मृति कोश में १०० अरब सूचनाएँ संग्रहित करने की शक्ति होती है जो 'एन्साइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका' के तीस वाल्यूम में अंकित कुल सूचनाओं का पाँच गुना है । दस अरब न्यूरान्स एवं दस खरब सिनेप्स समूहों से बना मस्तिष्क अद्भुत विलक्षणताओं का भण्डार और एक जादुई पिटारा है । डा. डी. सी. रीफ. एल. एच. स्नीडर, डा. विलियम होरविज, डा. मार्टिन डब्लू बार आदि अनेक वैज्ञानिक एवं विशेषज्ञ मस्तिष्क की विलक्षणता से चकित होकर कहते हैं, ऐसा सुपर कम्प्यूटर बना पाना मानव के बस की बात नहीं ।

किन्हीं–किन्ही में अद्भुत विलक्षण प्रतिभा की झलक बाल्यकाल में ही दीखने लगती है । यह जाग्रत कुण्डलिनी की ही चमत्कृति है ।आचार्य शंकर ने तीन वर्ष की आयु में मातृभाषा मलयालम सीख ली थी । माता पिता से सुन–सुन कर पुराणादि के विशिष्ट प्रसंग याद कर लिए थे । पाँच वर्ष की आयु में उनका यज्ञोपवीत संस्कार कराके, विद्याध्ययन के लिए भेजा गया । सात वर्ष के होते–होते उन्होंने वेद वेदान्त, वेदांगों का पूर्ण अध्ययन कर लिया था । आठ वर्ष की अवस्था में सन्यास दीक्षा ले ली । कुछ ही दिनों में वे सिद्ध योगी हो गये । १६ वर्ष की आयु तक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वे प्रमुख भाष्य आदि का लेखन पूरा कर चुके थे ।

भारतीय संस्कृति का पुरातन इतिहास इस तथ्य का साक्षी है कि आत्मिक प्रगति के क्षेत्र में ऋषिगण जीवन के प्रारम्भ से ही अग्रगामी रहे हैं । ऐसे अनेक आख्यान पढ़ने को मिलते हैं, जो जाग्रत अविज्ञात सम्पदा की फलश्रुतियों की एक झलक दिखाते हैं ।

हो सकता है किन्हीं को इन आख्यानों में अतिशयोक्ति जान पड़े । पर ऐसे कई आधुनिक उदाहरण भी हमारे सामने हैं । ग्राहमबेल ने २० वर्ष की आयु में टेलीफोन का और बिल्वर राइट ने वायुयान का ३२ वर्ष में आविष्कार किया । एली ह्विटली ने २८ वर्ष में कपास ओंटने की मशीन और ब्लेस पास्कल ने ३२ वर्ष में परिकलनह–यंत्र प्रथम बार बनाया । जेम्स क्रिस्टन ने १२ वर्ष की आयु में अरबी, ग्रीक, यहूदी तथा फ्लैमिश सहित विश्व की अनेक भाषाएँ सीख ली थीं । 'गिनीज बुक ऑफ वर्ड रिकार्डस' में इन सभी का एक कीर्तिमान के नाते उल्लेख है ।

प्रसिद्ध कवि गेटे ने १४ वर्ष में प्रसिद्ध काव्य 'थाट्स इन द डिस्टेटो आव जीसस क्राइस्ट इन टू हेल' लिखा । विक्टर ह्यूगो ने १४ वर्ष की आयु तक तीन हजार कविताएँ लिखीं । संत ज्ञानेश्वर ने १५ वर्ष में प्रसिद्ध 'ज्ञानेश्वरी' गीता पर लिखा । सिकन्दर २० वर्ष में विश्व विजय के लिए निकला था । मुगल सम्राट अकबर ने १८ वर्ष में गद्दी को भली भाँति सँभाला और काफी ख्याति पाई । सम्राट अशोक २० वर्ष में और शिवाजी १२ वर्ष में गद्दी पर बैठे थे ।

कुण्डलिनी विज्ञान का अनुसंधान–विवेचन वस्तुतः प्रसुप्त की जाग्रति का विज्ञान ही है । यदि ऐसा योग साधना–उपचारों द्वारा संभव हो सके तो शारीरिक बलिष्ठता और मानसिक प्रतिभा असाधारण रूप से बढ़ाई जा सकती है । शौर्य, पराक्रम, साहस जैसे गुण और स्फूर्ति, तत्परता, तन्मयता, सूझबूझ का स्तर इतना असामान्य हो सकता है कि उसके माध्यम से किये गए क्रिया–कलाप बहुमुखी सफलताएँ अपनी ओर खींचते घसीटते चले आते हैं ।

मनुष्य की आकृतियाँ तो लगभग एक जैसी होती हैं, पर उनकी प्रकृति में इतना अन्तर पाया जाता है कि उसे देखकर हतप्रभ रह जाना पड़ता है । कितने ही लोग हाथ पैर सिर सही होने पर भी गई–गुजरी अनगढ़ स्थिति में पड़े रहते हैं और ज्यों–त्यों करके जीवन की गाड़ी धकेलते हैं । किन्तु वैसे ही परिस्थितियों में जन्मे तथा पले व्यक्ति अपने विकसित मनोबल के कारण ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न कर लेते हैं, जिनमें सफलताओं का श्रेय पर्वत जितना जमा हो जाता है, वे प्रतिकूलताओं के बीच रहते हैं, पर उन्हें अनुकूल बनाने में देर नहीं लगती । उनका बढ़ा हुआ मनोबल ऐसी राह सुझाता है, जिस पर चलते हुए लम्बे लक्ष्य को सरलतापूर्वक पार किया जा सके और मार्ग के व्यवधानों को कुचलते हुए अभीष्ट केन्द्र तक सरलता पूर्वक पहुँचा जा सके । यह जाग्रत मनः शक्ति का ही चमत्कार है ।

शरीर पर मन का असाधारण प्रभाव होता है । प्राण विद्युत की पर्याप्त सप्लाई न हो पाने की स्थिति में हमारे शरीर के सभी क्रियाकलाप ढीले और धीमे पड़ जाते हैं । इसका परिणाम रुग्णता और दुर्बलता के रूप में दृष्टिगोचर होता है इस कठिनाई को हल करने के लिए आमतौर से औषधि उपचार का प्रचलन है । किन्तु देखा गया है कि मूल कारण का निवारण न होने पर औषधियों के दबाव से रोग अपना स्वरूप भर बदलते रहते हैं । एक से दूसरी शकल बना लेते हैं, पर पीछा नहीं छोड़ते । इस व्यथा से पूरी तरह मुक्त होने के लिए शरीरगत विद्युत भण्डार को बढ़ाया और रुग्ण अवयवों पर उसका प्रयोग किया जाये तो उसका आशांतीत प्रभाव हो सकता है ।

मन, लोभ, मोह, के विचारों, वासना–तृष्णा की धमाचौकड़ी से खाली रहे तो मनुष्य प्रतिभावान, तेजस्वी एवं अग्रगामी महामानवों में गिना जा सकने योग्य तानाबाना बुन सकता है । ऐसे व्यक्ति साधारण परिस्थितियों में भी, साधनों और सहयोगियों का अभाव होते हुए भी अपने व्यक्तिगत चुम्बकत्व द्वारा जो आवश्यक है उसे निखिल ब्रह्माण्ड में से अपने लिए खींच बुलाते हैं । ऐसे तेजस्वी व्यक्ति अपने बलबूते आगे बढ़ते हैं और बाँस की तरह झुरमुट बनाते हुए असाधारण ऊँचाई तक जा पहुँचते हैं । यह उनकी आन्तरिक जीवट का प्रतिफल है । इसी को कुण्डलिनी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कहते हैं । इसके जाग्रत होने पर मनुष्य निर्भय और निश्चय बन जाता और कठिनाई, समस्याओं और आक्रमणों के विरुद्ध इस प्रकार लोहा लेता है मानो उसे खेल के मैदान में कला-कौशल भर दिखाना है ।

इन्द्रिय शक्ति सर्वविदित है । हाथ, पाँव, आँख, कान, जिव्हा आदि के सभी काम लेते हैं पर इनमें एक अदृश्य परत भी है । जैसे कि शरीर के अन्तर्गत अदृश्य, प्राण । प्राण को हम प्रत्यक्ष अनुभव नहीं करते तो भी उसके अस्तित्त्व से इन्कार नहीं कर सकते । इसी प्रकार इन्द्रियों के सामान्य क्रिया कलाप के अतिरिक्त बहुत कुछ उच्चस्तरीय कर गुजरने की, जानने-समझने की क्षमता का प्रचण्ड समावेश भी रहता है । इसे अतीन्द्रिय क्षमता कहते हैं । यह सर्व साधारण में दृष्टिगोचर नहीं होती पर, जिनकी अन्तःक्षमता प्रस्फुटित हो उठती है, उनकी अतीन्द्रिय क्षमता भी काम करती है ।

पूर्व जन्मों की स्मृति, अपना और दूसरों का भविष्य ज्ञान, दूरवर्त्ती घटनाओं की बिना माध्यम के जानकारी, अपने विचार दूसरों तक पहुँचाना, दूसरों के विचार एवं उद्देश्य समझ लेना आदि बातें अतीन्द्रिय क्षमता के अन्तर्गत ही आती हैं । उन्हें परामनोविज्ञान क्षेत्र में मान्यता मिली है और संसार भर में इस स्तर के अनेकों प्रमाण उपलब्ध हुए हैं । योग विज्ञान के अनुसार कुण्डलिनी साधना की सहस्रार चक्र पर असाधारण प्रतिक्रिया होती है । अतीन्द्रिय क्षमताओं के दिव्य संस्थान अपनी मूर्छना छोड़ कर सक्रिय बनते हैं और वह देखने, सुनने, जानने लगते हैं जो साधारण स्थिति में असम्भव ही लगता है । अन्तरिक्ष की असख्यों हलचलों को-ध्वनियों एवं प्रकाश किरणों को हमारी भोंड़ी इन्द्रिय क्षमता देख समझ नहीं पाती । काम चलाऊ मोटी जानकारियाँ दे सकने के स्तर पर ही उनका निर्माण हुआ है । यदि अतीन्द्रिय क्षमता विकसित की जा सके तो सृष्टि के रहस्यों को-अविज्ञान को समझ सकना योगाभ्यासी सिद्ध पुरुषों की भाँति ही सम्भव हो सकता हैं । ये कभी-कभी किन्हीं-किन्हीं में पूर्वजन्मों के संचित संस्कारों के कारण जागी हुई पाई है, कुछ इसे साधना पुरुषार्थ से पा लेते हैं ।

कुण्डलिनी साधना से प्राप्त अतीन्द्रिय सामर्थ्य के प्रामाणिक उदाहरण भारतीय धर्म-इतिहास में अच्छी खासी संख्या में देखने को मिलते हैं ।

संजय राजमहल में बैठे-बैठे ही महाभारत के प्रत्येक मोर्चे की छोटी से छोटी घटना भी धृतराष्ट्र को सुनाते थे ।

चैतन्य महाप्रभु ने भगवान कृष्ण की लीलाभूमि को दिव्य दृष्टि से देख लिया था । वे बंगाल से चलकर वृन्दावन पहुँचे और वहाँ तीर्थ की स्थापना की ।

जिन दिनों स्वामी विवेकानन्द इंगलैण्ड में थे, उन्हीं दिनों जमशेद जी टाटा लोहे का कारखाना लगाने की स्वीकृति लेने वहाँ गये थे । वे स्वामी जी से मिले तथा कहा कोई ऐसा स्थान बतलायें जहाँ लोहे का खनिज, कोयला और पानी, यह तीनों चीजें पर्याप्त मात्रा में मिल सकें । स्वामी जी ने दिव्य दृष्टि से देखकर बतलाया कि बिहार के सिंह-भूमि जिले में साकची नदी के किनारे फैक्ट्री डालना ठीक रहेगा । वहाँ आस-पास सभी आवश्यक पदार्थ पर्याप्त मात्रा में मिले ।

शरीर क्षेत्र और मन क्षेत्र में अनेक प्रकार के चक्र, ग्रन्थि समुच्चय प्लेक्सस नाड़ियों के दिव्य प्रवाह मौजूद हैं । इनमें से कुछ स्थूल शरीर में होते हैं, कुछ सूक्ष्म और कारण शरीर में । इन्हीं को जाग्रत करने के लिए अनेक स्तर की तपश्चर्याएँ तथा योग साधनाएँ की जाती हैं । यह कार्य स्व उपार्जन की विधि अपनाने पर समय साध्य और कष्ट साध्य है । किन्तु यदि स्थूल शरीर की भाँति सूक्ष्म शरीर एवं कारण शरीर के अंग प्रत्यंगों को जाग्रत करने में किसी की सहायता मिल सके तो लम्बी साधना करने की अपेक्षा स्वल्प साधना से ही वे लाभ मिल सकते हैं, जिन्हें सामान्य नहीं समझा जा सकता ।

ऊपर की पंक्तियों में केवल उन तथ्यों की चर्चा की गई है, जो शरीर और मन की परिधि में हैं, जिन्हें समुन्नत करने से कुण्डलिनी साधना में सफलता का असाधारण सुयोग मिलता है । इसके अतिरिक्त

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ब्रह्माण्डीय चेतन और ब्रह्म चेतना के दो क्षेत्र और भी रह जाते हैं, उन्हें सशक्त करने में आत्म विद्युत की तरंगें बड़े काम आ सकती हैं ।

ब्रह्माण्डीय चेतना–प्रकृति को कहते हैं । शास्त्रकारों ने इसे माया नाम दिया है । इसी की हलचलें इस सृष्टि के सारे क्रिया–कलापों को संचालित करतीं एवं व्यवस्थित रखतीं हैं । वैज्ञानिकों ने इस प्रकृति चेतना की उथली परतों को खोलकर अनेक प्रकार के आविष्कार किये हैं । पर जो क्षेत्र अभी तक पाया जा सकता है । उसे पर्वत की तुलना में राई भर हाथ लगने के समतुल्य समझा जा सकता है । अभी जानने को बहुत कुछ शेष है । उसे सम्भवतः यंत्र उपकरण की सहायता से, बुद्धि की घुड़ दौड़ से उपलब्ध न किया जा सकेगा । इसलिए मनुष्य की जाग्रत चेतना का स्तर इतना सूक्ष्म होना चाहिए, जो प्रकृति के अन्तराल को पारदर्शी काँच की तरह देख–समझ सकें । यह स्तर कुण्डलिनी क्षेत्र में प्रचण्डता उत्पन्न करके हस्तगत किया जा सकता है ।

संतानोत्पादन की एक शाखा है जो यौनाचार तक सीमित न रहकर गुण सूत्रों एवं जीन्स घटकों तक चली जाती है । "जेनेटिक्स" के नाम से यह विज्ञान की शाखा जानी जाती है । साधारणतया पशु प्रणियों की तरह मनुष्य भी बच्चे जनता रहता है, पर उनके अन्दर उच्चस्तरीय विशेषताएँ उत्पन्न कर सकना मनुष्य के वश की बात नहीं । त्वचा का रंग एवं चेहरे की आकृति से ही अभिभावकों, की स्थिति झलकती है किन्तु शिशु का अन्तराल कैसा होना चाहिए ? उसके व्यक्तित्त्व में किन विशेषताओं का समावेश होना चाहिए ? इसका निर्धारण कर सकना सामान्य मनुष्य के बलबूते की बात नहीं है, किन्तु जाग्रत कुण्डलिनी इस मनोकामना को पूर्ण कर सकती है । इस कथन के प्रमाण स्वरूप साधना बल से सूक्ष्म–अदृश्य देव शक्तियों के आकर्षण द्वारा बिना किसी प्रकार के शरीर सम्पर्क के गर्भाधान और प्रतिभाशाली पुत्र जन्म की अनेक घटनाएँ भारतीय पुराणों में देखी जा सकती हैं ।

कुन्ती ने सूर्य की शक्ति से कर्ण, धर्मराज से युधिष्ठिर, वायु से भीम एवं इन्द्र से अर्जुन को जन्म दिया था । सहपत्नी माद्री को भी वह विद्या सिखाई थी, उसने अश्विनी कुमारों की शक्ति से नकुल–सहदेव को जन्म दिया था । इसी प्रकार माता अञ्जनी ने भी वायु देव की शक्ति से पवन पुत्र हनुमान जी को उत्पन्न किया था । जेनेटीक इंजीनियरिंग के वे प्रयोग जो आज इक्कीसवीं सदी का विज्ञान करता देखा जाता है, इन घटना प्रसंगों के समक्ष बौने नजर आते हैं । यही नहीं विशिष्ट आध्यात्मिक प्रयोगों से असाधारण क्षमता सम्पन्न संतति पैदा करने के प्रयोग पुराण काल में खूब हुए हैं । राम आदि चारों भाई तो पुत्रेष्टि प्रयोग से हुए ही थे । द्रुपद ने भी यज्ञ प्रयोग से द्रौपदी और धृष्टद्युम्न पैदा किए थे । द्रौपदी सौन्दर्य, विवेक, शौर्य सभी क्षेत्रों में असाधारण थीं । धृष्टद्युम्न महाभारत में पाण्डव सेना के प्रधान सेनापति थे ।

वृत्रासुर का जन्म भी यज्ञ के तंत्र प्रयोग से हुआ था । उसके शरीर पर किसी भी अस्त्र–शस्त्र का कोई प्रभाव ही नहीं पड़ता था । आध्यात्मिक साधना से अनुप्राणित ऋषि दधीचि की हड्डियों से बने वज्र से ही उसे मारा जा सका था । प्राणवान वातावरण में साधन द्वारा जाग्रत प्रचण्ड जैव विद्युत गर्भस्थ शिशुओं में विलक्षण प्रतिभाएँ जाग्रत कर देती है । इसी आधार पर महर्षि बाल्मीकि के आश्रम में लव कुश, महर्षि कण्व के आश्रम में भरत, महर्षि जमदग्नि के आश्रम में वत्सराज उदयन आदि अदभुत् प्रतिभा लेकर जन्मे–विकसित हुए ।

ब्रह्माण्डीय चेतना का प्रकृति का एक परम्परागत ढर्रा लुढ़क रहा है । उसमें सीमित या व्यापक परिवर्तन कर सकने की क्षमता ब्रह्माण्डीय चेतना के स्पर्श एवं उलट–पुलट से सम्भव है । इस प्रकार मनुष्य चाहे तो अपनी अध्यात्म ऊर्जा के सहारे ब्रह्माण्ड की–भूगोल की परिस्थितियों में आवश्यक एवं उपयोगी परिवर्तन कर सकता है । ब्रह्माण्डीय चेतना उससे बहुत बड़ी सीमा तक प्रभावित हो सकती है ।

दक्षिणेश्वर में प्रकृति पर चेतना के प्रभाव की चर्चा चल रही थी । एक भक्त बोले कि प्रकृति के स्वभाव से एक पौधे में एक ही प्रकार के फूल लगते हैं, पर क्या चेतना के प्रभाव से दो तरह के भी उग सकते हैं । परमहंस जी ने कहा "चेतना के स्तर पर कुछ भी अप्रत्याशित परिवर्त्तन संभव है ।"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दूसरे दिन जब भक्त आये तो उन्हें बगीचे में एक ही डाली पर गुलाब के दो फूल–एक लाल, एक सफेद खिले दिखे । आश्चर्य में भरे हुए वे परमहंस जी के पास पहुँचे तो वे मुस्कुरा भर दिए । शक्ति सम्पन्न महापुरुषों के लिए यह एक सामान्य उपक्रम है, पर जन सामान्य को चेतना सत्ता की सामर्थ्य का विश्वास दिलाने के लिए ही वे कभी–कभी ऐसे प्रयोग करते हैं । यह प्रदर्शन के लिए नहीं होता, न ही होना चाहिए ।

भगीरथ जी द्वारा तपशक्ति से स्वर्ग में प्रवाहित गंगा को पृथ्वी पर प्रवाहित करने का सर्वविदित आख्यान प्रकृति गत चेतना से तादात्म्य व उस पर मानवी चेतना के अधिकार का सूचक है । अत्रि पत्नी अनुसूया जी ने चित्रकूट क्षेत्र में सुरसरि की एक धारा मंदाकिनी रूप में अपने तपोबल से प्रवाहित की थी । ये प्रसंग यहाँ उस विज्ञान की महत्ता समझाने के लिए दिये गये हैं । जिसे साधारणतया प्रत्यक्ष नकारते देखे जा सकते हैं । ये सारे प्रकृतिगत परिवर्त्तन आज भी संभव हैं ।

ब्राह्मीचेतना परमात्मा–सत्ता को कहते हैं । वह सृष्टि का अधिपति है । इतना ही नहीं उसने सृष्टि का और अपना निज का समूचा ढाँचा मानवी काय कलेवर में समाहित कर रखा है । जो ब्रह्माण्ड में है सो पिण्ड में मौजूद है । जो परमात्मा में है उसे आत्मा में देखा और पाया जा सकता है ।

परब्रह्म अकेला एक व्यक्ति जैसा नहीं है । उसके साथ स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीर की अगणित आत्माएँ जुड़ी हुई हैं । इनमें से कुछ का स्तर अति साधारण है, कुछ का प्रमुख देव शक्तियों जैसा । पर सभी स्वच्छन्द नहीं हैं । ब्रह्म के साथ वे उसी प्रकार जुड़ी हुई हैं जिस प्रकार कि धागे में माला के मनके गुँथे होते हैं । बिजली अपने तारों के टेड़े मेढ़े मोड़ों को पार करती हुई सम्बद्ध समूचे तन्तु जाल में बिखर जाती है । इस बनावट के किसी भी कोने में विद्युत की उपस्थिति देखी जा सकती है और अभीष्ट प्रयोजन में काम लाई जा सकती है । इस प्रकार कुण्डलिनी न केवल ब्रह्माण्डीय चेतना (परा प्रकृति) के हर क्षेत्र के साथ सम्बन्ध जोड़ सकती है, वरन परमात्मा के साथ जुड़े हुए हर स्तर की आत्मा के साथ आवश्यकतानुसार अपने सम्बन्ध बनता सकती है । यह सम्बन्ध स्थापन निरुद्देश्य नहीं होते । उसके पीछे महत्त्वपूर्ण कारण रहते हैं और वे इस सम्बन्ध सूत्र के सहारे पूरे भी होते हैं । यह बहुत बड़ी उपलब्धि है । यदि साधक प्रकृति और परमेश्वर के प्रत्येक घटक के साथ अपना सम्बन्ध जोड़ लेता है और उस अनुबन्ध के सहारे उपयोगी कृत्य करता है तो उसे ऐसा ही समझा जा सकता है । जैसा कि ईंधन आग के साथ जुड़कर अग्नि रूप हो जाता है ।

एक्सचेन्ज की मारफत टेलीफोन का कनेक्शन किसी नगर के किसी व्यक्ति से मिलाया जा सकता है । इसी प्रकार ब्रह्म चेतना के साथ अपना सम्बन्ध जोड़ लेने पर विश्व के किसी भी व्यक्ति या प्राणी तक अपनी संदेश, संकेत अनुरोध, आग्रह पहुँचाया जा सकता है और साथ ही उसकी क्षमता या इच्छा के अनुरूप उत्तर भी पाया जा सकता है ।

ब्रह्म संस्थान, ब्रह्मरंध्र है । यहीं पर सहस्रार कमल अवस्थित है । इसे उत्तरी ध्रुव भी कहा जाता है । ब्रह्माण्डीय चेतना–प्रकृति का शरीर में अवस्थित–क्षेत्र मूलाधार चक्र है । विद्युत प्रसारण का मूल केन्द्र इसी को माना गया है । मूलाधार और सहस्रार को परस्पर देवयान मार्ग से मेरुदण्ड जोड़ता है । यह ब्रह्मदण्ड भी है । षट्चक्रों एवं इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना का त्रिवेणी संगम भी यही है । कुण्डलिनी महाविज्ञान का यह सारा ऊहापोह इस चिर प्रातन विधा की महत्ता एवं साधना पराक्रम से अप्रत्याशित को भी कर दिखाने, चेतना पर नियंत्रण स्थापित कर सकने की मानवी सामर्थ्य का रहस्योद्घाटन करता है ।

कुण्डलिनी महाशक्ति का स्वरूप और आधार

भारतीय योग साधन का मुख्य उद्देश्य जीवन्मुक्त स्थिति को प्राप्त करना है । अभी तक प्राणियों के विकास को देखते हुए सबसे ऊँची श्रेणी मनुष्य की है, क्योंकि उसको विवेक और ज्ञान के रूप में ऐसी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शक्तियाँ प्राप्त हुई हैं, जिनसे वह जितना चाहे ऊँचा उठ सकता है और कैसा भी कठिन कार्य हो उसे अपनी अन्तरंग शक्ति से पूरा कर सकता है । संसार के अधिकांश मनुष्य जीवन के बाह्य पक्ष को ही साधने का प्रयत्न करते हैं और प्रत्येक कार्य को सम्पन्न करने के लिए धन बल, शरीर बल तथा बुद्धिबल का प्रयोग करने के मार्ग को ही आवश्यक मानते हैं । इन तीन बलों के अतिरिक्त संसार में महान् कार्यों को करने लिए जिस आत्मबल की आवश्यकता होती है, उसके विषय में शायद ही कोई कुछ जानता हो, पर वास्तविकता यही है कि संसार में आत्मबल ही सर्वोपरि है और उसके सामने कोई और 'बल' कुछ विशेष महत्त्व नहीं रखता तथा न ही इस बल के आगे टिक ही सकता है । इस बल को अर्जित करने के लिए योग साधन द्वारा आत्मोत्कर्ष का पथ अपनाना पड़ता है ।

जो लोग अपने जीवन ध्येय को प्राप्त करने के लिए अपनी निर्बलताओं अथवा त्रुटियों को समझ कर, उनको दूर करने के लिए योग मार्ग का आश्रय ग्रहण करते हैं, वे धीरे-धीरे अपनी निर्बलता को सबलता में बदल देते हैं, और न केवल सांसारिक विषयों में ही अपने मनोरथों को सफल करते, वरन् आध्यात्मिक क्षेत्र में भी ऊँचे उठते हैं । वे स्वयं अपना कल्याण साधन करने के साथ-साथ अन्य सैकड़ों व्यक्तियों के लिए भी उद्धार का मार्ग प्राप्त करने के योग्य बना देते हैं ।

योग-शास्त्र में साधन के जो सर्वमान्य नियम दिये गये हैं, उनके सिवाय अध्यात्म-विद्या के ज्ञाताओं ने, इस मार्ग में शीघ्र प्रगति करके कुछ बहुत महत्त्वपूर्ण शक्तियाँ प्राप्त कर लेने की जो विधियाँ अथवा योग-शाखायें निकाली हैं, उनमें 'कुण्डलिनी-योग' का विशेष स्थान है । इससे शरीर में एक ऐसी शक्ति का आविर्भाव होता है, जिससे मनुष्य की चैतन्यता बहुत अधिक बढ़ जाती है और वह जब चाहे तब स्थूल-संसार के बजाय सूक्ष्म-जगत् की स्थिति का अनुभव कर सकता है और एक संकीर्ण क्षेत्र में रहने के बजाय विशाल-विश्व की गतिविधि को देखने लगता है । 'हठ योग प्रदीपिका' में 'कुण्डलिनी शक्ति' के महत्त्व का वर्णन करते हुए कहा है-

सशैलवनधात्रीणां यथाधारोऽहिनायकः ।
सर्वेषां योगतंत्राणां तथाधारो हि कुंडली ॥
सुप्ता गुरुप्रसादेन यदा जागति कुंडली ।
तदा सर्वाणि पद्मानि भिद्यंते ग्रंथयोऽपि च ॥
प्राणस्य शून्यपदवी तथा राजपथायते ।
तदापि चित्तं निरालबं तदा कालस्य वंचनस् ॥

-(हठयोग पृ. ३-१,२,३,)

"जिस प्रकार सम्पूर्ण वनों सहित जितनी भूमि है, उसका आधार सर्पो का नायक (शेषनाग) है, उसी प्रकार समस्त योग साधनाओं का आधार भी कुण्डली ही है, जब गुरु की कृपा से सोयी हुई कुण्डली जागती है, तब सम्पूर्ण पद्म (षट्चक्र) और ग्रन्थियाँ खुल जाती हैं, और उसी समय प्राण की शून्य पदवी (सुषन्ना), राजपथ (सड़क) के समान हो जाती है, चित्त विषयों से रहित हो जाता है और मृत्यु का भय मिट जाता है ।"

अन्यशास्त्रों तथ विशेषकर तन्त्र ग्रन्थ में कुण्डलिनी के स्वरूप तथा उसके उत्थान का विवेचन करते हुए कहा कि "कुण्डलिनी शक्ति मूलाधार में शक्ति रूप में स्थित होकर मनुष्य को सब प्रकार की शक्तियाँ, विद्या और अन्त में मुक्ति प्राप्त कराने का साधन होती है ।" इस कुण्डलिनी को 'परमा-प्रकृति' कहा गया है । देव, दानव, मानव, पशु-पक्षी, कीट-पतंग-सभी प्राणियों के शरीर में यह कुण्डलिनी शक्ति विराजमान रहती है ।

कमल-पुष्प में जिस प्रकार भ्रमर अवस्थित होता है, उसी प्रकार यह भी देह में रहती है । इसी कुण्डलिनी में चित्-शक्ति (चैतन्यत्ता) निहित रहती है । इतनी महत्त्वपूर्ण होने पर भी लोप उसकी तरफ ध्यान नहीं देते, यह आश्चर्य का विषय है । यह अत्यन्त सूक्ष्म शक्ति है । इसकी सूक्ष्मता की कल्पना करके योग-शास्त्र में कहा है-

योगिनां हृदयाम्बुजे मृत्यन्ती मृत्यमञ्जसा ।
आधारे सर्वभूतानां स्फुरन्ती विद्युताकृति ॥

अर्थात्- "योगियों के हृदय देश में वह नृत्य करती रहती है । यही सर्वदा प्रस्फुति होने वाली विद्युत

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रूप महाशक्ति सब प्राणियों का आधार है ।" इसका आशय यही है कि कुण्डलिनी शक्ति के न्यूनाधिक परिणाम में चैतन्य हुये बिना मनुष्य की प्रतिभा का विकास नहीं होता ।

कुण्डलिनी आत्म शक्ति की प्रकट और प्रखर स्फुरणा है । यह जीव की ईश्वर प्रदत्त मौलिक शक्ति है । प्रसुप्त स्थिति में वह अविज्ञान बनी और मृत तुल्य पड़ी रहती है । वैसी स्थिति में उससे कोई लाभ उठाना सम्भव नहीं हो पाता । यदि उसकी स्थिति को समझा जा सके तो प्रतीत होगा कि अपने ही भीतर वह भण्डार भरा पड़ा है जिसकी तलाश में जहाँ–तहाँ भटकना पड़ता है । वह ब्राह्मी शक्ति अपने ही अन्तराल में छिपी पड़ी है, जिसे कामधेतु कहा गया है । आत्मसत्ता में सन्निहित इस महाशक्ति का परिचय कराते हुए साधना शास्त्रों ने यह बताने का प्रयत्न किया है कि अपने ही भीतर विद्यमान इस महती क्षमता का ज्ञान प्राप्त किया जाये और उससे सम्पर्क साधने का प्रयत्न किया जाय । कुण्डलिनी परिचयन् के कुछ उद्धरण इस प्रकार हैं–

मल–मूत्र छिद्रों के मध्य मूलाधार चक्र में कुण्डलिनी का निवास माना गया है । उसे प्रचण्ड शक्ति स्वरूप समझा जाय । यह विद्युतीय प्रकृति की है । ध्यान से वह कौंधती बिजली के समान प्रकाशवान दृष्टिगोचर होती है । कुण्डलाकार है उसका स्वरूप प्रसुप्त सर्पिणी के समान है ।

यह उसका स्थानीय परिचय हुआ । अब उसका आधार, कारण, स्वरूप एवं प्रभाव समझने की आवश्यकता पड़ेगी । बताया गया है कि यह ब्राह्मी शक्ति है । स्वर्ग से गंगा अवतरित होकर पृथ्वी पर आई थी और इस लोक को धन्य बनाया था । इसी प्रकार यह ब्रह्मी शक्ति सतपात्र साधकों की आत्म सत्ता पर अवतरित होती है और उसे हर दृष्टि से सुमम्पन्न बनाती है । कहा गया है कि–

ज्ञेयाशक्तिरियं विष्णोर्निर्भया स्वर्णभास्वरा ।
सत्त्वं रजस्तमश्चेति गुणत्रय प्रसूतिका ॥
मूलाधारस्थ वन्स्यात्मते जो मध्ये व्यवस्थता
जीवशक्तिः कुण्डलाख्या प्राणाकाराण तेजसी
महाकुण्डलिनीप्रोक्ता पर ब्रह्मस्वरूपिणी ।
शब्दब्रह्ममयी देवी एकानेकाक्षराकृतिः ॥
शक्ति कुण्डलिनी नाम विसतन्तु निभा सुभा।

–महायोग विज्ञान

यह स्वर्ण समान आभा वाली महाशक्ति कुण्डलिनी निर्भयता प्रदान करने वाली है । वही वैष्णवी है । सत, रज, तम तत्त्वों को उत्पन्न करने वाली है । मूलाधार के मध्य में आत्म तेज रूपी अग्नि पुञ्ज होकर विराजमान है जीवनी शक्ति वही है । तेजस्वी प्राण ही उसका आकार है । परब्रह्म मय है । इसकी अनेक आकृतियाँ हैं । इन शुभ कामनाओं को पूर्ण करने वाली शक्ति का नाम कुण्डलिनी है ।

योग साधनाओं के अन्तर्गत कुण्डलिनी जागरण की फल श्रुतियों के सम्बन्ध में–समस्त संसार में लगभग एक जैसी ही मान्यताएँ प्रचलित हैं । इस साधना की सफलता से साधक में अनेकों दिव्य क्षमताएँ विकसित होने का विश्वास किया जाता है । समझा जाता है कि ऐसा व्यक्ति सामान्य स्थिति से ऊँचा उठकर विशिष्ट सिद्ध पुरुषों की स्थिति में जा पहुँचता है । योगशास्त्रों में कुण्डलिनी जागरण के महत्त्वों की जितनी चर्चा हुई है उतनी और किसी साधना के सम्बन्ध में सार्वभौम स्तर पर नहीं मिलती । उसके विधानों और विवरणों में तो थोड़ा बहुत अन्तर है, पर यह मान्यता सर्वविदित है कि आन्तरिक आत्मिक शक्तियों को प्रसुप्ति से जाति में बदलने–जाग्रति प्रचण्ड बनाने में कुण्डलिनी जागरण प्रक्रिया से असाधरण सहायता मिलती है ।

कुण्डलिनी साधक की जागृति होती है; पर यह नहीं कहा जाता कि यह साधक की अपनी उपार्जित पूँजी है । वह एक प्रचण्ड विश्वव्यापी शक्ति है जिसे उपयुक्त सत्पात्र अपनी साधना प्रक्रिया द्वारा आकर्षित करके अपनी आत्मिक सम्पदा सशक्तता बढ़ाते हैं । इस उपार्जित सम्पदा के आधार पर सांसारिक वैभव और आत्मिक वर्चस्व का दुहरा लाभ मिलता है ।

कठोपनिषद् के यम नचिकेता सम्वाद में जिस पंचाग्नि विद्या की चर्चा हुई है । उसे कुण्डलिनी शक्ति की पंच विधि विवेचना कहा जा सकता हैं । श्वेताश्वर उपनिषद् में उसे 'योगाग्नि' कहा गया है–

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नतस्य रोगो न जरा न मृत्युः
प्राप्तस्य योगाग्नि मयं शरीरम् ।

चैनिक योग प्रदीपिका में उसे 'स्पिरिट फायर' नाम दिया गया है । जानवुडरफ सरीखे तन्त्रान्वेषी उसे सर्पवत् बलयान्विता सर्पेन्ट नाम देते रहे हैं ।

ऋषि शिष्या मैडम ब्लैशेटस्की ने उसे विश्व–व्यापी विद्युत शक्ति–'कास्मिकी इलैक्ट्रिसिटी' नाम दिया है । वे उसकी विवेचना विश्व विद्युत के समतुल्य चेतनात्मक प्रचण्ड–ग्रन्थ में अपना अभिप्रायः इस प्रकार व्यक्त किया है–सर्पवत् या बलयान्विता गति अपनाने के कारण इस दिव्य शक्ति को कुण्डलिनी कहते हैं । इस सामान्य गति को योग साधक अपने शरीर में चक्राकार बना लेता है इस अभ्यास से उसकी वैयक्तिक शक्ति बढ़ती है । कुण्डलिनी विद्युतीय अग्नियुक्त गुप्त शक्ति है यह वह प्राकृत शक्ति है जो सेन्द्रिय निन्द्रय प्राणियों एवं पदार्थों के मूल में विद्यमान है ।

ब्रह्माण्ड में दो प्रकार की शक्तियाँ काम करती हैं– एक लौकिक (सेकुलर) दूसरी आध्यात्मिक (स्प्रिचुअल) इन्हें फिजीकल और मैटाफिजीकल भी कहते हैं । लोग प्रत्यक्ष शक्तियों का प्रमाण प्रत्यक्ष उपकरणों से प्राप्त कर लेते हैं, अस्तु उन्हीं की सत्ता स्वीकार करते हैं ।

शरीर विज्ञानियों ने उसे नाड़ी संस्थान से उद्भूत–सर्वस् फोर्स कहा है । डा. रेले ने अपने बहुचर्चित ग्रन्थ 'मिस्ट्रीरियस कुण्डलिनी' में उसकी वेगम नर्व' के रूप में व्याख्या की है । माँस–पेषियों और नाड़ी संस्थान के संचालन में काम आने वाली सामर्थ्य को ही अध्यात्म प्रयोजनों में काम करने पर कुण्डलिनी संरक्षक बनने का वे प्रतिपादन करते हैं । उनके मतानुसार यह शक्ति जब नियन्त्रण में आ जाती है तो उसके सहारे शरीर की ऐच्छिक और अनैच्छिक गतिविधियों पर इच्छानुसार नियन्त्रण प्राप्त किया जा सकता है । यह आत्म–नियन्त्रण बहुत बड़ी बात है । इसे प्रकारान्तर से व्यक्तित्व के अभीष्ट निर्माण की तद्नुसार भाग्य निर्माण की सामर्थ्य कह सकते हैं । वे भी रूप में कुण्डलिनी का गुण–गान करते और उसकी उपयोगिता बताते हुए उसके जागरण का परामर्श देते हैं ।

डाक्टर रेले की उपरोक्त पुस्तक 'रहस्यमयी कुण्डलिनी' की भूमिका तन्त्र मर्मज्ञ सर जाननुडरफ ने लिखी है । जिसमें उन्होंने रेले के इस अभिगत से असहमति प्रकट की है कि वह शरीर संस्थान की विद्युतधारा मात्र है । उन्होंने लिखा है–"वह एक चेतन और महान सामर्थ्यवान् शक्ति–'ग्रान्ड पोटेन्शियल' है जिसकी तुलना अन्य किसी पदार्थ या प्रवाह से नहीं की जा सकती । मेरी राय में नाड़ी शक्ति कुण्डलिनी का एक स्थूल रूप ही है, वह मूलतः नाड़ी संस्थान या उसका उत्पादन नहीं है । वह न कोई भौतिक पदार्थ है और न मानसिक शक्ति । वह स्वयं ही इन दोनों प्रवाहों को उत्पन्न करती है । स्थिर सत्य (स्टेटिक–रियल) गतिशील सत्य (फैनामिक रियल) एवं अवशेष शक्ति (रैजीडअल पावर) के समन्वित प्रवाह की तरह इस सृष्टि में काम करती है । व्यक्ति की चेतना में वह प्रसुप्त पड़ी रहती है । इसे प्रयत्नपूर्वक जगाने वाला विशिष्ट सामर्थ्यवान् बन सकता है ।"

विज्ञान की भाषा में कुण्डलिनी को जीवन शक्ति अथवा चुम्बकीय विद्युत कहते हैं । इसका केन्द्र मस्तिष्क माना गया है तो भी यह रहस्य अभी स्पष्ट नहीं हुआ कि मस्तिष्क को अपनी गतिविधियों के संचालन की क्षमता कहाँ से मिलती है । योगशास्त्र इसका उत्तर उस काम शक्ति की ओर संकेत करते हुए देता है और बताता है कि अव्यक्त मानवी सत्ता को व्यक्त होने का अवसर इसी केन्द्र से मिलता है । वही कामतन्त्र के विभिन्न क्रिया-कलापों के लिए आवश्यक प्रेरणा भी देती है । यही वह चुम्बकीय 'क्रिस्टल' है जो काया के 'ट्रान्जिस्टर' को चलाने वाले आधार खड़े करता है ।

कुण्डलिनी क्या है ? इसके सम्बन्ध में शास्त्रों और तत्त्वदर्शियों ने अपने–अपने अनुभव के आधार पर कई अभिमत व्यक्त किये हैं । ज्ञानर्णव तन्त्र में कुण्डलिनी को विश्व जाननी और सृष्टि संचालिनी शक्ति कहा गया है–"शक्तिः कुण्डलिनी विश्व जननी व्यापार वद्धोद्यता ।" विश्व व्यापार एक घुमावदार उपक्रम के साथ चलता है । परमाणु से लेकर ग्रह–नक्षत्रों और आकाश गंगाओं तक की गति परिभ्रमण परक है । हमारे विचार और शब्द जिस स्थान से उद्भूत होते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं–व्यापक परिभ्रमण करके वे अपने उद्गम केन्द्र पर ही लौट आते हैं । यही गतिचक्र भगवान् के चार आयुधों में से एक है । महाकाल की परिवर्तन प्रक्रिया इसी को कहा जा सकता है जीव को चक्रारूढ़ मृतिका पिण्ड की तरह यही घुमाती है और कुम्हार जैसे अपनी मिट्टी से तरह–तरह के पात्र उपकरण बनाता है, उसी प्रकार आत्मा की स्थिति को उठाने–गिराने की भूमिका भी वही निभाती है । कुण्डलिनी सृष्टि सन्दर्भ में समिष्ट और जीव सन्दर्भ में–व्यष्टि शक्ति संचार करती है ।

अध्यात्म ग्रन्थों में–विशेषतः उपनिषदों में कुण्डलिनी शक्ति की चर्चा हुई है । पर उतने को ही पूर्ण पक्ष नहीं मान लेना चाहिए । उतने से आगे एवं अधिक भी बहुत कुछ कहने, जानने और खोजने योग्य शेष रह जाता है । इन अपर्ण घटकों को मिलाकर हमें वस्तुस्थिति समझने–अधिक जानने के लिए अपना मस्तिष्क खुला रखना चाहिए ।

कुण्डलिनी आत्म शक्ति की प्रकट और प्रखर स्फुरणा है । यह जीव की ईश्वर प्रदत्त मौलिक शक्ति है । प्रसुप्त स्थिति में वह अविज्ञात बनी और मृत तुल्य पड़ी रहती है । वैसी स्थिति में उससे कोई लाभ उठाना सम्भव नहीं हो पाता । यदि उसकी स्थिति को समझा जा सके तो प्रतीत होगा कि अपने ही भीतर वह भण्डार भरा पड़ा है जिसकी तलाश में जहाँ–जहाँ भटकना पड़ता है । वह ब्राह्मी शक्ति अपने ही अन्तराल में छिपी पड़ी है, जिसे कामधेनु कहा गया है । आत्मसत्ता में सन्निहित इस महाशक्ति का परिचय कराते हुए साधना शास्त्रों ने यह बताने का प्रयत्न किया है कि अपने ही भीतर विद्यमान इस महती क्षमता का ज्ञान प्राप्त किया जाय और उससे सम्पर्क साधने का प्रयत्न किया जाय । कुण्डलिनी परिचय के कुछ उद्धरण इस प्रकार हैं–

मल–मूत्र छिद्रों के मध्य मूलाधार चक्र में कुण्डलिनी का निवास माना गया है । उसे प्रचण्ड शक्ति स्वरूप समझा जाय । यह विद्युतीय प्रकृति की है । ध्यान से वह कौंधती बिजली के समान प्रकाशवान दृष्टिगोचर होती है । कुण्डलाकार है उसका स्वरूप प्रसुप्त सर्पिणी के समान है ।

ज्ञान कर्म का समन्वय देवासुर सहयोग है । सुमेरु पर्वत यह तिकोना परमाणु है, जिसके कारण मूलाधार चक्र की रचना हो सकी । प्रसिद्ध है कि सुमेरु पर्वत पर देवता कहते हैं और स्वर्ण का बना है । निस्सन्देह इस त्रिकोण में एक से एक अदभुत दिव्य शक्तियों और स्वर्ण सम्पदाओं का समावेश है । सुमेरु की रई, शेषनाग की रस्सी बनाकर समुद्र मथा गया । यह सर्प रज्जु–ब्रह्मा नाड़ी के अन्तर्गत इड़ा, पिंगला की विद्युत धाराओं से ओत–प्रोत है । शिव और विष्णु के प्रतीक ज्ञान और कर्म सुर और असुर जब समुद्र–मन्थन की कुण्डलिनी जागरण की महासाधना में संलग्न हुए तो उसे सफल बनाने में प्रजापति ब्रह्मा ने कूर्म बनाकर उसका बोझ अपने ऊपर उठा लिया । प्रयत्न असफल न हो जाय–सुमेरु नीचे न धँसक जाय–इस आशंका को निरस्त करने के लिए कूर्म भगवान् ने अवतार लिया और अपनी पीठ पर पर्वत जैसा भार उठा लिया । साधना पथ के पथिकों का उत्तरदायित्व भगवान् वहन करते हैं और सफलता का पथ पुरुषार्थ एवं निष्ठा के अनुरूप निरन्तर प्रशस्त होता चला जाता है । प्रथम चरण में ही चौदह रत्न नहीं निकल आये वरन् उसके लिए देर तक निष्ठापूर्वक मन्थन की प्रक्रिया जारी रखनी पड़ी । आध्यात्मिक साधनाओं में उतावली करने वाले अधीर व्यक्ति सफल नहीं होते, उसका लाभ तो धैर्यवान् और श्रद्धा को मजबूती के साथ पकड़े रहकर विश्वासपूर्वक निर्दिष्ट मार्ग पर अग्रसर होते रहने वाले साधक नैष्ठिक साधक ही उठा पाते हैं ।

कुण्डलिनी जागरण से इस प्रकार की अनेकों शक्तियों, सिद्धियों और क्षमताओं का जागरण होता है, यह सच है, क्योंकि इस साधना द्वारा साधक की अन्तर्निहित बीज रूप शक्ति जाग्रत होकर उर्ध्वगामी बनती है । यह साधनाएँ आत्मसत्ता को परमात्म सत्ता से जोड़ने, उस स्तर पर पहुँचने में समर्थ है । इनके लिए सामान्य साधना क्रम से ऊपर उठकर कुछ विशिष्ट साधना प्रक्रियायें अपनानी पड़ती हैं । प्रत्येक व्यक्ति की स्थिति के अनुरूप उनका अलग–अलग विधान है, इसलिए उनका सार्वजनिक प्रकाशन करना न आवश्यक है और न उचित ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुण्डलिनी जागरण की साधना पद्धति का प्रयोजन अपने भीतर के देव अंशों को विकसित और परिपुष्ट बनाना है । कैलाश पर्वत पर सर्पों का यज्ञोपवीत धारण करके विराजमान शिव और क्षीर सागर में शेषनाग पर सोये हुए विष्णु का बीजांश हमारे मस्तिष्क मध्य केन्द्र–ब्रह्मरंध्र में यथावत् विद्यमान है । इस स्थान को 'सहस्रार' कहते हैं । महाकाली–अग्नि जिह्वा चामुण्डा का बीजांश जननेन्द्रिय गह्वर–'मूलाधार'–में विद्यमान है । इन दो शक्तियों के असम्बद्ध बने रहने पर केवल उनकी उपस्थिति का आभास मात्र ही होता है, पर जब उन दोनों का संगम समागम हो जाता है तो अजस्र शक्ति की एक ऐसी धारा प्रवाहित हो उठती है जिसे अनुपम या अद्भुत ही कहा जा सकता है ।

मस्तिष्क के मध्य भाग में अवस्थित सहस्रार कमल में शेषशायी विष्णु भगवान् अवस्थित है और अधः अवस्थित मूलाधार चक्र के अधिपति शिव हैं । शिव चरित्र में कामदेव द्वारा शिव को उद्दीप्त करने और उनके द्वारा तीसरा नेत्र खोलकर कामदेव को जला डालने वाली कथा प्रख्यात है । कुण्डलिनी जननेन्द्रिय केन्द्र के समीप होने से अपने निकटवर्ती क्षेत्र को प्रभावित करती है, तत्त्वदर्शी उस अपव्यय को ज्ञान नेत्र खोलकर नियन्त्रित कर लेते हैं । एक पौराणिक कथा इसी सन्दर्भ में यह भी है कि शिव के काम पीड़ित होने पर उनकी जननेन्द्रिय के १८ टुकड़े विष्णु ने कर डाले और वे जहाँ भी गिरे वहाँ ज्योतिलिंगों की स्थापना हुई । द्वादश ज्योतिलिंगों का उद्भव इसी प्रकार हुआ । वासना को ज्योति में बदला जा सकता है । इस कथानक का यही मर्म है ।

शिवजी का प्रधान आभूषण सर्प है और उनके चित्रों में हर सर्प प्रायः ३ फेरे लगाकर लिपटा हुआ दिखाई पड़ता है । शिवलिंग की मूर्ति पूजा में नर–नारी की जननेन्द्रियों की ही स्थापना है । शिव मन्दिरों की प्रतिमा में नर–नारी की जननेन्द्रियों को सम्मिलित करके प्रतिष्ठापित किया जाता है और उस पर जल चढ़ाने की–शीतल करने के प्रक्रिया जारी रहती है । अर्थात् इन अवयवों को यों अश्लील और गुह्य माना जाता है पर वे घृणित नहीं हैं । उनमें ऐश्वर्य के असाधारण रहस्य बीज विद्यमान हैं । प्रतीक रूप से सर्प जलहली और शिवलिंग की पाषाण प्रतिमा के बीच भी अवस्थित रहता है । इस स्थापना में इसी तथ्य का प्रतिपादन है कि कुण्डलिनी का अधिपांत शिव प्रत्यक्ष एवं समर्थ परमेश्वर है । उनके निवास स्थान कैलाश पर्वत और मानसरोवर की तरह समझे जायें उन्हें नर–नारी की घृणित जननेन्द्रिय मात्र न मान लिया जाय । वरन् उनकी पवित्रता और महत्ता के प्रति अति उच्च भाव रखते हुए, सदुपयोग की आराधना में तत्पर रहा जाय । साहस और कलाकारिता के–पुरुषार्थ और लालित्य के–कर्म और भावना के इन केन्द्रों को प्रजनन मात्र से निरस्त न बना दिया जाय वरन् नर–नारी की जननेन्द्रियों के निकट मूलाधार चक्र की शिव शक्ति को उच्च आदर्शों के लिए प्रयुक्त किया जाय ।

जर्मनी के मनःशास्त्री हेन्सावेन्डर ने अतीन्द्रिय क्षमता के अनेकों प्रमाण संग्रह करके यह सिद्ध किया है कि मन की व्याख्या पदार्थ विज्ञान के प्रचलित सिद्धान्तों के सहारे नहीं हो सकती । "कुण्डलिनी विज्ञान" इस सूक्ष्म शरीर के अन्तर्गत हो आने वाली ऐसी विधा है । जिसे मात्र अनुभूतियों से जाना जा सकता है ।

दैनिक योगप्रदीपिका में कुण्डलिनी को 'स्पिरिट फायर' कहा गया है । जानेवुडरफ सरीखे सुप्रसिद्ध तंत्रान्वेषी उसे 'सर्पेन्टाइन फायर' नाम देते रहे हैं । थियोसॉफिकल सोसायटी की संस्थापिका मेडम ब्लैवेट्स्की ने उसे विश्वव्यापी विद्युत शक्ति "कास्मिक इलैक्ट्रिसिटी" नाम दिया है । उनने उसकी विवेचना विश्व विद्युत के समतुल्य चेतनात्मक प्रचंड प्रवाह के रूप में की है ।

अपने ग्रंथ–"वायस ऑफ दि साइलेन्स" में उनने कहा है कि सर्पवत् या बलयान्विता गति अपनाने के कारण उस महाशक्ति को कुंडलिनी कहते हैं । इस सामान्य गति को योग साधक अपने शरीर में चक्राकार बना लेता है । इस अभ्यास से उसकी वैयक्तिक शक्ति बढ़ती कुंडलिनी विद्युतीय अग्नियुक्त गुप्तशक्ति है । यह वह प्राकृतिक शक्ति है जो सेन्द्रिय एवं निरीन्द्रिय प्राणियों और पदार्थों के मूल में विद्यमान है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हठयोग के व्याख्याकारों ने वस्तिक्षेत्र के गह्वर में अंडे की आकृति वाले 'कंद' के साथ उसका सम्बन्ध जोड़ा है । शिव संहिता में कहा गया है गुदाद्वयं गुलतश्चोर्ध्व मेढ्रैकांगुलतस्त्वधः एवं चास्ति समं कदं समता चतुरंगुलम् । अर्थात् गुदा से दो अंगुल नीचे चार अंगुल विस्तार 'कंद' का प्रमाण है । इसी में आगे उल्लेख है–'गुदा एवं शिश्न के मध्य में जो योनि है– वह पश्चिमि मुखी अर्थात् पीछे को मुख है, उसी स्थान में 'कंद' है और इसी स्थान में सर्वदा कुंडलिनी स्थिति है ।

कुंडलिनी परिचय में स्थान–स्थान पर स्वयंभू लिंग की चर्चा है । बहुत स्थानों पर उसे 'कंद' भी कहा गया है । यह क्या है ? इसे जानने के लिए स्थूल शरीर से सम्बन्धित शरीर शास्त्र का पर्यवेक्षण किया जा सकता है । शरीर में यह घटक सुषुम्ना का– मेरुदंड का नीचे वाला अंतिम छोर है । जिसे "कॉडां इक्वाइना" कहते हैं । मेरुदंड मस्तिष्क से प्रारंभ होकर वेचु (काक्सीक्स) की अंतिम कशेरुका तक जाती है और इसके बाद रेशमी धागों की भाँति शुंडाकृति हो जाती है । उसके अंत में अगणित पतले–पतले धागों से पैदा हो जाते हैं, जिससे नाड़ी तंतुओं का एक सघन गुच्छा तैयार हो जाता है । इसी गुच्छक को "कॉडां इक्वाइना" कहते हैं । सूक्ष्मशरीर के 'कंद' का इसे प्रतिनिधि कहा जा सकता है । शरीर शास्त्र की दृष्टि से यही स्वयंभू लिंग है । मूलाधार चक्र में 'आधार' शब्द इसी स्थान के लिए व्यवहृत हुआ है । रीढ़ की अंतिम चार अस्थियों के सम्मिलित समुच्य को भी कई मनीषियों ने 'कंद' बताया है । मल–मूत्र छिद्रों के मध्य स्थान पर मूलाधार चक्र बताया गया है । उसे चमड़ी की ऊपर सतह नहीं मान लेना चाहिए, वरन् उस स्थान की सीध में ठीक ऊपर प्रायः तीन अंगुल ऊँचाई पर अवस्थित समझना चाहिए । इस तरह मूलाधार मल–मूत्र छिद्रों के मध्य वाली सीध पर अंतः गह्वर में स्थित मानना चाहिए ।

'षटचक्र निरूपण' के अनुसार मूलाधार स्थित त्रिकोण के भीतर स्वर्ण के समान स्वयं भूलिंग है, जिस पर कमल तन्तु के समान ब्रह्मद्वार को अपने मुख से ढके हुए विद्युत एवं पूर्ण चन्द्रमा की आभायुक्त अतिसूक्ष्म कुंडलिनी शक्ति सो रही हैं । इसी तरह यगकुण्डल्युपनिषद् में उल्लेख है कि मूलाधार के मध्य वह आत्मतेज, ब्रह्मतेज, रूपी कुंडलिनी निवास करती है । वही जीव की जीवनी शक्ति है, प्राणशक्ति है । वह तेजस् रूप है । इसी में आगे–१/४३–४५ श्लोकों में वर्णन है कि इस अग्नि मंडल में साधक का जब, अपान प्राण, जाकर मिलता है तो अग्नि की लपटें और तीव्र हो जाती हैं । उस अग्नि से गरम होने पर सोई हुई कुंडलिनी जगती है और लाठी से छेड़ने पर सर्पिणी जिस प्रकार फुसकार कर उठती है, वैसे ही यह कुंडलिनी भी जाग्रत होती है । जाग्रत कुंडलिनी षट्चक्र वेधन करती हुई सहस्रार में पहुँचती है । जो इस रहस्य को जानता है । ब्रह्मवर्चस् प्राप्त करता है, नर से नारायण बनने का अवसर प्राप्त करता है ।

साधना शास्त्रों में पवित्र जीवन अग्नि के रूप में कुण्डलिनी शक्ति का वर्णन किया गया है । प्रदीप्त अग्नि जिस प्रकार अपने क्षेत्र को ऊष्ण एवं प्रकाशवान बना देती है वैसा ही प्रकाश कुण्डलिनी जागरण का भी होता है ।

ब्रह्मज्योतिर्वसुधा मा ब्रह्मस्थानीय उच्यते ।
ततो यः पावको नाम्ना यः सन्द्रियोग उच्यते।

–मत्स्य पुराण

ब्रह्मज्योति अग्नि ब्रह्म–रन्ध्र स्थान में निवास करती है । यह साधकों को पवित्र करने वाली है । यही योगाग्नि है ।

चन्द्राग्निरविसंयुक्ता आद्या कुण्डलिनी माता ।
हृत्प्रदेशे तु सा ज्ञया अंकुराकारसंस्थिता ॥२७॥

–अग्नि पुराण

चन्द्र और सूर्य की शक्ति से भरी हुई कुण्डलिनी शक्ति हृदय प्रदेश में रहती है । उनकी ज्योति अंकुर के आकार की है ।

मूलाधारादा ब्रह्मरन्ध्रपर्यन्तं सुषुम्ना सूर्याभा ।
तन्मध्ये तटित्कोटिसमा मृणालतन्तु सूक्ष्माकुण्डलिनी।
तत्र तमोनिवृतिः । तद्दर्शनात्सर्वपापनिवृत्तिः ॥

–मण्डल ब्राह्मणोपनिषद् १।२

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मूलाधार से लेकर ब्रह्मरन्ध्र तक सूर्य के प्रकाश जैसी सुषुन्ना नाड़ी फैली हुई है । उसी के साथ कमल तन्तु से सूक्ष्म कुण्डलिनी शक्ति बँधी हुई है । उसी के प्रकाश से अन्धकार दूर होता है और पापों से निवृत्ति होती है ।

कुण्डलिनी महाशक्ति की चर्चा विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार से हुई है । इनमें लगती तो भिन्नता है, पर वस्तुतः उसे परस्पर पूरक ही समझा जाना चाहिए । ईश्वर का भी समस्त वर्णन नहीं हो सका, उसके असंख्य पक्षों में से आत्म-प्रगति के लिए उपयोगी अंशों की ही चर्चा ब्रह्म विद्या के अन्तर्गत की जाती है । उसे समग्र नहीं माना जा सकता । ईश्वर का प्रकृति पक्ष भी तो है । पदार्थ विज्ञानी अपने ढंग से ईश्वर के उसी पक्ष का अनुसन्धान करते हैं । प्रत्येक प्राणी और पदार्थ पर जो चेतन तत्त्व की प्रतिक्रिया होती है उसका वर्णन किया जाने लगे तो असंख्यों अनुसन्धान शास्त्र विनिर्मित करने पड़ेंगे । ईश्वर की भाँति ही जीवसत्ता और प्रकृति सत्ता का सूक्ष्म-अतिसूक्ष्म स्थूल-अतिस्थूल विस्तार-विवेचन हो सकता है । अणोरणीयान् महतो महीयान् की उक्ति सर्वथा सत्य है । जो हम जानते हैं वह किसी भी प्राणी, पदार्थ या परिस्थिति के सम्बन्ध में एक अत्यन्त तुच्छ भाग है । हमारा अविज्ञात अज्ञान ज्ञान-विज्ञान से कहीं अधिक बड़ा है । हम ज्ञानोपार्जन की दिशा में क्रमशः बढ़ रहे हैं ।

प्रो० हडसन का कथन है कि आमतौर से जीवन शक्ति का प्रयोग, मात्र शरीर साधना में ही होता रहता है, पर यदि उसके प्रसुप्त पक्ष को जाग्रत किया जा सके और उस जागरण को महत्त्वपूर्ण आत्मिक उद्देश्यों में लगाया जा सके तो चेतना क्षेत्र की चमत्कारी शक्तियाँ हस्तगत हो सकती हैं ।

कुण्डलिनी को 'सार्वभौमिक जीवन तत्त्व' भी कहते हैं । इसके भीतर आकर्षण (अट्रेक्शन) और विकर्षण (रिपल्शन) की दोनों ही धाराएँ विद्यमान हैं । भौतिक विज्ञान की दृष्टि से उन प्रवाहों को जैवीय विद्युत एवं चुम्बकत्व वायो 'इलेक्ट्रिसिटी एण्ड मैगनेटिज्म' कह सकते हैं । दार्शनिक हर्बर्ट स्पेन्सर के अनुसार इसे जीवन सार-'ऐसेन्स आफ लाइफ' कहा जा सकता है । बाइबिल के अनुसार यही तत्त्व महान सर्प है ।

अध्यात्म शास्त्र इसे ब्रह्माग्नि कहते हैं और उसका केन्द्र संस्थान ब्रह्मरंध्र को मानते हैं । वहाँ से वह मूलाधार की ओर दौड़ती और वापिस आती है । सृष्टि के आरम्भ में ब्रह्माजी को अपने आसन से नीचे की जल राशि तक कमल नाल के सहारे असंख्य बार चढ़ता-उतरना पड़ा तब यह सृष्टि बनी । इस गाथा में सहस्रार शक्ति को मूलाधार तक आते-जाते रहने का संकेत समझा जा सकता है ।

आर्थर एवलन ने भी कुण्डलिनी को संग्रहीत शक्ति बताया है । उनका कथन है कि-"जो महत् ब्रह्म सत्ता (ग्रेट कास्मिक पावर्स) ब्रह्माण्ड का सृजन एवं धारण करती है उसकी व्यक्ति देह में अवस्थित प्रतिनिधि सत्ता का नाम कुण्डलिनी शक्ति है ।

स्वामी विवेकानन्द ने अपनी पुस्तक राजयोग में लिखा है-"वह केन्द्र, जहाँ समस्त अवशिष्ट सम्वेदनाएँ (रिजिडुअल सेन्सेशन्स) संचित संग्रहीत हैं, मूलाधार चक्र कहलाता है । वहाँ पर कुण्डलित क्रिया शक्ति (क्वाइल्डअप एनर्जी आफ एक्शन्स) की कुण्डलिनी शक्ति कहा जाता है ।

अवशिष्ट सम्वेदनाओं (रेजिडुअल सेन्सेशन्स) को सामान्य बची-खुची शक्ति नहीं समझनी चाहिए । वस्तुतः वह महाशक्ति के उद्भव का मूल कारण बीज है । यह क्या है तथा कैसे इसके द्वारा महाशक्ति का उद्भव हो सकता है ? इसके लिए विद्युत शक्ति उत्पादक यन्त्र (इलैक्ट्रिक जैनरेटर) के सिद्धान्त से समझा जा सकता है ।

जैनरेटर में चुम्बकीय क्षेत्र में सुचालक धातु के तारों की कुण्डली (क्वाइल्स) घुमाने में उनमें विद्युत संवाहक शक्ति (ई० एम० एफ० अर्थात् इलैक्ट्रोमोटिव फोर्स) पैदा होती है । चुम्बकीय क्षेत्र बनाने के लिए अच्छे जैनरेटरों में स्थाई चुम्बकों का प्रयोग नहीं किया जाता, उनमें विद्युत चुम्बक (इलैक्ट्रो मैगनेट) प्रयुक्त होते हैं । चालू जैनरेटर में उत्पादित विद्युत शक्ति का एक अंश इन विद्युत चुम्बकों को सशक्त बनाये रखने के लिए प्रयुक्त किया जाता रहता है । किन्तु जब जैनरेटर बन्द होता है तो उसमें कोई विद्युत प्रवाह प्राप्त

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नहीं किया जा सकता । समस्या उठती है कि विद्युत प्रवाह उपलब्ध न हो तो विद्युत चुम्बक कैसे कार्य करे और चुम्बकीय क्षेत्र के अभाव में विद्युत उत्पादन कैसे हो ? इस समस्या का समाधान 'रैजिडुअल मैगनेटिज्म' (अवशिष्ट चुम्बकत्त्व) से ही निकलता है । लोहे का गुण है कि उसके चारों ओर एक बार विद्युत प्रवाह पैदा किया जाये तो विद्युत प्रवाह की सबलता के अनुपात में उसके अन्दर चुम्बकत्त्व पैदा होता है । किन्तु यदि विद्युत प्रवाह रोक दिया जाये तो भी चुम्बकत्त्व एकदम समाप्त नहीं होता–थोड़ी मात्रा में बना ही रहता है । जब जैनरेटर चालू किया जाता है तो यही नाम मात्र का अवशिष्ट चुम्बकत्त्व थोड़ीसी विद्युत शक्ति पैदा करता है । उसे बाहरी उपयोग की ओर न ले जाकर चुम्बकीय क्षेत्र बनाने वाली कुण्डलियों (क्वाइल्स) में ही प्रवाहित करते हैं । इससे चुम्बकीय क्षेत्र सबल होता चलता है तथा उसके प्रभाव से विद्युत शक्ति भी अधिक मात्रा में पैदा होने लगती है । यही क्रम थोड़े समय तक चलने से विद्युत को चुम्बक तथा चुम्बक को विद्युत क्रमशः अधिकाधिक सशक्त बनाते हुए–जैनरेटर को पूर्ण समर्थ उत्पादन की स्थिति में पहुँचा देते हैं ।

मूलाधार स्थित अवशिष्ट सम्वेदनाएँ जैनरेटर के 'रैजिडुअल मैगनेटिज्म' के समकक्ष कही जा सकती है तथा कुण्डलित क्रिया शक्ति–कुण्डलिनी शक्ति तार की कुण्डलियों क्वाइल्स में उत्पादित हो सकने वाली ई० एम० एफ० (विद्युत संवाहक शक्ति) के रूप में समझी जा सकती है । योग साधनाओं को जैनरेटर चलाने की क्रिया विधि कहा जाना युक्ति संगत है । इनका सम्यक प्रयोग मूलाधार क्षेत्र में सन्निहित शक्ति बीज को प्रचण्ड कुण्डलिनी ऊर्जा के रूप में विकसित कर सकता है ।

प्राण शक्ति की व्याख्या कई रूपों की जाती है । विभिन्न मनीषियों एवं संशोधकों द्वारा उसे (१) मानव विद्युदाकर्षण–ह्यूमनमैगनेटिज्म (२) जीव शक्ति–मैटावॉलिज्म (३) जीवन रस–प्रोटोप्लाज्म (४) जीवन रस एक्लोप्लाज्म (५) ब्रह्माण्डीय चेतना–कास्मिक एनर्जी आदि नाम दिये गये हैं । वस्तुतः यह सभी व्याख्याएँ प्राण शक्ति द्वारा उत्पन्न होने वाली प्रतिक्रियाओं की हैं–स्वयं प्राण की नहीं ।

जीवन क्षार–एनिमो ऐसिड के परमाणुओं का एक सिरा ऋण विद्युत और दूसरा धन विद्युत के आवेशों से युक्त होता है । इनके द्वारा जो आकर्षण पुञ्ज बनता है । उससे नये विद्युत अणु निकलते हैं । उन्हीं के आधार पर मानव शरीर में पाई जाने वाली विद्युत शक्ति का संचार होता है । एनिमो ऐसिड की मूल प्रकृति में सन्निहित, रहस्यमयी क्षमता को वैज्ञानिक परिभाषा में 'प्राण' कहा गया है ।

डा० हेनरी लिंडाल के अनुसार ब्रह्माण्ड में काम करने वाली अनेकों शक्तियों के मूल में प्राण शक्ति की प्रेरणा काम कर रही है । ईथर के परमाणुओं की अपेक्षा प्राण परमाणु कहीं अधिक सूक्ष्म हैं । विश्वव्यापी त्त्वाष्ट्र यूनिवर्सल ईथर की क्षमता को क्रियाशील करने का प्रयोजन प्राणशक्ति पूरा करती है ।

डा० कारिंगटन के ग्रन्थ 'आधुनिक मनोविज्ञान और दृश्य' में तथ्यों समेत यह बताया है कि मानवी चेतना का चिरस्थायी रूप 'प्राण परमाणुओं से बना है और वह मरने के बाद भी बना रहता है । हेग के डा० माल्थ की शोधों में इस प्राणमय शरीर की जानकारियों पर और भी अधिक प्रकाश पड़ता है ।

सिलवान जे मुलडोन और हेरेवार्ड फैरिंगटन द्वारा संयुक्त रूप से लिखित 'दि प्रोजेक्शन आफ एस्ट्रल वाडी' में प्राणमय शरीर और उसके स्वरूप एवं गतिविधियों का वर्णन करते हुए कहा गया है कि वह भी पूर्ण सत्ता सम्पन्न है । 'चाइनाज बुक आवदि डेय' में उस देश की प्राचीन मान्यताओं एवं आधुनिक पर्यवेक्षणों का विवरण प्रस्तुत करते हुए बताया गया है कि स्थूल शरीर ही नहीं प्राणमय शरीर का भी आवरण जीवात्मा को उपलब्ध है । डा० मैकडूगल ने प्राणमय शरीर का भार और विस्तार नापने में भी एक सीमा तक सफलता प्राप्त की है । फ्रांसीसी विज्ञान वेत्ता डुराबेल ने अपने ग्रन्थ में ऐसे चित्र छापे हैं जिनमें प्राणमय शरीर की स्थिति का अच्छा खासा परिचय प्राप्त होता है । प्रो. मुलडोन द्वारा लिखित ग्रन्थ 'प्रोजक्शन आफ एस्ट्रल वाडी' ग्रन्थ में प्राण सत्ता के अस्तित्त्व के विश्वस्त और अकाट्य प्रमाणों की भरमार है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शरीर शास्त्र के अनुसार सुषुम्ना और इड़ा, पिंगला, की संगति कुछ प्रत्यक्ष नाड़ियों के साथ बिठाने का प्रयत्न किया गया है । मेरुदण्ड की पोल में सुषुम्ना संचार है । सुषुम्ना के दोनों ओर स्नायु कोषों की जंजीर ऊपर से नीचे तक फैली हुई है । दाहिनी ओर की जंजीर–राइट सिम्पैथिक कार्ड का पिंगला और बाँये ओर की जंजीर लैफ्ट सिम्पैथिक कार्ड को इड़ा कहा गया है ।

डा० राखाल दास राय की अपनी पुस्तक "रीजनल एक्स पोजिशन आव भारतीय योग दर्शन" में सुषुम्ना को उन्होंने–'स्पाइनल कार्ड' बताया है । पिंगला को 'राइट नर्वस् टर्मिनेल और इड़ा को लेफ्ट नर्वस् टर्मिनेल नाम दिया है ।

डा० ब्रजेन्द्र नाथ सील ने अपनी पुस्तक 'दि पॉजिटिव साइंसेज् आव एनसियेन्ट हिन्दूज' में प्राचीन और अर्वाचीन शरीर शास्त्र की विसंगतियों पर प्रकाश डालते हुए बताया है कि दोनों प्रतिपादन शैलियों में ही अन्तर है । तथ्य, लगभग मिलते–जुलते ही हैं । उसमें उन्होंने बताया है कि योग शास्त्र के चक्र यद्यपि अदृश्य क्षमताओं के प्रतीक हैं तो भी उनका आधार स्थल प्रत्यक्ष नाड़ी गुच्छकों को मानने में आपत्ति नहीं होनी चाहिए । थियोसोकिस्ट पत्रिका में मेजन वी० डी० वसु का एक लेख प्रकाशित हुआ था । "एनाटोमी आव तंत्राज" उसमें उन्होंने योग संस्थानों को शरीर में पाये जाने वाले प्रत्यक्ष अवयव ही सिद्ध किया है और कहा है उन्हें अदृश्य या सूक्ष्म मानने की आवश्यकता नहीं है । ये अवयव सामान्यतया शरीर यात्रा पूरी करते हैं पर असामान्य रूप से विकसित कर लिये जाने पर वे असाधारण कार्य भी कर सकते हैं जैसे कि मस्तिष्क और नेत्रों की परिष्कृत शक्ति से कई प्रकार के आश्चर्यजनक कार्य सम्पन्न किये जाते रहते हैं । महा महोपाध्याय गणनाथ सेन ने अपने ग्रन्थ प्रत्यक्ष शरीरम् तथा शरीर परिवेश में योग शास्त्र में वर्णित संस्थानों को इसी शरीर में विद्यमान बताया है ।

सरजन बुडरफ ने तन्त्र ग्रन्थ 'पादुका पंचक' और 'षटचक्र निरूपण' की व्याख्या विवेचना पर एक विशद ग्रन्थ सर्पेन्ट पावर' लिखा है । इसमें चक्रों की उपस्थिति प्रस्तुत शरीर में प्रत्यक्ष ही बताई गई है । बुडरफ के इस ग्रन्थ के आधार पर एम० पी० पंडित ने एक छोटी पुस्तक कुण्डलिनी योग "अँग्रेजी में लिखी थी इसमें वे चक्रों की उपस्थिति प्रत्यक्ष मानते हैं । थियोसोफी के आदि संचालकों में सी डबल्यू" लेडवीटर का भी नाम है । उनके ग्रन्थ 'चक्राज' में चक्रों के अस्तित्व को मानवी काया में ही दृश्यमान बताया है । सूक्ष्म तो वे उनकी प्रसुप्त शक्तियों भर को कहते हैं ।

कुण्डलिनी शक्ति को प्रायः 'फायर आफ लाइफ' के रूप में ही प्रतिपादित किया गया है । उसकी अभिवृद्धि जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार से परिलक्षित होती है । शरीर क्षेत्र में उसके समर्थ आरोग्य के रूप में–मन में सन्तुलित विवेकशीलता के रूप में उसे देखा जा सकता है । काय कलेवर में वह बलिष्ठता–निरोगिता–स्फूर्ति, क्रियाशीलता, उत्साह, तत्परता के साथ दृष्टिगोचर होती है । मस्तिष्क में उसका परिचय तीव्र बुद्धि, दूरदर्शिता, स्मरण शक्ति, सूझ–बूझ, कल्पना, निर्णय क्षमता, कुशलता, व्यवस्था आदि के रूप में देखा जा सकता है । भावना क्षेत्र में वही श्रद्धा, निष्ठा, आस्थाभाव सम्वेदना, करुणा, आत्मीयता, सौन्दर्यानुभूति के रूप में उभरती है । सब मिला कर उसे उच्चस्तरीय उत्कृष्टता की दिशा में जीव चेतना को धकेलते हुए देखा जा सकता है ।

इस संदर्भ में अब अनेक विदेशी विद्वान् भी इस तरफ ध्यान देने लगे हैं और उन्होंने स्वयम् कुण्डलिनी साधन करके उसकी शक्ति का अनुभव किया है । उनकी सम्मति में कुण्डलिनी शक्ति विश्व–व्यापी है । एक दृष्टि से हम अपने शरीरों में स्थित कुण्डलिनी को चैतन्य–शक्ति का आधार कह सकते हैं । इस शक्ति की एक धारा समस्त विश्व में सूर्य, चन्द्र आदि प्राकृतिक पिण्डों में भी बहती–रहती है । इस प्रकार उसे सर्व–शक्तिमान् कह सकते हैं । अगर साधक कुण्डलिनी–योग में पूर्ण सफलता प्राप्त करके उस पर पूरा अधिकार और नियन्त्रण कर सके तो फिर संसार में उसके लिये कोई कार्य असम्भव नहीं है । वह सृष्टि का संचालन अपनी इच्छानुसार कर सकता है ।

पर यह कार्य सामान्य नहीं है । इस कार्य में वे व्यक्ति ही हाथ डाल सकते हैं, जिन्होंने अपना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रहन–सहन आरम्भ से ही पूर्ण संयम–युक्त और सात्त्विक रखा है और अपने शरीर तथा मन को नियमित अभ्यास द्वारा सुदृढ़ और सहनशील बनाया है । क्योंकि यह महाशक्ति जो कि सूर्य की शक्ति मानी जाती है, जब जाग्रत की जाती है, तब समस्त शरीर, विशेषकर स्नायु–संस्थान में बहुत उष्णता उत्पन्न करती है, जिससे साधक को कष्ट प्रतीत होने लगता है । कभी–कभी ऐसा भी होता है कि उत्तम श्रेणी के साधकों में ध्यान और उपासना करते–करते यह स्वयम् ही जाग्रत हो जाती है ।

श्री रामकृष्ण परमहंस के जीवन–चरित्र से विदित होता है कि जिस समय दक्षिणेश्वर के मन्दिर में महीनों तक काली का ध्यान करते हुए उनकी कुण्डलिनी शक्ति जाग्रत हो गई थी तब उनको भी ऐसा ही कष्ट सहन करना पड़ा था । उस अवस्था का वर्णन करते हुए उन्होंने बतलाया था–

"कुछ झुनझुनी–सी उठकर पाँव से सर तक जाती है । सिर में पहुँचने के पूर्व तक तो चेतना रहती है, पर सिर में उसके पहुँचने पर सुध–बुध जाती रहती है, आँख, कान अपना कार्य नहीं करते, बोली भी रुक जाती है । बोले कौन ? उस समय 'मैं' और 'तू' का भेद ही मिट जाता है । जो शक्ति झन–झन करती ऊपर उठती है, वह एक ही प्रकार की गति से नहीं चढ़ती । शास्त्रों में उसके पाँच प्रकार कहे हैं–

(१) चींटी के समान धीरे–धीरे ऊपर चढ़ना, (२) मेंढ़क के समान दो–तीन छलांग जल्दी–जल्दी कूद कर फिर ठहर जाना (३) सर्प के समान टेढ़ी गति से चलना (४) पक्षी के समान उड़कर चढ़ना (५) बन्दर के समान दो–तीन छलाँग लगाकर सिर में पहुँच जाना । किसी भी गति से इसके सिर में पहुँचने पर समाधि हो जाती है ।

जीवन को उन्नत, शक्तिशाली और महान् बनाने के लिए कुण्डलिनी–जागरण निःस्सन्देह एक अत्यन्त प्रभावशाली मार्ग है । पर यह तभी सम्भव है, जब इस साधना को किसी अनुभवी शिक्षक की देख–रेख में किया जाये । इससे भी अधिक आवश्यक यह है कि साधक के आचार–विचार और उद्देश्य पूर्णतः शुद्ध हों ।

श्री आद्य शंकराचार्य के कुण्डलिनी अनुभव

श्री आद्य शंकराचार्य तत्त्व ज्ञान और ब्रह्म विद्या के अवगाहन में तल्लीन हो गये । ब्रह्म सत्य और जगत मिथ्या की मान्यता ने उनके लिये सांसारिक पदार्थों को ही नहीं काया को भी महत्त्वहीन बना दिया । सो वे उग्र तप करने लगे । शरीर को आहार–विहार का उपयुक्त पोषण न मिलने से वह कृश होता चला गया और एक समय ऐसी स्थिति आयी कि वे उठने, चलने, फिरने में भी असमर्थ हो गये । तब मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार के अन्तःकरण चतुष्टय ने भी अपना काम बन्द कर दिया और प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि की साधना पद्धति भी अवरुद्ध हो गई । सब ओर अन्धकार ही अन्धकार दीखने लगा ।

तब महाशक्ति ने उनके सम्मुख प्रकट होकर आदेश दिया कि वह कोरे तत्त्व ज्ञान तक सीमित न रहें । शक्ति प्राप्त करने की साधना भी करें । अन्यथा उनका उद्देश्यपूर्ण न हो सकेगा ।

उन्हें अपनी भूल मालूम हुई और उन शास्त्र वचनों पर ध्यान गया जिनमें कहा गया था कि शक्ति के बिना शिव–'शव' मात्र है । ब्रह्म के साथ माया, की अविच्छिन्नता को उन्होंने समझा और देखा कि सृष्टि के संचालक देव सत्ता केन्द्र भी एकाकी नहीं, युग्म युक्त है । सरस्वती ब्रह्मा लक्ष्मी नारायण, उमा महेश, शची इन्द्र, राधा कृष्ण, सीता राम, स्वाहा सुधा, सोम अग्नि, रयि प्राण आदि सर्वत्र युग्म संचार से ही सृष्टि क्रम चल रहा है । एकाकी महाकाल नहीं महाकाली भी उसके साथ समन्वित होकर इस विश्व ब्रह्माण्ड की विधि व्यवस्था चला रही है ।

भगवती का निर्देश उन्हें पूर्णतया अध्यात्म परम्पराओं से ओत–प्रोत लगा । 'नायमात्मा बल हीनेन लभ्यः' यह आत्म बल हीनों को प्राप्त नहीं होता यह तथ्य प्रकट करते हुए श्रुति ने 'बलयुपास्व' का बल की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उपासना करने का निर्देश दिया है सो ठीक ही है । श्री आद्य शंकराचार्य ने वेदान्त ब्रह्म ज्ञान के साथ शक्ति उपासना का समन्वय किया फलतः अपने छोटे से जीवन में वे अद्‌भुत पराक्रम कर सकने में समर्थ हुए । मात्र ३२ वर्ष जिये । इतनी छोटी आयु में अद्‌भुत साहित्य का सृजन, ध्वात्ति निवारण की दिग्विजय, चारों धामों की स्थापना, असाधारण तपश्चर्या तो उनके प्रकट प्रख्यात कार्य हैं । अविज्ञात रूप से और भी न जाने उन्होंने क्या-क्या किया, यह सब उनके ब्रह्म ज्ञान के साथ-साथ शक्ति साधना के जुड़ जाने का ही परिणाम था ।

भगवान् बुद्ध भी इसी तरह एक बार शरीर को जर्जर करने वाली तपश्चर्या में संलग्न थे तो भगवती ने एक कन्या के रूप में उपस्थित होकर उन्हें सामर्थ्यवान बनने की साधना करने का निर्देश दिया था । उन्होंने वैसा ही किया, एकाकी तत्त्व ज्ञान तक सीमित न रहकर उन्होंने विशाल संघ का निर्माण किया और नव सृजन के लिये व्यापक अभियान खड़ा कर दिया । अशक्त होते तो वे भी क्या कर सकते थे ।

श्री शंकराचार्य ने जो शक्ति साधना की, उसमें गायत्री उपासना मुख्य है । उनके स्वलिखित गायत्री पुरश्चरण पद्धति' नामक अति महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ को देखने से यह सिद्ध हो जाता है कि यह मात्र ग्रन्थ संरचना नहीं है । वरन् साधक का अनुभव और कृत्य ही इसकी प्रत्येक पंक्ति में जुड़ा हुआ है ।

गायत्री महाशक्ति के तीन चरण हैं । इसलिये उसे त्रिपदा, त्रिपुरा आदि नाम भी दिये गये हैं । गंगा-यमुना, सरस्वती की तरह गायत्री की भी तीन धाराऐं हैं जिन्हें उपासना क्षेत्र में ब्रह्मा, विष्णु, महेश अथवा सरस्वती, लक्ष्मी, काली कहते हैं । अगणित देवी-देवता अथवा साधन विधानों को जो विशाल परिवार दृष्टिगोचर होता है वह इन्हीं तीन वर्गों का नाम रूप भेद है । ज्ञान क्षेत्र में इन्हीं तीन धाराओं को ब्रह्म विद्या, प्राण विद्या, अग्नि विद्या कहते हैं । ब्रह्मविद्या अर्थात् वेदान्त, दर्शन, आत्म चिन्तन, प्राण विद्या अर्थात् सावित्री (गायत्री) की प्राण संरक्षण करने वाली शक्ति का उन्नयन । अग्नि विद्या अर्थात् काम शक्ति को ब्रह्म वर्चस के साथ जोड़ देने का कुण्डलिनी विज्ञान । गायत्री महाशक्ति का यह त्रिविधि प्रकरण श्री विद्या भी कहा जाता है । इसको और अधिक स्पष्ट करने के लिए त्रिकोणात्मक रेखा गणित के साथ अनेक रहस्यों से ओत-प्रोत श्री यन्त्र बनाया गया है ।

शक्ति विद्या का विस्तार बहुत है । उसका ज्ञान पक्ष भी है और विज्ञान पक्ष भी । ज्ञान पक्ष में वह सारा आचार व्यवहार आता है जो साधक की विचारधारा और जीवनचर्या के साथ अनिवार्यतः जुड़ा रहना चाहिए । उसके बिना कोई व्यक्ति इस पात्रता को ही प्राप्त नहीं कर सकता कि भगवती महाशक्ति उसमें अवतरित हो सके । विज्ञान पक्ष वह है जिसे साधना, उपासना, आराधन, तपश्चर्या आदि नामों से जाना जाता है । यह दोनों भाग मिलाकर ही समग्र साधना बनती है । श्री शंकराचार्य ने इसी प्रकार की समन्वयात्मक साधना पद्धति अपनाई और अग्नि विद्या की त्रिविधि शक्ति साधना सम्पन्न करके उन्होंने आध्यात्मिक, आधि दैविक, आधि भौतिक तीनों ही जीवन पक्षों को शक्ति सम्पन्न बनाया । गायत्री उपासना का अधिक स्थूल पक्ष जो भौतिक जगत् को अधिक प्रभावित करता है । वह कुण्डलिनी के नाम से प्रख्यात है ।

सौन्दर्य लहरी श्री आद्य शंकराचार्य की ही रचना है इसके अगणित प्रमाण शोध कर्त्ताओं ने प्रस्तुत किये हैं । उनका उल्लेख इन थोड़े पृष्ठों से सम्भव नहीं । पर वे प्रमाण इतने अधिक और इतने अकाट्य हैं कि किसी को इस बात का सन्देह करने की गुंजायश नहीं है कि यह स्तोत्र किसी दूसरे पंडित ने रचकर उसके अधिक प्रचलन के लिए शंकराचार्य का नाम जोड़ तो नहीं दिया है । ऐसा होता तो रहा है । ग्रन्थों में मिलावट भी कम नहीं हुई और नाम भी किसी ने किसी का रख दिया है । पर सौन्दर्य लहरी के बारे में यह बात नहीं है । उसकी ऐतिहासिक प्रामाणिकता एक बहुत बड़ी श्रृंखला के साथ मौजूद है । उस स्तोत्र के लगभग ३५ टीका संस्कृत में मौजूद हैं । अँग्रेजी में भी कितने ही भाष्य मौजूद हैं जिसमें कलकत्ता हाईकोर्ट के भूतपूर्व न्यायाधीश सर जान वुडरफ का भाष्य तो देखने ही लायक है । श्री

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

श्रीनिवास आयंगर ने भी एक सुन्दर टीका लिखी है । भारतीय भाषाओं में उसकी सैकड़ों टीकाएँ मिल सकती हैं । इससे भी उस रचना के महत्त्व का प्रतिपादन होता है ।

सौन्दर्य लहरी में कुण्डलिनी शक्ति का स्वरूप, विधान और महात्म्य बताते हुए भगवान् श्री आद्य शंकराचार्य ने मूलाधार वासिनी परम चेतना को 'शक्ति' और सहस्रार वासी परब्रह्म को शिव माना है और उनके परस्पर सहयोग से चलने वाले वर्तमान क्रिया-कलाप तथा प्रगति के भावी योजना विधान को क्रीड़ा विलास, शृंगार विनोद एवं काम-कौतुक के रूप में चित्रित किया है । शक्ति को एक नारी की तरह रूप यौवन, वेष विन्यास, वस्त्राभूषण युक्त एवं मनुष्यों जैसी आकृति-प्रकृति का-मान कर अपना काव्य सृजन आरम्भ किया है । चूँकि कुण्डलिनी शब्द स्त्री लिंग है और यहाँ प्रतिपादन का मूल्य विषय वही है इसलिये इन छन्दों में वर्णन देवी का ही प्रधान रूप से हुआ है । शिव गौण है । इतना तथ्य समझ लेने के बाद सौन्दर्य लहरी के श्लोकों की पहेलियों की तरह समझना पाठक के लिए सम्भव होगा और तभी उसमें से वे रहस्य उपलब्ध हो सकेंगे जिन्हें खोजने के लिये आकर्षित करना उस रचना के रचनाकार का मूल प्रयोजन रहा है ।

सौन्दर्य लहरी के सभी श्लोकों का उल्लेख तो बहुत लम्बा हो जाता और उस विषय से अधिक सम्बन्धित न होने वालों को बोझिल भी लगता । इसलिए उन १०३ श्लोकों में से कुछेक के उदाहरण नीचे प्रस्तुत किये जा रहे हैं । इनके आधार पर यह समझने में सुविधा होनी चाहिये कि कुण्डलिनी शक्ति की महत्ता कितनी बड़ी है । आद्य शंकराचार्य की उसके सन्दर्भ में कितनी गहन निष्ठा थी और वे अपने साधन अनुभव के आधार पर उपलब्ध हुये निष्कर्ष एवं परिणाम से कितने अधिक प्रभावित हुए थे । ऐसे महामानव साहित्य रचना अथवा काव्य कौतुक के लिये न तो अपना बहुमूल्य समय लगा सकते हैं और न अपने व्यक्तित्व को सम्मिलित करते हुए इतनी भाव भरी श्रद्धा व्यक्त कर सकते हैं । बिना अनुभव के पढ़ी या सुनी बातों के आधार पर ही ऐसे महापुरुष इतना प्रबल प्रतिपादन कर ही नहीं सकते । निस्संदेह उन्होंने इस रचना में अपनी निष्ठा अनुभूति और उपलब्धि के सहारे ही अपने उद्‌गार व्यक्त किये हैं और वे हम सबके लिये भी मार्ग-दर्शक सिद्ध होने योग्य हैं ।

सौन्दर्य लहरी के कुछ श्लोकों का उल्लेख नीचे किया जाता है-

महीं मूलाधारे कमपि मणिपूरे हुतवहं,
स्थितं स्वाधिष्ठाने हृदि मरुतमाकाशमुपरि ।
मनो अपि भ्रूमध्ये सकलमपि भित्त्वा कुलपथं,
सहस्रारे पद्मे सह रहसि पत्या विहरसि । ९।

-सौन्दर्य लहरी९

भावार्थ- तुम मूलाधार में पृथ्वी को, स्वाधिष्ठान में अग्नि को मणिपूर में जल को, अनाहत में वायु को, विशुद्ध में आकाश को और आज्ञाचक्र में मन को प्रकाश देती हुई- उस सम्पूर्ण मार्ग को भेदकर सहस्रार कमल में परब्रह्म के साथ बिहार करती हो ।

संकेत-कुण्डलिनी शक्ति का जागरण षटचक्रों के वेधन से सम्भव होता है । इन चक्रों के नाम मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत, विशुद्ध और आज्ञाचक्र हैं । शरीर को प्रभावित आरम्भिक पाँच चक्रों में अवस्थित पाँच चक्र करतें हैं । उनके अधिपति क्रमशः पृथ्वी, अग्नी, जल, वायु और आकाश हैं । आज्ञाचक्र महतत्त्व से संचालित और मन को प्रभावित करने वाला है । इन छहों चक्रों के प्रसुप्त स्थिति में जाग्रत चेतना में लाकर शरीर और मन को सर्व समर्थ बनाती हुई परब्रह्म के साथ सहस्रार में मिलाप करा देती है । ऐसी है यह दिव्य तत्त्वों से सम्पन्न महा कुण्डलिनी शक्ति ।

सुधा-धारा सारैश्चरणयुगलान्तर्विगलितैः,
प्रपञ्चं सिञ्चन्ती पुनरपि रसाम्नायमहसा ।
अवाप्य स्वां भूमि भुजगनिभमध्युष्टवलयं,
स्वमात्मानं कृत्त्वा स्वपिषि कुलकुण्डे कुहरिणि ॥१०

-सौन्दर्य लहरी १०

भावार्थ-अपने दोनों चरण-कमलों में बहती हुई अमृत धारा से तुम्हीं शरीर का सिंचन करती हो ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सर्पिणी की तरह कुण्डली मारकर तुम्हीं मूलाधार चक्र के कुल कुण्ड में शयन करती हो ।

संकेत– जिस तरह इस पृथ्वी को शेषनाग धारण किए हुए हैं उसी तरह इस काया को पाताल रूप मूला अवस्थित कुण्डलिनी ने धारण किया हुआ है । जो गढ़े हुए खजाने पर जिस तरह सर्प बैठा रखवाली करता है । उसी तरह अगणित दिव्य शक्तियों के भण्डार की रखवाली करती हुई कुण्डलिनी विराजमान है । इसे जाग्रत बनाकर सिद्धियों का भण्डार हस्तगत किया जा सकता है ।

तवाधारे मूले सह समयया लास्यपरया,
शिवात्मानं वन्दे नवरसमहाताण्डवन
उभाभ्यामेताभ्यामुभयविधिमुद्दिश्यदयया,
सनाथाभ्यां जज्ञे जनकजननीमज्जगदिदम्

–सौन्दर्य लहरी

भावार्थ–तुम मूलाधार चक्र में विराजमान तुम शक्ति (सावित्री) के शिव रूप ब्रह्मा के सहित अभि इस विश्व का वैभव तुम मात–पिता के संयुक्त सहयोगी ही निर्भर है ।

संकेत–मूलाधार चक्र में अवस्थित कुण्डलिनी शक्ति सावित्री–गायत्री भी कहते हैं । उसका योग परब्रह्म में होने के कारण ब्रह्म गायत्री भी कहा जाता है । नाम रूप होते हुए भी मूल शक्ति एक ही है । इसकी आराधना करने वाला साधक ऐश्वर्यवान बनता है क्योंकी इस समस्त विश्व का वैभव इस शक्ति युग्म के हाथ सन्निहित है ।

तवा स्वाधिष्ठाने हुतवहमधिष्ठान नियतं,
तमीड़े सम्वर्त्तं जननि महतीं च समय
यदा लोके लोकान् दहति क्रोधकलिले,
दयार्द्राभिर्दृग्भिः शिशिरमुपचारं रचयसि ।

–सौन्दर्य लहरी

भावार्थ–वन्दनीय रुद्र स्वाधिष्ठान चक्र में सम्वर्त अग्नि बनकर निवास करते हैं । जब वे अपने क्रोध नेत्रों की अग्नि ज्वाला से संसार को दग्ध करते हैं, तुम्हीं अपनी दया दृष्टि से शीतलता बखेरती हो ।

संकेत–स्वाधिष्ठान चक्र की साधना द्वारा कुण्डलिनी शक्ति को सक्रिय नाक साधक अपने आपको पंच विधाओं का निष्णात बनाकर यज्ञ अग्नि जैसा ज्वर जीवन जी सकता है और उस गर्मी से उत्पन्न हुई मेघ मालाऐं संसार पर करुणा भरी शीतल वर्षा कर सकती हैं तथा उस प्रचण्ड आतप में दोष दुरितों को जलाकर नष्ट भी किया जा सकता है ।

तडित्वन्तं शक्तयया तिमिरपरपिन्थस्फुरणया,
स्फुरन्नानारत्नाभरणपरिणद्धेन्द्रधनुषम् ।
निषेवे वर्षन्तं स्मरमिहिरतप्तं त्रिभुवनम् ।४०।

–सौन्दर्य लहरी४०

भावार्थ–मणिपूर चक्र निवासी काम बीज रूपी अमृत बरसाने वाले सूर्य विष्णु के सहित तुम नारायणी शक्ति के अभिवन्दन । तुम्हारी विद्युल्लता जैसी दिव्य–ज्योति से ही वे मेघ की तरह शोभायमान हैं ।

संकेत–कुण्डलिनी शक्ति में सम्बद्ध षटचक्रों में से मणिपूर चक्र की साधना करते हुए जब साधक उस दिव्य शक्ति के साथ अपना सम्बन्ध बना लेता है तो उसकी मनस्विता, तेजस्विता एवं समर्थता की दिव्य ज्योती विश्व आकाश में बिजली की तरह चमकती है । 'काम बीज' का रहस्य ज्ञान होने से उसके लिये सांसारिक सुखों की कमी नहीं रहती ।

समुन्मीत् सम्वित् कमलमकरन्दैकरसिकं,
भजे हंसद्वन्द्वमिपि महतां मानसचरम् ।
यदालापादष्टादशगुणितविद्यापरिणतिं,
समाधत्ते दोषाद् गुणमखिलमद्भ्यः पय इव ।३८।

–सौन्दर्य लहरी ३८

भावार्थ–अनाहत चक्र में निवास करने वाले–ज्ञान हंस के साथ विहार करने वाली तुम महाशक्ति वन्दन । तुम्हारी साधना करने वाला अठारहों विद्याओं का ज्ञाता तथा नीर–क्षीर का विवेक कर सकने में समर्थ है ।वृत्ति से सम्पन्न हो जाता है ।

संकेत–अनाहत चक्र की वेध साधना से कुण्डलिनी शक्ति को जागरण करके साधक में नीर–क्षीर विवेक कर सकने की–अनुचित का त्याग और उचित का ग्रहण कर सकने की प्रवृत्ति का विकास होता है । अस्तु वह हंस जैसा थबल और ब्राह्मी शक्ति का वाहन बन सकने की पात्रता प्राप्त कर लेता है । पात्रता के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अभाव से ही मनुष्य को अभावग्रस्त और असफल रहना पड़ता है । कुण्डलिनी साधक की बढ़ती हुई पात्रता उसे अनेक विद्याओं का भंडार बनादे यह नितान्त स्वाभाविक है ।

विशुद्धौ ते शुद्धस्फटिकविशदं व्योमसदृशं,
शिवं सेवे देवीमपि शिवसमानव्यसनिनीम् ।
ययोः कान्त्या यान्त्या शशिकिरणसारूप्यसरणीं,
विधूतान्तर्ध्वान्ता विलसति चकोरीव जगती ।३७।

–सौन्दर्य लहरी ३७

भावार्थ–विशुद्ध चक्र के साथ स्वच्छ स्फुटिक जैसे शिव के साथ उनकी कार्य शक्ति के रूप में निवास करने वाली तुम महाशक्ति को नमस्कार । यह संसार तुम्हारी ज्योति से ही अज्ञानान्धकार से छुटकारा पाकर आनन्दित होता है ।

संकेत–विशुद्ध चक्र का वेधन करते हुए कुण्डलिनी योग में संलग्न साधक के हृदय का अज्ञानान्धकार दूर हो जाता है । वह निरन्तर आनन्द उल्लास की अनुभूति करता है । ओर दूसरों को भी प्रकाश की ओर अग्रसर कर सकता है ।

तवाज्ञा चकस्थं तपन शशि कोटि द्युतिधरं,
परं शंभु बन्दे परिमिलित पार्श्व परचिता ।
यनाराध्यन्भक्त्या रवि शशि शुचीनाम विषये,
निरातङ्कः लोको निवसति हि भालोक भवन्ने।३६।

–सौन्दर्य लहरी ३६

भावार्थ–आज्ञा चक्र में पराधित शक्ति के रूप में ज्योतिर्लिंग के शिव सहित निवास करने वाली तुम भगवती का वन्दन । सूर्य, चन्द्र और अग्नि के प्रकाशों में आगे वाले प्रकाश का तुम्हारे ही रूप में साधन किया जाता है ।

संकेत–दिव्य दृष्टि जाग्रत करने वाला, शिवजी की तरह कामदेव को जला देने में समर्थ अग्नि रूप तीसरा नेत्र भृकुटि स्थान में स्थित आज्ञा चक्र ही है । दिव्य ज्ञान की समस्त भूमिकाऐं इसी केन्द्र से उपजती हैं । परम शिव सहित कुण्डलिनी शक्ति का ऊर्ध्व स्थान यही है । अधोगति में–जननेन्द्रिय मूल में पड़ी हुई इस महाशक्ति को उवार कर जो इस आज्ञा चक्र के शीर्ष स्थान तक पहुँचा सकता है वह साधक धन्य हो जाता है ।

तड़ि ल्लेखातन्वीं तपनशशिवैश्वानरमयीं,
निषण्णांषण्णामप्युपरिकमलानां तव कलाम् ।
महापद्माटव्यां मृदुतममायेन मनसा,
महान्तः पश्यन्तो दधति परमाह्लादलहरीम् ।२१।

–सौन्दर्य लहरी २१

भावार्थ–विद्युत धारा की तरह छहों चक्रों में से ऊपर सहस्रार कमल में तुम जा विराजती हों सूर्य चन्द्र और अग्नि (इड़ा पिंगला सुषुम्ना) तुम्हारी कला पर आश्रित हैं । माया रहित महापुरुष तुम्हारी आनन्द लहरी में स्नान करते हैं ।

संकेत–दिव्य शक्तियों से भरे छै रत्न भण्डार–छै चक्रों के रूप में मानव शरीर में विद्यमान हैं । इसको सक्रिय एवं उपयोग के योग्य बनाने वाली मेरुदण्ड क्षेत्र में विद्युतधारा की तरह प्रवाहित होने वाली शक्ति का नाम कुण्डलिनी है । उसकी प्रभाव मस्तक के मध्य अवस्थित परब्रह्म से है । तीनों देवता सूर्य, चन्द्र, अग्नि–इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना के रूप में इसी के सहचर हैं । जो इस महाशक्ति से सम्बन्ध मिलाकर शक्तिवान बन जाता है उसके जीवन में निरन्तर आनन्द की लहरें उठती रहती हैं ।

महाशक्ति की कृपा दृष्टि जिस पर हो जाती है, वह सब प्रकार धन्य हो जाता है । अपनी दृष्टि भगवती की ओर हो तो उनकी दृष्टि भी सहज ही साधक के ऊपर हो जाती है । संसार का सारा स्वरूप ही देखने की शैली पर निर्भर है । हम जिस दृष्टि से व्यक्तियों तथा पदार्थों को देखते हैं वे वैसे ही बनकर हमारे लिए आ खड़े होते हैं । इस तथ्य को जो समझता है वह भगवती की कृपा दृष्टि प्राप्त करने के लिए अपने दृष्टिकोण में भी परिवर्तन करता है । महाशक्ति का तीसरा नेत्र यही ज्ञान नेत्र है । जिससे समस्त सृष्टि का क्रम चलाती हैं । कुण्डलिनी साधक का जब यह विवेक नेत्र खुलता है तो उसे महाशक्ति की विभूतियाँ अपने भीतर बाहर भरी पूरी बिखरी दीखती

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं । इस सन्दर्भ में सौन्दर्य लहरी के कुछ पद्य नीचे हैं ।

विभक्तत्रैवर्ण्यं व्यतिकरितलीलाञ्जनतया ।
विभाति त्वन्नेत्रत्रितयमिदमीशानदयिते ॥
पुनः स्रष्टुं देवान्दहिणहरिरुद्रानुपरता-
न्रजः सत्त्वं विभ्रत्तम इति गुणानां त्रयमिव ।५३।

भावार्थ– तेरे तीन नेत्रों का अञ्जन तीन रंग का है । ये तीन रंग ही सत, रज, तम हैं । इन्हें ही ब्रह्मा, विष्णु, महेश कहते हैं । इन्हें प्रलय के आरम्भ और अन्त में तुम्हीं उत्पन्न और विलीन करती हो ।

संकेत–इस विश्व का सृजन पोषण और परिवर्तन करने वाले सत, रज, तम, ही ब्रह्मा, विष्णु, महेश हैं इन सृष्टि बीजों को प्रकाश देने वाली परब्रह्म की परा प्रकृति आद्य शक्ति ही है । इसी को कुण्डलिनी कहते हैं । इसके साथ जुड़ जाने पर व्यक्ति उसी जैसा महान् बन जाता है ।

पवित्रीकर्तुं नः पशुपतिपराधीनहृदये ।
दयामित्रैर्नेत्रैररुणधवलश्यामरुचिभिः ॥
नदः शोणो गंङ्गा तपनतनयेति ध्रुवममुम् ।
त्रयाणां तीर्थानामुपनयसि सम्भेदमनघं ॥५४॥

–सौन्दर्य लहरी ५४

भावार्थ–तुम्हारे दया पूर्ण तीन नेत्र अरुण, शुक्ल और श्याम वर्ण से शोभायमान हैं । उन्हीं से गंगा, यमुना और सरस्वती निकलती हैं । इनका परम पावन संगम तुम्ही हो ।

संकेत–स्थूल गंगा, यमुना, सरस्वती पुण्य नदियों की तरह आध्यात्मिक दिव्य धाराओं को इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना कहते हैं । इन तीनों का संगम जिस कुण्डलिनी शक्ति में होता है वही परम पावन संगम तीर्थराज है । इसमें स्नान करने वाला सच्चे संगम स्नान का फल तुरन्त प्राप्त करता है ।

विशाला कल्याणी स्फुटरुचिरयोध्या कुवलयैः ।
कृपाधाराऽऽधारा किमपि मधुराभोगवतिका ॥
अवन्ती दृष्टिस्ते बहुनगरविस्तारविजया ।
ध्रुवं तत्तन्नामव्यवहरणयोग्या विजयते ॥४६॥

–सौन्दर्य लहरी ४६

भावार्थ–तेरी दिव्य दृष्टि ही, विशाला कल्याणी, अयोध्या, धारा, मथुरा भोगवती, अवन्तिका और विजया नामक पाठ तीर्थ नगरी हैं, इन नामों में न जाने कितने रहस्य भरे पड़े हैं ।

संकेत–इन नगरियों को आठ आग्रमा मानना चाहिए । अष्ट सिद्धि इन्हें ही कहते हैं । कुण्डलिनी से निकलने वाली आठ प्रधान नदियाँ यहीं हैं ।

राजयोग के आठ अंक–मन्त्रयोग के आठ साधन, हठयोग के आठ प्रयोग, तन्त्रयोग के आठ प्रकरण इन आठ तीर्थ नगरियों को ही समझना चाहिए । इन रहस्यमय आध्यात्मिक तीर्थों का लाभ कुण्डलिनी साधक उठाता है । और धन्य हो जाता है ।

अहः सूते सव्यं तव नयनमर्कात्मकतया ।
त्रियामां वामं ते सृजति रजनीनायकतया ॥
तृतीया ते दृष्टिर्दरदलितहेमाम्बुजरुचिः ।
समाधत्ते सन्ध्यां दिवसनिशयोरन्तरचरीं ।४८।

–सौन्दर्य लहरी४८

भावार्थ–तेरे सूर्यात्मक दाहिने नेत्र से दिन और चन्द्रात्मक बायें नेत्र से रात्रि की रचना होती है । तेरा तीसरा नेत्र दिन और रात्रि के बीच में अवस्थित सन्ध्या है ।

संकेत–कुण्डलिनी शक्ति का साधक अपने लोक जीवन रूपी दिन को सूर्य की तरह प्रकाशवान और परलोक जीवन को चन्द्र किरणों की तरह शीतल बनाता है । इन दोनों के बीच के–योग साधन के–क्षण और भी अधिक आनन्दमय बन जाते हैं ।

महाशक्ति को लोक–लोकान्तरों में व्याप्त विभूतियों को चिन्तन करने में सहज ही इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है कि कुण्डलिनी मात्र शरीर में रहने वाली कोई नस–नाड़ी नहीं है वह एक विश्व व्यक्ति दिव्य शक्ति है । जो ब्रह्माण्ड में है वह पिण्ड में भी विद्यमान है । उस व्यापक शक्ति का एक बीज मानव शरीर में भी मौजूद है । उसी को विकसित करके इस योग्य बना लिया जाता है कि बछड़े के द्वारा गाय का दूध पिये जाने की तरह उस महाशक्ति के साथ प्रगाढ़ सम्पर्क बनाकर अपने विकास क्रम को गतिशील बनाने में सफल हो सके । श्री आद्य शंकराचार्य ने यही किया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

था । उनकी इस सन्दर्भ की कुछ अभिव्यक्तियाँ नीचे हैं–

निमेषोन्मेषाभ्यां प्रलयमुदयं याति जगती ।
तवेत्याहुः सन्तो धरणिधरराजन्यतनये ॥
त्त्वदुन्मेषाज्जातं जगदिदमशेषं प्रलयतः ।
परित्रातुं शंके परिहृतनिमेषास्तव दृशः ।५५।

–सौन्दर्य लहरी ५५

भावार्थ–तुम्हारे नेत्र बन्द करने पर सृष्टि का अन्त और खोलने पर सृष्टि का उद्भव होता है । यह सारा जगत तुम्हीं से उत्पन्न हुआ और तुम्हीं में लय होता है । लगता है सृष्टि को अनिष्ट से बचा के लिए ही तुम अपलक दृष्टि रखकर सदा नेत्र खोले रहती हो ।

संकेत–मनुष्य के अपने नेत्र बन्द होने पर सारा का सारा दृश्य समाप्त हो जाता है । अपने नेत्र खुल जाने पर जिस स्तर के दृश्य देखना चाहें देखने को मिल जाते हैं । इसी प्रकार आन्तरिक नेत्र बन्द रहने से सर्वत्र अज्ञानान्धकार छाया रहता है और भय, एकाकीपन, आशंका का वातावरण छाया रहता है , पग–पग पर ठोकर लगती है । अपनी दुनिया आप बनाने का श्रेय अपने ही दृष्टिकोण को है । भगवती कुण्डलिनी जिस प्रकार बिना पलक झपके निरन्तर अपनी सृष्टि व्यवस्था सँभालती है उसी तरह हमें भी ज्ञान के प्रकाश को क्षण भर के लिए भी बुझने नहीं देना चाहिए और अपने सृष्टि सृजन को निरन्तर गतिशील रखना चाहिए ।

गिरामाहुर्देवीं द्रुहिणगृहिणीमागमविदो ।
हरेः पत्नीं पद्मां हरसहचरीमद्रितनयां ॥
तुरीया कापित्त्वं दुरधिगमनिस्सीममहिमा ।
महामाया विश्वं भ्रमयसि परब्रह्ममहिषि ।६८।

–सौन्दर्य लहरी ६८

भावार्थ–ब्रह्मा की पत्नी सरस्वती, विष्णु की पत्नी लक्ष्मी और शिव की पत्नी पार्वती तो प्रख्यात है । तुम महामाया कोई चौथी ही हो । तुम्हारी महिमा असीम है । तुम्ही से सारा विश्व आच्छादित है । तुम्हें ठीक तरह जान पाना कठिन है ।

संकेत–ज्ञान की देवी सरस्वती, धन की देवी लक्ष्मी और बल की देवी दुर्गा यह तीनों लौकिक प्रयोजनों को ही पूरा करती हैं और इनके क्षेत्र सीमित हैं । कुण्डलिनी इन तीनों से भी महान इन्हें गति और सामर्थ्य देने वाली अति महान् ब्रह्म सत्ता है । उसी से सारा विश्व आच्छादित है । इस विश्व मूल का अवलम्बन लेने से उसकी शाखा प्रशाखाओं का लाभ तो सहज ही मिल जाता है ।

मनस्त्वं व्योमस्त्वं मरुदसि मरुत् सारथि रसि ।
त्वमापस्त्वं भूमिस्त्वयि परिणतायां नहि परम् ॥
त्वमेव स्त्वात्मानं परिणमयितुं विश्ववपुषा,
चिदानन्दाकारं शिव युवति भावेनवभृषे ॥३५॥

–सौन्दर्य लहरी ३५

भावार्थ–तुम्हीं मन, आकाश, वायु के सारथी और अग्नि, जल, पृथ्वी हो । तुम्हीं विश्व रूप में फैली हुई हो । तुम्हारी ही लीला में इस विश्व में चैतन्यता तथा आनन्द का अस्तित्त्व है ।

संकेत–पंच तत्त्वों के बने हुए शरीर की मूल प्रवृत्ति पर जिस दिव्य शक्ति का अधिकार है और पाँच प्राणों से संचालित मन की मूल प्रवृत्ति पर जिस सूक्ष्म शक्ति का अधिकार है उसे ही कुण्डलिनी कहते हैं इसे हस्तगत कर लने पर शरीर और मन को सुविकसित एवं सुव्यवस्थित करने का अवसर मिलता है । विश्व की चेतन्यता तथा आनन्द प्रदान करने वाली यह महाशक्ति अपने आराधक को भी इन विभूतियों से भर देती है ।

सुधामप्यास्वाद्य प्रतिभयजरामृत्युहरणीं,
विपद्यन्ते विश्वे विधिशतमखाद्या दिविषदः ।
करालं यत् क्ष्वेडं कवलितवतः कालकलना,
न शम्भोस्तन्मूलं जननि तव ताटंकमहिमा ॥२८॥

–सौन्दर्य लहरी२८

भावार्थ–संसार का निर्माण करने वाले ब्रह्मा सौ यज्ञ करने वाले यज्ञ, स्वगति रहने वाले देवता, अमृत पीकर भी जरा मरण से संत्रस्त होते हैं । किन्तु शिव लालकूट पीकर भी अमर हैं यह तुम्हारे ही अनुग्रह का फल है ।

संकेत–सत्कर्म परायण देवपुरुष अपने पुण्य फल से स्वर्ग, यश, सुख आदि तो प्राप्त कर लेते हैं पर आदर्शों की प्रतिष्ठापना के लिए कालकूट पीने जैसे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दुस्साहस नहीं कर पाते । ऋतम्भरा प्रज्ञा को उपलब्ध कराके दिव्य जीवन जीने वाले शिव जैसा व्यक्तित्त्व कुण्डलिनी शक्ति की कृपा से सहज ही प्राप्त हो जाता है ।

क्षितौ षट्पञ्चाशत् द्विसमधिकपञ्चाशदुदके,
हूताशे द्वाषष्टिश्चतुरधिकपञ्चाशदनिले ।
दिविद्विःषट्त्रिंशन्मनसि च चतुः षष्ठिरिति ये,
मयूखास्तेषामप्युपरि तव पादाम्बुजयुगम् ॥१४॥

–सौन्दर्य लहरी१४

भावार्थ–पृथ्वी की ५६ जल की ५२ अग्नि की ६२ वायु की ५४ आकाश की ७२ और मन की ६४ किरणें हैं वे ३६० दिन वाले वर्ष काल के दिन ही यह किरणें हैं । तुम्हारे पद पद्य इन सबसे ऊपर हैं ।

संकेत–३६० दिनों का वर्ष इन्हीं वर्षों से मिलकर बना हुआ जीवन । समय का सदुपयोग अर्थात् जीवन का सुदपयोग । यह काल ही सुदपयोग दुरुपयोग के आधार पर ऊँचा उठाता और नीचा गिराता है । महाकाल ही व्यक्ति और विश्व को सुसम्पन्न और सुव्यवस्थित बनाने में समर्थ है । उस महाकाल को गतिशील रखने वाली महाकाली ही कुण्डलिनी है । उसके आधार पर कालचक्र का प्रत्यावर्तन–समय का परिवर्तन संभव हो सकता है ।

शिवः शक्त्या युक्तो यदि भवति शक्तः प्रभवितु,
न चेदेवं देवो, न खलु कुशलः स्पन्दितुमपि ।
अतस्त्वामाराध्यां हरिहरविरञ्चदिभिरपि,
प्रणन्तुं स्तोतुं वा कथमकृतपुण्यः प्रभवति ॥१॥

–सौन्दर्य लहरी१

भावार्थ–शक्ति के साथ जुड़ जाने से ही शिव का कर्तृत्त्व है । अन्यथा वे हिल भी नहीं सकते । हे ब्रह्मा, विष्णु, महेश द्वारा अभिवन्दित महाशक्ति तेरी कैसे स्तुति करूँ ?

संकेत–शक्ति से ही सक्रियता उत्पन्न होती है और उसी आधार पर सफलताएँ मिलती हैं । शक्ति की अधिष्ठात्री कुण्डलिनी को जाग्रत करने का तात्पर्य अपने आपको प्रत्यके दिशा में समर्थ बनाना है । शिवजी तक बिना अपनी शक्ति की सहायता के शव की तरह निष्क्रिय पड़े रहते हैं तो मनुष्यों के बारे में क्या कहा जाय जिनकी बिना शक्ति सम्पन्न हुए कोई गति ही नहीं है ।

सौन्दर्य लहरी के संबंध में कितनी ही किम्बदंतिय परम्परागत सुनने में आती है । कहा जाता है कि–श्री शंकराचार्य भगवान शंकर के दर्शन करने कैलाश गये । वहाँ जाकर उन्होंने भगवान से 'सौन्दर्य लहरी' की याचना की श्री शंकर जी ने उन्हें कृपा पूर्वक दे दी । नान्दी को यह सहन न हुआ और उसने झपट कर उसे पुस्तक को चबा डाला शंकराचार्य ने अपने निवास पर आकर शिवजी के अनुग्रह से वह नष्ट अंश पूरा किया और वह फिर पूरी हो गई ।

कुण्डलिनी के सत्परिणाम अगणित हैं । साधक इस आराधना के माध्यम से भौतिक जीवन की कठिनाइयों को पार करते हुए सुख शांति समृद्धि एवं प्रगति की परिस्थितियाँ प्राप्त कर सकता है और आत्म–कल्याण के लक्ष्य तक पहुँच सकता है । इस संबंध में श्री शंकराचार्य की अनुभूतियाँ देखिए ।

अविद्यानामन्तस्तिमिरिमिहिरोद्दीपनकरी,
जड़ानां चैतन्यस्तवकमकरन्दस्रुतिशिरां ।
दरिद्राणां चिन्तामणिगुणनिका जन्मजलधौ,
निमग्नानां दष्ट्रा मुररिपुवराहस्य भवती ॥३॥

–सौन्दर्य लहरी ३

भावार्थ–अज्ञानियों के अज्ञानान्धकार का नाश करने के लिए तुम सूर्य रूप हो । तुम्ही बुद्धिहीनों में चैतन्यता का अमृत बहाने वाली निर्झरिणी हो । तुम दरिद्री के लिए चिन्तामणि माला और भवसागर में डूबने वालों को सहारा देने वाली नाव हो । दुष्टों के संहार करने में तुम बाराह भगवान के दाँत जैसी हो ।

संकेत–मनुष्य के अन्तराल में छिपी हुई कुण्डलिनी शक्ति–ज्ञान भूमिका में विकसित होंकर अज्ञान रूपी अन्धकार को दूर करती है । नव जीवन की चेतना प्रस्फुटित करती है । पुरुषार्थी दरिद्र रह ही नहीं सकते । जो आत्मोद्धार के लिए कमर कस कर खड़े हो जाते हैं उनकी नाव पार लगती ही है । दुष्टता तभी तक जीवित रहती है जब तक कि उसे सहन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

किया जाता रहे । जब उसका प्रतिरोध आरम्भ हो जाता है तब उसका अस्तित्त्व पानी के बबूले की तरह नष्ट हो जाता है । जाग्रत कुण्डलिनी शक्ति मानव जीवन में ऐसी ही परिस्थितियाँ उत्पन्न करती है ।

सरस्वत्या लक्ष्म्या विधिहरिसपत्नो विहरते ।
रतेः पातिव्रत्यं शिथिलयति रम्येण वपुषा ॥
चिरं जीवन्नेव क्षपितपशुपाशव्यतिकरः ।
परानन्दाभिख्यं रसयति रसं त्वद्भजनवान् ॥१०१॥

–सौन्दर्य लहरी १०१

भावार्थ–तेरी साधना करने वाला सरस्वती और लक्ष्मी दोनों का कृपा पात्र बनता है । सुन्दर रम्य शरीर से कामदेव की पत्नी रति को भी मोहित क ता है । पशु पाशों से छूट जाता है यह चिरकाल तक परम रस का रसास्वादन करता है ।

संकेत–आत्मिक विभूतियों को प्रस्तुत करने वाली सरस्वती, और भौतिक समृद्धियों की अधिष्ठात्री देवी लक्ष्मी दोनों ही कुण्डलिनी की सहचरी हैं । इस महाशक्ति का साधक बाह्य और आन्तरिक–लौकिक और पारलौकिक दोनों ही स्तर की समृद्धियाँ सफलताऐं प्राप्त करता है । उसकी अपनी निज की प्रसुप्त क्षमता से पति परायण पत्नी की तरह सहयोग देने लगती है तथा बंधन मुक्त जीवन की सरसता का निरन्तर रसास्वादन करते रहने का सौभाग्य मिलता है ।

नखैर्नाकस्त्रीरणां करकमलसंङ्कोचशशिभि–
स्तरूणां दिव्यानां हसत इव ते चण्डि चरणौ ॥
फलानि स्वः स्थेभ्यः किसलयकराग्रेण ददतां ।
दरिद्रेभ्यो भद्रां श्रियमनिशमह्न ददतौ ॥८६॥

–सौन्दर्य लहरी ८६

भावार्थ–तेरे चरण कमलों के सामने बेचारे कल्पवृक्ष तुच्छ हैं । तेरी स्तुति के लिए देवांगनाओं के जुड़े हुएहाथ १० चन्द्रमाओं के समान शोभायमान हैं । कल्प–वृक्ष तो स्वावलम्बी देवताओं को ही फल देते हैं, पर तुम्हारे चरण तो दरिद्र और परावलम्बियों को भी सहारा देते हैं ।

संकेत–कल्पवृक्ष की तुच्छता और कुण्डलिनी की महत्ता की तुलना करते हुए कहा गया है कि कल्पवृक्ष भरे पेट वाले समर्थ देवताओं को ही फल देता है पर कुण्डलिनी पतित और पिछड़े हुओं की भी मनोकामना पूर्ण करती है । दसों दिशायें हाथ बाँधे दस दासियों की तरह सम्मुख खड़ी रहती हैं, ऐसी समर्थ महाशक्ति का अबलम्बन करने वाला हर दृष्टि से अपना जीवन सार्थक बना सकता है ।

क्रिरन्तीमगेभ्यः किरथनिकुरं वामृतरसं,
हृदि त्वामाधत्ते हिमकरशिलामूर्तिमिव यः ।
स सर्पाणां दर्पं शमयति शकुन्ताधिप इव,
ज्वरप्लुष्टं दृष्ट्या सुखयति सुधासारशिरया॥२०॥

–सौन्दर्य लहरी२०

भावार्थ– अमृत भरी किरणें फैलाने वाली, हिमालय जैसी धवल, तुम महाशक्ति को जो हृदय में स्थान देता है वह दुष्टता के सर्पो का अभिमान गरुड़ की तरह चूर कर सकता है और संतृप्तों को अपनी शीतल सुधा दृष्टि से शान्ति दे सकता है ।

संकेत–कुण्डलिनी की आराधना करने वाला व्यक्ति अपने सफल सार्थक जीवन की आभा सब ओर फैलाता है, व्यक्तित्त्व हिमालय जैसा धवल निर्मल बनता है । उदारता और सम्पन्नता बढ़ जाने से पिछड़े हुओं को आगे बढ़ा सकता है तथा अपनी प्रखर प्रतिभा के कारण दुष्टता के सर्पों को गरुड़ की तरह निरस्त करने में सफल होता है ।

कुण्डलिनी रूपी महाशक्ति की समग्र साधना से आत्मिक प्रगति के लिए इस साधना की उपयोगता एवं प्रतिक्रिया क्या हो सकती है । जीवन लक्ष्य की प्राप्ति एवं परब्रह्म तक पहुँचने में किस प्रकार सहायता मिल सकती है, इसका कुछ संकेत इस प्रकार है ।

निथे नित्य स्मेरे निरवधिगुणे नीतिनिपुणे ।
निराधारज्ञाने नियमपरचित्तै कनिलये ॥
नियत्या निर्मुक्ते निखिलनिगमान्तस्तुतपदे ।
निरातंकेनित्ये निगमय ममापि स्तुतिमियां ॥१०२॥

–सौन्दर्य लहरी १०२

भावार्थ–तुम, हँसमुख, गुण–निधान, नीति निपुण, ऋतम्भरा प्रज्ञा, नियम परायण, सहायक नियमि से युक्त हो, सर्व शास्त्र, उपनिषद् तुम्हारे पद की स्तुति करते हैं । सो हे अभये, सनातनि मेरी भी स्तुति स्वीकार करो ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संकेत–कुण्डलिनी शक्ति में जो विशेषतायें हैं वे उसके साधक पुत्र में भी जा पहुँचती हैं । वह सन्तुष्ट, प्रसन्न, हँसमुख, गुणवान, नीति निपुण, प्रज्ञायुक्त चरित्रशील, उदार, बन्धनमुक्त, शास्त्रज्ञ एवं अभय जैसे दिव्य गुणों से सम्पन्न होकर सर्वत्र सम्पूजित होता है

शरज्ज्योत्स्ना शुभ्रां शशियुतजटाजूटमुकुटां,
वरत्रासत्राणस्फुटिकगुणिकापुस्तककराम् ।
सकत्रात्त्वा न त्वां कथमिव सतां सन्निदधते,
मधुक्षीरद्राक्षामधुरि मधुरीणा भणितयः ॥१५॥

–सौन्दर्य लहरी१५

भावार्थ–शरद ऋतु की चन्द्रिका जैसी निर्मल, जटाओं पर चन्द्रमुकुट वाली, हाथों में वर अभय, माला और पुस्तक धारण किये तुम भगवती का यदि ध्यान, मनन न करें तो उनकी रचनायें मधु जैसी मधुर कैसे हों ?

संकेत–शान्ति और सफलताओं की –प्राप्ति और समृद्धियों की–सिद्धि और विभूतियों की–अधिष्ठात्री देवी कुण्डलिनी की दीप्तिमान आभा जीवन को निर्मल, मस्तिष्क को सन्तुलित, हृदय को निर्भय, अन्तःकरण को प्रज्ञा सम्पन्न बनाती है । उसका कर्तृत्त्व एवं सृजन जो कुछ भी होता है । सर्वत्र मधु जैसा सराहा जाता है और सबको मधुर लगता है । अर्थात् उसमें सद्भाव और सत्कर्मों का ही बाहुल्य रहता है ।

अमू ते वक्षोजावमृतरसमाणिक्यकुतुपौ ।
न सन्देहस्पन्दो नगपतिपताके मनसि नः ॥
पिबन्तौ तौ यस्मादविदितवधूसङ्गरसौ ।
कुमारावद्यापि द्विरदवदनक्रौञ्चदलनौ ॥७३॥

–सौन्दर्य लहरी ७३

भावार्थ–तुम्हारा स्तन पान करके मनुष्य की समस्त वासनायें दूर हो जाती हैं । तुम्हारे दोनों पुत्र गणेश और कार्तिकेय वासना रस से सर्वथा अछूते रहकर अद्यावधि कुमार ही हैं ।

संकेत–कुण्डलिनी की गोद में बैठने पर लौकिक वासना, तृष्णा शान्त हो जाती है और उस दिशा में बिखरने वाला वर्चस्व दिव्यता के अभिवर्धन में लग जाता है । पार्वती के दोनों पुत्र गणेश और कार्तिकेय स्वयं देवता हैं और संसार को दिव्यता बाँटते हैं उन्हें वासना तृष्णा छूती भी नहीं । फलतः वे दोनों ही कुँवारे हैं । कुण्डलिनी माता का पयपान करने के इच्छुक साधक की भी मनोभूमि ऐसी ही हो जाती है ।

पुरारातेरन्तःपुरमसि ततस्त्वच्चरणयोः ।
सपर्यामर्यादा तरलकरणानामसुलभा ॥
तथा ह्येते नीताः शतमखमुखाः सिद्धिमतुलां ।
तव द्वारोपान्तस्थितिभिरणिमाद्याभिरमराः ॥९६॥

–सौन्दर्य लहरी ९६

भावार्थ–तुम्हारे चरणों की तात्त्विक पूजा, चंचल मन वाले लोग नहीं कर पाते । कामनाग्रस्त इन्द्र सहित देवगण स्तर वाले तो तुम्हारे दरवाजे से बाहर खड़ी अणिमा आदि सिद्धियों तक ही पहुँच कर रह जाते हैं ।

शास्त्रार्थ में जब श्री शंकराचार्य ने मण्डन मिश्र को परास्त कर दिया तो उनकी पत्नी भारती ने कहा अभी मेरे पति ही हारे हैं मैं उनकी अर्धांगिनी हूँ । मुझे भी हरा सकने पर आपकी विजय पूरी मानी जायेगी । शास्त्रार्थ उनसे भी हुआ, उनने काम विद्या म्बन्धी अनेक प्रश्न पूछे । शंकराचार्य ब्रह्मचारी हा ने के कारण उस विषय में अनभिज्ञ थे । प्रतिपादन यह था कि 'काम–विद्या' भी अध्यात्म विद्या का अविछिन्न अंग है । उसे न तो उपेक्षित रखा जा सकता है और न अनावश्यक बताया जा सकता है । जीवन व्यवस्था एवं आत्मिक प्रगति में उसका भारी उपयोग है । सो उस सन्दर्भ में भी आत्म–वेत्ता की जानकारी होनी ही चाहिए । श्री शंकराचार्य को भारती का तर्क स्वीकार करना पड़ा ।

उन्होंने उत्तर देने के लिए समय माँगा, कथन है कि अपना शरीर छोड़ कर शंकराचार्य ने एक मृत राजा के शरीर में प्रवेश करके जीवन धारण किया और उसकी रानियों के साथ रह कर कामविद्या सीखी । शिक्षण पूरा होने पर वे राजा का शरीर छोड़कर अपने पूर्व शरीर में पुनः आ गये और भारती के प्रश्नों का उत्तर देकर उसका समाधान किया ।

भगवान् शंकराचार्य ने अपनी शक्ति साधना के अनुभवों की एक हलकी सी झाँकी सौन्दर्य लहरी में प्रस्तुत की है । शक्ति के बिना शिव की प्राप्ति नहीं हो सकती । उपनिषदकार के अनुसार यह आत्मा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बलहीनों को प्राप्त नहीं होती । दुर्बलता के रहते ब्रह्म तक पहुँच सकने की क्षमता कहाँ से आ सकती है । इस दृष्टि से ब्रह्मविद्या के सहारे ब्रह्मवेत्ता बनने और ब्रह्म तत्त्व को प्राप्त करने के प्रयत्न में भगवान शंकराचार्य को शक्ति साधना करनी पड़ी और इसके लिए योगाभ्यास के–प्रत्याहार धारणा ध्यान समाधि के प्रयोग ही पर्याप्त न रहे वरन् उन्हें पंचतत्त्वों की प्रवृति का संचार और नियन्त्रित कर्त्री अपराविद्या का अवलम्बन लेकर शरीर और मन को भी समर्थ बनाना पड़ा । इस प्रयोजन के अपरा विद्या की साधना में कुण्डलिनी शक्ति को प्रमुख माना जाता रहा है । इसे काम कला या काम बीज भी कहते हैं । प्रजनन प्रयोजन में भी यह कला प्रयुक्त होती है और उसका जननेन्द्रिय के गुह्यक्रिया–कलापों से सम्बन्ध है इसलिए उसे गोपनीय गिन लिया जाता है और उसकी चर्चा अश्लील मानी जाती है । पर वास्तविकता ऐसी है नहीं । अश्लील कोई अवयव या कोई क्रिया–कलाप नहीं । प्रजनन को अपने यहाँ एक धर्म–कृत्य माना गया है । सोलह संस्कारों में गर्भाधान भी एक संस्कार है । जिसकी पृष्ठ भूमि धर्म–कृत्यों के–देवता और गुरुजनों के आशीर्वाद के साथ विनिर्मित की जाती है । भगवान् शिव का प्रतीक विग्रह जननेन्द्रिय के रूप में ही है जिसे धर्म भावना और श्रद्धा–के साथ पूजा जाता है । निन्दनीय वह प्रक्रिया ही हो सकती है जिसके द्वारा पशु–प्रवृत्ति को भड़काने में सहायता मिले ।

शंकराचार्य जी ने भारती के प्रश्नों को यह कह कर टाला नहीं कि हम संन्यासी है हमें 'काम–विद्या' के सन्दर्भ में कुछ जानना या बताना क्या आवश्यक है ? वे जानते थे कि योग परा और अपरा विद्या के सम्मिश्रण का नाम है । परा अर्थात् ब्रह्मविद्या ज्ञान–विद्या अपरा अर्थात् शक्ति विद्या आत्मवेत्ता को दोनों ही जाननी चाहिए । जो शक्ति है उसके सदुपयोग, दुरुपयोग की जानकारी होना भी आवश्यक है । शरीर के क्रिया–कलाप और मन के उल्लास जिस सूक्ष्म शक्ति से प्रेरित, प्रोत्साहित और कर्म प्रवृत्त होते हैं उस कुण्डलिनी शक्ति को उपेक्षा में नहीं डाला जा सकता । इस उपेक्षा से विकृतियाँ उत्पन्न होने और सदुपयोग की अनभिज्ञता से अहित ही हो सकता है इसलिए गृहस्थ ब्रह्मचारी सभी के लिए उसे जानना आवश्यक है । भारती ने इसी तथ्य को प्रतिपादित करते हुए कामकला सम्बन्धी प्रश्न पूछे । और शंकराचार्य ने उन प्रसंगों को निरर्थक या अनुपयुक्त नहीं बताया । वरन् यह स्वीकार किया कि ब्रह्मचारी ब्रह्मवेत्ता को भी रोम–रोम में संव्याप्त शक्ति का स्थूल न सही सूक्ष्म प्रयोग तो जानना ही चाहिए यह उन्हें विदित न था सौ पूछे प्रश्नों का उत्तर देने के लिए उन्हें अवकाश अवधि माँगनी पड़ी और आवश्यक ज्ञान प्राप्त करके शास्त्रार्थ की पूर्णता करनी पड़ी ।

मस्तिष्क के मध्य ब्रह्मरंध्र में 'ज्ञान बीज' और जननेन्द्रिय मूल में 'काम बीज' स्थित है । काम बीज को नारी की 'योनि' की संज्ञा दी जाती है और ज्ञान बीज को शिश्न की । यह मात्र आकर्षक कल्पना ही नहीं । इसमें वैज्ञानिक तथ्य भी है । जिस पर विस्तृत प्रकाश अगले अंक में डालेंगे । इस समय तो इतना ही समझना पर्याप्त होगा कि उत्तरी ध्रुव और दक्षिणी ध्रुव की तरह यह दो अत्यन्त सामर्थ्यवान् प्रचण्ड क्षमताओं से परिपूर्ण दो शक्ति संस्थान विद्यमान हैं । मस्तिष्क का सदुपयोग जानने और करने वाले व्यक्ति जिस प्रकार भौतिक और आत्मिक प्रगति कर सकते हैं । उसी प्रकार काम शक्ति कुण्डलिनी का सदुपयोग करके भी जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उत्साह और उल्लास विकसित किया जा सकता है । न केवल शरीर और मन के विकास के लिए–न केवल भौतिक सफलताएँ, समर्थताएँ प्राप्त करने के लिये वरन् आत्मिक और भावनात्मक प्रगति के लिए इस शक्ति की प्रक्रिया का ज्ञान एवं अनुभव होना आवश्यक है ।

आध्यात्म शास्त्रों में कुण्डलिनी के सम्बन्ध में बहुत कुछ बताया गया है । यथा–

अपाने मूलकन्दाख्यं कामरूपं च तज्जगुः ।
तदेव तन्हिकुण्डं स्यात् तत्त्वकुण्डलिनी तथा ॥६॥

योग राजोपनिषदः६

अपान स्थूल मूलाधार में–कन्द है । उसे काम रूप–काम बीज कहते हैं । उसे ही वन्हि कुण्ड अथवा कुण्डलिनी तत्त्व कहते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एष बीजी भवान् बीजमहं योनिः सनातनः ।
एवमुक्तोऽथ विश्वात्मा ब्रह्म विष्णुमभषत॥६६॥

–वायु पुराण

जीव ने ब्रह्म से कहा–आप बीज हैं मैं योनि हूँ । यह क्रम सनातन है ।

पूर्वभागे ह्यधोलिंङ्ग शिखिन्यां चैव पश्चिमम् ।
ज्योतिर्लिंङ्ग भ्रुवोर्मध्ये नित्यं ध्यायेत्सदा यतिः ॥८०॥

कुण्डलिनी स्थान पर अधोलिंग का, शिखा स्थान पर पश्चिम लिंग का और भृकुटियों के मध्य ज्योतिलिग का ध्यान करना चाहिए ।

प्रकृति का प्रतिनिधित्व करने वाला केन्द्र है–जननेन्द्रिय मूल–कुण्डलिनी चक्र । और पुरुष का मनुष्य शरीर से मस्तिष्क के मध्य ब्रह्मरंध्र–सहस्रार चक्र में अवस्थित है । जब तक दोनों का मिलन नहीं होता, बिजली की दो धारायें–पृथक–पृथक रहने की तरह मानव–जीवन में भी सब कुछ सूना रहता है पर जब इन दोनेां शक्ति केन्द्रों का परस्पर सम्बन्ध–समन्वय–साहचर्य आरम्भ हो जाता है । तो ग्रीष्म और शीत के मिलने पर आने वाले बसन्त की तरह जीवन उद्यान भी पुष्प–पल्लवों से भर जाता है । इसी प्रयत्न के किये जाने वाले प्रयोग को कुण्डलिनी जागरण कहते हैं । शंकराचार्य के ज्ञान और अनुभव में यही कभी देखकर भारती ने उनकी साधन अपूर्णता को चुनौती दी थी और शास्त्रार्थ के लिए ललकारा था ।

काम केन्द्र में स्फुरणा बड़ी सरस और कोमल है । समस्त कलाऐं और प्रतिभाऐं वहीं पर केन्द्रीभूत हैं । जो लोग उस सामर्थ्य को मैथुन प्रयोजन के तुच्छ से क्रीड़ा कल्लोल में खर्च करते रहते हैं वे उन दिव्य विभूतियों से वंचित रह जाते हैं जो इस काम शक्ति को सृजनात्मक दिशा में मोड़कर उपलब्ध की जा सकती हैं । आत्म विद्या के ज्ञाता इस काम शक्ति को न तो हेय मानते हैं और न तिरस्कृत करते हैं वरन् उसके स्वरूप, उपयोग को समझने और सृजनात्मक प्रयोजन के लिए प्रयुक्त करने के लिए सचेष्ट होत हैं ।

ब्रह्म को शिव और प्रकृति को–शक्ति कहते हैं । इन दोनों के मिलन का अतीव सुखद परिणाम होता है । ब्रह्म रन्ध्र में अवस्थित और ज्ञान बीज और जननेन्द्रिय मूल में सन्निहित कामबीज का मिलन भी जब सम्भव हो जाता है तो बाह्य और आन्तरिक जीवन में आनन्द, उल्लास का ठिकाना नहीं रहता है । ब्रह्मानन्द की तुलना मोटे अर्थ में विषयानान्द से की जाती रही है । यह अन्ततः शक्तियों का मिलन भी अलंकारिक भाषा में ब्रह्म मैथुन कहा जाता है । कुण्डलिनी साधना की जब प्राप्ति होती है तो इस स्तर का आनन्द भी साधक को सहज ही मिलने लगता है ।

सहस्रारोपरिबिन्दौ कुण्डल्या मेलनं शिवे ।
मैथुनं शयनं दिव्यं यतीनां परिकीर्तितम्॥

–योगिनी तन्त्र

हे पार्वती, सहस्रा कमल में जो कुल और कुण्डलिनी–महासर्प और महासर्पिणी का मिलन है । उसीको यतियों ने परम मैथुन कहा है ।

परशक्त्यात्म मिथुन–संयोगानन्दनिर्गराः ।
मुक्तात्ममिथुनं तत् स्त्यादितरस्त्रीनिवेषकाः॥

–तन्त्र सार

आत्मा को परब्रह्म के साथ प्रगाढ़ आलिंगन में आबद्ध करके परम रस में निमग्न रहना ।यही यतियों का मैथुन है । काम सेवन नहीं ।

ईडापिङ्गलयोः प्राणान् सुषुम्नायां प्रवर्तयेत् ।
सुषुम्नाशक्तिसुद्दिष्टा जीवोऽयं तु परः शिवः ।
तयोस्तु संगमे देवैः सुरतं नाम कीर्तितम् ॥

–तन्त्र सार

इड़ा, सुषुम्ना और जीवात्मा संगम इसे मैथुन सुख कहते हैं । शंकराचार्य कृत सौन्दर्य लहरी में कुण्डलिनी शक्ति को रूपवती युवती के रूप में चित्रित किया गया है और उसके ब्रह्म मिलन को काम–कल्लोल, मैथुन, सम्भोग की भाषा में चित्रित किया गया है । सो यह कुछ अटपटा सा लगता है पर प्राचीन काल की अलंकारिक शैली में पहेली बुझौअल की तरह इस प्रकार का साहित्यिक–काव्यात्मक–अलंकारिक प्रयोग चलता रहा है । उसी का प्रयोग सौन्दर्य लहरी में भी किया गया है । सो इसे अलंकारिक अभिव्यञ्जना ही माना जाना चाहिए और इसमें अश्लीलता ढूँढ़ने की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपेक्षा काव्यात्मक रसिकता के पीछे झाँकते हुए उस प्रतिपादन को ही देखना चाहिए जो व्यक्ति के कलेवर में छिपे हुए दो महान् शक्ति केन्द्रों के पारस्परिक सम्पर्क के लिए की जाने वाली साधना को प्रतिपादित करते हैं ।

सन्त कबीर की 'उल्टा वासियों' में इसी प्रकार का प्रयोग है । उन्होंने जीवात्मा को प्रेमिका और परमात्मा को प्रेमी के रूप में चित्रित किया है । आंतरिक स्थिति तथा साधनात्मक अनुभूतियों को पहली बुझौअल के रूप में प्रस्तुत किया है । उनके दो अटपटे पद्य नीचे देखिए–

(१)

देखि देखि जिय अचरज होई ।
यह पद बूझै विरला कोई ॥
धरती उलटि आकाश को जाय ।
चींटी बैठी हाथी खाय ॥
बिना पवन के पर्वत उड़े ।
मगर मच्छ तरुवर पर चढ़ें ॥
सूखे सरवर उठें हिलोर ।
बिन जल चकवा करें किलोल ॥
बैठा पंडित पढ़ै पुरान ।
बिन देखी का करै बखान ॥

(२)

वधू ऐसा ज्ञान विचारी ।
ताते भाई पुरुष से नारी ॥
ना मैं ब्याही ना मैं क्वारी ।
नित नित पूत जनूँ सो हारी ॥
काले मूँड को एक न छोड़ो ।
अजहूँ रही कुआँरी ॥
ब्राह्मन के घर रही ब्राह्मनी ।
जोगी के घर चेली ॥
कलमा पढ़ि–पढ़ि भई तुरकिनी ।
घर घर फिरूँ अकेली ॥
पीहर जाऊँ न रहूँ सासरे ।
पुरुष हि अंग न लाऊँ ॥
कहें कबीर सुनो रे सन्तो ।
अंग से अंग न छुवाऊँ ॥

कुण्डलिनी महाशक्ति को विभिन्न साधनात्मक ग्रन्थों में सुन्दरी, युवती, कामिनी के रूप में चित्रित किया है और उसके विविध क्रिया कलापों को यौवन अंगों के साथ तुलना करते हुए श्रृंगार रस की काव्य शैली का अनुकरण किया है–यथा–

युवती सा समाख्याता सा महाकुण्डली परा ।

–कामधेनु तन्त्र

इस कुण्डलिनी महाशक्ति को ही परम सुन्दरी युवती कहते हैं ।

कामीकलां कामरूपां चिकित्त्वा नरो जायते
–कामरूपश्च कामः ॥११॥

–त्रिपुरोपनिषद्

वह महाशक्ति कामरूप है । उसे काम कला भी कहते हैं । जो उसकी उपासना करता है । वह काम रूप हो जाता है और उसकी कामनाएँ फलवती होती हैं ।

यानाड़ी सूक्ष्मरूपा परम पदगता सेवनीया सुषुम्णा ।
सा कान्तालिंगनासी न मनुज रमणी सुन्दरी वारयोवितू ॥
कुर्याच्चन्द्रार्कयोगे युगपवन गतं मैथुनं नैव योनो ।
योगीन्द्रो विश्ववन्द्यः सुखमय भवने तां–परिष्यज्य नित्यम् ।

–भैरव या मन तन्त्र

रूपवती सुषुम्ना नाड़ी ही आलिंगन करने योग्य कांता है । इस महाशक्ति का आत्मा के साथ संयोग का काम ही मैथुन है । स्त्री संभोग नहीं । योगी जन इस परम मैथुन का ही रसास्वादन करते हैं ।

महाशक्ति की साधना से उत्पन्न, अनुभूतियाँ कितनी कोमल, कितनी सरस, कितनी मधुर, कितनी रमणीय, कितनी कमनीय और कितनी मोद–प्रमोद भरी होती हैं इसकी झाँकी उपनिषद्कार तत्त्व ज्ञानी ने इस प्रकार कराई है ।

सृण्येव सितया विश्वचर्षणिः पाशेनैव–
प्रतिबध्नात्यभीकाम् ।
इषुभिः पंचभिर्धनुषा च विधत्यादिशक्ति–
ररुणा विश्वजन्या ॥१३॥

–त्रिपुरोपनिषद

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उसका अंकुश मधु की तरह अत्यन्त मधुर है । क्रूर भी उस पाश में बँध जाते हैं । पाँच बाणों वाले काम धनुष में वह अरुणा सबको अपनी मुट्ठी में रखती हैं ।

सौन्दर्य लहरी के कतिपय श्लोकों में कुण्डलिनी के काम बीज की महत्ता और उसकी उपलब्धियों की ओर संकेत किया है । नीचे उनमें से कई श्लोक इसलिए दिये जा रहे हैं कि आत्म साधना के पथ पर चलने वाले पथिक यह समझ सकें कि अपने अन्तरंग में भरी हुई क्षमता का श्रेष्ठतम् लाभ कैसे उठाया जा सकता है । काम बीज का भोंड़ा लाभ तो पशु–पक्षी, कीट–पतंग सभी उठाते हैं । पर यदि उसका विशिष्ठ उपयोग सम्भव हो सके तो उससे असंख्य गुनी आनन्द, उल्लास भरी उपलब्धियाँ प्राप्त की जा सकती हैं । कुण्डलिनी जागरण से जहाँ ब्रह्मानन्द की हिलोरें अन्तःकरण को विभोर करती हैं वहाँ उनमें यह क्षमता भी है कि शारीरिक आनन्द को न केवल उत्साहवर्धक बना सकें वरन् उपयोगी भी बना सकें । ऐसे हास–विलास शरीरों की जितनी क्षति करते हैं उससे अनेक गुनी उपलब्धियाँ भी लाकर रख देते हैं । इस प्रकार उस शक्ति का भौतिक उपयोग भी उतना आनन्दमय, उत्साहवर्धक और लाभदायक बन जाता है जिससे गृहस्थ और ब्रह्मचर्य का समन्वित लाभ प्राप्त किया जा सके । कुण्डलिनी विद्या को इसीलिए भुक्ति और मुक्ति उभय सम्पदायें प्रदान करने वाली कहा गया है–

पूज्याविभावती सौम्या भोगिनीभोगशायिनी ॥६६॥
त्रैलोक्यसुन्दरीनूम्यासुन्दरीकामचारिणी ॥६७॥

– कूर्म पुराण

वह दीप्तिमान देवी सौम्या, भोगनी, भोग शायिनी, त्रैलोक्य सुन्दरी, रम्य, सौन्दर्य रूपा और कामचारिणी है ।

यद्वा मण्डलाद्वा स्तन बिम्बमेकं मुखं चाथ स्त्रीणि गुहासदनानि ।
कामी कलां काम रूपां चिकित्त्वा नरो जायते काम रूपश्च कामः ॥

त्रिपुरोपनिषद्११

जो स्तन मुख की तरह गोल तथ एक मुख वाला है । उसके नीचे तीन गुहा सदृश्य धर बने हुए हैं । ऐसी काम कला का कोई कामी मनुष्य उपभोग करता है तो उसकी कामना पूर्ण होती है और वह स्वयं काम रूप हो जाता है ।

कुण्डलिनी जागरण का वास्तविक लाभ तो आन्तरिक शक्तियों का अभिवर्धन ही है । ऐसा अभिवर्धन जिसमें रूखापन, नीरसता, सूनापन, उदासीनता नहीं वरन् पग–पग पर हर्षोल्लास का हास–परिहास का साधन विद्यमान है । सौन्दर्य लहरी में इसी तथ्य का प्रतिपादन करने वाली भगवान शंकराचार्य की अन्य अनुभूतियाँ इस प्रकार हैं जो समझने ही योग्य हैं–

अरालेः स्वाभाव्यादलिकलभसश्रीभिरलकैः ।
परीतं ते वक्त्रं परिहसति पङ्केरुहरुचिम् ॥
दरस्मेरे यस्मिन्दशनरुचिकिञ्जल्करुचिरे ।
सुगन्धौ माद्यन्ति स्मरदहनचक्षुर्मधुलिहः ॥

भावार्थ–बल खाती हुई कटि, भ्रमरी जैसी चंचलता; अलकावलि से आच्छादित मुख, कमल पुष्पों जैसी परिहास; स्फटिक जैसे दाँतों से युक्त है देवि, तेरी मुस्कराहट के समय निकलने वाली सुगन्ध से काम दहन करने वाले शिवजी भी भ्रमर की तरह उन्मत्त हो जाते हैं ।

संकेत–मन को सिकोड़ कर बैठे हुए, निष्क्रिय, निराश और नीरस लोग भी कुण्डलिनी की स्फुरणा प्राप्त करके इठलाते हुए, भ्रमरी जैसे सक्रिय, अलकावलि जैसे स्निग्ध, शोभित, बढ़ चलने वाले, हँस मुख स्वभाव और अपनी वाणी से सर्वत्र सुगाध फैलाने वाले बन जाते हैं । और निष्क्रिय लोगों को भी आशा और स्फूर्ति की उमंग से उन्मत्त कर देते हैं ।

गते कर्णाभ्यर्ण गरुत इव पक्ष्माणि दधती ।
पुरां भेत्तु श्चित्तप्रशमरसविद्रावणफले ॥
इमे नेत्रे गोत्राधरपतिकुलोत्तं सकलिके ।
तवाकर्णाकृष्टस्मरशरविलासं कलयतः ॥

भावार्थ– तेरे विशाल नेत्र कानों तक जा पहुँचे हैं और दो पलकों को पंखों की तरह धारण किये हुए हैं । यह कान तक तने हुए कामदेव के पुष्प वाण शिवजी के चित्त को भी अशान्त कर देते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संकेत–कुण्डलिनी साधक का दृष्टिकोण विशाल, परिष्कृत और दूरदर्शी हो जाता है । विशाल नेत्रा अर्थात् विशाल हृदय एवं विशाल दृष्टिकोण का विस्तार । उन पर मर्यादा और लोग हित के दो बन्धक अर्थात् पलक पंख । इस आन्तरिक सुसम्पन्नता से समर्थ बना हुआ साधक अपने प्रतिपादन पर भगवान का भी सिंहासन हिला सकता है । और ईश्वर की भी निष्क्रियता को उसी तरह क्रियाशील बना देता है जैसा कि काम देव ने शिवजी के चित्त को भी अशान्त कर दिया था ।

हरिस्त्वामाराध्य प्रणतजनसौभाग्यजननीं,
पुरा नारी भूत्त्वा पुररिपुमपि क्षोभमनयत् ।
स्मरो अपि त्वां नत्त्वा रतिनयनलेह्येन वपुषा,
मुनीनामप्यन्तः प्रभवति हि मोहाय महताम् ॥

भावार्थ–पूर्व काल में विष्णु ने तुम्हारी आराधना करके मोहिनी रूप पाया और शिवजी के मन में भी काम विकार उत्पन्न कर दिया । कामदेव भी तुम्हारी ही आराधना से अपनी पत्नी का नयनाभिराम बना हुआ है । और बड़े–बड़े मुनियों के मन में भी क्षोभ उत्पन्न करता रहता है ।

संकेत–मोहिनी वह जो दूसरों को मोहित करने पर स्वयं मोहित न हो । योग साधना से मनुष्य में वे सद्गुण विकसित होते हैं जिनके कारण दूसरे सभी लोग उससे प्रभावित एवं आकर्षित होते हैं । परिष्कृत दृष्टिकोण हो जाने पर मनुष्य स्वभावतः सम्मान और श्रद्धा का केन्द्र बन जाता है यही व्यक्ति का मोहिनी रूप है । इस सफलता को पाने के साथ–साथ आत्मवेत्ता स्वयं किसी पर मोहित नहीं होता । न व्यक्ति न पदार्थ दोनों में उसे आकर्षण नहीं होता । वह तो अपनी आत्मा पर ही मोहित रहता है इसलिए उसका प्यार कर्त्तव्य एवं आदर्श की परिधि में सीमाबद्ध हो जाता है । ऐसी मोहिनी वृत्ति कुण्डलिनी साधना के प्रभाव से उपलब्ध होती है ।

कुण्डलिनी जागरण के साथ–साथ काम वृत्ति का भी परिष्कार होता है । वहिर्मुखी लोगों के मन में उससे काम क्षोम भी उत्पन्न हो सकता है और बढ़ सकता है । पर विज्ञ साधक उसे रचनात्मक प्रयोजन में मोड़ कर जीवन को अधिक सरस एवं उल्लसित बना लेते हैं ।

धनुः पौष्पं मौर्वी मधुकरमयी पञ्चविशिखा,
वसन्तः सामन्तो मलयमरुदायोधनरथः ।
तथाप्येकः सर्वे हिमगिरी सुते कामपि कृपा–
मपांगात्ते लब्ध्वा जगदिदमनंगो विजयते ॥

भावार्थ–कामदेव पुष्पों का धनुष भ्रमरी की रस्सी पाँच विषयों के वाण, वसन्त रूपी सेनापति, मलयगन्ध रूप रथ में बैठ कर–शरीर न रहते हुए भी सारे जगत को अकेला जीत लेता है । उस कामदेव को यह सामर्थ्य तुम्हारी कृपा से ही प्राप्त होती है ।

संकेत–कुण्डलिनी का केन्द्र जननेन्द्रिय मूल में रहने से काम प्रवृत्ति होना स्वाभाविक है । यह प्रवृत्ति इच्छा और क्रिया दोनों का सृजन करती है । मस्तक में अवस्थित ज्ञान केन्द्र निर्णयों को आकांक्षा एवं क्रिया के रूप में बदल देना इसी शक्ति का कार्य है । काम प्रवृत्ति में मनुष्य का मन, शरीर और स्वाभाव सभी, प्रफुल्लित, आशान्वित एवं स्फूर्तिवान रहते हैं । इसका सदुपयोग होने से व्यक्ति आध्यात्मिक दृष्टि से कामदेव सरीखा आकर्षक हो जाता है । पुष्पों की तरह हँसता, मुसकराता मुख, भ्रमर जैसी दिव्य रसिकता, पाँचों ज्ञानेन्द्रियों का निग्रह, मलयगन्ध जैसी प्रवृत्ति से सम्पन्न होने वाला व्यक्ति अकेला ही संसार को प्रभावित कर सकता है । काम प्रवृत्ति के सदुपयोग का वही स्वाभाविक परिणाम है । कुण्डलिनी शक्ति की कृपा से यह उपलब्धियाँ सहज ही सम्भव हो जाती हैं ।

नरं वर्षीयांस नयन विरसं नर्मसु जडं.,
तवापांगालोके पतितमनुधावन्ति शतशः ।
गलद्वेणीबन्धाः कुचकलशविस्रस्तसिचया,
हठात् त्रुट्यत्कांच्यो गिलितदुकूला युवतय ॥

भावार्थ–वृद्ध, कुरूप, क्रीड़ा से अनभिज्ञ जड़ मनुष्य भी तुम्हारी दृष्टि पड़ने पर इतना कमनीय और रमणीय हो जाता है कि अनेक युवतियाँ इसके पीछे असयमी होकर अस्त–व्यस्त की तरह भागने लगती हैं ।

संकेत–मानसिक दृष्टि से निराश को वृद्ध, दुर्गुणी को कुरूप और नीरस, कर्कश स्वभाव वाले को मूढ़

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कहते हैं । ऐसा व्यक्ति भी कुण्डलिनी साधना से सहृदय, सज्जन, सद्गुणी और सरस बनकर एक प्रकार से अपना आंतरिक काया-कल्प ही कर डालता है । सिद्धियाँ और सफलताऐं- ऋद्धि और सिद्धियाँ उसके पीछे ऐसे ही भागती हैं जैसे कुलटा नारियाँ किसी रूप, सौन्दर्य सम्पन्न आकर्षक स्वभाव वाले कामुक युवक के पीछे बिना बुलाये ही फिरने लगती हैं ।

मुखं बिन्दुं कृत्त्वा कुचयुगमधस्तस्य तदधो,
हकारार्द्धं ध्यायेद्धरमहिषि ते मन्मथकलाम् ।
स सद्यः संक्षोभं नयति वनिता इत्यतिलघु,
त्रिलोकीमप्याशु भ्रमयति रविन्दुस्तनयुगाम् ॥

भावार्थ-तेरी काम कला के प्रभाव से मनुष्य के लिए स्त्रियों के मन में तुरन्त क्षोभ उत्पन्न कर देना बाँये हाथ का खेल होता है । सच तो यह है कि तेरी साधना करने वाला इन सूर्य चन्द्र रूपी दो स्तनों वाली प्रकृति तरुणी को भी अपने इशारे पर नचा सकता है ।

संकेत-महाशक्ति की साधना से उत्पन्न आकर्षण प्राण प्रवाह (काम) के प्रभाव से अनेक सत्प्रवृत्तियाँ और सफलताऐं आकर्षित होने लगती हैं जैसे खिले हुए फूल पर तितलियाँ और मधु मक्खियाँ मँडलाती हैं वैसे ही उस साधक को विभूतियों का दुलार और सहयोग अनायास ही सब ओर से प्राप्त होता है । यह प्रकृति भी अनुकूल हो जाती है और पस्थितियाँ उसके इशारे पर नाचती बदलती, सँभलती रहती है ।

एक गाथा यह प्रचलित है कि एक बार शंकराचार्य के पिता जी कहीं प्रवास में गये और अपनी अनुपस्थिति में अपनी पत्नी को भगवती के विग्रह की पूजा करते रहने का निर्देश कर गये । इसी बीच एक दिन शंकराचार्य की माताजी पूजा न कर सकीं तो उन्होंने बालक को दूध लेकर भगवती का भोग लगाने भेजा । भोग लगाया पर दूध ज्यों का त्यों रखा रहा । तब बालक ने रोकर पीने की प्रार्थना की । भगवती ने उसे पी लिया । अब बालक को और व्यथा हुई । भोग से बचा दूध उन्हें मिलता था, वह तो भगवती पी गई, उसे खाली हाथ रहना पड़ा । दूध न मिलने के कारण रोते हुए शंकराचार्य को भगवती ने छाती से लगा लिया और उसे स्तन पान कराया । इसे पीते ही वे प्रचंड विद्वान और प्रखर कवि हो गये और अद्भुत रचनाऐं करने लगें । इसी घटना का संकेत सौन्दर्य लहरी के श्लोक ७५ में [illegible] है । इस गाथा की चर्चा कैवल्य शर्मा ने अपनी टीका में की है ।

श्री शंकराचार्य की भाव विभोरता देखते ही बनती है । महाशक्ति के अनुग्रह से वे जिस प्रकार कृतकृत्य हुए और उन्होंने उसकी महान सम्भावनाओं तथा अनुकम्पाओं का स्वरूप समझा उसे देखते हुए यह भाव विभोरता उचित भी है ।

प्रदीपज्वालाभिर्दिवसकरनीराजनविधिः ।
सुधा सूतेश्चन्द्रोपलजललवैर्ध्यर्घरचना ॥
स्वकीयैरम्भोभिः सलिलनिधिसौहित्यकरणं ।
त्वदीयाभिर्वाग्भिस्तव जननि वाचां स्तुतिरियं ॥

भावार्थ-तुम्हारी ही दी हुई वाक् शक्ति से तुम्हारी ही स्तुति करना, सूर्य को दीपक दिखाना, ओस से चन्द्रमा को अर्थ चढ़ाने अथवा समुद्र के ही जल कणों से महासागर करने जैसा ही बाल प्रयास है ।

संकेत-मनुष्य के पास जो कुछ है सो सारा वैभव इस कुण्डलिनी नाम से सम्बोधित परा शक्ति का ही है । तुम्हारी दी हुई वाणी, काया, चेतना तथा सामिग्री से ही तुम्हारा स्तवन बन्दन कैसे हो ? इसका विकल्प यही है कि साधक अपना आत्म समर्पण इस सत्ता के चरणों में करके उसी के दिव्य संकेतों के अनुरूप दिव्य जीवन जीने के लिए कदम बढ़ाये और सच्ची साधना करने वाले सच्चे साधक को लोक परलोक में आनन्द उल्लास भरा रखने वाली परम गति को प्राप्त करे ।

तव स्तन्यं मन्ये धरणिधरकन्ये हृदयतः ।
पयः पारावारः परिवहति सारस्वतमिव ॥
दयावत्या दत्तं द्रविडशिशुरास्वाद्य तव य-
त्कवीनां प्रौढ़नामजनि कमनीयः कवयिता ॥

भावार्थ-तेरे स्तनों के बहने वाले ज्ञानामृत रूपी पय पान करके यह द्रविण शिशु (शंकराचार्य) प्रौढ़ कवियों जैसी कमनयी कवितायें रच सकने में समर्थ हो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गया ।

संकेत–श्री आद्य शंकराचार्य अपना अनुभव बताते हुए कहते हैं कि मैं तुच्छ सा द्रविड़ वंश का बालक कुण्डलिनी माता का ज्ञानामृत रूपी पय पान करने के कारण इतना समर्थ हो गया है कि बचपन में ही प्रौढ़ कवियों जैसा साहित्य सृजन करने लगा । ऐसा ही मेधा प्रगति का लाभ दूसरे श्रद्धावान साधक भी उठा सकते हैं ।

ददाने दीनेभ्यः श्रियमनिशमात्मानुसदृशी–
ममन्दं सौन्दर्य्यस्तवकम करन्दं विकिरति ।
तवास्मिन् मन्दारस्तवकसुभगे यातु चरणे,
निमज्जनमज्जीवः करणचरणैः षट्चरणताम् ॥

भावार्थ–मैं अपनी छहों इन्द्रियाँ (पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ छटा मन) इन छहों पैरों से–पट पद भ्रमर की तरह तुम्हारे पतितों को उबारने वाले चरण कमलों का मकरन्द पान करता रहूँ ।

संकेत–श्री आद्य शंकराचार्य कुण्डलिनी शक्ति की महान उपलब्धियों का रसास्वादन करते हुए आनन्द विभोर होकर एक मात्र यही कामना करते हैं कि उस महासत्ता पद पद्यों का षट पद–'भौंरे' की तरह मकन्द पान करते रहें । षट् चक्रों की आराधना में निरन्तर संलग्नता का भाव भी 'षट् पद' शब्द में है । इस मार्ग पर चलने वाले हर साधक को उपलब्ध आनन्द की अनुभूति करते हुए ऐसी ही आकांक्षा उमड़ती है

जपो जल्पः शिल्पं सकलमपि मुद्राविरचनं,
गतिः प्रादक्षिण्यं भ्रमणमदनाद्याहुतविधिः ।
प्रणामः सम्वेशः सुखमखिलमात्मार्पणदशा,
सपर्यापर्यायस्तव भवतु यन्मे विलसितम् ॥

भावार्थ–हे माँ, मेरे सभी वाक्य जप हों, हाथों की सभी क्रियायें मुद्रा हों, हर कदम प्रदक्षिणा हों, आहार के ग्रास आहुतियाँ हों, मेरे प्रणाम तुम में तदात्म्य हों, मेरे सभी सुख तुम्हारी अखिल आत्मा में समर्पित हो, मैं जो कुछ भी करूँ सो सभी तुम्हारी पूजा में गिने जायें ।

संकेत–कुण्डलिनी शक्ति से उपलब्ध आत्मिक शक्ति एवं उत्कृष्ट विचारणा के आधार पर साधक की विचारणा तथा क्रिया देवोपम हो जाती है और उसके द्वारा सोचा गया प्रत्येक विचार, कार्य भगवान की आराधना जैसा ही मंगलमय होता है । मनुष्य शरीर में देवत्त्व का उदय करने में कुण्डलिनी शक्ति का अनुपम योगदान मिलता है श्री शंकराचार्य ने बहुत कुछ पा लेने के बाद अन्तिम रूप में यह माँगा है कि वे सर्वतोभावेन महाशक्ति में ही लीन हो जायें ।

चेतना की प्रचण्ड ज्योति
ज्वाला–कुण्डलिनी

कुण्डलिनी शक्ति का एक नाम 'जीवन अग्नि' (फायर आफ लाइफ) भी है । जो कुछ भी चमक, तेजस्विता; आशा, उत्साह, उमंग, उल्लास दिखाई पड़ता है, उसे उस अग्नि का ही प्रभाव कहा जा सकता है । शरीरों में बलिष्ठता, निरोगता, स्फूर्ति, क्रियाशीलता के रूप में और मतिष्क में तीव्र बुद्धि, दूरदर्शिता, स्मरण शक्ति, सूझ–बूझ, कल्पना; आदि विशेषताओं के रूप में यही परिलक्षित होती है । आत्म–विश्वास और उत्कर्ष की अभिलाषा के रूप में धैर्य और साहस के रूप में इसी शक्ति का चमत्कार झाँकते हुए देखा जा सकता है । रोगों से लड़कर उन्हें परास्त करने और मृत्यु की सम्भावनाओं को हटाकर दीर्घजीवन का अवसर उत्पन्न करने वाली एक विशेष विद्युत धारा जो मन में प्रवाहित होकर समस्त शरीर को सुरक्षा की आमत सामर्थ्य प्रदान करती है । उसे कुण्डलिनी ही समझा जाना चाहिए ।

यह जीवन अग्नि इस समस्त विश्व ब्रह्माण्ड में संव्याप्त है । जड़ पदार्थों में जब यह काम करती है तब उसे विद्युत कहते हैं अध्यात्म भाषा में इसे अपरा प्रकृति कहा गया है । पदार्थों का उद्भव, अभिवर्धन एवं परिवर्तन इसी की प्रक्रिया से होता है । पदार्थ निर्जीव है पर उसमें यह त्रिविध हलचल होती रहती है । हलचल न हो तो जड़ पदार्थ कही जानी वस्तुऐं भी स्थिर निश्चल हो जायँ और सर्वत्र शून्यता नीरवता ही दिखाई पड़ने लगे । अपरा प्रकृति विश्व विद्युत–अणु संचालन से लेकर विविध विधि दृश्यजगत की गतिविधियों का संचार करती है । इस प्रकार वे जड़ कहे जाने वाले पदार्थ भी एक तरह की चेतना ज्ञान बुद्धि अनुभूति से रहित जीवन तत्त्व से भरे हुए ही हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपने ढ़ग का जीवन उनमें भी विद्यमान है ।

जीवन अग्नि का दूसरा रूप है–परा प्रकृति । इसे प्राणियों की अनुभूति कह सकते हैं । बुद्धि विवेक, इच्छा, ज्ञान, भावना आदि इसी के अंग हैं । अचेतन मस्तिष्क को केन्द्र बनाकर यही परा प्रकृति उनकी शारीरिक, मानसिक, स्वाभाविक गतिविधियों का अविज्ञात रूप से संचालन करती रहती हैं । श्वास–प्रश्वास, रक्ताभिसरण, निद्रा, जागरण, क्षुधा, मल त्याग एवं देह की भीतरी अङ्ग–प्रत्यङ्गों का संचालन उसी के द्वारा होता है । उसकी दूसरी क्रिया चेतन विज्ञात मस्तिष्क के द्वारा–अन्तः करणा चतुष्टय के माध्यम से–मन, बुद्धि, चित, अहंकार बनकर दृश्यमान होती है । इसे व्यक्तिगत क्रिया–कलाप में जीवन अग्नि का ही कर्तृत्त्व कहना चाहिए ।

यह परा और अपरा और परा प्रकृति में प्रत्यक्ष अनुभव में आने वाले–परखे जाने वाले स्थूल क्रिया–कलाप है । इस क्रिया को पदार्थ गत–व्यक्तिगत–एवं विभाजित भी कह सकते हैं । व्याष्टि इसी का नाम है । इससे उच्च स्तर की सूक्ष्म चेतना और है जिसे विश्व–व्यापी–सामूहिक एवं समष्टि कह सकते हैं । यह यन्त्रों और उपकरणों से–इन्द्रियों से–मनःचेतना से भी प्रकट, स्पष्ट और सिद्ध नहीं होती । पर उसका अस्तित्त्व असंदिग्ध रूप से है । इस जड़ चेतन जगत के संचालन में जो व्यवस्था, क्रम–बद्धता और नियमितता दीख पड़ती है उसके आधार पर उसे ज्ञान दृष्टि से देखा समझा जा सकता है । वह चेतना सत्ता अनुभूति एवं सम्वेदनाओं से भी समझ में आ सकती है । इसे भाव दृष्टि कहते हैं । ज्ञान दृष्टि और भाव दृष्टि से ही मनुष्य उसे समझ सकता है और उसकी निकटता तक पहुँच सकता है । इस चेतन–सूक्ष्म–जीवन अग्नि को ब्रह्म, ईश्वर परमात्मा आदि नामों से जाना जाता है ।

अध्यात्म और साधन विज्ञान का उद्देश्य यह है कि व्यक्ति की भावनात्मक 'जीवन अग्नि'–आत्मा उस विश्व व्यापी भाव चेतना के साथ अपना सम्बन्ध जोड़े और समीपता से उत्पन्न होने वाले लाभों से लाभान्वित हो । विश्व बिजली के उत्पादन केन्द्र से अपना तार जोड़कर ही छोटे यन्त्र अपने को सामर्थ्यवान बनाते हैं । अग्नि के समीप जाकर ही तो गीली और ठण्डी लकड़ी ज्वलन्त अग्नि का रूप धारण करती है ।नर –नारी समीपता की स्थिति बना कर ही तो दाम्पत्य सुख और सन्तान लाभ से लाभान्वित होते हैं । अलग–अलग रहने से तो निष्क्रियता ही रहेगी । धन और ऋण विद्युत के दोनों घटक अलग –अलग रहने पर–निष्क्रिय ही पड़े रहते हैं । मिलन होते ही शक्ति प्रवाह–करेन्ट चल पड़ता है । यही जड़ अग्नि का नियम–चेतन अग्नि पर भी लागू होता है । यही स्थूल व्यवस्था क्रम चेतन जगत में भी लागू होता है ।

व्यक्तिगत जीवन अग्नि–आत्मा का परमात्मा के साथ संमान्वय सम्बन्ध स्थापित करने की प्रक्रिया जितनी अग्रगामी होती है । उतना ही मनुष्य में देवत्त्व का उदय अवतरण दीखता है । उसकी इस जन–साधारण का सामन्य जीवन क्रम से अतिरिक्त जो विशेषताऐं इस ब्रह्म सम्बन्ध से–साधानात्मक–पुरुषार्थ से मिलती हैं उन्हें ब्रह्म वर्चस् अथवा आत्म–बल कहते हैं । यह आत्म बल व्यक्तित्त्व की प्रखरता, समर्थता और महानता के रूप में देखा जा सकता है । लौकिक कर्तृव्य में यह ब्रह्म वर्चस् जब समन्वित रहता है । तो मनुष्य तत्त्व वेत्ता, दृष्टा, ऋषि, मनीषी, महामानव के रूप में दीखता है । लौकिक कर्तृत्त्व भी कई बार उसका ऐसा होता है । जो साधारणतया घटित न होते रहने के कारण चमत्कार जैसा कौतूहल वर्धक और आश्चर्यजनक लगता है । जो सफलताऐं साधारण शरीर क्रम से बहुत समय में और बहुत मात्रा में मिलती हैं वे यदि स्वल्प समय, स्वल्प श्रम और प्रचुर परिमाण में उपलब्ध हो सके तो उन्हें अध्यात्म भाषा में सिद्धियाँ या विभूतियाँ कहा जायेगा । व्यक्तिगत जीवन अग्नि–आत्मा का–सर्वव्यापी समष्टि अग्नि के साथ संयोग सम्बन्ध हो जाने पर उपरोक्त दोनों ही लाभ होते हैं । (१) व्यक्तित्त्व की सर्वागीण प्रखरता । (२) कर्तृत्त्व में सफलताओं का आना ऐसा असाधारण संमावेश है जिसे सिद्धि का चमत्कार नाम से पुकारा जा सके । आवश्यक नहीं कि कोई ब्रह्म वर्चस् सम्पन्न व्यक्ति दूसरे लोगों पर अपनी इन विशेषताओं को प्रकट

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

करें पर उनमें होती वे दोनों ही हैं ।

स्वभावतः इन दोनों उपलब्धियों को पाकर व्यक्ति का अन्तरात्मा अधिक प्रफुल्ल और सन्तुष्ट रहेगा । संसार में भी दो आनन्द हैं । (१) इन्द्रिय तृप्ति (वासना) (२) अहंकार की तृप्ति–तृष्णा । लोभ और मोह तृष्णा के अन्तर्गत आते हैं । इन्द्रियों के सुख के अपने–अपने रसास्वादन अनौखे ही हैं । सामान्य चेतना वाला व्यक्ति इन्हीं दो माध्यमों से सन्तोष और सुख प्राप्त करने के फेर में लगे रहते हैं । पर वे उन्हें एक हलकी सी झलक दिखाकर तिरोहित होते रहते है । ठहरते नहीं । वासना और तृष्णा की तृप्ति का अवसर जब तक नहीं आता है तब तक उनके लिए ललक उत्सुकता से बेचैनी रहती है । जैसे ही वे मिले कि क्षण भर में आनन्द समाप्त । जिह्वा स्वाद पेट भरते ही समाप्त, मैथुन सुख का स्खलन होते ही अन्त–थन लाभ होते ही उसकी सुरक्षा की चिन्ता–स्त्री पुत्र मिलते ही उनके साथ जुड़े हुए भारी उत्तरदायित्वों का निर्वाह चिन्ता बन कर सामने खड़े हो जाते हैं । यश और पद पर दूसरे लोग घात लगाते हैं और अकारण ईर्ष्या द्वेष भरी शत्रुता की बात आ जाती है । इन परिस्थितियों में सामान्य स्तर के मनुष्य सुख सन्तोष के लिए वासना, तृष्णा की परिधि में घनघोर प्रयत्न करने पर भी खाली हाथ रहते हैं जबकि आत्मा के साथ परमात्मा जो जोड़कर ब्रह्म वर्चस् की मात्रा बढ़ा लेने वाला–व्यक्तित्त्व की प्रखरता और कर्तृत्त्व में अलैकिकता की चिरस्थायी उपलब्धि देखकर निरन्तर प्रफुल्ल और सन्तुष्ट रहने लगता है । अध्यात्म और साधना विज्ञान का प्रयोजन व्यक्ति को इन्हीं लाभों से लाभान्वित करता है ।

कहा जा चुका है कि इस विश्व ब्रह्माण्ड में संव्याप्त जीवन अग्नि–ब्रह्म चेतना के दो स्वरूप हैं । एक परा एक अपरा । अपरा प्रकृति पदार्थों में गतिशीलता हलचल उत्पन्न करती है और परा प्रकृति प्राणधारियों में इच्छाओं और अनुभूतियों का संचार करती है ।

यह विभाजन सर्वांश में सत्य नहीं है । बहुमत और बाहुल्य को ध्यान में रखते ही यह प्रतिपादित है । जड़ पदार्थों में मात्र क्रियाशील ही नहीं होती एक अत्यन्त स्वल्प अंश, भावना का भी विद्यमान रहता है । भारत के सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक सर जगदीशचन्द्र बोस ने यह प्रमाणित किया था कि पेड़ पौधे जड़ समझे जाने पर भी उसमें गतिशीलता ही नहीं एक अत्यन्त स्वल्प मात्रा में चेतनात्मक भावना विद्यमान है और वे भी भली बुरी परिस्थितियों में सुख–दुख अनुभव करते हैं । ठीक इसी प्रकार चेतन कहे जाने वाले प्राणियों को भी पूर्ण चेतना–पूर्ण परा प्रकृति से आनन्दित नहीं मान लेना चाहिए । उनका जीव अंश भावनाओं से तरंगित होता है और उनका शरीर जड़ जगत के नियमों से बँधा है । इस प्रकार चेतन प्राणियों का भी शरीर भाग जड़ सृष्टि के नियमों से प्रभावित है । इसलिए उतने अंश में प्राणधारी को भी जड़ कहा जा सकता है । यहाँ बाहुल्य की दृष्टि से ही जड़ चेतन का विभाजन है । वस्तुतः इस विश्व में कोई भी पदार्थ या प्राणी न तो पूर्णतया जड़ है और न चेतन । दोनों में दोनों शक्तियों का न्यूनाधिक मात्रा में समावेश रहता है । यदि इनका पूर्ण विच्छेद हो जायगा तो भी शून्यता और नीरवता के अतिरिक्त और कुछ शेष न रहेगा ।

जीवन अग्नि के–समष्टि रूप को अध्यात्म भाषा में ब्रह्माग्नि–परमात्मा और व्यष्टि रूप से उसे जीवाग्नि–आत्मा–कहा गया है । ब्रह्म तत्त्व का विवेचन ब्रह्म विद्या के रूप में और जीव विद्या का विवेचन आत्म विद्या के रूप में किया गया है । यह दोनों शक्तियाँ मूलतः एक ही प्रवाह के अविच्छिन्न अंग हैं, पर उनका स्वरूप समझने के लिए–विश्लेषण और अनुभव की दृष्टि से दो हिस्सों में बाँटना पड़ता है । विद्युत एक ही तत्त्व है । उसका शक्ति संचार संयोग और वियोग के विश्व नियम के आधार पर होना ही चाहिए सो उसे ऋण और धन निगेटिव और पाजिटिव कहकर समझा–समझाया जा सकता है । इसी प्रकार जीवन अग्नि को समष्टि रूप से परा और अपरा तथा व्यष्टि रूप से परमात्मा और आत्मा कहा जा सकता है । जो कुछ यहाँ हो रहा है, हो चुका या होने वाला है वह सब उसी परिधि के अन्तर्गत आता है ।

अध्यात्म विद्या में इस गूढ़ और वैज्ञानिक रहस्य को सर्वसाधारण को समझाने के लिये आलंकारिक शैली

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का उपयोग किया है । इसी उभय पक्षीय तत्त्व का शिव और शक्ति–ब्रह्म और माया–कृष्णा और राधा–राम और सीता आदि अनेक दिव्य युग्मों के रूप में विवेचन विस्तार किया है । यह शैली सर्व साधारण को अति गम्भीर विषयों को सरलता पूर्वक समझने की दृष्टि से उपयोगी भी है । साधना में श्रद्धा और भक्ति का समावेश आवश्यक है । उसके बिना विश्वास परिपक्व नहीं होता है और विश्वास के बिना मनोबल या आत्म–बल का प्रकटीकरण नहीं होता । शारीरिक बल वर्धन के लिए व्यायाम आवश्यक है और व्यायाम के लिए–गेंद, डमबल, मुद्गर आदि उपकरण चाहिए ।

अदृश्य जीवन अग्नि–परमात्मा चेतना के साथ सम्बन्ध बनाने और बढ़ाने के लिए जिस मनोवैज्ञानिक ढाँचे को खड़ा करना पड़ता है उसके लिए भी वह अलंकारिक प्रतिष्ठापन बहुत काम आती है । साकार सगुण–ईश्वर का सृजन इसीलिए हुआ है । उमा महेश, राम सीता, आदम हव्वा आदि की मान्यताऐं इसी आधार पर हैं । विश्वास की परिपक्वता में–आध्यात्मिक प्रयोजन में उस प्रकार की साकार मान्यताऐं अनिवार्य रूप से आवश्यक होती हैं । ईश्वर को व्यक्ति माने बिना हमारी अन्तःचेतना उससे भावनात्मक सम्बन्ध न तो बना सकती है और न बढ़ा सकती है । मानवीय चेतना का निर्माण ही इस ढंग से हुआ है कि उसका घनिष्ठ भाव दृश्य पदार्थों से ही सम्भव है ।

हवा, सर्दी या गर्मी, बिजली ईथर आदि के अस्तित्त्व और बल से हम भली प्रकार परिचित हैं, पर उन्हें प्यार नहीं कर सकते–उनके साथ भावनात्मक सम्पर्क नहीं बना सकते । इस स्तर का सम्पर्क बने बिना भाव संचार का उपासनात्मक प्रयोजन पूरा नहीं हो सकता और आत्मा को परमात्मा से मिलाने वाला भाव संचार साधन बन ही नहीं पाता । ज्ञान से इतना भर समझा–समझाया जा सकता है कि ईश्वर है और उसका विधान–कर्तृत्त्व यह है । उससे प्रेम करने की भाव साधना निराकार से साथ सम्भव है ही नहीं इसलिए आत्म विद्या को दो भागों में बाँटा गया एक ज्ञानयोग जिसमें वस्तुस्थिति को समझना भर सीमित है । दूसरा भक्ति योग जिसमें भावनात्मक उभार आवेश का चुम्बकत्त्व पैदा करके उस परब्रह्म का जीवब्रह्म के साथ सघनता स्थापित करना सम्भव होता है ।

निराकार और साकार का क्षेत्र यही है । निर्गुण और सगुण का सारा ढाँचा इन्हीं दो आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए खड़ा किया है । सो इन दोनों को अलग–अलग नहीं वरन् एक दूसरे का अविच्छिन्न अंग–पूरक मानकर चलना चाहिए । निराकार और साकार–निर्गुण और सगुण ब्रह्म दो अलग–अलग तत्त्व नहीं हैं और न उन्हें दो अलग–अलग विज्ञान धारा ही मानना चाहिए । वरन् ऋण और धन विद्युत की तरह–परा और अपरा प्रकृति की तरह समझने –समझाने पर विभिन्न परिस्थितियों में उनके विभिन्न प्रयोजन के लिए ही यह उभयपक्षी विवेचन है । वस्तुतः सब कुछ दोनों का मिला–जुला ही है । एकाकीपन यहाँ कहीं भी नहीं है ।

इतना समझ लेने के बाद कुण्डलिनी शक्ति के जागरण–तत्सम्बन्धी मान्यतायें–उसका आधार–साधना का स्वरूप समझने में सुविधा हो सकती है । व्यक्तिगत जीवन में–मनुष्य कलेवर में–परा प्रकृति के–चेतन प्रवाह का केन्द्र स्थान मस्तिष्क के मध्य अवस्थित ब्रह्मरंध्र–सहस्रार कमल है । इसी को कैलाशवासी शिव या शेषशायी विष्णु एवं कालाग्नि कहते हैं । दूसरा केन्द्र जननेन्द्रिय के मूल गहर में है । उसे अपरा प्रकृति का केन्द्र कहना चाहिए । इसे शक्ति, पार्वती–एवं कुण्डलिनी जीवाग्नि कहते हैं ।

इन दोनों को धन और ऋण विद्युत भी कहा जा सकता है । मानवीय शरीर को–पिण्ड को–इस दृश्य ब्रह्माण्ड का–विश्व विराट् का एक छोटा नमूना ही कह सकते हैं । जितनी भी शक्तियाँ इस विश्व ब्रह्मांड में कहीं भी विद्यमान हैं उन सबका अस्तित्त्व इस शरीर में भी मौजूद है । जिस प्रकार वैज्ञानिक जानकारी प्रयोग विधि और यन्त्र व्यवस्था के आधार पर विद्युत, ईथर आदि शक्तियों में प्रत्यक्ष लाभ उठाया जाता है, ठीक उसी प्रकार योग साधना के वैज्ञानिक प्रयोगों द्वारा शरीरगत अपरा प्रकृति की प्रचंड शक्तियों का उद्भव किया जा सकता है । इसी को योगियों के दिव्य कर्तृत्त्व के रूप में देखा जा सकता है । अलौकिकतायों–सिद्धियाँ चमत्कार एवं असाधारण क्रिया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कृत्यों की जो क्षमता साधना विज्ञान द्वारा विकसित की जाती है । उसे शरीरगत अपरा प्रकृति का विकास ही समझना चाहिए और उस निर्झर का मूल उद्गम–जननेन्द्रिय मूल–कुण्ड कुण्डलिनी की ही जानना चाहिए ।

इसी प्रकार व्यक्तित्व में गुण, कर्म, स्वभाव, संस्कार, दृष्टिकोण, विवेक प्रभाव, प्रतिभा, मनोबल, आत्मबल आदि की जो विशेषतायें दृष्टिगोचर होती हैं उन्हें चेतना तत्त्व से–भाव संवेदन की उपलब्धि माननी चाहिए । इसका केन्द्र मस्तिष्क स्थित ज्ञान केन्द्र सहस्रार कमल है । कालाग्नि यही शिव स्वरूप विद्यमान है । आत्म विद्या के दो लाभ बताये जा चुके हैं (१) व्यक्तित्व की भावनात्मक चेतनात्मक प्रखरता (२) शरीर की असामान्य क्रियाशीलता । इन्हीं को विभूतियाँ और सिद्धियाँ कहते हैं । विभूतियाँ मस्तिष्क केन्द्र से–ज्ञान संस्थान से–भाव ब्रह्म से प्रसृत होती हैं और सिद्धियाँ काम केन्द्र से–शक्ति निर्झर से–कुण्ड कुण्डलिनी से प्रादुर्भूत होती हैं । इन दोनों शक्ति केन्द्रों को मानवीय अस्तित्त्व के दो ध्रुव जानना चाहिए । पृथ्वी के दो सिरों पर उत्तरी दक्षिणी दो ध्रुव हैं ठीक इसी प्रकार मनुष्य का मस्तिष्क केन्द्र उत्तरी ध्रुव और काम केन्द्र दक्षिणी ध्रुव कहा जा सकता है । उन दोनों की असीम एवं अनन्त जानकारी प्राप्त करने और उन सामर्थ्यों को जीवन विकास के अन्तरंग और बहिरंग क्षेत्र में ठीक तरह प्रयोग कर सकने की विद्या का नाम ही कुण्डलिनी विज्ञान है । साधना के अनेक स्वरूप, साधन और मार्ग हो सकते हैं पर उन्हें बाह्य प्रतीकों का अन्तर ही समझना चाहिए । समस्त साधनाओं का उद्देश्य वही है जो कुण्डलिनी में देखा जाता है । शरीर को ऋतु प्रभाव से बचाना वस्त्र धारण का उद्देश्य है । संसार में विभिन्न डिजायनों के आकार–प्रकार के कपड़े इसी प्रयोजन के लिए बनाये और सिले जाते हैं । विभिन्न सम्प्रदायों में प्रचलित अनेक आध्यात्मिक मान्यताओं और साधनाओं को इसी दृष्टि से देखा जाना चाहिए । उनमें बाह्य भिन्नता दीखने पड़ने पर भी मूल प्रयोजन में कुछ विशेष अन्तर नहीं है । भारतीय अध्यात्म विद्या में इस विज्ञान को बिना अधिक लाग–लपेट के–सीधे साधे यथावत् मूल स्वरूप से प्रस्तुत कर दिया गया है । इससे समझने में सुविधा होती है और मन्जिल को पार करना–लक्ष्य तक पहुँचना अपेक्षाकृत अधिक सरल हो जाता है । कुण्डलिनी साधना की यही विशेषता है । उसमें दोनों तत्त्वों का आवश्यक समन्वय है ।

जगद्गुरु आद्य शंकराचार्य का साधनात्मक और भावनात्मक विश्लेषण पिछले पृष्ठों में 'सौन्दर्य लहरी' के कुछ श्लोकों के रूप में सामने आ चुका है । साधना एकांगी नहीं समग्र–समन्वित और उभयपक्षी होनी चाहिए सफलता का योग तभी बनता है । श्री आद्य शंकराचार्य का वेदान्तपरक ज्ञान योग प्रख्यात है । पर उतने भर से भी काम कहाँ चला ? शक्ति की आवश्यकता उन्हें भी रही, सो कुण्डलिनी जागरण की शक्ति प्रक्रिया उन्हें भी अपनानी पड़ी । समग्र अध्यात्म का स्वरूप समन्वयात्मक ही है । उसमें परा और अपरा प्रकृति के–ज्ञान और कर्म के समन्वय की ही व्यवस्था है । जीवाग्नि का काम–बीज और ब्रह्माग्नि का ज्ञान–बीज दोनों को अध्यात्म अलंकार में नर–नारी जैसे संयोग–संभोग के रूप में–रज और वीर्य के रूप चित्रित करते हुए यही कहा गया है कि इनका मिलन ही सफलताओं का स्रोत है । कुण्डलिनी तत्त्व ज्ञान एवं साधना विज्ञान की समन्वयात्मक साधना विद्या में इसी तथ्य का पूरी तरह समावेश हुआ है । इसलिए उसकी सरलता, यथार्थता और सफलता भी असंदिग्ध होती है । कुण्डलिनी साधना से व्यक्तित्व की प्रखरता और कर्तृत्व की विशिष्टता के दोनों ही प्रयोजन पूरे होते हैं । अन्तरंग और बहिरंग दोनों स्रोतों में असाधारण उत्कर्ष एवम् उल्लास का पथ प्रशस्त होता है ।

शिव और शक्ति दोनों का ही अध्यात्म शास्त्र में अग्नि के रूप में उल्लेख किया है । यह अग्नि चूल्हे में जलने वाली आग नहीं वरन् जीवन अग्नि ही समझी जानी चाहिए । नीचे की अग्नि जीवाग्नि को चन्द्राग्नि कहते हैं । क्योंकि चन्द्रमा में जो ज्योति दिखाई देती है वस्तुतः वह सूर्य का ही प्रतिबिम्ब है । मस्तिष्क में अवस्थित शिव रूप सूर्याग्नि ही प्रकारान्तर से कुण्डलिनी की अग्नि बनकर चमकती है । इसी को सोम और अमृत का नाम भी दिया जाता है । नाम रूप जो भी हो–शिव और शक्ति का कुण्डलिनी और ब्रह्मरंध्र को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अग्नि के अलंकार के साथ सम्बोधित करते हुए उसका संकेत जीवन अग्नि के इन दो शक्ति स्रोतों–थुवों और सूर्य चन्द्र युग्मों से ही है । साधना ग्रन्थों में इसकी चर्चा इस प्रकार मिलती है ।

तस्य सर्व्वजगन्मूर्त्तिः शक्तिमयिति विश्रुता ।
स कालाग्निर्हरो देवो गीयते वेदवादिभिः ॥

–कूर्म पुराण

वे शिव कालाग्नि रूप हैं ऐसा वेद वादियों ने कहा है । उनकी शक्ति–काली विश्वमूर्ति है ।

तस्य मध्ये महानग्निर्विश्वाचिर्विश्वतोमुखः
तस्य मध्ये वह्निशिखा अणीयोर्ध्वा व्यवस्थिता ।
तस्याः शिखाया मध्ये परमात्मा व्यवस्थित ॥

–चतुर्वेदोपनिषद५

उसके बीच प्रचण्ड अग्नि की ज्वालायें चारों ओर धधकती है । उन लपटों के मध्य एक अग्नि शिखा–अणु शक्ति है । उसी के बीच परमात्मा की स्थिति है ।

ज्वालामालासहस्राढ्यं कालानलशतोपमम् ।
दृष्ट्राकरालंदुर्द्धर्ष जटामण्डलमण्डितम् ॥

–कूर्म पुराण

ज्वालाओं की सहस्रों ही मालाओं से समन्वित तथा सैकड़ों कालानल के समान था । कराल दृष्टाओं से युक्त अत्यन्त दुर्धर्ष एवं जटाओं के मण्डल के मण्डित स्वरूप था ।

योग कालेन न मरुता साग्निना बोधिता सती ।
स्फुरिता हृदयाकाशे नागरूपा महोज्ज्वला ॥

–विशिखि ब्राह्मणोपनिषद् ६४

योग साधना से प्राण प्रयोग द्वारा, प्रज्जवलित अग्नि के समान इस कुण्डलिनी शक्ति को जाग्रत किया जाता है । वह हृदयाकाश में सर्प की गति से बिजली जैसी चमकती है ।

तथेति स होवाच–
आधारे ब्रह्मचक्रं त्रिरावृत्तभङ्गिमण्डलाकारं तत्र मूलकंदे शक्तिः पावकाकार ध्यायेत् तत्रैव कामरूपपीठं र्वकामप्रदं भवति इत्याधारचक्रम् ॥
तृतीय नाभिचक्रं पच्चावर्त सर्पकुटिलाकार तन्मध्ये कुडलिनीं बालार्ककोटिप्रभां तटित्सनिभां ध्यायेत् सामर्थ्यशक्तिः सर्वसिद्धिप्रदा भवति मणिपूरकचक्रम् ॥

–सौभाग्य लक्ष्युपनिषद्३११–३

उन्होंने कहा–मूलाधार में योनि के आकार का तीन घेरे वाला ब्रह्म चक्र है । वहाँ सुप्त सर्पिणी की तरह कुण्डलिनी शक्ति का निवास है । जब तक वह जाग्रत न हो तब तक उस स्थान पर प्रचण्ड अग्नि की धधकती हुई ज्वाला का ध्यान करे॥१॥

प्रातःकाल के अरुण सूर्य की तरह आभावती बिजली की तरह चमकती हुई, इस कुण्डलिनी को ध्यान द्वारा जाग्रत करते हैं । जाग्रत होने पर यह अनन्त सामर्थ्यवान् बना देती है और समस्त सिद्धियाँ प्रदान करती है ॥३॥

जातां तदानीं सुरसिद्धसंघा दृष्टा भयाद्दुद्रुवुरग्निकल्पाम ।
कालीं गरालंकृतकालकंठीमुपेंद्रपद्योद्भवशक्रमुख्याः॥

–लिंग पुराण

महाविष से समलंकृत कण्ठ वाली अग्नि के सदृश्य स्वरूप वाली उस अवतीर्ण भगवती काली को देखकर ब्रह्मा, विष्णु और इन्द्र आदि समस्त देवगण भय से भागने लगे थे ।

मूलाधाराभिधं चक्रं प्रथमं समुदीरितम् ।
तत ध्येयं स्वरूपं तु पावकाकारमुच्यते ॥
स्वाधिष्ठानाभिधं चक्रं द्वितीयं चोपरिस्थितम् ।
प्रवालाङ्कुरतुल्यं तु तत्र ध्येयं निगद्यते ॥
तृतीयं नाभिचक्रे तु ध्येयं रूपं तडिन्निभम् ।
तुर्ये हृदयचक्रे तु ज्योतिर्लिङ्गाकृतर्य्यते ॥
पञ्चमे कण्ठचक्रेतु सुषुम्ना श्वेतवर्णिनी ।
ध्येयं षष्ठे तालुचक्रे शून्यचित्तलयार्थकम् ॥
भूचक्रे सप्तमे ध्येयं दीपाङ्कष्टुप्रमाणकम् ।
आज्ञाचक्रेऽष्टमे ध्येयं रूपं धूम्रशिखाकृतिः ॥
आकाशचक्रे नवमे परशुः स्वोद्धर्व शक्तिकः ।
एवं क्रमेण चक्राणि ध्येयरूपाणि विद्धि च ॥
अखण्डैकरसत्त्वेन ध्येयस्यैक्येऽप्युपाधितः ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आकारा विविधायुक्ता नोपाधिश्चेतरः स्वतः ॥
विद्याशक्ति विलासेन पावकात् विस्फुलिङ्गवत् ।
अकस्मात् ब्रह्मणोऽखण्डात् विविधकृतयोऽभवन्॥

–महायोग विज्ञान

मूलाधार चक्र में आत्म ज्योति अग्नि रूप दीखती है । स्वाधिष्टान चक्र में वह प्रवाल अंकुर सी प्रतीत होती है । मणीपूर में विद्युत जैसी चमकती है । नाभि चक्र में वह बिजली जैसी चमकती है । हृदय कमल के अनाहत चक्र में वह लिंग आकृति की प्रतीत होती है । कंठ चक्र में वह श्वेत वर्ण, तालु चक्र में शून्याकार एकरस अनुभव में आती है । भ्रू चक्र में अँगूठे के प्रमाण जलती हुई दीप शिखा जैसी भासती है । आज्ञा चक्र में धूम्रशिखा जैसी और सहस्रार चक्र में चमकते हुए पशु जैसी दीखती है ।

यह सभी ज्योतियाँ एक ही हैं । सभी आत्म ज्योति हैं । सभी परम आनन्ददायिनी हैं । विद्या शक्ति कुण्डलिनी की क्रीड़ा से एक ही अग्नि की अनेक चिनगारियों की तरह यह अनेक तरह की प्रतीत होती हैं ।

अपाने चोर्ध्वगे याते संप्राप्ते बह्निमण्डले ।
ततोऽनलशिखा दीर्घा वर्धते वायुना हत्ता ॥
ततो यातौ वह्नयपानौ प्राणमुष्णस्वरूपकम् ।
तेनात्यनतप्रदीप्तेन ज्वलनो देहजस्तथा ॥
तेन कुण्डलिनी सुप्ता संतप्ता संप्रबुध्यते ।
दन्डाहतभुजङ्गीव निश्वस्य ऋजुतां व्रजेत् ॥

–योग कुण्डल्युपनिषद् १ ।४३,४४,४५

उस अग्नि मंडल में जब अपना प्राण जाकर मिलता है तो अग्नि की लपटें और तीव्र हो जाती हैं । उस अग्नि से गरम होने पर सोई हुई कुंडलिनी जागती है और लाठी से छेड़ने पर सर्पिणी जिस प्रकार फुसकार कर उठती है । वैसे ही यह कुंडलिनी भी जाग्रत होती है ।

प्राणस्थानं ततो वह्निः प्राणपानौ च सत्त्वरम् ।
मिलित्त्वा कुण्डली यति प्रसुप्ता कुण्डलाकृतिः॥
तेनाग्निना च सतप्ता पवनेनैव चालिता ।
प्रसाय स्वशरीरं तु सुषुम्नाबदनान्दरे ॥

योग कुंडल्युपनिषद् १ ।६५,६६

अग्नि स्थान में प्राण के पहुँचने से उष्णता से संतप्त कुंडलिनी अपनी कुंडली छोड़कर सीधी हो जाती है और सुषुम्ना के मुख में प्रवेश करती है ।

चित्रों में शिव को जमीन पर लेटा हुआ और शक्ति को उसकी छाती पर खड़ा हुआ चित्रित किया जाता है । वह कुंडलिनी जागरण के अवसर पर मूलाधार स्थिति प्रणाग्नि का सुषुप्ति अवस्था त्यागकर ब्रह्मरंध्र शिव संस्थान में जा पहुँचना और सहस्र कमल स्थिति सोम अमृत के मूलाधार की ओर स्रवित होने की साधना विज्ञान सम्मत प्रक्रिया का ही दिग्दर्शन है । दस देवियों के चित्रों में विपरीत रति के उल्लेख हैं । उस समागम में शिव को नीचे और शक्ति को ऊपर बताया जाता है । जाग्रत अवस्था में कुंडलिनी की समर्थता और प्रमुखता का जीवन के हर क्षेत्र में छा जाना–यह इस चित्रण का संकेत है । वृहज्जावालोपनिषद् में इसकी चर्चा इस प्रकार है–

अग्नीषोमात्मकं विश्वमित्याग्निराचक्षते ।
सोम शक्त्यामृतमयः शक्तिकरी तनूः ॥
अमृतं यत्प्रतिष्ठा सा तेजो विद्याकला स्वयम् ।
स्थूलसूक्ष्मेषु भूतेषु स एव रसतेजसि (सी) ॥
वैद्युदादिमयं तेजो मधुरादिमयो रसः ।
तेजो रसविभेदैस्तु वृत्तमेतञ्चराचरम् ॥
अग्नेरमृतनिष्पत्तिरमृतेनाग्निरेधते ।
अतएव हविः क्लृप्तमग्नीषोमात्मक जगत् ॥
अग्ने (अग्नि) रूर्ध्व भवत्येषा(ष) यावत्सौम्य परामृतम।
यावदग्न्यात्मकं सौम्यममृतं विसृजत्यधः ॥
अतएव हि कालाग्निरधस्ताच्छकिरर्ध्वगा ।
यावदादहनश्चीर्ध्वमधस्तात्पवनं भवेत् ॥

–वृहज्जावलोपनिषद् ब्राह्मण२

अग्नि और सोम इन दोनों के संयोग से यह जग बना है । सोम में अमृत शक्ति भरी है । अग्नि में विद्या और कला का निवास है । सोम और अग्नि का तेज सब प्राणियों में विद्यमान है ।

अग्नि जब ऊपर आती है तब सोम को ग्रहण करती है । तब सोम अग्नि के रूप में परिवर्तित होकर नीचे की ओर चलता है । इस प्रकार रुद्र नीचे होते हैं और शक्ति ऊपर ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ज्ञान शक्ति को शिव और क्रिया शक्ति को कुंडलिनी कहते हैं । इन दोनों का समन्वय सम्मिलन जब जीवन–अग्नि को प्रदीप्त ज्वालाओं की तरह आलोकित होता है तो मन मलीन, असफल और अस्त–व्यस्त जीवन क्रम एक अभिनव उत्कर्ष और उल्लास की परिस्थितियों से भर जाता है । उस ज्वलन्त शक्ति से अप्रभावित व्यक्ति का कोई भी दृश्य अदृश्य काम शेष नहीं रहता । समस्त विश्व में संव्याप्त इस महा अग्नि का कुण्डलिनी साधना द्वारा एक अंश जब व्यक्तिगत जीवन में उपलब्ध कर लिया जाता है । तो प्रगति की अनेक सम्भावना अप्रत्याशित रूप से सामने आ उपस्थित होती है–इसी अनुभव के आधार पर साधना विज्ञान के अनुभवी मनीषियों ने कुंडलिनी जागरण की चर्चा करते हुए लिखा है–

शक्ति कुण्डलिनोति विश्वजननव्यापारबद्धोद्यमा ।
ज्ञात्वे थं न तुनर्विशन्ति जननागर्भेऽर्भकत्वंनराः ॥

–शक्ति तन्त्र

कुंडलिनी महाशक्ति के प्रयत्न से ही संसार का सारा व्यापार चल रहा है । जो इस तथ्य को जान लेता है वह शोक–संताप भरे बन्धनों में नहीं बँधा रहता ।

कूजन्ती कुलकुण्डली च मधुरं मत्तालिमालास्फुटं,
वाचः कोमलकाव्यवन्धरचनाभेदातिभेदक्रमैः ।
श्वासोच्छ् वासविभञ्जनेन जगतां जीवो
यया धार्यते ।
सा मूलाम्बुजगह्वरे विलसति प्रोद्दामदीप्त्यावलिः ॥

–षट्चक्र निरुपणम् १२

कुंडलिनी शक्ति के जाग्रत होने पर वाणी में मधुरता आ जाती है । काव्य कला और सहित्य में प्रगति होती है । यह मूलाधार चक्र में दीप शिखा जैसी चन्द्र ज्योति जैसी प्रकाशित है, प्राण वायु द्वारा यह धारण की जाती है । १२

प्राणियों की शरीर रचना में यद्यपि बहुत अन्तर होता है, फिर भी आँतों से घिरा हुई 'आंत्रवेष्ठिनिका' नाम की एक ऐसी नाड़ी है, जो संसार के सब जीवों में एक–सी पाई जाती हैं । वीणा के मूल भाग में स्थित गोलाई, जल में भँवर और कुण्डल के चक्र के समान आकृति वाली इस नाड़ी का जीव चेतना से महत्त्वपूर्ण सम्बन्ध माना जाता है । यहीं से सैकड़ों नाड़ियाँ निकलकर शरीर के विभिन्न प्रदेशों तक फैल जाती हैं ।

यह नाड़ी देखने में ऐसी लगती है, जैसे शीत से सिकुड़कर कोई सर्पिणी कुण्डली मारकर सो गई हो । उसकी आकृति के अनुसार ही उसे कुण्डलिनी नाम से सम्बोधित किया गया है । यह नाड़ी ही जीव–चेतना का सम्पूर्ण आधार है । उसी से जीव–धारियों को शक्ति और तेजस्विता मिलती है, सामान्य स्थिति में जिस व्यक्ति की कुण्डलिनी शक्ति जितनी मात्रा में स्पन्दन करती है, उतना ही प्रभाव क्षेत्र, उस मनुष्य का होता है । उसी के आधार और अनुपात से लोगों को सुख–दुख, आदर–सम्मान, लोक, प्रतिष्ठा आदि मिलती है । इसलिये कहना न होगा कि मनुष्य के स्थूल जीवन ही नहीं व्यवहारिक जीवन की सफलता और समुन्नति का आधार भी कुण्डलिनी शक्ति ही है ।

पाँचों प्रकार की ज्ञान इन्द्रियाँ भी बिजली के तारों की तरह इसी परमशक्ति से जुड़ गई हैं, इसलिये वह सूक्ष्म चेतना होने पर भी संकल्प रूप में आ गई है । चेतन होने के कारण चिति, जीने जीव, मनन करने से मन और बोध प्राप्त करने के चेतना को बुद्धि रूप में देखा जाता है । अहंकार रूप में उसे ही तुर्यष्ठक कहते हैं । पर इन विभिन्न नामों का एक ही आधार है चेतना । इस चेतना को, शक्तियों की मूलाधार शक्ति को ही कुण्डलिनी कहा जाता है । ज्ञान और अनुभव के पाँचों कोश बीज रूप से इसी में पाये जाते हैं, इसलिए कुण्डलिनी शक्ति जाग्रत कर लेने वाला इन्द्रियों को उसी तरह वश में कर लेता है, जिस तरह लगम लगे हुये घोडा को वश में कर लिया जाता है । जिसने इन्द्रियों को जीत लिया संसार में उसे किसका भय जो निर्भय हो गया वही विश्व–विजेता हो गया ।

वस्तुतः कुण्डलिनी चिन्मयी, ज्ञान स्वरूपा एक शक्ति का नाम है जिसे योग सम्बन्धी शास्त्रों में साढ़े तीन कुण्डल डाले सर्पिणी के रूप में अलंकारिक ढंग से वर्णित किया गया है । इसके तीन कुण्डल–इच्छा, ज्ञान और क्रिया की तीन धारायें हैं । कुण्डलिनी को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ज्ञान स्वरूपा होने के कारण सरस्वती भी कहा जाता है तो पश्यन्ती, मध्यमा, बैखरी प्राणियों के तीन पूरे एवं परा का आधा कुण्डल मिलाकर साढ़े तीन लपेट कहे जाते हैं । इसी प्रकार आत्मा की तीन अवस्थायें–जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति या विश्व, तेजस् प्राज्ञ तीन अवस्थाएँ, ॐकार की अकार, उकार, मकार तीन मात्राएँ प्रकृति की शक्तियों को सत्, रज, तम तीन गुण वाली होने से इन्हें कुण्डलिनी के तीन कुण्डल कहा जाता है और सभी शक्तियों का उद्भव एवं विलीनीकरण परब्रह्म से होने के कारण उसको आधी मात्रा या आधा कुण्डल कहा जाता है–ऋग्वेद में कुण्डलिनी को साढ़े तीन शक्तियों वाले विष्णु के तेज के रूप में कहा गया है–

सप्तार्ध गर्भा भुवनस्य रेतो
विष्णोस्तिष्ठन्तिप्रदिशा विधर्गणि ।
ये धीतिभिर्मनसा ते
विपश्चितःपरिभुवःपरिभवन्ति विश्वतः ॥

(ऋग्वेद मंत्र १,अ. २२, सूक्त १६४,मंत्र ३६)

अर्थ–भुवन के व्यापक विष्णु का तेज, साढ़े तीन गर्भयुक्त शक्तियाँ सर्वतोदिशा विभिन्न धर्मों में स्थित हैं अर्थात् अनेक रूपों में अवस्थित है । जो बुद्धि की वृत्तियों और मन द्वारा ज्ञान प्राप्त मनुष्य हैं, वे सर्वत्र सबका पराभव करते हैं ।

योग शिखोपनिषद में चिन्मयी कुण्डलिनी महाशक्ति को मनन करते हुए कहा गया है–

सुषुम्नायै कुण्डलिन्यै सुधायै चन्द्रमण्डलात् ।
मनोन्मन्यै नमस्तुभयं महाशक्त्यै चिदात्मने ॥

(योग शिखोपनिषद् ६,३)

अर्थ–सुषुम्ना, कुण्डलिनी, चन्द्रमण्डल से झरने वाली सुधा और इनकी उन्मनी अवस्था, चिन्मयी महाशक्ति तुझको नमन करता हूँ ।

भवनोपनिषद् में क्रिया–शक्ति को पीठ,ज्ञान शक्ति को कुण्डलिनी एवं इच्छा शक्ति का शरीर रूपी गृह की स्वामिनी महात्रिपुर सुन्दरी कहा गया है । इच्छा, ज्ञान, क्रिया ये तीन और आधा चिद्रूप ये साढ़े तीन कुण्डल उसके कहे जाते हैं ।

मानव–देह की सर्वोत्कृष्टता उस चैतन्य शक्ति के कारण ही है जो सब मनुष्यों में जन्म से कुण्डलिनी शक्ति के रूप में विद्यमान है । समष्टिगत प्राण को ही चितिशक्ति कहा गया है । मनुष्य देह को यदि एक चेतन रेडियो यन्त्र के समान माना जाये तो समष्टिगत चेतना–शक्ति को ट्रान्समीटर द्वारा प्रसारित विद्युत–तरंगों का वैद्युत्मण्डल कहा जा सकता है ।

देहस्थ कुण्डलिनी शक्ति जाग्रत होने पर व्यक्ति का समष्टिगत दिव्य चेतना से सम्बन्ध जुड़ जाता है । कुण्डलिनी–जागरण को आध्यात्मिक पथ का प्रवेश द्वार कहा जाता है । कठोपनिषद् में यमाचार्य नचिकेता को जिस आत्मतत्त्व के बारे में बताते हैं, वह वस्तुतः कुण्डलिनी का विवेचन है–

या प्राणेन संभवत्यदितिर्देवतामयी ।
गुहां प्रविश्य तिष्ठन्ती या भूतेभिर्व्यजायत ॥

(क. ४,७)

अर्थात्–जो देवतामयी अदिति प्राण से उत्पन्न होती है, गुहा में प्रवेश करके स्थित हुई वह सब प्राणियों में व्यस्त होती है, वही आत्म–तत्त्व है ।

योग के द्वारा चेतना के विकास से अपनी मनःस्थिति को बदलकर स्नायु संस्थान पर नियन्त्रण किया जा सकता है । योगाभ्यास, मुद्रा, बन्ध, प्राणायामादि का प्रत्यक्ष प्रभाव अन्तःस्रावी ग्रन्थियों और स्नायु–संस्थान पर पड़ता है । व्यक्तिगत चेतना इससे विकसित होती है, परिष्कृत चेतना अपने प्रति स्वयं सजग होने लगती है । चेतना का यह परिवर्तन, परिष्कार प्रार्थना, जपादि अन्य अभ्यासों से भी शनैःशनैः होता है परन्तु कुण्डलिनी योग का श्रद्धापूर्वक अभ्यास उसमें शीघ्रता ला देता है । ध्यान की उच्चतम स्थिति–मन के अतिक्रमण की अवस्था में पहुँचने के लिए मन का नियन्त्रण इस प्रकार सुगम हो जाता है ।

कुण्डलिनी योग–शरीर–चेतना के विभिन्न केन्द्रों को जगाकर मन की शक्तियों के जागरण की प्रक्रिया है । चेतना के विभिन्न केन्द्र मेरुदण्ड में अवस्थित शक्ति भँवर कहलाते हैं । एक–एक चक्र की शक्तियाँ जाग्रत होते जाने से चेतन–स्थिति में परिवर्तन–उन्नयन होता जाता है । प्रथम चक्र मूलाधार से लेकर छठवें आज्ञाचक्र तक जाग्रति होने पर चेतना के स्तर में अन्तर आता है, मन का विस्तार होता है । अन्त में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अभ्यास करते-करते मन के अतिक्रमण की अवस्था अर्थात् कुण्डलिनी जागरण की अवस्था आ पहुँचती है और साधक अपने की विराट-चेतना में अनुभव करते हुए निश्चल हो जाता है ।

कुण्डलिनी को ज्ञान शक्ति, दैवी शक्ति, प्राण शक्ति का उद्‌गम या उच्च चेतना की कुञ्जी रूप शक्ति आदि कहा जाता है । आधुनिक मनोविज्ञान के शब्दों में "अचेतन मन की प्रसुप्त शक्ति" को कुण्डलिनी कहा जा सकता है । इसे सर्प-शक्ति भी कहते हैं । हिन्दू इसे देवी या शक्ति नाम से सम्बोधित करते हैं । चीन में 'ची-शक्ति', जापान में 'की-शक्ति' एवं अफ्रीका में 'नऊँम' इसी को कहते हैं ईसाई सन्त तेरेसा ने भी कुण्डलिनी शक्ति के अनुभवों को लिखा है ।

योगी लोग कुण्डलिनी शक्ति का मार्ग शरीरस्थ केन्द्र मूलाधार से सहस्रार तक मानते रहे हैं । रीढ़ की हड्डी (सुषुम्ना) में ६ केन्द्रों (चक्रों) को प्रमुख माना जाता है । मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत, विशुद्धि और आज्ञाचक्र ये ६ चक्र हैं । सप्तम सहस्रार को सभी चक्रों का नियंत्रक कहा जाता है । शरीर के बिन्दु, भूमध्य आदि अन्य चक्रों का कार्य प्रमुख षट् चक्रों में ही आ जाता है ।

मूलाधार चक्र को कुण्डलिनी का स्थान कहा जाता है । इसकी स्थिति मल-मूत्र छिद्रों के मध्य गह्वर में होती है । इसका तत्त्व पृथ्वी है । दूसरा स्वाधिष्ठान चक्र जननेन्द्रिय से ऊपर की सीध में है । इसका अधिष्ठाता जल तत्त्व है । तीसरा मणिपूर चक्र नाभि की सीध में पीछे अवस्थित माना जाता है । इसका तत्त्व अग्नि है, इसे अग्नि चक्र भी कहते हैं । चौथा अनाहत चक्र, हृदय के पीछे स्थित है । इसका अधिष्ठाता वायु तत्त्व है । पाँचवें आकाश तत्त्व के प्रतिनिधि विशुद्धि चक्र की स्थिति कंठ के पीछे है । छठाँ आज्ञाचक्र पीनियल ग्रन्थि पर अवस्थित माना जाता है, यहाँ तब तत्त्वों का समन्वय है । इसको गुरु चक्र भी कहते हैं । अन्तिम मस्तिष्क मध्य स्थित सहस्रार है जहाँ कुण्डलिनी का विश्व से मिलन होता है ।

सुषुम्ना स्थित ये चक्र स्थूल रूप में नहीं हैं बल्कि सूक्ष्म शक्ति केन्द्र है । आधुनिक वैज्ञानिक इन चक्रों को असीमित शक्ति के भण्डार मानते हैं परन्तु इनके जागरण का उपाय उनके पास नहीं है ये आध्यात्मिक चक्र अनेकों रहस्यों को छिपाये हुए हैं । सामान्यतया वे निष्क्रिय-प्रसुप्त पड़े रहते हैं । आध्यात्मिक साधक इन असीम शक्ति चक्रों का उद्‌घाटन करना चाहता है । यह उद्‌घाटन कुण्डलिनी जागरण से होता है, साधक को उस समय अपनी शक्तियों का अनुभव होने लगता है ।

अमेरिका के डॉ ली सेनेला ने कुण्डलिनी शक्ति पर अनेक प्रयोग परीक्षण किये हैं उन्होंने अपनी पुस्तक "कुण्डलिनी साइकोसिस एण्ड ट्रान्सैडेन्स" में कुण्डलिनी जागरण की विधियों का भी उल्लेख किया । व्यक्ति का चरित्र-चिन्तन उत्कृष्ट एवं कर्तृत्त्व आदर्शवादी होते जाने पर उसकी अन्तःशक्तियों का विकास स्वयं होने लगता है ।

कुण्डलिनी जागरण से व्यक्ति की चेतना का स्तर ऊँचा उठता है । यह सूक्ष्म प्रक्रिया है शरीर में स्थूल परिवर्तन नहीं होता । व्यक्तित्त्व में आमूल-चूल परिवर्तन हो जाता है । व्यक्ति की चेतना का विस्तार होने लगता है फिर वह संकीर्ण, स्वार्थी रह नहीं सकता । व्यक्तियों की जीवनधारा में महान परिवर्तन होकर वे निकृष्टता को छोड़ महानता की ओर इस कुण्डलिनी शक्ति के जागरण से ही बढ़े है ।

कुंडलिनी महाशक्ति की पौराणिक व्याख्या

आत्म विद्या के विद्यार्थियों को यह तो विदित ही है कि यह मानवीय पिण्ड (शरीर) विश्व ब्रह्माण्ड का एक छोटा सा नमूना मात्र है । सूर्य चलता है और सौर मण्डल के ग्रह-उपग्रह उसकी परिक्रमा करते हैं । ठीक इसी प्रकार परमाणु भी अकेला नहीं होता, उसके साथ इलेक्ट्रोन, प्रोट्रोन, न्यूट्रोन आदि की एक मण्डली रहती है जो 'न्युलियस' से प्रभावित होकर अपना कार्य उसी तरह चलाती है जिस तरह सौर मण्डल के साथ । विशाल वृक्ष का सारा ढाँचा छोटे से बीज के भीतर पूरी तरह विद्यमान रहता है । मनुष्य का शरीर ही नहीं उसका स्वभाव, बुद्धि,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अन्तःकरण आदि महत्त्वपूर्ण सूक्ष्म चेतना संस्थान भी अति सूक्ष्म रज वीर्य में पूरी तरह "जीन्स" रूप से विद्यमान रहता है । ब्रह्माण्ड की विशाल व्यापकता को यदि हम बीज रूप में देखना चाहें तो उसे मानव शरीर की सूक्ष्मता का विश्लेषण करते हुए भली प्रकार जान सकते हैं । जान ही नहीं सकते उस व्यक्तिगत सूक्ष्मता का विश्व गरिमा के साथ जुड़े हुए अविच्छिन्न सम्बन्ध का लाभ भी उठा सकते हैं । यह सम्बन्ध सूत्र यदि प्रसुप्त न रह कर जाग्रत हो जायें, दुर्बल न रह कर परिपक्व हो जायें तो विश्व व्यापी शक्ति भण्डार से अपने लिए आवश्यक वस्तुयें प्रचुर मात्रा में उपलब्ध आकर्षित कर सकता है इतना ही नहीं ? अपनी दुर्बल इकाई को बनाकर उससे विराट् विश्व के जड़ चेतना संस्थान को प्रभावित कर सकता है ।

साधना और तपश्चर्या वस्तुतः इसी अति महत्त्व -पूर्ण विज्ञान का नाम है । प्राचीन काल में तप साधना के द्वारा जिनने जो वरदान पाये थे उनके इतिहास, पुराण विस्तार पूर्वक हम पढ़ते सुनते हैं । इन दिनों वैसी उपलब्धियाँ प्रत्यक्ष न होने से वे बातें कपोल कल्पना जैसी लगती हैं; पर वस्तुतः बात ऐसी नहीं है । यदि ठीक विधि से–ठीक उपकरणों द्वारा उस विज्ञान को कार्यान्वित किया जाये तो पूर्व काल की कपोल कल्पना समझी जाने वाली बातों को आज भी प्रत्यक्ष किया जाना सम्भव है ।

तपस्वियों द्वारा साधना के फलस्वरूप प्राप्त किये वरदान और कुछ नहीं विराट् विश्व की अन्तरंग शक्तियों में से कुछ का इच्छानुकूल उपयोग कर सकने की क्षमता ही समझी जानी चाहिए इसी प्रकार शाप वरदान दे सकने की क्षमता को अपनी व्यक्तिगत इकाई को इतना प्रबल बना लेना चाहिए जिससे मनुष्यों या पदार्थों को अपनी संकल्प शक्ति के प्रहार से अभीष्ट दिशा में मुड़ने के लिए विवश किया जा सके । देवताओं का अस्तित्त्व इस विराट् विश्व में उनकी विशालता के अनुरूप व्यापक भी हो सकता है ? पर हम से देवताओं के जिस अंश का प्रत्यक्ष और सीधा सम्बन्ध है वह अंश अपने भीतर ही 'शक्ति बीजों' के रूप में विद्यमान रहता है । साधना का प्रयोजन इन्हीं शक्ति बीजों को जाग्रत और समर्थ बनाना है । समष्टिगत देवताओं का अशीर्वाद, वायु, वर्षा, धूप, शीत, दुर्भिक्ष, सुभिक्ष आदि के रूप में समग्र रूप से बरसता है और उससे सबको समान लाभ मिलता है । व्यक्तिगत वरदान आशीर्वाद देने वाले देवता अपने शरीर में ही विद्यमान रहते हैं । विविध–विधि साधनाओं द्वारा उन्हीं को स्वयं समर्थ बनाया जाता है । और अपनी पात्रता एवं तपस्या के अनुरूप उन्हीं से वह लाभ पाया जाता है जिसे 'अलौकिक चमत्कारी' देव प्रदत्त, वरदान के रूप में आश्चर्य के साथ सुना और देखा जाता है ।

इस अलौकिक और अद्भुत चमत्कार प्रस्तुत करने वाले शक्ति को ही योगियों और तपस्वियों ने कुंडलिनी नाम दिया है और उसे जीवन चेतना का आधार बताया है । उसी से जीवधारियों को शक्ति और तेजस्विता मिलती है, सामान्य स्थिति में व्यक्ति की कुण्डलिनी शक्ति जितनी मात्रा में स्पन्दन करती है, उतना ही प्रभाव क्षेत्र, उस मनुष्य का होता है । उसी के आधार और अनुपात से लोगों को सुख–दुःख आदर–सम्मान, लोक प्रतिष्ठा आदि मिलती है । इसलिए कहना न होगा कि मनुष्य के स्थूल जीवन की नहीं व्यावहारिक जीवन की सफलता और समुन्नति का आधार भी कुण्डलिनी शक्ति ही है ।

पाँचों प्रकार की ज्ञान इन्द्रियाँ भी बिजली के तारों की तरह इसी महाशक्ति से जुड़ गई हैं, इसलिए वह सूक्ष्म चेतना होने के पर भी संकल्प रूप में आ गई है । चेतन होने कारण चिति, जीने से जीव मनन करने से मन और बोध प्राप्त करने से चेतना को बुद्धि रूप में देखा जाता है । अहंकार रूप में उसे ही तुर्यष्टक कहते हैं पर इन विभिन्न नामों का एक ही आधार है चेतना । इस चेतना की, शक्तियों की मूलाधार शक्ति को ही कुण्डलिनी कहा जाता है । ज्ञान और अनुभव के पाँचों कोश बीज रूप से इसी में पाये जाते हैं, इसलिए कुण्डलिनी शक्ति जाग्रत कर लेने वाला इन्द्रियों को उसी तरह वश में कर लेता है, जिस तरह लगाम लगे हुए घोड़ों को वश में कर लिया जाता है । जिसने इन्द्रियों को जीत लिया संसार में उसको

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

किसका भाय । जो निर्भय हो गया वही विश्व-विजेता हो गया ।

कुण्डलिनी की इन्हीं महान् सामर्थ्यों को जान कर ही योग शास्त्रों में उसे सर्वाधिक महत्त्व दिया गया । इसके साथ अनेक प्रकार की कल्पनायें जोड़ दी गई हैं । अनेक प्रकार से उसका वर्णन किया जाता है । सीधे सरल शब्दों में कुण्डलिनी वह दिव्य मानस तेज है, जो आत्म-चेतना से परिसिक्त है और शरीर भर में व्याप्त है । साधना के फलस्वरूप यह तेज सिमट कर ध्यान के समय ज्योति बन कर देह में कार्य करने लगता है ।

कुण्डलिनी शक्ति को और अच्छी तरह समझने के लिए श्वास क्रिया और सुषुम्ना शीर्षक (मेडुला आफ लोंगलेटा) का विस्तृत अध्ययन आवश्यक है । पाश्चात्य वैज्ञानिक अभी तक इतना ही जान पाये हैं कि नाक से ली हुई साँस गले से होती हुई फुफ्फुसों(फेफड़ों) तक पहुँचती है । फेफड़ों के छिद्रों में भरे हुये रक्त को वायु शुद्ध कर देती है और रक्त-परिसंचालन की गतिविधि शरीर में चलती रहती है ।

किन्तु प्राणायाम द्वारा श्वास-क्रिया को बन्द करके भारतीय योगियों ने यह सिद्ध कर दिया है कि चेतना जिस प्राण-तत्त्व को धारण किये हुए जीवित है, उसके लिए श्वास-क्रिया आवश्यक नहीं । साँस ली हुई हवा का स्थूल भाग ही रक्त शुद्धि का काम करता है, उसका सूक्ष्म भाग सुषुम्ना शीर्षक में अवस्थित इड़ा और पिंगला नाड़ियों के माध्यम से नाभि-कन्द स्थिति चेतना को उद्दीप्त किये रहता है । 'गोरक्ष पद्धति' में श्लोक ४८ में इस क्रिया को शक्तिचालन महामुद्रा, नाड़ी शोधन आदि नाम दिये हैं और लिखा है कि सामान्य अवस्था में इड़ा और पिंगला-नाड़ियों का शरीर की जिस ग्रन्थि या इन्द्रिय से सम्बन्ध होता है, मनुष्य उसी प्रकार के विचारों से प्रभावित होता रहता है, इस अवस्था में नाड़ियों के स्वतः संचालन का अपना कोई क्रम नहीं होता । किन्तु जब विशेष रूप (प्राणायाम) से प्राणवायु को धौंका जाता है तो इड़ा (गर्म नाड़ी) और पिंगला (ठण्डी-नाड़ी) सम-स्वर में प्रवाहित होने लगती हैं । इस अवस्था के विकास के साथ-साथ नाभि-कन्द में प्रकाश स्वरूप गोला भी विकसित होने लगता है । उससे प्राण शक्ति का विद्युत-शक्ति के समान निसृण होता है चूँकि सभी नाड़ियाँ इसी भाग से निकलती हैं इसलिए वह इस ज्योति गोले के संस्पर्श में होती हैं । सभी नाड़ियों में वह विश्वव्यापी शक्ति झरने से सारे शरीर में वह तेज 'ओजस' के रूप में प्रकट होने लगता है । इन्द्रियों में वही बल के रूप में, नेत्रों में चमक के रूप में परिलक्षित होता है । इस प्राण-शक्ति के कारण प्रबल आकर्षण शक्ति पैदा होती है ।

यह शक्ति नाभि प्रदेश में प्रस्फुटित होती है और चूँकि कटि प्रदेश भी उसी के समीप है, इसलिए वह भाग अधिक शीघ्र और तेजी से प्रभावित होता है । इसलिए यौन-शक्ति केन्द्रों को नियन्त्रण में रखना अधिक आवश्यक होता है । साधना की अवधि में संयम पर इसीलिए अधिक जोर दिया जाता है, जिससे कुण्डलिनी शक्ति का फैलाव ऊर्ध्वगामी हो जाये उसी से ओज की वृद्धि होती है ।

स्थूल रूप से शरीर के स्नायु मंडल को ही पाश्चात्य वैज्ञानिक देख पाये हैं, वे अभी तक नाड़ियों के भीतर बहने और गतिविधियों को मूलरूप से प्रभावित करने वाले प्राण प्रवाह को नहीं जान सके । स्थूल नेत्रों से उसे देखा जाना सम्भव भी नहीं है । उसे भारतीय योगियों ने चेतना के अति सूक्ष्म-स्तर का वेधन करके देखा । योग शिखोपनिषद में १०१ नाड़ियों का वर्णन करते हुए शास्त्रकार ने सुषुम्ना शीर्षक को पर नाड़ी बताया है । यह कोई नाड़ी नहीं है वरन् इड़ा पिंगला के समान विद्युत-प्रवाह से उत्पन्न हुई एक तीसरी धारा है जिसका स्थूल रूप से अस्तित्त्व नहीं भी है और सूक्ष्म रूप से इतना व्यापक एवं विशाल है कि जीव की चेतना जब उसमें से होकर भ्रमण करती है तो ऐसा लगता है कि वह किसी आकाश गंगा में प्रवाहित हो रहा हो । वहाँ से विशाल ब्रह्माण्ड की झाँकी होती है । अन्तरिक्ष में अवस्थित अगणित सूर्य, चन्द्रमा, ग्रह-नक्षत्र की स्थिति समझने और विश्व-व्यापी हलचलों को नाद रूप में सुनने-समझने का अलभ्य अवसर, जो किसी चन्द्रयान या राकेट के द्वारा भी सम्भव नहीं है, इसी शरीर में मिलता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उस स्थिति का वर्णन किया जाये तो प्रतीत होगा कि कुछ स्थूल और सूक्ष्म इस संसार में विद्यमान् है उस सब के साथ सम्बन्ध मिला लेने और उनका लाभ उपलब्ध करने की क्षमता उस महान् आत्म-तेज में विद्यमान् है, जो कुण्डलिनी के भीतर बीज रूप में मौजूद है ।

सुषुम्ना नाड़ी (स्पाइनलकार्ड) मेरुदण्ड में प्रवाहित होती है और ऊपर मस्तिष्क के चौथे खोखले भाग (फोर्थवेन्ट्रिकल) में जाकर सहस्रार चक्र में उसी तरह प्रविष्ट हो जाती है । जिस तरह कि तालाब पानी में से निकलती हुई कमल नाल से शत-दल कमल विकसित हो उठता है । सहस्रार चक्र ब्रह्माण्ड लोक का प्रतिनिधि है, वहाँ ब्रह्म की सम्पूर्ण विभूति-बीज रूप से विद्यमान् है और कुण्डलिनी की ज्वाला वहीं जाकर अन्तिम रूप से जा ठहरती है, उस स्थिति में निरन्तर मधुपान का सा, सम्भोग की तरह का सुख (जिसका कभी अन्त नहीं होता) है, उसी कारण कुण्डलिनी शक्ति से ब्रह्म प्राप्ति होना बताया जाता है ।

कुण्डलिनी का महत्त्व इसी शरीर में परिपूर्ण शक्ति और सामर्थ्य का स्वामी बन कर आत्मा की अनुभूति और ईश्वर दर्शन प्राप्त करने से निःसन्देह बहुत अधिक बढ़ जाता है । पृथ्वी का आधार जिस प्रकार शेष भगवान् को मानते हैं, उसी प्रकार कुण्डलिनी का शक्ति पर ही प्राणि मात्र का जीवन अस्तित्त्व टिका हुआ है । सर्प के आकार की वह महाशक्ति ऊपर जिस प्रकार मस्तिष्क में अवस्थित शून्य-चक्र से मिलती है, उसी प्रकार नीचे वह यौन-स्थान में विद्यमान् कुण्डलिनी के ऊपर टिकी रहती है । प्राण और अपान वायु के धौंकने से वह धीरे-धीरे मोटी, सीधी, सशक्त और परिपुष्ट होने लगती है । साधना की प्रारम्भिक अवस्था में यह क्रिया धीरे-धीरे होती है, किन्तु साक्षात्कार या सिद्धि की अवस्था में वह सीधी हो जाती है । और सुषुम्ना का द्वार खुल जाने से शक्ति का स्फुरण वेग से फूट कर सारे शरीर में-विशेष रूप से मुखाकृति में-फूट पड़ता है । कुण्डलिनी जागरण दिव्य ज्ञान, दिव्य अनुभूति और अलौकिक सुख का सरोवर इसी शरीर में मिल जाता है ।

सुषुम्ना नाड़ी का रुका हुआ छिद्र जब खुल जाता है तो साधक को एक प्रकार अत्यन्त मधुर नाद सुनाई देने लगता है । यह ध्वनि प्रारम्भ में मेघ के गर्जन, वर्षा समुद्र की हहराहट, घण्टा, झाँझ, वीणा और भ्रमर गुंजार के तुल्य विकसित होती है, यही बाद में अनहद नाद में परिणित हो जाता है । नाभि से ४ अंगुल ऊपर यह आवाज सुनाई देती है, उसे सनुकर चित्त उसी प्रकार मोहित होता है । जिस प्रकार वेणुनाद सुन कर सर्प सब कुछ भूल जाता है । अनहद नाद से साधक के मन पर चढ़े हुए जन्म-जन्मान्तरों के कुसंस्कार छूट जाते हैं ।

कुण्डलिनी महाशक्ति को तन्त्र-शास्त्रों में द्विमुखी सर्पिणी कहा गया है । उसका एक मुख मल-मूत्र इन्द्रियों के मध्य मूलाधार चक्र में है । दूसरा मुख मस्तिष्क के मध्य ब्रह्म रन्ध्र में । पृथ्वी के उत्तरी ध्रुवों में सन्निहित महान् शक्तियों का परस्पर आदान प्रदान निरन्तर होता रहता है, इसी से इस पृथ्वी का सारा क्रिया-कलाप यथाक्रम चल रहा है । इसी प्रकार कुण्डलिनी शक्ति के ऊपर और नीचे के-जननेन्द्रिय और मस्तिष्क अधःऊर्ध्व केन्द्रों की शक्तियों का निरन्तर आदान-प्रदान होता रहता है । यह संचार क्रिया मेरु-दण्ड के माध्यम से होती है । रीढ़ की हड्डी इन दोनों केन्द्रों को परस्पर मिलाने का काम करती है । वस्तुतः स्थूल कुण्डलिनी का महासर्पिणी स्वरूप मूलाधार से लेकर मेरु-दण्ड समेत ब्रह्म-रन्ध्र तक फैले हुए सर्पाकृत कलेवर में ही पूरी तरह देखी जा सकती है । ऊपर नीचे मुड़े हुए दो महान् शक्तिशाली केन्द्र चक्र ही उसके आगे-पीछे वाले दो मुख हैं ।

मेरु-दण्ड पोला है, उसके भीतर जो कुछ है, उसकी चर्चा शरीर शास्त्र के स्थूल प्रत्यक्ष दर्शन के आधार पर दूसरे ढंग से की जा सकती है । शल्य क्रिया द्वारा जो देखा जा सकता है, वह रचना क्रम दूसरा है । हमें सूक्ष्म प्रक्रिया के अन्तर्गत योग-शास्त्र की दृष्टि से इस परिधि में सन्निहित दिव्य शक्तियों की चर्चा करनी है । योगशास्त्र के अनुसार मेरु-दण्ड में ए ब्रह्म नाड़ी है और उसके अन्तर्गत इड़ा और पिंगला दो अन्तर्गत शिरायें गतिशील हैं । यह नाड़ियाँ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रक्त वाहिनी शिरायें नहीं समझी जानी चाहिए । वस्तुतः ये विद्युत धारायें हैं । जैसे बिजली के तार में ऊपर एक रबड़ का खोल चढ़ा होता है और उसके भीतर जस्ते तथा ताँबे का ठंडा गरम तार रहता है, उसी प्रकार इन नाड़ियों को समझा जाना चाहिए । ब्रह्म–नाड़ी रबड़ का खोल हुआ, उसके भीतर इड़ा और पिंगला ठंडे–गरम तारों की तरह हैं । इनका स्थूल कलेवर या अस्तित्त्व नहीं है । शल्य–क्रिया द्वारा यह नाड़ियाँ नही देखी जा सकतीं । इस रचना क्रम को सूक्ष्म विद्युत धाराओं की दिव्य रचना ही कहना चाहिए ।

मस्तिष्क के भीतरी भाग में यो कतिपय 'कोष्टकों के अन्तर्गत भरा हुआ मज्जा भाग ही देखने को मिलेगा । खुर्दबीन से और कुछ देख नहीं जा सकता पर सभी जानते हैं, उस दिव्य संस्थान के नगण्य से दीखने वाले घटकों के अन्तर्गत विलक्षण शक्तियाँ भरी पड़ी हैं । मनुष्य का सारा व्यक्तित्त्व, सारा चिन्तन, सारा क्रिया कलाप और सारा शारीरिक, मानसिक अस्तित्त्व इन घटकों के ऊपर ही अवलम्बित रहता है । देखने में सभी का मस्तिष्क लगभग एक जैसा दीखेगा पर उसकी सूक्ष्म स्थिति में पृथ्वी, आकाश जैसा अन्तर दीखता है, उसके आधार पर व्यक्तित्त्वों का घटिया–बढ़िया होना सहज ही आँका जा सकता है । यही सूक्ष्मता कुण्डलिनी के सम्बन्ध में व्यक्त की जा सकती है । मूलाधार, सहस्रार, ब्रह्म–नाड़ी, इड़ा, पिंगला उन्हें शल्य क्रिया द्वारा नहीं देखा जा सकता । यह सारी दिव्य रचना ऐसी सूक्ष्म है, जो देखी तो नहीं जा सकती पर उसका अस्तित्त्व प्रत्यक्ष अनुभव किया जा सकता है ।

मूलाधार में अवस्थित कुण्डलिनी महाशक्ति मलद्वार और जननेन्द्रिय के बीच लगभग चार अंगुल खाली जगह में विद्यमान बताई जाती है । योग शास्त्र के अनुसार इस स्थान पर वहीं गहर में एक त्रिकोण परमाणु पाया जाता है । यों सारे शरीर में स्थिति कण गोल बताये जाते हैं पर यही एक तिकोना कण है यहाँ एक प्रकार का शक्ति भ्रमर है । शरीर में प्रवाहित होने वाली तथा मशीनों से संचारित बिजली की गति का क्रम यह है कि वह आगे बढ़ती है फिर तनिक पीछे हटती है और उसी क्रम से आगे बढ़ती पीछे हटती हुई अपनी अभीष्ट दिशा में दौड़ती चली जाती है । किन्तु मूलाधार स्थिति त्रिकोण कण के शक्ति भँवर में सन्निहित बिजली गोल घेर में पेड़ से लिपटी हुई बेल की तरह घूमती हुई संचारित होती है । यह संयम क्रम प्रायः ३ ॥ लपेटों का है । आगे चल कर यह विद्युत धारा इस विलक्षण गति को छोड़ कर सामान्य रीति से प्रवाहित होने लगती है ।

यह प्रवाह निरन्तर मेरुदण्ड में होकर मस्तिष्क के उस मध्य बिन्दु तक दौड़ता रहता है, जिसे ब्रह्म–रन्ध्र या सहस्रार कमल कहते हैं । इस शक्ति केन्द्र का मध्य अणु भी शरीर के अन्य अणुओं से भिन्न रचना का है । वह गोल न होकर चपटा है । उसके किनारे चिकने न होकर खुरदरे हैं–आरी के दाँतों से उस खुरदरेपन की तुलना की जा सकती है । योगियों का कहना है कि उन दाँतों की संख्या एक हजार है । अलंकारिक दृष्टि से इसे एक ऐसे कमल पुष्प की तरह चित्रित किया जाता है । जिसमें हजार पंखुरियाँ खिली हुई हों । इस अलंकार के आधार पर ही इस अणु का नामकरण 'सहस्रार कमल' किया गया है ।

सहस्रार कमल का पौराणिक वर्णन बहुत ही मनोरम एवं सारगर्भित है । कहा गया है कि क्षीरसागर में विष्णु भगवान् सहस्र फन वाले शेषनाग पर शयन कर रहे हैं । उनके हाथ में शंख, चक्र, गदा, पद्म हैं । लक्ष्मी उनके पैर दाबती हैं । कुछ पार्षद उनके पास खड़े हैं । क्षीरसागर मस्तिष्क में भरा हुआ, भूरा चिकना पदार्थ ग्रेटमैटर है । हजार फन वाला सर्प यह चपटा खुरदरा ब्रह्म–रन्ध्र स्थित विशेष परमाणु है । मनुष्य शरीर में अवस्थित ब्रह्म–सत्ता का केन्द्र यही है । इसी से यहाँ विष्णु भगवान का निवास बताया गया है । यह विष्णु सोते रहते हैं । अर्थात् सर्वसाधारण में होता तो ईश्वर का अंश समान रूप से है पर वह जाग्रत स्थिति में नहीं देखा जाता । आमतौर से लोग घृणित, हेय, पशु–प्रवृत्तियों जैसा निम्न–स्तर का जीवन यापन करते हैं । उसे देखते हुए लगता है । कि इनके भीतर या तो ईश्वर है ही नहीं–अथवा यदि है तो वह प्रसुप्त स्थिति में पड़ा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । जिसका ईश्वर जाग्रत होगा उसकी विचारणा, क्रियाशीलता आकांक्षा एवं स्थिति उत्कृष्ट स्तर की दिखाई देगी वह प्रबुद्ध और प्रकाशवान् जीवन जी रहा है, अपने प्रकाश से स्वयं ही प्रकाशवान् न हो रहा होगा वरन् दूसरों को भी मार्ग-दर्शन कर सकने में समर्थ हो रहा होगा । मानव तत्त्व की विभूतियाँ जिसमें परिलक्षित न हो रहीं हैं, जो शोक-संताप, दैन्य दारिद्र और चिन्ता-निराशा का नारकीय जीवन जी रहा हो, उसके बारे में यह कैसे कहा जाये कि उसमें भगवान् विराजमान हैं । फिर यह भी तो नहीं कहा जा सकता कि उसमें ईश्वर नहीं है । हर जीव ईश्वर का अंश है और उसके भीतर ब्रह्म सत्ता का अस्तित्त्व विद्यमान् भी है ।

इस विसंगति की संगति मिलाने के लिए यही कहा जा सकता है कि उसमें भगवान् है तो पर सोया पड़ा है । क्षीर जैसी उज्वल विचारणाओं के सागर में भगवान् निवास करते हैं । क्षीर सागर ही उनका लोक है । जस मस्तिष्क में क्षीर जैसी धवल स्वच्छ, उज्ज्वल प्रवृत्तियाँ, मनोवृत्तियाँ भरी पड़ी हों समझना चाहिए कि उसका अन्तरंग क्षीरसागर है और उसे भगवान् का लोक ही माना जायेगा । क्षीरसागर में सहस्र फन वाले शेषनाग पर विष्णु भगवान् के शयन करते रहने का यही पौराणिक रहस्य है ।

विष्णु के हाथ चार आयुध । शंख अर्थात् ध्वनि, वाक् शक्ति, दूसरों को जगाने-उठाने एवं प्रभावित करने की क्षमता । चक्र अर्थात् गतिशीलता, क्रिया, स्थिति के अनुरूप परिवर्तन कर सकने की शक्ति । गदा अर्थात् प्रताड़ना, अवांछनीय, अनुपयुक्त परिस्थितियों को दबाने-मिटाने एवं सुधारने की सामर्थ्य । पद्म अर्थात् सौन्दर्य, शोभा; सुगन्ध, मधुरता, सौम्यता, सज्जनता सहृदयता, उदारता, संयमशीलता आदि सद्गुणों का बाहुल्य । विष्णु भगवान् के चार हाथों में यह चार आयुध हैं । भगवान् अपने साथ यह विशेषतायें धारण किये हैं । जिनका भगवान् जाग्रत, सक्रिय होगा, उनमें उपरोक्त चारों विशेषतायें भी प्रत्यक्ष परिलक्षित होंगी । लक्ष्मी विष्णु की पत्नी है । जहाँ भगवान् रहेगा, वहाँ विभूतियाँ, सिद्धियाँ, विशेषतायें, सफलतायें, सद्भावनायें प्रचुर परिमाण में दृष्टिगोचर होंगी । लक्ष्मी अर्थात् विभूति । वह विष्णु की पत्नी है । महापुरुषों के पास महान् विभूतियाँ भी प्रस्तुत रहती हैं । दरिद्रता तो दुर्जनों के हिस्से आई हैं, सज्जन अपरिग्रही हो सकते हैं, यह उनकी स्वेच्छा, सुविधा एवं अभिरुचि है । वैसे कोई अभाव उनके ऊपर थोपा हुआ नहीं होता ।

नारद हयग्रीव आदि दूसरे पार्षदों की उपस्थिति का आधार यह है कि विष्णु और लक्ष्मी के साथ-साथ अनेक दैवी शक्तियाँ भी सहायता के लिए उपस्थित रहती हैं । सात्त्विक शक्तियों के ज्ञान-विज्ञान और वर्चस्व के प्रतीक नारद माने जाते हैं और बल, पराक्रम, पुरुषार्थ, वैभव, साहस एवं सकाम महत्ता के प्रतिनिधि हयग्रीव हैं । सतोगुण का बाहुल्य और रजोगुण का सान्निध्य सदा विष्णु और लक्ष्मी की उपस्थिति के साथ जुड़ा रहेगा । जो ईश्वर भक्त, आस्तिक एवं आत्मदर्शी है, उसे विष्णु लक्ष्मी, पार्षद, क्षीरसागर, शेषनाग जैसी दिव्य सत्ताओं को अपने अन्तरंग में प्रतिष्ठित देखने का अवसर मिलेगा । उसके प्रबुद्ध मस्तिष्क में उपरोक्त सारी विशेषतायें विद्यमान रहेंगी । उसका व्यक्तित्त्व प्रकाशमान अनुकरणीय एवं ऐतिहासिक चिर-स्मरणीय बनकर रहेगा । उसकी उत्कृष्ट विचारणा एवं आदर्श क्रियाशीलता उसे नर-पशु के स्तर से निकाल कर नर-नारायण की तरह पूजार्ह बनाकर रहेगी ।

कुण्डलिनी के ऊर्ध्व मुख ब्रह्म-रन्ध्र स्थित सहस्रार कमल के आधार पर शेषशायी विष्णु की अलंकारिक गाथा का रहस्य बहुत गम्भीर है, उसमें बताया गया है ऊर्ध्व मुख सहस्रार कंमल यदि जाग्रत हो सके तो व्यक्ति अपने भीतर विष्णु और उसके समस्त वैभव कलेवर को अपने साथ जुड़ा, गुँथा देख सकता है और सिद्ध-पुरुषों की तरह महामहिम जीवन-यापन कर सकता है ।

कुण्डलिनी के अधोमुख मूलाधार चक्र के साथ समुद्र-मन्थन की पौराणिक गाथा जुड़ी हुई है । सुर और असुरों ने मिलकर समुद्र मथा था और एक से एक बढ़कर महत्त्वपूर्ण चौदह रत्न प्राप्त किये थे । इस गाथा में पौराणिक उपाख्यानकार ने कुण्डलिनी की गरिमा ही प्रकट की है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सुर और असुर दो वर्ग माने गये हैं । इनकी प्रकृति भिन्न है । दिति-अदिति दो माताओं के पुत्र होने के कारण इनमें कुछ भेद भी है पर पिता एक होने के कारण वे एक ही अंश-वंश के तथा परस्पर पूरक हैं । सुर-गुरु बृहस्पति और असुर गुरु शुक्राचार्य दोनों ही देव थे । दोनों की योग्यता, तपस्या एवं दूरदर्शिता असाधारण थी । प्रक्रिया में थोड़ा अन्तर अवश्य था पर थे दोनों ही अपने स्थान पर महत्त्वपूर्ण । सुरु गुरु बृहस्पति ज्ञान मार्गी थे, उनका सम्प्रदाय योग को प्रधानता देता था और उनके अनुयायी दक्षिण मार्गी कहलाते थे । असुर गुरु शुक्राचार्य कर्ममार्गी थे; उनका सम्प्रदाय तन्त्र को प्रधानता देता था और उनके अनुयायी बाम-मार्गी कहलाते थे । आगम और निगम, वेद और तन्त्र दोनों की अपनी महत्ता है । ज्ञान और कर्म एक दूसरे के पूरक हैं । सुर और असुरों की सत्ता एक दूसरे की पूरक हैं । पर समन्वय का पथ छोड़ने वाले एक ही पन्थ परिवार के लोग दुराग्रह के कारण टकराते रहते हैं, सो अतिवादिता और उग्र दुराग्रह का दौर जब चला तो सुर, असुर भी टकराने लगे । देवासुर संग्राभ के बहुत कथानक पुराणों में पाये जाते हैं पर उनके सहयोग पूर्ण क्रियाकलापों का भी सर्वथा अभाव नहीं है । समुद्र-मन्थन दोनों ने मिलकर किया था । प्रजापति ने परस्पर कलह से उन्हें दिन-दिन दुर्बल होते जाते देख कर परामर्श दिया कि वे सहयोग का महत्त्व समझें और मिल-जुलकर काम करें । उन्होंने परामर्श माना और समुद्र-मन्थन का पुरुषार्थ करने के लिए तैयार हो गये । ज्ञान और कर्म का समन्वय ही सुर-असुर सम्मिलन है । विष्णु को ज्ञान का और शिव को कर्म का प्रतीक माना गया है । सुरों का उपास्य विष्णु और असुरों का उपास्य शिव माना जाता रहा है । यह तथ्य कुण्डलिनी महाशक्ति के सुविस्तृत विज्ञान में बहुत ही स्पष्ट है ।

मस्तिष्क के मध्य भाग में अवस्थित सहस्रार कमल में शेषशायी विष्णु भगवान् अवस्थित हैं और अधःअवस्थित मूलाधार चक्र के अधिपति शिव हैं । शिव चरित्र में कामदेव द्वारा शिव को उद्दीप्त करने और उनके द्वारा तीसरा नेत्र खोलकर कामदेव को जला डालने वाली कथा प्रख्यात है । कुण्डलिनी जननेन्द्रिय केन्द्र के समीप होने से अपने निकटवर्ती क्षेत्र को प्रभावित करती है, तत्त्वदर्शी उस अपव्यय को ज्ञान नेत्र खोलकर नियन्त्रित कर लेते हैं । एक पौराणिक कथा इसी सन्दर्भ में यह भी है कि शिव के काम पीड़ित होने पर उनकी जननेन्द्रिय के १८ टुकड़े विष्णु ने कर डाले और वे जहाँ भी गिरे वहाँ ज्योतिर्लिंगों की स्थापना हुई । द्वादश ज्योतिर्लिंगों का उद्भव इसी प्रकार हुआ । वासना को ज्योति में बदला जा सकता है । इस कथानक का यही मर्म है ।

शिवजी का प्रधान आभूषण सर्प है और उनके चित्रों में हर सर्प प्रायः ३ ॥ फेरे लगाकर लिपटा हुआ दिखाई पड़ता है । शिवलिंग की मूर्ति पूजा में नर-नारी की जननेन्द्रियों की ही स्थापना है । शिव मन्दिरों की प्रतिमा में नर-नारी की जननेन्द्रियों को सम्मिलित करके प्रतिष्ठापित किया जाता है । और उस पर जल चढ़ाने की-शीतल करने के प्रक्रिया जारी रहती है । अर्थात् इन अवयवों को यों अश्लील और गुह्य माना जाता है पर वे घृणित नहीं हैं । उनमें ऐश्वर्य के असाधारण रहस्य बीज विद्यमान् हैं । प्रतीक रूप से सर्प जलहली और शिवलिंग की पाषाण प्रतिमा के बीच भी अवस्थित रहता है । इस स्थापना में इसी तथ्य का प्रतिपादन है कि कुण्डलिनी का अधिपति शिव प्रत्यक्ष एवं समर्थ परमेश्वर है । उनके निवास स्थान कैलाश पर्वत और मानसरोवर की तरह समझे जायें उन्हें नर-नारी की घृणित जननेन्द्रिय मात्र न मान लिया जाये । वरन् उनकी पवित्रता और महत्ता के प्रति अति उच्च भाव रखते हुए, सदुपयोग की आराधना में तत्पर रहा जाये । साहस और कलाकारिता के पुरुषार्थ और लालित्य के कर्म और भावना के इन केन्द्रों को प्रजनन मात्र से निरस्त न बना दिया जाये वरन् नर-नारी की जननेन्द्रियों के निकट मूलाधार चक्र की शिव शक्ति को उच्च आदर्शों के लिए प्रयुक्त किया जाये । भारतीय अध्यात्म-शास्त्र का यह सन्देश हर किसी के लिए अति महत्त्वपूर्ण है । शिवलिंग की प्रतिमाओं में इसी तथ्य का संकेत रूप में प्रकटीकरण है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कृष्ण की रासलीला में गोपियों के साथ वेणुनाद और अनहद नृत्य में अलंकारिक रूप से अन्तरंग की समस्त भाव तरंगों को सरसता से ओत-प्रोत, झंकृत एवं उल्लसित करने का संकेत है । स्नान करती गोपियों के वस्त्र ले भागने और उन्हें नग्न करने में भी यही अलंकार है कि उस गुह्य शक्ति को तिरस्कृत, उपेक्षित एवं विस्मृत न रखकर उस पर पड़ा पर्दा हटाकर तथ्य को तात्त्विक दृष्टि से गम्भीरतापूर्वक देखना चाहिए । तांत्रिक साधनाओं में 'भैरवी-चक्र' की साधना असामाजिक एवं अश्लील होने के कारण उसकी चर्चा नहीं की जाती और उसे अति गुप्त रखा जाता है । रामकृष्ण परमहंस में अद्‌भुत शक्तियों का जागरण करने के लिए उनकी तांत्रिक गुरु महायोगिनी ने 'कुमारी पूजा' की साधना कराई थी । उसके अश्लील क्रिया-कलापों में सहयोग देने के लिए परमहंस जी की धर्मपत्नी शारदामणि जी बड़ी कठिनाई से ही अपनी सहज संकोचशीलता छोड़कर तैयार हुई थीं । आध्यात्मिकता का एक काम शास्त्र भी है । जिसके अनुसार कुन्ती द्वारा सर्वथा कुमारी होते हुए भी देव शक्तियों का आह्वान कर सूर्य का प्रसाद कर्ण, इन्द्र का प्रसाद अर्जुन, धर्मराज का प्रसाद युधिष्ठिर और वरुण का प्रसाद भीम उत्पन्न किया था । अंजनि पुत्र पवनसुत हनुमान के पिता मरुत थे, इसलिए उन्हें मरुत भी कहा जाता है । इस शास्त्र का एक सुविस्तृत विज्ञान है पर उसकी चर्चा केवल अधिकारी वर्ग तक ही सीमित रहने योग्य होने से उसका सार्वजनिक उल्लेख अवांछनीय समझा गया है । अस्तु तन्त्र की ऐसी ही अनेक प्रक्रियाओं को गुह्य घोषित करके उसे अधिकारी वर्ग के लिए ही सीमित और सुरक्षित कर दिया गया है ।

कृष्ण चरित्र में कालिया नाग का मान मर्दन करने और उसकी दोनों पत्नियों द्वारा भगवान् की अनेक उपहारों सहित अभ्यर्थना करती हुई प्रस्तुत होने की कथा प्रसिद्ध है । कृष्ण, विष्णु के अवतार हैं । उद्धत महासर्प को वे ही नियन्त्रित करते हैं । हमारा मनःसंस्थान महासर्प है, यदि वह उद्धत हो जाये तो विष उगलता है और सर्वनाश का सरंजाम जुटाता है । पर यदि उसे नियन्त्रित कर लिया जाये तो उसकी दोनों पत्नी ऋद्धि और सिद्धि अगणित विभूतियों का उपहार साथ लेकर अभ्यर्थना के लिए उपस्थित होती हैं, कथा प्रसिद्ध है कि पृथ्वी का भार शेषनाग के सिर पर रखा है । उपरोक्त महासर्प ही जीवन धारण किये रहने का आधार है । प्राण के समस्त स्फुल्लिंग उसी के गह्वर में छिपे पड़े हैं । महाप्राण का अधिपति वही है ।

समुद्र-मन्थन के प्रसंग में सुर-असुर का विवेचन ऊपर हो चुका है । ज्ञान कर्म का समन्वय देवासुर सहयोग है । सुमेरु पर्वत यह तिकोना परमाणु है, जिसके कारण मूलाधार चक्र की रचना हो सकी । प्रसिद्ध है कि सुमेरु पर्वत पर देवता रहते हैं और स्वर्ण का बना है निस्सन्देह इस त्रिकोण में एक से एक अद्‌भुत दिव्य शक्तियों और स्वर्ण सम्पदाओं का समावेश है । सुमेरु की रई, शेषनाग की रस्सी बनाकर समुद्र मथा गया । यह सर्प रज्जु ब्रह्म नाड़ी के अन्तर्गत इड़ा, पिंगला की विद्युत धाराओं से ओत-प्रोत है । शिव और विष्णु के प्रती ज्ञान और कर्म सुर और असुर जब समुद्र-मन्थन की-कुण्डलिनी जागरण की महासाधना में संलग्न हुए तो उसे सफल बनाने में प्रजापति ब्रह्मा ने कूर्म बनकर उसका बोझ अपने ऊपर उठा लिया । प्रयत्न असफल न हो जाये सुमेरु नीचे न धँसक जाये-इस आशंका को निरस्त करने के लिए कूर्म भगवान् ने अवतार लिया और अपनी पीठ पर पर्वत जैसा भार उठा लिया । साधना पथ के पथिकों का उत्तरदायित्त्व भगवान् वहन करते हैं और सफलता का पथ पुरुषार्थ एवं निष्ठा के अनुरूप निरन्तर प्रशस्त होता चला जाता है । प्रथम चरण में ही चौदह रत्न नहीं निकल आये वरन् उसके लिए देर तक निष्ठापूर्वक मन्थन की प्रक्रिया जारी रखनी पड़ी । आध्यात्मिक साधनाओं में उतावली करने वाले अधीर व्यक्ति सफल नहीं होते, उसका लाभ तो धैर्यवान और श्रद्धा को मजबूती के साथ पकड़े रहकर विश्वासपूर्वक निर्दिष्ट मार्ग पर अग्रसर होते रहने वाले साधक-नैष्ठिक साधक ही उठा पाते हैं ।

समुद्र-मन्थन की साधना के फलस्वरूप चौदह रत्न उपलब्ध हुए थे-(१) लक्ष्मी, (२) कौस्तुभ मणि,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(३) पारिजात पुष्प, (४) वारुणी, (५) धन्वन्तरि, (६) चन्द्रमा, (७) कामधेनु, (८) ऐरावत हाथी, (९) रम्भा–नर्तकी, (१०) उच्चैश्रवा अश्व, (११) अमृत (१२) धनुष, (१३) शंख, (१४) विष । पौराणिक उपाख्यान के अनुसार उनमें से अधिकांश रत्न देवताओं को उपलब्ध हुए । दैवी प्रकृति के व्यक्ति ही अपनी सत्पात्रता के आधार पर दिव्य विभूतियों का सदुपयोग करके लाभान्वित हो पाते हैं । दुष्प्रवृत्तियों वाले व्यक्ति उपलब्धियों को गँवा ही देते हैं और उन्हें प्रकृति के नियमानुसार खाली हाथ ही रहना पड़ता है ।

लक्ष्मी अर्थात् सम्पन्नता । कौस्तुभ मणि (पारस) अर्थात् जो भी सम्पर्क में आये उसका महत्त्वपूर्ण बन जाना । परिजात अर्थात् पुष्प–सी कोमलता, शोभा, सुगन्ध और प्रसन्नता । वारुणी अर्थात् आदर्शों के प्रति उत्साह भरा उल्लास । धनवन्तरि अर्थात् आरोग्य दीर्घजीवन ।चन्द्रमा अर्थात् शांति, शीलता । कामधेनु अर्थात् अवांछनीय कामनाओं की समाप्ति और उचित कामनाओं की पूर्ति के लिए आवश्यक श्रमशीलता का उद्भव । ऐरावत हाथी अर्थात् धैर्य–विवेक सहित बलिष्ठता । रम्भा अर्थात् कलात्मक सरसता, भावुकता एवं सौन्दर्य दृष्टि । उच्चेश्रबा अश्व अर्थात् अदम्य साहस और अथक पुरुषार्थ । अमृत अर्थात् आत्म–ज्ञान, आत्मा के स्वरूप और जीवनोद्देश्य की अनुभूति । धनुष अर्थात् अभीष्ट साधकों की उपलब्धि । शंख अर्थात् दूसरों को सजाना और प्रभावित कर सकने वाली प्रखर वाणी । इन तेरह विभूतियों के साथ–साथ एक जोखिम भी साथ ही जुड़ी हुई है कि यदि इन विभूतियों को पाकर व्यक्ति मदोन्मत्त हो जाये और उनका दुरुपयोग करने लगे तो वे ही विष तुल्य अपने और दूसरों के लिए घातक परिणाम भी उत्पन्न कर सकती है ।

रावण, कुम्भकर्ण, मेघनाद, हिरण्यकश्यपु, भस्मासुर, वृत्तासुर आदि असुरों ने तपश्चर्या की कड़ी परीक्षा में उत्तीर्ण होकर अनेकों वरदान और वैभव प्राप्त किये थे, किन्तु उद्धत मनोभूमि एवं निकृष्ट अन्तःस्तर होने के कारण उन्होंने जो पाया वह खो ही न गया वरन् विष तुल्य सिद्ध होकर सर्वनाश का कारण बना । समुद्र –मन्थन का चौदहवाँ रत्न विष भी है । जिसे कोई शिव साधक ही पचा सकता है,। भगवान् शंकर ने संसार की क्षति न होने देने के उद्देश्य से समुद्र–मन्थन से निकले हुए विष को अपने कण्ठ में धारण कर लिया था । संसार में दोष दूषण का अंश भी बहुत है, उसे न तो पेट में भरना चाहिए और न मुख से कटु, कर्कश बोलना चाहिए । जहाँ सुधार सम्भव है, वहाँ प्रयत्न किया जाय अन्यथा दुरित को न तो खाना ही उचित हैं, न उगलना ही उसे कण्ठ में धारण किये रहना चाहिए । शिव ने यही किया । अध्यात्म साधना के साधकों को यही करना चाहिए । इस मार्ग पर चलते हुए विभूतियों को जो अमृतमयी उपलब्धि होती है, वह विषाक्त न होने पावे इसका ध्यान रखना चाहिए ।

कुण्डलिनी साधना समुद्र–मन्थन की तरह है । उससे उपरोक्त चौदह रत्न हर साधक को मिल सकते हैं । अधः और ऊर्ध्व ध्रुव केन्द्रों में वह सब कुछ भरा पड़ा है, जो संसार में कहीं भी विद्यमान है । सहस्रार और मूलाधार के रत्न भण्डारों की तिजोरी खोल सकने की चाबी का नाम ही कुण्डलिनी साधना है, जो उसे कर सकें, उन दुस्साहसियों को इस संसार का अति सौभाग्यशाली व्यक्ति बनने का अवसर मिलता है ।

महासर्पिणी कुण्डलिनी और उसका महासर्प

वैज्ञानिक अब इस निष्कर्ष पर निकल आये हैं कि शरीर में विभिन्न ज्ञानेन्द्रियों के केन्द्र स्थूल इन्द्रियाँ नहीं वरन् उनसे भी सूक्ष्म और संवेदनशील कोई स्थान शरीर में हैं, जिन्हें न तो यन्त्रों के द्वारा पकड़ा जा सकता है और न स्थूल आँखों से देखा जा सकता है तो भी वे अत्यन्त शक्तिशाली, महत्त्वपूर्ण और अनेक रहस्यों से परिपूर्ण हैं ।

विज्ञान जगत् में परमाणु शब्द आज बहुत प्रचलित हो रहा है और उसे अत्यन्त गूढ़ रहस्य की दृष्टि से देखा जा रहा है । परमाणु को अँग्रेजी में एटम कहते हैं, यह ग्रीक भाषा से आया है, उसका अर्थ होता है, ऐसी वस्तु जिसका विभाजन न हो सके । कोई ५० वर्ष पूर्व तक परमाणु को पदार्थ की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लघुतम इकाई माना जाता था, किन्तु अब वैज्ञानिकों ने परमाणु का भी विखंडन किया तो उन्हें ३० अन्य अत्यन्त सूक्ष्म इकाइयाँ समझ में आईं, यह प्रत्येक इकाई बड़े ही रहस्यपूर्ण संस्थान माने गये हैं, उनमें किसी में तो सूर्य जैसी चमक है, किसी में पृथ्वी जैसी विशालता, जिसमें हजारों नदी, नद–झील और पर्वत हैं । उस अणु का आकाश ही इतना विस्तृत है कि वैज्ञानिक चकित रह गये, पदार्थ का न्यूक्लियस प्रोट्रान और न्यूट्रान से बना है, शेष स्थान खाली है, जिसमें इलेक्ट्रान चक्कर लगाते हैं, इस चक्कर वाले स्थान का समानुपाती व्यास २००० फुट है । यथार्थ व्यास तो अनन्त है । अर्थात् एक अणु में विराट् जगत समाया हुआ है ।

जो अणु में, विराट् जगत् में है, वही शरीर में है । ऊपर जिन सूक्ष्म संस्थानों की चर्चा कर आये हैं, वह एक–एक लोक है, जो मेरुदण्ड के पोले भाग में अवस्थित हैं, इन्हें अँग्रेजी में 'एस्ट्रल' कहते हैं, यह सुषुम्ना नाड़ी से सम्बन्धित है । इस सुषुम्ना के ही पृष्ठ भाग से अनेक रेशे निकल कर शरीर और मस्तिष्क में फैल जाते हैं और स्पर्श, ताप, झनझनाहट आदि समाचार ले जाते हैं, उसी प्रकार काम करने की आज्ञा भी लाते हैं । इससे अधिक की जानकारी वैज्ञानिकों को नहीं हो पाई ।

शरीर में कुछ स्थान ऐसे भी हैं, जिनकी जानकारी हो जाने पर विराट् जगत् के सन्देश और शक्तियों को उसी प्रकार खींचकर शरीर के विभिन्न अंगों तक पहुँचाया जा सकेगा, जिस प्रकार मस्तिष्क के सन्देश रेशों के माध्यम से शरीर के विभिन्न अवयवों तक पहुँचा देते हैं । इस क्रिया में मेरुदण्ड के पोले भाग में अवस्थित यह चक्र सहायता करते हैं, जिस तरह दूर–दूर रखे हुए दो वायरलेस सैट जब एक फ्रीक्वेन्सी में जोड़ दिये जाते हैं तो सैकड़ों मील दूर बैठे हुए दो आदमी ऐसे बातचीत कर लेते हैं, जैसे कोई आमने–सामने बैठकर बातचीत कर रहा हो । कोई जान–पहचान का आदमी हो तो उसकी आवाज से ही जाना जा सकता है कि अमुक व्यक्ति बोल रहा है । इतनी सुन्दर और साफ पकड़ तो अब वैज्ञानिकों ने ही कर ली है ।

परमाणु के इन लोकों को भगवान् ने मनुष्य शरीर में बड़ी खूबसूरती के साथ स्थापित किया है, उनका अध्ययन करने के लिये यद्यपि साधनायें करनी पड़ती हैं पर भारतीय योगियों ने जो उपलब्धि की है, उससे यह पता चलता है कि इन साधनाओं से विराट् जगत् की हलचलों को वायरलेस से भी अधिक स्पष्ट सुना और टेलिविजन से भी अधिक अच्छी तरह देखा जा सकता है । यह लोक ब्रह्माण्ड स्थित लोकों की फ्रीक्वेन्सियाँ हैं और उन्हें जोड़ने वाली या साधने वाली शक्ति का नाम 'शेष नाग' है, पौराणिक कथाओं में यह बताया जाता है कि शेष नाग पर पृथ्वी अवस्थित है या पृथ्वी को शेषनाग ने साध रखा है और शेषनाग की शैया में ही भगवान् लेटे हुए हैं, विश्राम कर रहे हैं ।

भगवान् और पृथ्वी दोनों एक ही आधार पर होने का अर्थ वह जोड़ने वाली शक्ति या क्रिया ही है, जो पृथ्वीवासी निवासी को विराट् ब्रह्माण्ड के साथ जोड़ती है । आगे जब शरीर की रचना और शेषनाग के रहस्य पर प्रकाश डालेंगे तो यह बात साफ समझ में आ जायेगी । अभी तक जो कहा गया है, उनमें से ध्यान रखने वाली बातें यह है कि मनुष्य शरीर को भगवान् ने विराट् ब्रह्माण्ड की एक परमाणु शक्ति के रूप में विकसित किया हैं, अर्थात् जिस प्रकार पदार्थ की सारी शक्तियाँ परमाणु में सन्निहित होती हैं, उसी प्रकार संसार में जो कुछ है, उसे शरीर में परमाणु रूप में स्थापित कर दिया गया है ।

सात लोक (भूः भुवः स्वः महः जनः तपः सत्यम्) प्रसिद्ध है, यह ऊर्ध्वगामी लोक हैं, सात अधोगामी लोक भी हैं । इसके बाद आकाश गंगा में घूमने वाले जो भी नक्षत्र हैं, वह सब इस शरीर में बीज रूप से आ बैठे हैं, उनका चिन्तन, अध्ययन और स्मरण करने से इन लोकों की हलचलों का ही पता नहीं लगाया जा सकता वरन् उनसे पृथ्वी पर अब से हजारों वर्ष बाद तक पड़ने वाले प्रभाव को भी देखा जा सकता है । चार युग बाँटकर उनमें होने वाले क्रिया–कलापों को योगियों ने पहले ही लिखकर रख दिया था, वह आज अक्षरशः सत्य उतर रही हैं । अब

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जो हम भविष्य के सम्बन्ध में कहा करते हैं, उनकी सत्यता को संसार शीघ्र ही स्वीकार करेगा ।

इन सूक्ष्म लोकों के अवस्थान को चक्र कहते हैं । सात लोकों के सात चक्र हैं, इनका विवरण गायत्री महाविज्ञान प्रथम भाग में विस्तृत रूप से दिया गया है । पाठक जिन्हें जिज्ञासा हो उसे पढ़ सकते हैं । उन चक्रों में अंतिम चक्र मूलाधार है, जो मूत्रेन्द्रिय से दो अंगुल नीचे गुदा के समीप सीवन भाग में स्थित है । इसे पृथ्वी–लोक का प्रतिनिधि मानते हैं, मूलाधार में पहुँचा हुआ साधक पृथ्वी की सारी गतिविधियों का न केवल दर्शन और ज्ञान कर सकता है, वरन् वह पृथ्वी का स्वामी हो जाता है । सारी पृथ्वी उसके लिये गेंद की तरह हो जाती है, वह किसी भी स्थान, किसी भी स्थान के निवासी की सूक्ष्म से सूक्ष्म चित्त वृत्तियाँ इच्छाओं तक का पता कहीं भी बैठा हुआ लगा सकता है ।

इसी तरह मस्तिष्क में शून्य चक्र हैं, इसे सहस्रार भी कहते हैं । यह शिर के ऊपर अवस्थित हैं । यह जगने पर बहुत प्रकाश मय रंगों की अति सुन्दरता युक्त अतिवेग वाली गति का हो जाता है । इसमें गिनने पर ६६० दल पाये गये हैं, इसके केन्द्र में १२ दलों का एक छोटा सा कमल है, उसमें चमकता हुआ श्वेत रंग है, जिसके भीतर सुनहला रंग समाया है । यह सत्य–लोक का प्रतिनिधि स्थान है और यह प्रकाश सत्य–लोक स्थिति भगवान् का परमाणु बीज है । अर्थात् सहस्रार को जान लेने अर्थ अब भगवान् के दर्शन कर लेना है । यहाँ आकर आदमी की इच्छाएँ और वासनाएँ सब शांत हो जाती हैं, वह आनन्द स्वरूप हो जाता है । उसके लिये संसार में सब कुछ सत्य, शिव, और सुन्दर प्रतीत होने लगता है ।

इन दो स्थानों के बीच में अन्य चक्रों का वर्णन नहीं कर रहे उनका यहाँ कोई प्रयोजन नहीं है । इन दोनों चक्रों को लेने का तात्पर्य यही है कि मनुष्य यह जान ले कि पृथ्वी निवासी के लिये अन्तिम पृथ्वी तत्त्व का प्रतिनिधि मूलाधार और सत्य–लोक का सहस्रार दोनों को इसलिये जोड़ दिया गया है कि मनुष्य पृथ्वी को ही सब कुछ न समझें वरन् अपने मूल ब्रह्म को जानने की चेष्टा करे ।

शेष भगवान् उस कार्य में सहायता करते हैं, उनका ध्यान करने से विज्ञान बुद्धि जाग्रत होती है और भगवान् के दर्शन होते हैं ऐसा कहा जाता है । आइये इस रहस्य को भी जान लें ।

मेरुदण्ड के शीर्ष सत्य–लोक और मूलाधार दोनों की मेरुदण्ड के क्रमशः सबसे ऊपर और नीचे रखा गया है । मूलाधार से दो नाड़ियाँ–इड़ा और पिंगला–ऊपर की ओर उठती हैं, इनके मिलने से एक तीसरी नाड़ी सुषुम्ना बनती है । सुषुम्ना के भीतर भी एक त्रिवर्ग है । बज्ज और चित्रणी नाम की दो अत्यन्त सूक्ष्म धारायें बहती हैं । उनके योग से एक तीसरी ब्रह्म नाड़ी का प्रादुर्भाव होता है, यह सबसे सूक्ष्म प्रकाश पथ है । जो आकाश से पृथ्वी तक बहता रहता है । इसे ही जीवन कह सकते हैं, ब्रह्म नाड़ी मेरुदण्ड के अन्तिम भाग के समीप एक काले वर्ण के षट्कोण वाले परमाणु से लिपट कर बँध जाती है, इस परमाणु को कूर्म कह गया है, उसकी आकृति कछुये जैसी है । इस कूर्म में ही आकर ब्रह्म नाड़ी तीन फेरे लगाकर लिपट गई है । इसलिये यह स्थान ऐसा लगता है, जैसे कुण्डली मारे हुये कोई सर्प हो और उस पर कूर्म अर्थात् कछुआ और उसके ऊपर मुलाधार अर्थात् पृथ्वी टिकी हुई हो ।

इसलिये पहली बात तो यह सिद्ध हुई कि शेषनाग पृथ्वी को साथे हुए हैं, यदि यह आधार कूर्म से अलग हो जाये तो मूलाधार चक्र अर्थात् मनुष्य के जीवन क्रम के नष्ट हो जाने में क्षण भर की भी देर न लगे, इसलिये यह कहा गया है कि शेष भगवान् पृथ्वी को साथे हुए हैं, यह कोई आन्युक्ति वर्णन नहीं है वरन् इस रचना का अलंकारिक वर्णन मात्र है ।

यह हो गया पृथ्वी के शेषनाग पर टिके होने का रहस्य । अब शेष भगवान् के हजार फनों का रहस्य समझने के लिये ऊपर चलिये और वहाँ पहुँचिये जहाँ ब्रह्म नाड़ी श्वेत दल कमल पर बैठे हुए प्रकाश (ब्रह्म–मूल) से मिलती है । ब्रह्मरंध्र में पहुँचकर यह ब्रह्मनाड़ी हजारों भागों में फैल जाती है । हर नाड़ी एक–एक दल में प्रविष्टि होकर सूक्ष्म लोगों के उन संस्थानों के सम्पर्क में आती है । यहाँ उनके रहस्यों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को स्पष्ट करना हमारा प्रयोजन नहीं । केवल उस आकृति का बोध कराना चाहेंगे, जो नाड़ियों के फैलने से हजारों फनों की तरह लगती है । विष्णु भगवचान् की शैया शेष के सहस्र फनों पर होने का अलंकार इसी सहस्र दल कमल से लिया गया है ।

यह चित्र अब डॉक्टरों ने भी प्राप्त कर लिये हैं । मस्तिष्क को आड़ा दो भागों में विभाग करने पर उसके भीतरी सतह पर मस्तिष्क के एक केन्द्र से दूसरे केन्द्र पर जाने वाले रेशों को देखा गया तो उनकी संख्या असंख्य दिखाई दी । यद्यपि उसके भीतरी प्रवाह को डॉक्टर समझ नहीं सके पर अब वे भी यह विश्वास करने लगे हैं कि कई बार अज्ञात ढङ्ग से स्वप्न या जाग्रत अवस्था में लोगों को जो सच्ची घटनायें दीखती या अनुभूति में आ जाती हैं, उनको ग्रहण करने वाली इन्हीं नाड़ियों में से कोई नाड़ी होती है । मस्तिष्क का वह भाग जहाँ से फनों की तरह हजारों नाड़ियाँ फैलती हैं, सेरीबेलम कहलाता है यहाँ एक पुरकुञ्जी नामक कोश का पता डाक्टरों ने लगाया है । सम्भवतः यह वही स्थान है, जिसके भीतर बारह दलों वाले चक्र में भगवान् विष्णु का प्रकाश स्वरूप अवस्थित है । ऊपरी जानकारी डाक्टरों को मिली है, भीतरी रहस्य केवल योगियों को ही प्राप्त है ।

यदि इन कोशों का विस्तृत अध्ययन किया जा सका तो जीव के पूर्व जन्मों के सम्बन्ध की अनेक बातें मालूम की जा सकेंगी, साथ ही आरोग्य शास्त्र में भी एक क्रांतिकारी परिवर्तन लाया जा सकेगा । तब सम्भव है अज्ञात शक्तियों और तत्त्वों को खींचकर रोग ठीक करने का वह क्रम चल पड़े जिस तरह किन्हीं सिद्ध पुरुषों के द्वारा आशीर्वाद मात्र से लोग अच्छे हो जाते हैं ।

शेषनाग के इस अलंकारिक चित्रण को केवल शरीर की ही एक प्रणाली नहीं माननी चाहिये वरन् यह एक विश्वव्यापी चेतना का भी अलंकारिक चित्रण है । ऊपर कह चुके हैं कि मनुष्य शरीर की सारी रचना विराट् ब्रह्माण्ड की ही नकल है । तब फिर पृथ्वी को घेर कर कोई ऐसी गुरुत्त्वाकर्षण शक्ति, या वह पथ भी हो सकता है जो अनेक दूरवर्ती लोकों को मिलता हुआ ब्रह्मलोक तक पहुँचता हो, (ऐसे एक विराट् लोक की जानकारी वैज्ञानिकों को हुई है, उनकी यह मान्यता है कि यह तारा बिल्कुल काला है । यदि यह सत्य है तो उसमें भी भुजंग शेषनाग के फनों में भगवान् का शयन होना सत्य माना जायेगा ।)

यदि अब किसी अन्य लोक से बैठ कर देखें जैसा कि योगियों ने सूक्ष्म दृष्टि से देखा तो सम्भव है, यह रचना ठीक ऐसी ही समझ में आये जैसा पुराणों में वर्णन मिलता है । यह निश्चित है कि आगे जो वैज्ञानिक खोजें होंगी और जब दूसरे लोगों में पृथ्वीवासी पहुँचेगे तो इन रहस्यों पर और भी विस्तृत प्रकाश पड़ेगा ।

शेषनाग का तीसरा रहस्य सर्पाकार गति में जीवन का भ्रमण भी है । सर्प एक चैतन्य जीव है उस पर पृथ्वी के टिके होने और भगवान् के शयन करने, दो रहस्यों का वर्णन ऊपर किया जा चुका है । मनुष्य शरीर से विलग सर्प शरीर में जीवन की संज्ञा कुछ अटपटी–सी लगती है पर हमें यह मालूम होना चाहिये कि जीवन के प्रत्येक हावभाव और गतिविधियाँ मानसिक स्थिति पर निर्भर करती हैं । मानसिक स्थिति इड़ा और पिंगला नाड़ियों की गति पर निर्भर है, जिस समय इड़ा अर्थात् चन्द्र नाड़ी चलती है, उस समय शांति, प्रेम, करुणा आदि उद्गार उठते हैं, इसलिये उस समय मनुष्य वैसे ही काम करने लगता है । पिंगला नाड़ी को गर्म नाड़ी भी कहते हैं, जिस समय साहस, शक्ति–प्रदर्शन, क्रोध जैसे गर्म विचार उठते हैं, उस समय पिंगला का उत्तेजन होता है । इसलिये वैसे ही क्रिया–कलाप भी बन पड़ते हैं पर जब दोनों नाड़ियाँ समवेत चलती हैं और चेतना का प्रवाह–ऊर्ध्वमुखी हो जाता है, तब ईश्वर प्रेम, भक्ति, श्रद्धा, भाव–विभोरता, ऐसे भाव उमड़ते हैं ।

इस स्थिति में यदि भावनायें निम्नगामी हो जाती हैं और कोई सम्भोग के लिए उतावला हो जाता है तो चेतना अधोमुखी हो जाती है पर आनन्द वैसे ही मिलता है जिस तरह ईश्वर भक्ति में । अधः प्रवाह में शक्तियों का ह्रास होता है, इसलिये उसे अनावश्यक बताया गया है । पर यहाँ यह निर्विवाद है कि जीवन की गतिविधियों का मूल इन्हीं नाड़ियों में स्थित है । यह नाड़ियाँ सर्प के समान लहराती हुई जाती हैं,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सुषुम्ना नाड़ी बीच में गहरे नीले रंग की होती है, जैसी कि रेखा सर्प के पेट में बीच में होती है और ऊपर मगज में (मेडुला आवलगिटा) में जाकर समाप्त हो जाती है, जहाँ से फन की आकृति बनती है। इसलिये बीच के भाग भी सर्प के शरीर से तुलना में फिट बैठ जाते हैं।

नाड़ियों के इस प्रवाह के साथ जीवन के सम्बन्ध को 'जाबाल दर्शनोपनिषत्' में विस्तृत रूप से समझाया गया है। और यह बताया गया है कि किस नाड़ी में कौन-सा देवता निवास करता है। उसका अर्थ यही है कि उस समय जो नाड़ी चल रही है, उस देवता के गुणों का भी संचार हो रहा होगा। (नाड़ियों की इस रचना पर कभी विस्तृत प्रकाश डालेंगे) इसी उपनिषद् में ३६ से लेकर ४७ मंत्रों तक इन नाड़ियों में जीवन प्रवाह और सूक्ष्म लोकों के प्रवाह की संगति बैठाते हुए शास्त्रकार ने बताया है कि-

विश्वोदराभिधायास्तु भगवान्यावकः पतिः
इड़ायां चन्द्रमा नित्यं चरत्येव महामुने।
.....३६-४७,

इड़ा नाड़ी में चन्द्रमा और पिंगला में सूर्य नित्य प्रति संचरण करते हैं, पिंगला से इड़ा में जो संवत्सर से सम्बन्धित प्राणायाम सूर्य का संक्रमण होता है, उसे ही वेदान्त वेतागण उत्तरायण कहते हैं, इसी प्रकार इड़ा से पिंगला में सूर्य का संक्रमण होना दक्षिणायन कहा गया है। पुरुष श्रेष्ठ जब प्राण इड़ा और पिंगला की श्रेणी में पहुँचता है। उस समय देह में ही अमावस्या कहते हैं। प्राण मूलाधार में प्रविष्ट होता है, तब तत्त्व-ज्ञानी महर्षियों अन्तिम विषुव योग में स्थित होना बताया है। सभी उद्वास और विश्वास मात्र संक्रांति माने गये हैं। इड़ा द्वारा जब प्राण कुण्डलिनी स्थान पर आ जाता है, तब चन्द्र ग्रहण का समय कहा जाता है, परन्तु जब पिंगला नाड़ी से प्राण कुण्डलिनी पर आता है, तब सूर्य ग्रहण का समय होता है।

यह गणित इतना सच्चा है कि प्राचीन समय में लोग बिना किसी गुणा-भाग के सूर्य और चन्द्रमा के ग्रहण की घोषणा कर दिया करते थे। यह सब इस जीवन तत्त्व के संचरण की गति के ज्ञान के कारण ही था।

शेषनाग भगवान् का फणि, पृथ्वी का धारण और जीवन के मूल होने का रहस्य इन पंक्तियों में बताया गया है। सर्प में जिह्वा और होती है, जिह्वा का काम रसास्वादन करना होता है। शेषनाग की हजार फणि में हजारों जीभे हैं, जो बाहर और भीतर लपलपाती रहती हैं। सहस्रार के हजार दलों पर फैली हजारों नाड़ियों से चेतना भी, विश्व सौन्दर्य का रसास्वादन करती है, अर्थात् जब मानसिक चेतना को ध्यानावस्थित कर (जैसा कि भगवान् बुद्ध के चित्रों में दिखाया गया है।) बाह्य जगत् से सम्बन्ध जोड़ते हैं तो संसार के सौन्दर्य का आनन्द मिलता है पर उसे अन्तर्मुखी कर लेते हैं तो साधक यह देखकर आश्चर्यचकित रह जाता है कि भीतर भी वही आनन्द भरा हुआ है। सहस्रार शक्तियों से विश्व-व्यापी हलचलों का भी पता चलता है और शरीर व्यापी शक्तियों का भी। सर्प के जीभ लपलपाने की यह क्रिया भी सर्प की गति से मेल खा जाती है।

इन्हीं सब तात्त्विक रहस्यों के लिये एक नाम चुना जाना था, वह शेषनाग चुना गया जो पूर्ण वैज्ञानिक और सत्य है।

सुप्त सर्पिणी और उसका जागरण

कुण्डलिनी महाशक्ति को सुप्त सर्पिणी की उपमा दी गई है। इस अलंकार से किसी को यह भ्रम नहीं होना चाहिए कि कोई साँप जैसा कीड़ा किसी संस्थान में सोया पड़ा है। ऋषियों की प्राचीनशैली बालबोध पद्धति से जन साधारण को गहन विषयकता अलंकारों और प्रतीकों के माध्यम से समझाने की रही है। देव प्रतिमाओं की आकृतियाँ इसी आधार पर गढ़ी गई हैं। पौराणिक कथा उपाख्यानों का सृजन इसी उद्देश्य से हुआ है। उनके पीछे तथ्यों और रहस्यों का समावेश इस प्रकार किया गया है कि पहले बुझौअल की तरह-गूढ़ विषयों का कौतूहल-समाधान का समन्वय करते हुए अधिक कुरेदबीन के साथ समझा जा सके। कबीर की 'उल्टी मासियाँ' प्राचीनशैली का सामयिक अनुसरण हैं। कुण्डलिनी की आकृति एवं प्रकृति का निर्धारण सुप्त सर्पिणी के रूप में इसी आधार पर किया गया है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तथ्यतः कुण्डलिनी नाड़ीशक्ति है । बड़ी रक्त वाहनियों से लेकर बाल से पतली असंख्य नाड़ियाँ समूचे शरीर में फैली हुई हैं । उनके माध्यम से प्राण ऊर्जा का समस्त काया में संचार होता है । यही बिजली समस्त कायिक और मानसिक क्रिया-कलापों को गतिशील बनाती है । मस्तिष्क का निर्देश और अनुदान समस्त शरीर को इन्हीं के माध्यम से पहुँचाता है । इनकी उपमा बिजली या टेलीफोन के उन तारों से दी जा सकती है । जिनमें निरन्तर विद्युत शक्ति प्रवाहित रहती है । शरीर का पोषण भर खाद्यपदार्थों से होता है । गतिविधियों का संचालन तो इसी विद्युत शक्ति द्वारा होता है जिसे बोल-चाल की भाषा में जीवन शक्ति कहते हैं और अध्यात्म की भाषा में प्राणशक्ति एवं कुण्डलिनी शक्ति कहा जाता है ।

प्राण शक्ति रासायनिक पदार्थों-परमाणुओं की भौतिक क्षमता और चेतना की आत्मिक क्षमता का सम्मिश्रित रूप है, इसे न पूर्णतया जड़ कहा जा सकता है । और न चेतन । इसमें दोनों का संयुक्त समन्वय है । प्राण इस विश्व में भरा पड़ा है और साथ ही मानवी काया में भी । विश्व जगत की तरह व्यक्ति जगत को भी उसी से गति मिलती है । वैज्ञानिक जानते हैं कि यह विश्व शक्ति पुञ्ज है । इसमें भरी शक्ति सम्पदा अनन्त है । उसमें से थोड़ा सा अंश ही मनुष्य की पकड़ में, उपयोग में आ सकना सम्भव हुआ है । जो अविज्ञात है वह ज्ञात से भी असंख्य गुना अधिक हैं । जो उपयोग में आता है उसकी तुलना में बिना उपयोग में पड़ी शक्ति अत्यधिक है । पर्वत में से एक कंकड़ उठाने की तरह ही सृष्टि सम्पदा का एक अंश मनुष्य के हाथ लगा है । जो ज्ञात नहीं है, जो उपयोग में नहीं आता उसे प्रसुप्त कहा जाये तो इस कथन पर किसी को आपत्ति नहीं हो सकती ।

मिट्टी के ढेले में असंख्य परमाणु होते हैं । ढेले की शक्ति एवं उपयोगिता सीमित हैं उसमें गुँथे परमाणुओं में से प्रत्येक की शक्ति अद्‌भुत है । विस्फोट के समय ही उसका आभास मिलता है । स्थिति को देखते हुए यह कहने में कोई हर्ज नहीं है कि ढेले में अनन्त शक्ति विद्यमान है पर वह प्रसुप्त स्थिति में है । विस्फोट आदि उपायों से ही उसे जाग्रत किया जा सकता है । यह कथन मोटा विश्लेषण ही है । वस्तुतः कोई परमाणु सोता नहीं । अपनी मूल स्थिति में वह सक्रिय है । उसके घटक अपने नाभिक के इर्द-गिर्द अनवरत रूप से गतिशील हैं । मनुष्य को उनका प्रत्यक्ष अनुभव नहीं होता । इस अविज्ञात को यों मनुष्य की गैर जानकारी-प्रसुप्त स्थिति कहा जाना चाहिए, पर व्यवहार में उसे परमाणु की प्रसुप्त स्थिति कहा जाय तो भी उद्‌देश्य एक ही है । परमाणु सो रहा है या मनुष्य का ज्ञान अविकसित है, दोनों बातों में एक ही स्थिति का वर्णन है । इसलिए नाम का झंझट खड़ा करने से कोई लाभ नहीं ।

मनुष्य शरीर में विद्यमान विद्युत शक्ति-प्राण ऊर्जा-कुण्डलिनी का एक बहुत छोटा अंश ही सामान्य व्यवहार में प्रयुक्त होता है । शरीर यात्रा में पेट और प्रजनन की आवश्यकतायें मुख्य हैं । मनःचेतना, वासना, तृष्णा और अहंता की पूर्ति के लिए ललकती रहती है । इन्हीं प्रयोजनों में मानवी सत्ता संलग्न रहती है । इसके लिए भी ऊर्जा तो चाहिए पर उसमें समूची क्षमता का एक अति स्वल्प अंश ही काम आता है इसके उपरान्त जो कुछ बच जाता है-उसे प्रसुप्त नाम दिया गया हो तो इसमें कोई बहुत बड़ी भूल नहीं है । इसे यदि मानवी जानकारी एवं उपयोग की उपेक्षा कहा जाता तो अधिक उत्तम होता । प्राण विद्युत को प्रसुप्त बताने की उपेक्षा उपयोग की तत्परता को प्रसुप्त कहा जाय तो स्पष्टीकरण अधिक सही होता । पर इस नामकरण के संशोधन में माथा-पच्ची करने से स्थिति में कोई अन्तर नहीं आता ।

इसी मानवी काया में रहने वाले अगणित व्यक्तियों ने अपनी विशिष्ट क्षमताओं का परिचय दिया है । अद्‌भुत पराक्रम करने वाले-अपनी सामर्थ्य एवं सफलताओं से सर्व साधारण को चमत्कृत करने वाले मनुष्यों की कमी नहीं । ऐसे तो असाधारण-महामानव-अतिमानव कहे जाते हैं । वस्तुतः उनकी मूलसत्ता में कोई अतिरिक्त विशेषता नहीं होती । ईश्वर ने हम सभी को समान अनुदान वितरण किये हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अन्तर जानने और प्रयशेग करने की तत्परताभर का रहता है । उपेक्षा करने वालों को प्रसुप्त कह सकते हैं अथवा उनकी शक्तियाँ सोई पड़ी हैं । सोते हुए मनुष्य मृततुल्य होते हैं, जागने पर उनकी सामर्थ्य प्रखर हो उठती है । इस उपमा का प्रयोग शक्तियों के लिए भी किया गया है । अविज्ञात एवं अप्रयुक्त शक्ति प्रसुप्त संज्ञक कही जा सकती है । कुण्डलिनी के बारे में यही कहा जाता है । वह सुप्त स्थिति में पड़ी है । इसका स्पष्टीकरण यों भी हो सकता है कि मनुष्य की प्राण ऊर्जा अत्यधिक मात्रा में–अत्यधिक प्रचण्ड स्थिति में उपलब्ध है पर उसका उपयोग न हो सकना प्रसुप्त स्थिति का परिचायक है । कुण्डलिनी सोई पड़ी है । इसका भावार्थ इतना ही है कि हमारी प्राण शक्ति उपेक्षित पड़ी है । कुण्डलिनी जागरण का तात्पर्य इस प्रसुप्त स्थिति को जागृति में परिवर्तित कर देने की चेष्टा करना ही समझा जाना चाहिए ।

सर्पिणी क्या है ? यहाँ भी ऐसा ही अलंकार रूपक है । जिन संस्थानों में नाड़ी शक्ति का–प्राण शक्ति का सीधा सम्बन्ध है वे सभी सर्प आकृति के हैं । चूँकि शक्ति शब्द स्त्रीलिंग है । नाड़ी शब्द भी स्त्रीलिंग है । इसलिए उसे सर्प न कह कर सर्पिणी कहा गया है । यह भी बाल कल्पना ही है । शक्तियों के लिए लिंग भेद का उपयोग व्यर्थ है । वे लिंग रहित अथवा उभयलिंगी होती हैं । भगवान को 'त्वमेव माता च पिता त्वमेव' कहा गया है । अग्नि का हिन्दी में स्त्रीलिंग और संस्कृत में बहुधा पुल्लिग उपयोग होता है । बिजली स्त्री और तेजस् पुल्लिग है । आत्मा के लिए भी कहीं नर कहीं नारी शक्ति का प्रयोग होता है । धन वैभव पुल्लिंग और सम्पत्ति स्त्रीलिंग है । प्राणऊर्जा को भाषा की दृष्टि से स्त्रीलिंग ठहराया गया है अस्तु उसे सर्प न कह कर सर्पिणी कहा गया तो यह उपमा ठीक ही बैठी । वैसे उस शक्ति प्रवाह को जीवधारियों की तरह नर–नारी के वर्गीकरण से बचा लिया होता तो भ्रम में पड़ने की सम्भावना अधिक रहती । जो भी हो अब तो कुण्डलिनी को सर्पिणी के–मादा के–रूप में ख्याति मिल गई तो उसी मान्यता को बनाये रहना उपयुक्त है ।

आकृति की दृष्टि से सर्पिणी के समतुल्य माना जाना भी ठीक है । मस्तिष्कीय ऊर्जा का समस्त शरीर में वितरण करने की प्रधान ऐजेन्सी रीढ़ है । इसी से होकर असंख्य तन्तु निकलते और फैलते हैं । मेरुदण्ड की बनावट सीधी न होकर थोड़ी टेड़ी है । उसे धनुषाकार कहा जा सकता है । पशुओं की पूँछ से भी उसकी उपमा दी जाती है । साँप सोते जागते या चले समय टेड़ेपन की स्थिति में ही रहता है । अस्तु रीढ़ की हड्डी और सर्पिणी की आकृति मिलती–जुलती ठहराई जाये तो इसमें कोई आपत्ति की बात नहीं है ।

फिर नाड़ी संस्थान की स्थिति भी ठीक वैसी है वे नाड़ी नाली की तरह ऐसे ही टेड़ी–मेड़ी बहती है । मानो सीधी लाइन में चलने की उन्हें आदत ही न हो । नाड़ियों की–नदियों की उपमा ठीक ही दी गई । उनकी मोड़–मरोड़ को देखते हुए नदियों की सजातीय ठहराने की बात कहना अलंकार की दृष्टि से सही भी है । नदियों में पानी बहता है–नाड़ियों में रक्त । यह संगति भी प्रायः ठीक ही बैठ गई । यों कोई वितंडावादी चाहे तो यह कह सकता है कि नदियाँ ऊपर से खुली पड़ी रहती हैं । फिर नाड़ियाँ पाइप की तरह पोली और बन्द क्यों हैं ? ऐसे लोगों को यही कहा जा सकता है कि उपमा एकांगी होती हैं । सभी बातें में समता नहीं हो सकती । मेरुदण्ड की बनावट और नाड़ियों के मार्ग विस्तार को देखते हुए उन्हें नदी भी कहा जा सकता है और सर्पिणी भी । सर्पिणी रस्सी की तरह होती है । ऊपर से सूखी भीतर से गीली । ऐसी दशा में नाड़ियों की समता उसके साथ ही ठीक बैठ जाती है । इसलिए नाड़ियों में सर्पिणी में उसकी प्रवाह मार्ग की तुलना करना ठीक है । शक्ति का अपना रूप तो कुछ होता नहीं वह जिस माध्यम से बहती है । उसका वही रूप मान लिया जाता है । प्राण शक्ति को उनके प्रवाह साधन नदियों के अनुरूप ही नाड़ी या सर्पिणी का नाम दिया गया है ।

विद्युत प्रवाह के प्रतीक चित्रों (ग्राफ) में सर्वत्र उस गति का यही स्वरूप अंकित किया जाता है । ग्राफ को देखकर कोई भी व्यक्ति विद्युत को भी लहरा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कर चलने वाली शक्ति की संज्ञा दे सकता हैं । नदी की सतह पर उठने वाली लहरें उस प्रवाह को बहुत कुछ देती हैं । शरीर में आंकुचन–प्रंकुचन होता है पृथ्वी और सूर्य तक साँस लेते हैं । इस फूलने–सिकुड़ने के क्रम को सर्पिणी की फुसकार कह सकते हैं ।

गुरुत्वाकर्षण का सिद्धान्त पेड़ पर से फलों को नीचे गिराता है । पानी जमीन की ढलान के अनुरूप स्वतः नीचे की दिशा में बहता है । ऊपर से गिराने पर पृथ्वी का आकर्षण उसे खींचता है । ऐसी दशा में नीचे गिरने का क्रम ही सर्वत्र चलता दीखता है । ऊँचा उठाने के लिए विशेष प्रयत्न एवं परिश्रम करना होता है । पानी कुएँ से ऊपर निकालना हो–या छत पर चढ़ाना हो तो इसके लिए रस्सी, पम्प, तथा खींचने की शक्ति जुटाने का प्रबन्ध करना पड़ेगा । यही स्थिति कुण्डलिनी शक्ति की है वह ऊपर से नीचे गिरती है । मस्तिष्क में प्राण शक्ति का प्रवाह नीचे की ओर चलता है । मेरुदण्ड में होकर निम्न अवयवों में फैलता है । जननेन्द्रिय छिद्रों की सामान्य दिशा अधोमुख ही है । उनके स्त्राव भी नीचे की ओर ही टपकते हैं । इन तथ्यों को देखते हुए कुण्डलिनी सर्पिणी को नीचे मुख किये हुए पड़ी होने का प्रतिपादन अपने प्रयोजन की पूर्ति ठीक ही कर देता है ।

पतनोन्मुख प्रवृत्तियाँ–विषैले परिणाम उत्पन्न करती है । इसे हर कोई जानता है । सुप्त कुण्डलिनी के मुख से विष झरने और उससे जीवात्मा पर विषाक्त आवरण चढ़ने की बात बहुत हद तक सही है । कुण्डलिनी का प्रधानकेन्द्र मूलाधार है । वहीं उसकी उत्तेजना कामुकता बन कर उभरती है । कामुकता की प्रतिक्रिया का मूल्य चुकाने के लिए नया परिवार बन कर खड़ा हो जाता है । उसका बहुमुखी उत्तरदायित्त्व कितना भारी होता है, उनके निर्वाह में जीवन सम्पदा का ८० प्रतिशत भाग गल जाता है । कामुकता की शारीरिक, मानसिक, मर्यादाओं का उल्लंघन करने में पग–पग पर पाप–वृत्तियों को पोषण मिलता है । और उसका परिणाम अहितकर ही होता है । इसी प्रकार अन्यान्य पतनोन्मुख प्रवृत्तियाँ अपने–अपने ढंग से औचित्य चिन्तन और अकरणीय कर्म करने की प्रेरणा देती हैं । उन्हीं के प्रतिफल शोक सन्ताप बनकर सामने आते हैं, यह सब देखते हुए अधोमुख किये सर्पिणी कुण्डलिनी प्राण शक्ति के मुख से विष झरने की बात भी सत्य ही है ।

मूलाधार के केन्द्र संस्थान को स्वयं भू–लिंग 'केन्द्र' कहा गया है । कामवासना भी यहीं से उद्भूत होती है । वासना–तृष्णा को उन्मादों के रूप में स्वीकार किया गया है । कुण्डलिनी इसी हेय परिकर में लिपटी हुई हैं । कहीं तीन कहीं साढ़े तीन फेरे लपेटें लगाये पड़ी हैं । यह तीन फेरे तीन शरीर, स्थूल, सूक्ष्मकारण समझे जा सकते हैं, जितने बन्धनों में जीव बँधा–जकड़ा पड़ा रहता है । यह फेरे छूटते हैं तो उसे भव बन्धनों से मुक्ति मिल जाती है । वासना, तृष्णा, अहंता में–पुत्रेष्णा, वित्तेष्णा, लोकेष्णा में जीव की प्रवृत्ति रहती है । यह लपेट उसने स्वयं लगाये हैं । किसी दूसरे ने इसके लिए उसे बन्धित नहीं किया है । मकड़ी अपना जाल स्वयं बुनती है और उसमें आप ही फँस जाती है । दुर्गति को, पतन को जीवसत्ता ने स्वयं ही वरण किया है, वह उसमें स्वयं ही लिपटी है । यह लिपटना सुप्तसिति का परिचयाक है । साढ़े तीन फेरे में आधा वह रह जाता है जिसमें आत्म–कल्याण की–जीवन लक्ष्य की बात भी कभी–कभी जी में उठती रहती है । वामन भगवान ने राजा बलि से साढ़े तीन पग भूमि माँगी थी । यह याचना परब्रह्म की हर मनुष्य से है कि वह बलि बने । बलि का बकरा बन कर परमसत्ता के–परमार्थ प्रयोजों को आत्म समर्थण करे । अपने हाथ से हर किसी का शरीर साढ़े तीन हाथ लम्बा होता है । इसे भगवान के लिए लगा दिया जाय । जीवसत्ता उसके भौतिक रसास्वादनों में उलझी पड़ी रहे । यह भाव भी तीने फेरे या साढ़े तीन फेरे लपेट वाले अलंकार में सन्निहित है ।

हेय और पतनोन्मुख स्थिति में पड़े रहना ही प्रसुप्त स्थिति है । उत्कर्ष या ऊर्ध्व गमन की दिशा में चल पड़ना ही जागरण है । जीवन लक्ष्य को उपेक्षित बनाये रहना–अपनी ईश्वर प्रदत्त सामर्थ्यों को अपंग स्थिति में डाले रहना सुप्तावस्था है । आत्म सत्ता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को इस स्थिति से उभारा जाय उसे सक्रिय बनाया जाय । इसके लिए किये जाने हवाले सर्वतोमुखी प्रयत्नों को कुण्डलिनी जागरण कहा गया है । इसे महान जागरण या आत्म बोध भी कह सकते हैं । कुण्डलिनी जागरण के लिए जो कर्मकाण्डपरक प्रयोग उपचार कराये जाते हैं उनका उद्देश्य यही है ।

शास्त्रकारों ने कुण्डलिनी के प्रसुप्त सर्पिणी के रूप में साढ़े तीन लपेट लगाये नीचे मुख किये विष उगलते हुए दुर्दशायुक्त स्वरूप का वर्णन किया है । साथ ही उसके जाग्रत होने पर उपलब्ध सत्परिणामों की जानकारी दी है । वे कहते हैं–

मूलाधरे आत्मशक्तिः कुण्डलिनी पर देवता ।
शोयिता भुजगाकारा; सार्धत्रिबलयान्विता ॥

(घेरंड संहिता)

मूलाधार में परमादेवी आत्मशक्ति (आत्मा की प्रचण्डशक्ति रूप) कुण्डलिनी तीन बलय वाली सर्पिणी के समान कुण्डल मार कर सोती है ।

त्र विद्युल्लताकारा कुण्डली परदेवता ।
सार्द्धत्रिकारा कुटिला सुषुम्णामार्गसंस्थिता ।२३।

(शिव संहिता)

उसी स्थान पर परमशक्ति देवी कुण्डलिनी, साढ़े तीन आकृति लिये सुषुम्ना मार्ग पर अवस्थित है । आकुञ्चनेन कुण्डलिन्याः कवाटमुद्घाटय मोक्षद्वारं विभेदयेत् । येन यार्गेण गन्तव्य तद्द्वारं मुखेनाच्छाद्य प्रसुप्ता कुण्डलिनी कुटिलाकारा सर्पवद्वेष्टिता भवति । सा शक्तिर्येन चलिता स्यात् सतुमुक्तो भवति । कुण्डलिनी कण्ठोर्ध्वभागे सुप्ता चेद्योगिनां मुक्तये भवति । बन्धनायाधोमूढानम् ।

(शाण्डिल्योपनिषद्)

कुण्डलिनी को अकुन्चित कर कपाट खोल कर मोक्षद्वार उन्मुक्त करना चाहिए । जो गन्तव्य मार्ग है, उसके द्वार को मुख से ढक प्रसुप्ता कुण्डलिनी कुटिलाकार होकर सर्पवत लिपटी पड़ी है । इस कुण्डलिनी शक्ति को जो संचालित करता है, वह मुक्त हो जाता है । कण्ठ के ऊपर भाग में स्थिति कुण्डलिनी योगी को मुक्त करती है । मूढ़ों के वह निचले भाग में ही रहती है और बन्धन का कारण बनती है ।

सुप्ता नागोपमा ह्येषा स्फुरूती प्रभया स्वया ।
अहिवत संन्धि संस्थाना वाग्देवी बीजसंज्ञिका ॥

(शिव संहिता)

यह कुण्डलिनी सर्प के समान निद्रिता अपने प्रभा से प्रकाशमान् है और सर्प के सदृश सन्धि में स्थित है और वाग्देवी है अर्थात् कुण्डलिनी से वाक्य उच्चारण होता है और बीज संज्ञक है अर्थात् संसार की बीज है ।

सा चोक्ता कुण्डलीनाम्ना कुण्डलाकारवाहिनी ।
प्राणिनां परमा शक्तिः सर्वशक्तिजवप्रदा ॥ अनिशं निश्चसद्रूपा रुषितेव भुजङ्गमी । सस्कृतोर्ध्वीकृतमुखी स्पन्दनाहेतुतां गता ॥

(योग वशिष्ठ)

सर्पिणी की तरह कुण्डली मार कर बैठी हुई यहुण्डलिनी प्राणियों की परमशक्ति है । सब शक्तियों को जाग्रत करने वाली है ।

जैसे क्रोध में भरी सर्पिणी फुसकारती है । वैसे ही मुँह ऊपर उठाये यह कुण्डलिनी फुँकारती रहती है । इसी से सारे सार शरीर में स्पन्दन होता है ।

शरीरगत प्रचण्ड शक्ति स्रोत– कुण्डलिनी

पृथ्वी पर तथा उसके इर्द–गिर्द अनेकों सूक्ष्म गतिविधियाँ इस प्रकार चलती हैं कि उन्हीं के सहारे प्राणियों के शरीर वनस्पति, जल जगत, अन्तरिक्ष, खनिज, भूगर्भ आदि क्षेत्रों की गतिविधियों का सूत्र संचालन होता है । इनमें गुरुत्वाकर्षण सर्वविदित है, क्योंकि वह ऊपर से नीचे की ओर गिरने वाली वस्तुओं को देखकर ही बालकों तक को प्रतीत हो जाती है । फिर धरती का अधर में टँगा होना दूसरों के साथ स्वयं बँधा रहना तथा अपने साथ सौरमण्डल के अन्यान्य ग्रह उपग्रहों को बाँधे रहना और भी बड़े रूप में यह सिद्ध करता है कि पृथ्वी कोई बहुत बड़ा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चुम्बक है । जिसकी पकड़ अपने कलेवर से बाहरी भाग को भी सन्तुलित रखती है और भीतरी क्षेत्र को भी इस प्रकार गतिशील बनाये रहती है कि जड़ चेतन स्तर के सभी पदार्थों का गतिक्रम सुनियोजित ढंग से चलता रहे । पदार्थ में पाये जाने वाले परमाणु परिकर और जीवधारियों के शरीर के काम करने वाले जीवाणु तक परस्पर इसी चुम्बकत्व के सहारे अपने क्रिया-कलापों को चलाते हैं, जो पृथ्वी के चुम्बकत्व के असीम भण्डार में से उन्हें थोड़ी-थोड़ी मात्रा में उपलब्ध होता है । वनस्पतियों का बढ़ना, बादलों का उठना, गरजना, कड़कना समुद्र में ज्वार-भाटे आना आदि क्रियाओं का होना इसी चुम्बकत्व से सम्बन्धित है, जिसे भूमण्डल का प्राण भी कह सकते हैं । उसी महाशक्ति ने एक स्वनिर्मित कवच को राजछत्र की तरह अपने ऊपर धारण किया हुआ है, जिनसे अन्तरिक्षीय विकरणों से रक्षा होती है और कोई उल्का उससे टकरायें तो जल-बल कर खाक हो जाती है । इसे आयनोस्फियर कहा जाता है । जिसे पृथ्वी का प्राणमय कोश भी कह सकते हैं ।

यह पृथ्वी का प्राण किस-किस क्षेत्र में किस प्रकार फैला हुआ है और उसका उपयोग कैसे हो सकता है, इसी जानकारी का यत्किंचित पता लगाने में भौतिक विज्ञान सफल रहा है । जिसे वह प्रकृति पर विजय कहता है । यद्यपि जो जाना जा सका है उससे असंख्य गुना जानने को शेष है । नित नये आविष्कारों का जो सिलसिला चल रहा है उसे इसी शक्ति भाण्डागार की कुरेद बीन कह सकते हैं ।

यहाँ चर्चा मात्र शरीर पिण्ड के सम्बन्ध में करनी है । उसके जीवकोश, रसायन, हारमोन, जीन्स आदि की अपनी सुविस्तृत व्यवस्था है । यहाँ उसका उल्लेख सम्भव नहीं । चर्चा मात्र मेरुदण्ड की और उसके दोनों सिरों की (पोल्स) हो रही है । यह क्षेत्र समग्र काया की तुलना में बहुत छोटा होते हुए भी इतना महत्त्वपूर्ण है कि उसे योगाभ्यास की अतिमहत्त्वपूर्ण धारा कहा जाय तो कुछ अत्युक्ति न होगी ।

मानवी काया यों है तो ब्रह्माण्ड की अनुकृति पर उसे छोटे रूप में समझाने के लिए एक भूमण्डल मान लेने में भी बहुत ही ज्ञातव्य बातें हस्तगत हो जायेंगी । पृथ्वी अपने उत्तरी ध्रुव से अन्तरिक्षीय भण्डार में से अपने काम की वस्तुएँ ग्रहण कर लेती है । यह उसका मुख है । मुख चाहे जो नहीं खाने लगता । जो उपयोगी होती है उन्हीं को स्वाद और स्वरूप के आधार पर पकड़ता और पेट में पहुँचाता है । उसी प्रकार अन्तरिक्ष में मँडराती रहने वाली असंख्य शक्तियों में से पृथ्वी उन्हीं को पकड़ती है और अपने लोक की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्रयुक्त करती है । प्रयुक्त करने के बाद जो कचरा बच जाता है उसे मलद्वार से-दक्षिण ध्रुव से निकाल बाहर करती है । पचे हुए उपयोगी अंश से ही उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाती है । मानवी शरीर भी इसी क्रिया का अनुसरण करता है । उसका उत्तरी ध्रुव मस्तिष्क है और दक्षिणी ध्रुव वह जिसे मल मूत्र स्थानों का मध्य भाग मूलाधार चक्र कहते हैं । उत्तरी ध्रुव को सहस्रार चक्र कहते हैं । इन दोनों के मध्य एक प्रचण्ड शक्ति प्रवाह बहता रहता है जिसे कुण्डलिनी शक्ति कहते हैं ।

पृथ्वी द्वारा खींचा गया अन्तरिक्षीय प्रवाह भूमध्य रेखा के साथ-साथ चलता है । अन्तर्ग्रही शक्तियों का पृथ्वी पर प्रवाह किस प्रकार बहता है और उसकी क्षमता अन्यान्य क्षेत्रों में किस प्रकार काम करती है? इसकी जाँच पड़ताल करने के लिए वैज्ञानिक इसी क्षेत्र में अपने विविध अन्वेषण करते रहते हैं । संसार की महत्त्वपूर्ण वेधशालाएँ इसी भूमध्य रेखा पर बनाई गई हैं । इसी क्षेत्र के लम्बे पर्यवेक्षण से अनेकानेक रहस्यों का उद्घाटन हो सका है ।

शरीर की भूमध्य रेखा मेरुदण्ड है । वह स्वयं तो अध्यात्म प्रयोगों की दृष्टि से आश्चर्यजनक है ही, उसके दोनों सिरे भी असाधारण हैं जिन्हें जादुई ही कह सकते हैं । मेरुदण्ड के शक्ति प्रवाह में तीन धाराएँ बहती हैं, जिन्हें इड़ा-पिंगला-और सुषुम्ना कहा जाता है । बिजली की दो धाराएँ होती हैं । एक को निगेटिव-दूसरी को पौजीटिव कहते हैं । इन दोनों का जहाँ मिलन होता है, वहाँ तीसरा "करेन्ट" बहने लगता है । इडा, पिंगला का जहाँ मिलन होता है वहीं से तीसरी धारा सुषुम्ना का उद्भव होता है । इसी को शास्त्रकारों ने गंगा यमुना के मिलन की सरस्वती कहा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है और उस संगम को त्रिवेणी नाम दिया है । सरस्वती प्रत्यक्ष नहीं है । वह मिलन संगम पर पाताल से आकर मिलती है । इसी बात को यों भी कहा जाता है कि जिस प्रकार पीला–नीला रंग मिलाने से तीसरा अलग से हरा रंग बन जाता है, ठीक उसी प्रकार इस सुषुम्ना संगम को कहा जा सकता है । यह त्रिविधि संगम ऐसा है जिसे लक्ष्मी, काली और सरस्वती के संगम की उपमा दी जा सकती है ।

जब हवा बहुत तेजी से बहती है तो 'चक्रवात' उत्पन्न होते हैं । नदी के तीव्र प्रवाह में भी "भँवर" पड़ते हैं । चक्रावातों और भँवरों में सामान्य प्रवाह की तुलना में सैकड़ों गुनी शक्ति अधिक होती है । उनकी चपेट में जो भी आ जाता है वह नाचने लगता है । वैज्ञानिक गण इन दिनों खोज में हैं कि चक्रावातों और भँवरों की असीम शक्ति को किसी प्रकार नियन्त्रित करके उपयोगी काम में लगाया जाय ।

मेरुदण्ड के बीच बहने वाली गंगा यमुना उठा पिंगला में भी ऐसे ही चक्र बनते हैं, जिन्हें वट चक्र कहा गया हैं वस्तुतः वे सात हैं । मेरुदण्ड की सीमा में तो छै ही आते हैं । पर उनका ऊपरी सिरा सहस्रार भी उससे जुड़ा हुआ है । इसलिए मेरुदण्ड की सीमा से एक कदम और आगे बढ़ा जाय तो सुहस्रार का कैलाश पर्वत आ जाता है जहाँ से गंगा और यमुना दोनों का मूलभूत उद्‌गम माना गया है ।

मेरुदण्ड संरचना का काय विश्लेषण करने पर उनमें उन प्रकार की रक्त वाहिनियाँ भी पाई गई हैं और शक्ति धाराएँ भी । वैज्ञानिक इड़ा प्रक्रिया को–"सिम्पैथेटिक सिस्टम" और पिंगल को "पैरासिम्पैथेटिक सिस्टम" कहते हैं । इन दोनों का उद्‌गम जिस कैलाश से है उसे मस्तिष्क मध्य में अपस्थित "हाईपोथेलेमस" कहते हैं । इसी के दो सिरे 'पीनियल' और पिट्यूटरी मस्तिष्क में ही अवस्थित रहते हैं । इन दोनों को मिलाने वाली शृंखला ही हाइपोथेलेमस है । इसे सहस्रार चक्र कहा गया है । ब्रह्मरान्ध्र भी इसी के साथ जुड़ा हुआ है, जिसकी संगति "कॉर्पस कैलोजम" के समीप से बैठती है । चक्र वेधन, सहस्रार उन्मथन एवं मूलाधार का शक्ति उद्‌घाटन यह तीनों ही कुण्डलिनी जागरण प्रक्रिया को पूर्ण कर लेने के लिए आवश्यक है ।

कहा जा चुका है कि मूलाधार मलमूत्र छिद्रों के मध्य है । इस स्थान की शल्य क्रिया करने पर जो नाड़ी गुच्छक पाया गया है उसे 'सेक्रलप्लेक्सस' कहते हैं । इससे स्नायु प्रवाह माध्यम से प्रायः कामोत्तेजना उभरती रहती है और सन्तोनोत्पादन के लिए शुक्राणु, डिम्बाणु प्रजनन अंगों में बनते रहते हैं । यहीं से दाढ़ी, मूँछ, पौरुष, साहस, श्रमयोग्य कठोरता उभारने वाले हारमोन उत्पन्न होते हैं । योगाभ्यास में इसे अग्निकुण्ड, कुण्डलिनी निवास आदि का नाम दिया गया है ।

मस्तिष्क मध्य में निवास करने वाले केन्द्र में अप्रत्यक्ष रूप से काम करने वाले विद्युत उत्पादन केन्द्र को सहस्रार के अतिरिक्त "रटीकुलर एक्टिवेटिंग सिस्टम" भी कहते हैं । इसे अति संविदनशील विद्युत मापक यन्त्रों की सहायता से ही मापा जा सकता है । यहाँ क्षण–क्षण में विद्युत स्फुल्लिगों उभरते रहते हैं । इसे असली हृदय कहा जा सकता है । छाती में धड़कने वाला हृदय रक्त को असली हृदय भी कह सकते हैं । सहस्रार चक्र का इससे सीधा सम्बन्ध है । उसे ब्रह्मरन्ध्र का उद्‌गम भी कह सकते हैं । इन स्फुल्लिगों को ही शतदल कमल कहा गया है और शतमुख वाला महा सर्प जिस पर क्षीर सागर में विष्णु भगवान शयन करते हैं ।

मूलाधार और सहस्रार को मिलाने वाला छोटे–छोटे घटकों से मिलकर बना मेरुदण्ड है । इसी को बोल–चाल की भाषा में रीढ़ कहते हैं । स्पाइनल कार्ड इसके अन्दर होता है । इसी के मध्य व दोनों ओर वे तीनों नाड़ियाँ शक्ति धाराएँ बहती हैं, जिनका उल्लेख ऊपर इड़ा पिंगला के रूप में किया गया है । इन्हीं दोनों की मध्यवर्ती सुषुम्ना है । मेरुदण्ड मार्ग को 'इक्वेटोरियल लाइन' विषुवत् रेखा कहते हैं । किन्तु इसका मध्यवर्ती प्रवाह "सेन्ट्रल केनाल" (स्पाइनल कार्ड का केन्द्रीय भाग) के नाम से जाना जाता है । यही सब मिलकर वैसी स्थिति बनती है जैसी कि पृथ्वी पर भूमध्य रेखा की है । ऐसे तो समस्त शरीर ही शक्ति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पुंज है किन्तु योग साधना से सम्बन्धित प्रचण्ड शक्ति का केन्द्र उसी भाग को समझा जाना चाहिए जो मूलाधार से लेकर सहस्रार तक मेरुदण्ड माध्यम से शक्ति पुंज बनकर अवस्थित है ।

कुण्डलिनी जागरण एक क्रिया नहीं है वह विभिन्न पक्षों, अवयवों में बँटी हुई है और उसके प्रत्येक अवयव को इस प्रकार झकझोरना पड़ता है जिससे अभीष्ट उद्देश्य की पूर्ति होती हो । मूलाधार, सहस्रार, इडा, पिंगला, सुषुम्ना यह पाँच घटक मोटे अंग अवयवों के रूप में गिने जा सकते हैं । अब इनके अन्तराल में सन्निहित शक्ति का विवरण चलता है । मेरुदण्ड मार्ग में छै चक्र हैं । इन्हें छै स्तर की विद्युत शक्तियाँ कह सकते हैं । इन में से जो अपने लिए विशेष उपयुक्त है उसी पर प्रयत्न केन्द्रित करने पड़ते हैं । छहों चक्रों को जगाने का तात्पर्य तो ऐसा है जैसा किसी विशाल कारखाने के अनेकानेक कल पुर्जों की समग्र जानकारी प्राप्त करना । यह व्यर्थ है । उनमें से जिनके साथ अपना सीधा सम्पर्क हो, उतने की ही जानकारी प्राप्त कर लेने में एक मध्यवर्ती साधक का काम चल सकता है । यही बात मूलाधार के अनेक पक्षों में से जो अपने लिए अभीष्ट है उसी अंग पर हाथ डाला जाय । यह सिद्धान्त सहस्रार की हजार या सौ धाराओं में से अपने उपयोगी पक्ष को चुनने के सम्बन्ध में है ।

दिव्य शक्ति का निर्झर कुण्डलिनी का चक्र परिवार

जीवन एक यज्ञ है । इसके भी पुरोहित देवता और उपकरण होते हैं । इन सबकी संगति शास्त्रकारों ने बिठाई है । कुण्डलिनी यज्ञ का विशेष वर्णन करते हुए मुण्डकोपनिषद के २/१/८ संदर्भ में कहा गया है–"सप्तप्राणी उसी से उत्पन्न हुए । अग्नि की सात ज्वालाएँ उसी से प्रकट हुई । यही सप्त समिधाएँ हैं, यही सात हवि हैं । इनकी ऊर्जा उन सात लोकों तक जाती है जिनका सृजन परमेश्वर ने उच्च प्रयोजनों के लिए किया है ।"

सप्त लोकों का देवी भागवत में अन्य प्रकार से उल्लेख हुआ है । उसमें भूः में धरित्री भुवः में वायु स्वः में तेजस महः में महानता, जनः में जनसमुदाय, तपः में तपश्चर्या एवं सत्य में सिद्धवाणी–वाक सिद्धि रूप सात शक्तियाँ समाहित बतायी गयी हैं । इस प्रकार कुण्डलिनी योग के अन्तर्गत चक्र समुदाय में वह सभी कुछ आ जाता है, जिसकी कि भौतिक और आत्मिक प्रयोजनों के लिए आवश्यकता पड़ती है ।

मानवी काया को एक प्रकार से भूलोक के समान माना गया है । इसमें अवस्थित मूलाधार चक्र को पृथ्वी की और सहस्रार को सूर्य की उपमा दी गई है । दोनों के बीच चलने वाले आदान–प्रदान माध्यम को मेरुदण्ड कहा गया है । सूर्य की गर्मी से पृथ्वी का सारा काम चलता है । ब्रह्मरंध्र ब्रह्माण्ड का प्रतीक है । सूर्य का तेजस धारण करने से ही पृथ्वी को बहुमूल्य जड़ चेतन सम्पदा–प्रवाह को उत्पन्न और निर्वाह करते रहने की क्षमता मिलती है । ठीक इसी प्रकार सहस्रार लोक ब्रह्माण्डीय चेतना का अवतरण केन्द्र है और इस महान् भाण्डागार में से मूलाधार को जिस प्रयोजन के लिए जितनी मात्रा में जिस स्तर की सामर्थ्य अपेक्षित होती है उसकी पूर्ति सतत् होती रहती है ।

यह अनुदान किस प्रकार बरसता है, इसकी एक झाँकी ध्रुव प्रदेशों में जाकर देखी जा सकती है, क्योंकि ब्रह्मरंध्र को मस्तिष्क को उत्तरी ध्रुव भी माना गया है, जहाँ सूर्य की तथा अन्यान्य ग्रहों की महत्त्वपूर्ण शक्तियाँ निरन्तर बरसती रहती हैं । इसमें कौन क्या कितनी मात्रा में बटोरता है, यह साधक के कौशल पर निर्भर है ।

पृथ्वी का उत्तरी ध्रुव क्षेत्र (आर्कटिका) प्रायः ५० हजार वर्ग मील का है । दक्षिणी, ध्रुव (एण्टार्कटिक) लगभग ३० हजार वर्ग मील क्षेत्र में फैला हुआ है । उत्तरी ध्रुव पर ध्रुवप्रभा मेरु प्रकाश के रूप में आती है और वह चित्र विचित्र रूपों में वहाँ दीखती है । यह प्रकाश (अरोरा बोरिएलिस) दोनों ध्रुवों पर अपने–अपने निराले रूपों में जिस प्रकार दृष्टिगोचर होता है, उसे देखकर चकित रह जाना पड़ता है ।

ध्रुव प्रकाश सूर्य किरणों की वक्रता के कारण विचित्र रूप में सर्च लाइट की तरह दीखता, गायब होता रहता है । उत्तरी ध्रुव पर चमक कुछ अधिक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होती है । उत्तरी ध्रुव पर एस्किमो जाति के मनुष्य भालू, रैन्डियर, मछली आदि प्राणियों का अस्तित्त्व पाया जाता है । दक्षिणी ध्रुव पर पेंगुइन पक्षी पाया जाता है, जिसकी प्रकृति में असीम प्यार भरा है । उत्तरी ध्रुववासी एस्किमो स्वभावतः असीम साहसी होते हैं ।

ध्रुव क्षेत्रों पर सूर्य किरणों की अनेक विचित्रताएँ दृष्टिगोचर होती हैं । उत्तरी ध्रुव यात्री जनि वायर्ड ने एक बार वहाँ सूर्य को बिलकुल हरे रंग का देखा था । वहाँ दूर की वस्तुएँ हवा में लहराती दिखाई पड़ती हैं । टीलों की ऊँचाई जितनी होती है, उससे कई गुनी ऊँची दिखाई पड़ती है । कई बार अनेक सूर्य एक साथ उगते हुए दीखते हैं । इसी प्रकार चन्द्रमा भी बर्फ पर, हवा में तथा आकाश में अलग-अलग दीखते हैं । उत्तरी ध्रुव पर रात्रि छै महीने की होती है । सूर्य वर्ष में मात्र १६ दिन पूरी तरह चमक से निकलता है । चन्द्रमा की चमक कई बार इतनी होती है, जिसकी तुलना सूर्य से की जा सके । रोशनी रंग बदलती और झिलमिलाती रहती है । कई बार वह टार्च के प्रकाश की तरह लम्बाई में दौड़ती चली जाती है । चुम्बकीय तूफान निरन्तर आते रहते हैं । यह शक्ति प्रवाह उछल कर उस स्थान पर गिरा पाया जाता है, जहाँ दक्षिणी ध्रुव है । उत्तरी ध्रुव का प्रदूषण आणविक धूलि दक्षिणी ध्रुव से उत्सर्जित पायी जाती है । एक ध्रुव गहरा है, दूसरा उठा हुआ । आवाजें कभी बहुत दूर की पास सुनाई देती हैं, कभी बहुत पास की भी सुनाई नहीं पड़तीं । यह विवरण काया के दोनों लोक मूलाधार व सहस्रार-दक्षिणी व उत्तरी ध्रुव से भली-भाँति संगति खाता है ।

मस्तिष्क उत्तरी ध्रुव है और जननेन्द्रिय मूल-मूलाधार -दक्षिणी ध्रुव । दोनों की परिस्थितियों और विशेषताओं तथा प्रभाव को देखते हुए जननेन्द्रिय और मस्तिष्क में पाई जाने वाली विशेषताओं की पूरी-पूरी संगति बैठ जाती है । कामवासना का प्रवाह भी मस्तिष्क से चलता है और जननेन्द्रियों पर अपनी उत्तेजना पटकता है । इस आदान-प्रदान में रोक थाम और मर्यादा बनी रहे, इस प्रयोजन के लिए मेरुदंड का एक लम्बा मार्ग है और उसमें भी छै चक्र-छै व्यवधान खड़े हुए हैं ।

कितने ही पौराणिक उपाख्यानों की संगति कुण्डलिनी योग से बैठती है । यह संसार शेष नाग के फन पर टिका है एवं शरीर मूलाधार स्थित सर्प पर । इस क्षेत्र में गड़बड़ी पड़ जाने पर मनुष्य अशक्त अपाहिज, नपुंसक हो जाता है । विष्णु भगवान शेषनाग पर सोते हैं । शंकर जी के गले में साँप है । यह ब्रह्म रंध्र का वर्णन है । यह सभी सर्प एक दूसरे का सहयोग करते हैं और धारणकर्त्ता को उस ऊर्जा से लाभान्वित करते रहते हैं जो विष्णु व शिव से जुड़े होने के कारण अलंकारिक रूप से उनमें पाई बतायी जाती है ।

जहाँ मूलाधार की प्रसुप्त महासर्पिणी नारी तत्त्व की बोधक है, वहाँ सहस्रारमें विद्यमान् महासर्प नर है । दोनों की अपनी-अपनी विशेषताएँ हैं और दोनों के मिलन की असीम उत्कंटा की पूर्त्ति मेरुदंड कुण्डलिनी योग के माध्यम से करता है ।

रतिक्रिया में मिलने वाले विषयानंद को मस्तिष्कीय ऊर्जा झकझोरने पर ब्रह्मानंद का एक छोटा रूप बताया गया है । दोनों ही क्षेत्र आमतौर से सोये रहते हैं एवं उमंग उठने पर ही वे उत्तेजित होते हैं ।

कुण्डलिनी की मूलाधार स्थित ऊर्जा को प्राण प्रवाह, जीवन शक्ति, सृजन प्रेरणा, जिजीविषा, उमंग-उत्साह-विनोद क्रीड़ा-पौरुष आदि के रूप में प्रकट होता देखा जाता है । वह क्षेत्र प्रसुप्त हो तो मनुष्य निराश अशक्त स्थिति में रहने लगता है ।

कुण्डलिनी के ऊर्ध्व लोक सहस्रार चक्र में बुद्धि विचारणा, विवेकशीलता, भक्ति भावना, आदर्शवादिता, संयमशीलता, स्नेह, श्रद्धा, सद्भाव, कर्मनिष्ठा आदि का निवास है ।

काम क्रीड़ा में अतिवाद बरता जाये तो नीचे और ऊपर के दोनों ही केन्द्र लड़खड़ाने लगते हैं । शारीरिक और मानसिक दोनों ही क्षेत्रों में अशक्तता आ जाती है । यदि इन केन्द्रों का सीमित एवं मात्र सत्प्रयोजनों के लिए प्रयोग किया जायें तो उससे असाधारण फल श्रुतियाँ भी मिलती हैं ।

कहा जा चुका है कि कुण्डलिनी शक्ति स्थूल शरीर में प्रजनन तथा क्रीड़ा विनोद भर काम करती हैं उसका गंभीर स्वरूप सूक्ष्म शरीर में सन्निहित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । शरीर की चीर फाड़ की जाये तो चक्र तो नहीं पर निर्धारित स्थानों के आस-पास छोटे-छोटे नाड़ी गुच्छक दृष्टिगोचर होते हैं, जिनकी एनाटामीकल संगति का वर्णन पूर्व में किया जा चुका है । चक्र वस्तुतः विद्युत प्रवाह के प्रतीक केन्द्र हैं ।

प्रस्तुत दिव्य प्रवाहों को रक्त-प्रवाह, नाड़ी चक्र, ज्ञान तन्तु, प्रवाह को ज्ञा स्फुल्लिग आदि के रूप में नहीं जाना जा सकता । इन मान्यताओं को अपनाकर चलने वाले वस्तुस्थिति को नहीं समझ पाते हैं और न तथ्यों की सही विवेचना ही कर पाते हैं । यह चेतनात्मक प्राप्त प्रवाह का विषय है, जिसे भौतिक विद्युत के सभतः नहीं माना जा सकता, क्यों कि उसका प्रवाह लकड़ी रबड़ जैसी वस्तुओं पर प्रभाव नहीं डालना जब कि प्राण की चेतना में ही नहीं जड़ में भी गति है ।

कुण्डलिनी प्रसंग योग वाशिष्ठ, योग चूड़ामणि, देवी भगवत्, शारदा तिलक, शान्डिल्योसपनिषद मुक्ति-कोपनिषद, हठयोग संहिता, कुलार्णव तंत्र, योगिनी तंत्र बिन्दूपनिषद, रुद्र यामल तंत्र सौन्दर्य लहरी आदि ग्रन्थों में विस्तार पूर्वक दिया गया है । तो भी वह वैसा नहीं है जिससे साधना के उतार-चढ़ावों को सरलता पूर्वक समझा जा सके और साधना का विधि-विधान समझ कर निर्धारित लक्ष्य तक पहुँचने की सफलता को प्राप्त किया जा सके । यही कारण है कि ऋग्वेद में ऋषि कहते हैं-हे "प्राणग्नि! मेरे जीवन में ऊषा बनकर प्रकटों अज्ञान का अन्धकार दूर करों, ऐसा बल प्रदान करो जिससे देव शक्तियाँ खिंची चली आएँ ।"

त्रिशिखिब्रह्मोपनिषद् में शास्त्रकार ने कहा है-"योग साधना द्वारा जगाई हुई कुण्डलिनी बिजली के समान तड़पती और चमकती है । उससे जो है सोया सा जागता है । जो जागता है, वह दौड़ने लगता है ।"

अजित मुकर्जी की "द तांत्रिक वे" स्वामी अगेहानन्द की "तांत्रिक परम्परा" एवं "यौन ऊर्जा" हैस जैक्सन की "पाश्चात्य मनोविज्ञान एवं भारतीय साधना" ओमर गैरीसन की "तंत्र-यौन योग " उखिल हॉस की "कमेण्टी ऑन हठयोग प्रदीपिका" फिलीप राखेन की "तान्त्रिककला" जान ब्राइट की "चेतना का सीमान्त" हैंस रिग्जीमर की "भारतीय धर्म उपाख्यान और प्रतीक" एवं सर जॉन वुडरफ की 'सर्पेण्टाइन पावर' में कुण्डलिनी योग के संदर्भ में आधुनिक मनोविज्ञान, परामनोविज्ञान एवं साधनाशास्त्र के ऊपर विस्तृत प्रकाश डाला है एवं बताया है कि यह विधा ऐसे सुनिश्चित तथ्यों पर आधारित है कि उसको प्रयोग में लाने वाले लाभान्वित हुए बिना रह ही नहीं सकते ।

महातंत्र में वर्णन आता है-"जाग्रत हुई कुण्डलिनी असीम शक्ति का प्रसव करती है । उससे नाद बिन्दु, कला के तीनों अभ्यास स्वयंमेव सध जाते हैं । परा, पश्यान्ति मध्यमा और बैखरी चारों वाणियाँ मुखर हो उठती हैं । इच्छा शक्ति ज्ञान शक्ति और क्रिया शक्ति में उभार आता है । शरीर-वीणा के सभी ताप क्रमबद्ध हो जाते हैं और मधुर ध्वनि में बजते हुए अन्तराल को झंकृत करते हैं । शब्दब्रह्म की यह सिद्धि मनुष्य को जीवनमुक्त कर देवात्मा बना देती है ।" चक्रों के भाव पक्ष को आधार मानकर चलने वाले उनमें कई-कई रंगों कई शब्दों कई कोणों, कई वाहनों का आरोपण करते हैं । ध्यान की गहनता में तो वैसा स्वरूप भी दीख सकता है और वैसी विशषताएँ भी प्रतीत हो सकती हैं । किन्तु यदि तथ्यों को आधार रखकर चला जाये तो उनकी वायु में पड़ने वाले चक्रवातों, ज्वालामुखी से प्रकट होने वाले लावा-अग्नि ऊर्जा के शोलों एवं नदी में पड़ने वाली भँवरों से तुलना की जा सकती है, जिनमें असाधारण सामर्थ्य काम करती रहती है । इस सामर्थ्य के द्वारा अदृश्य जगत में व्यापक हलचल उत्पन्न की जा सकती है, साथ ही आत्मिक प्रगति के सर्वोच्च सोपानों तक पहुँचा जा सकता है ।

कुण्डलिनी महाशक्ति और प्राण प्रवाह

आकाश पोला दीखता भर है पर वस्तुतः उसमें बहुत कुछ भरा रहता है । पोल में भरी हुई हवा को आसानी से अनुभव किया जा सकता है पर इसके भीतर 'ईथर' नामक तत्त्व रहता है । उसी के माध्यम से रेडियो का शब्द प्रवाह देश-देशान्तर तक पहुँचता है । अन्तरिक्ष की यात्रा करने वाले राकेटों और उपग्रहों का पृथ्वी से नियन्त्रण एवं मार्ग दर्शन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

करना ईथर तत्त्व के कारण ही सम्भव होता है । ईथर की मात्रा अन्तरिक्ष में लबालब भरी न हो तो हमारी आवाज पड़ौस में बैठा व्यक्ति भी न सुन सके और पृथ्वी पर तथा अन्तरिक्ष में काम करने वाले प्रक्षेपणास्त्रों राकेटों की सम्भावना ही न रहे । तब आकाश में सैर करने की बड़ी-बड़ी योजनायें बनाने का भी कोई आधार न रहें । रेडियो, ट्रांजिस्टर, टेलीविजन की बात तो दूर एक आदमी की बात दूसरे सुन सकें, यह साधारण बात भी असम्भव हो जायेगी । न दिखाई देने वाला, न अनुभव में आने वाला 'ईथर' तत्त्व कितने गजब की सामर्थ्य अपने भीतर भरे बैठा है, इसके महत्त्व पर जब ध्यान देते हैं, तब आश्चर्य चकित हो जाते हैं ।

ईथर की तरह ही आकाश में एक और भी तत्त्व है, जिसका नाम है 'ऊर्जा' ऊर्जा उष्णता से भिन्न है । एक ऐसा शक्ति प्रवाह परमाणुओं में बहता रहता है, जिसमें अन्त सामर्थ्य भरी पड़ी है । बिजली का समुद्र आकाश के उदर में लहलहा रहा है । बिजलीघर की मशीनें तो उस आकाश में बहने वाले शक्ति प्रवाह को पकड़ने, रोकने और काम में लाने भर का प्रयोजन पूरा करती हैं । अन्तरिक्ष में ऊर्जा का शक्ति प्रवाह भरा न होता तो इस संसार में एक भी प्रकार की हलचल दिखाई न पड़ती । चन्द्रमा जैसी निस्तब्ध नीरवता का यहाँ साम्राज्य रहता । सुनसान और चुपचाप ही सब कुछ दीखता । विश्व-व्यापी ऊर्जा ही है जो व्यक्ति के शरीर में रक्त संचालन हृदय की धड़कन, पाचन क्रिया, ज्ञान तन्तुओं में की हलचल, मस्तिष्क की उथल-पुथल यह सब कुछ ऊर्जा का ही खेल है । हमारा जीवन उसी पर निर्भर है । बाह्य जगत् में हवा का चलना, नदी का बहना, पौधों का उगना, ऋतुओं का बदलना आदि समस्त क्रिया-कलापों के मूल में विश्व-व्यापी प्रचण्ड शक्ति से परिपूर्ण यह ऊर्जा ही अपने चमत्कार दिखा रही है और संसार में विविध विधि हलचलें हो रही हैं ।

जड़ जगत् में जिस प्रकार अदृश्य 'ईथर' भरा पड़ा है और मोटी समझ में न आने वाली शक्तिशाली ऊर्जा का अस्तित्त्व मौजूद है । उसी प्रकार सूक्ष्म जगत् में भी ऐसी ही चमत्कारी शक्तियाँ मौजूद हैं । पंच-तत्त्वों से बने जड़ जगत् की तरह एक दूसरा अदृश्य अति सूक्ष्म, चेतन जगत् भी है, जिसमें सत्, रज, तम तीन ही तत्त्व हैं और उसमें कुछ ऐसी शक्तियाँ भरी पड़ी हैं, जो दृश्य जगत् में जो पाया गया है, उससे भी अधिक क्षमता सम्पन्न एवं चमत्कारी है । जड़ जगत् में जैसे 'ईथर' है, वैसा ही चेतन जगत् में 'महत्तत्त्व' है । जड़ परमाणु के पदार्थ बनाते हैं । उनके द्वारा विविध वस्तुयें विनिर्मित्त होती हैं और चेतनता के परमाणु जीवन का सृजन करते हैं । गिनी जा सकने वाली ८४ लाख योनियाँ और न गिनी जाने वाली कीटाणुओं की कोटि-कोटि श्रेणियाँ इस चेतना प्रवाह का उत्पादन है । इसी को जीवन कहते हैं । इसके अन्तर्गत एक जड़ जगत् में काम करने वाला ऊर्जा की तरह का एक प्रचण्ड शक्ति प्रवाह भरा पड़ा है, जिसे 'प्राण' कहते हैं । जीवन में सक्रियता इसी के बलबूते पर दिखाई देती है । शरीर के मर जाने पर भी उसमें जीवन रहता है, वह तुरन्त सड़ता है और कृमि पैदा हो जाते हैं । स्यार, कुत्ते, कौए उसे रुचिपूर्वक खाते हैं । यदि मृत शरीर में से जीवन समाप्त हो गया होता तो वह पत्थर, लोहे या मिट्टी की तरह स्थिर पड़ा रहता । सड़न न होती, कीड़े न उत्पन्न होते और कोई जीव उसे खाना पसन्द न करता, स्पष्ट है कि मृत शरीर में भी जीवन तो है पर जिस कारण उसकी गतिविधियाँ बन्द हो गईं, वह था प्राण निकल जाना, प्राण निकल जाना अर्थात् चेतन-जगत् में काम करने वाली ऊर्जा का जीवन से पृथक हो जाना । प्राण के समन्वय से ही जीवन प्रगतिशील रह सकता है । दोनों अलग हुए कि मृत्यु घोषित कर दी गई । 'प्राणी' शब्द ही इस तथ्य का द्योतक है कि उसकी गतिविधियाँ प्राण तत्त्व पर अवलम्बित हैं । जिस क्षण प्राण विलग हो जायेगा प्राणी की सत्ता भी उसी क्षण अस्त हो जायेगी ।

जड़ जगत् के वैज्ञानिक ईथर और ऊर्जा के मूल सिद्धान्तों के बारे में निरन्तर शोध करते हुए बहुत कुछ जान चुके हैं । जो जाना जा चुका, उससे असंख्य गुना जानने को अभी और शेष है । सो अन्वेषण कर्त्ता अथक उत्साह के साथ प्रकृति के सूक्ष्म रहस्यों को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जानने और उनसे लाभ उठाने की धुन में पूरी तन्मयता के साथ जुटे हुए हैं । इसी कार्य में उन्हें सरकारी और गैर सरकारी अभीष्ट सहयोग भी मिलता है । पर खेद इस बात का है कि चेतन–जगत् की महत्ता अत्यधिक होते हुए भी उसकी शोध, प्रयोग और उपलब्धियों के लिए अन्वेषण कार्य नहीं के बराबर ही हो रहा है और उस दिशा में अक्षम्य उपेक्षा बरती जा रही है । यदि इतनी शोध, जितनी कि जड़–जगत् की हो रही है–उतनी ही चेतन–जगत् की गई होती तो अब तक न जाने क्या–क्या मिल गया होता और हम न जाने कहाँ से कहाँ जा पहुँचे होते ।

प्राण–तत्त्व का योग और तन्त्र के उभय पक्षीय साधना ग्रन्थों में बहुत कुछ वर्णन है । चेतना जगत् में संव्याप्त 'महत्तत्त्व' की तुलना ईश्वर से की जा सकती है और 'प्राण' की ऊर्जा से । प्राण किसी भी प्राणी की स्थिति, पुष्टि और प्रगति का प्रधान आधार है । जिसमें प्राण की जितनी मात्रा अधिक होगी, वह उतना ही मनस्वी और तेजस्वी होगा । यह मात्रा जितनी ही न्यून होगी, उसी अनुपात से प्राणी आलसी, दीर्घ–सूत्री, मन्द, अज्ञ और अविकसित बना रहेगा । रक्त–माँस से शरीर का कलेवर बढ़ता है और हड्डियाँ उसे मजबूती से खड़ा रहने भर का अवसर देती हैं । चमड़ी का रंग और बनावट से रूप, कुरूप का अन्तर आता है । आहार विहार के द्वारा उपलब्ध कलेवर केवल आँखों से दीखने वाली स्थूलता, कृशता एवं दिखावट भर की आवश्यकता पूरी करता है । इतने भर से कोई व्यक्ति समुन्नत स्तर को प्राप्त नहीं कर सकता । प्राण की दुर्बलता रहने पर शरीर भरापूरा लगने पर भी उसमें अदक्षता और अक्षमता ही बनी रहेगी ।

प्राण की किसमें कितनी मात्रा है, इसका अनुमान उसकी प्रतिभा को देखकर लगाया जा सकता है । प्रतिभा प्राण की ही परिणित है । यह चमक प्रतिभावान् मनुष्यों के अङ्ग–प्रत्यङ्ग में चमकती है । शरीर कृश है या कुरूप इससे कुछ बनता बिगड़ता नहीं, जिसमें प्राण प्रवाह समुचित मात्रा में भरा होगा, वह सहज ही तेजस्वी दृष्टिगोचर होगा । कई व्यक्तियों के चेहरे पर उदासी, खिन्नता, निराशा, अवसाद ग्रस्तता, अकर्मण्यता की काली छाया स्पष्ट दीखती है । वे जीवित होते हुए भी मृत जैसे लगते हैं । उन्हें न किसी कार्य में उत्साह होता है और न स्फूर्ति दिखाई देती है । मरे–मरे से जिन्दगी का भार ढोते हुए, किसी तरह सामने पड़े काम को रो–धोकर निपटा भर लेते हैं । काम में रस नहीं आता और न उमंग ही उठती है कि इस कार्य को इस उत्तमता के साथ करके इस प्रकार की सफलता पाई जाये ।

मरा हुआ मन महत्त्वाकांक्षायें नहीं करता । कभी स्वप्न जैसी कल्पनायें तो उठती हैं पर अशक्ति का ध्यान आते ही वे दूसरे ही क्षण विलीन हो जाती है । शरीर देखने में परिपुष्ट होते हुए भी उस शक्ति से रहित होता है, जिसके द्वारा श्रम किया जाता है । महत्त्वपूर्ण काम करने में रक्त–माँस में रहने वाली गर्मी काफी नहीं होती वरन् एक और अन्तरंग क्षमता की आवश्यकता पड़ती है, जिसके आधार पर व्यक्ति बिना थके, देर तक, उत्साह के साथ काम करता रहता है–इस क्षमता का नाम 'प्राण' है । शरीर से रुग्ण और सशक्त होते हुए भी लोग इतना काम करते रहते हैं, जितना किसी बलवान पहलवान के लिए भी कठिन पड़ता है । काम के साथ गुथ जाने और प्रस्तुत प्रयोजन की पूर्ति में तन्मय होकर जुट जाने की सामर्थ्य शरीर के भीतर रहने वाले प्राण की मात्रा पर निर्भर है ।

अध्यात्म क्षेत्र के वैज्ञानिकों ने, तपस्वी ऋषियों ने प्राण तत्त्व की अति महत्त्वपूर्ण शोध किसी समय की थी और उससे लाभ उठाने की सांगोपांग क्रिया पद्धति सर्व–साधारण के सामने प्रस्तुत की थी । प्राणायाम एक सुविस्तृत विज्ञान है । इसे छोटे से छोटे और बड़े से बड़े प्रयोजनों में प्रयुक्त किया जा सकता है । फेफड़ों को मजबूत बनाने और वायु विकारों के समाधान करने के लिए गहरी साँस लेना (डीप ब्रीथिंग) प्राणायाम की हलकी किस्म है । इसे स्वास्थ्य संरक्षण के लिए काम में लाया जाता है । संध्या वन्दना में इसी किस्म के प्राणायाम का प्रयोग किया जाता है, ताकि वायु संचारक अंगों का हल्का–सा व्यायाम होता रहे ओर उन अगों से सम्बन्धित रोगों से ग्रस्त होने का अवसर न आवे ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

विदेशों में इस स्तर पर और भी अधिक प्रयोग हुए हैं । जापान के डाक्टर शेराबुज १५ से ३५ वर्ष तक की आयु में फेफड़ों के क्षय से ग्रसित रहे । जापान के हर बड़े अस्पताल में उन्होंने प्रवेश लिया और फेफड़ों में हवा भराते रहने से लेकर कई पसलियाँ निकलवा देने तक–दवाओं से लेकर परिचर्या प्रतिबन्धों तक उन्होंने पूरी सावधानी बरती पर लाभ कुछ नहीं हुआ और उनका दाहिना फेफड़ा बिलकुल निकाल देने की नौबत आ गई । इसी समय किसी प्रकार उन्हें गहरी साँस लेने वाली प्राणायाम की प्रथम प्रक्रिया की जानकारी मिली और वे उसका प्रयोग करने लगे । परिणाम बहुत चमत्कारी हुआ । स्वास्थ्य तेजी से सुधरने लगा और एक वर्ष के भीतर वे पूर्णतया क्षय मुक्त हो गये । इस पद्धति से वे बहुत प्रभावित हुए और अस्पताल से निकलते ही उन्होंने प्राणायाम प्रशिक्षण के सैकड़ों केन्द्र जापान के कोने–कोने में स्थापित किये और अपने जैसे ही हजारों–लाखों रोगियों के प्राण बचाये ।

हलके एवं प्रारम्भिक प्राणायाम भी शरीर में प्राण शक्ति का अभिवर्धन कर सकते हैं । उस बढ़ी हुई शक्ति के द्वारा रोगों से लड़ना और उन्हें परास्त करना सरल है । जीवनी शक्ति सब कुछ कर सकती है । वह काम करने की क्षमता, उत्साह, स्फूर्ति, आशा, उमंग, जैसी अभिनव क्षमता ही प्रदान करती हो, सो बात नहीं, रोगों से लड़ने और उन्हें मार भगाने की भी सामर्थ्य उसमें भरी पड़ी है । इस जीवनी–शक्ति को–प्राण प्रवाह को किसी प्रकार बढ़ाया, कमाया जा सके तो निश्चय ही रुग्णता पर विजय प्राप्त करके स्वास्थ्य और परिपुष्टता का लाभ उठाया जा सकता है ।

प्राण शक्ति का छोटा चमत्कार आरोग्य सम्बर्धन है । पर वह इतने तक ही सीमित नहीं । जीवन के हर क्षेत्र में उसकी सामर्थ्य का सत्परिणाम देखा और पाया जा सकता है । चेहरे पर ओज और आँखों में तेज प्राण शक्ति का ही चमत्कार है । किसी के सामने जाते ही हम इतने प्रभावित हो जाते हैं कि विरोध और असहमति की बात जो सोचकर गये थे, वे हवा में उड़ जाती है और उसके सामने सहमति प्रकट करने एवं हाँ में हाँ मिलाने के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं रह जाता । मैस्मरेज़म हिप्नोटिज्म की साधना में त्राटक द्वारा केवल नेत्रों का तेज बढ़ाया जाता है और चक्षु गोलकों में विकसित इन प्राण प्रवाह के द्वारा सम्मोहन के कितने ही खेल चमत्कार दिखाये जाते हैं । इस प्रकार प्राण प्रवाह अन्य इन्द्रियों में भी होता है । उसे विकसित और व्यवस्थित किया जा सके तो शरीरगत प्राण प्रवाह हमारे व्यक्तित्व को प्रखर, तेजस्वी एवं प्रभावशाली बना सकता है ।

कुण्डलिनी शक्ति की चर्चा पिछले पृष्ठों पर हमने कुण्डलिनी के दक्षिणी ध्रुव–मूलाधार चक्र की चर्चा की थी और कहा था कि जननेन्द्रिय केवल मूत्र विसर्जन अथवा काम–क्रीड़ा के लिए ही नहीं है वरन् उसमें प्राण शक्ति का एक ध्रुव केन्द्र अवस्थित है । नये मनुष्य उत्पन्न कर सकने की क्षमता से सुसम्पन्न यह केन्द्र है । प्रजनन के द्वारा मनुष्य प्रजापति की एक छोटी भूमिका प्रस्तुत करता है । इस केन्द्र का वैज्ञानिक स्तर पर उत्खनन, उद्दीप्तीकरण एवं प्रस्फुरण किया जा सके तो मनुष्य विश्व–व्यापी प्राण–तत्त्व के साथ अपना सम्बन्ध जोड़कर अति मानव बन सकता है । षट चक्रों में सन्निहित अष्ट सिद्धि एवं नवनिद्धि उसे करतल गत हो सकती है ।

मूलाधार चक्र के मानव शरीर के प्राण प्रवाह का एक सिरा जुड़ा है । दूसरा सिरा सहस्रार कमल मस्तिष्क का मध्य–बिन्दु है, जिसे ब्रह्मरन्ध्र भी कहते हैं । इन दोनों सिरों की शक्ति का एक–दूसरे में आवर्तन प्रत्यावर्तन होता रहता है । मस्तिष्क और जननेन्द्रिय का परस्पर अविच्छिन्न सम्बन्ध है । काम वृत्ति को मनसिज अर्थात् मन से उत्पन्न कहते हैं । मन में कामुकता के विचार आवेंगे तो जननेन्द्रिय में हलचल होगी । जननेन्द्रिय स्वप्नावस्था में वीर्यपात कर रही होगी तो अनायास ही स्वप्न में विषयभोग के दृश्य दीखेंगे । इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए हम विद्यार्थी को ब्रह्मचारी कहते हैं । जो ब्रह्मचर्य द्वारा शक्ति का संचय करेगा, वह विद्या प्राप्त कर लेगा । जिसने एक सिरे में छेड़छाड़ शुरू की उसका दूसरा शिरा उत्तेजित होगा । कामुकता की हलचलें करने वाले को सफल विद्याभ्यासी होने की आशा छोड़नी पड़ती है । मोटी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आँखों से शिवलिंग की पूजा अश्लील प्रतीत होती है । नारी और नर की जननेन्द्रियों का सम्मिश्रित स्वरूप 'शिवलिंग और जलहली' बनाकर हम पूजते और उस पर जल चढ़ाते हैं, इसका आध्यात्मिक रहस्य ब्रह्मचर्य का प्रतिपादन और इन इन्द्रियों को ब्रह्म रूप मानकर उनका अति उच्च उद्देश्य, उद्देश्यों के लिए ही प्रयोग करने का तत्त्व-ज्ञान है । जल चढ़ाकर इन शक्ति संस्थानों को उत्तेजित न करके शीतल रखने की आस्था को ही सुदृढ़ करते हैं ।

प्रकट रहस्य है कि शरीर के अन्य अंगों का स्पर्श हो जाने पर नर-नारी के बीच कोई खास विकृति नहीं आती । यदि जननेन्द्रियों का तनिक-सा सम्पर्क एक दूसरे को न छूटने वाले दाम्पत्य-जीवन में बाँध देता है । कारणवश न भी बँधे तो लगभग वैसी ही स्थिति उत्पन्न कर देता है । इसलिये इस सन्दर्भ में बहुत सतर्कता बरतने और बहुत सोच समझ कर ही इस दिशा में कदम बढ़ाने की अपनी परम्परा बनी है । जबकि दूसरे देशों में लुक-छिपकर काम सेवन को कोई महत्त्व नहीं दिया जाता, तब अपने देश में व्यभिचार को बहुत बुरा माना जाता है । कारण यही है कि यौन सम्पर्क से उत्पन्न आकर्षण इतना प्रबल होता है कि वह अवांछनीय जोड़ों को भी परस्पर जोड़कर भविष्य के लिए अवांछनीय परिणाम उत्पन्न करता है । ब्रह्मचर्य की महिमा इसीलिये है कि प्राण शक्ति के शरीरगत दक्षिणी-ध्रुव का अवांछनीय दुरुपयोग न होने पावे । वैज्ञानिक कहते रहते हैं कि पृथ्वी के ध्रुवों से परमाणु परीक्षण आदि की बड़ी हलचलें दूर रखी जायें अन्यथा धरती अपनी धुरी से हटकर किसी दूसरी कक्षा में बहक सकती है और संसार का सारा क्रम एवं स्वरूप ही बिगड़ सकता है । ब्रह्मचर्य की छेड़छाड़ ऐसी ही सम्वेदनशील है, उसका भले से भला और बुरे से बुरा परिणाम हो सकता है ।

गुदा और जननेन्द्रिय के बीच में जो थोड़ा-सा खाली स्थान है, वहीं मूलाधार चक्र का स्थान है । सुमेरु भी यहीं है । कूर्म अवतार भी यही विराजमान हैं । कुण्डलिनी शक्ति का एक सिरा इसी स्थान पर है । यहीं प्राणशक्ति का आधा भाग विद्यमान् है । साधक इस संचित महाकोश से जितनी मात्रा में वह शक्ति का अनुदान प्राप्त कर सकते हैं और तेजस्वी, मनस्वी, यशस्वी बन सकते हैं और दुरुपयोग करके जवानी में वृद्धावस्था वरण करके अकाल के काल कवलित भी हुआ जा सकता है ।

मानव शरीर के अन्दर भरी पड़ी प्राणाग्नि के इस भाण्डागार की जानकारी विज्ञान जगत को आधुनिक उपकरणों की सहायता से आज मिल पायी है । इस सम्बन्ध में उपनिषदकार पहले ही लिख चुके हैं-

"प्राणाग्नये वासिमन ब्रह्मपुरे जागृति"

अर्थात्-इस ब्रह्मपुरी यानी शरीर में प्राण ही कई तरह की अग्नियों के रूप में जलता है ।

(प्रश्नोपनिषद्)

प्राण को अंगारा व प्राणाग्नि को उससे निकलने वाली ताप ऊर्जा-धधकती लौ के रूप में समझा जा सकता है । जड़-जगत में वेव-क्वान्टम (तरंगों) के रूप में तथा चेतन जगत में विचारणा एवं सम्वेदना के रूप में व्याप्त यह प्राण-प्रवाह वस्तुतः विद्युत ऊर्जा का सूक्ष्मतम स्वरूप है । अदृश्य अन्तरिक्ष जगत से अनुदान रूप में प्राप्त ब्राह्मी प्राणशक्ति को मानव शरीर सतत् ग्रहण करता-अवशोषित करता तथ निस्सृत करता रहता है । इसका संचय ही प्राण निग्रह कहलाता है जो व्यक्ति को ओजस्वी, तेजस्वी, मनस्वी बना देता है । क्षरित होने पर यही शिथिल जीवनी शक्ति, निरुत्साह, रुग्णता, हताशा, अवसाद के रूप में प्रकटीकृत होता है ।

प्रश्न यह उठता है कि इस विद्युत भण्डार के अपने शरीर में संव्याप्त होने पर भी हम उसे जान क्यों नही पाते? बिजली के नंगे तार को छू लें तो 'शॉट' लगता है । उसमें तो कुछ ही 'वोल्ट' की विद्युत प्रभावित होती है जबकि मानव शरीर में तो १ लाख वोल्ट प्रति सेण्टीमीटर का विद्युत दबाव होता है । इतनी महत् शक्ति वाले संस्थान को तो एक विशाल बिजली घर की ही संज्ञा दी जा सकती है । फिर शरीर की विद्युत वैसा झटका क्यों नहीं देती, जैसा बिजली का तार देता है-अथवा उसे हम जान क्यों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नहीं पाते ? इसका उत्तर एक ही है–मानवी विद्युत का मात्र थोड़ा–सा अंश ही व्यावहारिक रूप से काम में आता है । नियन्ता ने इस विद्युत को चक्रों, ग्रन्थियों, उपत्यिकाओं में–जीवकोष ऊतकों में कैद कर रखा है । इस इन्सुलेशन के हटने पर 'लीक' हो रहे तार की तरह शरीर भी कभी–कभी झटका देने लगता है और ऑटोकम्बशन, शरीर से स्फुल्लिगों का चमक उठना, प्रसिद्ध महिला जेनीमार्ग्न की तरह छूने वालों को तेज शॉट देकर गिरा देना–(अखण्ड–ज्योति जनवरी ८१), इन माध्यमों से अपने अन्दर छिपे विद्युतभण्डार का परिचय दे उठता है । वस्तुतः यह सूक्ष्म विद्युत शक्ति का स्थूल परिचय मात्र है । भण्डार तो इतना सामर्थ्यवान है कि उसे मापा जाना उपकरणों से सम्भव नहीं ।

हृदय की धड़कन, माँसपेशियों का आकुंचन–प्रकुचन आँतों की गतिविधियाँ, मस्तिष्क में सन्देशों का आवागमन, अन्तःस्रावी ग्रन्थियों से रस स्राव, अस्थिविकास आदि शरीर व्यापार विद्युत शक्ति की ही चमत्कृति हैं । स्वादेन्द्रियों से रसों का रसास्वादन, नासिका से ग्रहण किये जाने वाले आहार की गन्ध व लार का टपकने लगना आदि सम्वेदन ग्रहण करके प्रतिक्रिया उत्पन्न करने वाली गतिविधियों में भी विद्युतीय शक्ति अपना खेल दिखाती है । आँखों में बाह्य प्रकाश के रेटीना से टकराने पर रेटीना के कोषों का विद्युतीय सन्तुलन जिस प्रकार बदलता है–वही दृश्यों के मानस पटल पर बनने का कारण बनता है । इलेक्ट्रोकार्डियोग्राम, इलेक्ट्रोएनसेफेलोग्राम, इलेक्ट्रोमायोग्राम, इलेक्ट्रो रेटीनोग्राम, इलेक्ट्रो ऑक्युलोग्राम, स्किनरेसीस्टेन्स आदि से तो क्रमशः हृदय, मस्तिष्क, मांसपेशियों, आँख का रेटीना, आँखों की गतिविधि, त्वचा प्रतिरोध के रूप में विद्युत का एक आंशिक भाग ही मापा जाता है । इन्हीं का मापन कर चिकित्सक, शोध–अन्वेषक शरीर की प्राण शक्ति की न्यूनाधिकता तथा रोगों की उत्पत्ति का कारण बताते हैं ।

अब पता चला है कि शरीर में जो विद्युत का असीम भण्डार है वह मनुष्य एक विद्युतचक्र के माध्यम से सतत् अवशोषित कणों के रूप में बनाये हुए है । विद्युत आवेशधारी कण वायु–मण्डल की गैसों में घुले होते हैं । इस विद्युत आवेश का कारण है–सौर ऊर्जा अन्तरिक्षीय किरणें जिनके स्रोतों की अभी वैज्ञानिकों को जानकारी नहीं, तथा धरती की स्वाभाविक रेडियो धर्मिता । विद्युत आवेशधारी ये अणु–परमाणु 'आयन' कहलाते हैं और हर श्वास के साथ मनुष्य के फेफड़ों में प्रवेश करते रहते हैं । इन मानवी अंगों की विशेषता है कि वे ऋण आवेश वाले आयनों को ही सोखते हैं और फेफड़ों से रक्त प्रवेश कर यह ऋण विद्युत शरीर के सभी भागों में फैल जाती है और शरीर के सभी कोष और ऊतक अपनी–अपनी संधारक क्षमता (केपेसीटी) के अनुसार इसे संचित कर लेते हैं । यदि क्षरण की गति (श्वास से, अत्यधिक श्रम से, अनिद्रा से या असंयम के कारण–वाणी, स्वाद, जननेन्द्रिय) । संचय से अधिक न हुई तो शरीर के सभी ऊतक विद्युत संतृप्त हो जाते हैं, और धीर–धीरे विद्युत आवेश उस व्यक्ति या जीवधारी की त्वचा से बहार निकलने लगता है । जिसे डॉ० किलनर ने 'ऑरा' के रूप में मापा व क्वान्टीफ्राम किया है, जिसे थियॉसाफी वाले इथरिकडबल व अध्यात्मवादी प्राण शरीर कहते हैं, वह यही शरीर से निरन्तर उत्सर्जित विद्युतधारा ही है । अवशोषण, संतृप्तीकरण व उत्सर्जन तीनों मिलकर एक विद्युतचक्र बनाते हैं । सभी जीवधारियों में यह बराबर चलता रहता है, मात्र मनुष्य को एक अतिरिक्त विशेषता प्राप्त है । इसे अतिरिक्त मात्रा में संचित कर अपने प्रसुप्त केन्द्रों को जगा लेने व इस विद्युत से स्वयं ही नहीं औरों को लाभान्वित कर सकने की क्षमता न्यूनाधिक रूप में हर मनुष्य में होती है । यह बात अलग है कि उसका प्रयोग–सदुप्योग बहुत कम कर पाते हैं अथवा जानकारी के अभाव में इसका सतत् दुरुप्योग करते रहते हैं विद्युत चयापचय की आधुनिकतम जानकारी का मूल स्रोत फ्रांस की स्ट्रासबर्ग यूनिवर्सिटी के प्रो. फ्रेड ब्लेज रहे हैं जिन्होंने अपना शोध प्रबन्ध ही इस विद्युतचक्र पर लिखा है । अपनी पुस्तक "दी बायोलॉजीकल कन्डीशन्स क्रिएटेड बाय द इलेक्ट्रीकल प्रापर्टीज ऑफ द एटमॉसफियर" में उन्होंने इस सम्बन्ध में अपने प्रयोगों पर विस्तार से लिखा है । ७५ हजार अरब कोषों के समन्वय से बनी मानवी काया को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उन्होंने इस चक्र के आधार पर चलता-फिरता बिजली घर बताया है तथा इसके सुनियोजन की भारतीय अध्यात्म में वर्णित प्राण विद्या की चर्चा करते हुए कहा कि यदि 'हाइडल पॉवर' की तरह चक्र रूपी 'टर्बाइन्स' चलाये जा सकें तो इस आदान-प्रदान को बढ़ाया व अनेक अतिमानवी शक्तियों को जगा पाना सम्भव है ।

डॉ. हिरोशी मोटोयोमा, जो जापानी वैज्ञानिक समुदाय में एक विवादास्पद चिकित्सक माने जाते रहे हैं, ने शरीर की इस विद्युत पर शताब्दी का सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य किया है । ये एक अतीन्द्रिय क्षमता सम्पन्न जापानी महिला 'ओडाइसामा' द्वारा पाले गये । इस महिला की इस शताब्दी की विगत की कई भविष्यवाणियाँ बाद में सत्य सिद्ध हुईं । अध्यात्म विद्या व झेन योग पर गहरा विश्वास रखने वाली इस महिला के संरक्षण में रहकर उन्होंने टोक्यो यूनिवर्सिटी से साइकोलॉजी व फिजियालॉजी में क्रमशः एम० ए० व एम. डी. करे ड्यूक यूनिवर्सिटी (प० जर्मनी) में परामनोविज्ञान पर शोध कार्य किया । अपनी संरक्षिका की मृत्यु के बाद १९७४ में उन्होंने उनकी इच्छानुसार एक संस्था टोक्यो में स्थापित की-"इंस्टीट्यूट फॉर रिलीजन एण्ड सायकोलॉजी" । अदृश्य सूक्ष्म अन्तः शक्तियों का कैसे उद्घाटन व मापन किया जाये-इसी पर उन्होंने अपने शोधकार्य को केन्द्रित किया ।" "कम्पेरेटिव स्टडीज ऑफ इस्टर्न एण्ड वेस्टर्न मिस्टीज्म," "द वर्ल्ड ऑफ रिलीजस एक्सपीरीयेन्सेस" तथा "साइन्स एण्ड इवॉल्यूशन ऑफ कांशसनेस" ये तीन पुस्तकें उन्होंने अपने गहन अध्ययन के आधार पर लिखी हैं । इसके लिये उन्होंने उपनिषदों, प्राणयोग, पातंजलि के योगदर्शन तथा चीनी चिकित्सा पद्धति का विशद मंथन किया व अपने निष्कर्षों के आधार पर उन्होंने कुछ उपकरण अपनी ही प्रयोगशाला में बनाये जिनसे सूक्ष्म विद्युत का मापन व चक्रों की हलचलों का ग्राफिक अंकन किया जा सके । यह तो वे भी जानते थे कि चक्र-उपकात्यिएँ स्थूल अंग नहीं वरन् उस स्थान विशेष से भंवर-चक्रवात यानी विद्युत संतृप्तीकरण के कारण उठ रहे आभा मण्डल का ही दूसरा नाम है । तो फिर मापन कैसे ? उन्होंने विभिन्न अतीन्द्रिय क्षमता सम्पन्न व पंचकोषी जागरण की साधना कर रहे तिब्बती लामाओं पर प्रयोग किये तथा अपने सूक्ष्म उपकरण से उनके 'ऑरा' व विद्युत शक्ति के स्थान विशेष पर केन्द्रीभूत हो जाने की प्रतिक्रिया को मापा ।

अपने विशद प्रयोगों को उन्होंने जिस उपकरण से सम्पादित किया, उसे 'चक्रा' मशीन नाम दिया । सूक्ष्म शरीर के हर चक्र को उन्होंने स्थूल शरीर के प्लेक्ससों से जोड़कर आर्ष ग्रन्थों में वर्णित फलश्रुतियों के आधार पर प्रयोग किए । उन्होंने पाया कि चक्र जागरण की बहिर्विद्युतीय प्रतिक्रिया को नापा जा सकता है । 'लेडशील्डेड' कमरे में साधक को बिठाकर बिना कोई इलेक्ट्रोड शरीर से छुए एक शरीर के चारों ओर घूमने वाले ताँबे के इलेक्ट्रोड द्वारा उत्सर्जित विद्युत्प्रवाह की ८०० मेगाओम के प्रिएम्पलीफायर व डी. सी. एम्पलीफायर से गुजार कर कमरे के बाहर रखे 'पॉवर स्पेक्ट्रम एनालाइजर' से उन्होंने मापा व एक रिकार्डर पर उसे अंकित किया । ध्यानधारणा व स्थान विशेष पर प्राण-प्रवाह को केन्द्रीभूत करने की प्रतिक्रिया उन्होंने पायी ।

कई वर्षों से उन्होंने अपने अनुसंधान का केन्द्र बिन्दु मानव शरीर के अन्दर छिपी इस 'सटलर' विद्युत को ही बना रखा है और इस साधना से वे उसी निष्कर्ष पर पहुँचे हैं जिसकी चर्चा प्राणमय-विद्युतमय शरीर के रूप में लेख के प्रारम्भ में की गयी । कोई कारण नहीं कि प्रयास किये जाने पर विद्युत चुम्बकत्त्व, रक्त में घुले रसायनों आदि के विश्लेषण से निकट भविष्य में यह बताया न जा सके कि मानव के सूक्ष्म संस्थान के जागरण की सम्भावनाएँ भी असीम व महान हैं ।न जानने व अपनी तकनीक को उस सीमा तक न पहुँचा पाने के कारण यदि जीव विज्ञानी इस विद्युत भण्डार को माप न सके तो मतलब यह नहीं कि उसका अस्तित्त्व ही नहीं है ।

मानवी काया की संरचना इतनी विलक्षण है कि उसके कई रहस्यों का अभी विज्ञान के पास कोई जवाब नहीं । विद्युत भण्डार तक चर्चा सीमित हो जाती तो एक बात थी, पर जब हम चुम्बकत्त्व की सत्ता की चर्चा करते हैं तो हतप्रभ रह जाते हैं । इतना सामर्थ्यवान यह चुम्बकीय विश्व इस काया में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विराजमान है कि वह उक्ति यथार्थ ही प्रतीत होती है । जिसमें पृथ्वी के दो ध्रुवों की तरह मानव को भी 'डायपोल मैग्नेट' बताया गया है । विद्युतधारा जहाँ भी बहती है–वहाँ चुम्बकीय क्षेत्र का निर्माण हो जाता है–यह सर्वविदित है ।

मानव सतत् श्वास द्वारा प्राणशक्ति खींचता है तथा उसका संचय–ऊतकों का संतृप्तीकरण कर अवशिष्ट को प्रश्वास द्वारा वापस वातावरण में धकेल देता है । यह संचित प्राण ऊर्जा ही वास्तविक सम्पदा है जो विशिष्ट प्रयोगों द्वारा चक्र–उत्पात्तिकाओं रूपी खजानों में बन्द कैद कर ली जाती है व इसी को आँखों से, वाणी से, उँगली के पोरों से. काया के रोम–रोम से तेजोवलय विद्युत्चुम्बकत्त्व के रूप में साधक निरन्तर निस्सृत कर वातावरण को, व्यक्ति को, वस्तु विशेष को–प्रभावित कर सकने की सामर्थ्य से सम्पन्न बनते हैं । प्राणऊर्जा सम्बन्धी 'सटलर पॉवर' के ये प्रयोग अब तो विज्ञान जगत के समक्ष परीक्षण के विषय वस्तु बन गये हैं । सही भी है–विज्ञान सम्मत होने पर प्राणाकर्षण–प्राण संचय की विधा को, क्षरण रोकने से होने वाले लाभों इत्यादि को प्रामाणिक मान सकना सबके लिए सहज ही सम्भव भी हो सकेगा ।

प्राणशक्ति इस ब्रह्माण्ड के कण–कण में प्रवाहित हो रही है । मानवी सत्ता उसका एक अंग मात्र है । उस शक्ति प्रवाह के बिना इसका कोई अस्तित्त्व नहीं । शरीर को समर्थ–शक्ति सम्पन्न बनाने, निरोग –बलिष्ठ बनाने के लिये आवश्यक है कि व्यष्टि प्राण सत्ता के तारों को उस असीम समष्टि प्राणसत्ता के विद्युत केन्द्र से जोड़ दिया जाये । उस आदान–प्रदान को आरम्भ कर दिया जाये, जिसे सम्पादित कर अपनी सूक्ष्म सत्ता को जगाना व जीव–ब्रह्म सम्मिलन–संयोग के शास्त्र वर्णित लाभों से स्वयं को कृतकृत्य अतिमानवी सामर्थ्य सम्पन्न बना सकना सम्भव है ।

कुल कुण्डलिनी देवि, कन्दमूल निवासिनी

कुण्डलिनी शक्ति की तुलना विद्युत शक्ति, ऊर्जा एवं आभा से की गई है । "तड़ित्लता समरुचिर्विद्युल्लेखेव भास्वरा" सूत्र में उसे बिजली की लता रेखा जैसा ज्योतिर्मय बताया गया है । इसी प्रकार एक अन्य स्थान पर उसका उल्लेख "तड़ित्लेखा तन्वी तपनशशिं वैश्वानरमयी" के रूप में किया गया है–अर्थात् वह प्रचण्ड अग्निशिखा एवं दिव्य वैश्वानर अग्नि के समतुल्य है । योग कुण्डल्युपनिषद् में कहा गया है–

मूलाधारस्य ब्रह्मयात्म तेजो मध्ये व्यवस्थिता ।
जीवशक्तिः कुण्डलाख्या प्राणाकाराय तैजसी ॥

अर्थात्–मूलाधार के मध्य वह आत्मतेज, ब्रह्मतेज रूप कुण्डलिनी निवास करती है । वही जीवनी शक्ति है, तेजरूप है एवं प्राण शक्ति है ।

इसी प्रकार महायोग विज्ञान में उल्लेख आता है–"मूलाधार चक्र में आत्म ज्योति अग्नि रूप दीखती है । स्वाधिष्ठान चक्र में वह प्रवाल अंकुर–सी प्रतीत होती है । मणिपूर में विद्युत जैसी चमकती है । नाभिचक्र में वह तड़ित सम प्रकाशवान है । हृदय कमल के अनाहत चक्र में वह लिंग आकृति की,कंठ (विशुद्धि) चक्र में श्वेत वर्ण की, तालु चक्र में शून्याकार एकरस अनुभूत होती है । भ्रूचक्र में अंगूठे के प्रमाण जलती दीप शिखा सी भासती है । आज्ञा चक्र में धूम्रशिखा जैसी और सहस्रार चक्र में चमकते पशु सी दीखती है ।"

प्रस्तुत अलंकारिक व्याख्या कुण्डलिनी महाशक्ति की विद्युत्मयी सत्ता की एक झाँकी देती है । वैसी वैज्ञानिक प्रतिपादनों व प्रमाणों के आधार पर हम कुण्डलिनी को मानवी विद्युत का प्रचण्ड अंश कह सकते हैं । बारूद फुलझड़ी जलाने के काम भी आती है और डाइनामाइट की तरह पहाड़ों के परखच्चे भी उड़ा देती है । मानवी विद्युत का हलका अंश चेहरे या शरीर के इर्द–गिर्द फैले हुए तेजोवलय जैसे हलके रूप में भी देखा जा सकता है और उसका प्रचण्ड रूप तृतीय नेत्र आज्ञा चक्र खोलकर शिव द्वारा काम देव जला देने जैसा विस्फोट भी कर सकती है । दमयन्ती के शाप से व्याध भस्म हो सकता है । सगर राजा के हजारों उद्धत पुत्र जलकर भस्म हो सकते हैं । गौतम के कोप से इन्द्र और चन्द्रमा जैसों की दुर्गति हो सकती है । जादव कुल दुर्वासा के शाप से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पारस्परिक कलह में नष्ट हो सकता है । यही प्रचण्ड रूप धारण करने वाली मानवी विद्युत कुण्डलिनी है । प्रकारान्तर से उसे "आध्यात्मिक डाइनामाइट" कह सकते हैं । साधारण ऊर्जा मनुष्य के कण-कण में विद्यमान है । वह मस्तिष्क, हृदय और जननेन्द्रिय मूल में विशिष्ट मात्रा में पाई जाती हैं । इन तीन अग्नियों को ही वैदिक भाषा में अहिताग्नि,दक्षिणाग्नि, गार्हपत्याग्नि तीन अग्नियों के नाम से जाना जाता है । यही महाकाली, महाचंडी और महादुर्गाएँ हैं । सामान्य ऊर्जा दो व्यक्तियों के सान्निध्य से दीर्घ प्राण वाले का प्रभाव, स्वल्प प्राण वाले पर डालती है । सत्संग और कुसंग के रूप में इसका भला बुरा प्रभाव होता है । नर नारी का संयोग इसी ऊर्जा का क्रीड़ा-कल्लोल पक्ष है । तपसी इसी योगाग्नि पर तपश्चर्या करते थे । जठराग्नि भोजन पचाती और उसे दीर्य स्तर तक ले पहुँचती है । कामाग्नि से पीड़ित नर नारी दीपक की चमक पर पतंगे की तरह जल मरते हैं । वाणी की अग्नि शत्रु मित्र बनाती शाप वरदान देती रहती है । ओजस, तेजस् एवं वर्चस् का आलोक व्यक्ति की प्रतिभा में फूटता हुआ परिलक्षित होता है । ब्रह्माग्नि, सहस्रदल कमल में रहती है और आत्मा को परमात्मा का दर्शन कराती है । हृदय की भावाग्नि, दया, करुणा, मैत्री सेवा आदि के रूप में प्रस्फुटित होती है । कालाग्नि मरण का निर्मित्त कारण बनती है । मंदाग्नि से मनुष्य आलसी और रोगी बन जाता है । ऐसी अनेकों अग्नियाँ शरीर में हैं । प्राकृत अग्नि विज्ञान ऐसी १३ अग्नियों का वर्णन करता है । उनके अपने प्रभाव हैं । इनमें से प्राणग्नि कुण्डलिनी है जिसके कारण जीवनी शक्ति, जीवट और हिम्मत मनुष्य में कूट-कूट कर भरी रहती है । यह माना गया है कि यह प्रसुप्त ऊर्जा स्रोत्र मनुष्य के सूक्ष्म शरीर में ६ तालों की तिजोरी में बन्द है । ये ६ ताले ही षटचक्र हैं जो भँवर, नाड़ी गुच्छक (प्लेक्सस) अथवा विद्युत प्रवाह के रूप में काया में अवस्थित हैं । शास्त्रकारों ने चक्रों एवं कुण्डलिनी की अपनी-अपनी तरह से अलंकारिक व्याख्याएँ की हैं ।

शाम्भवी तंत्र का कथन है-जिस प्रकार ताली से ताला खोलकर घर में प्रवेश किया जाता है, उसी प्रकार कुण्डलिनी जागरण के उपरान्त मनुष्य सुषुम्ना मार्ग से ब्रह्मलोक पहुँचता है । तैत्तिरीय आरण्यक में चक्रों को देवलोक कहा गया है । सौंदर्य लहरी में इस महाशक्ति की व्याख्या करते हुए आद्य-शंकराचार्य ने आज्ञाचक्र तथा सहस्रार को ब्रह्म चेतना का प्रतिनिधि माना है । तथा षटचक्र वेधन करने पर कैसे कुण्डलिनी शक्ति ब्रह्मलोक तक पहुँचती व परब्रह्म से विहार करती है, इसका वर्णन इस प्रकार किया है-

महीं मूलाधारे कमपि मणिपूरे हतवहं,
स्थितं स्वाधिष्ठाने हृदि मरुतमाकाशमुपरि ।
मनोऽपि भ्रूमध्ये सकलमपिभित्त्वा कुल पथं,
सहस्रारे पद्मे सहरहसि पत्या विहरसि ॥

अर्थात्-हे कुण्डलिनी, तुम मूलाधार में पृथ्वी को, स्वाधिष्ठान में अग्नि को, मणिपूर में जल को, अनाहत में वायु को, विशुद्ध में आकाश को वेधन करती हुई आज्ञाचक्र में मन को प्रकाश देती हो, तदुपरान्त सहस्रार कमल में परब्रह्म के साथ विहार करती हो । योगदर्शन के समाधि पाद सूत्र ३६ में कहा गया है-"विशोका-ज्योतिष्मती" । उनका यह संकेत कुण्डलिनी की ओर है कि इस ज्योतिष्मती के प्रकाशवान होने पर मनुष्य दुःख; शोकों से छुट जाता है ।

तैंतीस या तैंतीसकोटि देवताओं की हिन्दू धर्म में मान्यता है । यह मेरुदण्ड में पाये जाने वाले ३३ घटकों या गुटकों की ओर संकेत है । इन खण्डों को कशेरू या वर्टिब्री कहते हैं मेरुदण्ड आकृति में सर्पाकार है । प्रत्येक दो कशेरु के मध्य में एक मांस निर्मित गद्दी सी रहती है, जिस पर प्रत्येक कशेरू टिका और सूत्रों से कसा हुआ है । इसी कारण यह लचीला है और धुरी पर हर दिशा में घूम सकता है । उसे पाँच भागों में बाँटा जा सकता है । (१) ग्रीवा-सरवाइकल -७ कशेरू (२) पीठ-थोरेक्स-१२ कशेरू (३) कटिप्रदेश-लम्बर-५ कशेरू (४) वस्तिगह्वर-विक प्रदेश-सेक्रल-५ कशेरू (५) पुच्छिकास्थिचंचु-काक्सीक्स-४ कशेरू । इन तैंतीस खण्डों में सन्निहित क्षमता को देवोपम माना गया है ।

मेरुदण्ड पोला तो है पर ढोल की तरह खोखला नहीं । उसमें मस्तिष्कीय मज्जा भरी हुई है । प्रत्येक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कशेरू के पिछली ओर दाँये–बाँये अर्ध वृत्ताकार छिद्र होता है जिसमें से छोटे नाड़ी सूत्रों से निर्मित बड़ी नाड़ियाँ बाहर निकलती हैं । मेरुदण्ड का निचला भाग शंकु के आकार का है, जिसे "फाइलम टर्मीनिल" कहते हैं ।

चंचु प्रदेश के कशेरू जितने छोटे हैं, उतने ही चौड़े हैं । वे अन्दर से पोले भी नहीं हैं और एक–दूसरे से जुड़े हुए हैं । ये चार कशेरू मिलकर अण्डे की आकृति वाला अथवा फूल की कली से सदृश्य आकार बनता है । इसे काक्सीक्स कहते हैं । इस गोलक को कुण्डलिनी योग में 'कन्द' एवं स्वयं भू लिंग के नाम से पुकारा गया है ।

क्षेत्रों के हिसाब से चक्रों का क्रम इस प्रकार है । (१) चंचु प्रदेश–मूलाधार (२) त्रिक प्रदेश–स्वाधिष्ठान (३)कटि प्रदेश–मणिपूर (४) वक्षस्थल–अनाहत (५) ग्रीवा–विशुद्धि चक्र । मेरुदण्ड यहीं समाप्त हो जाता है, आज्ञाचक्र मस्तिष्क के अग्रभाग में है और सहस्रार मस्तिष्क के बीचों बीच ।

चक्र वेधन, चक्र शोधन, चक्र परिष्कार, चक्र जागरण आदि नामों से इन्हीं गुह्य केन्द्रों की क्षमता को प्रकट करने का प्रयत्न किया जाता है ।

यहाँ एक बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि अध्यात्म शास्त्र में शरीर विज्ञान को विशुद्ध रूप से सूक्ष्म विधा के रूप में माना जाता है । स्थूल शरीर में तो उसकी प्रतीक छाया ही देखी जा सकती है । कभी किसी शारीरिक अंग को सूक्ष्म शरीर से नहीं जोड़ना चाहिए । मात्र उसे प्रतीक प्रतिनिधि भर मानना चाहिए । शरीर के किसी भी अवयव विशेष में वह दिव्य शक्तियाँ नहीं हैं जो आध्यात्मिक शरीर विज्ञान में वर्णन की गई हैं । स्थूल अंगों से उन सूक्ष्म शक्तियों का आभास मात्र पाया जा सकता है ।

मूलाधार शब्द के दो खण्ड हैं । मूल+आधार । मूल अर्थात् जड़–वेस, आधार अर्थात् सहायक–सपोर्ट । जीवन सत्ता का मूल–भूत आधार होने के कारण उस शक्ति संस्थान को मूलाधार कहा जाता है । वह सूक्ष्म जगत में होने के कारण अदृश्य है । अदृश्यों का प्रतीक चिन्ह प्रत्यक्ष शरीर में भी रहता है । जैसे दिव्य दृष्टि के आज्ञाचक्र को पिटुटरी और पीनियल रूपी दो आँखें में काम करते हुए देख सकते हैं । ब्रह्मचक्र के स्थान पर हृदय को गतिशील देखा जा सकता है । मूलाधार सत्ता को मेरुदण्ड के सेक्रल प्लक्सस में देखा जा सकता है । अपनी चेतनात्मक विशेषताओं के कारण उसे वह पद, एवं गौरव प्राप्त होना हर दृष्टि से उनयुक्त है । प्राण का उद्गम मूलाधार है, पर उसका विस्तार, व्यवहार और वितरण तो मेरुदण्ड माध्यम से ही सम्भव होता है ।

मूलाधार के कुछ ऊपर और स्वाधिष्ठान से कुछ नीचे वाले भाग में शरीर शास्त्र के अनुसार 'प्रोस्टेट ग्लैण्ड' है । शुक्र संस्थान यही होता है । इसमें उत्पन्न होने वाली तरंगें काम प्रवृत्ति बन कर उभरती हैं । इससे जो हारमोन उत्पन्न होते हैं, वे वीर्योत्पादन के लिए उत्तरदायी होते हैं । स्त्रियों का गर्भाशय भी यही होता है । सुषुम्ना के निचले भाग में 'लम्बर और सेक्रल प्लैक्सस' नाड़ी गुच्छक हैं । जननेन्द्रियों की मूत्र त्याग तथा कामोत्तेजन दोनों क्रियाओं पर इन्हीं गुच्छकों का नियन्त्रण रहता है । यहाँ तनिक भी गड़बड़ी उत्पन्न होने पर इनमें से कोई एक अथवा दोनों ही क्रियाएँ अस्त–व्यस्त हो जाती हैं । बहुमूत्र, नपुंसकता, अतिकामुकता आदि के कारण प्रायः यहीं से उत्पन्न होते हैं । सारी जीवनोपयोगी प्रेरणाओं का केन्द्र यही स्थान हैं, जिसे कन्द, कुण्ड या कामबीज कह सकते हैं । कन्द का एक नाम कूर्म भी है । इसे कच्छपावतार का प्रतिनिधि माना गया है । उसे पैरों को सिकुड़ने फैलाने वाली प्रकृति के कारण वहाँ से निस्सृत शक्तिधाराओं का प्रतीक माना गया है । कन्द की आकृति एक अण्डे के समान मानी गयी है । उसे हाथ पाँव सिकोड़े कछुए की उपमा भी दी गई है । समुद्र मंथन की कथा में रई मंदराचल पर्वत की बनाई गई थी । उस पर्वत के नीचे ही भगवान कूर्मावतार के रूप में कच्छप बनकर बैठे थे और उस भार को अपनी पीठ पर उठाया था । यह कूर्म या कन्द की अन्तर्जगत के मंथन एवं शक्ति के ऊर्ध्वगमन के रूप में अलंकारिक व्याख्या है ।

षटचक्रों से ही संगति बिठाने वाले मनीषियों ने अन्तःस्रावी ग्रन्थियों के समूह को उनका स्थूल प्रतीक रूप माना है । उनके अनुसार नर व नारी में इन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चक्रों में प्रवाहित विद्युत की ही एक मोटी स्थूल प्रतिक्रिया पुरुषोचित दृढ़ता एवं स्त्रियोचित कोमलता के रूप में विकसित हुई देखी जा सकती है । तथापित यह सामान्य जैविक क्रिया–कलापों की एक झलक मात्र है । वैसे इन एण्डोक्राइन ग्लैण्डस व उनसे निकलने वाले हारमोन्स के क्षेत्र को जादू का पिटारा कहा जाऐ तो कोई अत्युक्ति न होगी । ये ६ हारमोन ग्रंथियाँ इस प्रकार हैं–

(१) पीनियल (सिरोटोनिन व मेलेटोनिन) (२) पीटुटरी (ग्रोथ हारमोन) (३) थायराइड (थायरॉक्सीन) (४) थाइमस (रिप्रोडक्टीव हारमोन) (५) एडरीनल्स (एड्रीनेलीन,ए.सी.टी.एच.) (६) गोनेड्रस (टिस्टोस्टेरॉन–नर एवं इस्ट्रोजन–मादा) ।

साधारणतया सर्पिणी कुण्डलिनी एवं सहस्रार आज्ञाचक्र आदि कुण्डलिनी से सम्बन्धित अवयव प्रसुप्त स्थिति में निष्क्रिय पड़े होते हैं । निद्रा या मूर्छा की स्थिति में मनुष्य भी मृतकवत स्थिति में हो जाता है । उसे कुछ भी होशो–हवास नहीं रहता । उसकी वस्तुओं को कोई उठा ले जा सकता है । पर कुछ ज्ञान नहीं रहता । लज्जा ढकने के कपड़े उतर जायँ तो भी बोध नहीं होता किन्तु जब जागृति की अवस्था होती है तो उसे अपनी सामर्थ्य और हानि होने की जानकारी वापस लौट आती है ।

शरीरगत विद्युत शक्ति का सामान्य प्रवाह निष्क्रिय पड़ा रहता है, पर उसे झकझोरकर साधना द्वारा जाग्रत और द्रुतगामी बना दिया जाता है तो स्थिति में भारी अन्तर पड़ जाता है ।

तेज हवा जब बाँस के झुरमुटों में टकराती है जो वंशी बजने जैसी आवाजें भी होती है और सूखे बाँसों में रगड़ पड़ने से उनमें अग्नि भी प्रकट हो जाती है । रेल, मोटर,जैसे द्रुतगामी वाहनों के पीछे पत्ते, तिनके, धूलिकण भी उड़ते दौड़ते देखे गये हैं । नदी के बीच पड़ी चट्टानों से पानी टकराता है तो उछलने लगता है । पनचक्की के पंखे घूमते हैं, तो उनसे आटा पीसने जैसे काम लिए जाते हैं । झरने ऊपर से नीचे गिरते हैं तो उन प्रपातों पर बिजली बनाने के यंत्र लगा दिये जाते हैं । अन्धड़, तूफान, चक्रवात, भँवर अपनी–अपनी असाधारण शक्तियों का परिचय देते हैं । चक्र भी जब जाग्रत और उत्तेजित होते हैं तो उनके द्वारा स्थूल, सूक्ष्म ओर कारण तीनों ही शरीर उफनने लगते हैं और अपनी असाधारण शक्ति का परिचय देते हैं ।

विभिन्न अध्यात्म ग्रन्थों में कुण्डलिनी के संदर्भ में अनेक अभिमत व्यक्त किये गऐ हैं । यथाः–

त्रिपुरा तंत्र में कहा गया है–"जो देवता भोग देते हैं वे मोक्ष नहीं देते । जो मोक्ष देते हैं वे भोग नहीं देते । किन्तु कुण्डलिनी दोनों को ही प्रदान करती है ।"

महायोग विज्ञान में लिखा है जिसकी मूलाधार शक्ति सो रही है, उसका सारा संसार सो रहा है । जिसकी कुण्डलिनी जगी, समझना चाहिए कि उसका भाग्य जग गया ।

महातंत्र में उल्लेख है–"जिसकी कुण्डलिनी जगती है उसकी वैखरी, मध्यमा, परा और पश्यन्ति वाणियाँ जाग्रत हो जाती है । उसका कथन सत्य होकर रहता है ।"

योगिनी तंत्र में लिखा है–"कुण्डलिनी के जगते ही अन्तराल में छिपा वैभव अनायास ही दृष्टिगोचर होने लगता है ।"

महाभारत का सुप्रसिद्ध आख्यान है कि भीष्म पितामह दक्षिणायण सूर्य रहने पर मरना नहीं चाहते थे । उनकी इच्छा उत्तरायण समय आने पर मरने की थी । इसके लिए उन्होंने देवयान को परलोक प्रयाण का पथ चुना । इस प्रसंग में भी कुण्डलिनी प्रसंग है । दक्षिणायन कुण्डलिनी अग्नि है । और उत्तरायण ब्रह्मरन्ध्र ऊर्जा । देवयान मेरुदण्ड मार्ग है । भीष्म की कुण्डलिनी जागरण प्रक्रिया अधूरी थी वे उसी को पूर्ण करने में शर शैया पर पड़े–पड़े प्रयत्न करते रहे उद्देश्यपूर्ण होने पर उन्होंने शरीर का त्याग किया ।

अथर्व १९।३७।१ में कहा गया है–हे आत्मग्नि तेरे द्वारा मुझे प्रकाश, तेज, बल, प्रतिमा, पराक्रम, ओजस् सभी तेरे भीतर से उभर रहे हैं । हे अग्नि मेरे तैतीस विभाग मेरे ऊपर अनुग्रह करें ।

यजु १२।७ में कहा गया है–हे दिव्य अग्नि तू आयु, वर्चस् सुसंतति, धन, मेधा, रति पौरुष बनकर हमें अपना अनुग्रह प्रदान कर ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आधुनिक मनोविज्ञानियों ने कुण्डलिनी को अचेतन मन की प्रसुप्त शक्ति कहा है । चीन और जापान के योगाभ्यासी उसे चीन को–शक्ति का नाम देते रह हैं ।

अमेरिका के डा०ली०सेनेल्या ने अपनी 'कुण्डलिनी साइकोसिक एण्ड ट्रान्सैन्डेन्स' पुस्तक में कुण्डलिनी की महत्ता बताते हुए लिखा है कि उसके जागरण से मनुष्य की क्रियाशीलता बढ़ जाती है । व्यक्तित्त्व निखरता है और गुह्य मस्तिष्क की उन क्षमताओं का विस्तार होता है जो आमतौर से सोई हुई ही पड़ी रहती हैं ।

वृहज्जाबालोपनिषद् का कथन है । "यह कालाग्नि कुण्डलिनी जब अधोगामी होती है तो मनुष्य को अशक्त बना देती है । पर जब वह ऊपर उठती है जो उच्च सिद्धियों को प्रदान करती हुई ब्रह्मलोग तक पहुँचती है ।"

स्कंद पुराण में एक रोचक कथा आती है । सृष्टि के आरम्भ में ब्रह्माजी ने कठोर दीर्घकालीन तप किया । उससे प्रचण्ड अग्नि उत्पन्न हुई । वह भूमि पर गिरी तो भूमि जलने लगी । ऊपर उठी तो आकाश जलने लगा । उसमें से तेजस् की चिनगारियाँ उठ–उठकर दशों दिशाओं को जलाने लगीं ।

अग्नि ने ब्रह्माजी से कहा–मैं भूख से जली जा रही हूँ । मुझे भोजन दीजिए ? ब्रह्माजी ने एक–एक करके अपने शरीर के सारे अंग उसे खिला दिये । तो भी उसकी तृप्ति नहीं हुई और वह "भूखा–भूखा" कह कर चिल्ला कर रुदन करने लगी ।

ब्रह्माजी को कोई उपाय न सूझा तो उन्होंने कहा "तू कामुक–व्यक्तियों के शरीर में घुस जा और उनकी समस्त धातुओं का भक्षण करना ।" अग्नि ने ऐसा ही किया । उसने असंख्य कामुक नर नारियों को खा लिया किन्तु तृप्ति तब भी न हुई । तब प्रजापति ने उसे देवता और ऋषियों के अन्तःकरण में प्रवेश करने के लिए कहा, वहाँ अमृत भरा हुआ पाया । अग्नि उसका पान करके तृप्त हो गयी और प्रसन्नतापूर्वक वहीं रहने लगी ।

इस कथन का तात्पर्य है कि कुण्डलिनी का काम क्षेत्र में प्रवेश होता है, तो वह जर्जर कर देती है । किन्तु जब उसका प्रयोग दिव्य प्रयोजनों के लिए होता है तो वह स्वयं भी प्रसन्न रहती है और आश्रयदाता को भी प्रसन्नतादायक वरदानों से भर देती है ।

कुण्डलिनी को दावानल कहा गया है, जो जंगलों को जलाकर खाक कर देती है । वह बड़वानल भी है, जो समुद्र में से ज्वालमाल बनकर उठती और पानी से रहित कर देती है । धरती की मध्यवर्ती आग्नि जब फूटती है तो भूकम्प आते और ज्वाला मुखी फूट पड़ते हैं । मनुष्य का आधार भूत शक्ति तत्त्व कुण्डलिनी है, जो ब्रह्माण्डीय चेतन सत्ता के साथ जुड़ा है और विश्व भण्डार में से अपनी इच्छा एवं आवश्यकतानुसार शक्ति को खींचता और धारण करता रहता है । मूलाधार में बसी हुई सुप्त सर्पिणी अग्नि कुण्ड में पड़ी–पड़ी विष उगलती रहती है । इस विष को अमृत बनाया जा सकता है । उसे अमृत रस पान, सोम सम्पर्क हेतु ऊर्ध्वगामी बनाया जाये, यही कुण्डलिनी साधना है ।

कुण्डलिनी–एक प्रचण्ड प्राण ऊर्जा

गिरना हमेशा बुरे अर्थों में लिया जाता है, एवं उठना अच्छे अर्थ में । यह सिद्धान्त कायसत्ता के क्षेत्र में, विशेषकर जननेन्द्रियों में सन्निहित प्राणशक्ति के ऊपर विशेष रूप से लागू होता है । मूलाधार को योनि एवं सहस्रार को लिंग बताते हुए अध्यात्मशास्त्र में अलंकारिक विवेचन तो किया गया है, पर क्रिया प्रसंग में वैसे कुछ नहीं है । मूलाधार स्थित शक्ति को कामाचार में नष्ट न कर मस्तिष्क में ले जाना चाहिए ताकि उसका सुनियोजन सद्ज्ञान संवर्धन, ध्यान द्वारा प्रसुप्ति के जागरण में हो सके । सोई हुई कुण्डलिनी शक्ति शिवलिंग के साथ लिपटी प्रसुप्त सर्पिणी की तरह पड़ी रहती है । समुन्नत स्थिति में विकास होते–होते यह शक्ति ऊँचे उठकर मस्तिष्क के सर्वोच्च स्थान क्षीरसागर–मस्तिष्क के ग्रेमैटर में अवस्थित सूक्ष्म स्नायु तन्तुजाल सहस्रार पर जा बिराजती है । एक छोटा–सा शिवलिंग ऊर्ध्वगमन के बाद कैलाश पर्वत का रूप ले लेता है । खिले हुए सहस्रदल कमल के रूप में उसका विकास होता है एवं क्रमशः मस्तिष्क के सारे सोये केन्द्र जाग पड़ते हैं । यह लघु का विराट् में विस्तार है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस नियन्त्रण में मेरुदण्ड का आश्रय लिया जाना अत्यावश्यक है । उसे मोड़कर सुषुम्ना की चेतन धारा को उच्चस्तरीय प्रयोजनों में नियोजित किया जा सके तो विषयानन्द की तुलना में हजार गुना आनन्द ब्रह्मानन्द में पाया जा सकता है । बंध, मुद्राओं, प्राणायाम–आसनादि के विभिन्न उपचार इसी उद्देश्य को लेकर किए जाते हैं । सिद्धासन या वज्रासन में शक्तिचालिनी मुद्रा व विशिष्ट बंधों व प्राणयोग का आश्रय लेकर मूलाधार की शक्ति के उद्दीपन–जागरण–उर्ध्वगमन एवं उसे पूर्णता के केन्द्र से जोड़ने का प्रयत्न किया जाता है । इन सभी प्रयोगों को जो कि हठयोग या क्रियायोग से संबंधित हैं, कुण्डलिनी जागरण प्रक्रिया का प्रारंभिक माध्यम भर मानना चाहिए । भ्रान्तिवश इन्हीं उपचारों को सब कुछ मान लिया जाता है जब कि ये मात्र "चोक" के प्रयोग द्वारा ठण्डी मोटर गाड़ी में गर्मी पैदा करने के समतुल्य हैं ।

यह प्रसंग यहाँ स्पष्ट करना अनिवार्य है, क्योंकि कुण्डलिनी को कामबीज भी कहा गया है । इसके प्रतीक रूप में शिवलिंग की स्थापना की जाती है । शिवलिंग का रुद्राभिषेक करते हैं तो तीन टाँग की तिपाही पर जलघट रखा जाता है और उसमें से एक–एक बूँद पानी गिराने का प्रबन्ध किया जाता है । यों नारी योनि में भी मदनांकुर होता है । पुरुषशिश्न के अधोभग में भी नारी योनि है । इन्हीं विपरीतताओं के जाग्रत होने पर लिंग परिवर्तन के प्रसंग घटते रहते हैं । नर नारी बन जाती है और नारी नर । इसका कारण प्रसुप्त क्षेत्रों में ऊर्जा आवेश का पहुँच जाना है । कामुकता भी इन्हीं कारणों से उभरती रहती है । यह अनुपयुक्त क्रम बनने न पाए । इसलिए मस्तिष्क का ज्ञान रूप अमृत टपका कर उसे शान्त करते रहा जाता है । इसी अमृत को सोमरस कहते हैं । खेंचरी मुद्रा की सोऽहम् साधना में सोमरस–पान की प्रक्रिया पूरी की जाती है ।

जिस तिपाही पर रुद्राभिषेक का जल–घट रखा जाता है, वह इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना इन तीन नाड़ियों का प्रतीक है । रुद्राभिषेक को कुण्डलिनी साधना का एक दृश्य प्रतीक माना गया है । इस वर्णन में अलंकारिक माध्यम से इस तथ्य का प्रतिपादन है कि कुण्डलिनी के अधिपति शिव प्रत्यक्ष और समर्थ परमेश्वर हैं । उनके निवास स्थान कैलाश पर्वत और मान सरोवर की तरह पवित्र समझे जाये, उन्हें नर–नारी की घृणित जननेन्द्रिय मात्र न मान लिया जाये । वरन् उनकी पवित्रता और महत्ता के प्रति उच्च भाव रखते हुए उनके सदुपयोग–शक्ति के सुनियोजन की आराधना में तत्पर रहा जाये । साहस और कलाकारिता के–पुरुषार्थ और लालित्य के–कर्म और भावना के इन केन्द्रों को प्रजनन मात्र से निरस्त न बना दिया जाये । वरन् नर–नारी की जननेन्द्रियों के निकटस्थ मूलाधार चक्र की शिव शक्ति को उच्चआदर्शों के लिए प्रयुक्त किया जाये ।

हठयोग के साधनाकाल के इस प्रचलन की अश्लील कल्पना करने वाले पुरुष शिश्न और नारी योनि के साथ संगति बिठाते हुए "संभोग के समाधि" की चर्चा करते हैं । यह कथन सही नहीं, बड़ा बेतुका, भद्दा एवं दिशाहीन करने वाला है । वस्तुतः हृदय–मस्तक जैसे पवित्र इन स्थानों तक अनाचार की–अतिवाद की गन्दगी नहीं पहुँचनी चाहिए । इन्हें अधिकाधिक पवित्र रखते हुए ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए और ऊर्ध्वरेता बनना चाहिए । यह मर्यादा स्त्री और पुरुष दोनों को ही निवाहनी चाहिए । शास्त्रकारों ने कुण्डलिनी की प्रकृति का निरूपण करते हुए कामकला से उसकी संगति बिठाई है । पर उसका अर्थ कामुकता नहीं वरन् कायसत्ता में उत्साह व उल्लास उत्पन्न करने वाली शक्ति से लिया जाता है । मूलाधार को कामबीज भी कहते हैं, एवं सहस्रार को ज्ञानबीज । दोनों के समन्वय–परिष्कार से विवेकयुक्त क्रिया बनती है । जीवन का सर्वांगिपूर्ण विकास व्यक्तित्त्व का परिष्कार, चिन्तन के स्तर में निखार इसी शक्ति पर निर्भर करती है । कुण्डलिनी योग इसी सुयोग संयोग की व्यवस्था के निमित्त की जाने वाली साधना है ।

श्वेताश्वतर उपनिषद् में कुण्डलिनी को "योगाग्नि" अथवा "नचिकेत अग्नि" कहा गया है और उसकी तुलना पवित्र यज्ञाग्नि से की गई है । कहा गया है कि जिसके शरीर में यह दिव्य अग्नि प्रज्ज्वलित रहती है, उसके न शरीर में रोग होता है, न मन में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विक्षोभ । चैनिक योग प्रदीपिका में आई, लोहेन ने इसे "स्प्रिट फायर" कहा है और आत्मा की ज्वलन्त अग्नि के रूप में उसकी विवेचना की है ।

पाश्चात्य योग विद्या विशारद सर जॉन वुडरफ ने इसे "सर्पेन्ट फायर" के नाम से सम्बोधित किया है । थियोसाफिकल सोसाइटी की जन्मदाता मैडम ब्लैवटस्की ने इसे विश्वव्यापी वैद्युतीय शक्ति 'कॉस्मिक इलेक्ट्रिकसिटी' कहा है और इसकी गति को ३,४५,००० मील प्रति सेकण्ड बताया है । जबकि प्रकाश की गति १,८५,००० मील प्रति सेकण्ड एवं विद्युत तरंगों की गति २,८८,००० मील प्रति सेकण्ड है । वैज्ञानिकों के अनुसार विचार तरंगों की गति विद्युत तरंगों से सात गुनी. अधिक अर्थात् २२,६५,१२० मील प्रति सेकण्ड है । विचार क्षण मात्र में ही पृथ्वी की लगभग चालीस बार परिक्रमा लगा सकते हैं ।

आध्यात्मिक शक्ति होते हुए भी कुण्डलिनी की संगति पूर्णरूपेण शारीरिक विद्युत के साथ जुड़ जाती है । डा० वसन्त जी रेले ने अपनी पुस्तक "द मिस्टीरियस कुण्डलिनी" में इसे नरवस फोर्स कहा है । इस पुस्तक की भूमिका सर वुडरफ ने लिखी है । उनके अनुसार रेले जहाँ कुण्डलिनी की संगति दायीं वेगस नर्व से बिठाते हैं वहाँ वे स्वयं उसे एक "ग्रैण्डपोटेन्शियल"–और भी बड़ी शक्ति मानते हैं । कुण्डलिनी उनके अनुसार "डायनेमिक रियल"– वह प्रसुप्त ऊर्जा है जिसे पदार्थ सत्ता की "इन्वल्यूशन" प्रक्रिया के विपरीत "इवल्यूशन" के माध्यम से ऊँचा उठाकर व्यक्तित्त्व को प्रखर–समुन्नत बनाया जा सकता है । कुण्डलिनी शक्ति वसन्त रेले के अनुसार स्थिर रूप में अपने सामान्य स्वरूप में रहती है, किन्तु गत्यात्मक रूप में यही प्राण शक्ति बन जाती है । वे कहते हैं कि हठयोग प्रदीपिका, शिव संहिता एवं षटचक्र निरूपण जैसे ग्रन्थों का विवेचन यह बताता है कि यह ब्रह्माण्डव्यापी समष्टिगत महत चेतना शक्ति का व्यष्टि रूप है ।

हठयोग के ज्ञाता पाश्चात्य वैज्ञानिक श्री हडसन ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'साइन्स ऑफ सीअरशिप' में कहा है कि चमत्कारी शक्ति कुण्डलिनी को पवित्र मन और कामना रहित होकर किसी सुयोग्य योगज्ञाता गुरु के मार्गदर्शन में ही जाग्रत करना चाहिए । अन्यथा कुण्डलिनी शक्ति नीचे की ओर प्रवाहित होकर विषय वासनाओं और कामुक विचारों के आवेग को बढ़ा सकती है । फिर इस शक्ति का क्षरण वासना तृप्ति और स्वार्थ साधन के रूप में होने लगता है ।

जैन योगाचार्यों ने कुण्डलिनी शक्ति को 'तिजोलेश्या' के रूप में वर्णित किया है और उसकी उपलब्धि के दो साधन बताये हैं । प्रथम है–अन्न और जल की अति सीमित मात्रा ग्रहण करते हुए तपस्या करना तथा दूसरा है–सूर्य की आतापना लेना अर्थात् सूर्योपासना द्वारा शक्ति संग्रह करना । तेजोलेश्या का उद्गम स्रोत सूक्ष्म शरीर माना गया है । वही स्थान कुण्डलिनी शक्ति का भी है । तेजोलेश्या को सावित्री साधना का स्वरूप माना जा सकता है ।

कुण्डलिनी शक्ति की व्याख्या करते हुए योग विज्ञानियों ने कहा है कि यह "वॉइस ऑफ साइलेन्स" मौन की भाषा है । लोग लौकिक अग्नि या विद्युत का प्रभाव जानते तथा उपयोग करते हैं । यदि वे इस स्प्रिचुअल या मेटाफिजीकल अग्नि का प्रयोग भी जान लें तो आत्मिक क्षेत्र की असंख्यों सिद्धियाँ हस्तगत कर सकते हैं ।

डा० स्कॉट ने कहा है कि यह "क्रिस्टल" है जिसके सहारे जीवन रूपी ट्रांजिस्टर अपनी ध्वनि बजाता है । शरीर शास्त्री अपने ढंग से उसकी व्याख्या करते हैं और उसे स्पाइनल कार्ड तथा मूलाधार को "गैंग्लियान इम्पार" के रूप में निरूपित करते हैं । उसकी उपमा जेनरेटर, डायनेमो, बैटरी, चुम्बक आदि से की है । माना सभी ने यह है कि यह काम क्षेत्र में दहकता हुआ कुण्ड है और उससे ऊपर उठता हुआ प्रज्वलन सचमुच असाधारण शक्ति का केन्द्र है ।

डॉ० हेनरी लिण्डाल ने ब्रह्माण्डव्यापी चेतना विद्युत एवं भौतिक जगत में काम करने वाली बिजली के उद्गम स्रोतों की व्याख्या करने के साथ ही मानव शरीर में काम करने वाली बिजली की भी विवेचना की है । ब्रह्माण्ड में पृथ्वी के चारों ओर विद्युत्चुम्बकीय धाराओं का एक जाल सा फैला हुआ है एवं यह धन विद्युत विभव तीन लाख वोल्ट की सामर्थ्य का है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हर जीवधारी पर ५ वोल्ट प्रतिमीटर की औसत से यह दबाव बना हुआ है । इसी ब्रह्माण्डीय विद्युत का व्यष्टिगत अंश कुण्डलिनी शक्ति के रूप में मेरुदण्ड में बिराजमान होता है । डॉ० लिण्डाल ने कहा है कि जीवकोशों, नाड़ी तन्तुओं तथा विभिन्न अवयवों के काम करने में बड़ी मात्रा में विद्युत शक्ति का निरन्तर व्यय होता रहता है । इसका उद्गम हृदय नहीं, मस्तिष्क है । वही जीवन के उद्भव तथा अन्त का आधार है । किन्तु यह उद्गम एकाकी नहीं है । मेरुदण्ड के ऊपरी सिरे पर स्थिति मस्तिष्कीय ग्रेमैटर एवं सुषुम्ना का निचला हिस्सा (कॉडा इक्वाइना) दोनों की इस प्राण विद्युत के उत्पादन में अपने-अपने पक्ष का निर्वाह करते हैं । मस्तिष्कीय ग्रेमैटर में "रेटीकुलर एक्टीवेटिंग सिस्टम" के रूप मे विद्युत्स्फुल्लिग निरन्तर उभरते रहते हैं । इस विद्युत का एक बहुत बड़ा भाग उस क्षेत्र का भी होता है, जिसे दक्षिणी ध्रुव या कामकेन्द्र की संज्ञा दी जाती है । डॉ० हिरोशी मोटोयामा ने अपनी ए०एम०आई० मशीन द्वारा विद्युत का सघन अनुपात इसी केन्द्र बिन्दु पर पाया है । वैज्ञानिकों ने काम केन्द्र पर जो विस्तृत अन्वेषण किया है उसका कारण यह है कि कुण्डलिनी क्षेत्र जीवन संचार का महत्त्वपूर्ण क्षेत्र है । नया प्राणी उत्पन्न करने के साधनों से भरपूर होने के कारण उसकी सत्ता और महत्ता शरीर के अन्य सब अवयवों की तुलना में विशेष रूप से संवेदनशील और क्षमता सम्पन्न है । सेक्रल प्लेक्सस व कॉडाइक्वाईना की संरचना मस्तिष्क के समान ही अत्यन्त पेचीदा व फिजीयॉलाजी की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है । इस तथ्य को भी ली सनेला ने अपनी पुस्तक-"कुण्डलिनी-साइकोसिस आर ट्रान्सेन्डेन्स" में डा० डी० ई० वुलरीज ने "दी मशीनरी आफ ब्रेन" में एवं डा० सी० नारन्जो-आर, आर्नस्टीर ने "साइकोलॉजी ऑफ मेडीटेशन" में भिन्न-भिन्न रूपों में अभिव्यक्त किया है ।

डॉ० कैरिंगटन ने अपनी "आधुनिक मनोविज्ञान और भारतीय दर्शन" पुस्तक में लिखा है कि ऐसे अनेक उदाहरण देखे गये हैं जिनमें प्राण-परमाणुओं वाला शरीर रहने या न रहने पर भी अपना अस्तित्त्व बनाये रखता है । उसके शरीर से जुड़ा रहने पर भी प्राण घटकों की सत्ता उसी क्षेत्र में बनी रहती है । इसी शोध से संबंधित एक विलक्षण खोज योगियों के शरीर से ध्यान साधना की चरमावस्था-समाधि प्रक्रिया के दौरान बाहर निकलने वाले आयडियोप्लाज्म अथवा साइकोप्लाज्म के रूप में की गयी है । वैज्ञानिक कहते हैं कि यह वाष्प अवस्था में शरीर से बाहर निकलता रहता है एवं सिर के शीर्षभाग स्तन, उँगलियों के पोर, होंठ तथा चेहरा, नाड़ी चक्र एवं जननेन्द्रियों के आसपास इसका सघन अनुपात देखा गया है । रूसी वैज्ञानिक सेमियन किर्लियन द्वारा "बायोलॉजीकल प्लाज्मा बॉडी" के अध्ययन व चित्रांकन (किर्लियन फोटोग्राफी) के बाद सूक्ष्मशरीर-कुण्डलिनी की प्राण शक्ति के संबंध में इस अनुसंधान कार्य ने बड़ी ख्याति प्राप्त की है । इमैनुअल स्वीडनबोर्ग ने इसे ईथर के दृश्य बादल की संज्ञा दी है, जिसे विशेष फिल्टर्स का प्रयोग कर हाइ-वोल्टेज प्रोजेक्शन द्वारा चित्रांकित किया जा सकता है । वैज्ञानिकों ने इसकी बनावट मकड़ीदार जाले व गंध ओजोन से मिलती-जुलती बतायी है । जीवनी शक्ति कम या अधिक होने पर इसकी सघनता घटती-बढ़ती रहती है । भावनाएँ भी इसके प्रभाव को कम अधिक करती हैं । इसकी उपस्थिति का प्रत्यक्ष प्रमाण लायल वाटसन ने अपनी पुस्तक "सुपरनेचर" में दिया है जिसमें किसी व्यक्ति का कोई अंग कट जाने पर भी उसे उस अंग की प्रत्यक्ष अनुभूति दर्द, जलन, खुजली इस रूप में होती रहती है । "फन्टम लिम्ब इफेक्ट" नाम से जाने जाते इस प्रसंग में यह प्रमाणित किया गया है कि सूक्ष्मशरीर की सत्ता एक्टोप्लाज्म के रूप में बनी रहती है एवं वही सारी संवेदनाएँ प्रत्यक्ष ज्ञान तन्तुओं के न होने पर भी मनुष्य को अनुभव होती रहती हैं ।

"टिबेटन बुक ऑफ डेड" एवं "चाइनीज बुक ऑफ सोल" में प्रत्यक्ष शरीर और प्राण शरीर की सत्ता पृथक्-पृथक् मानी गई है । यद्यपि वे दोनों साथ-साथ रहते हैं, पर कभी-कभी प्राण शरीर पृथक् होकर अन्यत्र रहने लगता व आवश्यकतानुसार नया प्राण शरीर बना लेता है । इसी प्रकार मनुष्य की कई बार दुहरी उपस्थिति भी देखी गई है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

डॉ० सील एवं जे० टेलर ने अपनी पुस्तक "द पोजीटिव साइन्सेज ऑफ एन्सीएण्ट हिन्दूज" में लिखा है कि हिन्दू धर्म के साधना विधान और कर्मकाण्ड प्राण शरीर अधिकतम उपयोग करते हुए सम्पन्न होते हैं । इस प्राण शरीर को दिव्य चक्षुओं से देखा जा सकता है । कुछ वर्ष पूर्व "थियॉसाफीस्ट" पत्रिका में एक लेख "एनाटॉमी आफ तंत्राज" नाम से इसी विषय में छापा था ।

थियॉसाफीस्ट वैज्ञानिक सी० डब्ल्यू लेडबीटर ने मेरुदण्ड में अवस्थित छह चक्रों का विवेचन अपनी "द चक्राज" पुस्तक में किया है वह कहा है कि प्राण शरीर एक विशेष प्रकार की विद्युत से विनिर्मित होता है और ऐसा ही कायसत्ता में विराजमान है जैसे कि घोंसले में पक्षी बैठा होता है । कितने ही अन्य वैज्ञानिकों ने प्राण को "फायर ऑफ लाइफ" कहा है । इस अग्नि की जितनी मात्रा शरीर में होती है वह उतना ही चैतन्य, उत्साही, साहसी और प्रतिभावान होता है । इसमें शिथिलता आने पर मोटा ताजा शरीर भी डरपोक, आलसी और निराशा प्रकृति का पाया जाता है । इस विद्युत्शक्ति को प्रयत्नपूर्वक बढ़ाया भी जा सकता है । योगाभ्यासों की रचना इसी दृष्टि से हुई है । कुण्डलिनी योग तो वस्तुतः प्राण विद्या के ऊपर ही आधारित है ।

कुण्डलिनी जागरण का सार संक्षेप यह है कि निखिल ब्रह्माण्ड में से प्राण चेतना को आकर्षित करके अपने निज के प्राण में उस महत् चेतना की बड़ी मात्रा मिलाकर उच्च स्तरीय शक्ति प्राप्त की जाय और इस सामर्थ्य को अभीष्ट प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त करने योग्य अभ्यास कर लिया जाय । यह क्षमता समय से बढ़ती है एवं शक्ति क्षरण करने पर क्रमशः घटती व नष्ट होती जाती है ।

योरोपियन तांत्रिकों में जेकब बॉहम की बहुत ख्याति रही है । उनके जर्मन शिष्य जार्ज मिशेल की पुस्तक थियॉसाफिक प्रैक्टिका में कुण्डलिनी जागरण व षट्चक्रों के प्रसंग में उसे गोपनीय रखने की भी हिदायत दी है । क्योंकि पता चलने पर अनधिकारी उसे लूट ले जाने का षड्यंत्र रचते हैं । ऐसी दशा में बहकावे में आने वाले बहुमूल्य रत्नराशि को मद्यपों को सौंपकर अपनी और उनकी उभयपक्षीय हानि करते हैं ।

कुण्डलिनी शक्ति का जागरण एवं उत्थापन कठिन है । उसमें प्रवाह का अवरोध करना पड़ता है । असंयम में मौज मस्ती लगती है और प्रसन्नता भी होती है । स्वादेन्द्रियों को जितने प्रकार के व्यञ्जन चखाये जायँ वह मोद मनाती है । अभ्यास से आदत भी बन जाती है कि स्वादिष्टों की विविधा भी चाहिए और अति मात्रा भी । यही बात जननेन्द्रियों के बारें में भी है । कामुकों का चिन्तन–आकाश पाताल चूमता रहता है और क्रिया में भी अतिवाद अपनाने की ललक छाई रहती है । व्यभिचारी की मानसिक तृप्ति नहीं होती, शरीर थक जाता है, पर मन विभिन्नता और अतिवाद की रट लगाये ही रहता है । यह बात अन्य इन्द्रियों के सम्बन्ध में भी है । मन ग्यारहवी इन्द्रिय है । उसके तीन स्वाद हैं–लोभ, मोह, अहंकार । समूची काया पर आलस्य प्रमाद छाया रहता है । सामान्य जीवन के यही प्रवाह हैं । पशुवत् और प्रेत पिशाच जैसी दुष्प्रवृतियाँ इसी अधोगामी दिशा में गिरती रहती हैं । बाँध बाँधने की तरह रोकना असाधारण प्रयत्न है । फिर समुद्री खारे जल का शुद्ध भाग भाप की तरह उड़ाकर बादल बनाना–आकाश भ्रमण के लिए ले जाना और भी कठिन है । कुओं का पानी अथवा गहरे स्रोतों का तेल ऊपर जमीन तक लाने के लिए शक्तिशाली उपकरणों की जरूरत पड़ती है । खींचने, उठाने के लिए क्रेन जैसे साधन चाहिए । फिर उन साधनों का यथावत् नियोजन संचालन, रख रखाव अपने आप में एक बड़ा काम है । उसे कर गुजरने के लिए सुशिक्षित इन्जीनियर चाहिए । उनकी शिक्षा ही नहीं तत्परता और तन्मयता भी काम करती है ।

कुण्डलिनी का संयम, जागरण, उत्थापन यह तीनों ही कार्य एक से एक कठिन हैं । इन्द्रियसंयम, मनसंयम के साथ–साथ विचारसंयम, अर्थसंयम, समयसंयम आदि को अपनाना ही नहीं, इस प्रकार निभाना पड़ता है जैसे घोड़े की लगाम, हाथी को अंकुश ऊँट को नकेल लगाकर मनमानी करने से रोका और इच्छित प्रयोजन के लिए उनका इच्छित उपयोग बलपूर्वक किया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जाता है । झरने की ऊपर से नीचे गिरने वाली प्रवृत्ति को यदि कोई बदलना चाहता है और उस पतनोन्मुख प्रवाह को नीचे से हजारों फुट ऊँचा ले जाना चाहता है, तो उसके लिए शक्तिशाली बड़े आकार के पम्प की जरूरत पड़ेगी । यह कार्य साधरण प्रयास से नहीं हो सकता ।

संयम निभाने व प्राणाग्नि को प्रज्ज्वलित कर लेने वाले साधक की विकसित आत्म–चेतन देव शक्तियों के रूप में साकार होकर कार्य कर सकती है । इस संबंध में कुछ उदाहरण सुविख्यात हैं । महात्मा जड़भरत राजर्षि भरत के ही अवतार थे । सुन्धु नरेश रहूगण को उन्होंने उनकी पालकी ढोते हुए ही आत्मज्ञान प्रदान कर दिया था । एक बार उन्हें एक दस्यु सरदार ने बलि के लिए पकड़ लिया । भद्रकाली की मूर्ति के सामने उन्हें वध के लिए खड़ा किया गया । वधकर्त्ता पुरोहित खड्ग लेकर आया । जड़ भरत निर्विकार खड़े रहे । उनके आत्मतेज से भद्रकाली मूर्ति जाग्रत हो गयी । उसने वधकर्त्ता का खड़ग छीनकर सभी दुष्टों का संहार कर दिया । आत्मसत्ता में प्रचण्ड शक्ति, असीम सामर्थ्य है । कार्यविद्युत जब जागती है तो आग्नेयास्त्र की तरह कार्य करती एवं प्रतिकूलताओं से जूझने की सामर्थ्य रखती है ।

शिव पत्नी सती ने, पिता दक्ष के यज्ञ से अपमान अनुभव होने पर घोषणापूर्वक योगाग्नि में अपना शरीर भस्म कर दिया था । ऋषि सुतीक्षण ने भी भगवान राम के सामने ही उनके दर्शन से पूर्णकाम होकर शरीर योगाग्नि में होम दिया था । राजा नल की पत्नी सती दमयन्ती ने वन में शील रक्षा के लिए नेत्र दृष्टि से ही व्याध को जला दिया था । यह सब सोये भाण्डागार को जगाने की फल श्रुतियाँ हैं ।

प्रसुप्त को जगाने में साधारणतया भी कठिनाई का सामना करना पड़ता है । सोता बच्चा या मनुष्य झकझोर कर जगाया जाये तो वह उस आनन्द को छोड़ते हुए खीज अनुभव करता है और चिढ़ता–खीजता है । सोते साँप को जगाना तो और भी बड़ा जोखिम मोल लेना है । परमाणु के भीतर उसकी नाभिक शक्ति सोई रहती है, पर उसे छेड़ा जाय या तोड़ा जाय तो इतना भयंकर विस्फोट होता है कि मीलों के दायरे में सर्वनाश उपस्थित हो जाता है । अणु विस्फोट की घटनाओं का जिन्हें स्मरण नहीं उन्हें नागाशाकी और हिरोशिमा की घटनाएँ स्मरण दिलाई जाती हैं, जिसमें लाखों मनुष्यों का सर्वनाश हो गया था और पहाड़ पिघलकर शीशे की झील जैसे बन गये थे । स्वेच्छा पूर्वक हुई ज्वालामुखी फटने की घटनाएँ कितनी भयंकर होती हैं ? इस सन्दर्भ में मैक्सिको, कोलम्बिया आदि के विस्फोटों की चर्चा को कुछ दिन हुए हैं । हेलेना का ज्वालामुखी विस्फोट एक सप्ताह तक दिन को रात बनाये रहा था । उसकी काली धूलि आकाश के बड़े भाग पर छा गई थी । सुप्त कुण्डलिनी का जागरण ऐसा ही है । सोते कुम्भकरण के ऊपर जागने के लिए हाथियों का झुण्ड घुमाया गया था । कुण्डलिनी प्रसंग ऐसा ही है । उसके प्रसुप्त स्थिति में पड़ी रहने पर ही दैनिक जीवन के सामान्य काम काज ढर्रे पर घूमते रहते हैं और अभ्यस्त दिनचर्या किसी प्रकार लँगड़ी गाड़ी की तरह लुढ़कती रहती है । पर जब रेल में नया शक्तिशाली इंजन जोड़ा और पूरे वेग से छोड़ा जाता है, तो वह साथ में जुड़े हुए डिब्बे को घसीटता हुआ द्रुतगामी गति से दौड़ता है । कुण्डलिनी जागरण वाले साधक को भी साधना काल के आरम्भिक दिनों में ऐसे ही जोखिम का सामना करना पड़ता है । उसकी चमत्कृति साधारण मंद पवन की तरह नहीं चलती वरन् आँधी तूफान के वेग से दौड़ती है । हवा के चक्रवातों और पानी की भँवरों जैसी उसकी गति होती है ।

"महायोग विज्ञान" में ऋषि कहते हैं–

मूलाधरे आत्मशक्ति कुण्डलिनी परदेवता ।
शायिता भुजगाकारा सार्द्धत्रय बलयान्विता ॥
यावत्सा निद्रिता देहे तावज्जीवः पशुर्यथा ।
ज्ञानं न जायते तावत् कोटियोगविधेरपि ॥
आधार शक्ति निद्रायां विश्वं भवति निद्रया ।
तस्यां शक्तिप्रबोधेन त्रैलोक्यं प्रति बुध्यते ॥

अर्थात्–"आत्म–शक्ति कुण्डलिनी मूलाधारचक्र में साढ़े तीन कुण्डली लगाये हुए सर्पिणी की तरह शयन करती है । जब तक वह सोती रहती है तब तक जीव पशुवत् बना रहता है । बहुत प्रयत्न करने पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भी तब तक उसे ज्ञान नहीं हो पाता । जिसकी आधार शक्ति सो रही है उसका सारा संसार ही सो रहा होता है । पर जब वह जागती है तो उसका भाग्य संसार ही जाग पड़ता है ।"

प्राणाग्नि की प्रज्वलन उद्दीपन अंतः में अपरिमित उखाड़ पछाड़ करता है । जब आँधी अंधड़ के साथ चक्रवात आते हैं तो वे अपनी शक्ति सामर्थ्य से साधारण पेड़ों को उखाड़ते झोंपड़ों को उड़ाते चलते हैं । सूखे पत्ते और धूलिकण तक आसापास चूमने लगते हैं । नदी के भँवर जहाजों तक को घसीट कर पाताल पहुँचा देते हैं । विशिष्ट गतिशीलता ऐसे ही अदृश्य दृश्य उत्पन्न करती है । जेनरेटर फटते हैं तो समीपवर्ती इलाके की धज्जियाँ उड़ा देते हैं । आकाश से तड़ककर गिरने वाली बिजली भी जहाँ गिरती है, उसको जलाकर रख देती हैं ।

कुण्डलिनी जागरण में भी ऐसी ही विपत्ति का सामना करना पड़ता है । अस्तु उसमें साहसिकता ही नहीं, सतर्कता भी ऊँचे दर्जे की बरतनी पड़ती हैं । इसमें आलस्य प्रमोद काम नहीं देता । सरकस में पतली रस्सी पर चलकर दिखाने वाले नट जिस प्रकार अपना संतुलन सही रीति से सम्भाले रहते हैं । उसी प्रकार कुण्डलिनी जागरण की प्रक्रिया भी साधक से उच्चस्तरीय स्तर एवं सतर्कता की आशा करती है । असावधानी उपेक्षा बरतने पर अनिष्ट की आशंका बनी रहती है ।

मक्खी-मच्छर दिन भर में ढेरों अण्डे देते रहते है । मछलियाँ भी एक ही समय में सैकड़ों हजारों अण्डे दे गुजरती है, उन्हें उनके पालन-पोषण की चिन्ता नहीं करनी पड़ती । पर मनुष्य के भ्रूणाण्ड को जननी गर्भावस्था में भी सम्भालती और प्रसवकाल में भी मरणतुल्य कष्ट सहती है और फिर कई वर्ष तक उसके आहार की, स्वच्छता की ऋतु प्रभाव से बचाने की व्यवस्था में लगी रहती है । अन्य क्रिया–कलाप तो मक्खी, मच्छर, मछली द्वारा दिये जाने वाले अण्डों के समान हैं पर कुण्डलिनी जागरण तो मनुष्य शिशु का प्रजनन और पोषण करने के समान है । उसमें सरलता नहीं कठिनता भी है और जिम्मेदारी भी । यह सब भली-भाँति सतर्कता चाहते हैं । भूल होने पर अनिष्ट का भय दिखाते रहते हैं ।

मादा बिच्छू के प्रजनन का तरीका विचित्र है । उसके पेट में कई अण्डे एक साथ पलते और बढ़ते हैं । जब वे कुछ बड़े हो जाते हैं तो पेट से बाहर निकलना चाहते हैं । जननेन्द्रिय का छिद्र इतना छोटा होता है कि उसमें से उनका निकलना संभव नहीं होता । उधर बच्चों के पेट में बढ़ते जाने पर उन्हें भूख भी सताती है । वे माता का पेट खाना आरंभ कर देते हैं और उसमें रहने वाले सारे माँस को खाकर बाहर निकलते हैं । इतने में मादा बिच्छू अपने पेट के खोखले हो जाने फट जाने पर प्राण गवाँ बैठती है ।

कुण्डलिनी के साथ जुड़ी हुई सिद्धियों का प्रजनन ठीक इसी प्रकार का है । जब वह जागती है तो शास्त्रकारों के अनुसार साधक का रक्त पी जाती और माँस खा जाती है । वह अस्थिपंजरवत् रह जाता है । यह एक प्रकार का काया कल्प है, जिसमें पुराना कचरा छँट जाता है और नये अंकुर उत्पन्न होते हैं । चतुर माली इसी रीति-नीति को अपनाते हैं । वे फूल पौधों को ऊपर से अगल-बगल से छाँट देते हैं । इसके बाद अनेक जगहों से नई कोंपले फूटती हैं और उन सभी पर फूलों के गुच्छे लटकते हैं । पौधे की गोलाई और शोभा कई गुनी अधिक हो जाती है । कुण्डलिनी जागरण में साधक को स्वयं ही अपने संचित कुसंस्कारों कषाय कल्मषों एवं अनगढ़ आदतों की छँटाई स्वयं ही करनी पड़ती है । कटते-छँटते समय लगता है कि पौधा भी छोटा हो गया, उसका कलेवरघट गया । पर यह स्थिति देर तक नहीं रहती । नये कोपल और नये फूल आना आरम्भ करते हैं । पतझड़ की श्रीहीनता चली जाती है और बसन्त में पुष्प पल्लवों से भरी हुई शोभा सम्पदा प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होने लगती है ।

कुण्डलिनी जागरण एक प्रकार की अग्नि परीक्षा है । तपाने पर सोने के साथ जो मिलावट होती है वही जलता है । खरे सोने वाले भाग को कोई आँच नहीं आती, वरन् उसकी कान्ति और भी अधिक निखर जाती है । अप्रामाणिकता का संदेह टूट जाता है और खरे सोने का मूल्यांकन हर ग्रहक करता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । जाग्रत कुण्डलिनी वाला साधक शक्तिशाली बनता है । उसकी काया का ढाँचा तो पूर्ववत् रहता है किन्तु उस पिंजर के भीतर ऐसी विद्युत जाग्रत होती है जो अन्तःजागरण और बाह्य वातावरण के परिवर्त्तन के उभयपक्षीय प्रयोजन साधती है ।

अग्नि प्रज्जवलित होने पर कई काम सधते हैं । उससे कीचड़, सीलन, सड़न सुखाई जा सकती है । भोजन पकाया जा सकता है । कूड़ा जलाया जा सकता है । अवे में लगाये गये मिट्टी के बर्तनों को तपाया जा सकता है । धातु शोधन का काम हो सकता है । ऐसे-ऐसे अनेकों काम उससे हो सकते हैं । कुण्डलिनी की अग्नि अन्तराल में जगाने से ठंडक लगने की कठिनाई तत्काल दूर होती है । अग्नि से भूख बुझाने वाली रसोई पकती है । गीले और बदबू वाले कपड़े सूखकर निर्मल बनते हैं । यह निजी लाभ हुए । बाहर के क्षेत्र में अनेकों व्यवसायिक प्रयोजन पूरे होते है । लुहार हलवाई सुनार, कुम्हार अपनी-अपनी भट्टियाँ जलाते हैं और उपयोगी वस्तुएँ विनिर्मित करते है । कुण्डलिनी शक्ति से भौतिक क्षेत्र की अनेक कठिनाइयों का निराकरण और उपयोगी सुविधाओं का सम्वर्धन होता चला जाता है । अग्नि का देव पूजन में भी प्रयोग होता है । दीपक अगरबत्ती आरती, हवन आदि में अग्नि का उपयोग होता है । दैवी शक्तियों को सान्निध्य प्राप्त करके सम्पर्क बढ़ाने में भी उसका उपयोग है । इतना ही नहीं, कई बार तो गैस वैल्डिंग के सहारे दो धातु खण्डों को मजबूती के साथ जोड़ भी दिया जाता है । जहाँ यह जोड़ होता है वहाँ से टूटने का खतरा नहीं रहता चाहे अन्यत्र से भले ही झुक या टूट जाये । देवी उपासनाओं में साधारणतया भावनात्मक ज्वार भाटे आते रहते हैं । कभी भक्ति भावना का आवेश ऊँचे दर्जे तक की उष्णता ले आता है । कभी वह दूध के झाग या पानी के बुलबुले जैसा नीचे बैठ भी जाता है किन्तु यदि उसमें कुण्डलिनी शक्ति का समावेश हुआ हो तो स्थिरता यथावत् बनी रहती है ।

संचित कुसंस्कार भी उभरे रहते हैं । द्रब गर्मी के दिनों में सूख जाती है और वर्षा में फिर हरी भरी हो जाती है, इसी प्रकार मनुष्य के कुसंस्कार भी परिस्थितिवश सूख जाने पर भी सजीव हो उठते हैं । विश्वामित्र कठोर तपस्वी व ऋषि थे पर मेनका का आग्रह वे न टाल सके । उन्होंने गृहस्थी बनायी और सन्तानोत्पादन किया । किन्तु जिनके संस्कार जड़ मूल से ही जल जाँय उनके सामने ऐसी विपत्ति आने की कोई संभावना नहीं रहती । शुकदेव की स्थिति अपने पिता वेद व्यास से सर्वथा भिन्न थी । वेदव्यास ने आग्रह मानकर अपनी भावजों से सन्तानोत्पादन की स्वीकृति दे दी पर शुकदेव जन्मते ही वन में तप करने को चले गये । पिता समेत सभी इसके विरुद्ध थे और उन्हें रोकने मनाने का प्रयत्न कर रहे थे । पर उन्होंने किसी का भी कहना न माना और अपने व्रत पर दृढ़ रहे । उनकी परीक्षा के लिए इन्द्र ने रम्भा अप्सरा को भेजा, पर उन्होंने तनिक से शब्दों में उसे निरुत्तर करके वापस भेज दिया । इसे कहते हैं कुसंस्कारों का जल जाना । पेड़ का तना काट दिया जाये और जड़ें हरी बनी रहें तो जड़ों में से अंकुर फूटने लगते हैं, किन्तु यदि जड़ को खोदकर फेंक दिया जाये या जला दिया जाये तो उसके फिर से उगने की सम्भावना नहीं रहती । कुण्डलिनी शक्ति संचित, प्रारब्ध, और क्रियमाण मात्र तीनों ही प्रकार के कर्मों को जलाकर भस्मसात कर देती है । इसमें तपा या पका हुआ साधक पक्की ईंट जैसा मजबूत हो जाता है ।

आयुर्वेद के ज्ञाता रस, भस्में बनाते हैं । उन्हें शतपुटी सहस्रपुटी, राजपुटी, अग्नि संस्कारों से बनाया जाता है । उन्हें संजीवनी की उपमा दी जाती है । यह अग्नि संस्कार ही है । कुण्डलिनी को योगाग्नि कहा गया है । यह एक प्रकार से प्राणाग्नि प्रज्जवलन की यजन प्रक्रिया है । उसमें पकाया हुआ साधक ऐसे ही बन जाता है जैसे सामान्य धातुओं से रस, भस्म बनकर संजीवन मूरि का काम देती है । कुण्डलिनी की अग्नि में तपा हुआ व्यक्ति भी इसी प्रकार असामान्य हो जाता है और उसकी क्षमताएँ असाधारण रूप से विकसित होती हुई देखी जा सकती हैं ।

भाप बिखरी हुई रहे तो उसका कोई महत्त्व नहीं, ऐसे ही हवा में उड़ जाती है । किन्तु यदि उसे एक घेरे में बन्द करके किसी स्थान विशेष तक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सीमित रखा जाये तो उसकी शक्ति से रेलगाड़ी के इंजन दौड़ने लगते हैं । प्रेशर कुकर मिनटों में खाना पकाने लगते हैं । इसी प्रकार समस्त शरीर में सोई और बिखरी हुई ऊर्जा जब कुण्डलिनी जागरण प्रयोगों द्वारा एकत्रित कर ली जाती है, तो आत्मिक ऋद्धियाँ और भौतिक सिद्धियाँ अनायास ही सशक्त हो उठतीं हैं । और उनके द्वारा अनेकों उपयोगी प्रयोजन सिद्ध किये जा सकते हैं ।

'पादुका पंचक' में कहा गया है–

'ब्रह्मरंध्रसरसीरूहोदरे नित्य,
लग्नमवदात् मद्भुतम् ।
कुण्डली विवरकाण्ड मंडितं,
द्वादशार्ण सरसीरुहं भजे ॥'

–पादुका पंचक

मस्तक के मध्य अधोमुख सहस्रार कमल है । उसके मध्य में अद्भुत पथ गामिनी शक्ति धारा है । उसे कुण्डलिनी कहते हैं ।

मूलाधार स्थित इस प्राण प्रवाह का क्षरण आमतौर से रतिक्रिया में किया जाता रहता है । उसे बचाया जा सके तो उस बचत से बहुमूल्य वस्तुयें खरीदी जा सकती हैं । योग साधना के दक्षिण मार्ग में ब्रह्मचर्य की सरल सर्वोपयोगी साधना का उल्लेख हैं । साधना का वाम मार्ग नेत्र है । उससे उन शक्ति को उत्तेजित करके ऐसी प्रक्रियाओं का वर्णन है, जिससे उस उत्तेजना में अगणित प्रसुप्त क्षमतायें जग पड़ें । उपयोग, क्षरण या विनोद के लिए नेत्र में काम–शक्ति को उत्तेजित करना और उससे लाभ उठाने के अद्भुत प्रयोगों का उल्लेख है । साधना के पंच 'म' कारों में एक मैथुन भी आता है । यह साधारण रतिक्रिया से सर्वथा भिन्न और अतीव विलक्षण प्रकार का है । चूँकि वह प्रसंग गुह्य है । सार्वजनिक उपयोग का भी नहीं । कहने–सुनने में अश्लील भी बन जाता है । लोग उसका अनैतिक प्रयोग भी कर सकते हैं, इसलिए तन्त्र की अन्य साधनाओं की तरह यह भी गुह्य प्रकरण में हो चला जाता है और केवल अधिकारी ही इस सन्दर्भ में चर्चा कर सकते हैं ।

शारदा तिलक तन्त्र, कुलाचवि तन्त्र, महामन्त्र आदि में भैरवी चक्र का वर्णन है । रामकृष्ण परमहंस की जीवनी में उनकी गुरुमाता ने उनसे 'कुमारी पूजन' की साधना कराई थी । परमहंस जी की धर्मपत्नी शारदामणि बड़े संकोच से ही उस सन्दर्भ में सहयोग के लिए उद्यत हुई थीं । इस प्रकार के और भी साधन विधान है, जिनमें कामोत्तेजना को मनस्विता में परिणत करने का वैसा ही प्रयोग है,जैसा कि गिरते हुए जल प्रवाह की शक्ति का उपयोग करके बिजलीघर बनाये जाते हैं । अथवा बहती हुई तेज हवा की क्षमता से पनचक्की चलाई जाती हैं ।

कहने का तात्पर्य इतना भर है कि काम–शक्ति केवल घृणित प्रयोजनों में अपव्यय करने के लिए नहीं वरन् अन्तरंग में अवस्थित गुह्य शक्तियों के जागरण के काम भी आती हैं और यदि उसका अपव्यय किया जाये तो शरीर को कम और प्राण को अधिक क्षीण कर देती है । प्रकट है कि हमारे आहार से क्रमशः रस, रक्त, माँस, अस्थि, मज्जा, भेद आदि बनने के उपरान्त अन्तिम धातु रजस (वीर्य) बनता है । और यही रजस अन्ततः स्थूल से सूक्ष्म बनकर ओजस् एवं तेजस् के रूप मे परिणत हो जाता है । चेहरे पर चमक, नसों में स्फूर्ति, मन में उमंग, अन्तरंग में आकांक्षायें, स्वभाव में दृढ़ता और शौर्य यह सारे चमत्कार शरीर और मन के क्षेत्र में काम करने वाले ओजस् के हैं और यह तेजस् की ही परिणित है । किशोर अथवा कुमार अवस्था में यह तत्त्व बढ़ता एवं सुरक्षित रहता है, इसलिए किशोर और किशोरियों में–युवा और युवतियों में चंचलता, सक्रियता, उमंग और विनोद की मात्रा पर्याप्त मात्रा में रहती है । गृहस्थ में पड़ने के बाद लड़के और प्रजनन के बाद लड़कियाँ इस तत्त्व से वंचित होने लगते हैं और उनमें अन्य मनस्कता, आलस्य तथा जैसे–तैसे समय गुजारने की मनोदशा बन जाती है । अविवाहित दिनों में जो उमंगें उनके शरीर और मन में काम करती थीं, वे समाप्त हुई दीखने लगती हैं । यह परिवर्तन ओजस की न्यूनता ही जाने से हो जाता है । 'तेजस्' की क्षति 'ओजस्' की कमी के रूप में प्रत्यक्ष देखी जा सकती है । इसलिए आत्म–बल का महत्त्व मानने वाले सदा ब्रह्मचर्य के सम्बन्ध में सतर्क रहते हैं । गृहस्थ में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रहते हुए भी अधिक संयम बरता जा सकता है । इससे पति–पत्नी दोनों को लाभ होता है । यदा–कदा किया हुआ समागम भी बहुत तृप्ति देता है । सुसन्तति का उत्पादन लम्पट दम्पत्तियों के लिए सम्भव नहीं । जो दम्पत्ति इस सन्दर्भ में मर्यादायें तोड़ेंगे, उन्हें अपनी शारीरिक, मानसिक क्षमतायें घटाने की तो हानि होगी ही, साथ ही सन्तान भी दुर्बल शरीर और मन वाली ही पल्ले पड़ेगी ।

प्राण शक्ति का केन्द्र–बिन्दु मूलाधार चक्र है । यह जननेन्द्रिय के समीप होने से अपना शक्ति प्रवाह समीपवर्ती उपकरण में अधिक बहा देता है । इसलिए अध्यात्म मार्ग के पथिकों को इस दिशा में अधिक सतर्कता बरतनी पड़ती है । काम का दुरुपयोग ही बुरा है । उसकी उपस्थिति शरीर और मन की मूर्छना को हटाकर सर्वतोमुखी सक्रियता एवं प्रखरता उत्पन्न करती है । इस वेग को किसी प्रकार मोड़ा जा सकता है और उस दिशा परिवर्तन को जीवनी शक्ति के अभिवर्धन एवं मनस्विता के उन्नयन में किस प्रकार प्रयुक्त किया जा सकता है, इसका एक समग्र शास्त्र है । तन्त्र मार्ग में इनको उत्तेजित करके उस दीप्त शक्ति पुञ्ज को विविध प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त करने की प्रणाली निकली है । इसके अनुसार कामुकता का अभिवर्धन और नियन्त्रण का प्रकरण मनस्विता की उपलब्धि और अतिशय सुप्त शक्तियों के जागरण में आश्चर्यजनक सफलता के लिए प्रयुक्त हो सकती है ।

प्राण शरीर में सक्रियता स्फूर्ति एवं रोग निवारिणी जीवनी–शक्ति के रूप में चमकता है । मन में उसे साहस, धैर्य, सन्तुलन और विनोद के रूप में देखा जा सकता है । जिनका प्राण दुर्बल है, वे आलस्य, अनुत्साह, अवसाद और दीर्घ सूत्रता में ग्रसित पाये जायेंगे । काम करने को जी ही न करेगा–करेगा तो आधे अधूरे मन से बेगार भुगतायेंगे । चेहरा निस्तेज और आँखें निराशा, संकोच एवं आशंका से डूबी हुई डबडवाई भी दीखेंगी । मन को प्राण का ईंधन न मिला तो वह भी बुझा मुरझाया पड़ा रहेगा । ऐसी शारीरिक और मानसिक दुर्बलतायें प्राण शक्ति की न्यूनता एवं क्षीणता व्यक्त करती हैं । कुण्डलिनी साधना का प्रयोग इन अभावों की पूर्ति सहज ही कर सकता है । और उसकी उच्चस्तरीय प्रगति व्यक्ति की प्रचण्ड शक्तियों और अद्भुत सिद्धियों का भाण्डागार सिद्ध कर सकती है ।

जिसकी कुण्डलिनी जाग्रत है, उसकी काया में ओजस् का प्राण प्रवाह फूलता रहता है । वह सम्पर्क में आने वालों को अपने अनुकूल–अनुरूप बना सकता है । अपने प्रभाव से निकटवर्ती वातावरण को विशेष स्तर का बना सकता है । ऋषियों के आश्रम में सिंह, गाय एक घाट में पानी पीते थे । हिलमिल कर रहते थे । पर जब वहाँ से चले जाते थे तो पूर्ववत् व्यवहार करने लगते थे । प्राण शक्ति का चमत्कार सीमित क्षेत्र में चमत्कार दिखाता है । कुण्डलिनी की क्षमता से साहस और प्रभाव असीम मात्रा में उभरता है । इससे साधक का न केवल आत्म–विश्वास उभरता है, वरन् उसकी क्रिया प्रभाव में भी अनेक गुना कौशल भर जाता है । जीवन सामान्य स्तर का न रहकर असामान्य बन जाता है । अनेकों को शक्ति प्रदान करना, उन्हें ऊँचा उठाना, आगे बढ़ाना ऐसे ही लोगों से बन पड़ता है, जिनके काय कलेवर प्राण ऊर्जा की अतिरिक्त मात्रा से भरे होते हैं । यह जीवनचर्या के संयम, अनुशासन, आत्म–विश्वास और महान दायित्वों के परिवाहन से ही संभव हो सकता है । उसका साधनात्मक तरीका यह भी हो सकता है कि कुण्डलिनी जागरण की विधा अपनाई जाये । इसमें जननेन्द्रिय मूल में सन्निहित महासर्पिणी जैसी प्राण ऊर्जा को जगाया जाता है । वह ज्वाल–माल की तरह ऊँची उठकर मेरुदण्ड मार्ग से मस्तिष्क मध्य ब्रह्मरंध्र तक पहुँचती है । मेरुदण्ड मार्ग से गुजरते हुए उसे उस प्रवाह में विद्यमान छै चक्रों का–चक्रवातों का–भँवरों का वेधन करना होता है । इन केन्द्रों की प्रसुप्त शक्ति जब जाग्रत होती है तो अपने निकटवर्ती पदार्थों प्राणियों को प्रभावित करती है । एक सीमा तक वातावरण में भी अभीष्ट परिवर्तन करती है । ऐसी अनेक कसौटियों पर कसने से प्रतीत होता है कि स्वस्थ सामान्य जनों में पाई जाने वाली समर्थता की तुलना में उनकी क्षमता कहीं अधिक विकसित होती है । जिन्होंने उस क्षेत्र की प्राण प्रक्रिया को जगा लिया है । पंचतत्त्वों में पंच प्राणों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का समन्वय हो जाने पर अनेक स्तर के प्रभाव–चमत्कार दीख पड़ते हैं । आवश्यक नहीं कि उन्हें मैस्मेरिज्म–हिप्नोटिज्म की तरह प्रदर्शन के लिए प्रयुक्त किया जाये । बढ़ी हुई क्षमता को उन महत्त्वपूर्ण कार्यों के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है, जिन्हें महामानवों द्वारा सम्पन्न किये गये महान कार्यों के समतुल्य समझा जा सके । मानवी विद्युत का एक स्वरूप शरीर के इर्द–गिर्द विद्यमान तेजोवलय के रूप में जाना जाता है । यह एक समर्थ कवच है जो बाहरी आघात आक्रमणों से रक्षा करता है और अन्यान्यों को अपने अनुशासन में चलने के लिए बाधित कर सकता है । ओजस् सचमुच ही शरीर क्षेत्र का एक विद्युत भण्डार है जिसे समयानुसार अभीष्ट प्रयोजनों के लिए सफलतापूर्वक प्रयुक्त किया जा सकता है ।

ओजस् का वैज्ञानिक पर्यवेक्षण प्राण ऊर्जा, और 'आरा' (तेजोवलय) के रूप में देखा गया है । वह शरीर के चारों ओर छै इंच की दूरी तक फैला हुआ विशेष यंत्रों द्वारा देखा जा सकता है । चेहरे पर उसकी मात्रा, सघनता की परिधि अधिक होती है । इसे एक प्रकार की माप समझा जा सकता है । चूल्हे पर पानी चढ़ा देने से उसमें से भाप उठती है । यह भाप निकट क्षेत्र में तो खुली आँखों से भी देखी जा सकती है, पर कुछ ऊँची उठने के बाद वह बिरल एवं अदृश्य हो जाती है । फिर भी उसका अस्तित्त्व बना रहता है । रात्रि को शीतलता का सम्पर्क होने पर वह घास–पात पर ओस बिन्दु बन कर जमा हो जाती है । इसी प्रकार स्थूल शरीर एवं उसमें समाई हुई प्राण चेतना का समन्वय जब क्रियाशील होता है तो उस ऊर्जा का भीतरी क्रिया–कलाप चलने के अतिरिक्त त्वचा के बाहर भी उसका फैलाव होता है । यही ओजस् या तेजोवलय है ।

तेजोवलय अपना काम अनायास ही अपने ढंग से करता रहता है । शरीर के ऊपर वह रक्षा कवच की तरह चढ़ा रहता है । बाहरी आक्रमणें से रक्षा करता है । जो हानिकारक तत्त्व–विषाणुओं के रूप में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष आक्रमण होते रहते हैं, उन प्रहारों से बचाव करता है । सामान्य जनों को वातावरण का सम्पर्क का प्रभाव अपनी ओर खींच ले जाता है, हावी हो जाता है । फलतः व्यक्ति अपने को असहाय अनुभव करता है और बिल्ली के मुँह में दबे चूहे की तरह समीपवर्ती प्रभावों से प्रभावित होता चला जाता है । अपनी निरोधक शक्ति प्रायः सीमित, न्यून पड़ने लगती है । जीवट भी स्वल्प मात्रा में होती है । किन्हीं कारणों से मनुष्य देखने में भला चंगा होने पर भी भीतर से खोखला बना रहता है– यही वास्तविक दुर्बलता है । इस स्तर के दुर्बल व्यक्ति न पराक्रम कर पाते हैं और न साहस दिखा पाते हैं । सृजन प्रयोजनों में उनका व्यक्तित्त्व बहुत हलका पड़ता है । प्रकृतिगत वातावरणजन्य मानसिक प्रहार एवं पतनोन्मुख आकर्षण इन दुर्बलों को चाहे जिस दिशा में घसीटते और कठपुतली की तरह नचाते रहते हैं ।उनकी अपनी सृजन क्षमता, संकल्प शक्ति कुछ ऐसा नहीं कर पाती कि अपनी आकर्षण शक्ति से अभीष्ट सहयोग सम्मान, विश्वास खींचकर बुला सके । आवश्यक साधन जुटा सके । इस अभाव को अध्यात्म की भाषा में ओजस् की कमी कह सकते हैं, जिसे उपकरणों से अथवा दिव्य चक्षुओं के प्रत्यक्ष भी देखा जा सकता है । तेजोवलय वस्तुतः अन्तरंग में समाहित प्राण शक्ति का बाहर झाँकता हुआ मँडराता हुआ स्वरूप है । इसे दृष्टि कौतुक या विज्ञात का ज्ञान भर नहीं समझा जाना चाहिए, वरन् यह मानकर चलना चाहिए कि बलिष्ठता का यह जीवन्त प्रमाण परिधान है ।

तेजोवलय की स्थिति में प्रयत्नपूर्वक परिवर्तन किया जा सकता है । वह उच्चस्तरीय भी होता है और निकृष्टतम भी । रूप सौंदर्य वाले व्याभिचारियों में, वेश्याओं में, ठगों में, क्रूर आक्रान्ताओं में यह भयावह स्तर का होता है । इसे असुरता का परिचायक कह सकते हैं । इसका सघन होना धारणकर्त्ता के पतन का द्वार खोलता है । जिस पर प्रभाव छोड़ता है उसे अशक्त, असहाय बनाकर निर्जीव पराधीन की स्थिति में ला पटकता है । इस आसुरी तेजोवलय का रंग कालिख लिए हुए होता है । दैत्य–दानवों की आकृतियाँ काले रंग की चित्रित की जाती हैं । पर यह त्वचा की निरख–परख पर लागू नहीं होती । गोरे रंग के हिटलर एवं नीत्से जैसे महत्त्वाकांक्षी व्यक्तित्त्वों का व्यक्तित्त्व दानवी पाया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

गया । रावण आदि लंकावासी हो सकता है कि गोरे रंग के रहे हों । उष्ण कटिबन्ध क्षेत्र में रहने वाले सभी निवासियों की चमड़ी काली होती है, पर उनमें भी सज्जनता का बाहुल्य पाया जाता है । इस प्रकार रंगों का निर्धारण त्वचा को देखकर नहीं, तेजोवलय में घुले काले रंगों को देखकर किया जाता है । सन्त, सज्जन एवं देव प्रकृति के लोगों का तेजोवलय पीली झलक लिए हुए प्रतीत होता है । वे समीपवर्ती लोगों को विविध-विधि अनुग्रह, अनुदान अनायास ही देते रहते हैं ।

तेजोवलय की न्यूनाधिकता तथा रंगों की झलक देखते हुए व्यक्ति की शारीरिक, मानसिक स्थिति का अन्तःस्वरूप जाँचा जा सकता है । भले-बुरे की, दुर्बल-सबल की, दुर्जन-सज्जन की परख की जा सकती है । उनसे बचा अथवा लिपटा जा सकता है । व्यक्तित्त्वों का विश्लेषण इस आधार पर हो सकता है । किस के शरीर में कहाँ किस प्रकार के विजातीय द्रव्य जमा हैं, इस प्रकार का रोग निदान जहाँ अंग-परीक्षण की अन्यान्य निदान पद्धतियों द्वारा होता है, वहाँ वह कार्य विभिन्न स्थानों से शरीर में उभरने वाले भिन्न-भिन्न स्तर के तेजोवलय को देखते हुए भी वस्तुस्थिति समझ कर सम्पन्न किया जा सकता है । इसी प्रकार मानसिक न्यूनताओं, विपन्नताओं को भी समझा जा सकता है । चरित्र का भी बहुत हद तक पता लगाया जा सकता है । तेजोवलय को देख पढ़ सकने की प्रक्रिया यदि किसी को हस्तगत हो सके तो वह दूसरों के बारे में इतना अधिक जान सकता है जितना कि गहरी जाँच-पड़ताल से भी संभव नहीं । इस आधार पर अनुपयुक्त सम्पर्क से बचा जा सकता है और उपयुक्त सान्निध्य से शक्ति वर्षा जैसा लाभ उठाया जा सकता है ।

तेजोवलय मात्र स्थिति का परिचायक नहीं है । उसे घटा-बढ़ाकर दूसरों की स्थिति में ऐसा परिवर्तन किया जा सकता है । जिससे समग्र सन्तुलन बन सके । विपन्नता सुधारी और सुसंस्कारिता बढ़ाई जा सके ।

जिस प्रकार पैसे के लेन-देन से रुके व्यवसाय चल पड़ते हैं । उसी प्रकार तेजोवलय की आवश्यक मात्रा किसी को हस्तान्तरित करके उसके द्वारा शारीरिक रोगों से मानसिक उद्वेगों से, प्रतिकूलता भरे संकटों से, अभावों से, कषाय-कल्मषों से भी छुटकारा दिलाया जा सकता है । यह एक बड़ी उपलब्धि है । शरीर में मांस तो खा-पीकर भी बढ़ाया जा सकता है, पर उसमें प्राण तत्त्व की प्रचुरता भर लेना यह एक असाधारण कौशल एवं पुरुषार्थ है । इसे पाकर निजी व्यक्तित्त्व को समुन्नत स्तर का प्रभावशाली प्रतिभावान बनाया जा सकता है । इसके अतिरिक्त यह भी हो सकता है कि सम्पर्क क्षेत्र में इतना अदृश्य अनुदान बाँटा जा सके जिसकी तुलना कर्ण जैसे दानवीर से की जा सके ।

इस हेतु प्राण अभिवर्धन के लिए साधनात्मक प्रयोग करने पड़ते हैं । इसके लिए प्राण योग से सम्बन्धित ऐसी साधनाएँ करनी पड़ती हैं जो अपने स्तर के अनुरूप हों । सभी भेड़ों को तो एक लाठी से हाँका जा सकता है पर ऐसा नहीं हो सकता कि सभी साधकों को एक ही साधना बताई जा सके । रोग निदान व उनकी स्थिति में भिन्नता के आधार पर उन्हें भिन्न-भिन्न औषधियाँ दी जाती हैं । भले ही वे स्वस्थता के लिए लालायित एक जैसी मनःस्थिति के क्यों न हों ? यह बात साधना के सम्बन्ध में भी है । प्राणयोग के अन्तर्गत प्राणोत्कर्षण का, प्राणायाम प्रक्रिया का सर्वसुलभ आरम्भिक प्रयोग हैं । पर उसे अन्त नहीं आरम्भ समझना चाहिए और उसका अभ्यास बन पड़ने पर अपने अनुकूल प्राणयाम चुनना चाहिए । लोभ-विलोम प्राणायाम सूर्य वेधन प्राणायाम तथा नाड़ी शोधन प्राणायाम आदि के अपने-अपने विधान हैं, जिनका विस्तार प्रसंग आने पर उपयुक्त मार्ग-दर्शक से समझा जा सकता है ।

संकल्प शक्ति को बढ़ाना भी इसी प्रक्रिया का व्यावहारिक पक्ष माना गया है । इसके लिए आत्म संयम एवं परमार्थ के छोटे-छोटे पुण्य प्रयासों के ऐसे संकल्प लेने चाहिए जो सरल भी हों और नियत अवधि में निश्चित रूप से पूरे भी हो सकें । जो अपनी स्थिति एवं रुचि के अनुरूप हों उसके लिए व्रत लेने का साहस करना चाहिए, जो उसे हर हालत में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

करते रहने का प्रण करना चाहिए । इतनी तत्परता और तन्मयता उसमें नियोजित करनी चाहिए । जिससे उसका पूरा कर सकना सुनिश्चित रूप से सम्भव हो सके । ऐसे छोटे-छोटे व्रत लेते रहने और पूरे करते चलने की श्रृंखला मनोबल बढ़ाने में अत्यन्त सहायक होती है । घरेलू एवं व्यावसायिक क्रियाकलापों को नित्य ही करना पड़ता है । उनका अनुमान अभ्यास भी रहता है, किन्तु व्रत धारण एवं पुण्य-परमार्थ की दिशा में कहना-सुनना ही बन पड़ता है । उसे व्यवहार में उतारने का यदा-कदा ही अवसर मिलता है । इस उपेक्षित दिशा में प्रगति होनी चाहिए, तभी प्राण चेतना को बढ़ा सकना सम्भव है ।

प्राण तत्त्व का केन्द्र मूलाधार स्थिति व कुण्डलिनी है । वही मनुष्य में उच्चस्तरीय समर्थता का आधार है । तेजोवलय के रूप में उसी की व्याख्या-विवेचना होती है । इस दिव्य क्षमता को उपलब्ध करने के लिए जहाँ योग साधनाओं का महत्त्व है वहाँ संकल्प शक्ति का भी स्थान है । यों तो कुण्डलिनी शक्ति कायकलेवर के प्रत्येक कण में समाहित है । शरीर के अंग अवयवों और मस्तिष्क के क्रियाकलापों में यह प्राण विद्युत ही खपती है और उसी के बलबूते यह सारा कल कारखाना चलता है । किन्तु अतिरिक्त ऊर्जा की तब जरूरत पड़ती है, जब जीवन यात्रा से कहीं आगे बढ़कर लोकमंगल एवं सार्वजनिक हित के कोई बड़े काम हाथ में लेने पड़ते हैं । ऐसी स्थिति में कुण्डलिनी द्वारा उत्पादित प्राणशक्ति ही काम करती है । फिर भी यह ध्यान रखने योग्य बात है कि वह शरीर तंत्र में उत्पादित होने के कारण होती भौतिक स्तर की ही है । इस आधार पर सूक्ष्म किया गया महाप्राण सांसारिक प्रयोजनों में विशेषतया व्यक्तिगत स्वार्थ सम्पादनों में ही प्रयुक्त होता है । इसे पाकर मनुष्य दैत्यवत् जांइटवत् हो जाता है । उसे किस प्रयोजन में नियोजित करें यह लक्ष्य स्पष्ट न रहने पर तो उसका दुरुपयोग भी हो सकता है । इसीलिए कुण्डलिनी शक्ति जागरण के साथ उच्चस्तरीय लक्ष्य निर्धारण को प्रमुखता दी गयी है ।

कुण्डलिनी जागरण प्रक्रिया के आधार पर योगों की सिद्धि हो सकती है और कालजयी बना जा सकता है । स्वयं महाप्राण बना जा सकता है और इन शक्तियों को एक शक्तिवान् अपने भण्डार में से दूसरों को दे सकता है तथा उसे अपने स्तर से कहीं ऊँचा उठा सकता है । इसे शक्ति संचार कहते हैं । इससे प्रभावित व्यक्ति दुर्बल, अल्पशिक्षित प्रतीत होते हुए भी ऐसे पराक्रम करते देखे गये हैं, जो बलवानों और विद्वानों के भी कान काटने लगे । विवेकानन्द ने अमेरिका में जो भाषण दिये थे, वे इतने उच्चकोटि के थे कि उनके निजी अध्ययन और अनुभव को देखते हुए कहीं अधिक उच्चकोटि के तथा प्रभाव की दृष्टि से आश्चर्यचकित करने वाले थे । यह विशेषता उन्हें अपने गुरु रामकृष्ण परमहंस से अनुदान के रूप में उपलब्ध हुई थी । गुरु मत्स्येन्द्र नाथ एवं जन्म से ही सिद्ध पुरुष के रूप में विख्यात गोरखनाथ के घटना प्रसंग भी यही बताते हैं कि प्राण चेतना के प्रभाव से आश्चर्यजनक परिवर्तन प्रस्तुत किये जा सकते हैं ।

वस्तुतः कुण्डलिनी उस सार्वभौमिक जीवन तत्त्व को कहते हैं जो इस विश्व के कण-कण में प्राण चेतना रूप में संव्याप्त है । इसके भीतर आकर्षण एवं विकर्षण की दोनों ही धारायें विद्यमान हैं । इन्हें स्थूल रूप में विद्युत और चुम्बकत्त्व के रूप में प्रत्यक्ष प्रतिपादित भी किया जा सकता है । प्रख्यात मनीषी हर्बर्ट स्पेन्सर के अनुसार इसे जीवन का सार-"ऐसेन्स आफ लाइफ" कहा जाना चाहिए । इसका इसाई धर्म की महान् पुस्तक बाइबिल में-"महान सर्प" के रूप में उल्लेख किया है । तंत्र विज्ञान में इसी को ईश्वरीय प्रकाश या दिव्य प्रकाश-"एस्ट्रल लाइट" के नाम से सम्बोधित किया गया है । पारसी धर्म में इसे "सीक्रेट फायर" कहा गया है । इसी से मानवी सत्ता का हर क्षेत्र प्रभावित किया जा सकता है । यह मूलतः प्राणग्नि है जो चेतना के मंथन से उत्पन्न होती है । आज तो इसे "चक्र मशीन" व इलेक्ट्रो मीटर द्वारा स्थूल दृष्टि से मापा भी जा सकता है ।

साधनाशास्त्रों में पवित्र जीवन अग्नि के रूप में कुण्डलिनी शक्ति का वर्णन किया गया है । प्रदीप्त अग्नि जिस प्रकार अपने क्षेत्र को उष्ण एवं प्रकाशवान् बना देती है, वैसा ही प्रकाश कुण्डलिनी जागरण का होता है । योगकुण्डल्युपनिषद् में कहा गया है-"अग्नि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और प्राणवायु दोनों के आघात से प्रसुप्त कुण्डलिनी जाग पड़ती है और ब्रह्मग्रन्थि, विष्णुग्रन्थि, रुद्रग्रन्थि तथा षट्चक्र का भेदन करती हुई सहस्रार कमल में जा पहुँचती है । वहाँ यह शक्ति शिव के साथ मिलकर आनन्द की स्थिति में निवास करती है । वही श्रेष्ठ परास्थिति है । ऋद्धि-सिद्धियों का-मोक्ष का कारण है ।"

जो ब्रह्माण्ड में है वही पिण्ड में भी है । आकाश का सूर्य सहस्रार-मस्तिष्क है तो पृथ्वी एवं समुद्र की तरह मूलाधार । यह दोनों अपना आदान-प्रदान क्रम जारी रखने के लिए जिस मेरुदण्ड का आश्रय लेते हैं, वही कुण्डलिनी है । हठयोग के अनुसार उसी के मध्यवर्ती भँवर चक्रवात षट्चक्र हैं । यह ऐसे प्राणशक्ति के निर्झर स्रोत हैं जो समूची कायसत्ता और अन्तः चेतना को प्रभावित करते हैं । इन अदृश्य एवम् अविज्ञात प्रसुप्त क्षमताओं को जाग्रत-उत्तेजित करके साधक अपने को ऐसा शक्ति पुञ्ज बनाता है जो उसे देवोपम बना सके । यही कुण्डलिनी जागरण है और विश्वशक्ति का मानवीकरण भी ।

कुण्डलिनी का निवास स्वरूप और प्रतिफल

बहुमूल्य सम्पदाएँ पृथ्वी की गहराई में दबी पड़ी हैं । खनिज, कोयला, लोहा, सोना को प्राप्त करने के लिए भूमि को गहरा खोदना पड़ता है । इतने श्रम के उपरान्त ये वस्तुएँ प्राप्त हो पाती हैं । मोती सामान्य नदी-नालों में नहीं समुद्र की गहराई में पाया जाता है । दुस्साहसी उन्हें करतलगत करने के लिए जीवन की वाजी लगा देते हैं । उथले पानी का पर्यवेक्षण करने वाले मछुआरे मछलियाँ ही प्राप्त कर पाते हैं । समुद्र के किनारे खड़े रहने वालों के हाथ पत्थर और बालू ही आता है । कीमती वस्तुओं की उपलब्धि के लिए अभीष्ट मात्रा में पुरुषार्थ की आवश्यकता पड़ती है और उसी अनुपात में साहस एवं मनोयोग की भी ।

प्रकृति की व्यवस्था भी कुछ ऐसी है कि बड़ी सम्पदाएँ पुरुषार्थी को ही मिलें । यही कारण है कि उसने भौतिक सम्पदाओं को पृथ्वी के-समुद्र के धरातल में छिपाकर रखा है । ताकि पुरुषार्थ से हीन, आलसी और अकर्मण्य व्यक्ति उन्हें न प्राप्त कर सके । मनुष्य शरीर को परमात्मा की सर्वोत्तम कृति माना गया है । सर्वोत्तम इन अर्थों में कि इसके विकास की असीम सम्भावनाएँ हैं । काया के अन्तरंग में शक्ति के स्रोत छिपे पड़े हैं । उन्हें जगाया एवं उपयोग में लाया जा सके तो मनुष्य असाधारण सामर्थ्य का स्वामी बन सकता है । अन्तः शक्ति स्रोतों को जगाने के लिए भी असामान्य साहस जुटाना पड़ता है । कठोर साधना पुरुषार्थ का परिचय देना होता है ।

सामान्यतया शरीर उतनी ही आवश्यकताओं की पूर्त्ति कर पाता है जितनी कि जीवन निर्वाह के लिए आवश्यक है । खाने-पीने, सोने, श्रम करने सम्पति उत्पादन जैसे प्रयोजन ही पूरे होते हैं । शरीर सामर्थ्य की इतने में ही इतिश्री समझ ली जाती है । शरीर के अन्तराल शक्ति के प्रचण्ड स्रोत भी हो सकते हैं इसका अनुमान भी नहीं हो पाता । जिन्हें होता भी है वे साधना के लिए इतना पुरुषार्थ साहस एवं धैर्य नहीं जुटा पाते । फलतः असीम शक्ति के लाभों से वंचित बने रहते हैं । पेट और प्रजनन तक में ही उनका जीवन समाप्त हो जाता है । जबकि साधना के लिए साहस जुटाने वाले व्यक्ति अपने अन्तराल में प्रविष्ट करते हैं । इनका काम वैसा ही होता है । जैसा कि एक वैज्ञानिक का धूल जैसे परमाणु कणों से परमाण्विक ऊर्जा प्राप्त करना । फलतः शरीर के सूक्ष्म परतों में दबी शक्ति को करतलगत करके असीम शक्ति से सम्पन्न बन जाते हैं । साधक योगी इसी स्तर के होते हैं ।

शरीर में अनेकों मर्म स्थान ऐसे हैं जिनका महत्त्व वैज्ञानिक दृष्टि से भी असाधारण है और अध्यात्मिक दृष्टि से भी । विज्ञान को अभी इन केन्द्रों के सम्बन्ध में विशेष जानकारी तो नहीं मिल पायी है, पर उनका विश्वास है कि शरीर संस्थान के संचालन में उनकी विशेष भूमिका होनी चाहिए । अध्यात्म विज्ञानवेत्ता इन मर्मस्थलों की शक्ति से परिचित रहे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं । उनके जागरण का उपाय विभिन्न योग ग्रन्थों में दिया गया है ।

ऐसे मर्मस्थलों में मेरुदण्ड शरीर का प्रमुख स्थान है । यह शरीर की आधारशिला है । मेरुदण्ड छोटे-छोटे तैतीस अस्थि खण्डों से मिलकर बना है । योगियों को प्रत्येक खण्डों में ऐसी विशेष शक्तियाँ परिलक्षित होती हैं जिनका सम्बन्ध दैवी शक्तियों से है । देवताओं में जिन शक्तियों का केन्द्र होता है वे शक्तियाँ भिन्न-भिन्न रूप में इन अस्थि खण्डों में पाई जाती हैं । इसलिए यह निष्कर्ष निकाला गया कि मेरुदण्ड तैतीस देवताओं का प्रतिनिधित्त्व करता है । आठ वसु, बारह आदित्य, ग्यारह रुद्र, इन्द्र और प्रजापति इन तैतीसों की शक्तियाँ उसमें बीज रूप में उपस्थित रहती हैं । पुराणों में देवताओं का निवास स्थान सुमेरु पर्वत बताया गया है वह वस्तुतः मेरुदण्ड ही है । उसके तैतीस गुटके, तैतीस देवता हैं ।

इस पोले मेरुदण्ड में शरीर विज्ञान के अनुसार अनेकों नाड़ियाँ हैं और वे विविध कार्यों में नियोजित रहती हैं । आध्यात्मिक विज्ञान के अनुसार उनमें प्रमुख तीन नाड़ियाँ हैं । इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना । इन तीनों को मेरुदण्ड को चीरने पर प्रत्यक्ष आँखों से तो नहीं देखा जा सकता क्योंकि उनका अस्तित्त्व सूक्ष्म है और सूक्ष्म जगत से सम्बन्धित है । यह एक प्रकार का विद्युत प्रवाह है । जिस प्रकार बिजली से चलने वाले यन्त्रों में ऋण और धन, निगेटिव और पॉजेटिव धाराएँ दौड़ती हैं और इन दोनों का जहाँ मिलन होता है, वहीं शक्ति पैदा हो जाती है इसी प्रकार इड़ा को निगेटिव और पिंगला को पॉजेटिव कह सकते हैं । इड़ा, को चन्द्रनाड़ी और पिंगला को सूर्य नाड़ी भी कहते हैं । दोनों के मिलने से जो तीसरी शक्ति पैदा होती है उसे सुषुम्ना कहते हैं । प्रयाग में गंगा और यमुना मिलती हैं । इस मिलन से एक तीसरी सूक्ष्म शक्तिधारा सरस्वती की विनिर्मित होती है । इस प्रकार दो नदियों के सम्मिलन से त्रिवेणी बन जाती है । मेरुदण्ड के अन्तर्गत भी ऐसी ही आध्यात्मिक त्रिवेणी है । इड़ा पिंगला की दो धाराएँ मिलकर सुषुम्ना की सृष्टि करती हैं । इस प्रकार त्रिवर्ग बन जाता है ।

यह त्रिवेणी ऊपर मस्तिष्क के मध्य केन्द्र से ब्रह्मरन्ध्र से सहस्रार कमल से सम्बन्धित और नीचे मेरुदण्ड का जहाँ नुकीला अन्त है वहाँ लिंग, मूल और गुदा के बीच 'सीवन' स्थान के सीध में पहुँचकर रुक जाती है । यही त्रिवेणी का अन्त है । सुषुम्ना नाड़ी के भीतर एक और त्रिवर्ग है । इसके अन्तर्गत भी तीन अत्यन्त सूक्ष्म धाराएँ प्रवाहित हैं । जिन्हें वज्रा, चित्रणी और ब्रह्म नाड़ी कहते हैं । ब्रह्म नाड़ी सब नाड़ियों का मर्मस्थल केन्द्र एवं शक्ति स्रोत है ।

ब्रह्म नाड़ी ही मस्तिष्क के केन्द्र में ब्रह्मरन्ध्र में पहुँचकर हजारों भागों में चारों ओर फैल जाती हैं । इसी कारण उस स्थान को सहस्र दल कमल कहते हैं । भगवान विष्णु की शैय्या सहस्र फनों पर होने का अलंकार भी उस सहस्र दल कमल से ही लिया गया है । सहस्र दल सूक्ष्म लोकों-विश्व व्यापी शक्तियों से सम्बधित है । यह मस्तिष्क का एरियल है जिसके द्वारा परमात्मा की अनन्त शक्तियों को सूक्ष्म लोक से पकड़ा जाता है ।

मेरुदण्ड के नीचे अन्तिम भाग में सुषुम्ना के भीतर रहने वाली ब्रह्म नाड़ी एक काले वर्ण के षट्कोण वाले परमाणु से लिपटकर बँध जाती है । षटकोण परमाणु को यौगिक ग्रन्थों में अलंकारिक भाषा में कूर्म कहा गया है । उसकी आकृति कछुए जैसी होती है । पृथ्वी कूर्म भगवान् पर टिकी है । शेषनाग के फन पर अवलम्बित है । इस उक्ति का आधार ब्रह्मनाड़ी की वह आकृति है जिसमें वह इस कूर्म से लिपटकर बैठी हुई है और जीवन को धारण किए हुए है । यदि वह अपना आधार त्याग दे तो जीवन भूमि के चूर-चूर हो जाने में थोड़ी भी देरी न लगे ।

कूर्म में ब्रह्म नाड़ी के गुन्थन स्थल को आध्यात्मिक भाषा में कुण्डलिनी कहते हैं । कुण्डलाकार होने के कारण ही उसका नाम कुण्डलिनी पड़ा । यह साढ़े तीन फेरे उस कूर्म में लगाये हुए हैं और मुँह नीचे की ओर है । कुण्डलिनी की महिमा, शक्ति एवम् उपयोगिता इतनी अधिक है । जितनी कि बुद्धि कल्पना भी नहीं कर सकती । भौतिक विज्ञान के अन्वेषकों के लिए परमाणु एक चमत्कार बना हुआ है । उसके तोड़ने की विधि प्राप्त हो जाने पर प्रचण्ड ऊर्जा का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्रोत वैज्ञानिकों के हाथ लग गया है अभी तो उसकी ऊर्जा के एक अंश का विध्वंशात्मक स्वरूप देखा गया है । रचनात्मक एवं शक्ति का एक बड़ा पक्ष अछूता है । यह तो जड़ जगत् के एक नगण्य से परमाणु की शक्ति की बात हुई जिसे देखकर आश्चर्यचकित हो जाना पड़ता है । फिर चैतन्य जगत् का एक स्फुल्लिग जो जड़ परमाणु की तुलना में अनन्त गुना शक्तिशाली है, कितना अद्‌भुत होगा यह कल्पना भी नहीं की जा सकती ।

विज्ञान की शक्ति एवं उपलब्धियों से सभी परिचित हैं । योग की उपलब्धियाँ हैं ऋद्धियाँ और सिद्धियाँ जिस प्रकार परमाणु की शोध में अनेकों वैज्ञानिक जुटे हैं उसी प्रकार पूर्वकाल के आध्यात्मिक विज्ञान वेत्ताओं तत्त्वदर्शी ऋषियों ने मानव शरीर के अन्तर्गत एक बीज परमाणु की अत्यधिक शोध की थी और उसकी असीम शक्ति से लाभ उठाया ।

दो परमाणुओं को तोड़ने, मिलाने स्थानान्तरित करने का सर्वोत्तम स्थान कुण्डलिनी केन्द्र में होता है क्योंकि अन्य सभी स्थानों के चैतन्य परमाणु गोल और चिकने होते हैं पर कुण्डलिनी में यह मिथुन के रूप में लिपटा हुआ है । जिस प्रकार युरेनियम एवं प्लूटोनियम धातु के परमाणुओं का गुन्थन ऐसे टेढ़े-तिरछे ढंग से हुआ है कि उनका तोड़ा जाना अन्य पदार्थों के परमाणुओं की अपेक्षा अधिक सरल है उसी प्रकार कुण्डलिनी स्थिति स्फुल्लिग परमाणुओं की गतिविधि का इच्छानुकूल संचालन अधिक सुगम है । अतएव पूर्वकाल के ऋषियों ने बड़ी तत्परता से कुण्डलिनी जागरण पर शोध की । शोध के परीक्षण एवं प्रयोगों के उपरान्त उन्होंने इतनी सामर्थ्य प्राप्त कर ली जिस से चमत्कार समझा जाता है ।

कुण्डलिनी को गुप्त शक्तियों का भण्डार-तिजोरी कहा गया है । बहुमूल्य रत्नों को तिजोरी में रखकर किसी गुप्त स्थान में रख दिया जाता है । उसमें मजबूत ताले लगा दिए जाते हैं जिससे कोई अनाधिकारी बाहरी व्यक्ति न प्राप्त कर सके परमात्मा ने भी मनुष्य की अनन्त शक्तियों के भण्डार दिये हैं उन पर छः ताले लगा दिये हैं । इन्हें ही षटचक्र कहते हैं । चक्रों के रूप में यह ताले इसलिए लगाये गये हैं कि कोई उन्हें कुपात्र न प्राप्त करले । कुण्डलिनी शक्ति पर लगे छः तालों-छः चक्रों को वेधना-खोलना पड़ता है । सामान्यतया कुण्डलिनी अस्त-व्यस्त स्थिति में मूलाधार में नीचे की ओर मुँह किए बैठी रहती है । उसे जागने के लिए सविता की प्राण शक्ति का आश्रय लेना होता है ।

गायत्री की उच्चस्तरीय साधना द्वारा मूर्छित पड़ी कुण्डलिनी महाशक्ति का जागरण किया जाता है । सविता की प्राण साधना इसी लक्ष्य की आपूर्त्ति करती है । कुण्डलिनी जागरण की प्रक्रिया के साथ साधक को आत्मपरिष्कार आत्म-सुधार का अवलम्बन लेना पड़ता है । दोहरे मोर्चे पर किया गया साधना पुरुषार्थ साधक के अन्तरंग को शक्ति सामर्थ्य से परिपूर्ण बनाता है । इस साधना पक्ष में लगभग उसी स्तर का मनोबल जुटाना एवं पुरुषार्थ करना होता है जितना कि समुद्र से मोती निकाल लाने वाले गोताखोर । अन्तर्निहित शक्ति स्रोतों को जाग्रत किया जा सके तो मनुष्य इतनी सामर्थ्य प्राप्त कर सकता है जिसे सामान्यतया सिद्ध और चमत्कार के नाम से जाना जाता है ।

पृथ्वी को जो भी सामर्थ्य प्राप्त है, उसका मूल आधार सूर्य है । पृथ्वी जिन मर्म केन्द्रों से सूर्य की शक्ति प्रवाह ग्रहण करती है उसे उत्तरी ध्रुव कहते हैं । जैसे भोजन मुँह द्वारा किया जाता है, उसी प्रकार पृथ्वी भी अपनी शक्ति-सामर्थ्य सूर्य से उत्तरी ध्रुव के माध्यम से प्राप्त करती है । चिड़िया जैसे अपने बच्चों को दाना खिलाती है, सूरज भी भूपिण्ड रूपी अपने नन्हें शिशु को वह सारा वैभव प्रदान करता है जिससे उसका जड़-चेतन परिकर इतना सुरम्य बना हुआ है ।

भूलोक जिस मुख गह्वर में सामर्थ्य ग्रहण करता है, उसे ध्रुव कहते हैं । मानवी काया रूपी धरती का मुख ब्रह्मरन्ध्र है जिसका चुम्बकीय केन्द्र बिन्दु सहस्रार चक्र है । धरती पर अनायास ही प्रकृति क्रमानुसार सूर्य का सामर्थ्य बरसाती और प्रविष्ट कराती है । उसी प्रकार ब्रह्मरन्ध्र रूपी सूर्य अपने प्राप्त अनुदान की दक्षिण ध्रुव रूपी प्रतिनिधि मूलाधार चक्र को प्रदान करता रहता है । मनुष्य की अगणित प्रकट-अप्रकट क्षमताऐं इसी प्रकाश पुञ्ज के कारण जाग्रत होती एवं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रतिभा–मेधा–जीवट रूपी विभूतियों के रूप में अपनी गरिमा दर्शाती है । इस क्षमताओं–उच्चस्तरीय शक्तियों को दीप्तिमान अग्निपिण्ड के रूप में माना गया है जिसे कुण्डलिनी कहते हैं । यद्यपि इसका निवास स्थान मूलाधार है तथापि इसका मूल स्रोत सहस्रार–ब्रह्मरन्ध्र रूपी उच्चस्तरीय केन्द्र ही है जिसे प्रणाग्नि का ऊर्जा केन्द्र कहा गया है, जो समष्टिगत प्राण से सीधे सम्पर्क स्थापित करने में सक्षम है ।

कुछ दिन पूर्व तक वैज्ञानिक यह समझते थे कि अपनी कक्षा में घूमने से तथा सूर्यताप सम्मिश्रण से ही ध्रुवीय चुम्बकत्त्व उत्पन्न होता है । पर जब कैलीफोर्निया विश्व-विद्यालय (सांतादियागो) के खगोल विज्ञानी डॉ० डबल्यू एक्सफर्ड ने अपनी दीर्घकालीन शोध के उपरान्त उसे सूर्य से प्रवाहित हो रहे एक निर्झर के रूप में प्रतिपादित किया है । उन्होंने वाशिंगटन की "इण्टर नेशनल मैग्नेटोस्फियर कान्फ्रेन्स में अपना शोध निबन्ध पढ़ते हुए कहा था कि सूर्य का शक्ति प्रवाह समस्त धरती पर नहीं वरन् उत्तरी ध्रुव के एक विशेष स्थल पर बरसता है । जो ध्रुव प्रभा के रूप में खुली आँखों से भी देखा जा सकता है । वहाँ से वह प्रकाश फिर पृथ्वी के वायु मण्डल तथा अन्तर्गर्भ में प्रवेश करके धरती में जीवन उत्पन्न करता है । यह शक्ति प्रवाह इतना तीव्र होता है कि यदि धरती उसे अपने व्यापक क्षेत्र में तत्काल वितरित कर दे तो वह क्षण भर में जलकर भस्म हो जाये ।

मानवी काया की ठीक यही स्थिति है चेतना के प्राण सूर्य 'सविता' से उसकी दिव्य किरणें ब्रह्मरन्ध्र में प्रवेश करती हैं । वहाँ से वह प्रपात दक्षिण ध्रुव तक बहता चला आता है और वहाँ नियन्त्रित, परिष्कृत होकर विभिन्न दिव्य नाड़ियों द्वारा शरीर और मन के विभिन्न क्रिया–कलापों का संचालन करने के लिए वितरित हो जाता है । कुण्डलिनी शक्ति का यही क्रम है । शक्ति वितरण का वही प्रत्यक्ष केन्द्र जननेन्द्रिय मूल में अवस्थित "अग्नि गह्वर" काम बीज ही है । इसी को संग्रह भण्डार कहना चाहिए । इसी को अन्तः में प्राणाग्नि एवं बहिरंग में तेजोवलय–दीप्तिमान अग्नि पुञ्ज के रूप में देखा जा सकता है ।

दीप्तिमान अग्नि एवं कायगत प्राणाग्नि ये दो ही अग्नियाँ शरीर एवं मन के माध्यम से विविध क्रियाकलाप करती देखी जाती हैं । यह अग्नि सन्तुलन यदि अस्त–व्यस्त हो जाये तो मनुष्य निराश, टूटा हुआ, हतवीर्य दिखाई पड़ता है । जीवित होते हुए भी उसमें आशा और स्फूर्ति की चमक समाप्त हो चुकी होती है । ओजस्, तेजस्, मनोबल, आत्मबल, ब्रह्मवर्चस् की दीप्तिमान चिनगारियाँ जो मनुष्य के क्रिया क्षेत्र में एवं भावना प्रवाह में दिखाई पड़ती हैं, वे मूलतः इन्हीं दिव्य अग्नियों की अभिव्यक्ति हैं । आत्मिकी की भाषा में इसे कुण्डलिनी शक्ति की प्रस्फुलित आभा कहकर सम्बोधित करते हैं ।

जिस प्रकार ध्रुवीय चुम्बकत्त्व सूर्य से प्रवाहित ऊर्जा निर्झर के उत्तरी ध्रुव पर केन्द्रित शक्ति प्रवाह के रूप में अपना अस्तित्त्व प्रकट करता है उसी प्रकार मानवी तेजस् जैव चुम्बकत्त्व भी सहस्रार रूपी उत्तरी ध्रुव के माध्यम से सुषुम्ना के प्रवाह पथ में गतिशील होता है । पूरा सुषुम्ना का पथ एक आयनिक क्षेत्र रूपी चेतन प्रवाह से घिरा होता है । जिसमें सघन ऋणा-वेशित एवं धन आवेश वाले आयान्स का परिभ्रमण होता रहता है । इनकी तुलना हम तालाब में उठने वाली जल तरंगों से कर सकते हैं । जिसमें केन्द्र से उठने वाला प्रवाह क्रमिक गति से चारों ओर के क्षेत्र में तरंगें फैलाता रहता है । मूलाधार चक्र वह केन्द्र है जहाँ अन्तः इड़ा एवं अन्तः पिंगला नाड़ी आकर मिलती हैं । सामान्य ऊर्जा सतत् नष्ट करने वाले व्यक्तियों में सूक्ष्म रूप से जुड़ी होने पर भी आयान्स का प्रवाह इनमें नहीं होता, न ही उच्च आवेश वाले आयामों को धारण करने की क्षमता ही विकसित हो पाती है ।

इस केन्द्र की सुषुप्ति से जाग्रति एवं स्फुरणा तब होती मानी जाती है जब योग साधना का आश्रय लेकर इड़ा–पिंगला की आयानिक सघनता बढ़ायी व ऊर्ध्वगमन की प्रक्रिया गतिशील बनायी जाती है । यह क्षेत्र जिसकी संज्ञा दक्षिणी ध्रुव से दी जाती है एक प्रकार का बायोकन्डेन्सर है जहाँ चुम्बकीय बल सम मात्रा में केन्द्रित एवं सघन होता है ।

भौतिकी के ज्ञाता जानते हैं कि कन्डेन्सर एक विद्युत उपकरण होता है जो निश्चित क्षमतानुसार विद्युत

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऊर्जा संग्रह करने में समर्थ है । जैसे चिनगारी के रूप में ऊर्जा प्रस्फुटित होती है, उसी प्रकार कन्डेन्सर की प्लेट के मध्य स्थित डाय इलेक्ट्रिक दो विद्युत ऊर्जा केन्द्रों के बीच स्पार्क का काम करता है । इड़ा, पिंगला के आयोनिक विभव के मध्य स्थिति मूलाधार चक्र का यह बायो-कन्डेसर ऊर्जा के एकीकरण-सघनीकरण- ऊर्ध्वगमन में महत्त्वपूर्ण उपकरण की भूमिका निभाने लगता है । यह ऊर्जा प्रवाह उतना ही ऊँचा जाता है जितनी कि मात्रा में ऊर्जा विनिर्मित होती है । इस प्रवाह का स्फुरण उन्नयन ही प्रसुप्त कुण्डलिनी का जागरण है जिसकी चरम परिणति सहस्रार रूपी उच्च केन्द्र पर जाकर आनन्दमय कोश के जागरण रूपी उच्चस्तरीय उपलब्धि के रूप में होती है ।

मानव का शरीर ऊर्जा का पुञ्ज है । इसके अन्दर स्नायु तन्तु रूपी नेटवर्क इतना जटिल है कि किसी भी यन्त्र को इसका विकल्प नहीं बनाया जा सकता है । योगतन्त्र विज्ञान के ज्ञाता यह जानते हैं कि समष्टि में संव्याप्त प्राण ऊर्जा के प्रवाह को कैसे अपने अन्दर संग्रहीत कर इस नेटवर्क को जंजाल मात्र न रहने देकर एक डायनेमों बना दिया जाये तो सूक्ष्म शक्ति सम्पन्न केन्द्रों को जगाने की भूमिका सम्पन्न कर सके ।

तन्त्रवेत्ताओं ने वैज्ञानिक आधार पर यह परिकल्पना की है कि सुषुम्ना के मध्य ब्रह्म नाड़ी पर शक्तिशाली चुम्बकीय प्रवाह होता है । नीचे से ऊपर तक मुख्यतः छै चक्र विद्यमान हैं । प्रत्येक दो चक्र के मध्य एक ऊर्जा पैकेट तब बनता है, अब नीचे का डायनेमों जैव-चुम्बकीय प्रभाववश चलने लगता है । हर दो चक्र के मध्य का केन्द्र बिन्दु एक प्रकार से 'इलेक्ट्रो डायनेमिक कॉइल' होता है । जिसका मध्य भाग अपार ऊर्जा से भरा होता है । इड़ा व पिंगला नाड़ियाँ, सिम्पेथेटिक व पैरा सिम्पेथेटिक स्नायु संस्थान एक प्रकार से इसी प्रकार के शक्तिशाली दो 'कॉइल' हैं जिनके मध्य सुषुम्ना एवं षटचक्र तथा छोटे-छोटे ऊर्जा पैकेट विद्यमान हैं । यौगिक क्रियाएँ जो क्रिया योग मात्र नहीं, अपितु उच्चस्तरीय भावयोग परक होती हैं । अन्यान्य अध्यात्म अनुशासनों तप तितीक्षा के द्वारा इस क्षेत्र की तीव्रता को बहुत बढ़ा देती है और यह कॉइल सक्रिय होकर सर्पिल गति से ऊपर की ओर चल पड़ता है । यही इस ऊर्जा केन्द्र का जागरण है जिसे कुण्डलिनी योग नाम से पुकारा जाता रहा है । सारी प्रक्रिया विज्ञान सम्मत है, जटिल भौतिकी के सिद्धान्तों पर आधारित है । अतः किसी प्रकार के सन्देह की कहीं गुंजाइश नहीं रह जाती ।

कुण्डलिनी साधना में नाद बिन्दु योग के उपक्रम के विस्तार में जब आज्ञा चक्र में ध्यान एकत्रित किया जाता है तो रंग-बिरंगी झिलमिल किरणें उपजती, उड़ती और विलीन होती दीखती हैं । यह दिव्य शक्ति संस्थान के पुनर्जागरण का चिन्ह माना जाता है । यह झिलमिल ऊर्जा प्रवाह उत्तरी ध्रुव की तरह साधक के ब्रह्मरन्ध्र में चुम्बकीय प्रवाह की हलचल को ही प्रामाणित करता है । ज्ञातव्य है कि सूर्य इन दोंनों ध्रुवों को ही अपनी अत्यधिक शक्ति प्रदान करता है । फिर भी वे इसलिए ठण्डे हैं कि वहाँ सूर्य की रोशनी तथा गर्मी फैलकर नष्ट हो जाती है । लगभग पचास लाख से अधिक वर्ग मील क्षेत्र का उत्तरी ध्रुव और तीस लाख से भी अधिक वर्ग मील क्षेत्र का दक्षिण ध्रुव एक प्रकार का दर्पण क्षेत्र है जहाँ से सूर्य किरणें परावर्तित होकर लौट आती हैं अथवा इन ध्रुव प्रदेशों की बर्फ और नम वायु मण्डल में ऊर्जा जज्ब होकर रह जाती है इसलिए यह क्षेत्र जहाँ अत्यधिक शीत वाला है वहाँ इसके अन्दर शक्ति की मात्रा भी बहुत अधिक है, अपरिमित है ।

भगवान मनुष्य को जो भी अनुदान, वरदान और अनुग्रह प्रदान करते हैं उनका ८० प्रतिशत भाग इन दोनों ध्रुवों को सहस्रार एवं मूलाधार को ही प्राप्त होते हैं । पर इसे दुर्भाग्य ही कहना चाहिए कि हमारी ठण्डक प्रमाद, उपेक्षा, अकर्मण्यता, मोहग्रस्तता, वीर्य क्षय में वह सभी दिव्य अनुदान वरदान निरर्थक चले जाते हैं । उस अनुदान का सदुपयोग कैसे किया जा सकता है और उस माध्यम से सर्वतोमुखी प्रगति के पथ पर कैसे आगे बढ़ा जा सकता है । यह विज्ञान कुण्डलिनी योग में भरा पड़ा है ।

अपना मनःक्षेत्र यदि सांसारिक विषय विकारों का ज्वलनशील आग से विरत करके शून्य तापतान तक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ले जाया जा सकेतो इस संसार में कहाँ क्या हो रहा है, कौन क्या सोच रहा है, इतनी सूक्ष्म ध्वनी बहुत स्पष्ट सुनाई पड़ सकती है और भूतकाल एवं वर्तमान की घटनाओं परिस्थितियों को ही नहीं भविष्य की सम्भावनाओं को भी जाना जा सकता है । यदि अपना मन तपश्चर्या की, आग्नि की गरम पट्टी को आकाश से आच्छादित करलें तो फिर संसार के आकर्षण, प्रलोभन, कौतुहल, भय, मनोविकार के ढोल ही क्यों न बजते रहें उनका एक भी शब्द कान में नहीं आता और घोर कोलाहल भरे वातावरण में रहते हुऐ भी चित्त को समाधिस्थ जैसा बनाकर रखा जा सकता है । यह ध्रुवों जैसी परिस्थितियाँ कुण्डलिनी साधना द्वारा की जा सकती है क्योंकि वस्तुतः शरीरगत ध्रुवों का ज्यों का त्यों लेखा–जोख ही कुण्डलिनी विज्ञान में सन्निहित है ।

साधना ग्रन्थों–उपनिषदों में पवित्र जीवन अग्नि, पंचाग्नि के रूप में कुण्डलिनी शक्ति का वर्णन है । प्रदीप्त अग्नि जिस प्रकार अपने क्षेत्र को उष्ण एवं प्रकाशवान बना देती है, वैसा ही प्रकाश कुण्डलिनी जागरण का भी होता है । मण्डल ब्राह्मणोपनिषद् में ऋषि लिखते हैं–

मूलाधारादा ब्रह्मरन्ध्रपर्यन्तं सुषुम्ना सूर्याभा । तन्मध्ये तटित्कोटिसमा मृणालतन्तु सूक्ष्मा कुण्डलिनी । तत्र तमोनिवृत्तिः । तद्दर्शनात्सर्व पापनिवृतिः ॥

अर्थात–मूलाधार से लेकर ब्रह्मरन्ध्र तक सूर्य के प्रकाश जैसी सुषुम्ना नाड़ी फैली हुई है । उसी के साथ कमल तन्तु समान सूक्ष्म कुण्डलिनी शक्ति बँधी हुई है । उसी के प्रकाश से अन्धकार दूर होता है और पापों से निवृत्ति होती है ।

इस दिव्य प्रकाश की उपलब्धि और अन्धकार की निवृत्ति में योग साधना से बड़ा महत्त्वपूर्ण सहयोग मिलता है । कहा जा सकता है कि कुण्डलिनी साधना ही वह सुगम और सहज मार्ग है जिसके माध्यम से समष्टिगत प्राण से स्वयं को ऊर्जावान्–प्रकाशवान् बनाया जा सकता है ।

कुण्डलिनी महाशक्ति का साक्षात्कार

कुण्डलिनी महाशक्ति का परिचय, स्थान और स्वरूप का वर्णन करते हुए कहा गया है कि वह मूलाधार चक्र के अग्नि कुण्ड में निवास करती है । अग्नि स्वरूप है । सुप्त–सर्पिणी की तरह सोई पड़ी है । स्वयंभू महालिंग से–शिव लिंग से लिपटी पड़ी है । इसी स्थिति की झाँकी शिव प्रतिमाओं में कराई जाती है । योनि क्षेत्र में एक सर्पिणी शिवलिंग से लिपटी हुई प्रदर्शित की जाती है । शिवपूजा में इस प्रतिमा पर जल धार चढ़ाने का विधान है । रुद्राभिषेक में जल कलश के पेंदें में छिद्र करके उसे तीन टाँग की तिपाई पर स्थापित करते हैं और उसमें से एक–एक बूँद पानी शिव लिंग पर टपकता रहता है । यह कुण्डलिनी का ही समग्र स्वरूप है ।

सहस्रार चक्र को अमृत कलश कहा गया है । उससे सोमरस टपकने का उल्लेख है । खेचरी मुद्रा में इसे 'अमृत स्राव' बताया गया है । यह स्राव अधोमुख है । नीचे की दिशा में रिसता टपकता रहाता है । कुण्डलिनी मूल तक जाता है ।

कुण्डलिनी महाशक्ति को ऊर्ध्वगामी बनाने और अमृत सोम का आस्वादन कराने का लाभ ब्रह्मी एकता के माध्यम से ही सम्भव है । यही कुण्डलिनी जागरण का उद्देश्य है । सुप्त सर्पिणी अग्नि कुण्ड में पड़ी–पड़ी विष उगलती रहती है और उससे जलन ही जलन उत्पन्न होती है । वासना की अग्नि शान्त नहीं हो सकती, वह शरीर और मन की दिव्य सम्पदाओं का विनाश ही करती रहती है । इसका समाधान अमृत रस को पान करने–सोम सम्पर्क से ही सम्भव होता है । यह तथ्य जन–साधारण को समझाने के लिए तीन टाँग की तिपाही पर कलश स्थापित करके शिवलिंग पर अनवरत जल धार चढ़ाने की व्यवस्था की जाती है और इस आध्यात्मिक आवश्यकता का परिचय कराया जा सकता है कि जल का समाधान मानसिक एवं आत्मिक अमृत रस पीने से–बौद्धिक एवं भावनात्मक उत्कृष्टता का रसास्वादन करने से ही सम्भव हो सकता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रुद्राभिषेक में जल कलश के नीचे जो तीन टाँग की तिपाई रखी जाती है, वह इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना की प्रतीक है । इन्हीं तीन आधारों के सहारे कुण्डलिनी जागरण की पुण्य प्रक्रिया सम्पन्न होती है । अग्नि और सोम के मिलन की आवश्यकता और उसके फलस्वरूप उत्पन्न होने वाले देवत्त्व का ही प्रत्यक्षीकरण रुद्राभिषेक के कर्मकाण्डों में किया जाता है ।

कुण्डलिनी परिचय में स्थान-स्थान पर स्वयंभू लिंग की चर्चा है । बहुत स्थानों पर उसे 'कन्द' भी कहा गया है । यह क्या है ? इसे जानने के लिए स्थूल शरीर से सम्बन्धित शरीर शास्त्र और सूक्ष्म शरीर से सम्बन्धित अध्यात्म शास्त्र का पर्यवेक्षण किया जा सकता है । शरीर में यह घटक सुषुम्ना का-मेरुदण्ड का-नीचे वाला अन्तिम छोर है । प्रत्यक्ष हलचलों की दृष्टि से इस संस्थान का इतना महत्त्व नहीं जितना कि वहाँ से निकलने वाली उस विद्युत शक्ति का जो इस समूचे क्षेत्र के अति महत्त्वपूर्ण संस्थानों को प्रभावित एवं अनुप्राणित करती है ।

कन्द का स्थूल शरीर में प्रतीक प्रतिनिधि तलाश करना हो तो दृष्टि "कॉडा इक्वाइना" पर जाकर टिकती है । मेरुदण्ड मस्तिष्क से प्रारम्भ होकर चंचु प्रदेश की अन्तिम कशेरुका तक जाती है और उसके बाद रेशमी धागों की भाँति शुण्डाकृति हो जाती है । उसके अन्त में अगणित पतले-पतले धागे से पैदा हो जाते हैं, जिनसे नाड़ी तन्तुओं का एक सघन गुच्छा तैयार हो जाता है । इसी गुच्छक को "कॉडा इक्वाइना" कहते हैं । सूक्ष्म शरीर के 'कन्द' का इसे प्रतिनिधि कहा जा सकता है । शरीर शास्त्र की दृष्टि से यही स्वयंभू लिंग है । मूलाधार चक्र में 'आधार' शब्द इसी स्थान के लिए व्यवहृत हुआ है । रीढ़ की अन्तिम चार अस्थियों के सम्मिलित समुच्चय को भी कई मनीषियों ने 'कन्द' बताया है । मलमूत्र छिद्रों के मध्य स्थान पर मूलाधार बताया गया है । उसे चमड़ी की ऊपरी सतह नहीं मान लेना चाहिये वरन् उस स्थान की सीध में ठीक ऊपर प्रायः तीन अंगुल ऊँचाई पर अवस्थित समझना चाहिये । मस्तिष्क में आज्ञाचक्र भी भूमध्य भाग में कहा जाता है पर वह भी ऊपरी सतह पर नहीं तीन अंगुल गहराई पर है । ब्रह्मरंध्र भी खोपड़ी की ऊपरी सतह पर कहाँ है ? वह भी मस्तिष्क के मध्य केन्द्र में हैं । ठीक इस प्रकार मूलाधार को भी मल-मूत्र छिद्रों के मध्य वाली सीध पर अन्तःगह्वर में अवस्थित मानना चाहिए ।

यहाँ एक बात हजार बार समझ लेनी चाहिये कि अध्यात्म शास्त्र में शरीर विज्ञान विशुद्ध रूप से सूक्ष्म शरीर का वर्णन है । स्थूल शरीर में तो उसकी प्रतीक छाया ही देखी जा सकती है । कभी किसी शारीरिक अङ्ग को सूक्ष्म शरीर से नहीं जोड़ना चाहिये । मात्र उसे प्रतीक प्रतिनिधि भर मानना चाहिये । शरीर के किसी भी अवयव विशेष में वह दिव्य शक्तियाँ नहीं हैं जो आध्यात्मिक शरीर विज्ञान में वर्णन की कई हैं । स्थूल अंगों से उन सूक्ष्म शक्तियों का आभास मात्र पाया जा सकता है ।

मूलाधार शब्द के दो खण्ड हैं । मूल+आधार । मूल अर्थात् जड़ (बिस) । आधार अर्थात् सहायक (सपोर्ट) जीवन सत्ता का मूलभूत आधार होने के कारण उस शक्ति संस्थान को मूलाधार कहा जाता है । वह सूक्ष्म जगत में होने के कारण अदृश्य है । अदृश्यों का प्रतीक चिन्ह प्रत्यक्ष शरीर में भी रहता है । जैसे दिव्य दृष्टि के आज्ञा चक्र को पिच्युटरी और पीनियल रूपी दो आँखों में काम करते हुए देख सकते हैं । ब्रह्मचक्र के स्थान पर हृदय को गतिशील देखा जा सकता है । नाभिचक्र के स्थान पर योनि आकृति का एक गड्ढा तो मौजूद ही है । मूलाधार सत्ता को मेरुदंड के रूप में देखा जा सकता है । अपनी चेतनात्मक विशेषताओं के कारण उसे वह पद, एवं गौरव प्राप्त होना हर दृष्टि से उपयुक्त है । प्राण का उद्गम मूलाधार पर उसका विस्तार, व्यवहार और वितरण तो मेरुदण्ड माध्यम से ही सम्भव होता है ।

मूलाधार के कुछ ऊपर और स्वाधिष्ठान से कुछ नीचे वाले भाग में शरीर शास्त्र के अनुसार 'प्रोस्टेट-ग्लैण्ड' है । शुक्र संस्थान यही होता है । इसमें उत्पन्न होने वाली तरङ्गें काम प्रवृत्ति बन कर उभरती हैं । इसी से जो हारमोनल उत्पन्न होते हैं, वे वीर्योत्पादन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के लिए उत्तरदायी होते हैं । स्त्रियों का गर्भाशय भी यही होता है । सुषुम्ना के निचले भाग में लम्बर और सेक्रल प्लैक्सस नाड़ी गुच्छक हैं । जननेन्द्रियों की मूत्र त्याग तथा कामोत्तेजन दोनों क्रियाओं पर इन्हीं गुच्छकों का नियन्त्रण रहता है । यहाँ तनिक भी गड़बड़ी उत्पन्न होने पर इनमें से कोई एक अथवा दोनों ही क्रियाएँ अस्त-व्यस्त हो जाती हैं । बहुमूत्र, नपुंसकता, अति कामुकता आदि के कारण प्रायः यहीं से उत्पन्न होते हैं ।

गर्भाशय की दीवारों से जुड़े हुए नाड़ी गुच्छक ही गर्भस्थ शिशु को नाभि मार्ग से सभी उपयोगी पदार्थ पहुँचाते रहते हैं । इन गुच्छकों को यह पहचान रहती है कि कितनी आयु के भ्रूण को क्या-क्या पोषक तत्त्व चाहिये । गर्भाशय के सम्वेदनशील नाड़ी गुच्छक उस अनुपात का-मात्रा का-पूरा-पूरा ध्यान रखते हैं और बिना राई रत्ती व्यतिक्रम किये शिशु की आवश्यकता पूरी करते रहते हैं ।

जीवन की आवश्यकता पूरी करने के लिए सबसे प्रथम और सबसे आवश्यक क्रिया चूसने की होती है । बच्चे में यह प्रवृत्ति (रिफ्लेक्स) उसे माता का स्तन पान करने की उत्तेजना देता है । यही प्रवृत्ति प्रौढ़ता आने पर यौनेच्छा (सेक्स रिफ्लेक्स) के रूप में विकसित होती है । बिना किसी प्रशिक्षण के यह दोनों ही प्रवृत्तियाँ अपने-अपने ढंग से हर प्राणी में अन्तःप्रेरणा से ही उठती और प्रयोग में आती हैं । इन जीवनोपयोगी प्रेरणाओं का केन्द्र यही स्थान है जिसे कन्द, कुण्ड या काम बीज कहते हैं ।

कन्द का एक नाम कर्म भी है । इसे कच्छपावतार का प्रतिनिधि बताया गया है । उसके पैरों को सिकुड़ने, फैलने वाले वाहन को, वहाँ से निसृत होने वाली शक्ति धाराओं की ओर संकेत किया गया है । कन्द की आकृति अण्डे के समान मानी गई है । उसे कछुए की उपमा भी दी गई है । समुद्र मंथन की कथा में रई मंदिराचल पर्वत की बनाई गई थी । उस पर्वत के नीचे भगवान् कूर्मावतार के रूप में कच्छप बनकर बैठे थे और उस भार को अपनी पीठ पर उठाया था । यह कूर्म या कन्द की ही अलंकारिक व्याख्या है ।

नाड़ी गुच्छकों के अतिरिक्त कन्द की व्याख्या मेरुदण्ड की अन्तिम चार अस्थियों और उस स्थान पर बिखरे पड़े नाड़ी संस्थानों के रूप में भी की जाती है । इसे समझने के लिए मेरुदण्ड की अस्थि संरचना को समझना होगा ।

शरीर विज्ञान के अनुसार मेरुदण्ड छोटे-बड़े ३३ विरूपस्थि खण्डों या कशेरूओं-वर्ट्रीब्री से मिल कर बना है । आकृति में वह सर्पाकार है । प्रत्येक दो कशेरू के मध्य में एक माँस निर्मित गद्दी सी रहती है । जिस पर प्रत्येक कशेरू टिका और सूत्रों से कसा हुआ है । इसी कारण यह लचीला है और अपनी धुरी पर हर दिशा में घूम सकता है । उसे पाँच भागों में बाँटा जा सकता है ।

(१) ग्रीवा-सर्वाइकल-७ कशेरू (२) पीठ-थोरेक्स -१२ कशेरू (३) कटिप्रदेश-लम्बर-५कशेरू (४) वस्तिगह्वर -त्रिक प्रदेश-सेक्रल-५ कशेरू (५) पुच्छिकास्थि -चंचु-कॉक्सीक्स ४ कशेरू । सब मिला कर इन तैतीस खण्डों को तैतीस देवता कहा गया है । इनमें से प्रत्येक में सन्निहित दिव्य क्षमता को देवता माना गया है ।

मेरु दण्ड पोला तो है पर ढोल की तरह खोखला नहीं । उसमें मस्तिष्कीय मज्जा भरी हुई है । प्रत्येक कशेरू के पिछली ओर दाँये-बाँये अर्ध वृत्ताकार छिद्र होता है जिसमें से छोटे नाड़ी सूत्रों से निर्मित बड़ी नाड़ियाँ बाहर निकलती हैं । मेरुदण्ड का निचला भाग शंकु के आकार का है । जिसे-फाइनम टर्मीनिल कहते हैं ।

चंचु प्रदेश के कशेरू जितने छोटे हैं, उतने ही चौड़े हैं । वे अन्दर से पोले भी नहीं हैं और एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं । यह चार कशेरू मिल कर अन्डे की आकृति वाला अथवा फूल की कली के सदृश आकार बनतां है । इसे 'कॉक्सीक्स' कहते हैं । इस गोलक को कुण्डलिनी योग में 'कंद' एवम् स्वयंभू लिंग के नाम से पुकारा है । कुण्डलिनी शक्ति इसी से इर्द-गिर्द सर्पिणी की तरह लिपटी मानी गई है ।

नाड़ी गुच्छकों एवम् मेरुदण्ड के निम्न भाग के अस्थि समूहों के ऊपर एक सूक्ष्म शक्ति छाई हुई है

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उसी को मूलाधार का, नाभिक (न्यूक्लियस) समझा जाना चाहिए। उसी के प्रभाव से उस क्षेत्र में बिखरे पड़े अनेक संस्थान अपना-अपना काम करते और एक से एक बड़े-बड़े प्रभाव उत्पन्न करते देखे जा सकते हैं। कमर से लेकर पेडू और जननेन्द्रिय मूल तक का पूरा क्षेत्र दक्षिणी ध्रुव के समतुल्य माना गया है और वहाँ किसी भी क्षेत्र में जो कुछ होता है उस सब पर मूलाधार का प्रभाव आँका जा सकता है। नाभि, गुर्दे, मूत्राशय, यौन संस्थान, पौरुष ग्रन्थियाँ आदि की समस्त गतिविधियों को-प्रजनन प्रक्रिया को उसी दिव्य केन्द्र को अनुदान एवम् चमत्कार कह सकते हैं। जीवनी-शक्ति का, क्रियाशक्ति का, उमंग-उत्साह का केन्द्र इसी को कहा गया है। कन्द के स्वरूप और महत्त्व का वर्णन अध्यात्म शास्त्रों से इस प्रकार हुआ है-

कन्दोर्ध्वे कुण्डलीशक्ति शुभमोक्षप्रदायिनी ।
बन्धनाय च मूढानां यस्तां वेत्ति स वेदवित् ॥

-गोरक्ष पद्धति

मंगलमय मोक्ष प्रदायिनी कुण्डलिनी शक्ति 'कन्द' के ऊर्ध्व भाग में अवस्थित है। वही प्रसुप्त होने पर मूढ़ मूति लोगों को बन्धन में बाँधे हुए है। इस मर्म को जो जानता है वही वास्तविकता को जानने वाला ज्ञानवान् है।

गुदाद्वय गुतलश्चोर्ध्व मेढ्रैकांगुलतस्त्वधः ।
एव चास्ति समं कन्दं समता चतुरंगुलम् ॥

-शिव संहिता

गुदा से दो अंगुल ऊपर और अर्थात् लिंग मूल से एक अंगुल नीचे चार अंगुल विस्तार कन्द का प्रमाण है।

पश्चिमाभिमुखी योनिर्गुदमेढ्रान्तरालगा ।
तम् कन्दं समाख्यातं तमास्ति कुन्डली सदा ॥

-शिव संहिता ५।७५

गुदा एवं शिश्न के मध्य में जो योनि है वह पश्चिमाभिमुखी अर्थात् पीछे को मुख है, उसी स्थान में 'कन्द' है और इसी स्थान में सर्वदा कुण्डलिनी स्थित है।

तन्मध्ये लिंगरूपी द्युतकनक-
कलाकोमलः पश्चिमास्यो ।
ज्ञानध्यानप्रकाशः प्रथम,
किसलयाकाररूपः स्वयम्भुः ।
विद्युत्पूर्णेन्दुविम्बुप्रकरकरचय-
स्निग्धसन्तानहासी काशो ।
वासी विलासी विलसति,
सरिदावर्त्तरूप प्रकारः ॥
तस्योर्द्ध्व वे विसतन्तुसोदर-
लसत्सूक्ष्मा जगन्मोहिनी
ब्रह्मद्वारमुख मुखेनं मधुरं,
सछादयन्ती स्वयम् ।
शंखावर्तनिभा नवीनचपला-
मालाविलासास्पदा
सुप्ता सर्पसमा शिवोपरि,
लसत्सार्द्धत्रिवृत्ताकृतिः ॥

-षट्चक्र निरूपण

अर्थात्-"त्रिकोण के भीतर स्वयम्भू लिंग है जिसका वर्ण स्वर्ण के समान है और जिसका सिर नीचे की ओर है। उस नूतन किशलय के समान देव का प्रकाश ज्ञान-ध्यान द्वारा ही सम्भव है। विद्युत और पूर्ण चन्द्रमा के समान ही वह स्निग्ध सौन्दर्ययुक्त है। इस स्वयम्भू लिंग पर कमल-तन्तु के समान अति सूक्ष्म कुण्डलिनी शक्ति सो रही है। वह जगत् को मोहित करने वाली है और ब्रह्मद्वार के मुख को अपने मुख से ढके हुए है। शंख की चक्रवत् रेखाओं के समान उसकी चमकीली सर्पाकार आकृति शिव लिंग के चारों ओर साढ़े तीन फेरे लिये हुये हैं।

कुण्डलिनी की तुलना तो विद्युत शक्ति, ऊर्जा एवं आभा से की गई है। "तडिल्लता समरुचिर्विचुत्रलेखेब "भास्वरा" सूत्र में उसे बिजली की लता रेखा जैसी ज्योतिर्मय बताया गया है। उसी प्रकार अन्यत्र उसका उल्लेख "तडिल्लेखा तन्वी तपनशर्शि वैश्वानरमयी" के रूप में किया गया है। उसे प्रचण्ड अग्नि शिखा एवं दिव्य वैश्वानर के समतुल्य कहा गया है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मूलाधारस्य ब्रह्मयात्म तेजो मध्ये व्यवस्थिता ।
जीव शक्तिः कुण्डलाख्या प्राणाकाराय तेजसी ॥

–योग कुण्डलल्युनिषद्

मूलाधार के मध्य वह आत्म तेज, ब्रह्म तेज रूपी कुण्डलिनी निवास करती है । वही जीव शक्ति, प्राण शक्ति है । वह तेज रूप है ।

आधार शक्त्यावधृतः कालाग्निरयमूर्ध्वगः ।
तथैव निम्नगः सोमः शिवशक्ति पदास्पदः ।

–वृहज्जावालोपनिषद्

मूलाधार (चक्र) की शक्ति से धारण की हुई यह कालाग्नि ऊर्ध्वगामी है और उसी प्रकार सोम निम्नगामी है, जो शिव शक्तिमय कहलाता है ।

मूलाधाराभिधं चक्रं प्रथमं समुदीरितम् ।
तत ध्येयं स्वरूप तु पावकाकारमुच्यते ॥
स्वाधिष्ठानाभिधं चक्र द्वितीयं चोपरिस्थितम् ।
प्रवालाङ्कुर तुल्य तु तत्र ध्येयं निगद्यते ॥
तृतीयं नाभिचक्रे तु ध्येयं रूपं तड्ग्निभम् ।
तुर्ये हृदयचक्रे तु ज्योतिर्लिङ्गाकृतीर्य्यते ॥
पञ्चमे कन्ठचक्रेतु सुषुम्ना श्वेतवर्णिनी ।
ध्येय षष्ठे तालुचक्रे शून्यचित्तलयार्थकम् ॥
भ्रू चक्रे सप्तमे ध्येयंदापाङ्गुष्टप्रमाणकम् ।
आज्ञाचक्रेऽष्टमे ध्येय रूपं धूम्रशिखाकृतिः ॥
आकाशचक्रे नवमे परशुः स्वोर्द्ध्व शक्तिकः ।
एव क्रमेण चक्राणि ध्ययेरूपाणि विद्धि च ॥
अखण्डैकरसत्त्वेन ध्ययेस्यैक्ये ऽप्युपाधितः ।
आकारा विविधायुक्ता नोपाधिश्चेतरः स्वतः ॥
विद्याशक्ति विलासेन पावकात् विस्फुलिंगवत् ।
अकस्मात् ब्रह्मणोऽखंडात् विविधाकृतयोऽभवन् ॥

–महायोग विज्ञान

मूलाधार चक्र में आत्म ज्योति अग्नि रूप दीखती है । स्वाधिष्ठान चक्र में वह प्रवाल अंकुरे सी प्रतीत होती है । मणिपूर में विद्युत जैसी चमकती है । नाभिचक्र में वह बिजली जैसी चमकती है । हृदय कमल के अनाहत चक्र में वह लिंग आकृति की प्रतीत होती है । कंठ चक्र में वह श्वेत वर्ण, तालु चक्र में शून्याकार एकरस अनुभव में आती है । भ्रू–चक्र में अँगूठे के प्रमाण जलती हुई दीप शिखा जैसी भासती है । आज्ञाचक्र में धूम्रशिखा जैसी और सहस्रार चक्र में चमकते हुए परशु जैसी दीखती है ।

यह सभी ज्योतियाँ एक ही हैं । सभी आत्म ज्योति हैं । सभी परम आनन्दायिनी हैं । विद्या शक्ति कुण्डलिनी की क्रीड़ा से ही अग्नि की अनेक चिनगारियों की तरह यह अनेक तरह की प्रतीत होती हैं ।

अपाने चोर्ध्वगे याते संप्राप्ते वह्निमण्डले ।
ततोऽनलशिखा दीर्घा वर्धते वायुना हत्ता ॥
ततो यातौ वह्नयप्यानौ प्राणमुष्णस्वरूपकम् ।
तनात्यन्तप्रदीप्तेन ज्वलनो देहजस्तथा ॥
तेन कुन्डलिनी सुप्ता सन्तप्ता सप्रबुध्यते ।
दन्डाहतभुजंगीव निश्वस्य ऋजुतां व्रजेत् ॥

–योग कुण्डल्युपनिषद्

उस अग्नि मण्डल में जब अपान प्राण जाकर मिलता है तो अग्नि की लपटें और तीव्र हो जाती हैं । उस अग्नि से गरम होने पर सोई हुई कुण्डलिनी जागती है और लाठी से छेड़ने पर सर्पिणी जिस प्रकार फुसकार कर उठती है वैसे ही यह कुण्डलिनी भी जाग्रत होती है ।

प्राणस्थान ततो वह्नि प्राणापानौ च सत्त्वरम्।
मिलित्वा कुण्डली याति प्रसुप्ता कुण्डलाकृतिः॥
तेनाग्निना च सतप्ता पवनेनैव चालिता ।
प्रसाय स्वशरीर तु सुषूम्नाबदनान्तरे ॥

–योग कुण्डल्युप निषद् १/६५,६६

अग्नि स्थान में प्राण के पहुँचने से उष्णता से संतृप्त कुण्डलिनी अपनी कुण्डली छोड़कर सीधी हो जाती है और सुषुम्ना के मुख में प्रवेश करती है ।

योगिनां हृदयाम्भोजे नृत्यन्तौ नित्यमञ्जसा ।
आधारे सर्व्वभूतानां स्फुरन्ती विद्युदाकृतिः ॥

–शारदा तिलक

वह कुण्डलिनी शक्ति योगियों के हृदय में नृत्य ही नृत्य करती है । बिजली की तरह स्फुरण करती है । वही सम्पूर्ण प्राणियों का आधार है ।

मूलाधरे स्मरेद्दिव्यं त्रिकोणं तेजसां निधिम् ।
शिखा आनीय तस्याग्नेरथ उर्ध्व व्यवस्थिता ॥

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तस्याः शिखाया मध्ये परमात्मा व्यवस्थितः ।
स ब्रह्मा स शिवः सेन्द्रः सोक्षरः परमः स्वराट् ॥
स एव विष्णुः स प्राणः स कालोऽग्निः चन्द्रमाः ।
इति कुंडलिनी ध्यात्त्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥

–कलिकोपनिषद्

मूलाधार में दिव्य त्रिकोण तेज–पुञ्ज, ऊर्ध्वगामी तेज–शिखा के मध्य, परब्रह्म अवस्थित है । वह तेज ही ब्रह्मा, विष्णु, शिव, इन्द्र, अक्षर, काल, अग्नि, चन्द्रमा, प्राण आदि है । ऐसा कुण्डलिनी ध्यान करना चाहिए ।

ध्यात्त्वैतन्मूलचक्रान्तरविवरलसत्कोटिसूर्यप्रकाशां
वाचामीशो नरेन्द्रः स भवति सहसा सवविद्याविनोदी।
आरोग्यं तस्य नित्यं निरवधि च महानन्दचित्तान्तरात्मा
वाक्यैः काव्यप्रबन्धैः सकलसुरगुरून् सेवते शुद्धशीलः ।

–षटचक्र निरूपणम १४

मूलाधार चक्र में कोटि सूर्य जैसे प्रकाश से युक्त कुण्डलिनी शक्ति का ध्यान रखने पर वाणी की सिद्धि होती है, वह मनुष्यों का नेतृत्त्व करता है । विद्यावान् बनता है । आरोग्य बनता है । चित्त में आनन्द रहता है । ऐसी शीलवान साधक देवताओं द्वारा पूजित होता है ।

निर्वाणाभ्यन्तरगता वह्नि रूपा निवोधिता ।
नारोऽव्यक्तस्त दुपरिक्रोट्यादित्य सन्निभा ।
अत्रैव कुण्डली शक्ति विहरेत् विश्वव्यापिनी ॥

–कोलामृत

वह कुण्डलिनी शक्ति अग्नि रूप है । कोटि सूर्य के समान चमकती है । वह परम शक्ति है । विश्व में विस्तृत विहार करती है ।

मूलाधारे मूल विद्यां विद्युत्कोटि सम प्रभाम् ।

–ज्ञानार्णव तन्त्र

मूलाधार चक्र में वह मूल विद्या कोटि विद्युत के समान चमकती है ।

कोटि सौदामिनीभासां स्वयंभू लिंग वेष्टिनाम् ।

–तन्त्रसार

स्वयंभू लिंग में लिपटी हुई वह कुण्डलिनी शक्ति विद्युत की तरह चमकती है ।

हिमाचल प्रदेश में ज्वालामुखी पर्वत पर निकलने वाली अग्नि शिखा को देवस्थान की शक्ति पीठ माना गया है । वहाँ आराधना उपासना के लिए दूर–दूर से भक्तजन जाते हैं । अग्नि ज्वाला को दैवी शक्ति मानने के पीछे यह कुण्डलिनी अग्नि का ही तारतम्य है । यज्ञाग्नि में अग्निहोत्र करने, घृतधारा चढ़ाने के पीछे भी अग्नि एवं सौम के संयोग की आवश्यकता का प्रतिपादन है । ब्रह्माग्नि के संयोग को कुण्डलिनी साधना कहा गया है ।

अग्नि की उत्पत्ति का स्कन्द पुराण में एक मनोरंजन उपाख्यान आता है । सनत्कुमार की अग्निजन्य जिज्ञासा का समाधान करते हुए महर्षि व्यास कहते हैं–प्रजापति ने सृष्टि के आदि में दिव्य शत वर्षों की अवधि तक महान् तब किया । इसमें 'भूः भुवः स्वः' शब्द उत्पन्न हुआ । इसका मन के साथ समावेश होने से अग्नि उत्पन्न हुई । वह नीचे गिरा तो भूमि जलने लगी, ऊपर उठी तो आकाश जलने लगा । वह शब्द रूप स्फुलिंगों से युक्त, स्वर्णिम आभा वाला परम दिव्य था ।

अग्नि ने ब्रह्माजी से कहा–'मैं भूख से स्वयं जला जा रहा हूँ । मुझे आहार दीजिए ।' ब्रह्माजी ने अपने शरीर के एक–एक करके सभी अवयव उसे खिला दिये । तो उसकी तृप्ति नहीं हुई और भूखा–भूखा ही चिल्लाता रहा । कोई और उपाय न देख कर ब्रह्माजी ने अग्नि से कहा–जो व्यक्ति कामुकता से अभिभूत हो तू उनकी देह में घुस जा और उनकी समस्त धातुओं को भक्षण किया कर ।

रोरूयमणि चाग्नौ तु पुनर्ब्रह्मा कृपान्वितः
आह कामाभि भूतानां भुंक्ष्वंत्त्वं देह धातवः ।
ते काले लब्ध कामस्य सावृत्तिः सम्प्रकल्पिता।

–स्कन्द पुराण

रुदन करते हुए अग्नि से ब्रह्माजी से कृपा पूर्वक कहा तू कामुकों के शरीर में घुस कर उनके धातु संस्थान को खालिमा कर ।

अग्नि ऐसा ही करने लगा किन्तु तो भी उसकी तृप्ति न हुई । इस पर ब्रह्माजी ने उसे मुनियों और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देवताओं के अन्तःकरण में प्रवेश करने के लिए कहा । तब कहीं अग्नि की तृप्ति हुई और शांति मिली ।

ब्रह्मातमाहत्त्वमपि यथेष्टां वृत्तिमाश्रय ।
देवमध्ये वहिर्वापि मुनीनामश्रयेष च ।
इत्येव मुक्त स्तेनाशु वृत्तिमेताम् रोचयेत् ॥

तब ब्रह्माजी ने अग्नि से कहा–तू ऋषियों के आश्रम में रह । देवों के भीतर और बाहर निवास कर । इस आदेश को प्राप्त कर अग्नि प्रसन्न हुआ और सन्तोष पूर्वक रहने लगा ।

यही जीवन सत्ता में ओत–प्रोत प्राण शक्ति–कालाग्नि एवं कामाग्नि है । इसको अधोगामी बनाने से मनुष्य जलता और गलता है । किन्तु यदि उसे ऊर्ध्वगामी बना लिया जाय तो वही ब्रह्म तेजस् बनकर योगाग्नि एवं प्राणाग्नि बनकर प्रज्वलित होती है । जीव को परम तेजस्वी बनाती है और उसे लौकिक, भौतिक एवं आत्मिक विभूतियों से सुसम्पन्न बनाती है । महाशक्ति कुण्डलिनी का स्तवन करते हुये शक्ति उपासक तत्त्ववेत्ता की अभिव्यक्ति है–

मेरुदण्डे वह्निना शब्दात् पदं तेजोमयीत च ।
सिद्धिः प्राप्ति पदात् सिद्धिः सर्वकाम पदात् पुनः ।
सर्वेशा परिपूरेति चक्र स्वामिनीति च ।
गुप्त योनिन्यनंगा च कुसुमेऽनंग मेखले ।
सर्व मन्त्रमयीत्युक्ता सर्व द्वन्द्व क्षयकरी ।
सर्व सौभाग्यदाचेति सर्व विघ्न निवारिणी ।
सर्वाज्ञानमयीत्युक्तात्त्वा सर्व व्याधि विनाशिनी ।
सर्वानन्दमयी देवि, सर्व रक्षा स्वरूपिणी ।
महाशक्ते महागुप्ते ततश्चैव महा–महा ।
कुल कुण्डलिनी देवि, कन्दे मूले निवासिनी ।

–स्तोत्र समुच्चय

मेरुदण्ड में अग्नि रूप, शब्द पद, तेजमयी, सिद्धि प्रदान करने वाली, काम पद, सर्वव्यापक, चक्र संस्थानों की स्वामिनी, गुप्त योनि, काम शक्ति अनग मेखला, समस्त मन्त्रों की शक्तियुक्त समस्त द्वन्द्वों का क्षय करने वाली, आनन्दमयी, संरक्षक, महाशक्ति, रहस्मयी, महानतम् कुण्डलिनी देवी, कन्द मूल में निवास करती है ।

* * *

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

षट्चक्रों का स्वरूप और रहस्य

शक्ति केन्द्रों का जागरण ऊर्जा का ऊर्ध्वगमन

मानवी काया का संगठन छोटी–छोटी कोशिकाओं के माध्यम से होता है । समान संरचना और कार्य-पद्धति वाले कोशिका समूह मिलकर ऊतकों का निर्माण करते हैं और ऊतकों से विभिन्न शारीरिक अंग अवयवों का विकास होता है । चेतना के सर्वव्यापी होने के कारण प्रत्येक कोशिका एक जीवन चैतन्य केन्द्र होती है और अपने स्तर की प्राण ऊर्जा की किरणें बिखेरती रहती है जिससे शरीर के सामान्य क्रिया-कलाप सम्पन्न होते रहते हैं । मनुष्य शरीर के अन्दर कुछ विशिष्ट शक्ति केन्द्रों का भी निर्माण होता है जहाँ चैतन्य ऊर्जा की बहुलता होती है । शरीर की समस्त कोशिकाओं को जाग्रत एवं विकसित कर सकना हर किसी के लिए संभव नहीं है । अतः प्राण शक्ति की अधिकता वाले विशिष्ट केन्द्रों को ही सक्रिय बनाने, जाग्रत करने का प्रयास विभिन्न साधनाओं, यौगिक क्रियाओं के माध्यम से सिद्धि पथ के साधकों द्वारा किया जाता है ।

मनोवैज्ञानिकों के अनुसार सामान्य परिस्थितियों में चैतन्य ऊर्जा के केन्द्र कषाय–कल्मषों के तमसावरण में छिपे प्रसुप्त स्थिति में पड़े रहते हैं । इनमें सन्निहित गुप्त शक्तियाँ प्राण ऊर्जा के अपरिष्कृत होने के कारण अपना सही स्वरूप प्रकट नहीं कर पातीं । उनसे निकलने वाली ऊर्जा रश्मियों से मात्र काय कलेवर की विभिन्न गतिविधियाँ ही सम्पन्न होती रहती हैं और उनके धुंधलके प्रकाश में मनुष्य को पेट–प्रजनन के अतिरिक्त आगे की बात नहीं सूझती । अत्मोत्थान और लोक-कल्याण की बात लोगों के समझ में आती । लोभ, मोह और संकीर्ण स्वार्थपरता के क्षुद्र दायरे में ही सिमटकर अपने जीवन की इतिश्री कर लेते हैं ।

प्राचीन ऋषियों, योगियों ने शरीरस्थ शक्ति स्रोतों को जाग्रत करने के लिए विज्ञान का आविष्कार किया था । जिसके अनुसार विभिन्न यौगिक क्रियाओं के नियमित एवं सतत् अभ्यास एवं गुण, कर्म स्वभाव में उत्कृष्टता का समावेश करने पर चैतन्य केन्द्रों का जागरण और प्रसुप्त शक्तियों का स्फुरण होता है । तन्त्रशास्त्र और योगशास्त्र में चैतन्य ऊर्जा केन्द्रों को "कमल" या "चक्र" के नाम से संबोधित किया गया है । शरीर-शास्त्रियों एवं चिकित्सा विशेषज्ञों ने इन केन्द्रों की संगति विशिष्ट ग्रन्थियों से बिठाई है जिन्हे "अंतःस्रावी ग्रन्थियाँ" इण्डोक्राइन ग्लैण्ड कहते हैं । वैज्ञानिकों तथा एक्यूपंचर विशेषज्ञों ने इन्हें विशेष प्रकार के "बायोइलेक्ट्रोमैग्नेटिक फील्ड" जैव विद्युत चुम्बकीय क्षेत्र माना है । तो कुछ ने इसे "नव फोर्स, वाइटल फोर्स एक्टीनियम बायोइलेक्ट्रिसिटी" आदि नामों से सम्बोधित किया है ।

भारतीय योग शास्त्रों में मनुष्य शरीर के पृष्ठ भाग में कशेरुकाओं के मध्य इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना नामक तीन प्रमुख नाड़ियों का वर्णन किया गया है । सुषुम्ना के अन्दर षट्चक्रों की उपस्थिति बताई गई है जिनकी स्थिति ऊपर से नीचे की ओर क्रमशः सहस्रार, आज्ञा चक्र, विशुद्धि चक्र, अनाहत चक्र, मणिपूर चक्र, स्वाधिष्ठान चक्र और मूलाधार चक्र हैं । इसके अतिरिक्त शरीर के अन्दर अनेकों शक्ति स्रोत मर्म स्थान उपत्यिकायें मातृकाएँ आदि होती हैं जिनमें शक्ति का विपुल भाण्डागार छिपा होता है ।

शरीर-शास्त्रियों के अनुसार काया में तत्रिका तंत्र और ग्रन्थि तंत्र दो प्रमुख प्रणालियाँ होती हैं जिनके माध्यम से समस्त शारीरिक एवं मानसिक गतिविधियों का संचालन और नियंत्रण होता रहता है । तंत्रिका तंत्र का प्रमुख केन्द्र मस्तिष्क है । तंत्रिका तंत्र विशेषज्ञों के अनुसार मानव मस्तिष्क दो भागों में विभक्त होता है– दायाँ भाग और बायाँ भाग । दोनों भाग चेतना से सम्बद्ध होते हैं । मस्तिष्क का बायाँ भाग भाषा,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गणित, तर्क आदि में व्यस्त रहता है । दायें भाग को ज्ञान, विज्ञान एवं प्रज्ञा का केन्द्र माना जाता है । मस्तिष्क के मध्य भाग में पिट्यूटरी नामक अंतःस्रावी ग्रन्थि होती है जिसे मस्तिष्क का चैतन्य केन्द्र कहते हैं । योगशास्त्रों में इसे ही सहस्रार–सहस्र दल कमल कहा गया है । यह स्थान अतीन्द्रिय क्षमताओं एवं दिव्य ज्ञान का केन्द्र है जिसके विकसित होने पर सहस्र दल कमल से असंख्य ऊर्जा किरणें प्रस्फुटित होकर मस्तिष्क के सम्पूर्ण गुप्त केन्द्रों को बींधती हुई सिर के चारों ओर प्रकाशमान घेरे का निर्माण करती हैं । इसे प्रभामंडल कहते हैं । सहस्रार के विकास के साथ अन्त और वाह्य वृत्तियाँ शान्त और सुस्थिर हो जाती हैं । मन के कषाय कल्मष समाप्त होने लगते हैं और अन्तः में प्रज्ञा जाग्रत हो जाती है । ऐसे साधक के व्यक्तित्व में ओजस, तेजस और वर्चस की झाँकी सुस्पष्ट रूप से देखी जा सकती है । सहस्रार का विकास कैवल्य प्राप्ति, का जीवन-मुक्ति का परिचायक माना जाता है ।

सहस्रार दल के नीचे ललाट मध्य में दोनों भौंओं के नीचे "आज्ञा चक्र" स्थित होता है । इसे दिव्य दृष्टि अथवा तृतीय नेत्र भी कहते हैं । शरीर-शास्त्रियों ने आज्ञा चक्र की संगति "पीनियल ग्रन्थि" से बिठाई है जिसे मास्टर ग्लैण्ड के नाम से भी जाना जाता है । इस ग्रन्थि से निस्सृत रसायन शरीर के सम्पूर्ण ग्रन्थि तंत्र को प्रभावित और नियत्रित करते हैं । पीनियल ग्रन्थि के परिष्कार से अनेकों शारीरिक एवं मानसिक विषमताओं का निराकरण होता है । मन में उठने वाले विभिन्न आवेग एवं आवेशों का शमन करने वाला यह केन्द्र जाग्रत होने पर साधक को ऊर्ध्वरता एवं दिव्य दर्शन की क्षमता प्रदान करता है । तृतीय नेत्रोन्मीलन से गुप्त एवं प्रसुप्त अतीन्द्रिय शक्तियों के जागरण का विज्ञान साधक को हस्तगत हो जाता है । बहिर्मुखी प्रवृत्ति का स्थान अन्तर्मुखी स्वभाव ले लेता है और ऐसा व्यक्ति किसी भी क्षेत्र में प्रगति कर सकता है ।

काया के ग्रीवा वाले भाग में पाई जाने वाली अंतःस्रावी ग्रन्थि को "थायरायड ग्लैण्ड" कहते हैं । शरीर-शास्त्रियों के अनुसार संरचना एवं कार्यिकी के दृष्टिकोण से शरीर में इस ग्रन्थि का महत्वपूर्ण योगदान होता है । चयापचय की क्रिया-प्रक्रिया को कार्यान्वित एवं नियंत्रित करने में थायराइड ग्रन्थि महत्वपूर्ण भूमिका सम्पन्न करती है । थायराइड को सक्रिय बना लेने पर चयापचय सम्बन्धी सभी दोषों का शमन हो जाता है । मन की चंचलता को दूर करने में इस ग्रन्थि का बहुमूल्य योगदान होता है । योग विद्या विशारदों ने कंठ भाग में स्थित इस ग्रन्थि के आसपास स्नायु प्रवाह को विशुद्व चक्र सम्बोधित किया है और इसे भावना शुद्वि का केन्द्र माना जाता है । मानसिक असतुलन को दूर करने के लिए विशुद्वि चक्र का शोधन आवश्यक माना गया है । कंठ कूप स्थित विशुद्वि चक्र पर ध्यान करने से भूख-प्यास जैसे सुख-दुख कारक द्वन्द्वों पर विजय पाई जा सकती है । आवेश जन्य गतिविधियों पर नियंत्रण एवं नीचे के चैतन्य केन्द्रों के जागरण में आने वाली कठिनाइयों का सहज समाधान भी इस चक्र की साधना से सध जाता है ।

अनाहत चक्र को हृदय स्थान स्थित चैतन्य शक्ति का भावना प्रधान केन्द्र माना गया है । शरीर शास्त्रियों ने इसे "थाइमस ग्रन्थि" के आसपास स्थित माना है । मनुष्य की मस्तिष्कीय चेतना ज्ञान, बुद्वि एवं तर्क प्रधान होती है । हृदय स्थित चेतना का सम्बन्ध संवेदना प्रधान होने के कारण मनुष्य दुःख-सुख के छोटे-बड़े थपेड़े से उद्वेलित एवं आनन्दित होता रहता है । अनाहत चक्र के जाग्रत होने पर द्वन्द्व की स्थिति समाप्त हो जाती है और व्यक्ति के जीवन में अनिर्वचनीय आनन्द का साम्राज्य छा जाता है ।अनाहत चक्र की साधना जीवन मृत्यु के वास्तविक रहस्य को सुलझाती है और उससे छुटकारा पाने का मार्ग उद्घाटित होता है ।

हृदय से नीचे नाभि के स्थान में मणिपूर चक्र स्थित होता है । प्राण ऊर्जा का केन्द्र होने के कारण वैज्ञानिकों ने इसे सोलर प्लेक्सस एवं पाचन संस्थान से जुड़े होने के कारण एपीगैस्ट्रियल प्लेक्सस नाम दिया है और इसका सम्बन्ध पैन्क्रियाज नामक ग्रन्थि तंत्र से भी जोड़ा है । शरीर शास्त्रियों ने अपने अनुसंधान निष्कर्ष में बताया है कि नाभि स्थान स्थित चैतन्य केन्द्र का सम्बन्ध स्नायु तंत्र से होता है । इसमें स्नायु तंतुओं का जाल सा बिछा होता है तथा मस्तिष्क

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की भाँति इसमें भी एक लिबलिबा भूरा पदार्थ "ग्रे मैटर" भरा होता है । इस केन्द्र को "एबडामिनल ब्रेन" की संज्ञा दी गयी है और बताया गया है कि चेतना शक्ति का वह प्रमुख केन्द्र है जिसकी साधना करने से शरीर में प्राण ऊर्जा का, तेजस् शक्ति का अभिवर्धन और पाचन संस्थान का शुद्धिकरण होता है ।

नाभि चक्र के नीचे पेडू के पास स्वाधिष्ठान चक्र स्थित होता है इसे "जीवनी शक्ति केन्द्र" भी कहते हैं । वैज्ञानिकों ने इसे एड्रीनल ग्रन्थि माना है और कहा है कि यह भाग वीर्य रक्षा एवं जीवनी शक्ति के पोषण रक्षण का मुख्य केन्द्र है । स्वाधिष्ठान चक्र की साधना करने से काम वासना पर नियन्त्रण सधता है और साधक ब्रह्मचारी एवं ऊर्ध्वरता बनता है ।

सुषुम्ना के सबसे निचले भाग में मूलाधार चक्र स्थित होता है । इसकी स्थिति गुदा द्वार एवं जननांगों के मध्य बताई गई है । योगशास्त्रों में इसे चेतन शक्ति का प्राण ऊर्जा केन्द्र कहा गया है । इसी आधार केन्द्र में कुण्डलिनी महाशक्ति कुण्डली मारे प्रसुप्त मुद्रा में दबी पड़ी रहती है और यौगिक साधनाओं के माध्यम से जाग्रत होने पर षट्चक्रों का भेदन करती हुई सहस्रार की यात्रा करती है तथा अनेकानेक अतीन्द्रिय दिव्य क्षमताओं का गुप्त भाण्डागार साधक के सामने खोल देती है । मस्तिष्क को प्राण विद्युत की शक्ति धारा की आपूर्ति इसी केन्द्र के द्वारा होती है । वैज्ञानिकों ने इस केन्द्र का सम्बन्ध प्रजनन ग्रन्थियों से जोड़ा है । यह वह शक्ति केन्द्र है जिसमें काम वासना की अधिकता होती है और इसे साधित, नियन्त्रित एवं परिष्कृत करके उच्चस्तरीय शक्तियों का स्वामी बना जा सकता है । मूलाधार चक्र की साधना करने वाला साधक वीर्यवान एवं ओजस्वी, तेजस्वी बनता है । वह अद्वितीय एवं अनुपम मेधा शक्ति का धनी प्रतिभावान व्यक्तित्व वाला होता है ।

योगविद्या विशारदों के अनुसार सृष्टि संरचना में उत्तरी और दक्षिणी ध्रुवों की तरह मनुष्य के शरीर में भी चैतन्य ऊर्जा के दो प्रमुख स्रोत हैं । पहला मस्तिष्क मध्य में सहस्रार और दूसरा जननांगों और गुदाद्वार के मध्य स्थान सुषुम्ना के निम्नवर्ती आधार में स्थित मूलाधार चक्र है । दोनों ध्रुवों के मध्य आदान-प्रदान होते रहने, तालमेल बने रहने पर ही मानवी काया के सभी क्रिया-कलाप संतुलित एवं सुव्यवस्थित रूप से सम्पन्न होते रहते हैं । यदि इनमें से एक ने भी अपना अनुदान सहयोग देना बन्द कर दिया अथवा उसने कटौती कर दी तो दूसरे के समस्त क्रिया-कलाप लडखड़ा जाते हैं और व्यक्तित्व में असन्तुलन पैदा हो जाता है । मनुष्य दीन-हीन, दयनीय स्थिति में पहुँच जाता है ।

इस संदर्भ में शरीर विज्ञानियों का कहना है कि प्राण ऊर्जा का प्रवाह निम्नगामी होने पर वह अतृप्त वासनाओं एवं कुंठाओं को जन्म देता है । शरीर के एक छोर पर मस्तिष्क, मध्य में द्विदलीय चक्र रूप में पिट्यूटरी ग्रन्थि स्थित होती है तो दूसरे सिरे पर जननांगों से सम्बन्धित एड्रीनल ग्रन्थि । फिजियोलाजी की दृष्टि से इन दोनों ग्रन्थियों की उपयोगिता बहुत महत्वपूर्ण होती है । इनका मनुष्य के आचरण, व्यवहार और स्वभाव से सीधा सम्बन्ध होता है । एड्रीनल ग्रन्थि काम वासना के आवेग को उत्तेजित कर देती है तो पिट्यूटरी ग्रन्थि उस आवेश को शान्त कर देती है अथवा उसकी दिशाधारा को उत्कृष्टता की रचनात्मक प्रवृत्तियों की ओर मोड़ देती है । इसी कारण ग्रन्थि तंत्र का शुद्धिकरण जैव ऊर्जा के ऊर्ध्वगमन का सर्वश्रेष्ठ उपाय माना गया है ।

स्थूल शरीर के अंदर गहराई में छिपे ये मर्मस्थल वस्तुतः विराट शक्ति के भाण्डागार हैं । परमाणु का विखण्डन करके जिस प्रकार बड़े परिमाण में ऊर्जा उपलब्ध की जाती है, लेसर व मेसर ऊर्जा के माध्यम से जिस प्रकार अगणित असंभव समझे जाने वाले कार्यों को सम्पन्न कर लिया जाता है, ठीक उसी प्रकार चेतना के ईंधन शब्द शक्ति का सुनियोजित कर ध्यान धारणा द्वारा सुपात्र साधक सुयोग्य मार्गदर्शन में इन शक्ति केन्दों को प्रस्फुटित करते व उपलब्धियों की आध्यात्मिक फलश्रुतियों से लाभान्वित होते रहते हैं । यह एक असाधारण स्तर का योग पुरुषार्थ है । बहुधा इसे हल्की-फुल्की, चर्चा के स्तर पर ऐसा मान लिया जाता है, मानों स्विच ऑन करने की तरह यह भी एक यांत्रिक प्रक्रिया है । यह क्रम जहाँ तक संभव

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हो दूर किया जाना चाहिए । साथ ही एक और तथ्य पर ध्यान दिया जाना चाहिए कि योग ग्रन्थों में वर्णित षट्चक्रों की जो संगतियाँ शरीरगत ग्रन्थियों और गुच्छकों से बिठाई जाती है, वस्तुतः वह शरीर विज्ञानियों के अन्दर स्थूल रूप में आत्मा नाम की संरचना खोजते रहे हैं और समस्त संभावनाओं को काय कलेवर की परिधि में ही लपेटते रहे हैं । अन्यथा ये सभी शक्ति केन्द्र अति सूक्ष्म होते हैं तथा योगाभ्यास, विचारणा-भावना की पवित्रता एवं गुण कर्म स्वभाव की उत्कृष्टता के आधार पर विकसित हुई अन्तः प्रज्ञा द्वारा अनुभूत होते हैं ।

कुण्डलिनी का अवस्थान शरीर के बीचों बीच है । जननेन्द्रिय को केन्द्र मानकर नापा जाय तो उसके ऊपरी और निचले भाग की लम्बाई प्रायः समान ही बैठती है । इसे एक प्रकार का चौराहा कह सकते हैं, जहाँ से ऊपर भी उठा जा सकता है और नीचे भी गिरा जा सकता है । उथले तट पर भी विनोदरत रहा जा सकता है और कुशल पनडुब्बों की तरह गहरी डुबकी लगाकर बहुमूल्य मणि मुक्तकों को भी बटोरा जा सकता है ।

कुण्डलिनी को प्राणाग्नि या योगाग्नि कहा गया है । उसकी स्वाभाविक प्रकृति ऊर्ध्वगामी है । पर यदि उपेक्षा बरती जाय तो वह निष्क्रिय भी पड़ी रह सकती है और यहाँ तक कि मार्ग अवरुद्ध रहने पर वह नीचे की ओर भी खिसक सकती है । कभी–कभी वह आवरण वेध कर अपने लिए बहिर्गमन मार्ग भी बना सकती है ।

वंश परम्परा का सृष्टि क्रम चलाते रहने के लिए प्रकृति ने जननेन्द्रिय में उत्तेजना उत्पन्न की है । सामान्य जीवधारी उससे प्रभावित रहते हैं, और वयस्क होने के उपरान्त काम कौतुक में रस लेने लगते हैं । इसके साथ ही प्रजनन का दायित्व भी जुड़ा हुआ है । उसमें जकड़ जाने के उपरान्त काम कौतुक की कठिनाई और जिम्मेदारी कंधे पर आती है । एक ऋण चुक नहीं पाता, तब तक दूसरा नया सिर पर लद जाता है, इसी प्रकार प्राणी वर्ग की उदरपूर्णा के अतिरिक्त यौनाचार और प्रजनन परक भार ढोते–ढोते हुए जिन्दगी बितानी पड़ती है ।

जो प्राणी जितने हेय स्तर के हैं उनमें प्रजनन की क्षमता उतनी ही अधिक पाई जाती है । मक्खी, मच्छर, मछली, चूहे आदि की प्रजनन क्षमता को देखकर आश्चर्य होता है । यदि उनके प्रयास सफल होते रहे तो इनका एक ही जोड़ा कुछेक वर्ष में समूची धरती पर छा सकता है । सभी जानते है कि टिड्डी दल और फसल के कीड़े कितनी तेजी से बढ़ते है । यह वृद्धि न उन उत्पादकों के लिए हितकर होती है, न वातावरण के लिए और न उनके लिए जिनके कि सम्पर्क में वे आते हैं ।

यह प्राणाग्नि का वैसा ही कौतुक कौतूहल है जैसे कि बच्चे फुलझड़ी जलाकर करते रहते हैं । उस विनोद की परिणति सब प्रकार महँगी पड़ती है । पैसा जलता है, धुआँ स्वास्थ्य बिगाड़ता है और आग लगने का जोखिम रहता है । काम कौतुक में प्राणाग्नि जैसी बहुमूल्य सम्पदा का अपव्यय भी ऐसा है, जिसमें व्यक्तिगत रूप से आत्मिक दृष्टि से मनुष्य का कोई लाभ नहीं बनता । प्रकृति के कौतुक कौतूहल भर की पूर्ति होती है ।

कुण्डलिनी जागरण उस प्रयत्न का नाम है जिसमें प्राणाग्नि को ऊपर उठाया जाता है । शक्ति केन्द्रों के उन चक्रों को गतिशील किया जाता है, जिनका पैंदा आवश्यक गर्मी के अभाव में ठंडा ही पड़ा रहता है । हाँडी के नीचे आग न जलाई जाय तो उसमें पड़ी वस्तु गरम होती है, न पकती है ।

प्राणाग्नि को गरम करने में बहुत कठिनाई नहीं है । ब्रह्मचर्य पालन से उसका अधोगामी व क्षरण रुक जाता है । इसके अतिरिक्त निर्धारित प्राणायामों के करने से शक्तिचालिनी मुद्रा जैसे प्रयोगों से उसे इतना तीव्र किया जाता है कि वह मेरुदण्ड मार्ग की नली में होती हुई मस्तिष्क के मध्य भाग में अवस्थित सहस्रार चक्र को स्पर्श कर सके । ब्रह्माण्डीय चेतना के साथ अपना सम्बन्ध जोड़ सके । तालमेल बैठा सके ।

उर्ध्वगमन प्राणाग्नि प्रायः प्रकृति प्रेरणा से नीचे गिरने या अन्य छिद्रों द्वारा बाहर फूटती है । इन्द्रियों के रस ऐसे ही हैं, जो सामान्य स्थिति में कामचलाऊ उपयोग से शान्त हो जाते हैं । पर उनके पृष्ठ भाग में जब ऊर्जा उभरती है तो हाँडी में उफान आने जैसी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्थिति बन पड़ती है । सभी इन्द्रियाँ अपने–अपने विषय के भोगों को अतिवाद की सीमा तक ले जाना चाहती है । जिह्वा को रसास्वादन, आँखों को दृश्य कौतूहल, मस्तिष्क को लिप्सा लालसा का उभार आता है । यह संस्थान आतुर हो उठते हैं ।असावधानी बरतने पर वे संग्रहीत क्षमता से ही हाथ धो बैठते हैं और खोखले हो जाते हैं । इसलिए कुण्डलिनी साधक को न केवल ब्रह्मचर्य का पालन करना पड़ता है वरन मन समेत सभी इन्द्रियों पर नियंत्रण कडा करके संयम साधना पड़ता है ।

कुण्डलिनी जागरण अभ्यास को निरन्तर जारी रखने पर असंयमजन्य उत्तेजनाएँ शान्त हो जाती हैं और प्राणाग्नि नीचे से ऊपर को उठना आरम्भ करती है ।

मूलाधार गह्वर–मेरुदण्ड का अन्तिम सिरा कुण्डलिनी शक्ति का केन्द्र है । यों उसकी ऊर्जा समस्त शरीर में काम करती और गर्मी पहुँचाती है । ऊर्ध्वमुखी कुण्डलिनी क्रमशः एक–एक चक्र को वेधती हुई आगे बढ़ती ऊपर चलती है । मेरुदण्ड में मूलाधार के अतिरिक्त चार चक्र और हैं– (१) स्वाधिष्ठान (२) मणिपूर (३) अनाहत (४) विशुद्धि चक्र । इसके बाद सहस्रार आ जाता है । आज्ञा चक्र का विषय विवादास्पद है । उसे मेरुदण्ड में सम्मिलित भी माना जाता है और पृथक भी कहा जाता है ।

ऊर्जा कितनी ऊपर उठी, इसका आभास इससे होता है कि ऊपर उन चक्रों के स्थान पर बार–बार अनायास ही स्पन्दन, फड़कन, गर्मी, खुजली जैसी मचती है । कभी–कभी चींटी काटने, कीड़े रेंगने जैसे अनुभव होते हैं । यह हलचलें जिस क्षेत्र में होती हैं वहाँ तक प्राणाग्नि का ऊर्ध्वगमन हुआ माना जा सकता है ।

स्वभाव में अन्तर आने वाली बात ही यह परिचय देती है कि कुण्डलिनी की पहुँच कितनी ऊँची हो गई । स्वाधिष्ठान में चंचलता, आतुरता, स्फूर्ति जैसे–उत्तेजनात्मक प्रयास चल पड़ते हैं । क्रोध एवं अहंकार की मात्रा भी बढ़ जाती है । यह उफान भर है । उफान स्थायी नहीं होते । वे कुछ ही समय उछल-कूद करने के बाद स्थिर होते और तली में बैठते दीख पड़ते हैं । यह इसलिए होता है कि आत्मसंयम की अगली सीढ़ी पर बढ़ने की परीक्षा साधक उत्तीर्ण कर सके ।

इसी प्रकार ऊपर के चक्रों की दिशा में प्राणाग्नि का बढ़ना स्वभाव में तरह–तरह की उत्तेजनाएँ भरता है । इनमें से कुछ सात्विक भी हो सकती हैं कुछ राजसिक और तामसिक भी । लगता है कई प्रकार के आवेश आते हैं और उतावली अपनाने के लिए बैचेन करते हैं । इन सभी को अधिक दृढ़तापूर्वक संयमित करना पड़ता है । न कर पाने पर उत्तेजना कार्यान्वित होने लगती है और साधक के किये हुए प्रयासों को निष्फल बना देती है । अस्तु इस मार्ग को अपनाने पर पूर्णता तक पहुँचने तक क्रमशः अधिक कठोर संयम बरतने की आवश्यकता पड़ती है । धीर, वीर, गंभीर की तरह फूँक–फूँक कर कदम बढ़ाना पड़ता है और ध्यान रखना पड़ता है कि यह नशे जैसे आवेश कुछ ऐसा न कर बैठें, जिसे उद्धत कहा जा सके ।

कुण्डलिनी की प्राण ऊर्जा जब मस्तिष्क के मध्य भाग सहस्रार तक पहुँचती है तब आत्म–ज्ञान उभरता है और शरीर और आत्मा की पृथकता अनुभव होने लगती है । इस स्थिति का प्रतिफल यह होता है, कि दृष्टिकोण में उच्चस्तरीय परिवर्तन आता है, जो आत्मा के पक्ष में अधिक सोचने और अधिक करने के लिए विवेक और साहस की मात्रा कहीं अधिक बढ़ा देता है । पूर्व–जीवन में जिस ओर इच्छा ही उत्पन्न नहीं होती उस आत्म–कल्याण के लिए परमार्थ मार्ग पर चल पड़ने का निश्चय दृढ़ से दृढ़तर होता जाता है ।

कुण्डलिनी जाग्रत होकर मेरुदण्ड के मध्य में स्थित सुषुम्ना मार्ग से होकर इड़ा (सूर्यनाड़ी) पिंगला (चन्द्रनाड़ी) की सहायता से ऊपर की ओर प्रवाहित होकर षट्चक्रों को प्रज्वलित एवं प्राणयुक्त करती हुई अन्त में सहस्रार में जाकर योगी को पूर्णावस्था की प्राप्ति करा देती है ।

मेरुवंश में से होकर ऊपर जाते समय जिस–जिस चक्र में से होकर यह गुजरती है उस-उस चक्र को यह जागरित करती तथा खोलती जाती है । स्वाधिष्ठान चक्र के जागरित होने पर मनुष्य सूक्ष्मतर लोक में स्वच्छंद विहार करता है । मणिपूरक की जाग्रति के साथ–साथ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

आत्मरक्षा की शक्ति उसमें अधिक हो जाती है। अनाहत चक्र के खुलते ही उसे अन्तर्दृष्टि प्राप्त होती है। विशुद्ध चक्र का जाग्रत होना, दिव्य श्रुति (Clariaudience) का कारण है। आज्ञा चक्र के जाग्रत होते ही साधक को दिव्यदृष्टि (Clariuision) प्राप्त हो जाती है। आज्ञा चक्र के ऊपर ब्रह्मरंध्र में सहस्रार चक्र है। सहस्रार चक्र का जाग्रत होना ही कुण्डलिनी साधक का चरम ध्येय है।

सहस्रार के जाग्रत होते ही शरीर और आत्मा अपनी स्वतंत्र स्थिति को प्राप्त होते हैं। आत्मा शरीर से बाहर निकलकर मन चाहे स्थान पर जाकर एवं लौटकर पुनः उसी देह में प्रवेश कर सकती है। योग क्रियाओं द्वारा कुण्डलिनी जाग्रत कर षट्चक्र रूप द्वारों को खोलते हुए मस्तिष्क में स्थित सहस्रार चक्र में उसे ले जाना ही योग की सिद्धि व सफलता है।

कुण्डलिनी के जाग्रत होने के साथ वेग उत्पन्न होने वाला प्रथम शब्द है 'नाद'। नाद के ३ भेद हैं– महानाद, नादान्त और निरोधिनी। नाद से प्रकाश होता है और प्रकाश का व्यक्तरूप महाबिन्दु है।

सम्पूर्ण चक्र कमल के आकार के माने गये हैं किन्तु इनकी पंखड़ियों की संख्या में अंतर है। मूलाधार चक्र में चार दल, स्वाधिष्ठान में ६, मणिपूरक में १०, अनाहत में १२, विशुद्धि चक्र में १६, आज्ञा चक्र में २०, सहस्रार में १००० दल हैं।

ये चक्र पंचतत्वात्मक हैं। मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूरक, अनाहत तथा विशुद्ध चक्र क्रमशः पृथ्वी, अप, तेज, वायु तथा आकाश के निदर्शक हैं। सहस्रार को शून्य चक्र भी कहते हैं।

अब हम उपर्युक्त चक्रों का ध्यान करने के फल पर विचार करेंगे। आधार चक्र का ध्यान करने से मनुष्य वक्ता, मनुष्यों में श्रेष्ठ, सर्व विद्याओं का जानने वाला आनन्दित, आरोग्य तथा काव्य–प्रबन्ध में चतुर होता है। स्वाधिष्ठान चक्र का ध्यान करने से अहंकारादि विकार नष्ट होते हैं। वह श्रेष्ठ योगी, निर्मोही तथा गद्य–पद्य का कुशल रचयिता होता है। मणिपूरक चक्र का ध्यान करने वाला जगत् का संहार व पालन करने में समर्थ होता है। जिह्वा पर सरस्वती निवास करती है और वाक्य–रचना में वह चतुर हो जाता है। अनाहत चक्र का ध्यान का फल ईशत्वसिद्धि, योगीश्वरत्व, इन्द्रियजितता तथा परकायाप्रवेश शक्ति आदि हैं। विशुद्धाख्य चक्र के ध्यान में लीन योगी ज्ञानवान, उत्तम वक्ता, शान्तचित्त, त्रिलोकदर्शी सर्वहितकारी, आरोग्यचिरंजीवी तथा तेजस्वी होता है। आज्ञा चक्र के ध्यान से वाक्य सिद्धि प्राप्त होती। सहस्रार का ध्यान करते ही योगी अमर–मुक्त, उत्पत्ति–पालन में समर्थ, आकाशगामी तथा समाधि युक्त होता है।

कुण्डलिनी शक्ति जाग्रत होकर देहस्थ कफ पित्तादि दोष एवं त्याज्य पदार्थों को नष्ट कर डालती है। उसके ऊर्ध्वगमन करते ही देह के तमाम व्यापार बंद हो जाते हैं। हृदय तथा नाड़ी की गति भी बंद हो जाती है। कुण्डलिनी के सहस्रार में प्रवेश करते ही योगी मोक्ष प्राप्त करता है। चक्रों का प्रकाश कुण्डलिनी जाग्रति का द्योतक है। कुण्डलिनी का ऊर्ध्वगमन यही है। वस्तुतः षट्चक्र वेधन एवं कुण्डलिनी शक्ति के जागरण का विज्ञान विराट ब्रह्माण्ड और व्यष्टिगत लघु पिण्ड के वियोग–अलगाव को दूर कर परस्पर सम्बद्ध करने एवं मूर्च्छना को निरस्त कर प्रखर पराक्रम जगाने की एक सर्वांगपूर्ण विधा है। आद्य शंकाराचार्य ने अपने ग्रन्थ "सौन्दर्य लहरी" में जो आठ सिद्धियाँ गिनाई हैं वे छः चक्रों, सहस्रार एवं अन्तरात्मा के जागरण से प्राप्त होती हैं। ये सिद्धियाँ हैं– (१) जन्म सिद्धि–पूर्वजन्मों की स्थिति का सहज आभास (२) शब्द ज्ञान सिद्धि–कानों से सुने गये शब्दों के पीछे छिपे हुए उद्देश्यों का ज्ञान (३) शास्त्र सिद्धि–शास्त्रवचनों का वास्तविक ज्ञान (४) सहनशक्ति–कठिनाइयों एवं आपत्तियों का सामना करने की सिद्धि सामर्थ्य (५) तापशक्ति–आक्रोशों–प्रकोपों को सहन करने की सामर्थ्य (६) शाप शक्ति–वाक्सिद्धि शाप या वरदान देने की शक्ति (७) विद्याशक्ति–जिन विधाओं को दूसरों से पढ़कर जाना जाता है उनका भीतर से स्मरण (८) विज्ञान शक्ति–विश्वब्रह्माण्ड के गुह्य रहस्यों को जानने की क्षमता। वस्तुतः भगवान शंकर ने अपने कुण्डलिनी स्तवन ँ तो भाव भरे शब्दों में यह कहा है कि मैं अबोध बालक जो कुछ भी बन सका हूँ तुम्हारे अनुग्रह और पयपान से ही बना हूँ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुण्डलिनी शक्ति का वर्णन अन्यान्य धर्मावलम्बियों ने भी किया है । इनमें मुख्यतः सूफी भारतीय दर्शन के अधिक समीप रहे हैं । दाराशिकोह (शाहजहाँ का ज्येष्ठ पुत्र) जो कि सूफी मंत को मानने वाला था उपनिषदों का अच्छा खासा विद्वान था । उसने तंत्र योग ग्रन्थ भी पढ़े तथा उनका फारसी में भाष्य किया । उसने कुण्डलिनी शक्ति की चर्चा अपनी पुस्तक "रिसाला–ए–हुक्मनामा" में की है जहाँ तीन केन्द्रों का दिल-ए-मुदव्वर, दिल-ए-सनोबरी एवं दिल-ए-निलोफरी नाम से वर्णन आता है । ये मूलतः ब्रह्मग्रंथि, विष्णुग्रंथि, रुद्रग्रन्थि हैं । इन्हें सहस्रार अनाहत एवं मूलाधार के समकक्ष माना जा सकता है । शेख मुहम्मद इकबाल ने अपनी पुस्तक "द डवलपमेण्ट ऑफ मेटाफिजीक्स इन पर्शियां" में ऐसे अनेक संदर्भों का वर्णन किया है जो बताते हें कि हिन्दू अध्यात्म दर्शन किस सीमा तक अन्यान्य मतावलम्बियों के लिए गहन रुचि का विषय रहा है । अल बिरूनी नामक विद्वान ने तो पातंजल योगसूत्र एवं सांख्यसूत्रों का ग्यारहवीं शताब्दी में अरबी भाषा में अनुवाद तक किया था ।

तिब्बती ग्रंथों में मानवी काया में प्रमुख ऊर्जा केन्द्रों की स्थिति–मस्तिष्क, गला, हृदय, सोलर प्लेक्सस और जननांगों के मध्य में मानी गई है । ग्रीक साहित्य में भी मनुष्य शरीर में ६ ऊर्जा केन्द्रों की उपस्थिति का वर्णन मिलता है । योगशास्त्रों में जिन गुप्त ऊर्जा केन्द्रों को 'चक्र' या 'कमल' कहा गया है मूर्धन्य शरीर शास्त्रियों चिकित्साविदों ने उनकी संगति विद्युत्प्रवाह, एण्डोक्राइन ग्लैण्ड्स एवं अन्यान्य आटोनॉमिक गैंगलिया से बिठाई है । जापानी पद्धति में जो स्थान एवं आकार "क्युसोस" नाम से बताये गये हैं, वह धारणा की ग्रंथियों व चक्रों से समानता खाती है । सुप्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक बैंजामिन बाकर ने अपनी पुस्तक 'एनसाइक्लोपीडिया ऑफ एसोटरिक मेन' में कहा है कि अंतःस्रावी ग्रन्थियों से निःसृत रस धारा एवं चक्रों से उत्सर्जित ऊर्जा मनुष्य के उत्थान–पतन के निर्धारण एवं गुण, कर्म, स्वभाव तथा व्यक्तित्व निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका सम्पादित करती है ।

कुण्डलिनी प्राणाग्नि है, जिसे प्राणकुण्ड जननेन्द्रिय मूल में प्रसुप्त चिनगारी की तरह जब प्रज्ज्वलित किया जाता है तो छः लोकों को वेधती हुई वह सातवें ब्रह्म लोक में पहुँच जाती है । वहाँ उसका स्वरूप ब्रह्माग्नि का हो जाता है । प्राणाग्नि शरीरगत और मनोगत विशिष्टताओं को उभारती है और सोमवर्षा करती है । देवता और ऋषि इसी सोम का पान करते हैं । ब्रह्मर्षि गण परमात्मा में आत्मा को हवन करके जीव और ब्रह्म के महत्व अद्वैत स्थिति एकत्व स्थापित कर देते हैं । इस अध्यात्म यज्ञ का वर्णन विस्तारपूर्वक किन्तु संयत रूप में किया गया है और इसे आत्म–यज्ञ कहा गया है ।

प्राणाग्नि शरीर सत्ता की भौतिक क्षमताओं को अन्तरात्मा में दिव्य विभूतियों के रूप में खींच बुलाती है । अमृत रूपी सोम का रसास्वादन कराती है और क्षुद्रता को महानता में परिवर्तित कर देती है ।

कुण्डलिनी शक्ति है और सहस्रार शिव । शिव और शक्ति के समन्वय से दो वरदान उत्पन्न होते हैं । सदबुद्धि के अधिष्ठाता गणेश और शक्ति के पुञ्ज कार्त्तिकेय । साधक शरीर को वैश्वानर महामाया से भरा–पूरा देखता है और ब्रह्मरंध्र में दिव्य चेतना का अजस्र अनुदान गंगावतरण की तरह प्रत्यक्ष दृश्यमान होने लगता है । इन्हीं का समन्वय पृथ्वी निवासियों के लिए सोम बन जाता है और स्वर्ग में निवास करने वालों के लिए अमृत । अध्यात्म तत्त्वज्ञान में सोम और अमृत को एक ही स्तर की दो वस्तुएँ माना गया है ।

मानवी मस्तिष्क जहाँ सहस्रार स्थित माना जाता है । प्रत्यक्ष देखने में खोपड़ी के अस्थि सम्पुट में भरा हुआ थोड़ा सा लिबलिवा पदार्थ मात्र है किन्तु उसकी वास्तविक महिमा और गरिमा अतीव विस्तृत है । उसका एक बड़ा भाग "साइलेण्ट या डार्क एरिया" कहलाता है जो मस्तिष्क का ८७ से ९३ प्रतिशत भाग होता है । चेतन और अचेतन मस्तिष्क दोनों मिलकर जितना क्षेत्र घेरते हैं साइलेण्ट ऐरिया (अर्थात् दायाँ पेराइटल कार्टेक्स, कार्पस कैलोजम एवं लिम्बिक सिस्टम इत्यादि)

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

का उससे कहीं अधिक व्यापक क्षेत्र है । दिव्य शक्तियों के केन्द्र इसी में हैं । मनोविज्ञान शास्त्र चेतन–अचेतन की ही खोजकर सकता है । यह सुपर चेतन अभी उनकी समझ और पकड़ से बाहर है ।

कुण्डलिनी योग मूलतः हठयोग के अन्तर्गत आता है । हठ योग तंत्र विद्या के अधिक समीप बैठता है । इसका कारण मोहन, उच्चाटन वशीकरण, आदि ऐसी विद्याएँ हैं जिनके सहारे किसी पर आक्रमण भी किया जा सकता है और उसे हानि भी पहुँचाई जा सकती है ।

इंग्लैण्ड की "स्काटलैण्ड यार्ड" की गुप्त पुलिस के अफसर राबर्ट फेबियन जब अफ्रीका में थे तो वहाँ उन्होंने तांत्रिकों के ऐसे भयंकर प्रयोग देखे, जिनमें कई प्राणघातक प्रयोग थे । अपनी पुस्तक में उन्होंने इन प्रसंगों को विस्तारपूर्वक प्रकाशित किया है ।

इसीलिए इन साधनाओं का थोड़ा सा सौम्य भाग ही प्रत्यक्ष उपचारों में देखने में आता है । शेष को गोपनीय रखा गया है ताकि किसी कुपात्र के हाथों यह प्रयोग लग जाने पर वह उनके माध्यम से अनर्थ न करने पाए । जिस बारूदी सुरंग से पहाड़ की चट्टानें तोड़कर सुविधाजनक रास्ता बनाया जा सकता है उसी से किसी विद्यालय या अस्पताल, मल्टी स्टोरीड बिल्डिंग को गिराया भी जा सकता है । गुह्य विधाओं को गोपनीय रखने का प्रचलन इसीलिए है कि उनके द्वारा अनर्थ न होने पाए । समुद्र मंथन का एक उपाख्यान पुराणों में आता है । इसमें देवता और दैत्यों ने मिलकर समुद्र मंथन किया था और फलस्वरूप चौदह बहुमूल्य रत्न निकले थे । इस कथानक की संगति कुण्डलिनी योग के साथ पूरी तरह बैठती है ।

कुण्डलिनी के यौन गह्वर में एक तलछट–कुण्ड बताया गया है । यह कूर्म है । जिस मदिराचल की 'रई' मँथने के लिए बनाई गई थी, वह मेरुदंड है । सर्प की रज्जु बनाकर मथा गया था । वह इड़ा, पिंगला के साढ़े तीन सर्पिल घेरे हैं । मंथन से, घूर्णन से ऊर्जा उत्पन्न होती है । काम कौतुक में भी मंथन होते हैं और कुण्डलिनी योग में भी प्राण मंथन । इसमें से विष भी निकल सकता है और अमृत भी । इस गुह्य विधा का यदि तांत्रिक वामाचार में प्रयोग करके किसी को हानि पहुँचायी जाय तो वह विष हुआ और यदि आत्म–कल्याण–विश्वकल्याण के लिए प्रयोग किया जाय तो वह अमृत है । सज्जन सदुपयोग करते हैं और दुर्जन दुरुपयोग । इसलिये उसे जननेन्द्रियवत आच्छादित रखने और आवरण से ढँके रखे रहने का भी विधान है ।

सोती सर्पिणी जगाने वाले की ओर ही सर्वप्रथम लपकती है और उसी को उठकर हैरान करती है । दुरुपयोग हैरान करने, सर्प को छेड़ने के समान ही है । चमत्कार दिखाने के लिए किसी का अनिष्ट करने के लिए अनगढ़ लोग उसे प्रयुक्त कर बैठते हैं । साधक की कामोत्तेजना भी बढ़ जाती है और वह उस आवेश में व्यभिचाररत भी हो सकता है ।

हैनरी ऑस्ले की पुस्तक "नोट्स ऑन स्प्रिचुअल फिजियोलॉजी" में लिखा है कि नर–नारियों में कामोत्तेजना मेरुदण्ड के निचले भाग सेक्रो–काक्सीजियल रीजन से उत्पन्न होती है । उस क्षेत्र की शिथिलता और उत्तेजना पर कामुकता बहुत हद तक निर्भर है । इस क्षेत्र में गड़बड़ी पड जाने पर कोई भी अति कामुक या नपुंसक हो सकता है । इसलिए मूलाधार बंधशक्ति चालिनी मुद्रा वज्रासन व पद्मासन इत्यादि द्वारा इस क्षेत्र को सशक्त बनाने का योग साधनाओं में प्रावधान रखा गया है । इन उपचारों द्वारा कुण्डलिनी साधना में प्रवाह का ऊर्ध्वगामी बनाना पड़ता है, अन्यथा यह अधोगामी होकर धातुओं का अनावश्यक क्षरण कर साधक को अल्पायु में ही वृद्ध सदृश अशक्त बना सकता है ।

कुण्डलिनी का शब्दार्थ है "घेरा मारकर बैठना ।" सर्पिणी घेरा मारकर बैठती है तो भी उसका फन ऊँचा रहता है । यही उसका अग्रभाग है । दौड़ना वह यहीं से आरम्भ करती है और जगने के पश्चात् वह ब्रह्मरन्ध्र के सहस्रार से मस्तिष्क के ग्रे मेटर से, जाग्रति केन्द्र स्फुल्लिंग के फब्बारे "रेटीकुलर सिस्टम" से जाकर चिपटती है । इसी विज्ञान और विधान को शिव मन्दिरों में स्थापित प्रतिमाओं में दिखाया जाता है । कुण्डलिनी वह है, जिसमें जल भरा रहता है । शिव का स्वरूप कैलाश पर्वत जैसा, स्फटिग लिंग जैसा गोलाकार है । वह जलहली के बीच स्थापित रहता है ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जीवात्मा भी कुण्डली मार कर बैठता है । न जाने कितनी-कितनी वस्तुओं पर अधिकार जमाता है । पर वास्तविकता यह है कि शरीर भी साथ नहीं पाता । मात्र अकर्म-कुकर्मों का पश्चाताप ही पीठ पर लदा रहता है ।

कुण्डलिनी जागरण का एक तात्पर्य यह भी है कि मनुष्य अहंता का दायरा छोटा करके न बैठे । निद्रा की खुमारी में ही न ऊँघता रहे । जगे और वह काम करे जिससे दूसरे संकीर्ण स्वार्थपरता में आबद्ध लोग भी जग पड़ें और उस मार्ग पर चलें जिस पर जाग्रत कुण्डलिनी सहस्रार कमल में अवस्थित सदाशिव से मिलने के लिए जाती है और साधक की साधना को सार्थक बनाती है ।

षट्चक्र प्रचण्ड प्रवाहों के उद्गम

जीव और ब्रह्म के बीच, पिण्ड और ब्रह्माण्ड के बीच कुछ सुनिश्चित सम्बन्ध सूत्र जुड़े हुए हैं । किन्तु वे शिथिल मूर्छित, अवरुद्ध, निष्क्रिय, उपेक्षित स्थिति में पड़े रहते हैं । यदि उन्हें सजग सक्रिय किया जा सके तो सम्बन्ध जुड़ जाने से आदान-प्रदान का द्वार खुलता है और फिर किसी प्रकार के अभाव संकट का सामना नहीं करना पड़ता । इन सम्बन्ध सूत्रों को सजग सक्रिय बना लेना ही साधना क्षेत्र का परम पुरुषार्थ माना गया है ।

कठपुतली और बाजीगर की उँगलियों के मध्य कुछ धागे जुड़े रहते हैं और वे ही सारे खेल की भूमिका निभाते हैं । आकाश में उड़ने वाली पतंग और उसे उड़ाने वाले के साथ सम्बन्धित किये रहने की प्रक्रिया पतली डोरी के द्वारा सम्पन्न होती है । माता और गर्भ के मध्य नाल नलिका से सम्बन्ध बना रहता है और पोषण उसी से पहुँचता है । टेलीफोन के तार ही आवाज को इधर से उधर पहुँचाने का कार्य करते हैं । इसी प्रकार जीव और ब्रह्म के बीच, पिण्ड और ब्रह्माण्ड के बीच आदान-प्रदान के माध्यम कुछ सम्बन्ध सूत्र हैं । इन्हें चक्र संस्थान कहा गया है । षट्चक्र प्रसिद्ध है । मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत, विशुद्ध और आज्ञा चक्र के नाम से इन्हें साधना विज्ञान के विद्यार्थी भली–भाँति जानते हैं । इन सबके ऊपर सहस्रार चक्र है । उस समेत यह चक्र संख्या सात हो जाती है । इन्हीं को सात लोक, सात ऋषि, सात द्वीप, सप्त सागर आदि की संज्ञा दी गई है । मेरुदण्ड स्थित छः चक्रों में सूक्ष्म जगत् में संव्याप्त आत्मिक और भौतिक विभूतियों के साथ सम्बन्ध जोड़े रहने की क्षमता है । उस क्षमता को क्रियान्वित करने का अवसर सहस्रार के माध्यम से मिलता है । इस चक्र संस्थान को जाग्रत करने के तन्त्र विज्ञान और योग विज्ञान में कई प्रकार के विधि–विधान बताये गये हैं । साधन उनमें से अपनी रुचि, सुविधा एवं उस परम्परा के अनुसार किसी मार्ग को अपनाने और सफलता के लक्ष्य तक पहुँचाते हैं । सभी जानते हैं कि साधनाओं में चक्रवेधन की, चक्र जागरण की साधना प्रमुख है ।

षट्चक्रों का स्वरूप क्या है और उनमें सन्निहित सामर्थ्य का आधार क्या है । यह समझने के लिए कुछ भौतिक उदाहरणों की आवश्यकता पड़ेगी । बहते हुए नदी प्रवाह में कई बार भयंकर भँवरें पड़ते देखे गये हैं । इनकी सामर्थ्य इतनी प्रचण्ड होती है कि उधर से गुजरने वाली नावों और जहाज के अस्तित्व को ही खतरा उत्पन्न हो जाता है । जो उनकी चपेट में आता है डूबकर ही रहता है । दूसरा उदाहरण हवा के बहाव में पड़ने वाले चक्रवातों का है । वे भयंकर अन्धड़ के रूप में भी कई बार तूफानी गति से परिभ्रमण करते हैं और जो कुछ उनकी चपेट में आ जाता है उसे तोड़–मरोड़कर रख देते हैं । यह भँवरों और चक्रवातों की विघातक क्षमता हुई । उनमें उपयोगी उत्पादन की सामर्थ्य नगण्य है; किन्तु काय कलेवर में अवस्थित षट्चक्रों में दोनों ही प्रकार की क्षमता विद्यमान है । वे जीवन क्षेत्र में घुसी हुई अवांछनीयता को तोड़–मरोड़कर फेंक देने, उदरस्थ करने में भी समर्थ हैं और साथ ही ऊँचा उछाल देने की ऐसी क्षमता भी विद्यमान है जिससे उन्नति के सर्वोच्च शिखर तक पहुँच सकना सम्भव हो सके । चक्र साधना का पुरुषार्थ करने वाले ऐसे ही उभयपक्षीय लाभ उठाते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ब्रह्माण्ड की ही एक छोटी अनुकृति पिण्ड है । जो ब्रह्माण्ड में है वही पिंड में ब्रह्माण्ड में भी ऐसी शक्ति धाराएँ दौड़ती हुई पाई गई हैं जो अन्तर्ग्रही आदान–प्रदान की व्यवस्था बनाती हैं । समस्त ग्रह नक्षत्र उन शक्ति प्रवाहों के मजबूत रस्सों से परस्पर बँधे हुए हैं और एक-दूसरे का सहयोग करके आवश्यक को पहुँचाने और अनावश्यक को हटाने का काम चलाते हैं । यह शक्ति धाराएँ स्थिर नहीं धावमान हैं । उन्हें जल भँवर एवं वायु चक्रवात के समतुल्य समझा जा सकता है । इन अन्तरिक्षीय विद्युत प्रवाहों का परिचय जब कभी मिलता है तब आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है ।

एक ऐसी ही विद्युतीय चक्रवात की प्रवाह धारा का परिचय पृथ्वी के निकटवर्ती क्षेत्र में से गुजरता हुआ पाया गया है । वह अपनी धरती से बहुत दूर है फिर भी उसका प्रभाव पृथ्वी के एक क्षेत्र को अपने विकिरण से प्रभावित करता है । यदि वह निकट होता तब तो पृथ्वी को ही उदरस्थ कर जाता, ईश्वर को धन्यवाद है कि वह धारा आकाश में बहुत दूरी पर बहती है और अपने चुम्बकत्व से थोड़े से ही क्षेत्र को प्रभावित करती है । इस प्रवाह को देखते हुए उन्हें अन्तरिक्ष के सुस्थिर चक्रवात कह सकते हैं । मानवी काया में पाये जाने वाले षट्चक्रों को भी इन्हीं विद्युत चुम्बकीय शक्ति प्रवाहों के समतुल्य माना जा सकता है ।

अटलांटिक महासमुद्र में वरमूडा द्वीप समूह के पास एक ऐसा तिकोना क्षेत्र है जिसे जादुई कहा जाता है । उसकी परिधि में प्रवेश करने वालों की खैर नहीं, भले ही वे जलयान से वहाँ पहुँचे या वायुयान से उड़ान भरें । (१) फ्लोरिडा से वरमूडा तक (२) वरमूडा से प्वेर्तोरिको तक और (३) प्वेर्तोरिको से सान्तोडोमिंगो क्यूबा के पास होकर फ्लोरिडो तक पहुँचने वाली रेखा तक इन तीन भुजाओं से यह त्रिकोण बनता है । इस क्षेत्र की विभीषिकाएँ ऐसी हैं जो मनुष्यों को अपने क्षेत्र से बाहर रखना चाहती हैं और जो उस लक्ष्मण रेखा को तोड़कर भीतर प्रवेश करना चाहते हैं, उन्हें निगल जाती है । पहले इस प्रकार के घटनाक्रमों को किम्वदंती या दैवी कहकर टाल दिया जाता था, पर इन दिनों जो प्रत्यक्ष प्रमाण सामने हैं उन्हें देखते हुए उन पर विचार करना और कारणों को खोज निकालना आवश्यक समझा जाने लगा है । अब तक १०० से अधिक वायुयानों और जलयानों के इस क्षेत्र में गायब हो जाने के विवरण नोट किये गये हैं जिनकी प्रामाणिक जानकारी नहीं मिल सकी ऐसी सच्ची-झूठी लोक चर्चाओं में तो वह संख्या और भी कई गुनी हो जाती है ।

इस क्षेत्र में प्रवेश करने वालों में से जो मनुष्य या यान किसी प्रकार बच निकले उनके द्वारा मिलने वाले विवरण आश्चर्यचकित करने वाले हैं । एक जलयान ऐसा मिला है जिसका ढाँचा भर हाथ लगा, उसमें बैठे हुए यात्रियों में से किसी का कुछ अता–पता नहीं था । कभी–कभी उस क्षेत्र में एक विशालकाय जलयान निरुद्देश्य और दिशाहीन विचरण करते पाया जाता है । कहते हैं कि यहाँ १९१२ में डूबे 'टाइटैनिक' जलयान का प्रेत है जो कभी दीखता है कभी गायब हो जाता है ।

सन् १९६६ की की घटना कप्तान डौन हेनरी ने लिखी है । उनका जलयान उस क्षेत्र से गुजर रहा था कि अचानक दिशा सूचक यन्त्र बन्द हो गया । जहाज के साथ जुड़ा हुआ बज़रा गायब हो गया और चारों ओर भयंकर तूफान छाया दीखने लगा । प्राणों की बाजी लगाकर ही बड़ी कोशिश के बाद जहाज को वापस लौटा सकना सम्भव हो सका । इसी प्रकार जीवित लौटे रिचर्डसन और नेकली नामक लौटे वायुयान चालकों ने अपना अनुभव बताया कि उस क्षेत्र पर उड़ते हुए उनका दिशा सूचक यन्त्र बिगड़ गया रास्ता भूल गये । नीचे ऊंपर भयंकर धुन्ध छाई हुई थी और समुद्र में तूफानी लहरें उठ रही थीं । धुन्ध में कुछ सूझ नहीं पड़ रहा था । नितान्त जोर लगाकर वापिस लौटने की कोशिश की । संयोग ही था कि दिशा ज्ञान न रहने पर भी वापस लौटना और जीवित बचना सम्भव हो सका ।

तथ्य का पता लगाने के लिए १९५५ में जापान के वैज्ञानिकों का एक दल उस क्षेत्र में गया था । तथ्यों को ढूँढ़ पाना तो दूर वह जहाज ही गायब हो गया और उसका अता–पता आज तक नहीं चल सका है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कई अन्य शोधकर्त्ताओं ने इस रहस्यमय क्षेत्र के सम्बन्ध में विभिन्न अनुमान लगाये और निष्कर्ष निकाले हैं। हैराल्ड वाइकिंग इसे अन्तरिक्ष के किसी लोकवासियों के साथ पृथ्वी से सम्बन्ध रखने वाला क्षेत्र बताते हैं। इस मार्ग में होकर वे लोग आसमान से धरती पर आते हैं और खोज, खबर तथा अभीष्ट पदार्थ लेकर वापस लौट जाते हैं। अर्जेन्टाइना के विज्ञानी रोमनी ऊंक ने भी इसी से मिलता-जुलता अनुमान लगाया है और कहा है यह क्षेत्र अन्तरिक्षीय आदान-प्रदान का अपने ढंग का विचित्र केन्द्र है। यों आदान-प्रदान तो ध्रुव केन्द्रों से ही प्रधानतया होते हैं, पर ऐसे छुटपुट केन्द्र अन्यत्र भी हो सकते हैं जो अनायास ही बन गये हों अथवा प्रयत्नपूर्वक बनाये गये हों।

अमेरिका के नासा शोध संस्थान द्वारा अन्तरिक्ष का एक एक्सरे फोटोग्राफ तैयार किया गया है जिससे पता चला है कि ब्रह्माण्ड में कई विचित्र विद्युत प्रवाह सनसनाती हुई तेजी के साथ एक ओर से दूसरी ओर दौड़ रहे हैं। इनकी गति में प्रकाशगति से भी अधिक तेजी है साथ ही चुम्बकीय ऊर्जा की उच्चस्तरीय प्रखरता भी उनमें भरी हुई है। यह कहाँ से आती है और किस लक्ष्य तक पहुँचने के लिए दौड़े जा रहे हैं यह तो पता नहीं चला है,पर इतना अवश्य देखा गया है कि वे ग्रह नक्षत्रों के बीच किन्हीं महत्वपूर्ण आदान-प्रदानों का भार वहन करते हैं। वे अपने कन्धों पर कुछ लादकर ले जाते हैं और अन्य ग्रहों तक उनकी आवश्यक सामग्री पहुँचाते हैं। एक से दूसरे को-दूसरे से तीसरे को-उसी प्रकार अन्ततः अन्तरिक्ष में यह प्रेरणा और ग्रहण का सिलसिला चलता रहता है और ग्रह नक्षत्र पारस्परिक सहयोग से अपने-अपने उपार्जनों को मिल बाँटकर खाते रहते हैं। फालतू का वितरण और आवश्यक का ग्रहण सहकारिता का खुला उद्देश्य है। उसी की पूर्ति का तारतम्य बिठाने के लिए यह विद्युत चुम्बकीय प्रवाह धाराएँ अन्तरिक्ष में दौड़ लगाती रहती हैं।

इन प्रवाहों की असंख्य धाराएँ अन्तरिक्ष में मकड़ी के जाले की तरह फैली हुई देखी जाती हैं। वे समुद्र तल की जल धाराओं की तरह उलटी सीधी सब ओर गतिशील रहती हैं। उनका कोई निर्धारित दिशा क्रम नहीं है। किस ग्रह की आवश्यकता किससे पूरी होती है, उस पूर्ति के लिए निकटतम मार्ग क्या हो सकता है, प्रवाहों के बिना टकराये किस प्रकार कहाँ पहुँचना सम्भव हो सकता है, सम्भवतः ऐसे ही विकट समाधानों का सामना करते हुए उनका हल निकालते हुए यह अन्तरिक्षीय विद्युत प्रवाह अपना मार्ग निर्धारित करते हैं। उनकी दिशा धारा का निर्धारण इसी आधार पर होता है।

टैक्सास यूनिवर्सिटी के अन्तरिक्ष विज्ञानी जान व्हीलर ने इन धावमान प्रवाहों को क्वासर्स ऊर्जा स्रोत कहा है, उनका कथन है कि संव्याप्त रेडियो तरंगें इसी स्रोत से प्रादुर्भूत होने वाली लहरें हैं। वे उन्हें ग्रहों को परस्पर बाँधने वाले शक्तिशाली रस्से भी ठहराते हैं।

अन्तरिक्ष भौतिकी के प्रो. हर्बर्ट गर्सकी ने इन प्रचण्ड प्रवाहों का नाम-ब्लैक होल-अन्धेरा गर्त कहा है। जिसमें गिरने के बाद फिर कोई वस्तु वापस नहीं लौट सकती वरन् अविज्ञात के प्रवाह में पड़कर अनिश्चित की ओर बहती चली जाती है। वे इन अन्ध गर्तों को ब्रह्माण्ड के ऐसे खम्भों की उपमा देते हैं जिनके कन्धों पर यह विशालकाय ब्रह्माण्ड छत-छप्पर की तरह खड़ा हुआ है।

चक्र संस्थान को ऐसे ही प्रचण्ड शक्ति प्रवाहों के उद्गम केन्द्र माना जा सकता है। सुप्त स्थिति तो मृतकवत् होती है। चक्र प्रसुप्त स्थिति में पड़े रहें तो उनका होना न होना समान है, किन्तु यदि उन्हें जाग्रत एवं सक्रिय किया जा सके और उन शक्ति धाराओं का महत्वपूर्ण उपयोग किया जा सके तो जीव को भी अपने उद्गम केन्द्र ब्रह्म के समान ही समर्थ बनने का अवसर मिल सकता है। तपस्वी, तत्वज्ञानी उन्हीं शक्ति स्रोतों को प्रचण्ड बनाने और उनके द्वारा आत्म-कल्याण और विश्व कल्याण का प्रयत्न करते रहते हैं। चक्र साधना का यही प्रयोजन है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

षट्चक्रों की पिटारी में कैद चेतना का महासागर

मानवी काय सत्ता के जिस पक्ष की चर्चा पहले की गयी वह सामान्य ज्ञान की परिधि में आता है, उसे यंत्र उपकरणों के माध्यम से जाना–समझा जाने लगा है । यह काया का स्थूल पक्ष है । इसी का पैथालॉजिस्ट विश्लेषण करते, काय चिकित्सक एवं शल्य विशेषज्ञ इसी आधार पर टूट–फूट की मरम्मत करते रहते हैं ।

इससे आगे जो चेतन सत्ता का प्रसंग आता है वह स्थूल भी है और सूक्ष्म भी । स्थूल इतना कि प्राण निकलते ही सारा खेल समाप्त हो जाता है और क्षण भर पहले जो शरीर नाना प्रकार की हलचलें कर रहा था वही शरीर निश्चेष्ट होकर सड़ने लगता है । सूक्ष्म इतना कि इसके छोटे–बड़े अनेक घटक विश्व चेतना से जुड़े रहते हैं । इस ब्रह्माण्ड में भी कुछ विद्यमान है, उसे अपनी क्षमता के अनुरूप ग्रहण करते एवं सतत् फेंकते रहते हैं । व्यष्टि चेतना ब्राह्मी चेतना का ही एक अंग होने के नाते उसी से सतत् अनुदान पाती व आदान–प्रदान का क्रम बनाए रखती है । कुण्डलिनी शक्ति के प्रसंग में जब भी चर्चा चलती है, इसी सूक्ष्म चेतनसत्ता का विवेचन इस संदर्भ में किया जाता है ।

मनुष्य शरीर में ऐसे अनेकों केन्द्र हैं जिनमें जीवनी शक्ति प्राण ऊर्जा की बहुलता होती है । इन्हें मर्म स्थान कहते हैं तथा इनकी संख्या सात सौ बताई गयी है । इन स्थानों में प्राणशक्ति में कमीवेशी होने पर स्वास्थ्य संतुलन बिगड़ जाता है और व्यक्ति को अनेकों बीमारियाँ धर दबोचती हैं । चिकित्सा विज्ञान में मर्म स्थानों का विशेष महत्व बतलाया गया है । जापान और चीन में एक्यूपंचर एवं एक्यूप्रेशर चिकित्सा प्रणाली का मूल आधार यही मर्म स्थान है ।

सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक के. कार्लफ्रीड ने 'द वाइटल सेण्टर्स आफ मैन' ग्रंथ में कहा है कि मर्म स्थानों पर तंत्रिका तंतु अधिक एकत्रित और सघन होते हैं तथा वे केन्द्र से एवं एक-दूसरे से सम्बन्धित भी होते हैं । मर्म स्थानों के अतिरिक्त शरीर में सात ऐसे प्रमुख केन्द्र हैं जिनमें प्राणशक्ति और अतीन्द्रिय क्षमताओं का अपार वैभव प्रसुप्त स्थिति में दबा पड़ा है । इन स्थानों को 'चक्र' या 'प्लेक्सस' कहते हैं । इन केन्द्रों में ज्ञान तन्तु अधिक मात्रा में उलझे होते हैं । स्थूल तथा सूक्ष्म शरीर के मिलन स्थान पर चक्रों की उपस्थिति बताई गई है ।

योरोप के प्रख्यात मनोवैज्ञानिक पैरासेल्सस ने शरीरस्थ सूक्ष्म केन्द्रों को 'एस्ट्रम' (तारा) नाम से उन पर प्रकाश डालते हुए उन्हें शक्ति पुंज बताया है । उनके मतानुसार इन सूक्ष्म केन्द्रों के माध्यम से ग्रह–नक्षत्रीय एवं ब्रह्माण्डीय शक्तियाँ मनुष्य के शरीर में अवतरित होती हैं ।

योगाचार्यों ने चक्रों को 'कमल' नाम से भी सम्बोधित किया है जैसे–हृदय कमल, नाभिकमल सहस्रार कमल आदि । अंग्रेजी में इन्हें 'प्लेक्सस' और जापानी 'जैन' धर्म की व्याख्यानुसार 'क्यूसोस' कहा गया है । चीन की ताओ प्रणाली में चक्रों को विश्व ब्रह्माण्ड में बिखरे हुए नर और नारी–'यांग और यिन' शक्तियों के एकत्रीकरण–सम्मिलन का केन्द्र बताया गया है ।

सर जॉन बुडरफ ने "पॉवर एज रिअलिटी" एवं "शक्ति एवं शाक्त में वी.जी. रेले ने "दमिस्टीरियस कुण्डलिनी में श्रीदास गुप्ता ने "हिस्ट्री ऑफ इण्डियन फिलॉसफी" वॉल्यूम "र" में इवान्स वेण्टज ने "टिबेटन बुक ऑफ ग्रेट लिबरेशन" में एवं एच. जी. बेन्स ने "माइथालॉजी ऑफ सोल" में जिस सूक्ष्म शरीर की संरचना का वर्णन किया है वह मूलतः वही है जो योग व तंत्र पर भारतीय दर्शनकारों ऋषिगणों ने निरूपित किया है । योग कुण्डल्युपनिषद् महानिर्वाण तंत्र षट्चक्र निरुपणम ध्यान बिन्दु उपनिषद् योगार्णव तंत्र कुलार्णव तंत्र शारदातिलक इत्यादि ग्रंथों में कुण्डलिनी–इड़ा पिंगला सुषुम्ना, मेरुदण्ड एवं मूलाधार सहस्रार रूपी दो केन्द्रों संबंधी जो विवेचन किया गया है उसे विज्ञान सम्मत भाषा में एक सीमा तक ही प्रस्तुत किया जा सकता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सुषुम्ना को वैज्ञानिक स्थायी विद्युतीय द्विध्रुव केन्द्र (इलेक्ट्रिक डायपोल) मानते हैं जिसका अधोभाग जो काडा इक्वाइना कहलाता है ऋण आवेश युक्त है तथा ऊर्ध्व वाला "सेरिब्रम" नामक भाग धन आवेश युक्त। काडा इक्वाइना व मूलाधर चक्र की स्थिति एक है। इसी प्रकार सेरिब्रम में विद्यमान विद्युतस्फुल्लिगों का फब्बारा "एसेण्डिंग रेटीकुलर एक्टीवेटिंग सिस्टम" सहस्रार के समकक्ष माना जाता है। असामान्य स्थिति में जब प्रवाह नीचे से ऊपर की ओर बहता है तो इसे काम बीज से ब्रह्म बीज की महायात्रा कहते हैं जो मेरुदण्ड रूपी देवयान मार्ग पर पूरी की जाती है। अलंकारिक रूप से इन्हीं अंगों को विभिन्न नाम दे दिये गए हैं पर होते ये सूक्ष्म विद्युतचुम्बकीय प्रवाह के रूप में ही हैं। वैज्ञानिक बताते हैं कि शरीर में कुल मिलाकर मोटे तौर पर एक लाख वोल्ट प्रति सेण्टीमीटर का विद्युत दबाव होता है। अन्य जीवधारियों की भाँति यह भी जननेन्द्रियों से, त्वचा से, श्वास मार्ग से क्रमशः नित्य प्रतिदिन क्षरित होकर नष्ट होता रहता है। मात्र मनुष्य को यह सामर्थ्य विधाता से मिली है कि वह स्खलन के पतन गर्त्त में पड़ी आत्मसत्ता को ऊर्ध्वगामी बना सके, क्षरण को रोक सके एवं योगाभ्यास द्वारा चक्र बंधन करते हुए सहस्रार को जगाकर अपना तेजोवलय बढ़ा सके।

चक्र जैसा कि बताया जा चुका है- कुल छः हैं। सातवें सहस्रार की गिनती इसमें नहीं होती। उसे सहस्र दल कमल कहा गया है। नीचे से ऊपर ये चक्र जिस क्रम में हैं व उनका एनाटॉमी से किस सीमा तक संबंध है, उसका संक्षिप्त विवेचन यहाँ किया जा रहा है।

मूलाधार चक्र सुषुम्ना (स्पाइनल कॉर्ड की मध्य केनाल) के निचले सिरे पर मेरुदण्ड के काक्सीजियल क्षेत्र-पेरीनियम में गुदा व जननेन्द्रिय के मध्य स्थित होता है। यहाँ पर काडा इक्वाइना से निकली सेक्रल नर्वरूट्रष कई गुच्छक बनाकर सेक्रल एवं पेरिनियल प्लेक्सस बनाती है। इन नाड़ी गुच्छकों में प्रवाहित विद्युतधारा चक्रवात के समान ऊर्जा उत्पन्न करने वाली भँवर बनाती है। इसी सूक्ष्म विद्युत प्रवाह को मूलाधार शक्ति कहते हैं जिसका मूल कार्य है उत्पादन प्रजनन। कुण्डलिनी महाशक्ति साढ़े तीन कुण्डलिनी में लिपटी यहीं सोयी पड़ी रहती है। यहाँ स्थित प्रवाह को ४ पंखुड़ियों वाले कमल के रूप में योगीजन देखते व इन्हें ४ वृत्तियों परमानन्द, सहजानन्द, योगानन्द, वीरानन्द का प्रतीक बताते हैं। यहाँ जो शब्द ब्रह्म के कम्पन होते हैं उससे जो शब्द की व्युत्पत्ति होती है उसे "ल" नाम दिया गया है। इस चक्र की तन्मात्रा गंध व तत्व पृथ्वी है।

ऊपर की ओर यात्रा करते हुए अगला चक्र स्वाधिष्ठान आता है जो मूलाधार से चार अंगुल ऊपर हाइपोगेस्ट्रियम के स्थान पर अवस्थित है। यहीं पर स्थित प्लेक्सस सुषुम्ना के दोनों ओर स्थित सिम्पैथेटिक गैंगलियान व सुषुम्ना के कड़ी गुच्छकों से मिलकर बनता है। इससे जुड़ा आंतरिक अंग एड्रीनल ग्रंथि है जो एड्रीनेलीन हार्मोन से संबंधित है। तनाव से जूझने व प्रतिकूलताओं से मोर्चा लेने की क्षमता इसी की सक्रियता से आती है। उत्सर्जन-विसर्जन इसका मूल कार्य है। किन्तु इसके जाग्रत होने पर बलिष्ठता व स्फूर्ति बढ़ती है। आलस्य-प्रमाद-अवज्ञा-अविश्वास आदि दुर्गुण मिटते हैं। यहाँ स्थित कमल की छः पंखुरियाँ मानी गयी हैं। बीज मंत्र "ब" है। इस चक्र की तन्मात्रा रस एवं तत्त्व जल है। मूलाधार व स्वाधिष्ठान दोनों ही एक समूह में आते हैं एवं इनका मिलन बिन्दु रुद्रग्रंथि कहलाता है।

तीसरा चक्र मणिपूर है। शरीर संरचना की दृष्टि से यह नाभिस्थान में मेरुदण्ड के लम्बर रीजन में होता है। यहीं पर सोलर प्लेक्सस होता है जो सिम्पैथेटिक गैंगलियान एवं वेगस नर्व के नाड़ी गुच्छकों से मिलकर बनता है। इससे जुड़ी ग्रंथि पैंक्रियाज है, जो हार्मोन्स के अतिरिक्त एन्जाइम्स बनाती है। इस चक्र के जागरण से संकल्प बल व पराक्रम बढ़ता है। पाचन क्रिया में सहायता इसका मूल कार्य है। मनोविकार घटते हैं एवं परमार्थ कार्यों में रुचि बढ़ती है। नाभि स्थित यह कमल दस दल वाला माना गया है। इसका बीज

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मंत्र "रं" तन्मात्रा रूप (दृश्य) एवं तत्त्व "अग्नि" है । इसके जागरण से शरीर की तीनों अग्नियाँ जाग्रत होती व ऊर्ध्वगमन में सहायक बनती हैं । इस चक्र के उद्भूत ऊर्जा को अपनी चक्रा मशीन से जापान के डा. हिरोशिमा मोटोयामा ने मापा व ग्राफ पर अंकित भी किया है । तिब्बती इसे मणिपद्म कहते हैं । चौथा चक्र अनाहत है जो हृदय के पीछे कार्डियक प्लेक्सस के स्थान पर अवस्थित माना जाता है । यहाँ सिम्पेथेटिक गैंगलियान चेन व सुषुम्ना तथा वेगस के नर्व तन्तु मिलकर एक जाल बनाते व पूरे हृदय क्षेत्र को ऊर्जा देने की भूमिका निभाते हैं । यह बारह पंखुरियों वाला कमल माना गया है । पेसमेकर का ऊर्जा स्रोत यही है । इसे भाव संस्थान भी माना गया है । कलात्मक उमंगें–रसानुभूति व कोमल संवेदनाओं का उत्पादक स्रोत यही चक्र है । इसके जागरण से उदार सहकारिता, परमार्थ, परायणता, "वसुधैव कुटुम्बकम" के भाव उभरते हैं । थाइमस इससे जुड़ी ग्रंथि है । प्राण धारण एवं उसका सुनियोजन इसका मूल कार्य है । इस चक्र का बीज मंत्र "यं" है । अनाहत नाद अथवा शब्द ब्रह्म की केन्द्र स्थली इसे माना गया है । शब्द ही इसकी तन्मात्रा एवं वायु इसका तत्त्व है । अनाहत व मणिपूर दोनों मिलकर सूर्य खण्ड बनाते व विष्णु ग्रंथि कहलाते हैं ।

कण्ठ में विशुद्धि चक्र होता है । थाइराइड ग्रंथि तथ उसी के पीछे स्थित फेरेन्जियल व लेरेन्जियल प्लेक्सस इससे संबंधित हैं । इस चक्र के जागरण से अतीन्द्रिय क्षमता के प्रसुप्त बीजांकुर फूट पड़ते हैं । यह चक्र सीधे अचेतन मन व चित्त संस्थान को प्रभावित कर दायें मस्तिष्क के "साइलेण्ट एरिया" को जगाता है । यहाँ स्थित कमल १६ पंखुरियों वाला है एवं इसका बीज मंत्र "हं" है । स्पर्श इसकी तन्मात्रा एवं आकाश तत्त्व है । आज्ञा चक्र छठा एवं अन्तिम चक्र है जो विशुद्धि के साथ मिलकर चन्द्र समूह तथा ब्रह्म ग्रंथि बनाता है । इसका बीज मंत्र ॐ एवं तत्त्व मनस् है । इसे द्विदलीय कहा गया है जो पीनियल व पीटयूटरी ग्रंथि से मिलकर बनते हैं । मध्य की सीध में ये दोनों ग्रंथियाँ हैं जो पूरे शरीर की गतिविधियों का संचालन करती हैं । इसके जागरण से दिव्य चक्षु खुल जाते हैं । लिम्बिक सिस्टम व हाइपोथेलेमस में जाग्रति आने से मस्तिष्क की सभी परतें खुल जाती हैं । व्यष्टि सत्ता समष्टि चेतना से संबंध जोड़ने में सक्षम हो जाती है ।

सहस्रार कुण्डलिनी जागरण की महायात्रा का अंतिम पड़ाव है जो मस्तिष्क मध्य में इन्टरनल कैप्सूल व रेटीकूलर एक्टीवेटिंग सिस्टम में अवस्थित माना जाता है । यहाँ से स्फुल्लिंग सहस्रों की संख्या में उठते हैं इसीलिए इसे सहस्रार कहा गया है । इसे ब्रह्मलोक एवं ब्रह्मरंध्र भी कहते हैं । आज्ञाचक्र इसका उत्पादन केन्द्र होने के नाते जुड़ा है । सहस्रार उत्तरी ध्रुव है जो ब्रह्माण्डीय चेतना से जुड़कर बह्मानन्द की प्राप्ति कराता है । सहस्रार के जागरण का अर्थ है सारे ग्रे मैटर के केन्द्रों का जागरण । सुषुम्ना नाड़ी जो मूलाधार चक्र से चलकर ऊपर बढ़ती है अपने दोनों ओर बायें से दायें व फिर दायें से बायें इड़ा (गंगा) एवं पिंगला (यमुना) नाड़ियों को लेकर चलती है । इड़ा बायीं ओर होती व चन्द्र नाड़ी कहलाती है एवं नेगेटिव आवेश युक्त होती है । पिंगला दायीं ओर होती व सूर्य नाड़ी कहलाती है एवं पॉजीटिव आवेशयुक्त होती है । दो इन के संगम स्थल हैं, जो सुषुम्ना रूपी सरस्वती से मिलकर मूलाधार व आज्ञा चक्र पर त्रिवेणी संगम बनाते हैं । इड़ा व पिंगला नाड़ियाँ पेरासिम्पैथेटिक व सिम्पैथेटिक सिस्टम का प्रतिनिधित्व करती हैं ।

वस्तुतः कुण्डलिनी शक्ति का स्थूल एनॉटामी की शब्दावली में वर्णन करना असंभव है । जो भी परिकल्पना विभिन्न मनीषियों ने की है उसका सार उपर्युक्त वर्णन माना जा सकता है । कुण्डलिनी, सर्पेण्टपॉवर, जीवनीशक्ति, फायर ऑफ लाइफ न जाने कितने नामों से जानी जाती है । षट्चक्र वे धन व कुण्डलिनी जागरण से उद्भूत ऊर्जा व्यक्ति को ब्रह्मवर्चस सम्पन्न बनाती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चक्र संस्थान और उसकी सिद्धि सामर्थ्य

आत्म विद्या के अन्वेष्कों ने सूक्ष्म जगत् में भरे चेतन तत्वों की शोध बड़ी तत्परतापूर्वक प्राचीन काल में की थी । इस काया में ही उन्होंने जड़ जगत् का सारा प्रतिबिम्ब पाया । जो स्थूल संसार में है वह सूक्ष्म रूप से मनुष्य की काया में भी विद्यमान है । इसलिए महँगे उपकरणों और साधनों द्वारा की जा सकने वाली प्रकृतिगत शोधों की अपेक्षा उन्होंने यह अधिक उंचित समझा कि काया को पृथ्वी की प्रतिक्रिया मानकर उसे खोजें और जो अन्वेषण प्रयोग अभीष्ट हों वे इस देह पर ही कर लें ।

इन्हीं अन्वेषण प्रयोगों के दौरान योगियों–आत्मविद्या के जानकारों ने जो निष्कर्ष प्राप्त किये उनके अनुसार योगाभ्यास की अनेक प्रक्रियाओं में सबसे महत्वपूर्ण है कुण्डलिनी महाशक्ति । इस महाशक्ति का स्वरूप समझने एवं उपयोग जानने पर पाया गया कि कुण्डलिनी का आधिपत्य मुख्य रूप से मानवी काया में ही अवस्थित दो केन्द्रों पर है । इन केन्द्रों की सामर्थ्य पृथ्वी के दो ध्रुवों–उत्तरी ध्रुव और दक्षिणी ध्रुव के समान है । कुण्डलिनी साधना को मानवी काया में स्थित इन दो ध्रुवों पर किया जाने वाला आधिपत्य का प्रयोग माना जा सकता है । इस साधना के छोटे-बड़े अनेक स्तर के प्रयोग एवं परिणाम हैं । सर्वसुलभ आरम्भिक प्रयोग भी इस साधना के हैं, उन्हें करने से भी सामान्य जीवन में तेजस्विता, प्रखरता एवं क्रियाशीलता भर सकते हैं । इस महाशक्ति की साधना के कठिन और उच्चस्तर के प्रयोग भी हैं, जो व्यक्ति की अन्तरंग सत्ता को इतनी व्यापक बना सकते हैं कि वह ब्रह्माण्ड की महान् सत्ताओं के साथ अपना सम्बन्ध जोड़ सके । इस ब्रह्माण्ड में इतना कुछ भरा पड़ा है कि मनुष्य की कल्पना तक उस सब को जानने, समझने में समर्थ नहीं हो सकती, पर ब्रह्मा के अतुल वैभव को छू सकने की क्षमता जिस व्यक्ति को उपलब्ध हो जाय, वह प्रकृति के समृद्ध भण्डार से अभीष्ट मात्रा में जो चाहे सो प्राप्त कर सकता है और उस महाकोष में अपना अनुदान देकर विश्व–व्यापी ब्रह्म चेतना को प्रभावित भी कर सकता है ।

कुण्डलिनी का मध्यवर्ती जागरण मनुष्य शरीर में एक अद्भुत प्रकार की तड़ित विद्युत उत्पन्न कर देता है । हमें एक ऐसे सिद्ध पुरुष का परिचय है, जिसका शरीर भौतिक बिजली से हर घड़ी भरा–पूरा रहता है । उसे कोई स्पर्श नहीं कर सकता । छुँए तो खुली बिजली छूने जैसा झटका लगे । वे हमेशा आँखें नीचे रखते हैं । आँख मिलाकर किसी की तरफ देखें तो वह मूर्छित हो जाये । एक बार उन्होंने गौर से एक काँच को देखा और वह तत्काल टूटकर चूरा हो गया । यह शरीरगत विद्युत प्रवाह था । यह धारा जब मनःक्षेत्र में प्रवाहित होती है तो मनस्विता का बारापार नहीं रहता । नारद के आगे वाल्मीकि और बुद्ध के आगे अंगुलिमाल जैसे दुर्दान्त दस्युओं का पानी–पानी हो जाना इसी मनस्विता का चमत्कार था । योग साधना शरीर, मन और आत्मा के स्थूल, सूक्ष्म एवं कारण कलेवरों में न जाने कितनी सामर्थ्य उत्पन्न कर सकती है । कहना न होगा कि कुण्डलिनी साधना योगाभ्यास की अति महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है । इसे आरम्भिक स्तर पर करने से भी भौतिक जीवन प्रखर एवं प्रतिभा सम्पन्न बनाया जा सकता है । ऊँचे स्तर पर तो उस साधना की परिणति कितनी चमत्कारी हो सकती है, इसका उल्लेख कर सकना भी कठिन है ।

शरीर मोटी दृष्टि से एक सजीव एवं चिन्तनशील माँस पिण्ड है । उसका क्रिया–कलाप पेट एवं प्रजनन पूर्ति की धुरी पर भ्रमण करता दीखता है; मन की लिप्सा, लोभ, मोह और अहंकार का खट्टा–मिट्ठा रसास्वादन करने के लिए मचलती रहती है । महत्वाकांक्षाओं में उछलता हुआ और निराशाओं से सिसकता जीवधारी ज्यों–त्यों करके मौत के दिन पूरे करता है और कठिनाई से भार–भूत जिन्दगी की लाश ढोता है । पदार्थ मिलते हैं और खिसक जाते हैं । व्यक्ति जुड़ते हैं और बिछुड़ जाते हैं । आशाओं और निराशाओं का–उपलब्धियों और असफलताओं का चक्र ऐसा है जिसका न आदि है न अन्त । जीवधारी इसी कुम्हार के चाक पर गीली मिट्टी की तरह घूमता है

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और इसी चक्की के पाटों में पिसकर अपने अस्तित्व को गँवाता, बदलता चला जाता है। उत्पन्न होने, बढ़ने और बदलने की काल गति का ही एक घटक मनुष्य भी है। अन्यथा पदार्थों की तरह उसकी भी उठक–पटक होती रहती है।

शरीर का रासायनिक विश्लेषण अति तुच्छ और नगण्य है। उसमें प्रयुक्त हुए पदार्थों का बाजारू मूल्य सामान्य पशु–पक्षियों से भी कम है। मनुष्य शरीर के रक्त, माँस, अस्थि, चर्म को बाजार में बेचा जाय तब एक जीवित मुर्गे से भी कम दाम का बैठेगा। फिर भी मनुष्य की अपनी स्थिति है और अपनी गरिमा। यह उसकी चेतना का मूल्य है। यह चित् शक्ति दृश्यमान शरीर में स्फूर्ति, बलिष्ठता एवं सुन्दरता के रूप में परिलक्षित होती है। सूक्ष्म शरीर उसे ज्ञान–गरिमा, बौद्धिक–प्रखरता एवं साहसिक मनस्विता के रूप में देखा जा सकता है। अन्तिम अति सूक्ष्म–कारण शरीर में इसी चेतना में आस्था, आकांक्षा, स्नेह, सेवा, उदारता, करूणा, जैसी दिव्यविभूतियों का निवास रहता है।

इन तीनों शरीरों में जो चेतनात्मक ऊर्जा–चित्शक्ति काम करती है, उसे अन्तरिक्ष-व्यापी ताप, शब्द, विद्युत ईथर आदि के प्रचण्ड शक्ति कम्पनों से भी अधिक क्षमता सम्पन्न माना जा सकता है। जड़ और चेतन के बीच जितना अनुपातिक अन्तर है, उतना ही विज्ञान परिचित भौतिक सामर्थ्यों और योगियों की जानी मानी आत्मिक क्षमता में। लेसर, मृत्युकिरण, अणु ऊर्जा आदि के सम्बन्ध में रोमाञ्चकारी चर्चाएँ सुनने को मिलती रहती हैं। आत्मिक शक्ति की सृजनात्मक शक्ति के बारे में उतनी ही गम्भीरतापूर्वक समझा जा सके तो प्रतीत होगा कि उसका मूल्यांकन अनिर्वचनीय है।

शरीर का एक नगण्य सा घटक शुक्राणु एक नया मनुष्य रच सकता है। अणु की सौर–मण्डल से तुलना की जाती है। पिण्ड को–व्यक्ति को ब्रह्माण्ड का प्रतीक प्रतिनिधि कहा गया है। यह तथ्य भी है और सत्य भी। ऐसी दशा में मानवी सत्ता की तुलना उस चिनगारी से की जा सकती है जिसमें दावानल बनकर समस्त संसार को अपनी चपेट में ले सकने की क्षमता बीज रूप से विद्यमान है। अवसर मिले तो वह बीज विशाल वृक्ष की तरह सुविकसित हो सकता है और चिरकाल तक अपने जैसे असंख्यों बीज उत्पन्न करता रह सकता है।

ब्राह्मी शक्ति के उभय पक्षीय प्रयोग हैं। उसके परिष्कृत होने पर मनुष्य महात्मा, देवात्मा और परमात्मा के स्तर पर पहुँच सकता है और इन तीनों समुन्नत चेतना वर्गों में जो दिव्य विभूतियाँ पाई जाती हैं, उनसे सुसम्पन्न बन सकता है। इसी शक्ति को यदि भौतिक प्रगति की दिशा में लगा दिया जाय तो व्यक्ति प्रखर प्रतिभावान बन सकता है, उन्नति के उच्च शिखर पर पहुँच सकता है और असम्भव दीखने वाले कार्यों को सम्भव बनाता हुआ पग–पग पर विजयश्री वरण कर सकता है। ओजस्वी, मनस्वी और तेजस्वी व्यक्तियों की गुण गरिमा से इतिहास के उज्ज्वल पृष्ठ आलोकित हो रहे हैं। ऐसे महामानवों की यश–गाथाएँ उन्हें मिलें साधनों एवं अवसरों के कारण नहीं, वरन् उनके अन्तरंग में उभरी हुई चित्–शक्ति के ऊपर ही आधारित रही हैं।

चित्–शक्ति को विकसित करने का विज्ञान ही योग एवं तप की संयुक्त प्रक्रिया बनकर विकसित हुआ है। स्थूल शरीर के अन्तराल में जो दो सूक्ष्म शरीर हैं उनकी मूर्च्छना जगाकर चेतना उत्पन्न कर देना, माया–मलीनता से छुड़ाकर दिव्य परिष्कृत बना देना, यही है साधना का उद्देश्य। समझा जाता है कि भक्तजनों अथवा योगी, तपस्वियों को कई तरह की जो ऋद्धि–सिद्धियाँ मिलती हैं, वे किसी देव–दानव के अनुदान, अनुग्रह का प्रतिफल हैं। पर वास्तविकता यह है कि जो कुछ अद्भुत, असाधारण, अतीन्द्रिय कहा जाता है वह भीतर से ही उभरता है। आत्म–परिष्कार का ही दूसरा नाम ईश्वर साक्षात्कार है, यह तथ्य यदि समझा जा सके तो हम सत्य को समझने वाले कहे जा सकेंगे।

आत्म–साधना के अनेक प्रयोग हैं। अनेकानेक परम्पराओं में अगणित विधि–विधान बताये गये हैं। भारतीय साधना विज्ञान के अन्तर्गत ८४ योग प्रधान हैं। उनकी शाखा–उपशाखाएँ बढ़ते–बढ़ते हजारों तक पहुँचती हैं। फिर संसार के अन्यान्य क्षेत्रों में प्रचलित साधनाओं की गणना करना और उनका लेखा–जोखा रखना तो और भी कठिन है। इन योग–साधनाओं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में चक्रवेधन की एक प्रक्रिया ऐसी है जिसका महत्व संसार भर के सभी योगाभ्यासियों ने स्वीकार किया है। षट्चक्रवेधन के स्वरूपों और विधि-विधानों में थोड़ा अन्तर मतभेद रहते हुए भी उनके अस्तित्व और प्रभाव को सर्वत्र स्वीकारा गया है। कुण्डलिनी शक्ति जागरण की चर्चा साधना क्षेत्र में बहुधा होती रहती है। यह चक्रवेधन में मिलने वाली सफलता की अन्तिम परिणति है।

शरीर के नाड़ी संस्थान में-ज्ञान तन्तुओं में दौड़ने वाली विद्युत शक्ति से सभी परिचित हैं। टेलीफोन के तार तभी काम करते हैं जब उनके साथ बिजली का सम्बन्ध हो। इन्द्रियों के माध्यम से मिलने वाली ज्ञान सम्वेदनाएँ-मस्तिष्क में उठने वाली विचार एवं भाव तरंगें इसी विद्युत शक्ति का चमत्कार हैं। शरीर में विद्युत चुम्बकत्व से भरे आँधी-तूफानों की परतें उठती रहती हैं और उनसे कई प्रकार के 'मूड' बनते, बिगड़ते हैं। जीवन की दिशा धारा इसी की प्रेरणा से विनिर्मित होती है। योगियों ने इस दिव्य चेतना प्रवाह के सम्बन्ध में बहुत कुछ जानने का प्रयास इसलिए किया है जिससे उसका सदुपयोग करके अधिक लाभ उठाना सम्भव हो सके।

चितू-शक्ति की शोध करते हुए पाया गया है कि मस्तिष्क के मध्य बिन्दु में अवस्थित सहस्रार चक्र पृथ्वी के उत्तरी ध्रुव की तरह है और जननेन्द्रिय के मूल में-मूलाधार चक्र की स्थिति दक्षिणी ध्रुव जैसी है। ब्रह्माण्ड चेतना का व्यक्ति सत्ता के साथ सम्पर्क बनने और आदान-प्रदान होने के माध्यम यही दो शरीर केन्द्र हैं। इनमें सन्निहित शक्ति को ही जीवन सञ्चार की धुरी कहा जा सकता है। बुद्धि एवं श्रद्धा का केन्द्र ऊपर है और प्रफुल्लता एवं बलिष्ठता की धुरी नीचे है। जननेन्द्रिय मात्र काम-क्रीड़ा का आनन्द लेने एवं सन्तान उत्पन्न करने के काम ही नहीं आती उसके मूल में स्फूर्ति, कला, साहसिकता, प्रफुल्लता जैसी अगणित क्षमताएँ भरी पड़ी हैं। इन्हें भौतिक प्रगति का आधार कहा जा सकता है। जिसकी यह शक्ति नष्ट हो जाये उसे क्लीव-नपुंसक कहकर चिढ़ाया जाता है। यहाँ यौनाचार की क्षमता का नहीं पौरुष का वर्णन है। मूलाधार चक्र को भौतिक शक्तियों को केन्द्र कहा गया है।

मस्तिष्क का सहस्रार केन्द्र ज्ञान, बुद्धि आदि आत्मिक सामर्थों का उद्गम है। प्रत्याहार धारणा, ध्यान, समाधि जैसी साधनाएँ मस्तिष्कीय क्षेत्र में ही की जाती हैं। भौतिक शक्तियों के केन्द्र मूलाधार और आत्मिक शक्तियों के उद्गम सहस्रार के बीच एक कड़ी है, जिसे बोल-चाल की भाषा में मेरुदण्ड और अध्यात्म की परिभाषा में सुषुम्ना संस्थान कहते हैं। रीढ़ की हड्डी का क्या महत्व है ? इसे शरीर-शास्त्र के विद्यार्थी भली प्रकार जानते हैं। इसके अन्तराल में प्रवाहित होने वाले विद्युत् प्रवाह के साथ उच्चस्तरीय विभूतियाँ जुड़ी हुई हैं इसे तत्वदर्शी आत्मवेत्ता भली प्रकार जानते हैं इस संस्थान में प्रचण्ड वेगवान विद्युत धाराएँ बहती हैं। इसके दो स्वरूप हैं-एक ऋण, दूसरी धन-एक नेगेटिव दूसरी पाजीटिव। ऋण को इड़ा और धन को पिंगला कहते हैं। दोनों जब भी परस्पर मिलती हैं तो शक्ति धारा का प्रत्यक्ष अनुभव होता है, इस मिलन प्रक्रिया को सुषुम्ना कहते हैं। इन्हें नाड़ियाँ भी कहा जाता है, पर यह शब्द प्रयोग से किसी को 'नस' का अर्थ नहीं लेना चाहिए। नाड़ी शब्द का एक अर्थ 'नस' भी होता है, पर यहाँ उस प्रकार की कोई बात नहीं है। यहाँ दो विद्युतधाराओं का संकेत है। मेरुदण्ड को चीर कर उसमें इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना नाम की कोई उस तरह की नसें नहीं देखी जा सकती जैसा कि योग-शास्त्र में उनका विस्तारपूर्वक वर्णन हुआ है। संक्षेप में मस्तिष्क और जननेन्द्रिय और मस्तिष्क रूपी दो अति महान् शक्ति केन्द्रों के बीच निरन्तर दौड़ने वाले विद्युत प्रवाह को इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना की संयुक्त प्रक्रिया कह सकते हैं। अलंकार रूप में इसी को गंगा, यमुना और सरस्वती के मिलन से बनने वाली त्रिवेणी की उपमा दी गई है।

तीव्र प्रवाह की नदियों में प्रायः 'भँवर' पड़ते रहते हैं। जब हवा तेज और गरम होती है तो ग्रीष्म ऋतु में चक्रवात उठते हैं। पानी में भँवर और हवा में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चक्रवात की तरह सुषुम्ना संस्थान में प्रवाहित रहने वाली 'चित्–शक्ति' को अति प्रचण्ड प्रवाह मात्र विद्युतधारा माना गया है। उसमें भी भँवर पड़ते हैं। उन्हें शक्तिचक्र कहते हैं । योग–शास्त्र में इनकी गणना छः है ।

पौराणिक उपाख्यान में पुरुषार्थ का प्रतीक और शक्ति का पुत्र–कार्तिकेय स्कन्द को माना गया है । यह यों शक्ति पार्वती के पुत्र हैं, पर शिवपुराण के अनुसार उन्हें छः कृतिकाओं ने पाला । अग्नि ने उन्हें गर्भ में धारण किया । शिव का रेतस् अग्नि के रूप में ही स्फुरित हुआ और उसे वैश्वानर ने नारी के रूप में ग्रहण करके अपने भीतर ही परिपक्व किया । अगणित व्यवधानों के प्रतीक यातुधानों ने देव जीवन को दुर्लभ बना रखा था उसका निराकरण इन कार्तिकेय स्कन्द द्वारा ही सम्पन्न हुआ । इन शक्ति पुत्र के छः मुख थे ।

इस स्कन्द अवतरण को कुण्डलिनी महाशक्ति से सम्बन्धित षट्चक्र समूह और उसके प्रभाव का वर्णन ही समझना चाहिए । जननेन्द्रिय मूल में अवस्थित आधार अग्नि का नाम ही कुण्डलिनी है । शिव रूप सहस्रार के जाग्रत–प्रफुल्लित होने पर उसका जो पराग मकरन्द निर्झरित हुआ उसे शिव 'रेतस्' कहना चाहिए । कुण्डलिनी आधार अग्नि ने उसे ग्रहण किया । छः कृतिकाओं ने उसे परिपक्व किया । यह छः कृतिकायें–छः चक्र ही हैं । शिव और शक्ति का यह समन्वय–संयोग स्कन्द रूपी महापराक्रम के रूप में प्रकट होता है । इसके छः मुख थे । छः कृतिकाओं द्वारा परिपोषित छः मुख वाले कार्तिकेय को अलंकार के रूप में षट्चक्रों का प्रभाव परिणाम ही माना जाय ।

मूलाधार के ऊपर मेरुदण्ड के सहारे क्रमशः ऊपर उठते हुये ६ चक्र हैं, यह ब्रह्मरन्ध्र से जुड़े हुये शक्ति सामर्थ्यों के विशिष्ट पावरहाउस, या माइक्रोवेव स्टेशन कहे जा सकते हैं । नाभि की सीध में मूलाधार से ऊपर स्वाधिष्ठान चक्रनाभि और हृदय के मध्य मणिपूर हृदय स्थित अनाहत कण्ठ में विशुद्ध तथा भ्रूमध्य में आज्ञाचक्र, ब्रह्मरन्ध्र में अवस्थित सहस्रार को गिनें तो इनकी संख्या सात हो जाती है । इन स्थानों का परिचय वहाँ उपस्थित देव शक्तियों, वाहन, वर्ण अक्षर तत्व आदि के माध्यम से दिया जाता है ताकि साधक जब उनका वेधन करें.तो उसे यात्रा की तरह यह जानकारी बनी रहे कि उसकी स्थिति और प्रगति कहाँ तक हुई ।

षट्चक्र क्या हैं ? कहाँ हैं ? क्यों हैं ? किस स्थिति में हैं ? उनका क्या प्रयोजन है ? इन प्रश्नों की यहाँ प्रारम्भिक जानकारी ही प्राप्त कर लेनी चाहिए । उनके प्रयोग उपयोग का शिक्षण भिन्न है और साधक की शारीरिक मानसिक स्थिति के अनुरूप उन्हें सिखाने का विधान है । जननेन्द्रिय के मूल में मेरुदण्ड का जहाँ अन्त होता है; उस बीच जितना पोला स्थान है उसे साधनात्मक भाषा में योनी कन्द कहते हैं । स्थूल शरीर शास्त्र के अनुसार वहाँ सुषुम्ना नाड़ी गुच्छक भर है पर सूक्ष्म शरीर रचना विज्ञान के अनुसार यहाँ एक विशेष अवयव है जिसे मूलाधार चक्र कहते हैं । इसके नीचे की पीठ कछुए जैसी है–इसे कूर्म कहते हैं । इसके ऊपर एक छोटा मेरुदण्ड है उसे सुमेरु कहते हैं । इसके चारों ओर साढ़े तीन फेरे लगाये हुए एक शक्ति सूत्र विद्यमान है । बस यही मूलाधार है । इसे सब मिलाकर एक कुण्ड गह्वर में अवस्थित–गेंद–कन्द–की समता देकर समझाया जा सकता है । प्रथम चक्र यही है । कुण्डलिनी का मूल स्थान यही है । ईंधन न मिलने से जैसे अग्नि कुण्ड में आग तो बुझ सी जाती है पर वहाँ गर्मी बनी रहती है, यही स्थिति सामान्यतया सभी साधारण व्यक्तियों की होती है । प्रयत्न करने से प्राण रूपी ईंधन देने से यह प्रदीप्त होती है । उसकी लौ ऊपर उठती है ।

षट्चक्र नाम से सभी परिचित हैं, वस्तुतः यह छः नहीं सात हैं । सातवाँ सहस्रार है । उसे सब का अधिपति मानकर गणना से बाहर रखा गया है । इस प्रकार यह सात शक्ति चक्र, सात लोकों के, सात ऋषियों के, सप्त धातुओं के, सप्तद्वीपों के प्रतीक समझे जा सकते हैं ।

चक्रों में अन्तर्निहत शक्तियों और आकृतियों का उल्लेख साधना शास्त्र में अनेक स्थानों पर मिलता है । उनमें थोड़ा मतभेद तो है पर सामान्यतया उनकी संक्षिप्त जानकारी इस प्रकार दी गई है–

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(१) मूलाधार–तत्व पृथ्वी । रंग पीला । तन्मात्रा–गन्ध । ध्वनि–लं । भू लोक । स्थान मलमूत्र छिद्रों का मध्य ।(२) स्वाधिष्ठान–तत्व जल । रंग–सफेद । तन्मात्रा–रस । ध्वनि–वं । भुवा लोक । स्थान पेडू की सीध । (३) मणिपूर–तत्व अग्नि । रंग लाल । ध्वनि– रं । लोक–स्वः । तन्मात्रा–रूप । स्थान–नाभि की सीध । (४) अनाहत–तत्व वायु । रंग–धूम्र । ध्वनि– यं । तन्मात्रा–स्पर्श । लोक मह । स्थान हृदय की सीध । (५) विशुद्ध–तत्व आकाश । रंग–नील । मन्मात्रा–शब्द ।लोक–जन । ध्वनि–इं । स्थान–कंठमूल की सीध । (६) आज्ञाचक्र–लोक–तप । ध्वनि–ॐ । रंग–श्वेत । स्थान–भृकुटियों के मध्य । (७) सहस्रार–लोक–सत्य । आकृति सहस्र दल कमल । रंग–स्वर्णिम । मस्तिष्क के मध्य में रैटिकुलर ऐक्टिवेटिंग सिस्टम से उसकी संगति बैठती है ।

सात चक्रों में सन्निहित शक्ति स्रोतों की तुलना किन भौतिक संस्थानों से–सम्प्रदायों से–चेतनाओं से की जा सकती है । इसका तुलनात्मक अलंकारिक उल्लेख साधना ग्रन्थों में इस प्रकार मिलता है–

महीस्थतीर्थे विमले जले मुदा ।
मूलाम्बुजे स्नाति स मुक्तिभाग्भवेत् ॥

–महायोग विज्ञान

पृथ्वी के समस्त तीर्थ मूलाधार चक्र में निवास करते हैं । उसमें जो स्नान करता है मुक्त हो जाता है ।

स्वर्गस्थं यावता तीर्थं स्वाधिष्ठाने सुपंकजे ।
मनो निधाय योगीन्द्रः स्नाति गंगाजले तथा ॥
मणिपूरे देवतीर्थं पञ्चकुण्ड सरोवरम् ।
तत्र श्रीकामना तीर्थं स्नाति यो मुक्तिमिच्छति ॥
अनाहते सर्व तीर्थं सूर्यमण्डलमध्यगम् ।
विभाय सर्वतीर्थाणि स्नाति यो मुक्तिमिच्छति ॥

–महायोग विज्ञान

स्वर्गस्थ तीर्थ स्वाधिष्ठान चक्र में विद्यमान है । यहाँ निवास करने वाली देव गंगा में योगी लोग स्नान करते हैं । मणिपूर चक्र देवतीर्थ है, उसमें पंच कुण्ड सरोवर है । वहाँ श्री कामतीर्थ है । अनाहत चक्र में सूर्य मण्डल में वर्तमान समस्त तीर्थों का निवास है । इनमें स्नान करने वाले उन पुण्य लोकों के अधिकारी होते हैं ।

मूलाधारे तु भूर्लोको स्वाधिष्ठाने भुवस्ततः ।
स्वर्लोको नाभिदेशे च हृदये तु महस्तथा ॥
जनलोकं कण्ठदेशे तपोलोकं ललाटके ।
सत्यलोकं महारन्ध्रे यति लोकाः पृथक्–पृथक् ॥
तलम्पादङ्गष्ठतले तस्योपरि तलातलम् ।
महातलं गुल्फमध्ये गुल्फोपरि रसातलम् ॥
सुतलं जडघ्योर्मध्ये वितलं जानुमध्यगम् ।
ऊर्वोर्मध्ये तलम्प्रोक्तं सप्तपातालमीरितम् ॥

–महायोग विज्ञान

मूलाधार चक्र में भूलोक स्वाधिष्ठान में भुवलोक, नाभि में महलोक, कण्ठ में जनलोक, ललाट में तपलोक और ब्रह्मरन्ध्र में सत्यलोक है । इस प्रकार नीचे के भाग में सात पाताल लोक हैं । पैरों के तले में तललोक पाँव के ऊपर भाग में तलातल लोक, गुल्फ के बीच महातल, गुल्फ के ऊपर रसातल, जंघाओं के मध्य वितल, उरुओं के मध्य पाताल है । इस प्रकार कटि से ऊपर सात और नीचे सात कुल चौदह भुवन इसी शरीर में विद्यमान हैं । जो इस तथ्य को जानता है; दुःखों से छूटकर परम सुखी हो जाता है ।

देहेऽस्मिन् वर्त्ततो मेरुः सप्तद्वीपसमन्वितः ।
सरितः सागराः शैलाः क्षेत्राणि क्षेत्रपालकाः ॥
ऋषयो मुनयः सर्वे नक्षत्राणि ग्रहास्तथ ।
पुण्यतीर्थानि पीठानि वर्त्तन्ते पीठदेवताः ॥
सृष्टिसंहारकर्त्तारौ भ्रमन्तौ शशिभास्करौ ।
नभो वायुश्च वह्निश्च जल पृथ्वी तथैव च ॥
त्रैलोक्ये यानि भूतानि तानि सर्व्वाणि देहतः ।
मेरु संबेद्वय सर्व्वत्र व्यवहारः प्रवर्त्तते ॥
जानाति यः सर्वमिदं स योगी नात्र संशयः ।

–महायोग विज्ञान

इसी शरीर में सुमेरु सातों द्वीप, समस्त नदियाँ, सागर, पर्वत, क्षेत्र, क्षेत्रपाल, ऋषि–मुनि, नक्षत्र, ग्रह, तीर्थ, पीठदेवता, ब्रह्मा, विष्णु, महेश, सूर्य, चन्द्रमा, आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी, समस्त प्राणी जो कुछ संसार में हैं सो सब इस सुमेरु (कुण्डलिनी स्थिति मेरु अथवा मेरु दण्ड) से लिपटे बैठे हैं और अपने–अपने कार्य कर रहे हैं । जो इस सबको जानता है वही योगी है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उपर्युक्त प्रतिपादन से स्पष्ट होता है कि यह शरीर मात्र सप्त धातुओं का ही बना नहीं है । उसमें (१) रस (२) रक्त (३) माँस (४) मज्जा (५) अस्थि (६) मेद (७) वीर्य ही नहीं वरन् उनके भीतर और भी दिव्य तत्व हैं । यह सातों धातुयें सात चक्रों से प्रभावित होती हैं और हमारा शरीर अविज्ञात रूप से उन्हीं के द्वारा स्वस्थ-अस्वस्थ रहता है । आहार व्यायाम ही नहीं अन्तरंग की गुप्त स्थिति जो चक्रों से सम्बन्धित है यदि ठीक प्रकार संचारित होती रहे तो आरोग्य और दीर्घ जीवन की सम्भावनायें प्रखर हो सकती हैं । गुप्त स्थिति अस्त–व्यस्त रहे तो पौष्टिक आहार और बहुत साज सँभाल रखने पर भी शरीर दुर्बल एवं अस्वस्थ ही बना रहेगा । यही बात मनःसंस्थान की है । चेतना के विभिन्न स्तर इन चक्रों से प्रभावित होते हैं और चेतन अचेतन मस्तिष्क के अवसाद को चेतना के उत्कर्ष में परिणत किया जा सकता है । ऋद्धियों-सिद्धियों का जो चमत्कारी वर्णन साधना ग्रन्थों में मिलता है उतना ही नहीं वरन् उससे भी अधिक उपलब्धियाँ अपने भीतर भरे शक्ति भण्डार के साधना विज्ञान के आधार पर अभीष्ट प्रयोजनों के लिए उपयोग कर सकने योग्य बनाया जा सकता है ।

जीवन एक यज्ञ है । मात्र हवन कुण्डों में सम्पन्न होने वाले अग्निहोत्र ही यज्ञ नहीं हैं । शरीर पिण्ड और विराट् ब्रह्माण्ड में उनके स्तर के अनुरूप छोटे और बड़े रूप से यह सूक्ष्म यज्ञ चलता रहता है । चक्रों को सात कुण्ड कहा जा सकता है । उनमें सात अग्नियों की स्थापना, सात ऋषियों का पौरोहित, सात देवताओं का आह्वान, सात चरू, सात परिणाम भी यह साधना यज्ञ के होते हैं । इसे कुण्डलिनी विद्या के अन्तर्गत चक्र जागरण की प्रक्रिया द्वारा सम्पन्न किया जाता है

सप्त प्राणाः प्रभवन्ति तस्मात् ।
सप्तार्चिषः समिधः सप्त होमाः ।
सप्त इमे लोका येषु चरन्ति प्राणा ।
गुहाशया निहिताः सप्त सप्त ॥ ८ ॥

–मुण्डक २/१/८

सप्त प्राण उसी से उत्पन्न हुए । अग्नि की सात ज्वालाएँ, सप्त समिधाएँ, सात यज्ञ, सात लोक यह सातों उस परमेश्वर से उत्पन्न हुए ।

भूर्लोकस्था त्वमेवासि धरित्री शौकधारिणी ।
भुवो लोके वायुशक्तिः स्वर्लोके तेजसां निधिः ॥१२॥
महर्लोके महासिद्धिर्जनलोके जनेत्यपि ।
तपस्विनी तपोलोके सत्यलोके तु सत्यवाक् ॥१३॥

–देवी भागवत

सात लोकों में आप सात शक्ति होकर विद्यमान हैं और उनका संचालन करती हैं । (१) भूलोक में– धरित्री, (२) भुवर्लोक में– वायु, (३) स्वःलोक में– तेज पुंज, (४) महःलोक में – महासिद्धि, (५) जनः लोक में–जनन शक्ति, (६) तपः लोक में–तपस्विनी, (७) सत्य लोक में–सत्य वाक् ।

सात चक्रों की भाँति शरीर में अन्यत्र भी कितने शक्ति स्रोत हैं । इन्हें ग्रन्थि उपत्यिका आदि कहते हैं । मस्तिष्क में विष्णु ग्रन्थि, हृदय में ब्रह्म ग्रन्थि और नाभि में रुद्र ग्रन्थि का स्थान है । यहाँ भी थोड़ा मतभेद है । हृदय स्थान में विष्णु ग्रन्थि और मस्तिष्क में ब्रह्म ग्रन्थि भी कही गई है । हमें इन नाम भेदों में भी नहीं उलझना चाहिए और समझना चाहिए कि न केवल मेरुदण्ड में वरन् मस्तिष्क हृदय एवं नाभि में ऐसे ही महत्वपूर्ण शक्ति चक्र हैं और उनका वेधन करने का विधान 'ग्रन्थि भेद' के नाम से वर्णित है । यहाँ एक बात और ध्यान रखने की है–वेध शब्द का सामान्य अर्थ 'छेद' कर देना होता है । पर अध्यात्म की परिभाषा में उसे 'जागरण' अर्थ में प्रयोग किया गया है ।

शरीर के पृष्ठ भाग के सुषुम्ना संस्थान के षट्चक्रों की तरह काया के अग्र भाग में भी छः चक्र अवस्थित हैं, उन्हें सूर्य–चक्र, अग्नि–चक्र अमृत–चक्र, प्रभंजन, तड़ित–चक्र, सोम–चक्र कहा गया है ।

पर्वतों में भरा जल जब एकत्रित होकर किसी स्थान विशेष से फूटता है तो उसे झरना कहते हैं । झरनों के उद्गम स्थान पर जलधारा कितनी प्रचण्ड होती है ऊपर से नीचे गिरने पर वहाँ कितना कोलाहल होता है और कितनी उथल–पुथल मचती है, उसे सभी जानते हैं । चक्र संस्थानों को भँवर, चक्रवात की ही तरह एक उपमा झरना फटने की भी दी जा सकती

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । ज्वालामुखी के छेद अक्सर अग्नि, धुआँ या दूसरी चीजें उगलते रहते हैं । चक्रों से भी उसी प्रकार का प्रकटीकरण होता रहता है । समुद्री लहरों से असीम विद्युत शक्ति उपलब्ध करने की तैयारियाँ हो रही हैं । चक्र संस्थानों में उबलती शक्ति का उपयोग कर सकना जिनके लिए सम्भव होता है वे उसका ऐसा लाभ उठा सकते हैं जिसे देव क्षमता कहकर सम्बोधित किया जा सके ।

हार्मोन ग्रन्थियों के सम्बन्ध में खोज करने वाले शरीरशास्त्री आश्चर्यचकित हैं कि इन नन्हीं–सी ग्रन्थियों से निकलने वाले रस मात्रा में कुछ ही बूँद होते हैं, पर शारीरिक और मानसिक स्थिति को कितना अधिक प्रभावित करते हैं । अण्डकोश, गुर्दे, जिगर, तिल्ली, पौरुष ग्रन्थियाँ आदि को बड़ी ग्रन्थियाँ ही कह सकते हैं । उनका क्रियाकलाप स्थूल होने से सरलतापूर्वक समझा जा सकता है । हार्मोन ग्रन्थियों का रहस्योद्घाटन इससे बहुत कठिन है और बहुत माथापच्ची करने के बाद भी ठीक तरह पकड़ में नहीं आ रहा है । सूक्ष्म ग्रन्थियाँ जिन्हें चक्र कहते हैं, इन्द्रियों एवं उपकरणों की पहुँच से बाहर हैं । उन्हें जाग्रत अन्तर्दृष्टि से ही देखा, समझा एवं प्रयोग में लाया जा सकता है । सूक्ष्म विज्ञान के आधार पर ही उनका अनुभव एवं उपयोग सम्भव होता है ।

हठयोग साधना के अन्तर्गत आने वाले मेरुदण्ड को सुषुम्ना संस्थान में अवस्थित छः चक्रों के नाम हैं– (१) मूलाधार चक्र (२) स्वाधिष्ठान चक्र (३) मणिपूर चक्र (४) अनाहत चक्र (५) विशुद्ध चक्र (६) आज्ञा चक्र ।

इनमें शरीर-शास्त्रियों ने चार को नाड़ी गुच्छकों के रूप में मान्यता दे दी है । मूलाधार चक्र को–पेल्विक प्लैक्सस । मणिपूर चक्र को– सोलर प्लैक्सस । अनाहत चक्र को–कार्डियल प्लैक्सस और विशुद्ध चक्र को–फैरेंजियल प्लैक्सस नाम से निश्चित कर दिया गया है । शेष दो के बारे में प्राचीन व्याख्या एवं नवीन वास्तविकता में थोड़ा अन्तर एवं मतभेद है । आशा की जानी चाहिए कि वह गुत्थी भी निकट भविष्य में सुलझ ही जायेगी ।

चक्र संस्थान के जागरण के फलस्वरूप मिलने वाली षट् सम्पत्तियों का वर्णन मिलता है । इन्हें आध्यात्मिक उपलब्धियाँ भी कह सकते हैं ।

षट् सम्पत्ति यह हैं–(१) शम (२) दम (३) उपरति (४) तितीक्षा (५) श्रद्धा (६) समाधान ।

शम–अर्थात् शान्ति उद्वेगों का शमन । दम–इन्द्रियों को दमन करने की क्षमता । उपरति–दुष्टता से घृणा । तितीक्षा–कष्टों का धैर्यपूर्वक सहना । श्रद्धा–सन्मार्ग में प्रगाढ़ निष्ठा, विश्वास और भावना का समन्वय ।समाधान–संशयों और लालसाओं से छुटकारा ।

यह गुण, कर्म, स्वभाव की विशेषताएँ हैं । उत्कृष्ट चिन्तन एवं आदर्श कर्तृत्व से मनुष्य ऊँचा उठता है और ब्रह्म परायण व्यक्तियों को मिलने वाले आन्तरिक सन्तोष, उल्लास और बाह्य सम्मान, सहयोग का अधिकारी बनता है ।

इसके अतिरिक्त आत्मिक प्रगति के भौतिक लाभ भी कितने ही हैं । जिन्हें सिद्धियों के नाम से पुकारा गया है । आत्मिक सफलताओं के सम्पत्ति एवं विभूति दो नाम हैं । भौतिक प्रगति को समृद्धि एवं सिद्धि के नाम से सम्बोधित किया जाता है । दोनों के सम्मिलित परिणाम को अतीन्द्रिय क्षमता विकास के रूप में देखा जा सकता है ।

श्री आद्य शंकराचार्य ने आठ सिद्धियाँ यह गिनाई हैं– (१) जन्म सिद्धि (२) शब्दज्ञान सिद्धि (३) शास्त्रज्ञान सिद्धि (४) आधिदैविक ताप सहन शक्ति (५) आध्यात्मिक ताप सहन शक्ति (६) आधिभौतिक ताप सहन शक्ति (७) विज्ञान सिद्धि (८) विद्या शक्ति ।

जन्म सिद्धि का अर्थ है पूर्व जन्मों की स्थिति का आभास, पूर्व जन्मों के सम्बन्धियों के प्रति सहज आकर्षण और उनके साथ अपने पूर्व सम्बन्धों की जानकारी ।

शब्द सिद्धि का अर्थ है–शब्दों के साथ जुड़ी हुई भावना का आभास । शब्दों की शक्ति बड़ी सीमित है और उससे कुछ का कुछ–उल्टा–सीधा–अप्रासंगिक अर्थ भी निकल सकता है । कहने वाले की भावना का सही अनुमान वही लगा सकता है जिसका अन्तःकरण पवित्र हो ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शास्त्र सिद्धि का तात्पर्य है– शास्त्रकार की मूल भावना को समझना और यह जानना कि यह प्रतिपादन किस देश, काल, पात्र को ध्यान में रखकर किया गया है। कोई सिद्धान्त या प्रतिपादन सार्वभौम या सर्वकालीन नहीं होता। यह शास्त्र वचन किस प्रकार प्रयुक्त करना चाहिए, यह सूक्ष्म ज्ञान होना ही शब्द की सिद्धि है।

आधिदैविक ताप सहन शक्ति का अर्थ है– दैवी प्रकोप अथवा प्रारब्ध जन्म योग के कारण, आकस्मिक अनायास विपत्तियां उत्पन्न हो जाने, प्रियजनों के कारण विछोह आदि के अवसर उपस्थित हो जाने पर उन शोक सम्वेदनाओं का धैर्यपूर्वक सहन।

आध्यात्मिक ताप सहन शक्ति का तात्पर्य है–काम, क्रोध, लोभ, मोह, मदमत्सर, ईर्ष्या आदि उद्वेगों को नियन्त्रण में रखना। इन्द्रियों के अमर्यादित योग को छूट न देना, मन को उच्छृंखल न होने देना। इस अवरोध से भीतर जो असन्तोष उत्पन्न होता है उसको हँसते हुए टाल देना।

आधिभौतिक ताप सहन शक्ति का अर्थ है–सर्दी, गर्मी, भूख, प्यास, नींद, रोग, चोट आदि के शरीर कष्टों को समय पड़ने पर शान्तिपूर्वक सह लेना और चित्त को अशान्त उद्विग्न न होने देना।

विज्ञान शक्ति का अर्थ है– शुद्ध अन्तःकरण, निर्मल चरित्र, सन्तुलित मन, सौम्य स्वभाव और हँसमुख प्रकृति, निरालस्यता स्फूर्तिवान और नियम–पालन की तत्परता, कर्त्तव्य–पालन में प्रगाढ़ निष्ठा, उदार व्यवहार में सन्तोष।

विद्या शक्ति अर्थात्–आत्मा के स्वरूप, उद्देश्य तथा कर्त्तव्य पर भावना और विश्वास भरी निष्ठा, ईश्वर पर विश्वास, आत्मा को सर्वव्यापी समझ कर सबको अपना ही समझना और आत्मीयता भरा व्यवहार करना, प्रेम भावनाओं का उभार, उद्वेग और आवेशों से निवृत्ति।

अतिवादी या अति उच्चस्तरीय अपवाद रूप में कहीं–कहीं कभी–कभी सुनी, देखी जाने वाली सिद्धियों में (१) अणिमा (२) महिमा (३) गरिमा (४) लघिमा (५) प्राप्ति (६) प्राकाम्य (७) ईशत्व (८) वशित्व का वर्णन मिलता है।

अणिमा अर्थात्–शरीर को अणु के समान सूक्ष्म बना लेना। महिमा अर्थात्–बहुत बड़ा कर लेना। गरिमा–बहुत भारीपन। लघिमा–बहुत हल्कापन। प्राप्ति–दूरस्थ वस्तु की समीता। प्राकाम्य–मनोरथों की पूर्ति। ईशत्व–स्वामित्व, अभीष्ट वस्तु व्यक्ति या परिस्थिति पर अधिकार। वशित्व–वशवर्ती बना लेना।

अष्ट सिद्धियों का दूसरा वर्णन एक और भी मिलता है–(१) परकाया प्रवेश (२) जलादि में असंग (३) उत्क्रान्ति (४) ज्वलन (५) दिव्य श्रवण (६) आकाश गमन (७) प्रकाश आवरण क्षय (८) भूत जय।

इस प्रकार के चमत्कार इन दिनों देखे नहीं जाते। जो दीखते हैं उनमें छल की मात्रा ही प्रमुख होती है। ऐसी दशा में हमें अनुभव में न आने वाली सिद्धियों पर ध्यान देने की अपेक्षा इतना ही सोचना है कि चक्र वेधन जैसी योग–साधनाओं का आश्रय लेकर हम सहज ही अपनी आत्मिक और भौतिक सामर्थ्यों को जगा सकते हैं और उस दिशा में मिलने वाली सफलता का इतना लाभ ले सकते हैं, जितना सामान्य पुरुषार्थ से सम्भव नहीं हो सकता।

षट्चक्र ब्रह्माण्ड व्यापी शक्तियों के रेडियो केन्द्र

बाँसुरी में सात छिद्र सात स्वर कहलाते हैं। जब उनमें से आरोह अवरोह क्रम में वायु फूँकी और उन छिद्रों का व्यवस्थित संचालन किया जाता है तो एक ऐसी मधुर स्वर लहरी का गुंजार होता है जिसे सुनकर हर कोई मुग्ध हो जाता है। भगवान् श्रीकृष्ण की बाँसुरी के स्वर सुनकर समस्त ब्रज भाव-विभोर उठता था। ऐसी ही एक बाँसुरी मनुष्य के शरीर में षट्चक्रों के रूप में भी विद्यमान है। सामान्य अवस्था में यह चक्र प्रसुप्त अवस्था में पड़े रहते हैं। किन्तु गायत्री उपासना से जब उनका जागरण होता है तो साधकों को एक ऐसा अनहद् नाद सुनाई पड़ता है जिससे वह आत्म-विभोर हो उठता है। उसे ऐसी तृप्ति के दर्शन होते हैं जिसके आगे संसार की कोई भी नियामत तुच्छ लगती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चक्र शब्द का अर्थ पहिया ही नहीं, नियमित गति भी होता है । भाग्य चक्र, जीवन-मरण चक्र, सुदर्शन चक्र आदि चक्र संयुक्त नामों से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि गाड़ी के पहिए की तरह जो भी वस्तु या स्थिति घूमने वाली हो उसके लिए चक्र शब्द का प्रयोग किया जाता है । पृथ्वी सहित सौर मण्डल के ग्रह एक निर्धारित कक्षा में घूमते हैं, परमाणु भी अपने छोटे सौर मण्डल के साथ अपनी धुरी पर घूमते रहते हैं । दिन और रात की तरह शरीर में रक्ताभिषरण–श्वांस–प्रश्वांस क्रिया में भी आवागमन का चक्र चलता रहता है । गति और प्रगति का जो क्रम संसार में सर्वत्र दीख पड़ता है वही प्रकारान्तर से हमारे शरीर के विविध क्रिया कलापों पर भी लागू होता है । ऐसे ही क्रिया–कलापों में एक विश्वव्यापी प्राणशक्ति में से कुछ अंश शरीर में ग्रहण करने और छोड़ने का क्रम चलाने के शक्ति संस्थान विद्यमान हैं जिन्हें योग की भाषा में चक्र कहा जाता है ।

नदी और नहरों के किनारे आटा पीसने की पनचक्कियाँ लगी होती हैं । बहता हुआ पानी जहाँ ऊपर से नीचे गिरता है वहाँ उस गिरने से उत्पन्न होने वाले दबाव से कुछ चक्के सम्बन्धित कर दिये जाते हैं और वे उस दबाव के कारण घूमने लगते हैं । इस घुमाव से चक्की के पहिए घूमने लगते हैं और आटा पीसने की मशीन अपना काम करने लगती है । विश्वव्यापी प्राणशक्ति का प्रवाह एक बड़ी नदी में बहने वाले जल प्रवाह की तरह है । मनुष्य शरीर की प्रपात्त से तुलना की जा सकती है । शरीर में विद्यमान कुछ सूक्ष्म चक्र इस शक्ति प्रपात के साथ जुड़े रहने के कारण उस प्रवाह जन्य दबाव को अपने भीतर ग्रहण करते हैं और वे स्वयं घूमने लगते हैं । चक्रों का परिभ्रमण सूक्ष्म शरीर के सारे अन्तरंग क्रिया–कलाप को घुमाता है और हमारी आंतरिक हलचलें अपना काम करने लगती हैं । विश्वव्यापी प्राणशक्ति की विद्युत भी हमारे सूक्ष्म चक्र ग्रहण करते हैं । जैसे बड़े बिजली-घर से उत्पन्न होने वाली शक्ति को छोटे ट्रॉसफार्मर अपने में ग्रहण कर लेते हैं और उससे अपने क्षेत्र की आवश्यकता पूरी करते हैं, उसी प्रकार हमारे सूक्ष्म शरीर में विद्यमान चक्र–विराट् प्राण चक्र से अपनी क्षमता के अनुरूप शक्ति प्राप्त करते हैं और उससे स्थूल, सूक्ष्म, कारण शरीरों को अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय, आनन्दमय कोशों की गतिविधियाँ संचालित रख सकने की क्षमता प्राप्त करते हैं । इसी क्षमता से वे स्वयं विद्युत मोटरों की तरह घूमते हैं और शरीर सत्ता के विभिन्न घटकों को गति प्रदान करते हैं ।

सामान्यतया गति के तीन रूप हैं (१) चक्राकार–गोल (२) कुण्डल्याकार–पेच की चूड़ियों की तरह (३) तरंगाकार–लहरों की तरह । साधारण जीवन क्रम में हम वाह्य जगत् की तरंग प्रक्रिया से लाभान्वित होते हैं । कानों में शब्द–त्वचा पर स्पर्श–जिह्वा पर रस– नाक में गन्ध नेत्रों में रूप का अवग्रहण तरंगों के रूप में ही होता है । हम प्रायः तरंगें ही फेंकते और तरंगें ही ग्रहण करते हैं । हमारी क्रियायें एवं विचारणाएँ अन्तरिक्ष में जो हलचलें उत्पन्न करती हैं वे तरंग रूप में ही आगे बढ़ती हैं और व्यक्तियों तथा वस्तुओं को प्रभावित करती हैं । इस प्रकार हम व्यापक शक्ति समुद्र में से एक-तिहाई का ही उपयोग कर पाते हैं । दो धारायें तो अछूती ही बनी रहती हैं जबकि उनकी क्षमता और भी अधिक है ।

दो तरंगें शरीर के अन्तःक्षेत्र में गतिशील रहती हैं । मूलाधार चक्र से मेरुदण्ड मार्ग में जो शक्ति प्रवाह चलता है वह पेच की चूड़ी की तरह कुंडल्याकार होता है । इसलिए धारा को कुंडलिनी कहते हैं । साधारण बन्दूकों में तो ऐसे ही गोल छेद की पोली नली होती है पर बढ़िया बन्दूकों का नली का भीतरी भाग चूड़ीदार होता है । गोली दागते समय उसे पेंचदार घुमाव की गति मिलती है फलतः वह लक्ष्य तक इसी गति से घूमती हुई पहुँचती है । जहाँ लगती है वहाँ छिद्र तो सामान्य होता है पर आगे वह अपने पेचदार चाले के कारण बड़ा छिद्र कर देती है । मूलाधार सें उठने वाले पेचदार प्रवाह भी ऐसे ही होते हैं और वे आगे बढ़ते–बढ़ते अधिकाधिक सशक्त होते जाते हैं ।

मस्तिष्क के उठने वाले विद्युत प्रवाह गोलाकार होते हैं । अस्तु उसे सूर्य चन्द्र जैसे गोल ग्रह पिण्डों की उपमा दी जाती है, बूँदें भी गोल होती हैं । उसे उस प्रवाह के अमृत बिंन्दुओं के समतुल्य माना जाता है और सोमरस से स्वाँति बूँदों से स्मरण किया जाता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । चातक की तृप्ति स्वाँति वर्षा से होती है । स्वाँति बूँदों से सीप में मोती, बाँस में वंश–लोचन, केला में कपूर होने की किंवदन्तियाँ पदार्थ विज्ञान की दृष्टि से सही नहीं हैं । इस अलंकार में मस्तिष्क में झरने वाले प्रवाह को ही अमृत वर्षा के नाम से पुकारा गया है । सीप, चातक, केला, बाँस आदि में मूलाधार संस्थान की ओर इंगित किया गया है । मस्तिष्क और काम बीज के बीच परस्पर आकर्षण तो है पर मिलन नहीं हो पाता । इस वियोग की अतृप्ति ही जीवन क्रम में विक्षोभ, असंतोष एवं अभाव भरे रहती है । यदि दोनों का मिलन हो सके तो इस संयोग का प्रतिफल आनन्द एवं उल्लास बन कर सामने आता है । यही स्थिति उत्पन्न करना कुण्डलिनी जागरण का उद्देश्य है ।

रेडियो यन्त्र में लगी सुई को अलग नम्बरों पर लगा देने से उसमें लगे बैण्ड बदल देने से अलग ब्राडकास्ट स्टेशनों का सम्बन्ध बनता और बदलता है रेडियो यन्त्र में ऐसी व्यवस्था है कि उसके विभिन्न पुर्जे थोड़ी फेर बदलने से अन्तरिक्ष में विभिन्न फ्रीक्वैन्सियों पर चल रहे शब्द प्रवाहों को पकड़ सकें । इसी व्यवस्था के आधार पर हम अपने रेडियो पर अभीष्ट प्रोग्राम सुन सकते हैं । मेरुदण्ड में अवस्थित चक्रों में ऐसी विशेषता है कि वे अनन्त आकाश में बह रही विभिन्न स्तर की चेतनात्मक शक्ति धाराओं के साथ सम्पर्क बना सकें । इन्हीं धाराओं को देवसत्ता कहते हैं । चक्रों के अधिपति विभिन्न देवता बताये गए हैं । इनका तात्पर्य है कि चक्रों के साथ चेतन जगत् की महत्वपूर्ण फ्रीक्वैन्सियाँ सम्बन्धित हैं । उनका सम्पर्क एवं अनुदान प्राप्त कर सकना हर दृष्टि से मनुष्य के लिए उपयोगी ही सिद्ध हो सकता है ।

हमारा रेडियो यन्त्र ग्रहण करने का एक ही कार्य सम्पन्न कर पाता है । उसमें प्रेषण की–ब्राडकॉस्टिंग की क्षमता नहीं है । प्रेषण और ग्रहण का दुहरा काम कर सकने की क्षमता मेरुदण्ड स्थित चक्र संस्थान में पाई जाती है । वे अन्तरिक्ष के विभिन्न क्षेत्रों एवं स्तरों के साथ सम्पर्क बनाने एवं आदान–प्रदान का द्वार खोलने में समर्थ हो सकते हैं । प्रसुप्त चक्र अविज्ञात एवं अनावश्यक स्थिति में उपेक्षित पड़े रहते हैं पर यदि उन्हें जाग्रत किया जा सके तो जीवन विकास में उनका महत्वपूर्ण उपयोग हो सकता है ।

संसार को परमाणुओं से बना हुआ एक खिलौना कहें तो अत्युक्ति न होगी । कुछ सीमित तत्वों के परमाणु ही विराट जगत् में परिभ्रमण करते और नाना प्रकार के ब्रह्मांड पदार्थ और परिस्थितियों की उत्पत्ति करते हैं । जीवन की सात अवस्थायें भी वस्तुतः इन परमाणुओं के संयोग से विनिर्मित सृष्टि क्रम ही है ।

कुण्डलिनी के षट्चक्र और उनका वेधन

कुण्डलिनी योग के अन्तर्गत शक्तिपात विधान का वर्णन अनेक ग्रन्थों में मिलता है । योग वाशिष्ठ, तेजबिन्दूपनिषद्, योग चूड़ामणि, ज्ञान संकलिनी तन्त्र, शिव पुराण, देवी भागवत, शाण्डिल्योपनिषद्, मुक्तिकोपनिषद्, हठयोग संहिता, कुलार्णव तन्त्र, योगनी तंत्र, घेरंड संहिता, कंठ श्रुति ध्यान बिन्दूपनिषद्, रुद्र यामल तन्त्र, योग कुण्डलिनी उपनिषद्, शारद तिलक आदि ग्रन्थों में इस विद्या के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डाला गया है । फिर भी वह सर्वांगपूर्ण नहीं है कि उस उल्लेख के सहारे कोई अजनबी व्यक्ति साधना करके सफलता प्राप्त कर सके । पात्रता युक्त अधिकारी साधक और अनुभवी सुयोग्य मार्ग-दर्शक की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए ही ग्रन्थों में इस गूढ़ विद्या पर प्रायः संकेत ही किये गये हैं ।

योरोपियन तांत्रिकों में जोकव बोहम की ख्याति कुण्डलिनी साधकों के रूप में रही है । उनके जर्मन शिष्य जान जार्ज गिचेल की लिखी पुस्तक 'थियोसॉफिक प्रोक्टिका' में चक्र संस्थानों का विशद वर्णन है जिसे उन्होंने अनुसंधानों और अभ्यासों के आधार पर लिखा है । जैफरी हडस्वन ने इस सन्दर्भ में गहरी खोजें की हैं और आत्म विज्ञान एवं भौतिक विज्ञान के समन्वयात्मक आधार लेकर चक्रों में सन्निहित शक्ति और उसके उभार उपयोग के सम्बन्ध में विस्तारपूर्वक प्रकाश डाला है ।

कुण्डलिनी साधना को अनेक स्थानों पर षट्चक्र वेधन की साधना भी कहते हैं । पंचकोषी साधना या पंचाग्नि विद्या भी गायत्री की कुण्डलिनी या सावित्री साधना के ही रूप हैं । एम. ए. एक डिग्री है इसे हिंदी अंग्रेजी, सिविक्स, इकॉनॉमिक्स किसी भी विषय

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से प्राप्त किया जा सकता है। उसी प्रकार आत्म–तत्व, आत्म शक्ति एक है, उसे प्राप्त करने के लिए विवेचन विश्लेषण और साधना विधान भिन्न हो सकते हैं। इसमें किसी तरह का विरोधाभास नहीं है।

तैत्तरीय आरण्यक में चक्रों को देवलोक एवं देव संस्थान कहा गया है। शंकराचार्य कृत आनन्द लहरी के ७७वें श्लोक में भी ऐसा ही प्रतिपादन है।

योग दर्शन समाधिपाद का ३६वाँ सूत्र है–

'विशोकाया ज्योतिष्मती'

इसमें शोक सन्तापों का हरण करने वाली ज्योति शक्ति के रूप में कुण्डलिनी शक्ति की ओर संकेत है।

इस समस्त शरीर को–सम्पूर्ण जीव कोशों को–महाशक्ति की प्राण प्रक्रिया सँम्भाले हुए हैं। उस प्रक्रिया के दो ध्रुव–दो खण्ड हैं। एक को चय प्रक्रिया (एनाबॉलिक एक्शन) तथा दूसरे को अपचय प्रक्रिया (कैटाबॉलिक एक्शन) कहते हैं। इसी को दार्शनिक भाषा में शिव एवं शक्ति भी कहा जाता है। शिव क्षेत्र सहस्रार तथा शक्ति क्षेत्र मूलाधार कहा गया है। इन्हें परस्पर जोड़ने वाली, परिभ्रमणशील शक्ति का नाम कुण्डलिनी है।

सहस्रार और मूलाधार का क्षेत्र विभाजन करते हुए मनीषियों ने मूलाधार से लेकर कण्ठ पर्यन्त का क्षेत्र एवं चक्र संस्थान 'शक्ति' भाग बताया है और कण्ठ से ऊपर का स्थान 'शिव' देश कहा है।

मूलाद्धाराद्धि षट्चक्रं शक्तिस्थानमूदीरतम्।
कण्ठादुपरि मूर्द्धान्तं शाम्भव स्थानमुच्यते॥

–वराहश्रुति

मूलाधार से कण्ठपर्यन्त शक्ति का स्थान है। कण्ठ के ऊपर से मस्तक तक शाम्भव स्थान है। यह बात पहले कही जा चुकी है।

मूलाधार से सहस्रार तक की, काम बीज से ब्रह्म बीज तक की यात्रा को ही महायात्रा कहते हैं। योगी इसी मार्ग को पूरा करते हुए परम लक्ष्य तक पहुँचते हैं। जीव सत्ता–प्राण शक्ति का निवास जननेन्द्रिय मूल में है। प्राण उसी भूमि में रहने वाले रज वीर्य से उत्पन्न होते हैं। ब्रह्म सत्ता का निवास ब्रह्मलोक में–ब्रह्मरन्ध्र में माना गया है। यह द्युलोक–देवलोक स्वर्गलोक है आत्मज्ञान का ब्रह्मज्ञान का सूर्य इसी लोक में निवास करता है। कमल पुष्प पर विराजमान ब्रह्मा जी–कैलाशवासी शिव और शेषशायी विष्णु का निवास जिस मस्तिष्क मध्य केन्द्र में है–उसी नाभिक (न्यूक्लियस) को सहस्रार कहते हैं। आत्म साक्षात्कार की प्रक्रिया यहीं सम्पन्न होती है। पतन के–स्खलन के गर्त में पड़ी क्षत–विक्षत आत्म सत्ता अब ऊर्ध्वगामी होती है तो उसका लक्ष्य इसी ब्रह्मलोक तक, सूर्यलोक तक पहुँचना होता है। योगाभ्यास का परम पुरुषार्थ इसी निमित्त किया जाता है। कुण्डलिनी जागरण का उद्देश्य यही है।

आत्मोत्कर्ष की महायात्रा जिस राजमार्ग से होती है उसे मेरुदण्ड या सुषुम्ना कहते हैं। उसका एक सिरा मस्तिष्क का–दूसरा काम केन्द्र का स्पर्श करता है। कुण्डलिनी साधना की समस्त गतिविधियाँ प्रायः इसी क्षेत्र को परिष्कृत एवं सरल बनाने के लिए हैं। इड़ा पिंगला के प्राण प्रवाह इसी क्षेत्र को दुहराने के लिए नियोजित किये जाते हैं। साबुन पानी में कपड़े धोये जाते हैं। झाड़ू झाड़न से कमरे की सफाई होती है। इड़ा पिंगला के माध्यम से किये जाने वाले नाड़ी शोधन प्राणायाम मेरुदण्ड का संशोधन करने के लिए हैं। इन दोनों ऋणात्मक और धनात्मक शक्तियों का उपयोग सृजनात्मक उद्देश्य से भी होता है।

इमारतें बनाने वाले कारीगर कुछ समय नींव खोद कर गड्ढा करते हैं, इसके बाद वे ही दीवार चुनने के काम में लग जाते हैं। इसी प्रकार इड़ा पिंगला संशोधन और सृजन का दुहरा काम करते हैं। जो आवश्यक है उसे विकसित करने में वे कुशल माली की भूमिका निभाते हैं। यों आरम्भ में जमीन जोतने जैसा ध्वंसात्मक कार्य भी उन्हीं को करना पड़ता है पर यह उत्खनन निश्चित रूप से उन्नयन के लिए होता है। माली भूमि खोदने, खर-पतवार उखाड़ने, पौधे की काट-छांट करने का काम करते समय ध्वंस में संलग्न प्रतीत होता है, पर खाद पानी देने, रखवाली करने में उसकी उदार सृजनशीलता का भी उपयोग होता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इड़ा पिंगला के माध्यम से सुषुम्ना क्षेत्र में काम करने वाली प्राण विद्युत का विशिष्ट संचार क्रम प्रस्तुत करके कुण्डलिनी जागरण की साधना सम्पन्न की जाती है ।

मेरुदण्ड को राजमार्ग–महामार्ग कहते हैं । इसे धरती से स्वर्ग पहुँचने का देवयान मार्ग कहा गया है । इस यात्रा के मध्य में सात लोक हैं । इस्लाम धर्म के सातवें आसमान पर खुदा का निवास माना गया है । ईसाई धर्म में भी इससे मिलती–जुलती मान्यता है । हिन्दू धर्म के भूः भुवः स्वः जनः तपः महः सत्यम् यह सात लोक प्रसिद्ध हैं । आत्मा और परमात्मा के मध्य इन्हें विराम स्थल माना गया है । लम्बी मंजिलें पूरा करने के लिए लगातार ही नहीं चला जाता । बीच–बीच में विराम भी लेने होते हैं । रेलगाड़ी गन्तव्य स्थान तक बीच के स्टेशनों पर रुकती–कोयला, पानी लेती चलती है । इन विराम स्थलों को 'चक्र' कहा गया है । चक्रों की व्याख्या दो रूपों में होती है, एक अवरोध के रूप में दूसरे अनुदान के रूप में । महाभारत में चक्रव्यूह की कथा है । अभिमन्यु उसमें फँस गया था । वेधन कला की समुचित जानकारी न होने से वह मारा गया था । चक्रव्यूह में सात परकोटे होते हैं । इस अलंकारिक प्रसंग को आत्मा का सात चक्रों में फँसा होना कह सकते हैं । भौतिक आकर्षणों की, भ्रान्तियों की विकृतियों की चहारदीवारी के रूप में भी चक्रों की गणना होती है । इसलिए उसके वेधन का विधान बताया गया है । रामचन्द्रजी ने बाली को मार सकने की अपने क्षमता का प्रमाण सुग्रीव को दिया था । उन्होंने सात ताड़ वृक्षों को एक वाण से वेधकर दिखाया था । इसे चक्रवेधन की उपमा दी जा सकती है । भागवत माहात्म्य में धुन्धकारी प्रेत के बाँस की सात गाँठें फोड़ते हुए सातवें दिन कथा प्रभाव से देव देहधारी होने की कथा है । इसे चक्रवेधन का संकेत समझा जा सकता है ।

चक्रों को अनुदान केन्द्र इसलिए कहा जाता है कि उनके अन्तराल में दिव्य सम्पदाएँ भरी पड़ी हैं । उन्हें ईश्वर ने चक्रों की तिजोरियों में इसलिए बन्द करके छोड़ा है कि प्रौढ़ता, पात्रता की स्थिति आने पर ही उन्हें खोलने उपयोग करने का अवसर मिले । कुपात्रता अयोग्यता की स्थिति में बहुमूल्य साधन मिलने पर तो अनर्थ ही होता है । कुसंस्कारी सन्तानें उत्तराधिकार में मिली बहुमूल्य सम्पदा से दुर्व्यसन अपनाती और विनाश पथ पर तेजी से बढ़ती हैं ।छोटे बच्चों को बहुमूल्य जेबर पहना देने से उनकी जान जोखिम का खतरा उत्पन्न हो जाता है । धातुओं की खदानें जमीन की ऊपरी परत पर बिखरी नहीं होतीं, उन्हें प्राप्त करने के लिए गहरी खुदाई करनी पड़ती है । मोती प्राप्त करने के लिए समुद्र में गहरे गोते लगाने पड़ते हैं । यह अवरोध इसलिए है कि साहसी एवं सुयोग्य सत्पात्रों को ही विभूतियों को वैभव मिल सके । मेरुदण्ड में अवस्थित चक्रों को ऐसी सिद्धियों का केन्द्र माना गया है जिनकी भौतिक और आत्मिक प्रगति के लिए नितान्त आवश्यकता रहती है ।

चक्रवेधन, चक्रशोधन, चक्र परिष्कार, चक्र जागरण आदि नामों से बताये गये विवेचनों एवं विधानों में कहा गया है कि इस प्रयास से अदक्षताओं एवं विकृतियों का निराकरण होता है । जो उपयुक्त है उसकी अभिवृद्धि का पथ प्रशस्त होता है । सत्प्रवृत्तियों के अभिवर्धन, दुष्प्रवृत्तियों के दमन में यह चक्रवेधन विधान कितना उपयोगी एवं सहायक है इसकी चर्चा करते हुए शारदा तिलक ग्रन्थ के टीकाकार ने 'आत्म विवेक' नामक किसी साधना ग्रन्थ का उद्धरण प्रस्तुत किया है । कहा गया है कि–

गुदलिङ्गान्तरे चक्रमाधारं तु चतुर्दलम् ।
परमः सहजस्तद्वदानन्दो वीरपूर्वकः ॥
योगानन्दश्च तस्य स्यादीशानादिदले फलम् ।
स्वाधिष्ठानं लिंगमूले षट्पत्रञ्च क्रमस्य तु ॥
पूर्वादिषु दलेष्वाहुः फलान्येतान्यनुक्रमात् ।
प्रश्रयः क्रूरता गर्वो नाशो मूर्च्छा ततः परम् ॥
अवज्ञा स्यादविश्वासो जीवसय चरतो ध्रुवम् ।
नाभौ दशदलं चक्रं मणिपूरकसंज्ञकम् ॥
सुषुप्तिरत्र तृष्णा स्यादीर्ष्या पिशुनता तथा ।
लज्जा भयं घृणा मोहः कषायोऽथ विषादिता ॥
हृदयेऽनाहतं चक्रं दलैर्द्वादशभिर्युतम् ।
लौल्यं प्रनाशः कपटं वितर्कोऽप्यनुतापिता ॥
आशा प्रकाशश्चिन्ता च समीहा ममता ततः ।
क्रमेण दम्भोवैकल्यं विवेकोऽहंक्वतिस्तथा ॥
फलान्येतानि पूर्वादिदलस्थस्यात्मनो जगुः ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कण्ठेऽस्ति भारतीस्थानं विशुद्धिः षोडशच्छदम् ॥
तत्र प्रणव उद्गीथो हुँ फट् वषट् स्वधा तथा ।
स्वाहा नमोऽमृतं सप्त स्वराः षड्जादयो विष ॥
इति पूर्वादिपत्रस्थे फलान्यात्मनि षोडश ॥

(१) गुदा और लिंग के बीच चार पंखुरियों वाला 'आधार चक्र' है । वहाँ वीरता और आनन्द भाव का निवास है । (२) इसके बाद स्वाधिष्ठान चक्र लिंग मूल में है । उसकी छः पंखुरियाँ हैं । इसके जाग्रत होने पर क्रूरता, गर्व, आलस्य, प्रमाद, अवज्ञा, अविश्वास आदि दुर्गुणों का नाश होता है । (३) नाभि में दस दल वाला मणिपूर चक्र है । यह प्रसुप्त पड़ा रहे तो तृष्णा, ईर्ष्या, चुगली, लज्जा, भय, घृणा, मोह, आदि कषाय–कल्मष मन में जड़ जमाये पड़े रहते हैं । (४) हृदय स्थान में अनाहत चक्र है । यह बारह पंखुरियों वाला है । यह सोता रहे तो लिप्सा, कपट, तोड़–फोड़, कुतर्क, चिन्ता, मोह, दम्भ, अविवेक अहंकार से भरा रहेगा । जागरण होने पर यह सब दुर्गुण हट जायेंगे । (५) कण्ठ में विशुद्धाख्य चक्र यह सरस्वती का स्थान है । यह सोलह पंखुरियों वाला है । यहाँ सोलह कलाएँ सोलह विभूतियाँ विद्यमान हैं । (६) भ्रूमध्य में आज्ञा चक्र है, यहाँ 'ॐ' उद्गीय, हूँ, फट, विषद, स्वधा स्वाहा, अमृत, सप्त स्वर आदि का निवास है । इस आज्ञा चक्र का जागरण होने से यह सभी शक्तियाँ जाग पड़ती हैं ।

श्री हडसन ने अपनी पुस्तक 'साइन्स आव सीयर-शिप' में अपना मत व्यक्त किया है । प्रत्यक्ष शरीर में चक्रों की उपस्थिति का परिचय तन्तु गुच्छकों के रूप में देखा जा सकता है । अन्तःदर्शियों का अनुभव इन्हें सूक्ष्म शरीर में उपस्थिति दिव्य शक्तियों का केन्द्र संस्थान बताता है । कुण्डलिनी के बारे में उनके पर्यवेक्षण का निष्कर्ष है कि–वह एक व्यापक चेतना शक्ति है । मनुष्य के मूलाधार चक्र में उसका सम्पर्क तन्तु है जो व्यक्ति सत्ता को विश्व सत्ता के साथ जोड़ता है । कुण्डलिनी जागरण से चक्र संस्थानों में जागृति उत्पन्न होती है । उसके फलस्वरूप पारभौतिक (सुपर फिजीकल) और भौतिक (फिजीकल) के बीच आदान–प्रदान का द्वार खुलता है । यही है वह स्थिति जिसके सहारे मानवी सत्ता में अन्तर्हित दिव्य शक्तियों का जागरण सम्भव हो सकता है ।

चक्रों की जागृति मनुष्य के गुण-कर्म–स्वभाव को प्रभावित करती है । स्वाधिष्ठान की जागृति से मनुष्य अपने में नव शक्ति का संचार हुआ अनुभव करता है उसे बलिष्ठता बढ़ती प्रतीत होती है । श्रम में उत्साह और गति में स्फूर्ति की अभिवृद्धि का आभास मिलता है । मणिपूर चक्र से साहस और उत्साह की मात्रा बढ़ जाती है । संकल्प दृढ़ होते हैं और पराक्रम करने के हौसले उठते हैं । मनोविकार स्वयंमेव घटते हैं और परमार्थ प्रयोजनों में अपेक्षाकृत अधिक रस मिलने लगता है । अनाहत चक्र की महिमा हिन्दुओं से भी अधिक ईसाई धर्म के योगी बताते हैं । हृदय स्थान पर गुलाब के फूल की भावना करते हैं और उसे महाप्रभु ईसा का प्रतीक 'आईचीन' कनक कमल मानते हैं । भारतीय योगियों की दृष्टि से यह भाव संस्थान है । कलात्मक उमंगें–रसानुभूति एवं कोमल सम्वेदनाओं का उत्पादक स्रोत यही है । बुद्धि की वह परत जिसे विवेकशीलता कहते हैं । आत्मीयता का विस्तार सहानुभूति एवं उदार सेवा सहकारिता के तत्व इस अनाहत चक्र से ही उद्भूत होते हैं । कंठ में विशुद्ध चक्र है । इसमें बहिरंग स्वच्छता और अन्तरंग पवित्रता के तत्व रहते हैं । दोष व दुर्गुणों के निराकरण की प्रेरणा और तदनुरूप संघर्ष क्षमता यहीं से उत्पन्न होती है । शरीरशास्त्र में थाइराइड ग्रन्थि और उससे स्रवित होने वाले हार्मोनों के सन्तुलन–असन्तुलन से उत्पन्न लाभ–हानि की चर्चा की जाती है । अध्यात्मशास्त्र द्वारा प्रतिपादित विशुद्ध चक्र का स्थान तो यहीं है, पर वह होता सूक्ष्म शरीर में है । उसमें अतीन्द्रिय क्षमताओं के आधार विद्यमान हैं । लघु मस्तिष्क सिर के पिछले भाग में है । अचेतन की विशिष्ट क्षमताएँ उसी स्थान पर मानी जाती हैं । मेरुदण्ड में कंठ की सीध पर अवस्थित विशुद्ध चक्र इस चित्त संस्थान को प्रभावित करता है । तदनुसार चेतना की अति महत्वपूर्ण परतों पर नियन्त्रण करने और विकसित एवं परिष्कृत कर सकने के सूत्र हाथ में आ जाते हैं । नादयोग के माध्यम से दिव्य श्रवण जैसी कितनी ही परोक्षानुभूतियाँ विकसित होने लगती हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सहस्रार मस्तिष्क के मध्य भाग में है । शरीर संस्चना में इस स्थान पर अनेक महत्वपूर्ण ग्रन्थियों से सम्बन्ध रैटिकुलर एक्टिवेटिंग सिस्टम का अस्तित्व है । वहाँ से जैवीय विद्युत का स्वयंभू प्रवाह उभरता है । वे धारायें मस्तिष्क के अगणित केन्द्रों की ओर दौड़ती हैं । इसमें से छोटी–छोटी चिनगरियाँ तरंगों के रूप में उड़ती रहती हैं । उनकी संख्या की सही गणना तो नहीं हो सकती, पर वे हैं हजारों । इसलिये हजार या हजारों का उद्बोधक 'सहस्र' शब्द प्रयोग में लाया जाता है । सहस्रार चक्र का नामकरण इसी आधार पर हुआ है सहस्र फन वाले शेषनाग की परिकल्पना का यही आधार है । यह संस्थान ब्रह्माण्डीय चेतना के साथ सम्पर्क साधने में अग्रणी है इसलिये उसे ब्रह्म-रन्ध्र या ब्रह्मलोक भी कहते हैं । रेडियो एरियल की तरह हिंदू धर्मानुयायी इस स्थान पर शिखा रखाते और उसे सिर रूपी दुर्ग पर आत्म सिद्धान्तों को स्वीकृत किये जाने की विजय पताका बताते हैं । आज्ञा चक्र को सहस्रार का उत्पादन केन्द्र कह सकते हैं ।

सभी चक्र सुषुम्ना नाड़ी के अन्दर स्थित हैं तो भी वे समूचे नाड़ी मण्डल को प्रभावित करते हैं । स्वचालित और ऐच्छिक दोनों ही संचार प्रणालियों पर इनका प्रभाव पड़ता है ।अस्तु शरीर संस्थान के अवयवों को चक्रों द्वारा निर्देश पहुँचाये जा सकते हैं । साधारणतया यह कार्य अचेतन मन करता है और उस पर सचेतन मस्तिष्क का कोई बस नहीं चलता है । रोकने की इच्छा करने पर भी रक्त संचार रुकता नहीं और तेज करने की इच्छा होने पर भी उसमें सफलता नहीं मिलती । अचेतन बड़ा दुराग्रही है सचेतन की बात सुनने की उसे फुर्सत नहीं । उसकी मन मर्जी ही चलती है ऐसी दशा में मनुष्य हाथ-पैर चलाने जैसे छोटे–मोटे काम ही इच्छानुसार कर पाता है । शरीर की अनैच्छिक क्रिया पद्धति के सम्बन्ध में वह लाचार बना रहता है । इसी प्रकार अपनी आदत, प्रकृति, रुचि, दिशा को बदलने के मन्सूबे भी एक कोने पर रखे रह जाते हैं । ढर्रा अपने क्रम से चलता रहता है । ऐसी दशा में व्यक्तित्व को परिष्कृत करने वाली और शरीर तथा मनः संस्थान में अभीष्ट परिवर्तन करने वाली आकांक्षा प्रायः अपूर्ण एव निष्फल बनी रहती है । चक्र संस्थान को यदि जाग्रत तथा नियन्त्रित किया जा सके तो आत्म जगत् पर अपना अधिकार हो जाता है । यह आत्म विजय अपने ढंग की अद्भुत सफलता है । इसका महत्व तत्वदर्शियों ने विश्व विजय से भी अधिक महत्वपूर्ण बताया है । विश्व विजय कर लेने पर दूरवर्ती क्षेत्रों से समुचित लाभ उठाना सम्भव नहीं हो सकता, उसकी सम्पदा का उपभोग, उपयोग कर सकने की अपने में सामर्थ्य भी कहाँ है । किन्तु आत्म विजय के सम्बन्ध में ऐसी बात नहीं है । उसका पूरा–पूरा लाभ स्वयं ही उठाया जा सकता है । उस आधार पर बहिरंग और अन्तरंग क्षेत्रों की सम्पदा का प्रचुर लाभ अपने आप को मिल सकता है ।

मेरुदण्ड को शरीर-शास्त्री स्पाइनल कालम कहते हैं । स्पाइनल एक्सिस एवं वर्टीब्रल कॉलम–शब्द भी उसी के लिए प्रयुक्त होते हैं । मोटे तौर पर यह ३३ अस्थि घटकों से मिलकर बनी हुई एक पोली दण्डी भर है । इन हड्डियों को पृष्ठ वंश–कशेरुका या 'वर्टिब्री' कहते हैं । स्थिति के अनुरूप इनका पाँच भागों में विभाजन किया जा सकता है ।

(१) ग्रीवा प्रदेश–सर्वाइकल रीजन–७ अस्थि खण्ड, (२) वक्ष प्रदेश–डार्सल रीजन–१२ अस्थि खण्ड, (३) कटि प्रदेश–लम्बर रीजन–५ अस्थि खण्ड, (४) त्रिक या वस्तिगह्र–सेक्रल रीजन–५ अस्थि खण्ड, (५) चेचु प्रदेश–काक्सीजियल रीजन–४ अस्थि खण्ड ।

मेरुदण्ड पोला है । उससे अस्थि खंडों के बीच में होता हुआ यह छिद्र नीचे से ऊपर तक चला गया है । इसी के भीतर सुषुम्ना नाड़ी विद्यमान है । मेरुदण्ड के उपर्युक्त पाँच प्रदेश सुषुम्ना में अवस्थित पाँच चक्रों से सम्बन्धित हैं । (१) मूलाधार चक्र–चेचु प्रदेश (२) स्वाधिष्ठान–त्रिक प्रदेश (३) मणिपूर–कटि प्रदेश (४) अनाहत–वक्ष प्रदेश (५) विशुद्धि–ग्रीवा प्रदेश छठे आज्ञा चक्र का स्थान मेरुदण्ड में नहीं आता । सहस्रार का सम्बन्ध भी रीढ़ की हड्डी से सीधा नहीं है । इतने पर भी सूक्ष्म शरीर का सुषुम्ना मेरुदण्ड पाँच रीढ़ वाले और दो बिना रीढ़ वाले सभी सातों चक्रों को एक ही श्रृंखला में बाँधे हुए है । सूक्ष्म शरीर की सुषुम्ना में यह सातों चक्र जंजीर की कड़ियों की तरह परस्पर पूरी तरह सम्बद्ध हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यहाँ यह तथ्य भली–भाँति स्मरण रखा जाना चाहिए कि शरीर विज्ञान के अन्तर्गत वर्णित प्लेक्सस, नाड़ी गुच्छक और चक्र एक नहीं हैं यद्यपि उनके साथ पारस्परिक तारतम्य जोड़ा जा सकता है। यों इन गुच्छकों की भी शरीर में विशेष स्थिति है और उनकी कायिक और मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाली प्रतिक्रिया होती रहती है ।

शरीरशास्त्र के अनुसार प्रमुख नाड़ी गुच्छकों (प्लेक्ससेज) में १३ प्रधान हैं । उनके नाम हैं (१) हिपेटिक (२) सर्वाइकल (३) ब्राँकियल (४) काक्सीजियल (५) लम्बर (६) सेक्रल (७) कार्डियक (८) इपिगेस्ट्रिक (९) इसोफैजियल (१०) फेरेन्जियल (११) पलमोनरी (१२) लिंगुअल (१३) प्रोस्टेटिक ।

इन गुच्छकों में शरीर यात्रा में उपयोगी भूमिका सम्पन्न करते रहने के अतिरिक्त कुछ विलक्षण विशेषतायें भी पाई जाती हैं । उनसे यह प्रतीत होता है कि उनके साथ कुछ रहस्यमय तथ्य भी जुड़े हुए हैं । यह सूक्ष्म शरीर के दिव्य चक्रों के सान्निध्य से उत्पन्न होने वाला प्रभाव ही कहा जा सकता है ।

'चक्र' शक्ति संचरण के एक व्यवस्थित, सुनिश्चित क्रम को कहते हैं । वैज्ञानिक क्षेत्र में विद्युत, ध्वनि, प्रकाश सभी रूपों में शक्ति के संचार क्रम की व्याख्या चक्रों (साइकिल्स) के माध्यम से ही की जाती है । इन सभी रूपों में शक्ति का संचार, तरंगों के माध्यम से होता है । एक पूरी तरंग बनने के क्रम को एक चक्र (साइकिल) कहते हैं । एक के बाद एक तरंग, एक के बाद एक चक्र (साइकिल) बनने का क्रम चलता रहता है और शक्ति का संचरण होता रहता है । शक्ति की प्रकृति (नेचर) का निर्धारण इन्हीं चक्रों के क्रम के आधार पर किया जाता है । औद्योगिक क्षेत्र में प्रयुक्त विद्युत के लिये अन्तर्राष्ट्रीय नियम है कि वह ५० साइकिल्स प्रति सेकन्ड के चक्र क्रम की होनी चाहिये । विद्युत की मोटरों एवं अन्य यन्त्रों को उसी प्रकृति की बिजली के अनुरूप बनाया जाता है। इसीलिए उन पर हार्सपावर, वोल्टेज आदि के साथ ५० साइकिल्स भी लिखा रहता है. । अस्तु शक्ति संचरण के साथ 'चक्र' प्रक्रिया जुड़ी ही रहती है । वह चाहे स्थूल विद्युत शक्ति हो अथवा सूक्ष्म जैवीय विद्युत शक्ति ।

नदी प्रवाह में कभी–कभी कहीं भँवर पड़ जाते हैं । उनकी शक्ति अद्भुत होती है । उनमें फँसकर नौकाएँ अपना सन्तुलन खो बैठती हैं और एक ही झटके में उल्टी डूबती दृष्टिगोचर होती हैं । सामान्य नदी प्रवाह की तुलना में इन भँवरों की प्रचण्डता सैकड़ों गुनी अधिक होती है । शरीरगत विद्युत प्रवाह को एक बहती हुई नदी के सदृश माना जा सकता है और उसमें जहाँ-तहाँ पाये जाने वाले चक्रों की 'भँवरों' से तुलना की जा सकती है ।

गर्मी की ऋतु में जब वायुमण्डल गरम हो जाता है तो जहाँ–तहाँ छोटे–बड़े 'चक्रवात'–साइक्लोन उठने लगते हैं । वे नदी के भँवरों की तरह ही गरम हवा के कारण आकाश में उड़ते हैं । उनकी शक्ति देखते ही बनती है । पेड़ों को, छत्तों को, छप्परों को उखाड़ते-उछालते वे बबन्डर की तरह जिधर-तिधर भूत–बेताल की तरह नाचते–फिरते हैं । साधारण पवन प्रवाह की तुलना में इन टारनेडो (चक्रवातों) की शक्ति भी सैकड़ों गुनी अधिक होती है ।

शरीरगत विद्युत शक्ति का सामान्य प्रवाह यों सन्तुलित ही रहता है पर कहीं–कहीं उसमें उग्रता एवं वक्रता भी देखी जाती है । हवा कभी–कभी बाँस आदि के झुरमटों से टकरा कर कई तरह की विचित्र आवाजें उत्पन्न करती है । रेलगाड़ी, मोटर और द्रुतगामी वाहनों के पीछे दौड़ने वाली हवा को भी अन्धड़ की चाल चलते देखा जा सकता है । नदी का जल कई जगह ऊपर से नीचे गिरता है–चट्टानों से टकराता है तो वहाँ प्रवाह में व्यतिक्रम उछाल, गर्जन–तर्जन की भयंकरता दृष्टिगोचर होती है । शरीरगत सूक्ष्म चक्रों की विशेष स्थिति भी इसी प्रकार की है । यों नाड़ी गुच्छकों–प्लेक्सस में भी विद्युत संचार और रक्त प्रवाह के गति क्रम में कुछ विशेषता पाई जाती है । किन्तु सूक्ष्म शरीर में तो वह व्यतिक्रम कहीं अधिक उग्र दिखाई पड़ता है । पवन प्रवाह पर नियन्त्रण करने के लिए नावों पर पतवार बाँधे जाते हैं, उनके सहारे नाव की दिशा और गति में अभीष्ट फेर कर लिया जाता है । पनचक्की के पंखों को गति देकर आटा पीसने, जलकल चलाने आदि काम लिये जाते हैं । जलप्रपात जहाँ ऊपर से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नीचे गिरता है वहाँ उस प्रपात तीव्रता के वेग को बिजली बनाने जैसे कार्यों के लिए प्रयुक्त किया जाता है । समुद्री ज्वार भाटों से भी बिजली बनाने का काम लिया जा रहा है । ठीक इसी प्रकार शरीर के विद्युत प्रवाह में जहाँ चक्र बनते हैं वहाँ उत्पन्न उग्रता को कितने ही अध्यात्म प्रयोजनों में काम लाया जाता है ।

चक्र कितने हैं ? इनकी संख्या निर्धारण करने में मनीषियों का मतभेद स्पष्ट है । विलय तन्त्र में इड़ा और पिंगला की विद्युत गति से उत्पन्न उलझन गुच्छकों को चक्रों की संज्ञा दी गई है और उनकी संख्या पाँच बताई गई है । मेरुदण्ड में वे पाँच की ही संख्या में हैं । मस्तिष्क अग्र भाग में अवस्थित आज्ञा चक्र को भी उनमें सम्मिलित कर लेने पर वे छः हो जाते हैं और हठयोग की गणना के अनुसार छः की संख्या पूरी हो जाती है ।

सातवाँ सहस्रार है । इसे चक्रों की बिरादरी में जोड़ने न जोड़ने पर विवाद है । सहस्रार नाभि है । उसे इसी बिरादरी में सम्मिलित रखने न रखने के दोनों ही पक्षों के साथ तर्क हैं । इसलिये जहाँ छः की गणना है वहाँ सात का भी उल्लेख बहुत स्थानों पर हुआ है ।

बात इतने पर ही समाप्त नहीं हो जाती । चक्रों की संख्या सूक्ष्म शरीर में बहुत बड़ी है । इन्हें १०८ तक गिना गया है । छोटे होने के कारण उन्हें उपत्यिका कहा गया है और जपने की माला में उतने ही दाने रखे जाने की परम्परा चली है । इनमें से कितने ही लघु चक्र ऐसे हैं जिन्हें जाग्रत करने वालों ने प्रख्यात चक्रों से भी अधिक शक्तिशाली पाया है । चन्द्रमा की गणना ग्रहों में नहीं उपग्रहों में होती है फिर भी अपनी पृथ्वी के लिए पूर्ण समझे जाने वाले ग्रहों में कम नहीं अधिक ही उपयोगिता है ।

तन्त्र ग्रन्थों में ऐसे चक्रों का वर्णन है जिनके नाम और स्थान षट्चक्रों से भिन्न हैं । जहाँ उनकी संख्या पाँच बताई गई हैं वहाँ पाँच कोशों का नहीं वरन् भिन्न आकृति-प्रकृति के अतिरिक्त चक्रों का वर्णन है । (१) त्रिकूट (२) श्रीहाट (३) गोल्लाट (४) औट पीठ (५) भ्रमर गुफा इनके नाम हैं । इनकी व्याख्या पाँच प्राण एवं पाँच तत्वों की विशिष्ट शक्तियों के रूप में की गई है । इनके स्थान एवं स्वरूप हठयोग में वर्णित षट्चक्रों से भिन्न हैं ।

इसी तरह कहीं-कहीं तन्त्र ग्रन्थों में उनकी संख्या छः से अधिक कही गई है-

नवचक्रं कलाधारं त्रिलक्ष्यं व्योम पंचकम् ।
सम्यगेतन्न जानति स योगी नाम धारकः ॥

-सिद्ध सिद्धान्त पद्धति

नवचक्र, त्रिलक्षं, सोलह आधार, पाँच आकाश वाले सूक्ष्म शरीर को जो जानता है उसी को योग को योग में सिद्धि मिलती है ।

अष्टाचक्रा नवद्वारा देवानां पूरयोध्या ।
तस्यां हिरण्मयः कोशःस्वर्गो ज्योतिषावृतः ॥

-अथर्ववेद

आठ चक्र, नव द्वार वाली यह अवोह या नगरी, स्वर्ण कोश और स्वर्गीय ज्योति से आवृत्त है ।

शक्ति सम्मोहन तन्त्र में उनकी संख्या ६ मानी गई है । कुण्डलिनी को 'नव चक्रात्मिका देवी' कहा गया है । नौ चक्र इस प्रकार गिनाये गये हैं (१) आनन्द चक्र (२) सिद्धि चक्र (३) आरोग्य चक्र (४) रक्षा चक्र (५) सर्वार्थ चक्र (६) सौभाग्य चक्र (७) संशोक्षण चक्र (८) शाप चक्र (९) मोहन चक्र । यह नामकरण उनकी विशेषताओं के आधार पर किया गया है । यह कहाँ है, इसकी चर्चा में मात्र तीन को षट्चक्रों की तरह बताया गया है और शेष अन्यान्य स्थानों पर अवस्थित बताये गये हैं ।

नौ के वर्णन में भी नाम और स्थानों की भिन्नता मिलती है । एक स्थान पर उनके नाम इस प्रकार गिनाये गये हैं । (१) ब्रह्म चक्र (२) स्वाधिष्ठान चक्र (३) नाभि चक्र (४) हृदय चक्र (५) कण्ठ चक्र (६) तालु चक्र (७) भूचक्र (८) निर्वाण चक्र (९) आकाश चक्र बताये गये हैं । यह उल्लेख सिद्ध सिद्धान्त पद्धति में विस्तारपूर्वक मिलता है ।

संख्या जो भी मानी जाये उन सब का एक समन्वय शक्ति पुञ्ज लोगोज (**Logos**) भी है जिसका स्थूल सूर्य के समान ही किन्तु अपने अलग ढंग की रश्मियाँ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

निकलती हैं । सूर्य किरणों में सात रंग अथवा ऐसी विशेषतायें होती हैं जिनका स्वरूप, विस्तार और कार्यक्षेत्र सीमित है । पर इस आत्मतत्व के सूर्य का प्रभाव और विस्तार बहुत व्यापक है । वह प्रकृति के प्रत्येक अणु को नियन्त्रित एवं गतिशील रखता है साथ ही चेतन संसार की विधि व्यवस्था को सँभालता सँजोता है । इसे पाश्चात्य तत्व वेत्ता सन्स आफ फोतह (Sons of Fotah) कहते हैं कि विश्वव्यापी शक्तियों का मानवीकरण इसी केन्द्र संस्थान द्वारा हो सका है ।

सामान्य शक्ति धाराओं में प्रधान गिनी जाने वाली (१) गति (२) शब्द (३) ऊष्मा (४) प्रकाश (५) संयोग (Cohesion) (६) विद्युत (७) चुम्बक यह सात हैं । इन्हें सात चक्रों का प्रतीक ही मानना चाहिए ।

कुण्डलिनी शक्ति को कई विज्ञानवेत्ता विद्युत द्रव पदार्थ (Electric Fluid) या नाड़ी शक्ति कहते हैं ।

इस निखिल विश्व ब्रह्माण्ड में संव्याप्त परमात्मा की छः चेतन शक्तियों का अनुभव हमें होता है । यों शक्ति पुञ्ज परब्रह्म की अगणित शक्ति धाराओं का पता पा सकना मनुष्य की सीमित बुद्धि के लिए असम्भव है । फिर भी हमारे दैनिक जीवन में जिनका प्रत्यक्ष सम्पर्क संयोग रहता है उनमें प्रमुख यह हैं–(१) परा शक्ति (२) ज्ञान शक्ति (३) इच्छा शक्ति (४) क्रिया शक्ति (५) कुण्डलिनी शक्ति (६) मातृका शक्ति (७) गुह्य शक्ति । इन सबकी सम्मिलित शक्ति पुञ्ज ईश्वरीय प्रकाश अथवा सूक्ष्म प्रकाश (Astral light) कह सकते हैं । यह सातवीं शक्ति है कोई चाहे तो इस शक्ति पुंज को उपर्युक्त छः शक्तियों का उद्गम भी कह सकता है । इन सबको हम चैतन्य सत्ताएँ कह सकते हैं । उसे पवित्र अग्नि (Secred fire) के रूप में भी कई जगह वर्णित किया गया है और कहा गया है उसमें से आग ऊष्मा तो नहीं पर प्रकाश किरणें निकलती हैं और वे शरीर में विद्यमान ग्रन्थियों ग्लैण्ड्स, केन्द्रों (Centres) और गुच्छकों को आसाधारण रूप से प्रभावित करती हैं । इससे मात्र शरीर या मस्तिष्क को ही बल नहीं मिलता वरन् समग्र व्यक्तित्व की महान सम्भावना को और अग्रसर करती हैं ।

इन सात चक्रों में अवस्थित सात उपर्युक्त शक्तियों का उल्लेख साधना ग्रन्थों में अलंकारिक रूप में हुआ है । उन्हें सात लोक, सात समुद्र, सात द्वीप, सात पर्वत, सात ऋषि आदि नामों से चित्रित किया गया है । इस चित्रण में यह संकेत है कि इन चक्रों में किन–किन स्तर के विराट् शक्ति स्रोतों के साथ सम्बन्ध है । बीज रूप से कौन महान सामर्थ्य इन चक्रों में विद्यमान है और जाग्रत होने पर उन चक्र संस्थानों के माध्यम से मनुष्य का व्यक्तित्व छोटे से कितना विराट और विशाल हो सकता है । टोकरी भर बीज से लम्बा–चौड़ा खेत हरा–भरा हो सकता है । अपने बीज भंडार में सात टोकरी भरा–सात किस्म का अनाज सुरक्षित रखा है । चक्र एक प्रकार के शीत गोदाम–कोल्डस्टोर है और इन पर ताला जड़ा हुआ है । इन सात तालों की एक ही ताली है उसका नाम है 'कुण्डलिनी' । जब उसके जागरण की साधना की जाती है तो यह ताले खुलते हैं । बीज बाहर लाया जाता है । शरीर रूपी साढ़े तीन एकड़ के खेत में वह बोया जाता है । यह छोटा खेत अपनी सुसम्पन्नता को अत्यधिक व्यापक बना देता है । पुराण कथा के अनुसार राजा बलि का राज्य तीनों लोकों में था । भगवान् ने वामन रूप में उससे साढ़े तीन कदम भूमि की भिक्षा माँगी । बलि तैयार हो गये । तीन कदम में तीन लोक और आधे कदम में बलि का शरीर नाप कर विराट् ब्रह्म ने उस सबको अपना लिया । हमारा शरीर साढ़े तीन हाथ लम्बा है । चक्रों के जागरण में यदि उसे लघु से महान्–अण्ड से विभु कर लिया जाय तो उसकी साढ़े तीन हाथ की लम्बाई–साढ़े तीन एकड़ जमीन न रहकर लोक–लोकान्तरों तक विस्तृत हो सकती है और उस उपलब्धि की याचना करने के लिए भगवान् वामन रूप धारण करके हमारे दरवाजे पर हाथ पसारे हुए उपस्थित हो सकते हैं ।

शरीर सात लोकों की शोभा–नगरी

स्वर्ग मुक्ति और परमात्मा यदि कहीं आकाश में हैं तो वह मनुष्य शरीर में भी है । 'यत्पिण्डे तत् ब्रह्माण्डे'

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ब्रह्माण्ड में जो कुछ भी है वह सब इस शरीर में है की मूल और सर्वाधिक महत्वपूर्ण वैज्ञानिक जानकारी भारतीय तत्व दर्शियों ने दी थी उसका विज्ञान और आत्म–साक्षात्कार की वैज्ञानिक साधनायें भी । वे कठिन भले ही हों किन्तु भारतीय अध्यात्म और आस्तिकता की परख का उससे बढ़िया न तो कोई उपाय है न दूसरा कोई विज्ञान ।

साधारणतः देखने में शरीर की वाह्य त्वचा और आँख, कान, नाक, मुँह, हाथ, पाँव आदि थोड़े अंग ही दिखाई देते हैं पर इसके भीतर ज्ञान–विज्ञान का, शक्ति और पदार्थ का भाण्डागार छिपा पड़ा है । पदार्थ स्थूल होने से उसकी जानकारी काफी अधिक मिल गई पर शक्ति सूक्ष्म होने से विज्ञान अभी तक उसके प्रवेश द्वार पर ही है भौतिक शक्तियों का वाह्य विश्लेषण वैज्ञानिकों ने बहुत अधिक कर लिया है पर उसका आध्यात्मिक शक्तियों से संयोग न होने के कारण उन्होंने मनुष्य शरीर चेतना की समस्यायें सुलझाने में कुछ भी योग न देकर उसे उलझा और दिया ।

मनुष्य शरीर का सूक्ष्म और शक्ति भाग नाड़ियों से प्रारम्भ होता है । शरीर विज्ञान भी मानता है कि शरीर में नाड़ियों का इतना लम्बा जाल बिछा हुआ है कि यदि उस सबको लम्बा खींचकर जोड़ दिया जाये तो विषुवत रेखा पर गाँठ लगाई जा सकती है । शिव संहिता के अनुसार शरीर में ३५०००० नाड़ियाँ हैं । त्रिशिख ब्राह्मणोपनिषद, दर्शनोपनिषद, गोरक्ष पद्धति, भूत शुद्धि तन्त्र आदि ग्रन्थों में ७२००० हजार नाड़ियों के होने का वर्णन है । प्रपंच सार में इनकी संख्या ३ लाख बताई गई है । यह समस्त नाड़ियाँ शरीर को जाल की तरह जकड़े हुये हैं । सड़कों, रेलवे लाइनों तथा सारी पृथ्वी में बिजली के तारों के अम्बार बिछे पड़े हैं । देखने में वे चुपचाप खड़े दिखाई देते हैं पर विज्ञान के विद्यार्थी जानते हैं कि बाहर से मात्र तार दिखाई देने पर भी इन तारों के अन्दर–अन्दर कहीं दिल्ली से बम्बई का कोई सन्देश जा रहा होता है तो कहीं कानपुर और कलकत्ता को जगमगाने वाली विद्युत तंरगें । अमेरिका की बेल लैबोरेटरी ने ऐसे टेलीफोन बनाये हैं जिनमें आवाज के अतिरिक्त बोलने वाले का चित्र भी टेलीविजन की तरह से दिखाई देता है अर्थात् बिजली के तारों के अन्दर प्रवाह रूप से शब्द और सन्देश ही नहीं दृश्य और शक्तियाँ भी बहती रहती हैं पर हमारी स्थूल आँखें उन्हें देख, सुन समझ नहीं पातीं उसी प्रकार शरीर के अन्दर बिछी इन नाड़ियों में चल रही सन्देश प्रणाली को भी हम देख सुन नहीं सकते क्योंकि उन्हें देखने और समझने वाली आँखें बाहर नहीं भीतर हैं । जब तक उन्हें जाग्रत न करें इन नाड़ियों के महत्व को समझना और उनके द्वारा अतीन्द्रिय शक्तियों का उद्घाटन करना सम्भव नहीं ।अन्ततः योग साधनायें ही आधार रह जाती हैं जिनके द्वारा मनुष्य शरीर की शक्तियों, विज्ञान और ईश्वरीय देन का सही उपयोग हो सकता है ।

नाड़ियों में प्रधान अलम्बुपा, कुद्दू, वरुणा, यशरिवनी पिंगला, इड़ा, मृषा, शडिखनी, सरस्वती, हस्ति जिह्वा विश्वोदरा आदि प्रमुख नड़ियाँ हैं पर उन सब में इड़ा पिंगला और इनके संयोग से बनी सुषुम्ना ही सर्वप्रमुख हैं क्योंकि शरीर के सभी आध्यात्मिक तत्व और तथ्य इन्हीं से सम्बन्धित हैं शेष सब शरीर की भौतिक रचना से सम्बद्ध होने से उतने मूल्य और महत्व की नहीं हैं ।

यह नाड़ियाँ मस्तिष्क के उस भाग को जहाँ से चोटी निकलती है कमर के उस भाग को जोड़ती हैं जहाँ मेरुदण्ड जाकर समाप्त होता है । इन दोनों स्थानों का शरीर के अन्य अंग प्रत्यंगों से भी सम्बन्ध है और उनको प्रभावित करने तथा शरीर का प्रभाव ग्रहण करने में भी इनका हाथ है तथापि मेरुदण्ड का यह भाग ही आध्यात्मिक शक्तियों का केन्द्र और सप्तलोकों का बीज लोक है । शक्तियाँ सामर्थ्य सिद्धियाँ, देवता, स्वर्ग अपवर्ग शिव, ब्रह्मा, विष्णु सब इसी मर्म में निवास करते हैं । इस शक्ति संस्थान को जाग्रत किये बिना ईश्वरीय शक्तियों का साक्षत्कार नहीं होता ।

सूर्य को सौर मण्डल में इस तरह टिकाया गया है कि वह अपने अधीनस्थ सभी ग्रह–उपग्रहों को नियमित रूप से प्रकाश व ऊर्जा बाँटता रहे कोई उससे वंचित न रहे, उसी प्रकार शरीर की आध्यात्मिक प्रक्रिया को नियन्त्रित रखने और उसका ब्रह्माण्डव्यापी तालमेल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्थापित करने के लिये सात प्रमुख केन्द्र भगवान् ने स्थापित किये हैं । ६ चक्र और सातवाँ ब्रह्म–लोक या शून्य चक्र–सातों के नाम (१) मूलाधार (२) स्वाधिष्ठान (३) मणिपूर (४) अनाहत (५) विशुद्ध (६) आज्ञा चक्र और, (७) सहस्रार । मूलाधार जो गुदा और सीवन भाग की सीध में स्थित होता है यह पृथ्वी लोक का प्रतिनिधि है और समस्त भौतिक सुख सम्पदाओं का मूल है । जिस प्रकार नीहारिकाओं में बहकर आता हुआ पदार्थ सूर्य के माध्यम से पृथ्वी तक पहुँचता है उसी प्रकार मस्तिष्कीय द्रव्य भी सुषुम्ना शीर्षक से होता हुआ मूलाधार तक आता है । पृथ्वी का अपना गुरुत्वाकर्षण अपनी उर्वरता अपने तत्व अलग हैं उसी प्रकार मूलाधार में भी पार्थिव गुण भी बीज रूप से विद्यमान हैं, इसीलिए इसे पृथ्वी लोक कहते हैं

तत्वाधारे मूले समयया लास्य परया,
शिवा (नवा) त्मानं मन्ये
–*नवरस महाताण्डव नटम* ॥

अर्थात्–मूलाधार में नृत्य करती हुई देवी (शक्ति) नवधा रसपूर्ण अर्थात् कामनाओं का नर्त्तन करने वाले शिवजी का चिन्तन करता हूँ ।

मूलाधार चक्र की सिद्धि से मनुष्यों में श्रेष्ठता आरोग्य, आनन्द चित्त, काव्य सामर्थ्य आदि का विकास होता है ।

पेडू स्थित स्वाधिष्ठान के बारे में सौन्दर्य लहरी में कहा है–

तव स्वाधिष्ठाने हुतवहमविष्टाय निरतं,
तमीडे संवर्तं जननि महतीं –तां च समयाम्।

हे जननि ! तुम्हारे स्वाधिष्ठान चक्र में अग्नि तत्व को प्रभाव में रखने वाली संवर्त अग्नि रहती है यह भुवः लोक का प्रतिनिधि चक्र है । इसके जागरण से सांसारिक मोह, अहंकार छूट जाते हैं तथा काव्य व गद्य रचना की साहित्यिक प्रतिभा का विकास होता है ।

तीसरा चक्र मणिपूर है । अग्नि तत्व की प्रधानता वाले इस चक्र को स्वःलोक या सूर्य लोक का प्रतिनिधि मानते हैं । यह नाभि स्थित है । नाभि ही खींची हुई श्वाँस से प्राणाग्नि लेकर शरीर में अग्नि और ऊष्मा बढ़ाती है । इसकी सिद्धि से संहार व पालन की तथा कुछ भी कहे सत्य हो जाने की क्षमता और प्रभुता का विकास होता है ।

चौथा चक्र अनादृत हृदय में स्थित है और महः लोक का प्रतिनिधि है । इसको शुद्ध या जाग्रत कर लेने पर इन्द्रियों पर विजय ईशत्व तथा योग सिद्धियाँ मिलती हैं । वायु तत्व की प्रधानता होने के कारण उसकी बुद्धि अत्यन्त सूक्ष्म हो जाती है । किसी के भी मन की बात जानना सम्भव हो जाता है ।

पाँचवें विशुद्धाख्य का स्थान कण्ठ, धुयें के समान आकाश तत्व वाले इस चक्र में जनः लोक प्रतिष्ठित है इसको जाग्रत कर लेने वाले त्रिकालदर्शी स्वस्थ रोगमुक्त सर्व-समर्थ तथा ज्ञानी हो जाते हैं ।

छठवाँ चक्र महत्तत्व वाला और तपः लोक का बीज स्थान है । यह नाक की जड़ तथा दोनों भौंहों के बीच द्विदल की बनावट वाला चक्र है । इसको जाग्रत कर लेने से मनुष्य सर्वदर्शी, मिताहारी, वाक् सिद्धि आदि सामर्थ्य पाता है । इसे तीसरी आँख भी कहते हैं । इससे ही योगी वाह्याभ्यन्तर सब कुछ देखने में समर्थ होते हैं । फ्रांस के टूरकुइंग नगर में मशहूर क्लेमेण्ट नाम की एक लड़की १७९३ में जन्मी थी । उसके माथे पर केवल एक ही आँख थी उसमें यह सारे गुण थे । वह १५ वर्ष तक स्वस्थ जीवित रही और एक आश्चर्य के रूप में भारतीय योग विद्या का प्रमाण प्रस्तुत करती रही ।

सातवें सहस्रदल कमल को ब्रह्म का निवास स्थान कहा जाता है । इच्छा शक्ति या मनुष्य जीवन की नाना प्रकार की इच्छायें इस सत्य लोक में लय हो जाने पर ब्राह्मी-भूत हो जाती हैं । चेतना केवल मात्र ब्रह्म हो जाती है । सहस्रार सिद्ध गौतम बुद्ध थे, राम और कृष्ण थे । वह इसी चक्र की सिद्धि के कारण शरीर में ही भगवान् हो गये थे । सहस्रार सिद्ध विश्व–विजेता होता है । शक्ति और सिद्धियाँ उसकी दासी होती हैं–

मही मूलाधारे कर्माय मणिपूरे द्रुतवहम् ।
स्थितं स्वाधिष्ठाने हृदिमरूत माकाश मुपरि॥

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मनोऽपि भ्रूमध्यं सकलमपि भित्वा कुलपथम।
सहस्रारे पद्मे सह रहसि पत्या विहरसि ॥

हे जननि मूलाधार स्थित पृथ्वी से चलकर तुम मणिपूर स्वाधिष्ठान अनाहत भ्रू मध्य चक्र का वेधन करती हुई अपने पति परमपिता परमेश्वर से जा मिलती हो ।

इस तरह योग शास्त्रों में नाड़ी विद्या के उन रहस्यों का उद्घाटन किया गया है जिन्हें जानकर योगी शरीर में ही सप्तलोकों में विचरण का आनन्द लेता है । हर लोक की सिद्धि और सामर्थ्य का वह स्वामी हो जाता है । ऐसा विज्ञान दुनिया के पर्दे पर आज तक किसी ने नहीं दिया । किन्तु अब वैज्ञानिक इन सत्यों को स्वीकार अवश्य करने लगे हैं । इस सम्बन्ध में कोराइन हेलाइन ने अपनी पुस्तक "आकल्ट अनाटामी" में जो प्रकाश डाला है वह इन सप्त लोकों की रचना और उनमें निहित शक्तियों से ९७ प्रतिशत मिलता--जुलता है । डा. कोराइन हेलाइन स्वयं भी एक वैज्ञानिक थे और बाइबिल तथा अध्यात्म दर्शन का भी उन्होंने विस्तृत अध्ययन किया था । भारतीय जिसे प्राण प्रवाह कहते हैं, थियोसॉफी वाले जिसे जीवन शक्ति या वाइटैलिटी कहते हैं उसे उन्होंने "नर्व फ्लूड" नाड़ियों में बहने वाला द्रव्य कहा है और हर ग्रन्थि या चक्र की विशेषता का कारण उस चक्र में उपस्थित अन्तः स्राव (हरमोन्स) को माना है । भारतीय योग ग्रन्थों में चन्द्र और सूर्य या गर्म और ठण्डी नाड़ियों को उन्होंने स्त्री वाचक और पुरुष वाचक माना है जो भारतीय योग-शब्दावली के समानार्थी ही हैं । प्राण में अग्नि तत्व की प्रधानता को उन्होंने फास्फोरस माना है ।

"सात पुष्प केन्द्र और उनकी गुप्त कार्य शैली (दिसेविन क्लावर सेंटर एण्ड देयर एसेटोरिक एक्टिविटी) शीर्षक से उन्होंने भी लिखा है कि मनुष्य शरीर के यह सात केन्द्र यद्यपि प्रसुप्त अवस्था में रहते हैं तथापि उनका बहुत अधिक महत्व है । यदि आध्यात्मिक विचार उद्बुद्ध किये जा सकें तो इन्हें प्रकाश व शक्ति के भँवरों के रूप में अनुभव किया जा सकता है तथा उनकी सुगन्ध और शोभा के दिव्य लाभ से लाभान्वित भी हुआ जा सकता है ।

मूलाधार के त्रिकोण–अणु को कोराइन ने हेलाइन ने मन्दिर कें मुख्य कोण का पत्थर लिखा है और उसका स्थान ठीक वही लिखा है जो भारतीय योग ग्रन्थों में है । उसके भेदन को उन्होंने भी अति कठिन माना है । दूसरा केन्द्र सोलर प्लैक्सस लाल नारंगी सूर्य की भाँति हलके पीले रंग नाभि स्थित, तीसरा तिल्ली या स्पिलीन स्थित है । उसकी सिद्धि श्री हेलाइन ने अप्रत्यक्ष वस्तुओं को देखने की क्षमता या दूरदर्शन माना है । इसके जागरण की स्थिति में रात में हवा में उड़ने के स्वप्न आते हैं ।

चौथे केन्द्र हृदय की सिद्धि से पृथ्वी में पूर्व जीवन की स्मृति आ जाती है । यह लिखकर उन्होंने एक प्रकार से ईसाई धर्म की पुनर्जन्म न मानने की धारणा को ठुकरा दिया है । इसे उन्होंने आध्यात्मिक तथा भौतिक विचारधारा के मध्य की विभाजन रेखा कहा है अर्थात् हृदय चक्र से ऊपर तक विकास हो जाने पर फिर मनुष्य की अधोगति नहीं हो सकती ।

पाँचवाँ केन्द्र गला और छठवाँ केन्द्र भ्रू मध्य मानने का मतलब विशुद्धाख्य तथा आज्ञा चक्र की उपस्थिति की ही पुष्टि होती है । सातवाँ केन्द्र सहस्रार के बारे में उन्होंने लिखा है कि यह केन्द्र सिर की चोटी पर मुकुट के रूप में अवस्थित है । उसको पाने के बाद मनुष्य दैवत्व में बदल जाता है ।

"एनाटामी एण्ड इमोशन" के लेखक डा0 हैजेल ने भी स्वीकार किया है कि मनुष्य जीवन को प्रभावित करने में अन्तःस्रावों (हरमोन्स) का बहुत अधिक महत्व है । यह इन ग्रन्थियों से ही सम्बन्धित होते हैं और दोहरा काम करते हैं । एक ओर शरीर की व्यवस्था दूसरे उनकी भावनाओं से तालमेल । यह भाव और पदार्थ के बीच की कड़ी है । जब मनुष्य उन्हें जानकर उनका आत्म–विकास में प्रयोग करता है तब वह इतिहास का असाधारण व्यक्ति बन जाता है । यह ग्रन्थियाँ "माइक्रोकास्म" पदार्थ की बनी होने से वह आकाशस्थ नक्षत्रों से प्रभावित होती हैं । इसलिये उन्होंने इन्हें आन्तर्नक्षत्र (इन्टीरियर स्टार्स) से सम्बोधित किया है और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पैरासेल्सस का कथन है–स्वर्ग हमारे अन्दर है यदि इन अन्तःस्रावी ग्रन्थियों और नाड़ी केन्द्रों का विमोचन किया जाये तो विराट् विश्व को अपने शरीर में ही प्राप्त किया जा सकता है । वेद का कथन भी यही है–

सप्तास्यासन्परिधयस्त्रिधः सप्त समिधः कृत ।
देवा यद्यज्ञ तन्वानां अब ध्नन्पुरुषं पशुम् ॥
यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत ।
वसन्तोऽस्या सीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः

–यजुर्वेद ३१ /१५–१४

अर्थात्–यज्ञ वेदी की सात परिधियाँ इक्कीस सिमिधायें हैं । ऐसे यज्ञ को देवताओं ने फैलाया है । उसमें पशु (जीव) बँधा है और देवताओं की इच्छानुसार तीन ऋतुओं में जीवन की हवि चढ़ाता रहता है ।जो वाह्य कामनाओं को समेट कर इन शक्तियों को ऊर्ध्वगामी बनाते हैं वे देवत्व को प्राप्त करते हैं ।

ध्रुव–प्रभा द्वारा देवयान मार्ग और स्वार्गारोहण की पुष्टि

महर्षि चित्र ने यज्ञ आयोजित किया । ऋत्विक के लिये उन्होंने महर्षि उद्दालक को आमन्त्रित किया था । किन्तु उद्दालक कुछ समय के लिये समाधि लेकर अन्तरिक्ष के कुछ रहस्यों का अध्ययन करना चाहते थे इसलिये उन्होंनें अपने पुत्र श्वेतकेतु को यज्ञ के ऋत्विक के रूप में भेज दिया, योग्यता की परख किये बिना महर्षि चित्र उन्हें यज्ञ के आचार्य वरण करने में हिचकिचाये सो उन्होंने श्वेतकेतु से प्रश्न किया– 'संवृत लोके यस्मिन्नाथस्य हो बोचदध्वा लोके यास्यसीति'।

अर्थात्–क्या इस लोक में कोई आवरण वाला ऐसा स्थान है जहाँ तुम मेरे प्राणों को स्थिर कर सकोगे अथवा कोई ऐसा आवरण रहित अद्भुत स्थान है जहाँ पहुँचा कर मुझे यज्ञ के फलस्वरूप स्वर्ग का भागी बनाओगे ?

श्वेतकेतु ने इस प्रश्न का उत्तर देने में असमर्थता प्रकट की । वे लौटकर अपने पिता के पास गये और उनसे वही प्रश्न पूछा जो उनसे (श्वेतकेतु से) महर्षि चित्र ने पूछा था । महर्षि उद्दालक बड़े सूक्ष्मदर्शी थे उन्होंने सारी स्थिति जान ली कि चित्र ने ऐसा प्रश्न क्यों पूछा– वे स्वयं इसी रहस्य को जानने के लिये अविकल्प समाधि (जिस समाधि में चिन्तन, मनन, भावानुभूति चलती रहती है उसे सविकल्प समाधि कहते हैं) लेना चाहते थे । उन्होंने अनुभव किया कि महर्षि चित्र यह रहस्य पहले से ही जानते हैं सो पिता पुत्र दोनों महर्षि चित्र के पास गये और उनके प्रश्न का उत्तर सविनय उन्हीं से बताने का आग्रह करने लगे । उनकी जिज्ञासा को समझकर महर्षि चित्र ने उन्हें मृत्यु की अवस्था और देवयान मार्ग द्वारा स्वर्ग प्राप्ति का जो ज्ञान दिया है कौषीतकि ब्राह्मणोपनिषद् का वह सारा का सारा ही आख्यान महान् वैज्ञानिक सत्यों और आश्चर्यों से ओत–प्रोत है । उससे यह पता चलता है कि भारतीय तत्व दृष्टा न केवल प्राण और जीवन के रहस्यों से विज्ञ थे वरन् उन्हें सूक्ष्म–से–सूक्ष्म भौगोलिक और खगोल विद्या के रहस्यों का भी ज्ञान था । आज जब उस ज्ञान को विज्ञान की कसौटी पर कसते हैं तो मानना पड़ता है कि भारतीय साधनायें किसी भी भौतिक विज्ञान से अधिक महत्वपूर्ण हैं और जीवन से सम्बन्धित समसय जिज्ञासाओं और समस्याओं का वही सर्वश्रेष्ठ विकल्प हैं ।

महर्षि चित्र उद्दालक और श्वेतकेतु को बताते हैं–आर्य ! यज्ञादि श्रेष्ठ कर्म करने वाले लोगों को स्वर्ग की प्राप्ति जिस तरह होती है वह मैं बताता हूँ, प्राणों के योग से चन्द्रमा को बल मिलता है । पर कृष्ण पक्ष में तथा दक्षिणायन सूर्य गति के समय स्वर्ग का द्वार अवरुद्ध रहता है इसलिये योगीजन उस समय अपने प्राणों को अपने ध्यान में ही स्थिर कर लेते हैं । अपनी निष्काम भावना को दृढ़ करके वे देवयान मार्ग में सुषुम्ना में पदार्पण करते हैं, और प्रथम अग्नि लोक को प्राप्त होते हैं, फिर वायुलोक और वहाँ से सूर्य लोक को गमन करते हैं । सूर्य लोक से वरुण लोक, इन्द्रलोक, प्रजापति लोक में पहुँचते हुये वे स्वर्ग लोक के अधिकारी बनते हैं–

कौषीतकि ब्राह्मणोपनिषद् की इस आख्यायिका में आगे के वर्णन में बड़े विस्तारपूर्वक देवयान् मार्ग की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अनुभूतियों का वर्णन है जीवात्मा को वहाँ से जैसे चित्र दिखाई देते हैं जैसी–जैसी ध्वनियाँ और गन्ध की अनुभूति होती है उस सबका बड़ा ही अलंकारिक और मनोरम वर्णन किया गया है । पढ़ने से ऐसा लगता है जैसे कोई अति मानसिक कहानी कही गई हो । जिसका सत्य से कोई सम्बन्ध न हो पर जब दर्शन और आज के विज्ञान की तुला पर उसे तौलते और विश्लेषण करते हैं तब आश्चर्यचकित रह जाते हैं कि इतनी विराट् अनुभूति ऋषियों को कैसे सम्भव हो सकी । विज्ञान अब उनकी अनुभूतियों को शत–प्रतिशत सत्य प्रमाणित कर रहा है । यद्यपि अभी विज्ञान अपूर्णावस्था में है तथापि अभी तक उसने जो भी निष्कर्ष निकाले हैं वह भारतीय तत्व दर्शन से एक भी कदम आगे नहीं बढ़ पाते ।

वैज्ञानिकों ने यह मान लिया है कि पृथ्वी स्वयं एक चुम्बक है, उत्तरी ध्रुव, उत्तरी सिरा और दक्षिणी ध्रुव, दक्षिणी सिरा दोनों उसके दो शक्तिशाली सांद्रित स्थान हैं । पृथ्वी ही नहीं सूर्य भी चुम्बक की तरह व्यवहृत होता है, और यदि यहाँ पर कहा जाये कि मनुष्य या उसकी जीवन–शक्ति भी एक प्रकार का विद्युत चुम्बकीय पदार्थ ही है । सूर्य के ११ वर्षीय चक्र में जब सूर्य कलेको (सन–स्पाट्स) की तीव्रता होती है और पृथ्वी पर चुम्बकीय आँधियाँ आ जाती हैं तो मनुष्य जीवन उससे बुरी तरह प्रभावित होता है । डा० क्रिट्ज आदि वैज्ञानिकों ने अनेक परीक्षणों से यह सिद्ध किया है कि विद्युत–चुम्बकीय आँधियों के समय जन्तु जगत् अपना सारा मानसिक सन्तुलन खो देता है जो इस बात का प्रतीक है कि सूर्य के जीवन या विद्युत–चुम्बकीय क्षेत्र में हलचल के साथ पृथ्वी के जीवन या विद्युत–चुम्बकीय क्षेत्र में हलचल होना अवश्यम्भावी है ।

कुण्डलिनी विज्ञान के अन्तर्गत सुषुम्ना शीर्षक को अत्यधिक प्रचण्ड क्षमता वाला चुम्बक माना गया है जिसका उत्तरी सिरा मस्तिष्क स्थित "सहस्रार" है और दक्षिणी गुदा स्थित मूलाधार चक्र है नाभि को सूर्य–चक्र स्थान माना है । मूलाधार पृथ्वी का प्रतिनिधि, जो स्थिति ब्रह्माण्ड में सूर्य के साथ पृथ्वी की अर्थात् २३० डिग्री झुकी हुई है वही नाभि के साथ मूलाधार चक्र की । मूलाधार चक्र स्थित त्रिकोण परमाणु ही "नाभि" से प्राप्त ऊर्जा को विद्युत चुम्बकीय रूप "प्राण" या जीवनी शक्ति के रूप में बदलता रहता है । यह ठीक सूर्य द्वारा पृथ्वी में जीवन–विकास की अवस्था के समान ही है । जब तक मूलाधार स्थित काम या इच्छा शक्ति से प्रेम बना रहता है कि मनुष्य अधोगामी स्थिति में रहता है पर यदि उसी प्राण–शक्ति को विभिन्न योग साधनाओं द्वारा ऊर्ध्वमुखी प्रच्छालित कर लिया जाता है तो सुषुम्ना प्रवाह के अन्दर के आग्नेय कण उत्तेजित और क्रियाशील हो उठते हैं जिससे सहस्रार के जागरण की क्रिया सम्पन्न होती है । यह अवस्था ईश्वरीय दिव्यशक्तियों से सम्पर्क और अनुभूति एवं बौद्धिक एवं आत्मिक प्रतिभा के विकास की होती है साथ ही ऊर्ध्वमुखी लोकों की प्राप्ति का साधन भी ।

मानवीय प्राण–शक्ति जो कि एक विद्युत–चुम्बकीय शक्ति होती है उसे यदि प्राणायाम और योग साधनाओं द्वारा नियन्त्रित कर लिया जाये तो सूर्य की उत्तरायण अवस्था में जबकि पृथ्वी का उत्तरी ध्रुव सक्रिय होता है वहाँ से जाने वाली एक तीव्र विद्युतीय चुम्बक रेखा द्वारा उसे ऊर्ध्व लोकों में बहाया जा सकता है । उत्तरी ध्रुव से खगोल के किन्हीं विशेष ग्रह व ज्योतिर्पिण्डों का सम्बन्ध होता है । इस बात से अब विज्ञान भी सहमत है । यह कथा वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित असंदिग्ध सत्य है । इस बात की पुष्टि के लिए दि ग्रीलियर–न्यूयार्क टोरंटो द्वारा प्रकाशित पुस्तक "दि बुक आफ पापुलर साइंस" का ७वाँ भाग पढ़ना चाहिये । इस पुस्तक में चुम्बकीय क्षेत्र और सूर्य के आग्नेय कणों द्वारा दोनों ध्रुवों में एक ध्रुव–प्रभा के निर्माण का रोमांचकारी वर्णन दिया हुआ है । इन ध्रुव प्रभाओं (अरोरल–लाइट) के बारे में आज तक विज्ञान जितना जान सका है वह कौषीतकि ब्राह्मणोपनिषद् के महान् ज्ञान की पुष्टि करता है ।

इस पुस्तक में बताया गया है कि चुम्बकीय विक्षोभ पृथ्वी के दोनों ध्रुवों पर प्रचण्ड होने के कारण पृथ्वी के उस क्षेत्र में न केवल आकस्मिक परिवर्तन उत्पन्न करते हैं वरन् अवशिष्ट कणों की उपस्थिति में विचित्र–विचित्र प्रकार के चकाचौंध उत्पन्न करने वाले प्रकाश भी उत्पन्न करते हैं । इस प्रकाश प्रभा को उत्तर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में "अरोरा बोरी येलिस" तथा दक्षिण में "अरोरा आस्ट्रेलिस" कहते हैं । इसका उद्‌गम ठीक ध्रुव प्रदेश में होता है और उत्पत्ति का स्रोत भी, सूर्य व चन्द्रमा माना गया है । मन को भारतीय दर्शन में–"चन्द्रमा मनोसोऽजायत"–मन चन्द्रमा है और प्राण को सूर्य का आग्नेय स्फुल्लिंग कहा है । इससे प्रतीत होता है कि जीवनी शक्ति और ध्रुव–प्रभा की रासायनिक बनावट में कोई बड़ा अन्तर नहीं है ।

ध्रुव प्रभा आकृति और चमक में एक-दूसरे से अत्यन्त भिन्न देखी गई हैं । अचानक ही वे स्वर्ग में–सुदूर अन्तरिक्ष में चमकदार प्रकाश फैला देती हैं । इनकी गति आश्चर्यजनक और शीघ्रचालित होती है जिससे आकृति और सघनता में अद्‌भुत परिवर्तन देखे गये हैं । यदि इस प्राण प्रवाह में बहते हुए किसी जीव को कौषीतकि ब्राह्मणों उपनिषद में वर्णित विराट आकाश गंगाओं के नदी रूप में, नीहारिकों के बादल रूप में तथा अनेक ग्रह–नक्षत्रों के दृश्य विलक्षण रूप से दिखाई दिये हों तो आश्चर्य क्या ? उत्तरायण मार्ग को स्वर्गारोहण और दक्षिणायण को अन्ध लोकों में ले जाने वाला कहा है । उसकी पुष्टि इस बात से हो जाती है कि दक्षिणी ध्रुव की प्रभायें कुछ ही दूर जाकर अन्धकारमय हो देखी गई हैं जबकि उत्तरी ध्रुव की प्रभायें जितनी ऊपर बढ़ती हैं और भी दिव्य होती गई हैं ।

गहन अध्ययन और अन्वेषणों ने यह सिद्ध कर दिया है कि ध्रुव प्रभा की उत्पत्ति का कारण सूर्य पर घटित हलचल ही है । यह ध्रुव प्रभायें यद्यपि कभी–कभी दिखाई देती हैं । स्पेन में १० वर्ष में 1 बार, उत्तरी फ्रान्स में १ वर्ष में ५ बार, लन्दन में १ वर्ष में ६ बार, उत्तरी आयरलैण्ड में १ वर्ष में ३० बार और उत्तरी संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, कैनेडा तथा फेरो आयलैण्ड्रा में क्रमशः ६०, ८० और १०० बार दिखाई देती है । यह ध्रुव प्रभायें वह होती हैं जो खुली आँख से देखी जा सकती हैं पर पीछे डी० वी० एम० स्लीफर ने लावेल वेधशाला में लगे स्पेक्ट्रम परीक्षण द्वारा यह सिद्ध कर दिया कि ध्रुव प्रभायें मन्द रूप में हमेशा ही विद्यमान रहती हैं । उच्चतर अक्षांश अर्थात् ठीक ध्रुवों पर तो यह सतत् अविच्छिन्न रूप से पाई जाती हैं । साँप की तरह से लहराती हुई चलने वाली इन प्रकाश लहरियों के बारे में विज्ञान जितना ही खोज करता जा रहा है उतने ही आश्चर्यजनक परिणाम सामने आ रहे हैं ।कदाचित इन खोजों में भारतीय तत्व दर्शन को भी सम्मिलित कर लिया जाता तो न केवल आध्यात्मिक मान्यताओं को बल मिलता वरन् मनुष्य–जीवन के अनेक अप्रकट रहस्यों का भी पता लगाना सम्भव हो जाता ।

मन्द प्रकाश पुञ्ज यद्यपि विस्तार में कम होते हैं पर ठीक ध्रुव पर उनमें स्थायित्व के साथ–साथ चमक और चौंध भी बहुत तीव्र होती है । उसकी शक्ति के आगे सामान्य यन्त्र भी काम नहीं कर पाते । एक बार उस क्षेत्र में एक जहाज जा रहा था उस चुम्बकीय शक्ति की प्रचण्डता के कारण जहाज में लगी लोहे की कीलें निकल–निकल कर भागीं और जहाज वहीं चूर–चूर हो गया । तब से उधर जाने वालो जहाजों में लकड़ी की कीलें ठोंकी जाती हैं । इसी प्रकार इस विद्युत चुम्बकीय शक्ति में "प्राण–तत्व" को प्रवाहित कर जीवात्मा को ऊर्ध्वगामी बनाने स्वर्ग पहुँचाने की बात सत्य है । उसके लिये तो पितामह भीष्म को भी अपने प्राणों को साधकर कितने दिनों तक बाणों की शैय्या पर लेटे रहना पड़ा था । बाणों में लेटने का अर्थ उनकी इस निष्ठा से था कि कहीं सूर्य की गति उत्तरायण होने से पूर्व ही उनका मन किन्हीं इच्छाओं में भ्रमित न हो जाये । इच्छायें जीवनी–शक्ति का विक्षोभ होती हैं इसलिये जब तक मन निष्काम न हो वह प्राणों को ससंकल्प किसी विशेष दिशा में नहीं लें जा सकता । इसीलिये मृत्यु के समय प्राणों को शुद्ध करने की क्रियायें पहले से ही निर्धारित कर दी गई हैं । गीता में उनका उल्लेख भी है ।

ध्रुव–प्रभा श्वेत दूधिया रंग की होती है । बादलों के समान दीखने वाले प्रकाश को "सीरस" नाम दिया गया है । बादलों में और इनमें अन्तर ज्ञात करना कठिन है कौषीतकि ब्राह्मण उपनिषद् में भी इन्हें बादल ही कहा गया है ।

ध्रुव–प्रभा फैलती और सिकुड़ती रहती है जोकि इलेक्ट्रॉनिक प्रवाह का प्रतीक होती है । प्रकाश इसमें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चार्पो के रूप में बहता है और उसका वेग बहुत अधिक होता है । इसमें तीव्र गतिमान परिवर्तन भी वैज्ञानिकों ने नोट किये हैं । शेट लैण्ड आइसल्स वैज्ञानिक इन्हें मेरी डासरस कहते हैं । कैनेडा वाले मेरीयोनेट । उनका विश्वास है कि इन प्रकाश–पुंजों के प्रवाह में अद्‌भुत ईश्वरीय नियम आसीन हो सकते हैं । इनमें श्वेत, पीत और गुलाबी रंग की प्रभाओं के अतिरिक्त "शब्दों" के कम्पन भी अंकित किये गये हैं । यह रंगीन किरणों कौषीतकि ब्राह्मणोपनिषद् में वर्णित विभिन्न प्रकार के दृश्य और श्रव्य की अनुभूति की समानार्थी उपलब्धियाँ हैं । हाइड्रोजन कणों की उपस्थिति से अनिवार्य सूर्य–हस्तक्षेप का पता चलता है । समाधिवस्था में सहस्रार का विद्युत–चुम्बकीय सम्बन्ध इस सूक्ष्म प्रकाश प्रभा व प्रवाह से जोड़कर विभिन्न ध्वनियों की विभिन्न लोक–लोकान्तरों की अनुभूतियाँ होती हैं यह ठीक आधुनिक रेडियो विज्ञान के समान ही है । कालान्तर में वैज्ञानिक इन्हीं तथ्यों पर आने वाले और मनुष्य–जीवन के विकास और खगोल सम्बन्धी जानकारियों में इसका वैज्ञानिक प्रयोग करेंगे तो यह निश्चित है कि जीवन से सम्बन्धित विज्ञान में तीव्र परिवर्तन करने पड़ सकते हैं ।

देवयान मार्ग–सुषुम्ना की महिमा महत्ता

कुण्डलिनी–विद्या के अन्तर्गत इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना का बारम्बार उल्लेख किया जाता है, उन्हें रक्तवाहिनी धमनियाँ ही नहीं शक्ति प्रवाह की तीन भिन्न–भिन्न 'फ्रीक्वेन्सी' समझा जाना चाहिए ।

मेरुदण्ड में उनका उल्लेख इसी रूप से हुआ है कि वे शक्तियाँ इस आधार के साथ अपना प्रवाह जारी रखती हैं और भी मोटे रूप से समझना हो तो मस्तिष्क को उत्तरी ध्रुव (पिंगला) कहिये । जननेन्द्रिय को 'इड़ा' और इन दोनों को आपस में जोड़कर रखने वाली हड्डी मेरुदण्ड को (सुषुम्ना) रीढ़ की हड्डी । एक दीखते हुए भी उसमें छोटे–छोटे कई टुकड़े परस्पर जुड़े हुए हैं । इन जोड़ों से जो ज्ञान तन्तु निकलते हैं वे शरीर के विभिन्न अवयवों से सम्बद्ध हैं और उन्हें प्रभावित करते हैं । रीढ़ की हड्डी एक प्रकार से सारे शरीर में ही चेतना संचार करती है । उसमें सुई लगा देने पर सारा शरीर सुन्न हो जाता है और उस चेतनाहीन अवस्था में बड़े–बड़े आपरेशन बिना रोगी को कुछ अनुभव हुए होते रहते हैं । सुषुम्ना को मोटे रूप में इस तरह भी जाना जा सकता है । अध्यात्मशास्त्र में इन तीन नाड़ियों का और उनसे सम्बन्धित अन्य छोटी नाड़ियों का वर्णन इस प्रकार हुआ है–

इड़ा वामे च विज्ञेया पिंगला दक्षिणे स्मृता ।
इड़ा नाड़ी स्थिता वामा ततो व्यस्ता च पिंगला।
इड़ायां तु स्थितश्चन्द्रः पिंगलायां च भास्करः॥

इड़ा वाम भाग में और पिंगला दक्षिण भाग में है । इड़ा नाड़ी वामावर्त से स्थित है और पिंगला उससे व्यस्त (विपरीत) दक्षिणावर्त से स्थित है । इड़ा में चन्द्रमा और पिंगला में सूर्य स्थित है ।

वामे चामृतरूपा स्याज्जगदाप्यायनं परम् ।
दक्षिणे चरभागेन जगदुत्पादयेत्सदा ॥

वाम भाग की नाड़ी इड़ा अमृत रूपा है और सम्पूर्ण जगत् का पोषण करती है तथा दक्षिण में चर भाग से स्थित पिंगला नाड़ी सदैव जगत् को पैदा करती है ।

शक्तिरूपः स्थितश्चन्द्रो वामनाड़ीप्रवाहकः ।
दक्षनाड़ीप्रवाहश्च शंभुरूपो दिवाकरः ॥

वाम नाड़ी का प्रवाहक चन्द्रमा शक्ति रूप से स्थित है और दक्षिण नाड़ी का प्रवाहक सूर्य शम्भु रूप से स्थित है ।

तासां मध्ये दश श्रेष्ठा दशानां तिस्र उत्तमाः।
इड़ा च पिंगला चैव सुषुम्ना च तृतीयका॥
गान्धारी हस्तिजिह्वा च पूषा चैव यशस्विनी।
अलंबुषा कुहुश्चैव शंखिनी दशमी तथा॥

उन सब नाड़ियों में दस श्रेष्ठ हैं और उन दसों में ये तीन उत्तम हैं–(१) इड़ा (२) पिंगला (३) सुषुम्ना (४) गान्धारी (५) हस्तिजिह्वा (६) पूषा (७) यशस्विनी (८) अलंबुषा (९) कुहू और (११) शंखिनी हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऊर्ध्व मेढ्रादयोनाभेः कन्दो योनिः खगाण्डवत् ।
तत्र नाड्यः समुत्पन्नाः सहस्राणां द्विसप्ततिः ॥
तेषु नाड़ीसहस्रेषु द्विसप्तति रुदाहृताः ।
प्रधानाः प्राणवाहिन्यो भूयस्तासु दश स्मृता ॥
इड़ा च पिंगल चैव सुषुम्णा च तृतीयका।
गान्धारी हस्तिजिह्वा च पूषा चैव यशस्विनी ॥
अलम्बुषा कुहूश्चैव शंखिनी दशमी स्मृता ।
एतत्राडीमयंचक्रं ज्ञातव्यं योगिभिः सदा ॥

–गोरक्ष पं० २५ से २८

लिंग मूल से ऊपर नाभि से नीचे–कन्द के सदृश नाड़ियों का मूल उत्पत्ति स्थान पक्षी के अण्डे जैसे आकार वाला है । वहाँ से ७२ हजार नाड़ियाँ निकली हैं और वे समस्त शरीर में व्याप्त हैं ॥२५ ॥

उन ७२ हजार नाड़ियों में ७२ ही मुख्य हैं । इनमें भी प्राण वाहिनी नाड़ियों दस ही हैं ॥२६ ॥

इडा, पिंगला, सुषुम्ना, गान्धारी, हस्ति, जिह्वा, पूषा, यशस्विनी, अलंबुषा, कुहू, शंखिनी यह मुख्य दस नाड़ियाँ हैं । यह नाड़ी चक्र योगियों को जानना ही चाहिए । सुषुम्ना सभी नाड़ियों का आधार स्तंभ है । इसकी महिमा का वर्णन करते हुए शास्त्र कहते हैं–

मूलाधारादा ब्रहारन्ध्र पर्यन्तं सुषुम्ना सूर्यभा ।
तन्मध्ये तडित्कोटि समा मृणाल तन्तु सूक्ष्मा ।
कुण्डलिनी । तत्र तमोनिवृत्ति । तद्दर्शनात्सर्भ पापनिवृत्तिः।

–मण्डल ब्राह्मणोपनिषद्

मूलाधार से लेकर ब्रह्मरन्ध्र तक सूर्य के प्रकाश जैसी सुषुम्ना नाड़ी फैली हुई है । उसी के साथ कमल तन्तु से सूक्ष्म कुण्डलिनी शक्ति बँधी हुई है । उसी के प्रकाश से अन्धकार दूर होता है और पापों की निवृत्ति होती है ।

देहमध्ये ब्रह्मनाड़ी सुषुम्ना सूर्यरूपिणी पूर्णचन्द्राभ वतति । सा तु मूलांधारादारभ्य ब्रह्मरन्ध्रगामिनी भवति । तन्मध्ये तटकोटिसमानकान्त्या मृणालसूत्रवत् सूक्ष्मागी कुण्डलिनीति प्रसिद्धाऽस्ति तां दृष्टा मनसव नरः सर्वोपापविनाश द्वारा भुक्तो भवति ।

–अद्वय तारकोपनिषद्

देह में ब्रह्मनाड़ी सुषुम्ना परम प्रकाशवान है । वह मूलाधार से ब्रह्मरन्ध्र तक जाती है । उसके साथ सूक्ष्म तन्तु में जुड़ी अति ज्वलन्त कुण्डलिनी शक्ति है । उसका भावनात्मक दर्शन करने से मनुष्य सब पापों और बन्धनों से छुटकारा प्राप्त कर लेता है ।

कुण्डलिनी साधना में सुषुम्ना का ब्रह्मनाड़ी का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है । योगशास्त्रों में इसकी महिमा और शक्ति का विस्तार-पूर्वक वर्णन किया गया है । साथ ही इड़ा पिंगला के साथ इसके समन्वय की भी सुविस्तृत चर्चा की गई है । कुण्डलिनी शक्ति के जागरण में इन तीनों के स्वरूप एवं उपयोग को समझ लेना आवश्यक है ।

मेरुदण्ड–स्पाइनल कालम को प्राण प्रवाह का राजमार्ग–महामार्ग माना गया है । धरती से स्वर्ग तक पहुँचने का देवयान मार्ग–सुषुम्ना अपनी सहयोगी नाड़ियों इड़ा–पिंगला के साथ इसी में अवस्थित होती है । दर्शनोपनिषद् में इसकी स्थिति का वर्णन करते हुए कहा गया है कि–

पृष्ठमध्यस्थिते नाम्ना वीणादण्डेन सुव्रत ।
सहमस्तकपर्यन्तं सुषुम्ना सुप्रतिष्ठिता ॥

अर्थात् पीठ के पीछे भाग में वीणा दंड में मस्तक पर्यन्त सुषुम्ना का विस्तार है ।

देहस्योपाधिरूपा सा सुषुम्ना मध्यरूपिणी ।
दिव्यमार्गमिदं प्रोक्तममृतानंद कारकम् ॥

–शिव संहिता

अर्थात् शरीर के मध्य में सुषुम्ना अवस्थित है । यही देव मार्ग है । इसी के मध्य में अमृत आनन्द की प्राप्ति होती है ।

सुषुम्ना साधना का माहात्म्य बताते हुए तंत्रसार में कहा गया है:–

सुषुम्नैव परं तीर्थम् सुषुम्नैव परोजपः ।
सुषुम्नैव परं ध्यानं सुषुम्नैव परागतिः ॥

अर्थात् सुषुम्ना साधना से बड़ा तीर्थ, जप, ध्यान आदि और कुछ नहीं है । सुषुम्ना ही परमगति है ।

दर्शनोपनिषद् में आगे कहा गया है:–

अश्वमेध सहस्राणि वाजपेय शतानि च ।

अर्थात् सुषुम्ना साधना का फल अश्वमेधों, वाजपेय यज्ञों से अधिक है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस तरह सुषुम्ना के महत्व का वर्णन अनेक ग्रन्थों में किया गया है । उनमें उसके क्षमता एवं गरिमा का आभास मिलता है । शांडिल्योपनिषद् में उसे 'विश्वधारिणी' कहा गया है । योगशिखोपनिषद् में उसे 'समस्त दूषणों से रहित ब्रह्मरूप' बताया गया है अद्वैतोपनिषद् में उसे 'प्राणियों की अन्तरात्मा' कहा है । दर्शनोपनिषद् ब्रह्म विद्योपनिषद् त्रिशिखि ब्राह्मणोपनिषद्, षट्चक्र निरूपण आदि में सुषुम्ना के स्वरूप और कार्य का विस्तृत वर्णन है । षट्चक्रों की स्थिति उसी के अंतर्गत मानी गई है । शिव संहिता के अनुसार सुषुम्ना के ऊर्ध्व शीर्ष पर सहस्रार चक्र है और अधोभाग में मूलाधार चक्र है । मूलाधार में ब्रह्मायोनि है जहाँ काम बीज का स्थान है । यहाँ एक ज्योति जलती है जिसे ज्वलन्त रखने के लिए सहस्रार से अमृत स्नेह टपकता है ।

दर्शनोपनिषद् एवं अन्य उपनिषदों के वर्णन से सिद्ध होता है कि मेरुदण्ड रज्जु स्पाइनल कॉर्ड ही सुषुम्ना है । दर्शनोपनिषद् ४/५–१० में सुषुम्ना को ही ब्रह्मनाड़ी कहा गया है और उसे रीढ़ की हड्डियों के छिद्र में स्थित बताया गया है । यही मूलाधार से सहस्रार तक फैली हुई है । जहाँ उसका अन्त होता है वह मस्तिष्क का चौथा खोखला भाग–फोर्थ वेन्ट्रिकल ही ब्रह्मरंध्र है । सुषुम्ना के खोखले भाग में ही प्रमुख मानी जाने वाली १४ तथा असंख्य छोटी सूक्ष्म नाड़ियों की सत्ता है । यों उस क्षेत्र में प्रत्यक्ष आँखों से तथा सूक्ष्मदर्शी यंत्रों की सहायता से देखी जा सकने वाली प्रत्यक्ष नलिकाओं एवं तंतुओं की संख्या भी कम नहीं है । 'संगीत रत्नाकर' और 'सहानुभूतिक मेरुतंत्र' ग्रंथों में सुषुम्ना को ७०० महत्वपूर्ण नाड़ियों से घिरा हुआ बताया गया है । वे दासियाँ और सुषुम्ना रानी हैं ।

यह सही है कि जिस प्रकार मस्तिष्क के केन्द्र नीचे के केन्द्रों को प्रेरणा–एक्साइटेशन भेजते हैं, उसी प्रकार निचले केन्द्र भी मस्तिष्क को न केवल जानकारियाँ भेजते हैं, वरन् उत्तेजनाएँ एवं प्रेरणाएँ भी भेजते हैं । मस्तिष्क को नाड़ी मंडल द्वारा भेजे जाने वाले उत्तेजनात्मक संकेत–प्रवाहों को–फीडबैक एक्साइटेशन कहते हैं ।

मस्तिष्क बहुसमर्थ तो है पर सर्वसमर्थ नहीं । उसे भी आवश्यक उत्तेजना एवं प्रेरणा चाहिए । यह जाग्रत कुंडलिनी संस्थान से भेजे जा सकते हैं । जिस प्रकार जनरेटर के चुम्बकीय क्षेत्र को एक्साइटिंग करेन्ट द्वारा सशक्त बनाने से उच्च विभवयुक्त हाईपोटेन्शियल विद्युत पैदा होने लगती है उसी प्रकार मूलाधार क्षेत्र से ऊपर भेजे जाने वाले उत्तेजक प्रवाह मस्तिष्क में अति संवेदनशीलता–सुपर सैन्सेशन पैदा करने में समर्थ होते हैं ।

मस्तिष्क को विद्युतीय संचार व्यवस्था ही सक्रिय बनाती है । इस प्रणाली को 'रैटीक्युलर एक्टिवेटिंग सिस्टम' कहते हैं । यह विद्युत धाराएँ ही मस्तिष्क के विभिन्न केन्द्रों को सजग एवं सक्रिय बनाये रखती हैं । वैज्ञानिकों का मत है कि मस्तिष्क के गहन अन्तराल में सेन्ट्रेनाकिफैलिक सिस्टम में यह विद्युत धाराएं प्रसुप्त अवस्था में रहती हैं । उनका बहुत थोड़ा अंश ही काम में आ पाता है । यदि इस प्रसुप्त प्रणाली को जाग्रत किया जा सके तो अपना यही मस्तिष्क सक्रियता, क्षमता एवं स्तर की दृष्टि से आश्चर्यजनक उत्कृष्टता प्राप्त कर सकता है । कुण्डलिनी साधना इन प्रयोजनों की पूर्ति में अत्यधिक सहायक सिद्ध हो सकती है ।

सुषुम्ना–ब्रह्मनाड़ी के सम्बन्ध में योगियों और शरीर शस्त्रियों की अलग–अलग व्याख्याएँ रही हैं । साधना विज्ञान के प्राचीन ग्रंथों में समूचे मेरुदंड को ही सुषुम्ना कहा गया है । उसके पोले भाग में विशेष क्षमताएँ रहने के संबंध में तो जानकारी थी पर वह समूचा संस्थान अति संवेदनशील है और भीतरी तथा बाहरी परतों में अन्योन्याश्रय संबंध है ।इसलिए पृथक वर्गीकरण करने की आवश्यकता नहीं समझी गई है और पूरे मेरुदण्ड को ही सुषुम्ना संस्थान माना गया । विद्युत या प्राण संचार का प्रवाह प्रधानतया भीतरी भाग में ही चलता है पर बाहरी खोल भी उस संदर्भ में कम संवेदनशील, कम सहायक या कम प्रभावित नहीं है ।

आधुनिक शरीरशास्त्र–एनाटामी के मत से मेरुदंड के भीतर एक सूक्ष्म नली का अस्तित्व है जिसे 'केनालिससेन्ट्रेलिस' कहते हैं । यह मेरुदंडीय और मस्तिष्कीय तत्वों से मिलकर बनी है । सुषुम्ना यही है । इस क्षेत्र में अनेकों संचार प्रणालियाँ काम करती हैं जिनमें से एक 'केनेलिससेंट्रेलिस' भी है । उसे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ही योगशास्त्र की दृष्टि से ब्रह्मनाड़ी कहा जा सकता है ।

मेरुदंड की संचार प्रक्रिया का संवाहक क्षेत्र 'पैरासिम्पैथेटिक' और 'सिम्पैथेटिक' के नाम से जाना जाता है । यह मेरुदंड के भीतरी भाग में स्थित होता है । इसे 'गैंग्लिया' कहते हैं । इसे नाड़ी कोशिकाओं का केन्द्रीय गुच्छक भी कह सकते हैं । इस क्षेत्र में प्राण संचार प्रणाली को अपना काम करने के लिए आवश्यक साधन प्राप्त होते हैं ।

मस्तिष्क से गुदा–उपस्थ भाग तक के क्षेत्र में फैले हुए अनेक महत्वपूर्ण संस्थानों का योगग्रंथों में उल्लेख हुआ है । यों वे सभी सूक्ष्म शरीर से संबंधित हैं तो भी उनकी स्थूल शरीर के कुछ संस्थानों के साथ सीधी संगति दीखती है और स्पष्ट सम्बंध दिखाई पड़ता है । थियोसोफी की मान्यताओं के अनुसार सुषुम्ना को मेरुदंड, रज्जु एवं स्पाइनल कॉर्ड समझा जाना चाहिए । वज्रा–बाह्य आवरण एवं माध्यमिक आवरण है । इसे 'ड्यूरामैटर' एवं 'पा मैटर' कह सकते हैं । चित्रामस्तिष्कीय धूसर पदार्थ–'ग्रे मैटर' है । ब्रह्मरंध्र–केन्द्रीय छिद्र–सेन्ट्रल कैनाल । अमृत–प्रमस्तिष्कीय द्रव–सेरिब्रो–स्पाइनल फ्लूइड । इड़ा–बाई सहानुभूतिक रज्जु–लेफ्ट सिम्पैथिक ट्रंक्स एवं पिंगला–दाहिनी सहानुभूतिक रज्जु–राइट सिम्पैथिक ट्रंक्स । त्रिवेणी–सुषुम्ना शीर्ष–मेडुला ओब्लांगेटा । शंकु शिखर–सुमेरु–पान्स को कह सकते हैं ।

योग विद्या विशारदों का कहना है कि मेरुदंड सुषुम्ना के आखिर में 'कोनस मेडुलरिस' नामक एक स्थान है जहाँ प्राण ऊर्जा का विशाल भण्डार छिपा हुआ है । जीवनी शक्ति अथवा चुम्बकीय विद्युत का विपुल भण्डार यही है । इसे खोजने और सक्रिय बनाने के वैज्ञानिक प्रयास भी किये जा रहे हैं । शरीर शास्त्रियों के अनुसार जिस प्रकार वैज्ञानिक जानकारी, प्रयोग विधि और यंत्र व्यवस्था के आधार पर विद्युत, ईथर आदि शक्तियों से प्रत्यक्ष लाभ उठाया जाता है, ठीक उसी प्रकार स्पाइनल कालम स्थित प्राण ऊर्जा का उन्नयन करके शरीर की अपराकृति की प्रचण्ड शक्तियों से लाभान्वित हुआ जा सकता है ।

थियोसाफिकल सोसायटी की जन्मदात्री मेडम ब्लैवट्स्की के अनुसार स्पाइनल एक्सिस–सुषुम्ना और कुण्डलिनी का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है । कुण्डलिनी को उन्होंने विश्वव्यापी विद्युत शक्ति कॉस्मिक इलेक्ट्रिसिटी नाम दिया है और उसकी विवेचना विश्व विद्युत के समतुल्य चेतनात्मक प्रचण्ड प्रवाह के रूप में की हैं सरपेंट फायर, द वायस आफ साइलैंस, फायरी पावर तथा वर्ल्ड मदर भी इसी के नाम हैं । सुप्त सर्पिणी की तरह यह मेरुदंड के निचले सिरे के मूलाधार केन्द्र में सोई पड़ी है । स्पाइनल कार्ड या स्पाइनल एक्सिस मेरुदंड का ही नाम है जिसमें एक प्रकार का विद्युत द्रव पदार्थ भरा है । मूलाधार चक्र से मेरुदंड मार्ग में जो शक्ति प्रवाह चलता है वह पेंच की चूड़ी की तरह कुण्डलाकार होता है इसलिए इसे कुंडलिनी के नाम से जाना जाता है । प्रसुप्त स्थिति में पड़ी–पड़ी यह विष उगलती रहती है । वासना की अग्नि को शांत नहीं होने देती । ऐसी स्थिति में वह शरीर और मन की दिव्य सम्पदाओं का विनाश ही करती है । जाग्रत होकर सहस्रार तक पहुँचने और सोम सम्पर्क में आने पर ही इसका समाधान होता है ।

स्टर्नवर्ग स्थित 'रिसर्च फाउन्डेशन फार ईस्टर्न विजडम एण्ड वैस्टर्न साइंस' में मानवी काया की प्रसुप्त क्षमताओं को उभारने के प्रयोग परीक्षण चल रहे हैं । इस संस्था में अनुसंधानरत मूर्धन्य वैज्ञानिकों के अनुसार कुंडलिनी साधना में बिजली की दो धाराएँ काम करती हैं । दोनों के मिलने पर ही शक्ति प्रवाह बढ़ता है । इन दोनों को सही दिशा देने एवं बाहर भटक कर उत्पात मचाने से रोकने का काम स्पाइनल कालम की पोली रज्जु ही करती है । यही वह राजमार्ग है जिसके अंदर स्नायु तंतु केन्द्रीभूत होकर चक्रों के रूप में दृष्टिगोचर होते हैं । कुंडलिनी जागरण में इन चक्रों की विद्युत शक्ति और स्नायु प्रवाह को प्रभावित एवं सक्रिय किया जाता है ।

शरीरशास्त्र के अन्तर्गत मेरुदंड संचार संस्थान का थोड़ा सा परिचय ऊपर की पंक्तियों में इसलिए दिया गया है ताकि स्थूल शरीर की संरचना से मिलते-जुलते सूक्ष्म शरीर की उपयुक्त कल्पना कर सकना साधना मार्ग के पथिकों के लिए सरल हो सके । सुषुम्ना तथा दूसरी अन्याय नाड़ियों का अस्तित्व प्रत्यक्ष शरीर में भी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है और उससे इस काय कलेवर के महत्वपूर्ण चेतनात्मक प्रयोजन सिद्ध होते हैं । ठीक इसी प्रकार सूक्ष्म शरीर के मेरुदंड क्षेत्र में ऐसी दिव्य विद्युत धाराएँ प्रवाहित होती हैं जो चेतना के उच्च स्तरों को प्रभावित करती और बल देती हैं । साधना–ध्यान चेतना द्वारा संग्रहीत प्राण विद्युत के माध्यम से की जाती है । यही वह औजार है जो सूक्ष्म शरीर के विभिन्न अवयवों में हलचल और उलट–फेर प्रस्तुत करता है । ध्यान–धारणा, संकल्प शक्ति एकाग्रता, प्राण–प्रवाह, भाव संवेदना, प्रगाढ़–निष्ठा जैसे अध्यात्म प्रयोजनों की पूर्ति में सुषुम्ना साधना का असाधारण योगदान रहता है ।

ध्यान–धारणा में मेरुदंड सीधा करके बैठने का विधान है । प्राणायाम में इड़ा–पिंगला के माध्यम से प्राणवायु को ग्रहण करने और छोड़ने का उपक्रम चलता है और कुंभक द्वारा सुषुम्ना में उस दिव्य ऊर्जा को धारण किया जाता है । कुण्डलिनी योग में मूलाधार और सहस्रार के मध्यवर्ती आदान–प्रदान का पथ प्रशस्त करने में सुषुम्ना मार्ग की ही प्रधान भूमिका रहती है । इसलिए उसे देवयान मार्ग भी कहा जाता है । सुषुम्ना साधना अपने आप में एक योग साधना है । जो उसे कर पाते हैं, भौतिक सिद्धियों एवं आत्मिक ऋद्धियों का लाभ उठाते हैं । चेतना के इसी मार्ग मे षट्चक्र कैद रहते हैं ।

मानवी सत्ता के दो ध्रुव प्रदेश–मूलाधार सहस्रार

ब्रह्माण्ड की व्यवस्था के अनुरूप असंख्यों सौर मंडल अपने–अपने काम करते हैं । सौर मण्डल की आचार संहिता का पालन अपनी पृथ्वी करती है । भूलोक के क्रिया–कलाप प्रतीक रूप से जीव सत्ता को प्रभावित एवं संचालित करते हैं । मानवी काया को एक प्रकार से भूलोक माना जा सकता है । उसमें दो महत्वपूर्ण केन्द्रों का–ध्रुव प्रदेशों का अस्तित्व समान रूप से है । मस्तिष्क के नाभिक न्यूक्लियस–सहस्रार चक्र को सूर्य का प्रतीक कह सकते हैं और पृथ्वी जिस सर्प सत्ता के आधार पर खड़ी है उसे मूलाधार कह सकते हैं । इन दोनों अति महत्वपूर्ण केन्द्रों की तुलना पृथ्वी के दो ध्रुव प्रदेशों से भी की जा सकती है । दोनों के अन्तर्ग्रही सम्बन्ध हैं और परस्पर पूरक होकर ही रह रहे हैं । ठीक इसी प्रकार मानवी मस्तिष्क ब्रह्म सूर्य से भी सम्बन्ध बनाये हुए है और काय केन्द्र को आवश्यक अनुदान भी प्रदान करता रहता है ।

सूर्य को धन (पॉजीटिव) और पृथ्वी को ऋण (नेगेटिव) धारा का प्रतीक माना गया है । दोनों स्वभावतः एक-दूसरे की ओर दौड़ते हैं । मिलन से शक्ति धारा प्रवाहित होती है । नर और नारी के आकर्षण की तरह ध्रुवों में भी परस्पर आकर्षण क्रम चलता रहता है । दोनों के मध्यवर्ती सम्बन्ध सूत्र को शक्ति दण्ड कहते हैं । विज्ञान की भाषा में इसे 'कड्मस' कहा जाता है । यह सूत्र जिन दिनों प्रखर रहता है उन दिनों प्राणियों तथा पदार्थों की हर दृष्टि से उन्नति होती है किन्तु यदि कारणवश उस शक्तिदण्ड में क्षीणता आ जाये तो फिर पदार्थों वनस्पतियों, जीवधारियों, परिस्थितियों में भारी अन्तर उत्पत्र हो जाता है । सबमें उदासी छाई रहती है और सब कुछ घटोत्तरी की ओर चलता है । शरीर में मूलाधार को पृथ्वी, सहस्रार को सूर्य एवं शक्ति दण्ड को मेरुदण्ड में सन्निहित माना गया है ।

पुरानी पीढ़ी के वैज्ञानिक मानते रहे हैं कि पृथ्वी में अपना गुरुत्वाकर्षण ताप तथा जीवन है । नई पीढ़ी के अन्वेषणकर्ताओं ने उस मान्यता को बदल दिया है । वे कहते हैं पृथ्वी अपेक्षाकृत अधिक परावलम्बी है । उसकी भौतिक सम्पदा तो आकर्षण भर की है । बाकी तो उसने वेश्या की तरह जिधर-तिधर से जोड़ बटोर कर ही अपनी पूँजी बढ़ाई है । कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय सैत्र दिगो के खगोल विज्ञानी डब्ल्यू एक्सफर्ड ने पृथ्वी की शक्ति को सूर्य का अनुदान भर कहा है । उन्होंने वाशिंगटन की इन्टरनेशनल मैनमेटोस्फियर कान्फ्रेंस में अपना शोध निबन्ध पढ़ते हुए कहा कि सूर्य का अजस्र शक्ति प्रवाह धरती पर उतरता है पर वह सारे भू-मण्डल पर समान रूप से नहीं बरसता । उतरी ध्रुव क्षेत्र के एक विशेष स्थल पर वह बन्दूक की गोली की तरह टूटता है । वहाँ से वह पृथ्वी के वायु मण्डल में रेडियो प्रवाह में सम्मिलित होकर पृथ्वी की भीतरी और बाहरी क्षमताओं को अनुदान

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देता है । वे कहते हैं उत्तरी ध्रुव पर खुली आँख से दृष्टिगोचर होने वाली ध्रुव प्रभा कोई चमत्कार कौतूहल नहीं वरन् पृथ्वी और सूर्य के आदान–प्रदान का परिचय भर है । अनुदान की मात्रा का सन्तुलित रहना पृथ्वी की आवश्यकता भर के लिए ही उसे ग्रहण किया जाना यही वह तथ्य है जिसके आधार पर 'सब कुछ ठीक' ओ० के० चल रहा है । इसमें असन्तुलन उत्पन्न होते ही ठंड से ठप्प हो जाने अथवा गर्मी से भस्म हो जाने का संकट सामने आ खड़ा होगा ।

उत्तरी ध्रुव क्षेत्र का प्रायः ५० हजार वर्ग मील क्षेत्र और दक्षिणी ध्रुव का प्रायः ३० हजार वर्ग मील क्षेत्र ऐसा है जहाँ सूर्य की किरणें दर्पण पर टकराने वाले प्रकाश प्रतिबिम्ब की तरह अवतरित होती हैं और सीमित आदान–प्रदान करके वापस लौट जाती हैं । अनुदान का एक बहुत छोटा अंश ही ध्रुव क्षेत्र ग्रहण करते हैं, उतने से ही धरती की गरिमा बनी रहती है ।

मानवी सत्ता के मौलिक शक्ति स्रोतों के सम्बन्ध में भी यही बात है । सूक्ष्म जगत् एवं निखिल ब्रह्माण्ड में अनन्त वैभव भरा पड़ा है । उसमें से उत्तरी ध्रुव के प्रतीक सहस्रार चक्र पर अनुदान बरसते हैं इस पूँजी से वह सूर्य की भूमिका निभाता है । अपना सूर्य भी तो पृथ्वी को देने वाली सामर्थ्य महासूर्य से ही धरती की ही भाँति माँग कर लाता है । सहस्रार का सूर्य–मूलाधार रूपी पृथ्वी को अपने अनुदान प्रदान करता है, वहाँ से वह शक्ति छोटे केन्द्रों को–चक्रों को–उपलब्ध होती है । उसी का वितरण क्रिया और ज्ञान क्षेत्र के विभिन्न केन्द्रों को समर्थ सक्रिय बनाता है ।

सूर्य और पृथ्वी का संयोग सुचारु रूप से चलाने का उत्तरदायित्व ध्रुव प्रदेश सँभालते हैं । मूलाधार और सहस्रार में भी इसी प्रक्रिया का सुसंचालन आवश्यक होता है । इस दिशा में कोई अवरोध उत्पन्न होते हों तो उन्हें हटाया जाना चाहिए । सुसंचालन और परिशोधन की भूमिका कुण्डलिनी जागरण से सम्भव होती है । दोनों केन्द्रों का प्रखर सहयोग होने पर ही भूलोक की सर्वतोमुखी सुव्यवस्था सम्भव है और उसी आधार पर जीव सत्ता का विकास क्रम अग्रगामी बनते–बनते पूर्णता के लक्ष्य तक जा पहुँचता है ।

उत्तरी ध्रुव पर अन्तर्ग्रही विशेषतया सौर ऊर्जा के टकराव को एक विलक्षण प्रकार के ऊर्जा कम्पनों के रूप में देखा जा सकता है । इसकी प्रत्यक्ष चमक उस क्षेत्र में फैली रहने वाली ध्रुव प्रभा या मेरु प्रकाश के रूप में छाई रहती है यह प्रकाश दोनों ध्रुवों पर अपने–अपने निराले रूपों में दृष्टिगोचर होता है । जिन्होंने उसे आरम्भ में देखा वे आश्चर्यचकित रह गये और हतप्रभ रह कर सोचते रहे, अपनी ही धरती पर यह जादुई दुनिया किस प्रकार बस रही है ।

ध्रुव प्रकाश सर्च लाइट की तरह होता है । यह उत्तर की अपेक्षा दक्षिण में अधिक तेज है । जीवन दोनों पर है । उत्तरी ध्रुव पर 'एक्सिमो' मनुष्य जाति रहती है ।कई प्रकार के रीछ, कुत्ते, मछली जैसे जीव तथा कई तरह की वनस्पति पाई जाती हैं । दक्षिण ध्रुव पर पेनगुइन पक्षी और बिना पंख वाला मच्छर भर पाया जाता है । पेनगुइन की प्रकृति में असीम प्यार भरा है । एक्सिमो अत्यधिक साहसी होते हैं । इसे भी नर के पौरुष और नारी के भाव सम्वेदन के समतुल्य माना जा सकता है ।

दक्षिणी ध्रुव पर महीनों अन्धकार छाया रहता है जबकि उत्तरी ध्रुव पर छः महीने की रात में भी मेरु प्रकाश का अस्तित्व बना रहता है । ध्रुवों पर सूर्य किरणों की अनेकों विचित्रताएँ दृष्टिगोचर होती हैं । ध्रुव यात्री वायर्ड ने एक बार सूर्य को बिल्कुल हरे रंग का देखा । सूर्य किरणों की वक्रता के कारण वहाँ ऐसे ही विचित्र दृश्य देखने को मिलते रहते हैं । दूर की वस्तुएँ हवा में लटकती जान पड़ती हैं । टीले जितने होते हैं उससे कई गुने बड़े लगते हैं । कई बार अनेक सूर्य एक साथ उगे हुए दीखते हैं । इसी प्रकार चन्द्रमा भी आकाश में–बर्फ में–हवा में अलग–अलग निकले हुए दीखते हैं । यह कृत्रिम सूर्य और चन्द्र भी देखने में वास्तविक जैसे ही प्रतीत होते हैं । उत्तरी ध्रुव पर दिन–रात का क्रम भी विचित्र है । रात–दिन छः–छः महीने के भी नहीं होते । ८० दिन की भी रातें होती हैं और सूर्य वर्ष भर में १६ दिन तक ही चमक पाता है, चन्द्रमा कई बार इतना चमकता है कि उसके प्रकाश से सूर्य की रोशनी जितना ही काम हो सके । मेरु

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रकाश कभी–कभी तो शान्त रहता है। पर कभी–कभी वह किरणों की लम्बाई के रूप में–कभी ज्योति या ज्वाला के रूप में प्रचण्ड रहता है। उसके भी दृश्य बदलते रहते हैं। प्रकाश के गुच्छों के रूप में एवं सर्च लाइट की लम्बी फेंक रोशनी की तरह ही वहाँ दृश्य बदलते रहते हैं।

यह प्रकाश परिवर्तन क्यों होते हैं ? इसके कारण सूर्य की स्थिति में परिवर्तन और उसकी प्रतिक्रिया का धरती पर अवतरण माना गया है। सूर्य से तेज चमक बढ़ते ही एक दो दिन में मेरु प्रकाश भी बढ़ जाता है। सूर्य में उठने वाले तूफान धरती पर चुम्बकीय विकरण बिखेरते हैं और पृथ्वी की सामान्य गतिविधियों के हर क्षेत्र में भारी उथल–पुथल उपस्थित हो जाती है।

पृथ्वी में चुम्बकीय शक्ति है जिसके कारण वह अपनी आवश्यक वस्तुएँ अनन्त आकाश में से पकड़ घसीट कर ले आती है। ध्रुव प्रदेश मेरु प्रकाश में होने वाली हलचलों को इसी पकड़–धकड़ का उखाड़–पछाड़ का दृश्य समझा जा सकता है। बिल्ली, चूहे का हिरन, चीते का शिकार प्रक्रिया एवं पहलवानों की कुश्ती में प्रयुक्त होने वाले दाव-पेचों के समतुल्य माना जा सकता है।

ध्रुव प्रकाश का दृश्यमान जितना अद्‌भुत है उससे भी अधिक रहस्यमय उसका अदृश्य प्रभाव है। यह प्रभाव स्थानीय ही नहीं होता, वरन् समस्त भूतल को प्रभावित करता है। भूगर्भ में–समुद्र तल में–वायु-मंडल में–ईथर के महासागर में जो विभिन्न प्रकार की हलचलें होती रहती हैं,चढ़ाव–उतार आते रहते हैं, उनका बहुत कुछ सम्बन्ध इस ध्रुव प्रभा से होता है। इतना ही नहीं उसकी हलचलें प्राणधरियों की शरीरिक एवं मानसिक स्थिति को भी प्रभावित करती हैं। मनुष्यों पर तो उसका प्रभाव विशेष रूप से होता है। पृथ्वी का चुम्बकत्व जो उसके कण–कण में संव्याप्त है और जिसके कारण जीवन तत्व गतिशील है–वह पृथ्वी की मौलिक सम्पदा प्रतीत भर होती है वस्तुतः वैसा है नहीं। यह चुम्बकत्व भी अन्तर्ग्रही अनुदान है। मिलों की पूँजी में बैंकों के सहयोग का बड़ा भाग रहता है। इसी प्रकार पृथ्वी रूप मिल भी अन्तर्राष्ट्रीय–अन्तर्ग्रही–बैंकों के उधार अनुदान से अपना काम चलाती है। उसकी मूल पूँजी तो वह साख भर है जिसके कारण उपयुक्त मात्रा में अनुदान दाता तत्व उसकी सीमित सहायता करते हैं।

यहाँ पृथ्वी की स्थिति से जीव सत्ता की तुलना की जा सकती है। उसे ब्रह्माण्ड–व्यापी ब्रह्मसत्ता से अभीष्ट अनुदान मिलते हैं। आवश्यकतानुसार वे बढ़ सकते हैं, पर इसके लिए अपनी साख बढ़नी चाहिए, प्रामाणिकता सिद्ध की जानी चाहिए। यह बताया जाना चाहिए कि जो नये अनुदान माँगे जा रहे हैं उन्हें सँम्भाल कर रखने एवं सदुपयोग करने की प्रामाणिकता, पात्रता बढ़ा ली गई है या नहीं ? इस सम्बन्ध में आश्वस्त हुए बिना कोई बैंक या ऋणदाता अपनी पूँजी नहीं फँसाता यहाँ तक कि भिक्षुकों के सम्बन्ध में भी यह सोचा जाता है कि दान मिलने पर वे उसका क्या उपयोग करेंगे ? उनकी मान्यता में औचित्य है या नहीं ? इतना भर सिद्ध कर देने पर अनुदानों का द्वार खुल जाता है और अभाव–ग्रस्तता की शिकायत करने को कोई कारण शेष नहीं रह जाता। साधना का पूरा नाम आत्म साधना है। देव साधना का तात्पर्य किसी बाहरी सत्ता को रिझाना नहीं, अपनी ही दिव्य विशेषताओं को जाग्रत एवं परिष्कृत करना है। इस दिशा में जो जितनी सफलता प्राप्त कर सका, उसे विश्व विभूतियों में से उतने ही अनुपात से दिव्य उपलब्धियाँ–सिद्धियाँ मिलती चली जाती हैं।

सूर्य से आने वाला शक्ति प्रवाह उत्तरी ध्रुव पर अवतरित होता है। टकराने पर उसमें उछाल आता है। जैसे रबड़ की गेंद पूरे वेग से टकराने पर उछल जाती है। उसी प्रकार यह शक्ति प्रवाह भी उछल कर उस स्थान पर जा गिरता है जिसे दक्षिण ध्रुव कहते हैं। उछाल के आकाश मार्ग को हम चाहें तो अपने काय विश्व का उछाल मेरुदण्ड कह सकते हैं। ब्रह्मरन्ध्र से टकरा कर सविता के दिव्य प्राण उछल कर जिस मार्ग से संचय भण्डार में स्थिर होता है उसे मूलाधार कहा गया है। मस्तिष्क गत ऊष्मा को जननेन्द्रिय मूल के काम्बीजतक पहुँचानामेरुदण्ड का काम है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एक ध्रुव गहरा है दूसरा उभरा लगता है, किसी फल को चीरते समय मध्य भाग में कुछ भूल रह गई है । दोनों टुकड़ों को मिला दिया जाय तो वे फिर एक समूचा फल दिखाई देंगे ।

सहस्रार और मूलाधार की भी यह स्थिति है । मूलाधार एक गह्वर है । उसे समुद्र की, सरोवर की, कुण्ड की–उपमा दी जाती है । योनि भी उसका नाम है । इन आकृतियों से गड्ढे का बोध होता है । सहस्रार की उपमा कमल पुष्प से–कैलाश पर्वत से–दी गई है । शिवलिंग के रूप में भी उसका उल्लेख है । यह उभार है । गड्ढा और उभार रहने से एक ओर खाई दूसरी ओर टीला रहेगा । दोनों को समन्वित कर दिया जाय तो समतल स्थिति बन सकती है और समस्वरता आ सकती है । इस समस्वरता को ही समाधि कहा गया है । समाधि रस को ब्रह्मानन्द कहा गया है । इसका थोड़ा–सा परिचय संभोग रस से मिलता है । आत्मा और परमात्मा के बीच चलने वाले आकर्षण को भक्ति, सम्वेदना कहते हैं । मूलाधार और सहस्रार के बीच चलने वाला आकर्षण इसी स्तर का है ।

आत्मा और परमात्मा की दिशा धारा एक ही रहने पर परम शान्ति की अनुभूति होती है । जब तक वे दोनों पृथक रहते हैं दोनों का आमुख प्रतिकूल रहता है तब तक न तो स्थिरता आती है और न शान्ति मिलती है । मूलाधार स्थिति भौतिक सामर्थ्य और सहस्रार स्थिति आत्म सम्पदा जब मिल-जुलकर एक ही दिशा में चलने लगते हैं तो जीवन का लक्ष्य पूरा होता है । आत्म–सत्ता में अन्तरंग बहिरंग की प्रतिकूलता को अनुकूलता में परिणत करने की प्रक्रिया कुण्डलिनी साधना में सम्पन्न होती है ।

पृथ्वी के इर्द–गिर्द एक छलनी जैसा सूक्ष्म कवच चढ़ा हुआ है । उसी में से छन कर आवश्यकतानुरूप अन्तर्ग्रही क्षमताएँ भीतर प्रवेश करती हैं । इसी विशेषता के कारण धरती की अद्‌भुत स्थिति बन सकी और उस पर जीवन सत्ता विकसित हो सकी । अन्य ग्रहों पर यह कवच नहीं चढ़ा है, इसलिए उन पर अन्तरिक्षीय ऊर्जाएँ मनमाने ढंग से उतरती हैं । चन्द्रमा का शरीर उल्काओं के आघात से कितना कुरूप बन गया है । उसकी सतह पर जो गहरे खड्ड हैं वे उल्काओं के आघात से बने हैं । अन्य ग्रहों को अन्तरिक्षीय विकिरण प्रभावित करते रहते हैं । इन्हीं आक्रमणों ने उन्हें निष्प्राण बना रखा है । यदि उन्हें भी धरती जैसा कवच मिला होता तो वे भी पृथ्वी की तरह सुन्दर, सुविकसित और सजीव स्थिति में बने हुए होते ।

मनुष्य का सौभाग्य है कि उसकी सत्ता के इर्द–गिर्द संकल्प शक्ति का–प्राण शक्ति का–एक कवच चढ़ा हुआ है । उसकी छलनी में होकर वह आवश्यकतानुसार ब्रह्माण्डीय ऊर्जा का प्रवेश होने देता है । अविकसित चेतना की इस छलनी में बहुत छोटे और थोड़े छिद्र होते हैं । तदनुरूप उसे ब्रह्मी अनुग्रह स्वल्प मात्रा में मिलता है । इतने से वह निर्वाह के साधन भर जुटा पाता है । पेट प्रजनन की आवश्यकता पूरी करने के लिए शारीरिक और मानसिक क्षुधाएं दवाब डालती हैं । जितना भर साधन मिल सके प्रायः उतने ही बड़े छिद्र सर्वसाधारण की छलनी में होते हैं । उससे अधिक की अधिक महत्वपूर्ण उपलब्धियों की आकांक्षा हो तो संकल्प कवच के छिद्र अधिक चौड़े करने पड़ेंगे और उनकी संख्या भी बढ़ानी पड़ेगी । इसी के लिए साधना विज्ञान का आश्रय लिया जाता है । दैवी अनुदान अभीष्ट मात्रा में सहज ही प्राप्त किये जा सकते हैं । उस भण्डार में कोई घाटा नहीं, जहाँ से कि प्राप्त किया जाना है । उपलब्धियों के उपयोग का क्षेत्र भी सुविस्तृत पड़ा है । ऊँचा उठने और आगे बढ़ने के लिए भौतिक और आत्मिक क्षेत्र में अनेकों आधार खाली पड़े हैं । भूमि को जल की आवश्यकता है समुद्र में असीम जलराशि भरी पड़ी है । भूमि प्यासी समुद्र पर भार । दोनों का सन्तुलन मिलाने के लिए वर्षा करने वाले बादलों की आवश्यकता पड़ती है । बादलों की व्यवस्था चल पड़े तो धरती का भी भला और समुद्र का भी । बादलों का प्रबन्ध करने वाली व्यवस्था साधना उपचार से बनती है । आवरण के छिद्रों की संख्या बढ़ाना और चौड़ी करना ही वह कार्य है जिसके आधार पर साधना को सिद्धि में परिणत होते देखा जा सकता है । जो इस परम पुरुषार्थ के लिए साहस जुटा सके, उसने मनुष्य जन्म का सच्चा लाभ पा लिया ऐसा समझा जा सकता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ध्रुव क्षेत्र में सूर्य के अस्त हो जाने पर भी एक विशेष प्रभामण्डल विद्यमान रहता है । सूर्य चन्द्र के बिना भी यह प्रकाश बहुत आश्चर्यजनक लगता है । यह चुम्बकीय विद्युत कणों की प्रकीर्णता ही है यह प्रकाश जैसा दीखने वाला, विद्युतीय परिमण्डल एक लम्बी रज्जु जैसा होता है । उसमें कई रंग की ज्योतियाँ झिलमिलाती सी दीखती हैं । यह रंग तेजी से उद्भूत परिवर्तित और तिरोहित होते रहते हैं । अलास्का विश्वविद्यालय के शोधकर्त्ता जब इस रंगीन झिलमिल के चित्र खींच कर लाये और लोगों को उन्हें दिखाया तो रंग बिरंगी प्राकृत फुलझड़ी की बात पर सभी ने भारी आश्चर्य व्यक्त किया । कुण्डलिनी जागरण के लिए किये जाने वाले ध्यानों में मस्तिष्कीय क्षेत्र में, आकाश में ऐसे ही रंग–बिरंगे प्रवाह, गोलक एवं स्फुलिंग गतिशील दिखाई पड़ते हैं ।

कुण्डलिनी उपासना काल में प्रकाश अनुभूतियां प्रायः होती रहती हैं । आग की उड़ती हुई चिनगारियों से लेकर ज्योति ज्वालाओं तक प्रकाश गोलकों से लेकर तन्तु धाराओं तक की अनुभूतियाँ ध्यानावस्था में होती हैं । आरम्भ में यह कौतुक कौतूहल जैसा ही प्रतीत होता है किन्तु पीछे इस प्रकाश के आलोक में आत्म–बोध, ब्रह्म बोध से लेकर अदृश्य दर्शन तक के कितने ही ऐसे आधार सामने आते हैं, जिनसे आत्म कल्याण का पथ–प्रशस्त हो सके और जीवन को समुन्नत एवं सर्वोपयोगी बनाने का सौभाग्य मिल सके ।

प्रतिभा, सौन्दर्य, माधुर्य एवं कौशल का आकर्षण सर्वविदित है । इन चुम्बकीय क्षमताओं के आधार पर लोग व्यक्तित्ववान बनते हैं और उससे दूसरों का मन मोह कर उन्हें उपयुक्त मार्ग पर चलाते हैं । आध्यात्मिक आकर्षण इससे अत्यधिक शक्तिशाली है । उससे अपना प्रभाव क्षेत्र विकसित होता है । उसके आधार पर दूसरों का सहयोग पा सकना–सद्भाव सम्पादन करके उन्हें ऊँचा उठाने में सफल होना सम्भव हो सकता है, साथ ही उस चुम्बकत्व के सहारे दैवी शक्तियों को आकर्षित कर सकने में भी सफलता मिल सकती है । गुण, कर्म, स्वभाव में उत्कृष्टता उत्पन्न करने वाले दिव्य तत्व इस निखिल ब्रह्माण्ड में भरे पड़े हैं । उन्हें सहायता के लिए कुण्डलिनी साधना के आधार पर चुम्बकत्व के आधार पर आकर्षित करने में सफलता मिल सकती है । ध्रुवीय चुम्बक ज्योति से साधक का व्यक्तित्व भी ज्योतिर्मय एवं विशिष्ट आकर्षण युक्त बन सकता है ।

पहली बार जब ध्रुव प्रदेश के अन्वेषक उस प्रदेश में गये तो उन्होंने अनेक ऐसी विचित्रताएँ देखीं जिनकी उन्हें कल्पना भी न थी । वहाँ एक मील दूर बैठे मनुष्य से भी उसी तरह बातचीत की जा सकती है मानो वह बिल्कुल पास बैठा हो । छोटे विद्युत जनरेटर चलाने पर उसकी आवाज बीस मील तक पहुँचती थी । चलते समय बर्फ पर चरमराते जूते तक की आवाज एक मील दूर से सुनाई पड़ती थी । लेकिन यह सब होता तभी था जब तापमान शून्य से नीचे होता । मस्तिष्कीय संस्थान का ध्रुव केन्द्र सहस्रार उद्वेलितताओं से रहित, शान्त एवं शीतल हो तो दूर श्रवण ही नहीं दूरदर्शन भी सम्भव हो सकता है । अपनी पृथ्वी पर, उसके नीचे, ऊपर क्या हो रहा है ? सूक्ष्म जगत् में क्या हलचलें उभर रही हैं ? इसकी जानकारी सामान्य न रह कर असामान्य स्तर की बन जाती है । सिद्धपुरुषों जैसी वह विशेषता उत्पन्न करने के लिए साधना द्वारा उत्तरी ध्रुव जैसी शान्ति मस्तिष्कीय क्षेत्र में उत्पन्न करनी पड़ती है । सहस्रार साधना से यह सम्भव हो सकता है ।

कुण्डलिनी साधना की सहस्रार चक्र पर असाधारण प्रतिक्रिया होती है । अतीन्द्रिय क्षमताओं के दिव्य संस्थान अपनी मूर्छना छोड़कर सक्रिय बनते हैं और वह देखने, सुनने, जानने लगते हैं जो साधारण स्थिति में असम्भव ही लगता है । दूरदर्शन, दूर श्रवण, अविज्ञात का परिचय, भविष्य का आभास, प्रभाव परिवेषण, जैसी सिद्धियाँ उनके सरल हैं जिन्होंने अपनी मनः स्थिति ध्रुव प्रदेश की तरह शान्त और शीतल बना ली है । अन्तरिक्ष की असंख्य हलचलों को–ध्वनियों एवं प्रकाश किरणों को हमारी भौंडी इन्द्रिय क्षमता देख समझ नहीं पाती । कामचलाऊ मोटी जानकारियाँ दे सकने के स्तर पर ही उनका निर्माण हुआ है । यदि अतीन्द्रिय क्षमता विकसित की जा सके तो सृष्टि के रहस्यों को–अविज्ञात को समझ सकना योगाभ्यासी सिद्ध पुरुषों की भाँति ही सम्भव हो सकता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ध्रुव प्रदेश में कभी–कभी इससे ठीक विपरीत स्थिति भी उत्पन्न होती देखी जाती है । जब हवा की परत आकाश में सघन हो जाती है तो सिर पर उड़ते वायुयान की आवाज भी कानों तक नहीं पहुँचती । यदि अपना मन क्षेत्र तपश्चर्या की–योगाग्नि की गरम पट्टी विनिर्मित कर ले तो सांसारिक आकर्षण, प्रलोभन, कौतूहल, भय, मनोविकार आदि के ढोल ही क्यों न बजते रहें, उनका एक भी शब्द कान में नहीं आता । घोर कोलाहल भरे वातावरण में रहते हुए भी चित्त को समाधिस्थ जैसा बनाकर रखा जा सकता है । कहने-सुनने में तो यह सामान्य सी बात लगती है, पर है इतनी महत्वपूर्ण कि उस आधार पर हर घड़ी आनन्द-मग्न रहने और लक्ष्य की दिशा द्रुतगति से आगे बढ़ चलने के उभय-पक्षीय महान प्रयोजन पूरे हो सकते हैं ।

लकड़ी के जहाज लेकर जब सर्वप्रथम ध्रुव प्रदेशों के शोधकर्त्ता वहाँ गये तो जहाजों में लगी मजबूत कीलें भी उनमें से अपने आप उखड़कर आकाश में उड़ गईं । मस्तिष्कीय ध्रुव केन्द्रों का चुम्बकत्व व्यक्ति की वर्तमान आन्तरिक और बाह्य परिस्थितियों में भारी अन्तर उपस्थित कर सकते हैं । अवांछनीयताएँ कीलों की तरह उखड़ती दृष्टिगोचर हो सकती हैं । नवोदित चुम्बकत्व से पुराने ढर्रे में परिवर्तन होने और नई गति चल पड़ने की सम्भावना साकार हो सकती है । सहस्रार चक्र की साधना का प्रभाव मात्र ईश्वर उपासना का आनन्द देने भर के लिए नहीं, वरन् मनःस्थिति परिस्थिति एवं अस्तित्व स्थिति में इस विकास परिवर्तन का आश्चर्यजनक परिणाम दृष्टिगोचर हो सकता है । उससे कुसंस्कारों की वे कीलें उखड़ सकती हैं, जो साधारणतया बहुत गहरी और मजबूत मालूम पड़ती हैं ।

ध्रुव केन्द्रों की परिस्थितियों में अन्तर पड़ने से इस पृथ्वी पर भयंकर परिवर्तन प्रस्तुत होते रहे हैं । हजारों वर्षों तक चलने वाले 'हिमियुग' एक प्रकार से खण्ड प्रलय जैसी स्थिति उत्पन्न करते रहे हैं । चुम्बकीय तूफानों से लेकर ज्वालामुखी फटने और भूकम्प आने की बड़ी घटनाओं के सम्बन्ध सूत्र ध्रुव प्रदेशों में पाये गये हैं । आज से कोई दो करोड़ वर्ष पूर्व 'रेडियो लारिया' नामक जीव अस्तित्व में आया है, पीछे वह ध्रुवीय संचार में परिवर्तन आने पर इस धरती से ही तिरोहित हो गया । ऋतुओं के प्रभाव एवं समय में भी अन्तर होता रहा है । ध्रुवों पर जो ब्रह्माण्डीय किरणों की बौछार होती है यदि उनकी मात्रा भू-लोक में न्यूनाधिक मात्रा में होने लगे तो इससे प्राणियों की आकृति-प्रकृति में और पदार्थों की संरचना एवं उपयोगिता में भारी उलट–पुलट हो सकती है । शक्ति-संचार बढ जाने से लाभदायक और घट जाने से हानिकारक परिणाम सामने आते हैं ।

यह तो हुई इस धरातल पर काम करने वाली व्यापक कुण्डलिनी की बात । व्यक्तिगत मानवी सत्ता में इसे मूलाधार और सहस्रार के अन्तर्गत काम करने वाली, मेरुदंड मार्ग से दौड़ने वाली दिव्य विद्युत की संज्ञा दी जाती है और उसे कुण्डलिनी कहा जाता है । इस ऊर्जा में शिथिलता एवं विकृति आने पर शरीर दुर्बल एवं अशक्त बनता है । मनोबल गिरता है । सन्तुलन बिगड़ा रहता है । अवसाद, आवेश छाये रहते हैं । भटकाव और असन्तोष का दौर चलता रहता है । दूसरों के प्रति विरक्ति उपेक्षा, ईर्ष्या के भाव उठते हैं । आत्मग्लानि, निराशा, खीज, आशंका की बढ़ी हुई मात्रा चित्त को खिन्न रखती है । डाँवाडोल स्थिति में कोई स्पष्ट निर्णय ले सकना कठिन पड़ता है । तनिक से अवरोध पर्वत जैसे भारी लगते हैं । विपत्ति अब तब सिर पर टूटती ही प्रतीत होती है । भविष्य अन्धकारमय दीखता है । विश्वास न अपने पर होता है और न स्वजनों पर, यह सर्वतोमुखी असमर्थता कुण्डलिनी शक्ति में कमी पड़ जाने के ही चिह्न हैं ।

उपर्युक्त पंक्तियों में पिण्ड को ब्रह्माण्ड का एक छोटा नमूना बताया गया है । वृक्ष का सारा कलेवर एक छोटे से बीज में समाया रहता है । नन्हे से क्षुद्र कीट में मनुष्य शरीर का सारा ढाँचा विद्यमान् है । सौर–मण्डल के ग्रहों का पारस्परिक आकर्षण और क्रिया–कलाप जिस ढंग से चलता है, उसकी एक नन्हीं–सी प्रक्रिया परमाणु परिवार के इलेक्ट्रॉन, न्यूट्रॉन, प्रोटॉन आदि प्रदर्शित करते हैं । इसी प्रकार समस्त ब्रह्माण्ड मनुष्य देह–पिण्ड में एक लघु कलेवर में दृष्टिगोचर होता है । हमारी इस छोटी सी देह में वह सब कुछ विद्यमान है, जो इस निखिल विश्व ब्रह्माण्ड

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में उपस्थित दृश्य और अदृश्य इकाइयों में पाया जाता है। इस पृथ्वी की समस्त विशेषताओं को भी हम अपनी इस छोटी सी देह में विद्यमान् देख सकते हैं।

पृथ्वी की समस्त शक्तियों, विशेषताओं और विभूतियों के केन्द्र उसके सन्तुलन बिन्दु–उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव हैं। यहीं से वह सूत्र संचालन होता है, जिसके कारण यह धरती एक सजीव पिण्ड एवं अगणित जीव धारियों की क्रीड़ा स्थली बनी हुई है। यदि ध्रुवों की स्थिति में किसी प्रकार आघात पहुँच जाय या परिवर्तन उपस्थित हो जाय तो फिर इस भूमण्डल का स्वरूप बदल कर कुछ और ही तरह का हो जायेगा। कहा जाता है कि किसी ध्रुव के संतुलन केन्द्र-बिन्दु पर यदि एक घूँसा मार देने जितना आघात भी पहुँचा दिया जाय, तो यह पृथ्वी अपनी कक्षा से लाखों–करोड़ों मील इधर–उधर हट जायेगी और तब दिन, रात्रि, ऋतु, वर्षा, सर्दी, गर्मी आदि का सारा स्वरूप ही बदलकर किसी दूसरे क्रम में परिणत हो जायेगा। यह छोटा-सा घूँसा आघात भू-पिण्ड को किसी अन्य ग्रह–नक्षत्र से टकराकर चूर-चूर हो जाने की स्थिति में डाल सकता है। कारण स्पष्ट है–ध्रुव ही तो धरती का सारा नियन्त्रण करते हैं और उन्हीं के शक्ति संस्थान कठपुतली की तरह इस भूमण्डल को विभिन्न क्रीड़ा–कलाप करने की प्रेरणा एवं क्षमता प्रदान करते हैं। दोनों ध्रुव ही तो उसकी क्रिया और चेतना के केन्द्र बिन्दु हैं।

जिस प्रकार पृथ्वी में चेतना एवं क्रिया उत्तरी-दक्षिणी ध्रुवों से प्राप्त होती है उसी प्रकार मानव पिण्ड–देह के भी दो ही अति सूक्ष्म शक्ति संस्थान हैं। उत्तरी ध्रुव है–ब्रह्मरंध्र–मस्तिष्क सहस्रार कमल। दक्षिणी ध्रुव है– सुषुम्ना संस्थान–कुण्डलिनी केन्द्र मूलाधार चक्र। पौराणिक कथा के अनुसार क्षीर–सागर में, सहस्र फन वाले सर्प पर विष्णु भगवान शयन करते हैं। यह क्षीर–सागर मस्तिष्क में भरा श्वेत सघन स्नेह सरोवर ही है। सहस्रार कमल एक ऐसा परमाणु है, जो अन्य कोपों की तरह गोल न होकर आरी के दाँतों की तरह कोण कलेवरों से आवेष्ठित है। इन दाँतों को सर्प फन कहते हैं। चेतना का केन्द्र बिन्दु इसी ध्रुव कण में प्रतिष्ठित है। चेतन और अचेतन मस्तिष्कों के अगणित घटकों को जो इन्द्रिय जन्य एवं अतीन्द्रिय ज्ञान प्राप्त होता है, उसका आधार यही ध्रुव–विष्णु अथवा सहस्रार कमल है। ध्यान से लेकर समाधि तक और आत्मा चिन्तन से लेकर भक्तियोग तक की सारी आध्यात्मिक साधनायें तथा मनोबल, आत्म–बल एवं संकल्पजन्य–सिद्धियों का केन्द्र बिन्दु इसी स्थान पर है।

दूसरा दक्षिण ध्रुव–मूलाधार चक्र, सुमेरु संस्थान सुषुम्ना केन्द्र है। जो मल-मूत्र के स्थानों के बीचो-बीच अवस्थित है। कुण्डलिनी, महसर्पिणी, प्रचण्ड क्रिया–शक्ति इसी स्थान पर सोई पड़ी है। उत्तरी ध्रुव का महासर्प अपनी सहचरी सर्पिणी के बिना और दक्षिणी ध्रुव की महासर्पिणी अपने सहचर महासर्प के बिना निरानन्द मूर्छित जीवन व्यतीत करते हैं। मनुष्य शरीर विश्व की समस्त विशेषताओं का प्रतीक प्रतिबिम्ब होते हुए भी तुच्छ-सा जीवन व्यतीत करते हुए कीट–पतंगों की मौत मर जाता है, कोई महत्त्वपूर्ण उपलब्धि प्राप्त नहीं कर पाता। इसका एकमात्र कारण यही है कि हमारे पिण्ड के, देह के दोनों ध्रुव मूर्छित पड़े हैं, यदि वे सजग हो गये होते तो ब्रह्माण्ड जैसी महान चेतना अपने पिण्ड में भी परिलक्षित होती। दोनों ध्रुवों के मध्य संचरण करने वाली कुण्डलिनी का एक अमोघ चमत्कार प्रजनन शक्ति–काम–क्रीड़ा और उसकी अनुभूतियों और प्रतिक्रियाओं के रूप में देखा समझा जाता रहा है। इस रूप में उसका उपयोग करने की इच्छा बोधवान बालकों से लेकर अशक्त वयोवृद्धों तक में पाई जाती है, भले ही वे उसे मूर्त्त रूप देने में तरुणों की तरह सफल न हो सकें। इतना मात्र परिचय वस्तुतः बहुत ही स्वल्प है। कुण्डलिनी कामवासना के रूप में हमें जितना प्रभावित कर सकती है उससे लाखों गुनाा अधिक प्रभावित वह कर सकती है, सर्वांगीण–सर्वतोमुखी–क्रिया शक्ति के रूप में। भूखण्डों को काटकर वीरान बनाती चलने वाली उच्छृंखल नदियों को जब बाँध के रूप में रोका और नहरों के रूप में प्रवाहित किया जाता है, तो उससे सहस्रों एकड़ जमीन सींची जाती और उससे प्रचुर धन-धान्य की उत्पत्ति होती है। ठीक इसी प्रकार प्रजनन शक्ति को कामुकता की उच्छृंखलता से रोककर यदि अन्य रचनात्क कार्यों में लगा दिया जाय तो उसके

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सत्परिणाम आश्चर्यजनक होते हैं । इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए आध्यात्मिक साधनाओं में इन्द्रिय संयम को–ब्रह्मचर्य को बहुत महत्त्व दिया गया है इसका प्रत्यक्ष उदाहरण रामकृष्ण के जीवन में देखा जा सकता है । रामकृष्ण परमहंस के जीवन चरित्र में 'कुमारी पूजन' की तंत्र प्रक्रिया का वर्णन आता है । इस अश्लील पूजा–पद्धति के पीछे तंत्रशास्त्र का प्रयोजन साधक की मनोभूमि में वह दृढ़ता उत्पत्र करना है, जिसके अनुसार वह मनोबल को विचलित होने से बचा सके ।

समुद्र मन्थन कुण्डलिनी शक्ति की स्थूल प्रेरणा कामुकता को अन्य दिशा में नियोजित करना है । यों कामुकता भी विषयानन्द और सन्तान लाभ का सुख देती है, पर यह दो छोटे लाभ नगण्य हैं । समुद्र मन्थन में १४ रत्न निकले थे । जिनमें अमृत, कल्पवृक्ष, कामधेनु, जैसे अति उत्कृष्ट और अति महत्वपूर्ण भी थे । यह ऐतिहासिक अथवा पौराणिक उपाख्यान हमारे जीवन में चरितार्थ किया जा सकता है । कुण्डलिनी जागरण साधना में काम वासना का निग्रह समुद्र मन्थन की भूमिका प्रस्तुत करता है । यों आगे चलकर आत्म-प्राण और महाप्राण को इड़ा पिंगला के द्वारा सुषुम्ना तक पहुँचने की साधना भी समुद्र मन्थन का दूसरा कार्यक्रम प्रस्तुत करती है, पर उसका प्रथम सोपान तो इन्द्रिय निग्रह पर ही अवलम्बित है ।

उत्तरी ध्रुव सहस्रार विचार शक्ति का और दक्षिणी ध्रुव मूलाधार क्रिया शक्ति का केन्द्र है । यह दोनो ही शक्तियाँ अद्भुत एवं महान् हैं । इनका समन्वय ही व्यक्ति की भौतिक एवं आत्मिक स्थिति को समुन्नत बनाने में समर्थ होता है । सहस्रार की विचारणात्मक साधनायें प्रत्याहारधारणा, ध्यान और समाधि स्तर की हैं । उनके अनेक प्रयोग और प्रयोजन हैं । उनकी चर्चा भी यथा अवसर करेंगे । इन पंक्तियों में तो कुण्डलिनी शक्ति का आरंभिक परिचय कराना और उसका प्रथम सोपान प्रस्तुत करना ही अभीष्ट है । अस्तु यहाँ इतना समझना और समझाना ही पर्याप्त है कि हम कुण्डलिनी के स्थूल स्वरूप की महत्ता समझें और यह अनुमान लगावें कि यदि उसे अन्तर्मुखी बनाकर प्रसुप्त दिव्य शक्तियों के जागरण में विधिवत प्रयुक्त किया जा सके, तो अदभुत एवं अनुपम लाभ उपलब्ध किये जा सकते हैं ।

कुण्डलिनी शक्ति के बहिर्मुखी चमत्कार को देख लो । काम वासना के कीड़े अपने और अपनी पत्नी के शरीर को बेतरह गलाते-घुलाते रहते हैं । विषयानन्द की एक हल्की सी झाँकी ही उन्हें मिल पाती है । अपव्यय से अपने को खोखला कर डालने वाले उपयुक्त इन्द्रिय सुख भी तो प्राप्त नहीं कर पाते । कितनी बार निष्फलता के उपरांत कभी ही सन्तानोत्पादन में । सफलता मिलती है । सो भी दीन–दुर्बल सन्तान के रूप में यदि वासनात्मक नियंत्रण द्वारा कुण्डलिनी की बहिर्मुखी शक्ति को भी सुव्यवस्थित बना लिया जाय तो उसके प्रतिफल भी आश्चर्यजनक होते हैं । ब्रह्मचारी हनुमान लंका दहन के उपरान्त समुद्र में कूदे तो उनके कुछ उत्पादक कण जल में चले गये । उनको धारण कर मत्स्य कन्या ने मकरध्वज जैसे पराक्रमी को जन्म दिया । भीम का वनवासी पुत्र 'घटोत्कच' कितना शक्तिशाली था । व्यास द्वारा उत्पन्न किये गये तीन पुत्र पाण्डु, धृतराष्ट्र और विदुर अपने ढंग के अनोखे थे । विश्वामित्र की कन्या शकुन्तला ऐसी सफल माता रही कि उसके पुत्र भरत के नाम पर इस देश का भारत नामकरण हुआ । लोमस पुत्री ऋगी, व्यास पुत्र शुकदेव आदि की अगणित पौराणिक और ऐतिहासिक गाथायें मिलती हैं, जिनसे सिद्ध है कि कामुकता पर नियंत्रण करने वाले ही सुसंतति उत्पन्न करने में समर्थ होते हैं । विषयानन्द का भी यदि कोई मूल्यांकन किया जाय, तो वह भी संयमी व्यक्तियों को ही प्राप्त होता है । कुण्डलिनी के संचित, परिपुष्ट एवं परिष्कृत शक्ति ही भौतिक प्रयोजनों को पूरा कर सकती है । जो उसके साथ खिलवाड़ करते रहते हैं, उन्हें तो शारीरिक अशक्ति और मानसिक अवसाद ही हाथ लगने वाले हैं । गृहस्थ जीवन में भी ब्रह्मचर्य की अधिकाधिक मर्यादाओं का पालन किया जाता रहे, तो उससे मनुष्य की शारीरिक एवं मानसिक दृढ़ता अक्षुणय बनी रह सकती है ।

मनुष्य शरीर में शारीरिक और मानसिक विद्युत शक्ति का एक प्रचण्ड प्रवाह निरन्तर बहता रहता है । वैसे तो उसका प्रभाव समान लिंग वाले प्राणी पर भी पड़ता है, पर विपरीत लिंग की ओर तो वह विद्युत धारा और भी तीव्र गति से प्रवाहित होती है । वासनात्मक आकर्षण का कारण यह विद्युत प्रवाह ही हैं । नर-नारी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के सम्पर्क से वह धारा आकर्षण तक सीमित न रह कर प्रत्यावर्धन के रूप में बदल जाती है। दो तालाब को एक नाली से जोड़ दिया जाय, तो अधिक ऊँचे जल का प्रवाह नीचे स्तर के जल की ओर प्रवाहित होने लगेगा और यह प्रवाह तब तक चलता रहेगा, जब तक दोनों जल एक स्तर पर न आ जायें। उच्च मनोबल वाली आत्माओं को अपनी निधि का बचाव करने के लिये काम संयम करना पड़ता है। अन्यथा उनकी कष्ट साध्य संचित शक्तियाँ उस कामुक प्रवाह में बहकर दूसरे के पास चली जायँ और वह खाली हाथ रह जाय। रोगी और निरोग, पापी और पुण्यात्मा मूर्ख और बुद्धिमान, स्वार्थी और परमार्थी भिन्न प्रकृति के दो प्राणी यदि विषय बन्धन में बँधते हैं, तो मिश्रित रुप से एक की विशेषताएँ दूसरे में जायेंगी। बलवान पक्ष अपनी विशेषताएँ दूसरे को देगा और उसकी दुर्बलताएँ खरीद लेगा। उसमें कमजोर पक्ष लाभ में रहेगा और सबल पक्ष घाटा उठायेगा। नर-नारी का मिलन दोनों का स्तर एक जैसा बना देता है। पार्वती हिमाचल की कन्या थी,पर शिव के साथ विवाह होने पर वे 'अर्ध नारी नन्देश्वर' की सहधर्मिणी ही नहीं अर्धांगनी भी बन गईं। शारीरिक मिलन मात्र में जब भारी सहानुभूति एक दूसरे में उत्पन्न हो जाती है, तो साथ में आत्म-मिलन भी रहने पर दोनों के व्यक्तित्वों का प्रत्यावर्तन नितान्त स्वाभाविक है। महामानवों की धर्म-पत्नियाँ प्रायः अपने पतियों जैसी ही संपूजित एवं यशस्विनी हुई हैं। भले ही उनकी योग्यता न्यून रही हो। कारण स्पष्ट है, बौद्धिक स्तर भिन्न रहने पर भी उनका आत्मिक स्तर एक हो जाता है और आध्यात्मिक मूल्यांकन की दृष्टि से वे पति-पत्नी एक ही स्तर के बन जाते हैं। देवताओं के साथ उनकी पत्नियों के नाम जुड़े होने का यही कारण है। सीता-राम, राधेश्याम, लक्ष्मी-नारायण, उमा-महेश, शची-पुरन्दर, वाणी-हिरण्यगर्भ आदि सपत्नीक नामों का उच्चारण इसी तथ्य को प्रतिपादित करता है।

श्री रामकृष्ण परमहंस की पत्नी शारदामणि, गाँधी जी की पत्नी कस्तूरबा की महानता उनके पतियों द्वारा प्रदत्त थी। हमारी पत्नी, माता भगवती देवी ने भी कुछ आध्यात्मिक उपलब्धियाँ ऐसे ही निकट सम्पर्क से प्राप्त की हैं। जब साधारण सम्पर्क, सम्बन्ध, सत्संग लोगों को प्रकाश एवं प्रेरणा प्रदान कर सकते हैं, तो शरीर एवं मन का अन्तरंग प्रत्यावर्तन प्राणियों की विशेषतायें एक-दूसरे में परिवर्तन करे, तो इसमें अचम्भे की कुछ भी बात नहीं है।

श्री रामकृष्ण परमहंस ने शक्तिपात द्वारा अपनी तप शक्ति एवं महत्ता विवेकानन्द को परिवर्तित कर दी थी। मरते समय उन्होंने अपने प्रिय शिष्य से कहा-"मेरे पास कुछ शेष नहीं है, जो था तुझे दे चुका।" यह आध्यात्मिक एवं समग्र शक्तिपात था। शरीरिक शक्तिपात काम-क्रीड़ा द्वारा करते रहने पर मनुष्य अपनी शक्तियों का अंशतः क्रमशः दूसरे को प्रदान करता रहता है। वह भी यदि उसे धारण करने योग्य न रहा तो केवल बर्बादी ही होती रहती है। इस प्रकार काम सेवन एक प्रकार का आत्मक्षरण ही है। साँप किसी को काटकर जैसे निस्तेज, हतप्रभ हो जाता है, वैसे ही कामी व्यक्ति भी निस्वत्व होता चला जाता है। विचारशील व्यक्ति अपनी इस मूल्यवान निधि को सोच-समझकर केवल उपयोगी प्रयोजन के लिये ही व्यय करते हैं।

कुण्डलिनी शक्ति का वासनात्मक प्रयोग आज सर्वत्र हो रहा है। उससे यह प्रचण्ड विद्युत-धारा ऐसे ही नष्ट-भ्रष्ट हो जाती है। यदि दाम्पत्य जीवन में भी इसका क्रमबद्ध प्रयोग हो सका होता, तो एक सशक्त पक्ष अपने दूसरे साथी को कुछ लाभ पहुँचा सका होता। पर वैसा भी तो नहीं होता। दोष, दुर्गुणों से भरे मनुष्य अपने दाम्पत्य-जीवन में अपनी दुष्प्रवृत्तियाँ ही एक-दूसरे को देकर नीचे की ओर ही धकेलते हैं। आध्यात्मिक दृष्टि से किये गये विवाहों में साथी की उच्च आत्मिक स्थिति परखी जाती थी, पर आज तो दूसरी ही कसौटियाँ सामने आ गईं, तो विवाह भी व्यक्तित्वों का एक-दूसरे द्वारा अभिवर्धन करने का उद्देश्य खोकर नीचे धकेलने का ही आधार बने हुए हैं। विवाह करने वालों में से आज कोई विरले ही ऐसे हैं, जो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सावित्री सत्यवान् च्यवन सुकन्या जैसा लाभ दूसरे को दे पाते हैं ।

इन तथ्यों पर विचार करते हुए ब्रह्मचर्य की उपयोगिता का रहस्य सहज ही समझ में आता है । यह प्रकृति के विरुद्ध दुराग्रह नहीं वरन् शक्ति के उत्पादन, पोषण, संचय एवं सदुपयोग का महान् विज्ञान है, जिसे चिरकाल से परखा जाता और सही प्रमाणित किया जाता रहा है । हमें ब्रह्मचर्य की कुण्डलिनी महाशक्ति के सन्दर्भ में देखना, परखना होगा और संयम साधना द्वारा वह पथ प्रशस्त करना होगा, जिसके आधार पर कि पिण्ड के–दक्षिणी ध्रुव–मूलाधार के शक्तिपुंज को शरीर और मन की अगणित दिव्य शक्तियों के अभिवर्धन में प्रयुक्त करके मानवीय महत्ता को देवोमय स्तर के उच्च–शिखर तक पहुँचाया जा सके ।

कुण्डलिनी जागरण की एक फुस्कार से भी कितना काम चल सकता है, इसका छोटा–सा अनुभव हम अपने व्यक्तिगत जीवन में कर चुके हैं । उसकी क्षमता मस्तिष्क को इतना तीव्र बना सकती है कि चारों वेद, १०८ उपनिषद, छहों दर्शन, २० स्मृति, १८ पुराण, प्रमुख ब्राह्मण एवं असंख्य ग्रन्थों का भाषान्तर तथा लगभग ३२०० से अधिक अन्य पुस्तकों का लेखन एक ही व्यक्ति द्वारा सम्पन्न हो सका, जो कार्य की विशालता को देखते हुए अचम्भा जैसा लगता है । सार्वजनिक क्षेत्र में संगठन, प्रचार एवं रचनात्मक कार्यों को देखते हुए भी लगता है कि १००० व्यक्तियों द्वारा सम्भव हो सकने वाला कार्य एक व्यक्ति ने सम्पन्न किया और भी अनेक अनुभव ऐसे हैं जो अभी अप्रकट रखे गये हैं । वे बताते हैं कि अधूरी एवं आंशिक कुण्डलिनी की छोटी–सी हलचल भी मनुष्य की क्रियाशक्ति को कितनी बढ़ा सकती है । फिर समग्र कुण्डलिनी जागरण के आधार पर तो किसी की शक्ति कितनी बढ़ सकती है, इसकी कल्पना कर सकना भी कठिन है ।

अध्यात्म की महान् शक्ति इस विश्व की सर्वोपरि शक्ति कुण्डलिनी है । उसे उपलब्ध करने के लिये हमें अपने उत्तरी और दक्षिणी दोनों ध्रुवों को साधन प्रक्रियाओं और तपश्चर्याओं द्वारा सजग करना चाहिये । पिण्ड (शरीर) के ये जाग्रत ध्रुव उतने ही शक्ति सम्पन्न हो सकते जितने पृथ्वी के ध्रुव । धरती के ध्रुव लकड़ी के जहाज में लगी मजबूत कीलों को अनायास ही उखाड़ कर उड़ा ले जाते हैं । मनुष्य के ध्रुव केन्द्र समस्त अवरोधों को उखाड़ सकते हैं और समस्त दिव्य सम्भावनाओं को अपने चुम्बकत्व से खींचने, जमा करने में समर्थ हो सकते । जो नर को नारायण स्तर का बनाकर दिखा सकते हैं । कुण्डलिनी साधना से यही पथ प्रशस्त होता है इसलिये उसकी सफल साधना का महत्व बताते हुए कहा है–

उद्घाटयेत्कपाटं तु तथा कुञ्चिकया हठात् ।
कुण्डलिन्या तथा योगी मौक्षद्वारं प्रभेदयेत् ॥

–गोरक्ष प० १ ।५१

जैसे ताले में ताली लगाकर द्वार खोलते हैं उसी प्रकार समस्त बन्धन अवरोधों से छुटकारे का मार्ग कुण्डलिनी साधना द्वारा खोलना चाहिए ।

यदा भवति सा संविद्विगुणीकृतविग्रहा ।
सा प्रसूते कुण्डलिनी शब्द ब्रह्ममयी विभुः ॥
शक्ति ततो ध्वनितस्मात्रादस्तस्मात्रिबोधिका ।
ततोऽर्धेन्दुस्ततो बिन्दुस्तस्मादसीत्परा ततः ॥
पश्यन्ती मध्यमा वाणी वैखरी सर्ग जन्मभूः ।
इच्छा ज्ञान–क्रियात्मासौ तेजोरूपा गुणात्मिका ॥
क्रमेणानेन सृजति कुण्डली वर्णमालिकाम ॥

–महा तन्त्र

जाग्रत हुई कुण्डलिनी असीम शक्ति का प्रसव करती है । उससे नाद जाग्रत होता है फिर बिन्दु । परा, पश्यन्ती, मध्यमा और वैखरी यह चारों वाणियाँ प्रखर होती हैं । इच्छा शक्ति, ज्ञान शक्ति, और क्रिया शक्ति में उभार आता है और वर्ण मालिका की ऋंखला से सम्बद्ध अनेक शारीरिक मानसिक शक्तियों का विकास होता है ।

प्रचण्ड ऊर्जा के दो प्रवाह कुण्डलिनी में

शरीरगत ऊर्जा का केन्द्र मूलाधार माना गया है और चेतन ऊर्जा का उद्गम केन्द्र सहस्रार । मूलाधार चक्र जननेन्द्रिय मूल में है और सहस्रार चक्र

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मस्तिष्क के मध्य केन्द्र में । इन दोनों की तुलना दक्षिण और उत्तर ध्रुवों से की जाती है । जिस प्रकार धरती का समस्त वैभव अनतग्रही अनुदानों से परिपूर्ण है और वह ध्रुव केन्द्रों के माध्यम से उपलब्ध होता है ठीक उसी प्रकार सहस्रार के माध्यम से ब्रह्माण्डीय शक्तियाँ उपलब्ध की जाती हैं और उपयोग में बची-खुची जो अनावश्यक लगती हैं, वे मूलाधार से निकल जाती हैं । सहस्रार को उत्पादन अर्जन का माध्यम और मूलाधार को विसर्जन निष्कासन का द्वार कहा गया है । आध्यात्मिक कमाई ब्रह्मरन्ध्र के केन्द्र से होती है और उसका खर्च यदि महत्वपूर्ण प्रयोजन में नहीं बन पड़ा तो मूलाधार के समीप वाला छिद्र उसे काम कौतुक सहारे विसर्जित करता बहाता रहता है । सहस्रार के माध्यम से समाधि का आनन्द और मूलाधार के माध्यम से कुण्डलिनी का लाभ उठाया जा सकता है ।

दिव्य उपार्जनों को प्रखर बनाने और श्रेष्ठ उपयोग में लगाने की विद्या का नाम कुण्डलिनी जागरण है । कुण्डलिनी उस प्राण विद्युत का नाम है, जिसमें शरीरगत ऊर्जा का अंश कम है और प्राण चेतना का भाग अनुपात अधिक होता है । यदि उसका महत्व समझा और उपयोग जाना जा सके तो मनुष्य प्रचलित सम्पदा उपार्जनों की तुलना में अधिक उच्चस्तरीय लाभ कमाने में सफल हो सकता है ।

कुण्डलिनी का शब्दार्थ है–घेरा बना कर बैठना । कुण्डलिनी मारकर सर्प बैठता है । इसलिए उसी की उपमा प्रायः काम में लायी जाती है । पृथ्वी शेषनाग के फन पर रखी हुई है । आकाश तत्व का देवता 'अनन्त' महासर्प है । इस पौराणिक मान्यता में विश्व–ब्रह्माण्ड की तथा पृथ्वी की स्थिति का निरूपण है । पाताल को शेष लोक कहते हैं । ऊपर के ब्रह्मलोक पर भी शेष सर्प का ही आधिपत्य है । विष्णु भगवान शेष सर्प पर सोये हुए हैं । शिव लोक में भी सर्प साम्राज्य है, वे भगवान शंकर के अंग–अंग से लिपटे हुए हैं । इस प्रकार अधःलोक और ऊर्ध्वलोक में पृथ्वी के ऊपर और नीचे सर्पसत्ता का ही आधिपत्य है । इस विवेचना के कुण्डलिनी शक्ति के स्वरूप की आरम्भिक जानकारी मिलती है ।

शक्ति का ही विकसित रूप पदार्थ है । शरीर के अवयव यों रासायनिक पदार्थों से बने हैं, पर मूलतः वे शक्ति रूप हैं । शक्ति ही सघन होकर रासायनिक तथा दूसरे पदार्थों का रूप धारण करती है और इन्हीं के संयोग से शरीर बन जाते हैं । संक्षेप में शरीर रचना का मूलतत्व–मूल आधार–एक विद्युत शक्ति के रूप में ही उद्भुत होता है । रतिक्रिया के घर्षण से यही विद्युत उत्पन्न होती है । उसी से शुक्राणु एवं डिम्ब कीट मिल कर गर्भधारण का सुयोग बनाते है । शरीरगत् सभी हलचलों, क्षमताओं और विशेषताओं का श्रेय जिन गुण सूत्रों को दिया जाता है–उनमें जिस वंशानुक्रम सम्पदा को खोजा जाता है–वह वस्तुतः एक सचेतन विद्युत की ही प्रतिक्रियाएँ हैं। यह प्राण विद्युत किसी शरीर का उत्पादन करने से लेकर उसका आजीवन बना रहने वाला ढाँचा खड़ा करती है इस ढाँचे में शरीर और मन दोनों की ही संरचना सम्मिलित है । संक्षेप में प्राणधारियों काय कलेवर का अस्तित्व, स्वरूप एवं भविष्य निर्धारण करने वाली प्राण विद्युत का नाम कुण्डलिनी है ।

कुण्डलिनी का दूसरा सिरा मस्तिष्क मध्य ब्रह्मरन्ध्र में है । यह चेतनामूलक है । चेतना यों समस्त शरीर में संव्याप्त है । पर उसका संचार केन्द्र मस्तिष्क ही है । प्राण विद्युत का ज्ञानपरक सिरा मस्तिष्क में और शक्ति परक सिरा मूलाधार में है । दोनों प्रायः पृथक ही रहते हैं । दोनों सिरे अपने–अपने सीमित प्रयोजनों को पूरा कर पाते हैं । पृथक्–पृथक् उनकी शक्ति इतनी ही है कि अपने स्थानीय उत्तरदायित्व को वहन कर सके । बिजली के दो तार अलग–अलग रहें तो उनसे कोई विशेष प्रयोजन पूरा नहीं होता, पर जब वे मिल जाते हैं तो उस संयोग से प्रचण्ड प्रवाह उत्पन्न होता है । कुण्डलिनी जागरण की साधना में प्राण–विद्युत के दोनों सिरों को मिला दिया जाता है । इस मिलन का चमत्कार वैसा ही होता है । जिस प्रकार नर–नारी के मिलन से एक नये उत्साह का, नये उत्तरायित्व का और नये परिवार का आरम्भ होता है । कुण्डलिनी जागरण में मूर्छना की समाप्ति और चेतना की अभिवृद्धि ही नहीं, दो शक्ति ध्रुवों की मिलन प्रक्रिया भी सम्मिलित है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मूलाधार वाला सिरा प्रजनन के लिए उत्साह एवं सामर्थ्य जुटाने में लगा रहता है और उसी प्रवाह की पूर्ति कर पाता है । सहस्रार की सामर्थ्य भी उपार्जन, उपयोग एवं व्यवहार व्यवस्था में नियोजित हो जाती है ।

मूलाधार चक्र को प्राण जीवनी शक्ति, सृजन प्रेरणा, जिजीविषा, उमंग आदि मैं स्रोत के रूप में समझा जा सकता है । उसका अनवरत प्रयास काया के समस्त भौतिक प्रयोजनों में आवश्यक समर्थता एवं प्रेरणा उत्पन्न करने में लगा रहता है । इन्हीं में से एक उत्साह काम–क्रीड़ा है । काम शब्द का वास्तविक अर्थ क्रीड़ा–विनोद एवं खिलाड़ी जैसे आनन्द की अनुभूति है । इस प्रयोजन में प्रायः 'काम' कौतुक की हलचल को प्रधानता मिल जाती है । इसलिए रति प्रयोजनों के अर्थ में ही इन दिनों 'काम' शब्द का उपयोग होने लगा है । मूल अर्थ इसमें कहीं अधिक व्यापक है, उसे कर्मठता और प्रगतिशीलता का उमँग भरा सम्मिलन कह सकते हैं । यदि ऐसा न हो तो जीवन के चार पुण्य फलों में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष में काम शब्द का प्रयोग न हुआ होता । भला योगी, तपस्वी, ब्रह्मज्ञानी, तत्वज्ञानी क्यों 'काम' जैसी अश्लील और शक्तिक्षरण करने वाली प्रक्रिया को जीवन फलों में सम्मिलित करते ।

कुण्डलिनी का दूसरा ऊपरी सिरा मस्तिष्क मध्य सहस्रार में है । यह जीव चेतना का ज्ञान धारणा का केन्द्र है । यह जितना विकसित होता चला जाता है, समझदारी बढ़ती जाती है । उसी अनुपात में मनुष्य अधिक आजीविका एवं प्रतिष्ठा प्राप्त करता है । इस केन्द्र की रहस्यमयी परतें कुण्डलिनी जागरण के अभ्यास से उभारी और सशक्त बनायी जा सकती हैं । इस उपार्जन को दिव्य ज्ञान या दिव्य दृष्टि कहते हैं । अतीन्द्रिय ज्ञान के कौतूहलपूर्ण चमत्कारों की चर्चा प्रायः होती रहती है । विशिष्ट बुद्धिमानों की अद्‌भुत मस्तिष्कीय प्रतिभा का विवरण सुनने को मिलता रहता है । उसके पीछे किसी रहस्यमय चेतना परत का प्रस्फुरण ही काम करता है । दूरदर्शी सूझबूझ के सहारे लोग ऐसी योजनाएँ बनाते हैं, जिनके सफल होने में कदाचित ही व्यवधान पड़ते हैं । इसे भी मानसिक विशिष्टता ही कह सकते हैं, जो सर्व साधारण में नहीं होती । ऐसी उपलब्धियों में भी उन्हीं गहरी पर्तों का उभार काम करता है, जिन्हें सामान्य प्रयत्नों से नहीं वरन् कुण्डलिनी जागरण जैसे आध्यात्मिक प्रयत्नों से ही पूरा किया जाता है । तत्वदर्शी, महामनीषी ब्रह्मज्ञानी आत्माएँ अपनी दिव्य क्षमताओं को उच्चस्तरीय प्रयोजनों में प्रयुक्त करने की उपयोगिता समझते हैं । फलतः वे महात्मा, देवात्माख, ब्रह्मात्मा जैसी भूमिकाएँ सामान्य शरीर धारण किए रहने पर भी निवाहते रहते हैं । उसमें हेर–फेर करने की क्षमता भी उनमें पाई जाती हैं, इसलिए उन्हें सिद्ध पुरुष भी कहा जाता है । यह मानवी सत्ता के उत्तरी ध्रुव का प्रखरीकरण हुआ । इसे महासर्प का जागरण भी कह सकते हैं ।

दक्षिणी ध्रुव का–मूलाधार का–जागरण वह है, जिसमें कामुकता को उदात्त परिष्कृत बनाया जाता है । मनुष्य पराक्रमी पुरुषार्थी, सनस्वी, तेजस्वी, ओजस्वी बनता है और महामानवों जैसी भूमिका निभाता है । उसकी काम–क्रीड़ा हँसते–हँसते स्वभाव में मिलते–मिलाते व्यवहार में सुविस्तृत होती देखी जा सकती है, ऐसे व्यक्ति कुरूप होते हुए भी सुन्दर, जराजीर्ण रहते हुए भी सुन्दर लगते हैं । इसे महासर्पिणी का चमत्कार ही समझा जाना चाहिए ।

दिव्य शक्तियों का केन्द्र सहस्रार एवं ब्रह्मरंध्र

मानवी सत्ता का मौलिक स्रोत ब्राह्म चेतना है । पृथ्वी के उत्तरी एवं दक्षिणी ध्रुव के समान मानवी सत्ता के भी दो ध्रुव हैं संहस्रार और मूलाधार । सहस्रार को उत्तरी ध्रुव के समतुल्य समझा जा सकता है । जिस प्रकार सूर्य के अनुदान उत्तरी ध्रुव पर बरसते हैं और सम्पूर्ण पृथ्वी और इस केन्द्र से आवश्यकता के अनुरूप शक्ति प्राप्त होती है । उसी प्रकार ब्रह्मी चैतना का चैतन्य प्रवाह अन्तरिक्ष में सतत् प्रवाहित होता रहता है । मानवीकाया में वह सहस्रार के माध्यम से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अवतरित होता है तथा दक्षिणी ध्रुव मूलाधार तक पहुँच जाता है ।

उत्तरी ध्रुव, सहस्रार चक्र मस्तिष्क के मध्य में अवस्थित बताया गया है । सिर के मध्य में एक हजार पंखुड़ियों का कमल है । उसे ही सहस्रार चक्र कहते हैं । उसी में ब्राह्मी शक्ति या शिव का बास बताया गया है । यहीं आकर कुण्डलिनी शिव से मिल गयी है । यहीं से सारे शरीर की गतिविधियों का उसी प्रकार संचालन होता हैं, जिस प्रकार पर्दे में बैठा हुआ कलाकार उँगलियों को गति दे देकर कठपुतलियों को नचाता है । इसे आत्मा का स्थान आदि कहते हैं । विराट् ब्रह्माण्ड में हलचल पैदा करने वाली सारी सूत्र शक्ति और विभाग इसी सहस्रार के आस–पास फैले पड हैं ।

सहस्रार का शाब्दिक अर्थ है हजार पंखुड़ियों वाला । शास्त्रों में इसी का अलंकारिक वर्णन विभिन्न रूपों में किया गया है । सहस्र दल कमल, कैलाश पर्वत, शेषनाग, क्षीर सागर जैसे दिव्य सम्बोधन इसी के लिए प्रयोग किये गये हैं । उपाख्यान आता है कि क्षीर सागर में शेषनाग पर भगवान विष्णु शयन करते हैं । इस अलंकारिक वर्णन में इस तथ्य का उद्घाटन किया गया है । कि जीव सत्ता के ऊर्ध्वस्थल अर्थात् दैवीयगुणों से सम्पन्न चेतना में ही परमात्मा अवतरित होते–निवास करते हैं । सहस्रार को कैलाश पर्वत के रूप में इंगित करने तथा भगवान शंकर के तप रत होने में भी उसी तथ्य का वर्णन हुआ है ।

शास्त्रों में कुण्डलिनी को अनेक शक्तियों और सिद्धियों का प्राण कहा है । सुषुप्त पड़ी कुण्डलिनी को जाग्रत कर लेने वाला इस लोक के अनन्त ऐश्वर्य का स्वामी बन जता है । भारतवर्ष में इस विद्या की शोध की गई है । कुण्डलिनी शक्ति की कोई सीमा और थाह नहीं है ।

किन्तु कुण्डलिनी जाग्रत कर लेना जीव का अन्तिम लक्ष्य नहीं है । जीव का अन्तिम लक्ष्य है मोक्ष की प्राप्ति या ब्रह्म निर्वाण । अपने आपको ब्रह्म की सायुज्यता में पहुँच देना ही मनुष्य देह धारण करने का उदेश्य है अनेक साधन और योग उसी के लिए बने हैं । कुंडलिनी का भी वही उद्देश्य है । उस पर अपनी टिप्पणी करते हुए हठ योग प्रदीपिका में लिखा है–

उद्घाट्येत्कपाटं तु यथा कुंचिकया हठात्।
कुण्डलिन्या तथा योगी मोक्ष द्वारं विभोदयेत् ॥

अर्थात् जिस प्रकार कोई मनुष्य अपने बल से द्वार पर लगी हुई अर्गला आदि को ताली से खोलता है उसी प्रकार योगी कुण्डलिनी के अभ्यास द्वारा सुषुम्ना के मार्ग का भेदन करता है और ब्रह्म–लोक में पहुँच कर मोक्ष को प्राप्त होता है ।

इस सहस्रार चक्र तक पहुँचने पर ही साधक को अमृतपान का सुख, विश्वदर्शन, संचालन की शक्ति और समाधि का आनन्द मिलता है उपरोक्त श्लोक में जिस स्थान को ब्रह्मलोक कहा गया है, वह यही सहस्रार चक्र है । यहाँ तक पहुँचना बहुत कठिन होता है । अनेक साधक तो नीचे के ही चक्रों में रह जाते हैं और उनमें जो आनन्द मिलता है उसी में लीन हो जाते हैं । इसलिये कुण्डलिनी साधना द्वारा मिलने वाली प्रारम्भिक सिद्धियों को साधक माना गया हैं । जिस प्रकार धन–वैभव, ऐश्वर्य और सौन्दर्यवती युवती पत्नियों का सुख पाकर मनुष्य संसार को ही सब कुछ समझ लेता है उसी प्रकार कुण्डलिनी का साधक भी बीच के ही छः चक्रों में दूरदर्शन, दूरश्रवण, दूसरों के मन की बात जानना, भविष्य दर्शन आदि अनेक सिद्धियाँ पाकर उनमें ही आनन्द का अनुभव करने लगता है और परम–पद का लक्ष्य अधूरा ही रह जाता है ।

सहस्रार चक्र में पहुँच कर भी साधक बहुत समय तक उस पर स्थिर नहीं रह पाते हैं । वह साधक की आन्तरिक और आध्यात्मिक शक्ति तथा साधना के स्वरूप पर निर्भर है कि वह सहस्रार में कितने समय तक रहता है उसके बाद वह फिर निम्नतर लोकों के सुखों में जा भटकता है पर जो अपने सहस्रार को पका लेते हैं वह पूर्ण ब्रह्म को प्राप्त कर अनन्त काल तक ऐश्वर्य सुखोपभोग करते हैं ।

सहस्रार दोनों कनपटियों से २–२ इन्च अन्दर और भौहों से भी लगभग ३–३ इन्च अन्दर मस्तिष्क के मध्य में 'महाविवर' नामक महाछिद्र के ऊपर छोटे से पोले भाग में ज्योति–पुंज के रूप में अवस्थित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । तत्त्वदर्शियों के अनुसार यह उलटे छाते या कटोरे के समान सत्रह प्रधान प्रकाश तत्वों से बना होता है, देखने में मर्करी लाइट के समान दिखाई देता है । छान्दोग्य उपनिषद् में सहस्रार दर्शन की सिद्धि का वर्णन करते हुए कहा गया है–'तस्य सर्वेषु लोकेषु कामचारो भवति' अर्थात् 'सहस्रार' प्राप्त कर लेने वाला सम्पूर्ण भौतिक विज्ञान की सिद्धि हस्तगत कर लेते हैं यही वह शक्ति केन्द्र है, जहाँ से मस्तिष्क शरीर का नियन्त्रण करता है और विश्व में जो कुछ भी मानवकृत विलक्षण विज्ञान दिखाई देता है । उनका सम्पादन करता है । मस्तिष्क के इसी मध्य भाग से एक विद्युत उन्मेष रह–रह कर सतत् प्रस्फुटित होते रहते हैं । इसे एक विलक्षण विद्युतीय फब्बारा कहा जा सकता है । वहाँ से तनिक–तनिक रुक–रुक कर एक फुलझड़ी–सी जलती रहती है । हृदय की धड़कन में भी ऐसे ही मध्यवर्ती विराम रहते हैं । ताप, ध्वनि आदि की प्रवाहमान तरंगों में भी उतार चढ़ाव होते हैं । मस्तिष्कीय मध्य बिन्दु में अवस्थित ऊर्जा उद्गम की गतिविधि भी ठीक उसी प्रकार की हैं । वैज्ञानिक इन उन्मेषों को मस्तिष्क के विभिन्न केन्द्रों की सक्रियता–स्फुरणा का मुख्य आधार मानते हैं । संत कबीर ने कहा है–'हिरदय बीच अनाहत बाजे, मस्तक बीच फबारा ।' यह फबारा ही 'रेटीकुलर एक्टीवेटिंग सिस्टम' या सहस्रार है ।

ब्रह्मरंध्र एक प्रकार से जीवात्मा का कार्यालय है । इस दृश्य जगत् में जो कुछ है और जहाँ तक हमारी दृष्टि पहुँच नहीं सकती उन सबकी प्राप्ति की प्रयोगशाला है । भारतीय तत्वदर्शन के अनुसार वहाँ १७ तत्वों से संगठित ऐसे विलक्षण ज्योति पुंज विद्यमान हैं जो दृश्य जगत् में स्थूल नेत्रों से कहीं भी नहीं देखे जा सकते । समस्त ज्ञानवाहक सूत्र और वात नाड़ियाँ यहीं से निकल कर सारे शरीर में फैलती हैं । सूत्रात्मा इसी भास्कर श्वेत दल कमल में बैठा हुआ चाहे जिस नाड़ी के माध्यम से शरीर के किसी भी अंग को आदेश–निर्देश और संदेश भेजता और प्राप्त करता रहता है । यह किसी भी स्थान में हलचल पैदा कर सकता है । किसी भी स्थान की बिना किसी वाह्य–उपकरण के सफाई और प्राण वर्षा आदि जो हम सब नहीं कर सकते वह सब कुछ कर सकता है । यह सब ज्योति पुंजों के स्फुरण, आकुञ्चन, प्रकुञ्चन आदि से होता है । नाक, जीभ, नेत्र, कर्ण, त्वचा इन सभी स्थूल इन्द्रियों को यह प्रकाश–गोलक ही काम कराते हैं और उन पर नियंत्रण सहस्रारवासी परमात्मा का होता है । ध्यान की पूर्णवस्था में यह प्रकाश टिमटिमाते जुगनू, चमकते तारे, चमकीली कलियाँ, मोमबत्ती आधे या पूर्ण चन्द्रमा आदि के प्रकाश–सा झलकता है । धीरे–धीरे उनका दिव्य रूप प्रतिभासित होने लगता है उससे स्थूल इन्द्रियों की गतिविधियों में शिथिलता आने लगती है और आत्मा का कार्य–क्षेत्र सारे विश्व में प्रकाशित होने लगता है । सामान्य व्यक्ति को केवल अपने शरीर और सम्बन्धियों तक की ही चिन्ता होती है उस पर योगी की व्यवस्था का क्षेत्र सारी पृथ्वी और दूसरे लोकों तक फैल जाता है उसे यह भी देखना पड़ता है कि ग्रह–नक्षत्रों की क्रियायें भी तो असंतुलित नहीं हो रहीं । स्थूल रूप से इन गतिविधियों से पृथ्वीवासी भी प्रभावित होते रहते हैं । इसलिए अनजाने में ही ऐसी ब्रह्मी स्थिति का साधक लोगों का केवल हित संपादित किया करता है उसे जो अधिकार और सामर्थ्य मिली होती है वह इतने बड़े उत्तरदायित्व को सँभालने की दृष्टि से ही होती है । वैसे वह भले ही शरीरधारी दिखाई दे पर उसे शरीर की सत्ता का बिलकुल ज्ञान नहीं होता । वह सब कुछ जानता, देखता, सुनता और आगे क्या होना वाला है यह वह सब पहचानता है । विज्ञानमय कोष और मनोमय कोष के अध्यक्ष मन और बुद्धि यहीं रहते हैं और ज्ञानेन्द्रिय से परे दूर के या कहीं भी छिपे हुए पदार्थों के समाचार पहुँचाते रहते है । आत्म संकल्प जब चित्त वाले क्षेत्र से बुद्धि वाले क्षेत्र में पदार्पण करता है तब दिव्य दृष्टि बनती है और वह आज्ञाचक्र से निकल कर विश्वब्रह्माण्ड में जो अनेक प्रकार की रश्मियाँ फैली हैं उनसे मिल कर किसी भी लोक के ज्ञान को प्राप्त कर लेती हैं । विद्युत तरंगों के माध्यम से जिस प्रकार दूर के अन्तरिक्षयानों को पृथ्वी से ही दाहिने–बायें (ट्रेवर्स) किया जा सकता है । जिस प्रकार टेलीविजन के द्वारा कहीं का भी दृश्य देखा जा सकता है इसी प्रकार बुद्धि और संकल्प को रश्मियों से कहीं के भी दृश्य देखे जाना या किसी भी हलचल में हस्तक्षेप करना मनुष्य को भी सम्भव हो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

जाता है । मुण्डक और आन्दोग्य उपनिषदों में क्रमशः खण्ड २ और ६ में इन साक्षात्कारों का विशद वर्णन है और कहा गया हैं–'हिरण्यमये परेकोशे विरजं ब्रह्मा निष्फलं, तच्छुभ्रं ज्योतिषां ज्योति तद् परात्मनों विदुः' अर्थात् आत्मज्ञ पुरुष इस हिरण्यमय कोष मुं शुभ्रतम ज्योति के रूप में उस कला रहित ब्रह्म का साक्षात्कार करते हैं ।

सहस्रार साधना के अनेकों स्वरूप, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि के प्रयोग अभ्यासों के रूप में प्रस्तुत किये गये हैं । उनकी सफलताओं के फलस्वरूप मिलने वाले सत्परिणामों का आकर्षक वर्णन हुआ है उस क्षेत्र की सफलताओं का भौतिक और आत्मिक ऋद्धि–सिद्धियों के रूप में माहात्म्य बताया गया है ।

मस्तिष्क में विलक्षण शक्ति दोनों केन्द्रों की बात वर्तमान वैज्ञानिक भी मानते हैं । मस्तिष्क शास्त्र के प्रतिष्ठित वैज्ञानिक स्मिथी की शोध के अनुसार शुद्ध बुद्धि प्योर इन्टैलिजेन्स मानवी मस्तिष्क के विभिन्न केन्द्रों से नियन्त्रित होती है । यह सबकी साझेदारी का उत्पादन है । यही वह सार भाग है जिसे व्यक्तित्व का स्वरूप बनता और निखरता है । स्मृति (मैमोरी) विश्लेषण (एनालैसिस) संरचना (सिन्थैसिस) चयन निर्धारण (सिलैक्टिविटी) आदि की क्षमताएँ मिलकर ही मानसिक स्तर बनती हैं । इनका सम्मिश्रण एवं उत्पादन कहाँ होता है वे परस्पर कहाँ गुँथती हैं, इसका ठीक से निर्धारण तो नहीं हो सका पर समझा गया है कि वह स्थान सेरिबेलम लघुमस्तिष्क में होना चाहिए । यही वह मर्मस्थल है, जिसका थोड़ा भी विकास परिष्कार सम्भव हो सके तो व्यक्तित्व का ढाँचा समुन्नत हो सकता है ।

इसी केन्द्र स्थान को अध्यात्म शास्त्रियों ने बहुत समय पूर्व जाना और उसका नामकरण 'सहस्रार' किया है ।

मस्तिष्क के गहन अनुसंधान में कितनी ही ऐसी परतें सामने आती हैं जो सोचने–विचारने में सहायता देने भर का नही समूचे व्यक्तित्व के निर्माण में भारी योगदान करती हैं । इस तरह की विशिष्ट क्षमताओं का क्षेत्र 'फ्रन्टल लोब' है इसमें मनुष्य के व्यक्तित्व (पर्सनालिटी कल्पना–इमैजिनेशन) आकांक्षाएँ (एम्बिशन्स) व्यवहार प्रक्रिया, अनुभूतियाँ, सम्वेदनाएँ आदि अनेक महत्वपूर्ण प्रवृत्तियों का निर्माण, निर्धारण होता है । इस केन्द्र को प्रभावित कर सकना किसी औषधि उपचार या शल्य क्रिया से सम्भव नहीं हो सकता । इसके लिए ध्यान धारण जैसी वे साधनाएँ ही उपयुक्त हो सकती हैं, जिन्हें कुण्डलिनी जागरण प्रक्रिया के अन्तर्गत प्रायः काम में लाया जाता है ।

ऊपर मस्तिष्क के एकाध केन्द्र की सांकेतिक चर्चा भर करदी गयी है । मस्तिष्क क्षेत्र अगणित रहस्यमय शक्तियों से भरा हुआ माना जाता है । मस्तिष्क के सम्बन्ध में वर्तमान वैज्ञानिक मान्यताओं की संगति इस सम्बन्ध में भारतीय दार्शनिक मान्यमाओं से भी बैठती है ।

मोटे विभाजन की दृष्टि से मस्तिष्क को पाँच भागों में विभक्त किया जाता है । (१) वृहद् मस्तिष्क (मिसिरेब्रम) (२) लघुमस्तिष्क (सेरिबेलम), (३) माध्यमिक मस्तिष्क (मिडब्रेन), (४) मस्तिष्क सेतु (पाँन्स) एवं (५) सुषुम्ना शीर्ष (मैडुला ऑबलॉगेटा) । इनमें से अन्तिम तीन अर्थात् मिडब्रेन, पाँन्स एवं मैडुला को संयुक्त रूप से मस्तिष्क स्तम्भ (ब्रेनस्टेम) भी कहते हैं ।

अध्यात्म शास्त्र के अनुसार मस्तिष्क रूपी स्वर्ग लोक में यों तो तैतीस कोटि देवता रहते हैं, पर उनमें से पाँच मुख्य हैं । इन्हीं का समस्त देव संस्थान पर नियन्त्रण है । मस्तिष्कीय पाँच क्षेत्रों को पाँच देव परिधि कह सकते हैं । इन्हीं के द्वारा पाँच कोशों की पाँच शक्तियों का संचार संचालन होता है । सावित्री की पंचमुखी साधना में इन पाँचों को समान रूप से विकसित होने का अवसर मिलता है । तदनुसार इस ब्रह्मलोक में, देवलोक में निवास करने वाला जीवात्मा स्वर्गीय परिस्थितियों के बीच रहता हुआ अनुभव करता है ।

यह एक प्रकार के विभाजन की बात हुई । अनेक विद्वान एक ही तथ्य के बारे में भिन्न-भिन्न प्रकार की विवेचनायें प्राचीन काल से ही करते रहे हैं और आज भी करते हैं । मस्तिष्क के विभाजन तथा सहस्रार चक्र के सम्बन्ध में भी इसी प्रकार एक ही तथ्य के भिन्न–भिन्न विवेचन मिलते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सहस्रार चक्र को अमृत कलश भी कहा गया है। उसमें से सोम रसस्रवित होने की चर्चा है। देवता इसी अमृत कलश से सुधापान करते और अमर बनते हैं।

वर्तमान वैज्ञानिक मान्यतानुसार मस्तिष्क में एक विशेष द्रव 'सैरिब्रो स्पाइनल फ्ल्यूड' भरा रहता है। यही मस्तिष्क के भिन्न-भिन्न केन्द्रों को पोषण और संरक्षण देता रहता है। मस्तिष्क की झिल्लियों से यह झरता रहता है और विभिन्न केन्द्रों तथा सुषुम्ना में सोखा जाता है।

अमृत कलश के सोलह पटल गिनाये गये हैं। इसी प्रकार कहीं-कहीं सहस्रार की १६ पंखुरियों का भी वर्णन है। यह मस्तिष्क के ही १६ महत्वपूर्ण विभाग विभाजन हैं। शिव संहिता में भी सहस्रार की १६ कलाओं का वर्णन है-

शिरः कपाल विवरे ध्यायेत षौडसी कला।
तत्र स्थित्वा सहस्रारे पद्मेचन्द्र विचित्रयेत्॥

-योग मुंजूषा

कपाल के मध्य चन्द्रमा के समान प्रकाशवान् सोलह कला युक्त सहस्रार चक्र का ध्यान करें।

सहस्रार की यह सोलह कलाएँ मस्तिष्क के 'सैरिब्रो स्पाइनल फ्ल्यूड' से सम्बन्धित मस्तिष्क के सोलह विभाग हैं। पूर्वोक्त पाँच स्थूल विभागों को अधिक विस्तार से व्यक्त किया जाय तो उनके निम्नांकिंत १६ विभाग होते हैं-(१) वृहद्मस्तिष्क (सैरिब्रम), (२) लघुमस्तिष्क (सैरिबेलम, (३) सुषुम्ना शीर्ष (मैडुला ऑबलॅगिटा), (४) सेतु (पॉन्स), (५) मध्य मस्तिष्क (मिडब्रेन), (६) महासंयोजक (कॉर्पस केलोसम), (७) रखी पिण्ड(कॉर्पस स्ट्रेटम), (८) पीयूष ग्रन्थि (पिट्यूटरी ग्लैण्ड), (९) शीर्ष ग्रन्थि (पीनियल ग्लैण्ड), (११) चेतक (थैलेमस), (११) अधःचेतक (हाइपो थैलेमस), (१२) उपचेतक (सब थैलेमस), (१३) अनुचेतक (मैटाथैलेमस), (१४) ऊर्ध्व चेतक (एपीथैलेमस), (१५) संचार जालिकाएँ (कॉराडप्लैक्ससैसेज), (१६) प्रकोष्ठ (वैन्ट्रिकुलस)।

इन सभी विभागों में शरीर को संचालित करने वाले एवं अतीन्द्रिय क्षमताओं युक्त अनेक केन्द्र हैं। सहस्रार अमृत कलश को जाग्रत करके उन्हें अत्यधिक सक्रिय बना कर असाधारण लाभ प्राप्त किये जा सकते हैं। शास्त्रों में इस सन्दर्भ में स्पष्ट उल्लेख किया गया है-

इदं स्थानं ज्ञात्वा नियतनिजचितो नरवरो,
न भूयात् संसार पुनरपि न बद्धस्त्रिभुवने।
समग्रा शक्तिः स्यान्नियतमनसस्तस्य कृतिनः,
सदा कर्तुं हर्तुं खगतिरपि वाणी सुविमला॥

-षट्चक्र निरुपणम्

इस सहस्रार कमल की साधना से योगी चित्त को स्थिर आत्म भाव में लीन हो जाता है। भव-बन्धन से छूट जाता है। समग्र शक्तियों से सम्पन्न होता है। स्वच्छन्द विचरता है और उसकी वाणी विमल हो जाती है।

शिरःकपालविवरे ध्यायेद्दुग्धमहोदधिम्।
तत्र स्थित्वा सहस्रारे पद्मे चन्द्रं विचिन्तयेत्॥

-शिव संहिता

कपाल की गुफा में क्षीर सागर समुद्र का तथा सहस्र दल कमल में चन्द्रमा जैसे प्रकाश का ध्यान करें।

तस्माद् गलित पीयूषं पिबेद्योगी निरन्तरम्।
मृत्योर्मृत्युं विधायाणु कुलं जित्वा सरोरुहे॥
अत्र कुण्डलिनी शक्तिर्लयं याति कुलभि।
तदा चतुर्विधा सृष्टिर्लीयते परमात्मनि॥

-शिव संहिता

जो योगी सहस्रार से स्रवित हो रहे पीयूष का निरन्तर पान करता है, वह मृत्यु की ही मृत्यु का विधान रचने में समर्थ होता है। अर्थात् मृत्यु उसे मृत्यु के समान नहीं प्रतीत होती, वह मृत्यु से परे का जीवन जीता है। यहीं इसी सहस्रार में कुण्डलिनी-शक्ति का लय होता है और तब चारों की प्रकार सृष्टि परमात्मा में ही लीन हो जाती है, सभी कुछ परमात्मामय हो जाता है।

येन पूता ऋचः सामानियजुर्ब्राह्माणं सह येन पूतम्।
तेना सहस्रधारेण पवमानः पुनातु माम्॥

-यजु१

जिससे ऋचायें, सोम, यजु और ब्राह्मण पवित्र

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हुए उस सहस्र धारा वाले सोम से पवमान मुझे पवित्र करे ।

सहस्रार क्या है ? इसका उत्तर शरीर शास्त्र के अनुसार अब इतना मात्र जाना जा सका है कि मस्तिष्क के माध्यम से समस्त शरीर के संचालन के लिए जो विद्युत उन्मेष पैदा होते हैं, वे आहार से नहीं वरन् मस्तिष्क के एक विशेष संस्थान से उद्भुत होते हैं, वह मनुष्य का अपना उत्पादन नहीं वरन् दैवी अनुदान है । आमाशय, हृदय आदि अवयव तो उसी ऊर्जा से अपने काम कर सकने की क्षमता प्राप्त करते हैं । रक्त से शरीर के अवयवों को पोषण मिलता है । यह सत्य है । फेफड़े साँस का और पाचन तन्त्र आहार का साधन जुटाते हैं यह भी सही है; पर देखना फिर भी शेष रह जाता है कि यह सारी मशीन निर्वाह की आवश्यकता पूरी करने में जुटी हुई है, वह अपने लिए मूल ऊर्जा कहाँ से पाती है ? यह समाधान सही नहीं है कि आहार एवं साँस आदि से ही जीवन ऊर्जा मिलती है । यदि ऐसा रहा होता तो भूख या दम घुटने के बिना किसी की मृत्यु ही न होती ।भारतीय योग ग्रन्थों में भी इसी बात को अपने ढंग से व्यक्त किया गया है–

मस्तिष्के मणिवद् भिन्न या जानाति स योगवित्।
तप्तवामी कराकारं तडिल्लेखव विस्फुरत् ॥

–ध्यानविन्दु उपनिषद्

मस्तिष्क के मध्य मणिवत् प्रकाश है । उसमें से तप्त स्वर्ण के समान विद्युत धाराओं स्फुरण होता है । जो इस रहस्य को जानता है । वह योगी है ।

ब्रह्मज्योतिर्वसुधा या ब्रह्ममस्थानीय उच्यते ।
ततोयः पावको नाम्नायः सम्दिर्योग उच्यते ।

–मत्स्य पुराण

ब्रह्म ज्योति–अग्नि रूप से ब्रह्मा रन्ध्र में निवास करती है । वह साधक को पवित्र करती है । यही योगाग्नि है ।

इस मस्तिष्कीय ऊर्जा उद्गम को शरीर शास्त्र के अनुसार सहस्रार चक्र कहा जा सकता है । सहस्र का अर्थ यों 'हजार' होता है, पर यहाँ उसका तात्पर्य हजारों से अगणितों से है, परब्रह्म को 'सहस्र शीर्षा पुरुष–सहस्राक्षसहस्र पाद' कहा गया है इसका तात्पर्य पूरे एक हजार आँख, हाथ, पैर वाला नहीं वरन् हजारों–अगणितों वाला समझाा जाना चाहिए । मस्तिष्कीय उद्गम से उभरने वाली फुलझड़ी की पूरी एक हजार नहीं वरन् अगणित चिनगारियाँ उड़ती हैं । उस फब्बारे की बूँदों की संख्या पूरी एक हजार नहीं वरन् हजारों असंख्यों है । इस 'सहस्र' प्रतिपादन के आधार पर ही उस उद्गम को 'सहस्रार' कहा गया है ।

मस्तिष्क में मस्तिष्कीय विद्युत की अगणित धारायें प्रवाहित होने की बात वर्तमान विज्ञान मानता है । आवश्यकतानुसार यह धारायें अगणित दिशाओं में अगणित विशिष्ट तन्तुओं द्वारा प्रवाहित होती हैं इन्हें वैज्ञानिकों ने उनकी प्रवृत्ति के अनुसार अनेक वर्गों में विभाजित कर रखा है । जैसे–ऊर्ध्वमुखी मस्तिष्कीय स्फुरण (एसेन्डिग रैटिकुलर एक्टिवेटिंग सिस्टम), अधोमुखी म. स्फु. (डिसैन्डिग रैटि. एक्टि. सि.), विशिष्ट चेतक स्फुरण (स्पैसिफिक थैलैमिक प्रोजेक्शन) (प्रस्तुत चे. स्फु.) डिफ्यूज्ड थै. प्रो.) स्तम्भिक स्फुरण (ब्रेनस्टैम रैटि. फार्मेशन) आदि । इन स्फुरण संस्थानों का संयुक्त प्रभाव योग दृष्टि से मस्तिष्क में विद्युतीय उन्मेष की सहस्रों धाराओं के रूप में दीखना स्वाभाविक है ।

सहस्र दल कमल का तथा शेषनाग के सहस्र फन माने जाने की उक्ति का आधार भी यही है । ब्रह्मलोक एवं क्षीरसागर के मध्य विष्णु भगवान का कुण्डली भरे हुए शेषनाग पर शयन करना, यह आकृति भी सहस्रार की स्थिति समझने की दृष्टि से ही बनी है । क्षीरसागर अर्थात् मस्तिष्कीय मज्जा । कुण्डलाकार सहस्रमुख सर्प अर्थात् सहस्रार चीरने के आरे में दाँते हैं । पहिये में भी आरे होते हैं । चक्र, सुदर्शन जैसे अस्त्र भी दाँतेदार होते थे । 'सहस्रार' नामकरण की संगति इन्हीं सब बातों के साथ मिलती है ।

सहस्रार की सूर्य (सहस्ररश्मि) की उपमा दी गई है । सूर्य की ऊर्जा से पूरा सौरमण्डल प्रकाशवान् एवं गतिशील है । मानवी सत्ता का प्रत्येक घटक मस्तिष्कीय ऊर्जा से अनुप्राणित होता है । अस्तु उसी पिण्ड रूपी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भूलोक का अधिष्ठाता सूर्य कहा जाय तो यह रूपक सर्वथा उपयुक्त ही माना जाएगा । सहस्रार की ब्रह्म सत्ता को सूर्य की उपमा दी गई है ।

सहस्रारे महादमे कर्णिकामुद्रितश्चरेत् ।
आत्मातत्रैव देवोशि केवलः पारदोपमः ॥
सूर्य कोटि प्रतीकाशः चन्द्रकोटि सुशीतलः ।
अतीव कमनीयश्च महाकुण्डलिनो युतः ॥

स्कन्द पुराण

"हे देवेशि ! सहस्र दल महापद्म में मुद्रित कर्णिका के अन्दर पारद की भाँति आत्मा का निवास है । यद्यपि उसका तेज करोड़ों सूर्यों के समान है, परन्तु स्निग्धता में वह करोड़ों चन्द्रमाओं के तुल्य है । यह परम पदार्थ अतिशय मनोहर तथा कुण्डलिनी शक्ति समन्वित है ।

ब्रह्म सूर्यसम ज्योतिः ।

–यजु १ २३, ४८

यह सूर्य ब्रह्मतत्व ही है, जिसका भौतिक प्रतीक स्थूल सूर्य है ।

'य आदित्ये तिष्ठन्नादित्यादन्तरो यमादित्यो न वेद यस्यादित्यःशरीर य आदित्यमन्तरो यमयत्येष तं आत्मान्तर्याम्यमृतः ।'

–वृहदारण्यक

'जो सूर्य में रहने वाला सूर्य का अन्तर्वर्ती है, जिसे सूर्य नहीं जानता, सूर्य जिसका शरीर है और जो भीतर रहकर सूर्य का नियमन करता है, वह तुम्हारा आत्मा अन्तर्यामी अमृत है ।'

देवोऽयं भगवान भानुरन्तर्यामी सनातनः ।

–सूर्य पुराण

यह सूर्य देवता अन्तर्यामी सनातन भगवान ही है ।

जिस प्रकार सूर्य से सौर मण्डल को ऊर्जा मिलती है, उसी प्रकार सहस्र धारा वाले ऊर्जा उद्गम से मस्तिष्कीय संयंत्र को गतिशील बनने की क्षमता उपलब्ध होती है । मील, कारखानों में अनेकों मशीनें चलती हैं । उन्हें चलाने के लिए बिजली की मोटर लगी होती हैं । मोटर चलती है और उसकी ताकत से मशीनें सक्रिय होती है । किन्तु मोटर को चलाने वाली बिजली उसकी अपनी कमाई नहीं है । वह कहीं अन्यत्र से आती है मस्तिष्क को मोटर और शरीर के अवयवों को छोटी–बड़ी मशीनें कहा जा सकता है । इस सारे मिल, कारखाने को चलाने के लिए आवश्यक शक्ति कहीं अन्यत्र से आती है । इसे ध्रुवीय क्षेत्र से पृथ्वी को मिलने वाले अनुदान प्रवाह के समतुल्य माना जा सकता है । यह अन्तर्ग्रही ऊर्जा का ही अनुदान है । व्यक्ति यों स्वतन्त्र है, स्वभाग्य निर्माता है, फिर भी व्यक्ति को व्यक्तित्व प्रदान करने वाली ऊर्जा को ब्राह्मी अनुदान ही माना जायगा । यह धारा जिस क्षण रुकती है, तत्काल मरण सामने उपस्थित होता है । हृदय की धड़कन पूर्णतया बन्द हो जाने पर भी उसे कृत्रिम उपायों से पुनः क्रियाशील बनाया जा सकता है । किन्तु जब सहस्रार का विद्युत उभार अपना उछलना बन्द कर दे तो समझना चाहिए कि अन्तिम मृत्यु हो गई । कनेक्शन कट जाने पर फ्रिटिंग और बल्ब सही होने पर भी अन्धेरा छा जाता है । अवयवों के सही सलामत होने पर भी मस्तिष्कीय उत्पादन के बिना जीवित नहीं रहा जा सकता ।

जीवन का आरम्भ और अन्त स्थूल विवेचना के अनुसार जिस भी तरह बताया जाय, सूक्ष्म विज्ञान के अनुसार उसका समूचा आधार 'सहस्रार' की सक्रियता पर अवलम्बित है । इतना ही नहीं आगे की बात भी यहीं से चलती है । सहस्रार मात्र जीवन का ही उद्गम नहीं है, वरन् व्यक्तित्व का स्वरूप एवं स्तर की दिशा धारा भी यहीं से निर्धारित होती है । ढलान का तनिक–सा अन्तर होने पर वर्षा का जल अपने बहाव की दिशा बदलता है । एक स्थान की ढलान जिस वर्षा जल को किसी नदी में पहुँचाती है, तो उसके समीप की ढलान दूसरी ओर होने के कारण वर्षा जल को किसी अन्य नदी में ले जाकर पटकती है । ढलान के आरम्भ में कुछ इन्चों का अन्तर था, पर बहते हुए वर्षा जल को भिन्न नदियों में जा पहुँचने का अन्तर सैकड़ों-हजारों मील का बन जाता है । जंक्शन स्टेशन पर एक ही लाइन में खड़ी गाड़ियाँ लीवर बदलने के आधार पर भिन्न–भिन्न दिशाओं में चल पड़ती हैं । लीवर का अन्तर कुछ इन्चों का ही होता है, पर चल पड़ने वाली गाड़ियों में दूरी का अन्तर निरन्तर बढ़ता जाता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सहस्रार उद्गम में राई रत्ती अन्तर रहने से व्यक्तित्व के बाहरी और भीतरी ढाँचे में आश्चर्यजनक अन्तर उपस्थित हो जाता है ।

पृथ्वी के अन्तर्ग्रही अनुदानों में न्यूनाधिकता करके ही बात सोचना भी वैज्ञानिकों के लिए डरावनी आशंकाएँ और विभीषिकाएँ सामने ला खड़ी करता है । वे उस दिशा में कदम बढ़ाने की कल्पना करते ही काँपने लगते हैं । तनिक भी उलटा-पुलटा होने पर सर्वनाश का अनर्थ खड़ा हो सकता है । यों अनुकूल उपाय बन पड़े तो पृथ्वी निवासियों को उसका असीम लाभ भी मिल सकता है । तब हम अकल्पनीय सुविधा साधनों के अधिपति बन सकते हैं आवश्यक ज्ञान के अभाव में वैज्ञानिक कोई बड़े कदम उठाने का साहस नहीं कर रहे हैं, केवल वे धीमे पैरों ध्रुवीय क्षेत्र की खोज कर रहे हैं । पृथ्वी की धुरी न तो अभी उन्हें मिली है और न उसके लिए गम्भीरतापूर्वक प्रयत्न ही हुआ है ।

मानवी सत्ता के ध्रुव केन्द्र मस्तिष्कीय धुरी संस्थान सहस्रार के सम्बन्ध में वैसा कोई जोखिम नहीं है । भौतिक शक्ति-दैत्य है । बिजली का, आग का तनिक भी असावधानी से प्रयोग करने पर प्राण संकट सामने आ उपस्थित होगा, किन्तु माता और बच्चे के बीच व्यवहार की कोई भूल-चूक बन पड़ने पर भी कोई बड़ा विग्रह उत्पन्न नहीं होता, मामूली ही अनबन भी देर तक नहीं टिकती । आत्म-चेतना और प्रकृति चेतना में यही भौतिक अन्तर है । सहस्रार में आत्मा और परमात्मा का मिलन संस्थान है । यह चेतनात्मक आदान-प्रदान है । इसमें उच्चस्तरीय भाव सम्वेदनाएँ भरी पड़ी हैं । अध्यात्म, साधनाओं का स्वरूप सद्भाव सम्पन्नता के साथ जोड़कर बनाया गया है, अस्तु उनमें श्रेष्ठताओं के देव अनुदान ही मिलते हैं ।

सहस्रार चक्र का सम्बन्ध रन्ध्र से है । ब्रह्म रन्ध्र को दशम् द्वार कहा गया है । नौ द्वार तो दो नथुने, दो आँखें, दो कान, एक मुख, दो मल-मूत्र छिद्र सर्व विदित हैं । दसवाँ द्वार ब्रह्म रन्ध्र है । योगी जन इसी में होकर प्राण त्यागते हैं । मरणोपरान्त कपाल क्रिया करने का उद्देश्य यही है कि प्राण का कोई अंश शेष रह गया हो तो वह उसी में होकर निकले और ऊर्ध्व गति प्राप्त करे ।

नवजात शिशु की खोपड़ी के मध्य भाग में थोड़ा-सा खाली स्थान होता है । जिसमें हड्डी न होकर झिल्ली होती है । यह स्थान पीरिटल और और आस्सीविटल हड्डियों के बीच में है । शरीर वृद्धि के साथ-साथ बगल की हड्डियाँ बढ़ती हैं और इस स्थान को ढक लेती हैं । योग शास्त्र का कथन है कि ब्रह्म सत्ता का-ब्रह्माण्डीय चेतना का-मानव शरीर में प्रवेश इसी मार्ग से होता है ।

शरीर रचना की दृष्टि से इस स्थल पर केवल हड्डियों का जोड़ ही नहीं होता उसी सीध में नीचे अन्य संगतियाँ भी बैठती हैं कपाल को हड्डियों के नीचे मस्तिष्क को आच्छादित किये हुए एक ब्लाक (सैरिब्रल कार्टेक्स) होते हैं । इसमे खेत में हल चलाने से बने हुए चिन्ह जैसे होते हैं जो उसे विभिन्न भागों में विभाजित करते हैं इन्हें सीता (सल्कस) कहते हैं । ब्राह्क (कार्टेक्स) को लम्बाई में बीच से विभाजित करने वाली धार के लाम्बिक सीता (लौंगीट्यूडिनल फिसर) तथा चौड़ाई में बीच से विभाजित करने वाली को केन्द्रीय सीता (सैन्ट्रल सल्कस) कहते हैं । इन दोनों जोड़ों का केन्द्र (क्रासिंग) ठीक उसी स्थल पर होता है, जहाँ ब्रह्मरन्ध्र कहा गया है । इसी रन्ध्र की सीध में मस्तिष्क की सबसे ऊपर रहस्यमक कही जाने वाली शीष ग्रन्थि (पीमियल ग्लैण्ड) का स्थान है ।

यह ब्रह्मरन्ध्र काय स्थित सत्ता को महत् चेतना से सम्बद्ध करने का विशिष्ट मार्ग द्वार है । योगी अन्त समय में इसी मार्ग से प्राण का निष्कासन करके ब्रह्मलीन होते हैं । स्पष्ट है कि जीवन काल में यह ब्रह्मरन्ध्र मस्तिष्क के सहस्रार चक्र के माध्यम से दिव्य शक्तियों तथा दिव्य अनुभूतियों के आदान-प्रदान का कार्य करता है । सहस्रार चक्र और ब्रह्मरन्ध्र मिलकर एक संयुक्त इकाई यूनिट के रूप में कार्य करते हैं अतः योग साधना में भी इन्हें संयुक्त रूप से प्रयुक्त प्रभावित करने का विधान है ।

मानवी काया की धुरी ब्रह्म रन्ध्र ब्रह्माण्डीय चेतना के साथ सम्पर्क बनाकर आदान-प्रदान का पथ-प्रशस्त करता है । भौतिकी ऋद्धियाँ और आत्मिकी सिद्धियाँ जाग्रत सहस्रार के सहारे निखिल ब्रह्माण्ड से आकर्षित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की जा सकती है । वृक्ष अपने चुम्बकत्व से वर्ष को आकर्षित करते हैं धातु खदानें अपने चुम्बकत्व से जातीय धातु कणों को खींचती और जमा करती रहती हैं । सहस्रार में जैसा भी चुम्बकत्व हो उसी स्तर का अदृश्य विश्व वैभव खिंचता और एकत्रित होता रहता है । यही जीवन का अदृश्य उपार्जन उसके स्तर एवं व्यक्तित्व का सूक्ष्म निर्धारण करता है । चेतन और अचेतन मस्तिष्कों द्वारा जो इन्द्रिय गम्य और अतीन्द्रिय ज्ञान उपलब्ध होता है उसका केन्द्र यही संस्थान है । ध्यान से लेकर समाधि तक और आत्म चिन्तन से लेकर भक्तियोग तक की समस्त आध्यात्मिक साधनाएँ यहीं से फलित और विकसित होती हैं । ओजस् तेजस् और ब्रह्मवर्चस् के रूप में पराक्रम, विवेक एवं आत्मबल की उपलब्धियों का अभिवर्धन यहीं से उभरता है ।

पौराणिक गाथाओं में सहस्रार को ब्रह्मलोक विष्णु लोक और शिवलोक के रूप में अलंकारिक ढंग से चित्रित किया गया है । ब्रह्माजी प्रलय जलराशि में–कमल पुष्प पर विष्णु क्षीर सागर में, शेष शैया पर और शिव मान सरोवर में कैलाश पर्वत पर विराजते हैं । ब्रह्मा के कमल आसन में सहस्र पंखुरियाँ हैं । विष्णु सहस्र फन वाले शेष नाग पर सोये हुए हैं । शिव के शरीर पर सहस्र सर्प और सानिध्य में सहस्र भूतगण होते हैं । इन अलंकारों में मस्तिष्क स्थित सहस्रार चक्र का ही चित्रण है । खोपड़ी के मध्य भरा हुआ व्हाइट और ग्रे मैटर ही क्षीर सागर कैलाश, दिव्य सागर है । सर्प, कमल भूत गणों का सहस्र की संख्या युक्त होना मस्तिष्कीय नाभिक सहस्रार चक्र समझा जाता है । उसी पर त्रिदेव अपने अपने ढंग से विराजते है । ब्रह्म सत्ता की उपस्थिति अवस्थिति यों तो समूची काया में है पर पूरी लाइन में दौड़ने वाली बिजली का नियंत्रण करने वाले प्लग की तरह इस सहस्रार चक्र को माना जा सकता है इस केन्द्र को ब्रह्मपक्षीय ज्ञान बीज आदि के नाम से भी पुकारा जाता है ।

सहस्रार मानवी सत्ता का उत्तरी ध्रुव है उत्तरी ध्रुव के समान ईश्वरीय अनुदान इस पर अवतरित होता रहता है । जिस प्रकार अर्न्तग्रही अनुदानों का उतना अधिक लाभ उत्तरी ध्रुव से पृथ्वी नहीं उठा पाती, मात्र उसका एक अंश ही ग्रहण कर पाती है । उसी प्रकार मनुष्य भी ब्राह्मी चेतना के दिव्य अनुग्रहों के लाभ से वंचित बना रहता है । इस सहस्रार चक्र की साधना द्वारा वह क्षमता विकसित की जा सकती है । जिससे चैतन्य प्रवाहों को ग्रहण कर अपने व्यक्तित्व को दैवीय गुणों से सम्पन्न बनाया जा सके ।

मस्तिष्क का कार्य मात्र इन्द्रियों पर अनुशासन बनाये रखना ही नहीं है । मस्तिष्कीय सामर्थ्य की जब भी परा–मनोविज्ञान क्षेत्र में चर्चा होती है, तब जीव ब्रह्म सम्पर्क सूत्रों की विवेचना इसी से विद्यमान घटकों के माध्यम से की जाती है । सहस्रार ही शरीर क्षेत्र में अवस्थित ईश्वरीय सत्ता का निवास स्थान है जिसे मस्तिष्क में मध्य भाग में ब्रह्मरन्ध्र के समीपस्थ माना जा सकता है ।

जिस प्रकार अणु–परमाणु से भरी पदार्थ सत्ता का उद्गम केन्द्र है– इलेक्ट्रॉन एवं उसके भी सूक्ष्म कण प्रतिकण । उसी प्रकार शरीर संसार की समस्त गतिविधियों का मूल स्रोत–शक्ति केन्द्र है–सहस्रार । ब्रह्मसत्ता का अवतरण इसी स्थान पर होता है । इस शक्ति स्रोत को जिसके माध्यम से व्यष्टि चेतना समष्टि चेतना से मिलती है, कहीं ढूँढ़ना है तो उसकी झलक स्थूल रूप में मस्तिष्क मध्य में विद्यमान विद्युत स्फुलिंग के फब्बारे 'रेटीकुलर एक्टीब्रेटिंग सिस्टम' के रूप में देखी जा सकती है । वैज्ञानिक बताते हैं कि मस्तिष्क के मध्य भाग से सहस्रों विद्युत स्पन्दन सतत् प्रस्फुटित होते दिखाई देते हैं । सुषुम्ना तथा मस्तिष्क के सन्धि स्थल से कुछ ऊपर मस्तिष्क मध्य (मिडब्रेन) नामक स्थान से विद्युत उन्मेषों को घनीभूत होते तथा ऊपर की ओर उठकर सहस्रों स्नायु केन्द्रों तथा अरबों स्नायु कोशों को उत्तेजित प्रभावित करते देखा गया है । इन्हें 'एसेन्डिंग रेटीकुलर एक्टीबेटिंग सिस्टम' 'स्पेसिफिक' एवं डीफ्यूज' :'थैलेमिक प्रोजेक्शन' नाम दिया गया है । ये सारे शरीर को चेतन बनाये रखने तथा निद्रा जाग्रति के विभिन्न चक्रों के लिये उत्तरदायी माने जाते हैं । इन स्पन्दनों को यदि इच्छानुकूल नियंत्रित किया जा सके तो उनके प्रभाव से समग्र मस्तिष्क के किसी भी स्नायु केन्द्र को इच्छानुसार सक्रिय तथा शिथिल बनाये जा सकने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

जैसी असम्भव उपलब्धियों को सम्भव कर दिखाया जा सकता है ।

योग एक विज्ञानसम्मत प्रक्रिया है । इसमें शक्ति केन्द्रजागरण का अर्थ केवल केन्द्रों की तीक्ष्णता तथा सक्रियता को बढ़ा देना ही नहीं, उन्हें सुव्यवस्थित, सुनियोजित करना भी है । विद्युत धाराओं के स्पन्दन विभिन्न विकृत स्थानों को उत्तेजित कर मिर्गी हाथ–पैरों की असामान्य हलचलों को जिस प्रकार जन्म देते हैं व उसकी आंशिक विद्युत कम्पन प्रक्रिया को जिस प्रकार 'इलेक्ट्रो एनसेफेलोग्राफ्री' यंत्र द्वारा पकड़ा जा सकता है, उससे स्पष्ट होता है कि ये विद्युत स्पन्दन सामान्य अवस्था में अति तीव्र एवं गतिमान होते हैं । इनसे भले ही निषेधात्मक पक्ष सिद्ध होता है यह तो प्रमाणित हो ही जाता है कि इन विद्युत धाराओं को सुनियोजित कर सहस्रार जागरण की–न्यूटॉन किस्ट्रल रूपी केन्द्रों को जगाकर उनसे समष्टि चेतना से सम्पर्क की क्रिया प्रतिक्रिया उत्पन्न करना सम्भव है । इसके लिए बाह्य इलेक्ट्रोडों की आवश्यकता नहीं अन्दर का विद्युत संस्थान ही इतना समर्थ संक्षम है कि उसको सुव्यवस्थित कर किसी भी प्रसुप्त केन्द्र को जगाया जा सकना पूर्ण रूपेण सम्भव है ।

यह एक वैज्ञानिक तथ्य है कि पृथ्वी पर विराजमान जीवधारी मनुष्य एक विलक्षण विद्युत दवाब से प्रतिक्षण प्रभावित होता रहता है ! पृथ्वी की सतह और वायुमण्डल के आयनोस्फियर्स के मध्य लगभग तीन लाख वोल्ट की शक्ति का घन विद्युत विभव होता है मानवी काया एक अच्छी विद्युतचालक है । यह काया जिस विशाल विद्युत संधारक के मध्य बैठी है उसे वैज्ञानिक ग्लोबल केपेसिटर कहते हैं । यह किसी भी स्थिति में हलचल रहित नहीं है । इसमें सतत् विद्युत स्खलन होता रहता है । शूमैन रेजोनेन्स के नाम से ७ से ८ तरंगें प्रति सेकण्ड की आवृत्ति में विद्यमान यह विद्युत प्रवाह जिस प्रकार मानवी काया को उत्तेजित प्रभावित करता रहता है उसका मूल कारण यह है कि इन तंरगों का गुण हमारे मस्तिष्क की विद्युत तरंगों से अत्यधिक साम्य रखता है । केवल २० वाट विद्युत शक्ति से संचालित अरबों सक्रिय न्यूरान्स व उन्हें जोड़ने वाले तन्तु संस्थान के ढांचे से बना यह मस्तिष्क ब्रह्माण्डीय विद्युत की आवृत्ति पर ही चलता है । यही प्रमुख कारण है कि मनुष्य के दैनन्दिन क्रिया–कलाप विद्युतीय क्षेत्रों–विद्युतचुम्बकीय तरंगों तथा रेडिएशन की लहरों से सतत् प्रभावित होते रहते हैं ।

वैज्ञानिक अध्ययन निष्कर्ष इस कथन की पुष्टि करते हैं कि मानवी सामर्थ्य असीम है । केन्द्रीय जगत् का एक प्राणी मानव अपनी उपलब्ध शक्ति सामर्थ्यों का सीमित उपयोग ही कर पाता है । यदि किसी प्रकार अपने संस्थान को जगाया–उत्तेजित किया जा सके तो उस महत् चेतना संस्थान शक्ति भण्डार से सम्पर्क स्थापित कर सकना भी सम्भव है । ईश्वर के ब्रह्माण्डव्यापी महासागर में दृश्य एवं अदृश्य पदार्थ परक तथा प्रधान चेतना शक्ति छिपी पड़ी है । यह महाप्राण का महासागर है । इस सागर की ही लघु संरचना मानवी काया है, ब्रह्मरन्ध्र एवं सहस्रार जिसके सम्पर्क माध्यम हैं हर जीवधारी अपनी–अपनी पात्रता के अनुसार इस भण्डार से वैभव अनुदान प्राप्त करता है । साधना उपचार–ध्यान धारणा आदि के विभिन्न प्रयोगों द्वारा इस सामर्थ्य को बढ़ाया-विकसित किया जा सकता है ।

ऐरियल या एन्टीना ट्रांसमीटर द्वारा भेजी शब्द किरणों को पकड़ते हैं । उनको इतना शक्तिशाली बनाया जाता है कि सुदूर क्षेत्रों से आने वाली तरंगों को पकड़कर भी उन्हें ध्वनि में परिवर्तित किया जा सके । ठीक इसी प्रकार मस्तिष्क के न्यूरान्स एक प्रकार के रेडियो क्रिस्टल, एन्टिना या एरियल हैं । वे ब्रह्माण्ड में संव्याप्त तरंगों को पकड़ते हैं तथा वांछित प्रवाह, को व्यक्ति को सामर्थ्यशाली बनाने वाली ऊर्जा में बदल देते हैं ।

सहस्रार की जैव संरचना को रेटीकुलर एक्टीवेटिंग सिस्टम के रूप में देखते हुए उसकी एक भव्य राडार या एन्टीना के रूप में कल्पना की जा सकती हैं जो तरंगों को पकड़कर अरबों स्नायु कोशों तक भेजना है, उनमें विद्युत सक्रियता बढ़ाता है । अलंकारिक रूप में सहस्रार की सहस्र दलकमल–सहस्र फन सर्प के रूप में कल्पना की गयी है । ब्रह्मलोक की व्याख्या में वृहत्

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

क्षीर सागर–सहस्र फन वाले शेषनाग शैया एवं उस पर विष्णु भगवान के शयन का वर्णन हैं वस्तुतः क्षीर सागर मस्तिष्क में विद्यमान ग्रे मैटर है सहस्रार कमल ही रेटीकुलर एक्टीवेटिंग सिस्टम है जो सारे ग्रे मैटर में मध्य मस्तिष्क से ऊपर तक फैला हुआ है। इस संस्थान में अवस्थित चेतना ही ब्रह्म सत्ता की प्रतीक–भगवान विष्णु हैं साधारण स्थिति में यह क्षेत्र प्रसुप्त निष्क्रिय ही पड़ा रहता है। इसी कारण इसमें भगवान सोते हुए दिखाए जाते हैं। यही शिवलोक है जहाँ मान सरोवेर व कैलाश हैं इन अलंकारिक विवरणों के पीछे एक ही उद्देश्य है–समष्टि चेतना को अपने अन्दर अवस्थित देखना–उसकी गरिमा को पहचानना तथा उससे अनुदान प्राप्त करना। आत्मा परमात्मा के मिलन–अद्वैत की स्थिति की अनुभूति यही की जाती है। योगी इसी केन्द्र में प्राण को विकेन्द्रित कर ब्रह्माण्ड का विचरण और नियंत्रण जैसी सफलता प्राप्त करते हैं–

सहस्रार को महत् चेतना से सम्पर्क का द्वार माना गया है। मूलाधार मै प्रसुप्त पड़ी सर्पिणी कुण्डलिनी यहीं पर मुखबन्द कली के खिलने के रूप में विकसित होती है। तथा शतदल कमल के सहस्रार के रूप में उसका विकास होता है। सहस्रार को 'स्वर्गलोक का कल्पवृक्ष कहा गया है। प्रलयकाल में भी शेष रहने वाला अक्षय वट, गीता का ऊर्ध्वमूल–अश्वत्थ–बोधि वृक्ष आदि उपमाऐं इस ब्रह्म बीज को इसी कारण दी गयी हैं। कि अपनी जाग्रत स्थिति में यह साधक को दिव्य सत्ता सम्पन्न बनाता है–पिण्ड में संव्याप्त चेतन सत्ता के तारों को समष्टि सत्ता के चेतना पुंज से जोड़ता है। ऐसा व्यक्ति स्वयं धन्य बनता है व अपने सम्पर्क क्षेत्र के अनेकानेक व्यक्तियों को दिव्य आलोक से भरा–पूरा बनाता है।

सहस्रार की आध्यात्मिक संरचना को दृष्टिगत रख शरीर में उसके स्थूल प्रतिनिधि की कल्पना की जाय तो सहस्राधिक स्फुलिंगों में विभाजित मध्य मस्तिष्क से प्रवाहित 'रेटीकुलर एक्टीवेटिंग सिस्टम' से उसकी संगति ठीक–ठीक बैठ जाती है। मस्तिष्क के एक–एक केन्द्रक नाभि ग्रे मैटर के गुच्छों के रूप में बिखरे पड़े न्यूरानल सेन्टर्स को ये प्रवाह उत्तेजित करते हैं तथा उन्हें प्रसुप्त से जाग्रति की स्थिति में लाते हैं। इस स्थान से न केवल काया की अचेतन गतिविधियों का नियमन होता है वरन् सूक्ष्म जगत् की हलचलों की इच्छानुसार 'मानिटरिंग'–भी। जैवीय विद्युत का स्वयंभू प्रवाह जो इस स्थान पर केन्द्रीभूत होता है समग्र काया के स्नायु तन्तुओं का सम्मिश्रित स्वरूप है। इस स्थान पर विद्युत की सघनता सारी काया में सर्वाधिक पायी गयी है। यहाँ से जो प्रवाह चलते हैं वे रेटीकुलर(जालीनुमा) प्रोजेक्शन्स के माध्यम से एक–एक स्नायु कोष को प्रभावित करते हैं– उनकी आवृत्ति को ब्रह्माण्डीय तरगों की आवृत्ति से जोड़ देते हैं आदान–प्रदान की क्षमता –वांछित को ग्रहण करने की सामर्थ्य इसी संस्थान के माध्यम से अर्जित हो पाती है।

इस आदान–प्रदान का समष्टि चेतना से सम्पर्क का सबसे महत्वपूर्ण एवं सशक्त पक्ष यह है कि भावना सम्बन्धी मस्तिष्कीय स्नायु रस स्रावों को नियंत्रण भी इसी स्थान से होता है। भावनाओं का रसायनशास्त्र भी अपने आप में विचित्र है। आज का वैज्ञानिक अब उन रहस्यों को जान सकने में समर्थ हो गया है जिन्हें अपनी शैशवावस्था में अविज्ञात कहकर छोड़ दिया जाता था। भाव–सम्वेदनाओं जैसी विशिष्टताओं का सम्बन्ध अब न्यूरोकेमीकल ट्रांसमीटर्स से जोड़ा जा रहा है। यह भी कहा जा रहा है कि अब स्वेच्छा से अति भावुकता पर नियंत्रण व सामान्य स्थिति में पायी जाने वाली भावपरक मान्यताओं का नियमन–विस्तरण सम्भव है। मस्तिष्क के मध्य भाग से ऊपर दोनों हेमीस्फीयर्स के बीच एक संस्थान पाया जाता है–'लिम्बिक सिस्टम'। इसी में आनन्द, दुःख, भाव–सम्वेदना, यौन भावना सम्बन्धी महत्वपूर्ण केन्द्र हैं हार्मोन ग्रन्थियों के माध्यम से क्रियाशील यह संस्थान पूरी तरह से अपने स्नायु उत्तेजन हेतु रेटीकुलर एक्टीवेटिंग सिस्टम के द्वारा भेजे गये सन्देशों पर निर्भर है। 'एनकेफेलीन'–नामक रस स्रावों स्नायु सन्धि स्थलों से प्रवाहित कर ये आनन्द की अनुभूति कराते हैं, भावनाओं को उत्कृष्ट बनाते हैं तथा उनके सुनियोजन के लिए चिन्तन प्रदान करते हैं कैलीफोर्निया यूनिवर्सिटी के वैज्ञानिक द्वय जॉन ह्वेजेज एवं श्री लीक्स तथा जॉन हापकिन्स मेडीकल स्कूल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के 'सोलोमन स्नीडर' द्वारा आविष्कृत इन हारमोन्स से चिकित्सकों को तो मनोरोगों एवं भावनात्मक विक्षोभों का समाधान करने में सहायता मिली है परन्तु अध्यात्म विद्या के अध्येता इस अमृत कलश के सदुपयोग का, सहस्रार के जागरण से भाव योग, श्रद्धा–समर्पण से अद्वैत की स्थिति की प्राप्ति का प्रतिपादन करते हैं । यही वस्तुतः सहस्रार का शाश्वत स्वरूप भी है ।

मस्तिष्कीय ब्रह्मरन्ध्र एक गड्ढा है । आँख, कान, नाक, मुख आदि भी इसी क्षेत्र के गड्ढे हैं उन्हें उत्तर ध्रुव कह सकते हैं । उन्हीं क्षेत्रों से विविध प्रकार की प्रेरणाएँ उत्पन्न होती हैं इन उत्कट आकांक्षाओं को ज्ञान या काम भी कह सकते हैं यह कुण्डलिनी भी है ।

मानवी सत्ता का दक्षिणी ध्रुव

मूलाधार

मानवी सत्ता के जिन दो ध्रुव केन्द्रों की चर्चा पिछले पृष्ठों में की गई है उनमें दूसरा दक्षिणी ध्रुव है मूलाधार चक्र, सुमेरु संस्थान सुषुम्ना केन्द्र जो मल–मूत्र के स्थानों के बीचों बीच अवस्थित है, कुण्डलिनी, महासर्पिणी, प्रचण्ड क्रिया शक्ति इसी स्थान पर सोई पड़ी है । उत्तरी ध्रुव का महासर्प अपनी सहचरी सर्पिणी के बिना और दक्षिणी ध्रुव की महासर्पिणी अपने सहचर महासर्प के बिना निरानन्द मूर्च्छित जीवन व्यतीत करते हैं और परिणाम स्वरूप विश्व की समस्त विशेषताओं का प्रतीक होते हुए भी मनुष्य तुच्छ–सा जीवनयापन करते हुए–कीट–पतंगों की मौत मर जाता है । कोई महत्वपूर्ण उपलब्धि प्राप्त नहीं कर पाता, इसका एक मात्र कारण यही है कि हमारे पिण्ड के, देह के दोनों ध्रुव मूर्च्छित पड़े हैं । यदि वे सजग हो गये होते तो ब्रह्माण्ड जैसी महान चेतना अपने पिंड में भी परिलक्षित होती ।

मूत्र स्थान यों एक प्रकार से घृणित एवं उपेक्षित स्थान है पर तत्वतः उसकी सामर्थ्य मस्तिष्क में अवस्थित ब्रह्मरन्ध्र जितनी ही है । वह हमारी सक्रियता का केन्द्र है यों नाक, कान आदि छिद्र भी मल विसर्जन के लिए प्रयुक्त होते हैं, पर उन्हें कोई ढकता नहीं मूत्र यंत्र को ढकने की अनादि एवं आदि परिपाटी के पीछे वह सतर्कता है, जिसमें यह निर्देश है कि इस संस्थान से जो अजस्र शक्ति प्रवाह बहता है, उसकी रक्षा, की जानी चाहिए । शरीर के अन्य अंगों की तरह यों प्रजनन अवयव भी माँस मज्जा मात्र से ही बने हैं, पर उनके दर्शन मात्र से मन विचलित हो उठता है । अश्लील चित्र अथवा अश्लील चिन्तन जब मस्तिष्क में उथल-पुथल पैदा कर देता है तब उन अवयवों का दर्शन यदि भावनात्मक हलचल को उच्छृंखल बना दे तो आश्चर्य ही क्या है ? यहाँ यह रहस्य जान लेना ही चाहिए । मूत्र स्थान में बैठी हुई कुण्डलिनी शक्ति प्रसुप्त स्थिति में भी इतनी तीव्र है कि उसकी प्रचण्ड धाराएँ खुली प्रवाहित नहीं रहने दी जा सकतीं । उन्हें आवरण में रखने से उनका अपव्यय बचता है और अन्यों के मानसिक सन्तुलन को क्षति नहीं पहुचती । छोटे बच्चों को भी कटिबन्ध इस लिए पहनाते हैं । ब्रह्मचारियों को धोती के अतिरिक्त लंगोट भी बांधे रहना पड़ता है । पहलवान भी ऐसा ही करते हैं । संन्यास और वानप्रस्थ में भी यही प्रक्रिया अपनानी पड़ती है ।

मल–मूत्र स्थान के मध्य अवस्थित मूलाधार चक्र का केन्द्र बिन्दु एक तिकोना कण है, जिसे 'सुमेरु' अथवा कूर्म कहते हैं । शरीर में समस्त जीवन कण गोल है, केवल दो ही ऐसे है जिनकी आकृति में अन्तर है, एक ब्रह्मरन्ध्र स्थित सहस्रार–कमल नाम से पुकारा जाने वाला आरी की नोकों जैसी आकृति का ब्रह्मरन्ध्र–उत्तरी ध्रुव । दूसरा मूलाधार में अवस्थित चपटा, बीच में ऊँचा उठा हुआ–पर्वत या कछुआ की आकृति वाला दक्षिणी ध्रुव । इन दोनों पर ही जीव की सारी आधारशिला रखी है । स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीर के–अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय, आनन्दमय कोषों के अन्तःकरण चतुष्टय में सप्त प्राणों के मूलाधार यही दो ध्रुव हैं इन्हीं की शक्ति और प्रवृत्ति से हमारा बाह्य और अन्तरंग जीवन क्रम चलते रहने में समर्थ होता है ।

उत्तरी ध्रुव सहस्रार–कमल में विक्षोभ उत्पन्न करने और उसकी शक्ति को अस्त–व्यस्त करने का दोष, लोभ, मोह, क्रोध, अहंकार जैसी दुष्प्रवृत्तियों का है मस्तिष्क उन चिन्ताओं में दौड़ जाता है तो उसे आत्म–चिन्तन के लिए ब्रह्म शक्ति के संचय के लिए अवसर ही नहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मिलता। इसी प्रकार दक्षिणी ध्रुव मूलाधार में भरी प्रचण्ड क्षमता को कार्य शक्ति में लगा दिया जाय तो मनुष्य पर्वत उठाने एवं समुद्र मथने जैसे कार्यों को कर सकता है। क्रिया–शक्ति मानव प्राणी में असीम है किन्तु उसका क्षय कामुकता–विषय–विकारों होता रहता है। यदि इस प्रवाह को गलत दिशा से रोक कर सही दिशा में लगाया जा सके, तो मनुष्य की कार्यक्षमता साधारण न रहकर दैत्यों अथवा देवताओं जैसी हो सकती है।

पुराणों में समुद्र–मन्थन की कथा आती है। यह सारा चित्रण सूक्ष्म रूप से मानव शरीर में अवस्थित कुण्डलिनी शक्ति के प्रयोग–प्रयोजन का है। हमारा मूत्र संस्थान–खारी जल से भरा समुद्र है। उसे अगणित रत्नों का भाण्डागार कह सकते हैं। स्थूल और सूक्ष्म शक्तियों की सुविस्तृत रत्न राशि इसमें छिपी हुई है। प्रजापति के संकेत पर एक बार समुद्र मथा गया। देव और दानव उसका मन्थन करने जुट गये। असुर उसे अपनी ओर खींचते थे अर्थात् कामुकता की ओर घसीटते थे और देवता उसे रचनात्मक प्रयोजनों में नियोजित करने के लिए तत्पर थे। यह खींचतान दूध में से मक्खन निकालने वाली बिलौने की, मन्थन की क्रिया चित्रित की गई है।

समुद्र मन्थन उपाख्यान में यह भी वर्णन है कि भगवान ने कछुआ का रूप बनाकर आधार स्थापित किया, उनकी पीठ पर सुमेरु पर्वत 'रई' के स्थान पर अवस्थित हुआ। शेषनाग के साढ़े तीन फेरे उस पर्वत पर लगाये गये और उसके द्वारा मंथन कार्य संपन्न हुआ। कच्छप और सुमेरु मूलाधार चक्र में अवस्थित वह शक्ति बीज हैं जो दूसरे कणों की तरह गोल न होकर चपटा है और जिसकी पीठ, नाभि ऊपर की ओर उभरी हुई है। इसके चारों और महासर्पिणी, कुण्डलिनी साढ़े तीन फेरे लपेट कर पड़ी हुई है। इसे जगाने का, कार्य मंथन का प्रकरण उद्दाम वासना के उभार और दमन के रूप में होता है। देवता और असुर दोनों ही मनोभाव अपना–अपना जोर अजमाते हैं और मंथन आरम्भ हो जाता है। कामुकता भड़काने और उसे रोकने का खेल ऐसा है जैसे सिंह को क्रुद्ध और उत्तेजित करने उपरान्त उससे लड़ने का साहस करना। कृष्ण की रासलीला का अध्यात्म रहस्य कुछ इसी प्रकार का है। उस प्रकरण की गहराई में जाने और विवेचन करने का अवसर नहीं है अभी तो इतना ही समझ लेना पर्याप्त होगा कि कामुकता की उद्दीप्त स्थिति को प्रतिरोध द्वारा नियंत्रित करने का पुरुषार्थ समुद्र मंथन से रत्न राशि निकालने का प्रयोजन पूरा करता है। मलद्वार और जननेन्द्रिय के बीच जो लगभग चार अंगुल जगह खाली पड़ी है, उसी के गह्वर में एक त्रिकोण परमाणु पाया जाता है। सारे शरीर में गोल कण हैं, यह एक ही तिकोना है। यहाँ एक प्रकार का शक्ति भ्रमर है। शरीर में प्रवाहित होने वाली तथा मशीनों में संचारित बिजली की गति का क्रम यह है कि वह आगे बढ़ती है, फिर तनिक पीछे हटती है और फिर उसी क्रम से आगे बढ़ती पीछे हटती हुई अपनी अभीष्ट दिशा में दौड़ती चली जाती है। किन्तु मूलाधार स्थित त्रिकोण कण के शक्ति–भंवर में सन्निहित बिजली गोल घेरे में पेड़ से लिपटी हुई बेल की तरह घूमती हुई संचारित होती है। यह संचार क्रम प्रायः साढ़े तीन लपेटों का है। आगे चलकर यह विद्युत धारा इस विलक्षण गति को छोड़कर सामान्य रीति से प्रवाहित होने लगती है।

यह प्रभाव निरन्तर मेरुदंड से होकर मस्तिष्क के उस मध्यबिन्दु तक दौड़ता रहता है जिसे ब्रह्मरन्ध्र या सहस्रार कमल कहा गया है।

ब्रह्मरन्ध्र मस्तिष्क की सामर्थ्य से हम सभी परिचित हैं पर कुण्डलिनी क्रिया–शक्ति के केन्द्र बिन्दु मूलाधार का रहस्य बहुत कम लोगों को मालूम है। उसी संस्थान का जादू है कि मनुष्य अपने समान एक नये मनुष्य को बना कर तैयार कर देता है, जबकि भगवान् भी अपने जैसा नया भगवान बना सकने का साहस न कर सका। इन अवयवों का पारस्परिक स्पर्श होने से नर-नारी के बीच एक असाधारण भावना प्रवाह बहने लगता है। सथी के दुश्चरित्र ओर अविश्वस्त होने की बात मानते हुए भी परस्पर इतना आकर्षण हो जाता है कि व्यभिचार पराण नर–नारी भी एक दूसरे के लिए सभी मर्यादायें तोड़ कर रोग, कलंक, पाप, परिवार–विग्रह एवं धन हानि की क्षति उठाते देखे गये हैं। विशुद्ध दाम्पत्य जीवन जीने वाले पति–पत्नी के पारस्परिक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आकर्षण का केन्द्र जहाँ उनकी धर्म भावना है, वहाँ वह शारीरिक क्रिया–कलाप भी हैं, जिनके कारण कुण्डलिनी बिन्दुओं का स्पर्श एक दूसरे के शरीर एवं मन पर जादुई प्रभाव डालता है और एक-दूसरे को अपना वशवर्ती कर लेता है ।

शिव लिंग के पूजा प्रचलन में एक महान् आध्यात्मिक तत्वज्ञान का संकेत है, जिसमें व्यक्ति को सचेत किया गया है कि वह शरीर के इस अवयव में ईश्वरीय दिव्य–शक्ति का अति उत्कृष्ट अंश समाविष्ट समझे और इस ब्रह्माण्ड को ईश्वर की क्रिया–शक्ति कुण्डलिनी का प्रतीक प्रतिनिधि माने । शिवलिंग का जल अभिषेक करने का एक तात्पर्य यह भी है कि इस शक्ति के महान् आध्यात्मिक लाभों को प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि उसे शीतल रखा जाय, उद्दीप्त न होने दिया जाय । योगी–यती अपनी साधनाओं में यह तत्व ज्ञान संजोये ही रहते हैं कि उन्हें ब्रह्मचर्यपूर्वक रहना चाहिए ताकि पिण्ड की–देह की–मूलाधार क्रिया–शक्ति कुण्डलिनी का अपव्यय न हो और वह बहिर्मुखी होकर अस्त–व्यस्त बनने, उच्छृंखल होने की अपेक्षा लौटकर ऊर्ध्वगामी दिशा पकड़ती हुई ब्रह्मरन्ध्र अवस्थित महासर्प के साथ तादात्म्य होकर परमानन्द–ब्रह्मानन्द का लक्ष्य प्राप्त कर सके ।

कुण्डलिनी विज्ञान में मूलाधार को योनि और सहस्रार को लिंग कहा गया है । यह सूक्ष्म तत्वों की गहन चर्चा है । इस वर्णन में काम क्रीड़ा एवं शृंगारिकता का काव्यमय वर्णन तो किया गया है, पर क्रिया प्रसंग में वैसा कुछ नहीं है । तन्त्र ग्रन्थों में उलट भाषियों की तरह मद्य, मांस ,मीन, मुद्रा और पाँचवा 'मैथुन' भी साधना प्रयोजनों में सम्मिलित किया गया है । यह दो मूल सत्ताओं के सम्भोग का संकेत है । शारीरिक रति कर्म से इसका सम्बन्ध नहीं जोड़ा गया है । यों यह सूक्ष्म अध्यात्म सिद्धान्त रति कर्म पर भी प्रयुक्त होते, दाम्पत्य स्थिति पर भी लागू होते हैं । दोनों के मध्य समता की, आदान–प्रदान की स्थिति जितनी ही सन्तुलित होगी उतना ही युग्म को अधिक सुखी, सन्तुष्ट समुन्नत पाया जायगा ।

मूलाधार में कुण्डलिनी शक्ति शिव लिंग के साथ लिपटी हुई प्रसुप्त सर्पिणी की तरह पड़ी रहती है । समुन्नत स्थिति में इसी मूल स्थिति का विकास हो जाता है । मूलाधार मल–मूत्र स्थानों के निकृष्ट स्थान से ऊँचा उठकर मस्तिष्क के सर्वोच्च स्थान पर जा विराजता है छोटा–सा शिव लिंग मस्तिष्क में कैलाश पर्वत बन जाता है । छोटे–से कुण्ड को मानवरोवर रूप धारण करने का अवसर मिलता है । प्रसुप्त सर्पिणी जाग्रत होकर शिव कण्ठ से जा लिपटती है और शेषनाग के पराक्रमी रूप में दृष्टिगोचर होती है । मुँह बन्द कली खिलती है और खिले हुए शतदल कमल के सहस्रार के रूप में उसका विकास होता है । मूलाधार में तनिक-सा स्थान था, पर ब्रह्मरन्ध्र का विस्तार तो उससे सौ गुना अधिक है ।

सहस्रार को स्वर्ग लोक का कल्पवृक्ष–प्रलय काल में बचा रहने वाला अक्षय वट गीता का ऊर्ध्व मूल अधः शाखा वाला अश्वत्थ–भगवान बुद्ध को महान बनाने वाला बोधि वृक्ष कहा जा सकता है । यह समस्त उपमाएँ ब्रह्मरन्ध्र में निवास करने वाले ब्रह्म बीज की ही है वह अविकसित स्थिति में मन, बुद्धि के छोटे–मोटे प्रयोजन पूरे करता है, पर जब जाग्रत स्थिति में जा पहुँचता है तो सूर्य के समान दिव्य सत्ता सम्पन्न बनता है । उसके प्रभाव से व्यक्ति और उसका सम्पर्क क्षेत्र दिव्य आलोक से भरा पूरा बन जाता है ।

ऊपर उठना पदार्थ और प्राणियों का धर्म है । ऊर्जा का ऊष्मा का स्वभाव ऊपर उठना और आगे बढ़ना है । प्रगति का द्वार बन्द रहे तो कुण्डलिनी शक्ति कामुकता के छिद्रों से रास्ता बनाती और पतनोन्मुख रहती है । किन्तु यदि ऊर्ध्वगमन का मार्ग मिल सके तो उसका प्रभाव परिणाम प्रयत्नकर्ता को परम तेजस्वी बनने और अन्धकार में प्रकाश उत्पन्न कर सकने की क्षमता के रूप में दृष्टिगोचर होता है ।

कुण्डलिनी की प्रचण्ड क्षमता स्थूल शरीर में ओजस् सूक्ष्म शरीर में तेजस और कारण शरीर में वर्चस के रूप में प्रकट एवं परिलक्षित होता है । समग्र तेजस्विता को इन तीन भागों से दृष्टिगोचर होते देखा जा सकता है । इस अन्तः क्षमता का एक भौंड़ा सा उभार और कार्य कामवासना के रूप में देखा जा सकता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कामुकता अपने सहयोगी के प्रति कितना आकर्षण, आत्म–भाव उत्पन्न करती है । सम्भोग कर्म में सरसता अनुभव होती है । सन्तानोत्पादन जैसी आश्चर्यजनक उपलब्धि सामने आती है । यह एक छोटी–सी इन्द्रिय है, पर इस अन्तः क्षमता का आवेश छा जाने पर उसका प्रभाव कितना अद्‌भुत होता है यह आँख पसार कर हर दिशा में देखा जा सकता है मनुष्य का चित्त, श्रम, समय एवं उपार्जन का अधिकांश भाग इसी उभार को तृप्त करने का ताना–बाना बुनने में बीतता है । उपभोग की प्रतिक्रिया सन्तानोत्पादन के उत्तरदायित्व निभाने के रूप में कितनी महँगी और भारी पड़ती है यह प्रकट तथ्य किसी से छिपा नहीं है । यदि इसी सामर्थ्य को ऊर्ध्वगामी बनाया जा सके तो उसका प्रभाव देवोपम परिस्थितियाँ सामने लाकर खड़ी कर सकता है ।

सामान्यतः जननेंद्रिय को कामवासना एवं रति प्रवृत्ति के लिए उत्तरदायी माना जाता है । पर वैज्ञानिक गहन अन्वेषण से यह तथ्य सामने आता है । कि नर–नारी के प्रजनन केन्द्रों का सूत्र संचालन मेरुदण्ड के सुषुम्ना केन्द्र से होता है । यह केन्द्र नाभि की सीध में है हैनरी आस्ले कृत 'नोट्स आन फिजयालोजी' ग्रन्थ में इस सन्दर्भ में विस्तृत प्रकाश डाला गया है । उसमें उल्लेख है कि नर–नारियों के प्रजनन अंगों के संकोच एवं उत्तेजना का नियंत्रण मेरुदंड के 'लम्बर रीजन' (निचले क्षेत्र) में क्षेत्र से होता है। इस दृष्टि से कामोत्तेजना के प्रकटीकरण का उपकरण मात्र जननेन्द्रिय रह जाती है । उसका उद्‌गम तथा केन्द्र सुषुम्ना संस्थान में होने से वह कुण्डलिनी की ही एक लहर सिद्ध होती है । यह प्रवाह जननेन्द्रिय की ओर उच्च केन्द्रों को मोड़ देने की प्रक्रिया ही इस महाशक्ति की साधना के रूप में प्रयुक्त होती है ।

नैपोलियन हिल ने अपनी पुस्तक 'थिंक एन्ड ग्रो रिच.' में काम शक्ति के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण प्रकाश डाला है । वे सैक्स एनर्जी को मस्तिष्क और शरीर दोनों को समान रूप से प्रभावित करने वाली एक विशेष शक्ति मानते हैं यह मनुष्य को प्रगति की दिशा में बढ़ चलने के लिए प्रेरणा देती है ।

सामान्यतया उसका उभार इन्द्रिय मनोरंजन मात्र बनकर समाप्त होता रहता है । जमीन पर फैले हुए पानी की भाप भी ऐसे ही उड़ती और बिखरती, भटकती रहती है, पर यदि उसका विवेकपूर्ण उपयोग किया जा सके तो भाप द्वारा भोजन पकाने से लेकर रेल का इन्जन चलाने जैसे असंख्यों उपयोगी काम लिये जा सकते हैं । काम शक्ति के उच्चस्तरीय सृजनात्मक प्रयोजन अनेकों हैं कलात्मक गतिविधियों में–काव्य जैसी कल्पना सम्वेदनाओं में–दया, करुणा एवं उदार आत्मीयता को साकार बनाने वाली सेवा साधना में–एकाग्र तन्मयता से सम्भव होने वाले शोध प्रयत्नों में प्रचण्ड पराक्रम के रूप में प्रकट होने वाले शौर्य, साहस में गहन आध्यात्मिक क्षेत्र से उद्‌भूत श्रद्धा भक्ति में उसे नियोजित किया जा सकता है ।

कामेच्छा एक आध्यात्मिक भूख है । वह मिटाई नहीं जा सकती । निरोध करने पर वह और भी उग्र होती है । बहते हुए पानी को रोकने से वह धक्का मारने की नई सामर्थ्य उत्पन्न करता है । आकाश में उड़ती हुई बन्दूक की गोली स्वयमेव शान्त होने की स्थिति तक पहुँचने से पहले जहाँ भी रोकी जायगी वहीं आघात लगावेगी और छेद कर देगी । काम शक्ति को बलपूर्वक रोकने से कई प्रकार के शारीरिक और मानसिक उपद्रव खड़े होते हैं । इस तथ्य पर फ्रायड से लेकर आधुनिक मनोविज्ञानियों तक ने अपने–अपने ढंग से प्रकाश डाला है और उसे सृजनात्मक प्रयोजनों में नियोजित करने का परामर्श दिया है । एक ओर से मन हटकर दूसरी ओर चला जाय । एक का महत्व गिरा कर दूसरे की गरिमा पर विश्वास कर दिया जाय, आकांक्षा एवं अभिरूचि का प्रवाह मोड़ने में विशेष कठिनाई उत्पन्न नहीं होती । ब्रह्मचर्य का वैज्ञानिक स्वरूप यही है । अतृप्ति -जन्य अशान्ति से बचने तथा क्षमता का सदुपयोग करके सत्परिणामों का लाभ लेने का एक ही उपाय है कि कामेच्छा प्रवृत्ति को सृजनात्मक दिशा में मोड़ा जाय ।

कलात्मक प्रयोजनो में संलग्न होने से उसके भौतिक लाभ मिल सकते हैं । अध्यात्म क्षेत्र में उसे भाव सम्वेदना के लिए 'भक्ति भावना' के रूप में तथा प्रबल पुरुषार्थ की तरह तपोमयी योग साधना में लगाया जा सकता है । दोनों का समन्वय कुण्डलिनी जागरण प्रक्रिया में समन्वित पद्धति के रूप में किया जा सकता है सहस्रार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चक्र भक्ति भावना का और मूलाधार चक्र प्राण सन्धान का केन्द्र है। दोनों की प्रसुप्ति स्थिति को समाप्त कर साहसिक सम्वेदना उभारना कुण्डलिनी जागरण प्रक्रिया अपनाने से सहज सम्भव हो सकता है।

धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, यह जीवन के चार परम प्रयोजन हैं। काम का अर्थ सामान्यतया रति कर्म समझा जाता है पर परम प्रयोजनों में उसका अर्थ विनोद, उल्लास आनन्द माना जाता है। यह रसानुभूति दो पूरक तत्वों के मिलन द्वारा उपलब्ध होती है। ऋण और धन विद्युत प्रवाह मिलने से गति उत्पन्न होती है। रयि और प्राण तत्व के मिलन से सृष्टि के प्राणि उत्पादनों की सृष्टि होती है। प्रकृति पुरुष की तरह नर और नारी को भी परस्पर पूरक माना गया है। मानवी सत्ता में भी दो पूरक सत्ताएँ काम करती हैं इन्हें नर और नारी का प्रतिनिधि मानते हैं। नारी सत्ता मूलाधार में अवस्थित कुण्डलिनी है और नर तत्व सहस्रार स्थित परब्रह्म है इन्हीं को शक्ति और शिव भी कहते हैं। इनका मिलन ही कुण्डलिनी जागरण का लक्ष्य है। इस संयोग से उत्पन्न दिव्य धारा को भौतिक क्षेत्र में ऋद्धि सिद्धि और आत्मिक क्षेत्र में स्वर्ग मुक्ति कहते हैं। आत्म साक्षात्कार एवं निर्माण का लक्ष्य भी यही है।

अथर्ववेद में भगवान के काम रूप से जीवन में अवतरित होने की प्रार्थना की कई है।

यास्ते शिवास्तन्वः काम भद्रायाभिः सत्यं भवति यद्वृणीषे ताभिष्ट्वमस्मां अभि संविशस्वान्यत्र पापी रपवेशाय धियः।

–अथर्व

हे परमेश्वर तेरा काम रूप भी श्रेष्ठ और कल्याण कारक है उसका चयन असत्य नहीं है आप काम रूप से हमारे भीतर प्रवेश करें और पाप बुद्धि से छुड़ाकर हमें निष्पाप, उल्लास की ओर ले चलें।

कुण्डलिनी महाशक्ति की प्रकृति का निरूपण करते हुए शास्त्रकारों ने इसे 'कामबीज' एवं 'काम कला' दोनों शब्दों का प्रयोग किया है। इन शब्दों का अर्थ कामुकता, काम क्रीड़ा या काम शास्त्र जैसा तुच्छ अर्थ यहाँ नहीं लिया गया है। इस शक्ति की प्रकृति उत्साह एवं उल्लास उत्पन्न करना है। यह शरीर और मन की उभय पक्षीय अग्रगामी स्फुरणाएँ हैं। यह एक मूल प्रकृति हुई दूसरी पूरक प्रकृति। मूलाधार को काम बीज कहा गया है और सहस्रार को ज्ञान बीज। दोनों के समन्वय से विवेक युक्त क्रिया बनती है। इसी पर जीवन का सर्वतोमुखी विकास निर्भर है। कुण्डलिनी साधना से इसी सुयोग संयोग का व्यवस्था बनाई जाती है।

प्रत्येक शरीर में नर और मादा दोनों ही तत्व विद्यमान हैं। शरीर शास्त्रियों के अनुसार प्रत्येक प्राणी में उभय–पक्षीय सत्ताएँ मौजूद हैं इनमें से जो उभरी रहती हैं। उसी के अनुसार शरीर लिंग प्रकृति बनती है। संकल्पपूर्वक इस प्रकृति को बदला भी जा सकता है। छोटे प्राणियों में उभय लिंगीय क्षमता रहती है। वह एक ही शरीर से समयानुसार दोनों प्रकार की आवश्यकताऐं पूरी कर लेते हैं।

मनुष्यों में ऐसे कितने ही पाये जाते है जिनकी आकृति जिस वर्ग की है, प्रकृति उससे भिन्न वर्ग की होती है। नर को नारी की और नारी को नर की भूमिका निवाहते हुए बहुत बार देखा जाता है। इसके अतिरिक्त लिंग परिवर्तन की घटनाएँ भी होती रहती हैं। शल्य क्रिया के विकास के साथ–साथ अब इस प्रकार के उलट–पुलट होने के समाचार संसार के कोने–कोने से मिलते रहते हैं अमुक नर नारी बन गया और अमुक नारी ने नर के रूप में अपना गृहस्थ नये ढंग से चलाना आरम्भ कर दिया।

दोनों में एक तत्व प्रधान रहने से ढर्रा तो चलता रहता है। पर एकांगी पर बना रहता है। नारी कोमलता, सहृयता, कलाकारिता जैसे भावात्मक तत्व का नर में जितना अभाव होगा उतना ही वह कठोर, नीरस, निष्ठुर रहेगा और अपनी बलिष्ठता, मनस्विता के पक्ष के सहारे क्रूर कर्कश बन कर अपने और दूसरों के लिए अशान्ति ही उत्पन्न करता रहेगा। नारी में पौरुष का अभाव रहा तो वह आत्महीनता की ग्रन्थियों से ग्रसित अनावश्यक संकोच में डूबी, कठपुतली गुड़िया बन कर रह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जायगी । आवश्यकता इस बात की है कि दोनों ही पक्षों में सन्तुलित मात्रा में रयि और प्राण के तत्व बने रहें । कोई पूर्णतः एकांगी बन कर न रह जाय । जिस प्रकार वाह्य जीवन में नर–नारी सहयोग की आवश्यकता रहती है । उसी प्रकार अन्तःक्षेत्र में भी दोनों तत्वों का समुचित विकास होना चाहिए । तभी एक पूर्ण व्यक्तित्व का विकास सम्भव हो सकेगा । कुण्डलिनी जागरण से उभयपक्षीय विकास की पृष्ठभूमि बनती है ।

काम की उत्पत्ति–उद्भव

कुण्डलिनी महाशक्ति को काम कला कहा गया है । उसका वर्णन कतिपय स्थलों में ऐसा प्रतीत होता है मानो यह कोई सामान्य काम सेवन की चर्चा की जा रही हो । कुण्डलिनी का स्थान जननेन्द्रिय मूल में रहने से भी उसकी परिणति काम शक्ति के उभार के लिये प्रयुक्त होती प्रतीत होती है ।

इस तत्व को समझने के लिए हमें अधिक गहराई में प्रवेश करना पड़ेगा और अधिक सूक्ष्म दृष्टि से देखना पड़ेगा । नर–नारी के बीच चलने वाली 'काम क्रीड़ा' और कुण्डलिनी साधना में सन्निहित काम कला में भारी अन्तर है । मानवीय अन्तराल में उभय लिंग विद्यमान है । हर व्यक्ति अपने आप में आधा नर और आधा नारी है । अर्ध नटेश्वर भगवान शंकर को चित्रित किया गया है । कृष्ण और राधा का भी ऐसा ही एक समन्वित रूप चित्रों में दृष्टिगोचर होता है । पति–पत्नी दो शरीर एक प्राण होते हैं यह इस चित्रण का स्थूल वर्णन है । सूक्ष्म संकेत यह है कि हर व्यक्ति के भीतर उभय लिंग सत्ता विद्यमान है । जिसमें जो अंश अधिक होता हैं उसकी रूझान उसी ओर ढुलकने लगती है । उसकी चेष्टाएँ उसी तरह की बन जाती हैं कितने ही पुरुषों में नारी जैसा स्वभाव पाया जाता है और कई नारियों में पुरुषों जैसी प्रवृत्ति, मनोवृत्ति होती है । यह प्रवृत्ति बढ़ चले तो इसी जन्म में शारीरिक दृष्टि से भी लिंग परिवर्तन हो सकता है अगले जन्म में लिंग बदल सकता है । अथवा मध्य सन्तुलन होने से नंपुसक जैसी स्थिति बन सकती है ।

नारी लिंग का सूक्ष्म स्थल जननेन्द्रिय मूल है । इसे योनि कहते हैं । मस्तिष्क का मध्य बिन्दु ब्रह्मरन्ध्र लिंग है इसका प्रतीक प्रतिनिधि सुमेरु–मूलाधार चक्र के योनि गह्वर में ही काम बीज के रूप में अवस्थित है । अर्थात् एक ही स्थान पर वे दोनों विद्यमान हैं पर प्रसुप्त पड़े हैं । उनके जागरण को ही कुण्डलिनी जागरण कहते हैं । इन दोनों के संयोग की साधना 'काम कला' कही जाती है । इसी को कुण्डलिनी जागरण की भूमिका कह सकते हैं । शारीरिक काम सेवन–इसी आध्यात्मिक संयोग प्रयास की छाया है ।

आन्तरिक काम शक्ति को दूसरे शब्दों में महाशक्ति –महाकाली कह सकते हैं । एकांकी नर या नारी भौतिक जीवन में अस्त–व्यस्त रहते हैं । आन्तरिक जीवन में उभय पक्षी विद्युत शक्ति का समन्वय न होने से सर्वत्र नीरस नीवरता दिखाई पड़ती है इसे दूर करके समग्र समर्थता एवं प्रफुल्लता उत्पन्न करने के लिये कुण्डलिनी साधना की जाती है । इसी संदर्भ में शास्त्रों में साधना का विज्ञान का जहाँ उल्लेख किया है वहाँ काम क्रीड़ा जैसे शब्दों का प्रयोग किया गया है । वस्तुतः यह आध्यात्मिक काम कला की ही चर्चा है । योनि–लिंग काम बीज, रज, वीर्य, संयोग आदि शब्दों में उसी अन्तः शक्ति के जागरण की विधि व्यवस्था सन्निहित है–

स्वयंभु लिंग तन्मध्ये सरन्ध्र यश्चमावलम ।
ध्यायेन्च परमेशानि शिवं श्यामल सुन्दर ॥

–शाक्तानन्द तरंगिणी.

उसके मध्य रन्ध्र सहित महालिंग है । वह स्वयंभू और अधोमुख, श्यामल और सुन्दर है । उसका ध्यान करे ।

तत्रस्थितों महालिंग स्वयंभुः सर्वदा सुखी ।
अधोसुखः क्रियावांक्ष्य काम बीजे न चालितः ॥

–काली कुलामृत

वहाँ ब्रह्मरन्ध्र में–वह महालिंग अवस्थित है । वह स्वयंभू और सुख स्वरूप है । इसका मुख नीचे की ओर है । यह निरन्तर क्रियाशील है काम बीज द्वारा चालित है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आत्मसंस्थं शिवं त्यक्त्वा बहिःस्थं यः समर्चयेत्
हस्तस्थं पिण्डमुत्सृज्य भ्रमते जीविताशया ॥
आत्मलिगार्चनं कुर्यादनालस्यं दिने दिने ।
तस्य स्यात्सकला सिद्धिर्नात्र कार्या विचरणा ।

–शिवसंहिता

अपने शरीर में अवस्थित शिव को त्याग कर जो बाहर पूजते फिरते हैं वे हाथ के भोजन को छोड़ कर इधर–उधर से प्राप्त करने के लिय भटकने वाले लोगों में से हैं ।

आलस्य त्याग कर 'आत्म-लिंग'–शिव–की पूजा करे । इसी से समस्त सफलताएँ मिलती हैं ।

नमो महाविन्दुमुखी चन्द्र सूर्य स्तन द्वया ।
सुमेरुदृार्ध्द्व कलया शौभमाना मही पदा ॥
काम राज कला रूपाजागर्ति स चराचरा ।
एतत काम कला व्याप्तं गुह्याद गुह्यतरं महत् ॥

–रुद्रयामल तंत्र.

महाविन्दु उसका मुख है । सूर्य चन्द्र दोनों स्तन हैं, सुमेरु उसकी अर्ध कला है, पृथ्वी उसकी शोभा है । चरअचर सबमें काम कला के रूप में जगती है सबमें काम कला होकर व्याप्त है यह गुह्य से भी गुह्य है ।

जननेन्द्रिय मूल–मूलाधार चक्र में योनि स्थान बताया गया है ।

मूलाधारे हि यत् पद्मं चतुष्पत्रं व्यवस्थितम् ।
तत्र कन्देऽस्ति या योनिस्तस्यां सूर्यो व्यवस्थितः

–शिव संहिता.

चार पंखुरियों वाले मूलाधार चक्र के केन्द्र भाग में जो प्रकाशवान योनि है ।

तस्मिन्नाधार पद्मे च कर्णिकायां सुशोभना ।
त्रिकोणा वतते योनिः सर्वतंमेषु गोपिका ॥

– शिव संहिता.

उस आधार पद्म की कर्णिका में अर्थात् दण्डी में त्रिकोण योनि है यह योनि सब तन्त्रों करके गोपित है ।

यत्तादृगुह्यमिति प्रोक्तं देवयोनिस्तु सोच्यते ।
अस्यां यो जायते बह्निः स कल्याण प्रदुच्यते ॥

–कात्यायन स्मृति.

यह गुह्य नामक स्थान देव योनि है । उसी में जो वन्हि उत्पन्न होती है । वह परम कल्याणकारी है ।

आधारं प्रथमं चक्रं स्वधिष्ठान द्वितीयकम् ।
योनि स्थानं द्वयोर्मध्ये कामरूपं निगद्यहे ॥

–गोरक्ष पद्धति.

पहले मूलाधार एवं दूसरे स्वधिष्ठान चक्र के बीच में योनि स्थान है, यही काम रूप पीठ है ।

आधाराख्ये गुदस्थाने पंकजं च चतुर्दलम् ।
तन्मध्ये प्रोच्यते योनिः कामाख्या सिद्ध वंदिता ॥

– गोरक्ष पद्धति.

गुदा स्थान में जो चतुर्दल कमल विख्यात है उसके मध्य में त्रिकोणाकार योनि है जिसकी वन्दना समस्त सिद्धजन करते हैं पंचाशत वर्ण से बनी हुई कामाख्या पीठ कहलाती है ।

यत्समाधौ परं ज्योतिरनन्तं विश्रतो मुखम् ।
तिस्मिन् दृष्टे महायोगे याता यातात्र विन्दते ॥

–गोरक्ष पद्धति.

इसी त्रिकोण विषय समाधि में अनन्त विश्व में व्याप्त होने वाली परम ज्योति प्रकट होती है वहीं कालाग्नि रूप है जब योगी ध्यान, धारण, समाधि–द्वारा उक्त ज्योति देखने लगता है तब उसका जन्म-मरण नहीं होता ।

इन दोनों का परस्पर अति घनिष्ठ संबंध है । वह सम्बन्ध जब मिला रहता है तो आत्म–बल समुन्नत होता चला जाता है और आत्मशक्ति सिद्धियों के रूप में विकसित होती चलती हैं । जब उनका सम्बन्ध विच्छेद हो जाता है तो मनुष्य दीन–दुर्बल असहाय–असमर्थ एवं असफल जीवन जीता है । कुण्डलिनी रूपी योनि और सहस्रार रूपी लिंग का संयोग मनुष्य की आन्तरिक अपूर्णता को पूर्ण करता है । साधना का उद्देश्य इसी महान प्रयोजन की पूर्ति करना है । इसी को शिव शक्ति का संयोग एवं आत्मा से परमात्मा का मिलन कहते हैं । इस संयोग का वर्णन साधना क्षेत्र में इस प्रकार किया गया है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भगः शक्तिर्भगवान् काम ईश उया दातार विह सौभमानाम् ।
सम प्रधानौ समसत्वौ समोजौ तयोः शक्तिरजरा विश्व योनिः ॥

–त्रिपुरोपनिषद्

भग शक्ति है । काम रूप ईश्वर भगवान है । दोनों सौभाग्य देने वाले हैं । दोनों की प्रधानता समान है । दोनों की सत्ता समान है । दोनों समान ओजस्वी हैं । उनकी अजरा शक्ति विश्व का निमित्त कारण है ।

शिव और शक्ति के सम्मिश्रण को शक्ति का उद्भव आधार माना गया है । इन्हें बिजली के 'धन और ऋण' भाग माना जाना चाहिए । बिजली इन दोनों वर्गों के सम्मिश्रण से उत्पन्न होती है । अध्यात्म विद्युत के उत्पन्न होने का आधार भी इन दोनों शक्ति केन्द्रों का संयोग ही है । शिव पूजा में इसी आध्यात्मिक योनि लिंग का संयोग प्रतीक रूप ले लिया गया है ।

लिंगवेदी उमा देवी लिंगं साक्षान्महेश्वरः ।

–लिंग पुराण.

लिंग वेदी (योनि) देवी उमा है और लिंग साक्षात महेश्वर हैं ।

सा भगाख्या जगद्धात्री लिंगमूर्तेस्त्रिवेदिका ।
लिंगस्तु भगवान्द्वाभ्यां जगत्सृष्टद्विजोत्तमाः ॥
लिंगमूर्ति शिवो ज्योतिस्तमसश्चोपरि स्थितः ।

–लिंगपुराण.

वह महादेवी भग संज्ञा वाली और इस जगत् की धात्री है तथा लिंग रूप वाले शिव की त्रिगुणा प्रकृति रूप वाली है । हे द्विजोत्तमा ! लिंग रूप वाले भगवान शिव नित्य ही भग से युक्त रहा करते हैं और इन्हीं दोनों से इस जगत् की सृष्टि होती है । लिंग स्वरूप शिव स्वतः प्रकाश रूप वाले हैं और यह माया के तिमिर से ऊपर विद्यमान रहा करते हैं ।

ध्यायेत् कुण्डलिनीं देवी स्वयंभु लिंग वेष्टिनीम् ।
श्यामां सूक्ष्मां सृष्टि रूपां सृष्टि स्थिति लयात्मिकम् ।
विश्वातीतां ज्ञान रूपां चिन्तयेद ऊर्ध्ववाहिनीम् ।

–षट्चक्र निरूपणम्.

स्वयंभू लिंग से लिपटी हुई कुण्डलिनी महाशक्ति का ध्यान, श्यामा, सूक्ष्मा, सृष्टि रूपा, विश्व को उत्पन्न और लय करने वाली, विश्वातीत, ज्ञान रूप ऊर्ध्ववाहिन के रूप में करे ।

यह उभय लिंग एक ही स्थान पर प्रतिष्ठापित है । जननेन्द्रिय मूल–मूलाधार चक्र में सूक्ष्म योनि गहर है । उसे ऋण विद्युत कह सकते हैं । उसी के बीचों बीच सहस्रार चक्र का प्रतिनिधि एक छोटा-सा उभार है जिसे 'सुमेर' कहा जाता है । देवताओं का निवास सुमेरु पर्वत पर माना गया है । समुद्र मंथन में इसी पर्वत का वर्णन आता है । साढ़े तीन चक्र लपटा हुआ शेषनाग इसी स्थान पर है । इस उभार केन्द्र को 'काम बीज' भी कहा गया है । एक ही स्थान पर दोनों का संयोग होने से साधक का 'आत्मरति' प्रयोजन सहज ही पूरा हो जाता है । कुण्डलिनी साधना इस प्रकार आत्मा के उभय पक्षी लिंगों का समन्वय सम्मिश्रण ही है । इसकी जब जाग्रति होती है तो रोम–रोम में अन्तः क्षेत्र के प्रत्येक प्रसुप्त केन्द्र में हलचल मचती है और आनन्द उल्लास का प्रवाह बहने लगता है । इस समन्वय केन्द्र–काम बीज का वर्णन इस प्रकार मिलता है–

योनि मध्ये महालिंग पश्चिमाभिमुखस्थितम् ।
मस्तके मणिबद्बिम्बं यो जानाति स योगवित् ॥

–गोरक्ष पद्धति.

त्रिकोणाकार योनि में सुषुम्ना द्वार के सम्मुख स्वयंभू नायक महालिंग है उसके सिर में मणि के समान दैदीप्यमान बिम्ब है यही कुण्डलिनी जीवाधार मोक्षद्वार है इसे जो सम्यक प्रकार से जानता है उसे योगविद् कहते हैं ।

तप्तचामी कराभासं तडिल्लेखेव विस्फुरत् ।
त्रिकोणं तत्परं वह्नरधो मेढात्प्रतिष्ठितम् ॥

–गोरक्ष पद्धति

मेढ (लिंग स्थान) से नीचे मूलाधार कर्णिका में तपे हुए स्वर्ण के वर्ण के समान वाला एवं बिजली के समान चमक–दमक वाला जो त्रिकोण है वही कालाग्नि का स्थान है ।

पूर्वाक्ता डाकिनी तत्र कर्णिकायां त्रिकोणकम् ।
यन्मध्ये विवरं सूक्ष्मं रक्ताभं काम बीजकम् ।
तत्र स्वयंभु लिंग स्नाधो मुखारक्तक प्रभुमू ।

–शक्ति तंत्र

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वहीं ब्रह्म डाकिनी शक्ति है । कर्णिका में त्रिकोण है । इसके मध्य में एक सूक्ष्म विवर है रक्त आभा वाला काम बीज स्वयंभू अधोमुख महालिंग यही है ।

आधारं प्रथमं चक्रं स्वाधिष्ठानं द्वितीयकम् ।
योनिस्थानं द्वयोर्मध्ये कामरूपं निगद्यते ॥
आधाराख्ये गुदस्थाने पंकजं च चतुर्दलम ।
तन्मध्ये प्रोच्यते योनिः कामाख्या सिद्धवंदिता॥
योनिमध्ये महालिंगं पश्चिमाभिमुखस्थितम् ।
मस्तके मणिवद्बिम्बं यो जानाति स योगवित्॥
तप्तचारीकराभासं तडिल्लेखेव विस्फुरत् ।
त्रिकोणं तत्पुरं वह्नरधो मेढात्प्रतिष्ठितम् ॥
यत्समाधौ परं ज्योतिरनन्त विश्वतोमुखम् ।
तिस्मन् दृष्टे महायोगे यातायातान्न विन्दते ॥

–गोरक्ष पद्धति.

मूलाधार और स्वाधिष्ठान इन दो चक्रों के बीच जो योनि स्थान है वही 'काम रूप' पीठ है ।

चौदह पुंखुरियों वाले मूलाधार चक्र के मध्य में त्रिकोणाकार योनि है इसे 'कामाख्या' पीठ कहते हैं । यह सिद्धों द्वारा अभिवंदित है ।

इस योनि के मध्य पश्चिम की ओर अभिमुख महालिंग है उसके मस्तक में मणि की तरह प्रकाशवान बिम्ब है । जो इस तथ्य को जानता है वही योगविद् है ।

लिंग स्थान से नीचे, मूलाधार कर्णिका में अवस्थित तपे सोने के समान आभा वाला, विद्युत जैसी चमक से युक्त जो त्रिकोण है उसी को कालाग्नि कहते हैं ।

इसी विश्वव्यापी परम ज्योति में तन्मय होने में महायोग की समाधि प्राप्त होती है और जन्म–मरण से छुटकारा मिलता है ।

तत्र बन्धूक पुष्पाभं कामबीजं प्रकीर्तितम् ।
कलहेमसमं योगे प्रयुक्ताक्षररूपिणम् ।
सुषुम्णापि च संशिलिष्टो बीजं तत्र वरं स्थितम् ।
शरन्च द्रनिभं तेर्जस्स्वयमेतत्स्फुरत्स्थितम् ॥
सूर्यकोटिप्रतलीकाशं चन्द्रकोटि सुशीतलम् ।
एतत्रयं मिलित्वैव देवी त्रिपुरभैरवी ।
बीजसंज्ञं परं तेजस्तदेव परिकीर्तितम् ॥
क्रियाविज्ञानशक्तिभ्यां युतं यत्परितो भ्रमत् ।
उत्तिष्ठद्विशतस्त्वम्भः सूक्ष्मं शोणशिखायुतम् ।
योनिस्थं तत्परं तेजः स्वमम्भूलिंगसंज्ञितम् ॥

–शिव संहिता.

जिस स्थान पर कुण्डलिनी है उसी स्थान पर पुष्प के समान स्वर्ण आभा जैसा चमकता हुआ रक्त वर्ण काम–बीज है ।

कुण्डलिनी सुषुम्ना और काम बीज यह सूर्य चन्द्रमा की तरह प्रकाशवान है । इन तीनों के मिलने को त्रिपुर भैरवी कहते हैं । इस तेजस्वी तत्व की बीज संज्ञा है ।

यह बीज ज्ञान और क्रिया शक्ति से संयुक्त होकर शरीर में भ्रमण करता है और ऊर्ध्वगामी होता है । इस परम तेजस्वी अग्नि का योनि स्थान है और उसे स्वयंभू लिंग कहते हैं ।

क्रिया विज्ञान शक्तिभ्यां युतं यत्परितो भृंमत् ।
उत्तिष्ठ द्विशतस्त्वम्भः सूक्ष्मं शोणशिखायुतम् ।
योनिस्थं तत्परं तेजः स्वयम्भू लिंग संज्ञितम् ।

–शिव संहिता.

अर्थ– वह बीज क्रिया शक्ति एवं ज्ञान शक्ति से युक्त होकर शरीर में भ्रमण करता है और कभी ऊर्ध्वगामी होता है और कभी जल में प्रवेश करता है और सूक्ष्म प्रज्वलित अग्नि के समान शिखा युत र?परम तेज वीर्य की स्थिति योनि स्थान में हैं स्वयम्भू लिंग संज्ञा है ।

तत्र बन्धूकपुष्पाभं कामबीजं प्रकीर्तितम् ।
कलहेम समं योगे प्रयुक्ताक्षर रूपिणम् ॥

–शिव संहिता.

अर्थ– जिस स्थान में कुण्डलिनी है उसी स्थान में बन्धूक पुष्प के समान रक्त काम बीज की स्थिति कही गई है । वह काम बीज तप्त स्वर्ण के समान स्वरूप योग युक्त द्वारा चिन्तनीय है ।

सुषुम्ना च संषिलिष्टो बीजं तत्रं वरं स्थितम् ।
शरच्चंद्र तेजस्स्वयमेतत्स्फुरत्स्थितम् ॥
सूर्य कोटि प्रतीकाशं चन्द्रकोटि सुशीतलम् ॥

–शिव संहिता.

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अर्थ– जिस स्थान में कुण्डलिनी स्थित है सुषुम्ना उसी स्थान में काम बीज के साथ स्थिति है और वहबीज शरच्चन्द्र के समान प्रकाशमान तेज है और वह आप ही कोटि सूर्यके समान प्रकाश और कोटि चन्द्र के समान शीतल है ।

स्थूल शरीर में नारी का प्रजनन द्रव–रज' कहलाता है । नर का उत्पादक रस वीर्य है । सूक्ष्म शरीर में इन दोनों की प्रचुर मात्रा एक ही शरीर में विद्यमान है । उनके स्थान निर्धारित हैं इन दोनों के प्रथक रहने के कारण जीवन में कोई बड़ी उपलब्धि नहीं होती । पर जब इनका संयोग होता है । तो जीवन पुष्प का पराग मकरन्द परस्पर मिलकर फलित होने लगता है कि सफल जीवन की अगणित सम्भावनाऐं प्रस्फुटित होती हैं । एक ही शरीर में विद्यमान इन उभय रसों का वर्णन साधना विज्ञानियों ने इस प्रकार किया है–

योनिस्थाने महाक्षेत्रे जपा बन्धूकसन्निभम् ।
रजो वर्सात जंतुनां देवीतत्वं समाहितम् ॥
रजसो रेतसा योगाद्राजयोग इति स्मृतः ।

–योग शिखोपनिषद.

योनि स्थान रूपी मूलाधार महाक्षेत्र में जवा कुसुम के वर्ण का रज हर एक जीवधारी के शरीर में रहता है । उसको देवी तत्व कहते हैं उस रज और वीर्य के योग से राजयोग की प्राप्ति होती है अर्थात् इन दोनों के योग का फल राजयोग है ।

गुदा और उपस्थ के मध्य में सीवनी के ऊपर त्रिकोणा कृति गुह्य–गहर है, जिसको'योनि–स्थान कहते हैं ।

गलितोपि यदा बिन्दुः संप्रप्ति योनिमण्डले ।
ज्वलितोपि यथा विन्दुः संप्राप्तश्च हुताशनम् ॥
ब्रजत्पूर्ध्वम् दृढाच्छक्त्या निबद्धो योनिमुदया ।
स एव द्विविधो बिन्दुः पाण्डुरो लोहितस्तथा ॥
पाण्डुरम् शुक्रभित्याहु र्लोहितारर्थ महारजः ।
विद्रुम द्रुम संकारां योनिस्थाने स्थितं रजः ॥
शीशस्थाने बसेद्विदुस्तयोरैक्यं सुदुर्लभम् ।

–ध्यान विन्दु उपनिषत्.

सहस्रार से क्षरित गलित होने पर जब वीर्य योनि स्थान पर ले जाया जाता है तो वहाँ कुण्डलिनी अग्नि कुण्ड में गिरकर जलता हुआ वह वीर्य योनि मुद्रा के अभ्यास से हठात् ऊपर चढ़ा लिया जाता है और प्रचण्ड तेज के रूप मे परिणत होता है यही आध्यात्मिक काम सेवन एवंगर्भ धारण है ।

स पुनद्विविधो बिन्दुः पाण्डुरो लोहितस्तथा।
पाण्डुरः शुक्रमित्या हुर्लोहिताख्यो महारजः ॥

–गोरक्ष पद्धति.

बिन्दु दो प्रकार का होता है–एक तो पाण्डु वर्ण जिसे शुक्र कहते हैं और दूसरा(लोहित) रक्त वर्ण जिसे महारज कहते हैं

सिन्दूरद्रव सकाश नाभिस्थाने स्थित रजः ।
शशिस्थाने स्थितो बिन्दुस्तयोरैक्यं सुदुर्लभम् ॥

–गोरक्ष पद्धति.

तैल मिले सून्दूर के द्रव (रस) के समान रस सूर्य स्थान नाभि मण्डल में रहता है । तथा बिन्दु (वीर्य) चन्द्रमा के स्थान कण्ठ देश षेडशाधन चक्र में स्थिर रहता है । इन दोनों का ऐक्य अत्यन्त दुर्लभ है ।

विन्दुः शिवो रजः शक्तिश्चन्द्रो बिन्दु रजो रविः।
अनयोः संगमादेव प्राप्यते परमं पदम् ।

–गोरक्ष पद्धति.

विन्दु शिव रज शक्ति है । इनके एक होने से योग सिद्धि एवं परम पद प्राप्त होता है । चन्द्रमा सूर्य का ऐक्य करना ही योग है ।

वायुना शक्ति चारेण प्रेरितं तु यदा रजः ।
याति विन्दोः सहकत्वं भवेद्विव्यं वपुस्ततः ॥

–गोरक्ष पद्धति.

शक्तिचालिनी विधि से वायु द्वारा जब रज–बिन्दु के साथ एक्य को प्राप्त होता है तब शरीर दिव्य है जाता है– स्व शरीरस्था रज–वीर्य एकता सिद्धि दायक ।

स बिन्दुस्तरजश्चैव एकीभूत स्वरेहगो ।
बजोलाभ्यास योंगेन सर्वसिद्धिं प्रपच्छतः ।

–ह योग प्रदीदपिका

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपने देह स्थित रज व वीर्य वज्रोली के अभ्यास के योग से सब सिद्धियों को देने वाले हो जाते हैं ।

शारीरिक काम सेवन की तुलना में आत्मिक काम सेवन असंख्य आनन्ददायक है । शारीरिक काम–क्रहीड़ा को विषयानन्द और आत्मरति को ब्रह्मानन्द कहा गया है । विषयानन्द से ब्रह्मानन्द का आनन्द और प्रतिफल कोटि गुना है । शारीरिक संयोग से शरीर धारी सन्तान उत्पन्न होती हैं आत्मिक संयोग प्रचण्ड आत्मबल और विशुद्ध विवेक को उत्पन्न करता है । उमा महेश विवाह के उपरांत दो पुत्र प्राप्त हुए थे । एक स्कन्द (आत्मबल) दूसरा गणेश (प्रज्ञा प्रकाश) कुण्डलिनी साधक इन्हीं दोनों को अपने आत्म लोक में जन्मा बढ़ा और परिपुष्ट हुआ देखता है ।

स्थूल काम सेवन की और से विमुख होकर यह आत्म रति अधिक सफलता पूर्व सम्पन्न हो सकता है । इसलिये इस साधनों शारीरिक ब्रह्मचर्य की आवश्यकता प्रतिपादित की गई है और वासनात्मक मनोविचारों से बचने का निर्देश दिया गया है । शिवजी द्वारा तृतीय नेत्र तत्व विवेक द्वारा स्थूल काम सेवन को भस्म करना–उसके सूक्ष्म शरीर को अजर–अमर बनाना इसी तथ्य का अलंकारिक वर्णन है । कि शारीरिककाम सेवन से विरत होने की और आत्म रति में संलग्न होने की प्रेरणा है । काम दहन के पश्चात उसकी पत्नी रति की प्रार्थना पर शिवजी हने काम को अशरीरी रूप से जीवति रहने का वरदान दिया था और रति को विधवा नहीं होने दिया था उसे आत्म रति बना दिया था । वासनात्मक अग्नि का आह्व अग्नि–कालाग्नि के रूप में परिणत होने का प्रयोजन भी यही है–

भस्मीभूते स्मरे शंभुतृतीयनयनाग्निां ।
तस्मिन्प्रविष्टे जलधौ वद त्वं किमभूत्ततः ॥

–शिव पुराण.

शिवजी के तृतीय नेत्र की प्रदीप्त अग्नि की ज्वाला से जब कामदेव भस्म हो गया और वह अग्नि समुद्र में प्रवेश कर गई इसके पश्चात क्या हुआ ?

तां च ज्ञात्वा तथाभूतां तृतीयेनेक्षणेन वै ।
ससर्ज काला कामारिः कालकंठीं कपर्दिनीम् ॥

–लिंग पुराण.

उस देवी को उस स्थिति में जानकर काम के मर्दन करने वाले शिव ने काल कण्ठी कपर्दिनी का सृजन किया था ।

काम बीज और ज्ञान बीज के मिलने से जो आनन्दमयी परम कल्याणकारी भूमिका बनती है उसमें मूलाधार और सहस्रार का मिलन संयोग ही आधार माना गया है इसी मिलाप को साधना की सिद्धि कहा गया है इस स्थिति को दिव्य मैथुन की संज्ञा भी दी गई है ।

सहस्रारो परिविन्दौ कुण्डल्या मेलनं शिवे ।
मैथुनं शयनं दिव्यं यतीनां परिकीर्तितम् ॥

–योगिनी तन्त्र.

पार्वती, सहस्रार में जो कुल ओर कुण्डलिनी का मिलनहोताहै उसी को यतियों ने दिव्य मैथुन कहा है ।

पर शक्त्यात्म मिथुन संयोगानंद निर्गराः ।
मुक्तात्म मिथुनंतत् स्त्यादितर स्त्री निवेषकः ॥

– तन्त्र सार.

आत्मा को परमात्मा को प्रगाढ़ आलिंगन में आवद्ध करके परम रस का आस्वादन करना यही यतियों का मैथुन है ।

सुषम्नाशक्ति सुदृिष्टा जीवोऽयं तु परः शवः ।
तयोस्तु संगमे देवैः सुरतं नाम कीर्तितम् ॥

–तन्त्र सार

सुषुम्ना शक्ति और ब्रह्मरंध्र शिव है दोनों के समागम को मैथुन कहते हैं ।

यह संयोग आत्मा और परमात्मा के मिलन एकाकार की स्थिति भी उत्पन्न करता है जीव को योनि और ब्रह्म को वीर्य संज्ञा देकर उनका संयोग भी परमानन्द दायक कहा गया है–

एष वीजी भवान् बीज महं योनिः सनायनः ।

–वायु पुराण.

जीव ने ब्रह्म से कहा– आप बीज हैं । मैं योनि हूँ । यही क्रम सनातन से चला आ रहा है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शिव और शक्ति के संयोग का रूपक भी इस सन्दर्भ में दिया जाता है । शक्ति को रज और शिव को बिन्दु की उपमा दी गई है । दोनों के मिलन के महत्वपूर्ण सत्परिणाम बताये गये हैं ।

बिन्दुः शिवो रजः शक्ति श्चन्द्रोबिन्दु रजोरथिः।
अनयोः संगमा देव प्राप्यते परमं पदम् ॥

–गोरख पद्धति.

बिन्दु शिव और रज शक्ति । यही सूर्य चन्द्र है । इनका संयोगे होने पर परम पद प्राप्त होता है ।

बिन्दुः शिवो रजः शक्ति रुभयोर्मिलनात् स्वयम् ।

शिव संहिता १/१००

बिन्दु शिव रूप और रज शक्ति रूप है । दोनों का मिलन स्वयं महाशक्ति का सृजन है ।

योनि वेदी उमादेवी लिंग पीठ महेश्वर ।

–लिंग पुराण.

योनि वेदी उमा है और लिंग पीठ महेश्वर ।

जातवेदाः स्वयं रूद्रः स्वाहा शर्वार्धकायनी ।
पुरुषाख्यो मनुः शंभुः शतरूपा शिवप्रिया ॥

–लिग पुंराण.

जातवेद अग्नि स्वयं रूद्र है और स्वाहा अग्नि वे महाशक्ति है उत्पादक परम पुरुष है और श्रेष्ठ उत्पादनकर्त्री शतरूपा एवं शिवा है ।

अहं बिन्दु रजः शक्तिरूभयोहर्मेलनं यदा ।
योगिनां साधनावस्था भवेद्दिव्यं वपुस्तदा ॥

–शिव संहिता ४/८७.

शिव रूपी बिन्दु शक्ति रूपी रज इन दोनों का मिलन होने से योग साधक को दिव्यता प्राप्त होती है ।

ब्रह्म का प्रत्यक्ष रूप प्रकृति और अप्रत्यक्ष भाग पुरुष है । दोनों के मिलने से ही द्वैत का अद्वैत में विलय होता है । शरीरगत दो चेतन धाराएँ रयि और प्राण कहलाती है । इनके मिलन संयोग से सामान्य प्राणियों को उसे विषयानन्द की प्राप्ति होती है जिसे प्रत्यक्ष जगत् की सर्वोपरि सुखद अनुभूति कहा जाता है । ऋण और धन विद्युत घटकों के मिलन से चिनगारियाँ निकलती और शक्ति धारा बहती है । पूरक घटकों की दूरी समाप्त होने पर सरसता और सफलता की अनुभूति प्रायः होती रहती है चेतना के उच्चस्तरीय घटक मूलाधार और सहस्रार के रूप में विलग पड़े रहें तभी तक अन्धकार की–नीरस गति हीनता की स्थिति रहेगी । मिलन का प्रतिफल सम्पदाओं और विभूतियों के-ऋद्धि और सिद्धियों के रूप में सहज ही देखा जा सकता है । इन उपलब्धियों की अनुभूति में आत्मा–परमात्मा का मिलन होता है और उसकी सम्वेदना ब्रह्मानन्द के रूप में होती है, इस आनन्द को विषयानन्द से असंख्य गुने उच्चस्तर का माना गया है ।

शिव पार्वती विवाह का प्रतिफल दो पुत्रों के रूप में उपस्थित हुआ था । एक का नाम गणेश, दूसरे का कार्तिकेय । गणेश को प्रज्ञा का देवता माना गया है और स्कन्द को शक्ति का । दुर्दान्त, दस्यु असुरों को निरस्त करने के लिए कार्तिकेय का अवतरण हुआ था । उनके इस पराक्रम ने संत्रस्त देव समाज का परित्राण किया । गणेश ने माँस पिण्ड मनुष्य को सद्ज्ञान अनुदान देकर उसे सृष्टि का मुकटमणि बनाया । दोनों ब्रह्मकुमार शिव शक्ति के समन्वय के प्रतिफल है शक्ति कुण्डलिनी–शिव सहस्रार दोनों का संयोग कुण्डलिनी जागरण कहलाता है । यह युण्य-प्रक्रिया सम्पन्न होने पर अन्तरंग ऋतम्भरा प्रज्ञा से और बहिरंग प्रखरता से भर जाता है । प्रगति के पथ पर इन्हीं दो चरणों के सहारे जीवन यात्रा पूरी होती है और चरम लक्ष्य की पूर्ति सम्भव बनती है ।

गणेश जन्म के समय शिवजी ने उनका परिचय पार्वती को कराया और उसे उन्हीं हाथों में सौप दिया । इसका विवरण वामन पुराण में इस प्रकार आया है–

यस्माज्जातस्ततो नाम्ना भविष्यति विनायकः ।
एष विघ्नसहस्राणि देवादीनां हनिष्यति ॥
पूजयिष्यन्ति देवाश्च देवि लोकाश्चराचराः ।
इत्येवमुक्त्वा देव्यास्तु दत्तवांस्तनय स हि ॥

–वामन पुराण

इस पुत्र ज्ञान पुत्र का नाम विनायक गणेश ही होगा । यह देवों के सहस्रों विघ्नों का हनन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

करेगा । हे देवि ! सब चर–अचर लोक और देवगण इसकी पूजा करेगें । इतना कह कर शिव ने वह पुत्र देवी को दे दिया था ।

स्कन्दोऽथवदनाद्वह्नेः शुभ्रात्षड्वदनोऽरिहा ।
निश्चक्रामोद्भुतो बालो रोगशोक विनाशनः ॥

–पद्म पुराण

तब छः मुख वाले कुमार स्कन्द उत्पन्न हुए । वे अद्भुत और शोक संताप विनाशक थे ।

दिव्य शक्तियों की गंगोत्री –नाभि चक्र

अध्यात्म में नाभि को उतना ही महत्व दिया गया है, जितना वैज्ञानिक परमाणु में न्यूकलियस को देते आये हैं अथवा सौरमण्डल में सूर्य का माना जाता है । नाभि की महत्ता शरीर शास्त्रियों के लिए गौण हो सकती है, पर आत्मविज्ञान का कथन है कि नाभिचक्र का चुम्बकत्व आजीवन बना रहता है । गर्भाशय में भ्रूण का पोषण माता के शरीर से होता है । बुलबुले की तरह अपना अस्तित्व प्रारम्भ करने वाला भ्रूण तेजी से बढ़ना प्रारम्भ करता है । निर्वाह एवं सतत् पोषण हेतु उसे जिस भण्डार की आवश्यकता है, वह अनुदान शिशु को माता के शरीर से अपनी नाभि के मुख से प्राप्त होता है । पका हुआ आहार माता के रक्त के माध्यम से वह निरन्तर प्राप्त कर अपनी विकास यात्रा प्रारम्भ रखता है । प्रसव के समय जिस नालरज्जु को काट कर माता व शिशु को अलग किया जाता है । यह नाल जो बालक की नाभि से जुड़ी होती है ही वह द्वार है जिससे माता के शरीर से आवश्यक रस द्रव्य बालक के शरीर में आता रहता है । नौ मास की पूरी अवधि में अपनी सारी आवश्यकताओं की पूर्ति वह नाभिमार्ग से ही करता है । जन्मोपरान्त बालक रोता, हाथ–पैर चलाता है और रक्त संचार आरम्भ हो जाता है । हृदय से रक्त फेफड़ों में जा पहुँचता है वे अपना काम आरम्भ कर देते हैं प्राणवायु को अपने रक्त में वातावरण से खींचकर स्वावलम्बन का पहला चरण नवजात बालक पूरा करता है । अब माता के गर्भाशय में बैठे 'प्लेसेन्टा' रूपी फेफड़ों की उसे आवश्यकता नहीं रह जाती । माँ व बालक के बीच सम्बन्ध विच्छेद नाल को काट कर किया जाता है । नवजात शिशु की जीवन यात्रा अपने ढर्रे पर चलने लगती है । माता का सहयोग समाप्त होते ही उस केन्द्र की उपयोगिता भी समाप्त हो जाती है स्थूल दृष्टि से चिकित्सकों की दृष्टि में इस केन्द्र की उपयोगिता एक सामान्य गड्ढे के रूप में ही रह जाती है । कुछ निरर्थक निष्क्रिय सूत्रों के माध्यम से (लिगामेण्टस टेरिस) नाभि लीवर से जुड़ी रहती है शरीरगत विकास की दृष्टि से नाभि की भूमिका समाप्त तो हो जाती है पर जब भी कभी लीवर पर दवाब पड़ता है उसमें रक्त प्रवाह बढ़ जाता है तब ये ही निष्क्रियता सूत्र जीवन्त हो जाते हैं । व 'केपट मेड्यूसि' के रूप में फूली शिराओं के स्वरूप में दिखाई देते हैं ।

यह सारी गाथा एक ही तथ्य का उद्घाटन करती है कि नाभि एक सक्रिय केन्द्र है जो अपनी उपयोगिता की अवधि में अपनी सामर्थ्य से भ्रूण के विकास में सहयोग देती हैं । बाद में वह निष्क्रिय नहीं हो जाती जिस तरह मस्तिष्क का , सूक्ष्म शरीर का केन्द्र आज्ञा चक्र माना गया है स्थूल शरीर का न्यूक्लियस नाभि है । इस केन्द्र का सशक्त होना स्वस्थ शरीर का चिह्न है । इसी की क्षमता से समीपवर्ती अवयव प्राणवान बनते हैं । नाभि केन्द्र के क्रिस्टल में आदान–प्रदान की उभय–पक्षीय क्षमता विद्यमान है । वातावरण में व्याप्त ध्वनि तरंगों को ट्रांजिस्टर का क्रिस्टल ही पकड़कर उन्हें श्रव्य ध्वनियों में परिवर्तित करता है । नाभि केन्द्र ब्रह्मी चेतना का न्यूक्लियस है । अनन्त अन्तरिक्ष से आवश्यक शक्ति खींचना और उसे धारण कर शरीर के समस्त अंगों को प्रभावित करना अध्यात्म विज्ञान के अनुसार नाभि का ही कार्य है । शरीर विज्ञान की दृष्टि से नाभि का भले ही वह महत्व न हो पर योग विज्ञान की दृष्टि से उसकी उपयोगिता आजीवन वैसी ही बनी रहती है । जैसी कि भ्रूणावधि में थी । नाभि चक्र के चुम्बकत्व को साधना योग द्वारा जाग्रत किया जा सके तो अपनी प्रखर आकर्षक क्षमता के सहारे वह इतना कुछ अदृश्य अनुदान प्राप्त कर सकने में सफल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हो सकती है जो स्थूल पदार्थों की अपेक्षा कई गुना अधिक उपयोगी है ।

शरीरशास्त्र की दृष्टि से नाभि के आस–पास नौ महत्वपूर्ण अन्तःस्रावी ग्रन्थियाँ (गैंगलियान्स) हैं । ये ओटोमैटिक नर्वस सिस्टम (स्वचालित स्नायु संस्थान) के वे केन्द्र हैं जो शरीरगत गतिविधियों, रक्त प्रवाह, पाचन में सहायक एन्जाइम्स अन्य रसों के स्राव का नियमन संचालन करते हैं । लम्बर, सेक्रल एवं काक्सीजियल गैंगलियान व इनके परस्पर सूत्रों के रूप में विद्यमान प्लेक्ससेज ही आमाशय–पाचन संस्थान तिल्ली, गुर्दे, यकृत आदि महत्वपूर्ण अंगों का संचालन करते हैं । नये शरीर का निर्माण करने वाली प्रजनन प्रणाली (गोनेड्स) अपनी अद्‌भुत क्षमताओं सहित इन्हीं केन्द्रों के नियंत्रण में काम करती है । इन सबकी फलश्रुति के रूप में दृश्य हाड़–माँस का पुतला यह शरीर अन्नमय कोष की अधीनता में तो है, पर स्वयं कोष नहीं है । देह तो नष्ट हो जाती है, पर अन्नमय कोष सूक्ष्म रूप में इच्छाओं, तृष्णाओं के रूप में जिन्दा रहता है ।

मनुष्य के प्राण–शरीर में तीन नाड़ियाँ प्रमुख हैं जिनके माध्यम से प्राण प्रवाहित होता है । ये हैं–इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना । इड़ा–पैरासिम्पेथेटिक सिस्टम–शामक संस्थान का प्रतिनिधित्व करती हैं । यह मनुष्य का शान्त, अन्तर्मुखी एवं मनोगत पक्ष हुआ । पिंगला सिम्पैथेटिक सिस्टम अर्थात् उत्तेजक संस्थान की प्रतिनिधि है । यह जीव का सक्रिय बहिर्मुखी एवं शरीरगत पक्ष है । दोनों के परस्पर सन्तुलन–सामंजस्य से ही सारी गतिविधियाँ क्रमबद्ध रूप से चलती हैं । पाचन प्रक्रिया के लिए जिस ऊर्जा की आवश्यकता शरीर को होती है वह दोनों नाड़ियों के प्राण प्रवाह से बनती हैं । नाभि के पीछे स्थित सोलर प्लेक्सस वह केन्द्र बिन्दु है, जहाँ से सारी प्रमुख धाराएँ विभिन्न अंगों को जाती हैं एक प्रकार से इसे जंक्शन स्टेशन की उपमा दी जा सकती है । जहाँ से अनेकों रेलवे लाइन विभिन्न दिशाओं में जाती हैं । सारे शरीर में स्फूर्ति इसी केन्द्र की सशक्तता पर निर्भर है । जिस भी व्यक्ति ने इस केन्द्र को साध लिया अर्थात् अन्नमय कोष की साधना कर ली, उसकी इन्द्रियाँ काबू में रहती हैं । एवं नियत निर्धारित क्रम से अपनी सुव्यवस्था कौशल का परिचय देती हैं । ऐसे व्यक्ति सामान्य मनुष्य की तुलना में कई गुने परिणाम में उत्कृष्ट कार्य कर सकने में सफल होते हैं ।

रावण किसी शस्त्र से मर नहीं सकता था क्योंकि उसकी नाभि में अमृत का कुण्ड था उसे सुखाये बिना यह असुर वध सम्भव नहीं था । यह भेद राम को विभीषण ने बताया । राम ने वह कुण्ड सुखा कर रावण मारा । इससे प्रकट है कि शरीर की स्थिति सुदृढ़ बनाने के लिए नाभि चक्र के माध्यम से कितनी बड़ी सफलता प्राप्त की जा सकती है । अध्यात्म रामायण में यह प्रसंग इस प्रकार आता है–

नाभि देशेऽमृतं तस्य कुण्डलाकार संस्थितम् ।
तच्छोषयानअस्त्रेण तस्य मृत्युस्ततो भवेत् ॥
विभीषण वचः श्रुत्वा रामः शीघ्र पराक्रमः ।
पावकास्त्रैण संयोज्य नाभिं विव्याध राक्षसः ॥

–अध्यात्म रामायण.

यह विभीषण की उक्ति है–संकेत है कि रावण की नाभि में कुण्डलाकार स्थित अमृत को अग्निवाण से सुखा दें, तभी उसकी मृत्यु होगी तब राम ने बड़ी फुर्ती से अपने पावकास्त्र से रावण की नाभि को वेध डाला ।

यह अमृतत्व पतनोन्मुख करके फुलझड़ी की तरह जलाकर तनिक सा विनोद भी खरीदा जा सकता है । उसे मधुमक्खी की तरह संचित करके अपना श्रेय और दूसरों का सुख बढ़ाया जा सकता है । प्रजनन संयंत्र के इर्द–गिर्द अनेकानेक क्षमताओं के दिव्य केन्द्र बिखरे हुए हैं । इनमें शरीर शास्त्री कुछ हार्मोन ग्रन्थि स्रावों तथा उत्तेजना परक विद्युत प्रवाहों के सम्बन्ध में ही थोड़ी-सी जानकारी प्राप्त कर सकते हैं । इतने से भी वे मानते हैं कि मस्तिष्क के बाद अवयवों की दृष्टि से हृदय और स्फुरण की दृष्टि से काम संस्थान की महत्ता है । आत्म-विद्या के अनुसार नाभि चक्र प्राण सत्ता का–साहसिक पराक्रमशीलता का एवं प्रतिभा का केन्द्र माना गया है । इस स्थान की ध्यान साधना करते हुए इस प्राण–शक्ति को निग्रहीत और दिशा नियोजित किया जा सकता है । फलतः उसके सत्परिणाम भी ओजस्विता की वृद्धि के रूप में सामने आते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जिस तरह दृश्य प्रकृति का सृजेता सूर्य माना गया है उसी प्रकार शरीर रूपी जगत् का सृजेता भी सूर्य है जो नाभि में बैठा हुआ है। डाक्टरों और वैज्ञानिकों द्वारा लगभग महत्वहीन नाभि को भारतीय योग शास्त्र में भारी महत्व दिया गया है। बच्चा गर्भावस्था में नाभि के द्वारा ही माँ के शरीर से जुड़ा हुआ होता है और उसके शरीर विकास के लिए उसे नाभि द्वारा ही सारी वस्तुयें प्राप्त होती हैं। नाभि का विस्तार सारे शरीर में है अन्तर्दृष्टि जाग्रत करने वाली प्रत्येक साधना का प्रारम्भ इसी को जाग्रत करने से होता है। कुण्डलिनी के साधक को भी प्राणाकर्षण प्राणायाम की यथेष्ट मात्रा एकत्र कर लेने के बाद सर्व प्रथम "लोम विलोम सूर्य भेदन प्राणायाम" का ही अभ्यास करना पड़ता है। पातंजलि कृत योग दर्शन में बताया है कि नाभि चक्रों काय काम व्यूह ज्ञानम्–नाभि चक्र में चित्तवृत्तियों को स्थिर करने से नाड़ी आदि शरीरस्थ स्थूल पदार्थों का ज्ञान होता है। पाश्चात्य देशों में अब लोग इसे सोलर फ्लैक्सस के नाम से जानने भी लगे हैं किन्तु उनका ज्ञान अभी नहीं के बराबर है। छान्दोग्योपनिषद में कहा है–

स य एवमेतं द्रथरन्तरमग्नो प्रोते वेद ब्रह्म वर्चस्यन्नादो भवति सर्वमायुरेति ज्योग्जीवति महान्प्रजया पशुभिर्भवति महान्कीर्त्या न प्रत्यंग्नि माचामेन्न निष्टै वेत्तद व्रतम् ॥

जो इस रथन्तर (नाभि स्थित) साम की अग्नि में उपासना करता है वह तेजस्वी, उदीप्त प्रदीप्त जठराग्नि वाला होता है। पूर्ण आयु पाता है। प्रजा और पशु से सम्पन्न प्रतिष्ठा वाला होता है वह कीर्ति से भी महान होता है–अग्नि की ओर मुख करके न कुछ खाये और न थूके यह व्रत है।

योगवशिष्ठ ने तो इसी अग्नि को, सूर्य को जो नाभि में स्थित है कुण्डलिनी शक्ति का द्वार माना है और लिखा है–

मास कुयंत्र जठरे स्थिते श्लिष्टमुखं मिथः ।
ऊर्ध्वाधः समिलत्स्थूलहृयम्भः स्थैरिव वैतसम् ॥
तस्य कुण्डलिनी लक्ष्मीर्निलीनान्त र्निजास्पदे ।
पद्यराग समुद्रस्य कोशे मुक्तावली यथा ॥
–६/१/८१/६३–६४.

हे राम–देहरूपी यंत्र के उदर भाग में नाभि के पास परस्पर मिले हुए मुख वाली धौकनियों के समान माँस का पिण्ड इस तरह थरथराता हुआ (सूर्य भी कम्पनशील प्लाज्मा या अग्नि ही है) स्थित है जैसे ऊपर और नीचे बहने वाले दो जलों के बीच में सदा स्थिर रहने वाला वेत कुंज उसके भीतर कुण्डलिनी शक्ति इसी प्रकार स्थित है जैसे मूंगे की पिटारी में मोतियों की माला।

योग–विद्या के यह कथ्य जितने तथ्य पूर्ण है उतने ही आश्चर्यजनक पदार्थ को शक्ति में बदलने वाले इस शक्ति केन्द्र की भारतीय योगियों ने तब शोध की थी जब परिश्रम शक्ति की परिभाषा करना भी नहीं जानता था। यों यह शक्ति सामान्य अवस्था में शिथिल और उपेक्षित पड़ी रहती है अमर्यादित आहार विहार के कारण उसका क्षय भी होता रहता है तथापि उस क्षय को रोककर आश्चर्यजनक काम किये जा सकते हैं।

नाभि संस्थान को शरीर चक्र की धुरी माना गया है। मानवीकाया का यह ऐसा विलक्षण केन्द्र है जिसके साथ अनेकों भौतिक और आध्यात्मिक प्रयोजन जुड़े हैं। मध्य भाग में अवस्थित होने के कारण शरीर को गतिशील रखने में यह प्रमुख भूमिका तो निभाता ही है वैभव और वर्चस्व के ऋद्धि-सिद्धियों के भाण्डागार भी इस केन्द्र में समाहित हैं। इसी स्थान में मेरुदण्ड के लम्बर रीजन में शरीर का तीसरा प्रमुख सूक्ष्म शक्ति केन्द्र 'मणिपूर' चक्र स्थित होता है विज्ञानवेत्ता जिसे सोलर प्लेक्सस या सूर्य चक्र के नाम से सम्बोधित करते हैं इसका दूसरा नाम 'अग्नि चक्र' भी है।

एम्ब्रियोलाजी अर्थात् भ्रूण विज्ञान के अन्तर्गत नाभि संस्थान का विशेष महत्व है। जीवधारी भ्रूणावस्था से लेकर परिपक्व विकसित शिशु बनने तक जितने दिनों गर्भावस्था में रहता है, तब तक वह माता के शरीर के साथ अपने नाभि केन्द्र से एक नलिका द्वारा जुड़ा होता है जिसे अम्बिलिकल कार्ड या गर्भनाल कहते हैं। इसके माध्यम से ही जननी की प्राण ऊर्जा, रस–रक्त एवं अन्यान्य पोषक तत्व उसके शरीर में पहुंचते हैं और वह एक विन्दुकलल से विकसित होता हुआ शिशु रूप धारण करता है। प्रसव के उपरान्त ही जननी और शिशु को पृथक इकाई के रूप में अपना–अपना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कार्य अपने बलबूते करने का अवसर मिलता है । इससे पूर्व नाभि मार्ग से ही शिशु पोषण प्राप्त करता है । आयुर्वेद ग्रंथों एवं योगशास्त्रों में इसीलिए नाभि केन्द्र को महत्वपूर्ण माना गया है और 'नाभिस्याः प्राणिना प्राणाः' कहकर उसे जीवनी शक्ति का प्राण ऊर्जा का केन्द्र बताया है अनुसंधानकर्ता वैज्ञानिकों ने इसे शरीर स्थित दूसरे मस्तिष्क 'ऐबडोमिनल ब्रेन' की संज्ञा दी है ।

कुण्डलिनी जागरण में मणिपूर चक्र का विशेष महत्व है । यों तो कुण्डलिनी महाशक्ति का उद्गम स्थल मूलाधार चक्र है, पर उसका उद्गम छः अंगुल ऊँचाई पर नाभि की सीध में है । मूलाधार को जो ऊर्जा अपने कार्य संचालन के लिए उपलब्ध होती है, वह वस्तुतः नाभि द्वारा ही बाहर से भीतर तक पहुँचती है । इसका प्रमुख कारण है नाभि में सूर्य का उपस्थित होना । प्राणायाम एवं ध्यान–धारणा के माध्यम से नाभि संस्थान में स्थित सूर्य तथा ब्रह्माण्ड स्थित सूर्य का योग होता है और उस स्थल से सूर्य मिश्रित प्राण ऊर्जा की सूक्ष्म कलाएँ मूलाधार तक पहुँचती हैं और प्रसुप्त कुण्डलिनी के जागरण में सहायक बनती हैं । शास्त्रों में इस संबंध में कहा गया है–उदरे तु यमं विद्यादादित्यं नाभिमंडले" अर्थात् पेट में यम और नाभि मंडल में सूर्य विद्यमान है । पातंजलि योग सूत्र ३/२६ में भी नाभि केन्द्र में सूर्य की स्थिति बताई गई है और कहा गया है कि इसमे संयम करने से भुवन का अर्थात् लोक–लोकान्तरों का ज्ञान प्राप्त होता है । सूर्य से सम्बन्धित होने के कारण मणिपूर चक्र की प्रकाश किरणें सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त हो जाती हैं और शरीर तथा सृष्टि का सारा रहस्य साधक के सम्मुख प्रकट हो जाता है ।

अथर्ववेद में इस संस्थान का वर्णन करते हुए कहा गया कि जिस प्रकार वर्षा का केन्द्र बादल होते हैं उसी प्रकार काया में नाड़ियों का केन्द्र नाभि स्थित सूर्य चक्र जहाँ से निकल कर वे समूचे शरीर तंत्र को नियंत्रित करती है । मणि की तरह चमकदार यह संस्थान अग्नि की तरह अपना कार्य करता और जीवन की गतिविधियों को ऊर्जा गर्मी प्रदान करता है ।इसे तेजस केन्द्र भी कहते हैं ।

वेद, उपनिषदों, में इसी को वैश्वानर, पूषन अग्नि, सौर तेज, अन्तर्ज्योति आदि नामों से सम्बोधित किया गया है । यह केन्द्र सभी प्रकार की अग्नियों का अधिष्ठाता है । इसके जागरण से शरीर की तीनों अग्नियाँ प्रदीप्त होती और प्राण चेतना को ऊर्ध्वगामी बनाने में सहायक बनती हैं । अग्नि तत्व की प्रधानता होने के कारण यह प्राण शक्ति की प्रबलता का, साहस और वीरता का संकल्प एवं पराक्रम का भी केन्द्र है । इसका सम्बन्ध निद्रा, भूख, प्यास लगने से है । प्रसुप्त पड़े रहने पर ईर्ष्या, तृष्णा, भय, घृणा, लोभ, मोह आदि विकार ही मन में जमे रहते हैं । सामान्य परिस्थितियों में इससे मात्र जैविक गतिविधियों को संचालित करते रहने लायक ऊर्जा ही उपलब्ध होती है, किंतु प्रयत्नपूर्वक अग्निचक्र को जाग्रत एवं विकसित कर लेने पर मनुष्य अपनी इच्छाओं पर नियंत्रण पा लेता है । दुख, रोग और मृत्यु का भय उसे नहीं सताता । इसके साथ ही वह अतीन्द्रिय क्षमताओं का स्वामी बन जाता है । उसे पर काया प्रवेश से लेकर दूर गमन, दिव्य दर्शन आदि अनेकों सिद्धियाँ हस्तगत हो जाती हैं । शिव संहिता ५/१०६–१०८ में 'मणिपूर' केन्द्र पर ध्यान करने से पाताल सिद्धि बताई गई है ।

आयुर्वेदिक ग्रथों में 'मणिपूर चक्र' को सूर्य, अग्नि या समान वायु का केन्द्र माना गया है जो रस, धातु, मल, दोष, आम आदि का पाचन करता है । इसके असंतुलित होने या शिथिल पड़ जाने पर भोजन का पाचन ठीक ढंग से नहीं हो पाता इसके विपरीत यह धातु और मल का अवशोषण करने लगता है और अंततः प्राण ऊर्जा को भी अवशोषित करके व्यक्ति को मृत्यु के मुख में धकेल देता है । इस संदर्भ में चिकित्सा विज्ञानियों ने गहन खोजें की हैं । निष्कर्ष प्रस्तुत करते हुए उन्होंने बताया है कि नाभि मंडल स्थित 'मणिपूर' पर ध्यान–धारणा केन्द्रित करने पर समान वायु एवं अग्नि साम्यावस्था में आ जाते हैं सर्वप्रथम समान वायु सक्रिय होती और अग्नि को उत्तेजित करती है । तदुपरान्त यह अग्नि पाचन एवं अवशोषण में भाग लेती है । इससे न केवल शारीरिक मानसिक स्वास्थ्य उत्तरोत्तर सुधरता है वरन् वाकशक्ति भी जाग्रत हो जाती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सुश्रुत संहिता ६६/६६ में भी यही बात कही कई है । मर्मस्थल के रूप मे वर्णन करते हुए कहा गया है कि यह स्थान सभी उत्पादनों का शीर्ष है । इस पर लगने वाला आघात व्यक्ति के लिए प्राणघातक सिद्ध हो सकता है ।

योग राजोपनिषद् १३/६२ में उल्लेख है कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड मनुष्य के नाभि चक्र में समाहित है, जहाँ से निकलने वाली वैद्युतीय तरंगें न केवल शरीर तंत्र को नियंत्रित करती हैं, वरन् समूचे ब्रह्माण्ड में अपने स्तर की हलचलें उत्पन्न करती हैं । यही बात गोरक्ष पद्धति में ४३/३१ में भी कही गई कि 'मणिपूर' चक्र में ध्यान केन्द्रित करने से असीम शक्ति उद्भुत होती है जिसके माध्यम से साधक सम्पूर्ण संसार में हलचल पैदा कर सकता है । नवीन क्रान्तियों को जन्म दे सकता है । इसी ग्रंथ में नाभि चक्र को कमलाकार बताते हुए कहा गया है कि इससे २४ नाड़ियाँ निकलती हैं जिनमें से दस नाड़ियां ऊपर की ओर जाती हैं और शब्द, रस, गंध आदि प्रक्रियाओं को नियंत्रित करती हैं । दस शिरायें शरीर के निचले भाग की ओर जाती हैं और सम्बन्धित अंग–अवयवों को नियंत्रित करती हैं इसके अतिरिक्त चार और नाड़ियाँ निकल कर कई शाखा–प्रशाखाओं में बँट जाती है और छोटे-छोटे स्थानों की आपूर्ति करती हैं । यह शक्ति सुषुम्ना मे मणिरत्नों की भाँति धागे से जुड़ा होता है । इसीलिए इसे 'मणिपूर' चक्र कहते हैं । शारदा तिलक में इसे दस पंखुड़ियों वाले कमल पुष्प के रूप में उल्लेख करते हुए कहा है कि यह रूद्र का स्थान है जो समस्त सृष्टि का पोषण करते हैं इसे विकसित कर लेने पर मनुष्य सभी प्रकार की व्यथाओं एवं कामनाओं पर विजय पा लेता है । उस में परकाया प्रवेश की सामर्थ्य आ जाती है ।

"जस्ट हाउ टू वेक दि सोलर प्लेक्सस" नामक अपनी खोजपूर्ण कृति में सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक एलिजावेथ टौन ने सूर्य चक्र और उसमें सन्निहित शक्तियों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है । उनके अनुसार नाभि मंडल में दस पंखुड़ियों वाली कमला कृति सूक्ष्म संरचना होती है जिसे ही सोलर प्लेक्सस कहते हैं । इस पर सविता का ध्यान करने से आत्म सूर्य अर्थात् अन्तर्ज्योति का प्रत्यक्ष आभास होने लगता है । इस जागरण से मन की मलिनताएँ तथा विकृतियाँ दूर होतीं और जीवन में उच्चस्तरीय उत्साह का संचार होता है । ओजस् तेजस् की अभिवृद्धि होती है ।

नाभि चक्र सूर्य का अधिष्ठान स्थल होने के कारण तेजस् का ज्ञान शक्ति का केन्द्र है । हमारी वृत्तियों से इसका गहरा सम्बन्ध है । चैत्यन्य अवस्था में जब यह सक्रिय रहता है, तब भावनाएँ एवं वृत्तियाँ उच्चस्तरीय होती है ।मन में प्रसन्न्ता की, स्फूर्ति की तरंगें प्रवाहित होती रहती हैं । किंतु संकुचित अवस्था में अशुभ वृत्तियाँ उभरती और मन खिन्न तथा उदास बना रहता है । सामान्य रूप से इस शक्ति केन्द्र में सौर शक्ति का नैसर्गिक प्रवाह सतत् होता रहता है ।

किन्तु जब कभी मनुष्य अपने स्वयं के चिन्तन, आचरण या क्रिया व्यवहारों के द्वारा उस प्रवाह में बाधा उत्पन्न कर लेता है तो जीवन तत्व–प्राण ऊर्जा की कमी के कारण अनेकानेक अधि–व्याधियों से ग्रस्त हो जाता है । सतत् संकुचित रहने के कारण सम्बद्ध नाड़ी समूह कमजोर पड़ जाते हैं और अत्यधिक सिकुड़ जाने के कारण उनमें प्राण तत्व का प्रवाह रुक जाता है । इस केन्द्र में जीवन तत्व उत्पन्न करने की अद्भुत एवं असीम सामर्थ्य है ।

भ्रूण अवस्था में नाभि संस्थान जीवन का आधार तो होती ही है । बड़े होने पर नाभी निष्क्रिय नहीं होती है वरन् महाप्राण में से प्राण खींचकर शरीरगत क्षमताओं का परिपोषण करती रहती है । नासिका के द्वारा वायु का आवागमन होता है, उसी प्रकार नाभि के द्वारा विश्वव्यापी प्राण प्रवाह के साथ संबंध जुड़ता है । कुण्डलिनी का उद्गम मूलाधार चक्र है । उस गुदा और जननेन्द्रिय की सीध में जाना जाता है । पर उसका उद्गम छः अंगुल ऊँचाई पर नाभि की सीध में है । मूलाधार को जो अपने कार्य संचालन के लिए ऊर्जा उपलब्ध होती है, वह नाभि द्वारा ही बाहर से भीतर तक पहुंचती है । गर्भ का परिपोषण शुक्र और डिम्ब के परिपाक में नाभि की अपनी महत्वपूर्ण भूमिका है ।

श्वास नासिका द्वारा शरीर में भीतर प्रवेश करती है । इससे आगे बढ़कर वह नाभि चक्र के अन्तःक्षेत्र से टकराती है और फिर समस्त शरीर की कोशाओं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को प्राण चेतना देने के लिए बिखर जाती है । श्वास आघात से नाभि क्षेत्र में भी एक अत्यन्त धीमी धड़कन चलती रहती है । इसलिए उसे दूसरा हृदय भी कहा गया है । यह सारा वर्णन स्थूल एनाटामी की भाषा में नहीं सटलर एनाटामी के माध्यम से समझा जाना चाहिए ।

सूक्ष्म शरीर में तीन ग्रन्थियाँ प्रमुख है । मस्तिष्क के मध्य भाग ब्रह्मरन्ध्र में ब्रह्म ग्रन्थि दोनों पसलियों के मिलन स्थान पर हृदय चक्र के स्थान पर विष्णु ग्रंथि । नाभि चक्र में मूलाधार से जुड़ी हुई रुद्र ग्रंथि । यहाँ ग्रन्थियों का तात्पर्य रत्न राशि को किसी पोटली में रख कर गाँठ बाँध लेने जैसा है । यह तीनों ही तींनों लोकों में कहीं भी उपलब्ध होने वाली सम्पदाएँ हैं । साधारणतया यह गाँठें मजबूती के साथ बँधी रहती हैं किन्तु इनमें से आवश्यकतानुसार वैभव और वर्चस खोजा एवं निकाला जा सकता है । ऋद्धि सिद्धियों की आवश्यकतानुसार इसी में से पूर्ति की जा सकती है सर्वविदित है कि मस्तिष्क में अवस्थित ब्रह्मग्रन्थि ज्ञान की, हृदय विष्णु ग्रंन्थि वैभव की और नाभि स्थित रुद्र ग्रंथि पराक्रम की अधिष्ठात्री है इन विभूतियों से सम्पन्न होने के लिए त्रिविध ग्रन्थियों के वेधन का विशिष्ट विधान है ।

चर्चा यहाँ नाभि ग्रन्थि की हो रही है । उसका प्रखरीकरण करने के लिए मूलबंध, उड्डियन बंध और जालंधर बन्ध जैसे उपक्रम अपनाने पड़ते हैं । उन विधियों को किसी अनुभवी के संरक्षण में ही सीखा जा सकता है । पुस्तकों में उन्हें कार्यान्वित करने की विधियाँ छपी हैं । पर उस आधार पर करने लगने की अपेक्षा यही उत्तम है कि जानकार के समीप या संरक्षण में उन्हें कार्यान्वित किया जाय । थोड़ी भी भूल होने से उल्टे परिणाम की आशंका रहती है ।

नाभि क्षेत्र को सजग समर्थ बनाये रहने के लिए कई उपयोगी अभ्यास हैं । उसमें सबसे सरल यह है कि चित्त लेटकर पेट को यथा सम्भव अधिक से अधिक फुलाया और कुछ रूक-रूक कर सिकोड़ा जाय । इससे उस क्षेत्र का आकुचन प्रकुंचन होने से निष्क्रियता दूर होती है और रक्त संचार में गतिशीलता आती है । साथ ही उस क्षेत्र से सम्बन्धित छोटे-बड़े अवयवों पर उपयोगी प्रभाव पड़ता है ।

शक्ति ग्रन्थों में मूलाधार के सदृश नाभि गह्वर में शक्ति का दुर्गा का निवास माना गया है और कहा गया है कि इस गुहा में महा शक्ति अदृश्य रूप में निवास करती है । साथ ही उनकी सहचरी ६४ योगिनियाँ भी सेवारत रहती है । इस स्थान पर ध्यान करने से भगवती की सिद्धि अपेक्षाकृत जल्दी होती है ।

षट्चक्रों में से प्रत्येक चक्र किसी तत्व विशेष से संबंधित एवं प्रभावित होता है । उसका सक्रिय करने के लिए किसी विशेष रंग का ध्यान करना होता है । जैसे सूर्य चक्र-(नाभि चक्र) अग्नि तत्व प्रधान है । उसे जाग्रत करने के लिए पीतवर्ण कमल का ध्यान किया जाता है । वास्तव में लाल-पीले, हरे-बैगनी एवं सफेद रंगों का सूर्य ज्योति की सात-किरणों से संबंध है । चक्रों में इनके मानसिक ध्यान मात्र से संबंधित तत्व में विशेष हलचल होकर हमारे ज्ञान तन्तुओं एवं मस्तिष्क को प्रभावित करता हुआ शरीर स्थित व्यष्टि प्राण को समष्टि प्राण, तथा चेतना से जोड़ देता है । जिस तरह बिजली की बैट्री की पॉवर समाप्त हो जाने पर उसे जेनरेटर से चार्ज कर शक्ति संपन्न कर लिया जाता है अथवा किसी छोटे स्टोर में संगृहीत भंडार खर्च हो जाने पर समीपस्थ किसी बड़े स्टोर से उसकी पूर्ति कर ली जाती है । उसी तरह विश्व में अनन्त शक्तियों के भंडार समष्टि प्राण से व्यष्टि प्राण के केन्द्र मणिपूर चक्र (सूर्य चक्र) द्वारा वांछित शक्ति को आकर्षित करके संचित किया जाना तथा आवश्यकतानुसार उसका उपयोग होना संभव है । जिस भी व्यक्ति ने इस केन्द्र को साध लिया उसकी इन्द्रियाँ काबू में रहती हैं एवं नियत निर्धारित क्रम से अपनी सुव्यवस्था कौशल का परिचय देती हैं ऐसे सामान्य मनुष्य की तुलना में कई गुने परिमाण उत्कृष्ट कार्य कर सकने में सफल होते हैं ।

इसको जाग्रत करने के लिए प्रातः काल सूर्योदय से पहले सांयकाल सूर्यास्त से पहले साधना करने का विधान है । किसी पवित्र एवं एकान्त स्थान में अथवा अपने दैनिक साधनाकक्ष में पद्मासन में कमर सीधी स्थिति में बैठकर दस से बीस बार गहरी-गहरी साँस लें अथवा तीन से पाँच मिनट तक नाड़ी शोधन प्राणायाम करें । इससे प्राण का सुषुम्ना नाड़ी में संचार प्रारम्भ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हो जाता है । इसके पश्चात् रीढ की हड्डी को बिल्कुल सीधा रखते हुए अजपा गायत्री (सोऽहम्) का श्वास के साथ पाँच मिनट तक मौन जप करना चाहिए । बाद में अपनी नाभि के पीछे मेरुदण्ड स्थित सूर्य चक्र में पीले चमकीले रंग वाले चमकीले कमल के मानसिक ध्यान में स्वयं को तन्मय कर देना चाहिए ।

इस तन्मयता में यह भाव गहराई में समाहित रहे कि सूर्य चक्र जाग्रत हो रहा है । पीतवर्ण कमल से निकलती प्रकाश रश्मियाँ सारे नाभि संस्थान को प्रकाशित कर रही हैं । इस भावना की गहराई में स्वयं को खोते हुए अपनी श्वास को धीरे–धीरे हृदय में फेफड़ों में ले जाते हुए पेट में भर दें इस प्रक्रिया के साथ यह भावना गहरी होती जाय कि "मैं आरोग्यता सुख शान्ति प्राण शक्ति स्फूर्ति सफलता एवं सिद्धि के परमाणुओं को समष्टि प्रकृति के भंडार से अपने भीतर आकर्षित कर रहा हूँ । तथा सूर्य चक्र में उनका संचय और संग्रह हो रहा है ।" पाँच मिनट श्वास को सूर्य चक्र में ठहराने के पश्चात यह भाव गहरा करें कि मेरा प्राण ऊर्ध्वगामी होकर शरीर के समस्त अंग प्रत्यगों में व्याप्त हो गया है और उसका प्रकाश पहुँच रहा है ।

इस आटो सजेशन के साथ श्वास को बिल्कुल धीरे-धीरे बाहर छोड़ दें और सूर्य चक्र से प्राण का स्पन्दन मेरुदंड में ऊपर की ओर गति करता अनुभव करें एक दो मिनट के विश्राम के पश्चात् फिर यही क्रिया पाँच से दस बार तक दुहराई जाय । श्वासं अंदर भरने तथा छोड़ने का क्रम इतने धीरे–धीरे हो कि उसकी ध्वनि न सुनाई पड़े । सुखपूर्वक परम विश्रांति के साथ उपर्युक्त क्रिया को दुहराने के साथ ही आत्मनिर्देश पूर्ण श्रद्धा एवं विश्वास के साथ दुहाराना जरूरी है । एक–दो महीने की नियमित साधना के पश्चात् शरीर, मन मस्तिष्क में परिवर्तन समझ पड़ते हैं । इन परिवर्तनों में यह स्पष्ट अनुभूति होती है कि भावनाओं के अनुरूप ही मन व बुद्धि विकसित हो रहे हैं । इसकी दीर्घकालीन साधना द्वारा दृढ़ संकल्पपूर्वक चेतना का प्राण के साथ संयोग हो जाने पर साधक के मन व मस्तिष्क में चुम्बकीय विद्युत तरंगों का निर्वाह प्रवाह जारी हो जाता है । जो साधक के आस–पास एवं उससे संबंधित वातावरण को प्रभावोत्पादक बनाने में समर्थ होता है ।

इस प्रकार के आकर्षक वातावरण का प्रभाव एवं उसकी अनुभूति हम उच्चकोटि के साधक संत महात्माओं के सान्निध्य में सहज ही कर सकते हैं । उपर्युक्त साधना से सूर्य चक्र एवं अनाहत चक्र में एक सुनियोजित सीधा संबंध स्थापित होकर साधक की सर्वतोमुखी उन्नति में जो स्वैच्छिक सहयोग मिलता है । वह शीघ्र ही लक्ष्य तक पहुँचने का मार्ग प्रशस्त कर देता है ।

साधना के प्रति उपेक्षा नाभि स्थित सूर्य के अमृत तत्व को पतनोन्मुख कर देती है । इसे फुलझड़ी की तरह जलाकर तनिक सा विनोद भी खरीदा जा सकता है । जबकि साधना प्रक्रिया को अपनाकर उसे मधुमक्खी की तरह संचित करके अपना श्रेय और दूसरों का सुख बढ़ाया जा सकता है । आत्मविद्या के अनुसार सूर्य चक्र प्राण सत्ता का, साहसिक पराक्रमशीलता का एवं प्रतिभा का केन्द्र माना गया है । इस स्थान की ध्यान साधना करते हुए इस प्राण शक्ति को निग्रहीत और दिशा को सुनियोजित किया जाता है । फलतः उसके सत्यपरिणाम भी ओजस्विता की वृद्धि के रूप में सामने आते हैं ।

नाभि सूर्य का प्रतीक है प्राण चेतना की उत्पत्ति इसी केन्द्र से होती है । प्राणायाम एवं सविता साधना द्वारा वस्तुतः सूर्य चक्र का ही जागरण किया जाता है । जिससे आत्मा अपना सम्बन्ध सीधे सूर्य से जोड़कर प्राणाग्नि का विकास करती रहती है इस केन्द्र को जाग्रत कर लेने का अर्थ है शक्तिपुंज बन जाना महाप्राण बन जाना ।

रहस्यमयी उपत्यिकाओं का पर्यवेक्षण

षट्चक्रों और २४ उपत्यिकाओं का वर्णन योग विज्ञान में विस्तारपूर्वक किया गया है । दिव्य शक्तियों के भाण्डागार के रूप में इनका निरूपण हुआ है । सृष्टा ने अमोघ शक्तियाँ बीज रूप में अपने युवराज मनुष्य को प्रदान की हैं साथ ही उन्हें छिपाकर भी रखा है । प्रसुप्त स्थिति में रहने दिया है ताकि आवश्यक परिपक्वता पात्रता विकसित होने पर ही वह इन्हें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उपलब्ध कर सके और सही समय पर सही रूप में उपलब्ध कर सके ।

षट्चक्रों को आत्मिक शक्तियों का भण्डार माना गया है । सातवाँ सहस्रार है यह सप्तलोक है । यह लोक एक से एक ऊपर है । इनकी विभूतियाँ सिद्धियाँ भी एक के बाद दूसरे में अधिक हैं । इन्हीं पर चढ़ते हुए आत्मा परब्रह्म तक पहुँचता और पूर्णता को प्राप्त करता है । यह षट्चक्र स्थूल शरीर में नहीं वरन् सूक्ष्म और कारण शरीरों में है । उन्हें इन्द्रियों या उपकरणों की सहायता से नहीं देखा जा सकता ।

इसके अतिरिक्त अध्यात्म विज्ञान के अनुसार २४ उपत्यिकाओं का उल्लेख है । इन्हें गायत्री मन्त्र के २४ अक्षरों के साथ जोड़ा गया है । इन्हें २४ देवता,२४ ऋषि, २४ अवतार भी कहा गया है । यह स्थूल शरीर में विद्यमान रहस्य भरी ग्रन्थियाँ हैं जिन्हें प्रत्यक्ष देखा जा सकता है । कुछ समय पूर्व तक इनके सम्बन्ध में विशेष जानकारी नहीं थी । वे माँस क्षेत्र में अवस्थित साधारण सी फुटकियाँ मानी जाती हैं ऐसी और कितनी ही हैं । गर्दन के आस पास उनकी भरमार है कभी-कभी वे फूल या सूज जाती हैं तब मुसीबत पैदा करती हैं । गलगंड, कन्ठमाला, विषबेल आदि नामों से इनका विकृत स्वरूप प्रसिद्ध है । उनके निवारण के लिए सेंक, लेप, आपरेशन जैसे उपचार काम में लाये जाते हैं ।

उपत्यिकाओं में से कुछ का विशेष विवरण थोड़े समय पूर्व ही प्राप्त हुआ है । इनमें से जो भली प्रकार जानी जा सकती है उन्हें अन्तःस्रावी ग्रन्थियाँ कहा जाता है । इनमें से विशेष प्रकार के स्राव अत्यन्त स्वल्प मात्रा में निकलते हैं और वे अपने ढंग से रक्त में मिल जाते हैं । इन स्रावों की न्यूनाधिकता तथा उत्कृष्टता, निकृष्टता के ऐसे विचित्र परिणाम होते हैं । जिन्हें देखते हुए आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है ।

शरीर में अनेक प्रकार के स्रावों और शोषक किण्वकों की व्यवस्था है । पाचन प्रक्रिया को समग्र बनाने के लिए मुख से, आमाशय से, यकृत से, आँतों से कितने ही प्रकार के स्राव निकलते हैं दिन-रात में उनका परिणाम भी काफी हो जाता है । जबकि अन्तःस्रावी ग्रन्थियों के स्राव जिन्हें हार्मोन कहा जाता है, नगण्य सी मात्रा में निकलते हैं इतने पर भी वे इतने अद्भुत परिणाम प्रस्तुत करते हैं जिन्हें देखते हुए उन्हें जादू के पिटारे से उपमा दी जाती है । मनुष्य विशेषताओं की कितनी विशेषताओं को घटाने और बढ़ाने में इनका असाधारण योगदान होता है पतलापन, मोटापा, लम्बाई बौनापन आदि विचित्रताओं में यह हार्मोन ही जादू की छड़ी घुमाते रहते हैं ।प्रजनन अवयवों की निष्क्रियता सक्रियता में इनकी अद्भुत भूमिका रहती है इन्हीं के व्यतिरेक लिंग परिवर्तन की घटनाओं भी होती रहती हैं ।

हार्मोन ग्रन्थियों में अभी थोड़ी सी ही विदित हो सकी है । किन्तु सम्भावना अभी औरों के भी प्रकाश में आने की है । कभी सूर्य, चन्द्र दो ही आकाश के अधिष्ठाता थे। पीछे नवग्रहों का पता चला । अब उनमें प्लेटो, नेप्च्यून, यूरेनस भी शमिल हो गए है । अनुसंधान की इतिश्री नहीं हुई है और सौर मण्डल के ग्रह-उपग्रह की ऋंखला पर नया प्रकाश पड़ता जा रहा है और उनकी संख्या तथा स्थिति की जानकारी मिल रही है । अन्तःस्रावी ग्रन्थियों के सम्बन्ध में भी यही बात है । कभी उन्हें पुरुष के अण्डकोश और नारी के स्तन के रूप में ही समझा जा सकता है । पीछे शुक्राणुओं और डिम्बकोशों की थैलियाँ भी प्रजनन प्रयोजन की आन्तरिक उथल-पुथल में भाग लेती देखी गईं । अब इन्हें अन्तःस्रावी ग्रन्थियों के रूप में खोज निकाला गया है । इनमें से छः प्रमुख मानी गई हैं । उनकी गतिविधियों की रूपरेखा भी बहुत कुछ स्पष्ट हो चुकी है ।

इतने पर भी नहीं समझा जाना चाहिए कि जो जाना गया है वह अन्तिम है । अभी उस श्रृंखला में और भी कितनी ही कड़ियाँ जुड़ने की सम्भावना है । आशा की जानी चाहिए कि वह दिन दूर नहीं जब रहस्यों पर से पर्दा उठता जायगा और उन २४ उपत्यिकाओं पर प्रकाश पड़ेगा जो विज्ञान अन्तःस्रावी ग्रन्थियों के ही समतुल्य सशक्त सिद्ध होगी वरन् उनसे भी बढ़ी-चढ़ी रहस्य भरी भूमिकाएँ सम्पन्न कर रहीं हैं ।

शरीर की गतिविधियों के संचालन में कभी हृदय, यकृत, आमाशय, आँत, गुर्दे, आदि को ही सब कुछ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

माना जाता था और इन्हीं के सही रहने पर आरोग्य निर्भर माना जाता था । पर अब बारीकियों में उतरने की सुविधा हुई है तो रुग्णता के दुर्बलता के, कारण वे सूक्ष्म संस्थान भी खोजे जाने लगे हैं जिनकी कुछ समय पहले तक चिकित्सकों को कोई खास जानकारी न थी ।

उपत्यिका विज्ञान के अनुसार अन्तःस्रावी प्रणाली शरीर के सभी प्रमुख क्रियाकलापों को प्रभावित करती है । इसके अन्तर्गत शरीर का विकास, प्रजनन, पोषण, रोग के विरुद्ध रक्षात्मक व विभिन्न परिस्थितियों में अनुकूलता स्थापित करने की क्षमता विद्यमान है । शरीर के उत्तम क्रियाकलापों हेतु सभी वाहिनी विहीन ग्रन्थियाँ सुसंचालित होनी चाहिए ।

वैज्ञानिक अब तक इस अन्तःस्रावी प्रणाली को समझने का प्रयास कर रहे हैं क्योंकि इससे स्रावित होने वाले रासायनिक तत्व इतने अल्प मात्रा में होते तथा इतनी शीघ्रता से क्षरित होते हैं कि उनका जैव रासायनिक विश्लेषण अत्यन्त कठिन होता है ।

पुरुष प्रजनन अन्तःस्रावी प्रणाली में प्रमुख ग्रन्थि तथा टेस्टिस होती है । गोनेड्स (टेस्टिस) की दो प्रमुख क्रियाएँ है–शुक्राणु कोष की रचना तथा पुरुष यौन हार्मोन एन्ड्रोजन्स को स्रवित करना, जो पुरुष की सहायक तीन विशेषताओं को प्रकट करता है । दाढ़ी व छाती पर के बाल, गम्भीर आवाज लम्बी अस्थियाँ व पेशियाँ बालक को मनुष्य के रूप में परिवर्तित कर डालती हैं ।

नारी प्रजनन विशेषताओं का भी नियंन्त्रण अन्तःस्रावी प्रणाली द्वारा होता है, जो नर की तुलना में अधिक जटिल होता है । सहायक यौन विशेषताओं के साथ–साथ नारी का मासिक धर्म तथा गर्भधारण प्रक्रिया भी हारमोन्स से प्रभावित होता है । स्त्रियोचित कोमलता भी इसी पर निर्भर करती है । इसी प्रकार यौवनारम्भ के समय इस्ट्रोजन्स नारी में स्तन के विकास, मासिक धर्म की शुरूआत तथा अन्य मादा विशेषताओं को प्रकट करते हैं ।

एड्रीनल मेडुला अर्थात् एड्रीनल ग्रन्थि का आन्तरिक हिस्सा दो मुख्य हार्मोन एड्रीनेलिन व नॉर एड्रीनेलिन को उत्पन्न करता है । यह व्यक्ति को भागने अथवा युद्ध करने में प्रयुक्त करता है । क्रोध अथवा भय, दुर्घटना, दर्द, अथवा रक्तस्राव तथा अधिक तापमान की स्थिति में ये हारमोन्स सामान्य अवस्था की तुलना में एक हजार गुना अधिक उत्पन्न होता है तथा रक्त में वितरित होकर अंगों ऊतकों को आपत्तिकालीन स्थिति में तत्पर होने का संकेत देता है ।

वैज्ञानिक अब यह बताते हैं कि व्यक्ति आक्रामक प्रवृत्ति का निर्धारण एड्रीनेलिन एवं नारएड्रीनेलिन के अनुपात के ऊपर आधारित होता है । एक दब्बू व्यक्ति में एड्रीनेलिन रसस्राव कम होता है तथा आक्रामक व्यक्ति में नार एड्रीनेलिन की मात्रा कम होती है ।

गले के निचले हिस्से में स्थित है ।इस हार्मोन की समुचित मात्रा के अभाव में व्यक्ति मानसिक दृष्टि से मन्द, सुस्त व कमजोर होता है । उसकी चयापचय प्रक्रिया भी कमजोर हो जाती है । हृदय की गति मन्द पड़ जाती है । इसके विपरीत थायराइड हारमोन्स के अधिक स्राव से हृदय की गति तीव्र हो जाती है । चयापचय दर बढ़ जाता है । अधिक भूख लगने लगती है । मानसिक दृष्टि से अत्यन्त विचलित होता है ।

पीनियल ग्रन्थि जो मस्तिष्क में स्थित है एक अत्यन्त अद्‌भुत ग्रन्थि है । इसे व्यक्ति का तृतीय नेत्र तथा आत्मा का स्थान बताया जाता है । पीट्यूटरी ग्रन्थि से विकास हारमोन्स का नियंत्रण होता है । यह ऊतकों के विकास में सहायक होता है । इस हार्मोन की कमी से व्यक्ति नाटा और अधिक स्राव होने से लम्बे कद का होता है ।

अन्तःस्रावी ग्रन्थियों के स्रवित होने वाले रसायनों में ऐसी क्या विशेषता है जो मनुष्य के स्वभाव, स्तर विकास एवं शरीर को असाधारण रूप से प्रभावित करती है । इसका कारण अभी ठीक से नहीं जाना जा सका है । उपलब्ध जानकारियों से इतना भर पता चलता है कि वे शरीर को, उसके प्रकट और अप्रकट अवयवों को प्रभावित करती है । स्वभाव और व्यक्तित्व को उठाने गिराने में सहायक होती है । किन्तु ऐसा क्यों होता है ? इन स्रावों में ऐसी क्या विशेषता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है ? इस संबंध में किसी सुनिश्चित निष्कर्ष तक पहुँच सकना सम्भव नहीं हुआ है । जो कहा जाता है उसे अनुमान पर ही आधारित समझा जाना चाहिए ।

अध्यात्म विज्ञान के सूक्ष्मदर्शियों ने इन रहस्य संस्थानों की विशिष्टता को बहुत पहले ही समझ लिया था और उन्हें उपत्यिका नाम देकर यह प्रयत्न किया था कि उन्हें ध्यान योग एवं साधना विधानों के माध्यम से नियंत्रित, परिमार्जित एवं उत्तेजित करने में सफलता प्राप्त की जाय और उस आधार पर शरीर को वैसा बनाया जाय जैसा कि अभीष्ट है ।

चक्र की साधना, कुण्डलिनी विज्ञान के अन्तर्गत आती है । वह चेतना क्षेत्र की प्रतिभा, प्रखरता एवं उत्कृष्टता को बढ़ाने के लिए प्रयुक्त की जाती है । उपत्यिका साधनाओं का क्षेत्र इससे कुछ हटकर है । उन्हें स्थूल शरीर को परिष्कृत बनाने के लिए जाग्रत एवं समुन्नत किया जाना है । इसके लिए आसन, प्राणायाम बन्ध मुद्रा जप, ध्यान जैसे कृत्यों का अवलम्बन लिया जाता है ।

अन्तःस्रावी हार्मोन ग्रन्थियों के प्रभाव को ध्यान में रखते हुए शरीर संरचना की बारीकियों को समझाने वाले अब इस खोज में हैं कि खोज को और आगे बढ़ाया जाय । सभी उपत्यिकाओं के स्थान, स्वरूप एवं क्रियाकलाप को इस प्रकार समझने–समझाने का प्रयत्न किया जाय जिससे प्रत्यक्षवादियों की भी वस्तु स्थिति समझने में कठिनाई न हो । समग्र आरोग्य के इच्छुकों को अब यह आवश्यकता अनुभव होने लगी है कि खाद्य औषधियों के सहारे रक्त माँस को प्रभावित करने की प्रचलित चिकित्सा पद्धति में नया अध्याय जोड़ा जाय और देखा जाय कि उपत्यिका संस्थान को प्रभावित करके शरीर और मस्तिष्क की निरोगता एवं समर्थता से संबन्धित समस्याओं का समाधान किस प्रकार किया जा सकता है ।

* * *

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुण्डलिनी जागरण की ध्यान साधनायें

कुण्डलिनी साधना स्वरूप और उद्देश्य

मस्तिष्क की तीक्ष्णता, बौद्धिक प्रखरता के माध्यम से प्राप्त होने वाली उपलब्धियों से सभी परिचित हैं। बुद्धिमान और सुशिक्षित व्यक्ति हर क्षेत्र में सफलता प्राप्त करते हैं। इस तथ्य से परिचित होने के कारण ही लोग शिक्षा साधना में मुक्त हस्त से धन और समय लगाते हैं। भारतीय ऋषियों और योगियों ने इस प्रखरता, तेजस्विता का केन्द्र ब्रह्मरन्ध्र बताया है। उसे मस्तिष्क का नाभिक– न्यूक्लियस भी कहा जा सकता है। इसके सहारे न केवल मस्तिष्क का स्तर प्रभावित होता है वरन् सूक्ष्म जगत के साथ भी वैसे ही आदान-प्रदान का द्वार खुलता है जैसा कि पृथ्वी का सूर्य एवं अन्यान्य ग्रह नक्षत्रों के साथ चलता है।

मानवी काया की धुरी ब्रह्मरन्ध्र स्थित सहस्रार चक्र को बताया जाता है। यह केन्द्र न केवल अपने क्षेत्र मस्तिष्क को प्रभावित करता है वरन् उसके स्तर का भी निर्धारण करता है। साथ ही ब्रह्मांडीय चेतना के साथ सम्पर्क बना कर आदान प्रदान का पथ प्रशस्त करता है। भौतिक ऋद्धियाँ और आत्मिक सिद्धियाँ जागृत सहस्रार के सहारे निखिल ब्रह्मांड से आकर्षित की जा सकती हैं। वृक्ष अपने चुम्बकत्व से वर्षा को आकर्षित करते हैं। धातु खदानें अपने चुम्बकत्व से सजातीय धातु कणों को खींचती और जमा करती रहती हैं। सहस्रार में जैसा भी चुम्बकत्व हो उसी स्तर का अदृश्य विश्व वैभव खिंचता और एकत्रित होता रहता है। यही जीवन का अदृश्य उपार्जन उसके स्तर तथा व्यक्तित्व के स्वरूप की पूँजी सम्पत्ति बनती तथा उसके व्यक्तित्व का नियमन निर्धारण करती है। चेतन और अचेतन मस्तिष्कों द्वारा जो इन्द्रिय गम्य और अतीन्द्रिय ज्ञान उपलब्ध होता है, उसका केन्द्र यही संस्थान है। ध्यान से लेकर समाधि तक और आत्म–चिन्तन से लेकर भक्तियोग तक की समस्त आध्यात्मिक साधनाएँ यहीं से फलित और विकसित होती हैं। ओजस्, तेजस्, और ब्रह्मवर्चस् के रूप में पराक्रम, विवेक एवं आत्मबल की उपलब्धियों का अभिवर्धन यहीं से उभरता है।

दूसरा महत्वपूर्ण केन्द्र दक्षिणी ध्रुव के समतुल्य जननेन्द्रिय मूल में अवस्थित 'काम बीज' है। इसी को साधना शास्त्र में मूलाधार चक्र कहा गया है। इसकी उपयोगिता और गरिमा अपने स्तर की है। मस्तिष्क ज्ञान का और काम बीज सामर्थ्य का उद्गम है। आत्मिक बल ऊपर है और भौतिक बल नीचे। भावनाएँ, विचारणाएँ, आस्थाएँ ऊपर से उतरती हैं और पराक्रम, उत्साह, उल्लास नीचे से उभरता है। ऊर्ध्व केन्द्र को ब्रह्म का–अधः केन्द्र को प्रकृति का–सम्पर्क द्वार कह सकते हैं। अपने–अपने स्तर के आदान–प्रदान इन्हीं केन्द्रों से सम्भव होते हैं।

ऊर्ध्व क्षेत्र ग्रहण करता है और अधः क्षेत्र विसर्जन। शिरो भाग में मुख है जिससे अन्न, जल ग्रहण किया जाता है। नाक है, जिससे साँस ग्रहण की जाती है। कान सुनते, नेत्र देखते हैं। इनसे मस्तिष्क की ज्ञान–सम्पदा बढ़ती है। यह शिर भोग ग्रहणकर्त्ता होने के कारण उतरी ध्रुव है। उसकी धुरी सहस्रार में है।

अधः क्षेत्र से विसर्जन होते प्रत्यक्ष देखा जाता है। मल, मूत्र, वीर्य का क्षरण इसी क्षेत्र से होता है। कामुकता यहीं से उठती है और मस्तिष्क की सरसता का प्रलोभन देकर अपने चंगुल में जकड़े रहती है। विवाह सन्तान का ताना–बाना इसके चरखे करघे पर तैयार होता है। इन्हीं दो प्रयोजनों में जीवन–सम्पदा का अधिकांश भाग खर्च हो जाता है। दक्षिणी ध्रुव से विसर्जन प्रक्रिया काम केन्द्र द्वारा किस प्रकार होती है, यह प्रत्यक्ष देखा जा सकता है। ओजस् का दिव्य उत्पादन शरीर में होता है। उसे क्रमशः अधिक सूक्ष्म और विकसित करते रहा जाय तो मानसिक तेजस् और आत्मिक वर्चस् की अभिवृद्धि करते–करते मनुष्य प्रचण्ड पराक्रमी हो सकता है। पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वे सभी दिव्य विभूतियाँ इसी काम क्षेत्र के उभारों में होकर अस्त-व्यस्त हो जाती हैं। शारीरिक और मानसिक ब्रह्मचर्य साधने और इस संचय को कलात्मक एवं भावनात्मक दिव्य प्रयोजनों में लगाकर मनुष्य क्या नहीं बन सकता ? किन्तु क्षरण के कारण तो वह खोखला ही बनता जाता है। सामान्य निर्वाह तक में कमी कठिनाई पड़ती है, तब महत्वपूर्ण प्रगति के लिए साधना सामग्री कैसे जुटे ?

काम केन्द्र का यह एक अद्भुत चमत्कार है कि वहाँ से नये मनुष्य का जन्म अवतरण सम्भव होता है। प्राणियों का उत्पादक परमात्मा है, पर जब जीव को अपने ही समतुल्य नया जीव बनाते देखा जाता है तो जी चाहता है कि उसे भी सृष्टा कहा जाय ? अपने शरीर में से अपने जैसे नये-नये शरीर बना कर खड़े करते जाना अनौखे किस्म का जादू है। जादूगर अपनी झोली, हथेली, मुख आदि से अन्य वस्तुएँ तो निकालते हैं, पर अपने जैसा मनुष्य निकाल सकना उनमें से किसी के लिए भी सम्भव नहीं हो सका। यह जादू मनुष्य काया में स्थित काम केन्द्र का ही है जो ऐसा अद्भुत उत्पादन सम्भव बना देता है।

काम केन्द्र मात्र रति प्रेरणा ही नहीं उभारता। उसमें कला सौन्दर्य, उत्साह, उल्लास, साहस जैसी अनेकों सृजन सम्वेदनाएँ उफनती रहती हैं। 'नपुंसक' शब्द एक प्रकार की गाली माना जाता है। ऐसे व्यक्ति राजकीय सेवा में स्वास्थ्य की दृष्टि से 'अनफिट' कर दिये जाते हैं। सेना, पुलिस जैसे साहसिक कार्यों में उनको प्रवेश नहीं मिलता। श्राद्ध और यज्ञ का सञ्चालन करने में नपुंसक आचार्यों को बहिष्कृत ठहराया गया है। गीता में कृष्ण ने अर्जुन को 'क्लीव' कहकर प्रकारान्तर से गाली ही दी थी। अध्यात्म क्षेत्र की नपुंसकता, नीरसता, निराशा, निष्क्रियता के रूप में दृष्टिगोचर होती है। इन प्रवृत्तियों में उभार या उतार की स्थिति बनने के लिए काम केन्द्र की स्थिति को उत्तरदायी माना गया है। सन्तानोत्पादन से लेकर सृजनात्मक क्षमताओं तक सम्बन्ध इसी केन्द्र से जुड़ता है। ऐसे-ऐसे अनेकों तथ्य मिलाकर यह सिद्ध करते हैं कि भौतिकी क्षमताओं और सफलताओं की दृष्टि से काम संस्थान का-(मूलाधार चक्र का) कितना महत्व है। जीव विकास विज्ञानियों ने तो प्रगति प्रेरणाओं को मनोविज्ञान के क्षेत्र में 'सेक्स' संज्ञा दी है। यहाँ रति कर्म को नहीं उत्साह और आनन्द के समन्वय को ही 'सेक्स' संज्ञक कहा गया है।

काम बीज का प्रतीक मूलाधार और ज्ञान बीज का प्रतिनिधि सहस्रार चक्र है। इन्हें मानवी सत्ता के दो अति महत्वपूर्ण शक्ति केन्द्र कहा जा सकता है। यहाँ एक बात विशेष रूप से स्मरणीय है कि इन्हें शरीर शास्त्र के अनुसार कोई प्रत्यक्ष अवयव नहीं मानना चाहिए। यह सभी सूक्ष्म शरीर में रहने वाली सत्ताएँ हैं। स्थूल शरीर में सूक्ष्म शरीर से मिलते-जुलते अवयव पाये जाते हैं। और उनके सहारे स्थूल एवं सूक्ष्म शरीरों के बीच आदान-प्रदान भी होते रहते हैं। इतने पर भी दोनों के अस्तित्व एक दूसरे से सर्वथा भिन्न हैं। रक्त संचार की थैली भी हृदय है और सहृदयता एवं हृदय हीनता के रूप में विद्यमान अन्तरात्मा भी हृदय कहलाती है। हृदय गुफा में ध्यान करने के लिए कहा गया है। यह हृदय, रक्त शोधक थैली नहीं, वरन् सूक्ष्म शरीर में अवस्थित विशिष्ट चेतना केन्द्र है। ठीक इसी प्रकार मूलाधार एवं सहस्रार को प्रत्यक्ष शरीर का कोई अवयव विशेष नहीं मानना चाहिए। हाँ, उनसे मिलते-जुलते अवयवों का अस्तित्व किसी ओंधे-तिरछे रूप में अवश्य पाया जा सकता है। उनका इतना ही महत्व है कि उन्हें झकझोरने से अधिष्ठात्री सूक्ष्म शक्ति को किस कदर प्रभावित किया जा सकता है। साधना प्रयोजनों में इन अवयवों से भी कुछ न कुछ काम लिया जाता है। प्रगति पथ-प्रशस्त होने में इससे सहायता भी मिलती है।

कुण्डलिनी जागरण मूलाधार और सहस्रार में अवस्थित भौतिक एवं आत्मिक शक्तियों के पारस्परिक शिथिल सम्बन्ध को सघन बनाया जाता है। दोनों के बीच आदान-प्रदान की गति तीव्र की जाती है। इन दोनों सरोवरों के बीच सम्बन्ध मार्ग है-मेरुदण्ड। इसी को महामार्ग कहा गया है। महा प्रयाण की, ऊर्ध्वगमन की देवयान प्रक्रिया यही है। पाण्डवों के स्वर्गारोहण को इसी प्रयास का अलंकारिक कथा प्रसंग कहना चाहिए।

कुण्डलिनी योग को भौतिक और आत्मिक प्रखरता प्राप्त करने की समर्थ साधना माना जाता है। पृथ्वी मूलाधार स्थित शरीरगत शक्ति, सूर्य ब्रह्मरन्ध्र स्थित सहस्रदल, कमल, इन दोनों के परस्पर सुयोग सम्मिलन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

का नाम ही कुण्डलिनी जागरण है। मूलाधार और सहस्रार के बीच पाँच और दूसरे चक्र हैं। कुण्डलिनी शक्ति जो मूलाधार केन्द्र में अवस्थित रहती है, इन पाँचों चक्रों का बंधन करती हुई सहस्रार से जा मिलती है और फिर वे सभी परिणाम ऋद्धि-सिद्धियाँ, वैभव, ऐश्वर्य आ प्रस्तुत होते हैं जो कुण्डलिनी जागरण की सफलता समझे जाते हैं।

मूलाधार केन्द्र में अवस्थित कुण्डलिनी शक्ति को जागृत करने के लिए यों विविध विधि साधनात्मक क्रिया कलाप अपनाये जाते हैं। कर्मकाण्डों के साधनात्मक उपचारों के आधार पर साधकगण छहों चक्रों का वेधन कर कुण्डलिनी शक्ति को सहस्रार चक्र तक पहुँचाने का प्रयत्न करते हैं और इसके लिए प्राणायाम, प्रत्याहार, साधारण, ध्यान, समाधि आदि का सहारा लेते हैं इन साधन प्रयोगों में मूलतः संकल्प शक्ति का ही उपयोग किया जाता है। और प्रखर संकल्प बल के आधार पर मानवी काया में अवस्थित सप्त चक्रों के माध्यम से वे समस्त सिद्धियाँ हस्तगत की जाती हैं, जिनका उल्लेख योगशास्त्रों में मिलता है।

मानवी संकल्प शक्ति की क्षमता असीम है। उसको जागृत करना और सदुद्देश्य के लिए प्रयुक्त कर सकना संभव हो सके तो कुछ भी बन सकना और कुछ भी कर सकना सम्भव हो सकता है-

फलं ददाति कालेन तस्य तस्य तथा तथा
तपोवा देवता वाणी भूत्वा स्वैव रिन्यथा,
फलं ददात्यथ स्वैर नभः फलं निपातवत ,

-योगवाशिष्ठ

जीव अपनी इच्छा से ही देवता, तपस्वी बनता रहता है। प्रगति और अवनति का आधार मनुष्य का अपना कर्तव्य ही है।

सप्त ऋषयः प्रतिहिताः शरीरे ।
सप्त रक्षति सर्व अप्रमादम् ॥

-यजु०

शरीर में सात ऋषि निवास करते हैं। ये वे सतर्कतापूर्वक उसकी निरंतर रक्षा करते हैं।

इस तथ्य की ओर बहुत कम लोग ध्यान देते हैं कि समस्त सम्पदाओं और विभूतियों का केन्द्र मनुष्य के अपने ही भीतर निहित है। शरीर के बाहर की ओर बनी इंन्द्रियाँ बाहर का तो बहुत कुछ देखती हैं पर आन्तरिक सम्पदा को समझने, उसका सदुपयोग करने से वंचित ही रह जाती हैं। हमारी बुद्धि बाहरी समस्याओं को सुलझाने में तो लगी रहती है किन्तु जीवन के स्वरूप, लक्ष्य एवं उपयोग को जानने में असमर्थ रहती है। पराञ्चि खानि व्यतृणत् स्वयम्भू स्तस्माद् पराङ पश्यति नान्तरात्मन् ।

कश्चिद्धीरः प्रत्यगात्मानमैक्षदावृतचक्षुर मृतत्वमिच्छनं ॥

(कठोपनिषद २/४/१)

विधाता ने छेदों को बाहर की ओर छेदा (अर्थात् इन्द्रियों को बहिर्मुखी बनाया) अतएव मनुष्य बाहर ही देखता है, अन्तर को नहीं देखता। अमृत की आकांक्षा करने वाला दूरदर्शी बिरला मनुष्य ही अन्तर की ओर देखता है।

गायत्री की उच्चस्तरीय साधना में सप्त चक्रों का जागरण प्रमुख है। यह सप्त चक्र और पंचकोश परस्पर सम्बद्ध हैं। दोनों की साधना एक साथ ही सम्पन्न होती है। इसी में देव साधना, ऋषि उपासना-समग्र उत्कर्ष, जीवन लक्ष्य, सर्वतोमुखी विकास उल्लास के समस्त तत्वों का समावेश है। कहा गया है-

मूलादि ब्रह्म रंध्रान्ता गीयते मननात् यतः ।
मननात् त्राति षट्चक्रं गायत्री तेन कथ्यते ॥

-तन्त्र कौमुदी

मूलाधार से लेकर ब्रह्मरन्ध्र तक विस्तृत षट्चक्र का जिसके अवगाहन से जागरण होता है। उसे गायत्री कहते हैं।

आत्मसत्ता में सन्निहित विश्व की समस्त विभूतियों को यदि खोजा और जगाया जा सके तो जीवात्मा को देवात्मा एवं परमात्मा बनने का अवसर मिल सकता है। इस अन्वेषण प्रयास को ब्रह्म विद्या और जागरण प्रक्रिया को ब्रह्म तेज सम्पादन कहते हैं। इस सन्दर्भ में सप्त ऋषियों को जीवन्त करने और उनके ब्रह्म-बल से उच्चकोटि का लाभ उठाने की प्रक्रिया 'चक्रवेधन' के रूप में समझी जा सकती है।

चक्रवेधन के लिए किये जाने वाले क्रिया कलाप यदि क्रिया-कृत्य तक ही सीमित रहे-उनमें संकल्प शक्ति का कोई पुट न दिया जाय तो इतने मात्र से काम नहीं चलेगा। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए संकल्प शक्ति के

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उपयोग एवं प्रयोग के साथ-साथ भावनात्मक स्तर पर भी अनुकूलता एवं अनुरूपता विनिर्मित करनी पड़ेगी। पृथ्वी अर्थात् भौतिक सम्पदा-अहंता, सूर्य अर्थात् आत्मिक सत्ता ब्रह्म चेतना इन दोनों को जो जितना जोड़ सकता है, उसे कुण्डलिनी जागरण के साथ जुड़ी हुई विभूतियाँ मिलती हैं। स्वार्थ को परमार्थ में जोड़ने का, शारीरिक वासनाओं को आत्मिक उल्लासों में घुला देने का नाम ही आत्म समर्पण है। इसी को साधना क्षेत्र में पृथ्वी और सूर्य का संयोग कहते हैं। कुण्डलिनी साधना इसी केन्द्र बिन्दु पर पहुँचने की चेष्टा को कह सकते हैं।

अशक्तता और संकीर्णता एक ही तथ्य के दो नाम हैं। कुण्डलिनी साधना द्वारा भीतर भरे शक्ति स्रोत को उभारा जाता है। और निखिल ब्रह्माण्ड में संव्याप्त अनन्त सामर्थ्य को अपने भीतर धारण किया जाता है। यह धारणा ही वह पात्रता है जिसके आधार पर दिव्य शक्तियों का साधक में अवतरण होता है। शारीरिक और मानसिक साधना पद्धति की उपयोगिता भी है और आवश्यकता भी। पर उसकी पूर्णता तभी होती है, जब अपने अणु अस्तित्व को विराट् के विभु में समर्पित कर दिया जाय। यह समर्पण जितना यथार्थ और जितना प्रगाढ़ होता है, उसी अनुपात में सफलता का पथ प्रशस्त होता चला जाता है।

कुण्डलिनी शक्ति एक होते हुए भी व्यक्ति तथा संसार के चेतन और जड़ जगत के अनेक प्रयोजन पूरे करती है। बिजली घर में विनिर्मित होने वाले विद्युत भण्डार का संग्रह एक ही प्रकार का है, पर उसके द्वारा बत्तियाँ, पंखे, हीटर, कूलर, रेडियो आदि के अनेक घरेलू प्रयोजन पूरे होते हैं और अनेक तरह के कल कारखाने चलते तथा अगणित प्रकार का उत्पादन करते हैं। इन क्रिया कलापों के नाम रूप अनेक हैं। उनके बाह्य स्वरूपों की भिन्नता इतने अधिक प्रकार और स्तर की है कि किसी का किसी से कोई सीधा सम्बन्ध मालूम नहीं पड़ता। पंखा चलने और रेडियो बजने के बाह्य स्वरूप में भारी अन्तर मालूम पड़ता है। एक मशीन से सिंचाई के लिए पानी निकलता है और दूसरी लोहा गलाने की भट्टी जलाती है। दोनों में प्रत्यक्षतः कितना भारी अन्तर दीखता है, पर बारीकी से देखने पर एक ही विद्युत भण्डार के यह विविध विधि क्रिया-कलाप सिद्ध होंगे। ठीक इसी प्रकार कुण्डलिनी शक्ति एक विश्व व्यापी जीवन प्राण और समर्थ क्षमता के रूप में एक ही प्रकार की है पर उसके कार्य जड़ जगत में अलग प्रकार के और चेतन जगत में अलग प्रकार के दिखाई पड़ते हैं।

चेतन जगत में इसकी क्रियाशीलता प्राणियों के जन्म, अभिवर्धन, वृद्धावस्था, मृत्यु तथा अंग प्रत्यंगों की दृश्य एवं अदृश्य गतिविधियों के रूप में देखी जा सकती है। इच्छा, ज्ञान, क्रिया, स्वभाव, संस्कार आदि के रूप में उसी महाशक्ति का प्रकाश फैला हुआ देखा जा सकता है पंचतत्वों के विभिन्न सम्मिश्रणों चेतनाओं के अनेक विभाजनों का एकत्रीकरण तथा कर्म संस्कारों के योग से जो अगणित योनियों में जन्म लेने वाले असंख्य आकृति प्रकृति के जीव उत्पन्न होते हैं उनमें यह कुण्डलिनी शक्ति की चेतन जगत में चल रही गतिविधियाँ ही कारण हैं, जड़ जगत में पृथ्वी और आकाश में जो विदित और अविदित अनेक हलचलें उत्पन्न होती रहती हैं और परिवर्तनों से भरी चंचलता निरन्तर गतिवान रहती है, उसका कारण भी दिव्य सत्ता है। अणु परमाणुओं की द्रुतगामी हलचलों से लेकर ग्रह नक्षत्रों का चल बल, समुद्र के ज्वार भाटे, भूकम्प, ऋतु परिवर्तन, भू-गर्भ के अन्तरंग में निरन्तर चल रहे हेर-फेर, ईथर तत्व की सक्रियता आदि जड़ जगत में चल रही समस्त उथल-पुथल के पीछे यह कुण्डलिनी शक्ति ही काम करती है। उनका क्रिया कलाप एक क्षण के लिए भी बन्द हो जाय तो महा प्रलय ही सामने होगी। सब यहाँ तब कुछ निर्जीव, नीरस, निष्क्रिय, नितान्त नीरव और अन्धकार ही यहाँ शेष रह जायेगा। सम्भवतः तब सारी आकृतियाँ बिगड़ कर पुनः नीहारिकाएँ उत्पन्न करने वाली धूमिलता में ही बिखर जायें और देखने अनुभव करने जैसा कुछ शेष ही न रह जाय।

लकड़ी का टुकड़ा यदि अग्नि जैसा तेजस्वी बनना चाहता हो तो उसे अग्नि रूप बनने के लिए वर्तमान अस्तित्व गँवाना ही पड़ेगा। बीज अपना अस्तित्व भी न खोना चाहे और विशाल वृक्ष बनाने का लाभ भी लेना चाहे तो यह दोनों बातें न हो सकेंगी। संकीर्णता और आत्मिक प्रगति का जोड़ा मिल ही नहीं सकता। जो जितना स्वार्थी है उसे आत्मिक प्रगति के पथ पर चलते हुए उतनी ही कठिनाई अनुभव होगी। आत्मिक सिद्धियाँ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

हैं, तो पर उनका लाभ कृपणता और स्वार्थपरता के रहते उठाया नहीं जा सकता । जीवन साधना का तात्पर्य ही अहंता का विसर्जन है । पारमार्थिक दृष्टिकोण अपनाये बिना न जीवन लक्ष्य पूरा होता है और न कुण्डलिनी जागरण जैसी योग साधनाओं में सफलता मिलती है ।

आध्यात्मिक चेतना में वृद्धि करने का मतलब है व्यष्टि को समष्टि से सम्बन्ध बनाते उसे घनिष्ट करते हुए अन्ततः परस्पर दोनों का एक हो जाना । एक का दूसरे में विलीन हो जाना । जीवात्मा वस्तुतः विशात्मा–परमात्मा का ही एक अंग है । जो जिसका अंग है वह उसी में लीन होने को व्याकुल रहता है और जब तक वह प्रयोजन पूरा नहीं हो जाता तब तक बेचैन ही रहता है । जल का भण्डार समुद्र है । समुद्र से ही बादल निकल कर सर्वत्र जल बरसाते हैं । यह बरसाया हुआ जल नदी, नाले, झरने, तालाबों, पृथ्वी के भीतर की नालियों आदि में होता हुआ यह प्रयत्न करता है कि वह समुद्र में जाकर मिले । जिधर भी पानी को ढलान दीखती है, उधर ही बहने लगता है । इस ढलान और प्रवाह का प्रयोजन उस विखरे हुए जल अंशों को अपने मूल भण्डार समुद्र तक पहुँचा देना ही है । आत्मिक उन्नति का उद्देश्य जीव की इस गति में तीव्रता ला देती है जिसके आधार पर वह एक छोटा टुकड़ा न रह कर अपने उद्गम में जा मिले और अपूर्णता खोकर पूर्णता का लक्ष्य प्राप्त कर ले ।

लेकिन अधिकांश लोग अधोगामी प्रवृत्ति ही अपनाये रहते हैं । पुराणों में ऐसे व्यक्तियों को पतित कहा गया है जिसका आशय है कि प्रगति ऊर्ध्व गमन को कहते हैं तथा पतन को अधोगमन कहा जाता है । मूलाधार गत शरीर चेतना–साधन शक्ति जब ऊर्ध्व गमन की इच्छा करती है तो उसे सहस्रार की ओर उठना, चलना पड़ता है । काम बीज का ज्ञान बीज में परिवर्तन, विसर्जन, समर्पण करने की प्रक्रिया ही आत्मिक प्रगति का लक्ष्य प्राप्ति का एक मात्र मार्ग है ।

इस आत्मिक उत्कर्ष के अनेकों मार्ग हो सकते हैं । संकीर्ण स्वार्थपरता के बन्धनों को शिथिल रहने और तोड़ने का प्रत्येक प्रयास इसी स्तर का माना जायगा । जिन विचारों, योजनाओं और गतिविधियों में आदर्शवादी सिद्धान्तों को अपनाने की बात बनती हो, उन्हें आत्मोत्कर्ष की साधना का एक स्वरूप माना जा सकता है । कुण्डलिनी जागरण इसी प्रकार की वैज्ञानिक परिपाटी के आधार पर परिणाम प्रस्तुत करने वाली साधना है । इसमें शरीर विज्ञान और मनोविज्ञान दोनों के महत्वपूर्ण आधार जुड़े हुए हैं । भौतिकी और ब्रह्मविद्या के दोनों तत्वों का इसमें समान रूप से समावेश है ।

जीवसत्ता सामान्यतया शरीराध्यास में डूबी रहती है । इसी वस्तुस्थिति का चित्रण कुण्डलिनी ज्ञान में इस प्रकार किया गया है कि मूलाधार क्षेत्र में एक महासर्पिणी किसी लिंग प्रतीक से साढ़े तीन लपेटे मार कर सोई हुई है । उसका मुख नीचे की ओर है और उससे विष झरता है । यह लिंग कन्द–संसार का आकर्षण है । जीव–सत्ता सर्पिणी है ।वह आत्मबोध के सम्बन्ध में प्रसुप्त स्थिति पड़ी है । उसे अपने स्वरूप का ज्ञान है, न लक्ष्य का मोह, मदिरा पीकर वह अज्ञान की मूर्च्छा से ग्रसित हो रही है । साढ़े तीन फेरों में तीन तो वासना, तृष्णा और अंहम के पूरे हैं । बीच–बीच में कभी–कभी आत्म–कल्याण की बात भी हलके–फुलके ढंग से उभरती है । अन्तरात्मा की यह पुकार पूरी तरह कोई भी कुचल नहीं सकता । वह अपनी माँग करती ही रहेगी, भले ही उसे पग–पग पर अनसुनी किया जाता रहे । यही है आधा लपेट जिसे मिलाकर साढ़े तीन फेरे बनते हैं । सुप्त–प्रसुप्त कुण्डलिनी का मुख नीचे की ओर अधःपतन की ओर है । हमारी निकृष्ट आकांक्षाएँ और प्रवृत्तियाँ आत्मकल्याण से नीचे ही धकेलने वाली बन गई हैं । शक्तियों का क्षरण अधोमुखी बना हुआ है । वीर्यपात से लेकर अन्य कार्य भी उठाने वाले नहीं, गिराने वाले ही बने हुए हैं । उनके दुष्परिणाम विष तुल्य होते हैं । जीवसत्ता की दुर्गति का चित्रण प्रसुप्त सर्पिणी के रूप में किया गया है तो यह उचित ही है । हमारी सत्ता इस विश्व वसुधा में सर्पिणी के समतुल्य ही हेय बनकर रह रही है । हमारे उत्पादन विष तुल्य ही हैं । विष बीज बोने और विषाक्त प्रदूषण फैलाने वाली ही तो अपनी जीवन प्रक्रिया बन रही है । मोह, मदिरा पीकर उन्मत बने दुर्भाग्य ग्रस्त मनुष्यों की तरह ही अपनी स्थिति बनी हुई है ।

कुण्डलिनी जब जागती है तो प्रसुप्ति छोड़ती है । लपेटे खोल देती है । तन कर खड़ी हो जाती

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है। मेरुदण्ड मार्ग से ऊपर की ओर चढ़ना प्रारम्भ करती है। उसके मुख से विषाक्त दुर्गन्ध के स्थान पर अमृतमयी सुगन्ध के श्वास निकलने लगती है। यह दृश्य आत्मोत्थान की ओर उन्मुख होने का है। कुण्डलिनी मेरुदण्ड मार्ग से ऊपर चलती है और सहस्रार अवस्थित महासर्प से जा लिपटती है। इसे शिव-पार्वती विवाह की कथा-गाथा के रूप में समझाने का प्रयत्न किया गया है। सती-शिव से विमुख होकर पिता के घर गई थीं और खिन्न होकर अग्निकुण्ड में जल मरी थीं। यह आत्मा का परमात्मा से विमुख होकर नारकीय यातनाओं के कुण्ड में जल मरना है। स्थिति बदलती है। सती नया जन्म पार्वती के रूप में लेती हैं। तप करती हैं और शिव की अर्धांगिनी बन जाती हैं। यह जीवसत्ता का योग तप की साधना अपनाकर अपनी पात्रता को विकसित करना और ऊर्ध्वगामी बनकर परमात्मा में समन्वित हो जाने का विकास क्रम है। कुण्डलिनी जागरण साधना का तत्वदर्शन इन कथानकों के माध्यम से अधिक अच्छी तरह समझा जा सकता है।

समुद्र मन्थन की कथा भी प्रकारान्तर से कुण्डलिनी जागरण प्रक्रिया का ही दिग्दर्शन है। समुद्र मन्थन की कथा में जीव की वस्तुस्थिति और कुण्डलिनी जागरण साधना से उसकी प्रगति सद्गति का अच्छा-खासा चित्रण है। कूर्म अर्थात् भगवान्-पैर-समेटे-गई-गुजरी स्थिति में सबसे नीचे। मन्थन के लिए लाया गया मदिराचल पर्वत उनकी पीठ पर। मथने के कार्य में प्रयुक्त होने वाली वासुकी सर्प की रज्जु। देवता और असुरों द्वारा उसका मन्थन। यही है समुद्र मन्थन का दृश्य चित्र। हमारे दैनिक जीवन में ईश्वर का स्थान सबसे नीचे है। वह कुछ करा सकने की स्थिति में नहीं है। कछुए की तरह सिकुड़ा-सिमटा ज्यों-त्यों करके मानवी-सत्ता का भार वहन कर रहा है। मदिराचल-वैभव। मदिरा (मादक) अचल (संग्रहीत)। अपना धन, वैभव, उद्धत अहंता की। तृप्ति में तथा अचल (संग्रह) करने के लिए प्रयुक्त होता है। वासुकी सर्प-विषधर जीव। साढ़े तीन लपेटों से मदिराचल के साथ लिपटा है और दोनों दिशाओं में देव-दानवों द्वारा घसीटे जाने के कारण दुर्दशाग्रस्त हो रहा है। हड्डी-पसलियों का कचूमर निकला जा रहा है। इस चित्रण में हम अपनी दुर्दशा का चित्र तथा भावी प्रगति का उपाय आभास देखने का दुहरा लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

जीवन-क्रम में संव्याप्त जड़ता को-पशु-प्रवृत्तियों के अभ्यस्त प्रवाह को निरस्त किया जाना चाहिए। चिन्तन में समुद्र मन्थन जैसी प्रखरता उत्पन्न की जानी चाहिए। प्रसुप्ति को जागृति में-मूर्छना को क्रान्तिकारी परिवर्तन में परिणत करने की आवश्यकता है। जीवन मन्थन कर डाला जाय-काया-कल्प के लिए कटिबद्ध हुआ जाय। पशु-प्रवृत्तियों से छुटकारा पाकर देवयान के पथ पर चलने का साहस जुटाया जाय तो अपने लिए भी समुद्र मन्थन से उपलब्ध हुए बहुमूल्य रत्नों की तरह अति महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ करतलगत हो सकती हैं। व्यामोह की, प्रलोभनों की, उन्मादों की सनकें यदि अन्तःचेतना पर छाई ही रहीं, अन्तर्द्वन्दों में क्षमता का अपव्यय होता रहा तो इस जीवन व्यापार में कमाया कुछ न जा सकेगा। जो पूँजी साथ लेकर आये थे वह भी गँवा कर ऋण भार लाद कर वापस जाना पड़ेगा। इस स्थिति से बचने के लिए जीवन मन्थन आवश्यक है। क्रान्तिकारी परिवर्तन अभीष्ट है। समुद्र मन्थन की कथा की मन्थन प्रक्रिया को कुण्डलिनी जागरण पद्धति के साथ सहजभाव से जोड़ा जा सकता है।

कामनाएँ भावनाओं में परिणित होने के लिए संकल्प करती हैं तो उनकी स्थिति गंगा के समुद्र में विलय होने की आतुरता जैसी बन जाती है। हिमालय से निकल कर गंगा आतुरतापूर्वक समुद्र मिलन के लिए लम्बा मार्ग पार करती हुई दौड़ती है। कुण्डलिनी को गंगा-मेरुदण्ड मार्ग को प्रवाह पथ और सहस्रार को समुद्र कहा जा सकता है। अपने प्रियतम को पाकर गंगा ने अशान्ति से छुटकारा पाया और महान् से मिलकर महान् बन गई।

नर को नारायण बनने में तभी सफलता मिलेगी जब वह अनन्त चेतना के दिव्य शक्तिस्रोत सविता देवता से अपने सम्बन्ध जोड़ेगा। सूर्य कितना तेजस्वी है, कितना समर्थ है यह जानने वाला सूर्य पुत्र बनने के लिए उसकी साधना कुण्डलिनी योग द्वारा करते तो हैं, पर यह भूल जाते हैं कि अपनी सत्ता में दिव्य चेतना भी उसी मार्ग पर चलते हुए प्रखर बनानी होगी, जिस पर चलते हुए एक तुच्छ सा अग्निपिण्ड सविता के रूप में विकसित हुआ है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुण्डलिनी साधना की पृष्ठभूमि

कुण्डलिनी को सचेतन विद्युत शक्ति कह सकते हैं। बिजली की दो धाराएँ हैं। एक वह, जो जड़ पदार्थों में काम करती है और दूसरी वह जो जीवित शरीरधारियों में काम करती है। इसलिए एक को भौतिक और दूसरी को आत्मिक कहा जा सकता है।

भौतिक बिजली वह है जो घरों में बल्ब, पंखे, हीटर, कूलर, रेफ्रीजरेटर आदि चलाती है और कल कारखानों में मोटरों को गतिशील बनाकर उनके द्वारा भारी भरकम काम कराती है। इसका प्रयोग सीखने के लिए तद्विषयक विद्यालयों में पढ़ना और व्यावहारिक प्रयोग सीखना पड़ता है। इस स्तर के प्रशिक्षितों को इन्जीनियर कहते हैं।

चेतन विद्युत वह है जो शरीर में प्राण रूप में काम करती है। इसका बटन बन्द होते ही सारा कारखाना फेल हो जाता है। वह यथास्थान खड़ा तक नहीं रह सकता, सड़ता है। इसलिए उसे जल्दी ही नष्ट करना पड़ता है। जलाने, गाढ़ने, बहाने की जहाँ जैसी प्रथा है, अन्त्येष्टि की व्यवस्था करने में विलम्ब नहीं किया जाता।

इस जीवन्त प्राण विद्युत के सहारे शरीर की सभी मशीनें काम करती हैं। जहाँ कहीं उसकी पहुँच अवरुद्ध हो जाती है, वहाँ अशक्ति छा जाती है। पक्षाघात, मूढ़ता, नपुंसकता आदि ऐसे ही रोग हैं, जिनमें जैविक विद्युत शक्ति की सप्लाई घट जाती है। कई बार तो कोढ़, गैंगरिन, नासूर जैसे रोगों में किन्हीं अंगों को काटना पड़ता है या वे स्वयं कट जाते हैं, आमाशय, आँतें, जिगर, गुर्दे आदि में जहाँ कहीं अशक्ति आती है वही अवयव अपना काम धीमा कर देते हैं या छोड़ देते हैं। फलस्वरूप सम्बन्धित दूसरे अंग भी प्रभावित होते हैं। चित्र-विचित्र नाम रूपों वाली बीमारियाँ आ दबोचती हैं। कष्ट सहना और उपचार करना पड़ता है। हृदय जैसे कुछ अंग तो ऐसे हैं जिनकी शक्ति संचार में व्यवधान खड़ा होने पर कुछ ही क्षणों में मृत्यु हो जाती है।

मस्तिष्क का अपना निराला क्षेत्र है। उसमें अनेक विशेषताओं के लिए अपने-अपने केन्द्र और क्षेत्र निर्धारित हैं। समस्त शरीर का विद्युतीय संचार संचालन मस्तिष्क में ही होता है। इसलिए मस्तिष्क मर जाने पर ही किसी की पूर्ण मृत्यु मानी जाती है। हृदय की धड़कन रुक जाने पर तो उसे दुबारा भी चलाया जा सकता है।

मस्तिष्कीय क्षेत्र की बिजली की जिस केन्द्र में कम सप्लाई होती है, उसका प्रभाव मनुष्य की क्रिया शक्ति और चिन्तन-शक्ति पर पड़ता है। मन्द मति, अर्ध विक्षिप्त, सनकी, बेसिर-पैर की कल्पनाएँ करने वाले निराश, भयभीत आदि स्तर के लोग ऐसे ही होते हैं, जिनके मस्तिष्क के किसी क्षेत्र विशेष में विद्युत प्रवाह कम पड़ता है। आलसी और प्रमादी भी ऐसे ही होते हैं। उनका मन, श्रम करने को तथा आगा-पीछा सोचने को ही नहीं होता। यथास्थिति को सहन करते हुए वे किसी प्रकार दिन काटते रहते हैं।

इसके विपरीत बुद्धिमान, उत्साही, साहसी, पराक्रमी तत्पर तन्मय वे लोग होते हैं, जिनके मस्तिष्क में प्राणविद्युत की पर्याप्त मात्रा होती है, उनकी निर्णायक बुद्धि सतेज होती है। लाभ हानि के दोनों पक्षों पर विचार करने और किसी उपयुक्त निष्कर्ष पर पहुँचने में उन्हें देर नहीं लगती। अवसर का लाभ ऐसे ही लोग उठा लेते हैं।

यहाँ मृगी, उन्माद, सिर दर्द या मूढ़मति लोगों की चर्चा नहीं हो रही है। क्योंकि उनका सम्बन्ध शरीर के अन्यान्य अवयवों से भी होता है। उनका उपचार अस्पतालों में ही किया जाता है। इनमें से कई तो वंशानुक्रम से भी सम्बन्धित होते हैं। ऐसी दशा में उनका उपचार शरीर विज्ञान के आधार पर किया जाना चाहिए। योग विज्ञान तो विशुद्धतः मनोविज्ञान पर आधारित है। कुण्डलिनी जागरण उसी क्षेत्र की एक शाखा है।

प्रत्येक शिल्पी को अपने-अपने विषय से सम्बन्धित उपकरण, औजार एकत्रित करने पड़ते हैं। चिकित्सक निदान के काम आने वाले, शल्य क्रिया से सम्बन्धित उपकरण एकत्रित करते हैं। बढ़ई अपने प्रयोजन के कितने ही औजारों का थैला भरे रहते हैं। स्वर्णकार के पास आभूषण ढालने, खरादने, मोड़ने आदि के काम आने वाली वस्तुएँ होती हैं। कुम्हार के पास खिलौने बनाने के साँचे होते हैं। सैनिकों के पास ढाल, तलवार, गोला, बारूद, कवच, वाहन आदि का प्रबन्ध रहता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है। कुण्डलिनी जागरण जैसे योग विज्ञानियों को मानसिक क्षेत्र के साधनों से लैस रहना पड़ता है।

अध्यात्म विज्ञानियों के पास संकल्प, साहस, प्राण, संयम, धैर्य के अतिरिक्त तन्मयता और तत्परता की आवश्यकता पड़ती है। इनमें से एक भी कम हो तो गाड़ी लड़खड़ा जाती है और लक्ष्य तक नहीं पहुँच पाती।

महत्व क्रियाओं का नहीं, आन्तरिक दक्षता का है। नट, बाजीगर अपने कौशल में प्रवीण होते हैं। यदि उन करतबों का रहस्य बता दिया जाय और विधि-विधान की व्याख्या-व्यवस्था समझा दी जाय, तो भी यह सम्भव नहीं कि कोई अजनबी उस कौशल को सबके सम्मुख प्रस्तुत कर सके। आपरेशन के समय वार्ड बॉय और सफाई कर्मचारी भी रहते हैं। वे उस कृत्य को आये दिन आँखों देखते रहते हैं तो भी उनसे यह अपेक्षा नहीं की जा सकती कि वे सर्जन की भूमिका निभा सकेंगे। दंगल में कुश्ती का दृश्य देखने अगणित लोग पहुँचते हैं। दाव-पेचों को भी आँखों से देखते रहते हैं। हार-जीत का कारण भी समझते हैं। फिर भी उन्हें अखाड़े में नहीं उतारा जा सकता। हथियार बनाने वाले तक उनका सही प्रयोग नहीं कर सकते। इसी प्रकार पुस्तकीय ज्ञान संचय कर लेने या उस विषय के विशेषज्ञों के व्याख्यान सुन लेने पर भी कोई योगी नहीं बन सकता। इसके लिए उसकी अपनी दक्षता होनी आवश्यक है। उसके लिए लम्बे समय तक श्रद्धा और निष्ठापूर्वक अनवरत अभ्यास न किया गया हो तो यह आशा नहीं की जा सकती कि उन विषयों में प्रवीणता या सफलता हस्तगत हो जायेगी।

फिर प्रत्येक साधक का अपना लक्ष्य होता है। एक से दूसरे के प्रयोजन में अन्तर रहता है। तदनुरूप साधना विधानों में अन्तर करना पड़ता है। हर रोगी को एक बीमारी में एक दवा नहीं दी जा सकती। यद्यपि कैमिस्टों से पूछ कर यह जाना जरूर जा सकता है कि किस नाम की दवा किस रोग में प्रयुक्त होती है। किन्तु उस आधार पर बिना चिकित्सक से परामर्श किये सेवन करने लगना खतरनाक है। चिकित्सक देखता है कि किस रोग के साथ क्या लक्षण मिले हुए हैं। रोगी की बीमारी कितनी हल्की या भारी है। उसकी सहन-शक्ति कैसी है। बालक की, गर्भिणी की दवाओं की मात्रा में अन्तर करना होता है। फिर उसकी प्रतिक्रिया में अनुकूलता उत्पन्न हो रही है या प्रतिकूलता, यह भी ध्यान रखना पड़ता है। इन्हीं सब उतार चढ़ावों पर विचार करने के लिए चिकित्सक की आवश्यकता पड़ती है। उसके यहाँ जाना या बुलाना पड़ता है। यदि ऐसी आवश्यकता न समझी जाती तो किताब में पढ़कर या कैमिस्ट से पूछकर कोई भी अपना इलाज कर लिया करता।

ऐसी ही आवश्यकता योग साधनाओं में भी पड़ती है। अपनी स्थिति का भली प्रकार पर्यवेक्षण जिसने किया हो और उपचार कृत्य में निजी अनुभव अभ्यास किया हो उस मार्गदर्शक का परामर्श योग साधनाओं में उपयुक्त हो सकता है, विशेषतया कुण्डलिनी जागरण में।

कुछ कार्य सरल होते हैं। कुछ कठिन। पानी को किसी पर फेंक देना या स्वयं नहाना, पीना उतना जोखिम का काम नहीं है जितना कि आग से खेलना। उसका उपयोग करते समय अनेक बातें ध्यान में रखनी पड़ती हैं। क्या पकाने के लिए कितनी धीमी या कितनी तेज आँच चाहिए, उसे कितनी देर जलने दिया जाय। पकड़ते, उठाते, हटाते समय किन बातों का ध्यान रखा जाय। इन विशेषताओं और भिन्नताओं की जिसे जानकारी है वह उसका उपयोग ठीक कर लेगा अन्यथा अपने कपड़े जला लेगा या चासनी को कड़ी करके पत्थर जैसी जमा देगा। यही बात बिजली के सम्बन्ध में भी है। उसके प्रयोग से अनेक लाभ हैं, अनेक सुविधाएँ मिलती हैं, किन्तु प्रयोक्ता को अनेक सावधानियाँ भी बरतनी पड़ती हैं। अन्यथा आग लगने से लेकर अपनी जान जाने और सम्पर्क में आने वालों तक के लिए खतरा है।

कुण्डलिनी योग बिजली का प्रयोग है। वह गेंद खेलने की तरह सरल नहीं है कि उल्टी-सीधी फेंक देने पर भी कोई भी खेल बन जाए। गुलाम, बेगम, बादशाह के ताश काटने में मनोरंजन भर है, किन्तु किसी व्यक्ति को काट देने पर फाँसी के तख्ते पर झूलना पड़ता है। हलवाई की सतर्कता का हर घड़ी प्रयोग करना पड़ता है अन्यथा जो बनाने चला था वह पकवान मिष्टान्न तो बनेगा नहीं। कुछ के बदले कुछ बन जायेगा या अपना हाथ-पैर गरम घी से जलेगा। कुछ काम ऐसे ही होते हैं जिनमें समग्र सतर्कता का प्रयोग करना पड़ता है। किसी व्यक्ति के हाथ में कागज, ब्रुश और रंगों की प्लेट

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

थमा देने भर से यह आशा नहीं की जा सकती कि वह बढ़िया किस्म के चित्र बना देगा । न किसी को पत्थर, छैनी हथोड़ा थमा कर यह आशा की जा सकती है कि बढ़िया स्तर की प्रतिमा बनकर तैयार हो ही जायगी । चित्रकार या मूर्तिकार को इस कला में प्रवीणता प्राप्त करने के लिए जो अभ्यास करना और अनुभव संचय करना पड़ता है उसी प्रवीणता के आधार पर श्रेय की उपलब्धि होती है । संगीतकार, नर्तक भी बहुत समय तक साधना करके अपने कौशल में पारंगत होते हैं ।

कुण्डलिनी जागरण का विधि-विधान उतना महत्वपूर्ण नहीं है जितना कि साधक का परिपक्व मनोबल । किसी भी योगाभ्यास की पुस्तकें बाजार में बिकती हैं उन्हें मुट्ठी भर पैसों में खरीदा जा सकता है । जो प्रयोग बताये गये हैं वे भी इतने सरल प्रतीत होते हैं कि उन्हें एक दो बार दुहरा लेने पर ही तद्नुसार कृत्य किया जा सके । इतने भर से कोई उन कृत्यों में सफल नहीं हो सकता । विधान तो हर कार्य के सरल होते हैं, पर उन्हें कार्यान्वित कर दिखाने के लिए अपनी मनःस्थिति एवं परिस्थिति भी तद्नुरूप विनिर्मित करनी पड़ती है । यह पूर्व तैयारी ही सफलता का या अपयश का पक्ष पूरा करती है । साधना वस्तुतः साधना है । उसके प्रयोग में अपना समूचा व्यक्तित्व साधना और अनुभवी मार्गदर्शन का सहारा लेना पड़ता है ।

कुण्डलिनी जागरण की पूर्व तैयारी

सोये हुए साँप को जगा देना सरल है । एक कंकड़ फेंक देने भर से वह फुसकार मारता हुआ फन फैलाकर पीछे दौड़ सकता है । दबी हुई चिन्गारी को प्रचण्ड कर देना सरल है । एक गठरी फूँस डाल देने पर या एक बोतल किरासिन तेल उडेल देने भर से यह कार्य हो सकता है । बाघ की माँद पर जाकर ढोल बजा देना आसान है, पर जब यह दहाड़ता हुआ हमला करता है, तब उससे बचाव करना कठिन है । आग जब प्रचण्ड होकर पूरे गाँव को जला देने के लिए उबल पड़े, तब उसका बुझाना और जिनका नुकसान हुआ है, उनका हर्जाना चुकाना कठिन है ।

कुण्डलिनी जागरण के लिए जिन पूर्व साधनों की आवश्यकता है, उनके जुटाने में ही अधिकांश समय लगता है, अन्यथा क्रिया मात्र का सम्बन्ध रहा होता तो उसे बालू का महल बनाने की तरह कोई बालक भी कर गुजरता और सारे साथियों को बुलाकर अपनी कारीगरी का ढिंढोरा पीटता फिरता । बिजली का बटन दबा देना सरल है, पर करेन्ट के चल पड़ने पर फिर उसकी चपेट में जो-जो आते हैं, उन्हें समेटना कठिन है । यह ठीक है कि सरकस में शेरों को रस्से पर चलाने की क्रिया मनुष्य ही कराते हैं, पर उन मनुष्यों को अपने जैसा साधारण नहीं माना जा सकता । कोई अनाड़ी उसी करतब को दिखाने के लिए मचल पड़े तो समझना चाहिए कि इसका बुरा दिन आ गया ।

कुण्डलिनी जागरण, क्रिया की दृष्टि से अति सरल है । उसमें मूलाधार, मेरुदण्ड और सहस्रार के साथ थोड़ी छेड़खानी करनी पड़ती है । यदि वह बहुत हल्की या उथली हुई तो बात दूसरी है, अन्यथा यदि उसे तनिक सशक्ततापूर्वक प्रयोग में लाया गया तो उसकी हलचल देखते ही बनती है । साँप की फुँसकार, हाथी की चिंघाड़, शेर की दहाड़ और आकाशीय बिजली की तड़कन से उसकी तुलना करनी पड़ती है । यों उनसे लाभ भी उठाया जा सकता है, पर पाशा पलट गया तो लेने के देने पड़ने में भी सन्देह नहीं ।

सपेरे साँप को नचा कर ही अपना गुजारा करते हैं । रीछ वाले अपनी गृहस्थी का उसी के बलबूते निर्वाह करते हैं । हाथी पर सवारी, राजा सामंत करते हैं । शेर खरीदना और सिखाना लाखों रुपया खर्च करने वाले सरकस मालिकों का काम है । इन कर्मों में सफलता प्राप्त करने वालों की प्रशंसा की जाती है, पर यदि चौकड़ी चूक गये तो जान गँवा बैठने के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं । इसलिए डरा तो नहीं जाना चाहिए, पर प्रयोग की प्रवीणता और बचाव के साधनों की सुविधा समय रहते एकान्त में कर लेने में ही समझदारी है । कुण्डलिनी साधना के लिए कदम बढ़ाने वालों को अपने क्रिया तलवार की धार पर चलने से कम समर्थ, किन्तु जोखिम भरी नहीं समझनी चाहिए ।

इस प्रयोग में जिन उपकरणों की आवश्यकता पड़ती है । उनकी गणना पहले कराई जा चुकी है ।(१) संकल्प,

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(२) साहस, (३) प्राण, (४) संयम, (५) धैर्य, (६) तत्परता, (७) तन्मयता । इन सातों का संकलन कर लेना एक प्रकार से आत्म-विजय करना है । जिसने अपने को जीत लिया उसके लिए अन्य किसी को भी जीत लेना सरल है ।

श्रद्धा और विश्वास भरे निश्चय निर्धारण, कार्यान्वयन को संकल्प कहते हैं । जिसने किसी विषय की जिज्ञासा उभार कर पक्ष और विपक्ष का सन्दर्भ मन्थन नहीं कर लिया है, उसके लिए संकल्प कर सकना और निभा सकना कठिन है । बाल-कल्पनाएँ और कौतुक कौतूहल देखने भर की ललक आम लोगों में होती है । उनके मनोरथ पानी के बबूले की तरह उठते, फूटते रहते हैं । गरम दूध उफन कर बर्तन से ऊपर निकलता है । एक चम्मच पानी डालते ही वह पेंदे में भी बैठ जाता है । ऐसी मनःस्थिति वाले कोई बड़ा काम नहीं कर सकते । वे आज आरम्भ करते और कल छोड़ बैठते हैं । साधना पथ के पथिकों को धैर्यवान होना चाहिए और विलम्ब लगने पर इतना ही सोचना चाहिए कि हथेली पर सरसों जमाना बाजीगर का काम है । हजार वर्ष जीवित रहने वाले वृक्ष उगने और प्रौढ़ होने में समय ले जाते हैं । उनकी सिंचाई और देखभाल देर तक करनी होती है ।

साहस में आत्म-बल, आत्म-विश्वास और पराक्रम का सम्पुट रहता है । कठिनाइयों के बिना सामना किये किसी बड़े काम में तत्काल सफलता नहीं मिलती । बालक जन्म लेने से पूर्व स्वयं काफी हैरान हो लेता है और माता को परेशान कर लेता है । सरल काम तो इस संसार में एक ही है मजाक और मनोरथ । बड़े पुल और बाँध बनाने, बड़े कारखाने खड़े करने में कितने साधन सरजाम जुटाने और कितने जोखिम उठाने पड़ते हैं । इसका विवरण ऐसे कामों का दायित्व उठाने वाले भुक्तभोगियों से ही पूछा जा सकता है ।

प्राण एक शक्ति है जिसे सजीव विद्युत कहा जाता है । इसका अभ्यास करने के लिए प्राणाकर्षण प्राणायाम करते रहना है । इसका विधान सीधा-सा है कि निखिल ब्रह्माण्ड में चेतना का भण्डार भरा पड़ा है और हम उस समुद्र में मछली की तरह जी रहे हैं । वह हमारे भीतर ओत-प्रोत है और हर श्वास के साथ हम उसे अधिकाधिक मात्रा में भर रहे हैं । शक्ति पुञ्ज, चेतना भण्डारगार जैसी हमारी स्थिति बन रही है । इसे कल्पना के रूप में नहीं वास्तविकता के रूप में मान्यता देनी चाहिए और अनुभव करना चाहिए कि हमारे कण-कण में रोम-रोम में सृष्टा का वरिष्ठ तेजस्-ब्रह्म वर्चस्-संव्याप्त हो रहा है । इस क्रिया में प्राणायाम अभ्यास से बहुत सहायता मिलती है ।

संयम उस तत्व का नाम है जो उत्तेजना भी, आवेशों आवेगों, प्रलोभनों, दबावों को अस्वीकार करता है और बहकाने वाले, फुसलाने वाले हर अनौचित्य को स्वीकारने से दो टूक इनकार करता है ।

आये दिन भीतर और बाहर से अवांछनीयताओं के उफान आते रहते हैं । कई बार तो वे अन्धड़ की तरह प्रचण्ड होते हैं । कामुकता और जीभ का चटोरापन तो अपने स्वभाव के अंग बने बैठे होते हैं । लोभ और मोह की, संग्रह और प्रदर्शन की लालसा इतनी तीव्र होती है, जो कुकर्म और अपराध अपनाने तक के लिए उत्तेजना प्रदान करती है । मित्र, सहयोगी, पड़ौसी और सम्बन्धी भी यह करते हैं और प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में वैसा ही अनुगमन करने का परामर्श देते हैं । एक ओर भीतरी और बाहरी दबावों का आकर्षण, दूसरी ओर सादगी, सज्जनता अपनाने पर उपहास और विरोध का तंगी और हैरानी का धैर्य तोड़ने वाला कुचक्र चलना । जो इस परिस्थिति से आये दिन जूझता रहता है, जूझने में प्रसन्नता अनुभव करता है उसे संयमी कहते हैं । उसे अपनी-अपनी निज की शक्ति-दुष्प्रवृत्तियों से जूझने में व्यय करनी पड़ती है । 'ना' कहना सीखना पड़ता है और किसी के भला या बुरा मानने का विचार करना पड़ता है । यह अभ्यास परिपक्व होते-होते उस संयम के रूप में बदलता है जो मनुष्य को सोने जैसा खरा और चट्टान जैसा मजबूत बना देता है ।

तत्परता का अर्थ है-लगन-स्फूर्ति और श्रम-शीलता का समन्वय । जिस काम में हाथ डाला जाय उसे पूरा करना अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न बना लिया जाय । आलस्य प्रमाद को पास न फटकने दिया जाय । श्रम की कठोरता में अपना गौरव अनुभव किया जाय ।

तन्मयता का अर्थ है-एकाग्रता । दत्त-चित्त होना । मन को भटकने न देना । जो सोचना या करना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

है, उसी के सम्बन्ध में इतनी गहराई तक उतरा जाय कि अन्य कोई विचार सामने आने ही न पाये। मस्तिष्क में टिक ही न सके। अर्जुन का मत्स्य वेध, पृथ्वीराज का शब्द-वेध इसका अच्छा उदाहरण है। कीट भृंग का सन्दर्भ भी इस सम्बन्ध में दिया जाता है। यह एकाग्रता भौतिक और आत्मिक सफलताओं के लिए समान रूप से आवश्यक है।

इस सप्त सम्पदाओं को अन्तराल में धारण करने पर कोई व्यक्ति सच्चा साधक बन जाता है। सातों ऋषि उसके भीतर निवास करते हैं और न उसकी साधना खण्डित होने देते हैं और न उपलब्धियों का दुरुपयोग करने पर उलटा परिणाम हस्तगत होने की विपरीत स्थिति बनने देते हैं। जिन्होंने इस दिशा में उपेक्षा बरती, अपने को पवित्र और प्रखर नहीं बनाया, वे मात्र क्रिया-कृत्यों में उलझे रहते हैं और जादूगरी का अनुकरण करते हुए ऐसी आशा लगाये रहते हैं कि करामातें हस्तगत करके लोगों को मूर्ख बनाने, उनसे यश और धन प्राप्त करने में सफलता प्राप्त करेंगे। ऐसे लोगों को अपयश और अनिष्ट ही हाथ लगता है। नैतिक पतन के गर्त में गिरने से उनकी अन्तरात्मा भी दुर्बल होती है और वस्तुस्थिति विदित होने पर प्रशंसक भी निन्दक, विरोधी बन जाते हैं।

कुण्डलिनी जागरण महत्वपूर्ण तो है, पर उसमें बारूद के खिलौनों से खेलने जैसा जोखिम भी है। दिवाली के दिनों में फुलझड़ी जलाने और पटाखे छुड़ाने में मजा तो बहुत आता है, पर कितनों की ही आँखें फूटती और उँगलियाँ उड़ती भी देखी गई हैं। भूत-प्रेत सिद्धि से लेकर कुण्डलिनी जागरण तक की सिद्धियाँ ऐसी हैं जिसमें शरीरगत संस्थानों की ही उठक-पटक करनी पड़ती है। इन सबको करने से पूर्व अपने साधनों को सही बना लेना और सुरक्षा कवच से सुसज्जित हो जाना है। टूटी तलावार और फटी ढाल लेकर लड़ाई के मैदान में उतर पड़ना, ऐसी जल्दबाजी है जिसका दुष्परिणाम पागल हो जाने जैसी विपतियों के रूप में सहन करना पड़ सकता है।

तीर कमान सही हो तो निशाना चिड़िया से लेकर शेर तक पर साधा जा सकता है, अभ्यस्त शिकारी कटार के सहारे सिंह, व्याघ्रों तक को परास्त करते देखे गये हैं। पूर्ण अभ्यास एवं अनुभव की भूमिका ऐसे अवसरों पर ही परखी जाती है। जो आतुरता में दूसरों की नकल करने में जुट पड़ते हैं, उनकी उतावली उन्हीं के लिए खतरनाक सिद्ध होती है।

इसकी तुलना में दूसरी साधनाएँ भी हैं जो अपूर्ण रहने पर भी किसी प्रकार की हानि नहीं पहुँचाती। अधिक से अधिक इतना ही हो सकता है कि लाभ सीमित मात्रा में मिले-समय कुछ अधिक लगे। इसके अतिरिक्त किसी प्रकार के ऐसे जोखिम की आशा नहीं है जिसके लिए चुनाव की गलती पर पश्चाताप करना पड़े।

ज्ञानयोग, कर्मयोग, भक्तियोग की साधनाएँ भी ऐसी हैं जिनके सहारे अध्यात्मवादी उपलब्धियों का समुचित लाभ मिल सकता है। हठयोग की सभी क्रियाएँ ऐसी हैं जिसमें साधक की मनोभूमि और मार्ग दर्शक की अपरिपक्वता बनी रहने पर उस प्रकार के प्रसंगों में कोई नये व्यवधान उठ खड़े होने की सम्भावना रहती है। कुण्डलिनी प्रयोग हठयोग के अन्तर्गत आता है। उसके लिए मात्र मनोभूमि का परिशोधन ही नहीं, नाड़ी शोधन के लिए नेति, धौति, वस्ती, कमाल भाति, बज्रोली आदि की भी तैयारी करनी पड़ती है। उसमें अशुद्धता भरी रहने पर अवरुद्ध नली वाली बन्दूक के न चल सकने की तरह असफलता का एक नया कारण बनता है।

दिव्य अग्नि का अभिवर्धन उन्नयन

यज्ञ को भारतीय धर्म और संस्कृति का पिता माना गया है। अग्निहोत्र की परम पवित्र श्रेष्ठ सत्कर्मों में गणना है, पर उससे वायु शुद्धि, रोग निवृत्ति, मनोबल की वृद्धि, प्राण वर्षा, वातावरण में सतोतत्व प्रवाह आदि अनेक लाभ भी हैं। यह यज्ञ का स्थूल रूप है। जिस ज्वलन्त अग्नि का हवन कुण्डों में पूजन किया जाता है, उसे प्रतीकात्मक प्रक्रिया ही समझना चाहिए।

अग्नि का, यज्ञ का, यज्ञ कुण्ड का, सूक्ष्म-दिव्य रूप भी है। वह मानवी पिण्ड में वैश्वानर के रूप में विद्यमान है, उसका केन्द्र मूलाधार स्थित कुण्डलिनी शक्ति है। यही अग्नि सम्पर्क शरीर में प्राणरूप संव्याप्त होकर जीवन का संचार करती है। अन्तः करण में इसी दिव्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ज्योति की आभा जाज्वल्य मान रहती है । अग्नि पूजा का आध्यात्मिक स्वरूप इसी दिव्य अग्नि की साधना अर्चना है ।

ब्रह्म रंध्र में अवस्थित सहस्रार चक्र को ब्रह्माण्ड अग्नि कहा गया है । कहीं-कहीं इसी की चन्द्रमा के रूप में भी चर्चा है । सूर्य या चन्द्र दोनों ही प्रकाश के प्रतीक हैं । दोनों ही ऊर्जा प्रदान करते हैं । सूर्य इसलिए कहते हैं कि इसमें प्रचंड ऊर्जा विद्यमान है । चन्द्र इसलिए कहते हैं कि उसमें शान्ति और शीतलता का अमृत भरा है । इसे शिव कहते हैं और कुण्डलिनी को शक्ति । कुण्डलिनी साधना को इसीलिए शिव-शक्ति की संयोग प्रक्रिया कहा गया है ।

पौराणिक अलंकार में जिस तत्व को शिव और शक्ति कहते हैं उसी को वैदिक भाषा में सोम और अग्नि कहते हैं । शिव का दूसरा नाम सोम और शक्ति को ही अग्नि कहते हैं । आगम और निगम दोनों ही शास्त्र पक्ष इसी प्रकार का प्रतिपादन करते हैं ।

यज्ञ का सूक्ष्म स्वरूप कुण्डलिनी अग्नि में सोम रूपी अमृत घृत का हवन करना है । आत्मा रूपी अग्नि और सोम रूपी ब्रह्म का समन्वय, लय, समर्पण ही आत्म-यज्ञ है । उसी में मानवी महता का विस्तार एवं जीवन लक्ष्य की पूर्ति सन्निहित है ।

मानवी काया में स्थित कुण्डलिनी रूपी अग्नि और ब्रह्म रंध्र अवस्थित सोम का वर्णन शास्त्रकारों ने इस प्रकार किया है ।

द्वयं वा इदं न तृतीयमस्ति । आर्द्रंचैव शुष्कं
च यदार्द्रं तत् सौम्यं यच्छुष्कं तदाग्नेयम् ।

-शतपथ

यह संसार दो पदार्थों से मिल कर बना है- (१) अग्नि, (२) सोम । इनके अतिरिक्त तीसरा कुछ नहीं है ।

अग्नि र्वा अहः सोमोरात्रिरथ यदन्तरेण तद् विष्णु ।

-श. प. ३ /४ /४ /१५

अग्नि और सोम के मिलन को विष्णु कहते हैं ।

इमौ तै पक्षावजरौ पतत्रिणौ याभ्यां रक्षांस्यपहंस्यग्ने ।
ताभ्यां पतेम सुकृतामु लोकं यत्र ऋषयो जग्मुः प्रथमजाः पुराणाः ।

-यजु. १८ /५२

हे अग्नि तेरे दोनों पंख फड़फड़ाते हैं । उनसे पाप और तम का हनन होता है । इन्हीं पंखों के सहारे हम उस पुण्य लोक तक पहुँचते हैं, जहाँ पूर्ववर्ती ऋषि पहुँचे थे ।

इन्दुर्दक्षः श्येन ऋतावा हिरण्य पक्षः शकुनो भुरण्युः ।
महान्तसधस्थे ध्रुव आ निषतो नम ते अस्तु मा मा हिसी-

-यजु१८ /५३

हे अग्नि तू सोम रस से परिपूर्ण है । तू दक्ष है । तू ही ऋत युक्त है । तेरे अमृत सिक्त पंख हैं । तू शक्तिशाली है । पोषक है, तू मस्तिष्क में ध्रुव केन्द्र बनकर विराजमान है । तुझे नमस्कार । तू हमें जलाना मत ।

अग्निर्ललाटं यमः कृकाटम् ।

-अथर्व. ६ /७ /१

तुम्हारे ललाट में वह अग्नि उत्पन्न हो जो शिव रूप बन कर काम विकृतियों को भस्म कर सके ।

पुरुषो यज्ञः । पुरुषसंमितो यज्ञः ।

-शत. ३ /१ /४ /२३

मनुष्य ही यज्ञ है । यज्ञ का स्वरूप मनुष्य पर निर्भर होता है ।

एक एवाग्निर्बहुधा समिद्धः ।

उस एक ही अग्नि में अनेक प्रकार से हवन किया जाता है ।

शिरोवा एतद् यज्ञस्य यदातिथ्यम् ।

-ऐतरेय ब्रा. ३ /६

इस यज्ञ का आतिथ्य स्थल सिर है ।

सोम एवं शिव को प्रकरण विशेष से इन्द्र भी कहा गया है । इन्द्र और अग्निसंयोग का तात्पर्य भी वही है-

ता हि मध्यम्भराणामिन्द्राग्नी अधिक्षितः ।
ता उ बित्वना कवी पृच्छयमाना सखीयते
संधीत तं नरा नभन्तामन्येके समे ॥

-ऋ.८ /४० /३

यह इन्द्र और अग्नि संघर्ष बन कर साथ-साथ निवास करते हैं । यह दोनों ही भावुकता भरे कवि हैं । यह सखा बन कर कर्म में प्रवृत होते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

या नु श्वेतावयो दिव उच्चरात उपद्युभिः ।
इन्द्राग्न्योरनुव्रतमुहाना यन्ति सिन्धावो यान्त्सीं
बन्यादमुञ्चतां नभन्तामन्यके समे ।

–ऋ. ८ /४० /८

इन्द्र और अग्नि दोनों शुभ्र वर्ण हैं । यह दीप्ति बन कर नीचे से ऊपर को चढ़ते हैं । इनके प्रताप से ही शक्ति नदियाँ गतिशील हैं । द्यु लोग में पहुँच कर फिर नीचे को चलते हैं । उन्हें यह दोनों ही असीम बनाते हैं ।

शरीर व्यापी अग्नि–विश्व व्यापी महाअग्नि का ही एक स्फुलिंग है । इसलिए उसे ब्रह्म का अंश ही कहा जाता है । जीव को ईश्वर का अंश ही कहा जाता है । इस ब्रह्माग्नि–आत्माग्नि की प्रार्थना, उपासना आराधना करने से साधक वह सब कुछ प्राप्त कर लेता है जो इस विश्व में पाने योग्य है । इन्हीं तथ्यों के निम्नांकित संकेत ध्यान देने योग्य हैं–

अयमग्नि ब्रह्म ।

यजु. १७ /१४

ब्रह्म वाग्निः

–शतपथ १ /६ /१ /११

अग्नियो ब्राह्मणः ।

–ता. ब्रा. १६ /४ /८
–तैत्त.२ /७ /३ /१

ब्रह्म वाग्नि स्तस्मादाह ब्रह्मणेति ।

–शतपथ. १ /४ /२ /८

मनुष्य शरीर में विद्यमान यह आत्मा रूपी अग्नि ब्रह्म ही है ।

येन ऋषयस्तपसा सत्रमायन्निन्धाना अग्निं
स्वराभरन्तः । तस्मिन्नहं निदधे नाके अग्निं
यमाहुर्मनवस्तीर्णबर्हिषम् ।

–यजु. १६ /४६

इस आन्तरिक अग्नि को ऋषि लोग अपने तप बल से प्रदीप्त करते हैं और उसे स्वर्ग लोक तक पहुँचा कर मस्तिष्क को प्रकाश से भरते हैं । यही दिव्य अग्नि है ।

अग्निः पूर्वेभि र्ऋषिभिरीडयो नूतनैरुत । स देवां
एह वक्षति ॥

–ऋ० १ /१ /२

प्राचीन और अर्वाचीन सभी ऋषि अग्नि का आश्रय लेते हैं, क्योंकि वही देवताओं को धारण करती है ।

अग्निर्ऋषिः पवमानः पांचजन्यः पुरोहितः ।
तमीमहे महागयम् ॥

–ऋ० ९ /६६ /२०

यह अग्नि–ऋषि है । पवित्र करने वाली है । पंच कोशों का मार्ग दर्शक है । इस महाप्राण की हम शरण जाते हैं ।

तामग्ने अस्मे इषमेरयस्व वैश्वानर द्यमती जातवेदः ।
यया राधः पिन्वसि विश्ववार पृथुश्रवो दाशुषे मर्त्याय

–ऋ०७ /५ /८

हे अग्नि, हमारे भीतर वे उदात आकाक्षाएँ पैदा करो जिनसे प्रभावित होकर तुम प्रसन्न होते हो और कीर्ति एवं सिद्धियाँ प्रदान करते हो ।

अग्ने विवस्वदुषसश्चित्रं राधो अमर्त्य ।
आ दाशुषे जातवेदो वहात्वमद्या वेदां उपर्बुधः ॥

–ऋ० १ /४४ /१

हे अग्नि मेरे जीवन की उषा बन कर प्रकटो । अज्ञान के अन्धकार को दूर करो, ऐसा आत्म–बल प्रदान करो, जिससे देवों का अनुग्रह खिंचा चला आवे ।

त्वदग्ने काव्यास्त्वन्मनीषास्त्वदुक्था जायंते राध्यानि ।
त्वदेति द्रविणं वीरपेशा इत्याधिये दाशुषे मर्त्याय ॥

–ऋ०४ /११ /३

हे अग्नि आप सत्य को धारण करने वाले उदार व्यक्ति के अन्तःकरण में कवित्व जैसी करुणा भर देते हो । तुम्हारी ऊष्मा से ही साहसी लोग सिद्धियाँ और सफलताएँ प्राप्त करते हैं ।

अग्ने तंवश्रवो वयो महि भ्राजन्ते अर्चयो विभावसो ।
बृहद्भानो शवसा बाजमुक्थ्यं दधासि दाशुषे कवे ॥

–ऋ० १० /१४० /१

हे अग्नि ! शरीर में संव्याप्त होकर आपकी प्रशंसनीय ज्वालाएँ हर दिशा में चमकती हैं । भाव विभोर उदात व्यक्ति को आप ही उत्थान की प्रेरणा और प्रतिभा प्रदान करती हैं ।

यत् ते पवित्रमर्चिषि, अग्ने वितत्मन्तरा ।
ब्रह्म तेन पुनीहि नः ॥

–ऋग्वेद ९ /६७ /२३

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हे अग्नि देव ! जो पवित्र और विशाल ब्रह्म तेरी ज्वाला में लस लस कर रहा है, उससे हमें पवित्र करो ।

इदं वर्चो अग्निना दतमागन्,
भर्गो यशः सहः ओजो वयो बलम् ।
त्रयस्त्रिंशद्यानि च वीर्याणि,
तान्यग्निः प्र ददातु मे ॥

–अथर्व० १६ /३० /१

मुझे अग्नि द्वारा क्या कुछ नहीं मिल रहा ? प्रकाश तेज, यश, प्रभाव, पराक्रम और बल–सभी मेरे अन्दर आ रहे हैं । मुझ पर अग्नि की कृपा बनी रहे और मुझे तेंतीस प्रकार के सभी वीर्य प्राप्त होते रहें ।

अग्नेऽभ्यावर्तिन्भि मा निवर्तस्वायुषा वर्चसा
प्रजया धनेन सन्या मेधया रय्या पोषेण ।

–यजु० १२ /७

हे अग्नि तू आयु, वर्चस, प्रजा, धन, दान, मेधा, रयि, पुष्ट बन कर अपना अनुग्रह हमें प्रदान करे ।

यह आत्माग्नि जैसे–जैसे प्रखर होती जाती है, वैसे–वैसे ही उसका स्तर और पद बढ़ता जाता है । चार वर्ण, चार आश्रम क्रमिक पदोन्नति के आधार पर ही विकसित होते हैं । यह उन्नति, ऋषि, राजर्षि, ब्रह्मर्षि, देवर्षि के रूप में होती है । देव वर्ग में गणना करते समय इसी को वरुण, मित्र, विश्वेदेवा और इन्द्र के नाम से पुकारते हैं । ब्रह्म अग्नि के भी यही चार स्तर हैं जो पदार्थों, जीवों और व्यक्तियों को उनकी पात्रता के अनुरूप उपलब्ध होते रहते हैं । अग्नि के चार स्वरूपों का ऋग्वेद में इस प्रकार वर्णन आता है–

त्वमग्ने वरुणो जायसे यत्
त्वं मित्रो भवसि यत्समिद्धः ।
त्वे विश्वे सहसस्पुत्र देवा
स्त्वमिन्द्रो दाशुषे मर्त्याय ॥

–ऋ०५ /३ /१

इस अग्नि के चार स्वरूप हैं । जब वह उत्पन्न होती है तब 'वरुण' कहलाता है । जब प्रदीप्त होता है तब उसे 'मित्र' कहते हैं । जब प्रचण्ड होता है, तब 'विश्वेदेवो' कहलाता है और अन्त में इन्द्र बनकर होता के लिए परम ऐश्वर्य प्रदान करता है ।

अपनी स्वार्थपरता, अंहता, संकीर्णता एवं पशुता को जो इस दिव्य अग्नि में होम देता है, वह बदले में इतना प्राप्त करता है, जिससे नर को नारायण की पदवी मिल सके । वेद कहता है–

विश्व सो अग्ने जयति त्वया धनं यस्ते ददाशमर्त्यः

–ऋ० १ /३६ /४ /

हे अग्नि ! जो अपना आपा तुम्हें सोंप देता है, वह उदात भावनाओं वाला व्यक्ति बदले में तुम्हारे सम्पूर्ण अनुदानों को प्राप्त करता है ।

प्राणाग्नि का, दिव्य अग्नि का उन्यन एवं ऊर्ध्वगमन ही 'कुण्डलिनी जागरण' नाम से जाना जाता है । वस्तुतः कुण्डलिनी जागरण एक प्रकार से शरीर में प्राण एवं संकल्प के आघात द्वारा परमाणु ऊर्जा प्रणाग्नि उत्पन्न करने, उसे प्रखर बनाने और उसका नियंत्रण नियमन करने की विद्या का नाम है । परमाणु–भौतिकी की सैद्धान्तिक जानकारी वस्तुतः देश के अनेक विज्ञान के विद्यार्थी भी जानते होंगे किन्तु उसके विखंडन का व्यवहारिक ज्ञान डा. भाभा, डा. मेघनाथ साहा जैसे थोड़े से वैज्ञानिकों को रहा है । क्योंकि यह अति दुस्तर और संकट भरा प्रयोग होता हैं । कुण्डलिनी साधना की स्थिति भी ऐसी ही है । उसके कई विधान तो इतने जटिल व कठिन हैं कि अनजान अभ्यासी भूल में पड़कर पागल हो सकता है । शरीर के किसी अंग का विस्फोट हो सकता है । मृत्यु तक हो सकती है । अतएव वह विधान चाहे जिसे बता देने, चाहे कहीं लिख देने की परम्परा नहीं है । ब्रह्मवर्चस शाँति कुंज में इन साधनाओं के शिक्षण और अभ्यास की व्यवस्था की है और उस पर शोध का प्रबन्ध भी है ।

सैकड़ों साधक यहाँ आकर उनकी जानकारी प्राप्त करते हैं । इन साधनाओं में प्राण–संधान की क्रिया प्रमुख रहती है । इसलिए कुडलिनी साधना में प्राणायाम का विशिष्ट स्थान है । इसके अतिरिक्त नाड़ी शोधन, सोऽ है जप, शक्तिचालिनी मुद्रा, त्राटक, नाद योग, विन्दु साधना आदि अनेक प्रकार के अभ्यास कुण्डलिनी जागरण के लिऐ किये जाते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नाड़ी संस्थान का शोधन और उसकी सामर्थ्य

कुण्डलिनी जागरण साधना में नाड़ी शोधन की प्रक्रिया को प्रधान उपचार माना गया है । इसके लिए प्राणायाम के उन विशिष्ट विधानों का उपयोग होता है, जो नाड़ी शोधन कर सकें । आत्मिक प्रगति का मार्ग इन नाड़ियों में भरी मलीनता ही रोकती है । इस मलीनता को निष्क्रियता एवं विषाक्तता के दोनों रूपों में पाया जाता है । प्राण प्रक्रिया द्वारा नाड़ी शोधन होने से संचार व्यवस्था ठीक बन जाती है और मूलाधार तथा सहस्रार के मध्य में जो अड़चन थी, वह दूर हो जाती है । यह तथ्य सदा ही स्मरण रखा जाना चाहिए कि नाड़ी शब्द किन्हीं नसों के लिए नहीं–नाड़ियों के सम्पर्क से चलने वाले प्राण प्रवाह के लिए ही प्रयुक्त होता है । इड़ा–पिंगला भी विशिष्ट विद्युत धारायें ही हैं । जो उस क्षेत्र की नाड़ियों के माध्यम से गतिशील रहती हैं ।

शरीर में नाड़ी मंडल जब गड़बड़ाता है तो उससे रक्त संचार में बाधा पड़ती है, फलतः कई प्रकार की व्यथाएँ उठ खड़ी होती हैं । ऐंठें अकड़े नाड़ी तन्तु रक्त का दबाव ठीक तरह न सह सकने के कारण पीड़ित रहते और दर्द करते हैं । पर्याप्त मात्रा में उचित समय पर रक्त न पहुँच पाने के कारण शरीर के विभिन्न अवयवों को समुचित खुराक नहीं पहुँच पाती और वे दुर्बल, अशक्त भूखे, प्यासे रह कर अपना काम ठीक तरह पूरा नहीं कर पाते । शरीर में उत्पन्न होने वाले मलोन्मृत कोषिकाओं का निष्कासन ठीक तरह से न हो सकने के कारण विषाक्तता बढ़ती जाती है । ऐसे ही अनेक कारणों से जीवनी शक्ति घटती है और मनुष्य दुर्बल रुग्ण बनता चला जाता है । सूक्ष्म शरीर की विद्युत धाराओं–नाड़ियों में गड़बड़ी उत्पन्न होने के कारण भी ठीक ऐसी ही स्थिति उत्पन्न हो जाती है । सभी जानते हैं कि टेलीफोन या बिजली के तारों में कहीं मध्यवर्ती अवरोध उत्पन्न हो जाने पर प्रवाह रुकता और सप्लाई बन्द होती है । इसका प्रभाव समूचे सूक्ष्म शरीर की स्थिति को गड़बड़ा देता है । अस्तु आवश्यक समझा गया है कि योगाभ्यास से आरम्भ करते हुए सूक्ष्म नाड़ी संस्थान के परिशोधन का प्रयत्न किया जायगा । इसकी उपेक्षा करने पर मस्तिष्क में ध्यान धारण नादानुसंधान, प्राण संदोह, त्राटक आदि के माध्यम से उत्पन्न की हुई ऊर्जा जहाँ की तहाँ अड़ी बैठी रहेगी । अवयवों में उसका समुचित वितरण न हो सकेगा । यह अवरोध सूक्ष्म शरीर को बलिष्ठ बनाने के उद्देश्य से किये गये प्रयत्नों को सफल नहीं होने देता । यही कारण है कि शारीरिक परिशोधन में रक्त संचार प्रणाली को ठीक करने पर महत्व दिया जाता है और आत्म विकास की साधनात्मक वैज्ञानिक पद्धतियों को कार्यान्वित करते समय सूक्ष्म नाड़ी संशोधन को प्राथमिकता देनी होती है ।

रक्त संचार का केन्द्र हृदय है । यहाँ पम्पिंग स्टेशन और रिफाइनरी के दोनों प्रयोजन पूरे होते हैं । फेफड़ों से सांस आकर ऑक्सीजन जैसे कितने ही उपयोगी पदार्थ देती है । वापस लौटते समय वह कार्बन डाइ–ऑक्साइड जैसे कितने ही शरीरोत्पादित मलों का कचरा वही सांस वापस ले जाती है । इधर से उपयोगी पदार्थ लाने और उधर से अनुपयोगी समेट ले जाने का काम सांस करती है और उस कार्य के लिए फेफड़े अपना काम करते हैं । पर उनका काम हृदय के द्वार तक पहुँचने से ही पूरा हो जाता है । दरवाजे पर खड़े इस वायु देवता से उपयोगी ग्रहण करने और अनुपयोगी वापस करने का काम घर मालिक हृदय ही करता है । अस्तु फेफड़ों की अपेक्षा हृदय को अधिक महत्वपूर्ण माना जाता है । ठीक यही स्थिति प्राण–तत्व के बारे में भी है । प्राण एक स्वतन्त्र तत्व है जो सांस के सहारे आता जाता तो है, पर वह सांस नहीं है । सांस में ऑक्सीजन जैसी गैसें घुली रहती हैं । ऑक्सीजन जड़ है और प्राण चेतन । स्थूल जगत से हमें ऑक्सीजन का ईंधन मिलता है और सूक्ष्म जगत से प्राण अनुदान ।

मलाकुलासु नाडीषु मारुतो नैव मध्यगः ।
कथं स्यादुन्मनीभावः कार्यासिद्धिः कथं भवेत् ॥

–योग संध्या

जब तक नाड़ी मल से व्याप्त है, तब तक प्राण मध्यम अर्थात् सुषुम्ना मार्ग से नहीं चल सकता, किन्तु मल शुद्धि होने पर ही सुषुम्ना नाड़ी में प्रवेश करेगा और जब मल नाड़ियों में विद्यमान है, तब उन्मनी भाव कहाँ ? पुनः मोक्ष रूप कार्य की सिद्धि कैसे हो सकती है ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मलाकुलासु नाड़ीषु मारुतो नैव गच्छति ।
प्राणायामः कथं सिद्धस्तत्वज्ञानं कथं भवेत् ।
तस्मादादौ नाड़ी शुद्धि प्राणायाम ततोऽभ्यसेत् ॥

–महायोग विज्ञान

मलों से भरी हुई नाड़ियों में प्राण वायु अवरुद्ध रहता है । ऐसे अवरोधों की स्थिति में प्राणायाम कैसे सफल हो ? इसलिए प्रथम नाड़ी शोधन करना चाहिए पीछे प्राणायाम का अभ्यास ।

शुद्धिमेति यदा सर्व नाडीचक्रं मलाकुलम् ।
तदैव जायते योगी प्राणसंग्रहणे क्षमः ॥६४॥

–गोरक्षा पद्धति

मलों से भरे हुए नाड़ी चक्रों की जब शुद्धि हो जाती है तो योगी प्राण संग्रह कर सकने में समर्थ होता है ।

"यदा तु नाड़ी शुद्धि स्यातथा चिन्हानि वाह्यतः ।
कायस्य कृशता कान्तिस्तदा जायते निश्चितम् ॥"

–हठ योग प्र०

अर्थ–जिस समय नाड़ियों की शुद्धि होती है । उस समय के चिन्ह हैं शरीर की कृशता और कान्ति में वृद्धि निश्चित रूप से होती है ।

चिह्नानि योगिनो देहे दृश्यते नाड़ि शुद्धितः ।
कथ्यन्ते तु समस्तान्यंगानि संक्षेपतो मया ॥
समकायः सुगन्धिश्च सुक्रान्तिः स्वर साधकः ॥

–शिव संहिता

नाड़ी–शुद्धि से योगी के शरीर में ये चिन्ह स्पष्ट दिखने लगते हैं–शरीर सम हो जाता है (न अधिक दुबला न मोटा, अपितु सुडौल, सुघड़), शरीर से सुगन्धि आने लगती है । कान्ति आ जाती है अर्थात् तेज दिखाई देने लगता है और स्वर सध जाता है–उसमें माधुर्य आ जाता है ।

यदा तु नाड़ी शुद्धिः स्यातथा चिन्हानि बाह्यतः ।
कायस्य कृशता कांतिस्तदा जायेत निश्चितम् ॥
यथेष्टधारण वायोरनलस्य प्रदीपनम् ।
नादाभिव्यक्तिरारोग्यं जायते नाडिशोधनात् ॥

–हठयोग प्रदीपिका

अर्थात्–नाड़ी शुद्धि के दो सुनिश्चित बाह्य चिन्ह हैं–शरीर की कृशता तथा कान्ति । वायु के शरीर में समुचित धारण–नियमन से देहाग्नि (या जठराग्नि) प्रदीप्त हो जाती है । इससे आरोग्य लाभ होता है, साथ ही नाद की अभिव्यक्ति होती है ।

शुद्धिमेति यदा सर्वं नाड़ीचक्रं मलाकुलम् ।
तदैव जायते योगी प्राणसंग्रहणे क्षमः ।
प्राणायाम ततः कुर्यान्नित्यं सात्विकया धिया ।
यथा सुषुम्नानाडीस्था मलाः शुद्धिं प्रयाँति च ॥

(हठयोग प्रदीपिका)

अर्थात् जब सम्पूर्ण नाड़ी चक्र मल से शुद्ध हो जाता है, तभी योगी प्राण–संग्रहण में सक्षम होता है । अतः सात्विक बुद्धि से नित्य प्रति प्राणायाम करना चाहिए, जिससे सुषुम्ना नाड़ी में स्थित मल की शुद्धि हो जाती हैं ।

यदा तु नाडीशुद्धिः स्याद् योगिनस्तत्वदर्शिनः ।
तदा विध्वस्तदोषश्च भवेदारम्भसम्भवः ।

–शिव संहिता

जब नाड़ी शुद्धि होगी, तब दोष शुद्धि होगी । उसी स्थिति में योग का आरम्भ संभव है ।

वपुःकृशत्वं वदने प्रसन्नता नादस्फुटत्वं नयने
सुनिर्मले । अरोगता बिन्दुजयोऽग्निदीपनं
नांडीविंशुद्धिर्हठयोगलक्षणम् ।

–योग संध्या

शरीर दुबला (कृश) मुख में प्रसन्नता (कांति) नाद की प्रकटता अर्थात् नाद का शब्द शुद्ध सुनने में आवे दोनों आखों में निर्मलता, रोग रहित, वीर्य का स्तम्भन और क्षुधा की वृद्धि ये हठयोगी के चिन्ह बाहर में नाड़ी शुद्ध होने पर दिखाई देते हैं ।

मेरुदण्ड अवस्थित ओटोमैटिक नर्वस सिस्टम स्वतः स्वसंचालित स्नायु मंडल–यद्यपि मस्तिष्क के साथ भी जुड़ा हुआ है, पर उसकी मूलभूत गतिविधियाँ स्वसंचालित हैं । मस्तिष्क के साथ उसका सम्बन्ध होते हुए भी घनिष्ठता एवं नियंत्रण की स्थिति नगण्य है । शरीरगत महत्वपूर्ण गतिविधियाँ मेरुदण्ड से निकल कर सर्वत्र फैलने वाले स्नायु मण्डल से संचालित होती हैं । उनके संचालक सूत्र सुषुम्ना में अवस्थित हैं, मस्तिष्क में नहीं । इसलिए प्रकारान्तर से मेरुदण्ड को भी मस्तिष्क मानना पड़ता है और उसे मस्तिष्क मेरु थुरी–स्ट्रैब्रो स्पाइनल एक्सिस कह कर समाधान करना होता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

वर्तमान शरीर विज्ञान के विश्लेषणकर्ता सुषुम्ना को मेरुदण्ड के भीतर दोनों ओर–नीचे से ऊपर तक समानान्तर चलने वाले स्नायु गुच्छकों की शृंखला मानते हैं। यह स्वसंचालित है। इसे अपना क्रिया–कलाप जारी रखने के लिए किसी बाहरी उत्तेजना की आवश्यकता नहीं पड़ती। इस शृंखला का वाम पार्श्व इड़ा, दाहिना पार्श्व पिंगला और मध्यवर्ती समन्वित भाग सुषुम्ना कहा जाता है। यों वे तीनों परस्पर घनिष्ठतापूर्वक संबद्ध हैं। उनके भीतर चलने वाले विद्युत प्रवाह के आरोह–अवरोह को देखते हुए ही यह वर्गीकरण किया गया है।

स्वतः संचालित स्नायु मण्डल को मुख्यतया दो भागों में विभक्त किया जाता है। एक सहानुभूतिक सिम्पेथेटिक दूसरा उप सहानुभूतिक–पैरा सिम्पेथेटिक। प्रथम को थौरेसको लम्बर सिस्टम और दूसरे को क्रेनियो सैक्रल सिस्टम कहते हैं। इन्हीं से निकल कर स्नायु मंडल समस्त शरीर में फैलता है। इतने पर भी उनकी गति प्रतिक्रियाएँ ऋण और धन विद्युत स्तर की परस्पर विरोधी हैं। किन्तु इस विरोधाभास के समन्वय से ही सम्बन्धित गतिविधियों का चलते रह सकना संभव होता है। नाड़ी समूह को शक्ति चेतना इसी संस्थान से उपलब्ध होती है। नाड़ी समूह को योग शास्त्र में ७२ हजार माना गया है, किन्तु अब सूक्ष्मदर्शक यन्त्रों में उन्हें इससे कहीं अधिक पाया गया है। इतने पर भी उनमें से प्रधान थोड़ी सी ही हैं। इन्हें आधुनिक शरीर शास्त्र में त्रिक जालक (सैक्रल प्लैक्सस) ग्रीवा चालक सर्वाइकल प्लैक्सस, गृध्रसी तंत्रिका (सिएटिक नर्व) अधोजिह्व तंत्रिका (हाइपोग्लोसल नर्व) अलिन्द (आरिक्युलर–कटि जालक (लम्बर प्लैक्सस) अनुत्रिक (कॉक्सीजिकल) कशेरुका (सैक्रल वर्ट्रिब्रा) नाम दिये गये हैं। योग शास्त्र में उनके नाम दूसरे हैं। दर्शनोपनिषद में इन प्रधान नाड़ियों को सरस्वती, कुहू, गान्धारा–हस्ति–जिव्हा, पूषा, यशस्विनी, विश्वोदरा, वरुणा, शंखिनी, अलम्बुषा आदि नाम दिये हैं और उनके भीतर काम करने वाली शक्ति धाराओं को ब्रह्मा, विष्णु, शिव, पूषत्, वायु, वरुण, सूर्य, चन्द्रमा, अग्नि आदि देवताओं के नाम से संबोधित किया गया है। उपरोक्त वर्गीकरण के अतिरिक्त इनका विभाजन दूसरे ढंग से भी किया गया है। दृष्टि नाड़ियों ऑप्टिक नर्व्स, श्रवण नाड़ियाँ ऑडोटरी नर्व्स, घ्राण नाड़ियां ऑल्फेक्ट्री नर्व्स इनमें प्रधान हैं। यों उनके हाइपोग्लोसल आदि और भी कतिपय विभाजन हो सकते हैं। ब्रह्म ग्रन्थि, विष्णु ग्रन्थि, शिव ग्रन्थि के नामों से इन्हीं गुच्छकों की चर्चा साधना विज्ञान के अन्तर्गत की गई है।

इस वर्गीकरण को और भी अधिक स्पष्ट करना है तो अग्ररज्जुका में अवस्थित ज्ञान वाही पूलिका को अलम्बुषा–पंच रज्जुका में स्थित ज्ञान वाही पूलिका को कुहू–हनु पूलिका को वरुणा–पार्श्व रज्जु में यशस्विनी–दृष्टि नाड़ी को पूषा–प्रधान तंत्रिका को पयास्विनी–अधोजिह्वा तंत्रिका को सरस्वती–कर्णावर्त तंत्रिका को शंखिनी–नेत्र तंत्रिका को गांधारा जिह्वा ग्रसनी को हस्ति जिह्वा, वेगस तंत्रिका को विश्वोदरा कह सकते हैं। यह वर्गीकरण असुर क्षेत्र में उनके काम करने की स्थिति को देखते हुए किया गया है। शरीर शास्त्र का आधुनिक वर्गीकरण और योग शास्त्र का प्राचीन विवेचन हमें संयुक्त रूप से लगभग एक ही स्थान पर पहुँचा देता है। जो थोड़ा बहुत अन्तर प्रतीत होता है वह भी थोड़ा अधिक अन्वेषण करने पर समाप्त हो जाने की आशा है।

मेरुदण्ड के दोनों ओर जो नाड़ी समूह सिम्पेथैटिक ट्रेक के रूप में निकलता है उनमें से बाईं ओर वाले इड़ा और दाहिनी ओर वाले पिंगला कहलाते हैं। शरीर संस्थान की अनेकों हारमोन स्रावी ग्रंथियां इन्हीं से नियन्त्रित होती हैं। स्पाइनल कैनाल के कार्यों के सम्बन्ध में अभी वैज्ञानिक खोजें अधूरी हैं। वे सोचते हैं जब मस्तिष्क का कण–कण विशेषताओं के भण्डारों से भरा हुआ है तो यह स्थान ऐसे ही निरर्थक नहीं हो सकता। इसे सुषुम्ना नाड़ी क्यों कहा गया इसके उत्तर में बिजली रोशनी की ट्यूब लाइट दंडों की संरचना पर ध्यान देना होगा। वे सर्वथा पोले होते हैं। उनमें मात्र गैस भरी होती है। गैस में विद्युत प्रवाह चल पड़ने से फ्लोरोसेन्ट ट्यूब चमकने लगते हैं और रोशनी होती है। पोले मेरुदण्ड में भरे हुए द्रव को फ्लोरोसेन्ट ट्यूब के समतुल्य माना जाय तो उसकी चमक को एक महत्वपूर्ण नाड़ी सुषुम्ना की भूमिका निभा सकने की बात सहज ही समझी जा सकती है।

समस्त शरीर में फैली हुई इन नाड़ियों के दो प्रकार के काम हैं। सिम्पथैटिक शारीरिक क्रियाओं की उत्तेजनाओं को बढ़ाने का काम करती है। पाचन रक्त संचार आदि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उन्हीं से सम्पन्न होते हैं । पैरा सिम्पैथेटिक नाड़ियों का काम नियंत्रण करना है । जैसे हृदय की गति को अधिक न बढ़ने देना–मल मूत्र के वेगों को संभालना आदि । एक वर्ग में धकेलने की क्षमता है । दूसरे में सकोड़ने खींचने की । धकेलने वाले पक्ष को सूर्य नाड़ी एवं पिंगला कहते हैं । सकोड़ने वाले को चन्द्र नाड़ी एवं इड़ा कहते हैं । एक को गरम अग्नि रूप दूसरी को शीतल सोम रूप कहा गया है । इन्हें धन और ऋण विद्युत भी कह सकते हैं । अध्यात्म शास्त्र में इन्हें प्राण और रयि कहा गया है । पुरुष और प्रकृति का प्रतिनिधित्व करने वाली भी इन्हीं को बताया गया है ।

सूक्ष्म शरीर की प्राण संचारिणी नाड़ियों में १४ प्रमुख हैं । इनके नाम इस प्रकार हैं (१) सुषुम्ना, (२) इड़ा, (३) पिंगला, (४) गान्धारी, (५) हस्त जिह्वा, (६) कुहू, (७) सरस्वती, (८) पुषा, (९) शंखनी, (१०) पयष्विनी, (११) वारूणी, (१२) अलम्बुषा, (१३) विश्वोधरा, (१४) पयस्विनी । इनमें भी सर्वोपरि तीन हैं । (१) इड़ा, (२) पिंगला, (३) सुषुम्ना । इन्हें तीन शरीर का–तीन लोकों का प्रतिनिधि बताया गया है । इनके नामकरण इस आधार पर किये गये हैं कि उनकी विशेषताएँ कार्य पद्धति एवं दिशा धाराएँ क्या–क्या हैं । उनकी सहायता से किन प्रयोजनों की पूर्ति, किन सिद्धि सफलताओं की प्राप्ति हो सकती है । समुद्र मंथन से उपलब्ध १४ रत्नों की चर्चा सभी ने सुनी है । इन १४ नाड़ियों को उसी स्तर के अनुदानों के लिए सूक्ष्म जगत में सम्बद्ध सूत्र का काम करने वाली विद्युत धाराऐं कहा जा सकता है । अन्तरिक्ष की फ्रीक्वेन्सी स्थिति से विज्ञान के आरम्भिक विद्यार्थी भी परिचित हैं । इन प्राण धाराओं को सूक्ष्म शरीर में साथ ही सूक्ष्म जगत में काम करने वाली चेतन धारा कहा जा सकता है । समुद्र में, वायुमण्डल में, धरती में अनेकों परतें पाई जाती हैं । नाड़ी धाराओं की उपमा इन परतों से भी दी जा सकती हैं । समझने भर के लिए उदाहरणों का प्रयोग किया गया है । अन्यथा नाड़ियाँ अपने ढंग की स्वतंत्र संरचना हैं । उनका सही उदाहरण संसार की अन्य किसी प्रक्रिया से नहीं मिल सकता । अनौखापन ही उनकी मौलिकता है ।

हमारा केन्द्रीय नाड़ी मण्डल मस्तिष्क और मेरुदण्ड को मिलाकर बना है । इन दोनों को जोड़ने वाला एक वाल्व है, जिसे मेडुला औब्लांगेटा कहते हैं । इस संस्थान का श्वांस–प्रश्वांस की स्वसंचालित प्रक्रिया से सीधा सम्बन्ध और नियंत्रण है । मेरुदण्ड के भीतर पायी जाने वाली भूरी और सफेद मज्जा (ग्रे एण्ड व्हाइट मटर) में भी वही तत्व पाये जाते हैं जो मस्तिष्क में हैं । इस पदार्थ का अस्थि संबंध ठीक वैसा ही है जैसा कि मस्तिष्क के क्रेनियल कैविटी में मस्तिष्क और मेरुदण्ड दोनों में ही सेरेब्रो स्पाइनल द्रव पदार्थ तैरते रहते हैं । मेरुदण्ड के पोले भाग 'केनालिस सैन्ट्रेलिस' में होकर ब्रह्म नाड़ी मूलाधार से लेकर सहस्रार तक पहुँचती है । अति महत्व पूर्ण भौतिक और चेतन तत्वों का रक्त संचार इसी पोले भाग में होकर होता है ।

समस्त शरीर में फैले हुए स्वसंचालित नाड़ी मंडल ओटोनामस सिसस्टम एवं एच्छिक नाड़ी मंडल वालेन्टरी मोटर नर्व्स दोनों पर मस्तिष्कीय नाड़ी मंडल सैन्सरी नर्व्स का नियंत्रण है । यों यह दोनों धाराएँ अलग हैं । किन्तु नाड़ी गुच्छकों (प्लैक्सस) के माध्यम से एक दूसरे के साथ पूरी तरह गुथी हुई है । अस्तु एक दूसरे पर अपनी क्रिया की प्रतिक्रिया छोड़ती है ।

जिस प्रकार पेट पचाने को भट्टी का काम करता है हृदय पम्पिंग स्टेशन का–फेंफड़े हवा थोकने का, गुर्दे छानने का काम करते हैं, उसी प्रकार मस्तिष्क विद्युत संचार का केन्द्र है । नाड़ी संस्थान को आवश्यक विद्युत प्रवाह देने से लेकर शरीर में चल रही विभिन्न हलचलों की व्यवस्था रखने वाले निर्देश देने तक का काम मस्तिष्क के स्वसंचालित संस्थान को ही करना पड़ता है । बाहरी समस्याओं को सुलझाने वाला मन बुद्धिभाग इसके अतिरिक्त है तो उसके लिए भी पोषण अनैच्छिक भाग में उत्पन्न होने वाली शक्ति धारा से ही मिलता है । सेन्सरी नर्व्स ऐच्छिक विचार संस्थान की सारी विधि व्यवस्था जुटाती है ।

मस्तिष्क को मोटे तौर पर खोपड़ी के खोखले में बन्द अवयव माना जाता है । पर वस्तुतः उसका विस्तार मेरुदण्ड की लम्बाई तक फैला हुआ है । बनावट और स्थान की दृष्टि से मस्तिष्क और मेरुदण्ड दो मान लिये गये हैं । खण्डों में व्याख्या करने से सुविधा भी रहती

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

है, किन्तु वस्तुतः वे दोनों एक ही हैं। मस्तिष्क के उत्पादन को कार्य क्षेत्र में फैलाने वाले भाग को मेरुदण्ड कहा जा सकता है। वस्तुतः वे दोनों एक दूसरे से पूरी तरह सम्बद्ध हैं। मस्तिष्कीय उत्पादन एवं निर्देश का वितरण मेरुदण्ड के माध्यम से समस्त शरीर में फैला हुआ नाड़ी संस्थान ही सम्पन्न करता है। इसी प्रकार मेरुदण्ड रूपी नहर को जो पानी मिलता है वह सारे का सारा मस्तिष्क रूपी नदी का अनुदान है। दोनों की मिलीभगत ही शरीर की क्षमता और गतिशीलता बनाये हुए है।

सामान्य व्यवहार में मन बुद्धि का क्रिया कलाप सेन्सरी नर्व्स के सहारे चलता है। किन्तु मानवी चेतना की क्षमता इतने तक ही सीमित नहीं है। उसके अन्तरंग में ऐसी अतीन्द्रिय क्षमताएँ भी विद्यमान हैं जो कायिक सामर्थ्य, बौद्धिक चिन्तन, इन्द्रिय ज्ञान एवं संग्रहीत लौकिक जानकारी से आगे बढ़ कर बहुत कुछ ऐसा जान सकती हैं जो अविज्ञात रहस्यमय है। सामान्य मनुष्य द्वारा जो कुछ सम्पन्न होता है उसे ही साधारण या स्वाभाविक कहा जाता है। जो दूसरों के पास न हो किसी विशेष व्यक्ति में दिखाई पड़े उसे रहस्यमय या चमत्कार कहा जाता है। यों वह भी प्रकृति के कायदे कानून के अन्तर्गत ही होता है। नियति का उल्लंघन कहीं भी नहीं हो सकता। हम जिन्हें जानते नहीं हैं उन्हीं नियमों के द्वारा हुए कार्यों को चमत्कारी कहने लगते हैं। मनुष्य के अन्दर जो चमत्कारी अतीन्द्रिय क्षमताएँ हैं वे मस्तिष्क की प्रसुप्त दिव्य प्रवृत्तियाँ हैं। इन्हें सुपर सैन्सरी नर्व्स कहा जा सकता है।

कुण्डलिनी का प्राणयोग–सूर्यविधन प्राणायाम

योग शास्त्रों में कुण्डलिनी को सर्वाधिक महत्व दिया गया है। इसके साथ अनेक प्रकार की कल्पनायें जोड़ दी गई हैं। अनेक प्रकार से उसका वर्णन किया जाता है। सीधे सरल शब्दों में कुण्डलिनी वह दिव्य मानस तेज है, जो आत्म–चेतना से परिसिक्त है और शरीर भर में व्याप्त है। साधना के फलस्वरूप यह तेज सिमट कर ध्यान के समय ज्योति बनकर देह में कार्य करने लगता है।

कुण्डलिनी शक्ति को और अच्छी तरह समझने के लिए श्वांस क्रिया और सुषुम्ना शीर्षक (मेडुला ऑबलंगिटा) का विस्तृत अध्ययन आवश्यक है। पाश्चात्य वैज्ञानिक अभी तक इतना ही जान पाये हैं कि नाक से ली हुई साँस गले से होती हुई फुफ्फुसों (फेफड़ों) तक पहुँचती है। फेफड़ों के छिद्रों में भरे हुए रक्त को वायु शुद्ध कर देती है और रक्त–परिसंचालन की गतिविधि शरीर में चलती रहती है।

किन्तु प्राणायाम द्वारा श्वांस क्रिया को बन्द करके भारतीय योगियों ने यह सिद्ध कर दिया कि चेतना जिस प्राण–तत्व को धारण किये हुए जीवित है, उसके लिये श्वांस क्रिया आवश्यक नहीं। साँस ली हुई हवा का स्थूल भाग ही रक्त शुद्धि का काम करता है। उसका सूक्ष्म भाग सुषुम्ना शीर्षक में अवस्थित इड़ा और पिंगला नाड़ियों के माध्यम से नाभि–कन्द स्थित चेतना को उद्दीप्त किये रहता है। 'गोरक्ष पद्धति' में श्लोक ४८ में इस क्रिया को शक्तिचालन, महामुद्रा, नाड़ी शोधन आदि नाम दिये हैं और लिखा है कि सामान्य अवस्था में इड़ा और पिंगला नाड़ियों का शरीर की जिस ग्रन्थि या इन्द्रिय से संबंध होता है, मनुष्य उसी प्रकार के विचारों से प्रभावित होता रहता है। इस अवस्था में नाड़ियों के स्वतः संचालन का अपना कोई क्रम नहीं होता। किन्तु जब विशेष रूप (प्राणायाम) से प्राण–वायु को थोंका जाता है तो इड़ा (गर्म नाड़ी) और पिंगला (ठंडी नाड़ी) दोनों सम–स्वर में प्रवाहित होने लगती है। इस अवस्था के विकास के साथ–साथ नाभि–कन्द में प्रकाश स्वरूप गोला भी विकसित होने लगता है। उससे प्राण–शक्ति का विद्युत शक्ति के समान निस्सरण होता है। चूँकि सभी नाड़ियाँ इसी भाग से निकलती हैं, इसलिए वह इस ज्योति गोले के सस्पर्श में होती हैं। सभी नाड़ियों में वह विश्वव्यापी शक्ति झरने से सारे शरीर में वह तेज, ओजस, के रूप में प्रकट होने लगता है। इन्द्रियों में वही बल के रूप में, नेत्रों में चमक के रूप में परिलक्षित होता है। इस प्राण–शक्ति के कारण प्रबल आकर्षण शक्ति पैदा होती है।

यह शक्ति नाभि प्रदेश में प्रस्फुटित होती है और चूँकि कटि प्रदेश भी उसी के समीप है, इसलिये वह भाग अधिक शीघ्र और तेजी से प्रभावित होता है। इसलिए

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यौन–शक्ति केन्द्रों को नियंत्रण में रखना अधिक आवश्यक होता है । साधना की अवधि में संयम पर इसीलिए अधिक जोर दिया जाता है, जिससे कुण्डलिनी शक्ति का फैलाव ऊर्ध्वगामी हो जाये उसी से ओज की वृद्धि होती है ।

स्थूल रूप से शरीर के स्नायुमंडल को ही पाश्चात्य वैज्ञानिक देख पाये हैं, वे अभी तक नाड़ियों के भीतर बहने और जीवन की गतिविधियों को मूलरूप से प्रभावित करने वाले प्राण प्रवाह को नहीं जान सके । स्थूल नेत्रों से उसे देखा जाना सम्भव भी नहीं है । उसे भारतीय योगियों ने चेतना के अति सूक्ष्म स्तर का वेधन करके देखा । योग शिखोपनिषद में १०१ नाड़ियों का वर्णन करते हुए शास्त्रकार ने सुषुम्ना शीर्षक को परानाड़ी बताया है । यह कोई नाड़ी नहीं है वरन् इड़ा और पिंगला के समान विद्युत प्रवाह से उत्पन्न हुई एक तीसरी धारा है, जिसका स्थूल रूप से अस्तित्व नहीं भी है और सूक्ष्म रूप से इतना व्यापक एवं विशाल है कि जीव की चेतना जब उसमें से होकर भ्रमण करती है तो ऐसा लगता है कि वह किसी आकाश गंगा में प्रवाहित हो रहा हो । वहाँ से विशाल ब्रह्मांड की झाँकी होती है । अन्तरिक्ष में अवस्थित अगणित सूर्य, चन्द्रमा, ग्रह–नक्षत्र की स्थिति समझने और विश्वव्यापी हलचलों को नाद रूप में सुनने, समझने का अलभ्य अवसर जो किसी चन्द्रयान या राकेट के द्वारा भी सम्भव नहीं है, इसी शरीर में मिलता है । उस स्थिति का वर्णन किया जाये तो प्रतीत होगा कि जो कुछ स्थूल और सूक्ष्म उस संसार में विद्यमान है, उस सब के साथ सम्बन्ध मिला लेने और उनका लाभ उपलब्ध करने की क्षमता उस महान् आत्मतेज में विद्यमान है, जो कुण्डलिनी के भीतर बीज रूप में मौजूद है ।

सुषुम्ना नाड़ी (स्पाइनल कॉर्ड) मेरुदण्ड में प्रवाहित होती है और ऊपर मस्तिष्क के चौथे खोखले भाग (फोर्थ वेन्ट्रिकल) में जाकर सहस्रार चक्र में उसी तरह प्रविष्ट हो जाती है, जिस तरह तालाब के पानी में से निकलती हुई कमल नाल से शत–दल कमल विकसित हो उठता है । सहस्रार चक्र ब्रह्माण्ड लोक का प्रतिनिधि है, वहाँ ब्रह्म की सम्पूर्ण विभूति बीज रूप से विद्यमान है और कुण्डलिनी की ज्वाला वहीं जाकर अन्तिम रूप से जा ठहरती है, उस स्थिति में निरन्तर मधुपान का सा, सम्भोग की तरह का सुख (जिसका कभी अन्त नहीं होता) है, उसी कारण कुण्डलिनी शक्ति से ब्रह्म प्राप्ति होना बताया जाता है ।

कुण्डलिनी का महत्व इसी शरीर में परिपूर्ण शक्ति और सामर्थ्य का स्वामी बनकर आत्मा की अनुभूति और ईश्वर दर्शन प्राप्त करने से निःसन्देह बहुत अधिक बढ़ जाता है । पृथ्वी का आधार जिस प्रकार शेष भगवान् को मानते हैं, उसी प्रकार कुण्डलिनी शक्ति पर ही प्राणि मात्र का जीवन अस्तित्व टिका हुआ है । सर्प के आकार की वह महाशक्ति ऊपर जिस प्रकार मस्तिष्क में अवस्थित शून्य चक्र से मिलती है, उसी प्रकार नीचे वह यौन–स्थान में विद्यमान कुण्डलिनी के ऊपर टिकी रहती है । प्राण और अपान वायु के थौंकने से वह धीरे–धीरे मोटी, सीधी, सशक्त और परिपुष्ट होने लगती है । साधना की प्रारम्भिक अवस्था में यह क्रिया धीरे–धीरे होती है, किन्तु साक्षात्कार या सिद्धि की अवस्था में वह सीधी हो जाती है और सुषुम्ना का द्वार खुल जाने से शक्ति का स्फुरण वेग से फूट कर सारे शरीर में (विशेष रूप से मुखाकृति में) फूट पड़ता है । कुण्डलिनी जागरण दिव्य ज्ञान, दिव्य अनुभूति और अलौकिक सुख का सरोवर इसी शरीर में मिल जाता है ।

सुषुम्ना नाड़ी का रुका हुआ छिद्र जब खुल जाता है तो साधक को एक प्रकार का अत्यन्त मधुर नाद सुनाई देने लगता है । यह ध्वनि प्रारम्भ में मेघ के गर्जन, वर्षा, समुद्र की हहराहट, घण्टा, झांझ, वीणा और भ्रमर गुंजार के तुल्य विकसित होती है, यही बाद में अनहद नाद में परिणत हो जाता है । नाभि से ४ अंगुल ऊपर यह आवाज सुनाई देती है, उसे सुनकर चित्त उसी प्रकार मोहित होता है, जिस प्रकार वेणुनाद सुनकर सर्प सब कुछ भूल जाता है । अनहद नाद से साधक के मन पर चढ़े हुए जन्म–जन्मान्तरों के कुसंस्कार छूट जाते हैं ।

नाद ही नहीं कुण्डलिनी शक्ति अपने जिस पुर्यष्टक नाम प्राण स्वरूप में स्थित है, उसमें ऐसी सुगन्ध प्रस्फुटित होती है, जैसे वहाँ कोई मंजरी या कस्तूरी बड़े यत्न से सुरक्षित रखी गई हो ।

कुण्डलिनी जागृत करने के लिए जितनी दुस्तर उसकी सिद्धियाँ हैं, उतना ही कठिन साहस भी करना पड़ता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

है, किन्तु यह शक्ति जब जागृत हो जाती है और उसके प्रवाह को अन्य नाड़ियों में फैलने से रोककर ब्रह्म नाड़ी से ऊपर की ओर ले जाते हैं (ब्रह्म नाड़ी सुषुम्ना की भी मध्यवर्ती और अत्यन्त सूक्ष्म नाड़ी है।) नाड़ियों के विवरण में पाठक पढ़ेंगे कि सुषुम्ना के भीतर भी केले के पत्तों की तरह वज्रा और चित्रणी नाड़ी स्थित है उनकी मिलन धारा का नाम ब्रह्म नाड़ी है। इन नाड़ियों को पाश्चात्य वैज्ञानिकों ने एक धूसर पदार्थ (ग्रे मैटर) के रूप मे जानने का प्रयत्न किया है, पर वे अभी तक इस सम्बन्ध में कोई यांत्रिक जानकारी उपलब्ध नहीं कर सके, तो वह इस शरीर को आकाश गमन की शक्ति से भर देती है। योग वशिष्ठ में कुण्डलिनी साधन की दिव्य सिद्धियों का वर्णन करते हुए लिखा है–

रेचकेन प्रयोगेण नाडयन्तर निरोधिना ।
मुहूर्त स्थितिमाप्नोति तदा व्योमगदर्शनम् ॥
मुखाद्बहिर्द्वादशान्ते रेचकान्यासयुक्तितः ।
प्राणे चिरं स्थितं नीते प्रविशत्यपरां पुरीम ॥
रेचकाभ्यासयोगेन जीवः कुण्डलिनीग्रहात् ।
उद्धृत्य योज्यते यावदामोदः पवनादिव ॥
त्यज्यते विरतस्पन्दो देहाऽयं कोष्ठलोष्ठवत् ।
देहेऽपि जीवेऽपि मतावा सेवक इवादरः ॥
स्थावरे जंगमे वापि यथाभिमतयेच्छयां ।
भोक्तुं तत्संपदं सम्याजीवोऽन्तर्विनिवेश्यते ॥
इति सिद्धिश्रियं भुक्त्वा स्थित चेतहपुः पुनः ।
प्रविश्यते स्वमन्यद्वा यद्यतास विरोचते ॥
देहादयस्तथा विम्बान्त्र्याप्तवत्याखिलानथ ।
पंविदा जगदापूर्य संपूर्ण स्थीयतेऽथवा ॥

अर्थात्– रेचक के प्रयोग से जब कुण्डलिनी शक्ति मस्तिष्क में थोड़ी देर के लिए टिक जाती है तो उन सिद्ध पुरुषों के दर्शन होते हैं जो बहुत पहले इस नश्वर देह का परित्याग कर चुके हैं। प्राणों को मुख से १२ अंगुल बाहर रखने का अभ्यास कर लेने वाला योगी किसी दूसरे शरीर में प्रवेश कर सकता है। इन्हीं युक्तियों से योगी में जीव को कुण्डली से उसी प्रकार बाहर निकालने की क्षमता मिल जाती है जिस प्रकार वायु से सुगन्ध खींच जी जाये। इस स्थिति में शरीर कहीं भी पड़ा रहे चेतना उससे अलग होकर बाहर के दृश्यों का उसी प्रकार घूम कर आनन्द ले सकती है, जैसे कोई इस शरीर से ही कहीं भ्रमण कर रहा हो। दूसरे शरीर चाहे वह जड़ जैसे वृक्ष ही क्यों न हों उसमें भी यह चेतना प्रवेश करके वहाँ के सब हाल जान सकती है। किसी और के शरीर में प्रवेश करके उस शरीर को मिलने वाले भोग आदि सुखों का रसास्वादन किया जा सकता है। अपने शरीर से भोग–भोग कर चेतना को किसी और के शरीर में बदलता रहे तो बहुत काल तक लौकिक सुख और उसे सारे संसार में फैला कर वह सर्वव्यापी और अन्तर्यामी हो सकता है।

कुण्डलिनी शक्ति की सिद्धियों का कोई आर–पार नहीं है। अन्य योगों की अपेक्षा यह योग सरल भी है, किन्तु साधना काल के विक्षेप और कठिनाइयों को सम्भालने के लिए उसमें भी बड़े साहस और कठोर तप की आवश्यकता होती है। कुण्डलिनी शक्ति मूलतः नाड़ियों से सम्बन्धित है और नाड़ी–जाल के द्वारा ही वह सारे शरीर में फैलती है, इसलिये उसे जागृत करने का सम्पूर्ण विधान नाड़ियों के उतेजन से ही सम्पन्न होता है। साधना काल में साधक को अपनी मनःस्थिति को वशवर्ती और स्थिर बनाये रखने के लिए यद्यपि यम, नियम, ध्यान, धारणा, प्रत्याहार आदि का भी अभ्यास करना आवश्यक हो जाता है, किन्तु कुण्डलिनी प्राण–शक्ति है, इसलिये उसका जागरण मुख्यतः प्राणायाम की क्रियाओं से ही होता है। कुछ साधन ऐसे भी हैं, जिनमें प्राणायाम के साथ मूलबन्ध और उड्डियानबन्ध भी करने पड़ते हैं, पर क्रियाएँ हठवादी होने से कई जोखिम भी हो सकते हैं यद्यपि इनमें कुण्डलिनी शक्ति का जागरण थोड़े समय में ही हो जाता है, किन्तु योगियों ने उन कठिनाइयों और बाधाओं को देखकर ऐसे सुलभ प्राणायाम खोज निकाले जो किसी भी स्वस्थ, निर्बल, युवक, वृद्ध या नारियों द्वारा किये जा सके और कुण्डलिनी के क्रमिक विकास का लाभ प्राप्त कर सके।

प्राणायाम के अभ्यास से जहाँ शरीर में प्राण–शक्ति बढ़ती है, वहाँ कुण्डलिनी जागरण के लिए आवश्यक साहस और आत्म–बल भी प्राप्त होता है। आत्म–बल के अभाव में कठिन साधनाएँ लोग स्वल्प समय में ही छोड़ बैठते हैं, किन्तु प्राणायाम के शारीरिक–मानसिक लाभ तुरन्त मिलते हैं जिससे मनोबल बढ़ता है, और आगे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का मार्ग साफ होता चला जाता है । बुद्धि की सूक्ष्म ग्रहणशीलता का विकास होने से स्थूल भोगों और दुर्वासनाओं से भी अरुचि होने लगती है और पारलौकिक सत्यता में आस्था बढ़ने लगती है । इस स्थिति में मार्ग में पड़ने वाली कठिनाइयों के प्रति उसी तरह साहस बढ़ता जाता है । जिस तरह किसी को यदि यह मालूम हो जाय कि यहाँ ये इतनी दूरी पर रत्नों का भण्डार छिपा हुआ है तो वह मनुष्य रत्नों के लोभ में मार्ग में आने वाली व्याधियों को भी नगण्य ठहराकर उन्हें प्राप्त करने के लिए चल पड़ता है ।

प्राण तत्व एक है, वही ब्रह्माण्ड में व्यापक रूप से संव्याप्त है और ब्रह्माग्नि कहा जाता है । वही पिण्ड सत्ता में समाया हुआ है और आत्माग्नि कहलाता है । इस प्रकार एक होते हुए भी विस्तार भेद से उसके दो रूप बन गये । आत्माग्नि लघु है और ब्रह्माग्नि विभु । तालाब में जब वर्षा का विपुल जल भरता है तो वह परिपूर्ण हो जाता है । यह अनुदान न मिलने पर तालाब सूखता और घटता जाता है । पानी में मलीनता भी आ जाती है । जिस प्रकार तालाब को भरा-पूरा और स्वच्छ रखने के लिए नये वर्षा जल की आवश्यकता पड़ती है, उसी प्रकार आत्माग्नि में ब्रह्माग्नि का अनुदान पहुँचाना पड़ता है । इसी का नाम प्राणायाम है । यों गहरी साँस लेकर फेफड़े के व्यायाम को भी आरोग्यवर्धक प्राणायाम कहते हैं । शरीर शास्त्र की दृष्टि से उसकी उपयोगिता तथा विधि-व्यवस्था बताई जाती है, साथ ही महिमा का गुण-गान भी किया जाता है । इससे अधिक ऑक्सीजन मिलती है और श्वांस यन्त्रों का व्यायाम होता है पर अध्यात्म शास्त्र का योग प्राणायाम उससे भिन्न है । उसमें ब्रह्माण्डव्यापी प्राण की अभीष्ट मात्रा आत्मप्राण तक पहुँचाई जाती है । इस प्रकार उसकी स्थिति एवं सम्पदा बढ़ती है । फलतः भौतिक सफलताओं और आत्मिक विभूतियों के समस्त अवरुद्ध मार्ग खुल जाते हैं ।

ब्रह्म-प्राण को आत्म-प्राण के साथ संयुक्त करने के लिए जहाँ जीवन-क्रम में शालीनता एवं उदारता की सत्प्रवृत्तियों का अधिकाधिक समावेश करने का प्रयास करना होता है, वहाँ उपासनात्मक उपक्रमों को अपनाना भी कम महत्वपूर्ण नहीं है । आहार-बिहार से स्वास्थ्य वृद्धि होती है साथ ही दुर्बलता और रुग्णता को निरस्त करने के लिए विशेष चिकित्सा उपचार एवं व्यायाम आदि भी अपनाने की आवश्यकता पड़ती है । प्राणशक्ति के अभिवर्धन में कुण्डलिनी जागरण में सूर्य वेधन जैसे प्राणायामों की भी आवश्यकता होती है । योगशास्त्र में-व्यक्तिप्राण और ब्रह्म-प्राण के सम्बन्ध और समन्वय की चर्चा इस प्रकार की है-

प्राणा वै द्विदेवत्याः एक मात्रा गृह्यते । तस्मात् प्राणा एक नामाता द्विमात्र हूयन्तेतस्मात्प्राण द्वन्द्वम् ।

-ऐत२/२७

प्राण एक है, पर वह दो देवताओं में-दो पात्रों में भरा हुआ है ।

अगर्भश्च सगर्भश्च प्राणायामो द्विधा स्मृतः ।
जपं ध्यानं विनागर्भः सगर्भस्तत्समन्वयात् ॥

- शिवपुराण

"प्राणायाम अगर्भ और सगर्भ दो प्रकार का होता है । जप और ध्यान से युक्त प्राणायाम सगर्भ होता है, और इनके बिना अगर्भ कहा जाता है ।"

तत्साधनं द्वयं मुख्यं सरस्वत्यास्तु चालनम् ।
प्राणरोधमाथाभ्यासाहज्वी कुण्डलिनी भवेत् ॥

-योग कुण्डल्युपनिषद१/८

उसके दो साधन मुख्य हैं- (१) सरस्वती (सुषुम्ना) का चालन, (२) प्राण-रोध । अभ्यास से यह कुण्डली मारे बैठी कुण्डलिनी सीधी हो जाती है ।

आध्यात्मिक प्राणायाम वे हैं जिनमे ब्रह्माण्डीय चेतना को जीव चेतना में सम्मिश्रित करके जीव सत्ता का अन्तःतेजस जागृत किया जाता है । कुण्डलिनी साधना में इसी स्तर के प्राणयोग की आवश्यकता रहती है । 'सूर्य-वेधन' इसी स्तर का है । उसमें ध्यान धारणा अधिकाधिक गहरी होनी चाहिए और प्रचण्ड संकल्प शक्ति का पूरा समावेश रहना चाहिए । श्वास खींचते समय महाप्राण को-विश्व प्राण को-पकड़ने और घसीट कर आत्मसत्ता के समीप लाने का प्रयत्न किया जाता है । श्वास के साथ प्राण तत्व की अधिकाधिक मात्रा रहने की भाव भरी मान्यता रहनी चाहिए । साँस में ऑक्सीजन की जितनी अधिक मात्रा होती है उतनी ही उसे आरोग्यवर्धक माना जाता है । ऑक्सीजन की न्यूनाधिक मात्रा का होना क्षेत्रीय प्रकृति परिस्थितियों पर निर्भर है,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

किन्तु प्राण तो सर्वत्र समान रूप से संव्याप्त है। उसमें से अभीष्ट मात्रा संकल्प शक्ति के आधार पर उपलब्ध की जा सकती है। सूक्ष्म जगत में (अध्यात्म क्षेत्र में) श्रद्धा को ही सबसे प्रबल और फलदायक माना गया है। साधनात्मक कर्मकाण्डों का फल परिपूर्ण मिलना न मिलना अथवा स्वल्प मिलना कर्मकाण्डों के विधि–विधानों पर नहीं साधक की श्रद्धा पर निर्भर रहता है। श्रद्धा की न्यूनता ही साधनाओं के निष्फल जाने का प्रधान कारण होता है। जो इस सुनिश्चित तथ्य को जानते हैं, वे सभी साधना उपचारों में गहनतम श्रद्धा का समावेश करने के लिए प्रचण्ड संकल्प शक्ति का उपयोग करते हैं।

साँस खींचते समय प्राण ऊर्जा का वायु के साथ प्रचुर मात्रा में समावेश होना, उसका सूक्ष्म शरीर में प्रवेश करना–सुषुम्ना(मेरुदण्ड) मार्ग से इड़ा धारा (वाम भाग के ऋण विद्युतीय शक्ति प्रवाह) द्वारा मूलाधार तक पहुँचना, वहाँ अवस्थित प्रसुप्त चिनगारी को झकझोरना, थप–थपाना, जागृत करना यह सूर्य–वेधन प्राणायाम का पूर्वार्ध है। उत्तरार्ध में प्राण को पिंगला मार्ग से (मेरुदण्ड के दक्षिण भाग के धन विद्युत प्रवाह) में होकर वापस लाया जाता है। जाते समय का अन्तरिक्षीय प्राण शीतल होता है, ऋण धारा भी शीतल मानी जाती है। इसलिए इड़ा को (पूरक को) चन्द्रवत कहा गया है। चन्द्रनाड़ी कहने से यही प्रयोजन है। लौटते समय अग्नि उद्दीपन प्राण प्रहार की संघर्ष क्रिया से ऊष्मा बढ़ती और प्राण में सम्मिलित होती है। लौटने का पिंगला मार्ग धन विद्युत का क्षेत्र होने से उष्ण माना गया है। दोनों ही कारणों से लौटता हुआ प्राण वायु उष्ण रहता है, इसलिए उसे सूर्य की उपमा दी गई है। इड़ा, चन्द्र और पिंगला सूर्य है। पूरक चंद्र और रेचक सूर्य है। ऐसा ही प्रतिपादन साधना विज्ञान के आचार्य करते रहे हैं।

सोई हुई शक्ति को जगाना, लेटी हुई गिरी पड़ी क्षमता को सक्रिय बनाना शक्ति चालन है। यों मुद्रा प्रसंग में एक शक्ति चालिनी मुद्रा भी है और उसका प्रयोग भी कुण्डलिनी जागरण उपचार में किया जाता है। साथ ही शक्ति चालन का अर्थ वह भी है जो कुण्डलिनी जागरण शब्द से प्रतिध्वनित होता है। प्रसुप्त स्थिति की मूर्च्छना जब दूर हो जाती है और प्राणशक्ति प्रखर एवं सक्रिय होती है तो सारे अवसाद अभाव दूर हो जाते हैं। अन्तःस्थिति में उभरी हुई प्रखरता का बाह्य क्षेत्र की बढ़ी हुई तेजस्विता के रूप में परिचय मिलने लगता है। शक्ति के चल पड़ने पर प्रगति के समस्त आधार अग्रगमन करते हुए दृष्टिगोचर होते हैं–

आधारकमले सुप्तां चालयेत्कुण्डलीं दृढ़ाम् ।
अपानवायुनोरुत्य बलादाकृष्य बुद्धिमान्।
शक्तिचालनमुद्रेयं सर्वशक्तिप्रदायिनी ॥

– *शिव सं.*

मूलाधार चक्र में स्थित प्रसुप्त पड़ी हुई कुण्डलिनी शक्ति को प्राण वायु द्वारा चलाने और जगाने वाली शक्ति चालन क्रिया सर्व शक्ति प्रदायिनी है।

विहाय निद्रां भुजगी स्वयमूर्ध्वं भवेत्खलु ।
तस्मादभ्यासनं कार्य योगिना सिद्धिमिच्छता ॥
यः करोति सदाभ्यासं शक्तिचालनमुत्तमम् ।
येन विग्रहसिद्धिः स्याद् अणिमादिगुणप्रदा ॥

– *शिव संहित*

जो योगी सिद्धि की इच्छा से शक्ति चालन का नित्य अभ्यास करता है, उसके शरीर में सो रही सर्पिणी कुण्डलिनी जागृत होकर स्वयं ही ऊर्ध्वमुख हो जाती है। सदा अभ्यास करने पर उसे सिद्धि मिलती है, तथा अणिमादि विभूतियाँ प्राप्त हो जाती हैं।

कुण्डल्येव भवेच्छक्तिस्तां तु चालयेद्बुधः ।
स्वस्थानादाधुवोर्मध्यं शक्तिचालनमुच्यते ॥
तत्साधने द्वयं मुख्यं सरस्वत्यास्तु चालनम् ।
प्राणरोधमधाभ्यासादृज्वीकुण्डलिनी भवेत् ॥

– *योग कुण्डल्युपनिषद्*

कुण्डली ही मुख्य शक्ति है, ज्ञानी साधक उसका चालन करके दोनों भौहों के मध्य में ले जाता है तो वही शक्तिचालन है। कुण्डलिनी को चलाने के दो मुख्य साधन हैं। सरस्वती का चालन और प्राण निरोध, अभ्यास द्वारा लिपटी हुई कुण्डलिनी सीधी हो जाती है।

तस्मात्संचालयेन्नित्यं सुखसुप्तामरुंधतीम् ।
तस्याः संचालनेनैव योगी रोगैः प्रमुच्यते ॥
येन संचालिता शक्तिः स योगी सिद्धिभाजनम्।
किमत्र बहुनोक्तेन कालं जयति लीलया ॥

– *हठयोग प्रदीपिका*

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसलिए सुखपूर्वक सो रही अरुन्धती (कुण्डलिनी) का नित्य संचालन आवश्यक है । इस शक्तिचालन से योगी रोगों से मुक्त हो जाता है । जिसने शक्ति संचालन कर लिया, वह योगी सिद्धि भाजन है । वह कालजित् कहा जा सकता है ।

प्राण के प्रहार से जीवाग्नि के उद्दीपन प्रज्वलन का उल्लेख साधना ग्रंथों में अनेकों स्थानों पर हुआ है । यह वही अग्नि है जिसे योगाग्नि प्राण ऊर्जा, जीवनी–शक्ति अथवा कुण्डलिनी कहते हैं । अग्नि में ऐसा ही ईंधन डाला जाता है जिसमें अग्नि तत्त्व की प्रधानता वाले रासायनिक पदार्थ अधिक मात्रा में होते हैं । कुण्डलिनी प्राणाग्नि है । उसमें सजातीय तत्वों का ईंधन डालने से ही उद्दीपन होता है । सूर्य–वेधन प्राणायाम द्वारा इड़ा –पिंगला के माध्यम से अन्तरिक्ष से खींचकर लाया गया प्राणतत्व मूलाधार में अवस्थित–चिनगारी जैसी प्रसुप्त अग्नि तक पहुँचाया जाता है, तो वह भभकती है और जाज्वल्यमान लपटों के रूप में सारी सत्ता को अग्निमय बनाती है । अग्नि का उल्लेख शास्त्रों में मूलाधार स्थित प्राण ऊर्जा के लिए ही हुआ है–

आदेहम ध्यकट्यन्तमग्नि स्थान मुदाहृद ।
तत्र सिन्दूर वर्णोऽग्निर्ज्वलनं दशपंच च ॥

– *त्रिशिखोपनिषद्*

अर्थात्– "कटि के निम्न भाग में अग्नि स्थान सिन्दूर के रंग का है । उसमें पन्द्रह घड़ी प्राण को रोककर अग्नि की साधना करनी चाहिए ।"

तडिल्लेख तन्डीतपन शशि वैश्वानरमयी ।
तड़िल्लता समरुचिर्बिधुल्लेखेन भास्वती ॥

अर्थात्– बिजली की बेल के समान, तपते हुए चन्द्रमा के समान अग्निमयी वह शक्ति दिखाई देती है ।

नाभेस्तिर्यग थोर्ध्वकुण्डलिनी स्थानमू । अष्ट प्रकृति रूपाऽष्टधा कुण्डलिकृता कुण्डलीनी शक्तिर्भवति । यथा वद्वाय संचार जलान्नदीनि परितः स्कन्धपाश्व व निरुध्यैनं मुखेनैष समावेष्टय ब्रह्मरन्ध्र योग कालेऽपानेनाग्निना च स्फुरति ॥

– *शाण्डिल्योपनिषद्*

अर्थात्–"नाभि के नीचे कुण्डलिनी का निवास है । यह आठ प्रकृति वाली है । इसके आठ कुण्डल हैं । यह प्राणवायु को यथावत् करती है । अन्न और जल को व्यवस्थित करती है । मुख तथा ब्रह्मरन्ध्र की अग्नि को प्रकाशित करती है ।"

आधार चक्रनियलयां विसतन्तुन्वी
विद्युत्प्रभां सकलमन्त्रमयीं पवित्राम् ।
योगैकगम्यपदमामृतवर्षधारां
सारा महेशसखिकुण्डलिनी नमामि ॥

मूलाधार चक्र में निवास करने वाली अग्नि रूप, बिजली के समान प्रकाशवान, तन्तु रूप, परम पवित्र, योगियों के लिए गम्य, अमृत वर्षा करने वाली, शिव सहचरी, कुण्डलिनी को नमस्कार ।

मूलाधारस्थ ब्रह्मयात्मतेजोमध्ये व्यवस्थिता ।
जीवशक्तिः कुण्डलाख्या प्राणाकाश तैजसी ॥

– *रुद्र तन्त्र*

मूलाधार में निवास करने वाली आत्म तेजरूपी अग्नि, जीवशक्ति है । प्राण रूपी आकाश में प्रकाशवान कुण्डलिनी है ।

जब वह दिव्य अग्नि ऊपर जाती है तो उसकी अनुभूति अन्तः उत्साह के रूप में होती ही है, साथ–साथ शरीर में भी ऐसा लगता है कि मेरुदण्ड के निकटवर्ती भाग में अथवा शरीर के अन्य किसी अवयव में स्फुरण जैसी विचित्र हलचलें होती हैं–

यथा कुण्डलिनी देहेस्फुरत्यब्ज इवालिनी ।
तथा संविदुदेत्यन्त मृदुस्पर्शवशोदया ॥

– *महायोग विज्ञान*

जब कुण्डलिनी देह में स्फुरण करती है तो त्वचा पर भ्रमर कमल विचरने जैसे मृदुल दिव्य स्पर्श का अनुभव होता है ।

अंगे पिपीलिकारोहे यथास्पर्शः प्रतीयते ।
मेरुदण्डे तथा वायोः स्पर्शः स्यादूर्ध्वरोहणो ॥

–*योग रसायनम्*

जैसे किसी अंग में चींटी के चढ़ने का स्पर्श प्रतीत होता है, वैसे ही मेरुदण्ड में ऊपर चढ़ने वाले प्राण का स्पर्श प्रतीत होता है ।

दिनैः कतिपयैरेवमभ्यासं कुर्वतो ध्रुवम् ।
मेरुदण्डे विशेत्प्राणो वंशरंध्रे यथानिलः ॥

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

– योग रसायनम्

कुछ दिन तक इस प्रकार अभ्यास करने पर निश्चय ही प्राण मेरुदण्ड में उसी प्रकार प्रविष्ट होते हैं, जिस प्रकार बाँस की पोल में हवा ।

प्राण का अग्नि पर प्रहार–यही है कुण्डलिनी जागरण की प्रधान प्रक्रिया । मेरुदण्ड के वाम भाग के विद्युत प्रवाह को इड़ा कहते हैं । नासिका से वायु खींचते हुए उसके साथ प्रचंड प्राण प्रचुर मात्रा में घुला होने की भावना की जाती है । खींचे एक श्वास को मेरुदण्ड मार्ग से मूलाधार चक्र तक पहुँचने की संकल्पपूर्वक भावना की जाती है । यह मान्यता परिपक्व की जाती है कि निश्चित रूप से इस प्रकार अन्तरिक्ष से खींचा गया और श्वास द्वारा मेरुदण्ड मार्ग से प्रेरित किया गया प्राण मूलाधार तक पहुँचता है और उस पर आघात पहुँचा कर जगाने का प्रयत्न करता है । बार–बार लगातार प्रहार करने की भावना श्वास–प्रश्वास के द्वारा की जाती है । मेरुदण्ड मार्ग से मूलाधार तक इड़ा शक्ति के पहुँचने का विश्वास दृढ़ता पूर्वक चित्त में जमाया जाता है ।

प्रहार के उपरान्त प्राण को वापस भी लाना पड़ता है । यह वापसी दूसरी धारा पिंगला द्वारा होती है । पिंगला मेरुदण्ड में अवस्थित दक्षिण पक्ष की प्राण धारा को कहते हैं । इड़ा से गया प्राण मूलाधार की प्रसुप्त सर्पिणी महा अग्नि पर आघात करके (झकझोर कर) पिंगला मार्ग से वापस लौटता है । यह एक प्रहार हुआ ।

दूसरा इससे उलटे क्रम से होगा दूसरी बार दाहिनी ओर से प्राण वायु का जाना और बाईं ओर से लौटना होता है । इस बार पिंगला से प्राण का प्रवेश और इड़ा से वापस लौटना है । प्रहार पूर्ववत । एक बार इड़ा से जाना–पिंगला से लौटना । दूसरी बार पिंगला से जाना इड़ा से लौटना । यही क्रम जब तक प्राणायाम प्रक्रिया चलानी हो तब तक चलना चाहिए । इसे अनुलोम–विलोम क्रम कहते हैं । यही कुण्डलिनी जागरण के लिए प्रयुक्त होने वाला सूर्यवेधन प्राणायाम है ।

सूर्यवेधन प्राणायाम का महत्व माहात्म्य बताते हुए हठयोग प्रदीपिका में कहा गया है–

कपाल शोधनं वात दोषघ्नं कृमि दोषंहृतम् ।
पुनः पुनरिदं कार्यं सूर्यवेधन मुत्तमम् ॥

यह कपाल शोधन, वात रोग निवारण, कृमि दोष विनाशक है । इस सूर्यवेधन प्राणायाम को बार–बार करना चाहिए ।

इस तरह कुण्डलिनी जागरण में सूर्यवेधन प्राणायाम की प्रमुखता है जिसमें लोम–विलोम क्रम से एक बार बाएँ स्वर से साँस लेकर दाहिने से निकालने की और दूसरी बार दाहिने से लेकर बाएँ से निकालने की क्रिया लगातार करनी पड़ती है । साथ ही इस मंथन का, प्रहार, मूलाधार में प्रसुप्त महा अग्नि पर प्रसुप्त सर्पिणी पर करना पड़ता है । ऑक्सीजन के संयोग से अग्नि भड़कती है । प्राण की अभीष्ट मात्रा प्रसुप्त अग्नि चिनगारी को मिलते रहने से उसके भड़कने और दावानल का रूप धारण करने में देर नहीं लगती । यही प्राण प्रहार प्रक्रिया सूर्य वेधन प्राणायाम का मुख्य प्रयोजन है ।

अग्नि और प्राण के संयोग एवं प्रहार क्रम को प्रहार प्रताड़ना आदि नाम दिये गये हैं । जागरण के इस प्रयोग का उल्लेख इस प्रकार मिलता है–

चक्र मध्ये स्थिता देवाः कम्पतिवायु ताडनात् ।
कुण्डल्यपि महामाया कैलाशे सा विलीयते ॥

– शिव संहिता

प्राणवायु के आघात से चक्रों के मध्य रहने वाले देवता जागते हैं और महामाया कुण्डलिनी कैलाशपति शिव से जा मिलती है ।

योगाभ्यासेन मरुता साग्निना बोधिता सती ।
स्फुरिता हृदयाकाशे नागरूपा महोज्ज्वला ॥

– त्रिशिखब्राह्मणोपनिषद्

योगाभ्यास द्वारा प्राण वायु तथा अग्नि से प्रदीप्त यह महासती कुण्डलिनी ऊपर उठकर हृदयाकाश में पहुँचती है और वहाँ अत्यन्त प्रकाशपूर्ण नाग के रूप में स्फुरित होती है ।

येन मार्गेण गन्तव्यं ब्रह्मस्थानं निरामयम् ।
मुखेनाच्छाद्यं तद्द्वारं प्रसुप्ता परमेश्वरी ।
प्रबुद्धा वह्नियोगेन मनसा मरुता सह ॥
सूचिवद्गुणमादायं प्रजत्यूर्ध्व सुषुम्नया ।
उद्घाटयेत्कपाट तु यथा कुन्चिकया हठात् ॥
कुण्डलिन्या तथा योगी मोक्षद्वार विभेदयेत् ॥

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

–ध्यानबिन्दुपनिषद

जिस मार्ग से ब्रह्मस्थान तक सुगमता से जाया जा सकता है, उस मार्ग का द्वार परमेश्वरी कुण्डलिनी अपने मुँह से ढके सोयी हुई है । अग्नि तथा मनप्रेरित प्राणवायु के सम्मिलित योग से वह जागृत होती है और जैसे सुई के साथ धागा जाता है, उसी प्रकार प्राणवायु के साथ वह कुण्डलिनी सुषुम्ना पथ से ऊपर जाती है । जैसे कुन्जी से हठात द्वार खोल दिया जाता है, वैसे ही योगी कुण्डलिनी शक्ति से मोक्षद्वार को भेदते हैं ।

ज्वलनाघातपवना थादोरुन्निद्रितोऽहितोऽहिराट् ।
ब्रह्मग्रन्थि ततो भित्वा विष्णुग्रन्थि भिनत्यतः ।
रूद्रग्रन्थि च भित्वैव कमलानि भिनति षट ।
सहस्रकमले शक्तिः शिवेन सह मोदते ॥
सैवावस्था परा ज्ञेवा सैव निर्वृतिकारणा ॥

–योगकुंडल्युपनिषद्

अग्नि और प्राणवायु दोनों के आघात से सुप्ता कुण्डलिनी जाग पड़ती है और ब्रह्मग्रन्थि, विष्णुग्रन्थि, रुद्रग्रन्थि तथा षट्चक्र का भेदन करती हुई सहस्रार कमल में जा पहुँचती है । वहाँ यह शक्ति शिव के साथ मिल कर आनंद की स्थिति में निवास करती है । वही श्रेष्ठ परा स्थिति है । यही मोक्ष का कारण है ।

प्राण स्थानं ततोवह्निः प्राणापानौ च सत्वरम् ।
मिलित्वा कुण्डली याति प्रसुप्ता कुण्डलाकृतिः ।
तेनाग्नाच संतृप्ता पवने परिचालिता ।
प्रसाय स्व शरीरे तु सुषुम्नावदनान्तरे ।

–योग कुण्डल्युपनिषद

प्राण और अपान के संयोग से महाअग्नि दीप्तवान होती है और कुण्डलिनी जगती है । प्राणवायु में तीव्रता आने से वह अग्नि भी तीव्र होती जाती है और अपना क्षेत्र विस्तार करती है ।

ततो वह्नि प्रतापेन प्राणसंघर्षणेन च ।
दंडाहता भुजंगीव कुण्डली संप्रबुध्यते ॥

–योगरसायनम्

अग्नि के ताप तथा प्राण के संघर्षण से उत्पन्न ऊर्जा से कुण्डली प्रबुद्ध होकर वैसे ही सीधी हो जाती है जैसे दण्ड से आहत सर्पिणी ।

तदानिल शिखा दीर्घा जायते वायुनाहता ।
तेन कुण्डलिनी सुप्ता संतप्ता सप्रबुध्यते ।

–हठयोग प्रदीपिका

प्राणवायु के प्रहार से अग्नि शिखा प्रदीप्त होती है और उसकी गर्मी से प्रसुप्त कुण्डलिनी जाग पड़ती है ।

सूर्यविधन प्राणायाम द्वारा अग्नि उत्पन्न करने के जिन उपकरणों से रगड़ उत्पन्न करनी पड़ती है, वे इड़ा और पिंगला नामक दो प्राण प्रवाह हैं । जो सुषुम्ना के मेरुदण्ड के मध्य में रहते हैं । सामान्यतया उनकी गतिशीलता इतनी ही रहती है कि शरीर निर्वाह के लिए जितनी आवश्यक है उतनी ऊर्जा उत्पन्न होती रहे । अधिक मात्रा में प्राण उत्पादन अभीष्ट हो तो इन प्रवाहों को अधिक सक्रिय करना पड़ता है । मन्दी आग पर कुछ पकाना हो तो चूल्हे में सामान्य गर्मी बनाये रखने से काम चल जाता है, किन्तु यदि खौलाने योग्य ताप की आवश्यकता हो तो अधिक ईंधन डालने तथा हवा धोंकने का प्रबन्ध करना पड़ता है । इस प्रयोजन के लिए इड़ा और पिंगला को अधिक गतिशीली बनाने के लिए सूर्यवेधन प्राणायाम का आश्रय लिया जाता है । इड़ा, पिंगला का महत्व बताते हुए कहा गया है ।

शक्तिरूपः स्थितश्चन्द्रो वामनाड़ी प्रवाहकः ।
दक्षनाड़ी प्रवाहश्च शम्भुरूपो दिवाकरः ॥

–शिव स्वरोदय

वाम नाड़ी का प्रवाह करने वाला चन्द्रमा शक्तिरूप से और दक्षिण नाड़ी का प्रवाहक सूर्य शिव रूप से स्थित रहता है ।

मेरोर्बाह्यप्रदेशे शशिमिहिरशिरे सव्यदक्षे निषण्णे मध्ये नाड़ी सुषुम्ना त्रितयगुणमयी चन्द्रसूर्याग्निरूपा ।
धुस्तूरस्मेरपुष्पप्रन्थिततमवपुः कन्दमध्याच्छिरःस्था वज्राख्या मेद्रदेशाच्छिरसि परिगता मध्यमेऽस्या ज्ज्वलन्ती ॥

–षट्चक्र निरूपणम्–२

मेरुदण्ड के बाहर बायीं ओर चन्द्रमा के प्रकाश के समान इड़ा नाड़ी, सूर्य के प्रकाश के समान पिंगला नाड़ी है । इड़ा से शक्ति रूप और पिंगला से शिव रूप

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का बोध होता है। मेरुदण्ड के भीतर अग्नि रूप सुषुम्ना है। भू मध्य भाग में इन तीनों का संगम होता है। यह तीनों नाड़ियाँ जननेन्द्रिय मूल में स्थित धतूरे के पुष्प के समान कन्द से उत्पन्न होकर ऊपर मस्तक तक जाती हैं।

प्राणायाम में श्वास को खीचना फेंकना भर ही नहीं होता वरन् उसके आवागमन की गति को नियन्त्रित रखना होता है। उनकी चाल एक जैसी रहनी चाहिए। कुम्भक के प्रहार रुकने का समय और वापसी की प्रवाह प्रक्रिया इन सब में समय एवं गति की क्रमबद्धता बनी रहनी आवश्यक है। अस्त-व्यस्तता से अनियमितता और नियंत्रण न रहने से प्राण योग का आधार ही नष्ट हो जाता है और वह मात्र गहरी साँस लेने की (डीप ब्रीडिंग की) सामान्य व्यायाम परिपाटी मात्र बन कर स्वल्प फलदायक रह जाती है।

तात्विकी प्राणायामों में श्वास क्रिया की एक सुनिश्चित क्रम व्यवस्था बना कर उसमें 'ताल' उत्पन्न किया जाता है। संगीत शास्त्र के जानकार समझते हैं कि 'ताल' किसे कहते हैं ? उसके आधार पर ही ताल वाद्य बजाने की शिक्षा दी जाती है और स्वर लहरी का सौन्दर्य निखरता है। ताल का ज्ञान न होने पर ढोलक, तबला, मजीरा, करताल आदि बजाये जायें तो उससे कर्ण कटु कर्कशता ही उत्पन्न होगी और सुनने वालों के कानों को अखरेगी। महत्वपूर्ण उद्देश्यों के लिए की गई प्राण योग की साधना में जहाँ श्रद्धा विश्वास भरी संकल्प शक्ति का समावेश करना है। वहाँ उसकी ताल बद्धता का अभ्यास करना भी आवश्यक होता है।

ताल से कितनी प्रचण्ड शक्ति उत्पन्न होती है, उसे विज्ञानवेत्ता भली प्रकार जानते हैं। पुलों पर से सेना को लेफ्टराइट करते हुए नहीं निकलने दिया जाता है। उन पर से गुजरते हुए वे चाल को अस्त-व्यस्त रखते हैं। तालबद्ध कदम पड़ने से उत्पन्न सूक्ष्म तरंगें पुल में दरारें डाल सकती हैं। एक भारी गार्डर छत में लटका दिया जाय और उस पर कार्क जैसी हल्की वस्तु के ताल बद्ध आघात पड़ते रहने की यान्त्रिक व्यवस्था कर दी जाय तो उन स्वल्प आघातों से भी उत्पन्न प्रचण्ड शक्ति के फलस्वरूप गार्डर में थरथराहट दृष्टिगोचर होने लगेगी।

एक नियत गति से काँच के गिलास के पास ध्वनि की जाय तो वह उन आघातों से टूट जायगा। संगीत का शारीरिक और मानसिक प्रभाव होता है, उसका स्वास्थ्य सम्वर्धन के लिए-रोग निवारण के लिए सफल प्रयोग हो रहा है। पशुओं का दूध और पक्षियों की प्रजनन क्षमता बढ़ाने में क्रमबद्ध संगीत के लाभ देखे गये हैं। पेड़-पौधों को कृषि उपज को बढ़ाने में भी संगीत का उत्साहवर्धक उपयोग होता है।

'स्टोन हैव्स' से पुराने अवशेष में यह विशेषता है कि मध्यम स्वर लहरी के ध्वनि प्रवाह से काँपने लगते हैं। अस्तु उस क्षेत्र में न केवल बजाना वरन् गाना भी मना है। चेतावनी के रूप में वहाँ यह सूचना टँगी है कि तालबद्धता इन अवशेषों को गिरा सकती है, इसलिए यहाँ वैसा कुछ न किया जाय।

लोम-विलोम प्राणायाम क्रम में यह ताल प्रक्रिया विशेष रूप से उत्पन्न होती है। एक ही क्रम बना रहने से घुमावदार 'सर्किट' बनता है पर उलट-पुलट का क्रम दुहराने से 'ताल की उत्पति' होती है। सूर्यवेधन प्राणायाम में तालबद्धता का उत्पन्न करना स्थूल शरीर गत ऊर्जा को एकत्रित, प्रज्वलित और प्रखर बनाता है। संकल्प शक्ति के आधार पर खींचा हुआ दिव्य प्राण आत्म-प्राण की मूलाधार स्थिति को प्रज्वलित करता है। इसी आधार पर प्रसुप्ति जागृति में परिणित होती है और साधक को आत्म-सत्ता के अन्तर्गत दिव्य ऊर्जा का अभिवर्धन दृष्टिगोचर होता है। योग शास्त्र में दिव्य प्राण को देवता-कुण्डलिनी अग्नि को दिव्य अग्नि कहा गया है और उसके जागरण से अनेकों दिव्य लाभ मिलने की बात कही गई है-

अपश्यं गोपामनिपद्यमान-
माच परा च पथिभिश्चरन्तम्।
स सध्रीचीः स विषूचीर्वसान
आवरीवर्ति भुवनेष्वन्तः॥

-ऐतरेय आरण्यक

मैंने प्राण को देखा है-साक्षात्कार किया है। यह प्राण सब इन्द्रियों का गोप (रक्षक) है। यह कभी नष्ट नहीं होने वाला है। यह भिन्न-भिन्न मार्गों अर्थात् नाड़ियों के द्वारा आता और जाता है मुख तथा नासिका के द्वारा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

क्षण-क्षण में इस शरीर में आता है तथा फिर बाहर चला जाता है। यह प्राण शरीर में अध्यात्म रूप में- वायु के रूप में है, परन्तु वस्तुतः वह आधिदेव रूप में सूर्य है।

ब्रह्मादयोऽपि त्रिदशाः पवनाभ्यासतत्पराः।
अभूवन्नन्त कभया तस्मात्पवनमभ्यसेत्॥

-योग सन्ध्या पृ. ६२

ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि भी सदा प्राणवायु के द्वारा ही कार्य करते हैं। इसलिए इस वायु को संयमित करने का अभ्यास करना ही चाहिए।

जागृत प्राण ऊर्जा स्थूल शरीर एवं सूक्ष्म शरीर के जिस भी भाग में पहुँचती है वहीं की प्रसुप्ति दिव्य सामर्थ्य सजग एवं सक्रिय होने लगती है। कुण्डलिनी का प्रभाव एवं प्रकाश पहुँचने से जो विभूतियाँ उभरती हैं उनका उल्लेख कुण्डलिनी स्तवन के रूप में इस प्रकार किया गया है-

हृत्पद्मस्था प्राण शक्तिः कण्ठस्था स्वप्न नायिका।
तालुस्था त्वं सदा धारा विन्दुस्था विन्दु मालिनी॥
मूले त्वं कुण्डली शक्तिर्व्यापिनी केश मूलगा॥

हृदय चक्र में प्राण शक्ति, कण्ठ चक्र में दिव्य दृष्टि, तालु में धारणा, बिन्दु में बिन्दु मालिनी, केश मूल में व्यापिनी और मूलाधार चक्र में तुम्हीं कुण्डलिनी शक्ति हो।

कीर्ति कान्तिश्च नैरुज्यं सर्वेषां प्रियतां व्रजेत्।
विख्यातं चपि लोकेषु मुक्त्वःन्ते मोक्ष माप्नुयात्॥

उस महा शक्ति की कृपा से कीर्ति, क्रान्ति आरोग्य, लोक प्रियता, सत्कार आदि मिलते हैं और अन्त में मोक्ष लाभ होता है।

कुण्डलिनी योग और अजपा गायत्री

कुण्डलिनी साधना गायत्री महाविद्या के अन्तर्गत एक आत्मशक्ति सम्वर्धक प्रयोग है। अस्तु उसे गायत्री विज्ञान के अन्तर्गत एक विशेष विधान के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

गायत्री एक स्वरूप जप परक है, जिसके आधार पर नित्य जप, अनुष्ठान, पुरश्चरण आदि के विधान सम्पन्न किये जाते हैं। इसक दूसरा स्वरूप है- 'अजपा' अजपा अर्थात् वह जप जो बिना प्रयत्न के अनायास ही होता रहता हो। योगियों का मत है कि जीवात्मा अचेतन अवस्था में अनायास ही इस जप प्रक्रिया में निरत रहता है। यह अजपा गायत्री है- 'सोहम्' की ध्वनि जो श्वास-प्रश्वास के साथ-साथ स्वयमेव होती रहती है। इसी को प्रयत्नपूर्वक विधि-विधान सहित किया जाय तो वह प्रयास हंस योग कहलाता है। हंस योग के अभ्यास का असाधारण महत्व है। उसे कुण्डलिनी जागरण साधना का तो एक अंग ही माना गया है।

विभर्ति कुण्डली शक्ति रात्मानं हंसयाश्रिता

-तन्त्रसार

कुण्डलिनी शक्ति आत्म क्षेत्र में हंसारूढ़ होकर विचरती है।

गायत्री का वाहन हंस कहा गया है। यह पक्षी विशेष न होकर हंस योग ही समझा जाना चाहिए। यों हंस पक्षी में भी स्वच्छ धवलता-नीर क्षीर विवेक-मुक्तक आहार विशेषताओं की ओर इंगित करते हुए निर्मल जीवन सत असत् निर्धारण एवं नीति युक्त उपलब्धियों को ही अंगीकार किया जाना जैसी उत्कृष्टताओं का प्रतीक माना गया है। किन्तु तात्विक दृष्टि से गायत्री का हंस वाहिनी होना उसकी प्राप्ति के लिए हंस योग की सोहम् की साधना का निर्देश माना जाना ही उचित है।

देहो देवालयः प्रोक्तो जीवो नाम सदा शिवः।
त्यजेद ज्ञानं निर्माल्यं सोहं भावेन पूजयेत॥

-प्रपंच तन्त्र.

देह देवालय है। इसमें जीव रूप में शिव विराजमान हैं। इसकी पूजा वस्तुओं से नहीं सोहम् साधना से करनी चाहिए।

अन्तःकरण में हंस वृत्ति की स्थापना की यह साधना अजपा गायत्री भी कही जाती है।

अजपा गायत्री का महत्व बताते हुए शास्त्रकार कहते हैं-

अजपा नाम गायत्री ब्रह्मविष्णुमहेश्वरी।
अजपां जपते यस्तां पुनर्जन्म न विद्यते॥

-अग्नि पुंराण.

अजपा गायत्री ब्रह्मा, विष्णु रुद्र की शक्तियों से परिपूर्ण है। इसका जप करने वाले का पुनर्जन्म नहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

होता है ।

अजपा नाम गायत्री योगिनां मोक्षदायिनी ।
अस्याः संकल्पमात्रेण सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥

– गोरक्षसंहिता

इसका नाम 'अजपा' गायत्री है, जो कि योगियों के लिए मोक्ष को देने वाली है । इसके संकल्प मात्र से सब पापों से छुटकारा हो जाता है ।

अनया सदृशी विद्या अनया सदृशो जपः ।
अनया सदृश ज्ञानं न भूतं न भविष्यति ॥

–गोरक्षसंहिता.

इसके समान न कोई विद्या है न इसके समान कोई ज्ञान ही भूत भविष्य काल में हो सकता है ।

अजपा नाम गायत्री योगिनां मोक्षदा सदा ॥

शिव स्वरोदय.

अजपा गायत्री योगियों के लिये मोक्ष देने वाली है।

श्वास लेते समय 'सो' ध्वनि का और छोड़ते समय 'हम' ध्यान के प्रवाह को सूक्ष्म श्रवण शक्ति के सहारे अन्तः भूमिका में अनुभव करना–यही है संक्षेप में 'सोऽहम्' साधना ।

वायु जब छोटे छिद्र में होकर वेगपूर्वक निकलती है तो घर्षण के कारण ध्वनि प्रवाह उत्पन्न होता है । बाँसुरी से स्वर लहरी निकलने का यही आधार है । जंगलों में जहाँ बाँस बहुत उगे होते हैं वहाँ अक्सर बाँसुरी जैसी ध्वनियाँ सुनने को मिलती हैं । कारण कि बाँसों में कहीं–कहीं कीड़े छेद कर देते हैं और उन छेदों से जब हवा वेगपूर्वक टकराती है तो उसमें उत्पन्न स्वर प्रवाह सुनने को मिलता है । वृक्षों से टकरा कर जब द्रुत गति से हवा चलती है, तब भी सनसनाहट सुनाई पड़ती है । यह वायु के घर्षण की ही प्रतिक्रिया है ।

नासिका छिद्र भी बाँसुरी के छिद्रों की तरह है । उनकी सीमित परिधि में होकर जब वायु भीतर प्रवेश करेगी तो वहाँ स्वभावतः ध्वनि उत्पन्न होगी । साधारण श्वांस प्रश्वास के समय भी वह उत्पन्न होती है, पर इतनी धीमी रहती है कि कानों के छिद्र उन्हें सरलतापूर्वक नहीं सुन सकते । प्राणयोग की साधना में गहरे श्वासोच्छ्वास लेने पड़ते हैं । प्राणायाम का मूल स्वरूप ही यह है कि श्वास जितनी अधिक गहरी, जितनी मन्दगति से ली जा सके, लेनी चाहिए और फिर कुछ समय भीतर रोक कर धीरे–धीरे उस वायु को पूरी तरह खाली कर देना चाहिए । गहरी और पूरी साँस लेने से स्वभावतः नासिका छिद्रों से टकरा कर उत्पन्न होने वाला ध्वनि प्रवाह और भी अधिक तीव्र हो जाता है । इतने पर भी वह ऐसा नहीं बन पाता कि खुले कानों से उसे सुना जा सके । कर्णेन्द्रियों की सूक्ष्म चेतना में ही उसे अनुभव किया जा सकता है ।

चित्त को श्वसन क्रिया पर एकाग्र करना चाहिए । और भावना को इस स्तर की बनाना चाहिए कि उससे श्वास लेते समय 'सो' शब्द के ध्वनि प्रवाह की मन्द अनुभूति होने लगे । उसी प्रकार जब साँस छोड़ना पड़े तो यह मान्यता परिपक्व करनी चाहिए कि 'हम' ध्वनि प्रवाह विनिसृत हो रहा है । आरम्भ में कुछ समय यह अनुभूति उतनी स्पष्ट नहीं होती, किन्तु क्रम और प्रयास जारी रखने पर कुछ ही समय उपरान्त इस प्रकार का ध्वनि प्रवाह अनुभव में आने लगता है और उसे सुनने में न केवल चित्त ही एकाग्र होता है, वरन् आनंद का अनुभव होता है ।

'सो' का तात्पर्य परमात्मा और हम का जीव चेतना समझा जाना चाहिए । निखिल विश्व ब्रह्माण्ड में संव्याप्त महाप्राण नासिका द्वारा हमारे शरीर में प्रवेश करता है और अंग–प्रत्यंग में जीवकोश तथा नाड़ी तन्तु में प्रवेश करके उसको अपने सम्पर्क संसर्ग का लाभ प्रदान कराता है । यह अनुभूति 'सो' शब्द ध्वनि के साथ अनुभूति भूमिका में उतरनी चाहिए और 'हम' शब्द के साथ जीव भाव द्वारा इस काय कलेवर पर से अपना कब्जा छोड़ कर चले जाने की मान्यता प्रगाढ़ की जानी चाहिए ।

प्रकारान्तर से परमात्मा, सत्ता का अपने शरीर और मनःक्षेत्र पर आधिपत्य स्थापित हो जाने की ही यह धारणा है । जीव भाव अर्थात् स्वार्थवादी संकीर्णता, काम, क्रोध, लोभ, मोह भरी मद मत्सरता–अपने को शरीर या मन के रूप में अनुभव करते रहने वाली आत्मा भी दिग्भ्रान्त स्थिति का नाम ही जीव भूमिका है । इस भ्रम जंजाल भरे जीव भाव को हटा दिया जाय तो फिर अपना विशुद्ध अस्तित्व ईश्वर के अविनाशी अंश आत्मा के रूप में ही शेष रह जाता है । काय कलेवर के कण–कण पर परमात्मा के शासन की स्थापना और जीव धारणा की वेदखली यही है सोऽहम् साधना का तत्वज्ञान । श्वांस

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रश्वास क्रिया के माध्यम से–सो और हम् ध्वनि के सहारे इसी भाव चेतना को जागृत किया जाता है कि अपना स्वरूप ही बदल रहा है अब शरीर और मन पर से लोभ–मोह का वासना–तृष्णा का आधिपत्य समाप्त हो रहा है। और उसके स्थान पर उत्कृष्ट चिन्तन एवं आदर्श कतृत्व के रूप में ब्रह्मसत्ता की स्थापना हो रहीं हैं। शासन परिवर्तन जैसी राज्यक्रान्ति जैसी यह भाव भूमिका है जिसमें अनाधिकारी अनाचारी शासनसत्ता का तख्ता उलट कर उस स्थान पर सत्य, न्याय और प्रेम संविधान वाली धर्मसत्ता का राज्याभिषेक किया जाता है। सोऽहम् साधना इसी अनुभूति स्तर को क्रमशः प्रगाढ़ करती चली जाती है। और अन्तःकरण यह अनुभव करने लगता है कि अब उस पर असुरता का नियंत्रण नहीं रहा उसका समग्र संचालन देवसत्ता द्वारा किया जा रहा है।

श्वास ध्वनि ग्रहण करते समय 'सो' निकालते समय 'हम' की धारण में लगने चाहिए। प्रयत्न करना चाहिए कि इन शब्दों के आरम्भ में अति मन्द स्तर की होने वाली अनुभूति में क्रमशः प्रखरता आती चली जाय। चिन्तन का सवरूप यह होना चाहिए कि साँस में घुले हुए भगवान् अपनी समस्त विभूतियों और विशेषताओं के साथ काय कलेवर में भीतर प्रवेश कर रहे हैं। यह प्रवेश मात्र आवागमन नहीं है। वरन् प्रत्येक अवयव पर संधन आधिपत्य बन रहा है। एक एक करके शरीर के भीतरी प्रमुख अंगों के चित्र की कल्पना करनी चाहिए और अनुभव करना चाहिए कि उसमें भगवान् की सत्ता चिरस्थायी रूप से वमाविष्ट हो गई। हृदय, फुफ्फुस, आमाशय, आँतें गुर्दे जिगर, तिल्ली आदि में भगवान का प्रवेश हो गया। रक्त के साथ प्रत्येक नस नाड़ी और कोशिकाओं पर भगवान ने अपना शासन स्थापित कर लिया।

बाह्य अंगों ने पाँच ज्ञानेन्द्रियों और पाँच ज्ञानेन्द्रियों ने भगवान के अनुशासन में रहना और उनका निर्देश पालन करना स्वीकार कर लिया। जीभ वही बोलेगी जो ईश्वरीय प्रयोजनों की पूर्ति में सहायक हो। देखना, सुनना, बोलना, चलना आदि इन्द्रियजन्य गतिविधियाँ दिव्य निर्देशों का ही अनुगमन करेगी। जननेद्रिय का उपयोग वासना के लिए नही मात्र ईश्वरीय प्रयोजनो के लिए अनिवार्य आवश्यकता का धर्म संकट सामने आ खड़ा होने पर ही किया जायेगा। हाथ–पाँव मानवोचित् कर्तव्य पालन के अतिरिक्त ऐसा कुछ न करेंगे जो ईश्वरीय सत्ता को कलंकित करता हो। मस्तिष्क ऐसा कुछ न सोचेगा जिसे उच्च आदर्शों के प्रतिकूल ठहराया जा सके। बुद्धि कोई अनुचित न्याय विरुद्ध एवं अदूरदर्शी अविवेक भरा निर्णय न करेगी। चित्त में अवांछनीय एवं निकृष्ट स्तरीय आकांक्षाएँ न जमने पायेंगी। अहंता का स्तर नर कीटक जैसा नहीं नर नारायण जैसा होगा।

यही हैं वे भावनाऐं जो शरीर और मन पर भगवान के शासन स्थापित होने के तथ्य को यथार्थ सिद्ध कर सकती है यह सब उथली कल्पनाओं की तरह मनोविनोद भर नहीं रह जाना चाहिए। वरन् उसकी आस्था इतनी प्रगाढ़ होनी चाहिए कि इस भाव परिवर्तन को क्रिया रूप में परिणत हुए बिना चैन ही न पड़े। सार्थकता उन्हीं विचारों की है जो क्रिया रूप में परिणत होने की प्रखरता से भरे हों। सोहम् साधना के पूर्वार्ध में अपने काय कलेवर पर श्वसन क्रिया के साथ प्रविष्ट हुए महाप्राण की–परब्रह्म की सत्ता स्थापना का इतना गहन चिन्तन करना पड़ता है कि यह कल्पना स्तर की बात के न रह कर एक व्यावहारिक यथार्थता के, प्रत्यक्ष तथ्य के–जीववद रूप में प्रस्तुत दृष्टिगोचर होने लगे।

इस साधना का उतरार्ध पाप निष्कासन का है। शरीर में से अवांछनीय इन्द्रिय लिप्साओं का आलस्य प्रमाद जैसी दुष्कृतियों का मन से लोभ, मोह जैसी तृष्णाओं का–अन्तस्तल से जीव भावी अहन्ता का–निवारण निराकरण हो रहा है। ऐसी भावनाऐं अत्यन्त प्रगाढ़ होनी चाहिए। दुर्भावनाऐं और दृष्कृतियाँ–निष्कृष्टतायें और दृष्टतायें क्षुद्रतायें और हीनताएँ सभी निरस्त हो रही हैं–सभी पलायन कर रही हैं यह तय हर घड़ी सामने खड़ा दीखना चाहिए। अनुपयुक्तताओं के निरस्त होने कक उपरान्त जो हलकापन, जो सन्तोष जो उल्लास स्वभावतः होता है और निरन्तर बना रहता है उसी का प्रत्यक्ष अनुभव होना ही चाहिए। तभी यह कहा जा सकेगा कि सोऽहम् साधना का उतरार्ध भी एक तथ्य बन गया।

सोऽहम् साधना के पूर्व भाग में श्वांस लेते समय 'सो' ध्वनि के साथ जीवन सत्ता पर उस परब्रह्म परमात्मा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

कहा शासन–आधिपत्य स्थापित होने की स्वीकृति है । उत्तरार्ध में 'हम' को– अहंता को–विसर्जित करने का भाव है । साँस निकली साथ–साथ अहम् भाव का भी निष्कासन हुआ । अहंता ही लोभ और मोह की जननी है । शरीराध्यास में जीव उसी की प्रबलता के कारण डूबता है । माया, अज्ञान, अन्धकार, बन्धन आदि की भ्रान्तियाँ एवं विपतियाँ इस अहंता के कारण ही उत्पन्न होती हैं । इसे विसर्जित कर देने पर ही भगवान का अन्तःक्षेत्र में प्रवेश करना–निवास करना सम्भव होता है ।

इस छोटे से मानवी अन्तःकरण में दो के निवास की गुंजाइश नहीं है । पूरी तरह एक ही रह सकता है । दोनों रहे तो लड़ते झगड़ते रहते हैं और अन्तर्द्वन्द की खींचतान चलती रहती है । भगवान को बहिष्कृत करके पूरी तरह 'अहमन्यता' को प्रबल बना लिया जाय तो मनुष्य दृष्ट–दुर्बुद्धि क्रूर–कर्मा असुर बनता है । अपनी कामनाएँ–भौतिक महत्वाकाँक्षाएँ ऐषणाएँ समाप्त करके ईश्वरीय निर्देशों पर चलने का संकल्प ही आत्म समर्पण है । यही शरणागति है । यही ब्राह्मी स्थिति है ।इसे प्राप्त होते ही मनुष्य में देवत्व का उदय होता है ।तब ईश्वरीय अनुभूतियाँ चिन्तन में उत्कृष्टता और व्यवहार मे आदर्शवादिता भर देती हैं । ऐसे ही व्यक्ति महामानव ऋषि, देवता एवं अवतार के नाम से पुकारे जाते हैं । 'सो' में भगवान का शासन आत्म–सत्ता पर स्थापित करने और 'हम्' में अहंता का विसर्जन करने का भाव है । प्रकारान्तर से इसे महान् परिवर्तन का आन्तरिक कायाकल्प का बीजारोपण कह सकते हैं । सोहम् साधना का यही है भावनात्मक एवं व्यावहारिक स्वरूप ।

ईश्वर जीव को ऊँचा उठाना चाहता है जीव ईश्वर को नीचे गिराना चाहता है । अस्तु दोनों के बीच रस्सा कशी चलती और खींचतान होती रहती है । न ईश्वर श्रेष्ठ जीवन क्रम देखे बिना सन्तुष्ट होता है और न अपनी न्याय–निष्ठा, कर्म–व्यवस्था तथाकथित पूजा पाठ के कारण छोड़ने को तैयार होता है । वह अपनी जगह अडिग रहता है और भक्त को तरह–तरह के उलाहने देने, शिकायतें करने, लांछन लगाने की स्थिति बनी ही रहती है । भक्त ईश्वर को अपने इशारे पर नचाना भर चाहता है । उससे उचित अनुचित मनोकामनाएँ पूरी कराने की पात्रता–कुपात्रता परखने की आदत छोड़ देने का आग्रह करता रहता है । दोनों अपनी जगह पर अडिग रहें–दोनों की दिशाएँ एक दूसरे की इच्छा से प्रतिकूल बनी रहें तो फिर एकता कैसे हो सामीप्य सान्निध्य कैसे सधे ? ईश्वर प्राप्ति की आशा कैसे पूर्ण हो?

इस कठिनाई का समाधान 'सोहम्' साधना के साथ जुड़े हुए तत्वज्ञान में सन्निहित है । दोनों एक–दूसरे से गुंथ जाय–परस्पर विलीनीकरण हो जाय । भक्त अपने आपको अन्तःकरण आकांक्षा एवं अस्तित्व को पूरा तरह समर्पित कर दे और उसी के दिव्य संकेतों पर अपनी दिशा धाराओं का निर्धारण करे । इस स्थिति की प्रतिक्रिया द्वैत की समाप्ति और अद्वैत की प्राप्ति के रूप में होती है । जीव ने ब्रह्म को समर्पण किया है । ब्रह्म की सत्ता स्वभावतः जीवधारी में अवतरित हुई दृष्टिगोचर होने लगेगी । समर्पण एक पक्ष से आरम्भ तो होता है पर उसकी परिणति उभयपक्षीय एकता में होती है । यही प्रेम योग का रहस्य है । यही भक्त के भगवान बनने का तत्त्वज्ञान है । ईंधन जब अग्नि को समर्पण करता है तो वह भी ईंधन न रहकर आग बन जाता है । बूँद जब समुद्र में विलीन होती है तो उसकी तुच्छता असीम विशालता में परिणत हो जाती है । नमक और पानी–दूध और चीनी जब मिलते हैं तो दोनों की पृथकता समाप्त होकर सघन एकता बनकर उभरती है । यही है वेदान्त अनुमोदित जीवन लक्ष्य की पूर्ति–परम पद की प्राप्ति । इसी स्थिति को अद्वैत कहते हैं । शिवोहम्–सच्चिदानन्दोहम्– तत्त्वमसि– अयमात्मा ब्रह्म की अनुभूति इसी सर्वोत्कृष्ट अन्तः स्थिति पर पहुँचे हुए साधक को होती है । इसी को ईश्वर प्राप्ति, आत्म साक्षात्कार एवं ब्रह्म निर्वाण आदि नामों से पूर्णता के रूप में कहा गया है ।

ऊर्ध्वगमन का अभ्यास शक्ति चालनी मुद्रा द्वारा

शक्ति चालनी मुद्रा द्वारा मूलाधार से प्रसुप्त कुण्डलिनी को जागृत करके ऊर्ध्वगामी बनाया जाता है । कुण्डलिनी महाशक्ति की सामान्य प्रवृत्ति अधोगामी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रहती है । रतिक्रिया में उसका स्खलन होता रहता है । शरीर यात्रा की मल-मूत्र विसर्जन प्रक्रिया भी स्वभावतः अधोगामी है । शुक्र का क्षरण भी इसी दिशा में होता है । इस प्रकार यह सारा संस्थान अधोगामी प्रवृत्तियों में संलग्न रहता है ।

कुण्डलिनी शक्ति के जागरण और उत्थान के लिए इस क्षेत्र को ऊर्ध्वगामी बनने का अभ्यास कराया जाता है । ताकि अभीष्ट उद्देश्य की सफलता में सहायता मिल सके । गुदा मार्ग को ऊर्ध्वगामी अभ्यास कराने के लिए हठयोग में 'वस्ति क्रिया' है । उसमें गुदा द्वार जल को ऊपर खीचा जाता है । फिर संचित मल को बाहर निकाला जाता है । इसी क्रिया को 'वस्ति' कहते हैं । इसी प्रकार मूत्र मार्ग से जल ऊपर खींचने और फिर विसर्जित करने की क्रिया 'वज्रोली' कहलाती है । वास्ति और वज्रोली दोनों का ही उद्देश्य इन विसर्जन छिद्रों को अधोमुखी अभ्यासों के साथ ही ऊर्ध्वगामी बनने का प्रशिक्षण दिया जाता है । इन अभ्यासों से कुण्डलिनी को ऊर्ध्वगामी बनाने में सहायता मिलती है ।

वास्ति और वज्रोली काफी कठिन है हठयोग की साधनाएँ सर्वसुलभ नहीं हैं । उन्हें विशेष मार्ग-दर्शन से विशेष व्यक्ति ही कर सकते हैं । उन अभ्यासों में समय भी बहुत लगता है और भूल होने पर संकट उत्पन्न होने का खतरा भी रहता है । अस्तु सर्वजनीन सरलीकरण का ध्यान रखते हुए 'शक्तिचालनी मुद्रा' को उपयुक्त समझा गया है ।

शक्ति चालनी मुद्रा में गुदा और मूत्र संस्थान को संकल्प बल के सहारे संकोचन कराया जाता है । संकोचन का तात्पर्य है उनकी बर्हिमुखी एवं अधोगामी आदत को अर्न्तमुखी एवं ऊर्ध्वगामी बनाने के लिए प्रशिक्षित करना । इसके लिए दोनों ही इन्द्रियों का-उसके सुविस्तृत क्षेत्र का संकोचन कराया जाता है । कभी-कभी मुँह से हवा खींची जाती है, पानी पिया जाता है । इसमें मुख को खींचने की क्रिया करनी पड़ती है । पिचकारी में पानी भरते समय भी ऐसा ही होता है । मल और मूत्र छिद्रों से ऐसा ही वायु खींचने का, छोड़ने का, खींचने छोड़ने का प्राणायाम जैसा अभ्यास करना संक्षेप में शक्तिचालनी मुद्रा का प्रयोग है ।

इस प्रयोग का पूर्वार्ध मूलबंध कहलाता है । मूलबन्ध में मात्र संकोचन भर होता है । जितनी देर मल-मूत्र छिद्रों को सिकोड़ा जाता रहेगा । उतनी देर मूलबन्ध की स्थिति मानी जायगी । यह एक पक्ष है । आधा अभ्यास है । इसमें पूर्णता समग्रता तब आती है जब प्राणायाम की तरह खींचने छोड़ने के दोनों ही अंग पूरे होने लगें । जब संकोचन-विसर्जन, का-खींचने ढीला करने, खीचेन ढीला करने का-उभय पक्षीय अभ्यास चल पड़े तो समझना चाहिए शक्ति चालनी मुद्रा का अभ्यास हो रहा है ।

कमर से नीचे के भाग में अपान वायु रहता है । उसे ऊपर रहने वाली प्राणवायु के साथ जोड़ा जाता है । यह पूर्वार्थ हुआ । उतरार्ध में ऊपर के प्राण को नीचे के अपान के साथ जोड़ा जाता है । यह प्राण अपान के संयोग की 'योग शास्त्रों' में बहुत महिमा गाई है-यही मूलबन्ध है । इस साधना की महिमा बताते हुए कहा गया है-

आकुंचनेन तं प्राहुर्मूलबंधोऽयमुच्यते ।
अपानश्चोर्ध्वगो भूत्वा वन्हिना सह गच्छति ॥

योग कुण्डल्योपनिषद.

मूलबन्ध के अभ्यास से अधोगामी अपान को बलात् ऊर्ध्वगामी बनाया जाय, इससे वह प्रदीप्त होकर अग्नि के साथ-साथ ही ऊपर चढ़ता है ।

अभ्यासाद् बन्धनस्यास्य मरुत्सिद्धिर्भवेद् ध्रुवम् ।
साधयेद् यत्नतो तर्हि मौनी तु विजितालसः ॥

(घेरण्डसंहिता ३/७७)

मूलबन्ध के अभ्यास से मरुत् सिद्धि होती है अर्थात् शरीरस्थ वायु पर नियंत्रण होता है । अतः आलस्य विहीन होकर मौन रहते हुए इसका अभ्यास करना चाहिए ।

प्राणापानौ नादबिन्दु मूलबन्धेन चैकताम् ।
गत्वा योगस्य संसिद्धिं यच्छतो नात्र संशयः ॥

-हठयोग प्रदीपिका

प्राण और अपान का समागम नाद बिन्दु की साधना तथा मूलबन्ध का समन्वय, यह कर लेने पर निश्चित रूप से योग की सिद्धि होती है ।

अपान प्राणयो रैक्यं क्षयोमूल पुरीष्योः ।
युवाभवति वृद्धोऽपि सतनं मूलबन्धनात ॥

-हठयोग प्रदीपिका.

निरन्तर मूलबन्ध का अभ्यास करने से प्राण और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपान के समन्वय से–अनावश्यक मल नष्ट होते हैं और वृद्धता भी यौवन में बदलती है ।

विलं प्रविष्टेव तर्तो ब्रह्मास्त्यंतरं ब्रजेत ।
तस्मान्नित्यं मूलबंधः कर्तव्यो योगिभिः सदा ॥

–हठयोग प्रदीपिका.

मूलबन्ध से कुण्डलिनी का प्रवेश ब्रह्म नाड़ी–सुषुम्ना में होता है । इसलिए योगी जन नित्य ही मूलबन्ध का अभ्यास करें ।

सिद्धये सर्वं भूतानि विश्वाधिष्ठानमद्वयम् ।
यस्मिनं सिद्धिं गताः निद्यास्तासिद्धासनमुच्यते ॥
यन्मूलं सर्वलोकानां यन्मूलं चित्तबन्धनम् ।
मूलबन्धः सदा सेव्यो गोग्योउसौ ब्रह्मवादिनाम् ॥

तेजाबिन्दु.

जो सर्वलोकों का मूल है । जो चित्त निरोध का मूल है, सो यह आत्मा ही ब्रह्मवादियों को सदा सेवन करना चाहिए । यही मूलबन्ध है । अन्यजुदा संकोचन रूप मूलबन्ध जिज्ञासुओं के लिए सेव्य नहीं है ।

विलं प्रविष्टे ततो ब्रह्मनाडयन्तरं ब्रजेत् ।
तस्मा न्नित्यं मूलबंधः कर्तव्यो योगिभिः सदा ॥

–हठयोग प्रदीपिका ३/६६

फिर जिस प्रकार सर्पिणी बिल में प्रविष्ट होती है, उसी प्रकार यह उद्दीप्त कुण्डलिनी ब्रह्मनाड़ी में प्रविष्ट होती है । इसीलिए योगियों को सदा ही मूलबन्ध का अभ्यास करना चाहिए ।

मूलबन्ध एवं शक्तिचालिनी मुद्रा को विशिष्ट प्राणायाम कहा जा सकता है । सामान्य प्राणायाम में नासिका से साँस खींचकर प्राण प्रवाह को नीचे मूलाधार तक ले जाने और फिर ऊपर की ओर उसे वापस लाकर नासिका द्वार से निकालते हैं । यही प्राण संचरण की क्रिया जब अधोभाग के माध्यम से की जाती है तो मूलबन्ध कहलाती है । नासिका का तो स्वभाव साँसे लेते और छोड़ते रहना है । अतः उसके साथ प्राण संचार का क्रम सुविधापूर्वक चल पड़ता है । गुदा अथवा उपस्थ इन्द्रियों द्वारा वायु खींचने जैसी कोई क्रिया नहीं होती अतः उस क्षेत्र के स्नायु संस्थान पर खिंचाव पैदा करके सीधे ही प्राण संचार का अभ्यास करना पड़ता है । प्रारम्भ में थोड़ा अस्वाभाविक लगता है, किन्तु क्रमशः अभ्यास में आ जाता है ।

मूलबन्ध में सुखासन (सामान्य पालथी मार कर बैठना), पद्मासन (पैरों पर पैर चढ़ाकर बैठना), सिद्धासन (मल–मूत्र छिद्रों के मध्य भाग पर ऐड़ी का दबाव डालना) इनमें से किसी का भी प्रयोग किया जा सकता है ।

मल द्वार को धीरे–धीरे सिकोड़ा जाय और ऐसा प्रयत्न किया जाय कि उस मार्ग से वायु खींचने के लिए संकोचन क्रिया की जा रही है । मल का वेग अत्यधिक हो और तत्काल शौच जाने का अवसर न हो तो उसे रोकने के लिए मल मार्ग को सिकोड़ने और ऊपर खींचने जैसी चेष्टा करनी पड़ती है । ऐसा ही मूलबन्ध में भी किया जाता है । मल द्वार को ही नहीं, उस सारे क्षेत्र को सिकोड़ने का ऐसा प्रयत्न किया जाता है कि मानो वायु अथवा जल को उस छिद्र से खींच रहे हैं । वज्रोली क्रिया में मूत्र मार्ग से पिचकारी की तरह जल ऊपर खींचने और फिर निकाल देने का अभ्यास किया जाता है । मूलबन्ध में जल आदि खींचने की बात तो नहीं है, पर संकल्प बल से गुदा द्वार ही नहीं, मूत्र छिद्र से भी वायु खींचने जैसा प्रयत्न किया जाता है और उस सारे क्षेत्र को ऊपर खींचने का प्रयास चलता है गुदा मार्ग से वायु खींचकर नाभि से ऊपर तक घसीट ले जाने की चेष्टा आरम्भिक है । कुछ अधिक समय तक रुकना सम्भव होता है, तो अपान को नाभि से ऊपर हृदय तक पहुँचाने का प्रयत्न किया जाता है । यह खींचने का ऊपर ले जाने का पूर्वार्ध हुआ ।

उतरार्ध में प्राणवायु को नाभि से नीचे की ओर लाया जाता है और अपान अपनी जगह आ जाता है इसका व्यावहारिक स्वरूप यह है कि खींचनें सिकोड़ने की क्रिया को ढीला छोड़ने, नीचे उतारने, खाली करने का वैसा ही प्रयत्न किया जाता है । जैसा कि प्राणायाम में रेचन के लिए साँस छोड़ी जाती है ।

मौटे तौर से उसे गुदा मार्ग को, मूत्र मार्ग को ऊपर की ओर सिकोड़ने की–पूरा संकोचन हो जाने पर कुछ देर रोके रहने की अन्ततः उसे ढीला छोड़ देने की गुदा मार्ग से होने वाली प्राणायाम क्रिया कहा जा सकता है ।

स्मरण रहे कि यह क्रिया वायु संचार की नहीं, प्राण संचार की है । नासिका द्वारा तो वायु संचार क्रम चलता ही रहता है अतः उसके साथी प्राण प्रक्रिया जोड़ने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में कठिनाई नहीं होती । मूलाधार क्षेत्र में श्वास लेने जैसा अभ्यास किसी इन्द्रिय को नहीं है, किन्तु प्राण संचार की क्षमता उस क्षेत्र में ऊर्ध्वभाग से किसी भी प्रकार कम नहीं । मूलबंध द्वारा प्राणको ऊर्ध्वगामी बनाना प्रथम चरण है । दूसरे चरण में शक्ति चालनी मुद्रा के अभ्यास से प्राण, पान आदि शरीरस्थ प्राणों को इच्छानुसार समुचित अनुपात में एक–दूसरे से जोड़ा, मिलाया जाना सम्भव होता है । ऐसा करने से शरीरस्थ पंच प्राण महाप्राण से सम्बद्ध हो जाते हैं ।

गीता में योग साधक द्वारा प्राण को अपान में तथा अपान को प्राण में होमने का उल्लेख इसी दृष्टि से किया गया है । यथाः–

अपाने जुह्वति प्राणः प्राणोऽपान तथा परे ।
प्राणवान गतिं रूद्धवा प्राणायाम परायणाः ॥

अर्थात्–कोई साधक अपान में प्राण को आहूति देते हैं, कुछ प्राण में अपान को होमते हैं । प्राण और अपान की गति नियंत्रित करके साधाक प्राणायाम परायण होता है ।

नासिका द्वारा प्राण संचार करके उसे मूलाधार तक ले जाना प्राण को अपान में होमना है, और मूलबन्ध एवं शक्तिचालिनी मुद्रा आदि द्वारा 'अपान' का उत्थान करके उसे प्राण से मिलाना–अपान को प्राण में होमना कहा जाता है । प्राण और अपान दोनों की ही सामान्य गति को नियंत्रित करके उसे उच्च लक्ष्यों की ओर प्रेरित करना ही प्राणायाम का उद्देश्य है ।

शक्ति चालनी मुद्रा का महत्व एवं लाभ योग शास्त्रों में इस प्रकार बताया गया है–

शक्तिचालनमेवं हि प्रत्यहं यः समाचारेत् ।
आयुर्वृद्धिर्भहवेतस्य रोगाणां च विनाशनम् ॥

–शिवसंहिता

शक्तिचालिनी मुद्रा का प्रतिदिन जो अभ्यास करता है, उसकी आयु में वृद्धि होती है और रोगों का नाश होता है ।

कुण्डली कुटिलाकारा सर्पवत परिकीर्तिता ।
सा शक्तिश्चालिता येन स युक्तो नात्र सशयः ॥

–हठयोग प्रदीपिका

कुण्डलिनी सर्पिणी की तरह कुटिल है, उसे शक्ति चालनी मुद्रा द्वारा जो चलायमान कर लेता है, वही योगी है ।

शक्ति चालन की महत्ता में जो कुछ कहा गया है वह अतिशयोक्ति नहीं । यह विज्ञान सम्मत है । शक्ति कहीं से आती नहीं, सुप्त से जागृत, जड़ से चलायमान हो जाना ही शक्ति का विकास कहा जाता है । बिजली के जैनरेटर में बिजली कहीं से आती नहीं है । चुम्बकीय क्षेत्र में सुक्वायल घुमाने से उसके अन्दर के इलैक्ट्रान विशेष दिशा में चल पड़ते हैं । यह चलने की प्रवृत्ति विद्युत सद्राहक शक्ति (ई. एम. एफ.) के रूप में देखी जाती है । शरीरस्थ विद्युत को भीं इसी प्रकार दिशा विशेष में प्रवाहित किया जा सके तो शरीर संस्थान एक सशक्त जैनरेटर की तरह सक्षम एवं समर्थ बन सकता है । योग साधनाएँ इसी उद्देश्य की पूर्ति करती हैं ।

कुण्डलिनी जागरण एवं नाद साधना

कुण्डलिनी साधना की एक प्रक्रिया ध्यान–योग, दूसरी प्राण–योग है, तो लययोग भी उसकी एक प्रक्रिया है । लययोग द्वारा कुण्डलिनी साधना का आधार नाद धारणा है ।

नाद द्विविध हैं–आहत एवं अनाहत । दोनों ही नादों का उद्गम स्रोत कुण्डली या कुण्डलिनी शक्ति ही मानी गयी है ।

वाक्योच्चारण की सम्पूर्ण प्रक्रिया आहत–नाद की प्रक्रिया है । इसके चार भेद हैं– परा, पश्यन्ती, मध्यमा एवं वैखरी । वाक्योच्चारण–चेष्टा में मूलाधार में परा नामक सूक्ष्म क्रिया होती है । श्वास–प्रश्वास में गुह्यदेश में जो आकुन्चन–चेष्टा होती है, वही शब्दोच्चारण की मूल क्रिया है । नाद की वह चेष्टा परा वाक्–शक्ति द्वारा होती है । इसके उपरान्त स्वाधिष्ठान में नाद–शक्ति का पश्यन्ती रूप सक्रिय रहता है । उदर–संकोचन की नाभिदेशीय क्रिया इसकी चेष्टा है । अनाहद चक्र में मध्यमा नादशक्ति की प्रतिष्ठा मानी गयी है । इसकी चेष्टा है फुम्फुसों का संकोचन । तदुपरांत कण्ठ–तालु आदि की क्रियाओं के द्वारा वैखरी वाणी या श्रव्य वाक्य प्रकट होते हैं । ये सब कुण्डली शक्ति की ही क्रियाएँ हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

इसीलिए 'षट्-चक्र-निरूपण' ग्रन्थ में कहा है-

"कला कुण्डलिनी चैव, नाद शक्ति समन्विता ॥"

अर्थात्-कला-कुण्डलिनी, नाद-शक्ति से संयुक्त है ।

अनाहत-नाद वह है जो किसी भी भौतिक द्रव्य के कम्पनों के बिना उत्पन्न हो । ये सूक्ष्म शब्द प्रवाह हैं, जो चेतना की सृष्टि व्यापी सक्रियता से समुद्भुत होते रहते हैं । इन नादों को सुनने की क्षमता विकसित कर अभ्यास द्वारा चित्रवृत्ति को उसी नाद-प्रवाह में विलीन करना ही लययोग है । इसी लय-योग की साधना को नाद-साधना कहा जाता है । लय योग की पूर्णता है परमात्म सत्ता में आत्मसत्ता का सम्पूर्ण विलीनीकरण । मूल नाद प्रसार या ॐ में चित्त को समाहित करना ही नाद-साधना या लययोग की प्रक्रिया का चरम विकास है और परमात्म सत्ता में आत्मसत्ता का विलय विकास उसकी ही परिणति है ।

कुण्डलिनी-जागरण की प्रक्रिया में अनाहत नाद की साधना इस प्रकार की जाती है कि मूरुदण्ड में नीचे से ऊपर तक एक नाद धारा उठ रही है प्रयत्न पूर्वक इसकी अनुभूति करनी चाहिए ।

" स्वात्मेच्छा शक्तिद्योतन प्राणवायु स्वरूपतः ।
मूलाधारे समुत्पन्नः पराख्योनाद उतमः ॥
स एव चोर्ध्वतांनीतः स्वाधिष्ठान विजृस्मितः ।
पश्यन्त्याख्यमवाप्नोति तथैवोर्ध्व शनैः-शनै ॥
अनाहतो बुद्धितत्वसमेतो मध्यमाभिवः ।
तथा तयोसर्ध्वगतो विशुद्धौ कठदेशतः ।
वैखरर्य्यास्ततः कण्ठशीर्षतालवजोपठ दन्तमः ॥"

अर्थात् अपनी इच्छा शक्ति के आघात से मूलाधार में प्राण वायु जो ध्वनि उत्पन्न करती है, वह परा नाद है । उसे ही ऊपर खींचे जाने पर स्वाधिष्ठान में वह पश्यन्ती अनाहत में बुद्धि तत्व से मिलकर मध्यमा तथा विशुद्ध चक्र में बैखरी का रूप लेकर कण्ठ, शीर्ष, तालु ओष्ठ दंत आदि द्वारा बाहर निकलती है । इस नाद शक्ति के प्रवाह में 'हम' शब्द अथवा अन्य किसी नाद की अनुभूति का अभ्यास करना चाहिए

हूँकारेणैव देवीं,...अभ्यासशीलः सुशीलः ।

(षटचक्र निरूपण)

सम्पूर्ण शरीर में ऊर्ध्वगामी ध्वनिधारा के रूप में अनुभूत अनाहत नाद की अभ्यास साधना करनी चाहिए । यह नाद क्रमशः ऊपर उठ रहा है और मस्तक में सहस्रार क्षेत्र में पहुँचकर वहाँ हजारों गुना गुंजित हो रहा है । उस दिव्य गुञ्जार में ही चित्तवृत्ति को लय करने का निरन्तर अभ्यास करना चाहिए ।

सहस्रार में वह घनीभूत नाद ही बिन्दु या ज्योति के रूप में परिणत होता है

"नाद एवं घनीभूतः क्वचिदम्येति विन्दुताम् ।"

अर्थात् घनीभूत नाद बिन्दुता प्राप्त करता है । यह बिन्दु ही देश व्याप्तिहीन शब्द तन्मात्र है ।

" कुण्ड़ाल्यव भवेच्छक्तिस्तां तु संचालयेत बुधः
स्वस्थानादाम्बु-वोर्मध्यं शक्तिचालनमुच्यते ॥"

(योग कुण्डल्युपनिषद)

अर्थात् बुद्धिमान साधक कुंडलीभूत शक्ति को संचालित करे । मूलाधार से स्फूर्ति तरंग उठकर भ्रूमध्य में पहुँचे और दिव्य नाद की अनुभूति कराने लगे, तभी कुण्डलिनी शक्ति जागृत-संचालित समझना चाहिए ।

नाद योग के द्वारा सुनी जाने वाली दिव्य ध्वनियाँ अनाहत हैं, क्योंकि वे अनन्त अंतरिक्ष में स्वतः विनिःसृत होती रहती हैं । इन्हीं चेतन, दिव्य-अलौकिक, अतीन्द्रिय ध्वनियों को देववाणी कहते हैं जो विकिरण-ऊर्जाओं के स्तर पर गतिशील रहती हैं ।

नादयोग चंचल मन के निग्रह एवं प्राणों के विरोध में उसी प्रकार सफल सिद्ध होता है, जिस प्रकार सपेरा, विषधर चपल सर्प को पकड़ने में । इस अभ्यास से चित्त वृत्ति नाद-अभ्यास में लीन होने लगती है और सारी चपलताएँ भूल जाती हैं । इससे चित्त में प्रशांत भाव प्रबल होता है और वासना की मादकता से विरक्ति हो जाती है ।

"बद्धः सुनाद गन्धेन सघः संत्यक्त चापलम् ।
नाद ग्रहणतश्चितमन्तरंग भुजंगम् ॥
विस्मृत्य विश्वमेकाग्र कुत्रचिन्नहि धावति ।
मन्दोन्मत गजेन्द्रस्य विषयोद्यानचारिणः ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(नाद-बिन्दु उपनिषद्)

अर्थात संपेरी की बीन से सुध-बुध खो देने वाले सर्प की तरह नाद-साधना में चित्त स्थिर हो जाता है और अपनी चपलताएँ भूल जाता है । वह कहीं दौड़ता भागता नहीं । विषय-वासनाओं के उद्यान में मदोन्मत गजेन्द्र की तरह विचरण करने वाले मन के नियमन में यह नाद का अंकुश ही समर्थ है ।

कानों के छिद्र बन्द कर नाद प्रवाह की अनुभूति करनी चाहिए । अभ्यास वश जब साधना परिपक्व होने लगती हैं, तो विभिन्न ध्वनियों की अनुभूति होती है-

शंखध्वनि निमिश्चादौ, मध्ये मेघध्वनि तथा ।
शिरोमध्यगते वापौ गिरिप्रसुवणं यथा ॥
पश्चात्प्रीतो महाप्राजः साक्षादात्मोन्मुखो भवेत् ॥

(जावाल दर्शनोवनिषद्)

अर्थात् प्रारम्भ में शंखध्वनि जैसी सुनायी पड़ती है । फिर मेघध्वनि जैसा मन्द-गम्भीर स्वर सुनाई पड़ता है । शिर में उस प्रवाह के पहुँचने पर लगता है मानों पहाड़ से कोई झरना कल-कल नाद करता झर रहा है । अंत में अत्यन्त प्रसन्नता की दिव्यानुभूति होती है और साधक आत्मतत्व की ओर उन्मुख हो जाता है । अखण्ड ज्योति के फरवरी ८० के अंक में ही एक लेख गया है । जिसमें यह बताया गया है कि निसर्ग में यह ध्वनियाँ पहले से ही विद्यमान हैं केवल अन्तः श्रवण खोलने भर की बात है उन्हें कोई भी सुन सकता है ।

शिव पुराण के अनुसार नादयोग में ये नौ ध्वनियाँ सुनाई पड़ती हैं-(१) समुद्र गर्जन जैसा घोष, (२) कांसे के बर्तन पर चोट से होने वाली झनझनाहट, (३) तुरही बजने जैसी आवाज, (४) घटानाद, (५) वीणाध्वनि, (६) वंशी ध्वनि, (७) नगाड़े जैसी ध्वनि, (८)शंख ध्वनि, (९)मेघ गर्जना । सर्वोपरि ध्वनि है ॐकार ।

यों नादयोग में सुनायी पड़ने वाली ध्वनियां नानारूप होती हैं । प्रारम्भ में ये भावोत्कर्ष में सहायक होती हैं । साधना के परिपक्व होने पर वे सुविस्तृत अंतरिक्ष में संव्याप्त हलचलों के संकेत प्रगट करती हैं । इन सूत्र संकेतों के सहारे परमोत्म सत्ता के शक्ति स्रोतों से आदान-प्रदान होता है । उच्चस्तरीय चेतन जगत की हलचलों का ज्ञान विभिन्न अतीन्द्रिय बोधों का आधार बनता है । इनका अनुभव एवं अर्थ बोध साधक के परिपक्व स्तर पर निर्भर करता है । परिपक्व साधक उसके द्वारा सूक्ष्म जगत में घट रही और भविष्य में व्यक्त होने वाली घटनाओं की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं । तब संकल्प शक्ति के नियोजन द्वारा किसी भी व्यक्ति, क्षेत्र, देश या लोक की सही स्थिति का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है । यह सब ध्वनियाँ सूक्ष्म कर्णेन्द्रिय में ही सुनी जाती हैं और अतिचेतन मस्तिष्क द्वारा ही समझी जाती हैं. चेतना स्तर के विकास के बिना आरम्भिक साधक इनके सही अर्थ नहीं समझ सकते । बिना समर्थ मार्गदर्शन के इन साधनाओं में समुचित प्रगति सम्भव नहीं है ।

विचार-संचालन-विद्या के ज्ञाताओं को यह तथ्य विदित है कि भावनात्मक उतार-चढ़ावों के अनुसार मस्तिष्क से भिन्न-भिन्न ध्वनि-प्रवाह प्रसारित होते हैं । उन्हें सुनने की जिनमें सामर्थ्य हैं, वे मौन रहकर ही अन्तःकरण में दूसरों की बात का अनुभव कर लेते हैं । इसी प्रकार दूसरों तक अपनी बात बिना कुछ बोले पहुँचायी भी जाती है । यह सब साधनात्मक पुरुषार्थ के बिना सम्भव नहीं । प्रारम्भिक ध्वनि-संकेतों को सुनकर उनसे मनमाने अर्थ निकालकर स्वयं की अतीन्द्रिय सामर्थ्य सम्पन्न मान लेने से भटकाव एवं पतन की ही सम्भावना रहती है, क्योंकि सामान्यतः शरीर में रक्त-प्रवाह की सीटी ध्वनि में पाचन रसों की चट-पट आवाज, हड्डियों की तीखी, बारीक कड़कड़ाहट आदि उत्पन्न ही होती रहती है । कानों के बाहरी छेद बंद कर थोड़ा ध्यान से सुनने का अभ्यास करने पर वे सुनायी दे सकती हैं, । इन्हें ही दैवी सिद्धियों के संकेत समझ लेने से हानि ही होगी । दिव्य संकेत स्थूल कर्णेन्द्रियों से नहीं, सूक्ष्म कर्णेन्द्रियों से ही सुने जा सकते हैं ।

नाद का घनीभूत बिन्दुरूप ही साध्य है । तन्त्र में उस बिन्दुत्व की प्राप्ति को ही शिवशक्तियाँ कहा जाता है । नाद श्रवण की परिपूर्णता अनाहत ओंकार ध्वनि की अनुभूति है । वही सहस्रार की जागरण, आनन्द, उल्लास के अनन्त प्रस्फुटन की स्थिति है । परमसत्ता की प्रतीक ध्वनि प्रणव से पूर्ण तादात्म्य ही नाद-साधना की सर्वोच्च निष्पति है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गायत्री द्वारा कुण्डलिनी जागरण

शरीर में अनेक साधारण और अनेक असाधारण अंग हैं । असाधारण अंग जिन्हें 'मर्म स्थान' भी कहते हैं । केवल इसीलिए 'मर्म स्थान' नहीं कहे जाते कि वे बहुत सुकोमल एवं उपयोगी होते हैं वरन् इसलिए भी कहे जाते हैं कि इनके भीतर गुप्त आध्यात्मिक शक्तियों के महत्त्वपूर्ण केन्द्र होते हैं । इन केन्द्रों में वे बीज सुरक्षित रूप से रखे रहते हैं जिनका उत्कर्ष, जागरण हो जाय तो मनुष्य कुछ से कुछ बन सकता है । उसमें आत्मिक शक्तियों के स्रोत उमड़ सकते हैं और उस उभार के फलस्वरूप वह ऐसी अलौकिक शक्तियों का भण्डार बन सकता है, जो साधारण लोगों के लिए "अलौकिक आश्चर्य" से कम प्रतीत नहीं होता ।

ऐसे मर्मस्थलों में मेरुदण्ड का, रीढ़ की हड्डी का प्रमुख स्थान है । वह शरीर की आधारशिला है । यह मेरुदण्ड छोटे-छोटे तेतीस अस्थिखण्डों से मिलकर बना है । इस प्रत्येक खंड में तत्त्वदर्शियों को ऐसी विशेष शक्तियाँ परिलक्षित होती हैं, जिनका सम्बन्ध दैवी शक्तियों से है । देवताओं में जिन शक्तियों का केन्द्र होता है वे शक्तियाँ भिन्न-भिन्न रूप से मेरुदण्ड के इन अस्थि खण्डों में पाई जाती हैं, इसलिए यह निष्कर्ष निकाला गया है कि मेरुदण्ड तेतीस देवताओं का प्रतिनिधित्व करता है । आठ वसु, बाहर आदित्य, ग्यारह रुद्र, इन्द्र और प्रजापति इन तेतीसों की शक्तियाँ उसमें बीज रूप से उपस्थित रहती हैं ।

इस पोले मेरुदण्ड में शरीर विज्ञान के अनुसार अनेक नाड़ियाँ हैं और वे विविध कार्यों में नियोजित रहती हैं । आध्यात्म विज्ञान के अनुसार उसमें तीन प्रमुख नाड़ियाँ हैं- (१) इड़ा, (२) पिंगला, (३) सुषुम्ना । यह तीन नाड़ियाँ मेरुदण्ड को चीरने पर प्रत्यक्ष रूप में आँखों द्वारा नहीं देखी जा सकतीं, इनका सम्बन्ध सूक्ष्म जगत से है । यह एक प्रकार का विद्युत प्रवाह है, जैसे बिजली से चलने वाले यंत्रों में नैगेटिव और पोजीटिव, ऋण और धन धाराएँ दौड़ती हैं और उन दोनों का जहाँ मिलन होता है, वहीं शक्ति पैदा हो जाती है । इसी प्रकार इड़ा को नैगेटिव, पिंगला को पोजीटिव कह सकते हैं । इड़ा को चन्द्रनाड़ी और पिंगला को सूर्य-नाड़ी भी कहते हैं । मोटे शब्दों में इन्हें ठण्डी और गरम धाराएँ कहा जा सकता है । दोनों के मिलने से जो तीसरी शक्ति उत्पन्न होती है, उसे सुषुम्ना कहते हैं । प्रयाग में गंगा और यमुना मिलती हैं । इस मिलन से एक तीसरी सूक्ष्म सरिता और विनिर्मित होती है जिसे सरस्वती कहते हैं । इस प्रकार दो नदियों से त्रिवेणी बन जाती हैं । मेरुदण्ड के अन्तर्गत भी ऐसी आध्यात्मिक त्रिवेणी है । इड़ा, पिंगला की दो धाराएँ मिलकर सुषुम्ना की सृष्टि करती हैं और एक पूर्ण त्रिवर्ग बन जाता है ।

यह त्रिवेणी ऊपर मस्तिष्क के मध्य केन्द्र से ब्रह्मरन्ध्र से-सहस्रार कमल से-सम्बन्धित है और नीचे मेरुदण्ड का जहाँ नुकीला अन्त है, वहाँ लिंग मूल और गुदा के बीच के 'सीवन' स्थान की सीध में पहुँचकर रुक जाती है, वह इस त्रिवेणी का आदि अन्त है ।

सुषुम्ना नाड़ी के भीतर एक और त्रिवर्ग है । उसके अन्तर्गत भी तीन अत्यन्त सूक्ष्म धाराएँ प्रभावित होती हैं, जिन्हें वज्रा, चित्रणी, और ब्रह्मनाड़ी कहते हैं । जैसे केले के तने को काटने पर उसमें एक के भीतर एक परत दिखाई पड़ती है ,वैसे ही सुषुम्ना के भीतर वज्रा है, वज्रा के भीतर चित्रणी है और चित्रणी के भीतर ब्रह्मनाड़ी है । यह ब्रह्मनाड़ी अन्य सब नाड़ियों का मर्मस्थल केन्द्र एवं शक्तिसार है । इस मर्म की सुरक्षा के लिए ही उस पर इतने परत चढ़े हुए हैं ।

यह ब्रह्मनाड़ी मस्तिष्क के केन्द्र में (ब्रह्मरन्ध्र में) पहुँचकर हजारों भागों में चारों ओर फैल जाती हैं, इसी से उस स्थान को सहस्रदल कमल कहते हैं । विष्णु जी की शय्या शेषजी के सहस्र फलों पर होने को अलंकार भी इस सहस्रदल कमल से ही लिया गया है । भगवान् बुद्ध आदि अवतारी पुरुषों के मस्तक पर एक विशेष प्रकार के गुंजलकदार बालों का अस्तित्व हम उनकी मूर्तियों अथवा चित्रों में देखते हैं । यह इस प्रकार के बाल नहीं हैं वरन् सहस्रदल कमल का कलात्मक चित्र हैं । यह सहस्रदल सूक्ष्म लोकों से, विश्वव्यापी शक्तियों से सम्बन्धित है । रेडियो-ट्रान्समीटर से ध्वनि-ग्राहक और ध्वनि विस्तारक तन्तु फैलाये जाते हैं, जिन्हें 'एरियल' कहते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं । इन तन्तुओं के द्वारा सूक्ष्म आकाश में ध्वनि को फेंका जाता है और बहती हुई तरंगों को पकड़ा जाता है । मस्तिष्क का 'एरियल' भी सहस्रार कमल है, उसके द्वारा परमात्मा सत्ता की अनन्तों शक्तियों को सूक्ष्म लोक में से पकड़ा जाता है । जैसे-भूखा अजगर जब जागृत होकर लम्बी साँस खींचता है तो आकाश में उड़ते पक्षियों को अपनी तीव्र शक्ति से जकड़ लेता है और वे मन्त्रमुग्ध की तरह खिचते हुए अजगर के मुँह में चले जाते हैं, उसी प्रकार जाग्रत हुआ सहस्रमुखी शेषनाग–सहस्राधार कमल अनन्त प्रकार की सिद्धियों को लोक–लोकान्तरों से खींच लेता है । जैसे कोई अजगर जब क्रुद्ध होकर विषैली फुँसकार मारता है तो एक सीमा तक वायुमंडल को विषैला कर देता है, उसी प्रकार जागृत हुय सहस्रार कमल द्वारा शक्तिशाली भावना–तरंगें प्रवाहित करके साधारण जीव–जन्तुओं एवं मनुष्यों को ही नहीं वरन् सूक्ष्म लोकों की आत्माओं को भी प्रभावित और आकर्षित किया जा सकता है । शक्तिशाली ट्रान्समीटर द्वारा किया हुआ अमेरिका का ब्राडकास्ट भारत में सुना जाता है । शक्तिशाली सहस्रार द्वारा निक्षेपित भावना–प्रवाह भी लोक–लोकान्तरों के सूत्रतत्वों को हिला देता है ।

अब मेरुदण्ड के नीचे के भाग को 'मूल को' लीजिये । सुषुम्ना के भीतर रहने वाली तीन नाड़ियों में सबसे सूक्ष्म ब्रह्मनाड़ी मेंरुदंड के अन्तिम भाग के समीप एक काले वर्ण के षट्कोण वाले परमाणु से लिपटकर बंध जाती है । छप्पर को मजबूत बाँधने के लिए दीवार में खूँटे गाढ़ते हैं और उन खूँटों में छप्पर से सम्बन्धित रस्सी को बाँध देते हैं । इसी प्रकार उस षट्कोण कृष्णवर्ण परमाणु से ब्रह्मनाड़ी को बाँधकर इस शरीर से प्राणों के छप्पर को जकड़ देने की व्यवस्था की गई है ।

इस कृष्णवर्ण, षट्कोण परमाणु को अलंकारिक भाषा में कूर्म कहा गया है, क्योंकि उसकी आकृति कछुए जैसी है । पृथ्वी कूर्म भगवान पर टिकी हुई है, इस अलंकार का तात्पर्य जीवन–ग्रह के उस कूर्म आधार पर टिके हुए होने से है । शेषनाग के फन पर पृथ्वी टिकी हुई है, इस उक्ति का आधार ब्रह्मनाड़ी की वह आकृति है, जिसमें वह इस कूर्म से लिपट कर बैठी हुई है और जीवन को धारण किये हुए है । यदि वह अपना आधार त्याग दे तो जीवन भूमि के चूर–चूर हो जाने में क्षण भर की भी देर न समझनी चाहिए ।

कूर्म से ब्रह्मनाड़ी के गुन्थन स्थल को आध्यात्मिक भाषा में 'कुण्डलिनी' कहते हैं । जैसे काले रंग के आदमी का नाम कलुआ भी पड़ जाता है, उसी प्रकार कुण्डलाकार बनी हुई इस आकृति को 'कुण्डलिनी' कहा जाता है । यह साढ़े तीन लपेटे उस कूर्म में लगाये हुए हैं और मुँह नीचे को है । विवाह संस्कारों में इसी की नकल करके 'भाँवरि या फेरे' होते हैं । साढ़े तीन (सुविधा की दृष्टि से चार) परिक्रमा किये जाने और मुँह नीचा रखे जाने का विधान उस कुण्डलिनी के आधार पर ही रखा गया है, क्योंकि भावी जीवन–निर्माण की व्यवस्थित आधारशिला, पति–पत्नी की कूर्म और ब्रह्मनाड़ी का मिलन वैसा ही महत्वपूर्ण है, जैसा कि शरीर प्राण को जोड़ने की कुण्डलिनी का महत्व है ।

इस कुण्डलिनी की महिमा, शक्ति और उपयोगिता इतनी अधिक है कि उसको भली प्रकार समझने में मनुष्य की बुद्धि लड़खड़ा जाती है । भौतिक विज्ञान के अन्वेषकों के लिए आज 'परमाणु' एक पहेली बना हुआ है । उसके तोड़ने की एक क्रिया मालूम हो जाने का चमत्कार दुनिया ने प्रलयंकर परमाणु बम के रूप में देख लिया है । अभी उसके अनेकों विध्वंसक और रचनात्मक पहलू बाकी हैं । सर आर्थक का कथन है कि "यदि परमाणु शक्ति का पूरा ज्ञान और उपयोग मनुष्य को मालूम हो गया तो उसके लिए कुछ भी असम्भव नहीं रहेगा ।" वह सूर्य के टुकड़े–टुकड़े करके उसे गर्द में मिला सकेगा और जो चाहेगा वह वस्तु या प्राणी मनमाने ढंग से पैदा कर लिया करेगा । ऐसे–ऐसे यन्त्र उसके पास होंगे, जिनसे सारी पृथ्वी एक मुहल्ले में रहने वाली आबादी की तरह हो जायगी । कोई व्यक्ति चाहे कहीं क्षण भर में आ जा सकेगा और चाहे जिससे चाहे जो वस्तु ले दे सकेगा तथा देश देशांतरों में स्थित लोगों से ऐसे ही घुल–घुलकर वार्तालाप कर सकेगा, जैसे दो मित्र आपस में बैठे–बैठे गप्पे लड़ाते रहते हैं । जड़ जगत में एक परमाणु की शक्ति इतनी कूती जा रही है कि उसकी महत्ता को देखकर आश्चर्य की सीमा नहीं रहती । फिर चैतन्य जगत का एक स्फुलिंग जो जड़ परमाणु की अपेक्षा अनन्त गुना शक्तिशाली है, कितना अद्‌भुत होगा इतनी तो कल्पना कर सकना भी कठिन है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

योगियों में अनेक प्रकार की अद्भुत शक्तियाँ होने के वर्णन और प्रमाण हमें मिलते हैं । योग की ऋद्धि–सिद्धियों की अनेकों गाथाएँ सुनी जाती हैं । उनसे आश्चर्य होता है और विश्वास नहीं होता कि यह कहाँ तक ठीक है । पर जो लोग विज्ञान से परिचित हैं और जड़ परमाणु तथा चैतन्य स्फुल्लिंग हैं, उनके लिए इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं, जिस प्रकार आज परमाणु की शोध में प्रत्येक देश के वैज्ञानिक व्यस्त हैं, उसी प्रकार पूर्वकाल में आध्यात्मिक विज्ञानवेताओं ने, तत्त्वदर्शी ऋषियों ने मानव–शरीर के अन्तर्गत एक बीज परमाणु की अत्यधिक शोध की थी । दो परमाणुओं को तोड़ने, मिलाने या स्थानान्तरित करने का सर्वोत्तम स्थान कुण्डलिनी केन्द्र में होता है; क्योंकि अन्य सब जगह ही चेतन्य परमाणु गोल और चिकने होते हैं, पर कुण्डलिनी में यह मिथुन लिपटा हुआ है । जैसे यूरेनियम और प्लेटीनयम धातु में परमाणुओं का गुन्थन कुछ ऐसे टेढ़े–तिरछे ढंग से होता है कि उनका तोड़ा जाना अन्य पदार्थों के परमाणुओं की अपेक्षा अधिक सरल है, उसी प्रकार कुण्डलिनी स्थित स्फुल्लिंग परमाणुओं की गतिविधि को इच्छानुकूल संचालित करना अधिक सुगम है । इसीलिए प्राचीन काल में कुण्डलिनी जागरण की उतनी ही तत्परता से शोध हुई थीं, जितनी कि आजकल परमाणु विज्ञान के बारे में हो रहीं हैं । इन शोधों परीक्षणों और प्रयोगों के फलस्वरूप उन्हें ऐसे कितने ही रहस्य भी करतलगत हुए थे, जिन्हें आज 'योग के चमत्कार' नाम से पुकारते हैं ।

मैडम ब्लेवेटस्की ने कुण्डलिनी शक्ति के बारे में काफी खोज–बीन की है । वे लिखती हैं–कुण्डलिनी विश्वव्यापी सूक्ष्म विद्युत शक्ति है, जो स्थूल बिजली की अपेक्षा कहीं अधिक शक्तिशाली है, इसकी चाल सर्प की चाल की तरह टेढ़ी है, इससे इसे सर्पाकार कहते हैं । प्रकाश एक लाख पिचासी हजार मील फी सैकेड चलता है, पर कुण्डलिनी की गति एक सैकेण्ड में ३४५००० मील है ।" पाश्चात्य वैज्ञानिक इसे 'स्प्रिट फायर' अथवा 'सरपेन्टलपावर' कहते हैं, इस सम्बन्ध में सर जोन बुडरफ ने बहुत विस्तृत विवेचन किया है ।

कुण्डलिनी को गुप्त शक्तियों की तिजोरी कहा जा सकता है ।बहूमूल्य रत्नों को रखने के लिए किसी अज्ञात स्थान में, गुप्त परिस्थितियों में तिजोरी रखी जाती है और उसमें कई ताले लगा दिये जाते हैं ताकि घर या बाहर के अनाधिकारी लोग उस खजाने में रखी हुई सम्पति को न ले सकें । परमात्मा ने हमें अनन्त शक्तियों का अक्षय भण्डार देकर उसमें छः ताले गला दिये हैं । ताले इसलिए लगा दिये कि जब पात्रता आ जाय, धन के उत्तरदायित्व को ठीक प्रकार समझने लगें तभी वह सब प्राप्त हो सके । उन छहों तालों की ताली मनुष्य को ही सौंप दी गई है ताकि वह आवश्यकता के समय तालों को खोलकर उचित लाभ उठा सके ।

यह छः ताले जो कुण्डलिनी पर लगे हुये हैं, छः चक्र कहलाते हैं । इन चक्रों का वेधन करके जीव कुण्डलिनी के समीप पहुँच सकता है और उसका यथोचित उपयोग करके जीवन, लाभ प्राप्त कर सकता है । सब लोगों की कुण्डलिनी साधारणतः अवस्था में पड़ी रहती है । पर जब उसे जगाया जाता है तो वह अपने स्थान पर से हट जाती है और उस लोक में प्रवेश कर जाने देती है जिसमें परमात्मा शक्तियों की प्राप्ति हो जाती है । बड़े–बड़े गुप्त खजाने जो प्राचीन काल से भूमि में छिपे पड़े होते हैं, उन पर सर्प की चौकीदारी पाई जाती है । खजाने के मुख पर कुण्डलीदार सर्प बैठा रहता है और चौकीदारी किया करता है । दैवलोक भी ऐसा ही खजाना है जिसके मुख पर षट्कोण कूर्म की शिला रक्खी हुई है और शिला से लिपटी हुई भयंकर सर्पिणी कुण्डलिनी बैठी है । यह सर्पिणी अधिकारी पात्र की प्रतीक्षा में बैठी होती है । जैसे ही कोई अधिकारी उसके समीप पहुँचता है । वह उसे रोकने या हानि पहुँचाने की अपेक्षा अपने स्थान से हट कर उसको रास्ता दे देती है और उसका कार्य समाप्त हो जाता है ।

मस्तिष्क के ब्रह्मरन्ध्र में बिखरे हुये सहस्रदल भी साधारणतः उसी प्रकार प्रसुप्त अवस्था में पड़े रहते हैं जैसे कि कुण्डलिनी सोया करती है । इतने बहूमूल्य यन्त्रों और कोषों के होते हुये भी मनुष्य साधारणतः बड़ा दीन, दुर्बल, तुच्छ क्षुद्र, विषय विकारों का गुलाम बनकर कीट, पतंगों जैसा जीवन व्यतीत करता रहता है और दुख–दारिद्र की दासता में बंधा हुआ फड़फड़ाता रहता है । पर जब इन यन्त्रों और रत्नागरों से परिचित होकर उनके उपयोग को जान लेता है, उन पर अधिकार कर लेता है तो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वह परमात्मा के सच्चे उत्तराधिकारी की समस्त योग्यताओं और शक्तियों से सम्पन्न हो जाता है। कुण्डलिनी जागरण से होने वाले लाभों के सम्बन्ध में योग शास्त्रों में बड़ा विस्तृत और आकर्षक वर्णन है। उन सबकी चर्चा न करके यहाँ उतना कह देना पर्याप्त होगा कि कुण्डलिनी शक्ति के जागरण से इस विश्व में जो कुछ है वह सब कुछ मिल सकता है, उसके लिए कोई वस्तु अप्राप्य नहीं रहती।

षट्चक्रों का वेधन

कुण्डलिनी के शक्ति मूल तक पहुँचने के मार्ग में छः फाटक हैं अथवा यों कहना चाहिए कि छः ताले लगे हुए हैं। यह फाटक या ताले खोलकर ही कोई जीव उस शक्ति-केन्द्र तक पहुँच सकता है। इन छः अवरोधों को आध्यात्मिक भाषा में 'षटचक्र' कहते हैं।

सुषुम्ना के अन्तर्गत रहने वाली तीन नाड़ियों में सबसे भीतर स्थित ब्रह्मनाड़ी से यह छः चक्र सम्बन्धित हैं। माला के सूत्र में पिरोये हुए कमल पुष्पों से इनकी उपमा दी जाती है। मूलाधार चक्र योनि की सीध में, स्वाधिष्ठान चक्र पेडू की सीध में, मणिपुर चक्र नाभि की सीध में, अनाहत चक्र हृदय की सीध में, विशुद्धाख्य चक्र कंठ की सीध में और आज्ञा चक्र भृकुटि मध्य में अवस्थित हैं। उनसे ऊपर सहस्रार कमल है।

सुषुम्ना तथा उसके अन्तर्गत रहने वाली चित्रणी आदि नाड़ियाँ इतनी सूक्ष्म हैं कि उन्हें साधारण नेत्रों से देख सकना कठिन है। फिर उनसे सम्बन्धित यह चक्र तो और भी सूक्ष्म है। किसी शरीर को चीड़-फाड़ करते समय इन चक्रों को नस-नाड़ियों की तरह स्पष्ट रूप से नहीं देखा जा सकता, क्योंकि हमारे चम-चक्षुओं की वीक्षण शक्ति बहुत ही सीमित है। शुद्ध की तरंगें वायु के परमाणु तथा रोगी के कीटाणु हमें आँखों से दिखाई नहीं पड़ते तो भी उनके अस्तित्व से इन्कार नहीं किया जा सकता। इन चक्रों को योगियों ने अपनी योग-दृष्टि से देखा है और उनके वैज्ञानिक परीक्षण करके महत्वपूर्ण लाभ उठाया है और उनके व्यवस्थित विज्ञान का निर्माण करके योग-मार्ग के पथिकों के लिए उसे उपस्थित किया है।

'षट्चक्र' एक प्रकार की सूक्ष्म ग्रन्थियाँ हैं जो ब्रह्मनाड़ी के मार्ग में बनी हुई हैं। इन चक्र-ग्रन्थियों में जब साधक अपने ध्यान को केन्द्रित करता है तो उसे वहाँ की सूक्ष्म स्थिति का बड़ा विचित्र अनुभव होता है। वे ग्रन्थियाँ गोल नहीं होतीं वरन् उनमें इस प्रकार कोण निकले होते हैं, जैसे पुष्प में पंखुड़ियाँ होती हैं। इन कोण या पंखुड़ियों को पद्मदल' कहते हैं। यह एक प्रकार के तन्तु गुच्छक हैं।

इन चक्रों के रंग भी विविध प्रकार के होते हैं क्योंकि किसी ग्रन्थि में कोई और किसी में कोई तत्व प्रधान होता है। इस तत्व प्रधानता का उस स्थान के रक्त पर प्रभाव पड़ता है और उसका रंग बदल जाता है। पृथ्वी तत्वों की प्रधानता का मिश्रण होने से रक्त का रंग पीला, जल के मिश्रण से गुलाबी, अग्नि से नीला, वायु से शुद्ध लाल और आकाश से धुमैला हो जाता है। यही मिश्रण चक्रों का रंग बदल देता है।

घुन नामक कीड़ा लकड़ी को काटता हुआ चलता है तो उस काटे हुए स्थान की कुछ आकृतियाँ भी बन जाती हैं। इन चक्रों में होता हुआ प्राण-वायु आता-जाता है। उसका मार्ग उस ग्रन्थि की स्थिति के अनुसार कुछ टेढ़ा-मेढ़ा होता है। इस गति की आकृति कई देवनागरी अक्षरों की आकृति से मिलती है, इसलिए वायु मार्ग को चक्रवर्हों के अक्षर कहते हैं।

द्रुतगति से बहती हुई नदी में कुछ विशेष स्थानों में भँवर पड़ जाते हैं। यह पानी के भँवर कहीं उथले, कहीं तिरछे, कहीं गोल, कहीं चौकोर हो जाते हैं। प्राण-वायु का सुषुम्ना प्रवाह इन चक्रों में होकर द्रुतगति से गुजरता है तो वहाँ एक प्रकार के सूक्ष्म भ्रमण पड़ते हैं जिनकी आकृति चतुष्कोण अर्धचन्द्राकार, त्रिकोण, षट्कोण, गोलाकार, लिंगाकार तथा पूर्ण चन्द्रकार बनती है, अग्नि जब भी जलती है उसकी लौ ऊपर को उठती है जो नीचे मोटी और ऊपर पतली होती है, इस प्रकार अव्यवस्थित त्रिकोण-सा बन जाता है। इस प्रकार की विविध आकृतियाँ वायु-प्रवाह से बनती हैं। इन आकृतियों को चक्रों के यन्त्र कहते हैं।

शरीर पंचतत्वों का बना हुआ है। इन तत्वों के न्यूनाधिक सम्मिश्रण से विविध अंग-प्रत्यंगों का निर्माण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

और उनका कार्य संचालन होता है । जिस स्थान में जिस तत्व की जितनी आवश्यकता है, उससे न्यूनाधिक हो जाने पर वह अंग रोगग्रस्त हो जाता है । तत्वों का यथास्थान, यथा मात्रा में होना ही निरोगता का चिन्ह समझा जाता है । चक्रों में भी एक-एक तत्व की प्रधानता होती है । जिस चक्र में जो तत्व प्रधान होता है वही उसका 'तत्व' कहा जाता है ।

ब्रह्मनाड़ी की पोली नली में होकर वायु का अभिगमन होता है तो चक्रों के सूक्ष्म छिद्रों के आघात से उनमें एक वैसी ही ध्वनि होती है, जैसी कि वंशी में वायु का प्रवेश होने पर छिद्रों के आघात से ध्वनि उत्पन्न होती है । हर चक्र में एक सूक्ष्म छिद्र की वंशी के स्वर छिद्र की सी प्रतिक्रिया होने के कारण स, रे, ग, म जैसे स्वरों का एक विशेष ध्वनि प्रवाह होता है, जो यँ, लँ, रँ, हँ, ॐ जैसे स्वरों में सुनाई पड़ता है । इसे चक्रों का बीज कहते हैं ।

चक्रों में वायु की चाल में भी अन्तर होता है । जैसे वात, पित्त, कफ की नाड़ी कपोत, मंडूक सर्प, कुक्कुट आदि की चाल से चलती है । उस चाल को पहचान कर वैद्य लोग अपना कार्य करते हैं । तत्वों के मिश्रण, टेढ़ा-मेढ़ा मार्ग, भ्रमर बीज आदि के समन्वय से प्रत्येक चक्र में रक्ताभिसरण और वायु अभिगमन के संयोग से एक विशेष चाल वहाँ परिलक्षित होती है । यह चाल किसी चक्र में हाथी के समान मन्दगामी, किसी में मगर की तरह डुबकी मारने वाली, किसी में हिरन की सी छलांग मारने वाली, किसी में मेढक की तरह फुदकने वाली होती है । उस चाल को चक्रों का वाहन कहते हैं ।

इन चक्रों में विविध दैवी शक्तियाँ सन्निहित हैं । उत्पादन, पोषण, संहार ज्ञान, समृद्धि, बल आदि शक्तियों को देवता विशेष की शक्ति माना गया है । अथवा यों कहिये कि यह शक्तियाँ ही देवता हैं । प्रत्येक चक्र में एक पुरुष वर्ग की उष्णवीर्य और एक स्त्री-वर्ग की शीतवीर्य शक्ति रहती है क्योंकि ऋण और धन, अग्नि और सोम दोनों तत्वों के मिले बिना गति और जीव का प्रवाह उत्पन्न नहीं होता, यह शक्तियाँ ही चक्रों के देवी-देवता हैं ।

पंच-तत्वों के अपने-अपने गुण होते हैं । पृथ्वी का गंध, जल का रस, अग्नि का रूप, वायु का स्पर्श और आकाश का शब्द गुण होता है । चक्रों में तत्वों की प्रधानता के अनुरूप उनके गुण भी प्रधानता में होते हैं । यही चक्रों के गुण हैं ।

यह चक्र अपनी सूक्ष्म शक्ति को वैसे तो समस्त शरीर में प्रवाहित करते हैं, पर एक ज्ञानेन्द्रिय और एक कर्मेन्द्रिय से उनका सम्बन्ध विशेष रूप से होता है । सम्बन्धित इन्द्रियों को वे अधिक प्रभावित करते हैं । चक्रों के जागरण के चिन्ह उन इन्द्रियों पर तुरन्त परिलक्षित होते हैं । इसी सम्बन्ध विशेष के कारण वे इन्द्रियाँ चक्रों की इन्द्रियाँ कहलाती हैं ।

देवशक्तियों मे डाकिनी, राकिनी, शाकिनी, हाकिनी आदि के विचित्र नामों को सुनकर उनके भूतिनी, चुड़ैल, मसानी जैसी कोई चीज होने का भ्रम होता है । वस्तुतः बात ऐसी नहीं है । मुख से लेकर नाभि तक चक्राकार 'अ' से लेकर 'ह' तक के समस्त अक्षरों की एक ग्रन्थि माला है, उस माला के दानों को 'मातृकाएँ' कहते हैं । इन मातृकाओं के योग दर्शन द्वारा ही ऋषियों ने देवनागरी वर्णमाला के अक्षरों की रचना की है । चक्रों के देव जिन मातृकाओं से झंकृत होते हैं, सम्बद्ध होते हैं उन्हें उन देवों को देव-शक्ति कहते हैं । ड, र, ल, श के आगे आदि मातृकाओं का बोधन 'किनी' शब्द जोड़कर राकिनी, डाकिनी नाम बना दिये गये हैं । यही देव शक्तियाँ हैं ।

उपरोक्त परिभाषाओं को समझ लेने के उपरान्त प्रत्येक चक्र की निम्न जानकारी को ठीक प्रकार समझ लेना पाठकों के लिए सुगम होगा । अब छहों चक्रों का परिचय नीचे दिया जाता है ।

मूलाधार चक्र-

स्थान-योनि (गुदा के समीप) वर्ण-लाल । लोक-भूः लोक । दलों के अक्षर-बँ, शँ, पँ, सँ । तत्व पृथ्वी । गुण तत्व लें । वाहन-ऐरावत हाथी । गुण-गंधदेव-ब्रह्मा । देव शक्ति डाकिनी । यंत्र-चतुष्कोण । ज्ञानेन्द्रिय-नासिका । कर्मेन्द्रिय-गुदा । ध्यान का फल वक्तृ, मनुष्यों में श्रेष्ठ, सर्व विद्या विनोदी, आरोग्य, आनन्द चित्त काव्य और लेखन की सामर्थ्य ।

स्वाधिष्टान चक्र-

स्थान-पेडू (शिश्न के सामने) । दल-छै । वर्ण-सिन्दूर । लोक-भुवः । दलों के अक्षर-वँ, भँ, मँ, रँ,

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लँ । तत्व–जल । तत्व बीज– बँ । बीज का वाहन–मगर । गुण–रस । देव–विष्णु । देव शक्ति–डाकिनी यंत्र–चन्द्राकार । ज्ञानेन्दिय–रसना । कर्मेन्द्रिय– लिंग । ध्यान का पल–अहंकारादि विकारों का नाश, श्रेष्ठ योग, मोह निवृत्ति, रचना शक्ति ।

मणिपूर चक्र–

स्थान–नाभि । दल–दस । वर्ण–नील । लोक–स्वः । दलों के अक्षर–उँ, ढँ, णँ, तँ, थँ, दँ, धँ, नँ, पँ, फँ । तत्व–अग्नि । तत्व बीज–रँ । बीज का वाहन–मेंढ़ा । गुण–रूप । देव–वृद्ध रुद्र । देवशक्ति–लाकिनी । यंत्र–त्रिकोण । ज्ञानेन्दिय–चक्षु । कर्मेन्द्रिय–चरण । ध्यान का फल–संहार और पालन की सामर्थ्य, वचन सिद्धि ।

अनाहत चक्र

स्थान–हृदय । दल–बारह । वर्ण–अरुण । लोक–महः । दलों के अक्षर– कँ, खँ, गँ, घँ, ङँ, चँ, छँ, जँ, झँ, टँ, ठँ । तत्व–वायु । तत्वबीज–यं । बाहन–मृग । गुण–स्पर्श । देव–ईश रुद्र । देव शक्ति–काकिनी । यंत्र–षट्कोण । ज्ञानेन्दिय–त्वचा । कर्मेन्दिय–हाथ । फल–स्वमित्व, योग सिद्धि, ज्ञान जागृति, इन्दिय जय, परकाया प्रवेश ।

विशुद्धार चक्र

स्थान–कंठ । दल–सोलह । वर्ण–धूम्र । लोक–जनः । दलों के अक्षर–अ से लेकर अः तक सोलह अक्षर । तत्व –आकाश । तत्व बीज– हँ । वाहन–हाथी । गुण–शब्द । देव–पंचमुखी सदाशिव, देवशक्ति–शाकिनी । यंत्र–शून्य (गोलाकार) । ज्ञानेन्दिय–कर्ण । कर्मेन्दिय–वाक । ध्यानफल–चित्त शान्ति, त्रिकाल दर्शित्व, दीर्घजीवन, तेजस्विता, सर्वहित परायणता ।

आज्ञाचक्र

स्थान– भ्रूमध्य । दल– दो । वर्ण–श्वेत । दलों के अक्षर–हँ क्षँ ।तत्व–मह तत्व । तत्व बीज–ॐ । बीज का वाहन–नाद । देव–ज्योतिर्लिंग । देवशक्ति–हाकिनी । यंत्र–लिंगाकार । लोक–तपः । ध्यान फल–सर्वार्थ साधन ।

षट्चक्रों में उपरोक्त छः चक्र ही आते हैं, परन्तु सहस्रार कमल या सहस्र दल पद्म को भी कोई-कोई योग सातवाँ शून्य चक्र मानते हैं । उसका भी वर्णन नीचे दिया जाता है ।

शून्य चक्र

स्थान–मस्तक । दल–सहस्र । दलों के अक्षर–अं से क्षँ तक की पुनरावृत्तियाँ । लोक सत्यः । तत्व–तत्वों से अतीत । बीज तत्व–(:) विसर्ग । बीज का वाहन –बिन्दु । देव–परब्रह्म । देव शक्ति महाशक्ति । यंत्र–पूर्ण चन्द्रवत् प्रकाश–निराकार । ध्यान फल–भक्ति, अमरता, समाधि, समस्त ऋद्धि–सिद्धियों का करतलगत होना ।

पाठक जानते हैं कि कुण्डलिनी शक्ति का स्रोत है । वह हमारे शरीर का सबसे अधिक सजीव चैतन्य स्फुलिंग है, उसमें बीज रूप से इतनी रहस्यमय शक्तियाँ गर्भित हैं जिनकी कल्पना तक नहीं हो सकती ।कुण्डलिनी शक्ति के इन छः केन्द्रों में, षट्चक्रों में भी उसका काफी प्रकाश है । जैसे सौर मण्डल में नौ ग्रह हैं, सूर्य उनका केन्द्र है और चन्द्रमा, मंगल आदि उससे सम्बन्ध होने के कारण सूर्य की परिक्रमा करते हैं । वे सूर्य की ऊष्मा, आकर्षणी, विलयिनी आदि शक्तियों से प्रभावित और ओत–प्रोत रहते हैं । वैसे ही कुण्डलिनी की शक्तियाँ चक्रों में भी प्रसारित होती रहती हैं । एक बड़ी तिजोरी में जैसे कई छोटे–छोटे दराज होते हैं, जैसे मधुमक्खी के एक बड़े छत्ते में छोटे–छोटे अनेक छिद्र होते हैं और उनमें भी कुछ अंश भरा रहता है वैसे ही कुण्डलिनी की कुछ शक्ति का प्रकाश चक्रों में भी होता है । चक्रों के जागरण के साथ–साथ उनमें सन्निहित कितनी ही रहस्यमय शक्तियाँ भी जाग पड़ती हैं । उनका संक्षिप्त या संकेत ऊपर चक्रों में ध्यान फल में बताया गया है । इनको विस्तार करके कहा जाय तो यह शक्तियाँ भी आश्चर्यों से किसी प्रकार कम प्रतीत नहीं होंगी ।

चक्रों का वेधन

षट्चक्रों का वेधन करते हुए कुण्डलिनी तक पहुँचना और उसे जागृत करके आत्मोन्नति के मार्ग में लगा देना यह एक महाविज्ञान है । ऐसा ही महा विज्ञान, जैसा कि परमाणु बम का निर्माण एवं उसका विस्फोट करना एक अत्यन्त उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य है । इसे यों ही अपने आप केवल पुस्तक पढ़कर आरम्भ नहीं कर देना चाहिये, वरन् किसी अनुभवी पथ-प्रदर्शक की संरक्षता में यह सब किया जाना चाहिए ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

चक्रों का वेधन ध्यान शक्ति के द्वारा किया जाता है । यह सभी जानते हैं कि हमारा मस्तिष्क एक प्रकार का बिजलीघर है और उस बिजलीघर की प्रमुख धारा का नाम 'मन' है । मन की गति चंचल और बहुमुखी होती है। यह हर घड़ी चंचलता, मग्न और सदा उछल–कूद में व्यस्त रहता है । इस उथल–पुथल के कारण उस विद्युत पंज का एक स्थान पर केन्द्रीकरण नहीं होता, जिससे कोई महत्वपूर्ण कार्य सम्पादन हो, इस अभाव में जीवन के क्षण यों ही अस्त–व्यस्त नष्ट होते रहते हैं । यदि उस शक्ति का एकत्रीकरण हो जाता है, उसे एक स्थान पर संचित कर लिया जाता है तो आतिषी शीशे द्वारा एकत्रित हुई सूर्य किरणों द्वारा आग की लपटें उठने लगना जैसे दृश्य उपस्थित हो जाते हैं । 'ध्यान' एक ऐसा सूक्ष्म विज्ञान है, जिसके द्वारा मन की बिखरी हुई बहुमुखी शक्तियाँ एक स्थान पर एकत्रित होकर एक कार्य में लगती हैं । फलस्वरूप वहाँ असाधारण शक्ति का स्रोत प्रवाहित हो जाता है । ध्यान द्वारा मनःक्षेत्र की केन्द्रीभूत इस बिजली से साधक षट् चक्रों का वेधन कर सकता है ।

षट् चक्र–वेधन की साधना करने के लिए अनेक ग्रन्थों में अनेक मार्ग बताये गये हैं । इसी प्रकार गुरु–परम्परा से चली आने वाली साधनाएँ भी विविध प्रकार की हैं । इन सभी मार्गों से उद्देश्य की पूर्ति हो सकती है, सफलता मिल सकती है, पर शर्त यह है कि उसे पूर्ण विश्वास, श्रद्धा निष्ठा और उचित पथ–प्रदर्शक की संरक्षता में किया जाय ।

अन्य साधनाओं की चर्चा और तुलना करके उनकी आलोचना, प्रत्यालोचना करना यहाँ हमें अभीष्ट नहीं है । इन पंक्तियों में तो हम एक ऐसी सुलभ साधना पाठकों के सामने उपस्थित करना चाहते हैं जिसके द्वारा गायत्री शक्ति से षट् चक्रों का जागरण बड़ी सुविधापूर्वक हो सकता है और अन्य साधनाओं में आने वाली असाधारण कठिनाइयों एवं खतरों से स्वतंत्र रहा जा सकता है ।

प्रातःकाल शुद्ध शरीर और स्वस्थ चित्त से सावधान होकर पद्मासन से बैठिये । पूर्ण वर्णित ब्रह्म सन्ध्या के आरम्भिक पंचकोषों की क्रिया कीजिये । आसन, शिखाबन्धन, प्राणायाम, अघमर्षण और न्यास करने के बाद गायत्री के एक सौ आठ मंत्रों की माला जपिये ।

ब्रह्म सन्ध्या कर चुकने के पश्चात् मस्तिष्क के मध्य भाग त्रिकुटी में (एक रेखा एक कान से दूसरे कान तक खींची जाय और दूसरी रेखा दोनों भोवों के मध्य में से मस्तिष्क के मध्य तक खींची जाय तो दोनों का मिलन जहाँ होता है, उस स्थान को त्रिकुटी कहते हैं) वेद माता गायत्री का ज्योति स्वरूप ध्यान रखना चाहिए । मन को उस ज्योतिलिंग के मध्य में इस प्रकार अवस्थित करना चाहिए । जैसे लुहार अपने लोहे को गरम करने के लिए भट्टी में डाल देता है और जब वह लाल हो जाता है, तो उसे बाहर निकाल कर ठोकता–पीटता और अभीष्ट वस्तु बनाता है । त्रिकुटी स्थित गायत्री ज्योति में मन को कुछ देर तक अवस्थित रखने से मन स्वयं भी तेज स्वरूप हो जाता है । तब उसे आज्ञाचक्र के स्थान में लाना चाहिये । ब्रह्मनाड़ी मेरुदण्ड से आगे बढ़कर त्रिकुटी में होती हुई सहस्रधार को गई है । इस ब्रह्मनाड़ी की पोली नली में दीप्तिमान मन को प्रवेश करके आज्ञाचक्र में ले जाया जाता है । वहाँ स्थिरता करने पर वे सब अनुभव होते हैं, जो चक्र के लक्षणों में वर्णित हैं । मन को चक्र के दलों का, अक्षरों का, तत्व का, बीज का, देवशक्ति का, यन्त्र का, लोक का, वाहन का, गुण का, रंग का अनुभव होता है । आरम्भ में अनुभव बहुत अधूरे होते हैं । चक्र के कुछ लक्षण स्पष्ट, कुछ अस्पष्ट और कुछ विकृत परिलक्षित होते हैं । धीरे–धीरे वे अधिक स्पष्ट होते जाते हैं, कभी–कभी किन्हीं व्यक्तियों के चक्रों में कुछ लक्षण भेद भी होता है । उसे अपने अन्दर के चक्र की आकृति का अनुभव होगा ।

स्वस्थ चित्त से, सावधान होकर, एक मास तक एक ही साधना करने से वह प्रस्फुटित हो जाती है । ध्यान में उसके लक्षण अधिक स्पष्ट होने लगते हैं और चक्र के स्थान पर उससे सम्बन्धित मातृकाओं, ज्ञानेन्द्रियों और कर्मेन्द्रियों में अचानक कंपन, रोमांच प्रस्फुरण, उत्तेजना, दाद, खुजली, जैसे अनुभव होते हैं । यह इस बात के चिन्ह हैं कि चक्रों का जागरण हो रहा है । एक मास या न्यूनाधिक काल में इस प्रकार के चिन्ह प्रकट होने लगें, ध्यान में चक्र का रूप स्पष्ट होने लगे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तो उससे आगे बढ़कर इससे नीचे की ओर दूसरे चक्र मेंप्रवेश करना चाहिए । विधि वही है–मार्ग वही है । गायत्री ज्योति में मन को तपाकर ब्रह्मनाड़ी में प्रवेश करना और उसमें होकर पहले चक्र में जाना–फिर उसे पार करके दूसरे में जाना–इस प्रकार प्रत्येक चक्र में लगभग एक मास का समय लगता है । जब साधना एक हो जाती है, तो एक चक्र से दूसरे चक्र में जाने का द्वार खुल जाता है । जब तक साधन कच्चा रहता है, तब तक द्वार रुका रहता है । साधक का मन आगे बढ़ना चाहे तो भी द्वार नहीं मिलता और यह उसी चक्र के तन्तु जाल की भूल–भुलैयों में उलझा रह जाता है ।

जब साधना देर तक नहीं पकती और साधक को आगे का मार्ग नहीं मिलता तो उसे अनुभवी गुरु की सहायता की आवश्यकता होती है, वह जैसा उपाय बतावे वैसे उसे करना होता है । इसी प्रकार धीरे–धीरे क्रमशः छहों चक्रों को पार करता हुआ साधक मूलाधार में स्थित कुण्डलिनी तक पहुँचता है और वहाँ उस ज्वालामुखी कराकाल स्वरूप, महाशक्ति–सर्पिणी के विकराल रूप का दर्शन करता है । महाकाली का प्रचंड स्वरूप यहीं दिखाई पड़ता है । कई साधक इस सोते सिंह को जगाने का साहस करते हुए काँप जाते हैं ।

कुण्डलिनी को जगाने में उसे पीड़ित करना पड़ता है, छेड़ना पड़ता है । जैसे परमाणु का विस्फोट करने के लिए उसे बीच में से तोड़ना पड़ता है । उसी प्रकार सुप्त कुण्डलिनी को गतिशील बनाने के लिए उस पर आघात करना होता है । इसे आध्यात्मिक भाषा में कुण्डलिनी पीड़न कहते हैं । इससे पीड़ित होकर क्षुब्ध कुंडलिनी फुसकराती हुई जाग पड़ती है और उसका सबसे प्रथम आक्रमण मन में लगे हुए जन्म–जन्मान्तरों के संस्कारों पर होता है । वह संस्कारों को चबा जाती है, मन की छाती पर अपने शस्त्रों सहित चढ़ बैठती है और उसकी स्थूलता, माया परायणता को नष्ट कर ब्रह्मभाव में परिणित कर देती है ।

इस कुण्डलिनी को जगाने और उसका जागने पर आक्रमण होने की क्रिया का पुराणों ने बड़े ही अलंकारिक और हृदयाग्राही रूप से वर्णन किया है ।

महिषासुर और दुर्गा का युद्ध इसी आध्यात्मिक रहस्य का प्रतीक है । अपनी युक्ति की कामना करता हुआ, देवी के हाथों मरने की कामना से उत्साहित होकर महिषासुर (महि–पृथ्वी आदि पंच भूतों से बना हुआ मन) चन्डी से, कुण्डलिनी से लड़ने जाता है । उस चुपचाप बैठी हुई पर आक्रमण करता है । देवी क्रुद्ध होकर उससे युद्ध करती है, उस पर प्रत्याक्रमण करती है । उसके वाहन महिष को, संस्कारों के समूह को चबा डालते हैं । मन के भौतिक आचरण को, महिषासुर के शरीर को, दसों भुजाओं से, दसों दिशाओं से, सब ओर से विदीर्ण कर डालती है और अन्त में महिषासुर, साधारण जीव चंडी की ज्योति में मिल जाता है । महाशक्ति का अंश होकर जीवन लाभ को प्राप्त कर लेता है । भक्तिमयी साधना का यह रौद्र रूप बड़ा विचित्र है । इसे 'साधन–समर' कहते हैं ।

जहाँ कितने ही भक्त, प्रेम और भक्ति द्वारा ब्रह्म को प्राप्त करते हैं, वहाँ ऐसे भी कितने भक्त हैं जो 'साधन–समर' में ब्रह्म से लड़कर उसे प्राप्त करते हैं । भगवान तो निष्ठा के भूखे हैं, वे सच्चे प्रेमी को भी मिल सकते हैं और सच्चे शत्रु को भी । भक्ति योगी भी उन्हें पा सकते हैं और साधन–समर में अपने दो–दो हाथ दिखाने वाले हठयोगी तन्त्र मार्गी भी उन्हें प्राप्त कर सकते हैं । कुण्डलिनी जागरण ऐसा ही हठ तन्त्र है, जिसके आधार पर आत्मा तुच्छ से महान् और अणु से विभु बनकर ईश्वरीय सर्व शक्तियों से सम्पन्न हो जाती है ।

षट् चक्र की साधना करते समय प्रतिदिन ब्रह्मनाड़ी में प्रवेश करके चक्रों का ध्यान करते हैं । यह ध्यान पाँच मिनट से आरम्भ करके तीन मिनट तक पहुँचाया जा सकता है । एक बार में इससे अधिक ध्यान करना हानिकारक है, क्योंकि अधिक ध्यान से बड़ी अधिक ऊष्मा का सहन करना कठिन हो जाता है । ध्यान समाप्त करते समय उसी मार्ग पर वापस लौटकर मन को त्रिकुटी में लाया जाता है और फिर ध्यान को समाप्त कर दिया जाता है ।

यह कहने की तो आवश्यकता ही नहीं कि साधनाकाल में ब्रह्मचर्य से रहना, एक बार भोजन करना, सात्विक खाद्य पदार्थ ग्रहण करना, एकांत सेवन करना,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

स्वस्थ वातावरण में रहना, दिनचर्या को ठीक रखना अनिवार्य है क्योंकि यह साधनाओं की प्रारम्भिक शर्तें मानी गई हैं ।

षट् चक्रों के वेधन और कुण्डलिनी के जागरण से ब्रह्मरन्ध्र में ईश्वरीय दिव्य ज्योति के दर्शन होते हैं और अनेकों गुप्त सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं ।

कुण्डलिनी जागरण की ध्यान धारणा

सविता साधना द्वारा कुण्डलिनी जागरण की संक्षिप्त प्रक्रिया इस प्रकार है–

१. ध्यान भूमिका में प्रवेश

(क) सावधान–कमर सीधी, दोनों हाथ गोद में, आँखें बन्द, स्थिर शरीर, शान्त चित्त ध्यान मुद्रा ।

(ख) दिव्य साधना लोक–गंगा की गोद, हिमालय की छाया, सप्त ऋषियों का तप स्थान, शान्तिकुंज, ब्रह्म वर्चस्, गायत्री तीर्थ, अखण्ड दीप, नित्य यज्ञ, नियमित जप, ब्रह्मसंदोह, दिव्य वातावरण, तीन दिव्य सत्ताओं का संरक्षण दिव्य साधना लोक ।

(ग) प्रेरणा सद्गुरु देव की–भावानुभूति अपनी–संगम गंगा यमुना का, संगम आत्म–चेतना ब्रह्म–चेतना का ।

(घ) भाव समाधि–वासना शान्त, तृष्णा शान्त, अहंता शान्त, उद्विग्नता शान्त ।

(ङ) दिव्य दर्शन–प्रातःकाल, पूर्व दिशा, स्वर्णिम सूर्योदय, स्वर्णिम सूर्य–सविता, गायत्री का प्राण सविता ।

(च) सविता–इष्ट, लक्ष्य, उपास्य, सविता–प्रकाश, ज्ञान प्रज्ञा, सविता अग्नि, ऊर्जा, ब्रह्म–शक्ति, सविता ब्रह्म–सविता वर्चस्, सविता ब्रह्म वर्चस् सविता उपास्य, ब्रह्म वर्चस् उपास्य ।

(छ) एकत्व अद्वैत, साधक का सविता को समर्पण, समर्पण-विसर्जन विलय, साधक सविता एक, भक्त भगवान् एक ।

२. विशिष्ट ध्यान प्रयोग

(क) सविता शक्ति का कुण्डलिनी क्षेत्र में–मूलाधार में प्रवेश, कुण्डलिनी जागरण, कुण्डलिनी प्राण-विद्युत जीवनी–शक्ति, योगाग्नि, अन्तःऊर्जा ब्रह्म–ज्योति ।

प्रथम चरण–मंथन

(ख) सविता सहयोग से, शक्ति क्षेत्र मंथन, मूलाधार मंथन, समुद्र मंथन, जीवन मंथन । मंथन–मंथन–मंथन । मंथन से अन्तःऊर्जा का सम्वर्धन, कुण्डलिनी जागरण ।

द्वितीय चरण–ऊर्ध्वगमन

(ग) सविता सहयोग से जागृत शक्ति का ऊर्ध्वगमन, जीवनी–शक्ति का ऊर्ध्वगमन, कुण्डलिनी का ऊर्ध्वगमन । ऊर्ध्वगमन–मूलाधार से सहस्रार तक–मेरुदण्ड मार्ग से । भू–लोक से ब्रह्मलोक तक–देवयान मार्ग से । जीवनी शक्ति का ऊर्ध्वगमन, उत्थान, उत्कर्ष, अभ्युदय, कुण्डलिनी जागरण ।

तृतीय चरण–वेधन

(घ) सविता सहयोग से षट् चक्रों का वेधन–प्राण विद्युत से शक्ति स्रोतों का उत्खनन, चक्रवेध–शब्दवेध –लक्ष्यवेध । वेधन–उत्खनन–जागरण, षट्चक्र जागरण, मूलाधार चक्र जागरण स्वाधिष्ठान चक्र जागरण, मणिपुर चक्र जागरण, अनाहत चक्र जागरण, विशुद्धि चक्र जागरण, आज्ञा चक्र जागरण–कुण्डलिनी जागरण ।

चतुर्थ चरण–विस्तरण

(ङ) सविता सहयोग से योगाग्नि का विस्तार, आत्मसत्ता का ब्रह्मसत्ता में विस्तार, चिनगारी का दावानल में विस्तार, ज्योति का ज्वाला में विस्तार । आत्मसत्ता का विस्तरण, प्रस्सरण जागरण, कुण्डलिनी जागरण ।

पंचम चरण–परिवर्तन

(च) सविता सहयोग से आत्म ज्योति का ब्रह्म–ज्योति में परिवर्तन, क्षुद्रता का महानता में परिवर्तन कामना का भावना में परिवर्तन, वियोग का संयोग में परिवर्तन, नर का नारायण में परिवर्तन ।

परिवर्तन, सम्वर्धन, जागरण–कुण्डलिनी जागरण ।

(छ) कुण्डलिनी महाशक्ति का समग्र संस्थान पर आधिपत्य बन्धन मुक्ति, ईश्वर दर्शन, कुण्डलिनी जागरण, महान् जागरण ।

समापन शान्ति पाठ

(क) ॐ तमसोमा ज्योतिर्गमय, असतोमा

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सदगमय, मृत्योर्माअमृतम् गमय, तमसो मा–तमसो मा तमसो मा ज्योतिर्गमय, ज्योतिर्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय ।

(ख) पंच ॐकार ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ।

इसके बाद शान्ति पाठ ।

इन प्रक्रियाओं का विस्तृत विवरण इस प्रकार है–

१. ध्यान भूमिका में प्रवेश

(क) ध्यान मुद्रा–

ध्यान धारणा के लिए शरीर का स्थिर और मन का शान्त रहना आवश्यक है । शरीर में हलचलें होती रहेंगी, अंग हिलते–जुलते रहेंगे तो वह स्थिरता उत्पन्न न हो सकेगी जो ध्यान साधना में आवश्यक होती है । इसी प्रकार मन की घुड़दौड़ चलती रहेगी, विचारों और कल्पनाओं की भगदड़ मची रहेगी तो चित्त पर दिव्य–चेतना का आवरण और अभीष्ट भाव चित्रों का उद्भव बन नहीं पड़ेगा । दर्पण हिलता रहे तो उसमें ठीक तरह दीख न पड़ेगा । घोड़ा उछल–कूद कर रहा हो तो उस पर सवार होना कठिन है । मन के घोड़े पर सवारी करने के लिए आवश्यक है कि ध्यान के समय मस्तिष्क उत्तेजित न हो, शान्त रहे । इसी प्रकार शरीर से हलचल करते रहने से नाड़ी संस्थान में उत्तेजना उत्पन्न होती है और मन की चंचलता बढ़ जाती है । इसलिए ध्यान के समय शरीर को स्थिर, शिथिल एवं मन को शान्त रखना आवश्यक होता है ।

ध्यान धारणा के लिए ध्यान मुद्रा बनाकर बैठना चाहिए । ध्यान मुद्रा के पाँच अंग हैं– (१) स्थिर शरीर, (२) शान्त चित्त, (३) कमर सीधी, (४) दोनों हाथ गोदी में (बायाँ नीचे, दाहिना ऊपर), (५) आँखें बन्द । पालथी सामान्य रीति से मारनी चाहिए । पद्मासन, सिद्धासन आदि पर पेंतालीस मिनट तक बिना दबाव अनुभव किये बैठे रहना कठिन है । पैरों पर तनाव–दबाव उत्पन्न हो तो ध्यान ठीक तरह लग नहीं सकेगा । इसलिए साधारण पालथी मार कर सुखासन से बैठना ही उचित है । प्रयत्न यह करना चाहिए कि पेंतालीस मिनट तक पैर न बदलने पड़े; पर यदि घुटनों में दर्द, जकड़न आदि की शिकायत हो तो बदल भी सकते हैं । यह विवशता की बात हुई, चंचलतावश पैरों को शरीर के अन्य अवयवों को चलाते–मटकाते रहना निषिद्ध है । बीमारी की स्थिति में आराम कुर्सी पर भी बैठा जा सकता है और पैर फैलाने की छूट विवशता के कारण मिल सकती है ।

ध्यान मुद्रा में बैठकर शरीर को ही नहीं बहिरंग वृत्तियों को भी शान्त करें । मस्तिष्क से हर अंग को शान्त स्थिर रहने के संकेत भेजें । वृत्ति अन्तर्मुखी होने पर शरीर में हलकापन लगने लगता है, बहुधा हृदय की धड़कन के स्पंदन सारे शरीर में सहज ही अनुभव होने लगते हैं । ध्यान को इसी हलकेपन अथवा स्पंदन पर केन्द्रित करें, इससे बाहरी चिन्तन की ओर मस्तिष्क नहीं जायगा ।

(ख) दिव्य वातावरण

उपयुक्त स्थान एवं वातावरण होने पर सफलता की सम्भावना सुनिश्चित होती है । कृषक एवं माली यह जानते हैं कि किस धान्य या पौधे को किस प्रकार की जमीन में तथा किस ऋतु में बोया जाय । इसका ध्यान न रखा जाय तो बीज और श्रम उपयुक्त होने पर भी परिणाम की दृष्टि से घाटे में रहना पड़ता है । जल–वायु का स्वास्थ्य पर कैसा प्रभाव पड़ता है इसे सभी जानते हैं । साधना के लिए घर में एकान्त एवं स्वच्छ स्थान तलाश किया जाता है । भावनात्मक दृष्टि से भी अधिक पवित्र और प्रभावी वातावरण की आवश्यकता होती है । तीर्थों का जो पुण्य–फल गाया गया है उसमें उन दिनों का वहाँ प्रभावी वातावरण ही मुख्य कारण था । उस तथ्य को ध्यान में रखते हुए ब्रह्म वर्चस् साधना के लिए सप्त ऋषियों के ऐतिहासिक तप स्थान की भूमि का चयन किया गया है । गंगा अपनी पवित्रता और हिमालय अपनी शान्ति–शीतलता के लिए प्रसिद्ध है । यह प्रभाव शरीर और मन दोनों पर पड़ता है, इसलिए भगवान राम, भगवान् कृष्ण से लेकर प्रायः सभी उच्चकोटि के अध्यात्म साधकों को गंगा की गोद और हिमालय की छाया का आश्रय लेना पड़ता है । वातावरण उपयुक्त गतिविधियों से बनता है ।

साधकों को सहज स्थिरता एवं प्रेरणा मिलती रहे, प्रगति का प्रवाह अनायास ही चल पड़े इसके लिए शान्ति कुंज के ब्रह्म वर्चस् आरण्यक को समर्थ गायत्री तीर्थ के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रूप में विकसित किया गया है । अखण्ड दीप, नित्य यज्ञ, नियमित जप तथा ब्रह्म अनुसन्धान के लिए स्वाध्यायात्मक सत्संग का संदोह यहाँ निरन्तर विद्यमान रहता है । अन्यान्य अदृश्य एवं अविज्ञात शक्तियाँ भी इस क्षेत्र पर अपने अमृत भरे पोषक तत्वों की वर्षा करती रहती हैं । यही कारण है कि घटिया अस्त–व्यस्त अथवा असामान्य वातावरण में की गई साधनाओं की तुलना में इस दिव्य वातावरण का प्रभाव साधना की सफलता को असंख्य गुनी सुनिश्चित बनाता है । प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष संरक्षण यहाँ उपलब्ध ही रहता है । मुर्गी की छाती की गर्मी से जिस प्रकार अण्डे पकते हैं, उसी प्रकार यहाँ की संरक्षण शक्तियाँ साधना को परिपक्व एवं फलित बनाती हैं ।

जिनके लिए यहाँ रहकर साधना कर सकना सम्भव हो, वे इस अवसर का लाभ लें । इसके अतिरिक्त जब घर या अन्यत्र रह कर साधना करनी हो तो उस दिव्य वातावरण में अपनी स्थिति मानकर उस प्रक्रिया को पूरा करना चाहिए । पूजा, आचमन में चरणामृत की, स्नान जल में तीर्थ जल की, प्रतिमा में देवता की भावना करके पुण्य फल प्राप्त किया जाता है । पुण्य तीर्थ में रहकर साधना करने की भावना से भी मन को बहुत अंशों में उस प्रकार के प्रभावी वातावरण का लाभ मिल जाता है ।

ध्यान धारणा के समय नेत्र बन्द करके पहले अपनी आत्मसत्ता को ब्रह्म वर्चस् के दिव्य वातावरण में पहुँचने तथा वहाँ के प्रभावों से लाभान्वित होने की भावना जमाने से बहुत कुछ साधना की सफलता का आधार बन जाता है । संकल्प भरी मनःस्थिति से भी अभीष्ट परिस्थिति का लाभ मिल जाता है ।

ध्यान मुद्रा में रहकर साधक यह अनुभव करे कि वे शान्ति कुंज में ही बैठे हैं । उनके चारों ओर हवन की दिव्य सुगन्धि फैली है । गंगा की शीतलता सर्वत्र व्याप्त है । ऋषियों, पवित्र आत्माओं के प्रभाव से वातावरण में दिव्य आलोक भरा है । अपने चारों ओर दिव्य सत्ताओं का तेजोबलय एक दिव्य कवच के रूप में घेरा डाले हुए है । उन सबके संयुक्त प्रभाव से अन्दर से दिव्य भावों–आवेगों की हिलोरें सी उठ रही हैं ।

(ग) गंगा–यमुना का संगम

ब्रह्म वर्चस् साधना के अन्तर्गत की जाने वाली ध्यान धारणा के दो पक्ष हैं–(१) जिस दिव्य सत्ता की प्रेरणा एवं इच्छा योजना के आधार पर यह प्रक्रिया चलती है उसके द्वारा प्रेषित किये गये दिव्य अनुदान (२) साधक के स्व कल्पित भाव चित्र । इस प्रकार इस प्रयोजन में दो व्यक्तित्वों का समान, सहयोग एवं योगदान बनता है । साधना की सफलता के लिए यह संगम अतीत फलप्रद सिद्ध होता है ।

छात्र अपने श्रम और मनोयोग से पढ़ता, अच्छे नम्बरों से पास होता, श्रेय प्राप्त करता और उसके सत्परिणामों से लाभान्वित होता है । इतने पर भी उसकी सफलता के पीछे अभिभावकों द्वारा साधन, सुविधा जुटाने तथा कुशल अध्यापक द्वारा रुचिपूर्वक पढ़ाने का सहयोग भी अति महत्वपूर्ण भूमिका प्रस्तुत करता है । यदि अभिभावक भोजन, वस्त्र, पुस्तक, कॉपी, फीस, स्कूल का चयन, विषय निर्धारण आदि का मार्ग–दर्शन सहयोग न करें तो अपने बलबूते स्वावलम्बनपूर्वक साधन जुटाना और पढ़ कर अच्छी सफलता पाना कठिन हो जायगा । इसी प्रकार यदि अध्यापक का योगदान न मिले तो अपने आप पढ़ते रहने और पास होते रहने की स्थिति कष्टसाध्य और संदिग्ध रह जायगी । कुछ विषय तो ऐसे होते हैं जिनमें अध्यापक के बिना कुछ सम्भव ही नहीं । शिल्प, संगीत, सर्जरी, इन्जीनियरिंग आदि के छात्रों को यदि क्रियात्मक शिक्षण न मिले तो उनकी प्रगति अवरुद्ध ही पड़ी रहेगी ।

ब्रह्म वर्चस् की ध्यान धारणा के साथ साथक द्वारा निर्देशित भाव चित्रों को अपने कल्पना लोक में जमाना और उभारना तो मुख्य एवं आवश्यक है ही पर उसके साथ ही निर्देशकर्ता के मनोबल एवं प्रेरणा स्रोत का आत्मबल सम्पन्न अनुदान भी कम सहायक सिद्ध नहीं होता । जहाँ भी इस प्रकार के सुयोग बनते हैं वहाँ सफलता की सम्भावना अत्यधिक बढ़ जाती है । इसलिए इसे त्रिवेणी संगम की उपमा दी गई है ।

यह ध्यान साधना, विशिष्ट आत्माओं को अपेक्षाकृत अधिक सुनियोजित रीति से लक्ष्य तक पहुँचा देने की योजना है । संचित संस्कारवान् व्यक्ति ही इसमें देर तक ठहर सकेंगे । अपरिपक्व मनोभूमि के चंचल चित्त एवं दुर्बल आस्था वाले इतना प्रकाश ग्रहण और धारण न

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कर सकेंगे। जो ठहरें उन्हें समुचित लाभ मिले इस लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए ब्रह्म वर्चस् साधना के छात्रों को अभिभावक और अध्यापक की भूमिका निभाने वाली विशिष्ट शक्तियों की सहायता सम्मिलित की गई है। एकाकी साधक गंगा है। उसका प्रयत्न मुख्य धारा कहा जा सकता है। इसमें यमुना, सरस्वती का सहयोग और मिल जाने से तीर्थराज प्रयाग बनता है और उस संगम का पुण्य फल अत्यधिक बढ़ जाता है। प्रस्तुत साधना का सत्परिणाम भी इसी स्तर का है।

दिव्य वातावरण के बीच प्रफुल्ल चित्त, उत्साहित साधक अनुभव करें कि वे अकेले नहीं हैं। उन्हें साधना-मार्ग का लाभ देने के लिए एक विशेष शक्ति प्रवाह उमड़ रहा है। अपने अन्दर का उत्साह-साधना की ललक एक लहर के रूप में उमड़ कर उसके साथ एकाकार हो जाती है। इससे एक नयी अद्भुत सामर्थ्य युक्त उल्लास की लहर उत्पन्न होती है। साधना क्षेत्र में बड़े से बड़े कदम बढ़ाने का आत्म-विश्वास, साहस जाग जाता है।

(घ) भाव समाधि

शान्ति और समाधान की दो स्थिति होती हैं-एक शरीरगत निद्रा, दूसरी मनोगत समाधि। मानसिक समाधान को शान्ति स्थिरता, सन्तुलन को समत्व, साम्य, स्थिति-प्रज्ञता एवं समाधि कहते हैं। यह स्थिति प्राप्त होने पर उसमें साधना के बीजांकुर भली प्रकार जमते एवं परिपुष्ट होते हैं। शरीर का समाधान निद्रा से होता है। सभी जानते हैं कि निद्रा की आवश्यकता आहार से कम नहीं होती।

योगनिद्रा का अर्थ है शरीर की उद्विग्नता और तनाव की स्थिति को संकल्प के सहारे हटा दिया जाना। यों यह स्थिति गहरी नींद में ही प्राप्त होती है, पर शिथिलीकरण मुद्रा, शवासन, शरीर निःचेष्ट होने के संकल्प द्वारा भी इसे प्राप्त किया जा सकता है। इस संकल्प तन्द्रा को योगनिद्रा कहते हैं। इसमें शरीर तो तनाव हीन हो जाता है, किन्तु संकल्प जागृत रहता है। संकल्प भी शिथिल हो जाय तो वह स्थिति सामान्य निद्रा की हो जाती है। ध्यान धारणा में शारीरिक तनाव दूर करने के लिए यह स्थिति जितनी मात्रा में प्राप्त हो सके उतनी ही उत्तम है। शरीर और मन को शिथिल करने का संकल्प जितना गहरा होगा उतनी ही यह स्थिति प्राप्त होगी और ध्यान का सममुचित लाभ मिलेगा।

भाव क्षेत्र को-मानसिक सन्तुलन को उत्तेजित, उद्विग्न, अस्त-व्यस्त एवं भ्रष्ट करने वाली कुछ थोड़ी-सी ही दुष्प्रवृत्तियाँ हैं। उन्हें यदि संयत किया जा सके तो मस्तिष्क, दूरदर्शिता एवं विवेकशीलता से भरी पूरी स्थिति में रह सकता है। असन्तुलित होने पर अत्यन्त हानि पहुँचाने वाली चार प्रवृत्तियाँ मुख्य हैं- (१) वासना, (२) तृष्णा, (३) अहंता, (४) उद्विग्नता। इन्हीं की विकृत स्थिति से, दृष्टिकोण गर्हित बनता है और गतिविधियों में भ्रष्टता भर जाती है। ऐसे अशान्त मन से दैनिक जीवन के सामान्य काम-काज भी ठीक तरह नहीं हो पाते फिर साधना का तो सारा आधार ही शान्त एवं उत्कृष्ट मनःस्थिति पर ही खड़ा होता है। तूफान और भँवर में फँसकर नावें डूबती हैं। आन्तरिक अशान्ति से पूरा जीवन ही नारकीय एवं कुमार्गगामी बन जाता है।

ध्यान धारणा के समय तक इन चारों का प्रकोप न हो, पीछे भी उनका आक्रमण न हो इस उद्देश्य से ब्रह्म वर्चस् ध्यान साधनाओं में इन शत्रुओं के खतरे से मन को सावधान किया जाता है और उनके प्रकोप से बचाये रहने वाली शान्त शालीनता का आह्वान किया जाता है। यह संकल्पित लक्ष्मण रेखा यदि सुस्थिर बनी रहे तो चित्त में समाधि जैसा समाधान प्रतीत होता है और लक्ष्य की दिशा में ध्यान की सही प्रगति होने लगती है।

अनुभव करें कि दिव्य संगम से जागृत दिव्य उल्लास की लहरें, सारे शरीर एवं मनःसंस्थान में तीव्रता से प्रवाहित हो रही हैं। अहंता आदि विकार उसकी ठोकर से धुएँ की कालिमा के रूप में बाहर निकल रहे हैं। अन्तःकरण में दिव्य शान्ति का आभास हो रहा है।

(ङ, च, छ) दिव्य-दर्शन एकत्व

दिव्य दर्शन का अर्थ है प्रकृति के पदार्थ साधनों के महत्व एवं आकर्षण से आगे की चेतनात्मक उत्कृष्टता की झाँकी। इसी को आत्म-दर्शन या ईश्वर-दर्शन कहते हैं। आँख जड़ तत्वों से बनी है उनसे भौतिक पदार्थ ही दीख पड़ते हैं। आत्मा और उसका परिष्कृत रूप परमात्मा भी चेतन है। इसलिए उन्हें इन्द्रियों से नहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देखा जाता । मात्र भावानुभूति की जाती है । सीमित आत्मा से असीम परमात्मा को स्पष्ट करने पर जो अलौकिक अनुभूतियाँ होती हैं, उन्हें ही दिव्य–दर्शन कहा जाता है ।

ध्यान एवं मस्तिष्कीय अनुभूतियों को जगाने के लिए दिव्यता के कुछ प्रतीक गढ़ने पड़ते हैं । इन्हें ही देव कहते हैं । देवत्व का सर्वोतम प्रतीक सविता है । सविता का कलेवर सूर्य है । सविता तेजस्वी ब्रह्म को कहते हैं । सूर्य उदीयमान अग्नि पिण्ड को । प्रातःकालीन सूर्य स्वर्णिम सौम्य होता है । स्वर्ण सबसे भारी, कोमल एवं बहुमूल्य धातु है । उस पर जंग नहीं चढ़ती । सुनहरेपन के विशिष्ट सौन्दर्य से तो सभी परिचित हैं । इन स्वर्ण विशेषताओं के कारण स्वर्णिम कान्ति वाले प्रातःकालीन सूर्य को सविता का प्रतीक माना गया है । ध्यान धारणा से वही सर्वोतम है । गायत्री का प्राण–देवता सविता है । उस महामन्त्र में सविता से ही सद्बुद्धि की याचना की गई है । सम्प्रदाय विशेष में तो अनेक आकृति–प्रकृति के देवी–देवताओं की मान्यता पूजा एवं ध्यान धारणा का विधान है किन्तु ब्रह्मसत्ता का प्रतीक प्रतिनिधि प्रायः सभी धर्मों में तेज पुंज को, ज्योति को, प्रकाश को माना गया है । सूर्य उसका सर्वश्रेष्ठ प्रतीक है । अग्नि को भी उसी का प्रतीक मानकर धूप, दीप, अग्नि होत्र आदि के रूप में उसकी पूजा, प्रतिष्ठा की जाती है । प्रकाश ध्यान के अनेक विधानों को प्रकारान्तर से सूर्य पूजा ही समझा जा सकता है । ब्रह्म वर्चस् की ध्यान धारणा में, गायत्री की उच्चस्तरीय साधना में सविता को ही इष्टदेव माना गया है । उसी को लक्ष्य, उपास्य एवं आराध्य भी कहते हैं ।

सविता को यों तो नियमितता, श्रम संलग्नता, प्रकाश वितरण, जीवन–दान, विकृति विनाश, जागरण, एकाकी विचरण, मार्ग–दर्शन आदि असंख्यों ऐसी विशेषताओं का पुंज माना गया है जो मुनष्य के लिए गृहणीय एवं अनुकरणीय हैं । किन्तु सबसे बड़ी सर्वोपरि विशेषताएँ दो ही हैं–(१) प्रकाश, (२) गर्मी । इनमें से प्रकाश को ज्ञान प्रज्ञा विवेक का–और गर्मी को अग्नि–ऊर्जा एवं शक्ति का–प्रतीक माना गया है । इन्हीं दो आधारों को जीवन–लक्ष्य तक पहुँचाने वाली दो टाँगें कह सकते हैं । ज्ञान को, आत्मिक और बल को भौतिक शक्ति कह सकते हैं । ज्ञान को ब्रह्म और शक्ति को वर्चस् कहते हैं । इन दोनों का समन्वय ब्रह्म वर्चस् है । यह सविता का नाम है । ज्ञान की आध्यात्मिक और बल की भौतिक शक्ति का इसमें समन्वय है । सर्वतोमुखी प्रगति के लिए इन दोनों ही सामर्थ्यों को उपार्जित करना पड़ता है । सविता उपासना में इन दोनों ही उपलब्धियों के लिए प्रयत्नशील रहने का संकेत है । सूर्य को इष्टदेव मानने का अर्थ है– उसमें सन्निहित विभूतियों को उपलब्ध करने का लक्ष्य निर्धारित करना । इनकी उपासना, आराधना करना । उपासना, अराधना अर्थात् आकांक्षा और चेष्टा । ब्रह्म वर्चस् की ध्यान धारणा में सविता की झाँकी दिव्य नेत्रों से की जाती है । साथ ही उसकी सत्ता को–विशेषता समूह को जीवन का लक्ष्य एवं इष्ट माना जाता है । साथ ही सन्निहित विभूतियों को उपास्य आराध्य घोषित करते हुए उस प्रयास में संलग्न होने का साहस सँजोया जाता है । सविता का दिव्य–दर्शन–आँखें बन्द करके दिव्य नेत्रों से दर्शन करने की प्रक्रिया के पीछे इन्हीं आधारों का समावेश है ।

दर्शन स्थापना है । उसकी पूर्णता घनिष्ठता को बढ़ाते–बढ़ाते एकता के स्तर तक पहुँचाने पर होती है । मन्दिरों में देव-दर्शन करना यह प्रथम चरण है । देवताओं में साधन, श्रद्धा और गहन भक्ति–भावना से उस एकत्व एवं अद्वैत की स्थिति विनिर्मित करता है जिसमें भक्त और भवागन् के बीच प्रत्यक्ष आदान–प्रदान चल पड़ते हैं । दो तालाबों को किसी नाली द्वारा परस्पर सम्बद्ध कर दिया जाय तो दोनों के पानी का लेविल समान हो जाता है । भक्त और भगवान् भी इसी सघंन श्रद्धा–भक्ति के आधार पर एक होते हैं । दोनों की आकांक्षा, दृष्टि एवं गतिविधियों में जितनी एकता–एक रूपता बनती जाती है उसी अनुपात से दोनों की सत्ता भी समान गुण, धर्म की बनती चली जाती है । ऐसे सच्चे भक्तों का स्तर भी प्रायः भगवान् के समतुल्य ही हो जाता है । उन्हें अवतार, ऋषि आदि नामों से सम्बोधित किया जाता है। आत्म-सन्तोष एवं सृष्टि सन्तुलन की दृष्टि से भी उनकी स्थिति अत्यन्त उच्चस्तरीय होती है ।

एकत्व वह स्थिति है जिसे ईश्वर प्राप्ति बन्धन मुक्ति आदि नामों से जाना जाता है । वेदान्त दर्शन में इस

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्थिति को अद्वैत कहा गया है । इसमें द्वैत मिलता है, भिन्नता समाप्त होती है, अद्वैत बनता है । एकता की वह आकांक्षा पूर्ण होती है जिसके लिए गंगा रूपी आत्मा–परमात्मा रूपी समुद्र से मिलने के लिए आतुरतापूर्वक दौड़ती और उद्विग्न रहती है । गंगा सागर का संगम तीर्थ स्थान है । आत्मा और परमात्मा का मिलन जब अद्वैत्य स्थिति बनता है तो जीव को ब्रह्म रूप में और ब्रह्म को जीवन रूप में देखा जा सकता है । इसी स्थिति को शास्त्रकारों ने सोहम् शिववोहम्, अयमात्मा ब्रह्म, तत्वमसि आदि शब्दों–में व्यक्ति किया है ।

इस स्थिति को प्राप्त करने का एकमात्र उपाय समर्पण है । इस स्थिति में साधक अपनी निजी आकांक्षाएँ त्यागता है और ईवरीय इच्छा को अपनी आकांक्षा मान लेता है । तब वासना, तृष्णा और अहंता में से एक की पूर्ति के लिए भी उद्विग्नता–आतुरता नहीं रहती । लोभ और मोह में से एक भी विचलित नहीं करता । संकीर्ण स्वार्थपरता का स्थान उदात परमार्थ ग्रहण कर लेता है । अपने को वंशरी मानकर वादक के होठों से चिपका देता है । कठपुतली की तरह अपने धागे बाजीगर की उँगलियों के साथ जोड़ देता है । यही आत्म–समर्पण है । इसी को विलय, विसर्जन, समन्वय, समापन कहा जाता है । नाला गंगा में मिलकर गंगा बन जाता है । बूँद की तुच्छ सत्ता इसी आधार पर समुद्र बनने का गौरव अनुभव करती है । ईंधन आग के साथ मिल कर अग्नि रूप बनता है । पतगां दीपक की लौ में आत्मसात् हो जाता है । इसी प्रकार भक्त भगवान् में अपने 'अहं' का विलय, विसर्जन करता है । शरणागति का तात्पर्य है आश्रय ग्रहण करना । आश्रय का अर्थ यहाँ सुरक्षा नहीं, वरन् स्वामी की आकांक्षाओं के अनुशासन के आश्रित हो जाता है । लोहा चुम्बक से सटे रहने के उपरान्त अपने में भी चुम्बकीय विशेषता उत्पन्न कर लेता है । चन्दन के समीप उगे पौधे तक सुगन्धित हो जाते है । नमक पानी में घुलकर अपनी सत्ता का विसर्जन कर देता है और तद्रूप हो जाता है । भक्त में भगवान् की विशेषताएँ, गरिमाएँ प्रगट होने लगें तो समझना चाहिए समर्पण का एकत्व प्रयोजन पूर्ण होने जा रहा है ।

सविता के अनेकानेक सद्गुणों में से साधक के व्यक्तित्व में ओजस्, तेजस्, वर्चस् जैसे जितने गुण प्रगट होते चलें उतने ही अंश में समर्पण सार्थक हुआ समझना चाहिए ।

(ड) भावना करें कि हमारा मुख पूर्व दिशा को है । सामने प्रातःकाल का स्वर्णिम सूर्य उदय हो रहा है । सविता का तेज, गायत्री का प्राण, स्वर्णिम आभा रूप में सारे ब्रह्माण्ड में (हमारे चारों ओर) भर रहा है । हम स्वर्णिम प्रकाश के समुद्र के मध्य में किसी जल जीव की तरह स्थिर हैं ।

(च) स्वर्णिम सविता के प्रति अपने सर्वाधिक प्रिय स्नेही–इष्ट का भाव बढ़ायें । वह हमारे परम कल्याण के लिए दिव्य ऊर्जा, ब्रह्म–शक्ति, ब्रह्म वर्चस् का विस्तार कर रहा है । अपनी दिव्य किरण रूपी बाहों से हमें, हमारी आत्म–चेतना को गोद में उठा लेने को, आत्मसात् कर लेने को आतुर है ।

(छ) हमारी आत्म–चेतना भी उसकी ओर लपकती है । जैसे पास–पास लाने पर दो दीपकों की ज्योति एकाकार हो जाती है, दीपक पतंग की तरह, वायु गन्ध की तरह हम उससे लिपट कर एकाकार हो जाते हैं । आग ईंधन की तरह, बिन्दु–सिन्धु की तरह एक रूप हो रहे हैं । अद्भुत आनन्द की अनुभूति होती है ।

२. (क) कुण्डलिनी के पाँच नाम पाँच स्तर

कुण्डलिनी जागरण ध्यान धारणा के साथ ही ध्यान भूमिका में प्रवेश का प्रथम चरण जुड़ा हुआ है । उसकी व्याख्या पंचकोशी ध्यान के क्रम में दी जा चुकी है । अस्तु यहाँ कुण्डलिनी जागरण के विशिष्ट ध्यान प्रयोग ये ही व्याख्या का प्रारम्भ किया गया है ।

कुण्डलिनी शक्ति की व्याख्या, विवेचन परिभाषा पाँच नामों से की जाती है । (१) प्राण विद्युत, (२) जीवनी शक्ति, (३) योगाग्नि, (४) अन्तःऊर्जा, (५) ब्रह्म–ज्योति । इन शब्दों में जो संकेत सन्निहित है उनसे न केवल उसके स्वरूप एवं प्रतिफल का बोध होता है, वरन् क्रमिक विकास का भी पता चलता है । जैसे–जैसे यह जागरण प्रक्रिया प्रखर होती जाती है, वैसे–वैसे ही उसके

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्तर निखरते–उभरते चले आते हैं और एक के बाद दूसरी अधिक गहरी एवं अधिक समर्थ विभूति का प्रमाण परिचय मिलता है ।

शरीर शास्त्र की दृष्टि से कुण्डलिनी का विश्लेषण प्राण विद्युत एवं जीवनी शक्ति के रूप में किया जाता है । ज्ञान तन्तुओं को सचेतन रखने वाली–मस्तिष्क को सक्षम बनाये रहने वाली और काया के घटक अवयवों को सक्रिय बनाये रहने वाली बिजली को प्राण विद्युत कहते हैं । यह यान्त्रिक बिजली से मिलती–जुलती है । उसे यन्त्रों से नापा जाना जा सकता है फिर भी उसमें जैव तत्वों का सम्मिश्रण है । विचारणा और भावना से प्रभावित होने और उन्हें प्रभावित करने की ऐसी विशेष क्षमता है जो यान्त्रिक बिजली में नहीं पाई जाती ।

प्राण विद्युत की न्यूनाधिकता के आधार पर मनुष्य का साहस, पराक्रम संकल्प और आत्म–विश्वास घटता–बढ़ता है । प्रतिभा इन्हीं विशेषताओं का समन्वय है जो उत्साह बनकर मन में और स्फूर्ति बन कर शरीर में विविध प्रकार की हलचलें करती दिखाई पड़ती हैं । इसी विद्युत की न्यूनाधिकता के आधार पर पारस्परिक आदान–प्रदान चलते हैं । एक दूसरे को प्रभावित करते एवं प्रभावित होते हैं । प्रतिभाशाली लोग अपने सम्पर्क क्षेत्र को ही नहीं, समूचे वातावरण पर छाप छोड़ते और उन्हें मोड़ने–मरोड़ने में सफल होते हैं । यही प्राण विद्युत जब आन्तरिक उत्कृष्टता के साथ जुड़ता है तो मनुष्य महामानवों जैसी गतिविधियाँ अपनाने के लिए एकाकी चल पड़ता है । उसे न किसी परामर्श सहयोग की आवश्यकता होती है और न किसी विरोध–अवरोध का कोई प्रभाव पड़ता है । साहसिकता अपने आप में एक प्रचण्ड शक्ति है जो प्रचण्ड मनोबल के रूप में काम करती है और स्वल्प साधनों के होने पर भी महान् प्रयोजन पूरे कराने के लिए बढ़ाती घसीटती चली जाती है ।

यह प्राण विद्युत शरीर में सौन्दर्य चुम्बकत्व आकर्षण पैदा करता है और कलपुर्जों में उत्साह भरता है । इसकी उपयुक्त मात्रा जहाँ भी होगी वहाँ आलस्य और प्रमाद ठहर न सकेंगे । अस्त–व्यस्त की अव्यवस्था की कुरूपता भी वहाँ दृष्टिगोचर न होगी । प्रगतिशील जीवन इसी उत्साह और स्फूर्ति के समन्वय से आरम्भ होता है और जिस भी दिशा में अन्तःकरण चाहे उसी में बढ़ता चला जाता है । कुण्डलिनी जागरण की आरम्भिक सिद्धियाँ इसी स्तर की देखी जाती हैं । उन्हें सँजोने वाली इसी विद्युत शक्ति के रूप में कुण्डलिनी का प्रथम परिचय मिलता है ।

इस महाशक्ति का दूसरा नाम है–जीवनी–शक्ति । जीवनी–शक्ति का सामान्य अर्थ उस शक्ति भण्डार से समझा जाता है जिसके आधार पर मनुष्य सुदृढ़ रहता है । सामर्थ्यवान् और दीर्घजीवी होता है । कठिनाइयों और अभावों एवं संकटों के बीच भी धैर्यपूर्वक अपनी स्थिरता बनाये रहता है । बीमारियों से लड़कर उन्हें भगाने में अथवा लम्बे समय तक उनके रहते हुए भी निर्वाह करते रहने में यही शक्ति काम करती है । इसके अभाव में मनुष्य खोखला रहता है और तनिक से प्रतिकूल आघात पड़ने पर चित्त–पट्ट हो जाता है । चार दिन की बीमारी के बाद हफ्तों चारपाई पकड़े रहता है और महीनों में कुछ करने लायक बनता है । तनिक–सी प्रतिकूलता आने पर इतना घबराता है मानों संसार भर की विपत्ति इकट्ठी होकर इसी के सिर पर गिर पड़ी है । आवेशग्रस्त आधीर मनुष्य आत्म–हत्या एवं दूसरों पर घात करने तक में नहीं चूकते । उनका विवेक समाप्त हो जाता है और आत्मरक्षा के नाम पर ऐसा कुछ कर गुजरते हैं जिसके लिए सदा के लिए मात्र पश्चाताप ही करना शेष रह जाय । धैर्य, साहस और विवेक का समन्वित सुयोग मनःक्षेत्र पर छाई हुयी जीवनी–शक्ति का ही प्रतिफल है ।

समझा जाता है कि भोजन अथवा सुविधाओं के आधार पर लोग दीर्घजीवी होते हैं । यह आंशिक सत्य है । प्रकृति के अनुकूल चलना अच्छी आदत है । किन्तु बात इतने से ही नहीं बनती । प्रतिकूलताओं के बीच रहने वालों की बलिष्ठता बनी रहने का फिर कोई कारण नहीं रह जाता है । घोर शीत उत्तरी ध्रुव प्रदेश में चिरकाल से रहती चली आ रही एक्सिमो जाति का अस्तित्व कैसे बना हुआ है ? इस प्रश्न का उत्तर आहार–बिहार की सुव्यवस्था के रूप में नहीं दिया जा सकता है । रूस के उजबेकिस्तान में सौ से लेकर पौने दो सौ वर्ष तक मनुष्य अभी भी जीवित रहते हैं । इसका कारण अन्न–जल सुविधा साधन अथवा रहन–सहन के सामान्य नियमों को आगे रखकर नहीं दिया जा सकता । यह सब जीवनी–शक्ति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के रहते प्रकृति के विपरीत आहार-बिहार करते रहने पर भी सुदृढ़ बने रहा जा सकता है। हिमाच्छादित प्रदेशों में रहने वाले योगियों का भोजन आहार शास्त्र की दृष्टि से कुपोषण स्तर का कहा जा सकता है फिर भी वे आश्चर्यजनक दीर्घजीवन प्राप्त करते हैं। कई आसुरी वृत्ति के लोग भी हर प्रकार की उच्छृंखलता बरतते हैं और दैत्यों की तरह बलिष्ठ बने रहते हैं। इन तथ्यों के पीछे झाँकते जीवनी शक्ति के भाण्डागार को देखा जा सकता है। शरशैय्या पर पड़े हुए भीष्म ने बहुत समय उपरान्त इच्छा मृत्यु का वरण किया। यह मनुष्य की संकल्प-शक्ति ही थी जिसने कष्टग्रस्त शरीर को भी जीवन धारण किये रहने का आदेश दिया और उसने उसको ठीक तरह निभा दिया। जीवन को धारण किये रहने और सुदृढ़ बनाये रहने में चेतना के साथ लिपटी हुई वह दिव्य क्षमता ही काम करती है जिसे जीवनी शक्ति अथवा जीवट कहते हैं। वास्तविक बलिष्ठता इसी आन्तरिक विशेषता के आधार पर आँकी जाती है। अन्यथा इसकी कमी रहने पर शरीर से हट्टे-कट्टे होते हुए भी कितने ही व्यक्ति हर दृष्टि से बहुत ही दुर्बल और कायर देखे जा सकते हैं। पुरुषों की तुलना में यह क्षमता आमतौर से स्त्रियों में अधिक पाई जाती है। इसी के आधार पर वे बार-बार प्रसव कष्ट सहती और बच्चों को दूध पिलाते रहने पर भी मौत के मुँह में जाने से बची रहती हैं।

जीवन-शक्ति एक विशेष सामर्थ्य है जो शरीर को जीवित रखने में-जीवन को समर्थ और सरस बनाये रहने में महत्वपूर्ण भूमिका प्रस्तुत करती है फिर भी वह रक्त-मांस से उत्पन्न नहीं होती। उसका स्रोत-आत्मा की गहन परतों के साथ जुड़ा होता है। वहाँ से उछल कर वह ऊपर आती और शरीर और मन को अपने अनुदान देकर बलिष्ठ बनाती है। कुण्डलिनी को जीवन क्षेत्र में प्रखरता प्रगट करते हुए जब देखा जाता है, तब उसे जीवनी-शक्ति कहते हैं। कुण्डलिनी का एक महत्वपूर्ण अंश जीवनी-शक्ति के रूप में भी प्राण विद्युत की तरह सामान्य जीवन में अपना परिचय देता देखा जाता है।

कुण्डलिनी का तीसरा नाम है-योगाग्नि। यह तपश्चर्या के आधार पर प्रयत्नपूर्वक प्रगट की जाती है। तपाने से हर वस्तु गरम होती है और गर्मी के सहारे उठने और फैलने वाली ऊर्जा के सम्बन्ध में विज्ञान के आरम्भिक विद्यार्थियों को भी जनकारी रहती है। व्यायाम से शरीर बल और अध्ययन से बुद्धि बल, व्यवसाय से धन बल बढ़ता है। इसी प्रकार आत्मिक पुरुषार्थ की तपश्चर्या से जो प्रखरता प्रकट होती है, उसे योगाग्नि कहते हैं। आत्मा और परमात्मा का, व्यवहार और आदर्श का कर्म और विवेक का-परस्पर जुड़ना योग कहलाता है। दो शक्ति धाराओं के मिलने से तीसरा अद्भुत प्रवाह उत्पन्न होता है। बिजली की ऋण और धन धाराएँ पृथक रहने तक निःचेष्ट पड़ी रहती हैं, पर जब वे मिलती हैं तो प्रचण्ड शक्ति प्रवाह उत्पन्न होता है। व्यवहार एवं आदर्श का समन्वय करने वाले तप प्रयास की ऊर्जा से जो दरिद्रता उत्पन्न होती है, उसे योगाग्नि कहते हैं। शाप, वरदान से दूसरों को प्रभावित कर सकना इसी से बन पड़ता है। असामान्य व्यक्तित्व से जुड़ी रहने वाली चमत्कारी सिद्धियों का प्रादुर्भाव प्रकटीकरण भी इसी उत्पादन से होता है। यह योगाग्नि कुण्डलिनी का ही एक रूप है।

अन्तःऊर्जा कुण्डलिनी का चौथा नाम है। शरीरगत ऊर्जा पुरुषार्थ के विभिन्न रूपों में देखी जा सकती है। मनोगत ऊर्जा बुद्धि-विवेक की सूझ बूझ के-सत्साहस के रूप में प्रकट होती है। इससे आगे की ऊँचाई, गहराई कक्षा को अन्तःऊर्जा अर्थात् आत्मबल कहते हैं। आत्मिक अवरोधों के साथ संघर्ष करना और उन्हें परास्त करना आत्मबल के अतिरिक्त और किसी प्रकार सम्भव नहीं होता। निष्कृष्ट योनियों में रहते-रहते जो कुसंस्कार पशु-प्रवृत्तियों के रूप में चेतना की गहराई तक घुसे रहते हैं उनके उभार प्रायः विवेक बुद्धि को बुरी तरह उलट देते हैं। आदर्शवादी चिन्तन एक कोने में रखा रह जाता है और भीतर से उठने वाले आँधी-तूफान को अपना उपद्रव करने के लिए अवसर मिल जाता है। इन विकृतियों, दुर्बलताओं से जूझने का प्रधान अस्त्र आत्मबल ही होता है। चारों ओर के अवांछनीय प्रवाह प्रायः दुर्बल जीवात्मा को अपनी ओर घसीट ले जाते हैं। उन्हें निरस्त करके आत्मा के संकेतों को सुनने और उन पर चलना आत्मबल की क्षमता से ही सम्भव होता है। वायुमण्डल की परिधि को-पृथ्वी की आकर्षण क्षमता को-चीर कर राकेट अन्तरिक्ष में प्रवेश करने के लिए चलते हैं तो उन्हें आरम्भ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

में भारी शक्ति साथ लेकर चलना होता है। उत्कृष्ट जीवन की कल्पना करते और ललचाते रहना तो सरल है, पर उस मार्ग पर चल पड़ने का साहस जुटाना अति कठिन है। लोभ, मोह की आन्तरिक दुर्बलताएँ और स्नेही स्वजनों से लेकर चारों ओर फैले हुए अविचारी वातावरण का दबाव यह दोनों मिलकर आत्मिक प्रगति के लिए कुछ महत्वपूर्ण कदम उठा सकना असम्भव कर देते हैं। इन अवरोधों से आत्मबल ही जूझता है और उसी की प्रचुरता से उत्कृष्ट जीवन की योजना बनाने से लेकर साधन जुटाने तक का सारा सरंजाम जमा करना सम्भव होता है।

ऊँचे उठने के लिए शक्ति चाहिए, पानी के पम्प–वजन उठाने के क्रेन–यही काम करते हैं। बन्दूक की गोली से लेकर ऊँची कूद तक के विभिन्न प्रयोजनों में इसी सामर्थ्य की आवश्यकता पड़ती है। पतनोन्मुख प्रगति की निम्नगामी प्रवृत्तियाँ तो पानी के निचली दिशा में बहने की तरह स्वयमेव गतिशील बनी रहती हैं पर यदि उत्कृष्टता की दिशा में बढ़ना हो–अनुकणीय उदाहरण प्रस्तुत करने हों तो आत्मबल के बिना कुछ महत्वपूर्ण परिणाम निकलेगा नहीं। कुण्डलिनी का चौथा नाम अन्तःऊर्जा इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए रखा गया है।

कुण्डलिनी का पाँचवाँ नाम ब्रह्म–ज्योति है। शरीर, मन और भाव संस्थान के स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीरों के आगे आत्मसत्ता और ब्रह्मसत्ता का ही क्षेत्र आत्मा है। आत्म–ज्योति और ब्रह्म–ज्योति इसी क्षेत्र की उपलब्धियाँ हैं। हृदय गुफा में अंगुष्ट मात्र प्रकाश का वर्णन उपनिषदों एवं साधना शास्त्र के अनेक ग्रन्थों में भरा पड़ा है। इसी दिव्य–ज्योति के दर्शन के लिए कितने ही साधन विधान बताये गये हैं। इसी ज्योति की अधिक स्पष्टता को आत्म–दर्शन एवं आत्मसाक्षात्कार कहा गया है। विज्ञानमय कोश का (अन्तःकरण को) जीवात्मसत्ता का केन्द्र स्थल कहा गया है। कुण्डलिनी का आभास विज्ञानमय कोश में आत्म ज्योति के रूप में होता है।

सहस्रार को ब्रह्मलोक कहा गया है। परब्रह्म का साक्षात्कार करने के स्थान को ब्रह्मरन्ध्र कहते हैं। इसी रन्ध्र गुफा में ब्रह्म छिपा रहता है जब बाहर निकल कर आता है तो उससे ब्रह्म–दर्शन का लाभ मिलता है। यही ब्रह्म–ज्योति है। वह ध्यान धारणा में ज्योति रूप में प्रकट हो सकती है। इसे प्रतीक दर्शन कहा जायेगा। वस्तुतः ब्रह्म–ज्याति देखी नहीं, अनुभव की जाती है। आत्मा की अनुभूति होती है कि ब्रह्मसत्ता का समावेश आत्मसत्ता में हो चला उसने अपना स्थान और अधिकार उपलब्ध कर लिया। ईश्वर की प्रेरणा ही जब क्रिया रूप धारण करती चले तो समझना चाहिए कि ब्रह्म–ज्योति का प्रभाव जीवनसत्ता के क्षेत्र में बढ़ता चला जा रहा है।

आत्म–ज्योति आत्म–क्षेत्र में दबी हुई विभूतियों को उभारती है और उनके सहारे मनुष्य को दिव्य–देवोपम बनने का अवसर मिलता है। उसे दिव्य जीवन जीते हुए देखा जा सकता है। ब्रह्म–ज्योति का प्रगटीकरण इससे ऊँची स्थिति है। उसे ब्रह्मवर्चस् के रूप में आत्मसत्ता पर छाया हुआ देखा जा सकता है। ईश्वरीय अनुग्रह एवं अनुदान इसी क्षेत्र में उतरते हैं। ब्रह्म सम्बन्ध इसी मिलन बिन्दु पर बनता है। आत्मा और परमात्मा के बीच आदान–प्रदान की सुव्यवस्था इसी धरातल पर बनती है। सहस्रार को परमात्मा का निवास माना गया है। कैलाशवासी शिव, शेषशायी विष्णु, कमलासन पर विराजमान ब्रह्मा की स्थिति सहस्रार की ओर ही संकेत करती है। यों ईश्वर का एक अंश तो हर जीवन में विद्यमान है, पर उसके स्तर एवं परिमाण का परिचय ब्रह्म–ज्योति की अधिकाधिक प्रखरता के आधार पर मिलता है। (लेटेन्ट लाइट डिवायन लाइट) के रूप में पाश्चात्य अध्यात्म विज्ञानी भी इसी प्रकाश की सर्वोपरि गरिमा स्वीकार करते हैं। सविता यही है। ब्रह्म के तेजस्वी स्वरूप को ही सविता कहते हैं। सविता गायत्री का प्राण है। जागृत कुण्डलिनी की मूलाधार स्थिति जीवसत्ता–इसी सहस्रार स्थित ब्रह्मसत्ता से मिलने के लिए आतुरता पूर्वक ऊर्ध्वगमन करती है। आत्म–ज्योति का ब्रह्म–ज्योति में मिल जाना–यही है जीवन–लक्ष्य और यही है कुण्डलिनी जागरण का अन्तिम चरण। इस स्थिति में पहुँचने पर साधक की अन्तः स्थिति सविता के समतुल्य बन जाती है। अवतारी महामानव, देवदूत, परमहंस, जीवन मुक्त मनुष्य इसी स्तर के होते हैं। ब्रह्म–ज्योति की सम्वेदना को प्रत्यक्ष अनुभव में लाना ही ज्योति दर्शन है। इसी को ईश्वर प्राप्ति भी कहा जा सकता है। कुण्डलिनी की दिव्य–चेतना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अन्ततः इसी स्थिति में जा पहुँचती है । इसी की प्रार्थना 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' की प्रार्थना में की गई है ।

कुण्डलिनी के पाँच नाम–(१) प्राण विद्युत, (२) जीवनी–शक्ति, (३) योगाग्नि, (४) अन्तःऊर्जा, (५) ब्रह्म–ज्योति आत्मिक प्रखरता के क्रमिक विकास का परिचय देती एवं मार्ग-दर्शन करती है ।

ध्यान करें यह शरीर महाशक्ति का एक उपकरण है । मूलाधार क्षेत्र में शक्ति बीज, शक्ति सिन्धु स्थित है । उस स्थल पर संकल्प के आघात अथवा मांस व पेशियों को कड़ा–ढीला करने से सारे शरीर में जैवीय विद्युत की सिहरन का अनुभव होता है । चित्र–विचित्र चिनगारियों जैसी अनुभूति होती है ।

२.(ख) कुण्डलिनी ध्यान धारणा के पाँच चरण

मंथन से दिव्य–ज्योति का प्रगटीकरण

कुण्डलिनी जागरण की ध्यान धारणा का प्रथम चरण है– मन्थन । मन्थन से ऊर्जा की उत्पति एवं अभिवृद्धि का तथ्य सर्वविदित है । हाथों को रगड़ते हैं तो हथेलियाँ गर्म हो जाती हैं । दही को मथने से वह गरम होता है और उस बढ़ी हुई गर्मी से पिघल कर घी ऊपर आ जाता है । बिजली का उत्पादन रगड़ से होता है । आकाश में चमकने वाली बिजली भी बादलों की हवा की रगड़ का परिणाम है । अन्तर्जगत का मन्थन करने से ब्रह्म–ज्योति प्रगट होती है । प्राणायाम क्रिया में श्वास–प्रश्वास के माध्यम से यह मन्थन कर्म ही सम्पन्न होता है । रक्त के आवागमन को भी मन्थन कहा जा सकता है, जिससे शरीर का तापमान स्थिर रहता है और काया का सारा क्रिया–कलाप विधिवत् चलता रहता है ।

कुण्डलिनी प्राण ऊर्जा मनुष्य को जन्म–जात रूप से ही प्रचुर परिणाम में उपलब्ध है, किन्तु वह प्रसुप्त स्थिति में पड़ी रहती है । सुप्त सर्पिणी उसे इसीलिए कहा गया है कि वह सर्पिणी के समान तीक्ष्ण होते हुए सोई स्थिति में, सो भी नीचे मुँह किये पड़ी रहती है । नीचा मुख किये रहने से तात्पर्य है निष्कृष्ट पथगामी– पतनोन्मुख प्रायः हमारी शक्ति कामवासना जैसे इन्द्रिय छिद्रों में होकर बहती रहती है और ऐसे कामों में लगती है जिन्हें आरम्भ में आकर्षक किन्तु अन्त में दुःखद परिणाम उत्पन्न करने वाला कहा जा सकता है । जागृत कुण्डलिनी ऊर्ध्वमुखी और ऊर्ध्वगामी होती है । इसका सीधा तात्पर्य इतना ही है कि पतन रुकता और उत्थान आरम्भ होता है ।

सोते हुए को जगाने के लिए उसे हिलाना, झकझोरना पड़ता है ।यह मन्थन क्रिया है । रतिकर्म में भी यही होता है । उसकी प्रतिक्रियाएँ, उतेजना, सरसता और गर्भ स्थापना के रूप में प्रस्तुत होती हैं ।

समुद्र मन्थन का सुविस्तृत वर्णन पुराणों में दिया हुआ है । देवता और असुरों ने मिलकर समुद्र मथा था और उस मन्थन कर्म के पुरुषार्थ का प्रतिफल १४ महारत्नों के रूप में प्राप्त किया था । आत्मसत्ता भी एक समुद्र है । इसमें ब्रह्म को (देव और प्रकृति को) दैत्य कह सकते हैं । दोनों के सम्मिलित पुरुषार्थ का प्रतिफल भौतिक और आत्मिक ऋद्धि–सिद्धि के रूप में सामने आता है । उसे समुद्र मन्थन से निकली रत्न राशि के समतुल्य समझा जा सकता है । जीवन एक समुद्र है । इसे यदि ऐसे ही पड़ा रहने दिया जाय तो खारी (निरर्थक) जल राशि से अधिक उसका कोई मूल्य न होगा, किन्तु यदि उसे मथा जाय, उसकी प्रसुप्त–मूर्छित विशेषताओं को ऊपर उभारा जाय तो सामान्य परिस्थितियों में उत्पन्न हुआ–सामान्य साधनों से गुजारा करने वाला मनुष्य भी उन्नति के उच्च शिखर पर पहुँच सकता है । ऐतिहासिक महामानवों से लेकर अविज्ञात श्रेष्ठ सत्पुरुषों तक की देवात्माएँ अपने जीवन को धन्य बनाने और असंख्यों को तारने में समर्थ हुई हैं । इसका कारण उनकी शारीरिक, मानसिक विशेषताएँ अथवा भौतिक सुविधाएँ नहीं रहीं, वरन् आन्तरिक विशेषताओं के उभार जागरण ने ही चमत्कार उत्पन्न किये हैं । इसके लिए आत्म शोधन एवं आत्म निर्माण के उभय–पक्षीय प्रबल पुरुषार्थ करने पड़ते हैं । इन दोनों प्रयासों की तुलना मथानी की रस्सी आगे–पीछे ले जाने और दधि मन्थन करने की तरह समझी जा सकती है । यही जीवन मन्थन है । दूध में छिपे हुए घी को मन्थन के द्वारा उभारने की तरह आत्मा की महती विशेषताओं को ऊपर ले आने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की चेष्टा इतनी सुखद परिणाम उत्पन्न करती है जिसकी तुलना पौराणिक समुद्र मन्थन से कम महत्वपूर्ण किसी जीवन साधक के लिए सिद्ध नहीं हो सकती ।

मानवी काया के सूक्ष्म, स्थूल और कारण शरीरों मे अग्नि तत्व की प्रखरता संव्याप्त है । शक्ति इसी का नाम है । इच्छा शक्ति, ज्ञान शक्ति और क्रिया शक्ति के रूप में उसी के अनेकानेक चमत्कार देखे जाते हैं और उन्हीं के आधार पर व्यक्तित्व का वर्चस्व आँका जाता है । इस अग्नि एवं शक्ति को अस्पर्श्य बनाये रहा जाय तो वह अविज्ञात स्थिति में ही बनी पड़ी रहेगी । उसके अस्तित्व तक का पता नहीं चलेगा, किन्तु यदि उसे उभारा जा सके तो फिर उस चिनगारी को गगनचुम्बी दावानल के रूप में प्रभाव और प्रकाश का परिचय देते हुए देखा जा सकता है । प्रबल पुरुषार्थ से इस जीवन अग्नि को उभारते हुए असंख्यों प्रगतिशीलों को देखा जाता है । साधना भी उच्चकोटि का पुरुषार्थ है । आत्मिक क्षमताओं को प्रबल बनाने में तो इसी का सबसे अधिक उपयोग होता है । कुण्डलिनी जागरण के प्रथम चरण में ध्यान धारणा के आधार पर जो मन्थन क्रिया सम्पन्न की जाती है । उससे तीनों शरीरों में छिपी हुई अग्नियाँ (शक्तियाँ,) उभर कर आती हैं । इसी तथ्य को ध्यान के समय संकल्प बल से प्रत्यक्ष किया जाता है । फलतः आत्मसत्ता में उभरती हुई अग्नि को, (शक्ति को) जीवन व्यवहार के अनेक क्षेत्रों में अपना प्रभाव परिचय देते हुए भी प्रत्यक्ष देखा जाता है । साधना जैसे–जैसे परिपक्व होती जाती है प्रखरता को भी उसी अनुपात से बढ़ते हुए देखा जा सकता है । यही अग्नि मन्थन, शक्ति मन्थन है ।

यज्ञ के लिए प्राचीन काल में पवित्र अग्नि अरणि मन्थन से ही उत्पन्न की जाती थी । लकड़ियों को परस्पर रगड़ने से ही यह अग्नि प्रगट होती है । अन्तः मन्थन को भी अरणि मन्थन के समतुल्य गिना जा सकता है । यह प्राण मन्थन भी है । शरीर का व्यायाम करने पर उसका तापमान बढ़ते और परिपुष्ट बनते देखा जा सकता है । अन्तः शक्ति का, (प्राण शक्ति का) मन्थन व्यायाम भी साधक को हर दृष्टि से सुयोग्य समर्थ बनाता चला जाता है ।

मन्थन के सुनिश्चित सत्परिणाम सर्वत्र देखे जाते है । मूलाधार मन्थन से, जीवन मन्थन का आरम्भ होता है और उससे दिव्य क्षमताओं की प्रसुप्ति महान्जागृति में परिणित होती चली जाती है । सुना गया है कि बुझे हुए दीपक भी दीपक राग के स्वर प्रवाह से जल उठते है । यह मान्यता भले ही संदिग्ध हो, पर यह सुनिश्चित तथ्य है कि ध्यान धारणा से आरम्भ होकर सर्वतोमुखी अन्तःमन्थन के फलस्वरूप जीवन की दीपशिखा जागृत होती है । अरणि मन्थन की तरह ही जीवन–ज्योति प्रज्वलित होती है । इस प्रगटीकरण से ठण्डक में गर्मी और तमिस्रा में ज्योति का अभिनव आविर्भाव होता है । यही है कुण्डलिनी जागरण का प्रथम चरण–मन्थन और उसके फलस्वरूप दिव्य ज्योति का अवतरण–प्रगटीकरण ।

२.(ग) जागृत जीवन–ज्योति का ऊर्ध्वगमन

आवश्यक नहीं कि प्रतिभा का, (क्षमता का) उपयोग श्रेष्ठ कार्मों में ही हो । बहुधा उसका अपव्यय एवं दुरुपयोग भी होता है । शरीर बल, बुद्धि बल, कौशल बल, साधन बल कितनों के ही पास होता है, पर वे उसका सदुपयोग न करके ऐसे कार्यों में दुरुपयोग करते हैं जो तत्काल तो सुखद प्रतीत होते हैं किन्तु अन्ततः दुःखद दुष्परिणामों से जीवन को नरकमय बना देते हैं । ऐसे लोग स्वयं कष्ट पाते और दूसरों को दुःखी करते देखे गये हैं । दुर्व्यसनी, कुकर्मी, दुष्ट, दुराचारी अपनी सामर्थ्यों का दुरुपयोग करते हुए सर्वत्र देखे जाते हैं । असुरता में सामर्थ्य तो होती है, पर वह कुमार्गगामी होने से दुष्परिणाम ही उत्पन्न करती रहती है । ऐसे लोगों का शक्तिवान् होना निरर्थक ही नहीं, दुर्भाग्यपूर्ण भी सिद्ध होता है । इससे तो कहीं अच्छा होता ऐसे लोग शक्तिहीन, साधनहीन ही बने रहते । तब वे अभावजन्य कठिनाइयाँ ही अनुभव करते दुष्टता की प्रताड़ना से तो बचे रहते ।

समर्थता का प्राप्त होना सौभाग्यजनक तब है, जब वह श्रेष्ठ सत्कर्म में लगे उच्च ऊर्ध्वगामी प्रयोजनों में संलग्न हो । यह तथ्य भौतिक और आत्मिक क्षेत्रों में समान रूप से लागू होता है । भौतिक बलों की तरह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आत्मबल का भी सत्परिणाम तभी हो सकता है, जब उसका प्रवाह उत्कृष्टता की दिशा में चल पड़े । इसी को कुण्डलिनी जागरण की ध्यान धारणा के द्वितीय चरण में 'ऊर्ध्वगमन' संज्ञा दी गई है। रावण, कंस, हिरण्यकश्यप, भस्मासुर, वृत्तासुर आदि ने भी दिव्य सामर्थ्य तो तपश्चर्या करके ही प्राप्त की थी, पर वे उसका दुरुपयोग करने लगे तो दुर्गति के गर्त में जा गिरे । योग और तप की शक्ति साधना से आत्मिक सामर्थ्य तो बढ़ती है, पर उसका प्रतिफल अशक्त रहने से भी अधिक कष्टकारक होता है । कुण्डलिनी जागरण में इस तथ्य को आरम्भ से ही ध्यान में रखा जाता है और जागरण से उत्पन्न प्रवाह को ऊर्ध्वगामी बनाने का प्रयास किया जाता है । यों ज्योति का (ज्वाला का) सहज प्रवाह ऊर्ध्वगामी ही होता है, पर दुर्बुद्धि उसे अधोगामी बनाने में भी नहीं चूकती । इस सन्दर्भ में पूरी-पूरी सतर्कता रखनी पड़ती है । आत्म-जागृति का (आत्म-ज्योति का) भी अधःपतन में उपयोग हो सकता है । तान्त्रिक, कापालिक, अघोरी प्रायः ऐसा ही करते भी हैं । असुरता इसी कारण बदनाम हुई अन्यथा शक्ति संचय तो इस वर्ग के लोग भी इसी आधार पर करते हैं । डाकू भी 'साहस' का आध्यात्मिक गुण अपना सकने पर ही अपने क्रूर कर्म में सफल होते हैं ।

द्वितीय चरण की ध्यान धारणा ऊर्ध्वगमन है । ध्यान किया जाता है कि मूलाधार से जागृत हुई कुण्डलिनी ज्योति ऊपर उठती है । मेरुदण्ड मार्ग से आगे बढ़ती है और सुषुम्ना पथ को पार करते हुए सहस्रार चक्र से जा मिलती है । इसे महामिलन कहा जाता है । मूलाधार शक्ति को महासर्पिणी और सहस्रार आलोक को महासर्प कहा गया है । उन्हें महाकाली और महाकाल भी कहते हैं । इन दोनों के संयोग से पति-पत्नी मिलन की तरह दोनों की अपूर्णता दूर होती है । दो विद्युत धाराओं के मिलने से उत्पन्न शक्ति प्रवाह का परिचय प्रत्यक्ष मिलने लगता है ।

जागृत कुण्डलिनी की शक्तिधारा को ऊर्ध्वगमन की दिशा देना साधक का काम है । मेरुदण्ड के भीतर की पोल सुषुम्ना मार्ग से वह ऊपर चढ़ती है और सनसनाती हुई ऊपर उठती और ब्रह्मरन्ध्र अवस्थित सहस्रार में जा मिलती है । इस ऊर्ध्वगमन का परिचय रीढ़ के इर्द-गिर्द खुजली, सरसराहट, फड़कन-रोमांच आदि के रूप में भी मिलता है । चूँकि कुण्डलिनी स्थूल शरीर की नहीं, सूक्ष्म शरीर की शक्ति है, इसलिए उसकी गतिविधियों का परिचय भी सूक्ष्म अवगाहन से ही अनुभव में आता है । प्रत्यक्ष शरीर में रीढ़ की सरसाहट जैसी अनुभूति कभी-कभी किसी को कदाचित ही होती है ।

अध्यात्म शास्त्र के अलंकारिक प्रतिपादनों में इसी ऊर्ध्वगमन को आत्मा का देवयान मार्ग से ब्रह्मलोक तक का महाप्रयाण भी कहा है । समझा जाता है कि ऐसा मरण के उपरान्त ही होता है । यहाँ इतना और समझा जाना चाहिए कि मरणोतर सद्गति की बात सही होने के अतिरिक्त यह भी प्रत्यक्ष तथ्य है कि मेरुदण्ड मार्ग को देवयान मार्ग भी कहा गया है और उस मार्ग से ऊर्ध्वगमन करने वाली जागृत आत्म-चेतना को दिव्य लोक गामिनी माना गया है । ब्रह्मरन्ध्र ही ब्रह्मलोक है । सहस्रार पर ब्रह्म विराजमान है । उनमें समीपता को जीवात्मा परमानन्द के रूप में (जीवन मुक्ति के रूप में) अनुभव करता है । मुक्ति और ईश्वर प्राप्ति एक ही वस्तु है । ईश्वर की समीपता को (मुक्ति को) चार प्रकार की माना गया है-(१) सालोक्य, (२) सामीप्य, (३) सारूप्य, (४) सायुज्य । मिलन की यही क्रमिक गतियाँ हैं । सालोक्य का अर्थ है-ब्रह्मलोक के क्षेत्र में जा पहुँचना । सामीप्य का अर्थ है-दूरी घटना और निकटता बढ़ना । सारूप्य का अर्थ है ब्रह्म के समतुल्य, ब्राह्मण ब्रह्म-परायण बन जाना । सायुज्य का अर्थ है- आत्मसत्ता और ब्रह्मसत्ता के मध्य पूर्ण एकता का अनुभव होना, दोनों का एकाकार हो जाना । ब्रह्मात्मा एवं अवतार, अवधूत. इसी स्तर के होते हैं । मरण के उपरान्त मिलने वाली मुक्ति अपनी जगह पर सही होते हुए भी जीवन काल की-(साधना काल की) जीवन मुक्ति का भी उसी प्रकार रसास्वादन किया जा सकता है जैसा कि कुण्डलिनी जागरण की ऊर्ध्वगमन ध्यान धारणा के अन्तिम भाग में मिलता है ।

मूलाधार स्थित-शरीराध्यास में गुथी हुई, उसी में रमण करने के लिए लालायित चेतना को भव बन्धनों में जकड़ी हुई कहते हैं । काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर यही तो छै भव-बन्धन हैं । इनका कटना तभी सम्भव है जब जीवात्मा अपने को (अपने स्वार्थ एवं लक्ष्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

को)–शरीर से ऊपर उठकर देखना आरम्भ करे । जब तक शरीर को ही अपना स्वरूप माना जाता रहेगा और उसके प्रिय–अप्रिय को ही लाभ–हानि समझा जाता रहेगा तब तक भव–बन्धन कटने की कोई सम्भावना नहीं है । हवाई जहाज पर सफर करने वाले जब धरती पर दृष्टिपात करते हैं तो सभी वस्तुएँ छोटी–छोटी दिखाई पड़ती हैं । ठीक इसी प्रकार अन्तःस्थिति ऊँची उठने पर शरीर के प्रिय विषय वासना, तृष्णा, अहंता आदि बहुत ही तुच्छ दिखाई पड़ने लगते हैं । तब आकाश अधिक स्पष्ट दीखता और सुरम्य लगता है । कुण्डलिनी जागरण के द्वितीय चरण में की जाने वाली ऊर्ध्वगमन की ध्यान धारणा का सत्परिणाम भी ऐसा ही होता है । उस स्थिति में जीवन–मुक्ति का आनन्द मिलने लगता है । यह आनन्द मात्र रसास्वादन नहीं होता, वरन् अपने साथ आत्मबल का ऐसा प्रचण्ड प्रवाह भी जोड़े रहता है जिसके सहारे आत्मिक और भौतिक क्षेत्र में ऐसी कुछ उपलब्धि हो सके जिसे समृद्धियों और विभूतियों के नाम से पुकारा जाता है ।

ऊर्ध्वगमन के पर्यायवाची शब्द हैं उत्थान, उत्कर्ष, अभ्युदय । इनसे उस स्तर के लोगों की स्थिति का आभास मिलता है । भौतिक बड़प्पन तो साधन सम्पन्नता के आधार पर निकृष्ट कोटि के व्यक्ति भी प्राप्त कर लेते हैं, पर आत्मिक महानता प्राप्त करने के लिए तो गुण, कर्म, स्वभाव की उत्कृष्टता का सम्पादन ही एकमात्र उपाय है । कुण्डलिनी उत्थान से इसी आन्तरिक उत्कर्ष की प्रेरणा मिलती है और अभ्युदय का वह आधार बनता है जिसे मानव, जीवन का सर्वोपरि सौभाग्य कहा जा सके ।

कुण्डलिनी जागरण के प्रथम चरण में मन्थन प्रक्रिया होती है । इसे प्रबल पुरुषार्थ की उमंगों का उठना कह सकते हैं, इसमें कुसंस्कारों को निरस्त करने और सदाशयता को बढ़ाने के लिए अदम्य साहस उमड़ता है । प्रसुप्ति को जागृति में बदलने का यही एकमात्र उपाय है । इस जागरण को (शक्ति उद्भव को) ऊर्ध्वगामी बनाना आत्मिक प्रगति का दूसरा चरण है । दिशा धारा न मिलने से ही भटकाव की स्थिति उत्पन्न होती है । दुरुपयोग होने पर तो उससे उलटा विनाश होने लगता है । अस्तु शक्ति का उत्पादन होते ही उसका उपयोग उत्कृष्टता की दिशा में नियोजित किया जाना उचित है । यही भौतिक प्रगति का आधार है और इसी मार्ग का अवलम्बन करने से आत्मिक प्रगति सम्भव होती है । अधःपतन बन्द करने से उत्थान की सम्भावना बढ़ती है । पेंदे में से टपकने वाले पानी को जब छिद्र बन करके रोक दिया जाता है तो घड़े को भरने की बात बनती है । कुण्डलिनी जागरण से विकसित होने वाली आत्मसत्ता भी इसी मार्ग से समुन्नत बनती है ।

ध्यान करें सविता शक्ति जागृत कुण्डलिनी शक्ति को दबाव देकर सूक्ष्म प्रवाहों के माध्यम से, मेरुदण्ड के मध्य से ऊपर की ओर प्रवाहित होने को बाध्य कर रही है । सविता शक्ति की लहर पर लहर उसी दिशा में चलती है और उसके साथ–साथ शरीरस्थ जीवनी–शक्ति क्रमशः ऊपर की ओर बढ़ती–चढ़ती जा रही है ।

२. (घ) चक्र शृंखला का वेधन–जागरण

काय–कलेवर में तो असंख्य शक्ति संस्थान हैं । प्रसुप्त स्थिति में वे मृतवत् पड़े रहते हैं, पर जब वे जागृत होते हैं तो अपना पराक्रम क्रुद्ध सिंह की तरह दिखाने लगते हैं । देव वरदान या सिद्धि चमत्कार के नाम से जानी जाने वाली विभूतियों के सम्बन्ध में समझा जाता है कि वे किसी बाहरी सत्ता के अनुग्रह का प्रतिफल हैं और वे सौभाग्य की तरह कहीं से अनुनय–विनय के आधार पर मिलती हैं । पर वस्तुतः ऐसा होता नहीं । वे अपने ही अन्तर्जगत की प्रखरता के साथ प्रकट होने वाली उपलब्धियाँ भर होती हैं । आत्म–जागरण और ईश्वरीय अनुग्रह को अविच्छिन्न समझा जा सकता है ।

साधना द्वारा जिन शक्ति संस्थानों को जगाया जा सकता है और जीवन के अनेक क्षेत्रों में जिनका चमत्कार देखा जा सकता है उनकी संख्या अगणित है । पर इनमें छः प्रमुख हैं । इन्हें षट्चक्र कहते हैं । मूलाधार मेरुदण्ड के सबसे नीचे भाग में और सहस्रार सबसे ऊपर वाले छोर पर है । इनके मध्य में स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत और विशुद्ध चक्र हैं । इस प्रकार मेरुदण्ड मार्ग में छः की संख्या पूरी हो जाती है । यहाँ एक शास्त्रीय विकल्प–मतभेद चला आता है । आज्ञाचक्र को षट्चक्रों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में सम्मिलित किया जाय तो सहस्रार को केन्द्रीयसत्ता ठहराना पड़ेगा । यदि सहस्रार को षट्चक्रों में गिनते हैं तो आज्ञाचक्र को झरोखा, खिड़की, सर्चलाइट नाम देकर उसकी गणना अलग से करनी पड़ेगी । आज्ञाचक्र और सहस्रार दोनों को ही शक्ति चक्रों की शृंखला में गिन लिया जाय तो उनकी संख्या सात होती है । यह छः और सात का झंझट है । वस्तुतः यह सभी चक्र दिव्य-शक्तियों के अत्यन्त प्रभावोत्पादक संस्थान है । इनमें से न किसी का महत्व कम है और न प्रगति के पथ पर अग्रगामी आत्म-चेतना इनमें से किसी की उपेक्षा कर सकती है । हमें दोनों ही गणनाओं को मान्यता देनी चाहिए । किन्तु लाभान्वित सातों से होना चाहिए ।

पुराणों में षट्चक्रों को शंकर जी (शिव) एवं पार्वती (शक्ति) के पुत्र शडमुखी कार्तिकेय के रूप में चित्रित किया गया है । उन्हें अग्नि ने अपने गर्भ में रखा और छः कृतिकाओं ने पालन किया था । ठण्ड होते ही उन्होंने दुर्दान्त दैत्यों को निरस्त किया है और देव-शक्तियों में स्वर्गीय क्षेत्र का आधिपत्य वापस दिलाने में भारी योगदान दिया । दस कथानक का विस्तृत वर्णन पुराणकारों ने जिस ढंग से किया है उससे स्पष्ट है कि यह मेरुदण्ड स्थिति षट्चक्रों के स्वरूप, रहस्य एवं प्रतिफल का ही कथापरक चित्रण है ।

सात की गणना भी कम महत्वपूर्ण नहीं है । सप्तद्वीप, सप्त समुद्र, सप्तलोक, सप्तऋषि, सूर्य रथ के सप्त अश्व आदि के स्वरूप एवं महत्व को यदि ठीक तरह पढ़ा जाय तो उन उपाख्यानों में सप्तचक्रों में सन्निहित क्षमता एवं जागरण की प्रतिक्रिया का सहज ही परिचय मिलता है । काया को यों ("पिण्ड") कहते हैं, पर यदि उसकी दिव्य क्षमता के विस्तार पर दृष्टि डाली जाय तो वह एक पूरा ब्रह्माण्ड ही कहा जा सकता है ।

यह चक्र मेरुदण्ड मार्ग में अवस्थित है-आज्ञाचक्र यों भ्रूमध्य भाग में माना जाता है, पर वस्तुतः वह भी इन स्थान की सीध में थोड़ी गहराई में अवस्थित है । सहस्रार चक्र का स्थान मस्तिष्क मध्य है । सहस्रार को सूर्य माना जाय तो आज्ञाचक्र को उसका उपग्रह चन्द्रमा कहा जा सकता है । दोनों परस्पर अति घनिष्ठता से सम्बन्द्ध हैं और अति समीप भी हैं । अस्तु दोनों को ही मेरुदण्ड के उच्च भाग से सम्बन्धित मान लिया जाय और सातों को मेरुदण्ड से सम्बन्धित मान लिया जाय तो इसमें किसी प्रकार की अड़चन नहीं है । इतने पर भी जब चक्रों के जागरण का प्रश्न आता है तो उनकी संख्या छः ही मानी जाती है । सातवाँ सहस्रार जागरण का केन्द्र और ब्रह्म का प्रत्यक्ष प्रतीक मान लिया जाता है । जागरण के लिए तो षट्चक्रों पर ही जोर दिया जाता है ।

मूलाधार से जब कुण्डलिनी शक्ति जागृत होती है तो वह ऊपर उठती है । गर्मी पाकर हवा ऊपर को ही उठती है । बादल बनने और चक्रवात उठने की क्रिया में यह प्रत्यक्ष देखा जा सकता है कि गर्मी का एक कार्य सम्बन्धित वस्तुओं को ऊपर उठाना भी है । शक्ति जागरण का ऊर्ध्वगामी हो जाना सहज सुलभ नहीं है । इसके मार्ग में अवरोध भी है । जिनसे निपटना पड़ता है । इन्हें लम्बी यात्रा के मार्ग में पड़ने वाले मील के पत्थर या विश्राम-गृह, उपहार-ग्रह भी कह सकते है । चक्र जागरण को चक्र-वेधन भी कहते हैं । जिस प्रकार बिखरे फूलों को, बिखरे मोतियों को वेध कर एक सूत्र में पिरोया जाता है और उनकी माला बनती है, उसी प्रकार इस चक्र-वेधन प्रक्रिया को भी समझा जा सकता है । बिखराव में संघबद्धता में परिणत कर देने पर जो प्रतिफल उत्पन्न होता है, वही चक्र-वेधन प्रक्रिया का भी होता है ।

भूमि का वेधन करके गहराई में उतरते जाने पर ही जल स्रोत धातुएँ, खनिज पदार्थ, तेल आदि की उपलब्धियाँ हस्तगत होती हैं । काय-कलेवर भी एक प्रकार से भू-लोक ही है । उनमें जो सम्पदाएँ दबी पड़ी हैं, उनमें कुछ परम उपयोगी षट्चक्रों के रूप में जानी जाती है । घर वालों को सोते हुए देखकर चोर घर में घुसते, घात लगाते और हानि पहुँचाते हैं । ठीक इसी प्रकार प्रसुप्त चक्रों की निस्तब्धता देखकर षट्रिपु-दुदन्ति दस्युओं की तरह भीतर घुस पड़ते हैं । आन्तरिक षड्रिपुओं को काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद मत्सर कहा गया है । बाहरी शत्रु तो बाहरी हानि ही पहुँचा सकते हैं, पर यह आन्तरिक शत्रु तो सारे अन्तःक्षेत्र को ही खोखला करते और भविष्य को अन्धकारमय बनाते हैं । जैसे-जैसे जागृति आती है वैसे-वैसे इन शत्रुओं का पलायन होने लगता है । प्रकाश का प्रभात उगते ही निशाचर अपनी-अपनी कोंतरों में जा छिपते हैं । हिंस्र, पशु-पक्षी,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

कीड़े–मकोड़े, चोर आदि प्रायः रात में ही घात लगाते हैं और दिन निकलते ही अपनी हरकतें बन्द कर देते हैं । आन्तरिक षड्रिपुओं के बारे में भी यही बात है । पशु-प्रवृत्तियों का निराकरण न हो सकने के कारण आत्मिक प्रगति प्रायः रुकी ही पड़ी रहती है । कुण्डलिनी जागरण के तृतीय चरण में षट्चक्रों के शोधन, वेधन, जागरण, प्रक्रिया के साथ–साथ यह अवरोधों के निवारण का उद्देश्य भी पूरा होने लगता है ।

भगवान् राम ने बालि वध की सामर्थ्य का परिचय देने के लिए सुग्रीव को सात ताड़ों का वेधन एक ही बाण में करके दिखाया था । चक्रवेधन को उसी के समतुल्य आत्मिक पराक्रम कहा जा सकता है । यह कुम्भकरण को जगाने के सदृश हैं । विष्णु भगवान् शेषशैय्या पर प्रसुप्त स्थिति में पड़े रहते हैं, पर वे जागृत किये जा सकें तो समय–समय पर अवतार लीलाओं का पराक्रम देखते हैं । आत्मसत्ता भी प्रसुप्त पड़ी हुई उपहासास्पद बनी रहती है, पर यदि उसे कुण्डलिनी जागरण जैसे साधना प्रयोगों द्वारा जागृत किया जा सके तो उसकी दिव्य सक्रियता देखकर आश्चर्यचकित रह जाना पड़ेगा ।

चक्र जागरण को समग्र आत्म–जागृति का खण्ड प्रयास कह सकते हैं । लम्बी यात्रा एक बारगी नहीं हो सकती, उसके बीच–बीच में विराम लेने होते हैं । रेलगाड़ी स्टेशनों पर रुकती हुई गन्तव्य स्थान तक पहुँचती है । चक्रों को ऐसे ही विराम केन्द्र कहा जा सकता है जहाँ पिछले श्रम की थकान मिटाने और अगली यात्रा के लिए सामर्थ्य प्राप्त करने की सुविधा मिलती है । इस प्रयास में जो लाभ मिलने चाहिए वे भी प्राप्त होते चलने से स्कूली छात्रों को इनाम, उपहार देकर अधिक उत्साह से पढ़ने की प्रेरणा मिलने जैसा प्रसंग भी बन जाता है । चक्रों का जिस अनुपात से जागरण होता है, उसी क्रम से वे आत्मिक विभूतियाँ उभरती चली आती हैं जिन्हें चमत्कारी ऋद्धि सिद्धियों के नाम से जाना जाता है ।

चक्रवेध के समतुल्य और भी कई शब्द हैं जैसे लक्ष्य–वेध, शब्द–वेध, चक्रव्यूह–वेध । इन वेधन कर्मों में कई महत्वपूर्ण सफलताएँ छिपी हुई हैं । लक्ष्य वेध निशाना मारने को कहते हैं । युद्ध जीतने में (शत्रु को परास्त करने में) सही निशाना लगने का बहुत महत्व है । योजना बनाते समय लक्ष्य निर्धारित किया जाता है और उसकी प्राप्ति के लिए तत्परतापूर्वक प्रयत्न में जुटा जाता है । जीवन का लक्ष्य पूर्णता की प्राप्ति है । इसी प्रकार अन्य अनेक उद्देश्य हो सकते हैं जिन्हें लक्ष्य कहा जाय । लक्ष्य–वेध से–लक्ष्य प्राप्ति से जो प्रसन्नता एवं सफलता मिलती है उसके लाभ तथा आनन्द को सभी जानते हैं ।

शब्दवेधी बाण की चर्चा सुनी जाती है । प्रभावशाली शब्दों से अन्तरवेध डालने वाली बात से भी सभी परिचित हैं । नादयोग–शब्दयोग है । शब्द ब्रह्म भी उसे कहते हैं । उसका वेधन ईश्वर प्राप्ति का ही एक प्रकार है । षट्चक्र वेधन को (चक्रवेध को) ऐसे ही शब्दवेध की उपमा दी जा सकती है ।

चक्रव्यूह युद्ध कला की एक संरचना है । जिसमें प्रतिद्वन्दी की घेराबन्दी की जाती है । जंगली हाथियों को पकड़ने के लिए उन्हें चारों ओर से घेर कर एक छोटे घेरे में लाया और बन्दी बनाया जाता है । शिकारियों को यही नीति अपनाते देखा गया है । वे सिंह, व्याघ्र आदि को चारों ओर से हंगामा मचा कर एक घेरे में समेटते लाते हैं और फिर उन्हें गोली का निशाना बनाते हैं । चक्रव्यूह युद्ध कला भी है । महाभारत में अभिमन्यु को ऐसी ही व्यूह रचना में फँसा कर मारा गया था । जीवात्मा भी एक ऐसे ही चक्रव्यूह में फँसी है । इसी घेराबन्दी को भव–बन्धन कहते हैं । पराधीनता यही है । इसी से छुटकारा पाने को मुक्ति या मोक्ष कहते हैं । दुष्प्रवृत्तियों और दुर्भावनाओं की घेराबन्दी में फँसा हुआ प्राणी जाल में फँसे पक्षी की तरह तड़पते हुए प्राण गँवाता है । बहेलिया मृग को जाल में फँसाता है–मछुए आटे की गोली का लोभ देकर मछली को काँटे से वेधते हैं, ऐसी ही दुर्गति असुरता के वधिक द्वारा जाल में फँसाये जीवात्मा की होती है । इन चक्रव्यूहों से बच निकलने का जिसे अवसर मिले उसे सौभाग्यशाली गिना जायगा । कुण्डलिनी जागरण की–चक्रवेध प्रक्रिया को चक्रव्यूह वेधन के समतुल्य माना जाय तो इसमें तनिक भी अत्युक्ति नहीं है ।

कुण्डलिनी जागरण की ध्यान धारणा के तीसरे चरण में षट्चक्रों का वेधन आता है । इस सन्दर्भ में यह भाव चित्र स्पष्ट किया जाता है कि मूलाधार केन्द्र में

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मन्थन प्रक्रिया के कारण प्राण ऊर्जा जागृत होती और ऊपर उठती है। मेरुदण्ड मार्ग में होती हुई वही सहस्रार तक पहुँचती है। इस मार्ग के मध्यवर्ती मोर्चों को उसे जीतना पड़ता है। विराम स्थलों पर ठहरना पड़ता है और उपहार जीतने की प्रतिस्पर्धा में भाग लेना पड़ता है। बिखरे मोती समेटने और एक सूत्र में पिरो कर माला के रूप में परिणत करने होते हैं। यही सब चक्रवेध की प्रक्रिया है। जिस प्रकार वरमा लकड़ी को– धरती को– छेदते हुए आगे बढ़ता है उसी प्रकार मूलाधार की जागृति प्राण शक्ति–कुण्डलिनी सुषुम्ना मार्ग की इस चक्र शृंखला को अपनी प्रचण्ड क्षमता से वेधन करती हुई लक्ष्य प्राप्ति के लिए आगे बढ़ती है। इस ध्यान में संकल्प एवं विश्वास का गहरा पुट रहने से यह कल्पना करने जैसी तुच्छ दीखने वाली बात वस्तुतः अत्यन्त प्रचण्ड सामर्थ्य सिद्ध होती है और वेधन के साथ जुड़े हुए समस्त उद्देश्यों की पूर्ति करती है।

ध्यान करें– मेरुदण्ड में सुषुम्ना एक प्रकाशवान् नली टूयूब की तरह। उसमें विशिष्ट शक्ति केन्द्र नीचे मूलाधार, पेडू की सीध में– स्वाधिष्ठान, नाभि की सीध में– मणिपूर, हृदय की सीध में– अनाहत, कण्ठ की सीध में– विशुद्धि, भ्रू–मध्य की सीध में– आज्ञाचक्र एवं सबसे ऊपर सहस्रार चक्र। ध्यान क्रमशः तेज ग्रन्थियों के रूप में करें। मूलाधार से योगाग्नि के ज्योति कण गोली की तरह छूटते हैं तथा उन चक्रों से टक्कर मारते हैं। चक्रों के शक्ति केन्द्रों में हलचल एवं जागरण स्फुरण की अनुभूति होती है, उनसे शक्ति प्रवाह फूट पड़ते हैं।

२. (ई, ङ) आत्मीयता का विस्तार आत्मिक प्रगति का आधार

कुण्डलिनी जागरण की ध्यान धारणा का चौथा चरण है–विस्तरण सीमित को असीम बनाना। संकीर्ण स्वार्थपरता में जकड़ा हुआ जीवात्मा महत्वपूर्ण प्रगति एवं उपलब्धि से वंचित ही बना रहता है। भ्रमवश लगता भर ऐसा है कि स्वार्थी मनुष्य लाभ में रहता है। अपने ही लाभ के गोरखधन्धे में लगा रहने के कारण सुसम्पन्न बन जाता होगा। परमार्थ में व्यय न होने के कारण उसके पास प्रचुर सम्पन्नता जमा हो जाती होगी। आरम्भ में कुछ–कुछ लगता भी ऐसा ही है किन्तु अन्ततः इसी निष्कर्ष पर पहुँचना पड़ता है कि संकीर्ण स्वार्थपरता में जो लाभ सोचा गया था वह सही नहीं निकला। उलटे इस भ्रम जंजाल में अपने पैरों कुल्हाड़ी मारी गई, भारी हानि उठाई गई।

संकीर्ण स्वार्थपरता ही उद्धत विलासित, आतुर तृष्णा और उद्दण्ड अहंता के रूप में पिशाच नृत्य करती है और दुष्ट चिन्तन में (क्रूर कर्मों में) उलझाये रह कर शोक–सन्तापों के गर्त में धकेल देती है। स्वार्थी का उपार्जन दुर्व्यसनों में नष्ट होता है अथवा उत्तराधिकारी उस हराम की कमाई को फुलझड़ी की तरह जलाते हैं। ऐसा व्यक्ति जीवन लक्ष्य की पूर्ति के लिए परमार्थ, पुरुषार्थ कर सकने का साहस जुटा ही नहीं पाता। किसी प्रकार सस्ती बाल–क्रीड़ा जैसे पूजा–पाठों को आश्रय लेकर उन स्वप्नों को देखता रहता है, जो उदात्त जीवन नीति अपनाने वालों के लिए प्रत्यक्ष हो सकते हैं।

आत्मिक प्रगति का सीधा अर्थ है–आत्म विस्तार–अपनेपन की सीमा को अधिकाधिक व्यापक विस्तृत बनाना। सब हमारे– हम सबके की मान्यता ही वसुधैव कुटुम्बकम् के रूप में परिणित और 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' बनकर विकसित होती है। संकीर्ण मनुष्य नर है और उदात्त बनने पर वही नारायण बन जाता है। पुरुष को पुरुषोतम, अणु को विभु, तुच्छ को महान्, जीवन को ब्रह्म बनने का अवसर आत्म–विस्तार का उदात्त दृष्टिकोण अपनाने से ही प्राप्त होता है। संसार के समस्त महामानवों को अनिवार्य रूप से अपने जीवन में उदात्त परमार्थवृति का समावेश करना पड़ा है। साधु और ब्राह्मण जीवन इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। भगवत भक्तों को सादा जीवन उच्च विचार की आधारशिला पर खड़े होकर सच्ची ईश्वर परायणता का प्रमाण देना पड़ता है। जिसे कृपणता, संकीर्णता और स्वार्थपरता ने घेर रखा हो समझना चाहिए कि उसकी आस्तिकता, आध्यात्मिकता एवं धार्मिकता कोई विडम्बना है। आत्मिक प्रगति का परिचय तो अपनेपन का अधिकाधिक विस्तार करते चलने से ही मिलता है। यज्ञीय जीवन इसी को कहते हैं। परमार्थ और यज्ञ एक ही तथ्य के दो नाम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

हैं– जीवन को यज्ञमय बनाने पर ही नर कलेवर में नारायण का प्रगटीकरण होता है। कुण्डलिनी ध्यान धारणा का चौथा चरण इस विस्तरण प्रक्रिया को अपनाने से ही सम्पन्न होता है। भावना की जाती है कि मूलाधार शक्ति की चिनगारी सीमित क्षेत्र में अवरुद्ध नहीं रही, वरन् व्यापक क्षेत्र को प्रभावित करने वाली दावानल का रूप धारण कर रही है। ज्योति ने छोटी बती में सीमित न रहकर प्रचड़ ज्वाला की तरह अपना क्षेत्र विस्तृत बनाने का निश्चयकर लिया। कुण्डलिनी मूलाधार में विकसित होकर समग्र आत्मसत्ता पर आच्छादित हुई और काय–कलेवर का समूचा क्षेत्र अपनी परिधि में (पकड़ में) ले लिया। कुण्डलिनी मूलाधार में अवरुद्ध नहीं रही, वरन् समूचे जीवन पर अपने व्यापक होने का परिचय देने लगी। आत्मसत्ता भी सीमित कैसे रह सकती है ? उसने भी विश्वसत्ता रूप धारण कर लिया। जो चिन्तन एवं कर्म मात्र शरीर तथा उसके साथ जुड़े हुए कुछ परिवारों के लिए नियोजित रहता था उसने अपनी आत्मीयता बढ़ाली और असंख्यों के साथ अपनापन जोड़कर परमार्थ में स्वार्थ सधने की मान्यता अपना ली।

यह कोई स्वप्न या कल्पना मनोरंजन नहीं, वरन् ऐसा तथ्य है जो व्यवहार में उतरता ही चला जाना चाहिए। इस धारणा के समय यह भावनाएँ उभरती रहनी चाहिए कि संकुचित चिनगारी अब सुविस्तृत दावानल बनने जा रही है और ज्योति ज्वाला बनकर रहेगी। शरीर और परिवार का स्वार्थ ही भूत की तरह सिर पर छाया न रहेगा, वरन् उसमें देव प्रयोजनों की पूर्ति का साहस भी उभरेगा।

पेट और प्रजनन भर से अब सन्तोष न किया जा सकेगा वरन् उत्क उत्कृष्टता एवं आदर्शवादिता का अभिवर्धन करने वाली गतिविधियों को भी जीवन नीति में सम्मिलित करना पड़ेगा। देश, धर्म, समाज और संस्कृति का भी उसी प्रकार ध्यान रखना पड़ेगा जैसा कि शरीर और परिवार के हित साधन का रखा जाता है। यह चिन्तन अधिकाधिक स्पष्टतापूर्वक मस्तिष्क को प्रभावित करने लगे और व्यवहार में उसी प्रकार के प्रयासों में तत्परता दृष्टिगोचर होने लगे तो समझना चाहिए कि विस्तरण की ध्यान धारणा का अभीष्ट उद्देश्य पूरा हो रहा है।

ध्यान करें मूलाधार स्थित सामान्य स्फुलिंग प्रचण्ड ज्वाला के रूप में बढ़ गये। सभी चक्रों से प्रकाश धाराएँ विकसित होकर चारों ओर फैल रही हैं। मेंरुदण्ड जलती हुई ट्यूब लाइट की तरह प्रकाश से भरा हुआ है। सारे शरीर संस्थान में दिव्य सम्वेदनाओं की सिहरन उठती है, अन्दर असीम शक्ति का अनुभव, आत्मीयता, प्रेम, करुणा आदि विस्तृत होकर सारे विश्व को अपनी गोद में समेंटे ले रही है– ऐसा बोध।

२. (च) अन्तिम चरण–परिवर्तन

साधना सफल हो रही है या असफल ? इस प्रश्न का उत्तर एक ही आधार पर दिया जा रहा है कि नर पशु जैसी स्थिति का परिष्कार नर–नारायण बनने की दिशा में हो रहा है या नहीं। यदि चिन्तन पशु प्रवृत्तियों में ही उलझा रहता हो। लोभ और मोह के अतिरिक्त और किसी में रुचि न हो– पेट और प्रजनन के अतिरिक्त और कुछ कर्तव्य सूझता ही न हो– वासना और तृष्णा की खुमारी हलकी न पड़ रही हो तो समझना चाहिए कि आत्म–साधना के सारे प्रयास कल्पना एवं बाल–क्रीड़ा बनकर मात्र मनोविनोद का प्रयोजन पूरा कर रहे हैं। उनका वास्तविक सत्परिणाम उत्पन्न नहीं हो रहा है। ईश्वरीय अनुग्रह और दैवी अनुदानों का आरम्भ होने जा रहा है यह नहीं इसकी परख इसी कसौटी पर हो सकती है कि चिन्तन और कर्म में उत्कृष्टता का समावेश हुआ या नहीं। स्पष्ट है कि पशु प्रवृत्तियों में कड़ा हुआ कोई मनुष्य आज तक कभी भी आत्म–कल्याण का, ईश्वरीय अनुग्रह का अनुदान प्राप्त कर सकने में सफलं नहीं हुआ। भले ही वह पूजा–पाठ के कितने ही उपचार रचता और बदलता रहता हो। सोने के खरेपन की परख उसे आग में तपाने और कसौटी पर कसने से होती है। ठीक उसी प्रकार साधना मार्ग पर चलते हुए आत्म–परिष्कार की प्रगति का स्तर इस आधार पर आँका जाता है कि साधक ने अपने दृष्टिकोण एवं क्रिया–कलाप में उत्कृष्टता का कितना समावेश किया। पशु–प्रवृतियों का देव वृतियों में परिवर्तन कितने परिमाण में सम्भव हो सका ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गीता में आत्म मार्ग के पथिकों की गतिविधियाँ–भव–बन्धनों में जकड़े हुए मायाग्रस्त सामान्य नर–वानरों से भिन्न प्रकार की बताई है । अलंकारिक रूप से कहा है जब संसारी सोते हैं, तब योगी जगते है । जब योगी जगते हैं तब संसारी सोते हैं । इस पहेली का अर्थ यह है कि मोहान्ध संसारियों से विवेकवान् आत्मवानों का दृष्टिकोण, लक्ष्य, स्वभाव एवं प्रयत्न भिन्न प्रकार का प्रायः विपरीत स्तर का होता है । जिन बातों को संसारी प्राण प्रिय मानते हैं और उनके लिए जीवन सम्पदा निछावर कर देते हैं, उनमें आत्मवानों को न तो रुचि होती है और न रस । वे उस ओर से उदासीन रहते हैं और महामानवों के द्वारा अपनाये गये उस मार्ग पर साहसपूर्वक चलते हैं जिसे चतुर लोगों की दृष्टि में 'मूर्खता' ही समझा जा सकता है । ऐसी दशा में स्पष्ट है कि साधक के जीवन–क्रम में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ दृष्टिगोचर होने लगे । सामान्य व्यक्ति अपनी तुलना में उसे असाधारण रूप में भिन्न एवं बदला हुआ देखे तो यह स्वाभाविक ही है ।

कुण्डलिनी आत्म–शक्ति है । जब वह प्रखर होती है तो उन आन्तरिक दुर्बलताओं को निरस्त होना पड़ता है जो आदर्श जीवान के मार्ग पर बढ़ चलने से रोकने वाली सबसे बड़ी बाधाएँ हैं । आकर्षणों का लोभ और तथाकथित 'मित्रों' का दवाब यही दो कारण हैं, जिनमें उत्कृष्टता के देव मार्ग पर चलने वाली आन्तरिक उमंगों में पग–पग पर पद–दलित होना पड़ता हे । इच्छा और सुविधा रहते हुए भी मनुष्य कुछ कर नहीं पाता और पेट प्रजनन के पशु लोक में किसी प्रकार जीवन का भार ढोते हुए पाप का भार और भी अधिक बढ़ाते हुए अन्धकार भरे भविष्य की दिशा में संसार से कूच करता है । इसी प्रवाह में जन–जीवन बहता रहता है । उसे चीरकर उलटे चलने की मछली जैसी क्षमता जिसमें उग सके समझना चाहिए इसका आत्मबल जगा और कुण्डलिनी जागरण का चिह्न प्रकट हुआ । बढ़ी हुई आत्मशक्ति कितने ही चमत्कार दिखाती है । इनमें सबसे पहला यह होता है कि अपने–आन्तरिक दुस्साहस के बलबूते 'अकेला चलो रे' का मन्त्र जपते हुए आत्मा, श्रेय पथ पर एकाकी चल पड़ता है । अपने निश्चय भगवान् के संकेत के अतिरिक्त और किसी के परामर्श एवं सहयोग की जरूरत नहीं पड़ती । आवश्यक ही हुआ तो देव परम्परा के महामानवों की साहसिक साक्षियाँ, उक्तियाँ, स्मृतियाँ इस प्रयोजन के लिए पर्याप्त मात्रा में सहज ही मिल जाती हैं । इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठ इसकी साक्षी देने के लिए प्रस्तुत हैं । उनमें साहसिक प्रेरणा देने वाले तत्व प्रचुर परिमाण में कभी भी प्राप्त किये जा सकते हैं ।

श्रेष्ठता की कल्पना करते रहना और निकृष्टता के मार्ग पर चलते रहना यही है आत्मिक दुर्बलता का सबसे बड़ा प्रमाण है । कुण्डलिनी जागरण की आन्तरिक प्रखरता इस विडम्बना को लात मार कर भगा देती है और शूरवीरों जैसे दूरदर्शी निर्णय और साहस भरे संकल्प लेकर सामने आती है । इतनी सामग्री जहाँ जुट सकेगी वहाँ नरक की कीचड़ में सड़ते रहने की विवशता का और कोई बाहरी कारण बाधक न रह जायगा । इस जागरण की प्रतिक्रिया ऐसे परिवर्तन के रूप में सामने आती है जिसे 'काया–कल्प' कहा जा सके । बूढ़े शरीर को औषधियों के साहरे युवा बनाने के प्रयत्नों को काया–कल्प कहा जाता है । उसमें तो कोई कहने लायक सफलता अभी तक नहीं मिली है, पर आन्तरिक काया–कल्प के उपचार से थके–हारे बूढ़े मन, नव युवकों जैसी अभिनव उमंगों से भरे–पूरे निश्चय ही बन सकते हैं । लिप्साओं और ललकों में जकड़ा– (लोभ और मोह द्वारा पकड़ा) निरीह दयनीय जीवन जब आत्म–गौरव को समझने लगता है और आत्मावलम्बन के सहारे आत्म–निर्माण के लिए तनकर खड़ा होता है तो इसे काया–कल्प की संज्ञा दी जा सकती है । यह परिवर्तन आत्मबल की प्रचुरता के बिना सम्भव हो ही नहीं सकता । कुण्डलिनी जागरण की सूक्ष्म प्रक्रिया का स्थूल परिचय का रूप में जानना हो जो जीवन–धारा को आदर्शवादिता की दिशा में मोड़ देने के रूप में ही उसे परखा जाना चाहिए । दृष्टिकोण, लक्ष्य, रुझान एवं क्रिया–कलाप का यह उच्चस्तरीय परिवर्तन ही कुण्डलिनी जागरण का अन्तिम चरण है । ध्यान धारणा में इसी आस्था को परिपक्व किया जाता है । सर्वतोमुखी परिवर्तन के उज्ज्वल भविष्य का स्वर्णिम भाव चित्र अन्तःलोक में विनिर्मित किया जाता है ताकि उसी प्रकार का प्रत्यक्ष परिवर्तन भी सम्भव हो सके ।

मूलाधार शक्ति का सहस्रार में जा मिलना–परिवर्तित होना– यह बताता है कि काम–बीज, ज्ञान–बीज के रूप में परिवर्तित हो रहा है । क्षुद्र प्राणी कामनाओं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के (कामुकता के) कल्पना रस में ललचाते रहते हैं और बेतरह चासनी पर टूट पड़ने वाली मक्खी की तरह फँसते और दुर्गति भुगतते हैं । आटे की गोली के लोभ में जान गँवाने वाली मछली की तरह इन कामग्रस्तों की दुर्दशा होती है । आत्म–जागृति में विवेक के नेत्र खुलते हैं और परिणाम की प्रतिक्रिया सूझ पड़ती है । ऐसी दशा में रस का केन्द्र काम बिन्दु न रहकर ज्ञान बिन्दु बन जाता है । सद्ज्ञान के अवगाहन में उससे कहीं अधिक उच्चस्तरीय आनन्द आता है जैसा कि लोलुपों को कामनाओं से डूबते, तिरते हुए कुछ–कुछ अनुभव होता है । भावी जीवन की सुनिश्चित रूपरेखा विवेकशीलता के आधार पर बनना और उस पर बिना लड़खड़ाये आजीवन चलते रहने का संकल्प करना इसी मनोभूमि में बन पड़ता है । कुण्डलिनी जितने अंशों में जागृत होती है उतने ही अनुपात से यह सर्वतोमुखी परिवर्तन की प्रक्रिया प्रखर होती है । तब सद्ज्ञान ही भावी यात्रा का एक मात्र मार्ग–दर्शक होता है । यह महान् परिवर्तन सबको अपने में दीखता है । हर कोई इस परिवर्तन को अनुभव करता है । इतना ही नहीं अपने को भी शरीर, संसार, सम्पर्क के साधन, सम्बद्ध प्राणी प्रायः बदले हुए ही दीखते हैं । मोह नेत्रों के स्थान पर जब दिव्य चक्षु लगते हैं तो संसार का स्वरूप पहले जैसा न रहकर सर्वथा भिन्न एवं विचित्र प्रकार का लगता है । इसी विराट् विश्व में परब्रह्म की झाँकी अहर्निशि होने लगती है ।

क्षुद्रता का महानता में परिवर्तन, कामना का भावना में परिवर्तन, नर का नारायण में परिवर्तन जैसे महान् परिवर्तनों को अन्तःक्षेत्र में होना सच्चे अर्थों में आत्मिक काया–कल्प है । इसी को तमसाछन्न की सत्व सम्पदा में, नरक की स्वर्ग में, बन्धनों की मुक्ति में परिणिति भी कह सकते हैं । आत्मा का परमात्म स्वरूप में अपूर्णता का पूर्णता में परिवर्तन होना यही है वह जीवन–लक्ष्य है जिसकी प्राप्ति के लिए यह सुरदुर्लभ मानव जन्म प्राप्त हुआ है । कुण्डलिनी जागरण की ध्यान धारणा के अन्तिम चरण–परिवर्तन इसी स्थिति को प्राप्त करने की आतुरता, उत्कण्ठा उत्पन्न करता है । चाह की उत्कटता स्वयमेव राह बनाती और लक्ष्य तक पहुँचने का साधन जुटाती है ।

ध्यान करें शक्ति क्षेत्र मूलाधार की तरंगों का, शिव क्षेत्र सहस्रार में विलय हो रहा है । शक्ति शिव एक हो गये हैं । शरीर संस्थान पर दिव्यसता के आधिपत्य का बोध । ब्रह्म–ज्योति में तप कर आत्मसत्ता, कामना, वासना आदि कलुषों से मुक्त होकर ब्रह्मसता से एक रूप हो रही है । स्वार्थ परमार्थ में, अपने सुख की कामना–सबके हित की आकांक्षा में, वासना, तृष्णा–शान्ति सन्तोष में, परिवर्तित हो रहे हैं । आत्म–वर्चस् असीम से एकाकार होकर ब्रह्म वर्चस् के रूप में बदल रहा है ।

३. (क, ख) समापन शान्ति पाठ

दोनों ध्यान धारणाओं का अन्तिम चरण समापन शान्ति पाठ है । किसी लेख में 'उपसंहार' अनिवार्य माना जाता है । ध्यान धारणा की प्रस्तुत प्रक्रिया में समापन शान्ति पाठ का भी उतना ही महत्व है । इसे अनिवार्य महत्व देने के कई कारण हैं । एक तो ध्यान प्रयोग के दौरान साधक का भाव प्रवाह, उसकी संकल्प–शक्ति बहुत प्रखर हो जाती है, चेतना अन्तःकरण की गहराइयों में दूर तक प्रविष्ट हो जाती है । ध्यान की समाप्ति पर वह पुनः धीरे–धीरे लौकिक धरातल पर आती है । उस समय उसके प्रखर भाव प्रवाह एवं संकल्प को दिशाबद्ध रखना आवश्यक है । तेज चलती हुई कार में ब्रेक लगाते समय स्टियरिंग के सन्तुलन का विशेष ध्यान रखना पड़ता है । यही स्थिति ध्यान प्रयोग के समापन के समय होती है । ध्यान प्रयोग के बाद समापन शान्ति पाठ उसी सावधानी एवं दिशाबद्धता की दृष्टि से आवश्यक है ।

दूसरा कारण यह है कि साधक ध्यान प्रयोग में स्वयं को महत् चेतना से जुड़ा हुआ अनुभव करता है, उसके दिव्य अनुदानों के मिलने की अनुभूति करता है । भाव समाधि से वापसी पर, योगनिद्रा से जागने पर भी वह उसे अनुभव करता रहे, उसे पाता रहे यह आवश्यक भी है और उपयोगी भी । समापन शान्ति पाठ के समय साधक समाधि से शनैः शनैः जागता तो है ही, पर साथ में यह भी अनुभव करता है कि दिव्य–धाराएँ, दिव्यानुदान उसे उतनी ही प्रचुरता से मिल रहे हैं, मिलते रह सकते हैं, जितने कि भाव समाधि की अवस्था में ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एक बात और भी है । किसी सत् पुरुष अथवा सत्–शक्ति के निकट कुछ समय स्नेहपूर्वक बिता कर व्यक्ति जब उठता है तो अपनी श्रद्धा एवं सम्मान को व्यक्त करता है तथा उस समय उस सता का स्नेह भरा आशीर्वाद विशेष रूप से उमड़ पड़ता है, जिसे पाकर व्यक्ति धन्य हो जाता है । ध्यान साधना की समाप्ति के समय इष्ट और साधक के बीच भी यह श्रद्धा एवं आशीर्वाद का आदान–प्रदान विशेष गहनता से चल पड़ता है । उसकी अनुभूति समस्त ध्यान साधना से भी अधिक सरस तथा तृप्तिकारी होती है । श्रद्धाभिव्यक्ति एवं स्नेहामृत पान की यह प्रक्रिया कई साधकों के लिए तो समग्र ध्यान प्रयोग से भी अधिक रोचक एवं लाभप्रद सिद्ध होती है ।

इसमें पहले 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' असतोमा सद्गमय एवं मृत्योर्मामृतम् गमय का गम्भीर उद्घोष होता है । हर साधक इसे अपने अन्तःकरण से उठती हुई प्रार्थना माने । उद्घोष कई बार दुहरा–दुहरा कर किया जाता है । उसके साथ–साथ साधक क्रमशः अपनी सहजावस्था में भी आता–जाता है तथा इष्ट से यह प्रार्थना भी करता रहता है कि हमें प्रकाश की, सत् की, मृतत्व की ओर बढ़ाते चलना । इससे जागृतावस्था का विकृत अहं नहीं उभर पाता तथा आत्म–प्रगति का सशक्त संकल्प कमजोर नहीं होने पाता । इसे विदाई के समय की श्रद्धाभिव्यक्ति प्रार्थना कह सकते हैं ।

उसके बाद पंच ओंकार का गुञ्जार किया जाता है । इसे परम सता का, इष्ट का स्नेह आशीर्वाद– प्रसाद माना जाता चाहिए । 'ॐ' अक्षर ब्रह्म है । इस दिव्य गुंजार के साथ उसकी स्वर तरंगों के साथ– अपने इष्ट, उपास्य, परम स्नेही के अनुदान, प्रेरणा प्रवाहों को आता हुआ अनुभव करना चाहिए । जैसे–भक्त–श्रद्धालु व्यक्ति चरणामृत, पञ्चामृत को बड़े चाव से लेता तथा बड़ी प्रसन्नता से पान करता है, वैसा ही भाव इस समय रहे । साधक शरीर की स्वाभाविक स्थिति में आता हुआ, गहरे श्वास–प्रश्वास लेता हुआ यह अनुभव करे कि उसका रोम–रोम स्वर–तरंगों के साथ घुला हुआ अमृत पान कर रहा है, धन्य हो रहा है, सामर्थ्य और तृप्ति प्राप्त कर रहा है ।

इस प्रकार समापन–शान्ति पाठ के साथ ध्यान धारणा समाप्त की जाय । उसके बाद भी थोड़ी देर तक मौन रहने, शान्त चित्त से टहलने, स्वाध्याय ने जैसी सौम्य–गम्भीर क्रिया ही करनी चाहिए । उत्तेजना, उच्छृंखलता हल्के हास–परिहास, भाग–दौड़ जैसे कार्यों का बचाव करना आवश्यक है । इस प्रकार ध्यान धारणा के माध्यम से हर साधक सुनिचित एवं स्थायी लाभ प्राप्त करता रह सकता है ।

कुण्डलिनी जागरण से आत्मिक और भौतिक सिद्धियाँ

कुण्डलिनी आत्म–शक्ति की प्रकट और प्रखर स्फुरणा है । यह जीवन की ईश्वर प्रदत्त मौलिक शक्ति है । प्रसुप्त स्थिति में वह अविज्ञात बनी और मृत तुल्य पड़ी रहती है । वैसी स्थिति में उससे कोई लाभ उठाना सम्भव नहीं हो पाता । यदि उसकी स्थिति को समझा जा सके तो प्रतीत होगा कि अपने ही भीतर वह भण्डार भरा पड़ा है जिसकी तलाश में जहाँ–तहाँ भटकना पड़ता है । वह ब्राह्मी शक्ति अपने ही अन्तराल में छिपी पड़ी है, जिसे कामधेनु कहा गया है । आत्मसत्ता में सन्निहित इस महाशक्ति का परिचय कराते हुए साधना शास्त्रों ने यह बताने का प्रयत्न किया है कि अपने ही भीतर विद्यमान इस महती क्षमता का ज्ञान प्राप्त किया जाय और उससे सम्पर्क साधने का प्रयत्न किया जाय । कुण्डलिनी परिचय के कुछ उद्धरण इस प्रकार हैं–

मल–मूत्र छिद्रों के मध्य मूलाधार चक्र में कुण्डलिनी का निवास माना गया है । उसे प्रचण्ड शक्ति स्वरूप समझा जाय । यह विद्युतीय प्रकृति की है । ध्यान से वह कौंधती बिजली के समान प्रकाशवान् दृष्टिगोचर होती है । कुण्डलाकार है । उसका स्वरूप प्रसुप्त सर्पिणी के समान है ।

यह उसका स्थानीय परिचय हुआ । अब उसका आधार, कारण, स्वरूप एवं प्रभाव समझने की आवश्यकता पड़ेगी । बताया गया है कि यह ब्राह्मी शक्ति है । स्वर्ग से गंगा अवतरित होकर पृथ्वी पर आई थी और इस लोक को धन्य बनाया था । इसी प्रकार यह ब्राह्मी शक्ति सत्पात्र साधकों की आत्म सत्ता पर अवतरित होती है और उसे हर दृष्टि से सुसम्पन्न बनाती है । कहा गया है कि–

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

ज्ञेयाशक्तिरिय विष्णोनिर्भिया स्वर्णभास्वरा ।
सत्वं रजस्तमश्चेति गुणत्रय प्रसूतिका ॥
मूलाधारस्थ वन्स्यार्त्मेजो मध्ये व्यवस्थिता ।
जीवशक्तिः कुण्डलाख्या प्राणाकाराथ तेजसी ॥
महाकुण्डलिनीप्रोक्ता परब्रह्मस्वरूपिणी ।
शब्दब्रह्ममयी देवी एकानेकाक्षराकृतिः ॥
शक्ति कुण्डलिनी नाम विसतन्तु निभा शुभा ।

–महायोग विज्ञान

यह स्वर्ण समान आभा वाली महाशक्ति कुण्डलिनी निर्भयता प्रदान करने वाली है। वही वैष्णवी है। सत,रज, तम तत्वों को उत्पन्न करने वाली है । मूलाधार के मध्य में आत्म तेज रूपी अग्नि पुंज होकर विराजमान है । जीवनी शक्ति वही है । तेजस्वी प्राण ही उसका आकार है । यह परब्रह्म स्वरूपिणी है । यह शब्द ब्रह्ममय है । इसकी अनेक आकृतियाँ हैं । इन शुभ कामनाओं को पूरा करने वाली शक्ति का नाम कुण्डलिनी है ।

स्वयं भू शिवलिंग में तीन लपेटे लगाकर सुप्त सर्पिणी की तरह पड़े होने की उपमा में यह संकेत है कि उसमें तीनों ही क्षमताएँ विद्यमान हैं जो मानवी अस्तित्व को विकसित करने के लिए मूलभूत कारण समझी जाती है । आकांक्षा विचारणा, क्रिया एवं साधन सामग्री के आधार पर ही मनुष्य आगे बढ़ता, सफलता पाता और प्रसन्न होता है । इन तीनों के बीज अन्तर में कुण्डलिनी शक्ति के रूप में विद्यमान हैं । इन्हें विकसित करने पर यह तीनों क्षमताएँ भीतर से उमँगती हैं तो बाहर के स्वल्प साधन मिलने पर भी उनको समुन्नत बनने का सहज अवसर मिल जाता है तो अन्तः क्षमता प्रसुप्त हो तो बाहर के विकास उपचार सफल नहीं होते, किन्तु भीतर के स्रोत उमँगों का बाह्य क्षेत्र में उभरना कठिन नहीं है । गायत्री के तीन चरण कुण्डलिनी के तीन लपेटे हैं और उन्हें मानव जीवन की मूल–भूत क्षमताओं के रूप में माना गया है ।

प्रकृतिः निश्चला परावायू पिणी परप्राणवात्मिका
कुण्डलिनी शक्तिः ।

–प्रपंच सार तन्त्र

यह कुण्डलिनी महाशक्ति, अविचल प्रकृति और परावाणी है । यह पर ब्रह्म है ।

इच्छाशक्तिश्च भूःकारः क्रिया शक्तिर्भुवस्तथा ।
स्वःकारः ज्ञान शक्तिश्च भूर्भुवः स्वः स्वरूपकम ।

भूः–इच्छा शक्ति; भुवः–क्रिया शक्ति; स्वः–ज्ञान शक्ति, यह तीन व्याहृतियों का स्वरूप है ।

सात्विकस्य ज्ञान शक्ति राजसस्य क्रियात्मिका ।
द्रव्य शक्तिस्तामसस्य तिस्रश्चामाथिताभव ।

–देवी भगवती

सात्विक ज्ञान शक्ति, राजस क्रिया शक्ति और तामस द्रव्य शक्ति यह तीन शक्तियाँ कही गई हैं ।

ज्ञानेच्छक्रियाणां तिमृणां व्यष्टीनां महासरस्वती महाकाली महालक्ष्मीरित ।

ज्ञान शक्ति, इच्छा शक्ति और क्रिया शक्ति यह तीन ही शक्ति की प्रकृति हैं । इन्हें ही महा सरस्वती, महाकाली और महालक्ष्मी कहते हैं ।

केचित्तां तप इत्याहुस्तमः केचिज्जडं परे । ज्ञान मायां । प्रधानं च प्रकृति शक्तिमप्यजाम् । आनन्दरूपता चास्याः परप्रेमास्पदत्वतः ।

–देवी भागवत

कोई मुझे तपः–शक्ति कहते हैं । कोई जड़ । कोई ज्ञान कहते हैं । कोई माया प्रकृति । मैं ही परम प्रेमास्पद तथा आनन्दरूपा हूँ ।

अहमेव स्वयमिदं वदामि
जुष्ट देवेभिरूत मानुषेभिः ।
य यं कामये तं तमुग्रं कृणोभि
तं ब्रह्माणं तमृषि तं सुमेधाम् ॥

ऋ० १०/१२५/५

देवताओं और मनुष्यों को अभीष्ट–प्राप्ति का मार्ग मैं ही बतलाती हूँ । जो मेरी (विवेक–शक्ति की) उपासना कर मुझे प्रसन्न करता है, उसे ही मैं प्रखर बनाती हूँ । ब्राह्मण, ऋषी तथा मेधावी बनाती हूँ ।

अपने में ही विद्यमान परम वैभव के सम्बन्ध में अपरिचित रहना यही अध्यात्म की भाषा में अज्ञान या अन्धकार है । इसकी निवृत्ति को ही आत्म ज्ञान की आत्म साक्षात्कार की महान् उपलब्धि कहा गया है । प्रसुप्ति को जागृति में बदल देना खोये को तलाश कर लेना यही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परम पुरुषार्थ है । आत्म-साधनाओं को परम पुरुषार्थ कहा गया है । सामान्य पुरुषार्थों से धन, बल, थोड़ी सी भौतिक उपलब्धियाँ स्वल्प मात्रा में उपार्जित की जा सकती हैं । वे भी अस्थिर होती हैं और मिलने के बाद उलटी अतृप्ति, भड़काती चलती हैं । किन्तु आत्मिक विभूतियों को उपार्जित करने की दिशा में बढ़ने पर प्रत्येक चरण क्रमशः अधिक उच्चस्तरीय प्रस्तुत करता चलता है । वे स्थायी भी होते हैं और तृप्ति कारक भी । उनसे अपना भी कल्याण होता है और दूसरों का भी । इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखते हुए आत्म-साधना को परम पुरुषार्थ कहा गया है ।

सोता हुआ मनुष्य मृत तुल्य निष्क्रिय पड़ा रहता है । जागृति होते ही उसकी समस्त क्षमतायें जाग पड़ती हैं । प्राण-शक्ति कुण्डलिनी शक्ति के सम्बन्ध में भी यही बात है जिसकी अन्तःशक्ति मूर्छित है, समझना चाहिए कि वह तत्त्वतः सोया हुआ ही है । जिसका अन्तराल जग पड़ा उसकी महान् सक्रियता को कार्यान्वित होते हुए देखा जा सकता है । सोने की, जागृति की स्थिति में जितना अन्तर होता है उतना ही आत्म शक्ति के प्रसुप्त और जागृत होने की स्थिति में समझा जा सकता है । इसी प्रसुप्ति और जागृति के अन्तर की चर्चा ताण्ड्य ब्राह्मण में इस प्रकार हुई है-

कुण्डलिनी की प्रसुप्ति को जागृति में बदलने के लिए 'साधन' का उपाय अपनाना पड़ता है । इस जागरण प्रयास में लगने के लिए जो साहस करते हैं, वे भौतिक और आत्मिक दोनों ही क्षेत्रों में समुन्नत स्थिति प्राप्त करते चले जाते हैं । इस महान् जागरण के लिए प्रोत्साहित करते हुए शास्त्रकार कहते हैं-

तदाहुः कोऽस्वप्नु यर्हतिः यद्वाव प्राण जागीत् देव जागरिम् इति ।

-ताण्ड्य

कौन सोता है ? कौन जागता है ? जिसका प्राण जागता है, वस्तुतः वही जागता है ।

मूलाधारे आत्मशक्तिः कुण्डलिनी परदेवता ।
शीयिता भुजगाकारा सार्द्धत्रय वलयान्विता ॥
यावत्सा निद्रिता देहे तावज्जीवः पशुर्यथा ।
ज्ञानं न जायते तावत् कोटियोग विधेरपि ॥
आधार शक्ति निद्रायां विश्वं भवति निद्रयां ।
तस्यां शक्तिप्रबोधेन त्रैलोक्य प्रति बुध्यते ॥

-महायोग विज्ञान

आत्म शक्ति कुण्डलिनी मूलाधार चक्र में साढ़े तीन कुण्डलिनी लगाये हुए सर्पिणी की तरह शयन करती है । जब तक वह सोती है तब तक जीवन पशुवत् बना रहता है । बहुत प्रयत्न करने पर भी तब तक उसे ज्ञान नहीं हो पाता । जिसकी यह आधार शक्ति सो रही है उसका सारा संसार ही सो रहा है, पर जब वह जागती है तो उसका भाग्य और संसार ही जाग पड़ता है ।

विद्युल्लता परा जाता पंचानांमातृ रूपिणी ।
अभ्यासां मार्ग योगात् सैका षोढा प्रजायते ।
पराचेतथा ज्ञानाक्रिया कुण्डलिनि नीति च ।

बिजली जैसी चमक वाली, पंच तत्वों एवं पंच प्राणों की माता, परम चेतना ज्ञान शक्ति तथा क्रिया शक्ति कुण्डलिनी, योग साधना से उपलब्ध होती है ।

प्रत्येककर्मसाफल्यं यत्प्रबोधे प्रजायते ।
अतस्तस्याः प्रबोधाय शक्तेर्यत्नवान भवेत् ॥

-महायोग विज्ञान

प्रत्येक कर्म की सफलता उस कुण्डलिनी के जागने से प्राप्त होती है । अतएव उस महाशक्ति को जगाने के लिए प्रबल प्रयत्न करना चाहिए ।

मूलाधारे कुण्डलिनी भुजंगाकार रूपिणी ।
जीवात्मा तिष्ठति तत्र प्रदीप कलिकाकृतिः ।
बहुभाग्यवशाद्यस्य कुण्डली जागृता भवेत् ॥

घेरण्ड संहिता ६/१६/१८

मूलाधार चक्र में सर्पिणी आकार की कुण्डलिनी शक्ति है जो दीपक की लौ जैसी दीप्तिमान है । वही जीवात्मा का निवास है ।

हे चण्ड, जिसकी कुण्डलिनी शक्ति जागृत हो जाए उससे बड़ा भाग्यशाली मानना चाहिए ।

सुप्ता नागोपमाह्येष स्फुरन्ती प्रभवा स्वया ।
अहिवत् संधि संस्थाना वाग्देवी बीज सज्ञका ।
ज्ञेया शक्तिरियं विष्णोर्निभया स्वर्ण भास्करा ॥

-शिव संहिता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह कुण्डलिनी शक्ति सुप्त सर्पिणी के समान है। वही स्फुरणा, गति, ज्योति एवं वाक् है। यह विष्णु शक्ति है। स्वर्णिम सूर्य के समान दीप्तिवान् है।

सा यथा योज्यते यत्र तेनू निर्यात्य तथा ॥
संवितिः सेव यात्यंग रसाद्यन्तं यथाक्रमम् ।
रसेनापूर्णतामेति तंत्रीभार इवाम्बुना ॥
रसानापूर्ण यमाकारं भावयत्याशु तत्तथा ।
धाते चित्रकृतो बुद्धो रेखा राम यथा कृतिम् ॥

–योग वशिष्ठ

यह कुण्डलिनी शक्ति रस भावना से ओत–प्रोत है। उसके जागृत होने पर मनुष्य रस भावनाओं से ऐसे भर जाता है जैसे पानी भरने से चमड़े का चरस। यह रसिकता अनेक कलाओं के रूप में विकसित होते हुए जीवन को रससिक्त बना देती है।

इच्छा–ज्ञान–क्रियात्मासौ तेजोरूपा गुणात्मिका ।
क्रमेणानेन सृजति कुण्डली वर्णमालिकाम् ॥
गुणिता सर्वगात्रेषु कुण्डली पर देवता ।
विश्वात्मना प्रबुद्धा सा सूते मंत्रमयं जगत् ॥
एकथा गुणिता शक्तिः सर्व विश्वप्रवर्तिनी ।

–महायोग विज्ञान

तेजस्वरूप कुण्डलिनी जागृत होने पर इच्छा शक्ति, ज्ञान शक्ति और क्रिया शक्ति को प्रखर बनाती है। सम्पूर्ण शरीर पर उसका प्रभाव दीखने लगता है। प्रसुप्त मन्त्रमय जगत जागृत हो उठता है। विश्वात्म ज्ञान जागृत होता है। विश्व का प्रवर्तन करने वाली कुण्डलिनी साधक को अनेक गुण शक्ति सम्पन्न बना देती है।

कुण्डलिनी जागरण के प्रतिफल से परिचित होने पर साधक उसके लिए साधना प्रयास आरम्भ करता है और उस परम पुरुषार्थ का समुचित लाभ प्राप्त करता है। कहा गया है कि

शक्ति कुण्डलिनोति विश्व जनन व्यापार बद्धोद्यामा
ज्ञात्वे यं न तुनर्वशान्ति जननागर्मेकत्व नराः ।

–शक्ति तंत्र

कुण्डलिनी महाशक्ति के प्रयत्न से ही यह सारा संसार व्यापार चल रहा है जो इस तथ्य को जान लेता है। वह शोक संतप्त भरे बंधनों से बँधा नहीं रहता।

योग के आधार पर आध्यात्मिक और तन्त्र के आधार पर भौतिक उन्नति का पथ प्रशस्त होता है। कुण्डलिनी जागरण में उभय पक्षीय सम्भावनाएँ सन्निहित हैं। यह दोनों ही प्रयोजन उससे सिद्ध होते हैं। गाड़ी के दो पहिये–पक्षी के दो पंख, मनुष्य के दो हाथ मिलकर जिस तरह उनकी क्षमता को मूर्तिमान बनाते हैं; उसी प्रकार कुण्डलिनी जागरण की प्रतिक्रिया जीवन के दोनों पक्षों को समुन्नत बनाती है। हठयोग प्रदीपिका में इसी तथ्य को इस प्रकार प्रतिपादित किया गया है–

सशैलवन धात्रीणां यथाधीराऽहिनायकः ।
सर्वेषाँ योगतन्त्राणां तथा धारोहि कुण्डली ॥
सप्ता गुरुप्रसादेन यथा जागति कुण्डली ।
तदा सर्वाणि पद्मानि भिद्यंते ग्रंथयोऽपि च ॥

हठयोग प्रदीपिका

जिस प्रकार सम्पूर्ण वनों सहित जितनी भूमि है, उसका आधार शेषनाग है, उसी प्रकार समस्त योग साधनाओं का आधार भी कुण्डली ही है, जब गुरु की कृपा से सोयी हुई कुण्डली जागती है, तब सम्पूर्ण पद्म (षट् चक्र) और ग्रन्थियाँ खुल जाती हैं।

योगिनां हृदयाम्बुजे नृत्यन्ती नृत्यमज्जसा ।
आधारे सर्व भूतानां स्फुरन्ति विद्युताकृति ॥

अर्थात् "योगियों के हृदय देश में वह नृत्य करती रहती है। यही सर्वदा प्रस्फुटित होने वाली विद्युत रूप महाशक्ति सब प्राणियों का आधार है।

सुप्ता सर्वोपमा मौला पाति साधकमीश्वरी ॥
चैतन्या कुण्डलीशक्तिर्वायवी बलतेजसा ।
चैतन्या सिद्धिहेतुस्था ज्ञानमात्रं ददाति सा ॥
ज्ञानमत्रेप मोक्षः स्याद्वायवी ज्ञानमाश्रयेत् ।

–महायोग सूत्र

अनन्त शक्तियों की भण्डार सुप्त सर्पिणी कुण्डलिनी अपने साधक का पालन और रक्षण करती है सो मुक्ति के आकांक्षी उसी का साधना करते हैं। प्राण वायु के द्वारा जागृत हुई यह कुण्डलिनी साधक के लिए सिद्धियों का आधार बनती है और उसे परम ज्ञान प्रदान करती है।

वेदाधीनं महायोगं योगाधीनो च कुण्डली ।
कुण्डल्यधीनं चित्तंतुचित्ताधीनं चराचरम् ॥
मनसः सिद्धि मात्रेण शक्तिसिद्धिर्भवेद् ध्रुवम् ।
यदि शक्तिवशीभूता त्रैलोक्य स्यात्तदा वशे ॥

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वेद के आधीन योग है । योग के आधीन कुण्डलिनी । कुण्डलिनी के आधीन चित्त है और चित्त के आधीन चराचर जगत ।

मन की सिद्धि होने से शक्ति की सिद्धि हो जाती है और जिसने शक्ति को वश में कर लिया तीनों लोक उसके वश में होते हैं ।

–महायोग विज्ञान

उद्घाटयेत्कपाटं तु यथा कुञ्चिकया हठात् ।
कुण्डलिन्या तथा योगी मोक्षद्वारं विभेदयेत् ।
येन मार्गेण गंतव्यं ब्रह्मस्थानं निरामयम् ।
मुखेनाच्छाद्य तद्द्वारं प्रसुप्ता परमेश्वरी ॥
ठंदोर्ध्वं कुण्डली शक्तिःसुप्ता मोक्षाय योगिनाम् ।
बंधनाय च मूढ़ानां यस्तां वेत्ति स योगवित् ॥

–हठ योग प्रदीपिका ३/१०५ से १०७

अर्थात् जिस प्रकार कुंजी से किवाड़ खोले जाते हैं, वैसे ही योगी कुण्डलिनी द्वारा मोक्ष द्वार को खोलते हैं ।

निरामय ब्रह्म स्थान को जाने वाले मार्ग को अपने मुख से ढाँके कुण्डलिनी परमेश्वरी सोती रहती है । कन्द के ऊर्ध्व में सोयी पड़ी यह कुण्डलिनी ही (जागने पर) योगियों के मोक्ष का साधन बनती है और (सोती रहने पर) मूढ़ों के बन्धन का कारण बनी रहती है । इस रहस्य को जानने वाला ही योगी होता है ।

नमस्ते देवदेवेशि योगीश प्राणवल्लभे ।
सिद्धिदे वरदे मातः स्वयम्भूलिंगवेष्टिते ॥
प्रसुप्तभुजगाकारे सर्वदा कारणप्रिये ।
कामकलान्विते देवि ! मनोऽभीष्टं कुरुष्व च ॥
असारे घोरसंसारे भवरोगान्महेश्वरि ।
सर्वदा रक्षा मां देवि ! जन्मसंसाररूपकात् ॥
इति कुण्डलिनीस्तोत्रं ध्यात्वा यः प्रपठेत्सुधीः ।

–योग सार

योगियों की प्राण वल्लभा सिद्धि दायनी, वरदायनी, स्वयं भू लिंग के साथ लिपटी हुई, सोई सर्पिणी के रूप वाली, काम कलान्वित अभीष्ट फलदायक है । हे देव देवेशि आपको नमस्कार । इस सार रहित घोर कष्टदायक भव रोगों से घिरे, जन्म मरण रूपी संसार में हे देवि, मेंरी रक्षा कीजिए । इन भावनाओं के साथ प्रज्ञावान साधक कुण्डलिनी महाशक्ति का ध्यान एवं स्तवन करें ।

कुण्डलिनी जागरण से व्यक्तित्व में क्रान्ति

परब्रह्म को जहाँ सर्वव्यापी, सर्वशक्तिमान, निर्विकार और निर्लिप्त कहा जाता है, वहीं उसे निष्क्रिय भी माना गया है । निष्क्रिय अर्थात् गुम–सुम बैठा रहने वाला, जिसकी न कोई इच्छा है और न कोई आकांक्षा ऐसा ब्रह्म विश्व के सृजन और पालन का उत्तरदायित्व भला कैसे पूरा कर सकता था । इसलिए उसे जागृत करने की आवश्यकता पड़ी । उस आवश्यकता की पूर्ति उसकी शक्ति ने की । यह शक्ति या शिवतत्व ही ब्रह्म को क्रियाशील बनाती है ।

परब्रह्म की भाँति उसका अंश आत्मा भी सर्व शक्तिमान, निर्विकार और निर्लिप्त होने के साथ–साथ निष्क्रिय भी है । सामान्य अवस्था में वह प्रसुप्त ही रहती है । लेकिन जब उसकी शक्ति जागृत हो जाती है तो साधारण दिखाई देने वाला मनुष्य भी असाधारण और असामान्य क्षमता संपन्न दिखाई पड़ने लगता हैं । आत्मा को प्रसुप्तावस्था से जागृत कर व्यक्ति को असाधारण शक्ति संपन्न बना देने वाली शक्ति का नाम कुण्डलिनी है । उसका स्थान काय कलेवर में मेरुदण्ड के अंतिम भाग में स्थित मूलाधार चक्र माना जाता है । इस संस्थान को आँखों या विज्ञान के यन्त्रों से नहीं देखा जा सकता । वहाँ तक पहुँचने और उस स्थान को उद्दीप्त कर जागृत करने में केवल भारतीय योग विद्या ही समर्थ है ।

गुदा क्षेत्र में सोई कुण्डलिनी दो धाराओं इड़ा और पिंगला (यह नाड़ियाँ ऋण विद्युत और धन विद्युत के समान ही होती हैं, पर उस प्राण–विद्युत और इस दृष्टि गत विद्युत के आण्विक स्वरूप में अन्तर है) में होकर ऊपर को उठती है और मस्तिष्क में जाकर मूढ़ ब्रह्म की चेतना को झकझोरती है । कुण्डलिनी यदि जागृत नहीं है तो इड़ा और पिंगला अपने सामान्य परिवेश में ही काम करती है, उसी प्रकार मस्तिष्क भी सामान्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

ढीले–पोले काम करता रहता है, पर जागृत कुण्डलिनी के आवेश को सम्भालना तो मस्तिष्क के लिए भी कठिन हो जाता है । फिर वह बैठा नहीं रह सकता । कुछ न कुछ उछल–कूद । तोड़–फोड़ बनाव शृंगार उसे करना ही पड़ता है । जिस व्यक्ति की कुण्डलिनी जाग जाती है वह जागृत अवस्था की तरह गम्भीर निद्रावस्था में भी उतना ही सचेतन रहता है । उसकी स्वप्न और जागृति में कोई अन्तर नहीं आता । जिस तरह जागृत अवस्था में वह किसी से बातचीत करता सुनता, सोचता, विचारता प्रेरणा देता, सहायता, सहयोग देता रहता है, उसी प्रकार स्वप्नावस्था में भी उसकी गतिविधियाँ चला करती हैं । उस अवस्था में वह किसी का भला भी कर सकता है और नई–नई जानकारियों के लिये अन्य ब्रह्माण्डों में सैर के लिए भी जा सकता है । अन्य ब्रह्माण्डों का अर्थ विशुद्ध रूप से सूर्य, चन्द्र, बृहस्पति, शुक्र, हर्शल, प्लूटो आदि से है । यह आश्चर्य करने वाली बात उसके लिये बिल्कुल साधारण और सामान्य होती है ।साधना में लीन व्यक्तियों को कभी–कभी रात में ऐसे कुछ स्वप्न हो जाते हैं जिसमें उन्हें किसी भविष्य की घटना का पूर्वाभास मिल जाता है या किसी गोपनीय रहस्य का पता चल जाता है । वह कुण्डलिनी की ही शक्ति होती है ।

हमारी धरती गोलाकार है । उसके केन्द्र में अति गर्मी है जिससे वहाँ की सब वस्तुयें और धातुयें गली हुई तरल स्थिति में होती हैं । मूलाधार की वह गाँठ, जहाँ मेरुदण्ड समाप्त होता है और जिसे अनेक नाड़ी गुच्छकों ने बाँध रखा है, का भेदन किया जाय तो वहाँ अत्यन्त तेजस्वी और उष्ण शक्ति मिलती है, यही कुण्डलिनी है ।

जब कुण्डलिनी जागृत हो जाती है तो इड़ा और पिंगला समान गति से ऊर्ध्वगामी हो जाती हैं और एक तीसरी धारा सुषुम्ना का आविर्भाव होता है उससे ऊर्ध्वमुखी लोकों की अनुभूति और गमन का सुख मिलता है । यह सुख सम्भोग सुख जैसा होता है पर सम्भोग का सुख क्षणिक होता है, जबकि ऊर्ध्वमुखी आध्यात्मिक सुख का रसास्वादन निरन्तर किया जा सकता है, पर उसके लिए कुण्डलिनी को जगाना आवश्यक हो जाता है । कुण्डलिनी जगाने का अर्थ भीतर गोलों की कुण्डलिनी को सक्रिय करना है । पवित्रता के बिना यह कार्य सम्पन्न नहीं हो सकता इसलिए कुण्डलिनी जागरण की विद्या बहुत को गुप्त रखा गया है ।

कुण्डलिनी के दो उत्पत्ति स्थान माने गये हैं । एक सूर्य के केन्द्र में निवास करने वाली पुरुष रूपी और दूसरी स्त्री रूप में पृथ्वी केन्द्र में । पृथ्वी केन्द्र में कुण्डलिनी को प्राणधारियों की जीवन सत्ता का केन्द्र कह सकते हैं । यह दरअसल सूर्य कुण्डलिनी का ही बीज है । कहा जाता है कि संसार में जो कुछ भी प्रकट अप्रकट है वह बीज रूप से देह में विद्यमान है । सूर्य भी कुण्डलिनी के रूप में शरीर में बैठा हुआ है और मूलाधार ग्रन्थि का विकास होता है तो उसमें सूर्य का प्राण प्रतिष्ठित हो जाता है और उसकी जागृत अवस्था सूर्य जैसी हो जाती है । अर्थात् उसमें मनुष्य की शक्ति सूर्य जैसी शक्ति वाली, सर्वव्यापी सर्व समर्थ हो जाती है फिर उस शक्ति का नियन्त्रण करना कठिन हो जाता है । कमजोर मन और शरीर वाले उस शक्ति को धारण नहीं कर सकते ।

गायत्री का देवता सविता है और कुण्डलिनी की प्रतिनिधि शक्ति भी सूर्य ही है इसलिये गायत्री उपासना का सीधा प्रभाव मेरुदण्ड से होकर इस गुदा क्षेत्र में ही पड़ता है । ऊपर से उतरने वाला प्राण प्रवाह पहले यहीं पहुँचता है और फिर गुच्छकों के द्वारा सारे शरीर में संचित होता रहता है । जितना अधिक साधन का विकास होता है उतना ही प्राण शक्ति का अभिवर्द्धन और उसी अनुपात से कुण्डलिनी जागृत होती है । यह प्रकाश धीरे–धीरे नेत्र, वाणी, मुख और ललाट आदि सम्पूर्ण शरीर में चमकने लगता है । त्वचा में यही कोमलता और बुद्धि में सात्विकता एवं पवित्रता की अभिवृद्धि करता है । यह क्रिया धीरे–धीरे होती है इसलिये हानि की भी आशंका नहीं रहती । उपासक अपने आत्म–कल्याण भर के संकेत प्राप्त करता हुआ जो वास्तविक लक्ष्य है वह जीवन–मुक्ति भी प्राप्त कर लेता है ।

सविता लोक से आने वाले प्राणकण यद्यपि बहुत छोटे होते हैं, किन्तु इतने प्रकाशमय होते हैं कि बिना दिव्य–दृष्टि के भी उन्हें देखा जा सकता है । आसमान की ओर देखने पर वायु में छोटे–छोटे प्रकाश के कण अति शीघ्रता से चारों ओर उछलते हुए दीख पड़ते हैं । ये प्राणकण ही हैं । यह कण सात ईथर कणों

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से विनिर्मित होता है । यह प्राण-कण सफेद होता पर ईथर के सातों अणु सात रंगों के बने होते हैं । सूर्य भी सात रंगों का प्रकाश है । नाभि-चक्र में घुसने पर यह रंग अलग-अलग होकर अपने क्रिया क्षेत्र में बँट जाते हैं । नीला और लाल रंग मिली हुई हलकी बैंगनी (वायोलेट) और नीली किरणें कंठ में चली जाती हैं और हलकी नीली कण्ठ चक्र में । यह दोनों गले को शुद्ध रखती हैं और वाणी को मधुर बनाती हैं । कासनी और गहरी नीली मस्तिष्क में चली जाती हैं उससे विचार, भक्ति और वैराग्य के गुणों का आविर्भाव होता है । गहरा नीला मगज के निचले और मध्य भाग तथा नीला रंग सहस्त्रार का पोषण करता है ।

पीली किरणें हृदय में प्रवेश करती हैं । उससे रक्तकणों की शक्ति और स्निग्धता बढ़ती है । शरीर सुन्दर बनता है । यही किरणें बाद में मस्तिष्क को चली जाती है जिससे विचार और भावनाओं का समन्वय होता है ।

हरी किरणें पेट की अन्तड़ियों में कार्य करती हैं । इससे पाचन क्रिया सशक्त बनती है । गुलाबी किरणें ज्ञान तन्तुओं के साथ सारे शरीर में फैलती हैं । आरोग्य की दृष्टि से इन किरणों का बड़ा भारी महत्व है इनकी बहुतायतें वाला व्यक्ति किसी को भी हाथ रखकर स्वस्थ कर सकता है । देवदारु और यूकेलिप्टस वृक्ष में इन किरणों की ही बहुतायत होती है जिससे उनकी छाया भी बहुत आरोग्यवर्धक होती है । नारंगी लाल किरणें जननेन्द्रियों तक पहुँचकर गुदा वाले रोग ठीक कर देती हैं और शरीर की गर्मी में सन्तुलन रखती हैं । हलकी बैंगनी किरणें भी यहाँ आकर इस क्रिया में हाथ बँटाती हैं । यदि कामवासना पर नियन्त्रण रखा जा सके तो इन किरणों को ही मस्तिष्क में भेजकर भविष्य ज्ञान, दूर दर्शन, दूर श्रवण आदि चमत्कार प्राप्त किये जा सकते हैं ।

इस प्रकार कुण्डलिनी जागरण से आंतरिक कलेवर में आमूल चूल परिवर्तन आ जाता है । इस जागरण से व्यक्तित्व में गुण, कर्म स्वभाव, संस्कार, दृष्टिगोचर, विवेक, प्रभाव, प्रतिभा, मनोबल, आत्मबल आदि की जो विशेषताएँ दृष्टिगोचर होतीं हैं, उन्हें चेतना तत्व से भाव संवेदन की उपलब्धि माननी चाहिए । इसका केन्द्र मस्तिष्क स्थित सहस्त्रार कमल है । कालाग्नि यहीं शिव स्वरूप विद्यमान है । व्यक्तित्व की भावनात्मक चेतनात्मक प्रखरता एवं शरीर की असामान्य क्रियाशीलता-आत्म विद्या के दो लाभ कहे गये हैं । इन्हीं को विभूतियाँ और सिद्धियाँ भी कहते हैं । विभूतियाँ मस्तिष्क केन्द्र से (ज्ञान संस्थान से) भाव ब्रह्म से प्रसूत होती है और सिद्धियाँ काम केन्द्र से, शक्ति निर्झर से, कुण्ड कुण्डलिनी से प्रादुर्भूत होती हैं । इन दोनों शक्ति केन्द्रों को मानवीय अस्तित्व के दो ध्रुव मानना चाहिए । पृथ्वी के दो सिरों पर उत्तरी दक्षिणी दो ध्रुव है । ठीक इसी प्रकार मनुष्य का मस्तिष्क केन्द्र उत्तरी ध्रुव और काम केन्द्र दक्षिणी ध्रुव कहा जा सकता है । इन केन्द्रों में सन्निहित असंख्यों दिव्य क्षमताओं का उन्नयन प्रगटीकरण एवं उपयोग कुण्डलिनी जागरण से हो सकता है ।

वस्तुतः कुण्डलिनी जागरण का उद्देश्य मूलाधार से सहस्त्रार, कामबीज से ब्रह्मबीज तक पहुँचने का है । उन दोनों की असीम एवं अनन्त जानकारी प्राप्त करने और उन सामर्थों को जीवन विकास के अन्तरंग और बहिरंग क्षेत्रों में ठीक तरह प्रयोग कर सकने की विद्या का नाम ही कुण्डलिनी विज्ञान है । इस साधना में एक प्रकार से शरीर में प्राण और संकल्प के आघात से परमाणु ऊर्जा उत्पन्न की जाती है और उसका नियंत्रण नियमन किया जाता है । मूर्धन्य वैज्ञानिक एवं अनुसंधानकर्ता प्रो० वौन वेजसेकर ने कुण्डलिनी जागरण में प्राण तत्व के नियंत्रण और नियमन पर अधिक बल दिया है । उनका कथन है कि इसकी संगति भौतिक विज्ञान के क्वांटम सिद्धान्त से बिठाई जा सकती है । दोनों के परमाणु सूक्ष्म स्तर के होते हैं । सूक्ष्म शरीर का प्राण प्रवाह ही कुण्डलिनी है । षट्चक्रों को जगाने-वेधन करने की क्षमता इसी प्राण-शक्ति में होती है । इसलिए भौतिक एवं आत्मिक प्रगति के लिए इसके शोधन, परिष्कार एवं उन्नयन के विविध विधि साधना विधानों को अपनाने का योगशास्त्रों में उल्लेख मिलता है ।

योग उपनिषद् में कहा गया है कि "कुण्डलिनी शक्ति जो कुण्डलित स्थिति में मानवी काया में विद्यमान है, यदि उसके जागरण का सही रूप से अभ्यास उच्चस्तरीय उद्देश्यों के लिए किया जाय तो ही वह शक्ति ठीक रूप से विकसित हो सकती है अन्यथा विपरीत प्रभाव उत्पन्न करती

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

है ।" स्टडीज ऑफ सैवेज एण्ड सेक्स नामक पुस्तक के मूर्धन्य लेखक श्री क्राबेल का कहना है कि "कुण्डलिनी जागरण का मूलभूत आधार जीवन की पवित्रता है । यह साधक के शारीरिक गठन तथा गुण, कर्म, स्वभाव से प्राप्त होता है ।" प्राचीन काल के भारतीय योगी एवं संत–महात्मा इसके प्रमाण हैं । आध्यात्मिक नियमों का निष्ठापूर्वक परिपालन करते रहने से एक निश्चल पवित्रता का विकास होता है जो कुण्डलिनी जागरण के लिए अत्यधिक उपयोगी एवं महत्वपूर्ण सिद्ध होता है । इसी के आधार पर उनने जाना था कि मेंरुदण्ड के नीचे अन्तिम छोर पर इस मानव ढाँचे में इतनी रहस्यपूर्ण दिव्य ऊर्जा विद्यमान है । षट्चक्र निरूपण में इसका उल्लेख करते हुए कहा गया है–"कृजन्नी कुल कुण्डली च मधुर–––– सा मूलाम्बुज गह्वरे विलसति अर्थात् कुण्डलिनी मधुर कूजन करती है । श्वास–प्रश्वास का प्रवर्तन करती हुई वह संसार के जीवों को प्राण धारण कराती है तथा मूलाधार पद्म–गह्वर में विलास करती है । जीवन में बाह्याभ्यांतर शुचिता–पवित्रता का समावेश करके ही इसे जाना और पाया जा सकता है ।

सुप्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक श्री ओवेलान ने अपनी कृति द सर्पेन्ट पावर" में कहा है कि कुण्डलिनी शक्ति का अभिव्यक्तीकरण सृजनात्मक शक्ति के रूप में सभी मानवों में दृष्टिगोचर होता है । मानवी काया में यह महाशक्ति एक दैवी बीज के रूप में विद्यमान है, जो कालान्तर में गहन अभ्यास के द्वारा पुष्पित और पल्लवित होती है । यदि एक बार भी यह शक्ति जागृत हो गई और क्रिया–कलापों में आ गई तो साइकिक नर्व से होती हुई मस्तिष्क के सहस्रार अर्थात् सहस्र दल कमल में प्रवेश करती है । इसके जागरण और संचालन से समस्त आध्यात्मिक शक्तियाँ जागृत हो उठती हैं और सामान्य मनुष्य को असामान्य स्तर का महामानव–देवपुरुष की श्रेणी में पहुँचा देती है । मूर्धन्य लेखक श्री वेले ने अपनी पुस्तक "ए ट्रीटीज ऑनि कास्तिक फायर" में लिखा है कि मेंरुदण्ड स्थित कुण्डलिनी शक्ति का जब ऊर्जा के रूप में रूपान्तरण होता है । तो मनुष्य को मोक्ष की प्राप्ति होती है । इसके जागरण और कुण्डलित सर्पिणी के खुलने से मानव जाति का उत्थान श्रेष्ठता और महानता में परिणित होता है । वेले का कथन है कि कुण्डलिनी जागरण की पद्धति विकासात्मक नहीं वरन् प्रयासात्मक है । साधक को बड़े धैर्यपूर्वक कई वर्षों तक इसका निरंतर नियमित अभ्यास करना पड़ता है । साथ ही शारीरिक मानसिक एवं वैचारिक पवित्रता का बहुत ध्यान रखना पड़ता है, तभी वह लक्ष्य तक पहुँच सकता है । पवित्रता का अंश जितनी मात्रा में विकसित होता है उसी अनुपात से उत्कृष्टता बढ़ती है और साधक को लक्ष्य के समीप पहुँचाती है ।

इसी प्रकार प्रख्यात लेखक श्री लेडवीटर ने अपनी पुस्तक दी चक्रज में बतलाया है कि आचार और व्यवहार की पवित्रता के बिना उत्कृष्ट क्षमता के इस शक्ति के जागरण के सभी प्रयास विफल हो जाते हैं । अतः इसके लिए कठोर अनुशासनात्मक जीवन–यापन करना अनिवार्य होता है । मूर्धन्य लेखक श्री प्रेसे ने अपनी कृति 'द एपोकेलिप्स अनसील्ड' में चेतावनी देते हुए लिखा है कि कुण्डलिनी जागरण एवं उसके विकास में बड़े गंभीर और भयानक खतरे भी जुड़े हुए हैं । पवित्रता के अभाव में यदि साधक का झुकाव सांसारिकता की ओर होता है तो वह पतनोन्मुखी हो जाती है और कामवासना तथा बुरे विचारों के माध्यम से जीवन को अधोगमिता की ओर ले जाती है । ऐसी स्थिति में सृजन शक्तियाँ दुर्बल और घटिया बनती चलती हैं । यही कारण है कि सामान्य व्यक्ति इसका अभ्यास करने और जागृत कर पाने में सर्वथा असफल पाये जाते हैं, किन्तु जो श्रेष्ठ मार्ग पर अवलम्बित होते हैं, तथा कठोर नियमों एवं सयंम का जीवन में परिपालन करते हैं वे चमत्कारी शक्तियों के भाण्डागार बन जाते हैं । ऐसे व्यक्ति बिरले ही होते हैं, किन्तु समाज के लिए–मानव जाति के लिए वे हर दृष्टि से उपयोगी और महत्वपूर्ण होते हैं । इसी तथ्य पर प्रकाश डालते हुए विद्वान लेखक एग्यूटरा ने 'निकाया' नामक अपनी पुस्तक में कहा है कि प्राचीन तत्वज्ञान के साहित्य का अवलोकन करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि मनुष्य जाति का उत्थान करने एवं उसे उत्कृष्ट बनाने में यह सर्पिणी शक्ति अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुई है । समाज में संव्याप्त बुराइयों और दुर्गुणों के निदान के लिए यह सबसे बड़ा पवित्र और सुनश्चित मार्ग है, परन्तु इसका लाभ तभी कोई व्यक्ति ले सकता है जब वह अपने अंतर्तम निहित संवेगों को परिशोधित एवं पवित्र बना ले ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रसिद्ध पुस्तक द एस्ट्रल बाड़ी एण्ड अदर एस्ट्रल फेनमिना" में लेखक आर्थर ई० पावेल ने कहा है कि "कुण्डलिनी जागरण की अभ्यास प्रक्रिया में मादक एवं नशीली वस्तुओं का सेवन करना अत्यन्त अनर्थकारी होता है। इससे षट्चक्रों के प्राण तत्व दूषित हो जाते हैं और उनकी झिल्लियाँ फट जाती हैं। दूषित तत्वों के प्रवाह से उनमें कड़ापन आ जाता है। जिससे सूक्ष्म तत्वों के प्रवाह में भी बाधा उत्पन्न हो जाती है और चक्रों का प्राण तत्व विकृत शक्तियों के प्रभाव में आ जाता है। इससे मनोविकृतियाँ पागलपन कम्पन जैसी अनेकानेक बीमारियाँ प्रकट होने लगती हैं और साधक स्वार्थी, हिंसक एवं पशुओं जैसा व्यवहार करने वाला बन जाता है। इसी तरह सामान्य लोगों के चक्रों में शुद्ध सूक्ष्म तत्वों का प्रवाह अवरुद्ध होने के कारण उनकी प्राण चेतना में निम्नस्तरीय परमाणुओं का ही प्रवाह होता रहता है जो उनकी चेतना को अशुद्ध एवं विकृत बना देता है।

कुण्डलिनी शक्ति के जागृत हो जाने पर कभी-कभी असामयिक घटनायें भी घटित हो जाती हैं जिनसे साधक को सदैव सावधान रहना चाहिए। मस्तिष्क में महत्वाकांक्षा उत्पन्न हो जाती है। जो सम्पूर्ण काय संस्थान को उभार देती है। अहंकार के जागृत हो जाने पर साधक का पतन हो जाता है। शारीरिक मानसिक शक्तियों का उभार, उनकी जागृति, योगियों को जहाँ स्वतन्त्रता प्रदान करती है आगे का मार्ग प्रशस्त करती है, वही मूर्खों के लिए बन्धन का कारण बन जाती है। शारीरिक मानसिक एवं वैचारिक पवित्रता ही आधार है जो लक्ष्य की प्राप्ति में सहायक होता है।

कुण्डलिनी साधना क्यों किस प्रयोजन के लिए

इन दिनों विश्वव्यापी विनाश संकट के घटाटोप इस तरह घिरते जा रहे हैं जिससे मानवी सता और सृष्टि के लिए अस्तित्व रक्षा का संकट उत्पन्न हो गया है। यह जितने विकट हैं, उतने ही समर्थ उनके प्रतिरोधक उपकरण चाहिए। हाथी छोटी पिस्तौल से नहीं मरता। किला बिस्मार करने के लिए बाण वर्षा से नहीं, तोपें दागने से काम चलता है। वृत्रासुर का निधन व्रज बन जाने पर हुआ था। महिषासुर के लिए चण्डी का आवेश भरा आक्रोश कार्यान्वित हुआ था। पर्वत उखाड़ने के लिए हनुमान का पौरुष काम आया था। पहाड़ उड़ाने के लिए डायनामाइट की छड़ें ही काम आती हैं। स्थिति को देखते हुए यह आवश्यक प्रतीत हुआ कि रचनात्मक सामर्थ्य की ही नहीं संघर्ष के लिए काम आने वाले ब्रह्मास्त्र जैसे साधनों की भी आवश्यकता पड़ेगी।

संकटों का दानवी समुदाय एकत्रित होकर संचित सभ्यता का विनाश जिस प्रकार करने पर तुला है, उन्हें यदि मानमानी करने दी जाय तो प्रलय के दृश्य प्रस्तुत हो सकते हैं। इनकी रोकथाम आवश्यक है। उन्हें उलटा और निरस्त किया जाना चाहिए। इसके लिए दूसरी तरह के हथियार चाहिए। ग्रन्थलेखन में कागज कलम, दवात काम दे जाती हैं। रसोई बनाने में आटा, दाल और ईंधन का होना पर्याप्त है। पर जब दुर्दान्त वस्तुओं का सामूहिक आक्रमण हो और लूट रक्तपात की विभीषका सामने आ खड़ी हो तो उन्हें रोकने के लिए बारूदी हथगोलों की आवश्यकता पड़ेगी।

हमारा जीवन गायत्रीमय ही बीता है। जो समय शेष रहा है, वह भी उसी में लग-खप जाय तो ठीक है। आज की विभीषिकाओं से जूझने में संघर्ष प्रयोजन के लिए कोई चन्द्रगुप्त, शिवाजी, विवेकानन्द मिल जाता तो हमें निर्धारित पथ से हटकर दायें-बायें न देखना पड़ता। पर बहुत प्रयत्न करने पर भी वैसा सुयोग न बन सका। फिर भी हम अभी निराश नहीं हैं। अध्यात्म शक्तियाँ संसार में हैं तो सही पर वे सभी सूक्ष्म शरीर में रह रही हैं। भौतिक प्रयत्नों के लिए स्थूल शरीरधारी चाहिए। महाभारत में पाँच देवताओं ने पाँच पाण्डवों के रूप में शरीर धारण किए थे। कुछ रीछ-वानरों के रूप में, कुछ हनुमान-अंगद आदि बनकर प्रकट हुए। प्रत्यक्ष कामों के लिये प्रत्यक्ष शरीर चाहिए। यह ढूँढ तलाश करने में लम्बा समय व्यतीत हो गया। शक्ति का समुच्चय न हो तो उसका थोड़ा अंश ही सही। वह किसी देवमानव में हो तो कामचलाऊ व्यवस्था बन सकती है। हमें बीजरूप में शक्ति सँजोए ऋषि सताएँ प्रज्ञा परिवार के रूप में हाथ लगी हैं। पर वे एकाकी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

तो निस्सार ही थीं । यदि उन्हें दिशा न दी गयी होती तो वही शक्ति कहीं ध्वंसपरक गतिविधियों में लगी होती । ऐसे में मार्गदर्शन के निर्देशानुसार एक ही उपाय शेष रहा कि बड़ी मात्रा में शक्ति उपार्जन एवं तदुपरान्त वितरण हेतु स्वयं ही आगे आया जाय और मार्ग बदलना है तो स्थिति के अनुरूप वह भी बदल लिया जाय ।

सन् १९८४ में वह परिवर्तन किया गया । एकान्त साधना–सावित्री साधना का अवलम्बन लिया गया । मुखर और मिलनसार जीवन छोड़कर एकान्तवास की रीति–नीति अपनाना सरल कार्य नहीं था । सावित्री साधना–पंच कोशों के जागरण की, कुण्डलिनी जागरण की साधना है । इसी को सूक्ष्मीकरण एवं वेदान्त की पंचीकरण साधना नाम दिया गया है । जिस मार्ग–दर्शक ने गायत्री साधना में हमें प्रवृत किया, उसी ने सावित्री साधना का विधान बताया ताकि हमारे माध्यम से अन्य अनेक प्रसुप्त दवमानवों का शक्ति जागरण हो, वे वास्तविक स्वरूप को पहचानें और आत्मिक प्रगति के माध्यम से समष्टिगत हित साधन कर सकें ।

देखा गया कि संकट उतना हलका नहीं है जिसे सौम्य प्रयासों से निपटा जाय । यह बायें हाथ से खेलने वाला खेल न प्रतीत हुआ इसलिए दाहिने हाथ को साधना और सम्भालना पड़ा है । सावित्री साधना से एक कदम आगे बढ़कर कुण्डलिनी को आड़े वक्त में जगाना पड़ा । इसी को दूसरे शब्दों में महाकाली महाचण्डी या महादुर्गा कहा जाता है । यह आवश्यक जान पड़ा कि जिस शक्ति का सुनियोजन जिन व्यक्तियों द्वारा किया जाना है, उन्हें इस विधा की समुचित जानकारी दी जाय । पिछले दिनों कुण्डलिनी विज्ञान का काफी अन्वेषण, पर्यवेक्षण, प्रयोग–परीक्षण, अध्ययन–अवगाहन चलता रहा है । इस सन्दर्भ में नई पुरानी पुस्तकों में चित्र–विचित्र प्रकार के उल्लेख मिलते हैं । इन्हीं को जोड़–गाँठ कर नए लेखकों और प्रकाशकों ने भी कुछ लिखने छापने का प्रयत्न किया है । इस लीपापोती के प्रयास में और भी अधिक गुड़ गोबर हो गया है ।

अब तक कुण्डलिनी विषय पर लिखे गए प्रतिपादनों को पढ़कर एक ही निष्कर्ष निकलता है कि यह विषय आकर्षक एवं गूढ्य विज्ञान से सम्बधित होने के कारण अनेकों ने इस पर कार्य किया है । पर निज का प्रयोग या अनुभव सम्पादन करने का कष्ट किसी ने भी नहीं किया । जो भी कुछ उन्होनें लिखा है, वह हठयोग के प्रारम्भिक प्रयोग एवं उनकी प्रतिक्रिया मात्र है जो कि इस विधा का एक प्रतिशत भी नहीं है । प्रयोगकर्ता यह दावा करने से भी चतुरतापूर्वक बचते रहे हैं कि उन्होंने अपना प्रयोजन पूरा कर लिया । आज कहीं प्रामाणिक पुस्तक–मार्गदर्शन तो दूर उसके सिद्धान्त विवेचन का सही रूप प्रस्तुत करने वाली पोथी भी कहीं दीख नही पड़ती । हमने स्वयं को भ्रम जंजालों से बचाकर उन्ही प्रतिपादनों को आगे बढ़ाने का एक विनम्र प्रयास किया है ।

हमारी सूक्ष्म मार्ग–दर्शक सता जो शताब्दियों से मौजूद है, गायत्री, सावित्री और कुण्डलिनी क्षेत्र में समान ज्ञान व अनुभव रखती है । उसी ने हमें परखा हुआ सिक्का समझकर विगत तीन वर्षों में सावित्री साधना तथा फिर देवात्मा भारत की कुण्डलिनी जागरण के अभ्यास हेतु नियोजित किया है ताकि एक लुप्तप्राय किन्तु अत्यन्त सशक्त विधा का सर्वथा लोप न होने पाए । उसकी टूटी हुई कड़ियाँ जुड़ कर अपने समग्र रूप में बनी रह सकें ।

गायत्री ब्रह्म विद्या है । उसे आत्मिकी भी कह सकते हैं । सावित्री आत्म भौतिकी है । आती तो वह आत्म–विज्ञान के अन्तर्गत ही है, पर उससे भौतिक लाभों का उपार्जन और सांसारिक संकटों का निवारण ही हो सकता है । दोनों ही के माध्यम से अपना या अपनों का हित साधन हो सकता है, किन्तु कुण्डलिनी की क्षमता ब्रह्माण्डव्यापी है और उसे विशेषतया तोड़ने या टूटे को जोड़ने में कार्यान्वित किया जाता है । चण्डी का क्रुद्ध–रुष्ट रूप उमड़ पड़े तो उसे अनाचार की मरम्मत करने के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है । उसे इसी कारण असुरनिकन्दिनी कहा गया है । उसका जब भी प्रयोग हुआ है, दानवों–आसुरी शक्तियों के विनाश हेतु ही हुआ है । इसे तलवार की तरह मारक होना चाहिए, जिसे तोड़ने मारने के लिए ही काम में लाया जा सकता है । जो बेकाबू हैं । उन्हें बलपूर्वक खींच बुलाने के लिए, जिस दिशा में चाहें, उसे घसीटकर ले चलने के लिए यह प्रयुक्त की जा सकती है । यह वशीकरण विज्ञान है । इसे मारण और उच्चाटन प्रधान कह सकते हैं ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भस्मासुर को, सुन्द-उपसुन्द को, महिषासुर को इस महाकाली ने ही अपनी शक्ति से वशीभूत कर नष्ट किया था । शुम्भ-निशुम्भ, दुर्दान्त असुर मधुकैटभ का मर्दन उसी ने किया था । राम एवं सीता के माध्यम से रावण का एवं श्रीकृष्ण-बलराम के माध्यम से पूतना, कंस, जरासंध जैसी आसुरी शक्तियों का नाश उसी ने किया था । यह तो शक्ति का एक पक्ष हुआ ।

यही शक्ति जब सृजनात्मक प्रयोजनों हेतु प्रयुक्त होती है तो सृष्टि संचालिनी शक्ति बन जाती है । ज्ञानार्णव तंत्र में कहा गया है-"शक्तिः कुण्डलिनी विश्वजननी व्यापार वद्धोद्यता" । सारा विश्व व्यापार इसी शक्ति के माध्यम से एक घुमावदार उपक्रम की तरह चलता है । महाकाल की परिवर्तन प्रक्रिया इसी के माध्यम से सम्पन्न होती है । जीव को चक्र पर आरूढ़ मृत्तिका पिण्ड की तरह यह घुमाती है और कुम्हार की तरह आत्मसत्ता को भिन्न-भिन्न रूपों में गढ़ देती है । वस्तुतः कुण्डलिनी सृष्टि सन्दर्भ में समष्टि एवं जीव सन्दर्भ में व्यष्टि में शक्ति संचार करती है । कुण्डलिनी एक प्रकार से "कॉस्मिक इलैक्ट्रिसिटी" है, जो योगाग्नि को जगाती, व्यक्ति को प्राणवान-समर्थ-दृष्टा स्तर का बनाती है । कठोपनिषद् के यम-नचिकेता संवाद में पंचाग्नि विद्या के रूप में इसी प्राणाग्नि की चर्चा हुई है जो व्यक्ति को रोग जरा एवं मृत्यु से परे जीवन्मुक्ति की ओर ले जाती है । नाड़ी संस्थान की उत्तेजना से जो शक्ति उत्पन्न होती है, वह सामयिक एवं क्षणिक प्रभाव का ही परिचय दे पाती है । किन्तु कुण्डलिनी चिरस्थायी है, चेतनात्मक शक्ति है जो व्यक्ति में ऊर्जा समाहित कर उसके व्यक्तित्व का कायाकल्प कर देती है ।

जहाँ कॉस्मिक स्तर पर, समष्टिगत धरातल पर कुण्डलिनी जागरण की प्रक्रिया चल रही हो, वहाँ यह मानना चाहिए कि यह अनिष्ट के निवारण एवं उज्ज्वल भविष्य के सृजन का प्रयोजन पूरा करेगी । पर ऐसे खतरनाक प्रयोग के लिए सत्पात्र तो हों । बन्दूक जब चलती है तो उसका झटका पीछे की ओर लगता है । इस महाशक्ति का प्रयोग करने वाले में इतना साहस, बल और शौर्य-पराक्रम होना चाहिए कि प्रहार के समय उलटकर पीछे लगने वाले झटके को सहन कर सके । अन्यथा लाभ उठाने के लिये किया गया प्रयोग हानिकारक भी हो सकता है । फिर रहस्यमयी साधनाओं को चर्चा का विषय बनाने से वह सर्व साधारण के लिए चर्चा का विषय बनती है । यही कारण है कि इन्हें गुह्य विद्या मानकर इन पर बहुधा पर्दा ही डाला जाता रहा है । जब तर्क-कुतर्कों का सिलसिला चलता है । अहंकारी लोग अपनी मीन-मेंख निकालते, गलतियाँ और सुधार सुझाते हैं । ऐसी दशा में साधना का मूलभूत आधार श्रद्धा ही डगमगाने लगती है और शंकित मनःस्थिति में उतम से उतम साधना भी निष्फल बनकर रह जाती है । संभवतः ऐसे ही अनेक कारणों को ध्यान में रखते हुए शास्त्रकारों ने उच्चस्तरीय साधनाओं को विशेष कर तंत्र से जुड़ी साधनाओं का चर्चा का विषय बनाने का निषेध किया है । इस सन्दर्भ में मार्ग दर्शक द्वारा साधक की पात्रता को परखकर तदनुसार साधना बताना आवश्यक समझा गया है । साधना क्षेत्र में पात्रता ही नहीं, साधक की आवश्यकता और परिस्थिति भी जाँचनी पड़ती है । इसके बाद ही निदान के आधार पर उपचार का तरीका रोगी व चिकित्सक दोनों के लिए लाभदायक सिद्ध होता है ।

सावित्री एवं कुण्डलिनी की साधना कराने का अनुभव एवं अभ्यास कष्ट साध्य एवं तलवार की धार पर चलने के समान दुरूह होने के कारण अब लोगों ने एक प्रकार से छोड़ ही रखा है । बिना अनुभवी शिक्षक के कोई इंजीनियर कलाकार नहीं बन सकता । इसी प्रकार जब कुण्डलिनी साधना के प्रवीण पारंगत ही नहीं रहे तो शिक्षार्थी कहाँ से मिले ?

कुण्डलिनी जागरण शरीरगत प्राणाग्नि का प्रज्वलन है और उसका लाभ निजी प्रयोजनों के लिए उठाने की परम्परा अब तक रही है । जननेन्द्रिय मूल की काम ऊर्जा को ब्रह्मरंध्र की ब्रह्म ऊर्जा में मेंरुदण्ड मार्ग में अवस्थित छः चक्रों का वेधन करते हुए मिलाया जाता है । इससे शिव शक्ति का संयोग-सम्मिलन होने पर सिद्धियाँ भी मिलती हैं, पर उसमें सर्पों को खिलाने जैसी सतर्कता से काम लेना पड़ता है । साँप का तमाशा दिखाने वाला सँपेरा उससे अपना कुटुम्ब तो पालता है, लोगों पर अपनी प्रवीणता की छाप भी डालता है, पर साथ ही वह जोखिम से भी खेलता है । किसी विषधर से पाला पड़े तो उसकी फुसकार भर से खेल रुक जाता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

है, लोगों के कलेजे थम जाते हैं व जान जाने का डर रहता है ।

शिव और शक्ति दोनों के गले में सर्प लिपटे हुए हैं । अलंकारिक रूप से इसी को सर्पिणी कुण्डलिनी कहा गया है । यह हठयोग का तांत्रिक प्रयोग तो है ही । छः चक्रों के वेधन से जो शक्तियाँ प्राप्त होती हैं वे न केवल प्रतिकूलताओं के निवारण हेतु अपितु सावित्री साधना का उच्चस्तरीय प्रयोग साथ जुड़ा होने से नया वातावरण बनाने के निमित काम भी आती है । षटचक्र वेधन के साथ जब पंच कोशों के जागरण की प्रक्रिया भी सम्पन्न होती है तो अनेक प्रकार के सृजन प्रयोजनों में उनका उपयोग होता है । मकान बनाने हेतु ईंट, चूना, लोहा, लकड़ी व श्रमिक की जरूरत पड़ती है । भोजन बनाने में ईंधन, आग, बर्तन, खाद्यपदार्थ और पकाने वाले की जरूरत पड़ती है । पंचरत्न प्रसिद्ध है । शरीर का निर्माण पंचरत्नों से व चेतना का आविर्भाव पंच प्राणों से हुआ है । यह शक्ति–स्रोत, जीवनी–शक्ति का ही दूसरा नाम है । प्राणाग्नि का उत्तेजन, कुण्डलिनी जागरण जब पंचकोशी साधना–सावित्री साधना के समन्वित रूप में होता है तो उसका प्रभाव क्षेत्र अति विस्तृत हो जाता है । समस्त विश्व के सम्मुख जितनी विकट समस्याएँ अभी सामने हैं वे पहले कभी देखने में नहीं आईं । अणु–आयुधों का विस्तार, नक्षत्र युद्ध की आसन्न विभीषिका, चारों ओर संव्याप्त वैचारिक एवं पर्यावरण प्रदूषण, प्रकृति का असंतुलन एवं मारक रोगों की भरमार, अपराध–आतंक की काली साया देखते हुए लगता है कि यह प्रयोग अब विशाल–व्यापक स्तर पर करना ही अभीष्ट है । इन पर विजय पाने वाले योद्धाओं–सृजन शक्तियों के प्रजनन में साधानात्मक कष्ट तो है पर उसका प्रतिफल इतना शानदार है जिसकी तुलना अब तक के पराक्रमों से नहीं की जा सकती । वे एक नया अध्याय ही जोड़ेंगे ।

इन पृष्ठों में दैवी प्रेरणावश एक व्यापक जनसमूह के शक्ति जागरण की प्रक्रिया हेतु किए गए प्रयोगों में से मात्र उन्हीं का रहस्योद्घाटन हो रहा है जो सर्वोपयोगी हैं । विधि–विधान की जटिलता में जाने की पाठकों को आवश्यकता नहीं । उन्हें तो मात्र फलितार्थ देखने व अपनी भूमिका कहाँ हो यह बात समझनी है । यहाँ यह स्पष्ट करने का प्रयास किया जाना है कि व्यक्ति का आन्तरिक विकास उसे इस स्थिति तक पहुँचा सकता है कि वह अपना ही नहीं अन्य असंख्यों का भी भला कर सके । इतना ही नहीं, व्यापक वातावरण को आमूल–चूल बदलकर नये युग का सूत्रपात कर सके । संक्षेप में इसी प्रयोग का अनुसंधान हमारी अपनी देवात्मा भारत की कुण्डलिनी जागरण साधना के माध्यम से सम्पन्न हुआ है ।

नव सृजन के निमित्त साधना पराक्रम

पुराणों में वर्णन आता है कि संसार की तत्कालीन परिस्थितियों से क्षुब्ध होकर विश्वामित्र ने एक समानान्तर संसार बनाने का निश्चय किया और विधाता के समान इस कार्य के लिए सामर्थ्य प्राप्त करने के लिए सूर्य का प्रचण्ड तप करने लगे । उनकी साधना सफल हुई । उन्होंने अपना कार्य आरम्भ किया ही था कि देवगण समानान्तर संसार बनाने से उत्पन्न कठिनाई को समझते हुए उस निश्चय का त्याग करने की प्रार्थना करने लगे और उस अनुरोध में सफल हुए भी ।

समानान्तर विश्व की संरचना कोई नई बात नहीं है । उसकी स्थिति पहले से ही विद्यमान है । वह अदृश्य और अनुभूति से परे हैं । पर है अवश्य । उसकी सता को समझा तो गया है पर किसी का साहस उसे प्रयोग में लाने का नहीं हुआ, क्योंकि उस छेड़–छाड़ से वर्तमान दुनिया का नक्शा ही बदल जाने का भय है ।

परमाणु का प्रतिद्वन्द्वी ऐन्टी–ऐटम पदार्थ का प्रतिद्वन्द्वी ऐन्टीमैटर, विश्व का प्रतिद्वन्द्वी ऐन्टी यूनीवर्स । इनकी सता पदार्थ विज्ञानियों ने स्वीकार कर ली है । वह काया की छाया की तरह साथ–साथ ही चलती है । इससे तराजू के दो पलड़ों की तरह साइकिल के चलते पहियों की तरह बैलेन्स बना रहता है और दृश्य मान विश्व का स्वरूप चिरकाल से यथावत् बना चला आता है । उसी कारण पदार्थ में अपनी धुरी पर घुमने और अपनी कक्षा पकड़ने की क्षमता बनी हुई है । छोटे घटक अपने से बड़े शक्ति केन्द्रों की परिक्रमा

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

करते हुए विश्व व्यवस्था का एक निर्धारित क्रम चला रहे हैं ।

पानी में भँवर, हवा में चक्रवात, ब्रह्माण्ड की पोल में ब्लैक होल जैसी स्थितियाँ जब कभी दीख पड़ती हैं, तो पता चलता है कि कोई प्रतिपक्षी शक्ति सामान्य प्रवाह में रोकथाम करके इस प्रकार के आश्चर्यजनक दृश्य उपस्थित करती है । अन्यथा सीधे प्रवाह के चलते ऐसी उथल-पुथल की आवश्यकता न थी । जल प्रपातों में जब ऊपर से नीचे की ओर पानी गिरता और नीचे टकराता है, तब वहाँ भी पानी भँवर की तरह घूमता दीख पड़ता है ।

इस प्रकार की सीधी को उल्टी करने वाल अगणित घटनाएँ घटित होती रहती हैं । तूफानों में कितनी शक्ति होती है, इसका अनुमान इससे लगता है कि वे कितने भारी-भरकम मकानों को, द्वीपों को, चट्टानों को उठाकर कहीं से कहीं फेंक देते हैं । नदियों की भँवरों में नावें टूब जाती हैं और समुद्री भँवरों में विशालकाय जलयानों की समाधि बन जाती है । बरमूडा जैसे ब्लैक होल अन्तरिक्ष में वायुयानों को, जलयानों को ऊपर उड़ाकर अदृश्य कर देते हैं ।

पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण शक्ति और चुम्बकीय शक्ति उसके घूमने या पराक्रम करने से नहीं बनती, जैसा कि समझा जाता है, वरन् नवीनतम मान्यता यह है कि पृथ्वी के समतुल्य कोई पदार्थ पिण्ड एण्टी वर्ल्ड (प्रति विश्व) जब घूमता है तो उसके कारण यह दोनों शक्तियाँ विनिर्मित होती हैं, जो न केवल उसे घुमाती चलती हैं, वरन् उसके ऊपर एक सुरक्षा छत्र भी विनिर्मित करती हैं ताकि अन्तरिक्षीय विकिरिण एवं सतत् गिरती उल्काएँ धरातल तक न पहुँचने पाएँ ।

अभी यह प्रतिद्वन्द्वी शक्ति छाया की तरह है, किन्तु कदाचित वह प्रति विश्व, एन्टी यूनीवर्स आगे आ जाय और दृश्य जगत पीछे पड़ जाय तो ऐसी स्थिति बन सकती है जिसमें सब कुछ नया है । पदार्थ भी नया-प्राणी भी नये-मनुष्य भी नये और स्वभाव तथा प्रचलन भी नये होंगे ।

क्या यह सम्भव है ? विश्वसनीय यह तथ्य है कि मनुष्य से बढ़कर और कोई नहीं, यह कथन भी सही है कि भगवान ने मनुष्य को बनाया पर यह कथन भी गलत नहीं कि भगवान को मनुष्य ने बनाया । अन्य प्राणियों में से कोई भी भगवान की सता नहीं समझता । मनुष्य ने ही उसे समझा है और जैसे जिसकी समझ में आया उसने उसी आकृति-प्रकृति का भगवान गढ़ा है । इतना तो मानना ही पड़ेगा कि मनुष्य भगवान का युवराज है और व्यास जी के शब्दों में "एक रहस्य बताता हूँ कि इस संसार में मनुष्य से बढ़कर और कुछ नहीं" अक्षरशः सत्य है ।

पृथ्वी अक्सर अपनी धुरी का स्थान बदलती रहती है । पर यदि उसका सही पता लग जाय और कोई मनुष्य वहाँ पहुँच कर एक घूँसा कस कर मार दे तो पृथ्वी अपनी कक्षा बदल देगी और जिस प्रकार अब ३६५ दिन का वर्ष होता है, २४ घंटे का दिन होता है वैसा न रहेगा और न्यूनाधिक हो जायगा । इतना ही नहीं तापमान में भी घट-बढ़ होगी और स्थिति अब की अपेक्षा भारी उलट-पुलट के फेर में फँस जायगी ।

जब एक मनुष्य की स्थूल शारीरिक शक्ति इतना कर सकती है, तो उसकी चेतना जो शरीर की तुलना में असंख्य गुनी प्रचण्ड है, यदि अपनी समग्र क्षमता समेट कर कोई विलक्षण प्रहार करे तो स्थिति में कितना भयंकर परिवर्तन हो जायगा, कुछ कहा नहीं जा सकता ।

आज की विपन्नता भूमण्डल की संरचना में परिवर्तन चाहती हो तो ऐसी बात नहीं हैं । वरन् परिस्थितियों का परिवर्तन चाहती है । यह परिस्थितियाँ कैसे बनीं ? कैसे बदलेंगी ? इस प्रश्न पर गम्भीर विचार करते हुए घटनाक्रमों का विश्लेषण करना व्यर्थ है । गहराई में उतरने पर प्रतीत होता है कि परिस्थितियों की निर्मात्री मनःस्थिति होती है । मन आकांक्षाओं से प्रभावित होता है । आकांक्षाएँ क्रिया करने के लिए विवश करती है और वे क्रियाएँ हीं एकत्रित होकर परिस्थितियाँ बन जाती हैं । मन ही परिस्थितियों का निर्माता विधाता है ।

इसलिए सोचना चहीये समीचीन होगा कि यदि आज की परिस्थितियाँ विपन्न हैं तो उन्हें बदलने के लिए लोक-मानस को बदला जाय । इसका भौतिक उपाय मात्र प्रचार या प्रशिक्षण रह जाता है । क्योंकि यह खोखला उपाय है । नीति, धर्म, देशभक्ति, कर्तव्य संस्कृति आदि की दुहाई देने वाले लोग ही जब अपने निजी जीवन में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विपरीत प्रकार के आचरण करते हैं तो विचार करने पर प्रतीत होता है कि मानसिक शिक्षण अधूरा है । इसमें भी और कोई परत है जो व्यक्तित्व के वास्तविक स्तर का निर्माण करती है । चोरों को पकड़ने का दावा करने वाले ही जब चोरी करते हैं तो लगता है कि जानकारी मात्र से व्यक्ति ढलता नहीं । वरन् उसे ढालने वाला केन्द्र कोई और है और वह है अन्तःकरण जिसे अन्तरात्मा भी कहते हैं । महापुरुषों के शरीर या साधन महान नहीं होते, वरन् उनके अन्तःकरण की महानता ही उन्हें दूसरों की तुलना में कहीं ऊँचा उछाल देती है । यह जिस भी उपाय से उछाला, बदला, सुधारा जा सके, उसे ही युग परिवर्तन का आधारभूत उपाय कहा जायगा ।

. एक दो व्यक्तियों का प्रश्न हो तो उसे प्रलोभन, दबाव, परामर्श, अथवा कूटनीति के सहारे बदला और अभीष्ट दिशा में चलाया जा सकता है । पर जहाँ ५०० करोड़ व्यक्तियों के भाग्य का निर्धारण होना हो अनेक भाषा–भाषी, अनेक वातावरणों में पले, अनेक परिस्थितियों से घिरे और अनेक संस्कारों से बँधे, अनेक परम्पराओं के अभ्यस्त लोगों का सवाल हो, वहाँ उनकी मान्यताओं में उच्चस्तरीय संस्कारों का आरोपण, आदर्शों का अवलम्बन करने हेतु तत्पर करना कितना कठिन हो सकता है? इसका अनुमान लगाना कठिन नहीं है ।

ऐसे महान प्रयोजन के लिए मानवी नहीं, दैवी शक्ति चाहिए । मानवी शक्ति के दबाव से मनुष्य हाँ में हाँ भर मिला सकता है, पर अन्तरात्मा के बदल जाने की बात असाधारण है । इसे सच्चे अर्थों में युग परिवर्तन की आधार–भूत शिला कह सकते हैं । परिस्थितियाँ जब बाहरी उपाय, उपचार, तानशाहों की कठोरता के काबू में नहीं आई उन्हें भी मनुष्य के निजी संस्कारों के आगे हार माननी पड़ी और उनसे समझौता करना पड़ा तो फिर अन्तरात्मा के भीतर से मंथन और परिवर्तन कितना कठिन और जटिल हो सकता है इसकी कल्पना करना तक असम्भव है । किन्तु यह भी स्मरण रखने योग्य है कि भगवान के लिए कुछ भी कठिन नहीं है । वह कलियुग को सतयुग में बदलता है, त्रेता में धर्म राज्य की स्थापना करता है । रावण, वृत्रासुर, जैसों के मद को चूर्ण विचूर्ण करता है । सुदामा, विभीषण, सुग्रीव, जैसे विपन्नों को सुसम्पन्न बनाता है । हारे हुए देवताओं को महाप्रलय के गर्त में डुबो देता है और सर्वव्यापी जल में से नई सृष्टि रचकर खड़ी कर देता है । वह मानवोचित विचारों को मानवी वर्चस्व की गरिमा को पुनर्जीवित करने के लिए अन्तःकरणों में भारी उथल–पुथल उत्पन्न कर दे तो क्या असम्भव है ? जिसके कौशल से निखिल ब्रह्माण्ड में ग्रह तारक अधर में टँगे और घुड़–दौड़ लगाते हुए ऐसा क्रम चला रहे हैं, जिसे देखते हुए आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है, उसके लिए किसी भी आस्तिक का उपयोगी परिवर्तन उसके अनुग्रह से सम्पन्न हो सकना असम्भव नहीं मानना चाहिए ।

इन दिनों अनजानों के लिए कोई समस्या नहीं है । वे रात भर सोते, दिन भर काम करते, अनुकूलता में हँसते और प्रतिकूलता में रोते हुए समय व्यतीत करते हैं । जन्म से लेकर मरण पर्यन्त उसी घर में रहते और उन्हीं सम्बन्धियों से रूठते–मिलते रहते हैं । किन्तु जो दूरदर्शी हैं, जिन्हें कूपमंडूक से गूलर के भुनगें से अच्छी स्थिति मिली है, उनके लिए आँखों पर दूर्बीन चढ़ाने के बाद यह देख सकना कठिन नहीं कि विभीषिकाओं की काली घटाएँ किस तरह उमड़ती–घुमड़ती चली आती हैं ।

परिस्थितियों को ही लें तो उनमें से प्रत्येक ऐसी है, जिन की चिन्ह पूजा के लिए कुछ उपचार तो करते हैं, पर समाधान का आदि अन्त कहीं नहीं दीखता । कारखानों में वाहनों में ताले कैसे डाले जाएँ ? और दिन–दिन बढता हुआ वायु प्रदूषण कैसे घटे ? अणुआयुधों का विस्फोटों का अणुभट्टियों का सिलसिला कौन रोके और बढ़ते हुए विकिरण पर अंकुश कैसे लगे ? बढ़ती हुई जनसंख्या को रोकने के लिए पुरुषों की एक द्वीप में और स्त्रियों को दूसरे द्वीप में बसाने का प्रबन्ध कैसे हो ? नर-नारियों के साथ रहते उन्हें इतनी समझ कौन दे कि अब बच्चे उत्पन्न करना विश्व विनाश का आयोजन है । पृथ्वी रबड़ की तरह खींच कर दूनी–चौगुनी कैसे की जाय कि उस पर बढ़ती जनसंख्या के अनुरूप अन्य और खनिज पैदा होने लगें ? इतने बादल किस प्रकार नौकर रखे जाएँ जो तीन महीने की समस्या का हल करें ? ऐसे शिक्षक कहाँ से आवें जो अन्य विषय छोड़कर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जीवन जीने की कला और समाज के प्रति कर्तव्य निष्ठा के अनेकानेक प्रकरणों को ही आदि से अन्त तक पढ़ाते रहें ? ऐसे चिकित्सालय किस प्रकार खुलें जिनमें प्रकृति के अनुसरण और संयम बरतने की शिक्षा देकर रोगी की चिकित्सा के साथ-साथ उनसे बचे रहने का उपाय सुझाया जाय और उसके परिपालन के लिए सर्व साधारण को विवश किया जाय? ऐसी समाज व्यवस्था कैसे बने? जिससे शोषण, उत्पीड़न, अपहरण और प्रपंच से मुक्ति मिले और सब लोग हिल-मिल कर रहें एवं मिल बाँट कर खाएँ ।

इस उल्टे को उलटकर सीधा करने के लिए बहुत बड़ी शक्ति चाहिए सो भी मानवी नहीं देगा । इसे किस प्रकार जागृत और एकत्रित किया जाय? उसे धरती निवासियों के पीछे किस तरह लगाया जाय? यह एक बहुत बड़ा काम है । सबसे बड़ी समस्या समर्थों की दिशा मोड़ने की है । चाहे धनवान हों चाहे शासक, चाहे साहित्यकार हों चाहे धर्माध्यक्ष, सभी उलटे मार्ग पर चल रहे हैं । लोक मंगल की बात तो करते हैं, पर सभी को अपने स्वार्थ साधना की पड़ी है । इस समुदाय की अपनी क्षमता ध्वंस से मोड़कर सृजन में स्वार्थ से विरत होकर परमार्थरत हो सके तो शालीनता का वातावरण बनने में कुछ देर न लगे ।

अध्यात्म विज्ञान के अनुसार उपचार मात्र एक ही रह जाता है–कठोरतम तपश्चर्या । उसी के बल पर ब्रह्मा ने नूतन सृष्टि रची थी । भागीरथ गंगा को स्वर्ग से घसीट कर धरती पर लाने में समर्थ हुए थे । वृत्रासुर के आतंक से जब देवता त्राहि–त्राहि कर उठे तो उनकी प्राण रक्षा के लिए दधीचि का अनुदान ही काम आया था । तपस्वी परशुराम ने अनाचारियों का अनेक बार धरती से उन्मूलन किया था, महर्षि दयानन्द एवं अन्यान्य समकालीन महामानवों ने पाखण्ड से मोर्चा लिया था ।

अब यदि परिवर्तन होना है तो वह तप से अर्जित शक्ति बल पर ही होगा । समष्टिगत संकल्प शक्ति, इच्छाशक्ति व क्रियाशक्ति के समन्वय से बलिष्ठ हुई व्यक्तित्व की सामर्थ्य, अभीष्ट सफलताएँ सहज ही खींचकर निकट से निकटतम ले आती हैं । मानवी शक्ति के अनेक रूपों में कुण्डलिनी की गरिमा सर्वोपरि है । जननेन्द्रिय मूल–मूलाधार क्षेत्र में यह निवास करती है और धारण शक्ति के अनुरूप वंश–वृद्धि करती चली जाती है । इसे एक आश्चर्य ही कहना चाहिए कि बिन्दुमात्र से एक नये प्राणी की जीवन सत्ता विनिर्मित होकर खड़ी हो जाती है । यह शरीर परिकर में सीमित रहने तक ही की स्थिति की परिणति है ।

जब इस शक्ति को साधना द्वारा ब्रह्माण्ड व्यापी बनाया जाता है तो वह असंख्यों की मनःस्थिति को उलट–पुलटकर कुछ का कुछ बना देती है । वह युग बदल सकती है, विश्वामित्र की तरह एक नई सृष्टि रच सकती है । इतिहास बताता है कि मनुष्यों के जीन्स–गुण सूत्र तक इस प्राण विद्युत के प्रहार से बदले जा सकते हैं । पुलस्त्य ऋषि के समस्त पोते रावण परिवार के दैत्य हो गए थे । बालखिल्य ऋषि दैत्य माता–पिता की सन्तान थे पर वे जन्मते ही उस वातावरण से विलग होकर बरगद का दूध पीकर उसी से पलते–बढ़ते रहे व ऋषि प्रकृति के हो गए । त्रेता में ऋष्यमूक निवासी समस्त वानर अपनी पशु प्रवृत्ति त्याग कर श्रेष्ठ मनुष्यों जैसी नीतिमत्ता और कुशलता उपलब्ध कर सके थे । ऐसी घटनाओं में प्राणशक्ति का कोई समर्थ प्रहार ही काम कर चुका होता हैं । युग परिवर्तन की आशा ऐसे ही उदाहरणों को देखकर की जा सकती है । ईश्वर ने प्राणियों की संरचना की है पर साथ ही युवराज मनुष्य में कुण्डलिनी शक्ति रूपी ऐसा विलक्षण शक्ति भण्डार भरा है कि वह व्यक्ति विशेष ही नहीं, समष्टिगत समूह की प्रकृति में आशातीत परिवर्तन कर सके । देवात्मा भारत की कुण्डलिनी जागरण की साधना हेतु निमित प्रारंभ में किसी एक को ही बनना पड़ा हो, पर है सबकी बराबर की भागीदारी । यह शक्ति जागरण युग परिवर्तन भी सम्भव कर सकता है ।

राष्ट्र कुण्डलिनी की परिवर्तन प्रक्रिया

कुण्डलिनी सविता की सूक्ष्म शक्ति है जो सर्वव्यापक होते हुए भी प्रगट वहीं होती है, जहाँ उसका अनुष्ठान–आह्वान किया जाता है । सविता रूपी महाशक्ति का एक स्थूल एवं सामान्य उपयोग हम गर्मी और रोशनी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

के रूप में करते है, असामान्य उपयोग जीवन निर्माण के रूप में है । ब्रह्माण्डव्यापी इस सविता शक्ति का बीज–तत्व मानवी काय–कलेवर में भी विद्यमान है । सप्तचक्र, सप्तधातु, सप्तजिव्ह सप्तगंग, सप्तभुवन, सप्ताश्व, सप्तशक्ति प्रवाह की तरह इन्हें सूर्य के सात वर्ण सात अश्व समझा जा सकता है । इन्हीं की सहायता से सृष्टि का उत्पादन अभिवर्धन, परिवर्तन क्रम चलता रहा है ।

प्रचलित जानकारी के अनुसार साधना उपादानों के माध्यम से व्यक्ति विशेष की ही कुण्डलिनी जागृत होती है और वह अपने मनोबल, प्राणबल के सहारे कुछ ऐसे काम कर पाता है जो शरीरबल या शास्त्र उपकरणों के सहारे सरलतापूर्वक कर नहीं पाता । मानवी काया में सन्निहित ऐसे अगणित बीज सूत्र हैं जो विकसित हो सकने की स्थिति में मनुष्य को असाधारण बना देते हैं । उसकी गणना सिद्धपुरुष, महामानव, तेजपुंज एवं शाप–वरदान के अधिष्ठाता के रूप में की जाने लगती है । वह ऐसे पराक्रम करने लगता है, जिनकी आशा किन्हीं देव–दानवों से ही की जाती है । सृजन और विघटन के दोनों ही क्षेत्रों में वह ऐसा कुछ करने लगता है, जिसे अदभुत, आश्चर्यजनक अलौकिक कहा जाने लगे ।

यह व्यक्तिगत सफलता की बात हुई । आमतौर से व्यक्ति की स्वार्थपरता ही प्रधान होती है । वह अपने ही वैभव–विलास, पराक्रम एवं यश–सम्मान की बात सोचता हैं । स्वर्ग–मुक्ति भी इसी क्षेत्र में आते हैं । शाप–वरदान देकर भी आत्म तुष्टि ही की जाती है । जिन्हें डराया या सम्पन्न किया जाता है वे भी बदले में प्रयोक्ता को प्रतिफल उपलब्ध कराते हैं। इस प्रकार प्रचलित प्रयोग में कुण्डलिनी जागरण भी व्यक्ति विशेष का निजी उत्कर्ष अभ्युदय ही कहा जा सकता है ।

समन्वित कुण्डलिनी जागरण आत्मिकी का एक उच्चस्तरीय प्रयोग है । इसमें साधक का स्व सीमित न होकर असीम बन जाता है । वह जो सोचता है, जो करता है, उसमें विश्व–व्यवस्था को समुन्नत श्रेष्ठ बनाना ही लक्ष्य होता है । जिसने 'आत्मवत्–सर्व भूतेषु' की 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की धारणा परिपक्व करली वह अपनी कामनाओं व चेष्टाओं को विश्व कल्याण के निमित्त ही केन्द्रिय कर देता है । उसका अपना कुछ रहता ही नहीं । जिसने द्वैत को अद्वैत में विसर्जित कर दिया–तुच्छ को महान में विलीन कर दिया, कामना को भावना बना लिया उसका चिन्तन और कर्तृत्व विराट के लिए ही हो सकता है । उसकी अभिरुचि विश्व वाटिका को फला–फूला देखने की ही ओर केन्द्रित हो जाती है ।

देवर्षि नारद जब भी विष्णु भगवान के पास जाते थे तब एक ही प्रश्न करते थे कि विश्व की अस्त–व्यस्त व्यवस्था में सुधार कैसे हो ? ऋषियों की आकांक्षा 'काम ये दुःख तप्तानां प्राणिनां आर्तनाशनम' में केन्द्रीभूत रहती रही है । उदारचेताओं का योग–तप भी इसी प्रयोजन के निमित्त होता रहा है । क्षुद्रता तो नितान्त अर्वाचीन है । पिछले अन्धकार युग में ही मनुष्य स्वार्थपरता में आबद्ध हुआ है । आत्मिकी साधनाएँ और उपलब्धियाँ इन्हीं दुर्दिनों में व्यक्ति विशेष की निजी कामनाओं की पूर्ति में नियोजित होकर रहने लगीं । आज सिद्ध पुरुषों के क्षेत्र में मनोकामनाओं की पूर्ति ही संकीर्ण स्वार्थपरता के रूप में कार्यान्वित होती हुई देखी जाती है । पर यह नहीं सोचना चाहिए कि यही सब कुछ है । परमार्थ और लोक मंगल भी अपवाद रूप में अभी भी जीवित है और वे अपने सनातन अस्तित्व का परिचय अभी भी देते रहते हैं ।

विगत तीन वर्षों में शान्तिकुञ्ज में सामयिक –परिस्थितयों को देखते हुए जो विशिष्ट साधना चली है, उसे विश्व का अथवा राष्ट्र का कुण्डलिनी जागरण कर सकते हैं । अग्नि का तेजस् उसके निकट क्षेत्र में अधिक होता है । उसके उपरान्त जैसे–जैसे दूरी बढ़ती है वैसे ही उसकी ऊष्मा कम होती जाती है । इसी प्रकार हिमालय की पुरातन ऋषि–ऊर्जा का पुनर्जागरण हरिद्वार के सप्तधारा क्षेत्र में नियोजित हुआ है । उसका प्रभाव राष्ट्र में समीपता की दृष्टि से अधिक और जल्दी दृष्टिगोचर होगा । दूरी बढ़ते जाने से विश्व के अन्य क्षेत्रों में उसका प्रभाव क्रमशः परिलक्षित होता जाएगा । अरुणोदय का प्रकाश सर्वप्रथम पानी में दृष्टिगोचर होता है । उसकी झलक आरम्भ में पर्वतों की चोटियों और वृक्षों की ऊपर टहनी–फुनगियों पर दिखाई पड़ने लगती है । उसके बाद यह प्रकाश क्रमशः अधिक व्यापक होता जाता है । समूचे आकाश में फैलता है और पर्वत–शिखरों से नीचे उतर कर सारी जमीन पर फैल जाता है । ठीक उसी प्रकार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

महाप्रज्ञा की जो इन तीन वर्षों में कुण्डलिनी जागृत हुई है, उसकी ऊर्जा का उदयन प्रथम इस देश से होगा । पीछे क्रमशः वह समस्त विश्व में फैलता जाएगा । उसके प्रभाव से होता हुआ परिवर्तन विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न रूपों में दृष्टिगोचर होगा । यह संभावना नहीं, सुनिश्चितता है । देश का-विश्व का कुण्डलिनी जागरण पुरातन काल में विश्वामित्र द्वारा सम्पन्न हुआ था । उस बार भी विश्व वसुधा का कायाकल्प हुआ था । परिस्थितियों में आमूलचूल परिवर्तन हुआ था । इस बार भी वैसा ही होने जा रहा है । गंगा के तलहट की सफाई सरकार द्वारा इन दिनों बड़ी राशि खर्च करके कराई जा रही है । गोवर्धन की मानसी गंगा की तली में जमी हुई कीचड़ को भी इन्हीं दिनों पूरी तरह निकालकर उसमें नया पानी भरने का प्रावधान बना है । ठीक इसी प्रकर विश्व वातावरण में जो विविध प्रकार की अवांछनीयताएँ घुस पड़ी हैं, अनेक परिमार्जन-परिशोधन किये जाने का ठीक यही समय है । प्रस्तुत कुण्डलिनी जागरण का यही प्रयोजन है कि व्यक्ति को नहीं, विश्व को आदर्शवादिता की पृष्ठभूमि पर सशक्त बनाया जाय । अनैतिकताओं, मूढ़मान्याताओं, अन्ध परम्पराओं, अवांछनीयताओं से उसे मुक्त किया जाय ।

परिवर्तन किस क्रम से होगा ? इस सन्दर्भ में यह समझ कर चलना चाहिए कि सर्वप्रथम जो जमा हुआ है । जड़ जमाये हुए है, उसे उखाड़ना पड़ेगा । भले ही इसमें राहत के स्थान पर असुविधाएँ ही क्यों न सामने आयें ।

नवजात शिशु को गोदी में खिलाने से पूर्व प्रसव पीड़ा सहनी पड़ती है और खून खच्चर होता है । नाली में जमा गन्दगी साफ करते समय उस सारे क्षेत्र में दुर्गन्ध फैलती है । फोड़े को अच्छा करने से पूर्व उसका आपरेशन होता है और जमा हुआ विषैला द्रव्य बाहर निकालना पड़ता है । होम्योपैथी की औषधियों के बारे में कहा जाता है कि ये पहले उभार लाती हैं अर्थात् जो विकृतियाँ जमी हुई थीं उन्हें भीतर से बाहर लाती हैं । इसके बाद रोग की अच्छा होने की प्रक्रिया आरम्भ हो जाती है । इमारत खड़ी करने से पूर्व नींव खोदनी पड़ती है । कपड़े को रंगने से पूर्व उसे पीट-पीट कर धोना पड़ता है । यही प्रक्रिया कुण्डलिनी ऊर्जा के देशव्यापी-विश्वव्यापी बनने से पूर्व आरम्भिक दिनों में दृष्टिगोचर होगी । जो विकार, विद्वेष, प्रपंच, पाखण्ड, अनाचार, कुविचार मुद्दतों से जड़ जमाए बैठे हैं उन्हें उखाड़े बिना नवीन स्थापनाओं का सिलसिला चल नहीं सकेगा, उपक्रम बन नहीं सकेगा । इसलिए इन आरंभिक दिनों में यदि तोड़-फोड़ हो तो ऐसा ही समझना चाहिए जैसे कुम्हार मिट्टी को पाँव से भिगोता, डंडे से कूटता और पैरों से रौंदता है । इसके बाद चाक पर बर्तन बनाने के उपरान्त उन्हें अँवे में पकाता है । नवयुग के निर्माण में भी इसी प्रकार की प्रक्रिया को परिवर्तन की विधि व्यवस्था द्वारा अपनाया जा रहा है । इन दिनों जहाँ-तहाँ उपद्रव हो रहे हैं, तोड़-फोड़ चल रही है, तो भी किसी को निराश होने की आवश्यकता नहीं है ।

वैद्य बहुमूल्य रसायन बनाते हैं तो औषधियों की पिसाई, घुटाई करने के उपरान्त रसभस्मों के अग्नि संस्कार भी करते हैं । अच्छी खासी औषधियों की दुर्गति बनाने जैसा ही यह क्रिया-कलाप दीखता है, पर इनका परिणाम अन्ततः अच्छा ही होता है । उज्ज्वल भविष्य की संभावना का यह प्रथम चरण है । वृक्ष बनने से पूर्व बीज को गलना-सड़ना पड़ता है, उसके बाद वह पौधा बनता और वृक्ष के रूप में फलता-फूलता है । वर्तमान विश्व-व्यवस्था को भी पुरातन अनुपयुक्त ढाँचे में से निकाल कर इस प्रकार ढालना पड़ेगा जिसमें नया कायाकल्प देखकर मानवी गरिमा का, विश्व की सुसंस्कृत समृद्धि का प्रत्यक्ष दर्शन हो सके ।

वर्षा के दिनों में आरम्भ में सर्वत्र कीचड़ होती है । हवा-पानी से झोंपड़े उड़ने और मकान चूने लगते हैं । किन्तु कुछ ही दिनों में सूखे तालाब भर जाते हैं । हरे-भरे घास-पात से ऊसर-बंजर और फसल से खेत लहलहाने लगते हैं । वह समय इक्कीसवीं सदी का होगा जिसमें सृजन का, अभ्युदय का, सभ्यता का विकास तेजी से होता दृष्टि गोचर होगा । अभी बीसवीं सदी के शेष तेरह वर्ष ऐसी ही उखाड़ पछाड़ से भरे होंगे । वर्षा ऐसी हैं, जिनमें घटाएँ घुमड़ती, बिजली कड़कती और अनिष्ट की संभावना उतरती दीख पड़ेगी । पर अन्ततः यह तथ्य सभी के सामने आता है कि वर्षा की घटाटोप विभीषिका सभी प्राणियों के लिए सुखद परिणाम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

साथ लाई थी। इन दिनों की उथल-पुथल के पीछे निकट भविष्य में सुखद संभावनाओं का आगमन आँकना चाहिए।

सांसारिक प्रचलन में मनुष्य कर्म करता है। उसकी प्रतिक्रिया एवं परिणति सामने आती है। किन्तु दैवी विधान इससे भिन्न है। उसमें प्रथम वातावरण बनता है। उससे व्यक्ति, प्राणी एवं पदार्थ प्रभावित होते हैं। ऋतु चक्र ऐसा ही है। सर्दी, गर्मी, वर्षा अपने-अपने समय पर वातावरण विनिर्मित करती है। पतझड़ और बसन्त का प्रभाव सहज ही देखा जा सकता है। युग परिवर्तन को भी ऋतु परिवर्तन के समतुल्य दैवी कर्तृत्व समझा जा सकता है। उसमें अदृश्य वातावरण की प्रधान भूमिका रहती है। उससे जड़ चेतन सभी प्रभावित होते हैं।

विश्व की-राष्ट्र की कुण्डलिनी जागृत होने का प्रभाव इस रूप में देखा जा सकेगा कि उससे जड़ पदार्थ, जीवधारी, मनुष्य एवं परिस्थितियों के प्रवाह प्रभावित होंगे। मृत्तिका की उर्वरता बढ़ेगी, खनिजों के भण्डार तथा उत्खनन का अनुपात बढ़ जाएगा। धातुएँ मनुष्य की आवश्यकताओं से अधिक ही उत्पन्न होंगी। खनिज तेलों की कमी न पड़ेगी। रसायनें प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होंगी। वृक्ष-वनस्पति लगाने के लिए मनुष्य को अधिक प्रयास नहीं करना पड़ेगा। वे प्रकृति की हलचलों से ही उपजते और बढ़ते रहेंगे। जलाशयों में कमी न पड़ेगी। वनौषधियाँ फिर प्राचीन काल की तरह इतनी गुणकार होंगी कि चिकित्सा के लिए बहुमूल्य उपचार न ढूँढने पड़ेंगे। उपयोगी प्राणी बढ़ेंगे और दीर्घ काल तक जीवित रहेंगे। हानिकारकों की वंश वृद्धि रुक जायगी और वे जहाँ-तहाँ ही अपना अस्तित्व बचाते हुए दीख पड़ेंगे। जलवायु में पोषक तत्व बढ़ेंगे और वे प्रदूषण को परास्त कर देंगे। मलीनता घटेगी और शुद्धता अनायास ही बढ़ेगी। प्रकृति प्रकोपों के समाचार यदा-कदा हीं सुनने को मिलेंगे। बाढ़, सूखा, अकाल, महामारी, भूकम्प, ज्वालामुखी-विस्फोट, ओलावृष्टि, टिड्डी इत्यादि हानिकारक उपद्रव प्रकृति के अनुकूलने से सहज ही समाप्त होते चले जायेंगे।

मनुष्य की आकृति तो वैसी ही रहेगी जैसी अब है। पर अगली शताब्दी में उसकी प्रकृति असाधारण रूप से बदल जायगी। दुर्व्यसन हर किसी को अरुचिकर लगेंगे और न उनमें जनसाधारण की प्रीति रहेगी, न प्रतीति। चोरी, ठगी, निष्ठुरता, क्रूरता, पाखण्ड, प्रपंच अपने लिए न अनुकूलता देख पायेंगे, न अवसर प्राप्त करेंगे। अधिकांश के जब गुण-कर्म, स्वभाव में सज्जनता भरी होगी तो दुष्ट-दुर्जनों की करतूतें न तो बन पड़ेंगी और न सफल होंगी। मक्खी-मच्छर सड़न कीचड़ में पनपते हैं। अनाचार भी तभी फूलते-फलते हैं, जब उन्हें रोका-टोका नहीं जाता। जब पग-जग पर उन्हें विरोध, प्रतिरोध, दमन, निन्दा, भर्त्सना और असहयोग का सामना करना पड़ेगा तो उनकी दाल गलने ही कैसे पाएगी? जब प्रचलन सज्जनता का होगा तो दुष्टता को अपनी घात लगाने के लिए न तो अवसर मिलेगा, न साहस बन पड़ेगा।

लोग आत्म-विश्वासी, स्वावलम्बी और पुरुषार्थ परायण होंगे तो दरिद्रता, अभावग्रस्तता के लिए कोई कारण ही शेष न रहेगा। मनुष्य की श्रमशीलता और बुद्धिमता यदि काम करे तो उचित आवश्यकताओं की पूर्ति में कमी क्यों पड़ेगी? उदारता जीवन्त हो तो दुखों को बाँट लेने और सुखों को बाँट देने की परम्परा ही चल पड़ेगी, तब न किसी को क्रोध का आवेश ही जकड़ेगा, न प्रतिशोध के लिए हाथ उठेगा।

व्यक्तिगत स्वार्थपरता और निष्ठुरता ही सामूहिक रूप से विकसित होकर साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद, शोषण, उत्पीड़न, अपहरण आदि के घृणित कृत्यों में विकसित होती है। युद्ध उसी के कारण छिड़ते और असंख्यों के प्राण हरते हैं। वस्तुतः अहमन्यता ही विग्रह खड़े करती है। लड़ाई में दोनों ही पक्ष हारते हैं और जर्जर होकर इस स्थिति में पहुँच जाते हैं कि कठिनाई से ही अपना अस्तित्व बनाये रखने में समर्थ हो सकें। युद्ध का उन्माद जब तक चढ़ा रहता है तब तक प्रतीत होता है कि अपनी स्थिति ही सर्वजयी है। किन्तु जब उन्माद उतरता है तो प्रतीत होने लगता है कि यह आत्मघात का ही एक तरीका है। विवेक का उदय होते ही यह समझ भी आ जाती है कि मतभेदों को विचार विनिमय से अथवा किसी न्यायनिष्ठ को पंच बनाकर उपयुक्त फैसले पर पहुँचा जा सकता है। ऐसे फैसलों में भले ही किसी को घाटा दिखाई पड़े पर वह लड़ाई की तुलना में लाभदायक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ही रहता है । यह समझ जब जनसाधारण में उपजेगी तो न छोटी लड़ाइयाँ होंगी और न महायुद्ध रचें जायेंगे ।

मानवी श्रमशीलता और बुद्धिमता में इतनी सामर्थ्य है कि यदि उसे सृजन प्रयोजनों में लगाया जा सके तो उसके आधार पर इतने सुविधा साधन विनिर्मित किए जा सकते हैं, जिनका सदुपयोग करके मनुष्य देवताओं जैसी प्रसन्नता, सुसंस्कारिता एवं सर्वांग सुन्दरता प्राप्त कर सके । सन्मार्गगामी व्यक्तियों से भरी-पूरी इस धरित्री को ही स्वर्ग से बढ़कर समृद्ध एवं सुसम्पन्न देखा जा सकता है ।

अगले दिनों ऐसा ही वातावरण बनेगा । इसे बनाने की अदृश्य भूमिका उस साधना द्वारा सम्पन्न होने जा रही है जिसे विश्व कुण्डलिनी जागरण नाम दिया गया है और जिसे तीन वर्षों में कठिन तपश्चर्या के माध्यम से पूरा किया गया है ।

परिवर्तित समय सुख संतोष से भरी-पूरी परिस्थितियों में विगत रामराज्य की तरह चिरकाल तक बना रहेगा । उसे 'सतयुग का वापसी' नाम दिया जाय तो यह उचित ही होगा ।

कुण्डलिनी साधना का मर्म एवं आवश्यक मार्गदर्शन

पदार्थों में से प्रत्येक का अपना-अपना प्रत्यक्ष प्रकट एवं अप्रत्यक्ष अप्रकट रूप है । सोना एक मूल्यवान धातु है । यह जमीन से मिट्टी मिली कच्चे अयस्क के रूप में निकलती है, परन्तु उसे परिशोधन के उपरान्त बाजार में महँगे मोल में खरीदा जाता है, सुन्दर आभूषण बनते हैं । पर जब उसे रासायनिक क्रियाओं द्वारा स्वर्ण भस्म के रूप में विकसित किया जाता है तो उसके गुणों में अद्‌भुत विशेषताएँ दृष्टीगोचर होती हैं । वह दुर्बल शरीर को बलिष्ठ एवं दीर्घायु बनाने के काम आती है । यही विशेषताएँ अन्य धातुओं में भी हैं । सामान्यतया उनके उपकरण बनते हैं पर शोधन-सूक्ष्मीकरण के उपरान्त वे रस-भस्मों के रूप में अपनी रहस्यमयी विशेषताएँ प्रकट करती हैं । रेत के परमाणुओं का सूक्ष्म अंश अणुशक्ति उत्पादन करने के काम आता है, जिससे बिजली, विकिरण, किरणें, तथा आयुध बनते हैं । यह स्थूल का सूक्ष्मीकरण है ।

यह एक सर्वविदित तथ्य है कि स्थूल की तुलना में सूक्ष्म में अगणित शक्ति होती है । मिट्टी के ढेले की तुलना में अणु-विस्फोट गजब का काम करती है । शरीर की तुलना में मनोबल की महता अत्यधिक है । पानी से भाप की समर्थता कई गुनी है । आत्मा अदृश्य है तो भी वह विकसित हो महापुरुष, ऋषि, देवात्मा, एवं अवतारों के रूप में प्रकट होती है ।

मानवी सता का सूक्ष्मीकरण भी इसी प्रकार योग और तप के माध्यम से हो सकता है । तपस्वी अपनी शरीरगत दिव्य क्षमताओं को जगाता है । भाप से रेल चलती है और बासों के घर्षण से दावानल प्रकट होती है । तपस्या की साधनात्मक विधि-व्यवस्था से यही प्रभाव उत्पन्न होता है । आतिशी शीशे पर बिखरी हुई सूर्य किरणें जब एक बिन्दु पर एकत्रित की जाती हैं तो उतने भर से अग्नि की ऊर्जा दृश्यमान होने लगती है । तपश्चर्या का-साधना का प्रतिफल ऐसा ही होता है ।

योग से मनुष्य की तुच्छता, दिव्य लोक की महानता के साथ जुड़ती है और उस गठबंधन का परिणाम होता है-लघु और महान् का एकीकरण । बिजली से जुड़ जाने पर सभी तार शक्तिशाली हो जाते हैं और अपने लिए नियोजित कार्य उस उपलब्ध शक्ति के सहारे सम्पन्न करने लगते हैं । बड़ी टंकी के साथ जुड़े हुए सभी नल तब तक पानी देते रहते हैं, जब तक टंकी भरी रहती हें स्पष्ट है कि दिव्य चेतना की टंकी कभी खाली नहीं होती है और उसके साथ जुड़ा हुआ नल तब तक पानी फेंकता रहता है, जब तक कि कोई भारी व्यवधान बीच में आकर खड़ा न हो जाय । परब्रह्म की दिव्य चेतना को मानवी अंश चेतना जब धारण करती है तो उसे नर से नारायण, पुरुष से पुरुषोत्तम, तुच्छ से महान बनने में देर नहीं लगती । कलेवर का विस्तार अपने साथ क्षमता को भी बढ़ाता चलता है । शेर की तुलना में हाथी का आकार ही नहीं, बल भी अधिक होता है । बच्चे की तुलना में तरुण का आकार ही बड़ा नहीं होता वरन् उसकी कार्यक्षमता भी उसी अनुपात से बढ़ जाती है । साधक की साधना उसे सिद्ध बना देती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

साधनाएँ इसीलिए सफल नहीं होतीं क्योंकि उनमें आत्मसंयम चरित्र का प्रखरीकरण और व्यवहार में उदार, सेवा–साधना का समन्वय नहीं होता । खाद पानी और रखवाली के बिना बोया हुआ बीज विशालकाय वृक्ष कैसे बने ? यह तथ्य कुण्डलिनी साधना प्रकरण पर पूरी तरह लागू होता है ।

कुण्डलिनी जागरण से तात्पर्य–चेतना के अन्तराल में छिपी हुई दिव्य शक्तियों का जागरण प्रचण्डीकरण । यह तीनों शरीरों में विभिन्न प्रयोजनों के लिये विभिन्न प्रकार से सम्पन्न हो सकता है ।

उपाय–उपचारों की विदित और अनुभूत संख्या १४ पाई गई है । इन १४ विभूतियों की समुद्र मंथन से निकले १४ रत्नों के साथ तुलना की जाती है । इनका वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है । स्थूल शरीर में मूलाधार से लेकर मेंरुदण्ड प्रदेश से आगे बढ़ते हुये सहस्रार कमल, ब्रह्मरन्ध्र तक जा पहुँचने वाला षट्चक्र समूह इन्हें भौतिक क्षेत्र की समृद्धियों के उत्पादन और अवरोधों के निवारण के काम आने वाला सशक्त माध्यम कहा जा सकता है । इनकी सिद्धियाँ मनुष्य को सशक्त, समृद्ध और प्रचंड–पराक्रमी बनाती है । इस आधार पर साधक सामान्यजनों की तुलना में कहीं अधिक सशंक्त हो जाता है । हमारी इन्द्रियाँ बहिर्मुखी ही नहीं रहतीं, अन्तर्मुखी होकर व्यापक क्षेत्र में भी काम करने लगती हैं । जो दृश्य आँखों से नहीं देखे जा सकते, वे दिव्य दृष्टि के जागने पर दीख पड़ते हैं । यही बात अन्य इन्द्रियों के सम्बन्ध में भी है । दूरदर्शन, दूरश्रवण, विचार संप्रेषण, पदार्थ संचालन प्राण प्रवाह, शक्तिपात, भविष्य ज्ञान जैसी स्थूल जगत से सम्बन्धित सिद्धियाँ स्थूल शरीर के क्षेत्र की कुण्डलिनी जगाने पर उपलब्ध होती हैं । ओजस् तेजस् और वर्चस् की बड़ी मात्रा का भी उपार्जन इस माध्यम से हो जाता है ।

सूक्ष्म शरीर का कुण्डलिनी जागरण पंच कोशों के आधार पर होता है । अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय और आनन्दमय कोश चेतना पर चढ़ी हुई पाँच परतें हैं । उनमें पंच तत्वों का पंच प्राणों का समीकरण है । इन्हें पाँच लोक या पाँच आयाम भी कह सकते है । इन क्षमताओं के विकसित होने पर साधक अदृश्य जगत से जुड़ जाता है । सर्व–साधारण की जानकारी तो दृश्यमान पदार्थ जगत तक ही सीमित होती है, किन्तु सूक्ष्म शरीर की कुण्डलिनी जागने पर मनुष्य का सम्बन्ध अदृश्य जगत से बन जाता है । उसके निवासी पितरों, देवों के साथ उसका स्नेह सम्बन्ध जुड़ता और आदान –प्रदान का क्रम चल पड़ता है । वह प्रकृति के रहस्यों से अवगत होता है । भविष्य की संभावनाएँ जिस प्रकार पक रही हैं, उनका पूर्वाभास भी उसे मिल जाता है । इस जानकारी के आधार पर तद्नुरूप प्रबन्ध करके अनुकूलताओं से लाभ लठाया जा सकता है और प्रतिकूलताओं को निरस्त किया जा सकता है । जनमानसय में अभीष्ट आवेश भरे जा सकते हैं और लोक प्रवाह को मोड़ा–मरोड़ा जा सकता है ।

कारण शरीर के तीन प्रयोग हैं, उन्हें "ग्रन्थि भेद" कहते हैं । मस्तक मध्य में ब्रह्म गन्थि है, जिसे कैलाश पर्वत अथवा क्षीर सागर कहा जाता है । उसे ब्रह्माण्डीय शक्तियों के साथ आदान–प्रदान में निरत ध्रुवकेन्द्र कहा जा सकता है । दूसरा हृदय देश में विष्णु चक्र है । उसे चेतना का अन्तराल कह सकते हैं । भाव संवेदनाओं का केन्द्र यही है । तुष्टि, तृप्ति और शान्ति यहीं मिलती है । अपने मानस को उच्चस्तरीय बनाने के अतिरिक्त दूसरों की समझ को भी समुचित मोड़ देना, इस विष्णु ग्रन्थि की शक्ति के सहारे ही बन पड़ता है । तीसरी ग्रन्थि है रुद्र ग्रन्थि । यह नाभि चक्र में है । शारीरिक स्वास्थ्य, प्रतिभा, प्रखरता, सशक्तता, साहसिकता, उत्पादन, अभिवर्धन जैसे अनेकों शक्ति स्रोत इस क्षेत्र में पाये जाते हैं । मूलाधार चक्र इसी गह्वर में है । कुण्डलिनी के चिर विश्राम का क्षेत्र यही है । उसे प्राण–प्रहार से ही जगाया ऊँचा उठाया और ब्रह्मलोक तक पहुँचाया जाता है ।

स्थूल शरीर के छः चक्र, सूक्ष्म शरीर के पाँच कोश–कारण शरीर की तीन ग्रन्थियाँ मिलकर चौदह बनते हैं । यही चौदह भुवन हैं । इनमें से सात ऊर्ध्वलोक हैं और सात अधः लोक ।सात का उन्नयन अभ्युदय के लिए प्रयोग होता है; और सात का दुष्टता के दमन के लिए–संकट निवारण हेतु । मानवी सता को ही समुद्र माना जाता है और उसे त्रिविधि कुण्डलिनी साधना द्वारा मथा जा सकता है । सही अर्थों में इसमें शरीर ही दैत्य है, और मन ही देव है । दोनों मिलकर जब तप योग

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की शाखा-प्रशाखाओं का अवलम्बन लेते हुए साधनारत होते हैं तो उपरोक्त १४ रत्नों को हस्तगत करते हैं। पौराणिक समुद्र मन्थन में इन्हीं का वर्णन विवेचन अलंकारिक रूप में किया गया है। मानवी सत्ता के पंच तत्वों और पाँच प्राणों से बने हुए कलेवर को समुद्र जितना गहरा और विशाल रत्नाकर माना गया है। अभीष्ट की प्राप्ति के लिए हमें कहीं अन्यत्र बाहर जाने की आश्यकता नहीं। जो चाहिए सो भीतर ही विद्यमान है। उसे बाहर क्यों ढूँढ़ा जाय ? कस्तूरी हिरन की तरह अपनी नाभि में ही क्यों न तलाश लिया जाय ?

संक्षेप में यही है-कुण्डलिनी विज्ञान की रूपरेखा जिसका इस अंक के विगत पृष्ठों में परिचय, विवरण-विधान का संकेत दिया गया है। पर इन चौदह विधानों में से किसी की भी समग्र रूपरेखा जानबूझ, कर प्रस्तुत नहीं की गयी है। क्योंकि यह अणु विस्फोट जैसा प्रयोग है। प्रयोग से पूर्व यह जानना पड़ता है कि किस स्थिति का, कौन व्यक्ति, किस प्रयोजन के लिए इसे प्रयुक्त करना चाह रहा है। यह विदित हुए बिना साधना आरम्भ कर देना बारूद के ढेर के साथ खिलवाड़ करने के समान है। गलत उपयोग से कर्ता की ऐसी हानि भी हो सकती है, जिसकी क्षतिपूर्ति न हो सके। नौसिखियों और असावधानों के लिए तो ज्ञानयोग, भक्तियोग, कर्मयोग प्रज्ञायोग आदि सरल जीवन साधनाओं से भी काम चल सकता है। वे इतना ही कर लें तो बहुत है।

कुण्डलिनी विधान सीखने के लिए किसी को भी आतुरता नहीं अपनानी चाहिए और न उसका कोई सिरा पकड़कर पूर्णता तक पहुँचने की साध संजोनी चाहिए। इस महान प्रयोग में से जितना जिसके लिए उचित और आवश्यक है, उतना उसे सिखाते रहने की हमारी जिम्मेदारी कम से कम एक शताब्दी तक बनी रहेगी उसे बताया और सिखाया जाता रहेगा। स्थूल शरीर न रहने पर भी हमारी सूक्ष्म सत्ता अपने सामयिक दायित्वों का निर्वाह भली प्रकार करती रहेगी।

किसी सत्पात्र को यह अनुभव न होने दिया जायगा कि सिखाने वाले के अभाव में हमारी आत्मिक प्रगति की उचित आवश्यकता कुण्डलिनी जागरण का विधान न मालूम होने के कारण इच्छा पूर्ति न हो सकी। जिस प्रकार दिव्य शक्तियों ने हम से २४ वर्ष में महापुरश्चरण पूरा कराया और तीन वर्ष में कठोर तप के माध्यम से देश की कुण्डलिनी जगाने का विधान ही नहीं बताया वरन् साथ देकर जो आवश्यक था, उसे पूरा करने का सरंजाम भी जुटाया। उसी प्रकार हम भी यह प्रयत्न करेंगे कि प्रज्ञा परिवार के परिजनों में से जो विशेष प्रयोजन के लिए विशेष आत्मबल संग्रह करने के लिए कुण्डलिनी विज्ञान का आश्रय लेना चाहें, उनकी आवश्यकता को पूरी करने के लिए आवश्यक संयोग बिठाते एवं सरंजाम जुटाते रहें।

* * *

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सावित्री विज्ञान और तंत्र साधना

सावित्री द्वारा वाममार्गी तांत्रिक साधनायें

सृष्टि के आदि में ब्रह्म ने इच्छा की कि 'एकोऽहं बहुस्याम' मैं एक से बहुत हो जाऊँ । यह इच्छा ही शक्ति के रूप में परिणत हो गई । ब्रह्म और माया दो हो गये । यह माया या शक्ति दो विभागों में बँटी । एक संकल्प मयी गायत्री, दूसरी परमाणुमयी सावित्री । संकल्पमयी गायत्री का उपयोग आत्मिक शक्तियों को बढ़ाने एवं दैवी सान्निध्य प्राप्त करने में होता है । आत्मिक गुणों और विशेषताओं के बढ़ने के कारण साधक को सांसारिक कठिनाइयाँ पार करना, स्वल्प साधन में भी सुखी रहना एवं सुखकर स्थिति का उपलब्ध करना सहज होता है । अब तक इसी विधि-विधान की चर्चा इस पुस्तक के पृष्ठों पर की गई है । यह योग विज्ञान है इसे दक्षिण मार्ग भी कहते हैं । यह सतू प्रधान होने से हानिरहित एवं व्यक्ति तथा समाज के लिए सब प्रकार हितकर है ।

शक्ति की दूसरी श्रेणी परमाणुमयी सावित्री है । इसे स्थूल प्रकृति, पंचभूत, भौतिक सृष्टि आदि नामों से भी पुकारते हैं । इस प्रकृति के परमाणुओं के आकर्षण-विकर्षण से संसार में नाना प्रकार के पदार्थों की उत्पत्ति, वृद्धि और समाप्ति होती रहती है । इन परमाणुओं की स्वाभाविक साधारण क्रिया में हेर-फेर करके अपने लिए अधिक उपयोगी बना लेने की क्रिया का नाम विज्ञान है । यह विज्ञान दो भागों में विभक्त है-एक वह जो यन्त्रों द्वारा प्रकृति के परमाणुओं को अपने लिए उपयोगी बनाता है । रेल, तार, टेलीफोन, रेडियो, हवाई जहाज, टेलीविजन, विद्युत शक्ति आदि अनेकों वैज्ञानिक यंत्र आविष्कृत हुए हैं और होने वाले हैं, यह यंत्र विज्ञान है । दूसरा है तंत्र विज्ञान-जिसमें यन्त्रों के स्थान पर मानव अन्तराल में रहने वाली विद्युत शक्ति को कुछ ऐसी विशेषता सम्पन्न बनाया जाता है, जिससे प्रकृति से सूक्ष्म परमाणु उसी स्थिति में परिणित हो जाते हैं, जिसमें कि मनुष्य चाहता है । पदार्थों की रचना, परिवर्तन और विनाश का बड़ा भारी काम बिना किन्हीं यन्त्रों की सहायता के तंत्र विद्या द्वारा हो सकता है । विज्ञान के इस तंत्र भाग को 'सावित्री विज्ञान', तंत्र-साधना, वाममार्ग आदि नामों से पुकारते हैं ।

यन्त्र-विज्ञान एक स्वतंत्र विद्या है । इस पुस्तक में उसके आधार और कार्य की चर्चा नहीं की जा सकती । इन पंक्तियों में तो हमें तंत्र के विज्ञान का पाठकों को थोड़ा सा परिचय कराना है । प्राचीन काल में भारत के विज्ञानाचार्य अनेक प्रयोजनों के लिये इसी मार्ग का अवलम्बन करते थे । प्राचीन इतिहास में ऐसी अनेक साक्षियाँ मिलती हैं, जिनसे प्रकट होता है कि उस समय बिना यन्त्रों के भी ऐसे अद्भुत कार्य होते थे, जैसे आज यन्त्रों से भी सम्भव नहीं हो पाये हैं । युद्धों में आज अनेक प्रकार के बहुमूल्य वैज्ञानिक अस्त्र-शस्त्र प्रयोग होते हैं, पर प्राचीन काल जैसे वरुणास्त्र-जो जल की भारी वर्षा करदे, अग्नेयास्त्र जो भयंकर अग्नि ज्वालाओं का दावानल प्रकट कर दे, सम्मोहनास्त्र-जो लोगों को संज्ञाशून्य बना दे, नागपाश-जो लकवे की तरह जकड़ दे, आज कहाँ हैं ? इसी प्रकार ऐंजिन, भाप, पैट्रोल आदि के आकाश में, भूमि पर और जल में चलने वाले रथ आज कहाँ हैं ? मारीच की तरह मनुष्य से पशु बन जाना, सुरसा की तरह बहुत बड़ा शरीर बढ़ा लेना, हनुमान की तरह मच्छर के समान अति लघु रूप धारण करना, समुद्र लाँघना, पर्वत उठाना, नल नील की भाँति पानी पर तैरने वाले पत्थरों का पुल बनाना, रावण, अहिरावण की भाँति बिना रेडियो के अमरीका और लंका के बीच वार्तालाप होना, अदृश्य हो जाना आदि अनेकों ऐसे अद्भुत कार्य थे, जो आज यन्त्रों से भी नहीं हो पाते, पर एक समय बिना किसी यन्त्र की सहायता के केवल आत्मशक्ति का तान्त्रिक उपयोग होने से सुगमतापूर्वक हो जाते थे । इस क्षेत्र में भारत भारी उन्नति कर चुका था और संसार पर चक्रवर्ती शासन करने एवं जगद्गुरू कहलाने का यह भी एक कारण था ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नागार्जुन, गोरखनाथ, मछीन्द्रनाथ आदि सिद्ध पुरुषों के पश्चात् भारत से इस विद्या का लोप होता गया और आज तो इस क्षेत्र में अधिकार रखने वाले व्यक्ति कठिनाई से ढूँढ़े मिलेंगे। इस तंत्र महाविज्ञान की कुछ लंगड़ी–लूली, टूटी–फूटी शाखा–प्रशाखाएँ जहाँ–तहाँ मिलती हैं, उनके चमत्कार दिखाने वाले जहाँ–तहाँ मिल पाते हैं। उनमें से एक शाखा है–"दूसरों के शरीर और मन पर अच्छा या बुरा प्रभाव डालना" जो इसे कर सकते हैं, वे यदि अभिचार करें तो स्वस्थ आदमी को रोगी बना सकते हैं, किसी भयंकर प्राणघातक पीड़ा, वेदना या बीमारी में अटका सकते हैं, उस पर प्राणघातक सूक्ष्म प्रहार कर सकते हैं, किसी की बुद्धि को फेर सकते हैं, उसे पागल, उन्मत्त, विक्षिप्त, मन्दबुद्धि या उलटा सोचने वाला कर सकते हैं। भ्रम, भय, सन्देह, आशंका और बेचैनी के गहरे दलदल में फँसाकर उसके मानसिक धरातल को अस्त–व्यस्त कर सकते हैं। इसी प्रकार किसी अप्रत्यक्ष चेतना शक्ति द्वारा किसी व्यक्ति का बुरा प्रभाव पड़ा हो तो उसे वे दूर कर सकते हैं। नजर लगना, उन्माद, भूतोन्माद, ग्रहों का अनिष्ट, बुरे दिन, किसी के द्वारा प्रेरित अभिचार, मानसिक उद्वेग आदि को शांत किया जा सकता है। शारीरिक रोगों के निवारण, सर्प, बिच्छू आदि का दर्शन एवं विषैले फोड़ों का समाधान भी तंत्र द्वारा होता है। छोटे बालकों पर इस विद्या का बड़ी आसानी से भला या बुरा प्रभाव डाला जा सकता है।

तंत्र साधना द्वारा सूक्ष्म जगत में विचरण करने वाली अनेक चेतना ग्रन्थियों में से किसी विशेष प्रकार की ग्रन्थि को अपने लिये जागृत, चैतन्य, क्रियाशील एवं अनुचरी बनाया जा सकता है। देखा गया है कि कई तान्त्रिकों को मसान, पिशाच, भैरव, छाया पुरुष, से बड़ा, ब्रह्मराक्षस, वेताल, कर्ण–पिशाचनी, त्रिपुर–सुन्दरी, कालरात्रि, दुर्गा आदि की सिद्धि होती है। जैसे कोई सेवक प्रत्यक्ष शरीर से किसी के यहाँ नौकर रहता है और मालिक की आज्ञानुसार काम करता है, वैसे ही यह शक्तियाँ अप्रत्यक्ष शरीर से उस तंत्र–सिद्धि पुरुष के वश में होकर सदा उसके समीप उपस्थित रहती हैं और जो आज्ञा दी जाती हैं उनको वे अपनी सामर्थ्यानुसार पूरा करती हैं। इस रीति से कई बार ऐसे–ऐसे अद्भुत काम किये जाते हैं कि उनके कारण आश्चर्य से दंग हो जाना पड़ता है।

होता यह है कि अदृश्य लोक में कुछ "चेतना ग्रन्थियाँ" सदा विचरण करती रहती हैं। तान्त्रिक साधना–विधानों द्वारा अपने योग्य ग्रन्थियों को पकड़ कर उनमें प्राण डाला जाता है। जब वह प्राणवान हो जाती हैं तब उनका सीधा आक्रमण साधक पर होता है, यदि साधक अपनी आत्मिक बलिष्ठता द्वारा उस आक्रमण को सह गया, उससे परास्त न हुआ तो प्रतिहत होकर वह ग्रन्थि उसके वशवर्ती हो जाती है और चौबीसों घण्टे के साथी आज्ञाकारी सेवक की तरह काम करती है। ऐसी साधनाएँ बड़ी खतरे से भरी हुई होती हैं। निर्जन, श्मशान आदि भयंकर प्रदेशों में ऐसी रोमांचकारी विधि–व्यवस्था का प्रयोग करना पड़ता है, जिससे साधारण मनुष्य का कलेजा दहल जाता है। उस समय में ऐसे घोर अनुभव होते हैं, जिनमें डर जाने, बीमार पड़ जाने, पागल हो जाने या मृत्यु के मुख में चले जाने की आशंका रहती है। ऐसी साधनाएँ हर कोई नहीं कर सकता कोई करले तो सिद्धि मिलने पर उस अदृश्य शक्तियों को साथ रखने की जो कष्टसाध्य शर्तें होती हैं उन्हें पालन नहीं कर सकता। यही कारण है, जो साहस करते हैं उसमें से कोई विरले ही साहस करते हैं, जो साहस करते हैं उनमें से कोई विरले सफल होते हैं और जो सफल होते हैं उनमें से कोई विरले ही अन्तकाल तक उनसे समुचित लाभ उठा पाते हैं।

यहाँ तंत्र साधना की किन्हीं विधियों को बताने का हमारा कोई इरादा नहीं है, क्योंकि उन गुप्त रहस्यों को जन–साधारण के लिए प्रकाशित कर देने का अर्थ है–बालकों के क्रीड़ा–स्थल में बारूद बिखेर देना, जिसमें वे विचारे क्रीड़ा–कौतुक करने के उपलक्ष में सर्वनाश का उपहार प्राप्त करें। यह परम्परा तो अधिकार और अधिकारी के आधार पर एक–दूसरे को सिखाने की रही है। हमें स्वयं इस मार्ग पर प्राणघातक खतरों में होकर गुजरने का कड़ुआ अनुभव है, फिर भोले–भाले पाठकों को कोई खतरा उपस्थित कर देने के लिए उस शिक्षण विधि को लिख मारने की भूल हम कैसे कर सकते हैं ? इन पंक्तियों में तो हमारा इरादा केवल यह बताने का है कि प्रकृति की परमाणुमयी सावित्री शक्ति पर भी आत्मिक विद्युत शक्ति द्वारा भूतकाल में अधिकार प्राप्त किया जा चुका है और आगे भी प्राप्त किया जा सकता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

८.३ सावित्री कुण्डलिनी एवं तंत्र

यह ठीक है कि आज ऐसे व्यक्ति दिखाई नहीं पड़ते जो प्रत्यक्ष रूप से यह प्रमाण दे सकें कि किस प्रकार अमुक यंत्र का काम, अन्दर की बिजली से अमुक प्रकार हो सकता है । यह विद्या विगत दो हजार वर्षों से धीरे-धीरे गुप्त होती चली आई है और अब तो उस विद्या के ऐसे ज्ञात ढूँढ़े नहीं मिलते । वैसे तो वैज्ञानिक यन्त्रों के अनेक आविष्कारों के कारण उतनी आवश्यकता आज नहीं रही है, फिर भी उस महाविद्या का प्रकाश तो जारी रहना ही चाहिए । यह आज के तान्त्रिकों का कर्त्तव्य है कि इस लुप्त प्रायः सावित्री विद्या को अथक परिश्रम द्वारा पुनर्जीवित करके भारतीय विज्ञान की महत्ता संसार के सामने प्रतिष्ठित करें । आज के तान्त्रिक जितना कर लेते हैं यद्यपि वह भी कम महत्वपूर्ण और कम आश्चर्यजनक नहीं है, फिर भी इस मार्ग के पथिकों को तब तक चैन नहीं लेना चाहिए जब तक कि परमाणु प्रकृति पर आत्म-शक्ति द्वारा अधिकार करने के विज्ञान में पूर्वकाल जैसी सफलता प्राप्त न हो जाय ।

वर्तमान काल में तंत्र का जितना अंश प्रचलित, ज्ञात एवं क्रियान्वित है, उसकी चर्चा ऊपर दी जा चुकी है । मनुष्यों पर अदृश्य प्रकार से भला या बुरा प्रभाव डालना आज के तंत्र विज्ञान की मर्यादा है । वस्तुओं का रूपान्तर, परिवर्तन, प्रकटीकरण, लोप एवं विशेष जाति के परमाणुओं का एकीकरण करके उनके शक्तिशाली प्रयोग का भाग आज प्रायः लुप्त है । चैतन्य ग्रन्थियों का जागरण और उनको वशवर्ती बनाकर आज्ञा पालने कराने में विक्रमादित्य के समान साधक तो आज नहीं है, पर किन्हीं अंशों में इस विद्या का अस्तित्व मौजूद अवश्य है ।

तंत्र शास्त्र में अनेक मन्त्र हैं पर उन सब मन्त्रों का कार्य गायत्री से भी हो सकता है । गायत्री की, संकल्प-शक्ति की साधना ही सर्व हितकारी, सर्व सुलभ और सर्व मंगलमय है । परमाणुमयी तंत्र प्रधान, वाममार्गी सावित्री विद्या का विषय गोपनीय है । यद्यपि आज सावित्री विद्या का अनुसंधान वैज्ञानिकों द्वारा प्रयोगशालाओं में भी हो रहा है । उसके आधार पर अगणित आविष्कार हो रहे हैं और प्रकृति के ऐसे रहस्य मालूम होते जा रहे हैं जिनके द्वारा राक्षस राज रावण को लज्जित कर देने वाले शस्त्रों एवं यंत्रों का स्वामित्व प्राप्त होता जाता है । प्राचीन काल में हमारे दूरदर्शी ऋषि जानते थे कि सावित्री की शोध, उपासना सीमित ही होना चाहिए अन्यथा मूर्ख मनुष्य उसके दुरुपयोग से प्रलय ही उपस्थित कर देगा । आज अणु बम, हाइड्रोजन बम, कीटाणु बम, मारक किरण आदि कितने पदार्थ सृष्टि में प्रलय उपस्थित कर देने की चुनौती दे रहे हैं । इस खतरे से परिचित होने के कारण उन्होंने भौतिक विज्ञान की अधिक शोधक न करके, सावित्री उपासना की उपेक्षा करके, गायत्री की आत्म शक्ति की, आराधना करना ही उचित समझा था, क्योंकि इसके द्वारा प्रत्येक कदम पर आनंद की ही वृद्धि होती जाती है ।

सावित्री गायत्री का ही एक भाग है । जैसे किसी ग्रह दशा में, छोटी छोटी अन्तर्दशा बर्तती जाती हैं, वैसे ही गायत्री के अध्यात्म विज्ञान में भी एक शाखा सावित्री की है जिसके आधार पर आत्म शक्ति द्वारा पदार्थों को इच्छानुकूल ढंग से आकर्षित, परिवर्तित, परिवर्द्धित, विनिर्मित एवं छिन्न-भिन्न किया जा सकता है । मंत्र बल के अनेक प्रकार की चमत्कारी ऋद्धि सिद्धियों की उपलब्धि इसी रीति से होती है । प्राचीन काल में अनेकों दिव्य अस्त्र शस्त्र मंत्र बल से संचालित होते थे । वर्षा, कुहरा, अग्निकाण्ड उपस्थित किए जाते थे । पुष्पक विमान, उड़ने वाले रथ, विचार संचालन द्वारा दूर देशों के व्यक्तियों का आपस में बातें करना, शरीर बदल लेना, मनुष्य से पशु पक्षी और पशु पक्षी से मनुष्य बन जाना, अदृश्य हो जाना, वायु में उड़ना, पानी पर चलना, जैसी अनेकों सिद्धियां गायत्री शक्ति द्वारा सावित्री पर प्रभुत्व प्राप्त करने की साधना द्वारा होती थी । उस विद्या को 'तंत्र' कहते थे । आज तंत्र का बड़ा महत्वपूर्ण भाग लुप्त हो चला है । फिर भी मारण, मोहन, उच्चाटन आदि विनाशकारी करतूतें करते हुए आज भी कितने ही तांत्रिक देखे जा सकते हैं ।

तंत्र भी उन्हीं खतरों से भरा है जिनसे कि भौतिक विज्ञान के अमर्यादित अनुसन्धान । इसलिए त्रिकालदर्शी ऋषियों ने पग-पग पर तंत्र की ऋद्धि सिद्धियों की निन्दा की हैं । उस मार्ग पर चलने के लिए मनाही की है । जिन्हें कुछ प्राप्त है उन्हें उसका प्रदर्शन न करने का आदेश दिया है । कठोर प्रतिबन्ध लगाया है । तत्व ज्ञानी ऋषि जानते थे कि मानव जीवन के लिए परम उपयोगी, अपार आनन्ददायक, अनन्त सुख-शान्ति देने वाली

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वस्तु केवल मात्र विशुद्ध अध्यात्म विद्या ही है । इसलिए उन्होंने गायत्री उपासना के लिए सर्व साधारण को प्रोत्साहित किया है ।

तांत्रिक साधनाएँ गोपनीय हैं ।

गायत्री द्वारा जैसे योगसम्मत वेदोक्त दक्षिणमार्गी साधनाएँ होती हैं वैसे ही उससे तंत्रोक्त वाममार्गी सिद्धियां भी प्राप्त की जा सकती हैं । तंत्र एक उत्तेजनात्मक उग्र प्रणाली है । उससे आंधी तूफान की तरह भयंकर कार्य कर डालने की शक्ति पैदा होती है । बड़े आकर्षक प्रलोभन सामने आते हैं परन्तु यह ध्यान रखने की बात है कि साधना में थोड़ी सी भूल हो जाने पर भयंकर खतरा भी है । तंत्र भ्रष्ट साधक बीमारी, पागलपन, अंग-आंग या किसी प्राणघातक संकट में फंस सकता है । यदि सिद्धि मिली भी तो तंत्र की तमोगुण प्रधान शक्तियां आत्मा को कलुषित करके अधःपतन की ओर ही ले जाती हैं ।

हमें इस दिशा में बड़े कटु अनुभव हैं । कई बार मृत्यु मुख में से वापिस लौट कर नया जीवन पाया है । ऐसे जोखिम भरे मार्ग में हम दूसरों को डालने की जिम्मेवारी अपने ऊपर नहीं लेते । इसलिए वाममार्गी तांत्रिक सिद्धियां प्राप्त करने के इच्छुकों को सदा हमारी यही सलाह रहती है कि वे आकर्षण, प्रलोभन, चमत्कार, आतंक जमाने की क्षमता, प्रशंसा एवं लोगों में पुजने के लोभ को त्याग कर तंत्र से विमुख ही रहें । यह मार्ग कुछ विशेष व्यक्तियों के लिए ही उपयुक्त हो सकता है । पर सर्व साधारण के लिए तो सर्वथा अनुपयुक्त ही है ।

तंत्र में जहाँ सभी वर्णों की साधना का अधिकार है तथा जाति-भेद और स्त्री-पुरुष का कोई प्रतिबन्ध नहीं है, वहाँ साधन-विधियाँ भी गुप्त रखी गयी हैं, और अधिकारी गुरु से ही प्राप्त की जा सकती हैं । गुरु भी अधिकारी की परीक्षा करके रहस्यमयी विद्या की दीक्षा देता है । गोपनीयता का कारण साधना-विधियों को उनके दुरुपयोग से बचाना है, क्योंकि तंत्र, शक्ति-विकास का विज्ञान है । इससे अपना व समाज का हित भी किया जा सकता है और अहित भी । ऐसे भी विधान हैं, जिनसे आतंक और भय का वातावरण उत्पन्न किया जा सकता है । ऐसी स्थिति न आने पाए, इसलिए साधना-विधान हर किसी को नहीं बताया जाता, उसे गुप्त रखा जाता है ।

उपनिषदों की पराविद्या को 'गुह्य' घोषित किया गया है और उस रहस्यमयी को दूसरों को न बताने का आदेश दिया गया है । गीताकार 'राजयोग' को भी 'गुह्य' की संज्ञा देते हैं । तंत्रों में अपनी साधना को 'योनि' की तरह गुप्त रखने की बात कही गई है । जिस तरह स्त्री अपने गुह्य अंगों को पति के अतिरिक्त सबसे छिपाती है, उसी तरह अपने पति-भगवान के अतिरिक्त इसे सबसे छिपाना चाहिए । प्राचीन यूनान में दीक्षा-विधि का एक अंग यह शपथ लेना भी था कि वह अपनी साधना के सम्बन्ध में किसी अनधिकारी को नहीं बताएगा । ईसाई धर्म के आरम्भ में नियम बहुत कड़े थे-यदि कोई विशिष्ट प्रकार की दीक्षा को जनसाधारण पर प्रकट कर देता था, तो उसे मृत्युदण्ड दिया जाता था । प्राचीन धर्मग्रन्थों में वर्णित है कि ईसाई धर्म की कई आदिम संस्थाओं का एक घातक नियम यह था कि जो उनके रहस्यों की रक्षा नहीं कर सकता था ऐसे, सदस्य को वे मृत्युदण्ड देते थे

इससे स्पष्ट है कि रहस्यमयी विद्या की प्रथा केवल भारत में ही नहीं है, ईसाई धर्म और पाश्चात्य संस्कृति में भी इसके अंकुर मिलते हैं । वे भी अधिकारी व्यक्ति को ही ज्ञान देने के पक्ष में हैं ।

गीता भी गोपनीयता की नीति का समर्थन करती है :

इदं ते नातपस्काय नाभक्ताय कदाचन ।
न चाशुश्रूषवे वाच्यं न मां योऽभ्यसूयति ॥

-गीता

"तपस्या-विहीन, अभक्त या जिसको अभी तक इन बातों के सुनने की तीव्र इच्छा न हुई हो और जो गुरु-सेवा परायण न हो या जो मुझसे (ईश्वर) से असूया रखता हो, ऐसे व्यक्ति से ये बातें न कहनी चाहिए ।"

तंत्र-शास्त्रों में तो इस आशय के स्पष्ट आदेश दिए गए हैं :

स्वमन्त्रा नोपदेष्टव्यो वक्तव्यश्च न संसदि ।
गोपनीयं तथा शास्त्रं रक्षणीयं शरीरवत् ॥

-नारद पञ्चरात्र

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"अपने मन्त्र का किसी को उपदेश न दे, सभा में उसे न कहे। पूजा-विधि को गुप्त रखे और तद्विषयक शास्त्र की शरीर की तरह रक्षा करे।"

इति मे सम्यगाख्याताः शान्ति शुध्यादि कल्पना ।
रहस्याति रहस्याश्च गोपनीयास्त्वया सदा ॥

अर्थात् नारदजी ! यह हमने आपसे शान्ति-शुद्धादि कल्पना रहस्य कहा है। यह रहस्य का भी रहस्य है। यह आपको सर्वदा गुप्त रखने योग्य है।

गोपनीयं गोपनीयं गोपनीयं प्रयत्नतः ।
त्वयाचि गोपितव्यं हि न देयं यस्य कस्यचित् ॥

"इन साधन-विधियों को यत्नपूर्वक गुह्य रखो-गुप्त रखो। इनको अपने तक ही सीमित रखो, किसी ऐसे-वैसे को मत बताओ।"

न देयं पर शिष्येभ्याह्यकेभ्यो विशेषतः ।
शिष्येभ्यो भक्ति युक्तेभ्याह्यन्ययामृत्युमाप्नुयात् ॥

"दूसरे के शिष्य के लिये विशेषकर भक्तिरहित के लिए यह मन्त्र कभी न देना चाहिए। इसकी दीक्षा भक्तियुक्त शिष्य को ही देनी चाहिए अन्यथा मृत्यु की प्राप्ति होती है।"

कथितं सारभूत ते खेलत्खञ्जनलोचने ।
ब्रह्मज्ञानं मया देवि किं भूयः श्रोतुमिच्छसि ॥
नातः परतरं किञ्चिद्विद्यते मम मानसे ।
गोपनीयं सदा भद्रे पशुपामर सन्निधौ ॥

योगिनी तंत्र

अर्थात् "हे देवदेवेशि ! यह अत्यन्त सारभूत ब्रह्मज्ञान मैंने तुम्हारे प्रति कहा है, अब अधिक क्या सुनने की इच्छा रखती हो ? इससे बढ़कर अन्य कुछ मेरे अन्तर में नहीं है। इस ज्ञान को पशु और पामर व्यक्ति से सदा गुप्त रखना चाहिए।"

अति गुह्यमिदं पृष्टं त्वया ब्रह्मतनूद्भव ।
न कस्यापि वक्तव्यं दुष्टाय पिशुनाय च ॥

-गायत्री तंत्र

"यह सुनकर श्री नारायण ने कहा कि हे नारद ! आपने अत्यन्त गुप्त बात पूछी है, परन्तु यह किसी दुष्ट या पिशुन (छलिया) से नहीं कहनी चाहिए।"

रहस्याति रहस्यानां रहस्योऽयं महेश्वरि ।
ऊर्ध्वाम्नायः समाख्यातः समासेन न विस्तरात् ॥
कुलार्णवमिदं शास्त्रं योगिनीनां हृदि स्थितम् ।
प्रकाशितं मया चाद्य गोपनीयं प्रयत्नतः ॥

-कुलार्णव तंत्र

अर्थात् " हे महेश्वरी ! यह जो परम गूढ़ एवं अत्यन्त ही रहस्य है, उसका भी यह सबसे प्रबल रहस्य है जो कि ऊर्ध्वाम्नाय मैंने तुम्हारे सामने बतला दिया है। इसका विशेष विशद् वर्णन नहीं किया है, यह कुलार्णव शास्त्र है, जो योगनियों के हृदय में स्थित रहा करता है। यह कभी किसी के सामने प्रकाशित नहीं किया जाता है। तुम्हारे अत्यन्त प्रेमानुरोध होने के कारण मैंने आज प्रकाशित कर दिया है। किन्तु मेरा आदेश है कि इसको प्रयत्नपूर्वक अत्यन्त गुप्त रखना।"

कुलार्णव तंत्र में ही एक और स्थान पर है कि अपना धन, स्त्री और प्राण तक अर्पण कर दे परन्तु गुह्य शास्त्र को अनधिकारी व्यक्ति को न बताए।

उपरोक्त प्रमाणों में यह बताया गया है कि तंत्र एक गुप्त विज्ञान है। उसकी सब बातें सब लोगों के सामने प्रकट करने योग्य नहीं होतीं। कारण यह है कि तांत्रिक साधनाएँ बड़ी क्लिष्ट होती हैं। वे उतनी ही कठिन हैं जितना कि समुद्र की तली में घुसकर मोती निकालना। गोताखोर लोग जान को जोखिम में डालकर पानी में बड़ी गहराई तक नीचे उतरते हैं, तब बहुत प्रयत्न के बाद उन्हें कुछ मोती हाथ लगते हैं। परन्तु इस क्रिया में अनेक बार जल-जन्तुओं का सामना करना पड़ता है। नट अपनी कला दिखाकर लोगों को मुग्ध कर देता है और प्रशंसा भी प्राप्त करता है, परन्तु यदि एक बार भी चूक जाए तो खैर नहीं।

तंत्र प्रकृति से संग्राम करके उसकी रहस्यमयी शक्तियों का विजय लाभ करना है। इसके लिए असाधारण प्रयत्न करने पड़ते हैं और उनकी असाधारण प्रतिक्रिया होती है। पानी में जोर से ढेला फेंकने पर वहाँ का पानी जोर से उछल खाता है और एक छोटे विस्फोट जैसी स्थिति दृष्टिगोचर होती है। तांत्रिक साधक भी एक रहस्यमयी साधना द्वारा प्रकृति के अन्तराल में छिपी हुई शक्ति को प्राप्त करने के लिए अपनी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साधना का एक आक्रमण करता है, उसकी एक प्रतिक्रिया होती है। उस प्रतिक्रिया से कभी-कभी साधक के अहित हो जाने का भय रहता है।

जब बन्दूक चलाई जाती है तो जिस समय नली में से गोली बाहर निकलती है उस समय वह पीछे की ओर एक झटका मारती है और भयंकर शब्द करती है। यदि बन्दूक चलाने वाला कमजोर प्रकृति का हो, तो उस झटके से पीछे की ओर गिर सकता है, धड़ाके की आवाज से डर या घबरा सकता है। चन्दन के वृक्षों के निकट सर्पों का निवास रहता है, गुलाब के फूलों में काँटे होते हैं, शहद प्राप्त करने के लिए मक्खियों के डंकों का सामना करना पड़ता है, सर्प-मणि पाने के लिए भयंकर सर्प से और गजमुक्त पाने के लिए मदोन्मत्त हाथी से जूझना पड़ता है। तांत्रिक पुरुषार्थ ऐसे ही विकट पुरुषार्थ हैं, जिनके पीछे खतरों की शृंखला जुड़ी रहती है। यदि ऐसा न होता, तो उन लाभों को हर कोई आसानी से प्राप्त कर लिया करता।

तलवार की धार पर चलने के समान तंत्र-विद्या के कठिन साधन हैं। उसके लिये साधक में पुरुषार्थ, साहस, दृढ़ता, निर्भयता और धैर्य पर्याप्त होना चाहिए। ऐसे व्यक्ति सुयोग्य-अनुभवी गुरु की अध्यक्षता में यदि स्थिर चित्त से श्रद्धापूर्वक साधना करें तो वे अभीष्ट साधन में सिद्धि प्राप्त कर सकते हैं। परन्तु यदि निर्बल मनोभूमि के-डरपोक, सन्देही स्वाभाव वाले, अश्रद्धालु, अस्थिर मति किसी साधन को करें और थोड़ा-सा संकट उपस्थित होते ही उसे छोड़ भागें, तो वैसा ही परिणाम होता है जैसा किसी सिंह या सर्प को पहले तो छेड़ा जाय पर जब वह क्रुद्ध होकर अपनी ओर लपके तो लाठी-डण्डा फेंककर बेतहाशा भागा जाय। इस प्रकार छेड़कर भागने वाले मनुष्य के पीछे वह सिंह या सर्प अधिक क्रोधपूर्वक, अधिक साहस के साथ दौड़ेगा और उसे पछाड़ देगा। देख गया है कि कई मनुष्य किसी भूत-पिचाश को वश में करने के लिए तांत्रिक साधना करते हैं, जब उनकी साधना आगे बढ़ चलती है तो ऐसे भय सामने आते हैं, जिनसे डरकर वह मनुष्य अपना साधन छोड़ बैठे। यदि उस साधक में साहस नहीं होता और किसी भंयकर दृश्य को देखकर डर जाता है, तो डराने वाली शक्तियाँ उस पर हमला बोल देती हैं। फलस्वरूप उसको भंयकर क्षति का सामना करना पड़ता है। कई व्यक्ति भंयकरबीमार पड़ते हैं, कई पागल हो जाते हैं, अनेकों तो प्राणों तक से हाथ धो बैठते हैं।

तंत्र एक उत्तेजनात्मक उग्र प्रणाली है। इस प्रक्रिया के अनुसार जो साधना की जाती है, उससे प्रकृति के अन्तराल में बड़े प्रबल कम्पन उत्पन्न होते हैं, जिनके कारण ताप और विक्षोभ की मात्रा बढ़ती है। गर्मी के दिनों में सूर्य की प्रचण्ड किरणों के कारण जब वायुमण्डल का तापमान बढ़ जाता है तो हवा बहुत तेज चलने लगती है। लू, आँधी और तूफान के दौर बढ़ते हैं। उस उग्र उत्तेजना में खतरे बढ़ जाते हैं, किसी को लू सता जाती है, किसी की आँखों में धूलि भर जाती है, अनेकों के शरीर फोड़े-फुन्सियों से भर जाते हैं। आँधी से छप्पर उड़ जाते हैं, पेड़ उखड़ जाते हैं। कई बार हवा के भँवर पड़ जाते हैं, जो एक छोटे दायरे में बड़ी तेजी से नाचते हुए डरावनी शक्ल में दिखाई पड़ते हैं। तंत्र की साधनाओं से ग्रीष्मकाल का-सा उत्पात पैदा होता है। और मनुष्य के बाह्य एवं आन्तरिक वातावरण में एक प्रकार की सूक्ष्म लू एवं आँधी चलने लगती है, जिसकी प्रचंडता के भयंकर झकझोरे लगते हैं। यह झकझोरे मस्तिष्क के कल्पना-तन्तुओं से जब संघर्ष करते हैं, तो अनेकों प्रकार की भयंकर प्रतिमूर्तियां दृष्टिगोचर होने लगती हैं। ऐसे अवसर पर डरावने, भूत, प्रेत, पिशाच, देव, दानव जैसी आकृतियाँ दीख सकती हैं, दृष्टि-दोष उत्पन्न होने के कारण कुछ-का-कुछ दिखाई दे सकता है। अनेकों प्रकार के शब्द, रूप, रस, गन्ध और स्पर्शों का अनुभव हो सकता है। यदि साधक निर्भयतापूर्वक इन स्वाभाविक प्रतिक्रियाओं को देखकर मुस्कराता न रहे, तो उसका साहस नष्ट हो सकता है और उन भयंकरताओं से यदि वह भयभीत हो जाय तो वह भय उसके लिए संकट बन सकता है।

इस प्रकार की कठिनाई का हर कोई मुकाबिला नहीं कर सकता, इसके लिए एक विशेष प्रकार की साहसपूर्ण मनोभूमि होनी चाहिए। मनुष्य दूसरों के विषय में तो परीक्षा-बुद्धि रखता है पर अपनी स्थिति का ठीक परीक्षण कोई विरले ही कर सकते हैं। "मैं तंत्र-साधनायें कर सकता हूँ या नहीं" इसका निर्णय अपने लिए कोई मनुष्य स्वयं नहीं कर सकता। इसके लिए

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उसे किसी दूसरे अनुभवी व्यक्ति की सहायता लेनी पड़ती है। जैसे रोगी अपनी चिकित्सा स्वयं नहीं कर सकता, विद्यार्थी अपने आप अपनी शिक्षा नहीं कर सकता, वैसे ही तांत्रिक साधनाएँ भी अपने आप नहीं की जा सकती, इसके लिए किसी विज्ञ पुरुष को गुरु नियुक्त करना होता है। वह गुरु सबसे पहले अपने शिष्य की मनोभूमि का परीक्षण करता है और तब उस परीक्षण के आधार पर यह निश्चित करता है कि इस व्यक्ति के लिए कौन-सी साधना उपयोगी होगी और उसकी विधि में अन्यों की अपेक्षा क्या हेर-फेर करना ठीक होगा। साधना-काल में जो विक्षेप आते हैं, उनका तात्कालिक उपचार और भविष्य के लिए सुरक्षा-व्यवस्था बताना भी गुरु के द्वारा ही सम्भव है। इसलिए तंत्र की साधनाएँ गुरु-परम्परा से चलती हैं। सिद्धि के लोभ से अनधिकारी साधक स्वयं, अपने आप, उन्हें ऊटपटाँग ढंग से न करने लग जाए, इसलिए उन्हें गुप्त रखा जाता है। रोगी के निकट मिठाइयाँ नहीं रखी जातीं, क्योंकि पचाने की शक्ति न रखते हुए भी यदि लोभवश उसने उन्हें खाना शुरू कर दिया तो अन्ततः उसी का अहित होगा।

तंत्र की साधनाएँ सिद्ध कर लेने के बाद जो शक्ति आती है, उसका यदि दुरुपयोग होने लगे तो उससे संसार में बड़ी अव्यवस्था फैल सकती है, दूसरों का अहित हो सकता है, अनधिकारी लोगों को अनावश्यक रीति से लाभ या हानि पहुँचाने से उनका अनिष्ट ही होता है। बिना परिश्रम के जो लाभ प्राप्त होता है। वह अनेक प्रकार के दुर्गुण पैदा करता है। जिसने जुआ खेलकर दस हजार रुपया कमाया है वह उन रुपयों का सदुपयोग नहीं कर सकता और न उनके द्वारा वास्तविक सुख प्राप्त कर सकता है। इसी प्रकार ईश्वरीय या राजकीय विधि से मिलने वाले स्वाभाविक दण्ड-विधान को छोड़कर किसी को मन्त्र-बल से हानि पहुँचाई जाती है, वह गर्भपात के समान अहितकर ही होती है। तंत्र में सफल हुआ व्यक्ति ऐसी गड़बड़ी पैदा कर सकता है। इसलिए हर किसी को उसकी साधना करने का अधिकार नहीं दिया गया है। वह तो एक विशेष मनोभूमि के व्यक्तियों के लिए सीमित क्षेत्र में उपयोग होने वाली वस्तु है, इसलिए उसका सार्वजनिक प्रकाशन नहीं किया जाता। हमारे घर केवल उन्हीं व्यक्तियों के प्रयोग के लिए होते हैं, जो उसमें अधिकारपूर्वक रहते हैं। निजी घरों का उपयोग धर्मशाला की तरह नहीं हो सकता और न हर कोई मनुष्य किसी के घर में प्रवेश कर सकता है। तंत्र भी अधिकार-सम्पन्न मनोभूमि वाले विशेष व्यक्तियों का घर है, उसमें हर व्यक्ति का प्रवेश नहीं है। इसलिए उसे नियत सीमा तक रखने के लिए गुप्त रखा है।

हम देखते हैं कि तंत्र-ग्रन्थों मे जो साधना-विधियाँ लिखी गई हैं वे बड़ी अधूरी हैं। उनमें दो ही बातें मिलती हैं-एक साधन का फल, दूसरे साधन-विधि का कोई छोटा-सा अंग। जैसे एक स्थान पर आया है कि "छोंकर की लकड़ी से हवन करने से पुत्र की उत्पत्ति होती है।" केवल इतने मात्र उल्लेख को पूर्ण समझकर जो छोंकर की लकड़ियों के गट्ठे भट्टी में झोंकेगा, उसकी मनोकामना पूर्ण नहीं होगी। मूर्ख लोग समझेंगे कि साधना-विधि झूँठी है। परन्तु इस शैली से वर्णन करने में तंत्रकारों का मन्तव्य यह है कि साधना-विधि का संकेत कायम रहे, जिससे इस विद्या का लोप न हो, वह विस्मृत न हो जाय। यह सूत्र-प्रणाली है। व्याकरण आदि के सूत्र बहुत छोटे-छोटे होते हैं, उनमें अक्षर दस-दस या पाँच-पाँच ही होते हैं, पर अर्थ बहुत भारी छिपा होता है। यह सूत्र, उस विस्तृत अर्थ के एक लघु संकेतमात्र होते हैं, जिससे याद कम करना पड़े और समय पड़ने पर पूरी बात याद हो आवे। गुप्त करने वाले डाकू, षडयन्त्रकारी या खुपिया पुलिस आदि के व्यक्ति भी कुछ ऐसे ही संकेत बना लेते हैं, जिनके द्वारा दो चार शब्द कह देने मात्र से एक बड़ा अर्थ समझ लिया जाता है।

"छोंकर के हवन से पुत्र-प्राप्ति"-इस संकेत-सूत्र में एक भारी विधान छिपा हुआ है। किसी मनोभूमि का मनुष्य, किस समय, किन उपकरणों के द्वारा, किन मन्त्रों से कितना हवन करे तब पुत्र-प्राप्ति हो-यह सब विधान उस सूत्र में छिपाकर रखा गया है। छिपाया इसलिए है कि अनधिकारी लोग उसका प्रयोग न कर सकें। संकेत-रूप में कहा इसलिए गया है कि कालान्तर में उस तथ्य का विस्मरण न हो जाय, आधार मालूम रहने से आगे की बात का स्मरण हो आना सुगम होता है। तंत्र-ग्रन्थों में साधना-विधियों को गुप्त रखने पर बार-बार जोर दिया गया है, साथ ही कहीं-कहीं ऐसी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऐसी विधियाँ भी बताई गई हैं जो देखने में बड़ी सुगम मालूम पड़ती हैं, पर उनका फल बड़ा भारी कहा गया है । इस दिशा के अनजान लोगों के लिए यह गोरखधंधा बड़ा उलझन-भरा है । वे कभी उसे अत्यन्त सरल समझते हैं और कभी उसे असत्य मानते हैं । पर वस्तुस्थिति दूसरी ही है । संकेत-सूत्रों की विधि से उन साधनाओं का थोड़ा-सा वर्णन करके तंत्रकारों ने अपनी रहस्यवादी मनोवृत्ति का परिचय दिया है ।

तंत्र का विषय गोपनीय है, इसलिए तंत्र-ग्रन्थों में ऐसी अनेक साधनाएँ प्राप्त होती हैं, जिनमें धन, सन्तान, स्त्री, यश, आरोग्य, पद-प्राप्ति, रोग-निवारण, शत्रु-नाश, पाप-नाश, वशीकरण आदि लाभों का वर्णन है और संकेत-रूप से उन साधनाओं का एक अंश बताया गया है । परन्तु यह भली प्रकार स्मरण रखना चाहिए कि इन संक्षिप्त संकेतों के पीछे एक भारी कर्मकाण्ड एवं विधि-विधान है । वह पुस्तकों में नहीं, वरन् अनुभवी, साधना-सम्पन्न व्यक्तियों से प्राप्त होता है ।

अपनी साधना को गुप्त रखने का एक आध्यात्मिक कारण भी है । साधना की प्रसिद्धि जब दूसरों में फैलती है, तो साधक का यश फैलना स्वाभाविक है । इस सम्मान से साधक के मनःक्षेत्र में अहंकार की प्रवृत्ति प्रविष्ट होती है, जो साधक के लिए अत्यन्त घातक सिद्ध होती है । यदि साधक इस स्तर पर पहुँच चुका हो, कि वह अपने तप की पूँजी से दूसरों को भी लाभान्वित कर सकें, तब तो उसकी आत्मिक गिरावट के सभी चिन्ह दृष्टिगोचर होने लगते हैं । कारण स्पष्ट है-उसकी प्रसिद्धि सुनकर जनसाधारण उसके पास अपनी इच्छाओं और कामनाओं को पूरा करने के लिये पहुँचने लगते हैं । यदि किसी को किसी प्रकार लगा हुआ, तब तो वह सिद्ध पुरुष घोषित कर दिए जाते हैं और जनता भेड़-चाल से उसे घेर लेती है । साधक को भी अपनी सफलता पर प्रसन्नता होती है । अब वे उलझन में फँस जाते हैं । यदि किसी को निराश लौटना पड़ा, तो उनके सम्मान को धक्का लगेगा । सबकी आशाओं की पूर्ति करने लगें तो अपनी आत्मिक सम्पत्ति समाप्त हो जाएगी, जिसे पूरा करने के लिए काफी तपस्या करनी होगी । साधना-काल में दूसरों के अन्न पर शरीर का पालन-पोषण होने लगा तो साधना भ्रष्ट होने की सम्भावना रहेगी, क्योंकि जो अन्त ग्रहण कर रहे हैं, न जाने वह कैसा है ? मानसिक निर्माण उस अन्न पर निर्भर करता है । इसीलिए कुलार्णव तंत्र में स्पष्ट लिखा है-

यस्यान्नेन तु पुष्टांगों जपं होमं समाचारेत् ।
अन्नदातु फलस्यार्ध चार्धं कर्तुर्न संशयः ॥

-कुलार्णव तंत्र

"दूसरे व्यक्ति के अन्न से अंग पुष्ट करके जप, हवन करने वाले साधक को उसका आधा फल ही मिल पाता है, उसका आधा तो अन्न देने वाले को मिलता है ।"

साधना को प्रकट करने में हानि-ही-हानि परिलक्षित होती है, क्योंकि उससे अहंकार का पोषण होता है । इसे आध्यात्मिक मार्जन का महान शत्रु माना जाता है । जब तक अहंकार मन में निवास करता है, तब तक साधना में प्रगति रुकी रहती है । निरहंकारी साधक ही साधना में सफलता प्राप्त कर सकता है । अतः यह पुष्ट न होने पाए, इसके लिए तंत्र-शास्त्रों में कड़े नियम निर्धारित किए गए हैं । उनमें प्रमुख है-अपनी साधना का किसी पर प्रकट न करना । तंत्रों की आज्ञा है कि "जब जनसाधारण को यह पता चल जाता है कि यह व्यक्ति तांत्रिक साधक है, तो उसी दिन उस साधक की मृत्यु मान लेनी चाहिए ।" इसलिए साधक की भलाई इसी में है कि वह अपनी साधना का ढोल न पीटे, वरन् उसे छिपाकर रखे तभी वह अन्त तक उसके निर्विघ्न संचालन में सफल हो पाएगा । प्रसिद्धि का लोभ उसके लिए सदैव फिसलने के अवसर उपस्थित करता रहेगा, यह निश्चित है ।

दक्षिणमार्गी साधना ही श्रेयस्कर

सावित्री महाशक्ति की साधना का भौतिक रूप, तंत्र कहलाता है । इसे वाम मार्ग भी कहते हैं । इसका उद्देश्य सांसारिक कामनाओं की पूर्ति कर सुखोपभोग करना है । इससे नाश भी संभव है और निर्माण भी, पर आत्मोपलब्धि का वह प्रयोजन अधूरा रह जाता है, जो मानव जीवन का सर्वोपरि लक्ष्य है । संक्षेप में कहें, तो गायत्री का वह पक्ष, जो अपरा प्रकृति पर नियंत्रण करता है, गायत्री तंत्र है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

८.९ सावित्री कुण्डलिनी एवं तंत्र

तांत्रिक साधनाओं की कार्यपद्धति का आधार ही यह है कि दूसरे प्राणियों के शरीरों में निवास करने वाली शक्ति को हस्तांतरित करके एक जगह इकट्ठा कर लिया जाय और फिर उस संचित शक्ति का मनमाना उपयोग किया जाय । तंत्र में बलि प्रथा का यही प्रयोजन है । उसमें किन्हीं पशुओं का वध करके उनके पाँच प्राणों का उपयोगी भाग खींच लिया जाता है । जैसे शिकारी लोग वराह के शरीर में से चर्बी को अलग से निकल लेते हैं वैसे ही तंत्र साधक उस वध होते हुए पशु के दस प्राणों में से उपयोगी पाँच प्राणों को चूस जाते हैं और उससे अपनी शक्ति बढ़ा लेते हैं । बकरे, भैंसे, मुर्गे आदि के बलिदानों का आधार यही है । मृत मनुष्यों के शरीर में एक सप्ताह तक कुछ उपचक्र एवं ग्रंथियों में चैतन्यता बनी रहती है । श्मशान भूमि में रह कर मुर्दों द्वारा शव–साधना करने वाले अघोरी उन मृतकों से भी शक्ति चूसते हैं । देखा जाता है कि कई अघोरी मृत बालकों की लाशों को जमीन में से खोद ले जाते हैं, मृतकों की खोपड़ी (महापात्र) लिए फिरते हैं चिताओं पर भोजन पकाते हैं । यह सब किन्हीं निहित उद्देश्यों के लिए किया जाता है । कुछ तांत्रिक कोमल प्रकृति के वयस्क स्त्री, पुरुषों या छोटे बालकों के प्राण चूस जाते हैं । ऐसे अघोरी, कापालिक, रक्तबीज, वैतालिक, ब्रह्मराक्षस, प्रेत, पितर, वतांक पुरुष तथा डाकिनी, शाकिनी, हाकिनी, कपाल–कुंडला सर्पसूत्रा, धूमावती आदि स्त्रियाँ अब भी गुप्त प्रकट रूप से जहाँ–तहाँ देखी जाती हैं । मंत्र विज्ञान का यह अभिचार पक्ष सर्वाधिक निंदनीय है ।

इस प्रकार मनुष्य या पशु-पक्षियों के शरीर से खींची हुई शक्ति अधिक समय तक ठहरती नहीं, उसका तात्कालिक कार्य के लिए ही उपयोग हो सकता है । किसी पर मारण प्रयोग करना होता है, कृत्या, घात, चौकी या मूँठ चलानी होती है, तो उसके लिए किन्हीं प्राणियों का बलिदान आवश्यक हो जाता है । तांत्रिकों का आधार ही दूसरे की शक्ति का अपहरण करके अपना काम चलाना है । इसी प्रकार उनके जितने भी काम होते हैं, वे इसी तरह एक स्थान से शक्ति का अपहरण करके दूसरे पर फेंकने के आधार पर होते हैं ।

किसान और डाकू में जो अंतर है, वही अंतर दक्षिण मार्गी योगी और वाममार्गी तांत्रिक में है । किसान अपने खेत में बाहर से लाकर बीज, खाद, और पानी डालता है, परिश्रमपूर्वक उसकी जुताई, निराई, गुड़ाई, सिंचाई, कटाई करता है, तब फसल का लाभ उठाता है । डाकू इन सब झंझटों में नहीं पड़ता, वह किसी भी राह चलते को लूट लेता है । किसान की अपेक्षा डाकू अधिक नफे में रहता मालूम होता है । वह एक दिन में अमीर बन जाता है और रईसी शान के साथ दौलत खर्च करता है । किसान वैसा नहीं कर सकता । कारण यह है कि उसे धन कमाने में काफी समय, श्रम, धैर्य एवं सावधानी से काम लेना पड़ता है । अतः खर्चते समय पीड़ा होती है । डाकू की स्थिति दूसरी है, वह लूट कर लाता है, तो होली की तरह उसे फूँक भी सकता है । तांत्रिक चमत्कारी सिद्धि युक्त होते हैं । थोड़े ही दिनों के प्रयत्न में वे प्रेत, पिशाच सिद्ध कर लेते हैं और उनके द्वारा अपना आतंक फैलाते हैं । किसान और डाकू की कोई तुलना नहीं । इसी प्रकार योगी और तांत्रिक की भी कोई समता नहीं हो सकती है ।

एक का आधार परा प्रकृति है, तो दूसरे का अपरा प्रकृति । एक का प्रयोजन यदि आत्मलाभ और ईश्वर दर्शन है, तो दूसरे का स्वार्थ–साधन । एक सात्विक है, दूसरा तामसिक । एक इष्टयुक्त है, तो दूसरे में अनिष्ट की पग–पग पर संभावना होती है । एक अंतर्जगत का अनुसंधान करता है, तो दूसरा बहिर्जगत का शोषण–दोहन एक में अंतस् के पंचकोश, पंच प्राण, चेतना चतुष्टय, षट्चक्र, एवं उपचक्रों, मात्रिकाओं, ग्रन्थिओं, भ्रमरों, कमलों, उपत्यिकाओं को जाग्रत करके आनंददायिनी अलौकिक शक्तियों को हस्तगत करना मूलभूत हेतु होता है, जबकि दूसरे में प्राणियों की प्राण–चेतना का अपहरण कर सामर्थ्यवान बनना प्रमुख होता है । योग में स्वयं को परिष्कृत कर ईश्वरीय चेतना को आविर्भूत किया जाता है, तो तंत्र में क्रूर–कृत्यों द्वारा दूसरों की चेतना लूट ली जाती है । योग समत्व पैदा करता है, तो तंत्र का वाममार्गी पक्ष विभेद की दीवार खड़ी करता है । एक का कार्य रचनात्मक है, दूसरे का ध्वंसात्मक है । एक प्रकृति के अनुरूप चलना सिखाता है, तो दूसरा प्रकृति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के विपरीत । एक में व्यवस्था की प्रेरणा है, तो दूसरे में अव्यवस्था की भावना है । इस प्रकार विश्लेषणात्मक दृष्टि से देखा जाय, तो दोनों की राह दो विपरीत दिशाओं में जाती दिखाई पड़ती है । योग यदि व्यक्ति और समाज के लिए उपयोगी और मंगलकारी है, तो अभिचार प्रयोग अमंगल की ही संभावनाओं से भरा हुआ है । इसीलिए तंत्र को सर्वसाधारण और अनाधिकारी पुरुषों के अनुपयुक्त ठहराया गया है ।

गायत्री द्वारा यह दोनों ही प्रयोग संभव हैं । उससे योग की दक्षिण मार्गी साधना भी होती है और तंत्र का वाममार्गी अनुष्ठान भी हो सकता है । संसार के अन्य किसी मंत्र से जो कार्य होते हैं । वे सब गायत्री से भी हो सकते हैं । तंत्र साधना भी हो सकती है, पर जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है तंत्र मार्ग कंटकाकीर्ण है । उसमें पग-पग पर हानि की संभावना रहती है । कई बार तो चूक होने पर जान के भी लाले पड़ जाते हैं । इसलिए उसका अनुष्ठान चाहे जब, जहाँ, जिस किसी के लिए निषिद्ध माना गया है ।

गायत्री का तंत्र पक्ष उग्र साधना प्रणाली युक्त है । इस प्रक्रिया के अंतर्गत जो साधना की जाती है, उससे प्रकृति के अतंराल में बड़े प्रबल कंपन उत्पन्न होते हैं, जिनके कारण ताप और विक्षोभ की मात्रा बढ़ती है ।

मनुष्य के बाह्य एवं आतंरिक वातावरण में एक प्रकार की सूक्ष्म आँधी चलने लगती है । जिसकी प्रचंडता के झकझोरे लगते हैं । यह झकझोरे मस्तिष्क के कल्पना-तंतुओं से जब संघर्ष करते हैं, तो अनेकों प्रकार की भयंकर प्रतिमूर्तियाँ दृष्टिगोचर होने लगती हैं । ऐसे अवसर पर डरावने भूत, प्रेत, पिशाच, देव, दानव जैसी आकृतियाँ दीख सकती है । दृष्टि-दोष उत्पन्न होने से कुछ-न-कुछ दिखाई दे सकता है । अनेकों प्रकार के शब्द, रूप, रस, गंध, और स्पर्शों का अनुभव हो सकता है । यदि साधक निर्भयतापूर्वक इन स्वाभाविक प्रतिक्रियाओं को देखकर मुसकराता न रहे, तो उसका साहस नष्ट हो जाता है । और उन भयंकरताओं से यदि वह भयभीत हो जाय, तो वह भय उसके लिए जानलेवा संकट बन सकता है ।

वाममार्गी तंत्र का शक्तिस्रोत दैवी, ईश्वरीय शक्ति नहीं वरन् भौतिक शक्ति है । प्रकृति के सूक्ष्म परमाणु अपनी धुरी पर द्रुतगति से भ्रमण करते हैं, उनके घर्षण से ऊष्मा पैदा होती है । तंत्र शास्त्र में इसी शक्ति को काली, दुर्गा, बगला, चंद्रघण्टा, कूष्मांडा, कालरात्रि, त्रिपुरा, जैसे नामों से पुकारा जाता है । इस ऊष्मा को प्राप्त करने के लिए अस्वाभाविक, उलटा, प्रतिगामी मार्ग ग्रहण करना पड़ता है । जल के बहाव को रोका जाय, तो उस प्रतिरोध से एक शक्ति का उद्भव होता है । जो तांत्रिक वाम मार्ग पर चलते हैं, वे काली शक्ति का प्रतिरोध करके अपने को एक तामसिक, पंचभौतिक बल से संपन्न कर लेते हैं । उलटा आहार, उलटा विहार, उलटी दिनचर्या, उलटी गतिविधि सभी कुछ उनका उलटा होता है ।

द्रुत गति से एक नियत दिशा में दौड़ती हुई रेल, मोटर, नदी, वायु आदि के आगे आकर उसकी गति को रोकना और उस प्रतिरोध से शक्ति प्राप्त करना-यह खतरनाक खेल है । हर कोई इसे कर भी नहीं सकता, क्योंकि प्रतिरोध के समय झटका लगता है । प्रतिरोध जितना ही कड़ा होगा, झटका भी उतना ही जबरदस्त लगेगा । तंत्र साधक जानते हैं कि जनकोलाहल से दूर एकांत खँडहरों, श्मशानों में निविड़ अर्धरात्रि के समय जब उनकी साधना का मध्यकाल आता है, तब कितने रोमांचकारी भय सामने आ उपस्थित होते हैं, इसे भुक्तभोगी ही जानते हैं । उनसे न तो डरना, न विचलित होना साधारण काम नहीं है । साहस के अभाव में यदि इस प्रतिरोधी प्रतिक्रिया से साधक भयभीत हो जाय, तो वह पागल, बीमार, गूँगा बहरा, अंधा हो सकता है । साहसी और निर्भीक प्रकृति के मनुष्य ही इस मार्ग में सफलता प्राप्त करते देखे जाते हैं ।

तंत्र के चमत्कारी प्रलोभन, निश्चित रूपेण असाधारण हैं । दूसरों पर आक्रमण करना तो उसके द्वारा बहुत ही सरल है । किसी को बीमारी, पागलपन, बुद्धिभ्रम, उच्चाटन उत्पन्न कर देना, प्राणघातक संकट में डाल देना आसान है । सूक्ष्म जगत में भ्रमण करती हुई किसी "चेतना ग्रंथि" को प्राणवान बना कर उसे प्रेत, पिशाच, वैताल, भैरव, कर्ण पिशाचिनी, छाया पुरुष आदि के रूप में सेवक की तरह काम लेना, सुदूर देशों से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

अजनबी चीजें मँगा देना, जेब की वस्तुएँ या अज्ञात व्यक्तियों के नाम–पते बता देना तांत्रिकों के लिए संभव है । धूमावती विद्या के माध्यम से वेष बदल लेना या किसी वस्तु का रूप बदल लेना भी उनके लिए असंभव नहीं । ऐसी कितनी ही विलक्षणताएँ उनमें देखी जाती हैं, परन्तु स्मरण रखना चाहिए कि इन शक्तियों का स्रोत परमाणुगत ऊष्मा ही है, जो परिवर्तनशील है । यदि थोड़े दिनों साधना बंद रखी गई, त्रुटि बरती गयी या छोड़ दी गई, तो उस शक्ति का घट जाना एवं स्वयं का अहित हो जाना अवश्यंभावी है ।

ऐसे में अभिचार प्रयोगों की उपयोगिता सीमित हो जाती है और तात्कालिक प्रयोजनों तक ही सीमाबद्ध होकर वह रह जाती है, किंतु एक स्वतंत्र विज्ञान होने के नाते उसका लाभ तो लिया ही जा सकता है । लिया जाना चाहिए पर आशंका एक ही है, विज्ञान के सदुपयोग की तुलना में दुरुपयोग होने की संभावना अधिक बनी रहती है, इसके अतिरिक्त इसका आधार गलत और खतरनाक है । शक्ति प्राप्त करने के उद्‌गम स्रोत अनैतिक और अवांछनीय हैं, साथ ही प्राप्त सिद्धियाँ भी अस्थायी नहीं हैं । इस दृष्टि से जितना परिश्रम एक तांत्रिक करता है, उसकी तुलना में वह घाटे में रहता है । यह समय, श्रम यदि आत्मकल्याण के लिए नियोजित होता, तो उसका अपना भी कल्याण होता और संसार व समाज का भी, किंतु तंत्र में कम समय में उपलब्धि एवं चमत्कारी आकर्षण ही प्रलोभन का मुख्य कारण है, जिसका खामियाजा प्रयोक्ता को भुगतना पड़ता है । इसीलिए अद्‌भुत होते हुए भी इस मार्ग को निषिद्ध एवं गोपनीय ठहराया गया है ।

दक्षिण मार्गी सौम्य साधना से वाममार्ग उलटा है । वाम अर्थात् टेढ़ा–उलटा यह दैत्य पथ है । इसी को तंत्र कहते हैं । रावण, मारीच, कुंभकरण, भस्मासुर आदि तंत्र मार्ग के साधक थे । जो अपना, अपनों का स्वार्थ साधन करने के लिए दूसरों का शोषण, उत्पीड़न करते हैं । हिरण्यकश्यपु वृत्तासुर, अघासुर, बकासुर, कंस आदि का पराक्रम और वैभव इसी स्तर का था । जरासंध इसी मार्ग का अनुयायी था ।

गायत्री उपासना जैसे दक्षिण मार्ग में आत्मा की उच्चस्तरीय शक्तियों का उपयोग किया जाता है और इसके लिए तप संयम का मार्ग अपनाया जाता है, इसका प्रतिफल आत्मशान्ति और दूसरों को सद्‌गति प्रदान करने में होता है ।

तंत्र का उपयोग प्रायः अनैतिक–अवांछनीय कार्यों में ही होता है जैसे मारण, मोहन, उच्चाटन, वशीकरण, स्तंभन, सम्मोहन आदि । इन उपाय उपचारों से दूसरों का अहित ही हो सकता है, लाभ की आशा तो की नहीं जा सकती । किसी शत्रु से प्रतिशोध चुकाया जा सकता है या अपने से दुर्बल को भयभीत करके उसका मनमाना उपयोग किया जा सकता है । भले ही वह अनुचित अनैतिक ही क्यों न हो ?

ऐसे क्रूर कर्म करने वाले को प्रायः पहले स्वयं इस प्रकार का जीवन ढालना पड़ता है जिसमें आत्मा की पुकार को दबाने–दबोचने में सफलता मिल जाय । ऐसे अनौचित्य का अभ्यास कर लेने के उपरान्त ही निर्भय होकर दूसरों पर हाथ छोड़ना संभव होता है ।

तंत्रमार्गी को वाममार्ग के अनुरूप पाँच साधनाएँ करनी पड़ती हैं (१) मद्यं (२) मास (३) मीनं (४) मुद्रा (५) मैथुन एवं च ।' यह पाँच प्रकार ही तंत्रमार्ग के आराध्य हैं । वे मांस खाते हैं और देवी देवताओं के नाम पर पशुओं का ही नहीं मनुष्यों तक का वध करते हैं, ताकि उनकी निष्ठुरता बधिकों की तरह अभ्यास में आ सके और स्वभाव का अंग बने सके । नशे की स्थिति में भी मनुष्य अर्धविक्षिप्त हो जाता है और वैसी स्थिति में क्रूर कर्म करते हुए संकोच नहीं होता । मछलियों को पकड़ना, तड़पाना, मारना भी उसी स्तर का क्रूर कर्म है । मुद्राएँ एक प्रकार की साधना हैं जिसमें वज्रोली मुद्रा का उद्देश्य वीर्यपात को रोकना भर है । कामोत्तेजना तो उसके लिए चाहिए ही मुद्रा का अर्थ येन–केन प्रकारेण धन कमाना भी है । भले ही वह किराये के हत्यारों की तरह ही क्यों न करना पड़े । ऐसे अनुचित तरीकों से ही विपुल धन कमाने में चोर डाकू हत्यारे सफल होते हैं और उस धन को दुर्व्यसनों की पूर्ति में उड़ाते रहते हैं ।

इस मार्ग को अपनाने वालों को सर्वप्रथम आत्महनन का अभ्यास करना पड़ता है, तदुपरान्त वे निर्भय हो कर दूसरों को अपंग करने, मनमर्जी के अनुरूप नचाने, विक्षिप्त करने आदि में सफल होते हैं, मारण के लिये किया गया 'कृत्या' घात–अभिचार इसी वर्ग के कृत्यों में सम्मिलित है । भावुकों को वशवर्ती बनाकर उन्हें वशवर्ती सहयोगी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बनाने में भी वे सफल हो जाते हैं । ऐसे लोग त्रिपुरा, भैरवी, महाकाली, बगलामुखी, भैरव महाकाल आदि को अपना इष्ट बनाते देखे गये हैं ।

सामान्य तांत्रिक लोगों को छुटपुट हानियाँ पहुँचा सकते हैं, किन्तु बड़े अनर्थ करने में बड़ी श्रेणी के तांत्रिक ही सफल हो पाते हैं । उन्हें अघोरी, कापालिक आदि कहते हैं । अघोरी, सरभंगी, अखाद्यों को मलमूत्र आदि तक का सेवन करते रहते हैं । कापालिक श्मशान सेवन करते हैं मुर्दों की चिताओं पर भोजन पकाते, श्मशानों में निवास करते देखे गये हैं, वे प्रेत–पिशाचों को सिद्ध कर लेते हैं और धन ऐंठने कुकर्म में सहयोग देने या उत्पीड़न का मजा देखने के लिए उनका उपयोग करते रहते हैं । ऐसे लोगों को बेताल, ब्रह्मराक्षस, कर्ण पिशाचिनी आदि कि सिद्धि होती है, जिनके माध्यम से वे दूसरों को डराने–सताने में समर्थ होते हैं ।

कुकर्मों में आरंभिक लाभ तो है ही । आततायी असावधानों पर अनायास आक्रमण करते हैं और उस हालत में तात्कालिक लाभ भी उठा लेते हैं । भले ही पीछे उन्हें उसका कितना ही भयंकर दुष्परिणाम क्यों न भुगतना पड़े, दैत्य प्रायः इसी नीति को अपनाते हैं और दूसरों को हानि पहुँचाने के उपरान्त अपना–अपनों का भी कम अनर्थ नहीं करते । वाममार्गी प्रायः इसी मार्ग का अनुकरण कर अपना सब कुछ गँवा बैठते हैं ।

भगवान बुद्ध के अवतार काल में ऐसे ही वामाचार का बोलबाला था । समर्थ लोग मदान्ध हो कर यही रीति–नीति अपनाते थे । उसका विरोध उनने प्राणपण से किया था और सदाचार की स्थापना में सर्वतोभावेन प्रयत्न करके सफलता पाई थी ।

अफ्रीका के जंगली आदिवासियों में अभी भी ऐसी प्रथायें विद्यमान हैं । अपने देश का नैतिक स्तर अब बुद्ध, महावीर, शंकराचार्य गाँधी, विवेकानन्द आदि के प्रयत्नों से काफी सुधर गया है । इसलिए वैसे प्रचलन अब नहीं रहे । देवताओं को प्रसन्न करने के लिए पशुबलि का प्रयोग भी दिनोदिन घटता जा रहा है । 'कृत्या–घात' आदि मारण क्रियायें भी किसी–किसी को ही सिद्ध होती हैं । अधिकांश तांत्रिक दूसरों को डराने भर की क्रिया कर पाते हैं । वस्तुतः उनमें वैसी सामर्थ्य पर्याप्त अभ्यास के अभाव में विकसित नहीं हो पाती । जो करते हैं वे बदनाम होने के अतिरिक्त तिरस्कार और दंड के भाजन भी बनते हैं ।

यह बातें यहाँ इसलिए लिखी गई हैं कि 'विलोम' गायत्री के अभ्यास से तंत्र कृत्य भी हो सकते हैं, रावण वेदों का भाष्यकार था, पर वह दक्षिण मार्ग पर चलने की अपेक्षा वाममार्ग की ओर मुड़ गया, फलतः दूसरे असंख्यों को दुःख देने के अतिरिक्त अपना तथा अपने कुटुम्ब का भी सर्वनाश करा बैठा । रावण कृत 'लंकेश तंत्र' प्रसिद्ध है ।

विचारशील मनीषियों ने हर अध्यात्म साधक को दक्षिणमार्गी देव साधनायें ही करने के लिए परामर्श दिया है और तंत्र से दूर रहने के लिए कहा है । जिन्हें तंत्र विज्ञान की दृष्टि से ज्ञान भी हो उनके लिए भी आदेश है कि कुपात्र को न बतायें, अन्यथा वह दूसरों का अनर्थ करने के प्रलोभन से अपने को बचा न सकेगा । इसी दृष्टि से गायत्री तंत्र के प्रथम श्लोक में ही इसे कुपात्र को न बताने का निषेध कर दिया गया है ।

'अति गुह्यामिदं पृष्टं त्वया ब्रह्म तनुद्भव।
वक्तव्यं न कस्मैचित् दुष्टाय पिशुनाय च ।।

–गायत्री तंत्र

अर्थात् हे नारद ! तूने गायत्री तंत्र का रहस्य पूछा तो है, पर किसी दुष्ट, अनाचारी, कुपात्र से इसका जिक्र भी न करना चाहिए ।

पुस्तकों में ऐसे प्रयोगों का कई जगह वर्णन है । यहाँ तक कि छलपूर्वक सिद्धियाँ दिखाने की इन्द्रजाल विद्या का भी उल्लेख है । आग्नेयास्त्र आदि के प्रयोगों का वर्णन है । इतने पर भी उन प्रयोगों को सिद्ध करने के विधियों को गुप्त रखने और संकेत मात्र करने की विधियाँ तंत्र ग्रन्थों में वर्णित हैं । उन्हें बिना रहस्यों को समझे प्रयोग करने पर निष्फलता ही हाथ लगती है और उलटे अपने निज के पागल आदि हो जाने का डर रहता है ।

वाममार्ग वस्तुतः शरीरगत विद्युतशक्ति का प्रयोग है । उसमें आत्मा को तो उलटा कुचलना ही पड़ता है, शरीरगत प्राणविद्युत को भी प्रचण्ड बनाना पड़ता है । मूलाधार और ब्रह्मरंध्र की मस्तिष्कीय क्षमताओं के समन्वय के कुण्डलिनी जाग्रत की जाती है । इस आधार पर तांत्रिक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

अपने प्राणतत्व बढ़ाता और उस आधार पर दूरवर्ती लोगों को प्रक्षेपास्त्र की भाँति हानि पहुँचा सकता है या अपने चुम्बकत्व से उसे अपने पास खींच कर बुला सकता है। मेघनाद ने लक्ष्मण पर ब्रह्मास्त्र चलाया था। वह अस्त्र शस्त्र जैसा नहीं था वरन् सिद्ध की गई आन्तरिक शक्ति का ही प्रहार था। महाभारत में ऐसे अनेक अद्भुत अस्त्रों का वर्णन है जो अग्नि बरसाते थे और दूसरे प्रकार के आश्चर्यजनक मारक परिणाम प्रस्तुत करते थे। उनकी काट भी विपक्ष तंत्र शक्ति के द्वारा ही करता था।

अन्य समस्त तंत्र साधनाओं की अपेक्षा सावित्री का वाममार्गी प्रयोग अधिक शक्तिशाली है यह सच है और यह भी सत्य है कि अन्य सभी विधियों की अपेक्षा इस विधि से मार्ग सुगम पड़ता है, फिर भी सर्वसाधारण के लिए तो उसका दक्षिण मार्ग ही निरापद और ग्रहण योग्य है, उसी का अवलंबन लिया जाना चाहिए।

तंत्र विद्या की उपयोगिता

प्रकृति अनन्त शक्तियों का भण्डार है। वैज्ञानिकों ने वायुयान, रेडियो, विद्युत, वाष्प आदि के अनेक आश्चर्य जनक आविष्कार किये हैं और नित्यप्रति होते जा रहे हैं पर प्रकृति का शक्ति भण्डार इतना अनन्त और अपार है कि धुरंधर वैज्ञानिक अब तक यही कह रहे हैं कि हमने उस महासागर में से अभी कुछ सीपें और घोंघे ही ढूंढ पाये हैं। उस अनन्त तत्व के शक्ति परिमाणुओं की महान् शक्ति का उल्लेख करते हुए सर्व मान्य वैज्ञानिक डाक्टर टामसन कहते हैं कि एक 'शक्ति-परिमाणु' (इलैक्ट्रस) की ताकत से लन्दन जैसे तीन नगरों को भस्म किया जा सकता है। ऐसे अरबों-खरबों परिमाणु एक एक इंच जगह में घूम रहे हैं फिर समस्त ब्रह्माण्ड की शक्ति की तुलना ही क्या हो सकती है। हमारी आत्मा भी इसी चेतन्य तत्व का अंश है हमारे शरीर में भी इसी चेतन्य तत्व का अंश है हमारे शरीर में भी असंख्य इलेक्ट्रस व्याप्त हैं इसलिये मानवीय शरीर और आत्मा भी अनन्त शक्ति सम्पन्न है उसे हाड़-मांस का पुतला मात्र न समझना चाहिये।

काल चक्र सदैव घूमता रहता है उसी के अनुसार संसार की अनन्त विद्याओं में से समय पाकर कोई लुप्त हो जाती है तो कोई प्रकाश में आती है। अब तक कितनी ही विद्यायें लुप्त और प्रकट हो चुकीं हैं और आगे कितनी लुप्त और प्रकट होने वाली हैं इसे हम नहीं जानते। आज जिस प्रकार भौतिक तत्वों के अन्वेषण से योरोप में नित्य नये वैज्ञानिक यन्त्रों का आविष्कार हो रहा है उसी प्रकार अब से कुछ सहास्त्रब्दियों पूर्व भारत वर्ष में आध्यात्म विद्या और ब्रह्मविद्या का बोलवाला था। उस समय योग के ऐसे साधनों का आविष्कार हुआ था जिनके द्वारा नाना प्रकार की सिद्धियों को प्राप्त करके साधक लोग ईश्वर का साक्षात्कार करते थे और जीवन मुक्त हो जाते थे। आज लोग अपने अज्ञान के आधार पर उन बातों की सचाई में भले ही संदेह करें पर सत्य-सत्य ही रहेगा।

अब भी उस महान अध्यात्म विद्या का पूर्ण लोप नहीं हुआ है। भारतवर्ष की पुण्य भूमि में अभी असंख्य सिद्ध योगों भरे पड़े हैं और उनको विश्वास है कि भौतिक आविष्कारों की अपेक्षा आध्यात्मिक शक्तियां करोड़ों गुनी बलवान और स्थायी हैं वे मनुष्य और समाज का कल्याण आध्यात्म उन्नति में ही समझते हैं। प्रत्यक्ष उदाहरणों में धुरंधर विद्वान और महान नेता एवं विचारक योगी अरविंद की योग साधना हमारे सामने है। इस शक्ति भण्डार में से एक सीप योरोप के पण्डितों के हाथ भी लगी है। मैस्मरेजम और हिप्नोटेजम नामक उनके दो छोटे आध्यात्म आविष्कार हैं। जिनके द्वारा, सिद्ध की आत्मशक्ति साधक में प्रवेश करके उस पर अपना पूर्ण आधिपत्य जमा लेती है। तब मोह निद्रा में डूबा हुआ साधक अनेक आश्चर्यजनक और गुप्त बातें बताता है। आंखों से पट्टी बांध कर पूरी तरह से संदूक या कोठरी में बन्द कर देने पर भी वह लोगों के मन की बात, उनके पास छिपी हुई चीजें, गुप्त बातें आदि बताता है। मोह निद्रित साधक, सिद्ध की इच्छा का पूर्ण अनुचर बन जाता है। उससे कहा जाय कि यह नीम का पत्ता पेड़े के समान मीठा है तो सचमुच उसकी बुद्धि और ज्ञानेन्द्रियां उस कड़ुए पत्ते को मीठा अनुभव करती हैं और वह बड़े प्रेम से उन्हें खाता है। इस विधि से वे सिद्ध, रोगियों की चिकित्सा भी करते हैं। अब से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दो शताब्दी पूर्व जब सुँघा कर बेहोश करने की 'क्लोरोफार्म' नामक दवा का आविष्कार नहीं हुआ था तब पश्चिमोय डाक्टर मैस्मरेजम की विधि से ही रोगी के पीड़ित स्थान को संज्ञा शून्य करके तब आपरेशन करते थे। कलकत्ता के बड़े अस्पताल में एक प्रसिद्ध डाक्टर ने मैस्मरेजम के तरीके से ही कई सौ रोगियों को या उनके पीड़ित स्थान को बेहोश करके बड़े-बड़े आपरेशन किये थे। यहाँ यह ध्यान रखना चाहिये कि मैस्मरेजम योग महासागर की एक बिन्दु मात्र है।

प्राचीन काल में योग की शक्तियों द्वारा संसार की बड़ी सेवा की गई थी। अनेक योगी, दुःखियों के दुःख निवारण में ही अपना जीवन लगा देते थे। महाप्रभु ईसा मसीह ने जीवन भर अपनी आत्म शक्ति के बल से दुःखियों के दुःख दूर किये। उन्होंने बीमारों को रोग मुक्त किया। अन्धों को आंखें दीं, कोड़ियों के शरीर शुद्ध कर दिये, लोगों की आत्मा से चिपटे हुए दुवृत्तियों के भूतों को छुड़ाया, जो अशान्ति और नाना प्रकार के दुःखों से चिल्ला रहे थे उनको सुख और शान्ति प्रदान की। अन्त में उस महात्मा ने दूसरों के दुःख और पापों को अपने ऊपर ओढ़ कर उनको भार मुक्त कर दिया। भारतवर्ष में शंकर, अश्विनी कुमार, धन्वतरि, गोरखनाथ, मत्स्येन्द्रनाथ, नागार्जुन, चरक आदि के बारे में ऐसी कथाऐं मिलती हैं जिनसे प्रतीत होता है कि जीवन भर वे लोगों के दुःख दूर करने में ही लगे रहे। दुर्भाग्य से उस समय के महात्माओं मे भी दो दल हो गये। एक दल ईश्वर प्राप्ति के कार्य को ही अपना लक्ष्य मानता था। दूसरा जन-दुःख-निवारण का भी समर्थक था। यह मत भेद बहुत बढ़ा और जन-दुःख निवारकों की शक्ति पूजक, शक्ति, तान्त्रिक संज्ञा बना कर उनको अपनी श्रेणी से अलग कर दिया गया, तान्त्रिक या शाक्त अपने आरंभ काल में परमतत्त्व की आराधना से शक्ति प्राप्त करने और उसके द्वारा सिद्धि प्राप्त करके जनता के शारीरिक एवं मानसिक दुःखों का दूर करते थे। समय के परिवर्तन के साथ इस महान् विज्ञान का भी दुर्दिन आया। महासिद्ध नागार्जुन के अवसान के बाद तंत्र विद्या कुपात्रों के हाथ में चली गई और उन्होंने उसका रावण की भाँति दुरुपयोग आरंभ कर दिया। मारण, मोहन, उच्चाटन, वशीकरण आदि का प्रयोग अपनी इन्द्रियों के सुख या धन लालसा के लिये किया जाने लगा। जिस तलवार से दस्युओं और हिंसक पशुओं का मुकाबला किया जाता है उसी से अबोध शिशुओं, ब्रह्माणों और गायों की गर्दने भी काटी जा सकती हैं। परन्तु ईश्वर के यहाँ सुव्यवस्था है। उसने जालिम को उम्र थोड़ी रख छोड़ी है। अवश्यम्भावी परिणाम के अनुसार तान्त्रिक नष्ट हो गये। जनता में उनके कार्य के विरुद्ध तीव्र घृणा फैल गई। वाममार्गी और तान्त्रिक, हिंसक पशु समझे जाने लगे। अन्त में तंत्र विद्या का वैज्ञानिक और उच्च कोटि का स्वरूप लुप्त हो गया। यवन राज्य में तंत्र शास्त्र के हजारों महान ग्रन्थों को जला डाला गया इस प्रकार शास्त्र इस महाविद्या का दुःखद अन्त हुआ।

चूंकि तंत्र विद्या की उपयोगिता और उसके आश्चर्यजनक लाभों की जनता कायल थी इसलिये उसकी वैज्ञानिकता और उच्च साधन का अभाव हो जाने पर भी अधूरे तान्त्रिक बने रहे और अपनी सामर्थ के अनुसार लोगों का हित करते रहे। इतना समय बीत जाने के बाद जो लंगड़ी-लूली तंत्र विद्या बच रही है वह भी अच्छे से अच्छे वैज्ञानिक को अचम्भे में डालने के लिए पर्याप्त है। अभी भी तांत्रिक लोग, जहरीले सांपों के काटे हुए आदमी को मन्त्र द्वारा अच्छा कर देते हैं। उस सांप को मन्त्रबल से बुला कर काटे हुए स्थान से जहर चुसवाते हैं, बिच्छू आदि का जहर उतारते हैं, वृक्षों की टहनी या मोरपंख की झाड़ू लगाकर फोड़ों को अच्छा करते हैं, एवं मंत्रबल से हजारों रोगियों को अच्छा करते हैं, मारण, मोहन, उच्चाटन, वशीकरण अब भी होते हैं। भूत, प्रेतों के ऐसे आक्रमण जिन्हें देखकर डाक्टर लोग किंकर्तव्य विमूढ़ हो जाते हैं, तांत्रिक ही ठीक करते हैं। वैज्ञानिक लोग तंत्र विद्या द्वारा दिया हुआ मन्त्र (सजेशन) साधक के अन्तरमन (सब कॉन्ससनेस) में गहरा चला जाता है और वहाँ जाकर ऐसी विद्युत शक्ति उत्पन्न करता है जिससे साधक या रोगी का मन एवं शरीर उसी के अनुसार कार्य करने लगता है। फलस्वरूप इच्छित लाभ प्राप्त हो जाता है। एक और वैज्ञानिक डाक्टर उड जिन्होंने मनुष्य शरीर की बिजली का अनुसंधान किया है, इस विषय पर और अधिक प्रकाश डाला है उनका कथन है कि मनुष्य शरीर से एक प्रकार का तेज निकल कर आकाश में प्रवाहित होता है यह तेज अपनी इच्छानुसार ऐसा बनाया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जा सकता है जिससे निश्चित व्यक्तियों को हानि या लाभ पहुंचाया जा सके । एक अन्य वैज्ञानिक डाक्टर फ्रेडन का कहना है कि मनुष्य के सुदृढ़ संकल्प संयुक्त विचार ईथर तत्व में मिलकर क्षण भर में निश्चित व्यक्ति तक पहुंचते हैं और उसका हित-अनहित करते हैं । सामूहिक प्रार्थना इसलिए की जाती है कि वह अधिक शक्तिशाली होकर अधिक असर दिखा सके । विद्वानों का कहना है कि तान्त्रिकों के मंत्र से उत्पन्न हुये कम्पन तथा तत्सम्बन्धी उपचार क्रियाओं की लहरें मिलकर बहुत शक्तिशाली हो जाती हैं और जो लोग उन्हें ग्रहण करते हैं, उन पर आश्चर्यजनक चमत्कार दिखाती हैं । विद्वानों की बात छोड़िये हम अपने दैनिक जीवन में देखते हैं कि अपने दूरस्थ प्रियजनों में से किसी की मृत्यु या हानि होने पर हमें दुःस्वप्न आते हैं और अनिष्ट की आशंका से मन कांप उठता है । कई बार तो अचानक जागृत और स्वप्न की अवस्था में ऐसी आशंकायें उठ खड़ी होती हैं कि अमुक व्यक्ति का अमुक अनिष्ट हो गया और कुछ देर बाद सचमुच वह बात सत्य होने का समाचार मिलता है । दूरस्थ पुत्र पर दुःख आने पर माता के कुचों में दूध उमड़ने लगता है । पति का अनिष्ट होने पर स्त्री के अंग टूटने लगते हैं । प्रेमी जब अपना प्रेमिका के लिए विरह में तड़पता है तब उसी समय दूरस्थ प्रेमिका भी व्याकुल हो उठती है । यह सब उसी महान सत्य की अनुभूतियाँ मात्र हैं जिसके आधार पर तंत्र शास्त्र स्थित है और रेडियो या टेलीविजन का आविष्कार हुआ है । शक्तिशाली और एकाग्र मन द्वारा निश्चित रूप के दूसरों के लिये सुख-दुःख की लहरें भेज सकती हैं । हाँ उनसे लाभ उठाना साधक की इच्छा पर निर्भर है । उच्च शक्ति के साथ ब्रौडकास्ट की हुई आकाशवाणी को भी तब तक ठीक तरह नहीं सुना जा सकता जब तक आपका रेडियो दोष रहित न हो ।

इस महा विज्ञान से लाभ उठाने की एक शर्त है वह है–साधन में अटूट श्रद्धा और विश्वास का होना । बिना इसके लाभ नहीं मिल सकता । मोती लेने के लिए समुद्र में गहरा घुसना पड़ेगा । शंकर का मधुर स्वाद चखने के लिए ईख बोनी पड़ेगी, पेट भरने के लिए मुँह चलाना पड़ेगा । जो सज्जन श्रद्धा और विश्वास स्थिर नहीं रख सकते वे इधर कदम बढ़ाने का व्यर्थ प्रयत्न न करें । अपने टूटे हुए रेडियो सैट पर आप विशुद्ध ब्रौडकास्ट को नहीं सुन पायेंगे । जो लोग तंत्र विज्ञान पर विश्वास नहीं करते वे इसकी परीक्षा कर देखें । हमारे अनुभव में ऐसे बीसियों कट्टर अविश्वासी आये हैं जो इसे ढोंग, अन्धविश्वास और मूर्खता कह कर मजाक उड़ाते थे, पर जब उन्होंने कुछ दिन अभ्यास किया तो तंत्र विद्या के प्रत्यक्ष लाभों को देख कर उसके अनन्य भक्त बन गये । हमारा कहना इतना ही है कि जो भी सज्जन अविश्वास करते हों, वे इसकी परीक्षा करें ।

तंत्र शास्त्र उपयोगी भी, विज्ञान सम्मत भी

भारतीय अध्यात्म का गौरवशाली साहित्य दो भागों में विभक्त है–'आगम' और 'निगम' । सामान्यतया आगम तंत्र के लिए और निगम वेदों के लिए प्रयुक्त होता है । वेदों की महत्ता तो सर्वविदित है ही, तंत्र भी अत्यंत महत्वपूर्ण उच्चकोटि के साहित्य में गिने जाते हैं । इसका प्रमाण इसी तथ्य से मिलता है कि आगम शब्द पहले वेदों के लिए प्रयुक्त किया जाता था, परंतु जब तंत्रों का आविर्भाव हुआ तो वेद निगम और तंत्र आगम के अंतर्गत आ गये । जिस तरह वेद ईश्वर की वाणी माने जाते हैं, उसी तरह तंत्र भी भगवान विष्णु, शिव, देवी की वाणी हैं और उन्हीं देवताओं के नाम से वे जाने भी जाते हैं । वेदों के कर्म, उपासना और ज्ञान के तीन विषय प्रसिद्ध हैं, किन्तु इनमें यह विषय संक्षिप्त और गुँथे हुए रूप में वर्णित हैं । इन्हें ही सरल रूप में युगानुसार विस्तारपूर्वक तंत्रों में वर्णित किया गया है ताकि यह सर्वसाधारण की समझ में आयें । वेदों के समस्त विषय तंत्रों में पाये जाते हैं । तंत्रों की महत्ता प्रकट करते हुए 'मत्स्य–सूक्त' में लिखा है कि जिस तरह वर्णों में ब्राह्मण, देवियों में दुर्गा, देवताओं में इन्द्र, वृक्षों में पीपल, पर्वतों में हिमालय, नदियों में गंगा और अवतारों में विष्णु हैं । उसी तरह शास्त्रों में तंत्र श्रेष्ट हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस तरह अध्यात्म साहित्य में 'तंत्र' की एक विशिष्ट स्थिति है । यह अध्यात्म विज्ञान की एक ऐसी शाखा है जिसका अवलंबन करके सर्वथा सामान्य व्यक्ति भी सांसारिक स्तर से ऊपर उठकर क्रमशः उच्च जीवन में प्रविष्ट कर सकता है । तंत्र का उद्देश्य साधक को निम्नगामी प्रवृत्तियों में उलझाना नहीं है, वरन् उसे एक ऐसा सुव्यवस्थित मार्ग सुझाना है जिससे वह जीवन में कुछ श्रेष्ठ एवं आदर्शवादी कार्य कर सके ।

यद्यपि यह सत्य है कि जिस प्रकार से प्रत्येक उच्च और उपयोगी सिद्धांत एवं संप्रदायों में कालांतर में अनेक विकार और दोष उत्पन्न हो जाते हैं, उसी प्रकार तंत्र मार्ग का भी अधिकांश में रूपांतर हो गया है और साधारण लोगों ने उसे मारण, मोहन, वशीकरण जैसे निकृष्ट, दूषित कार्यों का ही साधन समझ लिया है । पर अपने मूल रूप में उसका उद्देश्य यही रहा है कि जो लोग घर-गृहस्थी को त्याग करके दीर्घकालीन तप और वैराग्य द्वारा आत्म साक्षात्कार करने में असमर्थ हैं, वे अपने सांसारिक जीवन का निर्वाह करते हुए भी आध्यात्मिक दृष्टि से उन्नति कर सकें । इस बात को स्पष्ट करते हुए तंत्रशास्त्रों में कहा गया है कि "जहाँ भोग है वहाँ मोक्ष नहीं है और जहाँ मोक्ष है वहाँ भोग नहीं है, किंतु जो मनुष्य भगवती महाशक्ति की सेवा में संलग्न हैं उनको भोग और मोक्ष दोनों ही सहज साध्य हैं ।"

जब कभी तंत्र-साधना का प्रचार उच्चशिखर पर था, साधक इससे अनेकों प्रकार की असाधारण सिद्धियाँ प्राप्त करते थे, जो आज सर्वथा असंभव दृष्टिगोचर होती हैं । प्राचीन काल के साधक इससे बड़े-बड़े लाभ उठाते थे । रावण और अहिरावण हजारों मील की दूरी से बिना वैज्ञानिक यंत्रों के आपस में वार्तालाप करते थे । नल-नील ने पानी पर तैरने वाले पत्थरों से पुल बनाया था । हनुमान मच्छर की तरह छोटा बन सकते थे और बहदाकार पर्वत खंडो को उठाने की सामर्थ्य भी रखते थे । सुरसा अपने शरीर को विशालतम बना सकती थी । मारीच मनुष्य शरीर को पशु-शरीर में परिवर्तित कर लेता था । बिना पेट्रोल के आकाश में उड़ने वाले वायुयान उपलब्ध थे । वरुण-अस्त्र से जल की वर्षा कराई जाती थीं, आग्नेयास्त्र से चारों ओर अग्नि की लपटें लगती थीं, नागपाश की जकड़ लोहे की मोटी रस्सियों से भी अधिक सुदृढ़ थी । सम्मोहनास्त्र से व्यक्ति को मूर्छित कर दिया जाता था । आज यह विद्या लुप्त हो गयी और उसे मात्र ग्रंथों में ही पढ़ा जा सकता है ।

तंत्र-साधनाओं का लक्ष्य बड़ा विस्तृत है । वशीकरण, मारण, मोहन, उच्चाटन, दृष्टिबंध, परकाया प्रवेश, सर्प विद्या, प्रेतविद्या, अदृश्य वस्तुओं को देखना, भविष्य ज्ञान, संतान, सुयोग, आकर्षण, मोहन मंत्र, घात-प्रतिघात आदि की क्रियायें इससे संचालित की जा सकती हैं । इस साधना द्वारा दूसरों के मन को प्रभावित किया जा सकता है और उसकी गतिविधियों को अपनी इच्छानुसार मोड़ा-मरोड़ा जा सकता है । निर्बल मन व शरीर वाले व्यक्तियों को स्वस्थ बनाया जा सकता है । बिच्छू एवं सर्पदंश तथा विषैले फोड़ों का समाधान भी तंत्र द्वारा मिलता है । अनिष्टग्रह, भूतोन्माद, नजर लगने आदि के उपचार तंत्र द्वारा होते हैं । मानसिक उद्वेग, असहनीय वेदना व अन्य शारीरिक अव्यवस्थाओं में तंत्र सहायक सिद्ध होता है । मैस्मरेजम और हिप्नोटिज्म द्वारा भी कुछ ऐसे ही कार्य कर लिए जाते हैं । तंत्रों द्वारा इनकी अपेक्षा कहीं अधिक शक्ति उपार्जित की जा सकती है और उनसे महत्वपूर्ण लाभ उठायें जा सकते हैं ।

किसी समय तंत्रें के इतने विशाल साहित्य का निर्माण किया गया था जिसकी आज कल्पना भी नहीं की जा सकती । तंत्रों में ही वर्णन है कि प्राचीनकाल में चौदह हजार तंत्र ग्रंथ प्रचलित थे जिनमें सभी विद्याओं का समावेश था । ये अभ्यास और व्यावहारिक ज्ञान के शास्त्र माने जाते हैं जो जीव की परतंत्रता को समाप्त करके स्वतंत्रता का द्वार खोलते हैं, वह जिन सुदृढ़ बंधनों में जकड़ा हुआ है उनको ढीला करते हैं और ईश्वरीय सत्ता के सर्वोच्च स्थान पर लाकर खड़ा कर देते हैं । तंत्र के लक्ष्यों की ओर संकेत करते हुए मनीषियों ने कहा है-'ईश्वर की सृजनात्मक शक्ति का जागरण, इन शक्तियों को खोजकर कार्य करना, अपने देवत्व को पहचान और अपने चारों ओर दृष्टि में विशालतर देवत्य का आलिंगन करना ही वह आदेश है जिसे समस्त आगम उद्घोषित करते हैं । आत्मिक विज्ञान के सिद्धन्तों को क्रियारूप देना ही वस्तुतः तंत्रशास्त्र का कार्य है । विभिन्न प्रकार की साधनाओं के विधि-विज्ञान का मार्गदर्शन ही इनका मुख्य कार्य है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

तंत्रों में पंचमकार की साधना की जाती हैं । इन साधनाओं में मद्य, मांस, मत्स्य, मुद्रा और मैथुन के प्रयोग का निर्देश किया गया है । अलंकारिक भाषा में प्रयुक्त इन शब्दों को साधारण कोटि के साधक न समझ सके और इनका प्रत्यक्ष प्रयोग करके इस उच्चस्तरीय साधना क्षेत्र को भ्रष्ट कर दिया, जिससे बौद्धिक क्षेत्र में इनके प्रति घृणा के बीज उत्पन्न हो गये । परंतु वास्तविकता कुछ और ही है । जहाँ 'मद्य' के प्रयोग का आदेश है वहाँ नशा उत्पन्न करने वाले पेय से अभिप्राय नहीं है, वरन् वह दिव्य ज्ञान है जिससे साधक बाहरी जगत से नाता तोड़कर आंतरिक क्षेत्र में प्रवेश करता है । परमात्मा को सर्वस्व समर्पित करना ही तो 'मांस' का सेवन कहलाता है । 'मत्स्य' का अभिप्राय उस स्थिति से है जब सभी तरह के सुख-दुःख एक समान हो जाते हैं । दुर्गुणों के त्याग को 'मुद्रा' कहते हैं । सहस्रार में शिवशक्ति का कुंडलिनी के साथ मिलन 'मैथुन' कहलाता है । उच्चकोटि के साधक इन्हीं भावनाओं से ओत-प्रोत होकर साधना करते हैं । विषयी प्रकृति के व्यक्ति अपनी वासनाओं को तृप्त करने के लिए एक प्रकार का षडयंत्र करते हैं और तंत्रशास्त्र को बदनाम करते हैं जिससे यह व्यवहारिक रूप में जनसाधारण से दूर चला गया है । इसकी वास्तविकता को समझना और तद्नुरूप आचरण करना ही अभीष्ट है जिससे जीवन विकास में इस विज्ञान का लाभ उठाया जा सके ।

तंत्र पद्धति में छिपे हुए अर्थों को बताते हुए महर्षि अरविंद ने कहा है कि–"भारत भूमि की आत्मा के क्रमशः विस्तारशील राज्य में यह एक महत्वपूर्ण विकास शिखर था । वैदिक ऋषियों ने एक आतंरिक अनुशासन और धर्म विकसित किया और इसे पूर्ण बनाया जो मूल रूप में सहज बोध पर आश्रित और प्रतीकात्मक था और उस युग की अकृत्रिम विशुद्ध मानवता के अनुरूप था । उपनिषद् में इस प्रारंभ के प्रयास का उल्लेख है जिसमें मानव अपने विभिन्न स्तरों को आलोकित बुद्धि के उच्च स्तर से लेकर नीचे तक के स्तरों को ऊँचा उठा ले जाता है, उस पर आत्मा की ज्योति का प्रकाश डालता है । यह एक प्रणाली है जो कि स्मृतियों के युग से होते हुए आगे बढ़ी और दर्शन में अपनी पूर्णता को पहुँची । तांत्रिक साधना भगवान के विषय में और भी गंभीर दावा करती है । यह मानव के संवेदनशील और सक्रिय भागों, हृदय, संकल्प और जीवन सत्ता को भी लेती है और उन्हें आत्मा के ढाँचे के अनुरूप विकसित करने का यत्न करती है । इसलिए तंत्र राष्ट्र के प्रगतिशील तथा आत्म-विस्तारशील आध्यात्मिक आंदोलन में एक महत्वपूर्ण और यहाँ तक कि एक अनिवार्य सोपान रहा है ।"

वस्तुतः तंत्र एक स्वतंत्र विज्ञान है । प्रकृति की शक्तियों पर काबू पाकर उन्हें अपनी इच्छानुकूल वशवर्ती बनाना इस विद्या का प्रधान कार्य है । परमाणुमयी प्रकृति के आकर्षण–विकर्षण से जगत के पदार्थों में परिवर्तन होता रहता है, उत्पत्ति, स्थिति और लय के परिणाम उपस्थित होते हैं । विज्ञान द्वारा परमाणु की इस स्वाभाविक प्रक्रियाओं को बदल कर अपने अनुकूल बना लिया जाता है । तंत्र विज्ञान के द्वारा अपने अंतर की विद्युत शक्ति को इतना विकसित कर लिया जाता है कि प्रकृति के सूक्ष्म परमाणुओं को अपनी इच्छानुसार ढाल सकते हैं । इसी को सिद्धि कहते हैं । तंत्र विज्ञान के अनुसार सूक्ष्म जगत में चेतना ग्रंथियाँ विचरण करती रहती हैं । जिस उद्देश्य से साधना की जा रही है, उसके अनुसार उन्हीं प्रकार की चेतना ग्रंथियों को जाग्रत किया जाता है, ताकि वह क्रियाशील होकर अनुकूल परिणाम प्रस्तुत करने में समर्थ हों । जैसे कोई सेवक प्रत्यक्ष शरीर से अपने स्वामी की सभी आज्ञाओं का पालन करता है वैसे ही अप्रत्यक्ष शरीर से वह चेतना ग्रंथियाँ सदैव उसके साथ रहती हैं और अपनी शक्ति के अनुसार साधक की आज्ञाओं को पूर्ण करती हैं । जैसे कहा जाता है कि तांत्रिक को भैरव, छाया पुरुष, ब्रह्मराक्षस, मसान, पिशाच, आदि सिद्ध हैं ।

अदृश्य लोक की चेतना ग्रंथियों की प्रक्रिया इस प्रकार से होती है कि तंत्र साधनाओं द्वारा उन्हें पकड़ा जाता है, उनको प्राणवान बनाया जाता है, जाग्रत, क्रियाशील और चैतन्य बनाया जाता है । चैतन्य होने पर वह साधक पर आक्रमण करती हैं । यदि साधक इस आक्रमण से भयभीत न हुआ तो वह ग्रंथियाँ उस साधक के वश में हो जाती हैं और अप्रत्यक्ष शरीर से उसके सभी कार्य सिद्ध करती हैं । यदि वह भयभीत हो जाय तो उसे हानि की भी संभावना होती है । प्राचीनकाल में जब

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तंत्र अपने विशुद्ध रूप में चरमोत्कर्ष पर था तब अदृश्य लोक की इन चेतना ग्रंथियों को जाग्रत कर वह सभी कार्य कर लिये जाते थे जो आजकल भौतिक विज्ञान की शोधों से यंत्रों द्वारा किये जाते हैं । इस विद्या द्वारा अभी भी आनंददायक परिस्थितियाँ उत्पन्न और उपलब्ध की जा सकती हैं और उनका उपयोग स्वयं के लिए तथा जनहित में किया जा सकता है । इनसे आसन्न विपत्तियों का निवारण भी किया जा सकता है । तंत्र तुरंत फल दाता है और वह परिणाम आश्चर्यजनक होते हैं ।

तंत्र का सीधा संबंध चेतना-चितशक्ति से है । यह साधना पंचकोषों को पार करने एवं षट्चक्र जागरण-कुण्डलिनी उन्नयन की उच्चतम प्रक्रिया का मार्ग प्रशस्त करती है । अन्नमय कोष से आनंदमय कोष की ओर बढ़ते हुए चलना इनका उद्देश्य है । तंत्र साधनायें शक्ति के स्रोत हैं । हमारे सूक्ष्म शरीर में स्थित षट्चक्रों और यौगिक ग्रंथियों-उपत्यिकाओं को जगाकर साधक को एक शक्तिशाली चंबुक बना देती है । अंग-प्रत्यंग से शक्ति का प्रादुर्भाव होता है और यही आकर्षण शक्ति ईश्वर की विभिन्न शक्तियों, जिन्हें देवता कहते हैं, को अपने अनुकूल बनाकर अपनी ओर आकर्षित करती हैं और मनोवांछित सिद्धियाँ प्रदान करती हैं । सूक्ष्म देवताओं के लिए सूक्ष्म साधनों की आवश्यकता रहती है और इस कार्य के लिए मंत्र सर्वोपरि साधन स्वीकार किये गये हैं । तंत्रों ने मंत्रों के साथ बीजाक्षरों का प्रयोग भी बताया है । इन मंत्रों की सूक्ष्म तरंगें सूक्ष्म प्रकृति में हलचल उत्पन्न करती हैं और ईथर तत्व में संव्याप्त अपने अनुकूल तरंगों के साथ मिलकर एक शक्तिपुंज के रूप में परिणति हो जाती हैं । साधक एक चुंबक की तरह इन शक्तियों को आकर्षित करता रहता है और अपने में शक्ति के भंडार को भरता रहता है । इस तरह से मंत्र–तंत्र साधक का दिव्यशक्तियों से संबंध स्थापित कराते हैं और वह आध्यात्मिक विभूतियों एवं भौतिक सिद्धियों का पुंज बनता जाता है ।

तांत्रिक आचार्यों का कहना है कि तंत्र की उ च्चतम् सिद्धि उसे प्राप्त होती है जिसका गुरु कृपा से सुषुम्ना में प्रवेश हो जाता है और जिसकी कुंडलिनी शक्ति का जागरण होता है । तंत्र का मत ही है कि जो साधक इन्द्रियों और प्राणों को रोककर कुल मार्ग में सक्रिय नहीं हो जाता वह शक्ति की निकृष्ट उपासना का भी अधिकारी नहीं है । मेरु तंत्र के अनुसार जो पर द्रव्य के लिए अंधा है, पर–स्त्री के लिए नपुंसक है, परनिन्दा के लिए मूक है और इन्द्रियों को सदा वश में रखता है, ऐसा ब्रह्मपरायण व्यक्ति ही वाममार्गी तंत्र साधना का अधिकारी होता है । यह अधिकार प्राप्त करने के लिए तांत्रिक सिद्धांतों का गंभीर अनुशीलन और साधना मार्ग का निष्ठापूर्वक अनुगमन आवश्यक है, तभी दिव्य शक्तियों का वरद् हस्त प्राप्त हो सकता है ।

तंत्र अध्यात्म क्षेत्र का भौतिक विज्ञान

चेतना की विकास प्रक्रिया को योगाभ्यास कहते हैं और शरीर को अधिक समर्थ बनाने की पद्धति को तंत्र साधना । तंत्र प्रयोगों के द्वारा साधक के शरीर की विद्युत को सामान्य स्तर की तुलना में कहीं अधिक प्रहार किया जा सकता है और उसका उपयोग अपने तथा दूसरों के लिए प्रायः वैसा ही हो सकता है जैसे कि प्रकृति साधनों में से किन्हीं के द्वारा किया जाता रहा है । यह उपयोग भला भी हो सकता है, बुरा भी । आग से शीत निवारण का लाभ भी मिल सकता है और किसी पर नगर को भस्म कर देने का अनर्थ भी हो सकता है । यही बात तंत्र साधना के सम्बन्ध में भी है । वह विशु रूप से शरीरगत पंच तत्वों में सन्निहित है वरिष्ठ ऊर्जा का उत्पादन है । उपयोग प्रयोक्ता की मर्जी पर निर्भर है ।

शरीर एक ऐसा अद्भुत यन्त्र है, जिसमें न केवल जीवन निर्धारण निर्वाह के सामान्य क्रिया–कलाप सहज क्रम में होते रहते हैं । वरन् यदि प्रयत्न किया जाय तो उसमें सन्निहित उन प्रसुप्त क्षेत्रों को भी जगाया जा सकता है । जो वैज्ञानिक क्षेत्र में मिलते हैं, या मिल सकते हैं । अनेक यन्त्र उपकरणों की सहायता से प्रकृति शक्तियों को वशवर्ती करके उनसे आश्चर्यजनक काम लिये जाते हैं । यदि शरीरगत अदृश्य कर्मस्थलों को उभारा जा सके तो उससे भी वही काम हो सकते हैं जिन्हें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

वैज्ञानिक बहुमूल्य उपकरणों के माध्यम से कर सकते हैं । शरीर एक ऐसा ऊर्जा भण्डार है जिसे प्रकृति की किसी भी क्षमता के साथ सम्बद्ध करके उन कृत्यों को किया जा सकता है जो भौतिक जगत में मनुष्य द्वारा किये जा सकते हैं । इसी प्रयोजन की पूर्ति के लिए जो प्रयत्न किये जाते हैं उन्हें तंत्र साधना कहते हैं । योगाभ्यास की धारा उससे सर्वथा भिन्न है । उसमें आत्मा और परमात्मा के मध्यवर्ती चेतनात्मक–भावनात्मक प्रयोजन पूरे किये जाते हैं । उस क्षेत्र की सफलताओं को 'ऋद्धि' कहा जाता है । वे ऋषियों में देखी जाती हैं । तंत्र साधना से 'सिद्धियाँ' प्राप्त होती हैं । सिद्धियाँ अर्थात् समर्थता एवं सम्पदा के सहारे मिल सकने वाली सफलताएँ ।

योग का केन्द्र ब्रह्मरन्ध्र, सहस्रार है । तंत्र का मूलाधार–कुण्डलिनी केन्द्र है । यह जननेन्द्रिय मूल में है और योग का उद्गम मस्तिष्क में । यों किसी न किसी अंश में दोनों ही साधनाओं के लिए दोनों का प्रयोग करना पड़ता है । कुण्डलिनी साधना के लिए मनोगत संकल्प चाहिए और योग साधना के लिए जननेन्द्रिय संयम ब्रह्मचर्य । इस प्रकार दो धाराएँ गंगा–यमुना की तरह पृथक्–पृथक् होते हुए भी मूलतः हिमालय के एक विशेष क्षेत्र के साथ समान रूप से जुड़ी हुई हैं ।

तंत्र साधना में मस्तिष्क के अचेतन भाग का एक रहस्यमय केन्द्र झकझोरा जाता है । इस केन्द्र को अविज्ञात, रहस्यमय या अतीन्द्रिय संस्थान के नाम से जाना जाता है । इसकी सहायता से ही जननेन्द्रिय मूल में सन्निहित कुण्डलिनी क्षमता को उभारने, नियन्त्रित करने एवं दिशा विशेष में मोड़ने का प्रयोजन पूरा किया जाता है । संकल्प बल के अभाव में तो जननेन्द्रिय स्वस्थ समर्थ होने पर भी यौन कर्म ठीक तरह कर सकने तक में समर्थ नहीं होते । मानसिक नपुंसकता प्रायः संकल्प बल की कमी से समर्थों को भी असमर्थ बना देती है इस सम्बन्ध में की गई वैज्ञानिक शोधों से ज्ञात हुआ है कि मानवी मस्तिष्क का एक बड़ा क्षेत्र 'साइलेण्ट एरिया' मौन क्षेत्र–कहलाता है । यहाँ की हलचलें प्रायः निस्तब्ध जैसी प्रतीत होती हैं और समझ में नहीं आता है कि इसकी उपयोगिता क्या है । तो भी पाया गया है वहाँ किसी प्रकार का आघात लगने या उभार आने से सामान्य जीवन भी असामान्य बनते देखा जाता है ।

अजित मुकर्जी की 'दि तांत्रिक वे', स्वामी अगेहानन्द की 'तांन्त्रिक परम्परा'–डिरोप्प की–'यौन ऊर्जा'–हॉस जैक्सन की–'पश्चिमी मनोविज्ञान और भारतीय साधना'–ओमर गैरिसन की–'तंत्र यौन योग'–उलरिख हास रोकर की 'हठयोग प्रदीपिका'–फिलिप रासन की, 'तान्त्रिक कला'–जान दि वाइट की–'चेतना का सीमान्त' हाइन रिख जीमर की 'भारतीय सभ्यता में उपाख्यान और प्रतीक'–जॉन वुडरफ की 'दि सर्पेन्टाइन पावर' आदि पुस्तकें तंत्र के दर्शन सिद्धान्त और विधि–विधान पर यत्किंचित प्रकाश डालती है तो भी यह विषय ऐसा है कि जिसमें निजी अनुभव के आधार पर सामुयिक विधि–व्यवस्था और उसकी वर्तमान परिस्थितियों में सम्भावित उपलब्धियों पर प्रकाश डाला जा सकता है एवं इस विषय में जग–मानव में बैठी भ्रान्तियों को काफी सीमा तक हटाया जा सकता है ।

सामयिक एवं परिस्थितियों का संकेत इसलिए किया गया है कि तंत्र की प्रौढ़ता वाले युग में जिस प्रकार का वातावरण था वैसा अब नहीं रहा । जलवायु में भारी अन्तर आ गया है । तदनुसार शरीरों की क्षमता तथा मनःसंस्थानों की दृढ़ता में असाधारण हेर–फेर हुआ है । उन दिनों परम्परागत श्रद्धा के आधार पर साधनाएँ सहज सिद्ध थीं, पर अब तक युग में हर व्यक्ति अध्यात्म प्रतिपादनों के सम्बन्ध में शंकाशील और उदास है । इसी प्रकार चिन्तन व क्रिया दोनों में इन्द्रिय संयम घटते चले जाने से मनोबल में भी कमी आई है । आहार की शुद्धता न रहने के चित्त की चंचलता भी असाधारण रूप से बढ़ गई है । फिर प्रत्यक्ष कुछ कर गुजरने वाले अपनी सफलता देखकर अनुचरों में प्रगाढ़ विश्वास उत्पन्न करने वाले मार्गदर्शक भी कहाँ रहे हैं ? फिर भी अध्ययन पर आधारित निष्कर्ष इस सम्बन्ध में असीम सम्भावनाओं को स्रोत मानवी काया को बताते हुए उस दिशा में पराक्रम पुरुषार्थ की महत्ता सिद्ध करते हैं । मानवी विद्युत सामान्यतया निर्वाह के काम चलाऊ प्रयोजनों में खपती रहती है किन्तु विशेष स्थिति में उसका उपयोग अन्य प्रयोजनों के लिए भी हो सकता है । इस तथ्य को प्रमाणित करने वाली घटनाएँ कभी–कभी अनायास ही प्रकट होती देखी गई हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चीने में ऐसे कई बच्चे खोज निकाले गये हैं जिनमें एक्सरे-लेसर रेज जैसी वेधक दृष्टि है । वे दृष्टि को परिधि में-बाहर की वस्तुओं को देख और कागजों को पढ़ लेते हैं । ल्हासा के 'ट्रिडिशनल मेडीसिनल स्कूल' की शिक्षिकाओं ने इस खोज-बीन में बहुत उत्साह दिखाया और दौरा करके ऐसे विशेष क्षमता सम्पन्न बालकों को ढूँढ़ निकाला है जिनकी आँखें अदृश्य दर्शन कर सकती हैं । बड़ी उम्र वालों में यह विशेषता नहीं पाई गई । इससे प्रतीत होता है कि इस प्रकार के अनुभवों के लिए बालकपन की अवधि ही अधिक समर्थ रहती है । चीन की दो कुमारिकाओं की अतीन्द्रिय क्षमता पिछले दिनों संसार भर में चर्चा का विषय रही है । यह लड़कियाँ हैं १३ वर्षीय रेंग क्वेग और ११ वर्षीय बैंग विंग । यह दोनों दूर रखे हुए कागजों को पढ़ सकती हैं । दीवार के पीछे बैठे हुए व्यक्तियों को पहचान सकती हैं । यहाँ तक कि कागज के टुकड़े बगल में दबा कर भी उनमें जो लिखा है उसे पढ़ सकती हैं ।

इन लड़कियों का परीक्षण ३० वैज्ञानिकों द्वारा हुआ । जो तीन दिन चला और २५ टैस्ट लिये गये । इस परीक्षण के समय अन्यान्य उत्सुकजनों को भी बैठने व देखने का अवसर दिया गया । इस परीक्षण का विवरण उस देश की अनेक पत्रिकाओं में छपा । सभी इन सामर्थ्य के प्रदर्शन को देखकर हवप्रभ थे । जबकि यह प्रसुप्त क्षमताओं के जागरण की एक झलक भर थी ।

पिछले दिनों तंत्र और अनाचार प्रायः पर्यायवाची बने रहे हैं । उस विद्या का उपयोग, मारण, मोहन, उच्चाटन, वशीकरण, संतमन जैसे हेय प्रयोजनों के लिए होता रहा है । दूसरों को आतंकित करके या आक्रमण से अस्त-व्यस्त करके अपने क्षुद्र स्वार्थों की सिद्ध करने वाले तांत्रिकों ने इस विद्या के प्रति लोक मानस में तिरस्कार एवं भय का संचार किया है । इसके लिये कितने ही उदाहरण प्रमाण भी देखे जाते हैं ।

स्काटलैण्ड यार्ड के उड़न दस्ते के प्रमुख राबर्ट फेवियन ने नौकरी से निवृत्त होने के उपरान्त अपनी अनुभव पुस्तक प्रकाशित की है । उसमें ऐसे अनेक विवरणों का उल्लेख है जिसमें तांत्रिकों द्वारा कितने ही लोगों को न केवल हैरान किया वरन् उन्हें मार तक डाला गया । इंग्लैण्ड के बारविक शायर नगर में कुछ समय पूर्व एक उद्यान मालिक चार्ल्स वालटन की लाश बरगद के पेड़ तले पड़ी हुई मिली । जमीन कुरेदने के लिए काम आने वाला पैने दाँतों वाला लोहे का पंजा उसकी गरदन में घुसा हुआ था । साथ ही एक इस तरह की दरार सीने में थी जैसी कब्रिस्तानों में क्रूस चिन्ह की पाई जाती है । इस हत्या का रहस्य खोजने का काम वहाँ की गुप्तचर संस्था स्काटलैण्ड के अधिकारी राबर्ट फेबियन को सौंपा गया । उसने घटना के समीपवर्ती लोगों से पूछताछ करने की कोशिश की तो लगा कि वे जानते हुए भी बताना नहीं चाहते । इसी प्रकार की एक मौत इस इलाके में पहले भी चुकी है । अन्ततः उसने जाना कि यह मारण मन्त्र के प्रयोग का मामला है । इस विद्या को उस क्षेत्र के कई यांत्रिक जानते हैं और किसी लालच या प्रतिशोध वश ऐसे कृत्य जादू के जोर से करते रहते हैं ।

गुप्तचर विभाग के पास ऐसी ही कुछ और भी घटनाएँ दर्ज हैं । सन् १९७१ में लन्दन में ऐसी कितनी ही मृत्युएँ हुईं जिन्हें न रोगजन्य कहा जा सकता था न दुर्घटनाजन्य । अच्छे खासे आदमी ऐसे ही बेमौत मरे थे । कहा जाता था कि वहाँ के घुमक्कड़ बंजारे ऐसे कृत्य करते हैं उनके जादू से ऐसी दुर्घटनाएँ होती हैं । पूछ-ताछ करने पर बंजारा सभा के एक सदस्य ग्रेटन पक्सन ने यह स्वीकार भी किया था कि बंजारे यह विद्या जानते हैं और उनकी मरण विद्या से ऐसी घटनाएँ घटित होती भी रहती हैं । उन्होंने प्रमाण में ऐसी घटनाओं का वर्णन भी किया ।

इस सन्दर्भ में मनोविज्ञानवत्ताओं से पूछा गया तो उन्होंने कहा कि भयभीत प्रकृति के शंकाशील व्यक्ति किसी के डरा देने पर इस प्रकार स्व संकेतों के आधार पर मृत्यु के मुँह में जा सकते हैं । इन्हें एक प्रकार से अन्ध विश्वासजन्य आत्म-हत्या का मामला कहा जा सकता है ।

कैलीफोर्निया के फिल्म अभिनेता ल्यू ग्रेजाना को किसी तांत्रिक ने मार डालने की चुनौती दी थी । वह डर गया और अपने को एक कमरे में बन्द कर लिया । दरवाजा तक वह खोलता नहीं था । ऊपर के रोशनदान से ही घर वाले उसे भोजन पानी पहुँचाते थे । इस प्रकार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

निर्धारित चुनौती की २२ दिन की अवधि समाप्त होने पर उसने दरवाजा खोला और बाहर निकला । इसे संयोग ही कहना चाहिए कि जैसे ही वह भयभीत मनःस्थिति में सड़क पर बाहर आया कि एक दनदनाता हुआ भारवाही ट्रक उधर से आया और उसे कुचलता हुआ निकल गया ।

तंत्र के हेय प्रयोजन करने वाले अपना व्यक्तित्व एवं स्वभाव भी तदनुरूप बनाते हैं । "मघ मास च मीन च मुद्रा मैथुन मेवच" को अपनाकर जीवित भूत प्रेतों जैसे ढाँचे में अपने को ढालते हैं । श्मशान सेवन, अघोरी आचरण, मृतकों के कपालों को उपयोग, पशुबलि जैसे कृत्यों से अपने को आतंक आक्रमण के लिए पैने हथियार की तरह विनिर्मित करते हैं । आसुरी प्रकृति वाले प्रायः इसी दिशा में कदम बढ़ाते हैं और अपने को शुक्राचार्य विनिर्मित असुर सम्प्रदाय का अनुयायी बताते हैं । सिद्ध तांत्रिकों में रावण, कुम्भकरण, मारीच, भस्मासुर आदि का उल्लेख करते हैं । तो भी यह विद्या वस्तुतः वैसी है नहीं । दुरुपयोग से यों अच्छे साधनों की भी बदनामी होती है पर तथ्यतःतंत्र एक महत्वपूर्ण आत्मविज्ञान है । उसमें कायगत भौतिकी क्षमता को उभारने का वैसा ही प्रयोजन सध सकता है जैसा कि भौतिकी विज्ञानी विभिन्न उपकरणों से साधते हैं । बारूद से पहाड़ तोड़कर रास्ता भी बनाया जा सकता है और किसी अच्छे खासे निर्माण को बर्बाद भी किया जा सकता है अणु शक्ति से विश्व ऊर्जा की आवश्यकता पूरी हो सकती है । साथ ही यह भी सम्भव है कि उसका विस्फोट करके किसी क्षेत्र, महाद्वीप या समूचे विश्व को भस्मसात बना दिया जाय । तंत्र के दुरुपयोग से ही उसका स्तर गिरा है । यदि उसे सही रीति से समझा, संजोया और सत्प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त किया जाय तो उसे अध्यात्म क्षेत्र के भौतिक प्रयोजनों के लिये प्रयुक्त हो सकने वाला अन्तिम महत्वपूर्ण सामर्थ्य स्रोत कहा जा सकता है ।

'तंत्र विज्ञान' अलौकिक क्षमताओं से भरी पूरी विधा

तंत्र विद्या के क्षेत्र में लन्दन के रोमानी प्रिन्स "पैटूलिंगको ली" का नाम आज विश्व जन समुदाय की जुबान पर है । ऐसा कहा जाता है कि उनके मुख से निकली वाणी कभी खाली नहीं जातीं । एक बार नौटिंघम में एक विशाल कार्यक्रम होने को था । प्रबन्धकों को वर्षा की आशंका थी । अतः उससे बचाव हेतु उनने पैटूलिंगको ने उन्हें वर्षा न होने देने का विश्वास दिलाया । सचमुच ऐसा ही हुआ । उस दिन वर्षा नाम मात्र को भी न हुई, जबकि लन्दन में किसी दिन छुटपुट वर्षा हो जाना स्वाभाविक बात है ।

पैटूलिंगको ली ने एक बार ब्रिटेन के "यूरोपियन कॉमन मार्केट" में शामिल होने की भविष्यवाणी की थी । साथ में उसने यह भी कहा था कि एक वर्ष बाद ब्रिटेन को अपने उठाये कदम के लिए पाश्चात्ताप भी होगा एवं कई वर्षों तक यह आर्थिक संकट से उबर नहीं पायेगा । यह दोनों ही बातें सत्य सिद्ध हुईं ।

एक बार पैटूलिंगको ली के ऊपर झूठा कानूनी आरोप लगाया गया था । सजा के रूप में उन्हें ६ वर्ष की कैद सुनाई गयी थी । घोषणा सुनकर ली ने बस इतना कहा था—"जज साहब ! मेरे पास सफाई का कोई स्रोत नहीं है । परन्तु याद रखें मेरी सजा की अवधि समाप्त होते ही आपका प्राणान्त होगा । उस समय आपके पास बचाने वाला कोई न होगा ।" कुछ दिनों बाद एक दुर्घटना में जज महोदय का सचमुच देहान्त हो गया । इस प्रकार ली का शाप फलीभूत हुआ ।

कुछ दिनों पूर्व की एक और घटना है । ली को एक मकान आवंटित कराना था । परन्तु कॉउन्सिल के सदस्यगण उसे परेशान कर रहे थे । अन्ततः ली ने यह घोषणा की थी कि "यदि १५ दिन के अन्दर मुझे मकान नहीं मिलता तो मैं कॉउन्सिल के सदस्यों को शाप देने के लिए बाध्य हो जाऊँगा ।" इस चेतावनी से भरी घोषणा को सुनकर कॉउन्सिल के सभी सदस्य घबरा गये । उन्होंने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ली को पुनः बुलावाया तथा समस्या का यथोचित समाधान ढूँढ़ निकाला । तब ली ने उन्हें शाप न देने का आश्वासन दिया ऐसी अपवाद रूप घटना को छोड़ ली ने कभी अपनी दिव्य क्षमता का दुरुपयोग नहीं किया ।

इस प्रकार की कई घटनाएँ ली के जीवन में घटित हुई हैं । उन्होंने अपनी तान्त्रिक क्षमता एवं अलौकिक सामर्थ्य के लिए अपनी मृत दादी की आत्मा को माध्यम बतलाया है । उनका यह भी कहना है कि हम जिप्सियों के लिए तंत्र एक अचूक हथियार है । इसको अपनाकर हम अपनी तो सुरक्षा करते ही हैं, जहाँ कहीं किसी का अहित होता दीखता है, इसका प्रयोग करते हैं ।

विलियम सामरसेट मॉम की भारतीय तंत्र विधाओं में गहन अभिरुचि थी । वे अपने पास माँ भैरवी का तंत्र प्रतीक हमेशा रखा करते थे । उनके निवास स्थान की हरेक चीज पर माँ भैरवी की तंत्र मुद्रा अंकित होती थी । उनके अनुसार यह प्रतीक दुष्ट ग्रहों और पैशाचिक शक्तियों को पास फटकने न देता था ।

मॉम का जीवन बड़ी परेशानी भरा रहा । नींद में उन्हें प्रायः दुःस्वप्न आया करते थे । सपने में उन्हें ऐसा महसूस होता था कि कोई उनका गला दबोच रहा है । उस समय उनकी साँसें फूलने लगती तथा दमा जैसा प्रभाव उत्पन्न हो जाता था । ऐसी घटनाएँ प्रायः मंगलवार के दिन ही हुआ करती थीं । घटना के बाद कई दिनों तक उन्हें गले में खराश तथा उस स्थान पर सूजन का अनुभव होता था । इस स्वप्न रूपी काल चक्र से अपनी सुरक्षा हेतु मॉम ने पूर्वार्त्त दर्शन के अध्ययन के आधार पर तंत्र प्रतीक को अपना जीवन साथी बना लिया था । स्पष्ट है कि वह प्रतीक ही उनकी मृत्यु पाश से रक्षा का कारण बनता रहा ।

ऐसी ही एक और घटना है । तब भारत आजाद नहीं हुआ था । सीतापुर क्षेत्र में हृदय नारायण नामक एक सेठ रहते थे । विशाल बँगला था तथा उसमें पत्नी व नौकर-चाकर समेत वे रहते थे ।

एक दिन सेठ जी के बँगले पर एक तान्त्रिक का पदार्पण हुआ । उसने सेठ जी से वाँछित मादक पेय की तंत्र प्रयोग हेतु माँग की । सेठ जी ने जब इसको प्रस्तुत करने से इन्कार कर दिया तब उस तान्त्रिक ने उन्हें सबक सिखलाने की घोषणा की ।

कुछ दिनों बाद ही घर में बिल्लियों का उपद्रव आरम्भ हुआ । घर आँगन में हर तरफ बिल्लियों का शोर तथा चहल कदमी सुनने देखने को मिलने लगी, बिल्लियों को पकड़कर कोसों दूर फेंक आया जाता, तब भी न जाने कहाँ से नई बिल्लियाँ आ जातीं तथा उपद्रव पूर्ववत् जारी रहता । उपचार रूप में झाड़-फूँक, पूजा-पाठ को कृत्य भी सम्पन्न किया गया, पर वह भी नाकामयाब रहा ।

इसी बीच उस क्षेत्र में एक तलवार धारी साधु की ख्याति काफी फैली । उसने एक बार रेलगाड़ी को चलाने से रोक दिया था । तभी से लोग उसे अपने यहाँ कष्ट निवारणार्थ लिवा जाते । सेठ जी ने भी यही किया । साधु ने उन्हें निर्दोष मानते हुए उनके घर आना स्वीकार कर लिया । वहाँ उन्होंने अपनी तलवार माँजन शुरू किया तथा यह कहते रहे कि "देखता हूँ कौन अब बिल्लियों को भेजता है, कौन यहाँ तवाही मचाता है ।" इसके बाद से वहाँ फिर कोई हलचल नहीं हुई । आज भी सेठ जी के परिवार के अन्य लोग इस घटना के साक्षी हैं । ये घटनाएँ इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण हैं कि तंत्र विज्ञान एक अलौकिक सामर्थ्यों का समुच्चय है । तान्त्रिक के पास शाप-वरदान एवं अशुभ को टालने, अहित को मिटाने, साथ ही किसी का अहित करने की भी क्षमता होती है । बहुधा ऐसा कम ही होता है कि अहित करने वाले तंत्रवेत्ता को बदले में पुरस्कार मिला हो अथवा उसे कुछ लाभ हुआ हो । नियामक सत्ता की विधि-व्यवस्था के अन्तर्गत उन्हें भी चलना होता है एवं कर्म का फल भोगना ही होता है । जो इस विद्या का सदुपयोग करते हैं, वे अध्यात्म ऊर्जा सम्पन्न होते हैं एवं दूसरों के अनिष्ट का निवारण ही करते हैं । तंत्र विज्ञान के इस पक्ष को जो उज्जवल है, प्रकाश में लाया जाना चाहिए ताकि इस विषय में संव्याप्त भ्रान्ति का निवारण हो सके ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

योग विज्ञान एवं तंत्र शास्त्र एक ही वृक्ष की दो शाखाएँ

यदि किसी जिज्ञासु को हृदय, रक्तवाही संस्थान की क्रिया पद्धति एवं उससे सम्बन्धित रोगों के कारण सम्बन्धी जानकारी प्राप्त करनी हैं, इस विद्या में निष्णान्त होना है तो उसे यह विकल्प नहीं सौंपा जा सकता कि वह मात्र उस संस्थान सम्बन्धी एनाटॉमी पढ़कर–क्रिया प्रणाली के सिद्धान्त समझकर उसका विशेषज्ञ बनने का प्रयास करें । शरीर का, हर अंग अवयव एक–दूसरे से अविच्छिन्न रूप से जुड़ा हुआ है । हरेक की कार्य पद्धति का परस्पर एक–दूसरे से तालमेल है तभी तो शरीर व्यापार चल पाता है । किसी भी विद्या की शाखा में रुचि रखने वाले को उस समूचे विज्ञान के हर पहलू को भली–भाँति समझना होगा । तंत्र शास्त्र पर भी यही बात लागू होती है । भ्रान्तिवश सामान्यजन इसे आत्मिकी से इतर एक अलग विधा मान लेते हैं और जानकारी प्राप्ति के लिये तरह–तरह के उपाय अपनाते हैं । इस भटकाव भरी यात्रा में पल्ले कुछ पड़ता नहीं, उल्टे अपना अहित और कर बैठते हैं ।

तत्वज्ञानी ब्रह्मवेत्ताओं का अभिमत है कि सारी सृष्टि जड़ व चेतन का युग्म है । दोनों के सम्मिश्रण से ही इसकी संरचना हुई है । पदार्थ विज्ञान जड़ वस्तुओं की रचना, आकृति–प्रकृति एवं प्रयोग के विधि–विधानों से सम्बन्धित एक विधा है । चेतन जगत अपने आप में पूरा एक अलग ही संसार है जिसमें गति है, जिसकी अपनी सत्ता है एवं जिसमें असीम सम्भावनाएँ निहित हैं । इसे हम अध्यात्म विज्ञान के नाम से जानते हैं । ये दोनों ही शाखाएँ अपनी भूमिका अलग–अलग रूपों में निभाती रहती है पर हैं परस्पर गुँथी हुई ।

पदार्थ विज्ञान के प्रयोग अनुसंधान ही अनेकों रूपों में आज प्रयोगशालाओं में क्रियाशील नजर आते हैं । एप्लाइड फिजीक्स, कैमिस्ट्री, न्यूकलियर साइंस जैसी अनेकानेक शाखाओं में बँटी भौतिकी यन्त्र उपकरणों की मदद से इस सदी के प्रारम्भ से अब तक मानव समुदाय को अनेकों उपलब्धियों से लाभान्वित कर चुकी है । इसके लिये उसकी जितनी सराहना की जाय कम है । अध्यात्म विज्ञान के प्रयोग अनुसन्धान एक ही यन्त्र के माध्यम से सम्पन्न होते हैं ।

यह यन्त्र है-जड़-चेतन के सम्मिश्रण से बनी मानवीकाया स्थूल शरीर जो दिखाई पड़ता है; वही सब कुछ नहीं है । गहराई से देखने पर इस काया की दो अदृश्य परतें और दृष्टिगोचर होती हैं, जिन्हें 'सूक्ष्म शरीर' एवं 'कारण शरीर' नाम से पुकारा जाता है । दृश्यमान काया का तो मात्र उदरपूर्ति, मल विसर्जन, प्रजनन आकांक्षा एवं दैनिक जीवन व्यापार भर से नाता रहता है । लेकिन अन्य दो परतों का सम्बन्ध उस अदृश्य लोक से है जिससे स्थापित कर चेतन सत्ता समष्टि का एक अंग बन जाती है एवं वे कार्य सम्पादित करने लगती है जिन्हें अद्भुत–अलौकिक माना जाता है जबकि होते वे भी सुगम एवं प्रकृति अनुशासन की मर्यादा में ही हैं ।

यह अदृश्य जगत कैसा है, कहाँ है इसकी खोजबीन भौतिकी के चश्मे से नहीं की जा सकती । इसके लिये योग एवं तंत्र विज्ञान की धाराओं को-उनके रहस्यों को मनीषी स्तर के चिन्तन के माध्यम से समझना होगा । मानवी काया, जिसे इस अदृश्य लोक का यन्त्र उपकरण बताया गया है, का सूक्ष्म कलेवर इस दृष्टि से दो भागों में विभक्त माना जा सकता है । एक मस्तिष्क के ऊर्ध्वभाग में स्थित ब्रह्मरन्ध्र, सहस्रार रूपी विद्युत्स्फुल्लिगों के निर्झर एवं आज्ञाचक्र का समुच्चय । दूसरा निचले छोर पर स्थित प्राणाग्नि का सघन पुंज जिस मूलाधार, कुण्डलिनी एवं प्राण संस्थान कहा गया है ।

काया के निचले छोर पर स्थित मूलाधार केन्द्र की अलंकारिक दृष्टि से तुलना अधःलोक–पाताल लोक से की गयी है । पृथ्वी को शेष नाग पर विराजमान माना गया है । वह कल्पना आत्मिकी की भाषा में काया पर मूलाधार या कुण्डलिनी के रूप में अवस्थित सर्पिणी के माध्यम से समझायी जाती है । यह काय–कलेवर में प्रकृति का प्रतिनिधित्व करने वाला केन्द्र है । जड़–प्रकृति के सारे क्रिया कलाप गति एवं शक्ति पर आधारित हैं । काया का दक्षिणी ध्रुव दोनों प्रयोजनों को पूरा करता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस दोनों केन्द्रों–चेतन सत्ता एवं जड़ प्रकृति को परस्पर मिलाने–दोनों के मध्य आदान–प्रदान का प्रयोजन जिस उपकरण से पूरा होता है, उसे मेरुदण्ड रूपी देवयान मार्ग के रूप में समझा जा सकता है । अधोलोक के माध्यम से निर्वाह प्रयोजन–उदर पूर्ण एवं प्रजनन जैसी गतिविधियाँ सधती हैं । काया की निरोगता, दीर्घायुष्य, जीवनी शक्ति इसी पर निर्भर है । अध्यात्म विज्ञानियों ने इन स्थूल पक्षों को जन समुदाय के लिये स्पष्ट कर चेतना विज्ञान के उन अदृश्य क्षेत्रों पर और अधिक प्रकाश डालने का प्रयास किया है जो इन केन्द्रों व इन्हें जोड़ने वाली सुषुम्ना नाड़ी प्रवाह से सम्बन्धित है ।

अनन्त सामर्थ्य सम्पन्न विश्व ब्रह्माण्ड की दैवी चेतन से सम्पर्क जोड़ने के लिए जहाँ ब्रह्मरन्ध्र एवं सहस्रार का योग विज्ञान के माध्यम से प्रयोग होता है, वह प्रकृति वैभव रूप दैत्य शक्तियों के प्रचण्ड प्रवाह से लाभ उठाने के लिये तंत्र विज्ञान का आश्रय लेना होता है । ऊर्ध्वलोक का नेतृत्व जहाँ परब्रह्म–सदाशिव करते हैं वहाँ अधोलोक की अधिष्ठात्री हैं–महाकाली कुण्डलिनी । मध्यव्यापी देवयान मार्ग दोनों के बीच सघन सम्पर्क बनाये रखने की महती भूमिका निभाता है ।

स्वर्गलोक–ऊर्ध्वलोक–मस्तिष्क में अवस्थित सहस्रार को जगाने हेतु योग साधना के विभिन्न उपक्रम हैं, जबकि पाताललोक–अधोलोग मूलाधार में अवस्थित कुण्डलिनी में स्पन्दन पैदा करने के लिए तंत्र साधना के अनेकों उपक्रम शास्त्रों में वर्णित हैं । ये दोनों मिलकर अत्मिकी की विधा को पूर्ण बनाते हैं । एक शिव है एवं दूसरी शक्ति । दोनों मिलकर सम्पूर्ण बनते हैं ।

योगी ब्रह्म परायण होते हैं, दिव्यलोक में विचरण करते हैं, भाव साधना के माध्यम से दैवी सम्पर्क स्थापित करते हैं । जबकि तान्त्रिक शक्ति के उपासक होते हैं । वे प्रकृति विद्यमान अपरिमित शक्ति स्रोतों से अपना सम्पर्क स्थापित कर कुण्डलिनी केन्द्र को जगाने व प्रकृति से आदान–प्रदान का मार्ग प्रशस्त करते हैं । इस प्रकार शरीर की ये दोनों ही सूक्ष्म परतें अदृश्य रूप में ब्रह्म एवं प्रकृति से घनिष्ठता स्थापित कर वांछित अनुदान अपने लिए प्राप्त करते, अन्तः को बलिष्ठ बनाकर अन्यान्यों को लाभान्वित करते देखे जा सकते हैं । योग एवं तंत्र के समूचे विज्ञान को इस रूप में भली–भाँति समझ कर ही साधना उपक्रमी को आरम्भ किया जाना चाहिए ।

तंत्र विज्ञानी प्रकृति के परिकर में छिपी अनेकों ज्ञात–अविज्ञात शक्तियों का अपने लिये उपभोग कर सकते हैं । माध्यम उपकरण काय–कलेवर रूपी यन्त्र ही है । ईश्वर द्वारा अनुदान रूप में मिली काया की इस प्रयोगशाला का लाभ बिना किसी लागत के उठाया जा सकता है, बशर्ते कि तप–तितीक्षा के अध्यात्म अनुशासनों को पूरी तरह निभाया गया हो एवं बदले में प्राप्त ऋद्धि–सिद्धि रूपी अनुदानों के दुरुपयोग न होने देने का समुचित आश्वासन उस दैवी सत्ता को दे दिया गया हो । आत्मशोधन की संयम साधना के बिना, कषाय–कल्मषों को हटाए बिना ये चमत्कारी विभूतियाँ हस्तगत होती नहीं । ये कुछ प्रारम्भिक शर्तें हैं । जिन्हें पूरी किए बिना न योग साधना सध पाती है, न तंत्र साधना ही सम्भव हो पाती है । योगी अपने प्रचण्ड आत्मबल के सहारे इस दीवाल को गिराकर देव अनुग्रह प्राप्त करने के अधिकारी बन पाते हैं । इसी प्रकार तान्त्रिक भी अपनी कठोर तितीक्षा द्वारा उस श्रेय को प्राप्त करते हैं जो उन्हें अभीष्ट होता है ।

दोनों ही क्षेत्रों की अपनी–अपनी मर्यादा है लेकिन दोनों परस्पर अविच्छिन्न रूप से जुड़े भी हैं । योगी शिव का–आदर्शवाद की समर्थक शक्तियों का उपासक होता है । एवं तान्त्रिक शक्ति का–भौतिक क्षेत्र की सामर्थ्यों का आराधक, जिनके माध्यम से प्रकृति सम्पदा के वैभव का लाभ व सारे परिकर को दे सकने में समर्थ बनता है दोनों ही समान महत्व के लेकिन तभी जब दोनों का मानव कल्याण हेतु उपयोग हो ।

योग और तंत्र की पृष्ठभूमि

यह सृष्टि जड़ चेतन के सम्मिश्रण से बनी हुई है । पदार्थ दृश्यमान है और सर्वत्र बिखरा पड़ा है । चेतन अदृश्य है । फिर भी दृश्य पदार्थ कलेवर में रहकर काम करता है । चेतना में इच्छा और विचारणा है । जड़ का कलेवर है और साथ ही उसके साथ जुड़ी हुई हलचल भी । हलचल पदार्थ का धर्म है पर उसकी विधि–व्यवस्था में चेतना का समुचित सहयोग रहता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

पेड़-पौधे, मिट्टी और हवा-पानी के सम्मिश्रण से उगते हैं। पर उनका अव्यवस्थित और सुव्यवस्थित होना बुद्धि स्तर के ऊपर निर्भर है। ऊसर भूमि में मात्र धूलि के कण होते हैं। प्राणियों का मल-मूत्र उसके साथ मिलता है तो उर्वरता उत्पन्न होती है। पक्षी बीज खाते और बीट करते हैं। इस बीट में ऐसे भी बीज होते हैं जो उर्वर भूमि में पड़कर उग सकें। पौधे से लेकर वृक्ष तक के रूप में विकसित हो सकें। यह जड़ पदार्थ के साथ चेतन में रहने वाले जीवन का संयोग है। माली एवं किसान अपने खेतों में विचित्र आकृतियों, गुणों की हरीतिमा उत्पन्न करते हैं। यदि इन संयोजकों का योगदान न हो तो अनगढ़ खरपतवार ही जहाँ-तहाँ दृष्टिगोचर होगा, भूमि भी कहीं उर्वर होगी, कहीं ऊसर। संजोने, संभालने की व्यवस्था न होने पर भी कुछ तो बनता बिगड़ता ही रहता है। पर वह सब होता है अस्त-व्यस्त और अव्यवस्थित।

इस गतिशीलता को मानवी काय-कलेवर में भी काम करते देखा जा सकता है। शरीर पंचतत्वों से विनिर्मित होने के कारण जड़ है। तत्वों की संरचना जड़तामय मानी जाती है। इससे बनी वस्तुएँ भी जड़ ही होनी चाहिए। पर यहाँ जड़ कहने का अर्थ निष्क्रिय नहीं समझा जाना चाहिए। गति हर पदार्थ में होती है। भले ही वह प्रत्यक्ष तथा अनुभव होती हो या न होती हो। पदार्थ की सबसे छोटी इकाई परमाणु है। परमाणु के घटकों की प्रचण्ड गतिशीलता सर्व विदित है। सौर मंडल के ग्रह उपग्रह जिस प्रकार अपनी-अपनी कक्षाओं में निरन्तर परिभ्रमण करते हैं, उसी प्रकार परमाणु के मध्यवर्ती नाभिक को धुरी मानकर उसके इलेक्ट्रोन, प्रोटोन आदि भ्रमणरत रहते हैं और उस हलचल के कारण पदार्थ में अपने-अपने ढंग और स्तर की विशेषताएँ उत्पन्न होती तथा घटती बढ़ती रहती हैं। इसी को पदार्थ की अदृश्य एवं अविच्छिन्न गतिशीलता कहते है। अणुओं का समुच्चय ही दृश्यमान पदार्थ बनता है। यहाँ कहने का प्रयोजन यह है कि जड़ पदार्थ में भी गति और क्रिया रहती है। मानवी काया भी इस सर्वव्यापी नियम के साथ बंधी हुई है। उसमें अपनी निजी सामर्थ्य है। उसके विशिष्ट उपयोग का प्रश्न अलग है। चेतना की इच्छा, आकाक्षाएँ जब प्रबल होती हैं तो काया को भी उसी प्रकार काम में लाती हैं, जैसे हाथ, चाकू, कैंची आदि का उपयोग करता रहता है।

चेतना की धुरी मस्तिष्क का मध्यवर्ती ब्रह्मरंध्र है। इसी को सहस्रदल कमल, विष्णु का शयन शेष, शिव का कैलाश कहते हैं। प्राण का-जीव का-जीवन का निवास यही है। इसी ब्रह्म सत्ता का उपयोग करके चिन्तन की अनेक धाराएँ विकसित होती हैं। आस्था, आकांक्षा, कल्पना, विचारणा एवं तत्परता के तन्तु इसी केन्द्र से झंकृत होते हैं।

योगाभ्यास, तपश्चर्या, आत्मिक प्रगति, ईश्वर मिलन, स्वर्ग, मुक्ति, ऋद्धि-सिद्धि आदि का उद्गम यहीं है। सामान्य को असामान्य, पुरुष को पुरुषोत्तम, नर को नारायण बना देने की विभूति सरिता का उद्गम इसी केन्द्र में समाहित है।

शरीर के साथ मिलकर ही प्राण समग्र बनता है। शरीर का भार, विस्तार, स्वरूप, विभिन्न अंग अवयवों के साथ मिलकर बना होता है। वे सभी अपने-अपने निर्धारित क्रिया कलापों में लगे रहते हैं। सबका संयुक्त प्रयास श्रमशीलता एवं तत्परता की उपलब्धियों में जाना जाता है। पर रहस्य उस नाभिक में है जिसमें कि काया का मूलभूत उद्गम होता है और धुरी की तरह चित्र विचित्र गतिविधियों का सूत्र संचालन करता है। यह चुम्बकीय नाभिक जननेन्द्रिय मूल में अवस्थित है। उसका आधार-अध्यात्म की भाषा में मूलाधार कहा जाता है। जिस प्रकार प्राण का ध्रुव-ब्रह्मरंध्र है, उसी प्रकार कायिक क्षमताओं और विशेषताओं को केन्द्र मूलाधार। इसे बिजली घर की उपमा दी जा सकती है। कायिक ऊर्जा यही विनिर्मित, प्रस्फुटित और प्रचण्ड होती देखी जाती है। इसी ऊर्जा भरी ज्वालमाल को कुण्डलिनी कहते हैं। मानवी सत्ता को ब्रह्मरंध्र एवं मूलाधार का समन्वित प्रस्फुरण कह सकते हैं। यही है जीवन का परिचयगम्य स्वरूप।

ब्रह्मरंध्र की योगपरक साधना आध्यात्मिक विभूतियों का सृजन करती है। मूलाधार की ऊर्जा शरीर विद्युत को प्राण में परिवर्तित करके ऐसे चमत्कार प्रस्तुत करती है। जिन्हें सिद्धियाँ कहते हैं। चमत्कारी दोनों ही होती हैं। ब्रह्मरंध्र-ब्रह्मलोक का अधिष्ठाता है। उसमें देवत्व

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भरा पड़ा है । मूलाधार की कुण्डलिनी ऊर्जा भी भौतिक क्षेत्र में ऐसे रहस्य भरे प्रयोग प्रस्तुत करती है जिसे तांत्रिक प्रचण्डता कहते हैं । यह सब साधना का प्रतिफल है । यदि उससे बचा जाय तो ऊसर भूमि जैसी स्थिति बनी रहेगी । यदि प्रयत्नरत उत्कर्ष के लिए कटिबद्ध हुआ जाय तो वैसा ही प्रतिफल सामने आता है जैसा कि किसान और माली अपने-अपने खेतों में बहुमूल्य फसलें उगाते देखे जाते हैं । साधक किसी देव दानव से कोई वरदान झटक कर नहीं लाते । वे उसी बीज को उगाते हैं जो अनेक विशेषताओं सहित अपने पास पहले से ही विद्यमान हैं ।

योग में संयम प्रधान है । इन्द्रियसंयम, मनोनिग्रह, अर्थसंयम, विचारसंयम से ब्रह्मरंध्र का दिखराव रुक जाता है और वह कौशल प्राप्त होता है जो एकाग्रता के बल पर मत्स्यवेध करने वाले अर्जुन को प्राप्त हुआ था । आवें में घड़े पकाये जाते हैं और चूल्हे पर आलू । तपश्चर्या द्वारा अपनी ही विद्यमान शक्तियों को अभ्युदय के उस स्तर तक पहुँचाया जाता है जिसमें मानवी काया के रहते देवत्व जैसी विशेषताओं का प्रकटीकरण किया जा सके ।

तंत्र एक दुस्साहस है । चिनगारी को दावानल के रूप में प्रकट करने जैसा । परमाणु के विस्फोट से प्रचण्ड ऊर्जा उत्पन्न होती है और अपने प्रभाव क्षेत्र का विस्तार करती चली जाती है । कुण्डलिनी को काली, रणचण्डी, रौद्री कहा गया है । वह दैत्यों का दमन करती है । महिषासुर, मधुकैटभ, रक्तबीज और शुंभनिशुंभ अपने भीतर भी विद्यमान हैं और बाहर भी । वे जब साधने-सधाने से नरम नहीं पड़ते तो फिर हंटर फटकारने, आयुध चमकाने के अतिरिक्त और कोई मार्ग में नहीं रह जाता । पशु प्रवृत्तियों को ज्ञान चर्चा अथवा धर्मोपदेश से वशवर्ती नहीं किया जा सकता । उनके लिए सज्जनता कोई मूल्य महत्त्व नहीं रखती । वे प्रताड़ना की भाषा को ही समझते हैं । देवताओं को पूजा से प्रसन्न किया जा सकता है किन्तु दैत्य तो बलि चाहते और स्वयं भी प्रहार के आगे सिर झुकाते हैं । यही तंत्र है । योग और तंत्र की अपने-अपने स्थान पर समुचित आवश्यकता भी है और उपयोगिता भी ।

कुण्डलिनी योग का स्वरूप और प्रयोग

योग का अर्थ है मिलना । दो और दो का योग चार होता है । इसी प्रकार आत्मा और परमात्मा की मिलन प्रक्रिया सम्पन्न करने की विधि व्यवस्था को योग कहा जाता है । बिजली का एक तार अधूरा है ऋण और धन विद्युत की दोनों धाराएँ जब दो तारों के माध्यम से मिलती हैं तो उनका शक्ति चमत्कार तुरंत दीखने लगता है । एक तार एक प्रकार से निरर्थक ही है । बिजली से कोई कार्य तभी सम्पन्न हो सकेगा जब दोनों तार मिल सकें । जीव अकेला किसी प्रकार पेट और प्रजनन से सम्बन्धित समस्याएँ भी बड़ी कठिनाई से पूरी कर पाता है । उसी प्रकार ईश्वर भी अपनी अव्यक्त चेतना सत्ता का चमत्कार दिखा सकने में जीव के साथ सम्पर्क हुए बिना एक प्रकार से असमर्थ ही रहता है । बछड़े को गाय की आवश्यकता है ताकि उसे दूध मिले । गाय को बछड़े की आवश्यकता है ताकि उसके थनों का भार हलका हो जाय । गाय और बछड़े के मिलन में दोनों को आनन्द तो है ही । जीव और ईश्वर को मिलाने वाला योग साधना जहाँ बिजली के तारों की तरह शक्ति का उद्भव करती है वहाँ उसके द्वारा उपलब्ध होने वाले आनन्द की गरिमा भी कम नहीं है ।

योग साधन का दूसरा पहलू यह है कि भौतिक सिद्धियों और आत्मिक विभूतियों की समन्वयात्क उपलब्धि का मार्ग प्राप्त करना । आमतौर से मनुष्य वासना, तृष्णा और अहंता की पूर्ति के लिए विविध विधि क्रिया-कलापों में निरन्तर संलग्न रहते हैं उन्हें आत्म-कल्याण के लिए ध्यान देने का अवकाश अवसर ही नहीं मिलता । दूसरी ओर वे व्यक्ति हैं जो आत्म-कल्याण की बात सोचते हुए यह भूल जाते हैं कि यह जीवन भौतिक और आत्मिक दोनों ही तत्वों से मिलकर बना है । शरीर पंच भौतिक है तो आत्मा दिव्य सत्तात्मक । दोनों से मिल जुलकर ही यह जीवन-क्रम चल रहा है, सो प्रगति के लिए दोनों ही पक्ष आवश्यक हैं । दोनों पर ही समान ध्यान दिया जाय । एक हाथ,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

एक टाँग, एक कान, एक नथुना, एक फेफड़ा आधे शरीर में लकवा, इस स्थिति में एक पहिये की गाड़ी ठीक तरह लुढ़क नहीं सकती । एकांगी प्रगति भी उसी तरह की है । व्यष्टि और समष्टि की उभय पक्षीय प्रगति आवश्यक है । मनुष्य और समाज, आचार और व्यवहार दोनों का ताल-मेल ठीक तरह बैठना चाहिए, यही सन्तुलित एवं संक्षिप्त योग का दार्शनिक पक्ष कहा जा सकता है ।

योग के साधनात्मक पक्ष के भी दो पहलू हैं । एक को आगम दूसरे को निगम, एक को वाम मार्ग दूसरे को दक्षिण मार्ग कहते हैं । इन्हीं का तंत्र और योग के नाम से भी उल्लेख किया जाता है गायत्री और सावित्री विद्या इसे ही कहते हैं । तंत्र पक्ष का कहना यह है कि शरीर और मन में शक्ति तत्व भरा पड़ा है, साधना के द्वारा उसी का जागरण और विकास किया जाना चाहिए इससे साधक की भौतिक समर्थता बढ़ेगी और उनके साथ ही आत्मिक उत्कर्ष की भी सम्भावना बढ़ चलेगी । इस पक्ष ने सारा जोर कर्मकाण्डात्मक शरीर और मन तथा उपकरणों के माध्यम से की जाने वाली साधनाओं पर बल दिया है । दूसरा पक्ष दक्षिण मार्ग का है उसने भौतिक प्रगति की उपेक्षा की है और आत्मिक प्रगति को ही मूल माना है ।

दोनों के समन्वय की एक सर्वश्रेष्ठ साधना विधि है- कुण्डलिनी जागरण और योग तथा तंत्र दोनों के सिद्धान्त और प्रयोजनों को ठीक प्रकार सम्मिश्रण किया गया है । इसमें तान्त्रिकों द्वारा अभीप्सित भौतिक उन्नति की जितनी सम्भावना है उतनी ही दक्षिण मार्गी ब्रह्मवादियों का भी प्रयोजन उससे पूरा होता है । इन दोनों पक्षों के समन्वय को ही सर्वांग पूर्ण योग साधना कह सकते हैं । कुण्डलिनी योग दृष्टि से समन्वयात्मक और सर्वांग पूर्ण योग साधन कहा जा सकता है ।

नीचे दोनों पक्षों के तर्कों का प्रतिपादन करेंगे । तंत्र पक्ष के प्रतिपादन यह है कि शरीर स्वयं एक अद्‌भुत शक्ति भण्डार है । नित्य ही उसकी अपरमित शक्ति अनावश्यक रूप में खर्च होती रहती है इसे यदि बचा लिया जाय और अभीष्ट उच्च प्रयोजनों में लगा दिया जाय तो साधना का बहुत बड़ा प्रयोजन उतने भर में ही सध सकता है ।

नृतत्व विज्ञान के अनुसार मनुष्य की अपार शक्तियों का व्यय तीन प्रकार से होता है । प्रथम उन कार्यों में जो जीविका उपार्जन, परिवार व्यवस्था, मनोरंजन, नित्यकर्म, जन-सम्पर्क आदि की स्थूल जीवनयापन सम्बन्धी प्रयोजनों के लिए करने पड़ते हैं । दूसरे उन कार्यों में जो मस्तिष्क के द्वारा सम्पन्न होते हैं-जैसे पढ़ना, लिखना, सोचना, समझना, कहना, सुनना, जैसे रचनात्मक और चिन्ता, निराशा, घृणा, ईर्ष्या, क्रोध, भय, शोक, उद्वेग, संशय जैसे आवेशात्मक । इस प्रकार मस्तिष्क द्वारा शक्तियों का बहुत बड़ा भाग खर्च हो जाता है । इन्द्रिय भोग जो चाहे मनोरंजन के लिए किये गये हों चाहे किसी उपयोगी प्रयोजन के लिये दोनों पक्षों पर प्रभाव डालते हैं । शरीर और मस्तिष्क की दोनों ही शक्तियों का खर्च उनके द्वारा होता है । तीसरा मार्ग शक्तियों के व्यय का है स्वसंचालित नाड़ी संस्थान । शरीर की कुछ क्रियाएँ अनायास ही होती रहती है जिन पर हमारा प्रत्यक्षतः कोई नियन्त्रण नहीं होता । रक्त संचार, हृदय की धड़कन, श्वांस, प्रश्वांस-क्रिया, मांस पेशियों का आकुलन, प्रकुलन, हारमोन, प्रक्रिया नाड़ी-संस्थान की सक्रियता, मस्तिष्क की सम्वेदनाऐं, स्वेद आदि मलों का विसर्जन पाचन प्रक्रिया आदि कितने ही कार्य शरीर के भीतर अपने आप होते रहते हैं और हमें उनका पता तक नहीं चलता । इसी प्रकार अचेतन मस्तिष्क पर भी अपना सीधा नियन्त्रण नहीं होता किन्तु उस भाग द्वारा भी इतनी अधिक तीव्र स्फुरणाऐं, प्रेरणायें प्रादुर्भूत होती हैं कि जीवन का स्वरूप ही एक प्रकार से उन पर निर्भर रहता है । उस अचेतन मन से उठने वाले प्रवाह इतने तीव्र होते हैं कि शरीर और मन इच्छा होते हुए भी उन पर नियन्त्रण नहीं कर पाता और लगता रहता है कि कोई अज्ञात शक्ति बल पूर्वक उसे कहीं घसीटे लिये जा रही है ।

इस प्रकार शक्तियों के व्यय के तीन मार्ग हुए (१) शरीर, (२) मस्तिष्क, (३) स्वसंचालित नाड़ी मंडल अथवा अचेत मन । इन तीनों में जीवनी शक्ति के व्यय का अनुपात एक,दस,और सौ है । मान लीजिए दिन रात काम करने में एक सेर शक्ति खर्च होती है तो मन के द्वारा दस सेर व्यय होगी और स्वसंचालित नाड़ी संस्थान सौ सेर खर्च करेगा यह एक औसत अनुमान है । व्यक्ति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विशेष की परिस्थितियों के अनुसार इसमें हेर-फेर भी हो सकता है पर सामान्यतया यही अनुपात शक्तियों के खर्च होते रहने का रहता है ।

तंत्र पक्ष का प्रतिपादन यह है कि जिस प्रकार मौन, ब्रह्मचर्य, उपवास, एकांत सेवन, पूर्ण विश्राम आदि से शरीर को विश्राम देकर उसकी शक्ति का व्यय बचाया जा सकता है और खोये हुए स्वास्थ्य को सुधारा जा सकता है मन की प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि द्वारा स्थिति प्रज्ञ, परमहंस स्थिति, अनासक्ति व्रत्व दृष्टि आदि के द्वारा मानसिक तनाव दूर करके मस्तिष्कीय काया कल्प किया जा सकता है उसी प्रकार अचेतन नाड़ी मन एवं स्वसंचालित नाड़ी संस्थान पर नियन्त्रण प्राप्त किया जा सके तो शक्तियों को क्षरण असाधारण रूप से बचाया जा सकता है और उस बचत पूँजी से इतना सामर्थ्यवान बना जा सकता है जिसे शतगुणी कृत कहा जा सके । अर्थात् एक व्यक्ति से सौ व्यक्तियों जितनी समर्थता संग्रह हो सके और उसका अभीष्ट प्रयोग करके निर्धारित दिशा में सौ गुनी अधिक प्रगति की जा सके ।

दक्षिण मार्गी साधना पक्ष का प्रतिपादन यह है कि यह तो स्थूल शक्तियों की-पंच भौतिक क्रिया-कलाप की सीमा मात्र हुई । इस प्रकार जो शक्ति संग्रह होगा वह उसी स्थूल स्तर का होगा और उससे जो कार्य किया जा सकेगा या लाभ उठाया जा सकेगा उससे सांसारिक एवं दृश्य प्रयोजनों की ही पूर्ति होगी । जो सिद्धियाँ उपलब्ध होगीं वे अपना कार्यक्षेत्र इस दृश्य जगत को प्रभावित करने तक ही सीमित रहेगी । चूँकि दृश्य जगत की हर वस्तु हर आकृति और हर परिस्थिति स्वयं में ही अति चंचल है । उनसे परिवर्तन अपने आप ही होते रहते हैं । यदि योग उपलब्ध शक्तियों से मात्र इस अति चंचल और अति परिवर्तनशील जगत से ही कुछ घटनाओं की उलट-पुलट करना-बिगाड़ना सुधारना-सम्भव हो सका तो यह चमत्कार जैसा दिखाई भले ही पड़े पर उससे कुछ वास्तविक और स्थिर प्रयोजन सिद्ध नहीं होता ।

इन दोनों पक्षों का दृष्टिकोण अपने-अपने ढंग से सही है । स्थूल शरीर में असीम शक्ति भरी पड़ी है और उसे हटयोग, तंत्रयोग, क्रिया योग आदि के माध्यमों से जाग्रत करके असीम भौतिक लाभ उठाया जा सकता है । दूसरा पक्ष भी सही है कि आत्मा की सामर्थ्य सर्वोपरि है । उसमें स्थिरता भी है और उत्कृष्टता भी फिर उसी का आश्रय क्यों न लिया जाय । चिरकाल से चले आ रहे इन अतिवादी पक्षों की एक समन्वित साधन पद्धति का निर्माण निर्धारण किया गया था वह है कुण्डलिनी योग । इसका दर्शन और साधना उपक्रम ऐसा है जिससे दोनों ही आवश्यकताओं की पूर्ति होती है और भौतिक तथा आत्मिक प्रगति के द्वार समान रूप से खुल जाते हैं ।

कुण्डलिनी योग के अनुसार इस शरीर में दो केन्द्र दो शक्तियों के प्रतीक स्थल हैं । एक प्रकृति का एक परमेश्वर का । एक जीव का दूसरा आत्मा का । इन स्थलों में से एक को महा सर्पिणी कहते हैं । दूसरे को महासर्प । वस्तुतः यह दो पृथक सत्ताऐं ही नहीं हैं जैसा कि माना जाता है वरन् एक ही शक्ति के दो सिरे हैं । सर्प की पूँछ और फन दो स्थान पर दीखते हैं और उनके स्वरूप तथा गुण भी प्रथक प्रथक हैं पर गहराई से विचार करने पर एक ही सर्प आत्मा के दो अवयव मात्र रह जाते हैं ।

सर्प के प्राण के पृथक न पूँछ का अस्तित्व है न फन का । दोनों की सक्रियता एवं सजीवता सर्प के जीवन तत्व पर ही अवलम्बित है । इसी प्रकार मल और मूत्र स्थान के मध्य एक छोटा सा त्रिकोण परमाणु अवस्थित है, जिसे कूर्म या मूलाधार कहते हैं । इस स्थान पर एक भौतिक विद्युत से सर्वथा भिन्न-आत्मतड़ित का निवास है इसे महा सर्पिणी कहते हैं । इसे चाहें तो पूँछ कह सकते हैं । इसका दूसरा सिरा मस्तिष्क के बीचों बीच ब्रह्म रंध्र में है । जहाँ एक परमाणु गोल न होकर इस प्रकार है मानो उसके चारों ओर आरी जैसे छोटे-छोटे दाँत हों । इसे सहस्रार कमल कहते हैं । यहाँ महा सर्प का निवास है । इसे चाहें तो फन कह सकते हैं । कुण्डलिनी महा शक्ति इन दोनों के समन्वय से बनती है । उसे सर्प का प्राण कह सकते हैं ।

फुलझड़ी को दियासलाई से जलाने पर चिनगारियाँ उड़ती हैं । इसी प्रकार इन दोनों शक्ति केन्द्रों के मिलन से एक दिव्य धारा प्रवाहित होती है जिसे कुण्डलिनी शक्ति कहते हैं । इसे भौतिक और आत्मिक शक्तियों और सिद्धियों का बीज माना जाता है । इस प्रसुप्त शक्ति बीज में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जितनी जितनी स्फुरणा और जागृति उत्पन्न होती जाती है; साधक, उतना ही समर्थ बनता चला जाता है। इस जाग्रति के स्तर के अनुरूप ही सिद्ध पुरुषों का स्तर होता है।

इन दो शक्ति केन्द्रों को पिण्ड रूपी विश्व के दो ध्रुव माना जा सकता है। पृथ्वी के दो ध्रुव हैं, एक उत्तर में दूसरा दक्षिण में। वैज्ञानिक कहते हैं कि इस विश्व में जितनी भी जड़ चेतन शक्तियाँ विद्यमान तथा गतिशील हैं उन सबके मूल केन्द्र यह दो ध्रुव ही है। यही उनके मूल उद्गम है। जड़ शक्तियाँ दक्षिण ध्रुव में और चेतन शक्तियाँ उत्तर ध्रुव में सन्निहित हैं। इन दो ध्रुवों को इस विश्व शरीर का हृदय एवं मस्तिष्क कहा जाता है। हृदय अर्थात् शरीर को जीवित रखने वाला रक्त यन्त्र। मस्तिष्क अर्थात् चेतना को स्फुरित करने वाला केन्द्र। उत्तरी ध्रुव को मस्तिष्क कहें तो दक्षिण ध्रुव को हृदय कहना पड़ेगा। इस हृदय को संचालक मोटर मूलाधार में कुछ दूर हटकर लगी है। इस प्रकार प्रकृति की प्रतिनिधि शक्ति को महा सर्पिणी और पुरुष के प्रतिनिधि को महा सर्प कह सकते हैं। महासर्प सहस्र दल कमल में और महा सर्पिणी मूलाधार में निवास करती हैं दोनों का युग्म जहाँ लिपटा पड़ा है उसे मेरुदंड कहते हैं। दूसरी तरह इसी बात को यों भी कहा या समझाया जा सकता है कि एक कुण्डलिनी महाशक्ति मस्तिष्क के मध्य विन्दु में अपना सिर-मेरुदण्ड में धड़ और लिंग भूल में अपनी पूँछ रखे हुए इस शरीर और प्राण के सम्मिश्रित जीवन साम्राज्य पर अपना अधिकार किये हुए पड़ी है। इसमें जितनी अद्भुत सामर्थ्य भरी पड़ी है उसकी तुलना में समस्त बिजली घर मिलकर भी कम पड़ते हैं। बिजली घरों में केवल जड़ विद्युत ही रहती है जो किसी चेतन व्यक्ति के नियन्त्रण में ही उत्पन्न होती तथा प्रयोग की जा सकती है। कोई सजीव संचालक न हो तो बड़े से बड़ा बिजली घर बेकार हो जायेगा। पर शरीर का यह कुण्डलिनी विद्युत् भंडार जड़ और चेतन दोनों प्रकार से संयुक्त सम्मिश्रित होने के कारण अलौकिक ही कहा जायगा। उसकी जैसी अद्भुत सम्भावनाऐं संसार के किसी भी मानव कृत बिजली घर में नहीं पाई जा सकतीं।

आत्मा और परमात्मा का-जड़ और चेतन का-प्रकृति और पुरुष का मिलन होने में योग साधना है। साधना के क्षेत्र में इसे महा सर्प और महा सर्पिणी का संयोग सम्भोग कहा जाता है। वियोग की स्थिति में दोनों ही निरर्थक और निष्क्रिम रहते हैं जब मिलन का अवसर उत्पन्न होता है तो आग और बारूद के मिलन की तरह एक ऐसा विस्फोट होता है जिससे सारी जीवन धरा ही हिल उठती है और प्राचीन के स्थान पर सब कुछ नया प्रस्तुत हो जाता है। इस मिलन को संयोग इसलिये कहते हैं कि जैसे मैथुन में अपने ढंग का एक विलक्षण आकर्षण, उत्साह, मैथुन एवं आनन्द रहता है वैसा ही दोनों सत्ताओं का जब कभी मिलन होगा तो एक असाधारण आन्तरिक हलचल उत्पन्न होगी और कुछ अनन्य सन्तोष भरा उल्लास अनुभव होगा जिसकी मैथुन के अतिरिक्त और किसी सांसारिक अनुभूति से तुलना नहीं की जा सकती। संयोग शब्द जैसे काम-सेवन के अर्थ में प्रयुक्त होता है उसी प्रकार उसे आत्मा और परमात्मा के-महा सर्प और महा सर्पिणी के मिलने के सम्बन्ध से भी व्यक्त किया जा सकता है।

यह कुण्डलिनी जागरण योग साधना का केन्द्र बिन्दु है। योग के अनेक मार्ग हैं। राजयोग, हठयोग, लययोग, प्राणयोग, ऋजुयोग, नादयोग, स्वर योग, मन्त्रप्रयोग, भक्तियोग, ज्ञानयोग, कर्मयोग, तंत्रयोग, यह बारह प्रसिद्ध हैं। यों उनकी संख्या ४ तक गिनाई गई है। इन सबका मूल प्रयोजन अपने-अपने ढंग से कुण्डलिनी जागरण करना ही है।

इसी तथ्य को शास्त्रकारों ने स्थान-स्थान पर प्रतिपादित किया है।

अत्र शुभ्र सहस्रारे पूर्णेन्द्र मध्य विस्फुरितम्।
तदन्तरे परं शून्य निसर्गाधो व्यवस्थितम् ॥
परां शक्ति जगदयोनि कलाषोडश्य धोमुखी।
तत्र कुण्डलिनी शक्ति कोट्यादित्य प्रभामयीः ॥

-कुलार्णव

सहस्रार कमल के बीच में परम शून्य है। वहाँ परा शक्ति जगद्योनि, मूलाधार निवासिनी अधोमुखी, षोडश कलावंती, कोटि सूर्य को प्रभावती कुण्डलिनी शक्ति बिहार करती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुण्डलिनी योग साधन में दोनों प्रकार की शक्तियों का समन्वय है शरीर, मन और स्वसंचालित नाड़ी संस्थान में उत्पन्न होने वाली भौतिक शक्तियों का भी इसमें उतना ही उपयोग है जितना कि आत्मा, अन्तःकरण और प्राण के दिव्य तत्वों का। ऊर्ध्व अवस्थित सहस्रार चक्र आत्म शक्ति और अधःवासी मूलाधार चक्र भौतिक शक्तियों का प्रतिनिधि केन्द्र है। इन दोनों को मेरुदंड एवं इड़ा पिंगला सुषुम्ना के माध्यम से मिलाकर चलने वाली तथा सिद्धियों विभूतियों का पथ प्रशस्त करने वाली।

सन्तुलन के दो पक्ष हैं–एक अर्जन दूसरा विसर्जन। पेट मुख के द्वारा ग्रहण करता है और जो अनुपयुक्त है उसे मल मार्ग से विसर्जित कर देता है। नौकरों की भर्ती और तरक्की भी होती रहती है और जो अयोग्य अपराधी सिद्ध होते हैं उन्हें मुअत्तिल एवं वर्खास्त भी किया जाता रहता। श्रेष्ठता का सम्मान परिपोषण और निकृष्टता की भर्त्सना प्रताड़ना भी होती रहती हैं। सज्जनों को अधिकार सौंपे जाते और गुणानुवाद होता हैं। दुर्जनों को विरोध असहयोग ही नहीं सहना पड़ता जेल, मृत्युदण्ड जैसे त्रास भी मिलते है। सृष्टा की विधि–व्यवस्था में इसी दृष्टि से स्वर्ग नरक का विधान है। समदर्शी का तात्पर्य जैसे को तैसा समझना है। गुड़ गोबर को एकभाव खरीदना बेचना नहीं।

अध्यात्म साधना में कषाय–कल्मषों से जूझना और निरस्त करना पड़ता है। साथ ही सत्यप्रवृत्तियों का उन्नयन सम्बर्धन भी सन्तुलन इसी प्रकार बनता है। लोक व्यवहार में भी यह उभयपक्षीय विधि व्यवस्था कार्यान्वित की जाती है। इन्जन उलटा भी चलता है और सीधा भी। बिजली ए.सी., डी.सी. करेन्टों में से एक खींचता है और दूसरा फेंकता है। तप द्वारा प्रतिमा को जगाया झकझोरा जाता है और योग द्वारा उसे उपयुक्त कार्य में नियोजित किया जाता है।

आत्म चेतना के धनी जहाँ श्रेष्ठता को आकर्षित संगठित और समुन्नत बनाते है वहाँ उसका एक कार्य यह भी है कि दुष्टता को, विगठित, दुर्बल बहिष्कृत और दण्डित करे। यह सन्तुलन बन पड़ने पर पदार्थो और प्राणियों की अधोगामी प्रवृत्ति निकृष्टता की दिशा में ही वह चलेगी और जो भी चपेट में आवेगा उसे साथ में लपेटती घसीटती चलेगी। इसलिए प्रवाह के लिए जहाँ नहरें बनाई जाती हैं वहाँ दूसरी ओर रोकथाम करने वाले बाँध भी बाँधे जाते हैं। न श्रेष्ठता की अवहेलना हो सकती है और न दृष्टता की पूजा प्रतिष्ठा। सन्तुलन ही जीवन है। उसी के साथ प्रसन्नता और प्रगति जुड़ी हुई है। यह सिद्धांन्त भौतिक और आत्मिक जगत में समान रूप से लागू होता है।

मनीषियों ने जितना जोर सेवा साधना पर दिया है उतना ही अवाँछनीयता की भर्त्सना और प्रताड़ना पर भी। यह नीति अपने ऊपर भी लागू होती है दूसरों पर भी। दुष्कर्मों के लिए प्रायश्चित का विधान है और अनाचार के दमन का भी। रामराज्य की स्थापना से पूर्व असुरता दमन की आवश्यकता पड़ी थी। विशाल और सुसंस्कृत भारत के निर्माण में प्रथम भूमिका कुरुक्षेत्र में धर्मयुद्ध लड़ना पड़ा था। आमन्त्रण और निष्कासन की अपनी–अपनी उपयोगिता है। रसोई घर और स्नानागार की तरह शौचालय और कूड़ेदान भी चाहिए। कचरे को गलाकर उर्वरता का आधार खाद सड़ाना पड़ता है। दोनों ही पक्षों का महत्व समान है। इनमें से एक को भी नहीं छोड़ा जा सकता और न किसी एककी से समग्र प्रयोजन सिद्ध हो सकता है।

योग में परब्रह्म की महत्ता के साथ आत्म–चेतना को संयुक्त किया जाता है। ताप से तपाकर सोने के साथ मिले हुए घटिया को जलाकर उसे खरा बनाया जाता है। दोनों कार्य एक दूसरे में विपरीत भर प्रतीत होते है। पर हैं एक दूसरे के पूरक। धुलाई के बाद रंगाई होती है। भट्टी में गलाई किये जाने के बाद ढलाई वाला साँचा अपना प्रयोजन पूरा करता है।

न समाज एकपक्षीय है न व्यक्ति। न लोक अपने आप में पूर्ण है न परलोक। दोनों के संयोग से ही सुयोग बनता है। आत्म विद्या के प्रयोक्ता तथ्यों को समझते हैं और दो पैरों से एक के बाद दूसरा उठाते हुए निश्चित लक्ष्य तक पहुँचते हैं। विश्वामित्र ने राम लक्ष्मण को बला अतिबला विद्या सिखाई थी। इन्हीं को सावित्री और गायत्री कहते हैं। सावित्री में संशोधन है और गायत्री में अभिवर्धन संशोधित विषों से ही अमृतोपम रसायनें बनती है। आघात सहकर ही वाद्य यन्त्र झंकृत होते हैं। सरकस के जानवर रिंग मास्टर के हण्टर नचाने पर अपना प्रशिक्षण पूरा करते है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

तंत्र और योग का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है ! दुरुपयोग से तो अमृत भी विष हो सकता है । उपयोगी यन्त्र चलाने वाली बिजली, गलत ढंग से प्रयोग किये जाने पर प्राण घातक बन सकती है । तंत्र की निन्दा तभी है जब वह हेय प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त किया जाय उसे स्वार्थ, लोभ एवं दर्प में निमित्त कार्यान्वित किया जाय । अन्यथा मवाद निकालने वाला आपरेशन और घाव भरने का मरहम उपचार अपने–अपने अवसर पर अपने–अपने स्थान पर उपयोगी एवं प्रशंसनीय ही कहे जायेंगे ।

तंत्र दमन प्रधान है यह आत्म–दमन, मनोनिग्रह भी हो सकता है और दुष्टता का पद दलन भी । देव मन्दिर जितने उपयोगी हैं उतने ही जेलखाने और फाँसी पर भी । दोनों ही समाज की आवश्यकताओं को पूरा करते हैं ।

तंत्र अपने आप में विशुद्ध विज्ञान है । हेय वह स्वयं नहीं उसका दुरुपयोग है । गणेश सद्बुद्धि का सम्वर्धन करते हैं तो कार्तिकेय असुरता का दमन । सरस्वती सदबुद्धि की देवी है और दुर्गा महिषासुर मर्दिनी । दोनों के वाह्य स्वरूप में अन्तर प्रतीत होता है पर वस्तुतः उनकी दिशाधारा मिलकर उस संगत की भूमिका पूरी करती है जो अवतार का मूल प्रयोजन है । धर्म की स्थापना के लिए अधर्म का नाश भी आवश्यक माना गया है । समय की आवश्यकता कभी नारद के भक्ति प्रचार को आमन्त्रित करती है तो कभी परशुराम के कुठार को । दोनों ही अपने आप में अपूर्ण हैं धर्मतंत्र और राजतंत्र का समन्वय ही सुव्यवस्था बना पाता है ।

तंत्र की व्याख्या में दमन को प्रमुखता दी गई है । पशु प्रवृत्तियाँ अनुनय विनय को मान्यता नहीं देतीं, उनके लिए भय ही एकमात्र सूत्र संचालक हैं । मनुष्यों में आमतौर से पशुता अधिक और मनुष्यता स्वल्प मात्रा में पाई जाती है । इसलिए उसके लिए जितना आवश्यक शास्त्र है उतना ही शस्त्र भी । द्रोणाचार्य और गुरु गोविन्दसिंह ने दोनों को साथ–साथ ले चलने का प्रयत्न और निर्वाह किया था ।

चाणक्य ने अपना कार्य क्षेत्र अक्षुण्ण रखते हुए भी चन्द्रगुप्त को दिग्विजय के लिए प्रशिक्षित किया था । समर्थ गुरु रामदास की तपश्चर्या में शिवाजी को उत्साहित करके घमासान करने के लिए उठा देने में कोई विक्षेप नहीं पड़ा । कृष्ण सारथी रहे पर उन्होंने अर्जुन को गाण्डीव का अनवरत प्रयोग करने के लिए आदेश दिया । योग की अपनी सीमा मर्यादाएँ अक्षुण्ण रखनी चाहिए । पर उसे समय की आवश्यकता देखते हुए तंत्र को सजीव एवं सुगठित होने देना चाहिए ।

शास्त्रों की विशिष्टता हर किसी के मस्तिष्क पर छाई हुई है । आयुधों का निर्माण करने में पदार्थ विज्ञान की कलाएँ प्रधान रूप से नियोजित है । फिर भी यह नहीं कहा जा सकता है कि प्रयोक्ताओं में किसका मनोरथ पूरा होगा । क्योंकि विजय और पराजय का परिणाम क्या निकला इस पर सब कुछ निर्धारित है । विजयी पराजित से भी अधिक घाटे में रह सकते हैं और पराजित के हाथ वह पूँजी लग सकती है जिससे वह संकट का समाधान माना जाय और शान्ति एवं प्रगति का श्रेय प्राप्त करे ।

सब कुछ पदार्थ सम्पदा और अस्त्रों की बहुलता पर ही निर्भर नहीं है । किसने क्या रणनीति अपनाई और कितनी दूरदर्शिता दिखाई, इस तथ्य पर युद्ध का वास्तविक परिणाम निर्भर है । किसने कितने अधिक प्राण हरण किये यदि इसी पर विजय निर्भर रही होती तो नाजी सारी दुनिया के अधिपति बनकर रहे होते । वास्तविकता यह है कि किसे अदृश्य की–परिस्थितियों की–अनुकूलता मिली और किसने सही चाल चली और हारी बाजी जीती । इस स्तर का कौशल उपलब्ध करने के लिए अन्तःप्रेरणा और वातावरण की अनुकूलता आवश्यक है । इस प्रयोजन की सिद्धि में तंत्र की महती भूमिका हो सकती है ।

युद्ध मानवी भविष्य का प्रश्न चिन्ह तो है । पर उसका निर्णायक या निर्धारणकर्त्ता नहीं । इसके लिए भाव सम्वेदना धर्म धारण की लोग मानस में प्रतिष्ठापना के लिए अध्यात्म का योग पक्ष तत्वज्ञान अपनी भूमिका निभा सकता है किन्तु वातावरण को उलटकर सीधा करने की क्षमता के लिए तंत्र का आश्रय लेना पड़ेगा ।

बँगला देश की स्वतंत्रता में सैन्य शक्ति ने युद्ध कौशल में वह कार्य नहीं किया जो अदृश्य वातावरण के द्वारा नई राह पकड़ लेने के कारण सम्भव हुआ । जापान और जर्मनी को हर दृष्टि से दीन दुर्बल बना दिये जाने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के उपरान्त भी वे कुछ ही समय में जिस प्रकार उभरे उसे बौद्धिक तारतम्य बिठाकर सिद्ध नहीं किया जा सकता। इन पुनरुत्थान के पीछे अदृश्य शक्तियों का हाथ रहा है। भारत की स्वतंत्रता का इतिहास मात्र जेल यात्रियों के कारण ही इतनी आश्चर्यजनक सफलता के रूप में नहीं ढला। वरन् उसके पीछे ऐसी अदृश्य शक्तियाँ घटनायें एवं परिस्थितियाँ रही हैं जिससे पर्वत जैसा कठिन कार्य सरल एवं हलका हो गया। दासप्रथा, जमींदारीप्रथा, आदि का जिस प्रकार उन्मूलन हुआ, उसमें आन्दोलनकर्ताओं के प्रयासों को ही सब कुछ नहीं कहा जा सकता। बहते हुए विचार प्रवाह और उठते हुए उभार ने भी इन प्रसंगों में अपना योगदान किया है। कोई चाहे तो इसे अदृश्य का निर्धारण कह सकता है। इससे भी गहराई में उतरा जाय तो उसे अदृश्य का अनुकूलन भी माना जा सकता है। इस प्रकार की उथल-पुथल करने में अध्यात्म का जीवट काम करता है उसे यदि तंत्र प्रक्रिया कहा जाय तो अनुचित न होगा।

धर्म शिक्षा में कुछ मनुष्यों को किसी सीमा तक सज्जन बनाया जा सकता है पर उन पर छाई हुई दुष्प्रवृत्तियाँ इतने भर से निरस्त हो जायगी यह नहीं कहा जा सकता। उसके लिए चेतन मन को नीति निष्ठ एवं सामाजिकता के आधार पर उस स्तर का नहीं बनाया जा सकता, जिसकी कि आवश्यकता एवं अपेक्षा है। इसके लिए मानवी अचेतन को ही नही अदृश्य वातावरण को भी झकझोरना पड़ेगा। उसके लिए विचारणा ही सब कुछ नहीं हो सकती। इस सन्दर्भ में ऐसी शक्ति का उद्भव होना चाहिए जो लोक मानस की आस्था, आकाँक्षा, विचारणा, प्रवृत्ति एवं विधि व्यवस्था में जमीन आसमान जैसा अन्तर कर सके। इसके लिए तंत्र उपक्रम ही कारगर हो सकता है क्योंकि उसी में भक्ति और शक्ति का समन्वय है।

अदृश्य जगत और व्यापक वातावरण की तरह ही प्रतिभाओं और व्यक्तित्वों का भी निजी क्षेत्र में महत्व है। उनकी गलाई और ढलाई के लिए जितनी प्रचण्ड ऊर्जा चाहिए उतनी आध्यात्म का तंत्र पक्ष ही उत्पन्न कर सकता है। जनसंख्या नहीं, प्रतिभाएँ ही गतिविधियों, परिस्थितियों का आधारभूत कारण रही हैं। उनकी प्रकृति बदलने विशेषतया अवांछनीयता से उत्कृष्टता की दिशा में उन्मुख करने के लिए मात्र स्वाध्याय सत्संग ही काम नहीं दे सकता। उन पर ऐसा दबाव भी पड़ना चाहिए जिससे आकृति बदलती हुई दृष्टिगोचर हो सके।

तंत्र की सीमा व्यक्तिगत लोभ से द्वेष से आवृत होकर किसी को त्रास देना नहीं है। ऐसी रीति-नीति तो क्षुद्र स्तर के लोग ही अपनाते हैं! अपना दर्प दिखाने, बाल बुद्धि लोगों को चमत्कृत करने के कुछ कौतुक इस आधार पर दिखाये जा सकते हैं। प्रतिशोध लिये जा सकते हैं और दण्ड दिये जा सकते हैं। सताया और भयभीत भी किया जा सकता है। पर इतने भर के लिए तंत्र जैसी महती शक्ति का उपार्जन उपयोग करने की क्या आवश्यकता? यह कार्य तो बाहुबल, छद्म या आततायियों के सहयोग से भी हो सकते हैं। जो कार्य इतने सुगम तरीके से हो सकते हों उनके लिए बाजीगरी एवं धूर्तों का कुचक्री प्रयास ही पर्याप्त हो सकता है। उसके लिए क्यों तो शक्ति उपार्जित की जाय और क्यों इतने उथले रूप में बर्बाद किया जाय?

तंत्र अध्यात्म का भौतिक पक्ष है। योग उसका अन्तरंग पक्ष। दोनों की तुलना एवं समता प्रायः एक जैसी है। योगी तपस्वी होना जितना कठिन है उससे कम नहीं अधिक ही कष्टसाध्य प्रयाग तंत्र साधना में करना पड़ता है। यह दूसरों को हानि पहुँचाने की तुलना में अधिक मूल्यवान और कष्टसाध्य है। ऐसी दशा में उसका उपयोग भी दूर दृष्टि से महान प्रयोजन के लिए ही होना चाहिए। तभी इस महाविद्या की सार्थकता एवं सफलता है।

पिछले दिनों क्षुद्र प्रकृति के अनाचारी तान्त्रिक इस विद्या का उपयोग दुर्बलों को त्रास देने, भटकाने, आतंक जमाने के लिए करते रहे हैं। बौद्धिक या शारीरिक दृष्टि से किसी को अपंग बना देने,त्रास देकर नीचा दिखाने और शरणागत होने के लिए विवश करने में ऐसी क्या विशिष्टता है जिसके लिए स्वयं गर्व किया जा सके या दूसरों को अपना सहयोगी समर्थक बनाकर प्रसन्न हुआ जा सके।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जैनरेटर बनाना, चलाना और उसे बड़े कामों के लिए प्रयुक्त करना प्रशंसनीय कार्य हो सकता है पर उससे असंख्य गुना महत्वपूर्ण यह है कि अपने व्यक्तित्व, स्तर एवं मानस को इतना प्रचण्ड प्रखर बना लिया जाय तो परिस्थितियों की प्रतिकूलता को अनुकूलता में बदल सके। अपना तथा असंख्यों का भला कर सके। यह कार्य अध्यात्म विज्ञान के आधार पर ही हो सकता है। जहाँ तक लौकिक प्रयोजनों का सम्बन्ध है वहाँ तक तंत्र की प्रमुखता है।

योग का वामाचारी प्रयोग रोका जाय

योग के दो पक्ष हैं,एक उत्कृष्ट-चिन्तन, उज्जवल-चरित्र और आदर्श-कर्तृत्व। दूसरा पक्ष है-मानवी काया और चेतना में छिपी रहस्यमय शक्तियों का जागरण और उसका चमत्कारी उपयोग। भूतकाल में दोनों ही पक्षों पर समान रूप से ध्यान दिया जाता था। अतएव योगदर्शन और योग-साधन की समन्वयात्मक प्रक्रिया जन-साधारण को आत्मिक और भौतिक क्षेत्र में सर्वतोमुखी उत्कर्ष की सम्भावनाएँ उत्पन्न करती थी।

दुर्भाग्यवश योग के चमत्कार पक्ष को अधिक महत्व दिया गया और दार्शनिक उत्कृष्ट चिन्तन की अपेक्षा की जाने लगी। फलतः योग का स्वरूप धीरे-धीरे जादू जैसा बनने लगा उसे इच्छा शक्ति के चमत्कार क्षेत्र को कौतूहल भरी सफलताओं की परिधि में सीमित रहना पड़ा। योग सिद्धि और चमत्कार प्रदर्शन लगभग परिभाषिक शब्द बन गये। इस स्तर की योग-साधना भारत में वाम मार्ग कह लाई और पाश्चात्य देशों में उसे मैस्मरेजम, हिप्नोटिज्म, आकल्ट साइन्स, टैलीपैथी आदि नाम दिये गये। पाश्चात्य लोगों का योग संकल्पबल, मनोबल और इच्छा शक्ति के अभिवर्धन तक सीमित रहा जबकि भारतीय वामाचार में अमुक देवी-देवताओं की सहायता से सांसारिक सफलताओं को प्राप्त करने वाली बात भी सम्मिलित थी।

योग का वामाचार पक्ष यह मानता है कि सूक्ष्म जगत में अनेक दैवी-दानवी सत्ताएँ विद्यमान हैं। उन्हें अमुक विधि-विधान की साधना द्वारा वशवर्ती किया जा सकता है और उनसे इच्छानुसार लाभ प्राप्त करने में सहयोग लिया जा सकता है। योगिनी, कर्ण पिशाची, भक्षणी, भैरवी, बगलामुखी, छिन्नमसता, चामुण्डा, भद्रकाली आदि देवियाँ और भैरव, वेताल, वीरभद्र, महाकाल, चण्ड, रुद्र जैसे देवता वाम-मार्ग में विशेष रूप से उपास्य हैं। यह पद्धति योरोप में भी पहुँची उन्होंने विधि-विधान में तो मद्य-मत्स्य मांस, मुद्रा, मैथुन जैसी कौल प्रवृत्तियों को थोड़े हेर-फेर के साथ अपना लिया, पर अनेक आकृति-प्रकृति वाले तान्त्रिक देवी-देवताओं के स्थान पर एक महा असुर को ही प्रतिष्ठापित किया। ईसाई धर्म के अनुसार ईश्वर का प्रतिद्वन्दी महादानव का नाम 'शैतान' है। पश्चिमी वाम मार्ग में शैतान पूजा की प्रधानता है।

चिरअतीत में योग पर सर्वत्र बहुत विश्वास था। मध्य काल में वैज्ञानिक प्रतिपादनों के आधार पर नास्तिकवाद पनपा तो योग संदर्भ में भी उपेक्षा आई। अब एक से एक बढ़-चढ़कर आध्यात्मिक शक्तियों और उपलब्धियों के चमत्कार सामने आ रहे हैं इसलिए सहज ही योगसाधना के प्रति भी विश्व-व्यापी उत्साह का पुनर्जागरण हुआ है। इस विषय की चर्चा खूब है और साधना के भी उलटे सीधे प्रयोग नई उमंगों के साथ चल रहे हैं। इन दिनों वामाचार पाश्चात्य देशों में जिस तेजी से पनपा है उसे देखते हुए आश्चर्य होता है कि वहाँ भूतकाल में भारत में छाये हुए तंत्र युग को भी पीछे छोड़ देने वाला उत्साह उमड़ने लगा है।

इन दिनों वाममार्गी तंत्र साधनाओं का प्रचलन अब पाश्चात्य देशों में तेजी के साथ हो रहा है। अमेरिका और इग्लैण्ड में इस प्रकार के साधन-रत लोगों की संख्या दिनों-दिन बढ़ती जा रही है। वहाँ उसे "शैतान सिद्धि" का नाम दिया जाता है। अघोरी और कापालिकों जैसी क्रियाएँ की जाती हैं और आशा की जाती है कि इस प्रकार वे भौतिक लाभ की चमत्कारी सिद्धियाँ सहज ही प्राप्त कर सकेंगे।

आदिम युग का इतिहास जादू-टोने और मन्त्र-तंत्र की मान्यताओं से भरा पड़ा है। योग की अपेक्षा तंत्र पुराना है।

तेरहवीं सदी से लेकर सोलहवीं सदी तक तंत्र साधना का विस्तार विश्व-व्यापी उत्साह के साथ हुआ है। इस अवधि में वामाचार के अनेक सम्प्रदाय प्रकट

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हुए और अनेक ग्रन्थ रचे गये । १७ वीं सदी में फ्रांस के शासक १४वें लुई के जीवन वृत्तान्त में उसकी एक ऐसी प्रेमिका का विस्तृत वर्णन है जो काला जादू जानती थी और शासन सूत्र में अपने इशारे से भारी उलट–पुलट प्रस्तुत करती थी । काला जादू अभी भी पाश्चात्य देशों में ब्लैक मास के नाम से प्रसिद्ध है । इसकी साधना का प्रधान उपचार यह है कि मनुष्य आकृति का 'क्रूस' बनाकर उसे उलट दिया जाता है और उस पर एक युवती को नग्न करके लिटाया जाता है । फिर उसके अंगों को मद्य, मांस केक आदि के मधुपर्क से पूजा जाता है और नृत्य वाद्य का कीर्तन जैसा अभिचार चलता है । यह सामान्य विधान हुआ । विशेष उपचार इसके अतिरिक्त जिनमें ऐसे कृत्यों का आश्रय लिया जाता है जो सामान्य तथा अश्लील या असभ्य माने जाते हैं । अपने अघोरी कापालिक भी ऐसी ही वीभत्स रीति–नीति अपनाते रहते हैं ।

शिकागो जैसे सुसंस्कृत समझे जाने वाले नगर की एक तिहाई जनता किसी न किसी प्रकार वामाचार पंथ के साथ अपने को सम्बद्ध कर चली है । इन लोगों में ऊँचे अधिकारी, विद्वान, और सुसम्पन्न वर्ग से लेकर मध्य तथा छोटे वर्ग के लोग समान उत्साह के साथ सम्मिलित हो रहे हैं । अमेरिका के हर पुस्तक भण्डार मे ढेरों पुस्तकें इस विषय में मिल जायेंगी । उनकी बिक्री भी खूब होती है विलियम ब्लैटी की 'दि एक्सार सिस्ट' पुस्तक ने तो भारी लोकप्रियता प्राप्त की हैं । तंत्र उपचार की पत्रिका 'दि आकल्ट ट्रेड जनरल' की ग्राहक संख्या अत्यन्त द्रुतगति से बढ़ी है । उसमें छपने वाले लेखों ने न केवल "शैतान सिद्धि" के प्रति जनता में आकर्षण उत्पन्न किया है, वरन् शैतान संस्कृति को मानव जीवन की सफलता के लिए आवश्यक बताना भी जारी रखा है । शैतान संस्कृति अब एक नई जीवन रीति के रूप में सामने आई है जिसमें उचित अनुचित के झंझट से ऊपर उठकर किसी भी तरह शक्ति का उपार्जन और उपभोग करने का पक्ष समर्थन किया गया है इस सन्दर्भ में कितने ही विद्यालय खुले हैं और खुलते जा रहे हैं । पिछले दिनों इस आन्दोलन को अधिक अच्छी तरह समझाने के लिए तीन फिल्में बनी हैं– (१) रोज मरीज वेबी (२) दि पजेशन आफ जील डेलने (३) दि अदर । यह तीनों फिल्में असाधारण रूप से सफल हुई हैं, इन्हें देखने के लिए सिनेमा घर में हफ्तों पहले रिजर्वेशन कराना पड़ता है ।

फ्रांस, जर्मनी, ब्रिटेन, इटली आदि में शैतान संस्कृति के अनेकों केन्द्र खुले हैं । एक देश के निवासी दूसरी देश में चल रहीं गतिविधियों की जानकारी प्राप्त करके अधिक लाभ उठा सकें । इस दृष्टि से वायुयान तीर्थयात्र के लिए स्पेशल उड़ानें होती हैं । इसका आधा खर्च यात्रियों को देना पड़ता है और आधा अमेरिका की शैतान सोसाइटी उठाती है । शैतान संस्कृति महाविद्यालय प्रायः सभी देशों में खुल चुके हैं अकेले जर्मनी में वामाचारी सदस्यों की संख्या ३० लाख हैं । इस बढ़ते उत्साह से ईसाई धर्माचार्यो में भारी खलबली है । इंग्लैण्ड के रोमन कैथोलिक चर्च ने अपने अधीनस्थ पादरियों से कहा है कि वे इस बढ़ती हुई अधार्मिकता को रोकने के लिए पूरा–पूरा प्रयत्न करें ।

सेन फ्रंसिस्को में एक वामाचारी लावे द्वारा विधिवत् शैतान चर्च की स्थापना सन् १९६६ में की । तब से लेकर जब तक में उसकी अनेकों शाखाऐं खुल गई हैं । प्रार्थना करने वाले पशुओं की आकृति के मुखौटे पहन कर आते हैं । वे मनुष्य की अपेक्षा पशु संस्कृति को अधिक सीधी सच्ची मानते हैं और पशु आदर्श को सामने रखकर वैसे ही मुखौटे पहन कर पूजा करते हैं । इस वाम सम्प्रदाय के सदस्य अपने आपको 'चार्ल्स मेन्सस फेमिली' कहते हैं । इनके सदस्य ही उन विधान उपचारों को जान पाते हैं जो जादू, प्रेत विद्या, चमत्कार, शत्रुनाश, वशीकरण, शत्रु–लाभ आदि विविध प्रयोजनों से सम्बन्धित हैं । शरीर में शक्ति का केन्द्र वे मस्तिष्क को नहीं जननेन्द्रिय को मानते हैं इसलिए यौन उत्तेजना उत्पन्न करने वाले अभिचारों को विशेष रूप से प्रश्रय दिया जाता है ।

भारत में जब वामाचार के नाम पर योगदर्शन के मूल सिद्धान्तों के विपरीत आसुरी शक्तियों की साधना पनपी थी तो उसके दुष्परिणामों को ध्यान में रखते हुए विज्ञ मनीषियों ने उसे निरस्त किया था । भगवान बुद्ध जब जन्मे तब उन्होंने अपने चारों ओर हिंसावादी तंत्रचार पनपता पाया उन्होंने उसके विरूद्ध क्रान्तिकारी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रतिरोध प्रस्तुत किया । बुद्ध दर्शन इसी प्रतिरोधात्मक विचार क्रान्ति का नाम है । भगवान महावीर भी उन्हीं दिनों जन्मे तब उन्होंने भी जैन दर्शन की–अहिंसावादी आस्था की जड़ जमाई और असुरता समर्थक वाम मार्ग को उखाड़ा । इस सन्दर्भ में भगवान शंकराचार्य के प्रयत्न भी कम सराहनीय नहीं हैं ।

योग–विज्ञान का आविष्कर्त्ता होने के नाते भारत का यह विशेष दायित्व है कि इस महाविद्या का उपयोग जब अवांछनीय प्रयोजनों के लिए होने लगे तो उसके विरूद्ध कदम उठायें । भ्रान्तियों का निवारण करें और अनुपयुक्त योग–दर्शन साधना के दुष्परिणामों के विरूद्ध उस मार्ग के पथिकों को सचेत करें । भारत में समय–समय पर इस प्रकार की विकृतियों के उभार को निरस्त किया जाता रहा है तो क्यों न ही हमें आगे बढ़कर विदेशों में फैलने वाली उस योग विकृति का निराकरण करना चाहिए ।

योग एवं अध्यात्म का सही स्वरूप न समझने न समझाने की उपेक्षा ने ही इस अत्यन्त उपयोगी विज्ञान को ऐसी स्थिति में ला पटका है, जिसमें तात्कालिक लाभ थोड़ा सा भले ही होता हो अन्ततः उसमें हानि ही हानि हैं । यह विश्व को समझाना चाहिए कि योग–साधना का वास्तविक लाभ तभी उठाया जा सकता है जब उसके साथ अध्यात्मवादी योगदर्शन भी जुड़ा हुआ हो । इस शिक्षण को विश्व व्यापी बनाने की आज भारत की विशेष जिम्मेदारी है योग विज्ञान के अविष्कर्त्ता और प्रसारकर्त्ता होने के नाते ।

वाममार्गी साधनाओं में पंचमकार–रहस्य

तंत्र साधना में पंचमकारों की प्रायः चर्चा आती है । उनके लम्बे–चौड़े माहात्म्य भी तंत्र शास्त्रों में वर्णित किये गये हैं । आध्यात्मिक मकारों की प्रशंसा करते हुए कहा गया है–

मद्यं मांसञ्च मीनञ्च मुद्रा मैथुनमेव च ।
मकार पंञ्चकं प्राहुर्योगिनां मुक्ति दायकम् ।।

अर्थात् "मद्य, मांस, मीन, मुद्रा और मैथुन–यह पांच आध्यात्मिक मकार ही योगीजनों को मोक्ष प्रदान करने वाले हैं" ।

साधारणतः यह समझा जाता है कि मद्य, मांस, मीन और मैथुन आदि का प्रत्यक्ष प्रयोग का विधि विधान है इसीलिए तंत्र के विधि विधानों पर सर्वाधिक आक्रोश प्रकट किया जाता है और इसे निम्न वर्ग की साधन प्रणाली घोषित किया जाता है । स्पष्ट है कि मद्य, मांस का उपयोग करने वाले तामसिक अथवा राजसिक प्रकृति के ही व्यक्ति हो सकते हैं, सात्विक प्रकृति के व्यक्ति उनका उपयोग तो अलग रहा, उनका नाम सुनना भी पसन्द नहीं करते । लोक में भी आध्यात्मिक दृष्टि से शराबी और मांसाहारियों को हेयदृष्टि से देखा जाता है क्योंकि निश्चय ही इनका उपयोग तमोगुण की वृद्धि करता है । अध्यात्म शास्त्रों में सर्वत्र इनकी निन्दा की गई है और इनके त्याग के आदेश दिए गए हैं ।

सुरापान से व्यक्ति इतना संज्ञाशून्य हो जाता है कि विष्णु पुराण में अवतारी पुरूष बलरामजी द्वारा कथावाचक सूतजी की हत्या का उल्लेख मिलता है, जबकि वह मद्यमान किए हुए थे । ऐसे महान् व्यक्तियों से जब इतने अन्यायपूर्ण कार्य हो जाते हैं, तो साधारण व्यक्तियों से तो और भी जघन्य कार्य होने सम्भव है । विष्णु पुराण में ही कहा है कि स्यमन्तक मणि को अपने पास रखने वाले का जीवन पवित्र होना आवश्यक है श्री कृष्ण ने स्वयं कहा है–

आर्यबलभद्रेणापि मदिरापानाद्यशेषोपभोगपरित्यागः कार्यः
(४/१३/१५७)

"अर्थात् यदि आर्य बलरामजी इसे अपने पास रखते हैं, तो उन्हें अपने मदिरापान आदि सभी भोगों को छोड़ना पड़ेगा ।"

महाभारत में स्पष्ट रूप से निषेध किया गया है–

सुरा मत्सया मधु मांस मासवं कृशरौदनम् ।
धूर्तै प्रवर्तितं ह्येतत्रे तद्वेदेषु कल्पितम् ॥
मानान्मोहाच्च लोभाच्च लोलेयमेतत्प्रकल्पितम् ।
विष्णु मेवाभिजनान्तिसर्व यज्ञेषु ब्राह्मणः ॥
पायसैः सुमनोभिवश्च तस्यपि भजनं स्मृतम् ।
यज्ञियाश्चैव ये वृक्षा वेदेषु परिकल्पिता ॥

–महाभारत शांति.

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"सुरा, मत्स्य, शराब, मांस, आसव आदि सब व्यवहार धूर्तों का चलाया हुआ है । उसकी वेदों में कोई प्रमाण नहीं है । मान, मोह, लोभ, और जिह्वा की लोलुपता के कारण यह बनाया गया है ।वास्तव में सच्चे ब्राह्मण सभी यज्ञों में उस कण–कण में व्याप्त प्रभु का ही भजन–पूजन करते हैं और वेदों में दिये हुए आदेश के अनुसार यज्ञ में काम आने वाली वृक्षों की समिधाओं का उपयोग करते हैं ।"

शराब ओर मांस में रूचि रखने वालों को दैत्य की संज्ञा दी गई है–

मधुमांस प्रिया दैत्यास्ताम सत्वाद्रवन्ति चः ।

–स्कन्दपुराण,अध्याय६

नारद ने एक स्थान पर कहा है–"जिस धर्म में मांस ओर मद्य सेवन का विधान है, वह धर्म केवल नरक के लिए होता है ।"

विष्णु पुराण में इनसे दूर रहने वालों की भूरि–भूरि प्रशंसा की गई है– "जो जीवनपर्यन्त किसी प्रकार का मांस नहीं खाता, उसे स्वर्ग में विपुल स्थान प्राप्त होता है । यदि वह मांस खाता है तो सारे जाप, होम, नियम, तीर्थस्थान व्यर्थ हैं ।"

शास्त्रों मे मांसाहार पर दोषारोपण करते हुए उसके त्याग की प्रबल प्रेरणाऐं दी गई हैं–

"मांस से हिंसा की प्रवृत्ति बढ़ती है, अधर्म की वृद्धि होती है, दुःख की उत्पत्ति होती है इसलिए मांस का त्याग करना ही उपयुक्त है ।"

–शांतिपर्व.

चूंकि माँस से शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक और आत्मिक उन्नति में बाधा पड़ती है, इसलिए अपने जीवन–क्रम को शांतिपूर्वक चलाने का उपदेश करते हुए भीष्म युधिष्ठिर से कहते हैं–

य इच्छेत पुरूषोत्यन्तमात्मानं निरूपद्रवम ।
स वर्जयेत मांसानि प्राणानामहि सर्वथाः ॥

–महा. अनुशासन पर्व.

"जो मनुष्य अपनी जीवन–यात्रा शांति से चलाना चाहे, उसके लिए आवश्यक है कि वह मांस भक्षण कभी न करे ।"

मांस–भक्षण रसना का विषय है एक बार खा लेने से वह सहज में ही नहीं छूट पाता, इसलिए पहले से ही सावधान करते हुए भीष्म पितामह कहते हैं

दुष्करंहि रसज्ञाने मांसस्य परिवर्जनम् ।
चतुर्वृतमिदं श्रेष्ठं सर्वप्राणाय भयप्रदम् ॥

"मांस के रस के स्वाद में आसक्ति हो जाने पर मांस का छूटना कठिन है मांस–भक्षण करने वाले कभी भी श्रेष्ठ अहिंसा व्रत का पालन नहीं कर सकता ।"

अनुमण्ता विशसिता नीहन्ता क्रयविक्रहयी ।
संस्कर्त्तायोपहर्त्ता चरवादश्चेती घातकः ॥

– मनु. ५/५१.

"पशु वध के लिए सम्मति देने वाला, मांस को काटने, पशु आदि को मारने, वन को मारने के लिए लेने और बेचने, मांस के पकाने परसने और खाने वाले यह आठ मनुष्य घातक हैं ।"

नाकृत्वा प्राणिनां हिंसा मांसमुत्पद्यते क्वचित्।
न च प्राणिवधः स्वर्गयस्तस्यान्मांसं विवर्जयेत्।।

"प्राणियों के वध के बिना मांस प्राप्त नहीं हो सकता, प्राणों की हिंसा से स्वर्ग उपलब्ध नहीं होता, इसलिए मांस का त्याग करना चाहिए ।"

शास्त्रों में मांस न खाने वालें की प्रशंसा इन शब्दों में की गई है–

वष वर्षेऽमेधने यो यजेन शतं समाः ।
मासांनि चन खादेद्यस्तयों पुण्यफलं समम् ।।

–मनु. ५/५३.

"मांस भक्षण न करने वाले और सौ वर्ष तक अश्वमेघ यज्ञ करने वाले को समान फल प्राप्ति होती है ।"

याज्ञवल्क्य–स्मृति में माँस न खाने वाले की प्रशंसा की है ।

यथा–

सर्वान्कामानवप्नोति तयमेधफलं तथा ।
गृहेपि निवसन्तिद्रो मुनि मांस विर्वजनात् ॥

–आचार्य प्रकरण७, श्लोक१८०.

"विद्वान सभी इच्छाओं तथा अश्वमेघ के फल को पाता है, वह गृहस्थ मुनि है, जो माँस–भक्षण नहीं करता ।"

मैथुन काम–वासना की तृप्ति का साधन है । उससे काम का बेग बढ़ता है जो अध्यात्म–मार्ग की महान्

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बाधा है । गीताकार ने तो काम से सर्वस्व नाश की घोषणा की है–

ध्यायतो विषयान्पुंस संगस्तेषूपजायते ।
संगात्संचयते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते ॥
क्रोधाभ्दवति सम्मोहः सम्मोहात्स्मृतिविभ्रमः ।
स्मृतिभ्रंशाद्बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति ॥
रागद्वेषवियुक्तैस्तु विषयानिन्द्रियैश्चरन ।
आत्मवश्यैर्विधेयात्मा प्रंसादमधिगच्छति ॥

–गीता२/६२–६४.

अर्थात्–"विषयों का चिन्तन करने से इनमें संग बढ़ताहै संग से वासना की उत्पत्ति होती है कि हमें काम चाहिए । जब काम की तृप्ति नहीं हो पाती है, तो क्रोध उत्पन्न होता है क्रोध से संमोह अर्थात् अविवेक होता है, संमोह से स्मृति भ्रंश,स्मृति भ्रंश से बुद्धिनाश और बुद्धिनाश से सर्वस्वनाश हो जाता है ।"

इन्द्रियाणां हि चरतां यन्मनोऽनु विधीयते ।
तदस्य हरति प्रज्ञा वायुर्नावमिवाम्भसि ॥

–गीता २/६७.

अर्थात्–"विषयों में संचार अर्थात् व्यवहार करने वाले इन्द्रियों के पीछे–पीछे काम मन जो जाने लगता है वही व्यक्ति की बुद्धि को ऐसे हरण करता है जैसे कि जल में नाव को वायु खींचती है ।"

शास्त्र सुरा, मांस ओर मैथुन आदि का विरोध करते हैं । तंत्र वेदादि शास्त्रों के अनुकूल हैं, विरोध नहीं । जो आध्यात्मिक विचारधारा इन शास्त्रों में वर्णित की गई है, उनकी साधना–प्रणाली का प्रतिपादन तंत्रों में किया गया है । सभी शास्त्र एक स्तर से मद्य, मांस, और मैथुन आदि को आत्मिक उत्थान में बाधक समझते हैं तो तंत्र उनके प्रत्यक्ष प्रयोग की आज्ञा कैसे दे सकते हैं ? वास्तव में तंत्रे की भाषा सांकेतिक है, उन्हें उसी रूप में समझना उपयुक्त रहेगा । तंत्रों में इन संकेतों को दो रूपों में व्यक्त किया गया है – अनुकल्प और दिव्य । उनका विचार सभी मकारों में किया जायेगा ।

मद्य–

मद्य का अनुकल्प नारियल का पानी है । 'कुलार्णव तंत्र' में नारियल का पानी और दूध दोनों का वर्णन आता है । योगिनी तंत्र में ब्राह्मण, क्षत्रिय, और वैश्य के लिए अलग–अलग अनुकल्प दिए गये हैं–

तेषां विधिं श्रणुष्वाद्य मत्तस्त्वं कुलनायिके ।
गुडद्रिकरसेनैव सुरा तु ब्राह्मणस्य च ॥

अर्थात्–'हे कुल–नायिके ! उसकी विधि का श्रवण करो । गुड़ और अदरक का रस मिलाने से ब्राह्मण की सुरा बनती है ।"

नारिकेलोदकं कांस्ये क्षत्रियस्य बरानने ।
वैश्यस्य माक्षिकं प्रोक्तं कांस्यस्थं वरवर्णिनि ।।

अर्थात्–"कांसी के पात्र में नारियल का जल क्षत्रिय की और कांसी के पात्र में मधु वैश्य की सुरा कही गई है ।"

जहाँ सुरा का विधान है, वहाँ पूजा में इन वस्तुओं का प्रयोग अभीष्ट है । सुरा के दिव्य रूप का अभिप्राय इस प्रकार है ।

अन्तर्योग में कुण्डलिनी शक्ति को ही सुरा कहते हैं–

न मद्यं माधवी मद्यं शक्तिरसोद्भवम् ।
सामरस्यामृतोल्लासं मैथुनं तत्सदाशिवम् ॥

"मद्य से मदिरा का तात्पर्य नहीं है वरन शिव शक्ति के संयोग से जो महान अमृतत्व उत्पन्न है, वही वास्तविक शक्तिप्रदायक रस है ।"

व्योम पंकजानिष्यन्द सुधापानरतो भवेत् ।
मद्यपानमिद प्रोक्तमितरे मद्यपायिनः ॥

"ब्रह्मरन्ध्र सहस्र दल से जो स्रवित होता है उसका पान करना ही मद्यपान है इसके अतिरिक्त पीने वाला मद्यप है ।"

ब्रह्मस्थान सरोजपात्रलसिता ब्रह्माण्डतृप्तिप्रदा ।
या शुभ्रांशुक्ला सुधाविगलिता सा पानयोग्या सुरा।।
सा हाला पिवतामनर्थ फलदा श्रीदिव्यभावाश्रिता।
यामित्या मुनयः परार्थकुशला निर्वाण मुक्तिं गताः।।

तंत्र तत्व प्रकाश.

"जो सहस्रार कमलरूपी पात्र में भरी है और चन्द्रमा कलासुधा से स्रवित है वहीं पीने योग्य सुरा है इसका प्रभाव ऐसा होता है कि वह सब प्रकार के अशुभ कर्मों को व्यर्थ कर देती है । इसी के प्रभाव से परमार्थ कुशल मुनियों ने मुक्ति रूपी फल को प्राप्त किया है ।"

यदुक्तं परमं ब्रह्मं निर्विकारं निरंजनम् ।
तस्मिन् प्रंमदनज्ञानं तन्मद्यं परिकीर्तितम ॥

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"निर्विकार, निरंजन परब्रह्म के विषय में योग-साधना द्वारा जो प्रमदन-ज्ञान उत्पन्न होता हैउसको मद्य कहते हैं ।"

मार्कण्डेय पुराण में लिखा है कि देवी जब युद्ध में रत रहती थीं तो सुरा का पान करती थी । यहाँ मद्य का अभिप्राय अभिमान और उन्मत्त आचरण से है । देवी इससे शून्य होकर संघर्ष मेंकूदती थीं । नारद भक्तिसूत्र में ईश्वर कायही गुण बताया गया है-

ईश्वरस्याभिमानद्वेषत्वाद्दैन्यप्रियत्वाच्च ।

वह दीनों का बन्धु और अभिमान का द्वेषी हैं । अहंकारी को गीता में अज्ञानी कहा गया है-

तत्रैवं सति कर्तारमात्मानं केवलं तु यः ।
पश्यत्यकृतबुद्धित्वान्न स पश्यति दुर्मतिः ॥

१८/१६.

अर्थात "जो संस्कृत बुद्धि न होने के कारण यह समझे कि मैं अकेला ही कर्त्ता हूँ, समझना चाहिए कि वह दुर्मति कुछ नहीं जानता ।"

इसलिए भगवान परामर्श देते हैं कि-

मच्चित्तः सर्वदुर्गाणि मत्प्रसादात्तरिष्यसि ।
अथ चेत्वमहंकारान्न श्रोष्यसि विनक्ष्यसि ॥

१८/५८.

"यदि तू मुझ में चित्त रखेगा, तो मेरी कृपा से संकटों को पार कर लेगा । परन्तु अहंकार के वशीभूत होकर मेरी ओर ध्यान न देगा, तो नाश को प्राप्त होगा ।"

प्रश्नोपनिषद ३/१/४ में लिखा है कि ईश्वर को जानने वाले में अहंकार का अभाव रहता है-

प्राणों ह्येष यः सर्वभूतैर्विभाति ।
विजानन् विद्वान भवते नातिवादी ।

"यह परमेश्वर ही प्राण है, जो सब प्राणियों के द्वारा प्रकाशित हो रहा है । इसको जानने वाला ज्ञानी अभिमानपूर्वक बढ़-बढ़कर बातें, करने वाला नहीं होता ।"

अतः तंत्र-साधक को देवी की तरह इसी सुरा का पान करना चाहिए, तभी उसकी आत्मा शक्तिशाली होगी और वह आत्म-साक्षात्कार के योग्य हो सकेगा । यदि इस सुरा का पान नहीं किया जाता अर्थात् अहंकार का नाश नहीं किया जाता तो सौ कल्पों में भी ईश्वर दर्शन करना असम्भव है ।

माँस-

माँस का अनुकल्प है लवण, अदरक, लहसुन, तिल और गेहूँ की वालें । योगिनी तंत्र में कहा है-

मांसं मत्स्यन्तु सर्वेषां लपणार्द्रक मोरितम् ।

अर्थात् "सबका मांस और मत्स्य लवण तथा अदरक बताया गया है ।"

कुलार्णव तंत्र में भी माँस के स्थान पर लवण, अदरक, गेहूं या लहसुन से पूजा विधान बताया गया है । मांस के लिए विश्व रूप है- समस्त वस्तुओं को अन्तर्यामी ईश्वर को समर्पित करना ।

-कौलिकार्चन तंत्र.

मांसाहार का प्रतीकात्मक स्पष्टीकरण करते हुए शास्त्रों में कहा है-

माशब्दाद्रसना ज्ञेया तदशान रसनाप्रिये ।
सदा यो भक्षयेद्देवि स एव मांस साधकः ।।

"हे रसनाप्रिये ! मा रसना-शब्द का नामान्तर है, वाक्य उसका अंश है । जो सदा सर्वदा उस वाक्य की भक्षता करता है, अर्थात् जो वाक् संयम करके मौन रहता है, वही वास्तव में मांस साधक है ।"

पुण्यापुण्य पशुं हत्वा ज्ञान खड्गेत योगवित् ।
परे लयं नयेत् चित्तम् मांशासी स निगद्यते ।।

"पुण्य पापरूपी पशु को ज्ञानरूपी खड्ग से मारकर जो योगी मन को ब्रह्म में लीन करता है, वहीं सच्चा माँसाशी (माँसाहारी) है ।"

काम क्रोध सुलोभमोहपशुकांश्छित्वा विवेकासिना।
मांसनिर्विषयं परमात्मसुखदं खादन्ति वेषां बुधाः।।
ते विज्ञान परा धरातल सुरास्ते पुण्यवन्तो नरा।
नाश्नीयात्पशुमांसमात्मविमतेर्हिसापरं सज्जनः ॥

तंत्रतत्व प्रकाश.

"काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि पशुओं को विवेक रूपी तलवार से मारकर उसके भक्षण करे और दूसरों को सुख पहुँचावे वहीं सच्चा बुद्धिमान है । ऐसे ही ज्ञानी और पुण्यशीलजन पृथ्वी के देवता कहे जाते है । ऐसे सज्जन कभी पशु-माँस का प्रयोग करके पापी नहीं बनते ।"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पशु–वध से माँस की प्राप्ति होती है। माँस–लोलुपों ने उपासना के अतिरिक्त हवन–यज्ञों में अर्थका अनर्थ करके पशु–वध करना आरंभ कियाथा, उसका स्पष्टीकरण इस प्रकार है–

उपनिषद् के अनुसार–

काम क्रोध लोभादयः पशवः ।

अर्थात्–"काम, क्रोध, लोभ, मोह– यह पशु हैं, इन्हीं को मारकर यज्ञ में हवन करना चाहिए ।"

'महानिर्वाण तंत्र, में भी इसी आशय का श्लोक आया है–

काम क्रोध सुलोभ मोह पशु कांच्छित्वा विवेकासिना।
मांसं निर्विषयं परात्म सुखदं भुंजति तेषां बुधाः ।।

–भैरव यामल.

अर्थात्–'विवेकी पुरूष काम, क्रोध लोभ और मोह रूपी पशुओं को विवेकरूपी तलवार से काटकर दूसरे प्राणियों को सुख देने वाले निर्विषय रूपी मांस का भक्षण करते हैं ।"

कामक्रोधौ द्वौ पशु इमावेव मनसा वलिमर्पयेत्।
कामक्रोधौ विघ्नकृतौ बलि दत्तवा जपं चरेत।

"काम और क्रोध रूपी दोनों विघ्नकारी पशुओं का बलिदान करके उपासना करनी चाहिए, यही शास्त्रोक्त बलिदान का रहस्य है ।"

अलंकारिक रूप से यह आत्म–शुद्धि की, कुविचारों, पाप–तापों, कषाय–कल्मषों से बचने की शिक्षा है ।

गीता में लिखा है कि मन और बुद्धि को अर्पण करना चाहिए (१२/८) किन्तु विषयाक्त मन बुद्धि की संज्ञा पशु है और अर्पण ही बलि है ।

परमार्थसार में लिखा है कि 'मायापरिग्रह वशाद् बोधो मलिनः पुमान् पशु भवति' अर्थात् माया के कारण मलिन बुद्धि होने से मनुष्य पशुभाव को प्राप्त होता है । तंत्र में कहा है– 'इन्द्रियाणि पशून हत्वा' अर्थात् इन्द्रिय रूप पशु का वध करे ।

मूर्धन्य विद्वानों का कहना है कि पशु जगत् में इन्द्रियाँ सर्वोपरि हैं और उन्हीं का संचालन वहाँ प्रधान साधन है । किन्तु मनुष्य में जीवात्मा सर्वोपरि है और जीवात्मा तथा इन्द्रियों के मध्य में अन्तःकरण है । इनके पशु स्वभाव को कामात्मक स्वार्थ के लिए व्यवहृत न कर ईश्वर के अनेक होने के संकल्प (एकोऽहं बहुस्याम्) अर्थात् इच्छाशक्ति की, जिसकी संज्ञा महाविद्या है, पूर्ति रूपी यज्ञ में व्यवहृत होने के लिए महाविद्या को समर्पित करना अर्थात् ईश्वर के दिव्य गुण, शक्ति, सामर्थ्य आदि को प्रकाशित करने योग्य बनाना ही यथार्थ पशु बलि हैं । जीवात्मा रूपी होता को सद्बुद्धि रूपी स्रुवा में इस पशु–स्वभाव के साथ संयोजित कर ब्रह्माग्नि में अर्पण करना अर्थात् ब्रह्म के निमित्त सृष्टि–हित कार्य में प्रवृत्त करना ही, यज्ञ में इनकी बलि करना है ।

तंत्र विद्या विशारदों ने बकरे को काम, भैंसे को क्रोध, बिलाव को लोभ, मेड़े को मोह और ऊँट को मात्सर्य कहा है और इन्हीं विकारों के त्याग को पशुबलि कहा है ।

यजुर्वेद में ऐसे उदाहरण मिलते हैं, जिनसे यह अभिप्राय निकलता है कि अग्नि, वायु और सूर्य ही पशु हैं । यथा–

अग्निः पशुरासोत्तेनायजन्त ।

अर्थात्–अग्नि पशु था, उस द्वारा यज्ञ किया ।

वायुः पशूरासीत्तेनायजन्त ।

अर्थात्–वायु पशु था, उस द्वारा यज्ञ किया ।

सूर्यः पशुरासीत्तेनायजन्त ।

अर्थात्–सूर्य पशु था, उस द्वारा यज्ञ किया ।

ऐतरेय ब्राह्मण (१/२/१०) में 'पशवो व इवा हुआ' इस पृथ्वी को ही पशु कहा गया है । क्या इन सबको काट–काटकर होमा जायगा ? अन्न से बनी हुई वस्तु तथा (रोटी और पूरी आदि) खाद्य पदार्थों को भी पशु माना गया है ।

चरक संहिता में अर्ज औषधि का वर्णन है–

अजाना– मौषधि रज श्रृंगति विज्ञायते ।

– चरक संहिता प्र.

क्या उपरोक्त वाक्य में वर्णित अजा बूटी के स्थान पर बकरी को औषधि बनावेगा ?

महाभारत में भी अजा का अर्थ औषधि और बीज ही किया गया है–

बीजैर्यज्ञेषु यष्टव्य मिति वा वैदिको श्रुतिः ।
अज संज्ञानि बीजानि, छांग तो हन्तुमहर्षं ।।
नेष धर्मः सतां देवा यत्र वध्येत वै पशु ।

– महाभारत शान्ति ३३७.

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अर्थात् "बीजों का यज्ञ में हवन करना चाहिए, ऐसी ही वेद की श्रुति है। अज संज्ञक बीज होते हैं। इसलिए बकरे का हनन करना उचित नहीं जिस कर्म में पशु की हत्या होती है, वह सज्जनों का धर्म नहीं।

वैद्यक ग्रन्थों में अनेक पशुवाचक शब्द आते हैं। यथा–

अश्व=अश्व गन्धा। ऋषभ=ऋषभक कन्द। श्वान=कुकुरमुत्ता। बराह=बराहीकन्द। काक=काकमाची। अज=अजमोद। मत्स्य=मत्स्याक्षी। लोम=जटामांसी। महिष=महिषाक्ष गुग्गुल। मेष=चकवड़, मेषपर्णी। मातुल=धतुरा। मृग=सहदेवी बूटी। पशु=मोथरा। कुमारी–घिवकुमारी। रूधिर–केशर। पेश– जटामांसी। हृद–दारचीनी।

पशु वाचक शब्दों के अन्य प्रकार के भी अर्थ होते हैं–

(१) अज या छाग–तीन या सात वर्ष के पुराने धान, राशि चक्र में की मेष राशि।

(२) धेनु– धाना(अथर्व १२४/३२), पृथ्वी, अन्तरिक्ष, द्यौलोक, दिशाएँ आदि (अथर्व. ४/३९)।

(३) गौ–तण्डुले, शमीवृक्ष (ऋग्वेद १०/३/१०) रश्मि, चन्द्रमा, दूध चर्म धनुष की डोरी आदि (निरूक्त अ. २, पा.२. खं.१–३)।

(४) अश्व–तण्डुल के कण (अथर्व. का.११, सू. ३ पर्याय १,मं.५) सूर्य, अश्वपर्णी या असगन्धा औषधि (यजु. २१/२८), एक नक्षत्र आदि।

(५) अक्षा– सोम औषधि आदि (ऋग्वेद१०/२८/११)।

(६) वृषभ–ओदन (अथर्व ११/१/३५), बादन, ऋषभ औषधि आदि।

पुरुष–सूक्त में लिखा है कि 'अवघ्नन् पुरुषं पशून'–अर्थात् ईश्वर को ही पशु मान यज्ञ में समर्पण किया, ईश्वर के अपने को यज्ञ अथवा बलि करने से ही सृष्टि हुई और ऋषि, देवता आदि ने भी उन्हीं को शक्ति की बलि अथवा प्रयोग कर सृष्टि–यज्ञ किया, यही आदि पशु बलि हुई।

यदा पिष्ठान्यथलोमानि भवन्ति।
यदाय आनयति अथ त्वग्मवति।
यदासंयोत्थय मांसं भवति। संतत इव हि तिर्हि।
भवित संततमिव हि मांसं यदाश्रतोऽथास्थि भवति।
दारूण इव हि तर्हि भवति। दारूणः मित्यास्थि।
अथ यदुद्वासयन्नभिधारयति तं मंजानं ददाति।
ऐषो स सम्पद्यदाहु पांच्मः पशुरिति।

–शतपथ १/२/३/९.

अर्थात्–"अन्न का पिसा हुआ आटा ही रोम (बाल) है। जब उस पिसे हुए आटे में जल मिलाते हैं तो वह चमड़ा हो जाता है (क्योंकि चमड़े के समान कोमल से होता है) जब वह आटा गूँधा जाता है जब वह सेका जाता है, तब वह अस्थि कहलाता है।(क्योंकि अस्थि कड़ी होती है) जब उसमें घी डाला जाता है, तो उसका नाम मज्जा होता है।

'पशुर्ह वा एष आलम्भते यत्पुरोडशः।'

–शतपथ१,२,३,५.

अर्थात् "निश्चय ही पुरोडाश (चावल या जौ की मीठी) ही पशु है।"

सं यावद्वीर्यवद्धास्य हविरेव भवति,य एवमेतद्वेदात्रो सा सम्पद्ददाहुः पांक्रः पशुरिति।

–शतपथ १,२,३,७.

अर्थात्–"सब पशुओं के आलम्भन से जितना फल है, निश्चय रूप से उतना ही हवि, धान और जौ से होता है। पांचों पशुओं–गौ, अनव, पुरूष, अज और हवि की श्री इसी हवि में विद्यमान है।"

ऊपर की पंक्तियों से स्पष्ट है कि चावल या जौ की पीठी ही पशु है। अतः यज्ञ में इन्हीं का हवन करना चाहिए, न कि मांस द्वारा पशुओं का वध करके।

ऐसे ही प्रमाण एतरेय ब्राह्मण (२/२/२१) में भी मिलते हैं–

पशुभ्यो वै मेध उदक्रमंहतौ ब्रीहि बचेवे यवश्च भूतावर्जयाताम्।

'पशुओं में से हवनीय तत्व पृथ्वी में चला गया, जो चावल और जौ के रूप में ऊपर आया है।'

ब्राह्मण ग्रन्थ का यह वाक्य पशुओं के बलिदान का स्पष्ट निषेध करता है और चावल तथा जौ के आटे की ही बलि देने का आदेश देता है।

शास्त्रकारों के उपरोक्त वचनों से स्पष्ट है कि पशु–वध, माँसाहार अथवा पशु–बलि आदि के अलंकारिक अर्थ हैं,जिन्हें न समझकर प्रत्यक्ष व्यवहार होने लगा, जो अर्थ का अनर्थ और घोर जघन्य कार्य हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पुराणों में भगवती के साथ राक्षसों का जो युद्ध वर्णन है, उसमें लिखा है कि उनके भय से राक्षसों के माँस और रक्त सूख जाते हैं। सम्भवतः इसीलिए कवियों ने यह कल्पना कर ली है कि माता रक्त–माँस खाती है अथवा वह इसके अर्पण से प्रसन्न होती है। यह प्रतीकात्मक वर्णन भले ही हो सकता है। वह प्रत्यक्षः माँस के पूजन विधान से कभी भी प्रसन्न नहीं हो सकती और न ही ऐसे निर्दयी साधक को क्षमा कर सकती है। माँ तो विश्व के अणु-अणु में समाई हुई है, कौन-सा ऐसा स्थान है, जहाँ वह नहीं है। कौन–सा प्राणी है जिसमें वह नहीं है।

श्वेताश्वतरोपनिषद् का यही कहना है

त्वं स्त्री त्वं पुमानसि त्वं कुमार उत वा कुमारी।
त्वं जीर्णो दण्डेन वञ्चसि त्वं जातो भवति विश्वतोमुखः।

–४/३.

अर्थात्–"तू स्त्री है, पुरूष भी तू है, तू भी कुमार और कुमारी है, तू ही वृद्ध होकर लाठी के सहारे से चलता है और तू ही उत्पन्न होकर सब ओर मुख वाला हो जाता है।"

नीलः पतंगों हरितो लोहिताक्ष–
स्तडिन्द्गर्भ ऋतवः समुद्राः।
अनदिमत्वं विभुत्वेन वर्तसे,
यतो जातानि भुवनानि विश्वा॥

–४/४.

अर्थात्–"तू ही नील, पतंग है, हरे रंग का और लोहित वर्ण के नेत्र वाला है, तू मेघ, ऋतु और सप्त समुद्र है, तुझ से ही सब लोक प्रकट हुए हैं। तू अनादि प्रकृतियों का स्वामी है और सबमें व्याप्त हो रहा है।"

यदि यह सत्य है तो माँ की उपासना के विधान में माँस के प्रत्यक्ष प्रयोग की कभी भी आज्ञा नहीं दी जा सकती। यदि कोई साधक ऐसा करते भी हैं तो वह भगवती के कोपभाजन ही बनेंगे। क्योंकि वह जघन्य पाप के अपराधी माने जायेगें।

तंत्रों में मत्स्य का विधान लिखा है। उसका अनुकल्प है लाल मूली और बैंगन आदि। योगिनी तंत्र के अनुसार–

मांसं मत्स्यन्तु सर्वेषां, लवणद्रकमीरितम्।

अर्थात्–"सबका मांस, मत्स्य (मछली) और लवण आदिक कहा गया है।"

कुलार्णव तंत्र में भी जहाँ मत्स्य का विधान है, वहाँ बैंगन मूली या पानीफल अर्पित करने का विधान है। श्री एम. पी. पंडित ने मत्स्य का प्रतीकात्मक रूप इस प्रकार लिखा है–"ममत्व की भावना मत्-स्य, स्वयं से तादात्म्य जिसके फलस्वरूप विश्व के सुख-दुःख दोनों ही समान भोग्य हो जाते हैं।

मत्स्य और उसका सेवन करने वाले सच्चे मत्स्य साधक के शास्त्रों में इस प्रकार लक्षण दिये गए हैं–

मानसादीन्द्रियगणं संयाम्यात्मानि योजयेत्।
समीनाशी भवेद् देवि इतरे प्राण हिंसका॥

"मन आदि सारी इन्द्रियों को वश में करके आत्मा लगाने वाले को ही मीनाशी कहते हैं। दूसरे तो जीव हिंसक हैं।"

अहंकारी दम्भे यदपि शुनतामत्सरद्विषः।
षडेतान्मीनान् वै विषयहर जालेन विधृतान्॥
पचन् सद्विद्याऽग्नौ नियमित कृतिर्धीवरकृतिः।
सदा खादेत्सर्वान्न च जलचराणां षु पिशितुम्॥

– तंत्र तत्व प्रकाश.

"अहंकार, दम्भ, मद, पिशुनता, मत्सर, द्वेष –ये छः मछलियाँ हैं। इनको धीमर की तरह विषय–बिरांग रूपी जाल में पकड़े। उनको सद्विद्या रूपी अग्नि पर पकाकर नियमपूर्वक काम में लाता रहे। इसके अतिरिक्त जल में रहने वाली मछलियों को खाना तो सर्वथा धर्म विरूद्ध पापकर्म हैं।"

यत्समानं सर्वभूले सुख दुःख मिदं प्रिये।
इति सत्सात्विकं दानं सन्मत्स्यः परिकीर्तितः॥

"सब प्रकार के सुख-दुःखों में मेरी ही भांति समभाव रखना चाहिए। यह सात्विक ज्ञान ही मत्स्य है।"

गंगायमुनोर्मध्ये मत्स्यौ द्वौचरतः सदा।
तौ मत्स्यौ भक्षयेद् यस्तु स भवेन्मत्स्य साधकः॥

"गंगा–यमुना के भीतर सदा ही दो मत्स्य विचरण करते रहते हैं। जो व्यक्ति उन दोनों का भक्षण करता है, उसका नाम मत्स्यसाधक है। गंगा–यमुना से आशय है मानव शरीरस्थ इड़ा और पिंगला नाड़ी का। उनमें निरंतर बहने वाले श्वास–प्रश्वास ही दो मत्स्य हैं। जो व्यक्ति प्राणायाम द्वारा इन श्वास प्रश्वास को रोककर कुम्भक करते हैं। वे ही यथार्थ मत्स्य साधक हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मनसा चेन्द्रियगणं संयम्यात्मनि योजयेत् ।
मत्स्याशी स भवेद्देवि शेषाः स्युः प्राणि हिंसकाः ॥

अर्थात्–"अपनी समस्त इन्द्रियों के समुदाय का भलीभांति संयम करके मन से खूब नियंत्रित करके फिर आत्मा में योजित करना चाहिए । दे देवि ! यह मत्याशी होता है । शेष अन्य प्राणियों के हिंसक ही होते हैं ।

उपरोक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि इन्द्रियों का वशीकरण, दोषों तथा दुर्गुणों का त्याग साम्यभाव की सिद्धि और योग साधना में रत रहना ही मत्स्य का ग्रहण करना है । इस सांकेतिक भाषा को न समझ कर प्रत्यक्ष मत्स्य के द्वारा पूजन करना अर्थ का अनर्थ होगा और साधना–क्षेत्र में एक कुप्रवृत्ति को बढ़ावा देना होगा ।

'मत्स्य' शब्द बड़ा महत्त्वपूर्ण है । इसके नाम से एक अलग पुराण की रचना की गई है । मत्स्य पुराण में सृष्टि रचना के अन्य कारणों के साथ एक कारण मत्स्य को भी बताया गया है । वहाँ मत्स्य का अभिप्राय एक प्रकार का प्राण है, जो जगत के बीच में केन्द्रित हो जाता है और विषुवत रेखा से उत्तर ध्रुव और दक्षिण ध्रुव तक भ्रमण करता रहता है । इसी क्रिया को भौतिक सृष्टि के उत्पन्न होने का कारण बताया गया है ।

मत्स्य पुराण में मत्स्य को भगवान का रूप दिया गया है । भगवान विष्णु स्वयं मत्स्य का रूप धारण करते हैं और राजर्षि सत्यव्रत को आगामी प्रलय के प्रति सावधान करते हैं । उन्हें वे बचाते भी हैं । यहाँ सत्यव्रत से अभिप्राय वैवस्वत मनु से है, जो जगत के मूल बीजों को सुरक्षित रखने के लिए तप का व्रत लेते हैं । मत्स्य रूप भगवान ने मनु की परीक्षा ली । उन्होनें एक महान् कार्य भार अपने कन्धों पर लिया था, अतः उन्हें अहंकार का महारोग न हो जाए उन्हें सावधान किया । पहले वह एक मत्स्य के रूप में प्रस्तुत हुए, बड़े होते गये–इतने बड़े हो गये कि समुद्र में भी नहीं समा पाए । तब मनु का अहंकार तिरोहित हो गया और वह समझ गए कि यह भगवान का ही प्रतिरूप मत्स्य है । भगवान विष्णु ने मत्स्य रूप में अवतार लिया । इस पवित्रतम् रूप का उसे श्रेय दिया गया, उस पवित्र रूप की हम पूजा उपासना करते हैं । उसे काटकर खाना एक ऐसा अपराध होगा, जिसे भगवान कभी क्षमा नहीं करेंगे ।

पुराणों में विष्णु के मत्स्य रूप ग्रहण करने का आधार कुछ विद्वान यह मानते हैं कि ऋग्वेद में इन्द्र को जल में निवास करने वाला महामत्स्य बताया गया है । विष्णु को उपेन्द्र-छोटा, इन्द्र, इन्द्र का सखा आदि की उपाधि तो वेद में दी ही गई है । अतः सम्भव है इस रूप का अवतरण ऐसे ही हुआ हो । इन्द्र वेद में परमात्मा का वाचक नाम है । अतः मत्स्य को ईश्वरीय विभूति ही घोषित किया गया है ।

अन्य देशों में भी यह पवित्रता की प्रतीक थी । मिस्र में माता 'आइसिस' की जो मूर्तियाँ उपलब्ध होती हैं, उनके सिर पर 'मत्स्य' की स्थापना दृष्टिगोचर होती हैं । इसे वह विश्व की पिता शक्ति का प्रतीक मानते थे । इसी कारण ये प्रचीनकाल में यहाँ मन्दिरों में विमान बनाया गया था कि वहाँ के पुजारी मत्स्य को आहार रूप में न खा सकेंगें ।

'मिथ आफ बेविलोन एण्ड असीरिया' पुस्तक में लिखा गया है कि सुमेरी सभ्यता में एरिद् नगर का 'या' देवता माना जाता था । इस 'या' देवता का रूप मत्स्य जैसा था । इससे स्पष्ट है कि सुमेर में प्राचीन काल में मत्स्य रूपी देवता की पूजा होती थी ।

इससे मत्स्य पवित्रता का ही प्रतीक सिद्ध होता है । इसको इसी रूप में ग्रहण करना उपयुक्त है ।

मुद्रा–

मुद्रा के माहात्म्य का वर्ण करते हुए कुलार्णव तंत्र में कहा गया हैं–

इत्यादि पञ्चमुद्राणां वासनां कुलनायिके ।
ज्ञात्वा गुरूमुखाद्देवि यः सेवेत स. मुच्यते ॥

"हे कुलनायिके ! हे देवि ! ये उपर्युक्त पंथ मुद्राओं की वासना को गुरु के मुख से समझकर और ज्ञान प्राप्त करके जो सेवन किया करता है, वह मुक्ति की प्राप्ति किया करता है ।"

मुद्रा का अनुकल्प है चावल, धान । योगिनी तंत्र में कहा है–

भ्रष्टधान्यादिकं यद्वच्चर्वणीयं प्रचक्षते सा मुद्रा ।

"भ्रष्ट धान्यादि अर्थात्–जो भुने हुए चर्वणीय द्रव्य हैं, उन्हीं को मुद्रा कहते हैं ।"

कुलार्णव तंत्र में चावल, गेहूँ अथवा धान को ही मुद्रा के स्थान पर चढ़ाने के लिए आदेश दिया गया है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मुद्रा का दिव्य रूप है– बुराइयों का त्याग। ज्ञान की ज्योति से अपने अन्तर को जगमगाने वाला ही मुद्रा–साधक कहा जाता है। शास्त्रों के अभिवचन भी यही सिद्ध करते–

आशा तृष्णा महामुद्रा ब्रह्माग्नौ परिपाचिता।
ऋषया श्निन्त नियत चतुर्थी सैव कीर्तिता।।

–कैलाश तंत्र ८० पटल.

अर्थात्–"आशा और तृष्णा महामुद्रा हैं, जो ब्रह्म की अग्नि में परिपाचित होती है। ऋषिगण नियत रूप से इनका अशन कर जाते हैं, वही चतुर्थी कही गई है।"

सहस्रारे महापद्मे कर्णिकामुद्रितश्चरेत्।
आत्मा तत्रैव देवेशि केवलः पारदोपमः॥
सूर्यकोटि प्रतीकाशः चन्द्रकोटि सुशीतलः।
अतीव कमनीयश्च महाकुण्डलिनी युतः।
यस्य ज्ञानोदय स्तत्र मुद्रासाधक उच्यते॥

–आगम सार.

"हे देवेशि! महापद्म में मुद्रित कर्णिका के अन्दर पारद की भांति आत्मा का निवास है। यद्यपि उसका तेज करोड़ों सूर्यो के समान है, परंतु स्निग्धता में वह करोड़ों चन्द्रमाओं के तुल्य है। यह परम पदार्थ अतिशय मनोहर तथा कुण्डलिनी शक्ति समन्वित है। जिसके अन्तर में यह ज्ञान उदय हो जाता है, वही यथार्थ मुद्रा–साधक है।"

आशातृष्णा जुगुप्साभय विशदघृणमान लज्जा प्रकोपाः।
ब्रह्माग्नवष्ट मुद्राः परसुकृतिजनः पच्यमानाः समन्तात्॥
नित्यं समश्नयेत्तानवहितमनसा दिव्यभावानुरागी।
योऽसौ ब्रह्मांडभांडे पशुहति विमुखो रूद्रतुल्यो महात्मा॥

–तंत्र तत्व प्रकाश.

"आशा, तृष्णा, जुगुप्सा, भय, घृणा, लज्जा, कोप ये आठ कष्टदायक मुद्राएं हैं। सत्कर्म में निरत पुरूषों को इन्हें ब्रह्मरूप अग्नि में पका डालना चाहिए। दिव्य भावानुरागी सज्जनों को सदैव इनका सेवन करके सार ग्रहण करना चाहिए। ऐसे पशु–हत्या से विरत साधक ही पृथ्वी पर शिव के तुल्य माननीय पदवी प्राप्त करते हैं।"

सत्संगेन भवोन्मुक्तिरसत्संगेषु बन्धनम्।
असत्संग मुद्गुणे यत् तन्मुद्रः परिकीर्तितम्॥

–विजय तंत्र.

"सत्संग मुक्ति प्राप्त होती है और असंत्संग से बंधन होता है। अतएव असत्संग त्यागने का नाम मुद्रा है।"

मन्त्रार्थ मन्त्रचैतन्यं योनिमुद्रा न वेत्ति यः।
शतकाटिजपेनाऽपि तस्य सिद्धिर्न जायते॥

–मन्त्र मुक्तावली.

अर्थात् "मन्त्र का अर्थ और मन्त्र –चैतन्य की योनि मुद्रा जो पुरूष नहीं जानता है, वह चाहे सौ करोड़ भी जप क्यों न करे उसकी कदापि सिद्धि नहीं होती है।"

मुद्रा शब्द 'मुद्' धातु से बना है, जिसका अर्थ है प्रसन्न करना। उपासना में इसका नामकरण इसलिए किया गया है क्योंकि इससे देवताओं को प्रसन्नता होती है।

देवानाम मोददा मुद्रा।

और भी–

मुदं कुर्वन्ति देवानां मनीसि द्रावयन्ति च।
तस्मान्मुद्रा इति ख्याता दर्शितव्याः कुलेश्वरि॥

– कुलार्णव तंत्र.

"हे कुलेश्वरि! देवताओं का मुद अर्थात्–आनंद उत्पन्न करने से और उनके मन को उपासक के प्रति द्रवित कर देने से मुद्रा –यह नाम पड़ा है जो कि अवश्य ही देवों को दिखानी चाहिए"

उपासनाकाल में आन्तरिक भावों को व्यक्त करने के लिए बाह्य शरीर की जो विशेष भंगिमाऐं हैं, उन्हें मुद्रा कहते हैं। यह उपासक के आतंरिक भावों की भाषा है, जिसके माध्यम से वह अपने इष्ट देवता से वार्तालाप करता है, क्योंकि बाह्य रूप से उसके शरीर के अवयवों का संचालन होता है। वह उसके हृदय और मन का प्रतीक माना जाता है। हाथों और अंगुलियों की सहायता से बनाई गई यह भंगिमाएँ जब बार–बार उसी रूप में बनाई जाती हैं, तो वह आंतरिक भावों का रूप ही बन जाती हैं ऐसा लगता है जैसे सूक्ष्म ही स्थूल आकार में साकार हो गया है और दोनों में कोई अन्तर नहीं है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मुद्राओं की संख्या १०८ है । आवाहन, विसर्जन, अर्घ्य आदि उपासना के सभी अंगों के लिए मुद्राओं का विधान है । आवाहन के लिए आवाहन मुद्रा, अर्घ्य के लिए मत्स्य मुद्रा, किसी वस्तु को ढूँढने के लिए अवगुंठन मुद्रा । योनि मुद्रा से भगवती को आकर उपासक के सामने बैठने का निवेदन किया जाता है ।

मुद्राओं का प्रयोग काम्य कर्म, प्रतिष्ठा स्नान, आवाहन, नैवेद्य अर्पण और विसर्जन के साथ किया जाता है ।

'नित्योत्सव' में मुद्राओं के विभिन्न प्रकारों का विवेचन इस प्रकार किया गया है–

श्री गुरूवन्दन मुद्रा–सुमुखं, सुवृतं चतुरस्तं, मुद्गर–योनि ये गुरू–वन्दना की मुद्राऐं होती हैं, जिसमें विकसित कल्प होकर उत्तान अंजलि होती है, वही सुमुख मुद्रा है । यही मुष्टीकृत हो, तो सुवृत्त हो जाती है । दक्ष–वाम करतलों को ऊर्ध्वाधः स्थित कर अंगुलियों का मणिबन्ध के साथ सम्बन्ध करने पर चतुरस्त होती है । अधरोत्तर वाम मुष्टियों को स्नाभिमुख्य में योजन करने पर मुद्गर होती है । अग्रांगुलियों को तिरछी मिलाकर मध्यमांगुलियों के पीछे ऊपर नीचे वाम दक्षानामिकाओं के तिरछे होने पर तर्जिनियों से निपीड़ित कर वाम कनिष्ठिका को दक्षिण से पकड़ कर दोनों अंगूठों के अग्र भागों को मध्यमा से आगे मध्य पर्वद्वय से सम्बन्ध करने पर योनि–मुद्रा बनती है । अन्य मुद्राओं के नाम इस प्रकार हैं–

अर्घ्य स्थापन मुद्रा–मरस्यः, अस्त्रं अवगुंठन, धेनु, योनि और गलिनी मुद्राऐं अर्घ्यस्थापन में आती है । विस्तार अधिक हो जाने के कारण इन सबके बनाने की विधि यहाँ नहीं लिखी जाती है । वस्तुतः मुद्राओं का ज्ञान गुरू से प्राप्त कर अभ्यास कर लेना चाहिए । तभी सार्थक सिद्ध ज्ञान भी होगा ।

अर्चन मुद्रा–आवाहनी, संस्थापनी, संनिधायनी, संनिरोधनी, संमुखीकरणी, अवगुंठनी, बन्दनं, धेनु, योनि, तत्वमुद्रा, ज्ञानमुद्रा–ये अर्चना में आती है ।

सर्वसंक्षोभिणी–सर्वविद्राविणी, सर्वाकर्षणी, सर्वेश्वरी, सर्वोन्मादिनी, सर्वमहांकुश, सर्वखेश्वरी, सर्वबीजम् सर्वयोनि, सर्वत्रिखण्डा, प्राणमुद्रा, अपान, व्यान, उदान, समान नाराच, चक्रम्– ये भी मुद्राऐ होती है । मुख, करसम्पुट, षडंग मुंद्राएँ हैं । शक्त्युत्थापिनी, पाश, अंकुश, चाप, वाण मुद्राएँ भी हैं । ये पचास मुद्राएँ हैं इनके प्रकार का भेद भी अन्य तत्वों में पाया जाता है ।

मन्त्र कौमुदी के अनुसार–

भगवान श्री रामचन्द्र की ज्ञानमुद्रा है, जिसमें शर के सहित धनुष हैं । श्रीवत्स और कौस्तुभ वाली गारूड़ी मुद्रा है और दूसरी मोहनी है । नारसिंही, बाराही, हयग्रीवी और उसकी प्रिया कममुद्रा– ये सभी विष्णु भगवान की मुद्राएँ कही गई हैं ।

त्रिशूला नाम की, लिंग योनी, वराभीतिं , मृगात्मिका, खट्वांगा, कपाला और डमरू – ये शिव की मुद्रिकायें होती हैं । सूर्य की पद्मा नाम वाली एक ही मुद्रा होती है । क्रम से दन्त विघ्न पाश, अंकुश, परशु, लड्डू और पीजपूरा ये गणपति की मुद्राएँ होती हैं । पाश, अंकुश, वराभीति और खंड– ये दुर्गा की मुंद्राएँ हैं । धनुष, शर, धर्माख्या और मौसली से दुर्गा की मुद्राएँ होती हैं और लक्ष्मी की मुद्रा उसका अर्चन ही हैं ।

शास्त्रों में यौगिक मुद्राओं का वर्णन भी आता है । शिव–संहिता में १० मुद्राओं की चर्चा है–

महामुद्रा महाबंधों महावेधश्च खेचरी ।
उड्यानं मूलबंधश्च बंधो जालधंराभिधः ॥
करणो विपरीताख्या बज्रोली शक्तिचालनम् ।
इदं हि मुद्रा दशकं जरामरणानाशनम् ॥

अर्थात्–"महामुद्रा, महाबन्ध, महावेध, खेचरी, उड्यान, मूलबन्ध, जालन्धर बंध, विपरीत करणी, बज्रोली और शक्ति चालन–ये १० मुद्राएँ जरा और मृत्यु को नष्ट करने वाली हैं ।"

घेरण्ड संहिता के अनुसार मुद्राएँ २५ प्रकार की हैं–

महामुद्रा नभोमुद्रा उड्यानं जलंधरम ।
मूलबंधो महाबंधो महहावेधश्खेचरी ॥
विपरीतकरी योनिर्वज्रोली शक्तिचालिनी ।
ताडागी मांडुकी मुद्रा शम्भवी पंचधारणा ॥
अश्विनी पाशिनी काको मातंगी च भुजंगिनीं
पंचविंशति मुद्राणि सिद्धदानीह योगिनाम् ॥

अर्थात्–"महामुद्रा, नभोमुद्रा, उड्यान, जालंधर, मूलबंध, महाबंध, महावेध, खेचरी, विपरीतकरणी, योनि, वज्रोली, शक्तिचालनी, ताड़ागी, मांडुकी, शाम्भवी, पार्थिवी,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

आम्भसी, वैश्वानरी, वायवी, आकाशी, अश्विनी, पाशिनी, एकाकी, मातंगी और भुजंगिनी– ये २५ मुद्राएँ योगियों को सिद्धि प्रदान करने वाली हैं ।"

मुद्राओं का उद्देश्य शरीर को दृढ़ करके प्राणवायु को अंग विशेष में स्थिर करना है, जिससे मन धारणा की साधना के उपयुक्त हो जाता है । इनसे लौकिक व पारलौकिक सभी प्रकार के लाभ प्राप्त होते हैं ।

महामुद्रा से अहंकार ,अविद्या, भय, द्वेष, मोह आदि के पंच क्लेशदायक विकारों का शमन होता हैं ।भगन्दर, बवासीर, संग्रहणी, प्रमेह आदि रोग दूर होते हैं । शरीर के तेज बढ़ता है और वृद्धावस्था दूर हटती जाती है । महाबन्ध के लाभ भी मुद्रा की तरह ही हैं । इसके अतिरिक्त चक्रभेदन का मार्ग इससे प्रशस्त हो जाता है और कुण्डलिनी जागरण में सहायता मिलती है । महावेध के लाभ है– जठराग्नि की तीव्रता बालों का जल्दी सफेद न होना, शरीर पर झुरियाँ न पड़ना, प्राण का सूक्ष्म होकर सुषुम्ना में गमन आदि ।

खेचरी मुद्रा से कपाल गह्वर में होकर प्राण–शक्ति का संचार होने लगता है और सहस्रदल कमल में अवस्थित अमृत निर्झर झरने लगता है, जिसके आस्वादन से एक बड़ा ही दिव्य आनंद आता है । प्राण की ऊर्ध्वगति हो जाने से मृत्यु काल में जीव ब्रह्मरंध्र में होकर ही प्रयाण करता है, इसलिए उसे मुक्ति या स्वर्ग की सद्गति प्राप्त होती हैं । गुदा आदि अधोमार्गो से जिनका प्राण निकलता है, वह नरकगामी तथा मुख, नाक, कान से प्राण छोड़ने वाला मृत्युलोक में भ्रमण करता है । किंतु जिसका जीव ब्रह्मरन्ध्र में होकर जायगा, वह अवश्य ही सद्गति को प्राप्त करेगा । खेचरी मुद्रा द्वारा ब्रह्मांड स्थित शेषशायी सहस्रदल निवासी परमात्मा से साक्षात्कार होता है । यह मुद्रा बड़ी ही महत्वपूर्ण है ।

विपरीतकरणी द्वारा ऋण प्राण और धन प्राण का एकीकरण होता है, जिससे मस्तिष्क को बल मिलता है । इसके लाभ हैं– शरीर की स्वस्थता, बालों का शीघ्र श्वेत न होना, जठराग्नि का बढ़ना आदि ।

वज्रोली मुद्रा से वीर्य और मूत्र सम्बन्धी दोष दूर होते हैं । प्रमेह ओर स्वप्नदोष आदि रोग भी नहीं होते । इसका उद्देश्य ब्रह्मचर्य रक्षा है ।

शक्तिशालिनी मुद्रा से शरीर में आलस्य और प्रमाद का नाश होकर प्राणों में सक्रियता आती है, जो कुण्डलिनी जागरण के लिए आवश्यक है ।

योनि मुद्रा से प्राण और अपान के मिलने की प्रक्रिया सफल होती है, जो कुंडलिनी जागरण का पूर्वक्रम है ।

शाम्भवी मुद्रा के साधक को साक्षात ब्रह्मस्वरूप कहा गया है । इससे मन और बुद्धि में शान्ति उत्पन्न होती है । मनोलय के लक्षण इसमें दिखाई देने लगते हैं, जिससे आनन्द की वृद्धि होती है ।

काकी मुद्रा से नेत्र शक्ति बढ़ती है, पित्त की शांति होती है, अम्ल और पित्त के विकारों का शमन होता है, दिव्य–ज्योति के दर्शन होते हैं ।

अश्विनी मुद्रा से दिव्य ज्योति का प्रकाश, मूलाधार चक्र की शुद्धि प्राणों में सक्रियता ,कुण्डलिनी का जागरण के लाभ प्राप्त होते हैं ।

मातंगिनी मुद्रा से सिर, नेत्र, गले और फेफड़ों के रोगों में लाभ होता है । बाल शीघ्र सफेद नहीं होते, मुख पर अपूर्व चमक आती हैं । ब्रह्मरन्ध्र में शान्ति और आनन्द का उदय होता है ।

यहाँ कुछ प्रधान मुद्राओं के लाभ वर्णित किए हैं यह मुद्राएँ तंत्र साधना का अंग हैं । इनसे शारीरिक और आत्मिक दोनों प्रकार के लाभ प्राप्त होते हैं ।

मैथुन–

मैथुन का अनुकल्प है– उपयुक्त विधि से पुष्पों का समर्पण ।

तंत्र में 'लता–साधना' को बहुत कलंकित किया गया है । इसमे प्रत्यक्ष मैथुन का विधान बताया गया है । वास्तविकता यह हे कि तंत्र में परिभाषिक शब्द होते हैं । उनके अर्थों को न समझने से भ्रम फैलता है । इसी से तंत्र में तथाकथित गन्दगी का प्रवेश हुआ है । महानिर्वाण तंत्र में एक गन्दा श्लोक मिलता है–

मातृ–योनी क्षिपेत् लिंग भगिन्या स्तनमर्दनम् ।
गुरोर्मुर्ध्नि पदं दत्वा पुनर्जन्म न विद्यते ॥

इसकी व्याख्या श्री एम. पी. पंडित ने इस प्रकार की है ।

इस पद का शाब्दिक अर्थ स्पष्ट ही हैं पर वह इसका वास्तविक अर्थ नहीं हैं । प्रथम पंक्ति का पूर्वार्द्ध जीवात्मा को स्वयम्भू लिंग से युक्त मूलाधार केन्द्र की त्रिभुजाकार योनि में प्रतिष्ठित करने की ओर संकेत करता है । इसी त्रिभुज को मातृयोनि कहा जाता है । जीवात्मा ही लिंग है । इसी स्थल से कुंडलिनी के साथ योग होने

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पर जीवात्मा को ऊपर की ओर ले जाना होता है । जीवात्मा से कुंडलिनी के योग को पहली पंक्ति के उत्तरार्ध में कहा गया है कुंडलिनी जीवात्मा की बहिन है और दोनों एक ही शरीर में हैं । द्वितीय चरण का अर्थ है –कुंडलिनी और जीवात्मा के मिलने के बाद दोनों संयुक्त रूप से शीर्षस्थ सहस्रार की ओर जाते हैं जो कि गुरू के निवास स्थान द्वादश दलों वाले कमल के ऊपर स्थित हैं ।जब योगी द्वादशदलीय कमल के ऊपर चला जाता है, तो उसके चरणों को गुरू के सिर पर अवस्थित कहा जाता है । इस स्तर पर यह कहा जाता है कि यहाँ गुरू और शिष्य के संबंध समाप्त हो जाते है । मातृयोनि नाम उँगलियों के उन भागों का भी है जिन पर जप की गिनती या मन्त्रोच्चारण नहीं करना चाहिए ।

तंत्र शास्त्रों में जिस मैथुन की ओर संकेत किया है, वह इस प्रकार है–

सहस्रारोपरिबिन्दौ कुण्डल्या मेलनं शिवे ।
मैथुनं शयनं दिव्यं यतीनां परिकीर्तितम् ॥

–योगिनी तंत्र.

"हे शिवे ! सहस्रदश पद्मोपरि बिन्दु में जो कुल कुंडलिनी का मिलन है, वही यतियों का परम मैथुन कहा गया है ।"

मैथुन का अर्थ है मिलाना । साधारण भाषा में स्त्री और पुरूष के मिलन को मैथुन कहते हैं । परन्तु तंत्र की पारिभाषिक भाषा में मैथुन का अभिप्राय हाड़–मांस वाले स्त्री-पुरूष का नहीं है । स्त्री से अभिप्राय कुंडलिनी शक्ति से है, जो हमारे अन्दर सोई हुई है । इसका स्थान मूलाधार है । सहस्रार में जिनका स्थान है, इस शिव और शक्ति का मिलन ही वास्तविक मिलन अथवा मैथुन है । योग की भाषा में सुषुम्ना का प्राण से मिलन ही 'मैथुन' कहा जाता है । शास्त्र का वचन है ।

परशक्यात्म मिथुन– संयोगानन्दनिर्गराः ।
मुक्तात्ममिथुनं तत्स्त्यादितरस्त्री निवेषकाः ॥

–तंत्रसार.

अर्थ–"परा–शक्ति के साथ आत्मा के विलास–रस में निमग्न रहना ही मुक्त आत्माओं का मैथुन है । यहाँ किसी स्त्री इत्यादि का ग्रहण नहीं ।"

ईडापिंगलयोः प्राणान् सुषुम्नायां प्रवर्तयेत् ।
सुषुम्नाशक्तिसुद्दिष्टा जीवोऽयं तु परः शिवः ।
तयोस्तु संगमे देवैः सरतं नाम कीर्तितम् ॥

अर्थात्–"इड़ा और पिंगला से प्राणों को सुषुम्ना में प्रवृत्त करना चाहिए । सुषुम्ना की शक्ति उद्दिष्ट है । यह जीव तो फिर परम शिव है । देवों ने उन दोनों के संगम में सुख को बतलाया है ।"

यानाड़ी सूक्ष्मरूपा परम पदगता सेवनीया सुषुम्ना ।
सा कान्तालिगंनासी न मनुज रमणी सुन्दरी वारयोवित् ॥
कुर्याच्चिन्द्रार्कयोगे युगपवन गतं मैथुनं नैव योनो ।
योगीन्द्रो विश्ववन्द्यः सुखमय भवनेतां परिष्यज्य नित्यम् ॥

–भैरव यामल.

"परमानन्द को प्राप्त हुई सूक्ष्म रूप वाली सुषुम्ना नाड़ी है, वही आलिंगन करने योग्य सेवनीय कांता है, न कि मानवी सुन्दरी वेश्या ।"

सुषुम्ना के सहस्रचक्र के अन्तर्गत परम ब्रह्म के साथ संयोग होने का नाम ही मैथुन है, स्त्री–संभोग का नहीं । विश्ववन्द्य योगीजन सुखमक वनस्थली आदि में ऐसे ही संयोग का परमानन्द प्राप्त किया करते हैं ।"

रेफस्तु कुंकुमाभास कुण्डमध्ये व्यवस्थितः ।
मकारश्र बिन्दु रूपः महायोनौ स्थितः प्रिये ॥
अकारहंसमारूढा शक्ता च महाभवेत् ।
तदा जातो महानन्दो ब्रह्मज्ञान सुदुर्लभम् ॥

"रेफ कुंकुम वर्ण कुंड के भीतर रहता है । बिन्दुरूप महायोनि में रहता है, आकाररूपी हंस का आश्रय लेने पर जब उन दोनों का एकत्व हो जाता है । तभी सुदुर्लभ ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति होती है । ऐसे साधक ही सच्चे मैथुन साधक कहे जाते हैं ।"

उपरोक्त प्रमाणों से स्पष्ट है कि तंत्र में जहाँ मैथुन शब्द आया है वहाँ उच्च भावनाओं का उद्रक है, कहीं भी निम्न भावनाओं का लेशमात्र भी प्रवेश नहीं है । इसकी आलोचना का कारण तंत्र ज्ञान का अभाव है ।

यह पाँच मकारों का रहस्य है । तंत्र में जहाँ-जहाँ भी मद्य, मांस, मीन, मुद्रा और मैथुन शब्द आए हैं, वहाँ उनका अलंकारिक वर्णन ही किया गया है, उसे न समझकर भोगवादियों ने अपने मानसिक स्तर के अनुरूप

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उनके अर्थ निकालकर उनका प्रत्यक्ष व्यवहार आरम्भ कर दिया, जिससे कि जनसाधारण में तंत्र की उपेक्षा होने लगी और वह निम्नकोटि के विषयलोलुप वर्ग तक ही सीमित रह गए। वास्तव में तंत्र बहुत उच्च स्तर के ग्रन्थ हैं। पंचमकारों से उनको बदनाम करना ठीक नहीं हैं उनके अलंकारिक रहस्यों को समझना अभीष्ट है।

तंत्र-शास्त्र में मुद्राओं का महत्व

तंत्र-शास्त्र भारतवर्ष की बहुत प्राचीन साधन-प्रणाली है। इसकी विशेषता यह बतलाई गई है कि इसमें आरम्भ ही से कठिन साधनाओं और कठोर तपस्याओं का विधान नहीं है, वरन् वह मनुष्य के भोग की तरह झुके हुए मन को उसी मार्ग पर चलाते हुए धीरे-धीरे त्याग की ओर प्रवृत्त करता है। इस दृष्टि से तंत्र को ऐसा साधन माना गया कि जिसका आश्रय लेकर साधारण श्रेणी के व्यक्ति भी आध्यात्मिक मार्ग में अग्रसर हो सकते है। यह सत्य है कि बीच के काल में तंत्र का रूप बहुत विकृत हो गया और इसका उपयोग अधिकांश में मारण, मोहन, उच्चाटन, वशीकरण आदि जैसे जघन्य उद्देश्यों की पूर्ति के लिये किया जाने लगा, पर तंत्र का शुद्ध रूप ऐसा नहीं हैं। उसका मुख्य उद्देश्य एक-एक सीढ़ी पर चढ़ कर आत्मोन्नति के शिखर पर पहुंचना ही है।

तंत्र-शास्त्र में जो पंच-प्रकार की साधना बतलाई गई है, उसमें मुद्रा साधन बड़े महत्व का और श्रेष्ठ है। मुद्रा में आसन, प्राणायाम, ध्यान आदि योग की सभी क्रियाओं का समावेश होता है। मुद्रा की साधना द्वारा मनुष्य शारीरिक और मानसिक शक्तियों की वृद्धि करके अपने आध्यात्मिक उद्देश्य की पूर्ति कर सकता है।

मुद्राएँ अनेक हैं। घेरण्ड संहिता में उनकी संख्या २५ बतलाई गई है, पर शिव-संहिता में उनमें से मुख्य मुद्राओं को छांट कर इस की ही गणना कराई है जो इस प्रकार है-

(१) महामुद्रा (२) महाबन्ध (३) महाभेद (४) खेचरी (५) जालन्धर बन्ध (६) मूलबन्ध (७) विपरीत-करणी (८) उड्डीयान (९) वज्रोली और (१०) शक्ति चालिनी।

तंत्र मार्ग मे कुंडलिनी शक्ति की बड़ी महिमा बतलाई गई है। इसके जागृत होने से षटचक्र भेद हो ही जाते हैं और प्राणवायु सहज ही में सुषुम्ना से बहने लगती है इससे चित्त स्थिर हो जाता है और मोक्ष मार्ग खुल जाता है। इस शक्ति को जागृत करने में मुद्राओं से विशेष सहायता मिलती है। इनकी विधि योग ग्रंथों में इस प्रकार बतलाई गई है-

महामुद्रा- गुरू के उपदेशानुसार बांये टखने (पैर की पिंडली और पंजे के बीच की दोनों तरफ उठी हुई मोटी हड्डी) से योनि मंडल (गुदा और लिंगेन्द्रय के बीच का स्थान) का दबा कर दाहिने पैर को फैला कर दोनों हाथों से पकड़ ले और शरीर के नवों द्वारों को संयत करके छाती के ऊपरी भाग पर ठुड्डी को लगा दें। चित्त को चैतन्य रूप परमात्मा की तरफ प्रेरित करके कुम्भक प्राणायाम द्वारा वायु को धारण करे। इस मुद्रा का पहले बाँये अंग में अभ्यास करके फिर दाँये अंग में करे और अभ्यास करते समय मन एकाग्र करके उसी नियम से प्राणायाम करता रहे।

इस मुद्रा से देह की सारी नाड़ियाँ चलने लगती हैं। जीवनी शक्ति स्वरूप शुक्र स्तम्भित हो जाता है, सारे रोग मिट जाते हैं, शरीर पर निर्मल लावण्य छा जाता है, बुढ़ापा और अकाल मृत्यु का आक्रमण नहीं होने पाता और मनुष्य जितेन्द्रिय होकर भवसागर से पार हो जाता है।

खेचरी मुद्रा-इस मुद्रा से प्राणायाम को सिद्ध करने और समाधि लगाने में विशेष सहायता मिलती है। इसके लिए जिह्वा और तालु को जोड़ने वाले मांस-तंतु को धीरे-धीरे काटा जाता है, अर्थात् एक दिन जौ भर काट कर छोड़ दिया जाता है, फिर तीन चार दिन बाद थोड़ा सा और काट दिया जाता है। इस प्रकार थोड़ा काटने से उस स्थान की रक्त वाहिनी शिरायें अपना स्थान भीतर की तरफ बनाती जाती हैं और किसी भय की सम्भावना नहीं रहती। जीभ को काटने के साथ ही प्रतिदिन धीरे-धीरे बाहर की तरफ खींचने का अभ्यास करता जाय। इस अभ्यास करने से कुछ महिनों में जीभ इतनी लम्बी हो जाती है कि यदि उसे ऊपर की तरफ लौटा जाय तो वह श्वांस जाने वाले छेदों को भीतर से बन्द कर देती है। इससे समाधि के समय सांस का आना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जाना पूर्णतः रोक दिया जाता है ।

विपरीत करणी मुद्रा–योगियों ने मनुष्य के शरीर में दो मुख्य नाड़ियाँ बतलाई हैं । एक सूर्यनाड़ी और दूसरी चन्द्र नाड़ी । सूर्य नाड़ी नाभि के पास है और चन्द्रनाड़ी तालु के मध्य में है । मस्तक में रहने वाले सहस्रा–दल–कमल से जो अमृत झरता है वह सूर्य नाड़ी के मुख में जाता है । इसी से अन्त में मनुष्य की मृत्यु हो जाती है । यदि यही अमृत चन्द्रनाड़ी के मुख में गिरने लगे तो मनुष्य निरोगी, बलवान और दीर्घजीवी हो सकता है । इसके लिये तेज शास्त्र में साधक को आदेश दिया गया है कि सूर्यनाड़ी को ऊपर और चन्द्रनाड़ी को नीचे ले आवे । इसके लिये जो मुद्रा बतलाई गई है उसकी विधि शीर्षासन की है, अर्थात् मस्तक को जमीन पर टिका कर दोनों पैरों को सीधे ऊपर की तरफ तान दें और दोनों हाथ की हथेलियों को मस्तक के नीचे लगा दें । तब कुम्भक प्राणायाम करें ।

योनि मुद्रा–इसके लिये सिद्धासन पर बैठकर दोनों अंगूठों से दोनों कान, दोनों तर्जनी उँगलियों से दोनों मध्यमा (बीच की उंगली) से दोनों नाक के छेद और दोनों अनामिका से मुंह बन्द करना चाहिए । फिर काकी मुद्रा (कौवे की चौंच के समान होठो को आगे बढ़ाकर साँस खीचना) से प्राण वायु के भीतर खींच कर अपान वायु से मिला देना चाहिए । शरीर में स्थित छहों चक्रों का ध्यान करके 'हुँ' और 'हंस' इन दो मंत्रों द्वारा सोयी हुई कुंडलिनी को जगाना चाहिये । जीवात्मा के साथ कुण्डलिनी को जगाना चाहिये । जीवात्मा के साथ कुण्डलिनी को युक्त करके सहस्र दल–कमल पर ले जाकर ऐसा चिन्तन करना कि मैं स्वयं शक्तिमय होकर शिव के साथ नाना प्रकार का बिहार कर रहा हूँ । फिर ऐसा चिन्तन करना चाहिए कि "शिवशक्ति के संयोग से आनन्द स्वरूप होकर मैं ही ब्रह्म रूप में स्थित हूँ ।" यह योनि मुद्रा बहुत शीघ्र सिद्धि प्रदान करने वाली है और साधक इसके द्वारा अनायास ही समाधिस्थ हो सकता है ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि मुद्राओं में शारीरिक मानसिक और आत्मिक तीनों प्रकार के अभ्यासों का ऐसा समन्वय किया गया है कि मनुष्य की भीतरी शारीरिक शक्तियाँ, मानसिक शक्तियाँ जाग्रत हो जाती हैं और वह ऊँचे दर्जे के आत्मिक अभ्यास के योग्य हो जाता है । पर का बात एक ध्यान रखना परमावश्यक है और वह यह कि मुद्राओं का अभ्यास किसी भी दशा में किसी से सुन कर या पढ़ कर नहीं करना चाहिये, वरन् योग्य गुरू से सीख कर ही उसका अभ्यास करना अनिवार्य है ।

यंत्रों का रहस्यमय विज्ञान

साधना विज्ञान में विशेष कर वाममार्गी तांत्रिक साधनाओं में यंत्र–साधना का बड़ा महत्त है । जिस तरह देवी–देवताओं की प्रतीकोपासना की जाती है और उनमें सन्निहित दिव्यताओं, प्रेरणाओं की अवधारणा की जाती है, उसी तरह 'यंत्र' भी किसी देवी या देवता के प्रतीक होते हैं । इनकी रचना ज्यामितीय होती है । यह बिंदु, रेखाओं, वक्र–रेखाओं, त्रिभुजों, वर्गों, वृत्तों और पहदलों से मिलाकर बनाये जाते हैं और अलग–अलग प्रकार से बनाये जाते हैं । कई का तो बनाना भी कठिन होता है । इनका एक सुनिश्चित उद्देश्य होता है । इन रेखाओं, त्रिभुजों, वर्गों, वृत्तों और यहाँ तक कि कोण, अंश का भी विशेष अर्थ होता है । जिस तरह से देवी–देवताओं के रंग, रूप, आयुध, वाहन आदि विशेष गुणों का प्रेरणाओं का प्रतिनिधित्व करते हैं, उसी तरह यंत्रों में भी गंभीर लक्ष्य निहित होते हैं । इनका निर्माण पत्थर, धातु या अन्य वस्तुओं के तल पर होता है । रेखाओं और त्रिभुजों आदि के माध्यम से बने चित्रों को 'मंडल' कहा जाता है, जो किसी भी देवता के प्रतीक हो सकते हैं, किंतु 'यंत्र' किसी विशिष्ट देवी या देवता के प्रतीक होते हैं ।

तंत्र विद्या विशारदों के अनुसार यंत्र अलौकिक एवं चमत्कारिक दिव्य शक्तियों के निवास स्थान हैं । ये सामान्यतया स्वर्ण, चाँदी एवं ताँबा जैसी उत्तम धातुओं पर बनाये जाते हैं । भोजपत्र पर बने यंत्र भी उत्तम माने जाते हैं । ये चारों ही पदार्थ कास्मिक तरंगें उत्पन्न करने और ग्रहण करने की सर्वाधिक क्षमता रखते हैं । उच्चस्तरीय साधनाओं में प्रायः इन्हीं से बने यंत्र प्रयुक्त होते हैं ।

ये यंत्र केवल रेखाओं और त्रिकोणों आदि से बने ज्यामिति विज्ञान के प्रदर्शक चित्र ही नहीं होते, वरन् उनकी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

रचना विशेष आध्यात्मिक दृष्टिकोण से की जाती है । जिस प्रकार से विभिन्न देवी–देवताओं के रंग–रूप के रहस्य होते हैं, उसी तरह सभी यंत्र विशेष उद्देश्य से बनाये गये हैं । इन यंत्रों में पिण्ड और ब्रह्माण्ड का दर्शन पिरोया हुआ है । भारतीय दर्शन का मत है कि जो कुछ ब्रह्मांड में है, वह सारी देवशक्तियाँ पिण्ड अर्थात् मानवीकाया में भी सूक्ष्म रूप में विद्यमान हैं । मानवी काय–पिण्ड उस विराट् विश्व–ब्रह्मांड का संक्षिप्त संस्करण है, अतः उसमें सन्निहित शक्तियों को यदि जाग्रत एवं विकसित किया जा सके तो वे भी उतनी ही समर्थ एवं चमत्कारी हो सकती हैं । यंत्र साधना में साधक यंत्र का ध्यान करते हुए ब्रह्मांड का ध्यान करता है और क्रमशः आगे बढ़ते हुए अपनी पिण्ड चेतना को वह ब्रह्म जितना ही विस्तृत अनुभव करने लगता है । एक समय आता है जब दोनों में कोई अंतर नहीं रहता और वह अपनी ही पूजा करता है । उसके ध्यान में पिण्ड और ब्रह्मांड का ऐक्य हो जाता है । वह भगवती महाशक्ति को अपना ही रूप समझता है, फिर उसे सारा जगत ही अपना रूप लगने लगता है । वह अपने को सब में समाया हुआ पाता है, अपने अतिरिक्त उसे और कुछ दृष्टिगोचर ही नहीं होता । वह अद्वैत सिद्धि के मार्ग पर प्रशस्त होता है और ऐसी अवस्था में आ जाता है कि ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय एक रूप ही लगने लगते हैं । साधक की चेतना अब अनंत विश्व और अखण्ड ब्रह्म का रूप धारण कर लेती है । यंत्र पूजा में यही भाव निहित है ।

'यंत्र' का अर्थ 'ग्रह' होता है । यह 'यम्' धातु से बनता है जिससे ग्रह का ही बोध होता है, क्योंकि यही नियंत्रण की प्रक्रिया दृष्टिगोचर होती है यों तो सामन्य–भौतिक अर्थ में यंत्र का तात्पर्य मशीन से लिया जाता है जो मानव से अधिक श्रम साध्य और चमत्कारी कार्य कर सकती है और हर कार्य में सहायक सिद्ध होती है । उदाहरण के लिए मोटर–कार, रेलगाड़ी, वायुयान, सैटेलाइट आदि की उपयोगिता एवं द्रुतगामिता से सभी परिचित हैं । इसी तरह माइक्रोस्कोप, टेलीस्कोप जैसे सूक्ष्म एवं दूरदर्शी यंत्रों को भी सभी लोग जानते हैं कि किस तरह उनसे सूक्ष्म से सूक्ष्म वस्तुओं एवं दूरस्थ वस्तुओं को देखा जा सकता है । इसी तरह विराट् ब्रह्म को देखना हो तो भी यंत्र की अपेक्षा रहती है, उसकी भावना करनी पड़ती है । तांत्रिक यंत्र को निर्गुण ब्रह्म के शक्ति–विकास का प्रतीक माना जाता है । अध्यात्मवेत्ताओं ने यंत्र के अभिप्राय को स्पष्ट करते हुए कहा भी है–"जिससे पूजा की जाये, वह यंत्र–है । तंत्र परम्परा में इसे देवता के द्वारा प्राण-प्रतिष्ठा प्राप्त यंत्र शरीर के रूप में देखा जाता है । यंत्र उस देवता के रूप का प्रतीक है जिसकी उपस्थिति को वह मूर्तिमान करता है और जिसका कि मंत्र प्रतीक होता है ।" इस तरह यंत्र को देवता का शरीर कहते हैं और मंत्र को देवता की आत्मा । इसके द्वारा मन को केन्द्रित और नियंत्रित किया जाता है । कुलार्णव तंत्र के अनुसार–"यम और समस्त प्राणियों से तथा सब प्रकार के भयों से त्राण करने के कारण ही इसे 'यंत्र' कहा जाता है । यह काम, क्रोधादि दोषों के समस्त दुःखों का नियंत्रण करता है । इस पर पूजित देव तुरंत ही प्रसन्न हो जाते हैं । सुप्रसिद्ध पाश्चात्य मनीषी सर जॉन वुडरफ ने भी अपने कृति "प्रिंसिपल्स ऑफ तंत्र" में लिखा है कि इसका नाम 'यंत्र' इसलिए पड़ा कि यह काम, क्रोध व दूसरे मनोविकारों एवं उनके दोषों को नियंत्रित करता है ।

यंत्र-साधना का उद्देश्य ब्रह्म की एकता सिद्धि प्राप्त करना है । यंत्र द्वारा इस अंतिम लक्ष्य तक पहुँचने के लिए विभिन्न प्रकार की साधनायें करनी पड़ती हैं । इनका संकेत-सूत्र यंत्र के विभिन्न अंगों से परिलक्षित होता है । उनका चिंतन–मनन करना होता है । विकार परिष्कार एवं भावसाधना से ही उत्कर्ष होता है । यंत्र के बीच में बिन्दु होता है, जो गतिशीलता का, प्रतीक है । शरीर और ब्रह्मांड का प्रत्येक परमाणु अपनी धुरी पर तीव्रतम गति से सतत् चक्कर काट रहा है । यह सर्वव्यापक है । अतः हमें भी उन्नति के मार्ग पर संतुष्ट नहीं रहना हैं, वरन् हर क्षण आगे बढ़ने के लिए तत्पर और गतिशील रहना है, तभी शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा गतिशील हो सकते हैं । बिन्दु आकाशतत्व का प्रतिनिधित्व करता है क्योंकि इसमें अनुप्रवेश भाव रहता है जो आकाश का गुण है । बिन्दु यंत्र का आदि और अंत भी होता है अतः यह उस परात्पर परम चेतना का प्रतीक है जो सबसे परे है, जहाँ शिव और शक्ति एक हो जाते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वस्तुतः प्रत्येक यंत्र शिव और शक्ति की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति कराने वाला एक अमूर्त ज्यामितीय संरचना होता है । इसमें उलटा त्रिकोण 'शक्ति' का और सीधा त्रिकोण 'शिव' का प्रतीक माना जाता है । एक -दूसरे को काटते हुए उलटे और सीधे त्रिकोणों से ही यंत्र विनिर्मित होता है । त्रिभुज का शीर्षकोण--(वर्टिकल --एंगल) जब ऊपर की ओर बना होता है तो यह अग्निशिखा का प्रतीक माना जाता है जो उन्नति का ऊपर उठने का भाव प्रदर्शित करता है । जब यह शीर्षकोण नीचे की ओर होता है तो जल--तत्व का द्योतक माना जाता है, क्योंकि नीचे की ओर प्रवाहित होना ही जल का स्वभाव है । यंत्र में त्रिकोणों के चारों ओर गोलाकार वृत--सर्किल बनाये जाते हैं जिसे पूर्णता का और खगोल का प्रतीक कहा जा सकता है । इसे वायु का द्योतक भी माना जाता है, क्योंकि वृत में चक्राकार गति के लक्षण पाये जाते हैं । जब एक बिन्दु दूसरे के चारों ओर चक्कर लगाता है तो वृत बनता है । वायु भी यही करती है और जिसके साथ संपर्क में आती है, उसे घुमाने लगती है । अग्नि और जल के साथ यही स्थिति रहती है ।

यंत्र में इस गोलाकार वृत के सबसे बाहर जो चार 'द्वार' वाला चतुष्कोण या चतुर्भुज बना होता है, उसे 'भूपुर' कहते हैं । इसमें बहुमुखता का भाव है । यह पृथ्वी का, भौतिकता का और विश्व--नगर का प्रतीक माना जाता है । किसी भी दशा में इसके चारों द्वारों को पार करके ही साधक मध्य में स्थित उस महाबिन्दु तक पहुँच सकता है जहाँ परम सत्य स्थित है । यह बिन्दु यंत्र के बीच में रहता है और यह अंतिम लक्ष्य माना जाता है । वहीं ईश्वर के दर्शन होते हैं और एकता सधती है ।

आगम ग्रंथों के अनुसार यंत्रों में चौदह प्रकार की शक्तियाँ अंतर्निहित होती हैं और प्रत्येक इन्हीं में से किसी न किसी शक्ति के अधीन रहते हैं । इन्हीं शक्तियों के आधार पर यंत्रों की रेखायें और कोष्ठकों का निर्माण होता है । इन यंत्रों में ३६ तत्त्वों का समावेश होता है, जिनमें पंचमहाभूत, पंच ज्ञानेन्द्रियाँ, पंचकर्मेन्द्रियाँ और पाँच इनके विषय--रूप, रस, गंध आदि तन्मात्रायें, मन, बुद्धि, अहंकार, प्रकृति पुरुष, कला, अविद्या, राग, काल, नियति, माया, विद्या, ईश्वर, शिव, शक्ति आदि आते हैं । जिस तरह मंत्रों में बीजाक्षर होते हैं, उसी तरह यंत्रों में भी १ से लेकर ३६ तक की संख्या बीज संख्या मानी गयी है । ये बीज संख्यायें चौदह शक्तियों पर आधारित होकर ३६ तत्वों के भावों को भिन्न--भिन्न प्रकट कर रेखाओं, कोष्ठकों के आकार--प्रकार और बीजाक्षरों के अधिष्ठाता देवी-देवताओं का प्रतिनिधित्व करती हुई उन देवशक्तियों को स्थान विशेष पर प्रकट कर मानव संकल्प की सिद्धि प्रदान करती हैं । इन्हीं ३६ तत्वों के अंतर्गत पृथ्वी जल, वायु, अग्नि आदि जो २५ वर्ण बीजों से संबंध रखते हैं ।

यंत्र विज्ञान में १, ६ तथा शून्य (०) की संख्या अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है । जिस प्रकार एकाक्षरी बीज मंत्रों के अनेक अर्थ होते हैं उसी तरह प्रत्येक संख्या बीज भी अनेक अर्थों वाले होते हैं । ये अंकबीज विभिन्न प्रकृति के मनुष्यों के ऊपर प्रभाव डालने की अपार शक्ति रखते हैं । मीमांसाशास्त्र में कहा गया है कि देवताओं की कोई अलग मूर्ति नहीं होती । वे मंत्र मूर्ति होते हैं । वे यंत्रों में आवद्ध रहते हैं और उन पर अंकित अंकों एवं शब्दों का जब लयबद्ध ढंग से भावपूर्ण जप किया जाता है तो उनसे एक विशिष्ट प्रकार की तरंगें उत्पन्न होती हैं जिसका प्रभाव उच्चारणकर्ता पर ही नहीं पड़ता, समूचे आकाश मंडल एवं ग्रह--नक्षत्रें पर भी पड़ता है । यंत्र शरीर में स्थित शक्ति केन्द्र को मंत्र एवं अंकों के शक्ति के सहकार से उद्दीप्त--उत्तेजित करता है । मानवी काया में अनेकों सूक्ष्म शक्ति केन्द्र हैं जिन्हें देवता की संज्ञा दी जा सकती है । यंत्र वस्तुतः इन्हीं विभिन्न शक्ति केन्द्रों के मानचित्र के समान हैं जिनकी साधना से साधक में तदनुरूप ही शक्तियों का विकास होता है और वह उत्तरोत्तर प्रगति करते हुए आत्मोत्कर्ष के चरमलक्ष्य तक जा पहुँचता है ।

मंत्रों की तरह यत्र भी बहुविध एवं संख्या में अनेकों हैं और उनका रचना विधान भी प्रयोजन के अनुसार कई प्रकार का होता है । तंत्रशास्त्रों में इस तरह के ६६० प्रकार के यंत्रों का वर्णन मिलता है जिनकी प्रतीकात्मकता की विशद व्याख्या भी की गयी है इनमें से कुछ यंत्रों को 'दिव्य यंत्र' कहा जाता है । ये स्वतः सिद्ध माने जाते है और दैवी शक्ति संपन्न होते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उदाहरण के लिए बीसायंत्र, श्री यंत्र, पंचदशी यंत्र आदि की गणना दिव्य यंत्रों में की जाती है। इसमें 'श्री यंत्र' सबसे प्रसिद्ध है। इसकी उत्पत्ति के संबंध में 'योगिनी हृदय' में कहा है कि "जब परात्परा शक्ति अपने संकल्प बल से ही विश्व-ब्रह्मांड का रूप धारण करती है और अपने स्वरूप को निहारती है तभी 'श्री यंत्र' का आविर्भाव होता है।"

'श्री यंत्र' आद्यशक्ति का बोधक है। इसका आकार ब्रह्माण्डांकार है जिसमें ब्रह्मांड की उत्पत्ति और विकास का प्रदर्शन किया गया है। यह कई चक्रों में बँटा होता है जिनमें से प्रत्येक की अपनी महिमा-महत्ता है। इस यंत्र के सबसे अंदर वाले वृत के केन्द्र में बिन्दु स्थित होता है जिसके चारों ओर नौ त्रिकोण बने होते हैं। इनमें से पाँच की नोंक ऊपर की ओर और चार की नीचे की ओर होती है। ऊपर की ओर नोंक वाले त्रिभुजों को भगवती का प्रतिनिधि माना जाता है और शिव युवती की संज्ञा दी जाती है। नीचे की ओर नोंक वाले शिव का प्रतिनिधित्व करते हैं। इन्हें 'श्री कंठ,' कहते हैं।

ऊर्ध्वमुखी पाँच त्रिकोण, पाँच प्राण, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ, पाँच तन्मात्रयें और पाँच महाभूतों के प्रतीक हैं। शरीर में यह अस्थि, मांस, त्वचा आदि के रूप में विद्यमान हैं। अधोमुखी चार त्रिकोण शरीर में जीव, प्राण, शुक्र और मज्जा के प्रतीक हैं और ब्रह्मांड में मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार के प्रतीक हैं। ये सभी नौ त्रिकोण नौ मूल प्रकृतियों का प्रतिनिधित्व करते हैं। त्रिकोण के बाहर या पश्चात् जो वृत्त होते हैं वे शक्ति के द्योतक हैं। इस यंत्र में पहले वाले वृत्त के बाहर एक आठ दल वाला कमल है तथा दूसरा सोलह दलों वाला कमल दूसरे वृत्त के बाहर है। सबसे बाहर चार द्वारों वाला 'भूपुर' है जो विश्व ब्रह्मांड की सीमा होने से शक्ति गति-क्षेत्र है।

इस यंत्र में ऊर्ध्वमुखी त्रिकोण अग्नितत्त्व के, वृत्त वायु के, बिन्दु आकाश का और भूपुर पृथ्वी तत्व का प्रतीक माना जाता है। यह यंत्र सृष्टिक्रम का है। "आनंद लहरी" में आद्य शंकराचार्य ने इसका विस्तृत वर्णन किया है। वे स्वयं इसके उपासक थे। उनके हर मठ में यह यंत्र रहता है। योगिनी तंत्र में भी इसका वर्णन करते हुए कहा गया है कि आध्यात्मिक उन्नति के विशेष स्तर पहुँचने पर ही साधक इसकी पूजा का अधिकारी होता है। सिद्धयोगी अंतर पूजा में प्रवेश करते हुए यंत्र की पूजा से प्रारंभ करता है जो ब्रह्म विज्ञान का संकेत है।

यंत्रों में बिन्दु, रेखा, त्रिकोण, वृत्त आदि ज्यामितीय विज्ञान का असाधारण प्रयोग होता है। इसकी महत्ता प्रदर्शित करते हुए प्रख्यात यूनानी तत्त्वज्ञ प्लेटो ने अपनी पाठशाला के बाह्यकक्ष पर यह घोषणा लिखवादी थी कि जो विद्यार्थी ज्यामिति से अपरिचित हों वह इस पाठशाला में प्रवेश के लिए प्रयत्न न करें। आधुनिक विज्ञानवेत्ता भी यंत्र रचना पर गंभीरतापूर्वक अनुसंधानरत हैं और उसकी मेटाफिजिकल पावर एवं अद्भुत स्थापत्य को देखकर आश्चर्यचकित हैं। मास्को विश्वविद्यालय रूस के मूर्धन्य भौतिकी विद् एवं गणितज्ञ डा. अलेक्सेई कुलाई-चेव ने प्राचीन भारतीय कर्मकाण्डीय आकृतियों विशेषकर 'श्री यंत्र' के बारे में गहन खोज की है और पाया है कि यह एक जटिल आकृति है जो वृत्त में अंतर्निहित नौ त्रिभुजों से बनी है। उच्च बीज गणित, सांख्यिक-विश्लेषण, ज्यामिति एवं कम्प्यूटर आदि की मदद से ही वे इस आकृति को बनाने में सफल हुए। उनका कहना है कि विश्व प्रपंच से संबंधित तंत्र की धारणायें बहुत कुछ विश्वोत्पत्ति की 'विग-बैंग' वाली वैज्ञानिक मान्यताओं तथा 'तप्त विश्व' के सिद्धांतों से मिलती-जुलती हैं। यंत्र रचना का रहस्य वैज्ञानिकों एवं गणितज्ञों के लिए अभी भी एक चुनौती बना हुआ है। यंत्रों के अर्थ, उद्देश्य एवं उनमें अंतर्निहित प्रेरणाओं को यदि समझा और तदनुरूप साधना की जा सके तो सिद्धि अवश्य मिलती है, इसमें कोई संदेह नहीं।

तंत्र द्वारा शक्तियों का आदान-प्रदान

दक्षिण मार्ग की आध्यात्मिक साधनाऐं स्वयं ही करनी होती है। कहावत है कि अपने मरे बिना स्वर्ग दिखाई नहीं पड़ता। दूसरे को भोजन कराने से अपना पेट नहीं भरता, दूसरी की पढ़ी हुई विद्या कितना ही खर्च करने पर भी अपने को नहीं मिल सकती। इसी प्रकार आत्मोन्नति के लिए की हुई योग साधना भी वही फलदायक होती है जो स्वयं की जाती है। ईश्वर भक्ति, सदाचार,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ध्यान, चिन्तन, अपने द्वारा किये जाने पर ही फलदायक होते हैं ।

परन्तु तांन्त्रिक विधि के अनुसार साधनायें दूसरों से भी कराई जा सकती हैं, क्योंकि तंत्र साधन भी पंच भौतिक हैं और उनके उद्देश्य भी सांसारिक है । सांसारिक पदार्थों का आदान-प्रदान और क्रिय-विक्रय हो सकता है । रुपया के बदले में श्रम, समय, बुद्धि या वस्तुओं को खरीदा बेचा जा सकता है । एक प्राणी के शरीर का भाग दूसरे प्राणी के शरीर में लगा देने की विद्या में अब डाक्टर लोग बहुत हद तक सफल होने लगे हैं । किसी रोगी के शरीर में रक्त कम पड़ जाय तो दूसरे स्वस्थ मनुष्य का रक्त पिचकारी द्वारा निकाल कर उस रोगी के शरीर में प्रवेश करा दिया जाता है । बन्दर के अण्डकोषों को मनुष्य के अण्डकोष के स्थान पर बदल दिया जाता है इससे मनुष्य पुनः युवा बन जाता है । इसी प्रकार हड्डियां भी दूसरों के शरीर में लगाई जाती हैं और फूटी हुई आंख के स्थान पर दूसरे की स्वस्थ आंख लगा कर उसे पुनः नया बना दिया जाता है । इस प्रकार का आदान-प्रदान एक शरीर से दूसरे के शरीर में हो सकता है । फिर प्रत्यक्ष खरीदी और बेची जा सकने वाली चीजों के बारे में तो कहना ही क्या है । पैसे के बदले में प्रायः सभी सांसारिक वस्तुऐं इच्छानुसार मात्र में मिल जाती हैं ।

तांत्रिक विज्ञान द्वारा इसी आधार पर कुछ सूक्ष्म आदान–प्रदान हो सकते हैं जो मालूम तो ऐसे पड़ते हैं कि यह कोई आध्यात्मिक आदान-प्रदान हुआ पर वस्तुतः वह भौतिक वस्तुओं की ही अदला-बदली होती है । आत्मा की उन्नति-अवनति से उसका कोई सीधा संबंध नहीं होता । तंत्र के कई ज्ञाता एक मनुष्य की आयु का दूसरे को दान करा देते हैं, सुना जाता है कि अमुक मृत प्राणी को अमुक सिद्ध ने जीवित बना दिया, इसमें ऐसा होता है कि वह सिद्ध अपनी आयु का एक अंश उस मृत व्यक्ति को दे देता है और जब तक वह दी हुई आयु चलती है तब तक वह प्राणी जीता रहता है । कई सिद्ध अपने शिष्यों के सिर पर हाथ रखकर उनकी कुण्डलिनी शक्ति जाग्रत कर देते हैं, इसमें भी यही होता है कि गुरू अपनी शक्ति शिष्य के शरीर में प्रवेश करके उसके चक्रों को वेधता हुआ कुण्डलिनी पर आघात पहुँचा देता है फलस्वरूप कुण्डलिनी तिलमिला जाती है और ऐसा लगता है मानो उसकी कुण्डलिनी जाग्रत हो गई हो । वास्तव में वह जागरण नहीं होता वरन् स्फुरण मात्र होता है । यदि योग्य शिष्य उस स्फुरण को मजबूती से पकड़ कर ऊपर चढ़ता जाय तब तो बात अलग है अन्यथा वह स्फुरण थोड़े समय में शिथिल हो जाता है और फिर वही पूर्व अवस्था आ जाती है ।

शक्तिपात का प्रभाव कुछ अधिक स्थायी होता है । क्योंकि शक्ति सम्पन्न व्यक्ति अपनी उत्तम शक्ति का एक भाग अपने प्रिय व्यक्ति को दे देता है । वह उपेक्षा पूर्वक उसे बर्बाद करदे तब तो बात दूसरी है अन्यथा वह दी हुई शक्ति बहुत समय तक एक संचित पूंजी की तरह काम देती रहती है । जैसे एक मनुष्य का रक्त दूसरे मनुष्य के शरीर में डालकर उसे एक नई चेतना प्रदान की जाती है उसी प्रकार शक्तिपात द्वारा कोई शक्तिशाली व्यक्ति किसी दूसरे को कृपा पूर्वक अपना बल दे सकता है । जिस प्रकार तंत्र के ज्ञाता अपना बल दूसरे को दे सकते हैं वैसे ही वे दूसरे के बल को खींच भी सकते हैं । बालि को ऐसी ही विद्या मालूम थी जिसके द्वारा जो भी उसके सामने पड़ता था उसके आधे बल को वह खींच लेता था । हम अपनी "मानवीय विद्युत के चमत्कार" पुस्तक में यह बता चुके हैं कि यदि वृद्ध पुरुषों और नवयौवना स्त्रियों का काम संबंध हो तो वह स्त्री जल्दी ही अपनी शक्ति उस वृद्ध को चुसा देने से बुडढी हो जायगी । इसी प्रकार यदि वृद्ध को स्त्री से अल्पायु पुरुष का संबंध हो तो वह अपनी शक्तियां उस वृद्धा को देकर थोड़े ही समय में छूँछ बन जायगा । व्यभिचार से अनेक हानियां उठाते हुए भी वेश्याऐं दीर्घकाल तक सुन्दर बनी रहती हैं इसका एक मात्र कारण उनका शक्ति चूसते रहना ही है । अमीर आदमी गर्हित प्रणाली को अपना कर अनेक सुकुमार स्त्रियों से काम सेवन करके अपने में शक्ति संचय करते हैं । यह अनैतिक तरीके ऐसे ही निद्य हैं जैसे मांस–मछली, अण्डे आदि खाकर अपनी बढ़ोतरी का प्रयत्न करना । दुष्ट प्रकृति के तांत्रिक भी ऐसे ही तरीके अपना कर दूसरों की शक्ति को खा जाते हैं परन्तु उच्च उद्देश्य वाले ऐसा कदापि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नहीं कर सकते । क्योंकि वे जानते हैं कि यह गर्हित मार्ग है । इसलिए जो भी शक्ति दक्षिण या वाममार्ग से प्राप्त करते हैं उसे आत्मकल्याण या लोक हित के लिए लगाते हैं ।

मैस्मरेजम हिप्नोटिज्म का तरीका भी यही है कि प्रयोक्ता अपनी शक्ति को दूसरे के शरीर में इतनी अधिक मात्रा में प्रवेश कर देता है कि वह अपना मस्तिष्क खो बैठता है, और प्रयोक्ता का आधिपत्य उसके शरीर पर हो जाता है । वह जैसा चाहे जैसा उसके शरीर से काम लेता है । सत्संग और कुसंग के प्रभाव पड़ने का आधार भी यही है । जैसे एक तालाब में पानी कम है और दूसरे में अधिक है, और उन दोनों के बीच एक नाली बनादी जाय तो अधिक पानी वाले तालाब का पानी कम पानी वाले में जाने लगेगा और तब तक जाता रहेगा जब तक दोनों की सतह एक सीध में न आ जाय । इसी प्रकार भली और बुरी प्रकृति के लोग एक साथ रहें तो दोनों पक्षों में जो अधिक शक्तिशाली होगा उसका प्रभाव दूसरे पक्ष पर पड़ेगा और तब तक पड़ता रहेगा जब तक कि दोनों समान स्थिति पर न पहुँच जाय । यही कुसंग और सत्संग का रहस्य है । जो पक्ष कमजोर होगा वह प्रभावित होगा और जो पक्ष अधिक शक्तिशाली होगा वह दूसरे को प्रभावित करेगा । रस्सा खींचने के खेल में जिधर के खिलाड़ी अधिक जोरदार होते हैं उधर ही रस्सा खिंच जाता है ।

उपर्युक्त बातों पर विचार करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि कुछ हद तक उन सुक्ष्म शक्तियों का भी आदान–प्रदान हो सकता है जो आध्यात्मिक सी लगती तो हैं पर वे वस्तुतःआत्मा से संबंधित न होकर भौतिक हैं । हाँ, उनको स्थूल भौतिक न कहकर सुक्ष्म भौतिक कहना पड़ेगा । इस सूक्ष्म भौतिक क्षेत्र को ही तंत्र विद्या प्रभावित करती है । उसके द्वारा ईश्वर प्राप्ति, मुक्ति, आत्मदर्शन, सद्गति जैसी आत्मिक सम्पत्तियाँ तो नहीं मिल सकतीं पर सांसारिक मनोकामनाएँ बहुत हद तक पूरी हो सकती हैं, उचित भी और अनुचित भी । मारण, मोहन, उच्चाटन, वशीकरण आदि अभिचार ही हो सकते हैं और धन, संतान, स्वास्थ्य, यश, विघ्न–निवारण जैसी कामनाएँ भी पूर्ण हो सकती हैं । जैसे स्थूल भौतिक उपायों द्वारा इन कार्यों को पूरा किया जा सकता है वैसे ही तंत्र की सूक्ष्म भौतिक उपायों द्वारा भी इनकी पूर्ति हो सकती है ।

जिस प्रकार सांसारिक कार्यों के लिए दूसरों का सहयोग लिया जाता है वैसे ही तंत्रोक्त कार्यों के लिए भी कार्यकर्ताओं की नियुक्ति करके काम चलाया जा सकता है । कोई व्यक्ति एक कारखाना खोलता है और उसको चलाने के लिए कर्मचारी नियुक्त कर देता है । वे कर्मचारी जो काम करते हैं उसका लाभ उस संचालक को मिलता हैं । कर्मचारी गण एक लिखित मौखिक या प्रचलित परम्परा के अनुसार यह इकरार कर देते हैं कि हम अपने श्रम का लाभ उस व्यक्ति के पक्ष में बेचते हैं जो वेतन देता है । इस इकरार के बाद काम चलने लगता है और बड़े-बड़े उत्तर दायित्यपूर्ण कार्यों को वे कर्मचारी पूरा कर डालते हैं और संचालक उन सब लोगों से लाभान्वित होता रहता है । तांत्रिक क्षेत्रों में भी यह प्रचलित है । पूजा, पाठ, जप, आदि के लिए भी कर्मचारी नियत कर दिये जाते हैं । वे जो कर्मकाण्ड करते हैं उसका फल उस व्यक्ति के लिए जाता है जो उनको आयोजन कराता है । जैसे मालिक और नौकर में एक लिखित या मौखिक शर्त बन्दी हो जाती हैं । वैसे ही यजमान और पुरोहित में भी ऐसी ही शर्त बन्दी हो जाती है । पुरोहित हाथ को पवित्र सूत्र से बांध कर, यजमान उसे किसी कार्य के लिए वरण करता, और अमुक कार्य पूरा करने का संकल्प करके उसे अपने बंधन में बांधता है कि उतना श्रम मेरे लिए किया जाय । पुरोहित उसे स्वीकार करने का मंत्र पढ़ता है और जितना साधन करने का वचन दिया है उसे पूरा करता है । तांत्रिक प्रक्रिया के अनुसार इस प्रकार ऐसे सूक्ष्म भौतिक उपाय भी किये जाते हैं जिनसे मनुष्य अपनी प्रसन्नता के हेतु की प्राप्त कर सके । ऐसे आयोजनों में दो बातें आवश्यक हैं–एक तो पुरोहित का चुनाव दूसरा उसका उचित वेतन । अयोग्य, अश्रद्धालु, असदाचारी, कामचोर पुरोहित अपने यजमान का भला नहीं कर सकता इसलिए सत्पात्रों के चुनाव में विशेष ध्यान रखना चाहिए । दूसरी ओर उन्हें उचित पारिश्रमिक जैसे पेट भरी हुई गौ पूरा दूध देती है वैसे ही पेट भरा हुआ कर्मचारी भी संतुष्ट रहकर सद्भावना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पूर्वक काम करता है । गायत्री की तांत्रिक साधना जो किसी सकाम उद्देश्य के लिए करानी हो किसी ऐसे ही योग्य व्यक्ति द्वारा कराई जा सकती है । जप, अनुष्ठान और पुरश्चरण इस प्रकार होते भी हैं ।

दक्षिण मार्गी साधनाओं की भांति तांत्रिक साधनायें भी स्वयं की जायं तो सर्वोत्तम हैं, पर यदि किसी के लिए वैसा करना, संभव न हो तो उसे किसी अन्य कार्यकर्त्ता को नियुक्त करके पूरा कराया जा सकता है । यह ध्यान रखना चाहिए कि दूसरों से कराने की यह सुविधा सकाम उद्देश्य से किये जाने वाले तांत्रिक उपकारों में ही है । आत्मकल्याण के लिए योग के दक्षिण मार्गी साधन-साधक को स्वयं ही करने होते हैं । उन्हें दूसरों के द्वारा नहीं कराया जा सकता ।

* * *

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

परमपूज्य गुरुदेव की अभिनव पाँच स्थापनाएँ

युगदृष्टा के स्तर की अवतारी सत्ता के रूप में परमपूज्य गुरुदेव ने अपने अस्सी वर्ष के जीवन काल में जितना भी कुछ किया, उसकी मिसाल कहीं देखने को नहीं मिलती। करोड़ों व्यक्तियों के मनों का निर्माण उनके सोचने के तरीके में बदलाव एवं युगनिर्माण की पृष्ठभूमि बनाकर रख देने का कार्य इन्हीं के स्तर की सत्ता कर सकती थी जो लाखों वर्षों में कभी-कभी धरती पर आती है। उनके द्वारा की गयी स्थापनाओं का जब प्रसंग आता है तब ईंट-गारे-चूने-सीमेंट से बने भवनों से पहले उनकी स्नेह-संवेदना से सिक्त हुए, ममत्व में स्नानकर उनके अपने हो गये लाखों व्यक्ति दिखाई पड़ते हैं, जिनने उनके एक इशारे पर अपना सब कुछ उनको अर्पित कर दिया। स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में कभी ऐसा ही वातावरण भारत के कोने-कोने में दिखाई देता था, जब हर घर से सत्याग्रही निकलकर आ रहे थे। भावनाओं का आवेग चिरस्थायी नहीं रहता। वे ही लोग जो कभी राष्ट्रनिर्माण के लिए अपना सब कुछ छोड़ पढ़ना-लिखना छोड़ देश को आजाद बनाने के लिए कूद पड़े थे, कभी गड़बड़ाने न पाएँ, उसी के लिए बापू ने आजादी के बाद कांग्रेस भंग कर देने व सभी को एक आदर्श स्वयं सेवक की तरह दरिद्र नारायण का उत्थान कर राष्ट्र निर्माण में लग जाने की सलाह दी थी।

सभी इस तथ्य को जानते हैं कि ऐसा नहीं हुआ, राष्ट्र का कीर्ति स्तम्भ रूपी वह महापुरुष भी एक वर्ष के अंदर ही शहादत को प्राप्त हो चला गया। गिने-चुने उनके आदर्शों पर चलने वाले रह गये, अवसरवादियों को राजनेतृत्व भाने लगा एवं राष्ट्र आजाद होकर भी उनके हाथ में आ गया जो ब्रिटिश तो नहीं थे किन्तु, उसी रंग में रंगे सत्ता के उन्माद में काम करने वाले शासक थे- सुजेता नहीं। जिंदा रहा तो मात्र बापू का दर्शन बुनियादी आधार पर टिका-मानव को बनाने का तंत्र-आश्रम तंत्र जो सेवाग्राम-साबरमती आश्रम के रूप में कार्य करता रहा और वह भी शीर्ष-पुरुष के न रहने, बिनोबा जी के चले जाने के बाद अस्तित्त्व व महत्व की दृष्टि से गौण हो गया। परमपूज्य गुरुदेव ने अपनी दिव्य-दृष्टि से यह सब पूर्व में ही देख लिया था कि कोई भी भव्य निर्माण आश्रम या तंत्र बनाने से पूर्व राष्ट्र को सांस्कृतिक भौतिक, आध्यात्मिक आजादी दिलाने वाले अगणित व्यक्ति तैयार करने पड़ेंगे। १९११ में आज से ८४ वर्ष पूर्व वि. संवत् २०६८ में जन्में राष्ट्र की आजादी में उन्मत्त बने श्रीराम मत्त कहलाने वाले, आचार्य श्री ने पहले स्वयं को तपाया, वैचारिक क्रांति के निर्माण का आधारभूत तंत्र स्वयं व परमवंदनीया माता जी के रूप में खड़ा किया, 'अखण्ड ज्योति' पत्रिका-अपनी लेखनी से लिखी ममत्व भरी चिट्ठियों व छोटी-छोटी एक आने की किताबों से जन-जन के मन को छुआ, तब जाकर अपने एक लक्ष के २४ गायत्री महापुरश्चरणों की पूर्णाहुति पर उनने गायत्री तपोभूमि, मथुरा की स्थापना की बात १९५२-५३ में सोची। सबसे पहली मंत्र दीक्षा वहीं पर १९५३ में दी व यह मानते हुए कि बिना आध्यात्मिक आधार बनाये, मनोभूमि में, भावनाओं के स्तर पर बदलाब लाये कोई क्रांति सफल नहीं हो सकती, धीमी खुराक देते हुए हर व्यक्ति को गायत्री व यज्ञ के तत्व दर्शन से जोड़ते हुए चले गये। गायत्री परिवार रूपी विराट वट वृक्ष का मूल आधार वह स्थापना है जो जन-जन के मनों में पहले हुई- उनकी भाव संवेदनाओं के उदात्तीकरण के रूप में संपन्न हुई व उनके अंदर अपनी गुरु सत्ता को देखकर त्याग करने की यज्ञीय जीवन अपनाने की प्रेरणा बलवती होने लगी। उनने सर्वमेध के रूप में अपना सर्वस्व बलिदान एवं नरमेध के रूप में अपने आप को समाज के हित न्यौछावर करने की भावना से दो यज्ञ किये। अपनी जमींदारी के बाण्ड बेचकर एवं परमवंदनीया माताजी के कीमती सोने के जेवर (ढाई सौ तोले) बेचकर जो स्वेच्छा से संपन्न हुआ, एक स्थापना भवन के रूप में जो हुई- वह थी **गायत्री तपोभूमि, मथुरा** जो वृन्दावन रोड पर ऋषि दुर्वासा की जन्मस्थली पर बनी आज से ४२ वर्ष पूर्व १९५३ में। प्रारंभिक स्थापना यों अखण्ड ज्योति संस्थान को माना जा सकता है जहाँ अखण्ड दीपक आँवल खेड़ा से अपनी जन्मभूमि से जो वहाँ से मात्र ४० मील दूर थी, स्थापित किया गया था एवं प्रारंभिक तप-तितिक्षा वहीं पर १९४१ से, तपोभूमि की स्थापना से भी 12 वर्ष पूर्व आरंभ हो गयी थी। इस प्रकार जन-जन के मनों का निर्माण उनके अंत: स्थल में प्रवेश कर उनके अंदर देवत्व के जागरण की ललक पैदा करने वाली पृष्ठभूमि पर स्थापनाओं का क्रम बना। किराये की ऐसी हवेली जिसे भुतहा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

हवेली कहा जाता था, में अखण्ड दीपक की स्थापना, उसके समक्ष तप, **अखण्ड ज्योति संस्थान, घीयामण्डी, मथुरा** के रूप में विकसित हुआ एवं एक और दूसरा निर्माण मथुरा में ही गायत्री तपोभूमि के रूप में हुआ जोकि ३ मील दूर वृन्दावन रोड पर १९५३ बनाई गई। १९५३ में एवं क्रमशः सुसंगठित गायत्री परिवार के बनने की प्रक्रिया चल पड़ी।

इस प्रारंभिक भूमिका को समझने के बाद ही परमपूज्य गुरुदेव की पाँच मूल स्थापनाओं एवं बाद में देश के कोने-कोने में बनी भव्य इमारतों के रूप में शक्तिपीठों- प्रज्ञा संस्थानों भारत व विश्वभर में घर-घर में स्थापित स्वाध्याय मण्डलों व गायत्री परिवार की शाखाओं, प्रज्ञापीठों-चरणपीठों का महत्व समझा जा सकता है। नहीं तो जैसे अन्यान्य आश्रम-संस्थान बनते हैं ऐसे इनका भी वर्णन किया जा सकता था व यह कहा जा सकता था कि यह वैभवपूर्ण स्थापनाएँ पूज्यवर ने कीं। उनमें यदि प्राण फूँके गये हों, प्राणवान व्यक्ति वहाँ रहते हों व उस शक्ति के महा-अवसान के बाद भी वे सतत उसी दिशा में चल रहे हों तो माना जाना चाहिए कि प्रारंभिक पुरुषार्थ जो किया गया, वह औचित्य पूर्ण था।

परम पूज्य गुरुदेव की महत्वपूर्ण पाँच स्थापनाएँ, इस प्रकार हैं-

(१) युगतीर्थ आँवलखेड़ा (२) अखण्ड ज्योति संस्थान, घीयामण्डी, मथुरा (३) गायत्री तपोभूमि, मथुरा (४) शांतिकुंज, गायत्री तीर्थ, सप्तसरोवर, हरिद्वार तथा (५) ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान, सप्तसरोवर, हरिद्वार।

युगतीर्थ आँवलखेड़ा का नाम सबसे पहले इसलिए लिखा कि यहीं पर वह युगपुरुष जन्मा संवत् १९६८ की आश्विन कृष्ण त्रयोदशी तिथि के दिन ब्राह्म मुहूर्त में, जो अँग्रेजी तारीख से २० सितम्बर १९११ के दिन आती थी। एक श्री मंत ब्राह्मण परिवार में, जहाँ धन की कोई कमी नहीं थी, पूरा परिवार संस्कारों से अनुप्राणित-पिता भागवत के प्रकाण्ड पंडित बहुत बड़ी जागीर के मालिक। आज जहाँ पूज्यवर की स्मृति में एक विराट स्तंभ की, एक चबूतरे की तथा उनके कर्तृत्व रूपी शिलेखों की स्थापना हुई है- वहीं पूज्यवर ने शरीर से जन्म लिया था। समीप बनी दो कोठरियाँ जो काल प्रवाह के क्रम में गिर सी गयी थीं, जीर्णोद्धार कर वैसी ही निर्मित कर दी गयी हैं- जैसी उनके समय में थी। जन्मभूमि का कण-कण उस दैवीसत्ता की चेतना से अनुप्राणित है। उनके हाथ से खोदा कुआँ जिसे पूरे गाँव का एक मात्र मीठे जल वाला कुआँ माना गया- वह अभी भी है, उनके हाथ से रोपा नीम का पेड़ एवं वह बैठक जहाँ स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में सब बैठकर चर्चा करते थे, आज भी उन दिनों की याद दिलाते हैं। पास में ही दो कोठरियाँ हैं जिनमें से एक कक्ष में वह स्थान है जहाँ दीपक के प्रकाश में से सूक्ष्म शरीर धारी गुरुसत्ता प्रकट हुई थी तथा जिसने उनके जीवन की दिशा धारा का १९२६ के बाद के क्रम का निर्धारण कर दिया था। यह सब देखकर मस्तिष्क पटल पर वह दृश्य उभर आता था, जिसे गुरुसत्ता ने कभी देखा था व जो गायत्री परिवार की स्थापना का मूल आधार बना। आँवलखेड़ा में ही उनकी माताजी की स्मृति में स्थापित माता दानकुँवरि इंटर कालेज है जो उनके द्वारा दान दी गयी जमीन में प्रदत्त धन राशि द्वारा विनिर्मित्त है। १९६३ से चल रहे इस इंटर कालेज से कई मेधावी छात्र निकल कर आत्म निर्भर बने हैं व उच्च पदों पर पहुँचे हैं।

१९७९-८० में गायत्री शक्तिपीठ-एवं कन्या इंटर कालेज की स्थापना का ताना-बाना बुना जाने लगा एवं एक विशाल शक्तिपीठ तथा आसपास के दो सौ ग्रामों की बालिकाओं के पठन-पाठन की व्यवस्था करने वाले, उन्हें सुशिक्षित संस्कारवान आत्मावलम्बी बनाने वाले कन्या महाविद्यालय का अब रूप ले चुका है। प्रथम पूर्णाहुति हेतु इसी भूमि को जो शक्तिपीठ-जन्मभूमि-ग्रामीण क्षेत्र के चारों ओर है, इसीलिए चुना गया कि यहाँ से उद्भूत प्राण ऊर्जा से यहाँ आने वाला हर संकल्पित साधक अनुप्राणित होकर जाए व राष्ट्र के नव निर्माण की सांस्कृतिक-भावनात्मक क्रांति की पृष्ठभूमि रख सके। यहाँ पूज्यवर १९३६-३७ तक ही रहे, कुछ दिन आगरा रहकर १९४०-४१ में मथुरा चले गये जहाँ दो-तीन मकान बदलने के बाद वर्तमान मकान किराये पर लिया जिसे आज अखण्ड-ज्योति संस्थान कहते हैं।

अखण्ड ज्योति संस्थान, घीया मण्डी, मथुरा में स्थित हैं। परमपूज्य गुरुदेव सीमित साधनों में अपने अखण्ड दीपक के साथ यहीं रहने लगे एवं यहीं से क्रमशः आत्मीयता विस्तार की जन-जन तक अपने क्रांतिकारी चिंतन के विस्तार की प्रक्रिया 'अखण्ड ज्योति' पत्रिका, जो आगरा से ही आरंभ कर दी गयी थी, की 'गायत्री चर्चा' स्तंभ व अन्यान्य

लेखों की पंक्तियों के माध्यम से संपन्न होने लगी। व्यक्तिगत पत्रों द्वारा उनके अंतस्तल को स्पर्श कर एक महान स्थापना का बीजारोपण होने लगा। यहीं पर अगणित दुखी, तनाव ग्रसित व्यक्तियों ने आकर उनके स्पर्श से नये प्राण पाये तथा उनके व परम वंदनीया माताजी के हाथों से भोजन-प्रसाद पाकर उनके अपने होते चले गये। हाथ से बने कागज पर छोटी टेण्ड्रिल मशीनों द्वारा यहीं पर अखण्ड ज्योति पत्रिका छापी जाती थी व छोटी-छोटी किताबों द्वारा लागत मूल्य पर उसे निकालने योग्य खर्च निकलता था। बगल की एक छोटी सी कोठरी में जहाँ अखण्ड दीपक जलता था, आज पूजा घर विनिर्मित है। पूरी बिल्डिंग को खरीद कर उनके सुपुत्र ने एक नया आकार व मजबूत आधार दे दिया है किन्तु यह कोठरी अंदर से वैसी ही रखी गयी है जैसी पूज्यवर के समय में 1942-43 में रही होगी। तब से लेकर आगामी ३० वर्ष का साधनाकाल-लेखनकाल पूज्यवर का इसी घीयामण्डी के भवन में छोटी-छोटी दो कोठरियों में गहन तपश्चर्या के साथ बीता। तपोभूमि निर्माण की पृष्ठभूमि यहीं बनी, १९५८ सहस्र कुण्डीयज्ञ की आधार शिला यहीं रखी गयी, यहीं सारी योजना बनी एवं विधिवत-गायत्री परिवार बनता चला गया। रोज आने वाले पत्रों को स्वयं परम वंदनीया माताजी पढ़ती जातीं एवं पूज्यवर इतनी ही देर में जवाब लिखते जाते, यही सूत्र संबंधों के सुदृढ़ बनने का आधार बना। हर परिजन को तीन दिन में जवाब मिल जाता, शंका-समाधान होता चला जाता एवं देखते-देखते एक विराट गायत्री परिवार बनता चला गया। गायत्री महाविज्ञान के तीनों खण्ड, युग निर्माण परक साहित्य, आर्ष-ग्रन्थों के भाष्य को अंतिम आकार देने का कार्य यहीं संपन्न हुआ। जन सम्मेलनों छोटे-बड़े यज्ञों एवं १००८ कुण्डी पाँच विराट यज्ञों में पूज्यवर यहीं से गये एवं विदाई सम्मेलन की रूपरेखा बनाकर स्थायी रूप से इस घर से १९७१ की २० जून को विदा लेकर चले गये। इस संस्थान के कण-कण में जहाँ आज १० लाख से अधिक संख्या में हिन्दी सहित सभी भाषाओं में अखण्ड ज्योति पत्रिका के प्रकाशन विस्तार डिस्पैच आदि का एक विराट तंत्र स्थापित है, परमपूज्य गुरुदेव की चेतना संव्याप्त अनुभव की जा सकती है। भले ही बहिरंग का कलेवर बदल गया हो, अंदर प्रवेश करते ही परमपूज्य गुरुदेव व परम वंदनीया माताजी की सतत विद्यमान प्राणचेतना के स्पन्दन वहाँ विद्यमान हैं, यह प्रत्यक्षत: देखा जा सकता है।

गायत्री तपोभूमि, मथुरा को परमपूज्य गुरुदेव की चौबीस महापुरश्चरणों की पूर्णाहुति पर की गयी स्थापना माना जा सकता है, जिसे विनिर्मित ही गायत्री परिवार रूपी संगठन के विस्तार के लिए किया गया था। इसकी स्थापना से पूर्व चौबीस सौ तीर्थों के जल व रज को संग्रहीत करके यहाँ उनका पूजन किया गया, एक छोटी किन्तु भव्य यज्ञशाला में अखण्ड अग्नि स्थापित की गयी तथा एक गायत्री महाशक्ति का मन्दिर विनिर्मित किया गया। चौबीस सौ करोड़ गायत्री मंत्रों का लेखन जो श्रद्धापूर्वक नैष्ठिक साधकों द्वारा किया गया था, यहाँ पर संरक्षित कर रखा गया है। पू० गुरुदेव की साधना स्थली व प्रात: काल की लेखनी की साधना की कोठरी यदि अखण्ड ज्योति संस्थान में थी तो उनकी जन-जन से मिलने, साधनाओं द्वारा मार्गदर्शन देने की कर्म-भूमि गायत्री तपोभूमि थी। यहीं पर १०८ कुण्डी गायत्री महायज्ञ में १९५३ में पहली बार पूज्यवर ने साधकों को मंत्र दीक्षा दी। यहीं पर १९५६ में नरमेध यज्ञ तथा १९५८ में विराट सहस्रकुण्डी यज्ञायोजन संपन्न हुए। श्रेष्ठ नररत्नों का चयन कर गायत्री परिवार को विनिर्मित करने का कार्य यहीं व्यक्तिगत मार्गदर्शन द्वारा संपन्न हुआ। हिमालय प्रवास से लौटकर पूज्य आचार्य श्री ने युग निर्माण योजना के शत सूत्री कार्यक्रम एवं सत्संकल्प की तथा युगनिर्माण विद्यालय के एक स्वावलम्बन प्रधान शिक्षा देने वाले तंत्र के आरंभ होने की घोषणा की। यह विधिवत् १९६४ से आरम्भ किया गया एवं अभी भी सफलतापूर्वक चल रहा है। जिस कक्ष में परमपूज्य गुरुदेव सभी से मिला करते थे, अभी भी यहाँ देखा जा सकता है। भव्य निर्माण परमपूज्य गुरुदेव की १९७१ की विदाई के बाद यहाँ हो गया है किन्तु, कण-कण में उनकी प्राणचेतना का दर्शन किया जा सकता है। विराट प्रज्ञानगर, युग निर्माण विद्यालय, साहित्य की छपाई हेतु बड़ी-बड़ी ऑफसेट मशीनें तथा युगनिर्माण साहित्य जो पूज्यवर ने जीवन भर लिखा, उसका वितरण-विस्तार तंत्र यहाँ पर देखा जा सकता है।

शांतिकुंज, हरिद्वार- ऋषि परम्परा के बीजारोपण केन्द्र के रूप में १९७१ में स्थापित किया गया था, जब परमपूज्य गुरुदेव मथुरा स्थायी रूप से छोड़कर परमवंदनीया माताजी को अखण्ड दीपक की रखवाली हेतु यहाँ छोड़कर हिमालय में चले गये। गुरुसत्ता के निर्देश पर वे पुन: एक वर्ष बाद लौटे व तब शांतिकुंज को उनने एक बड़ा विराट रूप देने,

सभी ऋषिगणों की मूलभूत स्थापनाओं को यहाँ साकार बनाने का निश्चय किया । इससे पूर्व परमवंदनीया माताजी ने 24 कुमारी कन्याओं के साथ अखण्ड दीपक के समक्ष २४० करोड़ गायत्री मंत्र का अखण्ड अनुष्ठान आरंभ कर दिया था । पूज्यवर ने प्राण प्रत्यावर्त्तन सत्र जीवन साधना सत्र, वानप्रस्थ सत्र आदि के माध्यम से विभिन्न क्षेत्र में सक्रिय कार्य करने वाले कार्यकर्त्ता यहीं गढ़े । यह सत्र शृंखला कल्प साधना, संजीवनी साधना सत्रों के रूप में तब से ही ९ दिवसीय सत्रों व एक माह के युग शिल्पी प्रशिक्षण सत्रों के रूप में चल रही है, अभी भी अनवरत उसमें आने वालों का तांता लगा रहता है । पहले से ही सब अपनी बुकिंग इसमें करा लेते हैं ।

शांतिकुंज को गायत्री तीर्थ का रूप देकर सप्त ऋषियों की मूर्त्तियों की स्थापना १९७८-७९ में की गयी, एक देवात्मा हिमालय विनिर्मित किया गया एवं यहाँ सभी संस्कारों को संपन्न करते रहने का क्रम बन गया जो सतत चल रहा है। नित्य यहाँ दीक्षा, पुंसवन, नामकरण, विद्यारम्भ, यज्ञोपवीत, विवाह, श्राद्ध-तर्पण आदि संस्कार संपन्न होते हैं। इस बीच परम वंदनीया माताजी ने जागरण सत्र शृंखलाएँ संपन्न करना आरम्भ रखा । देव कन्याओं को प्रशिक्षित कर पूरे भारत में जीप टोलियों में भेजा गया । इनके माध्यम से तीन वर्ष तक भारत के कोने-कोने में तुमुलनाद होता रहा ।

शांतिकुंज का गायत्री नगर जो आज एक विराट स्थापना के रूप में, एक अकेडमी के रूप में नजर आता है व जिसमें एक बार में एक साथ दस हजार व्यक्ति एक साथ ठहर सकते हैं १९८१-८२ में बनना आरम्भ हुआ । विलक्षण, दुर्लभ जड़ी बूटियों के पौधे यहाँ लगाये गये तथा प्रखर प्रज्ञा-सजल श्रद्धा रूपी तीर्थ स्थली का पूज्यवर ने अपने सामने निर्माण कराया । यहीं उनके निर्देशानुसार उनके शरीर छोड़ने पर दोनों सत्ताओं को अग्नि समर्पित की जानी थी । स्वावलम्बन विद्यालय से लेकर एक विशाल चौके का निर्माण एवं गायत्री विद्यापीठ से लेकर भारत के सभी सरकारी विभागों के प्रशिक्षण के तंत्र की स्थापना यहाँ पर की गयी है एवं यह एक जीता जागता तीर्थ अब बन गया है, जहाँ पर उज्ज्वल भविष्य की पूर्व झलक देखी जा सकती है। कम्प्यूटरों से सज्जित विशाल कार्यालय से लेकर पत्राचार विद्यालय जहाँ नित्य हजारों पत्रों के द्वारा पूरे तंत्र का मार्गदर्शन किया जाता है, यहाँ की विशेषता है ।

ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान परम-पूज्य गुरुदेव की अभिनव पाँचवी स्थापना है, जहाँ पर विज्ञान और अध्यात्म के समन्वय का अभिनव शोध कार्य चल रहा है। इसे १९७९ की गायत्री जयंती पर आरम्भ किया गया था । वर्तमान शांतिकुंज-गायत्री तीर्थ से आधा किलोमीटर दूरी पर गंगातट पर स्थित यह संस्थान अपनी आकर्षक बनावट के कारण सहज ही सबके मनों को मोहकर आमंत्रित करता रहता है। इसमें तीन मंजिलों में प्रथम तल पर एक विज्ञान के उपकरणों से सुसज्जित यज्ञशाला विनिर्मित है तथा चौबीस कक्षों में गायत्री महाशक्ति की चौबीस मूर्त्तियाँ बीजमंत्रों व उनकी फल-श्रुतियों सहित स्थापित हैं । द्वितीय तल पर एक वैज्ञानिक प्रयोगशाला है, जहाँ ऐसे उपकरण स्थापित हैं जो यह जाँच पड़ताल करते हैं कि साधना से पूर्व व पश्चात्, यज्ञादि मंत्रोच्चारण के पूर्व व पश्चात् क्या-क्या परिवर्त्तन शरीर-मन की गतिविधियों व रक्त आदि संघटकों में देखने में आये । इनके आधार पर साधकों को साधना संबंधी परामर्श दिया जाता है । यहाँ पर वनौषधियों का विश्लेषण भी किया जाता है तथा यज्ञ ऊर्जा-मंत्र शक्ति का क्या प्रभाव साधक की मस्तिष्कीय तरंगों-जैव विद्युत आदि पर पड़ा यह देखा जाता है । विभिन्न प्रकार के मनोवैज्ञानिक परीक्षण भी यहाँ किये जाते हैं । तृतीय तल पर एक विशाल ग्रंथागार स्थापित हैं, जहाँ विश्वभर के शोध प्रबंध वैज्ञानिक अध्यात्मवाद पर एकत्रित किये गये हैं । यहाँ प्रायः ४५००० से अधिक ग्रंथ हैं, जिनमें कई पुरातन पाण्डुलिपियाँ हैं । यह अपने आप में एक अनूठा संकलन है जो और कहीं एक साथ देखने में नहीं मिलता ।

परमपूज्य गुरुदेव की उपरोक्त पाँच स्थापनाएँ किसी को भी यह परिचय दे सकती हैं कि किस विलक्षण दृष्टास्तर की वह महासत्ता थी जो हम सबके बीच अपना लीला संदोह रचकर चली गयी । प्रत्यक्ष तो यह केन्द्रीय पाँच स्थापनाएँ नजर आती हैं किन्तु ४८०० से अधिक अपने भवनों वाले प्रज्ञा संस्थान २४००० से अधिक प्रज्ञा मण्डल व स्वाध्याय मण्डल तथा अगणित गायत्री परिवार की शाखाएँ यदि इनमें मिलाई जायें तो इनका मूल्य राशि में आँका नहीं जा सकता। यही वह सब है जो उस महापुरुष को एक अवतारी स्तर की सत्ता के रूप में प्रतिष्ठापित करता है व जिसके कर्तृत्व पर श्रद्धावनत होने का मन करता है । ○○○

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पं. श्रीराम शर्मा आचार्य का जीवनदर्शन : समग्र वाङ्मय

परमपूज्य गुरुदेव पं. श्रीराम शर्मा आचार्य ने जीवन भर जो अपनी लेखनी से लिखा, औरों को प्रेरित कर उनसे सृजनात्मक लेखन करवाया, पुस्तकों-पत्रिकाओं में जो प्रकाशित हुआ, समय-समय पर उनने अमृतवाणी के माध्यम से जो विचारों की अभिव्यक्ति की, विचारसार व सूक्तियाँ जो वे लिख गये या अनायास कभी कह गये तथा पत्रों के माध्यम से जो अंतरंग स्पर्श जन-जन को दिया, वह समग्र इस वाङ्मय के खण्डों में है । जिनके नाम इस प्रकार हैं :-

१. युगद्रष्टा का जीवन-दर्शन
समग्र वाङ्मय का परिचय
२. जीवन देवता की साधना-आराधना
३. उपासना-समर्पण योग
४. साधना पद्धतियों का ज्ञान और विज्ञान
५. साधना से सिद्धि-१
६. साधना से सिद्धि-२
७. प्रसुप्ति से जाग्रति की ओर
८. ईश्वर कौन है, कहाँ है, कैसा है ?
९. गायत्री महाविद्या का तत्वदर्शन
१०. गायत्री साधना का गुह्य विवेचन
११. गायत्री साधना के प्रत्यक्ष चमत्कार
१२. गायत्री की दैनिक एवं विशिष्ट अनुष्ठान-परक साधनाएँ
१३. गायत्री की पंचकोशी साधना एवं उपलब्धियाँ
१४. गायत्री साधना की वैज्ञानिक पृष्ठभूमि
१५. सावित्री, कुण्डलिनी एवं तंत्र
१६. मरणोत्तर जीवन : तथ्य एवं सत्य
१७. प्राणशक्ति : एक दिव्य विभूति
१८. चमत्कारी विशेषताओं से भरा मानवी मस्तिष्क
१९. शब्द ब्रह्म-नाद ब्रह्म
२०. व्यक्तित्व विकास हेतु उच्चस्तरीय साधनाएँ
२१. अपरिमित संभावनाओं का आगार मानवी व्यक्तित्व
२२. चेतन, अचेतन एवं सुपर चेतन मन
२३. विज्ञान और अध्यात्म परस्पर पूरक
२४. भविष्य का धर्म : वैज्ञानिक धर्म
२५. यज्ञ का ज्ञान-विज्ञान
२६. यज्ञ : एक समग्र उपचार प्रक्रिया
२७. युग-परिवर्तन कैसे और कब ?
२८. सूक्ष्मीकरण एवं उज्ज्वल भविष्य का अवतरण-१
२९. सूक्ष्मीकरण एवं उज्ज्वल भविष्य का अवतरण-२ (सतयुग की वापसी)
३०. मर्यादा पुरुषोत्तम राम
३१. संस्कृति-संजीवनी श्रीमद्भागवत एवं गीता
३२. रामायण की प्रगतिशील प्रेरणाएँ
३३. षोडश संस्कार विवेचन
३४. भारतीय संस्कृति के आधारभूत तत्त्व
३५. समस्त विश्व को भारत के अजस्र अनुदान
३६. धर्मचक्र प्रवर्त्तन एवं लोकमानस का शिक्षण
३७. तीर्थ सेवन : क्यों और कैसे ?
३८. प्रज्ञोपनिषद्
३९. नीरोग जीवन के महत्त्वपूर्ण सूत्र
४०. चिकित्सा उपचार के विविध आयाम
४१. जीवेम शरद: शतम्
४२. चिरयौवन एवं शाश्वत सौन्दर्य
४३. हमारी संस्कृति : इतिहास के कीर्ति स्तम्भ
४४. मरकर भी अमर हो गये जो
४५. सांस्कृतिक चेतना के उन्नायक : सेवाधर्म के उपासक
४६. भव्य समाज का अभिनव निर्माण
४७. यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता
४८. समाज का मेरुदण्ड सशक्त परिवार तंत्र
४९. शिक्षा एवं विद्या
५०. महापुरुषों के अविस्मरणीय जीवन प्रसंग-१
५१. महापुरुषों के अविस्मरणीय जीवन प्रसंग-२
५२. विश्व वसुधा जिनकी सदा ऋणी रहेगी
५३. धर्मतत्त्व का दर्शन व मर्म
५४. मनुष्य में देवत्व का उदय
५५. दृश्य जगत् की अदृश्य पहेलियाँ
५६.ईश्वर विश्वास और उसकी फलश्रुतियाँ
५७. मनस्विता प्रखरता और तेजस्विता
५८. आत्मोत्कर्ष का आधार- ज्ञान
५९. प्रतिगामिता का कुचक्र ऐसे टूटेगा
६०. विवाहोन्माद : समस्या और समाधान
६१. गृहस्थ : एक तपोवन
६२. इक्कीसवीं सदी : नारी सदी
६३. हमारी भावी पीढ़ी और उसका नवनिर्माण
६४. राष्ट्र समर्थ और सशक्त कैसे बने ?
६५. सामाजिक, नैतिक एवं बौद्धिक क्रान्ति कैसे ?
६६. युग निर्माण योजना-दर्शन, स्वरूप व कार्यक्रम
६७. प्रेरणाप्रद दृष्टान्त
६८. पूज्यवर की अमृतवाणी (भाग एक)
६९. विचारसार एवं सूक्तियाँ (प्रथम खण्ड)
७०. विचारसार एवं सूक्तियाँ (द्वितीय खण्ड)

वाङ्मय के आगे प्रकाशित होने वाले ३८ खण्ड निम्न विषयों पर होंगे--

७१. मनोविकारों की मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि
७२. तनाव के कारण एवं उनके निवारण के उपाय
७३. चिन्तन का विधेयात्मक-निषेधात्मक स्वरूप
७४. पुरुषार्थ और मानवी जिजीविषा
७५. संकल्प बल का अनूठा प्रभाव
७६. बाल-विकास के विविध सोपान
७७. बाल मनोविज्ञान का सही उपयोग
७८. पारिवारिकता में सुसंस्कारों का योगदान
७९. पारिवारिक पंचशील और परिवार-निर्माण
८०. व्यक्तित्व के विकास की प्रक्रिया
८१. विचार-विज्ञान का महत्त्व
८२. सामाजिक समस्याएँ और उनका समाधान
८३. समाज-निर्माण के विभिन्न चरण
८४. सामाजिक जीवन में सद्गुणों की भूमिका
८५. नर-नारी की सामान्य समस्याएँ और उनका समाधान
८६. नारी जागृति की बाधाएँ एवं उनके निराकरण के उपाय
८७. पारिवारिक जीवन: एक तप-साधना
८८. दाम्पत्य जीवन के संयुक्त दायित्व
८९. नीति-विज्ञान और नैतिकता
९०. कृषि, व्यवसाय और उद्योग की उन्नति के आधार
९१. पूज्य गुरुदेव के स्फुट विचार
९२. पूज्यवर की अमृतवाणी-२
९३. पूज्य गुरुदेव की दिव्य अनुभूतियाँ
९४. पूज्य गुरुदेव के लिखे स्मरणीय पत्र
९५. तंत्र महाविज्ञान विवेचन
९६. मंत्र महाविज्ञान विवेचन
९७. महापुरुषों के प्रेरक जीवन-प्रसंग
९८. प्रेरणाप्रद कथा एवं गाथाएँ
९९. हृदयस्पर्शी विविध कथाएँ
१००. शान्तिकुंज का प्रज्ञा अभियान
१०१. युग निर्माण मिशन का क्रमिक इतिहास
१०२. वेद-सार-चिन्तन
१०३. पुराण-शोध-सार
१०४. उपनिषद् और आरण्यकों की दार्शनिक विषयवस्तु
१०५. काव्य-गीत-मंजूषा
१०६. मिशन के रचनात्मक कार्यक्रमों का क्रमिक इतिहास
१०७. मिशन की लोक-व्यवहार संहिता
१०८. गुरुदेव की अपने आत्मीय जनों से अपनी बातें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org